ओ३म्
सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)
वेदा
आर्यमर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र



वर्ष १ } २२ पौष वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदानुसार ५ जनवरी १९६९ रविवार { वार्षिक शुल्क—१० रुपये
अक ६ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ { एक प्रति— पसे २०

सम्पादक—**रघुवीरसिंह शास्त्री** लोकसभा सदस्य **सभा मन्त्री** स० सम्पादक—**जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री** पूव लोकसभा सदस्य

वेदमंत्रार्थ-प्रवचन

इन्द्रशब्देन व्यावहारिकमनमूक्त वाऽथश्वराथमुपदिश्यत । इद्र शब्द से व्यवहार का दिखला कर अब प्रार्थना रूप से अगल मन्त्र मे परमेश्वरार्थ का प्रकाश किया है

इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च ।
प्र उग्राभिरूतिभि । ऋ० १ ७ ४।

पदाथ —(इन्द्र) परमैश्वयप्रदेश्वर (वाजषु) सग्रामेषु (न) अस्मान् (अव) रक्ष (सहस्रप्रधानेषु) सहस्राण्यसख्य नि प्रकृष्टानि धनानि प्राप्नुवन्ति यषु तषु चक्रवर्त्तिराज्यसाधकेषु महायुद्धषु (च) आवत्त्यथ (उग्र) सर्वोत्कृष्ट (उग्राभि) अत्यन्तोत्कृष्टाभि (ऊतिभि) रक्षाप्रा विज्ञानसुखप्रवेशन ॥

अन्वय हे जगदीश्वर उग्र भवान् सहस्रप्रधनेषु वाजषूग्राभिरूतिभिर्नो रक्षा स तनुज्य च प्रापय ।

भावार्थ —परमेश्वरो धार्मिकषु यान् धर्षु कृपा दत्ते नेतरेषु । य मनुष्य जितेन्द्रिया विद्वास पक्षपातरहिता शरीरात्म बलो कृष्टा अनलसा सन्तो धमण महायुद्धानि विजित्य राज्य नित्य रक्षन्ति त एव महाभाग्यशालिनो भूत्वा सुखिना भवन्ति ॥

पदाथ—हे जगदीश्वर ! (इन्द्र)पर परमैश्वय देने तथा (उग्र) सब प्रकार से अनन्त पराक्रमवान् आप(सहस्रप्रधनेषु) असख्यात धन को देन वाले चक्रवर्तिराज्य को सिद्ध करने वाल (वाजेषु) महायुद्धो मे (उग्राभि) अत्यन्त सुख देने वाली (ऊतिभि) उत्तम उत्तम पदार्थों की प्राप्ति तथा पदार्थों के विज्ञान और आनन्द मे प्रवेश कराने से हम लोगो की (अव)रक्षा कीजिये ।

भावाथ—परमेश्वर का यह स्वभाव है कि युद्ध करने वाले धर्मात्मा पुरुषो पर अपनी कृपा करता है और आलसियो पर नही । इसी से जो मनुष्य जितेन्द्रिय विद्वान् पक्षपात को छोडने वाले शरीर और आत्मा के बल से अत्यन्त पुरुषार्थी तथा आलस्य को छोडे हुये धम से बडे-बडे युद्धो को जीत के प्रजा का निरन्तर पालन करते हैं वे ही महाभाग्य को प्राप्त हो के सुखी रहते है ॥

(**ऋषिदयानन्द के वेदभाष्य से**)

सार्वदेशिक न्यायसभा के निर्णय की आड में भ्रम-मूलक प्रचार का खण्डन

(**श्री र मनाथमल्ला सभा कोषाध्यक्ष**)

कुछ स्वार्थी व्यक्ति स्थान स्थान पर या समय समय पर आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारियो पर यह दोष लगाते नही थकते कि १९७० को सार्वदेशिक सभा के साथ हुए समझौते मे यह निश्चय करके कि न्यायसभा का निर्णय अन्तिम होगा तथा उसके विरुद्ध किसी न्यायालय मे न जावगे फिर भी पंजाब सभा के अधिकारी न्यायालय मे चले गये । इस विषय मे आर्यजनता को वस्तुस्थिति से अवगत कराना परम आवश्यक हो गया है ।

१—१९०६ को श्री स मनाथ मरवाहा द्वारा अपनी अन्तरगसभा के सामने लिखाये समझौते पर सार्वदेशिक सभा के प्रधान तथा मन्त्री सब ने हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था तथा वे सब उप से वठक से चले गये ।

अयन्तारि सभा पंजाब के प्रमुख अधिकारियो ने जहा उस पर हस्ताक्षर किये वहा अपनी अन्तरगसभा से उसे सम्पुष्ट भी कराया परन्तु सार्वदेशिक सभा के अधिकारियो ने आज तक उसे अपनी अन्तरगसभा से सम्पुष्ट नही कराया

३—१९ ३ के पाकस्मा अधिवेशन मे हुए निर्वाचन के विरुद्ध प्राप्त मूल आपत्तियो का ... केवल सार्वदेशिक न्याय सभा के पास निर्णय के लिये भेजने का निश्चय हुआ था । उनमे आपत्तिया ये थी कि कार्यालय द्वारा अकित प्रतिनिधियो की उपस्थिति ... तथा प्रधान पद के ... गये वोटो का जोड ६ ८ है अतः इन दोनो अको मे ... का अन्तर होने से निर्वाचन अवध है ।

४—प्रो० रामसिंह को उक्त निर्वाचन मे प्रधान पद के लिये ६१ तथा डाक्टर हरिप्रकाश को ४ वोट मिले । अथ तु प्रो० रामसिह जी को १४८ वोट अधिक मिले । श्री जगदेवसिह जी सिद्धान्ती जो उस समय बठक के सभाध्यक्ष थे । उन्होने कहा कि ... वोट प्रो० रामसिह जी के कम करने अथवा वे वोट डा० हरिप्रकाश को दे देने से भी निर्वाचन पर प्रभाव नही पडता फिर भी ... दोबारा गिणती कराने को तयार है उसी समय डा० हरिप्रकाश ने मच पर आकर प्रो० रामसिह जी की जीत तथा अपनी हार स्वीकार की और स्वय आग्रह करने पर प्रो० रामसिह जी को प्रधान घोषित करके सभापति के आसन पर बिठाया गया तथा अगली कायवाही हुई । उसी बठक मे बनी अन्तरगसभा व विद्यासभा की अगले वष की बैठको मे डा० हरिप्रकाश सदस्य के नाते प्रो० रामसिह की प्रधानता स्वीकार करके भाग लेते रहे । आज वही डाक्टर हरिप्रकाश अपने को सभा का मन्त्री लिखते नही थकते । अधिकार की इस लालसा को आर्य जगत् देख ले ।

५—न्यायसभाए इस लिये बनाई गई थी कि आर्य भाई सरकारी न्यायालयो ... म मनजके ... नय मे ... सम ... । पंजाब सभा अपने पक्ष का ... इसी लिये उसने सार्वदेशिक न्यायसभा को झगडा सौंपना स्वीकार किया था । सार्वदेशिक न्यायसभा का कर्तव्य था कि दोनो पक्षो को बलाकर निर्णय कर देता तथा झगडा समाप्त कराता

श्री चमनलाल सीतलवाड जो भारत मे सर्वोच्च तथा विख्यात वकील है उनका मत था कि उपरोक्त कारण के अतिरिक्त १९६४ मे अधिकारियो का निर्वाचन ... १९ ... के निर्वाचन की वधानिकता का प्रश्न ही नहीं उठता

६—निर्वाचन के विरुद्ध याचिकाए देने वाले व्यक्तियो को सार्वदेशिक न्याय सभा के प्रधान ने न तो पार्टी बनाया ... न ... ही बलाकर सुना । ... म ... निर्वाचन के विरुद्ध कोई याचिका न थी फिर भी उन्होने सार्वदेशिक सभा को बिना मतलब पार्टी बनाया

७—सार्वदेशिक न्यायसभा के ७ सदस्य है । उनमे से किसी को भी साथ न बिठा कर श्री रतनलाल जी प्रधान न्यायसभा स्वय ही दण्डाधिकारी की भाति कचहरी लगाते रहे तथा अकेले ही प्रत्येक प्रकार का आदेश व निषधादेश देते रहे ।

८—यदि सार्वदेशिक सभा के अधिकारियो का मान रखने के लिये पंजाब सभा का निर्वाचन अवध घोषित करके ही ला० रतनलाल प्रधान न्यायसभा को मानसिक शान्ति मिल सकती थी तो उसे अवध घोषित करके न्याय सभा के एक सदस्य

(शेष पृष्ठ १० पर)

आर्यसमाजी कवियों का स्फुट संस्कृतकाव्य

(ले० डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० पी० एच० डी०)

आर्यसमाज द्वारा सचालित सस्कृत पत्रिकाओ मे गुरुकुलकांगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक मुखपत्रिका गुरुकुल पत्रिका का अन्यतम स्थान है। इस पत्रिका के माध्यम मे आर्यसमाज के सस्कृत भाषा के कवियो को अपनी स्फुट रचनाओ के प्रकाशन का एक अच्छा अवसर मिल गया है। ये फुटकर कवितायें विभिन्न विषयो पर विभिन्न शैलियो मे लिखी गई है। यहा इनका किञ्चित विस्तृत विश्लेषण असमीचीन न होगा। सामयिक घटनाये तथा महापुरुषो का गुणानुवाद इन कविताओ का मूलप्रेरणास्रोत दिखाई देता है। दिवगत महापुरुषो के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने के रूप मे कई कवितायें लिखी गई है। ऐसी कविताओ मे श्रीगोपाल शास्त्री दर्शनकेसरी लिखित श्री श्रद्धानन्दायामराय श्रद्धाञ्जलि [1] तथा प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड रचित गुरुवर्यपुण्यस्मरणम [2] गुरुकुल कागडी के सस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी के विषय मे लिखी गई है। इसी प्रकार आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री[3] प्रसिद्ध विद्वान् और भाषाशास्त्री डा० रघुवीर[4] भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद[5] तथा आर्यसमाज के प्रसिद्ध सस्कृत विद्वान् प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु[6] के निधन पर भी प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने सस्कृत कविताओ मे अपनी शोकाञ्जलि अर्पित की है। ऐसी कविताओ मे दिवगत महापुरुषो के गुणो का कीर्तन ही मुख्य रहता है। करुण रस की निष्पत्ति इन कविताओ मे सहज ही देखी जा सकती है।

प० जवाहरलाल नहरू के निधन की शोकजनक घटना ने सस्कृत कवियो को सर्वाधिक विचलित किया प्रतीत होता है। नहरू जी के महाप्रयाण पर कवियो ने अपने शोक वेग का कविताओ के माध्यम से व्यक्त किया है। ऐसी कविताओ मे विश्वनाथ केशव छात्रे लिखित प० जवाहरलाल सस्मरणम[1] रामचन्द्र शास्त्री विद्यालकार लिखित हा दैवदुर्विलसितम[2] जगन्नाथ वेदालकार लिखित श्री नहरू महाप्रयाण प्रसगे विद्यानिधि शास्त्री रचित वियोगिनी वृत्त मे प्रधान मन्त्रिण प० जवाहरलाल नहरू महोदस्य महाप्रयाणमुपलक्ष्य श्रद्धाञ्जलि [1] पद्य रचित हा ! शान्तिदूतोऽपि दिवि प्रयात [2] मेधाव्रताचार्य रचित अनभ्रवज्रपात [3] धर्मदेव विद्यामार्तण्ड रचित श्री नेहरू महोदयस्य महाप्रयाणम [4] तथा वसन्ततिलकावृत्त मे प्राध्यापक हरिश्चन्द्र रेणापुरकर लिखित जवाहरलाल नेहरू[5] महत्त्वपूर्ण है। दिवगत नेता के व्यक्तित्व और चरित्र का उदात्त आकलन करते हुए कवियो ने अपनी भावभीनी श्रद्धाञ्जलि उस राष्ट्र पुरुष के प्रति अर्पित की है।

श्रद्धाञ्जलि और शोकोद्गार परक कविताओ की ही तरह अभिनन्दन परक कविताओ का भी उल्लेख किया जा सकता है। विद्यानिधि शास्त्री ने त्रोटक वृत्त मे महात्मा गाधी के अभिनन्दन मे श्री गान्धिमहोदयज माभिनन्दनम[6] शीर्षक कविता लिखी। गुरुकुल कागडी के भूतपूर्व उपकुलपति श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालकार के राज्य सभा के सदस्य मनोनीत किये जाने पर रत्नाकर शास्त्री ने अभिनन्दन[7] शीर्षक कविता लिखी। इसी प्रकार सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् प० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर के जन्म दिवस पर श्री जनमेजय विद्यालकार रचित अभिनन्दनात्मक कविता नमो नम सातवलेकराय प्रकाशित हुई। अधिकाश आर्यसमाजी सस्कृत कवि स्वामी दयानन्द के प्रति अपनी भक्ति और श्रद्धानन्द युक्त काव्याञ्जलि अर्पित करने मे सन्नद्ध हुए है। ऐसी कविताओ मे श्री हरिश्चन्द्र रेणापुरकर की दयानन्द गाथा ब्रह्मचारी योगेन्द्राग्य का वन्दे दयानन्द महमुना द्रम[9] श्रीजगन्नाथ शास्त्री की श्री गुरुपादोत्क्रम[10] श्रीप्रशस्यमित्र शास्त्री की भारत महादीपक —भूसुरो दयानन्द [11] तथा मेधाव्रताचार्य की जगन्नभसिदयानन्द चन्द्र [12] आदि उल्लेखनीय हैं। श्री मेधाव्रत ने मन्दाक्रान्ताछाद मे रूपकालकार के सहारे दयानन्द रूपी चन्द्र का इस प्रकार वर्णन किया है—

आशामैन्द्रीमकणकिरणै रञ्जयन्त समीक्ष्य
भौमाकाश निगमतरणि काशयिष्यन्तमग्र।
निश्चिस्यासौ चरमसुगिरेस्तुङ्गशृङ्गावलम्बी
यातोऽस्त नुप्रकृतिरुचिर श्रीदयानन्दचन्द्र ॥[1]

१९६२ मे चीन द्वारा भारतीय सीमा के अतिक्रमण तथा उसके दुर्दान्त आक्रमण ने सस्कृत कवियो की सरस्वती को भी स्फूर्त किया। अधिकाश कवियो ने चीन को ललकारा तथा भारत के रणबाकुरे सैनिको की विजयकामना करते हुए उन का अभिनन्दन किया। नरसिंह शास्त्री ने रणघोष शीर्षक कविता लिखी। इस रचना मे ओजगुण मानो साकार हो गया है—

श्रुत्वा शत्रुगणस्य सगरख शस्त्रास्त्रविस्फोटजम।
शार्दूलायितभारतीय पुरुषाश्चीनीयकन्यान मृगान् ॥
हत्वा शोणितवाहिनी हिमगिरौ सवाहयन्ति क्रुधा।
एतद् पश्यन धीरभारतमहाशार्दूलविक्रीडिनम ॥[2]

श्री वासुदेव द्विवेदी ने कदम कदम बढाये जा की शैली मे एक युद्ध प्रयाण गीत लिखा— सादर समीयनाम वन्दना विधीयनाम।
श्रद्धया स्वमातृभू समर्चना विधीयनाम ॥[3]

इसी कवि ने हिन्दी की तुक रहित छन्द विरहित शैली मे शत्रु देश को ललकारते हुए लिखा है—

अरे चीन ! दुर्गव पीन ! रे मर्यादाविश्वासहीन ! वद कुत्र गता ते लज्जा ? छल-बल-युक्ता अद्य दानवी एषा त रणरज्जा ! आदि।

इसी प्रसग मे श्री ब्रजनाथ झा लिखित चीन पाकौ च तेने [1] हरिदत्त पालीवाल लिखित सुराणा हिमालयोऽयम[2] तथा श्री नरसिहशास्त्री रचित रणघोष विशेषतया उल्लेखनीय है। अन्तिम कविता मे कवि दुर्दान्त शत्रु को ललकारते हुए कहता है—

रे रे कम्युनिज्म मदान्ध पशवश्चीनीयदजन्तव
युष्माभि सुविशाल भारतभुव सीमाप्रदेशो महान।
चौर्येणापहृत स सर्वविदित शौर्येण नो सवथा
त प्राप्तु समराङ्गणे न हि वय भीता भवाम क्वचित ॥[3]

चीनी आक्रमण के उत्तर मे भारतीय नागरिक की निम्न प्रतिज्ञा को श्री वासुदेव द्विवेदी कृत कविता मे उपनिबद्ध किया गया है—

हत्वा आक्रमकान् सर्वान शत्रून अन्यायकारिण।
रक्षयिष्यामो वय वीरा वन्द्या भारतमातरम ॥[1]

गुरुकुल पत्रिका मे प्रकाशित अधिकाश अन्य कवितायें आध्यात्मिक और दार्शनिक विषयो से सम्बन्ध रखती हैं। ऐसी कविताओ मे प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड की विष्णु महिमा[2] श्री बुद्धदेव शास्त्री की ईशकरुणात्मवीणावन्दनम[3] आदि प्रमुख हैं। कुछ अन्य कवियो ने वेद की प्रशस्ति मे भी स्फुट कवितायें लिखी है। इनमे श्री विद्यानिधि शास्त्रीकृत शिखरिणी वृत्त मे लिखा गया ८ छन्दो का वेदपुरुष स्तुति शीर्षक स्तोत्र अत्यन्त सुन्दर है। इसका एक ही उदाहरण देना पर्याप्त होगा—

स्फुट सूक्ष्मरात्रौ प्रकर्त्तममाघौनकलुष
समा विभ्रत् सज्जा भगवदुदित ज्ञानममलम।
अनिद्य सम्बन्ध्य सततमभिनन्द्य कृतधिया
स लोकैः शोभावान जयति भगवान वेदपुरुष ॥[4]

इसी प्रकार प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड रचित श्रुति प्रशस्ति भी अपने काव्योचित गुणो और प्रसादगुणयुक्त भाषा के कारण उल्लेखनीय है। वेदमाता की स्तुति करता हुआ कवि लिखता है—

कल्याणी जगदीश्वरस्य सुखदा वाणी परानन्ददा,
विज्ञान विविध जगद्धितकर या बोधयत्यादिमा।
जाड्य या निरखिल निहन्ति वरदा सम्भावयन्ती सुतान्
सा न पातु सरस्वती सकलभृद् या वेदमाताऽमरा ॥[5]

(शेष पृष्ठ ६ पर)

१ गुरुकुल पत्रिका पौष २०२० वि०। २ गुरुकुल पत्रिका पौष २०१९ वि०। ३ दिवगतो द्विजेन्द्रनाथ विद्यामार्तण्ड आषाढ २०२० वि०। ४ दिवगतो हा रघुवीर शास्त्री ज्येष्ठ २०२० वि०। ५ दिवगतोऽजातशत्रू राजेन्द्रप्रसाद महोदय फाल्गुन २०१९ वि०। ६ दिवगत श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु पौष २०२१ वि०। ७ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२१ वि०। ८ गुरुकुल पत्रिका आश्विन २०२१ वि०। ९ गुरुकुल पत्रिका श्रावण २०२१ वि०।

१ गुरुकुल पत्रिका। २ गुरुकुल पत्रिका आषाढ २०२१। ३ गुरुकुल पत्रिका आषाढ २०२१। ४ गुरुकुल पत्रिका आषाढ २०२१। ५ गुरुकुल पत्रिका पौष २०२०। ६ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२०। ७ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२० ८ गुरुकुल पत्रिका भाद्रपद २०२० तथा भाद्रपद २०२१। ९ गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन २०२१। १० गुरुकुल पत्रिका कार्तिक २०२१। ११ गुरुकुल पत्रिका कार्तिक २०२१। १२ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२०।

१ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२०। २ गुरुकुल पत्रिका ज्येष्ठ २०२०। ३ गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन २०१९। ४ गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन २०१९।

१ गुरुकुल पत्रिका श्रावण २०२१। २ गुरुकुल पत्रिका माघ २०१९। ३ गुरुकुल पत्रिका माघ २०१९।

१ गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०१९। २ गुरुकुल पत्रिका भाद्रपद २०२१। ३ गुरुकुल पत्रिका भाद्रपद २०२२। ४ गुरुकुल पत्रिका २०२२। ५ गुरुकुल पत्रिका भाद्रपद २०२२।

सम्पादकीय

पंजाब के हिन्दी प्रेमियों से

खेद है कि भाषा और लिपि का प्रश्न वर्तमान समय मे साम्प्रदायिक और राजनीतिक कुचक्र मे फंस कर अत्यन्त जटिल रूप धारण किये हुए है। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का यह स्वाभाविक अधिकार है कि वह अपने राष्ट्र की भाषा मे बोले और उस भाषा की राष्ट्र लिपि मे लिखे। इस अधिकार को बलात् छीनना मानवीय अत्याचार की प्रथम कोटि मे गिना जाता है।

हमारे राष्ट्र की एक भाषा सस्कृत और लिपि ब्राह्मी लाखो वर्षों तक चलती रही। ब्राह्मीलिपि का ही वर्तमान रूप देवनागरी लिपि है। आगे चल कर राष्ट्र मे सीमा विघटनो के कारण अनेक प्राकृतिक भाषाएँ प्रचलित हुई परन्तु लिपि एक समान देवनागरी ही रही। इसमे भी कालान्तर मे लिपिया भी अनेक हो गई।

मुस्लिम शासन काल मे फारसी लिपि मे विदेशी भाषा का प्रयोग भारत मे हुआ और भारतीय भाषाओ की खडी बोली के मिश्रण से उर्दू भाषा का जन्म हुआ। दूसरी ओर हिन्दी भाषा भी चालू हो गई। हिन्दीभाषा को ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थो मे प्राकृतभाषा लोकभाषा जनभाषा और आर्यभाषा के नाम से अनेक स्थानो पर लिखा है। उन्होने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को इसी लोकभाषा की खडी बोली के रूप म लिखा। उसी का आज हिन्दी नाम दिया जाता है।

पजाब म आर्यसमाज और सनातनधर्म सभाओ ने हिन्दीभाषा और देवनागरी का विशेष प्रचार किया और अपने व्यवहार मे इन दोनो का प्रयोग किया। अपने शिक्षणालयो म हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को स्वीकार किया। पजाब के उर्दू क्षेत्र मे भी इनका पूरा बल लगा कर आगे बढाया। लडकियो की शिक्षा का माध्यम तो सर्वथा हिन्दी और देवनागरी लिपि को ही रखा।

आगे चलकर हिन्दी और पजाबी दोनो को भाषा माना जाने लगा। उक्त दोनो भाषाओ का मूल सस्कृत भाषा है और ये बोलिया थी, परन्तु दोनो ही भाषा का रूप धारण कर गई। हिन्दी की लिपि जहाँ देवनागरी रही—वहाँ पजाबी को गुरुमुखी लिपि मे भी लिखा जाने लगा। यद्यपि पजाबी को फार्सी (उर्दू), देवनागरी लिपि मे भी लिखा जाता रहा। अत पजाबी की उक्त तीन लिपियाँ हो गई थी।

पजाबी को सिख हिन्दू और मुसलमान सभी एक समान बोलते थे परन्तु लिखने मे मुसलमान उर्दू, हिन्दू देवनागरी और सिख गुरुमुखी लिपि का विशेषतया व्यवहार करने लगे। कुछ आगे चल कर इन तीनो लिपियो को साम्प्रदायिक रूप दे दिया गया तथा राजनीतिक स्वार्थ से इनमे सघर्ष और कटुता के बीज बो दिये गये। पूरा पजाब जब एक था, तब तक तीनो लिपियाँ चलती रही, परन्तु पाकिस्तान बनने के पश्चात् इधर देवनागरी और गुरुमुखी प्रमुख लिपियाँ हो गई यद्यपि अभी तक उर्दू का व्यवहार और फार्सी लिपि भी चल रही है। हिन्दू और सिख दोनो चला रहे हैं।

राजनीतिक आपाधापी ने गुरुमुखी लिपि को सिख सम्प्रदाय से बाध दिया और हिन्दी प्रेमियो ने देवनागरी लिपि को यथापूर्व अपनाये रखा। जब परस्पर सघर्ष हो गया तब हिन्दी रक्षा आन्दोलन चला। इसी कारण पृथक् पृथक् हिन्दी और पजाबी क्षेत्र बने। पजाबी को शासकीय रूप मे भी गुरुमुखी लिपि से सम्बद्ध कर दिया गया। बहुपक्ष की भाषा हिन्दी और देवनागरी लिपि होते हुये भी लोगो पर शिक्षा विभाग म गुरुमुखी लिपि और पजाबी भाषा बलात् लाद दी गई।

राजनीतिक चक्र के कारण पजाब का विभाजन फिर हुआ। अब वर्तमान पजाब मे हिन्दी भाषी अल्प मत मे हो गये इसी आधार को लेकर पजाब की एकमात्र भाषा पजाबी और लिपि गुरुमुखी कर दी गई। पजाबी को देवनागरी लिपि मे लिखने का आधार भी राजकीय बल पर छीन लिया गया। हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को आवश्यक सरक्षण भी नही दिये जा रहे, जैसे कि पजाबी और गुरुमुखी लिपि को इनके अल्प पक्ष के समय मिले हुये थे।

अब पजाब का हिन्दी प्रेमी अत्यन्त दुखी होकर किकर्तव्यविमूढ की भाँति इस बात को जानने मे अपने को समर्थ नही पा रहा कि हिन्दी और देवनागरी लिपि की रक्षा कैसे की जाय? हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि की रक्षा किन उपायो से की जावे—इसके सम्बन्ध मे कुछ सामाजिक सुझाव आगे की पक्तियो मे दिये जाते हैं। पजाब के हिन्दी प्रेमी इन पर शान्त भाव से विचार करे और उचित प्रतीत होवें तो इनको कार्यान्वित कर लेवें।

अभी थोडे समय के पश्चात् पजाब मे विधानसभा के मध्यावधि चुनाव होने जा रहे हैं। इस अवसर से हिन्दी हितैषी जनता को लाभ उठाना चाहिये।

१ सबसे अच्छा कार्य यह रहेगा कि सम्प्रदाय आदि भेद भाव को छोडकर एक हिन्दी रक्षक सघ स्थापित किया जावे और इसके आधार पर विधान सभा मे उमीदवार खडे किये जावे। यह आवश्यक नही कि सब जगह खडे किये जावे जहाँ सुदृढ स्थिति होवे वही खडे किये जावे। कुछ स्थान भी विधान सभा मे मिल गये, तो राजनीतिक जोड तोड मे हिन्दी प्रमी पूरा लाभ उठा सकते हैं। यदि दुर्भाग्य से ऐसा सघ न बनाया जा सके, तो—

२ हिन्दी प्रमी उस उमीदवार को ही अपना वोट देवे जिसने हिन्दी रक्षा आन्दोलन मे काम किया हो अथवा सदा से हिन्दी हित म कार्य करता आया हो, चाहे वह हिन्दी रक्षा सत्याग्रह मे न भी शामिल हो सका हो। ऐसे उमीदवार से लिखित आश्वासन पर उसको वोट दिलवाये जावे चाहे वह इस समय किसी भी सम्प्रदाय अथवा राजनीतिक दल म शामिल हो। यदि दुर्जनतोष न्याय से ऐसा भी न हो सके, तो—

३ ऐसे उमीदवारो का विरोध किया जावे जिसने सदा हिन्दी का विरोध किया हो और अब भी विरोध कर रहा हो। इस प्रकार हिन्दी विरोध की शक्ति कमजोर हो जावेगी। अपना उमीदवार चाहे न बन पावे परन्तु घोर विरोधी को भी न बनने दिया जावे। यदि इस बात की सम्भावना भी कम प्रतीत होवे तो—

(शेष पृष्ठ १० पर)

जय-युवकगण जय

हरयाणा के आर्य युवक वीरो! तुम्हारी उद्भव-उषा-वेला का हम हृदय से स्वागत करते हैं। ब्रह्मचर्यसम्पन्न-विद्याविभूषित-तपस्वी महत्त्वभावगर्भित-उद्दामप्रचण्ड-भुजदण्डन्यक्कृतदुर्व्यसनसमूह वैदिकआर्य्यमर्य्यादाग्रसरसैनिकसाजसज्जासज्जित-दुर्धर्ष-गर्जनहुकारविमूढाहकारलिप्त योद्धाओ! ठीक समय पर आपने ब्राह्ममुहूर्त मे जागरण किया है। वह देखिये—सामने भारत राष्ट्र की वीर भूमि के हरयाणा खण्ड के क्षितिज पर उदीयमान सूर्य्य के प्रखररश्मि-मण्डल से तुम्हारे मुखमण्डल पर प्रदीप्त आभा छिटक रही है।

ध्यान रखिये—आपकी वीर सेना के सामने जनदुर्गुण-दोष-दुर्व्यसनो के पर्वत आपके बढने के मार्ग को रोके खडे हुये हैं। इनका कण-कण करके धराशायी करना है। प्रशासक-राजपुरुष-छिन्न-भिन्न-राष्ट्र-सुखैश्वर्य-स्वार्थ को परमार्थ-कुठार से खण्ड-खण्ड करके विलोप करना है।

आपके मार्ग मे अपनो और परायो द्वारा डाली गई विघ्नबाधाओ को सम्भल-सम्भल कर सहन करना है। हसनीरक्षीर-न्याय से विवेकपूर्वक इनकी काट-छाट करके सुस्थिर मार्ग बनाना है, जिस पर चल कर हरयाणा निवासी आर्यत्व को धारण करते हुए भारत राष्ट्र की दोधूयमान ध्वजा को कर मे लेकर आगे बढते रहे। ऐसे द्रुतगामी वाहन पर अधिकार करे जिसस आकाश मे उड्डीयमती पताका की नोक उतनी ही पीछे की तरफ लहराये जितना की आपका शौर्यवाहन आगे बढता रहे।

युवको! अहकार-मदमत्त होकर अन्याय और अविनय का प्रकाशन कदापि न करे। यह देखिये—तुम्हारे कर्तव्य-पालन की पवित्र भावना से आकृष्ट होकर, हरयाणा राज्य से अति दूर राज्यो के ज्ञानगरिमायुत नैष्ठिक होने पर युवक सर्वस्व की आहुति देकर आपके मार्ग का प्रशस्त करने के लिये आपके मण्डल मे शुद्ध भाव से सम्मिलित होकर हरयाणा को राष्ट्र म आर्यत्व की ज्योति को फैलाने का यश प्रदान करने के लिये सगम मे आ मिले हैं। स्वागत करिये इन स्वार्थत्यागी निस्पृह युवको का!

भगवान् आपका सामर्थ्य देवे। आप वैदिकधर्म की ध्वजा के नीचे चलते हुये हरयाणा से आगे बढ कर भारतराष्ट्र का मुख उज्ज्वल कर ससार मे यह घोषणा करे—

विश्ववारा सस्कृति को धारण करना हमारा ध्येय है।
'इन्द्रो विश्वस्य राजतीत्यो३म्'

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

जर्मनी में एक कटु अनुभव

(श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब)

गत ४ दिसम्बर को फेडरल रिपब्लिक आफ जर्मनी के निमन्त्रण पर जब मैं उनकी राजधानी बान म पहुँचा तो मैंने भारतीय दूतावास के एक अधिकारी को कहा कि मुझे बान विश्वविद्यालय का इडोलोजी विभाग देखना है। एक सस्कृतज्ञ एव वेद विश्वासी के नाते एतद्विषयक मेरी उत्सुकता सर्वथा स्वाभाविक थी क्योकि उस देश मे सस्कृत भाषा के अध्ययन के सम्बन्ध मे बहुत कुछ सुन रखा था।

दूतावास के अधिकारी ने उसी समय विश्वविद्यालय के एक भारतीय अध्यापक श्री तिलकराज चोपडा के साथ हमारा फोन पर सम्पर्क कराया और हम उनके घर उनसे मिलने पहुँच गये। इनसे बहुत कुछ जानकारी प्राप्त की और अगले दिन विश्वविद्यालय मे देखने गये। यद्यपि वहा उस दिन अवकाश था परन्तु इडोलोजी विभाग के अध्यक्ष प्रो० हफ्फ हमारी विशेष प्रार्थना पर अपने कार्यालय मे उपस्थित थे।

मैने श्री चोपडा से यह भी इच्छा प्रकट की थी कि यदि विश्वविद्यालय के विद्वानो से सस्कृत भाषा म ही विचार विनिमय हो तो मुझे विशेष हर्ष एव सुविधा होगी। परन्तु उन्होने बताया कि इन जर्मन विद्वानो मे कोई सस्कृत भाषण का अभ्यस्त नही है। प्रो० हफ्फ अपभ्र श बौद्ध साहित्य के विशेषज्ञ हैं तथा तिब्बती भाषा के भी विद्वान् हैं। इस विश्वविद्यालय म गत १५० वर्षों से इडोलोजी विभाग है, आजकल इसमे पाच अध्यापक हैं। जर्मनी के २१ विश्वविद्यालयो मे से १३ मे इडोलोजी विभाग है और सस्कृत के प्रति विद्यार्थियो म रुचि बढ रही है। आजकल कई बौद्ध ग्रन्थो पर अनुसधान हो रहा है। हमे उन्होने वे ग्रन्थ दिखाये जिनकी पाडुलिपियो की फोटो प्रतिया प्राप्त करने मे भारी मात्रा मे धन खर्च किया गया है। बौद्ध त्रिपिटक की अनेक भाषाओ की प्रतियाँ यहा के पुस्तकालय मे विद्यमान हैं। सस्कृत के ग्रन्थ भी प्राय सभी विषयो के सगृहीत हैं। जर्मनी के अन्य विश्वविद्यालयो एव विद्वानो की चर्चा भी चली जो वेद के सम्बन्ध मे कार्य कर रहे हैं।

जहाँ इन सब बातो को देखकर प्रसन्नता अनुभव हुई, वहाँ मुझे एक बात से आघात भी बहुत लगा। वेद के प्राय सभी भाष्यकारो के भाष्य वहाँ उपलब्ध हैं, परन्तु महर्षि दयानन्द का भाष्य वहा न था। मेरे पूछने पर एक अध्यापक ने कहा कि वेद के समझने के लिये सायन अथवा स्वामी दयानन्द के वेद भाष्य की कोई उपयोगिता नही है। उसने मेरी प्रतिक्रिया का भाप कर यह भी कहा कि चाहे हिन्दू धर्म की दृष्टि से स्वामी दयानन्द के भाष्य का कुछ महत्व हो, परन्तु वेद के समझने की दृष्टि से उसमे कुछ नही है।

फिर मैंने कहा कि इस युग मे यौगिक अर्थ की शैली महर्षि दयानन्द की विशेष देन है, जब कि अन्य सब आधुनिक भाष्य एक ढर्रे पर चलते हैं। तो वह चुप हो गया। मैंने उससे यह भी कहा कि यहा के लोग अपने विद्याव्यसन और ज्ञान-ग्राहकता के रूप मे विख्यात हैं। आपको कम से कम इस युग के महान् विद्वान् महर्षि दयानन्द का वेद-भाष्य अपने पुस्तकालय मे तो रखना चाहिए। आप न पढना चाहे न पढें, परन्तु अन्य कोई जिज्ञासु पढ कर लाभ उठा सकते हैं। इस पर उसने अनुकूल उत्तर देते हुए कहा कि अब हम मगा कर रखेंगे।

यहा इस सब के लिखने का मेरा अभिप्राय यही है कि जर्मनी के विश्वविद्यालयो मे ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य की प्रति तक न हो और वहाँ के अनुसधानकर्ता उसके विषय मे इस प्रकार की हल्की सम्मति रखे यह किसी भी आर्यसमाजी के लिये लज्जा का विषय है। आर्यसमाज का मूल आधार वेद है वेद का पढना-पढाना और सुनना-सुनाना हमारा परम धर्म माना गया है। यह हमारे कार्यक्रम का मुख्य अङ्ग एव लक्ष्य है। परन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है। इस समय आर्यसमाज भी अपने इस लक्ष्य कर्तव्य अथवा धर्म से दूर होता जा रहा है। वेद के अध्ययन के लिये आर्य समाज ने जो सस्थायें खोली थी वे आज हतप्रभ हैं। साधारणतया आर्यों मे भी वेद के स्वाध्याय की रुचि लुप्त हो चुकी है।

एक ओर हम यहा एडी उठा-उठाकर अपने कार्य की डींग मारते नही थकते, दूसरी ओर यह हाल है। केवल राजनैतिक दलो की भाति आत्मविज्ञापन का प्रोपेगैण्डा करके क्षणिक सन्तोष हम प्राप्त कर लें। तो यह और बात है, परन्तु यह तथ्य हमे नही भूलना चाहिये कि वेद प्रचार के रचनात्मक कार्यक्रम की उपेक्षा करके आर्यसमाज कैसे ससार मे अपने अस्तित्व की उपयोगिता जता सकेगा। महर्षि का वेद भाष्य लेकर आर्यसमाज बुद्धिवादी क्षेत्र मे प्रविष्ट हुआ था और अब वहा से वह निकल रहा है। आज देश-विदेश दोनो ही क्षेत्रो मे हम बुद्धिवादी धर्म से दूर होते जा रहे हैं, यह अवस्था सचमुच शोचनीय है। आर्यसमाज के सूत्रधार या तो इस स्थिति की गम्भीरता को भाप कर कोई ठोस कार्यक्रम बनायें, अन्यथा वर्तमान ढर्रे पर चल कर आर्यसमाज की गति भी अन्य सम्प्रदायो जैसी ही हो सकती है। ●●

दिल्ली में श्रद्धानन्द बलिदान जयंती समारोह

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली की ओर से अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द की बलिदान जयन्ती के अवसर पर बलिदान भवन नया बाजार दिल्ली से २५ दिसम्बर को विशाल शोभा यात्रा निकाली गई जिसमे दिल्ली राज्य के आर्य-समाजो तथा आर्य शिक्षण सस्थाओ के अतिरिक्त आर्यसमाज के भारी सख्या में कार्य कर्त्ताओ ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। स्वामी श्रद्धानन्द तथा आर्यसमाज अमर रहे के गगन भेदी जयघोषो से सारा नगर गूज रहा था।

शोभा यात्रा विभिन्न मार्गों से होती हुई गाधी मैदान मे समाप्त हुई जहाँ आर्यसमाज के विद्वान् नेता पूज्य अमर स्वामी जी (पूर्व ठा० प० अमरसिंह जी शास्त्रार्थ महारथी) की अध्यक्षता मे बलिदान जयन्ती समारोह आरम्भ हुआ। स्वामी श्रद्धानन्दजी को श्रद्धाजलि देने वालो मे दिल्ली के मुख्यकार्यकारी पार्षद प्रो० विजयकुमार मलहोत्रा श्री केदारनाथ साहनी प्रि० हरिश्चन्द्र जी प्रो० श्यामराव जी ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री अमर स्वामी जी महाराज ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे कहा कि श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की स्मृति मे दिल्ली मे उपदेशक विद्यालय स्थापित किया जाना चाहिए। आपने मार्मिक शब्दो मे कहा कि आर्यसमाज के नेता आर्यसमाज को पौराणिकता के गढे म धकेल रहे हैं क्योकि वे स्वामी श्रद्धानन्द जी की भाति आर्यसमाज के सिद्धान्तो से परिचित नही है। अत आर्यसमाज तथा सभाओ के अधिकारी विद्वान् तथा चरित्रवान् होने चाहिए।

—केदारसिंह आर्य

आर्य मर्यादा के ऐजेण्ट महानुभावों को सूचना

ऐजेण्ट महानुभावो की सेवा म सूचनार्थ निवेदन है कि आर्यमर्यादा की एक प्रति का मूल्य २० पैसे है परन्तु ऐजन्सी म १५ पैसे प्रति के हिसाब से दिया जावेगा। १० प्रतियो से कम ऐजन्सी स्वीकार नही की जावेगी। अत ऐजण्ट महानुभाव ऐजन्सी के लिये एक मास का अग्रिम धन (रक्षा धन) भेजने की कृपा करें।

—व्यवस्थापक

स्वामी श्रद्धानन्द से

श्री उत्तमचन्द शरर एम०ए०

[यह कविता भी देर मे पहुँचने के कारण श्रद्धानन्द बलिदान अक में न दी जा सकी—इसी कारण अब प्रकाशित की जा रही है।—सम्पादक]

ओ कर्मठ, ओ देश भक्त ओ आर्य जाति के जीवन
तूफानो के तीव्र वेग, ओ सघर्षों के यौवन
धन्य धन्य ओ वेद भक्त सच्चे ईश्वर विश्वासी
विपदाओ म उभर उभर बढने वाले सन्यासी
तेरा जीवन उग्र तपस्या की बल खाती धारा
स्वय चुनौती देकर तू ने मृत्यु को ललकारा
जब जब भी यह प्यारा भारत विपदा ग्रस्त हुआ था
दयानन्द के सैनिक तब तब तू हो व्यग्र उठा था
तेरे शौर्य धैर्य ने बढ कर रुकना कभी न जाना
तू ने गिर देना सीखा पर झुकना कभी न जाना
धन्य धन्य ओ दयानन्द से सेनानी के सैनिक
धन्य धन्य ओ वेद धर्म जाति के सच्चे रक्षक
तेरा साहस हिम गिरि से भी टक्कर ले सकता था
मुट्ठी मे तूफान जकड तू नौका खे सकता था
काश! कभी हम भी तेरी "मर्यादा" पर चल पाते
वेद धर्म के दीपक पर बढते बढ कर जल जाते
यह तेरा बलिदान दिवस हम मे भी जीवन लाता
दयानन्द के पथ पर मरने का अरमान जगाता

श्री भारतेन्द्रनाथ का हुलिया नं० ३

अपराधी कौन ?

(श्री शिवकुमार १५६५ हरध्यानसिंह रोड नई दिल्ली)

सार्वदेशिक साप्ताहिक २२ दिसम्बर ६८ के अंक मे पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी के नाम एक खुला पत्र, आर्य प्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश तथा आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब का हजारो रुपये का गोलमाल करने तथा धोखा देने वाले कथित नटवरलाल श्री भारतेन्द्रनाथ के नाम से प्रकाशित हुआ है, जिसमे उसने पंजाब सभा के वर्तमान अधिकारी प्रो० रामसिंह (प्रधान) श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री (मन्त्री) तथा श्रीरामनाथ भल्ला (कोषाध्यक्ष) पर भिन्न-भिन्न प्रकार के भ्रमपूर्ण तथा मिथ्या लाछन लगा कर आर्य जनता को गुमराह करने की असफल कुचेष्टा की है। श्री भारतेन्द्रनाथ का पूर्व इतिहास तो अब आर्य जनता को भली भाँति पता लग ही गया है, इस सम्बन्ध मे अधिक विस्तार से कुछ अधिक लिखने की आवश्यता नही। मे तो आपको केवल एक अपना अनुभव जो उनके साथ कुछ वर्ष कार्य करते हुए मुझे हुआ है, वह सबके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ।

१ मैं मार्च ६४ मे ७ मई ६८ तक श्री भारतेन्द्रनाथ के सम्पर्क मे रहा। वह तथा मैं एक ही कार्यालय मे (१५ हनुमानरोड, नई दिल्ली) एक साथ कार्य करते थे। इतने दीर्घकाल मे मुझे एक क्षण भी ऐसा याद नही आता कि जब इन्होने कभी सत्य बोला हो अथवा सत्य लिखा भी हो। इनके क्रियाकलापो के महल की बुनियाद धोखा झूठ और फरेब पर आधारित थी। हम सभी कार्यालय के कर्मचारी श्री भारतेन्द्रनाथ की कुटिलता मे सभा अधिकारियो को समय-समय पर सतर्क भी करते रहे परन्तु उदारमना अधिकारियों ने इन्हे सदा क्षमा दान ही दिया, जिसका श्री भारतेन्द्रनाथ ने हमेशा अनुचित लाभ ही उठाया।

२ श्री भारतेन्द्रनाथ सभा के आर्यविद्या परिषद् विभाग मे नियुक्त पद पर थे तब ही मेरा प्रवेश सभा के कार्यालय मे हुआ था। मैने भी कुछ समय तक आर्योदय सम्बन्धी कार्य इनके अन्तर्गत किया उस समय श्री भारतेन्द्रनाथ को धन प्राप्त करने की आज्ञा न थी क्योकि अधिकारियो को शका थी कि वह धन का दुरुपयोग करेगे तथा उसका कोई हिसाब आदि भी नही देगे। इन्होने कभी भी सही हिसाब सभा को नही दिया, हमेशा भ्रान्तपूर्ण तथ्यो से ही अधिकारियो को धोखा देते रहे। सन् ६७ के शेष पत्र में जब आर्योदय को ४३ हजार का घाटा हुआ तब श्री भारतेन्द्रनाथ की पोल खुलनी आरम्भ हुई। उस समय अन्तरग सभा ने अपनी बैठक मे श्री देसराज जी चौधरी को श्री भारतेन्द्रनाथ पर नियन्त्रण रखने के लिये आर्योदय का अधिष्ठाता नियुक्त करने का निश्चय किया। श्री चौधरी साहब अन्य कुछ सस्थाओ के प्रमुख अधिकारी होने के कारण आर्योदय के लिये उतना समय न दे सके, जितना श्री भारतेन्द्रनाथ पर अकुश लगाने के लिये पर्याप्त होता। इस लिये आर्योदय को फिर भारी घाटे मे डालने तथा गोलमाल करने का श्री भारतेन्द्रनाथ को अच्छा मौका मिला।

३ श्री भारतेन्द्रनाथ सभा के किसी भी नियमित कर्मचारी के साथ काय करने का साहस कभी नही कर सके, यदि साहस किया भी तो निभा नही सके। जिसका कारण सभा का प्रत्येक कर्मचारी उनकी गतिविधियो को भली भाँति जानता था तथा वह समय पर सभा अधिकारियो को सूचित कर देता था। वह हमेशा बाहर के व्यक्तियो को (पार्ट टाइम)पर ही आर्योदय का कार्य कराने का सभा से आग्रह करते रहते थे परन्तु फिर भेद खुल जाने के भय से इन्होने आर्योदय का साहित्य रखने का बहाना बना कर सभा-अधिकारियो से करोलबाग सभा भवन मे जहाँ इनका निवास स्थान भी है, एक कमरा साहित्य का स्टाक रखने के लिये लिया। उक्त कमरा देते समय इन्हे स्पष्ट आदेश दिया गया था कि इसमे केवल स्टाक ही रहेगा और आर्योदय का कार्यालय पूर्ववत् १५-हनुमान रोड नई दिल्ली मे ही होगा तथा सभी व्यक्ति (नियमित या पार्ट टाइम) हनुमान् रोड के कार्यालय मे ही कार्य करने आवेगे। परन्तु श्री भारतेन्द्रनाथ की योजना तो उसके विपरीत थी वह तो अपनी धोखेबाजीका सबसे बडा करिश्मा आर्यजगत् को दिखाना चाहते थे। अत उक्त आदेश को रद्दी की टोकरी मे डाल कर वह करोलबाग अपने निवास स्थान पर ही पार्ट टाइम के व्यक्तियो को बुलाने लगे तथा उसी पते पर आर्योदय सम्बन्धी समस्त डाक, मनिआर्डर आदि मगवाने लगे, जब इस बात की सूचना अधिकारियो को दी गई तो क्षमा याचना करते हुए कुछ समय के लिये फिर हनुमान् रोड के कार्यालय मे आने लगे। स्मरण रहे कि सभा ने इन्हें आर्योदय का मुद्रक व प्रकाशक भी बना रखा था। इन्होने एक असफल प्रयास आर्योदय के अपहरण का पहले भी किया था। जब यह अपना कार्यालय करोलबाग मे ले गये तब आर्योदय के मुख्य पृष्ठ पर छपने वाले 'आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का मुख पत्र" नामक शब्द ही हटा दिये। परन्तु यह षड्यन्त्र समय रहते विफल कर दिया गया।

४ अन्त मे सभा की अन्तरग सभा दि० २१-१-६८ मे ला० देसराज जी चौधरी ने आर्योदय के भारी घाटे तथा श्री भारतेन्द्रनाथ के गोलमाल की सारी स्थिति प्रतिनिधियो के सम्मुख रखी। इस पर तुरन्त काबू पाने के लिये सभा मत्री श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री ने अपने पत्र दि० २२-१-६८ तथा १५-२-६८ द्वारा आर्योदय का समस्त हिसाब देने का आदेश दिया। परन्तु श्री भारतेन्द्रनाथ बहाना बनाते रहे कि हिसाब तैयार हो रहा है। हिसाब तैयार न होना था तथा न हुआ। लेकिन श्री भारतेन्द्रनाथ भागने के लिये तैयार जरूर हो गये और इसके लिये वह रास्ता और समय का बडी शीघ्रता से इन्तजार करने लगे। इसके लिये इन्होने एक मास पहले ही पंजाब सभा के विरोधी पक्ष मे शरण मागी, उन्होने इन्हे क्या आश्वासन दिया तथा उसके बदले मे इनसे क्या मागा वह अब स्पष्ट रूप से सबके सामने हैं। सार्वदेशिक सभा ने भी अपने व्यक्तिगत उद्देश्या की पूर्ति के लिये इस तथाकथित "नटवरलाल" को सहायता दी।

५ ५-५-६८ की प्रात को सभा कोषाध्यक्ष श्री रामनाथ जी भल्ला ने श्री भारतेन्द्रनाथ को स्पष्ट चेतावनी दी कि या तो आर्योदय का हिसाब दो अन्यथा पुलिस के सुपुर्द कर दिये जाओगे। "नटवरलाल' का दिन मे तारे दिखाई दे गये, इन्होने तुरन्त भागने की योजना बना ली। वह भागने मे पहले उन सभी प्रमाणो को नष्ट कर देना अथवा अपने साथ ले जाना चाहते थे, जो इनके षड्यन्त्रो का विस्फोट कर सकते थे। इसके लिये इन्होने पहले ही आर्योदय का सारा रिकार्ड धीरे-धीरे अपने घर मे छिपा लिया था शेष रिकार्ड आदि लेने तथा विपक्ष का उनसे शरण प्राप्त करने के बदले सभा उप-कार्यालय का कब्जा दिलवाने ८-५-६८ को प्रात ५ बजे ही १५ हनुमान्रोड पहुँचे परन्तु वहा के रहने वाले कुशलबुद्धि कार्यकर्ताओ ने इनकी योजना असफल कर दी। लेकिन श्री भारतेन्द्रनाथ भागने मे फिर भी सफल हो गये। उस दिन मैं तथा सभा प्रधान प्रो० रामसिह जी उन्हे अपने साथ ला रहे थे। मुझे इनके उस दिन प्रात काल के उपकार्यालय का कब्जा विरोधियो को देने के षड्यन्त्र का पता न था। श्री भारतेन्द्रनाथ का भय था कि उपकार्यालय पहुचने पर तथा भेद खुल जाने पर यह घर वापस जाने के बजाय हवालात मे जावेगे, वह किसी आवश्यक कार्य का बहाना कर रास्ते मे ही टैक्सी से उतर कर भाग गये और आज तक उपकार्यालय मे आने का साहस नही किया। श्री सभा प्रधान जी ने इन्हे अपने पत्र दि० ८-५-६८ द्वारा सभा की सेवा से मुक्त कर दिया। आगे की राम कहानी कि—किस तरह से श्री भारतेन्द्रनाथ ने आर्योदय द्वारा भ्रमपूर्ण तथा मिथ्या-प्रचार किया, यह सबको पता ही है।

६ श्री भारतेन्द्रनाथ ने महात्मा आनन्द स्वामी जी के नाम इस खुले पत्र मे न्याय सभा, सार्वदेशिक सभा तथा अन्य कोर्टों की भ्रमपूर्ण धाराओ की दुहायी देकर अपने को आर्यसमाज का बहुत बडा हितचिन्तक सिद्ध करने की चेष्टा की है। प्रथम तो यह है कि श्री महात्मा जी, सार्वदेशिक सभा की अथवा सार्वदेसिक न्याय सभा की अथवा दुनिया के किसी भी कोर्ट के किसी भी निर्णय की किसी भी धारा से बाधित नही। उनका निर्णय सार्वदेशिक के कहने से नही, आर्य जनता के कहने से होगा। इसके अतिरिक्त श्री भारतेन्द्र द्वारा पजाब सभा के अधिकारियो पर लगाये सभी आरोप नितान्त भ्रमपूर्ण और मिथ्या है। सकटकाल मे अपने नाम से तो क्या, सभा का हिसाब दूसरो के नाम से भी खोलना कोई अपराध नही, यदि उसका दुरुपयोग श्री भारतेन्द्रनाथ जैसे व्यक्तियो द्वारा न हो सके। फिर उक्त एकाउण्ट को तो प्रधान जी के आदेश तथा अन्तरग की स्वीकृति से खोला गया था तथा उसमे से एक नया पैसा भी श्री रामनाथ भल्ला के निजी कार्य मे व्यय नही किया गया, यदि भारतेन्द्रनाथ मे साहस हो तो प्रमाणित करे। उसका सारा हिसाब आज भी हमारे कार्यालय मे मौजूद है। श्री भारतेन्द्रनाथ ने कभी सत्य बोला है, मुझे तो इसमे सदा सदेह ही रहा।

७ आज श्री भारतेन्द्रनाथ जिन लोगो की जय जयकार कर रहे है, उन्हे कुछ दिन पूर्व वह गालिया भी देते थे, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके हाथ का लिखा हुआ पत्र जिस की फोटो कापी हमारे पास है, उसे आप देखेंगे तथा सोचें कि यह

(शेष पृष्ठ १० पर)

एक नैतिक समस्या—

परीक्षा में नकल

(कु० सुशीला आर्या एम० ए० बरली बावरी)

मानव-जीवन स्वय एक बडी परीक्षा-स्थली है। इसमें अन्य अनेक प्रकार की परीक्षाएँ आती रहती हैं। परीक्षाएँ मानव-जीवन को आँकने के लिए कसौटी का काम करती है। इन्हीं परीक्षाओं मे विद्यार्थी जीवन की परीक्षाएँ भी आती हैं जो जीवन की अन्य परीक्षाओं जितनी जटिल तो नही हैं फिर भी उनका महत्त्व विशेषतः वर्तमान युग में इतना बढ गया है कि उनकी उपेक्षा कर या साधारण कहकर नहीं टाला जा सकता। प्रथम तो आज का छात्र विद्यार्थी न रहकर केवल परीक्षार्थी बन गया है अथवा यों कहिए 'प्रमाण पत्रार्थी क्योकि परीक्षा को वह जी भर कर गालियाँ देता है। यदि ऐसा करने पर भी वह टलती नहीं तो नकल के तरीके से उसे धत्ता बताना चाहता है। यो तो इस समय हमारे पाठ्यक्रम में ही विद्या नाम की वस्तु थोड़ी ही रह गई है फिर जितनी है भी उसकी चाह आज के लड़के लड़कियों में से बहुत कम को है। हाँ परीक्षा पास कर प्रमाण-पत्र वे अवश्य लेना चाहते हैं। क्योंकि यह प्रमाण-पत्र शिक्षा वा योग्यता का नही केवल नौकरी प्राप्त करने का साधन-मात्र है। इस बात की चिन्ता हमारे यहाँ परीक्षार्थियों ने करनी छोड़दी है कि केवल प्रमाण पत्र लेकर भी तत्तत्-पदों पर बिना योग्यता के वे कैसे काम चलाएँगे? जो व्यक्ति सुनहरे पठन-काल को नकल मारने के ढग सोचने में खोकर जीवन को धन्य बनाते हैं वे कार्यकाल मे बिना योग्यता के भी काम न निकाल लेंगे यह कौन कह सकता है। सच पूछिए तो ये नकलची परीक्षार्थी नकली जीवन के व्यक्ति बनते हैं। इनका भविष्य अधकारमय है। साथ ही ये देश का भविष्य भी काला करने के लिए स्याही लिए फिरते हैं। परीक्षक सस्थाओं एव अधिकारियों द्वारा नित्य नये उपाय परीक्षाओं मे नकल की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए किए जाते हैं परन्तु ये ऊपरी अधिकारी डाल-डाल हैं तो हमारे विद्यार्थी पात-पात। वास्तव में यह एक शिक्षा संस्थाओं की नहीं अपितु नैतिक समस्या है। इसका सम्बन्ध मनुष्य के चरित्र से है। कड़े से कडा निरीक्षण, अनेक प्रकार के दण्डों की घोषणा, परीक्षाओं का निर्वासन इत्यादि सभी निरोधात्मक उपाय इस विषय में व्यर्थ सिद्ध हुए हैं। अनेक विश्वविद्यालय विद्यालयो तथा परीक्षा-भवनो के सम्बन्धित अधिकारियों की मीटिंगें बुला चुके हैं। परीक्षा नियमो पर समय-समय पर नये अध्यादेश जारी होते हैं किन्तु ये सब अस्थायी उपचार हैं। हमारा विचार तो यह है कि इस रोग का असली इलाज हमारे घरों मे होगा और इसकी चिकित्सक हैं हमारी गृहदेवियाँ।

यह बात सुनने में कुछ अटपटी अवश्य लगती होगी किन्तु इसमें तथ्य है और है वास्तविकता। इसमें तो कोई सदेह नही कि नकल एक चोरी है। यद्यपि कुछ परीक्षा-केन्द्रों में खुले आम व्यवस्थापक तथा निरीक्षक भी नकलें करवाते देखे सुने गए हैं और यह नकल महात्मा गाँधी जी के जीवन की उस घटना की भान्ति ही नही जिसमें अध्यापक बूट की ठोकर या अन्य किसी संकेत से पास वाले परीक्षार्थी की नकल करने के लिए कहता है। समय की प्रगति के साथ नकल के ढंगों ने भी उन्नति की है। आज नकल केवल परीक्षा के कमरे की सामग्री अथवा वहाँ वर्तमान व्यक्तियों के ही बीच की वस्तु नही रही अपितु नकल भेजी जाती है, और नकल पकड़ाने या पहुँचाने के लिए व्यक्ति विशेषरूप से नियुक्त होने से और इस प्रक्रिया में लिखित कागजों के पुर्जों के साथ-साथ छपी पुस्तकों को फाड़कर ज्यों की त्यों सहायतार्थ प्रयुक्त किया जाने लगा है। कुछ अभिभावक इस कार्य के लिए अपने विशेष नौकर-चाकर अथवा अन्य व्यक्ति के लिए धन का प्रयोग करते हैं। कई माता-पिता इस प्रकार की रियायत की माँग बड़े ठाठ-बाट से करते हैं। इसलिए नकल को चोरी कहने से इन्कार किया जाने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं।

जो भी हो नकल विद्यार्थी के आलस्य पिछड़ेपन और अयोग्यता का जीवित प्रमाण है। यदि एक विद्यार्थी पढ़ाई किए बिना भी इस कागजी नाव से परीक्षा-सागर को पार कर जाता है तो अन्य परिश्रमी परीक्षार्थियों को ईर्ष्या होना अनिवार्य है और अगली बार वे भी परिश्रम से किनारा करने लगते हैं। इस प्रकार 'अन्धेनैव नीयमाना, यथान्धाः' की उक्ति के अनुसार यह दुष्वृत्ति बढ़ती जा रही है। इसे रोकने का यत्न एक आश्चर्य और रोकने वाला व्यक्ति इन परीक्षार्थियों को शत्रुवत् प्रतीत होता है। इन्हें निरीक्षकों के जान तक के ग्राहक बनते देखा जाता है।

जैसा कि हमने पहले भी चर्चा की कि यह प्रवृत्ति किसी भी नियम वा निरीक्षण से काबू में नही आ सकती। माता-पिता का सहयोग शिक्षकों के साथ पूरे वर्ष भर रहने से ही हमारे बालक-बालिकाएँ नियत पढ़ाई करें तभी वे परीक्षा में इस बुराई से बच सकते हैं। केवल उसी समय की कठोरता वा दण्ड व्यर्थ सिद्ध हो रहा है।

सर्वप्रथम माता अपनी सन्तान के हृदय में इस प्रकार की भावना बिठा सकती है कि परीक्षा पास करने के लिए पढ़ना 'नियमित-अध्ययन' अनिवार्य है। परीक्षा में नकल एक सामान्य सी रास्ता पार करने वाली बात न समझ ली जाए। यही परीक्षाएँ भावी जीवन की नीव है। सामान्य विषयो की वर्तमान ससार में वाञ्छित योग्यता भी इनसे होती है तथा चरित्र के अन्य अनेक गुण भी आके जाते हैं। बच्चों की अनुशासन-भावना, परिश्रम, कर्त्तव्य-परायणता यही तो भावी जीवन के लिए मानदण्ड हैं। नकलची विद्यार्थी कभी असली नागरिक नही बन सकता। दूसरी ओर जो माता बचपन से ही अध्यापकों की डाँट-फटकार अथवा परिश्रम करने की प्रेरणा पर बच्चों को उलटे मार्ग पर चलाती और कर देती है—हूँ। अध्यापक को इससे क्या? हमारी बात खूब चलती है हम तुम्हें परीक्षा मे पास करा देंगे इत्यादि २।

यह ठीक है सभी माताएँ स्पष्ट रूप से न पढने वाले बच्चों का बुराई में पक्ष नहीं लेतीं। कुछ परोक्ष रूप से न पढ़ने वाले बच्चो का समर्थन करती हैं। कुछ ऐसा समझती तो बुरा हैं परन्तु यह सोच है कि जब सभी परीक्षार्थी ऐसा कहते हैं हम भी क्यों न बहती गगा में हाथ धो लें बच्चो को छुट्टी दे देती हैं और यही बच्चें बड़े होकर ऊँची-से-ऊँची परीक्षाओ मे भी इन अनुचित उपायो का अवलम्बन करने में सकुचाते नही चाहे ये शीघ्र ही अध्यापक पद को सुशोभित करने वाले अध्यापक प्रशिक्षण के विद्यार्थी ही क्यों न हो। यही आगे चलकर अपने निरीक्षण काल में परीक्षार्थियो को नकल करने से किस मुह से रोकेंगे, यह विचारणीय है। अतः इस प्रश्न को गौण समझकर उपेक्षित नही कर देना चाहिए। अपितु घरो से श्री गणेश करके शिक्षकों के सहयोग से इस प्रवृत्ति पर पूर्ण-विराम लगाने के मार्ग पर पग बढ़ाना चाहिए अन्यथा हमारी शिक्षा शून्य बनकर रह जाएगी। ●

(पृष्ठ २ का शेष)

प्रकृति वर्णन के प्रति भी कवियो ने अपनी रुचि का प्रदर्शन किया है। श्री ज्ञानचन्द त्यागी ने गगा का अपह्नुति अलकार के द्वारा वर्णन किया है—

जल नैतच्छुभ्र जग शिशुकृतेऽय स्तनरस-
स्तटे नैते किन्तु प्रकृतिरमणीय भुजयुगम्।
दुकूलं शीतांशुद्युतिधवलमेतन्न पुलिन
हरेणोढ़ा गङ्गा भुवनजननीय न हि नदी ॥[1]

इसी प्रकार पं० धर्मदेव वेदवाचस्पति ने भी 'तारकितं नभः' शीर्षक कविता लिखकर प्रकृति के अनिंद्य सौन्दर्य के प्रति अपनी कमनीय रुचि का परिचय दिया है। शब्द सौष्ठव और कल्पना-वैभव की दृष्टि से यह लघु कविता विशेष रूप से उल्लेखनीय है—प्रफुल्लमेतद् कुमुदैः सरो वा कार्पासिकेदारमिद नु जिष्णोः।
सहस्र चक्षुः किमय बिडौजा. किं वा समुद्गीर्णमणिः समुद्रः ॥
सनाथिता वा बकुलैर्नदी स्याद् चित्राम्बरागुण्ठित सुन्दरी वा।
किं यत्र हहो विविधैर्विकल्पैः सुधांशुमत्तारकितं नभः स्याद् ॥[2]

प्रकृति के पुण्यक्रोड़ में बसा गुरुकुल कागड़ी अपने स्नातक कवियों के हृदय में श्रद्धा और भक्ति के पूत भावों का सचार करता है। श्री जनमेजय विद्यालंकार ने 'गुरुकुल मातु स्मरणम्' लिखकर अपने गुरुकुल वास के विगत दिनों को ही पुनः स्मरण किया है—

पुण्यान् प्रभातान् विमलाश्च सध्याः दिश प्रसन्ना विदिशश्च रम्याः।
तांस्ताश्च मुग्धान् महत. प्रमोदान् शक्नोमि विस्मर्तुमहेन किञ्चित् ॥[3]

पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने भी 'वन्देऽहं कुलमातरम्'[4] शीर्षक एक लघु कविता लिखकर गुरुकुल माता के प्रति अपनी भक्ति प्रणत श्रद्धाञ्जलि अर्पित की है।

अन्य स्फुट विषयों पर जो कवितायें लिखी गई हैं उनमे श्री विश्वनाथ केशव छात्रे लिखित 'शिक्षा समस्या'[4] वासुदेव द्विवेदी लिखित 'सुरभारती संदेशः[6] स्वामिनाथ पाण्डेय लिखित पुरुषार्थप्रभेदाः[7] प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड लिखित 'शिवरात्रेः सुसन्देशः'[8] आदि उल्लेखनीय हैं। ●

---

१. गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन चैत्र २०२०।

२. गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०१६। ३. गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन चैत्र २०२०। ४. गुरुकुल पत्रिका चैत्र २०१६। ५. गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन चैत्र २०२०। ६. गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन चैत्र २०२०। ७. गुरुकुल पत्रिका मार्गशीर्ष २०२१। ८. गुरुकुल पत्रिका माघ २०१६।

मेघ की तरह बरसने वाला

(श्री प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति, उपकुलपति गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी)

[यद्यपि यह लेख देर मे पहुँचने के कारण श्रद्धानन्द बलिदान-अक में स्थान न पा सका था, परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के जीवन कार्यों पर एक तर्क और उत्तम ढग से इस मे विचार किया गया है, अत हम इस को प्रकाशित करके आर्य जनता को विद्वान् लेखक के सुलझे और गम्भीर शान्त विचारो से अवगत कराना आवश्यक समझते हैं ।—सम्पादक]

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज एक ऐसे महापुरुष थे जो किसी भी देश और जाति मे कभी सहस्त्राब्दियो के बाद ही उत्पन्न होते हैं। किसी भी देश मे जो बड़े से बड़े महापुरुष हो चुके हैं। स्वामी जी महाराज उनके समकक्ष ही महापुरुष थे। ससार के महापुरुषो मे जो ऊंचे गुण पाये जाते हैं वे सब स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज में भरपूर मात्रा मे थे। उनके जीवन मे आत्मसयम था, तप, सादगी और कष्ट सहिष्णुता थी निर्भयता थी, आत्मत्याग था, परोपकार की भावना थी। जनता के कल्याण के लिए अपना सब कुछ निछावर कर देने की भावना थी और सकट के समय जनता के हित मे अपने प्राणो का भी उत्सर्ग करने के लिए उद्यत रहने की तीव्र भावना थी। उनमे बहुत ऊचे दर्जे की नि स्वार्थपरता थी। वे जो कुछ करते थे, उसमे उनका अपना कोई स्वार्थ नही रहता था। वे सब कुछ जनता की भलाई के लिए ही करते थे।

आर्यसमाज मे उनकी कोटि का कोई दूसरा नेता नही हुआ। ऋषिदयानन्द में और उनके सिद्धान्तो मे उनकी अगाध श्रद्धा थी। उन्होने अपना सारा जीवन ऋषिदयानन्द से सम्पर्क होने के पश्चात् ऋषि के सिद्धान्तो के अनुसार ही बिताया। वैदिकशास्त्रो के अनुसार ऋषिदयानन्द ने जीवन के बिताने की जिन मर्यादाओ का उपदेश दिया था स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अपना सम्पूर्ण जीवन पूर्णरूप से उन्ही मर्यादाओ के अनुसार बिताया। स्वामी जी महाराज एक इस प्रकार के नेता थे जिनके मन, वचन और कर्म मे पूर्ण एकता पाई जाती थी। वे जो सोचते थे और जो ठीक समझते थे वही कहते थे। और जो कुछ सोचते और कहते थे, वही करते थे। उन्होने दूसरो को जो बातें कही उन्हें वे पहले स्वय अपने जीवन मे लाते थे। इसीलिए आर्यजनता में स्वामी के प्रति महान् आदर की भावना थी और उनके कथनानुसार कार्य करने की उत्कठा थी। उनके आदेश पर आर्यजनता कुछ भी करने के लिए उद्यत रहती थी। वैदिकधर्म के प्रचार, गुरुकुल की स्थापना, शुद्धि आन्दोलन, और राजनैतिक क्षेत्र मे आर्यसमाज के अधिकारो की रक्षा के लिए स्वामी जी महाराज ने आर्यजनता से जब जो कुछ मागा, उसने स्वामी जी को सदा वह सब कुछ दिया। जब तक स्वामी जी महाराज जीवित रहे अपने अपूर्व गुणो के कारण आर्यजनता के वे एकछत्र नेता रहे। आर्यसमाज के तो वे एकछत्र नेता थे ही, आर्यसमाज से बाहर के कांग्रेस और हिन्दू महासभा आदि क्षेत्रो मे भी वे बहुत ऊँचा स्थान रखतेथे।

वेद मे एक स्थान पर सन्यासी के गुणो का लेख करते हुए यह कहा गया है कि उसे मीढ्वान् होना चाहिए। मीढ्वान् शब्द का अर्थ मेघ की तरह बरसने वाला होता है। जिस व्यक्ति में जनता के कल्याण के लिए मेघ की तरह बरसने की भावना हो, जो अपनी सब शक्तियो, योग्यताओ और सम्पत्ति को जनता के कल्याण के लिए इस तरह बहा देने के लिए इस तरह बरसा देने के लिए उद्यत रहता हो, जैसे कि मेघ वर्षा ऋतु मे अपने में भरे हुए सम्पूर्ण जल को जनता के कल्याण के लिए धरती माता की छाती पर बरसा देता है। जब मैं स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के आसानी से न गिने जा सकने वाले गुणो पर दृष्टिपात किया करता हूं तो मुझे उनके गुणो मे से उनका वेद मे वर्णित सन्यासी के इस गुण की ओर भी मेरा ध्यान बलात् चला जाया करता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज सचमुच एक मेघ थे। उनके पास जो कुछ था, उसे वे आर्यजनता के कल्याण के लिए निरन्तर बरसाते रहे। जब स्वामी जी महाराज का ऋषिदयानन्द जी से साक्षात्कार हुआ और फिर जब उन्होने ऋषिदयानन्द के ग्रन्थो का स्वाध्याय किया तो उनमे यह विचार जागृत हुआ कि जब तक ऋषिदयानन्द के विचारो को नगर-नगर और गाँव-गाव मे न पहुँचा दिया जायेगा, जब तक ऋषि के प्रचारो को नगरो और गावो के बाजारो और गलियो मे न पहुँचा दिया जायेगा, जबतक बाजारो और गलियो मे बसे घर-घर तक न पहुचादिया जायेगा, तब तक भारतवर्ष का कल्याण होने वाला नही है। यह विचार जागृत होते ही स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, ऋषिदयानन्द के विचारो का प्रचार करने के लिए आर्यसमाज के प्रचार-क्षेत्र में पूरी शक्ति के साथ कूद पडे। घूम घूम कर आर्यसमाजो के हजारो उत्सव कराए, उनमें स्वय भारी भाग लिया। आर्यसमाजो के उत्सवो से पहले जो नगरकीर्तन होते थे, उनमें भी स्वामी जी महाराज शामिल होते थे, खड़ताल बजाते हुए और भजन गाते हुए वे अपने सहयोगियो के साथ नगर कीर्तन के जलूस का सचालन करते थे और कई-कई घटे तक नगरवासियो के मोहल्लो और गली-कूचा मे जाकर उनके दरवाजो तक वैदिकधर्म के सदेश को पहुँचाते थे। बाजारो और गलियो मे, चौराहो पर स्टूल पर खड़े होकर जनता को ऋषिदयानन्द का महा सदेश सुनाते थे। इस प्रकार अपनी योग्यता, प्रतिभा और समय का जनता के कल्याण के लिए पूर्णदान करते रहे।

आगे चलकर उनके मन मे विचार उत्पन्न हुआ कि इस प्रकार के केवल मौखिक प्रचार से ही वैदिकधर्म का जैसा प्रचार होना चाहिये, वैसा प्रचार नही हो सकेगा। उन्होने अनुभव किया कि जब तक बालको की शिक्षा मे सुधार नहीं किया जायगा और बालको का वैदिकधर्म की शिक्षाओ मे ढालकर उन्हें सच्चे वैदिकधर्मी नागरिक नहीं बनाया जायगा, तब तक देश का कल्याण नही हो सकेगा। उनके मन मे आया, ऋषिदयानन्द ने अपने ग्रन्थो मे जिस गुरुकुल शिक्षा पद्धति का वर्णन किया है, उसका पुन उद्धार और प्रचार किया जाना चाहिए। यह विचार आते ही उन्होने गुरुकुल खोलने का निश्चय किया। आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब से गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव पास कराया। सभा ने यह प्रस्ताव स्वीकार करते हुए शर्त लगाई कि स्वामी जी महाराज पहले इस काम के लिए ३० हजार रुपये एकत्र कर लें, तदनन्तर ही गुरुकुल खोला जाए। उस समय ३० हजार रुपया एकत्र करना उससे भी अधिक कठिन था जितना कि आज कल ३० लाख रुपया एकत्र करना कठिन होता है। स्वामी जी महाराज ने व्रत लिया कि जब तक वे ३० हजार रुपया एकत्र नहीं कर लेंगे तब तक वे अपने घर मे पैर नही रखेंग और वे धन सग्रह के कार्य मे जुट पड़े। जब वह बाहर मे अपने नगर जालधर मे आते थे तो अपने घर मे न ठहर कर वहा के आर्यसमाज मदिर मे ठहरा करते थे। उस जमाने मे यह ३० हजार रुपया एकत्र करने मे स्वामी जी महाराज का लगभग ६ मास लग। जब यह भारी राशि एकत्र हो गई तभी स्वामी जी ने अपने घर मे प्रवेश किया। स्वामी जी महाराज इतने दृढ निश्चयी थे। गुरुकुल के लिए धन सग्रहार्थ देश के नगर-नगर मे घूमते हुए वहाँ के लोगो को ऋषिदयानन्द और वैदिकधर्म के सदेश सुनाने का अपना पुराना कार्यक्रम भी जारी रखा और इस प्रकार गुरुकुल के लिए धनसग्रह करने के महान् उद्देश्य मे अपना सारा समय और सारी शक्ति बहा दी। जब गुरुकुल खुलने का समय आया तो प्रश्न यह उत्पन्न हुआ कि इस प्रकार के गुरुकुल मे जिसके बारे मे कोई कुछ भी नही जानता, अपने लड़को को कौन दाखिल करेगा? स्वामी जी ने गुरुकुल की स्थापना के विरोध मे रखी जाने वाली इस शका का उत्तर यह कहकर दिया कि गुरुकुल मे मेरे दोनो बालक प्रविष्ट होगे और उसके बाद और लड़के भी गुरुकुल मे दाखिल होने के लिए आने लगेंगे और यही हुआ। गुरुकुल शुरू हो जाने पर स्वामी जी को उसके लिए बालको की कमी नही रही। गुरुकुल के प्रथम स्नातक उनके सुपुत्र श्री हरिश्चन्द्र जी विद्यालकार और श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति हुए और उसके बाद गुरुकुल मे प्रविष्ट होने वाले बालको का तथा वहाँ से शिक्षा समाप्त करके आने वाले स्नातको का ताता लग गया।

उस समय बहुत से आर्यभाई स्वामीजी द्वारा गुरुकुल की स्थापना के बहुत विरोधी थे। वे स्वामी की और गुरुकुल की समालोचना करते रहते थे और उनके दोष दिखाते रहते थे। लोगो ने यह कहना शुरू किया कि उन्होने अपने लड़को को गुरुकुल मे दाखिल कर दिया तो क्या हुआ। स्वामी जी की तो अपनी कोठी है, छापाखाना चल रहा है, कारखानो मे उनके शेयर हैं वकालत से उनके पास पुष्कल धन जमा है, स्नातक होने पर उनके पुत्रो को तो यह सारी सम्पत्ति मिल जायेगी और उन्हें जीवन निर्वाह मे कोई कठिनाई नही होगी और दूसरो के लड़के गुरुकुल की निरुपयोगी शिक्षा प्राप्त करने के बाद जीवन कैसे चलायेंग? उनके और गुरुकुल के विरोध मे विरोधियो द्वारा उठाई गयी इस शका का उत्तर स्वामी जी महाराज ने यह दिया कि अपने दोनो पुत्रो से परामर्श करके गुरुकुल के एक उत्सव पर उन्होने यह घोषणा कर दी कि मैं अपनी कोठी और अपना छापाखाना गुरुकुल कागड़ी को दान करता हूँ। उनकी इस घोषणा को सुनते ही मण्डप मे बैठी हुई विशाल जनता स्वामी जी की प्रशसा मे ताली बजाती हुई भावावेश से विह्वल हो उठी थी। गुरुकुल के विरोध में उठाई गई विरोधियो की इस आवाज को स्वामी जी महाराज ने अपने इस प्रकार के अद्वितीय त्याग के द्वारा शात किया था और इस प्रकार गुरुकुल की रक्षा मे अपनी सारी सम्पत्ति को इस तरह बहा दिया था जैसे बादल वर्षा मे अपने पानी को बहा देता है। गुरुकुल के सचालन के भारी कार्य मे स्वामी जी महाराज अपने समय-समय,

(शेष पृष्ठ ८ पर)

मेघ की तरह……

(पृष्ठ ७ का शेष)

र सम्पूर्ण योग्यता, सारी शक्ति और पूरी प्रतिभा का दान तो करते ही रहते थे और अपनी इन शक्तियो को भी गुरुकुल के लिए बादल की तरह बहाते रहते थे।

आगे चलकर स्वामी जी महाराज ने गुरुकुल से हटकर समाज सुधार और राजनीति के विस्तृत क्षेत्र में कार्य करने का निश्चय किया। आर्यसमाज के क्षेत्र में स्वामी जी की जैसी प्रतिष्ठा और मान्यता थी थोड़े ही समय में स्वामी जी की वैसी ही मान्यता और प्रतिष्ठा राजनीति और कांग्रेस के क्षेत्र मे भी हो गई। १९१९ में मार्शल ला के दिनों मे स्वामी जी महाराज ने पजाब में बड़ा भारी राजनैतिक कार्य किया। गवर्नर ओडायर और जनरल डायर के जलियां वाला बाग के नृशंस हत्याकांड जैसे घोर अत्याचारों से पीड़ित और सहमी हुई पंजाब की जनता को स्वामी जी ने घूम घूम कर ढाडस बधाया और उसके अधिकारों के लिए आवाज बुलन्द की। अपनी इन सेवाओं के कारण वे १९१९ को अमृतसर में होने वाली कांग्रेस के प्रबन्ध का सारा कार्यभार स्वामी जी को सौंपा गया और उन्हें कांग्रेस के उस अधिवेशन का स्वागताध्यक्ष बनाया गया। उस अधिवेशन मे स्वामी जी ने अपना स्वागत भाषण कांग्रेस के इतिहास मे सर्वप्रथम बार हिन्दी मे दिया। उनके भाषण और कांग्रेस के अधिवेशन को उनकी प्रबन्ध पटुता से राजनैतिक क्षेत्र मे उनकी ख्याति और प्रसिद्धि चरम सीमा पर जा पहुँची थी। आगे चलकर रोलेट एक्ट के विरुद्ध आन्दोलन के प्रसग में स्वामी जी महाराज ने दिल्ली मे बड़ा भारी कार्य किया और कुछ दिनों के लिए वे दिल्ली के बिना छत्र के सम्राट् से हो गये थे। उन दिनों दिल्ली मे उनकी आज्ञा राजा की आज्ञा की तरह चलती थी। स्वामी जी ने उसी सिलसिले मे एक दिन दिल्ली के चादनी चौक में एक विशाल जलूस निकाला। ब्रिटिश सरकार ने जलूसों पर प्रतिबन्ध लगा रखा था। स्वामी जी ने अधिकारियो से कह दिया था कि उनका जलूस अवश्य निकलेगा परन्तु अधिकारी निश्चिन्त रहे, जलूस कोई गड़बड़ हिसात्मक कार्यवाही नही करेगा। सरकार ने जलूस को रोकने के लिए सैनिको की एक बड़ी संख्या भेजी और इन सैनिको ने स्वामी जी से कहा कि तुम इस जलूस को खत्म करो नही तो गोली मार देगे। स्वामी जी ने अपनी छाती खोलकर निर्भीक भाव से उत्तर दिया कि जलूस नही रुकेगा। यह मेरी छाती खुली है, चाहे तुम गोली मार दो, चाहे संगीन भोक दो। गोरखा सिपाही स्वामी जी की छाती पर सगीन मारने ही वाला था कि टुकड़ी का कमाण्डर अग्रेज अफसर लपक कर आगे आया और उसने गोरखे सिपाही को धकेल कर पीछे किया। इस प्रकार राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने के अपने दिनों में स्वामी जी महाराज देश की स्वाधीनता के लिए अपने रुधिर को प्रवाहित करने के लिए चांदनी चौक मे छाती खोलकर खड़े हो गये थे।

फिर कुछ आगे चलकर हिन्दू जाति पर विधर्मियो की ओर से विशेष कर मुसलमान भाइयों की ओर से बड़े प्रहार हो रहे थे। सब उपायों से मुसलमान नेता हिन्दू जाति को क्षीण करने और उसकी संख्या कम करने में लगे हुए थे। मुसलमानों ने तबलीग का आन्दोलन चला रखा था। इस आन्दोलन के द्वारा सभी तरह के हथकंडों को अपना कर हिन्दू बालकों, स्त्रियों और पुरुषों को बहका कर मुसलमान बनाने का प्रयत्न किया जाता था और इस प्रकार हिन्दुओं की संख्या कम करने की जबरदस्त कोशिश की जाती थी। हिन्दुओ की इस दयनीय स्थिति को देखकर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज आगे आये और मुसलमानों को तबलीग के मुकाबले में शुद्धि का आन्दोलन चलाया और मुसलमानों को हिन्दू धर्म में लाने का प्रोग्राम चालू किया। इसके साथ ही हिन्दुओं को मजबूत बनाने के लिए हिन्दू संगठन आन्दोलन का भी प्रारम्भ किया। इस कार्य मे भी स्वामी जी महाराज अपनी सारी शक्ति के साथ कूद पड़े। यह कार्य करते हुए स्वामी जी महाराज ने किसी कष्ट को कष्ट नहीं गिना और उसके लिए बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने के लिए उद्यत रहे। अपना पूरा समय उन्होंने इस कार्य में लगाया। अपनी सारी योग्यता और शक्ति इस कार्य के लिए अर्पित कर दी थी। इस कार्य के लिए उन्होने लाखो रुपया एकत्र किया और उस धन को शुद्धि आदोलन और हिन्दू सगठन को सफल बनाने के लिए पानी की तरह बहा दिया जैसे कि बादल अपने पानी को बरसा दिया करता है। स्वामी जी के इन आन्दोलनो का मुसलमानो की ओर से घोर विरोध हुआ जिसके कारण कांग्रेस ने भी उनका घोर विरोध किया। गाधी जी तक स्वामी जी का विरोध करने लगे। स्वामी जी अपने निश्चय के पक्के और अत्यन्त साहसी और निर्भय व्यक्ति थे उन्होंने मुसलमानों, कांग्रेस और गान्धी जी के इस विरोध की तनिक भी परवाह नही की और वे अपना शुद्धि और संगठन का कार्य और भी तीव्र गति से करने लगे। दिल्ली में कांग्रेस और गान्धी जी की प्रेरणा से एक Unity Conference बुलाई गई, उसमें स्वामीजी द्वारा चलाए गए शुद्धि आन्दोलन की चर्चा हुई और कांग्रेस नेताओं ने स्वामी जी से आग्रह किया कि वे शुद्धि आन्दोलन को बन्द कर दे। स्वामी जी महाराज ने कहा कि जैसे मुसलमानो को अधिकार है कि वे हिन्दुओ को मुसलमान बना ले वैसे ही हम आर्यसमाजियो को अधिकार है कि मुसलमानो को हिन्दू बना ले। मुसलमानों को तबलीग का कार्यक्रम बन्द करने को क्यो नही कहा जाता है? हमें ही शुद्धि आन्दोलन बन्द करने को क्यो कहा जाता है? यदि स्वराज्य प्राप्ति के आन्दोलन में हिन्दू मुसलमानो की एकता आवश्यक समझी जाती है तो मेरी यह माग है कि मुसलमान तबलीग का आन्दोलन बन्द कर द। मैं शुद्धि का आन्दोलन बन्द करा देता हूँ। मुसलमान और कांग्रेस इसके लिए तैयार नही हुए और स्वामी जी ने भी अपना शुद्धि का आन्दोलन बन्द नही किया।

मुसलमानों में स्वामी जी का विरोध बढ़ता गया। १९२६ के दिसम्बर में स्वामी जी महाराज निमोनिया से रोगी हो गए। डाक्टरों की चिकित्सा से स्वामी जी का रोग शान्त हुआ और वे धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ करने लगे। इसी बीच २३ दिसम्बर को अब्दुलरशीद नाम का एक मुसलमान घातक स्वामी जी के डेरे पर पहुँचा और स्वामी जी के सेवकों से जाकर कहने लगा कि मैं स्वामी जी से मिलना चाहता हूँ। मुझे कुछ शकायें हैं मैं उन्हें दूर करके हिन्दू होना चाहता हूँ। उनके सेवकों ने उसे रोकना चाहा और कहा कि स्वामी जी स्वस्थ हो जायेंगे तब वह पुनः आने का कष्ट करे। स्वामी जी ने इस चर्चा को सुन लिया और अपने सेवको से कहा कि इस जिज्ञासु को मेरे पास आने दो। अब्दुलरशीद स्वामी जी के कमरे में गया। उसने स्वामी जी से पीने के लिए पानी मागा। स्वामी जी ने सेवक से आवाज देकर उसे पानी पिलवाया। उसके पानी पी चुकने पर स्वामी जी ने उससे पूछा कि कहो भाई तुम क्या पूछना चाहते हो, उसी समय घातक ने अपनी जेब से पिस्तौल निकाली और स्वाजी जी की छाती पर दनादन गोलियां चला दी। स्वामी जी की विशाल छाती से उनका उष्ण रक्त झरने की तरह बह निकला और इस प्रकार जो महान् सन्यासी आर्यजाति के कल्याण के लिए अपने समय, अपनी योग्यता, अपनी शक्ति, अपनी प्रतिमा और अपनी सम्पत्ति की वर्षा करता रहा और अन्त में अपनी उसी प्यारी आर्य जाति और उसके प्यारे धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए अपने प्राणों और रुधिर को भी वैसे ही बरसा दिया जैसे बादल अपने पानी को बरसाता रहता है।

इस प्रकार जब हम स्वामी जी के महान् जीवन का अध्ययन करते हैं तो हम देखते हैं कि वे वेद के आदर्शों पर चलने वाले एक सच्चे संन्यासी थे और उनके पास जो कुछ भी होता था उसे आर्यजाति, आर्यधर्म और आर्यसंस्कृति की रक्षा और प्रचार के लिए बादल की तरह बरसाते रहते थे। क्या हम स्वामी श्रद्धानन्द के अनुयायी ऋषि दयानन्द, वैदिक धर्म और आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार के लिए और उनका गौरव बढ़ाने के लिए स्वामी जी के चरणचिह्नों पर चलते हुए उनकी बादल की तरह अपना सब कुछ बरसा देने की भावना को सीखेंगे? ●

आर्यमर्यादा सिखा दो ●

पग धरो धरा पर, पर आर्यमर्यादा में हो।
न उगाओ पन्थ में काँटे नुकीले, ऋजु पन्थ गहो।१।

सुविचार विचार दो, मात्र मानव को उबार दो।
सतत वैमनस्य में फँसे कहीं, यह देश न विचार दो।२।

शीर्षस्थ पद पर चढ़े, इतने बढ़े बढ़ते गये तुम।
फल मिले क्या ईश जाने, यदि सन्मार्ग से हटते गये तुम।३।

अरे ये तरी, सठ-बन्ध पर कैसे लगेगी।
चालक ही इस नाव के, जब छिद्र करने को तुले हैं।४।

कटि कस उठो ऐ नौजवानो, ये पद-लोलुपता मिटा दो।
सेवा-धर्म परम गहन यह आर्यमर्यादा सिखा दो।५।

● इन्दु शास्त्री

"घट-घट व्यापक ओ३म्"

(श्री सुरेशचन्द्र वेदालंकार एम० ए० एल० टी० डी० वी० कालिज, गोरखपुर)

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः
समाभ्यः । (ईशोपनिषद् ८ म०)

भूल सुधार

श्रद्धानन्द बलिदान-अंक में पं० सुरेशचन्द्र वेदालंकार जी का लेख छपा है। उस लेख के साथ किसी अन्य सज्जन का ब्लाक छप गया। इसका हमें खेद है।

—व्यवस्थापक



इस मन्त्र का अर्थ है जो ब्रह्म (शुक्र) शीघ्रकारी, तेजस्वी सर्वशक्तिमान्, (अकायम्) कारण, सूक्ष्म एवं स्थूल शरीरो से रहित (अव्रणम्) शारीरिक विकार रहित (अस्नाविरम्) नस और नाडी के बन्धन मे न आने वाला (शुद्धम्) अविद्यादि दोषो से रहित, सदा पवित्र (अपापविद्धम्) पाप ससर्ग से सदा पृथक् (कवि) सर्वज्ञ (मनीषी) अन्तर्यामी (परिभू) दुष्टो का तिरस्कार करने वाला या सर्वोपरि वर्तमान (स्वयभू) स्वयसिद्ध अर्थात् स्वसत्त मे परानपेक्ष, अनादि-स्वरूप अर्थात् जिसकी सयोग से उत्पत्ति, विभाग से नाश, माता-पिता, गर्भवास, जन्मवृद्धि, ह्रास, मरण कभी नही होते वह 'ओ३म्' (परिअगाद) सर्वत्र व्यापक है, घट-घट मे समाया हुआ है। (स) वही परमेश्वर (शाश्वतीभ्य समाभ्य (नित्य जीवरूप प्रजाओ को (याथातथ्यत) ठीक-ठीक रीति से (अर्थात् व्यदधात्) वेद द्वारा सब पदार्थों को देता है अथवा कर्मफल देता है।

यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय ईशोपनिषद् के नाम से विख्यात है। [परन्तु दोनो के मन्त्रो मे भेद है और एक मन्त्र मे वेद के पाठ से उपनिषद् का अपना पाठ भिन्न है। सम्पादक] इस उपनिषद् मे जीवन बिताने का मार्ग बताते हुए, शरीर की नश्वरता, आत्मा की अमरता और आत्मा को परमात्मा के समीप ले जाने के लिए कर्म का उपदेश दिया है। गीता का कर्मवाद इसी उपनिषद् की देन है। इस मन्त्र मे ईश्वर की सर्वव्यापकता एव अन्य गुणो का वर्णन किया है और आत्मरक्षा के लिए उसकी उपासना का वर्णन किया गया है।

ईश्वर के असख्य नाम हैं। उनमे एक नाम 'ओ३म्' है इस उपनिषद् के एक मन्त्र मे कहा है कि हे जीवात्मा तू ओ३म् का स्मरण कर। 'ओ३म् क्रतो स्मर'। ओ३म् शब्द का अर्थ है 'अवतीति ओ३म्' अर्थात् जो मनुष्य की, प्राणियो की, सभी पशुपक्षियो की रक्षा करता है उसे 'ओ३म्' कहते हैं। परमेश्वर हमारी रक्षा कर रहा है। यह भावना हे जो हमे प्रभु का स्मरण करते हुए याद रखनी चाहिए। इस ससार मे जिसे अवमान सताता है, जो अपने आप को तुच्छ समझ रहा है, जिसे अपने पतन से निराशा है जिसे विषाद और अवसाद घेरे हुए है वह भी परमेश्वर के 'ओ३म्' नाम की उपासना से सुख और शाति प्राप्त कर सकता है। यह प्रभु विश्व के अणु-अणु को तोडता है, तोडकर जोडता है। यह विश्व का निर्माता प्राणी-प्राणी को जीवन दे रहा है। अणु-अणु को गति दे रहा है। जगल के फूलो मे किस्म-किस्म के रग भर रहा है। समुद्र के गहरे तल मे विचरने वाले जलचरो को भी भोजन दे रहा है। इस सृष्टि के कर्ता को अपनी सृष्टि के अणु-अणु का बोध है। मनुष्य तो उस सृष्टिकर्ता की सर्वश्रेष्ठ रचना है फिर निराशा कैसी ? हतोत्साह क्या ? विषाद और अवसाद को अवकाश कहाँ ? इसलिए अपने दुखो से घबराते और गिडगिडाते मनुष्य ! विश्व के निर्माता की शरण मे आ। (गीता १८, ६६) में कहा है —

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज, अहंत्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच।

सब अधर्म [ऋषि दयानन्द के जीवन से पता चलता है कि उन्होने 'सर्वधर्मान्' की व्याख्या सर्व+अधर्मान् मानके की थी स० सम्पादक] के झगडो को छोडकर एक मेरी शरण पकड, शोक मत कर, मैं तुझे सब पापो और कष्टो मे मुक्त करूगा। गीता मे वर्णित यही परमेश्वर का ओ३म्' नाम हमारी हर तरह से रक्षा कर रहा है। कभी-कभी हम कष्टो से ऊबकर परमेश्वर को कोसने लगते हैं पर परमेश्वर हमारा सर्वत्र रक्षक ही बना रहता है। एक बचपन मे पढी कहानी याद आ रही है। कहानी यह है —

एक राजा पर्यटन एव शिकार के लिए अपने मत्री के साथ जगल मे गया। चलते-चलते काटो वाली झाडी मे राजा का वस्त्र उलझ गया और उसको निकालते समय हाथ मे काटो से एक बडा घाव हो गया और खून बहने लगा। मत्री ने उसके हाथ मे पट्टी बाँधते हुए कहा, कोई बात नही, प्रभु जो करते हैं अच्छा ही करते हैं।' यह बात सुनकर राजा को क्रोध आ गया और उसने कहा "अरे, मेरी तो अगुली कट गई, इतना खून बह गया, मैं पीडा से परेशान हूँ और तू कहता है, प्रभु जो करता है, अच्छा करता है। ऐसे मत्री को मैं नही रखूगा। तू निकल, अभी यहाँ से भाग।

मत्री ने यह सुनकर कहा 'जो आज्ञा आपकी, मैं अपना रास्ता लेता हूँ। प्रभु जो करता है अच्छा करता है।" कहकर वह चला गया।

राजा अकेला चल पडा। चलते-चलते वह एक ऐसे स्थान पर पहुच गया जहा कुछ चोर मिलकर अपनी पत्थर की देवी को सन्तुष्ट करने के लिए नरबलि चढाने के लिए किसी मनुष्य की खोज कर रहे थे। उनकी दृष्टि राजा पर पडी। सुन्दर है, शरीर अच्छा है। देवी इसकी बलि मे प्रसन्न होगी। राजा को पकड कर वे मन्दिर मे ले गए। बलि चढाने से पूर्व जब राजा को स्नान कराया जाने लगा तो पुजारी की आखो ने राजा की कटी उगली को देखा और पुकार उठा अरे यह तो अग भग है। इसकी बलि नही चढाई जा सकती। राजा को छोड दिया गया। अब राजा को मत्री की बात याद आई कि उसने कहा था प्रभु जो करता है, अच्छा करता है। आज यदि मेरी अगुली कटी न होती तो मैं यमदूत के द्वारा यम मन्दिर मे पहुँचा दिया गया होता। उसने सोचा 'ऐसे मत्री का तो मान होना चाहिए।' राज्य मे पहुँचने पर मत्री को बुलाया उसे सारी घटना सुनाई और कहा कि तुमने मेरी अगुली कटने पर जो यह कहा था कि 'प्रभु जो करता है अच्छा करता है।' यह तो ठीक रहा। "परन्तु, मैंने आप जैसे तत्वदर्शी का जो अपमान किया और आपको निकाल दिया, इसमे प्रभु ने आपकी कौनसी भलाई देखी ?

मत्री ने मुस्कराते हुए कहा 'यह तो और भी अच्छा हुआ यदि आप मुझे न निकालते तो मैं आपके साथ रहता और मेरा तो अग भग था नही। वे मुझे पकडते और बलि चढा देते। मेरे ऊपर तो प्रभु ने और भी कृपा की मुझे तो जख्मी भी न किया और मृत्यु का ग्रास बनने से भी बचा दिया। सचमुच, प्रभु के कार्यों को हम समझ नही पाते और उसे कभी-कभी कोसने लगते हैं पर वह परमेश्वर तो 'ओ३म्' है और वह सर्वत्र हमारी रक्षा करता रहता है। ठीक ही कहा है —

तुम्हारी चाही मे प्रभु है मेरा कल्याण, मेरी चाही मत करो, मैं मूर्ख नादान।

इस प्रकार परमेश्वर का ओ३म् नाम उसकी रक्षा का सूचक है। इसके अतिरिक्त भी परमेश्वर के दूसरे गुणो का उल्लेख इस मत्र मे किया गया है और वे हैं कि परमेश्वर 'शुक्रम्' है। 'शुक्रम्' शब्द का अर्थ है शीघ्रकारी, तेजस्वी, सर्वशक्तिमान्। परमेश्वर सर्व व्यापक है अत ससार का सबसे तेज चलने वाला पदार्थ मन अपनी शीघ्रता से जहाँ पहुँचता है यह मन वहाँ पहले ही पहुँच चुका होता है। मन को जहाँ पहुँचना है वहा तो वह ईश्वर है ही। अत इसकी शीघ्रता का क्या कहना ? इसी प्रकार इसके कार्य ठीक समय से होते जाते हैं। उनके नियम हैं और नियमो मे कही व्यवधान नही होता, रुकावट नही होती। इसी प्रकार उसकी तेजस्विता और सर्वशक्तिमत्ता की बात भी आती है। इस विश्व मे प्रभु की तेजस्विता और सर्वशक्तिमत्ता का रूप क्या नही दिखाई देता ? जिसका एक एक नियम अटूट है, अविचल है, जिसकी व्यवस्था अचम्भे मे डालती है, जिसका न्याय अक्षुण्ण और अपूर्व है, सपूर्ण विषयो के भडार वेद जिसके निश्वासमात्र हैं, अनन्तकाल से ससार मे प्रकाश का प्रसार करने वाले सूर्य और चाद जिसकी क्रीडा के निमेषमात्र हैं, ऊची लहरो मे उमडता विस्तृत समुद्र जिसकी आज्ञा से सीमा न छोडने को विवश है और जिसके हुक्म को बजाने के लिए हजारो आत्मा हर वक्त हाथ जोडकर खडे हैं।

अपनी शक्ति का अभिमान करने वाले ऐ मनुष्यो ! जरा दूसरी ओर नजर उठा देख। जिस समय शक्ति का भडार और तेजस्विता का पुज यह विराट् प्रभु प्रलय का महाताण्डव करता है, धरती काप उठती है, आसमान मे चमकने वाले सूर्य, चाद और सितारे टूट पडते हैं। ऊँचे खडे पहाडो का कण-कण चकना चूर हो जाता है। विशाल समुद्र की बूद-बूद सूखकर आसमान मे विलीन हो जाती है। सम्पूर्ण

(शेष पृष्ठ १० पर)

(पृष्ठ ३ का शेष)

४. इस बात का पूरा ध्यान रखा जावे कि परस्पर हिन्दी हितैषी न टकरावें। राजनीतिक दल के भेदभाव को छोड़ कर हिन्दी हित में काम किया जावे, आपसी ईर्ष्या और मान-अपमान के भावों को हिन्दी हित में न आने दिया जावे। तथा समाचार पत्रों और भाषणों में यह ध्यान रखा जावे कि हिन्दी हित की वृद्धि होवे और हिन्दी विरोध में कमी न आवे। इन कुछ सामयिक उपायों को यदि काम में लाया जा सकेगा, तो ऐसी आशा है कि पजाब में हिन्दी की अवस्था में सुधार आ सकेगा।

५. इस समय चुनाव टिकटों में कांग्रेस तथा अकाली दलों में आपसी संघर्ष के अतिरिक्त दोनों में भीतरी सघर्ष है। इससे भी हिन्दी प्रेमी अवसरवादिता से लाभ उठा सकते हैं।

विशेष—अब वह समय हिन्दी हितैषियों से निकल चुका है, जबकि यह कहा जावे कि पंजाबी कोई भाषा नही, बोली है। इसको पुन: उठाने से वर्तमान समय में कुछ लाभ नहीं। इस समय पूरी शक्ति इस बात पर लगाई जावे कि पंजाबी भाषा की लिपि देवनागरी भी स्वीकार कराई जा सके। यही महत्त्वपूर्ण समस्या है, यदि इसको ध्यान मे रखकर पजाब के हिन्दी प्रेमी सज्जन चलेंगे, तो खोई हुई बाजी को फिर जीत कर अगले पग की तैयारी कर सकेंगे। —जयदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

(पृष्ठ ५ का शेष)

पत्र मिथ्या है अथवा सार्वदेशिक में प्रकाशित २२ दिसम्बर के अंक में श्री भारतेन्द्र नाथ का खुला पत्र ?

"श्री भारतेन्द्रनाथ जी का असली पत्र अगले अंक में दिया जायेगा।"

८. अब आर्य जनता तथा पूज्य महात्मा जी स्वय श्री भारतेन्द्रनाथ के उपरोक्त पत्र को तथा मेरे इस पत्र को देखें तथा बतलाए कि अपराधी कौन है ? पंजाब सभा के अधिकारियों का यही अपराध है कि उन्होंने एक सांप को दूध देकर पाला, जिसने उन्हे ही डसने की कोशिश की।

९. श्री भारतेन्द्रनाथ द्वारा—"लूट गया—मर गया, आर्यसमाज नष्ट हो गया, आग लगी है-महात्मा जी बचाओ—जल्दी दौड़ो आदि शब्दो के जाल मे महात्मा जी तथा आर्य जनता को बहकाने तथा कुछ व्यक्तियो को खुश करने की कोशिश की गयी है।

सबसे बड़ा आश्चर्य तथा खेद तो यह है कि आर्यसमाज का सर्वोच्च संघटन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली को अपने पत्र में इस प्रकार का "महात्मा आनन्द स्वामी जी के नाम का खुला पत्र', लिखने के लिये यह आर्य जगत् का बदनामी नटवरलाल ही मिला था ? सभा भी ऐसे बदनाम व्यक्तियो के लेखो से बदनाम ही होगी। ऐसे व्यक्ति नीर-क्षीर का भेद नही कर सकते अतः उन्हें इस "नटवरलाल" से सावधान रहना चाहिये अन्यथा यह सभा के गौरव को क्षीण ही कर देंगे।

(पृष्ठ १ का शेष)

अथवा किसी आर्य सन्यासी से प्रार्थना करते कि पजाब सभा के प्रतिनिधियो की एक बैठक बुलाकर सभा का निर्वाचन करा दें। श्री रतनलाल जी ने पहले तो सार्वदेशिक सभा को अभियोग मे पार्टी बना लिया फिर उसको ही पजाब सभा के अधिकारियों से चार्ज लेने तथा पजाब सभा का निर्वाचन कराने के लिये कह दिया।

९. सार्वदेशिक न्यायसभा को पजाब सभा के १९६३ के पाकस्मा निर्वाचन की वैधानिकता का प्रश्न ही केवल दिया गया था परन्तु श्री रतनलाल ने अपने १६-११-६७ के निर्णय मे अधिकार क्षेत्र से बाहर जो निर्णय दिये उन्हे आर्य जनता को बताना चाहता हूं।

(१) २४-११-६३ का निर्वाचन अनधिकृत है (२४-११-६३से १६-११-६७ तक अन्तरंग सभा ने अनेकों नियुक्तिया तथा विमुक्तियां कीं तथा लाखों के मूल्य की सम्पत्ति के बारे में अधिकार पत्र दिये। इस विषय में उन के द्वारा निर्णय देना क्या वैध हो सकता है ?)

(२) सभा के पदाधिकारियों को सभा की सदस्यता तया पदों के अयोग्य घोषित किया तथा इन्हे आगामी निर्वाचन और उसके एक वर्ष बाद तक सभा की सदस्यता व पदो से हटाया जावे।

(१९६३ के पाकस्मा निर्वाचन का प्रबन्ध तथा नियत्रण उस समय के अधिकारियों विशेषरूप से तत्कालीन मन्त्री डा० हरिप्रकाश के हाथ मे था। नये अधिकारियों ने तो निर्वाचन के बाद कार्य आरम्भ किया और उनका उक्त निर्वाचन मे कोई हाथ न था। यदि अयोग्य घोषित करना ही था तो डा० हरिप्रकाश को करते। नये अधिकारियों को जिन पर १९६३ के निर्वाचन की कोई अनियमितता नहीं डाली जा सकती तब उन्हे अयोग्य कैसे किया ? फिर रजिस्टर्ड सोसायटी के सदस्य को सोसायटी ही हटा सकती है यह कार्य भी न्यायसभा के अधिकार क्षेत्र मे बाहर था।

(३) सार्वदेशिक सभा को पंजाब सभा के प्रकाशित नियमों के सर्वथा अनुकूल सभा का निर्वाचन कराने के लिये नियुक्त किया जाता है।

(पहले मूल आपत्तिकर्ताओं को पंजाब सभा के अधिकारियों के साथ अभियोग में पार्टी न बना कर सार्वदेशिक सभा को पार्टी बनाया और फिर उन्हें ही पंजाब सभा के निर्वाचन के प्रबन्ध का अधिकार दे दिया। पंजाब सभा के प्रकाशित नियमों के अनुसार निर्वाचन की तिथि व स्थान का निश्चय पंजाब सभा की अन्तरंग सभा ही कर सकती थी और निर्वाचन सम्बन्धी बैठक का ऐजण्डा पंजाब सभा का मंत्री ही निकाल सकता था तथा केवल उन्हीं प्रतिनिधियों को भाग लेने की आज्ञा दी जा सकती थी जिन आर्य-समाजो ने अपना दशांश तथा वेदप्रचार दिया हो। परन्तु सार्वदेशिक सभा ने श्री ओम्प्रकाश त्यागी (जो न पजाब सभा के नथा न उसके किसी सम्बन्धित आर्यसमाज के सदस्य हैं) उन्हे निर्वाचन कराने पर लगा दिया। उन्होने डाक्टर हरिप्रकाश को अपना ऐजण्ट नियुक्त कर दिया।)

(४) न्यायसभा ने पजाब सभा के समस्त धन, उसके समाचार पत्र, समस्त चल-अचल सम्पत्ति, गुरुकुलकागड़ी विश्वविद्यालय और उसकी फार्मेसी सहित सब सस्थाए सार्वदेशिक के अधिकार में देने की घोषणा की। पंजाब सभा, गुरुकुलकांगड़ी तथा गुरुकुलकांगड़ी फार्मेसी के समस्त बैंक एकाउण्टों को ओप्रेट करने का अधिकार भी सार्वदेशिक सभा को ही दिया। समस्त रिकार्ड, मूल्यवान् सिक्योरिटीज, तथा समस्त प्रकार के दस्तावेज भी सार्वदेशिक सभा को ही देना घोषित किया।

(पंजाबसभा तथा गुरुकुलकांगड़ी विश्वविद्यालय, दोनों स्वतन्त्र रूप से रजिस्टर्ड सोसायटियां हैं। अत: उनका सब कार्य उनके विधान के अन्तर्गत ही चल सकता है। ला० रतनलाल को यह अधिकार कहां से मिल गया था कि वह उन का प्रबन्ध, नियंत्रण, धन, चल-अचल सम्पत्ति आदि सार्वदेशिक सभा को दे दें ?

आर्यजनता देख ले कि अपने अधिकारों का दुरुपयोग करके प्रधान न्यायसभा ने आर्यजगत् मे संघर्ष उत्पन्न करके आर्यसमाज को कितनी हानि पहुचाई है।

(१०) सार्वदेशिक न्यायसभा के प्रधान ने पंजाब सभा के अभियोग के सम्बन्ध मे स्वय निर्णय दे दिया तथा अन्य सदस्यों से भी हस्ताक्षर करा लिये।

उपरोक्त सारी स्थिति के प्रकाश में आर्यजनता विचार करे कि ला० रतनलाल को पजाब सभा के निर्वाचन की वैधानिकता अथवा अवैधानिकता के प्रश्न के अतिरिक्त किसी विषय पर निर्णय देने का अधिकार था या नहीं ? **

(पृष्ठ १ का शेष)

ब्राह्मण्ड का कण कण अलग होकर न जाने कहा उड़ जाता है। युद्ध की इस. शक्ति और तेजस्विता को देखकर मुख से सहसा निकल पड़ता है :—

अणोरणीयान् महतो महीयान् (कठ २. २०) प्रभु महान् से महान् है। इसलिए इस रूप की उपासना करने वाले मानव अपने अहकार को दूर कर और विश्व से प्रेम कर। निराश न हो वह प्रभु तेरा रक्षक है।

इसके बाद प्रभु को शारीरिक विकारो से रहित, शरीर रहित और नसनाड़ियों के बन्धन से रहित कहा गया है। परमेश्वर का शरीर नही। शरीरवान् व्यक्ति एक देशीय होता है अर्थात् यदि वह गोरखपुर में रहेगा तो बम्बई मे नही रहेगा और यदि कानपुर में रहेगा दिल्ली नही। शरीर सीमित वस्तु है अतः वह शरीर रहित है। जब शरीर नही तो उसे व्याधि कहा हो सकती है ? 'शरीर व्याधि मन्दिरम्' शरीर व्याधि का मन्दिर होता है और शरीर मे ही नस नाड़िया हैं। इसलिए परमेश्वर को शरीर रहित कहकर और इस बात पर विशेष आकर्षित करने के लिए 'अव्रणम्' और 'अस्नाविरम्' शब्दों का प्रयोग भी कर दिया है।

परमेश्वर के अन्य गुणो का उल्लेख करते हुए उसे 'अपाय विद्धम्' 'कवि' और 'मनीषी' शब्दों से सबोधित किया गया है। परमेश्वर कवि अर्थात् कालदर्शी या सर्वज्ञ है, मननशील है। परमात्मा सत्, चित् और आनन्द स्वरूप अर्थात् सच्चिदानन्द है। यदि हम सब बातो को एक शब्द मे कहे तो हम कह सकते हैं कि परमेश्वर ज्ञानी है, सर्वज्ञ है। जहां ज्ञान होगा, वहा शक्तिमत्ता रहेगी और जहां शक्तिमत्ता रहेगी वहां आनन्द रहेगा। इसीलिए परमेश्वर को सर्वज्ञ, मननशील कहा गया है। और उस दशा में पापो से उसका सघर्ष कभी न होता। वह बिल्कुल निर्बल, निष्कलंक और शुद्ध है।

अन्त मे परमेश्वर के दो और गुणों का उल्लेख किया गया है। वे गुण हैं 'परिभुः,' 'स्वयम्.। परिभु का अर्थ है दुष्टो का सहारक। वह प्रभु तो स्वयंभुः है। अर्थात् उसे किसी ने उत्पन्न नही किया। इन गुणो से विभुषित परमेश्वर (परि अगात्) सर्वत्र व्यापक है और यही परमेश्वर नित्य जीवरूप प्रजाओं को (याथातथ्यत.) ठीक-ठीक रीति से (अर्थात् व्यदधात्) ज्ञान द्वारा सब पदार्थों को देता है अथवा कर्मफल देता है। परमेश्वर सर्वव्यापक है। यही कारण है कि वह सबको उनके कर्मों के अनुसार ठीक-ठीक फल देता है।' ***

'श्रद्धानन्द' ही क्यों ?

(प० महेन्द्रप्रताप शास्त्री एम ए एम ओ एल विजिटर गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी)

[प्रतिष्ठित विद्वान् लेखक ने स्वामी श्रद्धानन्द जी की आन्तरिक भावना को इस लेख में मूर्त्तरूप दे दिया है। समय पर न पहुचने के कारण श्रद्धानन्द बलिदान अक में प्रकाशित न हो सका। लेख की उत्तम विचारसरणी के कारण इस लेख को प्रकाशित किया जाता है।—सम्पादक]

बच्चो के नाम प्राय यो ही रख दिय जात हैं। बच्चा स्वय ना सोच ही नही सकता उसके माता पिता अथवा पण्डित किस अक्षर पर नाम होना चाहिए अथवा सुनने पुकारने मे कौन सा नाम अच्छा लगेगा आदि बाना का विचार कर नाम रख देते हैं। परन्तु सन्यास आश्रम मे जान वाला व्यक्ति अपने नाम का निर्वाचन बहुत सोच समझकर करता है। उसे जो गुण अथवा आदश सबस अच्छा लगना है या जिस आदश अथवा गुण को अपन जीवन का लक्ष्य बनाना चाहना है उसी क अनुसार वह अपने नाम को चुनता है। स्वामी समपणानन्द जी का नाम इसका उदाहरण है। नाम विचित्र सा है जनसाधारण इसका अथ नही समझ सकना उसकी भावना तक पहुचना तो और कठिन है सुनने म मधुर भी नही हैं उच्चारण भी कम से कम शीघ्रता मे कठिन है फिर भी प० श्री बुद्धदेवजी विद्यालकार ने अपना (सन्यास का) यही नाम चुना क्योकि उन्होने अपना जीवन ऋषि दयानन्द और उनके मन्तव्यो के लिए समर्पित कर दिया था। उन्हे यह भावना सवप्रिय लगी उनक जीवन का लक्ष्य यही रहा। श्री म० मुन्शीराम जी ने भी विशेष भावना से प्ररित होकर ही अपना (सन्यास का) नाम श्रद्धानन्द चुना था। उनकी दृष्टि मे श्रद्धा एक विशेष गुण था और वे उसे अपने अन्दर धारण करना चाहत थे। उनका विचार था किसी लक्ष्य तक पहुचने से पहिले उसमे श्रद्धा होना आवश्यक है। बिना श्रद्धा के कोई भी आदमी अपने काय को पूरा नही कर सकता किसी उद्दश्य तक पहुचने के लिये उसमे और उसके साधनो मे श्रद्धा करना अनिवाय है।

वेदो मे और दूसरे शास्त्रो मे श्रद्धा का बडा महत्व है। निम्नस्थ वेदमन्त्र मे हर समय श्रद्धा का पल्ला पकडे रहने का सकेत है 'श्रद्धा प्रात हवामहे श्रद्धा मध्य दिन परि। श्रद्धा सूयस्य निम्रुचि श्रद्धा धाता दधातु मे॥'

यह मन्त्र स्वामी जी को बहुत प्यारा लगना था। सभव है इसी से प्ररित होकर उन्होन अपना नाम श्रद्धानन्द रखा हो]

एक अन्य स्थल पर कहा गया है—'श्रद्धापूता भवत यज्ञियास' अर्थात् श्रद्धा से पवित्र बनकर यज्ञ करने वाले बनो। इसकी स्पष्ट भावना यही है कि यज्ञ करने से पहिले श्रद्धालु हाना होगा बिना उसके यज्ञ पूरा न होगा। यज्ञ का अर्थ सामान्य अथवा विशेष यज्ञ और सम्पूण शुभ काय हैं। जब तक मनुष्य मे श्रद्धा न होगी उसका काय सफल न होगा और न उसे उसके करन मे आनन्द आवेगा। कम से कम उस काय के आदश को अपने जीवन मे कायरूप मे परणित न कर सकेगा। अथवा उसके अनुरूप अपना आचरण न बना सकेगा। स्वामी श्रद्धानन्द जी का एक विशेष गुण यह था कि जिस सिद्धान्त अथवा काय को वे ठीक मान लते थ उसके अनुसार आचरण भी करत थ। वे मशीराम से महात्मा मुशीराम इसलिए कहलाते थ कि उनके विचारो और आचरण म एकता थी। मनस्येक वचस्येक कमण्येक महात्मनाम का आदश उन्होने पूरा किया था और उसके लिये महात्मा की पदवी प्राप्त की थी। उनकी जीवनी इस प्रकार की घटनाओ से भरी पडी है जिससे पता लगता है कि वे अपने आदर्शों पर चलते थ। वकालत छोडकर जीवन मे बडा मोड लेना गुरुकुल खोलना अपने दोनो पुत्रो को उसी मे प्रविष्ट करना सन्तानो के विवाह जात-पात छोडकर करना उदू छोड हिन्दी को अपनाया गृहस्थ के पश्चात् वानप्रस्थ और उसके अनन्तर सन्यास आश्रम मे प्रवेश करना गोरे गोरखे और सैनिको की सगीनो के सामने छाती खोलकर खडे हो जाना अन्त मे शुद्धि के लिये गोली का शिकार बनना आदि बात यही बताती हैं कि स्वामी जी के मन्तव्यो और आचरणो मे एकता थी। उनका विचार था कि मनुष्य इस एकता को बिना 'श्रद्धा' के नही प्राप्त कर सकता।

श्रद्धा लक्ष्य तक पहुँचने का एक प्रमुख साधन है। बिना श्रद्धा के लक्ष्य की प्राप्ति हो ही नही सकती। केवल यही नही श्रद्धा लक्ष्य तक पहुचने की प्रथम सीढी है। अन्य साधनो की गणना बाद मे आती है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने इस रहस्य को समझा था और इसीलिये श्रद्धा मे उन्हे आनन्द आता था।

हमारे पाठकों के पत्र

आयमर्यादा का प्रथम अक प्राप्त हुआ। आर्योदय का प्रकाशन स्थगित हाने से आयसाहित्य म जो बाधा उत्पन्न हुई थी और जिसके प्रभाव से आर्य जनता मे निराशा की एक लहर सी दौड गई थी। उसे आयमर्यादा के प्रकाशन द्वारा दूर कर दिया गया।

—कु० शिवभूषणसिंह 'गौतम' ईशनगर

आर्य युवक समाज दयानन्द कालेज अबोहर

आपने आर्योदय के स्थान की पूर्ति स्वरूप आयमयादा आरम्भ करके पजाब के आयसमाजो म जो पुन प्राण डालने का सकल्प लिया है उसके प्रति पजाब विशेषतया आय युवक समाज अबोहर आपका कृतज्ञ है।

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान अक की पच्चास प्रतियाँ भेज देव। जो कि हम निशुल्क वितरित करगे। धन बिल आने पर भेज दिया जाएगा। कृपया बिल भी साथ ही भज।

—अशोक आय मन्त्री

आर्यसमाज कुचराणा खुर्द (करनाल) का उत्सव

आयसमाज कुचराणा खुद (करनाल) का उत्सव बडी धूम धाम से सम्पन्न हुआ जिसमे आयप्रतिनिधिसभा पजाब की ओर से श्री प० समरसिंह जी वेदालकार और हरयाणा की भजन मण्डलिया श्री दादा शिवनारायण जी श्री वानप्रस्थी रामपत जी श्री मुशीलाल जी श्री जयलाल जी के बडे प्रभावशाली भाषण और मनोहर भजन हुए। उत्तर प्रदेश स श्री वीरेन्द्र जी 'वीर' और पृथिवीसिंह जी बेधडक भी शामिल हुए। आय प्रतिनिधि सभा पजाब को इस अवसर पर २३१) भेट किए गए।

सम ग्रामीण जनता पर प्रचार का विशेष प्रभाव पडा। प्रचारको की माग बढी आस पास कई नये समाजो के बनने की आशा है।

—मानाराम मन्त्री आयसमाज कुचराणा खुर्द जि० करनाल

शराब बन्दी के लिये ५ जनवरी को आवश्यक बैठक

हरयाणा राज्य से शराब मास के उन्मूलन के लिए एक अत्यावश्यक बैठक श्रद्धेय आचाय भगवानदेव जी की अध्यक्षता मे ५ जनवरी रविवार दोपहर १२ बजे से दयानन्द मठ रोहतक मे हागी। इस बैठक मे विचारणीय विषय निम्न प्रकार से होगे—

१ सम्मेलन का आय-व्यय विवरण सुनाना। २ सघष समिति का निर्माण। ३ सघष की रूप रेखा तैयार करना। ४ अन्य विषय प्रधान जी की आज्ञा से।

कपिलदेव शास्त्री स्वागत मन्त्री

हरयाणा राज्य मद्य मास निषेध समिति दयानन्द मठ रोहतक

आर्यमर्यादा में समाचार भेजने वाले सज्जनो से

समाचार प्रकाशित करवाने वाले सज्जन साथ ही फोटो भेज देते है। उनसे निवेदन है कि यदि फोटो भी प्रकाशित कराना चाहते हो तो ब्लाक (छोटा पासपोट साइज) साथ भेज अथवा ६ ५० पैसे ब्लाक बनवाने के लिए प्रति फोटो भेजन आवश्यक हैं। अन्यथा फोटो न दिया जा सकेगा। समाचार ही प्रकाशित कर दिया जावेगा।

—व्यवस्थापक—आयमर्यादा

२१ संसद सदस्यों का प्रधान मन्त्री से आग्रह

ससद सदस्या डा० सुशीला नाय्यर ने २० अन्य सदस्यो के हस्ताक्षर से एक पत्र प्रधानमन्त्री तथा गृहमन्त्री को लिखा है जिसम उनसे प्राथना की गई है कि गोवा कांग्रेस मे पारित मद्यनिषेध सम्बन्धी प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के कायक्रम बनाये।

श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य का नया पता

सूचनाथ निवेदन है कि आयप्रतिनिधिसभा पजाब के मन्त्री श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य का नया पता १० महादेव रोड (निकट गोल डाकखाना नई दिल्ली) हो गया है। नया टेलीफोन न० ४२८३३ है। इच्छुक सज्जन अकित कर लेवें।—

र्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के साहित्य विभाग की सूची

(१) सत्यार्थप्रकाश नया सस्करण ३-०० (२) महान् दयानन्द ०-७५ (३) ाानन्द चरित्र १-५० (४) जीवन ज्योति—प० चमूपति जी ३-००(५) सोम सरोवर- ० चमूपति जी ३-०० (६) वैदिक सत्सगपद्धति हिन्दी अग्रजी २-०० (७) आर्य माज का सैद्धान्तिक परिचय ०-५० (८) मुक्ति के साधन १-०० (९) पजाब का ार्यसमाज २-०० (१०) प० लेखराम जीवन—स्वा० श्रद्धानन्द जी १ ५०

ग्रेजी साहित्य(११)Ten principles of Aryasamaj १ ५० (१२)Glimpses of)ayaNand १-०० (१३) Subject Matter of the Vedas १-०० (१४) The 'edas ०-५० (१५) The philosophy of the Vedas ० ५०

बांटने के लिए ट्रेक्ट

१६) वैदिकधर्म की विशेषताए १२ -सैकडा १०-०० (१७) वैदिकसध्या १०-सैकडा -०० (१८) ईसाई मत की पोल १०—सैकडा ८०० (१९) ईसाई पादरियो को ार्यसमाज की चुनौति, ले० स्वा० श्रद्धानन्द जी १०—८-०० (२०) ईसाईयो की चार प्रणाली १०—८-०० (२१) मोटू जाट और ईसाई पादरी २०—१५-००

प्राप्ति स्थान—

व्यवस्थापक साहित्य विभाग

आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब, १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

आर्योदय के ग्राहकों की सेवा में निवेदन

आर्यमर्यादा के गत अको मे सूचना प्रकाशित की गई थी कि आर्योदय के जिन ग्राहको ने श्री भारतेन्द्रनाथ के लिखे अनुसार शुल्क उनके निवासस्थान १५९७ हरध्यानसिंह रोड नई दिल्ली के पते पर भेजा है वह शुल्क आर्योदय कार्यालय मे जमा नही हुआ । अत उन ग्राहक महानुभावो से निवेदन है कि श्री भारतन्द्रनाथ द्वारा प्राप्त मनीआर्डरो की रसीदे (कूपन) आर्यमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान राड नई दिल्ली भेजने का कष्ट करे ताकि उचित कायवाही की जा सके ।

केदारसिह ३ वस्थापक

आर्य जनता के नाम सन्देश

मैं जिस क्षत्र मे कायरत हू यहाँ पर ईसाई मिशनरी इतने जोरो से अपना मत प्रचार कर रहे हैं कि उनका यह दुस्साहस देखकर मेरा खून खौल उठता है । किन्तु फिर भी स्थानीय सज्जन इस प्रकार शात हैं जिसे देखकर उनकी अकर्मण्यता का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है ।

विशेष रूप स मध्यभारत के उस क्षत्र मे जहाँ पर कुछ पिछडी हुई जातियो का निवास है ईसाइयो ने अपना जाल इस प्रकार फैला रखा है कि जिसे देखकर रोम रोम से प्रतिशोध की भावना ज्वाला सी भडक उठती है ।

अपने का आय तथा हिन्दू कहने वाले प्रत्येक भारतीय से मेरा यही एक प्रश्न है कि क्या तुम्हारी धमनिया का रक्त जम गया है ? या फिर रक्त के स्थान पर पानी बह रहा है । कहाँ है वह गौतम का पवित्र ज्ञान महर्षि दयानन्द का उत्सर्ग और स्वामी श्रद्धानन्द का दृढ सकल्प ? योगिराज श्रीकृष्ण की गीता का कर्म मे प्रेरित करने वाला सदेश तुम्हे पवित्र वेद मार्ग पर अग्रसर होने के लिए प्रोत्साहित कर रहा है । यदि तुम्हारी नसो मे रक्त की एक बूँद भी शेष है, और उस बूँद मे स्वधर्म तथा राष्ट्रियता का कुछ भी अश अवशेष है तो आओ ! और आर्यमर्यादा की रक्षा के लिये आर्यावत को पुन आदर्श बनाने का दृढ निश्चय करें । —एक आर्य

ग्राहक महानुभाव पत्र तथा शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने का कष्ट करे ।

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाडी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

वर्ष १ } २६ पौष वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदानुसार १२ जनवरी १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क—१० रुपये
अंक ७ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ { एक प्रति— पैसे २०

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य, सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमंत्रार्थ-प्रवचन

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठा ते नमउक्तिं विधेम ॥

—ऋ० १ १८९ १, यजु० ५ ३६ ७ ४३ ४० १६

ऋषिदयानन्द ने यजु० ४० १६ मन्त्र का व्याख्यान सत्यार्थप्रकाश के ७ वें समुल्लास तथा संस्कारविधि के आरम्भ में ईश्वरस्तुतिप्रार्थना और सन्यास प्रकरण मे भी किया है। हम इन सब स्थानो का ऋषि-भाष्य आगे लिखते हैं। आर्यमर्यादा के पाठक महानुभाव इस प्रकार से विशेष लाभ उठा सकेंगे। पहले ऋ० १ १८९ १ मन्त्र का भाष्य लिखा जाता है—(अथेश्वर गुणानाह) ईश्वर के गुणो का उपदेश करते हैं।

पदार्थ —(अग्ने) स्वप्रकाशस्वरूपेश्वर (नय) प्रापय (सुपथा) धर्म्येण सुगमेन सरलेन मार्गेण (राये) ऐश्वर्यानन्दप्राप्तये (अस्मान्) मुमुक्षून् (विश्वानि) सर्वाणि चराचरजगत्कर्माणि च (देव) कमनीयानन्दप्रद (वयुनानि) प्रज्ञानानि (विद्वान्) यो वेत्ति (युयोधि) वियोजय (अस्मत्) (जुहुराणम्) कुटिलगतिजन्यम् (एनः) पापम् (भूयिष्ठाम्) अधिकाम् (ते) तव (नमउक्तिम्) नमसा सत्कारेण सह स्तुतिम् (विधेम) कुर्याम ॥

अन्वय —हे देवाऽग्ने विद्वांस्त्वमस्मान् राये सुपथा विश्वानि वयुनानि नय। जुहुराणमेनोऽस्मद्युयोधि यतो वय ते भूयिष्ठा नमउक्ति विधेम।

भावार्थ —मनुष्यै धर्मविज्ञानमार्गप्राप्तये अधर्मनिवृत्तये च परमेश्वर सम्प्रार्थनीय सदा सुमार्गेण गन्तव्य दुष्पथादधर्ममार्गात्पृथक् स्थातव्य यथा विद्वास परमेश्वरे परानुरक्ति कुर्वन्ति तथेतरैश्च कार्या।

भाषापदार्थ —हे (देव) मनोहर आनन्द के देने वाले (अग्ने) स्वप्रकाशस्वरूपेश्वर (विद्वान्) सकलशास्त्रवेत्ता आप (अस्मान्) हम मुमुक्ष अर्थात् मोक्ष चाहते हुए जनो को (राये) धनादि प्राप्ति के लिय (सुपथा) धर्मयुक्त सरल मार्ग से (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) उत्तम-उत्तम ज्ञानो को (नय) प्राप्त कराइये (जुहुराणम्) खोटी चाल से उत्पन्न हुए (एन) पाप को (अस्मत्) हम से (युयोधि) अलग करिये जिसमे हम (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) अधिकतर (नम उक्तिम्) सत्कार के साथ स्तुति का (विधम) विधान करें।

भाषाभावार्थ —मनुष्यो को धर्म तथा विज्ञान मार्ग की प्राप्ति और अधर्म की निवृत्ति के लिए परमेश्वर की अच्छे प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये और सदा सुमार्ग से चलना चाहिये दु खरूपी अधर्म मार्ग से अलग रहना चाहिये जैसे विद्वान् लोग परमेश्वर मे उत्तम अनुराग करते वैसे अन्य लोगो को भी करना चाहिये।

यजु० ५ ३६ ईश्वर किमर्थं प्रार्थनीय इत्युपदिश्यते (अग्ने) सर्वनेत परमात्मन् ! (नय) प्रापय (सुपथा) यथा सुकृत शोभनेन धर्म्यमार्गेण गच्छन्ति तथा (राये) परमश्रीमोक्षसुखप्राप्तये (अस्मान्) अभ्युदयनि श्रेयससुखस्पृहावत (विश्वानि) सर्वाणि (देव) सर्वानन्दप्रापक सर्वजगत्प्रकाशक ! (वयुनानि) प्रशस्तानि कर्माणि प्रज्ञाश्च (विद्वान्) य सर्व वेत्ति स (युयोधि) दूरीकुरु (अस्मत्) अस्माक सकाशात् (जुहुराणम्) कुटिलम् (एन) दु खफल पापम् (भूयिष्ठाम्) बहुतमाम् (ते) तव (नमउक्तिम्) यथा नमोभिरुक्ति विदधति तथा (विधेम) वेदम।

अन्वय —हे अग्ने देव जगदीश्वर विद्वांस्त्व यथा सुकृतो राये सुपथा विश्वानि वयुनानि प्राप्नुवन्ति तथाऽस्मान्नय जुहुराणमेनोऽस्मद्युयोधि वय ते नव भूयिष्ठा नमउक्ति विधम।

भावार्थ —यथा प्रेम्णोपासित सन् जगदीश्वरो जीवान् दुष्टमार्गाद् वियोज्य धर्ममार्गे स्थापयित्वैहिकपारमार्थिक सुखानि तत्तत्कर्मानुसारेण ददाति तथा न्यायाधीशैरपि विधेयम्।

फिर ईश्वर की प्रार्थना किस लिये करनी चाहिये इस विषय का उपदेश अगल मन्त्र मे किया है।

पदार्थ —हे (अग्ने) सबको अच्छे मार्ग मे चलाने और (देव) सब आनन्दो को देने वाले सब जगत् के प्रकाशक (विद्वान्) समस्त विद्यान्वित जगदीश्वर। आप कृपा से जैसे धार्मिक जन (राये) मोक्षरूप उत्तम धन के लिये (सुपथा) उत्तम मार्ग से (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) उत्तम कर्म विज्ञान वा प्रज्ञा को प्राप्त होते हैं वैसे (अस्मान्) हम लोगो को (नय) प्राप्त कीजिये हम लोग (जुहुराणम्) कुटिल (एन) दु खफलरूपी पाप को (अस्मत्) हम लोगो से (युयोधि) दूर कीजिये हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) अत्यन्त (नमउक्तिम्) नमस्कार रूप वाणी को (विधम) कहते है।

भावार्थ —जैसे सत्य प्रम से उपासना किया हुआ परमेश्वर जीवो को दुष्ट मार्गो से अलग और धर्ममार्ग मे स्थापन करके इस लोक के सुखो को उनके कर्मानुसार देता है वैसे ही न्याय करने हारे भी किया करें।

यजु० ७ ४३। अथ तदीश्वरप्रार्थनामाह। अब ईश्वर की प्रार्थना अगले मन्त्र म की है।

पदार्थ —(अग्ने) सर्वेषा प्रकाशक ! (नय) प्रापय (सुपथा) योगमार्गेण (राये) योगसिद्धये (अस्मान्) यागिन (विश्वानि) अखिलानि (देव) योगप्रद ! (वयुनानि) योगविज्ञानानि (विद्वान्) यो वेत्ति सर्व योग स (युयाधि) नियोजय (अस्मत्) अस्माक योगानुष्ठातॄणा सकाशात् (जुहुराणम्) अस्मदन्त करणस्य कौटिल्यम् (एन) दुष्कृतात्मकमपराधम् (भूयिष्ठाम्) भूयसीम् (ते) तव योगोपदेष्टु परमगुरो (नमउक्तिम्) नतिपुरसरा स्तुतिम् (विधम) कुर्याम (स्वाहा) सत्यया स्वकीयया वाचा वेदवाचा वा।

अन्वय —हे अग्ने ! त्व सुपथा राये अस्मान् विश्वानि वयुनानि नय। यतो वय स्वाहा ते भूयिष्ठा नमउक्तिम् विधम। हे देव विद्वांस्त्व कृपया जुहुराणमेनश्चास्मद्युयोधि।

भावार्थ —न कश्चिदपि पुरुष परमात्मन सत्यप्रेमभक्त्या विना योगसिद्धि प्राप्नोति यश्चेत्थम्भूतो योगबलेन परमेश्वर स्मरति तस्मै स दयालु शीघ्र योगसिद्धि ददाति।

भाषार्थ —हे अग्ने ! सब के अन्त करण मे प्रकाश करने वाले परमेश्वर ! आप (सुपथा) सत्यविद्या धर्मयुक्त मार्ग से (राये) योग की सिद्धि के लिये (अस्मान्) हम लोगोको (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) योग के विज्ञानो को (नय) पहुचाइये जिस से हम लोग (स्वाहा) अपनी सत्यवाणी वा वेदवाणी से (ते) आप की (भूयिष्ठाम्) बहुत (नमउक्तिम्) नमस्कारपूर्वक स्तुति को (विधेय) करें। हे (देव) योगविद्या को देने वाले ईश्वर ! (विद्वान्) समस्त योग के गुण और क्रियाओ को जानने वाले आप कृपा करके (जुहुराणम्) हम लोगो के अन्त करण के कुटिलतारूप (एन) दुष्ट कर्मो को (अस्मत्) योगानुष्ठान करने वाले हम लोगो से (युयोधि) दूर कर दीजिये।

भावार्थ —कोई भी पुरुष परमात्मा की प्रमभक्ति के विना योगसिद्धि को नही प्राप्त होता और जो प्रमभक्तियुक्त

(शेष पृष्ठ २ पर)

(पृष्ठ १ का शेष)

हो कर योग बल से परमेश्वर का स्मरण करता है उसको वह दयालु परमात्मा शीघ्र योगसिद्धि देता है। [इस मन्त्र में स्वाहा पद अधिक है।] इस मन्त्र मे योग का वणन है।

यजु० ४० १६। ईश्वर कामनुग्राह्य सीत्याह। ईश्वर किन मनुष्यो पर कृपा करता है इस विषय मे कहा है।

पदार्थ —(अग्ने) स्वप्रकाशस्वरूप करुणामय जगदीश्वर! (नय) नमय (सुपथा) धर्म्येण (राये) विज्ञानाय धनाय वसुसुखाय (अस्मान्) जीवान् (विश्वानि) अखिलानि (देव) दिव्यस्वरूप (वयुनानि) प्रशस्तानि प्रज्ञानानि (विद्वान्) य सर्वविदि स (युयोधि) पृथक कुरु (अस्मत्) अस्माक सकाशात (जुहुराणम्) कौटिल्यम् (एन) पापाचरणम् (भूयिष्ठाम्) बहुतमाम् (ते) तुभ्यम् (नमउक्तिम्) सत्कारपुर सरा प्रशसाम् (विधेम) परिचरेम।

अन्वय —हे देवाग्ने परमेश्वर! यतो वय ते भूयिष्ठा नमउक्ति विधेम तस्माद्विद्वास्त्वमस्मज्जुहुराणमेनो युयोध्य स्मान राये सुपथा विश्वानि वयुनानि नय प्रापय।

भावार्थ —ये सत्यभावेन परमेश्वर मुपासते यथासामर्थ्य तदाज्ञा पालयन्ति सर्वोपरि सत्कर्त्तव्य परमात्मान मन्यन्ते तान दयालुरीश्वर पापाचरणमार्गात् पृथक कृत्य धर्ममार्ग च लयित्वा विज्ञान दत्त्वा धर्माथकाममोक्षान साद्ध समर्थान करोति तस्मात् सर्व एव एकमद्वितीयमीश्वर विहाय कस्याप्युपासन कदाचिन्नैव कुर्यु।

भाषार्थ —हे (देव) दिव्यस्वरूप (अग्ने) प्रकाशस्वरूप करुणामय जगदीश्वर! जिससे हम लोग (ते) आप के लिये (भूयिष्ठाम्) अधिकतर (नमउक्तिम्) सत्कार पूवक प्रशसा का (विधेम) सेवन कर इससे (विद्वान) सब को जानने वाले (अस्मत्) पापाचरण को (युयोधि) पृथक कीजिये (अस्मान) हम जीवो को (राये) विज्ञान धन से हुए सुख के लिये (सुपथा) धर्मानुकूल मार्ग से (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) प्रशस्तज्ञानो को (नय) प्राप्त कीजिये।

भावार्थ —जो सत्यभाव से परमेश्वर की उपासना करते यथाशक्ति उसकी आज्ञा का पालन करते और सर्वोपरि सत्कार के योग्य परमात्मा को मानते हैं उनको दयालु ईश्वर पापाचरण मार्ग से पृथक कर धर्मयुक्त मार्ग म चला के विज्ञान दे कर धर्म अर्थ काम और मोक्ष को सिद्ध करने के लिये समर्थ करता है इससे एक अद्वितीय ईश्वर को छोड किसी की उपासना कदापि न करें।

सत्यार्थ — मे इसी यजु० ४० हे सुख के दाता स्वप्रकाशस्वरूप सब को जानने हारे परमात्मन्! आप हम को श्रेष्ठ मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञानो को प्राप्त कराइये और जो हम में कुटिल पापाचरण रूप मार्ग है उससे पृथक कीजिये इसलिये हम लोग नम्रतापूर्वक आपकी बहुत सी स्तुति करते हैं कि आप हमको पवित्र करें॥

इसी यजु ४० १६ मन्त्र का अथ सस्कारविधि के आरम्भ मे स्तुति प्राथनोपासना प्रकरण म देखिये—

हे (अग्ने) स्वप्रकाशज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुख दाता परमेश्वर! आप जिससे (विद्वान्) सम्पूण विद्यायुक्त हैं कृपा करके (अस्मान) हम लोगो को (राये) विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वय की प्राप्ति के लिये (सुपथा) अच्छे धमयुक्त आप्त लोगो के माग से (विश्वानि) सम्पूण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तमकम (नय) प्राप्त कराइये और (अस्मत्) हम से (जुहुराणम्) कुटिलतायुक्त (एन) पाप रूप कम को (युयोधि) दूर कीजिये इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप (नमउक्तिम्) नम्रतापूवक प्रशसा (विधेम) सदा किया कर और सवदा आनन्द मे रहे। अब इसी यजु० ४० १६ मन्त्र का अथ सस्कारविधि के सन्यास प्रकरण मे पढिये—

हे (अग्ने) स्वप्रकाशस्वरूप सब दुखो के घातक (देव) सब सुखो के दाता परमेश्वर! (विद्वान्) आप (राये) योग विज्ञानरूप धन की प्राप्ति के लिये (सुपथा) वेदोक्तधम माग से (अस्मान्) हमको (विश्वानि) सम्पूण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्मों को (नय) कृपा से प्राप्त कीजिये और (अस्मत्) हम से (जुहुराणम्) कुटिल पक्षपात सहित (एन) अपराध पापरूपकम को (युयोधि) दूर कीजिये और इस अधर्माचरण से हमको सदा दूर रखिये इसलिये (ते) आपकी की (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार (नमउक्तिम्) नमस्कारपूवक प्रशसा को नित्य (विधेम) किया करें।

● विभु पर

[illegible] को [illegible]।
जग [illegible] करके [illegible] ॥१॥

वैरी [illegible] है ये आलस्य [illegible]।
सदा बाट जोहता ऋषि [illegible] ॥२॥

[illegible] को [illegible] को [illegible]।
[illegible] बनने को [illegible] ॥३॥

[illegible] के [illegible]।
[illegible] तुम [illegible] ॥४॥

सूर्योदय से उठो पूर्व [illegible] बैठक लगावो।
स्वय ही नहीं सब सोतो को जगावो ॥५॥

सब देशो का सिर मौर सुना था ये भारत।
क्या हमने ठेका लिया इसको करने का गारत ॥६॥

दृढ़-प्रतिज्ञ हो सुपथ पर जन २ को चलावो।
सर्व प्रथम इन्दु भारत को विभु पर पुजावो ॥७॥

इन्दु शास्त्री ●

ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य आदिसे

विशेष वक्तव्य

आयमर्यादा' के पाठकमहानुभावो! हमने एक ही मन्त्र के भिन्न भिन्न स्थानो पर ऋषि दयानन्द के किये अर्थों को इस लिये प्रकाशित किया है कि इस ढग से वेदो के ऊपर होने वाले पुनरुक्ति आदि अनेक दोषो का निराकरण हो जाता है। वेदमन्त्रो की ही अगले पिछले मन्त्रो के साथ सगति नही होती प्रत्युत एक सूक्त दूसरे सूक्त एक वग दूसरे वग एक अनुवाक दूसरे अनुवाक एक काण्ड दूसरे काण्ड एक अध्याय दूसरे अध्याय एक अष्टक दूसरे अष्टक और एक मण्डल दूसरे मण्डल के साथ अथ द्वारा सगत होता है। इसी प्रकार चारो वेदो की परस्पर सगति है। इस रहस्य को ऋषि दयानन्द ने सवत्र अपने अथ मे स्पष्ट किया है। इसी भान्ति एक ही मन्त्र कई बार पुनरुक्त रूप मे वेद मे मिलता है। उसकी शब्द रूप मे एकता होती है परन्तु प्रकरण मे अलग-अलग होने से अथ मे भिन्नता होती है अत मन्त्रो मे पुनरुक्ति का दोष सवथा नही है एक रहस्य और भी है कि एक ही मन्त्र के भिन्न भिन्न स्थानो पर देवता भिन्न होते हैं। मन्त्र के प्रतिपाद्य विषय को देवता नाम से कहा जाता है। इस कारण देवता भिन्न होने से एक ही मन्त्र के अथ भिन्न हो जाते हैं। जैसे इसी अग्ने नय सुपथा मन्त्र के देवता पदो को देखिये—ऋग्वेद १ १८९ १ का देवता अग्नि है। मन्त्रो के शब्द यौगिक होने से देवता के एक होने पर भी भिन्न भिन्न अथ हो जाते हैं। यजुर्वेद ५ ३६ मन्त्रका देवता भी अग्नि है। देवता एक होने पर भीवेदमन्त्राथद्रष्टा के भिन्न होने पर अथ मे भेद हो जाता है क्योकि ऋषि लोग योगोपासना द्वारा वेदमन्त्रो को व्यापक अर्थों मे से किसी का ग्रहण कर सकते हैं। जैसे 'चत्वारि शृङ्गा' मन्त्र ऋग्वेद और यजुर्वेद दोनों में मिलता है परन्तु इसके महर्षि पतञ्जलि ने अपने व्याकरण-महाभाष्य मे शब्द परक किये हैं। इसी भक्ति निरुक्त मे महर्षि यास्क ने यज्ञ परक अथ किये हैं। ऋषि दयानन्द ने इस मन्त्र के अपने दोनों वेदो के भाष्य में अभ्युदय और नि श्रेयस तथा ईश्वर आदि कई अथ किये हैं। अत देवता समान होने पर भी महर्षियो का अथदर्शन मन्त्रो मे भिन्न भिन्न होता है। यजुर्वेद ७-४३ का देवता जगदीश्वर है और यजुर्वेद ४० १६ का देवता आत्मा है। इस प्रकार देवता प्रतिपाद्य विषयो की भिन्नता के कारण अर्थों मे भेद हो सकता है। इस प्रकार इस मन्त्रो के अर्थों का साक्षात करने वाले ऐतिहासिक महर्षियो के नामो को भी देखिये। ऋ० १ १८९ १ का ऋषि अगस्त्य यजुर्वेद ५ ३६ का अगस्त्य ७ ४३ का आङ्गिरस तथा ४० १६ का ऋषि दीर्घतमा है। इससे यह भी प्रकट होता है कि एक ही मन्त्र के अथ का दशन भिन्न भिन्न ऋषियो ने किया है। इस कारण भी अर्थों मे भिन्नता होना स्वाभाविक है। हा एक बात आवश्यक है कि मन्त्र के अथ भिन्न-भिन्न होने पर भी परस्पर विरुद्ध अथ नही होते।

इस समस्या पर बहुत विस्तार से लिखा जा सकता है। पुन किसी अवसर पर लिखने का यत्न किया जावेगा।

—जगदवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री ●

सम्पादकीय

वैदिकराज्य का विधानसूत्र

एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए किन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा सभाधीन राजा राजा और प्रजा सभा के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे। —सत्यार्थप्रकाश—छठा समुल्लास

महर्षि दयानन्द ने राष्ट्र के प्रशासन को ठीक ठीक रूप मे चलाने के लिये जो विधान बनाना चाहिये उसका मूल सूत्र दे दिया है। यह विधान सूत्र बडी विस्तृत व्याख्या की अपेक्षा रखता है इस सूत्र के कई खण्ड हैं। (१) राष्ट्र का कोई एक स्वतन्त्र प्रशासक नही होना चाहिये। इस खण्ड से एक यह भी अर्थ सिद्ध होता है कि अधिकार देना राष्ट्र की जनता के हाथ मे है। अत राजा के स्वतन्त्र होने की कल्पना का प्रश्न नही उठता। क्योकि इस खण्ड मे अधिकार न देना चाहिये इसका अर्थापत्ति से यह भाव बनता है कि अधिकार देने की शक्ति दूसरी सत्ता के आधीन है और वह सत्ता है राज्य की जनशक्ति। (२) दूसरे खण्ड मे राजा शब्द का अभिप्राय स्पष्ट किया गया है कि राजा और सभापति एक ही अर्थ को बतलाने वाले दो पृथक पृथक शब्द हैं ऋग्वेद १ ३६ ७ के पदार्थ मे ऋषि ने कहा है कि प्रधान-सभाध्यक्ष और राजा एक ही पद का बतलाते हैं। अत राजा शब्द से यह भाव ग्रहण नही करना चाहिये कि राजा की सत्ता सभापति से पृथक है। (३) इस खण्ड मे यह बतलाया है कि राजा के साथ एक सभा (राजसभा) होती है जो कि राजा सभापति के आधीन होती है। अर्थात् सभा का नियन्त्रण सभापति के हाथ मे होना है। कुछ सज्जन शङ्का कर सकते है कि सभा की क्या शक्ति रह जायेगी जबकि वह राजा के आधीन कर दी जावे इस शङ्का का उत्तर (४) अगले खण्ड मे ऋषि ने दिया है अर्थात् सभाधीन राजा राजा कोई स्वतन्त्र रूप से कार्य नही कर सकता उसको सभा के आधीन रहना पडता है। जैसा निश्चय सभा करेगी— उसी के अनुसार राजा को प्रशासन चलाना होगा राजा स्वतन्त्र रूप से कोई अध्यादेश चालू नही कर सकता वह तभी अध्यादेश निकाल सकता है जब कि सभा उसकी स्वीकृति देवे। (५) इस खण्ड मे सभा का शक्ति के आधीन राजा और प्रजा को किया गया है अर्थात् राजा को सभा ही उसके कर्तव्यो का निर्देश देती है और प्रजा को भी सभा द्वारा बनाये गये नियम पर चलना होता है। इससे प्रजा मे उच्छृंखलता नही हो सकती और न ही राजा मे स्वतन्त्र होने के भाव पैदा हो सकते है। राजा और प्रजा को सभा के आधीन रहना ही पडेगा। (६) यह खण्ड अत्यन्त महत्वपूर्ण है अर्थात् प्रजा के ऊपर अधिकार राजसभा का ही होता है राजा को प्रजा पर सीधा नियन्त्रण नहीं दिया गया। किन्तु प्रजा पर सीधा नियन्त्रण राजसभा का ही होता है। यहाँ सभापद के साथ राजपद का योग करने से यह पता चलता है कि शासन का अधिकार राजसभा को है। यहा सभा के साथ राजपद का प्रयोग यह भी स्पष्ट करता है कि राष्ट्र के शासन मे सीधा अधिकार राजसभा का है। इस सूत्र से एक और महत्वपूर्ण नियम निकलता है कि राष्ट्र की सत्ता के अन्तिम अधिकार को जनता=प्रजा के हाथ मे दिया गया है। यह ठीक है कि जनता के सामान्य राज्य कार्यों को चलाने के लिये राजा और राजसभा का नियन्त्रण होना चाहिये परन्तु राजसत्ता का अन्तिम अधिकार प्रजा के आधीन किया गया है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि प्रजा ही सभा का निर्माण करती है और वही राजा का निर्वाचन करती है। राज्य प्रबन्ध सभा के आधीन रहता है सभा के नियमानुसार सचालन की ही शक्ति राजा के हाथ मे दी जाती है इसका गूढ अभिप्राय यही है। महर्षि दयानन्द ने यजुर्वेद ६ ३१ के भावार्थ मे लिखा है कि राज्य का प्रबन्ध सभा के आधीन होना उचित है। क्योकि सब प्रजा राजकर्मचारी राज्याधिकारी और जननेता प्रजा की सेवा करने वाले होकर अपने अपने कर्तव्यो का पालन करते हुये परस्पर आनन्दित रहते हैं।

यहा सभा पद से राजसभा को ग्रहण करने का एक विशिष्ट अभिप्राय भी है कि सभा केवल राजसभा ही नही होती अपितु तीन होती हैं—आर्यराजसभा आर्य विद्यासभा और आर्यधर्म सभा—इन तीनो के निर्माण करने का अधिकार राष्ट्र की जनता को दिया है जैसे कि ऋषि ने ऋ० १ ३० ११ के भावार्थ मे बतलाया है। सत्यार्थप्रकाश के इसी समुल्लास मे तीनो सभाओ की यह व्याख्या की है— महाविद्वानो को विद्यासभाऽधिकारी धार्मिक विद्वानो को धर्म सभाऽधिकारी प्रशंसनीय धार्मिक पुरुषो को राजसभा के सभासद् और जो उन सब मे सर्वोत्तम गुणकर्मस्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राजसभा। पतिरूप मान के सब प्रकार से उन्नति करें। अर्थात् राजसभा के सभासद् उन तीनो मे से जो सर्वश्रेष्ठ गुण वाला सदस्य हो उसको राजा सभा का पति अर्थात् सभापति सभाध्यक्ष राजा स्वीकार किया जावे। अब तीनो सभाओ के कर्तव्यो को ऋषि यो लिखते हैं— तीनो सभाओ की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमो के आधीन सब लोग बर्तें सब के हितकारक कामो मे सम्मति करें सर्वहित करने के लिये परतन्त्र और धर्मयुक्त कामो मे अर्थात् जो निज के काम हैं उनमे स्वतन्त्र रहे। इस वाक्य का अभिप्राय यह है कि राजसभा सर्वहितकारी नियम बनाते समय अकेली राजसभा नियम न बनावे अपितु तीनो सभाओ के प्रतिनिधि मिलकर बनावे राजसभा का चाहिये कि नये नियमो का निर्माण करने से पूर्व विद्यासभा के विशिष्ट विद्वानो और धार्मिक सभा के धर्मात्मा विद्वान सदस्यो से परामर्श करें। जब सहमति हो जावे तब राजसभा उन नियम को राष्ट्र की जनता मे प्रचारित और प्रसारित कर देवे। इस सर्वहित के कामो मे तीनो सभाए और जनता मिलकर चले तथा जो निज के कर्तव्य है उनको तीनो सभाए अलग अलग नियम जनहित मे बनावें और चलावें। इसी प्रकार राष्ट्र का प्रत्येक जन नागरिक सर्वहितकारी नियम मे सब के साथ मिलकर चले और निज के कामो मे इच्छापूर्वक कर्तव्य करता रहे। किसी नागरिक को ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जिससे अन्यो के कामो मे बाधा पडे। ऐसे ही तीनो सभाओ को भी समय समय पर परस्पर सम्मति करके जनता के चरित्र और शिक्षा का उत्तम रखने के लिये राजसभा मे सहयोग करते रहना चाहिये।

आर्यमर्यादा के पाठक महानुभावो से निवेदन है कि कि ऋषि दयानन्द द्वारा प्रकाशित मन्तव्यो और वैदिक सिद्धान्तो का स्वय समझ उन पर चले और दूसरो को समझावें तथा चलावें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आचार्य भगवान्देव जी का अभिनन्दन

श्रद्धेय आचार्य भगवान्देव जी की कर्मठता मनन अध्यवसाय वैदिकधर्मनिष्ठा तप त्याग विद्वत्ता आर्षशिक्षा प्रणाली के प्रति कर्तव्य पराण्यता राष्ट्रसेवा के लिये कष्टसहिष्णुता आर्यभाषा (हिन्दी) की रक्षा के लिये जागरूकता गोवध बन्द कराने के प्रति सर्वसमर्पणभाव दुर्व्यसन मद्यमांसादि के उच्छेद नष्ट कराने के लिये उद्यम—शीलता विद्यार्थीवर्ग तथा युवको के जीवनोत्थान के लिये ब्रह्मचर्य की सक्रियता का स्वय पालन करते हुये प्रचार राष्ट्र के प्राचीन इतिहास की लुप्त कडियो को खोज करके प्राचीन सिक्को और मूर्तियो का अद्भुत सग्रह करने वाले निरतर भ्रमणशील कठोरवृत्ति के व्रती से आर्यजगत् का कौन ऐसा व्यक्ति है जो अपरिचित हो ?

ऐसे महानुभाव का अभिनन्दन करना उन के व्यक्तित्व के लिये नहीं प्रत्युत आर्यजगत् मे कृतज्ञता के भाव बनाये रखने के प्रयोजन से इस आयोजन का निश्चय किया गया है। एतदर्थ इसी अक मे अन्यत्र पृष्ठ ४ पर आर्यसमाज के लब्धप्रतिष्ठ अनेक महानुभावो की ओर से अभिनन्दन को सफल बनाने की अपील की गई है जिसके अनुसार श्री आचार्य भगवान्देव जी को एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जाने का निश्चय किया गया है। इस ग्रन्थ मे इनके वैयक्तिक जीवन और कार्यों पर प्रकाश डालने के अतिरिक्त वैदिक सिद्धान्तो पर महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित मन्तव्यो की पुष्टि मे सस्कृत एव आर्यभाषा मे अनेक सारगर्भित लेख भी प्रकाशित किये जावेगे।

आर्यबन्धुओ से सप्रश्रय निवेदन है कि अन्यत्र दी गई अपील को पढकर इस शुभ कार्य को सम्पन्न करने के लिये सब प्रकार से सहयोग देवें। इस उत्तम कार्य की सफलता का अप्रत्यक्ष लाभ यह भी होगा कि इसी प्रकार आर्यसमाज मे ऐसे सेवाभाव रखने वाले महानुभाव अधिक सख्या मे दिखाई देने लगेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आवश्यक सूचना

कुमारी सुशीला आर्या एम० ए० विद्यावाचस्पति आर्यजगत् मे प्रसिद्ध लेखिका एव कवि हैं। आर्यमर्यादा के सभी पाठक इस बात को भली भाति जानते हैं। २८ जनवरी ६९ को साय बजे के अनुमान आकाशवाणी दिल्ली केन्द्र से ग्रामीण विभाग द्वारा आपका भाषण प्रसारित किया जावेगा। सुनने के इच्छुक सज्जन इस दिन और समय का अवश्य ध्यान रखें।

पता परिवर्तन

अनेक भाई बहिन उनके साथ पत्र व्यवहार मे पुराना पता लिखते रहते हैं जिससे उनका पत्र देरी मे मिलता है तथा किसी पत्र के न मिलने की सम्भावना भी हो सकती है। अत उनका पता नीचे लिखे अनुसार है—

कुमारी सुशीला आर्या एम० ए० विद्यावाचस्पति
अर्य हि म व त्र ख दरी (जि० महेन्द्रगढ) रयाणा

आचार्य भगवान्देव अभिनन्दन समिति द्वारा धनी व दानी महानुभावों से अपील

आप सर्व सज्जनो को आचार्य भगवान् देव जी के कार्य तप-त्याग और निष्ठा का परिचय कराना सूर्य को दीपक दिखलाना है अतः इनकी सेवाओं का समुचित आदर करने और इनकी भावी योजनाओ तथा आकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए उपरोक्त समिति ने श्रद्धेय आचार्य जी का शीघ्र ही "अभिनन्दन" करने का निश्चय किया है जिसमे **एक लाख रुपया** तथा एक सुन्दर "अभिनन्दन ग्रन्थ" भेंट करने की योजना बनाई गई है। अत. इस शुभ तथा राष्ट्र हितैषी कार्य में आप स्वयम् अपने परिवार के सदस्यों तथा अपने इष्ट मित्रों आदि सहित यथाशक्ति आहुति देकर पुण्य और यश के भागी बनें। **समिति ने निश्चय किया है कि :–**

१. जो सज्जन १००१) रु० दान देंगे, उनका संक्षिप्त जीवन परिचय चित्र सहित अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रकाशित किया जावेगा। २. जो महानुभाव, ५०१) रु० या अधिक दान देंगे उनका नाम चित्र सहित ग्रन्थ मे प्रकाशित किया जाएगा। ३. जो सज्जन १०१) रु० या अधिक दान देंगे उनका नाम ग्रन्थ में दानियों की सूची में दिया जावेगा। ४. १०१) रु० और इससे अधिक दान देने वाले सभी महानुभावों को एक-एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट स्वरूप दिया जावेगा।

कृपया धन निम्नलिखित महानुभावो को ही भेजने का कष्ट करें :—१. श्री रामेश्वरदास जी गुप्त, डी ३५, साऊथ एक्स्टेंशन पार्ट १ न्यू दिल्ली–३, दूरभाष, ६२४७६२। २. वैद्य कर्मवीर जी, सेवा आश्रम नरेला दिल्ली दूरभाष, ८९/२७२। ३. प० टेकचन्द जी भारत भण्डार बवानारोड नरेला दिल्ली दूरभाष :—८९/२४०। ४. जिन सज्जनो के पास समिति की अधिकृत रसीद बहियाँ हों। नोट :—धन संग्रह करने में सहयोग देने के इच्छुक महानुभाव रसीद बुकें उपरोक्त तीनों स्थानों में से किसी एकसे मगा ले।

निवेदक

जगदेवसिंह सिद्धान्ती (पूर्व एम० पी० तथा वर्तमान सदस्य दिल्ली विश्व-विद्यालय मण्डल)। प्रकाशवीर शास्त्री एम० पी०। शिवकुमार शास्त्री एम० पी०। रघुवीरसिंह शास्त्री एम० पी० मन्त्री आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब। हसराज गुप्त महापौर दिल्ली। देशराज चौधरी नेता कांग्रेस दल दिल्ली नगर निगम। टेकचन्द प्रधान आर्यसमाज नरेला। रिजकराम ऐडवोकेट सदस्य राज्यसभा। माडूसिह ऐडवोकेट एम० एल० ए० हरयाणा। भरतसिंह महाशय उपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब। बहिन लक्ष्मीदेवी कांग्रेस सेविका रोहतक। हीरासिंह चौ० सदस्य महानगर परिषद् दिल्ली। ब्रह्मचारी वदर्नसिह आर्य पहलवान ग्राम निस्तौली जिला मेरठ। सिहराम चौ० करनाल। रामदेव पूर्व सदस्य दिल्ली नगर निगम। प्रियव्रत वेद-वाचस्पति उपकुलपति गुरुकुल कागड़ी हरद्वार। रामगोपाल एडवोकेट (पानीपत) सदस्य, सार्वदेशिक न्याय सभा। कपिलदेव शास्त्री मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल भैंसवाल। ब्र० इन्द्रदेव मेधार्थी प्रधान आ० यु० परिषद्। प्रियव्रत ठेकेदार माडल टाउन रोहतक।

प्रो० रामसिंह एम० ए०	**वैद्य कर्मवीर**	**रामेश्वरदास गुप्त**
अध्यक्ष	**मन्त्री**	**कोषाध्यक्ष**

आचार्य भगवान् देव अभिनन्दन समिति

●

टंकारा में ऋषि शिक्षण शिविर

मकर सक्रान्ति १४ जनवरी मे गणतन्त्र दिवस २६ जनवरी तक टंकारा मे "ऋषि शिक्षण शिविर" का आयोजन होगा। जिसमे परिव्राजकाचार्य वेद स्वामी मेधार्थी सरस्वती एम० ए० सामवाचस्पति, स्वामी विशुद्धानन्द शास्त्री (बम्बई) और स्वामी रामानन्द सरस्वती (पटना) विशेष रूप से प्रशिक्षण देंगे।

शिवरात्रि से एक माम पूर्व टकारा मे पधारने वाले भी विशेष रूप से लाभान्वित होगे। टंकारा मे ठहरने की ठीक व्यवस्था होगी। भोजन व्यय का प्रबन्ध सब स्वय करेंगे। लगभग ३० रुपया एक मास मे होगा। दूध चाय इसमे सम्मिलित नही है। जो आर्य सज्जन हवन स्वस्तिवाचन आदि को शुद्ध रूप से सीखना चाहते हैं उनको अलभ्य लाभ होगा। गायत्री मत्र के जापकी विशुद्ध विधि और गायत्री मत्र प्राणायाम पद्धति जानने के पश्चात् ही सम्मिलित लाभ सन्ध्या और हवन से हो सकता है।

—कान्हू जी वानप्रस्थ, टकारा सौराष्ट्र

खोज थी जिसकी जिसे

[श्री रमाकान्त दीक्षित एम० ए० बी० टी० सनातन धर्म हा० स्कूल भिवानी]

यह मन भटकता ही रहा,
पर झूम कर, कुछ घूम कर,
नव द्वार खोला, फिर यों बोला।

मिला जब ज्ञान का सरगम सलोना,
मिट्टी, एक पल में बन गई सोना,
रोड़ा अटकता ही रहा,
शत भूल सम, शत शूल सम।
पर बदल चोला, फिर यो बोला।

प्राण घुटते फिर सुवासित हो उठे,
आपदाओं के हिमालय रो उठे,
दर्पण चटकता ही रहा,
पर विहँस कर, और कस कर।
हर रूप तोला, फिर यो बोला।

राह से पल में अंधेरा हट गया,
यह जगत् लगने लगा फिर से नया,
जीवन लटकता ही रहा,
नद मे बहा, सब कुछ सहा।
है भाग्य डोला, फिर यों बोला।

हर चरण सोपान पर चढ़ने लगा,
फिर अमर पद वह स्वयं गढ़ने लगा,
पथ भ्रम खटकता ही रहा,
भय छा गया, दुख आ गया।
भ्रम वही भोला, फिर यों बोला।

खोज थी जिसकी जिसे वह मिल गया,
फूल उकठे काठ में भी खिल गया।

समाचारपत्र–समालोचन

आर्ययुवक परिषद् के सचित्र पाक्षिक पत्र "राजधर्म" का दूसरा-तीसरा सम्मिलत अंक हमारे सामने है। इसमे "अमर शहीद श्री रामप्रसाद बिस्मिल" द्वारा लिखित उनके ही जीवन बलिदान की गाथा दी गई है।

हमें यह लिखने मे प्रसन्नता है कि न केवल प्रत्येक आर्ययुवक को ही इस गाथा को पढना चाहिये, अपितु राष्ट्र की राजनीतिक सरणी का अनुसरण करने वाले सभी लोगो को इसका मनन करना चाहिये। आर्यवीर ब्रह्मचारी रामप्रसाद ने फांसी पर चढ़ाये जाने से कुछ ही दिन पूर्व इसको लिखा था। पढ़ना तो आद्योपान्त ही चाहिये, परन्तु विशेषरूप से पृष्ठ ९५ से अन्तिम पृष्ठ ११६ तक उन विचारों और सुझावो पर पूरा ध्यान देना चाहिये, जिनको शहीद बिस्मिल ने राष्ट्रहित में लिखा है। अक के सम्पादक प्रो० श्यामराव एम० कॉम का सम्पादकीय तथा आर्ययुवक परिषद् के प्रधान ब्रह्मचारी इन्द्रदेव मेधार्थी का "राष्ट्रनिर्माण" लेख अवश्य देखने चाहियें। ये दोनो लेख अक के आरम्भ मे ही दिये गये हैं। वीर बिस्मिल की पूज्यामाता जी और उनकी बहिन वीराङ्गना श्रीमती शास्त्री देवी जी के उद्गार उनके चित्रो सहित आरम्भ मे कवर के दूसरे पृष्ठ पर दिये गये हैं। वीर बिस्मिल के द्वितीय प्राण अमर शहीद अशफाकउल्लाखां का बलिदान इस अक की शोभा बढ़ा रहा है सम्भव है कुछ लोग वीर बिस्मिल के विचारोसे सहमत न हों, परन्तु उन्होंने जो भाव लिखे हैं—वे सत्य के आधार पर है, इनसे प्रत्येक राजनीतिक दल के अनुयायियों को लाभ पहुंच सकता है—ऐसा हमारा विश्वास है। अक उपादेय तथा संग्रह करने योग्य है—सम्पादक, प्रकाशक और मुद्रक श्री प्रो० श्यामराव एम कॉम एल० एल० बी० हैं—मिलने का पता—आर्यसमाज मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली है। पत्र का वार्षिक मूल्य १०-०० है तथा इस विशेषाङ्क का मूल्य १-०० है। आशा है समस्त शिक्षित-वर्ग अध्यापक तथा छात्र इसका पारायण करके आर्ययुवकों के उत्साह में योग देंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आद्य श्री शङ्कराचार्य जी और जादू (माया)।

[अनुवादक डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम० ए० साहित्यालंकार विशारद, कानपुर]

वेदो मे जादू, तन्त्र, मारण, मोहन, वशीकरण की चर्चा नही है। इस विषय मे मैंने ऊहापोह से अपनी पुस्तक "अथर्ववेद की प्राचीनता" मे विचार किया है।

जादू तो मानवसमाज के इतिहास मे मन को प्रसन्न करने के लिए एक पुराना साधन है।

श्री आद्य शङ्कराचार्य जी ने वेदान्तदर्शन के "शारीरिकभाष्य' मे जादू की चर्चा की है।

"यथा स्वय प्रसारितया मायया मायावी त्रिष्वपि कालेषु न स स्पृश्यते अवस्तुत्वात्, एव परमात्मापि ससारमायया न सस्पृश्यत इति।" [शा० भा० २-१-९]

जैसे अपनी प्रसारित माया से मायावी (जादूगर) तीनो कालो मे भी दूषित नही होता क्योकि वह (माया) अवस्तु है। इसी प्रकार परमात्मा भी ससार की माया से दूषित नही होता। "यथा मायाविनश्चर्मखड्गधरात् सूत्रेणाकाशमधिरोहत स एव मायावी परमार्थरूपो भूमिष्ठोऽन्य।"—[शा० भा० १-१-१७]

जैसे वास्तविक मायावी (जादूगर) तो भूमि पर खडा रहता है और एक मिथ्या जादूगर हाथ मे ढाल, तलवार लिए रस्सी पर चढता हुआ प्रतीत होता है। इसी प्रकार जीव ब्रह्म से अलग है।" इस भाष्य से ज्ञात होता है कि 'आकाशी युद्ध' रस्सी का खेल प्राचीन भारत मे था। यह खेल अब विश्व मे कोई नही प्रदर्शित करता है। सभवत श्री शङ्कराचार्य जी के समय मे इस खेल को प्रदर्शित करने वाले जादूगर थे।

"एक एव परमेश्वर कूटस्थनित्यो विज्ञानधातुरविद्यया मायया मायाविवद-नेकधा विभाव्यते।" [शा० भा० १-३-१९] 'एक कूटस्थ नित्य और विज्ञानधातु ईश्वर अविद्या द्वारा अनेक प्रतीत होता है। उसी प्रकार जैसे मायावी (जादूगर) माया द्वारा अनेक प्रतीत होता है।'

"लोकेऽपि देवादिषु मायाव्यादिषु च स्वरूपानुपमर्देनैव विचित्रा हस्त्यश्वादि-सृष्टयो दृश्यन्ते। तथैकस्मिन्नपि ब्रह्मणि स्वरूपानुपमर्देनैवानेकाकारा सृष्टि-र्भविष्यति"—[शा० भा० २-१-२८] जैसे लोक मे देव आदि जादूगर आदि बिना अपने स्वरूप को विकृत किए, विचित्र हाथी अश्व आदि सृष्टि उत्पन्न कर देते हैं। उसी प्रकार ब्रह्म भी अपने मे विकार उत्पन्न किए बिना ही अनेक प्रकार की सृष्टि उत्पन्न कर देता है।" श्री शकराचाय जी के काल मे जैसे जादूगर समझे जाते थे कि उनमे विशेष शक्ति है जिसके द्वारा वे खेलो को प्रदर्शित करते हैं, पर यह सब केवल 'चतुराई' ट्रिक (Trick) ही है। श्री गौडपादाचार्य जी के पूर्व 'माया' शब्द इस (जादू) अर्थ मे प्रयुक्त नही होता था। ऋग्वेद मे ७५ स्थलो पर 'माया' शब्द आया है परन्तु उसका अर्थ 'अविद्या', भ्रम आदि नही है। ऋ० १०-८८-६ मे 'मायाम्' शब्द है जिसका अर्थ निरुक्त ७-२७ मे श्री यास्काचार्य 'प्रज्ञा' अर्थ करते हैं। यजुर्वेद ११-६९ मे "आसुरी माया" तथा यजुर्वेद १३-४४ मे "असुरस्य माया" शब्द आया है। सभवत कुछ लोग 'असुरो की माया अर्थ समझें, पर यह बात नही है। उव्वटाचार्य जी ने यजु० ११-६९ के भाष्य मे "प्राण सम्बन्धी प्रज्ञा" लिखा है। यजु० १३-४४ के भाष्य मे उव्वटाचार्य जी 'असुर' का प्राणवाले या ज्ञानी तथा 'माया' का 'प्रज्ञा' या बुद्धि अर्थ लिखते हैं। अथर्ववेद मे २७ स्थलो पर 'माया' शब्द आया है। वहाँ भी 'कपट' अर्थ मे नही है।

जादूविद्या भारत की एक प्राचीन ललितकला है। जादूगर अनेक वस्तुओ को प्रकट करता है और उनको गायब भी करता है। यह चालाकी कुछ समय के अभ्यास से आ जाती है। भारतवर्ष मे अब शिक्षितगण भी इस कला की ओर ध्यान देने लगे हैं। कलकत्ते मे अनेक सस्थाएँ जादूगरो की हैं। यह एक ऐसी कला है जिसको सीख कर मनुष्य सम्पत्ति उत्पन्न कर सकता है। विशेष सत्कार पा सकता है। यदि आग्ल भाषा का ज्ञान हो तो विदेशो मे भ्रमण करने में भी सुविधा हो सकती है।

विशेष=[१ यजुर्वेद ३१ २६ में "मायिनाम्" का पदार्थ ऋषि दयानन्द ने 'माया कुत्सिता विद्या विद्यते येषान्तान्'='दुष्टबुद्धि वाले छली कपटी को (भावार्थ)' किया है। तथा ऋ० १ ८०, ७ मे भी (मायिनम्) छलादिदोषयुक्तम्= कपटी को (भावार्थ) किया है। अत प्रकरणानुसार 'माया' का अर्थ छल कपट भी होता है।—सह सम्पादक]

वैदिक साम्यवाद और विदेशी साम्यवाद

(पं० हरिदेव जी आचार्य गुरुकुल, भटिण्डा)

वैदिकधर्म साम्यवाद का प्रतिपादक है, वेद मे साम्यवाद के पोषक अनेको मन्त्र हैं। यथा (१) अज्येष्ठासोऽ कनिष्ठासो म भ्रातरो सवावृधु सौभगाय॥

अर्थात् कोई बडा नही, कोई छोटा नही हम सब समानरूप से भाई-भाई हैं और सबको समान रूप से सौभाग्य की बृद्धि के लिए तथा आत्मोन्नति के लिये समानरूप से यत्न करना चाहिए।

(२) समानी प्रपा सहवोऽन्नभाग समानेन योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्नि सपर्यतारा नाभिमिवाभित॥

तुम्हारी प्याऊ अथवा रक्षा के साधन समान हो तुम्हारा अन्न भाग समान हो, तुम्हें कार्य मे मैं समान रूप से नियुक्त करता हू। तुम समान रूप से अग्नि अर्थात् एक ज्ञान एक ईश्वर, वा एक नेता का सेवन करो और रथ के अरो के समान सब समान रूप से मिल कर रहो।

(३) विभक्तार हवामहे वसोश्चित्रस्य राधस॥ सब धनो का उत्तम रूप से विभाजन करने वाले राजा वा नेता को हम आह्वान करते है, पुकारते हैं।

(४) सगच्छध्व सवदध्व स वो मनासि जानताम्। देवा भाग यथा पूर्वे सजानाना उपासते॥ तुम सब मिलकर चलो, मिलकर वार्तालाप करो, तुम्हारे मन मिले रहें और जिस प्रकार पूर्व के ज्ञानी लोगो ने अपने कर्तव्य को समान रूप से सिद्ध किया वा उपासना की थी वैसे ही तुम भी समान रूप से उसे प्राप्त करो।

(५) मोघमन्न विन्दतेऽप्रचेता सत्य ब्रवीमि वध इत्सतस्य नार्यमण पुष्यति नो सखाय केवलाघो भवति केवलादि अज्ञानी मनुष्य व्यर्थ ही अन्न वा धन को प्राप्त करते हैं क्योकि वे उसे न तो ईश्वरार्पण करत है न दोस्तो, मित्रो मे बाटते हैं। वह धन केवल उनकी मृत्यु रूप ही है, और जो अकेला खाता है वह केवल पाप का ही भक्षण करता है अन्न का नही। गीता म भी कहा है कि—

(६) भुञ्जते त्वघ पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥ जो पापी वा स्वार्थी लोग केवल अपने लिये ही पकाते है। वे केवल पाप का ही भक्षण करत हैं और वे भगवान् के तथा राष्ट्र के चोर हैं। बृहस्पतिनीति मे निम्न प्रकार से साम्यवाद की स्थापना की है। (७) धर्माय यशसे कामाय स्वजनाय परहिताय च। पञ्चधा विभजन् वित्त इहामुत्र च मोदते॥

जो मनुष्य अपने धन को धर्म के लिये, यश प्राप्ति के लिये, स्वच्छा पूर्ति के लिये अपने बन्धु बाधवो के लिय, और परोपकार के कार्यो मे पाँच प्रकार से बाट कर उपभोग करता है वह इस लोक मे परलोक मे दो स्थानो पर सदा सुखी वा प्रसन्न रहता है। पुन कहा—(८) सभा प्रपा-देवगृह-तडागा राम-सस्कृति। तथा अनाथ दरिद्राणाम् सरक्षण याजन क्रिया॥

(९) समर्थस्तु पालनीया सर्वे य समर्थस्तु सवदेत्। तस्य सर्वस्य हरण दण्ड: निर्वासिन च पुरात्॥

(१०) यावद्भ्रियते उदर तावत्स्वत्व हि देहिनाम्। तदूर्ध्वं यो हि मन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति॥

धनी पुरुषो का धर्म है कि वे सार्वजनिक हित के लिये सभा भवन, विद्यालय, मन्दिर, कूआ, तालाब उद्यान आदि तथा अनाथ, विधवा, आदि पीडितो की रक्षा, और बडी-बडी राष्ट्रहित की इञ्जीनीयरिग आदि योजनाओ के लिये धन देवें। यदि कोई धनी इनकार करे तो राजा का कर्तव्य है कि उसका सब धन जब्त करले और उसे देश निकाला दे दे। जितने से पेट भरता है उतने का ही मनुष्य अधिकारी है। जो उससे अधिक रखता है वह चोर है और दण्ड का अधिकारी है।' दूसरे स्थान पर कहा गया है कि 'दान सविभाग कि—(११) दान का लक्षण सविभाग अर्थात् समान बटवारा है।

(१२) योगदर्शन मे यमनियमो का पालन आवश्यक है। यमो के अन्तर्गत 'अपरिग्रह" की गणना की गई है जिसका अर्थ है आवश्यकता से अधिक सग्रह न करना।

(१३) वर्णाश्रम मर्यादानुसार मानव-समाज को चार भागो मे विभक्त किया गया है। मनुष्य की सौ वर्ष की आयु मे ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ तथा सन्यास मे धन का महत्व नही केवल गृहस्थी ही धन रख सकना है जिसकी अवधि केवल २५ वर्ष है। आयु के ७५ वर्ष धन जोडने का प्रश्न ही नही। मानव समाज के भी ३/४ भाग को ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र को धन कमाने का अधिकार नहीं केवल वैश्य धन कमा सकता है और वह भी कोषाध्यक्ष के रूप म मालिक के रूप मे नही।

(१४) इसके अतिरिक्त पांच यज्ञो का प्रचार क्रियात्मक साम्यवाद है।

(१५) भारत के ग्रामों की पुरातन व्यवस्था साम्यवाद का सच्चा आदर्श है। जिसमे प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति अनुसार एक दूसरे का कार्य करता है और फसल पकने पर धोबी, मोची, बढई, लोहार सब कोई अपना-अपना भाग प्राप्त कर लेता है। युक्ति से भी साम्यवाद सिद्ध होता है, यथा जब हम सब एक परमपिता

(शेष पृष्ठ ८ पर)

हरयाणे के किसान भाई ! अब तो जाग !

अनजान ग्राहक या पशु-व्यापारी को अपनी गाय न बेचिये । आज ही गाँव में पंचायत करके इसका निर्णय कीजिये ।

भारत में अच्छे पशुओ का इलाका हरयाणा है । हरयाणा के जिले गुड़गांवा, रोहतक, जीन्द, करनाल, अम्बाला, हिसार और महेन्द्रगढ बीस साल पहले अच्छे पशुओ के केन्द्र थे, वहाँ गाँव मे दूध का बेचना बुरा समझा जाता था । यहाँ के बैल बहुत बढिया नस्ल के और सस्ते थे । इन बैलो पर उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और बिहारप्रान्तो मे खेती बाड़ी का बहुत कुछ निर्भर था । आज कलकत्ता, बम्बई और मद्रास आदि बडे शहरो को अच्छे दुधारू पशुओ की निकासी के कारण अच्छे बैल और साँडों की बहुत कमी हो गई है । दूध-घी के भाव दिन-दिन ऊपर चढते जा रहे हैं । गरीब को तो लस्सी भी नसीब नही हो रही ।

२० वर्षों से देख रहे हैं और सुन रहे हैं कि सरकार हर वर्ष गायो की निकासी पर पाबन्दी लगाने की बात चला कर जनता मे भ्रम पैदा करती है । लेकिन करना-कराना कुछ नही है । आगे छपे कलकत्ता के दो कसाईखानो के आँकडे आप पढे । इस प्रकार के आसाम, बगाल, उड़ीसा, आध्र, केरल मद्रास, बम्बई और महा राष्ट्र में सैकडो कसाईखाने चल रहे हैं । जिन प्रान्तो मे गोवध निवारण कानून बने हुए हैं । वहाँ कसाई अपने घरो मे गोहत्या करते हैं जिनका कोई हिसाब नही है ।

अब मेरा हरयाणा के किसान भाइयो से नम्र निवेदन है कि आप सरकार के भरोसे पर न रहे निकासी बन्द करने का कानून आपने स्वय बनवाना है, स्वराज्य से पहले किसी मुसलमान पशु-व्यापारी को गाँव में गाय और बछड़ा नही बेचा जाता था । उसी प्रकार अब आप इन नई किसम के हिन्दू पशु-व्यापारियो को किसी भी कीमत पर गाय न दें । ये केवल 'राम' नाम के हिन्दू हैं । आज रोहतक मण्डी इन्ही के कारण अच्छे पशुओ की बर्बादी का एक गढ बना हुआ है । इस गढ में आ की गाय और बछड़ा न पहुँचे इसका प्रबन्ध आप आसानी से कर सकते हैं । यदि थोडे से लालच के लिए अब आप न सम्भले तो वह समय नजदीक है कि शुद्ध दूध-घी के दर्शन न होगे । आप डाक्टर और वैद्यो की दुकानो पर टक्करें मारते फिरेंगे । अत अब आप चेत जाइये और अपने गाँव मे सभी जाति के लोगो की पचायतें करके निम्न बातो का निश्चय करिये—

(१) अनजान ग्राहक या पशु व्यापारी को अपने अपने गाँव से गाय न खरीदने देवें । (२) रोहतक, जीन्द, करनाल, अम्बाला, नरवाना, हिसार हासी, भिवानी, दादरी रिवाडी आदि बडे स्थानो और हरयाणा के जिस भी स्टेशन से गायें लादी जाती हैं वहाँ बडे-बडे पशु-व्यापारी और उनके दलाल बैठे हुए हैं, ये गाय के सबसे बडे दुश्मन हैं, वहाँ के स्थानीय लोगो को चाहिये कि वहाँ स्थानीय गोरक्षा समिति बना कर इन गायो को रेल मे चढने से रोकें, उन हिन्दू कहलाने वाले पशु व्यापारियो को जनता मे बदनाम कर गाय को रेल या ट्रक मे न चढने दें ।

(३) अपने इलाके से लाल पगडवाले राजस्थानी बजारो द्वारा पूर्व को जमुना नदी की ओर गाय और बछड़ियो के टोलो को न जाने दें । जब आप रोकेंगे तो वह कहेगे कि राजस्थान मे अकाल है हम इन्हे चराने ले जाते हैं, यह उत्तर-प्रदेश के कसाइयो के एजेण्ट हैं । यह सभी गायें और बछड़ियाँ कसाई की छुरी के नीचे जाती हैं । (४) यह भी सूचना मिली है कि इन बजारो के पास प्राय चोरी की गायें होती हैं । अफीम और गाँझा राजस्थान से लाकर इस इलाके मे बेचते हैं । इनकी पूरी तरह पड़ताल की जावे तो इनके एजेण्टो का भी पता चल जावेगा यह कहाँ-कहा अफीम और गाँझा बेचते हैं ? अत पुलिस वालो को भी इस ओर ध्यान देना चाहिये । (५) जो लोग क्रूम का जूता पहनते है वह इसका तुरन्त त्याग करें, वह क्रूम बछडे की खाल का बनता है ।

सुखदेवसिंह, कार्यालय मन्त्री, भारत गोसेवक समाज ।

क्या द्वार पर गाय रहेगी ?

केवल कलकत्ता के टांगरा और गार्डनरीच के बूचड़खानों पर एक नजर डालिये !

वर्ष	बैल	गाये	भैंस	भैंसे	कुल जोड़	नापास पशुओ की सख्या
(टागरा)						
१९६०-६१	१४ ४७९	१४ १७६	१३ ६४२	१३,७६५	५६,०६२	१५,४७१
१९६१-६२	७ १४९	१५ ३७८	१७ ०३५	९ ४६३	५१,०२५	१९,०१५
१९६२-६३	७ ५६३	१४ ९१२	१५ १०९	१२,५०६	५०,०९०	१७,५२०
१९६३-६४	६ ९०८	१२,९४८	१३ ७०१	१२,४५१	४६,००८	९ ७५२
१९६४-६५	४ ३६७	१४ ८४५	१६ ०६४	१२,४६७	४७,७४३	२० १९३
१९६५-६६	८ ८७३	१४ ६८६	१५ ७०९	२१,२५८	६०,५२६	३४,६५२
१९६६-६७	१६,४१२	८,६०५	१३ ३६६	२२,४७३	६०,८५६	४६,५५१
१९६७-६८	१७ ४३४	७ ५११	१५ ६२६	२७,३१४	६७,८८५	३१,८३४
(गार्डनरीच)						
१९६०-६१	१५ ७९०	६ २५६	३ १०७	१,०४६	२६,१९९	७,६३२
१९६१-६२	१७ ४७४	५ ८१५	३,५७६	१,७३६	२८,६०१	७,८८१
१९६२-६३	१७ ४३४	५ ५३१	३ २८७	१ ३९८	२७,६५०	५,७३३
१९६३-६४	१५ ६८५	६ ४८१	३ २२४	४,३७७	२९,७६७	१२ ७१२
१९६४-६५	१२ १६१	११ ७५०	३ ४७७	४ ४०४	३१ ७९२	१९ ६९७
१९६५-६६	६ २२२	११ १७३	४ ५८०	२,४०२	२४,३७७	२१,२०६
१९६६-६७	९ ३३१	६ ६१३	३ ५४७	२ ६७०	२२ १६१	१९,३२९
१९६७-६८	६ ९०६	७,४८६	५,६१०	२ ३५१	२२,३५३	१९,०६०

सर्वदलीय गोरक्षा महाभियान समिति ११ ए कलाकार स्ट्रीट कलकत्ता ७ द्वारा प्राप्त

ये आँकड़े केवल सरकारी हैं !

बगाल की १४ नगर पालिकाओ मे एनीमल स्लोटर कण्ट्रोल ऐक्ट १९५० लागू है । इनकी सीमा के बाहर अवैध गोहत्या पर कोई कण्ट्रोल नही है । जो पशु बूचड़खाने से नापास हो जाते हैं वह प्राय कलकत्ता की नगरपालिका से बाहर कतल कर दिये जाते हैं । दुधारू गायें जो कलकत्ता ले जाई जाती हैं उनके बछड़े-बछड़ियो को १० १५ दिन मे कलकत्ता के होटल वाले मास के लिए खरीद ले जाते हैं ।

सबसे बडी आश्चर्य की बात यह है कि बकर-ईद के दिन बगाल मे मुसलमानो को गायो की कुर्बानी के परमिट दिये जाते हैं और सरकार की देखरेख मे उनकी कुर्बानी दी जाती है जबकि देश के अन्य किसी प्रान्त मे भी ऐसा नियम नही है । कलकत्ता देश की सर्वोत्तम नसल की गायो की वध-भूमि है ।

स्व० प० जवाहरलाल जी नेहरू ने १५ नवम्बर १९५५ को आनन्द (बम्बई) की दुग्धशाला के उद्घाटन के समय सन्देश भेजते हुए लिखा था कि 'जहाँ तक देश के पशुधनके निरन्तर ह्रास का प्रश्न है, कलकत्ता, बम्बई तथा कुछ अन्य बडे नगर सबसे बडे पातकी हैं। —सुखदेवसिंह

शोक समाचार

आर्य जगत् और गोरक्षक प्रेमियो को यह जानकर बहुत दुःख होगा कि डाक्टर रघुवीरसिंह आर्य गाँव कल्हावड (जिला रोहतक) की धर्मपत्नी का स्वर्गवास हो गया । डाक्टर साहिब दृढ आर्य पुरुष हैं । गत गोहत्या निरोध आन्दोलन मे आप आरम्भ से अन्त तक बार-बार सत्याग्रह करके तिहाड़ (देहली) जेल मे रहे । सत्याग्रहियो पर जेल मे जो अमानुषिक मार-पीट की गई उसमे आपको भारी चोटें पहुँचाई गई । अगहीन कर दिया गया । हाथ बेकार कर दिया गया, परन्तु डाक्टर साहिब अडिग रहे । आपके गृहस्थ का भार आपकी धर्मपत्नी पर ही था । भगवान् आपको परिवार सहित इस वज्रसम दुःख को सहन कर सकने के लिये धैर्य देवे । 'आर्यमर्यादा पत्र आपके परिवार के प्रति शोक समवेदना प्रकाशित करता है । —जगदेवसिंह सिद्धान्ती

हरिजनों के ईसाईकरण से भारी खतरा

केन्द्रीय खाद्य मत्री श्री जगजीवनराम ने चेतावनी दी कि यदि १०-१५ वर्ष और हरिजनो का धम परिवर्तित करके उन्हे ईसाई बनाया जाता रहा तो भारत पर 'ईसाईस्तान' की स्थापना के लिये दबाव डाला जायेगा ।

हाल के वर्षों म ईसाई मिशनरियो की हरिजनो को ईसाई बनाने की गतिविधियो का पता चला है । यह धर्म परिवर्तन भारत के लिए एक बहुत बडी समस्या खडी कर देगा । आपने स्वय हिन्दुओ को जो अनुसूचित जातियो का शोषण कर रहे हैं, चेतावनी देते हुए कहा कि उन्हे इस बात को अनुभव करना चाहिये कि हिन्दु धर्म ो खतरे में है ।

यदि छुआछूत खत्म न की गई, गाँवो मे हरिजनो को एक साथ कुओ से पीने का पानी लेने की स्वतन्त्रता न दी गई और उनके साथ हरेक प्रकार का भेदभाव समाप्त न किया गया तो एक दिन गावो की स्थिति को सम्भालना कठिन हो जायेगा ।

इस बात पर विश्वास नहीं होता कि अब भी भारत में छुआछूत जारी है ।

काशी शास्त्रार्थ समारोह का आमन्त्रण

यह सर्वस्वीकृत तथ्य है कि ससार के प्राचीनतम ग्रंथ चारो वेदों मे गुण-गुणी के ज्ञान के प्रकाशक होने से ऋग्वेद की प्रथम गणना की जाती है। जिस परमात्मा की परमशक्ति से इस विश्व का सृजन हुआ और जो इसका नियन्ता है उसी की कृपा से सृष्टि के आदि मे आद्य ऋषियो के द्वारा मानवोके नैमित्तिक ज्ञान के लिये वेदो का अविर्भाव हुआ। व्यापक सृष्टिज्ञान तथा परमतत्त्व ज्ञान के लिये मानव-बुद्धि को प्रकाश एव प्रेरणा प्रदान करने के निमित्त ही वेदो के कृपामय सदेश हैं।

वेदो मे निहित सदेश किसी देश, किसी काल के लिये नही, सार्वदेशिक, सार्वकालिक मानवहित के एव इसके द्वारा समस्त प्राणियो के हित के सदेश हैं। अत उनमें विद्या है, इतिहास नही, ज्ञान है, अनित्य गाथा नही। वेद समस्त ज्ञान-विज्ञान के स्रोत हैं एव उनके मौलिक प्रमाण हैं। वेदविद्या मे अध्यात्म और विज्ञान की सहज सगति है, अत ये दोनो वैदिक सृष्टिविद्या के दो पक्ष हैं। अतएव दर्शन तथा विज्ञान के उत्तरोत्तर यथार्थ शोधो से वेदविद्या कही बाधित नही, अपितु उत्तरोत्तर सुविज्ञात एव समर्थित होती आ रही है।

वेदो मे व्यक्ति तथा समाज की कल्याणमय व्यवस्था के शाश्वत सदेश हैं, विचार-आचार, कर्म-अकर्म एव नीति-अनीति के सार्वकालिक मत्र हैं। वैदिक यज्ञो का सदेश एक ओर सत्य सकल्पो के धारण का और दूसरी ओर सत्कर्मों के अनुष्ठान का सदेश है, हवन-यज्ञ जिसका प्रतीक है। अत यज्ञो के लिये अर्थात् सत्सकल्पो तथा सदनुष्ठानो के लिये, मनुष्य का तथा इनकी इष्ट वस्तुओ का धर्मभाव से समर्पित होना वैदिक सदेश है। बाद के भ्रष्ट युग के वामाचारियो द्वारा यज्ञो मे पशुबलियो नरबलि तथा मास-मद्य सेवन की कल्पना उस सदेश से सर्वथा प्रतिकूल भ्रष्टाचार है।

वेदो के पावन सदेशो मे मानव मात्र मे समभाव एव सहगमन की प्रेरणाएँ हैं। इनमे प्रत्येक के स्वभाव एव स्वकर्म की प्रतिष्ठा है, मनुष्यता के ऊँच या नीच, छूत या अछूत की कल्पना नही। इनमे प्रत्येक की अपनी योग्यता से समाज के अग के रूप मे कर्त्तव्यो के साथ ही अधिकारो का ध्यान करते ऊँचे से ऊँचे विकास की ओर इस प्रकार समाज के सर्वाङ्गीण एव सामञ्जस्यपूर्ण प्रगति की प्ररणाएं हैं।

वेदो के प्रादुर्भाव-देश भारत मे ही इनके सदेश पिछली लम्बी शताब्दियो मे जडता एव वामाचार के प्रभाव से आभल रहे एव यह देश तथा विश्व इनके प्रकाश एव प्रेरणाओ से वचित रहा और जडता एव वामाचार से ग्रसित रहा। मूल वेदो तक पहुच न होने से कितने ही आचार्य मौलिक प्रकाश प्राप्त न कर सके एव उक्त दुरवस्था को दूर न कर सके। इस देश का तथा ससार का परम सौभाग्य है कि गत शताब्दि मे उस महान् मौलिक-प्रतिभा सम्पन्न ऋषिदयानन्द सरस्वती, का उदय हुआ जिससे यथार्थ ऋषि के अनुरूप वेदो के दिव्य मौलिक ज्ञान को शोध-साधना से, योगसामर्थ्य से, महागुरु विरजानन्द सरस्वती के प्रसाद से, उपलब्ध किया और युगो [illegible] द उस दिव्य आलोक एव मौलिक ज्ञान-विज्ञान का झरना पुन खोल दिया [illegible] उस सत्य अर्थों का प्रकाश वितरित कर विश्व को कृतार्थ किया जिनके [illegible] ऊपर निवेदित है।

इस दिव्य ज्ञान के नये उन्मेष महर्षि दयानन्द ने मुख्यत अपने दो ग्रन्थो, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका तथा सत्यार्थप्रकाश, द्वारा प्रस्तुत किये और अपने जीवन की लम्बी साधना और तदुपरान्त देशव्यापी प्रचार के बीच दो वेदो के भाष्य भी प्रस्तुत किये, जिनसे वेदो के अर्थ एव तत्त्व समझने की आर्षविधि पुन उद्भावित हुई।

वैदिक ज्ञान एव सदेशो के प्रचारार्थ ऋषि ने जो व्यापकप्रयास, प्रवचन, शास्त्रार्थ आदि किये, उनमे भारतीय विद्या की केन्द्रिय नगरी काशी मे तत्कालीन प्रमुख विद्वानो को आमन्त्रित कर वेदो के सत्यार्थ के प्रतिपादनार्थ उनसे शास्त्रार्थ करना विशेष महत्त्वपूर्ण घटना है। तत्कालीन निष्पक्ष अन्वेषको ने उसे ऐसा ही माना है। वह शास्त्रार्थ सम्वत् १९२६ मिति कार्तिक सुदि १२ के दिन हुआ था। वैदिक ज्ञान के उस उन्मेष तथा उद्घोष को हुए आगामी सम्वत् २०२६ मिति कार्तिक सुदि १२ दिनाक को एक शताब्दि हो जायगी।

उस महान् ऋषि-ऋण का स्मरण कर उसके प्रति कृतज्ञता निवेदन के लिए तथा वैदिक-ज्ञान चर्चाओ के लिए आगामी वर्ष सम्वत् २०२६ के कार्तिक मे उसकी शताब्दि समारोह मनाने का सकल्प है। इस सम्बन्ध की सूचनाएँ यथासमय निवेदित होगी।

उस समारोह के प्रसग मे यह आयोजन विशेषत सकल्पित है कि महर्षि दयानन्द के द्वारा व्याख्यात वैदिक सन्देशो के विषय मे देश-विदेश के विद्वानो से पक्ष तथा विपक्ष मे विचारित सप्रमाण लेख उपलब्ध किए जायें और उन्हे यथोचित रूप में सगृहीत कर प्रकाशित किया जाय। एतदर्थ आप एव देश-विदेश के श्रद्धालु तथा जिज्ञासु विद्वानो को सादर आमन्त्रित किया जाता है। आप एव वे कृपया अपने यथोक्त लेख आगामी ३१ जनवरी सन् १९६९ तक निम्नलिखित कार्यालय के पते पर प्रेषित करें। आशा है इस पुण्य यज्ञ मे आप सबका यथेष्ट योगदान यथासमय उपलब्ध होगा।

मन्त्री—वाराणसी आर्य उपप्रतिनिधि सभा
नन्दसदन, सिकरौल, वाराणसी—२

आवश्यक निवेदन

।। सं श्रुतेन गमेमहि, मा श्रुतेन वि राधिषि ।।

हम सदा वेदवाणी से सयुक्त रहे, उससे कभी विमुख न हो

वेदो के सत्यप्रकाश के अभिलाषी महानुभाव !

महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन की अनुपम एव अलौकिक अत्यन्त महत्व-पूर्ण घटना काशी शास्त्रार्थ है, जो कि दुर्गाकुण्ड स्थित अमेठीराज्य के आनन्दबाग मे हुआ था। उस शास्त्रार्थ ने जहा ऋषि की अथाह विद्वत्ता, तर्क और अलौकिक प्रभा की धाक भारत मे जमा दी और जिसकी गूँज विदेशो मे भी पहुँची, वही पर वेदो के उस सत्य स्वरूप का अलौकिक, सुखदायी, मधुर शताब्दियो से अवरुद्ध झरना जो आदि सृष्टि से लेकर महर्षि जैमिनि पर्य्यन्त प्रवाहित था पुन खोल, विश्व को आश्चर्य चकित कर दिया। हमने इस अलौकिक घटना को उसी के गौरव के अनुरूप आगामी २० नवम्बर १९६९ मे, उसकी शताब्दी पूर्ण होने पर, स्मृति के रूप में मनाने की योजना बनाई है।

उस अन्धकार युग मे वेदो के नाम पर रक्त की नदियाँ बहती थी। प्यारे ऋषि ने उस पाखण्ड एव भ्राति को दूर कर वदो का सत्य स्वरूप विश्व के सामने रखा तो अवश्य, परन्तु इस पर भी अभी स्वार्थी उनके प्रति जाने अनजाने भ्राति फैलाकर मानव को दुखी बना रहे हैं। वेदो के प्रेमियो एव आस्था रखने वालो का परम कर्त्तव्य है कि वह ऋषि ऋण का स्मरण कर इस प्रकार की भ्रातियो को समूल नष्ट करे। इसी हेतु हमने विश्व के विद्वानो को आमन्त्रित किया है कि वह या तो वेदो के सत्यस्वरूप को जैसा आदि सृष्टि से लेकर जैमिनि पर्य्यन्त ऋषि मानते हैं और जिसका प्रतिपादन पुन ईसा की १९वी शताब्दी मे ऋषि दयानन्द सरस्वती ने किया था, उसे स्वीकार करें या वह अपना पक्ष सप्रमाण लिखित अथवा शास्त्रार्थ द्वारा प्रस्तुत करें। हम उनका उत्तर उनके आक्षेप के साथ पुस्तक के रूप में नवम्बर १९६९ मे भेंट करेंगे ताकि जनता सत्यासत्य का निर्णय कर वैदिक ज्ञान का दर्शन कर उससे लाभान्वित हो सके।

वेदो के प्रति यह कार्य महान् है, ठोस है, और स्थाई है। इसके लिये प्रत्येक आर्य नरनारी का वेदो के प्रति सच्ची आस्था रखने वालो का सच्चा श्रद्धामय सह-योग अपेक्षित है। यह महान् कार्य केवल काशी वालो का ही नही वरन् विश्व के उन सब महानुभावो का है जो वेदो को प्रभु की वा[illegible] हैं उसे सब सत्य विद्याओ का भण्डार मानते हैं। हमारा सब का परम सौभाग्य है कि हमारे जीवन काल मे यह शुभ अवसर आया है कि हम प्रभु की वाणी वेद की रक्षा, एवम् उसके सत्यस्वरूप के प्रचार में और उस पर चढे भ्रम को दूर करने में कुछ अपनी सेवा कर पुण्य कमा सकें।

आप से नम्र निवेदन है कि आप इस पुण्य यज्ञ में जिस योग्य भी हो सहयोग की आहुति, श्रद्धा एव प्रेम से दें। धनी दाता अपना सात्त्विक दान देकर पुण्य के भागी बनें, जिससे हम पुन महर्षि प्रतिपादित वेदो के सत्यस्वरूप का प्रकाश करने में सफल हो सकें। वेदो के विद्वान् अपने शोध पत्र दें और नियत तिथियो में यहाँ काशी मे आकर वेदो के सत्यस्वरूप का प्रकाश फैलाने मे सहायक हो।

हमे पूर्ण विश्वास हैं ऋषिभक्त भाई-बहिन वेदो के प्रति सच्ची आस्था रखने वाले नरनारी एव मानवता को ही नही प्राणी मात्र को अधिकाधिक सुखी बनाने के अभिलाषी बन्धु हमारे इस अनुरोध एव विनय पर विशेष ध्यान देकर अपने प्रेम व श्रद्धा का परिचय देगे। जो प्रमी भाई बहिन, सस्था या आर्यसमाज जिस प्रकार की सहायता देनी चाहे वह कृपया हमे १५-१-६९ तक निम्न पते पर सूचित करने की कृपा करें।

भवदीय—
कैलासनाथसिंह मत्री, खेमचन्द्र उपप्रधान
आर्य उपप्रतिनिधि सभा वाराणसी एव आर्यसमाज
बनारस छावनी, भोजूबीर वाराणसी कैण्ट।

उपर्युक्त अपील वास्तव मे अत्यन्त आवश्यक एव महत्त्वपूर्ण है। महर्षि ने वेदो के जिस यथार्थ स्वरूप को विश्व के समक्ष रखा था उसे काशी शास्त्रार्थ समा-रोह के रूप मे विश्व के समक्ष रखकर वेदो के प्रति फैली भ्राति दूर करने का प्रयास सराहनीय एव अत्युत्तम होगा। ऋषिभक्त आर्यजनता एव वेदो के प्रति सच्ची आस्था रखने वाले भाई बहिनो को इस पावन यज्ञ के सफल बनाने मे अवश्यमेव तन मन धन से सहयोग करना चाहिये।

१—स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती, नई दिल्ली। २—आनन्द स्वामी सरस्वती प्रधान आर्य महासम्मेलन हैदराबाद। ३—प्रज्ञादेवी व्याकरणाचार्या अध्यक्षा पाणिनि-कन्या महाविद्यालय वाराणसी। ४—विद्यानन्द शर्मा मन्तकी आर्यमहोपदेशक शास्त्रार्थ-महारथी वाराणसी उत्तरप्रदेश।

सदाचार की आवश्यकता

(आकाशवाणी द्वारा प्रसारित श्री जगदेवसिंह सिद्धांती का भाषण)

सदाचार मनुष्य के जीवन को ऊचे उठाता है । सदाचार का प्रभाव केवल एक व्यक्ति के ऊपर ही नही पडता, प्रत्युत जिस परिवार का वह अग है, वह भी प्रभावित होता है । फिर परिवार से आगे बढ कर समाज और राष्ट्र का भी उत्थान होता है जिन नियमो पर चलने और कर्त्तव्यो का पालन करते रहने पर कोई भी मनुष्य अपनी और दूसरो की भलाई करता है और किसी की हानि नहीं करता, उन नियमो और कर्त्तव्यो को सदाचार कह सकते हैं, तथा ये आचार के नियम और कर्तव्य सदा से चले आये हैं, इस लिये भी इनको सदाचार कहा जाता है ।

हमारा भारत देश अतिप्राचीन काल से ही सुसस्कृत और सभ्य रहा है । वर्तमान सृष्टि के आरम्भ मे ही आदिब्रह्मा ने व्यक्ति, परिवार समाज, राष्ट्र और विश्व मे बसने वाले सभी लोगो के लिये सदाचार के सामान्य और विशेष नियम बनाये थे तथा इन नियमो को जनता के व्यवहार मे लाने के लिये भारत के आदि शासक मनु को दे दिये थे । इसी कारण इन नियमो को अब तक मनुविधान-मनुस्मृति-मनुधर्मसूत्र तथा मनुधर्मशास्त्र के नाम से कहा जाता है । हमारे साहित्य मे धर्म शब्द से कर्तव्य का ग्रहण किया जाता रहा है, किसी मतमतान्तर अथवा सम्प्रदाय विशेष का नही । इन सदाचार के नियमो पर सभी जन, सम्प्रदाय, राष्ट्र, समाज, वर्ग, बिरादरी और व्यक्ति चल कर एक समान लाभ उठाते रहे हैं, अब भी उठा सकते हैं और आगे भी उठाते रहेगे । इन सामान्य नियमो के आधार पर सभी स्त्री, पुरुष, बालक, युवा वृद्ध और तपस्वी त्यागी महात्मा लोग अपनी-अपनी आयु और योग्यता के अनुसार अपना अपना विशेष कल्याण कर सकते हैं । यह सदाचार की व्याख्या पति पत्नी और सतान, अध्यापक और छात्र, भाई और बहिन तथा प्रशासक राजपुरुष और प्रशासित प्रजा के विशिष्ट कर्तव्यो के चरित्र निर्माण तथा शिक्षा की रीति को बतला कर सब की उन्नति करने के साधन जुटाती है । हमारे राष्ट्र के प्रथम जननाय मनु ने यही घोषणा कर दी थी—कि 'एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन । स्व स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा ।" अर्थात् इस भारत राष्ट्र मे जन्म लेने वाले सब विद्याओ मे निपुण श्रेष्ठ विद्वानो के पास पहुँच कर ससार के सभी मनुष्य अपने अपने गुणकर्मस्वभाव के अनुसार अपने कर्तव्यो और चरित्र निर्माण की शिक्षा ग्रहण करे तथा वापस जा कर अपने अपने देश मे मानवमात्र को सदाचार के इन नियमो और कर्तव्यो पर चलने के लिये समझावे । इसी मार्ग पर चलने मे विश्व की भलाई है । क्योकि—'येनास्य पितरो याता येन याता पितामहा । तेन यायात्सता मार्गेण तेन गच्छन्न रिष्यते ।" जिस सदाचार मार्ग पर हमारे पिता-माता-गुरु आदि विद्वान् और दादा परदादा आदि पूर्वज चलते आये हैं, उसी सदा से चले आ रहे श्रेष्ठ मार्ग पर हम सब को चलना चाहिये, इस मार्ग का अनुसरण करने पर किसी भी व्यक्ति को कभी दु ख नहीं होता । सदाचार शब्द की व्याख्या दो ढग से की जाती है । एक तो "सदा' हमेशा से चला आ रहा उत्तम आचार-चालचलन और दूसरा "सद्=श्रेष्ठ नेक आचार=कर्तव्य इन दोनो व्याख्याओ से एक भाव यह सिद्ध होता है कि सदा से चले आ रहे श्रेष्ठ आचार पर हमे चलते रहना चाहिये । इस मे हमारा मनुष्य मात्र का कल्याण निहित है और सब प्रकार के रोग, रागद्वेष-अन्याय-कुकर्म और अज्ञान से बचे रह कर दु खी नही होते । इन्ही भावो को मनुधर्म सूत्र मे इस प्रकार बतलाया है कि "विद्वद्भि सेवित सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभि ।" अर्थात् जिस मार्ग पर रागद्वेष को छोड कर श्रेष्ठ शुद्धाचार वाले विद्वान् लोग सदा से चलते और उसका सेवन करते हैं, उसी पवित्र सदाचार पर हमे भी चलना उचित है ।

सदाचार की रीति पर चलने मे सब मनुष्यो को यह लाभ होता है कि, 'आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिता प्रजा । आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणम् ।' अर्थात् श्रेष्टाचार पर चलने से नीरोगशरीरपूर्वक लम्बी उमर हो जाती है । उस मनुष्य को गृहस्थ मे आने पर अच्छी सतान की प्राप्ति होती है । कभी नष्ट होने वाली आचार रूपी सम्पत्ति मिलती है तथा आचार का पालन करने से कुलक्षण नष्ट हो जाते है । जो लोग सदाचार से दूर रह कर दुराचारी हो जाते हैं, उनकी यह बुरी दशा हो जाती है कि—"दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दित । दु खभागीच सतत व्याधितोऽल्पायुरेव च ।" जो लोग दुराचारी होत है जिनका चाल-चालन बुरा होता है । उसकी ससार मे सदा निन्दा होती है । ऐसे दुर्व्यसनी लोगो का सर्वत्र तिरस्कार होता है और ऐसे दुष्ट मार्ग पर चलने वाले दुराचारी लोग सदा दु ख उठाते हैं । व्याधियो बीमारियो में फसे रहत हैं और उनकी उमर थोडी रह कर शीघ्र मर जाते हैं । परन्तु सदाचार पर चलने वाले लोगो की उत्तम दशा सुनिये—'सर्वलक्षणहीनोऽपि य सदाचारवान्नर । श्रद्दधानोऽनसूयश्च शतवर्षाणि जीवति ॥" जो सदाचारी मनुष्य विद्यादि सब अच्छे लक्षणो से रहित भी हो, परन्तु डाह, ईर्ष्या आदि दुगणो से दूर रहता हो और सदाचार के मार्ग से श्रद्धा मे चलता हो, तो वह मनुष्य सौ वर्ष की लम्बी आयु भी प्राप्त करके सुखी जीवन व्यतीत करता है ।

सदाचारी युवक जब अपने सामने आते हुये किसी पूज्य वृद्ध महानुभाव को देखता है, तब उसके मन की दशा ऐसे हो जाती है कि—

"ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यून स्थविर आयति । प्रत्युत्थानाभिवादाभ्या पुनस्तान् प्रतिपद्यते ॥' वृद्ध को आता देखकर जवान के प्राण निश्चय से ऊपर को गति करने लगते हैं । जब वह उस पूज्य वृद्ध को उठ कर नमस्कार कर लेता है, तब उसके प्राण पुन अपने स्थान पर वापस पहुच कर शान्त होते हैं । यह लक्षण सदाचारी को स्वय प्रोत्साहित करता है । जब युवक इस प्रकार सदाचार के नियमो को अपने चरित्र मे ढालने लग जाता है, तब—

'अभिवादनशीलस्य नित्य वृद्धोपसेविन । चत्वारि तस्य वर्धन्त आयुर्विद्या यशोबलम् ॥" पूज्य वृद्ध महानुभावो को नमस्कार और सेवा करना वह युवक अपना पवित्र कर्म समझ लेता है और उसके अनुसार अपना स्वभाव बना लेता है, तो उसकी आयु, विद्या, कीर्ति और बल बढने लग जाते हैं । सदाचारी व्यक्ति की यह पहिचान देखी जाती है—"मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत् । आत्मवत् सर्वभूतेषु य पश्यति स पश्यति ॥" किसी नीतिकार ने क्या खूब कहा है—कि जो मनुष्य दूसरों की स्त्रियो को अपनी माता जननी के समान देखता है अर्थात् अपने से बडी उमर की देवियों को माता के रूप में समझता है । अपनी आयु के समान अवस्थावाली महिलाओ को अपनी सगी बहिन की निगाह से देखता है तथा अपने से छोटी उमर की बालाओ को अपनी पुत्री के समान मानता है । दूसरो के धन और सम्पत्ति को मिट्टी के ढेले के समान समझता हुआ उस पर लोभ लालच की दृष्टि नही डालता । सम्पूर्ण प्राणियो के आत्मा को अपने आत्मा के सदृश जानता है, अर्थात् अपने सुख दु ख के समान ही सभी जीवो के सुख दु ख को जानकर किसी को दु ख नही पहुँचाता- प्रत्युत सुख देने की कोशिश करता है-यही शुद्ध सदाचार की पुष्टि है ।

सदाचार की रक्षा चाहने वाले मनुष्यो को गन्दे भद्दे, समाज तथा राष्ट्र विरोधी कामो मे शामिल नही होना चाहिये । राष्ट्रोत्थान और चरित्र को उच्च बनाने वाले गानो और भाषणो को सुनना चाहिय । जीवन को सरल और स्वाभाविक बनान वाल पुस्तको का पढना उचित है । नेकचलन व्यक्ति को वहाँ जाना, बठना, सुनना और बोलना चाहिय, जहा माता और पुत्र, पिता और पुत्री तथा भाई और बहिन एक जगह बैठ सके, सुन सकें और लाभ उठा सके । यह कार्य सदाचार का मुख्य लक्षण है । सदाचार की रीति पर चलने से अनेक प्रकार की बुराइयाँ, अनुशासनहीनता भ्रष्टाचार और स्वार्थ की भावना छूट कर व्यक्तियो, परिवारो, राष्ट्रो और विश्व मे अनुशासन श्रेष्ठाचार और परोपकार की भावना पैदा होकर सबको सुख पहुँच सकता है । सार यह है कि सदाचार जीवन और दुराचार मृत्यु है ।

(पृष्ठ ५ का शेष)

के पुत्र हैं तो क्या कोई पिता अपने किसी पुत्र को भूखा मरता देख सकता है हरगिज नही । अत स्वामी दयानन्द जी महाराज ने लिखा है—

"राजा हो एव निर्धन हो सब के ब्रह्मचारियो को गुरुकुल मे तुल्य वस्त्र खानपान आसन आदि दिये जावें । स्वामीजी ने आर्यसमाज के दस नियमोमे एक नियमलिखा कि—

प्रत्येक मनुष्य को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नही रहना चाहिये सब की उन्नति मे अपनी उन्नति समझनी चाहिये । अत उपर्युक्त लेख से सिद्ध है कि वेद शास्त्र, नीति ऋषि मुनि महात्मा और युक्ति सब साम्यवाद का समर्थन करते हैं । फिर भी हम वैदिक साम्यवाद के तो समर्थक हैं—रूसी और और चीनी साम्यवाद के नही क्योकि इन मे परस्पर महान् अन्तर है ।

वैदिक साम्यवाद—प्राणिमात्र का सरक्षण चाहता है । ईश्वर का उपासक और धर्म का प्रचारक है । प्रशासन मे जनतन्त्र को स्वीकार करता है । मुक्ति और भुक्ति दोनो को मानता है, आत्मा को कर्त्ता, भोक्ता और शरीर को साधन बतलाता है तथा दोनो की उन्नति चाहता है, हिंसा तथा अहिंसा को कर्तव्यानुसार स्वीकार करता है । प्रचार से हृदय परिवर्तन मे विश्वास पैदा करता है । पारस्परिक सहयोग और प्रेम को प्रकट करता है । इस जन्म और परजन्म की सत्ता को मानता है । शुद्ध कमाई की पूजी कमाने वाले धनी को अच्छा समझता है । उद्देश्य की पूर्ति के लिये मानवी उपायो को अवलम्ब करने की शिक्षा देता है । इत्यादि ॥

इसके विपरीत विदेशी साम्यवाद—वर्गवाद के अनुसार केवल मजदूर और किसान वर्ग की हिमायत करता है, ईश्वर की सत्ता का विरोधी है । एकतन्त्रवादी है । केवल शारीरिक भोग को ही मानता है । हिंसा, लूटखसूट, रक्तपात और अमानवीय उपायो के अवलम्बन को ठीक मानता है । दूसरे के मत को बलपूर्वक दबाना चाहता है । अनैतिक उपायो को बुरा नहीं समझता । इसी लोक मे सुख भोग को ही मानता है । पूजीपतियो का विरोधी है, स्वय पूजीवादी रहता है । कार्यों मे मानवता का कुछ स्थान नही, इत्यादि ।

अत ससार का कल्याण वैदिक साम्यवाद से ही सम्भव है । विदेशी केवल भौतिक साम्यवाद से ससार में सुख शान्ति नहीं हो सकती, अपितु कलह और दुःख बना रहता है । इसीकारण आर्यसमाज वैदिकसाम्यवादका प्रचारक है, विदेशी साम्यवादका नहीं ।

RISHI DAYANAND SARSWATI

Dr. Mahendra Kumar Shastri, M.A. Bombay-19.

Amongst all the great sons of Modern India, Dayananda stand alone and above all, because he was a Rishi while others sex were leaders, reformers, and philosophers etc, and were led by intelligence and institutions, which illuminated their path from time to time. But Rishi is altogether in a different category

Who Are Rishis ?

Rishis are those who can see Truth face to face, by austerity, understanding, and rapport with the supreme spirit Their vision clearly sees through the mysteries of the past, Taugled present, and uncertain future.

Conditions of Aryas (Hindus) at the time of Dayananda

In the early nineteenth century, when Dayananda come to the scene, India lay prostrate, listless and lifeless at the feet of aliens Specially the conditions of Aryas were horrible. Once a proud, brave and all conquering Arya race, had lost its soul and turned into a slump of boneless mass like a jelly fish: meek mild and submissive falling an easy prey to its enemies. Besides this Hindus were suffering from the forces of ignorance, darkness, superstitions and what not. They have no knowledge of their glorious past and have lost all hopes for future.

Dayananda decides his own course

Looking at the miserable conditions of Arya Race, Dayananda who was the first Rishi born after Jamini of Mahabharat's, could not decide otherwise than to sacrifice his personal enjoyment of emancipation (Moksha) or attainment of Nirvana for the sake of his ancient Arya race. He decided to revive the knowledge of the vedas, and envigorate the Aryas, who were the trustees of the Vedic lore, because, in his opinion only the knowledge of Vedas and vedic culture alone could bring salvation of all difficulties of Aryas as well that of mankind Only the Vedas can lead the mankind to a happy and virtuous life He did his best in his life time towards his goal and established the "ARYA SAMAJ" to carry out his mission after his death

Who Are Aryas ?

Aryas are not the people of particular colour and place as some European Scholars try to depict According to Bhartiya traditions and Shastras Aryas are those persons 'who are away from sins and vices and full of virtues, having a true spirit and devoid of lust,greed, jealousy and anger etc. (Chakrapani Dutta. 11th Century commentator of Charaka Samhita). The state of Aryatwa (Being an arya) can only be achieved by learning, practising and application of the knowledge of the Vedas into one's own life The Vedas are God's knowledge, faultless and flawless and which have come down to us for the benefit of all creatures. Thus it is the pious duty of all the followers of the Rishi and Aryasamaj to carry out the torch of teaching of the Vedas to the every nook and corner of the world.

What is Arya Samaj ?

Aryasamaj is neither a religious nor a social reformist body alone, with limited object of guarding the interests of some communities or regions of the world alone, as some people imagine and treat it to be. On the contrary, it is an all comprehensive movement, whose aim is to serve the mankind by spreading the teachings of the Vedas in all its aspect. Aryasamaj does not treat humanity, or regions in water-tight compartments such as social, political, religious etc. on the contrary it takes mankind and its problems as a whole, i e., Aryasamaj believe in the uplift of mankind in all its spheres whether religious, social, political, or economical. Although Aryasamaj did not take part in the past in active politics due to special conditions of the country. But Aryasamajists as individuals took prominent part in all types of freedom movements whether revolutionary or ahimsak. Therefore, Aryasamaj should not be taken as a mere religious and reformist body alone. This type of Attitude has done great harm to Aryasamaj movement in the past.

2. To propagate the mission of Dayananda we require *devoted workers* but not ambitious leaders. These workers are to be created and must be picked up from the community and regions and language groups, where we intend to do Aryasamaj's work For example take Maharashtra region to be successful amongst Maharastians we must have the Maharashtrian workers with good knowledge of Marathi language, otherwise we are doomed to failures, of course they can have good guides, from outside, who can guide these Maharashtrian preachers Why Aryasamaj has not taken root among the people other than Hindi speaking or Punjabi speaking population? Obviously because there were few workers of Aryasamaj from non Hindi speaking people. In North, local people took up the cause of Aryasamaj and did work devotedly in their particular area, community and region, utilising all sorts of occasions, wheather marriage, thread ceremony, Local Melas etc. That is why Aryasamaj took root on Punjab, Hariana, and Uttar Pradesh, Rajasthan etc Taking lesson from the North we must try to *pick up and train our workers from the region or community or language group, where we want to start* work of Aryasamaj work. Aryasamaj took root in the old Hyderabad state, because of its local workers.

It is now time to carry put the movement of Aryasamaj to the south. To make it success my suggestions are as under :—

A. **Missionary Colleges** (Updeshak Vidyalayas) :—Starting of colleges and schools for spreading of education is a noble work, no doubt about it. These institutions have does a great work of Aryasamaj. But in the changed circumstances, due to secular charactor or our state we cannot teach our literature and preach our ideas. Therefore, we must concentrate more and more now on Updeshak Vidyalayas, where poor but talented pupils should be taught Vedic lore thoroughly, and give them all possible assistance to settle them in their life These pupils of our Updeshak Vidyalayas, full of devotion and armed with good knowledge of Aryasamaj literature will be the torch bearer of Rishi's Mission and will successfully spread the Gospel of Vedas among their respective region, communities and language groups

B. **Boarding Houses** Instead of opening Colleges and schools, we must open Boarding houses for students At least we can impart some education and ideas of Aryasamaj among them in weekly meeting and prayer meetings, and on festival occasions, because there is no restriction for such discourses in these Hostels of Students.

In these institutions of ours we must *employee Pukka Aryasamajists* as washed by Rishi long ago, (Vide Rishi Dayananda Ka ptra vyabhar, published by Ram Lal Kapur & Sons) so that the atmosphere of our institutios must be that of Aryasamaji Type. The Atmosphere exerts very great influence upon the mind of young people.

C Our workers should try encourage inter community or inter region marriages, so that they can be counted as one amongst their own people and these communities can come to the rescue of our workers in the times of distress, if need arises.

D Literature of Aryasamaj must be published in all local languages in popular forms and should be sold cheaply, so that it should be within the reach of every person. Mere Hindi literature will not do. For the *elite of the societies we must have our Literature in English*, because they are more prone to read works in English than in other Indian languages.

Note : We may come accross financial difficulties in the beginning, but if we contunue our work devotedly, these difficulties will be overcome in due course, there is no dearth of philonthrophists amongst Hindus.

Politics and Aryasamaj

As I have already mentioned, politics is within the perview of Aryasamaj More-over politics has pervaded in all our activities now a days You may not like politics but it will not leave you alone More-over Aryasamaj aims at making a particular type of society as envisaged by Rishi in his famous Book "Satyarth Prakash" To achieve this object there is no other go than to enter politics Aryasamaj may not enter in politics directly but it can work as a powerful catalytic agents to any political party, nearer to it and ready to go be guided by the principles of Aryasamaj.

The Punjab is lost to Akalis. Now remains Haryana and Uttar Pradesh, where Arya samaj has considerable influences among the masses. We can take advantage of our influence in these states by helping the parties helpful to the cause of Aryasamaj. If Such helpful and sympathetic govts are installed, they can contribute huge sums to the Aryasamajic institutions in the name, culture, Education, relief works of various types and uplift of down troden people and Aryasamaj can utilise it in a better way than the present politically minded institutions like, Bharat Sewak Samaj etc, which are given huge amounts by Government

No movement have ever succeeded without the help of government. Look at the history of Islam, Christianity or Buddhism They have spread in very vast areas, when they get the assistance of the state. In contrast to this Jainism did not get much encouragement and help from the state and consequently it remains a regional religion alone.

The Vedic Dharma and Mission of Aryasamaj has universal appeal and it can be universal Dharma provided it receive proper help and encouragement at the hand of public as well as truly Bhartiya state.

दैनिक हिन्दी हिन्दुस्तान दिल्ली से साभार—

१९०१ से १९९९ (९९ वर्ष) का कलैंडर प्रेषक: नारायणसिंह मंडारी देहरादून

											जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
१९०१	१९०७	१९१८	१९२९	१९३५	१९४६	१९५७	१९६३	१९७८	१९८५	१९९१	ख	च	च	क	ग	छ	क	घ	ज	ख	च	ज
१९०२	१९१३	१९१९	१९३०	१९४१	१९४७	१९५८	१९६९	१९७५	१९८६	१९९७	ग	छ	छ	ख	घ	ज	ख	च	क	ग	छ	क
१९०३	१९१४	१९२५	१९३१	१९४२	१९५३	१९५९	१९७०	१९८१	१९८७	१९९८	घ	ज	ज	ग	च	क	ग	छ	ख	घ	ज	ख
१९०५	१९११	१९२२	१९३३	१९३९	१९५०	१९६१	१९६७	१९७८	१९८९	१९९५	ज	ग	ग	छ	क	घ	छ	ख	च	ज	ग	च
१९०६	१९१७	१९२३	१९३४	१९४५	१९५१	१९६२	१९७३	१९७९	१९९०	—	क	घ	घ	ज	ख	च	ज	ग	छ	क	घ	छ
१९०९	१९१५	१९२६	१९३७	१९४३	१९५४	१९६५	१९७१	१९८२	१९९३	१९९९	च	क	क	घ	छ	ख	घ	ज	ग	च	क	ग
१९१०	१९२१	१९२७	१९३८	१९४९	१९५५	१९६६	१९७७	१९८३	१९९४	—	छ	ख	ख	च	ज	ग	च	क	घ	छ	ख	घ
							१९०४	१९३२	१९६०	१९८८	च	क	ख	च	ज	ग	च	क	घ	छ	ख	घ
							१९०८	१९३६	१९६४	१९९२	ग	छ	ज	ग	च	क	ग	छ	ख	घ	ज	ख
							१९१२	१९४०	१९६८	१९९६	क	घ	च	क	ग	छ	क	घ	ज	ख	च	ज
							१९१६	१९४४	१९७२	—	छ	ख	ग	छ	क	घ	छ	ख	च	ज	ग	च
							१९२०	१९४८	१९७६	=	घ	ज	क	घ	छ	ख	घ	ज	ग	च	क	ग
							१९२४	१९५२	१९८०	=	ख	च	छ	ख	घ	ज	ख	च	क	ग	छ	क
							१९२८	१९५६	१९८४	--	ज	ग	घ	ज	ख	च	ज	ग	छ	क	घ	छ

विधि—

तिथि मे वार निकालना—

जिस वर्ष और मास की किसी तिथि का वार निकालना हो उस वर्ष और मास के आने वाली पंक्तियां जिस जगह परस्पर काटती हों वहां के अक्षर को लेकर नीचे दिए हुए कलैंडर में से सम्बद्ध तिथि के सामने उस अक्षर के नीचे जो वार होगा वही अभीष्ट वार होगा।

वार से तिथियां निकालना—

उपर्युक्त विधि से निकले अक्षर के नीचे सम्बद्ध वार की सीध में पड़ने वाली तिथियां ही उस वर्ष और मास में उस वार को पड़ेगी।

क	ख	ग			ति थि	याँ		घ	च	छ	ज
सोम	मंगल	बुध	१	८	१५	२२	२९	गुरु	शुक्र	शनि	रवि
मंगल	बुध	गुरु	२	९	१६	२३	३०	शुक्र	शनि	रवि	सोम
बुद्ध	गुरु	शुक्र	३	१०	१७	२४	३१	शनि	रवि	सोम	मगल
गुरु	शुक्र	शनि	४	११	१८	२५	—	रवि	सोम	मगल	बुद्ध
शुक्र	शनि	रवि	५	१२	१९	२६	—	सोम	मंगल	बुद्ध	गुरु
शनि	रवि	सोम	६	१३	२०	२७	—	मंगल	बुद्ध	गुरु	शुक्र
रवि	सोम	मंगल	७	१४	२१	२८	—	बुद्ध	गुरु	शुक्र	शनि

गुरु विरजानन्द स्मृतिदिवस

हैदराबाद दशम आर्य महासम्मेलन मे यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया है कि १—सम्मेलन का मत है कि प्रतिवर्ष ९ अक्टूबर को समस्त आर्यसमाजें गुरु विरजानन्द जी महाराज का स्मृतिदिवस मनाया करें। २—९ अक्टूबर १९९९ को गुरु विरजानन्द निर्वाण शताब्दी महोत्सव बड़ी धूम-धाम से मनावें। ३—सम्मेलन यह निश्चय करता है कि यह शताब्दी महोत्सव अखिल भारतीय स्तर पर जालन्धर में विस्तृत रूप से मनाया जाय और उसी अवसर पर एक दिन का कार्य-क्रम करतारपुर मे सम्पन्न हो। —मन्त्री गुरु विरजानन्द स्मारक करतारपुर

वैदिक सिद्धान्त प्रेमियों को सूचना

आर्यमर्यादा के पाठक महानुभावो के पास सात अंक पहुंच चुके हैं। उन्होंने स्वयं जान लिया होगा कि वैदिक सिद्धान्तो और मन्तव्यो (ऋषि दयानन्द के वैदिक भाष्यानुसार) के प्रचार में प्रमुख साधन है। यह ध्यान रखा जाता है कि सिद्धान्तो के विरुद्ध कोई लेख सामग्री प्रकाशित न हो जावे। आर्यमर्यादा के प्रचार और प्रसार के लिये पाठक महानुभावों से निवेदन है कि वे पूरा सहयोग इस कार्य में देकर आर्यमर्यादा के सचालकों का उत्साह बढ़ायें। —सह सम्पादक

गोवा में अराष्ट्रिय प्रचार निरोध सप्ताह

गोवा प्रदेश में अराष्ट्रिय प्रचार निरोध सप्ताह मनाया गया। उक्त कार्य-क्रम के अन्तर्गत एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। सभा का सभापतित्व गोवा प्रदेश आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० अच्युतरिवणकर तथा उद्घाटन श्री दे० न० मुरटगीकर प्रिंसिपल आदर्श वनिता विद्यालय मडगांव ने किया। मुख्य वक्ता श्री माधव गडकरी सम्पादक गोमन्तक दैनिक थे।

सभी वक्ताओ ने विदेशी मिशनरियों के कुचक्र तथा अन्य अराष्ट्रिय तत्त्वो की गतिविधियो की ओर ध्यान आकर्षित किया। अस्पृश्यता एवं पिछड़ेपन को दूर किया जाना चाहिए। ये हिन्दु समाज के माथे पर एक कलंक है।

गोवा मे फैली जातीयता, पाश्चात्य प्रभाव और विदेशियों के द्वारा फैलाये जाने वाले भ्रम को दूर करो। आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है जिसने राष्ट्र को जोड़ने एवं अज्ञानता व अविद्या को दूर करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम अपनाया है।

श्री गडकरी जी ने आश्वासन दिया कि आर्यसमाज के लिए उनका पूर्ण सहयोग मिलेगा। श्री रिवणकर जी ने घोषणा की कि वे अपना जीवन समाज के कार्यों मे ही लगायेंगे। उन्होने आर्यसमाज के उद्देश्यों एवं कार्य-क्रम पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला। —रामप्रसाद सैनी ब्रह्मचारी

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् की सूचना

भारत सरकार की ओर से यह प्रयत्न गत कई वर्षों से हो रहा है कि देश मे अच्छे स्तर की तकनीकी तथा वैज्ञानिक पुस्तकें हिन्दी मे तैयार हो। इस समय सौभाग्य से देश मे अनेक वैज्ञानिक तथा तकनीकी अधिकारी है जो मूल रूप से तकनीकी विषयो की चर्चा हिन्दी में कर सकते हैं। हिन्दी में तकनीकी विषयो की चर्चा करने और विवेचन करने की परम्परा निर्माण करने के लिए इस बात से बहुत सहायता मिलेगी कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी पत्रिकाओ मे अनुसंधानात्मक लेख हिन्दी में भी प्रकाशित किये जाएँ। इस समय सरकार के विभिन्न विभागो की ओर से अनेक तकनीकी पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। राष्ट्रिय प्रयोगशालाओं की ओर से भी ऐसी अनेक पत्रिकाएँ निकलती हैं। अभी तक अधिकाश पत्रिकाओ में सभी लेख अंग्रेजी में निकलते रहे हैं। कुछ पत्रिकाओ मे हिन्दी मे लेख छापने की व्यवस्था कर दी गई है। यदि यह व्यवस्था अन्य पत्रिकाओ मे भी हो जाए तो वैज्ञानिकों को अपने विचार हिन्दी में प्रकट करने का भी अवसर मिलेगा और उससे ऐसा वातावरण तैयार होगा कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयो की पाठ्य पुस्तकें आदि मूल रूप से हिन्दी में लिखी जाने लगेंगी।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के पास कई सुयोग्य व्यक्तियों के आश्वासन प्राप्त होते हैं कि वे प्रसन्नतापूर्वक अपने लेख हिन्दी मे देना चाहेंगे। उन लेखों के प्रकाशन की व्यवस्था क्या हो और उनका उपयोग किस प्रकार किया जाए, इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक सोचने की आवश्यकता है। परिषद् का वैज्ञानिको तथा तकनीकी अधिकारियों से अनुरोध है कि उनमे से जो हिन्दी मे लेख लिख सकते हो वे कृपया अपना नाम, पता तथा अपने विषय की सूचना परिषद् कार्यालय (एक्स० वाई० ६८, सरोजनी नगर, नई दिल्ली—२३) को देने की कृपा करें। उनके विषय से सबंधित जो पत्र-पत्रिकाएँ भारत में प्रकाशित हुई हैं। उनका विवरण प्रकाशक आदि का नाम सहित भेजने की कृपा करें। अन्य देशों में जहाँ ऐसी पत्रिकाएँ एक साथ कई भाषाओ के लेख प्रकाशित करती हों, उनका विवरण तथा किस रीति से विविध भाषाओं के लेख प्रकाशित किए जाते हैं, यह भी सूचित करें।

परिषद् का विचार है कि दिल्ली में एक विचारगोष्ठी आयोजित की जाए जिसमे इस विषय के अधिकारी विद्वान् ऐसे प्रश्न के सभी पहलुओ पर विचार करके ऐसी रूप रेखा निर्धारित करें जो सरकार के विभिन्न विभागो, अनुसंधान सस्थाओ, विश्वविद्यालयों तथा इस प्रकार की पत्रिकाओ के प्रकाशनों के समक्ष रखी जा सके। आपसे निवेदन है कि इस कार्य मे कृपया अपना मूल्यवान सहयोग प्रदान करे तथा सूचित करें कि आप किन महानुभावों से सहयोग देने का अनुरोध किया जाए, तथा विचारगोष्ठी कब, कहाँ और किस प्रकार रखी जाए। —हरि बाबू कंसल, महामन्त्री

श्री भारतेन्द्रनाथ का हुलिया नं० ४

(श्री भारतेन्द्रनाथ के स्वयं हस्तलिखित पत्र की शुद्ध प्रतिलिपि अविकल रूप में दी जाती है, जैसा कि आर्यमर्यादा के गत अंक में लिखा गया था। इसकी फोटो कापी हमारे पास सुरक्षित है।)

(शिवकुमार, १५६५ हरध्यानसिंह रोड, नई दिल्ली)

१ "श्री रतनलाल जी अध्यक्ष न्याय सभा के निर्णय का अभी तक कोई वैधानिक मूल्य नही है। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब ने उस निर्णय की वैधानिकता पर आपत्ति न्यायालय में उठाई हुई है और न्यायालय सम्पूर्ण परिस्थिति पर गम्भीरता-पूर्वक विचार कर रहा है। (२) यह विशेषरूप से ध्यान देने की बात है कि किसी भी पच निर्णय का तब तक कोई मूल्य नही होता जब तक कि उसे न्यायालय द्वारा सम्पुष्ट न करा लिया जाए सार्वदेशिक सभा के अधिकारियो ने उसे सम्पुष्ट न कराया अत आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारियो ने उक्त निर्णय को चुनोती दी हुई है। (३) श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी द्वारा इस परिपत्र के भेजने से अब यह अत्यन्त स्पष्ट हो गया है कि सार्वदेशिक सभा के वर्तमान अधिकारी और उनके साथी आर्यसमाज मे न एकता चाहते हैं न शान्ति। उनका उद्देश्य तो प्रत्येक सम्भव प्रकार से पद और गद्दियाँ सभालना है। अन्यथा पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज जैसे महान तपस्वी सन्यासी को निर्वाचन के सम्पूर्ण अधिकार दे देने के बाद वह उससे मुकरने और जनता को गुमराह करने का दुस्साहस न करते। हमे विश्वास है कि पजाब की आर्यसमाजे किसी भी भ्रम मे न पडते हुए नियम-विधान और कानून का पालन दृढता से करेंगी। न्याय सभा के निर्णय के बाद सार्वदेशिक सभा के मत्री महोदय ३१ १२-६७ को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के आगामी निर्वाचन कराने के अधिकार पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी को दे देने के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर कर चुके हैं। ऐसी स्थिति मे न्यायसभा के निर्णय की आड मे उक्त परिपत्र प्रसारित करना कहाँ तक उचित है इसका निर्णय आर्यजनता स्वय भी कर सकती है। अत सभी समाजो को सावधान किया जाता है कि वे—१—अलकार मेडिकल हाल अम्बाला छावनी (जो सभा के विरुद्ध अनेक वर्षों से षड्यन्त्र का केन्द्र है) के पते पर कोई पत्र, धन या प्रतिनिधि निर्वाचित कर न भेजें। ऐसा करना विधान नियम और नैतिकआदर्शो के विपरीत होगा—अत उनके पत्रो को महत्व न देकर उन पर कोई कार्यवाही न की जाये। श्री ओम्प्रकाश त्यागी तो सार्वदेशिक सभा के साधारण सदस्य भी नही हैं। अत उनका अपने आपको सार्वदेशिक सभा का कार्यकर्ता प्रधान लिखना आर्यजनता को धोखा देना है।"

समस्त आर्यजनों से विनम्र निवेदन

(श्री भैरवदत्त शुक्ल)

हमारे इधर के क्षेत्र मे वेद के विषय मे घोर अज्ञान है। आर्यसमाज केवल रविवार को हवन मात्र करना ही अपनी इति कर्त्तव्यता समझ कर न बैठें। अज्ञान, अभाव, अकर्मण्यता के पाटो मे सी इधर की शोषित जनता ईसाईयो के कुचक्र का शिकार बनने की स्थिति मे तो है ही, चीनी मार्का कम्युनिज्म की ओर बेतरह खिंची हुई अराष्ट्रिय कार्यों में लिप्त होती आ रही है। तथाकथित राजनीतिक दलो के स्वनामधन्य नेता इस गिरावट की ओर से बिल्कुल आँखें मूँदे हुए हैं। ऋषि-निर्वाण दिवस के आयोजन के अवसर पर इसीलिए, एक साधारण अभावग्रस्त व्यक्ति होने के कारण सर्वथा पगु होने के बावजूद मैंने—(१) वैदिक धर्म, सस्कृति, तत्त्वज्ञान आदि के प्रचार-प्रसार (२) शुद्ध राष्ट्रियता के विकास (३) साम्प्रदायिकता के समूलोच्छेदन आदि के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्देशित पथ की सच्ची पहिचान करने का व्रत लेकर 'वैदिक परिषद्' नाम्नी सस्था स्थापित कर ली है। जिसके पदाधिकारी-अध्यक्ष-भैरवदत्त शुक्ल, उपाध्यक्ष-श्री राममिश्र, कोषाध्यक्ष श्री राममनोरथ, पुस्तकालयाध्यक्ष-श्री राजेन्द्रबहादुर, मत्री-श्री राजकिशोर 'प्रहरी' उपमत्री-सर्व श्री सकटाप्रसाद, भागवतदत्त, वृन्दाप्रसाद और शिक्षा-मत्री-श्री तुलसीराम मिश्र बनाये गये हैं।

हमारे साधन अत्यल्प या नही के बराबर हैं, जब कि कार्य महान् और गुरुतम दायित्वपूर्ण है। यहाँ तक कि आजकल की विज्ञापन-प्रवृत्ति की पूर्ति के अनिवार्य उपकरण—लेटर पैड आदि तक हमारे पास नही हैं। हमे केवल आशा है तो अपने उन आर्यबन्धुओ से जो सदैव ऐसी स्थिति मे उदारता के साथ धन आदि की मुक्त सहायता करने मे अग्रणी रहे हैं।

एतदर्थ, 'आर्यमर्यादा साप्ताहिक' के माध्यम से मैं अपनी झोली खोल कर खडा हो रहा हूँ उन सभी भारतीय आर्यजनो के सामने जो (१) नि स्पृह धर्म-प्रसार-प्रचार मे संलग्न आर्य साहित्य-प्रकाशक हैं। (२) धनी, मानी और दानदाताओ में सदैव अग्रणी हैं और (३) महर्षि दयानन्द के निर्भीक अनुयायी हैं। वे कृपया अविलम्ब मुझे भेंट-स्वरूप (१) वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, दर्शन से सम्बद्ध सस्कृत, हिन्दी, अग्रेजी माध्यम मे प्रतिपादित चुना हुआ उच्चस्तर का ठोस साहित्य प्रेषित करें। यज्ञार्थ वेदो की मूल प्रतियाँ (कम से कम यजुर्वेद की चार मूलप्रतियाँ) अत्यत अपेक्षित हैं। (जितनी श्रद्धा और सामर्थ्य हो उसके अनुसार धन धनादेश द्वारा प्रेषित करें। (३) महर्षि दयानन्द के निर्भीक अनुयायी धन और ग्रथ के उपहार भेजने के लिए मजबूत जन-मत तैयार ही न करें वरन् भिजवायें भी सभी-आर्य जनो के सबल पर भैरवदत्त शुक्ल अध्यक्ष, वैदिक परिषद् स्थान पोट—लगुवा जि०—खीरी (उ प्र)

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन का वार्षिक महोत्सव

शिवरात्रि के अवसर पर दिनांक १४ फरवरी से १६ फरवरी ६९ तक मनाया जा रहा है जिसमे सस्कृत सम्मेलन आय-सम्मेलन, राष्ट्र-रक्षा सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन आदि सम्पन्न होगे। नव स्नातको का दीक्षान्त समारोह भी इसी अवसर पर सम्पन्न होगा। भारत सरकार के उपप्रधान मत्री माननीय श्री मोरार जी देसाई नव स्नातको का दीक्षान्त भाषण देंगे। शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री माननीय श्री डा० त्रिगुणसेन जी करेंगे। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता भारत सरकार के सचार मत्री श्री माननीय इन्द्रकुमार जी गुजराल करेंगे। इसके अतिरिक्त देश के आयनेता तथा विद्वान् व्याख्याता आर्यसन्यासी महोपदेशक भी पधार रहे है। जो महानुभाव अपने बालक को गुरुकुल मे प्रविष्ट कराना चाहे, वे गुरुकुल कार्यालय से प्रवेश नियम व फार्म मगा ले।

नरदेव स्नातक एम पी मुख्याधिष्ठाता

आर्यसमाज छोटी बीकानेर का चुनाव

आर्यसमाज छोटी बीकानेर जि० गुडगाँव का निर्वाचन निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ—
प्रधान—मा० सत्यवीर जी, मन्त्री—श्री प्यारेलाल जी, कोषाध्यक्ष—श्री जवाहरलाल जी तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री महाशय हरिसिंह जी चुने गये। —मन्त्री

आर्यपर्व सूची सं० २०२५-२६ सन् १९६९

१ मकर सक्रान्ति अग्रेजी तिथि १४-१ ६९ दिन मगलवार। २ वसन्त पचमी २२-१-६९ दिन बुधवार। ३ सीताष्टमी १०-२ ६९ दिन सोमवार। ४ शिवरात्रि १५-२-६९ दिन शनिवार। ५ लेखराम तृतीया १९-२-६९ दिन बुधवार। ६ वसन्त नव सस्येष्टि (होली) ३-३-६९ दिन सोमवार। ७ आर्यसमाज स्थापना दिवस (सवत्सर) १९-३-६९ दिन बुधवार। ८ राम नवमी २७-३-६९ दिन बृहस्पतिवार। ९ हरि तृतीया (तीज) १६-८-६९ दिन शनिवार। १० श्रावणी उपक्रम तथा हैदराबाद आर्य सत्याग्रह बलिदान दिवस २७-८-६९ दिन बुधवार। ११ कृष्ण जन्माष्टमी ४-९-६९ दिन बृहस्पतिवार। १२ विजयादशमी २०-१०-६९ दिन सोमवार। १३ ऋषि निर्वाण दिवस तथा (दीपावली) ९-११-६९ दिन रविवार। १४ श्रद्धानन्द बलिदान दिवस २३-१२-६९ दिन मगलवार।

आर्यसमाज बाँकनेर (दिल्ली) का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज बाँकनेर का सत्रहवाँ वार्षिक उत्सव ८, ९ फरवरी १९६९ (शनिवार, रविवार) को होना निश्चित हुआ है। अत आर्यजनता पधार कर लाभ उठावें।

—ओम्प्रकाश मन्त्री

हमारे पाठकों के पत्र

(१) आपके 'आर्यमर्यादा' को पाकर खुशी हुई। जब से झगडा चल रहा है। तभी से हम सभी आर्य बन्धु चाह रहे हैं कि जल्द ही झगडा समाप्त हो। झगडना या किससे और क्या हम लोग कर बैठे हैं। महात्मा आनन्द स्वामी जी से प्रार्थना है कि इसे यथाशीघ्र निपटा दें। जिससे आर्यजगत् मे शक्ति आवे।

बीच मे आर्योदय ने अपना सम्बन्ध पुराने कार्यालय से विच्छिन्न किया लेकिन उसमे रोचकता कम हो गई थी। आशा है आर्यमर्यादा आपके अथक प्रयास से पुन आर्योदय का स्थान आर्यजगत् मे प्राप्त कर लेगा। मैं आपका एक पुराना ग्राहक हूँ।

रामचन्द्र यादव आर्य मुगेर (बिहार)

(२) आपका आर्यमर्यादा अक देखकर हर्ष हुआ कि आप लोगो को फिर से काम करने का अवसर मिला और आर्यजगत् के कर्मशील व्यक्तियो को आर्यसमाज की प्रगति एव ऋषि के कार्य की लो फिर से दिखाई देगी। ईश्वर से प्रार्थना करता हू आप लोगों का साहस दिन प्रतिदिन बढे "ऋषि के उपदेश के प्रचार एव प्रसार के लिए आपके कदम सर्वदा बढते रहे।" कृष्णलाल पाल भोपाल

आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के साहित्य विभाग की सूची

(१) सत्यार्थप्रकाश नया सस्करण ३-०० (२) महान् दयानन्द ०-७५ (३) दयानन्द चरित्र १-५० (४) जीवन ज्योति-प० चमूपति जी ३-००(५) सोम सरोवर-प० चमूपति जी ३-०० (६) वैदिक सत्सगपद्धति हिन्दी अग्रजी २-०० (७) आर्य समाज का सैद्धान्तिक परिचय ०-५० (८) मुक्ति के साधन १-०० (९) पजाब का आयसमाज २ ०० (१०) प० लेखराम जीवन-स्वा० श्रद्धानन्द जी १ ५०
अग्रजी साहित्य(११)Ten principles of Aryasamaj १ ५० (१२)Glimpses of DayaNand १-०० (१३) Subject Matter of the Vedas १-०० (१४) The Vedas ०-५० (१५) The philosophy of the Vedas ० ५०

बांटने के लिए ट्रेकट

(१६) वैदिकधर्म की विशेषताए १२-सैकडा १०-०० (१७) वैदिकसध्या १०-सैकडा ८-०० (१८) ईसाई मत की पोल १०-सैकडा ८०० (१९) ईसाई पादरियो को आर्यसमाज की चुनौति, ले० स्वा० श्रद्धानन्द जी १०-८ ०० (२०) ईसाईयो की प्रचार प्रणाली १०-८-०० (२१) चौदू जाट और ईसाई पादरी २०-१५ ०

प्राप्ति स्थान—

व्यवस्थापक साहित्य वि॰

आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली १

आर्यसमाज अड्डा होशयारपुर जालन्धर का उत्सव

पजाब की प्रसिद्ध आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वार्षिकोत्सव २७ से २९ दिसम्बर को धूम धाम और सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। एक सप्ताह पूर्व श्री स्वामी विद्यानन्द विदेह द्वारा स्वस्ति यज्ञ एव वेद कथा हुई। २३ दिसम्बर को श्रद्धानन्द बलिदान दिवस भी मनाया गया।

उत्सव के शुभावसर पर स्वामी सर्वानन्द जी सभा के प्रधान प्रो० रामसिंह जी सभामन्त्री प० रघुवीरसिंह शास्त्री सदस्य लोकसभा आचार्य भगवानदेव जी गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय के उपकुलपति प० प्रियव्रत जी सभा के वेद प्रचाराधिष्ठाता प० निरजनदव जी आदि के व्याख्यान एव सभा के भजनोपदेशक प० बसरायजी, प० अमरनाथ प्रमी और प० भगतराम जी के भजन हुये।

आर्यसमाज के अधिकारियो की ओर से वेदप्रचारार्थ सभाप्रधान प्रो० रामसिंह जी को ५००) की थैली भेंट की गई।

१२ जनवरी को मद्य मांस निषेधार्थ नारनौल में बैठक

हरयाणा मे मद्य मास निषेधार्थ जिला महेन्द्रगढ मे मद्य-मास निषेध कार्यान्वित कराने के हेतु १२ जनवरी १९६९ रविवार को मध्याह्न १२ बजे से श्री विश्वकर्मा मन्दिर पुल बाजार नारनौल मे हरयाणा के त्यागी तपस्वी नेता आचार्य भगवान्देव जी की अध्यक्षता मे एक विशेष बैठक बुलाई गई है।

मद्य मांस निषेध आन्दोलन को उत्साहपूर्वक चलाने के लिए 'जिला महेन्द्रगढ मद्य मास निषेध समिति का गठन किया जायेगा। अत आप अपने इष्ट मित्रो सहित निश्चित समय पर बैठक मे सम्मिलित होकर अनुगृहीत करें।

जवाहरलाल आर्य पथिक मन्त्री — प्र० द० यादव उपप्रधान

ग्राहक महानुभाव पत्र तथा शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक सख्या अवश्य लिखने का कष्ट करें।

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाडी धीरज दिल्ली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदा:

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र



वर्ष १ अंक ८ | माघ वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार १९ जनवरी १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ | वार्षिक शुल्क—१० रुपये एक प्रति — २० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य, सभा मन्त्री   स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमंत्रार्थ-प्रवचन

तत्र के कथं तमिन्द्रं पूजयन्तीत्युपदिश्यते ।

इस मन्त्र मे इस बात का प्रकाश किया है कि कौन-कौन पुरुष किस-किस प्रकार से इन्द्रसञ्ज्ञक परमेश्वर का पूजन करते हैं ।

गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे—ऋग्वेद १ १० १

पदार्थ :—(गायन्ति) सामवेदादिगानेन प्रशंसन्ति (त्वा) त्वा गेय जगदीश्वरमिन्द्रम् (गायत्रिण) गायत्राणि प्रशस्तानि छन्दांस्यधीतानि विद्यन्ते येषा ते धार्मिका ईश्वरोपासका (अर्चन्ति) नित्य पूजयन्ति (अर्कम्) अर्च्यते पूज्यते सर्वैर्जनैर्यस्तम् (अर्किण) अर्का मन्त्रा ज्ञानसाधना येषा ते (ब्रह्माण) वेदान् विदित्वा क्रियावन्त (त्वा) जगत्स्रष्टारम् (शतक्रतो)शतबहूनिकर्माणि प्रज्ञानानि वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (तद्) उत्कृष्टार्थे (वशमिव) यथोत्कृष्टैर्गुणै शिक्षयैस्स्व स्वकीय वशमुद्यमवन्त कुर्वन्ति तथा (येमिरे) उद्यच्छन्ति ।

अन्वय —हे शतक्रतो ! ब्रह्माण स्वकीय वंशमुद्येमिरे इव गायत्रिणस्त्वा गायन्ति अर्किणोऽर्कं त्वामर्चन्ति ।

भावार्थ —अत्रोपमालङ्कार -यथा सर्वैर्मनुष्यै परमेश्वरस्यैव पूजा कार्य्या, यदीयत्तदाज्ञाया सदा वर्त्तितव्यम्, वेदविद्यामप्यधीत्य सम्यग्विदित्वोपदेशेनोत्कृष्टगुणै, सह मनुष्यवश उद्यमवान् क्रियते, तथैव स्वैरपि भवितव्यम् । नेद फल परमेश्वर विहायान्यपूजक प्राप्तुमर्हति । कुत, ईश्वरस्याज्ञाभावेन तत्सदृशस्यान्यवस्तु नो ह्यविद्यमानत्वात्, तस्मात्तस्यैव गानमर्चन च कर्तव्यमिति ॥

भावार्थ —हे (शतक्रतो) असख्यात कर्म और उत्तमज्ञानयुक्त परमेश्वर ! (ब्रह्माण) जैसे वेदो को पढकर उत्तम-उत्तम क्रिया करने वाले मनुष्य श्रेष्ठ उपदेश, गुण और अच्छी-अच्छी शिक्षाओ से (वशम्) अपने वश को (उद्येमिरे) प्रशस्तगुणयुक्त करके उद्यमवान् करते हैं, वैसे ही (गायत्रिण) जिन्हो के गायत्र अर्थात् प्रशसा करने योग्य छन्दराग आदि पढे हुये धार्मिक और ईश्वर की उपासना करने वाले हैं, वे पुरुष (त्वा) आपकी (गायन्ति) सामवेदादि के गानो से प्रशसा करते हैं, तथा (अर्किण) (अर्क) अर्थात् जो कि वेद के मन्त्र पढने के नित्य अभ्यासी हैं, वे (अर्कम्) सब मनुष्यो को पूजने योग्य (त्वा) आपका (अर्चन्ति) नित्य पूजन करते हैं ।

भावार्थ —इस मन्त्र मे उपमालङ्कार है । जैसे सब मनुष्यो को परमेश्वर ही की पूजा करनी चाहिये, अर्थात् उसकी आज्ञा के अनुकूल वेदविद्या को पढकर अच्छे-अच्छे गुणो के साथ अपने मन्यो के वश को भी पुरुषार्थी करते हैं, वैसे ही अपने आप को भी होना चाहिये, और जो परमेश्वर के सिवाय दूसरे का पूजन करने वाला पुरुष है, वह कभी उत्तम मनुष्य को प्राप्त होने योग्य नहीं हो सकता, क्योंकि न तो ईश्वर की ऐसी आज्ञा ही है, और न ईश्वर के समान कोई दूसरा पदार्थ है कि जिसका उस के स्थान मे पूजन किया जावे । इससे सब मनुष्यो को उचित है कि परमेश्वर ही का गान और पूजन करें ।

—ऋषि दयानन्द का भाष्य

तथा कथित आर्यप्रतिनिधिसभा पर स्थायी रोक

तथाकथित आर्यप्रतिनिधिसभा के अवैध व्यक्तियों को आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के पदप्रयोग करने तथा उसकी सम्पत्ति व कार्यों में दखल देने से स्थायी रूप से रोक दिया गया

(श्री प्रीतपालसिंह चीफजुडीशियल मजिस्ट्रेट जालन्धर का निर्णय)

जालन्धर :—१३-१-६९, प्रो० रामसिंह (सभाप्रधान) तथा श्री रघुवीरसिंह शास्त्री संसत्सदस्य (सभा मन्त्री) की प्रार्थना पर श्री बख्शीशसिंह जी सब-जज जालन्धर ने ५-५-६८ को अम्बाला छावनी में अवैध रूप से घोषित तथा कथित पंजाबसभा के व्यक्तियों अर्थात् दीवान रामशरणदास, श्री वीरेन्द्र, श्री सोमनाथ मरवाह, श्री रामदत्त एडवोकेट, डा० हरिप्रकाश, श्री मुरारीलाल, श्री रामलाल वैद्य श्री विश्वनाथ ग्रोवर और श्री क्षितीशकुमार वेदालंकार को निषेधाज्ञा द्वारा अपने आपको आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा की सम्पत्ति व उसके कार्यों में हस्तक्षेप करने से रोक दिया था । वह अभियोग ४-१२-६८ से श्री प्रीतपालसिंह जी चीफजुडीशियल मजिस्ट्रेट जालन्धर सुन रहे थे, उन्होंने दोनों पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद आज श्री बख्शीशसिंह जी द्वारा लगायी अस्थायी निषेधाज्ञा को स्थायी (Permanent) कर दिया है । अब उपरोक्त व्यक्ति आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के नाम का न प्रयोग कर सकेंगे तथा न उसके कार्यों में हस्तक्षेप करेंगे ।

(माननीय न्यायाधीश के निर्णय का विस्तृत विवरण आगामी अंक में दिया जायेगा)

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से आवश्यक निवेदन

विदेशो मे रहने वाले आर्योदय के ग्राहक महानुभावो की सेवा मे "आर्यमर्यादा" भेजा जा रहा है । श्री भारतेन्द्रनाथ जी के गतवर्ष मई मास ६८ में सभा कार्यालय छोड़ जाने के कारण आर्योदय विदेशो मे भेजा नही जा सका, क्योंकि कार्यालय छोडते समय उन्होंने सभा कार्यालय का रिकार्ड तथा ग्राहकों की सूची तथा शुल्क का हिसाब भी नही दिया । इसी कारण सभा को आर्योदय के स्थान पर आर्यमर्यादा चालू करना पडा । अत सभी ग्राहकमहानुभावो से प्रार्थना है कि अपना शुल्क २० रुपये शीघ्र भेजने की कृपा करें । जिस से 'आर्योदय' की जगह सभा का मुख्य पत्र आर्यमर्यादा आप की सेवा में नियमपूर्वक भेजा जाता रहे ।

नोट : कृपया चैक या बैंक ड्राफट केवल आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के नाम ही भेजे आर्यमर्यादा सभा का ही पत्र है अभी आर्यमर्यादा का पृथक् हिसाब नहीं खोला गया है । व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा, १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली

भारतीय दर्शन शास्त्र मीमांसा

(श्री वैद्य गुरुदत्त जी एम० एस० सी० पंजाबी बाग, दिल्ली)



वेदादि शास्त्रो में जगत् तथा जगत् की रचना का विषद् वर्णन है। वेदों मे वह सब कुछ कैसे जाना गया बताना अति कठिन है। भारतीय परम्परा के अनुसार वेद स्वत प्रमाण हैं। वे ईश्वरीय ज्ञान के ग्रन्थ हैं। ऐसा वेदानुयायी मानते हैं।

परन्तु मानव समाज में कुछ प्रतिशत लोग सदा को ईश्वरीय ज्ञान मानने वाले कभी भी नहीं रहे। मानव सृष्टि के आदि काल मे भी न मानने वाला के लक्षण मिलने हैं। महाभारत मे एक इतिहास मिलता है कि ब्रह्मा के जीवन काल मे भी ऐसे लोग उत्पन्न हो गये थे जिनमे वेद ज्ञान लोप हो चुका था। देवता लोग ब्रह्मा के पास यह सूचना लेकर गये थे।

भगवन् नरलोकस्य ग्रस्त ब्रह्म सनातनम्।
लोभमो हादिभिर्भावैस्ततो नो भयमाविशत्॥ (महाभा०—शा०—६९-२४)

अर्थात्—हे भगवन्! लोभ मोहादि दूषित भावो के कारण मानव समाज मे सनातन वेद धर्म लोप हो गया है। यह इतिहास आदि सतयुग के काल का ही है। यह निर्विवाद है कि सब कालो मे वेदो के ईश्वरीयज्ञान होने पर सन्देह होता रहा है। यही कारण है कि इन सन्देह करने वालो को भी वैदिक सिद्धान्तो के स्वीकार कराने के लिये दर्शन शास्त्र की रचना की गयी है।

दूसरे देशो मे भी सत्य का दर्शन कराने वाले शास्त्र को दर्शन कहते हैं। अंग्रेजी मे दर्शन का पर्याय Philosophy है। यह यूनानी भाषा के 'फिलासफस' शब्द का अपभ्रंश है। इसका अर्थ है ज्ञान। अत सत्यज्ञान को जानने के साधन को 'फिलोसफी' का नाम दिया है। जब भी और जहाँ भी सत्यज्ञान की खोज में यत्न किया गया उसे दर्शन शास्त्र का नाम दिया गया। प्राय दर्शन शास्त्र किसी महापुरुष पीर पैगम्बर के कथन को प्रमाण मान कर नही चलते। वे अपनी खोज उनसे स्वतन्त्र ही चलाते है। महापुरुषो अथवा ईश्वरीयज्ञान को प्रमाण मानकर बात करनी मत, पथ मजहब रिलीजन कहलाता है। प्राय दार्शनिक इन कथनो एव प्रमाणो के अतिरिक्त साधनो से सत्य तक पहुचने का यत्न करते हैं। भारतीय दर्शन शास्त्र भी यही करते है। वे तत्वज्ञान को वेदादि ज्ञान के अतिरिक्त साधनो से जानने का यत्न करते है।

भारतीय दर्शन शास्त्रो मे वैदिक-दर्शन शास्त्र है और अवैदिक दर्शन शास्त्र है। इस वैदिक अथवा अवैदिक से हमारा अभिप्राय यह है कि वेदो मे प्रतिपादित सत्यज्ञान को वेदो के अतिरिक्त साधनो से सिद्ध करने वाले वैदिक दर्शन शास्त्र कहलाते हैं। दूसरे दर्शन शास्त्र है जो वैदिक सिद्धान्तो के अतिरिक्त सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं। उनके खोज का ढग वही है जो वैदिक दर्शन शास्त्रो का है। यदि अवैदिक दर्शन शास्त्र उन परिणामो पर नही पहुचते जिन पर वैदिक दर्शन शास्त्र पहुचते हैं तो इसमे कारण यह है कि वैदिक दर्शन शास्त्रो मे खोज के साधन वेद प्रमाणो से अतिरिक्त रखते हुए भी वैदिक वाक्यो से सहायता लेते हैं। अवैदिक दर्शन शास्त्र हैं बौद्ध, जैन चारवाक इत्यादि। इन्होने वेदादि शास्त्रो का आश्रय नही लिया। इस कारण य उस परिणाम पर नही पहुचे जिस पर वैदिक दर्शन पहुचे हैं। यही वैदिक दर्शन शास्त्रो का विशेषता है।

जैसे कोई सागर मे यात्रा करने वाला पोत चलता है तो अपने इजिन के आश्रय ही है परन्तु यदि वह पोत को ले जाने मे ध्रुव तारे अथवा कम्पास का आश्रय लेता है तो अपने बल बूते पर चलता हुआ भी ठीक दिशा मे ही चलेगा। यही बात भारतीय वैदिक दर्शन शास्त्रो की है। दर्शन शास्त्रो मे स्थान-स्थान पर लिखा है कि आप्त वचन यह है तथा श्रुति यह कहती है। दर्शन शास्त्रों के लिखने वाले यद्यपि स्वतन्त्र रूप से अन्वेषण करने हैं, परन्तु वे समय-समय पर देखते रहते हैं कि उनके परिणाम कहा शब्द प्रमाण के अनुसार हैं और कहा अनुसार नही है। अन्य देशों के दार्शनिक क पास इस प्रकार के ध्रुव सत्य ज्ञान के अभाव मे वे भटक गये हैं। इसी कारण हमने यह कहा है कि भारतीय वैदिक दर्शन शास्त्र वेदादि शास्त्रो मे दिये गये सत्यज्ञान को स्वतन्त्र साक्ष्यो से जानने का यत्न करते हैं।

ये दर्शन शास्त्र छ धाराओ म चलते हैं। इनको अंग्रेजी मे 'six schools of philosophy' कहते हैं। य छ धाराय छ ऋषियो के नाम पर विख्यात हैं। ये हैं ·····(१) कपिल का सांख्य दर्शन, (२) गौतम का न्याय दर्शन, (३) कणाद का वैशेषिक दर्शन, (४) व्यास का उत्तरमीमांसा (५) जैमिनी का पूर्वमीमांसा दर्शन, (६) पतञ्जलि का योग दर्शन। इन छओ धाराओं पर अनेक विचारकों ने व्याख्यायें, टीकायें और विवेचनायें लिखी हैं। इन छ धाराओं में भिन्न-भिन्न प्रकार से सत्य की खोज की गयी है। कुछ का कहना है कि ये धारायें परस्पर विरोधी हैं। यदि इन धाराओ पर वि न करने वालो की दृष्टि से देखें परस्पर विरोधी भी प्रतीत होती हैं। ऐसे विद्वान भी हैं जो इनके मूल ग्रन्थों में परस्पर विरोध नहीं देखते। इन विद्वानो मे महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती प्रमुख हैं। स्वामी जी का मत है कि सबके सब दर्शनशास्त्र वेदो को अथवा पथ-प्रदर्शक ध्रुव मानकर चलते हैं। अत यह सम्भव नहीं कि ये परस्पर विरोधी हो। स्वामी दयानन्द सरस्वती इन सबमें एक ही सच्चाई को पाते हैं। यह ठीक है कि प्रत्येक दर्शनशास्त्र की व्याख्या का एक मुख्य विषय है। उस विषय का प्रत्येक साधन से वह दर्शन शास्त्र व्याख्या और प्रतिपादन करता है परन्तु दूसर शास्त्रो के मुख्य विषय का वह खण्डन नही करता।

उदाहरण के रूप मे सांख्य दर्शन का मुख्य विषय है प्रकृति और पुरुष। सामान्य रूप मे सांख्य प्राणी की व्याख्या कर रहा है। प्राणी क्या है, इसके क्या-क्या अग हैं और वे अग किस प्रकार कार्य करते हैं?

कपिल मुनि एक ही सूत्र मे पूर्ण पुस्तक का तत्व दे देते हैं। वह सूत्र है —

सत्वरजस्तमसा साम्यावस्था प्रकृति प्रकृतेर्महान्
महतोऽहङ्कारोऽहङ्कारात् पञ्च तन्मात्राण्युभयमिन्द्रिय
तन्मात्रेभ्य स्थूलभूतानि पुरुष इति पञ्चविंशतिर्गण॥ (सांख्य-१-६१)

सत्व, रजस्, तमस् की साम्यावस्था प्रकृति है। प्रकृति से महत्, महत् से अहकार, अहकार से पच तन्मात्रा दोनो प्रकार की इन्द्रिया, तन्मात्राओ से स्थूलभूत, इनके अतिरिक्त पुरुष, ये (प्राणी) मे पच्चीस गुण हैं। परन्तु इनके विषय में लिखते हुए परमात्मा को अस्वीकार नही किया। न ही प्राणी के बाहर जड पदार्थों की उत्पत्ति और अस्तित्व को अस्वीकार किया है। उदाहरण के रूप मे सांख्य दर्शन में लिखा है — स हि सर्ववित् सर्वकर्त्ता॥ ईशेश्वरसिद्धि सिद्धा॥ (सांख्य—३-५६,-५७) अर्थात्—वह (परमात्मा ही) सबका ज्ञाता और सबका कर्त्ता है। इस प्रकार ईश्वर का होना सिद्ध है।

इसी प्रकार न्यायदर्शन मे मुख्य विषय तो है कि युक्ति करने का ढग क्या है? किस प्रकार सत्य, असत्य का निर्णय किया जावे? उदाहरण के रूप में गौतम मुनि न्याय दर्शन के प्रथम सूत्र मे ही लिखते हैं।

प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वा-
भासच्छलजातिनिग्रहस्थानाना तत्वज्ञानान्निश्रेयसाधिगम॥ (न्याय०—१-१-१)

इसका अर्थ है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिये ये सोलह उपाय हैं। इन के तत्वज्ञान से कल्याण की सिद्धि होती है। वे सोलह उपाय इस प्रकार लिखे हैं। प्रमाण हैं प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्द। (क) प्रत्यक्ष जो इन्द्रियो से जाना जाये। (ख) लिंग (लक्षण) के देखने से जो लक्षण वाले का ज्ञान होता है, वह अनुमान कहलाता है। जैसे धूम्र देखकर अग्नि का ज्ञान होता है यह अनुमान है। (ग) उपमान का अभिप्राय है किसी प्रसिद्ध वस्तु के साधर्म्य से साध्य वस्तु का ज्ञान होना। जैसे पाव के बल पर चला जाता है। जो चार पाव पर चलता है वह चार पाव वाला पशु है। (घ) आप्तपुरुष का वाक्य शब्द प्रमाण कहलाता है। आप्त उस पुरुष को कहते हैं जिसको उस विषय का ज्ञान है जिसकी बात पूछी गयी है। यथा एक रसायन शास्त्र का ज्ञाता कहता है कि जल एक सयुक्त पदार्थ है। यह कथन शब्द प्रमाण है। एक वेद का ज्ञाता कहता है कि वेदो मे इन्द्र वरुण परमात्मा के नाम हैं तो यह शब्द प्रमाण होगा।

प्रमेय है वह वस्तु अथवा समस्या जिसका ज्ञान प्राप्त करना हो और ज्ञान प्राप्त करने से दुःखो की निवृत्ति हो। न्यायदर्शन शास्त्र मे प्रमेय के विषय मे यह लिखा है —

आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमन प्रवृत्तिदोषप्रेत्यभावफलदुःखापवर्गास्तु प्रमेयम्॥ (न्याय दर्शन—१-१९)

अर्थ है—आत्मा शरीर इन्द्रिया इन्द्रियो के विषय बुद्धि मन प्रवृत्ति, दोष दुःख आवागमन और दुःखो से मुक्ति। ससार मे ये बारह बातें हैं जिनके विषय मे ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता है। ये प्रमेय हैं। सशय कहते हैं कि किसी पदार्थ के होने अथवा न होने से अनिश्चितता। उक्त पदार्थों का ससार मे प्रयोजन, उनके ज्ञान मे दृष्टान्त और फिर सिद्धान्त। इस प्रकार सोलह ज्ञान प्राप्ति के उपाय हैं।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

सम्पादकीय

आर्यसमाज जालन्धर के उत्सव पर

गत २८ दिसम्बर ६८ को आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर के वार्षिकोत्सव पर जाने का अवसर मिला। यह आर्यसमाज हुतात्मा सन्यासी स्वामी श्रद्धानंद जी महाराज द्वारा सस्थापित हुआ था और पंजाब के आर्यसमाजों में अपनी स्थिति एवं ऐतिहासिक, महत्त्व के आधार पर प्रमुखतम स्थान रखता है। एक विशेष बात यह है कि इस समाज के अधिकारी सदा ही सभा के हितैषी रहे हैं और सभा पर जब भी कोई संकट आता है तो इनका अमूल्य सहयोग सभा को समुपलब्ध रहता है। इन महानुभावों का उत्सव पर पहुँचने का अनुरोध मैं तो क्या, सभा-प्रधान प्रो० रामसिंह जी भी न टाल पाये और इस वृद्धावस्था में अपनी शारीरिक स्थिति और कड़ी सर्दी की चिन्ता किये बिना वे भी उत्सव में सम्मिलित हुए। आचार्य भगवानदेव जी भी पहुँचे हुए थे। सभा के वेद प्रचाराधिष्ठाता श्री पं० निरंजनदेव जी, श्री पं० बलराज जी आदि भी विद्यमान थे।

मेरा भाषण रात्रि को होना था, अतः सारा दिन गुरुदत्त भवन में रहा। सभा कार्यालय के कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त उपदेशक महानुभावों के साथ भी सभा की गतिविधि एवं प्रगति के सम्बन्ध में विचार विनिमय करने का अच्छा अवसर मिला। ये सभी भारी उत्साह एवं तन्मयता के साथ कार्य में जुटे हुये हैं, सभा के कार्य के प्रति पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना से ओतप्रोत हैं। सभा के बड़े-से-बड़े अधिकारी से कम इन्हें सभा की मान-मर्यादा तथा प्रतिष्ठा की चिन्ता नहीं है। बड़े-से-बड़े सकट में भी सभा की सेवा के लिये कृतसकल्प हैं, किसी भी प्रकार का त्याग एव बलिदान करने को उद्यत है। उपदेशक महानुभावों ने विशेष रूप से मुझे कई अमूल्य सुझाव दिये। उनके अदम्य साहस एवं सच्ची लग्न से मुझे पर्याप्त प्रेरणा मिली। मेरा मनोबल बढ़ा और मेरे मन मे बार-बार यह विचार घूमता रहा कि ऐसे निष्ठावान् सहयोगियों के बलबूते पर प्रत्येक कठिनाई का सरलता से मुकाबला किया जा सकता है। सारे विघ्न-बाधाओं को धराशायी किया जा सकता है। सभा के इन परखे हुए हितचिन्तकों के पुरुषार्थ के फलस्वरूप सभा का भविष्य उज्ज्वल है।

पंजाब की परिस्थिति

इसी दिन जालन्धर के प्रमुख आर्यसज्जनों एवं अन्य कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों से न केवल सभा के सम्बन्ध मे ही, अपितु पंजाब की स्थिति पर भी विचार-विनिमय हुआ। पजाब मे विधान सभा के चुनाव का आवेश आरम्भ हो चुका है और वहां हिन्दी तथा हिन्दू की स्थिति ज्वलन्त चर्चा का विषय है। कांग्रेस और उसकी नीति वहां पूर्णतया विफल हो चुकी है, वे बदली हुई परिस्थितियों में कुछ भी कहें, वाग्जाल मे कोई कैसे फसेगा? आजमाये हुए को कौन आजमाने की नासमझी दिखायेगा। कांग्रेस के घोषणा पत्र में गोलमाल शब्दों में हिन्दी के लिये भी कुछ कहा गया है, परन्तु पंजाब के हिन्दी प्रेमी नहीं भूले हैं कि कांग्रेस ने ही वहां हिन्दी का गला घोटा है। कांग्रेसी शासन के समय ही इतना उग्र आन्दोलन आर्यसमाज ने किया और हिन्दी प्रेमियों ने इतना बलिदान किया, परन्तु कांग्रेस के उच्च सत्ताधारी नेताओं ने किये हुये वचनों की अवहेलना करके हिन्दी प्रेमियों के साथ जो विश्वासघात किया, वह कांग्रेसी नेताओं की अनैतिकता का एक नग्न उदाहरण है। अब तो यों भी कांग्रेस पंजाब में मर चुकी है। उसके पास न नेता हैं, न अनुयायी न कार्यकर्ता। इनके अभाव में नीति का तो प्रश्न ही नहीं उठता। नेतृहीन और नीतिशून्य कांग्रेस मानो अपने कर्मों का फल भोगने के लिये ही छटपटा रही है। ऐसी कांग्रेस वहां जनता को आकृष्ट कर सकेगी, ऐसे दिवास्वप्न लेने वालों के विवेक पर तरस ही आता है।

जहां तक जनसंघ का सम्बन्ध है, एक बात स्वीकार करने में किसी को कोई संकोच नहीं होना चाहिये कि अकालीदल के साथ उनके द्वारा संयुक्त सरकार बनाने का यह परिणाम अवश्य दीखता है कि कांग्रेसी सत्ता के समय पैदा हुई हिन्दू-सिखों की पारस्परिक कटुता कम हुई है और दोनों वर्गों में विश्वास एवं सद्भाव किसी अंश में बढ़ा है। वातावरण में स्थिरता आई है।

हिन्दी के विषय में गत अंक में श्री सिद्धान्ती जी ने जो विचार प्रकट किये, हैं या सुझाव दिये हैं, मेरे विचार से वे बहुत सामयिक एवं उपादेय हैं। पंजाब का हिन्दू यथार्थ दृष्टिकोण से सारी परिस्थिति पर विचार करके यदि चुनाव के प्रसंग में अपनी नीति एवं कर्तव्य को निर्धारित करे तो अवश्य ठोस परिणाम निकल सकता है। हिन्दू की कोई सामूहिक नीति न होने के कारण उसे सदा घाटे में रहना पड़ता है। कुछ ऐसे तत्त्व भी हैं जो हिन्दू को कभी वास्तविक चिन्तन एवं विश्लेषण की दिशा में जाने ही नहीं देना चाहते, थोथे दमगज्जों से अपना स्वार्थ सिद्ध करना ही उनका व्यवसाय रहा है। केवल भावनाओं के भड़काने वाले व्यवसायियों से सतर्क रहते हुए समस्या का निदान करने से ही समाधान खोजने में सहायता मिल सकेगी।

—रघुवीरसिंह शास्त्री

आर्यसमाज श्रद्धानन्दबाजार जालन्धर में स्वीकृत प्रस्ताव

जालन्धर आर्यसमाज, श्रद्धानन्दबाजार, (अड्डा होशियारपुर) के ८२वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर आयोजित यह 'अश्लील साहित्य विरोधी सम्मेलन' इस बात पर गहरी चिन्ता प्रकट करता है कि अश्लील साहित्य के पठन की प्रवृत्ति हमारे देश मे विशेष रूप से युवावर्ग में दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। एक ओर तो सरकार विदेशी मुद्रा के सकट से परेशान है किन्तु दूसरी ओर अमरीका और योरुप आदि देशों से अश्लील साहित्य बड़ा-बड़ भारत मे आयात हो रहा है। इससे विदेशी मुद्रा की तो हानि होती ही है, देश के युवावर्ग पर इस कामोत्तेजक साहित्य का बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त पिछले कुछ वर्षों से अपने देश के भीतर भी अश्लील साहित्य का प्रकाशन बहुत अधिक बढ़ गया है। नंगी तस्वीरें और गंदी पठनसामग्री से भरपूर पत्र-पत्रिकायें खुले आम बेची जाती हैं। दैनिक समाचार पत्रों द्वारा भी व्यावसायिक लाभ के लिये इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया जा रहा है। इस प्रकार आज देश में अश्लील साहित्य एक विकट समस्या का रूप धारण कर चुका है और राष्ट्र के युवावर्ग के चरित्र के पतन का कारण बनता जा रहा है। इसलिए यह सम्मेलन भारत सरकार से बलपूर्वक मांग करता है कि वह अश्लील साहित्य की परिभाषा को भारतीय सभ्यता और सदाचार के अनुसार स्पष्ट घोषणा करके।

१—विदेशी अश्लील साहित्य के आयात पर प्रतिबन्ध लगाये। २—अश्लील पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशन और विक्रय को रोकने के लिये कानून मे उचित संशोधन करे और उस पर अमल करने के लिए प्रभावी पग उठायें। फिल्मों में अश्लील दृश्यो को बन्द कराने के लिये सैंसर व्यवस्था को कड़ा बनाये।

३—अन्त में यह सम्मेलन जनमत को प्रभावित करने वाली सभी संस्थाओं से आग्रह करता है कि वह अश्लील साहित्य के विरुद्ध विधिवद् आन्दोलन चलाये ताकि देश के युवावर्ग के नष्ट हो रहे चरित्र को बचाया जा सके।

सभापति—श्री आचार्य भगवान्‌देव गुरुकुल झज्जर।

वक्ता—प० प्रियव्रत वेदवाचस्पति, उपकुलपति कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय। श्रीमती सुवीरादेवी जी। प्रो० सुरेश एम० ए० गवर्नमेन्ट कालेज लुधियाना। पं० खैरातीराम शास्त्री। प० निरंजनदेव वेदप्रचार अधिष्ठाता। श्री ज्ञानेन्द्र सम्पादक हिन्दी दैनिक जनप्रदीप। श्री हरिवंशलाल लखनऊ। रामलाल गुप्त एम० सी०।

गोरक्षक अवश्य पढ़ें

सर्वदलीय गोरक्षा महाभियान समिति, २६।११ शक्तिनगर, दिल्ली की ओर से भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'गान्धी जी और गोरक्षा' के सम्बन्ध में समालोचनात्मक एक पुस्तिका प्रकाशित की गई है। इसमें गोहत्या को कानून से बन्द करने पर राष्ट्र को जो हानि पहुंच रही है। उस पर प्रकाश डाला है। भारत सरकार ने जो विचार गान्धी जी के प्रकट किये थे, उनको छापा और निःशुल्क देश में वितरित किया। सरकार के इस कार्य से गान्धी जी के सम्बन्ध में यह भ्रान्ति हो सकती थी कि वह कानून से गोहत्या बन्द करवाने के हक में नहीं थे। गोरक्षा महाभियान समिति ने इसी विषय पर समालोचना करके सिद्ध किया है कि गांधी जी के बारे में सरकारी दृष्टिकोण अयुक्त हैं। गोरक्षा बन्द करवाने के इच्छुक महानुभाव अवश्य इस पुस्तिका को पढें, जिस से उन्हे पता चलेगा कि भारत सरकार गोहत्या को कानून से बन्द न करने के लिये किस प्रकार अयुक्त उपायों को काम में लाकर राष्ट्र की बहुत बड़ी हानि कर रही है।

परस्पर प्रेम व्यवहार के मनोवैज्ञानिक उपाय

(प० सुरेशचन्द्र वेदालकार एम० ए० एल० टी० डी० ए० वी० कालेज गोरखपुर)

सहृदय सामनस्यमविद्वेष कृणोमि व ।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्स जातमिवाघ्न्या ॥ अ० ३।३०।१

भगवान् आदेश करते हैं । हे मनुष्यो ! (व) तुम्हारे (सहृदयम्) सहृदयता, एकचित्तता (सामनस्यम्) एक मनस्कता, एक विचार तथा (अविद्वेषम्) पारस्परिक प्रेम, निर्वैरता को (कृणोमि) करता हूं । (अन्यो अन्यम्) एक दूसरे को (अभिहर्यत) ऐसा चाहो, प्रेम करो (इव जातम्) जैसे (नए) उत्पन्न (वत्सम् अघ्न्या) बछडे को गौ चाहती है ।

इस मन्त्र मे वेद का आदेश है कि मनुष्यो ! तुम एक दूसरे से विद्वेष, विरोध, वैर करना छोड दो, परस्पर प्रेम और प्रीति से व्यवहार करो । मनुष्यो मे प्रीति क्यो नही होती ? प्रीति के लिए प्रेम के लिए एक दूसरे के चित्त की भावनायें एक होनी चाहिएँ, चित्तधारायें एक दिशा मे बहने वाली होनी चाहिएँ, मन एक समान सोचने वाले होने चाहिएँ, तब प्रेम की सृष्टि होती है, मधुर सबधो का सूत्रपात होता है । व्यक्ति और समाज के नियमो की दिशा एक है । व्यक्तियो का समूह समाज है । इसलिए व्यक्तियो के पारस्परिक प्रेम व्यवहारो का सम्बन्ध समाज पर भी पडता है । वेद कहता है हम दूसरे से ऐसा प्रेम करें जैसे गौ अपने नवजात बछडे से करती है । यहाँ एक बात ध्यान रखने की है कि ससार मे प्रत्येक प्राणी अपने बच्चो से प्रेम करता है । बन्दरी तो अपने मृत-बच्चे को पेट से चिपकाये चिपकाये बहुत दिनो तक घूमती रहती है । परन्तु वेद ने बन्दरी के प्रेम से उपमा न देकर गाय के प्रेम से उपमा दी है । इसका क्या कारण है ? इसका कारण है कि यदि गर्म रेगिस्तान मे एक गाय और एक बन्दरी अपने बच्चो के साथ जा रही हो और बालू बहुत ही अधिक गर्म हो तो जहा बन्दरी अपने बच्चे को जमीन पर रख कर उस पर खडी हो जायगी वहाँ गाय स्वय जमीन पर लेट कर बच्चे को अपने ऊपर लाने का प्रयत्न करेगी । यह स्वार्थ त्याग और दूसरे के सुख के लिए आत्म त्याग की भावना प्रेम को आकृष्ट करने मे अत्यन्त सहायक होती है । महर्षि दयानन्द का जीवन इस स्वार्थ त्याग का अनुपम दृष्टान्त है । (पर क्या हम आर्यसमाजी इस वेद मन्त्र का अनुकरण कर रहे हैं, यही विचारणीय है ?) । हम आपको पारिवारिक सामाजिक एव व्यक्तिगत प्रेम को कैसे आकृष्ट किया जाय, इस विषय मे कुछ नियम बनाने का प्रयास करें । शुद्ध नैतिक और आध्यात्मिक प्रेम को आकृष्ट करने के लिए यदि हम प्रयत्न करें तो हमे उसके व्यावहारिक जीवन मे अनेक आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त होगे ? इस विषय का ज्ञान विवाहित अविवाहित, व्यक्तिगत एव सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सभी व्यक्तियो के लिए मूल्यवान् है । हमे अपने पारिवारिक, व्यक्तिगत एव सामाजिक जीवन मे बहुत सा विषाद या बहुत सी अप्रसन्नता एव कटुता इसी ज्ञान के अभाव के कारण हो जाती है । इस मन्त्र मे बताए गए सिद्धान्तो को हम निम्नलिखित रूप मे दूसरे शब्दो मे समझ कर चलें तो हम एक दूसरे के प्रेम को विजय करने मे अवश्य समर्थ होगे ? यह नियम प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक समान हैं—चाहे वह पुरुष हो या स्त्री ।

(१) विजयशील व्यक्तित्व प्राप्त कीजिए—विजयशील व्यक्तित्व प्राप्त करने के लिए हमे बहुत सोचने की आवश्यकता नही । अपने परिचितो, अपने समाज के सदस्यो मे जिसके जो गुण हमे आकृष्ट करते हो, अच्छे लगते हो उन्हे हम अपने मे धारण करने का प्रयत्न करें और जिन दुर्गुणो से हम उद्विग्न होते हो उन्हे छोडने का प्रयत्न करें । किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके वे गुण हैं जो उसमे दिखाई देते हैं । इसलिए किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का अध्ययन करके उसके अच्छे गुणो को अपना अंश बना लेना चाहिए और यह निश्चय कर लेना चाहिए कि हम दूसरो पर अपने इन गुणो द्वारा प्रभाव स्थापित कर लेंगे । अपने प्रति दूसरो को आकृष्ट करने के लिए उत्तम स्वास्थ्य भी सहायक होगा क्योकि शारीरिक योग्यता और आकर्षणशीलता किसी भी व्यक्ति के प्रेम को जीतने की सभावना बढा देगी । याद रखिए व्यक्तित्व का प्रत्येक अनिवार्य गुण दूसरे व्यक्ति को आकृष्ट करने का स्वत स्पष्ट, सरल और प्रभावशाली तरीका है ।

(२) पारस्परिक प्रेम के लिए परचित्त ज्ञान का अभ्यास कीजिए—समाज मे जिस व्यक्ति के प्रेम को आप जीतना चाहते हैं उसका एक मानसिक चित्र बनाइए । प्रेमपात्र की तरफ प्रवाहित प्रेम तरगो का स्मरण कीजिए, अनुभव कीजिए और उन्हे देखिए । प्रभावशाली और अनुरागपूर्ण रूप मे कहिए "मेरा प्रेम स्वतन्त्रता पूर्वक तुम्हारी ओर प्रवाहित हो रहा है और मैं तुम्हे शुद्ध आध्यात्मिक प्रेम दृष्टि से प्यार करता हूँ, तुम पूर्णत मेरी प्रेम तरगो मे आप्लुत हो, तुम अनवरत मेरी तरफ आकृष्ट हो ।' यह सामनस्यम्' के लिए आवश्यक है । विशेषकर अपने विरोधी या उदासीन के मन को जीतने के लिए ।

(३) व्यक्तिगत आकृति—हमे अपने को सदा उत्तम रूप मे उपस्थित करना चाहिये । यह ध्यान रखना चाहिए कि पारस्परिक प्रेम को बढाने के लिए अच्छी चाल ढाल का भी बहुत बडा महत्व है । अच्छी चाल-ढाल के लिए अर्थात् सभ्य समाज के उपयुक्त बनने के लिए मनुष्य को सलीके ढंग से घूमने का अभ्यास करना चाहिये । अपने शरीर और सिर को सीधा रखना चाहिए और पेट को अच्छी तरह से अन्दर की तरफ । तन कर और ऐंठ कर मत चलिए । अपनी टागो को बहुत दूर रख कर और अगुलियो को फैला कर मत घूमिये । सदा अपने पैरों को सीधे अपने सामने रखिए । अपने घुटनो और पैरो को अलग-अलग करके न बैठिए । यह सब बातें पालन करने से मनुष्य सभ्य प्रतीत होता है और दूसरो का आकर्षण उत्पन्न करता है । सदा घुटनो और पैरो को ढीला करके, एक साथ करके बैठना चाहिए । ठीक तरह घूमने, बैठने, चलने से हमारे अन्दर शक्ति की भावना भरेगी, हमारा अग सौष्ठव और व्यवहार हमारे सम्बन्धित व्यक्तियो को यह अनुभूति देगा कि हम शारीरिक और मानसिक दोनो रूप मे मजबूत और दृढ हैं । यदि हमे दूसरे व्यक्ति शरीर से कमजोर और अस्थिर चित्त समझ लेंगे तो हमारे प्रति आदर की भावना नष्ट हो जाएगी । यदि आप अपने पडोसियों के हृदय मे मित्रता और प्रेम के प्रकाश जागृत करना चाहते हैं तो एक मजबूत मनुष्य बनना चाहिए और पूर्ण रूप से पौरुष भावो को प्रदर्शित करना चाहिए ।

(४) मर्मज्ञ और कुशल बनिए—यह किसी भी व्यक्ति मित्र या कुटुम्बी को वशीभूत करने का सच्चा रहस्य है । जितनी अधिक बातो को कोई पुरुष समान रूप से चाहते हैं उतनी ही घनिष्ठ एक दूसरे के प्रति आसक्ति होगी । उसकी अभिरुचियो और अरुचियो को ध्यान मे रखकर ही हमे एक दूसरे से व्यवहार करना चाहिए । जिन कार्यों को दूसरे पसन्द करते हैं और जिनसे दूसरो का लाभ और हमारी कोई हानि नही उन कार्यों को करते चले जाना चाहिए । आकर्षक व्यक्तित्व और अग सौष्ठव, सब दूसरो मे सच्ची अभिरुचि के द्वारा उत्पन्न होते हैं । अपने से सबधित व्यक्तियो की 'स्वभावना' को भी हम तभी ऊँचा कर सकते है । जब हम उनके दिल में उनकी बातों के प्रति अभिरुचि प्रदर्शित करके उन्हे भी महत्वपूर्ण व्यक्ति बना सकेंगे । इस प्रकार सच्ची अभिरुचि के साथ हमे मर्मज्ञ भी बनना चाहिए । संबंधित व्यक्तियो की—जिनसे प्रेम बढाने की इच्छा हो—निपुणता, सफलता और सुरुचियो के लिए उनका अभिनन्दन करना चाहिए । उनके अभिनन्दन से हम उनकी सदिच्छायें प्राप्त कर सकेंगे । इसका तात्पर्य यह नही कि उनकी अनवरत खुशामद और प्रशंसा ही करते रहे । बहुत अधिक अभिनन्दन की अपेक्षा कम अभिनन्दन बुद्धिमत्ता है । उचित अभिनन्दन से आत्म सम्मान बढता है । अधिक आत्म-विश्वास और प्रोत्साहन मिलता है ।

(५) अपनी मन की बातो को गुप्त रखिए—हमारे मन मे क्या हो रहा है, इसे मत जानने दीजिए । अपने उद्योग, पारिवारिक जीवन और अपने विचारो को हर जगह असमय मे कहते नहीं रहना चाहिए । हर समय अपनी बाते करते रहने से दूसरो के मन मे हमारे प्रति उपेक्षा और कभी-कभी घृणा के भाव भी आते जायेंगे । इसलिये सबधित व्यक्तियो के प्रेमपात्र बनने के लिए अपने सभी संशयों और चिन्ताओ को छिपा कर रखना चाहिए ।

(६) साहस रखिए—पारिवारिक एकता के लिए साहस की भी आवश्यकता है । एकता और साहस का सबध कुछ अजनबी लग सकता है, पर है सत्य ही । यदि परिवार मे कोई कठिनाई आ जाय तो अपने को उससे पराजित-सा अनुभव मत कीजिए । बहुत से मनुष्य अपने मन की हीन भावना के कारण उस कठिनाई को अपनी पहुँच से बाहर सोचने लगते है और परिणाम यह होता है कि अपनी असफलता का दोष दूसरो पर लगाने लगते है और तब पारिवारिक एकता समाप्त होने लगती है । इस मामले मे हमे मूढ नही बनना चाहिए और दूसरे के विद्रोही रुख को देखकर दबना भी नही चाहिए । उस समय हमे दृढता और मजबूती से काम लेना चाहिए, अपने को अधिक मजबूत और अच्छी तरह तैयार (सन्नद्ध) कर अपने आत्म-विश्वास के साथ उस कठिनाई को दूर करने का प्रयत्न कीजिए और उसका उत्तरदायित्व अपने ऊपर लीजिए । याद रखिए पारिवारिक प्रेम महान्, विशाल और आश्चर्यजनक है और यदि बहुत सरलता से प्राप्त हो जाय तो देर तक टिकाऊ नही होता । साहस युक्त तरीके से प्रेम को जीतने का आनन्द गम्भीर और स्थायी होता है । चित्त को प्रसन्न और हर्षित बनाए रखिए ।

आप पारिवारिक प्रेम और एकता को चाहते है और घर को स्वर्ग बनाना चाहते है तो उपर्युक्त मन्त्र के आधार पर बताये गए मनोवैज्ञानिक (उपर्युक्त) नियमो का पालन कीजिए । आप सबसे बढकर न्यायी दयावान् विचारशील और वास्तविक अर्थ में भद्रपुरुष बनिए और उस दशा मे हम सतत और निश्चित रूप में परिवार के प्रेम और एकता की वृद्धि मे सहायक हो सकेंगे ।

हिन्दी भाषी और हिन्दी

हिन्दी का विकास कहने से नहीं हिन्दी के उपयोग करने से होगा।

भूषण द्विवेदी कलकत्ता

विख्यात कवि रामधारीसिंह दिनकर ने कुछ समय पूर्व भारत वर्ष की ७० प्रतिशत जनता को हिन्दी बोलने पढने और समझने मे समर्थ सिद्ध किया था। मैं जनसाधारण के जीवन पर कुछ समय तक विशेषरूप से ध्यान देने पर यह भी समझ सका हूँ कि हिन्दी भाषा सर्वसाधारण के मध्य ही अधिक प्रचलित है। हिन्दी आर्थिक रूप से त्रस्त जन जीवन में अधिक प्रयुक्त होती है। भव्य भवनो और आकाश से स्पर्धा करने वाले महलो मे हिन्दी का प्रयोग बिरला ही करता दिखाई देता है। यदि मैं यह कहूँ कि हिन्दी देश के सर्वाधिक संख्या वाले गरीब लोगों की स्वयं स्वीकृत भाषा है तो अनुचित न होगा।

हमारे नेता देश की वास्तविक तस्वीर विदेशी लोगो को नही दिखाना चाहते। संभवत इसीलिये बाहर से आये मेहमानो का दिल्ली बम्बई मद्रास कलकत्ता आदि नगरो के निश्चित मार्गों का भ्रमण करा दिया जाता है। हम वास्तविक अर्थों मे जो हैं वह दूसरो के सामने नही आना चाहते। हम स्वतन्त्र होकर भी स्वदेशी वेषभूषा को हेय दृष्टि से देखने की दुर्भाग्यपूर्ण भूल करते जा रहे हैं। संभवत इस हीन भावना के कारण ही हम सर्वसाधारण की सरल हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप मे अपनाने मे असमर्थता अनुभव कर रहे है।

मध्यावधि चुनाव की सरगर्मी क्रमश बढने लगी है। सदा की तरह इस बार कुछ राजनैतिकदल हिन्दी भाषी क्षेत्रो मे हिन्दी के विकास का प्रलोभन दिखाने की चेष्टा कर सकते है और करेंगे भी मुझे यह बात अत्यन्त निन्दनीय प्रतीत होती है कि वोट प्राप्त करने के लिये इस प्रकार के ओछे हथकंडे अपनाये जाये और जनतन्त्र के नाम पर जन जीवन की आवश्यकताओ अपेक्षाओ तथा राष्ट्र हित को झुठलाया जाये।

मुझे यदि कम पढे लिखे हिन्दी भाषी बन्धुओ को हिन्दी के समाचार पत्र, पत्रिकायें आदि पढते देखकर हर्ष का अनुभव होता है तो शिक्षित हिन्दी भाषियो एवं उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक बन्धुओ को दैनिक जीवन मे हिन्दी की उपेक्षा करते हुये देखकर अत्यन्त दुख भी होता है। विगत दिनो एक बिलासपुर के सज्जन से भेंट हुई। लेखक हिन्दी भाषी है और वे भी हिन्दीभाषी हैं यह जानकर भी उन्होंने अंग्रेजी मे बात करने मे अपनी शान समझी। कितने शर्म की बात है कि हिन्दी भाषी मिले और वर्तालाप का माध्यम अंग्रेजी भाषा हो ?

मैंने यह अनुभव किया है कि साथी कर्मचारी जिस दिन टाई बांधकर और सूट पहिनकर आते है उस दिन वे अपने आप को जमीन से कुछ ऊपर अनुभव करने लगते हैं। अच्छी हिन्दी बोलने के स्थान पर टूटी फूटी अंग्रेजी बोलना उन्हे गुरुतर प्रतीत होता है। नमस्कार नमस्ते के स्थान पर गुड मार्निंग का प्रयोग उन्हे अच्छा लगता है। सभ्य कहे जाने वाले घरो मे मम्मी डैडी का प्रयोग बढता जा रहा है। हम इस प्रकार स्वाधीन होकर भी पराधीनता के दलदल मे गिरते जा रहे हैं।

कार्यालय से मेरे साथी (हिन्दी भाषी) प्राय पत्र तो हिन्दी मे लिखते है परन्तु पता अंग्रेजी मे लिखा करते है। मै अपने प्रिय मित्रो के पत्र भी अंग्रेजी मे लिखे पते के कारण चाहते हुये भी उन तक नही पहुचाता। मुझे रह रहकर हिन्दी भाषी बन्धुओ के अंग्रेजी प्रेम पर तरस आता है। पढे लिखे लोग हिन्दी के विकासार्थ कितने सजग हैं यह इसी प्रकार सर्वत्र देखा जा सकता है ? लोग हिन्दी के हित मे घोषणाये करते हैं सभायें और साहित्यिक सम्मेलन बुलाते है परन्तु हिन्दी के प्रयोग को प्राथमिकता नहीं देते यही सबसे बडा दुर्भाग्य है। ●

उभयपक्ष से नम्र निवेदन

(श्री प० शांति प्रकाश जी शास्त्रार्थमहारथी' गुडगांवा)

आर्योदय बन्द होने के पश्चात् सभा पत्रविहीन थी। मर्यादा ने इस कमी को पूरा कर दिया। मर्यादा मे सभा सबंधी मर्यादित लेखो के अतिरिक्त कुछ झगडा सम्बन्धी मैटर भी होता है। पक्षविपक्ष की ओर से यदि इसकी परिसमाप्ति करके विशुद्ध धार्मिक सामग्री प्रस्तुत की जाय तो यह आर्यसमाज की अनुपम सेवा होगी। ताली एक हाथ से नही बजती। अत मैं दोनो पक्षो से यही आग्रह करता हूँ। अन्यथा मर्यादा मे स्वपक्षपोषण अनिवार्य होगा।

श्री सिद्धान्ती जी के हाथो मे आर्यमर्यादा का संचालन है और श्री केदारसिंह जी इसके व्यवस्थापक हैं। केदारसिंह परिश्रमी और श्री सिद्धान्ती जी अनुभवी तथा सिद्धान्तो के मर्मज्ञ और वैदिक साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् है। आशा है श्री सिद्धान्ती जी तटस्थ भाव से इसका संपादन करते हुए आर्यत्व की मर्यादा का रक्षण करते रहेंगे।

(२) सभा संबंधी झगडो की परिसमाप्ति के लिये सार्वदेशिक सभा के हैदराबादीय आर्यसम्मेलन के निश्चयानुसार दोनो पक्ष महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती के द्वारा मतभेद दूर करके एक होने मे सफल हो गये तो इससे आर्यसमाज का भाग्योदय होगा। चाहिये कि सभा का पृथक २ निर्वाचन न हो। महात्मा जी की देख रेख मे सम्मिलित निर्वाचन सर्व सम्मति मे हो। तो सभा की बहुत बडी रक्षा और आर्यसमाज का भला होगा।

महात्मा आनन्दस्वामी के द्वारा झगडा का अन्त करने के लिये आवश्यक है कि अदालतो से सभी अभियोगो को वापिस लेकर शान्त वातावरण बनाया जाय।

याद रखें। मैं एक उपदेशक के सम्बन्ध से पक्ष विपक्ष मे सर्वथा ऊपर उठ कर दोनो का हितैषी होने की हैसियत मे ही यह निवेदन कर रहा हूँ। मेरा सम्पर्क दोनो ओर के नेताओ के साथ होने से कर्तव्य दृष्टि से ऐसा निवेदन करना आवश्यक है।

मैंने वेदप्रचार अधिष्ठाता पद इसी तटस्थता के आधार पर सफल बनाने का यत्न किया था और जब कभी सभा की सेवा का अवसर बने इसी को मुख्यता देना धर्म होगा।

अत इन पंक्तियो का संबोधन पक्ष विपक्ष दोनो से है। ●

विश्व वंद्य दयानन्द

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियाण शकूर बस्ती दिल्ली)

क्लान्त पौरुष की नस नस मे किसने रक्त संचार किया ?
प्रसुप्त धरा के जागरण हित किसने जन प्रचार किया ?
विकराल ताण्डव लख धर्म पतन किसका हृदय हुआ था आकुल ?
दुर्दशा देख निज धराधाम की किसका अन्तर हुआ व्याकुल ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ १ ॥

अस्पृश्य शूद्र के अश्रु को किसने स्व-अश्रु जाना था ?
अबला नारी के दुखडो को किसने दुख अपना माना था ?
रूढिवाद की वीभत्स लीला को किसने धारम धार किया ?
धनलोलुप पोप-पुरोहितो का किसने था बंटाधार किया ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ २ ॥

तारुण्य-परिणति, उभर उभर किसके मन को न सकी थी मोह ?
गृह समृद्धि निज प्रयत्नो से न सकी छेद अन्तर के रोह ?
यौवन उमंग प्रपंचो से किस इन्द्रिय भवन को मिटा न सकी ?
विवाह की शुभ सूचना दृढ प्रतिज्ञ को हटा न सकी ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ ३ ॥

किस आप्तकाम ने विष-दाता को दण्ड न दे उपहार दिया ?
किस धैर्य धाम ने विष पीकर भी मानव पर उपकार किया ?
किस दिव्य विभूति ने हमको जय विश्व का पाठ पढाया ?
किस भव्य मूर्ति ने फिर से सत्य का पाठ दिखाया ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ ४ ॥

प्यासो की किसने प्यास हरी वेदो के मीठे झरनो से ?
अन्धो की किसने हरी मूढता सत्यार्थ की धवल तरंगो से ?
सोतो को किसने आन जगाया अपनी निर्भय पुकारो से ?
मुर्दों को किसने आन उठाया अपनी अभय गुंजारो से ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ ५ ॥

पश्चिम की दूषित वायु से जननी की किसने रक्षा की ?
दासो को मुक्ति देने हित, देश प्रेम की भिक्षा दी ?
स्वतन्त्रता है अधिकार हमारा किसने प्रथम उद्घोष किया ?
अठावन की बुझी क्रान्ति का किसने उन्मेष किया ?
वह विश्व वंद्य दयानन्द वीर था सिंह समान दहाडा था ॥ ६ ॥

बिखरे भारत के कण-कण को किसने चुन चुन कर एक किया ?
बिखरी जाति की रग रग मे संघटन का मन्त्र फूंक दिया ?
भाषा एक संस्कृति एक हो किसने जन-गण आह्वान किया ?
आर्य अनार्य मे व्याख्या कर किसने स्पष्ट व्यवधान किया ?
वह विश्व-वंद्य दयानन्द वीर था, सिंह समान दहाडा था ॥ ७ ॥

चरित्र-शिक्षा

(श्री रामपालसिंह शास्त्री, सम्पादक—"मधुर लोक", दिल्ली-६)

आज देश में धर्मनिरपेक्षता ने जो अनाचार तथा भ्रष्टाचार फैलाये उसके परिणाम सर्वविदित हैं। इस धर्मनिरपेक्षता वाले मन्तव्य में ईश्वर के प्रति आस्था को स्पष्ट रूप से नष्ट करना है। ऐसी धर्मनिरपेक्षता राष्ट्र के आने वाली सन्तति पर ऐसे कुप्रभावी चिह्न करेगी कि वह अपने पूर्वजों की सच्ची कहानियों को कल्पित एवं असत्य समझेंगी। नैतिक शिक्षा से व्यक्ति सदाचारी बन सकता है। सदाचारी व्यक्ति का प्रथम कर्त्तव्य यह है कि —

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षे त नरश्चचरितमात्मन.। किं नु मे पशुभिस्तुल्यं किं नु सत्पुरुषैरपि॥

अर्थात्—मनुष्य को प्रतिदिन अपने चरित्र की आलोचना करनी चाहिए और यह विचारना चाहिए कि मेरा आचरण पशु तुल्य है अथवा सत्पुरुषों के तुल्य है।

इस प्रकार सोचने विचारने वाला व्यक्ति कभी भी दुराचारी नहीं बन सकता है। आत्म-चिन्तन ही मनुष्य को उन्नति के शिखर पर ले जा सकता है। हम जब अपने पूर्वजो के जीवन-चरित्रों को पढ़ते हैं, सुनते हैं और देखते हैं तो वे सब महात्माओं की श्रेणी में पहुँचे हुए दिखाई देते हैं। क्योंकि वे सब प्रतिदिन अपने जीवन का अन्वेक्षण करते रहते थे, भूल होने पर प्रायश्चित्त किया करते थे।

लोगों की यह मिथ्या धारणा है कि धर्म चरित्र का निर्माण नही करता धर्म के ही नाम पर कई बार उथल-पुथल और दगे-फसाद होते हैं। अतः यह आवश्यक है कि "धर्म" शब्द का विश्लेषण करके उसके प्रभाव की पूरी जाँच की जाए।

"प्राचीन-काल" में धर्म का अर्थ कर्त्तव्य था। यह धर्म की वास्तव में बहुत सुन्दर परिभाषा है। यदि मनुष्य परिवार, देश तथा समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करे तो वह सदाचारी और महान् है।

इसी धर्म की परिभाषाको कुछ समय के बाद कर्त्तव्य के बदले रीति-रिवाजों ने ले लिया। इससे कुछ लोगों को धर्म से घृणा हुई और वे उसकी आलोचना करने लगे। धर्मान्ध और कट्टर लोगो ने धर्म की ओट मे कई युद्ध किये। धर्म के नाम पर बहुत से अधार्मिक कार्य भी हुए। इस कारण जनता में धर्म से घृणा होने लगी।

विज्ञान आधुनिक शिक्षा का आधार है पर वह तर्क-वितर्क प्रधान है। इससे भावना का विकास नहीं होता। इससे ज्ञान बढ़ता है पर मनुष्य भावुक नहीं बनता जीवन में केवल जानने की अपेक्षा अनुभव करके काम कर डालना अधिक महत्वपूर्ण है।

आज धर्म केवल नाम के लिए रह गया है। उसमें पाखंड और दिखावा अधिक है, प्रार्थना कम। जप-तप-मनन-चिन्तन और साधना करने वाले व्यक्ति शून्य सम हैं।

राष्ट्र का सुधार धार्मिक सच्चरित्र व्यक्ति ही कर सकेंगे। अतः नैतिक शिक्षा का प्रसार होना देश में अत्यन्त आवश्यक है। ●

(पृष्ठ २ का शेष)

न्याय दर्शन का मुख्य विषय तो यही है कि ज्ञान प्राप्ति का ढंग क्या है? परन्तु इसके साथ उक्त प्रमेयों के विषय में जो कुछ न्याय के ढंग से जाना जाता है, वह भी लिखा है। यद्यपि उक्त प्रमेयों में ईश्वर का नाम नहीं- परन्तु एक वैदिक दर्शन होते हुए न्याय दर्शन ईश्वर के विषय को छोड़ नही सका। न्याय में लिखा है।

ईश्वरःकारणं पुरुष कर्माफल्यदर्शनात्॥ (न्याय०—४-१-१९)

पुरुष के कर्म स्वय फल नही देते। इससे ईश्वर की सिद्धि होती है। ईश्वर के सम्बन्ध में अन्य भी सूत्र हैं और युक्तियां की हैं।

सब से अधिक विवादस्पद बातें उत्तर मीमासा जिसे वेदान्त दर्शन भी कहते हैं, में उत्पन्न कर दी गयी हैं। वास्तव में विवाद वहा भी नहीं। वेदान्त दर्शन का दूसरा नाम "ब्रह्म सूत्र" है। अर्थात् उस ग्रंथ में ब्रह्म मुख्य विषय है। ब्रह्म की सिद्धि अकाट्य युक्तियों से की है, परन्तु यह कहीं भी नही लिखा कि ब्रह्म ही जीव है अथवा ब्रह्म ही प्रकृति है। वेदान्त दर्शन शास्त्र में यह तो आया है।

गुहां प्रविष्टावात्मानौ हि तद्दर्शनात्॥ (वे०-द०-१-२-११)

इसका अर्थ है कि दो आत्मतत्त्व गुहा मे प्रविष्ट हुए परस्पर दर्शन करने को। दो आत्मतत्त्वों को स्पष्ट लिखा है। यहां दो आत्मतत्त्वो का ही उल्लेख है। यह सूत्रकार ने अगले ही सूत्र मे स्पष्ट कर दिया है। लिखा है कि ये दो आत्मतत्त्व ही हैं क्योंकि उपनिषद् में जहाँ उक्त वाक्य आते हैं वहाँ आत्मतत्त्वों के विशेषणों में भेद बताये हुये हैं। और भी वेदान्त दर्शन में आया है।

अधिक तु भेदनिर्देशात्॥ (वे०-द०—२-१-२२)

अधिक अर्थात् बड़ा होने से और भेद दिखायी देने से ब्रह्म और जीवात्मा भिन्न-भिन्न हैं। यह सूत्र एक प्रश्न के उत्तर में है। प्रश्न था कि यदि परमात्मा को ही जीवात्मा समझ लिया जाये और परमात्मा सृष्टि की रचना करता है तो परमात्मा जन्म-मरण को दुःखकारक न बनाता। इसके उत्तर में कहा है कि जीवात्मा से परमात्मा भेद से दिखाई देता है। अतः बन्धन रचना जीवात्मा के लिये है, परमात्मा के लिये नहीं। इस प्रकार वेदान्त दर्शन में अनेक स्थानों पर जीवात्मा और प्रकृति का वर्णन आया है।

अतः महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का यह मत है कि छओं दर्शन परस्पर सहमत हैं और ये सब वेदानुकूल मत रखते हैं। यह तो इन दर्शनों के टीकाकारों ने भ्रान्ति फैलायी है कि इन दर्शनों में मतभेद है।

आज भारत देश में अद्वैतवादियों का बहुत प्रचार है। इसमें यह कारण नहीं कि अद्वैतवादियों के पास कोई प्रबल प्रमाण अथवा युक्ति है जिससे वे जीव, ब्रह्म और प्रकृति का एक होना ही सिद्ध कर सकें। सब वैदिक शास्त्रों में त्रैतवाद का समर्थन मिलता है। वैदिक शास्त्रों में हम चारों वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, एकादश उपनिषद्, छः दर्शन लेते हैं। मूल प्रमाण वेद मानते हैं। वेदों में तो त्रैतवाद है। छः दर्शन यदि वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाले हैं तो निस्संदेह वे भी त्रैतवाद के समर्थक होने चाहियें। हमारा यह विचारित मत है कि वे हैं। केवल स्वामी शंकराचार्य तथा उनकी परिपाटी के विद्वान् ही हैं जो यह मानते हैं कि वेदान्त दर्शन में अद्वैतवाद है। इस विषय में हम अपने अगले लेख में लिखेंगे। इसमें तो केवल मात्र इतना लिखना ही अभिप्रेत है कि वैदिक दर्शन शास्त्र वेदों को प्रमाण न मानने वालों को वैदिक सिद्धान्तों को समझाने के लिये लिखे गये ग्रन्थ हैं। ये युक्ति से आत्मा, परमात्मा, मन, बुद्धि, शरीर इन्द्रियां, इन्द्रियों के विषय को एवं प्रकृति और इनसे जगत् की रचना को प्रयोजन बताने के लिये रचे गये हैं। जहां-जहा श्रुति उपनिषदादि ग्रन्थों का उल्लेख आता है वहाँ केवल मात्र यह अभिप्राय है कि अमुक श्रुति में लिखा मन्त्र अमुक अर्थ रखता है। वहां इसका अर्थ युक्ति से ऐसा बनता है। उदाहरण के रूप में :—

छन्दोऽभिधानान्नेति चैन्न तथा चेतोऽर्पणानिगदात्तथा हि दर्शनम्॥(वे०-द०-१-१-२५)

अर्थ है कि केवल वेद में उल्लेख से ही नहीं (मानना कि ब्रह्म है) यदि ऐसा नहीं (तो फिर कैसे)। उपासना में चित्त का समर्पण कर दर्शन करने से ब्रह्म का साक्षात्कार होता है।) ●

पुस्तक समालोचना

नाम पुस्तक—ईश्वर दर्शन (ईशरोपनिषद्)।

लेखक—श्री पं० जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ"।

प्रकाशक:—मधुर प्रकाशन, आर्यसमाज मन्दिर, सीताराम बाजार, देहली-६ यही पुस्तक मिलने का स्थान है। मूल्य—१.५० पैसे सजिल्द। पृष्ठ संख्या १३८।

आलोचना—इस पुस्तक में ऋग्वेद के दूसरे मण्डल के बारहवें सूक्त का विवेचन किया गया है। इस सूक्त में कुल १५ मन्त्र हैं। विवेचक महानुभाव आर्यसमाज के प्रतिष्ठित विद्वान् सुयोग्य लेखक और उपदेशक हैं। आपने आर्यसमाज के साहित्यिक क्षेत्र में अनेक अच्छे-अच्छे ग्रन्थ लिखे हैं। इस पुस्तक में "इन्द्र" शब्द का अर्थ, "इन्द्र" का स्वरूप, देवता पद के निर्वचन और इस सूक्त के मन्त्रार्थद्रष्टा ऋषि गृत्समद का विवेचन मिलता है। वैदिक इन्द्र कोई ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है, परन्तु ऐतिहासिक मानने वाले सज्जनों के विचारार्थ पौराणिक इन्द्र का इतिहास और उसके कल्पित चरित्र के अनेक दोष दिखाये गये हैं। प्रत्येक मन्त्र की व्याख्या—प्रवचन आपकी योग्यता की परिचायिका है। आप ने प्रसङ्गवश पाश्चात्य विज्ञान के आधार पर "सौर्यमण्डल" की चर्चा भी इसमे कर दी है। पृ० १२२ पर आपने लिखा है— "सोम में ही वह ओम् भी वर्तमान है। स+ओम्=सोम।" यह निरुक्ति आपकी बुद्धि की प्रकर्षता का द्योतक है। रुचिकर है। अच्छा होता निम्नलिखित स्थान को अधिक स्पष्ट कर देते। "आर्य जगत् की उस उत्पत्ति के होते ही परमात्मा की दिव्य और सर्वोपरि सत्ता एवं महत्ता का जीवात्माओं ने देखा और अनुभव किया। बस, यह दर्शन और अनुभव ही ईश्वर का जन्म है।" पृ० ५१ इन स्थानों पर स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। आशा है अगले संस्करण में इस स्थान पर भी विवेचन हो सकेगा।

ऐसी उत्तम पुस्तक को लिखने पर लेखक महोदय बधाई के पात्र हैं। आशा है वेद भक्त सज्जन इस विवेचनात्मक पुस्तक का अध्ययन करके लाभ उठावेंगे। मूल्य उचित ही है। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

ग्राम बघरा (मु० नगर) में १३२ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री डालचन्द जी ने २९-१२-६८ को ग्राम बघरा जिला मुजफ्फरनगर में एक शुद्धि सम्मेलन का आयोजन किया जिसमें १३२ ईसाइयों ने वैदिक धर्म की दीक्षा लेकर अपनी पुरातन बाल्मीकि जाति में प्रवेश किया। शुद्धि संस्कार श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी ने कराया। ग्राम में २ दिन वैदिक धर्म का प्रचार हुआ। श्री दीपचन्द व मेहरसिंह जी के भजनों से ग्रामीण लोग बड़े प्रभावित हुए। श्री हरिदत्त शर्मा ने शुद्ध होने वाले भाइयों का शुद्धि सभा की ओर से स्वागत किया। —द्वारकानाथ प्रधान मन्त्री

प्रियं भारत भारतम्

[स्वामी वेदानन्द सरस्वती, अधिष्ठाता वैदिक साधु आश्रम, रोपड़ पंजाब]



आजकल अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त लोगों ने यह समझा तथा प्रचारित किया हुआ है कि हमारे देश का "भारतवर्ष" नाम पुराना नही है साथ ही इसे नवीन सिद्ध करने के लिए बहुविध युक्तियाँ घड़ते रहते हैं। उनकी अनभिज्ञता तथा भारतवर्ष नाम की प्राचीनता का दिग्दर्शन कराने के निमित्त कतिपय अकाट्य प्रमाण हम नीचे लिखते हैं :—

१—आनन्दवर्धन—अपने "ध्वन्यालोक" में काश्मीरिक आनन्दवर्धन (अष्टमी शती विक्रम) हमारे देश के लिए "भारतवर्ष" शब्द प्रयोगकर्ता है—"रतिर्हि भारत-वर्षोचितेनैव व्यवहारेण दिव्यानामपि वर्णनीयेति स्थितिः"। तृतीयोद्द्योतं। २—बाणभट्ट—आनन्दवर्धन का पूर्ववर्ती बाणभट्ट (सप्तमी शती विक्रम) इस समूचे देश का नाम भारतवर्ष लिखता है—इतश्च नातिदूरे तस्यास्मद् भारतवर्षादुत्तरेणानन्तरे किम्पुरुषनाम्नि वर्षे वर्षपर्वतो हेमकूटो नाम निवास। (कादम्बरी—महाश्वेता जन्म-वृतान्तः)। ३—वराहमिहिर—सुविख्यात ज्योतिषी वराहमिहिर अपनी बृहद् संहिता के पृष्ठ २८५ पर भारतवर्ष नाम स्मरण ... है। ४—अमरसिंह—कोषकार अमर-सिंह लिखता है—लोकोऽयं भारतं वर्षम्। २।१। ५—जैन उमास्वाती—तत्वार्थ सूत्र (विक्रम से ३०० वा अधिक पूर्व) ३।१० में ... भारतवर्ष नाम है। ६—कृष्ण-द्वैपायन—व्यास की महाभारत, भीष्म पर्वान्तर्गत भूमिपर्व में भारत शब्द का प्रयोग करते हैं तथा अन्यत्र भी लिखते हैं—

"मेरोर्हरेश्च द्वे वर्षे वर्षं हैमवतं ततः। क्रमेणैव व्यतिक्रम्य भारतं वर्षमासदत् ॥" शान्ति पर्व ३३३।१४।

७—भरत मुनि—कृष्णद्वैपायन से सहस्रों वर्ष पूर्ववर्ती मुनि भरत अपने नाट्य शास्त्र में लिखते हैं—

"तद् भारतेऽत्रवर्षे कर्तव्यं काव्यवन्धेषु। तस्माद् भारतमिष्टं वर्षेष्वेतेषु विदितेषु ॥"

८—कश्यप—मुनि भरत के समकालिक भगवान् कश्यप संहिता में कहते हैं—

क्षितौ भारतवर्षेऽस्मिन् नवभागव्यवस्थया पृष्ठ २६६।

उपरिनिर्दिष्ट प्रमाणों से ज्ञात होता है कि प्राचीनतम काल से ही यह भूमि भारतवर्ष नाम से प्रसिद्ध रही है इसमे सन्देह नहीं किया जा सकता। आधुनिक ईसाई यहूदी लेखक और उनके उच्छिष्ट भोजी शिष्य आर्यों को ईसा से लगभग २५०० वर्ष पूर्व बाहर से यहाँ आया हुआ मान कर अनेक तथ्यहीन कल्पनाएँ करते हैं, इन प्रमाणों के रहते उनका कोई मूल्य नही है। इन लोगों की विचार हीनता को इसी बात से समझा जा सकता है कि इन्होंने भारत को इण्डिया ही कहना प्रारम्भ कर दिया है। ससार में कहीं भी एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते समय व्यक्ति-वाचक संज्ञा (Personal Pronoun) का अनुवाद नही किया जाता अपितु नाम सभी भाषाओं में वैसे ही बने रहते हैं। अर्थात् हस्तिनापुर, लालबहादुर, शत्रुघ्न, सुमित्रा वा सुचेता आदि नाम को अंग्रेजी आदि भाषान्तर में बोलते हुए ज्यो के त्यों बोलते हैं। नहीं तो इन्हें क्रमशः (City of Elephents Brave Diomond, Enemykiller, Goodfriend holder of wellintaition holder) आदि कहना होगा। पर यह उपहासप्रद सिद्ध होगा। तब वाशिगटन और विलिंगटन आदि को भी २८ मन साबुन और २८ मन का इक्षुक आदि कहोगे क्या? यदि नही तो फिर भारत को अंग्रेजी में बोलते, लिखते, व्याख्यान देते व रेडियो पर समाचार प्रसारित करते समय इण्डिया क्यों कहा जाता है? क्या उस अंग्रेजी में Made in Bharat नहीं लिखा जा सकता? यह व्यवहार सर्वथा पक्षपात पूर्ण है।

भारत का आकार

वायु पुराण ४५।८६ में भारत भूमि को तिर्यगायत और मत्स्य पु० ११४।१५ में भी कहा है।

आयतस्तु कुमारीतो गंगायाः प्रवहावधिः।
तिर्यगूर्ध्वं तु विस्तीर्णः सहस्राणि दशैव तु ॥ मत्स्य पु० ॥

कुमारी से गंगा स्रोत तक तिरछी और ऊपर दश सहस्र विस्तीर्ण है। ब्रह्माण्ड पुराण में—आयतो ह्याकुमार्यां वै चागंगा प्रभवाच्च वै। तिर्यगुत्तर विस्तीर्णः सहस्राणि नवैव तु ॥ पू० भा० १६।११ नव सहस्र विस्तीर्ण वर्णन है। इससे आगे ब्रह्माण्ड पुराण का पाठ आर्य तथा म्लेच्छ बस्तियों का वर्णन करता है—

द्वीपो ह्युपनिबद्धोऽयं म्लेच्छैरन्तेषु सर्वशः। पूर्वे किराता ह्यस्यान्ते पश्चिमे यवनाः स्मृताः ॥१२॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या मध्ये शूद्राश्च भागशः ॥१३॥

अर्थात् भारत की सीमाओं पर सर्वत्र म्लेच्छ बस्तियाँ हैं। पूर्व सीमा पर किरात और पश्चिम में यवन हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य मध्य में अर्थात् आर्यावर्त में हैं। शूद्र विभिन्न भागो मे बिखरे हुए है। पुराणगत ये श्लोक महाभारत युद्ध से २-३ सहस्र वर्ष पूर्व की स्थिति का ज्ञान कराते हैं। तब ब्राह्मणों के अभाव में अनेक म्लेच्छ जातियाँ उत्पन्न हो गई थी जो सतयुग में नहीं थी। मनुस्मृति २।२३ के अनुसार पश्चिम समुद्र से परे थे और महा भा० शान्ति पर्व १६७।२ के अनुसार उदीची दिशा में भी म्लेच्छ थे। कभी ये यवन संस्कृत भाषी शुद्ध आर्य थे। केशव अपने कल्पद्रु कोश में लिखता है—

प्रत्यन्तोऽनार्यदेशः स्यात्। पृ० ५, श्लोक ८ ॥

अर्थात् सीमान्त प्रदेश अनार्य है। आर्य लोग बाहर से नहीं आये अपितु इस देश के मूल निवासी सदा से यही रहने से इस भूमि का प्राचीनतम नाम आर्यावर्त है पश्चात् महाराजा भरत के नाम पर भारतवर्ष हमारे देश का नाम पड़ा, यह भी अति प्राचीन नाम है। ईसाई-यहूदी लेखकों के कथनानुसार यदि आर्य लोग ईसा से २५०० वर्ष पूर्व भारत के उत्तर पश्चिम मार्ग से यहाँ बसे होते तो आर्य ग्रन्थों में ऐसे प्रमाण न मिलते कि भारत की सीमाओं पर म्लेच्छ बस्तियाँ बसती थी। भारत प्रवेश के समय सीमान्त स्थित म्लेच्छ को समाप्त करके ही आर्य लोग आगे बढ़ते। किन्तु आर्य लोग इनका उल्लंघन करके आगे नहीं बढ़े। क्षुद्रक और मालव जातियों का वाहीक देशों में सिकन्दर के काल में भी अस्तित्व प्रकट करता है। मैगस्थनीज ने भी स्पष्ट लिखा है कि क्षुद्रक-मालव दानवासुर (Dionysos) के काल से वाहीक देश में बस गये थे।

आर्य लोग भारत के ही मूल निवासी हैं इसमें कतिपय प्रमाण है—

१—भारत जम्बू द्वीप का एक भाग है। जम्बू द्वीप के अतिरिक्त समस्त द्वीपों के वसनीय स्थलों पर आर्यों का निवास था। कालान्तर में भाषा में अस्पष्टता आ जाने से म्लेच्छ लोग उत्पन्न हो गये। आर्य भाव वाले लोगों का स्थान संकुचित होता गया। पुनः भारत में भी आर्यों का वास-भाग संकुचित होता गया। २—यवन-लेखक—मगस्थनेज (विक्रम से लगभग ३०० वर्ष पूर्व) स्पष्ट लिखता है कि भारतीय प्रजा इसी देश की थी। उनका मूल इसी देश में था। ३—आर्यों के भारत में ईसा से २५०० वर्ष पूर्व आने की रट जिस कल्पित भाषा विज्ञान के आधार पर लगाई जाती है वह सर्वथा इतिहास के विरुद्ध है इसका नग्न चित्र पं० भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर द्वारा लिखित "भाषा का इतिहास" में प्रस्तुत किया है। उसका खंडन किये बिना ईसाई और यहूदी लेखक असत्य बात उपस्थित नहीं कर सकते। ४—भारत में ऐसे अनेक नगर, ग्राम और विषय हैं जिनके नाम अति प्राचीन काल के राजाओं के नाम पर रखे गये थे। यथा—

कोशाम्बी—महाराज कुशाम्ब द्वारा बसाई हुई नगरी।
हस्तिनापुर—महाराज हस्ती द्वारा बसाया हुआ नगर।
वत्स देश—महाराज वत्स द्वारा बनाया गया देश।
कुरु देश—महाराज कुरु द्वारा बनाया हुआ देश।

ऐसे ही शतशः ऐतिहासिक नाम महाभारत युद्ध से बहुत पहले के भारतीय इतिहास मे उन राजाओ की वंशावलियों सहित मिलते हैं। ईसाई, यहूदी पक्षपाती लेखकों का रामायण, महाभारत और पुराणगत इन वंशावलियों का निरादर करना तथा इन ग्रन्थों को ही कल्पित कहना प्रच्छन्न धूर्तता है।

५—आर्य लोग बाहर से भारत में आये यह मिश्र, बाबल, सीरिया, चीन, यूनान और अरब के किसी पुराने इतिहासकार ने नहीं लिखा। ६—विष्णुगुप्त कौटिल्य (विक्रम से १४०० वर्ष पूर्व) के अर्थशास्त्र में दाण्डक्य भोज, कराल वैदेह, तालजंघ, ऐल, रावण, हैहय अर्जुन (सहस्रबाहू), वृष्णि संघ, द्वैपायन, अम्बरीष नाभाग और जामदग्न्य राम (परशुराम) का उल्लेख है। इन सबका इतिहास वंशा-वलियों की तथ्यता को स्वीकार किये बिना नहीं जुड़ सकता और इतिहास के जुड़ते ही यह अनायास सिद्ध हो जाता है कि आर्य ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लोग विष्णु-गुप्त से सहस्रों वर्ष पूर्व भारत में रहते थे। ईसाई लेखकों के मार्ग में अर्थशास्त्र को चाणक्य की कृति मानने में यही रुकावट थी इसीलिये जूलियस जालि आदि ने भर-सक प्रयत्न किया कि अर्थशास्त्र और उसके रचयिता ऐतिहासिक न माने जाएँ।

[शेष पृष्ठ ९ पर]

सात मर्यादाएँ

(डा० रामनाथ वेदालंकार एम० ए० पी० एच० डी०, अध्यक्ष
संस्कृत—विभाग गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय)



सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु, तासामेकामिदभ्यंहुरो गात्।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीडे पथा विसर्गे धरुणेषु तस्थौ ॥ ऋग् १०-५-६

अर्थ—(कवय) मेधावी जनो ने (सप्त मर्यादा) सात मर्यादाए (ततक्षु) बनायी हैं। (तासाम् एकाम् इत्) उनमे से एक को भी, (अभिगात्) प्राप्त करता है, वह (अहुर) पापी होता है। इसके विपरीत जो उनसे दूर रहता है वह (उपमस्य नीड) सब गुणा के उपमान परमेश्वर के आश्रम मे रहता हुआ (ह) निश्चित ही (आयो) मनुष्यजाति का (स्कम्भ) आधारस्तम्भ हो जाता है, और (पथा विसर्गे) अनेक मार्गों के छूटे होने पर (धरुणेषु) धारक मार्गों पर ही (तस्थौ) स्थित होता है, चलता है।

मानवजाति के हितैषी मेधावी मनीषियो ने सात मर्यादाए या ऐसी सीमाए निर्धारित की हैं, जिनसे प्रत्येक मनुष्य को दूर रहना चाहिए। जो उनमे से किसी एक को भी प्राप्त करता है वह पापी कहलाता है। इन्ही मर्यादाओ को स्मृतिकारो ने महापातक या पातक नाम भी दिया है। यदि हम देश, जाति और समाज को श्रेष्ठ तथा उन्नत बनाना चाहते है तो यह आवश्यक है कि सब मनुष्य इन पातकों से बचें। निरुक्तकार यास्क के अनुसार सात मर्यादाए निम्न है।

१. स्तेयम्—चोरी। दूसरे की वस्तु को उसकी बिना स्वीकृति के चुपचाप हस्तगत कर लेना या बलपूर्वक उससे छीन लेना चोरी कहलाता है। यह एक बडा दुर्गुण है, जो समाज के लिए अभिशाप है। प्रत्येक मनुष्य को अपने परिश्रम की कमायी के ही उपयोग का अधिकार है, स्वय अकर्मण्य रह कर दूसरे की कमायी को छीनने का नहीं। अन्यथा समाज से परिश्रम की महत्ता समाप्त हो जायेगी। परिश्रमी लोग दुखी रहेंगे और दूसरो की सम्पत्ति का अपहरण करने वाले आनन्द लूटेंगे। समाज मे प्रचलित कुछ अन्य दुर्व्यसन भी चोरी के अन्तर्गत ही होते हैं, यथा असत्य बही खाते भर कर आय कर से बचने का प्रयत्न, बिना टिकट रेलगाडी मे यात्रा करना, दूध मे पानी मिला कर बेचना, किराया न देना आदि। ऐसी चोरियाँ शिष्टसमाज तक मे व्याप्त है, जिनसे देश का चरित्र गिरता है। आदर्श यह है कि अपना पसीना बहाकर जो कुछ हमे प्राप्त होता है उसी मे सन्तोष करें। यदि अस्तेय का आदर्श हम अपने जीवन मे अपना ले तो हमे किसी वस्तु की कमी न होगी। योगदर्शन के शब्दो मे—'अस्तेयप्रतिष्ठाया सर्वरत्नोपस्थानम्'।

२ गुरुतल्पारोहणम् गुरुपत्नी मे गमन। इसे किसी भी कुमारी या परनारी मे गमन का उपलक्षण समझना चाहिए। मनु ने भी सहोदरा, कुमारी, अन्त्यजा, मित्र-स्त्री, पुत्र-स्त्री आदि मे गमन को गुरुपत्नीगमन के ही समान पाप बताया है। विदेशी रहन-सहन, शिक्षा-दीक्षा, वेश-भूषा आदि के साथ यह महापराध भी हमारे युवको मे बढ रहा है। किन्तु हमे नही भूलना चाहिए कि मातृवत् परदारेषु' की भावना ही भारतीय संस्कृति का आदर्श है।

३ ब्रह्महत्या—स्थूल अर्थो मे इससे ब्राह्मण का वध गृहीत होता है, किन्तु व्यापक अर्थो म इससे नास्तिकता का प्रचार तथा सच्चे ब्राह्मण की वाणी की उपेक्षा अभिप्रेत है। पुण्य कर्मो मे प्रवृत्ति के लिए समाज मे ईश्वरविश्वास या आस्तिकता का वातावरण रहना नितान्त आवश्यक है। जो मनुष्य अपने मन, वाणी या कर्म से नास्तिकता को बढावा देता है वह ब्रह्मघाती है। इसी प्रकार सच्चे वीतराग ब्राह्मण की हितकर वाणी का जो विरोध करता है वह भी ब्रह्मघाती है। अथर्ववेद ५ म काण्ड के १८ वे तथा १९ वे सूक्त मे कहा है कि ब्राह्मण की वाणी का निरादर करना ब्राह्मण का वध करने के समान है तथा जिस राष्ट्र मे ब्राह्मण की हत्या होती है वह राष्ट्र दुर्गति का शिकार हो जाता है—'ब्राह्मण यत्र हिंसन्ति तद् राष्ट्र हन्ति दुच्छुना'। वैदिक साहित्य मे यह बार-बार कहा गया है कि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय मिल कर ही राष्ट्र को ठीक प्रकार चला सकते है।

४. सुरापानम्—मदिरा पान करना। मद्यपान एक ऐसा दुर्व्यसन है जिससे मनुष्य के मन एव शरीर दोनो दूषित हो जाते हैं। इसका प्रभाव केवल व्यक्ति पर नही, किन्तु सारे समाज पर पडता है, और समाज पतित हो जाता है। अतएव मनु आदि स्मृतिकारो ने इसकी महापातको मे गणना की है। जब हमारा देश स्वतन्त्र हुआ तब कई प्रान्तो ने मद्यपान के समूलोन्मूलन की घोषणा की थी। किन्तु आज तक इसमे सफलता प्राप्त नही हो सकी। आज तो देश के कर्णधार इस प्रश्न को और भी आगे के लिए टाल रहे है। वेद, धर्मसूत्र, स्मृतिशास्त्र आदि समग्र भारतीय धार्मिक साहित्य जिस दुर्गुण को दूर करने की प्रेरणा देता है, देश और जातियों का इतिहास जिसकी भयकर हानियो का साक्षी है, अनुभव जिसकी विनाशकारिता को प्रमाणित करता है उससे शीघ्रातिशीघ्र छुटकारा पा लेना ही श्रेयस्कर है।

५. भ्रूणहत्या—गर्भपात। इसकी प्रवृत्ति समाज मे कई कारणो से होती है। एक कारण है पाप को छिपाना। यदि किसी स्त्री को अवैध गर्भ होता है तो वह स्त्री इसी मार्ग का अवलम्बन करती है। दूसरा कारण है अधिक सन्तानो के उत्तरदायित्व से बचना। तीसरा कारण है जो आज प्रमुख रूप में सामने आ रहा है, वह है शासन की ओर से जनसख्या को न बढने देने के पक्ष में प्रचार। अनेक ऐसे उपाया का आविष्कार हुआ है जिनसे गर्भ न रहे और यदि रह भी जाये तो गर्भपात करा दिया जाये। कहा जाता है कि भ्रूणहत्या को पाप उस युग मे माना गया था जब जनसख्या को बढाने की समस्या थी, पर आज तो जनसख्या को घटाने की समस्या है, अत वह पाप नही है। किन्तु वस्तुत वैयक्तिक तथा सामाजिक दोनो दृष्टियो से ही यह प्रवृत्ति हानिकारक है।

६ दुष्कृतस्य कर्मण पुन पुन सेवा—दुष्कृत कर्म को पुन पुन करना। सभी मनुष्यो से एकाध बार तो कोई न कोई पाप हो ही जाता है। परन्तु उससे शिक्षा लेकर भविष्य मे वे उस पाप को न करें यह अभिप्रेत होना है। पर जानबूझ कर आनन्द ले लेकर किसी पाप को बार-बार करना यह एक बडा भयकर रोग है। इससे व्यक्ति का तो सर्वनाश होता ही है, उस दुर्व्यसन के प्रचार के कारण समाज भी विनाश के गर्त मे गिरता चलता है।

७ पातके अनृतोद्यम्—पाप करके उसे छिपाने के लिए असत्य भाषण करना। यह प्रवृत्ति छोट-बडो सबमे पायी जाती है। बच्चा कोई बुरा कार्य करके पूछने पर कह देता है कि मैंने यह कार्य नही किया क्योकि उसे दण्ड का भय होता है। ऐसे ही बडा व्यक्ति भी अपयश या दण्डादि के भय से किये पाप को स्वीकार नही करता। दूसरे की हत्या जसे महापाप को करके भी वह उससे मुकर जाता है, तथा न्यायालय तक मे अपने असत्य को सत्य सिद्ध करने के लिए जीतोड प्रयत्न करता है। पर पाप को छिपाने के लिए असत्य बोलना एक पाप के ऊपर दूसरा पाप करना है। किय पाप के परिमार्जन का एक ही उपाय है कि उसे सच्चे हृदय से स्वीकार करना, उसके लिए प्रायश्चित्त करना तथा वैधानिक दृष्टि से दण्ड भी मिलता हो तो उसे सहर्ष झेलना। इससे अन्त करण शुद्ध होता है, अन्तस्तुष्टि मिलती है तथा भविष्य मे उस पाप को न करने की भूमिका तैयार हो जाती है।

इन उपर्युक्त सात मर्यादाओ के घेरे मे न घिरने का सब मनुष्य प्रण कर लें तो समाज कितना उन्नत हो जाय यह कहने की आवश्यकता नही है। ऋग्वेद के भाष्यकर सायण ने भी इस मन्त्र की व्याख्या मे यास्काचार्य-प्रोक्त ये सात मर्यादाए ही गृहीत की हैं। परन्तु साथ ही विकल्प रूप मे दूसरी सात भी परिगणित की हैं। वे है चार कामज—गण के व्यसन मद्यपान, द्यूतक्रीडा, स्त्रियो में अत्यासक्ति तथा शिकार और तीन क्रोधज—गण के व्यसन अनुचित दण्ड देना, वाक्पारुष्य तथा अर्थदूषण अर्थात् अन्याय से दूसरे की सम्पत्ति हडप लेना, जैसा कि मनुस्मृति ७-५० ५१, में कहा है—

पानमक्षा स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम्, एतत् कष्टतम विद्याच्चतुष्क कामजे गणे।
दण्डस्य पातन चव वाक्पारुष्यार्थदूषणे, क्रोधजेऽपि गणे विद्यात् कष्टमेतद् त्रिक सदा ॥
मनु० ७। ५०, ५१

इन सातो दुर्व्यसनो से भी मनुष्य को बचना चाहिए। मन्त्र के उत्तरार्ध में यह कहा है कि जो मनुष्य निर्दिष्ट सातो मर्यादाओ से दूर रहता है उसमें कैसी शक्ति या कैसा गुण उत्पन्न हो जाता है। वह व्यक्ति उस परमेश्वर को अपना आश्रय बना लेता है जो सब गुणो का उपमान है तथा मनुष्य-समाज का आधारस्तम्भ या नेता बन जाता है। उस व्यक्ति में यह विवेक उत्पन्न हो जाता है कि ससार में जो पाप पुण्य के सैकडो मार्ग चल रहे होते हैं उनमें से वह धारक पुण्य के मार्गों को ही चुनता है, स्वय पुण्यमार्गों का राही होकर पीछे अन्यो को भी उन्हीं मार्गों से चलाता है। प्रभु करे हम भी उसी कोटि के बनें।

शिष्टाचार

(श्री सन्त जानकीदास जी संस्थापक रघुवर आश्रम बेड़की (महेन्द्रगढ़)

शिष्टाचार का शब्दार्थ और साराश शिष्ट और आचार इन दो शब्दो से शिष्टाचार बना है। शिष्ट का अर्थ है सज्जन और आचार का अर्थ है बर्ताव, अर्थात् सज्जन पुरुषो के बर्ताव के अनुसार बुद्धिपूर्वक व्यवहार करना शिष्टाचार कहा जाता है। जो रीति-रिवाज जो अच्छे नही हो, उनको छोड देने मे भलाई है, वे रिवाज चाहे प्राचीन हों अथवा नवीन।

१. अतिथि सत्कार अच्छा काम है, परन्तु किसी व्यक्ति को अपने स्थान पर आता देख कर ही बाहरी रूप से कहना कि 'आइये, भोजन कीजिये', परन्तु सत्कार करने वाले के भीतर यह भावना नही है, केवल दिखावे के लिए वाणी मात्र से कहता है, तो यह शिष्टाचार नही है। यदि किसी का सत्कार करना हो, तो उसको पहिले निमन्त्रण दिया जावे और सत्कार किया जावे, तब यह बात ठीक है। हाँ अचानक आये हुए अतिथि का आसन तथा वाणी मात्र से भी सत्कार करना शिष्टाचार है, भोजन आदि का कराना तो और भी अच्छा काम है। अभिप्राय यह है कि दिखावे मात्र से काम करना ढोंग है। ढोग नही करना चाहिये। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि अतिथि के रूप मे कोई डाकू चोर खूनी आवारा भले पुरुष के वेश मे हानि न पहुँचा जावे।

२—मर्यादा का पालन करना अच्छी बात है गावो मे एक साधारण बात देखी जाती है कि छोटे भाई की स्त्री को बडा भाई अथवा उन भाइयो का पिता भार (पानी आदि का घडा) उठवाने मे पाप मानता है झिझक मानता है। परन्तु कभी ऐसा अवसर पड जावे, तो पिता अपने लडके की स्त्री को अपनी पुत्री मानकर अथवा उस स्त्री के पति का बडा भाई उस स्त्री को अपनी छोटी बहिन समझते हुए पानी का घड़ा उठवा देना चाहिये। इसमे कुछ पाप का दोष नही है। कोई विशेष कार्य होवे तो अपनी पुत्री अथवा बहिन रूप मे उसको काम बतला देना चाहिये और उस स्त्री को भी अपना पिता अथवा बडा भाई मान कर पूछ लेना चाहिये, इसमें दोष नही। हा व्यर्थ मे परस्पर बातें नही करनी चाहियें।

३—पति-पत्नी को आदर से अवसर पडने पर एक दूसरे का नाम लेने मे दोष नही, जैसे राम और सीता आपस मे आदर से नाम लेते थे। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि बात बात मे नाम नही लेना चाहिये।

४—माता-पिता वृद्ध, साधु और अपने सगे सम्बन्धियो की सेवा करना धर्म है। परन्तु यदि वे कोई अधर्म की बाते करने को कहे, तो आदर से निषेध कर देना चाहिये, परन्तु सेवा अवश्य करते रहना, सेवा को छोडना नही चाहिये। हाँ मरे हुए माता-पिता आदि के नाम पर मृतक भोज-काज-जग आदि करना ढोग है। सेवा जीवितो की हो सकती है, मरन पर नही। मरे हुए व्यक्तियो की अस्थि गगा आदि नदियो मे डालना अनुचित है। श्मशान भूमि मे हड्डियो को गाड देना चाहिये।

५—परस्पर यज्ञ आदि उत्सवो मे सत्कार करना अच्छी बात है, परन्तु विवाह सस्कारो मे बडी बरात बुलाना या ले जाना बुरा है। अपनी स्थिति के अनुसार कार्य करना ठीक है। ऋण लेकर कोई मान बडाई का काम करना बुरी बात है। गृहस्थी को अपने सामर्थ्य के अनुसार ही घर बार का काम चलाना चाहिये। दान भी शक्ति से अधिक देना गृहस्थी के लिए उचित नही है।

६—जनता के हित के लिये कुआ तालाब पेड बाग, धर्मशाला पाठशाला बनवाना अच्छा है, परन्तु ऐसे शिवालय और मन्दिर जिनमे केवल घटा, घडियाल, झाझ आदि बजा कर शोर मचाते रहना ठीक नही। मन्दिर ऐसे बनाने चाहियें जहाँ गाँव अथवा नगर के लोग जाकर ईश्वर की उपासना और यज्ञादि उत्सव काम कर सकें और धर्म तथा राष्ट्रहित के लिये उत्सव आदि कर सकें। मन्दिरो मे पत्थर की मूर्ति रखना अयुक्त है। ईश्वर की उपासना के लिये सबसे उत्तम स्थान अपना हृदय देश है। जहाँ चाहे शुद्ध उत्तम स्थान मे एकान्त जल के समीप खुली हवा मे बैठ कर सन्ध्या उपासना की जा सकती है, मूर्त्ति पूजा एक ढोग और पुजारियो के स्वार्थ का एकमात्र साधन है।

७—अपने पूर्वजो के इतिहास को जानकर उनके अच्छे काम पर चलना उत्तम काम है और उनके बुरे कामो की नकल करना दोष है। इसी प्रकार रामलीला और रास-लीला करना अयुक्त हैं।

८—मद्य मास, तम्बाकू, गाँजा, अफीम आदि नशीली चीजो का सेवन करना बुरा है। ऐसे दुर्व्यसनों से स्वय दूर रहना और दूसरो को भी 'दूर रहने की प्रेरणा करते रहना चाहिये, सात्विक शुद्ध पदार्थों का ग्रहण करना ठीक है और अपनी प्रकृति के अनुकूल शुद्ध पदार्थों का भक्षण करना उत्तम है। पदार्थ चाहे शुद्ध हो, परन्तु अपनी प्रकृति के अनुकूल न हो तो उसका सेवन नहीं करना चाहिये।

९—जिस बात को हम अपने लिये अच्छा समझते हो, जिससे हमे सुख मिलता हो, और जो धर्म और राष्ट्र के लिए हितकर हो, वैसी बात दूसरो के साथ करना ठीक है, परन्तु जो कार्य हमे पीडा देवें, दुखी करें वैसे काम दूसरो के साथ कभी नहीं करना चाहिये।

सार यह है कि धर्मात्मा विद्वान् सदाचारी परोपकारी राष्ट्र हितैषी निर्व्यसनी शिष्ट पुरुषो के मार्ग पर चलना शिष्टाचार है। इससे विपरीत कदाचार है। शिष्टाचार के पालन और कदाचार से दूर रहने मे अपनी और दूसरो की भलाई होती है। ●

●गाजर

आहा कैसी सुन्दर स्वस्थ बनाने वाली।
रंग मनोहर इसका जनप्रिय इसकी लाली ॥१॥
बच्चे, जवाँ, वृद्ध सब खुश हो इसको खाते।
कच्ची हो या सब्जी इसकी हलवा मन से चाहते ॥२॥
इतने गुण हैं इसके अन्दर लाल बना देती है।
कुव-कार्यों को यह बलवान् बना देती है ॥३॥
सर्वजन सुलभ अरे यह सब क्रय कर सकते इसको।
काँजी पीयो, अचार बनाओ तुम कच्ची खाओ इसको ॥४॥
सुस्वादु रायता इसका क्या नहीं चाहिये तुमको।
सम सेव मुरब्बा इसका क्या नहीं अभीष्ट है मुझको ॥५॥
सर्वोत्तम शीत ऋतु का सुन्दरतम खाद्य यही है।
लालों को लाल करेगा विटेमिन की खान यही है ॥६॥

राजेश वर्मा●

[पृष्ठ ७ का शेष]

७—फ्लीट आदि पक्षपाती ईसाई यहूदी लेखको ने कलि-सवत् के विषय मे भी यह षड्यन्त्र रचने का यत्न किया कि यह विक्रम की चतुर्थ शती के समीपस्थ ज्योतिषियो द्वारा घडा हुआ माना जाय। ८—"मिस्र देश के अति प्राचीन लेखो मे वेद मन्त्रो के अक्षरश अनुवाद मिलते हैं, बाबल देश के अति प्राचीन स्तोत्रो मे वैदिक शब्दो का बाहुल्य है। ईरान की जेन्द-अवेस्ता मे लिखे अति पुरातन भाग ऋग्वेद का मन्त्राश लिपि विकार) के दोष छोड कर यथा तथ्य रूप मे मिलता है।" (भारतवर्ष का बृहद् इतिहास-२ के पृष्ठ ३६)। ९—जब सरस्वती नदी अपने पूरे यौवन पर थी, तब आर्य सम्राट् और ऋषि, मुनि इसके नीरो पर निवास करते थे। सरस्वती के विनशन स्थान पर उत्सन्न होने की घटना भारत युद्ध से बहुत पहले हुई थी। उस प्राचीन काल मे भी आर्य भारत मे थे। १०—प्रिय भारत भारतम्—अन्त मे हम ऐसा प्रमाण देते हैं, जो योरुप के लेखको पर वज्र प्रहार है—

'अत्र ते वर्णयिष्यामि वर्ष भारत भारतम्। प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च ॥५
पृथोश्च राजन् वैन्यस्य तथेक्ष्वाकोर्महात्मन। ययातेरम्बरीषस्य मान्धातुर्नहुषस्य च ॥६
तथैव मुचुकुन्दस्य शिवेरौशीनरस्य च। ऋषभस्य तथैतस्य नृगस्य नृपतेस्तथा ॥७॥
अन्येषा च महाराज क्षत्रियाणा बलीयसाम्। सर्वेषामेव राजेन्द्र पिय भारत भारतम् ॥८
॥ महा भा० भीष्मपर्व ॥

महाभारत भीष्म पर्व मे कौरव-मन्त्री सजय धृतराष्ट्र को सुनाता है—हे भारत, भारतवर्ष देव इन्द्र वैवस्वत मनु, पृथु वैन्य महात्मा इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष मान्धाता, नहुष, मुचुकुन्द, शिबि औशीनर, ऋषभ, ऐल तथा नृपति नृग आदि सब क्षत्रियो का प्रिय भारत था। स्पष्ट अभिप्राय है कि आदि काल से ही भारतवर्ष की भूमि आर्य भूमि रही है। ऐसे सत्य प्रमाणो को ईसाई लेखक कब सहन कर सकते थे। अत उन्होने महाभारत तथा उसके रचयिता कृष्णद्वैपायन व्यास को ही कल्पित कहकर उनको अस्तित्व में सन्देह कराने का जघन्य अपराध ईसाई लेखको ने किया। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर ईसाई लेखको का यह प्रलाप कि आर्य लोग ईसा से १५०० वर्ष पूर्व के लगभग भारत मे आये सब व्यर्थ है। भारतवासियो की उनके पीछे आँखें बन्द करके नहीं चल पडना चाहिए। यह धारणा अब समाप्त होनी चाहिये कि देश प्रेम अंग्रेजी शासन काल मे उत्पन्न हुआ है। देखना चाहिये कि देश प्रेम तो इन्द्र आदि देवो के काल से ही चला आ रहा है। अत भारतीय इतिहास पर एक बार पुन भारतीय प्राचीन साहित्यगत प्रमाणो की छत्र छाया में विचार करना चाहिये क्योंकि भारतीय इतिहास ही ससार के इतिहास की कुञ्जी है। इसी में देश हित भी निहित है। इति। ●

दोराहे पर खड़ा जीवन

(श्री रमाकान्त दीक्षित एम० ए० बी० टी० साहित्य रत्न, भिवानी)

आज के युग मे चकाचौंध को सभ्यता और संस्कृति का प्रतीक माना जाता है। वस्तुत यह हमारी हीन भावना का ही परिणाम है। एक कहावत है—'थोथा चना, बाजे घना'—कहना न होगा कि आज यह बात अक्षरशः चरितार्थ हो रही है। हमारे जीवन मे अन्दर ही अन्दर घुन लग रहा है। ऊपर से भले ही चमक-दमक हो, चमक-दमक भी एसी कि चार दिन की चाँदनी भी इसकी अपेक्षा कही अधिक टिकने वाली होती है और मजे की बात यह कि चकाचौंध की इस भाग-दौड़ में बहुसंख्यक वर्ग पीछे रहना नही चाहता। उसे लगता है यदि वह पीछे रह जाएगा तो उसका जन्म ही व्यर्थ हो जाएगा। दुनियाँ वालो को वह मुँह क्या दिखाएगा। वह चकाचौंध की सभ्यता सस्कृति का विशालबोर्ड अपने घर के दरवाजे पर लगा लेना चाहता है। वह गली कूचे, सभा-सोसायटी मे भी इस चकाचौंध के बोर्ड को अपने माथे पर लगाये रहता है। तात्पर्य यह है कि वह आठो पहर सोते-जागते, उठते-बैठते, खाते-पीते, हँसते-बोलते, इस चकाचौंध वाली सभ्यता-सस्कृति के बोर्ड को अपने से अलग करने के लिए तैयार नही। परन्तु ऐसी सभी बातें जो आरम्भ मे तो बड़ी आरामदायक, चौंधियाने वाली, एक ही बार में अपनी ओर आकर्षित करने वाली होती हैं, और जिनमे सार नही होता, वे प्रेय मार्ग की ओर ले जाने वाली होती हैं। प्रेय का अर्थ ही प्रियता सा लिया जाता है। प्रारम्भ मे तो कुछ चीजें मन को बड़ी प्यारी लगती है। परन्तु अत मे उनका परिणाम बड़ा दु खद होता है जैसे कोई व्यक्ति शराब का नशा करता है तो प्रारम्भ मे तो उसे वह शौक बड़ा प्यारा लगता है। वह इसका अधिकाधिक व्यसनी होता जाता है। कालान्तर मे वह फेफड़ों का रोगी होकर जीवन से हाथ धो बैठता है।

अब प्रश्न उठता है फिर जीवन में किस मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। उत्तर होगा कि जीवन को उन्नत बनाने के लिए श्रेय मार्ग को ही अपनाना श्रेयस्कर है। श्रेय मार्ग का अर्थ ही है कल्याणकारिता। इसके अपनाने में प्रथम तो जीवन में कष्ट का अनुभव होता है। परन्तु अंतिम परिणाम बड़ा सुखद होता है। इस मार्ग को अपनाना प्रत्येक के वश की बात नही होती। दृढसकल्पी, संयमी और आत्मोत्थान की कामना करने वाला ही उसे अपनाकर जीवन का सच्चा आनन्द लूट सकता है। हमारे-ऋषि-मुनियों ने इसी मार्ग को जीवन भर अपनाने की सुनहली सीख दी है। वास्तविक जीवन का मूलमत्र, वास्तविक जीवन का आनन्द-कोष, आत्मोन्नति का साधन, केवल श्रेय मार्ग का अनुसरण ही है। इसे भी हम एक उदाहरण द्वारा समझ सकते हैं। एक व्यक्ति बचपन से ही अपनी इन्द्रियो को वश में कर लेता है तो वह उन्हें वश में करते समय प्रारम्भ में कष्ट का अनुभव तो करेगा परन्तु अत मे उसका परिणाम सुखद ही होगा। वह जीवन मे किसी स्थान पर भी मार नहीं खा सकेगा। न बीमार ही पड़ेगा। इन्द्रियाँ भी बलिष्ठ होंगी।

इस प्रकार जीवन में दो मार्ग होते हैं—अच्छा और बुरा अथवा श्रेय और प्रेय। इनमे से अच्छे अर्थात् श्रेय मार्ग से ही मनुष्य की मुक्ति है। दोराहे पर खड़ा जीवन यदि भटकता रहे तो उद्धार नहीं। कठोपनिषद् में यम ने नचिकेता को तत्त्व ज्ञान की शिक्षा देते समय श्रेय और प्रेय के सम्बन्ध में कहा है—

'श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीर.। श्रेयोहि धीरोऽभिप्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते ॥'

मनुष्य के जीवन मे प्रायः श्रेय और प्रेय का आवागमन होता है। हमारा विवेक उनका परीक्षण करता है। जो बुद्धिमान् हैं वे प्रेय को छोड़कर श्रेय को ग्रहण करते हैं। इसके विपरीत जो मद बुद्धि हैं वे हित अहित का विचार किए बिना प्रेय को अपनाते हैं। ●

आर्ययुवक परिषद्ग दिल्ली

आज से कई वर्ष पूर्व आर्ययुवक परिषद् की स्थापना युवको में आध्यात्मिक एव चारित्रिक सुषुप्त शक्तियों को जागृत करने तथा उनकी शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक उन्नति करने के हेतु की गई थी। तभी से परिषद अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करती हुई लगातार उन्नति की ओर अग्रसर हो रही है। इसके सरक्षकों में श्री नवनीतलाल जी एडवोकेट आदि प्रतिष्ठित आर्य महानुभाव हैं तथा इसके प्रधान ी पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु हैं। आर्य बन्धुओ को परिषद् की उपयोगिता से पूरा लाभ उठाना चाहिये। इस प्रयोजन के लिये परिषद् के प्रधान कार्यालय १६५३ कूचादखिनी राय, दरियागज, दिल्ली ६ से पत्र व्यवहार करें। इसका वार्षिक निर्वाचन इस प्रकार से हुआ:—अध्यक्ष—श्री प० देवव्रत धर्मेन्दु, मन्त्री—श्री ओम्प्रकाश, कोषाध्यक्ष—श्री केदारनाथ जी। जलसिंह प्रचारमन्त्री।

आधुनिक युग का महान् स्रष्टा, द्रष्टा—महर्षि दयानन्द

(श्री सत्यभूषण जी वेदालंकार एम० ए० प्रो० सेन्टस्टीफन कालिज, दिल्ली)

कदाचित् काल की सुदीर्घ गहन परिखा का अतिक्रमण कर, किसी दैवी लोक से प्रस्फुटित आलोक-पुंज को धारण कर, अतिशय भासमान, जाज्वल्यमान कणिका के समान विशाल वसुन्धरा पर स्वर्गीय सदेश का प्रसार करने के लिए अज्ञान-गर्त मे, गहन अन्धकारावेष्टित प्रान्तर मे दोलायमान जन-मानस को पुनः प्रबुद्ध करने के लिए रूढिवाद, भ्रमजाल की शृंखलाओ को अदम्य साहस तीव्र गति से झकझोर देने के लिए, परतन्त्रतापाश में आबद्ध देशवासियों को दु:ख, दारिद्र्य, शोषण से उन्मुक्त करने एक अद्भुत् विभूति, महान् शक्ति सच्चिदानन्द परमात्मा की अपार करुणा से इसी मर्त्यलोक मे अमर्त्य देव का रूप धारण कर प्रादुर्भूत होती है।



ऐसी ही एक महान् विभूति ने इस देश की पवित्र पुण्यभूमि पर जन्म लिया, जिसके नाम से भारत का प्रत्येक नर-नारी ही नही, विश्व का प्रत्येक नागरिक परिचित हो चुका ह। वह महान् युग स्रष्टा युग-द्रष्टा था—महर्षि दयानन्द सरस्वती।

युग युग से पीडित मानवता, दुर्दम्य दानवी प्रहारों से प्रताडित, अतृप्ति से जर्जर, कुत्सित विचारो से भ्रान्त, उद्देश्य विहीन, अकारण विग्रह एवं विकल्पजनित वैषम्य के कुठाराघातो से म्रियमाण मानव समाज। पग पग पर मन विचलित, अन्तश्चेतना मूर्छित, स्वरलहरी विकृत, त्राहि त्राहि' का करुण क्रन्दन, व्यथा, वेदना के हाहाकार से गुंजायमान जल, थल, अम्बर।

नितान्त तिमिराच्छन्न वेला में युगों से अभिशप्त मानवता के उद्धार के लिए पूर्ण श्रद्धा एवं ज्ञान से जागरूक, समष्टि में मंगल की उदात्त भावना से अनुप्राणित जो उद्घोष जन-मानस में, भूतल के कण में प्रतिध्वनित हुआ था, वह प्रचण्ड भानुसम प्रदीप्त, यशःपूत, तेजोपुंज काल के अमिट प्रवाह में चाहे विलीन हो गया हो, किन्तु उसकी प्रतिध्वनि अब भी गुंजरित हो रही है। जीवन के आन्तरिक बाह्य समन्वय मे ज्ञान-विज्ञान के नूतन अभ्युदय में, साधना के स्वर्णिम पथ में, मानव के चिरन्तन इतिहास में युगों की चट्टानों पर उसकी पगछाप सदा अंकित है और रहेगी।

कविता

(श्री सत्यभूषण जी 'वेदालंकार एम० ए० नई दिल्ली)

एक नया मोड़ दो।
वक्त की पुकार है, साँस की खुमार है।
एक स्वर मचल रहा, एक गान गूंजता।
राह में उखड़ चुके, दैव के प्रहार से,
क्षीणकाय जो थके, हाथ दे उन्हें,
कि शृंखलाएं उनकी तोड़ दो।
एक नया मोड़ दो।

\+　　+　　+

दम्भ का दलन करो, नेक निज चलन करो।
कालिमा बुहार दो, दीन को दुलार दो।
इक नई तड़प उठे, जिन्दगी, महक उठे।
काल को झकोर दो,
एक नया मोड़ दो।

\+　　+　　+

विश्व एक हो रहा, द्वन्द भेद खो रहा।
एकता के सूत्र को, दैव भी पिरो रहा।
किन्तु भित्तियां बनी, वर्ण, रूप, रंग की,
रोशनी हुई नहीं, प्रीत की उमंग की,
फिर सृजन करो नया। श्रेय द्वार खोल दो।
एक नया मोड़ दो।

बालोपयोगी—

सत्संग का महत्व

श्री अरुण कुमार पाण्डेय

सज्जनो की सगति को ही सत्सगति कहा जाता है। जो मनुष्य अपने हानि-लाभ की परवाह किए बिना ही परोपकार करते हैं उन्हे ही सज्जन कहते हैं और उन्ही की सगति को सत्सगति कहा जाता है। ईश्वर ने इस विस्तृत सृष्टि की रचना कर उसमें माया का जाल फैला दिया है। उसने जहाँ यह मायिक प्रपच रचा है वही मुक्त होने के अनेको साधन प्रदान किये हैं। इन साधनो का विवेक पूर्ण उपयोग द्वारा ही मनुष्य कष्टों से मुक्ति पा सकता है। इन साधनो मे सत्सगति बडा ही सरल और सुलभ साधन है।

सगति दो प्रकार की होती है। मनुष्य जैसी सगति मे रहता है वह ऐसा ही बन जाता है। अच्छी सगति से मनुष्य उत्थान के मार्ग पर अग्रसर होता है और बुरी सगति उसे पतन की ओर घसीटती है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

सगति ही गुण होत है, सगति ही गुण जाय।
बॉस-फॉस की मिसरी, एकै भाव बिकाय॥

सत्सगति से आत्मसुधार होता है। हमारे अन्दर सद्वृत्तियो का उदय होता है और ज्ञान की अभिवृद्धि होती है। सत्सगति के द्वारा मनुष्य अपने अन्दर के समस्त दोषो को जान जाता है और उनका निराकरण करता है। सत्सग मे हम सन्तो, महात्माओ और सज्जनो के सम्पर्क मे आये हैं। महात्मा निरन्तर सयम और नियमन के साथ जीवन यापन करते हैं और उनके सम्पर्क मे आकर हम भी उसी प्रकार बनने की चेष्टा करते हैं। वे भी हमे उसी प्रकार का उपदेश देते हैं। उनके साथ रहकर हममें आत्म सयम की भावना जागृत होती है। सयम से मन स्थिर रहता है, चित्त की एकाग्रता बढती है। इस प्रकार सत्सगति आत्म सुधार का एक अच्छा साधन है।

सत्सगति से हमारी बुद्धि का बहुमुखी विकास होता है। सन्त-महात्माओ को जीवन के गम्भीर तत्वो, मौलिक अनुभूतियो, सत्यताओं आदि का पूर्ण ज्ञान होता है। सन्त सदैव आध्यात्मिक वातावरण मे विचरण करता रहता है। वह ससार के माया-मोह, छल-प्रपच आदि से दूर रहता है। सन्तो के सम्पर्क से हम गम्भीर से गम्भीर बातो को आसानी से समझ सकते हैं। इसके अलावा हम अनेको प्रकार की लोक शिष्टाचार की बातें सीखते हैं।

सत्सग हमारे लिए एक ऐसा वातावरण पैदा करता है जिससे हमारी सारी दुष्प्रवृत्तियाँ समाप्त हो जाती है और हममे प्रेम, दया, क्षमा, सत्य, सहानुभूति, शाति, परोपकार, अहिंसा, त्याग आदि की भावना जागृत होती है। इस प्रकार हम नि सदेह यह कह सकते हैं कि सत्सगति हमारे लिए एक वरदान है। इसको अपने अच्छे कर्मों द्वारा ही प्राप्त कर सकता है। सत्सगति हमे लौकिक और पारलौकिक दोनो प्रकार के सुखो को प्राप्त कराती है। भर्तृहरि ने ठीक ही कहा है—

जाड्यधियो हरति सिंचति वाचि सत्यम्, मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेत प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिम् सत्सगति कथय किं न करोति पु साम्॥

महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट, टंकारा

वैदिक सस्कृति के पुनरुद्धार का महान् कार्य प्रारम्भ करने का श्रेय महर्षि दयानन्द को ही है, जिन्होने पश्चिमी सभ्यता की तुलना मे भारतीय सभ्यता की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया। इस ट्रस्ट के ट्रस्टियो की योजना है कि महर्षि दयानन्द की जन्मभूमि टकारा को वैदिक सस्कृति के प्रसार का केन्द्र बनाया जाय। वहा दस लाख रुपया से भी अधिक मूल्य का एक भव्य प्रासाद खरीदा जा चुका है जहा १९५९ से विधिवत् कुछ कार्य प्रारम्भ किए गए हैं। टकारा ट्रस्ट की चल रही प्रवृत्तियो मे इस समय वैदिक शोध सस्थान, उपदेशक विद्यालय, अतिथि गृह, दो लाख रुपये का विशाल पुस्तकालय, गोसवर्धन, सस्कृत भाषा-शिक्षण वेद प्रचार तथा शिवरात्रि के महापर्व पर प्रतिवर्ष ऋषि-मेलो का आयोजन उल्लेखनीय है। हम चाहते है कि टकारा वैदिक सस्कृति का एक ऐसा केन्द्र बन जाए जहाँ रहकर ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और सन्यासी शान्तिपूर्वक वैदिक सस्कृति के प्रचार की साधना कर सकें।

इस ट्रस्ट द्वारा टकारा को पूर्णीय देशी मे एक आदर्श सास्कृतिक केन्द्र बनाने के लिये दस लाख रुपये १००००००) की आवश्यकता है। आशा है कि प्राचीन वैदिक सस्कृति के प्रेमी दानी महानुभाव उदारतापूर्वक ट्रस्ट की सहायता करेंगे,

—रामनाथ सहगल मन्त्री, महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट सहायक समिति, दिल्ली
आर्यसमाज मन्दिर १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली

स्वामी समर्पणानन्द जी रुग्णावस्था में

आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी समर्पणानन्द जी (पूर्व प० बुद्धदेव जी विद्यालकार) ऑप्रेशन के लिये सरगगाराम हस्पताल न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली मे प्रविष्ट किये गये थे। आप्रेशन तो हो गया परन्तु अभी उनकी अवस्था अच्छी नही है। परमात्मा उन्हें स्वस्थ करें।

शोक समाचार

श्री वैद्य रामस्वरूप जी आर्य गाव मकडौली (रोहतक) का ७५ वर्ष की अवस्था मे देहावसान हो गया। वैद्य जी अपने गाव के सर्वप्रथम आर्यसमाजी थे तथा सम्पूर्ण जीवन अविवाहित ही रहे। उन्होने पूर्ण जीवन रोगियो की नि शुल्क ही चिकित्सा की। परमात्मा उनके आत्मा को शान्ति प्रदान करे।—सुरेन्द्रकुमार सामवेदी

शोक समाचार

स्वर्गीय चौ० पीरूसिंह जी ने गुरुकुल मटिण्डू (रोहतक) की स्थापना अपनी ३०बीघे भूमि दान दे कर की थी। आयु भर गुरुकुल और आर्यसमाज का कार्य करते रहे। आप हरयाणा के आर्यसमाज के सर्वमान्य नेता थे। आप के स्वर्गवास के पश्चात् आप के छोटे भाई चौ० शिवकरण जी ने भी गुरुकुल का सब प्रकार से सरक्षण किया। उनके देहान्त के पश्चात् चौ० पीरूसिंह जी के सुपुत्र चौ० महासुख अब तक गुरुकुल का कार्य सर्वात्मना करते रहे। खेद से लिखना पडता है कि अब चौ० महासुख जी का भी शरीरान्त हो गया। 'आर्यमर्यादा' इस गहरे दुःख मे गुरुकुल मटिण्डू और उनके परिवार के साथ शोक सहानुभूति प्रकाशित करता है। परमात्मा से प्रार्थना है कि उनके परिवार को धैर्य प्रदान करे। आशा है गुरुकुल के अधिकारी भी गुरुकुल के सचालन को यथापूर्व करते रहेंगे। —सम्पादक

श्रद्धानन्द वैदिक पुस्तकालय

श्रद्धानन्द सेवा सघ ने साहित्य प्रेमी जनता की माँग पर महाशयकृष्ण हाल, आर्यभवन जोरबाग मे आधुनिक स्तर पर एक बृहद् पुस्तकालय खोल दिया है। इस का उद्घाटन श्रद्धानन्द वैदिक पुस्तकालय के नाम पर निकट भविष्य मे होने जा रहा है। इस पुस्तकालय मे वैदिक साहित्य सम्बन्धी हर प्रकार के ग्रन्थ सस्कृत, हिन्दी, अग्रेजी तथा अन्य भाषाओ मे उपलब्ध होगे। इसके अतिरिक्त अन्य सस्कृत साहित्य भी उपलब्ध होगा। साथ ही आर्यसमाज के प्रसिद्ध लेखको के अनेक ग्रन्थो का सग्रह भी होगा। बाल विभाग भी खोला जाएगा, जिसमे बालकों के लिए उपयोगी साहित्य रखा जाएगा।

आर्यसज्जन हमे वैदिक और आर्य साहित्य मूल्य तथा बिना मूल्य प्राप्त करने मे अपना सहयोग दें। जो सज्जन ऐसा साहित्य दे सकते हो वे उसे आर्यभवन जोरबाग मे भेज दें अथवा इस सघ के कार्यालय को दूरभाष न० ६१७६६१ पर सूचना दें, श्रद्धानन्द सेवा सघ उनसे सम्पर्क प्राप्त करेगा। उपहार अथवा दान मे आने वाली पुस्तको पर भेंट कर्ता महानुभावो के नाम अकित रहेंगे।

—ज्ञानचन्द मन्त्री श्रद्धानन्द सेवा सघ

गुरुकुल विद्यापीठ हरयाणा भैंसवाल का वार्षिकोत्सव

४९ वा वार्षिक महोत्सव २८ फरवरी १-२ मार्च १९६९ को होना निश्चय हुआ है। हरयाणा प्रदेश का सब से बडा आर्यो का महामेला होता है। उत्सव से एक सप्ताह पूर्व विशेष यज्ञ प्रारम्भ होगा। उत्सव मे देश के अनेक उच्चकोटि के आर्य-सन्यासी, महात्मा, विद्वान् उपदेशक पधार रहे हैं। प्रतिदिन यज्ञ के पश्चात् प्रात और साय वेद कथा होगी। हरयाणा की प्रसिद्ध भजन मडलिया भी पधारेंगी। आप सबको सादर निमन्त्रण है। —कपिलदव शास्त्री मुख्याधिष्ठाता विद्यापीठ

कन्या गुरुकुल खानपुर (रोहतक) का वार्षिकोत्सव

वार्षिक महोत्सव ८-९ फरवरी १९६९ को होना निश्चित हुआ है। कन्या-गुरुकुल हरयाणा प्रदेश की आर्यो की कन्याओ की देहाती क्षत्र मे सब से बडी शिक्षण सस्था है जिस मे १ हजार छात्राए छात्रावास मे आर्यमर्यादाओ का पालन करती हुई नियमित जीवन व्यतीत करती हैं। इस वर्ष से गुरुकुल मे बी० एड० ट्रेनिंग कक्षाए चालू करके अलग से महाविद्यालय प्रारम्भ किया गया है।

महेश्वरसिंह मलिक मन्त्री-महासभा कन्या गुरुकुल खानपुर

आर्यसमाज तिलक नगर नई दिल्ली का वार्षिक निर्वाचन

"आर्यसमाज तिलकनगर नई दिल्ली का १९६९ के लिए वार्षिक चुनाव सम्पन्न हुआ जिसमे निम्नाकित अधिकारी सर्व सम्मति से चुने गये।

प्रधान—श्री धनपत राय एम० ए०।—मन्त्री— लक्ष्मणदास जी। कोषाध्यक्ष—हरदेव जी ग्रोवर। पुस्तकाध्यक्ष—कल्याणा राम जी। तथा अन्य अधिकारी एव अन्तरङ्ग सदस्य-मन्त्री

बालपयोगी

व्याख्यान

भीड उमड रही थी और जनता बढती चली जा रही थी। मच के चारो ओर का वातावरण व्यग्र था साथ ही शात भी। मच पर ऋषिवर विराजमान थे। पास मे नगर के अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति भी बैठे थे। ऋषि का व्यक्तित्व जनता को अपनी ओर आकृष्ट किए हुए था। सबका मुख मच की ओर ही उन्मुख था। भीड इतनी थी मानो पूरा नगर ही उमड पडा हो।

पास ही विशाल हवन-कुण्ड का निर्माग कराया गया था—प्रचुर हवन-सामग्री रखी थी। हवन प्रारम्भ हुआ। सर्वत्र सुगन्धि फैल गई। वातावरण प्रमुदित हो उठा। डाली पर के विहग चहचहा उठे नये खिले फूल मुस्कराने लगे। 'ओ—अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ओ अमृतापिधानमसि स्वाहा। आदि मत्रो से वायु-मण्डल एक बार पूर्ण रूपेण निनादित हो उठा। वैदिक-सदेश विश्व मे फैल गया। आडम्बर एव मिथ्या के पैर काँपने लगे, इन पर आश्रिता की रोजी समाप्त होने लगी। ढोग मे आग लग गयी और वह धाँय-धाँय उसी हवन,कुण्ड मे जलने लगा। ऋषिवर का व्याख्यान प्रारम्भ हुआ। जनता भाव-विभोर हो उठी। मत्र-मुग्ध समाज को दुनिया की अन्य किसी भी वस्तु से क्षण भर के लिए लगाव नही रहा। चोर की चोरी, कपटी का कापट्य, ढोगी का ढोग, लालची का लालच और अज्ञानी का अज्ञान मिट गया। अपने अतीत के स्मरण से सब मे नवीन जागृति उत्पन्न हो गई। आदि पुरुष मनु के उपदेशो को सुनकर मानव का वशज मानव पुन अपने मूले के स्मरण से नवीन चेतना-सी प्राप्त कर उठा। ऐसी धूम मची की वैदिक-ध्वजा के नीचे आने को अखिल विश्व व्यग्र हो उठा। प्राचीन भारत का वास्तविक रूप एक बार पुन सम्मुख आ गया। विभिन्न तर्क प्रस्तुत किये गये परन्तु अपनी अद्भुत मेधा द्वारा ऋषिवर ने सबको मिथ्या सिद्ध कर दिया। वैदिक-सिद्धान्त अकाट्य हो गए। व्याख्यान समाप्त हुआ ? पर, यह क्या ? जनता उसी प्रकार बैठी रही। ऋषि के वाक्य अब भी उनके कानों में गूँज रहे थे—

"ईश्वर एक है, वही उपासना करने योग्य है, वह अजन्मा है, समस्त विकारो से रहित और अनादि है····· ——।"

—सूर्यकुमार पाण्डेय ५३, छोटा चाँद गज, लखनऊ-७

ग्राहक महानुभाव पत्र तथा शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने का कष्ट करें। —व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाडी धीरज, दिल्ली-६ मे मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

वर्ष १ } १३ माघ वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार २६ जनवरी १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रुपये विदेश में—२० रुपये
अंक ९ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ { एक प्रति — २० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमंत्रार्थ-प्रवचन

ती कीदृशी वाक प्राप्तुमेष्टव्यत्युपदिश्यत ।

विद्वानो को किस प्रकार की वाणी की इच्छा करनी चाहिये इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है—

पावका न सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसु । ऋ० १-२ १०॥

पदार्थ —(पावका) पाव पवित्रकारक व्यवहार काययति शब्दयति या सा (न) अस्माकम् (सरस्वती) सरस प्रशसिता ज्ञानादयोगुणा विद्यन्ते यस्या सा सर्वविद्या प्रापिका वाक (वाजेभि) सर्वविद्याप्राप्ति निमित्तैरन्नादिभि सह (वाजिनीवती) सब विद्यासिद्धक्रियायुक्ता (यज्ञम्) शिल्पविद्या महिमान कमच (वष्टु) कामसिद्धिप्रका शिका भवतु (धियावसु) शुद्धकर्मणा सह वास प्रापिका ।

अन्वय —या वाजेभिर्वाजिनीवती धिया वसु पावका सरस्वती वागस्ति सास्माक शिल्पविद्यामहिमान कम च यज्ञ वष्टु तत्प्रकाशयित्री भवतु ।

भावार्थ —ईश्वरोऽभिवदति-सवमनुष्यै सत्याभ्या विद्याभाषणाभ्या युक्ता क्रिया कुशला सर्वोपकारिणी स्वकीया वाणी सदैव सम्भावनीयेति ।

भाषापदार्थ —(वाजेभि) जो सब विद्या की प्राप्ति के निमित्त अन्नादिपदार्थ हैं और जो उनके साथ (वाजिनीवती) विद्या से सिद्ध की हुई क्रियाओ से युक्त (धियावसु) शुद्ध कर्म के साथ वास देने और (पावका) पवित्र करने वाले व्यवहारो को चिताने वाली (सरस्वती) जिसमें प्रशसा योग्य ज्ञान आदि गुण हो ऐसी उत्तम सब विद्याओं की देने वाली है वह हम लोगो के (यज्ञम्) शिल्पविद्या के महिमा और कर्मरूप यज्ञ को (वष्टु) प्रकाश करने वाली हो ।

भाषाभावार्थ —सब मनुष्यो को चाहिये कि वे ईश्वर की प्रार्थना और अपने पुरुषार्थ से सत्य विद्या और सत्य वचन युक्त कामो मे कुशल और सबके उपकार करने वाली वाणी को प्राप्त रहे यह ईश्वर का उपदेश है ।

—(ऋषि दयानन्द भाष्य)

● गणतंत्र अह आया

नई उमगें नई तरग जीवन मे लाया गणतत्र यह आया ।
नव ज्योति जले आलस्य टले समझाया जय विजय दिवस आया ॥१॥
दुख द्वन्द्व ना रहे देश मे हो आर्य सब मनुज देश मे सुन्दर पाठ पढ़ाया ।
विश्वास प्राप्त कर धूलि सात सब मिलके भ्रात शुभ मन्त्र सुनाया ।२॥
भ्रम भूत मिटे न कुरीति डटे दुर्व्यसन छुडाया सुप्रभात नव आया ।
निरामिष भोजी जन जन हो मद्य मास ना कहीं प्रशन हो कुन्दन देह बनाया ॥३॥
सादा सुन्दर वेष मेरा हो ऋषियों का यह देश मेरा हो सुषमागार बनाया ।
रहन-सहन और खान-पान जन जन समान नूतन विहान सुन्दरतम बन आया ॥४॥
एक अकेला ही है एक एक मिल ग्यारह होते सगठन सूक्त समझाया ।
सब मिल होली व्यसनो की कर दो पत्र प्रतिज्ञा भर दो विश्वसाथम् पाठ पढ़ाया ॥५॥

इन्दु शास्त्री ●

"आर्य्यमर्य्यादा" के ग्राहकों तथा प्रेमियों को

शिवरात्रि पर स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश "विशेषाङ्क भेंट"

यह निश्चय किया गया है कि 'शिवरात्रि' के अवसर पर आर्यमर्यादा का विशेषाङ्क पुस्तकरूप मे प्रकाशित किया जावे । इसमे ऋषिदयानन्द के प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग 'स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश' का प्रकाशन होगा । उसमे प्रदर्शित मन्तव्यो के कुछ स्थलो पर विशेष टिप्पणिया भी दी जावेंगी । सत्यार्थप्रकाश का यह अन्तिम भाग ऋषिदयानन्द के भावो का द्योतक है तथा सत्यार्थप्रकाश के चौदहो समुल्लासो मे इसी भाग का विस्तृत व्याख्यान किया गया है । आर्यसाहित्य में अपने ढग की यह बहुमूल्य पुस्तिका होगी । आर्यजगत् के पूज्य विद्वानो से निवेदन है कि यदि किसी मन्तव्य पर अपनी टिप्पणी अतिसक्षेप रूप में भेजने की कृपा कर सकेंगे, तो हम उनके आभारी होंगे । टिप्पणियां आर्यमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान् रोड नई देहली में व्यवस्थापक के नाम पर ५ फरवरी १९६९ तक अवश्य पहुच जानी चाहिये । आर्यमर्यादा के ग्राहक बन्धुओ को ग्राहक रूप में ही यह विशेषाङ्क मिलेगा । जो सज्जन ५ फरवरी ६९ तक आर्यमर्यादा का वार्षिक शुल्क १० रुपये नये ग्राहक के रूप में भेज देंगे, उनको भी ग्राहक रूप मे ही यह अंक पहुच जावेगा । एजेण्ट महाशयो को भी उनके साथ निर्णीत दर पर उनके पास प्रतियाँ भेज दी जावेंगी ।

विज्ञापन देने वाले बन्धु भी इस अवसर से पूरा लाभ उठा सकते हैं । विज्ञापन की दर पत्र व्यवहार द्वारा व्यवस्थापक से मालूम करें । विज्ञापन का मूल्य अग्रिम लिया जावेगा । जोकि कार्यालय मे ५ फरवरी ६९ तक पहुचना चाहिए ।

इस विशेषाङ्क की एक प्रति का मूल्य ४० पैसे रखा गया है । १०० अथवा अधिक प्रतिया खरीदने वालो को २५ पैसे प्रति ५० प्रतिया लेने वालो को ३० पैसे और २५ प्रतियो के खरीदार को ३५ पैसे प्रति दी जावेगी । अत अपना आदेश धन सहित आज ही भेजकर अपनी प्रतिया सुरक्षित करालेवे ।

जो सज्जन इस विशेषाङ्क के प्रचारार्थ १०१) रु० अग्रिम भेट स्वरूप भेज देगे, तो उनका फोटो और नाम पते सहित आदर पूर्वक छाप दिया जावेगा ।

—व्यवस्थापक

चत्वारि शृङ्गाः · · मंत्र का रहस्य

(श्री डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम० ए० साहित्यालंकार विद्यावाचस्पति कानपुर)

लौकिक काव्या म यदि श्लेषादि के बल पर किसी श्लोक के एक से अधिक अर्थ हो जाते है तो कर्त्ता के पाण्डित्य की सराहना की जाती है पर वेदमन्त्रो के अनेक अर्थ हो जाते है तो कई लोग नाक भौं चढाने लगते हैं। त्रिविध प्रक्रिया के अनुसार महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने भी वेदमन्त्रों का अर्थ किया है।

पाठकोके सामने वेदका एक ऐसा मन्त्र प्रस्तुत किया जाता है जो एकविचित्र पहेली है।

चत्वारि शृङ्गा त्र योऽस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश ॥

—ऋग्वेद मण्डल ४ सूक्त ५८ मन्त्र ३ यजुर्वेद अ १७ मन्त्र ६१

पाश्चात्य वैदिक विद्वान् तथा उनके चरण चिह्नो पर चलने वाले भारतीय विद्वान इसका अर्थ करेंगे— चार इसके सीग हैं तीन पैर हैं दो सिर हैं सात हाथ हैं। तीन स्थानो मे जकडा हुआ यह बैल चिल्लाता है। यह पूजनीय देव मनुष्यो मे घुसा जाता है। यह कैसा विचित्र बैल है? इसे पाश्चात्य विद्वान् तथा ऐतिहासिक विद्वान् समझ नही सकत है। इस मत्र को समझने के लिए निरुक्त निघण्टु व वैदिक व्याकरण का सहारा लेना अनिवार्य है। इस मन्त्र पर भिन्न भिन्न ऋषियो वेदभाष्यकार तथा विद्वानो ने भिन्न भिन्न प्रकार से विचार किया है जिससे स्पष्ट पता चलता है कि इस मत्र मे किसी सीग वाले बैल की चर्चा नही है।

(क) महर्षि यास्काचार्य जी निरुक्त मे इस मत्र की व्याख्या करते हैं—

चत्वारि शृङ्गा निवेदा वा एत उक्ता । त्रयो अस्य पादा इति सवनानि त्रीणि। द्वे शीर्षे प्रायणीयोदयनीये । सप्त हस्तास सप्त छन्दांसि । त्रिधा बद्धस्त्रेधा बद्धो मन्त्र ब्राह्मणकल्प । वृषभो रोरवीति रोरवणमस्य सवनक्रमेण ऋग्भिर्यजुर्भि सामभिर्यदेन मृग्भि शंसति यजुर्भिर्यजति सामभि स्तुवन्ति महोदेव इत्येष हि महान देवो यद्यज्ञो मर्त्यां आविवेशेत्येष हि मनुष्यानाविशति यजनाय ॥ निरुक्त परिशिष्ट अ०१ ।पा० १।७

चार शृङ्ग वेद ही ये कहे गए। तीन पाद [हैं] सवन। दो सिर प्रायणीय और उदयनीय। सात हाथ सात छन्द [हैं] तीन प्रकार से बधा हुआ मन्त्र ब्राह्मण और कल्प से वृषभ शब्द करता है। शब्द इसका सवन क्रम स होता है ऋचाओ यजुओ और सामो मे। जो इस (यज्ञ) की ऋचाओं स आशसन करते हैं यजुमन्त्रो से यजन करते हैं और साममत्रो से स्तुति करते हैं। यही महान देव है जो यज्ञ है। मन्त्रो मे प्रविष्ट हुआ। यह यज्ञ ही मनुष्यो मे यजन के लिए प्रविष्ट होता है।

स्वामी ब्रह्ममुनि जी विद्यामार्तण्ड— यज्ञस्य द्वे शीर्षे यास्कोक्ते प्रायणीयोदयनीये संवत्सरस्यानिरागे दक्षिणायनोत्तरायणे मासस्य दर्शपौर्णमासौ। अहोरात्रस्य प्रात सायनने होत्र च। म त्रब्राह्मणकल्प सहितामन्त्रण ब्राह्मणेन तद्विधिव्याख्यानग्रन्थेन कल्पेन विधिनिदर्शकेन सूत्रग्रन्थेन च। अन्यत्र स्पष्टम्।[2]

प० चन्द्रमणि विद्यालंकार— यास्काचार्य ने प्रसिद्धिज्ञापन के लिए मन्त्र ब्राह्मण कल्प का उल्लेख करके उसका अर्थ ऋग्भिर्यजुर्भि सामभि किया है। इसी प्रकार आगे ६ व खड मे मन्त्र कल्पो ब्राह्मण चतुर्थी व्यावहारिकीति याज्ञिका ऋचो यजूंषि सामानि चतुर्थी व्यावहारिकीति नरुक्ता । यहा याज्ञिका तथा नरुक्ता का मत दर्शाया है। इससे पता लगता है कि याज्ञिक जिन्हे मन्त्र कल्प और ब्राह्मण कहते है उन्हे ही नरुक्त ऋक यजु और साम कहते हैं। एव पता लगा कि यहा ब्राह्मण ब्राह्मण ग्रन्थो का वाचक नही। प्रत्युत साम का वाचक है। और इसी प्रकार कल्प कल्पग्रन्थो का वाचक नही प्रत्युत साम का वाचक है। और इसी प्रकार कल्प कल्प ग्रन्थो का वाचक नही परन्तु इसका अर्थ यजु है। कल्प का शब्दार्थ क्रियाविधान है और यजु भी क्रियाकाण्ड को बतलाता है। ब्राह्मण इद प्राप्तिसाधनमिति ब्राह्मणस साम। (यदेनमृग्भि) यत ऋचाओ से इस प्रभु की स्तुति करते हैं यजुओं से इसकी प्राथना करते हैं। और साममन्त्रो से इसकी उपासना करते हैं एव इन तीनो कर्मो से मनुष्य परमेश्वर को अपने साथ बाध लेता है।[3]

इसकी पुष्टि ब्राह्मणग्रन्थ से भी होनी है। यथा—

(ख) यह मन्त्र गोपथ ब्राह्मण पूर्वभाग प्र०२ कण्डिका १६ मे भी आया है। जिसका अनुवाद करते हुए अथर्ववेदभाष्यकार प० क्षेमकरणदास जी त्रिवेदी लिखते हैं— [शृङ्गा पद के स्थान पर वहाँ शृङ्गा पद है] (अस्य) इस [वृषभरूपयज्ञ] के (चत्वारि) चार [वेद] (शृङ्गा) सीग (त्रय) तीन [कर्म उपासना ज्ञान] (पादा) पैर (द्वे) दो [प्रायणीय और उदयनीय अर्थात् आरम्भ काल और उदयकाल] (शीर्ष) सिर और (अस्य) इसके (सप्त) सात [गायत्री आदि छन्द] (हस्तास) हाथ [समान] हैं। (त्रिधा) तीन प्रकार [मन्त्र कल्प का यज्ञ पद्धति और ब्राह्मण वा ब्रह्मज्ञान से] (बद्ध) बँधा हुआ (वृषभ) श्रेष्ठ बैल [समान यज्ञ] (रोरवीति) बडा शब्द करता है (मह देव) उस महान देव [कामना योग्य यज्ञ] ने (मर्त्यान्) मनुष्यो मे (आविवेश) प्रवेश किया है।[4]

(ग) महर्षि पतञ्जलि अपने महाभाष्य 'महर्षि पाणिनिकृत अष्टाध्यायी की व्याख्या) मे इस मन्त्र की व्याख्या करते हैं—

चत्वारि शृङ्गाणि। चत्वारि पदजातानि नामाख्यातोपसर्गनिपाताश्च ॥ त्रयो अस्य पादा । त्रय काल भूतभविष्यद्वर्तमाना ॥ द्वे शीर्षे। द्वौ शब्दात्मानौ नित्य कार्यश्च ॥ सप्त हस्तासो अस्य । सप्तविभक्तय ॥ त्रिधा बद्ध । त्रिषु स्थानेषु बद्ध उरसि कण्ठ शिरसीति ॥ वृषभो वर्षणात् ॥ रोरवीति शब्द करोति। कुत एतत्? रौति शब्दकर्मा। महोदेवो मर्त्यां आविवेशेति। महान्देव शब्दो मर्त्या मरणधर्माणो मनुष्यास्तानाविवेश ॥ [महाभाष्य अ० १।पा०१। आ० १।६१]

अर्थात् हे मनुष्यो! तुम जिस (अस्य) इसके (त्रय) भूत भविष्यत् और वर्तमान तीन काल (पादा) पग (चत्वारि) नाम आख्यात उपसर्ग और निपात चार (शृङ्गा) सीग (द्वे) दो (शीर्ष) नित्य और कार्य शिर वा जिस (अस्य) इसके (सप्त हस्तास) प्रथमा आदि सात विभक्तिया सात हाथ वा जो (त्रिधा बद्ध) हृदय कण्ठ और शिर इन तीन स्थानो मे बधा हुआ (मह) बडा (देव) शुद्ध अशुद्ध का प्रकाशक (वृषभ) सुखो का वर्षाने वाला शब्द शास्त्र (रोरवीति) ऋक यजु साम और अथर्व वेद मे शब्द करता हुआ (मर्त्यान्) मनुष्यो को (आविवेश) प्रवेश करता है उसका अभ्यास करके विद्वान् होओ।[5] तात्पर्य यह है कि व्याकरणाचार्य की सम्मति मे यह मन्त्र शब्द परक है।

(घ) नाटयाचार्य भरतमुनि जी अपने भरतनाट्यशास्त्र मे इस मन्त्र की व्याख्या करते हैं— सप्त स्वरा त्रिस्थानानि (कण्ठहृदयमूर्धानि) चत्वारो वर्णा द्विविधा काकु। अर्थात् सात स्वर तीन स्थान (शब्दोत्पत्ति के कण्ठ हृदय और मूर्धा ये तीन स्थान हैं) चार वर्ण दो प्रकार का काकु है।

(ड) मीमांसादर्शन १।२। ८ सूत्र के भाष्य मे श्रीशबरस्वामी इस मन्त्र पर लिखते हैं— चत्वारि शृङ्गाणीत्यभिधान गौण न सगौणा कल्पना प्रमाण वान्। उच्चारणात्प्रमप्रमाणम्। चत्वारो वेदा शृङ्गाणीवास्य त्रयो अस्य पादा इति सवनाभिप्रायम् द्वे शीर्षे इति पत्नीयजमानौ। सप्त हस्तास इति छन्दांस्यभिप्राय। त्रिधा बद्ध इति त्रिभिर्वेदैर्बद्ध। वृषभ कामान् वर्षतीति रोरवीति शब्द कर्मा। महोदेवो मर्त्यानाविवेशेति मनुष्याधिकाराभिप्रायम्।

अर्थात् चार सीग वाली वस्तु के न मिलने से यह शब्द मुख्यवृत्ति से प्रयुक्त नही हुए अपितु गौणी वृत्ति भी प्रमाण होती है। (चत्वारि शृङ्गा) चार होता (त्रयो अस्य पादा) तीन सवन (द्वे शीर्ष) पत्नी और यजमान सप्तहस्तास) गायत्री उष्णिक अनुष्टुप पक्ति बृहती त्रिष्टुप और जगती सात छन्द (त्रिधा बद्ध) यज्ञोपयोगी ऋग्यजुस्सामवेद (वृषभ) कामना का पूरा करने वाला (रोरवीति) शब्द करता है (महादेवो मर्त्यान् आविवेश) महान् देव मर्त्यो मे प्रविष्ट हुआ अर्थात् यज्ञानुष्ठान का अधिकार मनुष्यो का है।[7]

(च) श्रीकुमारिलभट्टाचार्य ने श्री शबरस्वामी कृत मीमांसादर्शन भाष्य पर वार्तिक रचा है। पहले अध्याय के प्रथम पाद के वार्तिक का नाम श्लोकवार्तिक है यह सारा ग्रन्थ श्लोको मे है। प्रथमाध्याय के दूसरे पाद से लेकर तीसरे अध्याय के अन्त तक के वार्तिक ग्रन्थ का नाम तन्त्रवार्तिक है और शेष भाग ४ से १२ अध्याय तक के वार्तिक का नाम टुप्टीका है।

श्री कुमारिलभट्टाचार्य अपने तन्त्रवार्तिक ग्रन्थ मे इस मन्त्र की निम्नलिखित व्याख्या करते हैं— चत्वारि शृङ्गेति रूपकद्वारेण याग-स्तुति कर्मकाले उत्साह करोति हौत्रत्वय विषुवति होतुराज्य विनियुक्त । तस्य चाग्नेयत्वादह्नश्चाऽऽदित्यदवतत्व सस्तवादादित्यरूपेणाग्निस्तुतिरूपवर्ण्यते। तत्र चत्वारि शृङ्गेति दिवसयामाना ग्रहणम्। त्रयो अस्य पादा इति शीतोष्णवर्षाकाला। द्वे शीर्षे इत्ययनाभिप्रायम्। सप्त हस्तास इत्यश्वस्तुति । त्रिधा बद्ध इति सवनाभिप्रायम्। वृषभ इति वृष्टिहेतुत्वेन स्तुति । रोरवीति स्तनयित्नुना सर्वलोकप्रसिद्धमहान्देवो मर्त्यानाविवेशेत्युत्साहकरणोपकारेण सर्व पुरुष हृदयानुप्रवेशात्। [तन्त्रवार्तिक १।२।३८] क्रमश

१ तुलना करो प० चन्द्रमणि विद्यालंकार पालीरत्न कृत निरुक्तभाष्य उत्तरार्ध प्रथमावृत्ति पृष्ठ ७६९ प० भगवद्दत्त जी बी०ए० कृत निरुक्त भाषाभाष्य प्रथम सस्करण पृष्ठ ६५८। २ निरुक्तसम्मर्श प्रथम सस्करण पृष्ठ ८८२।

३ निरुक्त भाष्य उत्तरार्ध पृष्ठ ७६२ ७६३।

४ अथर्ववेदस्य गोपथ ब्राह्मणम् आर्यभाषायामनुवाद—भावार्थादिसहित प्रथमावृत्ती पृष्ठ १३२।

५ महर्षि दयानन्द जी कृत यजुर्वेदभाष्यम् द्वितीयो भाग तृतीयावृत्ति पृष्ठ ५०१।

६ मासिक पत्र दयानन्द-सन्देश दिल्ली अगस्त १९४८ ई० पृष्ठ २७२।

७ वही पृष्ठ ३७२ ३७३।

सम्पादकीय

भारतीय गणतन्त्र दिवस

स्वागत है, इस पवित्र राष्ट्रिय महोत्सव के दिवस का। स्वागत इसलिये कि यह महोत्सव गणतन्त्र का रूप है। गणतन्त्र राष्ट्रप्रणाली का मूलस्रोत राष्ट्र की जनशक्ति है। राजतन्त्र में जो बाह्य दोष होता है वह गणतन्त्र मे नही होना। गणतन्त्र मे राष्ट्र के सभी सामाजिक और आर्थिक घटक सम्मिलित होते हैं। सभी मतो और सम्प्रदायो को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार अपने मन्तव्यो पर आचरण करने और प्रचार करने की स्वतन्त्रता होती है। सार्वजनिक सर्वहितकारी नियमो मे राष्ट्रवासी परतन्त्र होने हुये भी निजी कामो मे स्वतन्त्र रहते हैं। सौभाग्य से हमारे राष्ट्र को ये सब सुविधाएँ सविधान के रूप मे प्राप्त हैं अत इस राष्ट्रोत्थान दिवस को हमे श्रद्धा से मनाना चाहिये। यह भावना कल्याण के मार्ग को प्रशस्त करती है। प्रभो ! हमारी यह भावना सदा बनी रहे—यही प्रार्थना है।

गणतन्त्र पर सकट हो सकता है, तो राष्ट्र की भीतरी शासन प्रणाली से, अत हमे इस समस्या पर सदा ध्यान रखते हुये समय-समय पर अपने गुण दोषो का विवेचन करते रहना आवश्यक है। ऐसी समस्या हमारे ही राष्ट्र मे और हमारे ही समय मे उपस्थित हुई है ऐसी बात नही, किन्तु गणतन्त्र प्रणाली मे यह समस्या सदा बनी रहती है और राष्ट्र के जननेता इस पर विचार करके समयानुसार कार्य करके राष्ट्र को सुरक्षित रखते रहते हैं। कई बार भीतरी सकट गणतन्त्र मे उपस्थित होने पर यदि समय पर उसका प्रतिकार नही किया गया तो वह गणतन्त्र सुदृढ होने पर भी नष्ट हो जाते देखे गये हैं। भारतीय इतिहास मे ऐसे उदाहरण मिलते हैं।

जिस समय महाभारत युद्ध के महासेनानी बाणशैया पर लेटे हुए थे, उस समय श्री कृष्ण जी को आगे रखकर युधिष्ठिर उस स्थान पर प्रतिदिन पहुचकर राजनीति आदि के सम्बन्ध मे भीष्म से प्रश्न पूछते रहते थे और वह इन प्रश्नो का उत्तर देते थे। इस प्रश्नोत्तर सरणी से हम राष्ट्रवासी आज भी लाभ उठा सकते हैं। युधिष्ठिर ने पूछा—हे पितामह भीष्म !

"गणाना वृत्तिमिच्छामिश्रोतु मतिमतावर"। भेदमूलो विनाशोहि गणानामुपलक्षये ॥'

—महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय १०७

अर्थात्— हे मतिमानो मे श्रेष्ठ भीष्म ! मैं गणो के राजनीतिक व्यवहार को सुनना चाहता हूँ। क्योकि मैं गणो के विनाश का कारण परस्पर भेद को समझता हूँ।'

इस प्रश्न के उत्तर मे भीष्म महाप्राज्ञ कहते हैं—

"गणाना च कुलाना च राज्ञा भरतसत्तम। वैरसन्दीपनावेतौ लोभामर्षौ नराधिप ॥'

अर्थात् हे युधिष्ठिर ! राजन् ! गणों, कुलो और राजाओ मे परस्पर वैर भाव को उत्पन्न करने वाले दो प्रदीप्त-प्रचण्ड दोष होते हैं। एक लोभ और दूसरा अमर्ष।"

"लोभमेको ही वृणुते ततोऽमर्षमनन्तरम्। तौ क्षयव्ययसयुक्तावन्योन्य च विनाशिनौ ॥'

अर्थात् गणतन्त्र, कुल अथवा राजससद् का कोई एक सदस्य लोभ की ओर झुक कर उससे अपना अनुचित स्वार्थ सिद्ध करने मे प्रवृत्त हो जाता है तब दूसरा सदस्य उसके द्वारा उठाये गये अनुचित स्वार्थ को जान कर उस प्रथम सदस्य के प्रति ईर्ष्या, असहिष्णुता और क्रोध के भाव अपने मन मे पैदा कर लेता है। ऐसी दशा मे वे दोनो दुर्गुण लोभ और अमर्ष नाश और व्यय मे फँस कर परस्पर विनाश कर डालते हैं। अर्थात् इन दोनो दोषो के परस्पर सदस्यो मे जड पकड लेने के कारण सदस्यो के समूह गणो, कुलो और राजाओ के नाश का मूल कारण बन जाते हैं।'

यहाँ भीष्म ने गण, कुल और राजा तीन पक्ष रखे हैं और तीनो पक्षो के नाश का कारण लोभ और ईर्ष्या बताये हैं। भीष्म ने तीनो का वर्णन इसलिये किया, कि उस समय भारत मे ये तीनो शासन प्रणालियाँ चलती थी। उत्तरभारत मे यौधेय आदि गणतन्त्र बडे प्रभावशाली थे। पश्चिम मे कृष्ण का यादवकुल=जाति सघ बहुत उच्च स्थान रखता था। युधिष्ठिर स्वय राजतन्त्र के अनुसार कुरुवश का अधिकारी युद्ध के पश्चात् बन गया था। तीनों राज्य-प्रणालियो में लोभ और अमर्ष भयकर दोष एक समान शक्ति का नाश और कमी को उत्पन्न करते हैं। इन दोनो दोषो के कारण कुरुवश मे भेद पैदा होकर महाभारत युद्ध हुआ। कृष्ण के जीवन काल में ही परस्पर लडकर यादव कुल नष्ट हो गया। इसी भाति यौधेय आदि गणो का शासन अस्तित्व भारत से उठ गया।

राष्ट्र के वर्तमान प्रशासको और जन-नेताओ से हम निवेदन करना चाहते हैं कि ये दोनो राष्ट्रशक्तिघातक दोष हम में हैं अथवा नही ? छाती पर हाथ रख कर राष्ट्र के सभी राजनीतिक दल इस समस्या पर विचार करने का कष्ट करें। इसी स्वार्थ और ईर्ष्या के कारण दल के भीतर नये नय दल राजनीतिक क्षेत्र में दिखाई पड रहे हैं। राजनीतिक नेताओ मे भी परस्पर ईर्ष्या के कारण एक दूसरे की टाग खीचने में लगे हुये हैं। इसका परिणाम भी भारत की सुरक्षा पर बुरा पड रहा है। राष्ट्र की सीमाओ पर शत्रु दनदना रहे हैं। समय की टोह में लगे हुए हैं कि भारतीय नेताओ के पारस्परिक सघर्ष से कब अवसर मिले कि भारत पर आक्रमण कर देवें। यह तो परमेश्वर की अपार दया है कि हमारी सैन्यशक्ति सुदृढ होती जा रही है और सेना राष्ट्रभक्त है अत समय पर राष्ट्र पर आई हुई सेनाजन्य आपद् को दूर किया जाता रहा है।

खेद से कहना पडता है कि भारत में ऐसे भी राजनीतिक नेता हैं जिनके वक्तव्यो से शत्रु देश पूरा लाभ उठाते है। दूसरे कुछ सन्त प्रकृति के ऐसे महानुभाव भी भारत में जीवित रहत हैं जो यह कहत नही झिझकत कि राष्ट्र में सेना की कुछ आवश्यकता नही।

अभी कई राज्यो मे मध्यावधि चुनाव हो रह है। सब स्थानो पर सभी राजनीतिक दलो ने अपने अपने प्रत्याशी खडे किये हुय है। एक दल दूसरे दल के प्रति मिथ्या और स्वार्थभरे आरोप लगाने से नही झिझकना। ऐसे ही एक प्रत्याशी दूसरे प्रत्याशी के प्रति कीचड उछालने मे ही अपनी जीत समझता है। य लक्षण राष्ट्र की उन्नति के मार्ग मे बाधक है।

गणतन्त्र के राष्ट्र दिवस पर भारतवासी इन राजनीतिक बुराइयो को दूर करने का क्या कुछ यत्न करेंगे ? परमात्मा करे—एसा यत्न किया जाय।

आर्यसमाज जैसा शक्तिशाली सघटन राजनीति क्षत्र मे टुरमुर टुरमुर खडा देख रहा है। दूसरे राजनीतिक दलो मे व्यक्तिगत सम्मिलित होकर परस्पर चुनाव मे भिड रहे हैं।

भगवान् करे—राष्ट्र के गणतन्त्र दिवस पर हम सभी राष्ट्रवासी अपनी शुद्ध भावना को प्रज्वलित करके राष्ट्रव्यापी दोषा का भस्म कर सकें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

श्री मद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ

जिसका कार्यालय गुरुकुल झज्जर (रोहतक) मे है। इसकी साधारण सभा की बैठक दिनांक ५-१ ६९ रविवार को हुई जिसमे निर्णय किया गया कि—(१) श्री मद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ से सम्बद्ध सभी विद्यालय अधिक से अधिक छात्रो को उसके द्वारा सचालित परीक्षाओ मे बैठावे ३ वर्ष तक यह काय बहुत तत्परता से करना है। इसी से केन्द्र द्वारा मान्यता दी गई परीक्षाओ म स्थिरता आयेगी। (२) जो विद्यालय अभी केन्द्रीय शिक्षा मत्रालय स मान्यना प्राप्त नही हुए है उन्हे चाहिये कि वे मान्यता के लिए शीघ्रता करे यह अवसर है इसक लिए आवश्यक है सस्थाएँ रजिस्टर्ड हो, केन्दीय शिक्षा मत्रालय से आर्थिक सहायनार्थ प्रपत्र ग्रहण करें और उसे भर कर अपनी अपनी राज्य सरकारा द्वारा केद्र म भेजे। जिस सस्थान द्वारा ऐसा कर लिया जावेगा उसका निरीक्षण केन्द्रीय शिक्षामत्रालय की सस्कृत परिषद् जिसके सदस्य आचार्य भगवानूदेव जी भी हैं करेगी। अगस्त १९६९ मे ही अब प्रपत्र भरे जा सकेंगे। (३) हिन्दी की कुछ पुस्तकें पाठविधि मे छात्र छात्राओ के उपयोगी नही हैं, इन्हें परिवतन करक उनके स्थानो पर उपयागी ग्रन्थ रखने का काय सभा ने उपकुलपति को सौंप दिया है। जो ७ दिन क भीतर भीतर ऐसा कर देवें।(४) एक साथ ६ प्रश्न-पत्र देने वाले छात्र यदि ३ प्रश्न पत्रो म असफल हा जावे तो वे आगामी परीक्षाओ मे केवल तीन की ही परीक्षा देंगे। परीक्षा शुल्क पूरा होगा।

कार्यकारिणी परिषद् अन्तरंग सभा का घटन इस प्रकार है:—

श्री आचार्य भगवानूदेव जी गुरुकुल झज्जर कुलपति। श्री स्वामी मुनीश्वरानन्दजी धर्माचार्य गुरुकुल ततारपुर उपकुलपति। श्री स्व० वेदानन्द वेदवागीश गुरुकुल झज्जर, प्रस्तोता। तथा अन्य अधिकारी एव अन्तरग सदस्य। विशेष जानकारी के लिये श्री प्रस्तोता जी से गुरुकुल झज्जर जिला रोहतक से विद्यापीठ का विधान मगवा लेवें।

—प्रस्तोता

आर्यसमाजों से नम्र निवेदन

शिवरात्रि महोत्सव निकट आ रहा है। जो आयसमाज कथा का कार्यक्रम रखना चाहते हैं, वे शीघ्र सभा-कार्यालय को सूचित करने की कृपा करें। समाजो को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि सभा का कार्यक्षेत्र विस्तृत होने के कारण सभा अन्य उपदेशक तथा भजनोपदेशक लगा रही है।

निरजनदेव अधिष्ठाता वेदप्रचार विभाग

आर्यप्रतिनि सभा पजाब द्वारा आर्यसमाज अड्डा होशयारपुर जालन्धर नगर

अम्बाला छावनी में अवैध रूप से घोषित तथा-कथित सभा के बोगस अधिकारियों पर रोक

[उक्त सभी व्यक्तियों को पंजाब सभा की संस्थाओं और सम्पत्ति में दखल देने से स्थायी रूप से रोक दिया गया।]

(श्री प्रीतपालसिंह चीफ जुडीशियल मजिस्ट्रेट, जालन्धर का निर्णय)

आर्यमर्यादा के गत अंक मे समाचार दिया गया था कि प्रो० रामसिंह जी (सभा प्रधान) तथा श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री लोकसभा सदस्य (सभामंत्री) की प्रार्थना पर श्री बक्शीशसिंह सब-जज जालन्धर ने ५-५ ६८ को अम्बाला छावनी में अवैध रूप से घोषित तथाकथित पंजाब सभा के व्यक्तियों अर्थात् श्री दीवान रामशरणदास, श्री वीरेन्द्र, श्री सोमनाथ मरवाहा, डा० हरिप्रकाश तथा श्री मुरारीलाल आदि को निषेधाज्ञा द्वारा अपने आपको आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा की सम्पत्ति व उसके कार्यों में हस्तक्षेप करने से रोक दिया था। वह अभियोग श्री प्रीतपालसिंह जी चीफ जुडीशियल मजिस्ट्रेट जालन्धर ४-१२-६८ से सुन रहे थे। उन्होंने दोनों पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद यह निर्णय दिया कि सभा की सब संस्थाओं तथा सम्पत्ति पर प्रो० रामसिंह तथा उनके साथियों का ही केवल नियंत्रण है। उन्होंने कहा कि पूर्ण पड़ताल के उपरान्त उनका यह मत है कि अभियोग वादियों के पक्ष में है। अत उन्होने निर्णय दिया कि जब तक सारे केस का निर्णय न हो जावे, वर्तमान स्थिति का रहना अत्यन्त आवश्यक है। इस आधार पर उन्होंने स्थायी निषेधाज्ञा द्वारा अम्बाला में अवैध रूप से घोषित उपरोक्त व्यक्तियों को अपने १३-१-६९ के निर्णय द्वारा आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की संस्थाओं के प्रबन्ध और सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने से रोक दिया।

माननीय न्यायाधीश का निर्णय अक्षरशः निम्न दिया जाता है।

In the Court of Shri Pritpal Singh, Chief Judicial Magistrate, Jullundur.

1. Arya Pratinidhi Sabha, Punjab.
2. Professor Ram Singh, President Arya Pratindidhi Sabha, Punjab
3. Shri Raghuvir Singh Shastri, M.P., General Secretary, Arya pratinidhi Sabha, Punjab

Versus

1. Diwan Ram Saran Dass 2 Shri Virender 3. Shri Som Nath Marwaha 4 Shri Ram Datt Advocate 5. Dr. Hari Parkash 6. Shri Ram Lal Vaid 7. Shri Murari Lal 8. Shri Vishwa Nath Grover 9. Shri Kshatish Kumar 10. Sarvadeshik Arya Pratindhi Sabha Delhi and 11. Sarvadeshak Nayai Sabha.

Order

1. In this suit for grant of permanent injuction restraining the defendants from declaring themselves as office bearers of the Arya Pratanidhi Sabha Punjab and from interfering with the management of the properties and working of the Sabha, the plaintiffs have applied for ad-interim injuction to the same effect, pending this suit. My learned predecessor passed an exparte temporary injuction and issued notice to the defendant. The latter have appeared and have applied for vacation of the same.

2. The facts of the case are that the annual general election of the said Sabha was held on 28.11.1964 and Professor Ram Singh Plaintiff No. 2 and Shri Raghuvir Singh Plantiff No. 3 were elected president and Secretary of the Sabha respectively. In 1965 annual election was fixed to be held in November, but it was stayed by an injunction order issued by Sub Judge Ambala; confirmed by the Haryana High Court Eventually defendant No. 10 reached a compromise according to which the dispute between the parties was referred to the arbitration of defendent No 11, the president of which, Shri Rattan Lal, gave an award on 16.11 1967. The plaintiffs fiiled objections against the award under Sec. 14(2) of the Indian Arbitration Act in the COURT of Sh. M.K. Bansal Sub Judge Delhi. The Court issued injuction order dated 27 4.1968 restraining defendant No. 10 from implementing the decision given in the award, and also from holding the proposed election on the fixed date at Ambala CANTT. In which defendants No, 1 to 9 were elected as office bearers. This election according to the plaintiffs is illegal and did not confer any rights as office bearers to the defendants Nos. 1 to 9 The grounds on which the election is said to be illegal are given in para No. 9 of the plaint. The plaintiffs are still in possession of the properties of the Sabha and are in management of the working of the Sabha. They allege that the defendants No, 1 to 9 are trying to take forcible possession of the properties and intend to interfere in the managemen tof the institutions run by them (plaintiffs No. 2 and 3). The plaintiffs have therefore filed this suit seeking injuction to restrain the defendants from doing so.

3. The question for determination in this suit is if the defendants No. 1 to 9 are duly elected office bearers of the Sabha (plaintiff No. 1). If their election is held illegal as alleged by the plaintiffs then the plaintiffs No. 2 and 3, who are admittedly previous office holders, will be entitled to obtain the injuction prayed for in this suit. On the other hand if the election of the defendents was valid then this suit must fail

4. Admittedly the defendents have filled a suit against the plaintiffs in the court of Sh. Bakashih Singh Sub Judge Jullundur for getting their election declared valid. That suit is pending and it will be decided in those proceding as to which the two parties is entitled to be called the office holders of the disputed sabha; and authorised to hold the properties of the Sabha and its management. Till then status quo should be maintained and the defendants cannot be permitted to forcibly take possession of the properties and management of the Sabha from the plaintiffs. In the said previous suit the defendents applied for ad-interim injuction rest-raining the present plaintiffs from interfering with the management of the properties and working of the disputed Sabha. However this application was dismissed by Shri Bakashish Singh Sub Judge on the ground that the present plaintiffs are in possession and management of various institutions and properties of Sabha and till the validity of the defendents election is determined a status quo ought to be maintained. True that this order is under appeal but the fact remains that the plaintiffs are in possession of the properties and institutions of the disputed Sabha and till the parties respective rights are determined they (plaintiffs) cannot be allowed to be uncermoniously deprived of the said properties and management.

5. It is to be noted that the suit between the parties pending in the Court of Shri Bakshish Singh Sub Judge Jullundur is a previously instituted suit regarding the same dispute. The decision in that suit regarding the validity of the election in question will operate a resjudicate between the parties in the present suit. Hence it is advisable that no such order should be made in these procedings which would come in conflict with my order made in that suit. Thus any order passed by me presently will be subjects to the decision of the prvious suit.

6. In my ultimate analysis I find that there being a dispute regarding the validity of the defendents election there is a prima facie case in favour of the plaintiffs in this suit. The plaintiffs are in possession of the institution and properties of the disputed Sabha. So the balance of convenience is in their favour. Till the parties status are determined, the balance of convenience is in the maintaining of status quo. If the defenants are allowed to interfere in the properties and institutions of the disputed Sabha at this stage and ultimately their election is found invalid, an irrepaireable injury will be caused to the plaintiffs, on the other hand no harm will be caused to the defendants if their managements of the properties and institutions of the Sabha is postponed till their election is found to be valid.

7. Consequentty an ad-interim injunction is issued to the defendants No. 1 to 9 restraining them from interfering with the plaintiffs management of the institutions and properties of the disputed Sabha till the decision of this suit.

Sd/—
13.1.69

Anuounced in open Court **Sub Judge I Class Jullundur.**

आशा है, उपरोक्त निर्णय के उपरान्त १०-१२ वर्ष से आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब पर जबरदस्ती कब्जा करने की भावना रखने वाले यह महानुभाव अब वैधानिक रूप से चलने की कृपा करेंगे और आर्यसमाज में इसी कारण से चल रहे संघर्ष को समाप्त करने में सहयोग देंगे।

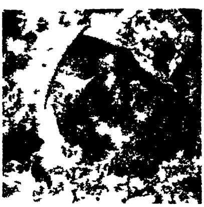
अब हैदराबाद के सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन में महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को आर्य जगत् के सब झगड़े समाप्त कराने का पूर्ण अधिकार दे दिया है और सुना है कि अम्बाला में घोषित इन महानुभावों ने भी हैदराबाद आर्य महासम्मेलन के उक्त प्रस्ताव के स्वागत के साथ महात्मा आनन्द स्वामी जी का निर्णय स्वीकार

(शेष पृष्ठ ५ पर)

स्वामी समर्पणानन्द जी का स्वर्गवास

स्वामी समर्पणानन्द जी के नाम के साथ स्वर्गवासी शब्द लिखते हुए हृदय पर असह्य आघात होता है। परन्तु विवशता है क्योंकि ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था का नियम अटल है। स्वामी जी के निधन से केवल आर्यसमाज की ही हानि नहीं हुई प्रत्युत संस्कृत भाषा का अद्वितीय विद्वान् देववाणी के उपासकों से हठात् छीन लिया गया। वैदिक शास्त्रों का पारंगत विशेषज्ञ आँखों से ही नहीं हृदय से भी ओझल हो गया। आपकी विद्वत्ता चतुर्मुखी थी। वेद और वेदाङ्गों पर आपका मनन अध्ययन और अध्यापन एक विशिष्ट सरणी का द्योतक था। आप केवल शुष्क पथ के राही नहीं थे अपितु गान विद्या के भी भावुक प्रचारक थे। शास्त्रार्थ समर के दिग्गज विजेता थे। संस्कृत भाषा के साथ साथ आंग्ल भाषा के भी आप प्रौढवेत्ता थे। आपने अनेक पुस्तकों की रचना की जिनका अध्ययन पठित समाज में आदर से किया जाता है।

आपके वंश का मूल स्थान उस समय के पंजाब राज्य में था पुन आपके पूर्वज ग्राम पटलेड (जिला सहारनपुर) में आकर बस गये। आपके पिता प० रामचन्द्र जी आर्यसमाज और स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी के भक्त थे, उन्होंने अपने सुपुत्र को गुरुकुल कांगड़ी के आदिम काल में वहाँ प्रविष्ट कराया। गुरुकुल में स्वामी जी का नाम ब्रह्मचारी बुद्धदेव था। आपका नाम अन्वर्थ सिद्ध हुआ। गुरुकुल के प्रतिष्ठित विद्वान् स्नातकों में आप अग्रगण्य समझे जाते थे। गुरुकुल से विद्यालंकार की पदवी प्राप्त की और अपने जीवन का मुख्य भाग वैदिक धर्म के प्रचार के लिये अर्पण कर दिया। सन्यास आश्रम में प्रवेशकाल में इसी पवित्र भावना के कारण समर्पणानन्द नाम रखा।



आप आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब द्वारा संस्थापित दयानन्द सेवा सदन के आजीवन सदस्य थे। कुछ मास पूर्व सभा के किसी अधिकारी के अशिष्ट व्यवहार के कारण तुरन्त पृथक् हो गये, तथा धार्मिक पेंशन की वृत्ति को ठुकरा दिया। आप में ब्राह्मण वृत्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी। एक बार स्वर्गीय दानवीर सेठ श्री जुगुलकिशोर बिरला जी ने आपसे भेंट करने की इच्छा प्रकट की। आपने श्री सेठ जी को नम्रभावों में सन्देश भेज दिया, कि वैश्य ब्राह्मण के पास जाता है न कि ब्राह्मण वैश्य के पास। इस बात से स्वामी जी की मनोभावना पर उत्तम प्रकाश पड़ता है।

आप आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के प्रधान रहे। पाकिस्तान बनने के पश्चात् पंजाब में आर्यसमाज की महती क्षति हुई। वेद प्रचार का कोश प्राय समाप्त हो गया। तब तात्कालिक सभाप्रधान स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्द जी महाराज के साथ होकर आपने वेदप्रचार के रिक्त कोश को पुन भरपूर कर दिया।

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के उच्च आचार्य पद को आपने सुशोभित किया तथा उसके कुलपति भी रहे। वैदिक वर्णाश्रम मर्यादा चालू करने की योजना में आप ने जिला मेरठ के टीकरी गाँव में प्रभातआश्रम स्थापित किया। राजनीति क्षेत्र से भी आप दूर नहीं रहे। इसीलिये स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को सहयोग देकर वैदिक राजनीतिक संघ की स्थापना की।

देहली के चारों ओर गोवंश क्षेत्र में भारत में दूध दही की नदियाँ बहाने के लिये आपने 'गोपावर्त्त' दल की स्थापना की। इसका अच्छा प्रभाव पड़ा। इसी कारण हरयाणा का आर्यसमाज आपको दादा के पवित्र नाम से पुकारता था।

हैदराबाद आर्यसत्याग्रह के प्रमुख सेनानियों में आपने भाग लिया तथा पंजाब में हिन्दी आन्दोलन में भी आपने जेल यात्रा की। इसी प्रकार गोहत्या-निरोध आन्दोलन में सक्रिय योग दिया।

आप वर्णाश्रम मर्यादा को पुन स्थापित करना चाहते थे। वर्तमान जन्मगत बिरादरियों को तोड़ कर आपने अपनी दोनों सुपुत्रियों का विवाह संस्कार जात-पात की जंजीरों को तोड़ कर किया। प्रो० शेरसिंह जी एम० ए० केन्द्रीय शिक्षा राज्यमंत्री आपके जामाता हैं। पण्डित जी की सुपुत्री श्रीमती प्रभाशोभा पण्डिता एम० ए० प्रो० साहिब की धर्मपत्नी हैं।

आपके विलक्षण त्याग का परिचय इस बात से मिलता है कि आपको जीवन में आर्यजनता ने लाखों रुपये भेंट किये परन्तु आपकी जेब सदा खाली रही। किसी अपरिचित व्यक्ति ने उनकी सेवा में पहुँच कर अपनी निर्धनता का दु खड़ा सुनाया, उसी समय आर्द्रहृदय पण्डित जी ने जो कुछ उस समय जेब में था, उसे दे दिया। यही तो ब्राह्मवृत्ति का रूप कहा जा सकता है। आप दलगत भेदभाव से ऊपर थे। इन पंक्तियों के लेखक को स्वामी जी के सहयोग में पर्याप्त समय कार्य करने का अवसर मिला है, उसी आधार पर उपर्युक्त कुछ श्रद्धा शब्द लिखे हैं। व्यक्तिगत रूप में जहाँ मुझ से स्नेह रखते थे, वह परामर्श देते समय धमकाते भी रहते थे।

इस प्रकार का चतुर्दिक् प्रतिभा-सम्पन्न कर्मठ वैदिक विद्वान् से आर्यजगत् वंचित हो गया। यह क्षति पूरी नहीं हो सकती। विशेष दु ख इस बात का रह रह कर हृदय को आघात पहुँचाता है कि इच्छा रखते हुये भी "शतपथ ब्राह्मण" का भाष्य अविकल रूप में न कर सके। "आर्यमर्यादा" के समस्त ग्राहक, प्रेमी पाठक सहयोगी लेखक बन्धुओं तथा आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के सब समाजों की ओर से स्वर्गीय स्वामी जी के पवित्र कार्यों के प्रति आभार प्रकट करते हुये श्रद्धाञ्जलि प्रस्तुत करते हैं। भगवान् उन्हें उचित स्थान देवे।

— जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

(शेष पृष्ठ ४ का)

करने की घोषणा की है ऐसी अवस्था में इन महानुभावों को सभा तथा आर्यसमाजों में झगड़े न बढ़ा कर महात्मा जी द्वारा आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का निष्पक्ष निर्वाचन कराने में अब सहयोग देना चाहिये। खेद है कि शान्ति के उपरोक्त मार्ग को त्याग कर इन महानुभावों ने १८-१-६९ का सेशन जज जालन्धर के न्यायालय में उपरोक्त स्थायी निषेधाज्ञा के विरुद्ध अपील कर दी है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये महानुभाव किसी हालत में भी झगड़ा समाप्त करने को तैयार नहीं और सम्भवत महात्मा आनन्द स्वामी के प्रयत्नों को भी ऊपर मन से ही आदर करते दिखायी देते हैं। आर्य जनता अब स्वयं देख ले कि इन महानुभावों की क्या भावना है?

आर्यजनता "वीरप्रताप" जालन्धर के मिथ्या-प्रचार से सावधान रहे

जालन्धर २१-१-६९ (विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

जालन्धर के सब समाचार पत्रों द्वारा आर्यजनता को पता लग चुका है कि अम्बाला में घोषित बोगस व्यक्तियों अर्थात् दीवान रामशरणदास श्री वीरेन्द्र श्री सोमनाथ मरवाहा डा० हरिप्रकाश श्री मुरारीलाल आदि के विरुद्ध स्थायी निषेधाज्ञा द्वारा श्री प्रीतमसिंह जी चीफ जुडीशियल मजिस्ट्रेट जालन्धर ने उन्हें आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब की संस्थाओं तथा सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने से १३-१-६९ को रोक दिया था। उक्त निर्णय का स्वागत न करके इन महानुभावों ने निर्णय के विरुद्ध सेशन जज जालन्धर के न्यायालय में १८-१-६९ को अपील कर दी। जज महोदय ने उसकी सुनवायी के लिए २३-१-६९ तिथि रख दी है परन्तु जब तक अपील का कोई निर्णय नहीं होता उन्होंने निम्न आदेश किया है—

Status quo should be maintained as existing today (18 1 69)'

आज (१८-१-६९) की स्थिति रखी जाय।

इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्थायी निषेधाज्ञा जो कि १३-१-६९ को लग चुकी थी वह अपील के निर्णय तक ऐसे ही लगी रहेगी। पर तु खेद है कि वीरप्रताप जो मिथ्याप्रचार में अपना सानी नहीं रखता उसने अपने १९-१-६९ के पत्र में मिथ्या-समाचार देकर निम्न शीर्षक से आर्यजनता को भ्रम में डालने का प्रयत्न किया है।

"आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के नये अधिकारियों के विरुद्ध निषेधाज्ञा रद्द"

जिनको न्यायालयों का अंशमात्र भी ज्ञान है उन्हें पता है कि अस्थायी निषेधाज्ञा बिना दूसरे पक्ष को सुने समाप्त नहीं होती। भला यह कैसे सम्भव है कि सेशन जज महोदय स्थायी निषेधाज्ञा को बिना दूसरे पक्ष को सुने रद्द कर देते? और यदि रद्द कर दी होती तो फिर उसकी पेशी २३ १ ६९ को रखने की क्या आवश्यकता थी? आर्यजनता वीरप्रताप और जालन्धर प्रताप के झूठे प्रचार से सावधान रहे क्योंकि इन्होंने झूठ बोलना अथवा समाचार को गलत ढंग से देना अपना पेशा बना रखा है।

भूल सुधार

कुमारी सुशीला आर्य एम० ए० विद्यावाचस्पति का आकाश वाणी दिल्ली केन्द्र के द्वारा भाषण दोपहर पश्चात् २ से २॥ बजे के बीच में बहिनों के कार्य क्रम में प्रसारित किया जायेगा। श्रोता सज्जन अंकित करलें गत अंक में भूल से सायंकाल का समय प्रकाशित कर दिया गया था। इसका हमें खेद है। —व्यवस्थापक

प्रार्थना की भाषा

(लेखक—श्री पण्डित जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—ईश्वर-प्रार्थना का प्रचलन और प्रकार ससार के सभी आस्तिक समुदायो मे लगभग एक जैसा ही है। भाषा-भेद होने पर भी उनकी प्रार्थनाओ मे कोई विशेष अर्थ-भेद नही है। हा, एक प्रश्न ऐसा अवश्य है, जो जब तब विवाद का विषय बनता रहा है। वह यह कि प्रार्थना की भाषा क्या हो ? यह एक आवश्यक प्रश्न है। सभी प्रार्थना-प्रेमी नर-नारियो को इस प्रश्न का सम्यक् विचार कर लेना चाहिये, क्योकि कभी-कभी यह प्रश्न उग्र रूप मे उठ खड़ा होता है और प्रार्थना-अनुष्ठानो मे भारी उलझनें पैदा कर देना है।

२ – कुछ लोगो का कथन है कि प्रार्थना प्रार्थी की अपनी भाषा मे ही होनी चाहिये। प्रार्थना की शब्दावली कोरी तोता-रटन्त ही न हो। प्रार्थना सार्थक भी हो, शुभ्र भी, सन्तुलित भी, स्निग्ध भी सात्विकता-गर्भित भी, शिवतर एव शुचितर भी। प्रार्थना की शब्दावली मे प्रार्थी के हार्दिक उद्गारो का प्रकाश होना चाहिये और प्रार्थना की वाक्य—धारा को प्रभु-प्रेम तथा सर्वहित की उदात्त भावनाओ से परिपूर्ण होना चाहिये। विनम्रता, विनय-शीलता, निर्वैरता एव सात्विकता की पुष्ट=सुस्पष्ट छाप भी प्रार्थना के सम्पूर्ण अनुष्ठान पर अवश्य ही अकित होनी चाहिये। ऐसी प्रार्थना गद्यात्मक भी हो सकती है। पद्यमयी भी और गद्य-पद्य मिश्रित भी। यह ससार की किसी भी भाषा मे हो सकती है। आत्मश्रुत भाषा मे भी, मौन-भाषा मे भी।

३ दूसरे लोगो का कथन है कि प्रार्थना प्रार्थी के अपने शब्दो मे होनी ही नही चाहिये। प्रार्थना तो विशेष-विशेष धर्म ग्रन्थो विशेष धार्मिक स्तोत्रो, मन्त्रो और सिद्धो द्वारा निर्धारित श्लोको आदि की मूल-भाषा म ही होनी चाहिये। प्रार्थना योग का अनुष्ठान करने वालो का चाहिये कि वे परम्परागत रूढ—प्रार्थनाओ को रट ले और मशीन जैसी नियत विधि से उनका अनुष्ठान करे, या धार्मिक ग्रन्थो मे से अवसरानुकूल एव अपनी पसन्द के अनुसार प्रार्थनाओ का चुन ले और साम्प्रदायिक पद्धतियो के अनुसार ही उनका पाठन-जाप आदि किया करे। प्रार्थनाओ के सभी कार्यक्रमो मे व धार्मिक ग्रन्थो की वाक्यावली, पाठ-विधि उच्चारण शैली आदि के विधि विधान पर व विशेष बल देते है। धर्म-ग्रन्थ किसे स्वीकारा जाय ? किसे नही ? यह एक बड़ा विवाद है। लोग अपने मान्य ग्रथो को धार्मिक और दूसरो के ग्रथो को अधार्मिक बताते ही रहते हैं। इस विवाद का विस्तार प्रस्तुत प्रकरण मे सम्भव नही है।

४—कुछ लोग विशेष-विशेष मन्त्रो, स्तोत्रो, श्लोको, गीतो, वाक्यो, कल्मों आदि-आदि की विशेष-विशेष शाब्दी-शक्तियो के प्रतिपादक और प्रतिपालक होते हैं। नाना प्रकार के ऊने-टूने एव मन्त्र-तन्त्र प्रयोग भी इसी श्रेणी से सबधित हैं। धार्मिक-ग्रथो के पक्षपातियो के समान ही ये लोग भी रूढीवादी और कट्टरता पन्थी होते हैं। अपने-अपने मन्त्रो-तन्त्रो आदि की अनेक विध दिव्यताओ, निवारक—उपचारक शक्तियो और चमत्कारपूर्ण प्रभावनाओ आदि के रोचक बखान कर करके ये लोग बहुत आसानी से ही धर्म भीरू और दुर्बल मन-सकल्प के लोगो को दुविधाग्रस्त करके अपने-अपने मत मे मिलाया करते हैं। इनको कतिपय बड़े-बड़े मत-मतान्तरो के आवान्तर भेद-स्वरूप समझना चाहिये। विभिन्न मत-मतान्तरो की रूढियो का सम्मिश्रण भी इन मे होता है। अपने-अपने मतो की त्रुटियो एव रूढियो पर आवरण डालने के लिये ये लोग प्राय समन्वयवादी भी बना करते है।

५—ईसाइयो का कथन है कि प्रार्थना के लिये केवल बाइबिल के वाक्यो का ही उपयोग किया जाये। इनमे जो कट्टर-पन्थी हैं। उनका कथन है कि बाइबिल के वाक्यो का उपयोग तो किया ही जाये—वह भी बाइबिल की मूल-भाषा लेटिन=इबरानी मे ही, जो कि ईसाइयो के पूर्वजो की प्राचीन धार्मिक भाषा है। कट्टर-पन्थी रोमन कैथोलिक ईसाई तो इबरानी को ही खुदा की कचहरी की भाषा भी समझते हैं। सुधार के प्रबल आन्दोलनो के परिणाम स्वरूप, जो प्रोटेस्टेंट आदि नये-नये ईसाई सम्प्रदाय बने हैं, उन्होने अपने-अपने अनुयाइयो को यह सुविधा अवश्य दे दी है कि यदि वे चाहे, तो बाइबिल के अनुवादो का उपयोग प्रार्थनाओ में कर लें। कुछ स्वतन्त्र वृत्ति के ईसाई अपनी-अपनी मातृ-भाषा वा अपनी पसन्द की भाषा का उपयोग भी अपनी प्रार्थनाओ मे करने लगे हैं।

६—मुसलमानो का आग्रह है कि केवल कुरान की आयतो का ही उपयोग=उच्चारण प्रार्थनाओ मे किया जाये—कुरान की मूल अरबी-भाषा में ही, किसी अनुदित रूप में नही। इनका यह भी एक विशेष मन्तव्य है कि पुराने सभी धर्म-ग्रथ और पुरानी सभी धर्म-भाषायें कुरान के प्रकाशन के बाद रद्द हो चुके हैं। इस्लामी क्षेत्रो मे भी सुधार के आन्दोलन चले हैं, और नये-नये सम्प्रदाय बने हैं, परन्तु उनकी कट्टरता की मात्रा मे कोई कमी नही हो सकी है। प्रत्येक नया सुधार कट्टरतर और कट्टरतम दिशा मे ही बढ़ता दिखाई देता है। कुरान के जो अनुवाद ससार की विभिन्न भाषाओ मे हो चुके हैं, मौलवी लोग उनमे से किसी एक को भी पूर्ण प्रामाणिक नही मानते। उनका कथन है कि पूर्ण-भाषा तो बस एक अरबी ही है। और सब भाषायें तो अधूरी=त्रुटिपूर्ण हैं। कुरान का अनुवाद तो किसी भाषा मे नही हो सकता। कुरान के किसी अनुवाद का उपयोग प्रार्थनाओ मे करने की सुविधा का मिलना अभी भी शेष है। इनके मत मे ईश्वर-प्रार्थना केवल अरबी भाषा मे ही होनी चाहिये और वह भी कुरान की किसी आयत के रूप मे ही। ये लोग शायद अपने खुदा की कचहरी की भाषा भी अरबी ही मानते हैं। मुसलमानो मे कुरान के अनुवादो को मूल अरबी पाठ सहित ही लिखने-छापने का रूढीवाद प्रचलित है। यद्यपि अब कुछ मूल रहित अनुवाद भी उर्दू, अग्रेजी आदि में छपे हैं।

७—भारतीय पौराणिक आदि पुरातन—पन्थी सम्प्रदाय भी प्राचीन ग्रथो के पाठो, अशो वा स्तोत्रो आदि का उपयोग कर्मकाण्ड की प्रचलित विधियो के साथ करने पर ही सर्वाधिक बल देते है। पौराणिक आदि भारतीय मतो मे बहुदेवतावाद का प्रचलन भी खूब है ही, अत यहाँ की धार्मिक प्रार्थना-पद्धतियो मे साम्प्रदायिक देवताओ और देवियो आदि को ही सम्बोधित किया जाता है। प्रार्थना-गीतो को पौराणिक गाथाओ आदि से खूब अलकृत भी किया जाता है। भारतीय प्रार्थनाओ का स्तर भटैती के निम्नतर स्तर तक जा पहुँचा है। एक देववाद के प्रचारको को भारत मे सर्वाधिक कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। जैन और बौद्ध सम्प्रदायो मे कोई सृष्टिकर्त्ता ईश्वर तो नही स्वीकारा जाता, तथापि तीर्थंकरो गुरुजनो बुद्धो और सिद्धो की मूर्तियो के सामने एव मूर्त्तियो के बिना भी नाना प्रकार के स्तुति-पाठो का प्रचलन तो उनमे भी पौराणिक आदि सम्प्रदायो जैसा ही है। किरानियो और कुरानियो जैसी कट्टरता भी उनम देखी जा सकती है। जैनियो और बौद्धो के अधिकाश धर्म-ग्रथ प्राकृत और पाली आदि भाषाओ मे है। वे लोग उनको ही मूल अथवा अनुचित रूपो मे गाते अपनाते है। अर्थवाद के अनुसार इन नास्तिको के स्तुति-प्रार्थना-गीत भी आस्तिको के गीतो जैसे ही हैं। भारत के विभिन्न मत-मतान्तरो के अपने-अपने प्रवर्त्तक है, अपने-अपने ग्रथ और अपने-अपने स्तुति-प्रार्थना प्रकार। फिर भी उन सभी मे थोडी बहुत आर्थिक समानता तो है ही। सिक्ख—सम्प्रदाय का सघठन आरम्भ मे तो सैनिक कार्यों के लिये ही किया गया था। अब वह भी एक नये मनुष्य-पूजक, पुस्तक-पूजक और कट्टर-पन्थी सम्प्रदाय के रूप मे परिवर्तित हो चुका है। राजनीतिक प्रभावो के परिणाम स्वरूप आजकल का सिक्ख मत श्री गुरु नानक देव जी महाराज की प्रेरणाओ से विमुख होकर बहुत दूर जा पड़ा है। सिक्खो का आग्रह है कि ईश्वर की प्रार्थना पजाबी भाषा मे ही की जाये। ऐसे ही होते हैं ये भाषावाद के दुराग्रह। समान्यजन तो इन साम्प्रदायिक दुराग्रहो को अनुचित ही समझते है, तथापि दुराग्रही लोगो को समझाना सरल नही है। किसी प्रार्थी का किसी ऐसी भाषा मे प्रार्थना करना कभी भी हितकर या उचित नही हो सकता। जिसे प्रार्थी स्वय समझता नही, समझ सकता नहीं। ऐसा करना तो समय और शक्ति का दुरुपयोग ही है। प्रार्थना के लिये प्रथम तो हमे अपनी-अपनी मातृ-भाषा का ही प्रयोग करना चाहिये, और यदि धर्म-ग्रथो के पाठो को अपनाया जाये। तो उन ग्रथो के प्रार्थना में प्रयुक्त अशो के अर्थो को तो कम से कम अवश्य ही सुन समझ कर हृदयगम कर लिया जाये। प्रार्थना-योग को सीखने के लिये किसी नये या पुराने ग्रथ से आवश्यक सहायता लेने में कोई बुराई नहीं है, परन्तु प्रार्थना तो प्रार्थी की अपनी प्रार्थना ही होनी चाहिये। इस बात को स्वीकार करने में किसी को कोई एतराज न होना चाहिये कि प्रार्थी सोच-समझ कर किसी भी नई या पुरानी पुस्तक के किसी अपने मन पसन्द अश का उपयोग मूल या अनुदित रूप मे अपनी प्रार्थना के तौर पर करे। ईश्वर तो सभी भाषाओ को सुनता और समझता है। मौन-भाषा को भी, स्वागत=आत्मश्रुत भाषा को भी।

८—आर्यसामाजिक क्षेत्रो मे भी प्रार्थना विषय मे दुविधा पाई जाती है। कुछ लोग केवल वेद-मन्त्रों के ही उपयोग पर जोर देते हैं, प्रार्थना के रूप मे, कुछ लोग सस्कृत के प्राचीन ग्रथो के कुछ श्लोको या श्लोकसम वाक्यो पर। ऐसा होने पर भी कोई कट्टर-पन्थी रग-ढग यहाँ नही है। वैदिक-सन्ध्या भी एक प्रार्थना—माला ही है, जो कि कतिपय वेद-मन्त्रो और कुछ प्राचीन वाक्यो का सग्रह है, उसका अनुष्ठान अर्थज्ञान-पूर्वक किया जाये। इस बात पर यहा आरम्भ से ही अधिक बल दिया जाता है। अर्थ ज्ञान के लिये छोटे-बड़े गद्य-पद्यमय बहुत से सन्ध्यानुवाद भी विभिन्न भाषाओ मे आर्य-विद्वानो ने कर दिये हैं। सन्ध्या-योग के पुनरुद्धारक महर्षि दयानन्द कृत सस्कृत और हिन्दी सन्ध्यानुवाद भी पच महायज्ञविधि में मौजूद हैं। बड़ी बात यह है कि सन्ध्या,

के साथ ही एव सन्ध्या के बिना भी यहा गद्य में या पद्य मे प्रार्थना करने का रिवाज भी प्रचलित है। ऐसी प्रार्थनायें या तो प्रार्थियो की अपनी मातृ-भाषा मे ही होती हैं या ऐसी भाषा मे जिसको प्रार्थना-योग का अनुष्ठान करने वाले नर-नारी भली प्रकार समझते हैं। वेद हमारे धर्म-ग्रथ हैं। सस्कृत हमारी प्राचीन धार्मिक और सास्कृतिक भाषा है। इसलिये समझने और प्राचीन साहित्य से लाभ प्राप्त करने के लिये वेदो और अन्य सस्कृत ग्रथो का पठन-पाठ सरक्षण भी हमारा कर्त्तव्य है। परन्तु जहा तक ईश्वर—प्रार्थना—कर्म के अनुष्ठान का सम्बन्ध है। आर्यसमाज सभी उपासको को यह पूर्णस्वतन्त्रता प्रदान करता है कि वे अपनी-अपनी भाषा मे ईश्वर-प्रार्थना करें या अपनी पसन्द की ऐसी भाषा मे प्रार्थना करें जिसे वे भली प्रकार से समझ सकते हैं। प्रार्थना के शब्दो और भावो का आविर्भाव तो उपासको के उदारता और स्निग्धता परिपूर्ण हृदय से ही होना चाहिये, होठो से नही। बाह्याडम्बर अथवा वाग्जाल तो किसी के कुछ भी काम का नही।

माला लीनी काठ की धागे लेई पिरोय। मन मे घुन्डी पाप की नाम जपे क्या होय॥
माला तो कर में फिरे और जिह्वा मुख माही।
मनवा तो चहुँ दिश फिरे यह तो सिमरण नाही॥

९—यहाँ एक बात और भी समझ ली जाय। नर नारियो के लिये प्रार्थना करना आवश्यक भी है हितकर भी और सम्भव भी, परन्तु अल्पज्ञान अल्पसामर्थ्य और अल्पसाधन शक्ति एवं अल्पकाल-जीवी मनुष्यो द्वारा ईश्वर की महिमा का पूरा-पूरा बखान अर्थात् स्तुति=करण सम्भव नही है न वाणी द्वारा न लेखनी की सहायता से। प्रार्थना-कर्म कुछ सरल भी है—आत्म निवेदन और आत्म समर्पण के रूप मे बल बुद्धि की याचना के रूप मे। स्तुतिकरण मे किसी कवि ने मानव की असमर्थता का बखान किया है—

सकल धरा कागद करूँ मसि करूँ जलराई।
सकल तरु की लेखनी, हरि गुण लिखा न जाई।,

१० वेद मे भी उल्लेख है—

तुञ्जे तुञ्जे य उत्तरे स्तोमा इन्द्रस्य वज्रिणः।
न विन्धे अस्य सुष्टुतिम्॥ अथर्व० २०।७०।१३ ऋग्० १।७।७

उस वज्री=न्यायकारी इन्द्र=सकल ऐश्वर्य सम्पन्न सर्वोपरि प्रशासक सकल दुष्टताओ के निवारक एव विदारक परमात्मा के प्रत्येक दान पर=दान को प्राप्त करने के प्रत्येक अवसर पर, जो उत्तमोत्तम स्तुति-गीत हैं वे ही मैं गाता हूँ, परन्तु उसकी पूर्ण स्तुति=यथार्थ स्तुति को तो मैं कर ही नही सकता। उसकी स्तुति का विस्तार इतना अधिक है कि उसका अन्त ही मुझे नही मिलता।

११—यहाँ हम प्रार्थना के उद्देश्य और प्रकार का विस्तार भी कर लेना चाहिये। यदि ईश्वर से सहायता या अन्य कुछ माग लने का नाम ही या आत्म-निवेदन का नाम ही प्रार्थना है तब तो प्रार्थना-कर्म के लिये प्रार्थी की अपनी मातृ-भाषा ही पर्याप्त है। घट-घटवासी सब कुछ यथावत् रूप मे जानता ही है। इसके लिये इबरानी अग्रेजी, सस्कृत अरबी, पाली प्राकृत या हिन्दी आदि किसी विशेष भाषा मे बोलने, गाने, चिल्लाने या रोने की तो कुछ भी आवश्यकता नही। ईश्वर तो सब के मनोगत भावो, विचारो, इच्छाओ और आवश्यकताओ को बिना बोले-बताये भी जानता ही है।

जो तन मन मे बसत है, कियो हृदय मे भौन।
वाको सुख-दुख कहन की, रही बात अब कौन॥

सन्त कबीर ने चुटकी भी ली है—

काकर पाथर जोडकर, मस्जिद लेई बनाय।
ता चढि मुल्ला बाग दे, बहरा भया खुदाय॥

१२—यदि ईश्वर की स्तुति और प्रार्थना आदि का कुछ और भी उद्देश्य है, तो वह भी सुस्पष्ट होना चाहिये। निस्सन्देह मुख्य उद्देश्य तो कुछ और है ही। यथा—आत्म-ज्ञान, आत्म-निर्माण, आत्म-विकास एकाग्रता सम्पादन, भावप्रकाशन, आत्म शोधन, शक्ति सवर्धन, एकता सम्पादन पारिवारिक और सामाजिक सगठन, आत्म-प्रेरण, आत्म सुधार, आत्म-जागरण आत्मानुशासन और सुख-शान्ति की प्राप्ति एव अनुभूति आदि-आदि। उद्देश्य के अनुरूप ही प्रार्थना की भाषा और शब्द-योजना भी होनी ही चाहिये। जीवन मे कोई ऐसा कार्य प्रार्थी को नही करना चाहिये जो उद्देश्य पूर्ति मे बाधक हो। प्रार्थना एक मनोविज्ञानिक अनुष्ठान है।

१३—यदि हम किसी असाधारण और उच्चतर बात को कहना चाहते हैं, तब तो अपनी दैनिक बोल चाल की भाषा से हमारा काम चल ही न सकेगा। हमें अवश्य ही उपयुक्त उच्चतर और विशेष भाषा भावो और शैलियो को ग्रहण करना ही होगा। यदि कोई वेदादि धर्म ग्रन्थो से अथवा पक्षपात शून्य परोपकारी विद्वानो के वचनो से किसी को वाछनीय सहायता मिलेगी, तो, वह अवश्य ही स्वीकार की जायेगी प्रसन्नता-पूर्वक। यदि प्रार्थना की भाषा और रीति-नीति को सीखने के लिये कुछ परिश्रम आवश्यक होगा, तो वह भी किया ही जायेगा। यदि कोई मूल्य देना पडेगा, तो अवश्य ही दिया जायेगा। यदि कभी कोई विघ्न प्रार्थना-कर्म मे उपस्थित होगा तो उसे भी यथोचित रूप मे हटाया ही जायेगा। प्रार्थना के सभी काम सुनिश्चित=सुनियोजित रूप मे बुद्धि-विवेक-जागृति पूर्वक होंगे। इन कामो मे अन्ध-श्रद्धा से काम न चलेगा, ढोग तो कुछ भी काम न देगा। वास्तविक श्रद्धा और तप को तो अपनाना ही होगा। साधारण भाषा की शब्दावली और शैली को लेकर और निम्नतर स्तर पर रह कर तो कोई भी प्रार्थना-योग द्वारा अपने उच्चतर उद्देश्यो और लाभो का प्राप्त न कर सकेगा। प्रार्थना कार्यों मे पवित्रता एकरूपता और अनुशासन के अभाव मे तो हानियो की भी आशका है ही उत्तम मर्यादाओके उल्लघनके परिणामतो अहितकर होतही है।

१४—अन्ध श्रद्धा-अभिभूत साम्प्रदायिक दलो और व्यक्तियो ने जहाँ तहाँ बहुत सी ऐसी काल्पनिक कहानियाँ भी फैला रक्खी हैं कि अमुक-अमुक प्रसगो या कार्यों मे अमुक-अमुक व्यक्तियो ने ये-ये या इस-इस प्रकार से प्रार्थना की थी और ईश्वर ने उनकी प्रार्थनाओ को स्वीकारा था, इत्यादि। गम्भीरता पूर्ण विचार-विमर्शों मे ऐसी कहानियो का कुछ भी लाभ या उपयोग नही है। हा मनोविज्ञान का परिज्ञान और उपयोग सभी प्रार्थना कार्यों मे विशेष उपयोगी है।

१५—एक दृष्टान्त है। युद्ध-काल मे एक अग्रज बुढिया यह प्रार्थना कर रही थी कि हे परमेश्वर! कृपा करके जर्मनी वालो का नाश कर दे। किसी ने देखा सुना और कहा—'माता जी! जर्मनी के लोग भी तो आजकल अग्रजो के विनाश के लिये ईश्वर से इसी प्रकार की प्रार्थना मे कर रहे होंगे। क्या ईश्वर अग्रजो और जर्मनो दोनों की ही प्रार्थना को स्वीकार करेगा? यदि तुम्हारी प्रार्थना स्वीकारी जायेगी, तो उनकी प्रार्थना अस्वीकृत क्यो होगी? बुढिया बेचारी भोली वह हाथ नचाकर बोली—'ईश्वर तो केवल अग्रेजी भाषा ही जानता है? जर्मन-भाषा तो वह जानता ही नही। इस भोली-भाली दुनिया मे आजकल अधिकांश भक्त तो ऐसे ही हैं।

[शेष फिर]

किसान

श्री योगेन्द्र पाण्डेय ग्राम लखोलिया (जिला बलिया उ० प्र०)

हे जगती की जान किसान हे करुणा की खान किसान।
याद तुम्हारी जब आती है प्रतिमा तेरी दिखलाती है,
तू मानव की आन किसान। हे जगती की जान किसान॥
रहते हो श्रम मे अनुरक्त हो ईश्वर के सच्चे भक्त।
छल अरु दम्भ न रखते लेश सीधा-सादा तेरा वेश,
तुझमे तनिक नही अभिमान। हे जगती की जान किसान॥
रैन-दिवा का तुम्हे न ध्यान दुख-सुख का कुछ तुझे न ज्ञान।
तुम तप मे हो सदा विलीन वैभव रहते भी तुम दीन,
तुझसे उज्ज्वल जग की शान। हे जगती की जान किसान॥
रीति-प्रीति आगार तुम्हीं हो, धर्म-ज्ञान आधार तुम्ही हो।
लोक-शोक हरने वाले हो उदर पूर्ति करने वाले हो,
देते हो नित जीवन दान। हे जगती की जान किसान॥
क्लेश व्याधि नहि आते पास जनोद्रेक के बने न दास।
शुद्ध अनिल के हो अधिकारी, पूर्ण रक्त है रग मे जारी
सद्गुण को हो कान किसान। हे जगती की जान किसान॥

—क्रमश

मुंगेर जिला आर्य सभा का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री ओम् प्रकाश जी मंत्री श्री डा० दामोदरराम वर्मा कोषाध्यक्ष—श्री अनूप सिंह लखानिरीक्षक—श्री सुन्दर लाल महाशय रामचन्द्र आर्य उपमन्त्री

जीवात्मा का स्वरूप

(स्वामी आत्मानन्दतीर्थ, आचार्य आनन्दनिकेतन, सरधोवा (मेरठ)

वैदिकधर्म के समस्त सिद्धान्तो का आधार ईश्वर, जीव, प्रकृति है। प्राचीनकाल मे जब कि वैदिकधर्म की अजस्र धारा विश्व मे सर्वत्र अबाध गति से बह रही थी, उस समय भी इन तीनो विषयो मे ऋषियो की विवेचना निरन्तर जन मानस को प्रभावित करती रहती थी। छान्दोग्य और बृहदारण्यक मे अनेक स्थल इन विषयो की चर्चा से ओतप्रोत हैं। राजा से लेकर रक पर्यन्त सभी विद्या व्यसनी थे और यज्ञादिक के निमित्त से आयोजित बृहद्-सभाओ मे उपस्थित हुये विद्वानो से इन गम्भीर विषयो पर शास्त्रार्थ का लाभ उठाया करते थे। आज से लगभग साढे पाच हजार वर्ष पूर्व महाभारत के दु खद युद्ध की विभीषिका मे भारत का समस्त भौतिक एवम् आध्यात्मिक वैभव भी भस्मसात् सा हो गया और उसी के परिणाम स्वरूप चार्वाक, जैन और बौद्ध आदि वेदविरुद्ध भ्रामक मतो का प्रादुर्भाव हुआ। यही नही, आज से लगभग दो हजार वर्ष मे मतो की बाढ सी आ गई और यदि आज उनकी गणना करना चाहे तो पाच हजार के लगभग बैठती है। आचार्य शकर के समय तक लगभग साढे तीन हजार मतो का प्रचलन हो चुका था और शकर ने उन मतो का खण्डन किया, परन्तु उनके अनुयायियो ने शकर के मन्तव्यो से ही अद्वैतवाद की रचना कर डाली। इन मतो ने सत्य के स्वरूप को नष्ट प्राय कर दिया है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश मे स्पष्ट कर दिया कि इन सब मतो का मूल विद्वानो का स्वार्थ है। इन मतो के कारण ही ईश्वर, जीव और प्रकृति जैसे अनादि विषयो मे भी भ्रम उत्पन्न हो गया है। अत इनका स्पष्टीकरण आवश्यक था। वेदविद्या के बिना इनका स्पष्टीकरण सम्भव नही था। परमात्मा की असीम कृपा और महर्षि दयानन्द जी महाराज के उत्कृष्ट तप से ही त्रैतवाद के इन गहन तत्त्वो का विवेचन सम्भव हो सका।

आर्यजगत् मे भी जीवात्मा के स्वरूप के सम्बन्ध मे विभिन्न विचार हैं। एक वर्ग मानता है कि जीवात्मा अणु परिमाण वाला है। वस्तुत यह विचारधारा जैनागम से प्रभावित हैं। जैनी ही जीवात्मा को अणु परिमाण वाला मानते हैं। ऋषि दयानन्द ने जीवात्मा को अणुपरिमाण वाला नही माना, अपितु सत्यार्थप्रकाश के १२ वे समुल्लास मे लिखा है कि जीवात्मा परमाणु मे भी रह सकता है। अत जीवात्मा परमाणु से भी सूक्ष्म है तभी परमाणु मे रह सकता है। इसलिये जीवात्मा को अणुस्वरूप मानना भ्रामक है।

कतिपय विचारक जीवात्मा को ईश्वर के समान निराकार मानते हैं। ईश्वर निराकार है और सर्वव्यापक भी है परन्तु क्या जीवात्मा सर्वव्यापक है? नहीं, जीवात्मा के सम्बन्ध मे ऋषि दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थप्रकाश म लिखा है—क्या जीवात्मा शरीर मे व्यापक है? नही जीवात्मा शरीर मे व्यापक अर्थात् विभु नही है। यदि व्यापक होता तो जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति आदि अवस्थाये न होती।" जीव शरीर मे भी व्यापक नही है। जीव परमेश्वर से स्थूल और परमेश्वर जीव से सूक्ष्म होने से परमेश्वर व्यापक और जीव व्याप्य है। सत्यार्थप्रकाश सातवा समुल्लास) अत जीव ईश्वर के समान निराकार नही है क्या जीव साकार है? नही यह आवश्यक नहीं है कि जो निराकार नही है वह साकार अवश्य होगा। ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनो नित्य और अनादि होते हुये स्वरूप से भिन्न हैं।

जीवात्म के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिये ऋषि दयानन्द के ग्रन्थो का पर्याप्त अध्ययन अपेक्षित है। ऋषि दयानन्द से पूर्ववर्ती पतन कालीन सभी विद्वानो ने जीवात्मा के स्वरूप का समझन और अभिव्यक्ति मे बडी अस्पष्टता से काम लिया है। इस सम्बन्ध मे यह भी माना जा सकता है कि वे इस विषय का समझ न पाये हो। इस विवेचना की दृष्टि से ऋषि दयानन्द जी महाराज का मार्ग दर्शन अत्यधिक लाभकारी एवम् स्तुत्य है।

जीवात्मा का स्वरूप क्या है? इस सम्बन्ध मे ऋषि का मत स्पष्ट है। जीवात्मा एकदेशीय, परिछिन्न और अल्पज्ञ है, और यही है वास्तविक स्वरूप जीवात्मा का। शरीरस्थ आकाश के एक देश मे जीवात्मा निवास करता है। शरीर मे ही स्थानान्तर करने पर जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदि अवस्थायें सम्पन्न होती हैं।

जीवात्मा और परमात्मा परस्पर व्याप्यव्यापक होने से अभिन्न होते हुये भी स्वरूप से भिन्न हैं। जहा परमात्मा सर्वव्यापक है, जीवात्मा एकदेशीय है। परमात्मा और जीवात्मा दोनो ही चेतन है परन्तु जीवात्मा शरीर के माध्यम से नाना प्रकार के कर्म सम्पन्न करता है और उनका फल भोगता है। नाना योनियो मे जन्म लेता है गर्भवास के कष्ट सहता है अर्थात् जीवात्मा, परमात्मा से अभिन्न होते हुये भी स्वरूप से भिन्न है। इसी दृष्टि से जीवात्मा परिछिन्न है।

हरयाणा प्रान्तीय मद्य-मांस निषेध समिति,

हरयाणा सप्तम आर्यमहासम्मेलन (रोहतक) में सर्वसम्मति से पारित प्रस्ताव

यह सम्मेलन भारत भर मे दिन प्रति दिन बढते हुए दुर्व्यसनो के प्रभाव से चिन्तित है। विशेषकर वीरभूमि हरयाणा मे मद्य-मास के निरन्तर प्रचार से दु खी है। अत समस्त आर्यजनता से अपील करता है कि भावी सन्तति के उत्थान का ध्यान रखते हुए इन व्यसनो के विरुद्ध जनमत तैयार करे और आन्दोलन को तीव्र रूप देने के लिए एक सघर्ष समिति का निर्माण किया जाये साथ ही यह सम्मेलन सरकार से हरयाणा मे मद्य-मास पर प्रतिबन्ध लगाने का अनुरोध करता है और चेतावनी देता है कि यदि सरकार ने शीघ्र ही इस दिशा मे कोई उचित पग न उठाया तो घोर आन्दोलन मे होने वाले दुष्परिणाम का उत्तरदायित्व सरकार पर होगा।

मद्य-मांस निषेध संघर्ष समिति की सूचना

हरयाणा का प्रत्येक बुद्धिमान् व्यक्ति बढते हुये शराब के प्रवाह से चिन्तित है। आर्यसमाज ने विवश होकर इस कुकर्म के विरोध मे लडाई का बिगुल बजाया है। सत्याग्रहियो की भर्ती तथा धन सग्रह का कार्य तेजी से चालू है। २६ जनवरी १९६९ को मध्याह्न १२ बजे से दयानन्द मठ रोहतक मे श्री आचार्य भगवान्देव जी की अध्यक्षता मे सघर्ष समिति की विशाल बैठक हो रही है, जिसमे प्रात भर के सभी कार्य-कर्त्ता भाग ले रहे हैं। —निवेदक —इन्द्रदेव मेधार्थी (प्रचार मन्त्री)

मद्य मांस निषेध समिति नारनौल का समाचार

१२ जनवरी को जि० महेन्द्रगढ (हरयाणा) के आर्य कार्यकर्ताओ तथा अन्य प्रमुख सज्जनो की राज्य मे मद्यमास को बन्द करवाने के लिये एक बैठक हुई। श्री आचार्य भगवान् देव जी अध्यक्ष थे। अनेक महानुभावो ने अपने विचार प्रकट किये। बहुत सज्जनो ने इस बुराई को जि० महेन्द्रगढ से नष्ट करने के लिये कार्य करने की प्रतिज्ञा की। सत्याग्रह के लिये कई प्रमुख सज्जनो ने जत्थो के रूप मे जाने का वचन दिया। सर्वसम्मति से राव माधोसिह जी समिति के अध्यक्ष चुने गय तथा उन्होने अपनी कार्यसमिति के सदस्यो की नियुक्ति की। बैठक मे इस बुराई को दूर करने के लिये बहुत उत्साह था। मन्त्री—ताराचन्द आर्य, नारनौल

आर्ष कन्या गुरुकुल नरेला (दिल्ली)

वार्षिकोत्सव १-२ फरवरी ६९ ई० को समारोह से मनाया जावेगा। इस अवसर पर अनेक पूज्य सन्यासी महात्मा, विद्वान् उपदेशक, नेता और भजनोपदेशक पधारेंगे। २६ जनवरी मे सामवेदपरायण यज्ञ आरम्भ होगा। परीक्षोत्तीर्ण स्नातिकाओ को प्रमाणपत्र दिये जावेंगे। नवीनकन्याओं का प्रवेश भी इसी समय होगा। आर्य देवियो और पुरुषो को परिवार सहित उत्सव मे पधार कर उपदेशो मे लाभ उठाना तथा दान देकर कन्या शिक्षा मे सहयोग देना चाहिये। —मन्त्री धीरजसिंह

स्वा० समर्पणानन्द जी के निधन पर शोक सभा

दिल्ली के आर्यसमाजो की ओर से १९ जनवरी को आर्यसमाज दीवान हाल मे स्वा० ब्रह्मानन्द जी दण्डी की अध्यक्षता मे एक शोक सभा हुई जिसमे स्वा० विवेकानन्द जी प्रो० शेरसिंह जी केन्द्रीय राज्यशिक्षा मन्त्री, स्वामी रामेश्वरानन्द जी आचार्य कृष्ण जी, प्रो० श्यामराव जी श्रीमती प्रभातशोभा जी आदि ने श्रद्धाजलि अर्पित की और स्वामी जी द्वारा लिखित ग्रन्थो के प्रकाशन पर बल दिया गया।

परमात्मा सर्वज्ञ है परन्तु जीवात्मा अल्पज्ञ है। समस्त सृष्टि की विधिवत रचना, परमात्मा की सर्वज्ञता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। समस्त सृष्टि के क्रिया कलापो को परमात्मा भली भाति जानता है जबकि जीवात्मा अपने क्षेत्रीय जगत् को भी भली भाति नहीं जानता है। इससे अनेको भूल इसकी अल्पज्ञता के कारण होती हैं और उनका परिणाम भी यह भोगता है। अनेको योनियों मे जन्म लेने का कारण भी इसकी अल्पज्ञता युक्त कर्म हैं अर्थात् स्वभाव से ही जीवात्मा अल्पज्ञ है।

वैदिक दर्शनो के ऋषि दयानन्द सम्मत दृष्टिकोण से जीवात्मा एकदेशीय, परिछिन्न और अल्पज्ञ है। इससे भिन्न सभी मान्यतायें ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों के विरुद्ध और त्याज्य हैं।

ग्राहक महानुभाव पत्र तथा शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने का कष्ट करें।

गुरुकुल प्रणाली ?

गुरुजन समादृत हों !

(श्री मुकुलचन्द्र पाण्डेय, लेक्चरर, वनस्पति विज्ञान विभाग शिया डिग्री कालेज लखनऊ-७)

अतीत को भूलना आज हम अपना गौरव समझते हैं। भारतवर्ष बहुत पहले से ही संसार के मार्गदर्शक के रूप में सम्मानपूर्ण दृष्टि से आदर पाता रहा है। यह राष्ट्र धन-धान्य व स्वर्णादिक रत्नों से परिपूरित रहा है। राम, कृष्ण, बुद्ध और गांधी सदृश महापुरुष यही पैदा हुए। महर्षि दयानन्द ने सारे विश्व को वेदों की तरफ झुकने के लिए प्रेरित किया। किन्तु आज नाना प्रकार के दु:ख दर्द, प्रपीड़न और क्लेश पराकाष्ठा पर हैं। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' के सिद्धान्त का अतिक्रमण कर विद्याध्ययन को निम्न श्रेणी के कार्यों में गिनने की एक परम्परा आ गई है। राजनीति के घिनोने दलदल में यदि कोई सर्वाधिक कष्ट का भाजन बना है तो मूक शिक्षक। प्राचीन गुरुकुल प्रणाली में आर्य सम्राट् गुरुजनों का बहुविधि आदर करते थे, उनके पधारने पर आसन छोड़ उन्हें अपने राजसिंहासन पर बैठाते थे। इसके लिए गुरुजन भी राष्ट्र के कर्णधारों, राजकुमारों तथा अन्यान्य जिज्ञासुकुमारों को उच्च ज्ञान देते रहते थे। धनुर्विद्या, कलाकौशल, हिंस्र जंगली सिंहादि जातुओं की मृगया राजनीति तथा भाई चारे का अन्यतम पाठ पढ़ाना उन गुरुकुलों के संचालक ऋषियों का काम था। वे समाज में आदर की भावना से पूज्य व महत्वपूर्ण थे। आज का भारत उन आदर्शों व प्राचीनतम मानदण्डों को बिल्कुल विस्मृत कर गया यवन और ब्रिटिश शासनने हमारी धरोहर संस्कृति का सर्वनाश कर डाला। हमारी सभ्यता मिट्टी में मिल गई, आज उसी का परिणाम है कि गुरुजनों का समाज में कोई स्थान नही, न उन्हें राजाश्रय है, न सामान्य जनता का ही स्नेह सुलभ है।

शिक्षा प्रत्येक राष्ट्र का मेरुदण्ड है। अविद्यान्धकार में पड़ा व्यक्ति पशुवत् है—'विद्याविहीनाः पशुभिः समानाः' आखिर ये विद्या को देने वाले स्रोत कौन हैं ? जब किसी राष्ट्र में विद्या के देने वाले गुरु ही अनादर की दृष्टि से देखे जावेंगे, आर्थिक कष्टों से बोझिल होंगे व भाँति-भाँति की यातनायें सहते होंगे तब वह राष्ट्र कभी सबल व सशक्त नहीं हो सकता। देश की बुनियाद दुर्बल व अल्पकालिक ही हो सकेगी। यही दशा आज हमारे देश में व्याप्त है, मुख्य रूप से उत्तर-प्रदेश के शिक्षको की दशा कारुणिक व अवर्णनीय है। इन्हें जीवनयापन योग्य वेतन नही मिलता, समस्याओं की पूर्ति के लिए यथेष्ट धन इनके पास नही, ये कैसे शिक्षण कर पावेंगे। उत्तरप्रदेश के प्राथमिक, माध्यमिक तथा डिग्री स्तर के शिक्षकों की दशा अत्यन्त दयनीय व मर्मस्पर्शी है। यहाँ प्राथमिक शिक्षक को कुल ८०-९० रुपये, मिडिल स्कूल के शिक्षकों को ११०-११५ रु० मात्र प्रति मास मिलते हैं। बढ़ती हुई विषम महगाई ने इस तरफ सबको अपने चंगुल में जकड़ लिया है कि असह्य परेशानियों को मौन रूप से सहन करने वाला यह समुदाय आज इनके सम्मुख असहाय है, शिक्षक अपने घुटने टेक चुके हैं। अब आये उनका धैर्य जाता रहा है, उनकी परेशानियाँ दिनप्रतिदिन वृद्धि पर ही हैं, उनकी कठिनाईयों का अहसास किसी भी राजनीतिज्ञ, समाजसेवी अथवा सरकारी कर्मचारी को कदापि नही होता। शिक्षक का मौलिक दायित्व आज क्षीण हो रहा है। जिस राष्ट्र के सृजनात्मक वर्ग के अग्रदूत शिक्षक आन्दोलनोन्मुख हो वह राष्ट्र कभी उत्कर्ष पर नहीं जा सकता। इतना अल्पवेतन पाने वाला शिक्षक क्या कभी अपने दायित्व का सही निर्वाह कर सकता है ? गाँवों के शिक्षक अध्यापन को गोण तथा अपने कृषिकर्म को प्रधानता दे रहे हैं। इसी बात को लेकर उत्तरप्रदेश के वर्तमान राज्यपाल डा० बैजवाड़ा गोपाल रेड्डी इनकी माँगों को अनुचित बताते हैं। उन्हीं की बातों का अनुसरण कर केन्द्रीय गृहमंत्री श्री चह्वाण ने भी अनौचित्यपूर्ण बतलाया था।

सबसे पहली समस्या है लगभग ४५००० माध्यमिक शिक्षकों की जो शान्तिपूर्वक अपनी हर प्रत्येक इच्छाओं का शमन कर अति अल्प वेतन में ही अपना गुज़ारा करने को कृत संकल्प थे। आज वे व्यग्र व निराश हैं, समाज उन्हें उपेक्षापूर्ण दृष्टि, से देखता है, भला ऐसी स्थिति में कोई भी जन समुदाय शान्त रह पावेगा ? कदापि नहीं। गत नवम्बर, ६८ से ही अपनी बृहत्तर मांगों तथा औचित्य के समर्थन में वे उत्तेजित व आन्दोलनन्मुख हैं। राज्य सरकार उनकी मागों को दुराग्रहपूर्ण तरीके से ठुकरा रही है जो शुभ परम्परा का प्रतीक नहीं है। माध्यमिक शिक्षकों का दायित्व गुरुतर है, वे छात्रों को इस योग्य बनाते हैं कि वे डिग्री स्तर तक क्रमश: जा सकें व विद्योपार्जन कर सकें। ये शिक्षक इतने दुर्भाग्यशाली हैं कि सबके वेतनमानों में संशोधन हुआ परन्तु उन्हें वही वेतन मिलता है जो ब्रिटिश शासन काल में मिलता था अर्थात् हाई स्कूल कक्षाओं के ग्रेजुएट अध्यापक १२०) और इण्टरमीडिएट के शिक्षक १७५) प्रति मास। ग्रामीण अंचलों में कालेज प्रबन्धकों ने इसे अपना धंधा बना रखा है। वे हर तरीकों से शिक्षकों को पीड़ित कर उनके वेतनों में कटौती कर अपना निर्वाह करते हैं। कितने स्थानों पर तो बीस महीने से ऊपर भी वेतन नहीं मिलता। चुनावों में उनसे अपना प्रचार कार्य कराते हैं, घरों के कार्य कराते हैं। विवश शिक्षक सारे दुष्कृत्य करने को प्रेरित हो जाते हैं। ऐसी दुर्दशा आज शिक्षक समुदाय में व्याप्त है। आखिर यह अवमानना और उपेक्षा कब तक चलती रहेगी ? मागों के औचित्य से स्वयं केन्द्रीय शिक्षा मंत्री, राज्य के शिक्षामंत्री तथा स्वयं प्रधानमंत्री भी सहमत हैं परन्तु साधन हीनता का मिथ्या प्रपंच रचकर इन वस्तुओं का तिरस्कार किया जा रहा है जो मौलिक हितों के प्रतिकूल है। नौकरशाही, लाल फीताशाही और बर्बरता से प्रेरित उत्तरप्रदेश के अधिकारीगण इतने निर्दयी हैं कि निहत्थे शिक्षकों तथा छात्रों पर नैनी जेल में बर्बरतापूर्ण लाठी चार्ज किया, यह हेय घृणित व निन्दनीय है।

इतना ही नहीं डिग्रीस्तर के शिक्षकों की दशा तो बहुत ही विचित्र है। ब्रिटिश शासन काल में विश्वविद्यालय स्तर के शिक्षकों तथा डिग्री कालेजों के शिक्षकों का वेतनमान समान था। 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के सिद्धान्त पर यह न्यायोचित था, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वराज्य-शासन ने विश्वविद्यालय के शिक्षकों की स्वार्थपूर्ण भावना से प्रेरित होकर जमीन-आसमान का अन्तर वेतनमान में कर दिया। यह विडम्बना है कि एक ही कार्य को करने वाले शिक्षक विभिन्न निकायों में रहकर ऊँच-नीच के भेदभाव मे पड़कर पिसे जा रहे हैं। विश्वविद्यालय स्तर का नवनियुक्त लेक्चरर डिग्री कालेजों के विभागाध्यक्षो से अधिक वेतन पाता है, अन्ततः भी उनका वेतन बहुत ज्यादा है। उनकी सुविधाएँ, चिकित्सा, पुस्तकालय, आवास तथा आर्थिक सुलभ हैं परन्तु डिग्री कक्षाओ के शिक्षक सारी सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं। इन समस्याओं के अतिरिक्त प्रबन्धकारिणी समिति की मनमानी व दमनात्मक वृत्ति उन्हें प्रपीड़ित करती है। नाना समूहों से परेशान किये जाने के कारण यह वर्ग पर्याप्त कुण्ठित व निराश हो चला है। कोठारी आयोग की सिफारिशों का सही क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है। राज्य सरकार शिक्षा को महत्वहीन व शिक्षकों को सरकार पर आर्थिक बोझ समझकर इन्हें संतुष्ट अथवा सुख-चैन में रखने से कतराती है। जनता को इस बात की कोई परवाह नहीं। अभिभावक अपने बच्चों को शिक्षकों के हाथों देकर अपने कर्तव्य की इतिश्री मान बैठते हैं। बहुत थोड़े अभिभावक ही अपने नौनिहालों के उज्ज्वल भविष्य के प्रति सजग हैं। कुसंगति, राजनैतिक फुसलाहट, आवेग और सिनेमा आदि की ओर बलात् आकर्षण छात्रों को भ्रान्त करते हैं। सन्मार्ग का अनुसरण न कर छात्र गन्दी बातों को सीखते हैं, अपना कार्य पूरा करने में चित्त नहीं लगाते, बड़ों की आज्ञा का पालन नहीं करते, धर्म के प्रति निष्ठा व सहिष्णुता नहीं है। फिर वे अपने गुरुजनों का अनादर देख स्वयं उनके प्रति खिन्न व अन्यमनस्कतावश कुमार्ग अपनाते हैं।

शिक्षा को जब तक राष्ट्र का एक सृजनात्मक अंग नहीं माना जाता, निश्चय ही राष्ट्र का अपकर्ष समीप है। नक्सलवाडी प्रभाव, लालरक्षकवाद, साम्प्रदायिकता व शिक्षा को शिक्षेतर जनों द्वारा उद्योग का रूप देना देश की भावी पीढ़ी को दुर्बल बनाना है। कोई भी देश तभी प्रगति कर सकता है जब यह प्रबुद्ध नागरिकों व जाजवल्मान नौनिहालों का सत्यस्वरूप उत्पादन करें, इसके लिए गुरुजनों का समादर अपेक्षित है।

प्राचीन काल की गुरुकुलशिक्षा प्रणाली इस बात की साक्षी है कि उसकाल में निडर, विनयशील आज्ञाकारी व शौर्य वाले शिष्य ही गृहस्थ आश्रम में प्रवेश के अधिकारी होते थे। कृष्ण, भरत, आरुणि, एकलव्य सदृश अनेक शिष्यों के अनुकरणीय उदाहरण इतिहास में निहित हैं। आज भारत को भरत तुल्य बच्चे, प्रह्लाद, ध्रुव, व गणेश के समान अडिग सपूतों की अपेक्षा है। जब तक गुरुजनों को समाज में उच्चतम स्थान नहीं मिलता, यह कदापि सम्भव नहीं है कि प्राचीन भारत मे उत्पन्न बहादुर राष्ट्र-नायकों का सृजन हो सके। वर्तमान सरकार तथा आर्यसमाज के लिए यह स्वर्णिम अवसर है कि पुनः गुरुजनों के समादर का शंखनाद फूँककर जनमानस को उद्बोधित कर स ँ।

[योग्य लेखक महोदय से नम्र निवेदन है कि हम आपके भावों को उचित समझते हैं, तथापि एक प्रार्थना यह भी है कि आप अध्यापकों गुरुजनों के कर्तव्यों पर भी उचित प्रकाश डालने की कृपा करें। —सहसम्पादक]

आर्यसमाज कलकत्ता का ८३ वाँ वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज कलकत्ता १९, विधान सरणी का ८३ वाँ वार्षिक समारोह २५ दिसम्बर १९६८ से १ जनवरी १९६९ तक मुहम्मदअली पार्क में धूम-धाम से मनाया गया जिसमें उच्चकोटि के विद्वान्, महात्मा तथा भजनोपदेशक पधारे थे। ऋग्वेद से ८ दिनों तक यज्ञ, नगर कीर्तन तथा कई सम्मेलन भी बड़ी सफलता से सम्पन्न हुए, जिनमें वेद, गोरक्षा, श्रद्धानन्द बलिदान-दिवस, राष्ट्ररक्षा आदि से सम्बन्धित प्रस्ताव पारित हुए।

—छबीलदास सैनी मन्त्री

गो-रक्षा

(श्री कुशलदेव 'शास्त्री' "विद्याभास्कर")

गऊ माता ने अपने हित मे, अञ्चल जहाँ पसारा हो।
तो सहर्ष उसकी झोली मे, पहिला शीष हमारा हो॥

यह किसी से छिपा हुआ नही कि आर्यावर्त कभी ससार का सिरमौर था। यह अटक से कटक एव कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक विस्तृत विशाल देश बडा ही शक्तिशाली व धन वैभव से परिपूरित, सत्शिक्षाओ से विभूषित एव प्रकृति की छटाओ से आलोडित था। परन्तु क्यो आज सोने की चिडिया तथा पारसमणि के नाम से सम्बोधित किये जाने वाले देश मे सुख और शान्ति का नाम नहीं ? क्यो आज भारत विदेशो के समक्ष दाने दाने के लिए झोली फैलाता हुआ शर्माता नही ? कहाँ है दूध घी की नदियाँ ? आज शस्यश्यामला भारतभूमि बञ्जर क्यो ? आज सबके पेट भरने वाले के जिगर मे जलन क्यो ? आज बच्चो के आखो में छलछलाते आँसू क्यो ? देश दरिद्र क्यो ? इसमे जहाँ अन्य अनेक कारण हैं वहाँ गो-रक्षा न करना भी एक प्रमुख कारण है ? गौ वन्दनीया है। गोमाता वास्तव मे गुणो की खान है। गौ-दुग्ध पौष्टिक भोजन ही नही अपितु अनेक प्रकार के रोगो को दूर करने की एक अचूक महौषधि है। जहाँ गोमाता का दुग्ध अमृत है वहाँ गोमूत्र भी अमृतवत् प्राणिमात्र का हित करता है। यह एक अटल सब प्रकाण्ड विद्वानो द्वारा सम्मानित सिद्धान्त है।

ऋषि दयानन्द का वचन है कि "गौ आदि पशुओ के नाश से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है।" इस तथ्य को राजनीतिज्ञ योगेश्वर श्रीकृष्ण अच्छी तरह जानते व समझते थे, इसी कारण उन्होने गोसेवा अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिभाव से की थी और उनकी सदा एक ही अभिलाषा रहती—"गावो मेऽग्रत सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठत । गावो मे सर्वत सन्तु गवा मध्ये वसाम्यहम्" ॥ (महाभारत)

वेद मे गौ को 'माता रुद्राणा दुहिता वसूनाम्' कह कर माँ, बेटी व बहन के समान माना है। गाय की उपयोगिता को देखते हुए महर्षि च्यवन ने सम्राट् नहुष से कहा था—"गोभिस्तुल्य न पश्यामि धन किञ्चिदिहाच्युत" अर्थात् हे राजन् ! मैं गाय के समान इस भूमण्डल पर कोई दूसरा धन नही देखता। तथा भीष्म पितामह ने भी श्री युधिष्ठिर से ये शब्द कहे थे कि—

"पयसा हविषा दध्ना शकृता चाथ कर्मणा।
अस्थिभिश्चोप कुर्वन्ति शृङ्गै बालैश्च भारत॥"

अर्थात्—हे धर्मराज युधिष्ठिर ! जहाँ गायें अपने जीवन काल में दूध, दही, घी और तक्र से हमारा पालन व पोषण करती हैं वहाँ मरने के उपरान्त भी अपने चमडे, हड्डी, सीग तथा बालों से हमारा उपकार करती है। गाय भारतीय सम्पत्ति है। गाय हमारी सर्वस्व है। अब देश मे गायें थीं हर खेत को पानी व हर पेट को रोटी थी। प्रिय पाठको ! वेद में गौ को—"गावो विश्वस्य मातर" कह कर सारे ससार की माँ बतलाया है। परन्तु स्व० मैथिलीशरण के शब्दो मे विवश हो रम्भाती हुई कहती है—

हाँ दूध पीकर भी हमारा पुष्ट होते हो नहीं,
दधि घृत तथा तक्रादि से भी तुष्ट होते हो नहीं।
तुम खून पीना चाहते हो तो यथेष्ट वही सही,
नर योनि हो, तुम धन्य हो तुम जो करो थोडा वही।

जिस गोमाता के लिये राजा दिलीप ने अपने प्राणो को न्यौछावर कर दिया। योगेश्वर श्रीकृष्ण गोपाल कहलाये। जिस गोमाता की प्राण रक्षा के लिये शिवाजी ने म्यान से करवाल निकाल कर गोहत्यारे का सिर धड से अलग कर दिया। मगल पाडे व हरफूल ने हँसते-हँसते फाँसी के फन्दे को चूमा। यदि गौ की रक्षा नही की तो हमारे पूर्वजो तथा देश का नाम धूल-धूसरित हो जायेगा।

मान्य पाठको ! इसमे कोई सन्देह नही, कि गोवश का ह्रास भारत में अनेक प्रकार के व्याधियो का कारण बना हुआ है। एक समय था जब गाँधी जी ने कहा था—"गाय की हत्या मेरी हत्या है", तथा तिलक ने कहा था—"स्वराज्य प्राप्त करने के पाँच मिनट बाद ही गोवध-बन्दी कानून पास कर देंगे। परन्तु आज सरकार गाँधी और तिलक के सिद्धान्तो को ठुकरा रही है। जिस देश मे गोधन ही मुख्य वस्तु है और वहाँ उसी का कतल हो यह बडी खेद व शर्म की बात है। सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद मे गौ की महत्ता को बतलाते हुए कहा है—"गोस्तु मात्र न विद्यते" अर्थात् गौ की समानता कोई नही कर सकता। गाय तपस्वियो के आश्रम की सम्पत्ति है। गो-दूध बालको के लिये जीवन, युवको के लिये ओज, वृद्धो के लिये शक्ति व बीमारो के लिये औषधि है तथा सारे परिवार के पालन करने की आधार शिला है। गो-दान महादान है। विवाह भी गो-दान के बिना अधूरा है। गो रक्षा ही सच्चे अर्थों मे राष्ट्र रक्षा है।

सरकार के आश्वासन पर हमने "गो-रक्षा आन्दोलन" बन्द कर दिया, जितना उन्होने समय माँगा उतना समय भी दे दिया। पर सरकार अब तक टस से मस नही हुई। इस समय राष्ट्र हित इसी मे है कि जनता की भावना का आदर करते हुए गो-हत्या बन्द कर दे। गो-माता के नाम पर सभी सम्प्रदाय एक हो चुके हैं। बौद्ध अन्य नहीं जैन दूसरे नही, आर्यसमाजी पराये नही, कबीर पन्थियो की काथी तीनों लोको से न्यारी नहीं, ग्रन्थ साहब के उपासक अलग नही, कोई वल्लभ तथा रामानुज सम्प्रदायी अलग नही। आज सब एक हैं।

गणतंत्र-दिवस

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय)

गणतत्र दिवस मगल आया-गणतंत्र दिवस मगल आया।
दयानन्द की त्याग-भावना को यह बतलाने आया,
वेद ज्ञान के उस महत्व को फिर से समझाने आया।
वैदिक-धर्म पताका दुनियां मे फिर फहराने आया,
दुनियां को फिर एक ध्वजा के नीचे यह लाने आया॥
आज हमारे सम्मुख फिर से ऋषिवर का यह फल आया,
गणतत्र दिवस मगल आया-गणतत्र दिवस मगल आया।
भारत के निर्धन हिन्दू सब बने जा रहे ईसाई,
है विदेश की शैली अब सब यहाँ जा रही अपनाई।
वैदिक-धर्म पतन को उन्मुख हो उन्नत किसके द्वारा?
दयानन्द के जाते ही अब मन्द पडा प्रचार सारा।
उसको आज बढाने के हित, एक यही सम्बल आया,
गणतत्र दिवस मगल आया-गणतत्र दिवस मगल आया।

प्रश्न–उत्तर

(प्रश्न १)—क्या परमेश परमात्मा ने सम्पूर्ण ज्ञान (विद्या) चारो वेदो के भीतर ही देकर सीमित कर दिया या चारो वेदो को छोडकर इसके बाहर भी और दिया है।

(प्रश्न २)—आयुर्वेद मे पशु-पक्षी आदि का मास अण्डा-मछली खाने का भी विधान है। मनुस्मृति मे भी इनके खाने की आज्ञा लिखी है। आयुर्वेद (वैदिक चिकित्सा विज्ञान या शास्त्र) के भीतर कौन-कौन से ग्रन्थ मान्य व प्रामाणिक (सत्य) हैं। कौन-कौन नही। क्या मनुस्मृति, आयुर्वेद वैदिक चिकित्सा-शास्त्र मे रोगी मनुष्य के लिये पशु-पक्षी मछली आदि का मास व अण्डा खिलाना उचित लिखा है अथवा नहीं ?

—श्री अभिलाषसिंह आर्य, पचौमी (बाँस बरेली)

(उत्तर १)—प्रत्येक सृष्टि की रचना विशेष के आरम्भ=कल्प के आदि मे ही जीवो को उन-उन के कर्मों के अनुसार सुखदु खरूप फल को भुगाने, लौकिकचरमोत्कर्ष=अभ्युदय=चक्रवर्तिराज्य की प्राप्ति तथा मुक्ति काल मे परमानन्द की उपलब्धि के लिये परमेश्वर चारो वेदो का ज्ञान (एक-एक ऋषि के द्वारा एक-एक वेद को उन ऋषियो के हृदयो मे) दे देता है। मनुष्य का परम प्रयोजन यही है जो ऊपर लिख दिया है। इस प्रयोजन के लिये ही चारो वेदो का ज्ञान है। चारो वेदो से बाहर मनुष्य के लिये कुछ ज्ञान नही है, जिसकी उसको आवश्यकता होवे।

(उत्तर २)—चारो वेद ही स्वत प्रमाण हैं। वेद का प्रमाण किसी दूसरे प्रमाण की अपेक्षा नहीं रखता। वेदो के अतिरिक्त ऋषि मुनियो द्वारा रचे गये सब ग्रन्थ परत प्रमाण कोटि मे हैं। उनमे भी वेद की अनुकूलता होने से उनको परत प्रमाण माना जा सकता है। यदि वेदो से प्रतिकूल उन ग्रन्थों मे कोई बात होवे, तो उसको परत प्रमाण भी नहीं माना जा सकता। वेदो मे किसी भी प्रकार के मास का किसी भी अवस्था मे खाने का विधान नही है, अत यदि किसी मानवीय ग्रन्थ मे मास का खाना लिखा है, तो वह ग्रन्थ प्रमाण नही माना जा सकता। चाहे वह ग्रन्थ मनुस्मृति हो चाहे आयुर्वेद का कोई ग्रन्थ विशेष हो। मानवग्रन्थो मे मास-भक्षण के पक्षपाती लोगो ने ऋषि-मुनियो के बनाये हुए ग्रन्थो मे मास-भक्षण का विधान करने वाले वचन मिला दिये हैं। वे वचन प्रक्षिप्त हैं, वेद विरुद्ध हैं, इसलिये त्याज्य हैं। आयुर्वेद मे चरक और सुश्रुत सहिताए ही परत प्रमाण कोटि में आती हैं, परन्तु मासभक्षण को बतलाने वाली बात ऊपर बताये गये नियम के अनुसार उन में भी त्याज्य हैं। यही अवस्था मनुस्मृति के भी प्रक्षिप्त श्लोको की समझनी चाहिये।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

सरकारी काम-काज-हिन्दी में

(श्री महेशचन्द्र गुप्त-प्रबन्धमन्त्री, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद)।

कुछ लोगो को यह भ्रम रहा है कि यदि केन्द्रीय सरकार के दफ्तरो मे सरकारी कामकाज हिन्दी मे किया जाएगा तो यह नियमो का उल्लंघन होगा। यह भी धारणा फैली हुई है कि सरकार नही चाहती कि सरकारी कामकाज हिन्दी मे किया जाए। इस धारणा के पीछे यह भावना हो सकती है कि सरकारी कामकाज की भाषा वर्षों से अग्रजी रही है और आगे भी अग्रजी मे ही कामकाज किया जाता है। पर यह धारणा ठीक नही है। सविधान के निर्देशो के अनुसार स्वय कार्य करना तथा वैसा करने के लिए दूसरो को प्रोत्साहन देना सरकारी कमचारियो तथा अधिकारियो का कर्तव्य है।

सविधान के अनुच्छेद ३४३ के अनुसार २६ जनवरी १९६५ से हिन्दी भारत सघ की राजभाषा हो चुकी है इसलिए केन्द्रीय कार्यालयो मे हिन्दी मे काय करना गैरकानूनी नही है। हिन्दी का प्रयोग सरकार की इच्छा के विपरीत या सेवा नियमो के विपरीत भी नही है इसका स्पष्टीकरण भारत सरकार के विभिन्न आदशो मे किया जा चुका है।

पिछले अनेक वर्षों से दफ्तरो म काम करन वाले लोग अग्रजी मे काम करने के आदी रहे हैं। कुछ लोगो की आयु भी लगभग ५० वष हो गई है और व हिन्दी नही जानते हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अभी हिन्दी का काम चलाऊ ज्ञान नही प्राप्त कर सके हैं। इस सबको दृष्टिगत रखकर अग्रजी मे भी दफ्तर का काम करने की छूट दी गई है। पर यह तभी तक है जब तक कमचारी हिन्दी का कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त नही कर लेते हैं। इस सुविधा का यह अर्थ लगाना कि अनन्त काल तक केन्द्रीय सरकारी काम काज मे अग्रजी जारी रहेगी और सरकार भी चाहती है कि कमचारी केवल अग्रजी मे ही काम करें उचित न होगा।

हिन्दी मे सरकारी कामकाज करना अग्रजी की अपेक्षा कही सरल है। जिन्हे अब तक अग्रजी मे काम करने का अभ्यास रहा है वे कमचारी यदि हिन्दी म काम करना शुरू कर द तो हो सकता है कुछ थोडे समय के लिए उन्हे कुछ कठिनाई का अनुभव हो परन्तु बाद मे उन्हे भी सफलता मालूम होगी। जो कमचारी हिन्दी कम जानते हैं उन्हे भी थोडा थोडा काम हिन्दी म शुरू करना लाभदायक होगा। कुछ समय बाद व अधिक काम हिन्दी म कर सकेंगे। उनके लिए शब्द कोषो का आश्रय लेने की आवश्यकता नही है। सीधी सरल भाषा का प्रयोग किया जाए। अग्रजी के जो शब्द आज बहुत प्रचलित है और सामान्य उपयोग मे आ रहे हैं उनके हिन्दी पर्याय खोजने की आवश्यकता नही है उन्ही शब्दो का देवनागरी लिपि म या अग्रजी मे ही लिख कर काम चलाया जा सकता है। वास्तव मे अनेक सरकारी कमचारी अब वैसा कर भी रहे हैं।

भारत सरकार गृह मत्रालय ने अपने ६ जुलाई १९५८ के अनुदेशो के अनुसार भी स्पष्ट कर दिया है कि फाइलो पर हिन्दी मे टिप्पणिया लिखने वाले व पत्रो के उत्तरो के प्रारूप हिन्दी मे तैयार करने वाले कमचारियो को उनका अग्रजी अनुवाद देने के लिए नही कहा जा सकेगा। यदि कही अनुवाद की आवश्यकता पडेगी तो उसकी जिम्मेदारी कार्यालय पर होगी। अनेक कार्यों जैसे टेण्डरो करारो (एग्रीमेण्टस) नोटिसो प्रशासनिक तथा अन्य रिपोर्टों लाइसेंसो परमिटो प्रेस विज्ञप्तियो आदि मे हिन्दी का प्रयोग अनिवाय किया गया है।

इस नई स्थिति की जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद अब अनेक सरकारी कमचारियो ने अपने दफ्तरो मे हिन्दी काम करना शुरू कर दिया है। अधिकारी भी जिन्हे सरकार के इन अनुदेशो की जानकारी मिल गई है अपने कमचारियो को हिन्दी मे काम करने की दिशा मे प्रोत्साहित कर रहे हैं। जहाँ अधिकारियो तथा कर्मचारियो को इस स्थिति की जानकारी अब तक नही थी वहाँ भी उन्हे जानकारी मिलने पर काफी लोग हिन्दी मे काम करने के लिए तैयार हो रहे हैं। हो सकता है कि अभी भी कुछ ऐसे कार्यालय हो जहाँ अभी तक इन नए अनुदेशो की जानकारी न पहुँची हो। ऐसे कार्यालय अपने प्रधान कार्यालय से सरकारी नीति की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस बारे मे केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् एक्स० वाई० ६८ सरोजिनी नगर नई दिल्ली २३ से भी सम्पर्क किया जा सकता है। काम काज हिन्दी मे सुगमतापूवक कर सकने मे सहायता देने के लिए अब बहुत से प्रकाशन भी उपलब्ध हैं। परिषद् ने भी कई उपयोगी प्रकाशन विविध कायालयो के लिए निकाले हैं। इन प्रकाशनो मे विभिन्न विभागो मे बहुधा लिखे जाने वाली टिप्पणिया और प्रारूपो के नमूने हिन्दी रूपान्तर के साथ दिए गए हैं। परिषद् अपने अधिकाश प्रकाशन को कार्यालयो की माग पर उन्हे नि शुल्क भेजती रही है उनसे प्रेरणा लेकर भारत सरकार के अनेक कार्यालयो मे हिन्दी मे काम होना प्रारम्भ हुआ है।

भारत सरकार ने हिन्दी की विभिन्न परीक्षाएँ पास करने वाले कमचारियो तथा हिन्दी टाइपिंग और आशुलिपि सीखने वालो का वेतन वृद्धि देकर प्रोत्साहित किया है। जो व्यक्ति सरकारी काम काज का हिन्दी मे करने लगे हैं उन्हे प्रोत्साहन देने की एक योजना केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद द्वारा भी बनाई गई है। दो महीने की अवधि के बीच एक हिन्दी व्यवहार प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। जो सरकारी कमचारी इस अवधि म कार्यालय का काम हिन्दी मे करेंगे उन्हे हिन्दी मे लिखे गए प्रत्येक १० शब्दो के पीछे एक अक दिए जाएगे। इस प्रकार दो महीनो मे हिन्दी म किए गए कामो के अक जोडे जाएगे। प्रतियोगिता मे भाग लेने का कोई शुल्क नही रखा गया है।

अनेक पुरस्कारो व प्रशस्ति पत्रो आदि के माध्यम से कमचारियो को प्रोत्साहन देने की व्यवस्था की गई है।

अब हिन्दी के नए कुजीपटल के टाइपराइटर भारी सख्या मे बन रहे हैं। उनकी कोई कमी नही है। पुराने कुजीपटल के हिन्दी टाइपराइटरो को या अग्रजी के टाइपराइटरो को भी कुजीपटल हिन्दी के नए कुजीपटल म बदले जा सकते हैं। पहले भी अनेक कार्यालयो मे हिन्दी टाइपराइटर रहे हैं अब अन्य कार्यालयो म भी हिन्दी टाइपराइटर मगाए जा रहे हैं। सभी कार्यालयो मे हिन्दी टाइपराइटर मगाने के लिये आवश्यक आदेश जारी किए गए है।

अग्रजी टाइपिस्टो तथा आशुलिपिको को हिन्दी टाइपिंग व आशुलिपि सिखाने के कई केन्द्र भारत सरकार द्वारा खोले गए हैं। जहा पर हिन्दी टाइपिंग व आशुलिपि प्रशिक्षण के केन्द्र भारत सरकार की ओर से नही खुले है वहा उन केन्द्रीय कमचारियो को जो अपने प्रयत्न से हिन्दी टाइपिंग व आशुलिपि सीखेंगे विशेष पुरस्कार व वेतन वृद्धि आदि देने की सुविधाएँ प्रदान की गई है।

सभी सरकारी फार्मो को द्विभाषी रूप (हिन्दी अग्रजी) म छापन का निश्चय किया जा चुका है। अब कोई भी फाम केवल अग्रजी म न छापा जा सकेगा। इसी प्रकार विभिन्न विभागो की मैनुअलो कोडस तथा नियमो आदि के हिन्दी अनुवाद का काय सरकारी स्तर पर तेजी से हो रहा है। प्रशासनिक शब्दो के हिन्दी पर्याय भी तैयार हो चुके है इन शब्दावलियो की पुस्तक विभिन्न विभागो के प्रधान कार्यालयो से अथवा वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग शिक्षा मन्त्रालय रामकृष्णपुरम् नई दिल्ली म प्राप्य हैं केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद ने शब्दावलियो के चार्ट भी प्रकाशित किए है। गृह मन्त्रालय के परामर्श से विभिन्न मन्त्रालयो तथा उनके कार्यालयो ने इन चार्टो को मगाकर अपने कमरो म लगाया है। और उनसे कमचारियो को हिन्दी मे काम करने म काफी सहायता मिलने लगी है।

सरकारी कमचारी राष्ट्रिय भावना म किसी भी भारतीय नागरिक से कम नही है। आत्मविश्वास की कमी अथवा शब्दावली हिन्दी टाइपराइटरो आदि की सुविधा के अभाव मे जहा अब तक काम नही हो पाया था, आशा है वहा अब स्थिति बदलेगी और कमचारीगण स्वेच्छापूवक हिन्दी म काम करने के लिए प्रेरित होगे। यदि एक बार सभी जगह थोडा थोडा काम भी हिन्दी मे होना आरम्भ हो जाए तो उससे वातावरण काफी बदलेगा और यह शीघ्र सिद्ध हो जाएगा कि प्रशासनिक काम हिन्दी मे बडी खूबी से हो सकता है और हिन्दी का प्रयोग करके कार्यालयो की कुशलता बढेगी ही किसी प्रकार कम न होगी।

[केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के अधिकारियो से निवेदन है कि आवश्यक जानकारी दोनक पुस्तिकाए एव चार्ट समाचार पत्रो के सम्पादको को नि शुल्क भेज देवे तथा आगे भिजवाते रहें। इसम हिन्दी के काय और उत्थान म सहयोग मिल सकेगा।]—स० सम्पादक

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली द्वारा ऋषिमेले का आयोजन

दिल्ली राज्य की आय केन्द्रीयसभा के तत्वावधान मे गतवर्षो की भाति इस वर्ष भी आयसमाज के प्रवतक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का बोधोत्सव ऋषि मेल के रूप मे दिल्ली दरवाजे के बाहर फीरोजशाह कोटला के मैदान मे शनिवार १५ फरवरी १९६९ को प्रात ८ वजे से सायकाल ५ बजे तक बडे उत्साहपूर्वक मनाया जायगा। दिल्ली के सारे आयसमाज आयस्त्रीसमाज आय वीरदल आयसस्थाएँ एव आय स्कूल इस समारोह के लिए अपनी अपनी तैयारी कर रहे है। ऋषिमेले मे आयसमाजो के खेल रस्साकशी आदि एव स्कूलो के छात्र छात्राओ के खेल होगे। महर्षि के जीवन पर भाषण प्रतियोगिता एव निबध प्रतियोगिता भी होगी। मध्याह्नोत्तर २ बजे से ५ बजे तक विशाल सभा होगी जिसमे देश भर के बडे-बडे नेता विद्वान् सन्यासी भारत सरकार के मन्त्री इत्यादि महर्षि के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पण करगे। —रामनाथ सहगल प्रधान मन्त्री।

जिन ग्राहक महानुभावों का शुल्क समाप्त हो चुका है वे अपने वार्षिक शुल्क १०) शीघ्र भेजने की कृपा करें। —व्यवस्थापक

गुरुकुल मटिण्डू [रोहतक] में शोक सभा

१९ जनवरी ६९ को गुरुकुल मटिण्डू (रोहतक) के उपप्रधान चौ० महासुख जी के स्वर्गवास हो जाने पर शोक सभा हुई। इसमे गुरुकुल के अधिकारी, सदस्य, प्रेमी, सहयोगी और बड़ी सख्या म आस पास के आर्य सज्जन एकत्र हुये। प० कपिलदेव जी शास्त्री प० विष्णुमित्र जी शास्त्री चौ० माडूसिह एम० एल० ए०, चौ० रणबीरसिंह एम०एल०ए० महाशय भरतसिह उपमन्त्री आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब, श्री बाबासाहिब दिल्ली शिक्षा विभाग अधिकारी श्री बनवारीलाल आर्य उपाध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल नम्बरदार गिरधारीलाल आदि महानुभावों ने स्वर्गीय चौ० महासुख के प्रति श्रद्धाञ्जलि प्रकट की तथा गुरुकुल के कार्य को आगे बढ़ाते रहने की प्रेरणा की। शोकसभा के अध्यक्ष श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती के विचार प्रकाशन के साथ गुरुकुल के आचार्य प० मनुदेव जी शास्त्री ने आगत सज्जनों के प्रति आभार प्रकट किया। सबने गुरुकुल के प्रधान डिपुटी चौ० शेरसिंह जी को सहयोग के लिये विश्वास दिलाया। —निज सवाददाता

"आर्यमर्यादा के लिये शुभ कामना

आर्य मर्यादा" साप्ताहिक का साहित्यक एवम् सैद्धान्तिक स्तर सराहनीय है। अपने शैशव मे सिद्धान्तो का प्रसार करते हुए यह पत्र फले फूले यही कामना है। वैदिक धर्म के मतवालो से मेरी एक मांग है कि अपने जीवन का उत्सर्ग करके भी इस विनाशकारी लीला को समाप्त करावें अन्यथा आर्यसमाज ही समाप्त हो जायेगा। वेद के अनुयायियो ! वैदिक सस्कृति रूपी माता तुम्हारे से रक्षा की मांग कर रही है आओ आगे बढ़ कर मा को इस सकट से बचालो मा तुम्हारी रक्षा करेगी। यदि तुमने मा का क्रन्दन नही सुना तो किसी न किसी प्रकार मा तो बच ही जायगी पर तुम अवश्य नष्ट हो जाओगे। समय रहते जागना ही बुद्धिमत्ता है। ओ राष्ट्र के प्रहरियो जाग जाओ।

स्वामी आत्मानन्द तीर्थ आचार्य आर्ष योग विद्यापीठ सरधना (मेरठ)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज दिल्ली-६ मे मुद्रित और १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

वर्ष १ } १३ माघ वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार २ फरवरी १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रुपये
अंक १० } सृष्टि स०-१९६०८५३०६८ { विदेश में—२० रुपये
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमंत्रार्थ-प्रवचन

मनुष्यैः परमेश्वरात् किं किं याचनीयमित्युपदिश्यते ।

मनुष्यो को परमेश्वर से क्या क्या मांगना चाहिये सो अगले मन्त्र मे प्रकाश किया है ।

एहि स्तोमाँ अभि स्वराभि गृणीह्यारुव ।

ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय ॥—ऋग्वेद १ । १० । ४

पदार्थ —(आ इहि) आगच्छ (स्तोमान्) स्तुतिसमूहान् (अभि) धात्वर्थे (स्वर) जानीहि प्राप्नुहि (अभि) अभिमुख्ये (गृणीहि) उपदिश (आ) समन्तात् (रुव) शब्दविद्या प्रकाशय (ब्रह्म) वेद विद्याम (च) समुच्चये (न) अस्मान् अस्माकम वा (वसो) वसन्ति सर्वाणि भूतानि यस्मिन् वा वसति सर्वेषु भूतेषु यस्तत्सम्बुद्धौ (सचा) ज्ञानेन सत्कर्मसु समवायेन वा (इन्द्र) स्तोतुमर्ह दात (यज्ञम) क्रियाकौशलम (च) पुनरर्थे (वर्धय) उत्कृष्ट सम्पादय ।

अन्वय —हे इन्द्र जगदीश्वर ! यथा कश्चित् सर्वविद्याऽभिज्ञो विद्वान् स्तोमान भिस्वरति यथावद्विज्ञान गृणात्यारौति तथैव नोऽस्मानेहि । हे वसो कृपयैवमेत्य-नोऽस्माक स्तोमान् वेदस्तुतिसमूहार्थान् सचाभिस्वर ब्रह्मवेदार्थानभिगृणीहि यज्ञ च वर्धय ।

भावार्थ —अत्र लुप्तोपमालङ्कार । ये सत्येन वेदविद्यायोगेन परमेश्वर स्तुवन्ति प्रार्थयन्त्युपासते तेभ्य ईश्वरोऽन्तर्यामितया मन्त्राणामर्थान् यथावत्प्रकाशमित्वा सतत् सुख प्रकाशयति । उतो नैव तेषु कदाचिद्विद्यापुरुषार्थौ ह्रसत ।

भाषार्थ —हे (इन्द्र) स्तुति करने योग्य परमेश्वर ! जैसे कोई सब विद्याओ से परिपूर्ण विद्वान् (स्तोमान्) आप की स्तुतियो के अर्थों को (अभिस्वर) यथावत् स्वीकार करता कराता वा गाता है, वैसे ही (न) हम लोगो को प्राप्त कीजिये । तथा हे (वसो) सब प्राणियो को बसाने वा उन मे बसने वाले ! कृपा से इस प्रकार प्राप्त हो के (न) हम लोगो के (स्तोमान्) वेद स्तुति के अर्थों को (सच) विज्ञान और उत्तम कर्मों का सयोग कराके (अभि स्वर) अच्छी प्रकार उपदेश कीजिये । (ब्रह्म च) और वेदार्थ को (अभिगृणीहि) प्रकाशित कीजिये । (यज्ञ च) हमारे लिये होम ज्ञान और शिल्पविद्यारूप क्रियाओ को (वर्ध च) नित्य बढाइये ।

भावार्थ—इस मन्त्र मे लुप्तोपमालङ्कार है । जो पुरुष वेदविद्या वा सत्य के सयोग से परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना करते हैं, उनके हृदय मे ईश्वर अन्तर्यामी रूप से वेद मन्त्रो के अर्थों को यथावत् प्रकाश करके निरन्तर उनके लिये सुख का प्रकाश करता है इस से उन पुरुषो मे विद्या और पुरुषार्थ कभी नष्ट नही होते ।

—(ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य से)

ग्राहक महानुभावों को पुनः हर्ष सूचना

जैसा कि सब सज्जनो की सेवा मे सूचित किया जा चुका है कि शिवरात्रि के समय "आर्यमर्यादा" का विशेषांक 'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश" [सत्यार्थप्रकाश का अन्तिम भाग] पुस्तक रूप में प्रकाशित होगा । अब यह निश्चय किया गया है कि स्वमन्तव्यामन्तव्य के साथ ही ऋषि दयानन्द कृत 'आर्योद्देश्य रत्नमाला' और आर्यसमाज के नियम भी प्रकाशित किये जावेंगे । इन पर जहां-तहां आवश्यक टिप्पणियां भी दी जायेंगी । पुराने ग्राहको को सामान्य अकों की भाँति ही यह विशेषांक भी मिलेगा । जो सज्जन नये ग्राहक के रूप मे १०) रु० ग्राहक शुल्क भेज देंगे जो कि ५ फरवरी ६९ तक आर्यमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान् रोड मे पहुच जावेगा, उनको भी पुराने ग्राहको के समान ही यह विशेषांक मिल जावेगा । धन प्रत्येक अवस्था मे मनीआर्डर द्वारा अग्रिम मिलना आवश्यक है । चेक स्वीकार नही किये जावेगे जो सज्जन १०० प्रतिया मगायेगे उनका २५ पैसे एक प्रति के, जो ५० प्रतियां मगवायेंगे, उनसे ३० पैसे एक प्रति और जो २५ प्रतिया मगवायेगे, उनसे ३५ पैसे एक प्रति के हिसाब से दाम लिये जायेंगे, जिन के दाम ५ फरवरी तक कार्यालय मे पहुँच जावेगे उन्हीं सज्जनो को रेल पार्सल द्वारा उनकी माग के अनुसार बिल्टी करवाकर तुरन्त डाक से बिल्टी भेज दी जावेगी । रेलवे बिल्टी का किराया मात्र देकर वे सज्जन पार्सल छुडा लेवें । कृपया अपने डाक घर, जिला तथा निकट रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें । यह निश्चय है कि अग्रिम मूल्य पहुँचे बिना उनकी केवल माग पर विशेषांक की मांगी गई प्रतिया नही भेजी जावेंगी । अलग केवल एक प्रति लेने वालो मे ४० पैसे एक प्रति के लिये जावेगे माग के अनुसार ही प्रतिया निश्चित सख्या मे छापी जावेगी । अधिक नही । बाद मे माग करने वालो का आदेश पूरा न हो सकेगा । ऋषि दयानन्द के मन्तव्यो को समझने और लेख रूप मे पास मे रखने का यह सस्ता अवसर है ।

केदारसिह आर्य, व्यवस्थापक आर्यमर्यादा
कार्यालय १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली

चत्वारि शृङ्गा·····मन्त्र का रहस्य

(श्री डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम ए साहित्यालंकार विद्यावाचस्पति कानपुर)

[गतांक से आगे]

भावार्थ चत्वारि शृङ्गा इस मन्त्र मे रूपकालंकार द्वारा की गई यज्ञस्तुति अनुष्ठान समय मे उत्साह बढाती है। होत्रकाण्ड मे विषुवान् यज्ञ मे होता के आज्य स्तोत्र में इसका विनियोग किया गया है। अग्नि देवताक है और विषुवान् के आदित्य देवताक होने से आदित्य रूप से अग्नि स्तुति का वर्णन है—(चत्वारि शृङ्गा) दिन के चार पहर (त्रयो अस्य पादा) शीत उष्ण और वर्षाकाल (द्वे शीर्षे) दो अयन= दक्षिणायन और उत्तरायण (सप्त हस्तास) सूर्य के सात अश्व=किरण (त्रिधाबद्ध) तीन सवन प्रात सवन माध्यन्दिन सवन और तृतीय साय सवन (वृषभ) वृष्टिकारक (रोरवीति) बादल के द्वारा गर्जना करता है। (महोदेव) सकल संसार मे प्रसिद्ध महान् देव (मर्त्यान् आविवेश उत्साहकरण रूप उपकार के द्वारा सबके हृदय मे प्रवेश करता है।

(छ) यजुर्वेद भाष्यकार श्री उव्वटाचार्य इस मन्त्र की व्याख्या अ० १७ म ९१ के भाष्य म इस प्रकार करते हैं—

यस्यास्य चत्वारि शृङ्गाणि। ब्रह्मोद्गातृहोत्रध्वर्य्वाख्यानि यस्य चास्य त्रय पादा ऋग्यजु सामलक्षण। यस्य चास्य द्वे शीर्षे हविर्धानप्रवर्ग्याख्ये। यस्य चास्य सप्त हस्ता सप्त होतारो हस्ता इव व्याप्रियन्ते। यद्वा सप्तच्छन्दांसि हस्ता इव। यश्च त्रिधात्रिप्रकार सबद्ध प्रात सवनमाध्यन्दिनतृतीयसवनै। वृषभो वर्षिता। रोरवीति म ग्ले अ य र श द करो न सोऽय महोदेव महोदेवो महादेव हिरण्य गर्भसंज्ञ य नाना प्राणिन पुरु प्य। ज्ञानकर्म समुच्चयकारिणा शरीरभून। मर्त्यान् मनुष्यान् आविशति। श ग्र मोवा भ य। चत्वारि शृङ्गाणि नामाख्यातोपसर्ग निपाता त्रयोऽस्य पादा प्रथमपुरुषमध्यमपुरुषोत्तमपुरुषा। द्वे शीर्षे नामाख्याते। सप्त हस्ता सप्त विभक्तय। त्रिधा बद्ध एकवचन द्विवचनबहुवचनै। वृषभ इवामर्षा द न नि शास्त्राण्यवस्पर्शक य रोरवीति। त उक्तगुण सोऽयम्महादेवोमर्त्यान् आविशति प्रतिपादयति॥ ८

अर्थात्— (चत्वारि शृङ्ग ब्रह्मा उद्गाता होता और अध्वर्यु (त्रयो अस्य पादा ऋग्यजुस्साम) तीन इसके पाद ऋग यजु और साम (द्वे शीर्षे) हविर्धान और प्रवर्ग्य (सप्त हस्तास) सात ऋत्विज अथवा सात छन्द (त्रिधा बद्धा प्रातस्सवन माध्यन्दिन सवन और तृतीय सवन (वृषभ) वर्षिता रोरवीति बहुत शब्द करता है (महोदेव) हिरण्यगर्भ मे जिनके पर्यन्त का जीवनाधार ज्ञान कर्म समुच्चयकारियो का शरीर (मर्त्यान् आविवेश) मनुष्यो मे प्रविष्ट होता है।

अथवा चत्वारि शृङ्गा) नाम आख्यात उपसर्ग और निपात (त्रयो अस्य पादा) प्रथम पुरुष मध्यम पुरुष और उत्तमपुरुष (द्वे शीर्षे) नाम और आख्यात (सप्त हस्तास) सात विभक्तिया (त्रिधा बद्ध) एक वचन द्विवचन और बहुवचन (वृषभ रोरवीति) बैल की भाति असहिष्णु होने से दूसरे शास्त्रो को पैर तले करके गरजता है।

(ज) श्री महीधराचार्य वेददीप भाष्य करते हुए लिखते हैं—

यज्ञपुरुषस्तत्र य ऋषभा मन्त्र। चत्वारि शृङ्गोऽत्रमादित्युक्ता चतु शृङ्ग यज्ञ वृषभ रूपेण प्रतिपाद्यते नुमान यो वृषभ कामाना वर्षिता रोरवीति रुशब्दे यङलुगन्तम् अत्यर्थं शब्द करोति सो य र ग्ले व महति पूजयति महते वा जनैरिति महोमहान देव स्त्र न्तमत्र्य र त्र म त्रानु जी रो ज्ञानकर्म समुच्चयकारिणा विदुषा शरीरभूतो मर्त्यान मनु य नारक अ र त म ु र न व्याप्य तिष्ठति। यस्य वृषभस्य यज्ञस्य चत्वारि शृङ्गा शृङ्ग ग र त्रा ृ ो त ह र्यु लक्षणानि त्रय पादा ऋग्यजु सामरूपा द्वे शीर्षे न्नी र र र र र र र र एतस्य हविर्धान ग्रीवा वै यज्ञस्योपसद शिर र र र न र र र र र र र र स र हस्तास म होतारो हस्ता हस्ता इव व्याप्रियन्ते म न ङ ित व न्ता। त्र व त्रिधा त्रिप्रकारैर्बद्ध प्रात सवनमाध्यन्दिन सवन तीर्यसवनाद्ध र र र ो वेदा शृङ्ग ग र र पादा सवनानि द्वे शीर्षे प्रायणीय नीयम न म म ङ ा प त्रिधा बद्ध मन्त्रब्राह्मणकल्पैर्बद्ध॥ शब्दब्रह्मो वा र व र र र र शृङ्ग ग न न ह र नार र ा न र ा र र र पादा प्रथमपुरुषमध्यम पुरुषोत्तमपुरुषा र र क न ा वा द्वे शीर्षे क य र वड ने सप्त हस्ता विभक्तिरूपा त्रिर बद्ध एकवचन र र र र र र। व र भ इव र म र शास्त्राणि अव कृत्वा रोरवी त सो य म न ो म र न त्रित ा आविशति प्रतिपाद्यति मनुष्येष्विति मनु र त्रि र र र र र र न र त्र ॥ ९

भ त्र र मे की अ र क ता प्रतीत नही होती है। एकाध शब्द की व्युत्पत्ति तथा एक प्रमाण के अतिरिक्त यह प्राय श्री उव्वटाचार्य की शब्दश प्रतिलिपि मात्र है। हाँ यज्ञ परक व्याख्या मे श्री उव्वट का मत देकर फिर निरुक्तानुसार व्याख्या कर दी है। शब्दपरक व्याख्या मे र न प का अर्थ महाभाष्यकार के अनुसार दिया है अन्यत्र श्री उव्वट के भाष्य के समान है। श्री महीधर ने यजुर्वेद सर्वानुक्रम सूत्र के अनुसार इस मन्त्र का नाम ऋषभ मन्त्र कहा है।

(झ) विद्यावारिधि प० ज्वाला प्रसाद मिश्र —यह महीधर और उव्वट के अनुगामी हैं। उन्हीं लोगों के भाष्यों का छायानुवाद कर दिया है। निरुक्त और महाभाष्य के प्रमाणों को भी उद्धृत किया है। वेद परक अर्थ करते हुए कुछ भेद किया है। चार वेद ही शृङ्ग है तीन चरण तीन सवन हैं प्रायणीय उदयनीय दो शिर हैं सात हाथ छन्द गायत्री आदि हैं मन्त्र ब्राह्मण और कल्प से तीन प्रकार बद्ध होकर शब्द करता है १० इस वेद रूप यज्ञ पुरुष के धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप ही चार शृङ्ग हैं कर्म उपासना और ज्ञान तीन चरण हैं व्यष्टि समष्टि रूप दो शिर वा छन्द सात हाथ हैं इस प्रकार कर्म उपासना ज्ञान वा तीन गुण से युक्त चार पदार्थ की वर्षा करने वाला वेद अत्यन्त शब्द कर रहा है कि हे मनुष्यो! जाओ परमात्मा का भजन करने को यह शरीर है इस परमात्मा ने जीवात्म रूप से शरीरो मे प्रवेश किया है।"११

(ञ) वैदिक संस्थान के विद्वान् — इस यज्ञ के ऋग्यजु सामाथर्वरूपी चार वेद ही शृङ्गवत् हैं। प्रात सवन तथा साय सवन मे तीन सवन इसके चरण रूप हैं। सूर्य के उदय तथा अस्त दो काल इसके शिर के समान हैं। तथा सात गायत्री आदि छन्द हस्त के तुल्य हैं। उदात्तानुदात्त—स्वरित इन तीन स्वरो में बद्ध हुआ सुखों का वर्षक यज्ञ मन्त्रो से ध्वनित होता है। महान देवरूपी यज्ञ प्राणियों मे प्रविष्ट होता है १२

(ट) चतुर्वेद भाष्यकार प० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार मीमांसातीर्थ —आपने इस मन्त्र के ५ प्रकार के (राजा यज्ञ शब्द आत्मा व परमात्मा के पक्ष मे) अर्थ किए हैं। आपने दो अर्थ निरुक्त व महाभाष्य के अनुसार किया है और तीन अर्थ अपने मत के अनुसार दिया है। यहाँ सभी अर्थ विस्तार भय मे न देकर केवल आत्मा के पक्ष मे दिया जा रहा है। ४ सींग धर्म अर्थ काम और मोक्ष। तीन पाद अर्थात् तीन ज्ञान साधन तीन वेद या मनन क्रिया और उच्चारण या ज्ञान कर्म और गान। दो शिर प्राण अपान सात हाथ शिरोगत सात प्राण दो कान दो आँखें दो नाक एक मुख अथवा सात धातु त्वचा मास रुधिर मेद अस्थि मज्जा और शुक्र त्रिधा बद्ध मन कर्म और वाणी अथवा त्रिगुण सत्व रजस तमस द्वारा बद्ध हैं। वह भीतरी सब सुखो का वर्षक होने मे वृषभ महाप्राण आत्मा (देव) साक्षात् ज्ञान द्राष्टा होकर (मर्त्यान आविवेश०) मरणधर्मा देहो मे आश्रित है।१३

(ठ) श्री विधुशेखर भट्टाचार्य एम० ए० —आचार्य शान्ति निकेतन बलीपुर अपने वेद व्याख्या और उसकी परम्परा शीर्षक लेख मे लिखते हैं — चार इसकी सीगें हैं तीन इसके चरण हैं दो इसके सिर हैं और सात इसके हाथ हैं। तीन तरह से बधा हुआ यह वृषभ (अर्थ की वर्षा करने वाला) जोर से चिल्ला रहा है, महादेव ने मरणधर्मा (वस्तुओ) मे प्रवेश किया। वह महादेव कौन है? निरुक्त परिशिष्ट (१३/८) के अनुसार किसी का मत है कि वह यज्ञ है। चारो वेद उसकी चार सीगे हैं तीन पैर तीनो सवन (सोम का रस निकालने के तीन समय) हैं दो सिर हैं दो हवन और सात हाथ सात छन्द है। तीन तरह से बन्धा का अर्थ है कि मन्त्र ब्राह्मण और कल्प से नियमित किया गया है। दूसरो का मत है कि वह सूर्य है चार सीगे चारो दिशाय हैं तीन पैर तीनो वेद हैं क्योंकि तैत्तिरीय ब्राह्मण (३/१२/९/१) के अनुसार सूर्य की गति का सम्बन्ध तीनो वेदो से है दो सिर हैं दिन और रात सात हाथ हैं। सूर्य की सात किरणें तीन तरह से बधा है का अर्थ या तो प्रदेश (पृथ्वी अन्तरिक्ष और द्युलोक) है या तीन ऋतु (ग्रीष्म वर्षा और शीत) हैं। १३

(ड) श्री सायणाचार्य — ऋग्वेद भाष्य करते हैं —

यद्यपि सत्कस्यास्याग्निसूर्यादि पञ्चदेवताक वान्पञ्चधाय मन्त्रो व्याख्येयस्तथापि निरुक्ताद्युक्तरीत्या यज्ञात्मकाग्ने सूर्यस्य च प्रकाशकत्व तत्परतया व्याख्यायते। अस्य यज्ञात्मकस्याऽग्नेश्चत्वारि शृङ्गा चत्वारो वेदा शृङ्गस्थानीया। यदप्यापस्त म्बेन यज्ञ व्याख्यास्याम स त्रिभिर्वेदैर्विधीयते (परिभाषा १/३) इत्युक्त तथाव वणस्ययेनरानेकपश्यवैकाग्निसाध्यानेकत्सत्कर्मणामभिधायकत्वात्तदपेक्षया चत्वारि शृङ्गेत्युक्त त्रयो अस्य पादा सवनानि त्रीण्यस्य पादा प्रवृत्तिसाधनत्वात्पादा इत्युच्यन्ते। द्वे शीर्षे ब्रह्मोदन प्रवर्ग्यश्च इष्टि सोम—प्रशान्यवदपुक्तम्। सप्त हस्तास सप्तच्छन्दांसि हस्ता अनुष्ठानस्य मुख्य साधन छन्दास्यपि देवता प्रणिनस्य मुख्य साधनमिति हस्त व्यवहार त्रिधा बद्धा मन्त्रकल्पब्राह्मणस्त्रिप्रकारबद्ध बन्धनस्य तन्निष्पाद्यत्वमेववृषभ फलानावर्षिता रोरवीति भृशशब्दायते। ऋग्यजुस्सामोक्थं शस्त्रयागस्तुतिरूपैर्होत्राद्युत्पादिनैर्ध्वनिभिरसौ रौति। एव महोदेवो मर्त्यानाविवेश मर्त्यैर्यजमानैर्निष्पाद्यत्वात्प्रवेश उपपद्यते। अत्रयास्यश्चत्वारि शृङ्गेति वेदा वा एत उक्ता (निरुक्त १३/७) इत्यादिना निरवोचत् तदत्रानुसन्धेयम्।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

८ शुक्ल यजुर्वेद संहिता द्वितीयखण्डम् पृष्ठ ९१४। [सन् १९१२ ई० चौखम्बा संस्कृत बुक डिपो वाराणसी सिटी]।

९ वही पृष्ठ ९१४ ९१५।

१० यजुर्वेद मिश्रभाष्य पूर्वार्द्ध पृष्ठ ७४९ (संवत् १९५१ वि० वैंकटेश्वर प्रेस बम्बई। ११ वही १२ यजुर्वेद संहिता भाषानुवाद द्वितीय खण्ड पृष्ठ ४७३ ४७४ [संवत् १९९८ वि० मे वैदिक संस्थान ५ हिलन रोड लखनऊ द्वारा प्रकाशित]

१२ ऋग्वेद संहिता भाषाभाष्य, प्रथम खण्ड द्वितीयावृत्ति पृष्ठ ७५७। १३ मासिक पत्रिका गङ्गा का वेदाङ्क प्रवाह २ जनवरी १९३२ ई० तरङ्ग १, पृष्ठ ९ कालम २।

सम्पादकीय

भारत सरकार अपनी राष्ट्र नीति की जाँच करे

हमारा राष्ट्र अति प्राचीन काल से ही शासन-नीतियों का अनुभव करता आ रहा है। समय-समय पर देश-काल-अवस्थानुसार हमारे पूर्वज राजनीतियो का पर्यालचन करते रहते थे, जिससे राष्ट्र का ऐश्वर्य और सुख यथावत् बना रहे तथा अन्य राष्ट्र भी इस नीति प्रणाली से यथासम्भव लाभ उठाते रहें। राष्ट्र का प्रशासक समयानुसार संशोधित नीति के अनुसार राष्ट्र की रक्षा, उन्नति और सुदृढ़ता रखता रहता था। राष्ट्र में बसने वाले बड़े-बड़े ऋषि मुनि और अर्थशास्त्र के विद्वान् प्रशासक को सावधान करते रहते थे। इसी प्रकार का एक प्रसङ्ग महाभारत के सभापर्व के पाँचवें अध्याय मे मिलता है। उस प्रसग की नीति पर विचार करके हमारी भारतीय सरकार इस समय भी पूरा लाभ उठा सकती है। इस प्रसंग की कुछ नीतियो को हम इस लेख मे प्रस्तुत करते हैं—

युधिष्ठिर के पास देवर्षि नारद पहुँचे तथा स्वागत सत्कार ग्रहण करने के पश्चात् ऋषि ने युधिष्ठिर से अर्थ और रक्षा नीति के कुछ प्रश्न पूछे—

(१) 'मित्रोदासीन शत्रूणा कच्चिद्वेत्सि चिकीर्षितम् ॥ (२) राष्ट्र सुरक्षित तात शत्रुभिर्न विलुप्यते ॥ (३) कच्चिन्ते मन्त्रितो मन्त्रो न राष्ट्र परिधावति ॥ (४) कुलीनाश्चानुरक्ताश्च कृतास्ते वीर मन्त्रिण ॥ (५) कच्चित् सहस्रैर्मूर्खाणामेक क्रीणासि पण्डितम् ॥ (६) कच्चिद् दुर्गाणि सर्वाणि धनधान्यायुधोदकै. । यन्त्रैश्च परिपूर्णानि तथा शिल्पिधनुर्धरैः ॥ (७) कच्चिन्मुख्या महत्स्वेव मध्यमेषु मध्यमाः । जघन्याश्च जघन्येषु भृत्याः कर्मसु योजिता. ॥ (८) कच्चिद् धृष्टश्च शूरश्च मतिमान् धृतिमाञ्छुचि. । कुलीनश्चानुरक्तश्च दक्ष सेनापतिस्तथा ॥ (९) कच्चिद् बलस्य ते मुख्याः सर्वयुद्धविशारदाः ॥ (१०) कच्चिद व्यसनिनं शत्रुं निशम्य भरतर्षभ । अभियासि जदेनैव समीक्ष्य त्रिविध बलम् ॥ (११) कच्चित्कोषश्च कोष्ठ च वाहन द्वारमायुधम् । आयश्च कृतकल्याणैस्तव भक्तैरनुष्ठितः ॥ (१२) कच्चिदायस्य चार्धेन चतुर्भागेन वा पुनः । पादभागैस्त्रिभिर्वापि व्ययः संशुध्यते तव ॥ (१३) कच्चिन्न चौरैर्लुब्धैर्वा कुमारैः स्त्रीबलेन वा । त्वया वा पीड्यते राष्ट्र कच्चित्तुष्टाः कृषीवलाः ॥ (१४) कच्चिद् राष्ट्रे तडागानि पूर्णानि च बृहन्ति च । भागशो विनिविष्टानि न कृषिर्देवमातृका ॥ (१५) कच्चिन्न भक्त बीज च कर्षकस्यावसीदति ॥ (१६) कच्चिन्न चौरा न सा.ता ये च ते राष्ट्रवासिनः । त्वया सह विरुध्यन्ते परैः क्रीता कथ च न ॥ (१७) उत्पन्नान् कच्चिदाढ्यस्य दरिद्रस्य च भारत अर्थान्न मिथ्या पश्यन्ति तवामात्या हृता जनैः ॥ (१८) कच्चिदभ्यागता दूराद् वणिजो लाभकारणात् । यथोक्तमवहार्यन्ते शुल्कं शुल्कोपजीविभिः ॥ (१९) कच्चिदभ्यस्ते सम्यग् गृहे ते भरतर्षभ । धनुर्वेद सूत्र वै यन्त्रसूत्रं च नागरम् ॥ (२०) कच्चिदस्त्राणि सर्वाणि ब्रह्मदण्डश्च तेऽनघ । विषयोगास्तथा सर्वे विदिता शत्रुनाशना ॥"

नारद मुनि ने युधिष्ठिर से पूछे गये बहुत प्रश्नों में से हम केवल यहाँ २० ही दे रहे हैं। राजमन्त्रियों, राजपुरुषों, राजकर्मचारियों और प्रजा नेताओं को इस अध्याय को पढ़ कर पूरा लाभ उठाना चाहिये। अब प्रत्येक प्रश्न के भाव के अर्थ को आगे लिखते हैं। शब्दार्थ के लिखने पर लेख का कलेवर बढ़ जाता। "आर्यमर्यादा" के पाठक महानुभाव भी इन पर पूरा विचार करें। हे युधिष्ठिर ! क्या तुम—

(१) "अपने राष्ट्र के मित्र राष्ट्रों, उदासीनो (जो न अपने साथी हैं न द्वेषी है) और शत्रुओं के भीतरी भावों-इच्छाओ को जानते हो ? । (२) सुरक्षित राष्ट्र को शत्रु देश छीन झपट करके किसी भाग को हड़प तो नही कर रहे ? । (३) तुम्हारा विचार राष्ट्र को विचलित तो नही करता ? । (४) तुम्हारे मन्त्रिमंडल के सदस्य और सचिव श्रेष्ठ कुल और स्वराष्ट्र मे उत्पन्न और राष्ट्रभक्त हैं ? । (५) सहस्रों मूर्खों—नीतिशास्त्र को न जानने वालों की अपेक्षा किसी नीतिशास्त्र में निपुण एक पण्डित को मुख्यता देते हो ? । (६) दुर्ग, पर्वत, झील जंगल, नदियो और समुद्र के सब दुर्गम स्थानों को धन, अन्न, जल, मशीनरियों और कारीगरों से युक्त रखते हो ? । (७) मुख्य कामो पर मुख्य, बीच के कार्यों पर मध्यम दर्जे और सामान्य कामों पर साधारण क्रमश. मुख्य, मध्यम और सामान्य राजकर्मचारियों की नियुक्तियां की हुई हैं ? । (८) समस्त प्रकार की सेनाओं का प्रधानसेनापति अद्वितीय योद्धा, शत्रुओं से धर्षण करने के अयोग्य, शूरवीर-समस्त शस्त्रास्त्रसंचालन पद्धतियो का ज्ञाता और प्रयोग करने में समर्थ, नीतिनिपुण, धैर्यशाली, शुद्ध निर्लोभी, पवित्र आचरण वाला, सैनिक कोष्ठ स्वराष्ट्र में उत्पन्न हुआ और राष्ट्र का अनुरक्त है ? । (९) जल, थल और नभ तीनों प्रकार की सेनाओ के मुख्य बलाध्यक्ष युद्ध की सम्पूर्ण नीतियों मे चतुर हैं ? (१०) शत्रु देश को किसी भीतरी और बाहरी शत्रुजन्य विपत्ति मे फँसा हुआ जानकर और अपनी तीनों प्रकार की सेनाओ को पूरे रूप में तैयार जानकर बड़े वेग से शत्रु पर आक्रमण करने का साहस रखते हो ? । (११) राष्ट्र का सुरक्षित सब प्रकार का कोष धन सम्पत्ति, अन्न भण्डार और शस्त्रास्त्रागार, सब प्रकार के यान विमान, भूमि पर युद्ध करने योग्य, घोड़े, बैल रथ तथा समुद्री जहाज, आकाश, भूमि और समुद्र मे काम देने वाले विद्युत सचालित वाहन, राष्ट्र की सीमाओ के द्वार सेनाओं से सुदृढ हैं ? तथा राष्ट्र के भक्त उत्तम-आचार वाले कर्मचारियो के हाथ मे सब प्रकार की आय का प्रबन्ध है ? । (१२) राष्ट्र का सम्पूर्ण व्यय क्या आय के आधे, चौथाई अथवा पौने (तीन चौथाई) भाग से ठीक-ठीक पूरा हो जाता है ? । (१३) राष्ट्र की रक्षा और सम्पत्ति को चोर, डाकू, लुटेरे, स्वार्थी, लोभी, प्रशासको, मन्त्रियो राजपुरुषों और राजकर्मचारियो के बच्चे और स्त्रियां तथा स्वय प्रशासक हड़प करके हानि तो नहीं पहुँचाते ? क्या खेती करने वाले सब ओर से सुरक्षित और सन्तुष्ट हैं ? (१४) खेती-पशु आदि राष्ट्र की मूल सम्पत्ति को बढ़ाने के लिए बड़े-बड़े बाँध, तालाब, सागर तथा अन्य प्रकार की जल सिंचाई से राष्ट्र युक्त हैं ? तथा खेती केवल वर्षा के आधार पर ही तो नही होती है ? । (१५) किसानो का पैदा हुआ अन्न, उनके पास पर्याप्त मात्रा मे रहता है और समय पर बुवाई करने के लिए किसान को बीज खरीदने का कष्ट तो नही होता ? । (१६) राष्ट्र मे बसने वाले नगरो और ग्रामों मे शत्रु जासूसो से विचलित तो नही होते ? तथा शत्रुओ के द्वारा किसी भी प्रकार के लोभ लालच मे फँस कर और खरीदे जाकर राष्ट्र का गुप्त रूप से भी विरोध तो नही करते ? । (१७) प्रजा जन के द्वारा किसी भी प्रकार की रिश्वत, घूसखोरी के कारण मन्त्रिमण्डल के सदस्य अन्य राजपुरुष तथा राजकर्मचारी किसी भी धनवान् और निर्धन को कानून के जाल में जकड़ कर पीड़ित तो नही करते ? । (१८) दूर बाहर विदेशों से धन कमा कर स्वदेश मे पहुँचने वाले व्यापारियो से चुंगी के अधिकारी ठीक-ठीक चुंगी वसूल करते हैं ? छलकपट मे अपना और व्यापारियों का स्वार्थ सिद्ध करने के लिए किसी प्रकार का षड्यन्त्र तो नही करते ? । (१९) राष्ट्र के घर-घर में शस्त्रास्त्र विद्या का अभ्यास और नगरो मे कला-कौशल यन्त्रों का पूरा प्रबन्ध है ? जिससे आपत्ति के समय सभी नागरिक युद्ध मे शस्त्रास्त्र धारण करके युद्ध करने के लिये तैयार रह सकें ? । (२०) सम्पूर्ण शस्त्र-अस्त्रों के उत्पन्न करने और प्रयोग करने का विधान तथा शत्रु राष्ट्र को नष्ट करने के उपायों मे सब प्रकार के विषों=जहर की जानकारी और प्रयोग करने की युक्तियों को राष्ट्रवासी जानते हैं ?

आज हमारे राष्ट्र की जो अवस्था है, उससे कोई भी समझदार सज्जन अपरिचित नही है। नारद मुनि के प्रश्नों के उत्तर में युधिष्ठिर ने क्या उत्तर दिये, उनको यहाँ लिखने की आवश्यकता नहीं है—वे भूतकाल का विषय बन चुके। हाँ, उन प्रश्नों को भारत सरकार राजनीतिक नेता और जनता ध्यान से पढ़े और स्वय उत्तर देवे। यदि उत्तर ठीक रूप में दिये जा सकें, तो अहो भाग्य ? यदि प्रश्नों के उत्तर में हम खरे नहीं उतरते हैं, तो अपना राजनीतिक और आर्थिक ढग अवश्य बदलना चाहिये। इसका प्रमुख उत्तरदायित्व भारत सरकार पर है। राष्ट्र के प्रशासन को शुद्ध करना ही उत्तरदायित्व को निभाना कहा जा सकता है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

यह समाचार मिथ्या तथा भ्रम मूलक हैं

(प्रो० रामसिंह-प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब)

मुझे समाचार पत्रों में आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब द्वारा "राज आर्यसभा" के निर्माण का समाचार पढ़ कर बड़ा आश्चर्य हुआ है। आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब ने कोई राज आर्यसभा नहीं बनायी तथा न इस कार्य के लिये लुधियाना में कोई बैठक की गई। यह समाचार मिथ्या तथा भ्रममूलक है। आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब किसी रूप मे भी वर्तमान दल गत राजनीति में पड़ने के पक्ष में नही है। यह सारा मिथ्या प्रचार इस सभा के विरोधियों ने अपने स्वार्थ के लिये ही किया गया लगता है। मैं जनता से प्रार्थना करूंगा कि उक्त सभा के नाम पर कुछ स्वार्थी लोगों के ऐसे प्रचार को कोई महत्व न दें।

—(रामसिंह) प्रधान आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब

चत्वारि शृङ्गा······मन्त्र का रहस्य

[पृष्ठ २ से आगे]

अथसूर्यपक्ष—अस्यादित्यस्य चत्वारि शृङ्गाणि चतस्रो दिश एता श्रवणार्थं-स्वाच्छृङ्गाणित्युपचर्य्यन्ते । त्रयो अस्य पादा त्रयो वेदा पादस्थानीया भवन्ति गमन-साधनत्वात् तथाहि ऋग्भि पूर्वाह्णदिवि देव ईयत इत्युपक्रम्य वेदैरशून्यस्त्रिभिरेति सूर्य (तै ब्रा ३।१२।११) इतिहि वेदत्रयेण गतिराम्नाता । द्वे शीर्षे अहश्च रात्रिश्च शिरसी । सप्त हस्तासो अस्यसप्तरश्मय षड्विलक्षणा ऋतव, एक साधारण इतिवा सप्त हस्ता भवन्ति । त्रिधा बद्ध स्त्रिषु स्थानेषु क्षित्यादिष्वग्न्याद्यात्मक त्वेन सबद्ध । ग्रीष्मवर्षाहेमन्ताख्यै स्त्रिभिस्त्रधा बद्धो वा । स महो महान् देवो मर्त्यानाविवेश तन्नियन्तृतया सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुश्च ऋ० १।११५।१ इतिहि श्रुतम् ।

एव त्ववादि पक्षपि योज्य । शाब्दिकास्तु शब्दब्रह्मपरतया चत्वारि शृ गेति चत्वारि शृ गेति चत्वारि पद जातानि नाम स्याते चोपसर्ग निपाताश्चे ,यादिना व्याचक्षते अपरे त्वपरथा तत्सर्वमन्यत्रद्रष्टव्यम् ॥' अर्थात्—'यद्यपि इस सूक्त के अग्नि, सूर्य आदि पाच देवता हैं और अतएव इस मन्त्र की पाँच प्रकार की व्याख्या होनी चाहिए तथापि निरुक्त आदि की शैली यज्ञात्मक अग्नि और सूर्य के प्रकाश न होने से तत्परक व्याख्या करते है । इस यज्ञात्मक अग्नि के (चत्वारि शृ ग) चार वेद शृ ग स्थानीय हैं । (त्रयो अस्यपादा) तीन सवन इत्यादि । (इस अर्थ मे श्री सायण ने निरुक्त का अनुसरण करते हुए कही-कही अपना तक भी किया है । सूर्यपक्ष मे—इस आदित्य के (चत्वारि शृ गा) चार दिशायें शृङ्ग स्थानीय हैं (त्रयो अस्य पादा) तीन वेद (द्वे शीर्षे) दिन और रात (सप्त हस्तास) सात किरणें अथवा सात ऋतुएँ (त्रेधा बद्ध) पृथिव्यादि मे अग्नि आदि के रूप मे से सबद्ध अथवा गरमी, वर्षा और शीतकाल से सबद्ध (वृषभ) वर्षा करने वाला (रोरवीति) वृक्ष्यादि के द्वारा शब्द करता है । यह (महान् देव मर्त्यानाविवेश) नियामक होकर मर्त्यों मे प्रकाश करता है । इसी प्रकार जलादि के पक्ष मे लगाना चाहिए । वैयाकरण शब्दपरक व्याख्या करते हैं । दूसरे किसी अन्य प्रकार से । यह सब यहाँ समझ लेना ।"

(ढ) **पौराणिक प० रामगोविन्द त्रिवेदी 'वेदान्त शास्त्री और प० गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ व साहित्याचार्य प० महेन्द्र मिश्र "मग"**—"इस यज्ञात्मक अग्नि मे चार शृङ्ग हैं अर्थात् शृङ्गस्थानीय चार देव हैं । इसे सवनस्वरूप तीन पाद हैं । ब्रह्मोदन एव प्रवर्ग्य-स्वरूप दो मस्तक है । छन्द स्वरूप सात हाथ हैं । ये अभीष्टवर्षी हैं । ये मन्त्र, कल्प एवम् ब्राह्मण द्वारा तीन प्रकार से बद्ध है । ये अत्यन्त शब्द करते हैं । वह महान् देव मर्त्यों के मध्य मे प्रवेश करते हैं ।'[13] पुन पाद-टिप्पणी मे लिखते हैं "सायण ने इस ऋचा का आदित्यात्मक अर्थ भी किया है । आदित्यपक्ष मे दिक्-चतुष्टय शृङ्ग, वदत्रय पाद, अहोरात्र मस्तक, सप्त रश्मि हाथ एवम् ग्रीष्म, वर्षा और हेमन्त तीन बन्धन है ।'[14]

(ण) **चतुर्वेद भाष्यकार प० जयदेव शर्मा विद्यालकार, 'मीमासातीर्थ'**—आपके यजुर्वेद भाष्य से ऊपर प्रमाण दिया जा चुका है । अब ऋग्वेद भाष्य मे आपने यज्ञ पुरुष वा वेदविद् विद्वान्, यज्ञमय पुरुष के पक्ष म, प्राणमय आत्मा पक्ष मे, सूर्य पक्ष मे अर्थ किया है । यहा समस्त अर्थ न देकर केवल सूर्य पक्ष का अर्थ दिया जाता है "चार दिशा नीन चातुर्मास्य ऋतु दा अ रन सातमास, तीन लोको मे बद्ध होकर सवत्सर रूप होकर व्याप रहा है ।[15]

(त) **महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज** ने यजुर्वेद १७।९१' तथा ऋग्वेद ३।५८।३ म इस पर भाष्य किया है । यजुर्वेदभाष्य म आपने भाष्य करते हुए निरुक्त और महाभाष्य का भी प्रमाण दिया है ।

यजुर्वेद में भाष्य—"(चत्वारि) (शृङ्गा) शृङ्गाणीव चत्वारो वेदा नामाख्यातोपसर्गनिपाता वा (त्रय) प्रातर्मध्यसाय सवनानि । भूतभविष्यद्वर्त्तमाना, काला वा (अस्य) यज्ञस्य शब्दस्य वा (पादा) अधिगमसाधनानि (द्वे) (शीर्षे) शिरसी प्रायणीयोदयनीये, नित्य कार्यश्च शब्दात्मानौ वा (सप्त) एतत्सख्याकानि गायत्र्यादीनि छन्दासि विभक्तयो वा (हस्तास) हस्तेन्द्रियमिव (अस्य) (त्रिधा) त्रिभि प्रकारैर्मन्त्र-ब्राह्मणकल्पै उरसि कण्ठे शिरसि वा (बद्ध) (वृषभ) सुखानामभिवर्षक (रोरवीति) ऋग्वेदादिना सवनक्रमेण वा शब्दायते (मह) महान् (देव) सगमनीय प्रकाशको वा (मर्त्यान्) मनुष्यान (आ, विवेश) आविशति ।'[16]

पदार्थ —हे मनुष्यो ! तुम जिस (अस्य) इसके (त्रय) प्रात सवन, माध्यन्दिन सवन और साय सवन ये तीन (पादा) प्राप्ति के साधन (चत्वारि) चार वेद (शृङ्गा) सीग (द्वे) दो (शीर्षे) अस्तकाल और उदयकाल शिर वा जिस (अस्य) इसके (सप्त, हस्तास) गायत्री आदि छन्द सात हाथ हैं वा जो (त्रिधा) मन्त्र ब्राह्मण और कल्प इन तीन प्रकारो से (बद्ध) बँधा हुआ (मह) बडा (देव) प्राप्त करने योग्य (वृषभ) सुखो को सब ओर से वर्षाने वाला यज्ञ (रोरवीति) प्रात , मध्य और साय सवन क्रम से शब्द करता हुआ (मर्त्यान्) मनुष्यो को (आ, विवेश) अच्छे प्रकार प्रवेश करता है, उसका अनुष्ठान करके सुखी होओ ।'

ऋग्वेद में भाष्य—'(चत्वारि) चत्वारो वेदा (शृङ्गा) शृङ्गाणीव (त्रय) कर्मोपासनाज्ञानानि (अस्त) धर्म्मव्यवहारस्य (पादा) पन्तव्या (द्वे) अभ्युदयनिश्रयसे (शीर्षे) शिरसी इव (सप्त) पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि वा कर्म्मेन्द्रियाण्यन्त करणमात्मा च (हस्तास) हस्तवद्वर्त्तमाना (अस्य) धर्मयुक्तस्य नित्यनैमित्तिकस्य (त्रिधा) श्रद्धा-पुरुषार्थयोगाभ्यासै (बद्ध) (वृषभ) सुखाना वर्षणात् (रोरवीति) भृशमुपदिशति (मह) महान् पूजनीय (देव) स्वप्रकाश सर्वसुखप्रदाता (मर्त्यान्) मरणधर्मान् मनुष्यादीन् (आ) समन्तात् (विवेश) व्याप्नोति ।[17]

पदार्थ —"हे मनुष्यो ! जो (मह) बडा सेवा और आदर करने योग्य (देव) स्वप्रकाशस्वरूप और सब को सुख देने वाला (मर्त्यान्) मरणधर्म वाले मनुष्य आदिको को (आ) सब प्रकार से (विवेश) व्याप्त होता है (वृषभ) और जो सुखो का वर्षाने वाला (त्रिधा) तीन श्रद्धा पुरुषार्थ और योगाभ्यास मे (बद्ध) बधा हुआ (रोरवीति) निरन्तर उपदेश देता है (अस्य) इस धर्म से युक्त नित्य और नैमित्तिक परमात्मा के बोध के (द्वे) दो, उन्नति और मोक्ष रूप (शीर्षे) शिरस्थानापन्न (त्रय) तीन अर्थात् कर्म, उपासना, और ज्ञान रूप (पाद) चलने योग्य पैर (चत्वारि) और चार (शृङ्गा) शृ गो के सदृश आप लोगो को जानने योग्य हैं और (अस्य) इस धर्म व्यवहार के पाच ज्ञानेन्द्रिय वा पाँच कर्मेन्द्रिय अन्त करण और आत्मा ये सात (हस्तास) हाथो के सदृश वर्तमान हैं और उक्त तीन प्रकार से बँधा हुआ व्यवहार भी जानने योग्य है ।

'चत्वारिशृ गा"—मत्र का षोडश प्रकार का अर्थ दिया गया है । इस पर विचार करने से प्रकट होता है कि महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज ने यज्ञ और शब्द के अतिरिक्त ईश्वर बोध तथा लोक-व्यवहार-परक अर्थ भी स्वीकार किए हैं । आपने यजुर्वेदभाष्य मे इस मन्त्र की निरुक्त व महाभाष्य के अनुसार व्याख्या करके भावार्थ मे "अत्रोभयोत्तमा रूपक श्लेषालकारश्च, कहा है, अर्थात् अर्थों की विविधता मे रूपक और श्लेषालङ्कार हेतु हैं ।

इस समस्त लेख का निष्कर्ष इतना ही है कि वेद काव्य है । काव्य मे अलङ्कार भी होते हैं । अत उनके कारण जैसे लौकिक काव्यो मे अर्थ-भेद होता है, वैसे ही यहाँ वेद मे भी होता है । हाँ, प्रकरणादि का विचार अवश्य करना चाहिए । इत्यलम्

[विशेष—प्रतिष्ठित विद्वान् लेखक ने बहुत उत्तम सग्रह करके आर्यमर्यादा के प्रमी पाठको को उपकृत किया है । इस पवित्र भाव के प्रति हम कृतज्ञता प्रकाशित करते हैं । ऋषि दयानन्द के वेदभाष्यो का स्वाध्याय करने वाले सज्जन इस बात को पूर्ण रूप मे समझते हैं कि ऋषि ने भावार्थ (सस्कृत तथा आर्यभाषा) मे भी अमूल्य रत्न वेदाभ्यासियो के लिये दिये हैं । आदरणीय लेखक के प्रयास को और परिष्कृत करने के लिय हम ऋ० ४ ५८ ३ तथा यजु० १७ ९१ के उपर्युक्त मन्त्र मे दिये भावार्थों का भी आगे लिख देते हैं । अन्य द्वारा गृहीत क्रम के अनुसार पहिले यजुर्वेद का भावार्थ देकर पुन ऋग्वेद का भावार्थ दे रहे हैं—

यजुर्वेद १७ ९१ का भावार्थ —"अत्रोभयोक्त या रूपक श्लेषालङ्कारश्चा य मनुष्या यज्ञ विद्या शब्द विद्या च जानन्ति ते महाशया विद्वांसो भवन्ति ॥ इस मन्त्र मे उभयोक्ति अर्थात् उपमान के न्यूनाधिक धर्मों के कथन से रूपक और श्लेषालङ्कार है—जो मनुष्य यज्ञ विद्या और शब्द विद्या को जानते हैं वे महाशय विद्वान् होते हैं ॥"

ऋषि दयानन्द ऋग्वेद का भाष्य पहिले कर चुके थे, अत उन्होने ऋग्वेद के भावार्थ मे मन्त्र के भाव पर विशेष प्रकाश डाला था । पुन यजुर्वेद का भाष्य करते समय केवल अलङ्कारजन्य भावार्थ का ही प्रकाश किया । अब आगे ऋग्वेद का भावार्थ लिखा जाता है—

(शेष पृष्ठ ९ पर)

१३ ऋग्वेद सहिता ' (सरल हिन्दी-टीका-सहित), तृतीय अष्टक, प्रथम सस्करण पृष्ठ २२७ । १४ वही । १५ ऋग्वेद सहिता भाषाभाष्य तृतीयखण्ड, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ६६४-६६५ ।

१६ "यजुर्वेदभाष्यम् द्वितीयो भाग , तृतीयावृत्ति पृष्ठ ५०९ ।

१७. "ऋग्वेद भाष्यम्" चतुर्थ मण्डलम्, षष्ठभागात्मकम्, पृष्ठ ६३५-६३६ (सवत् १०८३ वि० वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर मे मुद्रित व प्रकाशित)

प्रार्थना की भाषा—२

(लेखक—श्री पण्डित जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१६—प्रार्थना—योग के अनुष्ठान मे भाषा विषयक एक विशेष कठिनाई का विचार अब कीजिये। हमारा अपनी भाषा के विषय मे अल्पज्ञान मिथ्याज्ञान, हमारी शाब्दिक दरिद्रता और प्रत्येक भाषा की अपनी-अपनी अपूर्णता=भाव प्रकाशन की सीमितता वा असमर्थता एव सूक्ष्मतम मानसिक और आत्मिक क्षेत्रो मे तथा अनुष्ठान की उच्चतर भूमिकाओ मे सब प्रकार के वाणी व्यापारो की अनुपयोगिता आदि-आदि के कारण प्रार्थना-कर्म का अनुष्ठान त्रुटिपूर्ण भी हो जाता है, कृत्रिम सा भी और कभी-कभी अर्थशून्य वा अव्यावहारिक भी। इतना ही नही उच्चतर भूमिकाओ मे तो मन की ऊँची ऊँची उडाने और कल्पनायें भी साथ छोड देती हैं फिर वाणी बेचारी की क्या कथा? इस दृष्टि से तो हमारे सभी गीत स्तोत्र कथनोपकथन प्रार्थना वचन आदि-आदि शुद्ध होने पर भी कुछ त्रुटिपूर्ण ही होते हैं। ईश्वर के लिये हमारे सम्बोधन शब्द, आदर वा महिमा सूचक सभी विशेषण भाव विचार और निवदन ऐसे ही होते हैं जैसे कि ससार के मूर्तिमान् बडे लोगो राजाओ महाराजाओ, गुरुजनो आदि के लिए होते हैं। ईश्वर की किसी बडे और प्रभावी रूप की परिकल्पना किये बिना—अमूर्त्त की परिकल्पना, हम प्रार्थनानुष्ठान मे असमर्थ हो जाते हैं। अमूर्त्त के सामने—सर्वव्यापक, विभु और घट-घट वासी के सामने—आत्म-निवेदन भाव-प्रकाशन एव उसके गुण-कीर्तन की कोई दूसरी युक्ति तो हमे ज्ञान ही नही है। एवमेव हमारी उच्च और शुभ एव शुचितर उक्तियो और कामनाओ आदि मे भी कुछ न कुछ त्रुटियाँ कमिया और मलिनतायें भी रहती ही हैं। इन दोषो का कुछ-कुछ परिहार धार्मिक ग्रन्थो की सहायता से प्रार्थना कर्म को सीख कर किया जा सकता है विशेष रूप से वेद-मन्त्रो और उपनिषदो की कण्डिकाओ की सहायता से यह भी हम बिना सकोच स्वीकारते हैं। हम जानते हैं कि अन्य मतो के अनुयायी भी अपने पक्ष मे इस युक्ति का उपयोग कर सकते हैं। वे ऐसा करते भी हैं। अत धर्म-ग्रथो के प्रार्थना-पाठो और सभी साम्प्रदायिक प्रार्थनाओ को तर्क, व्याकरण, भाषा-विज्ञान सृष्टिक्रम-विज्ञान आदि-आदि की कसौटियो पर भी कस लेना चाहिये। प्रार्थना एक मनोविज्ञानिक कर्म अवश्य है, परन्तु मिथ्यावादो को इसमे न जोडा जाये। अन्यथा तो लाभ के स्थान पर हानि ही उठानी पडेगी।

१७—महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने 'आर्याभिविनय" नामक एक अति उत्तम, सुललित और सारगर्भित पुस्तक वैदिक भक्तिवाद विषयक लिखा है। जो लोग महर्षि जी को कोरा तार्किक और खण्डन-कुठार का धनी मात्र ही मानते हैं उन्हे इस पुस्तक को एक बार अवश्य ही देख लेना चाहिये। इसमे महर्षि जी ने ईश्वर की स्तुति और प्रार्थना विषयक वेद-मन्त्रो को प्रतीकवत् उद्धृत करके उनके आधार पर अपनी भाव-भरी लोक-भाषा मे अपने उद्गारो को एक सौ आठ प्रार्थनाओ के रूप मे प्रकाशित किया है। इस पुस्तक की सहायता से प्रार्थना-योग का अनुष्ठान करने की उचित रीति को अपना कर और अपनी-अपनी मातृ-भाषा मे वेद-मन्त्रो के आधार पर प्रार्थना-योग को अपना कर, सभी श्रेणियो और अवस्थाओ के नर-नारी अपने-अपने जीवन को विशेष रूप मे सरस, शान्त, उन्नत और स्निग्ध बना सकते हैं। 'आर्याभिविनय के अनुवाद उर्दू, गुजराती, मराठी अग्रेजी बगला आदि विविध भाषाओ मे हो चुके है। "आर्याभिविनय' से प्रार्थना-प्रवेशिका वा प्रकाशिका का काम उत्तम रूप मे लिया जा सकता है।

१८—अपने 'सत्यार्थप्रकाश' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के सातवें समुल्लास मे महर्षि दयानन्द जी ने प्रार्थनावाद का कुछ विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है। वहाँ उन्होने वेद मन्त्रो और ब्राह्मण-ग्रन्थो के वचनो को आधार बना कर नमूने के तौर पर यह भी दर्शाया है कि उत्तम प्रार्थनायें कैसी होती हैं और धार्मिक ग्रन्थो के वचनो को आधार बना कर उपासक गण अपनी-अपनी मातृ-भाषाओ या अभिष्ट भाषाओ मे किस प्रकार प्रार्थना-योग का अनुष्ठान करे। वेद-मन्त्रो का अर्थ वा भाव-विस्तार अथवा व्याख्या-विस्तार करने की पूर्ण स्वतन्त्रता महर्षि जी ने उपासको को दी है। परन्तु इसका यह अभिप्राय नही है कि कोई वेद-मन्त्रो वा अन्य शास्त्रीय वचनो को अयुक्त वा विपरीत अर्थों और भावो आदि से सवलित करे। महर्षि जी के ग्रन्थो और उनके जीवन व्यवहारो से सुस्पष्ट है कि प्रार्थना-योग के अनुष्ठान मे वेद-मन्त्रो, आर्ष-ग्रन्थो और पक्षपात रहित विद्वानो के वचनो को मुख्य-आधार बनाने के प्रबल समर्थक थे, परन्तु अर्थ-ज्ञान-शून्य, अनुचित, अव्यावहारिक और पुरुषार्थ-घातक, आलस्य-प्रसारक प्रार्थनाओ के पक्षपाती वे नही थे। वेद-मन्त्रो के आधार पर सस्कृत एव जन दोनो भाषाओ मे अर्थवाद=अनुवाद और भावविस्तार करते हुए अपने 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ मे भी महर्षि दयानन्द जी ने ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना के बहुत से नमूने प्रस्तुत किये हैं। उनका अनुगमन भी सभी प्रार्थना प्रेमियो के लिये अत्यन्त हितकर है। महर्षि जी के ग्रन्थो मे जहा-तहा बिखरे हुए इस प्रार्थनावाद का सकलन अभी तक भी किसी स्वतन्त्र पुस्तक के रूप मे हो नही सका है। उपासक अपनी मातृ-भाषा मे प्रार्थना करे इसके विरोधी महर्षि जी नही थे। महर्षि दयानन्द जी का तो पक्ष ही यह है कि जो-जो तर्क-सगत सत्य सिद्धान्त और उत्तमोत्तम आचार विचार ससार मे प्रचलित हैं वे सब वेदो से ही निसृत होकर फैले हैं। अत वे सभी वैदिक भी है और अनुकरणीय एव अभिरक्षणीय भी। यदि अन्य मत-मतान्तरो के अनुयायी भी महर्षि जी के इस उदार-पक्ष को अपना सकेंगे, तब तो सभी प्रकार के साम्प्रदायिक राग-द्वेष बहुत शीघ्र ही समाप्त हो जायेंगे। न जाने कब आयेगा वह शुभ दिन?

१९—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के 'वेदविषयविचार प्रकरण मे महर्षि दयानन्द जी एक प्रश्न उठाते है कि यज्ञो मे वेद-मन्त्रो का पाठ क्या किया जाये? इसके समाधान मे वे कई हेतु प्रस्तुत करते है। यथा—वेदो की रक्षा, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना यज्ञो मे होने वाले लाभो का परिज्ञान, वेद-मन्त्रो का कण्ठाग्र होना, आस्तिकता-प्रसार, नास्तिकता-निरोध आदि-आदि। वहाँ ही वे यह भी स्पष्ट विधान करते हैं कि "ईश्वर की प्रार्थनापूर्वक ही सब कर्मो का आरम्भ करना होता है।"

२०—महर्षि जी वहा एक और महत्वपूर्ण प्रश्न उठाते हैं कि वेदो मे वेद-मन्त्रो को छोड के दूसरो का पाठ करें तो क्या दोष है? इसके उत्तर मे वे लिखते हैं —'अन्य के पाठ मे यह प्रयोजन सिद्ध नही हो सकता। ईश्वर के वचन से जो सत्य प्रयोजन सिद्ध होता है, सो अन्य के वचन से कभी नही हो सकता। क्योकि जैसा ईश्वर का वचन सर्वथा भ्रान्तिरहित सत्य होता है, वैसा अन्य का नही।' वे आगे फिर लिखते हैं 'इससे यह निश्चय है कि जहाँ-जहा सत्य दीखता और सुनने मे आता है। वहा-वहा वेदो मे ही फैला है। और जो-जो मिथ्या है, सो-सो वेद मे नही, किन्तु वह जीवो की ही कल्पना से प्रसिद्ध हुआ है।

२१—महर्षि जी के इन और ऐसे ही अन्य उल्लेखो से यह सुस्पष्ट होता है कि यज्ञो मे वेद-मन्त्रो के उपयोग के जो-जो लाभ हैं, वे ही सब लाभ वेद-मन्त्रो के आधार पर ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करने के भी है। अर्थात् वेद-मन्त्रो के आधार पर स्तुति, प्रार्थना और उपासना के सभी अनुष्ठानो को निर्दोष बनाया जा सकता है। इसके विपरीत मानव-वचनो स्तोत्रो, श्लोको, गीतो आदि मे तो मानव के अज्ञान, भ्रान्त ज्ञान, प्रमाद और राग-द्वेष आदि मनोविकारो के कारण होने वाले दोषो की सहज-सभावना प्रबल रूप मे बनी ही रहती है।

२२—"सत्यार्थ-प्रकाश" मे महर्षि दयानन्द जी ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का तात्पर्य दर्शाते हैं (१) स्तुति से ईश्वर मे प्रीति, उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण कर्म, स्वभाव का सुधारना।(२) प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना।(३)उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।

२३— प्रार्थना-योग से लाभ उठाने की युक्तियो का उल्लेख महर्षि दयानन्द जी "सत्यार्थ-प्रकाश" मे करते है —"जो मनुष्य, जिस बात की प्रार्थना करता है, उसको वैसा ही वर्तमान करना चाहिये। अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिये परमेश्वर की प्रार्थना करे, उसके लिये जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना ही किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।'

२४—वे आगे लिखते है ऐसी प्रार्थना कभी न करनी चाहिये, और न परमेश्वर उसको स्वीकार करता है कि जैसे हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रुओ का नाश, मुझ को सबसे बडा, मेरी ही प्रतिष्ठा, और मेरे अधीन सब हो जाये, इत्यादि। क्योकि जब दोनो शत्रु एक दूसरे के नाश के लिये प्रार्थना करें तो क्या परमेश्वर दोनो का नाश करदे? जो कोई कहे कि जिसका प्रेम अधिक उसकी प्रार्थना सफल हो जावे, तब हम कह सकते हैं कि जिसका प्रेम न्यून हो, उसके शत्रु का भी न्यून नाश होना चाहिये। ऐसी मूर्खता की प्रार्थनायें करते-करते, कोई ऐसी भी प्रार्थना करेगा कि हे परमेश्वर! आप हमको रोटी बनाकर खिलाइये, मेरे मकान मे झाडू लगाइये, वस्त्र धो दीजिये और खेती-बाडी भी कीजिये। इस प्रकार जो ईश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं, वे महामूर्ख हैं। क्योकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है, उसको जो कोई तोडेगा, वह सुख कभी नही पावेगा।

२५—वे फिर लिखते हैं —"परमेश्वर भी सबके उपकार करने की प्रार्थना मे सहायक होता है। हानिकारक कर्म मे नही। जो कोई गुड मीठा है। ऐसा कहता है। उसको गुड प्राप्त वा उसको स्वाद प्राप्त कभी नही होता। और जो यत्न करता है उसको शीघ्र वा विलम्ब से गुड मिल ही जाता है।'

२६—ईश्वर-प्रार्थना के लिए विशेष रूप से उपयोगी कुछ वेद-मन्त्र और ब्राह्मण-ग्रन्थो के वाक्य नमूने के रूप मे सक्षिप्त अर्थ सहित यहा उद्धृत किये जा रहे हैं। इन

का व्याख्या-विस्तार करने एव इनको अपनी अभीष्ट प्रार्थना-भाषा से सबलित करने मे विज्ञजन पूर्ण स्वतन्त्र हैं। वैदिक-शब्दो का अर्थ-विस्तार भी अधिक होता है, भाव-विस्तार भी, सार्वभौम सामान्य उपयोग भी।

(१) महर्षि दयानन्द का सर्वप्रिय प्रार्थना मन्त्र है—

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप, सब सुखो के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दु खो को दूर कर दीजिये। और जो कल्याणकारक गुण कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वे सब हमको सुप्राप्त कीजिये।

(२) सत्कर्मानुष्ठान के लिये प्रतिज्ञाबद्ध होने—आत्मदीक्षा ग्रहण करने की रीति देखिये—

अग्ने व्रतपते व्रत चरिष्यामि, तत्ते प्रब्रवीमि, तच्छकेयम्। तेनार्ध्यासम् इदमहम-नृतात् सत्यमुपैमि ॥

हे ज्योतिस्वरूप परमात्मा! मैं व्रत का अनुष्ठान करूँगा। अपना व्रत मैं आपकी सेवा मे निवेदन करता हूँ। आपकी कृपा से मेरा व्रत पूर्णता को प्राप्त करे। आपकी कृपा से अपने व्रत के परिचालन का सामर्थ्य मुझे मिले। वह मेरा व्रत यह है कि मैं अनृत=असत्य का परित्याग करके सत्य=ऋत को ग्रहण करता हूँ।

(३) वह अनन्त नामो का नामी परमेश्वर तो एक ही है—

शन्नो मित्र श वरुण शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इन्द्रो बृहस्पति शन्नो विष्णुरुरुक्रम ॥

सबका मित्र, स्वप्रकाशस्वरूप, वरणीय और वर्णन करने योग्य न्यायकारी, सकल बलविदारक सकल ऐश्वर्य का स्वामी, सबका सर्वोपरि स्वामी सर्वव्यापक और सर्व-शक्तिमान् परमेश्वर हमारा कल्याण।

(४) महर्षि दयानन्द का एक प्रिय नमो-निवेदन इस प्रकार है—

नमो ब्रह्मणे, नमस्ते वायो, त्वमेव प्रत्यक्ष ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्ष ब्रह्म वदिष्यामि, ऋत वदिष्यामि।
सत्य वदिष्यामि, तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु।
अवतु मामवतु वक्तारम् ॥

ब्रह्म को मेरा नमस्कार। सर्वगत वायु (परमेश्वर) को नमस्कार। तू ही प्रत्यक्ष ब्रह्म है। मैं तो तुझे ही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा। मैं ऋत ही बोलूँगा। मैं सत्य ही बोलूँगा। मेरी रक्षा कर। वक्ता की रक्षा कर। मेरी रक्षा कर। ऋत और सत्य के उपदेशक की रक्षा कर।

(५) प्रार्थना रूप मे प्रचलित एक प्रसिद्ध ब्राह्मण-वाक्य यह है—

असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा–अमृत गमय।

मुझे असद् से सत की ओर ले चल। अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चल। मृत्यु से अमृत की ओर ले चल।

(६) गुरु शिष्य, पिता-पुत्र पति-पत्नी की विशेष हितकर और सुप्रसिद्ध सम्मिलित प्रार्थना यह है—

सहनाववतु सहनौभुनक्तु। सह वीर्य करवावहै। तजस्विनावधीनमस्तु माविद्विषावहै ॥

हे प्रीतिवर्धक परमेश्वर! हम परस्पर एक दूसरे की रक्षा करें। मिल-मिल कर आनन्द ग्रहण करें। पुरुषार्थी बन कर हम एक दूसरे को सबल बनाते रहें। हमारी विद्या, तेज, ओज और प्रभाव से युक्त, सत्य और सबके लिए हितकारिणी हो। हम परस्पर विद्वेष न करें। हमारा पारस्परिक सद्भाव निरन्तर बढ़ता ही रहे।

(७) गायत्री तो सर्वप्रसिद्ध और सर्वमान्य प्रार्थना है ही—

ओ३म् भुर्भुव स्व। तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो न प्रचोदयात् ॥

हे सर्वरक्षक! हे सर्व व्यापक! हे दु खनाशक! हे सुखस्वरूप! तू ही इस सकल सृष्टि का रचयिता है। तू ही वर्णन करने योग्य है और तू ही प्राप्त करने योग्य है। दिव्य देव हमे अपना पाप-ताप नाशक तेज प्रदान कर। हमारी बुद्धि को सन्मार्ग मे प्रेरित कर।

(८) सन्मार्ग की प्राप्ति का श्रेष्ठ उपाय तो सत्सग ही है—

स्वस्ति पन्थामनुचरम सूर्याचन्द्रमासाविव। पुनर्ददताघ्नता जानता सगमेमहि ॥

हम सूर्य और चन्द्र के समान उत्तम नियमो मे आबद्ध होकर निरन्तर कल्याणप्रद मार्ग पर ही चलें। हम सदैव उत्तम दानाओ सत्यरक्षको और विद्या विज्ञान शीलजनो का ही सग और अनुगमन करें।

प्रभु के सख्य का फल

(डा० श्री रामनाथ जी वेदालकार, एम० ए० पी० एच० डी०)

अश्वी रथी सुरूप इद् गोमाँ इदिन्द्र ते सखा।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रो याति सभामुप ॥ ऋग्० ८-४-९

अर्थ—(इन्द्र) हे राजाधिराज प्रभो! (ते सखा) आपसे मित्रता करने वाला मनुष्य (अश्वी) प्रशस्त अश्वो वाला (रथी) प्रशस्त रथ वाला (सुरूप इद्) सुन्दर रूप वाला और (गोमान् इत्) प्रशस्त गौओ वाला हो जाता है। वह (श्वात्रभाजा) त्वरित कर्मवाली (वयसा) आयु से (सदा सचते) सदा सयुक्त होता है, और (चन्द्र) चाँद बनकर (सभाम् उपयाति) सभा मे पहुचता है।

हे प्रभो! आप 'इन्द्र' है, परमैश्वर्यशाली हैं, राजाधिराज हैं। ससार मे बिखरा हुआ हिरण्य रजत, हीरक, मुक्ता, मणि आदि समस्त ऐश्वर्य आपका ही है। सूर्य, वायु, जल, वनस्पति आदि अमूल्य धन के भी आप ही राजा हैं। इसके अतिरिक्त अहिंसा, सत्य, अस्तेय, सन्तोष, तप, दया, परोपकार, वीरता आदि गुणो की जो अनुपम सपत्ति है उसके भी अगार तथा स्रोत आपही हैं। अत यह स्वाभाविक है कि जो आपसे मित्रता करता है उसे भी अपने धन से धनी बना देते हैं।

आपको आत्मसमर्पण करने वाला, आपके प्रति मित्रता के लिए हाथ बढाने वाला तथा आपसे पूर्ण सख्य स्थापित कर लेने वाला व्यक्ति 'अश्वी' हो जाता है। अश्व का स्थूल अर्थ है घोडा तथा यह बैल हाथी, ऊँट आदि सभी भारवाहक तथा सवारी देने वाले पशुओ का उपलक्षक है। अश्व के बाद मतुबर्थक प्रत्यय इनु जोडकर 'अश्विन्', तथा उससे 'अश्वी' बना है। मतुबर्थक प्रत्यय प्रशसा अर्थ मे भी होते हैं, यहाँ वही अर्थ अभिप्रेत है। एव 'अश्वी' का अर्थ हुआ प्रशस्त घोडे आदि उपयोगी पशुओ वाला। अभिप्राय यह हुआ कि आपके मित्र को इन उपयोगी पशुओ की कमी अनुभव नही होती। आपकी कृपा से वह इतना समृद्ध हो जाता है कि आवश्यकतानुसार इन पशुओ को उपयोग के लिए अपने पास रख सकता है, या न भी रखे तो आवश्यकता होने पर शुल्क देकर मगा सकता है, अथवा यदि स्वेच्छा से उसने अपरिग्रह का व्रत स्वीकार किया हुआ हो तो दूसरे धनी लोग समय पडने पर उसके लिए अपने अश्व आदि भेज देने के लिए सदा तत्पर रहते हैं। परन्तु घोडा पशु तो अश्व शब्द का सबसे स्थूल अर्थ है। इसके अतिरिक्त शरीर मे जो ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ हैं वे भी अश्व शब्द से गृहीत होती हैं—**इन्द्रियाणि हयानाहु** (कठ उप०)। और शरीर मे सबसे बडा अश्व तो प्राण है, जो नियुक्त न तो प्राण है, जो नियुक्त न हो तो शरीर चल ही नही सकता। अत, आप का सखा 'अश्वी हो जाता है' इसका यह आशय भी निकलता है कि प्रशस्त इन्द्रियो वाला तथा प्रशस्त प्राण वाला हो जाता है। हम प्रति दिन प्रात सायम् सन्ध्याग्निहोत्र करते हुए अगस्पर्श विधि द्वारा इन्द्रियो के यशस्वी बलवान् तथा प्रशस्त होने की प्रार्थना करते हैं। आप के सखा की वह प्रार्थना सफल होती है।

फिर, हे प्रभो! आपका सखा 'रथी' हो जाता है। वह प्रशस्त बलगाडी, घोडा-गाडी मोटरगाडी आदि यानो का स्वामी बन जाता है या इन्हे आवश्यकता के समय आसानी से प्राप्त कर सकता है। रथ का दूसरा अर्थ यह शरीर भी है जिस पर आत्मा रूपी रथी बैठता है—**आत्मान रथिन विद्धि शरीरं रथमेव तु** (कठ उप०)। इस अर्थ को लेने से आपके सखा का शरीर रूपी रथ सदा प्रशस्त रहता है, आधि-व्याधियो से ग्रस्त एव नरकतुल्य नही रहता। प्रत्येक मनुष्य को यह शरीर-रथ लक्ष्य तक पहुँचने के लिए मिला है। परन्तु जिनका यह रथ रोगग्रस्त एव जीर्ण-शीर्ण रहता है वे इसके द्वारा लक्ष्य की ओर तो अग्रसर होने नही ही पाते, उल्टा उन्हे इसी की सेवा करनी पडती है। किन्तु आपके सखा को इस विपत्ति का सामना नही करना पडता। उसका शरीर-रथ स्वच्छ, पवित्र, स्फूर्तिमय, सप्राण एव क्रियाशील होता हुआ उसे आगे ही आगे ले जाता है।

हे भगवन्! आपके साथ सखित्व स्थापित करने वाला 'सुरूप' भी हो जाता है। मनुष्य का सच्चा रूप उसके गुण हैं। उन दया दाक्षिण्य, वीरता आदि गुणो के रूप से वह कान्तिमान् हो जाता है। उसका यह मनोमोहक सुन्दर रूप देखकर सब उस पर बलि बलि जाते हैं।

हे देवाधिदेव! आपके सख्य का सौभाग्य प्राप्त करने वाला 'गोमान्' भी हो जाता है। उसे गौओ की या दूध-घी की कमी नही रहती। 'गो' शब्द का अर्थ वाणी, प्रकाश की किरण, पृथिवी आदि भी होता है। तदनुसार आपका सखा प्रशस्त वाक्-शक्ति से युक्त हो जाता है। उसकी वाणी बलवती तथा प्रभावशालिनी हो जाती है। उसके मुख से निकले हुए एक-एक शब्द का लोग आदर करते हैं। वह जो कुछ कहता,

(शेष पृष्ठ १० पर)

गुरु-घर में फूट का कारण गद्दी

(स्वामी वेदानन्द जी सरस्वती, अध्यक्ष वैदिक साधु आश्रम रोपड़ पंजाब)

पंजाब प्रान्त के ग्राम तलवंडी वर्तमान नाम ननकाना साहिब मे गुरु नानकदेव जी का जन्म सं० १५२६ वि० मे हुआ था। बीस वर्ष की आयु में आपका विवाह मूलचन्द खत्री की सुपुत्री सुलखनी देवी के साथ हुआ। पश्चात् गुरु जी के दो सुपुत्र श्रीचन्द और लखमीदास उत्पन्न हुए। श्रीचन्द जी ने आजीवन ब्रह्मचारी रहते हुए त्याग और वैराग्य का तपोमय जीवन व्यतीत किया। सदा ईश्वर भक्ति में ही लीन रहे। कारण तो अज्ञात है और नानक देव जी ने निज पुत्रों को गद्दी न देकर लहना जी (गुरु अगद जी) का अपना स्थानीवत् उत्तराधिकारी बनाया जिससे परिवार मे कलह ने इतना जोर पकड़ा कि गुरु नानक देव जी का स्वयं गुरु अगददेव जी को छोड़कर खडूर साहिब जाकर रहने का परामर्श देना पड़ा। इस घटना से स्पष्ट है कि इस झगड़े और पारस्परिक फूट का कारण केवल गुरुगद्दी से प्राप्त धन एवं मान ही था।

यद्यपि बाबा श्रीचन्द जी का जीवन उच्चचरित्रवान होने से छठे गुरु हरगोविन्द जी तक सारे गुरु आपको सम्मान की दृष्टि से देखते रहे इसलिए प्रतिवर्ष आपका एक घोड़ा और पांच सौ रुपये भेंट रूप मे दिए जाते रहे। छठे गुरु जी ने तो अपना सुपुत्र गुरु दित्ता जी भी बाबा श्रीचन्द जी के अर्पण कर दिया था जो उनके पश्चात् उदासी सम्प्रदाय का उत्तराधिकारी बना। बाबा श्रीचन्द जी ने श्री अविनाशी मुनि को गुरु धारण कर लिया था।

गुरु अगददेव जी के भी दो सुपुत्र थे एक दातो और दूसरा दासो। आपने भी निज पुत्रों को गुरुयाई न देकर श्री अमरदास जी को दे दी। आप आयु मे अगददेव जी से बड़े थे तथापि आपकी सेवा से प्रभावित होकर ही ऐसा पग उठाया गया था। अधिकार हाथ से जाते देख दातो और दासो का उत्तेजित होना स्वाभाविक ही था। अतः दातो अपनी पृथक गद्दी बनाकर खडूर साहिब आ बैठा और घोषणा करदी कि अमरू तो बूढ़ा है और मेरा सेवक है। मैं साहिबजादा गुरु जी का अंश और गुरयाई का अधिकारी हूं। परन्तु गुरु अमरदास जी की कीर्ति दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ने लगी और अब आपने गोयन्दवाल मे रहना प्रारम्भ कर दिया था। एक दिन किसी व्यक्ति ने दातो जी से जाकर कहा कि जिसे आप अपना नौकर कहते है अमर दास जी का गोयंदवाल मे बड़ा मान है। प्रतिदिन सिखों का बेअन्त धन उनकी भेंट मे चढ़ता है वह तो राज कर रहे हैं। यह सुनकर दाता गोयंदवाल पहुंच गया और गुरु जी के पास वैभव एवं सज धज देखकर क्रोधित होकर अपशब्द बोलने लगा कि कल तो तू हमारे घर का पानी भरता था आज गुरु बन बैठा है ऐसा कह कर गुरुजी का हाथ पकड़ सिंहासन से नीचे लात मारकर गिरा दिया। इस घटना से भी पता चलता है कि इस झगड़े और फूट का कारण गद्दी से प्राप्त होने वाला धन एवं मान ही था।

तलवंड और सत्ता रबाबी दो व्यक्ति गुरु अगददेव जी के दीवान मे शब्द कीर्तन सुनाया करते थे एक बार उन्होंने गुरुजी से पांच सौ रुपया अपनी लड़कियों के विवाह के लिये मांगा। गुरुजी ने वैसाख मास मे देने का कहा तो तलवंड बोला—हम इतनी प्रतीक्षा नहीं कर सकते हमें रुपया शीघ्र मिलना चाहिये चाहे उधार लेकर दो। गुरु जी ने समझाया कि उधार लेना ठीक नहीं है इस पर उन्होंने गुरुजी को अपमानजनक कठोर शब्दों में कहना प्रारम्भ कर दिया कि हमने तुम्हारा यश गा-गाकर तुम्हें इतना प्रसिद्ध किया कि यदि ऐसा न करते तो चढ़ावा लोग न चढ़ाते। पश्चात् दोनों अप्रसन्न होकर चले गये। उन्होंने दीवान मे आना और कीर्तन करना छोड़ दिया। इस घटना से भी यही सिद्ध होता है कि गुरुदरबार मे कीर्तन करने वाले रागी भी गुरुयाई को धन और मान का साधन गुरुडम ही समझते थे और यही पारस्परिक फूट का कारण था।

आगे चलकर गुरु अमरदास जी ने भी गुरुयाई अपने पुत्रों को न देकर अपने दामाद रामदास जी को उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया। इससे आपके पुत्र घोर विरोधी बन गये। वैसे गुरुजी को पूर्व ही यह निश्चय था कि मोहन और मोहरी दोनों पुत्र रामदास जी को कष्ट अवश्य देंगे। अतः गुरु अमरदास जी ने गुरु रामदास जी को आदेश दिया कि सिखों के लाभ के लिए गोयंदवाल छोड़कर कहीं अन्यत्र स्थान खोज लेवें और एक नगर बसा लेवें। अन्ततः विरोध से घबराकर गुरु रामदास जी ने अमृतसर बसाया। गुरु पुत्र अपनी गद्दी बनाकर गुरुडम चलाते रहे अतः आज भी भले साहिबजादे अपने पृथक सिख बनाकर उनके गुरु बने हुए हैं और कार भेंट प्राप्त करते हैं।

चौथे गुरु रामदास जी ने गुरुयाई का उत्तराधिकार रखा तो घर मे ही परन्तु बड़े लड़के पृथीचन्द को न देकर छोटे पुत्र अर्जुनदेव को स्थानीवत् नियुक्त किया जिससे पृथीचन्द विरोधी होकर आजीवन मुस्लिम राज्य कर्मचारियों से मिलकर गुरु अर्जुनदेव जी के विरुद्ध भड़कता रहा। मैकालिफ साहिब और प्रतापसिंह ज्ञानी ने भी इस बात का समर्थन किया है कि पृथीचन्द और उसका लड़का मेहरबान, गुरु अर्जुनदेव जी के घोर विरोधी थे। राज्य ने उन्हें मालवे मे कोठा ग्राम जागीर मे दे दिया था जिससे भाइयों मे परस्पर फूट रहे। आगे चलकर यही फूट गुरु अर्जुनदेव जी के बलिदान का कारण बनी थी। यह भी गद्दी का ही झगड़ा था।

जैसा कि ऊपर लिखा है कि बाबा गुरुदित्ता जी गुरु हरगोविन्द जी के पुत्र थे जिन्हें गुरु जी ने बाबा श्रीचन्द के अर्पण कर दिया था पश्चात् वे उदासीमत की गद्दी के उत्तराधिकारी बने। बाबा गुरुदित्ता जी के पुत्र धीरमल जी गुरयाई लेना चाहते थे किन्तु उनकी यह अभिलाषा पूरी न हो सकी। गुरु हरगोविन्द जी गुरुगद्दी बाबा गुरुदित्ता के छोटे पुत्र हरराय जी को देना चाहते थे। अतः धीरमल ने अपनी पृथक गुरुगद्दी स्थापित कर ली। गुरु अर्जुनदेव जी का लिखवाया हुआ ग्रन्थ साहिब इन्हीं के अधिकार मे था। विरोध के कारण यह मुगल राज्य मे जा मिला। एक बार जब मुगल सेना ने करतारपुर को घेर लिया था तो बाबा धीरमल ने अपने दादा गुरु हरगोविन्द जी के विरुद्ध गद्दारी की थी। पहले तो यह माता जी को कहते रहे कि गुरु जी को मुगलों के विरुद्ध युद्ध नहीं करना चाहिए परन्तु युद्ध के दिनों मे इन्होंने सूबा जालन्धर को पत्र लिखा था कि मैं तुम्हारा साथी हूं। गुरु जी को इस पत्र का पता चल जाने से धीरमल की इच्छा पूरी न हो सकी। गुरुगद्दी के कारण ही बाबा धीरमल सातवें आठवें और नवें गुरुओं के विरुद्ध जीवनभर संघर्ष करता रहा। एक बार इन्होंने गुरु तेगबहादुर जी पर बन्दूक से आक्रमण करके उनका कन्धा घायल कर दिया था। सारांश यह है कि गद्दी की आय से प्राप्त धन एवं मान ही परस्पर की फूट का कारण बन रहे और गुरुपुत्र सदा मुगलराज्य का साथ अपने सगे भाइयों के विरुद्ध देते रहे। ठीक ही कहा है— स्वार्थी दोष न पश्यति

चाणाक औरङ्गजेब ने सातवें गुरु महाराज जी को पत्र लिखा कि वह देहली आकर मिलें। गुरुजी ने स्वयं न जाकर अपने बड़े पुत्र रामराय को भेज दिया। देहली दरबार मे औरंगजेब ने रामराय से पूछा कि तुम्हारे गुरुग्रन्थ मे इस्लाम के विरुद्ध लिखा है। रामराय शाही रौब मे आ गया। उसने उत्तर दिया—बादशाह सलामत ग्रन्थ साहिब मे मिट्टी मुसलमान की शब्द नहीं अतः मिट्टी बेईमान की लिखा है। औरंगजेब तो सुनकर खुश हो गया परन्तु गुरुजी और सिख शब्द के उलटने पर उत्तेजित हो उठे। रामराय का गुरयाई का अधिकार छीन लिया गया। तब गुरुगद्दी पांच वर्ष के नाबालिग पुत्र गुरु हरकृष्ण जी को दी गई। इस निर्णय को सुनकर रामराय लाहौर आकर मुगल राज्याधिकारियों से मिल गुरु गद्दी प्राप्त करने के लिये हर सम्भव उपाय करने लगा उसने बाबा धीरमल जी को भी पत्र लिखा गुरुजी से कहे कि गुरुयाई मुझे दी जाय अन्यथा भयंकर परिणाम निकलेगा। औरंगजेब ने परस्पर फूट डालने के लिए रामराय को डेरादून (वर्तमान देहरादून) मे जागीर देदी और सज्जादानशीन का पद और खिताब प्रदान किया। रामराय ने अपनी पृथक् गद्दी स्थापित कर आयुभर गुरु घर का विरोधी बना रहा। इस फूट का कारण भी धन और मान ही था।

ज्ञानी लालसिंह तवारीख खालसा केअनुसार आनन्दपुर के किले मे दशमगुरुगोविन्दसिंह जी की बड़ी दुखद अवस्था थी। वे धीर और वीर थे किला छोड़ना नहीं चाहते थे पर सिख ठहरना नहीं चाहते थे बाहर से सहायता की भी आशा न थी बाहर मित्र कोई न था बहुत से सिख छोड़कर चल गये थे। शेष सिखों ने भी त्यागपत्र दे अपने घरों को लौट गये कि तू हमारा गुरु नहीं है और न हम तुम्हारे सिख हैं। फूट के कारण गोविन्दसिंह को किला छोड़ना पड़ा विवश होकर आखिर करते भी क्या? सरसा नदी पर बहुत से सिख मारे गये। खालसा चमकौर मे समाप्त हो गया। जिस वीर कलगीधर ने औरंगजेब के राज्य की जड़ें हिला दी थी उसे अब प्राण बचाने भी कठिन हो गये। घर की फूट के कारण विवश उन्हें दक्षिण की ओर जाना पड़ा।

बहुत से सिख सरहिन्द के नवाब के पास नौकर हो गये थे। सहसा वीर बन्दा वैरागी को मैदान मे आया हुआ देख मुगल बादशाह ने उपहास किया कि एक गुरु की तो दक्षिण मे दुर्गति हो रही है एक यह भी दूसरा आया है अब इसकी भी खबर ली जायेगी। सिखों को बुरा लगा नौकरी छोड़ वैरागी के साथ मिल गये। वीर वैरागी ने मुगलों के छक्के छुड़ा दिये। बादशाह ने खालसा को लालच देकर साथ मिला लिया। समझाया कि बन्दा से कहो मुगलों के साथ दुश्मनी न करे बाबे की और बाबर की एक बात थी। वैरागी फिसाद की जड़ है। आप अमृतसर मे बैठ बिठाये दस हजार रुपये मुझसे ले लो। लोभ मे आकर सिखों ने विष का प्याला पी लिया। बादशाह की मनचाही हो गई। अब अपने ही एक-दूसरे की जान के ग्राहक बन गये। अन्ततः आपसी फूट के कारण वह मनहूस दिन भी देखना पड़ा जब वैरागी को बन्दी बनाकर उसके बच्चे को कत्ल करके दिल निकाल वैरागी के मुंह मे ठूंसा गया गर्म चिमटों से खाल नोची गई और उसका एक एक अङ्ग काटा गया। क्या सिख अब भी इतिहास से शिक्षा ले सकेंगे? आपसी फूट को त्याग देशहित के लिए सोचेंगे? ●

विचार-विमर्श—

सृष्टि की आयु

(ब्र० विरजानन्द दैवकरणि, गुरुकुल झज्जर)

सृष्टि की उत्पत्ति को कितना समय व्यतीत हो गया है, इस विषय में आर्यविद्वान् पर्याप्त समयसे विभिन्न मतोंका आश्रय पकडे हुये हैं कुछ विद्वान् ऋषिदयानन्दसरस्वती द्वारा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका मे वर्णित काल गणना को सही मानते हैं और उसमे परिवर्तन करने की कुछ भी आवश्यकता अनुभव नही करते। इसके साथ अनेक पण्डितो का यह कथन है कि महर्षि द्वारा निर्दिष्ट गणना मे सन्ध्या और सन्ध्याशो का काल जुडने से रह गया है। अब उसके जोडने से सही गणना का ज्ञान हो जाता है। इस लेख द्वारा इसी विषय मे कुछ लिखने का प्रयत्न किया गया है।

शतंतेऽयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः ।
इन्द्राग्नी विश्वेदेवास्तेऽनुमन्यन्तामहृणीयमानाः ॥ अथर्ववेद ८। ४। २१ ॥

इस मन्त्र के अनुसार सृष्टि की आयु चार अरब बत्तीस करोड वर्ष निश्चित की जाती है। ये वर्ष सृष्टि रचना के प्रारम्भ से लेकर उसके सूक्ष्म तत्त्वो मे लीन होने तक के हैं। सृष्टि के बनने मे तीन महायुग अर्थात् एक करोड, उनतीस लाख साठ हजार वर्ष लगते हैं। तदनन्तर सृष्टि बनकर तैयार होने पर मनुष्य तथा वेदो की उत्पत्ति हुई। एक बार इनकी उत्पत्ति होने पर निरन्तर चार अरब उनतीस करोड, चालीस लाख अस्सी सहस्र वर्ष तक इनकी विद्यमानता रहती है। पुन सृष्ट्युत्पत्ति की तरह ही प्रलय मे भी तीन चतुर्युगियो जितना समय लग जाता है इस प्रकार सृष्टि के बनने स्थित रहने और बिगडने का काल मिलकर चार अरब बत्तीस करोड वर्ष हुआ करता है। कृत त्रेता द्वापर और कलियुग चारो युगो के समय को मिलाकर तेतालीस लाख बीस सहस्र वर्षो की एक चतुर्युगी (महायुग) मानी जाती है। ऐसे इकहत्तर महायुगो का एक मन्वन्तर होता है इसप्रकार के चौदह मन्वन्तरो अर्थात् नौ सौ चौरानवें महायुगो तक इस सृष्टि मे मनुष्य तथा वेदो की स्थिति निर्बाध रूप से बनी रहती है। एक सृष्टि मे एक सहस्र चतुर्युगिया होती हैं जिनमे से तीन तो सृष्टि के बनने मे तथा तीन बिगडने मे लग जाती हैं शेष के लिये पहले निर्देश कर ही दिया है।

कतिपय विद्वज्जन चौदह मन्वन्तरो के अन्त की चौदह तथा एक सर्ग के आदि की इन पन्द्रह सन्धियो के काल को मन्वन्तरो के काल मे मिलाकर सृष्टि की आयु की सख्या पूरी किया करते हैं। एक सन्धि का काल सत्रह लाख अट्ठाइस सहस्र वर्ष अर्थात् सतयुग के बराबर माना जाता है। मेरे विचार से दो मन्वन्तरो के मध्य सन्धिकाल कोई पृथक नही रह जाता जिसे पुन जोडा जाय और महर्षि दयानन्द ने नही जोडा हो। एक दिन रात मे आठ प्रहर अथवा चौबीस घटे होते हैं इन चौबीस घटो मे प्रात साय की सन्धिवेला के दो घण्टे भी मिले हुए हैं। जिस प्रकार प्रत्येक चौबीस घण्टे के अनन्तर दूसरा नया दिन (रात्रि सहित) तीस दिन के पश्चात् नया मास और प्रत्येक बारह महीने के बाद नया वर्ष बिना किसी पृथक सन्धिकाल की अपेक्षा के निरन्तर आता रहता है ठीक इसी प्रकार प्रत्येक तीस करोड सतसठ लाख और बीस सहस्रो के पश्चात् बिना किसी पृथक् सन्धिकाल की अपेक्षा किये दूसरा नया मन्वन्तर आता रहता है एक के बाद दूसरा दूसरे के पश्चात् तीसरा तीसरे के अनन्तर चौथा इस प्रकार चौदह मन्वन्तर क्रमश निरन्तर बीतते जाते हैं। यदि ऐसा नही है तो पृथक रूप वह सन्धिकाल कहा से जोडा गया इसी प्रकार जलप्लव की बात है। दो मन्वन्तरो के बीच सत्रह लाख अट्ठाईस सहस्र वर्ष तक जलप्लव माना जाय तो इतने वर्षो तक जीव आदि सृष्टि तथा वेद आदि ज्ञान अथवा पुस्तक कहा रहे? ब्राह्मणग्रन्थ रामायण महाभारत बाइबिल जिन्दअवस्था आदि मे जलप्लव का जो वर्तमान रूप मिलता है। यह विचारणीय मत है। कई महानुभाव प्रत्येक मन्वन्तर के प्रारम्भ मे नई सृष्टि का होना मानते हैं सो वह भी अनुपपन्न है। ऐसा स्वीकार करने पर स्वायम्भुव मनु की बनाई मनुस्मृति आज पर्यन्त कैसे रह सकती है जिसे कि महर्षि दयानन्द जी स्वायम्भव मनु की ही मानते है।

हा! प्रत्येक मन्वन्तर के प्रारम्भ मे आकाश को छोडकर शेष चार पचभूतो मे नवीनशक्ति अवश्य आती है किन्तु इसका आशय यह नही कि लाखो वर्षों तक सारी पृथ्वी जल से भरी रहे और सब प्राणी नष्ट हो जाये।

सन्धिकाल के मानने मे आपत्ति

पहली बात तो यह है कि महर्षि दयानन्द जी ने ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका के वेदोत्पत्ति मे सन्ध्या और सन्ध्याशो के काल का कही भी निर्देशन नही किया। यदि दुर्जन तोष न्याय से मान ले कि सख्या के जोड मे सन्धिकाल जुडना छूट भी गया तो सस्कृत भाष्य मे कही पर तो उसका अर्थ करते अथवा कुछ निर्देश करते जबकि शेष श्लोकों को उन्होने विस्तार से खोला है।

ग्रहर्क्षदेवदैत्यादि सृजतोऽस्य चराचरम्।
कृताद्रिवेदा दिव्याब्दा शतघ्ना वेधसो गता ॥ (सू० म० अधि० २४)

इस श्लोक से सूर्यसिद्धान्त मे यह दर्शाया गया है कि सृष्टि के बनने मे एक करोड सत्तर लाख चौंसठ सहस्र वर्ष लग जाते हैं। इसके पश्चात् चार अरब बत्तीस करोड वर्ष तक सृष्टि रहती है और प्रलय होने मे सतयुग जितना समय लग जाता है। इस से कई लोग यह सिद्ध करते हैं कि किसी वस्तु के बनने में अधिक समय लगता है और बिगडने मे कम अतएव यहाँ दोनो कालो मे इतना अन्तर है किन्तु ऐसा नही होता। निर्माण मे अधिक समय का लगाना अल्पज्ञ मनुष्यो का काम है। क्योकि मनुष्य अल्पज्ञ होता है। किसी वस्तु को बनाते बनाते तथा उसमे परिष्कार करते-करते बहुत समय लग जाता है। कही कोई न्यूनता दिखलाई तो दूसरी बार उसे ठीक कर लेता है पुन तीसरी और चौथी बार। यहा तक सदा वह एक वस्तु मे नये-नये परिवर्तन करता रहता है और नष्ट करना चाहता है तो उसे शीघ्र ही कर देता है।

किन्तु भगवान् ऐसा नही करता। वह सर्वज्ञ है। वह जानता है कि किस प्रकार सूक्ष्म प्रकृति को स्थूल विकृति के रूप मे लाया जाना चाहिए तथा उसमे किस गति से क्रिया पैदा की जाय जिससे उचित समय पर वस्तु बनकर तैयार हो जाये। इसी प्रकार उसके नष्ट करने मे भी ईश्वर उतना ही समय लगाता है जितना कि बनाने मे। जिस गति तथा तरीके को वह निर्माण काल मे अपनाता है उसी को प्रलय करते समय अपनाता है अत ऐसा नही हो सकता कि सृष्टि के बनने तथा बिगडने मे एक-सा समय न लगकर भिन्न भिन्न लगता हो।

वैदिक सिद्धान्तो मे माना गया है कि जब तक ब्रह्मलोक की शतवर्ष की आयु पूरी नही होती तब तक जीवमुक्ति मे रहता है। इस काल का परिगणन इस प्रकार किया जाता है। सृष्टि की विद्यमानता का नाम ब्राह्मदिन है तथा प्रलय का नाम ब्राह्मरात्रि है। इस प्रकार के तीस अहोरात्रो का नाम एक मास हुआ ऐसे बारह महीनो का एक वर्ष तथा ऐसे ऐसे सौ वर्षो का एक परान्तकाल होता है। इसका समय इकतीस नील, दस खरब चालीस अरब वर्ष होता है। सृष्टि के बनन-बिगडने मे कुछ न कुछ समय अवश्य चाहिये वह समय चार अरब, बत्तीस करोड वर्षं के अतिरिक्त होगा। ऐसा मानने पर जीव का मुक्तिकाल बढ जायेगा। यदि आप मुक्तिकाल के बढने मे आपत्ति मानेंगे तो पुन सृष्टि के बनने तथा बिगडने का काल क्षणमात्र ही मानना पडेगा जो कि वैदिक मर्यादा के विपरीत है। इसका कोई समाधान चाहिये?

जितने वर्ष तक सृष्टि मे मनुष्य तथा वेदो की विद्यमानता रहती है वह काल चौदह मन्वन्तर का होता है। इसके अतिरिक्त शेष छ महायुग सृष्टि के बनने-बिगडने मे लग जाते हैं। इसके लिये महर्षि दयानन्द जी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के वेदोत्पत्ति विषय मे लिखते हैं— ते चैकस्मिन् ब्राह्मदिने १४ चतुर्दशभुक्तभोगा भवन्ति। एक-सहस्र १००० चातुर्युगानि ब्राह्मदिनस्य परिमाण भवति। 'ब्राह्मया रात्ररपि तावदेव परिमाण विज्ञेयम्। इस स्थान पर चतुर्दशभुक्तभोगा पद विशेष ध्यान देने योग्य है जीव लोग जितने दिन कर्मफलादि का भोग करते हैं वह काल चौदह मन्वन्तर अर्थात् चार अरब उनतीस करोड चालीस लाख अस्सी सहस्र वर्ष होता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सृष्टि और वेदोत्पत्ति का काल एक अरब छियानबे करोड आठ लाख बावन सहस्र नौ सो छियत्तर वर्ष माना है। जब सृष्टि बनकर तैयार हो गई थी उस समय से यह काल माना गया है। इसकी गणना निम्न प्रकार है— सृष्टि की कुल आयु—४३२००००००० वर्ष (आदि से अन्त तक) मनुष्य तथा वेदो की स्थिति का समय=४३२००००००० वर्ष

—२५९२०००० [सृष्टि के बनने व बिगडने का काल]
४२९४०८०००० वर्ष

महर्षि दयानन्द तक वेद-सृष्टि तथा मनुष्यादि जीवो की उत्पत्ति का समय— एक मन्वन्तर का कुल समय=३०६७२०००० वर्ष। अत स्वायम्भव स्वारोचिष औत्तमि तामस रैवत और चाक्षुष इन अतीत छ मन्वन्तरो का समय
=१८४०३२०००० वर्ष

वैवस्वतमनुके सत्ताईस महायुगो का अतीत समय=११६६४०००० ,
अट्ठाईसवी चतुर्युगीके सत-त्रेता द्वापर तीन युगो का समय=३८८८००० ,
सवत् १९३३ तक कलियुग का अतीत समय = ४९७६ ,,
योग १,९६,०८,५२,९७६ वर्ष

ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के अनुसार यह गणना है। सवत्

(शेष पृष्ठ १० पर)

भारत देश महान् है

उत्तर में उत्तुंग हिमालय ऊँची जिसकी शान है ।
कलकल करती गंगा बहती ऊँचा उद्गम स्थान है ।।१।।
अटवी शस्य भरी पूरी है कलरव जिसकी जान है ।
मृग स्वच्छन्द मृगराज विचरते और करी महान् है ।।२।।
गौतम कपिल कणाद जहां की हस्ती उच्च महान् है ।
वर्णी शिष्य दयानन्द स्वामी करता जन कल्याण है ।।३।।
राम कृष्ण प्रताप शिवा की कसी बाँकी आन है ।
विधिवेत्ता जहा मनु सरीखा चाणक्य नीतिमान् है ।।४।।
विपद् ग्रस्त जब देश हुआ तो भामाशाह श्रीमान् है ।
वेदोका मान है और वेदोका गान है मेरा देश महान् है ।।५।।

इन्दु शास्त्री ●

गताग से आगे—

किसान



योगेन्द्र पाण्डेय

●

रज कण रंजित देह तुम्हारी नव घन सी लगती है प्यारी ।
पाहन सदृश गठित तव काया रूप मनोहर सबको भाया
बनी हुई तव रान किसान । हे जगती की जान किसान ।।

राज काज तुमसे चलता है कारबार तुझसे पलता है ।
पय-पीयूष दे देती गया तुम बिन पार न जग की नया
हो तुम ही भगवान् किसान हे जगती की जान किसान ।

रहिला मूँग व मटर उगाते अरहर उर्द आदि उपजाते
गेहूँ जौ औ मकई बोते सन राई तिलहन सब होते
दे कपास औ धान किसान हे जगती की जान किसान ।।

ढोरो के सँग जाते हो तुम वन वन उन्हे चराते हो तुम ।
सन्ध्या समय लौट घर आते अपने खात उन्हे खिलाते
इससे तेरे पैर पिरान हे जगती की जान किसान ।।

ढोल मजीरे पर जुट जाते नित सध्या को मंगल गाते ।
दिन की मेहनत भूल गये तुम राग रंग मे फूल गये तुम
मद्यादिक का किया न पान हे जगती की जान किसान ।।

* * * * * * * * *

(पृष्ठ ४ का शेष)

ऋग्वेद ४ ५८ ३ का भावार्थ — हे मनुष्यो अस्मिन् परमेश्वर व्याप्ते जगति यज्ञस्य चत्वारो वेदा नामाख्यातोपसर्गनिपाता विश्वतजसप्राज्ञतुरीयधर्मार्थकाममो क्षाश्चेत्यादीनि शृङ्गाणि त्रीणिसवनानि त्रय काला कर्मोपासनाज्ञानानि मनोवाक शरीराणि चेत्यादीनिपादा द्वौ व्यवहारपरमार्थौ नित्यकार्य्यौ शब्दात्मानावुदगयन प्रायणीया अध्यापको उपदेशको चेत्यादीनि शिरासि गायत्र्यादीनि सप्त छन्दासि सप्त विभक्तय सप्त प्राणा पञ्च कर्मेन्द्रियाणि शरीरमात्मा चेत्यादया हस्तास्त्रिषु मन्त्र ब्राह्मणकल्पेषूरसिकण्ठ शिरसि श्रवणमनननिदिध्यासनेषु ब्रमचय सुकर्मसुविचारेषु सिद्धोऽय व्यवहारो महान सत्कतव्यो मनुष्यषु प्रनिष्टोस्तीति सव विजानन्तु ।। हे मनुष्या इस परमेश्वर से व्याप्त ससार मे यज्ञ के चार वेद और नाम आख्यात उपसग और निपात विश्व तजस प्राज्ञ तुरीय और धम अथ काम और मोक्ष आदि शृङ्गा हैं तीन सवन अथात् त्रकालिकयज्ञ कम तीन काल कम उपासना ज्ञान मन वाणी शरीर इत्यादि पाद हैं दो व्यवहार और परमार्थ नित्यकार्य शब्द स्वरूप उदगयन और प्रायणीय अध्यापक और उपदेशक इत्यादि शिर हैं गायत्री आदि सात छन्द सात विभक्तिया सात प्राण पाच कर्मेन्द्रिया शरीर और आत्मा इत्यादि हस्त हैं । तीन मन्त्र ब्राह्मण कल्प और हृदय कण्ठ शिर म श्रवण मनन निदिध्यासनो मे ब्रह्मचय श्रष्ठकम उत्तम विचारो के बीच सिद्ध यह व्यवहार महान सत्कतव्य और मनुष्यो के बीच प्रविष्ट है यह सब जानें ।।

पाठक बन्धुवग देखेंगे कि ऋषि दयानन्द ने अपने पदार्थ से भावार्थ मे और विशेष लिखी है । साथ ही ऋषि ने वेद के प्रत्येक पद के भावार्थ करते हुए इत्यादि पद का प्रयोग किया है । इसका यह स्पष्ट भाव है कि ऋषि वेदमन्त्रार्थों की सीमा नही बाधते प्रत्युत अन्य अर्थों के लिये भी अवकाश प्रदान करते हैं जिससे स्वाध्याय प्रिय विद्वान् वेदमन्त्रार्थ के अनुकूल अन्य अधिक भावार्थों को ग्रहण कर सकते हैं ।

—(सह सम्पादक)

विज्ञापन दाताओं को सूचना

शिवरात्री के अवसर पर आर्यमर्यादा का विशेषांक स्वमनतव्यामन्तव्य २०×३०/१६ पुस्तक साइज मे भारी सख्या मे छापा जा रहा है जो कि सारे भारतवर्ष मे भेजा जायगा । विज्ञापन दाताओ से निवदन है कि इस अवसर पर अपना विज्ञापन भेजकर लाभ उठाव । इस विशेषांक के विज्ञापन रेट निम्न प्रकार होगे ।

टाइटल का पूरा पृष्ठ	१००)	अन्दर का पूरा पृष्ठ	७०)
आधा पृष्ठ	६०)	आधा पृष्ठ	४०)
चौथाई पृष्ठ	३५)	चौथाई पृष्ठ	२५)
कम से कम स्थान के लिये	१०)	कम से कम	८)

नोट —विज्ञापन शुल्क प्रत्येक अवस्था मे ८ फरवरी तक मनीआर्डर द्वारा कार्यालय मे पहुचना आवश्यक है ।

व्यवस्थापक —आर्यमर्यादा १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली १

प्रश्नोत्तर

(प्रश्न) यदि कोई आदमी कोई पाप कर देता है और उसको राजकानून के आधीन दण्ड दिया जाता है, तो फिर उसके मरने के बाद उसको ईश्वरीय नियम के अनुसार दण्ड मिलेगा या यही समाप्त हो जावेगा—श्री ओम्प्रकाश अध्यापक, सुदकान कला।

(उत्तर) मनुष्य कम करने मे अपने सामर्थ्यानुसार स्वतन्त्र है परन्तु उस कम का फल भोगने मे ईश्वर की व्यवस्था से परतन्त्र है। परमेश्वर जीव के कर्मों का फल-चेतन=मनुष्य पशु पक्षी और सरीसृप आदि तथा वायु, अग्नि जल और पृथिवी के भौतिक पदार्थों द्वारा भुगतवाया है। ईश्वर सर्वज्ञ सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान् सर्व-नियन्ता सर्वान्तर्यामी और सदा वर्तमान रहता है। परमेश्वर की कमफलव्यवस्था से एक जीव स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करता रहता है और दूसरा जीव परतन्त्रता से फल भोगता रहता है। दूसरे जीव के कर्म अथवा भौतिक पदार्थ उस जीव को कर्मफल भुगवाने मे निमित्त होते हैं। जीव को पूर्वजन्म मे किये हुए कर्मों तथा वर्तमान जन्म मे किये हुए कर्मों का फल वर्तमान जन्म और परजन्म मे मिलता रहता है। कमफल भुगवाने का ठीक ठीक ज्ञान ईश्वर को ही है। जीव स्वभाव से अल्प होने का कारण कर्म का ज्ञान भी उसको पूरा नही होता, फिर फल का ज्ञान तो उसका हो ही नही सकता। वह बात व्यक्तिगत कम और फल की है।

जब न्यायाधीश ने किसी मनुष्य को राजकानून से दण्ड दिया तो न्यायाधीश भी अल्पज्ञ होने से यह पूर्णरूप मे नही जान सकता कि अदालत मे पुलिस द्वारा पेश किये गये मनुष्य ने कितना किस रूप मे और किस अवस्था मे पाप=अपराध=दोष किया है। पुलिस जुर्म लगा देती है। नही कह सकते कि पुलिस ने जाच म ठीक कार्यवाही की है अथवा जाच मे किसी कारणवश अनुचित साधन का प्रयोग किया है अथवा प्रत्यक्षदर्शी लोगो ने सच्च बात पुलिस को बतलाई है अथवा झूठी यह भी नही कहा जा सकता कि अदालत मे साक्षियो ने झूठ बोला है अथवा सच। इससे आगे न्याया-धीश ने भी राज कानून को ठीक ठीक समझा है वा नही। ठीक समझा भी है, तब भी न्यायाधीश ने किसी बाह्य हस्तक्षेप के बिना निर्णय दिया है वा कुछ अन्यथा बात की है। इससे आगे चलकर राजकानून भी तो मनुष्यो का बनाया हुआ है। नही कहा जा सकता कि वह कानून ठीक है अथवा उसमें त्रुटि है। इतना होने पर भी मान लिया जावे कि न्यायाधीश ने अपनी ओर से न्याय दिया परन्तु न्याय उस पर दिया गया है, जो कि उसके सामने मामला रखा गया है। ऐसी दशा मे न्याय ठीक भी हो सकता है और उससे दण्ड ठीक दिया जा सकता है। यदि न्याय मे अधिकता वा कमी रही तो दण्ड मे भी अधिकता वा कमी रह सकती है यदि उस अपराधी को दण्ड ठीक मिला जैसा कि अपराध था तब उसने अपने कार्य का फल पा लिया। यदि अपराध के अनुसार दण्ड नही मिला, तो ईश्वरीय व्यवस्था से उसे अधिकता अथवा कमी के अनुसार दण्ड मिलेगा। कम दण्ड मे आगे फल मिलेगा अधिक दण्ड मे उसके किसी दूसरे किये अपराध का दण्ड ईश्वर की व्यवस्था से सम्मिलित हो जाता है।

यह अत्यन्त ध्यान रखने की बात है कि कम का फल भौतिक रूप मे नही होता जैसे अग छेदन अथवा धन दण्ड। ये दण्ड तो फल भुगवाने मे निमित्त है, साधन है। वास्तविक फल सुख का भोग अथवा दुख का भोग होता। धर्म और राष्ट्र के लिय कानून से प्राण दण्ड मिलने पर भी एक मनुष्य हसता-हसता फासी के तख्ते पर चढ जाता है अथवा गोली खाने के लिय छाती खोल देता है। क्योकि वह जानता है कि धर्म और राष्ट्र सरक्षण अपराध नही है और अदालत दण्ड देती है तब भी वह दुख रूप फल को नही भोगता। दूसरे पक्ष म अपराधी थोडा दण्ड मिलने पर भी बहुत दुख अनुभव करता है। सुख दुख का कारण पुण्य और पाप निश्चित हैं, परन्तु पाप और पुण्य को समझना साधारण कोटि के लोगो का काम नही। अत कानून द्वारा दण्ड की त्रुटि की पूरी फलव्यवस्था ईश्वर के ही आधीन है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

(पृष्ठ ८ का शेष)

१९३३ विक्रमी मे यह ग्रन्थ बन रहा था। तब से लेकर स० २०२५ वि० तक बानवें (९२) वर्ष बीत गये। उपर्युक्त सख्या मे ९२ मिलाने से १९६०८५३०६८ इतने वर्ष आज तक वेद तथा मनुष्यादि सृष्टि की उत्पत्ति को हो गये हैं और अभी ४२९४०८०००–१९६०८५३०६८=२,३३२ २६९३२ वर्षों का भोग होना शेष है। इस प्रकार सृष्टि बनने का काल आज तक वेद तथा मानवोत्पत्ति का अतीत तथा अवशिष्टभोग्य समय और सृष्टि के बिगडने का काल ये चारो मिलकर ४३२०००००० वर्ष ठीक बैठ जाता है।

इन विचारो का विद्वान् लोग पढकर तथा सम्यक् निर्णय करके जनता के सम्मुख रक्खें, मैंने अपना विचार प्रस्तुत कर दिया है। यह प्रसग सत्यासत्य के निर्णय का है न कि हठ और दुराग्रह करने का।



(भैरवदत्त शुक्ल)

सदा चाहता पंथ पर मुस्कुराना

उपल-पात-उत्पात नभ कर रहा है, हत प्रभ बना भानु का तनु बिचारा।
हुई मद हैं ज्ञान की रश्मियाँ सब, बही भूमि पर पातकी पक-धारा।
नियति ने कुटिल कट पथ पर बिछाये, न पर चाह कर भय हृदय मे बिठाना।
सदा चाहता पथ पर मुस्कुराना।
सियारो-उलूको ने चेतावनी दी, निशा सुन्दरी भी खडी आदि पथ पर।
कही शैल-खडो ने डपटा-डराया, खडे झाड-झखाड अभियान अथ पर।
तिमिर भी जगत् पर है सत्ता जमाये, न पर चाह कर कायरो को बुलाना।
सदा चाहता पथ पर मुस्कुराना॥
निराशा-पिशाची ने देकर भुलावा प्रणय का प्रलोभन न थोडा दिखाया।
शुभाशा-दुलारी न आ पास पायी, समय ने उसे क्रूर काडा दिखाया।
उदासी ने सकेत लाखो दिखाये न पर चाह कर सौम्य आशा भुलाना।
सदा चाहता पथ पर मुस्कुराना॥
कहा रोक मरि ने—'किधर जा रहे हो, कहा नरि ने—'मेरा न कोई सहारा।
बनोगे अभी भक्ष्य मेरे पथिक ! तुम', उछल-कूद कर खल मकर ने पुकारा।
भँवर ने सभी अग नर्तन दिखाये न पर चाह कर पैर पीछे हटाना।
सदा चाहता पथ पर मुस्कुराना॥

● ● ● ● ● ● ● ●

(पृष्ठ ६ का शेष)

है उसका पालन करने के लिए उस पर मर मिटने तक के लिए उसके अनुयायी तैयार रहते हैं। आपका सखा आध्यात्मिक गौओ से अन्त प्रकाश की किरणो से भी जग-मगाने लगता है। वह स्वय कर्तव्याकर्तव्य के विवेक से युक्त होकर अन्यो को भी विवेक तथा आलोक प्रदान करता है। साथ ही आपके सखा को पृथिवी रूपी गौ भी प्राप्त हो जाती है, वह सारी वसुधा को अपना कुटुम्ब मानने लगता है। वह चाहे तो सारी वसुधा का चक्रवर्ती राज्य तक प्राप्त कर सकता है।

हे महादानी ! एक और बहुमूल्य वस्तु जो आपके मित्र को प्राप्त होती है वह है त्वरित कर्म से अनुप्राणित आयु। ज्ञान और कर्म सफल जीवन के दो सूत्र हैं। जो केवल ज्ञान ही ज्ञान का अर्जन करता है तदनुसार कर्म नही करता उसका जीवन एकाकी है। आप अपने सखा को कर्मपरायणता का पाठ पढाते हैं—कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा। वह कर्म करता हुआ जीता है और कर्म करता हुआ ही मरता है। वह मर कर भी अपने कर्मों से अमर हो जाता है।

हे राजाओ के राजा ! आपका सखा 'चाद' बन जाता है। चन्द्र के समान सौम्य, शीतल, मधुर, आह्लादक, आकर्षक, प्रकाशमय तथा प्रकाशक हो जाता है। जैसे गगन मे सितारो की सभा के बीच चाँद चमकता है, वैसे वह सब जनो की सभा मे भासमान होता है। लोग उसे अपना नेता बनाते हैं, ऊँचे आसन पर आसीन करते हैं, और वह चाँद के समान सबको प्रकाश देता हुआ, चाँदनी बखेरता हुआ जीवन यापन करता है।

हे प्रभो ! हमे भी अपना सखा बनने का सौभाग्य प्रदान करो। ●

● रिजर्व सीट

एम. पी. नहीं तो एम. एल. ए. तो मैं भी बन जाता।
समूल मिटा इस आपाधापी को नया राज लाता॥
पर हताधिकार मैं कैसे इलेक्शन लड़ पाता।
मेरी सीट रिजर्व है कांग्रेस है केवल हरिजन भ्राता॥

हनु शास्त्री

स्वर्गीय स्वा० समर्पणानन्द जी सरस्वती।

आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध प्रतिभाशाली शास्त्रार्थ महारथी महाविद्वान् और कवि स्वामी समर्पणानन्द जी सरस्वती (भू०पू० श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड) के देहावसान का दुःखद समाचार सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। इस समय आर्य जगत् में वेद-शास्त्र, काव्य, पुराणादि समस्त संस्कृत पर अगाध पाण्डित्य, मौलिकता और प्रतिभा, कविता, शास्त्रार्थ पटुता, ओजस्विनी वक्तृता आदि में वे अनुपम थे तो इसमें जरा भी अत्युक्ति न होगी। उनका अथर्ववेद का संस्कृतभाष्य और शतपथ ब्राह्मण का हिन्दीभाष्य मौलिक विद्वत्तापूर्ण और अद्भुत था। खेद की बात है कि ये दोनों ग्रन्थ अपूर्ण ही रह गये तो भी जितना भाष्य वे कर गये उसके प्रकाशन की शीघ्र व्यवस्था होनी चाहिये। ताकि विद्वत्मण्डली उनसे लाभ उठा सके। शास्त्रार्थ महारथी के रूप में उनकी ख्याति अपनी अद्भुत विद्वत्ता और वक्तृतत्व शक्ति के कारण अत्यधिक थी। अभी १४ अप्रैल १९६८ को वे अखिल भारतीय गुरुकुल कांगड़ी स्नातक मण्डल के प्रधान चुने गये थे। मुझे मुख्य उपप्रधान के रूप में प्रधान नियत किया। उनके ग्रन्थों में से कायाकल्प, पञ्चमहायज्ञप्रकाश सोम, महत्सूक्तम्, सप्तसिन्धु व्याख्या आदि विशेष रूप से पठनीय हैं। गुणग्राहकता और आर्य जगत् में उनके अभाव की पूर्ति की चिरकाल तक आशा नहीं प्रतीत होती तथापि आर्यविद्वानों को विशेषतः स्नातक बन्धुओं को चाहिये कि उनके अधूरे छोड़े हुए वेदादिविषयक कार्य की पूर्ति का मिलकर प्रयत्न करें। स्नातक मण्डल की ओर से दिवंगत विद्वच्छिरोमणि मान्य त्यागी, तपस्वी आर्यनेता और सन्यासी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

विद्या के मार्तण्ड मनस्वी, बुद्ध देव जी अस्त हुए।
जग आलोकित किरणों से कर, दिव्य दिवाकर अस्त हुए॥
ओजस्वी वक्ता थे कविवर, प्रतिभाशालि शिरोमणि थे।
अज्ञानात्याचार मिटाते, हाय भानु वे अस्त हुए॥
शतपथ ब्राह्मण श्रुति आथर्वण, भाष्य अधूरा छोड़ गये।
जनता का वह दोष अधूरा, कार्य छोड़ जो अस्त हुए॥
ये शास्त्रार्थ महारथि अनुपम, सिंह समान गरजते थे।
तम अज्ञान मिटाते जग का, विद्या भास्कर अस्त हुए॥
वेद धर्म निष्ठा विक्ता, निर्भयता का अनुकरणीय।
प्रस्तुत करके भव्य दिर्शन, बुद्धदेव रवि अस्त हुए॥

(धर्मदेव विद्यामार्तण्ड)

का० प्रधान अखिल भारतीय स्नातक मण्डल, आनन्द कुटीर, ज्वालापुर।

निम्नलिखित संस्थानों और सज्जनों ने शोक सभा द्वारा श्रद्धांजलि दी। आर्यसमाज नरेला। आर्यसमाज इटारसी (होशंगाबाद) आर्यकुमार सभा गुरुकुल झज्जर (रोहतक) धन्वन्तरी कन्या हाई स्कूल (झंग) रोहतक। श्री मदनजित् आर्य फिरोजशहर, आर्यसमाज हनुमान रोड, नई दिल्ली गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर (मेरठ) आर्यसमाज राजेन्द्रनगर (नई दिल्ली) आर्यसमाज दीवानहाल, देहली, आर्यसमाज नारनौल, आर्यसमाज नया बास देहली,

हिन्दी टाइपिंग का रिकार्ड

कुछ समाचार पत्रों में यह समाचार छपा है कि श्री शांताराम नीलकंठ नीलाखे ने दावा किया है कि वे अपने द्वारा बनाए गए हिन्दी "की बोर्ड" पर ८४ शब्द प्रति मिनट की गति से टाइप कर सकते हैं जब कि हिन्दी टाइप का रिकार्ड ५५ शब्द प्रति मिनट का है। हिन्दी टाइपिंग गति के सम्बन्ध में यह स्पष्ट करना आवश्यक प्रतीत होता है कि केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् द्वारा आयोजित की गई आठवीं अखिल भारतीय हिन्दी टाइपराइटिंग प्रतियोगिता में गत वर्ष उच्चतम गति ६०-६ शब्द प्रति मिनट रही थी। यह गति प्रत्येक अशुद्धि के लिए ५ शब्द काटने के बाद निकली थी। इस समय भारत में अनेक व्यक्ति हैं जो ६० से लेकर ६५ शब्द प्रति मिनट तक की गति से हिन्दी का टाइप वर्तमान कुंजीपटल के टाइपराइटरों पर कर सकते हैं। परिषद् की ओर से यह स्पष्टीकरण इसलिए दिया जा रहा है कि यह भ्रान्ति अनेक क्षेत्रों में विद्यमान है कि हिन्दी टाइपराइटिंग की गति सामान्यतः ३०-३५ शब्द प्रति मिनट होती है और कोई व्यक्ति बहुत उच्च गति से टाइप करने वाला हुआ तो वह ४०-५० शब्द प्रति मिनट की गति से टाइप कर सकेगा। गत वर्ष की प्रतियोगिता में अहिन्दी भाषियों की गति भी ६० शब्द प्रति मिनट के आस पास की रही थी। एक तेलगू भाषी प्रतियोगी की गति ५८-४ शब्द प्रति मिनट थी। अशुद्धियां काट कर निबल गति अनेक प्रतियोगियों की ७५ शब्द प्रति मिनट से अधिक रही है।

(हरीकिशन गुप्ता)

विशेष—प्रतियोगित परिणाम के सम्बन्ध में प्राप्त सूचना सर्वथा कटे हुए टाइप में होने से प्रकाशित नहीं की गई—सम्पादक

जिला आर्योपप्रतिनिधि, बलिया के नाम सन्देश

उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिला बलिया के अन्दर सक्रिय ईसाई मिशनरियों तथा आर्यसमाज की शिथिलता के परिणाम स्वरूप एक गाँव के हजारों नर-नारी शीघ्र ही धर्म परिवर्तन को आतुर हैं। बलिया घनी आबादी वाला जिला है जहाँ पर कोई उद्योग-धंधा आदि नहीं हैं, यहाँ की जनता पूर्णतया कृषि और नौकरी पर जीवनयापन करती है, निर्धनता के इस ताण्डव में ईसाई मिशनरियाँ अपना कृतित्व दिखलाने तथा विस्तार का पूर्ण लाभ उठा रही हैं। रसड़ा तहसील में तीन-चार स्थलों पर ये अपना विशाल अड्डा बनाकर हरिजनों तथा कुछ अन्य जातियों को प्रलोभन के माध्यम से धर्म परिवर्तन को बाध्य कर रही हैं। विद्यालयों पर मुफ्त दूध, गेहू, चावल, सेम का बीज, पनीर, मक्खन आदि वितरित कर बच्चों को मनोविज्ञानतः अपनी ओर आकर्षित करने का कुचक्र रच रही है। रसड़ा नगरपालिका, कोटवारी, जमुआँव, इन्दारा तथा भीमपुरा (समीप नगरा) में ये हजारों हरिजनों का धर्म परिवर्तन करा चुकी हैं।

बलिया तहसील के अन्तर्गत रतसड़ के पास नरऊपुर गाँव के कुछ ब्राह्मण वहाँ के स्थानीय ब्राह्मणों के दुर्व्यवहार के फल स्वरूप शीघ्र ही ईसाई धर्म ग्रहण करने को उत्सुक हैं। हजारों की संख्या में ये ब्राह्मण धनाढ्य हैं किन्तु कतिपय कारणों से ये जाति से बहिष्कृत रहे। स्वजाति में विलय की इन्होंने अनेक चेष्टाएं की परन्तु सब व्यर्थ रहा। आर्यसमाज को इसमें सदल आने की आवश्यकता है जिससे वहाँ के तथाकथित शुद्ध ब्राह्मण समुदाय को उन्हें स्वजाति में ग्रहण करने तथा शुद्धि द्वारा उनको समान स्थान दिया जा सके। वे इस कार्य के लिए प्रचुर मात्रा में धन व्यय करने तथा हर सामाजिक दण्ड को शिरोधार्य करने को सहर्ष उद्यत हैं। ऐसी परिस्थिति में सार्वदेशिक सभा, उपदेशकों, संसद् सदस्यों यथा पं० प्रकाशवीर शास्त्री रघुवीरसिंह शास्त्री, आदि का यहाँ आना अवश्यक है। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, आर्यसमाज बलिया आदि अविलम्ब यहाँ पहुंचकर स्थिति को सुधारें साथ ही ईसाई मिशनरियों का बढ़ता वितान उखाड़ फेकें।

योगेन्द्र पाण्डेय, ग्राम लखौलिया जिला बलिया

आर्यजगत् को शुभ सूचना

आर्य जगत् को यह जानकर हर्ष होगा कि आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध अनुसन्धाता विद्वान् और लेखक डा० भवानीलाल भारतीय का शोध ग्रन्थ ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन आगामी मास में प्रकाशित हो रहा है। इस ग्रंथ पर लेखक को राजस्थान विश्व विद्यालय ने 'डाक्टर आफ फिलासफी' की उपाधि प्रदान की थी तथा आर्य श्रेष्ठि श्री श्री कृष्णलाल जी पोद्दार ने इसके प्रकाशन हेतु २००० रु० प्रदान किया। ३०० पृष्ठों का यह बृहद् ग्रन्थ आर्यसमाज के संस्कृत विषयक सम्पूर्ण कार्य का ऐतिहासिक दृष्टि से मूल्यांकन उपस्थित करता है। प्रत्येक आर्यसमाज तथा आर्य सभासद् के लिये इसकी एक प्रति क्रय करना अत्यन्त आवश्यक है। मूल्य भी लागत मात्र ६ रु० रक्खा गया है ग्रंथ डा० भवानीलाल भारतीय गवर्नमेंट कालेज, पाली अथवा रामलाल कपूर ट्रस्ट २३२ माडल टाउन सोनीपत (हरयाणा) से प्राप्य है। —मंत्री आर्यसमाज पाली राजस्थान

माननीय मल्ला जी, सादर नमस्ते।

हमारे पाठकों के पत्र

आपके साथ जो बात हुई, मुझे बहुत बड़ी प्रसन्नता हुई। परमात्मा करे सभा के सम्बन्ध में शीघ्र वातावरण शान्त हो और आर्य भाई बहिन सभा की छत्रछाया में वैदिकधर्म प्रचार में अग्रसर हों। आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब आर्यों के दिल की धड़कन और आत्मा की आवाज रही है। अब भी आर्यसमाज की उन्नति की राहें इसी के द्वारा खुलेंगी।

भगवान् आर्यों को सुमति प्रदान करे कि हम अपने झगड़े स्वयं निपटाने में कृतसंकल्प हों और अदालतों की चरण शरण में जाना आर्यसमाज के लिये हितकर न समझें। मैंने सभा की छत्रछाया में चालीस वर्ष तक निरन्तर प्रचार कार्य किया है अतः सभा का आभार मानता और इसकी सर्वतोमुखी उन्नति का इच्छुक हूँ। चाहता हूँ कि सभी आर्य इसी में विलीन होकर परस्पर भेद मिटा और पूर्ण सेवा द्वारा विश्रान्ति लें। सबके साथ योग्य व्यवहार ही इसका उपाय है। विनीत

—शान्ति प्रकाश शास्त्रार्थ महारथी जेकमपुरा, गुड़गाँवा छावनी।

आर्यमर्यादा के लिए शुभ इच्छा

सभा ने आर्यमर्यादा आरम्भ करके आर्य विचारधारा फैलाने के लिये अनार्य विरोधियों के मुंह पर जो करारा चपत लगाया है उसके लिये सभा के योग्य अधिकारियों के अदम्य साहस की आर्य जगत् में सर्वत्र प्रशंसा है। अब मैं पुनः अपने नगर से आर्यमर्यादा के दस पाँच ग्राहक बनाऊँगा।

सत्येन्द्रसिंह आर्य एम० ए० बाबपुर

आर्य वीर दल बिन्दकी का द्वितीय महासम्मेलन

दिनाक २२ २३ २४ फरवरी १९६९ को सोत्साह मनाया जा रहा है जिसमे आर्य जगत् के चोटी के विद्वान् तथा कर्मठ आर्यवीर आ रहे हैं। प्रान्त के हर जिले से अनेको आर्यवीर दल कार्यकर्त्ता भाग ले रहे हैं। इस अवसर पर सभी आर्यवीर उक्त सम्मेलन को सफल बनाने हेतु आमन्त्रित हैं। इच्छुक सज्जन सम्मेलन के प्रोग्राम को निम्न पते से मगावें।

सचालक प्रान्तीय आर्य वीर दल (उ०प्र०) बिन्दकी (फतेहपुर)

हरयाणा राज्य के लोक सम्पर्क विभाग से

डा० कृष्ण मशोक० निदेशक भाषा विभाग द्वारा प्रेषित हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में' तथा श्री बिहारी लाल भाटूजा भाषा सचिव द्वारा प्रेषित 'हिन्दी हरयाणा प्रशासन की भाषा' में दोनो सूचनाए देर से पहुँचने के कारण गणतन्त्रदिवस २६-१-६९ के अक मे प्रकाशित नहीं की जा सकी। आर्यमर्यादा' साप्ताहिक पत्र है अत कम से कम एक सप्ताह पूर्व सूचनाए पहुचा देनी चाहिये। —व्यवस्थापक

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार का उत्सव

आठवा वार्षिकोत्सव समारोह सहित सम्पन्न हुआ इस अवसर पर दानवीर तथा कर्मठ सेठ श्री रतनचन्द सूद नई दिल्ली ने विद्यालय के छात्रो को प्रमाणपत्र तथा पुरस्कार प्रदान किये तत्पश्चात् उन्होने नवनिर्मित मेहरचन्द ब्लाक का उद्घाटन किया, विद्यालय की कार्य व्यवस्था की प्रशसा करते हुए अपनी शुभकामना प्रकट की और विद्यालय को पाच हजार रु० की राशि प्रदान की तथा प्रतिमास सौ रुपया देने का वचन दिया है, हम विद्यालय की ओर से उनका हार्दिक धन्यवाद करते हैं।

—सत्यप्रिय शास्त्री उपाचार्य

प्रचारक की आवश्यकता है

उच्चकोटि के विद्वान्, वेदविद्या विषयज्ञाता, शास्त्रार्थ महारथी, मर्यादापुरुष, स्वस्थ, और प्रचारक उत्साही पंडित की।

दक्षिणा योग्यताअनुसार। प्रार्थनापत्र मे आयु व कार्यों का विवरण लिखें। पत्र व्यवहार का पता:—मन्त्री आर्यसमाज मन्दिर, महर्षिदयानन्द मार्ग, [कांकरिया] अहमदाबाद—२२

सत्यार्थ प्रकाश परीक्षापारितोषिक वितरणोत्सव

रविवार ९ फरवरी ६९ को आर्यसमाज राजेन्द्रनगर नई दिल्ली मे आर्ययुवक परिषद् दिल्ली द्वारा सचालित सत्यार्थप्रकाश परीक्षाओ मे विजेताओ को ११ बजे ला० कर्मचन्द जी महाजन पारितोषिक और प्रमाण पत्र देंगे तथा सध्याह्न २ बजे से उक्त परिषद् की मासिक बैठक भी यही होगी'— मन्त्री ओमप्रकाश ओबेराय

जिन ग्राहक महानुभावो का शुल्क समाप्त हो चुका है वे अपना वार्षिक शुल्क १०) शीघ्र भेजने की कृपा करें। —व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ मे मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

वर्ष १ अंक ११ | २० माघ वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार ९ फरवरी १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ | वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रुपये, ,, ,, विदेश में—२०) रुपये, एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य, सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथ द्विविधोऽग्निरुपदिश्यते।

अथ अगले मन्त्र मे दो प्रकार के अग्नि का उपदेश किया है।

अग्निमग्नि हवीमभिः सदा हवन्त विश्पतिम् हव्यवाहं पुरुप्रियम् ।।ऋ०-१२-२।।

पदार्थ :—(अग्निम्) परमेश्वरम् (अग्निम्)विद्युद्रूपम् (हवीमभिः) ग्रहीतुं योग्यैरुपासनादिभिः शिल्पसाधनैर्वा (सदा) सर्वस्मिन् काले (हवन्त) गृह्णीत (विश्पतिम्) विशः प्रजास्तासां स्वामिनं पालनहेतुं वा (हव्यवाहम्) होतुं दातुमादातुं च योग्यानि ददाति वा यानादीनि वस्तू नीतस्ततो वहति प्रापयति तम् (पुरुप्रियम्) बहूनां विदुषां प्रीतिजनको वा पुरूणि बहूनि प्रियाणि सुखानि भवन्ति यस्मात्तम्।

अन्वय :—यथा वयं हवीमभिः पुरुप्रियं विश्पतिं हव्यवाहमग्निमग्निं वृणीमहे तथैवेतं यूयमपि सदा हवन्त गृह्णीत।

भावार्थ :—अत्र लुप्तोपमालङ्कारः। पूर्वस्मान्मन्त्राद् 'वृणीमहे' इति पदमनुवर्तते। ईश्वरः सर्वान्प्रत्युपदिशति-हे मनुष्या युष्माभिर्विद्युदाख्यस्य प्रसिद्धस्याग्नेश्च सकाशात्कला कौशलादिसिद्धिं कृत्वाऽभीष्टानि सुखानि सदैव भोक्तव्यानि भोजयितव्यानि चेति

भाषार्थ—जैसे हम लोग (हवीमभिः) ग्रहण करने योग्य उपासनादिकों तथा शिल्पविद्या के साधनों से (पुरुप्रियम्) बहुत सुख कराने वाले (विश्पतिम्, प्रजाओं के पालन हेतु और (हव्यवाहम्) देने लेने योग्य पदार्थों को देने और इधर उधर पहुंचाने वाले (अग्निम्) परमेश्वर प्रसिद्ध अग्नि और बिजली को (वृणीमहे) स्वीकार करते हैं, वैसे ही तुम लोग भी सदा (हवन्त) उसका ग्रहण करो।

भावार्थ—इस मन्त्र मे लुप्तोपमालङ्कार है। और पिछले मन्त्र से (वृणीमहे) इस पद की अनुवृति आती है। ईश्वर सब मनुष्यों के लिये उपदेश करता है कि—हे मनुष्यो! तुम लोगों को विद्युत् अर्थात् बिजुली रूप तथा प्रत्यक्ष भौतिक अग्नि से कला-कौशल आदि सिद्ध करके इष्ट सुख सदैव भोगने और भुगवाने चाहियें।

—ऋषिदयानन्द के भाष्य से ●

● शिवरात

वत्सर पर वत्सर बीते, कितनी बीतीं शिवरातें।
पर क्या कुछ पाया तुमने, किंचित् तो हमें बताते ।।१।।
शिव-भक्त पिता के पुत्र, मूलशंकर ने व्रत उपवास किया था।
प्रथम प्रयास में ज्ञान मिला, अज्ञान विनाश किया था ।।२।।
ज्ञान दीप से दीप जलाकर, सकल विश्व प्रबुद्ध कर डाला।
गहन तिमिर में घुसे तीर से, उजियारा कर डाला ।।३।।
महान् तपस्वी बाल भूल ने, व्रत ब्रह्मचर्य धारा था।
वेद ज्ञान से आलोकित किया, भूमण्डल सारा था ।।४।।
सीखें सुपन्थ पर चलना, ऋषि ने आर्य समाज बनाया।
प्रीति पूर्वक धर्मानुसार चलो तुम, हमें समझाया ।।५।।
क्रम वर्णाश्रम से देश चले, ऋषि की थी प्रबल सदिच्छा।
देश नहीं जग सारा सुधरे, चाहे पड़े मांगनी भिक्षा ।।६।।
मानव ही नहीं प्राणिमात्र का, उद्धार लक्ष्य था उनका।
करुणाकर ने गोकरुणानिधि में, भक्ष्या भक्ष्य बताया उनका ।।७।।
गहरी निद्रा से सुप्त जनों को, ऋषिज्ञान जगा सकता है।
पर जो पड़े हुए बढ़ सावे, उनको कौन उठा सकता है ।।८।।

इन्दु शास्त्री ●

आर्य मर्यादा का आगामी अंक विशेषांक होगा

पाठकों को पूर्व अंकों द्वारा सूचित किया जा चुका है कि शिवरात्री १६ फरवरी पर "स्वमन्तव्यामन्तव्य विशेषांक" पुस्तक साइज में प्रकाशित हो रहा है।

हम १२ फरवरी को विशेषांक को डाक द्वारा पोस्ट कर देंगे, आशा है १५ फरवरी से पूर्व पाठकों के हाथ में विशेषांक पहुंच जावेगा।

~~जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क समाप्त हो चुका है~~ वे यथाशीघ्र १०) मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें

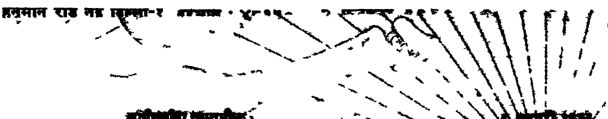
सभामन्त्री का नया फोन नम्बर

श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य मंत्री आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के निवास-स्थान १० महादेव रोड, नई दिल्ली का टेलीफोन नम्बर बदल गया है। उनका नया टेलीफोन नं० ३८७८१७ हो गया है। सम्बन्धित सज्जन अंकित कर लें।

समाचार भेजने वालों से निवेदन

कृपया अपने समाचार भेजते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि समाचार संक्षिप्त हों। जिससे अनेक संस्थानों के समाचार प्रकाशित किये जा सकें। वैयक्तिक नामों की अपेक्षा संस्थाओं की उपयोगिता का उल्लेख रहना चाहिये। लम्बे-लम्बे समाचार भेजने पर यहाँ कार्यालय का काम बढ़ जाता है और समाचारों में काट-छांट करनी अनिवार्य हो जाती है। यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यह पत्र आर्यसमाज का है। इसी से सम्बन्ध रखने वाले समाचार ही भेजे जावें।

—केदारसिंह आर्य व्यवस्थापक



शिवरात्रि का बोधप्रद सन्देश

(वैदिक विद्वानाचार्य श्री पं० [illegible] वेदवाचस्पति [illegible], [illegible])

आज के दिन मैंने शिव की आराधना की थी। मैंने निराहार रहकर पूर्ण रूप से व्रत करके शारीरिक एवं मानसिक पवित्रता सम्पादन की थी। अत्यन्त उमंग से [illegible] शिवजी के [illegible] प्राप्ति करने के लिये गया था। मेरे पूज्य पितृदेव भी तो एकमात्र शिवजी के परम भक्त थे, अतः—"अनुव्रत पितु पुत्र—" वेद के इस आदेश का पालन करना मेरा कर्तव्य था। इसी में मेरा एवं मानव जाति का परम कल्याण, परम मंगल परमशिव निहित था।

मैंने महाशिवरात्रि के व्रत को श्रद्धा से पालन किया था। मुझे व्रत का प्रसाद बोध के रूप में प्राप्त हुआ था। लौकिक प्रसाद अपेक्षा होता है। [illegible] वह औषधतुल्य अल्प प्रमाण होता हुआ भी महान लाभ किसी भी एक व्यक्ति को एक क्षण के लिये कर सकता है। परन्तु ज्ञानप्रसाद की प्राप्ति से तो सम्पूर्ण जीवन ही नहीं अपितु संसार का जीवन भी युगो के लिये परिवर्तित हो जाता है।

मुझे तो ज्ञानप्रसाद ही प्राप्त करना था। परम दयालु भगवान् शिवशंकर की अपार अहेतु कृपा से जो बोधात्मक ज्ञानप्रसाद मेरे पूज्य पितृदेव को प्राप्त नहीं हुआ था, उसके अन्य-अनन्य भक्तजनो को भी जो दीर्घकाल से उसकी आराधना से विविध साधनाओ से अविरत सलग्न थे उन को भी प्राप्त नहीं हुआ था वह मुझे बाल्यावस्था मे ही प्रथम बार के प्रयास में ही प्राप्त हो गया था। क्योंकि—'यो जागार तमय सोम आह" वेद के इस वचनानुसार जो जाग्रत होकर भक्ति पूर्वक मानस सरोवर मे साधना करता है एवं उपासना करता है उसी को ही तो सोम की प्राप्ति होती। मैंने बोधात्मक ज्ञानप्रसाद प्राप्त कर—'ओ नम शिवाय च शिवतरायच" कह कर सबको प्रबुद्ध करना प्रारम्भ किया था।

मैं तुम सब को भी इस महाशिवरात्रि के दिवस पर "बोधोत्सव" मनाते हुए देख रहा हूँ। इस बोधरात्रि के उत्सव को सोल्लास मनाते हुए तुम्हें लगभग पौन शताब्दि व्यतीत हो गई मेरे नाम पर मेरी जन्मभूमि टंकारा मे भी महाशिवरात्रि पर्व पर "ऋषिमेला" नाम से आयोजित करते हुए भी कई वर्ष व्यतीत हो गये। तुम्हें भी कुछ बोध अभी तक प्राप्त हुआ या नहीं? तुम्हारे अज्ञान और अहंकार के दुर्ग का अभी ध्वस हुआ या नहीं? मेरे अज्ञान के तिमिर रूपी दुर्ग की अभेद्य दीवारो मे तो इस क्षण की ही ज्ञान रश्मियो की एक क्षीण रेखा से ही बोध रूपी प्रकाश का आविर्भाव हो गया था।

मैंने अपने जीवन मे कठोर तपस्या करके अखण्डित ब्रह्मचर्य व्रत का अनुष्ठान किया था। अनेक योगी विद्वान्, यतियो की सेवा मे रत रहकर वेदो को प्राप्त किया था और उनको अपने हृदय, कठ एवं मूर्धा मे धारण किया था। 'अहंमनुष्याणा वेवस्य निधिपो भूयासम्'—इसको अपने जीवन मे घटित किया था। "यथेमा वाचकल्याणीमावदानि जनेभ्य" वेदवाक्य को पढ़कर इस परम कल्याणमयी, विश्व को पवित्र करने वाली दिव्यवाणी का प्रकाश परम प्रभु जगदीश्वर ने अपनी समस्त प्रिय प्रजा के लिये किया है यह आदेश प्रभु का जानकर वेद पठन-पढाने का अधिकार मानवमात्र को है, इसकी घोषणा मैंने की थी। क्या तुमने मेरी उस घोषणा को हृदयगम करके वेदो को नित्य पढने का व्रत धारण किया है?

मैंने तुम्हें वेद के दिव्य संदेश 'देवस्य पश्य काव्यम्'—के आधार पर आदेश दिया था कि 'वेद का पढना-पढाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।" क्या तदनुसार तुमने प्रभु की उस दिव्य वेदवाणी को हृदय, कंठ और मूर्धा में धारण किया है? जीवन के लिये परमधर्म रूपी वेद का सबल सम्बल मैंने तुम्हे किया था। तुमने उसे ग्रहण क्यो नहीं किया? उसे छोडकर तुम विविध आन्दोलन कार्यों को ही अपना जीवन आधार बना कर पथभ्रष्ट हो गये हो।

मैं तुम सब को एक भ्रांत पथिक की भांति भटकता हुआ देख रहा हूँ। तुम्हारे द्वारा मैं मानव मात्र को मोक्ष के आनन्द का अधिकारी बनाना चाहता था। तुम्हें मैंने जगन्नियन्ता, जगदीश्वर की प्राप्ति के पथ के पथिक मानवमात्र को बनाने का कार्य सौंपा था। ईश्वर प्राप्ति ही इस जीवन का प्रथम लक्ष्य है, अतः सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास मे ईश्वर के ही शताधिक नामोकी व्याख्या की थी। आर्याभिविनय [illegible] भी शताधिक मन्त्रो के द्वारा उसी प्रभु का दिव्य स्तोत्र, भक्ति रूप [illegible] करने के लिये तुम्हारे लिए [illegible] आर्यसमाज के [illegible] भी ईश्वरविज्ञान व उपासना के [illegible] किये थे परन्तु तुमने [illegible] कुछ भुला दिया। उस प्रभु को भी भुलाकर [illegible] अवस्थावाद के [illegible] पडकर पदो और कुर्सियो को ही [illegible] हो गये। [illegible] तुमने वेद का कार्य करना छोडकर उसको किसी [illegible] की संस्था बना दिया।

पदो के मोह और उन्हीं की [illegible] से तुममें [illegible] का भ्रान्त नेतृत्व जाग्रत होने लगा और [illegible] स्वरूप [illegible] को भी वेद से दूर करते आ रहे हो। [illegible], [illegible], [illegible] आर्यसमाज में [illegible] के द्वारा [illegible] अन्दोलन के प्रबल प्रवाह में बहकर तुमने उनकी पूर्ण उपेक्षा कर दी। अत वेद की उपेक्षा भी पूर्ण हो गई। तुमने वेदज्ञ धर्मात्मा पक्षपातरहित, निर्लोभी विद्वानो की प्रतिष्ठा करके उनको अपना नेता बनाना था और उनकी सेवा एवं आज्ञा पालन मे अपन जीवन को अर्पित कर देना था। परन्तु तुम तो उनकी सेवा करने मे अपनी प्रतिष्ठा की हानि भी समझने लगे।

मैंने संस्कारविधि मे धार्मिक सदाचारी, निर्व्यसनी, वेदज्ञ पुरोहित की स्थापना करने का क्यो आदेश दिया था? इसी हेतु से कि उन्ही के नेतृत्व मे रहने से तुम स्वय मोक्ष के अधिकारी बन सकते थे। परन्तु अब तो तुम्हें मैं बार-बार कारागार का अधिकारी बनता हुआ देख रहा हू। 'मैं कैद करान नहीं आया अपितु कैद से छुडान आया हूँ—क्या यह मेरे शब्द तुम बिल्कुल ही भूल गये? वेदपथ को भूलकर वामपथ के पथिक बनकर आर्यजनता का कारागार के बन्धनों मे बाधना लक्ष्य से पतन का ही द्योतक है। मैंने तो तुम्हे 'अग्न देवा अमृतमानशानास्तृतये भगस्व्यदेवरयन्त" की ओर चलने चलाने का नित्य स्मरण दिलाने के लिये प्रार्थना का मन्त्र दिया था—परन्तु तुम वाम पथ पर चल दिये।

मैंने तुम्हें प्रात उठते ही नित्य स्मरण करान क लिये वेद का आदेश दिया था—' वय देवाना सुमतौ स्याम"—हम देवो क नेतृत्व मे चले। इसी से तुम अनेक प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त कर सकते हो। फिर भी तुम भ्रान्तव्यक्तियों के नेतृत्व में रहते चले जा रहे हो। देवो क नेतृत्व मे चलने से और उनकी आज्ञा पालन करने से परमशिव, देवो क भी देव, महादेव को भी इसी जीवन मे प्राप्त कर सकते हो। इसी क लिये वास्तव मे तुम्हें यह जीवन प्राप्त हुआ है। इसको क्यो भुला बैठे?

इसी भ्रान्तनेतृत्व के कारण ही तुम ब्रह्म से और ब्रह्म की वेदवाणी से विमुख हो गये हो। मैंने तुम्हें प्रीतिपूर्वक परस्पर रहने को कहा था। "सहृदय सांमनस्य अविद्वेष कृणोमि व"—का मन्त्र दिया था। परन्तु तुम सबने वेद के इस आदेश की अवहेलना करके वाममार्ग मे प्रवेश करके रागद्वेष का घोर घना जंगल खड़ा कर दिया। उसमे मुझे दावानल की प्रलयकारी लपटें धधकती हुई दीख रही हैं—उसमें तुम भस्म हो जाओगे। इस ओर घने जंगल मे छल कपट की कटकाकीर्ण भूलभूलैया दीख रही है, जिन में फसकर, तुम्हारा निकलना भी संभव नहीं होगा। आत्मघाती झगडो की तीव्र आग्नि विनाश की अच्छादित होने से अग्नि तुम्हे दिखाई नहीं पड़ रही हैं। वह तुम्हारे ही पास, अपने पग पर ही है, जिसमे गिरने पर तुम्हारी अस्मिता भी चकनाचूर हो जावेगी।

देश का नवनिर्माण करने के लिये मैंने तुम्हे शिक्षा के सूत्र के रूप में सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय एवं तृतीय समुल्लास दिये थे। आज देश की शिक्षा बिगड़ी हुई है। उसको कोई शिक्षा का हल प्राप्त नहीं हो रहा है। क्या तुम्हारी बुद्धि इतनी कुंठित हो गई है कि वह शिक्षा के क्षेत्र में देश का नेतृत्व नहीं कर सके? मैंने राष्ट्रमें समाजवाद लाने के लिये वर्णाश्रम के परिचायक सूत्रो का उल्लेख सत्यार्थप्रकाश के तृतीय, चतुर्थ एव पचम समुल्लास में किया था। तदनुसार वर्णाश्रम की स्थापना में क्यो उदासीन बनकर, नास्तिकवाद, उच्छृंखलवाद एव अनाचारवाद युक्त तामसिक शूद्रवाद (कम्युनिज्म) के प्रसार को उपयुक्त अवसर प्रदान कर रहे हो? मैंने तुम्हें रचनात्मक श्रेष्ठ राजनीति का पाठ पढाने के लिये सत्यार्थप्रकाश का छठा समुल्लास दिया था। तुम उसे भूलकर, स्वार्थमय देशघाती एव धर्मघाती

(शेष पृष्ठ ४ पर)

सम्पादकीय

१—आर्य जनता और हिन्दी

ऋषि दयानन्द जी ने वेदभाष्य और ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका जहाँ सस्कृत में लिखे, वहाँ उनके अर्थ आर्यभाषा में भी लिखे। सत्यार्थप्रकाश जैसा प्रसिद्ध ग्रंथ खड़ी बोली के रूप में आर्यभाषा में ही लिखा, जिससे सर्वसाधारण जनता भी उससे पूरा लाभ उठा सके। ऋषि जी सर्वसाधारण भाषा को आर्यभाषा, प्राकृतभाषा, लोकभाषा और जनभाषा के नाम से कहते थे। उनके ग्रंथों का स्वाध्याय करने वाले सभी महानुभाव इस बात को जानते हैं। आर्यभाषा को ही आज हिन्दी नाम दिया गया है। ऋषि दयानन्द को एक पत्र बम्बई से श्री बी० एच० चिन्तामणि ने अंग्रेजी मे लिखा था, उसका उत्तर १६ जनवरी सन् १८७८ में गुजरात (पंजाब) से ऋषि ने इस प्रकार दिया था—

"उत्तर पश्चिम प्रान्त (आज यह उत्तरप्रदेश राज्य कहलाता है) के अनुभवी व्यक्तियों की सयुक्त सम्मति और स्वीकृति से मैं आपको सूचना देने को आवश्यकता अनुभव करता हूँ कि सम्पूर्ण होने से पूर्व वेदभाष्य का अनुवाद अंग्रेजी वा उर्दू में नहीं करना चाहिये। क्योंकि यदि अंग्रेजी का उर्दू में अनुवाद किया गया, तो इससे लोग सस्कृत और भाषा के अध्ययन के लिए निरुत्साहित हो जायेंगे। क्योंकि वे सोचेंगे कि संस्कृत और भाषा के बिना ही अंग्रेजी वा उर्दू के द्वारा ही हम अपना उद्देश्य प्राप्त कर लेंगे। ऐसी स्थिति में हमें ग्रन्थ के अंग्रेजी वा उर्दू में अनुवाद करने के यत्न की आवश्यकता नहीं, जिससे "सुपरिणाम के स्थान पर अन्त में दुष्परिणाम प्राप्त हो।" पहले केवल शुद्ध संस्कृत और भाषा में पूर्ण हो जाने दीजिये, पश्चात् अन्य भाषाओं में अनुवाद करना आवश्यक समझा गया तो आप सब अपनी इच्छानुसार संसार में जनहित की दृष्टि से कार्य करने में स्वतन्त्र होंगे।"

ऋषि के भाव अत्यन्त स्पष्ट हैं। वह संस्कृत और भाषा को सर्वोच्च स्थान देते थे। इसी प्रकार अन्य अनेक सज्जनों को भाषा (हिन्दी) की उन्नति के सम्बन्ध में पत्र लिखे थे। एक समय ऋषि ने कहा था कि "दयानन्द के नेत्र तो उस दिन को देखना चाहते हैं कि जिस दिन सारे राष्ट्र मे अटक से कटक और काश्मीर से कन्याकुमारी तक आर्यभाषा (हिन्दी) का प्रचार और प्रसार हो जावे।"

आर्यसमाज ने हिन्दी के प्रचार में बहुत कार्य किया है, इससे कोई सज्जन अपरिचित नहीं है। आर्यसमाज ने सदा यह प्रयत्न किया है कि इसका सारा काम काज हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में किया जावे। इसका उत्तर-भारत और मध्य दक्षिण तक पूरा प्रभाव भी पड़ा है। इस सम्बन्ध में आर्य-समाज सदा जागरूक रहा है। कई बार विवशता में इसको आन्दोलन भी करने पड़े हैं। भारतीय सरकार भी इस प्रभाव से अछूती नहीं रही, भारतीय संविधान में हिन्दी को राष्ट्र भाषा का स्थान दिया जा चुका है। दुर्भाग्य से राजभाषा बनाये जाने के मार्ग में नई-नई अड़चनें और बाधाएँ हिन्दी के विपक्ष में खड़ी की जा रही हैं। फिर भी इतना सन्तोष है कि उत्तर-प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार तथा राजस्थान राज्यों में राजभाषा के रूप में हिन्दी को कई वर्ष पूर्व स्वीकार किया जा चुका है और अब हरयाणा, दिल्ली और हिमाचलप्रदेश की भी राजभाषा हिन्दी बन चुकी है, केन्द्रीय सरकार भी इधर पग बढाने जा रही है। केन्द्रीय सरकार ने कई वर्ष पूर्व यह स्वीकार कर लिया था कि हिन्दी भाषी क्षेत्रों में केन्द्रीय सरकार के जो कार्यालय हैं, उनमें टिप्पणियाँ आदि हिन्दी में लिखी जा सकती है तथा ये कार्यालय अपने प्रधान कार्यालय से हिन्दी में पत्र-व्यवहार कर सकते हैं। इन आदेशों के अन्तर्गत कार्यालयों का पर्याप्त काम हिन्दी में हो सकता है। इस नीति का अनुपालन कराने के लिये आर्यसमाज के सभी सदस्यों का कर्तव्य है कि वे जिन-जिन कार्यालयों में काम करते हैं अथवा जिन-जिन कार्यालयों में उनका परिचय है, वे वहाँ के अधिकारियों वा कर्मचारियों को अपना अधिकतम काम हिन्दी में करने की प्रेरणा देवें। आर्यसमाज के जो सदस्य सरकारी कार्यालयों में नहीं हैं वे निश्चय करे कि जब कभी उन्हें किसी सरकारी कार्यालयों को कोई पत्र लिखना हो तो हिन्दी में ही लिखें और उनका उत्तर भी हिन्दी में ही प्राप्त करने की अपेक्षा करें। आर्यसमाज के सत्संगों तथा उत्सवों आदि के विशेष अधिवेशनों में उपर्युक्त विचार का प्रचार व्यापक रूप मे करने की आवश्यकता है। आर्यसमाज के सभी सदस्यों से अनुरोध है कि अपने सभी संस्थानो, स्कूलों, कालिजों, गुरुकुलों, पाठ-शालाओं आदि के कार्यालयों मे एव निजी व्यवहार में सब प्रकार से हिन्दी को अपनायें। सरकारी नियमों से भी लाभ उठा कर तदनुसार कार्य करने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने हजारों तारबाबुओं को हिन्दीतार भेजने वा प्राप्त करने का प्रशिक्षण दिया है। लगभग सभी नगरों में हिन्दी में तार भेजने की व्यवस्था है। हिन्दी के तार अंग्रेजी तारों की अपेक्षा सस्ते पड़ते हैं। हिन्दी तारों के नियमों का विवरण, विभिन्न प्रकार के तारों के नमूने तथा ऐसे अनेक वाक्यांशों के उदाहरण दिये गये है। 'देवनागरी मे तार" पुस्तिका मे यह देखे जा सकते है। यह पुस्तिका सभी आर्यसमाजों के लिये केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली से बिना पैसे दिये ही मिल सकती है। सभी आर्यसमाजो से अनुरोध है कि इस पुस्तिका का अध्ययन करके उसकी चर्चा अधिवेशनो मे भी करे और नगर की जनता को प्रेरित करे विशेष रूप से व्यापारी वर्ग को, कि वे तार हिन्दी मे ही देवे। व्यापारी वर्ग इस दिशा मे बड़ा काम कर सकता है और स्वय लाभ भी उठा सकता है। सभी सज्जनो की सुविधा के लिये "आवेदन-पत्र का प्रारूप" पुस्तिका एवं अन्य उपयोगी साहित्य उपर्युक्त परिषद् से मंगवाये—ये सब पुस्तिकाएँ बिना शुल्क वहीं से मिल सकती हैं। उनकी सहायता के लिये 'सरकारी कर्मचारी अपने कार्यालय से सम्बन्धित आवेदन सुगमता से हिन्दी मे लिख सकेंगे और अपने साथी निकट के मित्रों को भी इस विषय में सहायता कर सकेंगे।

जहाँ हमें सरकार से हिन्दी प्रचार की आशा करनी चाहिये, वहाँ हमारा अपना भी कर्तव्य है कि हम अपना कार्य हिन्दी भाषा देवनागरी लिपि में करे। दूसरों को कहने से पूर्व हमे स्वय इस दिशा में आचरण करना अनिवार्य है। इस लेख के लिखते-लिखते एक आर्य भाई के सुपुत्र के विवाहोत्सव में सम्मिलित होने का निमन्त्रण पत्र मिला। आश्चर्य है कि यह अंग्रेजी भाषा में भेजा गया है, यह कार्य हमारे लिये शोभाजनक नहीं कहा जा सकता। आशा है "आर्यमर्यादा" के सभी प्रेमी बन्धु इस निवेदन पर ध्यान देकर हिन्दी और देवनागरी लिपि के उत्थान मे पूरा कार्य करते रहेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

२—आर्यसमाज और शिवरात्रि

ऋषि दयानन्द जी के हृदय पर शिवरात्रि की घटना ने ऐसा अमिट प्रभाव डाल दिया था, कि वह सच्चे शिव=परब्रह्म की खोज में घर से निकल पड़े। इन पंक्तियों में उनके जीवन की घटनाओं का उल्लेख करना हमें अभीष्ट नहीं है। उनके द्वारा लिखे समस्त ग्रंथों के पढ़ने से पता मिलता है कि ऋषि जी वेदमन्त्रार्थद्रष्टा, पूर्णयोगी और महावैज्ञानिक बन चुके थे। ईश्वर का साक्षात् उनको हो चुका था। इस बात को बताने के लिए यहाँ केवल दो वचन सत्यार्थप्रकाश से उद्धृत करते हैं—"जब जीवात्मा शुद्ध होके परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है उसको उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं।"—सातवां समुल्लास। "परमात्मा को देखने का साधन शुद्धान्त:करण, विद्या और योगाभ्यास से पवित्रात्मा परमात्मा को प्रत्यक्ष देखता है।"–१२ वां समुल्लास। इसमें सन्देह नही कि शिवरात्रि की घटना से ऋषि दयानन्द ने अन्तिम ध्येय प्राप्त कर लिया था। हमारे लिये भी यह विशेष उत्सव का अवसर है, अत: आर्यसमाज शिवरात्रि को ऋषिबोधोत्सव के रूप मे मनाता है, यह उत्तम कार्य है। परन्तु इस महोत्सव में कुछ पूज्य संन्यासी महात्माओं और आदरणीय उपदेशक महानुभावों के प्रवचन करवा लेना अथवा आर्यसमाज से बाहर के कुछ नेताओं के ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में उच्च विचार सुन लेना ही पर्याप्त नहीं है। आर्यसमाज में सौभाग्य से अनेक शास्त्रों के पारंगत विद्वान् है। उनके द्वारा वेदादि शास्त्रों के

(शेष पृष्ठ १० पर)

शिवरात्रि का······

(पृष्ठ ५ का शेष)

कुटिलनीति में क्यों फस गये ? मैंने तुम्हें अध्यात्मवादी बनाने के लिये सप्तम से नवम् समुल्लासों को दिया था। परन्तु तुम तो पूरे भौतिकवादी बन गये और अध्यात्मवाद को भुलाकर दूसरे ही वादों में बह गये। मैंने राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि के लिये दशमसमुल्लास मे गोवंश की वृद्धि करने की प्रेरणा दी थी क्योंकि वेद मे कहा है–"अनड्वाश्च मे धेनुश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्" अतः गोसदन नगर-नगर मे संचालित करके यदि तुम कार्य करते तो वास्तव मे वेद के अनुसार गोवंश की रक्षा और वृद्धि होती और उसके माध्यम से देशवासियों का बल बढता, बुद्धि की वृद्धि होती राष्ट्र सशक्त होता और आर्थिक रूप से समृद्ध होता। उसे दूसरों से ऋण भी लेने की आवश्यकता नहीं होती। परन्तु तुमने यह रचनात्मक मार्ग गोरक्षा का न अपनाकर केवल आन्दोलनात्मकमार्ग किसी दूसरे उद्देश्य से अपनाकर अपने को कृतकृत्य समझ लिया और परिणामस्वरूप एक भी गौ की रक्षा करने में समर्थ न हो सके। जनता का लाखों रुपया राष्ट्र की शक्ति और समय का इस प्रकार के प्रपचपूर्ण आन्दोलनों मे नष्टकर जेल सदनों का ही विकास करवा दिया। इतनी राशि और परिश्रम से तो अनेक गोसदन स्थापित हो सकते थे और अनेक गौवों की रक्षा हो सकती थी।

आज यज्ञ के लिये गोघृत नहीं मिल रहा है। क्या तुम्हारे इस प्रकार के गोरक्षा आन्दोलनों से शुद्ध गोघृत उपलब्ध होने लगा है ? यदि नहीं तो तुम अपना यज्ञ कैसे सम्पन्न करते होंगे ? परन्तु मैं यह अनुभव कर रहा हूं कि तुम्हें तो यज्ञ में भी श्रद्धा नहीं है। अतः यज्ञ आज तुम्हारे जीवन का अंग भी नही रहा। "आयुर्यज्ञेन कल्पताम्" इस वेद वाक्य को तुम फिर अपने जीवन मे घटित भी नहीं कर सकते हो। आन्दोलनों के कुचक्र और फण्डों की फन्दमय अपीलें ही तुम्हारे जीवन की दिनचर्या बन गई हैं। इन्ही के माध्यम से कुटिल राजनीति को, कुटिल असन्दियों की आसक्ति से आसक्त हो कर गौ माता की जय के घोष लगाते हो। क्या यह गोवंश के साथ धोका एवं विश्वासघात नही है ? जनता के साथ कपट नही है और धर्म के साथ भी द्रोह नहीं है ???

तुम्हें गोरक्षा नहीं करना है - अपितु गोरक्षा आन्दोलन करना है। सम्प्रति राजस्थान में अकाल के कारण नित्य गोवें मर रही हैं। जल एवं चारा प्रदान कर उनके जीवन को बचाने के लिये तुमने क्या उपाय किया ? तुम्हारी धर्म-भक्ति और तुम्हारी गोभक्ति का करुणामय स्रोत अब कहां सूख गया ? देश अनावृष्टि एवं अतिवृष्टि के कष्ट से अकाल की स्थिति में पहुंचा। अन्न की कमी हुई। पेयजल की कमी हुई। घृत दूध आदि की कमी हुई अनेक देश व्यापीरोग फ्लू आदि हुए। देश की मानसिक स्थिति में तामसिकभाव जागृत हुए। देश का मस्तिष्क विकृत हो गया। उसकी अपनी शिक्षा नष्ट हुई। वह कुसंस्कारों में ग्रसित होकर उन्मत्त की भांति अपने ही देश की सम्पत्ति को नष्ट कर रहा है और उसे जला रहा है। अपने ही भाईयों से लड़ रहा है और खून की नदियां भी बहा रहा है ? तुमने इसका क्या हल निकाला है ?

सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में देश को सुख समृद्धि के लिये मैंने स्पष्ट लिखा कि–"जब तक इस होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगो से रहित और सुखों से पूरित था। अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाय।" क्या तुमने इसको भुला दिया ? मैंने "सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्–सुखं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्–अयक्ष्मं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्–"आदि वेद मन्त्रों के आधार पर ही यह लिखा था। क्या तुमने इसको भुला दिया ?–"मतिश्च मे सुमतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्"–यह वेदवाक्य स्पष्ट कह रहा है कि यज्ञ से बुद्धि एवं सुबुद्धि की भी वृद्धि होती है। देश में सर्वत्र कुबुद्धि की वृद्धि हो रही है। अतः सुबुद्धि की वृद्धि के लिये यज्ञों का आयोजन करने के लिये क्यों नहीं उद्यत हुए ?

परन्तु तुम तो आन्दोलनों के चक्र में और येन केन प्रकारेण नेतृत्व प्राप्त करने के चक्र में पड़कर वेद एवं यज्ञ को भी भुला बैठे हो। "वृष्टिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्" यह वेदवचन यज्ञ से वृष्टि का संकेत देते हुए भी "उत त्वः पश्यन्त ददर्श वाचम्"—के अनुसार अनसुना कर रहे हो। "वृष्टेरन्नम्"—"अन्नं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्" के अनुसार यज्ञ के द्वारा वृष्टि और वृष्टि से अन्न की उत्पत्ति के वैज्ञानिक क्रम को भुलाकर देश को अन्न से समृद्ध और सुखी कराने से क्यों वंचित कर रहे हो ? यज्ञ से वृष्टि और वृष्टि से अन्न की उत्पत्ति से देश की अकाल की स्थिति दूर की जा सकती थी, जिस से विधर्मियों को क्षुधा पीड़ित भारतीय जनता को विधर्मी बनने से स्वतः रोका जा सकता था। परन्तु तुमने वास्तविक रूप से यह कार्य नहीं किया अतः देशवासियों को राष्ट्र द्रोही", विधर्मी बनाने में परोक्ष रूप से तुमने सहयोग ही प्रदान किया है यह मुझे स्पष्ट प्रतीत हो रहा है।

मैंने तुम्हें आर्यसमाज के माध्यम से अपने कार्य का उत्तराधिकारी बनाया था। क्या तुम मेरे द्वारा बताये कार्य को कर रहेहो ? मैंने तुम्हें सुख और शांति सम्पादन के लिये—"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, अपितु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये"—यह नियम दिया था। यदि इसके अनुसार समस्त देशवासियों की उन्नति में संलग्न हो जाते तो देश में कम्यूनिज्म को अपनी जड़े जमाने के लिये अवसर ही नहीं मिलता और न नक्कसलवाड़ी सदृश घटनायें ही घटित होतीं। परन्तु तुम तो दूसरों की उन्नति को देखकर उसको गिराने का प्रयत्न करते हो। अपने ही जनों के यश से ईर्ष्या के वशीभूत होकर उसको विविध प्रकार से बहिष्कृत करने का प्रयत्न करते हो।

मैंने तुम्हें सबसे प्रीतिपूर्वक तथा धर्मानुसार वर्त्तने को कहा था। "येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः" का मन्त्र दिया था। सबसे प्रीतिपूर्वक व्यवहार करने का मार्ग देवों का है। मैंने देवों का मार्ग तुम्हें बताया था और इस निमित्त—'योस्मान्द्वेष्टि य च वय द्विष्मस्त वो जम्भे दध्म !' का प्रतिदिन अहोरात्र में १२ बार पाठ करने का आदेश दिया था। परन्तु तुम इस देवमार्ग को भुलाकर, परस्पर के विवादों, में निरन्तर लगे हुए हो और उन्हीं में अपनी शक्ति और धन को लगाकर मेरी भी अपकीर्त्ति करा रहे हो। तुम तो मेरे बताये वेद के आदर्श पथ—"अग्ने नय सुपथा राये'–को भूलाकर दानवों की तरह आपस में लड़-झगड कर प्रमत्त लीला कर रहे हो क्या तुम्हें लज्जा भी नहीं आती ?

आर्यसमाज को अनार्यसमाज मे परिणत करने में तुमने कोई प्रयत्न शेष नहीं रखा है। तुम्हारी सम्पूर्ण कुबुद्धि की शक्ति और धन इन्हीं दुष्कर्मों में लग रहा है। "आर्यसमाज अमर हो'—का नारा लगा कर तुम्हीं उसे नष्ट करने में भी अहर्निश जुटे हुए हो। वैदिकधर्म की जय बोलते हुए भी तुम वैदिक धर्म की व्यवहार रूप में, वास्तव मे पराजय करा रहे हो। मेरी जय-जय कार से अन्तरिक्ष को गुंजायमान करते हुए भी मेरे ही कथन के विपरीत चल रहे हो। मुझे तुम्हारे कार्यों से तीव्र घृणा हो रही है। काल के चक्र में गुप्त और प्रकट रूप में तुम्हारे सब अपराधों का जो इतिहास अंकित एवं सचित हो रहा है वही तो तुम्हारे भविष्य का निर्माता होता है। 'अस्मान्विश्वानिदेव वयुनानि विद्वान्' इस मन्त्र को पाठ करते हुए भी क्या तुम भुला बैठे हो ? क्या इसके अर्थ पर ध्यान तुम्हारा नहीं गया है ?

देखो, मेरे पास जब कोई वेदपाठी ब्राह्मण आता था तो मैं उससे वेदपाठ श्रवण करने का परम धर्म सम्पन्न करता था और उसको १ स्वर्ण मुद्रा और उत्तम शाल भेंट करके सत्कृत करता था। क्या तुमने मेरे इस व्यवहार का कभी अनुसरण करके वेद के अभ्यास को प्रोत्साहन दिया है ? मैं जब शाहपुरा राज्य में गया था तो वहां के वेदपाठियों को जागीर देने के लिये राजाधिराज श्री नाहरसिंह जी को आदेश दिया था। तदनुसार उन्हें जागीर मिलने से वहां वेद की उन्नति होती रही थी। परन्तु इस व्यवहार के विपरीत आज से दस वर्ष पूर्व की दिल्ली के एक सर्वप्रमुख आर्यसमाज की घटना—"कि एक वेदपाठी विद्वान् को वहां ब्राह्म मुहूर्त में वेदपाठ करने में इसलिये रोका था कि तुम्हारी निद्रा में विघ्न होता है'—यह तुम्हारे वेदद्रोह का प्रत्यक्ष प्रमाण है। तुम हृदय से वेदद्रोही हो अतः मेरे जय-जयकार करने का तुम्हें अधिकार नहीं है।

तुमने मेरे नाम पर अनेक शिक्षण संस्थायें चला रखी हैं। मुझे इससे किंचित् भी प्रसन्नता नहीं है। मैंने अपने ही जीवन काल में अपने द्वारा स्थापित उन संस्कृत पाठशालाओं को बंद कर दिया था, जिनसे वेद के अध्येता विद्यार्थियों का निर्माण नहीं होता था। मैं तो अपनी शिक्षण संस्थाओं में वेदों का ही प्रमुख रूप से अध्ययन अध्यापन कराना चाहता था। क्या तुम्हारे द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाओं से वेद के स्नातकों का

(शेष पृष्ठ १० पर)

धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी आर्यमुसाफिर

(प० जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—"कार्यवृत्त का अनुपम दर्शन"

अमर शहीद धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी आर्यमुसाफिर आर्यसमाज के उन सर्वोच्च लेखक, उपदेशक और नेताओ मे से एक थे, जिन्होने महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के साक्षात् सम्पर्क और उपदेशो से प्रभावित होकर आर्यसमाज में प्रवेश किया था, जिनको महर्षि जी से विचार-विमर्श करके अपनी सम्पूर्ण शकाओ का सम्यक समाधान प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ था, और जिन्होने आर्यसमाज के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर डाला था। "आर्यमुसाफिर" शब्द श्री पण्डित लेखराम जी ने स्वय पसन्द करके, अपने उपनाम के रूप मे स्वय ही अपने नाम के साथ जोडे थे। किसी दूसरे ने यह पदवी उनको प्रदान नही की थी। उनके विचारो, कार्यों और उनकी प्रगतियो को ये दो शब्द—"आर्य मुसाफिर" भली प्रकार प्रकट करते हैं। सचमुच वे आर्य-मुसाफिर थे। धर्मात्मा भी, यात्री भी।

२—वे एक बहुत अच्छे, निडर और त्यागी-तपस्वी धर्मप्रचारक थे। बहुत अच्छे अनुसधाता और लेखक थे, एव अत्यन्त प्रतिभाशाली व्याख्यान-दाता। उर्दू, हिन्दी और सस्कृत के विद्वान् होने के साथ ही साथ, वे अरबी और फारसी भाषाओ के भी महापण्डित थे। उनका स्वाध्याय गम्भीर भी था, विस्तृत भी। नई-नई बातो को खोज-खोज कर जानने का तो मानो उनको एक व्यसन-सा ही था। स्मरण-शक्ति अच्छी थी और आचार-विचार निर्दोष। ससार के सभी मुख्य-मुख्य मत-मतान्तरो के विषय मे उनको जानकारी अत्यन्त विस्तृत भी थी और प्रामाणिक भी। विभिन्न मत-मतान्तरो के सैद्धान्तिक ग्रन्थो की छान-बीन तथा जाच-पडताल के साथ ही साथ ऐतिहासिक विषयो से भी उन्हे विशेष प्रेम था। श्री पण्डित जी अपनी धुन के धनी थे और अपनी बात के पक्के। श्री महर्षि दयानन्द जी के प्रति उन्हें अगाध एव निस्सीम श्रद्धा थी इसीलिए जब आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब की ओर से महर्षि दयानन्द जी के बृहद् एव प्रामाणिक जीवन-चरित्र की तैयारी और खोज का कार्य आरम्भ किया गया, तब उसकी पूर्ति का सम्पूर्ण कार्य भार श्री पण्डित जी को ही सौंपा गया था।

३—श्री पण्डित लेखराम जी ने लगातार बहुत वर्षों तक कष्टसाध्य और देश-व्यापी यात्राओ, अथक उद्योग और सद्विवेक गर्भित अनुसधान के आधार पर महर्षि दयानन्द जी का सुविशाल और प्रामाणिक जीवन-चरित्र लिखा था। इस कार्य की पूर्ति के लिए श्रद्धेय पण्डित जी ने कई-कई बार राजस्थान, कच्छ, काठियावाड, बम्बई, महाराष्ट्र, बिहार, बगाल और युक्त-प्रदेश एव पजाब के नगरो की यात्रायें की थी। जिन-जिन लोगो ने महर्षि जी को देखा था, उनसे वार्तालाप किया था, अथवा जिनको किसी न किसी रूप मे श्री महर्षि दयानन्द जी के सम्पर्क मे आने का अवसर मिला था, उन सभी को प्रयत्नपूर्वक खोज-खोज कर पूज्य पण्डित जी ने उन-उनके सस्मरण लिपिबद्ध किये थे। श्री पण्डित जी की अमर पद प्राप्ति के पश्चात् वह सुविशाल जीवन-चरित्र एक बडे आकार के महाग्रथ के रूप मे छपा था। लगभग एक हजार बडे-बडे पृष्ठो का वह स्थूलकाय महाग्रथ श्री पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर की उज्ज्वल ऋषि-भक्ति का एक अत्यन्त पुष्ट प्रमाण है। इसके बाद महर्षि दयानन्द जी के जो-जो जीवन-चरित्र लिखे गये है, तथा कई विवादास्पद तथ्यो को जो भी खोज वा जाच-पडताल हुई, ऐसे सभी कार्यों में श्री पण्डित लेखराम जी द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री और उनके लिपिबद्ध किये हुए उल्लेखो से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सहायता प्राप्त की गई है।

४—यद्यपि बाद के लेखको और अनुसधाताओ ने श्री पण्डित लेखराम जी के ग्रथ में कुछ परिवर्तन योग्य वृत्तान्तो को भी ढूंढ निकाला है, तथापि इससे श्री पण्डित लेखराम जी के पुरुषार्थ और गौरव की कोई हानि नही होती है। क्योकि नई खोज का मार्ग पुराने वृत्तान्त से ही आगे बढता है। बाद के सभी लेखको ने श्री पण्डित जी के ग्रथ से खूब लाभ उठाया है। स्वर्गीय श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज कृत "श्रीमद्दयानन्द प्रकाश" और स्वर्गीय श्री पण्डित देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय द्वारा विरचित दयानन्द-चरित्र" जोकि बडे आकार के दो भागो मे है, ये दोनो ही श्री पण्डित लेखराम के ग्रथ के प्रकाश मे ही तैयार हुए है। ये दोनो ही महर्षि दयानन्द जी के बहुत अच्छे जीवन-चरित्र समझे जाते है। इन दोनो के ही विषय मे बहुत अच्छी तरह से सोच-विचार करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि यदि श्री पण्डित लेखराम जी अपनी विस्तृत खोज-सामग्री और उसके परिणामो को लिपिबद्ध न कर जाते तब तो वह उत्तम और निष्कण्टक-मार्ग भी तैयार न हो पाता, जिस पर चल कर श्रीमद्दयानन्द-प्रकाश" और 'दयानन्द-चरित्र" जैसे उत्तम ग्रथ लिखे गये है। उस अवस्था मे तो इन दोनो ग्रथो की सफलता और प्रामाणिकता भी सदिग्ध ही बनी रहती।

५—स्वर्गीय श्री मास्टर लक्ष्मण जी आर्योपदेशक ने भी उर्दू मे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का एक बडा जीवन चरित्र लिखा और प्रकाशित किया था। वह वास्तव मे श्री पण्डित लेखराम जी के विशालकाय ग्रथ का ही कुछ छोटा सस्करण था। श्री मास्टर लक्ष्मण जी ने अपनी पुस्तक के आरम्भ मे ऐसा ही सूचित भी किया था। श्री मास्टर लक्ष्मण जी रामनगरी पूज्य पण्डित लेखराम जी के ही चरण-चिह्नो पर चलने वाले एक उत्तम, लेखक, उपदेशक और पुस्तक प्रकाशक थे। अपनी पुस्तको के मुखपृष्ठो को वे प्राय श्री पण्डित लेखराम जी के चित्रो से विभूषित किया करते थे। आर्यसमाज के साहित्य मे उनका योग-दान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

६—श्री पण्डित लेखराम जी ने अपने जीवन मे कुल कितने ग्रन्थ लिखे थे? इस विषय मे कुछ लिखना मेरे लिये कठिन है। उनकी ततीस पुस्तको का एक बडे आकार का बडा सग्रह श्री महात्मा मुन्शीराम जी जिज्ञासु ने "कुल्लियाते-आर्य मुसाफिर" के नाम से प्रकाशित किया था। भूलना न चाहिये कि ये श्री महात्मा मुन्शीराम जी जिज्ञासु ही हमारे महान् शिक्षा सस्थान गुरुकुल कागडी के यशस्वी सस्थापक थे और वे ही फिर हिन्दु-सगठन, शुद्धि और अछूतोद्धार के प्रबल सूत्रधार श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के रूप मे प्रगट हुए थे। "कुल्लियाते-आर्य-मुसाफिर' का दूसरा सस्करण श्री मास्टर लक्ष्मण जी आर्योपदेशक ने देहली से प्रकाशित किया था। इसका अनुक्रम जालन्धर वाले सस्करण से भिन्न था। कुल्लियाते आर्य मुसाफिर के कुछ भागो का हिन्दी-अनुवाद श्री महाशय प्रेम शरण जी "प्रणत" ने आगरा से बहुत सुन्दर रूप मे कतिपय खण्डो मे प्रकाशित करवाया था। तीस-बत्तीस वर्ष पूर्व वे खण्ड मेरे पास थे। वह कार्य बहुत उत्तम रूप मे आरम्भ हुआ था। न जाने किन कारणो से वह कार्य अधूरा ही रह गया था। श्री मास्टर लक्ष्मण जी ने श्री पण्डित लेखराम जी की हृदकम्पकारी पुस्तक—"तकजीबे बुरा हनुलअहमदिया का अनुवाद— अहमदी युक्तियो का खण्डन" के नाम से प्रकाशित किया था। उनकी कुछ अन्य पुस्तके भी हिन्दी मे अनुदित होकर प्रकाशित हुई थी। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से भी कुल्लियाते-आर्य मुसाफिर को हिन्दी मे प्रकाशित करने कराने के उद्योग पिछले दस-बारह वर्षो से हो रहे है। एक खण्ड सार्वदेशिक सभा की ओर से हिन्दी अनुवाद का प्रकाशित भी हो चुका है। इस कार्य के लिये मैने भी अपना सहयोग सार्वदेशिक सभा को समर्पित किया था। अपनी जानकारी के आधार पर मैं यह लिखने को विवश हूँ कि इस महत्वपूर्ण कार्य की प्रगति सन्तोषजनक नही है। इस अधूरे कार्य को पूरा करना ही चाहिये।

७—मैंने लाहौर मे श्री पण्डित लेखराम जी के कतिपय उर्दू ग्रन्थो को देखा एवं पढा था। वे बहुत उत्तम कागज पर बहुत उत्तम लिखावट और सुन्दर साज-सज्जा के साथ प्रकाशित ग्रन्थ थे। सन् १९६० और सन् १९६१ ई० मे कुछ स्थानो की यात्रा मैंने श्री पण्डित जी के ग्रन्थो के प्रथम-प्रथम सस्करण खोज करके प्राप्त करने के लिये की थी। तब मुझे बाईस ग्रन्थ मिल गये थे, जो कि मेरे पास हैं। पुराने-पुराने आर्य समाजो मे अभी भी श्री पण्डित जी के वे प्रथमवार मुद्रित ग्रन्थ सुरक्षित होगे। क्या ही अच्छा हो कि कोई ऐसा प्रबन्ध किसी प्रकार हो जाये जिस से उन ग्रन्थो को अधिक सुरक्षित तथा अनुसन्धाताओ के लिये सुलभ किया जा सके। जो कोई सज्जन विविध विश्वविद्यालयो मे आर्यसमाज से सम्बन्धित किसी विषय म किसी प्रकार का अनुसन्धान कर रहे हो, या अनुसन्धान करने के इच्छुक हो, उन्हे अपने-अपने अनुसन्धान को त्रुटिरहित बनाने के लिये श्री पण्डित लेखराम जी के मूलग्रन्थो को अवश्य ही पढ लेना चाहिये। ऐसा करने क लिये उर्दू की अच्छी योग्यता भी प्राप्त करनी चाहिये। अनुसन्धान-कार्यो के लिये श्री पडित लेखराम जी के ग्रन्थो का महत्व अत्यधिक है। हमे डर

(शेष पृष्ठ ६ पर)

(पृष्ठ ६ का शेष)

है कि कहीं ऐसा न हो कि जिस से उस महान् धर्मवीर के ग्रन्थों का भण्डार आर्यों के आलस्य, प्रमाद, उपेक्षा और कर्त्तव्य विमुखता को भेंट चढ़ जाये। लेखराम वीर तृतीया का पावन-पर्व और मेला उनके ग्रन्थों के प्रकाशन और पठन-पाठन के अभाव मे सफल कैसे हो सकेगा ?

८—"कुल्लियाते-आर्य मुसाफिर" बाजार में बहुत वर्षों से अप्राप्त चलो आ रही है। उसके पुनः प्रकाशन का आयोजन अब कौन करेगा ? उनके विभिन्न छोटे-बड़े ग्रन्थों के नये सस्करण व्यापारिक दृष्टि से भी कुछ लाभप्रद हो सकते हैं। इस कार्य के लिये साधन और सामर्थ्य जिन के पास हैं, उन्हें अवश्य ही आगे बढ़कर यह कार्य सम्भाल लेना चाहिये। यदि कोई सभा-संस्था या पुस्तक प्रकाशक बन्धु कुल्लियाते—आर्य मुसाफिर का अथवा पूज्य पण्डित जी को किसी भी पुस्तक का सार-संक्षेप हिन्दी में प्रकाशित करने का संकल्प करें, तो आवश्यक होने पर मैं अपना सहयोग समर्पित करने के लिये प्रस्तुत हूँ। "[आर्य-मर्यादा"—कार्यालय के द्वारा मेरे साथ सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है।]

९—श्री पंडित लेखराम जी आर्यसमाज के लिये ही जीवित रहे थे, आर्यसमाज के लिये ही उन्होंने अपने जीवन का बलिदान किया था—फिर आर्यसमाज ने अब उनके विषय में यह—"न कुछ करनी नीति" क्यों अपना रखी है ? उनके ग्रन्थों का प्रकाशन बन्द है, उनको स्मृति में आगरा में स्वर्गीय श्री पण्डित भोजदत्त जी ने आर्य मुसाफिर विद्यालय स्थापित किया था, वह भी देर हुई बन्द हो चुका है। पहिले जालन्धर से और फिर लाहौर से उर्दू में "आर्यमुसाफिर" पत्र छपा करता था, वह भी देर हुई बन्द हो चुका है। श्री पण्डित लेखराम जी ने आर्यसमाज के नाम अपना अन्तिम सन्देश देते हुए यह वस्सीयत की थी कि "तहरीर का काम आर्यसमाज की ओर से बन्द न होने पाये।" इस वस्सीयत को शोभाजनक रूप में पूरा क्यों नहीं किया जाता ?

१०—एक विनम्र धर्म प्रचारक के रूप मे मैंने सभी मत-मतान्तरों के धर्म ग्रन्थों को मनोयोग पूर्वक पढ़ा है। मैंने उन-उनके मतगत साम्प्रदायिक इतिहासों का भी अध्ययन किया है। एक पुस्तक लेखक के रूप में मैंने विभिन्न मतमतान्तरों के प्रवर्त्तकों और आचार्यो के बहुत से जीवन-चरित्र पढ़े भी हैं, लिखे भी हैं, वे पुस्तकाकार मे छपे भी हैं अपनी खोज और जानकारी के आधार पर यह लिखते हुए मैं हार्दिक प्रसन्नता अनुभव करता हूं कि आर्य वीर श्री पण्डित लेखराम जी जैसे उत्साह, श्रद्धा और प्रेमभाव से परिपूर्ण महान् व्यक्तित्व बहुत ही कम देखने में आते हैं, वे भी कभी कभार, कहीं-कहीं। उपदेशक तो आज भी कम नहीं हैं, पहिले से तो अधिक ही हैं। विद्या भी उनमें अधिक है। बड़ी-बड़ी उपाधियों के प्रमाण-पत्र तो हैं ही उनके पास। फिर भी अमर शहीद, धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर का स्थान तो आज भी खाली ही पड़ा है। उन जैसा कोई दूसरा फिर कोई हुआ ही नही। उन जैसे त्याग, तप, बलिदान, संयम कर्त्तव्य-पालन, निडर और प्रफुल्ल प्रभु-भक्ति-परायणता से परिपूर्ण, असाधारणताओं से ओत-प्रोत जीवन तो किसी भी धर्म-प्रचारक का बहुमूल्य धन और शोभनीय आभूषण ही होता है। भगवान् बुद्ध के चेलों में सारिपुत्र, मौगदल्यायन और आनन्द, ईसा के चेलों मे शम औन पीटर, मुहम्मद के चेलों में अली, और सुप्रसिद्ध बंगाली सन्त राम-कृष्ण परम हंस के चेलों में विवेकानन्द, ये कुछ ऐसे श्रेष्ठ पुरुष थे जिनके साथ श्री पण्डित लेखराम जी के त्याग, तप और बलिदानमय जीवन की कुछ-कुछ तुलना की जा सकती है। उस महान् आर्य-मुसाफिर की संक्षिप्त जीवन झांकी आगे प्रस्तुत की जा रही है।

आओ-आओ ओम् का झण्डा उठाओ आर्यो !
वेद का प्रकाश घर-घर में पहुँचाओ आर्यो !
नाम छुआ-छूत का जग से मिटाओ आर्यो !
वेद का अमृत पियो, सब को पिलाओ आर्यो !
आपसी झगड़ों की अब होली जलाओ आर्यो !
बन के कुछ और काम कुछ करके दिखाओ आर्यो !
वकते आखिर था यही पैग़ाम प्यारे वीर का।
काम बिल्कुल बन्द होने पाये न तहरीर का॥

२—"जीवन वृत्त की उज्ज्वल झांकी"

१—धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर के जीवन में बाल्य काल से ही धार्मिक पुस्तको के अध्ययन का प्रबल उत्साह देखने में आता था। जब कभी विवाह का प्रश्न सामने आता था। तब उनका वैरागी मन विद्रोह कर देता था। एक बार तो स्थिति इतनी विषम हो गई थी कि उनके स्थान पर, उनके भाई का विवाह-संस्कार सम्पन्न कराया गया था। इसके बहुत बाद सब ओर से बहुत अधिक दबाये जाने और आत्मीयजनों के समझाने बुझाने से वे विवाह के लिये सहमत हो गये थे। फिर भी घर-गृहस्ती के झमेलों से तो वे दूर-दूर ही बने रहे। उनका सारा समय धर्म-प्रचार में ही व्यतीत होता था और धर्म-प्रचार के कार्यों में ही उनका प्रबल उत्साह देखने में आता था।

२—श्री पण्डित लेखराम जी पहिले पुलिस के सिपाही बने थे। सुशिक्षित होने के कारण उनको प्रायः लिखने-पढ़ने के कार्यों में ही नियुक्त किया जाता था। आर्यसमाज का प्रेम युवावस्था का आरम्भ होते-होते ही उनकी नस-नस में बस चुका था। पुलिस की नौकरी के साथ ही साथ उन्होंने आर्यसमाज की प्रगतियों में भी सक्रिय भाग लेना आरम्भ कर दिया था। फिर, जब उन्होंने देखा कि पुलिस-विभाग में रहते हुए वे अपने विचारों की स्वतन्त्रता को स्थिर और सुरक्षित नहीं रख सकते, तब उन्होंने नौकरी का परित्याग कर दिया और धर्म-प्रचार के कार्यों में ही आत्म-समर्पण कर दिया।

३—आर्यसमाज के प्रचार के लिये फिरोजपुर से "आर्य-गजट" नामक उर्दू साप्ताहिक पत्र निकालने का जब निश्चय किया गया, तब धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी को ही उसका सर्वप्रथम सम्पादक नियुक्त किया गया। इसके कुछ काल पश्चात् पंजाब के आर्यों में गृह-दाह की ज्वाला भड़क उठी। कालिज-पार्टी और गुरुकुल-पार्टी के विवाद बढे। तब यद्यपि श्री पण्डित लेखराम जी ने गुरुकुल विभाग को ही अपनाया था, तथापि एक सच्चे आर्योपदेशक के रूप में उनका व्यक्तित्व पक्ष-विपक्ष की राग-द्वेषमयी दलदल से बहुत ऊँचा था। अपने गौरव को उन महाभयानक काले दिनों में भी उन्होंने सुरक्षित रखा था और अपनी सर्वप्रियता पर उन्होंने कोई आँच नहीं आने दी थी।

४—इधर ओम् का झण्डा हाथ में लेकर धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी महर्षि दयानन्द जी के अधूरे कार्यों को पूर्ण करने के लिये वैदिक-धर्म का प्रचार प्रबल उत्साह के साथ आरम्भ करते हैं, उधर एक नये कादयानी अथवा अहमदी नामक इस्लामी मत के प्रवर्त्तक के रूप में एक मौलवी साहेब—मिर्जा गुलाम अहमद कादयानी भी प्रगट होते हैं। मुसलमानों में मिर्जा साहेब अपने आपको एक नये नबी—"मसीह मोऊद के रूप में प्रगट करते हैं, हिन्दुओं को अपने जाल में फंसाने के लिये वे अपने आपको श्री कृष्ण जी का अवतार बतलाते हैं। वे पुस्तकें लिखते हैं और उन पुस्तकों में हिन्दुओं तथा ईसाइयों के महापुरुषों के लिए घोर अपमान जनक शब्दों का व्यवहार करते हैं। स्वयं मुसलमानों के दिल को दुखाने वाले लेख लिखने से भी वे चूकते नहीं हैं। दूसरों के महापुरुषों पर निराधार आरोप लगाना, अपराधों, कुकृत्यों और मूर्खतापूर्ण बातों को उनके मत्थे मढ़ना उनका स्वभाव बन जाता है। अपने विपक्षियों को वे गन्दी-गन्दी गालियाँ भी देते हैं, और उन्हें डराने-धमकाने के लिये तरह-तरह की भविष्यवाणियों का आश्रय भी लेते हैं।

५—सब ओर से मिर्जा गुलाम अहमद के आक्रमणों के उत्तर दिये जाते हैं। पादरी आथम साहेब, मौलाना हुसैन अहमद साहेब बटालवी, मौलाना सनाउल्ला साहेब अमृतसरी और धर्मवीर पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर अपने-अपने मन्तव्यों के अनुसार उस नये नबी और कादयानी—अहमदी मत प्रवर्त्तक को मुँहतोड़ जवाब देते हैं। श्री पण्डित लेखराम जी इन सब में भी आगे-आगे हैं। वे ईंट का जवाब पत्थर से देते हैं। वे मिर्जा साहेब के खोखले मत की छीछालेदर करके उसे नगे रूप में संसार के सामने प्रस्तुत करते हैं। वे मिर्जा साहेब को बारम्बार शास्त्रार्थ के लिए ललकारते हैं। वे मिर्जा साहेब की पुस्तकों के जवाब, उनके रंग में ही, बहुत शीघ्रता के साथ लिखते हैं और पुस्तकाकार प्रकाशित भी करवा देते हैं। अपने-पराये सभी पण्डित लेखराम जी के परिश्रम की सराहना करते हैं। बेचारे मिर्जा जी बहुत अधिक परेशान हो जाते हैं। क्या करें ? क्या न करें ?

६—धावे पर धावे बोलते हुए पण्डित लेखराम जी कादियाँ पहुंच जाते हैं और सामने आकर सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए मिर्जा जी को ललकारते हैं। पण्डित जी के सामने आने की हिम्मत मिर्जा जी में नहीं है। वे अदालतों में मुकदमे बाजी आरम्भ करके धर्मवीर को उलझाना चाहते हैं। काम बनता न देखकर गालियाँ और धमकियां देते हैं। फिर उस महान्

(शेष पृष्ठ १० पर)

महर्षि दयानन्द : एक आलोक-स्तम्भ !

(श्री रमाकान्त जी दीक्षित एम० ए० भिवानी)



महर्षि दयानन्द का जीवन ऐसा— आलोक स्तम्भ है जिसके प्रकाश में जीवन-पोत को भव-सागर से सहज ही पार उतारा जा सकता है और अध्यात्म-लोक मे पहुँच कर सच्चे वैभव का आनन्द लिया जा सकता है। वास्तव में वे एक दिव्य पुरुष थे। देखिए—

१—स्वामी दयानन्द गुरु विरजानन्द के पास अढाई वर्ष तक अध्ययन करते रहे। उन्होने उनसे वेदो और शास्त्रो का ज्ञान प्राप्त किया। अध्ययन के बाद गुरु से विदा लेने का समय आया। स्वामी दयानन्द को पता था कि गुरु जी लौंग बहुत पसन्द करते हैं। इसलिए, वे गुरुदक्षिणा के रूप में लौंग लेकर गुरु के पास पहुँचे। पर गुरु जी इतने सस्ते मे छूट देने वाले नहीं थे। उन्होने इस भेंट को अस्वीकार करते हुए कहा—"गुरु दक्षिणा के रूप मे मुझे ये लौंग नही, कुछ और चाहिए।'

स्वामी दयानन्द ने नम्रभाव से कहा—"गुरु देव मेरा तन-मन सब आपकी भेंट है, आज्ञा दीजिए, मैं जी जान से उसका पालन करूँगा।

२—कर्णवास गगा स्नान का मेला था। स्वामी दयानन्द भी वहाँ भाषण दे रहे थे। वहीं करोली के रईस कर्णसिंह भी आए हुए थे। हजारो नर-नारी भाषण सुन रहे थे। जैसे ही भाषण समाप्त हुआ कर्णसिंह स्वामी जी से वाद-विवाद करने लगे। स्वामी जी ने कर्णसिंह से कुछ प्रश्न पूछे तो असमर्थ रहे और खीझ उठे। गालियाँ देने लगे। क्रोध से उनका हाथ बार-बार तलवार की मूठ पर जाने लगा। यह देख स्वामी जी बोले—"यदि शास्त्रार्थ करना है तो अपने गुरु को यहाँ बुला लाओ। यदि युद्ध करने का शौक है तो सन्यासी से क्यो टकराते हो। जयपुर और जोधपुर से जा भिडो।" यह सुनकर कर्णसिंह स्वामी जी पर तलवार से वार करने के लिए दौडे। वह वार करने जा ही रहे थे कि स्वामी जी ने तलवार के दो टुकडे करते हुए कहा—"मैं सन्यासी हूँ। तुम पर प्रहार करके बदला नही लूँगा। जाओ भगवान् तुम्हें सद्बुद्धि दे।"

३—एक दिन जालन्धर के रईस सरदार विक्रमसिंह स्वामी दयानन्द से बोले—"आपने ब्रह्मचर्य को इतना महत्त्व दिया है पर उसका अभी तक कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नही दिखाया।" स्वामी जी उस समय तो मुस्करा दिए। थोडी देर में विक्रमसिंह ने स्वामी जी से विदा ली। प्रणाम करके वे बग्घी में अलग जा बैठे। कोचवान ने बग्घी चलाई पर वह अपने स्थान से एक इंच भी न हिली। आखिर जब सरदार जी ने पीछे मुडकर देखा तो स्वामी जी पहिया पकडे मुस्करा रहे थे। यह था उनके ब्रह्मचर्य का प्रभाव।

४—स्वामी विरजानन्द जो एक बार पढा देते थे उसे दुबारा नही पढाते थे। एक बार की बात है कि दयानन्द कुछ पाठ भूल गए। स्वामी जी ने बडी नम्रता से गुरु जी से कहा कि यह पाठ मुझे फिर बतला दीजिए पर उन्होने बतलाने से साफ इन्कार कर दिया और कहा—"जब तक सारा पाठ याद न हो जाए यमुना मे भले ही डूब मरो, मेरे पास मत आना।" स्वामी जी उस समय निराश हो गए। पर वे निष्ठापूर्वक यमुना के तट पर एक वृक्ष के नीचे पाठ स्मरण करने लगे। थोडी देर मे उन्हें सारा पाठ याद हो गया। वे गुरु जी पर यह सुसवाद लेकर पहुँचे। वे प्रसन्न हुए और उन्होने आशीर्वाद दिया।

५—जब स्वामी दयानन्द जोधपुर के दौरे पर गए हुए थे वहाँ कुछ दुष्टो ने उनको दूध में जहर दे दिया। जिस रसोइये से जहर दिलाया गया था उसे स्वामी जी ने बडे प्यार से पास बुलाकर कहा—"मेरा तो देहान्त हो ही जाएगा, पर बाद में लोग तुम्हें भी कष्ट देंगे, इसलिए ये रुपए लो और यहाँ से दूर चले जाओ।" ऐसा महान् आत्मा, ऐसा सहायक भला कहाँ मिलेगा !●

ऋषि तुमने उपकार कर दिया

श्री भैरवदत्त शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद् लगुचा (खीरी)

तिमिर-निशा को शिव महिमा मयि मत्य सजग-साकार करदिया।
खोल नयन, सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
युग बीते थे किन्तु किसी ने अपना पन जाना न कभी था,
घट रीते थे पर रीता पन सचमुच कुछ माना न कभी था,
छल जीते थे पर उनकी कमियो को पहिचाना न कभी था,
बल पीते थे दम्भ कुफल पर जिसका अनुमाना न कभी था,
सभी समस्याओ के चिन्तन का अभिनव विस्तार कर दिया।
खोल नयन सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
रूढि-स्वैरिणी के जालो मे ज्ञान फँसा कलपा-बिलखा था,
ढोगो का परिवेश भयकर प्रज्ञा ने सर्वत्र लखा था,
जड प्रतिमा पर अक्षत खाते मूषक को सबने निरखा था,
पर मायावी गहन आवरण नही किसी ने भी परखा था,
अन्तश्चेतन की ध्वनि सुनकर जडिमा का परिहार कर दिया।
खोल नयन सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
भाँति-भाँति के मत वर्णों से धरती का तन गया रँगाया,
तुमसे पहिले सत बहुत से जगे, किन्तु जग जगा न पाया,
निज हित पर सबकी भेंटें ली जग-हितपर न निजत्व लगाया,
परम्परा का वक्ष कुचल कर अभिशापो का भय न भगाया,
तुमने तो जग-हित पर अपना तन-मन-धन बलिहार कर दिया।
खोल नयन सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
गिरि-कन्दर वन-कानन छाने झाँका वसुधा का हर कोना,
मदिर-मठ के पाप समझ कर सुना युगो का रोना-धोना,
खुद तज सोना रहे बाँटते उपदेशो मे शाश्वत सोना,
मेधा बल से खोज निकाला वेद-तत्त्व मधु भरा सलौना,
ओजस्वी आलोक-पुज से गहन तिमिर सब क्षार कर दिया।
खोल नयन, सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
गुरु कुल खोल देव-वाणी के गौरव का चिर शिखर बनाया,
हिन्दी का अस्तित्व सुदृढ कर आर्ष प्रथाओ को पनपाया,
वैदिक धर्म-ध्वजा फहरायी आर्य-शक्ति का पुज जगाया,
ब्रह्मा से लेकर जैमिनि तक प्राप्त दाय को बढ अपनाया,
सत्य, अर्थ की सुदृढ भूमि पर अघ-छल का सहार कर दिया।
खोल नयन, सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥
स्वतन्त्रता, सहयोग, ऐक्य की भावन बेलि नवीन लगायी,
सुप्त आर्य-सस्कृति-गरिमा सब, खुद देखो, जग को दिखलायी,
पक्ष-पात, विद्वेष मिटाकर मानवता की शक्ति बढायी,
क्रान्त दर्शिता मयि शुचिता से पकिलता की छाप हटायी,
मृतवत् शाश्वत शिव मूल्यो मे नव जीवन-सचार कर दिया।
खोल नयन, सोते भारत का ऋषि ! तुमने उपकार कर दिया॥

प्रहेलिकाएँ

(श्री सूर्य कुमार पाण्डेय—लखनऊ)

(१)

जब सब घर से जाने लगते, मुझको लटका जाते।
घर की रक्षा करता रहता, चोर न घर मे आते॥

(२)

सबके साथ सदा रहती हूँ, पकड न कोई पाता।
छोटी-बडी हुआ करती हूँ, सबसे मेरा नाता॥

(३)

तनिक हवा भी जब चलती है, मेरा तन हिल जाता।
हुआ पुराना गिर जाता हूँ, नया-नया आता॥

(४)

बिन बोले सब बतला देती, सबको देती ज्ञान।
वृद्ध-युवा-बालक सब रखते, बूझो इसको जान॥

१ ताला २ छाया ३ पत्ता ४ पुस्तक

स्व० स्वामी समर्पणानन्द जी के संस्मरण

(ले० डा० भवानीलाल भारतीय, एम० ए०, पी० एच० डी०)

लगभग १० वर्ष पूर्व की बात होगी। सार्वदेशिक सभा के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर दयानन्द भवन में पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार से भेंट हुई। मैंने पूछा पण्डित जी, आपने मुझे पहचाना। पण्डित जी बोले, अरे भाई जिनके कंधों पर हमे जाना है, भला हम उन्हें क्यों नहीं पहिचानेंगे ? और आज वे सचमुच हमारे कंधों पर बैठकर चले गये। स्वामी समर्पणानन्द जी ने अपना जीवन ही ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के समर्पित कर दिया था, अतः उनका समर्पणानन्द नाम धारण कर प्रव्रज्या ग्रहण करना सार्थक ही था। अपने अपूर्व वक्तृत्व कौशल, विशद वैदिक और शास्त्रीय ज्ञान, शास्त्रार्थ सभा मे उनका अद्भुत प्रतिवादी—भयंकर-रूप, शास्त्रीय समस्याओं को सुलझाने मे उनकी अद्वितीय ऊहा ये सभी गुण उन्हें आर्यसमाज के विद्वानों में मूर्धाभिषिक्त स्थान प्रदान करते थे।

१९५३ में डीडवाना (राजस्थान) में मैंने उन्हें माधवाचार्य और अखिलानन्द से शास्त्रार्थ संगर में जूझते देखा। जिस कुशलता से वे प्रतिवादी विद्वानों को निग्रह स्थान में ले आते थे यह देखकर आश्चर्य होता था। पुराणों का जैसा विस्तृत और समालोचनात्मक ज्ञान उन्हें था, वैसा इस समय के स्वाध्याय शून्य वातावरण में मिलना कठिन है वे पौराणिक मन्तव्यों की जैसी तीखी समालोचना करते थे उससे विपक्षी तिलमिला तो अवश्य जाते परन्तु उसका उत्तर देना उनके लिए सम्भव नहीं होता। शिवदूती को शिव द्वारा विचित्र भट देना, शिवपुराण वर्णित दारुण की कथा तथा गृहस्थ सूत्रों मे वर्णित अवकीर्णी प्रायश्चित आदि के प्रसग उनके पास ऐसे ट्रम्प के कार्ड थे जिनसे विपक्षियो का परास्त हो जाना स्वाभाविक ही था।

प० बुद्धदेव जी को मैंने जोधपुर, अजमेर, टंकारा, पाली आदि अनेक स्थानों पर सुना। एक विशिष्ट मजमून पर उनके व्याख्यान जितने सारगर्भित, प्रभावपूर्ण और विचारोत्तेजक होते उन्हें सुनकर यह विश्वास हो जाता कि आर्यसमाज का यह दिग्विजयी पण्डित भूमण्डल के विद्वानों को परास्त कर देने की क्षमता रखता है। जिन दिनों हिन्दी की कुख्यात पत्रिका सरिता में रतनलाल बंसल का कुख्यात लेख गोवध के समर्थन में छापा था, उन दिनों पं० बुद्धदेव जी ने अपना व्याख्यान उक्त मजमून पर ही बनाया। अपनी युक्तियों को उन्होने एक पुस्तक रूप में भी निबद्धकिया, जिसका शीर्षक था— किसकी सेना में भर्ती होंगे ? कृष्ण की या कस की ? जो लोग आर्यशास्त्रों के आधार पर गोवध का समर्थन करते हैं उन्हें कड़ी फटकार बताते हुए पण्डित जी कहा करते थे कि ये लोग कंस के वंशज है। पुनः ऋग्वेद के सप्तसिन्धु सूक्त की अद्भुत व्याख्या करने वाला उनका व्याख्यान बहुत प्रसिद्ध हुआ जिसमे उन्होने यूरोपीय विद्वानो को आह्वान करते हुए पूछा कि वे वेद के सूक्त में भारतोय नदियों का उल्लेख किस प्रकार सिद्ध करते हैं। अथर्ववेद के उस मत्र की भी वे मार्मिक व्याख्या करते थे जिसमें शाब्दिक रूप से यह कहा गया कि ब्राह्मण अब्राह्मण स्त्रियो को स्वीकार कर सकता है।

अच्छा तो यह होता कि पं० बुद्धदेव जी के अपार शास्त्र ज्ञान और उनकी विशद मेधाशक्ति का आर्यसमाज रचनात्मक लाभ उठाता और उनको एक स्थान पर बैठाकर शतपथ ब्राह्मण का भाष्य सम्पूर्ण कराने की व्यवस्था करता। यह विडम्बना ही है कि स्वामी समर्पणानन्द जी का अधिकांश समय आर्यसमाजों के उत्सवों तथा अन्य सभाओं के कार्यक्रमों पर जाने मे ही समाप्त हो जाता और वे लेखन कार्य के लिए कुछ भी समय नहीं निकाल पाते थे। कुछ उनकी प्रवृत्ति भी जनता से साक्षात् सम्पर्क कर व्याख्यान द्वारा प्रचार करने की अधिक थी। अस्तु। पिछले दिनों वे सुरापान के सम्बन्ध में अपना मार्मिक प्रवचन दिया करते थे। वेद विषय में पाश्चात्य विद्वानों को उनका Standing Challenge रहता था। एक बार टंकारा मे आयोजित ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर मैंने उनसे पूछा — महाराज ! आप अपने वेद विषयक मार्मिक व्याख्यानों द्वारा श्रोतागणों के दिल जीत लेते हैं, समार भर के वेदविपश्चितों को आहूत भी करते हैं, परन्तु आर्यसमाजो के इन उत्सवों मे उपस्थित होने वाली इस सीमित जनता के समक्ष प्रस्तुत आपकी यह सिंह गर्जना तो एक सीमित दायरे की गूंज मात्र रह जाती है। पाश्चात्य विद्वानों की बात छोड़िये, एतद्देशीय पाश्चात्यों के उच्छिष्ट भोजी विश्व विद्यालयों के प्राध्यापकों तक भी आपके विचार नहीं पहुँच पाते जो पाश्चात्य सरणि पर ही वेद विषयक अध्यापन और अध्ययन में प्रवृत्त हैं। बात सही है। हमने उस महान् विद्वान् के व्याख्यानों की व्यवस्था यदि भारत तथा अन्य देशों के विश्वविद्यालयों सस्कृत विभागों मे की होती और इन वैदिक विद्वानों से विचार विमर्श कराने का अवसर उपलब्ध कराया होता तो उनकी विद्वत्ता की धाक समस्त विद्वन्मण्डल पर छा जाती।

यहाँ संक्षेप में उनके द्वारा रचित ग्रन्थों की सूची उपस्थित की जा रही है। व्याख्यान और प्रचार कार्य में अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी उन्होंने कई उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखे थे—

१. अथर्ववेद का सस्कृत भाष्य—आर्यप्रतिनिधि सभा, पजाब के लाहौर से प्रकाशित होने वाले मुखपत्र आर्य में धारावाही रूप से प्रकाशित हुआ था। यह पूरा नहीं हो सका।

२. शतपथ मे एक पथ-जिस शतपथ ब्राह्मण पर प० जी का अपूर्व अधिकार था, उस पर उनकी यह विवेचनात्मक पुस्तक है। उनके देहान्त के पश्चात् भारत के शिक्षा विभाग के राज्यमंत्री प्रो० शेरसिंह ने इस ग्रन्थ के केन्द्रीय शिक्षा विभाग के अनुदान से पुनः प्रकाशित कराने का संकल्प किया है।

३. पञ्चमहायज्ञ प्रकाश—पञ्च यज्ञों की अपूर्व व्याख्या। लाहौर से छपी थी। अब अनुपलब्ध है।

४ अथ ब्रह्मयज्ञ—उपर्युक्त ग्रन्थ का ब्रह्मयज्ञ विषयक अंश। द्वितीय संस्करण कार्तिक १९९० वि० मे गुरुदत्त भवन, लाहौर से छापा।

५ अथ मरुत्सूक्त—ऋग्वेद के मरुत्सूक्तों की व्याख्या। गुरुदत्त भवन लाहौर से चैत्र १९८८ वि० में प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ।

६. स्वर्ग—वेद मंत्रों के आधार पर वैदिक स्वर्ग का विवेचन।

७. सप्तसिंधु सूक्त—ऋग्वेद के दशम मंडल के ७५ वें सूक्त की सेना पर व्याख्या।

८. किसकी सेना में भर्ती होंगे ?—वैदिक ग्रन्थों पर गोवध विधान के आक्षेपों को निवारणार्थ लिखा गया ग्रन्थ। सरिता पत्रिका के उत्तर में लिखा गया था।

९. कायाकल्प—स्वामी समर्पणानन्द वर्णाश्रम व्यवस्था के कट्टर समर्थक थे। वे वर्तमान समाज, राष्ट्र और विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान वर्णाश्रम व्यवस्था के पुनरुद्धार से ही सम्भव मानते थे। उनके एतद् विषयक विचारों का विवेचन करने वाला महत्वपूर्ण ग्रन्थ।

१०. पाणिनीय प्रवेशिका—अष्टा ध्यायी में प्रवेश करने के लिये सुगम व्यवस्था ग्रन्थ।

इसके अतिरिक्त उन्होंने छोटी बड़ी पुस्तिकायें भी समय-समय पर लिखी थी, जिनमें निम्न उल्लेखनीय हैं—भारतीय लोक संघ की स्थापना क्यों ? गोपावर्त, Vedic Seleclionism आदि। स्वामी जी का संस्कृत और हिन्दी के ही समान अंग्रेजी भाषा पर भी पूर्ण अधिकार था। यदि उन्हें सुविधा मिलती तो वे वैदिकवाङ्मय पर अंग्रेजी भाषा में भी उत्कृष्ट साहित्य की रचना कर सकते थे ? आवश्यकता इस बात की है कि अब उनके दिवंगत होने पर हम उनके साहित्य को सुन्दर और व्यवस्थित ढंग से प्रकाशित करने की योजना बनावें। यही हमारी इस दिवंगत महापुरुष के प्रति उचित श्रद्धाञ्जलि होगी।

शोक-प्रस्ताव

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार के प्राध्यापक एवं छात्रों की यह सम्मिलित सभा श्रद्धेय स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है। ईश्वर से दिवंगत आत्मा की सद्गति और शान्ति की प्रार्थना है, तथा ईश्वर उनके वियोग से संतप्त शिष्यों एवं भक्तों को धैर्य प्रदान करे,

—सत्यप्रिय शास्त्री, उपाचार्य

आर्य युवक प्रोत्साहन—

'ऋषि' बोध-प्रसाद

(श्री अशोक कुमार आर्य उप प्रधान आर्य युवक समाज दयानन्द कालिज अबोहर)

सैकडो वर्षों की दासता ने भारत को पगु बना रखा था। भारत मे ईंटो और मढियो की पूजा का प्रचार निरन्तर बढता ही चला जा रहा था। ऐसी विकट परिस्थितियो में मा अपने बच्चे को शिवरात्रि का महत्व बताते हुए कह रही है कि 'यह एक ऐसा व्रत है कि इसका पालन करने से भगवान् का साक्षात्कार किया जा सकता है किन्तु यह व्रत है बहुत कठिन। क्योकि इसमे न तो खाना ही होता है और न ही इसमे कुछ पीने की ही आज्ञा होती है। इसलिए इसे नन्हे बालक नही निभा सकते।'' किन्तु उस दृढस्वभाव बालक ने, जिसे सभी मूलशकर के नाम से पुकारते थे, भगवान् के साक्षात्कार करने के लिए व्रत रखने का दृढ निश्चय कर लिया। सारा दिन भूखा, प्यासा रहने के पश्चात् रात्रि को पिताजी के साथ शिवाजी के मन्दिर को चल दिए, जहाँ सारी रात जागने पर ही भगवान् से साक्षात्कार होगा ऐसी धारणा से लोग बैठे भगवान् की आराधना कर रहे थे। किन्तु कुछ ही समय पश्चात् धीरे-धीरे करके सभी लोग स्वप्न लोक मे खो गए। ऐसी परिस्थिति में भी मूलशकर अकेला बैठा जागता रहा और एकटक शिव-मूर्ति की ओर टकटकी लगाए भगवान् की प्रतीक्षा करता रहा। थोडी ही देर मे क्या देखा कि एक चूहा भोग्य पदार्थों को भगवान् की मूर्ति के ऊपर बैठा निश्चित होकर खा रहा है। बालक ने सोचा कि शायद भगवान् सो रहे होगे इसीलिए उसने आवाजें लगानी आरम्भ की कि भगवान् उठ, देख तेरे भोग्य पदार्थों को नि सकोच यह चूहा खाए जा रहा है। इतना चिल्लाने के पश्चात् भी भगवान् तो न उठा, किन्तु उसके पिताजी की नीद खुल गई जिन्होंने मूल शकर को ऐसा कृत्य करने के कारण खूब झाडा पिता की झाड से बालक बाह्यरूप से तो शान्त हो गया किन्तु उसकी अन्तर-आत्मा मे यह चक्कर बार-बार चक्कर लगाने लगा कि क्या वह भगवान् हो सकता है? जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा न कर सके। अन्त मे यह निर्णय कर कि नही वह भगवान् नही हो सकता, वह बालक उठा और चल पडा सच्चे शिव की खोज मे। अनेको जगह भटकने के पश्चात् अन्त मे मथुरा मे स्वामी विरजानन्द जी द्वारा शिक्षा ले न केवल भारत को अपितु समग्र विश्व के कल्याण का सकल्प लेकर कार्य क्षेत्र मे उतरे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् जब कार्यक्षेत्र में पैर रखा तो भारत की अवस्था दीन हीन और क्षीण थी। वेदो के नाम पर मनमाने ढोग रचे जा रहे थे। इन्हें गडरियो के गीत और न जाने अन्य कितनी प्रकार की उपमाओ से इन्हे दूषित किया गया। महर्षि दयानन्द ने कार्यक्षेत्र मे उतरते ही सर्वप्रथम वेदो के सच्चे ज्ञान को खोजकर विश्व के सामने ला रखा। भारतीयो मे इस ईश्वरीय ज्ञान के प्रति पुन श्रद्धा पैदा की।

इसके अतिरिक्त भारत मे और भी अनेको कुरीतिया घर कर रही थीं। सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, छूआछूत का बोलबाला था। विधवाओ और स्त्रियो को भी समाज मे बहुत बुरा और अनाथ समझा जाता था। स्वामी जी ने महिलाओ को समान स्थान दिलवाया उनके लिए शिक्षा का प्रबन्ध किया, विधवाओ को पुन: नियोग की प्रथा बतलाई। सती-प्रथा, बाल-विवाह, बहु विवाह, छूआछूत जैसी कुरीतियो को समाप्त करने के लिए प्रकाश का सा कार्य किया। इस प्रकार इस क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त की।

समाज सुधार करना वास्तव मे लोहे के चने चबाना होता है। इस लोकोक्ति के अनुरूप ही उन्हे जीवन मे न जाने कितनी कठिनाईयो का सामना करना पडा। मुसलमान और ईसाईयो ने तो सामने आना ही था यहां तक कि हिन्दू भी मार्ग में चट्टान बनकर खडे हो गए। इस प्रकार जीवन में न जाने कितनी बार घातक वार तो हुए सो हुए ही किन्तु अनेको बार विषपान करते हुए भी वेद मार्ग प्रदर्शित किया।

सामाजिक बुराइयाँ पुन अपना सिर उठा रही हैं, युवक वैदिक पताका हाथ में लेकर आगे बढें। इसलिए आओ वीर आर्य युवको! हम सब मिलकर ऋषि बोध पर्व पर बोध प्रसाद के रूप में यह निश्चय करें कि जब तक हमारे शरीर में रक्त का एक भी बिन्दु है, निरन्तर वैदिक प्रचार करते चलेंगे।



प्रतिबोधविदितं मतममृ-
तत्त्वं हि विन्दते। केन उप

★

लें० सत्यभूषण वेदालंकार शांत
एम० ए०

होता मानव को बोध जगत् का जब इन्द्रियां भटकती हैं
केवल बाहर के शब्द स्पर्श रस, रूप गन्ध मे फसती हैं।
विपरीत इसी के जब नर को यह ज्ञान हुआ कितना अनर्थ,
मैं अमिल शक्ति पर माणु पुज, जीवन इनमे हो अनासक्त ॥
जब सहसा मूक हृदय से यू दैवी स्वर से प्रति बोध हुआ।
तब आत्म तत्व की ओर लौट मानव ने निज प्रतिरोध किया ॥
प्रतिबोध यही है आत्मज्ञान मैं वीर्यवान् अति कर्मशील,
विषयो से पथ को जो मोड़ हूं नर पुंगव, मृदु शान्त धीर ॥
स्वर्गीय ज्ञान से ही मानव, यो अमर तत्व पा जाता है।
यह ही विद्या का विमल रूप, चैतन्य नवीन दिखाता है ॥
इसलिए इसी क्षण से मानव निज बोध त्याग प्रतिबोध करो,
देखो जग का व्यापार विकल, अपने अन्तर का शोध करो
यो केवल पशुवत् रहने से नर निम्न गर्त मे गिरता है।
वहिवि असख्य जो योनि-चक्र उनमे रह रहकर फिरता है ॥
इस कारण आत्मा को जानो श्रुतियो ने यह बतलाया है,
परमात्म तत्व का लाभ करो उसकी ही अद्भुत माया है ॥

श्री उदयराज सिंह वर्मा का स्वर्गवास

सोमवार ता० १३ जनवरी की रात्रि मे जब हम त्रिनिडाड स्थित भारतीय हाई कमीश्नर श्री मुन्नलाल जी से विदाई लेने के निमित एकत्रित हुये थे इसी सम्मेलन मे श्री वर्मा जी का ओजस्वि भाषण हो रहा था। जिस समय आप भारतवर्ष के इतिहास मे वीरो की गाथा का दिग्दर्शन करा रहे थे उसी समय अचानक आपका कण्ठ रुक गया और तत्क्षण आप इस ससार से विदाई ले लिये। सभा मे हलचल मच उठा डाक्टरो का परिश्रम निस्फल रहा।

सस्था आर्य दिवाकर के आप अनन्य भक्त थे विविध कार्य करते हुये कई बार प्रधान रह चुके हैं। इसलिये आपकी अन्त्येष्टि सस्कार का भार आर्य दिवाकर खुद ले ली। हमारे देश मे अन्त्येष्टि सस्कार (दाहक्रिया) करने का कानून नही था इसी से खास सुरक्षित रख दाहक्रिया के लिये गवर्नर से अर्जी की गई। इस अर्जी पर कानून बनाने के लिये ता० २३ जनवरी को असेम्बली सभा में स्वीकार किया गया जिससे सदा के लिये अब दाहक्रिया करने का अधिकार मिल गया। रविवार ता० २६ जनवरी को आर्य दिवाकर के कार्यक्रम और श्री प्रो० भास्करानन्द के अध्यक्ष मे स्व० वर्मा का अन्त्येष्टि सस्कार समुद्र तट पर करीब २० हजार की उपस्थित मे किया गया।

श्री वर्मा जी से विछोह होने क कारण अब आर्यसमाज शिथिल पड गया है जिसे हमे पूर्ति करने में अधिक परिश्रम करना है।

—प० आर० शिवरतन, सुरीनाम द्वीप

आर्यसमाज दहकोरा जि० रोहतक का वार्षिकोत्सव

१८-१९ जनवरी को आर्यसमाज दहकोरा का छठा वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ जिसमें स्वामी धर्मानन्द जी, स्वामी नित्यानन्द जी, ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी ब्र० रामकिशन जी के उपदेश और भजन हुए। स्वामी धर्मानन्द जी के द्वारा यज्ञशाला की आधारशिला रखी गई। उपस्थित जनता ने शराब बन्द कराने के लिए हरयाणा सरकार से माग की।

अर्जुनदेव आर्य मत्री आर्यसमाज

(पृष्ठ ६ का शेष)

वीर के प्राण-हरण के षड्यन्त्र भी रचाते हैं। अन्त में वे अपने नीच उद्देश्य में सफल भी हो जाते हैं। ठीक ही है—

जाहिलों पर होता है उपदेश का उलटा असर।
लाजवाब होकर वे आते हैं लड़ाई पर उतर॥

७— आर्य पुरुष श्री पण्डित लेखराम जी को समझाते रहे कि अपनी रक्षा का उचित ध्यान रखा करें। परन्तु वह सच्चा ईश्वर-विश्वासी, धुन का धनी, सच्चाई का मतवाला, धर्म का दीवाना हँस देता है। उसके उत्साह में कोई व्यवधान नहीं आता। विरोधियों के लिए भी उसके हृदय में अपार प्यार है। हितैषियों की चेतावनियां बेकार हो जाती हैं। श्री पण्डित लेखराम जी के बलिदान की कहानी अत्यन्त करुणाजनक है। फरवरी सन् १८८७ ई० में एक मुसलमान, श्री पण्डित जी के पास आया। बोला कि वह दो वर्ष पूर्व कुछ लोगों के बहकावे में आकर मुसलमान बना था और अब फिर शुद्ध होकर वह अपने सत्य सनातन वैदिक-धर्म में वापिस आना चाहता है। श्रद्धेय पण्डित जी ने उसकी बातों का विश्वास कर लिया। उसे अपने पास ठहरा लिया और शुद्ध करने का वचन दिया।

८—आर्य पुरुषों ने श्री पण्डित जी को फिर समझाया कि यह व्यक्ति संदिग्ध प्रतीत होता है। इसे पास ठहराना और इसका विश्वास करना उचित नहीं है। परन्तु श्री पण्डित जी ने उनके कथन पर कोई ध्यान नहीं दिया। इसके बाद श्री पण्डित जी आर्यसमाज के उत्सव पर मुलतान गये। वहाँ से वे ६ मार्च सन् १८८७ ई० को वापिस आये। वह दुष्ट तो पूज्य पण्डित जी के वापिस आने की प्रतीक्षा ही कर रहा था। कम्बल ओढ़कर वह पंडित जी के साथ हो लिया। पण्डित जी आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के कार्यालय में पहुँचे। वह धूर्त हत्यारा भी उनके साथ ही था। अचानक ही श्री पण्डित जी की दृष्टि उस दुष्ट के चेहरे की तरफ उठ गई। हत्यारा कांप उठा। पण्डित जी के पूछने पर उसने बतलाया कि उसे ज्वर है और सिर में दर्द भी है। पण्डित जी उसे डाक्टर के पास ले गये। डाक्टर ने बतलाया—"ज्वर नहीं है। खून में जोश है। कुछ थकान भी है।" दवा दी गई। हत्यारे को साथ लेकर पण्डित जी अपने मकान पर आ गये।

९—सायंकाल का समय था। श्री पण्डित लेखराम जी महर्षि दयानन्द के जीवन-चरित्र का अन्तिम प्रकरण लिख रहे थे। महर्षि की मृत्यु का प्रसंग ही चल रहा था। पण्डित जी की माता जी ने पुकार कर कहा—"बेटा! तेल नहीं आया है।" पण्डित जी बाजार से तेल ले आने के लिए उठे। अगड़ाई लेकर वे चलना ही चाहते थे कि घात में बैठे हुए उस हत्यारे ने अपना छुरा ताना और पण्डित जी के पेट में भोंक दिया। "हाये! हाये!! दुष्ट! तूने यह क्या कर डाला? हत्या, विश्वासघात, क्रूरता, शोक! महाशोक!!"

१०—पण्डित जी लोहू लुहान होकर गिर पड़े। हत्यारे का हाथ उन्होंने पकड़ लिया। हत्यारा हाथ छुड़ा कर भागने ही लगा था कि पण्डित जी की माता जी और धर्मपत्नी जी भी आ पहुँची और उन्होंने हत्यारे को पकड़ लिया। परन्तु वह छुड़ा कर भाग गया। रात के अन्धकार में फिर वह किसी के हाथ न आया। खोज करने पर पता चला था कि वह पटना शहर का एक कसाई था। कानून की पकड़ से वह साफ बच गया था।

११—श्री पण्डित लेखराम जी को शीघ्रतापूर्वक लाहौर के सुप्रसिद्ध म्यो हस्पताल में पहुँचाया गया। श्री पण्डित जी के मित्र, प्यारे, सम्बन्धी, शिष्य और साथी भी वहाँ एकत्रित हो गये। आघात होने के बाद भी पण्डित जी बहुत देर तक जीवित रहे। उनकी उस समय की अवस्था को देखकर हस्पताल के प्रधान डाक्टर पेरी साहेब ने कहा था—"बला का आदमी है। यदि यह बच गया, तो सचमुच एक बड़ा चमत्कार होगा। रात के दो बजे थे कि सांस का पंछी काया के पिंजरे को तोड़ कर उड़ गया। अन्तिम समय तक भी पूज्य पण्डित जी ने उस हत्यारे के प्रति क्रोध अथवा घृणा का कोई एक शब्द भी अपने मुँह से न निकाला। वहां पर उपस्थित आर्य पुरुषों ने जब पूछा कि हमारे लिए अब क्या आदेश है? कोई अपनी अन्तिम इच्छा हो तो कहो। तब उस महावीर ने कहा था—

"आर्यसमाज से लेख का काम बन्द न होने पाये।"

१२—अपने अन्तिम समय में भी उन्हें यदि कोई चिन्ता थी तो वह आर्यसमाज की ही थी। बूढ़ी माँ मौजूद थी पत्नी पत्थर की मूर्त्ति बनी पास बैठी थी। मित्र-प्यारे सभी थे। और अपनी महायात्रा के लिए तैयार पूज्य पण्डित जी आर्यसमाज की उन्नति के उपाय बतला रहे थे। धन्य है उस महावीर को और उसकी माता को। उस अमर हुतात्मा की परम पद प्राप्ति के बाद कालिज पार्टी और गुरुकुल पार्टी के बखेड़े समाप्त हो गये थे। तब आर्यसमाज में उत्साह की जो एक नई लहर आई थी, उसे देखकर तो हत्यारे को भी कहना पड़ा होगा—

लहू में हाथ रंगे, मुदआ बर आ न सका।
तेरा वजूद मिटाया निशां मिटा न सका॥

१३—श्री पण्डित लेखराम जी का जन्म ८ चैत संवत् १९१५ विक्रमी में जिला जेहलम के एक छोटे से ग्राम सैदपुर के एक सुप्रतिष्ठित मुहियाल ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उन्होंने ६ मार्च सन् १८८७ ई० को लाहौर में अमर पद प्राप्त किया था।

(पृष्ठ ३ का शेष)

प्रवचन लगातार कहीं न कहीं करवाते रहना चाहिये। ऋषि ने वैदिक सिद्धान्तों और मन्तव्यों पर अमूल्य प्रकाश डाला है, उनको मनन करने के लिए निरन्तर स्वाध्याय की आवश्यकता है। तभी हमें स्वयं को भी कुछ लाभ हो सकता है।

इस बार हमने शिवरात्रि=ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थों के उपदेश प्रकाशित करने का इसीलिये विचार किया है कि जिससे स्वाध्यायशील बन्धुओं को मनन करने का अवसर मिले। परन्तु परम्परा के अनुसार शिवरात्रि के समय के लिये हमारे पूज्य लेखक और कवि महानुभावों ने कुछ सामग्री भेज दी थी। ऐसी अवस्था में शिवरात्रि से पहला अंक उन लेखों और कविताओं के संग्रह से ऋषि बोधोत्सव के सम्बन्ध में यह अंक सामान्य रूप से प्रकाशित कर रहे हैं। इसमें "ऋषि दयानन्द का सन्देश" एक अत्यन्तोपयोगी लेख दिया जा रहा है। इसके लेखक एक पूज्य वैदिक विद्वान् हैं।

३—वीरतृतीया

महाबलिदाता पं० लेखराम आर्य मुसाफिर की 'वीरतृतीया' भी शिवरात्रि के एक सप्ताह के भीतर पड़ती है। आर्य जगत् में पं० लेखराम आर्य-मुसाफिर का जो उच्च स्थान है, उससे कोई भी आर्य महाशय अपरिचित नहीं है। इस सम्बन्ध में एक अधिकारी लेखक महोदय ने उनके कार्यों और जीवन पर अपने लेख में अपने चेतावनीपूर्ण विचार प्रकट किये हैं, वह लेख भी इसी वर्तमान अंक में दिया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त ऋषि के मन्तव्यों और कार्यों के प्रति एक उत्तम कविता भी प्रकाशित की जा रही है। मानों यह अंक भी ऋषि बोध अंक का पूर्वरूप बन गया है। आशा है आर्यमर्यादा के सभी स्वाध्याय प्रेमी इस अंक से भी पूरा लाभ उठायेंगे। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती

(पृष्ठ ४ का शेष)

निर्माण होता है? क्या वहाँ पर वास्तव में वेद की ही प्राधान्यता है? यदि नहीं, तो उन संस्थाओं के साथ मेरे नाम का उपयोग करना व्यर्थ है। मेरे नाम पर अनार्ष ग्रन्थों एवं अनार्ष विद्याओं को पढ़ाते हो और वेद तथा वैदिक धर्म की शिक्षा आर्यजाति के पुत्रों को भी नहीं दे सकते हो तो वैदिक धर्म की जय के घोष और मेरे नाम की जय घोष लगाना व्यर्थ है।

मैंने वेदभाष्य आर्यभाषा में करके तुम्हें वेद का रहस्य समझाया था। वेद में सब सत्य विद्यायें हैं तथा उनमें विविध प्रकार का विज्ञान भरा हुआ है। यह दृढ़ विश्वास प्रदान किया था। क्या तुमने वेद की विद्याओं एवं वैदिकविज्ञान का विकास करके उसको जनता के लाभार्थ व्यवहारोपयोगी बनाकर वेद की प्रतिष्ठा समुन्नत की है? तुमने तो एक भी सत्य विद्या का प्रकाश वेद में से नहीं किया है। और न यज्ञ के विज्ञान के माध्यम से वृष्टि विज्ञान का अनुसन्धान ही किया। तुम में वेद एवं यज्ञ विज्ञान के प्रति किंचित् भी श्रद्धा नहीं है, अतः तुमने तो इसका प्रतिपादन करने वालों को किसी भी प्रकार से सहयोग न देकर उनका अपने पत्रों में उपहास ही किया है और पूर्ण रूप से तिरस्कार भी किया। क्या मैं तुम्हारे ऐसे व्यवहार से कभी प्रसन्न हो सकूंगा?

क्या तुमने किसी वेदपाठी वेदज्ञ विद्वान् को बिना नौकरी कराये सम्मान सहित उत्तम भेंट अर्पण की है? क्या उनके जीवन निर्वाह की समस्या का हल करके उनको वेदकार्य में सम्पूर्ण समय लगाने की सुविधा प्रदान की है? नहीं-नहीं कदापि नहीं। अतः तुम पथ भ्रष्ट हो गये हो। नेतृत्व भ्रष्ट भी हो और लक्ष्य भ्रष्ट भी हो गये हो। मुझे तो तुम पूर्ण स्वार्थी प्रतीत हो रहे हो। तुम में और मठाधीशों को गद्दियों में कोई अन्तर नहीं रहा। सम्पूर्ण संपत्ति वेद के लिये है ऐसा समझ कर वह सब जब वेद के अर्पण करोगे और जब सांसारिक कामना रहित, पक्षपात शून्य, पार्टियों की दल-दल से रहित, आर्थिक दासता से मुक्त वेदज्ञों की शरण में जाओगे तब तुम वेद का संदेश भूमण्डल पर प्रसारित कर सकोगे और विश्व में तुम्हारी प्रतिष्ठा वेद की विद्याओं और वेद के विज्ञान के माध्यम से ही हो सकेगी, अन्यथा नहीं। तभी तुम मेरा बोधोत्सव एवं ऋषि मेला लगाने के अधिकारी बन सकोगे।

आर्य वेदप्रचार मण्डल मेवात प्रचार कार्यक्रम

जिला गुडगाँवा की तहसील फिरोजपुर-झिरका और तहसील नूह कुछ क्षेत्र अलवर जिला और कुछ क्षेत्र भरतपुर जिला को मिला कर मेवात क्षेत्र कहलाता है। जहाँ पर मेव मुसलमानो की बहुसख्यक आबादी है।

कस्बो को छोडकर ग्रामो मे हिन्दू बहुत थोडी सख्या मे आबाद हैं। मेवात क्षेत्र मे प्रमुख समस्याएँ "गौ कशी" "हिन्दू औरतो का व्यापार" "धर्म परिवर्तन" है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् से ही इस क्षेत्र मे मुसलमानो का तबलीगी प्रचार अत्यन्त तेजी से शुरू हो गया। आये दिन हर ग्राम में कोई न कोई जमात पहुँच जाती है। जो देहली से—निजामुद्दीन के हजरत की निगरानी मे निकलती है। इनके निरन्तर प्रचार के फलस्वरूप ही उक्त तीन समस्याएँ पैदा हुई है।

अत. चार वर्षों से इस क्षेत्र के आर्यसमाजो ने इन समस्याओ के समाधान के लिए "आर्य वेदप्रचार मण्डल मेवात" नामक सस्था का गठन किया। जो समय-समय पर "सम्मेलन शिविर" उत्सव प्रचार आदि से हिन्दुओ को जागृत करते हुए इन समस्याओ को उच्च सरकारी अधिकारियो तक पहुँचाने का प्रयत्न करता रहता है। लेकिन अभी पिछले मास दिसम्बर मे तमाम जिले की बैठक मे हालात की गम्भीरता को न विचारते हुए उक्त समाधान अपर्याप्त समझते हुए कुछ नवीन निर्णय हुए और वो यह है कि—

(१) अच्छे कार्यकर्त्ताओ को समय का त्याग करते हुए ग्राम-ग्राम घर-घर पहुँच कर हर हिन्दू को वैदिक सन्देश सुनाएँ। (२) ग्रामो मे पिछडी जाति के लोगों की हर समस्या का समाधान खोजे। (३) पैदल चलते हुए अपना सारा सामान अपने साथ लेकर चले।

(४) उद्देश्य हर हिन्दू को "चोटी", जनेऊ", (यज्ञोपवीत) "गायत्री मन्त्र", "दान", "शराब छोडने" की महत्ता को समझाएँ। अत उक्त निर्णयो को क्रियान्वित करने के लिए कार्य शुरू हो गया है। प्रथम पदयात्री जत्था ता० १-१-६९ को श्री भजनलाल जी आर्य उपप्रधान "आर्य वेद प्रचार मडल मेवात" की अध्यक्षता में फिरोजपुर झिरका से चल कर ढोहा, अगोन, रावली, भाकडोजी, कोलगाव, पाढल, 'भूकमका' ता० ११-१-६९ को सीमा में समाप्त किया। हर ग्राम में जाकर, हर हिन्दू के घर-घर जाकर उनकी समस्याएँ सुनना तथा रात को निश्चित स्थान पर प्रचार मे आने की प्रेरणा देते हुए "चोटी, जनेऊ" आदि के उद्देश्य के छपे विज्ञापन देते रहे। विशेष तौर से पिछडी जाति के लोगो पर बडा ही प्रभाव रहा। प्रचार मे उपस्थिति अच्छी रही, हर ग्राम मे एक-एक रात रहे। कुल मिलाकर प्रथम यात्रा में ६० यज्ञोपवीत दिये और कई स्थानो पर समाज मन्दिर स्थापित होने का निर्णय हो गया। जनता मे उत्साह की लहर दौड गई।

द्वितीय—तारीख १५-१-६९ को नगीना से स्वामी प्रेमानन्द जी की अध्यक्षता में नगीने क्षेत्र में 'करेडा', 'माथस', 'मूलथान', 'उलेटा', 'भादस' 'उगरा', 'हुसन नगर', 'मरोडा' 'माडीखेडा' तथा नागल' मे २५-१-६९ को समाप्त हुआ। कार्यक्रम यथा पूर्व रहा। दूसरी यात्रा मे मुसलमानो ने शका समाधान भी किया। जिसका सन्तोषजनक उत्तर दिया। कई स्थानो पर हिन्दुओ का मनोबल अत्यन्त गिरा हुआ था। मुसलमान अत्यन्त घृणा से देखकर मजाक उडाते थे। लेकिन पदयात्रियो के साहस और त्याग से हिन्दुओ पर बडा प्रभाव पडा। कुल मिला कर लगभग ६० को यज्ञोपवीत दिलाए। तीसरी यात्रा तारीख १-२-६९ को मूलचन्द जी छोटी बीकानेर वालो की अध्यक्षता मे सोहना से चली है। चौथी यात्रा १५-२-६९ को श्री किशोरसिंह मीतरोल, औरगाबाद वालो की अध्यक्षता में नूह क्षेत्र में चलेगी। पाँचवी यात्रा तारीख ७-३-६९ को आज दिवाकर हस जी की अध्यक्षता में पुनहाना क्षेत्र में चलेगी।

हमारा यह प्रयास है कि इस तरह की "जन जागरण यात्रा" निरन्तर चलती रहे ताकि मेवात मे पिछडे लोग पुन वैदिक धर्म में आस्था पैदा कर सकें। वरना वो दिन दूर नही जब यह सब लोग धर्म परिवर्तन करके एक नया "मेवात स्थान" की माँग शुरू कर देगें और देहली के अति निकट होने से हर समय सिर दर्द बना रहेगा। अत हम समस्त धर्म प्रेमी जनता से विशेष तौर से वैदिक धर्मियो से अपील करते हैं कि वो कुछ "समय दान" देकर तन मन धन से सहयोग दें। और "आर्य वेद प्रचार मण्डल मेवात नगीना" (गुडगाँवा) को सूचना दें ताकि पूर्व कार्यक्रम बनाया जा सके।

शास्त्रार्थों का सूर्य अस्त हो गया

(श्री प० शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी गुरुधाम छावनी)

गुरु विरजानद जी के स्वर्गवास पर ऋषि दयानद जी ने कहा था कि व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया आज मैं श्री स्वामी समर्पणानन्द जी (प० बुद्धदेव जी विद्यालकार) के निधन पर भी मैं यही शब्द कहता हूँ कि शास्त्रार्थों का सूर्य अस्त हो गया।

इस उक्ति के कहने का तात्पर्य यह है कि प० बुद्धदेव जी ने अपने समय मे जो शास्त्रार्थ किये उनमे वेदार्थ के सबन्ध मे नई सूझ और युक्ति प्रमाण का प्रवाह सा चलता दिखाई देता था। प० जी देव गुरु बृहस्पति ऋषि के सदृश शास्त्रार्थियो के मार्ग प्रशस्त करने वाले माने जाय तो अत्युक्ति न होगी।

मैंने कितने ही दिग्गज शास्त्रार्थियो को देखा कि शास्त्रार्थों मे आई आपत्तियो का समाधान प० जी से ही कर पाते थे।

प० जी का वेदो का ज्ञान अगाध था। अद्भुत प्रतिभा के कारण वेदार्थ के रहस्य को खोल कर उनकी सच्ची व्याख्या करने मे प्रवीण थे। कर्मकाड की गुत्थियो को भी उन्होने युक्ति प्रमाण के आधार पर सुलझाने में कमाल कर दिया, उनकी पच महायज्ञ विधि इसका पुष्ट प्रमाण है। शतपथ में एक पथ ने शतपथ भाष्य का मार्ग प्रशस्त किया है। काश कि वह भाष्यपूर्ण कर पाते तो भारतीय जनता के लिये यह अद्भुत वस्तु होती

उनका स्वभाव ऐसा था कि कोई विद्वान् शिष्य भाव से उनके चरणों मे बैठ कर कुछ लिखवा लेता तो ठीक था। अन्यथा वह अपनी दिव्य छटाओ को बोलते २ आकाश मे ही उडा देते थे। लिखने का स्वभाव बोलने का मुकाबला न कर सकता था। किन्तु जब एक बार लिखने बैठ जाये तो कमाल ही कर देते थे। कवित्व शक्ति पर भी उनको नियत्रण था। अत आलकारिक वर्णनों के रहस्यों के खोलने मे जादू का काम करते थे।

[illegible] लिये बिना अकस्मात् निकल खडा हुआ तब मैं आर्य [illegible] बालक बन चुका था। भाग्यवश श्री तुलसीदास जी तथा एक देवी ने मेरे [illegible] वहन किया और मैं आर्यों की काशी लाहौर में श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार के घर मे सस्कृत के अध्ययनार्थ पहुच गया।

प० जी की सहधर्मिणी सुशीला देवी जी और मैं इस पाठशाला के दो प्रमुख विद्यार्थी जिनकी दौड विद्याध्ययन में एक दूसरे से आगे निकल जाने के लिये सदैव रात दिन मुकाबला के साथ चलती थी। वे मुझे वहाँ प्रविष्ट होने [illegible] के अनन्तर उनकी सहधर्मिणी का स्वर्गवास हो गया। प० जी लाहौर के गगाश्रम के एक मकान मे चालीस रुपये मासिक किराये पर रहते थे। वहीं पर आर्यसमाज के ऊहावान् यशस्वी मूर्धन्य विद्वान् प० चमूपति जी प्राय: रात्रि को पधारा करते और प० जी के साथ दार्शनिक सैद्धान्तिकादि चर्चा किया करते थे।

स्वामी समर्पणानन्द जी सरस्वती

(श्री नारायणदास कपूर प्रधान आर्य केन्द्रीय सभा देहली)

श्री स्वामी जी की रुग्णावस्था की सूचना पाने पर मैं हस्पताल में पहुँचा। बहुत देर तक वह मुझे देखते रहे, फिर पहचान लिया। उस समय प० रामसिंह जी भी वहीं उपस्थित थे। अन्तिम अवस्था जानकर उसी दिन उन्होने अपनी वसीयत श्री श्यामराव जी को बुलाकर कर दी। प्रभात आश्रम की सम्पत्ति जो उनके नाम पर थी और बैंक से धन निकलवा कर श्री श्यामराव जी को दे दिया। और सम्पत्ति वर्णाश्रम सघ जो कि एक रजिस्टर्ड सोसाइटी है जिसके मन्त्री श्यामराव जी हैं और जिसके प्रधान स्वामी स्वय थे को देने के लिये वसीयत कर दी और धन भी वर्णाश्रम सघ के द्वारा व्यय हो ऐसा आदेश दिया। प्रो० शेरसिंह, उन के जामाता और उनकी सुपुत्रिया आर्ये और शोभा अधिक समय उनकी सेवा मे रहते थे। १५ ता० जनवरी को प्रात: ब्राह्म मूहूर्त में अपने प्राणो को छोड दिया। आकाश वाणी द्वारा घोषणा हो गई। शवयात्रा प्रो० शेरसिंह जी की कोठी से चल कर आर्यसमाज दीवानहाल होते हुए निगम बोधघाट यमुना नदी पर पहुँची। वही उनके शरीर का अन्तिम सस्कार किया गया।

ग्रामीण जनता में छुआछूत का बडा भारी जोर है। पिछले दिनो एक महत की हत्या कर दी गई जिसका आज तक भी कोई कातिल नहीं पकडा जा सका। मेवात क्षेत्र में छोटे-छोटे "औषधालय", "प्राइमरी पाठशाला" तथा दलित भाइयों को पीने के पानी के लिये कुओ द्वारा सहायता की शीघ्र आवश्यकता है।

—[illegible] शर्मा, मन्त्री

"मधुर-लोक;; मासिक पत्र का मई १९६९ का नया विशेषांक

"आर्यवीर"

इस अक मे आर्यवीरो की जीवनिया और उनके कर्त्तव्य पढेंगे। यह विशेषाक सभी दृष्टियो से एक क्रातिकारी विचारो से परिपूर्ण होगा। आर्य साहित्य मे नवीन एवं स्थायी वृद्धि मे सहायक होगा। इस अक की पृष्ठ स० २०० होगी। टाईटिल पेज तिरगा और विशेष आकर्षक होगा। एक प्रति का मूल्य २) रु० होगा। दस प्रति का मूल्य १५) रु० पच्चीस प्रति का मूल्य ३२) रु० पचास प्रति का मूल्य ६०) रु० तथा सौ प्रतियो का मूल्य १००) रु० होगा। मधुर-लोक के स्थायी ग्राहको को यह विशेषाक बिना मूल्य भेट किया जायेगा। अत ५) रु० वार्षिक शुल्क भेज स्थायी ग्राहक बनें।

यह सुविधा केवल उन्ही को मिलेगी जिनकी धन राशि ३१ मार्च १९६९ तक पहुंच जायेगी।

"मधुर-लोक" कार्यालय आर्यसमाज बाजार सीताराम दिल्ली

प्रचारक की आवश्यकता है

उच्चकोटि के विद्वान वेदविद्या विषयज्ञाता शास्त्रार्थ महारथी मर्यादापुरुष स्वस्थ, और प्रचारक उत्साही पडित की।

दक्षिणा योग्यता अनुसार। प्रार्थनापत्र मे आयु व कार्यो का विवरण लिखे। पत्र व्यवहार का पता—मन्त्री आर्यसमाज मन्दिर महर्षिदयानन्द मार्ग [कांकरिया] अहमदाबाद—२२

जिन ग्राहक महानुभावो का शुल्क समाप्त हो चुका है वे अपना वार्षिक शुल्क १०) शीघ्र भेजने की कृपा करें। —व्यवस्थापक

ग्राम भापडोदा (रोहतक) में वृष्टि यज्ञ

अकाल की परछाई से घबराये हुए लोगो ने १० मन घी, २० मन सामग्री और १०० मन करीर (कैर) की समिधाओ का प्रबन्ध किया। आर्यसमाज द्वारा ठीक २५ ता० माघ सुदी ५ से यज्ञ आरम्भ हो गया। इस वृष्टि यज्ञ से ग्रामवासी और आस-पास की ग्रामीण जनता मे हर्ष की लहर चल रही है। सब अपनी शक्ति के अनुसार घी और सामग्री लेकर पहुँच रहे हैं—यज्ञ के ब्रह्मा-स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश गुरुकुल झज्जर हैं तथा स्वामी सोमानन्द जी दयानन्द मठ रोहतक और गुरुकुल झज्जर के छ ब्रह्मचारी मधुर स्वर से वेदमन्त्रो का उच्चारण करते हैं। ईश्वर सहायक है।

—[illegible] आर्य प्रधान

गुरुकुल ततारपुर (जि० मेरठ) के लिये अपील

भारत सरकार द्वारा स्वीकृत आर्ष विद्यापीठ के अनुसार यहाँ ब्रह्मचारियों को संस्कृत की प्रथमा से लेकर आचार्य परीक्षा तक का उत्तम प्रबन्ध है। स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज इसके सचालक हैं। आपके नाम से आर्यजगत् सुपरिचित है। भारतीय जनता दुखी है। उनके बालको का भविष्य गुरुकुलो की ब्रह्मचर्य प्रणाली के आधार पर आर्ष पाठविधि मे ही सुरक्षित है। वर्तमान अर्थ युग प्रधान वातावरण मे कोई भी नि शुल्क सस्था किस कठिनता से सस्था का भरण पोषण को पूरा कर सकती है, यह किसी भी शिक्षा विशेषज्ञ से अज्ञात नही है। इस गुरुकुल मे अधिक सख्या मे विद्यार्थियो का प्रवेश नहीं किया जा सकता। प्रवेश के समय अनेक सरक्षक अपने बालको को प्रवेश न मिलने से निराश होकर लौटने मे बाधित हो जाते हैं। इस कार्य को पूरा करने के लिये ब्रह्मचारियो के अधिक आवास की अत्यन्त आवश्यकता का अनुभव हो रहा है। साथ ही यज्ञशाला स्नानागार भोजन घर और छात्रो के अध्ययन के स्थान की वृद्धि के लिये इस समय ५० हजार रुपये की आवश्यकता है। यदि आर्य सज्जन इधर ध्यान देकर गुरुकुल की आवश्यकता की पूर्ति मे योगदान देंगे तो आर्य बालक को उच्च शिक्षा और सच्चरित्र का वातावरण मिलकर वैदिक धर्म और आर्यसमाज के कार्य मे आगे बढने का अवसर मिल सकता है।—मन्त्री गुरुकुल ततारपुर (मेरठ)

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रैस, पहाडी धीरज दिल्ली-६ मे मुद्रित और १५ हनुमान-रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

जब तक उत्तम अतिथि जगत् मे नहीं होते तब तक उन्नति भी नही होती। उनके सब देशो मे घूमने और सत्योपदेश करने से पाखण्ड की वृद्धि नहो होतो और सवत्र गृहस्थो को सहज से सत्य विज्ञान की प्राप्ति होतो रहती है और मनुष्य मात्र मे एक ही धम स्थिर रहता है। विना अतिथियो के सदेह निवृत्ति नही होती। सन्देह निवृत्ति के विना दृढ निश्चय भो नही होता निश्चय बिना सुख कहा ?

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष २ अंक ११

४ फाल्गुन वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १५ फरवरी १९७० रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
" , विदेश मे—२० रु०
एक प्रति का मूल्य ००—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री, पूर्व लोकसभा सदस्य (फोन ५६२१६३)

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनस्ते वायव कि प्रयोजना सन्तीत्युपदिश्यते ॥
फिर वे वायु किस किस प्रयोजन के लिये हैं इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ॥

अस्ति हि ष्मा मदाय व स्मसि ष्मा वयमेषाम् ।
विश्वं चिदायुर्जीवसे ॥ ऋ० १. ३७. १५ ॥

पदार्थ—(अस्ति) वत्तते (हि) यत. (स्म) खलु (मदाय) आनन्दाय (व) युष्माकम् (स्मसि) भवेम (स्म) नरन्तर्ये (वयम्) उपदेश्या जना (एषाम्) ज्ञातविद्याना मरुता सकाशात् (विश्वम्) सर्वम् (चित्) अपि (आयु) प्राणधारणम् (जीवसे) जीवितुम् ॥

अन्वय—हे विद्वांसो मनुष्या एषा हि स्म वो युष्माक मदाय जीवसे विश्वमायुरस्ति तथाभूता वय चित्स्मसि स्म ॥

भावार्थ—यथा योगाभ्यासेन प्राणविद्याविदो वायुविकारज्ञा पथ्यकारिणो जनाश्चानन्देन सर्वमायुर्भुञ्जते तथैवेतरै जनैस्तत्सकाशात्तद्विद्यां ज्ञात्वा सर्वमायुर्भोक्तव्यम् ।

भाषार्थ—हे विद्वान् मनुष्यो (एषाम) जानी है विद्या जिन की उन पवनो के सकाश से (हि) जिस कारण (स्म) निश्चय करके (व) तुम लोगो के (मदाय) आनन्दपूर्वक (जीवसे) जीने के लिये (विश्वम) सब (आयु) अवस्था है। इसी प्रकार (वयम्) आप से उपदेश को प्राप्त हुए हम लोग (चित्) भी (स्मसि, स्म) निरन्तर होव ॥

भावार्थ—जसे योगाभ्यास कर के प्राण विद्या और वायु के विकारो को ठोक ठीक जानने वाल पथ्यकारी विद्वान् लोग आनन्द पूर्वक सब आयु भोगते हैं वसे अन्य मनुष्यो को भो करनी चाहिये कि उन विद्वानो के सकाश से उस वायु विद्या को जान के सम्पूण आयु भोग ॥

(ऋषि दयानन्द भाष्य)

श्रद्धया सत्यमाप्यते

(लेखक—जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ' देहली)

व्रतेन दीक्षामाप्नोति, दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति, श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

यजुर्वेद—१९।३०

मनुष्य (व्रतेन व्रत के द्वारा (दीक्षाम्) दीक्षा=दक्षता को (आप्नोति) प्राप्त करता है। (दीक्षया) दीक्षा के द्वारा (दक्षिणा को (आप्नोति) प्राप्त करता है। (दक्षिणा) दक्षिणा के द्वारा (श्रद्धाम) श्रद्धा को (आप्नोति) प्राप्त करता है। (सत्यम्) सत्य (श्रद्धया) श्रद्धा के द्वारा ही (आप्यते) प्राप्त किया जाता है।

पद्यानुवाद —

जब सत्य शीलता को मानव जीवन में धारा जाता है।
तब ऐसा शुभ व्यवहार हीतो वैदिक बन सज्ञा पाता है ॥

कमकाण्ड (वेद विषय विचार)

(प्रश्न) क्या यज्ञ करने के लिये पृथिवी खोद के वेदिरचन, प्रणोता, प्रोक्षणी और चमसादि पात्रो का स्थापन दभ का रखना यज्ञशाला का बनाना और ऋत्विजो का करना यह सब करना ही चाहिये ?

(उत्तर) करना तो चाहिये, परन्तु जो जो युक्ति सिद्ध हैं सो सो ही करने के योग्य हैं। क्यो जैसे वेदि बना के उसमे होम करने से वह द्रव्य शीघ्र भिन्न भिन्न परमाणु रूप हो के, वायु और अग्नि के साथ आकाश मे फैल जाता है, ऐसे ही वेदि मे भी अग्नि तेज होने और होम का शाकल्य इधर उधर बिखरने से रोकने के लिये वेदि अवश्य करनो चाहिये। और वेदि के त्रिकोण, चतुष्कोण गोल तथा श्येन पक्षी आदि के तुल्य बनाने के दृष्टान्त से रेखा गणित विद्या भी जानी जाती है कि जिसस त्रिभुज आदि रेखाओ का भी मनुष्यो को यथावत् बोध हो तथा उसमे जो ईटो की सख्या है उससे गणित विद्या भी समझी जाती है। इस प्रकार से कि जब इतनी लम्बी चौडी और गहरी वेदि हो तो उसमे इतनी बडी ईट इतनी लगगो इत्यादि वेदि के बनाने मे बहुत प्रयोजन हैं। तथा सुवण, चान्दी वा काष्ठ के पात्र इस कारण से बनाते हैं कि उनमे जो घृतादि पदाथ रक्खे जाते हैं वे बिगडते नहीं और कुश [illegible] जिससे यज्ञशाला का मार्जन हो और चिवटी आदि कोई जन्तु वेदि की और अग्नि में न गिरने पावे। ऐसे ही यज्ञशाला बनाने का यह प्रयोजन है कि जिस से अग्नि को ज्वाला मे वायु अत्यन्त न लगे और वेदि मे कोई पक्षी किंवा उसकी बीठ न गिरे। इसी प्रकार ऋत्विजो के बिना यज्ञ का काम कभी नही हो सकता इत्यादि प्रयोजन के लिये यह सब विधान यज्ञ मे अवश्य करना चाहिये। इससे भिन्न द्रव्य की शुद्धि और सस्कार आदि भी अवश्य करने चाहियें। परन्तु इस प्रकार स प्रणोता पात्र रखने से पुण्य और इम प्रकार रखने से पाप होता है, इत्यादि कल्पना मिथ्या ही है किन्तु जिस प्रकार करने मे यज्ञ का काय अच्छा बन वही करना अवश्य है, अन्य नही ॥

—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (ऋषि दयानन्द)

इस सत्याचार मे दक्ष मनुज, धन वभव, सिद्धि पाते हैं।
वे श्रीमान् और मतिमान्, जगति मे पूजे जाते हैं।
ससिद्धि ही नर-जीवन मे, श्रद्धा के फूल खिलाती है।
श्रद्धा माता ही साधक को, शिव सत्य-धाम पहुचाती है ॥
मानव-जीवन का चरम-लक्ष्य है यही सत्य है विज्ञवरो !
सब भजो सत्य-नारायण को, सब सत्य-सुधा का पान करो ॥

दोहा

धारें सब शुभ-पुण्य व्रत दक्ष बनें सब लोग।
भजें सच्चिदानन्द को, वरकर श्रद्धा-योग ॥

वसन्त पंचमी का शुभ अवसर

स्वागत करो ऋतुराज का छवि इसकी नीहारो

(पं० दीनानाथ सिद्धान्ता अलंकार १५।४७ पंजाबी बाग, दुर्गा निवास नई दिल्ली २६)

वेद के निम्न मंत्र मे इस महान विश्व को यज्ञ से उपमा देते हुए वसन्त को "आज्य" अर्थात् घृत का प्रतिरूप कहा गया है—

ओं यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो ऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मः इध्मः शरद्धविः ॥

विश्वयज्ञ में वसन्त घृत के सदृश यजु ३१।१४

महान् ब्रह्म पुरुष द्वारा अपने विशाल दान से इस विश्व यज्ञ का निरन्तर विस्तार किया जा रहा है। इस जागतिक यज्ञ में वसन्त ऋतु घृत सदृश है, ग्रीष्म ऋतु समिधा है और शरद् ऋतु सामग्री की आहुति सदृश है। याज्ञाग्नि को प्रदीप्त उज्ज्वल और देदीप्यमान करने के लिए घृत ही सर्वोत्तम साधन है। जिस समय यज्ञ की अग्नि शिखाएं चारों ओर प्रसारित होकर ज्योति का स्वतः दान करती हैं, उस समय ही यज्ञ की शोभा चतुर्दिक प्रस्फुरित होती है। घृत द्वारा प्रज्वलित यदि यज्ञाग्नि ऊर्ध्वगामी है। तो क्या यज्ञ शोभायमान हो सकता है? घृत से प्रेरित होकर ही अग्नि शिखाएं समस्त यज्ञ समाग्री को आत्मसात करती हुई सर्वत्र सुगन्ध का प्रसारण करती हैं। इसी प्रकार विश्व में वसन्त रूपी घृत प्रकृति की सुषमा को यज्ञपति प्रभु की प्रेरणा से ही कोटि-कोटि गुणा परिवर्धित परिष्कृत और नव्य जीवन से सतत अनुप्राणित करता रहता है।

प्रकृति नये कलेवर में ईश्वर के सौन्दर्य की परिचायक

श्रीकृष्ण ने गीता के अध्याय १०, श्लोक ३५ में अपने माध्यम से ब्रह्म के विराट स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है—

मासानां मार्गशीर्षो ऽहमृतूनां कुसुमाकरः अर्थात् ब्रह्म सृष्ट इस प्राकृतिक द्वादेश मास चक्र में मार्गशीर्ष मास और ऋतु चक्र मे वसन्त सर्वोत्तम है। यहां वसन्त को "कुसुमाकर" नाम दिया गया है। यह नाम ही इगित करता है कि इस ऋतु में पुष्पों की बहुलता होती है और अपनी सुगन्ध और विविध तथा विभिन्न रंगों वाली पंखुड़ियों से शीत ऋतु से बर्जरित प्रकृति के परिधान को ये कुसुम वृन्द अन्तोगत्वा और अपूर्ण रूप दे देते हैं। संस्कृत साहित्य में "वसन्त" ऋतु के कई नामों में =ऋतु राज =मधुमास"=कुसुमाकर" मदन महोत्सव इत्यादि मुख्य हैं। वर्ष को छः ऋतुओं में वसन्त ही एक ऐसा ऋतु है जिसमें प्रकृति अपने जोर्ण-शरीर पुरातन चोले का त्याग कर मनोहर कमनीय आकर्षक और मनमोहक वेष में अपने सर्व व्यापक स्वामी ब्रह्म के प्रक्षेप सौन्दर्य का परिचय देती है। हिमाच्छादित पर्वत शृंग, वन उपवन, क्षेत उद्यान, नदी, सरोवर, झरना —सर्वत्र वसुधा अपने पूर्ण यौवन वेश में विकसित और प्रस्फुटित होती। है सौन्दर्य का लक्षण संस्कृत साहित्य में किया गया है—

क्षणे क्षणे रमणीयता यन्नवता मुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः

रमणीयता सौन्दर्य का लक्षण

प्रतिक्षण जो नवीनता के लक्षण के रूप में निखरे उसी का नाम रमणीयता सौन्दर्य है।

संस्कृत साहित्य में वसन्त ऋतु की मनोहारी रमणीयता और सुषमा के सम्बन्ध में कवियों ने अनेक अद्भुत और हृदयग्राही उपमाओं और अलंकारों से इसका चमत्कारिक और वैज्ञानिक वर्णन किया है।

वसन्तों में पथ्य—भ्रमण

इस ऋतु में प्रभूत भ्रमण करना चाहिए। प्रकृति के समय प्रत्यक्ष और अनवरत सम्यक रखने से स्वास्थ्य में वृद्धि और मानसिक विकारों का उपशमन हो जाता है।

वसन्तो में देवों का जीवन

वसन्तेन ऋतुना देवाः वसवस्त्रिवृता स्तुताः ।
रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः ॥ यजु २१।२३

वसन्त ऋतु में देव—श्रेष्ठ संयमी विद्वान् पुरुष—तीन प्रकार की शक्ति—शारीरिक मानसिक और आत्मिक—प्राप्त करते हैं। इसकी सहायता से उन्हें दीर्घ आयुष्य और तेज की उपलब्धि होती है।

एक हिन्दी कवि के शब्दों में

दुखद दूर हुन्दा हिम-त्रास है। सुखद आगत श्री मधुमास है।
अब कहीं दुख का न निवास है, सब कहीं बस होस विलास है।

"आर्यमर्यादा" के समस्त धर्म प्रेमी पाठकों सहित हम इस वसन्त ऋतु का आल्हादपूर्ण हृदय के साथ स्वागत करते हैं। ●

महर्षि दयानन्द आप जागे जगत् को जगाया

(श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, पूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा)

शिवरात्रि पर महर्षि को एक विशेष बोध हुआ। महर्षि ने इस बोध के आधार पर अपनी कार्य प्रणाली को आधारित किया। बोध शिव अर्थात् ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानने के सम्बन्ध में था। महर्षि की प्रचार शैली और कार्य प्रणाली का बोध और उनमें समन्वय निम्नलिखित वेद मंत्रों से हो सकता है—

१. गायत्री मंत्र—

यह मंत्र बोध से सीधा सम्बन्धित है। यदि बुद्धि से ईश्वर का सही स्वरूप सन्मुख आ जावे और उसके प्रकाश में कर्म किये जांय तो कर्म ही धर्म का रूप धारण कर लेंगे।

२. नमस्कार मंत्र

गायत्री के ठीक पश्चात् महर्षि ने संध्या की पद्धति में नमस्कार मंत्र का स्थान रखा है। नमस्कार मंत्र में यह घोषणा है कि ईश्वर को सच्चे शिव के रूप में छः प्रकार से समझ लिया है जैसे शिव, शंकर व शम्भू इत्यादि।

३ विश्वानि देव वाला मंत्र—

यह मंत्र सब प्रकार के दुर्गुणों से बचने के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यदि ईश्वर का स्वरूप सम्मुख रहेगा तो मनुष्य हर प्रकार के पाखण्डों से बचा रहेगा। चाहे वह लोक सम्बन्धी हो या परलोक सम्बन्धी।

४. शान्ति पाठ वाला मंत्र—

यदि मानव के हृदय में ईश्वर के स्वरूप का सच्चा ज्ञान होगा और उस ज्ञान के प्रकाश में वह अपने कार्य क्रम को मर्यादित करेगा तो उसको न केवल सुख परन्तु शान्ति भी प्राप्त होगी। जिसकी आजकल सबसे बड़ी आवश्यकता है।

५. धन और वैभव की प्राप्ति—

महर्षि केवल त्यागवाद पर ही बल नहीं देते थे। उनकी भावना यह भी थी कि सारे जगत् में वैदिक धर्म वालों का चक्रवर्ती राज्य हो और चक्रवर्ती धर्म हो। प्रत्येक नागरिक और व्यक्ति धन धान्य से परिपूर्ण हो। और इसके लिये आठों उपासना के मंत्र में पांचवें मंत्र में ईश्वर को प्रजापति मानकर पतियों का स्वामी होने की याचना मनुष्य के लिये हितकर बताई गई है। आठवें मंत्र में ईश्वर को अग्नि और व्यापक मानकर पुरुषार्थी होकर धन प्राप्ति के लिये उत्साही किया गया है और कुटिलता आदि दुर्व्यसनों से बचने का आदेश है। सम्मलित प्रार्थना वाले चार मंत्रों में सबसे पहिले मंत्र में यह प्रार्थना है कि "वसूय्या भरा" अर्थात् सब ऐश्वर्य भरपूर प्राप्त हो और इसके लिये ईश्वर को रचयिता और संचालन मानना आवश्यक बताया गया है। इन मंत्रों को जिनको आर्यजगत् में प्रयोग और उच्चारण होता है यदि उपयुक्ति दृष्टि कोण से महर्षि के आदेश को सन्मुख रखकर समझा जावे। और इनके अनुसार विचार-आचार ओर व्यवहार को मर्यादित किया जावे तो जीवन का लक्षण पूरा हो सकता है। और सुख और शान्ति भी प्राप्ती हो सकती है।

६ शिवरात्रि पर्व को सफल रूप से मनाने के लिये यह आवश्यक है कि उस दिन इस दिवस को "पाखण्ड खण्डन प्रतिज्ञा" दिवस के रूप में मनाया जावे और सब सज्जन यह प्रतिज्ञा करें कि वह हर प्रकार के लोक व परलोक सम्बन्धी पाखण्डों से बचे रहेंगे। कोश के अनुसार पाखण्ड का अर्थ वैदिक सभ्यता के प्रतिकूल होना है। इससे मूर्ति पूजा भी पाखण्ड सिद्ध होती है। मूर्ति पूजा के खण्डन के शिवरात्रि का पर्व सीधा सम्बन्धित है। दिसम्बर मास में काशी में "काशी शास्त्रार्थ शताब्दी" और "पाखण्ड खण्डिनी पताका शताब्दी" बड़ी धूम धाम से मनाई गई उनको भावी कार्य क्रम का आधार मानकर प्रतिज्ञा दिवस मनाना बड़ा जरूरी है और इसको सफल बनाना चाहिये। ●

सम्पादकीय—

१ श्री मुरार जी देसाई का विपरीत परामर्श

काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा आयोजित एक समारोह में बोलते हुए भारत के पूर्व उपप्रधान मन्त्री श्री मुरार जी देसाई ने उत्तर प्रदेश के हिन्दी भाषा के पुस्तक लेखकों को कठिन भाषा मे लिखने को हानिकर बतलाया। इतना ही नहीं, अपितु सस्कृत भाषा पर यह प्रहार किया कि सस्कृत भाषा कठिन रूप में लिखने के कारण ही वह भाषा अति शीघ्र मृत हो गई। हिन्दी लेखको को परामर्श दिया कि वे ऐसी सरल भाषा में लिखें, जिससे उनकी रचनाए हिन्दी भाषी राज्यो मे स्थान पा सकें।

खेद से कहना पड़ता है कि श्री मुरार जी देसाई ने किन हृद्गत भावो के वशीभूत हो कर ऐसा विपरीत परामर्श दिया।

सस्कृत भाषा मृत नहीं है। आज भी विश्व भर के देशो के उनके उन्नत राष्ट्रों के विश्वविद्यालयों में सस्कृत का अध्ययन अध्यापन हो रहा है। यूरोप तथा अमेरिका को बात तो दूर जाने दें। अपने पड़ोसी देश अफगानिस्तान मे सस्कृत की पढ़ाई पर बल दिया जा रहा है। वहा के विद्वानो का कहना है कि पश्तो भाषा की उन्नति ठीक रूप मे तभी हो सकती है जब कि उसके साथ सस्कृत भाषा का अध्ययन किया जावे, क्यो कि पश्तो भाषा पर सस्कृत का बहुत प्रभाव है। वहा से 'आर्यन' पत्र भी निकाला जा रहा है। उससे मिलते हुए देश ईरान की भी देख लिए वहा के प्रशासक ने सस्कृत के आधार पर अपने नाम को भी सुशोभित कर लिया है। भारत के पूर्वी पड़ोसी देशों की भाषाओ पर सस्कृत भाषा की अमिट छाप है। जिनको भारत के अहिन्दी भाषी राज्य श्री मुरार जी देसाई कहते और समझते हैं, वहां सस्कृत निष्ठ हिन्दी भाषा को खूब समझा जाता है न कि 'मुरारजी' [illegible] हिन्दी को। दक्षिण भारत और बगाल सस्कृत भाषा के सदा से पढ़ रहे हैं, वहां अब भी सस्कृत का अच्छा प्रचार है। राजर्षि स्वर्गीय पुरुषोत्तमदास टण्डन की सस्कृत गर्भित हिन्दी को राष्ट्र की राजभाषा बना दिया जाता तो हिन्दी के विरुद्ध दुर्भावनाए न भड़कतीं। दक्षिणी क्षेत्रो को हिन्दी के विरुद्ध करने का दोष स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल ने आरभ किया। पजाब हिन्दी रक्षा आन्दोलन के समय श्री नेहरू जी ने कहा था कि यदि हिन्दी पर बल दिया जावेगा, तो 'दक्षिण' भारत को जनता विरोध करेगी हिन्दी के विरुद्ध यह चिनगारी सर्वप्रथम श्री नेहरू जी ने फूक मार कर भड़काई थी। इतने पर ही बस नहीं किया, अपितु श्री टण्डन जी को काग्रेसाध्यक्षीय पद से हटवा कर ठण्डा पानी पिया और सरल श्वास लिये। इसी शान्ति बगाल में भी सस्कृत निष्ठ हिन्दी को खूब समझा जाता है। महाराष्ट्र से लेकर उत्तर मे सस्कृतयुक्त हिन्दी का अच्छा प्रभाव है जिस पजाबी को हिन्दी का विरोध मे खड़ा किया गया, उसमे ६० प्रतिशत शुद्ध अथवा अपभ्रश रूप मे सस्कृत के शब्द बोले और लिखे जाते हैं। हिन्दी भाषी राज्यो का तो कहना ही क्या है?

श्री मुरार जी ने ऐसी उलटी बात कह कर भारतीय सभ्यता और आर्य सस्कृति को बड़ी हानि पहुचाई है। यदि सस्कृतनिष्ठ हिन्दी न रखी जावे, तो सस्कृत के ग्रन्थों को कौन समझ सकेगा। सस्कृत भाषा का नाश न जाने श्री मुरार जी ने कैसे समझ लिया। सस्कृत भाषा ने विश्व भर के देशों मे करोड़ों वर्षों तक एक छत्र प्रभाव रखा है। सस्कृत भाषा के कारण ही आज भी भारत मे भारतीयता चल रही है। यह ठीक है कि हिन्दी भाषा भारत की लोक भाषा है, परन्तु लोक भाषा केवल अपठित लोगों तक ही तो सीमित नहीं है? हिन्दी भाषा का साहित्य तभी विशाल रूप धारण कर सकता है जब कि सस्कृत की भाषा और भावो को प्रचुर रूप में हिन्दी में उतार लिया जावे।

हम राष्ट्र के हिन्दी साहित्य के लेखको से प्रबल अनुरोध करते हैं कि मुरारजी के इस परामर्श को उन्हीं की कोठी तक सीमित कर देवें, यह परामर्श उनके ही हृदय में पड़ा रहे।

२—वेद-दर्शन विशेषाङ्क

इस अक से अगला २२ २ ७० वाला अक 'शिवरात्री अक' के रूप में प्रकाशित होगा क्योकि १ ३ ७० का 'वेद-दर्शन विशेषाङ्क" प्रकाशित होगा जिस को शिवरात्रि से पूर्व ही स्वाध्याय प्रिय ग्राहकों तथा पाठको तक पहुचाया जा सके। वेद दर्शन विशेषाङ्क मे वेद के सम्बन्ध मे अनेक ज्ञातव्य सिद्धान्तो तथा मन्तव्यो पर माननीय लेखक ने अनेक वर्षों के वेद के गहन स्वाध्याय के परिणाम स्वरूप प्रकाश डाला है। यह अक सभी आर्यसमाजो पुस्तकालयो शिक्षणालयो और स्वाध्याय स्वभाव सज्जनो को सग्रह करने योग्य वेद सम्बन्धी सामग्री देगा। ऊपर का पृष्ठ आकर्षक बनवाया जा रहा है। रगीन और बढिया कागज पर छापा जा रहा है। हम नि सकोच भाव से निवेदन करते हैं कि वेदो के सम्बन्ध मे अनेक प्रकार की शङ्काए और भ्रातियो को दूर करने वाला यह विशेषाङ्क होगा। आर्यसमाजो को पर्याप्त सख्या मे मगवाकर बाटना चाहिये। इस अक की एक प्रति का मूल्य ८० पैसे होगा। जो सज्जन १० प्रतियो से अधिक मगवायेंगे उन्हे ७० पैसे मे एक प्रति के हिसाब से मिलेगा तथा जो महानुभाव और सस्थाए ५० अको से अधिक मगवायगे उन्हे ६० पैसे एक प्रति के हिसाब से मिलेगा। ग्राहक बन्धुओ को ग्राहक रूप मे ही मिलेगा उन्हें अधिक पैसे नही देने पडग। ग्राहको को कुल २० पसे ही मे इतना उपयोगी अक मिलेगा, जिस को वे पढकर कह सकगे कि वेदो के सम्बन्ध में यह विशेषाक वास्तव मे वेद दर्शन का काम कर रहा है। इस अक की सूचना मिलते ही विशेषांक की अधिकमात्रा मे लेने के इच्छुक सज्जनो को अपनी सख्या का आदेश पत्र मूल्य सहित (मनीआर्डर द्वारा) आर्यमर्यादा' के कार्यालय १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली मे तुरन्त भेज देना चाहिये। चैक स्वीकार नही किये जायगे। यह विशेषाक परिमित सख्या मे ही छापा जावेगा। हमारा यह विश्वास है कि इस अक की उत्तमता और उपयोगिता को देख कर कुछ सज्जन बाद मे मगवाना चाहेगे, परन्तु उनकी इच्छा पूरी न की जा सकेगी। जिन सज्जनो अथवा सस्थाओ का धन सहित आदेश १८ फरवरी मास तक आर्यमर्यादा के कार्यालय मे पहुच जायेगा उनके नाम इच्छित अक भेज दिये जायगे। आशा है इस सूचना रूप निवेदन पर समय पर विचार करके यथोचित कार्य से कृतार्थ करगे।

३—वेदो का सत्य स्वरूप

महर्षि दयानन्द के काशी शास्त्रार्थ को प्रथम शताब्दी के शुभ अवसर पर आर्यप्रतिनिधि सभा वाराणसी ने वेदो का सत्य स्वरूप" नाम से पुस्तक प्रकाशित किया है। इसमे वेदो के सम्बन्ध मे १५ लेख सस्कृत, आर्यभाषा और अग्रेजी मे आर्य विद्वानो द्वारा लिखे हुए हैं। इसके अतिरिक्त प्रस्तावना आदि रूप मे भी उत्तम सामग्री दी गई है। बडे साइज मे उत्तम कागज पर ३०० पृष्ठो मे पुस्तक छापा गया है। इसका मूल्य सात रु० रखा गया है, परन्तु प्रचारार्थ यह ग्रन्थ इस समय खरीदने वालों को केवल ४ रु० मे मिल सकेगा, कुछ समय के पश्चात ५ पाच रुपये मे दिया जावेगा डाक व्यय इस मूल्य के अतिरिक्त लगेगा। उत्तम आर्यप्रतिनिधि सभा वाराणसी ने इन उत्तम लेखो का प्रकाशन धर्म भाव से किया है आर्थिक कष्ट भी उठाया है। प्रारम्भ मे इस सभा ने ही शास्त्रार्थ शताब्दी का आयोजन किया था बाद मे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने इस शुभ कार्य को अपने हाथ मे ले लिया था। हम आर्यसमाजो से अनुरोध पूर्वक निवेदन करते हैं कि वे अपने पुस्तकालयो मे इस अमूल्य ऐतिहासिक पुस्तक को खरीद कर अवश्य रख। ऐसे पुस्तक जो बार छपने अति कठिन होते हैं। पुस्तक मगवानेका पता यह है—मन्त्री आर्यसमाज-भोजूवीर, वाराणसी केंट (उत्तर प्रदेश)॥

ऋषि दयानन्द की पुण्य स्मृति रूप इस ग्रन्थ को आर्य बन्धुओ को पृथक् रूप मे भी खरीद कर अपने घरो में अवश्य रखना चाहिये। इस पुस्तक का यह कोई विज्ञापन नही है, अपितु प्रचार भाव के रूप में सम्पादकीय टिप्पणी दी है। इस पुस्तक के खरीदने से प्रकाशक आर्यप्रतिनिधि सभा वाराणसी तथा आर्यसमाज भोजूवीर-वाराणसी केंट का आर्थिक भार सहन करने के पवित्र कार्य मे सहयोग भी दिया जा सकेगा।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

सभा प्रधान प्रो० रामसिंह जी का अभिनन्दन

आर्यसमाज नया बास दिल्ली के अधिकारियों, सदस्यो तथा नगर के आर्यसमाजो के प्रतिनिधियो द्वारा सभा प्रधान प्रो० रामसिंह जी का, आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के पुन सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित होने पर रविवार १ फरवरी ७० को प्रात १० बजे, आर्यसमाज मन्दिर नया-बास दिल्ली मे अभिनन्दन किया गया। उपस्थित अधिकारियो, सदस्यो तथा प्रतिनिधियो मे सबश्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी (आचार्य गुरुकुल एटा) श्री स्वामी सुमेधो जी, डा० रामस्वरूप जी (प्रधान) ला० देवकीनन्दन जी ला० उमरावसिंह जी (प्रधान आर्य वैदिक पाठशाला) श्री लक्ष्मीचन्द जो (मुख्याध्यापक आर्य वैदिक पाठशाला) श्री धर्मपाल जी आर्य, ला० प्रेमचन्द जी ला० श्रीकृष्णदास जो, श्री धमपाल जी सहगल, श्रीमनोहर सिंह जी एडवोकेट, श्री पन्नालाल जो आर्य, श्री दीपचन्द जो आर्य, श्री त्रिलोकचन्द जी आर्य, तथा श्रीमती शान्ति देवी जी मन्त्री स्त्री आर्य-समाज नयाबास ने फूल मालाओ से सभा प्रधान जी का स्वागत किया।

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने कहा कि मैं सभा प्रधान जी को प्रोफेसर न कह कर आचार्य रामसिंह ही कहता हू। उन्होने कहा कि आचार्य राम-सिंह जब गुरुकुल एटा मे पधारे थे तो वहा आपने अष्टाध्यायी के सूत्रो की जो अनुपम व्याख्या की थी, उसे सुन कर मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ और मैंने यही समझा कि अष्टाध्यायी के सूत्रो का इतना अच्छा व्याख्याता तो आचार्य ही हो सकता है। प्रोफसर नही। इसलिये मैंने आचार्य रामसिंह कहना उचित समझा। श्री स्वामी जी ने उपस्थित जन समूह को भी यही प्रेरणा की कि भविष्य मे आप सभा प्रधान जी की विद्वत्ता, तथा आर्यसमाज के प्रति अटूट निष्ठा की दृष्टि से आचार्य रामसिंह जो के नाम से ही सम्बोधित करें। स्वामी जी ने कहा कि यह हमारा सौभाग्य है कि इस आयु मे भी सभा प्रधान जी जिस लग्न के साथ आर्यसमाज की सेवा कर रहे हैं, वह हम सबके लिये अत्यन्त प्ररणाप्रद है।

श्री धर्मपाल जो आर्य ने कहा कि आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब पर जिस प्रकार गत कछ वर्षों से विपक्षियो द्वारा सकट उत्पन्न किये गये, सभा के बैंक एकाउन्टस बन्द कराये गये, दफतरों मे ताले लगवाये गये और सभा के विरुद्ध स्थान स्थान पर अभियोग किये गये, तथा जिस प्रकार सभा के विरुद्ध दूषित वातावरण उत्पन्न किया, वह सब आप लोगो को भली भाति ज्ञात है। इतनी विघ्न बाधाओ के बावजूद भी हमारे सभा प्रधान जी ने जिस धैर्य, साहस तथा कार्यकुशलता से सभा से गौरव की रक्षा की और सभा की सम्पत्ति को तथा सस्थाओ को नष्ट होने से बचाया और इसके साथ ही सभा के सघटन को और भी सुदृढ किया है, उसकी जितनी भी प्रशसा की जावे, थोडी ही है। उसी विजयश्री के सम्मानार्थ और प्रोफेसर साहब के पुन सभा का प्रधान चुने जाने पर आज हम सब उनका हार्दिक अभिनन्दन करने के लिये उपस्थित हुए हैं। प्रोफेसर साहब ने भव्य और सुन्दर स्वागत समारोह के आयोजन के लिये आर्यसमाज नयाबास के उत्साही सदस्यो तथा इस अवसर पर उपस्थित अन्य गण्य मान्य महानुभाओ का हार्दिक आभार प्रदर्शन किया तथा अपने व्याख्यान मे आर्यसमाज की स्थापना के महत्व पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्हो कार्लमार्क्स (साम्यवाद के प्रवर्तक) के सिद्धान्तो की तुलना करते हुए बताया किस प्रकार साम्यवाद की भित्ति केवल भौतिकवाद पर आधारित है तथा आर्यसमाज के सिद्धान्त सार्वभौम वैदिक धर्म पर आश्रित होकर अकाट्य, सर्वकालीन तथा समस्त मानवजाति के लिये हितकर और उपादेय हैं। व्यक्तिवाद और समाजवाद का वैदिक स्वरूप बताते हुए प्रोफेसर साहब ने आयसमाज की अत्यन्त आवश्यकता और उसके वैधानिक सघटन पर अधिक बल दिया। साथ ही उन्होने आय महानुभावो स अपील की कि वे आर्यसमाज के नियमो के अनुसार आर्यसमाज का अधिक से अधिक कार्य करें और प्रवेश-सस्कार अर्थात् यज्ञोपवीतादि धारण के महत्व को न भूलें। अन्त में उन्होने उपस्थित आर्य भाईयो का पुन हार्दिक धन्यवाद किया।

—निज सवाददाता



श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी आचार्य गुरुकुल एटा। श्री सभा प्रधान जी का स्वागत करते हुए।



श्री ला० दोपचन्द जोआर्य प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान का स्वागत करते हुए।



श्री देवकीनन्दन जी किराये वाले प्रोफेसर जी [illegible]

धन का वास्तविक अधिकारी कौन ? (२)

(श्री स्वामी वेदानन्द सरस्वती—वैदिक साधु आश्रम रोपड़ पंजाब)

इससे पूर्व हम यह विचार कर चुके हैं कि धन का अधिकारी वही है जो धन का यथार्थ उपयोग कर सके। वह समाज या समाज का छोटा कोई घटक अथवा समाज का छोटे से छोटा घटक=व्यक्ति, इनमे से कोई भी हो सकता है। इनमें से प्रत्येक अपनी अपनी सीमा मे रहते हुए भी एक ही समय में एक ही देश में धन के स्वामी हो सकते हैं। वे यज्ञीय कर्म हैं—श्रेष्ठो सदाचारियो विद्वानों का सत्कार। (२) प्रजा के हितार्थ सज्जनों का सघटन और (३) असहायों सुपात्रो को यथा योग्य सहयोग प्रदान करना। ये कर्म वैदिक सस्कृति अथवा भारतीय परम्परा मे श्रेष्ठतम कर्म माने गये हैं। इन्ही श्रेष्ठतम कर्मों को यज्ञ एव कर्तव्य कर्म मान कर व्यक्ति और समाज को करने के लिये "यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म" से प्रेरणा मिलती रही है। ससार के सभी उत्तम कर्मों का आधार इन्ही के अन्तर्गत इसलिये माना गया है क्योकि इनसे प्रजा कि शारीरिक मानसिक एव आत्मिक उन्नति होकर सब को सुख एव आनन्द प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रजा का सम्यक् पालन होता है। अत जो ऐसे ही कर्मों को करने में धन का सदुपयोग कर सके उसे प्रजापति कहा गया है। वह ही धन का वास्तविक अधिकारी है।

समाजवाद वा साम्यवाद

उद्देश्य की दृष्टि से समाजवाद एव साम्यवाद मे भेद नही है। वास्तव मे ये दोनो वाद एक ही लक्ष्य के शासन द्वारा प्राप्त करने के दो भिन्न प्रकार के समाघोष हैं। जो कुछ चतुर चालाक लोगों ने अपनी तानाशाही चलाने के दो ढग निकाले हैं। ये दोनो ही मानव समाज का नाम लेकर सब प्राकृतिक पदार्थ, धन सम्पत्ति मानव समाज और उनके परिश्रम अर्थात् व्यवसाय, उद्योग धन्धो, व्यापार आदि तक को शासन के आधीन कर स्वय शासन को हाथ में लेना चाहते हैं। ये दोनो ही वादी दल कहते हैं कि सर्वसाधारण का हित इसी बात में है कि समाज, जिसका प्रतिनिधित्व शासन करता है, वही सब प्राकृतिक पदार्थों और मानव परिश्रम का स्वामी हो। साथ ही ये दोनो ही मानसिक नियन्त्रण जिसे Thougt Contral का नाम दिया जाता है, को एक आवश्यक अग मानते हैं। यह एक भयकर स्थिति है जिसमे मानव को सर्वथा दास बना कर उसकी अवस्था पशु जैसी करदी जाती है। यो तो वे कहते हैं कि देश के सब नागरिक समाज के नियन्त्रण मे रहें किन्तु समाज के नियन्त्रण से उनका अभिप्राय शासन के ही नियन्त्रण से है। यदि इन दोनो वादो मे अन्तर है तो वह केवल इस बात मे है कि एक (समाजवाद) इस नियन्त्रण को धीरे-धीरे प्रजा को ही अपने विचारो के अनुकूल बनाकर अथवा चालाकी से प्रजा से ही अपने विचारो का अनुमोदन प्राप्त कर के करना चाहता है जबकि दूसरा (साम्यवाद) शासन की तानाशाही से ही नियन्त्रण करना उचित समझता है। इनमे पहला शान्तिवादी समझा जाता है और दूसरा भौतकवादी। बस यही इन दोनो वादो मे भेद है।

समाजवाद एव साम्यवाद के समाघोष वर्षों से गुजाए जा रहे हैं। समाघोषो का मानव मस्तिष्क पर प्रभाव अवश्य पड़ता है, विशेष कर सामान्य जनता तो समाघोषो के पीछे ही चलने वाली होती है। ऐसे तो समाज मे बहुत कम व्यक्ति होते हैं जो समाघोषो के पीछे आख बन्द करके नहीं चलते, अपितु उस पर गम्भीरता से विचार कर उचित या अनुचित का निर्णय करके आचरण किया करते हैं। भारत में भी वर्षों से निरन्तर सुनते रहने पर यहाँ की जनता के मस्तिष्क पर इन समाघोषो का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। परिणाम स्वरूप साम्यवादी दल जहा भारत के अनेक क्षेत्रो मे अपनी विकरालता का प्रदर्शन कर रहा है। वहा समाजवाद का समाघोष सारा देश ही सामूहिक रूप मे लगा रहा है। प्रत्येक राजनीतिक दल यह मान बैठा है कि समाजवाद का समाघोष लगाने में यदि वह अन्य दलो से पीछे रह गया तो उसका अस्तित्व ही सकट में पड़ जायेगा, जैसे समाजवाद को इन्होंने 'शाश्वत सिद्धान्त' मानव कल्याण के लिये स्वीकार कर लिया हो। कोई भी तो इसके विरोध मे नही बोल रहा वास्तव मे समाजवाद का समाघोष कुछ चतुर चालाक राजनीतिज्ञ नेताओं का एक भयकर षड्यन्त्र है, जिसके द्वारा वे शासन सूत्र स्वय हाथ में लेकर समाज का नाम लेकर अपनी खुली तानाशाही चाला सकें। इसका भारत की जनता को डटकर विरोध करना चाहिये। भारतीय परम्परा मे समाजवाद का नाम निशान तक नही।

भारतीय परम्परा मे यह तो स्वीकार किया जाता है कि मानव एक सामाजिक प्राणी है। परन्तु यह कभी नही माना गया कि व्यक्ति का सब कुछ यहाँ तक कि उसका परिश्रम भी समाज का ही है, व्यक्ति का अपना कुछ भी नही है। यजुर्वेद अ० ४० । १ ॥ मे आया है।

"जगत्यां जगत्"

"जगती के आधार से जगत् रहता है।' यह इस वचन का पदार्थ अर्थ है। यह विचारणीय है कि जगत् किसे कहते हैं और जगती किसे ? जगत् का अर्थ है—(गच्छति इति जगत्) जो गतिमान् हो, जिसमे चलने चेष्टा करने की शक्ति हो जो प्रगति करता है वह जगत् है। परन्तु जगत् की यह प्रगति जगती के आधार से ही सम्भव है। क्योकि "जगत्या जगत्" इस वेद वचन मे जगती पद मे अधिकरण मे सप्तमी विभक्ति है और अधिकरण आधार कहाता है। अत जगती आधार है और जगत् का होना जगती के आश्रय है। एक व्यक्ति को 'जगत' कहा है और अनेक जगतो की समष्टि को 'जगती' कहतेहैं। इसे ऐसे समझ।

जगत्, जगती। एक, बहुत। व्यष्टि, समष्टि। व्यक्ति, समाज। असम्भूति, सम्भूति। असम्भव, सम्भव। विनाश, अविनाश। घटक, जाति।

यहाँ प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या व्यक्ति स्थाई है अथवा समाज। हिन्दु व्यक्ति मरते रहते हैं पर 'हिन्दु-समाज' स्थायी है। मोहम्मदी व्यक्ति मरते रहते हैं पर 'मोहम्मदी-समाज' स्थिर है। ईसाई व्यक्ति मरते हैं पर 'ईसाई समाज' स्थायी है। ऐसे अन्य समाजो और उसके व्यक्तियो के विषय मे जाना जा सकता है। यद्यपि ससार के इतिहास मे अनेक बार समाज भी नष्ट होते देखे जाते हैं। ब्राह्मसमाज तथा थियोसोफिकल समाज जैसे नष्ट हो ही गये हैं। जो वस्तु बनती है वह विनष्ट भी हो जाती है। समाज की सम्भूति या सम्भव इसीलिये तो कहा है कि वह बनाई जाती है। अत समय पाकर विनष्ट भी हो जाती है तथापि व्यक्ति को अपेक्षा समाज या जगत् की अपेक्षा जगती प्राय स्थायी कहे जा सकते हैं। साथ ही यह तथ्य भी दृष्टि से ओझल नही किया जा सकता कि ससार मे ऐसा भी कई बार देखा जाता है जिन व्यक्तियो ने कोई समाज बनाया था और अन्य भी जो जो व्यक्ति उस समाज मे सम्मिलित हुवे थे उनमे से कोई न मरा, वे सब व्यक्ति ज्यो के त्यो जीवित बने रहे पर समाज कुछ दिन चलकर विनष्ट हो गया। वस्तुतः समाज कोई शाश्वत सत्ता तो है नही। यह परिवर्तन शील भी है और विनष्ट होने वाला भी है। एक या अनेक विचारशील व्यक्ति प्रजा के हित अथवा निज स्वार्थ सिद्धि करने के निमित समाज की स्थापना किया करते हैं। जिस समाज की रचना प्रजा के हित के निमित्त की जाती है यदि वह अपना उद्देश्य पूरा नही करता अथवा उलटा प्रजा का अहित करने लग पड़े तो प्रजा मे उसका विरोध होता है और वह नष्ट कर दिया जाता है। स्वार्थ सिद्धि के निमित्त घटित समाज को भी जब विचार शील व्यक्ति चालाकी भाप लेते हैं तो अपने प्रचार द्वारा जन मत उसके विरुद्ध करके प्रजा द्वारा उसे भी समाप्त करा देने मे सफल हो जाते हैं।

इस विवेचन से हमारा कहना यह है कि जहा व्यक्ति मरने वाले हैं वहा समाज भी तो विनष्ट होते देखे जाते हैं। व्यक्ति के कल्याण या विकास अथवा प्रगति के लिये समाज का निर्माण व्यक्तियो के ही द्वारा किया जाता है। अत समाज व्यक्ति का स्वामी न होकर सेवक हुआ। सेवक होने से प्रजा के व्यक्ति उसे कुछ साधन रूप मे सीमित अधिकार भी देते हैं जिससे समाज प्रजा का कल्याण कर सके। यह समाज निर्माण काय व्यक्ति इसलिये करते हैं कि इसके बिना व्यक्ति की प्रगति ही सम्भव नही है। अत मानव एक सामाजिक प्राणि है ऐसा तो भारतीय परम्परा मे माना गया है। (क्रमश.)

छे मार्च का शहीदी दिवस

(श्री प० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी गुरुकुल)

अमर शहीद प० लेखराम आर्य मुसाफिर को कौन आर्य नहीं जानता ऋषि दयानन्द के पश्चात् ससार के आर्य धर्म के क्षेत्र में प० लेखराम का नाम सब से अधिक लिया जाता था। यह पेशावर में पोलीस की सर्विस में थे। धर्म की पिपासा इन्हें ऋषि दयानन्द के पास खेंच ले गई। तब से यह ऋषि के ही हो गये।

शुरू में इन्होंने गीता पढी थी कृष्ण जी की भक्ति मे अहर्निश सलग्न रहना इनका काम था। पश्चात् वेदान्ती बने यह ब्रह्मास्मि के जाप में स्वसत्ता को विस्मृत कर बैठे। एक बार सिखधर्म पर भी इनका दृष्टि-पात हुआ। जन्म साखी और सुख मणि के पाठ को पुण्य मानते थे। अन्त में मुसलमानी धर्म को अपने लिये श्रेयस्कार समझा। गुलिस्ता, बोस्ताँ आदि फारसी के अनेक ग्रन्थ बालपन की अवस्था मे पढे थे। अब अरबी ग्रन्थों के पढने का चाव बढा। इसलामी करण हुआ ही चाहता था कि भगवान की दया से विचार बदल गये और कुलियात असल्ल आरी में यह शब्द पढ कि जिसको धर्म के प्रति कोई शका हो और उसकी निवृत्ति न हो पाती हो तो उसे श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती की सेवा मे उप-स्थित हो कर वह शका दूर करानी चाहिये। अवश्य सफलता मिलेगी

इस ग्रन्थ को पढते ही सरकार से अवकाश लेकर वह ऋषि के चरणो मे समुपस्थित हो गये। और शकाओ का निराकरण करना चाहा। ऋषि के उत्तर से मन की कली खिल उठी। समस्त शकाओ का निराकरण हो गया। वापिस आते ही पेशावर मे आर्यसमाज की स्थापना कर दी और आर्यसमाज ने इन्हे अपने समाज का प्रधान चना।

उन्ही दिनो मिर्जागुलाम अहमद कादयानी सरकार की सहायता से मुसलमानो को आर्यसमाज से दूर रखने के लिये आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के विरुद्ध बहुत कुछ लिख रहे थे। अपने नबी होने की घोषणा भी कर दी थी। हिन्दुओ के लिये वह कृष्ण मुरार बने बैठे थे। उन्होने एक विज्ञापन प्रकाशित कराकर दस हजार रुपये के पारितोषिक की घोषणा की कि जो प्रसिद्ध व्यक्ति उनके पास एक वर्ष तक रहेंगे वह अवश्य चमत्कार से मुसलमान बन जायगे। यदि ऐसा न हुआ तो १० हजार रुपये हर्जाना पायेंगे।

लेखराम ने मिर्जा जी के चमत्कारो की पोल खोलने के लिये सरधड की बाजी लगा दी। कादयान मे गये। पत्र व्यवहार का परिणाम वही ढाक के तीन पात रहा। मिर्जा जी टाल मटोल कर गये और कोई चम-त्कार न दिखा सके।

प० जी कादयान मे दो मास रह कर आयसमाज स्थापित कर आये। मिर्जा जी को आरम्भ मे ही हार हुई।

प० जी को यह काय सरकारी सर्विस छोड का ही करना पडा। अब वह आयसमाज के नियम पूर्वक उपदेशक बन गये। सभा मे ३०) मासिक पर कार्य करने लगे। आर्य गजट का फिरोजपुर से सम्पादन करते थे। मिर्जा जी की पुस्तको के उत्तर मे कई पुस्तकें लिखीं। करारा उत्तर पाकर मिर्जा जी चिढ गये। एक इश्तहार लाहौर की दीवारों पर लगाया गया जिसमे लिखा था कि तू मोहम्मदी तलवार से डर और खडन करना छोड दे। प० जी ने इस के उत्तर मे लिखा कि यदि वैदिक धर्म के प्रचार में मेरी बलि हो जाय तो सौभाग्य होगा। यह २० फरवरी १८९३ के विज्ञापन उत्तर मे लिखा गया था।

इसका परिणाम वही हुआ जिसकी आशका थी। एक व्यक्त शुद्धि के लिये प० जी को सेवा मे पहुचा। और एक दिन छे मार्च १८९७ की शाम को जब प० जी ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र लिख रहे थे। ऋषि के शरीर त्याग कर उनके बलिदान की गाथा लिख कर थकावट से उठे ही थे कि कातिल ने छुरा पेट मे भोक कर अन्तडिया काट दीं। और समझ लिया कि अब यह ज्योति बुझ जाएगी।

सारे ससार ने इस हत्या को महा बलिदान स्वीकार किया। देश विदेश में इस की चर्चा हुई। आर्यसमाज को इस से बहुत बडा बल मिला। शहीद की अर्थी के साथ ५० [illegible] की भीड थी। जोश से भरे थे। अविद्या के साथ लोहा लेने के लिये सीसियों युवक मैदान में कूद पडे। आर्यसमाज का प्रचार बढा और वैदिक तोपों मिर्जा जी के सीने में जी चुभ गयी। अन्ततोगत्वा मिर्जा जी ने स्वीकार किया कि पं० लेखराम ईश्वर की सच्चाई को प्रकाशित करने के लिये बतौर बलिदान के हो गये।

मिर्जा जी ने वैदिक धर्म के मुख्य सिद्धान्तों का स्वीकरण किया और वेद कोई ईश्वरीय होने की घोषणा करदी आशा थी कि वह धीरे-धीरे अपने विचारों को और अधिक विकसित करेंगे किन्तु मौत, ने उनको समय न दिया। एक बात स्पष्ट है कि प० लेखराम का बलिदान व्यर्थ नहीं गया। आर्य धर्म की इस बलि से बहुत बडी उन्नति हुई और मिर्जाई मिशन को बहुत हानि पहुची। आज आर्यसमाज सारे भारत में अपना सुदृढ स्थान बना चुका है तथा मिर्जाई मत भारत से उखड चुका है।

आर्यसमाज की शाखा प्रशाखा ससार भर के देशों में फल फूल रही है और मिर्जाई मत का सर्वनाश पाकिस्तान के चौराहे में ही हो गया है। अभी आगे इस बलिदान का रग और गहरा होगा। सत्य है ससार में बलिदानों से ही सत्य का प्रकाश फैलता है और धर्म को नींव सुदृढ होती है। एक लेखराम से कई लेखराम तैयार हो गये। वह शास्त्रार्थों की धूम मची कि मिर्जाईयो मे खलबली मच गई और अन्त मे नीति अपनाई कि यथा सभव आर्यो से शास्त्रार्थ न किये जायें।

आज भी छे मार्च की वीर गाथा आर्यों के रक्त प्रवाह को गरमाने के लिये पूर्ण रूपेण सशक्त है। आर्यसमाज चाहे तो इस से लाभ उठावे।

वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है

(श्री सत्येन्द्रसिंह आर्य एम० ए०, रामपुर)

सब मत मतान्तर वालो की पृथक्-पृथक् यह इच्छा रहती है कि सारे ससार के लोग उनके मत में आ जाय। इसाई पादरी तो विशेष रूप से इस बात के लिए प्रयत्नशील हैं कि समस्त ससार का ईसाईकरण हो जावे। भारतवर्ष में विद्यमान ईसाई पादरियों की गतिविधियों मे तो उनकी राजनीतिक महत्वाकाक्षा एव छल कपट की झलक स्पष्ट दृष्टि-गोचर होती हैं। अन्य मतो के कर्णधार भी अपने मत के अनुयाईयों की सख्या में वृद्धि चाहते हैं। ये सब लोग अपने मत-प्रचार के लिए एक आम दलील यह देते हैं कि उनके पूज्य इष्टदेव, अवतार या गुरु पर ईमान लाने से उस ईमान लाने वाले के सारे पाप क्षमा हो जायेंगें और उनकी समस्त मन कामनाए पूर्ण हो जायेगी। ऐसी अधविश्वासपूर्ण गप का बुद्धिमान् लोगो को अविश्वास होना अस्वाभाविक नही है। आज के युग में बढती हुई नास्तिकता के जहा अन्य कई कारण हैं, वहा एक कारण यह भी है कि (वैदिक) धर्म की विस्तृत जानकारी करने के लिए तो न उनके पास समय है और न अपने सस्कारो के कारण उनकी इस ओर प्रवृत्ति ही है। अन्य मतो की झूठी सच्ची गप्पों से पूर्ण बातें उनके तर्क और बुद्धि की कसौटी पर खरी नहीं उतरती। इस कारण धर्म और ईश्वर पर से उनकी आस्था उठ जाती है। मानव मात्र के लिए कल्याणकारी जिन अपेक्षित बातो का मतो मे नितान्त अभाव है वे सब बातें और अपेक्षित ज्ञान वेद और वैदिक धम में विद्यमान हैं इसीलिए वैदिक धर्म प्रिय है।

१—विज्ञान वैदिक मन्तव्यों के अनुकूल हैं—

दिन प्रति दिन प्रगति के पथ पर अग्रसर विज्ञान वेद के ही अनुकूल है। वैदिक धर्म का कोई सिद्धान्त विज्ञान से टकराता नहीं है। मतो की बहुत सी बातें विज्ञान के प्रतिकूल हैं। गैलीलियो को मृत्यु दण्ड इसलिए दिया गया था कि उसने विज्ञान के ऐसे सिद्धान्त की घोषणा की थी कि जो बाईबिल की मान्यता के विपरीत था। वैदिक तत्वज्ञान और विज्ञान परस्पर अनुकूल हैं, प्रतिकूल नहीं। यह वैदिक धर्म की एक निजी विशेषता है जो कि किसी भी मत में विद्यमान नहीं है।

२—वैदिक मन्तव्य युक्ति और तर्क संगत हैं—

ससार के मतवादियो का कहना यह है कि उनके धर्म में "अकल का दखल" नहीं है, वहा तो केवल अन्धविश्वास से काम चलता है। मतों में

शेष पृ० ७ पर

श्री रामपाल सिंह तेवतिया एम.ए. मूप गढ़ी से निवेदन

आर्यमर्यादा के मत अंक १-२-७० में पृष्ठ ६ पर इसमे सन्देह नहीं कि आप द्वारा प्रचलित सत्यार्थप्रकाश के ११ वें समुल्लास के जाति भेद के प्रसंग में आपातत भ्रम पैदा होता है, परन्तु ऋषिदयानन्द के भावो को ठीक रूप में ग्रहण करने के पश्चात् यह भ्रम दूर हो जाता है। आप सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में दिये गये दार्शनिक प्रकरण पर विचार कीजिये। वह यह है—

"द्रव्यत्वं गुणत्वं कर्मत्व च सामान्यानि विशेषाश्च ॥ वै० १ २ ५ ॥

द्रव्यों में द्रव्यपन, गुणों मे गुणपन, कर्मों मे कर्म पन ये सब सामान्य और विशेष कहाते हैं, क्योंकि द्रव्यो मे द्रव्यत्व सामान्य और गुणत्व कर्मत्व से द्रव्यत्व विशेष है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना ॥

सामान्य विशेष इति बुद्ध्यपेक्षम् ॥ वै० १ २ ३ ॥

सामान्य और विशेष बुद्धि की अपेक्षा से सिद्ध होते हैं। जैसे-मनुष्य व्यक्तियो मे मनुष्यत्व सामान्य और पशुत्वादि से विशेष तथा स्त्रीत्व और पुरुषत्व इनमे ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व वैश्यत्व शूद्रत्व भी विशेष हैं। ब्राह्मण व्यक्तियो में ब्राह्मणत्व सामान्य और क्षत्रियादि से विशेष हैं इसी प्रकार सर्वत्र जानो ॥"

इस स्थल को विशेष रूप से समझने के लिये वैशेषिक दर्शन के १ अध्याय के दूसरे आह्निक का ध्यान से मनन करना चाहिये। अनेक व्यक्तियो मे रहने वाले समान भाव को सामान्य कहते हैं। जैसे जीवो मे जीवत्व जीवभाव, मनुष्यो मे मनुष्यत्व, पुरुषो मे पुरुषत्व, ब्राह्मणो मे ब्राह्मणत्व आदि समान धर्म को ही सामान्य कहा जाता है। परन्तु जीवत्व से जड़त्व में विशेष भाव है। ऐसे ही मनुष्यो में मनुष्यत्व सामान्य होने पर मनुष्यो के अवान्तर भाव ब्राह्मणो में ब्राह्मणत्व सामान्य और क्षत्रित्व से विशेष है। अत मनुष्यो के अवान्तर भेदो ब्राह्मण आदि में सामान्य विशेषात्मक धर्म रहता है। क्योंकि ब्राह्मण आदि में मनुष्य के रूप मे मनुष्यत्व समान्य धर्म है ही, तथापि क्षत्रियादि से ब्राह्मण में विशेष धर्म है, अत ब्राह्मणादि में सामान्य विशेषात्मक भाव रहता है।

वैशेषिक में जो अर्थ सामान्य पद का है वही अर्थ न्याय दर्शन मे जाति पद से लिया जाता है। जैसे—

"समानप्रसवात्मिका जाति ॥ न्याय० २ २ ६७

अर्थात् अनेक व्यक्तियो में समानभाव को उत्पन्न करने वाले पदार्थ को जाति कहते हैं। जैसे मनुष्यों में मनुष्यत्व परन्तु। मनुष्य के अवान्तर भेदों में जो जाति रहती है उसको इसी सूत्र की व्याख्या मे भाष्यकार वात्स्यायनमुनि कहते हैं कि "यच्च केषांश्चिदभेद कुतश्चिद्भेद करोति तत्सामान्यविशेषो जाति" अर्थात् जो निमित्त किन्हीं व्यक्तियो मे अभेद तथा किन्हीं में भेद बतलाता है, वह निमित्त सामान्य विशेषात्मक जाति कहलाता है। अत मनुष्यो मे मनुष्यत्व का अभेद होने से वह सामान्य और मनुष्य के अवान्तर भावो ब्राह्मण आदि मे जो भाव क्षत्रिय आदि से भेद को प्रकट करता है विशेषता बतलाता है। अत ब्राह्मण आदि मे सामान्य विशेषात्मिका जाति रहती है। ठीक यही भाव ऋषि दयानन्द ने प्रकट किये हैं।

अब सब से मुख्य प्रश्न सामने यह आता है कि यह तो ठीक है कि पशुत्व आदि की भान्ति मनुष्यत्व भी ईश्वरकृत हो सकती है? यह ब्राह्मण आदि तो मनुष्यकृत ही है। इसका उत्तर यह है कि जीव को कर्मफल भुगाने के लिये परमात्मा जैसे मनुष्य आदि जाति में जन्म देता है, ठीक वैसे ही वह ब्राह्मण आदि वर्ण में भी जन्म देता है। जीव स्वय जन्म धारण नही कर सकता। जन्म धारण कराना ईश्वर का ही काम है। वह चाहे जिस देश में, चाहे जिस योनि में चाहे जिस बिरादरी का वर्ण मे चाहे जिस पेशे मे उस जीव के कर्म फल को भुगावे के लिये जन्म देता है। अत ब्राह्मण आदि में जन्म देने से ब्राह्मणत्व जाति भेद भी ईश्वरकृत सिद्ध होता है। जन्म के रूप में ईश्वरकृत जाति भेद होता है परन्तु ब्राह्मणत्व आदि जाति भेद ईश्वरकृत होते हुए भी सामान्य मात्र नहीं, अपितु सामान्यविशेषात्मक जाति भेद है। इसका कोई भी समझदार व्यक्ति अपलाप नहीं कर सकता कि ब्राह्मणों में ब्राह्मणत्व ब्राह्मणपना सामान्य धर्म अथवा जाति नहीं है। 'त्व' प्रत्यय का अर्थ 'पना' अर्थात जाति बोधक पद है।

यदि ऋषि दयानन्द ब्राह्मणत्व आदि को ईश्वरकृत न लिखते, तो ऊपर लिखित ईश्वरीय व्यवस्था मे दोष आ जाता। परमात्मा न्यायकारी होने से मनुष्यो और मनुष्यो के अवान्तर भेदों मे जन्म देता है, अत ब्राह्मणत्व आदि भी ईश्वरकृत है। और मनुष्यो की सामान्य जाति का अवान्तर भेद होने से ईश्वरकृत होता हुआ भी सामान्यविशेषात्मक जाति भेद है। जैसे पृथिवी मे पृथिवीत्व जाति सामान्य है, परन्तु पृथिवी के विकार भेद 'घट' मे भी पृथिवीत्व सामान्य जाति रहती हुई भी 'घटत्व' विशेष जाति भी रहती है, अत पृथिवीत्व की अपेक्षा घट मे रहने वाली जाति को सामान्यविशेष जाति भेद कहा जाता है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० ६ का शेष

मत प्रवर्त्तक की अपनी जीवन से सम्बन्धित अनेक घटनाए बड़े आश्चर्योत्पादक ढग से वर्णित की गई होती हैं और मत के सिद्धान्तो का उनसे सीधा सम्बन्ध होता है। वे बाते युक्तियुक्त प्राय नही होतीं। पौराणिक मत मे ऐसी बहुत सी बातो का प्रचलन है कि अमुक कहानी के सुनने से धन और आयु कि वृद्धि होती है, अमुक तिथि को उपवास रखने से उपवास रखने वाले के पिता पुत्र, की आयु बढती है और अमुक तिथि को जन्मना ब्राह्मणो को दान देने से दानदाता की सब मन कामनाए पूर्ण होती हैं। मतो मे प्रचलित ऐसी सभी बात अयुक्त असगत और बुद्धि विरुद्ध हैं। वैदिक धर्म में ऐसी बातों का समावेश बिल्कुल भी नही है। यहा तो खरा सौदा है। विद्या के इच्छुक को प्रयत्नपूर्वक स्वाध्याय करना चाहिए। धन पुरुषार्थ से प्राप्त होता है, अच्छ कार्यों के करने से और जीवन सदाचारयुक्त बनाने से यश मिलता है, आस्तिकभाव से सत्कार्यों मे प्रवृत्ति होती है। वृद्धों (माता पिता, आचाय और अतिथि आदि की सेवा से स्वास्थ्य लाभ होता है क्योकि सेवाकार्य मे परिश्रम अपेक्षित है।—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्त आयु., विद्या, यशो बलम् ॥

कर्तव्य परायण और गुणवान् होने से आयु, विद्या, यश और बल क वृद्धि होती है। मतो मे प्रचलित जड-पूजा से नही।

३—वैदिक सिद्धान्त न्याय-संगत हैं—

वेद सृष्टि के आदि मे मनुष्य मात्र की भलाई और कल्याण के लिए प्रदत्त ईश्वरीय ज्ञान है। सब स्त्री पुरुषो को वेद पढने और वैदिक धर्म अपनाने का पूर्ण अधिकार और स्वतन्त्रता है। दूसरी ओर पौराणिक मत मे तो अब तक यह मान्यता है कि वेद पढना स्त्रियो के लिग वर्जित है। भला कोई इनसे पूछे कि जो वेद ज्ञान पुरुषो के लिए लाभदायक उपयोगी और अपेक्षित है वही वेद ज्ञान स्त्रियो को क्योकर हानि पहुचायेगा? वैदिक धर्ममे स्त्री पुरुषो के मध्य ऐसा पक्षपात नही बरता गया है। वैदिक धर्म की तो सभी बात स्त्री-पुरुष धनी-निर्धन, ऊच-नीच, बाल वृद्ध और युवा सभी के लिए उपदिष्ट हैं और निष्पक्ष भाव से उपयोगी और ग्राह्य हैं। वहा यह भी शर्त नहीं है कि किसी व्यक्ति विशेष पर ईमान लाओ या किसी बात पर विना सोचे विचारे अध-श्रद्धा करो। वहा तो—"मनुर्भव" मनुष्य बनो—का सीधा उपदेश है। वेद और वैदिक धर्म विज्ञान-परक, न्याय-सगत और युक्तियुक्त है। वैदिक धर्म की उपादेयता सार्वभौम है, इसीलिए वह प्रिय है। मानवीय विज्ञान का भी मूल परम्परया वैदिक विज्ञान ही है। वैदिक विज्ञान ईश्वरीय ज्ञान वेद प्रतिपादित होने से पूर्ण और सत्य है। मानव विज्ञान जितना जितना प्रत्यक्षादि-प्रमाणो से सिद्ध है। वह सत्य है। मनुष्य का ज्ञान परमावधि तक बढ़ने पर भी सीमित है, परन्तु वेद ज्ञान अनन्त और नित्य है। मानव विज्ञान के पास अभी वह विज्ञान नही है, जो कि वेदो में प्रतिपादित है। अभी मानव विज्ञान का क्षेत्र सीमित है, इसको आगे बढ़ना है। परमात्मा करे यह परमावधि तक बढ़कर ससार का कल्याण करें।

११ १ १९७० से आगे —

अमर हुतात्मा (शहीद राजा नाहरसिंह बल्लभगढ

(श्री आचार्य भगवान् देवजी गुरुकुल झज्झर)

पाचवे पत्र के शब्द इस प्रकार है।

"(Rajah) assures His Majesty that he (the Rajah) is day and night busy entisting, Cavalry and Infantry, urges that his health is very indifferent but not withstanding this that as soon as has settled the bad character of the district he will wait up on His Majesty "

भावार्थ यह है, "राजा नाहरसिंह बादशाह सलामत को यह विश्वास दिलाता है कि वह दिन रात सेना भर्ती करने मे लगा हुआ है। दोनो प्रकार के सैनिक पैदल, पलटन, अश्वारोही (घुडसवार) भर्ती करने मे व्यस्त है जब कि राजा का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है फिर भी वह धुन का धनी अपनी सैनिक शक्ति बढा रहा है। और लिखता है ज्यू हि जिले की व्यवस्था ठीक हो जायेगी, सुधर जायेगी, वश मे आ जायेगी मैं उतना ही शीघ्रातिशीघ्र बादशाह सलामत के दर्शनार्थ उपस्थित होकर प्रतीक्षा करूगा।

इसके पश्चात् बादशाह और राजा मे प्रतिदिन पत्र व्यवहार होता हुआ प्रतीत होता है। २१ तारीख को बादशाह का उत्तर मिलता है जो राजा नाहरसिंह को लिखा गया है। उसमे दिल्ली को बडी सडक तथा बदरपुर थाने के सुप्रबन्धार्थ और सुरक्षार्थ लिखा गया है। यही मुख्य कार्य राजा को बादशाह ने सौंपा था कि इस सडक पर तथा बदरपुर थाने मे कोई गडबड न हो। उधर से अंग्रेजो की सेना दिल्ली की ओर न आने पावे। इस पत्र से पूर्व के पत्रो मे क्या लिखा होगा उसका परिचय मिलता है और राजा के पहले के उन कार्यों का भी ज्ञान होता है जो उसने अंग्रेजो के विरुद्ध किए।

इस पत्र मे बदरपुर के नए थानेदार की नियुक्ति की चर्चा है तथा कुछ अन्य राजकर्मचारियो के हटाने के विषय मे लिखा है।

२२ मई का पत्र राजा का बादशाह के नाम लिखा मिलता है। उसमे वह अपने निजी कुछ विश्वासघाती नौकरो के विषय मे बादशाह से शिकायत करता है और उनसे सावधान रहने के लिये निवेदन करता है। ये निकृष्ट सनिक मेरे सैनिको और बादशाह के सैनिको मे झगडा करा दगे तथा मेरे (राजा) के तथा आप (बादशाह) के सम्बन्धो को बिगाड देंगे। ये धूर्त लोग हमारे परस्पर के सम्बन्धो को बिगाड कर एक दूसरे का शत्रु बना दगे और हमारी सारी योजना खराब हो जायेगी, अत इन नौकरो की झूठी बातो पर विश्वास न कर मैं (राजा) पहले को भाति आप का पूर्ण विश्वासपात्र सेवक हू।

२४ मई का पत्र कुछ ऐसे पत्रो की ओर सकेत करता है जो बादशाह ने राजा को लिखे थे किन्तु वे अंग्रेजो के हाथ नही लगे। वे बल्लभगढ मे मिलने चाहिये थे किन्तु मिले नही। इस पत्र मे राजा को बादशाह ने उपस्थित होने के लिये लिखा है किन्तु राजा पुन उस समय भी उपस्थित होने मे अपनी विवशता प्रकट करता है। वह लिखता है कि ज्यूहि व आस-पास के जिलो का ठीक प्रबन्ध हो जायेगा वह तुरन्त ही बादशाह की सेवा में उपस्थित होगा।

राजा इस पत्र मे लिखता है कि जब वह शुद्ध वायु सेवनार्थ बाग मे गया तो ईद के नये चान्द के दर्शन हुये। उसने इस चाँद के दर्शनो को बादशाह के सौभाग्य का सूचक माना है।

२५ मई का जो पत्र है उस मे राजा सूचित करता है कि दिल्ली के द्वार तक के सब क्षत्रो पर इस समय के प्रबन्ध का प्रभाव पडा है। इसलिये हुरीनाम (Hurrinam) की चौकी पर दस सिपाही और एक थानेदार की आवश्यकता है और नेरौली (Nerowlee) मे २५ सिपाही होने आवश्यक हैं। इतना होने पर सब प्रबन्ध पूर्णरूप से यथोचित हो जायेगा। यदि बादशाह सलामत मुझ आज्ञा दे तो मैं आवश्यकतानुसार दोनों स्थानो पर सम्यक् प्रबन्ध कर दू गा।

२७ मई का पत्र फिर इसी प्रकार का है जो आस पास के क्षेत्रो की सुरक्षा करवाने के विषय मे बादशाह को लिखा गया है। ये पत्र यही सिद्ध करते हैं कि राजा नाहरसिंह बादशाह से मिलकर अंग्रेजो के विरुद्ध पूर्णरूप से बगावत मे सहयोग दे रहा था।

२८ मई और ३० मई के पत्रो मे फिर इसी प्रकार की चर्चा की गई है। राजा इन पत्रो मे यही दुःख प्रकट करता है कि उसकी प्रार्थना पर प्रबन्धार्थ ध्यान नही दिया गया और वह फिर स्वय (२०) बीस सवारों की एक टोली बादशाह को सहायतार्थ प्रबन्ध करने के लिये भेजता है।

And this apparently elicits the King's approval, for the reply is in autograph, and to the following effect "very good This servant is our well wisher

और यह बादशाह को स्वीकृति वा अनुमोदन को प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशित करता है प्रकट करता है। उत्तरार्थ अपने हस्ताक्षर युक्त वा अपने हाथ से लिखा गया है। निम्नलिखित प्राभावार्थ लिखा है कि बादशाह राजा को बहुत अच्छा माने और अपनाहितैषी सेवक स्वीकार करे।

इससे अगला पत्र जो मिलता है वह ३१ जुलाई का है। इन पत्रो में ३० मई से ३१ जुलाई तक (६०) साठ दिन का अन्तर पड जाता है। इन बीच के दिनो मे क्या हुआ पत्रो के अभावो मे अंग्रजो को कुछ पता नही चला। इस पत्र मे राजा कुछ अपने धूर्त नौकरो के विषय मे जिन्होंने राजा को धोखा दिया तथा राजा तथा बादशाह के परस्पर सम्बन्ध बिगाडने का यत्न किया, चर्चा करता है। वह इन शब्दो मे लिखता है।

The present one commences on the part of the Rajah by a complaint against his own servants or rather against those who had formerly been in his employ he accuses them of having embezzeled cash and property to the value of a lakh of Rupees and that when he was on the point of taking their accounts they under somepretence or another fled to Delhi and their stating falsehoods to His Majesty had made him who was formerly his friend displeased with him the prisoner emplcafically exclaims My Lord all that my enemies have stated to my discredit are lies, they hope by this mean to prove their good will and faithfullness to your Majesty and than to digest in peace the endless wealth that they have heaped up during their connescies with my Government and that no enguiry will be instituted by pour Majesty

इस पत्र मे राजा नाहरसिंह की ओर से अपने ही नौकरो के विरुद्ध शिकायत लिखी है। ये लोग पहले राजा के यहा नौकर थे इन्होने राज्य की सम्पत्ति तथा नकद रुपया सब मिलाकर जो एक लाख रुपया होता है अवैध रूप से अर्थात खाली बेईमानी थी। जब राजा ने इन नौकरो स इसका हिसाब मागा तो ये नौकर चालाकी से कोई बहाना करके दिल्ली भाग गये और बादशाह के पास जा कर राजा के विरुद्ध झूठी शिकायतें की, झूठ दोष लगा कर राजा और बादशाह की मित्रता भग करने का प्रयत्न किया। जो बादशाह राजा का पहले मित्र था उसे राजा के विरुद्ध करके नाराज कर दिया। राजा इस पत्र मे बादशाह को लिखता है बादशाह सलामत 'जो दोष मेरे ऊपर मेरे इन शत्रुओ ने लगाये हैं तथा जो विश्वास की बात कही हैं वे सर्वथा झूठी हैं। इस प्रकार वे मेरे ऊपर झूठ दोष लगा कर अपने आप को बादशाह सलामत की दृष्टि मे विश्वास पात्र और श्रेष्ठ हितैषी सिद्ध करना चाहते हैं और जो मेरे राज्य से उन्होंने बहुत बडी धन की राशि बेईमानी से इकट्ठी की है वा चुराई है उसे हजम करना चाहते हैं। मेरे विरुद्ध शिकायत करके वे इस दोष को छिपाना चाहते हैं जिससे बादशाह सलामत भी उनके विरुद्ध इन दोषो की पूछताछ न करें और आप की दृष्टि मे अच्छे बने रहें। वे आगे इस पत्र मे लिखते हैं।

Your most humble servant am as my ancestors have ever been a faithful retainer and heartly will wisher of your family and have never dreant of disobeying the orders of one who dictates his mandates to the world I am standard gold, faithful and true, ment me a thousands times I shall not be found wanting and as proof of the sincerity of such language was necessary he urges upon His Majesty's rememberance that when these distur-

शेष पृष्ठ ९ पर

श्री रामनाथ जी भल्ला के विरुद्ध अभियोग खारिज

नई दिल्ली दिनांक ७-२-७० श्री भारतेन्द्रनाथ ने १९६८ के प्रारम्भ में सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से किसी भांति कुछ ऐसे पत्र प्राप्त किये जिनमें उक्त सभा के एक सेवक ने आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री के विरुद्ध दुराचारी के आरोप लगा रहे थे, फिर उन पत्रों को श्री चतुरसेन के नाम से साइक्लोस्टाईल करा कर सारे भारत में बांटा। साथ ही एक षड्यंत्र द्वारा श्री भल्ला जी के हस्ताक्षर की किसी लेख की कुछ लाइनों की फोटो करा ली। जब उन्हें प्रो० रामसिंह जी सभाप्रधान ने सभा के गबन के आरोप में सभा की सेवा से पृथक् कर दिया तो श्री भारतेन्द्र ने जहां श्री भल्ला जी के विरुद्ध 'आर्योदय' में भिन्न भिन्न प्रकार के लेख लिखने तथा आरोप लगाने आरम्भ किये, वहां फोटो की गई कुछ लाइनें छाप कर आचार्य वैद्यनाथ के विरुद्ध छापे पत्रों का दोषी श्री भल्ला जी को बनाने का प्रयत्न किया। सभाओं के तत्कालीन आपसी झगड़ों के कारण उस समय वातावरण अत्यन्त दूषित था और पंजाब सभा के विरोधियों की सारी शक्ति श्री भल्ला जी को प्रत्येक प्रकार से बदनाम करने तथा हानि पहुंचाने पर लगी हुई थी। उसी सन्दर्भ में सार्वदेशिक सभा में एक षड्यंत्र रच कर उसके अधिकारियों ने श्री भारतेन्द्र की प्रेरणा पर अपने एक कर्मचारी श्री चतुरसेन गुप्त से जुलाई, १९६८ में श्री भल्ला जी के विरुद्ध अभियोग खड़ा कर दिया। १॥ वर्ष में केवल पहले गवाह अर्थात् श्री भारतेन्द्र की गवाही ही चल रही थी कि श्री चतुरसेन द्वारा अभियोग की पैरवी न करने कारण के श्रीमती मंजुला महाजन जुडीशल मैजिस्ट्रेट दिल्ली ने ५-२-७ को उक्त अभियोग को खारिज कर दिया।

२. यह उल्लेखनीय है कि अपनी गवाही में श्री भारतेन्द्र नाथ ने स्वीकार किया कि उक्त पत्रों को सभा के कार्यालय में टाईप उसी ने कराया तथा साइक्लोस्टाईल उसी ने कराया और पत्र की फोटों भी उसी ने कराई दूषित वातावरण के कारण उस समय तीन प्रतिष्ठित व्यक्तियों अर्थात् श्री सत्यदेव जी विद्यालंकार, श्री वेदव्रत जी विद्यालंकार तथा श्री रामलाल जी ठेकेदार ने सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों के प्रभाव में आकर श्री भल्ला जी के विरुद्ध गवाही देने के लिये नाम दे दिये। परन्तु जब उन्हें पता लगा कि अभियोग झूठा है तब उन्हें बड़ी पश्चाताप हुआ। अभियोग खारिज हो जाने से इन तीन महानुभावों को निश्चय ही मानसिक शान्ति होगी। श्री चतुरसेन भी न्यायालय में सभा के कर्मचारियों को प्रायः कहा करते थे कि दोषी तो वास्तव में श्री भारतेन्द्र नाथ ही है श्री भल्ला जी को तो अकारण ही फंसाया गया है। वह तो अभियोग भी वापिस लेने को तैयार रहते थे परन्तु उन्हें शंका यह थी कि श्री भल्ला जी उनके विरुद्ध मानहानि का अभियोग न कर दें। परमात्मा ने उनकी इच्छा भी पूरी कर दी। उन्हें भी अब बड़ी मानसिक शान्ति होगी।

३. स्मरण रहे कि श्री भारतेन्द्र नाथ जिनके षड्यंत्र के कारण यह अभियोग चला तथा जिनके विषैले प्रचार के कारण श्री भल्ला जी आर्यजगत् में कुछ समय के लिए चर्चा का विषय बने उन्हें आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने एक बार तथा पंजाब सभा ने दो बार अपनी सेवा से पृथक् किया था। जब इन पर न कोई विश्वास करता था तथा न सेवा में रखने को तैयार था तो श्री भल्ला जी ने प्रो० रत्नसिंह जी तथा बाबू कालीचरण जी की प्रेरणा पर श्री भारतेन्द्र की पंजाब सभा में १५०) मासिक वेतन पर नियुक्त किया, जिनके फलस्वरूप उनके परिवार का निर्वाह चलने लगा। बाद में उनका वेतन ३००) रु० कर दिया और निवास स्थान आदि की उनकी सुविधाएं दी उसी भारतेन्द्र नाथ ने श्री भल्ला जी के विरुद्ध मिथ्या प्रचार किया तथा झूठा अभियोग कराया। यह है उपकार का पारितोषिक जो श्री भारतेन्द्रनाथ ने श्री भल्ला जी को दिया।

—निजसंवाददाता

स्वास्थ्य में सुधार

श्री तीर्थराज जी वैद्य, सभा उप-मन्त्री तथा म्यूनिसिपल कमिश्नर, मोगा में आर्यसमाज के एक प्रमुख स्तम्भ हैं। सभा की संकट काल में बड़ी सहायता करते हैं। सभा के कार्यों में इधर उधर जाने आने में अस्वस्थ हो गये। उन्हें निमोनियां हो गया था। श्री रूपलाल जी एम० एल० ए० ने एक्सरे करवाया तो असली बीमारी का पता लगा। मैं १-२-७० को आर्यसमाज साबुन बाजार लुधियाना के आवश्यक कार्यवश लुधियाना गया तो दोपहर बाद श्री वैद्य जी को देखने मोगा गया। मेरे साथ आर्यसमाज साबुन बाजार के प्रधान श्री अमरनाथ जी छिब्बा, तथा अन्य अधिकारी यह देखकर बड़ा सन्तोष हुआ कि अब उन्हें कोई कष्ट नहीं। केवल कमजोरी ही है। आशा है शीघ्र स्वस्थ हो जावेंगे।

—रामनाथ भल्ला सभा मन्त्री

पृष्ठ ८ का शेष

bances broke out, he the prisoner was in Delhi on urgent business and that if he had not had the inclination or faith in His Majesty why should he have solicited permission to present himself at court thro' Meer Futteh Allt The Diregah.

भावार्थ इस प्रकार है जिस प्रकार मेरे पूर्वज आप के मुगल परिवार के विश्वास पात्र, हृदय से हितैषी होते आये हैं और उन्होंने स्वप्न में भी मुगल बादशाहों की आज्ञा के विरुद्ध आचरण करने की नहीं सोचते थे मैं भी उसी परम्परा का पालन कर रहा हूं।

मैं खरा स्वर्ण (सोना) हूं विश्वसपात्र और सच्चा हूं। मुझे हजार बार अजमा कर देखो मुझमें कोई न्यूनता नहीं मिलेगी।

अपना स्नेह तथा विश्वास पात्रता प्रदर्शित करने के लिये राजा ने उपरोक्त प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है। राजा नाहरसिंह निवेदन करते हैं कि यदि मेरा विश्वास वा भक्ति बादशाह सलामत के प्रति नहीं होती तो इस बगावत के झगड़ों से पूर्व मैं दिल्ली हजूर के दरबार में क्यों उपस्थित होता और दरोगा मीर फतह-अली के माध्यम से आप के दर्शनार्थ क्यों प्रार्थना करता।

इन पत्रों से न्यायालय में सरकारी वकील यह सिद्ध करता है कि राजा नाहरसिंह बल्लभगढ नरेश का बादशाह बहादुरशाह आदि बागियों के साथ पूर्ण और घनिष्ट सम्बन्ध था और राजा नाहरसिंह पहले से ही इन षड्यन्त्रों में भाग ले रहे थे।

इसी प्रकार अनेक साक्षी (गवाह) राजा के विरुद्ध अंग्रेजी न्यायालय में उपस्थित किये गये। राजा नाहरसिंह ने भी अपने वकील द्वारा सफाई देने का यत्न सब व्यर्थ ही सिद्ध हुआ। अन्त में इनके साथियों सहित देहली में कोतवाली के आगे इन्हें फांसी की जयमाला पहना दी गई।

देहली के मुगल बादशाहों के साथ राजा के पूर्वजों का कभी संघर्ष तथा कभी मित्रता दोनों ही अवस्था में चली आती थी। राज नाहरसिंह ने समयानुसार बादशाह बहादुरशाह जफरशाह के साथ मित्रता की तथा अंग्रेजों के विरुद्ध प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में अपनी शक्ति के अनुसार भाग लिया। इसी के फलस्वरूप वह देश भक्त राजा फांसी के तख्ते पर झूल कर अमर शहीद हो गया और अपने कुल तथा हरयाणा की यश कीर्ति को चार चान्द लगाकर अमर हो गया। इनका जीवन चरित्र कभी विस्तार से लिखूंगा।

श्री रामनाथ जी भल्ला, सभा मन्त्री का हार्दिक अभिनन्दन

श्री रामनाथ जी भल्ला, जब आर्य समाज साबुन बाजार लुधियाना के अधिकारियो के निमन्त्रण पर सभा मन्त्री बनने के उपरान्त रविवार दिनांक १-२-७० को पहली बार सत्सग मे पधारे तो आर्य समाज साबुन बाजार, आर्य कालेज, आर्य हायर सैकण्डरी स्कल, दयानन्द मैडिकल कालेज, आर्य गर्ल्स हायर सकण्डरी स्कूल के अधिकारियो, प्रिंसिपलो, स्थानीय व्यापारियो तथा प्रतिष्ठित नागरिको की ओर से उनका हार्दिक अभिनन्दन किया गया। सभा मन्त्री जी ने अपने भाषण मे आर्य समाज साबुन बाजार के सब पक्षो द्वारा मिलकर समाज का कार्य करने के निश्चय के कारण आर्य समाज मे उत्पन्न हुई जाग्रति से समाज के अधिकारियो को बधाई दी तथा सत्सग की हर्षजनक उपस्थिति पर प्रसन्नता प्रकट की। आर्यसमाज के सघटन को अधिक दृढ बनाने पर बल दिया। शिक्षण सस्थाओ के अध्यक्षो को प्ररणा की कि वह अपनी अपनी सस्था के छात्रो छात्राओ को सभा द्वारा आयोजित धर्मशिक्षा की परीक्षाओ मे बैठायें ताकि वह बडे होकर उत्तम नागरिक बन सक। इसके साथ उपस्थित बन्धुओ को सत्सगो मे उसी भाति रुचि लेने तथा उपदेशो द्वारा सब लाभ उठाने की भी प्रेरणा की। स्कूल के छात्रो को सत्सग मे उपस्थित देखकर उनकी बडी सराहना की तथा मुख्याध्यापिका जी को भी छात्राओ व अध्यापिकाओं को सत्सग मे लाने की प्रेरणा की।

श्री अमरनाथ जी छिब्बा, प्रधान, तथा डा० रामस्वरूप जी मन्त्री, आयसमाज ने श्री भल्ला जी की आर्यसमाज के प्रति सेवाओ की प्रससा की तथा बताया कि भारत सरकार की सेवा से निवृत होने के उपरान्त उन्होने आजीवन समाज सेवा करने का जो सकल्प किया है उसके बाद वह इतनी सर्दी के बावजूद स्थान स्थान पर आर्यसमाज के सघटन को दृढ करने तथा प्रचार कार्य को तीव्र करने के लिए पजाब मे भ्रमण कर रहे हैं। स्मरण रहे कि जिस भाति श्री वीरेन्द्र आदि ने प्रतिनिधि न होते हुए भी श्री मनोहर जी विद्यालकार तथा अनगपाल सिह जी को अपनी तथाकथित सभा के उप-प्रधान घोषित कर दिया था उसी भाति श्री अमर नाथ जी छिब्बा को अनाधिकार चेष्टा से अपनी तथाकथित अन्तरग का सदस्य घोषित कर दिया था हालांकि श्री छिब्बा प्रो० रामसिह जी तथा श्री रामनाथ जी भल्ला को ही आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के विधिवत क्रमश प्रधान तथा मन्त्री मानते हैं।

अन्त मे श्री भल्ला जी ने आयसमाज साबुन बाजार के अधिकारियो द्वारा किये गये उनके अभिनन्दन का हार्दिक धन्यवाद किया।

—निजसवाददाता



सभा मन्त्री जी सत्सग मे भाषण दे रहे हैं।



आर्यसमाज साबुन बाजार लुधियाना के साप्ताहिक सत्सग में १-२-७० को पधारने पर श्री उग्रसैन सागर, प्रिंसिपल आर्य कालेज श्री रामनाथ जी भल्ला सभा मत्री का स्वागत कर रहे हैं।



प्रिंसिपल, आर्य गर्ल्स हायर सैकन्डरी स्कल द्वारा सभा मत्री जी का स्वागत।



सतसग के उपारान्त समाज मन्दिर मे सभा मत्री जीका अभिनन्दन। श्री भल्ला जी के साथ प्रि० सन्तराम, श्री अमरनाथ छिब्बा (प्रधान समाज) प्रि० सागर, मुख्या ध्यापिका जी, श्री विद्याभास्कर जी (उप प्रधान समाज) श्री ओमप्रकाश जी पासी, डा० रामस्वरूप जी, (मत्री समाज) श्री हसराज शर्मा, श्री अशोक डा० कान्तीनन्दन तथा अन्य प्रतिष्ठित सदस्य हैं।

आर्यसमाज बाकनेर दिल्ली का अठारहवां वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज बाकनेर (दिल्ली) का १८ वां वार्षिकोत्सव १ मार्च १९७० रविवार होना निश्चित हुआ है।　मंत्री आर्य समाज

महात्मा आनन्दस्वामी जी के स्वास्थ्य में सुधार

महात्मा आनन्द स्वामी जी अगस्त, ६९ को प्रचारार्थ विदेश यात्रा पर गये थे। कई देशों में प्रचार करने के उपरान्त लन्दन गये तो उन्हें फ्लू हो गया। उन्हें अन्यत्र भी जाना था परन्तु अस्वस्थता के कारण बम्बई २०-१-७० को आ गये जहां वह चिकित्सा करा रहे हैं। अब उनके स्वास्थ्य में सुधार है। महात्मा जी ने अपनी यात्रा में किये कार्य तथा बीमारी के सम्बन्ध में ला० मेलाराम जी प्रधान, आर्यसमाज, हनुमान् रोड, नई दिल्ली को जो बम्बई से पत्र लिखा है वह आर्य जनता की जानकारी के लिये दिया जा रहा है। —रामनाथ भल्ला सभा मन्त्री

ओ३म

११४-ए, टरनर रोड, बान्दरा, बम्बई-५० ३१-१-७०

मेरे बहुत प्यारे ला० मेलाराम जी,

आनन्द रहो। पत्र आपका मिला। मैंने दक्षिण अमरीका, तथा मध्य अमरीका के देशों तथा योरुप के कुछ देशों में पांच मास खूब वेद सन्देश सुनाया अमरीकन लोग बड़े प्रभावित हुए। एक अमरीकन ने मुझसे संन्यास लिया। पांच मास के बाद जब मैं अफ्रीका जाने के लिए लन्दन पहुंचा तो वहां फ्लू ने मेरे शरीर को घेर लिया और शरीर में से एक प्राण नहीं निकाले बाकि सब कुछ निकाल कर ले गया। तब डाक्टरों ने अफ्रीका जाने से रोक दिया और मैं बुखार की अवस्था में बम्बई चला आया। जहां श्री अरवाहा जी ने चिकित्सा कराई। अब बुखार नहीं। खांसी नहीं। परन्तु नींद और भूख भी नहीं। कमजोरी बहुत है। सो ठीक है। कमजोरी ठीक हो गई तो अच्छी बात और यदि दूर न हुई तो भी अच्छी बात। आपका धन्यवाद कि आप छोटे से साधु को याद रखते हैं। घर में सबको आशीर्वाद। सेवक—आनन्द स्वामी सरस्वती

पंजाब सभा के अधिकारियों के फोन नम्बर

प्रो० रामसिंह (सभा प्रधान) नई दिल्ली २७२६७६ तथा ५६३२१३, श्री नवनीत लाल जी (सभा उप-प्रधान) नई दिल्ली ४२६१५ दफतर तथा ६११५६८ (घर) श्री महाशय भरतसिंह जी (सभा उप-प्रधान) रोहतक (हरयाणा) ५८४, ला० लालचन्द जी सब्बरवाल (सभाउप-प्रधान) जालन्धर(पंजाब) ३५३७, श्री रामनाथ जी भल्ला सभा मन्त्री नई दिल्ली २७४६५१, श्री तीर्थ राज जी वैद्य (सभा उप-मन्त्री) मोगा (पजाब) ४०२, श्री जगन्नाथ जी, (सभा कोषाध्यक्ष) नई दिल्ली ४३३६६ (दफतर) तथा ७२२४४ (घर), श्री देवेन्द्र कुमार जी (सभा पुस्तकाध्यक्ष) नवांशहर (पंजाब) १५, मुख्य कार्यालय, जालधर ४२५०, उप-कार्यालय, नई दिल्ली ४८१५०, श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती सम्पादक "आर्यमर्यादा" दिल्ली ५६२१६३, श्री रघुवीरसिंह जी संसद सदस्य नई दिल्ली। ३८७८१७ —(रामनाथ भल्ला) सभा मन्त्री

अवतारवाद पर शास्त्रार्थ

ग्राम देतोरा (आगरा) में आर्यसमाज के उत्सव समय आर्यसमाज और पौराणिकों में अवतारवाद पर शास्त्रार्थ हुआ आर्यसमाज की ओर से पं० रामदयालु जो शास्त्री ने पहिले धाराप्रवाह संस्कृत में अवतारवाद का प्रबल प्रमाणों से खण्डन किया। फिर जनता को सुविधा के लिये भाषा में उसकी व्याख्या की। पौराणिक पक्ष की ओर से पं० कृष्णचन्द्र जी ने आर्यसमाज के पक्ष का उत्तर न देकर अपशब्द बोलने लगे और सनातन धर्म की जय बोलते हुए ऊपर चले गये। उपस्थित जनता पर बहुत प्रभाव पड़ा। —मन्त्री आर्यसमाज

आत्म शुद्धि आश्रम बहादुरगढ़ (रोहतक)

२७ २८ फरवरी ७० को आश्रम को ओर से आंखो का मुफ्त आप्रेशन कैम्प लगाया जायेगा। डा० एस. सी मिढा १-२ मार्च को आप्रेशन करेंगे। आप्रेशन कराने के इच्छुक सज्जन आश्रम से पत्र व्यवहार करें।

—ब्रह्मचारी धर्मवीर सन्तोषी, व्यवस्थापक आत्मशुद्धि आश्रम, दिल्ली रोड़, बहादुरगढ़ (जि० रोहतक)

रेडियो भाषण की सूचना

श्री सरदारसिंह तूफान आर्योपदेशक, (सांकरौद जि० मेरठ) २२ फरवरी ७० को देहाती प्रोग्राम में अनुमान ७॥ बजे कृषि गान करेंगे

आर्यसमाज के निर्वाचन

१—जलाली (अलीगढ़)

प्रधान—श्री उलफत राय, मन्त्री—श्री पृथ्वीराज हितैषी, पुस्तकाध्यक्ष-श्री शिवकुमार आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री पन्नालाल आर्य। —मन्त्री

२—पाठा (करनाल)

प्रधान—श्री जोतराम मन्त्री,—श्री दुलीचन्द, कोषाध्यक्ष, श्री जय॰ पाल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री रामकिशन —मन्त्री

३—बडहलगंज (लखनऊ)

प्रधान—श्री शारदा प्रसाद आर्य, मन्त्री—श्री हरिहर प्रसाद आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री धर्मदत्त आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री इन्द्रदेव, आर्य। —मंत्री

४—बीकानेर छोटी (गुड़गांवा)

प्रधान—श्री गंगाराम मन्त्री —श्री मंगलचन्द बेदी, कोषाध्यक्ष—श्री हट्टीसिंह, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सत्यपाल। —मन्त्री

५—फिरोजपुर (पंजाब)

सभी समाजों की ओर से शिरोमणि समाज की स्थापना की गई। प्रधान श्री मदनजित्, मन्त्री श्री देवीराम शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री ब्रह्मदत्त। —मन्त्री

आर्य गर्ल्ज हायर सैकण्डरी स्कूल लुधियाना का चुनाव

प्रधान—वैद्य लोकनाथ जी, मैनेजर श्री अमरनाथ जो छिब्बा तथा कोषाध्यक्ष—श्री रामनाथ जी प्रभाकर चुने गये।

—अमरनाथ छिब्बा प्रधान आर्यसमाज साबुन बाजार लुधियाना

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज साबुन बाजार, लुधियाना के साप्ताहिक सत्संग के पश्चात् १-२-३० को डा० रामस्वरूप जी मन्त्री आर्यसमाज ने श्री अलखधारी जी आर्य नेता अम्बाला, श्री रूपलाल जी, एम० एल० ए० गुड़गांव तथा श्री खिदमतराय जी, अध्यापक आर्य हायर सैकण्डरी स्कूल लुधियाना की अकस्मात् मृत्यु पर हार्दिक शोक का प्रस्ताव रखा तथा दिवंगत आत्माओं की सद्गति और उनके सम्बन्धियों व ईष्ट मित्रों को धैर्य प्रदान करने की परमात्मा से सब महानुभावों ने प्रार्थना की।

शोक समाचार

सोनीपत के प्रसिद्ध आर्यसमाजी कार्यकर्ता श्री रूपचन्द जी मुखीका स्वर्गवास हो गया। आर्यसमाज ऋषिनगर सोनीपत में शोक सभा का आयोजन किया गया जिसमें श्री मुखी जी को श्रद्धाञ्जली दी गई और परमात्मा से प्रार्थना की गई कि उनके शोक संतप्त परिवार को धैर्य और दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

—सत्यदेव शास्त्री मन्त्री आर्यसमाज सोनीपत

शोक समाचार

श्री यज्ञदत्त जी वर्मा बी०ए० शाहबाद मारकण्डा जि० करनाल का स्वर्गवास हो गया है। श्री वर्मा जी शाहबाद में आर्यसमाज का लग्न से कार्य करते थे।

परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवगत आत्मा को सद्गति तथा उनके परिवार को धैर्य प्रदान कर।—तेजभानु आर्य प्रचारक शाहबाद मारकण्डा

शोक सभा

श्री रामलाल जी गुप्त, म्यूनिसिपल कमिश्नर, जालन्धर, सभा अंतरंग सदस्य व अधिष्ठाता सभा मुख्य कार्यालय को धर्मपत्नी श्रीमती ज्ञान देवी जी के स्वर्गवास के सम्बन्ध में श्री गुप्त जी के निवास स्थान पर शोक सभा हुई। इसमें लगभग एक हजार व्यक्ति जालन्धर तथा अन्य स्थानों से उपस्थित थे। और पंजाब सभा की ओर से मैं स्वयं तथा अन्य सभा अधिकारी प्रतिष्ठित आर्य महानुभाव उपस्थित थे।

श्री रामलाल जी ने अपनी धर्मपत्नी की स्मृति में ५०००) रुपये का दान घोषित करके एक ट्रस्ट बनाने का निश्चय किया। उक्त राशि की आय से दीन-दुखियों तथा निर्धनों की सहायता की जावेगी। इसके अतिरिक्त १५०) रु० सामाजिक संस्थाओं को दान की घोषणा की।

—रामनाथ भल्ला सभा मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साहित्य विभाग का सूची-पत्र

सभा द्वारा प्रकाशित :—

१. सत्यार्थ प्रकाश—ले० स्वामी दयानन्द मूल्य ३-००
२. धर्मवीर पं० लेखराम जीवन—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी १-२५
३. सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह १-००
४. आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द जी के लेखों का संग्रह तथा उनका जीवन परिचय १-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी के लेखों का संग्रह तथा उनका जीवन परिचय १-२५
६. वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या हवन मन्त्र अर्थ सहित तथा सतसंगों के लिये ४० गीतों का संग्रह ०-५०
७. कुलियात आर्य मुसाफिर—पं० लेखराम की पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद ६-००
८. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश—आर्यसमाज के सिद्धात टिप्पणीसहित ०-४०
९. वेदाविर्भाव—वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि ०-७५
१०. जीवन ज्योति—वेद मन्त्रों की व्याख्या—प० चमूपति जी एम० ए० ३-००
११. सोमसरोवर " " " " " " ३-००
१२. वदिक सिद्धांत— " " " १-००
१३. नीहारिका वाद और उपनिषदे " " " १-५०
१४. Principle of Arya Samaj " " " १-५०
१५. Glimpses of Swami Daya Nand " " १-००
१६. Subject Matter of Vedas by Swami Bhoomanand ji १-००
१७. वेदों का यथार्थ स्वरूप—लेखक प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड ६-५०
१८. काया कल्प—पं० बुद्धदेव जी विद्यालकार १-५०
१९. आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी सरस्वती ०-५०
२०. मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर १-००
२१. आर्य समाज क्या मानता है ?— " " सैंकड़ा १०-००
२२. बाल उपयोगी कहानियां—स्वा० दयानन्द जी लिखित कहानियां ०-७५
२३. गोकरुणा निधि—ले० स्वामी दयानन्द जी सैकड़ा १०-००
२४. आर्य नेताओं के वचनामृत, लेखक ला० साईंदास जी, सैंकड़ा १०-००
२५. मर्यादा पुरोषोत्तम राम, लेखक कु० सुशीला आर्या एम० ए० ०-२५
२६. दयानन्द चरित्र—लेखक देवेन्द्र नाथ जी १-५०
२७. बलिदान जयन्ति स्मृति ग्रन्थ—आर्य समाज के बलिदानों का संग्रह ४-५०
२८. पजाब का आर्यसमाज—पजाब, हरयाणा, दिल्ली के आर्य समाजों का सचित्र इतिहास—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद २-००
२९. वैदिक सन्ध्या—सन्ध्या मन्त्र अर्थ सहित सैकड़ा १०-००
३०. वैदिक धर्म की विशेषताए—लेखक प० हरिदेव जी आचार्य सैकड़ा १०-००

सभा द्वारा प्रचारित पुस्तकें

३१. प० गुरुदत्त जी विद्यार्थी जीवन चरित्र—लेखक प्रो० रामप्रकाश जी १-३५
३२. मैं और मेरा भगवान्—लेखक प० गगा प्रसाद उपाध्याय एम० ए० २-००
३३. सनातन धर्म " " " ०-७५
३४. सन्ध्या, क्या, क्यों, कैसे " " " २-००

व्यवस्थापक : साहित्य विभाग,

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

पुस्तकों के मंगवाने के पते—

(१)—१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१ फोन४८१५०
(२)—दयानन्दमठ रोहतक (हरयाणा) फोन ५७४
(३)—गुरुदत्तभवन जालन्धर (पंजाब) फोन ४२५०

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिए जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस पहाड़ी धीरज, देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

वेद-मन्त्रार्थ प्रवचनम्

पुनस्ते किं कुर्युरित्युपदिश्यते। फिर वे क्या करे इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है॥

असाम्योजो बिभृथा सुदानवोऽसामि धूतय शव।
ऋषिद्विषे मरुत परिमन्यव इषु न सृजत द्विषम्॥

—ऋ० १ ३९ १०॥

पदार्थ —(असामि) अखिलम (ओज) विद्यापराक्रमम (बिभृथ) धरत तेन पुष्यत वा। (सुदानव) शोभन दानु दानं येषां तत्सम्बुद्धौ (असामि) पूर्णम (धूतय) ये धून्वन्ति ते (शव) बलम (ऋषिद्विषे) वेदवदविदीश्वरविरोधिने दुष्टाय मनुष्याय (मरुत) ऋत्विज (परिमन्यव) परित सर्वतो मन्यु क्रोधो येषां वीरगणा ते (इषुम) बाणादिशस्त्र-समूहम (न) इव (सृजत) प्रक्षिपत (द्विषम) शत्रुम)॥

अन्वय —हे धूतय सुदानवो मरुत ऋत्विजा यथा शत्र प्रतीप शस्त्रसमूह प्रक्षिपन्ति तथा द्विषत्साम्य यो बिभृथ ब्रह्मद्विष शत्रु प्रति शस्त्राणि सृजत प्रक्षिपत।

भावार्थ —अत्रोपमालङ्कार। यथा धार्मिका जातक्रोधा शूरवीरा शस्त्रप्रहारै शत्रून विजित्य निष्कण्टकराज्य प्राप्य प्रजा सुखयन्ति। तथैव सर्वे मनुष्या वेदविद्याविद्वदीश्वरद्वेष्ट न प्रत्यखिलाभ्या बलपराक्रमाभ्या शस्त्रास्त्राणि प्रक्षिप्यैतान्विजित्य वेदविद्ब्रह्मप्रकाशयुक्त राज्य निष्पादयन्तु॥

भाषान्वयपदार्थ —हे (धूतय) दुष्टो को कम्पाने (सुदानव) उत्तमदानस्वभाव वाले (मरुत) विद्वान लोगो! तुम (न) जैसे (परिमन्यव) सब प्रकार क्रोध युक्त शूरवीर मनुष्य (द्विषम) शत्रु के प्रति (इषुम) बाण आदि शस्त्र समूहो को छोडते हैं वैसे (ऋषिद्विषे) वेद वेदो का जानने वाले तथा ईश्वर के विरोधी दुष्ट मनुष्यो के लिए (असामि) अखिल (ओज) विद्या पराक्रम (असामि) सम्पूर्ण (शव) बल को (बिभृथ) धारण करो और उस शत्रु के प्रति शस्त्र वा अस्त्रो को (सृजत) छोडो॥

भाषा भावार्थ —इस मन्त्र मे उपमा अलङ्कार है। जैसे धार्मिक शूरवीर मनुष्य क्रोध को उत्पन्न शस्त्रो के प्रहारो से शत्रुओ को जीत निष्कण्टक राज्य को प्राप्त हो कर प्रजा को सुखी करते हैं वैसे ही सब मनुष्य वेद विद्वान वा ईश्वर के विरोधियो के प्रति सम्पूर्ण बल पराक्रमो से शस्त्र अस्त्रो को छोड उन को जीत कर ईश्वर वेद-विद्या और विद्वानो से युक्त राज्य को सम्पादन करें॥

—(ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य से)

श्रद्धा सूक्त

ऋग्वेद १ १५१ सूक्त 'श्रद्धा' सूक्त कहा जाता है। अमर हुतात्मा वीर सन्यासी श्री स्वामी श्रद्धानन्द ने इस सूक्त के ज्ञान के अनुसार अपने जीवन को ढाला था और नाम भी "श्रद्धानन्द" चुना था। इस सूक्त मे केवल ५ मन्त्र हैं। इन मे श्रद्धा पदार्थ का उपदेश ईश्वर ने किया है। इस सूक्त के अर्थ यद्यपि व्यापक हैं, परन्तु आंशिक रूप मे हम कुछ अर्थों पर ही प्रकाश डालते है। प्रति मन्त्र का अर्थ करने से पूर्व कुछ विशिष्ट शब्दो के अर्थ पहिले देते हैं —

१ श्रद्धा ईश्वरसत्यधर्मादिगुणानामुपर्यत्यन्त विश्वास श्रद्धा। अर्थात् ईश्वर सत्यभाव और धर्मादिगुणो के ऊपर अत्यन्त विश्वास रख कर तदनुसार आचरण करना श्रद्धा कहलाती है।

२ हवि सत्येन धर्मेण युक्त दान ग्रहण च हवि अर्थात् सत्य धर्म मे युक्त पदार्थों का ग्रहण और देना हवि कहा जाता है।

३ आकूति अध्यवसाय उत्साह आप्तरीतिर्वा आकूति अर्थात् दृढ निश्चय उत्साह और आप्तविद्वानो द्वारा स्वीकृत मार्ग आकूति है।

४ हृदय्यया मानसानि प्रेमप्रचुराणि कार्याणि तद्युक्तभावेन मानसिक कर्मो मे युक्तभाव द्वारा हृदय्यया पद का अर्थ है।

५ योगदर्शन के व्यासभाष्य मे व्यास मुनि का वचन यह है—कल्याणकारिणी जननी माता के समान श्रद्धा योगी की रक्षा और पालना करती है।

६ निरुक्त मे कहा है कि श्रत् नाम सत्य का जो सत्य को धारण करती है उस को श्रद्धा कहते है। श्रद्धा मे सत्य का निवास है। सत्य मे श्रद्धा से प्रीति होती है।

७ भागधेयस्य ऐश्वर्य स्वरूप का

८ मूर्धनि उत्तमाङ्ग मे

९ वचसा वेदवचन और आप्तवाणी से। इन शब्दो और अर्थों को पहिले ही एक बार लिख दिया है। जिस से एक ही शब्द के बार-बार अर्थ लिखने न पड़ें। अब पाचो मन्त्रो को भी एक साथ लिख कर उन के अर्थ दिये जाते हैं।

श्रद्धयाग्नि समिध्यते श्रद्धया हूयते हवि।
श्रद्धा भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि॥१॥

[शेष अगले पृष्ठ ३ के नीचे]

सम्पादकीय

ओजीयो हविः

१—मुंशीराम शहर कोतवाल के लड़के थे। बुद्धिमान थे, परन्तु दुर्व्यसनो में फस चुके थे। बरेली शहर मे एक वर्चस्वी तेजस्वी बलिष्ठ सन्यासी पहुचे। उन के भाषणो को सुन कर सब प्रकार के लोग प्रभावित होने लगे। शहर कोतवाल को भी उन के प्रति श्रद्धा पैदा हुई। अगले दिन वह अपने पुत्र मुंशीराम को भी सन्यासी का उपदेश सुनने के लिये साथ ले गये। इच्छा न होते हुये भी पिता के आदेश पर उपदेश सुनने चले गये। सन्यासी के उपदेश ने मुंशीराम के हृदय और मस्तिष्क पर प्रभाव डाला। फिर वह प्रतिदिन उपदेश सुनने जाते रहे। मुंशीराम ने अपने सब दुर्गुण और दुर्व्यसन त्याग दिये और सन्मार्ग के राही बन गये। यह सन्यासी ऋषि दयानन्द थे।

२—मुंशीराम अब वकालत करने लगे। आमदनी अच्छी होती थी। सन्यासी के उपदेश के प्रभाव से सच्चा मुकदमा ही लेते थे। झूठा नही। अदालतो पर भी उन के इस भाव का प्रभाव होना स्वाभाविक था। एक दिन किसी मुवक्किल ने उन के पास आ कर उन्हें अपने मुकदमे की पैरवी के लिये कहा। वकील मुंशीराम ने सब बातें पूछीं और कहा कि "तुम्हारा मुकदमा सच्चा नही है। मैं तुम्हारी पैरवी नही करूँगा" उस मुवक्किल ने उसके मुंशी से जोड़ तोड़ कर लिया। उस मुंशी ने भी अपने वकील मुंशीराम के उस मुकदमे के वकालतनामे पर हस्ताक्षर करा लिये और उन की डायरी मे तारीख लिख दी। तारीख आई। मुंशीराम वकील ने उस मुकदमे के कागजात देख कर कहा कि मैं ने तो इस मुकदमे को लेने से इन्कार कर दिया था। उनके मुंशी ने कहा कि इस वकालतनामे पर आप के हस्ताक्षर हैं। वकील मुंशीराम ने उस मुकदमे की तो पैरवी करनी ही क्या थी—वकालत को ही लात मार दी।

३—मुंशीराम अब आर्यसमाज के कार्यकर्ता बन कर खूब काम करने लगे। उन का उर्दू में साप्ताहिक पत्र निकलता था, नाम "सद्धर्मप्रचारक" था उन्होंने विचार

[शेष पृष्ठ ४ पर]

[पृष्ठ २ से आगे]

प्रिय श्रद्धे ददत प्रिय श्रद्धे दिदासत।
प्रिय भोजेषु यज्वस्विद म उदित कृधि ॥२॥

यथा देवा असुरेषु श्रद्धामुग्रेषु चक्रिरे।
एव भोजेषु यज्वस्वस्माकमुदित कृधि ॥३॥

श्रद्धा देवा यजमाना वायुगोपा उपासते।
श्रद्धां हृदय्ययाकूत्या श्रद्धय विन्दते वसु ॥४॥

श्रद्धा प्रातर्हवामहे श्रद्धा मध्यन्दिने परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह न ॥५॥

श्रेष्ठ ज्ञानकर्मोपासना के द्वारा हृदय मे परमेश्वर की प्रत्यक्षता की प्राप्ति होती है। श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा ही जन-कल्याण में उत्तम पदार्थों का दान और ग्रहण होता है। ऐश्वर्य युक्त धर्म के मुख्य भाग मे वेदवाणी और आप्त पुरुषो के वचनो द्वारा श्रद्धा का निवेदन किया जाता है ॥१

दान देने और लेने के भाव मे तथा देने लेने की इच्छा रखने वाले मनुष्य की श्रद्धा मे प्रियता बढ़ती है। मेरा यह पवित्र वचन तथा उत्तम गमन सुसगत करने और पालन करने वाले लोगो में प्रेम को बढ़ाता है ॥२

जैसे विद्वान् योगी महात्मा बलिष्ठ प्राणो मे श्रद्धा का योग करते हैं। वैसे ही हम वचन और कर्म को यज्ञप्रिय राष्ट्र-रक्षक जनो को समर्पित करते हैं ॥३

अनन्तसामर्थ्य स्वरूप परमेश्वर से सुरक्षित विद्वान् श्रेष्ठ कर्म करने वाले लोग ईश्वर की श्रद्धा पूर्वक उपासना करते हैं। श्रद्धा और हृदयगत भावो के द्वारा श्रद्धा रखते हुये जन योग आदि उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त कर लेता है ॥४

प्रातःकाल, दोपहर दिन और सूर्यास्त के समय हम अपने सब कार्य और ईश्वर की भक्ति करते है। श्रद्धे! तू हम मे श्रद्धा का आधान कर ॥५

[पृष्ठ ३ से आगे]

किया कि मैं तो संस्कृत और आर्यभाषा का पक्षपाती हूँ। बस इतना सोचना था कि सद्धर्मप्रचारक उर्दू से बदल कर आर्यभाषा मे चालू कर दिया। घाटे की कुछ चिन्ता न की।

४—आर्षशिक्षा प्रणाली को चालू करने के लिये गुरुकुल कांगडी को स्थापित कर दिया। गङ्गापार जङ्गली पशुओं से भरे हुए स्थान मे गुरुकुल-आश्रम की नींव रख दी। सब से पहिले अपने दोनो पुत्रो हरिश्चन्द्र और इन्द्र को ब्रह्मचारी बना कर प्रविष्ट करा दिया।

५—आर्यसमाज और गुरुकुल आदि के कार्य के लिये अनेक जगह जाते थे। लोगों से सब बातें सुनते थे। उसी समय जालन्धर की अपनी कोठी और सब सम्पत्ति आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब को दान कर दी। लड़को और लड़की को कुछ भाग नहीं दिया।

६—वानप्रस्थ आश्रम मे प्रवेश किया। अब मुंशीराम-महात्मा मुंशीराम के रूप मे आर्यजनता ही नही, भारतीय जनता के सामने नेता बन कर आ गये। खूब काम किया।

७—अब गुरुकुल कांगडी का उत्तरदायित्व भी छोड़ दिया। सन्यास आश्रम में प्रवेश किया। अब वह मुंशीराम महात्मा से स्वामी श्रद्धानन्द बन गये। दिन-रात चतुर्दिक् कार्य का विस्तार कर दिया। कहीं दलितोद्धार का कार्य बढ़ाया जा रहा है। कहीं वर्तमान जाति बिरादरी को हटाकर वैदिक वर्णव्यवस्था को स्थापित करने की ओर पग बढ़ाया जा रहा है। कही शुद्धि का चक्र वेग से चल रहा है। कहीं राष्ट्रभाषा के लिये यत्न किया जा रहा है। कही राष्ट्र की पराधीनता की बेडियो को काटने के लिये विदेशी सैनिकों के सामने गोली खाने के लिये सीना ताने खडे है। वैदिकधर्म, आर्यसमाज और आर्यावर्त्त को स्वतन्त्रता दिलाने के लिये जीवन लगा दिया।

८—शुद्धि आन्दोलन को पूर्ण वेग से चलाया जा रहा है। हजारो नही लाखो विधर्मी बने मतवादी लोग पुन अपने धर्म मे प्रविष्ट कराये जा रहे हैं। सारे भारत में राजनीतिक रूप से हलचल मच गई। कार्य अधिक, दिन-रात विश्राम नही। अवस्था बडी हो चली। व्यायाम स्नान और नित्यकर्म विधि पूर्वक करने नही छोडे। शरीर कब तक साथ देता? रुग्ण हो कर चारपाई का सेवन किया, परन्तु चारो ओर की मानसिक चिन्ता उसी प्रकार चलती रही।

९—समय आया। एक मतान्ध हत्यारे ने उन की चारपाई के पास पहुँच कर और उनके द्वारा ही पानी मगवाया हुआ पी कर श्रद्धानन्द सन्यासी के प्राण पिस्तोल की गोलियो से ले लिये।

१० मुंशीराम वकील मुंशीराम आर्यसमाज के कार्य-कर्त्ता मुंशीराम और अन्त मे भारत के नेता स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना सर्वहुत यज्ञ करके प्राणो की बलि भी वैदिकधर्म आर्यसमाज और राष्ट्रहित की वेदी पर चढा दी। वेद के अनुसार जीवन सर्वहित मे अर्पण कर दिया।

अथर्ववेद के एक मन्त्र में आता है—

यत्पुरुषेण हविषा यज्ञं देवा अतन्वत।
अस्ति नु तस्मादोजीयो यद्विहव्येनेजिरे॥

अर्थात् तपस्वी त्यागी विद्वान् नेता लोग पुरुष रूप प्राणो की हवि डाल कर जो आत्म यज्ञ करते हैं। क्या इस से भी बडा 'ओजीय' आत्म यज्ञ हो सकता है? कि जिस यज्ञ में विशेष हवि-प्राणो के ओज की दे दी जाती है।

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द ने यही ओजीय—हवि डाल कर प्राण=आत्म-यज्ञ किया था। उसी का स्मरण यह बलिदान दिवस आर्यजाति को प्रतिवर्ष कराता रहता है तथा कुछ करने की प्रेरणा देता है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

शहीद श्रद्धानंद की श्रद्धा

(प० शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी गुरुनाथ)

श्रद्धा के अर्थ सत्यधारी के हैं। श्रत्सत्यदधातीति श्रद्धा। इस निरुक्ति के अनुसार स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सत्य का आह्वान किया और यथा नाम तथा गुण की उक्ति चरितार्थ की।

काशी मे ऋषि दयानन्द पधारे तो इनकी माता जी ने बालक मुशीराम जी को कमरे मे छिपा लिया कि नगर मे एक जादूगर सन्यासी आया हुआ है। जिस पर उसकी दृष्टि पडती है वह उसी का हो जाता है। अत माता जी ने यह उपक्रम करना आवश्यक समझा।

बरेली मे ऋषि जी का व्याख्यान मुशीराम जी ने सुन ही लिया और कुछ प्रश्नोत्तर भी हुए। बस, जादूगर का जादू चल गया। मुशीराम जी जीवन भर के लिए ऋषि दयानन्द के हो गये। और उनके वैदिक मिशन को फैलाने के लिये अपने तन-मन-धन को लुटाकर दम लिया।

इसलामिक इतिहास मे चारो खलीफा इसलाम के प्रहरी बने और उसी के लिये सर्वशक्ति लगा दी। किन्तु स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जो जो कार्य अपने जीवन मे किये और जो सिद्धिया प्राप्त की उनका मूल्यांकन करना कठिन है। खलीफो के हाथ मे राज्यशक्ति थी। स्वामी जी साधु थे। अत मृतप्राय समाज मे जीवनश्वास फूकने मे इनको जो सिद्धि प्राप्त हुई, वह चारो खलीफाओ से कम न होगी।

(१) श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ईशोपासना में जीवन भर कटिबद्ध रहे। योगाभ्यास भी किया करते थ।

(२) संस्कृत के पढने में पर्याप्त परिश्रम किया था। महाभाष्य को श्रद्धा से पढा और गुरुकुल खोलने के लिये अपनी कोठी तक दान कर दी।

(३) सर्वप्रथम अपने दोनो बालक हरिश्चन्द्र और इन्द्र गुरुकुल-कांगड़ी में ले जाकर जगल मे मगलधाम अर्थात गुरुकुल खोल दिया।

(४) १९१६ ई० में सन्यास की दीक्षा लेकर स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए।

(५) १९१९ ई० में अमृतसर जलिया वाला बाग गोलीकाड के कारण पंजाब में हाहाकार मचा तो स्वामी जी ने जलती मशाल पर सहानुभूति का फाहा रखा। जखमियो की सेवा की। मृतको के परिवारो की सहायता की तथा कांग्रेस के बृहदधिवेशन अमृतसर के स्वागताध्यक्ष बने।

(६) सर्वप्रथम इसी अधिवेशन में देवनागरी लिपि में आर्यभाषा द्वारा अपना स्वागतीय भाषण दिया।

(७) गुरुकुल कागडी आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब सार्वदेशिक सभा शुद्धिसभा आदि के सस्थापक थ।

(८) बीस के लगभग छोटी बडी पुस्तके लिखीं।

(९) जन्मगत जाति का अन्त करके विशाल भ्रातृत्व का परिचय दिया।

(१०) कन्या महाविद्यालय जालधर खोलकर स्त्री-शिक्षा का द्वार खोल दिया।

(११) पटियाला केस में स्वय वकालत की और पीडित परिवारो की सहायता भी की।

(१२) चादनी चौक देहली में गोरखो के आगे छाती खोलकर खडे हो गये। निर्भीक सन्यासी ने देशसेवा में भी पूर्ण निर्भयता का परिचय दिया।

(१३) जामामस्जिद देहली के मेम्बर से भाषण दिया।

(१४) १९२१ में असहयोग आन्दोलन में कूद पडे। १९२२ में जेलयात्रा की।

(१५) १९२३ मे कोकानाडा काग्रस में मौलाना मुहम्मदअली ने दलितवर्ग के विभाजन का प्रस्ताव रखा। स्वामी जी ने डटकर उसका विरोध किया। और शुद्धिसभा की स्थापना की। आगरा के मलकानो का धर्मप्रवेश हुआ।

(१६) २३ दिसम्बर १९२६ को अब्दुर्रशीद की गोली से शहादत का ताज पहना। इस प्रकार बलिदान से अमर पदवी प्राप्त की।

महान् वीर स्वामी श्रद्धानन्द जी ● (श्री शिवकुमार शास्त्री ससंसदस्य नई दिल्ली)



श्री शिवकुमार शास्त्री ससंसदस्य

श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी अद्वितीय और महान् वीर थे। शास्त्रकारो ने वीर रस के चार भेद किये हैं। १ दानवीर २ दयावीर ३ धर्मवीर तथा ४ युद्धवीर। मेरे विचार मे जिस महापुरुष में वीररस की इन चारो धाराओ का परिपाक हुआ हो उसे महावीर कहना चाहिए। स्वा० श्रद्धानन्द जी की जीवनी पर दृक पात करके देख तो इन चारो ही के उत्कृष्ट उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं।

(१) श्री स्वामी जी की दानवीरता का उल्लेखनीय उदाहरण यह है कि जब वे गुरुकुल कागडी के वार्षिकोत्सव पर धन की अपील करने खडे हुए उस समय तक और सम्पत्ति तो समाप्त हो चुकी थी। केवल जाल धर शहर मे एक मकान शेष रह गया था। श्री स्वामी जी के मन में विचार आया कि दान मागने का अधिकार तो उस व्यक्ति का है जो पहले स्वय भी दान करे। अत जब तक मैं अपनी स्वयं आहुति नही डालता मेरा अपील करने का कोई अधिकार नहीं है। अत अपील के लिए खडे होते ही सबसे पहले यह घोषणा की कि मागने का अधिकारी बनने के लिए मैं एकमात्र बचे हुए अपने मकान को गुरुकुल कागडी को दान करता हू और इसके बाद उन्होने और लोगो से गुरुकुल की सहायता करने को कहा।

(२) श्री स्वामी जी की दयावीरता के गुणगान उस समय के छात्र करते नही थकते। वे अपने ब्रह्मचारियो के कष्टो को दूर करने के लिए रात दिन एक कर देते थे। ब्रह्मचारियो की अस्वस्थता के समय रातो रात उनकी बैठ निकल जाती थी। एक ब्रह्मचारी ने सजलनयन होकर अपने सस्मरण सुनाते हुए कहा कि– वह ज्वराक्रान्त था। स्वामी जी उसका सर दबा रहे थे–इतने मे जब उसे उलटी होने लगी तो वहां कोई पात्र नही था। स्वामी जी ने अपने दोनो हाथ फैला कर उलटी ले ली। इतनी दु ख-कातरता और दयार्द्रता तो माता को भी नही होती जो उन्हे थी।

(३) उनकी धर्मवीरता का उदाहरण धर्म के प्रत्येक क्षेत्र मे निष्ठापूर्वक प्रगति है। काग्रेस के क्षेत्र मे श्री स्वामी जी का स्थान बहुत महत्वपूर्ण बन चुका था। उस समय गाँधी जी का व्यक्तित्व तो विशेष उभरा नही था। किन्तु उस समय धर्म की रक्षा के लिए उन्हे आत्म प्रेरणा हुई और उन्होने अपना मार्ग उस समय के राजनीतिक नेताओ से पृथक चुना। उनके लाख मत भेद प्रकट करने पर भी मलकाना की शुद्धि के काम मे तत्पर रहे।

(४) चौथी विशेषता श्री स्वामी जी की युद्धवीरता की है। उसके दो अनुपम उदाहरण है। एक जलियावाला बाग के गोलीकाण्ड के बाद जनता की सेवा और दूसरा उदाहरण दिल्ली के चाँदनीचौक मे गोरखो की सगीनो के सामने छाती खोल कर बढना। इस प्रकार श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महान् वीर थे। अपितु वे मूर्तिमान वीर रस थे। वसुधरा वीरभोग्या रही है अब भी है और आगे भी रहेगी। अत राष्ट्र मे वीरत्व की रक्षा होनी चाहिए और वीरो की पूजा भी होनी चाहिए।

बलिदान-गाथा

(कु० सुशीला आर्या एम० ए०
आर्य हिन्दी महाविद्यालय, बरलीवावरी)

बलिदान दिवस यह आज आर्यो हमे जगाने आया।
बुझती ज्वाला को फूक मार कर फिर भडकाने आया ॥

मानव हैं वे ही पर हित जो निज सब कुछ भेंट चढाते।
बलिदान अमर फल है जिसको चख वीर अमर हो जाते ॥

केवल जीने की चाह लिए जो, वे क्या कभी जिए हैं।
जीवित हैं वही जिन्होने हस हस जीवन भेट किए हैं ॥

जो सगीनो के सगीतो मे आगे बढ जाते है।
हैं धन्य वान जो वक्ष, बलि-वेदी पर चढ जाते हैं ॥

बिछुडो को गले लगाने को निज पावन हाथ बढाते।
जो भेद भूल निज पर का कुल जग को परिवार बनाते ॥

ठोकर खाकर जो सम्भल पुन अपना पथ आप बनाते।
निज जीवन का आदर्श दिखा औरो को कुछ सिखलाते ॥

ऐसा ही वह जीवन था जो इस दिन सहर्ष बलिदान हुआ।
जाति को जाती जाति बचाने को जिसका निर्वाण हुआ ॥

हर नया फूल पा इसी रक्त का रग खिला करता है।
जी जाते है असख्य जब ऐसा एक कोई मरता है ॥

जो रक्त हृदय से उसके निकला व्यर्थ नही जाने पाया।
उसने आर्य जाति का उपवन हरा-भरा कर दिखलाया ॥

तज कर अतीत लो सोचे हम क्या करना क्या करते हैं।
क्या हम अपने सिर सकट ले दुखियो के दु ख हरते हैं ॥

कितने हैं मन मे भाव हमारे धर्म पै बलि हो जाने के।
दलितो को साथ मिलाने के पतितो को पुन उठाने के ॥

जब कभी परीक्षा आती है हम उससे घबराते तो नही ?
कर्त्तव्य द्वार पर खडा देख हम उससे छिप जाते तो नही ?

श्रद्धानन्द की जय का नारा केवल मुख से न लगाए हम।
आओ कुछ त्याग-दीप लेकर श्रद्धा के सुमन चढाए हम ॥

सन्यासी का बलिदान-अमर बस सफल तभी हो पाएगा।
जब सकल विश्व यह ओ ध्वजा की छाया मे आ जाएगा ॥

हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी का पुण्य स्मरण

(प० धर्मपाल विद्यालङ्कार, स० मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी)

किन्ही उच्च उद्देश्यो के लिये अपने जीवन का उत्सर्ग कर देने वाले महापुरुष ही कल्याण मार्ग मे पथिको के लिये प्रकाश स्तम्भ का काम देते हैं। इस प्रकार के कठिन मार्ग पर चलने वाले महापुरुषो का जीवन सदैव खतरे मे रहता है—विरले ही वीर साहसी महापुरुष इस दुस्तर मार्ग को स्वीकार करते हैं। इस विचित्र ससार मे प्रत्येक व्यक्ति के सामने सदैव अनेक प्रकार के चैलेंज आते रहते हैं—जो वीर पुरुष निर्भयता से इन चैलेंज का मुकाबला करते हैं, वे ही बलिदान के अमर पद को प्राप्त करते है। यह आत्मोत्सर्ग की भावना एकाएक उत्पन्न नही होती—जीवन मे कदम ब कदम, सीढ़ी दर सीढ़ी को बढते चले जाने की निरन्तर प्रक्रिया का परिणाम होता है।

आर्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द से ही आत्म बलिदान से ही आर्यसमाज को बलिदान का उपक्रम हुआ। ऋषि के आदर्शमय शुभ ज्योति से प्रकाश ग्रहण करके स्वामी श्रद्धानन्द (महात्मा मु शीराम) ऋषि के सर्वश्रेष्ठ शिष्य हुए, कल्याणमार्ग का पथिक बने। स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन श्रद्धामय था वे श्रद्धा से ओत प्रोत सस्कारी महापुरुष थे। इसीलिये उनके जीवन में निर्भयता और साहस की पराकाष्ठा उत्पन्न हो गई थी।

आर्यपद्धति के अनुसार स्वामी जी का जीवन चार भागो मे विभाजित हो गया। १—ब्रह्मचर्याश्रम, जिस में अधकारमय जीवन से प्रकाशमय जीवन की तरफ बढने की प्रवृत्ति रही। २—गृहस्थाश्रम, जिस मे वैदिक-धर्मप्रचार की धुन समाई गई। ३—वानप्रस्थाश्रम, जिस में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की पुन स्थापना का महान् कार्य सम्पन्न हुआ। ४—सन्यसाश्रम—जिस में सामाजिक व राजनैतिक उत्थान का कार्य करते हुए अमर पद प्राप्त किया। आर्यसमाज का यह श्रद्धानन्द युग कहलाता है।

सन् १८७८ में युवक नास्तिक मु शीराम का बरेली मे ऋषि दयानन्द जैसे तजोमय महापुरुष से साक्षात्कार हुआ—इस सत्सग ने युवक मु शीराम की जीवन दिशा को बदल दिया—उनके हृदय में श्रद्धा का अंकुर उत्पन्न किया। मुन्शीराम जी का हृदय श्रद्धामय तो हो ही चुका था अब कि वकालत का कार्य करते हुए प्रचार की धुन समा गई। सन् १८८५ मे उनकी लाहौर और जालन्धर में आर्यजाति के सुप्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् प० गुरुदत्त से घनिष्ठता हो गई। प० गुरुदत्त जी का विश्वास था कि ऋषि दयानन्द के ग्रन्थो को जितनी बार भी पढा जाय उस में से नित्य नये-नये भाव प्रकट होते हैं। वस्तुत प० गुरुदत्त जी मु शीराम जी के स्वाध्याय के प्रवर्तक हुए। प० गुरुदत्त जी ऋषि दयानन्द की पाठविधि के भक्त थे। वैदिक साहित्य के लिये सस्कृत का ज्ञान होना सस्कृत के ज्ञान के लिये अष्टाध्यायी पढना वे आवश्यक समझते थे। इसलिये मुन्शीराम जी ने भी सस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। धर्मप्रचार के इस युग मे इन्ही दिनो आर्य-पथिक प० लेखराम का सहयोग प्राप्त हो गया। खूब शास्त्रार्थ होते थे। इसी समय सन् १८८७ ई० मे श्री मु शीराम जी को "उपदेशक विद्यालय" खोलने का विचार आया। यही विचार दृढ होता हुआ भविष्य मे 'गुरुकुल कांगड़ी' के रूप मे प्रकट हुआ। महात्मा मु शी-राम जी धर्म के सिद्धान्तो मे समझौते के विरोधी थे, इस का वे दृढता से पालन करते थे। यही भावना उनके जीवन के समस्त कार्यों की सफलता का सार है। जितनी-जितनी कठिन विघ्न बाधाये उन के सामने आती-जाती थी उतने ही अधिकाधिक उत्साह, दृढता से वे अपने कार्य की पूर्ति मे लग जाते थे। सफलता हाथ बांधे खड़ी रहती थी।

१८९२ ई० मे महात्मा मु शीराम जी आर्यप्रति-

निधिसभा पजाब के जो कि महात्मा पार्टी की सभा मानी जाती थी के प्रधान निर्वाचित हुए। आप की प्रेरणा पर २६ नवम्बर १८९८ मे आर्यप्रतिनिधिसभा ने गुरुकुल खोलने का निश्चय किया। यह काम महात्मा मुन्शीराम जी के सुपुर्द किया गया। मुशीराम जी ने प्रण किया कि जब तक ३०,००० रुपया इकट्ठा न हो जावे घर नही लौटेंगे—सन् १९०० ई० मे यह तीस हजार धन इकट्ठा हो गया और उन्होने अपने दोनो पुत्र हरिशचन्द्र और इन्द्रचन्द्र को गुरुकुल में प्रविष्ट करा दिया। आर्यसमाज ने सर्वस्व त्यागी मुशीराम जी को "महात्मा" नाम से विभूषित किया और वे "महात्मा मुशीराम" प्रसिद्ध हो गये।

"श्रेयासि बहुविघ्नानि" के अनुसार इन सर्वस्व त्यागी महात्मा को अपने सहयोगियो से तथा बाहर के विरोधियो से कितना दु.खपूर्ण कठिन सघर्ष करना पड़ा, इसकी कहानी "दु खी दिल की पुरदर्द दास्तान" के पढने से जानी जा सकती है। वास्तव मे स्वामी श्रद्धानन्द (महात्मा मुशीराम) जी के जीवन का मुख्य कार्य गुरुकुलो की स्थापना का आन्दोलन का ही है। गुरुकुल को किन-किन भयकर आपत्तियो से रक्षा करते हुए विशाल वृक्ष के रूप मे परिणत किया—इसकी कहानी अलग है।

१९१७ ई० मे महात्मा मुशीराम जी ने सन्यास ले लिया और स्वामी श्रद्धानन्द हो गये। यह उनके जीवन का चतुर्थ स्वर्गारोहण का पर्व है। इसके बाद स्वामी जी देश के विस्तृत सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र मे प्रविष्ट हो गये। इन दिनो महात्मा गाधी के 'स्वराज्य आन्दोलन' की आधी चल रही थी। निर्भय साहसी नेता इससे अछूते कैसे रहते? १९१९ ई० मे रौलट एक्ट के विरोध मे देश भर मे सभायें, जुलूस आदि निकल रहे थे। दिल्ली में भी हडताल हुई। २०, २५ हजार का जुलूस निकला। आगे-आगे स्वामी श्रद्धानन्द जी थे। चादनी चौक मे घण्टाघर पर अग्रेजी और गुरखो की फौज रास्ता रोके खड़ी थी। सगीनें तनी हुई थी। जुलूस को पीछे छोड़कर स्वामी जी सीधे सिपाहियो के सामने आ गये। गुरखे की सगीन स्वामी जी की छाती पर थी—स्वामी जी ने छाती खोल कर कहा कि हिम्मत है तो गोली मारो। निर्भयता और साहस के इस कार्य से सिपाहियो की बन्दूके नीचे आ गई, जुलूस निकल गया। कहते हैं कि उन दिनो दिल्ली मे 'राम राज्य' हो गया था। मुसलमान इतने प्रभावित थे कि ४ अप्रैल को जामा मस्जिद की मिम्बर पर स्वामी श्रद्धानन्द जी का वेदोपदेश हुआ। यह अभूतपूर्व घटना थी—

पजाब मे दगो के कारण मार्शल ला की घोषणा हो चुकी थी—१३ अप्रैल को जलियावाला का प्रसिद्ध हत्याकाण्ड हो चुका था—पजाब निर्जीव सा था। निश्चय किया गया कि अमृतसर मे काग्रेस का अधिवेशन किया जाय। देश के नेताओ की दृष्टि स्वा० श्रद्धानन्द पर पड़ी—स्वामी जी के प्रबन्ध मे अमृतसर काग्रेस बहुत शान से मनाई गई। पजाब मे पुनर्जीवन आया—चेतना आने लगी। रहतियो की शुद्धि, गढवाल मे दुर्भिक्ष पीडितो की सहायता, धौलपुर आर्यसमाज मन्दिर का सत्याग्रह, गुरु का बाग आदि अनेक देशोपकारी कार्यों मे सलग्न रहे। यही तो शहादत की सीढी है।

देश मे राजनैतिक आन्दोलन की गतिविधि की गहराई में जाने पर स्वामी जी को अनुभव हुआ कि राजनैतिक आन्दोलन की आड़ मे मुसलमान पृथक् होकर राजनैतिक लाभ उठाने का यत्न कर रहे हैं। मालाबार, मोपला काण्ड, सहारनपुर, पेशावर, कोहाट, मुलतान आदि स्थान-स्थान पर हिन्दू मुस्लिम दगे होने लगे। तब लीग का काम जोरो पर था। अछूतो को मुसलमान बनाने की योजनायें चल रही थी। काग्रेस का राष्ट्रिय आन्दोलन हिन्दू मुस्लिम यूनिटी के काल्पनिक जगत् मे किया जा रहा था। आर्य हिन्दू जाति के निर्बल हो जाने पर स्वराज्य का क्या स्वरूप होगा। हिन्दुओ के विनाश की भयानक स्थिति को देखकर स्वामी जी ने शुद्धि आन्दोलन प्रारम्भ किया। मलकानो की सामूहिक शुद्धिया होने लगी। आन्दोलन की सफलता ने मुसलमानो के धार्मिक जनून को उत्तेजित कर दिया। काग्रेस के नेताओ ने शुद्धि आन्दोलन को स्वराज्य प्राप्ति मे बाधक बतलाया। महात्मा गाधी जी के आर्यसमाज के विरुद्ध लेख ने भी मुसलमानो के मजहबीजोश को बल दिया। स्वामी जी का कत्ल करने की साजिशे होने लगी।

घटनाचक्रवश मैं सन् १९२१ मे ही स्वामी जी के

पाद छल के निजू मत्री के रूप में पहुँच गया था। स्वामी जी महराज ने मुझे क्यो अपने पास बुला लिया इस की मनोरजक कहानी है—जिस का पता स्वामी जी के पास रहने पर बाद मे मालूम हुआ। मुशीराम जी अपने कोतवाल पिता के साथ कुछ दिनो बदायूँ रहे थे। वहा राय साहब गोवर्धनसिंह और नवाब नौबतराय से जो आनरेरी मैजिस्ट्रेट थे मेलजोल रहा था। हमारे पितामह श्री प्यारेलाल जी भी मजिस्ट्रेट थे। गुरुकुल के उत्सवो पर हमारे पिता परिवार सहित जलसे का प्रबन्ध करने १५-२० दिन पहले ही गुरुकुल आ जाते थे। इस प्रकार अनजाने मे ही उन का हम पर स्नेह था, इसी स्नेह के कारण ही ६ वर्ष स्वामी जी के पास और ६ वर्ष 'अर्जुन' पत्र को सम्भालने के लिये बाधित होना पड़ा।

शुद्धि आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि प्राय स्वामी जी की डाक मे उन के कत्ल की धमकियो के पत्र आने लगे। देहली के दंगे के बाद, २१ दिन का अनशन करने से पहले जब महात्मा गाधी जी स्वामी जी से मिलने पधारे तो वह सब कत्ल के करने की धमकियो के पत्र व इश्तहार उन्हे दिखलाये गये थे। स्वामी जी इन धमकियो की उपेक्षा करते थे—स्वामी जी का यह वाक्य "हम अपने सिर को हथेली पर लिये फिरते हैं" अभी तक स्मरण है। धीरे २ हमें खतरे का आभास होने लगा तब स्वभावत ही छाया की तरह उनके साथ रहने का यत्न करने लगे। स्वामी जी ताना देते थे और कहते थ तुम इस प्रकार मेरी क्या रक्षा कर सकते हो—प्रभु मेरा रक्षक है। वे श्रद्धा और निर्भयता के मूर्तिमान स्वरूप ही थे।

सन् १९२६ मे कराची की असगरी बेगम एक मुस्लिम महिला की शुद्धि ने और उस पर मुस्लिम "अलमान" आदि अखबारो के आन्दोलन ने मुसलमानो के मजहबी जोश की आग को भड़का दिया। लड़की के पिता ताजमुहम्मद और उसके पति अब्दुलहमीद सयार के समझाने और डा० अन्सारी व श्री आसफअली के कहने पर भी वह शिक्षिता असगरी बेगम इस्लाम धर्म मे वापिस जाने को तैयार नहीं हुई। तब मुकद्दमे चलाये गये। असगरी बेगम जो शान्तिदेवी हो गई थी—उनकी कहानी भी बड़ी बहुत विचित्र है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी का सम्पूर्ण जीवन ही त्याग और आत्माहुति का तपा हुआ जीवन था परन्तु अभी बलिदान का शानदार मुकुट पहनना शेष था। दिसम्बर १९२६ को स्वामी जी गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ गये। सर्दियो मे भी रात को रखे जल से प्रात ४ बजे स्नान किया करते थे। मैंने अनुभव किया कि उस दिन उन्हे ठण्ड लग गई है तबियत कुछ खराब सी थी तब भी वे गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ चल ही दिये—इन्द्रप्रस्थ पहुचकर तबियत और खराब हो गई—उसी दिन वापिस लौट आये। डाक्टरो ने जाच की, मालूम हुआ कि निमोनिया हो गया है। डा० अन्सारी का इलाज शुरू हुआ—१५ दिन की परिचर्या से निमोनिया से छुटकारा तो हुआ परन्तु कमजोरी बहुत हो गई। बीमारी के पिछले ३-४ दिनो मे विशेष सावधानी रखने के लिए डा० अन्सारी की हिदायत थी इसलिये दिन-रात जागते ही रहे। दो तीन दिन से रात भर का जागना था। २३ ता० को भोजन के बाद हाथ धुलाते हुए नीद का झौंका आया। स्वामी जी के आराम करने के लिये कहने पर मैं साथ के कमरे मे चला गया। धर्मसिह को कह दिया था कि किसी को मिलने न दे—स्वामी जी को आराम करने दें। लगभग ३ बजे अब्दुलरशीद नामक एक मुसलमान सीढियो से चढकर ऊपर आया—धर्मसिह ने स्वामी जी के पास जाने से रोक दिया। वह नीचे उतर गया। कुछ देर बाद फिर दोबारा आया मिलने नहीं दिया गया। तीसरी बार पुन ऊपर आया और स्वामी जी से मिलने के लिये जिद्द करने लगा। धर्मसिह ने कहा कि यदि मैं कह दूँगा तभी मिलना हो सकेगा—इस पर वह मेरे कमरे में आकर बैठ गया—अखबार आदि देखता रहा। शेर वाला गलीचा ओढे हुए था—मैंने भी मिला देने से इन्कार कर दिया—तब वह धर्मसिह से झगड़ने लगा। इस पर स्वामी जी ने कहा कि 'मिलने दो' क्या हर्ज है ? तब कौन रोकता ? अब्दुलरशीद स्वामी जी के पास आ गया। स्वामी जी से कहा कि मैं आप से मजहब के मामले मे बातचीत करना चाहता हूँ। स्वामी जी का जवाब था कि जब मैं अच्छा हो जाऊ तब आइयेगा उससे पहले आर्यसमाज की पुस्तकें पढ लीजियेगा। धर्मसिह पास खड़ा था। अब्दुलरशीद ने पानी पीने की माग का बहाना कर धर्मसिह को हटाना चाहा—धर्मसिह उसे पानी पीने

के लिये बाहर अपने साथ लाया—कुल्ला करके वह फौरन भाग कर अन्दर आ गया और गोली मारने लगा। गोली की आवाज सुनकर धर्मसिंह अन्दर को भागा तो उसे गोली मार दी जो उसकी जाघ मे लगी गिर गया। गोली की आवाज सुनते ही मैं तुरन्त भाग कर स्वामी जी के कमरे मे पहुँचा। धर्मसिंह को गोली मेरे सामने लगी—मेरे पहुचने पर उसने मुझ पर भी गोली का वार करना चाहा परन्तु जब तक वह घूमे मैंने उसका पिस्टल वाला हाथ पकड़ लिया और टांग मार कर गिरा दिया खीचकर स्वामी जी के सिरहाने की पास की दीवार तक खीच ले गया। वह छूटने की बराबर कोशिश करता रहा—पिस्तौल वाला हाथ मैंने छोड़ा नही। बीच से आकर उसका सिर अपने कन्धे की दीवार के बीच मे इस तरह दबा रखा था कि देर के बाद वह शायद बेहोश हो गया—तब मैंने धर्मसिंह से कहा कि उठकर शुद्धि सभा के साथ के दफ्तर मे स्वामी चिदानन्द जी को इत्तला दे। स्वामी चिदानन्द जी ने देशबन्धु जी को फोन कर दिया—देशबन्धु जी ने कोतवाली को। सबसे पहले डा० सुखदेव जी स्वामी जी को देखने पहुचे तो स्वामी जी को गोली मार देने की बात समझ गये। धर्मसिंह को गोली लगने की बात भी मालूम हुई। मुझे स्वामी जी के सिरहाने पड़ा हुआ देखकर पूछा कि आप को गोली कहाँ लगी है। मेरे कहने पर कि आदमी को मैंने दबा रखा है—आप पास न आये—पिस्तौल अभी आदमी के हाथ मे है वे तुरन्त नीचे उतर गये। स्वामी जी की गोली मार देने की खबर फैलने लगी। कुछ लोग कमरे मे आ चुके थे—इसी बीच मे प० इन्द्र जी भी आ गये। उनको भी दूर रहने के लिये कहा। जनता इकट्ठी हो रही थी। राजाराम वालण्टियर गुस्से मे छुरी लेकर आ गया था—उसे समझ मे बात नही आती थी—छुरी मुझे छू छू जाती थी। प० इन्द्र जी के हौसले कायम थे। वे धक्के दे देकर वालण्टियरो को हटाते थे। स्वामी जी को गोली मार देने की खबर से शहर मे दगा होने लगा। लगभग आधे घण्टे से अधिक समय तक मैं कातिल को नीचे दबाये पड़ा रहा—यदि छोड़ देता तो गजब हो जाता। कुछ समय बाद मि० औंड सीनियर सुपरिटेण्डेण्ट पुलिस के साथ और पुलिस भी आ गई—उन्होने होशियारी से मेरे हाथो से अब्दुलरशीद को गिरफ्तार कर लिया।



महात्मा मुंशीराम जी

डा० अन्सारी भी आये और स्थिति देखकर तुरन्त चले गये। उस जमाने को और आज के जमाने को सोचता हू कितना बदल गया। आर्य हिन्दु जाति—आर्य संस्कृति की रक्षा का किसे ध्यान है? आर्यपुरुष कहाँ है, आर्य-आदर्श कहाँ है, आर्यसमाज कहाँ है?

क्या वह श्रद्धा, साहस, निर्भयता और लग्न की शिक्षा स्वामी जी के बलिदान से ले रहे है? सोचे?

उनका आत्मा कैसे जागा

(कुमारी सुशीला आर्या एम० ए० विद्यावाचस्पति)

संसार में कई प्रकार के महापुरुष होते हैं। कुछ शैशव से ही महान् होते हैं किन्तु कुछ में जन्म से महान् बनने के विशेष लक्षण नहीं होते। उनका जीवन स्व-निर्मित होता है। तीसरे प्रकार के इने-गिने महानुभाव ऐसे भी होते हैं जो जीवन के प्रभात और दोपहरी मे सामान्य पुरुषों से भी पतित दशा में होते हैं। पुन: किसी प्रकार आत्मबोध होने पर महत्ता के शिखर पर आरूढ हो बैठते हैं। जो वस्त्र सदा से ही उजला है उसकी शोभा का क्या कहना ? किन्तु नगण्य वह भी नहीं जिसे मैला-कुचैला कर दाग धब्बों से कलंकित करके भी पुन दुग्ध-धवल कर प्रस्तुत किया जाए।

हम जिस महापुरुष के विषय मे कुछ लिखने चले हैं वे तीसरी कोटि मे आते हैं। मुंशीराम से महात्मा मुंशी-राम पुन. स्वामी श्रद्धानन्द के रूप मे जीवन की सत्य गहराइयों तक उतरने वाले तथा पतन की गम्भीर खाई से हाथ पैर मार कर उत्थान के गिरिशृङ्ग पर चढ़ने वाले इस जीवन से पतित से पतित व्यक्ति भी शिक्षा ग्रहण कर आगे बढ़ने का साहस कर सकता है।

मुंशीराम अपनी यौवनावस्था में सामान्य युवको जैसे भी न थे। वे मदिरा तक का सेवन करते थ। किन्तु उनके जीवन की एक घटना ने उनकी काया पलट दी। होटल में शराब के नशे में उन्मत्त एक पुरुष को किसी देवी के प्रति अशिष्ट व्यवहार पर उतारू देख उनका मद का मद उतर गया। उनका खानपान अशुद्ध था किन्तु चरित्र दूषित नहीं था। आत्मा मे पवित्रता का अंश सुरक्षित था। थोड़ी सी कीटाणुनाशक औषधि जिस प्रकार बहुमात्रा में जलादि को शुद्ध करने के लिए पर्याप्त होती है उसी प्रकार पवित्रता के अभ्यास ने जोर मारा। मुंशीराम ने दुराचारी मदिरोन्मत्त पुरुष के क्रूर हाथो से उस देवी की लाज बचाई और मदिरा त्याग का प्रण कर अपनी या यों कहिए आगे चलकर समस्त आर्यजाति की लाज बचा ली। नारी के प्रति करुणा ने हृदय के बन्द द्वार खोल दिए। ओह ! इतनी कुत्सित वस्तु है मदिरा। विवेक की आंखें फोड देने वाली। यह विष की प्याली। यह मुक्ति भी कभी भी कहीं भी गिरा देगी। इसे दूर से ही नमस्कार।

तो मुंशीराम की यह सम्भलने की शुभ घडी थी। एक बीमारी छूटी तो आगे चलकर धीरे-धीरे और सब ने भी बिस्तर बांधने शुरू कर दिए। वे 'महात्मा' बनने के रास्ते पर पैर बढाने लगे और जिस प्रकार इष्ट-स्थान तक पहुँचे यह एक लम्बी कहानी है।

हमें उनके आत्म-सस्कार की इस घटना से कुछ सीखना है और वह यही कि नारी की मर्यादा रखने वाला ससार में अनेक दोषो से बच सकता है। मातृत्व के प्रति आस्था ने एक महान् जीवन को बचा लिया और देश का बडा उपकार कालान्तर में कर दिखाया। आर्यो ! नारीत्व की मर्यादा के लिए वर्तमान युग भयङ्कर खतरे की घण्टी बना आ है। यदि ऋषियो की देन का कोई अंश बचाना है तो सर्वप्रथम इस अतुल सम्पत्ति को बचाना होगा। अमरशहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन से यही एक बात ग्रहण कर लें तो व्यसनो मे फंसे युवक भाइयो का कितना कल्याण हो सकता है। परमात्मा हमें सद्बुद्धि दे।

●

सदाचार ही जीवन है —दुराचार मृत्यु है।
सदाचार ही उन्नति देता है —दुराचार अवनति करता है।
सदाचार ही आयु को बढ़ाता है—दुराचार आयु को कम करता है।

बलिदान

(स्वर्गीय प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)

(महात्मा मुंशीराम के सुपुत्र प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने स० २०१३ विक्रमी मे "मेरे पिता" नाम से एक पुस्तक लिखा था, जिसमे यशस्वी विद्वान् लेखक ने स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी के सम्बन्ध मे सस्मरण लिखे थे। उसी पुस्तक मे तेतीसवें परिच्छेद मे उक्त स्वामी जी महाराज के बलिदान का वर्णन किया गया है। हम इस लेख मे लेखक के नाम से उन्ही के शब्दो मे यही वर्णन "आर्यमर्यादा" के प्रेमी पाठको के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।--सिद्धान्ती)

"पिता जी निमोनिया के भयकर आक्रमण से निकल चुके थे। अभी इलाज जारी था और निर्बलता बहुत अधिक थी, परन्तु रोग का सिर कट चुका था। मैं नित्य नियम के अनुसार दोपहर बाद बलिदान-भवन गया। "अर्जुन" कार्यालय, जहाँ मैं रहता था, बलिदान-भवन से बहुत दूर नही था, अधिक से अधिक चार मिनट का पैदल रास्ता होगा। पिता जी की तबीयत अच्छी थी। उस समय कुछ अन्य महानुभाव भी वहाँ बैठे थे। पिता जी को स्वास्थ्य लाभ करते देखकर सभी प्रसन्न थे। पिता जी ने सारी बीमारी का बड़ी वीरता से सामना किया, परन्तु एक बात इस बीमारी मे उनकी जिह्वा पर रही। वे बार-बार कहते थे, कि अब यह शरीर सेवा करने के योग्य नही रहा। अब तो एक ही इच्छा है कि अगले जन्म मे ऐसा शरीर प्राप्त करूँ कि जो धर्म की सेवा के काम आ सके। ऐसे ही भाव उस दिन भी पिता जी ने स्पष्ट किये। इस पर हम सबने निवेदन किया कि अब तो कोई खतरे की बात नही है। डा० अन्सारी ने भी कह दिया कि रोग जा चुका है, कुछ ही दिनों मे आप सर्वथा स्वस्थ हो जायेंगे। पिता जी ने मुस्करा कर जो उत्तर दिया, उसका आशय यह था कि होगा तो वही जो भगवान् चाहेंगे, मैं तो केवल अपनी इच्छा प्रकट कर रहा हूँ।

थोड़ी देर तक बातचीत करने के पश्चात् हम लोग उठ गये, क्योकि पिता जी के नित्य कर्म से निवृत्त होने का समय हो गया था। केवल उनका सेवक धर्मसिंह उनके पास रहता था। उसने चारपाई के पास कमोड रख दिया पिता जी स्वय उठकर शौचादि से निवृत्त हुए, और फिर चारपाई पर लेट गये। हम लोग बलिदान-भवन के दूसरे हिस्से में थोड़ी देर बातचीत करके अपने-अपने स्थानो को चले गये।

मैं घर आकर चारपाई पर बैठा ही था, कि बच्चा भागता हुआ आया और उसने घबराये हुए स्वर मे कहा--दादा जी को किसी ने गोली मार दी। घर के सब लोगो ने अचम्भे और अविश्वास से उसकी बात को सुना, क्योकि मैं उन्हे पिता जी के स्वास्थ्य की सन्तोषजनक उन्नति होने के समाचार सुना रहा था। यह समझ कर कि बच्चे ने बात समझने मे भूल की है, मैंने उससे पूछा--'तू ने यह किस से सुना' उसने उत्तर दिया--आप पूछ लीजिये' सड़क पर जीवनलाल जी बहुत ही घबराई आवाज मे मुझे पुकार रहे थे। मुझे देखकर वह बोले--स्वामी जी को किसी ने गोली मार दी।

मैंने पूछा गोली मारने वाला पकड़ा गया या नही ? जीवनलाल जी गोली की आवाज सुनकर सड़क पर ऐसी खबर देने के लिये भाग आये थे, उन्होने उत्तर दिया, 'यह तो पता नही शायद भाग गया हो।'

समाचार सुनकर पाँव तले से जमीन निकल गयी। परन्तु समाचार के मानने और समझने मे देर नही लगी, ऐसी आशका तो कुछ दिनो से हो ही रही थी। इतने मे घर के और लोग आगे छज्जे पर पहुच गये, और पूछने लगे कि क्या बात है मैंने कोई उत्तर नही दिया और यह कह कर कि मैं स्वय देखकर आता हू क्या बात है। नगे पाँव सीढ़ियो से उतर आया। पीछे घर के अन्य लोग--मेरी पत्नी और सभी चल पडे।

मैं भागता हुआ भवन के नीचे पहुचा तो देखा कि कुछ आदमी इकट्ठे हो गये हैं और दो चार ऊपर भी

आ चुके हैं। मुझे देखकर सभी तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगे, पर मैं किसी का भी उत्तर दिये बिना ही ऊपर चढ़ गया। वहाँ जाकर अन्दर घुसते ही मेरी पहली नजर पिता जी की चारपाई पर पड़ी पिता जी की आखें बन्द थी, मानो सुख-पूर्वक सोये हो। सामने भगवे कुर्ते पर रक्त दिखाई दे रहा था जो असली घटना की सूचना दे रहा था अन्यथा पिता जी को देखकर एक दम यह अनुमान नही लग सकता था कि वे सजीव नही हैं।

दूसरी नजर सेवक धर्मसिंह पर पड़ी। वह कमरे के मध्य में जाँघ को हाथ से दबाये पड़ा था। उसके चारो ओर खून फैला हुआ था मैंने पूछा--'धर्मसिंह तुम्हारे भी गोली लगी है ?'

धर्मसिंह ने उत्तर दिया—'हाँ, पण्डित जी, मेरे भी गोली लगी है। पर आप मेरी चिन्ता न करो, स्वामी जी को कई गोलियाँ लगी हैं, उन्हे सम्भालिये।' मैं तब तक पलंग के पास पहुच चुका था। मैंने पिता जी की कलाई और माथे पर हाथ रखा, तो उसे बिल्कुल ठण्डा पाया। उसी समय मेरी दृष्टि पलग के पीछे कमरे के कोने में जमीन पर औंधे मुह लेटे हुए स्नातक धर्मपाल जी पर पड़ी। मैंने पूछा—

'धर्मपाल जी क्या आपके भी गोली लगी है ?' उन्होने उत्तर दिया—'मैंने गोली मारने वाले को दबा रखा है।' मैंने घबरा कर पूछा—'क्या सहायता के लिए आऊँ ?' उनका उत्तर था—'आप इसकी चिन्ता न करें। इसे मैं नही छोड़ूँगा। आप स्वामी जी को सभालिये।

उस परिस्थिति में मेरा दिमाग कैसे ठिकाने रहा, मुझे इसी बात पर आश्चर्य है, इस समय बहुत से और महानुभाव भी वहाँ पहुँच चुके थे। वे भी विचार में भाग ले रहे थे। पहला काम यह किया गया कि डा० अनसारी को टेलीफोन द्वारा बुलाया गया और दूसरा काम यह हुआ कि कोतवाली में दुर्घटना की सूचना दी गई।

वह प्रबन्ध हो ही रहा था कि कमरे के दरवाजे पर हल्ला मच गया। मैं भागकर दरवाजे पर गया तो देखता क्या हू कि हमारा स्वयसेवक राजाराम हाथ में लम्बा चाकू लिये अन्दर घुसने की चेष्टा कर रहा है और उसे डा० धनीराम जी मेरे बहनोई, दोनो हाथो से पकड़कर रोक रहे हैं, कुछ लोग कह रहे थे, इसे अन्दर आने दो, और कुछ लोग उसे शान्त कर रहे थे। पूछने पर राजाराम ने कहा—मैं उस पापी को मारकर छोड़ूँगा, मुझे मत रोको, नही तो एक जगह कई खून हो जायेंगे। मैंने जाकर राजाराम का चाकू वाला हाथ पकड़ लिया। वह मुझे देखकर चिल्लाया, पण्डित जी आप भी मुझे रोक रहे हैं। हमारे जीते जी उसने स्वामी जी के गोली मार दी—हम उसे अभी मारकर छोड़ेगे।

मैंने उसे समझाया कि यदि तुम उसे अभी मार दोगे तो इसका कोई प्रमाण न रहेगा कि वह हत्यारा है और ससार पर सच्चाई प्रकट न होगी। यह समय शान्त रहने का है, घबराने का नही। यह नही कि हमारे जोश के कारण पापी का पाप हमारे ही सिर लगा दिया जाय।

राजाराम खूब गठे हुए शरीर का लम्बा चौड़ा नौजवान था। उसके चेहरे से बहादुरी टपकती थी। वह ट्राम्वे के दफ्तर में चौकीदारी करता था, परन्तु उसकी नौकरी जाति सेवा के काम में कभी बाधक नही होती थी, बिल्कुल निर्भय, सुन्दर डीलडौल के उस सच्चे नौजवान को देख कर हृदय में अभिमान पैदा होता था, कभी किसी बड़े से बड़े खतरे के काम की आज्ञा मिलने पर मैंने उसे क्षणभर के लिये भी सोचते या घबराते नही देखा, आज्ञा मिलते ही मैदान में कूद पड़ना—यह राजाराम का स्वभाव था। मैंने उस समय राजाराम की आँखो में रक्त बरसता देखा तो अन्य कोई उपाय न पाकर जोरदार स्वर मे आज्ञा दी—'राजाराम क्या-क्या कर रहे हो, क्या आज्ञा का उल्लघन करोगे ? चले जाओ यहा से।' राजाराम का हाथ ढीला हो गया, उसने एक बार खून भरी आखो से उस कोठरी की ओर देखा, जहा धर्मपाल जी के दाहिनी शिकजे मे पड़ा हुआ हत्यारा फड़फड़ा रहा था। वह जिस वेग से ऊपर चढ़ा था, उसी वेग से धड़धड़ाता हुआ सीढ़ियो से उतर गया। सच्चा सिपाही आदेश का उल्लघन न कर सका।

राजाराम वहा से तो चला गया, परन्तु उसका क्रोध शान्त न हुआ, उसके पश्चात् दस मिनट के अन्दर ही अन्दर नये बाजार मे तीन आदमी घायल हुए, जिनमें से एक जान से मर गया। इस हुल्लड़ के अपराध में जिन तीन नौजवानो पर मुकदमा महीनो तक चलता रहा—अन्त में सब अभियुक्त बरी कर दिये गये।

बेचारा राजाराम हवालात मे बीमार हो गया था, बाहर आकर उसकी देह सभल न सकी—गिरती ही गयी, अन्त मे वह बाका जवान असमय मे ही जेल मे लगी हुई बीमारी का ग्रास बन गया।

इतने वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी जब कभी मैं राजाराम की याद करता हू तो मेरे सामने उसकी चढी हुई मू छो वाला बहादुर चेहरा जीवित रूप मे आजाता है।

डा० अनसारी और पुलिस को साथ ही साथ टेलिफोन किया गया था, पर डाक्टर साहब पहले ही आ पहुचे। डाक्टर साहब अकेले नही आये, डाक्टर अब्दुर्रहमान को साथ लेते आये थे। इस अन्तिम बीमारी मे पिता जी का इलाज डा० अनसारी ही कर रहे थे, और जब कभी उन्हे दिल्ली से बाहिर जाना पडता था तब वह अपना स्थानापन्न डा० अब्दुर्रहमान को बना जाते थ।

जब डाक्टर साहब को बुलावा पहुचा, तब उन्होने यही समझा कि शायद निमोनिया ने अपना उग्रतम रूप धारण कर लिया है, जिससे घबराकर डा० को बुलाया गया है। १९१६ से पिता जी का डाक्टर अनसारी से परिचय हुआ था। तब से अन्तिम समय तक पिता जी को सिवाय डा० अनसारी के और किसी चिकित्सक का इलाज अनुकूल नही पडता था। पिता जी की अवस्था इतनी बढ गई थी कि जब निमोनिया के दिनो मे डाक्टर जी को चार दिन के लिये भोपाल जाना पडा, तो पिता जी ने दूसरे डाक्टर से दवा ही नही ली। चार दिन तक इलाज केवल सेक-प्लास्टर और परहेज तक ही परिमित रहा। जब डाक्टर साहब भोपाल से वापस आये तब दवा ली। इस अटल श्रद्धा का श्रेय श्रद्धालु को दे या श्रद्धा के पात्र को, इस प्रश्न का उत्तर यह है कि वह श्रेय दोनो मे समान रूप से बाँटना चाहिये। पिता जी जिसमे श्रद्धा रखते थे, अटल रखते थे और डाक्टर अनसारी से जिसने एक बार इलाज करवा लिया उसे दूसरा दरवाजा सुहाता ही न था।

हाँ, तो जब डाक्टर अनसारी बलिदान-भवन मे पहुँचे तो आश्चर्य और दु ख से स्तब्ध रह दरवाजे मे घुसते ही सारे दृश्य को देख कर परिस्थिति को समझने की चेष्टा करते रहे—कुछ देर तक जहाँ के तहाँ खडे रह गये—मानो पाँव भूमि मे गड गये हो। फिर आगे बढ कर पिता जी की नब्ज देखी—माथे और पेट को छुआ—आँखो के पर्दे पलट कर देखे और जो कुछ आवश्यक समझा देखा भाला और अन्त मे आँसू भरी आँखो से मेरी ओर देख कर कहा—भाई अब तो कुछ बाकी नहीं, गोली सीधी छाती मे लगी है। मृत्यु फौरन ही हो गई प्रतीत होती है, फिर डाक्टर जी धर्मसिंह की ओर मुडे, और उसके घाव पर पट्टी बाँधने लगे।

इतने मे पुलिस आ पहुँची। एक इन्स्पेक्टर, दो सब इन्स्पेक्टर और बहुत से सिपाही बडी टट फट के साथ मैदान मे उतरे, मानो जग के लिये तैयार होकर आये हो। अनहोनी हो जाने पर शान दिखाना हिन्दुस्तानी पुलिस की विशेषता है। उस समय तक और वह समय आध घण्टे से कम न होगा—धर्मपाल जी खूनी को दबाये पडे रहे। खूनी के जिस हाथ मे भरा हुआ पिस्तौल था, उसे धर्मपाल जी ने एक हाथ से दबा रखा था, दूसरे हाथ से उसके सिर को फर्श मे खू टे की तरह गाड रखा था। और उसकी पीठ पर अपनी छाती का पूरा जोर देकर लेटे हुए थे। कई लोगो ने बीच बीच मे सहायता के लिये हाथ बढाया। उन सबको धर्मपाल जी ने दूर से हटा दिया। यह बिल्कुल ठीक था कि यदि हत्यारे पर धर्मपाल जी का शिकजा कुछ भी ढीला पड जाता तो वह न जाने कितना अनर्थ करके भाग निकलता।

सर्व साधारण को धर्मपाल जी के उस धैर्य और बल को देखकर बहुत आश्चर्य हुआ था—पर जो लोग उन्हे बचपन से जानते थे उन्हे कुछ भी आश्चर्य नही हुआ, विद्यार्थी अवस्था मे ही साथियो पर उनकी शारीरिक दृढता का आतक था। उसके बडे दुर्भाग्य उदित हुए समझो जो फुटबाल के मैदान मे हाफ बैक धर्मपाल के सामने पड जाय। यदि हाफ-बैक की लात सामने के खिलाडी की लात पर जा लगी तो मेजर एक्सीडेंट (भयानक दुर्घटना) का हो जाना अनिवार्य था। या तो हड्डी टूट जाती थी, अथवा टाँग पर गेंद जैसा गोला सूज आता था। यह बिल्कुल आकस्मिक था, कि अब्दुल-रशीद का वास्ता धर्मपाल जी जैसे ठोस आदमी से पडा—परन्तु विधाता की इच्छा प्राय ऐसी घटनाओ से पूरी

[शेष पृष्ठ १६ के नीचे]

वह मूर्ति

(श्री स्वामी समर्पणानन्द जी सरस्वती)

गुरुकुल कांगड़ी का जन्मोत्सव था। हम ब्रह्मचारियो मे उन दिनों प्राय यही चर्चा चलती थी कि अब जब कि हम स्नातक बन जावेंगे तो खाएगे कहाँ से ? हमारा जीविका का उपाय क्या होगा ?

यह बात कुलपति जी के कानो तक भी जा पहुँची।

वह भरे हुए कण्ठ से बोलने लगे हुए।

मेरे पुत्रो ! वह लम्बा कद, वह ऋषियो की सी दाढी, वह पीला दुपट्टा, वह मेघ गम्भीर नाद वह दिव्य तेज वह आज तक नही भूलता, वह छवि ठीक वैसी की वैसी आज तक आखो के सामने खडी है।

और वह सवैय्या, मेरे पुत्रो सुनो ! जिस भावना ने आज तक मुझे अपने जीवन मे कठिन से कठिन घाटियो से पार उतरने की शक्ति प्रदान की है। वह इस सवैय्ये मे बन्द है।

"जब दात न थे तब दूध दियो, जब दात दिये तब अन्न न दैहैं। जल में थल मे पशु-पक्षिन की सबकी सुधि लेत सो तोरिहु लैहैं। काहे को सोच करै मन मूरख सोच किये कछु हाथ न ऐ हैं। जान को देत अजान को देत, जहान को देत सो तोहु को दैहै॥" यह सवैय्या उस दिन से पल्ले बाध रक्खा है।

मेरे पुत्रो ! मैं रोटी कपडे की चिन्ता करने के लिये तो तुम्हें गुरुकुल मे नही लाया था।

मैं आज तुम्हे एक "पौराणिक" कथा सुनाता हूँ। महाराज रामचन्द्र लङ्का विजय करके लौटे। उनका राज्याभिषेक हुआ। राज्याभिषेक मे पारितोषिक बटे। सीता जी ने हनुमान् को बुलाया। गले से एक अत्यन्त मूल्यवान् मोतियो का हार उतार कर हनुमान् को पहिना दिया।

हनुमान् बेचैन था। सिर झुका कर हार पहिन तो लिया, उससे रहा न गया। अन्त को उसने एक मोती तोड ही लिया, उसे दो टुकडे करके देखने लगा। वह उसमे कुछ ढूँढता था। जब न मिला तो मोती धरती पर फैंक दिया। एक दो तीन कई दाने जब इस प्रकार धरती पर बिखर चुके तो सीता जी हस पडी। हनुमान् ने हाथ जोड कर कारण पूछा। माता सीता हँस कर बोली आखिर तू रहा बन्दर का बन्दर !

हनुमान कहने लगा—माता मैंने क्या बन्दरपना किया ?

सीता जी बोली—इतने मूल्यवान् मोतियो का मूल्य तू ने कुछ भी न जाना। उलटा तोड कर फैंक दिये। इससे बढ कर बन्दरपना और क्या होगा ?

हनुमान् बोला, माता मोतियो का मूल्य तो मैं जानता हूँ पर इन मोतियो मे कही राम नाम भी है, या नही, यही मैं देख रहा था। जब नही मिला तो तोड कर फैंक दिया। जिस पर राम नाम नही लिखा, उसका मूल्य कुछ हो, हनुमान् के लिये कुछ नही।

सीता जी ने पूछा तेरे शरीर पर रामनाम कहाँ लिखा है ?

"हनुमान् ने झट एक रोम पर से त्वचा छील डाली। कहा, माता देख लो, रोम-रोम मे रामनाम है।" मेरे पुत्रो ! मैं तो तुम्हे इस लिये गुरुकुल मैं लाया था, कि तुम्हारे रोम-रोम मे दयानन्द और उस का ब्रह्मचर्य लिखा हो। तुम तो रोम-रोम मे रोटी कपडा लिखने लगे।

उस दिन से समर्पणानन्द रोम-रोम में दयानन्द लिखने में लगा हुआ है। कहाँ तक लिख पाया है। यह अन्तर्यामी ही जाने !

ऐसे थे मेरे गुरु श्रद्धानन्द।
और ऐसा था मेरा प्यारा गुरुकुल।
हा मेरे गुरु श्रद्धानन्द ! आप कहा हैं ?
हा मेरे गुरुकुल तू कहाँ है ?

*

[पृष्ठ १५ का शेष]

होती हैं जिन्हें मनुष्य आकस्मिक कहता है। यह विधाता का विधान था कि पिता जी के बलिदान का कानूनी सबूत माल हाथो के साथ ही गिरफ्तार हो। यह काम धर्मपाल जी जैसे व्यक्ति के हाथो से ही हो सकता था।

कच्चे और पक्के साथी मैंने बहुत देखे है, परन्तु धर्मपाल जी की अपेक्षा अधिक ठोस बात निभाने वाला अब तक मेरे अनुभव मे नही आया, वह पिता जी के शिष्य भी थे और निजू मन्त्री भी—परन्तु वह सारा आध्यात्मिक सम्बन्ध था, घर से खर्च मगा कर निर्वाह करते थे और धर्म-भाव से पिता जी की सेवा करते थे। उन्हे उस घटना से जो यश प्राप्त हुआ, वह वस्तुत उसके अधिकारी हैं।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द

(श्री रामलाल गुप्त, मंत्री [illegible] आर्यसमाज)

जो जीवन भर संघर्षों से खेला मृदु मुस्कान लिए।
बाधाओं के वक्ष चीरता बढ़ा वेद का ज्ञान लिए ॥

आर्यजाति के परमहितैषी आदर्शसंयासी अमर शहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का सारा जीवन वीरोचित था और अन्त मे उन्हें वीरगति ही प्राप्त हुई।

मुंशीराम अपने प्रारम्भिक जीवन मे नास्तिक थे और आप के जीवन मे अनेक त्रुटिया भी थी। महर्षि दयानन्द जब बरेली पधारे तो आप पर स्वामी जी के उपदेशो ने जादू का असर किया और आपके जीवन की धारा को बदल दिया।

आप की गणना जालन्धर के चोटी के वकीलो में की जाती थी। वकालत के काम के साथ-साथ आप आयसमाज के कार्मो मे बहुत दिलचस्पी लेते थे। आपको जालन्धर आर्यसमाज का प्रधान निर्वाचित कर लिया गया। आपने इस काम को बडी योग्यता से निभाया। देश और समाज-सेवा के अदम्य उत्साहवश अपने कुछ समय पश्चात वकालत के काम को भी छोड दिया और पूरी लग्न से आयसमाज के काम मे ही लग गए। उस समय जालन्धर आयसमाज के मन्त्री ला० देवराज जी थे। दोनो मिलकर समाज के काम को बडी तत्परता से करने लगे। जालन्धर के प्रत्येक कस्बे मे जा जाकर आपने प्रचार किया और आर्यसमाजो की स्थापना की। पजाब के प्रत्येक बडे बडे नगरो मे भी आपने समाज का प्रचार किया। जालन्धर के शास्त्रार्थों और समाज के उत्सवो की सारे पजाब मे धूम मच गई। आपने रहतियो के परिवारो को शुद्ध करके आयसमाज मे सम्मिलित किया।

सन १८८६ ई० मे आयसमाज के काम को और प्रगति देने के लिए आपने सद्धमप्रचारक नाम का पत्र निकालना आरम्भ किया।

आपने स्त्री शिक्षा की आवश्यकता अनुभव करके १८६१ ई० मे जालन्धर समाज की ओर से कन्या पाठशाला जारी की।

आप चिरकाल तक आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब के प्रधान निर्वाचित होते रहे।

हिन्दी के माध्यम से समस्त शिक्षा देने वाली ब्रह्मचर्य प्रधान शत―प्रतिशत यह गुरुकुल राष्ट्रिय शिक्षा सस्था अग्रेंजो के लिए एक पहेली थी। वे इसे राजद्रोह का केन्द्र समझते थे।

इधर बम-भय और स्वदेशी आन्दोलन के दिनो मे अग्रजो की आर्यसमाज पर बडी कड़ी दृष्टि थी। ऐसे अवसर पर महात्मा मुंशीराम जी ने एक पुस्तक आर्य-समाज एण्ड पोलिटिक्स" लिख कर सरकार को मुँह तोड उत्तर दिया था। जब आर्यसमाज पटियाला के सभासदो को गिरफ्तार कर लिया गया और समाजमन्दिर पर पुलिस ने अधिकार कर लिया तो आपने वकालत का लाइसेंस पुन प्राप्त कर उस केस मे सरकार के दाँत खट्टे किये।

जनरल डायर द्वारा जलयावालाबाग के नर सहार के पश्चात् पजाब के लोग बुरी तरह सहमे हुए बैठे थे। कांग्रस के अधिवेशन के होने की कोई आशा नही थी। ऐसे समय मे पजाब पहुँच कर लोगों को ढारस देना आपका ही काम था। आपके उद्योग से ही उस वर्ष अमृतसर मे कांग्रेस का अधिवेशन सफल हो सका। आप उस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष थे। आपने अपना स्वागत-भाषण हिन्दी मे ही पढना उचित समझा। यह पहला अवसर था कि कांग्रस के अधिवेशन मे स्वागत-भाषण हिन्दी मे पढा गया हो। आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति के पद को भी सुशोभित किया था।

इसके पश्चात् सन १६२२ ई० से जब अमृतसर मे गुरु के बाग का सत्याग्रह शुरू हुआ तो आपने वहाँ अपने सिक्ख भाइयो का पूरी तरह साथ दिया और वहाँ सत्या-ग्रह किया जिस पर आपको ६ महीने के लिए जेल यात्रा करनी पडी।

स्वामी जी हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के पक्षपाती होते हुए भी दब कर मेल करना नही चाहते थे। मोपला काड और सहारनपुर की सहार लीला से आप मुसलमानो का रुख समझ गए थे।

तोपो बन्दूको के आगे डटा रहा जो सीना तान।
धन्य धन्य वह वीर तपस्वी श्रद्धानन्द राष्ट्र अभिमान॥

स्वामी श्रद्धानन्द का आदर्श जीवन

श्री सुरेशचन्द्र वेदालंकार एम. ए. एल. टी. डी. वी. कालेज, गोरखपुर)



स्वामी जी का जीवन सच्चे वीर का जीवन था। उसमें मानवोचित गुणो का अपूर्व ढग से सम्मिश्रण हुआ था। यदि हम उनके जीवन का अध्ययन करें तो हमे पता चलेगा कि उनके जीवन का उद्देश्य दुखियो की सेवा करना था—वे फिर चाहे किसी मत और धर्म के हो और वे अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए दृढता विश्वास, साहस, आदर उत्साह को लेकर चलते थे।

उन्हे बुद्धि द्वारा (अपने विचारो द्वारा) अपने मे मिलाकर एक वृहत् समाज की और राष्ट्रिय एकता की नींव डाली। यही उनकी महत्ता और विशालता थी। उन्होने स्त्रियो को पुरुषो के समान ऊँचा स्थान दिया और शूद्रो का सम्मान किया। सवर्ण और असवर्ण के भेद को नष्ट करने का प्रयत्न किया और सब को दृष्टि से देखा।

वात्सल्यपूर्ण हृदय

मैं प्रथम कक्षा का छात्र था। बहुत पतला, दुबला और अपनी कक्षा मे आयु तथा ऊँचाई मे सबसे छोटा। वैसे तो मैं प्रविष्ट होने गुरुकुल कांगड़ी गया था पर मेरे निर्बल शरीर, कम आयु पीले चेहरे को देखकर वहाँ के अधिकारियो ने अपने प्रवेश करने से इन्कार कर दिया। उन दिनो आजकल की भाति सबका प्रवेश नही होता था। प्राचीन काल के गुरुकुलो की तरह बुद्धि, स्वास्थ्य एव चरित्र की परीक्षा के बाद गुरुकुलो मे विद्यार्थी का प्रवेश होता गया। गुरुकुल कांगड़ी से निराश होने के बाद गुरुकुल कुरुक्षत्र था। वहाँ वालो ने तीन मास के परिक्षण के लिए मुझे रखा पर मैं उन तीन महीनो में पूर्ण स्वस्थ हो गया। कुरुक्षेत्र स्वास्थ्य प्रद स्थान है। स्वामी जी महाराज जब कुछ अस्वस्थ होते थे अथवा कार्यभार से थक कर कुछ विश्राम करना चाहते थे या किसी समस्या का समाधान करना होता था तो गुरुकुल कुरुक्षेत्र मे रहा करते थे। वह भी दिन आया जब स्वामी जी महाराज गुरुकुल मे आ गए। उनके सत्कार के लिए पंक्तिबद्ध विद्यार्थी हाथ मे फूल लिए खड़े हो गए। स्वामी जी प्रसन्न मुख, प्रत्येक को प्रसन्न करते मेरे पास भी पहुँचे। उन पर फूल डालने की उत्सुकता और जल्दी का फल यह हुआ कि जब वे मेरे सामने थे मेरे हाथ से फूल जमीन पर गिर गए। मैंने उन्हें दोनो हाथो से ढरी के समान उठाया। कम फूल और अधिक मिट्टी मेरे हाथ आई। वह मेरे सामने से आगे न चले जाय इसलिए वह पुष्प और धूलि की अजलि स्वामी जी पर बरसा ही तो दी। उनका चेहरा धूल से भर गया। अधिष्ठाता जी कुछ नाराज होने लगे परन्तु वह दृश्य मुझे कभी न भूलेगा। उन्होने अपनी विशाल गोद मे मुझे उठा लिया। मैं तो उनका पुत्र था। फूल और धूल मे क्या भेद ? घृणा और तिरस्कार से, हृदय की भावना से रहित, दिए हुए फूल भी अपना महत्व नही रखते और श्रद्धा से दी गई उस धूलिका का श्रद्धानन्द न हजारो फूल की मालाओ से अधिक महत्व दिया। है न प्रेम पूर्ण वात्सल्य भावना !

दृढ़ प्रतिज्ञा

रात का समय है। सर्वत्र निस्तब्धता और शांति का साम्राज्य छाया हुआ है। एक घर मे एक स्त्री अपने पति के देर मे भी न आने से अत्यन्त व्याकुल होकर कभी अन्दर कभी बाहर आ जा रही है। अचानक कुछ देर बाद शराब के नशे में चूर, लडखडाता हुआ एक व्यक्ति आकर घर के दरवाजे पर धम्म से गिर पड़ता है। स्त्री वहाँ झट से पहुँच जाती है और हाथ का सहारा देकर उसकी सेवा सुश्रूषा मे झट से लग जाती है। उसके मुह से दुर्गन्ध आ रही है। पर, उसको कुछ परवाह नही वह अपना पति सेवा धर्म निभा रही है। यह उसके अपने पति लाला मुशीराम (बाद मे स्वामी श्रद्धानन्द) हैं। होश आने पर अपनी पत्नी की कर्तव्य परायणता, धर्म प्रियता एव सेवाभाव को देखकर मुशीराम का हृदय परिवर्तन हो जाता है। उसी क्षण प्रायश्चित स्वरूप शराब न पीने का प्रण करते हैं। शराब के सब पात्र उठाकर फेंक देते हैं। उनके जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ होता है।

अद्भुत सेवक

शायद सन् १९१६ ई की बात है। पचम श्रेणी के ब्रह्मचारी देवदत्त को टाईफाईड हो गया था। उसकी दशा ठीक नही थी। विद्यार्थियो की रात को उसकी सेवा के लिए ड्यूटी लगती थी वह विद्यार्थी रात को १२½ बजे एक कुर्सी पर बैठकर पुस्तक पढ रहे थे। विद्यार्थी को उल्टी आती प्रतीत हुई और घबराहट के मारे वह रोने लगा। वह नीचे पड़ी चिलमची को उठा कर रोगी के सामने रखने के लिए वह विद्यार्थी झुका पर वह पानी और थूक से भरी हुई थी, इसलिए व भगी को बुलाने गए और भगी को साथ लेकर जब वे आए तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होने देखा कुलपिता महात्मा मुशीराम जी रोगी ब्रह्मचारी के पास झुके खडे हैं, वह कै कर रहा था और महात्मा जी अपने हाथ की अजली मे कै करा रहे थे। रोगी बालक के कै करने पर उन्होंने बाहर आकर अपने हाथ साफ किए और फिर बीमार के सिरहाने बैठकर उसका सिर सहलाने लगे। वे सेवक विद्यार्थी की ओर देखकर बोले 'तुम कहाँ चले गए थे?' उसने कहा कि चिलमची भरी पड़ी थी इसीलिए मैं उसे साफ कराने के लिए भगी को बुलाने के लिए गया था। स्वामी जी ने कहा 'तो तुम जाकर आराम करो। इसकी सेवा के लिए किसी दूसरे को भेजो। तुम से सेवा हो चुकी। जरा सोचो कि क्या कै (उल्टी) तुम्हारी और भगी की प्रतीक्षा करती ?'

यह सेवा धर्म अत्यन्त कठिन है। इसे प्राप्त करना योगियो के लिए भी दुष्कर है।

अद्वितीय साहसी

वृक्षो की छाया मे, जगल के बीच एक गुरु और तीन शिष्य बैठे हैं। अध्ययन, अध्यापन चल रहा है। शेर और चीते, हाथी और रीछ दिन मे घूमते रहते हैं। इतने मे हिंसा का दूत सिंह वहाँ आ जाता है। वह उन पर लपकना चाहता है। महात्मा मुशीराम ने—कुलपिता ने अपने पुत्रो—गुरुकुल के ब्रह्मचारियो की रक्षा के लिये अपने जीवन की जरा भी परवाह किये बिना अपनी पगडी मे पत्थर बाँधा और शेर की ओर घुमाते हुए आए। इस अजीब रूपधारी व्यक्ति को अपनी ओर आता हुआ देख जगल का शासक शेर वहाँ से लापता हो गया। देखी है आपने ऐसी निर्भीकता और आत्म त्याग की भावना ? इसे ही कहते हैं प्रत्युत्पन्न मतित्व।

विचित्र वीरत्व

गुरुकुल भी स्वामी श्रद्धानन्द की एक विचित्र कला थी जिसे अग्रेज-सरकार राज्य को बदलने का एक नया कारखाना समझती थी, मुसलमान इसे अपने धर्म के लिए एक खतरनाक वस्तु की कल्पना करके भयभीत होते रहते थे। आर्यसमाजी और हिन्दू इसे विद्या का केन्द्र मानते थे तो चोर डाकू इसे धन का भडार ही मानते थे। एक दिन बिजनौर जिले के प्रसिद्ध डाकू सुल्ताना ने नोटिस दिया कि अमुक समय पर गुरुकुल मे डाका डालने आऊँगा। वह बहादुर डाकू था। सचेत करके लूटता था। स्वामी जी महाराज को जब यह सूचना मिली तो वे मुस्कराये और अन्य अधिकारियो को बुला कर इसकी सूचना दी। सबने कहा कि पुलिस को सूचना दी जाय। परन्तु, स्वामी जी महाराज ने सोचा जो अपनी रक्षा स्वयं नहीं कर सकता उसे दूसरा कब तक बचाएगा। दवा उसी रोगी

जोखना जानती है जिसके जीवनी शक्ति हो। रात निश्चित मिल जायगे, रिश्ते बीमारो और छोटी कक्षा के लड़को की रक्षा की व्यवस्था कर स्वय महाविद्यालय के बड़े लड़को को लेकर और सबके हाथ मे हाकी देकर सुल्ताना —उस सुल्ताना जिससे पुलिस और सरकार भय खाती थी का सामना करने को उद्यत हो गए। रात को निश्चित समय डाकू घोडे पर सवार होकर आया और बोला 'तुम कौन हो ?' स्वामी श्रद्धानन्द ने बडी निर्भीकता से उत्तर दिया, 'हम लोग सुल्ताना डाकू से लडने को और उसका सामना करने को उद्यत है। सुल्ताना ने जब यह दृश्य देखा और उसे इस शिक्षा केन्द्र की वास्तविकता का पता चला तो वह घोड़े से उतरा तथा स्वामी श्रद्धानन्द के पैरो पर गिर पड़ा और क्षमा मांगते हुए ऐसी धृष्टता फिर न करने का वचन दिया।

आत्माहुति

१९२६ ई० की २३ दिसम्बर को दिल्ली के एक मकान में एक व्यक्ति भयंकर बीमारी से उठा है। आराम करने की उसे फुरसत कहाँ ? अपने बिस्तर पर लेटा हुआ अपनी प्राइवेट सेक्रेटरी को अपने कार्य बता रहा है। पास मे एक भक्त, शिष्य एव सेवक भी है। इतने मे एक व्यक्ति वहाँ आ धमका ? वहाँ तो रुकावट किसी को नही। उस मन्दिर मे सभी आ जा सकते हैं, हिन्दू मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन वह किसी एक का थोडे ही है। मानव मात्र का है। इसने तो जामा मस्जिद मे मुसलमानो के समक्ष भाषण दिया था, सिखो के लिए वह जेल गया था, हिन्दुओ के प्रति तो उसके उपकार गिनाए नही जा सकते हैं। आने वाला मुसलमान था। उसने पानी मांगा। प्यासे को पानी पिलाना दया नही कर्तव्य है। सेवक को पानी लाने को भेजा। इतने मे उस मुसलमान युवक ने पिस्तौल निकाल कर छाती पर तीन गोलियाँ मारी और भारत की नही मानवता की इस विमल विभूति का भौतिक शरीर शांत हो गया।

क्या स्वामी श्रद्धानन्द मर गए ? वे नही मर सकते। संसार की कोई शक्ति उनको नही मार सकती।

आइए, आज हम उनके चरण-चिह्नों पर चल कर आर्यसमाज के माध्यम से विश्व की सेवा करें।

●

स्वामी श्रद्धानन्द राष्ट्रिय नेता भी थे

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान, दिल्ली)

आज की विषम परिस्थियो में जबकि पश्चिम की आंधी भारतीय संस्कृति को अपने साथ उड़ाये लिये जा रही है छात्रवर्ग अनुशासनहीनता के शिकजे मे बुरी तरह छटपटा रहा है, आचार्य वर्ग कर्त्तव्यहीनता से ग्रसित है, दिन प्रतिदिन हरिजनो पर अमानवीय प्रहार हो रहे हैं, राजनीति को अन्याय तथा स्वार्थ की कीचड मे घसीटा जा रहा है वनवासियो का निलंज्ज साधनों से धर्मपरिवर्तन किया जा रहा है और राष्ट्रियता की सरेआम होली जलाई जा रही है उस गम्भीर व्यक्तित्व का स्मरण हो उठना स्वाभाविक है जिसमे हिमालय सी दृढता, गगा सी पवित्रता, सिन्धु सा उत्साह और गगन सा व्यापक विवेक वर्तमान था।

स्वामी जी सही अर्थो मे एक कुशल और ईमानदार राजनीतिज्ञ थे जो स्वार्थभाव से नही बल्कि सेवाभाव से प्राँगण मे कूदे थे।

स्वामी जी जिस आध्यात्मिक शस्त्र को लेकर राजनीति के क्षेत्र मे कूदे थे उस शस्त्र को चलाने वालो का नितान्त अभाव आज हो रहा है।

स्वामी जी शब्दो के धनी नही थे वरन् उनकी सम्पूर्ण अन्त स्थली पवित्रता की प्रतीक थी। उनका प्रत्येक शब्द नपा-तुला होता था। जो भी वे कहते उनके दीर्घ अनुभव का फल होता था। उनकी वाणी और कर्म मे अद्भुत साम्य रहता था। राजनीति मे रहकर भी उन्होने जिस संयम और मानवता का परिचय दिया उसका उदाहरण अन्यत्र मिलना दुष्कर सा है।

पवित्रता एव सहृदयता की इस साकार मूर्ति को देखकर ही श्री गणेशशंकर विद्यार्थी तथा बिहार श्रीयुत पराडकर ने उन्हे 'ऋषि' नाम से सम्बोधित किया था और दैवीय गुणो से ओत प्रोत, पावनता की इस भव्य-साकारता मे ही ब्रिटिश प्रधानमन्त्री रेम्जेमेकडानल्ड ने ईसा के दर्शन किये थे।

अपनी ओजस्विनी वाणी में गम्भीर गर्जना करते हुए उस निस्वार्थ कर्मयोगी ने एक ही सन्देश युवा पीढ़ी को दिया था, और वह था यह—

"दु ख सुख सब इसी स्थान पर सहन करने चाहिये। इस जन्मभूमि के लिये कष्ट सहना, इसकी सेवा मे सारा पुरुषार्थ लगाना और इसी पर सर्वस्व न्योछावर करना यदि एक-एक भारतवासी अपना धर्म समझ ले तो परमात्मा की भी उन पर असीम कृपा हो जाय।'

अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

(प० निरञ्जनदेव जी सभा वेदप्रचाराधिष्ठाता)

फाल्गुन बदी १३ सम्वत् १९१३ विक्रमी तदानुसार फरवरी १८५६ ई० मे आपका जन्म तलवन (जिला जालन्धर) मे हुआ।

१४ श्रावण स० १९३६ वि० को ऋषि दयानन्द बरेली पधारे। आपके भाषणो की धूम मच गई। जन साधारण के अतिरिक्त बडे बडे आफीसर जिनमे अग्रेज भी शामिल थे, बडे चाव से आपके भाषण सुनते और आपकी योग्यता विद्या निर्भीकता और साधना से अति प्रभावित होते।

युवक मुशीराम ने ईश्वर नही है इस विषय पर अपने तर्क पेश किये। ऋषि के युक्ति युक्त समाधान से निरुत्तर होकर युवक ने कहा कि महाराज। आपके सामने मुझे कुछ नही सूझता परन्तु ईश्वर है ऐसा मेरा दिल नही मानता। ऋषि ने कहा कि जब प्रभु कृपा होगी तब ऐसा होगा आपने नावल नाटक पढने छोडकर ऋषि के ग्रथो का अध्ययन आरम्भ किया। १८८४ ई० मे आप लाहौर आर्य समाज के सदस्य बन गये। वकील तो थे ही आर्य समाज मन्तव्यो पर आपके प्रभावशाली भाषण होने लगे। प्रसुप्त शक्तिया जागी। आप पत्रकार और नेता के रूप मे जनता के समक्ष आ गये। १८९२ से १८९६ तक आप आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान रहे। सभा मे वेद प्रचारनिधि की स्थापना की। महात्मा मुशीराम लेखक थे, उपदेशक थे सचालक एव प्रबधक थे। शास्त्रवेता तथा नेता थे। निर्भीक और दानी थे। १९०२ ई० मे अपना पुस्तकालय दान कर दिया। १९०७ मे प्रेस और १९११ ई० मे कोठी। गुरुकुल कागडी की ख्याति दुनिया भर मे फैली। अग्रजो ने तो गुरुकुल को विद्रोह का अड्डा समझा। १९०७ मे ला० लाजपत राय का साथ देने और १९०९ मे पटियाला केस के कारण महात्मा मुशीराम बहुत प्रसिद्ध हो चुके थे। भारत मत्री रैम्जे मैक्डानल्ड १९०४ मे गुरुकुल मे आप के दर्शनो के लिये पधारे। ८ अप्रेल १९१५ को गाधी जी और २१ अक्तूबर १९१६ को भारत वायसराय लार्ड चैम्सफोर्ड ने भी गुरुकुल कागडी पधार कर आप के दर्शन किये।

सार्वदेशिक सभा की स्थापना भी आप के यत्नों का परिणाम है। पद लोलुपता आपको छू तक न गई थी। १२ अप्रैल १९१७ को सन्यास ले लिया और श्रद्धानन्द सन्यासी नाम पाया। १९१९ मे रोलट रेकट पास होने के कारण भारत मे बडी बेचैनी थी तब आपने राजनीति मे प्रवेश किया। ७ मार्च १९१९ को आपने राजनीति पर पहला भाषण दिया। स्वामी जी महाराज की बदौलत ही अमृतसर मे काग्रेस का अधिवेशन हो सका। सिक्खो की ओर से चलाये गए मोर्चों मे भाग लिया। अगरेज सरकार ने आपको कैद की सजा दी। २६ दिसम्बर तक आप मियावाली जेलमे रहे। उस वर्ष अछूतोद्धार के प्रश्न पर आप ने काग्रेस वर्किंग कमेटी से त्याग पत्र दे दिया। मालाबार में मोपले मुसलमानो ने हिन्दुओ पर बडे अत्याचार किये। यह वीर सेनानी हर मोर्चे पर पहले पहुचा। १९२५ में मथुरा जन्म शताब्दि उत्सव आप की देख-रेख में बडी शान से सम्पन्न हुआ। १९२४-२५ में आप ने अछूतोद्धार के लिये मद्रास का दौरा किया। आपने अनेक पुस्तकें लिखी, कई समाचार पत्र निकाले, शास्त्रार्थ किये। कन्या पाठशालाए खोली। जात-पात तोडकर अपने बच्चो के विवाह किये। आर्य-समाज के सगठन को दृढ बनाया। ईसाईयो और मुसलमानो की तबलीग के मुकाबिले में शुद्धि का सुदर्शन चक्र चलाया। निर्जीव जाति मे वीरता का सचार किया।

उन्हीं दिनो मौलवी ताजुद्दीन की कन्या असगरी ने प० लेखराम जी की पुस्तकें पढ़कर इसलाम त्यागने का निश्चय किया। स्वामी जी ने उसे वैदिक धर्म की दीक्षा देकर उसका नाम शाति देवी रक्खा। इस पर मुसलमान भडक उठे। स्वामी जी पर अभियोग चलाया गया, जो ४ दिसम्बर १९२६ को खारिज हो गया। इस पर विरोधी और भी निराश हुये और स्वामी जी के कत्ल का कार्य-क्रम बना लिया।

२३ दिसम्बर १९२६ को इस उद्धारक, विचारक प्रचारक तथा लेखक, वीर सन्यासी नेता का बलिदान हुआ। सारे भारत में आपकी मृत्यु पर शोक मनाया गया महात्मा गाधी ने मृत्यु का समाचार सुना सहसा उनके मुँह से निकला—"शानदार जीवन का शानदार अन्त"

अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्दजी

(श्री अनूपसिंह, दयानन्द भवन, मुजफ्फरनगर)

ऋषि दयानन्द के उपदेश से सब कुटेव और दुर्व्यसनो से घिरे हुए मु शीराम ने अपना रास्ता बदला और आत्म-विश्लेषण कर अपने चरित्र को इतना महान और उज्ज्वल बनाया कि 'सर रैमजे मैक्डानल्ड' (जो बाद मे इग्लैण्ड का प्रधान मत्री बना) उनसे प्रभावित होकर यह लिखे बगैर न रहा—"वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि भगवान् ईसा की मूर्ति बनाने के लिए कोई जीवित मॉडल चाहे तो मैं इस भव्य मूर्ति की ओर इशारा करूंगा। यदि कोई मध्यकालीन चित्रकार सैंटपीटर के चित्र के लिए नमूना मागेगा तो मैं इस जीवितमूर्ति के दर्शन करने की प्रेरणा दूंगा।"

ईसाई मिशन स्कूल से घर आती हुई अपनी पुत्री वेदकुमारी को—"इक बार ईसा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल ? ईसा मेरा राम रमैया, ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया।"

इस गीत को गाती हुई सुनकर मुन्शीराम जी स्तब्ध रह गए। उन्होने विचार किया कि कितनी छोटी आयु मे हिन्दू लडकियो को ईसाई बनाने का कुचक्र इन तथाकथित मिशन स्कूलो द्वारा चलाया जा रहा है। अत उन्होने कन्या विद्यालय खोलने का निश्चय किया ताकि हिन्दू लडकियों को ईसाईयत के प्रभाव से बचाया जा सके। उन्होंने ला० देवराज के सहयोग से कन्या महा विद्यालय जालंधर खोला।

समाज सुधारक के रूप में मु शीराम जी ने हिन्दू समाज मे प्रचलित जाति-प्रथा को ही रुकावट सोचा। इसके विरुद्ध उन्होने केवल मौखिक रूप से ही कार्य नही किया अपितु अपनी पुत्री का अन्तर्जातीय विवाह किया। अपने दोनो सुपुत्रो का भी विवाह उन्होने वर्तमान जाति-पाति तोड़ कर ही किया। अस्पृश्यता की भावना को मिटाने के लिए उन्होने "दलितोद्धार सभा" खोली।

पजाब मे पजाबी और उर्दू को छोडकर हिन्दी के प्रति श्रद्धा जागृत करने वाले व्यक्ति स्वामी श्रद्धानन्द जी ही थे।

पजाब मे "मार्शल ला" लागू करने से अग्रेजो का अन्याय और अत्याचार ससार के सामने खुले रूप मे आ गया। इस "ला' से उत्पन्न जनता की व्यथा को शमन करने के लिए स्वामी जी पजाब पहुँचे। उन्होने काग्रस को अपना अधिवेशन अमृतसर मे करने के लिए निमत्रित किया। स्वागताध्यक्ष के रूप मे उन्होने अपना भाषण हिन्दी मे दिया। सन् १६२२ मे "गुरु का बाग"आन्दोलन शुरू हुआ। स्वामी जी ने इसमे सक्रिय भाग लिया और और जेल गए। ●

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी

श्री भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) दिल्ली)

युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के रचाए हुए आर्यसमाज रूपी महान् यज्ञ मे जिन धर्मवीरो ने अपने बलिदानो द्वारा जीवनाहुतियाँ देकर धर्म-अग्नि को प्रचण्ड किया उनमे अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी का स्थान है।

हमारे स्वामी जी को ऋग्वेद के दसवें मडल के सूक्त १५१ के ५ मन्त्र बहुत प्रिय थे। वह सूक्त "श्रद्धा" सूक्त के नाम से प्रसिद्ध हैं। उसी के आधार पर उन्होने सयासी हो कर अपना नाम 'श्रद्धानन्द' रक्खा, और "श्रद्धा" पत्र का नामकरण भी उन की श्रद्धासूक्त पर श्रद्धा का ही परिचायक था। आर्यसमाज के इस सेनापति ने अपने जीवन काल मे "श्रद्धा" का ही आश्रय लिया। जिस बात को वह सत्य मान लेते थे, उसे अनेक विघ्न-बाधाओ के उपस्थित होने पर भी क्रियात्मक रूप देने मे अनुभव नही करते थे।

वह कर्मवीर महात्मा धन्य थे। जिन्होने वीरता पूर्वक विरोधियो को ठीक कर कल्याण मार्ग के पथ से एक पग भी पीछे न हटाया। जो भी कार्य करते थे अपने अन्तरात्मा के निश्चयानुसार करते थे। वह तेजस्वी नेता, उच्चकोटि के वक्ता, गम्भीर, महान् लेखक, अथक कार्यकर्ता, सुयोग्य प्रबन्धक और परमोत्साही वीर धीर महात्मा थे।

स्वामी जी मे तीन बडे गुण थे। एक यह कि वह समय की गति को खूब समझते थे। जब किसी कार्यक्षेत्र मे कूदने का समय आता था, ठीक समय पर कूद पडते थे। दूसरा बडा गुण था कि अपने भक्तो का पूरा-पूरा साथ देते थे, चाहे ऐसा करने मे उन्हे कितना ही कष्ट क्यो न उठाना पडे। तीसरा बडा गुण यह था कि उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुक्तहस्त से व्यय कर डालते थे, कृपण नही थे। ऐसे आश्रम मर्यादा के पालन मे वानप्रस्थाश्रम और सयासाश्रम मे प्रवेश किया।

व्यापक शुद्धि आन्दोलन मे सब से प्रथम कूद कर मार्गदर्शक बनने वाले स्वर्गीय स्वामी जी ही थे। उनकी धार्मिक दृढ़ता, आपका, अटल ईश्वरविश्वास आपकी ऋषि दयानन्द के प्रति अचल भक्ति, आपका धर्म, जाति और देश की सेवा का भाव आदि अनेक विशेषताओं से पूर्ण क्रियात्मक जीवन आर्यजाति के लिये एक शिक्षाप्रद आर्यजीवन है। ●

ग्राहकों की सेवा में निवेदन

आर्योदय के सभी ग्राहक महानुभावो की सेवा मे "आर्यमर्यादा" हम नियमपूर्वक भेज रहे है। जिन ग्राहको ने अपना शुल्क ३० अप्रैल १९६८ तक आर्योदय के कार्यालय १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली के पते पर भेज दिया था उनका शुल्क ग्राहक पजिका मे जमा है परन्तु मई से जुलाई १९६८ की अवधि मे जिन ग्राहको ने शुल्क श्री भारतेन्द्रनाथ के निवास स्थान १५९७ हरध्यानसिंह रोड नई दिल्ली के पते पर भेजा है उनका शुल्क यहाँ कार्यालय मे जमा नही हो सका। अत उसका उत्तरदायित्व आर्यमर्यादा" के कार्यालय पर नही है। जिनका शुल्क समाप्त हो चुका है, उनकी सेवा मे पत्र द्वारा सूचित किया जा रहा है। अत वे अपना शुल्क पत्र प्राप्त करते ही मनीआर्डर द्वारा भेज देने की कृपा करे। —व्यवस्थापक

समस्त आर्य समाजों को सूचना

सभा से सम्बन्धित सब आर्यसमाजो को प्रार्थना की गई थी कि वह सब अपने-अपने समाज के अधिकारियो अन्तरग सभा तथा पजाब सभा के लिये प्रतिनिधियो का निर्वाचन करने की कृपा करे। प्रतिनिधि फार्म भी भेज गये थे। क्योकि सभा के अधिकारियो आदि के निर्वाचन की योजना बन रही है जिसमे आपके आर्यसमाज के प्रतिनिधियो का भी सम्मिलित होना आवश्यक है। अत प्रार्थना है कि यदि आपके आर्यसमाज का निर्वाचन हो चुका हो तो आप प्रतिनिधि फार्म भरकर तुरन्त १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली के पते पर वेदप्रचार और दशाश सहित भेज दे। यदि निर्वाचन अभी तक न किया हो तो उसका तुरन्त प्रबन्ध करे और प्रतिनिधि फार्म अधिक से अधिक २०-१-६९ तक उपकार्यालय १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली भेज दे।

—रघुवीरसिंहशास्त्री ससत्सदस्य मन्त्री आर्यप्रतिनिधि सभा,

आर्य मर्यादा

छल-विलास की आँधी रोके
फिर से जागे जीवन सादा।
आर्य दाय युत नव उपाय हो,
रोक न पाये पथ पर बाधा।
पारम्परिक कलह मिट जाये,
जीवन-यौवन जाये साधा।
दयानन्द की लिये धरोहर,
शाश्वत मजे 'आर्यमर्यादा'।

—भैरवदत्त शुक्ल

आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के साहित्य विभाग की सूची

(१) सत्यार्थप्रकाश नया सस्करण ३-०० (२) महान् दयानन्द ०-७५ (३) दयानन्द चरित्र १-५० (४) जीवन ज्योति—प० चमूपति जी ३-०० (५) सोम सरोवर-प० चमूपति जी ३-०० (६) वैदिक सत्सगपद्धति हिन्दी अंग्रेजी २-०० (७) आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय ०-५० (८) मुक्ति के साधन १-०० (९) पजाब का आर्यसमाज २-०० (१०) प० लेखराम जीवन—स्वा० श्रद्धानन्द जी अंग्रेजी साहित्य १-५० (११) Ten principles of Aryasamaj १-५० (१२) Glimpses of DayaNand १-०० (१३) Subject Matter of the Vedas १-०० (१४) The Vedas ०-५० (१५) The philosophy of the Vedas ०-५०

बांटने के लिए ट्रैक्ट

(१६) वैदिकधर्म की विशेषताए १२—सैकडा १०-०० (१७) वैदिकसध्या १०—सैकडा ८-०० (१८) ईसाई मत की पोल १०—सैकडा ८०० (१९) ईसाई पादरियों का आर्यसमाज की चुनौति, ले० स्वा० श्रद्धानन्द जी १०—८-०० (२०) ईसाईयो की प्रचार प्रणाली १०—८-०० (२१) भोदू जाट और ईसाई पादरी २०—१५-००

प्राप्ति स्थान—

व्यवस्थापक साहित्य विभाग

आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब

१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

मर्यादा: कवयस्ततक्षु:

वेदा:

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र



वर्ष १ } ११ फाल्गुन वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार २ मार्च १६६६ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रुपये
अंक १४ } सृष्टि स०-१६६०८५३०६८ { ,, ,, विदेश में—२०) रुपये
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथेन्द्रशब्देन त्रयोऽर्था उपदिश्यन्ते ॥

अब अगले [इस] मन्त्र मे इन्द्र शब्द से तीन अर्थों का उपदेश किया है—

इन्द्र प्रातर्हवामहे इन्द्र प्रयत्यध्वरे । इन्द्र सोमस्यपीतये ॥ऋ० १०।१६।३

पदार्थ - (इन्द्रम्) परमेश्वरम् (प्रात) प्रतिदिनम् (हवामहे) आह्वयेम (इन्द्रम्) परमैश्वर्यसाधक भौतिकमग्निम् (प्रयति) प्रति प्रकृष्ट ज्ञान ददातीति प्रयत् तस्मिन् (अध्वरे) उपासना क्रिया साध्ये यज्ञ (इन्द्रम्) बाह्याभ्यन्तरस्थ वायुम् (सोमस्य) (सूयते सर्वेभ्य पदार्थेभ्यो रसस्तस्य (पीतये) पानाय ॥

अन्वय —वय प्रात प्रतिदिनमिन्द्र परमैश्वर्यप्रदातारमीश्वर प्रयत्यध्वरे हवामहे । वय प्रयत्यध्वरे प्रात प्रतिदिनमिन्द्र विद्युदाख्यमग्नि हवामहे । वय प्रयत्यध्वरे सोमस्य पीतये प्रात प्रतिदिनमिन्द्र वायु हवामहे ॥

भावार्थ —मनुष्यै परमेश्वर प्रतिदिनमुपासनीयस्तदाज्ञाया वर्त्तितव्य च । प्रतियज्ञ विद्युदाख्योऽग्निर्योजनीय प्राण विद्यया पदार्थभोगश्च कार्य इति ॥

भाषार्थ—हम लोग (प्रात) नित्यप्रति (इन्द्रम्) परम ऐश्वर्य देने वाले ईश्वर का (प्रयत्यध्वरे) बुद्धि प्रद उपासना यज्ञ मे (हवामहे) आह्वान करें। हम लोग (प्रयति) उत्तम ज्ञान देन वाले (अध्वरे) क्रिया से सिद्ध होने योग्य यज्ञ मे (प्रात) प्रतिदिन (इन्द्रम्) उत्तम ऐश्वय साधक विद्युत् अग्नि को (हवामहे) क्रियाओ मे उपदेश कह सुन के सयुक्त करे, तथा हम लोग (सोमस्य) सब पदार्थों के सार रस को (पीतये) पीन के लिये (प्रात) प्रतिदिन यज्ञ म (इन्द्रम) वाहर ले वा शरीर के भीतर ले प्राण को (हवामहे) विचार म लाव उसके मिद्ध करन का विचार करें ॥

भाषा भावार्थ—मनुष्यो को परमेश्वर प्रतिदिन उपासना करने योग्य है और उसकी आज्ञा के अनुकूल वर्तना चाहिये, बिजुली तथा प्राण रूप जो वायु है उसकी विद्या से पदार्थों का भोग करना चाहिये ॥

- (ऋषि दयानन्द-भाष्य)

ग्राहक महानुभावों को आवश्यक सूचना

आर्य्यमर्यादा का ६ मार्च १६६६ का १५ वां अङ्क होली की प्रेस की छुट्टियो के कारण बन्द रहेगा— सब ग्राहक सज्जन तथा एजेण्ट इस सूचना को अंकित करलें। इससे अगला १६वा अङ्क १६-३-६६ को आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर प्रकाशित होगा।

—केदारसिंह व्यवस्थापक

वेद चर्चा

वैदिक खाद्य-सामग्री विवेचन

[डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम० ए०, साहित्यालङ्कार, विशारद, कानपुर]

वेदो मे कृषि का विस्तृत रूप से वर्णन है। ऋ० ४।५७, सूक्त तथा १०।१०१। सूक्त मे स्पष्ट चर्चा है। वेदो मे किसी प्रकार के मास भक्षण का वर्णन नही है। कुछ पाश्चात्य विद्वान् व उनके चरण चिह्नो पर चलने वाले कतिपय उच्छिष्ट भोजी भारतीय विद्वान् भी वेदो मे मास व अण्डा भक्षण का प्रमाण प्रस्तुत करते है। पाश्चात्य देशो में कुक्कुटाण्ड को शाकाहारी माना जाता है परन्तु यह सिद्धान्त सर्वथा ही भ्रमपूर्ण है। वह भी तो गर्भ-हत्या ही है? जब हम मनुष्यो की गर्भ हत्या करने के लिए उद्यत नहीं हैं तो हमे पक्षियो की गर्भ हत्या करने का क्या अधिकार है?... अण्डा भी मास की भाति ही तामसिक भाजन है। अण्डे मे जो पोष्टिक तत्व बताए जाते हैं वे सब तत्व हमे दूध दही मक्खन, मलाई, अनाज, सब्जी, फल और मेवे खाने से अच्छी तरह मिल सकते हैं। इसलिए अण्डे खाने की आवश्यकता नही है।[1]

'य आम मासमदन्ति पौरुषेय च ये क्रवि ।
गर्भान् खादन्ति केशवास्तानिता नाशयामसि ।'

[अथर्ववेद काण्ड ८ सूक्त ६ मन्त्र २३]

इस मन्त्र मे कच्चे मास नवजात पशुपक्षियो के गर्भों, अण्डो आदि का भक्षण करने वालो को नाश करने की चर्चा है।

इस मन्त्र के भिन्न २ भाष्यकारो ने भिन्न २ भाष्य किए हैं, परन्तु प० विश्वनाथ विद्यालङ्कार[2] प० यश पाल सिद्धान्तालङ्कार, प० जे० पी० चौधरी जी काव्यतीर्थ[3] प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड[4], मुनि देवराज जी विद्यावाचस्पति[5] प० आत्माराम अमृतसरी[6] डा० सत्यप्रकाश डी० एस० सी०,[7] साहित्याचार्य प० वैद्यनाथ शास्त्री एम० ए० ने स्पष्ट इस मन्त्र से अण्डा भक्षण का निषेध अर्थ किया है।

यजुर्वेद अ० १८ मन्त्र १२ मे व्रीहि, यव, माष (उडद), तिल, मूग, खल्व, प्रियगु अणु श्यामाक नीवार गोधूम (गेहूं), मसूर आदि नाम आए हैं। अथर्व० १२।१।२२ मे मनुष्यो के जीवन का साधन अन्न को उत्पन्न करने वाली पृथ्वी की प्रशसा की गई है।

अन्न को नापने वाले पात्र का नाम ऋ० २।१४।११ में 'अर्दर' आया है।

(शेष पृष्ठ २ पर)

१ प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति कृत मेरा धर्म प्रथम सस्करण, पृष्ठ २४४ २ वैदिक पशुयज्ञ मीमासा प्रथम सस्करण पृष्ठ १२६ ३ शक्ति-रहस्य द्वितीय सस्करण, पृष्ठ ११६-१२० ४ वेदो का यथार्थ स्वरूप प्रथम सस्करण, पृष्ठ ४११ ५ वैदिक भारत मे यज्ञ और उसका आध्यात्मिक स्वरूप प्रथम संस्करण पृष्ठ १६६. ६ दिव्य-विज्ञान प्रथम सस्करण, पृष्ठ १२७ ७ Humanitarian dict" PP 187 ८ वैदिक धर्म और आर्य मानव प्रथम संस्करण, पृष्ठ १६४

वैदिक सममाव

[लेखक—श्री पण्डित जयकुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली]

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते, संभ्रातरो वावृधु सौभगाय।
युवा पिता स्वया रुद्र एषां, सुदुघा पृश्नि. सुदिना मरुद्भ्य ॥
ऋ० ५।६०।५

शब्दार्थ —(अज्येष्ठास) जिनमे कोई बडा नही है, और (अकनिष्ठास) जिनमे कोई छोटा भी नही है, ऐसे (एते) ये सब (भ्रातर) भाई (सौभगाय) सौभाग्य के लिये (सवावृधु) मिलजुल कर यत्न करे। (एषाम्) इनका (पिता) पिता पालक, नेता (युवा) सदा ही युवक बना रहने वाला और (स्वया) सुख को बढाने, सुरक्षित रखने वाला तथा (रुद्र) दुष्टो को रुलाने वाला परमेश्वर है। और इनकी माता (पृश्नि) धरती-माता है। यह (मरुद्भ्य) मरुतो=न रोने वालो=देवो के लिये (सुदिना) अच्छे दिन लाने वाली है।

भावार्थ —ससार के सब मनुष्य आपस मे भाई-भाई हैं। न कोई बडा है, न छोटा। तीनो कालो मे एक रस रहने वाला, आनन्द-स्वरूप और सुख-दाता, सबका नियामक ईश्वर सब का पिता है। और यह विस्तृत वसुन्धरा, जो कि नाना प्रकार के अन्न-आदि पदार्थों और बहुमूल्य रत्नो से परिपूर्ण है सब की माता है। जो लोग रोने-पीटने मे अपना समय नष्ट नही करते और समय-समय पर दूसरो की सहायता भी करते हैं उनके लिये यह भूमि उत्तम दिनो के लाने वाली होती है।

प्रवचन

उत्तम आचार-विचार के आधार पर मनुष्य को जो बडप्पन प्राप्त होता है, वेदो मे उसका उल्लेख बारम्बार किया गया है। इसी प्रकार निकृष्टआचार-विचार के आधार पर मनुष्य को जो लघुता प्राप्त होती है, उसका प्रतिपादन भी वेदो में बहुत अधिक है। ऐसा होने पर भी वेद उन भेद-प्रभेद पूर्ण दलो, वर्गों, श्रेणियो, जातियो, नस्लो, पर्टियो, सम्प्रदायो और परस्पर विरोधी स्वार्थ रखने वाले टोले-टोलियो आदि की पुष्टि नही करता, जो कि अपने वर्तमान, भद्दे और हानिकारक रूप में हमारे सामने विद्यमान हैं। और, जोकि राग, द्वेष, ऊँच, नीच, छूत, अछूत, आदि के शतश दूषित विचारो से प्रभावित होकर, ससार में घोर अशान्ति मचा रहे हैं।

वेद गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार चतुर्विध श्रम-विभाग के सिद्धान्त को ससार के सामने प्रस्तुत और प्रतिष्ठित करता है। विविध प्रकार के कला-शिल्पियो और ललित कला-विशारदो का उल्लेख भी वेदो मे है। आयु और अनुभव के आधार पर चार प्रकार के ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास नामक आश्रमों की प्रतिष्ठा भी वेद करता है। वेद सज्जनो के आदर, दुर्जनो के निरादर और समाज-कण्टको को शिक्षा और दण्ड-दान आदि द्वारा सुधारने की बात भी कहता है। फिर भी जन्मगत जात-पात के आधार पर, ऊँच, नीच, छूत, अछूत, उत्तम और अधम के बखेडे फैलाकर मानवता का अपमान तथा मानव-जाति के टुकडे-टुकडे करना वेद को मान्य नहीं है। कोई मनुष्य केवल इसलिये ब्राह्मण समझा जावे कि वह किसी तथाकथित ब्राह्मण-ब्राह्मणी का बेटा है, अथवा कोई केवल इसलिये क्षत्रिय-वीर माना जाये कि वह किसी तथाकथित क्षत्रिय-क्षत्राणी का पुत्र है, या कोई इसलिये ही वैश्य और धन पति बन जाये कि वह किसी तथाकथित वैश्य वा धनपती का पुत्र है और उसका भ्रष्टाचारी बाप बहुत-सी धन-सम्पत्ति चोर-बाजारी द्वारा एकत्रित करके मरा है, ये विचार अवैदिक हैं। वेद ऐसे विचारो का समर्थक नही, विरोधी है।

वेद अखिल मानव-जाति के पारस्परिक भाई-चारे का प्रतिपादन अत्यन्त स्पष्ट और प्रबल शब्दो मे करता है। मनुष्य-मात्र को ही जीवित रहने और सभी प्रकार के सुख तथा सभी प्रकार की सुख-सुविधायें प्राप्त करने का समान रूप से अधिकार है। किसी की उन्नति मे बाधा डालने और किसी के स्वत्वो का अपहरण करने का अधिकार किसी को नही। वेद ने सार्वभौम भाई-चारे के इस उच्च सिद्धान्त का अध्यात्मवाद, यज्ञवाद, त्यागवाद और समतावाद के व्यावहारिक एव तर्क-सगत रूप मे बहुत हो उत्तमता से प्रकाशित किया है।

आज का प्रभुता-सम्पन्न और स्थिति-पालक पूजीवादी समाज वेद की इस भाई-चारे वाली शिक्षा से बहुत बुरी तरह भयभीत हो रहा है। परन्तु अखिल विश्व और अखिल मानवता की सुख-शान्ति के लिये, यह परमावश्यक है कि ससार के सभी विद्वान् और बुद्धिमान् स्त्री-पुरुष मिलकर ससार में भ्रातृ-भाव और समतावाद की प्रतिष्ठा करें। यदि प्रभुता सम्पन्न तथा स्थिति पालक वर्ग इस पुण्य-कार्य में बाधक बनें तो उनके विरोध को दृढतापूर्वक कुचल दिया जाये। जो लोग भेद-भाव, राग-द्वेष और पारस्परिक वैर के बीज बोते हैं और शोषणवादी कार्य-प्रणालियों तथा विचार-प्रणालियों, समाज-व्यवस्थाओ, राज्य विधानो एव आयोजनों का समर्थन करते वे सब तो जान-बूझकर अथवा अनजान मैं ही मानवता के प्रति शत्रुता का व्यवहार करते हैं। ससार के प्रबुद्ध लोग उनकी कुटिलता को सहन नहीं करेंगे।

वेद एक सुखी और सम्मिलित कुटुम्ब के रूप मे अखिल मानव-जाति की कल्पना करना है। जिसमे सर्वोत्पादक आनन्द स्वरूप और सब का नियामक जगदीश्वर पिता स्थानीय है। यह विशाल पृथिवी माता है। सब भाइयों और बहिनो का हित इसी मे है कि वे सब मिलकर रहें और अपनी-अपनी मर्यादा एव शक्ति के अनुसार अपने-अपने कर्त्तव्यो का पालन करें। जो पुरुषार्थी मनुष्य हैं वे ही सासारिक भोगो और आत्मिक ऐश्वर्यों के सच्चे अधिकारी हैं। ●

(पृष्ठ १ का शेष)

ऋ० १०।६८।३ मे अन्न को खत्तियो मे रखने की चर्चा है जिसे 'स्थिति' कहा है। यजुर्वेद ३।६० मे खरबूजे का नाम 'उर्वारुक आया है। अथर्ववेद १।२३।१ मे हल्दी को रजनी कहा है। अथर्व० २०।१७।१० मे दूध पीने, जौ आदि के सक्षण की चर्चा है। यजु० २३।८ मे लाजाओ, सत्तू, जौ, गोदुग्ध को भक्षण करने का आदेश है। अथर्व० ६।१४०।२ मे दातो को धान, जो, उडद तिल खान को कहा गया है। ऋ० ६।३०।३ से ज्ञात होता है कि बैठकर भोजन किया जाता था। ऋ० १।१८७।१ में भोजन की प्रार्थना है।

आजकल पाश्चात्य देशो मे भोजन के साथ जल न पीकर मदिरा पीने को रीति है। मदिरापान वेदो मे वर्जित है। राजस्थान के राजाओ मे भी सुरापान की बीमारी थी। ऋ० मण्डल ७ सूक्त ८६ मन्त्र ६ में शराब को आलस्य, अचेतन क्रोध भय और जडता उत्पन्न करने वाला तथा द्यूत क्रीडा का प्रेरणादायक कहा है। अथर्व वेद काण्ड ६ सूक्त ७० मन्त्र १ मे मास, मद्य और अक्ष (जुआ) को एक कोटि में रखकर निन्दनीय व वर्जनीय कहा है। पाश्चात्य वेद भाष्यकार श्री ग्रिफिथ ने भी ऋ० १०।३४।१३ का अग्रेजी अनुवाद करते समय अथर्व० ६।७०।१ उद्धरणदेते हुए शराब को बुराकहा है।

ऋग्वेद १०।४३।९ मे अपूप को घृतवत् कहा है। वे व्रीहि या जव के आटे से बनाए जाते थे। शक्कर या गुड मिलाकर घृत मे पकाए जाते थे। सभवत पुआ, गुलगुला कह सकते हैं।

इस प्रकार आर्यों श्रेष्ठ लोगो के भोजन की चर्चा है। आर्यों के भोजन में मांस, अण्डा, मदिरा प्रयोग का सर्वथा निषेध है। इनके भक्षण करने वाले को राक्षस, पिशाच आदि कहा गया है। ●

आर्यमर्यादा के स्वामित्व आदि का विवरण

फार्म ४ (नियम ८)

१—प्रकाशन स्थान	—	१५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१
२—प्रकाशन अवधिक्रम	—	प्रतिसप्ताह
३—मुद्रक का नाम	—	जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्वलोक सभा सदस्य
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता	—	सम्राट् प्रेस, ७११७-१८ पहाडी धीरज, देहली-६
४—प्रकाशक का नाम	—	जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता	—	सम्राट् प्रेस, ७११७-१८ पहाडी धीरज, देहली-६
५—सम्पादक का नाम	—	रघुवीरसिह शास्त्री लोकसभा सदस्य
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता		१० महादेव रोड, नई दिल्ली-१
६—अखबार के मालिक का नाम और पूरा पता	—	आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब गुरुदत्त भवन, जालन्धर (प्रधान—प्रो० रामसिह एम० ए०)

मैं जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री यह घोषित करता हूँ कि ऊपर दिया गया विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है।

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री
प्रकाशक

सम्पादकीय

राजनैतिक विवेक की आवश्यकता

पजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा बगाल इन चार राज्यो में हुए मध्यावधि चुनावो के परिणामो से यह एक बार पुन स्पष्ट हो गया है कि देश में राजनैतिक अस्थिरता के कारण देश का प्रशासनिक ढाचा भी व्यवस्थित नही रह पाता। आर्थिक स्थिति और निर्माण एव विकास की प्रगतियो पर भी इसका कुप्रभाव पडता है। राजनैतिक दलो की बढती हुई सख्या के कारण देश के जनमानस पर इतना भ्रम व्याप्त हो गया कि वह निर्वाचनो के समय किसी एक दिशा को नहीं पकड पाता। कुछ लोगो का विचार है कि बार-बार मध्यावधि चुनाव होने से स्वय एक ही स्थिरता पैदा हो जायगी। परन्तु यदि यह किसी प्रकार सम्भव भी हो तो भी बहुत महगा सौदा रहेगा। निर्वाचनो मे सरकार तथा जनता के धन का जो अपव्यय होता है और खीचातानी एव उत्तेजना का जो वातावरण बनता है, उसको देखते हुए कोई भी सहृदय व्यक्ति निर्वाचन ज्वर को बार-बार निमन्त्रित करना वाञ्छनीय नहीं मान सकता।

ससार के मानचित्र पर यह हमारे देश का ही एकमात्र उदाहरण है कि जहा एक राजनैतिक दल के हाथो मे इतने लम्बे समय तक निरन्तर राज्य-सत्ता रही है। इन २२ वर्षों में यद्यपि काग्रेस दल की सरकारो का कार्य बहुत असन्तोषजनक रहा और देश मे सार्वजनिक एव जनतन्त्रीय जीवन मे सत्ता लोलुप्ता से प्रेरित होकर काग्रेस ने बहुत गलत ढग की परम्परायें डाली, फिर भी वह सत्तारूढ बनी रही तो यह हमारे देश की जनता के पिछडेपन का ही प्रमाण है। कोई भी जागरूक जनता उन नीतियो एव कार्यों को सहन नहीं कर सकती थी जो कांग्रेस दल द्वारा किये जाते रहे। सबसे बुरी बात यह है कि दल को राष्ट्र से ऊपर माना जाने लगा, उसे अधिक महत्ता मिल गई, निष्ठा के सन्दर्भ मे भी राष्ट्र को दल से पीछे छोड दिया गया। लगता है कि यह बुराई काग्रेस की देखादेखी दूसरे राजनैतिक दलो मे भी घुस रही है। पहले राष्ट्रियहितो की उपेक्षा करके दलीय हितो को प्रमुखता दी गई और फिर दलो मे भी गुट और गुटो मे भी व्यक्तिगत सकीर्णता का बोलबाला हो गया। नाम देश और जनता का लिया जाता है और प्रत्येक प्रश्न या समस्या पर इसी दृष्टि से विचार किया जाता है कि इससे हमारे दल गुट या नेतृत्व पर क्या प्रभाव पडने वाला है।

यदि केवल विशुद्ध राष्ट्रहित की दृष्टि से सोचें तो आज की परिस्थितियो का यह अनुरोध है कि सब दलो को राष्ट्र के निर्माण एव विकास के कार्य-क्रम मे सहकारिता की भावना का अवलम्बन करना चाहिये। इन चारो राज्यो में कहीं भी किसी एक दल को ऐसा बहुमत नही मिल पाया कि वह केवल अपने बलबूते पर निश्चिन्तता से शासन चला सके। यदि कही किसी ने जोड-तोड करके काम चलाऊ सरकार बनाने का यत्न भी किया तो गाडी सदा दल-दल में ही धंसी रहेगी और उसके नेताओ के हाथ हर समय पहियो पर ही लगे रहेंगे। राष्ट्र रथ के पहियो पर नही प्रत्युत अपने छकडे के पहियों पर। देश की बदली हुई परिस्थितियो में कांग्रेस को अपना मन भी बदलना होगा।

अब उसे यह समझ ही लेना चाहिये कि शासन पर उसके एकाधिकार के दिन लद चुके हैं। फिर भी उसके नेता सत्ता पर चिपकने के लिये हाथ-पैर मारते रहे तो अर्थ परम्परा के अतिरिक्त कुछ हाथ आने वाला नहीं है। साझेदारी के बिना अब कोई मार्ग नही रह गया है। यदि यह साझेदारी समझ-बूझकर कर ली जाय तो अच्छा रहेगा। आवश्यक है कि कांग्रेस दल इस साझेदारी को पहल करे। दूसरे दलो की ओर अपना हाथ सयुक्त सरकार बनाने के लिये बढाये। हम अन्तर्राष्ट्रिय मञ्च पर तो खडे होकर दूसरे विरोधी राष्ट्रो को सह-अस्तित्व का पाठ पढाने का नाटक कर सकते हैं, परन्तु अपने ही देश मे अपने साथियो का सहयोग लेने-देने में अपने अस्तित्व का खतरा समझते हैं, यह एक विचित्र विडम्बना है। अब राजनैतिक दलो के लिये यह विवेक के प्रदर्शन का अतीव उपयुक्त अवसर है। काग्रेस सद् भावनापूर्ण पहल करे और अन्य दल भी उसी प्रकार की सद्भावनात्मक प्रतिक्रिया दिखायें तो देश की राजनैतिक अस्थिरता को एक दिशा मिल सकती है अन्यथा विषम समस्याओ मे फँसी। राष्ट्र की नौका ऐसे राजनैतिक झञ्झावात मे उलझेगी कि फिर क्या परिणाम हो, कोई नहीं कह सकता।

—रघुवीरसिंह शास्त्री

हैदराबाद आर्य महासम्मेलन का शान्ति प्रस्ताव खतरे में

(श्री धर्मेन्द्रसिंह जी उपमत्री आ० प्र० उ० प्र०)

हैदराबाद आर्य महासम्मेलन कई दृष्टियो से सफल सम्मेलन कहा जा सकता है। पर सबसे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बात वहां जो मेरी दृष्टि में हुई थी, वह है इस बात का सभी आर्यों को यह अनुभव करना कि— 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली व आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के वर्षो से चल रहे विवाद मे आर्य जगत् की अत्यधिक हानि हुई है ' अत इसे तुरन्त सबसे पहले समाप्त किया जाना चाहिये। सबसे पहले प्रार्थना मन्त्रो के पश्चात् इस सम्मेलन के मनोनीत अध्यक्ष श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने मार्मिक अपील करते हुए (जबकि भावुकता मे उनका कण्ठ भी अवरुद्ध हो गया था) कहा कि इन प्रार्थना मत्रो व सम्मेलनो की क्या आवयश्कता है जबकि आर्य जगत् मे इस प्रकार के विवाद चल रहे हो और हम आर्य लोग अपने हितो को न समझकर अपने हाथों अपना विनाश कर रहे हो। उनकी इस मार्मिक अपील पर श्री आचार्य विश्वश्रवा जी ने एक प्रस्ताव रखा कि यह सम्मेलन आर्य जगत् की मानी हुई विभूति, त्यागमूर्ति व आज के अध्यक्ष श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को सर्वसम्मति से इस विवाद का निपटारा करने के लिये कि जिससे आर्य जगत् की बडी अपकीर्ति हो रही है, अपना सर्वाधिकारी नियुक्त करते हैं व उन्हें अधिकार देते हैं कि वे जैसा चाहें फैसला कर दें। प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए मैंने भी अपने विचार रखे। श्री मरवाहा जी का सुझाव था कि इसके साथ अन्य भी ऐसे विवाद सुलझाने का इन्हें ही अधिकार दिया जाये, यह बात भी उचित होने के कारण मान ली गई थी, ऐसा मुझे याद है, पर अत्यन्त खेद व दु ख के साथ लिखना पड रहा है कि उक्त प्रस्ताव जिस उत्साह व आनन्द के वातावरण में पास सर्वसम्मति से किया गया था, उसे कुछ स्वार्थी लोग जो आर्य जगत् का भला नही चाहते उस वातावरण को निराशा मे परिणत कर रहे हैं। अब जब स्वामी जी ने इस विवाद को निपटान का प्रयत्न प्रारम्भ किया तो पता चला कि उन्हे यह कह दिया गया कि वे सभी विवाद आर्य जगत् के ल, पजाब सभा का तो कोई विवाद ही नही। यह जानकर और भी कष्ट तब हुआ जब यह बात सार्वदेशिक सभा के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओ के श्रीमुख से सुनी गई। मैं इस समय यह विवाद नही उठाना चाहता कि कौन इस प्रस्ताव के विरोध मे कार्य कर रहे हैं, पर मे इतना अवश्य कहना चाहता हूँ कि इस प्रस्ताव के पीछे करोडो आर्य जनो की भावनाए निहित है, जो भी कार्यकर्त्ता या पदाधिकारी इन भावनाओ के विपरीत कार्य करेगा, उसे आर्य जगत् क्षमा न करेगा, व उसके साथ यथायोग्य बर्ताव होगा ऐसी लोगो की भावनाए हैं, अत मैं सच्चे हृदय से सभी सम्बन्धित पक्षो से अपील करता हूँ कि उक्त प्रस्ताव मे तोड-मरोड न करके मूल भावना को समझ कर इसे सही रूप मे क्रियान्वित किया जाए, और इस प्रकार आर्य-जगत् को विनाश के कगार से बचाकर सभी आर्यजन यश के भागी बनें।

("आर्य मित्र" के अक २३ फरवरी ६९ से साभार, उद्धृत)

अम्बाला में घोषित अवैध सभा द्वारा मिथ्या प्रचार

सभा तथा शिक्षण संस्थाओं को हानि पहुंचाने का षड्यंत्र

(ब्र० भरतसिंहजी रोहतक)

आर्यजगत् को पता है कि "प्रताप" तथा वीर प्रताप जालन्धर के सम्पादक श्री वीरेन्द्र १९५६ से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब पर कब्जा करने की भावना से वह सब अनुचित कार्यों तथा षड्यंत्रों का प्रयोग करते आ रहे हैं जो राजनीतिक पार्टियां प्रायः करती हैं। गत वर्ष अम्बाला में अवैध सभा के अधिकारियों की नाटकीय ढंग से घोषणा करके पंजाब सभा के कार्यालयों पर कब्जा करने का प्रयत्न किया। दिल्ली में तो सफलता न मिली परन्तु जालन्धर में गुण्डों तथा बदमाशों द्वारा कर्मचारियों को मार पीट कर कब्जा कर लिया और उस रात्रि वह लोग कार्यालय में शराब पीते रहे और सिगरेटों का प्रयोग करते रहे। अगले दिन सभा अधिकारियों अर्थात् प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान तथा श्री रघुवीरसिंह शास्त्री संसद् सदस्य, सभा मंत्री के प्रयत्नों से इन सब लोगों को कार्यालय से पुलिस द्वारा बाहर निकलवाया गया और बाद में पुलिस ने वहां अपना ताला लगा दिया। जो उपरोक्त षडयंत्र सभा कार्यालयों पर कब्जा करने के लिये किया वही उपाय शिमला, लुधियाना, चम्बा तथा नवांशहर के आर्यसमाजों व शिक्षण संस्थाओं पर कब्जा करने के लिये भी किया परन्तु सफलता न मिली।

२—श्री बख्शीशसिंह सब-जज जालन्धर द्वारा पंजाबसभा के अधिकारियों के विरुद्ध निषेधाज्ञा लेकर प्रसन्न होने लगे परन्तु शीघ्र ही योग्य सब-जज ने सारी स्थिति का अध्ययन करने के उपरान्त निषेधाज्ञा समाप्त करते हुए निश्चय किया कि सभा, संस्थाओं तथा सम्पत्ति पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारियों अर्थात् प्रो० रामसिंह तथा श्री रघुवीरसिंह शास्त्री आदि का ही अधिकार है अतः यथापूर्व सभा का सचालान का निर्णय कर दिया। इसके विरुद्ध इन लोगों ने कुछ दिन पहले एक अतिरिक्त डिस्ट्रिक जज से पुनः कुछ भ्रम मूलक तथ्यों के आधार पर एक अस्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त की जिसके विरुद्ध पंजाब हाई कोर्ट चण्डीगढ़ में २७-२-६९ को अपील की सुनवायी होगी। उपरोक्त अस्थायी निषेधाज्ञा प्राप्त होने के बाद इन्होंने फिर उसी प्रकार जबरदस्ती से आर्यसमाजों व शिक्षण संस्थाओं पर कब्जा करने का काम आरम्भ कर दिया। पता लगा है कि शिमला के स्कूल तथा आर्यसमाजमन्दिर जो कि अधिक सर्दी के कारण आजकल बन्द हैं, उनके तालों के ऊपर इन्होंने अपने ताले लगा दिये और अनियमितताओं तथा गबन आदि अपराध में अपदस्थ प्रिंसिपल श्री नन्दलाल को प्रसन्न करने के लिये नवांशहर की शिक्षण संस्थाओं पर कब्जा करने के लिये एक प्रबन्ध समिति का निर्माण कर दिया और श्री नन्दलाल को उसका मन्त्री बना दिया, सब संस्थाओं के बैंक एकाउण्ट बन्द करवा दिये और स्थानीय आर्यसमाज की एक एडहाक कमेटी घोषित कर दी। किसी शिक्षण संस्था के प्रिंसिपल ने इन लोगों को संस्थाओं में घुसने तक नहीं दिया और बैंकों ने स्थिति की जानकारी मिलने पर सब एकाउण्ट खोल दिये। आर्य-समाज पर भी श्री देवेन्द्रकुमार आदि का ही यथापूर्व नियंत्रण है परन्तु अपने घर के समाचार पत्र "प्रताप" तथा "वीर प्रताप" में इस अवैध तथा भ्रम मूलक समाचार को छाप कर अपनी पार्टी का मिथ्या प्रचार करने का दुस्साहस किया। पता नहीं यह लोग और किस-किस संस्था व आर्यसमाज में इस प्रकार का दुष्कर्म करेंगे।

३—इन्होंने एक परिपत्र निकाल कर आर्यजनता में कुछ भ्रम उत्पन्न करने का प्रयास किया है परन्तु इन लोगों ने आर्यजनता को यह कभी बताने का साहस नहीं किया कि अम्बाला में अवैध रूप से घोषित इन सब लोगों के ऊपर जालन्धर के प्रथम श्रेणी के सब-जज श्री प्रीतपालसिंह जी ने स्थायी निषेधाज्ञा द्वारा इन लोगों को सभा तथा सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने से रोक रखा है। ऐसी अवस्था में इन लोगों को सभा तथा उससे सम्बन्धित आर्य-समाजों एवं शिक्षण संस्थाओं में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं परन्तु खेद है कि यह अपने पत्र "प्रताप" तथा "वीर प्रताप" का दुरुपयोग कर रहे हैं।

४—आर्यजनता को तो यह बताते नहीं थकते कि इन्होंने महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज को पंजाब सभा के झगडे समाप्त करने का पूर्ण अधिकार दे रखा है, दूसरी ओर जो शुभ कार्य प्रतिदिन वह करते हैं वह आर्यजनता के सामने हैं। जिन लोगों ने गत वर्ष १२ वर्षों में सभा कार्यालय पर दो बार ताले लगवाये हों, दो तीन बार समानान्तर सभा बनायी हों, सभा अधिकारियों पर बार-बार मुकदमें किये हों, सभा के विरुद्ध प्रचार के लिये नये नये साप्ताहिक समाचार पत्र आरम्भ किये हों और आर्यसमाजों पर जबरदस्ती कब्जा करने का प्रयत्न किया हो, ऐसे व्यक्तियों द्वारा पास किये गये प्रस्तावों पर भला कौन विश्वास करेगा? आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का यदि झगड़ा है तो केवल सार्वदेशिक सभा से है। अम्बाला में घोषित व्यक्तियों को सार्वदेशिक सभा ने ही जन्म दिया है। आर्यजनता को पता होना चाहिये कि सार्वदेशिक सभा का झगड़ा केवल आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से ही नहीं अपितु आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब, आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, आर्यप्रतिनिधि सभा बंगाल, गुजरात आदि सबसे है। जो सभा भी सार्वदेशिक सभा के वर्तमान अधिकारियों के हां में हां नहीं मिलावेगी, उन सबको यह महानुभाव सार्वदेशिक सभा से बाहर ही रखने का प्रयत्न करेंगे।

आशा है, उपरोक्त सारी स्थिति जानने के उपरान्त आर्यजनता "प्रताप तथा "वीर प्रताप" के मिथ्या तथा भ्रममूलक प्रचार पर ध्यान न देंगे।

●



अमर दयानन्द

(श्री सूर्य कुमार पाण्डेय—लखनऊ)

●

अपनी सुरश्मियां अमलता ही साथ लिए,
शीतल निज चाँदनी ही देता हमें चन्द है।
देता है प्रकाश सूर्य तेज पूर्ण आभा निज,
जिसकी न ज्योति हुई अब तक अमन्द है।
सूर्य-चन्द्र नित्य जन-जीवन को शक्ति देते,
अपने ही में पृथ्वी पर रहते वे द्वन्द्व हैं।
पर ज्ञान हमको जो देकर गया वेद का,
जगती में अमर हो गया वह दयानन्द है॥ १॥

मिथ्या-आडम्बर की पुटिका को साथ लेकर,
आई जब उसकी वह स्वामिनी विचरती।
अपने अधीन सब लोगों को करती हुई,
अपने कि मोह से जन-मानस को हरती।
भरी हुई दर्प से कि घूमती निशाचरी थी,
ज्ञात हुई जग की तब सभ्यता भी मरती।
आये तब ऋषिवर सरस्वती जी चक्र ले,
छोडी तब उसने स्वयं ही यह धरती॥ २॥

× × × ×



Prof. Maxmuller—The Great Sanskrit Scholar

By

—Dr. Bhawani Lal Bhartiya, M.A. Ph d. Head of the Hindi Department,

Government College, PALI (Raj.)

The begining of the indological learning in West, particularly in Europe should be considered from the day when Sir William Jones, a Supreme Court Judge of the East India Company, introduced Sanskrit language and literature to the people of West, through the translation of the Bhagvad Gita, Shakuntla—the famous drama of poet Kalidas and the laws of Manu After words the renowned Scholar of Germany Prof F. Maxmuller devoted whole of his life in the study of the Vedas and at the same time in editing and publishing their different Samhitas

Maxmuller was born in the year 1823 He took his early education in Liepzig-a city of Germany. He met in Berlin Franz Bopp-a famous philologist Then he went to Paris where he worked for some time with esteemed Vedic Scholar Buornaf, Roth and goldustakar were his contemporaries who had earned their names for Vedic scholarship From Paris he went to England, where he made Oxford as his centre of activity. He passed fifty years of his remaining life there.

The monumental work of Maxmuller in the field of Vedic learning was the translation into English the great commentary of Sayanacharya on the Rigveda and publishing it in six big volumes. Its first edition was published in the year 1873 He also published the Pratishakhyas in 1856-69 He edited the Sacred Books of the East series under which many important books on Religion, Philosophy and Metaphysics were published Lectures delivered by him under Giford and Hibert were also published in five volumes and a collection of miscellaneous articles was out bearing the namechips from a German Workshop.

Before we enter into the criticism of his works, it is necessary for us to find out the underlying idea and motive which caused our western friends to start their Vedic studies. In this connection I would like to quote Maxmuller's own words. He says "I maintain that for a study of men, or if you like for a study of Aryan humanity, there is nothing in the world equal in importance to the Veda I maintain that to every body who cares for himself, for his ancestors, for his history or for his intellectual development, a study of Vedic literature is indespensable." But one should not be satisfied with this praise of the Vedas alone. There was one more motive behind the study of Western scholars which we can not ignore.

There was the difficulty of the publication of Maxmuller's translation of the commentary on the Rigveda by Sayana. There was no one to publish a voluminous book containing more than six thousand pages It was thought that not even one hundred copies of the book might fetch a sell in the market. At last on account of the efforts of Prof. H H. Wilson, the Directors of the East India Company agreed to publish the book. The words in which the resolution was passed by the company Directors cleary show their intention in patronising Indian literature and learning. The resolution runs thus "The work is in a peculiar manner deserving of me patronage of the East India Company, connected as it is with the early religion, history and language of the great body of their Indian subjects."

The above quotation is sufficient to prove that the motive of East India Company Directors in publishing Prof. Maxmuller's work was not full of honesty The Directors believed that it is better to publish the book of those native Indian who are governed by them, so as to give them a clear idea of the habits, ideas and character of those Hindus who are their subjects This was the imperialistic feeling behind the publication of the Vedas and Vedic commentary by Maxmuller Explanning the motive of the Vedic studies, Maxmuller has again stressed that by studing the Vedas we shall feel the importance and sobriety of our Christian religion in a better way In one of his lectures he said, "We shall learn to appreciate better than ever what we have in our own religion. No one who has examined patiently and honestly the other religions of the world, can know Christianity really is, or can join with such truth and sincerity in the words Shri St Paul "I am not ashamed of the Gospel of Christ " The Vedas by Maxmuller, P. 42

Thus it is a proved fact that the Vedic and Sanskrit Studies of these Western Scholars were neither impartial or without prejudice Having kept in their minds the sublimity of the teachings of Christ they started the studies of Indian scriptures A great and reputed scholar like Maxmuller is no exception to this When they have this preconceived notion in their minds that christianity is the best of prevailing religions and we have to study the principles of other religions only to prove the greatness and sublimity of christianity, we can very well judge that they can not do justice to the Vedas.

Besides this Maxmuller has adopted different methods in studing Vedas and other Aryan scriptures On the other hand the orthodox methods of Vedic studies are quite different from that or Western Methods Western scholars mainly depend upon the theory of evolution as propounded by Charles Darwin in solving the *riddle of* this Universe At the same time they adopt philological methods and the principles of comparative mythology in dealing with the hymns of the Rigveda Although these scholars have accepted the important role of Sanskrit in the philological studies and comparative study of the languages of Indo European family, still they do not agree with the theory propounded by ancient Indian Grammarians that Sanskrit is the mother of all Indian (Aryan) languages. On the other hand they say in the words of Maxmuller—"The religion of the Veda is not the source of all the other religions of the Aryan world, nor is Sanskrit, the mother of all the Aryan languages, as compared to Greek and Latin, is an elder sister, nor a parent" The Vedas, P-26.

These so called philologists have not only under rated the important role of Sanskrit, but have also invented a so called prehistoric Indo European language One of them have tried to invent the imaginary alphabet of this language and he was also written a story of a sheep and horse. To one extent knowledge of comparative mythology is also helpful in Vedic studies For example, it is a proved fact that Vedic Gods have changed their names and forms in Greek and in Hindu mythology Vedic द्यौस पितर became the Zeus Pater of Greek language and ultimately it came as Jupiter the king of Greek Gods. So also Vedic Soma, asura and mitra (सोम, असुर, मित्र) were changed into Zenda Avesta of the Parsis as Ahur, Homa and Mithra But Western scholars like Maxmuller and Macdonell have exaggerated this fact to the other extent, and the same is highly objectionable That is why Swami Dayanand, the greatest of the Vedic scholars of modern times have criticised the western methods of Vedic studies In his magnum opus Satyartha Prakash he has *aptly* said about Maxmuller and other European scholers—The impression that the Germans are the best Sanskrit scholars and that no one has read so much of Sanskrit as Prof. Maxmuller is altogether unfounded Yes, in a land where lofty trees never grow, even Recinis Communis (एरण्ड)—the common castor oil plant may be called on oak The study of Sanskrit being almost non-existent in Europe German scholars like Prof Maxmuller, who have read a little Sanskrit may have come to be regarded as the highest authoritie in Germany but compared with India the number of Sanskrit scholars in that countary is very small

हिन्दी देश में उपेक्षित

(श्री० सुरेन्द्रसिंह कादियान)

दुर्भाग्य से विश्व में भारत ही एक ऐसा विचित्र देश है, जिसके संविधान में एक सर्वमान्य भाषा को राष्ट्रभाषा उद्घोषित किया गया हो और फिर भी वह भाषा निर्वासित-भाषा के रूप मे पडी तड़प रही हो। राष्ट्रभाषा का ऐसा घोर अपमान किसी दूसरे स्वतन्त्र एवं स्वाभिमानी राष्ट्र के इतिहास मे देखने को नहीं मिलता।

कामिल बुल्के के इस कथन मे गहन सत्य विद्यमान है कि, "राष्ट्रभाषा हिन्दी का विरोध देश की एकता का विरोध है।" कामिल बुल्के से लगभग एक शताब्दी पूर्व निरीक्षण द्वारा विदेशी शासको ने इस तथ्य को स्वीकार किया था कि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो सम्पूर्ण भारत में सुगमता-पूर्वक समझी और बोली जा सकती है। इस पर भी ब्रिटिश शासकों ने शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी को इसलिये बनाया कि कहीं हिन्दी द्वारा भारत मे ऐसी सुदृढ एकता स्थापित न हो जाये जो उनके साम्राज्य को छिन्न-भिन्न करने का कारण बने। अंग्रेजी से ऐसी भयानक स्थिति उत्पन्न होने का खतरा कम था क्योंकि अधिकतर अंग्रेजी पढे-लिखे लोग अंग्रेजों की नौकरियों मे ही थे।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि उस स्थिति मे पर्याप्त परिवर्तन हुआ है परन्तु खेद है आज भी हमारे कुछ नेता भाषा की समस्या को सांस्कृतिक प्रश्न के रूप में न लेकर राजनीतिक प्रश्न के रूप में लेते हैं। यद्यपि दोनों पक्ष समान महत्व रखते हैं परन्तु फिर भी यह देखने में आता हैं कि इस समस्या को राजनीतिक बना कर अपने अन्य स्वार्थ सिद्ध किये जाते हैं जो राष्ट्र-भाषा और संविधान के प्रति विश्वासघात है।

इसी आधार पर ही डी० एम० के० को तमिलनाड में विजय मिली। भारतीय परम्परा के विरुद्ध एक विदेशी भाषा को वे लोग भिन्न-भिन्न अवैध उपायों से यहाँ की पटरानी बनाने के यत्न कर रहे हैं जो अव्यवहारिक, आपत्तिजनक और क्षोभनीय हैं।

इस कथन में अतिश्योक्ति नहीं कि भारत की राष्ट्रभाषा को देश में नहीं बल्कि विदेश में गौरव मिल रहा है। इसे विडम्बना ही समझना चाहिये कि जो हिन्दी देश में उपेक्षित समझी जाती है वही हिन्दी विदेश में अपेक्षित समझी जा रही है। यह देखकर हम प्रसन्नता से झूम उठते हैं कि विदेशों में हिन्दी की शाखाएं दिन-प्रतिदिन बढती जा रही हैं। परन्तु यह देखने का अवकाश किसी को नही कि देश मे उसी की जड़ां मे मट्ठा दिया जा रहा है। जड नष्ट होने पर शाखाओ का अस्तित्व कैसे रह पायेगा ?

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् विदेशों में हिन्दी का सम्मान पर्याप्त बढ़ा है और उसे सीखने में विदेशी लोग बड़ी तत्परता और रुचि दिखा रहे हैं। वर्धा की राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति और भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् के सहयोग से विदेशो मे हिन्दी का प्रसार-कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त विभिन्न राष्ट्र और राष्ट्र-भाषा प्रचारक व्यक्तिगत स्तर पर भी हिन्दी को प्रोत्साहन दे रहे हैं।

हनोई, बुडापेस्ट, काठमाण्डू, कंधार, मास्को, प्राग और सानफ्रांसिस्को आदि स्थित भारतीय दूतावासों में तो हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही देने की व्यवस्था की गई है, जो सराहनीय है। परन्तु जैसा साहस रूसी प्रधानमन्त्री कोसीगन ने दिल्ली में रूसीभाषा मे सार्वजनिक भाषण देते हुए दिखाया था, वैसा साहस यदि हमारे नेता भी विदेशों मे जाकर दिखा पायें तो सोने में सुहागा हो जाये।

विश्व के लगभग सभी प्रमुख देशों में हिन्दी का अध्यापन कार्य चल रहा है। रूस मे तो हिन्दी के प्रति लोगों का अत्यधिक आकर्षण है। लेनिनग्राड विश्वविद्यालय, ताशकन्द विश्वविद्यालय और इंस्टीट्यूट आफ एशिया, ऐकेडमी आफ साइन्सेज मास्को आदि में हिन्दी के पढ़ाने की व्यवस्था है। लेनिनग्राड के बोर्डिङ्ग स्कूल नं० ४ और ताशकन्द के माध्यमिक स्कूल नं० २४ में तो दूसरी कक्षा से ही हिन्दी-अध्यापन की व्यवस्था की गई है। सैकडों हिन्दी पुस्तकों का अनुवाद रूसी भाषा में किया जा चुका है। प्रेमचन्द के उपन्यास, यशपाल, प्रेमचन्द, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर आदि की कहानियाँ और प्रसाद, पन्त, बच्चन तथा दिनकर आदि की कविताएँ तो लाखों की संख्या में अनूदित और प्रकाशित हो चुकी हैं। इन अनूदित पुस्तकों की माँग निरन्तर बढ़ती जा रही है। अनेक रूसी-हिन्दी, शब्द-कोशों का निर्माण भी हुआ है।

संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैण्ड, पश्चिमी जर्मनी, जापान, चीन, श्रीलका, चैकोस्लावेकिया, इण्डोनेशिया, ट्यूनिशिया, ईरान, सूडान आदि देशों के अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन चालू किया जा चुका है।

ब्रह्मदेश में तो अनेक भारतीय विद्यालय हैं जिनमें हिन्दी पढ़ाई जाती है। ब्रह्मदेश हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति वर्धा और हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के सब प्रयत्नों से वहां हिन्दी का भरपूर विकास हो रहा है।

दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका में भी इस मार्ग पर सराहनीय कदम उठाये गए हैं। डरबन के हिन्दी-शिक्षा-मंच के माध्यम से समस्त दक्षिणी अफ्रीका में स्थान-स्थान पर हिन्दी पढ़ने की व्यवस्था की गई है। वहां के अनेक शहरों में वर्धा-समिति के परीक्षा केन्द्र खुले हुए हैं। इसी समिति के पूर्वी अफ्रीका के मोम्बासा, नैरोबी, दारेसलाम, जीजा, मुसोमा और कपाला आदि स्थानो पर भी परीक्षा-केन्द्र खोले गये हैं।

विदेश में हिन्दी के बढ़ते गौरव को देखकर किस भारतीय का मस्तक गौरवान्वित न होगा कन्याकुमारी मे लेकर हिमालय तक और मणिपुर से लेकर सौराष्ट्र तक का फैला हुआ भू-भाग जब हिन्दी की सहजता और विनम्रता पर विमुग्ध है, असम के शंकर हों या महाराष्ट्र के ज्ञानदेव, गुजरात के दयानन्द, गांधी हो अथवा दक्षिण के प्राचीन संत प्रायः सभी ने जब हिन्दी को भारत की राष्ट्रीय-एकता का स्त्रोत माना है तो दो प्रतिशत अंग्रेजी जानने वाले महानुभाव किस आधार पर अंग्रेजी को टिकाये रखना चाहते है ? जब देश अपना है, राज अपना है तो भाषा विदेशी क्यों ?

भारतीय जन 'मानसिकपरतन्त्रता' से कब मुक्ति पायेगा, यह तो ईश्वर ही जानता है परन्तु इतिहास हमें बारम्बार चेतावनी दे रहा है कि विदेशियों के परतन्त्र रह कर देश समृद्धी को नहीं पहुँच सकता। ●

एक विद्वान् की सम्मति

आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् लेखक श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री लिखते हैं—(क) "आर्यमर्यादा का विशेषाङ्क देखा इस में महर्षि दयानन्द के "स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश," उनकी लघु पुस्तक "आर्योद्देश्य रत्नमाला" और आर्यसमाज के दश नियमों को महापण्डित श्रद्धेय श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती शास्त्री की टिप्पणियों के साथ सुसम्पादित रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्री सिद्धान्ती जी की टिप्पणिया अत्यन्त महत्वपूर्ण, उनके व्यापक स्वाध्याय, गम्भीर पाण्डित्य और नीर-क्षीर निर्धारक विवेक की परिचायक हैं। आर्य साहित्य में यह नई और स्थायी वृद्धि आनन्द का विषय है। मेरा यह विशेष अनुरोध आग्रह है कि अब श्री सिद्धान्ती जो अपने इस आयोजन की ओर भी बड़ा रूप देने की कृपा करें और स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश, आर्योद्देश्य रत्नमाला एवं आर्यसमाज के नियमों का सुविस्तृत भाष्य मर्यादा के किसी आगामी विशेषाङ्क के रूप में प्रस्तुत करने की कृपा करें। इस कार्य के निमित्त अपेक्षित श्रद्धपुष्ट प्रतिभा और पाण्डित्य श्री सिद्धान्ती जी के पास ही है।

(ख) शङ्कायें, प्रश्न, आक्षेप अपने परायों सभी से प्रेरणापूर्वक मंगवायें, समाधान करें। जल्दीबाजी नहीं।

(ग) पठन-पाठन में अभी तक "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" को उचित महत्व मिला नहीं है। इसीलिये वेद-विषयक भ्रान्तवादों का जोर घटा नहीं है। इधर भी ध्यान दीजिये॥

एक ग्राहक की सम्मति

आर्यमर्यादा विशेषाङ्क (१२ वां अंक) प्राप्त हुआ। आप की सेवा के लिये धन्यवाद देता हूं जिसे आप स्वीकार करेंगे। मैंने अंक की छपाई तथा सामग्री सुन्दर पायी है जो एक हर्ष की बात है। स्वाध्यायशील पुरुषों के लिये तथा जनसाधारण के लिये अंक उपयोगी वस्तु है। मुझे आशा है आप का परिश्रम सफल जायेगा। यज्ञ की परिभाषा और टिप्पणी सहित अर्थ जो पृष्ट ३९, सं० ४७ में दी गई है वह मुझे बहुत पसन्द आई है। इसलिये ठीक इसी परिभाषा के अनुकूल महर्षि स्वामी दयानन्द से लेकर आज पर्यन्त आर्यजगत् ने यज्ञ के विषय में जो साहित्य छापा हो विशेषाङ्क के रूप में प्रकाशित होना चाहिये, और वह आर्यमर्यादा के ग्राहकों को भेंट रूप देना चाहिये।

—[illegible]

आर्यमर्यादा के प्रेमी पाठकों को शुभ सूचना दी जाती है कि १६ मार्च ६९ के अंक में आर्यसमाज के स्थापना दिवस पर एक विस्तृत लेख 'यज्ञ' के सम्बन्ध में यज्ञ विषय के जानकार अधिकारी विद्वान् का लेख प्रकाशित किया जावेगा।

—सह सम्पादक

शिक्षा द्वारा ईसाईकरण

(श्री हरिश्चन्द्र विद्यार्थी बी. ए., बी. डी. जम्मू)

मध्यप्रदेश सरकार की यह योजना अच्छी है कि ईसाई स्कूलो के मुकाबले मे सरकारी स्कूलो का जाल बिछाया जाय विशेष रूप से आदिम जातियो के क्षेत्रो मे। इस योजना से स्कूलो द्वारा ईसायत के प्रचार को रोका जा सकेगा। इस कार्य मे लगी सस्थाओ और कार्यकर्ताओ को इससे उत्साह मिल सकता है।

मेरा अनुभव है कि यह योजना सफल न होगी। छोटा नागपुर में इस बारे मे पर्याप्त प्रयत्न किया गया था कई वर्ष तक मैंने इस योजना के लिये कार्य किया। परन्तु सफलता न हो सकी। जो बातें इस योजना की सफलता मे रुकावट हैं उनकी तरफ ध्यान देने की आवश्यकता है।

१ अधिकतर ईसाई स्कूल रोमन कैथालिक सस्थाओ के हैं। रोमन कैथालिक ईसाई भी ७० प्रतिशत से अधिक हैं। यह अपने बच्चो को सिवाय अपने स्कूल के कही नही भेजते। रोमन पादरियो का सम्पर्क प्रत्येक घर से रहता है। सरकारी तो क्या इनका कोई बच्चा किसी दूसरे ईसाई स्कूल मे भी नही जाता। न जाने दिया जाता है।

२ ईसाई स्कूलो मे काम करने वाले ईसाई अध्यापक अपने मिशन—ईसाईकरण के लिये काम करते हैं। प्रयत्न करते हैं कि अधिक से अधिक बच्चे उनके स्कूल मे प्रविष्ट हो। माता-पिता सम्पर्क बना कर बच्चो को लाते और उनकी शिक्षा तथा प्रगति का ध्यान रखते हैं।

सरकारी स्कूलो के अध्यापक इससे उलटा काम करते हैं। उनका ध्येय यह है स्कूल मे बच्चे कम से कम हो, ताकि काम करना पडे। सरकारी नौकरी है। बच्चो की शिक्षा वा प्रगति मे वे रुचि नही रखते।

३ सरकारी नियम है कि एक स्कूल के मुकाबिले मे दूसरा स्कूल विशेष अन्तर तक खोला नही जा सकता।

४ सरकार का शिक्षा विभाग एक प्रकार से पादरियो का साथ देता है। सरकारी कर्मचारियो की हीन बुद्धि वा पादरियो की ऊपर तक की पहुँच का परिणाम यह है कि क्या दफ्तर में और क्या दफ्तर के बाहिर इन्सपैक्टर लोग अपने आपको पादरियो पर आश्रित समझते हैं।

५. ईसाइयो ने अपन स्कूलो का जाल सा बिछा रखा है। शायद ही कोई ऐसा स्थान हो जो उनकी पहुँच से बचा हो। मैदान उनके हाथ में है। सरकार के कर्मचारी उपेक्षा वृत्ति से यह मैदान उन से छीन सकने में असमर्थ सिद्ध हुए है।

इसलिये शिक्षा द्वारा ईसाईकरण को रोकने का केवल एक ही साधन है कि कम से कम प्राइमरी शिक्षा केवल सरकार द्वारा ही दी जावे। अर्थात् प्राइमरी शिक्षा का जातीयकरण किया जावे।

अपने अनुभव से ही सक्षप मे यह नोट मैं लिख रहा हूँ। इस कार्यक्षेत्र मे मुझे ईसाई पादरियो से सघर्ष करना पडा है। बीसियों उदाहरण दिये जा सकते हैं। इनमे बडे अद्भुत उदाहरण भी है। परन्तु उनके लिखने की आवश्यकता तब पडे, यदि इन क्षत्रो मे कार्य करने के लिये कोई सस्था आगे आवे और उनसे लाभ उठाने का अवसर उसे मिले।

मेरा निश्चित मत है कि आर्यसमाज को इस क्षत्र मे—शिक्षा के जातीयकरण पर बल देना चाहिये। न अन्य पन्था विद्यतेऽयनाय।

स्वामी सुधानंद जी महाराज

(श्री प० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी, गुडगावां)

श्री स्वामी जी महाराज एक असाधारण तपस्वी यति थे। बालपन से साधु बने थे। मरण समय तक रहे। आश्चर्य है उन की तपस्या का। शरीर पर वस्त्र धारण न करते थे। जूता भी धारण न करते थे। सर्दी गर्मी मे एकरस रहे। विद्वत्ता मूर्तरूप मे उनके सीना मे मौजूद थी। ब्रह्ममुहूर्त्त मे उठकर जगन्नियन्ता की भक्ति मे मग्न होकर शास्त्रो के पाठ मे तन्मय हो जाते थे। प्राणायाम का अभ्यास उनका बहुत था। व्यायामशील थे। लम्बी, पतली और सूक्ष्म-सी काया मे अलौकिक शक्तियो के साथ उनका आत्मा वर्तमान था।

जीवन भर वह निकम्मे और निठल्ले नही रहे। प्रचार कार्य मे उनकी वाणी सदैव लोगो के मनो पर अमृत बरसाती थी। कथा वार्ता मे सहस्रो शास्त्रीय प्रमाणों की झडी लगा देते थे। विद्वानो और जनता के मनो को मोह लेते थे। स्पष्ट वक्ता थे। किसी की चिकनी चुपडी बातो मे न आते थ। अकारण विवाद भी खडा न करते थे।

छलकपट, धोखा उनको प्रिय न था। चाटुकारिता के व्याख्यानो के वह कट्टर विरोधी थे। यज्ञो में अलौकिक पुण्यो के आख्यान द्वारा पौराणिको की भान्ति अत्युक्तियो को वह आर्य धर्म के लिये विष समान समझते मानते और इनका प्रबल खडन करते थ। दिखावे के वे महाशत्रु थे। स्पष्ट वक्तृत्व से उनको बहुत प्यार था।

आश्चर्य है कि शास्त्रनिष्णतु अद्भुत विद्वान् परमतपस्वी, सच्चे यति, सच्चे साधु द्वन्द्वाघात सहनकर्ता मोहमाया के जाल से विरक्त महात्मा सुधानद जी अपने आर्यधर्म के प्रचार कार्य मे सभा के सघटन में इस तत्परता से कार्य करते रहे कि सभा उनको जी जान से प्यारी प्रतीत होती थी। वैतमिक न होते हुए भी वेद-प्रचाराधिष्ठाता की स्वीकृति के बिना कोई प्रोग्राम स्वत स्वीकार न करते थे। सघटन मर्यादा का दुष्कर पालन इससे अधिक हो नही सकता। अनुशासनप्रियता को प्राण से भी प्रिय मानना उन महात्मा का ही काम था। अस्मदादि सहस्रो को इनका अनुकरण करना धर्म है। तभी आर्यधर्म की सिद्धि और ऋषि सेना की धाक ससार पर बैठेगी। आर्यसमाज का सिक्का माना जायगा और आर्य समार की नीव दृढतर बनकर सुन्दर और पुण्यमय जगत् का रचन कर पायगे। उनकी प्रबल इच्छा भारत भ्रमण की थी। मैंने उन्हे नेपाल जाने का निवेदन किया। वह सहर्ष पहुँचे। मद्रासादि मे भी घूमे, महाराष्ट्र मे विचरे अहमदाबाद मे भी मेरे साथ थे। और आबू होकर पजाब लौट आये। यह सारा कार्यक्रम उनका सभा के आधीन था।

ग्रीष्मऋतु मे वह नगे पाव केवल अधोवस्त्र धारण किये एक साधारण से कबल के साथ पर्वतीय प्रचार यात्रा करते थे। समाज उनसे प्यार करते और बार-बार बुलाते थे। उन समाजो के दूरस्थ होने पर भी सभा सघटन में बनाये रखना स्वामी जी को बहुत प्रिय था।

दयानन्द मठ रोहतक और दयानन्द मठ दीनानगर से उनका स्नेह विशेष था। स्वामी सर्वानंद जी महाराज की प्रशसा मे वह थकते न थे। विश्रान्ति के दिन स्वामी सर्वानद जी के साथ बिताने मे उनको प्रसन्नता थी। और अन्त मे स्वामी जी महाराज ने ही उनकी अन्तिम यात्रा में उनके उपचार आदि का सारा प्रबन्ध किया। स्वामी सर्वानद जी ही उन्हें देहली मे उपचार के लिये लाये। उनकी सेवा के लिये सारी देख-रेख रखी।

स्वामी सुधानद जी परलोक यात्रा से पूर्व गुडगावा में भी कुछ दिन वैद्य श्रीचद जी आर्य के आधीन इलाज कराते रहे और मैंने देखा कि परमात्मा की कृपा से उनके मुखमडल पर कान्ति पुन लौट आयी। उठने-बैठने की शक्ति कुछ कुछ अनुभव करने लगे। किन्तु दैव ने साथ न दिया। स्वामी जी हमारा साथ छोडकर चले गये। अपने जीवन से आर्यों को अनुशासनप्रियता और धर्मप्रचार को सर्वस्व समझने का पाठ पढा गये। काश कि हम इस योग्यता मे प्रवीण होकर मातृभूमि के कष्टो का निवारण करने मे सशक्त हो सके। भगवान् हमे बल दे। ●

"किसान"

(श्री योगीन्द्र पाण्डेय, लखौलिया-बलिया)

कोई यदि आ जाता द्वार करते तुम आदर सत्कार
सेवा के बस तुम ही मूल वह न तुम्हे सकता है भूल।
पाता है इतना सम्मान हे जगती की जान किसान॥
उन्नति की मिलती है राह, देख तुम्हारा वह उत्साह
तुम ही तो हो सच्चे आर्य, जो नित करते रहते कार्य।
लगा दिया उस मे निज प्राण हे जगती की जान किसान॥
जब हो आती पैदावार तब तुम पर रक्षा का भार
तुमको विधि रक्षा की ज्ञात करते रखवाली दिन रात।
बना खेत में एक मचान हे जगती की जान किसान॥
सब हो जावें पढ गुण विज्ञ रह न पाय कोई अनभिज्ञ
हो शिक्षा का यहाँ प्रसार तेरा है बस यही विचार।
जिस से निज का हो उत्थान हे जगती की जान किसान॥
फल औ फूल आदि उपजाते हरी सब्जियाँ सदा उगाते
जीवन का तेरा यह क्रम है लालच हीन तुम्हारा श्रम है।
कर्मवीर तेरा उत्थान हे जगती की जान किसान॥ (क्रमश)

पुस्तक समालोचना

(१) नाम—ईशोपनिषद्-व्याख्या (२) व्याख्याता-श्री स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश (३) मूल्य ०.७५ पैसे (४) पृष्ठ संख्या ५२ (५) मिलने का स्थान-हरियाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्जर (जि० रोहतक) हरयाणा।

आलोचना-लेखक महोदय वेद वेदाङ्गों के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। प्राक्कथन को अवश्य ही पुस्तक के पठन से पूर्व ध्यान से देख लेना चाहिये, इससे उपनिषद् की व्याख्या को समझने में सहायता मिल सकती है आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् इस उपनिषद् की व्याख्या, भाष्य और अर्थ करते आये हैं। सबकी अपनी-अपनी शैली है। इस व्याख्या में पाठक बन्धुओं को उनसे कई विशेषताएं मिलेंगी। इसमें शब्द रचनशैली आर्यभाषा को संस्कृत भाषा के निकट पहुँचा देती है, नये शब्दों के निर्माण के लिये मार्ग प्रदर्शन का काम देती है। (२) मन्त्रार्थ के उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया गया है (३) प्रत्येक मन्त्र के आरम्भ में ही मन्त्र का प्रतिपाद्य विषय दे दिया गया है (४) व्याख्या में आर्ष-शैली को ग्रहण किया गया है। (५) मन्त्र के भाव को प्रकट करने में लेखक के गम्भीर मनन और प्रखर पाण्डित्य का बोध पाठक को सरलता से समझ में आ जाता है। इस उत्तम कृति के लिये हम लेखक के आभारी हैं। स्वाध्यायशील सज्जनों को इस उपादेय पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। आर्य-शिक्षणालयों और आर्य समाजों को अपने पुस्तकालयों में इसको रखना चाहिये। आर्य छात्र छात्राओं को पुरस्कार रूप में प्रदान करने के लिये यह पुस्तक उपयुक्त रहेगा। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री।

मासिक पत्रिका की समालोचना :—

आर्य प्रेमी का विशेषाङ्क [महर्षि श्रद्धाञ्जलि अंक]

यह मासिक पत्रिका है। इसका अक्टूबर १९६८ का अंक हमारे सामने है। इस अंक की विशेषता यह है कि इसमें महर्षि दयानन्द के दिवंगत होने पर देश-विदेश में सर्वत्र शोक छा गया था। उस समय स्वदेश तथा अन्य देशों के अनेक बड़े-बड़े नेताओं द्वारा और समाचार पत्रों में ऋषि के प्रति श्रद्धाञ्जलि प्रकट की गई थी। शोक प्रकट करने वालों में सभी सम्प्रदायों के नेता और पत्रकार थे। उन श्रद्धाञ्जलियों में से २८ को डा० भवानीलाल जी भारतीय एम० ए०, पी० एच० डी० अध्यक्ष हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कालिज, पाली (राजस्थान) ने सकलित करके इस अंक मे प्रकाशित कराया है। यह एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री है। इस सामग्री से "ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व पर प्रत्तम प्रकाश पड़ता है। हम चाहते हैं कि आर्यसमाजो तथा आर्यबन्धुओ को इस अंक का संग्रह करना लाभदायक है। इसकी एक प्रति का मूल्य ०.२५ पैसे है। मासिक पत्रिका के मिलने का पता यह है-वैद्य मोहनलाल, बीरूमल आर्यप्रेमी, आर्यप्रेमी भवन-नला बाजार, अजमेर।

शङ्का समाधान

शङ्का—आर्यमर्यादा के शिवरात्रि विशेषाङ्क के पृष्ठ ४२ पर टिप्पणी में आपने लिखा है-"ईश्वर में क्रिया होने से ही सृष्टि की रचना विशेष को वह करता है।" सिद्धान्ती जी! परमात्मा के लिये तो यजुर्वेद के ४०वें अध्याय में मन्त्र आया है "तदेजति तन्नैजति" अर्थात् परमात्मा गति देता है स्वयं गति में नही आता। —अनूपसिंह मुजफ्फरनगर

समाधान—"(प्रश्न) उसको बहुत से मनुष्य निष्क्रिय और निर्गुण कहते हैं? (उत्तर) :—न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते। परास्य शक्तिर्विविधैवश्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च॥ (श्वेताश्वतर उपनिषद् अ० ६, मं० ८॥)

परमात्मा से कोई तद्रूपकार्य और उसको धारण अर्थात् साधकम दूसरा अपेक्षित नहो न कोई उसके तुल्य और न अधिक है सर्वोत्तम शक्ति अर्थात् जिसमे अनन्तज्ञान, अनन्त बल और अनन्त क्रिया है वह स्वाभाविक अर्थात् सहज उसमे सुनी जाती है जो परमेश्वर निष्क्रिय होता तो जगत् की उत्पत्ति स्थिति प्रलय न कर सकता इसलिये वह विभु तथापि चेतन होने से उसमें क्रिया भी है। (प्रश्न) जब वह क्रिया करता होगा तब अन्तवाली क्रिया होती होगी वा अनन्त? (उत्तर) जितने देश काल मे क्रिया करता है न अधिक न न्यून क्योंकि वह विद्वान् है। —"सत्यार्थप्रकाश ७म समुल्लास"

"(नास्तिक) ईश्वर अक्रिय है, क्योंकि जो कर्म करता होता तो कर्म का फल भी भोगना पड़ता इसलिये जैसे हम केवली प्राप्त मुक्तों को अक्रिय मानते हैं वैसे तुम भी मानो। (आस्तिक) ईश्वर अक्रिय नहीं किन्तु सक्रिय जब चेतन है तो कर्त्ता क्यों नहीं? और जो कर्त्ता है तो वह क्रिया से पृथक् कभी नहीं हो सकता जैसा तुम कृत्रिम बनावट के ईश्वर तीर्थंकर को जीव से बने हुए मानते हो इस प्रकार के ईश्वर को कोई भी विद्वान् नहीं मान सकता क्योंकि जो निमित्त से ईश्वर बने तो अनित्य और पराधीन हो जाय क्योंकि ईश्वर बनने से प्रथम जीव था पश्चात् किसी निमित्तसे ईश्वर बना तो फिर भी जीव हो जायगा अपने जीवत्व स्वभाव को कभी नहीं छोड़ सकता। (आस्तिक नास्तिक संवाद)॥

—"सत्यार्थप्रकाश १२ वां समुल्लास" उपर्युक्त दोनों स्थलों से स्पष्ट है कि ईश्वर में क्रिया है॥

यजुर्वेद अध्याय ४० के मन्त्र ५ में ईश्वर में क्रिया अथवा अक्रिया का वर्णन नहीं है-वहाँ तो ईश्वर के स्वभाव का वर्णन किया गया है-देखिये-ऋषि दयानन्द का भाष्य। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

प्रश्नोत्तर

१—(प्रश्न) इस समय हरिजन कहे जाने वाले, परिगणित, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, आदिवासी जाति, भंगी (महतर), चमार (जाटव), धानुक, खटिक, कंजड, हवड़ा, अछूत वर्ग, ईसाई, मुसलमान, शूद्र के हाथ का बना भोजन और जल वैदिक धर्मी ब्राह्मण तथा क्षत्रिय को खा लेना चाहिये या नहीं? इस सम्बन्ध में वेदों (वेद) शास्त्रों तथा महर्षि दयानन्द जी की क्या सम्मति व आज्ञा है?

२—(प्रश्न) बिना मनुष्य को बुद्धि व हाथ पैर की शक्ति तथा बिना पशु की शक्ति के कार्य करने का साधन जिसे यन्त्र या मशीन कहते हैं, जो तेल, कोयला या बिजली की शक्ति से चलती है, जो मनुष्य के बौद्धिक श्रम को तथा पशु की शक्ति को व्यर्थ करके मनुष्यों तथा पशुओं को बेकार कर दे। आज का विश्व यन्त्रीकरण की ओर अग्रसर हो रहा है, कुछ लोग कहते हैं कि भारत ने यदि यन्त्रों को नहीं अपनाया, तो भारत विश्व में पिछड़ा देश रह जायेगा जैसे ट्रैक्टर से कृषि करना। क्या यह प्रणाली भारत व विश्व के लिये ठीक है या नहीं या"'।

—अभिलाषसिंह आर्य, बमौली (राय बरेली)

उत्तर १ (क) कृपा करके ऋषि दयानन्दकृत सत्यार्थप्रकाश का दशम समुल्लास पढ़िये वहाँ इस प्रश्न का उत्तर विस्तारपूर्वक दिया हुआ है और भक्ष्य, अभक्ष्य, आचार और अनाचार पर प्रकाश डाला गया है॥

१—(ख) वेद में किसी जाति-पांति और मानवीय ऊँच-नीच, छूत-अछूत का वर्णन नहीं हो सकता, क्योंकि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। वेद में मानवीय इतिहास नहीं है। वेदों के आधार पर समय-समय पर ऋषि मुनि सामाजिक व्यवहार को शुद्ध रखने के लिये नियम बनाते रहते हैं। ये नियम समाज की अवस्था के अनुसार बदलते रहते हैं। इन्हीं ग्रन्थों को स्मृति नाम से कहा जाता है। मनुस्मृति सब स्मृतियों से पुरानी है। इनमें भी वेदानुकूल और वेद से अविरुद्ध वचनों को ही परतः प्रमाण माना जाता है। वेद विरुद्ध वचन ग्रहण करने के योग्य नहीं।

उत्तर (२) वेदों में शिल्पकला यन्त्रों के निर्माण करने का उपदेश मिलता है। ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में "नौविमानादिविद्या-विषय" और "तार विद्यामूलविषय" को पढ़ना आवश्यक है। यन्त्रों के निर्माण में दोष नहीं, उनके अनुचित प्रयोग में दोष है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

एक पाठक का पत्र

आर्यमर्यादा का प्रत्येक अंक संग्रहणीय है। सामग्री बहुत ही खोज पूर्ण एवं विद्वत्तापूर्ण प्रकाशित होती है।

—राधपालसिंह आर्य हापुड़

प्रबोध पञ्चदशी

(मोहनदेव शर्मा पो० बगड जि० झुंझुनू (राज०)

यह उलटी गगा बहती है।

अवतार प्रभु का मान लिया, यह भूल भरा अविचार हुआ।
मूरत उसकी बनवा पूजी, उन्माद समान विकार हुआ।
हत बुद्धि हुए सब सुध खोकर, थिरता न कहीं भी रहती है॥

जल जन्तु पशु अवतार बने, उलटी गति है मतिमन्दों की।
व्यापक को व्याप्य बताते हैं, सुध बुध बिगडी है अन्धो की।
यह क्या जानें हठ के पुतले, वैदिक मर्यादा ढहती है॥

सत्-चित्-आनन्द अखण्ड विभु, है अजर अमर अखिलेश महा।
इनको तज प्रकृति मे उलझे, ना धर्म कर्म का ज्ञान रहा।
जड पूजन से जड बुद्धि हुई, जडता सुविवेक न चहती है॥

उपनिषदें गीता शास्त्रन मे, वेदों में तीन अनादि कहे।
इक ब्रह्म ही है कुछ और नही, मिथ्या अद्वैत पुकार रहे।
मतिमन्द बहुत से ब्रह्म बने, दिन रैन अहंता रहती है॥

मिथ्या शशि, सूर्य उडूगण भी, मिथ्या गुरु, मातु, पिता सगरे।
मिथ्या सब दृश्य प्रपच यहां, हैं मिथ्या वेद विवाद भरे।
यो मायावादी बकते हैं, सुरम्य टुक ज्ञान न गहती है॥

जल-थल को तीरथ मान रहे, वहां पापो का लक्ष्य होता है।
चाहे जितने शिर पाप चढें, सारे गगाजल धोता है।
यह है अति सुलभ उपाय यहां, जनता तप कष्ट न सहती है॥

बूढे पितु मातु पडे टसकें, ना कोई पूछन वाला है।
मरने पर खूब करें सेवा, बनता कुछ ढग निराला है।
पकवान बने अरु भोज लगें, भ्रमता मन को अति दहती है॥

पुरुषो का बेडा पल छिन मे, डूबेगा फैशन सागर मे।
अब रग विदेशी चढता है, बिगडा सब ढग बने घर मे।
भाषा अरु भेष अमिष्ठो सा, यहां भूल भरी अति महती है॥

ललनाएं लाज गंवा बैठीं, योरुप की बनती जाती हैं।
सस्कृति अपनी से हीन हुईं, गौरव गरिमा ठुकराती हैं।
बूढो व बडो का मान नहीं, रखती स्वेच्छा से रहती हैं॥

सासू के मन वात्सल्य मिटा, बहुओ की बुद्धि न पूज्य कही।
गृह युद्ध अहर्निश रहता है, समझौते की कुछ बात नही।
सुमती की सरिता लुप्त हुई, कलहाग्नि घरो को दहती है॥

प्रभु नाम सुओ३म् जपा न कभी, पति छोड मुखण्डन मे बिखरी।
उपनिषदो का ना ज्ञान सुना, मन मे विषयो की प्यास भरी।
नित माला हाथ दिखावट की, पाखड की बाते कहती है॥

गुण-कर्म-स्वभाव त्रिवेणी के, सगम सा वर्ण विचार यहां।
सघठित, पवित्र, परस्पर था, सामाजिक उच्च प्रकार यहां।
अब जन्म जातिया रूढ हुईं, कर्मों की गति अति महती है॥

हर पीर-बबर्ची-भिश्ती, खर के, पद से भूषित ब्राह्मण हैं।
क्षत्रिय का शौर्य दिखाने को, आमिष मदिरा समरागण हैं।
है वैश्य आलसी, शूद्र बुद्धि, सेवा का भाव न सहती है॥

वेदो से औ उपनिषदो से, गीता से मुख को मोड लिया।
विज्ञान भरे छ शास्त्रो का, सविवेक विवेचन छोड दिया।
अध्यात्म तत्त्व समझा न कभी, पाखण्डो मे मति रहती है॥

नित सत्य सुधा से दूर रहें, मिथ्या का विष पीते जाते।
परिणाम अचूक वही होता, वैसा ही उसका फल पाते।
कर जांच प्रमाण कसौटी पे, जन के हित की श्रुति कहती है॥
सुन लो वाणी कवि "मोहन" की, यह उलटी गगा बहती है॥

अखिल भारतीय हिन्दी टाइपिंग व आशुलिपि प्रतियोगिता

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के तत्त्वावधान मे अक्तूबर, १९६८ में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी टाइपिंग एव आशुलिपि प्रतियोगिताओ का परिणाम घोषित हुआ है। इसके अनुसार हिन्दी टाइपिंग मे इस वर्ष दिल्ली के श्री भारतप्रकाश भाटिया ने ८८-९ शब्द प्रति मिनट की गति से टाइप करके प्रथम स्थान प्राप्त किया। द्वितीय स्थान श्री चन्द्रदेव पाण्डेय (नई दिल्ली) तृतीय स्थान श्री रामगोपाल तबर (जबलपुर) तथा चतुर्थ स्थान कानपुर के श्री प्रभाषचन्द्र साहू को प्राप्त हुआ। उनकी गति क्रमशः ८७-२, ८४-१ तथा ७६-९ शब्द प्रति मिनट रही।

राज्यो मे प्रथम आने वाले प्रतियोगियो का परिणाम भी प्रशसनीय रहा है। राजस्थान के श्री भागचन्द्र गगवाल, उत्तर प्रदेश के श्री अशोककुमार जग्गी, मध्य प्रदेश के श्री विजयकुमार गुप्त, महाराष्ट्र के श्री श्यामनाथसिंह, मद्रास के श्री के० वी० राघवन अपने-अपने राज्यो मे प्रथम पुरस्कार विजेता रहे हैं। उनकी गति क्रमश ७१-४, ७३-६, ७४-५, ७१-३ तथा ४०-६ शब्द प्रति मिनट रही है।

नवीनतम कुजी पटल के टाइपराइटर पर ५८-१ शब्द प्र० मि० की उच्चतम गति प्राप्त करने पर श्री रामउदारसिह(पटना केन्द्र)को विशेष पुरस्कार दिया जाएगा।

आशुलिपि प्रतियोगिता मे अखिल भारतीय प्रथम पुरस्कार २०१ रुपए नकद व चल वैजयन्ती दिल्ली के श्री सत्यप्रकाश पनोचा को २२० शब्द प्रति मिनट की गति से सफल डिक्टेशन लिखने पर मिलेगा। इसी गतिवर्ग मे द्वितीय स्थान श्री शरच्चन्द्र चतुर्वेदी रहे हैं।

२०० शब्द प्रति मिनट की गति वर्ग मे दिल्ली के श्री गोपालदत्त विष्ट प्रथम पुरस्कार के अधिकारी रहे है तथा १२० शब्द प्रति मिनट की गति मे श्री मनोहरखुल्बे (नई दिल्ली) प्रथम रहे हैं। इस वर्ष १०० व १८० शब्द प्रति मिनट के गतिवर्ग कोई भी प्रतियोगी सफल नही हुआ एव १५० व १२० शब्द प्रति मिनट के डिक्टेशन लिखने पर दोनो गतिवर्गों मे क्रमश १ व ३ प्रतियोगी सफल हुए।

इस वर्ष हिन्दी टाइपिंग प्रतियोगिता देश के ३१ केन्द्रो पर हुई तथा आशुलिपि प्रतियोगिता के ४ केन्द्र रहे। दोनो ही प्रतियोगिताओ के विजेताओ को पुरस्कृत करने के लिए परिषद् की ओर से मार्च मे दिल्ली मे भव्य समारोह आयोजित किया जा जाएगा। सभी प्रतियोगी समारोह मे आमन्त्रित होंगे। प्रतियोगिता मन्त्री।

—प्रतियोगिता मन्त्री

आर्य समाज (डी० ए० वी० कालेज) अम्बाला नगर

आयसमाज के प्रथम चुनाव निम्नलिखित अधिकारी निर्वाचित हुए।

प्रधान—श्री हरदयाल सचदेव जी, मन्त्री प्राचार्य भगवान दास जी

चुनाव के अतिरिक्त एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव यह भी सर्वसम्मति से पास किया गया — जो सदस्य समाज एक सौ रुपया से अधिक धन इस समाज को दान अथवा सहायतार्थ प्रदान करेगी वह समाज प्रति १००।-के उपलक्ष मे एक सदस्य इस समाज की अन्तरग सभा मे मनोनीत कर सकेगी।

—मन्त्री भगवानदास

आर्य स्त्री समाज कीर्तिनगर में ऋषिबोधोत्सव

प्रान्तीय आर्य महिला सभा के तत्वावधान मे ऋषि बोधोत्सव पर आर्य-स्त्री समाज कीर्तिनगर मे समारोह पूर्वक मनाया गया बहुत सख्या मे स्त्री समाजो की बहिनो ने उसमे भाग लिया। श्रीमती शन्नोदेवी जी, श्रीमती रक्षा-सरन जी, श्रीमती विद्यावती जी, विशारदा, श्रीमती कौशल्यादेवी जी, कुमारी प्रतिभा जी आदि बहिनो ने ऋषि दयानन्द को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की।

—सुशीला देवी मन्त्री

रामपुर आर्यसमाज का वार्षिक निर्वाचन

श्री हरिश्चन्द जी आर्य प्रधान, सहदेव शरण आर्य मन्त्री, शान्तिप्रसाद जी गोयल कोषाध्यक्ष, विद्याशकर जी, मनलेश, पुस्तकाध्यक्ष।

—मन्त्री सहदेव शरण आर्य

अध्यात्म आनन्द

(परिव्राजकाचार्य वेदस्वामी मेधारथी सरस्वती, साम्वाचस्पति एम० ए०)

(वेदस्वामी आचार्य मेधारथी जी आर्यजगत् के पूर्णपरिचित वेद विद्वान् हैं आप अभी तक गुरुमुख से पडघरी में वेदानुशीलन कर रहे है। आपके द्वारा आर्यजगत् को अध्यात्म-आनन्द का लाभ होगा।)

तस्या (गायत्री से) समुद्रा अधि विक्षरन्ति,
तेन (गायत्री द्वारा प्राणायाम से) जीवन्ति चतस्रः।
ततः (गायत्री के अभ्यास से) क्षरति अक्षरम्,
तत् (गायत्री से अनुभूत ब्रह्म) विश्वं उपजीवति॥

अतएव तत् से ही गायत्री मंत्र का प्रारम्भ माना जाता है।

यह ऋग्वेद का मन्त्र है। छन्द इसका बृहती है। बृहती छन्द का स्थान हमारे शरीर में हृदयदेश है। कहा भी है —अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषः सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः। जब तक गायत्री छन्द का प्रभाव हृदयदेश न हो। गायत्री जाप व्यर्थ हो जाता है। गायत्री मंत्र जब गुरुमंत्र बन जाता है। तभी उसकी हृदयदेश तक पहुँच होती है। इसीलिए इस मन्त्र के प्रथम चरण में अंकित है कि गायत्री से (समुद्रा) सम्+उत्+द्रु=ऊपर गति करके अक्षर (तत्, स, वि, तुर-आदि) पहुँचते हैं। यह गुरुमुख से प्राणायाम द्वारा प्रतीत होता है। प्राणायाम चार प्रकार का है। चौथे प्राणायाम "ततः क्षीयते प्रकाशावरण" से ही प्रभु का प्रकाश प्राप्त होता है। अतएव इस मंत्र में अंकित है कि गायत्री से चारों प्राणायाम जीवनदान देते हैं। जब गायत्री का ७ वां अक्षर "न्यं" मूर्धाचक्र में, जो सातवां चक्र गुहा भ्रमर है—पहुँचता है। तब "ण्यम्" का अर्थ होता है "ब्रह्म" देखो अथर्ववेद। 'ण्यम्' तो मूर्धदेश में ध्वनि के कारण बोला जाता है। ऋ टु र षा णाम् मूर्धा। वैसे 'न्यम्' ही है। नि+अम्' मिलकर 'न्यम्'। नि है सातवां स्वर निषाद, जो सदा ऊँचे स्वर से बोला जाता है। नियम है—उच्चौ निषादगान्धारौ। अम् है ओम् का संक्षेप। अ ३ म्—में से बीच का अक्षर ३ हटा दीजिये। अम् रह जाता है। केवल 'अम्' यह ध्वनि सुषुम्णा में प्रविष्ट होती है। इसीलिये मंत्र के चौथे चरण में अङ्कित है। (तत्) वह ब्रह्म। (विश्वं) सारे विश्व को। (उपजीवति) जीवित रखता है। धारण करता है।

विदेशी ईसाई पादरियों का वावेला

उड़ीसा और मध्य प्रदेश राज्यों में धर्म स्वातन्त्र्य विधेयक पारित किये गए हैं और बलपूर्वक धर्म परिवर्तन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। 'बल-प्रयोग' 'कपटपूर्ण साधन' या 'प्रलोभन' द्वारा 'कोई भी व्यक्ति' 'किसी भी व्यक्ति' का धर्म परिवर्तन करेगा तो दंड का भागी होगा। चाहे यह प्रयत्न 'प्रत्यक्ष' हो या अप्रत्यक्ष, ऐसे साधनों से धर्म परिवर्तन करना, या करने की चेष्टा करना अथवा प्रेरणा देना भी दण्डनीय करार दिया गया है।

यदि इस प्रकार का अपराध (१) अप्राप्य वय, (२) स्त्री, (३) किसी अनुसूचित जाति के व्यक्ति या (४) किसी अनुसूचित जन-जाति के व्यक्ति के सम्बन्ध मे हो तो दण्ड का विधान द्विगुण, अर्थात् दो वर्ष की कैद और सहस्र रुपया जुर्माना तक होगा।

विधेयक सब के लिये समान रूप से लागू है। इसमे किसी मजहब का नाम तक नहीं। जो भी ऐसा करेगा—हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हो या पारसी—वही दंड का भागी होगा।

परन्तु इस विधेयक पर शोर मचा रहे हैं केवल ईसाई पादरी और वह भी अधिकतर विदेशी और जेसूइट।

जब विधेयक सब लोगों पर समान रूप से लागू है तो उनको ही इसकी चिन्ता क्यों है? दूसरे मतावलम्बी इस विधेयक का विरोध क्यों नही कर रहे अपितु इसे श्रेयस्कर मानते हैं उनका कथन है कि इस प्रकार का विधेयक बहुत पहले-पारित होना चाहिए था। और शेष सब राज्यों और केन्द्र मे भी इसी प्रकार का विधेयक पारित करने की आवश्यकता है।

धर्म परिवर्तन मे बल, छल, कपट, प्रलोभन आदि के प्रयोग को कोई भी अच्छा नहीं कहता। खुद ईसाई भी इन साधनों को निन्दनीय मानते हैं। फिर इसकी निन्दा करना इसके विरुद्ध आन्दोलन करना क्या अर्थ रखता है।

मध्य प्रदेश के एक बड़े पादरी ने तो यहां तक घोषणा की है कि वह और अन्य ईसाई पादरी इस कानून की अवहेलना करेंगे। दूसरे शब्दों में वह धर्म परिवर्तन कार्य में छल, बल, कपट, प्रलोभन आदि साधनों का प्रयोग करते ही रहेंगे, और डंके की चोट से करेंगे।

यदि सतर्कता न बरती जाय तो अच्छे से अच्छे कानून भी केवल पुस्तकों में धरे रहते हैं। शारदा एक्ट जैसा लाभदायक और समाज-सुधार का कानून इसी प्रकार पुस्तकों की शोभा बढ़ाता रहा है। इस समय भी बीसियों कानून जनता की उपेक्षा या 'जिसका डंडा उसकी भैंस के नियम के अधीन नाकारा हो कर रह गये हैं।

क्या ये विधेयक भी उसी खाते में जायेंगे? कौन देखेगा कि इन विधेयकों पर अमल होता है? मेरा विचार है कि यह आर्यसमाज का कर्तव्य है। प्रत्येक प्रदेश तथा नगर में आर्यसमाजों को कानून जानने वालों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की सतर्कता समितियां बनानी चाहिएं। इनका यह काम हो कि इस प्रकार के मामलों पर नजर रखे। यदि कुछ भी अपराधी उचित दंड पा गये तो आगे के लिये मार्ग साफ हो जायगा अन्यथा कानून धरा ही रहेगा और इस प्रकार के अपराधों में जरा भी कमी न हो सकेगी।

—हरिश्चन्द्र विद्यार्थी (वैदिक मिशनरी)

ओ जाग आर्य ! गौरव-निधान

(श्री भैरवदत्त शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद् लखुआ (जि० खीरी)

जगती की गति-विधि देख गयी, कवि करने आया सावधान !
क्यों गहरी निद्रा में खोया, ओ जाग आर्य ! गौरव-निधान !!

तू ही श्रम-बल से सर्व प्रथम, संसृति में लाया नव प्रभात,
तू ने ही सदा प्रवाहित की, मंजुल मंगलमय मलय वात;
जो थे असभ्य कान्तार-व्यक्ति, उनको तू ने कर दिया सभ्य;
जो दलित-पतित था भ्रांति भरा, सब वही ज्ञान दे किया भव्य;
पर, स्वयं बना क्यों दलित-पतित, इस पर देता फिर तुझे ध्यान !

'वसुधा कुटुम्ब है' कह करके, तू ने की जग पर सुधा-वृष्टि;
नीचों का छल-मद नष्ट हुआ, तेरी लख किंचित् कुटिल दृष्टि,
रह द्वेष-दोष से सदा दूर, कर दिया विश्व अभिमान हीन,
तेरे द्वारा सम्मान-प्राप्त, हो गये आप्त निष्प्राण-दीन,
पर, स्वयं कलह का केन्द्र बना, किस लिये खो रहा स्वाभिमान ?

शक, हूण प्रभृति परकीय वर्ग, कर लिये कभी सब आत्मसात्।
सारे जगतल के मानस की, नफरत कर डाली भस्मसात्;
पर आज बन्धुओ से अपने, तू हाथ मिलाते क्यो डरता ?
उन्नति भाई की ही लख कर, उर में जल-जल कर क्यों मरता,
बन कर ढोंगी आदर्श भूल, क्यों भुला रहा सम्मान-ज्ञान !

बहिनो का भाल-सिन्दूर पोंछ, सुत-हीन बना कर माताएँ,
सबलाओं को कर सिद्ध रहा, है कौन आज फिर अबलाएँ,
करता है अत्याचार कौन, करता है दुर्व्यवहार कौन ?
क्या शत्रु ! नहीं कुछ सोच-समझ, कर रहा घृणित व्यापार कौन,
तू ही इन सब का हो दोषी, करता मुख-मंडल स्वयं म्लान ?

तू ने भारत को बँटा दिया, तू ने अपने को लुटा दिया;
कश्मीर बाँटने का साधन, तू ने ही तो है जुटा दिया ?
तू ने दीनों-विधवाओं के, रोके न, प्रवाहित रक्त बूँद,
है स्वयं चाहता मिट जाना, अपने पाँवों को खोद-खूँद
हिन्दू धर्म साम्प्रदायिक है, तेरा ही नारा जड़ महान् ?

अपनी भाषा पर लड़ जाना, अपना हित-अनहित कर जाना,
तुझको है विघटन पतन भला, भाषा स्वामी सा बन जाना,
तू ही अपने सहयोगी-हित, जय चन्द चाहता हो जाना ?
तू ही अपने को दे धोका, क्यो स्वयं चाहता खो जाना,
निज नयन खोल कुछ सोच परख, कर स्वत्वों का तो तनिक ध्यान ?

है बलि द्वीप की यह पुकार, चम्पा-जावा कह बार-बार
बोर्नियो सुमात्रा आज लखें, सहमे से लोचन फाड़-फाड़ ?
कह रहा श्याम-कम्बोज आज, कहता पुकार फिर ब्रह्म-देश-
कहता श्री लंका अफ्रीका, 'सुनले ! सुनले ! ओ आर्य-वंश ?
कर पुन. संघटित हम सब को, हम सभी चाहते पूर्व-शान.

इसलिए भुला कर भेद-भाव, हो पुनः शक्तिमय एक बार ?
क्षिति-उन्नत बन विश्व भव्य, गिरती संसृति को फिर उभार,
खल जयचन्दों को रौंद कुचल, कर शान्ति-धर्म का महोच्चार ?
बस 'रक्त ! रक्त !' भीषण निनाद, कर आज निनादित एक बार,
करले अतीत का समय याद, गा नया अमर चिर क्रांति गान ?

आर्यसामाजिक कार्यकर्ता शिविर

सब सज्जनो को यह जानकर हर्ष होगा कि आर्यसमाज के मुख्य-मुख्य कार्यकर्त्ताओ का एक शिविर दयानन्दमठ रोहतक मे श्री प० जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती की अध्यक्षता मे हो रहा है। जिसमे आर्यसमाज के सन्यासी, वानप्रस्थ उपदेशक तथा आर्यसमाज के चुने हुए कार्यकर्ता भाग लेगे। शिविर २६ फरवरी २ बजे से आरम्भ होकर २८ फरवरी सायकाल तीन बजे तक चलेगा। नोट —शिविर मे प्रविष्ट होने वाले सज्जन ऋतु अनुकूल वस्त्र साथ लावें।

विचारणीय विषय

१-आर्यसमाज के प्रचार कार्य को तीव्र करना। २-वेदप्रचारमण्डलो की स्थापना करना। ३-आर्यसमाज मे युवापीढी को लाने पर विचार। ४-वर्णाश्रम के सिद्धान्तो को व्यवहारिक रूप देने पर विचार।

—प्रो० बलजीतसिंह मन्त्री आर्य युवक परिषद्

शास्त्री और आचार्य बी० ए० तथा एम० ए०

श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ की शास्त्री और आचार्य परीक्षाओ को सरदार पटेल यूनिवर्सिटी वल्लभ विद्यानगर (गुजरात) ने अपने बी० ए० और एम० ए० के समकक्ष क्रमश स्वीकार कर लिया है। स्मरण रहे— गुरुकुल पद्धति पर चलने वाली। अखिल भारतवर्षीय श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ की प्रथमा, मध्यमा शास्त्री और आचार्य परीक्षाओ को केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय नई दिल्ली ने क्रमश मिडिल, हायर सैकण्ड्री, बी० ए० और एम० ए० के समकक्ष मान्यता प्रदान की है। —वेदानन्द वेदवागीश-प्रस्तोत

—श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ

कार्यालय—गुरुकुल झज्जर (जि० रोहतक)

गोहत्यारे रंगे हाथों गिरफ्तार

ता० ९-२-६९ को ग्राम घासेडा (गुडगावा) मे रगे हाथो गौओ की हत्या करते हुये आठ-दस कसाइयो को गिरफ्तार कर लिया। कुछ गायो को तो कसाई काट चुके थे काफी सख्या मे जिन्दी गायो के जीवन को बचा लिया गया। इस केस को थाना नूह के थानेदार ने पकडा है। ५१ गाय जिन्दी बचा ली गई मेवात क्षेत्र मे काफी तादाद मे गोहत्या होती है।

—पदमचन्द आर्य मन्त्री आ० वे० प्र० म० मेवात

गायन प्रतियोगिता

शनिवार ता० ८ मार्च ६९ की मध्याह्न ३ बजे छात्र-छात्राओ की गायन प्रतियोगिता केवल ईश्वर-भक्ति, राष्ट्र-भक्ति, तथा वीरतापूर्ण गायनो की श्री केन्द्रीय आर्य समाज सरोजिनी नगर नई दिल्ली के तृतीय वार्षिकोत्सव सेंट्रल पार्क सरोजिनी नगर मार्कीट के बस स्टाप के पास उत्सव के पण्डाल में बडे समारोह पूर्वक होगी।

प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय विजेता छात्र-छात्राओ को अलग-अलग पारितोषिक दिये जावेंगे।

माता-पिता तथा आचार्य गण प्रतियोगिता मे सम्मिलित होने के इच्छुक बालक बालिकाओ के नाम दिनाक ७ मार्च ६९ तक प्रतियोगिता के सयोजक श्री प० देवव्रत धर्मेन्दु आर्योपदेशक, १६५४, कूचा दखिनी राय, दरिया गज दिल्ली-६ के पते पर भेज देवें।

रोशन लाल गुप्त मन्त्री

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज कोसली (रोहतक) मे प० चन्दगीराम कौशिक के देहान्त पर उनके परिवार के प्रति समवेदना रूप मे शोक सहानुभूति प्रस्ताव स्वीकार किया। परमेश्वर उनके परिवार को धैर्य प्रदान करें तथा दिवगत आत्मा अपनी न्याय व्यवस्था के अनुसार उचित स्थान देवे।

—मन्त्री आर्य समाज

वेदप्रचार विभाग का संक्षिप्त कार्य विवरण

शरद् ऋतु मे जबकि अन्य आर्य सस्थायें प्राय मौन रही हैं, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का वेदप्रचार विभाग यथापूर्व अपने कार्य मे सलग्न रहा है। हरियाणा प्रान्त मे निम्न स्थानो मे वार्षिक उत्सव बडी धूमधाम से हो चुके हैं।

आर्यसमाज मितरौल औरगाबाद। आर्यसमाज ऐचरा कला (जीन्द)। आर्यसमाज बाकनेर। कन्या गुरुकुल नरेला तथा कन्या गुरुकुल खानपुर। इनके अतिरिक्त जिला गुरुदासपुर, करनाल, अम्बाला तथा हिमाचल मे विशेष रूपेण प्रचार हुआ। बडे नगरो का विवरण इस प्रकार है—

१—आर्यसमाज पठानकोट शिवरात्रि महोत्सव बडी धूमधाम से मनाया गया है। सभा की ओर से मुन्शीलाल धर्मपाल मण्डली तथा प० रामनाथ जी सि० वि० उपदेशक शामिल हुये। सभा को १२५ रुपये वेदप्रचार मिला। २—आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर—वसतपचमी तथा शिवरात्रि को दोनो उत्सव बडी धूमधाम से मनाये गये। अनेक विद्वानो ने अपने ओजस्वी भाषण दिये। ३—आर्यसमाज बस्ती गुजा, जालन्धर—वसतपचमी और शिवरात्रि दोनो उत्साह से मनाये गये। बसन्तपचमी पर प० निरजनदेव जी इतिहास केसरी का प्रवचन हुआ। ४—वैदिक आश्रम पजौड (होशियारपुर)—श्री स्वामी ध्यानानन्द जी की देख-रेख मे बडी धूमधाम से शिवरात्रि महोत्सव मनाया गया है। सप्ताह भर श्री रामनाथ जी मण्डली ने जनता को कृतार्थ किया। पूज्य स्वामी जी ने १५०) रुपये वेदप्रचारार्थ दिये। ५—निजामुद्दीन दिल्ली—आर्यसमाज का कथोत्सव बडी धूमधाम से मनाया गया। आचार्य कृष्ण जी, तथा पडित निरजनदेव जी वेदप्रचाराधिष्ठाता तथा श्री अमरनाथ प्रेमी जी के अतिरिक्त अन्य सज्जन भी पधारे। सभा को विशेष रूप से वेदप्रचार धन दिया ६—आर्यसमाज नरवाना—का समाचार गताङ्क मे प्रकाशित हो चुका है। —निरञ्जनदेव वेदप्रचाराधिष्ठाता

हरयाणा में आगे होने वाले उत्सवों की सूची

२१ से २३ फरवरी कोसली, अचीणा और गुरुकुल आर्यनगर हिसार। २५ से २७ फरवरी बुढापण। २८ से १-२ मार्च आर्यसमाज सालवन और गुरुकुल भैसवाल। ५ से ७ मार्च उवाना खुर्द। ८ से ९ नरेला, औचन्दी गुरुकुल मटिण्डू। १० से १२ आ० सा० कारद (पानीपत)। १४ से १६ सुदकान कला। १८ से २० मुआना (करनाल) इत्यादि।

—समरसिंह वेदालकार अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल

आर्यसमाज जौनपुर का वार्षिक चुनाव

श्री रामवतार जी प्रधान तारानाथ जी मन्त्री, रामनारायण जी कोषाध्यक्ष, चुन्नीलाल जी पुस्तकाध्यक्ष।

आर्यसमाज जींद का वार्षिक निर्वाचन

आर्यसमाज जीन्द शहर का चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ। जिस मे निम्न पदाधिकारी चुने गये।

श्री छबीलदास आर्य प्रधान, श्री टेकचन्द मन्त्री श्री प्रेमचन्द कोषाध्यक्ष, श्री रामसिंह पुस्तकाध्यक्ष। —तारनाथ मन्त्री

मन्त्री—आर्यसमाज जीन्द शहर

इटारसी में महर्षि दयानन्द बोधोत्सव

महर्षि दयानन्द बोधोत्सव बडे ही समारोह के साथ मनाया गया, तथा महर्षि को किन कारणो से मूर्तिपूजा पर से विश्वास जाता रहा, विस्तारपूर्वक समझाया गया। आर्यसमाज के भूतपूर्व कोषाध्यक्ष श्री लक्ष्मीनारायण अग्रवाल की पत्नी के निधन पर शोक मनाया गया।

—दिनेशकुमार चौरासिया उपमत्री

ऋषिबोध उत्सव मे ३-४ दिन तक प्रातः गायत्री यज्ञ व रात्रो को श्री सेवकराम यात्री की वेद कथा होती रही।

—श्री रामपथिक कृष्णपुरी (छुटमलपुर)

शीघ्र मंगवाइये—

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य, आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियो के लिये २५) ; ५० प्रतियों के लिये १५)
२५ प्रतियों के लिए ८) ७५ ; १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैंकडा
वैदिकधर्म की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक पं० हरिदेव जी	१०) सैंकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित्र	१-५० ,,
मुक्ति के साधन १-०० पं० लेखराम जीवन चरित्र	१-५० ,,
वैदिक सत्सग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अग्रेजी	२-०० ,,
जीवन ज्योति ले० पं० चमूपति जी एम. ए	३-०० ,,
सोम सरोवर ,, ,, ,,	३-०० ,,
The Principles of Aryasamaj ,, ,,	१-५० ,,
Glimpses of Swami Daya Nand ,, ,,	१-०० ,,
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० ,,

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मगवाइये । थोड़ी प्रतियां शेष हैं ।

व्यवस्थापक—"आर्य मर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से निवेदन

आर्योदय के ग्राहक महानुभाव जो विदेशों में रहते हैं, उनकी सेवा में आर्यमर्यादा नियमपूर्वक भेजा जा रहा है।

आर्योदय कुछ अपरिहार्य कारणों से बन्द करना पड़ा और आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से उसके स्थान पर आर्यमर्यादा प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारा आर्थिक वर्ष अप्रैल में समाप्त हो रहा है। अतः विदेशों में रहने वाले सभी ग्राहक महानुभावो को सेवा में निवेदन है कि वे अपना वार्षिक शुल्क २०) रु० यथाशीघ्र **आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब** के नाम चैक या ड्राफ्ट द्वारा भेजने की कृपा करें। आशा है आर्योदय की भान्ति आर्यमर्यादा को भी अपना सहयोग एवं स्नेह मिलता रहेगा। विनीत

रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सम्पादक

अपना वार्षिक मनीआर्डर द्वारा शुल्क भेजिये

ग्राहक महानुभावों से नम्र निवेदन

हम आर्योदय के सभी ग्राहकों की सेवा में आर्यमर्यादा नियमपूर्वक भेज रहे हैं। जिनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो चुका है उनके पास पत्र द्वारा शुल्क समाप्ति की सूचना दी जा रही है। अतः प्रार्थना है कि अपना शुल्क शीघ्र मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें। आर्यमर्यादा आपका अपना ही पत्र है। अतः आपका सहयोग एवं स्नेह मिलना ही चाहिए। पत्र का व्यवहार तथा धन भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

विनीत
केदारसिंह आर्य
व्यवस्थापक आर्यमर्यादा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, [illegible] दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

वर्ष १ } २५ फाल्गुन वि० स० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार १६ मार्च १९६९ रविवार, { वार्षिक मूल्य स्वदेश में—१०)
अंक १५ } सृष्टि स०-१९६०८५३०६८ { ,, विदेश में—२०) एक प्रति का मूल्य—२०

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनरग्निगुणा उपदिश्यन्ते।

फिर अगले मन्त्र मे अग्नि के गुणो का उपदेश किया है।

अग्ने पत्नीरिहा वह देवानामुशतीरुप। त्वष्टारं सोमपीतये॥ ऋ० १-२२-९॥

पदार्थ —(अग्ने) अग्निर्भौतिक (पत्नी) देवाना विदुषा पालनयोग्या-न्यादीना स्थित्यर्थं पृथिवी वर्त्तते तस्मादिं पत्नीत्युच्यते यस्मिन्-यस्मिन् ... सन्ति तास्ता स्तेषा द्रव्याणा पत्न्य इवेत्युच्यन्ते (इह) अस्मिन् शिल्पयज्ञे (आ) समन्तात् (वह) वहति प्रापयति (देवा नाम्) पृथिव्यादीनामेकत्रिंशत (उशती) स्वस्वाधारगुणप्रकाशयन्ती (उप) सामीप्ये (त्वष्टारम्) छेदनकर्त्तारं सूर्यं शिल्पिनं वा (सोमपीतये) सोमाना पदार्थाना पीतिर्ग्रहणं यस्मिन् व्यवहारे तस्मै॥

अन्वय —योऽयमग्निः सोमपीतये देवानामुशती पत्नीस्त्वष्टारं चोपावह समीपे प्रापयति तस्य प्रयोगो यथावत्कर्त्तव्यः॥

भावार्थ —विद्विद्भिर्योऽग्निर्भौतिक विद्युत्प्रसिद्धसूर्यरूपेण त्रिधावर्त्तमानो शिल्पविद्यासिद्धये पृथिव्यादीनां सामर्थ्यप्रकाशको मुख्यहेतुरस्ति स स्वीकार्यः। अत्र शिल्पविद्यायज्ञे पृथिव्यादीनां संयोगसामर्थ्यात्तत्तत्सामर्थ्यस्य पत्नीति सञ्ज्ञा विहिता॥

भाषार्थ —(अग्ने) जो यह भौतिक अग्नि (सोमपीतये) जिस व्यवहार में सोम आदि पदार्थों का ग्रहण होता है उस के लिए (देवानाम्) इकतीस जो कि पृथिव्यादि लोक है उनकी (उशती) अपने आपके आधार के गुणो के प्रकाश करने वाला (पत्नी) स्त्रीवत् वर्त्तमान अदिति आदि पत्नी और (त्वष्टारम्) छेदन करने वाले सूर्य्य वा कारीगर को (उपावह) अपने सामने प्राप्त करता है उस का प्रयोग ठीक-ठीक करे॥

भावार्थ —विद्वानो को उचित है कि जो बिजुली प्रसिद्ध और सूर्य्य रूप से तीन प्रकार का भौतिक अग्नि शिल्पविद्या की सिद्धि के लिए पृथिवी आदि पदार्थों के सामर्थ्यप्रकाश करने में मुख्य हेतु है। उसी को स्वीकार और यह इस शिल्पविद्या रूपी यज्ञ में पृथिवी आदि पदार्थों के सामर्थ्य का पत्नी नाम विधान किया है उस को जानें॥

—(ऋषि दयानन्द-भाष्य)

आर्य मर्यादा हमें सिखला रही है

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय, ११ छोटा चाँद गंज लखनऊ)

विश्व को हम बन्धु समझें द्वेष तजकर,
राष्ट्र के रक्षार्थ हम नित रहें तत्पर,
भू हमारी और सबका है कि अम्बर
उस कथा को जो कि कहकर गये ऋषिवर
आज यह हमको कि फिर बतला रही है।
'आर्य-मर्यादा' हमें सिखला रही है॥

आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब, गुरुदत्त भवन जालन्धर

(उपकार्यालय १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१)

साधारण सभा के सदस्यों की सेवा में

श्रीमान् जी नमस्ते!

आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब का वार्षिक साधारण अधिवेशन ३० मार्च १९६९ रविवार को प्रात १० बजे दयानन्द मठ रोहतक मे होगा।

विचारणीय विषय

१ गत अधिवेशन तिथि २८ २९ नवम्बर ६४ की कार्यवाही की सम्पुष्टि।

२ स्वर्गवास हुए सभासदो तथा प्रतिष्ठित आर्यमहानुभावो के वियोग पर शोक प्रस्ताव।

३ वार्षिक वृतान्त।

४ सभा मुख्य कार्यालय वेद प्रचार विभाग दयानन्द उपदेशक विद्यालय, गुरुकुल कागड़ी कन्या गुरुकुल देहरादून आदि सस्थाओ के सम्वत् २०२४ के आय-व्यय के ब्योरे तथा सम्वत् २०२५ के लिए प्रस्तावित बजट।

५ सम्वत् २०२४ के अन्त का शेष पत्र।

६ सम्वत् २०२५–२६ के लिये अधिकारियो, अन्तरग सभा, विद्या सभा, न्याय सभा, राजार्य सभा सीनेट गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय आदि के सदस्यो का चुनाव।

७. अन्य आवश्यक विषय श्री सभापति जी की आज्ञा से।

नोट —(क) प्रवेश पत्र एजेण्डा के साथ प्रेषित है अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए प्रवेश-पत्र अपने साथ लावें। इसके बिना प्रवेश मे कठिनाई होगी।

(ख) अपनी आर्यसमाज का वेद प्रचार तथा दशांश तुरन्त सभा उपकार्यालय, १५-हनुमान रोड, नई दिल्ली भिजवाने की कृपा करें।

(ग) श्री सभा प्रधान जी की आज्ञा से आवश्यकतानुसार कार्यवाही के क्रम में परिवर्तन भी किया जा सकता है

भवदीय

रघुवीरसिंह शास्त्री संसद सदस्य

सभा-मन्त्री

भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमि

[संघर्षों के लिये]

मा ... नमोभि, ... सहूती।

उन्नो वीरा ... भेषजेभि

भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमि ॥ ऋ० २।३३।४

शब्दार्थ—(रुद्र) हे दुष्टों को रुलाने वाले न्यायकारी भगवन्! हम (त्वा) तुझे (नमोभि) अपने [बनावटी विधि-रहित] नमस्कारो से (मा) न, नहीं (चुक्रुधाम) क्रोधित करें। (वृषभ) हे सबके पालक, पोषक, वाहक, बल के भण्डार, सुखवर्षक! हम (मा) न तो (दुष्टुती) दुष्ट—बुरी स्तुति करने वाले हों और (मा) न ही (सहूती) शोर मचाने वाले, हल्ला करने वाले, दिखावे के गीत गाने वाले हो। (न) हमारे (वीरान्) वीरो को (उत-अर्पय) उन्नत करो। मैं (त्वा) तुझ को (भिषजाम्) वैद्यों का औषधियो का (भिषक्तमम्) सर्वश्रेष्ठ वैद्य और (भेषजेभि) औषधियों, उपायो के द्वारा सर्वश्रेष्ठ औषध (शृणोमि सुनता हूँ।

भावार्थ—हे सबके पालक पोषक और न्यायकारी भगवन्! हम आप को अपने बनावटी नमस्कारो और कोलाहलपूर्ण पुकारो तथा विधिशून्य व्यवहारो द्वारा क्रोधित न करें। आप कृपा करके हमको और हमारे सब साथियों को सब प्रकार की उन्नति प्रदान करो। हमारे सब प्रकार के पापो और दुःखो का अन्त कर दो। हमने सुना है कि आप तो वैद्यो के भी वैद्य हो, औषधो की भी औषध हो और उपायो के भी उपाय हो।

प्रवचन

नमस्कार करना एक बहुत अच्छी बात है। परन्तु वह विधिपूर्वक होना चाहिये। नमस्कार, नमस्कार नमस्कार, नमस्कार इस प्रकार धूम-धाम मचाने और हल्ला-गुल्ला करने से तो वे दयालु देव भी रुष्ट हो जायेंगे। जब कभी किसी को नमस्कार करो तो सच्चे हृदय से करो। नमस्कार के प्रत्युत्तर में जो नमस्कार हो, वह भी विधिपूर्वक ही होना चाहिये। विधि-रहित नमस्कार तो कभी किसी को भी न करो। प्रत्युत्तर में किसी को नमस्कार करते समय अर्थात् अभिवादन के प्रत्याभिवादन में किसी प्रकार का प्रमाद या किसी प्रकार की कंजूसी न करो। जो लोग नमस्कार-धर्म की शिष्ट-मर्यादाओ का उल्लघन करते हैं, वे अशिष्ट समझे जाते हैं और वे अनेक प्रकार के निरादर एव कष्ट भी पाते हैं।

हे भक्तो! उस पालक पोषक और प्रेम स्वरूप भगवान् की स्तुति, प्रार्थना और उपासना तो हम सब प्रतिदिन करते ही हैं, आज तो आओ, हम उस देवाधिदेव रुद्र की उपासना का भी आरम्भ करके देखें। भगवान् के रुद्र रूप से डरने की तो हमारे-तुम्हारे लिये कोई बात है ही नहीं। क्योकि प्रभु रुद्र तो केवल दुष्टो को ही रुलाने वाले हैं। श्रेष्ठ जनो से तो वे भी प्यार और दुलार का ही व्यवहार करते हैं। भगवान् रुद्र की उपासना से हमें विशेष प्रकार की शारीरिक और मानसिक दृढता प्राप्त होगी। परन्तु देखना, भगवान् रुद्र को तुम बनावटी और दिखावटी नमस्कार न करना। किसी का अहित करने के उद्देश्य से कोई रुद्रोपासना न करे। क्योकि दुष्टो के नमस्कारो को दुष्टतापूर्ण और विधि-शून्य नमस्कारो को तो वे प्रभु स्वीकार नहीं करते। दुष्टता की तो छोटी से छोटी क्रिया भी, हाँ मानसिक क्रिया भी उनके कोप को बढ़ाती ही है।

हे देवाधिदेव! आप दुष्टो के सहारक, एव सज्जनो के सहायक एव उन्नायक हैं। हम आपके बालक आपको अपना नमस्कार समर्पित करना चाहते हैं। परन्तु नमस्कार करने की यथार्थ-विधि हमको ज्ञात नही है। हे दयानिधे! हमको ज्ञान-धन प्रदान करो। जिससे कि हम आपको विधि-पूर्वक अपना-अपना नमस्कार निवेदन कर सकें। हम कभी भी आपको अनुचित रीति से अथवा अनुचित भाव से नमस्कार न करें। हे प्रभो! आप की जय हो। हमारे नमस्कार को स्वीकार करो। तन, मन और धन अपना सभी कुछ हम आपको समर्पित करते हैं। इस समर्पण को स्वीकार करके, इसे सार्थकता प्रदान करो। हे आनन्द और ऐश्वर्य के प्रदाता! आपकी कृपा हम पर सदैव बनी रहे। हम कभी भूल कर भी आपके उत्तम नियमों को न तोडें। हम कभी भी आपके कोप-भाजन न बनें।

हे प्रभो! एक से बढ़कर एक, आपके भक्त और शूरवीर इस ससार में हो चुके हैं। कोई दानवीर, कोई प्रणवीर, कोई सत्यवीर, कोई रणवीर और कोई किसी अन्य उत्तम गुण, कर्म या स्वभाव में वीर। उन-उन सब वीरों की वीरता आप ही की कृपा का तो प्रसाद है। सब कोई आपके बल को प्राप्त करके ही बली बनते हैं। आपके धन से ही धनी बनते हैं। उन-उन की दृढता के आधार, बस एकमात्र आप ही तो हो।

हे प्रभो! हमें भी वीरता प्रदान करो। कुछ उत्तम उद्देश्यों की पूर्ति के लिये तथा कुछ उत्तम आदर्शों की प्राप्ति के लिये, हम और हमारे साथी सहयोगी, पहिले भी अनेक बार यत्न कर चुके है। परन्तु पूर्ण सफलता के अभाव में हम अभी तक भी कृतकार्य हो नहीं सके हैं। हे नाथ! हमारे मन की चचलता, हमारी इन्द्रियो की विषय-लोलुपता और हमारी नाना विधि दुर्बलताओ को हटाकर, हमारे शुभ कार्यों में होने वाली सब प्रकार की विघ्न-बाधाओं को मिटाकर, अब तो हमें सफल-मनोरथ कर दो।

हे न्याय नियन्ता! हम अनेक प्रकार के भय शोक, सुख, दुःख, दारिद्रय, राग-द्वेष और अभावों से ग्रसित हैं। आधिभौतिक, आधिदैविक एव आध्यात्मिक त्रिविध तापों से हम सन्तप्त हैं। काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ और अहकार प्रभृति मनोविकार भी हमें मूर्तिमान् शत्रुओ के समान ही सता रहे हैं। हमारी बुद्धि विभ्रम में पड गई है। कर्त्तव्य-पथ हमें सूझ नहीं रहा है। हे नाथ! आप तो घट-घट वासी और सर्वान्तर्यामी हो। हम दीन जनों पर क्या बीत रही है, सो सब, आप तो यथावत् जानते ही हैं। देखो तो, इन कष्टो को सहते-सहते और अपने मनोविकारों से लड़ते-लड़ते हमारी यह कैसी जर्जरित अवस्था हो गई है। सुना है—आप तो औषधियों की भी औषधी हो। और आप तो वैद्यों के भी वैद्य हो। हे नाथ! अब तो हमारे दुःखों की दवा करो। हे कृपा सिन्धो! अब तो हमारे भी सब कष्टों और अभावों को दूर करो।

जवानो! तुम्हें अ...

... सुनामी सभी ... के ... रहा है
... तुम्हें ... मचलना पड़ेगा!
... की पूर्ति ... हो,
... वह अभी ... है
... का,
नहीं दे रहे ... होता ...

... के ...
... करना पड़ेगा!
जवानो! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा!!

हुआ अस्त परकीय सत्ता का रविपुष,
नहीं कुछ हुआ किन्तु स्वाधीन जन है;
नयन खोलने के पहेले ... ,
सभी का हुआ जो कि नैतिक पतन है,

कलुष से सराबोर जो राष्ट्र सारा,
तुम्हें फिर उसका बदलना पड़ेगा!
जवानो! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा!!

जिन्हें हम समझते हैं मल्लाह अपने
वही दे रहे नाव पूरी डुबाने,
नहीं कार्य में हैं सफलता के लक्षण,
अधाधुन्ध वादों के बादल हैं छाये,

अखिल नीति-नभ-स्वच्छता के लिए ही
प्रबल वायु का वेग बनना पड़ेगा!
जवानो! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा!!

उठो याद कर तुम 'हकीकत' को फिर से
प्रखर नाम 'बन्दा' के सक्रिय पुकारें,
बड़ा दूर 'राणा' तुम्हें हेरता है
द्रुपद की सुता-सी सहस्रों पुकारें,

कहाँ-सो रहे हो बधिर से बने तुम?,
सभी त्याग आलस्य, जगना पड़ेगा!
जवानो! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा!!

सम्पादकीय

आर्य समाज और शिक्षा

देश में उत्थान एवं अभ्युदय के जिन अनेक कार्यों का सूत्रपात करने का श्रेय आर्यसमाज को है, उनमें से एक शिक्षा सम्बन्धी है। शिक्षा के विषय में आर्यसमाज की बहुमुखी देन रही है। उसने समाज में फैले अज्ञानान्धकार को मिटाने एवं जनता में पढने लिखने की प्रवृत्ति को जगाने के लिये भारी प्रचार किया। देश के पिछडे हुए क्षेत्रों और वर्गों में शिक्षा प्रसार के लिये शिक्षणालयों का जाल बिछा दिया। स्त्रियों को पढ़ाना पाप मानने वाले समाज को झकझोर कर स्थान-स्थान पर कन्या विद्यालय खोले गये और आर्यसमाजों के भवन तो प्राय कन्यापाठशालाओं के रूप में ही परिवर्तित हो गये। सभी स्थानों पर प्राय सकल्पशील एव साहसी आर्यबन्धुओं को कन्याओं को पढ़ाने के मामले में रूढिग्रस्त समाज के भारी प्रतिरोध का सामना करना पडा परन्तु अन्त में विजय औचित्य की हुई, सन्मार्ग का समर्थन एव आकर्षण बढता ही चला गया।

शिक्षा प्रसार के साथ-साथ आर्यसमाज ने उसकी पद्धति में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने की अपनी योजना को भी मूर्तरूप दिया। देश मे दी जा रही शिक्षा का रूप- राष्ट्रियता, सस्कृति एव उपादेयता आदि सभी दृष्टियो से बडा विकृत था। इसलिये आर्यसमाज ने उसे भी नया मोड दिया। हमारा समाज अन्याय, अनाचार तथा विषमता से जर्जरित था, निष्क्रियता के गर्त में पडा छट-पटा रहा था, ओज का उसमें नामोनिशान तक न था, सब प्रकार की हीन भावना का वह दास बना हुआ था। राष्ट्रिय सस्कृति एव इतिहास के गौरव को वह भूलता जा रहा था। इस सारी दयनीयता का एकमात्र प्रतिकार था, शिक्षापद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन। आर्यसमाज ने इसका बीडा उठाया। सारी प्रतिगामी शक्तियों को चैलेञ्ज देते हुये उसने प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित करके एक आदर्श मार्ग का उद्घाटन किया। देश के कोने-कोने में गुरुकुल खोले गये और एक बार समाज का झुकाव वैदिक साहित्य एव सस्कृत भाषा के गम्भीर अध्ययन की ओर कर दिया। कुछ दिनो पीछे चलकर सामयिक आवश्यकता को अनुभव करते हुए स्कूल-कालिज भी खोले गये, परन्तु उनके द्वारा भी आर्यसस्कृति, सस्कृतभाषा एव राष्ट्रिय भावनाओं के प्रतिष्ठापन का ही कार्य किया गया।

वह था आर्यसमाज का सुवर्ण युग जबकि शिक्षा सम्बन्धी क्रान्ति के हम सूत्रधार बने थे। उन दिनों को हम बहुत गर्व एव गौरव के साथ स्मरण करते हैं। परन्तु आगे चलकर हमारा ह्रास-युग आरम्भ हो गया। शिक्षा के प्रचार की आवश्यकता को समय की गति के साथ राष्ट्र हृदयगम करता चला गया। बालिकाओं की शिक्षा की उपादेयता को भी समाज ने स्वीकार कर लिया और प्राय सभी मतों एवं विचारो के अनुयायियों ने कन्याशिक्षा के लिये यथेष्ट प्रयास किये, इसके लिये विभिन्न वर्गों में होड-सी लग गई। परन्तु शिक्षा प्रणाली मे परिवर्तन के कार्यक्रम को हम चालू न रख सके। हमारा वह प्रयत्न शिथिल हो गया। वास्तविकता यह है कि ब्रिटिश शासकों द्वारा उद्भावित वर्तमान शिक्षा प्रणाली देश के लिये एक अहितकर भार सिद्ध हो रही है। जैसे-जैसे शिक्षा तीव्र गति से फैल रही है, इसकी बुराइयां भी राष्ट्र-शरीर को उसी तेजी से दबा रही हैं, क्षीण करती चली जा रही हैं। आज के शिक्षित युवक का शारीरिक अथवा मानसिक किसी भी प्रकार का उचित विकास नहीं हो पाता। शिक्षा युवकों में पुरुषार्थ एव आत्म-विश्वास की भावना को पनपाने में सर्वथा असफल है। चारित्रिक अथवा मनोबल की स्थिति बडी निराशाजनक है। इस दशा में सुधार लाने की पहल आर्यसमाज ने की थी, परन्तु वह पहल अब उनके हाथों से निकल चुकी है। इस सम्बन्ध में मैं अपने विचार आगामी लेख में व्यक्त करूंगा।

—रघुवीरसिंह शास्त्री

आर्यमर्यादा के लिये सम्मतियाँ

ग्राहक का पत्र—१

आर्योदय के बन्द हो जाने के पश्चात् आपने "आर्यमर्यादा" द्वारा उसके रिक्त स्थानों की पूर्ति की। इस कार्य के लिये आप धन्यवाद के पात्र हैं। आपको ज्ञात हो कि यह एक पिछडे ग्राम में स्थित एक आर्यसमाज का छोटा मोटा सघटन है जहां प्रति वर्ष वार्षिकोत्सव भी नहीं मनाया जाता है न उपदेशक ही पहुँच कर ज्ञान की गगा से हम ग्रामवासियो को वेद का सदेश पहुंचाते हैं। ऐसे परिस्थिति में आपकी पत्रिका से काफी सहयोग पाता हूँ।

मन्त्री आर्यसमाज दयालपुर (भागलपुर)

ग्राहक का पत्र—२

'आर्योदय' का अर्धवार्षिक मूल्य रु० ६-०० भेजकर लगभग डेढ मास हो चुके थे। धनादेश धन प्राप्ति की रसीद भी उचित समय प्राप्त हुई थी। लेकिन पत्रिका के न आने का कारण मालूम न हो सका था।

इतने में एक दिन मेरे नाम का कमर बन्द डाक प्राप्त हुआ। उत्सुकता से खोला तो 'आर्यमर्यादा' दि० १-१२-६८ का अक (नई पत्रिका) देखकर विस्मय हुआ। पहले पृष्ठ पर ही 'ग्राहकों के लिए आवश्यक सूचना' पढ़कर मेरा मन आश्वस्त हुआ। तथा सभा के भूतपूर्व पदाधिकारियो के त्रुटिपूर्ण आचरण पर खेद भी हुआ।

तब से आर्य मर्यादा मुझे बराबर मिल रही है। वैदिक धर्म के सिद्धान्तों तथा आर्य जीवन प्रणाली का प्रतिपादन करने वाली पत्रिका आर्यमर्यादा भविष्य में निर्बाध गति से आर्य जगत् का उपकार करती रहे।

सार्वजनिक चारित्र्य के द्रुतगति से बिगडते हुए इन दिनो में सद्आचार, सद्विचार तथा सत्कर्म की प्रेरणा देते हुए—आर्यमर्यादा पुण्य भागी बने। बोध होना चाहिये।

आर्यसमाज (आर्य प्रतिनिधि सभा) तथा आर्यमर्यादा इस दिशा में अपने पवित्र सकल्प को चरितार्थ करे।

कल्लाचार्य हिन्दी अध्यापक सरकारी प्रौढशाला, कोथल, जिला रामपूर, मैसूर राज्य।

कल्याण (गोरखपुर)—३

"हिन्दी साप्ताहिक आर्यमर्यादा" का विशेषांक प्राप्त हुआ। धन्यवाद अपने लघु कलेवर में यह अक सुन्दर एव हितप्रद है। इसके मुख पृष्ठ पर श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के हस्ताक्षर सहित चित्र को देखकर प्रसन्नता हुई।

—प्रेमसहित

गुरुकुल महाविद्यालय अयोध्या फैजाबाद

वार्षिकोत्सव २४ मार्च से २७ मार्च ६९ तक होगा। इस समय देश के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान्, सन्यासी, भजनोपदेशक आमन्त्रित किये गये हैं। नवीन बालकों का प्रवेश भी गुरुकुल नियमावली के अनुसार होगा, निर्धन तथा तीव्र बुद्धि बालको को वरीयता दी जावेगी

—[illegible]

(पृष्ठ ४ का शेष)

असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्माऽमृत गमयेति ॥

शतपथ ब्रा० (१४।३।१।३०)

हे परमगुरो परमात्मन्! आप हमको असत् मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग में प्राप्त कीजिए। अविद्यान्धकार को छुडा के विद्या रूप सूर्य को प्राप्त कीजिए। और मृत्यु रोग से पृथक् करके मोक्ष के आनन्द रूप अमृत को प्राप्त कराइए।

जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे ही परमेश्वर का सामीप्य प्राप्त होने से सब दोष दु ख छूटकर परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण, कर्म स्वभाव निर्दोष और पवित्र हो जाते हैं। इसलिए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिए। इससे आत्मा का इतना बल बढेगा कि वह पर्वत के समान दु ख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा। और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नही करता वह कृतघ्न और महा-मूर्ख भी होता है क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिए दे रक्खे हैं उसका गुण भूल जाना ईश्वर ही को न मानना कृतघ्नता और मूर्खता है। हम सबको चाहिए कि सदैव विशुद्ध वैदिक रीत्यनुसार ईश्वर की प्रार्थना करें।

ईश्वर की उपासना का वैदिक स्वरूप

श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य एम० ए०, अवैतनिक उपदेशक
आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश, लखनऊ)



सर्वशक्तिमान् परमेश्वर के उपासकों को संसार में कोई कमी नहीं है और सभी ईश्वर भक्त अपने-अपने मतों में प्रचलित परम्परा के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से ईश्वर की उपासना करते हैं। इस सम्बन्ध में विचारणीय बात यह है कि ईश्वर की उपासना करने का सार्थक स्वरूप कौन सा है। उपासना के ऐसे अनेक प्रकार देखने को मिलते हैं कि जिनसे कोई सार्थकता सिद्ध नहीं होती। धर्म भावना से युक्त ईश्वर-उपासकों को चाहिए कि वे पहले उपासना शब्द के शुद्ध अर्थ को जान लेवें और पश्चात् तदनुसार उपासना करें। महाभारत काल के पश्चात् अविद्या और अज्ञान बढ़ जाने से आर्यावर्त में अवैदिक और बुद्धि विरुद्ध मान्यताएं प्रचलित हो गई। जिसके परिणामस्वरूप साधारण लोग अज्ञान की इस सीमा तक पहुँच गये कि वे किसी नदी में डुबकी लगाने को पत्थर पर पानी डालने को, किसी पुस्तक के आगे या मन्दिर में जाकर मत्था टेकने को घण्टे घड़ियाल बजाने को, किसी गपोड़ों से भरे चालीसे के पाठ करने को अथवा कुछ विशेष तिथियों में भूखे रहकर कोई मनगढ़न्त कहानी सुनने को ईश्वर की उपासना मानने लगे। उपासना का विशुद्ध वैदिक स्वरूप लुप्त प्राय हो गया। ऐसे घोर अन्धकार के समय में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने उपासना का बुद्धिगम्य वास्तविक स्वरूप लोगों के सामने रक्खा जिसके लिए हम सब महर्षि के ऋणी हैं।

उपासना का अर्थ है समीपस्थ होना। हमारे सामने परमात्मा के समीपस्थ होने का प्रश्न इसलिए उठता है कि हम किसी न किसी रूप में परमात्मा से दूर अवश्य हैं। परमात्मा के और आत्मा के बीच की दूरी जिन-जिन कार्यों के करने से कम होती हो या समाप्त होती हो उन-उन कार्यों को उपासना की संज्ञा दी जानी चाहिए। दूरी संसार में तीन प्रकार की है। एक तो समय की—जैसे महाभारत काल के और हमारे जीवन काल के बीच पांच हजार वर्ष का अन्तर है। परन्तु ईश्वर और आत्मा तो दोनों ही अनादि हैं। इसलिए आत्मा और परमात्मा के बीच समय की दूरी तो है नहीं। दूसरे प्रकार की दूरी है स्थान की जिसको कि चलकर (गति द्वारा) समाप्त किया जा सकता है। परन्तु हमारे आत्मा और परमात्मा के बीच में स्थान की दूरी भी नहीं है क्योंकि ईश्वर तो सर्वत्र व्यापक रूप में विद्यमान है कणमात्र भी उसकी व्यापकता, उपस्थिति और विद्यमानता से शून्य नहीं है। तीसरे प्रकार की दूरी है ज्ञान की—जैसे किसी जर्मन भाषा न जानने वाले अध्यापक से कोई छात्र जर्मन भाषा सीखना और पढ़ना चाहे तो अध्यापक उस छात्र को यही उत्तर देगा कि इस भाषा के ज्ञान से तो मैं कोसों दूर हूं। परमात्मा के और हमारे बीच नैमित्तिक ज्ञान की ही दूरी है। ईश्वर के सम्बन्ध में ज्ञान होने की जन साधारण की तो बात क्या है, शिक्षित लोगों को भी ईश्वर के बारे में थोड़ी बहुत जानकारी कठिनता से ही होती है। पछुआ हवाओं के प्रभाव—प्रवाह में बहने के कारण वर्तमान समय में शिक्षित लोगों की रुचि भी वेद और वेदानुकूल अन्य आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय में नहीं रही है। वेद ब्राह्मण ग्रंथ उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति आदि के अतिरिक्त किसी मत मतान्तरों की किसी पुस्तक से भी ईश्वर के सम्बन्ध में कोई तर्क पूर्ण सम्यक् जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती।

इन तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए जब विचार करते हैं तो एक बात तो यह सिद्ध होती है कि ईश्वर के सम्बन्ध में अपने ज्ञान के संवर्द्धन हेतु किये गये वेद और वेदानुकूल आर्ष ग्रंथों के स्वाध्याय को एक निश्चित सीमा तक उपासना का एक रूप कहा जा सकता है क्योंकि सदुद्देश्यपूर्ण स्वाध्याय से परमात्मा के बारे में जितना-जितना हमारा ज्ञान बढ़ेगा उतने ही हम परमात्मा के समीपस्थ अपने को अनुभव करेंगे। ज्ञान की वृद्धि से आचार विचार भी सुधरेगा और दूरी कम होती जावेगी।

उपासना का दूसरा रूप है अष्टांग योग से परमात्मा के समीपस्थ होना। उसको सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामी रूप से प्रत्यक्ष करने के लिए जो-जो काम करना होता है वह-वह सब करना चाहिए।

तत्राऽहिंसा सत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥ (साध० सू० ३०)

इत्यादि सूत्र पातञ्जल योग शास्त्र के हैं। जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिए यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे, सर्वदा सबसे प्रीति करे, सत्य बोले, मिथ्या कभी न बोले, चोरी न करे, सत्य व्यवहार करे, जितेन्द्रिय हो, लम्पट न हो और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे। यह पांच प्रकार के यम मिल के उपासना योग का प्रथम अंग है। (सत्यार्थप्रकाश, सप्तम समुल्लास)

शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥ योग सूत्र
(सा० सू० ३२)

रागद्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहे, धर्म से पुरुषार्थ से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे। सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढ़ावे, सत्पुरुषों का संग करे और 'ओ३म्' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्य प्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पांच प्रकार के नियमों को मिला के उपासना योग का दूसरा अंग कहाता है। इसके आगे छः अंग और हैं। (स० प्रकाश)

जो इन साधनों को करता है तब उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्यप्रति ज्ञान विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुँच जाता है।

परन्तु जनसाधारण के लिए इस अष्टांग योग का अभ्यास और अनुष्ठान करना कोई सरल कार्य नहीं है, उनके लिए भी ऋषि ने दिशा-निर्देश किया है। एक व्यक्ति महर्षि दयानन्द सरस्वती के पास आया और पूछने लगा कि क्या गायत्री का जप करना भी ईश्वर की उपासना है? महर्षि ने उस व्यक्ति को उत्तर में कहा कि हां गायत्री का पाठ करना ईश्वर उपासना तो अवश्य है परन्तु साथ ही चरित्र को भी गायत्री के अनुकूल बनाना अनिवार्य है। ईश्वर की उपासना का अर्थ है अपने गुण कर्म स्वभाव तद्वत् करना। जैसे वह न्यायकारी है तो आप भी न्यायकारी होवे। परन्तु जो केवल भांड के समान परमेश्वर के गुण कीर्तन तो करता जाता है और अपना चरित्र सुधारता नहीं है उसका स्तुति करना व्यर्थ है। महर्षि के कहने का अभिप्राय यही है कि ईश्वर हमारे मुख से अपनी प्रशंसा और गुणानुवाद सुनने का इच्छुक नहीं है और न ही उस परम पिता परमात्मा को हमारे द्वारा अपने विभिन्न नामों और गुणों का पाठ और जाप कराने की अपेक्षा है।

सन्ध्यादि करना भी ईश्वर उपासना है परन्तु है वह इसी अर्थ में कि हम आन्तरिक और बाह्य रूप से शुद्ध होकर सन्ध्या (उपासना) करने बैठें और शुद्ध मन से उस सृष्टिकर्ता परमेश्वर का ध्यान करें। प्रत्येक मन्त्र का पाठ करने के पश्चात् उसके अर्थ पर गहराई से विचार करें। ईश्वर से सद्बुद्धि, बल, सामर्थ्य, गुण और पराक्रम के लिए प्रार्थना करें। जो जैसी प्रार्थना करे उसको वैसे ही प्रयत्न भी करना चाहिए अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमेश्वर की प्रार्थना करे उसके लिए जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

अब प्रश्न यह है कि उपासना का फल क्या है। स्तुति से ईश्वर में प्रीति उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण कर्म स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना। (सत्यार्थप्रकाश) उपासना करने का आशय यह कभी नहीं होना चाहिए कि इसके करने से परमात्मा हमारे पक्ष में हो जायेगा और हमारे किये हुए अपराधों का दण्ड भोगने से हमें मुक्त कर देगा या उपासना से प्रसन्न होकर परमात्मा हमें बिना प्रयत्न किये ही धन, ऐश्वर्य, सुख और सम्पत्ति प्रदान कर देगा। इस भ्रान्ति को दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में शतपथ ब्राह्मण के एक वाक्य का अर्थ करते हुए स्पष्ट लिख दिया है।

(शेष पृष्ठ [illegible] पर)

विवेचना —

शंकर एक महान् तार्किक

(वैद्य श्री गुरुदत्त जी एम० एस० सी०, आयुर्वेदवाचस्पति, नई दिल्ली)

आज हिन्दु समाज मे स्वामी शकराचार्य के महान् तार्किक होने की ख्याति है। उदाहरण के रूप में श्री एस० राधा कृष्णन भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति भी स्वामी शकराचार्य को एक महान तार्किक (Great Logician) मानते हैं। वे उनको युक्ति करने में एक सिद्ध (Master of logic) स्वीकार करते हैं, परन्तु इतना लिखकर भी इन्होंने एक स्थान पर यह भी लिखा है।

It is held that, in an endeavour to preserve the continuity of thought, he attempted to combine logically incompatible ideas However creditable this may be to the elasticity of 'Sankara's mind or his spirit of genuine toleration, it can not but affect the logical rigour of his thought, and the theory of MAYA serves as a clock to cover the inner rifts of his system

S Radhakrishnan Indian Philosophy
Vol II P.P 471-472

अपने विचार प्रवाह को चालू रखने के यत्न मे युक्ति से असगत विचार उपस्थित करते हैं। भले ही यह बात गौरवपूर्ण हो और इससे स्वामी जी के मन की लचक एव सत्य हृदय से विपक्षी के लिये सहनशीलता प्रकट होती है, तथापि इससे उनके तर्क की श्रेष्ठता असिद्ध होती है। मायावाद उनके सिद्धान्तो मे छिद्रो को ढापने का यत्न करता है।'

श्री स्वामी जी की तर्क शक्ति की प्रशसा महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने भी की है। महर्षि दयानन्द जी ने शकराचार्य के अद्वैतवाद का खण्डन किया है, परन्तु लिखा है कि इनकी युक्ति अति प्रबल थी।

अत यह जिज्ञासा मन में उत्पन्न हो उठती है कि स्वामी जी के इस तर्क का दर्शन किया जावे जिसकी प्रशसा तो लोग करते हैं, परन्तु जिस तर्क के परिणामों से विद्वान सहमत नहीं हैं।

स्वामी शकराचार्य जी के मायावाद के विषय में श्री डा० राधा कृष्णन जी के निम्न शब्द उल्लेखनीय हैं —

An Indian tradition opposed to Sankara hold that he was a Buddhist in disguise and his MAYAVAAD but crypto Buddhism, In the Padma Puran Ishwara is said to have declared to Parvati, 'The theory of MAYA is a false doctrine, a disguised form of Buddhism

Yamunaacharya, the spiritual grandfather Ramanuja is of the same opinion which Ramnuja repeats Vijnan Bhikshu Commenting on the Sankhya system observes, "There is not a single Brahmasutra in which our bondage is declared to be due to mere ignorance As to the novel theory of MAYA propounded by persons calling themselves Vedantists, it is only a species of the subjective idealism (of Buddhists) The theory is not the tenet of Vedanta."

S Radhakrishnan Indian Philosophy
Vol II P 471

इसका भावार्थ यह है —

'भारत की एक परम्परा शंकर मत का विरोध करती है और यह मानती है कि शकर छुपा हुआ बौद्ध था। इस का मायावाद बौद्ध मत का रूपान्तर है। पद्म पुराण में शिव ने पार्वती को यह कहा लिखा है कि मायावाद एक मिथ्या बात है। यह बौद्ध मत का प्रच्छन्न रूप है" "।' रामानुज के दादा गुरु यमुनाचार्य जी का भी यही मत है। रामानुजाचार्य भी कहते हैं, 'विज्ञान भिक्षु साख्य मत की विवेचना करते हुए लिखते हैं ब्रह्म सूत्रो में एक भी सूत्र ऐसा नहीं कि जिसमें यह आपत्ति हो कि हमारे (जन्म-मरण के) बन्धन केवल अज्ञान के कारण हैं। यह माया का नवीन सिद्धान्त जिसे नवीन वेदान्ती प्रतिपादित करते हैं, यह बौद्धो की अवास्तविकता आदर्शवादिता है। यह (माया) वाद वेदान्त में कहीं नहीं है।

स्वामी शकराचार्य जी के वेदान्त सम्बन्धी मत का आधार ही मायावाद है। इस कारण जब स्वामी जी की तर्क शक्ति की प्रशसा सुनी जाती है तो इस तर्क शक्ति के दर्शन करने की लालसा उत्पन्न होती है। विस्मय होता है कि वह तर्क ही क्या है जो मिथ्या परिणामों को उपस्थित करता है?

स्वामी जी ने प्रस्थान त्रयी पर भाष्य किया है इनमें ब्रह्म सूत्रों पर भाष्य सर्व विख्यात है और यह सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। अत हम ब्रह्म सूत्रो के भाष्य मे ही स्वामी जी महाराज के तर्कों का दर्शन करने का यत्न करगे। पुस्तक की प्रस्तावना एक प्रकार से पूर्ण ग्रन्थ का निचोड होता है। स्वामी जी ने भी ब्रह्म सूत्रो के भाष्य जिन्हे वे शारीरक भाष्य का नाम देते हैं, की प्रस्तावना लिखी है। वर्तमान लेख मे हम इसी प्रस्तावना के एक अश को लेकर स्वामी जी की तर्क शक्ति का दर्शन करेंगे। स्वामी जी ब्रह्म सूत्रो के शारीरक भाष्य के उपोद्घात् का आरम्भ इस प्रकार करते हैं।

युष्मदस्मत्प्रत्ययगोचरयोर्विषयविषयिणोस्तम प्रकाशवद्विरुद्धस्वभावयोरितरेतरभावानुपपत्तौ सिद्धाया तद्धर्माणामपि सुतरामितरेतरभावानुपपति इत्यतोऽस्मत्प्रत्ययगोचरे विषयिणि चिदात्मके युष्मत्प्रत्ययगोचरस्य विषयस्य तद्धर्माणां चा ध्यास, तद्विपर्यं येण विषयिणस्तद्धर्माणा च विषयेऽध्यासो मिथ्येयति भवितु युक्तम्,

अर्थात्" (स्वामी जी अपने उपोद्घात् को पूर्व पक्ष के कथन के रूप मे आरम्भ करते हैं। प्रश्न इस प्रकार लिखा गया है 'युष्मत् और अस्मत्, अन्धकार और प्रकाश के समान परस्पर विरोधी हैं। इन (युष्मत् और अस्मत्) विषयी के विषय भी परस्पर विरुद्ध स्वभाव वाले हैं। इनकी इतरेतर भाव से अनुपपत्ति (न उपस्थिति) सिद्ध है। इसी प्रकार इनके धर्मों की भी परस्पर अनुपपत्ति है। इस कारण अस्मत् की विषय भूत, इसके विषयो के धर्मों का अध्यास एव इसके विपरीत विषय मे और उसके धर्मों में विषयी का अध्यास मिथ्या है।

यह पूर्व पक्ष मे लिखा गया है। इसका उत्तर स्वामी जी देंगे। परन्तु पहले प्रश्न को समझ लिया जाये तो स्वामी जी के उत्तर का मूल्याकन किया जा सकेगा। हमारा यह कहना है कि यह प्रश्न ही ऐसे ढग से किया गया है कि जिससे पाठको के मन मे विचारणीय विषय का ही भ्रम उत्पन्न हो जाये।

आइये, देखें कि किस बात को मिथ्या कहा गया है? इस प्रश्न को समझने के लिये युष्मत् और अस्मत् का अर्थ समझ लेना होगा।

अस्मत् से स्वामी जी का अभिप्राय उस चेतन तत्त्व से है जिसे जन साधारण परमात्मा के नाम से जानते हैं। युष्मत् से स्वामी जी का अभिप्राय कार्य रूप जगत् है। इसमे जन साधारण का जड तत्त्व माना जाता है और साथ ही भूत अर्थात् प्राणी भी माने गये हैं।

स्वामी जी युष्मत् को माया (मिथ्या भ्रम) अर्थात् कुछ न होना, मानते हैं। वास्तव मे यह ही सिद्ध करने की बात है कि चराचर जगत् मिथ्या भ्रम है अथवा अस्तित्व रखता है? इस जगत् को तो हम देखते हैं। इसको मिथ्या सिद्ध करना ही स्वामी जी के अद्वैतवाद का मुख्य कार्य है और अपने प्रश्न कर्त्ता से यह बात पहले ही स्वीकार करवा ली है कि युष्मत् अन्धकार समान है। अन्धकार प्रकाश के अभाव को कहते हैं। अतएव हमारा यह मत है कि जो दुर्बल, असिद्ध विचार हैं उसको प्रश्न मे न रख कर घूम-घुमाव से यह प्रश्न रखा गया है जिसको स्वामी जी स्वय मानते हैं।

अस्तु, देखें स्वामी जी के पूर्व पक्ष का अभिप्राय क्या है? विषय और विषयी से अभिप्राय है गुण और गुणी का। पदार्थ मे गुण रहते हैं। गुण पदार्थ को छोडते नही। पदार्थ और गुण का स्थायी सम्बन्ध है।

धर्म गुण से पृथक् वस्तु है। धर्म पदार्थ के कर्म का सूचक है। जिसके कारण कार्य की सिद्धि हो वह वस्तु का धर्म है।

शक्कर चखने पर मीठी लगती है। मीठा लगना कर्म है। इस कर्म में कारण शक्कर का मीठापन उसका गुण है। कर्म से धर्म का ज्ञान होता है। अत मुख को मीठा कर देना शक्कर का धर्म है।

दूध देने वाले जन्तु को स्तन्य कहते हैं। स्तन्य जन्तु का धर्म है और यह धर्म दूध देना कर्म उत्पन्न करता है। जो जन्तु दूध नहीं देते, वे स्तन्य नहीं। गुण का धर्म से सम्बन्ध है और धर्म का कर्म से कर्म का अभाव धर्म के अभाव को प्रकट करता है, परन्तु गुण के अभाव को प्रकट नहीं करता। गुण जब कर्म करने लगता है तो पहले धर्म का स्वरूप प्राप्त कर लेता है। जैसे माँ बच्चे को दूध पिलाने की योग्यता रखती है तो वह स्तन्य है। किसी समय यह योग्यता नहीं भी रखती तब यह स्तन्य नहीं होती, परन्तु मनुष्य तो होती है और मनुष्य दूध पिलाने वाला जन्तु है। दूध पिलाने वाला होना उसका गुण है। अत द्रव्य मे गुण, गुण से धर्म और धर्म से कर्म, यह प्रक्रिया है।

प्रश्न कर्त्ता का पक्ष यह है कि कभी भी एक वस्तु का आभास अपने गुणो और धर्मों के साथ दूसरी वस्तुओ मे नही होता और नही हो सकता। अत यह कहना कि युष्मत् मे अस्मत् का आभास जिसे नवीन वेदान्ती अध्यास कहते हैं नही हो सकता।

अद्वैतवादियो का मत है कि प्राणो मे आत्मा (परमात्मा) का अध्यास होता है। पूर्व पक्ष यह है कि विषय और धर्म का अध्यास हो नही सकता। इस कारण विषय का भी अध्यास नही हो सकता। मान लीजिये कि दो कटोरो मे पीले भूरे रग की वस्तुएँ रखी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि दोनो में शक्कर है। एक कटोरे के पदार्थ के गुण और धर्मों से पता चला कि वह शक्कर है। रूप, रग देखकर यह कहा जा सकता है कि दूसरे मे भी शक्कर है, परन्तु जब उसके कर्म एतदर्थ उसके धर्म से पता चले कि वह मीठी नहीं तो यही कहा जायेगा कि एक का धर्म और गुण दूसरे में नही हैं। इस कारण दूसरे मे पहले का भ्रम नही हो सकता।

हमने यह बताया है कि प्रश्न ही व्यर्थ है। एक तो यह कि युष्मत् और अस्मत् परस्पर विरोधी नही। दूसरे का अभाव पहला है। दूसरा यह कि अध्यास का न होना तो परीक्षा करने के अर्थात् ज्ञान प्राप्ति के उपरान्त ही पता चलता है। इस ज्ञान प्राप्ति के पूर्व तो भ्रम ही हो सकता है। अत प्रश्न मार्मिक नहीं है। इस पर भी यह देखना चाहिये कि स्वामी जी क्या उत्तर देते हैं ?

तथाप्यन्योन्यस्मिन्नन्योन्यात्मकतामन्योन्यधर्मांश्चाध्यस्येतरेतराविवेकेनात्यन्तविविक्तयोर्धर्मधर्मिणोर्मिथ्याज्ञाननिमित्त सत्यानृते मिथुनीकृत्य, "अहमिदं" "ममेदम्" इति नैसर्गिकोऽय लोकव्यवहार ।

इसका अर्थ इस प्रकार है —

'इस पर भी अन्य-अन्य के धर्म और धर्मी के परस्पर मूल भेद में ज्ञान के अभाव मे एक का दूसरे में परस्पर स्वरूप तथा धर्म का अध्यास (भ्रम) सत्य और अनृत का मथुनीकरण होता है। इसमे यह "मैं हूँ" यह "मेरा है"। इस प्रकार का मिथ्या ज्ञान के निमित्त लोक व्यवहार होता है।

यह पूर्व पक्ष का उत्तर नहीं है। कारण यह कि उस प्रश्न में ज्ञानवान् और अज्ञानी की तुलना नहीं की गयी। प्रश्न का आशय यह है कि ज्ञानवान् के लिये अध्यास नहीं है। जो दोनो कटोरों में पीले एव भूरे पदार्थ का जिह्वा पर रख कर स्वाद ले चुका है उसको भ्रम नहीं हो सकता। वह तो जान जायेगा कि अमुक कटोरे में शक्कर है और अमुक कटोरे में नहीं है। अज्ञानी भले ही न समझे। ज्ञानवान् के लिए दोनो एक नहीं। दोनों भिन्न-पदार्थ हैं।

स्वामी जी ने भी वही बात कह दी है जो प्रश्न कर्त्ता ने पहले ही कही है। प्रश्न कर्त्ता ने कहा था कि क्योकि एक वस्तु के गुण और धर्म दूसरी वस्तु में नही होते। इस कारण अध्यास (भ्रम) नही हो सकता। यही बात दूसरे शब्दो में स्वामी जी ने मानी है कि जब दोनो वस्तुओ के गुणो और उनके धर्मों में मूल भेद का ज्ञान हो जाये तो भ्रम नही रहेगा।

हमारा कहना यह है कि अपने तर्क शक्ति की धाक जमाने के लिये पहले अपने मन की बात पूर्व प्रश्न वाले से कहलवा ली है और फिर स्वय उसी बात को दूसरे शब्दो में कह कर अपने को तार्किक सिद्ध करने का यत्न किया है।

मूल प्रश्न यह है कि दोनो पदार्थ युष्मत् और अस्मत् यथार्थ अस्तित्व रखने वाले हैं अथवा नही ? अद्वैतवादियो का मत है कि एक परमात्मा तो है और दूसरा (जगत्) नही है। वह मिथ्या है।

निष्कर्ष यह निकला कि एक वस्तु का भ्रम दूसरी में हो सकता है, परन्तु जब दोनो के स्वरूप और धर्मों में मूल भेद का ज्ञान हो जाता है तो भ्रम नहीं रहता। शक्कर और लकडी के बुरादे में इतरेतर (एक का दूसरे में) भ्रम हो सकता है परन्तु एक का धर्म मिठास है और दूसरे का धर्म फीकापन है।

यह दोनों के धर्मों में मूल भेद पता चल जाने से शक्कर और लकडी के बुरादे में अन्तर प्रतीत हो जायेगा और अध्यास (भ्रम) नही रहेगा।

अत पूर्व पक्ष ही सिद्ध रहा कि ज्ञानवान् के लिये दोनों पदार्थ पृथक्-पृथक् हैं। अज्ञानी को दोनो एक ही दिखायी देंगे।

स्वामी जी ने अपने उक्त उत्तर से तो यह सिद्ध कर दिया है कि परमात्मा का अध्यास चिदात्मा अथवा जगत् में दिखाई देता है। यह दोनों के धर्मों में मूल भेद न जानने से अध्यास है। अर्थात् अज्ञानी को चिदात्मा परमात्मा दिखायी देने लगता है। ज्ञानवान् को जो दोनों के धर्मों में मूल भेद जान जाता है वह दोनो को भिन्न-भिन्न देखने लगता है। जैसे ज्ञानवान् को शक्कर औ लकडी के बुरादे में भेद दिखायी देने लगता है।

यह तो स्वामी जी ने सब अद्वैतवादियो को अज्ञानी प्रकट कर दिया है। चिदात्मा मन, बुद्धि और आत्मा के सयोग को कहते हैं। मन और बुद्धि तो जड हैं। जीवात्मा इनमे चेतन तत्व है। यह जीवात्मा परमात्मा से भिन्न धर्म रखता है। दोनो के मूल धर्मों में अन्तर है। देखिये, उपनिषद् में लिखा है—

ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशनीशावजा ह्येका भोक्तृभोग्यार्थयुक्ता।
अनन्तश्चात्मा विश्वरूपो ह्यकर्ता त्रय यदा विन्दते ब्रह्ममेतत् ॥९॥
(श्वे० उ० १-९)

इसका अर्थ है कि दो चेतन तत्व हैं। एक ज्ञानवान् है और दूसरा अज्ञानी है। एक सामर्थ्यवान् है और दूसरा सामर्थ्यवान् नही है। अर्थात् परमात्मा और आत्मा के धर्मों मे मूल भेद प्रकट है। जो इस मूल भेद को नहीं जानते अर्थात् अज्ञानी हैं, वे परमात्मा और आत्मा को एक मानने लगते हैं। उनको परमात्मा का आत्मा में अध्यास होने लगता है और जो दोनो के धर्मों में उक्त मूल भेद जान जाते हैं, वे ज्ञानवान् हैं।

देखिये, तर्क करने में सिद्ध (Master of logic) कहाँ फँस गये ? वास्तव मे उक्त सत्य तो अनायास ही उनकी लेखनी से निकल गया है। उनका मायावाद मिथ्या है जिसे सिद्ध करने के लिये टेढी-मेढी बातें करते हैं।

परमात्मा के लक्षण भगवद् गीता मे लिखे हैं।

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमस परमुच्यते।
ज्ञान ज्ञेय ज्ञानगम्य हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥१७॥ (भ० गी० १३-१७)

परमात्मा परम प्रकाशवान है। अन्धकार से दूर है। वह ज्ञान स्वरूप है। जानने योग्य और सबके हृदय में स्थित है।

चिदात्मा न तो ज्ञान स्वरूप है और न ही सबके हृदय में स्थित है। अत दोनो के धर्मों में मूल भेद है। ज्ञानवान् दोनो को पृथक्-पृथक् मानते हैं।

इस प्रकार स्वामी जी ने अपने मत के मानने वालो को अज्ञानी बता दिया है। हमारा मत है कि स्वामी जी बौद्ध और जैन मत वालो की अधूरी जगत् मीमांसा का खण्डन करते-करते अपने वैदिक मत का भी खण्डन कर गये। यह किस कारण हुआ ? इसको बताना आवश्यक नहीं। इस पर भी इतना निश्चित है कि जो कुछ स्वामी जी ने प्रतिपादित किया है, वह वेद मत नहीं है। वह उपनिषदो का मत भी नही है। यदि उपनिषदो में कहीं भाषा की शिथिलता के कारण अथवा किसी अन्य कारण से कहीं भ्रम मूलक वचन आ गये हैं तो वह वेद विरुद्ध होने के कारण सम्मानित नही होने चाहियें।

वेद का मत है कि इस ससार में तीन मूल पदार्थ हैं। कहीं-कहीं उपनिषद् में इन तीनो को ही ब्रह्म कहा है। लिखा है—

"सर्वं प्रोक्त त्रिविध ब्रह्ममेतत्।"

सब कहते हैं कि ये तीन प्रकार का ब्रह्म है। स्पष्ट शब्द है "त्रिविध"। तीन प्रकार का। यह नहीं कि एक के तीन नाम हैं। यह तीन अनादि पदार्थ परमात्मा, जीवात्मा और प्रकृति हैं। तीनों मूल रूप मे अक्षर हैं, अनादि हैं और अनन्त हैं तथा अव्यक्त हैं। इनमें प्रकृति परिणामी है। अर्थात् इसमें परिवर्तन होते हैं। परमात्मा और आत्मा मे परिवर्तन नही होते। प्रकृति में इन परिवर्तनों के परिणाम बनते हैं और बिगडते हैं, परन्तु मूल प्रकृति अनादि अनन्त इत्यादि है। जीवात्मा असख्य हैं। जीवात्मा प्रकृति के परिणामी स्वरूपो का भोग करता है। परमात्मा साक्षी मात्र है, भोग नहीं करता। परमात्मा और आत्मा में यह मौलिक भेद एक के ज्ञानवान् और दूसरे के अज्ञानी होने के कारण हैं।

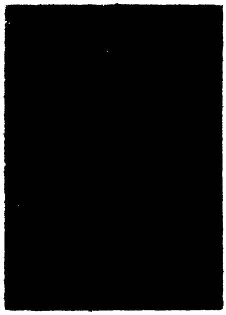
स्वामी जी की पूर्ण युक्ति में भूल यही है कि वह वेदो का तिरस्कार कर बैठे हैं। हमने दर्शन शास्त्रों के विषय में अपने पूर्व लेख में लिखा था कि सब दर्शन शास्त्र वेदो को आधार मान कर चलते हैं। वे वेदो में वर्णित सिद्धान्तो को युक्ति से सिद्ध करते हैं। क्योंकि सब वेदो को आधार मानकर युक्ति कर रहे हैं, इस कारण सब दर्शन शास्त्र एक ही बात बताते हैं।

स्वामी जी ने सम्भवत बौद्धो के दबाव के नीचे आकर वेदों को त्याज्य मान लिया है। इसी कारण वे युक्ति करने में असफल रहे हैं।

इस लेख में हमने यह सिद्ध किया है कि स्वामी जी को तर्क करने का ढंग नही आता था। इसमें एक कारण यह प्रतीत होता है कि स्वामी जी न्याय दर्शन को अमान्य कर बैठे हैं और तर्क करने का ठीक ढंग "न्याय" के ज्ञान के बिना सम्भव नहीं था। हमने ब्रह्म सूत्रों पर शाँकरिक भाष्य की कुछ पंक्तियाँ देकर यह सिद्ध कर दिया है कि स्वामी जी अपने ही मत का स्वयं खडन करने लगे हैं। स्वामी जी के शाँकरिक भाष्य के उपोद्घात में कुछ अन्य युक्तियाँ भी दी हैं, उनका हम अपने आगामी लेख में वर्णन करेंगे।

स्वर्गीय पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

[ले० पं० शान्तिप्रकाश (शास्त्रार्थ महारथी) शंकमपुरा गुडगांव छावनी]



पं० जी आर्यसमाज के महान् नेता और अद्भुत विद्वान् थे। सरलता उनमे कूट-कूटकर भरी हुई थी। कभी क्रोधावेश में न आते थे। बातें करते हुए मन को मोह लेते थे। सभी से उनका प्यार था। सभी उनको अपना और सबको वह अपना समझते और मानते थे।

प्रेम की वह सच्ची मूर्ति सदैव आँखो के सम्मुख घूमती-सी दिखाई देती है। सहस्रो के मनो मे उनकी स्मृति स्थिर रूपेण विराजमान है और रहेगी।

वह अपने पारिवारिकजना मे रहते हुये भी 'वसुधैव कुटुम्बकम्" की उक्ति को चरितार्थ कर रहे थे। राजा जनक के वचन के सदृश—"मिथिलायां दह्यमानायां किमे दह्यति" के जीवित प्रमाण थे अपने शरीर की कुछ चिन्ता थी तो इसलिये कि इसके द्वारा ससार का मार्ग प्रदर्शन किया जाय। परिवार से कुछ लगाव था तो इसलिये कि परिवार की शक्ति को भी संसार उपकार में विनियुक्त कर सकें।

इस वृद्धावस्था में वह कार्य करते थकते न थे। शरीर के सभी अग शिथिलत्व को प्राप्त कर चुके थे किन्तु बुद्धि आर्यधर्म के शुभचिन्तन में तीक्ष्ण से तीक्ष्णतर थी। हाथ कापते थे किन्तु वाणी बोलकर वेद के रहस्यों को खोलने मे निरन्तर धारा प्रवाहित हो रही थी। विचित्र शक्ति से सम्पन्न थे वह महामानव।

मेरा सिर उनके चरणो मे झुक जाता था। जब वह मुझे अपने प्यारे शब्दो में बुलवा लेते और शास्त्र की चर्चा करते थे।

कई बार उन्होने मुझे अपने घर पर ठहराया कि बातें करने और शास्त्रीय रहस्य खोलने मे सुविधा हो। शास्त्रार्थों मे पहुँचना उनके लिये दुष्कर था पुनरपि कई बार वह रिक्शा के साधन से पहुँचे और गद्गद प्रसन्न हुए।

वह झगडे के शास्त्रार्थों के विरुद्ध थे। यदाकदा इस पर विचार भी प्रकट कर देते थे किन्तु शान्तिपूर्ण शास्त्रार्थों को वह आर्यधर्म के लिये उपयोगी समझते थे। पादरी रलियाराम के साथ तीन घटे के शास्त्रार्थ मे वह अन्त तक बैठे रहे। युक्ति प्रमाण-समन्वित शास्त्रार्थों को वह आर्यसमाज की दैवी सपदा मानते थे। पादरी अब्दुलहककको मेरे साथ शास्त्रार्थ समर में उतारने के लिये उनका ही मुख्यरूप से हाथ था। पादरी साहिब उनके पास प्राय मिलने जाते रहते थे।

आश्चर्य है कि मौलवी भी उपाध्याय जी की मित्रमडली में शामिल थे और इनके विचारो को आदर से सुनते थे। वह घर मे बैठे हुए भी आर्यसमाज का एक अविकल सस्था दिखाई देते थे। ऐसा मैंने अनुभव किया था उनको।

मेरे मन ने उनके चरणो में सीस झुकाया और अपना महापुरुष, बुजुर्ग और सच्चा हितैषी स्वीकार किया। मैं उनकी दिव्यात्मा को श्रद्धापूर्ण भावो के साथ नमस्कार करता हुआ ऐसे अनेक महापुरुषों की ज्योति को आर्यसमाज के लिये आवश्यक समझता हूं। इस ज्योति के बिना आर्यसमाज शून्य के तुल्य होगा। अतः आओ ऐसी ज्योतियो का आह्वान करते हुए तुल्य महान् नेता, सच्चे आर्यसेनानी कर्मठ विद्वान्, नम्र महामानव, अद्भुत विचारक भ्रान्ति निवारक, अशान्ति विद्रावक, वेदशास्त्रों के मर्मज्ञ, निखिल शास्त्र निष्णात, सकल जगद् विख्यात, संयमी, यति, यशस्वी लेखक, अद्भुत विचारक, ऋषि तुल्य, मुनिशील, आस्तिक शिरोमणि महात्मा गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के चरण चिह्नों पर चलकर हम आर्यजाति के उत्थान और राष्ट्र कल्याण तथा विश्वनिर्माणार्थ कृतसंकल्प हो।

भूमि सुधार और भूमिहीनों का पुनर्वास

(भारत सरकार के पत्र सूचना कार्यालय द्वारा)

बेकार भूमि को खेती योग्य बनाने के दो लाभ हैं। इससे देश की खाद्य उत्पादन क्षमता बढती है और साथ ही, भूमिहीन खेतिहर मजदूरो की सामाजिक-आर्थिक समस्या भी सुलझती है।

अनुमान है कि देश मे लगभग ४ लाख ८८ हजार हेक्टर बेकार भूमि खेती योग्य है। यह १९३९ मे भारत सरकार द्वारा नियुक्त बेकार भूमि सर्वे समिति के सर्वे से पता चला है। किन्तु यह सर्वे २५० एकड से बडे टुकडो वाले क्षेत्रो तक ही सीमित था। तीसरी पंचवर्षीय योजना मे राज्य सरकार ने २५० एकड से छोटे टुकडो मे बेकार भूमि का एक और सर्वे किया था। इसके फलस्वरूप, यह पता चलता है कि लगभग २१ लाख हेक्टर अतिरिक्त भूमि खेती योग्य बनाई जा सकती है। वर्तमान सर्वे के पूरा होने से पहले और ऐसे क्षेत्रो का पता चलने की सभावना है।

बेकार भूमि को खेती योग्य बनाने और भूमिहीन खेतिहर मजदूरो को बसाने की केन्द्र-प्रायोजित योजना के अतर्गत मार्च १९६८ तक लगभग १ लाख ८३ हजार हेक्टर भूमि को खेती योग्य बनाया जा चुका है तथा भूमिहीन खेतिहर मजदूरो के १ लाख ८० हजार परिवारो को उन पर बसाया जा चुका है। यह काम तीसरी पचवर्षीय योजना की अवधि मे शुरू किया गया था।

इस योजना के अतर्गत विभिन्न प्रकार की भूमि के सुधार का काम होता है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे सुधार के खर्च म अतर है। किन्तु देश भर में भूमि के अधिक मूल्य को देखते हुए भूमि सुधार पर होने वाला खर्च निश्चय ही उपलब्धियो के मुकाबले ठीक है।

भूमि की प्रकृति के अनुसार स्थान-स्थान पर सुधार प्रक्रिया मे भी अतर होता है। कहीं तो सफाई या भूमि को समतल बनाने मे भारी मशीनो से भी काम चल जाता है। लेकिन कही फालतू जल मे प्रवाह के नियन्त्रण की समस्या सामने आती है। जिसमे कौशल और धैर्य की जरूरत होती है। भड़ौच जिले के तिथौर-करेली क्षेत्रो मे ३ लाख ७६ हजार रु० की लागत से २,५४० हेक्टर भूमि को खेती योग्य बनाने के लिए २४,९०० फुट लम्बा बाँध बनाना पड़ा।

केन्द्र और राज्य सरकार भूमि सुधार का आधा-आधा खर्च उठाती हैं जो अधिक से अधिक ७५० रु० प्रति हेक्टर तक ही होना चाहिए। सुधरी भूमि के अलाटियो को आरम्भिक खर्च के लिए अधिक से अधिक ७५० रु० प्रति परिवार के हिसाब से वित्तीय सहायता दी जाती है। इसका ७५ प्रतिशत अनुदान तथा २५ प्रतिशत ऋण के रूप मे होता है।

केन्द्र प्रायोजित योजना के अतर्गत मार्च १९६८ के अत तक १,८३,४६८ हेक्टर बेकार भूमि खेती योग्य बनायी जा चुकी है इसमे सबसे अधिक ५०,७३८ हेक्टर भूमि महाराष्ट्र मे तथा उसके बाद ४४,५५८ हेक्टर भूमि पजाब में है। इस भूमि पर एक लाख से अधिक भूमिहीन खेतिहर मजदूर और परिवार बसाए जा चुके हैं। सबसे अधिक, ४०,०३६ परिवार पजाब मे बसाए गए हैं। मार्च १९६८ तक भूमि सुधार का कुल खर्च तथा ऋण व अनुदान के रूप में बसाने का आरम्भिक खर्च लगभग ४ करोड ५९ लाख रु० था।

सम्प्रति केन्द्र प्रायोजित योजनाओ का लाभ अधिकतर भूमिहीन खेतिहर मजदूर को ही मिल रहा है। यह लाभ पाने वालो मे परियोजना स्थल के विस्थापित भूमिहीन कृषक या अपना भविष्य निर्माण करने के इच्छुक भूमिहीन खेतिहर मजदूर हैं।

ऐसे क्षेत्रो में खेतो का काम सयुक्त खेती सहकारी समितियो के द्वारा किया जा रहा है। सुधारी गयी भूमि के अधिकाश मे खेती हो रही है। अधिकाश स्थानो में अनाज की खेती हुई यद्यपि उत्तर प्रदेश और केरल की चुनी हुई बस्तयो में लगभग ५० हेक्टर प्रतिशत कृषि क्षत्र में नकदी फसल की खेती हुई है।

सभी पुनर्वास योजनाओ का मुख्य उद्देश्य अधिवासियो की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है। यह बडी उत्साहवर्द्धक बात है कि ऐसी भूमि के अधिवासियों ने खेती मे बडा उत्साह दिखाया है। अधिकतर स्थानो पर अधिवासियो ने सहकारी खेती समिमितियां बनायी हैं तथा उनके परिवारो के सदस्यो ने जो बेरोजगार या बिना पूरे रोजगार के थे, अब अपनी भूमि के विकास मे पूरी तरह लग गए हैं। एक साथ ही, उनका विश्वास है कि वे शीघ्र समीपवर्ती ग्रामो के निवासियो की बराबरी के स्तर पर पहुँच जाएंगे।

शतपथ क्या है ?

(स्वा० विवेकानन्द सरस्वती अध्यक्ष वर्णाश्रम संघ)

[श्रद्धेय स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती (पूर्व प० बुद्धदेव विद्यालंकार, विद्यामार्तण्ड) के प्रमुख शिष्य योग्य विद्वान् स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती का अत्यन्त उपयोगी लेख 'शतपथ ब्राह्मण का सामान्य परिचय रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। विद्वज्जन इस पर विचार करें और स्वाध्यायशील महानुभाव लाभ उठावें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद का व्याख्यान ग्रन्थ है, ऐसा महर्षि दयानन्दजी का मन्तव्य है। परन्तु जब हम इस ग्रन्थ का आद्योपान्त पारायण करते हैं तो हमें प्रतीत होता है कि यह तो यज्ञों का व्याख्यान ग्रन्थ है, जिसमे अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त जितने यज्ञ हैं उनकी व्याख्या है। इन यज्ञो की व्याख्या में यह बतलाया गया है कि इन्हें किस प्रकार किस समय और किस को करना चाहिये। इनके करने से क्या लाभ होता है इत्यादि। तो क्या फिर महर्षि ने जो इसको यजुर्वेद का व्याख्यान ग्रन्थ कहा वह उनकी मिथ्या कोरी कल्पना मात्र है ? नहीं ! कदापि नहीं !! वास्तव मे बात यह है कि सामन्यतया लोग यज्ञ शब्द का अर्थ अग्निहोत्रादि समझते हैं किन्तु यदि हम शब्द शास्त्र के अनुसार इस शब्द का अर्थ जानने का यत्न करें तो हमें ज्ञात होगा कि यज्ञ शब्द का अर्थ अग्निहोत्रादि ही नहीं। क्योंकि जिस यज् धातु से यज्ञ शब्द निष्पन्न होता है, उसका अर्थ "देव पूजा सगतिकरण और दान" (यज् देवपूजा सगतिकरण दानेषु) पा० धातु पाठ में ये तीन अर्थ हैं। किन्तु इन तीन अर्थों में भी देवपूजा और दान ये दो अर्थ तो संगतिकरण अर्थ के ही उपोद्बलक हैं। क्योंकि देवपूजा अर्थात् अपने से बड़े विद्वानादि का सत्कार जब कोई करता है, या अपने से छोटे या बड़े को दान देता है तो उसका फल तो यही प्राप्त होता है कि पूज्य और पूजक में दाता और जिसको दान दिया जाता है उनमें परस्पर सगतिकरण होता है। अर्थात् मेल होता है। वैसे तो शतपथ ने स्वय ही किसी को सशय न रह जाय इसलिये यज्ञ शब्द का अर्थ बताया है "यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म" अर्थात् जो श्रेष्ठ (उत्तम) कर्म है वही यज्ञ है। इसलिए वास्तव तथा शतपथ के अनुसार यज्ञ का परिष्कृत और वास्तविक अर्थ है कोई भी श्रेष्ठ सगठित समारम्भ। सगठित समारम्भों की ही व्याख्या शतपथ मे यथा स्थान की गई है। जिसे अश्वमेधादि यज्ञ कहते हैं। इन यज्ञो के रहस्य को समझने के लिये तीन बातों के ज्ञान की अत्यन्त आवश्यकता है। (१) मन्त्रों का अर्थ (२) यज्ञ की प्रक्रिया (३) मन्त्रार्थ और क्रिया का परस्पर सम्बन्ध। इन तीनों के मेल से ही शतपथ ब्राह्मण बना है। मन्त्रार्थ और यज्ञ की प्रक्रिया के परस्पर सम्बन्ध को समझाने के लिये महर्षि याज्ञवल्क्य को मन्त्रो के अर्थ भी दर्शाने पड़े क्योंकि मन्त्रार्थ के ज्ञान बिना यज्ञ की प्रक्रियाओं का समझना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव कल्प हो जाता। अत मन्त्रो की व्याख्या करनी पड़ी। इसलिये यज्ञ प्रक्रिया के व्याख्या के निमित्त से मन्त्रों की व्याख्या अपने आप हो गई। अतएव वेदमन्त्रार्थ द्रष्टा महर्षि दयानन्द ने जो इसे यजुर्वेद का व्याख्यान ग्रन्थ कहा वह सर्वथा उचित ही है। उसके लिये सन्देह के लिये अवकाश नहीं।

किन्तु शतपथ समझ में आवे कैसे ? यह एक समस्या है, यह एक पहेली है, जिसको न समझ करके मांसल यज्ञ अर्वाचीनकालीन मीमांसकों ने यज्ञ और शतपथ की जो दुर्दशा की उसके स्मरण मात्र से हृदय कांप उठता है और शरीर रोमांचित हो जाता है। अस्तु प्रकृतमनुसराम।" शतपथ को समझने के लिये पहले यह आवश्यक है कि ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना को समझ लिया जाय, ब्राह्मण ग्रन्थो की रचना को समझने के लिये यह आवश्यक है कि कल्प सूत्रों को समझ लिया जाय। वेद के छ अङ्गों में एक का नाम कल्प है ? पहले यही समझना चाहिये कि इसका नाम कल्प क्यों है। वेद की शिक्षा को घर-घर में पहुँचाने के लिये ऋषियों ने कुछ नाटकों की कल्पना की, जिनमें वेद की शिक्षाओं को स्थूल रूप दिया गया। इसका प्रमाण यह है कि भरत मुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में लिखा है "यजुर्वेदादभिनयम्" अर्थात् अभिनय की शिक्षा मैंने यजुर्वेद से ली है। परन्तु इन वैदिक नाटको मे तथा भरत मुनि के प्रचलित नाटको में गहरा भेद है। वह यह कि वैदिक नाटको में अभिनेता का काम अग्नि, जल आदि जड़ पदार्थों से लिया गया। ये पदार्थ प्रतीक कहलाते हैं, और जिस सूक्ष्म भाव का ये अभिनय करते हैं वह इन प्रतीकों का प्रत्यापनीय कहलाता है। इसलिये वैदिक नाटकों का नाम प्रतीक नाटक है। अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त जितने यज्ञ हैं उनका ही दूसरा नाम प्रतीक नाटक है और इन प्रतीकों का प्रत्यापनीय कोई न कोई वेद मन्त्रों का एक देश है। अब जब तक उन मन्त्रों का अर्थ न जान लिया जाय तब तक प्रतीको का कुछ भी समझ मे नहीं आ सकता, ब्राह्मण ग्रन्थों का काम है प्रत्येक प्रतीक का प्रत्यापनीय से क्या सम्बन्ध है यह स्पष्ट करके बताना। इसलिये उन प्रतीको के अर्थ को समझाने के लिये याज्ञवल्क्य ने पहिले मन्त्रो का अर्थ समझाया है पीछे अपने सूत्र की प्रक्रियो का। कल्प सूत्र की प्रक्रियाओं का याज्ञवल्क्य के शिष्य ने ग्रन्थ रूप दिया। वस्तुत यह भी याज्ञवल्क्य का ही ग्रन्थ है, परन्तु कात्यायन श्रौत सूत्र कहा जाता है।

अब जब तक हम प्रत्येक प्रतीक का प्रत्यापनीय क्या है यह नहीं समझ पाते तब तक लाख कोशिश करने पर भी शतपथ हमारी समझ से बाहर है, एक जन्म में ही नहीं किन्तु अनेक जन्मो में भी हम भगवती श्रुति के हृदय मन्दिर में पहुँचने के अधिकारी नहीं बन सकते। उसके बिना याज्ञवल्क्य का यह ग्रन्थरत्न हमारे लिये अज्ञात ही होगा। अत जब तक स्थूल प्रतीको के पीछे जो सूक्ष्मभाव उन प्रतीकों का प्रत्यापनीय है वह समझ मे नहीं आता तब तक यह कहना कि मैंने शतपथ को समझ लिया है, कोरा दम्भ होगा, केवल अदम्य होगा, आत्म वचना होगी वेद भगवान् के प्रति छल होगा, वैदिक संस्कृति के प्रति घोर अन्याय होगा, अक्षम्य अपराध होगा।

मैं इस प्रथम लेख माला मे सामान्यतया इस ग्रन्थ का परिचय देता हूँ। जिससे पाठको को इस ग्रन्थ का आभास मिले कि यह वास्तव मे क्या है ? यह ग्रन्थरत्न १४ काण्डों में विभक्त है जिनमें प्रत्येक काण्डों की विषय सूची निम्न है।—

प्रथम काण्ड—दर्श पौर्णमास याग। द्वितीय काण्ड—अग्न्याधान, अग्निहोत्र, उप-स्थान, पिण्ड पितृयज्ञ, आग्रायण, दाक्षायण, वैश्वदेव, वरुण प्रघास, साकमेध, महाहवि त्र्यम्बक यज्ञ, शुनासीर्य। तृतीय काण्ड—सोमयाग चतुर्थ काण्ड—सोमयाग। पञ्चम तथा सप्तम काण्ड—वाजपेय राजसूय। अष्टम नवम काण्ड—चयन विधा। दशम काण्ड — अग्निरहस्य। एकादश काण्ड—यज्ञरहस्य। द्वादश काण्ड—सौत्रामणि। त्रयोदश काण्ड—अश्वमेध। चतुर्दश काण्ड—बृहदारण्यकोपनिषद् अर्थात् ब्रह्म विद्या।

शतपथ पौर्ण मास याग से आरम्भ होता है इस याग में बालक के उत्तम मस्तिष्क निर्माण की विधि बतलाई गई है, जिस प्रकार की अङ्गुली के चन्द्रमा के रूप में दम्पती ने प्राप्त किया उसकी शारीरिक तथा मानसिक उन्नति किस प्रकार करके उसे पूर्णिमा का चन्द्र बनाकर राष्ट्र या समाज रूप महा यज्ञ में कैसे हवन किया जाय, गर्भाधान के पूर्व तथा पश्चात् माता पिता अपनी शारीरिक तथा मानसिक उन्नति किस प्रकार करें, जिससे आने वाली सन्तान पूर्ण सोम तथा पूर्णिमा चन्द्र के रूप में शीघ्रातिशीघ्र आ सके यह बताया गया है।

बालक उत्पन्न होने के पश्चात् नये गर्भाधान के पूर्व के काल को दर्शयाग या अमावस्या का याग कहते हैं। इस याग में बालक उत्पन्न होने के पश्चात् माता-पिता के अन्दर जो एक क्षीणता सी आ जाती है उसे किस प्रकार से दूर किया जाय। इसका विस्तृत वर्णन है। क्षीण अवस्था को पुनराप्यायित करने के लिये शारीरिक अवस्था का जितना ध्यान रखा गया है उससे कई गुना अधिक मानसिक अवस्था पर ध्यान दिया गया है। इससे ही पता लगता है कि महर्षि याज्ञवल्क्य आने वाली सन्तति के निर्माण का कितना ध्यान रखते थे। आखिर इतना ध्यान क्यों न देते। क्योंकि भावी समाज और राष्ट्र का निर्माण आने वाली पीढ़ियों को ही तो करना है। जब निर्माण करने वाले स्वय निर्मित नहीं होंगे तो वे राष्ट्र का क्या निर्माण करेंगे। जब तक याज्ञवल्क्य सरीखे तत्त्ववेत्ता महा विद्वान् इस भारत भू पर थे और उनकी वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक दर्श पौर्णमास की यज्ञ पद्धति भारत सर्वत्र घर-घर में फैली हुई थी, तभी भारत मा अश्वपति ऐसे परिश्रवान् सम्राट् को पैदा किया जिसने डंका चोट पूर्वक कहा कि— न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यप।

नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः ॥

अर्थात् न मेरे राज्य में कोई चोर है न जार है, न शराबी है, और कोई ऐसा भी व्यक्ति नहीं है जो अग्निहोत्र न करता हो या विद्वान् न हो, इतना ही नहीं—सबसे बड़ी बात तो यह है कि मेरे यहां कोई स्वेच्छाचारी लम्पटी पुरुष नहीं है, तो भला स्वच्छन्द विहारिणी कुलटा स्त्रियां भी कैसे हो सकती हैं।

धन्य हो ! याज्ञवल्क्य तथा तुम्हारा ग्रन्थरत्न शतपथ ? तुम्हारा अद्भुत पाण्डित्य तुम्हारी अलौकिक प्रतिभा तथा वैज्ञानिक सूझ-बूझ निराली है। तुम्हारे इस ग्रन्थरत्न के रहस्य का पता जिस दिन विश्व के विद्वानों को लगेगा उसी दिन तुम्हारी विलक्षण प्रतिभा पर अखिल विश्व के मनीषी विस्मित और आश्चर्य चकित होकर दांतों तले अंगुली दबावेंगे।

भारत को पुन याज्ञवल्क्य तथा अश्वपति के समकालीन भारत के रूप में देखने के लिए पूज्य गुरुवर्य स्वा० समर्पणानन्द जी (ब्र० पू० प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार) विद्यामार्तण्ड ने इस ग्रन्थ का उद्धार किया और इसका भाष्य भी लिखना प्रारम्भ किया। किन्तु दुर्भाग्य भारत का कि वे अभी पौने तीन काण्ड का ही भाष्य कर पाये थे कि प्रभु ने उन्हे उठा लिया। स्वामी जी का उत्तराधिकारी वर्णाश्रम संघ शीघ्रातिशीघ्र इस ग्रन्थ का प्रकाशन करने जा रहा है। जिन काण्डों का भाष्य अवशिष्ट है उसको भी पूरा करने के लिए हम कटिबद्ध हैं प्रभु हमारे दुर्बल मस्तिष्क तथा दुर्बल लेखनी में शक्ति प्रदान करे, जिससे हम उनकी बताई हुई पद्धति का अनुसरण करते हुए पूरा कर सकें।

इस भाष्य के पढ़ने से पूर्व जो ग्रन्थरत्न आज तक कराहते हुए पशुओं के रुधिर मांस और लोहित से लथपथ था। वह इस भाष्य को पढ़ने से राजनीति शास्त्र, समाज शास्त्र तथा अध्यात्म विद्या का अमूल्य भण्डार बन कर चमक उठेगा। आगे हम श्रद्धेय गुरु जी से प्राप्त ज्योतिर्मय ज्ञान प्रसाद को आपके लिये बांटते रहेंगे। कांटे में हमें सफलता कहां तक मिलेगी यह तो विज्ञ पाठक ही बतायेंगे क्योंकि—

त सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद् व्यक्ति हेतवे।

हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा ॥

आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर आर्यजनों के लिये शतपथ का बोधप्रद सन्देश

तानूनप्त्र-यज्ञ

पृ० वीरसेन वेदश्रमी, वेद-सदन इन्दौर

आर्यसमाज की स्थापना महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने जिस आशा से की थी, क्या हम उनकी उस आशा को पूर्ण कर रहे हैं ? यह प्रश्न सभी के मन में जागृत होता है। इस प्रश्न पर यदि आर्यसमाज स्थापना दिवस पर भी विचार नहीं करेंगे तो अन्य उपयुक्त अवसर भी हमे न प्राप्त होगा।

शतपथ ब्राह्मण के तृतीय काण्ड में एक कथा प्राप्त हुई और उस स्थिति से उद्धार का भी उपाय "तानूनप्त्र-व्रत" दृष्टिगोचर हुआ। अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उसी को स्थापना दिवस के अवसर पर इसीलिए प्रकट कराना आवश्यक हुआ कि यह शाश्वत उपाय है। सदा ही ऐसी विपरीत स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं और उनका उपाय भी हो सकता है। अत आज आर्यसमाज को भी अपने जीवन की रक्षा के लिये "तानूनप्त्र-व्रत-यज्ञ का शीघ्र ही अनुष्ठान करना चाहिये।

शतपथ ब्राह्मण मे कथा इस प्रकार वर्णित है —जब देवताओं ने आतिथ्य यज्ञ कर लिया तो उनमें झगड़ा हो गया। वे चार भागो मे विभक्त हो गये क्योंकि वे एक दूसरे की महत्ता को स्वीकार नहीं करते थे। इस कारण से अग्नि के साथ वसु हो गये, सोम के साथ रुद्र हो गये, वरुण के साथ आदित्य हो गये, इन्द्र के साथ मरुत हो गये और बृहस्पति के साथ विश्वेदेव हो गये। (बृहस्पति के साथ अवशिष्ट देव थे—वे निर्दलीय स्थिति के थे)। जब वे अलग-अलग दलो में विभक्त हो गये तो असुर राक्षस भी उनके बीच मे प्रविष्ट हो गये।

देवों को अनुभव हो गया कि हम तो पापी हो गये हैं क्योंकि असुर राक्षस हमारे मध्य प्रविष्ट हो गये हैं अत हम विभक्त होकर परस्पर विरुद्ध होकर झगड रहे हैं, इससे शत्रु हमारा अवश्य ही विध्वंस कर देंगे। विनाश की स्थिति को शीघ्र ही अनुभव करके एक सभा आयोजित करके निर्णय कर लिया कि हम अपने में एक की महत्ता स्वीकार कर लें। तदनुसार सब देवो ने इन्द्र की श्रेष्ठता स्वीकार कर ली।

देवों ने एक घोषणापत्र निर्माण किया और कहा कि—"हमें इसलिये आपस में झगडना नहीं चाहिये क्योंकि ऐसी स्थिति मे जो कोई हमारा दूर का भी शत्रु होता है वह हमारे मे प्रविष्ठ होकर जो कुछ उस शत्रु को प्रिय होता है उसी को वह हमसे करवाने लगता है और हम उसी को करने लगते हैं। इस प्रकार शत्रु हमारा ही विध्वंस कर देता है। अत: परस्पर दोषारोपण, आक्षेप, निन्दा, विवाद आदि हमें नहीं करना चाहिये। जो इस स्थिति को समझता है वह झगडा नहीं करता और वह वही कार्य करता है जो शत्रु को अप्रिय होता है। इससे शत्रु उसका नाश नहीं कर सकता है। अत हम सबको एक होकर, एक मन से परस्पर के विवाद को त्याग कर देना चाहिये।

इस घोषणापत्र को सब देवों ने बलपूर्वक उच्च स्वर से पूर्ण रूप से स्वीकार करते हुए घोष लगाये कि हमारी मैत्री अजर-अमर हो, कभी नष्ट न हो।

देवो ने अपने समस्त बल, सामर्थ्य और सैन्य को एकत्र किया और कहने लगे कि हमारी इस सन्धि का हममें से यदि कोई उल्लंघन करेगा तो वही नाश को प्राप्त हो जायगा। इस सन्धि घोषणापत्र का उपद्रष्टा (गवाह) बलवान् "तनूनपात" को बनाया गया। (इसलिये इस सन्धि का नाम तानूनप्त्र-व्रत हुआ) यह जो अन्तरिक्ष मे बहने वाला है अर्थात् वायु है वही बलवान् तनूनपात हैं। यही प्रजा का उपद्रष्टा है क्योंकि यह प्राण और उदान होकर प्रत्येक शरीर मे प्रविष्ट है।

"तानूनप्त्र-व्रत" कर्म के द्वारा देवो का झगड़ा शान्त हो गया और वे इच्छा करने लगे कि यह जो हमने एक दूसरे की निन्दा की है उसका प्रायश्चित होना चाहिये। अब तक आज से पूर्व उन्होने कोई प्रायश्चित नहीं रखा था, इसलिये उन्होने अवान्तर दीक्षा प्रचलित की। अग्नि के द्वारा अपने को चारों ओर से आवृत करके तप और दीक्षा से अपने को आवृत कर लिया।

जब देव दीक्षित हो गये तो कोई यज्ञ के लिये समिधा लाते, कोई हवि लाते, कोई मन्त्रोच्चारण करते और कोई वेदमन्त्रो का स्वाध्याय प्रवचनादि करते। असुर राक्षसों ने भी देवरूप धारण करके समिधा लाना, हवि लाना, मन्त्रोच्चारण, स्वाध्याय प्रवचनादि कार्य उनके मध्य प्रारम्भ कर दिया और वे देवो को मारने लगे। प्रत्येक एक दूसरे पर आक्षेप करता कि तुमने मेरा अहित किया, तुमने मारा। परन्तु अग्नि ने किसी को भी नहीं कहा और न अग्नि से ही किसी ने ऐसा कहा।

देवो ने अग्नि से पूछा कि क्या तुमसे भी किसी ने कहा है कि तुमने मारा या तुमने किसी से कहा कि तुमने मारा। अग्नि ने कहा कि न मैंने किसी से कहा और न मुझसे ही किसी ने कहा है।

देवों ने जान लिया कि यही हमारे मध्य ऐसा है जो राक्षसो को मार सकता है। अत हमें भी इसी का रूप धारण करना चाहिये। इससे हम राक्षसो से बच सकेंगे। तदनुसार उनने अग्नि का रूप धारण किया और राक्षसो से बच गये और स्वर्ग (सुख विशेष) प्राप्त किया। इसलिये जो भी अग्नि का रूप धारण करता है वह राक्षसो से बच जाता है और (सुखविशेष) प्राप्त करता है। इसके निमित्त उसे आहवनीय अग्नि पर समिधा रखकर अवान्तर दीक्षा प्राप्त करनी चाहिये।

यह कथा आज भी वेदों को परम धर्म मानने वाले देवों-आर्यविद्वानो-में भी उसी प्रकार घटित हो रही है। आर्यसमाज, आर्यप्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक सभा तथा आर्यसंस्था आदि सभी मे अनेक प्रकार के झगडे व्याप्त हो गये हैं। क्या आर्यजन, आर्यनेता एव पदाधिकारी "तानूनप्त्र यज्ञ" को करके देवत्व भाव का परिचय संसार को नही दे सकते हैं ? जो झगडने का परामर्श देता है, जो दूसरे की प्रतिष्ठा को सहन नही कर सकता और जो दूसरों की निन्दा ही करता है वह चाहे हमारे मध्य कितना ही बडा नेता, धर्माधिकारी, विद्वान्, शास्त्रार्थ महारथी भी हो वह पूर्ण असुर-राक्षस है। उसको तुरन्त अपने से पृथक् कर दें और उसके परामर्श पर कदापि न चलें। नही तो हमारा पूर्ण विनाश हो जायगा। जिनके मध्य झगडा है वे ही परस्पर एकत्र होकर वार्तालाप करें। उनके परामर्शदाता नही होने चाहिये। वे परामर्शदाता ही झगडो के जीवनदाता हैं। प्रत्येक अपने को निर्दोष न समझे। दूसरों के दोषों को देखने के स्थान पर अपने दोष का दर्शन एवं दूसरो के गुणो का वर्णन करें। निन्दा कथन एवं श्रवण से अग्नि की तरह पृथक् रहे। अपने पूर्व कृत दोषो के लिए प्रायश्चित करे। तभी हम आर्यसमाज का हित करते हुए आर्यसमाज की स्थापना भूमण्डल में कर सकते हैं।

गतांक से आगे

किसान

(श्री मोतीचन्द्र पाण्डेय, लखौलिया (बलिया)

जब देखी थी कुटिया तेरी, इच्छा रहने को थी मेरी,
थी लिपी-पुती-अति स्वच्छ सुघर, था नैसर्गिक सुषमा का घर।
पाया सुख उसके दरम्यान।
हे जगती की जान किसान ॥

था पड़ा कहीं मिट्टी का घट, तो टंगे कहीं पर थे कुछ पट,
मैंने भी मन चाही पाली, थी पास रखी तेरी थाली।
उसमें जौ का रखा पिसान।
हे जगती की जान किसान ॥

थी मडई सुन्दर द्वार सजी, चौकी थी उसमें एक पड़ी,
लौकी के नारे फैल रहे, नादों पर खाते बैल रहे।
खाई चर कर घास सुजान।
हे जगती की जान किसान ॥

कौं बछड़े की भी खाट रही, इक छोटी सुन्दर खाट रही,
था पास रखा पशु का चारा उसको था खाय रहा पाड़ा।
पशु थे बैठे सभी अनजान।
हे जगती की जान किसान ॥

मैंने जब भीतर ओर लखा देखा दधि का का था पात्र रखा,
थी रखवाला था उस बस्ती में गृह स्वामिनि तेरी पत्नी है ॥
साथ रखा था एक मचान।
हे जगती की जान किसान ॥ —क्रमशः

आर्यो जागो! उठो!! कर्त्तव्य पालन करो!

(श्री [illegible] शर्मा कवि-कुटीर [illegible], राजस्थान [illegible])

श्रेष्ठतम संसार में जिसके सर्वदा कर्म्म हो।
सर्वहितकारी सनातन मान्य वैदिक धर्म्म हो॥
"आर्य" कहलाता वहि मत दम्भ कर मिथ्या मरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

श्रेष्ठ पुरुषों का बना समुदाय आर्यसमाज है।
पच नहीं सकता इसी में दुष्ट दानव राज है॥
महर्षि! द्वारा बताये मार्ग हित जीयो मरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

जानते सब प्राणियों के अंग सम्यक् रूप से।
प्रेरणा शक्ति बिना निश्चेष्ठ होत अनूप से॥
हठ-दुराग्रह की भट्ठी के बीच पड़ मत जल मरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

संस्थाओं में शिरोमनि आपका स्थान है।
शुद्ध मस्तिष्क चाहिये फिर क्यों न? विकृति हान है॥
स्वार्थ से निर्लिप्त रह वेदोक्त आदर्शता धरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

शुद्ध सिर से पाय तक होता सुचारु काम है।
विकृति आ जाय तो सब चेष्टा हो वाम है॥
स्वयं देख समाज को भी नाश ही समझो डरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

देखीये इतिहास के अध्याय पन्ने खोल है।
पता सब लग जायगा कह रहे मानो बोल हैं॥
देखते प्रत्यक्ष प्रतिदिन दुष्ट भावों को हरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

आज आर्य्य देश की नैया भँवर में है फँसी।
सोचिये गंभीरता से छोड़ कर रस्सा-कसी॥
प्रार्थना विनम्र हमारी विश्व हित सम्मुख धरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

वेद और समाज के सद् प्रेरणा ऊपर चलो।
हार अथवा जीत पर न कीजिये हुल्लड़ हलो॥
स्वार्थ की होली जला न ध्यान अड़ी का धरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

हो यदि सच्चे समाजी कर दिखावो काम को।
रख सदैव ईमानदारी तज उपाधि नाम को॥
हो नहीं "सम्मर्थ-सचेतक" पद बिना हठ पथ हरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

स्वयं सुहृदय टटोले और खोजें दोष को।
कहाँ तक निर्लिप्त है हम त्याग सौंपे कोष को॥
आग्रह करता हूँ सभी को "बढ़कर" ऋषि किंकरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

भूलना कर्तव्य पथ करना कराना नाश है।
देख कर हँसते विपक्षी जल रहा आवास है॥
व्यर्थ है झगड़ा पदों का काम की खातिर लड़ो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

आर्य्य-संन्यासी प्रचार कमर कस आवे बढ़े।
हाथ चुप किस भाँति बैठे पड़ रहे विघटन गढ़े॥
देखते कब तक रहोगे खड़ा चितन पर हरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

वेद ऐसे कह रहे हैं, "सत्य" बहरे कान खोले।
किंतु उल्टा न्याय-निष्ठा न यदि विद्वान् बोले॥
चार दिन की चाँदनी है जरा ईश्वर से डरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

ओ३म् की पावन पताका आर्य्यो कर में उठावो।
वेद ऋषि संदेश की जा अखण्ड-घर घर में जगावो॥
सत्य की हत्या करो मत तोड़ "हठ" अंजर धरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

अन्त क्या? होके रहेगा कहो यह किसको पता है।
हे प्रभु करे पार नैया हाथ सब तेरे सत्ता है॥
दे सभी को शुद्ध मेधा शरण में तेरी पड़ो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

कौन? जलाती आग में अपना कलेवर झोंक देवे।
अमर हो बलिदान देकर प्रलय ज्वाला रोक देवे॥
अगम मेरी भावना सुन: वह अमर आवश्यकता हरो।
आर्य्यो जागो! उठो!! कर्तव्य का पालन करो॥

वेदप्रचार विभाग का संक्षिप्त कार्यविवरण

शरत ऋतु में सभा ने ग्राम प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया। इन दिनो जिला गुरुदासपुर के निम्न ग्रामो मे प्रचार हुआ है —

१—श्री रामनाथ मण्डली ने जिला का कोई भी प्रमुख स्थान नही छोड़ा जहाँ प्रचार न किया हो। कतिपय स्थानो के नाम इस प्रकार हैं —

१—गुरुदासपुर, छीना, बटाला, डेरा बाबा नानक, फतहगढ चूड़िया धर्मकोट रन्धावा भागोवाल सुचानिया, दीनानगर, दीदा, अवखा, घरोटा दोबवच्छी, सिहोवाल परमानन्द, छोया कलेसर, फूल प्यारा कतलौर, सारामड और माजरा आदि।

इसके अतिरिक्त १५ फरवरी से ३ मार्च तक श्री यात्री मण्डली ने आर्य-समाज भार्गव कैंप जालन्धर, गढाकैंप और बस्तीशेख, तथा अन्य स्थानो में २० दिन प्रचार किया।

इसी सप्ताह माजरी कनियाल और नरोट जयमल सिंह में तीन स्थानो पर उत्सव हो रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश में श्री प० बलराज जी ने निम्न स्थानो पर प्रचार किया —धाड़िया, मकहोटी, मानगढ, बासू इत्यादि।

प्रचार कार्य में ठाकुर जोतसिंह ठा० प्रसन्नसिंह, इत्यादि महानुभावो ने तन मन धन से सहयोग दिया हम हृदय से इनके आभारी हैं।

आर्यसमाज सालवन जिला करनाल का उत्सव २८ फरवरी से १-२ मार्च को बड़ी धूमधाम से मनाया। सभा की ओर से श्री प० हरिदेव जी, रामनाथ जी, प० निरजनदेव जी अधिष्ठाता वेदप्रचार, प० मुन्शीलाल मण्डली श्री बलराज जी श्री तेजभानु जी प्रेमी जी भजनोपदेशक उपस्थित थे। एक दिन के लिये प्रसिद्ध आर्य नेता, दार्शनिक विद्वान श्री प० जगदेवसिंह जी सिद्धांती, पधारे। एक भाषण श्री प्रो० रामप्रकाश जी का भी हुआ।

समाज ने वेदप्रचार निधि के लिये ३००रुपया दिया। और बेमसाल सेवा की। इलाका में प्रचार समिति बनी हुई है। वेद प्रचाराधिष्ठाता की अध्यक्षता में प्रचार समिति का वार्षिक चुनाव हुआ। प्रधान श्री जयमलसिंह जी तथा मन्त्री श्री प० भगवतदयाल जी चुने गये।

(निरजनदेव) अधिष्ठातावेदप्रचार

दिल्ली में आर्यसमाज स्थापना दिवस

आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज के तत्वाधान मे दिल्ली की समस्त आर्य समाजो तथा आर्य संस्थाओं की ओर से रविवार दिनांक २३ मार्च, ६९ अजमल खां पार्क, करोल बाग, नई दिल्ली में आर्यसमाज स्थापना दिवस आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् प० शिवकुमार जी शास्त्री, ससद्-सदस्य की अध्यक्षता मे मनाया जायेगा।—मन्त्री

आर्यसमाज भीमनगर का सिलान्यास

आर्यसमाज भीमनगर (गुड़गावा) १६ मार्च ६९ को आर्यसमाज स्थापना दिवस तथा शिलान्यास मनायेगा। वहाँ के अधिकारियो ने दिल्ली के आर्य बहनो एव भाइयो को उसमे सम्मिलित होने का निमन्त्रण दिया है।

—मन्त्री आर्यसमाज

२३ मार्च को शराब विरोधी दिवस

हरयाणा मद्यमांस समिति ने २३ मार्च रविवार को हरयाणा भर में शराब विरोधी दिवस मनाने का निश्चय किया है। १२ बजे से प्रत्येक नगर में मौन प्रदर्शन होगा फिर सार्वजनिक सभाये होगी। यह प्रदर्शन सांकेतिक होगा और यदि सरकार ने ठेके उठाने से पहले कोई घोषणा नही की तो घोर आन्दोलन से होने वाले परिणामो की जिम्मेदारी सरकार पर होगी।

—मन्त्री-हरयाणा आर्य युवक परिषद्

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का महोत्सव

१० अप्रैल से १३ अप्रैल तक बड़े समारोह के साथ मनाया जायगा जिसमें शिक्षा सम्मेलन राष्ट्रभाषा सम्मेलन, राष्ट्ररक्षा सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन विद्वत्कला परिषद्, आर्यकिशोर सभा आदि सम्मेलनो का आयोजन किया गया है। दीक्षान्त समारोह के लिए केन्द्रीय शिक्षा मत्री प्रभृति महानुभाव आमन्त्रित हैं। विद्वानो, सन्यासियो, महात्माओ तथा व्याख्याताओ के प्रवचनो से धर्मलाभ उठाकर लाभ उठाइये। —मन्त्री सभा

देवास आर्यसमाज का वार्षिक चुनाव

देवास आर्यसमाज के वार्षिक चुनाव में निम्न पदाधिकारी चुन लिये गये। प्रधान श्री ठाकुर सरदारसिंह, मन्त्री एवं कोषाध्यक्ष सदानन्द लेखक।

—मन्त्री आर्यसमाज देवास

आर्यसमाज पानीपत का वार्षिकोत्सव

१८, १९ २० अप्रैल ६९ को होना निश्चय हुआ है। इस अवसर पर आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् उपदेशक तथा भजन मण्डलियाँ पधार रही हैं।

—मेघराजार्य मन्त्री

आर्यसमाज सिकन्द्राबाद का वार्षिक निर्वाचन

आर्यसमाज सिकन्द्राबाद का वार्षिक निर्वाचन हुआ। प्रधान—श्री मुन्नीलाल जी माहेश्वरी, मन्त्री—श्री आनन्द प्रकाश जी, कोषाध्यक्ष—श्री छेदालाल जी वर्मा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री नारायनदास एडवोकेट।

मन्त्री—आनन्द प्रकाश

आर्यसमाज बड़ा बाजार (कलकत्ता) का निर्वाचन

चालू वर्ष के लिये निम्न पदाधिकारी निर्वाचित हुए—

प्रधान—श्री सूरजमल जी गुप्त मन्त्री—श्री गजानन्द आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री महावीर प्रसाद बसल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सत्यनारायण शर्मा।

मन्त्री—आर्यसमाज बड़ा बाजार

काशी आर्यसमाज बुलानाला, वाराणसी का वार्षिक चुनाव

सर्वश्री हरेन्द्रनाथ वर्मा प्रधान, श्री सम्पूर्णानन्द जी मत्री, भानुदत्त शास्त्री पुस्तकाध्यक्ष। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में अजमल खाँ पार्क में

विशेष वेद प्रचार

दि० १२ मार्च से २२ मार्च तक सायंकाल प्रतिदिन ३॥ बजे से ६ बजे तक मंत्रोच्चारण ६ बजे से ७ बजे तक

श्री पं० सत्यकाम शास्त्री एम० ए० वेद वाचस्पति

के विशेष भाषण होंगे। धर्म प्रेमी सज्जन यथा समय पधार कर सत्संग से लाभ उठावें। —मन्त्री आर्यसमाज करौल बाग नई दिल्ली

(१) ग्राम बोढ़ा (मेरठ) में २७३ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री इतवारीलाल आर्य ने ग्राम बोढ़ा जिला मेरठ मे एक शुद्धि सम्मेलन का आयोजन किया जिसमें २७३ ईसाइयो ने वैदिक धर्म की दीक्षा ली। शुद्धि सस्कार श्री प० हरप्रसाद जी वानप्रस्थी ने कराया। ग्राम में २ दिन वैदिक धर्म का प्रचार हुआ। श्री दीपचन्द जी भजनोपदेशक तथा श्री रामजीदास कलवाण प्रधान दलित वर्ग सघ मेरठ, श्री हरिदत्त शर्मा कार्याध्यक्ष भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा ने सम्मेलन में भाग लिया। श्री हरिदत्त शर्मा ने शुद्धि सभा की ओर से शुद्ध होने वाले भाइयो का स्वागत तथा ग्रामवासियो का धन्यवाद किया।

—द्वारकानाथ प्रधानमन्त्री

(२) ग्राम चरथावल में २१५ ईसाइयों की शुद्धि

श्री डालचन्द आर्य ने ग्राम चरथावल जिला मुजफ्फरनगर में एक शुद्धि समारोह का आयोजन किया। सम्मेलन धूमधाम से मनाया। अनेक विद्वानो के भाषण और भजन हुए। शुद्धि सस्कार श्री हरप्रसाद वानप्रस्थी ने कराया जिसमें २१५ ईसाइयो ने वैदिक धर्म की दीक्षा ली।

—द्वारकानाथ प्रधानमन्त्री

शराब के विरुद्ध प्रदर्शन

आर्यसमाज महिला एव बालकल्याण समिति गाँधी शताब्दी समारोह ने हलद्वानी जिला नैनीताल में सारे नगर में मद्यपान के विरोध में उस स्थान पर जाकर जहाँ जिला अधिकारी आगामी वर्ष के लिए शराब की दुकानो का नीलाम कर रहे थे विशेष प्रदर्शन किया और सरकार को हजारो हस्ताक्षर कराकर ज्ञापन भेजा गया। —मन्त्रिणी, नैनीताल

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से निवेदन

आर्योदय के ग्राहक महानुभाव जो विदेशों में रहते हैं, उनकी सेवा में आर्यमर्यादा नियमपूर्वक भेजा जा रहा है।

आर्योदय कुछ अपरिहार्य कारणो से बन्द करना पड़ा और आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से उसके स्थान पर आर्यमर्यादा प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारा आर्थिक वर्ष अप्रैल मे समाप्त हो रहा है। अत विदेशो में रहने वाले सभी ग्राहक महानुभावो को सेवा मे निवेदन है कि वे अपना वार्षिक शुल्क २०) रु० यथाशीघ्र आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के नाम बैंक या ड्राफ्ट द्वारा भेजने की कृपा करें। आशा है आर्योदय की भान्ति आर्यमर्यादा को भी अपना सहयोग एव स्नेह मिलता रहेगा।

विनीत

रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा [illegible] प्रधान

अपना वार्षिक शुल्क मनीआर्डर द्वारा भेजिये

ग्राहक महानुभावों से नम्र निवेदन

हम आर्योदय के सभी ग्राहको की सेवा में आर्यमर्यादा नियमपूर्वक भेज रहे हैं। जिनका वार्षिक शुल्क समाप्त हो चुका है उनके पास पत्र द्वारा शुल्क समाप्ति की सूचना दी जा रही है। अत प्रार्थना है कि अपना शुल्क शीघ्र मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें जिन ग्राहकों का शुल्क मनीआर्डर द्वारा प्राप्त न हो सकेगा, विवश होकर इनके पास ११) की वी पी भेजनी पड़ेगी। अत डाक के अधिक व्यय से बचने के लिये अपना शुल्क १०) मनीआर्डर द्वारा भेज कर सहयोग प्रदान करें। आर्यमर्यादा आपका अपना ही पत्र है। अत आपका सहयोग एव स्नेह मिलना ही चाहिए। पत्र का व्यवहार तथा धन भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

विनीत—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१

[आर्य?] प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये [illegible] सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible], [illegible], दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित।

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र



वर्ष १ } २ चैत्र वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार २३ मार्च १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
अंक १६ } सृष्टि सं० १९६०८५३०६८ ,, विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन स किं कुर्यादित्युपदिश्यते ॥

(फिर वह सभाध्यक्ष क्या करे इसका उपदेश किया है।)

विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्। शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन ॥ ऋ० १-५१-८ ॥

पदार्थः—(वि) विशेषार्थे (जानीहि) विद्धि (आर्य्यान्) धार्मिकानाप्तान्विदुषः सर्वोपकारकान्मनुष्यान् (ये) वक्ष्यमाणा (च) समुच्चये (दस्यवः) परपीडका मूर्खा धर्मरहिता दुष्टा मनुष्या (बर्हिष्मते) बर्हिष प्रशस्ता ज्ञानादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् व्यवहारे तत्सिध्यत्तये (रन्धय) हिंसय (शासत्) शासन कुर्वन् (अव्रतान्) सत्यभाषणादिरहितान् (शाकी) प्रशस्ता शाक शक्तिर्विद्यते यस्य स (भव) निर्वर्त्तस्व (यजमानस्य) यज्ञनिष्पादकस्य (चोदिता) प्रेरक (विश्वा) सर्वाणि (इत्) एव (ता) तानि (ते) तव (सधमादेषु) सुखेन सह वर्त्तमानेषु स्थानेषु (चाकन) कामये।

अन्वय —हे मनुष्य ! त्व बर्हिष्मत आर्य्यान् विजानीहि ये दस्यव सन्ति तांश्च विदित्वा रन्धयाऽव्रतान् शासत् यजमानस्य चोदिता सन् शाकी भव यतस्ते तवोपदेशेन सगेन वा सधमादेषु ता तानि विश्वा विश्वान्येतानि सर्वाणि कर्मणीदेवाह चाकन।

भावार्थ —मनुष्यैर्दस्युस्वभाव विहायाऽऽर्य्यस्वभावयोगेन नित्य भवितव्यम्। त आर्य्या भवितुमर्हन्ति ये सद्विद्याप्रचारेण सर्वेषामुत्तमभोगसिद्धये अधर्मदुष्टनिवारणाय च संतत प्रयतन्ते न खलु कश्चिदार्यसङ्गाध्ययनोपदेशैर्विना यथावद्विद्वान् धर्मात्माऽऽर्य्यस्वभावो भवितु शक्नोति तस्मात्सदैव सर्वैरुत्तमानि गुणकर्माणि सेवित्वा दस्युकर्माणि हित्वा सुखयितव्यम्।

भाषापदार्थ —हे मनुष्य ! तू (बर्हिष्मते) उत्तम सुखादिगुणो के उत्पन्न करने वाले व्यवहार की सिद्धि के लिए (आर्य्यान्) सर्वोपकारक धार्मिक विद्वान् मनुष्यो को (विजानीहि) जान और (ये) जो (दस्यव) परपीड़ा करने वाले अधर्मी दुष्ट मनुष्य हैं उनको जान कर (बर्हिष्मते) धर्म की सिद्धि के लिए (रन्धय) मार और उन (अव्रतान्) सत्यभाषणादि धर्म रहित मनुष्यो को (शासत्) शिक्षा करते हुए (यजमानस्य) यज्ञ के कर्त्ता का (चोदिता) प्रेरणाकर्त्ता और (शाकी) उत्तम शक्तियुक्त सामर्थ्य को (भव) सिद्ध कर जिससे (ते) तेरे उपदेश वा सङ्ग से (सधमादेषु) सुखो के साथ वर्त्तमान स्थानो मे (ता) उन (विश्वा) सब कर्मों को सिद्ध करने की (इत्) ही मैं (चाकन) इच्छा करता हूँ।

भावार्थ —मनुष्यो को दस्यु अर्थात् दुष्ट स्वभाव को छोड़कर आर्य्य अर्थात् श्रेष्ठ स्वभावो के आश्रय से वर्त्तना चाहिए। वे ही आर्य्य हैं कि जो उत्तम विद्यादि के प्रचार से सब के उत्तम भोग की सिद्धि और अधर्मी दुष्टो के निवारण के लिए निरन्तर यत्न करते हैं। निश्चय करके कोई भी मनुष्य आर्य्यों के सङ्ग उनसे अध्ययन वा उपदेशों के बिना यथावत् विद्वान्, धर्मात्मा, आर्य्य स्वभावयुक्त होने को समर्थ नहीं हो सकता। इस से निश्चय करके आर्य के गुण और कर्मों को सेवन कर निरन्तर सुखी होना चाहिये। (महर्षिदयानन्द-भाष्य)

महात्मा आनन्द स्वामी जी सफलता के मार्ग पर सब अभियोग वापस

नई दिल्ली १७-३ ६९ —सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद द्वारा ८-११-६८ को स्वीकृत प्रस्ताव के आधार पर सार्वदेशिक सभा, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा अम्बाला छावनी मे घोषित व्यक्तियो ने महात्मा आनन्द स्वामी जी को अधिकार दिया है कि वह आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का निर्वाचन कराकर सब झगडे समाप्त कराने की कृपा करें। उक्त अधिकार के आधार पर महात्मा जी ने आर्य नेताओं को ९-३-६९ को आदेश दिया था कि सब सम्बन्धित व्यक्ति १६-३-६९ तक अभियोग वापस लेने के प्रार्थना पत्र उनको दे दें। उसके अनुसार वह पत्र महात्मा जी के पास कल तक पहुँच गये थे। आज श्री एम० के० बन्सल, सब-जज दिल्ली तथा दिल्ली हाई कोर्ट मे चल रहे अभियोग वापस हो गए हैं। जालन्धर के न्यायालयो में तथा पजाब हाई कोट में चल रहे अभियोग भी १-२ दिनों में वापस हो जावेंगे। अभियोग वापिस लेने के सम्बन्धित पत्र दोनो स्थानो को भेज दिये गये हैं। महात्मा जी की इस सफलता पर सब ओर से हर्ष प्रकट किया जा रहा है।

उपरोक्त कार्य सम्पन्न होते ही महात्मा जी आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के निर्वाचन की योजना घोषित करेंगे। आर्य जगत् की महात्मा जी के शुभ कार्यों की ओर दृष्टि लगी हुयी है अत सब उनकी सफलता के लिये शुभकामना कर रहे हैं।

महात्मा आनन्द स्वामी जी का आदेश

नई दिल्ली —१८-३-६९ —महात्मा आनन्द स्वामी जी ने आर्य जगत् मे शान्ति स्थापित करने के लिये जो पग उठाये है उसमें उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। इसी पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिये महात्मा आनन्द स्वामी जी ने श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री सभा मन्त्री द्वारा रोहतक में निर्वाचन के लिये ३०-३-६९ को रखी बैठक तथा इसी कार्य के लिये डा० हरि प्रकाश द्वारा अम्बाला छावनी मे ६-४-६९ के लिये रखी बैठक रद्द करने का निम्न आदेश दिया है —

(१) आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का अपनी देख रेख में निर्वाचन कराने की योजना मैं बना रहा हूँ—निर्वाचन तक की व्यवस्था क्या होगी, इस पर भी विचार कर रहा हूँ—शीघ्र ही इसको घोषित कर दूंगा।"

(२) श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री द्वारा रोहतक में ३०-३ ६९ को निर्वाचन के लिये रखी बैठक तथा डा० हरिप्रकाश जी की ओर से इसी कार्य के लिये ६-४-६९ को अम्बाला छावनी में रखी बैठकों को मैं रद्द करता हूँ। अत दोनों महानुभावो को आदेश देता हूँ कि वह भी विज्ञप्ति द्वारा उक्त बैठक को रद्द करने की घोषणा कर दें और उसकी प्रतियां मुझे भेज दें।"

ह० :—आनन्द स्वामी सरस्वती

उपरोक्त आदेश के उपरान्त ३०-३ ६९ तथा ६-४-६९ को पंजाब सभा के निर्वाचन के लिये कोई बैठक न हो सकेगी।

(पृ० ३ पर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का नवीन आदेश अवश्य पढ़िये।

विद्या [illegible] कुछ [illegible]

[लेखक — श्री [illegible] एम० ए० [illegible] (रोहतक)]



महर्षि दयानन्द सरस्वती [illegible] राज ने यजुर्वेद भाष्य [illegible] विद्या और अविद्या के [illegible] सुन्दर रीति से समझा [illegible] प्रकाश नवम् समुल्लास [illegible] विद्या और अविद्या के [illegible] समझाया गया है। किन्तु [illegible] में तथा संगति में [illegible] स्वाध्यायशील आर्य [illegible] सन्देह बना रहता है। [illegible] कठिनाई को इस लेख के [illegible] करने का प्रयास किया जा रहा है। वेदमन्त्र इस प्रकार है—

> विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयँ सह ।
> अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥ य० ४०।१४ ॥

इस मन्त्र का सीधा सा अर्थ यह है कि जो विद्या और अविद्या दोनो को एक साथ जान लेता है। वह अविद्या से मृत्यु को तर कर विद्या से अमृत को प्राप्त करता है। यहाँ विद्या से अमृत प्राप्ति की बात तो ठीक समझ मे आती है। किन्तु अविद्या से मृत्यु को तरने की बात सर्वथा असगत प्रतीत होती है। अतः इसको समझने के लिए महर्षि के वेदभाष्य की शरण मे आइये। इस मन्त्र का ऋषि भाष्य इस प्रकार है—

पदार्थान्वयः —(य) विद्वान् (विद्याम्) पूर्वोक्ताम् (च) तत्सम्बन्धिसाधनोपसाधनम् (अविद्याम्) प्रतिपादित पूर्वाम् (च) एतदुपयोगिसाधनकलापम् (तत्) (उभयम्) (सह) (वेद) विजानीते स (अविद्यया) शरीरादिजडेन पदार्थसमूहेन कृतेन पुरुषार्थेन (मृत्युम्) मरणदुःखभयम् (तीर्त्वा) उल्लङ्घ्य (विद्यया) आत्मशुद्धान्तःकरणसंयोगधर्मजनितेन यथार्थदर्शनेन (अमृतम्) नाशरहितं स्वस्वरूपं परमात्मानं वा (अश्नुते)।

पदार्थान्वयभाषा —(य) जो विद्वान् (विद्याम्) पूर्व मन्त्र में कही विद्या (च) और उसके साधन उपसाधनों को तथा (अविद्याम्) पूर्व प्रतिपादित अविद्या (च) और उसके उपयोगी नाना साधन (तत्, उभयम् सह) उन दोनों को साथ जानता है (स) वह (अविद्यया) शरीर आदि जड पदार्थों के द्वारा किये गये पुरुषार्थ से (मृत्युम्) प्राण त्याग में होने वाले दुःख के भय को (तीर्त्वा) पार करके (विद्यया) आत्मा और शुद्ध अन्तःकरण के संयोग रूप धर्म से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान से (अमृतम्) अविनाशी अपने आत्मा के स्वरूप को अथवा परमात्मा को (अश्नुते) प्राप्त करता है।

भावार्थ —ये मनुष्या विद्याविद्ये स्वरूपतो विज्ञायानयोर्जडचेतनौ साधकौ वर्तत इति निश्चित्य सर्वं शरीरादिजडं चेतनमात्मानं च धर्मार्थकाममोक्षसिद्धये सहैव प्रयुञ्जते ते लौकिकं दुःखं विहाय पारमार्थिकं सुखं प्राप्नुवन्ति। यदि जडं प्रकृत्यादिकारणं शरीरादिकार्यं वा न स्यात्तर्हि परमेश्वरो जगदुत्पत्तिं, जीवः कर्मोपासने ज्ञानं च कर्तुं कथं शक्नुयात्। तस्मान्न केवलेन जडेन न च केवलेन चेतनेनाथवा न केवलेन कर्मणा न केवलेन ज्ञानेन कश्चिदपि धर्मादिसिद्धिं कर्तुं समर्थो भवति।

भावार्थभाषा—जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को जानकर, और इनके जड और चेतन पदार्थ साधक हैं, ऐसा निश्चय करके, शरीर आदि जड और चेतन आत्मा का धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए एक साथ ही प्रयोग करते हैं वे लौकिक दुःख से छूटकर पारमार्थिक सुख (मुक्ति) को प्राप्त होते हैं। यदि जड (अविद्या) प्रकृति आदि कारण वस्तु अथवा शरीर आदि कार्य वस्तु न हो तो परमात्मा जगत् की उत्पत्ति, तथा जीव कर्म, उपासना और ज्ञान प्राप्ति कैसे कर सके?

इसलिये—न केवल जड (अविद्या) के द्वारा और न केवल चेतन (विद्या) के द्वारा, अथवा न केवल कर्म (अविद्या) के द्वारा और न केवल ज्ञान (विद्या) के द्वारा कोई भी व्यक्ति धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि नहीं कर [illegible] ॥१[illegible] सत्यार्थप्रकाश [illegible] भी [illegible] अविद्या और विद्या [illegible] वेदभाष्य के समान अविद्या शब्द का अर्थ कर्मोपासना और विद्या [illegible] अर्थ यथार्थ ज्ञान किया है। किन्तु [illegible] के विषय में [illegible] विशेष लिखा है सो इस प्रकार [illegible]

"[illegible]मा शुद्ध [illegible] और परमेश्वर की उपासना [illegible] पार कोई नहीं [illegible] उपासना और [illegible] ही से मुक्ति और [illegible] कर्म, पाप [illegible] शरीर के [illegible] है। कोई भी [illegible] कर्म, [illegible] और [illegible] से रहित नहीं होता। इसलिये [illegible] और मिथ्या [illegible] को छोड़ [illegible] है।"

विद्यां च। विद्यया॥ वेद मन्त्र में विद्या शब्द का 'विद्यां च। विद्यया' इस रूप में दो बार प्रयोग हुआ है। ऋषि ने वेदभाष्य में 'विद्यां च' की व्याख्या—चेतन और उसके साधन, उपसाधन की है। अर्थात् विद्या शब्द का अर्थ चेतन है और चकार पद से विद्या के साधन और उपसाधन का समुच्चय किया गया है। विद्या अर्थात् आत्मा चेतन है। अन्तःकरण चेतन आत्मा का साधन है। यथार्थज्ञान चेतन आत्मा का उपसाधन है। अतः ऋषि ने इस मन्त्र के भाष्य मे 'विद्यया' पद की व्याख्या करते हुए, चेतन और उसके साधन, उपसाधन सब का संग्रह करके इस प्रकार लिखा है—"विद्यया—आत्मा और शुद्ध अन्तःकरण के संयोग रूप धर्म से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान से अविनाशी अपने आत्मा के स्वरूप को अथवा परमात्मा को प्राप्त करता है।

अविद्यां च। अविद्यया॥ वेद मन्त्र मे अविद्या शब्द का "अविद्यां च। अविद्या" इस रूप में दो बार प्रयोग हुआ है। ऋषि ने वेदभाष्य में अविद्यां च' की व्याख्या जड और उसके नाना साधन, की है। अर्थात् अविद्या शब्द का अर्थ जड है और मन्त्र में पठित चकार पद से उसके उपयोगी नाना साधनों का समुच्चय किया गया है। अविद्या अर्थात् वस्तु। जड वस्तु अर्थात् प्रकृति आदि कारण, शरीर आदि कार्य वस्तु। पुरुषार्थ (कर्म) और उपासना उसके उपयोगी नाना साधन हैं। अतः ऋषि ने इस मन्त्र के भाष्य में 'अविद्यया' पद की व्याख्या करते हुए जड, और उसके नाना साधन, सब का संग्रह करके इस प्रकार लिखा है—"अविद्यया अर्थात् शरीर आदि जड पदार्थों से किये गये पुरुषार्थ से।

ऋषि ने भावार्थ में 'अविद्या' की बड़ी आवश्यकता बताई है तथा लिखा है कि—यदि अविद्या=जड प्रकृति आदि कारण वस्तु अथवा शरीर आदि कार्य वस्तु न हो तो परमात्मा जगत् की उत्पत्ति नहीं कर सकता और जीवात्मा कर्म, उपासना और ज्ञान-प्राप्ति नहीं कर सकता। अतः 'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा' मृत्यु आदि लौकिक दुःखों को पार करने के लिये अविद्या (शरीरादि जड पदार्थ) का होना परम आवश्यक है।

अमृत अर्थात् परमानन्द का उपभोग विद्या (केवल आत्मा) से ही होता है। वहाँ अविद्या (जड शरीर) की आवश्यकता नहीं। अतः ऋषि ने [illegible] स्पष्ट लिखा है—'आत्मा से आनन्द को भोग"।

ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश (नवम समुल्लास)* में अविद्या का अर्थ कर्मोपासना और विद्या का अर्थ यथार्थ ज्ञान किया है। और वेदभाष्य में अविद्या

(शेष पृष्ठ ८ पर)

*इस स्थल पर ऋषि दयानन्द ने लिखा है— अनित्याशुचि दुःखानात्मसु नित्य-शुचिसुखात्मख्यातिरविद्या॥ (पात० द० साधन पादे सू० ॥५॥) यह योग सूत्र का वचन है।" सूत्र की व्याख्या करके आगे लिखा— "वेत्ति यथावत्तत्त्व पदार्थ स्वरूपं यया सा विद्या यया तत्त्वस्वरूपं न जानाति भ्रमादन्यस्मिन्नन्यन्निश्चिनोति यया साऽविद्या।" जिस से पदार्थों का यथार्थस्वरूप बोध होवे और जिससे तत्त्वस्वरूप न जान पड़े, अन्य में अन्य बुद्धि होवे वह अविद्या कहाती है अर्थात् कर्म उपासना अविद्या इसलिये है कि यह बाह्य [illegible] क्रिया [illegible] है [illegible] नहीं।"

उपर्युक्त योगदर्शन का सूत्र यजु० ४०।१२ के [illegible] में [illegible] है। ऋषि ने [illegible] है [illegible] किया है कि कर्म [illegible] किया है ज्ञान [illegible] नहीं [illegible] कर्म और उपासना [illegible] है इसी से [illegible] अविद्या है।

[illegible]

सम्पादकीय

आर्यसमाज स्थापना दिवस

महर्षि दयानन्द के मस्तिष्क में संसार एवं मानवसमाज का जो चित्र था, उसकी रूपरेखा का एकमात्र आधार ईश्वरीय ज्ञान वेद है। वेद प्रतिपादित मानव का आदर्श 'आर्य' नाम से प्रतिबिम्बित होता है। उच्चकोटि की मानवता के प्रतीक जितने भी गुण अथवा लक्षण हो सकते हैं, वे सब 'आर्य' शब्द से अभिप्रेत हैं। ऋषि का मनोरथ था, मानवमात्र को 'आर्य' बनाना और इसी मनोर की पूर्ति के लिए उन्होंने 'आर्यसमाज' नाम की संस्था को जन्म दिया। सारे संसार के लोग आर्य बन जायें और सारा मानव समाज आर्यसमाज बन जाये, यह कितना सुखद, सुन्दर एवं आह्लादक विचार है।

मानव समाज विभिन्न सम्प्रदायों और राष्ट्रों में बँट गया। सम्प्रदायवाद और राष्ट्रवाद की लपटों में जलती मानवता कराह उठी। अन्धविश्वास एवं अनाचार के दुर्दान्त दैत्य उसे निगलने लगे। पशुता का नग्नताण्डव होने लगा। देवभूमि कहलाने वाला भारत तो विशेषतः शोचनीय दशा मे फंसा हुआ था। धर्म की भूमिका में अधर्म फल फूल रहा था। देव मन्दिर पैशाचिकता की लीलास्थली बने हुए थे। पाखण्ड एवं आडम्बर के दलदल में फंसा भारतीय समाज छटपटा रहा था। विदेशी दासता की तीखी तलवार संस्कृति के सूत्र को काट रही थी, सभ्यता के स्रोत को सुखा रही थी, प्राचीन गौरव के सुमेरु का खण्ड-खण्ड कर रही थी : खोखले एवं सर्वथा अवैज्ञानिक विदेशी मत वैज्ञानिकता एवं बुद्धिवाद के नाम पर नये भ्रमजाल मे जाति को फसा रहे थे। जाति-पाँति की रूढ़ियों का घुन जातीय जीवन की शृंखलाओं को विशृंखलित कर रहा था।

ऐसे घोर अन्धकार अवसाद एवं अनुभूति शून्य युग मे महर्षि दयानन्द का विश्व प्रांगण में पदार्पण हुआ। उनके एक हाथ मे वेद की मशाल तथा दूसरे हाथ मे अखण्ड ब्रह्मचर्य का शस्त्र था। उन दोनों शक्तियो के भरोसे उन्होंने मानवता के शोषक सभी तत्त्वो को चेलेञ्ज किया। अगाध पाण्डित्य, अकाट्य तर्क तथा निर्भीकता की यह ओजस्वी मूर्ति जहाँ भी जाती थी, विरोधी शक्तियां धराशायी होती जाती थीं। क्रान्ति का यह देवता ससार में उथल-पुथल मचाता हुआ मानव जीवन की नौका को खे रहा था, भीषण जगलों मे भटकती जाति को सन्मार्ग दिखा रहा था। इसी उत्साह, भावना तथा उद्देश्य को आज से ९० वर्ष पूर्व उसने आर्यसमाज रूपी सस्था का सूत्रपात किया।

आरम्भ मे महर्षि का व्यक्तित्व उनकी कृति आर्यसमाज में पूरी तरह झलक रहा था। उनके द्वारा पैदा किये वेग से वह आगे बढ़ रहा था। उनका कार्यक्रम पूरा करने का संकल्प लेकर चल रहा था। वद का सन्देश जन-जन के मानस मे अकित करना और सारे समाज को वैदिक आदर्शों एवं मान्यताओं में ढालना उसका अतीव स्पष्ट लक्ष्य था। प्रत्येक आर्य इस लक्ष्य की पूर्ति को अपना उत्तरदायित्व समझता था। आर्यसमाज की गतिविधियाँ चहुंमुखी थी। समाज का कोई अग अथवा राष्ट्र का कोई क्षेत्र उसकी दृष्टि से बचा न था, उसका अदम्य कार्यक्रम सब ओर अपनी भुजायें फैला रहा था। अन्धकार भाग रहा था, पाखण्ड खण्ड-खण्ड हो रहा था। निराशा आशा मे बदल रही थी। आर्यसमाज ने समाज के रोग का निदान करके उसके मूल को छुआ था और ठोस उपचार आरम्भ किया था। वेद को समाज निर्माण की आधारशिला बनाने के उद्देश्य से सबसे पहले उसने गुरुकुल आदि शिक्षा संस्थाये खोलीं, जिनके द्वारा वेद के मर्मज्ञ विद्वान् प्रचारक पैदा किये गये। प्रत्येक आर्य के श्वास-प्रश्वास में वैदिक गन्ध समाया हुआ था और उसकी तन्त्री के प्रत्येक तार से वेद का सन्देश गूँजता था परन्तु आज हम इस लक्ष्य पर कहाँ पहुंचे, यह देखकर भारी उद्वेग होता है। वेद प्रचार के स्रोत में शिक्षणालय अब सूख रहे हैं। इन शोभिवृक्षों पर अब फल नहीं आते, वसन्त की छटा नहीं दिखाई देती। पतझड़ का बोलबाला है। इनमें से बहुत से जड़ से ही उखड़ गये। अनेक ठूंठ बने खड़े हैं और बचे-खुचे भी जीवन के रस के लिए तरस रहे हैं।

आर्यसमाज के पास वाणी एवं लेखनी के धनी एक-से-एक विद्वान् थे, जिन पर हमें उचित गर्व था। जो वहीं पर खड़े होकर चाहे जिनको ललकार सकते थे, पछाड़ सकते थे। प्रचार मच पर हमारा एकाधिकार था। हमारी वाणो एवं लेखनी का लोहा संसार मानता था। परन्तु आज वह क्षेत्र भी सूना होता आ रहा है। बची-खुची विभूतियाँ एक-एक करके कालकवलित हो रही हैं और कोई उनकी जगह लेने वाला दिखाई नहीं देता। आर्यसमाजियों की जिह्वा पर वेद की दुहाई तो बची है, परन्तु वेद वहाँ नहीं रहा। 'ओ३म्' की पताका तो जलसे-जलूसों में अथवा मन्दिरों पर फहराती दीखती है, परन्तु हृदयमन्दिरों में वह ढूँढने पर भी मिलनी सम्भव नहीं है। प्रत्येक आर्यसमाजी हर समय चलता-फिरता स्वयसेवी प्रचारक था, अब वह परम्परा समाप्त हो रही है। अनपढ़ जनता मे हम जाते नहीं, शिक्षित वर्ग में हमारी ओर कोई आकर्षण नहीं है।

ऐसी स्थिति में आर्यसमाज की शताब्दी मनाने की चर्चायें चल रही हैं। अभी छः वर्ष शेष हैं आर्यजगत् के सूत्रधार मिलकर सोचें कि किस प्रकार हम छूटते जा रहे मैदान पर छाये रह सकते हैं। वेद के प्रचार का महान् कार्य वर्तमान परिस्थितियों में किस प्रकार गतिशील हो सकता है, यही एक बहुत बड़ा प्रश्न हमारे सामने अंकित है। राजनैतिक दल-दल एवं भ्रान्ति में फँसे समाज को आज भी कही आशा की किरण दीख सकती है तो वह केवल आर्यसमाज है। अच्छा हो कि हम आर्यसमाज स्थापना दिवस पर आत्म निरीक्षण करें, अपना उत्तरदायित्व समझें, महर्षि के मन्तव्य एवं मनोरथ की गहरी अनुभूति हममे जगे और हम इन छः वर्षों में पुनः शक्ति का उपार्जन करके क्रान्ति की अगली शती में पैर रख सकें और संसार को एक नये क्रान्तिद्वार में प्रविष्ट करा सकें। —रघुवीरसिंह शास्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सम्बन्ध में महात्मा आनन्द स्वामी जी का दूसरा नवीन आदेश

आर्य प्रान्तीय सभाओं के जितने अभियोग आपस में इस समय तक न्यायालयों में चल रहे थे उनमें अधिकतर तो कल तक वापस ले लिये गये हैं और बाकी वापस लिये जा रहे हैं।

२—जब तक मैं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का निर्वाचन न करवा लूँ तब तक मैं आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब जिसके प्रधान प्रो० रामसिंह जी हैं उनको आदेश देता हूँ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के आधीन जितनी भी संस्थाएँ हैं, सभा कार्यालय, गुरुकुल, कालिज, स्कूल, पाठशालाएँ इत्यादि तथा जितने बेंकों में उनका लेन देन है कोई भी कार्य मेरी लिखित आज्ञा के बिना नहीं होगा। बेंकों में आज तक जितना धन है उसका ब्यौरा मुझे तत्काल देना होगा और आज के पश्चात् बेंकों से या नकद पड़े धन से, मेरी लिखित आज्ञा के बिना धन निकालना नहीं होगा और सभा का या संस्थाओं का व्यय मेरी लिखित आज्ञा के बिना नही होगा।

३—आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब जिसके प्रधान दीवान रामसरनदास हैं उनको मैं आदेश देता हू कि सभा के निर्वाचन होने तक मेरी आज्ञा के बिना किसी संस्था या सभा के कार्यालय पर अधिकार करने की चेष्टा न करें। इन सब संस्थाओं पर और सभा कार्यालय पर मैं स्वयं नियंत्रण करूँगा।

४—सभा के निर्वाचन के लिए दोनों सभाओं से वार्तालाप करके मैं स्थान और तिथि नियत करूँगा।

नई दिल्ली १८-३-६९ ह० : आनन्द स्वामी सरस्वती

३०-३-६९ को निर्वाचन के लिये रखी बैठक भंग

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रतिनिधियों को मैंने २८-२-६९ को एजेण्डा द्वारा सभा के निर्वाचन आदि के लिये रविवार दि० ३०-३-६९ को रोहतक में रखी बैठक की सूचना दी थी। महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेशानुसार उक्त बैठक को भग कर दिया गया है अतः अब ३०-३-६९ को बैठक न होगी। मैं पत्रों द्वारा भी सब प्रतिनिधियों को सूचित करने का प्रबन्ध कर रहा हूँ। दि०—१८-३-६९॥ रघुवीरसिंह शास्त्री (लोकसभा सदस्य) मंत्री आर्य प्रतिनिधिसभा पजाब १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्ष शिक्षा प्रणाली

(स्वामी वेदानन्द वेदवागीश)

,'आर्ष शिक्षा प्रणाली'' इन तीन शब्दो वाले एक समस्त पद में से यदि 'आर्ष' इस शब्द को हटा दिया जावे तो शब्द रह जाता है-''शिक्षाप्रणाली।'' शिक्षा प्रणाली मे अब वह ओज नही रहा जो ''आर्ष शिक्षा प्रणाली'' से टपकता था, किन्तु आर्ष शिक्षा प्रणाली'' के उच्चारण करते ही हमारा ध्यान एक अन्य शिक्षा प्रणाली पर भी चला जाता है, जिसे हम इस की विरोधिनी 'अनार्ष शिक्षा प्रणाली'' कह सकते हैं। इस प्रकार शिक्षा प्रणाली के दो स्वरूप हमारे सम्मुख आकर उपस्थित होते हैं—आर्ष शिक्षा प्रणाली और दूसरा अनार्ष शिक्षा प्रणाली।

आर्ष शिक्षा प्रणाली पर विचार प्रकट करने से इसके विपरीत गुण लिये हुये अनार्ष शिक्षा प्रणालो का बोध हो जायेगा, और अनार्ष शिक्षा प्रणाली पर लेखनी चलाने से आर्ष शिक्षा प्रणालो से सम्बद्ध बहुत कुछ बातें कहनी शेष दीख पड़ेंगी। अत आर्ष शिक्षा प्रणालो को ही अभिमुख रखते हुये मन को व्यापार मे लगाना अधिक श्रेयस्कर प्रतीत होता है, क्योकि इसके वर्णन से भावनाएँ पवित्र और उत्तेजित होती हैं एव उस अनार्ष शिक्षा प्रणाली का निराकरण साथ-साथ हो जाता है, जिसका आज बोल बाला है और जिसके भयङ्कर परिणाम भी किसी से छिपे नही हैं।

ऋषि से आर्ष शब्द बना है। जिसका अर्थ होता है-ऋषियो से सम्बद्ध। ऋषि का अर्थ दर्शाते हुये श्री यास्काचार्य कहते हैं—धर्म का साक्षात् किये हुये लोग ऋषि कहलाते हैं* और धर्म वेद का नाम है। इसका तात्पर्य यह हुवा कि वेद मन्त्रो के अर्थों का दर्शन करने वाले महानुभाव ऋषि के नाम व्यवहृत होते हैं।

सर्वथा इसी के अनुरूप लक्षण महर्षि गोतम के न्याय सूत्र का भाष्य करते हुवे वात्स्यायन मुनि ने भी किया है। केवल भेद इतना रक्खा है कि वे ऋषि के स्थान पर आप्त शब्द का प्रयोग करते हैं[1] इस से ऋषि और आप्त दोनो शब्द अर्थ की दृष्टि से समान ही हो जाते हैं।

आप्त वा ऋषि कैसे होते हैं यह बताने के लिये श्रीमान् वात्स्यायन मुनि का कथन है कि आप्त पुरुषो को सब विषयो का साक्षात् होता है। यह त्याज्य है और ये इसके साधन हैं। यह प्राप्त करने योग्य है और ये इसके प्राप्त करने के उपाय है। यह प्रकट करते हुवे वे प्राणियो पर उपकार किया करते हैं। अन्य प्राणी स्वय तो ज्ञानी हैं नही, उपदेश के बिना उनके ज्ञान का और कोई साधन भी नही। बिना ज्ञान के वे लेने की और छोडने की चेष्टा नही कर सकते तथा इसके बिना कल्याण नही। इस कारण महर्षियो ने सोचा कि अपने ज्ञान के अनुसार इन्हे हम हो पदार्थों की वास्तविकता का उपदेश कर दे, जिससे कि ये लोग त्याज्य का त्याग और ग्रहण करने योग्य का ग्रहण कर ले। इस प्रकार अपना कोई प्रयोजन न होने से ऋषिजन यथार्थ ही उपदेश करते हैं।[2]

इन ऋषियो के उपदेश का विषय वह ही होता है जो ईश्वर के रचे वेद मन्त्रो का है। इस बात को वेद पारगामो श्री यास्काचार्य ने ऐसे कहा है कि धर्म का साक्षात् करने वाले ऋषियो ने अपने उपदेश से वेदमन्त्रो के अर्थों का उन लोगो के लिये प्रकाश किया, जिन्हे उनका साक्षात्कार नहीं था।[3]

महर्षि दयानन्द एक पग आगे बढकर यह कहते हैं कि जिन्होने ऐसा किया वे ऋषि बन गये।[4] वेदमन्त्रो के उपदेश करने और उनके अर्थ-प्रकाशन मे उनका क्या प्रयोजन था? इसके उत्तर मे वे कहते हैं—उत्तरोत्तर वेदो के अर्थों का प्रचार करना ही उनका ध्येय था।

इससे अतिरिक्त कुछ ऋषियों ने दूसरी पद्धति यह अपनाई कि सर्वत्र भ्रमण करके वेदमन्त्रो के अर्थ प्रकाशन में जिन्हें रुचि नहीं थी, उन्होंने विद्या केन्द्रो में बैठ कर निघण्टु और निरुक्त का अबुद्ध जनों को भले प्रकार अच्छा अभ्यास कराया। वेद भी पढाए और वेदाङ्ग भी।[1] इस प्रकार के कृपालु ऋषि ही होते हैं।

ऋषियो के बिना कल्याण नही है—इस बात को महर्षि यास्क ने यूं बताया है कि एक समय की बात है—ऋषि लोग इस धराधाम से समाप्त हो गये, तब मनुष्य देवो से पूछने लगे—अब हमारा ऋषि कौन बनेगा? इस पर देवताओ ने उन्हे तर्क ऋषि प्रदान किया कि तर्क से मन्त्रो के अर्थ स्पष्ट हो जावेंगे।[2]

तर्क के सम्बन्ध मे महर्षि गोतम ने कहा है कि तत्वज्ञान के लिए जो ऊहा की जाती है, उसे तर्क कहते हैं।[3]

इस प्रकार ऋषि के विकल्प मे—अभाव मे तर्क को रक्खा। जिसका तात्पर्य यह हुवा कि तर्क से वह बात नहीं बन सकती, जो ऋषि से सम्भव है। ऋषि यथाभूत अर्थ को प्रकाशित करने मे समर्थ होता है और तर्क पदार्थ की वास्तविकता को प्रकट कर सके वा न भी कर सके, सन्दिग्ध है, क्योकि तर्क का आश्रय दो प्रकार से लिया जाता है। एक वेद शास्त्र का अनुगमन करते हुये और दूसरा वेदशास्त्र की अवहेलना करके। धर्म का ज्ञान वेद शास्त्र के अनुगामी तर्क से ही होता है, ऐसा मनु महाराज का वक्तव्य है।[4] यहा भी वेद शास्त्रो के जानने का ही प्राधान्य रहा। वेद शास्त्र हृदयगत होगे, तब उनके अनुसार किया गया तर्क दूसरो को बोध कराने में साधक बनेगा। महर्षि गोतम और वात्स्यायन ने भी न्यायदर्शन में ऋषियो को नहीं, अपितु अज्ञो को ज्ञान कराने के लिये तर्क का आश्रय लिया। इस प्रकार तर्क की अपेक्षा ऋषि का स्थान उच्च ठहरता है। ऋषि महानुभाव अत्यन्त पुरुषार्थ से मन्त्र के अर्थ का अधिक वा न्यून यथावत् ज्ञान करते हैं। इस कारण उनकी प्रशसा होती है।[5]

इस सब कथन से यह बात सिद्ध होती है कि सच्चा ज्ञान वेदमन्त्रों में ही है, क्योकि सभी ऋषि वहीं से शिक्षा लेने और देने की चेष्टा कर रहे हैं।

अब हमें यह प्रमाणित करना पडेगा कि वास्तविक बोध वेद मन्त्रों में ही क्यो है। इसके लिये ऋग्वेद में कहा गया है कि इस ब्रह्माण्ड के स्वामी ने ही मनुष्य के लिए जितना कहना योग्य था, उतना प्रवचन किया।[6] इस प्रकार मन्त्रो की उत्पत्ति ईश्वर से मानी गयी है, जिसकी पुष्टि यजुर्वेद का मन्त्र भी प्रमाण है। कि यज्ञ रूप भगवान् से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद प्रकट हुये।[7] और परमात्मा को महर्षि दयाननन्द सरवती ने आर्योद्देश्य रत्नमाला मे इस प्रकार बताया है 'जिसके गुण कर्म स्वभाव और स्वरूप सत्य ही हैं। जो केवल चेतन मात्र वस्तु है, तथा जो एक अद्वितीय सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्वव्यापक अनादि और अनन्त आदि सत्यगुण वाला हैं और जिसका स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी, दयालु और अजन्मा आदि है, जिसका कर्म जगत् की उत्पत्ति, पालन और विनाश करना तथा सब जोवो को पाप-पुण्य के फल ठीक-ठीक पहुँचाना है उसको ईश्वर कहते हैं।''

(शेष पृष्ठ १० पर)

*साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवु (निरुक्त १ २०)

१—आप्ता खलु साक्षात्कृतधर्माण। (न्यायदर्शन २-१-६८ वात्स्यायन भाष्य)

२—आप्ता खलु साक्षात्कृतधर्माण इद हातव्यमिदमस्य हानहेतुरिदमस्याधिगन्तव्यमिदमस्याधिगमहेतुरिति भूतान्यनुकम्पन्त। तथा वै प्राणभृता स्वयमनवबुध्यमानाना नान्यदुपदेशादवबोधकारणमस्ति। न चानवबोधे समीहा वर्जन वा, न वा अकृत्वा स्वस्तिभाव नाप्यस्यान्य उपकारकोऽप्यस्ति। हन्त! वयमेभ्यो यथादर्शन यथाभूतमुपदिशामस्त इमे श्रुत्वा प्रतिपद्यमाना हेय हास्यन्ति, अधिगन्त मेवाधिगमिष्यन्ति, इत्येवमाप्तोपदेश ॥ (न्यायदर्शन २-१-६८ पर वात्स्यायनभाष्य)

३—तेऽवरेभ्यो ऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादु। (नि० १-२०)

४—येऽवरेभ्यो ह्यसाक्षात्कृतवेदेभ्य उपदेशेन मन्त्रान् मन्त्रार्थां श्च प्रकाशितवन्तस्ते ऋषयो जाता। (ऋ० १-१२ भाष्य)

१—उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे बिल्मग्रहणायेम ग्रन्थ समाम्नासिषु वेद च वेदाङ्गानि च बिल्म भिल्म भासनमिति वा। (नि० १-२०)

२—पुरस्तान्मनुष्या वा ऋषिषूत्क्रामत्सु देवानब्रुवन् को न ऋषिर्भविष्यतीति तेभ्य एत तर्कमृषि प्रायच्छन् मन्त्रार्थ चिन्ताभ्यूहमभ्यूढम्। (नि० १३-१२)

३—अविज्ञाततत्त्वेर्थे कारणोपपत्तितस्तत्त्वज्ञानार्थ मूहस्तर्क। न्याय० १-१४

४ आर्ष धर्मोपदेश च वेदशास्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्म वेद नेतर ॥मनु० १२ १०६

५ ऋषि प्रशसा चैवमुच्चावचैरभिप्रायैर्ऋषीणा मन्त्रदृष्टयोभवन्ति। निरुक्त ७-३

६ प्रनून ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्र वदत्युक्थ्यम् (ऋ० १४० ५)

७ तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋच सामानि जज्ञिरे। छन्दासि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥ (यजु० ३१-७)

वृष्टि यज्ञ के कतिपय परीक्षणों का संक्षिप्त विवरण

(पं० वीरसेन वेदश्रमी-वेद सदन, महारानी पथ, इन्दौर २,म०प्र०)

वेद के—"निकामे निकामे न: पर्जन्यो वर्षतु"—"वृष्टिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्—"वशापृश्नि भूंत्वा दिवंगच्छ ततो नोवृष्टिमावह"—अर्थात् जब जब हम कामना करें वर्षा हो—यज्ञ के द्वारा हमारी वृष्टि समर्थ हो, सम्पन्न हो-हमारी यज्ञ की आहुति अन्तरिक्ष में जाकर वृष्टि को लावे"—इत्यादि वाक्यों से वृष्टि कराने के लिये प्रेरणा प्राप्त कर तथा—"यज्ञाद्भवतिपर्जन्य:"—"अग्निर्वैधूमोजायते-धूमादभ्रं अभ्रात् वृष्टि:"—अर्थात् "यज्ञ से मेघ उत्पन्न होते हैं—अग्नि से धूम उत्पन्न होता है और धूम से बादल उत्पन्न होते हैं तथा बादलों से वृष्टि होती है"—श्रुति वचनों को पुष्ट करने वाले ऋषियों के अनुभव सिद्ध इन वाक्यों से अत्यधिक उत्साहित एवं आशावान् होकर मैंने यज्ञ के वृष्टि विज्ञान के विकास के लिये परीक्षणों का प्रारम्भ करने का संकल्प किया। अभी तक प्राय: जो परीक्षण दृष्टि से मैंने प्रयोग किये हैं, उनका परिणाम प्रकट करने के लिये संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहा हूं जो निम्न प्रकार है :—

प्रथम परीक्षण १९६१ में

(१) **दिल्ली**—सन् १९६१ में ४ जून से १५ जून तक दिल्ली की सीमा में नांगलोई स्थान पर वृष्टि के लिये यज्ञ का परीक्षण किया था। यह समय पूर्णरूप से दिल्ली में ग्रीष्म ऋतु का होता है। दिनांक ८ जून से दिल्ली, नांगलोई तथा पूर्व एवं दक्षिण के वहां क्षेत्रों में सुदूर तक वर्षा हुई। यह यज्ञ श्री मुल्कराजजी मल्ला, मैनेजिंग डायरेक्टर हिन्दुस्तान जनरल इण्डस्ट्रीज दिल्ली ने अपने निजी व्यय से कराया था। लगभग ३ सहस्र रुपया व्यय हुआ था।

सन् १९६५ मे ४ परीक्षण

(२) **अजमेर**—सन् १९६५ में वर्षा ऋतु में वर्षा न होने की स्थित के कारण दिनांक २६ से ३१ जुलाई तक श्री हकीम वीरूमलजी आर्यप्रेमी ने अपने व्यय से अजमेर में करवाया। यज्ञ के ही दिनों में ४॥ इंच वर्षा हुई। व्यय लगभग १ सहस्र हुआ। इससे पूर्व इस मास में वर्षा नहीं हुई थी।

(३) **दिल्ली**—सन् १९६५ मे अवर्षण की स्थिति के कारण १० से २० अगस्त तक आर्यसमाज, नया बांस, दिल्ली मे यज्ञ का परीक्षण करने के ही निमित्त वृष्टि यज्ञ किया। दिनांक १० अगस्त को वर्षा कुछ समय के लिये दिल्ली के क्षेत्र में अच्छी वर्षा हुई और पुन: २० अगस्त से ३-४ दिन तक खूब वर्षा हुई। व्यय लगभग ७५०) रुपये हुआ था। इस परीक्षण में मध्य के दिनों में वर्षा न होने का कारण विशेष रूप से यह था कि दिनांक १२ से १९ तक यज्ञवेदी का ऊपर से भी पूर्ण रूप से आच्छादन इस प्रकार का कर दिया था कि यज्ञ का धूम सीधा अन्तरिक्ष में वेगपूर्वक प्रवेश न कर सका और उसका वेग छत से टकरा कर मन्द गति एवं मन्द वेग का होकर इधर उधर निकल गया, अत: मध्य के दिनों में यज्ञ से वर्षा की क्रिया सम्पन्न नहीं हो सकी। और दिनांक २० को ऊपर के आवरण के खोल दिये जाने पर यज्ञ के धूम की गति वेग से अन्तरिक्ष की ओर हो गई तथा चारों ओर से लगभग ३० फीट ऊँचा आवरण होने से धूम को ऊपर वेग से जाने के लिए विशेष शक्ति भी प्राप्त हो गई जिससे उसी दिन से वर्षा अच्छी प्रारम्भ हो गई थी।

(४) **पानीपत**—सन् १९६५ मे अवर्षण की स्थिति के कारण अकाल की परिस्थिति की सम्भावना से आर्यसमाज पानीपत ने दिनांक २१ से २९ अगस्त तक वृष्टि यज्ञ कराया। सम्पूर्ण ऋतु में वर्षा नहीं हुई थी। परन्तु दिल्ली में वृष्टियज्ञ २० को पूर्ण होने पर वहाँ पर भी दिनांक २० की सायंकाल कुछ वर्षा हो गई थी। पुन: २१ को प्रात:काल आकाश स्वच्छ था। दिनांक २२ को यज्ञ के प्रारम्भ होने के १ घण्टा पश्चात् आकाश में मेघ उत्पन्न होने लगे और रात्रि से वर्षा जोर से प्रारम्भ हो गई तथा लगातार २४ अगस्त तक २। इंच वर्षा हो गई। जब लोगों ने कहा कि अब वर्षा बन्द कराने का प्रयोग करें। तदनुसार वर्षा बन्द कराने का प्रयोग किया। जिससे २४ की रात्रि से वर्षा बन्द हो गई और बादल भी हट गये। इस यज्ञ के लिये एक ... रुपये का ५ कनस्तर शुद्ध घृत श्री दिलीपसिंह जी आर्य ने दिया था। इस यज्ञ में लगभग २॥ सहस्र रुपया व्यय हुआ।

(५) **ग्राम कड़ाई**—(जिला उज्जैन) सन् १९६५ में वर्षा की ऋतु समाप्त हो जाने पर तथा वर्षा की ऋतु में अवर्षण को स्थिति रहने से ग्राम के पटेल श्री जगन्नाथजी ने दि० २८ सितम्बर से १ अक्टूबर तक वृष्टि यज्ञ कराया। वृष्टि की आशा न होने पर भी तथा यज्ञ के लिये व्यय भी केवल २००) रुपये होने पर तथा केवल ३। दिन यज्ञ का अत्यल्प समय नियत होने पर भी परीक्षण की दृष्टि से यज्ञ प्रारम्भ किया कि ऐसी स्थिति मे, अल्प व्यय से, अल्प प्रमाण में और अल्पकाल में भी यज्ञ करने के क्या परिणाम निकलते हैं :— इसका परिणाम यही स्पष्ट रूप से हुआ कि केवल वहीं स्थानीय श्वेत वर्ण के मेघ उत्पन्न हुए। ग्रामवासियों को मेघों को देखकर वर्षा की आशा उत्पन्न हुई तथा वहाँ एक काला मेघ भी बड़े आकार का एक दिन प्रकट हुआ। परन्तु अन्य मेघों के अभाव में तथा वायु के अभाव मे उसमे विद्युत् उत्पन्न न होने से वर्षा न हो सकी। मेघ यज्ञ समय मे ही विशेष रूप से निर्मित होते थे :

अवर्षण के वर्ष सन् १९६६ में ४ परीक्षण

(६) **जयपुर में**—सन् १९६६ मे कांग्रेस अधिवेशन पर वृष्टि कराने के लिये दिनांक ८ से १२ फरवरी तक वृष्टि निमित्त यज्ञ किया। दिनांक १० से वर्षा प्रारम्भ हुई और १२ फरवरी की सायकाल इतनी जोरदार वर्षा प्रारंभ हो गई कि जिससे सायंकाल का कांग्रेस का अधिवेशन ही स्थगित हो गया और १३ का भी अधिवेशन स्थगित करके अधिवेशन समाप्त ही कर दिया गया। इस यज्ञ में रु० १७००) व्यय हुआ जिसमें से रु० १०००) श्री दिलीपसिंह जो आर्य पानीपत, रु० ३००) श्री लाला रामदेवजी एण्ड सन्स आढ़ती गाड़ोदिया मार्केट दिल्ली, १००) श्री सेठ भगवानदेवजी आर्य बम्बई, रु० ६०) श्रीमती सौ० सावित्री देवी शर्मा, स्नेह सदन, जयपुर ने विशेष रूप से प्रदान किये थे। यह वृष्टि राजस्थान के एक बड़े क्षेत्र में हुई।

(७) **राजकोट**—सन् १९६६ मे ५ से १२ जून को श्री भगवानदेवजी आर्य बम्बई वालों ने अपने राजकोट स्थित भवन के उद्यान में गायत्री महायज्ञ कराया। परन्तु ८ जून से वहां वर्षा प्रारम्भ हो गई। बम्बई, गुजरात व सौराष्ट्र में सर्वप्रथम यहीं वर्षा प्रारम्भ हुई जिसे यज्ञ का ही परिणाम समझा जा सकता है।

(८) **खण्डवा**—सन् १९६६ का वर्ष देश में भयंकर अवर्षण का था। अवर्षण के कारण सूखा की स्थिति उत्पन्न हो रही थी। खण्डवा के तालाब पूर्णरूप से सूख गये थे और उनमें भी जमीन में दरारें पड़ गई थी : ऐसी स्थिति में स्थानीय आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता और नगरवासियों ने दिनांक ११ से १८ जुलाई तक वृष्टियज्ञ कराया। इससे पूर्व वर्षा यहाँ बिल्कुल नहीं हुई थी। मेघ ऊपर के क्षेत्र से चले जाते थे। दिनांक ११ को यज्ञ प्रारम्भ होने पर सायंकाल यज्ञ समाप्त होते ही जोर से वर्षा प्रारम्भ हो गई। आस पास के भी क्षेत्र मे वर्षा होने लगी। अन्य दिवस भी वर्षा हुई। कुल ४। इंच वर्षा यज्ञ के दिनों में हुई। इसमे व्यय रु० ३५००) हुआ।

(९) **बिलासपुर** (म० प्र०)—सन् १९६६ में अवर्षण के कारण जब सितम्बर मास में छत्तीसगढ़ क्षेत्र की धान की फसल सूखने की स्थिति में होने से नष्ट होने को थी तो आर्यसमाज बिलासपुर ने वृष्टियज्ञ का आयोजन कराया। यज्ञ ३ से ११ अक्टूबर तक सम्पन्न हुआ। मध्यप्रदेश से मानसून समाप्त होने की सूचना आकाशवाणी से हो चुकी थी। ऐसी स्थिति में केवल प्रयत्न करना अपना कर्तव्य है तथा परिणाम जो भी होगा वह अपने अनुसंधान में सहायक होगा' इस आशा से वृष्टि यज्ञ का प्रयोग किया। दिनांक १२ अक्टूबर को बिलासपुर के पूर्व, उत्तर तथा दक्षिण क्षेत्र के लगभग ४०,००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में अच्छी वर्षा पड़ी, किन्तु बिलासपुर नगर में बहुत कम वर्षा हुई। जिससे फसल नष्ट होने से बच गई। ऐसा ज्ञात होता है कि इस यज्ञ के प्रभाव से पूर्वीय क्षेत्र से मानसून का संचालन हुआ था। यदि २-३ दिन और यज्ञ होता तो उसका और अधिक आकर्षण होने से बिलासपुर में तथा इसके पश्चिमी क्षेत्र मे भी वर्षा व्याप्त हो जाती। इस यज्ञ में व्यय ३५००) हुआ।

सन् १९६७ में ३ परीक्षण

(१०) **दिल्ली**—सन् १९६७ मे दिनांक ७ से १ फरवरी को पंजाबी बाग में श्री कपिल मुनि जी राजपाल तथा उनके भाइयों ने राष्ट्रहित की कामना

से वृष्टि यज्ञ करवाया। दिनांक ८ को दिल्ली के ऊपर का सम्पूर्ण आकाश बादलों से आच्छादित हो गया था और शीघ्र ही वर्षा की आशा हो गई। परन्तु इस स्थिति के पश्चात् दिनांक १० को काश्मीर की घाटियों में वर्षा प्रारम्भ हो जाने से वायु का प्रवाह उत्तर एवं पश्चिम की ओर अधिक वेग से हो गया जिससे यहाँ के बादलो का संचय क्रमश: घट गया। पुन: बादलों के प्रारम्भ से निर्माण को प्रक्रिया प्रारम्भ होने से स्थिति में उत्तरोत्तर सुधार होकर दिनांक १६ फरवरी को दिल्ली क्षेत्र में प्राय: अच्छी वर्षा हुई। यज्ञ समय मे तत्काल जो लाभ दीखने की आशा थी उसमें पूर्वोक्त प्राकृतिक कारणों से विलम्ब हो जाने से सामान्य जनता को उस समय निराशा भी हुई। यह परीक्षण भी अवर्षण की स्थिति एवं बिना वर्षा के मौसम की स्थिति का ही था। उपरोक्त विपरीत स्थिति हो जाने पर आवश्यकता इस बात की भी थी कि यज्ञ ४-५ दिन और बढ़ाया जाता परन्तु समय एवं द्रव्य की अपेक्षा से आगे नहीं चलाया जा सका। अत: उतने मात्र यज्ञ से पुनः अनुकूल स्थिति निर्माण में कुछ विलम्ब से वर्षा सम्पन्न हो गई और फसल को लाभ हो गया। इस यज्ञ में रु० ७०००) व्यय हुआ। यज्ञ सम्बन्धी अन्य बाह्य कार्यों का व्यय अतिरिक्त हुआ।

(११) अजमेर—सन् १९६७ में जुलाई २४ से ३० तक श्री हकीम वीरूमलजी आर्यप्रेमी ने अजमेर में वृष्टि के अभाव के कारण वृष्टि यज्ञ करवाया। यज्ञ क्रिया के मध्य में ही २ दिन ऐसी वर्षा हुई कि वेदि एवं यज्ञकर्ता अच्छी प्रकार भीग गये। अन्तिम दिवस दिनांक ३० को बादल थे। आकाश मेघाच्छन्न रहा। कभी हलकी फुहारे हुई परन्तु इस दिन विशेष वर्षा नहीं हुई आस-पास के क्षेत्र में वर्षा अच्छी हुई और अजमेर में भी १ दिन बाद अच्छी वर्षा हो गई। इस यज्ञ में लगभग रु० १५००) व्यय हुआ।

(१२) शाहपुरा (जिला भीलवाड़ा-राजस्थान) सन् १९६७ में अगस्त ४ से १० तक स्थानीय आर्यसमाज ने वर्षा के अभाव को दूर करने के लिये यज्ञ सम्पन्न कराया। यज्ञ प्रारम्भ होने के दूसरे ही दिन से वर्षा प्रारम्भ हो गई और ता० १० तक के मध्य कई बार वर्षा हुई। बाद को भी समय समय पर वर्षा होती रही। इस यज्ञ में लगभग रु० २०००) व्यय हुआ।

सन् १९६८ में ६ प्रयोग

(१३) ग्राम वर्धा (जिला विदिशा म० प्र०)—सन् १९६८ के जून मास के प्रथम सप्ताह में यज्ञ हुआ। यह ग्रीष्म ऋतु का ही समय था। यज्ञका उद्देश्य वर्षा का नहीं था तथापि "यज्ञाद्भवति पर्जन्य:"—इस नियम के अनुसार बादल उत्पन्न हुए। दिनांक ३,४ व ५ को कुछ बूंदें इस ग्राम में भी पड़ी और समीप के ग्रामों में वर्षा कुछ अधिक हुई इस यज्ञ में लगभग रु० १२००) व्यय हुआ।

(१४) ग्राम ससरिया (जिला-विदिशा)—सन् १९६८ के जून मास में १२ से १४ जून को यह यज्ञ सम्पन्न हुआ। यह ग्रीष्म ऋतु का ही समय था। यज्ञ वर्षा कराने के उद्देश्य से नहीं किया था तथापि-यज्ञाद्भवति पर्जन्य:"—यज्ञ से बादल होते हैं, इस नियम के अनुसार बादल उत्पन्न हुए और दिनांक १३ जून को सायं यज्ञ समय में इतनी अधिक वर्षा हुई कि यज्ञशाला में पानी भर गया। यज्ञकर्त्ता भी अत्यधिक भीग गये। शामियाना भी गिर गया। यज्ञ प्रारम्भ करने से पूर्व बादल नहीं थे और दिनांक १२ को भी यज्ञ के समय आकाश स्वच्छ ही था। इस यज्ञ में लगभग रु० ७५०) व्यय हुआ।

(१५) शाहपुरा (जिला भीलवाड़ा-राजस्थान)—सन् १९६८ के जून २८ से १० जुलाई तक वृष्टि यज्ञ सम्पन्न हुआ। दिनांक ४,५,६,८, एवं ९ को शाहपुरा में वर्षा हुई तथा दिनांक ७ को शाहपुरा से ७-८ मील की दूरी पर वर्षा हुई थी। बाद को वर्षा कम मात्रा मे अत्यल्प ही हुई।

(१६) शाहपुर (जिला भीलवाड़ा) सन् १९६८ में वर्षा ऋतु में वर्षा की कमी होने से अक्टूबर मास को फसलें नष्ट होने को थी और राजस्थान सरकार ने भी राजस्थान मे अकाल की घोषणा जलाभाव के कारण कर दी थी। ऐसी स्थिति में जब वर्षा की ऋतु समाप्त हो चुकी थी और जल की पूर्ति का अन्य कोई उपाय नही था तब केवल परमात्मा से प्रार्थना यज्ञ द्वारा करने का निश्चय राजाधिराज श्री सुदर्शनदेव जी—शाहपुरा ने तथा श्रीमती अ. सौ. महारानी सा. ने किया। वृष्टि यज्ञ ३ सितम्बर से १७ सितम्बर तक श्री राजाधिराज एव श्रीमती महारानी सा. ने अत्यन्त श्रद्धा एवं प्रेम से अपने व्यय से स्वयं यजमान बनकर किया। अगस्त मास में बादल भी आकाश में नहीं दीखते थे। दिनाक २ सतम्बर को भी आकाश स्वच्छ था। परन्तु यज्ञ प्रारम्भ होने की प्रबल संभावना भी होती रही। प्रतिदिन ११ बजे से साय ६ बजे तक बादल अच्छी स्थिति में रहते। कभी रात्रि के ९ व १० बजे तक भी रहते, कभी और अधिक समय भी। शेष समय नहीं रहते।

दिनांक १३ को जयपुर आकाशवाणी केन्द्र से सूचना प्रसारित हुई कि पूर्वी राजस्थान में वर्षा होगी। दिनांक १३ व १५ को शाहपुरा में रात्रि में बादल रहे। दिनांक १३, १४,१५, व १६ को रात्रि में आग्नेय कोण एवं दक्षिण दिशा में आकाश में बिजली की चमक दूर तक दीखती थी जिससे उस दिशा में बादल एवं वर्षा होना ज्ञात होता था। उदयपुर, भीलवाड़ा, एवं चित्तौड़ में वर्षा नहीं हुई थी।

दिनांक १४ को कुछ बूंदे शाहपुरा में पड़ी थी तथा दिनांक १८ को प्रातः १० बजे से बादलों का अत्यधिक संचय होना प्रारम्भ हो गया। हवा भी पूर्वी चलती रही। दोपहर को बादलों से सर्वत्र छाया ही हो गई थी और ३-४ बजे कुछ हलकी सी बौछार १-१ मिनट के लिये पड़ी थी। पुनः बादल शाम तक कम हो गये। इस प्रकार शाहपुरा के क्षेत्र को इस यज्ञ से मेघ निर्माण का ही परिणाम दृष्टिगोचर हुआ परन्तु शाहपुरा से ५०-६० मील से आगे के पूर्वीय सुदीर्घ भूभाग में उत्तरोत्तर अधिकाधिक वर्षा सम्पूर्ण मध्यप्रदेश के क्षेत्र में इतनी अधिक दृष्टिगोचर हुई कि नदी, ताल, नाले, गढ्ढे, खेत सब पानी से भर गये थे। क्योंकि इस यज्ञ के प्रभाव से दूर पूर्व दिशा से मानसून का आकर्षण होने से उत्तरोत्तर पूर्वीय भाग में वर्षा की अधिकता और प्राथमिकता थी यज्ञ के प्रभाव से मानसून चलने का क्रम पूर्वीय क्षेत्र से प्रारम्भ हुआ था उसके आकर्षण केन्द्र शाहपुरा तक उसके पहुँचने में मध्य के क्षेत्र मे वर्षा हो जाने से क्षति हो गई और जब तक उसने शाहपुरा में प्रवेश किया तो उसके १ दिन पूर्व ही यज्ञ समाप्त हो जाने से मानसून का आकर्षण केन्द्र विशृंखल हो जाने से और अधिक प्रभाव नहीं हो सका। यदि शाहपुरा से पश्चिम दिशा में अजमेर में भी इसी समय या १२-१३ सितम्बर से यज्ञ होता तो मानसून को शाहपुरा क्षेत्र से आगे भी आकर्षण करने को बल प्राप्त होता और शाहपुरा में अच्छी वृष्टि हो सकती थी। परन्तु यह करना उस समय हमारी सामर्थ्य में नहीं था। वर्षा समाप्त हो जाने की स्थिति में आकाश में जलीय संचय समाप्त प्राय: हो जाने से पुन: मानसून के आकर्षण की अन्तिम सीमा यज्ञस्थली ही रह जाती है उससे वहाँ मानसून का वेग एव प्रवाह न्यून हो जाने से वर्षा अत्यल्प ही होती है। यह तात्कालिक मानसून मध्य के क्षेत्रों मे बरसने से भी अपनी शक्ति क्षीण कर चुका था। अत: दोनों ही कारणों से स्थानीय लाभ हुआ। अन्यथा कई प्रान्तों में अकाल की स्थिति उत्पन्न होती।

(१७) ग्राम-खरौरा—(जिला रायपुर) सन् १९६८ में सितम्बर २४ से ३० तक वृष्टि यज्ञ का आयोजन आर्यसमाज खरौरा ने किया। यहां वृष्टि के न होने से फसल के नष्ट होने को संभावना थी। दिनांक २३ को बादल आकाश में नहीं थे। दिनांक २४ को प्रात: यज्ञ समाप्त होने के बाद दिन में बादल विशेष उत्पन्न हुए। दिनांक २५ को सायं यज्ञ समय मे बादलों की घटायें उमड़ने लगी और यज्ञपूर्ण होते ही १॥ घंटा तक खूब जोर से मूसलाधार वर्षा हुई। दिनांक २६ को पश्चिम दिशा के ग्रामों में वर्षा हुई। दिनांक २७ को रात्रि को खरौरा ग्राम में कुछ वर्षा हुई तथा दक्षिण व पश्चिम दिशा के समीपवर्ती ग्रामों में अच्छी वर्षा हुई। दिनांक २८ को दक्षिण और उत्तर दिशा में वर्षा हुई। ३० को पूर्णाहुति के बाद सायंकाल उत्तर व पश्चिम के अतिनिकट के क्षेत्रों में भी जोरों से वर्षा हुई तथा बाद को २-४ दिन तक खरौरा व समीप के क्षेत्रों में वर्षा होती रही। इस यज्ञ में लगभग रु० ३०००) व्यय हुआ।

(१८) ग्राम-आटौन (जिला-कोटा)—सन् १९६८ में ४ से ६ अक्टूबर तक वृष्टि यज्ञ स्थानीय आर्य-समाज ने सम्पन्न कराया। वर्षा के अभाव को दूर करने के लिये ही यज्ञ आयोजित किया था। यज्ञ के दिनों में बादलों की घटायें उत्पन्न हुईं। दिनांक ६ को कुछ बूंदे भी पड़ी थी पुन: ७ व ८ को वर्षा भी हुई। यज्ञ के दिनों में भी ४-५ मील दूर के क्षेत्रों में भी वर्षा हुई थी। इस यज्ञ में लगभग रु० ६००) व्यय हुआ।

परिणाम

उपरोक्त परीक्षण यज्ञ मेरे द्वारा सम्पन्न हुए हैं। अन्य भी अनेक व्यक्तियों ने अनेक स्थानो पर वर्षा के लिये यज्ञ किये हैं उनमें भी प्राय पूर्ण रूप से या आंशिक सफलता अवश्य हुई है। परन्तु आज का युग प्रत्येक बात को नवीन रूप में वैज्ञानिक स्वरूप में देखना चाहता है और उसी को मानना चाहता है। अत आज सर्वाधिक आवश्यकता हमे यह अनुभव हो रही है कि अपनी-वैदिक-विज्ञान-अनुसन्धान-प्रयोगशाला-स्थापित कर वर्तमान विज्ञान के अनुसार परीक्षण करें। यह कार्य रु० २५,०००) के प्राथमिक व्यय से प्रारम्भ हो सकता है। जितनी शीघ्र इसकी पूर्ति होगी उतनी ही शीघ्र हम प्रयोगशाला का कार्य प्रारम्भ कर सकने में समर्थ होंगे।

इन वृष्टि यज्ञो के परीक्षणो के आधार पर मैं निम्न निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि —

(१) वैदिक वृष्टि विज्ञान के अनुसन्धान का क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है और उसके अनुसन्धान कार्य से विश्व वैज्ञानिको को ५ वर्ष मे ही अत्यधिक प्रभावित किया जा सकता है और इस कार्य में विश्व के ऋतु विशेषज्ञो में वैदिक विद्वान् अपना नेतृत्व ग्रहण कर सकते हैं तथा वेद की प्रतिष्ठा विश्व में विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित की जा सकती है।

(२) वृष्टि यज्ञ की सफलता उतनी ही मात्रा और क्षेत्र में प्रधान रूप से होगी जितनी मात्रा और क्षेत्र में उसके अन्तरिक्ष प्रदेश में जलीय वाष्प का सचय या सग्रह होगा।

(३) जिस क्षेत्र के अन्तरिक्ष प्रदेश मे जलीय सग्रह विद्यमान होगा उस क्षेत्र में यज्ञ से बादलो का निर्माण शीघ्र होगा और शीघ्र वर्षा होगी। चाहे वह क्षेत्र यज्ञ किये जाने वाले क्षेत्र से सीधा सम्बन्धित हो या उसके समीपवर्ती का क्षेत्र हो।

(४) यज्ञ स्थल के अन्तरिक्ष के प्रदेश जलीय वाष्प के न होने पर या न्यून होने पर यज्ञ से जलीय तत्त्व की वृद्धि अन्तरिक्ष में प्रारम्भ होगी तत्पश्चात् बादलो का निर्माण भी प्रारम्भ होगा।

(५) यज्ञ से जलीय तत्त्व की वृद्धि का प्रमाण अन्तरिक्ष में श्वेत बादलो (अभ्र) की उत्पत्ति के रूप में दृष्टिगोचर होगा। वे जलीय गर्भ स्थापना की प्रारम्भिक स्थिति के सूचक हैं। इन अपक्व श्वेत बादलों का बरस जाना अन्तरिक्ष के जल का गर्भस्राव एव गर्भपात है। इसके कारण पुन अन्तरिक्ष को गर्भ धारण कराने का कार्य भी यज्ञ से ही होता है।

(६) यज्ञ द्वारा अभ्र उत्पन्न होने पर यदि यज्ञ से उत्तरोत्तर जलीय भाव की वृद्धि के लक्षण बादलो की स्थिरता, दृढता, सचय उपचय, श्यामलता एव स्निग्धता आदि नही प्रकट होते हैं या वे बादल (अभ्र) पुन शीघ्र ही विलीन हो जाते हैं, या दिन में विद्यमान् रहकर रात्रि में विलीन हो जाते हैं तो यह समझना चाहिये कि आस पास का अन्तरिक्ष जलीय अश से रिक्त है अत वह बुभुक्षित अन्तरिक्ष यज्ञ से उत्पन्न एव सगृहीत जलीय वाष्प को आत्मसात् कर रहा है।

(७) बारम्बार जलीय वाष्प को अन्तरिक्ष के आत्मसात् करने के उपरान्त ही अन्तरिक्ष में समुद्र का उद्भव होता है। अन्तरिक्षस्थ समुद्र के उद्भव होने पर ही बादलो का विशाल क्षेत्र में उद्भव होता है और वे बादल स्थिरता को प्राप्त होकर यज्ञ में आहुति पडे हुए पदार्थों के धूम के प्रभाव से स्थूल भाव, भार एव शीतलता को प्राप्त कर वर्षने की स्थिति में हो जाते हैं।

(८) यदि यज्ञ कार्य के मध्य में अपने क्षेत्र के अन्तरिक्ष में जलीय वाष्प का सचय हो गया हो या बादलो का अच्छा सग्रह और उपचय हो गया हो और तभी साथ ही किसी दूसरे क्षेत्र में वर्षा हो जावे तो वर्षा होने वाले क्षेत्र की ओर हवा दबाव, प्रवाह और वेग हो जायगा जिससे अपने क्षेत्र की बादलो की स्थिति तुरन्त क्षीण होना प्रारम्भ हो जावेगी और परिणामत अन्तरिक्ष स्वच्छ हो जायगा—बादल नही रहेंगे। पुन वायु की समस्थिति होने पर अन्तरिक्ष में जलीय गर्भ धारण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो सकेगी। उस दशा में प्रथम रूप में अति पतली झिल्ली बादलो की आकाश में कहीं-कहीं निर्मित दृष्टिगोचर होगी। पुन बादलो के आकार और परिमाण में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी और विलम्ब से वर्षा होगी।

(९) यज्ञ का वर्षा के लिये परिणाम यज्ञ समय में भी हो सकता है, यज्ञ के पूर्ण होने पर भी हो सकता है और यज्ञ के पूर्ण होने पर कुछ दिनो के बाद भी हो सकता है। यह आवश्यकता नही है कि यज्ञ दिनो में ही वर्षा हो या यज्ञ की पूर्णाहुति पर ही वर्षा हो। यह अब अन्तरिक्ष की जलीय स्थिति एव तात्कालिक ऋतु की स्थिति पर निर्भर रहता है। यज्ञ अन्तरिक्ष को प्रभावित करता है। परन्तु प्रकृति के बलवत्तर अनुकूल या प्रतिकूल कारणों के उपस्थित हो जाने पर प्रभाव में शीघ्रता या विलम्ब हो जाता है।

(१०) यज्ञ का प्रभाव शीघ्र या विलम्ब से अवश्य होता है। अपूर्ण प्रभाव से मध्य के परिणाम प्राप्त होते हैं।

(११) यज्ञो में व्यय सदा एक समान नहीं होता है। ऋतु, देश काल की स्थिति के कारण न्यूनाधिक व्यय होता है और प्रभाव क्षत्र की सीमा भी एक सी नही होती।

(१२) वृष्टि कराने मे निम्न तीन शक्तिया प्रधान हैं —

(१) मानसिक शक्ति (सकल्प या इच्छा शक्ति) (२) वाचिक (ध्वनि) शक्ति (३) आहुति (पदार्थ) शक्ति।

इनमें आहुति (पदार्थ) की शक्ति सर्वाधिक सुलभ सुगम और सामान्य जनो के लिये विश्वासजनक है। ध्वनि शक्ति भी अपना पूर्ण स्वतन्त्र प्रभाव रखती है। एक सदृश ध्वनि के निरन्तर कम्प से जलीय वाष्प को सगठित होने की सामर्थ्य विशेष रूप से प्राप्त होती है। मानसिक शक्ति सर्वाधिक प्रभावकारी होती है परन्तु सर्वसाधारण प्राय उसका पूर्ण प्रभावयुक्त प्रयोग करने मे असमर्थ होते हैं अत प्राय उसका सामान्य लाभ ही प्राप्त हो पाता है।

(१३) यज्ञ में उपरोक्त तीनो शक्तियो का प्रयोग होता है। अत यज्ञ की प्रक्रिया से वृष्टि कार्य अवश्य होता है यह प्राचीनकाल से अनुभव सिद्ध मान्यता अब भी सत्य ही है।

(१४) यदि कभी यज्ञ से वर्षा का प्रभाव दृष्टिगोचर न हो तो उसमे यज्ञ की असफलता नही है अपितु अपने प्रयोग की न्यूनता का ही कारण है ऐसा मानकर अपनी न्यूनता पर दृष्टिपात करके उसको पूर्ण करना चाहिये।

(१५) यज्ञ मे सामूहिक रूप से एकमन से भाग लेने से मानसिक शक्ति का सहयोग प्राप्त होता है। यज्ञ मे एक मन से ही भाग लेना चाहिये विरोधी भाव से नहीं।

(१६) यज्ञ मे मन्त्र ध्वनि करने वाले व्यक्ति अधिक होने चाहिये जिससे वाचिक या ध्वनि शक्ति का भी अन्तरिक्ष पर प्रभाव पड सके। अधिक व्यक्तियो की सामूहिक उच्च ध्वनि का भी अच्छा प्रभाव देखा गया है। यज्ञ मे 'स्वाहा —की ध्वनि भी सब उपस्थित जनो ने अति उच्च स्वर से करनी चाहिये।

(१७) यज्ञ में ध्वनि विस्तारक यन्त्र (लाउडस्पीकर) का उपयोग करना चाहिये और उसके हार्न का मुख ऊपर आकाश की ओर रखना चाहिये। इससे बादल होने की स्थिति में बहुत अनुकूल प्रभाव पडता है।

(१८) यदि अन्तरिक्ष में जल सचय पूर्व से नही होगा तो यज्ञ की सफलता में विलम्ब होगा।

(१९) यदि यज्ञ में तीव्र वायु चलती रहेगी तो यज्ञ का प्रभाव स्थानीय अन्तरिक्ष पर सीधा नही पड सकेगा और विलम्ब से न्यून प्रभाव होगा।

(२०) वृष्टि यज्ञ मध्यान्ह में अवश्य करना चाहिये। यह समय बहुत उपयुक्त एव लाभकारी होता है प्रात सायकाल का समय इसके लिए कम प्रभावशाली है मध्याह्न के यज्ञ की आहुति ऊपर अन्तरिक्ष मे शीघ्र पहुँचती और अन्तरिक्ष को विशेष रूप से प्रभावित करती है।

(२१) यज्ञ के अवसर पर बादलो का भिन्न-भिन्न स्थानो में निर्माण आहुति के अन्तरिक्ष में पहुँच कर स्थान विशेष को प्रभावित करने से होता है। आहुति का धूम जब अपने अन्दर अन्तरिक्ष के जल को आत्मसात् कर लेता है तब वह पृथक्-पृथक् ताप का हो जाता है और उसका उतना-उतना क्षत्र

(शेष पृष्ठ ८ पर)

विद्या और अविद्या का.........

(पृष्ठ २ का शेष)

पद का अर्थ प्रकृति आदि कारण और शरीरादि कार्य जड़ वस्तु दर्शाया है। और चकार से शरीर से होने वाले कर्म (पुरुषार्थ) और उपासना का संग्रह किया है। इसी प्रकार 'विद्या' पद का अर्थ वेदभाष्य में चेतन आत्मा और चकार पद से चेतन आत्मा के साधन, उपसाधन शुद्ध अन्तःकरण और यथार्थ ज्ञान अर्थ स्वीकार किया है। इस प्रकार सत्यार्थप्रकाश और वेदभाष्य में किये मन्त्रार्थ में परस्पर बड़ा ही समन्वय उपलब्ध होता है।

यजुर्वेद ४० वें अध्याय के १२, १३ और १४ वें मन्त्र में विद्या और अविद्या के तत्त्व को समझाया गया है। इन मन्त्रों के महर्षिकृत भाष्य में विद्या और अविद्या सम्बन्धी निम्नलिखित तत्त्व उपलब्ध होते हैं—

१—विद्या का लक्षण—शब्द, अर्थ, सम्बन्ध का ज्ञान मात्र (मं० १२)। आत्मा, और शुद्ध अन्तःकरण से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान (मं० १४)।

२—विद्यारत का लक्षण—शब्द, अर्थ, 'सम्बन्ध मात्र संस्कृत भाषा का ज्ञाता, सत्यभाषा रहित, पक्षपात रहित न्यायाचरण रूप धर्म का अनुष्ठान न करने वाला, अभिमानी, विपरीत आचरण से अविद्या का मान तथा विद्या का अपमानकर्ता (मं० १२)।

३—विद्यारत की निन्दा—विद्या के उपासक अज्ञान दुःख सागर में पड़े सदा दुःखी रहते हैं। (मं० १२)

४—विद्या के साधक—विद्या और उसके साधक उपसाधनों का ज्ञान आवश्यक है (मं० १४)। विद्या का साधक चेतन पदार्थ(आत्मा) है (मं०१४)

५—विद्या का पंगुत्व—केवल विद्या (ज्ञान) से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि नही हो सकती (मं० १४)। केवल विद्या (चेतन आत्मा) से धर्मादि की सिद्धि नहीं हो सकती (मं० १४)॥

६—विद्या का फल—विद्या के उपयोग से पारमार्थिक सुख की प्राप्ति होती है (मं० १४)॥

७—अविद्या का लक्षण—अनित्य को नित्य, अपवित्र को पवित्र दुःख को सुख अनात्मा को आत्मा जानना अविद्या है। ज्ञानादि गुणों से रहित कार्य-कारण रूप परमेश्वर से भिन्न जड़ वस्तु। अविद्यादि पांच क्लेश—१. अविद्या, २. अस्मिता, ३. राग, ४. द्वेष, ५. अभिनिवेश। अविद्या रूप वस्तु ज्ञेय है (मं० १२)। प्रकृत्यादि कारण तथा शरीर आदि कार्य वस्तु। शरीर आदि जड़ पदार्थों से किया गया पुरुषार्थ अर्थात् कर्म और उपासना (मं० १४)।

८. अविद्या के साधक—अविद्या और उसके उपयोगी नाना साधनों का ज्ञान आवश्यक (मं० १४)। अविद्या का साधक जड़ पदार्थ है (मं० १४)॥

९. अविद्या का पङ्गुत्व—केवल अविद्या 'प्रकृत्यादि कारण तथा शरीरादि कार्य जड़ पदार्थ') से धर्मादि की सिद्धि नहीं हो सकती (मं० १४)॥

१०. अविद्या की आवश्यकता- अविद्या (जड़ पदार्थ) के बिना परमेश्वर जगत् उत्पत्ति नहीं कर सकता (मं० १४)। जीवात्मा कर्म, उपासना और ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सकता (मं० १४)॥

११. अविद्या का उपयोग-आत्मज्ञानी विद्वानों ने बतलाया है कि अविद्या (शरीर आदि जड़ पदार्थ) के उपयोग से लौकिक दुःख की निवृत्ति करो (मं० १४)॥

१२. अविद्योपासक की निन्दा—अविद्या के उपासक गाढ़ अन्धकार में प्रविष्ट होते हैं (मं० १२)। अविद्या आदि दोषों से युक्त मनुष्य महान् दुःख सागर में डूबते हैं (मं० १२)॥

१३. विद्या और अविद्या का सहज्ञान—विद्या (चेतन पदार्थ) और अविद्या (जड़ पदार्थ) के स्वरूप का साथ साथ ज्ञान परम आवश्यक है (मं० १३-१४)॥

१४. विद्या और अविद्या से रहित होना असम्भव—कर्म, उपासना और ज्ञान के बिना कोई भी, एक क्षण के लिये भी, खाली नहीं रह सकता (मं० १४)।

१५. विद्या और अविद्या के उपयोग-ज्ञान के साधन—विद्या (चेतन) और अविद्या (जड़) वस्तु का उपयोग पृथक्-पृथक् है इनका उपयोग जानने के साधन ये हैं—१- विद्वानों सग २- विज्ञान ३- योगाभ्यास ४- धर्माचरण।

१६. विद्या और अविद्या का फल—आत्मज्ञानी विद्वानों द्वारा कथित विद्या और अविद्या का फल जानना मनुष्य के लिये परम आवश्यक है (मं० १३) विद्या और अविद्या का धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की सिद्धि में साथ साथ प्रयोग करो (मं० १४)।

१७. विद्या और अविद्या उपासनीय नहीं—विद्या और अविद्या परमात्मा से भिन्न वस्तु हैं। परमेश्वर से भिन्न उपासनीय नहीं हो सकता किन्तु वह तो उपकार ग्रहण करने योग्य है (मं० १२)॥

इस प्रकार विद्या और अविद्या का विवेक-ज्ञान प्राप्त करके पवित्र आत्मायें अमृत को प्राप्त करते हैं।

इन विद्या-अविद्या सम्बन्धी तीन मन्त्रों पर किये ऋषि-भाष्य से उपरि-लिखित विद्या-अविद्या विषयक १७ सतरह तत्त्वों पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। महर्षि का वेद भाष्य ऋषियों की प्रणाली के अनुरूप बड़ा सरल तथा गम्भीर है। आर्य विद्वानों को चाहिये कि वे अपना मनोवाञ्छित मन्त्रार्थ करना छोड़ कर महर्षिकृत वेदभाष्य एवं मन्त्रार्थ पर गम्भीर मनन करके ऋषि के वेद भाष्य को साधारण स्वाध्यायशील आर्य जनता तक पहुंचायें। जिससे साधारण जनता तथा विद्वत्समाज में भी महर्षि के प्रति श्रद्धा, भक्ति एवं निष्ठा उत्तरोत्तर बढ़ती जावे।

कर्म और उपासना ज्ञान विशेष न होने के कारण विद्या नहीं, अतः अविद्या है। परन्तु ज्ञान के साथ कर्म, उपासना का सहचार है। कर्म और उपासना के स्वरूप का पूरक है। अतः सिद्ध हुआ कि योग दर्शन में वर्णित अविद्या का लक्षण वेद में उपदिष्ट अविद्या=कर्म, उपासना पर सुघटित होता है।

उपासना को आन्तर क्रिया होने के कारण कर्म होते हुए भी पृथक् बतलाया गया है। जो सज्जन उपासना को ज्ञानरूप समझते हैं; उनको इस स्थल से जान लेना चाहिये कि उपासना भी कर्म का ही आन्तर अङ्ग होने के कारण जड़ है—अविद्या है॥ [जगदेवसिंह सिद्धान्ती]

(पृष्ठ ७ का शेष)

बादल के रूप में दृष्टिगोचर होने लगता है।

(२२) अन्तरिक्ष में जलीय गर्भ को धारण-पोषण, पुष्ट और प्रसव कराने में घृत सर्वाधिक समर्थ है। घृत के अतिरिक्त दूध, दही, आदि द्रव पदार्थ आर्द्र द्रव्य, स्नेहयुक्त हविद्रव्य, अन्नादि, वनस्पति इनका धूम मेघ निर्माण में तथा वर्षा कराने में परम सहायक है, यदि घृत के साथ इनका प्रयोग हो। घृत गौ का ही सर्वाधिक उपयोगी है।

(२३) वर्षा ऋतु के पश्चात् ही जब अन्तरिक्ष जलीय गर्भ से रिक्त हो उस समय यज्ञ प्रभाव से यदि समुद्रिय मानसून उत्पन्न हो जावे तो उसका प्रभाव एवं बल यज्ञ स्थल तक आने पर न्यून हो जाता है क्योंकि वह स्थान उस दिशा के आकर्षण का अन्तिम केन्द्र होता है और उससे विपरीत दिशा का भी वही अन्तिम आकर्षण केन्द्र होता है। एक ही स्थान पर चारों दिशाओं का आकर्षण विपरीत दिशाओं के प्रभाव को रोकने में समर्थ हो जाता है। ऐसी स्थिति में यज्ञ से उत्तरोत्तर दूर के स्थान वर्षा से अधिक प्रभावित होते हैं और यज्ञस्थल सब से कम प्रभावित होता है। यदि स्थानीय मानसून का सहयोग मिल जावे तो वहां पर भी वृष्टि अच्छी हो जायगी। ऐसी स्थिति हो जाने पर इच्छित प्रदेश के समीप के एक-दो अन्य क्षेत्रों में भी यज्ञ करना श्रेयस्कर होगा।

(२४) यज्ञवेदी का मध्य भाग ऊपर से खुला हुआ रखना चाहिये जिस से यज्ञ का धूम वेग से अन्तरिक्ष में जा सके। वर्षा होने पर उसके आच्छादन की व्यवस्था करना चाहिये।

(२५) यदि एक सहस्र नारियल के गोलों में घृत, शक्कर, शहद, मेवा खीर मोहनभोग (हलुआ), मावा, तिल, जौ आदि पदार्थों को भरकर उनको यज्ञवेदी में अग्नि को अपनो वृष्टि की कामना के साथ समर्पित किया जावे और उच्च स्वर से-ओ३म् स्वाहा-की सम्मिलित रूप से बार-बार ध्वनि की जावे तो वर्षा ऋतु में मेघों के होने पर उसी दिन शीघ्र ही वर्षा होगी। मेघ नहीं होंगे तो शीघ्र ही मेघ उत्पन्न होंगे और वर्षा भी उसी दिन या १-२ दिन में होगी।

आर्यसमाज के दस नियमः व्याख्याग्रन्थ तथा विविध अनुवाद

(डा० भवानीलाल भारतीय, एम० ए०, पी० एच० डी०, पाली-राजस्थान)

आर्यसमाज के दस नियमों की व्याख्या में निम्न ग्रन्थ लिखे गये हैं—

१. आर्यसमाज के दस नियम—ले० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या—वैदिक यंत्रालय, अजमेर
२. आर्यसामाजिक धर्म स्वामी सत्यानन्द साहित्य सदन, लाहौर
३. „ „ स्वामी सत्यानन्द गुरुकुल झज्जर २०१५ वि०
४. स्वर्ण सिद्धान्त जगदीशचन्द्र विद्यार्थी श्रद्धा पुष्पाञ्जलि-२२ १९६१ ई०
५. दशनियम व्याख्या रघुनाथ प्रसाद पाठक आर्यसाहित्य सदन, दिल्ली २०१२. वि०
६. आर्यसमाज के द्वितीय [नियम की व्याख्या शिवपूजनसिंह कुशवाहा ग्रन्थमाला-३ २००६ वि०
७. आर्यसमाज के दस नियम स्वामी सत्यप्रकाश यति
८. आर्यसमाज के नियम परमेश्वरीसहाय सरस्वती प्रेस, आगरा
९. आयसमाज के नियमों का वेद मंत्रों से सम्मेलन
१०. दशनियम शिखरिणी पं० ज्वालादत्त शर्मा वैदिक यंत्रालय, अजमेर १९५० वि०
११. आर्य नियमोदय काव्यम् पं० अखिलानन्द शर्मा संस्कृत काव्यानुवाद)

आर्यमर्यादा के पाठकों के मनोरंजनार्थ यहाँ आर्यसमाज के नियमों का संस्कृत पद्यानुवाद, मराठी, गुजराती तथा अंग्रेजी अनुवाद दिया जाता है।

(क) आर्यसमाज नियमः संस्कृत पद्यानुवाद

उपजाति वृत्तम्,

या सत्यविद्या विलसन्ति सर्वाः, सर्वत्र लोकेषु विलोक्यमानाः।
यापि विद्याधिगताः पदार्थास्तेषां समेषां प्रभुरादि मूलम् ॥१॥

ईशश्चिदानन्दमयः स्वरूपोऽजन्मा स्वयम्भूरथ निर्विकारः।
आकारहीनोऽनुपमोऽस्त्यनन्तः, स एव सर्वैः समुपासनीयः ॥२॥

सर्वेश्वरः सर्वमहान् समान्तर्यामी समव्यापक ओमनादिः।
सत्याभयः सन्नजरोऽमरोऽस्ति, एव सर्वैः समुपासनीयः ॥३॥

यो न्यायकारी कथितोऽथ सर्वाधारो दयालु खलु सर्वशक्तिः।
नित्यः पवित्रोऽस्ति च सृष्टिकर्ता, स एव सर्वैः समुपासनीयः ॥२॥

यथार्थविद्यानिधिरस्ति वेदो, यतस्ततः स्यात् सकलार्यधर्मः।
तत्पाठनं तत्पठनं च भूयस्तच्छ्रावणं तच्छ्रवणं च नित्यम् ॥३॥

सत्यग्रहेऽसत्यपरिक्षये च सदोद्यतैर्भाव्यमिहार्यवर्यैः।
मात्सर्यमुत्सार्य च सर्व कार्यम्, सत्यावृते साधु विचार्य कार्यम् ॥४-५॥

लोकोपकारः खलु पुण्यमस्य मुख्यं समाजस्य चकास्तिलक्ष्यम्।
शारीरिकी चोन्नतिरात्मिकी च समाजिकी चेति विभावनीयम् ॥६॥

आर्यैः स्वधर्मानुगुणं यथावत् सप्रेमसर्वैः सह कर्तनीयम्।
विद्या विवृद्धिः परितो विधेयाऽविद्या प्रहाणिश्च सदैषणीया ॥७-८॥

संतोषणीयं न किलात्मनीनैः, कार्यं यतो विश्वजनीन मिष्टम्।
हेयः स्वभूत्यर्थंहितः प्रयत्नः सर्वोन्नतौ स्वोन्नतिराहिता स्यात् ॥९॥

सामाजिके सर्वहिते विधौ हि भाव्यं समस्तैः परवद्भिरेव।
हिते प्रतिस्वं तु विधौ स्वतन्त्राः, सर्वेभवन्त्वार्यजनः क्षमित्योम् ॥१०॥

अनु० पं० विद्यानिधि शास्त्री व्याकरणाचार्य।

(ख) आर्यसमाजा चे नियम (मराठी)

१. सर्व सत्य विद्या वजे पदार्थ विद्येनें जाणले जातात त्या सर्वांचा आदि मूल परमेश्वर आहे।
२. परमेश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, दयालु, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, जन्मरहित, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र आणि सृष्टिकर्ता आहे, त्याचीच उपासना करणें योग्य आहे।
३. वेद सत्य विद्यांचें पुस्तक आहे, वेदा चें पठन पाठण करणें श्रवण व वेद एकविणें हा सर्व आर्यांचा परमधर्म आहे।
४. सत्या चें ग्रहण करण्यास व असत्याचा त्याग करण्यास सर्वदा उद्यत राहिलें पाहिजे।
५. सर्व काम धर्मानुसार सत्य व असत्य यांचा विचार करुन केलीं पाहिजे।
६. सर्व जगावर उपकार करणें हा आर्यसमाजा चा मुख्य उद्देश्य आहे, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक आणि सामाजिक उन्नति करणें।
७. सर्वांशी प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथयोग्य सर्वांनी वर्तन करावें।
८. अविद्येच्या नाश विद्येची वाट करावी।
९. प्रत्येकाने केवल आपल्याच उन्नति मध्यें सन्तुष्ट राहूं नये तर सर्वांच्या उन्नति मध्यें आपली उन्नति आहे, असें समझावें।
१०. सर्व मनुष्यंनी सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालण्या मध्यें परतंत्र राहिलें पाहिने, पण प्रत्येकाचें हितकरणारे नियम पालण्यांत सर्वांना स्वातन्त्र्य असते।

(ग) आर्यसमाज ना नियमो (गुजराती)

१. सर्व सत्य विद्या अनेजे पदार्थ विद्याथी जाणवामा आवे छो, ते सर्वनु आदि मूल परमेश्वर छो।
२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निर्विकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अनन्नत, अजन्मा, अनादि, अनुपम, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय नित्य पवित्र अने सृष्टिकर्ता छो, तेनीज उपासना करनी योग्य छो।
३. वेद सत्य विद्याओ नुं पुस्तक छो। वेदनुं भणवुं, भणाववुं अने सांभलवुं, संभलाववुं ओ सघल आर्योना परमधर्म छो।
४. सत्य ग्रहण करण करवामां ने असत्य छोड़वामां सदा तैयार रहेवुं जोइओ।
५. सर्व काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य अने असत्य नो विचार करीने करवा जोइओ।
६. संसार नो उपकार करवो अर्थात् शारीरिक, आत्मिक अने सामाजिक उन्नति करनी ओ आ समाजनो मुख्य उद्देश्य छो।
७. सर्वनी साथे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथा योग्य वर्तवुं जोइओ।
८. अविद्या नो नाश अने विद्या नी वृद्धि करवी जोइओ।
९. दरेक आर्ये पोतानी उन्नति थी संतुष्ट न रहेवुं जोइओ, परन्तु सर्वनी उन्नति मांज पोतानी उन्नति समजवी जोइओ।
१०. सघला मनुष्यो ओ सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालवामां परतंत्र अने स्वंहितकारी नियम मांस्वतंत्र रहेवुं जोइओ।

अनु० स्नातक सत्यव्रत वेद विशारद

(घ) Principles of the Arya Samaj : The Ten Commandments of Dayanand.

(Translated by Late Pt. Chamupati M.A.)

1. The first (efficient) cause of all knowledge and all that is known through knowledge is Parmeshwara.
2. Ishwara is existent, intelligent, and blissful. He is formless, omni-potent, just, merciful, unborn, endless, unchangeble, beginingless, unequalled, the support of all, the master of all, omni-present, immanent, unaging, immortal, fearless, eternal, and holy, and the maker of all. To Him alone worship is due.
3. Vedas are the scriptures of true knowledge. It is the first duty of the Arya to read them, teach them and hear them.
4. One should always be ready to accept truth and give up untruth.
5. One should do every thing according to the dictates of Dharma, i.e., after due consideration of right and wrong.
6. The primary object of this society is to do good to the whole world, i.e., to its physical, spiritual and social welfare.
7. One's dealings will all should be regulated by love and justice in accordance in the dictates of Dharma.
8. One should Promote Vidya (realisation of subject and object) and dispel Avidya (illusion).
9. One should not be content with thy own welfare alone, but should look for one's own welfare in the welfare of all.
10. One should regard one self under restriction to follow altruistic rulings of the society, while in following rules of individual welfare all should be free.

(शेष पृष्ठ १० पर)

(पृष्ठ १ का शेष)

Bibliography of the Arya Samaj

(2)

(Compiled by Dr. Bhawani Lal Bhartiya M.A. Ph.d.)

Here is a list of English books written in English. It will prove useful for research scholars and for other persons who are interested in the Arya Samaj.

Name of the Book Author Publisher

1. The Arya Samaj, Lala Lajpat Rai, Longman Green & Co., London. 1932.
2. The History of the Arya Samaj, „ Orient Longmans, Delhi. 1967.
3. The Arya Samaj, Principal Diwan Chand M.A., Arya Pradeshik Sabha, Lahore. 1942.
4. The Arya Samaj : A world movement, By Pt. Ganga Prasad Upadhaya, M.A.
5. The Arya Samaj Introduced, By Pt. G.P. Upadhyaya M.A., Arya Samaj Chowk, Allahabad.
6. The Arya Samaj and the International Arya League, By Pt. G.P. Upadhyaya, 1947.
7. The Teachings of the Arya Samaj, Lahore.
8. The origion, mission and scope of the Arya Samaj, By Pt. G. Upadhyaya, 1937.
9. The claims of the Arya Samaj, By Pt. G.P. Upadhyaya, 1937.
10. The Arya Samaj and the Depressed classes, By Pt. G.P. Upadhyaya, 1937.
11. The Arya Samaj and Hinduism, By Pt. G.P. Upadhyaya, 1937.
12. The Arya Samaj and World Problems, By Pt. Shiv Chandra, Arya Samaj Dewan Hall, Delhi.
13. Views on Arya Samaj, By Andrew Jackson Davis, Virjanand Press, Lahore. 1888.
14. Arya Samaj : A Political Body ? By Madan Mohan Seth M.A., L.L.B Star Press, Allahabad.
15. Arya Samaj : A Political Body—Being an open letter to Viscount Morley of Blackburn. His Majesty's Secretary of State for India : Sat Dharma Pracharak Press.
16. Arya Samaj and its Detractors, By Munshi Ram and Ram Deva, Satdharma P.P.
17. High Government officials on Arya Samaj and its work, By M.M. Seth, Star Press, 1917.
18. A memo on Arya Samaj, By R.B. Mul Raj M.A., Matter of Fact Series No. 1
19. The Veda and the Arya Samaj, By R.B. Mul Raj M.A.
20. Catechism of Vedic Dharm and Arya Samaj, By Pt. Dharm Deva Vidya Vachaspati.
21. The outlines of the Arya Samaj, By Keshav Dev Gyani, Arya Samaj Madras, 1933.
22. The Hand Book of Arya Samaj, By Pt. Vishnu Lal Sharma, Indian Press Allahabad.
23. The claims of Arya Samaj on the Hindus by a well wisher of Hindus, A.P S.U.P.
24. A Birds eyeview on Arya Samaj, By Vidya Sagar Arya, Alwar.
25. A Lecture on the Arya Samaj, By R.B. Mul Raj M.A.
26. Arya Samaj and Congress, By Late Bhai Parmanand M.A.
27. Spit in Arya Samaj.
28. The Arya Samaj from the outsiders point of view, Arya Pratinidhi S. Punjab, 1902.
29. Three quarter century of Arya Samaj, By Amar Singh.
30. Brahmo Samaj and Arya Samaj, By Frank Lillington.
31. The Arya Samaj, By Pt. Ram Deo, Gurukula Kangri. 1911.
32. Stray thoughts on the Arya Samaj, By Barristor Roshan Lal.
33. The Principles of Arya Samaj, By Pt. Chamupati M.A., A.P. Sabha Punjab.
34. The Arya Samaj and the Theosophical Society By Shyam Sunder Lal Vakil.
35. Hyderabad and Arya Samaj, By International Aryan Legue, Delhi.
36. Message of the Arya Samaj, By Pt. Bhartendra Nath, A.P. Sabha, Punjab.
37. The Arya Samaj its cult and creed, By Pt. Vaidya Nath Shastri M.A ,S.A.P. Sabha 1965.
38. The Ten Principles of Arya Samaj, By Pt. Chamupati M.A., Arya Samaj, Madras.
39. The constitution of Arya Samaj, By S.A.P. Sabha, Delhi.
40. Contribution of Arya Samaj in the making of Modern India, a thesis approved by the Rajasthan University for the award of degree of Doctor of Philosophy. Submitted by Dr. Radhe Shyam Pareek, Jamna Dairy, Ajmer Road, Jaipur.

(पृष्ठ ४ का शेष)

अब इस में कोई संशय को अवकाश नहीं रहा कि इन प्रकार के विलक्षण गुण स्वभाव कर्म वाले भगवान् का वेद भी यथार्थता को लिये हुये ही है

जिस मनु से प्रत्येक व्यक्ति मानव कहलाने का अधिकार प्राप्त कर सका, वे मनु महाराज भी शिक्षा के क्रम में वेद का अध्ययन ही अनिवार्य मानते हैं। उनका यह उच्च घोष है कि बालक-बालिकाएँ सामर्थ्य हो तो चारों वेदों को ही पढ़ें। यदि ऐसा नहीं कर सकते, जो तीन पढ़ें, दो पढ़ें। एक वेद तो द्विजमात्र का हो जाना ही चाहिए। अपने इस पठन-काल में वे अखण्ड ब्रह्मचारी रहें। जो ऐसा करें वे ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश करें।[1]

अत: वह आर्ष शिक्षा ऋषियों के माध्यम से ईश्वर से सम्बद्ध हो जाती है। वह सृष्टि की रचना करके, उसका ठीक-ठीक उपयोग करने के लिए एवं आत्मा और परमात्मा के स्वरूप को जानने के लिये वेद का बोध महर्षियों के हृदय में संचालित करता है।[2] इस आर्ष शिक्षा प्रणाली में मनुष्य के उत्थान की सब वास्तविक और सीधे ढंग से कही हुई विद्याएँ होती हैं। ऋषियों की इस में मनुष्यों के समान कोई काल्पनिक वस्तु नहीं होती। केवल वेदों को समझाने के लिए अपने नवीन-नवीन उपाय होते हैं। उनके ऐसे पुस्तकों के नाम, जिनमें ज्ञान का सच्चा और उच्च वर्णन पाया जाता है क्रमश: इस प्रकार हैं—वर्णोच्चारण-शिक्षा, पाणिनीय अष्टाध्यायी, लिङ्गानु शासन, उणादि गणपाठ, महाभाष्य। निघण्टु, निरुक्त पिङ्गल छन्द:, काव्यालङ्कार सूत्र। मनुस्मृति, विदुर-नीति, बाल्मीकि रामायण। सूर्य सिद्धान्त। पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य, वेदान्तदर्शन। दश उपनिषदें। ऐतरेय, श्रौत, गृह्यसूत्र, ऋग्वेद। सामब्राह्मण, सामवेद। गोपथ, अथर्ववेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, और अर्थवेद॥

इन ग्रन्थों में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद तो ईश्वर के हैं। शेष सब ऋषियों के हैं। ऋषि-प्रणीत ये सभी पुस्तक परमात्मा से आविर्भूत ऋग्वेदादि चार वेदों को ही सरल करते हैं। इस प्रकार 'आर्ष शिक्षा प्रणाली' का क्षेत्र वर्णोच्चारण से लेकर वेद पर्यन्त है। इस सरणी में कोई भी विद्याक्षेत्र नहीं रहती। रह भी कैसे सकती है, जब कि ईश्वर अनन्त विद्या वाला है। वह मनुष्य का जितना ज्ञान अधिक से अधिक होना सम्भव समझता है, देने का सामर्थ्य रखता है। विश्व के सारे मानव मिलकर भी इतना बोध प्रदान नहीं कर सकते। भगवान् के जो जितना निकट अपनी साधना से होता जायेगा, वह उसकी कृति को उतना ही समझ जायेगा। ऋषि अथवा आप्त पुरुष ही ऐसा करने में समर्थ हो पाते हैं इनके ग्रन्थों में पिष्टपेषण अथवा कहीं से सङ्गृहीत विषय नहीं होता। प्रत्येक आप्त पुरुष विद्याक्षेत्र में नवीन-नवीन देन देता है। इन पुस्तकों का अध्ययन करने वाला मानव अल्पकाल में ही अनेक सत्य विद्याओं से विभूषित हो जाता है।

इस से विपरीत अनार्ष शिक्षा प्रणाली से चलकर जहाँ रुपये का सर्वनाश होता है, वहाँ जीवन के अमूल्य क्षण ऐसे पठन-पाठन में बीत जाते हैं, जो केवल मनुष्यों की उपज है। पहले तो धर्म का साक्षात्कार न होने से उन लेखकों को यथार्थ बोध नहीं होता, फिर जैसा कुछ जानते हैं, पढ़े हैं, लिखे हैं; वैसा भी सर्वत्र पुस्तक प्रणयन करते समय इस कारण नहीं लिख पाते कि वे अर्थ के दास होते हैं। सामान्य लोगों की रुचि उनके सम्मुख प्रधान होती है अथवा अवैदिक राष्ट्र जैसा लिखाना चाहता है, अर्थ के वशीभूत होकर वे वैसा लिख देते हैं। ऐसे व्यक्ति धनोपार्जन का यन्त्र तो अवश्य बन जाते हैं; परन्तु मानव धर्म की सार्थकता से सर्वथा वञ्चित रह जाते हैं। उसमें न उनका ही कल्याण होता है और नहीं राष्ट्र का। हाँ गणित, शिल्प और विज्ञान की विद्याएं सर्वदा-सर्वथा दोनों पक्षों में समानता लिये हुये होती हैं।

(शेष अगले अंक में)

---

१. वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुत ब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत्॥ (मनु० ३.२)

२. बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधाना:। यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहावि:। (ऋ० १०-७१-१)
"यज्ञेन वाच: पदवीयमायन् तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम् (ऋ० १०-७१-३)

आर्यमर्यादा के लिये कुछ सम्मतियाँ

१—आर्यमर्यादा नियमित रूप से प्राप्त हो रहा है। पत्र का मुखपृष्ठ, छपाई और लेखन सामग्री से मैं बहुत ही प्रभावित हुआ हूँ तथा अन्य आर्य सदस्यों ने भी बहुत ही अच्छा बतलाया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि कुछ ही दिनों में आर्यमर्यादा भी आर्योदय के समान ही प्रिय हो जावेगा।

चन्द्रभूषण शर्मा मन्त्री आर्यसमाज इटारसी (होशंगाबाद)

२—आर्यमर्यादा साप्ताहिक वास्तव में आर्य जाति में नव प्राण सञ्चार कर रहा है। हम सभी आर्यसमाजी इसको प्राणपण से रखा करेंगे।

मनहरिलाल पिता वाचस्पति ग्राम चौकी मलेसा (जि डोडा) जम्मू काश्मीर।

३—बड़ी प्रसन्नता की बात है कि आप धीरे धीरे आर्यमर्यादा को आर्योदय के स्तर पर ला रहे हैं। समय पाकर यह वेद प्रचार का बड़ा उत्तम साधन बन जायगा। —डा० सेवकराम यात्री-खतौली

हरयाणा वेद प्रचार मण्डल की सूचनाएँ

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, हरयाणा मण्डल की ओर से निम्न आर्य समाजों व संस्थाओं के वार्षिकोत्सव सफलता पूर्वक सम्पन्न हुए।

फर्वरी में आर्यसमाज कोसली, बड़ौदा, गु० कु० आर्यनगर (हिसार) आर्य समाज जुलाना (जीन्द) सालवन और गु० कु० भैंसवाल (रोहतक) आर्य-समाज उचाना खुर्द, फरलिम्बु खेड़ा, नरेला, मोखन्दी, काहुलाना, गुरुकुल मटिण्डू, बारव (करनाल) आर्य सम्मेलन नारनौल और गुरुकुल सिंहपुरा सुन्दरपुर (रोहतक)।

इन उत्सवों को सफल बनाने का श्रेय हरयाणा की प्रसिद्ध भजन-मण्डलियों, श्री मुंशीलाल जी, श्री बदलाल जी, श्री रामकरण जी, डाक्टर शिवनारायण जी वानप्रस्थी, श्री रामपत जी आदि के अतिरिक्त पूज्य आचार्य भगवान्देव व प० जगदेवसिंह सिद्धान्ती को है। जिन्होंने छोटे गांव से लेकर शहर, कस्बों और गुरुकुलों में समय पर पहुँच कर आर्य जनता को कृतार्थ किया।

सब समाजों और संस्थाओं ने यथाशक्ति वेद-प्रचारनिधि के लिए सभा को दान देकर अनुगृहीत किया। अगले सप्ताह का विवरण अगले अंक में दिया जावेगा। केहरसिंह वेदालंकार—अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार (मंडल)

आर्यसमाज मऊनाथ भंजन का चुनाव

सर्वसम्मति से निम्नलिखित रूप में हुआ—

प्रधान—श्री सर्वेश्वर जी सर्राफ, मन्त्री—श्री देवव्रत जी, कोषाध्यक्ष—श्री कृष्ण मुरारी प्र० जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री रामानन्द जी गुप्त तथा ११ सदस्यों की एक कार्यकारिणी समिति गठित की गई। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज बालन्द (रोहतक) का निर्वाचन

सर्वसम्मति से वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ। प्रधान—महाशय मुंशीराम जी, मन्त्री—महाशय सुखलाल जी, कोषाध्यक्ष—श्री चन्दूलाल जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री प्रेमसिंह। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज जौनपुर का वार्षिकोत्सव

२७ मार्च ६९ से ३० मार्च ६९ तक समारोह से मनाया जावेगा। अनेक पूज्य सन्यासी, महात्मा, पण्डित, उपदेशक और प्रचारक पधारेंगे।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्ष गुरुकुल यज्ञतीर्थ एटा

२१ वां वार्षिक महोत्सव २९ मार्च से १ अप्रैल ६९ तक मनाया जावेगा। इस समय पूज्य सन्यासी, विद्वान्, उपदेशक और नेता पधारेंगे। यज्ञों का वैदिक स्वरूप देखने को मिलेगा। इस यज्ञतीर्थ की अनुपम यज्ञशाला एवं ब्रह्मचारियों का सस्वर वेद पाठ भारत भर में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। देवराज शर्मा—अधिष्ठाता

आर्यसमाज फीरोजगंज रोहद

वार्षिक महोत्सव ६ मार्च से ८ मार्च ६९ तक सम्पन्न हुआ। इस उत्सव में अनेक उपदेशक तथा नेता पधारें। जनता पर उत्तम प्रभाव पड़ा। —मन्त्री

आर्यसमाज गोविन्दनगर कानपुर का निर्वाचन

प्रधान—श्री देवीदास आर्य, मन्त्री—श्री शिवप्रसाद टंडन, कोषाध्यक्ष—श्री कृष्णकुमार वोहरा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सन्तोषपाल। —मन्त्री आर्यसमाज

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का ६९ वां वार्षिक उत्सव

श्री दिनेशसिंह जी विदेश मन्त्री, दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता करेंगे।

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का ६९ वां वार्षिकोत्सव १३ अप्रैल तक होगा। १२ अप्रैल ६९ को प्रातः श्री दिनेशसिंह जी विदेश मन्त्री भारत सरकार, दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता करेंगे। अन्य कार्यक्रमों के लिये भारतवर्ष के प्रमुख सन्यासी तथा आर्य नेताओं के व्याख्यान होंगे। —स० मुख्याधिष्ठाता

आर्यसमाज स्थापना दिवस का कार्यक्रम

आर्य केन्द्रीय सभा की ओर से दिल्ली में २३ मार्च रविवार सायं ४ बजे अजमलखां पार्क करोलबाग नई दिल्ली में मनाया जायेगा। इस अवसर पर पं० शिवकुमार जी शास्त्री ससद सदस्य चौ० चरणसिंह जी भूतपूर्व मुख्य मन्त्री उत्तर प्रदेश, प० प्रकाशवीर जी शास्त्री ससद सदस्य श्री के० नरेन्द्र जी आदि भाषण देंगे। —मन्त्री सभा

मोहन आश्रम हरद्वार में ऋषि-मेला

मोहन आश्रम हरद्वार में पूर्ववत् ता० ८, ९, १०, और ११ अप्रैल सन् १९६९ को वेदोद्धारक ऋषि दयानन्द मेला मनाया जावेगा जिस में आर्य जगत् के बड़े-बड़े पूज्य महात्मा सन्यासी और विद्वान् महानुभावों के सदुपदेश होंगे उन्हीं दिनों में बृहद्यज्ञ भी होगा।

नोट १—मोहन आश्रम हरद्वार स्टेशन से २ मील और हरकी पौडी से लगभग एक मील ऋषिकेश रोड पर है, स्टेशन से रिक्शा लगभग १) और तांगा १) में मिल जाता है।

नोट २—मेले में आने वाले महानुभावों से निवेदन है कि अपने आने की सूचना पहले से ही देने की कृपा करें। (स्वामी सच्चिदानन्द तीर्थ अधिष्ठाता

शोक प्रस्ताव

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की यह बैठक माननीय डा० गोकलचन्द जी नारंग के आकस्मिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है। श्री डाक्टर साहब जीवन भर देश और समाज का कार्य करते रहे। शुद्धि सभा की डाक्टर साहब तन, मन, धन से सदा सहायता करते रहे। भगवान् से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति और शोकाकुल परिवार को शांति प्रदान करे। —द्वारकानाथ प्रधान मंत्री

आर्यसमाज कालका (नई दिल्ली) गुरुकुल विभाग वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ—

प्रधान—श्री कृष्णचन्द्र एम० ए० मन्त्री—श्री निरजनदेव मलहोत्रा, कोषाध्यक्ष श्री अर्जुनदेव तथा ५ अन्तरङ्ग सदस्य—मन्त्री आर्यसमाज।

नये छात्रों का प्रवेश

गुरुकुल आर्यनगर (हिसार) मे नवीन छात्रों का प्रवेश आरम्भ हो चुका है। प्रवेश की अन्तिम तिथि ३१ मई है। श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ के अनुसार पाठ्यक्रम है। स्कूल के पाचवीं उत्तीर्ण छात्र को गुरुकुल की ६ ठी कक्षा में प्रवेश मिलेगा। शिक्षा नि शुल्क है। गुरुकुल का वातावरण सुन्दर तथा शान्तिमय है। प्रवेशार्थी आचार्य गुरुकुल आर्यनगर पो० कुरडी (हिसार) से पत्र व्यवहार करें। —आचार्य गुरुकुल आर्यनगर जि० हिसार

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से निवेदन

आर्योदय के ग्राहक महानुभाव जो विदेशों मे रहते हैं, उनकी सेवा में आर्यमर्यादा नियमपूर्वक भेजा जा रहा है।

आर्योदय कुछ अपरिहार्य कारणों से बन्द करना पड़ा और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से उसके स्थान पर आर्यमर्यादा प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारा आर्थिक वर्ष अप्रैल में समाप्त हो रहा है। अत विदेशों में रहने वाले सभी ग्राहक महानुभावों की सेवा में निवेदन है कि वे अपना वार्षिक शुल्क २०) रु० यथाशीघ्र आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम चैक या ड्राफ्ट द्वारा भेजने की कृपा करें। आशा है आर्योदय की भान्ति आर्यमर्यादा को भी अपना सहयोग एवं स्नेह मिलता रहेगा। विनीत

रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सम्पादक

श्राद्ध के सम्बन्ध में शास्त्रार्थ

आर्यसमाज मऊनाथ भजन (आजमगढ) के तत्वावधान में नूरपुर कैथ बलिया (गाजीपुर) में एव प० सत्यमित्र जी शास्त्री वेदतीर्थ एवम् श्री लक्ष्मीनारायण जी के बीच हुआ। प्रथम शास्त्री जी ने वेद मन्त्रो के आधार पर यह सिद्ध किया कि श्राद्ध जीवित पितरो का होना चाहिए मृतकों का नही। विपक्ष के श्री लक्ष्मीनारायण जी वेद शास्त्रो से कोई प्रमाण प्रस्तुत करने मे असमर्थ रहे। उपस्थित जनता ने श्री शास्त्री जी के प्रमाण और तर्क को स्वीकार किया। देवशरण—मन्त्री आर्यसमाज

सार्व० प्रतिनिधि [illegible] सभा के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

वर्ष १ अंक १७

१७ चैत्र वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४, [illegible]० मार्च १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) ,, विदेश में—२०) एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य सभा मन्त्री स० सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

ईश्वररचिता विद्युदादय कीदृग्गुणा सन्तीत्युपदिश्यते । ईश्वर के रचे हुए बिजुली आदि पदार्थ कैसे गुण वाले हैं सो अगले मन्त्र मे उपदेश किया है।

घृतपृष्ठा मनोयुजो ये त्वा वहन्ति वह्नय ।

आ देवान्त्सोमपीतये ॥ ऋ० १ १४ ६ ॥

पदार्थ —(घृतपृष्ठा) घृतमुदक पृष्ठ आधारे येषा ते मनोयुज) मनसा [illegible] ते (ये) विद्युदादय (त्वा) तमलकत्तु योग्य यज्ञम् (वहन्ति) प्रापयन्ति (वह्नय) वहन्ति प्रापयन्ति वर्त्ता पदार्थान् यानानि च यैस्ते (आ) समन्तात् क्रियायोगे (देवान्) दिव्यगुणान् भोगानृतून्वा (सोमपीतये) सोमाना पदार्थाना पीति पान यस्मिन्त्स्मै यज्ञाय

अन्वय —हे विद्वासो य इमे युक्त्या सप्रयोजिता घृतपृष्ठा मनोयुजो वह्नयो विद्युदादय सोमपीतये त्वा तमेत यज्ञ देवांश्चावहन्ति, ते सर्वैर्मनुष्यैर्यथा तद्विद्वित्वा कार्यसिद्धये सम्प्रयोज्या ॥

भावार्थ —ये स्तनयित्न्वादयस्त एव जलमुपरि गमयन्त्यागमयान्त वा ताराख्येन यन्त्रण सचालिता विद्यु मनोवेगवद्वार्त्ता देशान्तर प्रापयति । एव सर्वेषा पदार्थाना सुखाना च प्रापका एत एव सन्तीतीश्वराज्ञपनम् ।

भाषार्थ—हे विद्वानो ! जो युक्ति से सयुक्त किये हुए (घृतपृष्ठा) जिनके पृष्ठ अर्थात् आधार मे जल है । (मनोयुज) तथा जो उत्तम ज्ञान से रथो मे युक्त किये जाते (वह्नय) वार्त्ता पदार्थ वा यानो को दूर देश मे पहुँचाने वाले अग्नि आदि पदार्थ हैं, जो (सोमपीतये) जिसमे सोम आदि पदार्थों का पीना होता है उस यज्ञ के लिये (त्वा) उस भूषित करने योग्य यज्ञ को और (देवान्) दिव्यगुण दिव्य भोग और वसन्त आदि ऋतुओ को (आवहन्ति) अच्छी प्रकार प्राप्त करते है, उनको सब मनुष्य यथार्थ जान के अनेक कार्य्यों को सिद्ध करने के लिये ठीक-ठीक प्रयुक्त करना चाहिये ।

भावार्थ —जो मेघ आदि पदार्थ हैं, वे ही जल को ऊपर नीचे अर्थात् अन्तरिक्ष को पहुचाते और वहा से वर्षाते हैं और ताराख्य यन्त्र से चलाई हुई बिजुली मन के वेग के समान वार्त्ताओ को एक देश से दूसरे देश मे प्राप्त करती हैं । इसी प्रकार सब सुखो को प्राप्त कराने वाले ये ही पदार्थ हैं, ऐसी ईश्वर की आज्ञा है ॥

—(ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य से)

महात्मा आनन्द स्वामी जी ने आचार्य प्रियव्रत जी को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का वास्तविक उप-कुलपति घोषित किया

अनुदान आदि लेने तथा बैकों से धन निकालने का पूर्ण अधिकार भी उन्हे दिया गया

नई दिल्ली दिनाक २४-३-१९६९

श्री आचार्य प्रियव्रत जी, उपकुलपति
गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय, जिला सहारनपुर
आदरणीय आचार्य जी,

सार्वदेशिक सभा के निश्चय के अनुसार मैं आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का सारा कार्य अपनी देख रेख मे कर रहा हू । और इस सम्बन्ध मे मैंने ला० दीवानचन्द जी ३३ वी पूसा रोड नई दिल्ली को व्यवस्थापक के रूप में अपना सहायक नियुक्त किया है जिसकी सूचना प्रतिनिधि सभा तथा सार्वदेशिक सभा को दे दी गई है, और आगे से सब कागजात लाला दीवानचन्द जी मेरी ओर से ही देखेंगे ।

आपका पत्र दिनांक २३ ३ १९६९ मिला । गुरुकुल कागडी के वास्तविक रूप मे उप-कुलपति आप ही हैं और आपने ही अनुदान आदि लेने का यत्न करना है, जब तक मैं कोई नया निश्चय न कर लू । अत पूर्ववत् अपना कार्य करते रहे ।

सब बंको से भी धन निकालने के पूर्ववत् अधिकारी आप ही हैं, और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा शिक्षा मन्त्रालय आदि से जो धन अनुदान के रूप मे प्राप्त होता है उसे लेने के आप ही अधिकारी हैं और सब कागजात पर आपके ही हस्ताक्षर स्वीकृत हैं ।

मैं इस पत्र की प्रतिलिपि सब बंको के प्रबन्धको, शिक्षा मन्त्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा अन्य प्रशासनिक अधिकारियो को सूचना एव उचित आदेश के लिए भज रहा हूँ । आपसे भी निवेदन है कि आप इन सब अधिकारियो को पत्र व्यवहार द्वारा इनकी सूचना दे दे ।

भवदीय—ह० महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती
(विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

नई दिल्ली, २६-३-६९ —गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय की सीनेट मे अपनी बैठक दि० १०-११-६८ में श्री महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री को गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय का विजिटर नियुक्त किया था और साथ ही स्वामी समर्पणानन्द जी आचार्य भगवान् देव जी तथा ला० देसराज जी चौधरी की उपसमिति बनायी थी जिसने विजिटर महोदय के पास उपकुलपति की नियुक्ति के लिये तीन नाम भेजे थे । उक्त सिफारिश के आधार पर श्री महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री विजिटर ने आचार्य प्रियव्रत को ही उपकुलपति नियुक्त करने की अनुमति दी थी तथा आचार्य जी ने तीन वर्ष के लिये वह पद सभाल लिया । कुछ महानुभाव जिनका सम्बन्ध अम्बाला मे गत वर्ष घोषित व्यक्तियो मे था, उन्होने बिना अधिकार के एक षड्यन्त्र द्वारा डा० सत्यकेतु नामक एक व्यक्ति को विश्वविद्यालय का विजिटर तथा श्री दीनदयालु शास्त्री नामक किसी व्यक्ति को विश्वविद्यालय का उपकुलपति घोषित करके

(शेष वेद मन्त्र के नीचे)

उन द्वारा गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय तथा गुरुकुल कागडी फार्मेसी के भिन्न-भिन्न बैको मे सब एकाउन्ट बन्द करा दिये । जब सारी स्थिति महात्मा आनन्द स्वामी जी के समक्ष प्रस्तुत की गयी तब उन्होने हैदराबाद सम्मेलन के प्रस्ताव के आधार पर प्राप्त अधिकार के अनुसार घोषित किया है कि आचार्य प्रियव्रत जी ही गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय के वास्तविक रूप मे उपकुलपति हैं अत उन्हे ही अनुदान प्राप्त करने और पूर्ववत् बैंकों से धन निकालने का अधिकार दिया है । इसके उपरान्त आशा है, कि विश्वविद्यालय में स्थिति सामान्य होगी महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज द्वारा लिखा पत्र ऊपर दिया गया है ●

"वेद प्रसार कैसे हो"

(श्री प० [illegible])

१ सबसे पहले जो दूसरे लोगों पर जिस वस्तु का प्रभाव पड़ता है वह चरित्र है, सदाचार है, अत प्रत्येक आर्य को अपना चरित्र दूसरे लोगों से ऊँचा बनाना चाहिये, जिससे शत्रु भी कह सके कि इस व्यक्ति मे चरित्र सम्बन्धी दोष कुछ भी नहीं है। जब तक आर्यसमाजी चरित्रवान् नहीं हो। वह आर्य कहलाने का अधिकारी नहीं है, चाहे वह कितना ही वैदिक धर्म महर्षि दयानन्द की जय के नारे लगाता है।

२ प्रत्येक आर्यसमाजी आर्यसमाज के नियमो और सिद्धान्तो का पालन करे और अपने जीवन में ढालने का प्रयत्न करे। आर्यसमाज के नियम अथवा सिद्धान्तों की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि प्रत्येक आर्येजन भली-भाँति जानता है। यदि हम ऐसा करेंगे तो दूसरे मनुष्य अवश्य आकृष्ट होगे।

३ घर में परिवार के सदस्यो को विचारो से आय बनाने का प्रयत्न करना चाहिये विशेषकर गृहस्थी अपनी धर्मपत्नी को आर्य विचार की अवश्य बनाये। क्योकि यदि घर मे पुरुष तो आर्य है और उसकी धर्मपत्नी मूर्तिपूजा मृतक श्राद्धादि पाखण्ड करती हो, तो उसका प्रभाव पडोसियो पर उल्टा पडेगा जिससे लोग आर्यसमाज में नही आ सकते बहुधा ऐसा देखा गया है। अत इन बातो का ध्यान अवश्य रखना चाहिए इन बातो को हम छोटी मानते हैं। किन्तु यह आर्यसमाज के प्रचार मे बडी बाधा डालती हैं।

४ (पारीवारिक सम्बन्ध) यह वैदिक धर्म के प्रसार मे सबसे अधिक सहयोगी है। किन्तु आर्यो ने अपना एक आर्य परिवार नही बनाया। पहले की तरह जन्म जात जाति पाति मे अब तक फँसे हुए हैं। जिससे दूसरे अल्पसख्यक लोग आर्यसमाज मे नहो आते। क्योकि जब कभी जाति-पाँति का बखेडा खडा होता है, तो उस बेचारे को भी जो आर्यसमाजी विचार रखता है उसको भी औरो की भाँति कुचला जाता है। पहले तो वह अपनी जन्म जात बिरादरो वालो से आय बनने के पश्चात् कुचला जाता है और फिर बिरादरीवाद मे फँसकर आय भाई भी उसका साथ छोड देते हैं। तब तो बेचारे का जीवन दूभर हो जाता है। और वह एक आध दृढ आत्मा वाले को छोडकर शेष उन पूर्व बिरादरी वालो के साथ ही चले जाते हैं। इसमे जो भी जहाँ अल्पसख्यक है उसी का यह हाल होता है। किसी एक बिरादरी का जिक्र नही है। जब तक हम अपना एक परिवार नही बनायगे तब तक वेद का प्रसार होना असम्भव है। प्रत्येक आर्य के विवाह उत्सव आदि मे आर्य भाई ही दिखाई देने चाहिय। तभी दूसरो पर प्रभाव पड सकता है।

५ (माण्लिक व्यवस्था) मण्डलो की स्थापना से जितना शीघ्र वेद प्रसार हो सकता है उतना शीघ्र दूसरे प्रकार नही हो सकता। जैसे ऋषि दयानन्द जी महाराज ने आर्ष प्रणालो विद्या प्राप्ति का सबसे उत्तम साधन बताया है। इसी प्रकार मण्डलो की स्थापना से वैदिक सिद्धान्तो का प्रचार शीघ्र और दूर दूर फल सकता है। पाँच अथवा दस ग्रामो का एक मण्डल और पाँच-पाँच मण्डलो का एक प्रधान मण्डल और पाच अथवा अधिक प्रधान मण्डलो का एक महामण्डल (जिला मण्डल) भी कह सकते हैं। इसी प्रकार उनका सम्बन्ध प्रान्तीय सभा से कर देवें और फिर सार्वदेशिक सभा से सम्बन्ध हो जावे तो एक दृढ सगठन बन सकता है। जिससे अति शीघ्र वेदप्रसार सारे ससार मे किया जा सकता है।

६ प्रत्येक आर्यसमाजी ग्राम में एक मन्दिर अवश्य होना चाहिये। जिसमें कोई एक सन्यासी वानप्रस्थी हर समय रहे इससे आर्यसमाज के सभी कायक्रमो का पता प्रत्येक आर्य को लग सकता है। कम से कम सायकाल की सन्ध्या सामहिक रूप से की जावे जिससे आगे आने वाली पीढी पर अच्छा प्रभाव पडता है क्योकि बच्चो को नयी चीज सीखने का बडा चाव होता है।

७. प्रत्येक आर्य अपने नाम के आगे आर्य शब्द लगाये। प्रत्येक दुकानदार, कारखानेदार, मिलमालिक और घरो पर भी बोर्ड आदि पर आर्य [illegible] प्रयोग करें। [illegible] होना चाहिए। धनवान् आर्यों ने अपनी कारो, जीपें [illegible] ओ३म् का झण्डा लगाना चाहिए।

८ [illegible] आर्यसमाजी भाई दूसरे [illegible] वालो से बडी कठोर भाषा में विचार [illegible] करते हैं। जिससे मत [illegible] जाते हैं और वह आर्यसमाजियों [illegible] जाते हैं। [illegible] सबको दूसरो तक अपने सिद्धान्त [illegible] के लिए मधुर [illegible]

९ साहित्य वितरण वैदिक [illegible] अत सस्ता और बढ़िया। साहित्य [illegible] जावे अथवा थोड़े मूल्य में दिया जावे। दैनिक पत्रों [illegible] जाते हैं, उनमें वैदिक लेख [illegible] जावें।

१०. प्रचारकों और [illegible] क्रिये जावें भजनो द्वारा बडा अच्छा प्रचार किया जा सकता है। सबसे कठिन और वैदिक सिद्धान्तो के प्रचार का सबसे उत्तम और बडा साधन है, वैदिक राज्यसभा को स्थापना करके सामूहिक रूप से राजनीति मे भाग लेना। यह कार्य अवश्य करना चाहिए यदि यह नहीं किया गया, तो कोई कितनी ही शक्ति लगाये (कृण्वन्तो विश्वार्य) का युग युगान्तर में भी पूरा नही हो सकता, क्योकि सुख का मूल धर्म का मूल वित्त अर्थात् धन और धन का मूल राज बताया है अत राज लिए बिना वैदिक धर्म का प्रसार बहुत कम अश मे हो सकता है। यह कुछ सुझाव हैं जिनको अपनाने से वेद के प्रसार मे अत्यधिक उन्नति हो सकती है विद्वानो से प्रार्थना है इनको फैलाने का कष्ट कर केवल सूखे नेता बनने से वेद, ऋषिदयानन्द जी महाराज के आदेश पर कुठाराघात करते हो हे आर्यसमाज के ठेकेदारो! यदि इसी प्रकार मुकद्दमेबाजी से ही वेद का प्रचार करना था तो क्यो उस पावन ऋषि की फौज मे आये थे। यदि ऐसा करते रहे तो आपका नाम वेद विरोधी दयानन्द द्रोहियो मे लिखा जाएगा। तुम से अच्छे तो विरोधी लोग हैं जो खुलकर विरोध तो करते हैं।

गतांक से आगे

किसान

श्री योगीन्द्र पाण्डय लखोलिया (बलिया)

घर मे तेरे जब देखा पय, होकर अतीत मे मैं तन्मय,
यो लगा सोचने बार-बार, तब अन्तर भी बोला विचार-
'पय है तेरा पयस्समान।' हे जगती की जान किसान॥

बहती थी यहाँ दुग्ध-धारा, धन-धान्य-पूर्ण भारत सारा,
तुम उस युग को चाहो लाना, अब क्षीर-नदी तुम बहवाना।
वह सुख छत्र रहे तुम तान। हे जगती की जान किसान॥

दरवाजे पर वह तुम्हारी, थी रुकी, खडी बैल-गाडी,
था द्वार तुम्हारा भी पावन, रक्खा था कोने मे ईंधन।
जो थी तेरी यान किसान। हे जगती की जान किसान॥

देखा तेरा व्यायाम-स्थल, जिसमे होते रहते दगल,
तुममे अपूर्व जो ताकत है, उससे ही सक्षम भारत है।
निज शरीर का रखते ध्यान। हे जगती की जान किसान॥

होवे दूर कि जिससे सुस्ती, इसीलिये करते हो कुश्ती,
मल्ल-युद्ध, मुगदर उठाना, उट्ठक-बैठक, दौड लगाना।
तेरे हैं ये सभी निशान। हे जगती की जान किसान॥

[क्रमश]

सम्पादकीय

राष्ट्रहित की तात्कालिक मांग

देश इस समय बहुत ही विचित्र स्थिति मे ˘सा हुआ है। काग्रेस जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भी देश के राजनैतिक जीवन पर छाई रही और सत्तारूढ रही, अब जर्जरित हो रही है। जनता मे उसकी शाख खत्म हो रही है, जनता को उसकी नीतियो एव कार्य शैली से घोर निराशा हुई है। उसका दिनो दिन बढता आन्तरिक बजट उसे बिल्कुल खोखला बना रहा है।

साथ ही देश मे कई दर्जन छोटे-बडे राजनैतिक दलो के खडे हो जाने से राजनैतिक अस्थिरता पैदा हो गई है। अनेक राज्यो मे मध्यावधि चुनावो के पश्चात् भी कोई टिकाऊ सरकार चलने के लक्षण दिखाई नही देते। अराजकता का वातावरण बन रहा है। केन्द्र की स्थिति भी शिथिल हो रही है। देश की सीमाओ पर प्रबल शत्रु-सेनाओ के आक्रमण का भय प्रति-दिन सघन हो रहा है। इन सब परिस्थितियो का लाभ उठाकर विघटन-कारी शक्तिया जोर पकड रही हैं जिनके पीछे विदेशी हाथ की आशका भी निर्मूल नहीं कही जा मकती। आसाम, बगाल, नागालैण्ड, केरल आदि में यही खेल खेला जा रहा है।

नागालैण्ड की नीव ही उस बपतिस्ठ अर्थ को प्रेरणा पर रखी गई जिसका नेतृत्व विदेशी ईसाई प्रचारको के हाथो मे था। आसाम का विभा-जन भी इसी सम्प्रदाय की दुरनितियो का फल है। केरल मे अपने को धर्म विरोधी एव साम्प्रदायिकता के शत्रु कहने वाले कम्युनिस्टो ने मुस्लिम लीग के साथ गठबन्धन कर लिया है। इसी सिलसिले मे वहाँ मोपलिस्तान बनाने की पुरानी मुस्लिम लीगी माँग को कार्यरूप मे परिणत किया जा रहा है, साथ ही वहाँ एक मुस्लिम विश्वविद्यालय भी बनाया जा रहा है। बगाल मे कम्युनिस्टो और मुस्लिम साम्प्रदायिकता में स्पष्ट गठबन्धन हो चुका है। ससद् मे कम्युनिष्टो द्वारा बिना प्रसग के भी मुसलमानो का अनु-चित पक्ष लेना और समर्थन करना उनकी नीति का परिचय एव प्रमाण प्रस्तुत करता है।

इन सब बातो को देखते हुए देश का भविष्य एव लोकतन्त्र का अस्तित्व तक खतरे मे पड गए हैं। देश के सभी विवेकशील लोग बहुत चिन्तित हैं कि देश किधर जा रहा है, घटनाचक्र किस दिशा मे घूम रहा है?

इस सकट से देश को बचाने का सबसे पहला और कारगर उपाय यही है कि देश मे राजनैतिक ध्रुवोकरण होना चाहिए। देशहित का तत्काल यह अनुरोध है कि देश मे जितने भी राष्ट्रवादी एव लोकतन्त्र मे विश्वास रखने वाले दल के नेता हैं, वे इकट्ठे हो जायें। सब अपने-अपने दलविशेषो का मोह छोडे, अपनी व्यक्तिगत आकाक्षाओ को भुला द और एक दल के रूप मे सगठित हो जायें। सभी समान विचारधारा वाले दलो को मिलने मे कोई कठिनाई नही होनी चाहिये। हमारे देश का यह दुर्भाग्य ही रहा है कि बिखेरने वाली शक्तिया तो सगठित हो जाती हैं और एकतावादी तत्त्व कभी इकट्ठे नही हो पाते। यह विडम्बना मानो अब भी हमारा पल्ला नही छोड रही है दलीय अथवा व्यक्तिगत स्वार्थों से टकराकर देश का सर्वस्व चूर चूर हो गया तो फिर ये दल और नेता भी कहाँ देखने को मिल सकेंगे। मैं अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर यह कह सकता हूँ कि विभिन्न राष्ट्रवादी दलो के नेता मन-मन मे तो बडे जोर से इस प्रकार के प्रयत्नो की आवश्यकता को अनुभव करते हैं, परन्तु सार्वजनिक रूप से कुछ कहने या करने मे सकोच अनुभव कर रहे हैं। समय आ गया है कि अब इन लोगो को अपनी मानसिक दुर्बलता एव दुविधा त्यागकर साहसपूर्वक देश का नेतृत्व करना चाहिए। ●

रघुवीरसिंह शास्त्री

डाक्टर सुभाष आर्य सम्मानित

डा॰ सुभाष जी आय बच्चो के रोगो के विशिष्ट चिकित्सक हैं। अब यह होनहार युवक डाक्टर नवजात बालको में श्वास तथा रक्त से सम्बद्ध रोगो पर विशेप अनुसधान कार्य में सलग्न हैं। इन्होने सन् १९६१ में अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान सस्थान से एम॰ बी॰ बी॰ एस॰ उत्तीर्ण कर के अमेरिका के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय शिकागो मे जाकर विशिष्ट योग्यता प्राप्त की है।

गत १८ मार्च १९६९ को अन्तर्राष्ट्रीय सस्थान जूनियर चेम्बर की देहली शाखा द्वारा मावलकार भवन मे आयोजित एक समारोह मे इन को वर्ष का असाधारण युवक' के सन्मानित एव गौरव पूर्ण पद से विभूषित किया गया।

सामान्य रूप मे समस्त आर्य जगत् मे और विशेष रूप मे आयप्रतिनिधि पजाब के क्षेत्र म यह जान कर प्रसन्नता होगी कि आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब के उपप्रधान माननीय श्री नवनीतलाल जो एडवोकेट (सुपरिम कोर्ट) के आप सुपुत्र हैं। सुयोग्य पिता के अनुरूप आप मे सोम्य आदि मब मानवोचित गुण विद्यमान हैं।

सभा से सम्वद्ध समस्त आयसमाजो तथा आय बन्धुओ की ओर से हम इस सन्धान का स्वागत करते हैं और बधाई देते है। परमेश्वर आपको सदा यशस्वी एव दीर्घजीवी रख।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

लेखक महानुभावों से नम्र निवेदन

सौभाग्य है कि 'आर्यमर्यादा" पत्र के प्रति माननोय लेखक बन्धुओ का सौजन्य बढता जा रहा है। गद्य-पद्यमय लेख प्रति सप्ताह पर्याप्त सख्या मे पहुँचते रहते हैं। उनको हम यथाक्रम प्रकाशित करते रहते हैं, इसी कारण एक-दो सप्ताह का विलम्ब भी प्रकाशन मे होता रहता है। कृपया कुछ बातो पर ध्यान अवश्य रखते रहिये—(१) लेख (गद्य-पद्य) सुलेख मे स्वच्छ अक्षरो मे होवे, जिससे कम्पोज करते समय सुविधा रहे। (२) यदि आर्य-मर्यादा के एक पृष्ठ का लेख हो तो कई विद्वानो के भिन्न-भिन्न लेख प्रकाशित किये जा सकते हैं। यदि अधिक लम्बे लेख हो तो विभाग करके आगे के अको मे दिये जाते रहेगे। वैदिक धर्म सम्बन्धी सिद्धान्त के लेख लम्बे भी हो, तो एक साथ दो पृष्ठ पर दिये जा सकते हैं। अधिक लम्बे होने पर उन को भी अग्रिम अक मे प्रकाशन करना आवश्यक हो जाता है। (३) लेखो की भाषा सस्कृतनिष्ठ शुद्ध हिन्दी ही होनी चाहिये। अन्य भाषाओ का मिश्रण न होवे। आर्यमर्यादा वेदो के प्रचार के लिए सस्कृत-अध्ययन अध्यापन और उच्चस्तर को हिन्दी स्तर को बनाये रखना चाहता है। गवेषणात्मक और आलोचनात्मक लेखो मे प्रमाण रूप अन्य भाषाओ का पुट दिया जा सकता है, जिससे मूल लेख की पुष्टि हो सके हमे पूर्ण विश्वास है कि माननीय लेखक महानुभाव सदा इसी भाँति "आर्यमर्यादा' के शुद्ध प्रचार कार्य मे योग दान देकर कृतार्थ करते रहेगे।—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सहसम्पादक

समाचार प्रेषकों से निवेदन

समाचार भेजने वाले सज्जन सक्षिप्त समाचार भेजने की कृपा किया करे, क्योकि अनेक आर्यसमाजो के निर्वाचनो, उत्सवो तथा अन्य सस्थानो के समाचार प्राप्त होते हैं। सबको स्थान दिया जायेगा, अत सक्षिप्त समा-चार ही प्रकाशित किए जा सकते हैं, विस्तृत नही। व्यवस्थापक

लोकालोक का प्रलाप

(डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम० ए०, साहित्यालंकार, कानपुर)

'परोपकारी' वर्ष ६ अगस्त १९६८ ई० अङ्क १०, पृष्ठ २७ में "ब्यावर में श्री शंकराचार्य जी" शीर्षक से पं० भगवान स्वरूप जी का एक लघु लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें उन्होंने लिखा था कि ब्यावर में पुरी के श्री शंकराचार्यजी महाराज ने वाक्छल से ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य से अवतार-वाद और मूर्त्ति-पूजा का प्रतिपादन किया है। उनके लेख की आलोचना में दिल्ली से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र "लोकालोक" वर्ष ८ सितम्बर १९६८ ई०, अंक ६ पृष्ठ ६, ७, ८ में श्री मीमांसक का व्यर्थ का रोष ?" शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ है।

लेखक ने शारीरिक भाष्य से अवतार व मूर्त्ति-पूजा सिद्ध करने का प्रयास करते हुए महर्षि दयानन्द जी के वेदभाष्य से अवतार, मूर्त्ति-पूजा सिद्ध करने का दुस्साहस किया है।

"स्थानादिव्यपदेशाच्च" (वेदान्त दर्शन १।२।१४)

इस सूत्र का भाष्य आद्य शंकराचार्य जी महाराज का भ्रमपूर्ण है। उन्होंने स्वयं भाष्य में ब्रह्म को "निर्गुण" माना है। सगुण का उन्होंने उदाहरण दिया है।

देखिये—"निर्गुणमपि सद् ब्रह्म नामरूप गतैर्गुणैः सगुणमुपासनार्थं···।"

इसका हिन्दी अनुवाद—"ब्रह्मनिर्गुण है, तो भी उपासना के लिए स्थल स्थल पर सगुण की तरह नाम और रूप से उसका उपदेश किया जाता है।"[1] "सगुण की तरह" उपदेश किया जाता है इसका क्या तात्पर्य है ?

इस सूत्र में तो परमात्मा को "शरीरांग से भिन्न" बतलाया गया है। यथा—"(च) और भी यह अन्य हेतु उस 'अन्तर:' शब्द के परमात्मा का वाचक होने में (स्थानादिव्यपदेशात्) शरीराङ्गों से भिन्न पृथिवी स्थानादियों में वर्तमान होता हुआ वह उनसे भिन्न व्यपदिष्ट है– कहा गया है।······[2]

वेदान्त दर्शन १।१।२० में परमात्मा का मायामय रूप जो शङ्कर भाष्य में है वह भी सूत्र के अनुसार नहीं है।

उसका तात्पर्य है—"(अन्त:) कहीं अध्यात्म प्रकरण में 'अन्त:' शब्द प्रयुक्त किया गया है। वहां अन्तर्यामी परमात्मा अभीष्ट है, क्योंकि (तद्धर्मोपदेशात्) उस ब्रह्म के धर्मों का वहाँ उपदेश वर्णन होने से।·········"[3]

आद्य श्री शंकराचार्य जी महाराज 'अवतारवाद' व मूर्त्ति-पूजा नहीं मानते थे, ऐसा उनका लिखना अशुद्ध नहीं है। देखिये—

"ईशावास्योपनिषद् म० ८ का आद्य शंकराचार्य जी महाराज का भाष्य—"स पर्यगात्स यथोक्त आत्मा पर्यगात् परिसमन्तात् आगात् गतवान् आकाशवद् व्यापीत्यर्थः। वह आत्मा जैसा कि (यस्मिन् सर्वाणि) इत्यादि मंत्र में कहा गया है, आकाश के समान सर्वत्र व्यापक है। शुक्रं शुद्ध ज्योतिष्मद्दीप्तिमानित्यर्थः। प्रकाशमान है। अकायम् अशरीर लिङ्ग शरीर वर्जित इत्यर्थः। जो लिंग शरीर रहित है। अव्रणं अक्षतम् क्षत रहितम्। जिसमें कोई व्रण न हो। अस्नाविरम् जो नस-नाड़ी से रहित है। अव्रणमस्नाविरमित्याभ्यां स्थूलशरीर प्रतिषेधः। अव्रण और अस्नाविर ये जो दो विशेषण दिए गए हैं इन दोनों से परमात्मा के स्थूल शरीर का निषेध है। शुद्धम् निर्मलमविद्यामल रहितमिति कारणशरीरप्रतिषेधः। वह शुद्ध अर्थात् अविद्यादिमल रहित है। इससे उसके कारण शरीर का प्रतिषेध है। अपापविद्धम् धर्माधर्मादिपापवर्जितम्। धर्म, अधर्म आदि पाप से रहित है। कविः क्रान्तदर्शी सर्वदृक् मनीषी मनस ईषिता सर्वज्ञः ईश्वरइत्यर्थः सर्वज्ञ ईश्वर। परिभूः सर्वोपरि भवतीति परिभूः। जो सबके ऊपर हो, उसके ऊपर कोई न हो। स्वयभू जो स्वयं होता है और जो ऊपर होता है वह सब स्वयं वही है। नित्य मुक्त ईश्वरो याथातथ्यतः सर्वज्ञत्वाद्यथातथा भावो याथातथ्यं यस्माद्यथाभूतकर्मफलसाधनतः अर्थान् कर्तव्यपदार्थान् व्यदधात् विहितवान्। यथानुरूपं व्यभजदित्यर्थः। शाश्वतीभ्यो नित्याभ्यः समाभ्यः संवत्सराख्येभ्यः प्रजापतिभ्य इत्यर्थः॥"

आद्य श्री शङ्कराचार्य जी महाराज के इस उपर्युक्त भाष्य से स्पष्ट प्रकट होता है कि अवतारवाद व मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध है। क्या 'लोकालोक' के सम्पादक, लेखक इस भाष्य को नहीं मानते हैं यदि मानते हैं तो इनका लिखना नितान्त उचित है। वेद के केवल इस मंत्र से ही अवतारवाद व मूर्तिपूजा पर हड़ताल फिर जाती है। अब श्री मीमांसक अपने आचार्यपाद के "वाक्छल" के पक्ष में लिखते हैं :—

—यदि आचार्य श्री ने स्वा० दयानन्द के वेद भाष्य से अवतारवाद और मूर्ति पूजा प्रतिपादन करने की घोषणा की है तो वह असत्य नहीं है।

·········यथा—'एसो ह देव: प्रदिशोनुजात:' (यजु:) आदि के भाष्यों से अवतारवाद तथा घृतेन सीता मधुना समज्यताम् (यजु: १२।७०) आदि के भाष्यों से मूर्तिपूजा प्रत्यक्षसिद्ध है। संस्कारविधियों में तो छुरे, ओखल, मूसल, लाठी, छाता और जूते तक की पूजा विद्यमान है।·········"

समीक्षा—श्री मीमांसक जब आर्य-समाज व वैदिक सिद्धान्त के 'क-ख' को भी नहीं जानते तब महर्षि दयानन्द जी महाराज के भाष्यों से अवतार व मूर्तिपूजा का फतवा देने का कुप्रयास क्यों करते हैं ? आप पौराणिक पं० कालूराम शास्त्री कृत "आर्यसमाज मूर्तिपूजा" नामक पुस्तिका से दो चार प्रश्नों को चोरी करके वाक्छल कर रहे हैं। श्री कालूराम की पुस्तिका का उत्तर आर्यजगत् के विद्वानों द्वारा दिए जा चुके हैं, पर जिनके उत्तर दिए जा चुके हैं उन प्रश्नों को भी वारबार साधारण जनता के सम्मुख प्रदर्शन करना विद्वत्ता नहीं है।

आपको "एषोह देव······" को यजुर्वेद का पूरा प्रमाण तथा महर्षि दयानन्द जी के भाष्य देकर उसकी समुचित आलोचना करनी चाहिए थी। इतनी योग्यता तो है नहीं, केवल आपके कथनमात्र से अवतारवाद सिद्ध हो गया ? जिसके हृदय के नेत्र फूट गए हों वही इस प्रकार का अनर्गल प्रलाप कर सकता है ?

पूरा मंत्र और महर्षि दयानन्द जी का भाष्य :—

"एषोह देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वो हजतः स उगर्भे अन्तः। स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः। [यजु० अ ३२ मंत्र ४

भाष्य—"(एषः) परमात्मा। अत्र विभक्तेरलुक् (ह) प्रसिद्धम् (देवः) दिव्यस्वरूपः (प्रदिशः) (अनु) आनुकूल्ये (सर्वा.) दिशश्च (पूर्वः) प्रथमः (ह) प्रसिद्धम् (जातः) प्राकट्यं प्राप्तः (स्त्रः) (उ) एव (गर्भे) अन्तकरणे (अन्तः) मध्ये (सः) (एव) (जातः) प्रसिद्धः (स्रः) (जानिष्यमाण.) प्रसिद्धिं प्रारस्यामानः (प्रत्यङ्) प्रतिपदार्थं मञ्चतिप्राप्नोति (जनाः) विद्वांसः (तिष्ठति) वर्त्तते (सर्वातोमुखः) सर्वतो मुखाद्यवमवा यस्य सः।"······[4]

इससे अवतारवाद कैसे सिद्ध होता है, यह मीमांसकजी लेख में लिखते नहीं हैं तो उत्तर क्या दिया जाय ? फिर भी 'दुर्जनतोष' से कुछ उत्तर दिया जाता है—

इसमें 'जात: और जनिस्यमाण:' पद देखकर पौराणिक भ्रम में पड़ जाते हैं, पर ये दोनों पद ईश्वर के लिये गौण हैं और ईश्वर के व्यापकत्व के बोधक हैं। जब परमात्मा अरूप है, उसके जन्म निषेध वेदों में है तब जात:, जनिस्यमाण को गौण माने बिना श्रुतियों की संगति नहीं लग सकती।

'गर्भ' का अर्थ 'अन्त:करण 'है' पौरापिक संभवत: 'पेट के भीतर' समझकर अवतारवाद का दुर्ग बनाने का स्वप्न देखते हैं।

"आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिण कृणुते गर्भमन्त:" क्रमश:

१. "ब्रह्मसूत्र शङ्करभाष्य रत्नप्रभा भाषानुवाद सहित, प० चण्डीप्रसाद शुक्ल प्रिंसिपल जी म० गोयनका संस्कृत महाविद्यालय, तथा प० श्री कृष्णपन्त शास्त्री, साहित्याचार्य द्वारा सम्पादित, पृष्ठ ४५५ [संवत् १९९२ वि० में अच्युत ग्रंथ माला कार्यालय, वाराणसी से प्रकाशित, प्रथमोध्याय·]।

२. "पूज्य स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक कृत "वेदान्तदर्शन" भाषाभाष्य प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४४।

३. वही, पृष्ठ १६।

[वेदान्तदर्शन १।२।१४ के भाष्य में आद्य श्री शंकराचार्य जी महाराज ने जो शालग्राम की बटिया मे विष्णु की कल्पना की है यह उनका कल्पनामात्र ही है। वेदों व उपनिषदों में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है। यह पुराणों का गप्प है।]

४. "यजुर्वेदभाष्य,पृष्ठ ७६१ [वैशाख शुक्ल ११ शनो संवत् १९४६ वि० में वैदिकयन्त्रालय अजमेर द्वारा प्रकाशित]

क्या आचार्य ब्रह्मचारी को अपने पेट के भीतर रख लेता है ? अत: महर्षि दयानन्द का अर्थ ठीक है।

पटेला, छुरे, ओखल, मूसल, छाता, जूते आदि पूजा का रहस्य "घृतेन सीता मधुनासमज्यताम्" (यजु० १२-७०) के भाष्य से मूर्तिपूजा

सिद्ध करना आकाश से पुष्प तोड़ने के समान है।

आर्ष शिक्षा प्रणाली

(श्री स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश गुरुकुल झज्जर)

गताक से आगे

वैज्ञानिको को उनके क्षेत्र मे वेदो के वैज्ञानिक मन्त्रो से कुछ नवीन दिशा मिलने की सम्भावना विशेष है। मनुष्य लिखित ग्रन्थो मे अधिकतर विषय कल्पना के आधार पर चलता है और जो कुछ उसमें यथार्थता की झलक है, वह वेद, ऋषि-मुनियो के सत्यग्रन्थो वा सत्पुरुषों का उच्छिष्ट है। अत सहृदय उन्नतिशील लोगो को ज्यो ही इस तथ्य का बोध होता है वे काल्पनिकता को तिलाञ्जलि देकर आर्षग्रन्थो वा अनुकूल सत्पुरुषो के रचित साहित्य से ही अपने आत्मा को अलकृत करना आरम्भ करते हैं।

यह आर्ष शिक्षा प्रणाली व्यक्तियो को विद्वान्, देवता, ऋषि और मुनि बनाने की टकसाल है। जब अन्य वस्तु बिना परिश्रम के उत्पन्न नही किये जा सकते, तब मनुष्य जैसा महत्त्वपूर्ण प्राणी समुचित उपायों का आश्रय न लेकर कैसे निर्माण किया जा सकता है। सर्वथा ऊँचा व्यक्तित्व पाने के लिए मानव को दो जन्म लेने ही पड़ेंगे। पहला जन्म सदाचारी विद्वान् माता-पिता से और दूसरा आचार्य से। बालक के निर्माण मे इन दोनो का ही हाथ होता है। जैसे माता बच्चे को गर्भ में धारण करके सर्वाङ्ग परिपूर्ण बनाती है, वैसे ही आचार्य उसे अपने गुरुकुल रूपी गर्भ मे रखकर साङ्गोपाङ्ग सम्पूर्ण विद्याओ मे प्रवीण बना देता है। आचार्य का गर्भ बच्चे के उपनयन यज्ञोपवीत सस्कार से आरम्भ होता है और जब तक ऋग्यजु. सामरूप त्रयी विद्या समाप्त नही हो जाती, तब तक चलता है[1]।

इस गर्भ मे जिस प्रकार का निर्माण होता है, उससे आगे बताई जाने वाली बातो की नींव पडती है—

क—ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासियो की।

ख—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र (सेवकों) की।

जैसे किसी भवन का आधार उसकी नींव है और जैसे वृक्ष का आश्रय उसकी जडे हैं, ठीक ऐसे ही गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासियों के उत्पादक ब्रह्मचारी है। जिस देश मे विद्या पढ़ते समय २५ वर्ष वा ४८ वर्ष के आयु तक अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन एकान्त—शान्त, नगर से दूर रहकर मनोरम विद्यामन्दिर में चलता है वह देश एक आदर्श, स्वच्छ और निष्कलक गार्हस्थ्य धर्म का जन्मदाता है और वह धर्म ही वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम का जनक बनता है। ब्रह्मचर्य के अभाव मे अवास्तविक गृहस्थ, और अविचारशील वानप्रस्थ और अविरक्त सन्यासी दृष्टिगोचर होने लगते हैं। अथवा ऐसे गृहस्थ बन जाते हैं, जिनमें वानप्रस्थ और सन्यासी बनने वा बनाने का सामर्थ्य नही रहता। जब तक ससार मे वानप्रस्थ और सन्यासी महात्मा न हो तब तक गृहस्थो का मार्ग दर्शक और कोई नही है और यह सब कुछ ब्रह्मचर्य पालन से दृढ होता है। अत ब्रह्मचर्य आश्रम पद्धति से ब्रह्मचारी बनना सर्वोपरि है। जैसे मकान की नींव और पेड की जड दिखाई नहीं देती, ऐसे ही प्रमुख होते हुए भी एकान्त स्थान मे विद्यमान ब्रह्मचर्याश्रम अज्ञानी जनो की दृष्टि में लाभ पहुँचाते दिखाई नही देते।

ब्रह्मचारी बनने के स्थान गुरुकुल होते हैं, इन्हें ही ब्रह्मचर्य-आश्रम कहते हैं। वहाँ सयमपूर्वक विद्याध्ययन के साथ-साथ शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियो का पूर्ण विकास होता है।

विद्या समाप्ति पर आचार्य उन ब्रह्मचारियो का जो गृहस्थाश्रम मे प्रवेश के इच्छुक हैं, उनकी योग्यता के आधार पर उनके लिए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्ण और इन तीनो वर्णों के सेवक शूद्र वर्ण का निर्धारण करता है। बस यही उनकी जाति के हैं, जो मरणपर्यन्त स्थिर रहती है। यह सत्य है! अजर है!! अमर है!!!

जो गृहस्थ बनने मे आस्था नही रखते वे आचार्य के कारणो मे रहकर निरन्तर उत्तरोत्तर विद्या और योग का अभ्यास करते हैं एव ऐसा करते हुए जब भी विरक्ति आती है, सन्यासी होकर लोकोपकार मे लग जाते हैं।

इससे अतिरिक्त जो अत्यन्त मेधावी होता है जब वह सम्पूर्ण विद्याए ग्रहण करके अनूचान पद प्राप्त कर लेता है तो आचार्य महानुभाव उसे गृहस्थाश्रम न करने के लिए प्रेरित करता है क्योकि उससे ससारस्थ मनुष्यो को बहुत सुख पहुचने की आशा होती है। गृहस्थाश्रम मे वीर्यादिक्षय से अल्पायु होकर लोकोपकार की सम्भावना कम पड जाती है।*

राज्य की ओर से जब इस प्रकार चारो वर्णों को उत्पन्न करने एव अन्यो के उत्थान के लिए भी आर्षशिक्षा प्रणाली से विद्याध्ययन का सुचारू प्रबन्ध किया जाता है, तो देश की सकल समस्याए समाधान पाने मे सुन्दर हो जाती हैं। ऐसा समय भगवान् राम का था। उस काल मे इसी आर्ष शिक्षा प्रणाली से शिक्षित करके प्रत्येक व्यक्ति को सभ्य नागरिक बनाया जाता था। चारो वेदो के महान् विद्वान् श्रीराम अपने अनुज लक्ष्मण से सुग्रीव के दूत ब्रह्मचारी हनुमान जी की प्रशसा करते हुए कहते हैं कि जब तक ऋग्वेद के अध्ययन से विनय न आए, यजुर्वेद का धारण न किया जावे सामवेद का ज्ञान न हो, तब तक ऐसा सुन्दर भाषण नही किया जा सकता। निश्चय ही हनुमान जी ने व्याकरण भी अनेक बार सुना है, क्योकि दीर्घकाल तक बोलते हुए भी इसके मुख से एक भी अशुद्ध शब्द नही निकला[1]। इसके मुख, नेत्र, ललाट भ्रू व एव शरीर के अन्य अङ्गो मे कही दोष नही जाना गया[2]।

आर्ष पाठविधि का यह क्रम महाभारत पर्यन्त अविराम चला आया। इसके टूटने से मनुष्यो के काल्पनिकता लिए हुए पुस्तक चल पडे। जिसका परिणाम मत मतान्तरो की वृद्धि होकर देश मे ऐक्य न रह जाने से अराजकता, परतन्त्रता खण्डता व्याप्त होती चली गयी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र भी अपने रूप मे गुण कर्मानुसार न रह सके। जिस देश के किसी कोने में भी मूर्खता व्याप्त है, कहना पडेगा—वहाँ ब्राह्मण नहीं हैं। जिस देश के मनुष्यो को शत्रुओ का आतङ्क सताता है वा अन्याय होता है, वहाँ क्षत्रिय तेज नहीं है और जिस देश की जनता भुखमरी के दिन देखती है, वहाँ से सर्व हितकारी वैश्यवर्ग समाप्त हो चुका है।

आर्ष शिक्षा प्रणाली गुण-कर्म व्यवस्था से चारो वर्णों को जन्म देकर देश मे भक्ति, आस्तिकता, उदारता, धर्मप्रवृत्ति ब्रह्मचर्य और सदाचार का वातावरण प्रकट करती है। इस पद्धति से अध्ययन करने मे परिश्रम कम और ज्ञान-वृद्धि अधिक होती है।

आर्ष शिक्षण सरणी मे शब्दाडम्बर को स्थान नहीं है। शब्दाडम्बर उसे कहते हैं, जहाँ शब्द ही शब्द हो और पल्ले बहुत कम पडे। किन्तु इस शैली मे परिमित शब्द रखकर अत्यधिक ज्ञान गागर मे सागर की न्याईं भरा हुआ है। इसकी पुष्टि मे महर्षि दयानन्द का यह वाक्य प्रमाण है—"जो महाशय महर्षि लोगो ने सहजता से महान् विषय अपने ग्रन्थो मे प्रकाशित किया है, वैसा उन क्षुद्राशय मनुष्यो के कल्पित ग्रन्थो मे क्यो कर हो सकता है।"

अत आवश्यकता है—देश के हितैषी मानवता के सरक्षक और राष्ट्र के कर्णधार इसी आर्ष शिक्षा प्रणाली को सर्वोपरि समझ तथा अपना तन-मन-धन इसी पर लगावे।

---

*जाति शब्द से यहाँ सामान्य विशेषात्मक जाति से है देखो सत्यार्थप्रकाश ११ समुल्लास

उदीरय कवितम कवीनामुनत्तैनमभिमध्वा घृतेन।
स नो वसूनि प्रयता हितानि चन्द्राणि देव सविता सुवाति॥
(यु० ५-४२-३)

१ नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिण।
नासामवेदविदुष शक्यमेव विभाषितुम्॥
नून व्याकरण कृत्स्नमनेन बहुधाश्रुतम्।
बहुव्याहरतानेन न किञ्चिदपशब्दितम्॥
२ न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा।
अन्येष्वपि च सर्वेषु दोष सविदित क्वचित्॥
(वाल्मीकीय रामायण किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३ श्लोक २८-३०)

१—आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिण कृणुते गर्भमन्त।
त रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति त जात द्रष्टु मभिसयन्ति देवा॥
(अथर्ववेद ११-५-३)

"कीर्तन जगत् की पहेली"

(श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट, भूतपूर्व प्रधान सार्व० आ० प्र० नि० सभा)

कीर्तन जगत् अपने आप में एक उलझी हुई पहेली है सृष्टि की आदि से इसको सुलझाने का यत्न होता रहा इसके समाधान के दो मौलिक रूप हैं एक आत्मा की दृष्टि से और दूसरा शरीर निर्माण की दृष्टि से।

सबसे विचित्र बात यह है, कि जोव या जीवात्मा दिखाई नहीं देता। उसका प्रभाव दिखता है उसका अभाव दिखता है, और मृत्यु दिखती है दूसरो विचित्र बात यह है कि आत्मा का प्रवेश कब और कैसे होता है दिखाई नहीं देता। जोव कैसे निकल जाता है और निकलकर कहाँ जाता है यह दिखाई नहीं देता।

किसी शरीर में जब जोवात्मा का प्रवेश होता है तो उसे जन्म कहते हैं निकल जाने को या शरीर से संबंध विच्छेद हो जाने को मृत्यु कहते हैं गर्भ धारण होते हुये दृष्टिगोचर नहीं होता। गर्भ कहते हैं उसको जिसका प्रत्यक्ष कठिन हो। गर्भ कई प्रकार के हैं पृथ्वी का गर्भ, और माता का गर्भ। माता के गर्भ में पिता का वीर्य आवश्यक साधन है इसी प्रकार पृथ्वी के गर्भ में बीज का बोना और उसको उगने के लिये आवश्यक साधन जुटाना विचारणीय प्रश्न है।

पहेली के दो सुझाव

पहेली जिसकी रूप रेखा ऊपर संक्षिप्त में दी गई थी उसके सुलझाने के या समाधान के दो रूप हैं—

एक, केवल, शरीर के आकार, रूपरंग आदि को देखकर उनमें समानता और भिन्नता का पता लगाना। इस दृष्टिकोण में आत्मा की सत्ता पर कोई विशेष विचार नहीं हुआ इस विचार धारा को पश्चिमी जगत् में विकासवाद के नाम से प्रकट किया गया है। विकासवाद एक बड़ा प्रचलित, प्रसिद्ध वाद है विशेषरूप से इसका आरम्भ चार्ल्स डार्विन द्वारा १८५९ में माना जाता है चार्ल्स डार्विन को प्रसिद्ध "The origin of species" इसकी सबसे आरंभिक और माननीय पुस्तक मानी जाती है।

विकासवाद के विचारकों का मत है कि विकासवाद का सिद्धान्त बहुत पुराने समय में किसी न किसी रूप में माना जाता रहा। यूनान में Aristotle ने इसकी चर्चा की है, और उसके पश्चात् भी अनेक विचारकों ने इस पर विचार प्रकट किये।

विकासवाम वाले शरीर की आकृति को देखकर उनमें समानता और भिन्नता का पता लगाने का यत्न करते हैं।

डार्विन के सामने मुख्य विचार Matthus जो अर्थशास्त्र का विशेषज्ञ माना गया है उसका विचार डार्विन के सम्मुख था। Matthus ने इस पर विचार किया है कि वह पदार्थ सीमित है। भोक्ताओं की संख्या और उनके भोग इच्छाओं की मात्रा असीमित प्रत्येक भोक्ता को उसकी इच्छा पूर्ति के लिए भोग पदार्थ प्राप्त बड़ी कठिनता से हो सकते हैं इसका नाम "struggle for Existence" या "जीवन-संघर्ष" रखा गया इस एक विचार को लेकर चल जगत् के भिन्न-भिन्न प्रकार के शरीर धारियों की सत्ता पर विचार किया गया उन्होने केवल शरीर की आकृति को देखकर यह विभाजन स्वीकार किया कि आरंभ में उस आकार के प्राणी हुये, जिनका आकार बड़ा सादा था। उनका कहना है कि पहले फासिल, फिर मछली, फिर बिना पैर के रेंगने वाले सांप इत्यादि, फिर दो चार पैर वाले पशु व पक्षी, फिर लंगूर व बंदर और अंत में मानव। शरीर के स्वरूप को दृष्टि में रख कर मनुष्य के अतिरिक्त और आगे किसी योनि का विकास नहीं माना गया है मनुष्य सबसे विस्तृत और उन्नत प्राणी है विकासवाद वालों की दृष्टि में भी यही माना गया है।

एक कठिनाई

विकासवाद वाले केवल शरीर के आकार को देखकर, केवल जीवन संघर्ष को लक्ष्य मे रखकर शरीरों के आकार भेद का कारण मानते हैं। वह यह बात नहीं बताते कि वह कौन सी सत्ता है। जो फासिल से लेकर मनुष्य तक अस्थायी रूप से उपस्थित रही। विकास और उन्नति के लिए एक अस्थायी सत्ता का होना आवश्यक है। शरीरों का तो मृत्यु के बाद अन्त हो जाता है। पंचतत्त्वों से बने हुये शरीर किसी न किसी प्रकार पंच तत्वों में समा जाते हैं। पृथ्वी में गड़ जायें; या जल जाये या हवा में छिन्न-भिन्न हो जायें। प्रत्येक दशा में अन्त हो जाना अनिवार्य है एक प्रकार के शरीर में किसी सत्ता का निकलकर दूसरे प्रकार के शरीर में यदि प्रवेश माना जाये तो विकास या परिवर्तन माना जाता है दूसरी एक कठिनाई और भी है कि वर्तमान अवस्था में भी हर स्तर के शरीरधारी प्राणी पाये जाते हैं मछलियाँ, चिड़ियां, सांप, चौपाये, बंदर और मनुष्य सब ही पाये जाते हैं संसार के इतिहास में ऐसा कोई काल और स्थिति से ऐसा प्रमाण नहीं है, कि केवल किसी एक प्रकार के आखिर प्राणी पाये जाते हों। यह आकृति का भेद विशेष रूप से व्यक्तिगत आधार पर समाधान किया जा सकता है सामूहिक आधार पर नहीं। यदि हर स्तर के प्राणी हर समय और लगभग सब स्थानों पर कम या अधिक पाये जाते हैं तो केवल शरीर के निर्माण को लक्ष्य में रखकर इस परिवर्तन का समाधान नहीं होता।

विकासवाद वाले इस परिवर्तन का आधार बताते हैं वह Natural Selection अर्थात् जैसी कि विधान, Intelligence design अर्थात् बौद्धिक विधान, Heridity अर्थात् माता-पिता का प्रभाव और Enviornment अर्थात् निवास की परिस्थिति। यह सब कारण यदि विचार की दृष्टि से देखे जायें तो विकासवाद की पुष्टि नहीं करते। Intelligent design और Natural Selection से अभिप्राय दैवीय व्यवस्था है जिसको विकासवाद वाले नहीं मानते। माता-पिता का प्रभाव भी केवल एक साधन है कौन सा आत्मा कैसे और किस गर्भ में आता है इसका निर्णय तो कोई एक महती दैवी शक्ति ही कर सकती है माता पिता के गर्भ में कोई आकृति परिवर्तन का कारण नहीं माना जाता। इसी प्रकार Enviornment और बाह्य परिस्थिति के परिवर्तन का कारण, नहीं माना जा सकता। किस संस्थान, किस परिस्थिति और किस प्रकार की योनि में किसी आत्मा का किसी विशेष प्रकार के शरीर में प्रवेश होता है इसका समाधान तो आध्यात्मिक दृष्टिकोण से ही हो सकता है। केवल शरीर की अवस्था को लक्ष्य में। रखकर आत्मा और परमात्मा की सत्ता को भुला कर चेतन जगत् की पहेली समझ नहीं सकते। और अधिक उलझ जाती है विकासवाद के नवीन विचारकों ने यही स्वीकार किया है, कि केवल जड़ जगत् को लक्ष्य में रखकर इस पहेली का समाधान नहीं हो सकता। विकासवाद के एक प्रसिद्ध लेखक Mr Lull हुये हैं उनकी सम्मत्ति इस विषय में बड़ी उपयोगी है, उन्होंने विकासवाद के विषय में एक माननीय प्रसिद्ध पुस्तक लिखी है उसमें विकासवाद के विषय में विचार करते हुये यह लिखा है—कि सारे विश्व की विचित्र रचना को दृष्टि में रखकर यह विश्वास करने की आवश्यकता प्रतीत होती है कि सारी रचना का निमित्त कारण एक महती शक्ति या निर्माता है जिसने इस सारी रचना की व्यवस्था की है हम उनको सम्मति का सार दे रहे है—विस्तार भय से पूर्ण रूप से उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत नही होता है उस सम्मति को देखकर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पदार्थ—विज्ञान वाले कितना ही तर्क और अन्वेषणों पर विश्वास करें। फिर भी उन्हें इसलिये विवश होना पड़ता है कि वह किसी विशाल शक्ति या divine alchitect अर्थात् दैवीकि निर्माता की सत्ता पर faith रखें। और विश्वास करें। गम्भीरता से विचार करने पर तर्क, और विश्वास में कोई विशेष भेद, गहराई में जाने पर प्रतीत नहीं होता किसी पदार्थ को समझ लेने के लिए उसके निर्माण की प्रक्रिया पर विचार करना होता है। किसी चीज के पूर्ण रूप से निर्माण होने में अनेक श्रृंखलायें या कड़ियाँ प्रयोग में आती हैं उनमें से पहली कड़ी को कारण और उसके बाद वाली कड़ी को कार्य संबंध इस बात का प्रतीक है कि इस श्रृंखला को प्रक्रिया का रूप देने वाला एक महान् विभिन्न कारण है जिसके बिना वह प्रक्रियायें रूप धारण नहीं कर सकतीं। विज्ञान के जगत् वाले कारण-कार्य के संबंध पर विचार करते हैं और Philosophy उन कारण-कार्य संबंध के विषय में तत्त्वज्ञान की दृष्टि से विचार करती हैं। Science और Philosophy दोनों समझने के साधन हैं अन्तिम निर्णय धर्म के सिद्धान्तों के आधार पर ही हो सकता है इस संबंध में धर्म से अभिप्राय तर्क शून्य अन्ध विश्वास नहीं परन्तु वह धर्म का रूप है, जो तर्क से परीक्षित और क्रियात्मक जीवन में उपयोगी सिद्ध होता है। धर्म से उदासीन होकर या धर्म के विरोधी बनकर

या धर्म के महत्त्व को न समझकर पश्चिमी जगत् में पदार्थ विज्ञान वालो ने एक ऐसी विचारधारा को जन्म दिया। जिसका अन्तिम परिणाम नास्तिकता के रूप में प्रगट हुआ। सृष्टि रचना और विशेष रूप से चेतन जगत् की पहेली पर जो केवल परीक्षणो और तर्क पर निर्धारित विचारधारा चली उसका एक रूप या एक आवश्यक अग विकासवाद है। आरभ मे विकासवाद वाले ईश्वर की सत्ता को अनावश्यक आत्मा की सत्ता को असिद्ध मानकर चलते थे। परन्तु जब विज्ञान ने प्रगति को और उनकी आँखें खुली तब विज्ञान वाले स्वय आत्मा और परमात्मा की सत्ता पर विश्वास करने के लिये उद्यत हुये। विकासवाद के सिद्धान्त के संबध मे यह बात उल्लेखनीय है कि इग्लेंड में Charles Darwin ने और अमरीका मे Elfrared Russel Valus ने चेतन जगत् की रचना पर प्रथक् २ एक ही समय में विचार किया और निबध लिखे। चार्ल्स डार्विन ने अपनी उदारता का परिचय देते हुये अपने निबध को Elfred Russel Valus के पास देखने के लिये भेज दिया। Valus ने उससे भी अधिक उदारता का परिचय दिया और उसने Darwin को हृदय को यह अनुमति देदी। कि विकासवाद के निर्माता वह स्वय अपने को समझें। और उनके ही नामसे प्रसिद्ध है। परिणाम यह हुआ। और उनकी पुस्तक Origin of Species अर्थात् योनियो की उत्पति एक प्रसिद्ध पुस्तक मानी गई। जीवन का देहान्त हो गया। और Valus बहुत दिन तक उसके बाद जीवित रहे। Valus की जो पुस्तकें बाद मे प्रकाशित हुयी। उनमे आस्तिकता, और धर्म की विशेषता पर विशेष रूप से बल दिया गया। उनकी पुस्तक "Man's Enviornment" और 'Human Progress" बड़ी प्रसिद्ध हैं इससे प्रतीत होता है। कि सृष्टि रचना और चेतन जगत् की पहेली बिना अध्यात्मवाद का सहरा लिये सुलभ नही हो सकती। और अब हम इस पहेली का अध्यात्मवाद की दृष्टि से सुलझानेका यत्न करते हैं और आशा यह करते हैं कि यदि ध्यान से दोनो सुलझाने की विधि पर विचार किया गया तो विकासवाद का सिद्धान्त असिद्ध माना जायेगा। और अध्यात्मवाद के आधार का सुलझाव प्रमाणिक सिद्ध होगा।

पहेली को दूसरा सुलझाने का यत्न

चेतन जगत् को लक्ष्य मे रखकर यह मानना आवश्यक होगा। कि ससार मे ईश्वर जीव और प्रकृति तीन अनादि पदार्थ हैं। ईश्वर के निमित्त से जड जगत् की व्यवस्था और रचना होती है चेतन जगत् के प्राणियो के शरीरो की रचना भी इसी सिद्धान्त के अनुसार होती है चेतन जगत् मे आत्मा एक अनादि सत्ता है आत्मा को कर्मों के आधार पर अपने किये हुये कर्मों का फल भोगने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के शरीरो में जन्म लेना पडता है। इन शरीरो के निर्माण मे कर्म करने, भोग प्राप्त करने और ज्ञान की उपलब्धि की दृष्टि से भेद रखे गये है। मनुष्य योनि सब से उत्तम, उन्नत योनि है। इसकी विशेषता यह है कि चेतन जगत् मे केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो सीधा खडा हो सकता है। जिसके हाथ छोटे व पैर बडे हैं उसकी कमर की रचना ऐसी बनाई गई है। जो उसके नीचे के व ऊपर के धड को मिलाती है। इस के बिना मनुष्य सीधा ही खडा नही होता। उसकी दूसरी विशेषता यह है कि वह बुद्धि का प्रयोग कर सकता है मनुष्य शरीर मे ज्ञान प्राप्ति के साधन अर्थात् पाचो ज्ञानेन्द्रियाँ ऊपर के भाग मे है बुद्धि ठीक काम लेना धार्मिक जीवन का प्रतीक है। यह प्रसिद्ध कहावत है। कि "पाप का सिर नीचा" और इसी प्रसग मे यह भी विचारणीय है कि मनुष्य को पाप से बचे रहने के लिये और बुद्धि का सदुपयोग करने के लिये ब्रह्मचर्य पालन आवश्यक माना गया है। ब्रह्मचर्य आश्रम मे प्रवेश के समय कटिबद्ध रहने का उपदेश दिया जाता है। साधारण व्यक्तियो मे यह कहा जाता है कि लगोटी और अटीका सच्चा होना सदाचार के लिये आवश्यक है और जो सदाचारी है, और दूसरे शब्दो में ज्ञान का सदुपयोग करता है वह मनुष्य योनिका अधिकारी है यदि विशेष यत्न करे तो मोक्ष प्राप्ति की भी आशा कर सकता है। मनुष्य के अतिरिक्त जितने अन्य प्राणी हैं उनको ऐसा शरीर मिलता है जहां सिर झुका हुआ है या सिर नीचा है मनुष्य के बाद चौपायो का नम्बर आता है यह चार पैर वाले प्राणी हैं जिनके शरीर पैरों के सहारे ऊपर उठे हुये होते हैं परन्तु सिर झुके हुये। हाथी ऐसा बलशाली और ऊंट ऐसा तेज चलने वाला भी सिर झुकाये हुये ही रहते हैं इन चौपायो के बाद नम्बर उन प्राणियो का आता है जिनके पैर बिल्कुल नहीं है। जिन्हें पेट के बल रेंकना पडता है जहाँ सिर का झुका हुआ होना मनुष्य व पशुओ में भेद करता है वहा पैरो का होना या न होना पशुओ मे एक भेद का आधार है ऐसे प्राणी भी जिनके चार पैर हैं परन्तु उनमें से दो पैर पर के रूप में हो गये हैं एक अन्तिम श्रेणी की योनि वह भी है। जहां शरीर निर्माण की व्यवस्था मनुष्य से बिल्कुल उल्टो है। जहाँ नीचे सिर और ऊपर पैर होते हैं। इसे वृक्ष योनि कहते हैं। वृक्षो मे खाना और पानी नीचे से दिया जाता है एक प्रसिद्ध अपमान जनक बात मनुष्य के लिये यह कही जाती है कि यदि बहुत अपराध करोगे तो नीचे सिर और ऊपर पैर कर दिये जायेंगे। यह भी विशेषता है कि कर्मफल के अनुसार आत्माओ को हर प्रकार के शरीर में प्रवेश करना पडता है। और उसकी सुविधा के लिये शरीरो के निर्माण में ऐसी व्यवस्था की गई है कि उसके मनुष्य योनि मे सचित शुभ कर्मों की भावना सुरक्षित रहे। और गुणों की रक्षा के साथ-साथ अवगुणोंका निराकरण होता रहे। चेतन जगत् के सब प्रकार के शरीरो के निर्माण को देखकर यह सिद्ध होता है। कि शरीरो के निर्माण मे भेद अकस्मात् नहीं हुवा है। और न केवल जड प्रकृति के आधार पर ही भेद एक महान् रचयिता को रचना का प्रतीक है। समानता और भिन्नता दोनो यह सिद्ध करते हैं कि चेतन जगत् का निमित्त कारण एक महान् शक्तिशाली रचियता है, जो आत्माओ को कर्मो का फल प्राप्त कराने के लिये भिन्न भिन्न प्रकार के शरीरों का निर्माण करता है। उनमे समानता भी बिचित्र है जैसे आहर, निद्रा, भय, मैथुन आदि और उनमें यह भी विशेषता है कि उनको लक्ष्य मे रखकर यह बात समझ में आ जाती है कि दुनिया क्यों रची गई। दुनिया की रचना का प्रयोजन क्या है। इससे सिद्ध होता है कि भोग और अपवर्ग के लिये दृश्य जगत् की रचना हुई है, जितना परिक्षण और अन्वेषण है उसे चेतन जगत् की पहेली अध्यात्मवाद की दृष्टि से बडी सुगमता व सरलता से सुलझ जाती है। जिस आधार पर पश्चिमी जगत् वाले विकासवाद सिद्ध करते हैं। उसी आधार पर और अधिक सफलता के साथ पुनंजन्म का सिद्धान्त प्रमाणित होता है। पूर्वजन्म और पुनर्जन्म मानने से यह सिद्ध हो जाता है कि एक अनादिसत्ता आत्मा है दूसरी अनादि—सत्ता परमात्मा की व्यवस्था सें आत्माओ को कर्म करने और भोग प्राप्त करने का अवसर मिलता है। जिससे उनका विकास भी होता है। और दण्ड स्वरूप ह्रास भी होता है। परन्तु वह ह्रास भी विकास की दृष्टि सें ही है ह्रास "Struggle for Existence" या जीवन सघर्ष के रूप मे प्रगट होता है। जीवन के लिये सघर्ष कर्मों के परिणाम—स्वरूप है और दुख भी सुख की भूमिका के रूप मे है जिस प्रकार विकासवाद वाले 'Struggle for Existence' को विकास का आधार मानते हैं, उसी प्रकार अध्यात्म-वाद वाले दु ख को सुख की उपलब्धि का दर्शक मानते हैं। किये हुये कर्मो का फल भोग लेने से जो कभी-कभी दुख के रूप मे होता है। आगामी का सुखमय जीवन सरल और सुलभ हो जाता है। आश्चर्य इस बात का है कि स्वय विकासवाद वाले और पदार्थ विज्ञान वाले जीवन सघर्ष या दु ख को विकास या उन्नति का आधार मानते हैं, परन्तु जब आस्तिक जगत् से परमात्मा की सत्ता सुख दु.ख के आधार पर अर्थात् कर्मफल और न्याय के आधार पर सिद्ध की जाती है। तो यह एक विचित्र तर्क करने लगते हैं कि दु ख की उपस्थित देखकर परमात्मा की सत्ता में विश्वास नही रह सकता। उनका विचित्र तर्क यह है कि आस्तिक जगत् वाले परमात्मा को सर्वशक्तिमान व दयालु मानते हैं और सब प्राणियो को उसकी प्रजा या सतति। यदि परमात्मा सर्व शक्तिमान और दयालु है। तो उसके इन गुणो के होते हुये और उसकी प्रजा या सतति दु खी नही रह सकती। यदि वह दु ख दूर नही कर सकता तो सर्व शक्तिमान नही है। यदि कर सकता है और तब नही करता तो दयालु नहीं है गुणी के आधार पर गुणो की सत्ता सिद्ध होती है। वह उपरोक्त तर्क उपस्थित करते समय यह भूल जाते हैं। ईश्वर सर्वशक्तिमान भी है दयालु भी है, और इसके साथ न्यायकारी भी। उसकी न्याय व्यवस्था अटल और अचल है। उसमें कोई, बाधा नही डाल सकता। यह उसकी दया है, कि जीवो को कर्म करने का अवसर क्षेत्र और साधन प्रदान किये हैं। साथ ही साथ जीवो को विशेष रूप से मनुष्य मनुष्यो को कर्मों की स्वतन्त्रता भी प्रदान की है। यदि कर्म की स्वतन्त्रता नही होती तो जीवन का आनद न रहता। दु ख और सुख दोनो एक ही चित्र के दो रूप हैं। बिना दु ख के सुख की सत्ता निरर्थक बन रह जाती है। सुख-दुःख कर्मों के अनुसार प्राप्त होता है। परमात्मा का न्याय अटल है, उसमें कोई बाधक नही हो सकता। और इस दृष्टिकोण से

(शेष पृष्ठ ८ पर)

Prof. Maxmuller—The Great Disseminator of Christianity in India.

(By Shri Giridhari Lal Arya, Chauri Chaura)

Of course, Prof. Maxmuller was an ardent spreader of Christianity just like Lord Macaulay who, too, was a staunch propagator of the English education in India. Both were engrossed with Christian notions like other Western scholars and Indologists who caused much destructions and subjugation of India during the British regime. They were powerful instruments to demoralise and de-Indianise our country into the Imperialistic submission for their nefarious purposes. Yet, after our freedom, the foreign Christian Missionaries are brazenly doing that heinous work of conversion and proselytization of illiterate and poor Indian people through their immense wealth and wiliness Here for example, I quote some few excerpts from the books by the renowned authors such as Swami Dayanand Sarswati, Pt. Gurudutta Vidyarthi M A. and Mahatma Devi Chand ji M.A.

1. As Europe is devoid of Sanskrit Knowledge therefore whatever little Sanskrit is studied by Germans and Prof. Maxmuller is much for those places. But it pales into insignificance when compared with India. I discovered from a Sanskrit letter of a Principal that here are very few persons in Germany who might even make out clearly the sense of a letter.

Having seen Maxmuller's books on Sanskrit literature and short Commentary on the Vedas, I Conclude that he has written only a little here and there by seeing the commentaries written by people of this country. For instance, in commenting on the following verse of Rig Veda—युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्त परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि। (१-६-१) he takes it in the sense of horse Sayana was much better when he took it in the sense of 'the sun'. But its correct meaning is God. You can know by this what amount of Knowledge of Sanskrit the Germans or Prof. Maxmuller possess.

2. The interpretation of the Vedas, as given at present by Prof. Maxmuller and other European Scholars must not only be regarded as imperfect, defective and incomplete, but as altogether flase. Nay, in the light of true reason and sound scholarship we are forced to admit their entire ignorance of the very rudiments of Vedic language and philosophy. We are not alone in the opinion we hold. Says Schopenhauer. "I add to this the impression which the translations of Sanskrit words by European scholars, with very few exceptions, produce on my mind. I cannot resist a certain suspicion that our Sanskrit scholars do not understand their text much better than the higher class of school boys their Greek or Latin". It is this want of Vedic scholarship among European scholars, this utter ignorance of Vedic language and philosophy that is the cause of so much misimpression and prejudice even in our own country. We are, indeed, so often authoritatively told by our fellow brethern who have received the highest English education but are themselves entirely ignorant of Sanskrit that the Vedas are books that teach idol-worship or element-worship, they contain no philosophical, moral or scientific truths of any great consequence unless they be the commonest truisms of the kitchen. In the treatment of question, such as the estimation of the valve of a system of philosophy or religion, extreme sobriety and impartiality of the mind are required. Is not this christian prejudice?

3. With the view that Christinanity of Max muller may be set forth more clearly before the reader, I quote the following quotations Maxmuller's sole object in persuing Sanskrit studies as he himself often expressed, was to convert India to christianity. A letter written to him by E.B. Pussey reads thus-"Your work will form new are in efforts for the conversion of India, and Oxford will have reason to be thankful that, by giving you a home, it will have facilitated a work of such primary and lasting importance for the conversion of India, and which by enabling us to compare that early flase religion with the true illustrates the more than blessedness of what we enjoy."

In 1886 Maxmuller thus wrote to his wife "I hope I shall finish the work and I feel convinced. though I shall not live to see it, yet this edition of mine and the translation of the Veda will hereafter tell to a great extent on the fate of India and on the growth of millions of souls in that country. It is the root of their religion and to show them what the root is, I feel sure, the only way of uprooting all that has sprung from it during the last three thousand years." The ancient religions of India is doomed and if christianity does not step in, whose fault will it be? It is pity Maxmuller pooh-poohs the external truth and teachings, and belittles the etymological and scientific method employed by Rishi Dayanand in interpreting the Vedas, which Maxmuller, the follower of Sayan's historical method, hopelessly failed to understand. In a letter to his son, he writes,"Would you say that any one sacred book is superior to all others in the world? It may sound prejudiced, but, taking all in all, I say the New Testament. After that I should place the Koran, which, in its moral teachings, is hardly more than a later edition of the New Testament. Then would follow the old Testament, the Southern Budhist Tripataka, the Taote King of Laotize, the Kings of Confucius, the Veda and the Avesta. There is no doubt, however, that the ethical teachings is far more prominent in the old and New Testament than in any other sacred books. Therein lies the distinctiveness of the Bible. Other sacred books are generally collection of whatever was remembered of ancient times". what a pity Maxmuller ranks the Vadas as inferior to the Bible and the Koran, whereas in the Lofty ethical teachings these books stand in no comparision with the Vedas. To me the disparaging remarks of the scholar are basod on ignorance or misunderstanding of the true purport of the Vedas. I would be rather harsh and unjust to say that scholar has made these remarks intentionally to degrade the Vedas in the eyes of the civilized world.

Thus, these letters clearly prove that the real aim of Western Scholars, under the garb of research is to let down the Vedas. and establish the superiority of the Bible. Research scholars in their quest for truth, should proceed without pre-conceived notions and prejudiced minds. It is pity the Western scholars have miserably failed to follow the requisites of true research, and some of them have in their religious frenzy and bigotry remarked, the Vedas are "mad-man's raving and child's prattle". Their poor knowledge of the Vedic literature their lack of a thorough unbiassed study of our scriptures, their zealous missionary spirit that blurred their vision, their antipathy towards Non-christian religions, and their convictions of superiority of the ethical teachings of the Bible have resulted in arriving at wrong and poor notions of the Vedas, the encyclopaecia of knowledge, and the repository of eternal, lofty, moral teachings. Where is the need of writing more for the wise?

(पृष्ठ ७ का शेष)

आत्मा व परमात्मा की सत्ता मान लेने पर चेतन जगत् की पहेली का पूर्ण-रूप से समाधान हो जाता है। इसके साथ यह भी कह सकते हैं कि सारी सृष्टि की रचना का प्रयोजन भी भली प्रकार सिद्ध होता है। सृष्टि रची जाती है। रचना के सिद्धांत पर उसकी अपनी विधि है। सृष्टि रचना के साथ-साथ सृष्टि का प्रलय और उत्पत्ति भी स्वमेव सिद्ध हो जाती है।

पुनर्जन्म की पुष्टि में एक वेद मन्त्र नीचे उद्धृत किया जाता है—

अपाङ् प्राङ् एति स्वधया गृभीतः अमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।
ताशश्वन्ता विषूचीना वियन्ता न्यन्यं चिक्यु नंनिचिक्युरन्यम्॥

ऋ० १।१६४।३८ अथर्व ९।१०।१६

शब्दार्थ—(अमर्त्यः) न [मरने वाला (मर्त्येन) मरने वाले के साथ (सयोनिः) एक घर वाला होकर (स्वधया) अन्नेच्छा से, भोगेच्छा से (गृभीतः) पकड़ा हुआ, कभी (अपाङ् एति) नीचे जाता है और कभी (प्राङ् [एति]) ऊपर आता है। (ता) वे दोनों शश्वन्ता) सदा साथ रहने वाले (विषूचीना) सब जगह फिरने वाले [(वियन्ता) विविध लोकों तक पहुँचने वाले हैं पर इनमें से (अन्यं) एक को मर्त्य को (निचिक्युः) लोग जानते हैं (अन्यं) दूसरे को (न निचिक्युः) नहीं जानते।

इस मंत्र का आशय यह है, कि ऊँचे और नीची योनियों में कर्मों के अनुसार आत्माय जन्म धारण करते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती काशी शास्त्रार्थ की शताब्दी:-

पिछले मास आर्यजगत् के प्रसिद्ध पत्र वेदवाणी और आर्यमर्यादा ने "भेरी पुकार" पूर्णरूपेण प्रकाशित कर बड़ा उपकार किया इससे आर्यजगत् को इस शताब्दी के मनाये जाने की जानकारी हो सकी है। और हम आयोजकों के कार्य में कुछ प्रगति हुई है और आगे के लिए आशा बधी है। उस प्रकाशन के पश्चात् इस न्यूनसमय मे जो प्रगति हुई है उसका विवरण इस प्रकार है।

शोध पत्र जो और प्राप्त हुये

१—वेदो में इतिहास नही है श्री प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति उपकुलपति वि० वि० गुरुकुल कांगड़ी।

२—"महर्षि दयानन्द और साख्यशास्त्र"–श्री प० उदयवीर जी शास्त्री गाजियाबाद।

३—महर्षि दयानन्द तथा पाणिनी पद्धति–श्री प० गोपाल जी शास्त्री दर्शन केसरी अध्यक्ष काशी पडित सभा।

४—'वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है"। शास्त्रार्थ महारथी प० विश्वानन्द जी शर्मा मल्लिकी, वाराणसी।

५—इगलिश लेख "Do the Vedas permit serving Beaf to Honoured guests"

६—इगलिश लेख "Vedic Conception of Monotheism" श्री प० वैद्यनाथ जी शास्त्री अध्यक्ष अनुसधान विभाग सार्वदेशिक सभा नई दिल्ली।

७—सृष्टि सम्वत् मानव सम्वत् और वैदिक सवत्–श्री रामपालसिंह जी तेवतिया, एम० ए० एल० टी० सिद्धात शास्त्री भूपगढी पो० जानी जिला—(मेरठ)

८—इगलिश लेख—' The Vedas or the Rays of Hope for peaceless world

श्री विश्वमित्र जी वेदोद्यानम गौरीबिदनूर जिला कोलार (मैसूर)

इससे पूर्व ६ शोधपत्र प्राप्त हो चुके जिन का विवरण पहिले दिया जा चुका है। अभी कई एक विद्वानो के शोधपत्र आने की सूचना प्राप्त हो चुकी है।

श्री प० विश्वमित्र जी ने ही हिन्दी शोधपत्र का इगलिश अनुवाद करने का कठिन कार्य अपने हाथ मे लेकर हमारे ऊपर अपार दया की है। उनका एक अनुवाद, There is no History in the Vedas " शोधपत्र का प्राप्त हो चुका है। आर्यजगत् के धनी वर्ग ने भी अपना सात्विक धनदान मे देकर कुछ आशा का सचार किया है। इस थोडे काल मे निम्न प्रकार धन प्राप्त हो चुका है।

२०–०० गुप्त दान एक ही सज्जन से।
११–०० श्री डा० जगदीश चन्द्र जी आर्य आँतरी जिला ग्वालियर
१०–०० श्री ज्ञानभिक्षु जी वानप्रस्थी सोनीपत–रोहतक
२५–०० लोजारी सिंह जी, गोरखपुर।
२०–०० श्री डा० रा० स० लाल जी मेडिकल आफिसर हरपालपुर मध्यप्रदेश
२८–०० श्री राजितसिंह जी दारानगर वाराणसी।
५–०० श्री मन्त्री आर्यसमाज जगीगज।
२०–०० श्री गुरु प्रसाद द्वारा तहसील के बन्धुओ से दान
१३९–०० योग
५४४–२५ पिछला योग
६८३–२५ कुल योग

शोधपत्र भेजने वाले विद्वानो एव महाशयो को बहुत बहुत धन्यवाद। आशा है दूसरे भाई भी अपनी सहायता का हाथ बढाकर हमारे भारी भार को हलका बनाने की कृपा करेंगे।

—क्षेम चन्द प्रधान—आर्य उपप्रतिनिधि सभा
कार्यालय आर्यसमाज भोजूबीर
वाराणसी कैण्ट

"भद्रा जनिज्य जीजनत्"

(श्री सत्यभूषण "वेदालङ्कार")

सामवेद (अ० ४, ३ १०) का मन्त्र इस प्रकार है—

"उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषव। महान्त त्वा महीना सम्राज च र्षणीनाम् देवी जनिज्यजीजनद् भद्रा जनिज्य जीजनत्॥

ये दोनो द्युलोक और पृथिवी (पृथु-विस्तारे) विस्तृत भूमि किसने प्रकाशित किये हैं, कौन इन्हे धारण कर रहा है? मानव के मन में सृष्टि के आदि काल से यही जिज्ञासा रही है। "विश्वदेव सविता या पूजा सोम मरुत चचल पवमान। वरेण आदि सब घूम रहे हैं किसके शासन मे अम्लान।" इस सारे गतिशील जगत् का सूत्रधार कौन है? प्रात कालीन सूर्य की प्रभा के समान, उषावत् द्युलोक और पृथिवी, भूलोक को कौन प्रकाशित करता है। ऐन्द्र काण्ड मे इसका उत्तर है, हे इन्द्र! तुम इन्हे प्रकाशित करते हो। प्रश्न उत्पन्न होता है, कि यह इन्द्र कौन है। क्या यह पौराणिक देवता है, जो देवराज, अहल्या को पतित करने वाला है? नही! इन्द्र शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए, यास्काचार्य लिखते हैं इस इणातीति ददातीति वा इय दधातीति का इय दारयते, धारयते इति वा इन्द्र के रयति, इन्दौ रयते इति वा इन्धे भूतानि। इन्दौ। इत् शत्रूणा दारयिता कन्द्रावयिता। आदरयिता च यज्यनाम्। (नि० अ० ४ पाद १)

इसके तीन अर्थ, भूमि, पृथ्वी, और वाणी है। इन तीनो को देने वाला धरण वा धारण करने वाला, शत्रु विदारक नाशक यज्ञशीलो का आदर कर्त्ता, परमैश्वर्यशाली इन्द्र है। इन्द्र चन्द्रमा मे वही रमता है। "तस्य भासा सर्वभिद विभाति" उसी एक से आलोकित है विश्व सकल यह जानो, सूर्य चन्द्र तारो पृथ्वी मे उसकी महिमा मानो यह इन्द्र सर्वशक्तिमान् परमैश्वर्यशाली परमात्मा है। महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास ईश्वर के नामो मे इन्द्र की व्युत्पत्ति करते हुए लिखते हैं।" य इन्दति परमैश्वर्यवान् भवति स इन्द्र! जो अखिल ऐश्वर्ययुक्त है उसी से उस परमात्मा का नाम इन्द्र है। अत इसी परमैश्वर्यशाली इन्द्र से यह द्यौ और पृथ्वी उषा के समान प्रकाशित होते हैं। हे इन्द्र! तुम इनके प्रकाशकर्ता हो महीना महान्त बड़ो मे बडे मनुष्यो के राजा आपको देवी जनिजी, दिव्य गुणो वाली वेदमाता मगलकारिणी वेदमाता ने वैसा ही प्रकट किया है।

ईश्वरीय ज्ञान, दवीज्ञान, को प्रकट करने वाली उसने यथार्थ रूप को अकित करने वाली है वेदमाता। यह भद्रा है देवी है, तो आओ। हम सब इसकी गोद मे बैठें, वेदो को पढे पढावें सुनें सुनाए। वेद सब सत्य विद्याओ का पुस्तक है। इसका पढना और पढाना, सुनना सब आर्यों का परम धर्म है।

अहा! इससे तो कल्याण ही कल्याण होता है, चारो ओर मगल की वर्षा होती है। पाप-ताप दूर होते है। दिव्य गुणो वाली है यह धरा को स्वर्ग बनाना हो, सत्य, अहिंसा अस्तेय आदि का पालन करना हो विशाल ब्रह्माण्ड के रहस्य की कुजी जाननी हो, विश्व के समस्त नर नारियो को मानवता एकता विश्व बन्धुत्व सौहार्द का पाठ पढाना हो, व्यक्तिगत जीवन को पवित्र बनाकर सामाजिक जीवन का स्तर ऊँचा उठाना हो शरीर वज्रवत् कठोर, बलवान् मन को नितान्त पवित्र आत्मा को शुद्ध करना हो, सन्तान को राम, कृष्ण, भीम अर्जुन आदि के समान बनाना हो, राष्ट्र का कायाकल्प करना हो सर्वोच्च शिखर पर चढना हो विज्ञान के नूतन आविष्कार कर उनका सदुपयोग करना सीखना हो सर्वाङ्गीण उन्नति करनी हो तो आर्यो! प्रण करो प्रतिदिन वेद का स्वाध्याय करगे। वेद ही हमारी मानव जाति का प्राण है जीवनाधार है। फिर क्यो सोये हो? वेद माता की शरण लो, शीघ्र ही उत्थान होगा, उद्धार होगा।

प्रश्न भेजने वाले सज्जनों से निवेदन

प्रश्न भेजते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि एक बार एक ही विषय के सम्बन्ध मे प्रश्न भेजा जावे, जिस से स्पष्ट रूप मे सप्रमाण उस के उत्तर मे निवेदन किया जा सके। कार्ड पर कई-कई लिखे गए प्रश्न अस्पष्ट और कटे फटे अक्षरो में पहुचते हैं, उन को पढने में कठिनता पडती है। आशा है प्रश्न भेजते समय इन सुविधाओ का ध्यान रखते रहेंगे। कुछ प्रश्न हमारे पास पहुँचे हुए हैं। उनका हम क्रमश उत्तर लिखते रहेगे। उत्तर को पढने के साथ उल्लिखित ग्रन्थो के दिए गए प्रमाण भी उस पुस्तक में अवश्य पढ़ना चाहिए, जिस से विषय का ठीक रूप में समाधान हो जावे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

मेरा भारत

(कु० शिवभूषणसिंह 'गौतम' विशारद काव्य भूषण)

अब कैसे होगा भारत देश महान् ॥
था वह कोई समय कि जब यह धर्म गुरु कहलाता था।
मानवता की विजय पताका विश्व मध्य लहराता था ॥
सुनकर जिसका नाम हृदय दुश्मन का यूं दहलाता था।
जग समस्त जिसके समक्ष हो अपना शीश झुकाता था ॥
इतना सब कुछ होने पर भी था न जिसे अभिमान। अब···
वह शक्ति आध्यात्म आज जो वेदों में भरी पड़ी।
शास्त्र और उपनिषद् जोड़ते जहाँ ज्ञान की कड़ी-कड़ी ॥
जिसे तोड़ने में सदियों से खपीं शक्तियां बड़ी-बड़ी।
आज वही सब सोचनीय हालत में बिलखें पड़ी-पड़ी ॥
जिस पर अहंभाव था हमको आज कहां वह ज्ञान। अब···
परमार्थ के लिये राजऋषियों ने प्राण प्रदान किया।
हरिश्चन्द्र न स्वप्न मानकर सत्य राज्य का दान दिया ॥
पक्षी की रक्षा के कारण शिवि ने तन बलिदान किया।
धर्म देश और जाति मानहित कितनों ने निज जान दिया ॥
वीर शिवा राणा प्रतापसिंह जिसका चक्षु प्रमान। अब···
इसी धूल पर रामचन्द्र श्रीकृष्ण वीर हनुमान हुये।
पारथ के समान धनुधारी भीमसेन बलवान हुये ॥
बाल ब्रह्मचारी प्रतिज्ञ दृढ़ भीष्म व्रती महान् हुये।
इसी भूमि पर बड़े-बड़े व्रतधारी ज्ञान निधान हुये ॥
पर न नजर में आज आ रहा 'गौतम' का वह ज्ञान। अब···
जग में मानव-मानव का विश्वास नहीं है खुद करता।
बादल बनकर पूर्ण विश्व में छाई हुई स्वार्थपरता ॥
अपना कार्य सिद्ध करने हित नर-नर का जीवन हरता।
सत पथ पर चलने वाले पथिकों का नहीं पेट भरता ॥
लाखों नर हर साल हो रहे हाय क्षुधा बलिदान। अब···
है सीधी सी बात बिना जल कैसे होगा जलजाता।
कहां मिलेगा दया दान जब रूठ जायगा जगदाता ॥
अब न देख पायेगा कोई क्षीर सिंधु वह लहराता।
कैसी कठिन दुर्दशा में है हाय ! विधाता ! गोमाता ॥
जिसकी पूजा की दिलीप नृप श्रीकृष्ण भगवान्। अब···
जिसकी पूजा आर्य जगत् में माता मान सदा करते।
देकर जिसका दान अन्त में भी दुःख सागर से तरते ॥
कर जिसका पयपान पुत्र से जिसके कृषि साधन करते।
आज बिना कुछ सोचे हम उन लाखों का जीवन हरते ॥
उनके अतुलित उपकारों का दिया नहीं कुछ ध्यान। अब···
दूध दही थी और छाछ की बहती रही जहा नदियां।
वहीं आज अबलाओं के आंसू लहरें खूं की नदियाँ ॥
सो न सकें भाई संग भाई जहां चैन की सुख निंदियां।
इसी तरह से रोते-रोते बीत गई कितनी सदियां ॥
युग वह आज हमें लगता है झूठे स्वप्न समान। अब···
जहां धर्म की रक्षा हित नृप प्राण निछावर करते थे।
होते थे कुर्बान आन पर प्रण हित रण में मरते थे ॥
जिनकी छाया क्षत्र मध्य गो सिंह एक संग चरते थे।
जीव जन्तु पशु पक्षी प्राणी हो स्वच्छंद विचरते थे ॥
किस निद्रा में सोती है वह आर्य जगत् की शान। अब···
पुत्र न मानें मात-पिता को भाई बहन नहीं जाने।
गुरु शिष्य के नाते तो चल रहे आजकल मनमाने ॥
स्वयं सर्वव्यापी बन बैठे यहां प्रेम रस दीवाने।
फिर भी देख रहे अखिलेश्वर बने हुये क्यों अनजाने ॥
"भूषण" भनत भ्रमित भवसागर तब भरोष भगवान। अब···

"वाणी-वन्दना"

(श्री कृष्णस्वरूप 'आनन्दी' खैराबाद सुल्तानपुर)

झंकृत वीणा के शुचि स्वर से शुचि सन्देश सुना दे।
भौतिकता के भक्तों को आध्यात्मिक पथ दर्शादे ॥
अज्ञान-अवनि पर ज्ञानमयी ! ज्ञानसुधा सरसा दे।
जननि ! जग का तम हर, जगमग ज्योति जगा दे ॥
वाणी विमले ! वसुधा पर ज्ञानवारि बरसा दे।
नैराश्य-धरा पर हे जननि ! तू आशा-कण बरसा दे ॥
ज्ञानरत्न से जनमानस पर ज्ञानज्योत्सना चमका दे।
मम जीवन में हे जननि ! तू मन का स्वर्ग बसा दे ॥

आते ही......

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय)

दयानन्द सूर्य थे, जिनके उदित होते ही,
अस्त हुए सारे, टिम-टिमाते तारे।
और वह चन्द्र भी, अपने कलंक से,
छिप गया ओट ले, ऋषिकर की चोट ले ॥
उसके दुःख किरणों की, बिखर गई माला भी,
छिन्न-भिन्न टूट गई, घटिका भी फूट गई।
आते ही ऋषिवर के, दुःख मेघ छँट गये,
भारत को मुक्ति मिली, वेदों की सूक्ति मिली ॥

मुसदिसे—हाली

(मौलाना अलताफ हुसैन "हाली" पानीपती)

करे गैर गर बुत की पूजा तो काफिर।
जो ठहराये बेटा खुदा का तो काफिर ॥
झुके आग पर बहरे सिजदा काफिर।
सितारों में माने करिश्मा तो काफिर ॥
मगर मोमिनो पर कुशादा हैं राहे।
परवरिश करें शौक से जिसकी चाहे ॥
नबी को जो चाहे, खुदा कर दिखायें।
अमामो का रुतबा नबी से बढ़ायें ॥
शहीदो पै दिन रात नजरें चढ़ायें।
वे आ-आ के कबरों से मांगें दुआयें ॥
न तोहीद में कुछ खलल इससे आयें।
न इसलाम बिगड़े, न ईमान जाये ॥

(श्री प० जगत्कुमार शास्त्री साधु सोमतीर्थ की कृपा से प्राप्त)

आर्यसमाजों के निर्वाचन—

१ आर्यसमाज किदवई नगर नई देहली—प्रधान—महाशय किशनचन्द, मन्त्री—श्री राममेहर आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री ओम्प्रकाश शर्मा। —मन्त्री

२ आर्यसमाज नागल (हिसार)—प्रधान—श्रीजोखीराम आर्य, मन्त्री-श्री नौरंगराम आर्य, कोषाध्यक्ष तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री मेघाराम आर्य।
—जोखीराम प्रधान

३ आर्यसमाज नया बास (देहली)—प्रधान—डा० रामस्वरूप, मन्त्री-श्री नन्दकिशोर, कोषाध्यक्ष—श्री फूलचन्द, पुस्तकाध्यक्ष—श्री भलेराम।
—मन्त्री आर्यसमाज

४ आर्यसमाज ककोर (मेरठ)—प्रधान—श्री खजानसिंह, मन्त्री—श्री खासेराम आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री कदमसिंह, पुस्तकाध्यक्ष—श्री नरेन्द्रसिंह।
—मन्त्री आर्यसमाज

५ आर्यसमाज देहरादून—प्रधान—प० तेजकृष्ण कौल, मन्त्री—श्री धर्मेन्द्रसिंह आर्य, कोषाध्यक्ष-श्रीमती विमला देवी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री ईश्वरदयाल आर्य। —मन्त्री आर्यसमाज

६ आर्यसमाज कोलगा—प्रधान—श्री भगवान् दास आर्य, मन्त्री—प० बजरगबली आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री रामगोपाल साहू तथा अन्य दो अन्तरग सदस्य। —मन्त्री आर्यसमाज

७ आर्यसमाज आई० एन० ए० कालोनी, नई दिल्ली—प्रधान—श्री वेदप्रकाश कुलश्रेष्ठ, मन्त्री—श्री चरणलाल शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री नानकचद स्थापना दिवस भी समारोह से मनाया गया। —मन्त्री आर्यसमाज

८ आर्यसमाज जानो खुर्द (मेरठ)—प्रधान—श्री मगलसैन, मन्त्री—श्री कान्तिप्रसाद एम० काम०, कोषाध्यक्ष—श्री सलेखचन्द, पुस्तकाध्यक्ष-श्री ज्ञानप्रकाश। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्य युवक समाज दयानन्द कालिज अबोहर का वार्षिकोत्सव श्री प्रि० नारायण दास जी ग्रोवर की अध्यक्षता मे सोत्साह मनाया गया। जिला फीरोजपुर के अनेक स्थानो के आर्य युवक बडी श्रद्धा से सम्मिलित हुए। अनेक महानुभावो के सारगर्भित भाषण हुए। वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि कई अच्छे आयोजन किये गये। श्री प्रिंसिपल साहिब ने अपने दीक्षान्त भाषण मे शिक्षा सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण समस्याओ पर प्रकाश डाला।
—अशोक आर्य

१० फरमाणा (रोहतक) आदि ७ गाँव के आर्यसमाजो के मण्डल मे प० अमरसिंह अग्निहोत्री (गुरुकुल भैसवाल) ने सफल प्रचार किया। जिससे प्रभावित होकर कई लोगो ने शराब त्याग देने की प्रतिज्ञा की।
—रामसिंह वैद्य मन्त्री

आर्यसमाजों के उत्सव सम्पन्न—

(१) आर्यसमाज राजा बाजार खड्डा (देवरिया) का उत्सव सफलता से मनाया गया। इस समय हिन्दी रक्षा, गोरक्षा और राष्ट्र रक्षा सम्मेलनो का आयोजन हुआ विद्वानो एव भजनोपदेशको के प्रभावशाली भाषण हुए। स्वामी आत्मानन्द जी तीर्थ ने कहा कि श्री सुभाष 'नेता' जी जीवित हैं। लोगो ने कुतूहल से यह बात सुनी। —मन्त्री आर्यसमाज

(२) आर्यसमाज ककोर (मेरठ) का उत्सव पूर्ण समारोह से मनाया गया। अनेक विद्वानो और उपदेशको द्वारा वैदिक धर्म के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया। —मन्त्री खासेराम आर्य

पजाब में निम्न स्थानो पर प्रचार का कार्य क्रम सम्पन्न हुआ।

(१) सतवाड़ा टाऊनशिप, में ९ मार्च को श्री निरजनदेव जी ने भाषण दिया। (२) पठानकोठ—१०-१४ मार्च श्री निरजनदेव जी व श्री बलराज जी ने प्रचार किया। (३) नगरी (जम्मू-काश्मीर)—कठुआ के निकट यह महत्त्वपूर्ण कस्बा है। ११ मार्च को वहाँ श्री स्वामी सम्पूर्णानन्द जी की देख-रेख मे समाज की स्थापना की गई है। श्री रामनाथ मण्डली तथा श्री अमरनाथ प्रेमी ने वहाँ प्रचार किया। श्री ठा० सुमार्षसिंह प्रधान चुने गये। (३) जनियाल—गत वर्ष श्री रामनाथ मात्री जी ने यहाँ समाज की स्थापना की थी। ठा० कर्मसिंह प्रधान ने प्रचार करवाया और सभा को वेद प्रचार के लिये ५०) रुपये दिये। (४) आर्यसमाज नरोट जयमलसिंह बड़ी देर के बाद अबके १४-१५ मार्च को इस समाज ने वार्षिकोत्सव बड़ी शान से मनाया। उत्सव में श्री निरंजनदेवजी वेद प्रचार अधिष्ठाता, श्री बलराज जी, श्री रामनाथ मडली, श्री अमरनाथ जी प्रेमी थे। सभा को ११) रुपये वेद प्रचार मिला। नगरी जनियाल तथा नरोट के कार्यक्रम में स्वामी सम्पूर्णानन्द जी ने जो सहयोग दिया, उसके लिए सभा की ओर से मैं उन का धन्यवाद करता हूँ।

—निरजनदेव इतिहास केसरी अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय (हिसार) में राज्यपाल का आगमन

हरयाणा के राज्यपाल श्री चक्रवर्ती दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में पधारे, उनके साथ हिसार के जिलाधीश चौ० हरफूलसिंह जी तथा नगर प्रबन्धक श्री चौ० बलवीरसिंह जी एव नगर के अन्य अनेक गणमान्य प्रतिष्ठित सज्जन पधारे, राज्यपाल महोदय ने विद्यालय का निरीक्षण कर उसकी व्यवस्था तथा कार्यपद्धति से सन्तुष्ट हो अत्यन्त हर्ष प्रकट किया। इस अवसर पर छात्रो को सम्बोधित करते हुए उन्होने जहा प्राचीन वैदिक सभ्यता, संस्कृति, एव साहित्य की बडी प्रशसा की वहाँ महर्षि दयानन्द द्वारा किये गये महान् कार्य का यशोगान करते हुए विद्यालय के छात्रो को महर्षि मार्ग पर अडिग रहते हुए निरन्तर आगे बढते रहने की प्रेरणा की। निज सवाददाता।

आर्यसमाज बड़ा बाजार कलकत्ता

४२ वा वार्षिकोत्सव २ अप्रैल से ६ अप्रैल ६९ तक बडे समारोह से मनाया जावेगा। अनेक प्रतिष्ठित सन्यासी, महात्मा, पण्डित और भजनोपदेशको को निमन्त्रित किया गया है। —गजानन्द आर्य मन्त्री

आर्यसमाज लोहारू

१८ वा वार्षिक आर्य सम्मेलन विशेष समारोह के साथ मनाया जावेगा जिसमे अनेक प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् एव साधु महात्मा तथा आर्य भजनोपदेशक महानुभाव पधारेगे। —मन्त्री भरतसिंह शास्त्री

सरकारी काम काज हिन्दी में करने पर अनेक व्यक्तियों को पुरस्कार

नई दिल्ली १७ मार्च हिन्दी मे श्री घनश्याम दत्त ने सरकारी फाइलो पर दो मास में २ लाख १८ हजार ६ सौ साठ हिन्दो के शब्द लिखकर केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् की केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियो की व्यवहार प्रतियोगिता मे प्रथम स्थान प्राप्त किया है।

कार्यालयो मे हिन्दी मे काम करने की दृष्टि से परिषद् द्वारा आयोजित इस प्रतियोगिता मे ५।। कर्मचारियो ने भाग लिया।

श्री बहादुरसिंह (मथुरा) ने प्रतियोगिता की अवधि मे २ लाख १६ हजार ९० शब्दो का सरकारी कामकाज मे प्रयोग किया और वे द्वितीय रहे। तृतीय रहने वाले देहरादून के श्री विश्वेश्वर दत्त दोमाल ने। १ लाख ९४ हजार ९ सौ शब्दो का प्रयोग किया। बरेली, कानपुर, वाराणसी, झासी आदि नगरो के नौ अन्य प्रतियोगियो ने इस अवधि मे एक लाख से अधिक शब्द हिन्दी मे लिखे। इस प्रतियोगिता मे रेल डाक व्यवस्था, आयुध निर्माणी, लघु अस्त्र निर्माणी, कर्मचारी राज्य बीमा निगम, रेल कारखाना, शिक्षा निदेशालय, डाकघर, पूर्ति व निपटान महानिदेशालय, रेल मडल अधीक्षक, राष्ट्रीय शर्करा सस्थान, महल्लेखाकार, खाद्य विभाग, रक्षा मत्रालय, सूचना व प्रसारण मत्रालय, दूर सचार, केन्द्रीय तारघर, विभागीय तारघर, खादी ग्रामोद्योग कमीशन, रक्षा लेखा नियत्रक, मुख्य वाणिज्य अधीक्षक आदि के कार्यालयो ने भाग लिया। इससे अन्य कर्मचारियो को भी हिन्दी मे काम करने की प्रेरणा मिलती है।

अहिन्दीभाषी केन्द्रीय कर्मचारियों की हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता

अहिन्दीभाषी केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियो के लिए परिषद् द्वारा अयोजिय निबन्ध प्रतियोगिता में इस वर्ष ६६२ प्रतियोगियो ने भाग लिया। देश भर के ८३ केन्द्रो में आयोजित इस प्रतियोगिता का परिणाम इस प्रकार रहा—प्रथम श्री एम० टी० जाम्बुलकर (मराठीभाषी), द्वितीय सु श्री एम० के सुमदाम्मा (तमिलभाषी), तृतीय श्री सु० रामनाथन (मलयालमभाषी), सुलेख पुरस्कार श्री लीला जुमनानी।

नारनौल में मद्य मांस निषेध सम्मेलन

नारनौल (जिला महेन्द्रगढ) मे जिला महेन्द्रगढ मद्य मास निषेध आर्य महासम्मेलन जिला की मद्य मास निषेध समिति के तत्वावधान में बडी धूम-धाम से मनाया गया । जिसमें जिला के प्रमुख आर्यसमाजों के साथ-साथ इलाके के लगभग ५००० नर-नारियों ने भाग लिया । अनेक सन्यासी महात्मा, पण्डितो और भजनोपदेशको के भाषण तथा भजन हुए । माननीय प्रो० रामसिंह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की भव्य शोभा यात्रा बैलगाडियो पर अखाडा व बैंड के साथ निकाली गई । आर्य युवक सम्मेलन ब्रह्मचारी इन्द्रदेव जी मेधार्थी की प्रधानता में सम्पन्न हुआ और प्रो० रामसिंह जी तथा आचार्य भगवान्देव जी का ओजस्वी भाषण मद्यमास निषेध पर हुआ ।

सम्मेलन मे मद्यमांस के विरोध में तथा अन्य विषयो पर अनेक प्रस्ताव स्वीकार किये गये । —ताराचन्द आर्य मन्त्री जि० समिति

देहली में आर्यसमाज का स्थापना दिवस

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य के तत्वावधान में आर्यसमाज का स्थापना दिवस बडे समारोह से मनाया गया । सब से प्रथम हवन यज्ञ किया गया । इसके ब्रह्मा प० सत्यपाल जी शास्त्री एम० ए० थे । तत्पश्चात् आर्य जगत् के लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान् प० शिवकुमार जी शास्त्री ससत्सदस्य की अध्यक्षता मे स्थापना दिवस की कार्यवाही चली । आर्यसमाज के भावी कार्य-क्रम पर आपने प्रकाश डाला । तदनन्तर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज तथा अनेक विद्वानो ने अपने अपने विचार प्रकट किये, इस प्रकार यह समारोह पूर्ण सफलता के साथ सम्पन्न हुआ ।

—मन्त्री ओमप्रकाश

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाडी धीरज, दिल्ली-६ मे मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)
वेदाः
आर्यमर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

वर्ष १ } २४ चैत्र वि० २०२५, दयानन्दाब्द १४४ तदनुसार ६ अप्रैल १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
अंक१८ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६८ { ,, विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथाग्निशब्देनेश्वरभौतिकगुणा उपदिश्यन्ते ॥

अगले मन्त्र में अग्नि शब्द से ईश्वर और भौतिक अग्नि के गुणों का उपदेश किया है।

न हि देवो न मर्त्यो महस्तव क्रतुं परः ।
मरुद्भिरग्न आ गहि ॥ऋ० १.१९.२॥

पदार्थ :—(नहि) प्रतिषेधार्थे (देव:) विद्वान् (न) निषेधार्थे (मर्त्य:) अविद्वान् मनुष्यः (महः) महिमा (तव) परमात्मनस्तस्याग्नेर्वा (क्रतुम्) कर्म (परः) प्रकृष्टगुणः (मरुद्भिः) गणैः सह (अग्ने) विज्ञानस्वरूपेश्वर भौतिकस्य वा (आ) समन्तात् (गहि) गच्छ ॥

अन्वय :—हे अग्ने ! त्वं कृपया मरुद्भिः सहागहि विज्ञातो भव यस्य तव परो महो महिमास्ति तं क्रतुं तव कर्म सम्पूर्णमियत्तया नहि कश्चिद् देवो न च मनुष्यो वेत्तुमर्हतीत्येकः ॥

यस्य भौतिकाग्नेः परो महो महिमा क्रतुं कर्म प्रज्ञां वा प्रापयति यं न देवा न मर्त्यो गुणेयत्तया परिच्छेत्तुमर्हन्ति सोऽग्निर्मरुद्भिः सहागहि समन्तात्प्राप्नोतीति द्वितीयः ॥

भावार्थ :—नैव परमेश्वरस्य सर्वोत्तमस्य महिम्नः कर्मणश्चानन्त्यत्वात् कश्चिद् वेत्तस्यान्तं मन्तुं शक्नोति, किन्तु यावत्यो यस्य बुद्धिविद्ये तावन्तं समाधियोगयुक्तेन प्राणायामेनान्तर्यामिरूपेण स्थितं वेदेषु सृष्ट्यां भौतिकं च महतः स्वस्वरूपगुणा यावन्तः प्रकाशितास्तावन्त एवं ते वेदितुमर्हन्ति नाधिकं चेति ॥

भाषार्थ :—(हे अग्ने) विज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! आप कृपा करके (मरुद्भिः) प्राणों के साथ (आगहि) प्राप्त हूजिये । अर्थात् विदित हूजिये । आप कैसे हैं कि जिनकी (परः) अत्युत्तम (महः) महिमा है, (तव) आपके (क्रतुम्) कर्मों की पूर्णता से अन्त जानने को (नहि) न कोई (देवः) विद्वान् (न) और न कोई (मर्त्य.) अज्ञानी मनुष्य योग्य है, तथा जो (अग्ने) जिस भौतिक अग्नि का (पर) अति श्रेष्ठ (मह) महिमा है, वह (क्रतुम्) कर्म और बुद्धि को प्राप्त करता है, (तव) उसके सब गुणों को (न देव·) न कोई विद्वान् और (न मर्त्य:) न कोई अज्ञानी मनुष्य जान सकता है, वह अग्नि (मरुद्भिः) प्राणों के साथ (आगहि) सब प्रकार से प्राप्त होता है ॥

भाषा भावार्थ :—परमेश्वर की सर्वोत्तमता से उत्तम महिमा का कर्म अपार है इससे उनका कोई पार नहीं पा सकता, किन्तु जितनी जिसकी बुद्धि विद्या है, उसके अनुसार समाधियोगयुक्त प्राणायाम से अन्तर्यामिरूप करके वेद और संसार में परमेश्वर ने अपनी रचना स्वरूप वा गुण वा जितने अग्नि आदि पदार्थ प्रकाशित किये हैं, उतने ही जान सकता है, अधिक नहीं ॥

—(महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य से)

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज का वर्तमान आदेश

दशम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद में प्रांतीय आर्यसभाओं के झगड़े निपटाने और अभियोग लौटाने के लिए मुझे सर्व अधिकार दिये थे। तत्पश्चात् सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने भी हैदराबाद सम्मेलन के इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और पंजाब की आर्यप्रतिनिधि सभा के दोनों पक्षों ने भी मुझे यही सर्व अधिकार दिया।

यह प्रसन्नता की बात है कि दिल्ली तथा चण्डीगढ़ में चल रहे अभियोग सम्बन्धित महानुभावों ने लौटा दिये हैं और जालन्धर वाले भी लौटाये जा रहे हैं। अब मैं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (जिस शब्द मे दोनों पक्ष समझे जावें) के कार्यों को और सभा से सम्बन्धित और संचालित सब संस्थाओं को सुचारु रूप से चलाने के लिए निम्नलिखित सज्जनों पर निर्धारित प्रबन्ध कर्त्री समिति नियुक्त करता हूं। इस समिति की संख्या न्यूनाधिक की जा सकती है। यह समिति मेरी अध्यक्षता मे कार्य करेगी—

१. महात्मा आनन्द भिक्षु जी, २. श्री दीवानचन्द जी नयी दिल्ली। ३ श्री नारायणदास कपूर चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट नयी दिल्ली। ४ श्री चौधरी रूपचन्द जी एडवोकेट चण्डीगढ। ५. श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती दिल्ली। ६. प्रिंसीपल रामचन्द्र जावेद जालन्धर छावनी।

प्रबन्ध कर्त्री समिति के सदस्यो मे कार्यक्रम का बँटवारा इस प्रकार होगा—

इस को भी समय-समय पर आवश्यकतानुसार बदला-बदली की जा सकती है।

श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी—वेदप्रचार का प्रबन्ध करना—इसमें उपदेशक महानुभावों और वेदप्रचार सम्बन्धित सब कार्य सम्मिलित हैं। इनकी सहायता के लिये श्री पं० शान्तिप्रकाश जी को नियुक्त करना उचित होगा। इस सम्बन्ध में उपदेशकों तथा भजनीकों की नियुक्तियां और आवश्यक निश्चय प्रबन्धकर्त्री समिति समय-समय पर किया करेगी। तात्कालिक व्यय—२००) मासिक तक कर सकेंगे।

ला० दीवानचन्द जी सभा कार्यालय के अध्यक्ष होंगे। बिल स्वीकार किया करेंगे और सभा का पत्र व्यवहार प्रबन्धकर्त्री समिति की बैठकों को बुलाना। समिति की कार्रवाई लिखना और निश्चयों को कार्यरूप में परिणत करना और अन्य सम्बन्धित कार्यों को करना अथवा करवाना। किसी नीति के प्रश्न पर प्रबन्ध कर्त्री समिति का निर्णय लेना।

श्री नारायणदास कपूर—सभा की धन सम्बन्धी अथवा सम्पत्ति सम्बन्धी पूर्ण संचालन करेंगे। बैंकों के हिसाबों पर सभा के अथवा सभा सम्बन्धित वा संचालित संस्थाओं में जहां-जहां सभा कोषाध्यक्ष के हस्ताक्षर होते हैं वहीं इनके हस्ताक्षर होंगे।

चौधरी रूपचन्द जी एडवोकेट—न्याय सम्बन्धी सब कार्य करना और स्कूल कालेजों को चलाना। आर्यविद्या परिषद् के प्रस्तोता (रजिस्ट्रार) के कार्य को करेंगे।

(शेष पृष्ठ ३ पर)

वैदिक-[illegible] [सत्संग प्रसंगो को लिये।]

मृ[illegible] को [illegible]

लेखक—श्री प[illegible] कुमार [illegible] योगी[illegible] देह

अघ[illegible] म्य करेणानुक[illegible] ।
यक्ष्मं च [illegible] मृत्यु [illegible] निर[illegible] ॥
अथर्व० १२।२।२

शब्दार्थ —(अघश[illegible]) पाप की प्रशंसा करने वाले और सज्जनों की निन्दा करने वाले [illegible] द्वारा [जो [illegible] दिये हैं,] (करेण) अपने किये हुए कर्म के फलस्वरूप [illegible] दुष्टो का अनुकरण करने के कारण, [जो-जो [illegible] आदि बढे हैं,] (च) और जो (यक्ष्मम्) [illegible] (च) [illegible] (मृत्युम्) मृत्यु को भी (सर्वम्) सब विकारों, रोगो, कष्टो, चिन्ताओ, और विभीषिकाओं आदि को (तेन) अपने उस सामर्थ्य से, प्रभाव से जो कि प्रसिद्ध है, उस ज्ञान से जो कि गुरु की कृपा से मिला है, प्रभु की कृपा से (इत) यहाँ से (निरजामसि) में पूर्णतया दूर करता हूँ।

भावार्थ —विद्वानो और विशेषज्ञो को उचित है कि वे जब भी किसी दुखी पीडित, शोषित अथवा रोगी मनुष्य वा प्राणी को देखें, तो उसे धैर्य प्रदान करें, और उसके कष्टो को दूर करें। उस से कहें कि पाप के प्रशसको ने एव सज्जनो को निन्दा करने वाले कुटिल लोगो ने तुझे जो-जो कष्ट पहुचाये हैं, अपनी ही भूलो से तथा दुष्टों का अनुकरण करके तूने जो-जो कष्ट उठाये हैं भयकर रोग से जो पीडा तुझे हो रही है और मृत्यु का जो डर तुझे सता रहा है, इस सम्पूर्ण दुख-समुच्चय को मैं अपनी शक्ति से अपनी विद्या के प्रभाव से, और प्रभु की कृपा से अभी दूर कर देता हूँ। ऐसा आश्वासन देकर पुरुषार्थ पूर्वक दुखियो के दुख निवारण करते रहे।

जो बना है वह एक दिन बिगडेगा और जो उत्पन्न हुआ है वह भी किसी दिन न हो निश्चित् नहीं है, हा सभी प्राणियो का मरना तो अत्यन्त निश्चित् है। हम सब प्राणी मृत्यु के भोजन ही तो हैं।

पानी केरा बुलबुला, अस मानस की जात।
भोर होय छिप जायेगा, ज्यों तारा परभात।

और—

यह जहाँ यो ही रहेगा, और हजारो जानवर।
अपनी-अपनी बोलियाँ सब बोलकर उड जायेंगे॥

और—

आगाह अपनी मौत से कोई बशर नहीं।
समान सौ बरस का, कल की खबर नहीं।

मृत्यु का होना तो अत्यन्त निश्चित है, परन्तु मृत्यु का समय अत्यन्त अनिश्चित् है। हाँ, एक बात और भी है—यशस्वी लोग तो मरने के बाद भी जीवित रहते हैं। तभी तो कहा है—कीर्तिर्यस्य स जीवति। जिस की कीर्ति स्थिर है, वह तो मरकर भी जीवित है।

ससार मे मृत्यु के खेल नाना प्रकार के रूपो में प्रवर्तित हो रहे हैं। आत्मा का शरीर से वियोग तो मृत्यु कहलाता ही है। पापमय जीवन व्यतीत करना भी मृत्यु है, पापो से समझौते करना भी मृत्यु है, अपने अन्तरात्मा की—जमीर की आवाज को न सुनना भी मृत्यु है। किसी मनुष्य के नैतिक-पतन का होना, उस की मृत्यु ही तो है। इन्द्रियो के विषय-भोगों में फसना, अपने समय और शक्ति को व्यर्थ ही खोना, अपयश का भागी होना भी तो मृत्यु ही है। मृत्यु से बचो।

पाप की प्रशसा न करो। झूठी झूठी विज्ञापन—बाजी करके लोगों को न ठगो। लोग झूठ बोलते हैं। जान—बूझकर झूठ बोलते हैं। बहुत जोर से और बडे प्रभावशाली ढग से झूठ बोलते हैं। एक झूठ को सत्य सिद्ध करने के लिये दूसरा झूठ बोलते हैं। दूसरे झूठ को सत्य सिद्ध करने के लिये तीसरा झूठ बोलते हैं। फिर चौथा, फिर पाँचवाँ। फिर और फिर और। इस प्रकार के मिथ्याचारी लोग बहुत बडी-बडी झूठ परम्पराओ के प्रवर्तक बन जाते हैं। उन के ये मिथ्याचार मृत्यु के खेल ही तो हैं। इस मिथ्याचार के परिणाम स्वरूप ससार में आये दिन बडी-बडी विनाश-लीला में भी घटित होती ही रहती है।

जैसे पाप की प्रशंसा एक वर्जित कर्म है, [illegible] किसी पर झूठ-मूठ के दोष[illegible] से हो कि[illegible] मनुष्य की दुष्ट स्तुति कर[illegible] है। [illegible] से [illegible] को [illegible] दोषो को गुण बताना भी वर्जित है। [illegible], एव [illegible] दान आदि अप-भाषण [illegible] वर्जित [illegible]। [illegible] निन्दित और वर्जित [illegible] परिणाम तो निश्चित् रूप [illegible] जीवन [illegible] विनाश के रूप [illegible] होता है। समय आता है, जबकि कर्मकर्ता [illegible] करतूतों [illegible] करता है, परन्तु पछताने से क्या होता है?

करनी [illegible], जो फल भरे, करके क्यों पछताय।
[illegible] कहा से खाय॥

[illegible]। कभी वह [illegible]वश पाप करता है, कभी [illegible], [illegible]वश, कामवश वा किसी अन्य मनोविकारवश। फिर वह बारम्बार पाप करने लग जाता है। इस प्रकार वह एक अभ्यस्त अपराधी बन जाता है। कभी वह किसी दुष्ट प्रेरणा-वश पापी-अपराधी लोगो के साथ उठने-बैठने लग जाता है। देखते ही देखते वह पूरा निर्लज्ज और पक्का पापी वह अपराधी बन जाता है। ससर्गजा—दोष—गुणा—भवन्ति।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सुधारको की सुधार-प्रक्रिया ही दोषपूर्ण होती है। उस के प्रतिक्रिया अथवा परिणाम स्वरूप, कुछ भी सुधार न होकर, उल्टा बिगाड ही होता रहता है। यह ह्रास, बिगाड और पाप-प्रवाह भी मृत्यु ही है। सामाजिक जीवन में कुछ पेशेवर परोपकारी, पेशेवर सन्त, महन्त, पुजारी और भक्त भी पाये जाते हैं। इन लोगो ने स्थिति बहुत बिगाड दी है। जनता का पग-पग पर कष्टो का सामना करना पड रहा है।

नाना प्रकार के रोग हैं। रोगो का विचार पापो और अपराधो से पृथक् होता है। अनुचित खान-पान तथा प्राकृतिक नियमो के उलघन का परिणाम रोग हैं। मानसिक, आत्मिक और ईश्वरीय नियमो के उलघन को पाप तथा समाजिक, और राजकीय नियमो के उलघन को अपराध कहते हैं। रोग क्यो होते हैं? अधिक खाने से, न खाने से, कम खाने से, दोषयुक्त अन्नजल आदि के व्यवहार से, अधिक सोने से या कम सोने से अर्थात् उचित आहार-विहार न करने से रोगो की उत्पत्ति होती है। रोगो से कैसे तिल तिल कट कट के मरना होता है? इसे तो कोई भुक्त-भोगी ही ठीक-ठीक जानता है। ईश्वर ऐसी मृत्यु से सब की रक्षा करे। खाट में पडे-पडे मरना तो बहुत ही बुरा है।

हे ससार के सज्जन पुरुषो! तुम सब मिल-जुलकर मृत्यु को इन नानाविध लीलाओ का अन्त कर दो। यदि ससार का पापी, पाखण्डी, दम्भी और पाप-प्रशसक समुदाय तुम्हे डराना, धमकाना, फुसलाना, अपने जाल में उलझाना चाहे तो उसके प्रस्तावो को ठुकरा दो, अपने विद्या-बल, मनो-बल और भगवान् के भरोसे पर ही चलकर पापी- समुदायो की पोल खोल दो, उनकी वास्तविकता सभ्य ससार के सामने प्रगट कर दो। उन को सन्मार्ग पर लाने का यत्न करो। यदि ऐसा न कर सको, तो पापियों को महत्व देना तो छोड ही दो। उन की पूर्णतया उपेक्षा कर दो।

हे पूज्य महात्माओ! ससार के साधारण लोग बडी आशा-भरी दृष्टि से तुम्हारी और देख रहे हैं। जग-पीडक विनाश-लीलाओं का अन्त करने के लिये तुम जो भी यज्ञ रचोगे, उसमें सम्पूर्ण सभ्य समाज तुम्हारा अनुगमन करेगा। अपनी श्रद्धा की आहुतियाँ भी वह अवश्य ही तुम्हारे यज्ञ में समर्पित करेगा। सबसे बढकर यह, कि ईश्वर की दिव्य प्रवर्तनायें भी तुम्हारी सहायता करेंगी। ससार मे सदैव अन्तिम और पूर्ण विजय तो बस सत्य की ही होनी है। हाँ, विजय तो सदा सत्य की ही होगी। सावधान हो जाओ। ससार के नेतृत्व, यश की प्राप्ति और कुछ करके दिखाने, कुछ बन के दिखाने का जो सुयोग तुम्हें मिला है, उसका सदुपयोग करो।

जो कल करना है वह आज करले,
जो आज करना है वह अब करले।
जब चिडियों ने चुग खेत लिया,
फिर पछताये क्या होवत है।

हे ससार के कल्याण की अभिलाषा करने वाले स्त्री-पुरुषों! वे विद्वान और तथा कथित नेतागण अपने-अपने कर्तव्यो का पालन करते हैं, या नहीं, इस

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादकीय

संस्कारों की कुरीतियों को दूर करो

समाज में सस्कारो का करना अत्यावश्यक कर्त्तव्य है। ऋषि दयानन्द सस्कारविधि की भूमिका मे लिखते हैं कि "जिस करके शरीर और आत्मा सुसस्कृत होने से धर्म अर्थ काम और मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं इसलिये सस्कारो का कराना सब मनुष्यो को अति उचित है।" ऋषि के इन शब्दो द्वारा सस्कारों के महत्व पर पूरा प्रकाश पडता है। आर्यसमाज के गृहस्थाश्रम क्षेत्र मे यद्यपि सस्कारो का प्रचलन हो रहा है जो कि उत्तम बात है, परन्तु खेद से कहना पडता है कि सस्कारो में हम कुरीतियो मे फसकर इतना अपव्यय करने लगे हैं, कि साधारण गृहस्थो को तब बडी चिन्ता होने लगती है, जब कि वे अपनी सुशिक्षिता युवावस्था मे पहुँची हुई सुशील कन्या को किसी योग्य वर को देने का आयोजन करते हैं। सामान्य स्थिति के गृहस्थी ने अपने पुत्र की भाति ही अपनी प्रिय पुत्री को भी योग्य बनाने मे अपने सामर्थ्य से अधिक व्यय किया है। इससे बढकर वह क्या कर सकता था ? जब वह अपनी कन्या के योग्य किसी सुशिक्षत वर को ढू ढ लेता है, तब वह उसके अभिभाव को माता-पिता आदि के सामने अपनी कन्या को उनके सुपुत्र का विवाह करने के प्रस्ताव रखता है, तब वर के सरक्षक ऐसी-ऐसी अनहोनी शर्तें कन्या के पिता आदि के सामने प्रस्तुत करते हैं, जिनको पूरा करना कन्या के पिता के वश की बात नही। वह बिचारा मारा-मारा फिरता रहता है, जिससे उस की इच्छा पूरी हो सके, परन्तु चारो ओर समाज के बगुले भक्त पूरे घाख कन्या के दहेज के नाम पर उस कन्या के पिता आदि की शरीर की चमडी को भी नोच कर उधेड लेना चाहते हैं। यह महा भयङ्कर रोग आर्यसमाज के उच्च स्थिति के जन नेताओ, उच्चाधिकारियो और राष्ट्र के नेताओ मे गिन जाने वाले लोगो मे फैला हुआ है। सस्कृत तथा अग्रजी पढे लिखे लोग भी इस बीमारी से बच नही है। इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि अच्छे कुलो की साधारण स्थिति के गृहस्थ की उच्च शिक्षा प्राप्त कन्याओ की विवाह के समय की आयु होने पर भी वर नही मिल पाते और वह कन्या पिता के घर ही बैठी रहने मे विवश होती है। कल ही हमें हमारे परिचित एक आर्य बन्धु मिले जो कि अपनी धेवती (पुत्री की पुत्री) के विवाह की चिन्ता मे अत्यन्त दु खी थे। वर पक्ष वालों के समान ही कन्या पक्ष के सम्पन्न परिवार भी अपने पुत्र-पुत्रियो के विवाहो मे धन का इतना दुरुपयोग कर रहे हैं, जिसके दुष्ट प्रभाव से सामान्य आर्य भाई बहिनें अपनी लोकमर्यादा को बचाने के लिये ऋण पर रुपया लेकर उन कुरीतियो को पूरा करने मे खर्च करने पर विवश हो रहे हैं। जब किसी सज्जन को अपनी लडकी के लिये वर ढू ढना पडता है, तो वह कुरीतियो को दूर करने की दुहाई देता है, परन्तु जब वह अपने पुत्र का विवाह करने चलता है तो लडकी वाले की सारी सम्पत्ति को हडप करना चाहता है। यह अभिशाप नगरो मे उत्पन्न और पुष्ट होकर गाव की तरफ भी बढने लगता है। इसके कीटाणु गावो की सामान्य स्थिति के लोगों के हृदय मे पैदा होने लग रहे हैं। मैं स्पष्ट कह सकता हूँ कि गावो के आर्य भाई बहिन अब तक नगरो के आर्य बन्धुओ की अपेक्षा कुरीतियो के जाल मे कम फसे हैं। इसका एक कारण तो गांवो मे धन का कम होना है, दूसरा कारण वहा नगरो की चहल पहल नहीं है। तीसरे यदि व कल्पित व्यय मे पडना चाहे, तो उन्हें अपनी भूमि गिरवी रखनी पडती है अथवा दुकान बेचनी पडती है उनके दो ही धन्धे कमाने के हैं। जो ऋण लेकर इस कुरीति मे फस जाता है जो दोनो पक्षो के लोग दु खी हाय नौकरी ! हाय नौकरी !! कहते हुये नगरो के दफ्तरो के दरवाजो पर भटकते फिरते हैं।

> मेरे प्यारे श्री सिद्धान्ती जी,
> सप्रेम नमस्ते, आर्य कृपया 'आर्यमर्यादा' के सम्पादक रूप मे कार्य करते रहिये।
> ह० महा० आनन्द स्वामी सरस्वती
> ३१ ३ ६९

विवाह मे दहेज मागना, अधिक बरात ले जाना अथवा मगवाना, आभूषणो के लिये चोरी से सोना चांदी खरीद कर जेवर बनवाना और जेवरो में खोट मिले माल को लेना, भोजन आदि मे अनेक मिठाई आदि में व्यय करना, पत्तलो अथवा थाली में मिठाई आदि को प्रचुर मात्रा मे झूठ छोडना, कार, रेडियो और इसी प्रकार की चीजो की माग करना, बडे-बडे गाने बाजे वालो को बुलाना, रग-बिरगी बिजली की रोशनी करना, आतिशबाजी छुडवाना इत्यादि कहाँ तक कहें—सर्वत्र खून-पसीने की गाढी कमाई का नाश किया जाता है तथा उस कमी के पूरा करने के लिये बुरे व्यवहारो से रुपया कमाया जाता है।

उपर्युक्त बातें ऐसी नही हैं, जिनसे आर्य जनता परिचित न हो। फिर किसी न किसी बहाने से इन कुरीतियो मे फसते ही रहते हैं।

सौभाग्य से उत्तर भारत के देहली के चारो तरफ फैले देहातो के लोगो ने सर्वखाप पचायत द्वारा इन कुरीतियो को दूर करने का यत्न किया है। इसका शुभ परिणाम यह हुआ कि ग्रामो के रहने वाले लोगो को अपने पुत्र और पुत्रियो को शिक्षा देने का कुछ अवसर मिल गया। परन्तु जब ये गाव के लोग अपने शहरी भाइयो के ठाट-बाट को देखते हैं, तो उनके पाव भी लडखडाने लगते है और कुछ पेशेवर लोग उनको बहकाते रहते है और अपने चक्र मे चढा कर ऐसी पटक देते हैं कि वह ग्रामीण उसमे फस कर सदा के लिये ऋण ग्रस्त होकर रोता रहता है।

ये कुछ कुरीतियाँ हमने केवल विवाह सस्कार के सम्बन्ध मे ही लिखी हैं। यदि अन्य सामाजिक बुराइयो का लेखा-जोखा खोला जावे, तो भगवान् ही उन दुर्व्यसनो से हमारे समाज को बचा सकता है। शराब, अण्डा, मास, सिनेमा और स्वाग आदि बीमारिया भी अपने पाव जमा रही हैं। चाय, बीडी, सिगरेट और पान आदि तो अब सभ्य समाज के सत्कार के रूप मे आ चुकी है। उत्तरप्रदेश के एक छोटे से नगर में हम अपने मिलने वाले सज्जन के पास गये वह तब उपस्थित नही थे। हमारे लिये घर का एक बालक पान लाया। हमने निषेध कर दिया। जब वह सज्जन घर लौटे, तो उनके घर वालो ने हमारी शिकायत की कि इन्होने हमारा पान भी न लेकर हमारा अपमान किया परन्तु उस सज्जन ने समझा दिया। इस साधारण घटना से पता चलता है कि हम मे बुराईया कहा तक घुस चुकी हैं।

आर्य भाई बहिनो और आदरणीय नेताओ से हमारी नम्र प्रार्थना है कि आर्यों मे बढती हुई इन कुरीतियो को रोकें। इसी से शुद्ध सस्कारो की परिपाटी पड सके। जिसके कारण हमारा सब प्रकार से उत्थान हो सके।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

(पृष्ठ १ का शेष)

श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती—सभा के मुख्य पत्र जो इस समय "आर्य मर्यादा" अथवा सभा पत्र को सुचारू रूप से चलाना परन्तु सभा पत्र की नीति प्रबन्ध कर्त्री समिति निर्धारित करेगी।

श्री रामचन्द्र जावेद—सभा के साहित्य विभाग के अध्यक्ष होगे।

प्रबन्ध कर्त्री समिति—

इसके सयोजक ला० दीवानचन्द जी होगे। सभा और सभा से सबधित और सचालित सस्थाओ को चलाने के लिये सारी नीतियों का निर्धारण करना।

मेरी अनुपस्थिति मे प्रबन्ध कर्त्री समिति अपने मे से जिसको नियुक्त करे वह उस बैठक का प्रधान होगा।

३ जिस समय आर्यसमाजो के सब अभियोग समाप्त हो जायेगे और शान्ति स्थापित हो जायगी उसी समय मैं आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का निर्वाचन करवा दूँगा।

४ गुरुकुल कांगडी और गुरुकुल फार्मेसी के प्रबन्ध को सुचारू रूप से चलाने और उसके सब झगडो को समाप्त करने के लिए मैं निम्नलिखित महानुभावो की समिति नियुक्त करता हूँ।

(१) श्री नारायणदास कपूर सयोजक (२) चौधरी रूपचन्द जी, (३) प्रधान स्नातक मण्डल।

५ ऊपर लिखित आदेशो के अनुसार आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के दोनो पक्षो के अधिकारियो को आदेश देता हू कि वह अपना-अपना चार्ज ऊपर लिखित महानुभावो के सुपुर्द शीघ्र कर दें।

टाल्स्टाय मार्ग, ३१-३-१९६९ (ह०) आनन्द स्वामी सरस्वती

विचार विमर्श—

वेद रक्षानिधि-एक योजना

(श्री पन्नालाल परिहार, श्री शारदा सदन, पावटा-ए, जोधपुर)

वर्तमान् काल वेद का केवल नाम मात्र वा पुस्तकस्थ-विद्या शेष है। भारत में थोड़े से घरानों को छोड़कर वेदपाठी ब्राह्मण-कुलों में वेद का पठन पाठन लुप्त होता जा रहा है। भौतिक विज्ञान के कराल बवंडर में वेद ज्ञान उड़ जाने की गंभीर आशंका है। अभी भी कुछ लोग वेद परम्परा के लकीर के फकीर बने दिखाई देते हैं परन्तु आने वाली पीढ़ी के लोग इसे भी भूल जावेंगे ऐसा भयंकर अनुमान है। हमारी प्राचीनतम संस्कृति-सभ्यता का आधार, ईश्वर प्रदत्त ज्ञान, मानव मस्तिष्क से ओझल होने वाला है और होता जा रहा है। हम चाहे जितनी दुहाई वेदप्रचार, रक्षा की दें, पर यह लोगों के गले नहीं उतरती। अतः यदि इस अनुपम अमूल्य धरोहर वेदनिधि को बचाना है तो निम्न प्रस्ताव पर आर्य बन्धु वेद प्रेमी अवश्य ध्यान देकर कार्य करें। अस्तु। समय रहते चेतें।

वेद रक्षा की योजना इस प्रकार है :—

(१) वेदरक्षा निधि (कोष) बनाया जावे। उसमें पांच लाख रुपया किया जावे। (२) यह कोष सार्वदेशिक सभा के संरक्षण में ट्रस्ट रूप में रहे। (३) इसके संग्रहकर्ता परिश्रमी, लग्न वाले विद्वान् आर्य सज्जन हों। मेरे विचार में ५ सदस्य भारत में भ्रमण कर इस राशि को एकत्र करें। मेरा प्रस्ताव इन व्यक्तियों का है :—

(क) श्री वीरसेन वेदश्रमी-संयोजक (ख) श्री युधिष्ठिर मीमांसक— (ग) श्री भगवान् स्वरूप न्यायभूषण— (घ) श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड। (ङ) श्री सत्यानन्द वेदवागीश।

(४) इनके भ्रमण का व्यय सार्वदेशिक सभा वहन करे। (५) एक वर्ष में उक्त राशि एकत्र होनी चाहिये। (६) धन का उपयोग:—एकत्र राशि का उपयोग इस प्रकार सार्वदेशिक सभा के निर्देश अनुसार हो। उक्त पांच सज्जन अथवा दो तीन ही देश भर में विशेषतः बनारस, महाराष्ट्र, बम्बई, मद्रास और गुजरात में वेदज्ञ घरानों के प्रतिष्ठित वेदपाठी पंडितों से सम्पर्क स्थापित करें और। (ख) वेद का सस्वर टेप रेकार्ड (Tape Recording) करें। (ग) टेप रिकार्डिंग का विशेषज्ञ इस दल के साथ में रहे। (घ) टेप रिकार्ड फिल्म, मशीन का व्यय पहले से ही अनुमानित हो। (ङ) गुजरात में सामवेद गायन सस्वर अब भी कुछ घरानों में होता है। (च) महाराष्ट्र में ऋग्वेद का सस्वर पाठ, जटा, माला दण्ड, ध्वजा आदि प्रणाली से होता है। (छ) यजुर्वेद का पाठ बनारस और उत्तर प्रदेश के कई स्थानों में उपलब्ध हो सकता है। (ज) अथर्ववेद का प्रचलन बहुत थोड़ा है वह भी केवल महाराष्ट्र और गुजरात के कुछ अथर्ववेद शौनक, पिप्पलाद घरानों में है। (झ) इन्दौर के श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी ने प्राचीन परम्परानुसार बड़े परिश्रम से मंत्रों के उच्चारण का अभ्यास विविध प्रकार से किया है। उनका प्रदर्शन स्थान-स्थान पर होता रहता है। साथ ही उन्होंने वृष्टि यज्ञ की योजना भी हाथ ले रखी है तथा कई परीक्षण भी किये हैं। लोग साथ देवें तो बहुत देश व्यापी उपयोगी कार्य हो सकता है। इसी प्रकार अब भी कई वेदपाठी मिल जावेंगे। शीघ्रता करें अन्यथा यह पीढ़ी भी अन्तर्धान हो जावेगी तो वेद का सस्वर सुनना सुनाना दुर्लभ या असंभव हो जायगा। स्वर्गीय शास्त्रीय संगीत मार्तण्ड श्री ओंकारनाथ ठाकुर ने कुछ वेद मंत्रों का साम गान के रूप में अभ्यास व प्रदर्शन किया था परन्तु यह विद्या भी दिवंगत विद्वान् के साथ चली गई। भगवान् न करे ऐसा ही हमारे साथ फिर न हो। (ञ) अतः सामवेद का गायन तथा सम्भव रेकार्ड करा लिया जावे। (ट) रेकार्डों की बिक्री भी खूब होने की आशा है। व्यवसायी लोग आगे आवेंगे। धर्म प्रेमी वेद ध्वनि सुन कर प्रत्येक घर में अहोभाग्य समझेंगे। (ठ) समस्त वेदमन्त्रों (संहिता) का पूर्ण रेकार्ड कार (सार्वदेशिक सभा) दिल्ली में रहे। जहाँ से डुप्लीकेट रिकार्डिंग तैयार होते रहेंगे और प्रचारित होंगे। यह भी व्यवसाय रहेगा। (ड) सर्वप्रथम तो बात यह है कि इस वेदोद्धार पवित्र योजना को आगे बढ़ाने वाले पाँच वीर कोई आगे आवें। जैसे गुरु गोविन्दसिंह के सामने पाँच प्यारा आये थे। क्या आर्य समाज में है कोई व्यक्ति जो इस बीड़े को उठावे। क्या किसी आर्य प्रेमी वेद प्रेमी में उत्साह अवशिष्ट है? अथवा केवल कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का नारा लगाना ही पर्याप्त समझते हैं? कहने का तो आर्यसमाज का नियम पाठ होता है कि वेद का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना आर्यों का परम धर्म है। परन्तु अब परीक्षा की घड़ी आई है। कोई माई का लाल आगे आवे तो जानें। अधिक क्या कहूँ।

(ढ) विशेष—शास्त्रीय संगीतज्ञों द्वारा वेद मन्त्रों में चुने हुए वेद मन्त्रों को वर्तमान राग-रागनियों में गवाया और रेकार्ड कराया जावे। इससे वेद-प्रचार होगा। यह स्थायी साहित्य का काम देगा। अब प्राचीन वामदेव्य गान को नारदीय पद्धति से हाहूहाहू करना वृथा है। वह विद्या तो लुप्त हो चुकी है। ऐसा हमारा अनुमान है। वेद का विषय है। धर्मसंकट है। भगवान् रक्षा करे।

[योजना उपयोगी है, परन्तु दो बातों के लिए हमें कुछ लिखना है आप अन्तिम सन्दर्भ में लिखते हैं कि "अब प्राचीन वामदेव्य गान को नारदीय पद्धति से 'हाहू-हाहू' करना वृथा है," यह बात उचित नहीं है। ऋषि दयानन्द ने संस्कारविधि के सामान्य प्रकरण के अन्त में वामदेव्य गान की यह पंक्ति लिखी है। यह वृथा नहीं है। इसके लिए सामवेदी लोगों द्वारा प्रचलित करने का यत्न करना चाहिए। हमें विश्वास है कि इस पद्धति के गायक से सर्वथा लुप्त नहीं हुए हैं। सामवेद के प्रधान रूप गान प द्धति को वृथा बतला कर इस योजना के क्रियान्वित करवाना वेद द्रोह ही कहा जा सकता है। (२) जिन पांच सज्जनों के नाम आपने सुझाये हैं। उन में क्या आप कह सकते हैं कि ये पांचों महानुभाव ऋषि दयानन्द को वेदमन्त्रार्थद्रष्टा, परमयोगी और महावैज्ञानिक समझते हैं! क्या इनमें किसी सज्जन ने ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य में उलटफेर नहीं किये हैं? क्या ऋषि के अर्थ को हटाकर अपना मनमाना अर्थ नहीं डाला है? और ऋषि के अर्थ को नीचे टिप्पणी में नहीं पटक दिया है? हम ऐसे अनेक उदाहरण दे सकते हैं—जिनमें ऋषि के अर्थों का अपने मिथ्या पाण्डित्य के अभिमान में अनर्थ किया गया है। अतः नाम ऐसे होने चाहिये जो ऋषि दयानन्द के मन्तव्य को मानते हैं। आर्यसमाज ऋषि दयानन्द का उत्तराधिकारी है, इस बात को मानसपटल से कदापि दूर नहीं करना चाहिये,

आशा है श्री पन्नालाल जी "योजना" के लेखक हमारी टिप्पणी पर विचार करेंगे]

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेद प्रचार विभाग की सूचनाएँ

१. आर्यसमाज मुवाना (जि० करनाल) का उत्सव धूम-धाम से हुआ। हरयाणा वेद प्रचार मण्डल के अध्यक्ष श्री पं० समरसिंह जी वेदालंकार अपने सहयोगी उपदेशक तथा भजन प्रचारकों के साथ उपस्थित थे। पं० जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती शास्त्री भी एक दिन के लिए पधारे, आर्यसमाज ने वेद-प्रचार, दशांश और आर्यमर्यादा के लिये पूरा सहयोग दिया।

२. आर्यसमाज गुगरां (जि० गुरुदासपुर) का उत्सव उत्साह से मनाया गया। इतिहास केसरी श्री पं० निरञ्जनदेव जी अपने साथी उपदेशक और भजन-मण्डलियों सहित पहुँचे हुए थे। सभा को वेदप्रचार में अच्छी राशि मिली। पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी महाराज अध्यक्ष दयानन्दमठ दीनानगर तथा स्वामी सेवकानन्द जी भी पधारे। उत्सव का अच्छा प्रभाव रहा।

—अधिष्ठाता वेदप्रचार विभाग

लोकालोक का प्रलाप

(डा० शिवपूजनसिंह कुशवाहा एम० ए०, साहित्यालकार, कानपुर)

[गताक से आगे]

यहाँ उपासना का वर्णन नही—वरन् कृषि का वर्णन है। इस मन्त्र का देवता भी कृषि* है। पटेला+ से ऋषि दयानन्द जी का अभिप्राय खेत मे हल चलाने से उत्पन्न हुई उस गहरी लकीर का है जिसमे बीज बोया हुआ उगना है क्योकि यह अर्थ मन्त्र मे विद्यमान सीता शब्द का है और सीता शब्द का अर्थ हल या सुहागा हो ही नही सकता जैसा कि—"सीता लाङ्गल पद्धति" (अमर कोश) अर्थात्—सीता यह एक नाम हल रेखा का है।×

इसी को ऋषि दयानन्द जी ने 'पटेला' शब्द से वर्णन किया है। आपने अपने मन से मनमाना 'लकडी का सुहागा अर्थ निकाल लिया।

ऋषि दयानन्द जी के लिखे हुए मन्त्र के नीचे के भावार्थ को आपने छुपा लिया है जिससे उनका तात्पर्य स्पष्ट होता है वह यह है—

सब विद्वानो को चाहिये कि किसान लोग विद्या के अनुकूल घी मीठा और जल आदि से सस्कार कर स्वीकार की हुई खेत की पृथ्वी को अन्न से सिद्ध करने वाली कर। जैसे बीज सुगन्धि आदि युक्त करके बोते है वैसे इस पृथ्वी को भी सस्कार युक्त कर।

इस भावार्थ मे स्पष्टतया "पृथ्वी को भी सस्कार युक्त कर' लिखा है, अब पटेले का अर्थ सुहागा कैसे हो सकता है ?

आपके माननीय भाष्यकार श्री महीधराचाय इस मन्त्र का अर्थ लिखते हैं—

लाङ्गल पद्धति (कुंड) को मधुरघृत से सीचे। इस कुंड का विश्वदेव और मरुतो ने स्वीकार किया है। हे कुंड तू अन्नवती होकर दूध, दही, घी से दिशाओ को पूर्ण करती हुई दुग्ध आदि के साथ हमारे अनुकूल हो।"

---

*यजुर्वेद भाष्यकार प० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार मीमासातीर्थ भी लिखते हैं (सीता) काठ की पट्टी फाली या हल से विदीर्ण भूमि। यजुर्वेद भाष्य प्रथम खड द्वितीया वृत्ति पृ० ५०२)।

डा० माताप्रसाद गुप्त एम० ए० डी० लिट् अध्यापक हिन्दी विभाग प्रयाग विश्वविद्यालय अपनी पुस्तक तुलसी पृ० ६४ (सन् १९४९ ई० साहित्य कुटीर, प्रयाग से प्रकाशित प्रथम सस्करण मे लिखते हैं—वैदिक साहित्य मे सीता शब्द का प्रयोग साधारणत हल से बनी हुइ रेखा के लिए हुआ है। किन्तु उनके साथ भी 'रामायण की ज्ञात कथा का कोई प्रसग नही आया है।

+यजुर्वेद १२।७० का देवता ऋषि दयानन्द कृषि नही किन्तु कृषिवला" अर्थात् खेती करने वाले किसान' लिखते हैं॥

×इसी मन्त्र मे सीता शब्द का पदार्थ (सस्कृत) मे ऋषि दयानन्द ऐसा लिखते हैं—(सीता) सायन्ति क्षेत्रलोष्ठान् क्षयन्ति या सा काष्ठपट्टिका। इसी का अर्थ भाषा मे पटेला लिखा है। ऋषि के मत मे यहाँ सीता का अर्थ खेत मे हल से बनने वाली लीख=गहरी लकीर नही है, किन्तु लोहे की फाली के नीचे लगने वाले काष्ठ की पट्टी है। जोकि खेत के ढेलो को तोडती है। यह पट्टी लोहे की भी होती है, जैसे ऋषि दयानन्द ऋ० ४।५७।६ मे लिखते हैं— (सीत) हलादिकर्षणावयवायोनिर्मिता (सस्कृत पदार्थ) हलादि को खीचने वाले अवयव लोहे से बनाई गई सीता है। (भावार्थ)" इसी प्रकार ऋ० ४।५७।७ मे सीताम् शब्द का अर्थ ऋषि दयानन्द सस्कृत भाष्य मे ऐसा करते हैं—"(सीताम्) भूमिकर्षिकाम्।" इसका भाषार्थ यह दिया है 'भूमि जुताने वाले वस्तु को'। इस दोनो स्थलों से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द सीता' पद का अर्थ खूड'—खेती मे हल से बनी गहरी लकीर नही करते, किन्तु उस लकीर को बनाने वाली फाली' के नीचे साथ लगने वाली 'काष्ठ पट्टी अथवा लोहे की बनी वस्तु" करते हैं। जो लोग खेती नही करते और वेदभाष्य करने लग जाते हैं—वे मन्त्रार्थ का समझना तो दूर रहा ऋषि के किये अर्थ को भी नही जान सके न जान सकते हैं। हल मे अनेक वस्तु फाल='फाली के साथ लगे रहते हैं। उनको कायत, ओध, पछेला, पाथा, घू सवा कहते हैं। इन उपर्युक्त स्थानो मे सीता का अर्थ 'कायत है। इसी पर फाली जुडी रहती है जो कि खेत के ढेलो को फाडती रहती है। और फाली से खूड बनते रहते हैं। ऋषि दयानन्द का सम्पर्क किसानो से रहा है, अत उन्होने ही ठीक अर्थ किये हैं—स्वय वह वेदमन्त्रार्थद्रष्टा थे ही। और देखिये यजु० १२।७१ मे 'लाङ्गलम् शब्द का अर्थ ऋषि दयानन्द 'सीरापश्चाद्भागे दार्ढ्याय सयोज्य काष्ठ" फाले के पीछे जो दृढता के लिए काष्ठ लगाया जाता है' किया है इसी को कृषक लोग 'पछेला' कहते हैं॥ अत पटेला का अर्थ 'कायत' होता है॥ [जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री]

इतने पर भी यदि आप यह कहें कि पटेले पर घी जल डालना ही उस की पूजा है तो क्या कुंड मे जल डालना शिवलिंग की पूजा है ?

ऋषि दयानन्द जी ने अपनी सस्कारविधि 'चूडाकर्मप्रकरण' मे लिखा है—ओ विष्णोर्दंष्ट्रोसि" (म० ब्रा० १ ६-४। गाभि० २-८-१०-१७) इस मन्त्र से छुरे की ओर देखके—

यहा पर ऋषि ने कोई अर्थ नही किया है। उन्होने केवल गोभिल गृह्य-सूत्र का उद्धरण रख दिया है। अर्थ तो आप करते हैं और आक्षेप स्वामी जी पर या आर्यसमाजियो पर करते है, यह कहाँ की सभ्यता है ?

इसका अर्थ तो आपने किया है इसलिए आपको सम्मति दी जाती है कि यदि छुरा विष्णु की दाढ है तो अशुद्ध असभ्य भग लिङ्ग को पूजा त्याग कर छुरी का पूजन कीजिए। लिङ्ग से तो यह अच्छा रहेगा। बाल भी बना लो, सवेरे पूजा करके मोहनभोग भी खा लो। एक पन्थ दो काज !

देखिये इस का अर्थ होगा—'यज्ञो वै विष्णु' (शतपथ ब्रा० १-२-१३) विष्णु नाम यज्ञ का है और "दश्यतेऽनेनेति दंष्ट्र" जिससे काटा जावे उसका नाम दंष्ट्र है अतएव अर्थ हुआ 'छुरा यज्ञ मे वस्तुओ को काटने का साधन है।'

आपका 'पुराण' छुरी और कुद्दाल की अवश्य पूजा बतलाता है—

सर्वसत्वागभूतासि सर्वाशमनिवारिणी।
क्षुरके क्षुर मा नित्य शान्ति यच्छ नमोस्तुते।
(भविष्यपुराण उत्तर पर्व ४ अ० १३८)

अर्थात्—सारे प्राणियो की अगभूत है, सारे विघ्नो की दूर करने हारी है, हे छुरी ! मेरी रक्षा कर, मुझको नित्य शान्ति प्रदान कर तुम को नमस्कार है।

तोष्य कर्मकरा सर्वे कुद्दालानि च पूजयेत्" ॥३६॥
(भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय १२७)

अर्थात् सारे काम करने वालो को सन्तुष्ट करे और कुद्दाली को पूजे।

ऋषि दयानन्द जी ने सस्कारविधि' मे केवल मन्त्र देकर यह लिखा है कि 'इस मन्त्र को बोल के छुरे को दाहिने हाथ मे लेवे।

आपने इस मन्त्र का यहा अर्थ नही किया है। आप अपने यजुर्वेद भाष्य मे इसका अर्थ लिखते है— हे जगदीश्वर और उपदेश करने हारे विद्वान् ! जो आप (स्वधिति) अविनाशी होने से वज्रमय (असि) है। (ते) आपका (शिव) सुख स्वरूप विज्ञान का देने वाला (नाम) नाम (असि) है सो आप मेरे (पिता) पालन करने वाले (असि) हैं। आपके लिए मेरा (नम) सत्कार पूर्वक नमस्कार (अस्तु) विदित हो, तथा आप (मा) मुझे (मा) मत (हिंसी) मृत्यु से युक्त कीजिए। और मैं आपको (आयुषे) आयु के भोगने (अन्नाद्याय) अन्न आदि के भोगने (प्रजननाय) सन्तानोत्पादन करने (सुप्रजास्त्वाय) उत्तम-उत्तम पुत्र आदि वा चक्रवर्ती राज्य आदि की प्राप्ति होने (सुवीर्याय) उत्तम शरीर आत्मा का बल पराक्रम होने और (रायस्पोषाय) विद्या वा सुवर्ण आदि धन की पुष्टि के लिये आपके आश्रय से सब दु.खो को (निवर्त्तयामि) दूर करता वा कराता हूँ।

आपको उचित था कि ऋषि दयानन्द जी के इस अर्थ पर आक्षेप करते।

श्री महीधराचार्य का अर्थ—'शिवो नामेति लोहक्षुरमादायेति। हे क्षुर त्व नाम नाम्ना शिव शान्तोसि स्वधिति वज्र ते तव पिता। ते तुभ्य नमोऽस्तु मा मा हिंसी।"

अर्थात्—'शिवो नामासि०' यह कह कर लोहे के छुरे को ले (और कहे) हे छुरे तू नाम से शिव=शान्त है। वज्र तेरा पिता है। तुम को नमस्कार हो। मुझे मत मार।

ऋषि दयानन्द तो कहे, हे जगदीश्वर ! आप मेरे पालन करने वाले हैं" और आपके माननीय भाष्यकार वाममार्गी श्री महीधराचार्य जी कहें "हे छुरे तुम को नमस्कार हो, मुझे मत मार।"

कहिये कौन छुरा (उस्तरा) पुजवाता है आप या आपके गुरु वाममार्गी महीधर या ऋषि दयानन्द जी ?

इस प्रश्न को देख कर पता चलता है कि आप (श्री कालूराम जी) या तो नास्तिक हैं या आपने मीमासादर्शन का स्वाध्याय नहीं किया है।

(क्रमश:)

विज्ञान जगत् :—

उच्च वैज्ञानिक साहित्य का आर्य भाषा में प्रणयन

(श्री मुकुलचन्द पाण्डेय, एम० एस० सी०, ५२ छोटा चान्दगंज, लखनऊ-७)

वर्तमान युग में प्रत्येक पार्श्व पर हम विज्ञान के प्रभाव से ओतप्रोत हैं। दैनिक उपयोग की सामग्रियों से लेकर भौतिक सुखों के समस्त प्रसाधनों की प्राप्ति का श्रेय अधिकाधिक रूप में मानवता के परमहितैषी विज्ञान को ही है। जनसामान्य को विज्ञान के नूतनतम चाकचक्य में अभिरुचि रखने की प्रेरणा का स्रोत उसकी व्यावहारिक भाषा है। दिन प्रतिदिन हो रहे आविष्कारों से साधारण छात्र को परिचित कराने तथा सुगमता की दृष्टि से यह नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है कि उच्चस्तर पर भी विज्ञान की शिक्षा का माध्यम हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाएं ही बनाई जायं। इस दिशा में कुछ प्रयास चल रहे है परन्तु कार्य की धीमी गति को देखकर ऐसा आभास होता है कि कदाचित् इस कार्य में शताब्दियां लग जावें। यद्यपि इण्टरमीडिएट स्तर तक यथासम्भव विज्ञान की शिक्षा का माध्यम हिन्दी ही रखने की व्यवस्था की गई है परन्तु स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर एकाएक विद्यार्थी के शिक्षा का माध्यम बदल जाने से उसे अवर्णनीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस कठिनाई का भाव न तो शिक्षकों के एक बड़े समुदाय को होता, न अभिभावकों को न सरकार को, इस दुविधापूर्ण स्थिति में पड़े छात्र का साहस जाता रहता है।

हिन्दी मे प्रश्नपत्रों के उत्तर लिखने की सुविधा यद्यपि कुछ विश्वविद्यालयो ने दे रखी है परन्तु पाठ्यपुस्तकों, संदर्भ ग्रन्थों तथा हिन्दी से सुलभ शोध पत्रिकाओ के अभाव मे यह कार्य यथावत रुका पड़ा है। विद्यार्थियों के अनुनय विनय तथा हड़तालों आदि की धमकी के फलस्वरूप सरकारी स्तर पर कुछ कोशिशे की जाती रही हैं किन्तु नियोजन की अव्यवस्था के कारण यह कार्य खटाई मे पड़ा रहा। उत्कृष्ट मौलिक अथवा अनुदित ग्रन्थों के प्रणयन का दायित्व उच्चश्रेणी मे अध्यापकों पर डाला गया, परिणाम यह हुआ कि अपने पूर्व कार्यभार से दबे होने के कारण वे इस कार्य को अनिश्चित समय तक के लिये टालते रहे। बार-बार अनुस्मारक आदि देने पर उन्होने अपने प्रिय शोधकर्त्ताओं को उनका कार्य करने के लिए विवश किया, वे इस कार्य से असमर्थ प्रतीत हुए किन्तु अपने शिक्षक की आज्ञा का उल्लंघन संवरण न कर पाने के कारण वे छायानुवाद, भावानुवाद अथवा भाषानुवाद के द्वारा कार्य की पूर्ति कर अपने दायित्व का इतिश्री मान बैठे। ऐसे कुछ ग्रन्थ प्रकाश में आने पर दुरुहता के पराकाष्ठा पर होने के कारण बोधगम्यता के अभाव में लोकप्रियता न पा सके। इस भांति के अनुत्तरदायित्वपूर्ण कृतित्वों के ग्रन्थो के सृजन का ऋणात्मक कार्य ही अबतक की उपलब्धि है। अनुवाद के प्रश्न को हल करने के निमित्त कई प्रयास किए गए जिसमें विज्ञान से इतर व्यक्तियों को भाषानुवाद के लिए सेवायोजित किया गया; उन्होंने अपनी सेवा को यथावत रखने के लिए शिथिलता से कार्यारम्भ किया। इस कार्य में दो प्रकार के दोष थे, पहला विज्ञान की अनभिज्ञता, दूसरा अस्थायी कार्य को अधिक समय तक चलाते रहने की कुप्रवृत्ति। इन दोनों कारणों ने अनुदित ग्रन्थों की उत्तमता को पर्याप्त क्षतिग्रस्त किया।

विश्वविद्यालय स्तर पर चिरकाल प्रतिष्ठित रहने का दंभ भरने वाली पाश्चात्य भाषा अंग्रेजी के सम्मोहन के कारण इस कार्य को दृष्टि से ओझल करने का कुचक्र रचा जा रहा है। यद्यपि छात्रो के अगणित आग्रहों पर अपनी सहमति व्यक्त करने में कोई प्राध्यापक पीछे नहीं रहता परन्तु वह भयवश मौन ही है। इसको निरस्त करने की प्रवृति हिन्दी के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध हो रही है। सम्प्रति हिन्दी स्नेही प्राध्यापकों की तीन कोटियाँ हैं : वे जिन्हें हिन्दी के प्रति अटूट श्रद्धा या अनुराग है तथा हिन्दी के संवर्धन में अपना सर्वस्व न्योछावर करने को सदैव उद्यत रहते हैं, दूसरे वे जो अपने हृदय मे इसके प्रति आसक्ति तो रखते हैं परन्तु हिन्दी द्रोही वरिष्ठ प्राध्यापकों के भय से वे अपनी भावनाओं का प्रस्फुटन नहीं कर पाते, तीसरे प्रकार के वे कायर शिक्षक हैं जो इसके प्रति सर्वथा उदासीन से रहते हैं, उन्हें कार्य हो या न हो कोई चिन्ता नहीं रहती। ये लोग भी प्रगति में बाधक हैं क्योंकि इनका वृथा मौन साहस को भंग करने मे विष का काम करता है। अनुरागी शिक्षक तो भर्तृहरि के अनुसार :—

"निंदन्तु नीतिनिपुणा, यदिवास्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥"

अबाध गति से कार्य करते रहते हैं। ऐसे महानुभावों में उत्तर उपदेशस्थस्वः श्रीराम दास गौड़, डॉ० गोरखप्रसाद, डा० बी० एन० प्रसाद, प्रो० बीरबल साहनी, डॉ० शान्तिस्वरूप भटनागर, डॉ० त्रिलोकी नाथ वर्मा आदि के प्रयास अनुकरणीय हैं। वर्तमान व्यक्तियों में डॉ० सत्यप्रकाश, डॉ० सन्तप्रसाद, श्री नारायणसिंह परिहार, रमेशचन्द्र कपूर, आर० डी० विद्यार्थी, ब्रह्मप्रकाश पाण्डेय, भगवती प्रसाद श्री वास्तव, जगपति चतुर्वेदी, निहालकरण सेठी, दयाप्रसाद खण्डेलवाल, नन्दलालसिंह, ओ३म् शंकरवाजपेयी, मुकुलचन्द पाण्डेय, सुरेशसिंह, फूलदेव सहाय वर्मा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। डॉ० रामचरण मेहरोत्रा के कार्य श्लाघ्य है जिन्होंने अनेक वैज्ञानिक क्षेत्र के पुस्तकों का सृजन हिन्दी भाषा में किया है।

वैज्ञानिक पत्रिकाओं का साहित्यिक कार्य विशेष रूप से स्मरणीय है। समसामयिक घटनाओ तथा उत्तम वैज्ञानिक कृतियों पर सम्यक् प्रकाश डालते हैं। समय-समय पर रोचक निबन्धों, चित्रों तथा अन्य सारगर्भित रचनाओ के माध्यम से सुविज्ञ लेखक अपनी बुद्धिमत्ता के आधार पर जन साधारण को जटिल गुत्थियों से अवगत कराते रहते हैं। बालकों को अद्यतन उपलब्धियों से सुपरिचित कराने मे इन पत्रिकाओ का योगदान अविस्मरणीय है। इस क्षेत्र मे विज्ञान परिषद्, प्रयाग का कार्य सराहनीय है जिसने अत्यन्त दुरूह समस्याओं को अति जन प्रिय भाषा में प्रस्तुत कर आइन्सटाइन के सापेक्षवाद, ज्योतिष विज्ञान की अस्पष्ट गुत्थियों आदि को सरल, सुबोध भाषा में जनता के सामने रखा। हिन्दी जनता को इससे पर्याप्त बल मिला और 'पापुलर साइन्स,' 'आर्येचर साइन्स' सदृश अंग्रेजी पत्रिकाओ के परिवेश में अपनी ख्याति स्थापित कर ली। सामान्य धरातल पर दैनिक उपयोग की चीजों—फोटोग्राफी, साबुन उद्योग, तेल, औषधियां, बढई गिरी आदि की उपादेयता को इसी पत्रिका के माध्यम से आलोकित करने का श्रेय डा० सत्यप्रकाश को है। इस परिषद् ने कई लोकोपयोगी पुस्तके भी प्रकाशित कर हिन्दी वैज्ञानिक साहित्य भण्डार को अक्षुण्य बनाया। इस पत्रिका का गेटअप आदि उतना सुघर तथा सवरा हुआ न था, इस कमी की पूर्ति भारत से प्रकाशित – विज्ञान लोक' ने की। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, दिल्ली के भारतीय भाषा एक ने 'विज्ञान प्रगति' नामक उत्कृष्ट प्रकाशन द्वारा अंग्रेजी पत्रिकाओं को नीचा दिखलाया। इंडियन प्रेस पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद ने कुछ काल तक 'विज्ञान जगत्' पत्रिका का प्रकाशन कर इस दिशा में अतुलनीय कार्य किया। अब तो लगभग प्रत्येक पत्र, पत्रिका तथा दनिक पत्रों ने भी विज्ञान को स्थान देना आरम्भ कर दिया है।

कार्यालयों में हिन्दी व्यवहार का श्रीगणेश केन्द्रीय-सचिवालय हिन्दी परिषद् के उद्योग से सम्भव हो पाया। इस संस्था ने हिन्दी की वृद्धि में अथक प्रयास किया है। स्थान-स्थान पर भव्य हिन्दी पुस्तक प्रदर्शनियों, समारोहों प्रतियोगिताओं तथा व्याख्यान और टंकण आदि की व्यवस्था कर दिनानुदिन हिन्दी व्यवहार को अधिक से अधिक लोकप्रियता प्रदान की गई है। इस क्षेत्र में श्री जगपति शरण निगम, श्री रामेश्वर प्रसाद तिवारी आदि के प्रयत्न सराहनीय हैं।

कुछ प्रकाशकों ने भी वैज्ञानिक पुस्तकों की लोकप्रियता की सहजानुभूति का लेखकों को पर्याप्त प्रश्रय दिया है। इस कार्य में जहां इण्डियन प्रेस पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद अग्रणी रहा है, ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयाग, मालवीय प्रकाशन, लखनऊ, जय प्रकाश नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ, मेहरा न्यूज पेपर्स, आगरा, एस० चान्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली तथा जयपुर के कुछ प्रकाशन विज्ञान की पुस्तकें को बड़े पैमाने पर लभ्य कराने में तल्लीन हैं। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने प्रत्येक राज्य को मौलिक तथा अनूदित पुस्तकों को तैयार कराने के निमित्त १ करोड़ रुपए का विशेष अनुदान दिया है ताकि वैज्ञानिक प्राविधिक तथा तकनीकी पुस्तकों का शीघ्रातिशीघ्र प्रणयन हो पावे। केन्द्रीय हिन्दी निर्देशालय, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार की देख-रेख में अनेक उत्कृष्ट एतद्देशीय तथा विदेशी पुस्तकों का भारतीय भाषाओं में अनु·

(शेष पृष्ठ ८ पर)

धर्म का यथार्थ वैदिक स्वरूप और महर्षि दयानन्द

(श्री सत्येन्द्र सिंह एम० ए०, आर्य समासद, देहरादून)

लगभग चार पांच सहस्त्र वर्षों से वेद का पठन-पाठन लुप्त प्रायः हो गया। यदि कोई वेद का नाम लेने वाले शेष रहे भी तो केवल ऐसे लोग रह गये जो बिना अर्थ विचार ही मंत्रों को कंठस्थ कर लेते थे। धीरे-धीरे वे भी समाप्त होते गये। अपने को हिन्दू कहने वाले आर्य लोग वेद से पूर्ण रूपेण अनभिज्ञ हो गये। वेद से हटने का सबसे बड़ा दुष्परिणाम यह हुआ कि धर्म के नाम पर यज्ञों में पशुबलि और मृतक श्राद्ध आदि होने आरम्भ हो गये तथा वेद-विरुद्ध मत और सम्प्रदाय प्रचलित हो गये। वेद विरोधी प्रतिक्रियायें लगभग ढाई तीन हजार वर्ष पूर्व चारवाक, जैन, बौद्ध मतों तथा वाममार्ग के उद्भव के साथ आरम्भ हुई। अपने को वेदों का अनुयायी बताने वाले भी वेदो के स्थान पर पुराणों को अपना बैठे। अपने को वेदों का रक्षक कहने वाले शंकराचार्य ने भी वेदों के स्थान पर केवल उपनिषद्, गीता और ब्रह्म-सूत्र को ही अपनाकर अवैदिक वेदान्त का प्रचार किया। जिन्होने वेदो को माना भी परन्तु उन्होंने भी वेदों के मनमाने अर्थ किये। धर्म क्या है—इस सम्बन्ध में उनके विचार अस्पष्ट हो गये। जिस समय महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने प्रतिद्वन्द्वी प्रसिद्ध पौराणिक विद्वान से पूछा कि धर्म क्या है तो श्री बालशास्त्री जो चक्र मे पड़ गये और बड़ी कठिनता से मनुस्मृति के उस श्लोक को स्मरण कर पाये जिसमे धर्म के दस लक्षण बताये हैं। जब स्वामी दयानन्द सरस्वती ने उनसे अधर्म की परिभाषा पूछी तो वह बिल्कुल निरुत्तर हो गये। अपने को विद्वान कहने वाले पौराणिक पंडित बौद्धिक पतन की पराकाष्ठा पर पहुँच गये और उनको यह पता ही नहीं रहा कि धर्म और अधर्म मे अन्तर क्या है? "वेदोखिलो धर्ममूलम्"—वेद ही सब धर्म का मूल है के स्थान पर सब सम्प्रदाय वाले अपने-अपने ग्रंथो को धर्म का मूल मानने लगे। इस बात का श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती जो महाराज को ही है कि उन्होने वेदों के ही आधार पर धर्म का बुद्धिगम्य यथार्थ स्वरूप हम लोगो के सामने रक्खा और प्रचलित भ्रान्तियों का खण्डन किया।

पारसी, यहूदी, जैन, बौद्ध, ईसाई, मुसलमान और सिक्ख अपने अपने मतों को धर्म की संज्ञा देते हैं। इस समय सिक्ख मत को आरम्भ हुए लगभग साढे चार सौ वर्ष, इस्लाम मत को आरम्भ हुए लगभग चौदह सौ वर्ष, ईसाई मत को आरम्भ हुए १९६८ वर्ष, जैन और बौद्ध मत को आरम्भ हुए ढाई हजार वर्ष और पारसी और यहूदी मत को आरम्भ हुए तीन हजार से कुछ अधिक वर्ष हुए है। मैं इन मतों के मानने वालों से पूछता हूँ कि उनका मत आरम्भ होने से पूर्व जो उनके पूर्वज थे उनका कुछ न कुछ दीन ईमान तो होगा ही? या वे बिल्कुल बे ईमान थे। यदि उनका कोई धर्म कोई विचारधारा थी तो यह घोषणापूर्वक कहा जा सकता है कि वह केवल वैदिक धर्म ही था। संकुचित दृष्टिकोण से धम का अर्थ करना बुद्धि से शत्रुता करना ही है। धर्म कहते हैं उन नियमों को और सिद्धान्तों को जो कि धारण करने के योग्य हैं, शाश्वत हैं और जो सृष्टि के उत्पत्ति काल से चले आ रहे हैं और जिनके आधार पर सृष्टि के सारे कार्य निर्विघ्न रूप से चल रहे हैं। परिस्थितियों के कल्प विकल्प और विषमताओं के कारण किसी समय उठ खड़े हुए सम्प्रदाय को या किसी व्यक्ति विशेष की कोई विचारधारा उसके स्वार्थी अनुयायियों में प्रचलित हो जाय तो उसको धर्म की संज्ञा नहीं दी जा सकती। धर्म के अन्तर्गत जो जो बाते आती हैं उनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

यतो अभ्युदयनिश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

दर्शनकार ने इस वाक्य में धर्म की परिभाषा बुद्धिमत्तापूर्वक की है। जिन-जिन कार्यों के करने से संसार मे हमारा सर्वाङ्गीण विकास (चक्रवर्त्ती-राज्य पर्यन्त) हो और जीवनोपरान्त मोक्ष की प्राप्ति हो वे सब धर्म की कोटि में आते हैं। यह बात तो स्पष्ट हो गई की धर्म का पालन करने के लिए सद्व्यवहारपूर्ण लौकिक जीवन से अवकाश लेने की आवश्यकता नहीं है। धर्म का अर्थ कार्यक्षेत्र से पलायन नहीं है। जीवनभर वेद प्रतिपादित कर्तव्यों के करने का नाम ही धर्म है जैसे सत्य बोलना, न्याय, परोपकार और दया के कार्य करना, पुरुषार्थ करना आदि।

एक विचारधारा यह भी प्रचलित हुई थी कि—'अहिंसा परमोधर्मः'—अहिंसा परम धर्म है। बौद्ध तथा जैन मत के मानने वालों तथा महात्मा गांधी जी के वर्तमान अनुयाइयों का तो एकमात्र उद्देश्य ही यह है। परन्तु इस अहिंसा परमो धर्म के चक्र में पड़कर हम विदेशियों के आधीन हो गये। इस विचारधारा से फैली हुई भ्रान्ति का निराकरण आर्यसमाज के सातवें नियम से हो जाता है कि 'सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए' इसका अभिप्राय यही है कि जो धर्म और प्रीति के व्यवहार के साथ-साथ यथायोग्यव्यवहार भी करना चाहिए। अहिंसा भी धर्म का एक अंग है यह तो ठीक है परन्तु जो यह कहते हैं कि अहिंसा ही धर्म है उनको यह पता होना चाहिए कि अहिंसा का अर्थ कायर होना कभी नहीं है। अहिंसा शब्द में 'अ' जिसका अर्थ 'नहीं' बनता है, केवल एक तिहाई है और जिसका अर्थ चोट करना (हिंसा) है वह दो तिहाई है। इसका यही आशय लेना चाहिए कि हम पूर्ण रूप से शक्ति सम्पन्न और पराक्रमी हों जिससे समय पड़ने पर धर्म का पालन कर सकें, जैसे महाभारत में श्रीकृष्ण के उपदेशानुसार अर्जुन ने किया। हाँ बिना अपराध किसी को मन, वचन और कर्म से दुःख (हिंसा) (अ) न देवें। रणक्षेत्र में खड़ा होकर जो अहिंसा को परम धर्म बताता हो उस जैसा धर्म से शून्य-मार्ग और कौन होगा? स्मृति तो कहती है कि शासक दुष्ट शत्रु को पहले मार दे और विचार बाद मे करे, यही उस समय का धर्म है अर्थात् क्षत्रिय न्यायाधीश का कर्त्तव्य है।

धर्म की एक परिभाषा कुछ लोग यह भी करते हैं कि दान देना धर्म है-"दानं धर्मः।" ठीक है, दान करना धर्म का एक अंग है परन्तु दान योग्य पात्र को ही दिया जाना चाहिए। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के चौथे समुल्लास में मनुस्मृति के श्लोकों का अर्थ करते हुए लिखा है कि अज्ञानोदाता और ग्रहीता दोनों ही अधोगति अर्थात् दुःख को प्राप्त होते हैं जैसे कि पत्थर की नौका में बैठकर तैरने वाला डूब जाता है। इस सम्बन्ध मे एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि दान देना ही धर्म है, दान लेना नही। यदि यह मान भी लेवें कि ब्राह्मण का धर्म दान देने के साथ-साथ दान लेना भी है, परन्तु "प्रतिग्रहः प्रत्यवरः। मनुस्मृति॥ हाथ देखकर भविष्य बताना, दान मे धन, अन्न और वस्त्र लेकर दानदाता के ऊपर से तथा कथित ग्रहों के कुप्रभाव को हटाना जैसी अंधविश्वासपूर्ण कुप्रथाएं इन पाखंडो लोगों ने धर्म को परिभाषा की आड में चलाई। धर्मार्थ औषधालय, पुस्तकालय, अनाथआश्रम, गो सेवा-सदन, असहायों को सहायता आदि कितनी हो जगह है जहां पर धर्म से प्राप्त हुए धन का दान दिया जाना धर्म है।

मनु महाराज ने धर्म की सर्वमान्य परिभाषा निम्न प्रकार की है।—

"आचारः परमो धर्मः।"

धर्म की यह परिभाषा बुद्धि संगत है क्योंकि आचार शब्द का अर्थ बड़ा विस्तृत है जिसके अन्दर व्यक्ति विशेष की प्रकृति, गुण, कर्म, स्वभाव और विचारधारा सभी कुछ आ जाता है। आचार शब्द धर्म का पर्यायवाची है। जो कुछ भी वेदविहित कर्म करने और अपनाने के योग्य है वही आचार है, वही धर्म है।

हिन्दु अपने वर्तमान मत को सनातन धर्म कहते हैं क्योंकि वे वैदिक धर्म को तो आर्य समाजियों तक के लिए ही सीमित समझते हैं। सनातन का अर्थ है जो सदा रहने वाला हो, कभी नाश न हो और फिर भी उसमें नूतन, नवीन या नयापन जैसा प्रतीत होता हो। सनातन वही है जो सदा से हो, सदा रहे और कभी नष्ट न हो। वेद और उसका ज्ञान प्रवाह से अनादि है। प्रत्येक सृष्टि के आदि में यह वेद ज्ञान ईश्वर द्वारा प्राणीमात्र की भलाई और मानव पथ-प्रदर्शन के लिए दिया जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि वैदिक धर्म ही सही अर्थों में सनातन है। यदि हम हिन्दुओं के वर्तमान धार्मिक रीती रिवाजों को वेद को कसौटी पर रक्खें तो पता चल जायेगा कि ये सब वेदो पर आधारित नहीं, पुराणों पर आधारित हैं। अतः हिन्दुओं के वर्तमान मत को सनातन नहीं कह सकते, उसे पुराना या पौराणिक कहा जा सकता है जैसा कि पुराण शब्द के अर्थ से स्पष्ट है। सनातन धर्म केवल वेद प्रतिपादित धर्म ही है, अन्य कोई भी मत उसका स्थान नहीं ले सकता।

मनुस्मृति में धर्म के लक्षण निम्न प्रकार से बताये गये हैं।—

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥

वेद, स्मृति, वेदानुकूल आप्तोक्त मनुस्मृत्यादि शास्त्रों, सत्पुरुषों का आचार जो सनातन अर्थात् वेद द्वारा परमेश्वर प्रतिपादित कर्म और अपने आत्मा मे प्रिय अर्थात् जिसको आत्मा चाहता है जैसा कि सत्यभाषण, ये चा

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय की जानकारी हेतुः-

अपराध प्रधान-फिल्में अविलंब रोकी जायें ?

(श्री ब्रजभूषण दुबे एम. एस. सी (अपराध विज्ञान-कलकत्ता)

राजधानी दिल्ली के राष्ट्रिय संग्रहालय से विगत २५ अगस्त की रात में दूसरी मंजिल से करोड़ो रुपयों के मूल्य के सिक्के तथा मुगलकालीन रत्न जड़ित आभूषणों (जिनकी कुल संख्या १२५ बताई गई थी) पर अत्यन्त चातुर्यपूर्ण ढग से हाथ साफ करने वाले ऐतिहासिक सेंध के नामक यादगिरो 'उर्फ' यादगीर ने ५ नवम्बर को अपनी गिरफ्तारी के पश्चात् एक सनसनी-खेज घोषणा करते हुये बताया है 'कि इतनी बड़ी राष्ट्रिय-सम्पत्ति पर हाथ साफ करने की प्रेरणा मुझे 'हाऊ टू स्टील एमिलियन' नामक अपराध-प्रधान-फिल्म देखने से मिली थी।' उपर्युक्त फिल्म में एक संग्रहालय से बहुमूल्य मूर्त्ति की चोरी का चित्रण किया गया था। फिल्म के आधार पर ही यादगिरी ने अपनी योजना निर्धारित की तथा बिना किसी अन्य की सहायता के न केवल अपने लक्ष्य की प्राप्ति की प्रत्युत अपनी चातुर्यपूर्ण कार्यवाही से देश के वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को महिनों चक्र में डाले रखा। देश के गुप्तचर विभाग के शीर्षस्थ अधिकारी भी घटनास्थल को देखकर अपराधी की प्रशंसा किये बिना न रह सके। इतनी महत्त्वपूर्ण चोरी कांच के टुकड़े पर प्राप्त हुये तीन अंगुलियों के निशानों पर ही पकड़ी जा सकी है जिसका श्रेय अगुली-मुद्रण कार्यालय' को ही मिला है। चोरी गई ९९ वस्तुयें सोने की मोहरों को छोड़ कर प्राप्त हो गई है। अपराधी को ४ वर्ष की सजा भी हो चुकी है परन्तु यादगिरी की चेतावनी को दृष्टि बाह्य नहीं किया जा सकता।

कुछ समय पूर्व उत्तरप्रदेश के डकैती कांड के कुछ अभियुक्तों ने भी अपराध-प्रधान चलचित्रों से प्रभावित एवं प्रेरित होने की बात कही थी। देश में बढ़ रही बाल अपराधियों की संख्या अमेरिका के समान उग्ररूप धारण करती जा रही है देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् देश के अपराधियों ने जहां उपराध-प्रधान फिल्मों से नये गुर सीखे हैं वहां देश के नौनिहालों को अपराधी बनाने में भी इस प्रकार की फिल्मों ने बड़ा दुर्योग दिया है।

देश की स्वाधीनता के पश्चात् भारत ने फिल्म निर्माण के क्षेत्र मे आशातीत सफलता प्राप्त की है और विश्व मे दूसरा स्थान प्राप्त कर लिया है। फोटोग्राफी के क्षेत्र में देश आगे बढ़ा है परन्तु यह नितान्त सत्य है कि फिल्म निर्माताओं ने केवल धनोपार्जन को ही अपना लक्ष्य माना है जिसके फल-स्वरूप ऐसी फिल्में अत्यल्प हैं जिन पर हम सम्मान से सिर उठा सकते हैं। अधिकांश फिल्में ओछे-प्रेम तथा मनगढंत कथानकों की सीमा का परिभ्रमण करती हुई परिलक्षित होती हैं। इन फिल्मों के कुप्रसार से ही केश-विन्यास तथा फैशन परस्ती के संक्रामक रोगों को उच्च अट्टालिकाओं से झोपड़ियों तक पांव पसारने के अवसर मिले हैं। बढ़ते हुये चारित्रिक-पतन, उभरते हुये फैशन तथा बढ़ती हुई उद्दंडता के कारण आज देश के नेता और विचारक भी उलझन में पड़े हुये हैं।

निम्नस्तरीय फिल्मों के दुर्भाग्यपूर्ण दुष्प्रभाव के कारण ही समाज का नैतिक ढांचा चरमरा गया है। बन्धु जन फिल्मी अभिनेताओं के पदचिह्नों पर अग्रसर होते हुये यदि चुस्त वस्त्रों में सिमटकर चेहरे को पाउडर-क्रीम से चमकाने लगे हैं तो बहिनें फिल्मी तारिकाओं के समान चुस्त सलवार कुर्त्ती से भी आगे चुस्त 'मिनी स्कर्ट' पर उतर आई हैं। आश्चर्य तो यह है कि संरक्षक इस प्रकार की कुगतियों को सहन करते जा रहे हैं। नैतिक पतन का इससे और खेदजनक प्रमाण क्या हो सकता है? आधुनिक नंगे-फैशन, नवीनतम-केश विन्यास तथा अपराधी प्रवृत्तियों को उभारने में इनका हाथ रहता है। फिल्मों के माध्यम से मनोरंजन के नाम नैतिक मूल्यों की जो क्षति हुई वह कभी पूरी न हो सकेगी। विकास के मद में अपराध-प्रधान-फिल्मों पर प्रतिबंध न लगाया गया तो अल्प समय में ही यह देश चुनौती-पूर्ण अपराधों के दुर्भाग्यपूर्ण बवंडरों से घिर जाएगा।

(शेष पृष्ठ ६ का)

वाद द्रुतगति से हो रहा है। इस दिशा में केरल प्रान्त के निवासी श्री ए० चन्द्रहासन का योगदान अनुपम है।

महर्षि दयानन्द ने आर्य भाषाओं के प्रयोग के सम्बन्ध में कहा था—'मुझे उसी समय पूर्ण शान्ति मिलेगी जब कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक एक ही सम्पर्क भाषा होगी; यह भाषा केवल हिन्दी (आर्य भाषा) ही हो सकती है।" हमारी सरकार की ढुलमुल तथा अस्थिर नीति के फलस्वरूप दक्षिण भारत के कतिपय राज्य राष्ट्रभाषा हिन्दी का व्यापक विरोध कर रहे हैं, यह सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए अहितकर है। रूस, जापान, इजराइल, चीन प्रभृति देशों का यदि उदाहरण लिया जाय तो उनके समस्त राजकाज, ज्ञान विज्ञान का माध्यम तद्देशीय भाषायें ही है। वे राष्ट्र प्रगति की चरन सीमा पर भाषा अपनी निजी भाषा के फलस्वरूप है। राष्ट्र मे भावात्मक एकता को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए अन्य देशों की भांति ही हिन्दी को हर क्षेत्र में सभाहृत करना श्रेयस्कर होगा।

लोकोपयोगी विज्ञान हमारे लिये नया नहीं है। तैत्तिरीय उपनिषद् में लिखा है—"विज्ञानं ब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। विज्ञानेन जातानि जीवन्ति। विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति ॥ तै० उ० ।३।५।

अस्तु, सर्वहितकारी विज्ञान को उच्चस्तरीय सम्मान देने के निमित्त उसे आर्यभाषा हिन्दी मे परिणत करना देश व देशवासियों के लिए अत्यन्त लाभप्रद होगा। हम प्रगति को दिशा मे तभी अग्रसर होंगे, जब हमें मौलिक उद्भावनाओं के प्रकटीकरण की स्वच्छन्दता मिल सके।

(शेष पृष्ठ ७ का)

धर्म के लक्षण अर्थात् इन्हीं से धर्माधर्म का निश्चय होता है। (सत्यार्थ प्रकाश) इसका सीधा सा अर्थ यही है जो धर्म सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करना चाहता हो उसे चाहिए कि वह इन बातों को वेद से जान लेवे। क्योंकि धर्म कर्त्तव्य, कर्त्तव्य का अन्तिम निश्चय वेद से ही होता है। जैसे धर्मं जिज्ञासमाना प्रमाण परम श्रुतिः ॥ मनुस्मृति। के एक श्लोक में धर्म के दस लक्षण बताए है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ॥ म० अ० ६

धर्म का पहला लक्षण है सदा धैर्य रखना, दूसरा क्षमा जो कि निन्दा-स्तुति, हानि लाभ आदि दुःखो मे भी सहनशील रहना, तीसरा मन को सदा अच्छाई में प्रवृत्त कर बुराई में जाने से रोकना, चौथा चोरी-त्याग अर्थात् बिना आज्ञा के या छल, कपट और विश्वासघात से परपदार्थ का ग्रहण न करना, पांचवा राग-द्वेष पक्षपात छोड़ के भीतर और जल मृतिका मार्जन आदि से बाहर की पवित्रता, रखना, छटा-इन्द्रिय निग्रह अर्थात् अधर्माचरणो से रोक के इन्द्रियों को धर्म में ही सदा चलाना, सातवां (धीः) मादक द्रव बुद्धिनाशक अन्य पदार्थ, दुष्टों का संग, आलस्य, प्रमाद आदि को छोड़ के श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन, सत्पुरुषों का संग, योगाभ्यास से बुद्धि को बढ़ाना, आठवा पृथ्वी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त यथार्थज्ञान और उनसे यथायोग्य उपकार लेना, जैसा आत्मा में वैसा मन में वैसा वाणी में जैसा वाणी में वैसा कर्म में बर्तना विद्या है, इसके विपरीत अविद्या है, नवां—जो पदार्थ जैसा हो उसको वैसा ही समझना, वैसा ही बोलना वैसा ही करना भी और दसवां है क्रोधादि दोषों को छोड़कर शान्ति आदि गुणों को ग्रहण करना। इस दस लक्षणयुक्त पक्षपात रहित न्यायाचरण धर्म का सेवन चारों आश्रम वाले करें।

—(सत्यार्थ प्रकाश)

ऋषि दयानन्द यही मानते थे कि "जो पक्षपात रहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है उसी का नाम धर्म है और इसके विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहण रूप कर्म है उसी को अधर्म कहते हैं।" सभी मतावलम्बियों को परमात्मा ऐसी सद्बुद्धि दे कि वे धर्म के ठेकेदारों के चंगुल से छूट जावें और निष्पक्ष भाव से तर्क बुद्धि से यह जानने का प्रयत्न करें कि धर्म का यथार्थ स्वरूप क्या है?

विचार सरणि—

रोम के पोप की लीला

चौ० किशनदास आर्य, ललानियां (जिला गंगानगर) राजस्थान

[रोम के पोप के एक शिष्य की करतूतों की थोडी झांकी]

क्षमा पत्र ने एक डाकू को भी क्षमा प्रदान किया। धर्म मोक्ष और किये हुए पापों के छुटकारे के लिए राजा, रंक, अमीर, गरीब, शिक्षित, अशिक्षित और यहाँ तक कि नेता लोग भी पोपाचार मे फँस कर अपने धन का दुरुपयोग करते हैं। संसार में मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, गिरजाघर, देहरासर, अग्यारी और मठ अरबों रुपयों की लागत से बने हुए हैं। जब से आपस की फूट और अविद्या अधकार से हमारे पवित्र वैदिक धर्म में से स्वार्थी लोगों ने अनेक मतमतान्तर खड़े करके अपना जाल फैलाया है, तभी से अच्छाई तो मानवों से दूर रहने लग गई है। अनेक भयकर युद्ध स्वार्थी लोगों ने धर्म के नाम पर कराये। मां, बहनों, बहुओं और बेटियों की इज्जत सरेआम लुटी गई। छुआछूत ने निरपराधों को कोड़े लगवाये। रोटी बेटी के लिए पापाचार सहे। दुनियाँ में पोपो ने अनेक जाल फैलाये हैं।

यहाँ ईसाई मत में पूज्य पोप के क्षमा पत्र तथा पोप के एजेन्ट मि० टैटजिकाहाल है। पुराने जमाने में रोम के पोप ने आमदनी का जरिया क्षमा पत्र दे कर के रख लिया था। क्षमा-पत्र लेने वाले को अपने सब पाप पोप के सामने बताने पड़ते थे। पोप ईसा और मरियम की मूर्ति के सामने खड़े होकर के एक हुंडी (मुक्ति-पत्र) लिख देता था कि हे खुदा बन्द यीशु मसीह फलां भक्त ने आपके नाम पर जितनी रकम वह देता उसकी सख्या लिखकर कहता इतना धन जमा करा दिया है। जब यह भक्त स्वर्ग में आवे तब तू अपने पिता के स्वर्ग के राज्य में से बाग-बगीचा दास-दासी उत्तमोत्तम खाद्य सामग्री वस्त्राभूषण इष्ट-मित्रों और भाई-बन्धुओं की दावतों का सामान दिला देना। पोप फिर उस हुंडी पर हस्ताक्षर करके दे देता और दिवगत होने पर कब्र में सिरहाने रख छोडने की हिदायत फरमाता। जब तुम्हे स्वर्ग में ले जाने के लिये फरिश्ते आयेंगे और क्षमा-पत्र में लिखे मुताबिक ऐशो-आराम का सारा सामान दिला देंगे। यह था मुक्ति-पत्र का जाल।

पोप ने गमनागन की असुविधाओं को ध्यान में रख करके तथा ज्यादा धन कमाने की अभिलाषा से मुख्य-मुख्य नगरों और ग्रामों में एजेंसियाँ खोल करके अपने प्रतिनिधि बैठा दिये और धनवानों से अधिक धन और गरीबों से कम धन लेकर क्षमा-पत्र दिये जाने लगे। इसी प्रकार तमाम जर्मनी में क्षमा-पत्र बना कर बेचने का ठेका मिस्टर टैंटजिल ने ले रखा था। यह बड़ा धूर्त, छली, कपटी, अत्याचारी, व्यभिचारी, बेईमान और अव्वल दर्जे का बदमाश आदमी था। लेकिन दिखावे के लिये घंटों गिरजा घरों में आँखें बन्द करके प्रार्थना करने का ढोंग रचता था। जब मिस्टर टैटजिल गिरजा घर में जाता तो एक सुन्दर गाड़ी में बैठकर जाता। तीन चार हथियारों से लैस घुडसवार अगरक्षक के रूप में उसके साथ चलते थे और पादरी लोग उसके आस-पास कुछ मशालची साथ रहते और मर्द और बूढ़े बच्चे उसके जुलूम में शामिल हो लेते थे। गिरजाघर में पहुँच कर वह धूर्तराज उपदेश देता—

मेरे धर्म प्रेमी ईसाई भाइयो! ईश्वर की सृष्टि में क्षमा-पत्रों से बहुमूल्य दूसरी वस्तु कोई भी मूल्यवान् नहीं है जिसने क्षमा-पत्र नहीं बनाया उसका जीवन व्यर्थ है। इससे अगने पिछले सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। क्षमा-पत्रों की श्रेष्ठता का बखान करना सूर्य को दीपक दिखाना है। यह क्षमा-पत्र तुम्हारे पूर्वजों को भी नरक से स्वर्ग में पहुँचा सकते हैं। उनका करुणा-क्रन्दन मुझे सुनाई देता है। यह सुन जिज्ञासु क्षमा-पत्र बनाने लग जाते और इस प्रकार भोले लोगों से धन ऐंठना उस धूर्तराज के बाएं हाथ का काम था।

एक दिन एक डाकू अमीर का रूप धारण करके मि० टैंटजिल के पास आया और तीस रुपये में अगला पिछला सब पाप क्षमा कराकर क्षमा-पत्र ले गया। जब मिस्टर टैंटजिल एक नगर से दूसरे नगर जा रहा था तब सारा धन उस डाकू ने लूट लिया।

मिस्टर टैंटजिल ने न्यायाधीश की अदालत में केस चालू कर दिया। निश्चित तिथि पर वह निडर डाकू हाजिर हो गया और क्षमा-पत्र पेश करके बोला कि अगर मि० टैंटजिल का लिखा क्षमा-पत्र सत्य है तो मैं क्षमा-पत्र लिखने के कारण निरपराध हूँ यदि आप मेरा अपराध क्षमा योग्य नहीं समझते हैं तो टैंटजिल के दिये सभी क्षमा-पत्र झूठे हैं। इन पत्रों द्वारा जनता से लिया गया सारा धन लोगों को वापिस दिलवा कर इस धूर्त को जेल में ठूंसना चाहिये। न्यायाधीश ने टैंटजिल से क्षमा-पत्रों के बारे में पूछा तो उस धूर्त ने कहा मेरे द्वारा लिखे गये क्षमा-पत्र कभी झूठे नहीं हो सकते। तब न्यायाधीश ने कहा कि यह डाकू निर्दोष है क्योंकि इसके अपराध तो आपने क्षमा कर दिये हैं यह कह कर न्यायाधीश ने उस डाकू को छोड़ दिया। मिस्टर टैटजिल के समय में ही जर्मनी में महात्मा मार्टिन लूथर हुए थे उन्होंने इन पोपाचार का खूब डटकर विरोध किया था और ईसाई मत में कुछ सुधार किया उस सुधारे ईसाई पंथ को प्रोटेस्टेन्ट (लूथरन) कहते हैं। संसार में पोपाचार ने मानो जनता पर अपना जाल फैला रखा है।●

जीवन में स्वास्थ्य

श्री अरुण कुमार पाण्डेय

मानव जीवन मे स्वास्थ्य का एक बहुत बड़ा स्थान हैं। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए एक सुन्दर स्वास्थ्य की आवश्यकता होती है। मनुष्य चाहे कितना ही धनवान् हो, सर्वगुण सम्पन्न हो यदि वह रोगी है तो उसकी सारी विशेषताए निरर्थक हैं। आज हम इस नाम मात्र बौद्धिक युग में स्वास्थ्य की उपेक्षा कर जाते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि मनुष्य शीघ्र ही रुग्णावस्था को प्राप्त हो जाता है और कुछ समय के पश्चात् उसकी मृत्यु हो जाती है।

हमारे यहाँ एक कहावत ऐसी है कि जब बालक बारह वर्ष से ऊपर का हो जाता है तो वह अपने स्वास्थ्य की चिन्ता स्वय करने लगता है। आज हमारे दुर्बल होने का प्रधान कारण यह है कि हम वास्तविकता को त्यागकर कृत्रिमता की ओर बढते जा रहे हैं। मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए भोजन, जल व वायु की आवश्यकता पडती है। हमारा भोजन पौष्टिक तथा स्वादिष्ट होना चाहिए। यदि कोई भोजन कितना ही अच्छी रीति से क्यों न बनाया गया हो यदि वह स्वादिष्ट नहीं है तो लाभप्रद नहीं है।

स्वास्थ्य के लिए स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक अच्छे स्वास्थ्य के लिए व्यायाम करना भी नितान्त आवश्यक है। व्यायाम करने से फेफड़ों में रक्त की गति तीव्र हो जाती है और श्वास तेजी से चलने लगता है जिससे अशुद्ध वायु अधिक से अधिक मात्रा में शरीर से बाहर निकल जाती है व्यायाम करने से मांस पेशियाँ पुष्ट होती हैं। और शरीर स्वस्थ तथा सुडौल बनता है। टहलना भी एक प्रकार का व्यायाम ही है। व्यायाम और शुद्ध वायु का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि व्यायाम अशुद्ध व दूषित वायु मे किया जाता है तो उसका प्रभाव हानिकारक ही होता है।

स्वास्थ्य के लिए सबसे आवश्यक बात संयम शीलता है। प्रत्येक मनुष्य को संयमी होना चाहिए। यदि वह सयमी नही है तो चाहे व कितना ही पौष्टिक भोजन करे, नित्य व्यायाम करे उसे कोई लाभ नहीं होगा। यदि मनुष्य किसी भी प्रकार का व्यसन करता है तो उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। हमारे विचार भी स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव डालते हैं। यदि दूषित व अश्लील साहित्य का अध्ययन करते हैं तो उसका प्रभाव हमारे मस्तिष्क पर पड़ता है। हमें कदापि ऐसे साहित्य का अध्ययन नहीं करना चाहिए। सदैव उत्तम पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए इससे हमारे विचार और मन पवित्र रहते हैं। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। स्वस्थ मन के लिए स्वस्थ शरीर की और स्वस्थ शरीर के लिए स्वस्थ मन की आवश्यकता है। इस प्रकार अपने स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए हमें अपने शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की शुद्धि रखनी होगी।●

विचार-विमर्श:—

परमात्मा के विचित्र नाम

प० हरिश्चन्द्र विद्यार्थी—वैदिक मिशनरी

आर्ष शास्त्रों में 'ओ३म्' को परमात्मा का निजी नाम कहा गया है इस की व्युत्पत्ति और व्याख्या व्याकरण के नियमों के अनुसार की जाती है। इसके अतिरिक्त परमात्मा के असंख्य नाम हैं—जो उसके गुणों, कर्मों और स्वभाव का वर्णन करते हैं और सार्थक हैं। संस्कृत शब्दों की परिपाटी के अनुकूल ही इन सबकी बनावट है।

प्राय: हिन्दू इन शब्दों को प्रयोग करते हैं। संस्कृत जन्य भारतीय भाषाओं में भी इन्हीं शब्दों का प्राय: तत्सम रूप में और कभी-कभी तद्भव रूप में भी प्रयोग होता है।

मगर परमात्मा वाची कुछ शब्द कुछ भाषाओं में ऐसे भी हैं, जो प्रचलित हैं, प्राय: प्रयोग में भी आते हैं, परन्तु उनका इतिहास और बनावट विचित्र है।

ऐसा ही एक शब्द यहूदी भाषा में है। इसे जिहोवा Jehovah या Joweh कहते हैं। इस शब्द का इतिहास बहुत ही अद्भुत है। प्राचीन यहूदी भाषा में स्वर न होते थे। भाषा केवल व्यंजन अक्षरों में लिखी जाती थी। मगर किसी शब्द का भी उच्चारण स्वरों के बिना किया नहीं जा सकता। इसलिये शब्द लिखा तो जाता था केवल व्यजनों में Jhvh या Jhwh और उच्चारण जबानी याद रखा जाता था। समय गुजरने के साथ यह भाव प्रबल हो गया कि परमात्मा का पवित्र नाम केवल मन में लेना चाहिये। बोलने से इसकी पवित्रता में दोष आ जाता है। इसका परिणाम यह हुआ कि इसका असल उच्चारण लुप्त हो गया। लोग जानते ही न थे इसे बोला कैसे जाय। इसका समाधान यह निकाला गया कि बाईबिल में जब यह शब्द आया और यह शब्द ६००० से अधिक बार प्रयुक्त हुआ है—तो इसकी लिखित तो इन्हीं चार व्यंजनों में रही, परन्तु उच्चारण के स्थान पर लोग दूसरे नाम एलोहेम Elohim को बोलने लगे। इस प्रकार लिखा कुछ जाता रहा और बोला कुछ जाता रहा।

फिर समय बदला तो हीब्र्यू या यहूदी भाषा में स्वर लगाए जाने लगे। पहले इनका रूप केवल बिन्दु का था। सभी स्वर एक बिन्दु से प्रगट किये जाते थे। बाद में इन बिन्दुओं को स्वरों के अक्षरों का रूप दिया गया। सारी बाईबिल में स्वर लगाए गए। परिणाम यह हुआ कि बाईबिल के हर शब्द के लिये पाठ भेद हो गया। इसीलिये बाईबिल में लगभग २ लाख पाठ भेद हैं। केवल नई बाईबिल में ही १३६००० पाठ भेद हैं।

परमात्मा वाची Jhvh में भी स्वर लगाने की चेष्टा हुई। परन्तु इसकी आवाज का ज्ञान लुप्त हो चुका था। इसलिए इसके स्थानापन्न शब्द Elohim एलोहिम के स्वर इसमें जोड़ दिये गये। इसीलिये इसके इस समय दो रूप प्रचलित हैं—एक जेहोवा और दूसरा जाहोवे। यह शब्द न सार्थक है, न इस की बनावट से इसकी व्युत्पत्ति का पता चलता है। पूर्णतया रूढ़ि आवाज है जो परमात्मा वाची अर्थ देने लगा है।

एक और बात भी याद रखने योग्य है, यहूदी भाषा में एलोहेम Elohim शब्द बहुवचन है। इसका अर्थ परमात्मा नहीं देवगण है। परन्तु दोनों शब्दों की मिलावट से अब परमात्मा के अर्थों में प्रयुक्त होता है।

अल्ला

अरबी भाषा का अल्ला शब्द भी इसी प्रकार का है। हजरत मुहमद के समय मक्का में मन्दिर में ३६० मूर्तियों की पूजा होती थी। और मन्दिर में ये सभी मौजूद थीं। इनमें से सबसे पवित्र माना जाने वाला देवता "अल्ला" था। परमात्मा वाची शब्द यह मुहमद के समय भी न था। जब मुहमद जी ने इस मन्दिर पर अधिकार कर लिया तो इसके अतिरिक्त सभी मूर्तियों को मन्दिर से निकाल दिया गया। यह 'अल्ला' नाम का पत्थर का शिवलिंग आकार का देवता इस समय तक मौजूद है।

परमात्मा की एकता पर हजरत मुहमद ने बहुत बल दिया। इसका फल यह हुआ कि यह शब्द अल्ला ही परमात्मा वाची बन गया और अब इसी रूप में प्रयोग में आता है।

आबासान के पूर्वजों ने एक बार मक्का पर अधिकार कर लिया था। वे लोग इस 'अल्ला' को उठा कर ले गया और मक्का का मन्दिर बीस वर्ष तक इसके बिना ही रहा।

२० वर्ष के पश्चात् मिस्र वालो—हाशम की संतान ने इसे पुन: मक्का में लगाया। एक बार वहाबयो ने इसे तोड़ भी दिया था। अब इसके दोनों टुकड़ों को चांदी के पतरे से जोड़ कर एक छोटे से कमरा (हुजरा) के एक कोने में लगा रखा है। इसी अल्ला नामी ब्रह्मा से परमात्मा भी अल्ला बन गया है।

वाहिगुरु

इसी प्रकार का एक शब्द वाहिगुरु है। गुरुओं के समय यह शब्द परमात्मा वाची न था। सिखों के ग्रन्थ साहिब में यह शब्द अब भी नहीं है। जपुजी (गुरु नानक कृत), सुखमनी (गुरु अर्जुनदेव कृत) और जाप (गुरु गोबिन्दसिंह कृत) तथा अन्य गुरु वाणियों में भी इस शब्द का अभाव है।

पहले पहल यह शब्द भाटों ने प्रयोग किया भाट लोग गुरुओं के सामने कीर्तन किया करते थे। इनमें मुसलमान अधिक थे। इन लोगों ने गुरु की प्रशंसा में—वाह वाह गुरु या वाहिद गुरु के अर्थों में इसका प्रयोग किया। यह कीर्तन प्रतिदिन होते थे। अब तक ग्रन्थ साहिब के सामने इस प्रकार के कीर्तन का रिवाज है।

उन्हीं भाटों से यह शब्द साधारण जनता में प्रयोग में आया। और जब गुरु ही परमात्मा का रूप बल्कि उससे भी बढ़ कर माना जाने लगा तो यह शब्द भी परमात्मा वाची हो गया।

जन्मसाखी में इस शब्द को व (वासुदेव), ह (हर या हरि), ग (गोबिंद) और र (राम) से बनाया गया है। मगर यह बाद का विचार है। ऐतिहासिक रूप से इस शब्द के प्रयोग का और आरम्भ का श्रेय तो भाटों को है।

आज यह शब्द सिखों और नानक पंथियों में इस प्रकार प्रचलित है कि किसी को कभी विचार भी नहीं आता कि शब्द के असल अर्थ या इतिहास क्या है। आज प्राय: लोग इसका जाप करते हैं।

[विशेष – इन उपयुक्त नामों के मूल संस्कृत में मिलते हैं। जो लेखक इस सम्बन्ध में लिखना चाहेंगे, उनके विचारों का हम स्वागत करेंगे। सहसम्पादक]

ईश्वर में प्रणिधान करो

प्रेषता—प्रशस्य मित्र शास्त्री शास्त्री नगर २३/३ कानपुर-५

ए मानव ! तू व्यर्थ खड़ा क्या यहाँ तमाशा देख रहा है,
ईश्वर सदा सखा है तेरा क्यों उद्यम से भाग रहा है।
मानवता का मान करो तुम क्रान्ति-शङ्ख का दान करो,
जनता का उपकार करो परमेश्वर में प्राणिध करो ॥१॥
दूर किया पाखण्ड विश्व से जिसने सच्चा ज्ञान दिया है,
वेदों का करके प्रकाश अज्ञान अन्धेरा नष्ट किया है।
दयानन्द की कीर्त्ति-कौमुदी का जग में विस्तार करो,
निराकार ईश्वर को जानो उसमें ही प्रणिधान करो ॥२॥
भव-वापी में जो रहकर भी कमलपत्र सम ही रहता है,
ऐहिक माया छोड़कर वही सच्चा सुख स्वत: प्राप्त करता है।
परम पिता के तुम सुपुत्र हो उसका ही अब ध्यान करो,
हो नियुक्त विषयों के बन्धन से उसमें प्रणिधान करो ॥३॥
प्रतिमा ही भगवान् नहीं वह प्रभु तो कण कण में रहता है,
मूर्ख मनुज मन्दिर को दौड़े पर विद्वान् सदा रमता है।
पुण्य कमाओ तुम अनन्त दुष्कर्म पाप से सदा डरो,
निराकार सच्चिदानन्द उस ईश्वर में प्रणिधान करो ॥४॥

(शेष पृष्ठ २ का)

विषय का अधिक विचार न करके, तुम स्वयं अपने कर्तव्यों का पालन करो। यदि कभी किसी पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता हो, तो वेदों का स्वाध्याय करो, आर्ष-साहित्य का पाठ करो, अपने अन्तरात्मा से भी पथ-प्रदर्शन प्राप्त करो। चिन्ता न करो। अवसर आने पर तुम्हारा अनुभव भी तुम्हारे लिये गुरु का काम करेगा। प्रत्येक मनुष्य का अन्तरात्मा पाप और पुण्य के स्वरूप को ठीक-ठीक जानने-पहिचानने वाला है। अपने-अपने अन्तरात्मा की आवाज को सुनो। सुनने का अभ्यास करो। सुनकर उसे अन-सुनी न करो।

पापी लोग ही मृत्यु से डरने वाले होते हैं। धर्मात्मा तो साफ कहते हैं:—

जिस मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कब मरि हों कब याद हों पूर्ण परमानन्द ॥
कोई शुभ-कर्मी ललकार रहा है—
मौत यह मेरी नहीं, मेरी कजा की मौत है।
क्यों डरूँ अब मर के, दोबारा नहीं मरना मुझे ॥

पुस्तक समालोचना—

१—महर्षि दयानन्द (जीवन कथा)। लेखक—स्वामी वेदानन्द जी वेद-वागीश। प्रकाशक—हरयाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्जर (रोहतक)। पृष्ठ संख्या—१७४ (ऋषि दयानन्द के चित्र सहित) मुख्य पृष्ठ भी चित्र सहित। मूल्य २ २५ (प्रथम संस्करण)। लेखक महोदय वेदवेदाङ्ग के उच्च कोटि के विद्वान् हैं। इससे पूर्व भी पुस्तकों की रचना करते रहे हैं। जहाँ पुस्तक का बाह्य आकार मनोहर है वहाँ पुस्तक के प्रतिपाद्य विषय को अनुठे और नवीन वृत्त से प्राञ्जल भाषा में परिपुष्ट किया गया है। इस जीवन-चरित्र में पाठक अनेक नवीन घटनाओ का वर्णन पढ़ेंगे। भाषा को संस्कृत के निकट लाया गया है। संयुक्त अक्षरो का संयोजन भी नवीन ढंग से मिलता है। पुस्तक सब प्रकार से उपादेय है। हम लेखक महानुभाव को इस उत्तम कृति पर बधाई देते हैं। प्रत्येक आर्य को इसे पढ़ना और मनन करना चाहिये—यह हमारा निवेदन है।

२—गीता कुसुमाञ्जलि। संकलन कर्त्ता—श्री योगेन्द्र पुरुषार्थी। प्रकाशक-श्री जगदीश आर्य सरपंच (जि० महेन्द्रगढ़)। प्राप्ति स्थान—हरयाणा साहित्य संस्थान गुरुकुल झज्जर (जि० रोहतक)। पृष्ठ संख्या ६४,मूल्य ०० ७५ (प्रथम बार)। संकलनकर्त्ता स्वयं विद्वान् तरुण कवि हैं। अनेक प्रतिष्ठित आर्य विद्वानो का उत्तम कविताओ को (गीतिका रूप में) संकलन है। अपनी रचित गीतकाएँ भी दी हैं। भिन्न-भिन्न विषयो का समावेश कुसुमवत् संचय किया गया है। संस्कृत गीतिकाओ के भावार्थ भी दिये गये हैं। आशा है काव्य प्रेमी आर्य इस पुस्तक से पूरा लाभ उठायेंगे।

३ दैनन्दिनी (दिनचर्या)। संग्रह कर्त्ता—श्री सत्यव्रत अग्निवेश। प्रकाशक-हरयाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्जर (रोहतक)। पृष्ठ संख्या १२० मूल्य १ ५०। इस पुस्तक में प्रात काल जागरण से लेकर रात्रि शयनकाल तक एक आर्य को अपनी दिनचर्या कैसे रखनी चाहिये। इस सम्बन्ध में नित्य कर्म का उत्तम संग्रह किया गया है। वेद मन्त्रार्थों के साथ भाषा प्रार्थनाओ को भी पुस्तक मे दिया गया है। यद्यपि पुस्तक पर "सत्यव्रत अग्निवेश" नाम से पूर्व 'लेखक' शब्द लिखा है, परन्तु अच्छा होता, लेखक के स्थान पर "संग्रहकर्त्ता" दिया जाता। इतना होने पर भी पुस्तक पढ़ने और मनन करने योग्य है।

४—हरयाणा के वीर यौधेय (प्रथम खंड)। लेखक—आर्य जगत् के मान्य इतिहास वेत्ता तपस्वी विद्वान् आचार्य भगवान्देव जी हैं। प्रकाशक—हरयाणा साहित्य संस्थान गुरुकुल झज्जर (जि० रोहतक)। पृष्ठ संख्या १८० (सजिल्द) प्रथम संस्करण मूल्य ६ ५०। माननीय आचार्य जी भारत के उन इने गिने इतिहास गवेषण विद्वानो में उच्च स्थान रखते हैं, इन्होने इस पुस्तक को प्राचीन काल की मुद्राओ, शिला लेखो और प्रस्तर मूर्त्तियो के चित्रो से सुभूषित किया है। इन मुद्राओ आदि के ब्लाक बनवा कर चित्र देने मे कितना व्यय होता है, इसको सामान्य जन नही जानते। इतिहास खोजी ही इसका मूल्य आँक सकते हैं। हरयाणा के वीर योद्धाओ के इतिहास का यह प्रथम खण्ड ही है। इसमें सृष्टि उत्पत्ति आदि का इतिहास भी दिया है। भारत के इतिहास लेखको ने वीर यौधेयों के वर्णन पर आँखें बन्द रखी थीं। श्री आचार्य जी की इस गवेषण पूर्ण कृति में भारतवर्ष के इतिहास परिचय को दिशा में एक नया मोड दिया है। इससे हरयाणावासी ही नहीं, समस्त भारत के इतिहास प्रेमी लाभ उठा सकते हैं। जहाँ यह प्रत्येक सजग मनुष्य को रखनी चाहिये, वहाँ भारत के सभी पुस्तकालयो में भी संग्रह करने योग्य है। इतिहास की इस एक कडी से आगे यौधेयों के इतिहासो पर पूरा प्रकाश डाला जावेगा। तब ही इस पुस्तक की उपयोगिता का पूरा पता मिल सकेगा।

५—धर्म शिक्षा तीसरा भाग। लेखक—प० सत्यव्रत जी शास्त्री। प्रकाशक—श्री मुख्याधिष्ठाता जी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर। पृष्ठ संख्या १८४ (२य संस्करण) मूल्य १ ७५। पुस्तक के लेखक आर्यसमाज के अग्रगण्य शिक्षा विशेषज्ञो में उच्च स्थान रखते हैं। आपने अपने जीवन का बडा भाग संस्कृत विद्या के पठन-पाठन में लगाया है। इस पुस्तक में लेखक महानुभाव ने वैदिक कर्मकाण्ड सम्बन्धी प्राय सभी आवश्यक बातों पर उत्तम प्रकाश डाला है। लेखक के [illegible] के पढ़ने से उनके विस्तृत स्वाध्याय और योग्यता का परिचय मिलता है। पुस्तक के अन्तिम भाग में सत्यार्थप्रकाश में दिये स्वमन्तव्यामन्तव्य भाग को आर्य जगत् के यशस्वी प्रकाण्ड विद्वान् माननीय डा० हरिदत्त जी शास्त्री एम० ए० पी० एच० डी० अनेक विषयों के आचार्य और तीर्थ द्वारा रचित संस्कृत छन्दोबद्ध रचना से अलंकृत किया गया है। इससे पुस्तक की उपादेयता और बढ गई है। पुस्तक से न केवल विद्यार्थी हो, अपितु कर्मकाण्ड मे रुचि रखने वाले सभी सज्जन लाभ उठा सकते हैं।

६—आर्य प्रेमी मासिक का महर्षि श्रद्धाञ्जलि अंक। संग्रहकर्त्ता तथा इस अंक के सम्पादक आर्य जगत् के ख्यातनामा विद्वान् डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० पी० एच० डी० अध्यक्ष हिन्दी विभाग गवर्नमेंट कालिज पाली (राजस्थान) हैं। मासिक पत्रिका आर्य प्रेमी का फरवरी मार्च ६९ का यह विशेषांक है। प्रकाशक-वैद्य मोहनलाल सुपुत्र हकीम बीरूमल आर्य प्रेमी, नला बाजार अजमेर। पृष्ठ संख्या १०० (प्रथम संस्करण) मूल्य ०० ५० पैसे। माननीय डाक्टर भारतीय जी ने महर्षि दयानन्द जी के प्रति अनेक भारत प्रसिद्ध विद्वानो और नेताओ ने साम्प्रदायिक भेद-भाव के बिना समयानुसार जो श्रद्धाञ्जलि भेंट की हैं, उनमे से अनेक श्रद्धाञ्जलियो का इस अंक में समावेश कर दिया गया है। इतिहास के महत्त्व को जानने वाले ही इस उत्तम कृति का मूल्य समझते हैं। यह अंक केवल पठनीय ही नहीं, अपितु अपने निजी अथवा सार्वजनिक पुस्तकालयो में भी सुरक्षित रखने के योग्य है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आर्य विद्वान् स्पष्टीकरण करें।

सोमालदत्तचिष्ठाता दयानन्द मठ रोहतक

क्या शव पर फूल चढाना और हाथ जोडना क्या पार्थिव (जड) पूजा नहीं है? आर्यसमाज मूर्त्ति पूजा का इसलिये निषेध करता है कि वह पार्थिव (जड) पूजा हैं जड वही हैं जो अनात्मा हैं अर्थात् आत्मा नहीं है। शव इसी आधार पर जड वस्तु हैं। मैंने कई बार देखा है कि आर्यसमाज के कई स्वर्गीय महात्माओ के शव पर कई घडी फूल तथा मालायें चढायी गई और अनेको आर्य भाई बहनो को हाथ जोडते और नतमस्तक होते देखा। जड वस्तु से चैतन्य (आत्मा) के तुल्य व्यवहार करना अविद्या हैं। मेरी समझ मे नही आता कि इस प्रकार का कार्य कैसे वैदिक सिद्धान्त ठहराया जा सकता है? ये महात्मा नि संदेह आर्यसमाज के लिये गौरवमय व्यक्ति थे। उन के जीवन कार्य को जितना अपनाया जाय उन को स्मृति में उन के कार्य को जीवित रखने तथा आगे बढाने के लिये जो कदम उठाया जाय वही स्वर्गीय आत्मा के प्रति आभार प्रकट करना है। रही बात शव के संस्कार की तो संस्कारविधि के अनुसार उसका दाहकर्म करना ही उस का यथा योग्यसंस्कार है। इसके विपरीत शव पर फूल चढ़ाना और हाथ जोडना जड पूजा है या नहीं है? यह आर्य विद्वानो को स्पष्ट करना चाहिये। प्रारम्भ मे चाहे इस प्रकार की भूल या अशुद्ध कार्य भयंकर रूप धारण न किये हुये हो परन्तु धीरे २ मान्यता का रूप धारण कर लेता है और समाज से इस को हटाने के लिये ऋषि दयानन्द जैसे अनेक सुधारको को घोर परिश्रम करना पडता है। अत आर्य विद्वानों की सेवा मे नम्र प्रार्थना है। कि समय पर ही आर्य जनता को वैदिक मान्यताओ से भटकने से बचायें।

आर्यसमाज पुनपुन (पटना) का

वार्षिकोत्सव बडे समारोह से सम्पन्न हुआ। देश के बडे-बडे विद्वान्, साधु, महात्मा एवं भजनोपदेशक पधारे। इसी अवसर पर कई सम्मेलन भी सम्पन्न हुए।

—[illegible] प्र० मन्त्री

नये बालकों का प्रवेश

[illegible] गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के विद्यालय-विभाग में नये बालकों का प्रवेश वार्षिकोत्सव पर १० से १३ अप्रैल १९६९ तक होगा। गुरुकुल की उपाधियाँ सरकार और विश्वविद्यालयो द्वारा स्वीकृत हैं। आश्रम-प्रणाली, शुद्ध जलवायु, उत्तम आचार-व्यवहार इस संस्था की मुख्य विशेषताएं हैं। प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र तथा नियमावली आचार्य गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय जिला सहारनपुर से मगाए जा सकते हैं।

—आचार्य गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,

आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियों के लिये २५) ; ५० प्रतियों के लिये १५)

२५ प्रतियों के लिए ८) ७५ , १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैकड़ा
वर्णिकपर्यों की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित	१-५० "
मुक्ति के साधन १-०० पं० लेखराम जीवन चरित	१-५० "
वैदिक सत्संग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रेजी	२-०० "
जीवन ज्योति ले० प० चमूपति जी एम. ए	१-०० "
सोम सरोवर " " "	१-०० "
The Principles of Aryasamaj " "	१-५० "
Glimpses of Swami Daya Nand " "	१-०० "
Subject Matter of the Vedas	१-०० "
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० "

अपना आदेश पत्र लिखकर शीघ्र मंगवाइये। थोड़ी प्रतियाँ शेष हैं।

प्राप्तिस्थान—"आर्य मर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

आर्यसमाज रक्सौल (चम्पारण)

४४ वाँ वार्षिकोत्सव ६, ७, ८ अप्रैल ६९ के समारोह से मनाया जायेगा। इस अवसर पर आर्य जगत् के ख्याति प्राप्त विद्वान् उपदेशक, भजनोपदेशक और सन्यासी गण पधार रहे हैं। —रामचन्द्र आर्य मन्त्री

आर्यसमाज नयाबास (देहली)

३० मार्च ६९ से आर्यसमाज मन्दिर में कविराज श्री रघुनन्दनसिंह जी निर्मल सत्यार्थप्रकाश की कथा और व्याख्या कर रहे हैं। आधा घण्टा पूर्व भजनोपदेश भी होते हैं। कथा के पश्चात् १५ मिनट का समय शंका निवारण के लिये भी रखा हुआ है। —नन्दकिशोर आर्य मन्त्री

सामवेदी आर्ष पाठशाला

ऋषि ग्राम जीवापुर (टंकारा) में वैशाख पूर्णिमा पर सामवेदी आर्ष पाठशाला का उद्घाटन पण्डित देवी शंकर जी शास्त्री सामसकस्व (पकवदि) के सामगान द्वारा होगा। पाठशाला का सुन्दर सदन परिव्राजकाचार्य वेद स्वामी मेधार्थी एम० ए० भाषवाचस्पति ने अपने अथक आभास से बनवा दिया है। —प्रेम जी पटेल सरपंच

आर्यसमाज सान्ताक्रुज (बम्बई)

वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ। प्रधान—श्री अर्जुन भाई कुंवर जी पटेल, मन्त्री—श्री नवीनचन्द्र जी च० पाल, कोषाध्यक्ष—श्री इन्द्रलाल जी मलहोत्रा। इनके अतिरिक्त ८ नये अन्तरङ्ग सदस्य चुने गये। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज कालका जी (गुरुकुल विभाग) नई दिल्ली

चिराग दिल्ली में श्री प्रि० कृष्णचन्द्र जी एम० ए० का भाषण हुआ। आर्यसमाज स्थापना दिवस के समय उक्त श्री प्रिंसिपल जी तथा प० रामनारायण जी एम० ए० के भाषण हुए और परिवार प्रचार योजना में भी उक्त प्रिंसिपल जी का भाषण हुआ। —निरञ्जनदेव मलहोत्रा मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सत्यार्थ प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

त्वं नो गोपा पथिकृद्विचक्षण ॥
ऋग्वेद २-२३-६

हम लोगों के रक्षा करने, सकल सुकृत् मार्ग का प्रचार करने का विविध सत्योपदेश करने वाले आप हैं।
—ऋषि दयानन्द

वर्ष १
अंक १९

१ वैशाख वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १३ अप्रैल १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
" " विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथ पृथिव्यादीनां रक्षको धारकश्च कोऽस्तीत्युपदिश्यते।

अब पृथिवी आदि पदार्थों का रचने और धारण करने वाला कौन है, इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है।

अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे।
पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥ ऋ० १ २२ १६ ॥

पदार्थ —(अतः) अस्मात्कारणात् (देवा) विद्वांसोऽन्नादयो वा, (अवन्तु) अवगमयन्तु प्रापयन्ति वा (नः) अस्मान् (यतः) प्रसादनादि कारणात् (विष्णु) वेवेष्टि व्याप्नोति चराचर जगत् स परमेश्वरः (विचक्रमे) विविधतया रचितवान् (पृथिव्याः पृथिवीमारभ्य (सप्त) पृथिवी-जलाग्निवायुविराट् परमाणुप्रकृत्याख्यैः सप्तभि पदार्थैः (धामभि)) दधाति सर्वाणि वस्तूनि येषु तैः सह ॥

अन्वय यतोऽयं विष्णुर्जगदीश्वर पृथिवीमारभ्य प्रकृतिपर्यन्तैः सप्तभिर्धामभिः सह वर्त्तमाँल्लोकान् विचक्रमे रचितवान् त एतेभ्यो देवा विद्वांसो नोऽस्मानस्मैतद्विद्यामवगमयन्तु ॥

भावार्थ —नैव विदुषामुपदेशेन विना [illegible] यथावत्सृष्टि-विद्या [illegible] नैवेश्वरोत्पादनेन विना [illegible] महत्परिमाणेन [illegible] विना मनुष्या [illegible] [illegible] ॥ [illegible] 'पृथिव्यास्त-[illegible]' सहायेन देवा [illegible]' इति [illegible] [illegible] ॥

भाषार्थ —(यत) जिस सदा वर्त्तमान [illegible] से (विष्णु) चराचर ससार में व्यापक जगदीश्वर (पृथिव्या) (पृथिवी को लेकर सप्त) सात अर्थात् पृथिव्या जल, अग्नि, वायु, विराट्, परमाणु और प्रकृति पर्य्यन्त लोको को (धामभि) जो सब पदार्थों को धारण करते हैं उनके साथ (विचक्रमे) रचता है (अत) उसीसे देवा) विद्वान् लोग (न) हम लोगो को (अवन्तु) उक्त लोको की विद्या को समझाते वा प्राप्त कराते हुए हमारी रक्षा करते रहें ॥

भावार्थ —विद्वानो के उपदेश के बिना किसी मनुष्यको यथावत् सृष्टि विद्या का बोध कभी नही हो सकता ईश्वर के उत्पादन करने के बिना किसी पदार्थ का साकार होना नही बन सकता और इन दोनो कारणो के जाने बिना कोई मनुष्य पदार्थों से उपकार लेने को समर्थ नही हो सकता। और जो यूरोप देश वाले विलसन साहिब ने 'पृथिवी उस खण्ड के अवयव से तथा विष्णु की सहायता से देवता हमारी रक्षा करें' यह इस मन्त्र का अर्थ अपनी झूठी कल्पना से वर्णन किया है, सो समझना चाहिये ॥

—(महर्षिदयानन्द-भाष्य)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की आवश्यक सूचनाएँ

१—आर्यसमाजों एवं आर्य शिक्षण संस्थाओ से निवेदन

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब से सम्बन्धित समस्त शिक्षण संस्थाओं एवं आर्य समाजो से निवेदन है कि जब तक सभा का मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन, जालन्धर खुल नही जाता तब तक सभा सम्बन्धी समस्त पत्र व्यवहार सभा के उपकार्यालय १५ हनुमान् रोड नयी दिल्ली से ही करने की कृपा करें।

प्रचार तथा उत्सवो का प्रबन्ध अथवा शिक्षण संस्थाओं का संचालन सम्बन्धी कार्य नयी दिल्ली कार्यालय द्वारा ही सम्पन्न होगा। सभा की प्रबन्धकर्त्री समिति के अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करने के लिये निम्न टेलीफोन नम्बर अंकित कर लें।

१—सभा उपकार्यालय, १५ हनुमान् रोड, नयी दिल्ली
फोन न० ४८१५०

२—सभा कार्यालय के प्रबन्धक श्री दीवानचन्द जी
फोन नं० ५८१४२५
निवास ३३ बी–पूसा रोड, नयी दिल्ली।

३—सभा वित्त अध्यक्ष—श्री नारायणदास जी कपूर
कार्यालय प्रातः १० से ५ बजे तक फोन न० ४३८२६
निवास—सायं ६ से प्रात १० बजे तक फोन नं० ५६६२१०

२—सभा के उपदेशक तथा भजनोपदेशक महानुभावों से निवेदन

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के दोनो पक्षों के उपदेशको तथा भजनोपदेशको से निवेदन है कि वे अपना प्रचार कार्य, १५ हनुमान् रोड नयी दिल्ली से महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज अथवा श्री पण्डित शान्ति प्रकाश जी द्वारा प्राप्त करने की कृपा करें। अपने प्रचार कार्य की मासिक रिपोर्ट तथा मार्गव्यय बिल (आय-व्यय सहित) भी दिल्ली उपकार्यालय में ही भेजें।

(ह०) दीवान चन्द सभा कार्यालय प्रबन्धक

ग्राहकों को आवश्यक सूचना

सौर वर्ष के आरम्भ के उपलक्ष में अगला अंक बन्द होकर २७ अप्रैल का अंक प्रकाशित होगा। सब सज्जन अंकित कर लेवें।

—व्यवस्थापक

महिला समाज का एक साप्ताहिक सत्सग—

दान की महिमा

(श्रीमती इन्दिरा देवी पुत्री श्री सुखदेव नारायण जी वकील तुर्तीपार, बलिया)

हमारे पिता आर्यसमाजी हैं और मैं यह कहू कि वे नैष्ठिक और सच्चे अर्थों में आर्यसमाजी हैं तो यह उनका प्रचार नही। उनकी इस आर्यसमाज की प्रेम की भावना के कारण हमे बचपन मे न चाहते हुए भी साप्ताहिक सत्सगों में जाना पडता था। अब तो कुछ स्वभाव ही ऐसा हो गया है कि जब मैं किसी शहर, कस्बे या नगर में जाती हूँ और रविवार या शनिवार को सत्सग का पता लगाकर अवश्य जाने का प्रयत्न करती हूँ। अभी उस दिन बिल्परा रोड आर्यसमाज के महिला समाज के साप्ताहिक सत्सग मे आर्यसमाज की एक विदुषी श्रीमती ······ · ······आई थी। उन्होंने महिलाओ को दान की महिमा बताते हुए निम्नलिखित वेद मत्र की व्याख्या की —

त्व नश्चित्र ऊत्या वसो राधाᳬसि चोदय
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाध तुचे तुन ।

(वसो) हे लाख धनो के एक धन (त्वम्) तुम (न) हमारे लिए (चित्र) चमत्कृत होकर (ऊत्या) अपनी कृपा कोरों से (राधासि चोदय) हमें समृद्ध कीजिए—निहाल कीजिए। (अग्ने) हे यज्ञस्वरूप अग्निदेव ! (अस्य) इस (दया-रूप) राय) धन के (त्वम्) तुम्ही (रथी) वास्तविक धनी (असि) हो। तुम्हारी कृपा से (न) हमारे [यज्ञ की] (तुचे) सन्मति के लिए (गाधम्) कुछ आधार (तु) सा (विदा) हो।

धनी कौन है ? क्या वह जिसने अतुल धन राशि एकत्र कर सदूर मे रख छोडी है ? क्या वह जिसकी अन गिनत सम्पत्ति व्यापार मे लगाकर दिन दूनी रात चौगुनी होती जा रही है ? या वह—जो उसे दया मे धर्म के कार्यों मे, दान के रास्ते लगा रहा है ? वेद ने अग्नि को सबसे बडा धनी कहा है। अग्नि धन को एक स्थान पर न रख कर उसे घुमाता फिरता है। जैसे शरीर का रुधिर शरीर मे चलता ही रहे तो वह शरीर को स्वस्थ तथा बलिष्ठ बना देता है। रुकने पर रोग का रूप धारण कर लेता है वैसे ही जो धन समाज के देह में चलता रहे वह 'वस्तु' है—वास का, जीवन का हेतु है। इस धन का चमत्कार यह है कि यह दिया जाता हुआ ही लिया जाता है। धन दिया जाय पर उस देने में दया का भाव न हो तो वह धन, धन नहीं, वह दान दान नही। जो भी रुपया पैसा धेला कौडी हम रखते हैं वह हमारे लिए समृद्धि का साधन तभी है जब उसके साथ कृपा की भावना सबद्ध हो। उसके कमाने मे सचय करने मे तथा दान दे देने मे कृपा कोरो का साहचर्य हो तभी वह धन हमें वस्तुत समृद्ध बनाता है। आत्मा की समृद्धि दान द्वारा—यज्ञ द्वारा होती है। दान कैसा हो ? यह बताते हुए उन्होने यह कहानी सुनाई —

प्रचीन भारत के इतिहास के स्मरणीय पृष्ठ की एक कहानी है। कुरुक्षेत्र के मैदान में जब चारो ओर शव ही शव थे, कही मनुष्य अन्तिम दम तोड रहे थे तो कहीं हाथी घोडे जीवन की अन्तिम सास ले रहे थे। इसी समय एक निर्धन ब्राह्मण लाशो को पहचानता हुआ एक मृतप्राय व्यक्ति के पास पहुचा और जोर से बोला 'दानवीर कर्ण की जय हो।'

मुदी पलकें खोलते हुए कर्ण बोला 'तुम कौन हो ?'

एक गरीब ब्राह्मण। क्या चाहते हो ?—दानवीर से कोई क्या चाहता है, गरीब हू धन मागने आया हूँ—क्यो उपहास करते हो ? आज कर्ण मृत्यु शैया पर पडा है। उसके पास स्वर्ण कहाँ से आया ?—तो लौट जाऊँ ? कर्ण कातर हो गये। यह कैसी परीक्षा ? ब्राह्मण बोला' तो जाता हूँ दानवीर कर्ण जाता हूँ। खाली हाथ जाता हूँ। नही ठहरो, वह पत्थर उठाओ। ब्राह्मण बोला—'दान के उपाय जुटाना दानी का ही काम है।' मैं द्विज आपके पुण्य का भागी नही बनूगा। यदि सामर्थ न हो तो लौट जाऊँ ? नहीं, कर्ण में प्राण रहते सामर्थ्य है। फिर कर्ण घिसटते घिसटते एक पत्थर के पास गए और उससे अपना स्वर्ण जटित दाँत तोड़कर उस ब्राह्मण को दे दिया।'

यह था चरमदान। स्वर्णदान। कहीं कोई मोह नही। सोने का अनुचित मोह ठीक नही। दान दान का बहुत ही अधिक महत्व है। दानवीर हरिश्चन्द्र की कथा, दधीचि की कथा आदि अनक दानवीरता के दृष्टान्त हमारे इतिहास में भरे पडे हैं।

तैत्तरियोपनिषद् में तो यह कहा गया है कि दान दो चाहे वह दान श्रद्धा से दो, अश्रद्धा से दो, अपनी बढ़ती श्री—सम्पत्ति में से दान दो, श्री न बढ रही हो तो भी लोभ लाज के विचार से दो, भय से दो प्रेम से दो, पर, दान अवश्य दो। 'श्रद्धया देयम् अश्रद्धया देयम् श्रिया देयम्, ह्रिया देयम् भिया देयम् प्रेम्णा देयम्।' उपदेशिका महोदया ने अपना भावमय उपदेश जारी रखते हुए आगे कहा। दान को हम 'अपरिग्रह' शब्द से भी समझ सकते हैं। 'अपरिग्रह' शब्द का अर्थ है 'परि' चारों ओर से 'ग्रह' का अर्थ है ग्रहण करना। परिग्रह का अर्थ हुआ कस कर चारो तरफ से पकड लेना और अपरिग्रह का अर्थ हुआ, पकड कर ढीला कर देना, छोड देना, समाज से धन की महत्ता और उपयोग को तो घटाया नहीं जा सकता। जब तक जीवन है पेट तो भरना ही होगा, अन्य सामाजिक कार्य करने ही होंगे और उनके लिए अर्थ की प्राप्ति करनी होगी ? एक कथानक में ईरान के उस निर्धन विद्वान् की जो सडक की लैम्पों का तेल चुपके से लेकर ज्ञान प्राप्त करने में लगा था, उसके परिश्रम को देखकर ज्ञान के देवता स्वयं उसके पास आए और उन्होंने उसे ज्ञान—सपूर्ण ज्ञान देने की बात कही। विद्वान् ने बड़ी नम्रता से कहा 'ज्ञान आप देंगे यह तो आपकी इच्छा पर है पर मुझे तो मिट्टी के तेल के लिए पैसे की आवश्यकता है। वह दे सकें तो देने की कृपा करें। इसलिए धन की तो आवश्यकता प्रत्येक को पडती है। वेद में कहा है "वय स्याम पतयो रयिणाम्' हे प्रभो ! हम ऐश्वर्यों के स्वामी हो जावें। एक दूसरे स्थान पर आया है। शतहस्त समाहर सहस्र हस्त विकिर" सौ हाथों से कमा और हजार हाथो से उसको दे—वितरित कर। ईशोपनिषद् मे 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' वैराग्य भाव से भोग कर। यदि इस तत्व को लक्ष्य मे रखकर धन नही कमाया गया, अपरिग्रह के तत्व को काम में नही लाया गया तो यह अर्थ—अनर्थ हो जायगा।

उपदेशिका महोदय ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा आज मनुष्य धन को बटोर कर ऊँचे प्रासाद बना रहा है भोग विलास मे डूब रहा है और अपने ऊपर त्याग का आडम्बर डालना चाह रहा है।' उन्होंने कहा "अभी मुझे बम्बई जाने का अवसर मिला। राष्ट्रपिता बापू ने हरिजनो—द्धार के लिए जो आमरण अनशन किया था और उसके बाद जिस महल मे उनकी शुश्रूषा की गई थी उस भवन को देखने का भी सुअवसर मुझे मिला। उस विशाल महल का नाम 'पर्णकुटि रखा गया था। वास्तव मे वह एक जगमगाता महल था। मैंने उसे देखा और मुझे लोग आज की इस समाज व्यवस्था की यह कैसी कसम पूर्ण पर व्यग्य से भरी हुई बिडम्बना है। गरीबो का हृदय हीन शोषण करके पहाडियो पर विशाल महल खडे करना बडे सेवा आराम से अपनी जिन्दगी बिताना खुद कुछ भी परिश्रम न करते हुए समाज के श्रमजीवियों का जीवन पशुओ जैसा बना देना और फिर इन दरिद्र अकिंचन मजदूरो को चिढ़ाने के लिए, उनका परिहास करने के लिए उन्हे भुलावे मे डालने के लिए अपने महल का नाम 'पर्णकुटि' रखना यह त्याग नहीं—यह दान नहीं। यह रिवाज पश्चिम के देशों की नकल है। वहा के अमीर नए फैशन शुरू करते हैं और हम उनकी नकल करते हैं। आज पूजीवाद के विरुद्ध उठने वाली आवाज का मुकाबला पूजीवादी लोग अपने को निर्धन दिखाने का प्रयत्न कर रहे हैं दान देकर दानी का खिताब प्राप्त कर रहे हैं परन्तु पुराने जमाने मे चुप चाप दान देने की प्रथा थी। अगर वे दाहिने हाथ से दान देते थे तो बाए हाथ को भी उसकी खबर न होती थी। उनका यह विश्वास था कि यदि दान का ढिंढोरा पीट दिया जाय तो उसका सारा पुण्य मारा जाता है। परन्तु, आज दान का उद्देश्य आत्म विज्ञापन है। एक ओर मनुष्य भरपूर शोषण कर रहा है और दूसरी ओर शोषण को और बढाने और उस पर त्याग का पर्दा चढाने के लिए दान के रूप मे थोडी बूदें टपका दे रहा है।

दान के विषय मे उपनिषद् में एक कहानी आती है कि प्रजापति ने मनुष्य को जीवन के लिए दान करने की ही शिक्षा दी है। प्रजापति के पास एक बार देवता, असुर और मनुष्य तीनो पहुँचे। प्रजापति ने ३० वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण करने के बाद जब वे आये तो प्रजापति ने द' कहा और मौन हो गए। थोडी देर के बाद प्रजापति ने देवताओ से पूछा 'क्या समझे ?" देवताओ ने कहा 'जी महाराज, आपने कहा 'द' अर्थात् दमन करो।' आपने हमे दमन करने, इन्द्रियो को वश मे रखने का उपदेश दिया है। प्रजापति ने कहा 'ठीक समझे तुम।' तुम्हारे लिए मेरा यही उपदेश है। असुरों की ओर लक्ष्य करके प्रजापति ने कहा 'द' और उनसे भी इसका आशय पूछा और कहा क्या समझे ?' असुरो ने कहा 'जी महाराज, आपने हमे 'द' अर्थात् 'दयध्वम्' दया का उपदेश दिया है। आपने कहा है कि हमें प्राणिमात्र पर दया करनी चाहिए। प्रजापति बोले 'ठीक समझे हो तुम, यही मेरा उपदेश है तुम्हारे लिए। इसके बाद प्रजापति ने अपनी दृष्टि मनुष्यो की ओर उठाई और बोले 'द'। मनुष्यों से भी उन्होने उसी प्रकार पूछा 'क्या समझे ? मनुष्यो ने कहा 'आपका उपदेश है 'द' अर्थात् दान। आपने हमें दान का उपदेश दिया है। प्रजापति बोले 'ठीक समझे हो तुम' जाओ दान देने में ही मनुष्य का कल्याण। बिना दान के, त्याग के मनुष्य का मनुष्यत्व नहीं बचता।

देवता उस समय देवता बनता है जब वह अपनी इन्द्रियों का दमन करे, उन्हें

(शेष पृष्ठ ४ पर)

सम्पादकीय

संन्यास आश्रम की सर्वोच्चता

ऋ० ७-१३ सूक्त के मन्त्रों के भावार्थ में ऋषि दयानन्द लिखते हैं—"जो अग्नि के तुल्य, विद्या और सत्य धर्म के प्रकाशक, अधर्म के खण्डन और धर्म के मण्डन से सब के शुद्धिकर्त्ता, बुद्धिमान् निश्चित ज्ञान देने वाले, अविद्वत्ता के विनाशक, मनुष्यों को विज्ञान और धर्म का धारण कराते हुए संन्यासी हों उनके सङ्ग से सब मनुष्य बुद्धि को धारण कर निःसन्देह होओ" प्रथम मन्त्र।

"जैसे अग्नि आप शुद्ध हुआ सब को शुद्ध करता है वैसे सन्यासी लोग स्वयं पवित्र हुए सब को पवित्र करते हैं।" दूसरा मन्त्र।

"जो सूर्य के तुल्य, परोपकार, विद्या, उपदेश जिनके प्रसिद्ध हैं वे जैसे गौए बछड़ों की रक्षा करतीं वैसे विद्यादान से सबकी रक्षा करने वाले सर्वदा घूमते हुए वेद, ईश्वर को जानने के लिये राज्य रक्षणार्थ राजा के तुल्य न्यायशील होकर सब मूर्खों को बोध कराते, वे सदा सब को सत्कार करने योग्य होते हैं।" तीसरा मन्त्र।

आर्यमर्यादा के प्रेमी आर्य बन्धुओ ! ऋषि दयानन्द ने वेदमन्त्रों के अर्थों के अनुसार सन्यासी के गुण, कर्म और स्वभाव का यथार्थ वर्णन कर दिया है, इनका पूरे रूप से मनन कीजिये। ऐसे पूज्य सन्यासियों का सत्कार कौन नहीं करेगा।

संन्यास ग्रहण करने में तीन विकल्प हैं। प्रथम सामान्य क्रम-अर्थात् ब्रह्मचर्याश्रम पूरा करके गृहस्थाश्रम में रहे, फिर वानप्रस्थ स्वीकार करे और तत्पश्चात संन्यासी बने। यह निष्कण्टक सरल और सुगम मार्ग है।

दूसरा—ब्रह्मचर्य से गृहस्थ में रहकर वानप्रस्थ न करके सीधा संन्यासाश्रम में प्रवेश करो। तीसरा ब्रह्मचर्याश्रम से गृहस्थ और वानप्रस्थ में न जाकर एक दम संन्यास आश्रम में प्रवेश कर लेवे, परन्तु यह सामान्य कोटि के लोगों के वश का काम नहीं, किन्तु जितेन्द्रिय योगी पुरुष ही इस उच्च मार्ग पर चढ़ सकता है। अतः गृहस्थ को सरलता इसमें है कि वानप्रस्थ मे रहकर संन्यास आश्रम में जावे। सार यह है कि "यदि पूर्ण अखण्डित ब्रह्मचर्य, सच्चा वैराग्य और पूर्णज्ञान विज्ञान को प्राप्त होकर विषयासक्ति की इच्छा आत्मा से यथावत् उठ जावे, पक्षपात रहित होकर सब के उपकार करने की इच्छा होवे और जिसको दृढ निश्चय हो जावे कि मैं मरणापर्यन्त यथावत् संयासधर्म का निर्वाह कर सकूंगा, तो वह न गृहस्थाश्रम करे न वानप्रस्थाश्रम, किन्तु ब्रह्मचर्याश्रम को पूरा करके ही सन्यासाअश्रम को ग्रहण कर लेवे।"—तृतीय प्रकार-संस्कार विधि"।

"पुत्रैषणायाश्च वित्तैषणायाश्च लोकैषणायाश्च व्युत्थाय भिक्षचर्यं चरन्ति" शतपथ० लोक मे प्रतिष्ठा वा लाभ धन से भोग वा मान्य पुत्रादि के मोह से अलग होके संन्यासी लोग भिक्षुक होकर रात-दिन मोक्ष के साधनों में तत्पर रहते हैं।" सत्यार्थप्रकाश ५ समुल्लास।

धन और पुत्रादि के लोभ का तो त्याग अनेक मनुष्य कर लेते हैं, परन्तु मान-अपमान का त्याग करना सरल नहीं और यही त्याग भावना संन्यास ग्रहण करने में मुख्य है।

"(प्रश्न) गृहाश्रम और वानप्रस्थाश्रम न करके संन्यासाश्रम करे उसको पाप होता है वा नहीं। (उत्तर) होता भी है और नहीं भी होता। (प्रश्न) यह दो प्रकार की बात क्यों कहते हो (उत्तर) दो प्रकार की नहीं, क्योंकि जो बाल्यावस्था में विरक्त होकर विषयों में फंसे वह महापापी और जो न फंसे वह महापुण्यात्मा सत्पुरुष है।" —सत्यार्थप्रकाश ५ समुल्लास

"जितना भ्रमण का अवकाश संन्यासी को मिलता है उतना गृहस्थ ब्राह्मणादिकों को कभी नहीं मिल सकता। जब ब्राह्मण वेद विरुद्ध आचरण करें तब उनका नियन्ता सन्यासी होना है, इसलिये सन्यास का होना निश्चित है।"—सत्यार्थप्रकाश ५ म. समुल्लास।

"जो निर्वाह न कर सके इन्द्रियों को न रोक सके वह ब्रह्मचर्य से सन्यास न लेवे, परन्तु जो रोक सके वह क्यों न लेवे ? जिस पुरुष ने विषय के दोष और वीर्यसंरक्षण के गुण जाने हैं वह विषयासक्त कभी नहीं होता और उनका वीर्य विचराग्नि का इन्धनवत् है अर्थात् उसी में व्यय हो जाता है। जिस पुरुष या स्त्री को विद्या धर्म की वृद्धि और सब ससार का उपकार करना ही प्रयोजन हो वह विवाह न करे। जैसे पचशिरवादि पुरुष और गार्गी आदि स्त्रियां हुई थीं इसलिए संन्यासी का होना अधिकारियों को उचित है और जो लोग अनाधिकारी संन्यास ग्रहण करेगा तो आप डूबेगा औरो को भी डुबावेगा।" सत्यार्थप्रकाश—५ म समुल्लास

"संन्यास उस को कहते हैं कि जो मोहादि आवरण, पक्षपात छोडकर विरक्त होकर सब पृथिवी मे परोपकारार्थ विचरे।

संन्यास मे दृढ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान का होना ही मुख्य कारण है। "—सस्कार विधि सन्यास प्रकरण"

"(प्रश्न) संन्यास ग्रहण करना ब्राह्मण ही का धर्म है वा क्षत्रियादि का भी ? (उत्तर) ब्राह्मण को ही अधिकार है, क्यों कि जो सब वर्णों मे पूर्ण विद्वान् धार्मिक परोपकार प्रिय मनुष्य हैं उसी का ब्राह्मण नाम है बिना पूर्ण विद्या के धर्म, परमेश्वर की निष्ठा और वैराग्य के सन्यास ग्रहण करने में संसार का विशेष उपकार नहीं हो सकता इसलिये लोक श्रुति है कि ब्राह्मण को सन्यास का अधिकार है अन्य को नहीं।······संन्यास ग्रहण करने का अधिकार मुख्य करके ब्राह्मण का है और क्षत्रियादि का ब्रह्मचर्याश्रम है।" "सत्यार्थ प्रकाश ५ म समुल्लास।

"इस क्रमानुसार संन्यास योग से जो द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य संन्यास ग्रहण करता है वह इस ससार और शरीर से सब पापों को छोड़ छुड़ा के पर ब्रह्म को प्राप्त होता है मनु० ६-८५" सस्कार विधि संन्यास प्रकरण।

"जो विवाह करना ही न चाहें वे मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सकें तो भले ही रहें, परन्तु यह काम पूर्ण विद्यावाले जितेन्द्रिय और निर्दोष योगी स्त्री और पुरुष का है। यह बडा कठिन काम है। कि जो काम के वेग को थाम के इन्द्रियों का अपने वश रखना।" सत्यार्थ प्रकाश ३ समुल्लास।

उपर्युक्त समस्त सन्दर्भ से सन्यासाश्रमी की सर्वोच्चता और महत्ता पर पूरा प्रकाश पडता है।

ऋषि दयानन्द जी वेदवित्त योगी और मानवता के पारखी थे, इस बात को जानकर ऋषि के आगे लिखे वचन बहुत महत्त्वपूर्ण हैं—"क्षत्रियादि को नियम मे चलाने वाले ब्राह्मण और सन्यासी तथा ब्राह्मण और सन्यासी को सुनियम मे चलाने वाले क्षत्रियादि होते हैं।" सत्यार्थप्रकाश—३ य समुल्लास।

इस स्थल से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द जी के मत में ब्राह्मण तथा संन्यासी भी सर्वथा निरङ्कुश नही हो सकते। उनके ऊपर सुनियम मे रखने वाली क्षात्र शक्ति है।

वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा में चलकर आर्यों ने संसार में करोडों वर्षों तक राज्य और वेद का प्रचार किया था। महाभारत युद्ध से १ सहस्र वर्ष पूर्व से आर्यों मे निर्मायाद के दोष घुमने लगे थे, उसी का दुष्परिणम महाभारत युद्ध हुआ उस समय ऋषि मुनि भी थे, परन्तु वे युद्ध को रोक न सके महाभारत मे लिखा है कि व्यास मुनि कहते हैं—"उर्ध्वं बाहुर्विरोम्येष न हि कश्चिच्छृणोति माम्॥ अर्थात् हाथों से ऊपर उठा कर चिल्ला रहा हूं, कि इन दोषो से बचो, परन्तु मेरी पुकार को कोई नही सुनता।" क्या आर्य जाति के विद्वान् वर्णाश्रम धर्मी लोग इन महर्षियो के वचनों पर कुछ विचार करके इन पुराने दोषों से बचने का उपाय करके कल्याण के मार्ग पर चल सकेंगे ?

जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—

जीवन रक्षा

(श्री पं० सत्यपाल जी शास्त्री एम० ए० नई दिल्ली)

ओ३म् अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च न: ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ ऋक् ९।६६।१९।

(अग्ने) सर्वप्रकाशक तेजस्विन् ! (आयूंषि) जीवन की (पवसे) रक्षा करो। (न:) हमको (ऊर्जम्) बल पौरुष (इषं च) और अन्नादि प्राप्त कराइये। हमारे (दुच्छुनाम्) राक्षसों को हमसे (आरे) दूर कर (बाधस्व) पीड़ित करो।

प्रवचन

ऋग्वेद के इस मन्त्र में मानव अपने जीवन-रक्षा की मांग करता है। वेद की भाषा में कहता है कि प्रभु आप मेरी रक्षा कीजिये। साथ-साथ मुझे जीवन रक्षा के साधन भी प्रदान करो। मुख्य रूप से दो बातों की चर्चा की। प्रथम तो भोग्य-सामग्री, द्वितीय उपभोग करने का सामर्थ्य। "इषं" कह कर वेद ने मानव के जीवनोपयोगी उपभोगों की ओर निर्देश किया है। साथ ही यह भी बताया है कि आपके पास भोग्य-सामग्री तो हो सकती है किन्तु यदि उपभोग का सामर्थ्य नहीं तो सामग्री का होना, न होना बराबर ही है। मानव के पास जीवन के भोग्य साधनों के साथ-साथ स्वास्थ्य भी होना चाहिये। वेद ने इस तत्त्व को "ऊर्जम्" कह कर पुकारा है।

जब विवाह संस्कार में "सप्तपदी" कार्यक्रम सम्पन्न कराया जाता है तो नवदम्पती दोनों इस प्रक्रिया को सम्पन्न करते हुवे कहते हैं कि—

"इषे एक पदी भव"

अर्थात् प्रथम चरण गृहस्थाश्रम में अन्नादि की प्राप्त्यर्थं बढ़ाते हैं तो साथ ही—दूसरा पग:— "ऊर्जे द्विपदी भव"

ऊर्जे अर्थात् बल तथा शक्ति संचय के निमित्त बढ़ाते हैं।

इसका अर्थ है यदि किसी की जीवन रक्षा करनी है तो सफल जीवन के दो ही मुख्य साधन हैं। एक तो भोग्य सामग्री का होना। दूसरे उनके उपयोग का सामर्थ्य होना। इसके बिना जीवन रक्षा नहीं।

तीसरी बात वेद ने बड़ी महत्त्वपूर्ण कही। जीवन के साधन प्राप्त करने पर मानव में अहंकार आना स्वाभाविक है। अतः उससे बचने का साधन—

"दुच्छुनां आरे बाधस्व"

हे सर्वशक्तिमान् नियन्ता ! अहंकार जैसे, जो राक्षस मुझ में विराजमान हो जाते हैं अर्थात् उत्पन्न हो जाते हैं, उन्हें दूर कर दो। साथ ही उन्हें चैन से न बैठने दो अपितु पीड़ित करो। तात्पर्य यह है कि मानव को जीवनोपयोगी साधन प्राप्त करके अहंकार नहीं करना चाहिये। क्योंकि अहंकार सारे करे कराये और कमे-कमाये पर पानी फेरे देता है।

महाभारत में एक प्रकरण आता है कि बुढ़ापा युवावस्था को नष्ट कर है। लम्बी आशा में धैर्य का बांध टूट जाता है और असूया-निन्दा अर्थात् चुगली करने से सारी धर्मचर्या, नेक कर्म, धार्मिकता नष्ट हो जाती है आदि आदि। अन्त में लिखा है कि अभिमान व अहंकार सब कुछ नष्ट कर देता है। अतः वेद में अहंकार जैसे राक्षसों की ओर संकेत करके व्यवस्था दी गई है कि यदि जीवन की रक्षा करनी चाहते हो तो अपने अन्दर के राक्षसों को दूर भगाना होगा। बिना इनके दूर किये जीवन सुरक्षित नहीं है। अहंकार की भांति काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह और मत्सर ये छः मानव में आन्तरिक शत्रु हैं। इन सभी की ओर निर्देश है। इनमें से यदि एक भी प्रबल है तो जीवन दूभर हो जाता है। साथ ही जिनमें ये दो वा उससे अधिक अथवा छः विद्यमान हों तो क्या आप समझेंगे कि ऐसा व्यक्ति जीवित है ? कदापि नहीं। अपना जीवन दूसरों के हाथों में सौंप कर मानव यदि अपने को सुरक्षित समझ बैठे तो इससे बड़ी भूल और क्या हो सकती है। हां, दूसरे हाथों में भी इस जीवन को सौंपा जा सकता है किन्तु ऐसे हाथों में जो काम-क्रोध-मद-लोभ मोह और मत्सर आदि से परे हो। कोई भी मानव ऐसा नहीं हो सकता है। अन्ततोगत्वा उसी निर्लेपनारायण की शरणागत होना पड़ेगा जो इन सारे राक्षसों से दूर है। अर्थात् ये सारे अथवा एक एक भी जिसके द्वार पर जाते ही नहीं। यदि जाने का कभी दु:साहस भी करे तो उसका नाम भी तो "अग्नि" है। वह अपने तेज प्रकाश से इन्हें भी तेजस्वी बना देता है। तब भक्त कहता है कि—"हे अग्ने ! न: आयूंषि पवसे" अर्थात् मेरी जीवन रक्षा करो। मेरा कल्याण होगा। ●

(पृष्ठ २ का शेष)

वश में रहे अन्यथा [illegible] हो जाता है। मनुष्य तब [illegible] मनुष्य बनता है जब वह स्वयं दयाकर दूसरों को दान दे, दूसरों की रक्षा करे, दूसरों की सहायता करे नहीं तो उसकी मानवता पशुता में परिवर्तित हो जाएगी, असुर उसे कहते हैं जिसके शरीर में बल हो और जो इसका दुरुपयोग करके दूसरों की रक्षा में उसे लगाता है। हम मनुष्य हैं, हमें दान देना चाहिए। त्याग करना चाहिए।

आज सभी मनुष्य धन के पीछे पागल होकर दौड़ रहे हैं। दूसरों के धन को अपना बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। धन को जोड़कर बैठने में ही उन्हें संतोष हो रहा है। त्याग मानव जीवन से दूर हो गया है। शरीर का त्याग, जीवन का त्याग और धनादि का त्याग मानव जीवन की सफलता है, इसमें आनन्द है। धन को कोई मरने के बाद ले नहीं जा सकता। त्याग ही जीवन का उद्देश्य है। ईशोपनिषद् में कहा गया है 'त्यागेन भुंजीथा,' त्याग भाव से भोग करो। 'मागृध,' लालच मत करो। 'कस्यस्विद्धनम्' धन किसी का नहीं। उपदेशिका महोदया ने पू० आनन्द स्वामी जी महाराज की सुनाई हुई एक कथा सुनाई। एक साधु किसी नगरी में रहता था, भक्ति के गीत गाता सब उसका सम्मान करते, उसे वस्तुएं देते। एक दिन साधु ने अपने शिष्य से कहा 'बेटा, चलो किसी दूसरे नगर में चलें।'

शिष्य ने कहा 'नहीं, यहां चढ़ावा बहुत आता है। कुछ पैसे जमा हो जाय तब चलेंगे।' गुरु ने कहा 'पैसे जमा करके क्या करेगा ?' चल मेरे साथ। पैसे नहीं जमा करेंगे हम।'

चल पड़े दोनों। चलते-चलते मार्ग में नदी पड़ गई। नौका वाला बिना पैसे के नदी पार करने को तैयार न हुआ, गुरु के पास पैसे न थे। नदी का किनारा खतरनाक था। जंगली पशु आदमियों को मार डालते थे। लोगों ने उन्हें बताया कि तुम भी मार डाले जाओगे। तब शिष्य ने अपने पैसे निकाले। वे पार हुए। शिष्य ने कहा 'देखा, गुरु जी आप कहते थे' पैसा इकट्ठा करने की कोई जरूरत नहीं। पैसे से क्या होगा ? गुरु जी ने देखते हुए कहा 'सोचकर देख बेटा, पैसा एकत्र करने से तुम्हें सुख नहीं मिला, पैसे को देने से मिला। सुख देने में है, त्याग में है, बटोरने में नहीं।

अन्त में बड़े भावपूर्ण शब्दों में विदुषी उपदेशिका महोदया ने सभी बहनों को संबोधित करते हुए कहा "हम सब यजमान हैं, हम सब यज्ञ कर रहे हैं. अग्नि में जीवन की आहुति दे रहे हैं। जिसने इस यज्ञवृत्ति वा दानवृत्ति को अपना अंग बना लिया, जिसने अपना सर्वस्व यज्ञार्थ, परोपकारार्थ अर्पण कर दिया, जो धनधान्य से लेकर विद्या तथा कला की विभूतियों तक को यज्ञ के लिए अर्पण कर देता है, जो भौतिक वैभवों से आरम्भ कर अन्त को अपने आत्मा तक की बाजी लगा सकता है वह मनुष्य है। मनुष्य का जीवन जब यज्ञमय, दानमय हो जाता है तब उसका धन उससे छीना नहीं जाता उसके हाथ से गिर नहीं पड़ता, वह देता है। केवल देता है। मनुष्य जीवन का यह कर्तव्य है कि वह अपना सर्वस्व यज्ञार्थ अर्पित कर दे। यही जीवन की सफलता है। स्त्रियां तो करुणा का स्वरूप हैं। वह तो दान के लिए बनी ही हैं। आइये आज से हम व्रत लें कि 'शत हस्त समाहर सहस्र हस्त विकिर' सौ हाथों से कमायें और हजार हाथों से वितरित करें।'

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

[पूज्या बहन से निवेदन है कि समय-समय पर बहिनों के लिये अपने उत्तम विचार भिजवाती रहिये। आर्यमर्यादा उनको सहर्ष प्रकाशित करने का सौभाग्य प्राप्त करेगा।—जगदेवसिंह सिद्धान्ती—सम्पादक] ●

स्वामी वेदमुनि परिव्राजक की सहायता कीजिये

स्वामी जी महाराज पर्याप्त समय से रुग्णावस्था में चले आ रहे हैं। अर्थाभाव के कारण स्वास्थ्य में बाधा पड़ रही है। आर्यसमाजों तथा धर्म-बन्धुओं से निवेदन है कि आगे लिखे पते पर धन की सहायता भेजी जावे—स्वामी वेदमुनि जी, अध्यक्ष वैदिक संस्थान नजीबाबाद, जि० बिजनौर (उ० प्र०)।

—मन्त्री आर्यसमाज चौक, प्रयाग

(पृष्ठ ६ से आगे)

नहीं जानते, वह जानते ही नहीं और जो जानते हैं, वह जानते ही हैं। फिर यह वस्त्रो का प्रदर्शन किस के लिए ?

पण्डित जी पहले पायजामा पहनते थे। पैण्ट लाहौर आने के पश्चात पहननी आरम्भ की थी। सम्भवत इसमें उन्हें अधिक सुविधा और खुली अनुभव हुई हो। यू जी मे आया तो दीक्षान्त समारोह के अवसर पर पहनने वाला गाऊन पहन कर ही घूमते रहते। वही पहन कर समाज की अन्तरंग सभा चले जाते। विचित्र स्वभाव सीखा थी उनकी।

लगता है गुरुदत्त अपने शरीर को किसी विशेष तपस्या के लिए तैयार कर रहे थे। इसीलिए सर्दी मे कभी ठडे कपडे पहन लेते और गर्मी मे गर्म। कभी दिन में नगे पैर घूमते और कभी रात को छाता ले लेते। वैसे लाहौर में रहते हुए शरद् ऋतु में प्राय कई वर्ष तक लट्ठे के कपडे पहनते रहे। लट्ठे की पतलून लट्ठ का कुर्ता, लट्ठे की वास्कट तथा कोट और साधारण सी टोपी—बस यह शरद् ऋतु का पहरावा था। जब लोग गर्मी से झुलस रहे होते थे तब काश्मीरा का कोट और वास्कट पहन लेते थे तथा रात को ऊनी कम्बल ओढा करते थे। चाहे कोई ऋतु हो, यात्रा में कम्बल साथ रखते थे।

सोते समय कुछ बिछा लिया तो बिछा लिया, नहीं तो यू ही सोए रहे। एक बार मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी आप से मिलने आए। पण्डित जी छत पर एक टूटी हुई चारपाई पर बिना दरी, बिछौना तथा सिरहाना के सो रहे थे। मास्टर जी ने उन्हें जगाया तथा पूछने लगे—'पण्डित जी, नगी खाट है और वह भी टूटी हुई—इस पर आप को कैसे नीद आ गई ?" हस कर बोले—'नगी खाट निद्रा मे कैसे बाधक हो सकती है ? बेचारे गरीब इन्ही खाटो पर सोकर अमीरो से अच्छी नीद का आनन्द लूटते हैं।

वैसे उन दिनो मुनतान का बना हुआ इकहरा कपडा साधारण दरी के काम में लाया जाता था। गुरुदत्त उसे ही बिछाते थ। ओढने के लिए साधारण चादर थी। कितनी सर्दी हो, वह इसी मे लिपट कर सो जाते थे। कई बार एक कम्बल मे ही सो रहते। लाला लाजपतराय ने वर्षो यह दृश्य स्वय देखा था। वह लिखते हैं कि "एक दो बार जब मुझे उनके पास सोने का अवसर मिला तो मुझे कम्बल या इस प्रकार का अन्य वस्त्र न होने के कारण सारी रात जागना पडा, जबकि दूसरी ओर वह गाढी नींद सोते रहे तथा सर्दी लगने का कोई भी चिह्न प्रकट नही किया।"

"आर्यसमाज जालन्धर का प्रथम वार्षिकोत्सव था। दिसम्बर का महीना। कडकाती शीत। मूसलाधार वर्षा ने शीत की तीव्रता और भी असह्य बना दी थी। सायकाल के समय पण्डित गुरुदत्त, महात्मा मुन्शीराम व मास्टर भक्तराम भ्रमणार्थ निकल पडे। मुन्शीराम ने कई गर्म वस्त्र पहन रखे थे। ओवरकोट पहना हुआ था। पर गुरुदत्त के पास एक भी गर्म वस्त्र नही था। वही साधारण लट्ठे का कुर्ता, डबल जीन की की वास्कट और कोट। भक्तराम ने पण्डित जी से गर्म वस्त्र पहनने का अनुरोध किया। तब भोले बादशाह ने छाता खोलकर ले लिया और बोले—"बस, इससे बचाव हो जायगा।' मुन्शीराम ने सेवक को बुलाकर उनके लिए घर से एक धुस्सा मगवाना चाहा। पण्डित जी ने झट मुन्शीराम का हाथ उनकी जब में से निकाल कर अपने हाथो मे ले लिया और बोले, 'बताओ, धुस्सा किसे चाहिए ?" सच गुरुदत्त के हाथ अधिक गर्म थे। इसके पश्चात् महात्मा मुन्शीराम ने भी अनावश्यक वस्त्रो का बोझ ढोना बन्द कर दिया था।

यह ठीक है कि व्यर्थ का शृगार तथा अनावश्यक वस्त्र पहने फिरते रहने का कोई लाभ नहीं। पर मुनि गुरुदत्त के व्यवहार को समझना भी कठिन है क्योंकि इसका ही परिणाम था कि वज्रसमान शरीर यौवनकाल मे ही खटका खा गया। सम्भवत इसीलिए अन्तिम दो तीन वर्षों में उन्होंने इस स्वभाव का परित्याग कर देना पड गया था।

पण्डित जी को स्वाध्याय की अद्भुत रुचि थी। ऐसा लगता था कि मानो वह पुस्तकों के लिए ही कमाते हों। सस्कृत, ऋषि दयानन्द तथा एण्ड्र्यो जैकसन डेविस के ग्रन्थो को सम्भाल कर रखते थे। उन्हे 'पवित्र पुस्तकालय' कहा करते थे। उनके अतिरिक्त मूल्यवान से मूल्यवान पुस्तक को भी पढकर फैंक देते थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश को १८ बार पढा। वह कहा करते थे कि सत्यार्थप्रकाश की प्रत्येक पुनरावृत्ति पर मुझे सदैव नई बातों का बोध होता है। एक बार उन्होंने यहाँ तक कहा कि "सत्यार्थप्रकाश की एक प्रति कुछ आने मे मिल जाती है पर यदि इस का मूल्य अधिक होता तो मैं अपनी सारी सम्पत्ति बेचकर भी इसे खरीदता। मुझे यह ग्रन्थ इतना प्रिय है कि इसे खरीदने के लिए गले मे झोली डाल कर भिक्षा मांगने के लिए भी तैयार हूँ।" वैसे पण्डित जी डेविस महोदय के ग्रन्थ भी चाव से पढते थे। हिन्दी-सस्कृत न जानने वालो को डेविस की पुस्तकें पढने को कहा करते थे। उनके चित्र के साथ गुरुदत्त की आकृति कुछ मिलती थी। बाल स्वभाव से गुरुदत्त इस बात से बडे प्रसन्न होते। डविस के लिए उनके हृदय मे काफी मान था। पर ऋषि के दर्शन कर लेने के पश्चात् उनके प्रति श्रद्धा सब सीमाएँ पार कर चुकी थी। गुरुदत्त ऋषिवर को अपना पिता कहा करते थे। इसमें अतिशयोक्ति भी क्या ? यदि लाला रामकृष्ण ने उसे भौतिक जन्म दिया तो आध्यात्मिक जन्म दिया ऋषिवर ने। जगत्गुरु ने गुरुदत्त को आयसमाज को दे कर उसका 'गुरुदत्त' नाम सार्थक बना दिया।

पण्डित जी का भोजन सादा तथा विशुद्ध शाकाहारी होता था। मास भक्षण के प्रबल विरोधी थे। लाल मिर्च का सेवन भी नहीं करते थे। हा शाक उन्हे बहुत प्रिय था। नशीले पदार्थों से उन्हे इतनी घृणा थी कि कोई नशा कभी न खाया, न पिया। भोजन की विशेष चिन्ता न करते थे। जिन दिनो कालिज मे पढाते थे और पिता जी की बीमारी के कारण सेवक उनके पास भेज दिया था तब दो महीने केवल दूध और बिस्कुट पर काट दिए। अपने वस्त्र स्वय धोते रहे। हालत फकीरो की सी थी।

व्यायाम मे उन्हे बाल्यकाल से ही रुचि रही। वह जमनास्टिक, क्रिकेट, फुटबाल आदि सभी खेलो मे दक्ष थे। पण्डित जी गवर्नमेण्ट कालेज मे क्रिकेट तथा फुटबाल टीम के सदस्य थे। स्नान करने का बडा ध्यान रखते थे। चाहे कोई ऋतु हो, प्रतिदिन दो बार ठण्डे जल से स्नान अवश्य कर लेते थे। बचपन मे उनका शरीर बडा हृष्ट-पुष्ट था पर लगातार प्राकृतिक नियम तोडे गए। अन उन का ही दण्ड भुगतना पडा। अन्यथा अभी आयु ही क्या थी ? केवल २६ वर्ष।

[माननीय लेखक जी से निवेदन है कि स्वर्गीय पण्डित गुरुदत्त जी की लिखी पुस्तको के सम्बन्ध में भी एक लेख लिखें, जिससे उनके अद्भुत पाण्डित्य पर भी पाठको को पठन सामग्री अनायास मिल सके। पाश्चात्य ईसाई पादरियों को जो मुँह तोड उत्तर उन्होंने दिए तथा वैदिक सिद्धान्तो का मण्डन किया—इन बातो पर भी इस लेख द्वारा प्रकाश पड सकेगा। आर्यमर्यादा इसी भांति उस लेख का प्रकाशन भी सहर्ष करेगा।

—सम्पादक]

गताक से आगे

किसान

—श्री योगीन्द्र पाण्डेय—

जब कुछ समझ नही पाते, मास आदि सब कुछ खाते थे,
पर जब दयानन्द जो आये, सभी सुप्त थे उन्हें जगाये,

दिया वेद का तुमको ज्ञान,
हे जगती की जान किसान।

पडे हुए थे आडम्बर मे, नीच पाखियों के तुम कर में,
जो तुमको ठगते रहते थे, कटि-सहस्र लगते रहते थे।

पर तुम भेद गये सब जान,
हे जगती की जान किसान।

रखते वस्त्र आदि तुम कम ही, वसन तुम्हारा है बस श्रम ही,
जिसको हो नित धारण करते, दुख का स्वय निवारण करते।

कठिन तुम्हारे बहुत आसान,
हे जगती की जान किसान।

तुमने ही ससार बसाया, जड सिंचित कर इसे बढाया,
तुम न रहो जग अवनत होगा, तुमको सत श्रम में रत होगा।

उन्नति के हो तुम सोपान,
हे जगती की जान किसान।

तुमको सब कहते प्राचीन, कहे न कोई अर्वाचीन,
'सादा जीवन उच्च विचार' इसका ले चलते आधार।

धन्य तुम्ही से हिन्दुस्तान,
हे जगती की जान किसान।

—क्रमशः

देश के नव जवानो !

[श्री भैरवदत्त शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद्, लगुचा (खीरी)]

★

देश के नव जवानो! कहाँ सो रहे ?,
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !

ठीक है, पूर्णतः राज अपना हुआ,
ठीक है, दूर परतंत्र पलना हुआ,
ठीक है, वह विदेशी जुआ हट चुका,
ठीक है, देश का ज्ञात सपना हुआ,

किन्तु सब जीर्णता मेटने के लिए,
पुष्ट आधार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

आज भी भूख से मर करोड़ों रहे,
पेट को हाथ से भर करोड़ों रहे;
उर्वरा भूमि बेहद बहुत-से लिये,
व्यक्ति बे-भूमि भी दिख करोड़ों रहे;

इस भयंकर विषमता व अन्याय का,
पूर्ण संहार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

स्वस्थ शिक्षा नहीं, दीप्त दीक्षा नहीं;
पुष्टता से भरी युग-परीक्षा नहीं;
वाद पर वाद आबाद हैं हो रहे,
किन्तु हल-खोज की शिव-समीक्षा नहीं;

क्षुब्ध संत्रस्त शोषित जनों का सभी,
दूर चीत्कार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

त्याग कर दूसरे उपकरण की शरण;
आत्म-निर्भर बनो, शक्ति का कर वरण;
हिंस्य-विध्वंस-संघर्ष का बल मिटा;
साधनों का करो बस विकेन्द्रीकरण;

नीचता-उच्चता, जातिगत भेद की—
मूल बेकार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

भूमि उर्वर करो, ज्ञान का दान दो;
शस्य गृह, वस्त्र का साम्य-वरदान दो;
'दाय' अर्पित करो राष्ट्र के पाँव पर,
बुद्धि-श्रम को सदृश प्रेम-सम्मान दो;

ऐक्य-हित 'स्वत्व' तज कर, अहंकार का,—
दूर विस्तार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

आत्मवत् प्राणियों को समझ कर चलो,
रूढ़िगत मोह से दूर रह कर चलो;
शत्रुओं के हृदय रौंदते-कूटते,
लोक-कल्याण का भाव भर कर चलो;

खाइयाँ पार कर, सिसकती शक्ति का—
शीघ्र उद्धार करना अभी शेष है !
स्वप्न साकार करना अभी शेष है !!

अस्थि-विसर्जन

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान)

हरद्वार को भागी रेल करती छुक्कम-छक्की,
न बचे किसी के होश, थी अन्दर धक्कम-धक्की।
थी अन्दर धक्कम-धक्की, न पैर रहे धरती पर,
उठे हवा में या टकराये, बैठा था जो खिड़की पर।
अरे अन्धा है क्या फूटी आंखें, तुझे उठाये राम,
मैं बोला कुछ ढम से बोलो, तुम्हें अक्ल दे श्याम ॥१

अर्ध-भाग टिका सीट पर, मिली जगह जब मुझे जरा सी,
जैसे-तैसे कर मैं भी उसका, बन गया सगा पड़ोसी।
बन गया सगा पड़ोसी फिर बात शुरू की हम ने,
इधर लाओ इस हंडिया में, मिष्टान्न धरे क्या तुमने।
हंडिया का सुन नाम पड़ोसी, सकुचाया-घबराया भी,
धुनी रुई सा मुँह तक उसका, दिल मेरा पछताया भी ॥२

मिष्टान नहीं है फूल, न व्यंग्य कसो भोले बनकर,
उसने कहा खिसियाते से खिसियानी बिल्ली बनकर।
खिसियानी बिल्ली बनकर, न रुका गया सच हमसे,
कहा फूल तो धरो सामने, ढके हुए क्यों सब से।
हंडिया में गर सचमुच फूल क्यों कर बन्द हुए हैं,
जोंक नहीं है फूल, फिर भी ताले पड़े हुए हैं ॥३

फूल, फूल ही फूल हैं बगिया में खिलते हैं फूल,
गुलदस्ते में या सजते हैं क्यों कर की भूल।
क्यों कर की यह भूल या कहीं उद्घाटन-मेला,
हंडिया का पट खोल, सहायक राम है तेरा।
हंसना-खिलना खुश्बू देना है फूलों का काम,
हक अदा करने दो इनको, लगता क्या है दाम ॥४

न कुछ चारा देख बन्धू ने फिर मुझको समझाया,
माँ मेरी के फूल हैं भाई पास खिसक बतलाया।
पास खिसक बतलाया, समझ गये हम झटपट,
हर की पौड़ी का कीड़ा है ताड़ गये हम सटपट।
माँ तेरी थी गेंदा-मोती या थी बेल-चमेली,
या गुलाब की पंखुड़ियाँ थीं, कसकर मारी बोली ॥५

सुनकर मेरी बात; गया भूल वह सिट्टी-पिट्टी,
कनॉट-प्लेस में फिरते जैसे चरस पिये कुछ हिप्पी।
चरस पिये कुछ हिप्पी, फिर बोला वह ऊंकड़ू तान,
अस्थि-विसर्जन करता है, क्यों जान खाई मतिमान।
देख उसे रस्ते पर आते, मैं भी कुछ द्रवित हुआ,
जान गया गंगा-मोह में यह भी है भ्रमित हुआ ॥६

कुढ़ी नहीं है गंगा-मैया, ना ही है हड़वाड़ा,
ज्ञानेन्द्रियां खोल तनिक, विवेक तेरा क्यो हारा।
विवेक तेरा क्यों हारा, सुन ले बात पते की,
मुर्दघाट को लौट फेंक ये अस्थि माँ की।
हरद्वार क्या लेगा जाकर गंगा जी के घाट,
वहां है फूकी वहीं गाड़ दे माता-जी के हाड़ ॥७

फड़क उठे होंठ उसके खून आंखों में उतरा,
फूले नथुने देख मुझे भी हो गया खतरा।
हो गया खतरा, लगे लोग सब हंसने,
हंडिया उठा पड़ोसी जी भी लगे खिसकने।
अच्छी बातों को गांठ बांध ले, ऐसे हैं विद्वान् कहीं,
दयानन्द का ज्ञान जहां, ठहरे कैसे अज्ञान वहां ॥८

[श्री कादियान महोदय का 'आर्यमर्यादा' पत्र के साथ कृपया बन्धन है। हम आभारी हैं, परन्तु निवेदन यह है कि आर्यभाषा को छोड़ कर अनावश्यक रूप में अन्य भाषाओं को प्रोत्साहन न देवें। कविता में पाखण्ड का उन्मूलन किया गया है, इसी कारण हम इसको प्रकाशित करने का लोभ न छोड़ सके।

—सम्पादक]

लोकोलोक का प्रलाप

(डा० शिवपूजनसिंह एम० ए० पी० एच० डी० साहित्यालंकार कानपुर)

[गतांक से आगे]

आज से कई सहस्र वर्ष पूर्व आपके सरीखे नास्तिकों ने प्रश्न किया था जिसकी चर्चा मीमांसा दर्शन मे है और श्री सायणाचार्य जी ने अपने ऋग्वेद भाष्य के उपोद्घात में इसी प्रश्न को उठाकर उत्तर दिया है। पाठकों के सम्मुख दोनो को रख देता हूँ।

प्रश्न—'ओषधे त्रायस्वैनमिति मन्त्रो दर्भविषय ' स्वधिते मैन हिंसीरिति क्षुरविषय , शृणोतग्रावाण इति पाषाणविषय । एतेषु अचेतनाना । दर्भक्षुर-पाषाणाना चेतनवत् सम्बोधन श्रूयते । ततो द्वौ चन्द्रमसाविति वाक्यवद् विपरीतार्थबोधकत्वात् अप्रामाण्यम्, अस्योत्तरम्–ओषध्यादिमन्त्रे चेतना एव तत्तदभिमानिदेवता तेन तेन नाम्ना सम्बोध्यन्ते ।

भाषार्थ—हे ओषधे ! इसकी रक्षा कर, यह मन्त्र दभ के विषय में है। हे स्वधिते इसको कष्ट न हो, यह मन्त्र क्षुर विषयक है, पत्थर सुनें यह मन्त्र पत्थर विषयक है। इन मन्त्रो में चेतन के समान सम्बोधन देखा जा रहा है। परन्तु जैसे दो चन्द्रमा कहने से विपरीत अर्थ का बोध होने के कारण इस वाक्य की प्रामाणिकता नही है उसी प्रकार जड को सम्बोधन करना भी अयुक्त है। इसका उत्तर श्री सायणाचार्य जी देते है कि ओषध्यादि मन्त्रो मे जड ओषधि आदि के सम्बोधन से उन पदार्थो के अभिमानी चेतन देवता+ का सम्बोधन ग्रहण होता है। अर्थात् जड का सम्बोधन नही समझना किन्तु उसके ग्रहण करने वाले चेतन देवता का ग्रहण होता है। अब कर्मकाण्ड पक्ष मे मन्त्र का अर्थ यो हुआ—

'हे क्षुर अर्थात् क्षुराभिमानी नापित तेरा नाम शिव है। स्वधिति (छुरा)× तेरा पालक है अर्थात् छुरे से तेरी जीविका है इसलिए इसको घाव न लगे।

'ओ स्वधिते मैन ७ हि ७ सी ' यजु० ४-१।

ऋषि दयानन्द जी ने यहा इस मन्त्र का अर्थ नही किया। ऋषि दयानन्द जी अपने भाष्य मे लिखते हैं—(ओषधे) सोमाद्योषधिगण (त्रायस्व) त्रायताम् (स्वधिते) रोगनाशने स्वधितिर्वज्रवत् प्रवर्तमान । (स्वधिति-रिति वज्रनामसु पठितम् निघण्टु २।२०) (मा) निषेधार्थे । एनम् । यजमान प्राणिमात्र वा । (हि७सी) हिंस्यात् । अत्र लिङर्थे लुङ् । (यजु० ४।१)

[अय मन्त्र शतपथ ब्रा० ३ १।१।१।१२।३।१।२-१० व्याख्यात]

अर्थात् जैसे सोमलता आदि ओषधिगण सब रोगो से रक्षा करता है, वैसे तू भी हम लोगो की (त्रायस्व) रक्षा कर। (स्वधिते) रोगनाश करने मे वज्र के समान होकर (एनम्) इस यजमान वा प्राणीमात्र को (मा हि७सि) कभी मत मार ''

आप को उचित था कि इस अर्थ पर आक्षेप करते, पर आपने छलकपट से काम लिया है। ओषधे त्रायस्व इत्यादि का समाधान जैमिनि मुनि ने अपने 'मीमासा दर्शन' में किया है सो सुनिये—

अभिधानेऽर्थवाद इति । असतोऽर्थस्याभिधाने वाक्ये गौणस्यार्थस्योक्ति-र्द्रष्टव्या । तद् यथा चत्वारो होतृ अध्वर्यं उद्‌गातृ ब्रह्माणोऽस्य कर्मण शृङ्गाणि। प्रात सवनादयस्त्रय पादा । पत्नी यजमानौ द्व शीर्षे गयत्र्यासप्त छन्दासि हस्ता । ऋग्वेदादिभिस्त्रिभिर्वेदस्त्रेधा बन्धन । कामान्वर्षतीति वृषभ । रोरवीति स्तोत्र शस्त्रादि शब्दान् पुन करोति । महोदेव सोऽय प्रौढो यज्ञ रूपो देवो मर्त्यानाविवेशति ।

लोकेऽपि गौणा प्रयोगा दृश्यन्ते चक्रवाकस्तनी हंसदन्तावली काशवस्त्रा, शेवलकेशिनी इत्येवम् नद्या स्तूयमानत्वात् एवम् ओषधे त्रायस्व शृणोत ग्रावाण इत्यादि अचेतन— सम्बोधन तत्र स्तुतिपरत्वेन योजनीयानि । यस्मिन् वपन ओषधिरपि त्रायते तत्र पवन, कर्त्ता त्रायते इति किमुवक्तव्यम् । तथा ब्राह्मणोऽपि प्रातरनुवाक शृणवन्ति किमुत विद्वासो ब्राह्मणा इत्याम-त्रणाभि प्राय ॥"

'अविद्यमान् वचनाच्च' इस सूत्र में 'चत्वारिश्रृगा' इस मन्त्र पर यह शका उठाई गई है कि चतु शृगादि से युक्त कोई भी यज्ञ का साधन नहीं है। इससे मन्त्रार्थ का बोध नहीं होता, किन्तु केवल उच्चारण से मन्त्र का अदृष्टार्थ प्रयोजन है इस सूत्र का उत्तर आगे (अभिधाने अर्थवाद इति) इस सूत्र में दिया है अर्थात् मन्त्र के अर्थ का बोध न होता हो तो मन्त्र में गौणार्थ लेना चाहिये जैसे यज्ञ के चार सींग का जहाँ कथन है वहाँ, होता, अध्वर्यु, उद्‌गाता और ब्रह्मा करना चाहिये इत्यादि लोक मे भी गौण प्रयोग देखा जाता है जैसे नदी के वर्णन मे नदी को चक्रवाकस्तनी (चक्रवाक जिसके स्तन हैं) हसदन्तावेली (हंस जिसके दातो के कतार हैं) काशवस्त्रा, (काशही जिसके वस्त्र हैं) सेवल केशिनी (सेवार जिसके बाल हैं) कहते हैं।

अर्थात् नदी जड है इसमे चेतन के गुण का आरोप करके स्त्री रूप में उसका वर्णन चेतनवत् किया गया है । इसी प्रकार 'ओषधेत्रायस्वैन ' इस मन्त्र मे भी गौणी प्रयोग है अर्थात् दर्भ क्षुर प्रस्तर के ग्रहण वाले चेतन में, गुण का आरोप उनमे करके उन्हें सम्बोधित किया जाता है। यह वेद की शैली है। जब चेतन का आरोप होता है तो ऊपर वर्णित नदी के समान चेतन के सब गुणो (सुनने नमस्कार आदि) का प्रयोग जड मे होना चाहिए।

ब्राह्मण ग्रन्थो में भी ऐसा आरोप मिलता है।

"त तपोऽब्रवीत् । प्रजापते तपसा वै श्राम्यसि । अहमु वै तपोस्मि । मांनुयजस्व । त श्रद्धा अब्रवीत् । प्रजापते तपसा वै श्राम्यसि । अहमु वै तपो-स्मि । मा नु यजस्व त श्रद्धा अब्रवीत् । प्रजापते श्रद्धया वै श्रोम्यसि अहमुवै श्रद्धास्मि । मा नु यजस्व । त सत्य अब्रवीत् । त मनोऽब्रवीत् इत्यादि" (तैत्तिरीय ब्राह्मण ३-१२।३)

अर्थात्—तपने प्रजापति से कहा कि हे प्रजापते ! आप तप के साथ ही श्रम करते हैं। मैं ही तप हूँ मेरा भजन करो।

श्रद्धा ने कहा, हे प्रजापते ! श्रद्धा के साथ आप श्रम करते हैं, मैं ही श्रद्धा हू, मेरा भजन करो।

सत्य ने प्रजापति से कहा मन ने कहा, इत्यादि अनेक उदाहरण तप श्रद्धा आदिको को चेतनवत् वर्णन करते हैं।

उपनिषदें आत्मवाद हैं। इनमे प्राणो के अनेक सम्वाद हैं।

जूता पूजन—आक्षेप– 'संस्कारविधि के समावर्त्तन प्रकरण में—"

ओ प्रतिष्ठेस्थो विश्वतो मा पातम् । पार० गा० २ क० ६

ऋषि दयानन्द जी ने संस्कार विधि 'समावर्त्तन प्रकरण' मे इसका अर्थ नहीं किया है। उन्होने केवल लिखा है "'''इस मन्त्र से उपानह, पादवेष्टन, पगरखा और जिसको जोडा भी कहते हैं धारण करें ।

यहाँ पर क्या आक्षेप हो सकता है ? आक्षेप कर्त्ता स्वय जूता पूजक है। इसका तो अर्थ है—' यह मजबूत जूतिएँ आदि पैर की रक्षा के लिए पहनता हूँ।"

जूता पैर मे पहन कर चला जाता है, क्या यह जूते की पूजा है ? क्या जिन वस्तुओ की पूजा होती है उनकी यही दशा की जाती है ?

चित्रकला का विरोधी आयसमाज नही है, पर उस पर फूल चढाना भोग लगाना, आरती उतारने का विरोधी है। अत टिकट और चित्र पर पादप्रहार का प्रसंग उठाना मूर्खता है।

आद्य श्री शकराचार्य जी के वेदान्तदर्शन' शारीरिक भाष्य में अनेक स्थानो पर परस्पर विरोध है। पहिले अपने बेल बराबर छिद्र को देखन चाहिए न कि दूसरे के सरसो बराबर छिद्र को।

परस्पर विरोध के कतिपय उदाहरण—

(१) ' अविद्यावद्विषयाण्येव प्रत्यक्षादीनि प्रमाणानि शास्त्राणि च ।' [शा० भा० १।१।१] शास्त्र आदि अविद्यावत् है।' शास्त्र मे वेद भी आ गया।

पुन "महत ऋग्वेदादे शास्त्रस्यानेकविद्यास्थानोपबृंहितस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिन सर्वकल्पस्य योनि कारण ब्रह्म" । [शा० भा० १।१।३ वेद प्रदीप के सदृश स्वय सिद्ध है क्योकि ब्रह्म ही उसकी योनि।

(२) ' द्विरूप हि ब्रह्मावगम्यते, नामरूपविकारभेदोपाधिविशिष्ट, त

(शेष पृष्ठ ११ पर)

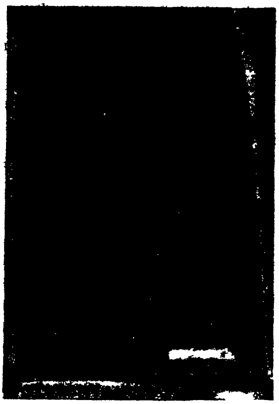
+अभिमानी देवता मन्त्र मे जिसका वर्णन हो वही मन्त्र का देवता होता है। मन्त्र में वपन का वर्णन है इसलिए क्षुर से क्षुर के अभिमानी नापित का ग्रहण होता है तथा क्षुर शक्ति का भी।

×देखो, महीधर भाष्य अध्याय ४ मन्त्र १ जिसमें 'स्वधिति' का अर्थ क्षुर किया गया है। पिता पालक वासयि ता ऋ० १ ३१-१० श्री सायणाचार्य ।

आर्यसमाज की प्रदीप्त ज्योति —

पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी का विचित्र स्वभाव

श्री रामप्रकाश, एम ए.
पी० एच० डी०,
कैमिस्ट्री विभाग
पजाब
विश्वविद्यालय
चण्डीगढ़



मुनिवर गुरुदत्त विचित्र व्यक्तित्व के धनी थे। वह शान्त स्वभाव, मेधावी, प्रतिभाशाली, प्रगल्भ वेदव्याख्याता एव गम्भीर चिन्तक थे। अदम्य उत्साह की मूर्ति थे। साहस छोड़ना तो सीखा ही नही था। रातो जाग कर कार्य कर सकते थे। 'थकना' शब्द उनके लिए निरर्थक था। ग्रहण ि‍न आश्चयजनक थी। अल्प समय में कई कई सौ पृष्ठ पढ़ जाते और गूढ़ म र्‌स्य प्रथम पाठ मे ही समझ लेते थे।

पण्डित जी स्वभाव स नक, मिलनसार व प्रमी थ। शिष्यो, नौकरो एव धर्मी-मस्त वर्गों से घण्टो बातों करते रहते थे। कार्यकर्त्ताओं के साथ उनका व्यवहार स्नेहसना था। इस प्रसग मे स्वर्गीय मास्टर आत्माराम अमृतसरी का एक निजी अनुभव बड़ा रोचक है। एक बार मास्टर जी रोग ग्रस्त हो गये। इसलिए कई दिन तक पण्डित जी के दशनार्थ न आ सके। स्वस्थ होने पर मिलने गए। पण्डित जी उन दिनो स्वय बहुत रुग्ण थे अत दिन मे सो रहे थे। मास्टर जी आकर चारपाई पर बैठ गए। जब आँख खुली तो बहुत धीमे स्वर मे आत्माराम जी पूछने लगे कि "अब तुम्हारा क्या हाल है?" पण्डित जी इतने बीमार थे कि उनसे बोला भी नही जा रहा था तो भी अपनी दुख की चर्चा नही की। हा, उन्ही के विषय मे पूछते रहे। पण्डित जी का व्यवहार इतना स्नेह भरा था कि मास्टर जी दिल मे सोचने लगे— इन से अधिक प्रम अपने जीवन मे कौन सिद्ध कर सकता है?" वस्तुत पद का अभिमान उन्हे कभी छू न सका।

हृदय की पवित्रता पण्डित जी का भूषण थी। उनकी कल्पना मे पवित्रता, चिन्तन मे व्यापकता, सकल्प में दृढता आँखो मे महनता मुख पर बच्चा की सी सरलता भुजाओ में कार्य करने की क्षमता और पाव मे गतिमयता थी। बर्फ शीतल है पर वह हिमगिरीसे अधिक शीतल स्वभाव थे। अग्नि गम है पर वह ज्वालामुखी से अधिक तेजस्वी थे। उनमें सागर की गहराई और पर्वत की ऊँचाई विद्यमान थी।

मुनिवर आध्यात्मिक मूल्यों का बहुत मान करते थे। चरित्र विषय मे लोक-व्यवहार के स्थान पर वेद को ही प्रमाण मानते थे। भले ही आयु कम थी पर जीवन महात्माओ जैसा था। यौवन के मदमस्त हाथी को उन्होने अकुश के आधीन रखा हुआ था। वह इन्द्रियो के दास नही स्वामी थे। वैदिक साहित्य के गहन अध्ययन, अन्तर्मुखी प्रवृतियों एव आत्मा की पवित्रता के कारण उनका चरित्र अत्यन्त निर्मल था। अनैतिक कार्यों से उन्हें बहुत घृणा थी। कुटिलता तथा षड्यन्त्र के लिए उनकी नैतिक सहिता में कोई स्थान नहीं था। झूठी सन्धि उन के बस की बात नहीं थी। उन जैसी निराली स्पष्टवादिता, कुटिलता की साहसपूर्ण भर्त्सना की क्षमता, कथनी मे आत्मिक शक्ति, नैतिक साहस, स्वभाव एव विचारों की सरलता का संमिश्रण अन्यत्र कहा मिल सकता है? वह मनसा वाचा कर्मणा पूर्णतया एक थे। किसी को अच्छा लगेगा या बुरा—इसकी चिन्ता किये बिना सदैव सत्य भाषण करते थे। हाँ उनका सत्य भाषण किसी को दुखी करने के लिए नहीं अपितु हित की मगल भावना से होता था। वह झूठी महत्वाकाक्षा तथा दम्भ से रहित थे। उन्होंने कभी सम्मान नहीं चाहा। सम्मान उनका पीछा करके स्वय सम्मानित होता था। उनमे वह आन्त-रिक आकर्षण तथा दिव्य शक्तियों का अस्तित्व था जिन के कारण उनका जीवन कृत्रिम महापुरुषों के जीवन से स्पष्ट भिन्न दीख पड़ता है।

गुरुदत्त की दिनचर्या विचित्र रूप से अनियमित थी। खाना-पीना, सोना-जागना, उठना-बैठना खेलना कूदना—कोई कार्य भी नियमबद्ध नहीं था। जब सोने की ठान लेते तो कई-कई दिन सोते ही रहते। केवल भोजनादि के लिए जागते और फिर समाधिस्थ हो जाते। यदि पढ़ना शुरू कर दिया तो दो-दो, तीन तीन दिन लगातार पढ़ते ही रहते। थोड़ी देर के लिए भी आँख न झपकते। भ्रमण करने निकल पड़े तो मीलों चलते जाते। फिर तो ज्येष्ठ की दुपहरी मे भी घूम रहे हैं। यदि घर में बैठने की सूझ गई तो कई कई दिन तक घर मे बैठे रहते। फिर केवल कालिज मे जाने आने के अतिरिक्त और कहीं जाने का नाम ही नहीं लेते थे। उन्हें स्वय अपने इस विषम स्वभाव का आभास था, इसीलिए दैनिक पञ्जिका मे प्राय इसकी चर्चा है। वैसे वह नियमित रूप से तो डायरी भी नहीं लिखते थे। पण्डित जी ने २ जुलाई १८८९ को डायरी में लिखा —"क्या मेरे लिए सुधरना सम्भव है? यदि ऐसा हो सकता है तो मैं किन परिस्थितियो मे 'प्रवेश निषेध' जारी कर सकता हूँ? अत अनियमितता का एक कारण अधिक लोगों का विचार-विमर्श के लिए आते रहना भी हो सकता था। प्यासे का सरिता के पास जाना स्वाभाविक है। पर वह सरल स्वभाव परोपकारी जीव कभी किसी को 'नहीं' न कह सका, यद्यपि इसके लिए स्वास्थ्य हानिरूप भारी मूल्य चुकाना पड़ा। पर प्रत्येक कार्य मे अनियमित होने का यही एक कारण हो—यह भी सम्भव नहीं। फिर ऐसा क्यो था—कहा नहीं जा सकता। इस गुत्थी को कोई मनोविज्ञान का पण्डित भी शायद ही सुलझा सके। पण्डित जी का अपने ऊपर सयम तो था। फिर क्या प्रत्येक कार्य करने की क्षमता ही उन्हे अनेक कार्यों मे उलझा कर अनियमित जीवन का राही तो नही बना देती थी? बस, वही अन्तर्यामी जानता है।

पण्डित जी 'दिल के बादशाह' थे। धन की कभी चिन्ता नहीं की। कभी हिसाब-किताब न रखा। किसी को दे दिया तो दे दिया, फिर माँगने का प्रश्न ही नहीं। पर यदि स्वय किसी से उधार धन ले लेते तो लौटाए बिना चैन न पड़ती। उनके लिए धन जग व्यवहार चलाने के लिए साधन मात्र था। इसीलिए वह आवश्यकता से अधिक अर्थ सग्रह को पाप मानते थे। वह कहा करते थे—"निर्वाह मात्र के लिए धर्मानुसार धन कमाना साहूकारी है, न कि पाप से अर्थ सग्रह कर के विषय भोग करना। "कस्यिस्विद् धनम्" यजुर्वेद के उपदेश को उन्होंने जीवन में उतारा था। वह केवल वचन से नहीं अपितु कर्म से भी समाजवादी थे। उनके पास जितना धन बच पाता उसे वह परोपकार में लगा देते थे। पुस्तकें खरीदने तथा निर्धन विद्यार्थियों की सहायता में ही उनका अधिक धन व्यय होता था। स्वामी अच्युतानन्द ने लिखा है कि "पण्डित जी बड़े दानशील और धार्मिक कार्यों मे धन व्यय करने वाले थे। राजकीय कालिज मे २५० रुपये मासिक वेतन पाते थे परन्तु अगले महीने की पहली तिथि से पूर्व ही यह रुपया सामाजिक कार्यों में व्यय कर देते थे।" वह सरिता के जल को दोनो हाथों उड़ेलते रहते थे। उन्हें अपने लिए चाहिए ही कितना था? निजी आवश्यकताएँ बहुत कम थी। एक नौकर के अतिरिक्त कभी दूसरा नही रखा। कितनी बार सारा कार्य अपने हाथ से निपटा लेते थे। प्रोफेसर बन कर भी उन्होंने सुख सुविधा की सामग्री को नही बढ़ाया। सारा कार्य पूर्ववत् चलता रहा। लाहौर मे किराये के जिस छोटे से मकान मे एम० ए० में पढते समय रहते थे, अन्त तक उसी में रहते रहे। हाँ, एक बार जब उनके पिता जी बीमार होकर चिकित्सा के लिए लाहौर आ गये तब उस तग मकान को दो मास के लिए अवश्य बदलना पड़ा, नहीं तो उसी मे रहते पढ़े, उसी मे रहते पढ़ाया, उसी मे रहते ज्ञान विज्ञान के क्षितिज को पार किया और और'''वहीं से उस अज्ञात स्थान की यात्रा पर चले गए।

वेश-भूषा बहुत सादी थी। किसी पहरावा विशेष के दास नहीं थे। न उन्हें इस विषय मे किन्हीं दीवारो पर घिरा रहना रुचता था। व्यक्ति सुविधानुसार जैसा वस्त्र चाहे पहन ले। बस वह सादा और स्वच्छ होना चाहिये। इसीलिए उन्हें जो मिल गया, वही पहन लिया। वैसे साधारण तथा बेढंगे वस्त्रो के लिए प्रसिद्ध थे। वास्त-विकता यह थी कि वस्त्र उन के लिए आवश्यकता पूर्ति के साधन थे, सजावट के नहीं? दिखावा चाहे आन्तरिक हो या बाह्य, उन्हें पसन्द ही नही था। हीरे का मूल्य उसकी उस आन्तरिक चमक के कारण है जो प्रत्येक आवरण में से झलक पड़ती है। 'वह कहा करते कि "लोग क्या कहेंगे—इसकी चिन्ता मत करो कोई भी व्यक्ति सकल ससार को प्रसन्न नहीं कर सकता।" वैसे भी वह समझते थे कि जो

(शेष पृष्ठ ७ पर)

प्रश्न—उत्तर

प्रश्न १—जब कि सृष्टि संवत् १९७२९४९०६९ पढ़ा जाता है तो इसके विपरीत आर्यमर्यादा में २३ मार्च सन् ६९ के अंक में १९६०८५३०६९ ऐसा क्यों छापा गया है।—

हरदेवी, पो० अजमतगढ़ पैलेस, मोती झील वाराणसी-१

उत्तर—ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के वेदोत्पत्ति विषय में ऋषि दयानन्द लिखते हैं—"वेदानामुत्पत्तौ कियन्ति वर्षाणि व्यतीतानि ? अत्रोच्यते-एको वृन्दः, षण्णवतिः कोट्योऽष्टौ लक्षाणि द्विपञ्चाशत्सहस्राणि, नवशतानि, षट्सप्ततिश्चैतावन्ति (१९६०८५२९७६) वर्षाणि व्यतीतानि, सप्तसप्ततिमोऽयं संवत्सरो वर्तत इति वेदितव्यम्। एतावान्त्येव वर्षाणि वर्त्तमानकल्पसृष्टेश्चेति।'''यमार्या विक्रमस्यैकोनविंशतिशत मर्यास्त्रिंशत्तमोत्तरं संवत्सरं वदन्ति।।"

भाषार्थ—यह जो वर्त्तमान ब्रह्मदिन है इस के (१९६०८५२९७६) एक अरब, छानवे करोड़, आठ लाख, बावन हजार नवसौ, छहत्तर वर्ष इस सृष्टि की तथा वेदों की उत्पत्ति में भी व्यतीत हुए हैं।'''यही व्यवस्था सृष्टि और वेदों की उत्पत्ति के वर्षों की ठीक है।'''विक्रम के सवत् १९३३ फाल्गुन मास, कृष्ण पक्ष, षष्ठी, शनिवार के दिन, चतुर्थ प्रहर के आरम्भ में यह बात हमने लिखी है।।"

इस प्रकार से पता चला कि ऋषि दयानन्द ने विक्रमी स० १९३३ में यह गणना सृष्टि की उत्पत्ति के समय (१९६०८५२९७६) की लिखी थी। अब विक्रमी सम्वत् २०२५ है। अर्थात् २०२५ मे से १९३३ घटाये तो ९२ वर्ष आज से पूर्व ऋषि ने यह गणना लिखी अत: ऋषि की गणना १९६०८५२९७६ वर्ष में ९२ वर्ष जोड़ें तो १९६०८५३०६८ वर्ष हुए। अभी यही वर्ष चल रहा है। सौर्य वर्ष प्रथम वैशाखी से बदलता है। तब १ वैशाख १३ अप्रैल १९६९ को विक्रम सवत २०२६ होकर सृष्टि सम्वत् ६९ वां हो जावेगा। चान्द्रमास के अनुसार चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से विक्रम संवत् को बदलते हैं। परन्तु आर्यमर्यादा में सौर मास से गणना की जाती है अत. वैशाखी के दिन सृष्टि सम्वत् १९६०८५३०६९ वां और विक्रमी सम्वत् २०२६ वां चल पड़ेगा।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमि के अनुसार ही ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास मे भी यह लिखा है—

(प्रश्न) जगत् की उत्पत्ति में कितना समय व्यतीत हुआ ? (उत्तर) एक अरब, ९६ करोड़, कई लाख और कई सहस्र वर्ष जगत् की उत्पत्ति और वेदों के प्रकाश होने मे हुए हैं। इसका स्पष्ट व्याख्यान मेरी बनाई भूमिका में लिखा है देख लीजिये।"

ऋषि दयानन्द के दोनों ग्रन्थों के प्रमाण के अनुसार आर्यमर्यादा में सृष्टि सम्वत् लिखा जाता है। जो लोग १९७२९४९०६९ वर्ष मानते हैं, ये ऋषि दयानन्द के मन्तव्य से स्पष्ट विरुद्ध मानते और लिखते हैं। कृपया यह भी शुद्ध कर लीजिये कि २३ मार्च ६९ के अंक में १९६०८५३०६९ नही छापा गया, किन्तु १९६०८५३०६८ छापा है जैसे ऊपर लिखा है ६९ वां वर्ष एक वैशाखी वि० २०२६ से लिखा जावेगा। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

प्रश्न २—६ वेदाङ्गों मे निरुक्त के कर्त्ता यास्क मुनि और व्याकरण के कर्त्ता पाणिनि तो लिखे हैं। शेष ४ अगों और ४ उपवेदों के कर्त्ता कौन-कौन हैं ? —सन्त जानकी दास

उत्तर—६ वेदाङ्ग अथवा ४ उपवेद कोई एक एक ग्रन्थ नहीं हैं। अपितु प्रत्येक वेदांग और प्रत्येक उपवेद मे भिन्न-भिन्न ऋषियों मुनियों के रचे अनेक ग्रंथ हैं। अग और उपवेद वेद विद्या के ही प्रकाशक हैं। निरुक्त भी अनेक हैं, परन्तु वर्तमान समय मे यास्क मुनिकृत निघण्टु और उसका व्याख्यान निरुक्त सर्वत्र उपलब्ध हैं और पठन-पाठन में इनका प्रचार है। निरुक्त में ही अन्य मुनियों के निघण्टु और निरुक्तों के नाम मिलते हैं, परन्तु उनकी उपलब्धि न होने से यास्क मुनि कृत निरुक्त की ही प्रसिद्धि है। वैसे अनेक निरुक्त ग्रन्थ थे। इसी प्रकार अनेक व्याकरण ग्रंथ प्राचीनकाल में थे। परन्तु वर्तमान काल में पाणिनि मुनि कृत अष्टाध्यायी का ही सर्वत्र प्रचार है। अन्य भी व्याकरण ग्रंथ हैं, परन्तु उनका प्रचार और उपलब्धि नाम मात्र ही हैं। इसी प्रकार शेष चारों वेदाङ्गों और चारों उपवेदों की विद्याओं के प्रकाशक अनेक ऋषि मुनि कृत ग्रंथ हैं। इसको पूरी तरह जानने के लिये सत्यार्थप्रकाश का तीसरा समुल्लास, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का पठन-पाठन विषय और सस्कार विधि का वेदारम्भ संस्कार का पठन-पाठन प्रकरण देखिये। वहाँ विस्तार से ये बातें लिखी हैं। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

प्रश्न ३—पाश्चात्य विज्ञान में 'परमाणु' के टुकड़े माने जाते हैं, परन्तु वैदिक सिद्धान्तों में परमाणु के टुकड़े होना नहीं माना जाता। इस असंगति का परिहार कैसे किया जा सकता है ? प्रश्न कर्त्ता का नाम ज्ञात नहीं रहा परन्तु वह हापुड़ के निवासी हैं। फिर भी उत्तर यह है।

उत्तर—वैदिक सिद्धान्त में परमाणु के टुकड़े होना नहीं माना जाता यह ठीक है। जैसे -"पर वा त्रुटे." न्याय दर्शन २४.१५॥ अर्थात् त्रुटि:=पदार्थ के टुकड़े का जो परम अत्यन्त अन्तिम अति सूक्ष्म अश-टुकड़ा=अवयव है, जिस अवयव=टुकड़े के आगे कोई टुकड़ा नही हो सकता, उस अन्तिम टुकड़े का नाम परमाणु है। ऋषि दयानन्द जी ने इसी भाव को ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में बहुत स्पष्ट किया है जैसे—"यद् द्रव्य विभक्तं विभक्तमन्ते विभागानर्हं भवति तस्य परमाणुसंज्ञा चेति व्यवहार:॥ ते विभक्ता अतीन्द्रिया: सन्त आकाशे वर्त्तन्त एव॥" अर्थात् परमाणु उसको कहते हैं कि जिसका विभाग फिर कभी न हो सके। जिसका ज्ञान से भी टुकड़ा नहीं हो सकता। इसीलिये उस अन्तिम विभाग न हो सकने वाले अंश को परमाणु नाम से कहा जाता है। परन्तु परमाणु का नाश नही होता, वे परमाणु आकाश में सदा विद्यमान रहते हैं। पाश्चात्य विज्ञान के अनुवादकों ने टुकड़े होने वाले पदार्थों=सूक्ष्म तत्वों का नाम "परमाणु" अशुद्ध किया है। वह परमाणु हो नही, जिसके टुकड़े हो सकें। अणु के टुकड़े हो सकते हैं, परन्तु परम-अणु के नही; क्योंकि वह द्रव्य की अन्तिम अवस्था है। और नित्य बनो रहतो है। अत: अनुवादकों का यह दोष है, कि जो उन्होंने टुकड़े होने वाले सूक्ष्म तत्त्व का नाम परमाणु रख दिया।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

प्रश्न ४(क)—सत्यार्थप्रकाश के ८ वें समुल्लास मे प्रश्नोत्तर में लिखा है कि "जब पृथिवी के समान सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र वसु हैं पश्चात् उनमें इसी प्रकार प्रजा होने में क्या सन्देह ?" सूर्य्य अत्यन्त तप्त है। चन्द्र भी निर्जन है। फिर वहाँ मानव जाति या जीव सृष्टि का होना कैसे सम्भव है ? विज्ञान के साथ इसकी संगति नहीं बैठती। विज्ञान और वेद में भी कोई विरोध नहीं। वेद मे विज्ञान बीज रूप में है। ऐसा होते हुए क्या वेद के पवित्र वचनों का अनर्थ हो गया है ? ऐसा मेरा मन कहता है कि उपरोक्त लेख महर्षि का नहीं है।

ख-जीव तत्व क्या सब में एक है वा जीव अनेक हैं और अनादि हैं और अनन्त हैं ?

ग-जब जीव मुक्त हो जाता है तब उसकी कौन-सी अवस्था रहती है।

घ-और अनेक मुक्तात्मा क्या एक ही अस्तित्व रखते हैं। या अपना-अपना पृथक् पृथक् अस्तित्व रखते हैं ?

—भगवान् राव आर्य भोसीकर, आर्य निवास कन्धार (नान्देड़) महाराष्ट्र

(उत्तर) पहिले ख-ग और घ का उत्तर दे देते हैं। (ख) जोव सब मे एक नहीं, अपितु सब व्यक्तियों में पृथक्-पृथक् होता है। जीव अनेक हैं। अनादि तथा असंख्य हैं। मनुष्य ज्ञान मे असख्य हैं। परन्तु ईश्वर के ज्ञान मे सख्य हैं। आपके अनन्त शब्द का अर्थ असख्य समझना चाहिये। (ग) मुक्ति अवस्था में जीव केवल मुक्तावस्था में ही रहता है।

(घ) सब ही मुक्तात्माओं की सत्ता पृथक्-पृथक् होती है।

कृपया इन बातो का पूर्ण विवरण जानने के लिये सत्यार्थप्रकाश का नवम समुल्लास देखिये तथा ११ वा भी।

अब हम "क" भाग का उत्तर लिखते हैं।

(क) यह ठीक है कि शुद्ध विज्ञान वेद का ही भाग है। सृष्टि विज्ञान का प्रकाश वेद करता है। जिस विज्ञान को भौतिकवादी वैज्ञानिक नहीं जानते और जिस का वेदमन्तार्थ द्रष्टा परमयोगी तथा महावैज्ञानिक आप्तपुरुष वेद दृष्टि से आज तक प्रत्यक्ष करते आये हैं। उसी कोटि के आप्त पुरुष महर्षि दयानन्द हैं। उन्होंने सृष्टि के सम्बन्ध में ८ म समुल्लास में जो लिखा है वह सर्वथा वेदोक्त है। वर्तमान भौतिक विज्ञान वहाँ तक अभी नहीं पहुँच सका है। अत: ये वचन ऋषि दयानन्द के ही हैं कि सूर्य्यादि लोकों में मनुष्य यादि प्रजा निवास करती हैं। अब इस सम्बन्ध मे वेद मन्त्रों के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि जिनपर ऋषि दयानन्द जो का स्वय किया हुआ भाष्य है—

(१) यजुर्वेद १-२८—

भावार्थ:—येनेश्वरेणान्तरिक्षे पृथिव्यस्तत्समीपे चन्द्रास्तत्समीपे पृथिव्योऽन्योन्यं समीपस्थानि नक्षत्राणि सर्वेषां मध्ये सूर्य्यलोका एतेषु विविधाः प्रजाश्च रचयित्वा स्थापिताः, सर्वैस्तत्रस्थैर्मनुष्यैः स एवोपासितुं योग्योस्ति ॥

भाषार्थ—जिस ईश्वर ने क्रम से अन्तरिक्ष में पृथिवियें, पृथिवियों के समीप चंद्रलोक और चंद्रलोकों के समीप पृथिवियें, एक दूसरेके समीप तारालोक और सब के बीच में अनेक सूर्य लोक तथा इन सब में नानाप्रकार की प्रजा रचकर स्थापना की है। वह परमेश्वर [वहां वहां] रहने वाले सब मनुष्यों के उपासना करने योग्य है।

(२) यजुर्वेद १३-३६—

पदार्थ:—(ये) (दिवि) सूर्य्यादिलोके (तेभ्यः) (सर्पेभ्यः) प्राणिभ्यः (नमः) अन्नम्:

भावार्थ:—यावन्त इमेलोका दृश्यन्ते ये च न दृश्यन्ते ते सर्वे स्वस्वकक्षायामीश्वरेण नियताः सन्त आकाशे भ्रमन्ति तेषु सर्वेषु लोकेषु ये प्राणिनश्चलन्ति तदर्थमीश्वरेण रचितं यत एनेषां जीवन भवति यूय विजानीत"

पदार्थ—जो कोई इस जगत् में लोक लोकान्तर और प्राणी हैं उन लोकों के जीवन के लिये "अन्न हो जो आकाश में, जो प्रकाशमान सूर्य्यादि लोको में और जो भूमि के ऊपर चलते हैं उन प्राणियों के लिये अन्न प्राप्त होवे ॥

भाषा भावार्थ—हे मनुष्यो! जितने लोक दीख पडते हैं और जो नहीं दीख पडते हैं वे सब अपनी-अपनी कक्षा में नियम से स्थिर हुए आकाश मार्ग में घूमते हैं उन सबों में जो प्राणी चलते हैं उनके लिये अन्न भी ईश्वर ने रचा है कि जिस से इन सब का जीवन होता है इस बात को तुम लोग जानो ॥

३—ऋग्वेद १-१३९-११

मन्त्रांश:—ये देवासो दिव्येकादश स्थ......

पदार्थ:—(यं) (देवासः) विद्वांसः (दिवि) सूर्य्यादिलोके (एकादश) दश प्राणा जीवात्मा च (स्थ) सन्ति "भापार्थ— हे (देवासः) विद्वानो! तुम (यं) जो (दिवि) सूर्य्यादिलोक में (एकादश) दश प्राण और ग्यारहवां जीव (स्थ) हैं।......

भावार्थ:—इहेश्वरसृष्टो ये पदार्थाः सूर्य्यादिलोके सन्त्यर्थाद्येऽन्यत्र वर्त्तन्ते त एवात्र यावन्तोऽत्र सन्ति तान्त एव तत्र सन्ति।

भाषार्थ—ईश्वर के इस सृष्टि में जो पदार्थ सूर्य्यादिलोकों में हैं अर्थात् जो अन्तहां वर्त्तमान हैं वे ही यहां हैं। जितने यहां हैं उतने वहां और लोकों में हैं।

४—ऋ० १-१६४ १०

मन्त्रांश:—मन्त्रयन्ते दिवो अमुष्य पृष्ठे विश्वविदं वाचमविश्वमिन्वाम् ॥

पदार्थ—(मन्त्रयन्ते) गुप्तं भाषन्ते (दिवः) प्रकाशमानस्य (अमुष्य) दूरे स्थितस्य सूर्य्यस्य (पृष्ठे) परभागे (विश्वविदम्) विश्वे विदन्तो ताम् (वाचम्) वाणीमविश्वमन्विम् असव से वनाम् ॥

भापार्थ—जो सब ओर से न सेवन को गई सब लोग उस को प्राप्त होते उस वाणी को सब ओर से विचार पूर्वक गुप्त कहते हैं वे उस दूरस्थ प्रकाशमान सूर्य के पर भाग में विराजमान होते हैं ॥

५. ऋ० १-१६४-३१

भावार्थ—इमे जीवाः कर्मगत्या सर्वेषु लोकेषु भ्रमन्ति ॥ भाषार्थ—ये जीव कर्मगति से सब लोकों में भ्रमते हैं ॥

६. ऋ० १-१००-१

पदार्थ:—(समोकाः) सम्यगोकांसि निवास्थानानि यस्मिन् । भाषार्थ—जिसमें समीचीन निवास के स्थान हैं। इस मन्त्र में सूर्य्य का वर्णन है।

७. ऋ० १-१८५-७

भावार्थ—यथा पृथिव्याः समीपं चन्द्रलोकभूमिस्तथा सूर्यलोकभूमिर्दूरे। भाषार्थ—जैसे पृथिवी के समीप में चन्द्रलोक की भूमि है वैसे सूर्यलोकस्थ भूमि दूर में है। यहां पृथिवी=भूमि के समान हो चन्द्रलोक और सूर्य लोक को भी भूमि कहा गया है।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट हो जाता है कि ऋषि दयानन्द सब नक्षत्रों, तारों, चन्द्र और सूर्य को भूमि लोक मानते हैं और उनमें मनुष्यादि प्रजा की सत्ता को भी स्वीकार करते हैं, अतः सत्यार्थप्रकाश के ८ वें समुल्लास का लेख ऋषि दयानन्द का ही है और किसी का नहीं।

भौतिक विज्ञान के अनुसार भी सब ही लोक-लोकान्तरों में पञ्चीकरण सिद्धान्त के रूप में पृथिवी, जल, अग्नि, वायु के अत्यन्त सूक्ष्म तत्त्व हैं। आकाश सब स्थानों पर है ही। जहां सूक्ष्म वायु नहीं होवे तो वहां अग्नि, जल और पृथिवी भी नहीं बन सकते। इसी नियम के अनुसार सूर्य के निर्माण में भी ये सब तत्त्व मिलते हैं। परमात्मा की यह विशेष रचना है। अग्नि जहां काष्ठ आदि को भस्म कर देता है वहां राख को भस्म नहीं कर सकता। सूर्य केवल अग्नि तत्त्व का ही पिण्ड नहीं है। इसमें पृथिवी, जल और वायु के तत्त्व भी सम्मिलित हैं। इनके परस्पर संयोग के बिना किसी पदार्थ की रचना नहीं हो सकती। पृथिवी लोकों के जीवों के शरीरों में पार्थितत्त्व प्रधान तथा अन्य तत्त्व गौण होते हैं। चन्द्रादि जलीय लोकों में जल तत्त्व प्रधान होता है। आग्नेय सूर्य्य लोकों में अग्नि तत्त्व प्रधान होता है। वायवीयलोक में वायु तत्त्व प्रधान होता है। इसी रूप में वहां वहां के निवासी जीवों के शरीरों की रचना तथा व्यवस्था होती है। वायु लोक में स्थूल अग्नि तत्त्व न होने से पार्थिव लोक वालों को वे लोक चक्षु से दिखाई नहीं देते। हमारे दर्शन शास्त्रों में इन बातों का स्पष्ट वर्णन मिलता है। यह हमारा काम है कि स्वाध्याय के द्वारा उसका ज्ञान प्राप्त करें। ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य में ऐसी अनेक रहस्यपूर्ण बातें लिखी हैं जिनको अभी तक भौतिक विज्ञान प्राप्त नहीं कर सका है। भौतिक विज्ञान वादी सत्कार के योग्य हैं, परन्तु ये अन्तर्द्रष्टा न होने से इन भौतिक मूलतत्त्वों का आन्तरिक मानस प्रत्यक्ष नहीं कर सके हैं जिसको हमारे पूर्वज ऋषियों ने किया था। उसी ऋषि कोटि के वर्त्तमान युग के आप्त महापुरुष ऋषि दयानन्द वेदमन्त्रार्थद्रष्टा, परम योगी और महावैज्ञानिक थे। मैंने जो प्रमाण ऊपर दिये हैं, कृपया उन उन ग्रन्थों में दिये मन्त्रों के ऋषि दयानन्द के पदार्थ, अन्वय, भावार्थ का मनन करना आवश्यक है। साप्ताहिक पत्रों में विस्तृत उत्तर दिये जाने सम्भव भी नहीं।

(५) प्रश्न—शव पर फूल चढ़ाना और हाथ जोड़ना पार्थिव (जड़) पूजा क्या नहीं है? पूज्य स्वामी सोमानन्द जी दयानन्द मठ रोहतक ने इस प्रश्न का स्पष्टीकरण आर्य विद्वानों से चाहा है। यद्यपि मेरी गणना आर्य विद्वानों में नहीं है। जब कोई पूज्य आर्य विद्वान् इसका समाधान आर्यमर्यादा में भेजेंगे। तब उसको सहर्ष प्रकाशित कर दिया जावेगा। हां, क्योंकि 'आर्यमर्यादा' में यह प्रश्न प्रकाशित कराया है, अतः सम्पादक के रूप में इस प्रश्न के उत्तर में कुछ निवेदन कर देता हूं।

(उत्तर) पूजा का भाव यहां श्री स्वामी जी ने सत्कार का लिया है—मैं ऐसा समझता हूं। यदि मेरा समझना ठीक है तो शव पर फूल चढ़ाना अथवा हाथ जोड़ना अवश्य जड़ पूजा है। चेतन का सत्कार तो भोजनादि से किया जा सकता है, परन्तु जड़ का सत्कार उसको उचित काम मे लेना ही है। परन्तु शव के लिये केवल दाह कर्म संस्कार ही किया जा सकता है। हाथ जोड़ने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। अतः शव पर फूल चढ़ाना अथवा हाथ जोड़ना सिद्धान्तहीन बात है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

६९ वां वार्षिकोत्सव १० अप्रैल से १३ अप्रैल ६९ तक यथापूर्व समारोह से मनाया जावेगा। इस अवसर पर भारत सरकार के विदेश मन्त्री श्री दिनेशसिंह जी दीक्षान्त भाषण देंगे। शिक्षा, वेद, सरस्वती, आयुर्वेद तथा व्यायाम सम्मेलन होंगे, जिनके अध्यक्ष भारतीय नेता और प्रतिष्ठित विद्वान् होंगे। साथ ही आर्य जगत् के अनेक पूज्य संन्यासी, महात्मा, पण्डित, भजनोपदेशकों तथा नेताओं के भाषण होंगे, १३ अप्रैल को नवीन प्रविष्ट ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार होगा। निवास के लिये तम्बुओं का प्रबन्ध होगा। हरद्वार तथा ज्वालापुर स्टेशन पर यात्रियों की सहायता के लिये स्वयं सेवक उपस्थित होंगे। गुरुकुल पहुंचने वाले यात्रियों को हरद्वार स्टेशन पर ही उतरना चाहिये।

—आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, कुलपति

आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव

१ रामपुर (उत्तर प्रदेश) १९-२०-२१ मई ६९ को होगा। इस समय आर्यसमाज के अनेक सन्यासी, महात्मा, उपदेशक और भजनीक पधारेंगे। अनेक सम्मेलनों और प्रदर्शनी की आयोजन की जा रही है।
—सहदेवशरण आर्य मन्त्री

२ आर्यकुमार सभा रोहतक—रामनवमी पर्व प० मनुदेव जी की अध्यक्षता में समारोह से मनाया गया। अध्यक्षीय भाषण के अतिरिक्त कुमारों के भाषण एव कविताए भी हुई। —जगदीश मित्र आर्य

३ आर्यसमाज लोतकर्ला में आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के हरयाणा वेदप्रचार मण्डल ने श्री मु शीलाल धर्मपाल भजनमण्डली द्वारा प्रचार किया। अच्छा प्रभाव पड़ा। गाँव ने वालों शराब के ठेकेदार को कोई स्थान नही दिया। सभा को ११६ रु० वेदप्रचार और १० रु० आर्यमर्यादा के लिये भेंट दिये और सभा का धन्यवाद किया। —धर्मवीर मन्त्री

४ वैदिक शास्त्रार्थ सस्थान उज्जैन—चैत्र शुक्ला १ स० २०२६ को स्थापित किया गया है। आर्यवीरो ने यह पग उठाया है।
—सरक्षक वै० शा० सस्थान

५ आर्यसमाज लोहारू (हिसार) वार्षिकोत्सव समारोह से सम्पन्न हुआ। इस समय यज्ञ के समय अनेक लोगो को यज्ञोपवीत दिये गये। कइयो ने तम्बाकू तथा शराब छोडने की प्रतिज्ञा की। इस क्षेत्र मे दुर्भिक्ष पडा हुआ है, फिर आर्यसमाज ने वेदप्रचारादि के लिये १०१) रुपये भेट आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब को दिये। भारत सरकार से माग की गई कि देहाती प्रोग्राम मे आलइण्डिया रेडियो से मास का प्रचार तुरन्त बन्द किया जावे, ऐसे नाशक प्रचार से हरयाणा राज्य के देहातो मे भारी असन्तोष फैला हुआ है। —भरतसिह शास्त्री मन्त्री

६ आर्यसमाज अरमासु कानपुर का वार्षिक बडे समारोह पूर्वक मनाया गया। ३० मार्च को डा० शिवपूजन सिंह कुशवाहा एम ए के दो सारगर्भित भाषण हुए। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा तथा प्रो० रत्नसिह जी एम ए के भाषण हुए। —सवाददाता

आर्यसमाजों के वार्षिक निर्वाचन

१ खतौली शूगर मिल्स प्रधान—श्री सुलेखचन्द नारग, मन्त्री तथा कोषाध्यक्ष—डा० सेवकराम यात्री।

२ डाक-तार कालौनी रामकृष्णपुरम्—प्रधान—श्री प्रेमनाथ चोपडा, मन्त्री—श्री राजकुमार शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री चमनलाल वध्वा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सत्यप्रकाश।

३ आर्यसमाज बिरला लाइज (देहली)—प्रधान-श्रीमती रत्नदेव पाराशर, मन्त्री श्री प्रेमसिंह आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री जगदीशचन्द्र त्यागी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री गिरीशचन्द्र। —प्रेमसिह मन्त्री

४ आर्यकुमार सभा नरवाना—प्रधान श्री करणपाल आर्य मन्त्री—श्री कमलसिंह आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री ईश्वरचन्द्र आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री जोगीराम आर्य। —मन्त्री आय कुमार सभा

५ आर्यसमाज गौहाटी—प्रधान—डा० नारायण दास जी, मन्त्री—वेदप्रकाश, कोषाध्यक्ष—श्री भरतलाल जी गुप्त। —मन्त्री

६ आर्यकुमार परिषद् मुशाढी (पटना)—श्री सत्येन्द्र कुमार सत्यार्थी, मन्त्री—श्री अरविन्द कुमार आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री योगेन्द्र कुमार आर्य।
—मन्त्री

७ आर्यसमाज फरमाना (महम)—प्रधान-मास्टर रणपतसिह आर्य, मन्त्री—श्री बेगराज आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री मानसिह आर्य।

८ आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर—प्रधान—यशपाल, मन्त्री—रणजीतसिह यादव, कोषाध्यक्ष—मुन्शीराम जी, पुस्तकाध्यक्ष—उदयशकर जी व्यास, तथा अन्य अन्तरङ्ग सदस्य। —मन्त्री

९ आर्यसमाज टोटोली (रोहतक) का उत्सव समारोह से सम्पन्न हुआ। अनेक सन्यासी, विद्वान्, भजनोपदेशक पधारे। सभा को वेदप्रचार के लिए १०१) रु० दिया। निर्वाचन इस प्रकार हुए। प्रधान—श्री चन्द्रस्वरूप पच, मन्त्री—श्री छोटेलाल पच, कोषाध्यक्ष—श्री जयनारायण। —मन्त्री

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरद्वार) के नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश तथा ११ अप्रैल को

वेदारम्भ-संस्कार

अपने प्रिय बालको को गुरुकुल की प्राचीन शिक्षा-प्रणाली के आधार पर प्रविष्ट करने वाले सज्जनो को यह सूचना देते हुए हर्ष होता है कि इस वर्ष गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर मे उत्सव के अवसर पर नवीन छात्रों का प्रवेश होगा। स्वच्छ वातावरण, उपयोगी शिक्षा, रहन-सहन की सुव्यवस्था, प्राचीन आश्रम प्रणाली का वातावरण को देखते हुए प्रत्येक के लिए आकर्षक गुरुकुल मे अपने बच्चो को प्रविष्ट कराएँ। नियमावली तत्काल महाविद्यालय के पते पर पत्र भेज कर मगावे। स्थान कम है। अत शीघ्रता करे। गुरुकुल के उत्सव पर सपरिवार पधार कर धर्म लाभ उठावें।
—प्रकाशचन्द्र शास्त्री सभा मन्त्री

सूचना

होशियारपुर पजाब विश्वविद्यालय के विश्वेश्वरानन्द सस्थान, साधु आश्रम मे विशारद की कक्षाएँ खोलने का निर्णय कर लिया गया है। सस्थान मे शास्त्री तथा आचार्य की कक्षाएँ पहले से ही चलती हैं। विशारद की कक्षाएँ १९६९-७० के सत्र से प्रारम्भ कर दी जाएँगी।

भूल सुधार

आर्यसमाज नागल (हिसार) के निर्वाचन मे भूल से श्री रतिराम आर्य का नाम पुस्तकाध्यक्ष रूप से प्रकाशित होने से रह गया। इसका हमे खेद है। —व्यवस्थापक

(पृष्ठ ५ का शेष)

विपरीत च सर्वोपाधिविवर्जितम् ।" [शा० भा० १।१।१२] ब्रह्म के दो रूप जाने गए हैं एक नामरूप विकार भेद उपाधि विशिष्ट और दूसरा उपाधि रहित।

पुन "समस्त विशेषरहित निर्विकल्पक मेव ब्रह्म प्रतिपत्तव्य न तद् विपरीतम्"। [शा० भा० ३।२।११] ब्रह्म को सब विशेषणो से मुक्त निर्विकल्प ही मानना चाहिये अन्यथा नही।

(३) 'ब्रह्मणोऽपितर्हि सत्तालक्षण स्वभाव आकाशादिष्वनुवर्तमानो दृश्यते।" [शा० भा० २।१।६] कारण ब्रह्म और कार्य आकाश दोनो मे सत्ता लक्षण मिलता है।

पुन "कार्य्यस्य तद्धर्मणा चाविद्याध्यारोपितत्वान्नतै कारण ससृज्यत इति"। [शा० भा० २।१।९] कार्य और उसके धर्मसत्व नही, अविद्या के आरोपित मात्र है।

(४) "नहि जीवनामात्यन्तभिन्नो ब्रह्मण।" [शा० भा० १।१।३१] ब्रह्म से भिन्न जीवात्मा नही।

पुनः "नन्वीश्वरोऽपिशरीरे भवति, सत्यम्। शरीरे भवति न तु शरीर एव भवति। ...जीवस्तु शरीर एव भवति तस्य भोगाधिष्ठानाच्छरीरादन्यत्र वृत्त्याभावात्।' [शा० भा० १।२।३]

ईश्वर भी शरीर में है। यह ठीक है। परन्तु शरीर मे ही है ऐसा नहीं। जीव तो शरीर मे ही है। शरीर से बाहर उसकी वृत्ति नही जाती। शरीर उसके भोग का अधिष्ठान है।"

यहाँ जीव और परमात्मा का स्पष्ट भेद है।

(५) 'यत् सर्वज्ञ सर्वशक्ति ब्रह्म नित्य शुद्धबुद्धमुक्तस्वभाव शरीरादधिकमन्यत्, तद्वय जगत स्रष्ट्र ब्रूम।" [शा० भा० २।१।१२]

जो सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव है और जीव से बडा है, उसी को हम जगत् का स्रष्टा कहते हैं।

पुन 'जीवस्य ससारित्व ब्रह्मणश्च स्रष्टृत्व .....सम्यग् ज्ञानेन बाधितत्वात्।" [शा० भा० २।१।२२]

"सम्यग् ज्ञान से जीव का ससारीपन और ब्रह्म का स्रष्टा होना बाधित हो जाता है।"

जब बाधित हो गया तो ब्रह्म का स्रष्टा होना भी मिथ्या रहा।

इत्यलम्

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,

आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियों के लिये २५), ५० प्रतियों के लिये १५)

२५ प्रतियों के लिए ८) ७५, १० प्रतियों के लिए ४)

ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना अर्थ सहित	मूल्य १०) सैकड़ा
कर्मिष्ठों की विशेषताएं ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महात्मा दयानन्द ०० -७५ दयानन्द चरित्र	१-५० „
मुक्ति के साधन १-०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१-५० „
वैदिक सत्संग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रेजी	२-०० „
वैदिक ज्योति ले० प० चमूपति जी एम ए	३-०० „
सोम सरोवर „ „ „	३-०० ,
The Principles of Aryasamaj ,	१-५० „
Glimpses of Swami Daya Nand , „	१-०० „
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	० ५० ,

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मंगवाइये । थोड़ी प्रतियां शेष हैं ।

प्राप्तिस्थान—"आर्य मर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज नारनौल (जि० महेन्द्रगढ़) में श्री हरिसिंह बोहरा के निधन पर शोक प्रस्ताव स्वीकार किया गया, तथा उनके शोकाकुल परिवार के प्रति शोक सहानुभूति प्रकाशित की गई । परमात्मा से प्रार्थना की गई कि वह दिवंगत आत्मा को अपनी कार्य व्यवस्था के अनुसार सद्गति प्रदान करे। स्वर्गीय बोहरा जी आर्यसमाज के दृढ़ स्तम्भ, स्वाध्यायशील, धार्मिक निर्भय सत्यवादी आर्य थे । समाज के सभी वर्गों से उनका सम्पर्क रहता था । आर्यसमाज द्वारा संचालित सभी सत्याग्रह आन्दोलनों में उन्होंने सक्रिय भाग लिया था । आपके रिश्तेदारों में हरयाणा के प्रसिद्ध आर्य महानुभाव हैं । आपके सुपुत्र श्री सत्यपाल एम० ए० नारनौल कालिज में प्रोफेसर हैं । इस प्रकार यह क्षेत्र एक योग्य आर्य नेता से वंचित हो चुका । आपके स्वर्गवास से सब जगह शोक प्रकाशित किया गया ।—

—ताराचन्द आर्य मन्त्री [illegible]

वन्दे वेदमातरम्

(श्री कृष्णस्वरूप "आनन्दी" खैराबाद सुल्तानपुर)

एक बार तू आर्यों को महाहुंकृति की स्वीकृति की स्वीकृति दे दे ।
शक्ति की स्रोतवाहिनी माँ ! महाशक्ति का सिंचन कर दे !
हृदय के अन्तराल में स्नेहसुधामयि ! श्रद्धा का मधुमिश्रण भर दे !
करुणामयि ! कण-कण मे वात्सल्य प्रवाहित कर दे !
चित्स्वरूपिणी ! आज चतुर्दिक आर्यों को जयध्वनि बजने दे !
भारती ! भारत के जन-जन में कमनीय कान्ति भर दे !
आर्यों के महामात्यो का मनस्ताप हर मार्ग दर्शन कर दे !
ओ माँ ! आर्यों मे अमृत यौवन का विलयन कर दे !

ग्रीष्म ऋतु का उपहार



गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से ही क्यों खरीदें ?

क्योंकि—

● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण पूर्ण शास्त्रोक्त ढंग से तथा सर्वश्रेष्ठ उपादानों द्वारा करती है ।

●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की आय किसी व्यक्ति की जेब में नहीं जाती, वरन् आप के ही बच्चों की शिक्षा आदि पर व्यय होती है ।

●●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी द्वारा निर्मित औषधि क्रय करने पर आप जहाँ निश्चय ही श्रेष्ठ औषधि प्राप्त करते हैं वहाँ आपकी जेब से निकला एक-एक पैसा भी राष्ट्र के निर्माण तथा जनता की सेवा में खर्च होता है ।

●●●● इसलिए आप अपनी आयुर्वेदिक औषधियों तथा तैल आदि सम्बन्धी किसी भी खरीद के समय गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरिद्वार) का नाम अवश्य ही याद रखें

आपका संतोष हमारा उद्देश्य है ।

नोट —१ किसी भी रोगी के सम्बन्ध मे पत्र द्वारा या मिल कर सम्मति प्राप्त करें ।

२ गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियां बेचने के लिये नियम मुफ्त मंगावें ।

शाखा कार्यालय :

१ ६३ गली राजाकेदारनाथ, चावड़ी बाजार दिल्ली-६
२ गोविन्द मित्र रोड, पटना-४ (बिहार)
३ नेहरू रोड, बेल्दारपुरा, बालविहार के पास भोपाल, म० प्र०

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी [हरिद्वार]

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित



जब से विदेशी मासाहारी इस देश मे आके गौ आदि पशुओ के मारने वाले मद्य पायी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमश आर्य्यों के दु ख की बढ़ती होती जाती है।

सत्याथ प्रकाश १०म समुल्लास ।।

वर्ष १ अंक २०

१५ बैशाख वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २७ अप्रैल १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
" " विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौड

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

ईश्वरेणैतज्जगत् कियत्प्रकारक रचितमित्युपदिश्यते ।।

ईश्वर ने इस ससार को कितने प्रकार का रचा है, इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है—

इद विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ।

समूढमस्य पांसुरे ।। ऋ० १-२२-१७

पदार्थ—(इदम) प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष जगत् (विष्णु) व्यापकेश्वर (वि) विविधार्थे (चक्रमे) यथायोग्य प्रकृतिपरमाण्वादिपादानशान् विक्षिप्य सावयव कृतवान् (त्रेधा) त्रि प्रकारकम् (नि) नितराम् (दधे) धृतवान् (पदम) यत्पद्यते प्राप्यते तत् (समूढम्) यत्सम्यक् तर्क्यते तर्केण यद्विज्ञायते तत् (अस्य) जगत (पासुरे) प्रशस्ता पासवो रेणवो विद्यन्ते यस्मिन्नन्तरिक्षे तस्मिन् ।।

अन्वय—मनुष्यैर्यो विष्णुस्त्रेधेद पद निचक्रमेऽस्य त्रिविधस्य जगत समूढ मध्यस्य जगत् पासुरेऽन्तरिक्षे विदधे विहितवानस्ति स एवोपास्यो वर्तत इति बोध्यम् ।।

भावार्थ—परमेश्वरेणास्मिन्ससारे त्रिविध जगद्रचितमेक पृथिवीमय द्वितीयमन्तरिक्षस्थ त्रसरेण्वादिमय तृतीय प्रकाशमय च । एतेषा त्रयाणामेतानि त्रीण्येकाधारभूतानि यच्चान्तरिक्षस्थ तदेव पृथिवादे सूर्यादिकस्य वर्धक नैवैतदीश्वरेण विना कश्चिज्जीवो विधातु शक्नोतीति मन्तव्यम् ।।

सायणाचार्य्यादिभिर्विलसनाख्येन चास्य मन्त्रस्यार्थस्य वामनाभिप्रायेण वर्णितत्वात्स पूर्वपश्चिमपर्वतस्थो विष्णुरस्तीति मिथ्यार्थोऽस्तीति वेद्यम् ।।

भावार्थ—मनुष्य लोग जो (विष्णु) व्यापक ईश्वर (त्रेधा) तीन प्रकार का (इदम्) यह प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष (पदम्) प्राप्त होनें वाला जगत् है उस को (विचक्रमे) यथायोग्य प्रकृति और परमाणु आदि के पद वा अशो को ग्रहण कर सावयव अर्थात् शरीर वाला करता और जिसने (अस्य) इस तीन प्रकार के जगत् का (समूढम्) अच्छी प्रकार तर्क से जानने योग्य और आकाश के बीच मे रहने वाला परमाणुमय जगत् है उसको (पासुरे) जिसमे उत्तम-उत्तम मिट्टी आदि पदार्थो के अति सूक्ष्म कण रहते हैं, उनको आकाश मे (विदधे) धारण किया है ।

भावार्थ—परमेश्वर ने इस ससार मे तीन प्रकार का जगत् रचा है अर्थात् एक पृथिवी रूप, दूसरा अन्तरिक्ष आकाश में रहने वाला प्रकृति परमाणु रूप और तीसरा प्रकाशमय सूर्य्यादि लोक तीन आधार रूप हैं, इन मे से आकाश मे वायु के आधार से रहने वाला जो कारण रूप है, वही पृथिवी और सूर्य्यादि लोको का बढाने वाला है इस जगत् को ईश्वर के बिना कोई बनाने को समर्थ नहीं हो सकता, क्योकि किसी का ऐसा सामर्थ्य ही नही ।

—(ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य से)

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी का दूसरा आदेश

दशम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद मे प्रान्तीय आर्य सभाओ के झगडे निपटाने और अभियोग लोटवाने के लिए मुझे पूर्ण अधिकार दिए थे । तत्पश्चात् सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी हैदराबाद सम्मेलन के इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और पजाब की आर्य प्रतिनिधि सभा के दोनो पक्षो ने भी मुझे यही सर्व अधिकार दिया । मैंने सभा के सचालन के लिए एक आदेश तिथि ३१-३-६९ को दिया था । अब मैं दूसरा आदेश देता हूँ कि प्रबन्ध कर्ती समिति को वे सब अधिकार प्राप्त होंगे जो कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की अन्तरग सभा और विद्यासभा को है ।

ह० आनन्द स्वामी सरस्वती

ति० ९-४-१९६९

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का वक्तव्य

आर्य जगत् को सूचनार्थ यह लिखना आवश्यक है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के परस्पर झगडो को समाप्त करने के लिये जो प्रयत्न हो रहे है, उनमे अड़चने और विघ्न तो स्वाभाविक ही है परन्तु प्रभु कृपा से शान्ति स्थापित करने वालो का सहयोग लेकर यह समिति सफलता पूर्वक आगे बढती चली जा रही है । आर्य जगत् को शान्ति के साथ प्रतीक्षा करनी चाहिये और इसके लिये प्रार्थना भी करनी चाहिये । बहुत से मुकदमे लौटाये जा चुके हैं जालन्धर के मुकदमो को लौटाने के लिये अब दोनो पक्ष प्रयत्नशील है इसलिये अब आशा बढ गई है । गुरुकुल कालेज तथा स्कूलो के प्रबन्ध के सुधार के लिए यह समिति प्रयत्नशील है ।

आनन्द स्वामी सरस्वती

उप कार्यालय, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली

स्वास्थ्य सम्बन्धी विशेष लेख

ग्रीष्म ऋतु और स्वास्थ्य

ना० रा० वैद्य, गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी चावड़ी बाजार, दिल्ली

विश्व के प्राय देशो मे ऋतुओ की इतनी विविधता नही पायी जाती जितनी कि भारत की शस्य श्यामला भूमि मे, यहा छ ओ ऋतुए अपनी मनोरम छटा मे जन मानस को प्रमुदित करती रहती हैं।

वर्ष की प्रमुख ऋतुए तो तीन ही हैं, ग्रीष्म, वर्षा तथा शरद। एक मौसम के व्यतीत होने तथा दूसरी के प्रारम्भ होने के १५-१५ दिनो को सधि दिवस कहते हैं। स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से इन दिनो अत्यधिक सावधान रहने की जरूरत है इसी लिये आयुर्वेद मे इन दिनो "अल्पभोगी जीवयेत" लिखा है अर्थात् कम खाना, कम मेहनत करना कम सोना, अर्थात किसी भी कार्य का आधिक्य वर्जित है।

शरद ऋतु व्यतीत होकर ग्रीष्म ऋतु का प्रारम्भ हो गया है, इन दोनो के सधि दिवसो मे नजला, जुकाम इन्फलूएजा, खासी आदि अनेक रोग जनता को परेशान करते रहते हैं।

भगवान भुवन भास्कर की प्रखर किरणें दिन व दिन अपना तेज बढा रही हैं तथा सृष्टि के जीवमात्र की व्याकुलता गर्मी की बढती हुई तेजी के कारण अधिक से अधिकतम हो रही है। गर्मी में शरीर से पसीना अधिक मात्रा में निकलता है तथा प्यास बार-बार व अधिक मात्रा मे लगती है। खाने को चाहे कम भले ही मिले पर पीने को शीतल जल तथा मीठी मन्द ठण्डी बयार ही अधिक प्रिय लगती है।

गर्मी मे अधिक हानि लूओ से होती है, गर्म रेतीली लहराती हवाओ का झन्झावात मनुष्य तो क्या प्रत्येक प्राणी को अपने नीड मे ही छुपे रहने को विवश कर देती है।

वैसे ग्रीष्म ऋतु की भी अपनी एक महत्ता तथा आवश्यकता है—सूर्य की प्रखर किरणें जहाँ फसलो को पकाने तथा जन-जीवन के भोजनादि के प्रबन्ध मे अपना योग देती हैं वहा वाष्प द्वारा जल को उडाकर जलधाराओ के निर्माण द्वारा वर्षा का भी प्रबन्ध करती हैं। गर्मी के कारण बहुत से कीटाणुओ का भी नाश होता है जो कि अनेक रोगो के फैलने आदि के कारण होते हैं। इस प्रकार के अनेक लाभ हमे प्राप्त होते हैं।

स्वास्थ्य के लिये शरद ऋतु को ही उत्तम माना गया है, पर भारत की गरीब व साधनहीन जनता को गर्मी की मौसम विशेष प्रिय है क्योकि इस मौसम मे विशेष वस्त्रादि की आवश्यकता नही पडती। जिधर चाहे जैसे चाहे लोट-पोट कर गुजर हो ही जाती है।

ग्रीष्म ऋतु में स्वस्थ रहने के लिए अपनी दिनचर्या इस प्रकार रखी जावें तो शरीर मे स्फूर्ति, शक्ति, तथा कान्ति बढेगी।

प्रात सूर्योदय से पूर्व ही उठ कर किसी बाग या अन्य खुले स्थान मे टहलना या हलका व्यायाम करना उचित है, जिन्हें गर्मी की अधिकता तथा जलन रहती हो वे नगे पैर ओस वाली हरी घास पर टहले तो लाभकारी सिद्ध होगा—उषा पान अर्थात् रात को ताम्बे के पात्र मे रखा हुआ जल पीने से कब्ज नही रहती तथा मल साफ हो जाता है जिन्हे पुरानी कब्ज हो वे इसका अवश्य ही प्रयोग करें। भजन कर शीतल जल से स्नान करें। प्रभु का ध्यान तथा ईश्वर का विश्वास भी स्वास्थ्यवर्धन में सहायक हो सकता है। नाश्ते मे छाछ का प्रयोग अति उत्तम है। नमक पोदीने तथा जीरे युक्त मठ्ठे के पीने से पेट के रोग नही हो पाते, लिखा भी है —

न तक्र भोजी व्यथते कदाचन, न तक्र दग्धा प्रभवन्ति रोगान।
यथा पुराणा भृत हिताय तथा नराणाम् भुवि तक्रमाहु॥

नीम्बू की शिकजबीन भी ली जा सकती है। नाश्ता जो भी हो हलका, सुपाच्य तथा ऋतु के अनुकूल ही होना चाहिए, अधिक गर्म भारी तथा गरिष्ट पदार्थों का प्रयोग इस ऋतु में अहितकर है, क्योकि जठराग्नि मन्द हो जाती है, इसी लिये भूख भी कुछ कम ही लगती है।

भोजन में दाल, चावल, फुलके, सलाद, नीम्बू, दही आदि पदार्थ लेने चाहिए। अधिक मसाले वाले तीक्ष्ण तथा तले हुए भारी व गरिष्ठ पदार्थ स्वास्थ्य के लिये अहितकर तथा हानि कारक हैं। दोपहर मे भोजन के बाद कुछ देर आराम कर लेना भी सेहत के लिये लाभदायक है।

मध्यान्ह मे तरबूज, खरबूजा, सन्तरा, शहतूत, फालसे, आम आदि सभी फल ठण्डे कर ले सकते हैं। रात को भोजन मे भी इसी प्रकार टिण्डे, तोरी, घिया आदि सब्जी फुलके वगैरह लें। रात्रि को सोते समय दुग्ध ले सकते हैं।

नींबू, पोदीना, धनिया, प्याज, हरी मिर्च, आम्बी आदि इस मौसम मे विशेष लाभकारी हैं।

शीतल जल का प्रयोग खूब करें। पानी से पेट भरा होने पर लू लगने का भय नही रहता—प्याज अथवा कपूर पास मे रखने पर लू से बचाव होता है।

सयम तथा ब्रह्मचर्य से रहना तो सदैव ही लाभकारी है पर इस मौसम मे विशेष लाभदायक है। भगवान की लीला है कि वह मौसम के अनुसार ही हमे फल सब्जिया आदि साधन प्रदान करता है।

आम कच्ची आमी को गर्म राख (भूभल) मे भून कर उसका पानी मे पना बना जीरा नमक या चीनी आदि स्वाद के अनुसार लेने से अत्यन्त रुचिकर तथा लू मे लाभकारी है।

हरे पोदीने व धनियाँ की आमी व हरी मिर्च भी चटनी भी अपनी लज्जत व स्वाद का सानी नही रखती। नीबू, पपीता, खीरा, ककडी, तरबूज खरबूजा आम वगैरह इस मौसम में खूब होते हैं तथा यथोचित प्रयोग से स्वास्थ्य को उन्नत तथा पुष्ट करते हैं। आम तो फलो का राजा ही कहलाता है।

तेज धूप तथा लूओ मे नगे सिर नही घूमना चाहिए। प्यास लगते ही पानी पीते रहना चाहिये। वृक्ष की ठण्डी छाँह तथा शीतल मन्द समीर भी पथ्य है। रात्रि को खुली हवा मे सोना चाहिए। मक्खी तथा मच्छरो से बचाव रखना आवश्यक है।

गर्मी मे शर्बत सर्वप्रिय तथा मधुर पेय है, शहतूत फालसा नीबू, गुलाबादि का शर्बत स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी है। आम्बी का पना भी सुमधुर रुचिकर पेय है। फलो के रसो मे समान भाग चीनी मिला कर शर्बत का घर पर भी पका कर बनाया जा सकता है—नीम्बू की शिकजबीन सर्वप्रिय पेय है।

यू तो हर ऋतु का अपना अलग-अलग महत्व है पर ग्रीष्म ऋतु न हो तो वर्षा के लिये बादल कहाँ से आए तथा गर्मी से अनाज न पके तो अन्न की समस्या और भी विकट हो जावे। अनावश्यक हानिकर कीटाणुओं का नाश कैसे हो। इसलिये ग्रीष्म ऋतु का अपना विशेष महत्व है। देश के लिये भी जनता के लिए भी।

सुमेर और सुमेर

(श्री पं० रामगोपाल वैद्य शास्त्री, करौल बाग, नई दिल्ली)

धवल सुमेरगिरि हिम के प्रभात से।
धवल हो सुमेर। तुम शुभ्र यश गात से॥
जल के प्रदान से, नग जीवन का दाता है।
रक्त बलिदान से, तू जाति को जगाता है॥
वज्र के प्रहारो से, खिसी तो निवाता नही।
दण्ड के प्रहारो से, तू भी घबराता नही॥
अद्रि तो मेघ द्वारा, वारि बरसाता है।
तू भी प्राण त्याग द्वारा, अमृत पिलाता है॥
मातृ भाषा हेतु तूने, दृढ़ता दिखाई है।
जेल मे पिशाचो द्वारा, वीरगति पाई है॥

सुमेर=प्रसिद्ध पर्वत, पजाब हिन्दी आन्दोलन के शहीद वीर सुमेर सिंह। गात=शरीर।

सम्पादकीय

१. हरयाणा सरकार से—

आर्य्यावर्त्त के पवित्र भूखण्ड हरयाणा मे अति प्राचीन काल से ही वेद आदि सत्यशास्त्रो और संस्कृत साहित्य के अंगोपाङ्गो का पठन-पाठन चला आया है। कुरुक्षेत्र भूमि मे बडे-बडे ऋषियो मुनियो का निवास रहा है। इस की सरस्वती आदि नदियो के तटों पर व्यास आदि महर्षियो के आश्रमों में देश विदेशो से आ-आ कर सहस्रो छात्र ब्रह्मचर्य पूर्वक वेदाध्ययन करते थे। यज्ञो के धूम से समस्त आकाश सुगन्ध से पूरित रहता था। इसी भूखण्ड के कुरुक्षेत्र युद्ध का इतिहास लिखा गया जो कि आज महाभारत महा काव्य के रूप मे सर्वत्र पढा जाता है।

इस मे सन्देह नही कि यह राज्य आक्रान्ताओ से सर्वप्रथम मुठभेड करता था, इसी कारण संस्कृत अध्ययन-अध्यापन मे कमी हुई। परन्तु यह भी सत्य है कि अंग्रेजी राज्य की सत्ता यहाँ आने से पूर्व सभी बडे-बडे ग्रामो मे संस्कृत की पाठशालाएँ चलती थी। इस नवीन शिक्षा प्रणाली ने उस आर्ष प्रणाली को मिटा दिया।

महर्षि दयानन्द की दया और आर्यसमाज के प्रचार से यहाँ संस्कृत के अनेक गुरुकुल और पाठशालाएँ खुली। फिर से वेद-मन्त्रो की मधुर ध्वनि सुनाई देने लगी। आर्यसमाज के कारण सभी बिरादरियो और सम्प्रदायों के लोगो मे संस्कृत विद्या का प्रसार हुआ। सौभाग्य से आज उन बिरादरियो मे संस्कृत और वेदो के प्रकाण्ड पण्डित हैं जिनको अछूत और शूद्र कहा जाता था।

भगवान् की दया से पंजाब से हरयाणा फिर अलग होकर अपने अस्तित्व मे आया है। परन्तु अभी तक पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ से शिक्षा बन्धन मे जकडे होने के कारण पंजाबी का पचडा दूर होना शेष है। इस पर एक चोट और लगने की आशंका है कि भारत सरकार के शिक्षा फार्मूले के कारण हरयाणा राज्य मे दक्षिण की तमिल भाषा को जबरदस्ती लादने का राजनीतिक कुचक्र चलने का षड्यन्त्र किया जा रहा है। इससे राज्य मे संस्कृत की पढाई को गहरा धक्का लग जावेगा। तमिल हरयाणा वालो के किस काम आ सकती है? जब पंजाबी से राज्य वासियो का कुछ प्रयोजन नही, तो तमिल से क्या लाभ हो सकता है?

हरयाणा सरकार से हम प्रबल अनुरोध करते है कि वह तमिल के चक्र मे न फसे और संस्कृत को प्रोत्साहन देवे। समय रहते यह चेतावनी है, अन्यथा सरकार और जनता का भाषा-संघर्ष अनिवार्य हो सकता है।

२. अस्पृश्यता अशास्त्रीय है—

दुर्भाग्य से इस हिन्दू नाम आर्य लोगो मे कुछ न कुछ ऐसी भ्रान्ति चलती है, जिसके कारण हिन्दुओ मे बिरादरियो के नाम पर टुकडे बढने लग जाते हैं, इतना ही नही। हिन्दुओ से पृथक् होकर अनेक सम्प्रदाय बन चुके हैं। दुर्भाग्य से पुरी के जगद् गुरु शङ्कराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थ के एक वक्तव्य से ऐसी आशंका पैदा हो गई है कि आर्यजाति के प्रमुख अङ्ग करोडो हरिजन कहे जाने वाले भाई पृथक् हो जाने का विचार करने पर विवश हो रहे है अथवा किये जा रहे हैं।

इस मे सन्देह नही कि स्वच्छता और शुद्धता के रूप मे मद्यमांसाहारी तथा गन्दे धन्धे करने वाले लोगो के साथ भोजन व्यवस्था मे बाधा है परन्तु यह बाधा ऊँच नीच छूआछूत के नाम पर नही किन्तु गन्दे पेशे के नाम पर है। इस बाधा का प्रभाव स्पृश्यता-अस्पृश्यता पर नही पडना चाहिये। देखिये सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द लिखते हैं—

"इन से व्यवहार और गुण ग्रहण करने मे कोई भी दोष वा पाप नही है, किन्तु इन के मद्यपानादि दोषो को छोड गुणो को ग्रहण करें तो कुछ भी हानि नही। जब इनके स्पर्श और देखने से भी मूर्ख जन पाप गिनते हैं इसी से उनसे युद्ध कभी नही कर सकते क्यो युद्ध मे उनको देखना और स्पर्श होना अवश्य है।' १०वा समुल्लास।

इस स्थल से स्पष्ट हो जाता है कि भोजन व्यवस्था और स्पर्श-अस्पर्श-भाव को एक समान नही माना जा सकता है। आशा है धर्म शास्त्रो के विद्वान् ऐसा अडंगा न डालेंगे कि जिससे वैदिक संस्कृति और भारतीय आर्य सभ्यता को हानि पहुचे।

३. जन्म मात्र से सब मनुष्य एक हैं—

जो लोग जन्म से ऊँच नीच भाव मानते है—वे अपने ही पूर्वज ऋषियो के पवित्र और दार्शनिक मन्तव्यो का तिरस्कार करते हैं। न्याय-दर्शन के रचयिता महर्षि गौतम मुनि का यह वचन है—

समानप्रसवात्मिका जाति ॥—न्याय २-२-६७

अर्थात् जिन जीवो की प्रसूति—उत्पत्ति—जन्म का स्वरूप समान हो, उन जीवो की जाति एक ही होती है जैसे मनुष्य पशु और पक्षी आदि जातिया हैं। मनुष्य मात्र को देखने पर एक ही समान ज्ञान होता है कि यह मनुष्य जाति का जीव है। जो सज्जन जाति और वर्ण को एक समझते हैं—यह उनकी भ्रान्ति है।

४. वर्ण भेद—

मनुष्य जाति मे वैदिक संस्कृति और सभ्यता को मानने वालो मे वर्ण व्यवस्था गुण कर्म और स्वभाव के भेद से है जन्म से नही। कुछ सज्जन स्वभाव से जन्म का ग्रहण करते हैं यह मिथ्या मत है। दो सगे भाइयो मे स्वभाव भिन्न-भिन्न प्रकार के देखे जाते हैं जब कि जन्म दोनो का एक ही माता-पिता से होता है। धर्म शास्त्रों में वर्ण व्यवस्था की भरपूर चर्चा मिलती है। आर्यों मे शिक्षा आदि गुणो मे रहित होने पर शूद्र संज्ञक कहलाता है। यदि उन गुणो से विभूषित हो जावे तो वर्ण परिवर्तित हो जाता है। मनुस्मृति मे कहा है—

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैव शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च ॥ १० ६५ ॥

अर्थात् शूद्र कुल मे उत्पन्न हो के ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण कर्म स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय, वैसे ही जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य कुल मे उत्पन्न हुआ हो उसके गुण कर्म स्वभाव शूद्र के सदृश हो तो वह शूद्र हो जाय वैसे क्षत्रिय वा वैश्य के कुल मे उत्पन्न हो के ब्राह्मण वा शूद्र के समान होने से ब्राह्मण वा शूद्र भी हो जाता है।—सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुल्लास ॥

इस प्रकार के उदाहरण महाभारत आदि ग्रन्थो मे भरे पडे हैं। विस्तार के लिये उन उन ग्रथो को देखना चाहिये। जैसे कोई ब्राह्मणादि पतित होकर ईसाई आदि बन जावे तो वह ब्राह्मणादि नही कहलाता, इसी प्रकार मनुष्य गुण कर्म से ऊपर भी उठ जाता है।

५. पुरी के श्री शङ्कराचार्य जीसे शास्त्रार्थ—

अस्पृश्यता के सम्बन्ध में पुरी के शङ्कराचार्य जगद् गुरु श्री निरंजन-देव तीर्थ पर सरकार की ओर से मुकदमा नही चलाया जाना चाहिये। किसी भी व्यक्ति के विचारो को बल-पूर्वक राजदण्ड से दबाया जाना हानि-कर होता है। इस ढग से समस्या का समाधान नही हो सकता। सरकार शरीर और वाणी पर रोक लगा सकती है, परन्तु मन और आत्मा पर नही। अत सरकार को हम सुझाव देना आवश्यक समझते हैं कि श्री शङ्कराचार्य जी से वेदादि सत्य शास्त्रो के आधार पर शास्त्रार्थ कराया जावे। यह इस बात को प्रमाणित कर देगा कि शुद्ध धर्म वैदिक मत के अनुसार किसी भी मनुष्य के साथ जन्म के आधार पर अस्पृश्यता अनुचित है। शास्त्रार्थ मे बलाबल की जाच हो जावेगी। आशा है भारत सरकार मुकदमा न चलवा कर शास्त्रार्थ का आयोजन करावेगी, आर्यसमाज शास्त्रार्थ के लिये सन्नद्ध है।

(शेष पृ० ४ पर)

जाग रे ! संतान मनु की

(श्री सूर्य्यकुमार पाण्डेय, ५३ छोटा चाँद गंज, लखनऊ)

देखकर पौरुष तुम्हारा, काल भी है त्रास खाता,
जाग रे ! सन्तान मनु की, खोजती है आज माता।
आज तक ससार में जिनका कि झुक पाया न माथा,
पूर्वजो की याद कर ले आज फिर से वीर-गाथा।
वीरता की मूर्ति राणा हाथ ले जब चला भाला,
शत्रु सम्मुख टिक सका क्या ? तुरत ही सहार डाला।
आज तक जिस वीर का यश है अखिल ससार गाता।
जाग रे ! सतान मनु की खोजती है आज माता ॥
वह शिवाजी शत्रु ग्रीवा युद्ध-थल म काटता था
मुगल औरगजेब-सेना से धरा को पाटता था।
कर लिया अधिकार दुर्गों पर कि फहरा दी पताका,
और दिखलाया जगत को है कि क्या स्थान माँ का।
आज फिर से दीन माँ का पास है सदेश आता।
जाग रे ! सतान मनु की खोजती है आज माता॥
कूद लक्ष्मी भी गई थी साथ अपना लिये घोडा
एक भी गोरा न छोडा और मुख अपना न मोडा।
मर गई आदर्श देकर वह कि सबको एक नारी,
छोड दी ज्वाला धधकती, लाज रखने को हमारी।
आज भी आदर्श उसका है हमे सामर्थ्य दाता।
जाग रे ! सतान मनु की, खोजती है आज माता॥
समय बीता, माँ जकड कर शत्रु कर मे गई बाँधी
ज्योति ले आये दयानन्द, सत्य ले आया कि गाँधी।

आज 'आर्य भूमि' पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली

(श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर कुरडायाँ (राजस्थान)

आज 'आर्य भूमि' पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली।
आर्यावर्त की नार नवेली मल-मल अन्तर अग चमेली।
सज-धज पूण सग सहेली घूमन बेधडके अलबेली॥
नहिं सादगी अरु सुहाग की शिर पर सुन्दर रोली।
आज आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥१॥
वात्सल्य स्वाभाविक रतिका, अन्तर मे अभाव सद् वृत्तिका।
पिता पुत्र भ्राता व पति का, अकुश सहन करे न रतिका॥
तितली बन उड रही गगन मे कर ढीलि निज चोली।
आज आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥२॥
शिर पर चोटी चिह्न नही है, गले जनेऊ भी न कही है।
टाई परम छवि पाय रही है, फैशन की हद बाढ बही है॥
अनु व्रत पिता पुत्र श्रुति आज्ञा डग-मग नैया डोली।
आज आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥३॥
स्नेह श्रृंखला टूट रही है, मर्यादा सद् उठ रही है।
लता द्वेष की फूट रही है समता सुचिता छूट रही है॥
विषय-विलासिता की दावानल धधक रही विष घोली।
आज 'आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥४॥
राष्ट्र पुत्र बन रहे विदेशी, सब प्रकार उपराम कुवेशी।
वर्त्तमान गति विधि है जैसी, कभी दुर्दशा थी नहिं ऐसी॥
कहा कहे कच्छ कहा न जावे बढ रही इगलिश बोली।
आज आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥५॥
प्राण रूप भारत की भाषा 'हिन्दी" हद सुध पडी निराशा।
अटको किस आशा हित खासा, 'बादीगर' सा माँड तमासा॥
कर्ण धार शिर फिरे देश के महल चढा रहे गोली।
आज "आर्य भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥६॥

(क्रमश)

प्रभु तुम कैसे जगत रचायो

श्री कन्हैया लाल गुप्त—पूरे दक्षिण लाल, जिला—सुलतानपुर (उ० प्र०)

प्रभु तुम कैसे जगत् रचायो।
गगन पवन क्षिति, जल औ पावक कहाँ से तुम लै आयो।
निराकार होकर तुम कैसे जग साकार बनायो ॥ प्रभु० ॥
सूरज को दियो तेज तपन और शीतल चाद बनायो।
नभमण्डल मे तारागण को मोती से बिखरायो।
चन्द्र करै पृथ्वी परिक्रमा, नभ में सूर्य घुमायो।
सूरज के चहुँ दिशि पृथ्वी को काहे नाच नचायो।
नाना आकृति के चोलो को नाथ कहाँ से लायो।
जल थल औ आकाश मे भगवन् जीव असख्य बसायो।
मन, चित्त बुद्धि ज्ञान और शक्ति देकर मनुज पठायो।
श्रवण चक्षु नासिका, रसना अद्भुत तन्त्र लगायो।
भाँति-भाँति की वनस्पति तुम धरती पर उपजायो।
जान सका नहि भद 'कन्हैया' प्रथम बीज कहाँ से लायो॥प्रभु॥

पृ० ३ का शेष

६. अन्धानुकरण नहीं चाहिये—

जब कोई हिन्दू देवी किसी मुसलमान अथवा ईसाई आदि विधर्मी के साथ विवाह करती है, तब आर्य बन्धुओ मे हलचल मच जाती है। यह बात स्वाभाविक भी है। परन्तु इस बात को लेकर सरकार से बन्धन डालने की माग की जाती है। इस पर विचार करना आवश्यक है। विपक्ष मे यदि कोई विधर्मी स्त्री किसी आर्य अथवा हिन्दू से विवाह करती है तब क्या सरकार से वही बन्धन की माग की जाती है ? नही। यदि एक पक्ष मे बन्धन की माग की जाती है तो दूसरे पक्ष में माग को जानी स्वाभाविक ही है। इस से जहाँ ईसाई आदि प्रचार को मन का प्र चार करने से सरकार से रोक लगाने की माग की जावे तो ईसाई देशो मे वैदिक धर्म के प्रचार पर भी बन्धन लग जावे, तो ऐसी दशा मे क्या कहा जा सकता है ? ऐसी अवस्था मे हमारा निज मत यह है कि किसी प्रकार के प्रलोभन आदि को बिना कोई स्त्री वा पुरुष अपना मत परिवर्तित करता है, तो उस पर सरकारी बन्धन नही डाला जा सकता। अभी एक जर्मन विद्वान् ने वैदिक धर्म को ग्रहण किया है इस पर आर्यो को कुछ आपत्ति नही अपितु प्रसन्नता हुई है। जो पुरुष वा स्त्री हिन्दू मत को छोड कर जाते हैं, उनको ऐसा करने से रोकने के लिये वैदिक धर्म के प्रचार की आवश्यकता है, नही तो दुधारी तलवार दोनो पक्षो को काट सकती है—शत्रु का गला भी और अपनी गर्दन भी।

खेद से कहना पडता है कि उडीसा आदि मे वनवासियो को ईसाई मत मे धकेलने मे हिन्दुओ का भी हाथ है—ऐसे हिन्दू उन निर्धनो बनवासियो से व्यापार मे इस प्रकार लूट करते हैं, कि जिस से तग आ कर वे ईसाइयो के बाडे मे जाने मे विवश हो जाते हैं। ईसाइयो के पास धनादि की कमी नही—हिन्दुओ को अपनी इस कमी को भी अवश्य ध्यान मे रखना चाहिये। यदि इस पर आचरण किया जावेगा तो निर्धन पीडित शोषित लोग विधर्मियो के जाल में फसने से बच सकते हैं और बचाये जा सकते हैं। अपने दुर्गुणो और दोषो को हटाना भी अनिवार्य है। केवल दूसरों के दुर्गुणों को कहते जाना बुराई का कुछ प्रतीकार नही। इस बात पर भी ध्यान रखना चाहिये।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

राष्ट्र निर्माण का वैदिक स्वरूप

[श्री सत्येन्द्र सिंह आर्य एम० ए०, आमपुर]

भारत को स्वतन्त्र हुए बाईस वर्ष होने को आये परन्तु राष्ट्र को जिस रूप में राष्ट्र के महान शुभचिन्तक देखना चाहते थे उस रूप मे राष्ट्र आज तक नहीं आ पाया। स्वतन्त्रता मिलने से पूर्व जो वीर सेनानी स्वाधीनता संग्राम मे तन, मन धन से जुटे हुए थे वे दिल मे यही साध लिये थे कि जो सुख और सुविधाये पराधीन होने के कारण देशवासियो को प्राप्त नही हैं वे सब सुख, सुविधायें स्वाधीन हो जाने पर राष्ट्र के लोगो को प्राप्त हो जायेंगी। जिन वीर पुरुषो ने राष्ट्र को स्वतन्त्र कराने के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था उनके अनुपम त्याग, अथक प्रयास और नि स्वार्थ बलिदान से सन् १९४७ मे १५ अगस्त को राष्ट्र मे स्वाधीनता का प्रात -काल हुआ। राजसत्ता अपने देशवासियो के हाथ मे आ गई। राष्ट्र के कर्णधारों ने राष्ट्र के विकास, सुख और शान्ति के लिए पचशील और पचवर्षीय योजनाएँ बनाईं और औद्योगिक, सामाजिक तथा जीवन के अन्य क्षेत्रो मे अपनी समझ के अनुसार कार्य किया। परन्तु इन सब योजनाओ और प्रयत्नो के होने पर भी आज स्थिति यह है कि शिक्षित लोगो की तो बात क्या है, देहात का साधारण से साधारण व्यक्ति भी यह अनुभव करता है कि स्वतन्त्रता के इन बाईस वर्षों के लम्बे समय मे राष्ट्र की उन्नति और विकास जितना होना चाहिए था उतना नही हुआ। प्रगति का जिस शिखर तक पहुच जाने की आशा थी उससे राष्ट्र बहुत पीछे है। इस अभीष्ट उन्नति के न होने का मूल कारण यह है कि स्वाधीनता मिलने पर जिन राजनेताओ ने शासन की बागडोर सम्भाली उन मे वे गुण और योग्यताएँ नही थी जो कि उनके लिए आवश्यक हैं इसी कारण वे राष्ट्र निर्माण के महान् दायित्व को सफलता पूर्वक नही निभा सके। स्मृतिकार ने शासक के लक्षण निम्न प्रकार से किये हैं।

ब्राह्म प्राप्तेन सस्कार क्षत्रियेण यथाविधि।
सर्वस्यास्य यथान्याय कर्तव्य परिरक्षणम्॥ मनु० अ० ७-२

क्षत्रिय को चाहिए कि जैसा परम विद्वान् ब्राह्मण होता है, विद्या, सुशिक्षा से वैसा ही विद्वान् और सुसस्कृत होकर वह राज्य की रक्षा न्याय से यथावत् करे। स्पष्ट है कि शासक मे जहाँ क्षात्र-गुण का होना आवश्यक है वहा उसका विद्वान होना भी अनिवार्य है। जिस विद्या को प्राप्त करने का सकेत इस श्लोक मे किया गया है उस विद्या के अन्तर्गत आज विद्यालयो मे पढाई जाने वाली शिक्षा और ज्ञान के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ आता है। राजनीति, दण्डनीति, न्याय-व्यवस्था और समस्त राज-कार्यों का कुशल वेत्ता होने के लिए जो ज्ञान और विद्या अपेक्षित है वह सब प्राप्त किया जाना चाहिए। केवल विद्यालय की पढाई कर के या उसके बिना ही धन, छल, प्रपच और शक्ति के प्रयोग से निर्वाचन जीत कर शासक बनने की परम्परा जब तक चलेगी, राष्ट्र-निर्माण का कार्य तब तक नही हो सकेगा। यदि राष्ट्र निर्माण की कार्य-व्यवस्था को सम्भालने वाले शासक सब प्रकार से योग्य और वेदज्ञ विद्वान् होंगे तो उनको इस महान् कार्य मे अवश्य ही आशातीत सफलता मिलेगी—यह निश्चित है। वेद में कितने ही मत्र आते हैं जिनसे राष्ट्र-निर्माण का सम्यक् दिग्दर्शन होता है।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभाग समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्नि सपर्यतारा नाभिमिवाभित॥ अ० वेद ३-३०-६

वेद का आदेश है कि सब राष्ट्र वासियों का प्रपा समान हो, उनके खान-पान, रहन-सहन मे समानता और एक जैसा पन, मिला-जुलापन हो। कही ऐसा न हो कि धन अन्न और आवश्यकता की अन्य वस्तुओ के असमान वितरण के कारण राष्ट्र के कुछ सीमित लोगों का प्रपा तो श्रेष्ठतम हो जाये और शेष लोग सूखी रोटियो के लिए भी तरसते रहें। इस सीमा तक तो बात मानी जाने के योग्य है कि धन तो प्रत्येक को अपने-अपने परिश्रम और योग्यता के अनुसार ही पारिश्रमिक के रूप में मिलना चाहिए परन्तु उस धन से आवश्यकता की सब वस्तुएँ तो सब को एक समान सुविधा से मिलनी चाहियें। आज तो दिखाई यह देता है कि राष्ट्र में आय के आधार पर वर्गीकरण हो गया है। उच्च वर्ग के लोगों को खाने पीने और पहनने की सभी उत्तम वस्तुएं बडी आसानी से घर बैठ ही पर्याप्त से भी अधिक मात्रा में कण्ट्रोल रेट पर ही आ जायेंगी और निम्न वर्ग तथा मध्यम वर्ग के लिए आस्ट्रेलिया और अमेरीका से आया हुआ सारहीन जीवन तत्त्वो (Vitamins) से रहित और घटिया गेहू भी राशन की दुकान पर पक्ति मे घण्टो खडे होकर भी आवश्यकता के अनुसार कठिनता से ही मिल पाता है। परतन्त्रता के दिनो मे जिस असमानता का रोना रोया जाता था वह असमानता बढी ही है, घटी नही। इस पारस्परिक असमानता के कारण ही राजनीति में, औद्योगिक क्षेत्र मे तथा जीवन के अन्य क्षेत्रो मे बहुत से लोगो ने खिन्न होकर असन्तुष्ट गुट का घटन कर लिया है और 'न काम करो, न दूसरो को करने दो' का मार्ग अपना कर विघटन के कार्य पर लग गये हैं। उनके काम न करने का प्रभाव अन्ततोगत्वा राष्ट्र-निर्माण पर विपरीत दिशा मे ही पडेगा। यदि ऐसी व्यवस्था हो जाय कि राष्ट्र के सब लोगो को अपनी-अपनी योग्यता और पुरुषार्थ के अनुसार किये गये श्रम का पारिश्रमिक न्यायानुसार मिले और उस पारिश्रमिक के रूप मे मिले धन से खरीदने के लिए आवश्यकता की वस्तुएँ सब के लिए समान रूप से सुलभ हों तो धीरे धीरे कुछ न कुछ समानता आ जायेगी लोगो मे सन्तोष बढेगा और सब अपना-अपना काय उत्साह से करेंगे।

दूसरी बात इस मन्त्र में कही गई है कि हम सब अपन आप को इस राष्ट्र रूपी रथ के जुए में उसी प्रकार जुडा हुआ समझें जैसे कि साधारण रथ के जुए में उस रथ को आगे ले चलने के लिए बैल घोडा या अन्य भार वाहक पशु जुडा होता है। अभिप्राय यही है कि राष्ट्र का कुछ न कुछ भार हमारे ऊपर भी है। हम राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व को समझ राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य की ओर से उदासीन न हो विमुख न हो। जैसे बैल आदि पशु गाडी को खीच कर आगे ले चलते हैं वैसे ही राष्ट्र वासियो को चाहिए सब मिलकर इस राष्ट्ररूपी रथ को प्रयत्न पूर्वक आगे बढायें, उन्नति के मार्ग पर ले चलें। परन्तु वेद के विशुद्ध आदेश से अनभिज्ञ राज नेता तो आज यह सोचते हैं कि हमारे हिसाब से तो राष्ट्र बनें या बिगडे, आगे बढे या जहा का तहा खडा रहे, हमें इससे क्या लेना, देना है, बडे प्रयास से तो सत्ता मिली है अब तो धन बटोर कर स्विट्जरलैण्ड के बैंक में जमा कर लेवे, पता नही कब हमारे विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो जाय और यह स्वर्णिम अवसर हाथ से निकल जाय। वेद कहता है कि राष्ट्र को आगे ले चलने का भार प्रत्येक नागरिक पर है पर यहा स्थिति यह है कि राजनेता राष्ट्र को आगे बढाने में अपना कोई दायित्व ही नही समझते। यथा राजा तथा प्रजा स्वाभाविक ही है।

तीसरी बात इस मन्त्र मे उदाहरण द्वारा बताई है कि हम अपने आप को राष्ट्र से सम्बद्ध समझें ऐसा देश-द्रोह कभी न करे कि अपने को राष्ट्र से असम्बद्ध मान लेवें और चीन पाकिस्तान जैसे शत्रु राष्ट्रो से साँठ-गाँठ कर लें। रथ के पहिये में अरे उस पहिये के केन्द्र (नाभि) को पहिए की परिधि से सम्बद्ध रखते हैं और अलग नही होने देते। रथ पहियो पर ही टिका होता है और उन पर ही आगे ले जाया जाता है। यदि अरे (spokes) पहिये से निकाल दिये जाय तो रथ को आगे ले जाये जाने की तो बात क्या है, वह जहाँ खडा है वहा भी टिका नही रह सकता, पृथ्वी पर ही धराशायी हुआ दिखाई देगा। यदि कोई उसे आगे बढाने का प्रयत्न भी करेगा तो घसीटकर ही आगे ले जाया जा सकेगा, सम्यक् स्वाभाविक गति पर नही। ठीक इसी प्रकार से आज राष्ट्र (रूपी रथ) को घसीटा ही जा रहा है वह कोई मधुर गति से नही चल रहा क्योंकि अरे अर्थात् राष्ट्रवासी (विशेषकर राजनेता लोग) अपने आप को राष्ट्र से सम्बद्ध नही रख रहे हैं। कहने का आशय यही है कि जो जहा पर भी है और उसका जो कुछ भी कर्तव्य बनता है वह उसे ईमानदारी से प्रयत्न पूर्वक पूरा करे तभी राष्ट्र की उन्नति होगी। यदि हम अपने को राष्ट्र से असम्बद्ध मानकर अपने कर्तव्य के प्रति उपेक्षा बरतेंगे तो राष्ट्र के निर्माण मे न्यूनता, दोष और धीमेपन का आना आवश्यक ही है। जैसे मशीन के छोटे से छोटे पुर्जे का भी मशीन को चलाने के लिए अपना अलग महत्त्व और स्थान है वैसे ही हम सब भी राष्ट्र रूपी मशीन के अलग-अलग पुरजे

शेष पृष्ठ ६ पर

देश के चरित्र निर्माण में शिक्षकों का योग

(ले० कु० सुशीला आर्या एम ए संस्कृत-प्रवक्ता राज० उच्च० मा० कन्या विद्यालय चरखी दादरी)

चरित्र मानव जीवन की सबसे बडी सम्पदा है। प्रसिद्ध स्मृतिकार मनु महाराज ने तो आचार प्रथमो धर्म श्रुत्युक्त स्मार्तएव च' कह कर धर्मों में प्राथमिकता आचार को ही दी है। अन्य विचारक गण भी ऐसा मानते आए हैं कि धन गया ता समझो कुछ भी नही गया, स्वास्थ्य गया तो समझो कुछ हानि हुई है चरित्र गया तो समझो सब कुछ नष्ट हो गया। इससे भी सभी धनो मे चरित्र धन प्रमुख प्रमाणित होता है। वर्तमान युग मे भी चरित्र की महत्ता कुछ क्षीण हुई हो ऐसी बात नही हाँ जीवन-प्रणाली अवश्य इस ढग की हो गई है कि चरित्र-निर्माण पर ध्यान कम दिया जाता है। यो तो प्रत्येक माता-पिता अपनी सन्तान को सच्चरित्र देखना चाहता है। तभी तो स्वय चाय तम्बाकू व शराब पीने वाले पिता अपने बच्चों को कहते सुने गए हैं कि वे इन बुराइयो से दूर रहें। माता पिता से अगले स्थान पर शिक्षक इस कार्य के लिए उत्तरदायी हैं।

एक समय था जब कुछ वर्षों के लिए ही सन्तान को शिक्षको गुरुओ के हाथो सौंप दिया जाता था। उस समय के आश्रम जीवन में शिक्षको का प्रभाव शिष्यो के चरित्र पर अवश्यभावी था ही, किन्तु इस युग मे भी चाहे गुरु शिष्यो का सम्पर्क तुलना मे प्राचीन काल की अपेक्षा कम है फिर भी उनके प्रभाव से निषेध नही किया जा सकता।

इसलिए आज का शिक्षक वर्ग इस उत्तरदायित्व से किनारा नहीं कर सकता कि देश की सन्तान के चरित्र-निर्माण मे उनका भी हाथ है। शिक्षक विद्यार्थी को दो प्रकार से पढाता है—एक पाठ्य पुस्तको के माध्यम से दूसरा अपने जीवन को खुली पुस्तक के द्वारा। पाठ्य पुस्तको मे कुछ त्रुटिया भी सम्भव हैं। क्योकि इस युग मे उनका निर्धारण शिक्षको द्वारा तो क्या होना था इस कार्य मे उनका परामर्श भी नही लिया जाता। यद्यपि शिक्षा शास्त्री ही इस कार्य को सम्पन्न करते हैं किन्तु यह अनिवार्य नही कि वे उत्तम शिक्षक भी रहे हो। फिर भी पुस्तकों में जो कुछ लिखा है उसे उलटे सीधे जिस रूप मे शिक्षक चाहे अपनी रुचि अनुसार विद्यार्थियो की बुद्धि मे बिठा सकता है। बुरे भले का विवेक शिक्षक के मस्तिष्क मे जितना है उसे वह अपने शिष्य के मन मस्तिष्क मे भी उडेल सकता है। किसी विषय का सम्यक् बोध कराने के साथ-साथ उसका नैतिक प्रभाव किस रूप मे छात्रो पर पडता है इसका मूल्यांकन करने की क्षमता शिक्षक में होनी चाहिए। उदाहरण के लिए वह गणित के प्रश्नो से भी ईमानदारी का पाठ पढा सकता है। स्वास्थ्य विद्या तो है ही चरित्र-विद्या। जहाँ तक उसमे भक्ष्य-अभक्ष्य पदार्थों के खाने बनाने का प्रश्न है सामान्य मान्यता आज भी मासाहारादि के विरुद्ध ही है। इसकी पुष्टि करने से विद्यार्थियो की धारणा शक्ति और दृढ होती है। साहित्य पाठन से भी अध्यापक छात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियो का विकास कर सकता है। उसमे यत्र-तत्र आए रूपक वा अतिशयोक्ति अलङ्कारों का रहस्य समझा कर ग्राह्य तथ्य का ज्ञान कराना अनिवार्य होता है। मनोविज्ञान इत्यादि विषय तो चरित्र सम्बन्धी शिक्षा का बहुत सुन्दर माध्यम हैं ही। इस प्रकार सभी पाठय विषयों की सहायता से शिक्षक विद्यार्थी वर्ग को सच्चरित्रता की पून्जी से धनवान बना सकता है।

किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षा जो शिक्षक अपने शिष्य वर्ग को देता है वह है उसके अपने जीवन रहन-सहन और कार्यप्रणाली द्वारा विद्यार्थी विद्यालय मे पढने आता है वह पुस्तको को पढता है—और पढता है शिक्षक वर्ग को भी। यहाँ तक कि खाली घण्टियों में भी गुरुजनों की गतिविधियो के अध्ययन का उसका क्रम जारी रहता है। ऐसा समझना भूल होगी कि अवकाश के पश्चात् वह इस वातावरण से सर्वथा विमुक्त हो जाता है। नही दिन भर के इस प्रभाव के छायाचित्र उसके मस्तिष्क पर अङ्कित होकर उस अतिरिक्त समय मे भी प्रभावित करते हैं। कौन शिक्षक कितनी कर्त्तव्य-परायणता से अपने कार्यकाल व्यतीत करता है, छात्रो के जीवन-निर्माण में उसे कितनी रुचि है उनके हानि-लाभ के प्रति उसकी कितनी सम्वेदना है ऐसी सभी गतिविधियो को वह पैनी दृष्टि से देखता और उन सबके मिश्रित परिणामो के आधार पर उसका दृष्टिकोण शिक्षक के प्रति भी बनता है तथा उसके स्वय के चरित्र पर भी यही प्रभाव अङ्कित होता है। विद्या-विलास में निमग्न शिक्षक ही विद्यार्थी को विद्यार्थी बनने की प्रेरणा देता है जब कि शृगार परस्त सुखार्थी बनने पर बाधित करता है। सादगीप्रिय अध्यापक से विद्यार्थी सरलता और सादगी का प्रसाद ग्रहण करते हैं। इसलिए शिक्षकों का परम कर्त्तव्य है कि वे अपने चरित्र की खुली पुस्तक को कही से मैली न होने दें कटने-फटने न दें। यदि हममें कुछ त्रुटिया हैं भी उनसे विद्यार्थियो को अछूता रखने का यत्न करना भी इसका एक उपाय है। एतदर्थ हमारे प्राचीन गुरुओ की वह उक्ति हमें कभी न भूलनी होगी जो वे समावर्तन के समय शिष्य को कहा करते थे—"यान्यस्माक सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि—हे शिष्य! जो हमारे अच्छे आचरण हैं उन्हे ही तुम ग्रहण करना अन्यो को नही।" यदि शिक्षक इस उक्ति को स्मरण करेगा तो वह अपने कुछ आचरण तो ऐसे बनाने का यत्न करे ही जो छात्र के लिए उपास्य हों। इसमें कोई सन्देह नहीं कि देश के चरित्र निर्माण में आज भी शिक्षक वर्ग का महत्त्वपूर्ण योगदान सम्भव है। आवश्यकता केवल कर्त्तव्य-बोध की है। विद्यार्थीगण को जैसे-तैसे (चोर दरवाजे से ही क्यो न सही) केवल परीक्षा सागर से पार उतार देना ही शिक्षक की सफलता नही- उसे मनुष्य बनाना सर्वप्रथम ध्येय है। वेद का सन्देश है— मनुर्भव जनया दैव्य जनम्" पहले हम स्वय मनुष्य बनें फिर अपने इन मानसपुत्र एव पुत्रियो को देवी देवता बनाएँ, दिव्यजनो को जन्म दें। यही आदर्श शिक्षकों की सफलता की कसौटी है। इस कठिन कर्तव्य की पूर्ति हेतु हमें स्वजीवन निर्माण का पुण्यकार्य भी करना होगा जो कालान्तर मे न केवल हमारे शिष्यवर्ग के लिए अपितु स्वय हमारे लिये भी वरदान सिद्धहोगा।

(पृष्ठ ५ का शेष)

चौथी और अन्तिम बात इस मन्त्र में कही है कि हम सब (सम्यञ्चो) भली प्रकार से एक ढग से (अग्निम्) ईश्वर को (सपर्या) उपासना करें। यह अन्तिम बात भी कोई कम महत्व की नहीं है। आस्तिकता के भाव से कर्तव्य पूरा करने की बडी प्रेरणा मिलती है सबकी विचार धारा में सामन्जस्य रहता है विवाद कम होते हैं। यदि सब एक मत और एक मन होकर अपने-अपने कार्य करने में लग जावें तो जितना कार्य अब हो रहा है उससे कई गुना अधिक कार्य सम्पन्न हो सकेगा। विघटन एवम् विनाश के काय स्वमेव समाप्त हो जावेंगे और निर्माणकारी कार्य तीव्र गति से होंगे।

इस ऊहापोह के अतिरिक्त वे साधारण बातें भी स्मरण के योग्य हैं जो महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने अमर ग्रथ सत्यार्थ-प्रकाश में राष्ट्र की व्यवस्था को ठीक बनाये रखने के लिये आवश्यक बताई हैं। "जो-जो नियम राजा और प्रजा के सुख कारक समझें उन-उन नियमो को पूर्ण विद्वानो की राज्य सभा बाधा करे। शरीर आत्मा में पूर्ण बल सदा रहे क्योंकि जो केवल आत्मा का बल अर्थात् विद्या ज्ञान बढाये जायें और शरीर का बल न बढावें तो एक ही बलवान् पुरुष ज्ञानी और सैकडो विद्वानो को जीत सकता है। और जो केवल शरीर का ही बल बढाया जाय आत्मा का नही तो भी राज्य पालन की उत्तम व्यवस्था बिना विद्या के कभी नही हो सकती। बिना व्यवस्था के सब आपस में ही फूट-टूट विरोध लड़ाई झगडा करके नष्ट-भ्रष्ट हो जायें। इसलिए सर्वदा शरीर और आत्मा के बल को बढाते रहना चाहिए।" स० प्रकाश

हम सब का परम कर्तव्य है कि राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य तथा उत्तरदायित्व को समझते हुए राष्ट्र-निर्माण के महान् कार्य में यथाशक्ति पूर्ण सहयोग दें, पूर्ण आस्तिक भाव सब के साथ मिलकर कार्य करें। राष्ट्र से ही सदैव लगाव रक्खें, व्यक्तियो से नही। देश को जैसा कुछ भी बनाना है हमने ही बनाना है। यदि राष्ट्र-निर्माण का कार्य imported (विदेशी) व्यक्तियों द्वारा पूर्ण होने वाली चीज होती तो यह कार्य पिछले हजार बारह सौ वर्षों में अवश्य पूर्ण हो गया होता। इसलिए यही योग्य है कि देश के प्रत्येक कार्य में हम साधक ही बनें, बाधक नहीं।

गृहाश्रम सुख का साधन कैसे बने ?

(श्री अनूपसिंह एम ए, आनन्द भवन, मेरठ मार्ग मुजफ्फरनगर)

ब्रह्मचर्य—गृहस्थ—वानप्रस्थ और सन्यास ये चार आश्रम कहलाते हैं। इन आश्रमो मे गृहाश्रम सब से ज्येष्ठ एव श्रेष्ठ है। मनु महाराज ने लिखा है —

यथा नदीनदा सर्वे सागरे यान्ति सस्थितिम् ।
तथैवाश्रमिण सर्वे गृहस्थे यान्ति सस्थितिम् ॥

अर्थात् जैसे नदी और बडे-बडे नद तक भ्रमते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त नही होते वैसे ही गृहस्थ ही के आश्रय सब आश्रम स्थिर रहते हैं बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नही होता। इसलिए जितना कुछ व्यवहार ससार में है उसका आधार गृहाश्रम है। जो गृहाश्रम न होता तो सन्तानोत्पत्ति के न होने से ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम कहाँ से हो सकते ? जो गृहाश्रम की निन्दा करता है वही निन्दनीय है और जो प्रससा करता है वही प्रससनीय है।' (सत्यार्थ प्रकाश)

हमारे देश का दुर्भाग्य है कि आज के वैज्ञानिक एव प्रगतिशील युग में दहेज जैसी कुरीति ने घर कर लिया है। इस कुरीति के कारण अधिकाश अनमेल विवाह होते हैं जिनका परिणाम अच्छा नही निकलता। कालान्तर मे पति पत्नी से तग आ जाता है और पत्नी पति से तग आ जाती है। वह गृहाश्रम जिसमे स्त्री और पुरुष ने सुख प्राप्ति के लिए प्रविष्ट किया था, दु ख का साधन बन जाता है। अनमेल विवाह के विषय मे ऋषिवर दयानन्द जी महाराज लिखते हैं—"चाहे मरण पर्यन्त कन्या पिता के घर मे बिना विवाह के बैठी भी रहे, परन्तु गुणहीन, असदृश, दुष्ट पुरुष के साथ कन्या का विवाह कभी न करे और वर कन्या भी अपने आप स्वसदृश के साथ ही विवाह करें।"

गृहाश्रम के सुख का मूल कारण ब्रह्मचर्य और स्वयवर विवाह है।

स्वयंवर विवाह—लडका अपने सदृश गुण-कर्म-स्वभाव वाली लडकी का और लडकी का अपने सदृश गुण-कर्म स्वभाव वाले लडके का चयन कर के विवाह करना स्वयवर विवाह कहलाता है।

ब्रह्मचर्य —जो पुरुष ऋतुगामी होता है वह गृहाश्रम मे बसता हुआ भी ब्रह्मचारी कहलाता है। गृहाश्रम में पत्नी को वासना पूर्ति का साधन न समझ कर उसको उत्तम सन्तानोत्पत्ति का साधन समझना चाहिए।

गृहाश्रम सुख का साधन किस प्रकार बने इसका उपाय वेद भगवान् के अधोलिखित मन्त्र मे वर्णित है —

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्त मया पत्या जरदष्टिर्यथास ।
भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्य त्वादुर्गार्हपत्याय देवा ॥

उपरोक्त मत्र का अर्थ महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस प्रकार किया है—"हे स्त्री ! मैं सौभाग्य अर्थात् गृहाश्रम मे सुख के लिए तेरा हस्त ग्रहण करता हू। और इस बात की प्रतिज्ञा करता हू कि जो काम तुमको अप्रिय होगा उसको मैं कभी न करूँगा। ऐसे ही स्त्री भी पुरुष से कहे कि जो व्यवहार आप को अप्रिय होगा उसको मैं कभी न करूँगी। और हम दोनो व्यभिचारादि दोष रहित हो के वृद्धावस्थापर्यन्त परस्पर आनन्द के व्यवहारो को करेंगे। हमारी इस प्रतिज्ञा को सब लोग सत्य जानें कि इससे उलटा काम कभी न किया जावेगा। जो ऐश्वर्यवान् सब जीवों के पाप पुण्य के फलो को यथावत् देने वाला सब जगत् का उत्पन्न करने और सब ऐश्वर्य का देने वाला तथा सब जगत् का धारण करने वाला परमेश्वर है, वही हमारे दोनों के बीच मे साक्षी है। तथा परमेश्वर और विद्वानो ने मुझको तेरे लिए और तुझको मेरे लिए दिया है, कि हम दोनो परस्पर प्रीति करेंगे, तथा उपयोगी होकर घर का काम अच्छी तरह से करेंगे और मिथ्या भाषणादि से बच कर सदा धर्म मे वर्त्तेंगे। सब जगत् का उपकार करने के लिए सत्य विद्या का प्रचार करेंगे और धर्म से प्रजा को उत्पन्न कर के उनको सुशिक्षित करेंगे, इत्यादि प्रतिज्ञा हम ईश्वर की साक्षी से करते हैं कि इन नियमो का ठीक-ठीक पालन करेंगे। दूसरी स्त्री और दूसरे पुरुष से मन मे भी व्यभिचार न करेंगे। हे विद्वान् लोगो ! तुम भी हमारे साक्षी रहो कि हम दोनो गृहाश्रम के लिए विवाह करते हैं। फिर स्त्री कहे कि मैं अपने पति को छोड के मन-वचन और कर्म से भी दूसरे पुरुष को पति न मानूगी। तथा पुरुष भी प्रतिज्ञा करे कि मैं इसके सिवाय दूसरी स्त्री को अपने मन-कर्म और वचन से कभी न चाहूँगा। (ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका)

उपर्युक्त मन्त्र मे निर्देश दिया गया है—

१—पति पत्नी कभी भी ऐसा काम न करें जो एक दूसरे को अप्रिय लगे। अप्रियाचरण पारस्परिक मनमुटाव को जन्म देता है। इससे बचने का उपाय है कि जो भी कोई कार्य किया जाय वह एक दूसरे के परामर्श से किया जाय।

२—दोनो परस्पर प्रीति करें। केवल पत्नी ही नही अपितु पति भी पत्नी को प्यार करे। दोनो मे पारस्परिक आकर्षण हो।

३—दोनो उपयोगी बनें। गृहस्थ रूपी गाडी को चलाने के लिए उद्योग अनिवार्य है। उद्योगिन पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी" अर्थात् सिंह [शेर] के समान उद्यम करने वालो को लक्ष्मी प्राप्त होती है

४—दोनो कभी भी मिथ्याभाषण न करें। मिथ्याभाषण से पारस्परिक अविश्वास पैदा हो जाता है।

५—दोनो धर्म मे प्रवृत्त रहें। धर्म का अर्थ है सत्य तथा न्याय का आचरण करना। सुखस्य मूलधर्म —सुख का मूल धर्म है।

६—दोनो सदैव ऐसा व्यवहार कर जिससे जगत का उपकार हो।

७—धर्म से सन्तानोत्पत्ति करना—अर्थात ऋतुगामित्व से सन्तानो की उत्पत्ति करना और गर्भस्थिति के पीछे एक वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करना।

८—सन्तानो को सुशिक्षित करना। आचार्य चाणक्य ने कहा है—

माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठित ।
न शोभते सभामध्ये हसमध्ये बको यथा ॥

वे माता-पिता अपने सन्तानो के पूर्ण वैरी हैं जिन्होने उनको विद्या की प्राप्ति न कराई वे विद्वानो की सभा मे वैसे तिरस्कृत होते हैं जैसे हसो के बीच मे बगुला।

९—पति अपनी पत्नी के अतिरिक्त दूसरी स्त्री को मन-वचन और कर्म से न चाहे और पत्नी भी अपने पति के अतिरिक्त अन्य पुरुष को मन-कर्म और वचन से न चाहे।

अर्थात् पति का धर्म पत्नी व्रत का पालन करना है और पति का धर्म पति व्रत का पालन करना है। पत्नी का पूजनीय देव पति और पतिकी पूजनीया अर्थात् सत्कार करने योग्य देवी पत्नी है।

१०—जीवो के पाप पुण्य के फलो को यथावत् देने वाले परमेश्वर और विद्वानो को साक्षी समझ कर सदैव पति-पत्नी उपर्युक्त बातो का पालन किया करें।

यदि पति-पत्नी ऊपर लिखे वेद द्वारा निर्दिष्ट उपायो का पूर्णरूपेण पालन करें तो गृहाश्रम सुख का साधन बन सकता है अन्यथा नही। परमात्मा कृपा करें कि समस्त गृहाश्रमी वेदोक्त नियमो का पालन कर सुख लाभ उठावें।

मोरीशस द्वीप से प्राप्त पत्र

मुझे आप की आर्यमर्यादा नामक नयी पत्रिका मिली। जिसको पाकर एव पढकर हृदय को काफी उत्साह तथा प्रेरणा मिली जिसके लिए मैं आप का अत्यन्त आभारी हूँ।

आधुनिक युग मे वैदिक विचार धारा के प्रचार की यहाँ मोरिशस टापू मे भी बडी भारी आवश्यकता है। आशा है कि उक्त पत्रिका यहाँ पर इस कमी की पूर्ति कर देगी। 'आर्यमर्यादा' सदा उन्नति करती रहे यही मेरी हार्दिक कामनाएँ हैं।

विद्यानन्द रामदयाल "सि० शास्त्री" मन्त्री आर्य समाज,
पेचीवेरजे, मेप्पेर मोरिशस टापू

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी व्यक्तित्व और कृतित्व

(श्री डा० भवानीलाल भारतीय, एम-ए० पी० एच० डी०)

प्रखर और अद्भुत मेधा के धनी मुनिवर गुरुदत्त आर्यसमाज की दिव्य विभूति थे। २६ वर्ष के अल्पकालीन जीवन में उन्होंने अपने महान् पाण्डित्य और अशेष प्रतिभा से जो गौरवशाली साहित्य आर्यसमाज को प्रदान किया। वह अकल्पनीय है। २६ वर्ष की अल्पायु में तो नवयुवक अध्ययन और जीवन का प्रारम्भ ही कर पाते हैं, परन्तु इसी अवधि में गुरुदत्त कार्यशीलता और सफलता के सर्वोच्च सोपान पर पहुंच चुके थे। अपने युग के पाश्चात्य विद्या विशारदों में वे सुपरिचित थे और उनके लेखन और विचारों की छाप समुद्र पार के देशों तक पहुंच चुकी थी। यहाँ हम संक्षेप में उनके जीवन की रूपरेखा प्रस्तुत कर उनके कृतित्व पर विचार करेंगे।

प० गुरुदत्त का जन्म २६ अप्रैल १८६४ को अविभाजित पंजाब के मुलतान नगर में लाला रामकृष्ण के घर हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई जहाँ उन्होंने उर्दू और फारसी का ज्ञान प्राप्त किया। पुन उन्होंने अंग्रेजी सीखी। आठ वर्ष की आयु में वे झंग के जिला स्कूल में प्रविष्ट हुये जहाँ उनके पिता अध्यापक थे। इसी बीच उन्होंने फारसी के मौलाना रूमी और हाफिज आदि कवियों के काव्य का गम्भीर अध्ययन किया। मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण कर वे मुलतान के हाई स्कूल में पढने लगे। यहाँ पाश्चात्य दार्शनिको के ग्रन्थ पढने से उनके विचारों में संशयात्मकता, अनीश्वरवाद आदि के तत्त्व पनपने लगे। धीरे-धीरे उनका ईश्वर पर से विश्वास हट गया। परन्तु सौभाग्य से वे प० रैमलदास और लाला चेतनानन्द जैसे मित्रों के सम्पर्क में आकर आर्यसमाज की ओर आकृष्ट हुये। इसी बीच उन्होंने सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण पढ़ा और २० जून १८८० को विधिवत आर्यसमाज में प्रवेश किया। अब उन्होंने अष्टाध्यायी पढ़ना आरम्भ कर दिया। अष्टाध्यायी के साथ अन्य शास्त्र ग्रन्थों तथा स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों का अध्ययन भी जारी रहा।

वस्तुत: गुरुदत्त का व्यसन ही अध्ययन था। अल्पवय में जबकि उस आयु के बालक खेल-कूद से ही अवकाश नही पाते, गुरुदत्त ने मिल्टन, कूपर, शेक्सपियर जैसे कवियों को पढ डाला। किशोरावस्था में उनका अध्ययन विज्ञान के अतिरिक्त तर्क, मनोविज्ञान और दर्शनशास्त्र जैसे क्लिष्ट विषयों को अपनी परिधि में सन्निविष्ट कर चुका था। १८८० के नवम्बर मास में एट्रेंस परीक्षा पास कर वे लाहौर के गवर्नमेंट कालेज में उच्चतर शिक्षा के लिये प्रविष्ट हुये। यहां पाठ्य पुस्तकों के अध्ययन के साथ-साथ उन्होंने मिल और बेन जैसे अंग्रेज तत्त्वविचारकों का अध्ययन किया जिससे उनके विश्वासों को धक्का लगा, परन्तु उनका अध्ययन अधिकाधिक विशद और सूक्ष्म होता गया। १८८३ के मई मास में उन्होने इण्टरमीजियेट की परीक्षा उत्तीर्ण की। लाला लाजपतराय उनके सहपाठी थे। १८८२ में उन्होंने अपने मित्रों के सहयोग से एक क्लब स्थापित किया। स्वतन्त्र और निरपेक्ष भाव से विभिन्न प्रश्नों और समस्याओं पर खुले मस्तिष्क से विचारों के आदान-प्रदान ही इस क्लब का उद्देश्य था। प० गुरुदत्त उसके मंत्री थे।

१८८३ तक आते-आते गुरुदत के विचारों में नास्तिकता के भाव प्रबलता से व्याप्त हो गये और इसी वर्ष उनके जीवन में वह परिवर्तनकारी घटना घटित हुई जिसके कारण नास्तिकता के अभिशाप से छूटकर वे जीवन भर के लिये वैदिक धर्म के सच्चे सेवक बन गये। स्वामी दयानन्द सरस्वती के अस्वस्थ होने के कारण लाहौर आर्यसमाज ने उन्हें लाला जीवनदास पेंशनर के साथ सुश्रूषा हेतु अजमेर भेजा। वहां मृत्युशय्या पर मृत्युञ्जय दयानन्द की अन्तिम छवि देखकर गुरुदत्त की नास्तिकता निर्मूल हो गई, यह प्रसिद्ध बात है। स्वामी दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को उन्होंने अठारह बार पढ़ा और वे कहते थे कि प्रत्येक बार के अध्ययन में उन्हे कुछ न कुछ नवीनता ही मिली।

महर्षि के दिवंगत होने पर लाहौर के आर्य पुरुषों ने उनकी स्मृति को स्थायी बनाने हेतु उनके स्मारक के रूप में डी-ए० वी० कालेज खोलने का निश्चय किया। ८ नवम्बर १८८३ के दिन स्वामी जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने हेतु आयोजित सभा में दयानन्द कालेज की स्थापना का विधिवत् प्रस्ताव औपचारिक रूप से स्वीकार हुआ। अब पं० गुरुदत्त सर्वात्मना डी-ए० वी० कालेज की स्थापना के प्रयत्न में लग गये। १८८५ में बी०ए० पास करने के पश्चात् वे सारे पंजाब में भ्रमणकर कालेज के पक्ष में वातावरण का निर्माण करने लगे तथा इसी हेतु धन संग्रह करने में जुट गये। उनके प्रभावशाली भाषणों का व्यापक प्रभाव पड़ा और स्वल्प काल में ही जनता ने पर्याप्त धन कालेज स्थापना हेतु दिया। १८८६ में भौतिकशास्त्र में एम०ए० परीक्षा सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर उन्होंने उत्तीर्ण की और गवर्नमेंट कालेज लाहौर में ही वे विज्ञान के सहायक प्रोफेसर नियुक्त हो गये। अब उन्होंने सामाजिक कार्यों में अधिकाधिक ध्यान देना आरम्भ किया। डा० ओमन के अवकाश पर जाने की अवधि में वे विज्ञान के प्रोफेसर पद पर भी कार्य करते रहे। १८८७ में वे उस शिष्ट मण्डल मे सम्मिलित हुये जिसने डी० ए० वी० कालेज की सहायता हेतु चंदा एकत्र करने के लिए पंजाब का व्यापक दौरा किया था। शिष्टमण्डल में प० गुरुदत्त के अतिरिक्त लाला लालचंद एम०ए०, लाला मदनसिंह बी० ए०, लाला द्वारिकादास एम० ए०, लाला लाजपत राय तथा लाला ज्वालासहाय थे। १८६० में उनका सुप्रसिद्ध ट्रैक्ट The Realities of Inner Life प्रकाशित हुआ।

अब उनकी प्रवृत्तिया अधिकाधिक व्यापक और जीवन अधिक व्यस्त होता गया। लोग उनके पास शंका समाधान, विचारविमर्श और ज्ञानवृद्धि हेतु आते। आश्चर्य की बात है कि गुरुदत्त संस्कृत, अरबी, भौतिकविज्ञान, रसायन, भूगर्भ-शास्त्र, शरीर विज्ञान, ज्योतिष, गणित, दर्शन और भाषा विज्ञान जैसे विभिन्न शास्त्रों पर एक से अधिकार से वार्तालाप कर सकते थे। उनके विशाल और व्यापक अध्ययन पर श्रोताओं का चकित रह जाना स्वाभाविक ही था। मोनियर विलियम्स की 'इण्डियन विजडम' की आलोचना में १८८८ में उन्होंने व्याख्यान दिये। अब उनका कार्य अधिक व्यापक होने लगा जिसने उनके स्वास्थ्य को प्रभावित किया। यह जानकर आश्चर्य होता है कि मुनिवर गुरुदत्त अच्युतानन्द, प्रकाशानन्द, स्वात्मानन्द और महानन्द इन चार सन्यासियों से घण्टों तक शास्त्र विषयों पर वार्तालाप करते थे। ये संन्यासी नवीन वेदान्ती थे। परन्तु रात-दिन अपने घर पर इन संन्यासियों से विचार विमर्श कर गुरुदत्त ने उन्हे वैदिक त्रैतवाद का अनुयायी बना दिया और चारों सन्यासियों को वैदिक धर्म की दीक्षा दी। इस समय उनका घर एक आश्रम के तुल्य बन गया था, जहां रात-दिन शास्त्र चर्चा होती रहती थी।

१८८६ में गुरुदत्त ने उपदेशक कक्षा खोली। उसमें वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध लोग मुनिवर से अष्टाध्यायी और आर्यशास्त्रों का अध्ययन करते। लाला नारायणदास जो उस समय अतिरिक्त सहायक आयुक्त के महत्वपूर्ण पद पर आसीन थे, अपने कार्य से तीन मास का अवकाश लेकर पण्डित गुरुदत्त की अष्टाध्यायी और महाभाष्य की कक्षा में प्रविष्ट हो गये। गुरुमुख से संस्कृत का अध्ययन न कर पाने पर भी उन्होंने स्वामी दयानन्द रचित वेदाङ्गप्रकाश की सहायता से ही संस्कृत भाषा पर इतना अधिकार प्राप्त कर लिया था कि वे धाराबाही रूप से संस्कृत बोल सकते थे। आर्यसमाज मन्दिर में भारत धर्म महामण्डल द्वारा संचालित तथा-कथित सनातनधर्म आन्दोलन की आलोचना में उनके धाराप्रवाह संस्कृत भाषण होते थे।

जुलाई १८८६ में मुनिवर ने वैदिक मैगजीन नामक पत्रिका निकालनी प्रारम्भ की, जिसमें उच्चकोटि के वैदिक विषयों पर लेख होते थे। अत्यधिक बौद्धिक परिश्रम ने गुरुदत्त के स्वास्थ्य को जर्जर बना दिया।

शेष पृ० ६ पर

बड़े-छोटे सबको नमस्ते

(डा० रामनाथ वेदालंकार अध्यक्ष संस्कृत विभाग गुरुकुल कांगड़ी)

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो
नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्य ।
यजाम देवान् यदि शक्नवाम
मा ज्यायस शसमावृक्षि देवा ।।
ऋग्० १।२७।१३

अर्थ—(महद्भ्य नम) जो गुणो मे महान् हैं उन्हे नमस्ते, (अर्भकेभ्य नम) जो छोटे शिशु, कुमार या विद्यार्थी हैं उन्हे नमस्ते, (युवभ्य नम) जो युवा हैं उन्हे नमस्ते, (आशिनेभ्य नम) जो वयोवृद्ध हैं उन्हे नमस्ते। (यदि शक्नवाम) यदि हम समर्थ हो अर्थात् जहा तक सभव हो (देवान् यजाम) हम पूर्वोक्त देवजनो का सत्कार करते रहे। (देवा) हे विद्वानो ! (ज्यायस) अपने से बडे की (शसम्) स्तुति को (मा आवृक्षि) मैं छिन्न न करू ।

इस ससार मे, हमारे देश मे हमारे समाज मे अनेक महान् व्यक्ति हैं। अनेक ऐसे सत्पुरुष हैं जो परस्पर युद्धग्रस्त देशो को कलह से बचाकर जगत मे शान्ति लाना चाहते हैं। अनेक ऐसे महिमामय नर-नारी हैं जो स्वार्थ की चिन्ता न करते हुए अपने देश के लिए प्राणो का उत्सर्ग करने को तैयार रहते हैं। अनेक ऐसे नेता हैं जो देशवासियो की सुख-समृद्धि को ही अपना मूलमन्त्र समझते हैं। अनेक ऐसे वीतराग सन्यासी हैं जो यहा से वहा पर्यटन करते हुए अपने उपदेशामृत की वर्षा से जनता को तृप्त करते रहते हैं। अनेक वानप्रस्थाश्रमी हैं, आचार्य हैं, विद्वच्छिरोमणि हैं, तपोनिष्ठ हैं, निश्चवर हैं, जो सदैव जनता-जनार्दन की सेवा मे तत्पर रहते है। ये सभी गुणो मे महान् होने के कारण 'महान् देव' कहलाते है। अपनी भावभीनी श्रद्धाजलि अर्पित करता हुआ भक्तिभाव से मैं इन्हे नमस्ते' करता हू।

मेरे देशो मे, मेरे समाज मे, मेरे परिवार मे कुछ अबोध शिशु अल्पवयस्क कुमार तथा विद्यार्थी हैं। इनकी उपेक्षा करना, इनकी समुचित शिक्षा आदि की व्यवस्था न करना, इनके सुख-लालन-पालन आदि का ध्यान न रखना एक बडा अपराध है। इनकी बाल्य-लीलायें किसके हृदय मे रस सचार नही करती ? इनकी निष्कपट, निश्छल भावभगिमा तथा पवित्र चेष्टाये किसके मन को मुदित नही करती ? अध्ययन में रत कुमार विद्यार्थियो की विकासोन्मुखी प्रतिभा और शक्ति किसके हृदय को आह्लादित नही करती ? ये नन्हे-मुन्ने और कुमार भी मेरे देश के देव हैं। मैं प्रेम में विभोर होकर इन्हे 'नमस्ते' करता हू।

मेरे देश मे अनेक युवक है, तरुण हैं। उनके सकल्प-बल के आगे भूमि-आकाश झुक जाते हैं। पर्वत-नदी-नाले-समुद्र कोई उनके मार्ग मे बाधक नही हो सकते। उनके मनो में साहस है उनके हृदय में बल है, उनके अन्तरात्मा में तेज है उनकी वाणी मे ओज है। वे ब्राह्मण बनकर ज्ञान और सत्य का प्रचार करते हैं वे क्षत्रिय होकर देश की दीवार बनते हैं, वे वैश्य बनकर कृषि, व्यापार आदि से देश को समुन्नत करते हैं, वे शूद्र होकर जन-जन के सेवक बनते है। तरुणाई की उमग में राष्ट्रीय और माननीय ध्वज लेकर यशोदुन्दुभि बजाने वाले ज्ञान-विज्ञान-शिल्प आदि सभी क्षेत्रो में देश को निरन्तर उन्नति की ओर ले जाने वाले, कभी हिम्मत न हारने वाले इन वीर युवको पर मुझे गर्व है। मैं इन्हे प्रेम और आदर के साथ 'नमस्ते' करता हू।

मेरे देश में कुछ लोग 'आशिन' हैं, वयोवृद्ध है। उनका अनुभव देश की क्षती है, उनका मार्गदर्शन बहुमूल्य है। उनकी परिपक्वता अनुभवहीनो को परिपक्व करने वाली है। वे धीर हैं गम्भीर हैं, ज्ञानगरिमा के आगार हैं, कर्म मे निष्णात हैं, आदर्श शिक्षक हैं, देश के गौरव हैं। स्वय शारीरिक शक्ति से क्षीण हो चुकने पर भी दूसरो मे उत्साह का मन्त्र फूंकने वाले है। वे धन्य है वन्दनीय हैं। भक्ति और पूर्ण आदर के साथ मैं उन्हे 'नमस्ते' करता हू।

जहाँ तक सभव हो, जहाँ तक सामर्थ्य हो उपर्युक्त सब देवो का हमे यजन, यथायोग्य वन्दन-पूजन करते रहना चाहिए। ऐसा न हो कि हम इनकी उपेक्षा करे, इनके प्रति जो हमारे कर्तव्य हैं उनका पालन न करें। ससार मे देश मे समाज मे सस्था मे परिवार मे सब बडे-छोटो के प्रति हमें अपने कर्त्तव्यो को निबाहना चाहिए।

एक बात और। भले ही मैं किन्ही से बडा हू तथापि सभी से बडा नही हो सकता। कुछ व्यक्ति मुझ से बडे अवश्य रहेंगे। उनके बडप्पन का, उनके ज्यायस्त्व का मुझे मान करना चाहिए। अनेक बार ऐसा होता है कि हम अपने को ही बडा मान बैठते हैं, और वस्तुत पद आदि मे जो बडा है उसे बडा नही मानते। इससे समाज मे कलह का बीज उत्पन्न होता है। हम अपने छोटो से यदि आदर चाहते है, यह चाहते है कि वे हमारा स्तवन एव सत्कार करे तो अपने से बडो का हमे आदर, स्तवन और सत्कार करना चाहिए। उनके योग्य जो स्तुति है, गौरव है, उससे उन्हे वचित करने का यत्न नही करना चाहिए। अत मैं यह प्रण करता हू कि मुझ से जो बडे है उनके आदर का मैं कभी छेदन या हनन नही करूगा।

आइये सब एक-दूसरे का नमस्ते करे। ●

किसान

[श्री योगीन्द्र पाण्डेय, लखौलिया जिला बलिया]

अन्न तुम्हारा धन होता है, जिसको अर्पित तन होता है,
जिसको रक्षा मे तुम अपना त्याग दिया करते भव-सपना,
उससे ही होते धनवान, हे जगती की जान किसान।
कण-कण मे तेरा यश फैला, जो न कभी हो सकता मैला,
पड न कभी सकता धूमिल यश प्रकृति सदा रहती तेरे वश,
अखिल जगत् के तुम्ही प्रधान हे जगती की जान किसान।
तुम दधिचि शिवि औ सान्तनु हो तुम ही दयानन्द हो, मनु हो
कर्ण सदृश तुम सब हो दानी, दुर्योधन-सम नहि अभिमानी
तुम गुणवान् और विद्वान्, हे जगती की जान किसान।
कृष्ण तुम्ही हो, राम तुम्ही हो इस भू मे सुख-धाम तुम्ही हो
पुण्य तुम्ही हो स्वर्ग तुम्ही हो, उन्नति के इक सर्ग तुम्ही हो
कर्म भाव के तुम सोपान, हे जगती की जान किसान।
अखिल राष्ट्र का भार तुम्ही पर, तुम होकर जिसके हित तत्पर
करते रहते हित के कार्य दुख भी सहते हित के कार्य
तुम से निर्मित राष्ट्र-विधान, हे जगती की जान किसान।
—क्रमश

पृ० ८ का शेष

वे यक्ष्मा के शिकार हो गये। अनेक चिकित्सको से चिकित्सा कराने पर भी रोग से मुक्ति नही मिली और १९ मार्च १८९० के दिन जब वे अपनी आयु के २६ वर्ष भी पूरे नही कर पाये थे, उन्होने परमधाम को प्रस्थान किया। मुनिवर गुरुदत्त का साहित्य अग्रेजी मे लिखा गया है। उन्होंने कतिपय वैदिक विषयो पर व्याख्यात्मक टिप्पणिया लिखी, कुछ उपनिषदो की मौलिक टीकायें तथा यूरोपीय विद्वानो के वेद विषयक भ्रमात्मक विचारो का खण्डन किया। उनको समस्त रचनायें दो बार छप चुकी हैं। इसका विवरण इस प्रकार है—

1 Works of Late Pandit Gurudatta with biographical sketch published by the Aryan printing publishing and general trading Company Ltd , Lahore, 1912

मे इसका तृतीय सस्करण छपा। प० गुरुदत्त के परममित्र और सामाजिक कार्यों म उनके सहयोगी, लाला जीवनदास पेंशनर (उपप्रधान आर्यसमाज, लाहौर) ने गुरुदत्त को पाण्डुलिपियो और उनके जीवनकाल में प्रकाशित ग्रन्थो से मिलान कर उनका सम्पूर्ण रचनाओ का मत सग्रह छपाया था।

2 Wisdom of the Rishis • Works of Pandit Gurudatta Vidyarathi, M A प्रकाशक सार्वदेशिक पुस्तकालय दिल्ली। ●

महात्मा-हंसराज

(श्री पं० भक्तराम जी शर्मा अफ्रीका वाले दिल्ली)

उन्होंने आर्यसमाज लाहौर की ६ नवम्बर सन् १८८३ की मीटिंग के निश्चयानुसार, जून सन् १८८६ से स्थापित होने वाले दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज के आधाररूप डी० ए० वी० स्कूल में अवैतनिक मुख्याध्यापक का उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सम्भाला। सन् १८८८ में जब वह स्कूल कालेज हो गया तो अपूर्व स्वार्थ त्याग, अनुपम साहस और विलक्षण कार्य-कुशलता आदि गुणों के कारण उन्ही को प्रिंसिपल का काम सौंपा गया। इस पद से मुक्त होकर कालेज की प्रबन्ध कर्तृ सभा का प्रधान ग्रहण किया।

वह जीवनभर सज-धज, साज-सजावट और अकड़-मकड़ से कोसों दूर रहे। जिनका वेष था पगड़ी, बन्द गले का कोट, पजामा, और जूता गृहसामग्री थी, एक तख्तपोश, दो-चार काठ की टूटी-फूटी कुर्सियां कई जगहसे फटा हुआ कम्बल। उन्होंने यूरोप यात्रा में भी देशीय वेष न त्यागा था।

उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री बलराज के दिल्ली अभियोग में फँसने, धर्म-पत्नी के मृत्यु का ग्रास होने, बलराज को पहले काले पानी और फिर अपील पर ७ वर्ष का कड़ा दण्ड होने और फिर दूसरे पुत्र योधराज व पुत्री चन्दनदेवी के विषम ज्वर से पीड़ित होने पर अपने आचार-विचार से किसी को पता न चलने दिया था। कि उनके ही सिर पर घोर विपत्तियों के बादल घिरे हुए हैं। "विपदि धृतिः" का कैसा अत्युत्तम दृष्टान्त था।

आर्य सेवक महात्मा हंसराज जिन्होंने सार्वदेशिक सभा में स्वय स्थान रिक्त किया था जब उन्हें विदित हुआ कि उनकी वहाँ उपस्थिति अन्यों को पसन्द नही है पर नियन्त्रण पर गुरुकुल कांगड़ी और बच्छोवाली समाज में चले गये, आर्यसमाज के हित की भावना से प्रेरित होकर।

निरभिमानी महात्मा हसराज घर पर पधारे उपदेशकों का आतिथ्य नौकरों से न कराकर साधारण गृहस्थी की भाँति स्वय करते थे। दीर्घदर्शी महात्मा हंसराज को आर्यसमाज के सत्सगों ने सन्ध्या, समाज, स्वदेश, स्वाध्याय और सेवा पांचसकार का उपदेश दिया करते थे। प्रत्येक सभासद् से निजी परिचय और संपर्क पैदा किया करते और सुख-दुःख में सम्मिलित हुआ करते थे।

मलकाना शुद्धि के दिनों में स्वामी श्रद्धानन्द जी के आगरा पधारने पर उन्हें पलंग पर बिठाते थे। कहा करते थे कि "संन्यासी, शुद्धि सभा के प्रधान और अतिथि के नाते स्वामी जी हमारे पूज्य हैं।

उनके त्याग और तपस्या के गुणों को अपने जीवनों में धारण करते हुए अनेक नवयुवकों ने उनके समान अपनी जवानी आर्यसमाज के लिए लुटादी।

आवश्यकता है। परमावश्यकता है महात्मा हसराज जैसे चटान की तरह दृढ़ और ध्रुव तारे के समान अटल नेता की जो वर्तमान आर्यसमाज को महर्षि दयानन्द का आर्यसमाज बना दे। ●

गतांक से आगे

क्यों न्यायी, भगवान् न सोये ?

[श्री भैरवदत्त शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद्, लगुआ, जि० खीरी]

निर्बल-जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान् न सोये ?
जहाँ स्वत्व की बात चलाना, देश-द्रोह बतलाया जाता;
सस्कृति, धर्म, राष्ट्र-गौरव को, बुरा समझ दफनाया जाता;
घर को फूक तमाशा करना, नित्य-नित्य अपनाया जाता,
स्वार्थ-साधन में रत होकर, न्याय-सत्य तड़पाया जाता;
हुई पार्थ की व्यर्थ कल्पना, क्यों माधव का प्राण न सोये ?
निर्बल-जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान् न सोये ?
जहाँ नग्न कृष्णाएँ होती, कुटिल करोड़ों दुःशासन हैं;
शकुनी शीर्ष-स्वामिवत् बैठे, किये निमन्त्रित वर आसन हैं;
भाग्य विधायक नीद-गोद में, सुनते वेतन का भाषण हैं?

श्री शंकराचार्य जी के वक्तव्य का विरोध

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री डा० वेदीराम जी का वक्तव्य

पुरी के स्वामी शकराचार्य जी ने विश्व-हिन्दू-सम्मेलन पटना में अपना भाषण देते हुए हिन्दू धर्म में छूतछात एवं अस्पृश्यता का जिन खुले शब्दों में समर्थन किया है। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर इसका कड़ा विरोध करती है। श्री शकराचार्य जी ने भारतीय संविधान में दिये गये प्रत्येक को मानवता के नाते समानता के अधिकारों का अपमान किया है। वहाँ वेद-शास्त्रादि सत्य-शास्त्रों के 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठासो भ्रातरो वावृधु सौभागाय'—'समानी प्रपा सह वोऽन्न-भागः—इत्यादि वेद में वर्णित वैदिक समानतावाद की भी अवहेलना की है। भारत के विशाल आर्य-हिन्दुसमाज को छूतछात के घातक रोग ने कितनी भारी हानि पहुँचा कर खोखला व दुर्बल कर दिया। क्षतियों की इस कमी को अभी तक पूरा नही किया जा सका। छूतछात के अवैदिक विचार में राष्ट्र को फूट तथा बटवारे का शिकार बना कर रख दिया है। युगों के बाद आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस छूतछात व ऊँच-नीच के महारोग का उन्मूलन करने में अपना सारा जीवन बलिदान कर दिया। बाद मे महात्मा गांधी जी ने हरिजनों की सेवा में जीवन लगा दिया। आज भारतीय संविधान ने सारे देश में ऊँच-नीच के भेदभाव रखने को एक अपराध घोषित कर दिया है।

स्वामी शकराचार्य ने भारतीय संस्कृति के मौलिक शास्त्रों व राष्ट्रिय संविधान दोनों का अपमान किया है। सरकार उनके विरुद्ध कड़ा पग उठाये। मैं सारे आर्यसमाजों से अनुरोध करता हूं कि वे स्वामी शंकराचार्य जी के इस छूतछात को बढ़ावा देने वाले अपराधपूर्ण भाषण का विरोध करते हुए प्रस्ताव पारित करके सभा को भेजें तथा उस प्रस्ताव की प्रतिलिपि गृहमन्त्री भारत सरकार को भी भेजें। प्रेस में भी प्रकाशित करावें। ●

श्री शंकराचार्य जी के वक्तव्य पर खेद प्रकाश

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी अध्यक्ष वैदिक साधनाश्रम यमुना नगर (अम्बाला)

वैदिक साधनाश्रम यमुनानगर (अम्बाला) के संन्यासी, वानप्रस्थी, उपाध्याय, छात्रों तथा कर्मचारियों की सभा में श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज ने अध्यक्ष के रूप में पुरी के स्वामी शङ्कराचार्य के पटना के उस वक्तव्य पर महान् खेद प्रगट किया जिसमें उन्होंने छूत-छात के हटाने को हिन्दू धर्म पर आक्रमण कहा है। स्वामी शङ्कराचार्य जी को इस बात का ज्ञान होगा कि उनके धर्म ग्रन्थों में गुण कर्म स्वभाव के कारण वेश्या गर्भोत्पन्न तक व्यक्तियों को महामुनि की उपाधि से विभूषित किया गया। आर्यसमाज का सुवर्णिम इतिहास इस बात का साक्षी है कि अर्थ और विद्या की दृष्टि से पिछड़े हुए हिन्दू और आर्य भाई (जिनको भूल से हरिजन का नाम दिया गया) विशाल हिन्दू समाज का प्रमुख अङ्ग हैं, इनमें से वेदों के विद्वान् संस्कृत के महा पण्डित, सुयोग्य पुरोहित, गायनाचार्य, एवं प्रसिद्ध गुरुकुल विश्वविद्यालयों के आचार्य तथा डी० ए० वी० कालिजों के मुख्याधिष्ठाता तथा प्रिंसिपल के रूप में हिन्दू समाज की सेवा करते आ रहे हैं, यही तक नही अपितु लोक सभा, विधान सभाओं तथा विधान परिषदों के रूप में हमारे सहयोगी रहे हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि सनातन धर्म जगत हिन्दू महासभा विशेषतया आर्यसमाज के नेताओं तथा समाचारपत्रों ने स्वामी जी के उन शब्दों को अभिष्टकर कहा है। अतः राजवैदिक नेताओं को इस बात को बहुत उछाल-उछाल कर निकृष्ट राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए इसे स्टष्ट नहीं बनाना चाहिए। ●

वेद प्रचार विभाग की सूचनाएं

१ नारग—(हिमाचल) आर्यसमाज का उत्सव बडी धूमधाम से मनाया गया। सभा की ओर से प० निरजनदेव जी आदि उपदेशक पधारे—उपदेशो तथा भजनो का उत्तम प्रभाव हुआ। सभा को २०० रु० भेंट वेदप्रचारार्थ मिली।

२ सहाहां (हिमाचल) आर्यसमाज का उत्सव बडी शान से मनाया गया। सभा की ओर से प० निरजनदेव जी आदि उपदेशक और भजन प्रचारक पधारे। खूब प्रचार हुआ। २५१ रु० वेद प्रचार के लिए भेंट मिली।

३ आर्यसमाज फरीदाबाद टाउनशिप का वार्षिकोत्सव बडी धूम धाम से मनाया गया। गत कई वर्षों से समाज का उत्सव नही हुआ था। सभा की ओर से विद्वान उपदेशक महानुभाव पधारे। व्याख्यानो और भजनो का उत्तम प्रभाव हुआ। सभा को ३०० रु० भेंट वेदप्रचारार्थ प्राप्त हुई। —निरजन देव

ईसाई युवती की शुद्धि

इन्दौर दिनाक ५-४-६९ को आदर्श विवाह मन्दिर परदेशीपुरा इन्दौर मे ईसाई युवती लिना पुत्री जानपीटर ईसाई निवासी बम्बई की शुद्धि की गई और उसका नाम शुद्धि के पश्चात उमादेवी रखा गया। शुद्धि सस्कार शकरसिंह आर्य ने सम्पन्न कराया यह युवती जन्म से ही ईसाई थी। —सचालक शकराचार्य

ग्राम गढ़िया की शुद्धि

शुद्धि सभा के उपदेशक श्री प० गगालाल जी के प्रयत्न से ग्राम गढ़िया जिला एटा मे एक परिवार के ८ सदस्यो का श्री प० हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी द्वारा शुद्धि सस्कार हुआ और उन्हे उनकी पुरातन राजपूत जाति मे सम्मिलित किया गया। दिल्ली से श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष ने जाकर भाग लिया। ग्राम सहौरी ठा० हाकिमसिंह तथा बाहर से अनेक ठाकुर ब्राह्मण सम्मिलित हुए।

कस्बा शाहपुर मे १७६ ईसाइयो की शुद्धि

श्री डालचन्द आर्य उपदेशक के प्रयत्न से शाहपुर जिला मुजफ्फरनगर मे १७६ ईसाइयो को श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी द्वारा शुद्धि सस्कार कराकर उनकी पुरातन वाल्मीकी जाति मे प्रविष्ट किया गया। दिल्ली से श्री द्वारकानाथ प्रधान मन्त्री तथा हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष शुद्धि सभा ने जाकर भाग लिया। स्थानीय सनातनधर्मी सम्मिलित हुए और पूर्ण सहयोग दिया। —प्रधान मन्त्री

आर्यसमाज मन्दिर हरद्वार का शिलान्यास

श्रीयुत कविराज हरनामदास जी बी० ए० के करकमलो द्वारा हरद्वार आर्यसमाज मन्दिर का शिलान्यास किया गया और निर्माण कार्य सिन्ध के पुराने कर्मठ आर्य कार्यकर्त्ता सेठ डेबनदास जी की देखरेख मे आरम्भ हो गया है। नीवें भर गई हैं। यह मन्दिर ललतारी पुल के निकट बन रहा है। प० धर्मपाल जी विद्यालकार मन्दिर निर्माण समिति के सचालक रूप मे कार्य कर रहे हैं।
—शिवदयालु पूर्व-पूर्व आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश

आर्य समाज सरसपुर अहमदाबाद

वार्षिक महायज्ञ श्री कस्तुर बाजार मे हर वर्ष के अनुसार धूम-धाम से हुआ। धर्म प्रेमी भाई और बहनो ने धर्मोपदेशो से लाभ उठाया। —मन्त्री

आर्योपप्रतिनिधि सभा वाराणसी

१ जिला आर्योपप्रतिनिधि सभा का साधारण वार्षिक अधिवेशन काशी आर्यसमाज बुलानाला मे श्री क्षेमचन्द के सभापतित्व मे हुआ। अधिवेशन में प्राय सभी सम्बद्ध समाजो के प्रतिनिधि उपस्थित थे। सभा के जिला मन्त्री कैलाशनाथ सिंह ने वार्षिक रिपोर्ट तथा वर्ष भर के आय व्यय का लेखा प्रस्तुत किया, उन्होने सभा के अतीत तथा भावी कार्यक्रमों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आगामी नवम्बर मे ऋषि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शती समारोह यहाँ अखिल भारतीय स्तर पर मनाया जाएगा जिसमे देश तथा आर्य जगत के शीर्षस्थ विद्वान भाग लेंगे इस अवसर पर उनके द्वारा आर्यसमाज के सिद्धान्तो, स्वामी दयानन्द तथा वेदो से सम्बन्धित हिन्दी तथा अग्रेजी मे पक्ष तथा विपक्ष मे लिखे गये शोधपत्रो के प्रकाशन की भी बृहद योजना है।

२ आगामी वर्ष के लिये निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गये सर्व श्री क्षेमचन्द—प्रधान कैलाशनाथ सिंह—प्रधान मन्त्री उपकोषाध्यक्ष—श्री सम्पूर्णानन्द तथा १३ व्यक्ति अन्तरग समिति के सदस्य निर्वाचित हुए। —मन्त्री

आर्यसमाज किशनगज (मिल एरिया) दिल्ली

वार्षिकोत्सव बडे समारोह से सम्पन्न हुआ। इस समय प्रभात फेरी ध्वजारोहण सामवेद पारायण यज्ञ और प्रतिदिन वेदप्रवचन हुए। उत्सव मे अनेक आर्यनेताओ विद्वानो पण्डितो और भजनोपदेशको के प्रभावशाली व्याख्यान उपदेश और भजन हुए। जनता ने धर्मोपदेश से पूर्ण लाभ उठाया। —जगदीशप्रसाद पाठक उपमन्त्री

आर्य समाज महर्षि दयानन्दपथ इन्दौर

नव निर्वाचन इस प्रकार हुआ प्रधान श्री योगराज नारग मन्त्री—श्री तेगकरण माहेश्वरी कोषाध्यक्ष—श्री नारायणसिंह सोलकी पुस्तकाध्यक्ष—श्री विजयदेव मेहता। —मन्त्री

आर्यसमाज बल्लभगढ़ का निर्वाचन

निम्नलिखित सर्वसम्मति से हुआ। प्रधान—श्री वेदप्रकाश जी, मन्त्री—राधेश्याम गुहा कोषाध्यक्ष—श्री पूरनलाल बजाज पुस्तकाध्यक्ष—श्री सागरमल जी। —डा० प्यारे लाल शर्मा

गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडी स्नातक मण्डल के पृथक् पृथक् दो चुनाव

एक दलीय निर्वाचन

प्रधान—श्री प्रो० वेदव्रत वेदालङ्कार मन्त्री—श्री निरूपण विद्यालकार तथा कोषाध्यक्ष—श्री बलदेव आयुर्वेदालङ्कार। —मन्त्री

दूसरा दलीय निर्वाचन

प्रधान श्री दशकुमार मन्त्री श्री राजन्द्रकुमार शर्मा तथा कोषाध्यक्ष श्री उदयनारायण सिंह। मन्त्री

विशेष—दो भिन्न-भिन्न सूचनाए प्राप्त हुई, उनक अनुसार उन को प्रकाशित कर दिया गया है। इनके सम्बन्ध मे विवाद ग्रस्त कोई वक्तव्य प्रकाशित नही किया जावेगा। —सम्पादक

आर्यवीर महासम्मेलन

इस वष प्रान्तीय आर्यवीर दल (पजाब-हरयाणा-हिमाचल) का पचम आर्य वीर महासम्मेलन १७-१८ मई ६९ को अम्बाला छावनी में समारोहपूर्वक सम्पन्न होगा। इसमे पजाब, हरयाणा तथा हिमाचल की सभी आर्यवीर दल की शाखा आर्य-युवक-सभा तथा आर्यकुमार सभाए सम्मिलित होगी। —मन्त्री

अजमेर क्षेत्रीय आर्यसम्मेलन

९ मई से १३ मई तक अजमेर में क्षेत्रीय आर्य सम्मेलन होने की पूरे जोर-शोर से तैयारियाँ की जा रही हैं। इस अवसर पर राष्ट्ररक्षा, गौरक्षा, राष्ट्रभाषा, दलितोद्धार, नशाबन्दी तथा महिला सम्मेलन आदि आयोजित किये जा रहे हैं। इस अवसर पर यजुर्वेद पारायण महायज्ञ भी सम्पन्न होगा। आर्यसमाज के अनेक नेताओ तथा विद्वान् उपदेशको को निमन्त्रित किया गया है। —मदन मोहन शास्त्री मन्त्री

नया-प्रवेश

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में १ जौलाई से नया प्रवेश हो रहा है, विद्यालय में पढने वाले छात्रों को भोजन, निवास पुस्तकादि सभी वस्तुए नि:शुल्क दी जाती हैं, अत उपदेश बनने के इच्छुक सज्जन जो १६ वर्ष से अधिक आयु के हो तथा सस्कृत सहित मैट्रिक अथवा तत्सम योग्यता वाले हो वे शीघ्र ही आचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार (हरयाणा) पते पर पत्र-व्यवहार करें। —आचार्य

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,

आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियो के लिये २५) , ५० प्रतियो के लिये १५)

२५ प्रतियो के लिए ८) ७५ , १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैंकड़ा
वैदिकधर्म की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैंकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित्र	१-५० „
मुक्ति के साधन १-०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१-५० „
वैदिक सत्सग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रेजी	२-००
जीवन ज्योति लै० प० चमूपति जी एम. ए	३-०० ,
सोम सरोवर , „ „	३-००
The Principles of Aryasamaj ,	१-५० „
Glimpses of Swami Daya Nand „ „	१-०० „
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० „

अपना आदेश-पत्र भेजकर शीघ्र मगवाइये । थोडी प्रतियां शेष हैं ।

व्यवस्थापक—"आर्य मर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से विशेष निवेदन

आर्योदय के सभी ग्राहको को जो कि विदेशों मे निवास करते हैं, आर्योदय के बन्द होने पर उसी शुल्क में "आर्यमर्यादा" नियमपूर्वक भेजा जा रहा है ।

आर्यमर्यादा का आर्थिक वर्ष (बजट) १५ अप्रैल को समाप्त हो चुका है । अतः इस सूचना द्वारा सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि नये वर्ष का वार्षिक शुल्क २०) तुरन्त बैंक ड्राफ्ट अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम चैक द्वारा भेजने की कृपा करें ।

आशा है आप आर्योदय की भाँति ही आर्यमर्यादा को अपना सहयोग एवं संरक्षण प्रदान करेंगे ।

विनीत
व्यवस्थापक "आर्यमर्यादा"
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

आर्यसमाज लक्ष्मीबाई नगर नई दिल्ली

३-५-६९ से ९-५-६९ तक सी०पी० डब्लू० डी० इन्कवारी के पास रात्रि ९ से १० बजे तक स्वामी वेदमुनि परिव्राजक द्वारा वेद कथा होगी । कथा से पूर्व १ घंटा भजन हुआ करेंगे । —सत्यपाल मन्त्री

आवश्यकता है

१ श्रद्धानन्द अनाथालय करनाल को एक योग्य पण्डित (पुरोहित) की आवश्यकता है, जो हवन, यज्ञ और वेद प्रचार का कार्य भली प्रकार करा सके । वेतन १५० रु० से २०० रु० तक मासिक दिया जावेगा, और रहने का स्थान फ्री होगा ।

२ अनाथ लडकियो के लिये २ योग्य वरो की आवश्यकता है ।

—सेक्रेटरी

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सजाद प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्
सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)
वेदाः
आर्यमर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।

—सत्यार्थप्रकाश-भूमिका

वर्ष १ अंक २१

२२ वैशाख वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ४ मई १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
" " विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनस्तत्कृतानि कर्म्माणि मनुष्येण नित्यं द्रष्टव्यानीत्युपदिश्यते।

फिर व्यापक परमेश्वर के किये हुये कर्म मनुष्य नित्य देखें, इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है—

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे।
इन्द्रस्य युज्यः सखा॥ ऋग्वेद० १.२२.१९॥

पदार्थः—(विष्णोः) सर्वत्र व्यापकस्य शुद्धस्य स्वाभाविकानन्तसामर्थ्यस्येश्वरस्य (कर्माणि) जगद्रचनपालनन्यायकरणप्रलयत्वादीनि (पश्यत) सम्यग्विजानीत (यतः) कर्मबोधस्यसकाशात् (व्रतानि) सत्यभाषणन्यायकरणादीनि (पस्पशे) स्पृशति कर्तुं शक्नोति। (इन्द्रस्य) जीवस्य (युज्यः) युंजन्ति व्याप्त्या सर्वान् पदार्थान् ते युजोदिक्कालाकाशादयस्तत्र भवः (सखा) सर्वस्य मित्र सर्वसुखसंपादकत्वात्॥

अन्वयः—हे मनुष्या यूयं य इन्द्रस्य युज्यः सखास्तियतोजीवो व्रतानि पस्पशे स्पृशति तस्य विष्णोः कर्माणि पश्यत॥

भावार्थः—यस्मात्सर्वमित्रेण जगदीश्वरेण जीवानां पृथिव्यादीनि ससाधनानि शरीराणि रचितानि तस्मादेव सर्वे प्राणिनः स्वानि-स्वानि कर्माणि कर्तुं शक्नुवन्तीति॥

भाषा पदार्थ—हे मनुष्य लोगों! तुम जो (इन्द्रस्य) जीव का (युज्यः) अर्थात् अपनी जो व्याप्ति से पदार्थों में संयोग करने वाले दिशा, काल और आकाश हैं, उन में व्यापक होके रमने वा (सखा) सर्वसुखों के संपादन करने से मित्र है (यतः) जिस से जीव (व्रतानि) सत्य बोलने और न्याय करने आदि उत्तम कर्मों को (पस्पशे) प्राप्त होता है उस (विष्णोः) सर्वत्र व्यापक शुद्ध और स्वभावसिद्ध अनन्त सामर्थ्य वाले परमेश्वर के (कर्माणि) जो कि जगत् की रचना पालना न्याय और प्रयत्न करना आदि कर्म हैं, उनको तुम लोग (पश्यत) अच्छे प्रकार विदित करो॥

भाषा भावार्थ—जिस कारण सबके मित्र जगदीश्वर ने पृथिवी आदि लोक तथा जीवों के साधन सहित शरीर रचे हैं। इसी से सब प्राणी अपने-अपने कार्यों के करने को समर्थ होते हैं॥

—(ऋषिदयानन्द के भाष्य से)

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का वक्तव्य

जगद् गुरु शंकराचार्य जी ने छूत छात के सम्बन्ध में पटना के विश्व हिन्दू सम्मेलन में जो वक्तव्य दिया है वह अशास्त्रीय है। आर्यसमाज जन्म के आधार पर किसी व्यक्ति को स्पृश्य अथवा अस्पृश्य नहीं मानता। गैर अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगों के उत्थान के लिये आर्यसमाज ने बड़ा संघर्ष किया है और दलितोद्धार के लिये बलिदान दिये हैं। जगत् गुरु से इस सम्बन्ध में हम सदा शास्त्रार्थ के लिये उद्यत हैं।

मैं पंजाब, देहली, हरयाणा के आर्य समाजों से प्रार्थना करता हूं कि वह जगद् गुरु शंकराचार्य के इस वक्तव्य का प्रस्तावों द्वारा युक्ति-युक्त निराकरण करें और सभी प्रकार के पिछड़े वर्गों को निकट लाने के लिये अपनी सुविधा अनुसार सप्ताह मनायें।

व्यावहारिक शिक्षा

(प्रश्न) जब-जब सभा आदि व्यवहारों में जावें तब-तब कैसे-कैसे वर्तें।

(उत्तर) जब सभा में जावें तब दृढ़ निश्चय कर लेवें कि मैं सत्य को जिताऊं और असत्य को हराऊंगा। अभिमान न रक्खें, अपने को बड़ा न माने। अपनी बात का कोई खण्डन करे, उस पर क्रुद्ध वा अप्रसन्न न हो। जो कोई कहे उस वचन को ध्यान देकर सुनके जो उसमें कुछ असत्यमात्र हो, उस अंश का खण्डन अवश्य करे और जो सत्य हो तो प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करे, बड़ा छोटा न गिने। व्यर्थ बकवाद न करे, कभी मिथ्या का पक्ष न करे और सत्य को कदापि न छोड़े। ऐसी रीति से बैठे वा उठे कि जिससे किसी को बुरा विदित न हो। सर्वहित पर दृष्टि रखे, जिससे सत्य की बढ़ती और असत्य का नाश हो उसको करे। सज्जनों का संग करे और दुष्टों से अलग रहे। जो-जो प्रतिज्ञा करे वह वह सत्य से विरुद्ध न हो और उसको सर्वदा यथावत् पूर्ण करे, इत्यादि कर्म सब सभा आदि व्यवहारों में करे।

—व्यवहारभानु (ऋषिदयानन्द)

BEEF OR BUTTER?

By Giridhari Lal Arya, Chauri Chaura

Terribly growing habits of flesh-eating and wine-drinking in India of today.

With exception of few vegetarians and teetotallers, almost all men of today become fond users of meat and liquor without a sense of shame and hesitation. Now - a - days, it becomes an ultra - modern fashion to revel and regale on all occasions and functions and at all places whether at homes or in posh hotels with meat and wine, besides egges and fish. As if they become the self - styled slave of passions. For, meat - eating and boozing is only for the sake of flavour, taste and delicious dishes. Even Hindus are blindly aping the aliens and adopting the practices, systems and modes of western life, diet and manners. Unfortunately, they are discarding and abandoning their sublime and ancestral traditions, civilizations and cultures, and indiscreetly following the artificial and expensive occidental traits and ways which are extremely contrary to this land At present, in india, where once was plenty of food, milk and ghee (clarified butter) the number of flesh-eaters and wine - drinkers are alarmingly and painfully increasing day by day. Notwithstanding, all religious books forbid flesh eating and wine drinking. Needless to say about the spurious books which dissuade a man for the virtuous path and righteous deeds. It is well-known to all that God rewards a man pain or pleasure according to his good or bad actions. However, some might distort contradict and Cortrovert this subtle point of view in toto. Some might also argue and plead to eat flesh and drink wine and be merry at all costs because there they think is no after-life in the world and none will reborn after-death. Further, some might say about the overpopulation & food scarcity prevailing in India, hence, flesh, fish and eggs and the like are essential commodities to be consumed. Nevertheless learned persons, sages, seers and saints refute and repudiate this frivolous and blashphemy contentions in this regard. Swami Dayanand Sarsvati, Swami Vivekanand ji and Mahatma Gandhi are all vegetarians, celibates and stoic personalities of our ages. They led their exemplary lives with austerity and purity. They also preached the all mankind of truth, non-violence and godliness. The killing of innocent and mute birds and animals of all sorts and species for their flesh is most cruel, inhuman and heartrending to see for the pious and liberalminded men full of mercy and justification. An ignorant of Sanskrit ventures to say or write to the extent that Lord Rama, Rishis and Hindu's forefathers used to eat flesh themselves and also serve to their guests with beef. What a ridiculous and balderdash, indeed! It is also baseless, worthless, useless, hapless and meaningless of Course! So know the authenticity of the performance of sacrifice i.e. yajna, one must study carefully the Vedas, the Manusmriti, the Upnishads, the Valmiki Ramayane and other authoritative scriptures. It is no denying fact that Cows (Kine), Buffaloes, goats and sheep are most useful and fruitful cattle for our agricultural and domestic purposes. They yield us sweet, fresh and nutritious milk while the sheep provide adequate wools. Milk contains "A" vitamin and is our balanced, virile and staple food as well I read in the famous books Styarth Prakash and Gokarunanidhi that the milk of cow is of special nutritive value. Buffaloes too are equally useful. But cow-milk is far more useful for brain than buffalo-milk. It is why Aryas have held the cows most valuable. Those who kill these animals should be considered guilty of many men's murder. During the rule of Aryas, no slaughter was allowed of cows or other serviceable animals. Then men and other creatures lived happily in Aryavartt and other countries of the world. Milk, butter, oxen and other animals were in abundance and supply of food articles was up to the mark. From the time the flesh-eating foreigners have come to India and begun slaughtering cows etc and the rule has passed to wine-drinking officials, the miseries of the Aryas are gradually increasing when the root of the tree is cut off, flowers and fruits can not be obtained. So neither we should kill nor let kill animals like cow who in one generation does good to 475600 men. Mr. Peter Davidson of Scotland wrote in a letter that I have abstained from animal food, alcoholic beverage and although a married man, live in a manner approaching to unmarried. I care nothing for money or worldly means. My earnest soul aspires only to know more of what man really is and what be can become and to perfect myself in virtue so as to be able to hold more advanced intercourse with wist beyond. Western materialistic science is creating uneasiness in the world ever. We can attain to righteousness, happiness, prosperity and salvation merely through the science of Divinity and science of Soul. By this impression Mr. Lourd Flinch of Paris writes thus — Oh India! Will you not help us? Be patient with us, India? Remember are your children. You are old and learned and wise before existed. Our path is steep and thorny. Help us, Mother India! We, your real Vedic children, are turning our gaze to our motherland together. We can become the great regenerating and moralising force of this world. Mr Adolf just of Germany has written in his book:—At the present time scientific investigations are carried out upon living animals by cutting open the body to observe the working of the internal organs, or by taking out the eyes, removing the tongue or the stomach or the liver and subsequently replacing them. Science is guilty here of fearful cruelties, which cry to Heaven. Man has everywhere damaged Nature in his false struggle for progress. Take for example the rooting up of forests, the pollution of air hunting etc. For the cradle to the grave men are aflicted with pain and suffering of every kind. Vice and passion, sin and crime are strangely prevalent among mankind Nerve-trouble is widely spread among us.

We find men generally sunk in care and trouble, in sin and misery, in unhappiness and despair. Never before were the lunatic asylums so full and suicide is becoming more common every day. Civilisation has never before reached such a height and it calls for on extra-ordinary reaction. One must belive either in a vast Catastrophe for the civilised nations or in reaction in a return of mankind to God and Nature.

Darwinism, which teaches the descent of man from monkeys, gave a great impetus to the free thinking and materialism of the present day. This theory has been the cause of much evil and unhappiness. To a certain degree, man lost respect for himself. We know that according to the order of Nature, man is fruit-eater. In undisturbed Nature, man is orginally nothing but fruit eater. Uncooked milk and even sour milk can be taken and butter too can be eaten. The body becomes, as it were, new in course of time under this diet of nuts and fruits, it becomes full of freshness, elasticity and strength. Man, as I have said often enough, is essentially a fruit-eater. Nuts, berries, roots, orchard fruit are his proper food according to the order of Nature. The digestive organs are adapted in all their details for fruit alone, and it is Consequently only fruit which is absolutely and entirely digested. I have to point out again and again how many strips by the wayside, how many patches of the ground are unused and unplanted and how many fields and gardens are still planted with things which are not necessary for the support of human life or which even conduce to unhappiness, bringing only sickness and misery such as tobacco growing, wine growing, cattle raising etc. How beautiful and beneficial is even bodily labour in fruit-raising and horticulture, when carried out in the right spirit. I believe there is scarcely anything more ridiculous and pitiful than our fools of fashion, male and female, they are the lowest slaves that have ever existed (Vedic Sampatti). The United Nations Servey submitted a report to the current session of the UNESC that for the first time in the 1960's, the growth rate of agricultural production approached that of industrial output, and moreover, outpaced the rise in population, especially in countries with relatively low levels of per capita consumption.

Mr M. Platen writes: Alcohol has an extremely hurtful influence on the central organ of the body and thus, it is easy to explain the great number of cases of insanity which are due to spirit drinking. And the frightful ravages of this excessive indulgence in alcohol are extended to posterity, the children of drunkards are aflicted with idiotcy, epilepsy, insanity, scrofula, rickets and consumption. Dr. Munde says:—In addition to this, tobacco smoke contains prussic acid sulphuretted hydrogen, oxide of carbon and carbonic acid etc. It has been proved that in certain circumstances these poisons pass into the blood by means of the air. In the opinions of many eminent doctors the flesh-eating, wine-drinking and smoking are unnecessary, unnatural and undesirable. So, the bad addict of these things must be for sakened for ever. Because these things injurious to the health, body and mind, and also reduce the longevity of the human life. It is pity that a canard-puffer-cum-flesh-eater could advocate against the prohibition and total ban of cow-killing and other useful animal slaughtering still prevalent in India in view of acute shortage of foodgrains. It is not a preposterous and paradoxical - policy to export flesh and import foodgrains and milk products to and from abroad? In fact, almost all men and ministers in our popular and secular Government are individually in favour of total ban on cow-slaughter for the benefit and prosperity which can be obtained

(Contd. on page 4)

सम्पादकीय

राजनीतिक कुचक्र :—

संस्कृत और आर्य भाषा पर कुठाराघात

अभी भारतीय विश्व विद्यालयो के उपकुलपतियो का सम्मेलन हुआ, जिसमे सर्वसम्मत रूप मे प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि विश्व-विद्यालयो तक शिक्षा का माध्यम पृथक्-पृथक् भारतीय भाषाए की जावें। परन्तु अंग्रेजी का स्तर इतना अवश्य बनाये रखा जावे, जिससे विज्ञान आदि की शिक्षा मे कमी न हो सके।

सुनने मे यह प्रस्ताव उचित प्रतीत होता है कि सर्वसाधारण जनता अपने-अपने राज्यो की भाषाओ के द्वारा उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकती है तथा विज्ञान आदि के लिये अंग्रेजी की सहायता उसे मिलती रह सकती हैं। परन्तु इस प्रस्ताव का दुष्परिणाम यह होगा कि भारत की सदा से चली आ रही और समस्त राष्ट्र को एक कड़ी मे बाधे रखने वाली सस्कृत भाषा सर्वथा बहिष्कृत कर दी जावेगी। भारत ही नही विश्व के समस्त ज्ञान-विज्ञान का अमरकोष सस्कृत भाषा के बिना है कहा? जितना विज्ञान विश्व भर मे फैलेगा उस समस्त विज्ञान का मूल सस्कृत भाषा ही है। शब्द शास्त्र का अपार भण्डार सस्कृत भाषा मे ही तो सुरक्षित है। ईश्वरीय नित्य-सार्वदेशिक सार्वभौम ज्ञान वेद की भाषा वैदिक सस्कृत ही है। इसी के आधार पर हमारे पूर्वज ऋषि-मुनियो ने अनेक विध शास्त्रो का प्रणयन किया है। इसी अक्षय कोष से विश्व की समस्त भाषाए अपना-अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं।

भारत के उत्तर से दक्षिण और पश्चिम से पूर्व तक सदा एक सूत्र मे बान्धे रखने वाले यही शास्त्र तो हैं। यदि यह प्रस्ताव कार्य रूप मे चालू कर दिया गया, तो न भारत राष्ट्र रह सकेगा, न भारतीय सभ्यता बच सकेगी और न ही वैदिक विश्व सस्कृति का घोष कही सुनाई दे सकेगा

इतना ही धक्का लगकर समाप्ति नही हो जावेगी, अपितु भारतीय राष्ट्र भाषा जिसको हिन्दी नाम से पुकारा जा रहा है, वह भी अस्ताचल मे समाधि ले लेगी। भारत मे बोली जाने वाली विभिन्न बोलियाँ और लिपियाँ अपने-अपने स्थानो पर रह जावेंगी। इन सबको एक सूत्र मे पिरोने वाली माध्यम-आधार रूप हिन्दी भाषा न रहकर भारत केवल भाषा के रूप मे ही नही, अपितु प्रादेशिक रूप मे भी टुकडे-टुकडे होकर अनेक राज्यो मे बिखर जावेगा। फिर उसका जो परिणाम हो सकता है, उसको भारत भुक्त चुका है। राजनीतिक दृष्टि से भारत पराधीन होकर भी सस्कृत भाषा जन्य सस्कृति और सभ्यता मे एक रूप मे रहा। इसी कारण पराधीनता की बेड़ियाँ कड़ी। परन्तु इस प्रस्ताव के कारण भारत को एक अखण्ड रूप में बनाये रखने वाली सत्ता ही नष्ट हो जावेगी। हिन्दी भाषा का आधार ही नही, स्वय हिन्दी भाषा का अस्तित्व सकट में पड जाने की पूरी आशङ्का खडी कर दी गई है, यह कुचक्र राजनीतिक षड्यन्त्र की उपज है।

आर्य बन्धुओ! ऋषिदयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ८वें समुल्लास मे समस्पर्शी शब्दो मे लिखा था—

"इक्ष्वाकु आदि राजा जो आर्यावर्त्त के प्रथम राजा हुए जिन्होंने यह आर्यावर्त्त बसाया है। अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है जो कुछ है सो भी विदेशियो के पादाक्रान्त हो रहा है कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियो को अनेक प्रकार के दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियो का राज्य भी पूर्ण सुख-दायक नही है।

परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा अलग-अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है, बिना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना अति कठिन है, इसलिये जो कुछ वेदादि शास्त्रों मे व्यवस्था वा इतिहास लिखे हैं उसी का मान्य करना भद्र पुरुषो का काम है।

'आर्यमर्यादा' के स्वाध्याय प्रमी पाठक बन्धुओ! महर्षि दयानन्द के ऊपर लिखे सन्दर्भ का बार-बार मनन कीजिये। ऋषि ने स्पष्ट उपदेश दिया कि वेद की व्यवस्था और शास्त्रो के इतिहास के आधार पर ही आर्यावर्त्त की उन्नति हो सकती है।

एक बात बडे ध्यान मे रखने योग्य है कि ऋषि ने सर्वत्र अपने ग्रन्थो मे आर्य, आर्यावर्त्त, आर्यसमाज और आर्य-भाषा शब्दो का प्रयोग किया है, कही भी हिन्दू, हिन्दुस्तान, हिन्दू समाज और हिन्दू भाषा का नाम नही लिखा। हम आर्यों ने सब से मिलकर चलने की नीति अपना कर ऋषि के आदेश की स्पष्टत अवहेलना की। आर्यसभा के स्थान पर हम सर्वत्र हिन्दी भाषा इसीलिये लिखते आ रहे हैं कि आर्य नाम से चिढकर कोई दूर न भागे और हिन्दी नाम से इकट्ठे रह सकें। परन्तु राजर्षि पुरुषोत्तम-दास टण्डन का यह उद्यम भी आज धूलि मे मिलाया जाने लगा है। हमारी आज वही दुर्गति है जैसेकि किसी विद्वान् का कथन है—

भक्षितेऽपि लशुने न शान्तोव्याधि

अर्थात् रोग दूर करने के लिए अभक्ष्य लशुन भी खालिया, परन्तु रोग तक भी दूर न हुआ। इस दोष मे हम सभी आर्यजन दोषी हैं। इसका एक कारण आर्यों मे समझौता वृत्ति के नाम पर ऋषि दयानन्द द्वारा उपदिष्ट मन्तव्य से दूर हटते जाना है।

सयुक्त पजाब मे राजनीतिक मच से आर्यसमाज के अदम्य सेनानी स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अमृतसर मे हिन्दी के स्थान पर आर्य-भाषा शब्द का प्रयोग किया था। आज वह बात हमारे ध्यान मे भी नही रह गई।

आर्यसमाज की स्थापना ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदिष्ट वैदिक सिद्धान्तो और मन्तव्यो के प्रचार और प्रसार के लिए की गई थी। यह ठीक है कि आज राजनीतिक रूप से आर्यसमाज के राष्ट्रिय क्षेत्र मे काम करने वाले नेता कार्यकर्त्ता एक मच पर नही हैं, परन्तु हम समझते हैं कि भाषा के नाम पर खडी की गई राष्ट्रिय आपत्ति को दूर रखने के लिए एक जुट होकर हम कर्त्तव्य पालन करने के लिए आगे बढे, तो यह बात असम्भव नही है कि राष्ट्रभाषा और सस्कृत भाषा की रक्षा की जा सकती है। इनकी रक्षा मे ही राष्ट्र की एकता, सुरक्षा और सुदृढता निहित है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

श्री मद्दयानन्द आर्य विद्यापीठ के अन्तर्गत
विरजानन्द संस्कृत-हिन्दी परीक्षा
सूचना

आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वानो द्वारा सचालित एव अनेक महात्माओ से आशीर्वाद प्राप्त "विरजानन्द सस्कृत-हिन्दी परीक्षा" की परीक्षायें सन् १९६९ अक्टूबर २६, नवम्बर २, ९ तथा १६ रविवारो को होगी। कार्यालय मे २० पैसे डाक टिकट भेजकर, २० जौलाई से पूर्व ही पाठविधि, नियमावली और आवेदन—पत्र निम्न पते से मगवायें —

—परीक्षा मन्त्री

विरजानन्द सस्कृत-हिन्दी परीक्षा, श्रीमद्दयानन्द आर्य विद्यापीठ,
गुरुकुल झज्जर जि० रोहतक (हरयाणा)

महर्षि दयानन्द सरस्वती काशी शास्त्रार्थ की शताब्दी

३०-३-६९ के "आर्यमर्यादा" में शताब्दी के कार्यों की प्रगति प्रकाशित हुई थी। उसके पश्चात् जो कार्य आगे हुआ है उसका विवरण आर्य जगत् के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है :—

(क) शोध फल जो प्राप्त हुए—

१—"हमारा असली व प्राचीनतम नाम आर्य ही है।" श्री जगदीश-चन्द्र 'वसु' सिद्धान्तालंकार—नरवाना

२—'वेदों का ईश्वरीयत्व और नित्यत्व'। श्री जयदत्त जी व्याकरण दर्शनाचार्य—जोशीमठ

३—'ऋषि दयानन्द का ऋषित्व'। श्री सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि—हिसार

४—'वैदिक संहिताओं में अलंकार।" श्री विनोदचन्द्र जी विद्या-लंकार एम० ए० गुरुकुल—कांगड़ी

५—'वैदिक शाखाओं का स्वरूप'। श्री जयदेव जी आर्य एम० ए० वेदाचार्य—विद्यावाचस्पति हिसार

६—'स्वामी दयानन्द के यजुर्वेदभाष्य पर एक तुलनात्मक दृष्टि'। गु० नि० वि० कांगड़ी श्री डा० रामनाथ जी विद्यालंकार एम० ए० पी० एच० डी०

७—'महर्षिदयानन्द की वेदार्थ विषयक क्रान्ति का निष्पक्ष विद्वानों पर प्रभाव'। श्री आचार्य धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड ज्वालापुर।

८—'सामयिक समाधान"। श्री स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश —झज्जर।

इंगलीश लेख—

९—Swami Dayanand Sarswti's. Constitution to spritual Revived in India

—श्री आचार्य धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड—ज्वालापुर

विपक्ष में लेख—

१०—'ससार की कोई भी पुस्तक ईश्वरोक्त नही।" श्री रामपाल-सिंह तेवतिया एम० ए० सिद्धान्त शास्त्री—मेरठ

संस्कृत लेख—

११—"वेदानां [महत्त्वं तत्प्रचारोपायाश्च"। श्री पं० युधिष्ठिरो मीमांसक:—सोनीपत (हरयाणा)

इस से पूर्व १४ शोधपत्र प्राप्त हुए थे। अभी कुछ और शोधपत्र आने को हैं जिनकी सूचना विद्वानों से प्राप्त हो चुकी है।

(ख) दान में जो धन प्राप्त हुआ है।

१०.००	श्री कृष्णचन्द्र जी गुप्त ग्रा० पो० कुमारी जि० पूर्णियां (बिहार)
२५०.००	श्री गुरुमुखदास जी उपप्रधान आर्यसमाज भोजूवीर वाराणसी छावनी
१००.००	श्री जगन्नाथ जी आर्य धनवाद (बिहार)
११.००	श्री कैलाशनाथसिंह मंत्री उप प्रतिनिधिसभा वाराणसी
५.००	श्री धर्मपाल जी आर्यमुसाफिर काशी आर्यसमाज
१००.००	काशी आर्यसमाज बुलानाला—वाराणसी
१००.००	श्री गंगाविष्णु जी मंत्री आर्यसमाज जमशेदपुर (बिहार)
२.००	श्री इन्दुलाल जी पटेल सामला (सौराष्ट्र)
५७८.००	योग
६८३.२५	पिछला योग
१२६१.२५	कुल योग

शोध पत्र भेजने वाले विद्वानों एवं दानी महाशयों को बहुत-बहुत धन्यवाद।

प्राप्त शोधपत्रों को ग्रन्थ का रूप प्रदान करने हेतु श्री पं० विद्यानन्द जी मन्तिकी एवं आचार्य कृष्णानन्द जी ने कार्य प्रारम्भ कर दिया हैं।

शताब्दी समारोह के लिये स्वागत समिति के सदस्य २०-४-६९ से यज्ञ के पश्चात एक विशेष समारोह में बनाये जाने प्रारम्भ किये जा रहे हैं। २५० सदस्य बनाने का लक्ष्य है। प्रत्येक सदस्य इक्यावन रुपया चन्दा (दान) देकर सदस्य बन सकेगा।

श्री खेमचन्द्र प्रधान
(आर्य उपप्रतिनिधी सभा कार्यालय आर्यसमाज भोजूवीर वाराणसी छावनी)

"भविष्य को बदलना है"

विनोद "शाही"

शान्ति मे निर्माण राष्ट्र का करना है तरुणाई,
मौत से भी राष्ट्र रक्षा में, तरुण करनी सगाई।

अब आधुनिकता में कही तुम इतना न बह चलो रे,
कि छूते पतवार पुरानी मंझधार, न भूलो रे।

निज, मान, ज्ञान, सम्मान के ध्यान की बेला आई,
मौत से भी राष्ट्र रक्षा में तरुण करनी सगाई।

भूल गए जब दांत गिने सिंहों शेरों के बचपन ने,
तरुण अभिन्यु की गाथा गुंजित की थी कण-कण ने।

श्याम-मेघ हैं प्राचि क्षिति में, नही ललाई आई,
मौत से भी राष्ट्र रक्षा में तरुण करनी सगाई।

देखो, भविष्य में सुखों के, सुनहले दीप हैं जलते,
तरुण, तुम पर ही निर्भर है, कैसा भाग्य बदलते।

अंधियारे में प्रस्तर पर बढ़ने की बारी आई,
मौत से भी राष्ट्र रक्षा में तरुण करनी सगाई।

(*Contd. from page 2*)

economically, politically, socially, physically and religiously for our bretheren Hindus, Muslims, Sikhs, Parsis and Christions alike. However, if an unmaterial quibbling and rigmarole in this matter of significance and justification might be condemned contemptuously. It may be recalled, that the constitution of India also prohibits the cow-slaughter throught the whole of the country. After all in the holy land of our glorious ancestors, we should take in our daily diets foodgrains, fruits, roots, vegetables milk and butter the manna, in place of flesh and wine and the like. Moreover. Pt. Bhagwaddutta ji writes in one of his books that among the Greeks and Semites, therefore, the idea of a Golden Age, and the trait that in that age man was Vegetarian in his diet. Man in his primitive state of innocence, lived at peace with all animals, eating the spontaneous fruits of the earth. Thus, from Egypt as far as Lake Tritonis, Cows flesh however none of these tribes ever taste, but obstain from it for the same reason as the Egyptions, neither do they any of them breed swine. Even at Cyrene, the women think it wrong to eat the flesh of the cow. In brief, I carry no malice, enmity or hatred towards any person of any caste or creed in writing here some few words of feeling in my mind and heart for a proper and pertinent ponderation. So, in Yajur Veda—"Honour the just ruler. Keep away death, the great finisher. Worship God, the Destroyer of the Wicked Contemplate on God, the Great. Try for the preservation of Vedic Knowledge. Revere all learned persons, utilise all the forces of nature. Acquire the knowledge of Heaven and Earth".

शङ्कर एक महान् तार्किक

(ले० श्री प० गुरुदत्त जी एम० एस० सी० १८/२८, पजाबी बाग, नई दिल्ली-२६)

(प्रथम लेख जो १६-३-६९ के अंक मे छपा था। उसके आगे—)



पूर्व लेख में हमने यह बताया था कि स्वामी शङ्कराचार्य जी ने वेदान्त दर्शन के शारीरक भाष्य के उपोदघात में जो युक्ति दी है वह उनके अद्वैतवाद का खण्डन करती है।

स्वामी जी ने लिखा है कि अन्य-अन्य के धर्मों के परस्पर मूल भेद मे ज्ञान के अभाव मे एक-दूसरे मे परस्पर स्वरूप तथा धर्म का अध्यास (भ्रम) सत्य और अनृत का मिथुनीकरण होता है।

इसका स्वाभाविक अर्थ यह है कि जब पदार्थों के धर्मों मे मूल भेद का ज्ञान हो जाये तो भ्रम नहीं रहेगा। हमने अपने पूर्व लेख मे बताया है कि जीवात्मा और परमात्मा के धर्मों मे मूल भेद तो उपनिषदादि ग्रन्थो मे लिखे हैं। अत स्वामी जी के अद्वैतवाद का स्वामी जी के अपने कथन से ही खण्डन हो जाता है।

स्वामी जी अविद्या के विषय मे भी इसी उपोद्घात मे लिखते हैं।

तमेतमेवलक्षणमध्यास पण्डिता अविद्येति मन्यन्ते, तद्विवेकेन च वस्तुस्वरूपावधारण विद्यामाहु । (श०-भा०-ब्र०-सू०-उपोद्घात)

उक्त लक्षण वाले इस अध्यास को विद्वान् लोग अविद्या कहते हैं। विवेक द्वारा वस्तुस्वरूप के निश्चय को विद्या कहते हैं।

शास्त्र मे यह विद्या अविद्या के लक्षण नहीं। पहले यह समझ लें कि स्वामी जी तमेतमव किसको कह रहे हैं? इस कथन से पूर्व स्वामी ने कहा है।

पुरोऽवस्थित एव विषय विषयान्तरमध्यसितव्यमिति, अप्रत्यक्षेऽपि ह्याकाशे बालास्तलमलिनताद्यध्यस्यन्ति। एवमविरुद्ध प्रत्यगात्मन्यप्यनात्माऽध्यास । (श०-भा०-ब्र०-सू०-उपोद्घात)

अर्थात (यह नियम नही कि) पुरोवर्ती विषय मे ही विषयान्तर का अध्यास होना चाहिये। क्योकि अप्रत्यक्ष आकाश मे तलमलिनता आदि का अध्यास करते हैं। अत प्रत्यागात्मा मे अध्यास सिद्ध है।

इस अध्यास को अविद्या माना है। आप उदाहरण देते हैं कि अप्रत्यक्ष आकाश मे तलमलिनता (नीलापन तथा कडाही के भीतर का गोलाकार) दिखायी देने लगता है। अत प्रत्यागात्मा मे भ्रम सिद्ध है।

विद्या अविद्या की बात तो आगे चल कर लिखेंगे। यहाँ यह देखेंगे कि उक्त उक्ति मे कुछ सार है क्या?

आकाश अप्रत्यक्ष है। इन्द्रियगोचर नहीं, परन्तु वह नीला दिखायी देता है और कडाही तल की भाँति गोल दिखायी देती है। यह अध्यास है।

प्रथम, आकाश अवस्तु नहीं। द्वितीय, नीलम भी अवस्तु नहीं कडाही भी अवस्तु नहीं। अत देखने मे भूल अवश्य होती है, परन्तु भूल मे वस्तु का आभास होता है जो पहले देखी-भाली होती है। साथ ही जिसको अध्यास होता है, वह कोई तीसरी वस्तु है। स्वामी जी की बात सिद्ध नहीं हुई और स्वामी जी ने कह दिया है कि अत प्रत्यागात्मा मे अध्यास सिद्ध है। महाराज! उक्त युक्ति से यह सिद्ध नहीं हुआ। कारण यह कि (१) किसको सिद्ध हुआ है? परमात्मा के अतिरिक्त तो कोई है नहीं तो किसको यह पता चला कि स्वामी जी ने युक्ति दी है और वह युक्ति ठीक है। (२) प्रत्यागात्मा क्या है? (३) और आत्मा क्या है? जब तक ये तीनो पृथक्-पृथक् न हों, तब तक कुछ भी सिद्ध नहीं हुआ। यदि — किन ... है तो अब यह कि प्रत्यागात्मा परमात्मा से पृथक् पदार्थ मे प्रत्यागात्मा को अथवा प्रत्यागात्मा मे परमात्मा का भ्रम करने लगता है।

स्वामी जी की सब युक्तियो मे त्रुटि यह ही रह जाती है कि वे परमात्मा प्रत्यागात्मा और देखने वाला जीवात्मा को पृथक पृथक सिद्ध तो कर रहे हैं परन्तु मान नहीं रहे।

अब विद्या अविद्या की बात भी देखनी चाहिए। स्वामी जी किसी वस्तु के अविवेक से मिथ्या ज्ञान को अविद्या कहते हैं परन्तु वेद तथा उपनिषद् इससे भिन्न बात बताते हैं।

यह ठीक है कि अविद्या का अर्थ अज्ञान भी है, परन्तु मिथ्या ज्ञान मे वस्तु का अभाव नहीं माना गया। अयथार्थ ज्ञान को अज्ञान कहा है। स्वामी जी शून्य मे किसी दूसरे के अध्यास (भ्रम) को अविद्या कहते हैं। ऐसा हो ही नहीं सकता। अत यह बात ही गलत है। इस पर शास्त्र मे विद्या अविद्या का नाम आया है परन्तु वहाँ इसके अर्थ विलक्षण हैं।

महा भारत मे महर्षि व्यास विद्या अविद्या के विषय मे इस प्रकार लिखते हैं—

अविद्यामाहुरव्यक्त सर्गप्रलयधर्मि वै।
सर्गप्रलयनिर्मुक्ता विद्या वै पञ्चविंशक ॥२॥ (म०-भ०- शा०-३०७-२

इसका अर्थ है कि वह अव्यक्त जो सर्ग तथा प्रलय धर्म वाला है वह अविद्या कहलाता है और जो सर्ग प्रलय धर्म से युक्त नही वह अव्यक्त जिसे पच्चीसवा गण भी कहते हैं वह विद्या है।

सर्ग धर्म वाला अव्यक्त प्रकृति है। पच्चीसवा गण आत्म तत्त्व है। इसमे आत्मा और परमात्मा दोनो लिये जाते है। इसी को सांख्य ने इस प्रकार कहा है—

सत्त्वरजस्तमसा साम्यावस्था प्रकृति प्रकृतेर्महान
महतोऽहङ्कारोऽहङ्कारात् पञ्चतन्मात्राण्युभयमिन्द्रिय ।
तन्मात्रेभ्य स्थूलभूतानि पुरुष इति पञ्चविंशतिगण ॥१॥ (सा०-१-६१)

अर्थात्—प्रकृति सगधर्म वाला है और इससे महत्। महत् से अहकार, अहकार से पचतन्मात्रा और दोनो प्रकार की इन्द्रियाँ। तन्मात्राओ से स्थूलभूत उत्पन्न होते है। पच्चीसवा गण पुरुष (आत्मा तत्त्व) है।

इस प्रकार सर्ग एव प्रलय वाले अव्यक्त (प्रकृति) का वर्णन लिखा है और पुरुष को उससे पृथक् गिनाया है।

प्रकृति को सांख्य इस प्रकार लिखता है—

अव्यक्त त्रिगुणाल्लिङ्गात् ॥ (सा०-१-१३६)

अर्थात्—तीन गुण वाली अव्यक्ता (प्रकृति) है।

अत महाभारत के प्रवक्ता के अनुसार अविद्या प्रकृति है और यह अभाव नहीं। यह भ्रम भी नहीं।

अत प्रत्यागात्मा मे जड का अध्यास हो अथवा परमात्मा का प्रकृति मे अध्यास हो यह सिद्ध नहीं किया जा सका। प्रत्यागात्मा अवस्तु है क्या? प्रत्यागात्मा क्या है?

यह विलियम मोनियर अपने कोष मे इस प्रकार लिखते हैं—

The personal Soul अथवा individual Soul

प्रत्यगात्मा के शाब्दिक अर्थ हैं कि जीवात्मा जब मन और बुद्धि के सयोग से प्रत्यक्ष होता है। चिदात्मा भी इसे ही कहते हैं।

कुछ भी हो प्रत्यगात्मा क्या है? यह कोई वस्तु है अथवा अवस्तु है। स्वामी जो नहीं बता सके। हम मानते है कि यह सयोग है आत्मा का प्रकृति के साथ। परमात्मा का सयोग तो होता नहीं। इसमे परमात्मा का अध्यास भी नहीं। कारण यह कि इसमे परमात्मा के गुणो का आभास नहीं होता।

परन्तु स्वामी जी क्या मानते हैं? वह स्पष्ट बताते नहीं। कारण यह कि स्वामी जी किसी अनात्मतत्त्व को मानते नहीं। यह अनात्म कहाँ से आ गये? आप इस प्रवचन मे आगे लिखते है

तमेतमविद्याख्यमात्मानात्मनोरितरेतराध्यास पुरस्कृत्य सर्वे प्रमाण-प्रमेयव्यवहारा लौकिका वैदिकाश्च प्रवृत्ता, सर्वाणि च शास्त्राणि विधि-

(शेष पृ० ६ पर)

प्रतिषेधमोक्षपराणि । कथं पुनरविद्यावद्विषयाणि प्रत्यक्षादीनि प्रमाणानि शास्त्राणि चेति ? (श०-भा०-ब्र०-सू०-उपोद्घात्)

अर्थात्—उक्त वर्णित अविद्या कहे जाने वाले आत्मा और अनात्मा के परस्पर अध्यास को सामने रखकर सब लौकिक और वैदिक शास्त्र प्रमाण प्रमेय व्यवहार में लग गये हैं। ये सब शास्त्र कैसे अविद्यावत् विषयों में प्रचुरता, प्रत्यक्षादि प्रमाण कैसे हो सकते हैं ?

आत्मा और अनात्मा दोनों को अविद्या कहे जाने वाला मान लिया है। कहा है कि अविद्या कहे जाने वाले आत्मा और अनात्मा के परस्पर अध्यास को मानकर………। अब बताइये, आत्मा (परमात्मा) भी अविद्या हो गया है।

आगे लिखते हैं कि इन दोनों को अविद्या मानकर वैदिक और लौकिक शास्त्र प्रमाण प्रमेय व्यवहार में लग गये हैं।

वेदादि शास्त्र क्या कर रहे हैं ? यह तो पीछे देखा जायेगा। पहले हम यह पूछते हैं कि आत्मतत्त्व को भला स्वामी जी अविद्या किस प्रकार कह गये और फिर आप नही जानते कि अनात्म का आत्मा में अध्यास होता है। अथवा आत्मा का अनात्मा में ? आप लिखते हैं (इतरेतराध्यासं) परस्पर अध्यास होता है। अभिप्राय यह कि अनात्मा भी कुछ है, जिसका आत्मा पर अध्यास होता है।

विस्मय है कि ऐसी युक्ति करने वाले को 'Master of logic' कैसे कहा जा सकता है ? स्वामी जो अनात्मा तत्त्व मानते नहीं और उसका अध्यास आत्मा परमात्मा पर मानने लगे हैं।

स्वय एक युक्ति विहीन वात कर लौकिक और वैदिक शास्त्रों तथा प्रमेय प्रमाण इत्यादि की निन्दा करने लगे हैं।

प्रमेय का अर्थ है यथार्थ ज्ञान और यथार्थ ज्ञान को जानने के साधन को प्रमाण कहते हैं।

(प्रमीयतेऽनेति प्रमाणम्)। जिससे यथार्थ ज्ञान की उपलब्धि हो, वह प्रमाण है। भ्रम अयथार्थ ज्ञान को कहते हैं।

स्वामी जी ने वेद शास्त्रों की तो निन्दा की, परन्तु प्रमाणादि की निन्दा क्यों की ? ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी जी बौद्ध विचारधारा से समन्वय कर रहे हैं। बौद्ध वेदों को अमान्य करते हैं। यही स्वामी जी ने कर दिया। बौद्ध प्रत्यक्षादि प्रमाणों को मानते हैं। स्वामी जी ने वह भी अमान्य कर दिया। उन्होने युक्ति को भी स्वीकार नही किया और अयुक्ति सगत वक्तव्य देने आरम्भ कर दिये।

वेद वाक्य में तथा महाभारत में जो अव्यक्त प्रकृति को तथा उनसे बनने वाले पदार्थों को अविद्या कहा है तो इस कारण नही कि उनका अस्तित्व ही नही। यह इस कारण कहा है कि उनके रूप-रूपान्तर स्थाई नही। उनके रूपों का स्वरूप सत्य नहीं, परन्तु वह जिसके ये रूप-रूपान्तर बनते हैं, वह तो स्थाई अविनाशी और अजन्मा हैं।

देखिये, शास्त्र इसमें क्या कहता है ? श्वेताश्वतर उपनिषद् का कथन है—

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः। (श्वे०—४-५)

अर्थात्—एक अजन्मा (अक्षर) रक्तवर्ण, श्वेतवर्ण और कृष्णवर्ण की (प्रकृति) है जो अनेक प्रकार की सृष्टि में अपने ही गुणों वाली प्रजा का सृजन करती है।

यहाँ प्रकृति को अजन्मा एतदर्थ अक्षर कहा है।

भगवद् गीता में भी लिखा है—

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि। (भ०-गी०—१३-१९)

अर्थात्—प्रकृति और पुरुष दोनों अनादि हैं।

अब एक वेद मन्त्र भी देखिए—

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास ॥
(ऋ०—१०-१२९-२)

इसका अर्थ है कि उस समय (ब्रह्म रात्रि में) न मृत्यु थी और न ही अमृतत्व था। अर्थात् प्राणी मरते-जीते नहीं थे। न रात थी और न दिन था। कारण सूर्यादि अभी बने ही नहीं थे। उस समय (आनीद्) समीप ही (अवातम्) अविचल (तत् एकम्) वह एक (स्वधया) प्रकृति, जगत् का मूल पदार्थ अव्यक्त उससे अधिक परे (इन्द्रिय अगोचर) नही था।

स्वधया को विलियम मोनियर लिखते हैं 'Nature of the material universe, condition of universe

इस प्रकार अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं कि अनात्मतत्त्व और आत्मतत्त्व दोनों हैं। दोनों सत्य हैं और परमात्मा सर्वव्यापक होने से अनात्मतत्त्व में विद्यमान होता है। जब विद्यमान है तो अध्यास का प्रश्न नहीं। दोनों विद्यमान हैं।

परन्तु स्वामी जी ने हिन्दू समाज का सबसे अधिक अनिष्ट यह कह कर किया कि……

मतः अहं प्रत्यय (वृत्ति) वाला प्रत्यगात्मा अपने को ही अध्यास का साक्षी है। और वह प्रत्यगात्मा सबका साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से नैसर्गिक मिथ्या रूप कर्तृत्व तथा भोक्तृत्व आदि का प्रवर्तक सर्वलोक में विदित है।

स्वामी जी का मत है कि यह अनर्गल बात वेदान्त वाक्यों में लिखी है। हमने ऊपर अनेक उपनिषद्, वेदादि ग्रन्थों से प्रमाण देकर बताया है कि ऐसा कुछ भी नही लिखा। शास्त्र के मिथ्या अर्थ कर स्वामी जो ने मानव समाज में एक ऐसी बात बता दी है जिसके परिणाम हिन्दू समाज में अति भयंकर हुए हैं और हो रहे हैं।

अहं प्रत्यय का अभिप्राय यह कि पुरुष यह मानता है कि मैं मोटा हूं, मैं दुर्बल हूं, मैं सुखी हूं अथवा दुःखी हूं इत्यादि। यह मानता है। प्रत्यगात्मा और यह इस कारण मानता है कि वह सर्व साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से है। वह प्रत्यगात्मा सबके साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से स्वभाविक, परन्तु मिथ्या कर्तृत्व-भोक्तृत्व वाला, मानने लगता है।

स्वामी जो प्रत्यगात्मा का शब्द परमात्मा के लिये प्रयोग कर रहे हैं। उनके विचार में परमात्मा स्व-प्रकाशमान नही; अर्थात् वह अपने आप प्रत्यक्ष नहीं होता। जब परमात्मा का परमात्मा में अध्यास (भ्रम) होकर प्रत्यगात्मा हो जाता है तो वह प्रत्यगात्मा अपने को मिथ्या रूप में कर्ता और भोक्ता मानने लगता है।

यह एक वक्तव्य है। न तो इसमें प्रमाण है और न युक्ति। परमात्मा ही मिथ्या रूप में अपने को कर्त्ता और भोक्ता समझने लगता है। वह न तो कार्य कर रहा होता है और न भोग कर रहा होता है।

अर्थात् जब एक प्राणी अपनी पत्नी की हत्या कर दे तो वह हत्या कर रहा नही होता। अथवा जब कोई पुरुष किसी पर-स्त्री से व्यभिचार कर रहा हो तो वह कर नही रहा होता। यह सब मिथ्या भ्रम है।

स्वामी जी के उक्त वक्तव्य से अनुमान लगाया जा सकता है कि कितनी भयंकर जीवन मीमांसा वह उपस्थित कर गये हैं।

(स्वामी जी स्वामी शंकराचार्य जी जानना चाहिये—सम्पादक)

महर्षि-महिमा

(ले० मोहनदेव शर्मा पो० बगड़ (झुंझुनू) राज०)

पाखण्ड कुंगरू के कँगूरे ढह जाने लगे,
कुण्ठित हुये वे शस्त्र अबाल अरिन्द के।
टूटने लगे थे घेरे मिथ्या के दिखाऊ जब,
होने लगे मुक्त चहुं ओर बन्दी बन्द के॥
छूटने लगे थे छक्के अन्ध मतिमन्दन के,
ढीले पड़ गये फन्द सारे छल छन्द के।
"मोहन" तूणीर में से निकल निकल जब,
तीखे तीखे तीर चले वीर दयानन्द के॥

शङ्कर एक महान् तार्किक

(वैद्य श्री प० गुरुदत्त जी एम० एस० सी० १८/२८, पजाबी बाग, नई दिल्ली-२६)

(प्रथम लेख जो १६-३-६९ के अक मे छपा था। उसके आगे—)



पूर्व लेख मे हमने यह बताया था कि स्वामी शङ्कराचार्य जी ने वेदान्त दर्शन के शारीरक भाष्य के उपोद्घात मे जो युक्ति दी है, वह उनके अद्वैतवाद का खण्डन करती है।

स्वामी जी ने लिखा है कि अन्य-अन्य के धर्मों के परस्पर मूल भेद मे ज्ञान के अभाव मे एक-दूसरे म परस्पर स्वरूप तथा धर्म का अध्यास (भ्रम) सत्य और अनृत का मिथुनीकरण होता है।

इसका स्वाभाविक अर्थ यह है कि जब पदार्थों के धर्मों मे मूल भेद का ज्ञान हो जाये तो भ्रम नही रहेगा। हमने अपने पूर्व लेख मे बताया है कि जीवात्मा और परमात्मा के धर्मों मे मूल भेद तो उपनिषदादि ग्रन्थो मे लिखे हैं। अत स्वामी जी के अद्वैतवाद का स्वामी जी के अपने कथन से ही खण्डन हो जाता है।

स्वामी जी अविद्या के विषय मे भी इसी उपोद्घात मे लिखते हैं।

तमेतमेवलक्षणमध्यास पण्डिता अविद्येति मन्यन्ते, तद्विवेकेन च वस्तुस्वरूपावधारण विद्यामाहु। (श०-भा०-ब्र०-सू०-उपोद्घात)

उक्त लक्षण वाले इस अध्यास को विद्वान् लोग अविद्या कहते हैं। विवेक द्वारा वस्तुस्वरूप के निश्चय को विद्या कहते हैं।

शास्त्र मे यह विद्या अविद्या के लक्षण नही। पहले यह समझ लें कि स्वामी जी तमेतमेव किसको कह रहे हैं? इस कथन मे पूर्व स्वामी ने कहा है।

पुरोऽवस्थित एव विषये विषयान्तरमध्यसितव्यमिति, अप्रत्यक्षेऽपि ह्याकाशे बालास्तलमलिनताद्यध्यस्यन्ति। एवमविरुद्ध प्रत्यगात्मन्यप्यनात्मा-ऽध्यास। (श०-भा०-ब्र०-सू०-उपोद्घात)

अर्थात् (यह नियम नही कि) पुरोवर्ती विषय मे ही विषयान्तर का अध्यास होना चाहिये। क्योकि अप्रत्यक्ष आकाश मे तलमलिनता आदि का अध्यास करते हैं। अत प्रत्यगात्मा मे अध्यास सिद्ध है।

इस अध्यास को अविद्या माना है। आप उदाहरण देते हैं कि अप्रत्यक्ष आकाश मे तलमलिनता (नीलापन तथा कडाही के भीतर का गोलाकार) दिखायी देने लगता है। अत प्रत्यगात्मा मे भ्रम सिद्ध है।

विद्या अविद्या की बात तो आगे चल कर लिखेंगे। यहाँ यह देखेंगे कि उक्त उक्ति मे कुछ सार है क्या?

आकाश अप्रत्यक्ष है। इन्द्रियगोचर नही, परन्तु वह नीला दिखायी देता है और कडाही तल की भाँति गोल दिखायी देती है। यह अध्यास है।

प्रथम, आकाश अवस्तु नही। द्वितीय, नीलम भी अवस्तु नहीं, कडाही भी अवस्तु नही। अत देखने मे भूल अवश्य होती है, परन्तु भूल मे वस्तु का आभास होता है जो पहले देखी-भाली होती है। साथ ही जिसको अध्यास होता है, वह कोई तीसरी वस्तु है। स्वामी जी की बात सिद्ध नही हुई और स्वामी जी ने कह दिया है कि अत प्रत्यगात्मा मे अध्यास सिद्ध है। महाराज! उक्त युक्ति से यह सिद्ध नही हुआ। कारण यह कि (१) किसको सिद्ध हुआ है? परमात्मा के अतिरिक्त तो कोई है नही तो किसको यह पता चला कि स्वामी जी ने युक्ति दी है और वह युक्ति ठीक है। (२) प्रत्यगात्मा क्या है? (३) और आत्मा क्या है? जब तक ये तीनो पृथक्-पृथक् न हो, तब तक कुछ भी सिद्ध नही हुआ। यदि कुछ सिद्ध हुआ है तो वह यह कि प्रत्यगात्मा परमात्मा से पृथक् पदार्थ है। देखने वाला परमात्मा को जानता है, तभी तो वह परमात्मा मे प्रत्यगात्मा को अथवा प्रत्यगात्मा मे परमात्मा का भ्रम करने लगता है।

स्वामी जी की सब युक्तियो मे त्रुटि यह ही रह जाती है कि वे परमात्मा प्रत्यगात्मा और देखने वाला जीवात्मा को पृथक् पृथक् सिद्ध तो कर रहे हैं, परन्तु मान नही रहे।

अब विद्या अविद्या की बात भी देखनी चाहिए। स्वामी जी किसी वस्तु के अविवेक से मिथ्या ज्ञान को अविद्या कहते हैं, परन्तु वेद तथा उपनिषद् इससे भिन्न बात बताते हैं।

यह ठीक है कि अविद्या का अर्थ अज्ञान भी है, परन्तु मिथ्या ज्ञान मे वस्तु का अभाव नही माना गया। अयथार्थ ज्ञान को अज्ञान कहा है। स्वामी जी शून्य मे किसी दूसरे के अध्यास (भ्रम) को अविद्या कहते हैं। ऐसा हो ही नही सकता। अत यह बात ही गलत है। इस पर शास्त्र मे विद्या अविद्या का नाम आया है परन्तु वहाँ इसके अर्थ विलक्षण हैं।

महाभारत मे महर्षि व्यास विद्या अविद्या के विषय मे इस प्रकार लिखते हैं—

अविद्यामाहुरव्यक्त सर्गप्रलयधर्मि वै।

सर्गप्रलयनिर्मुक्ता विद्या वै पञ्चविंशक ॥२॥ (म०-भ०- शा०-३०७-२

इसका अर्थ है कि वह अव्यक्त जो सर्ग तथा प्रलय धर्म वाला है, वह अविद्या कहलाता है और जो सर्ग प्रलय धर्म से युक्त नही, वह अव्यक्त जिसे पच्चीसवा गण भी कहते हैं, वह विद्या है।

सर्ग धर्म वाला अव्यक्त प्रकृति है। पच्चीसवा गण आत्म तत्त्व है। इसमे आत्मा और परमात्मा दोनो लिये जाते हैं। इसी को साख्य ने इस प्रकार कहा है—

सत्त्वरजस्तमसा साम्यावस्था प्रकृति, प्रकृतेर्महान्

महतोऽहङ्कारोऽहङ्कारात् पञ्चतन्मात्राण्युभयमिन्द्रिय।

तन्मात्रेभ्य स्थूलभूतानि पुरुष इति पञ्चविंशतिर्गण ॥१॥ (सा०-१-६१)

अर्थात्—प्रकृति सर्गधर्म वाला है और इससे महत्। महत् से अहकार, अहकार से पचतन्मात्रा और दोनो प्रकार की इन्द्रियाँ। तन्मात्राओ से स्थूलभूत उत्पन्न होते हैं। पच्चीसवा गण पुरुष (आत्मा तत्त्व) है।

इस प्रकार सर्ग एव प्रलय वाले अव्यक्त (प्रकृति) का वर्णन लिखा है और पुरुष को उससे पृथक् गिनाया है।

प्रकृति को साख्य इस प्रकार लिखता है—

अव्यक्त त्रिगुणाल्लिङ्गात् ॥ (सा०-१-१३६)

अर्थात्—तीन गुण वाली अव्यक्ता (प्रकृति) है।

अत महाभारत के प्रवक्ता के अनुसार अविद्या प्रकृति है और यह अभाव नही। यह भ्रम भी नही।

अत प्रत्यगात्मा मे जड का अध्यास हो अथवा परमात्मा का प्रकृति मे अध्यास हो, यह सिद्ध नही किया जा सका। प्रत्यगात्मा अवस्तु है क्या? प्रत्यगात्मा क्या है?

यह विलियम मोनियर अपने कोष मे इस प्रकार लिखते हैं—

The personal Soul अथवा individual Soul

प्रत्यगात्मा के शाब्दिक अर्थ हैं कि जीवात्मा जब मन और बुद्धि के सयोग से प्रत्यक्ष होता है। चिदात्मा भी इसे ही कहते हैं।

कुछ भी हो प्रत्यगात्मा क्या है? यह कोई वस्तु है अथवा अवस्तु है। स्वामी जी नही बता सके। हम मानते हैं कि यह सयोग है आत्मा का प्रकृति के साथ। परमात्मा का सयोग तो होता नही। इसमे परमात्मा का अध्यास भी नही। कारण यह कि इसमे परमात्मा के गुणो का आभास नही होता।

परन्तु स्वामी जी क्या मानते हैं? वह स्पष्ट बताते नही। कारण यह कि स्वामी जी किसी अनात्मतत्त्व को मानते नही। यह अनात्म कहाँ से आ गये? आप इस प्रवचन मे आगे लिखते हैं

तमेतमविद्याख्यमात्मानात्मनोरितरेतराध्यास पुरस्कृत्य सर्वे प्रमाण-प्रमेयव्यवहारा लौकिका वैदिकाश्च प्रवृत्ता, सर्वाणि च शास्त्राणि विधि-

(शेष पृ० ६ पर)

तिषेधमोक्षपराणि । कथ पुनरविद्यावद्विषयाणि प्रत्यक्षादीनि प्रमाणानि शास्त्राणि चेति ? (ब्र०-भा०-अ०-सू०-उपोद्घात्)

अर्थात्—उक्त वर्णित अविद्या कहे जाने वाले आत्मा और अनात्मा के परस्पर अध्यास को सामने रखकर सब लौकिक और वैदिक शास्त्र प्रमाण प्रमेय व्यवहार में लग गये हैं। ये सब शास्त्र कैसे अविद्यावत् विषयों में प्रचुरता, प्रत्यक्षादि प्रमाण कैसे हो सकते हैं ?

आत्मा और अनात्मा दोनों को अविद्या कहे जाने वाला मान लिया है। कहा है कि अविद्या कहे जाने वाले आत्मा और अनात्मा के परस्पर अध्यास को मानकर········। अब बताइये, आत्मा (परमात्मा) भी अविद्या हो गया है।

आगे लिखते हैं कि इन दोनों को अविद्या मानकर वैदिक और लौकिक शास्त्र प्रमाण प्रमेय व्यवहार में लग गये हैं।

वेदादि शास्त्र क्या कर रहे हैं ? यह तो पीछे देखा जायेगा। पहले हम यह पूछते हैं कि आत्मतत्त्व को भला स्वामी जी अविद्या किस प्रकार कह गये और फिर आप नही जानते कि अनात्म का आत्मा में अध्यास होता है। अथवा आत्मा का अनात्मा में ? आप लिखते हैं (इरेतरेतराध्यास) परस्पर अध्यास होता है। अभिप्राय यह कि अनात्मा भी कुछ है, जिसका आत्मा पर अध्यास होता है।

विस्मय है कि ऐसी युक्ति करने वाले को 'Master of logic' कैसे कहा जा सकता है ? स्वामी जो अनात्मा तत्त्व मानते नही और उसका अध्यास आत्मा परमात्मा पर मानने लगे हैं।

स्वय एक युक्ति विहीन बात कर लौकिक और वैदिक शास्त्रों तथा प्रमेय प्रमाण इत्यादि की निन्दा करने लगे हैं।

प्रमेय का अर्थ है यथार्थ ज्ञान और यथार्थ ज्ञान को जानने के साधन को प्रमाण कहते हैं।

(प्रमीयतेऽनेनेति प्रमाणम्)। जिससे यथार्थ ज्ञान की उपलब्धि हो, वह प्रमाण है। भ्रम अयथार्थ ज्ञान को कहते हैं।

स्वामी जी ने वेद शास्त्रों की तो निन्दा की, परन्तु प्रमाणादि की निन्दा क्यों की ? ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी जी बौद्ध विचारधारा से समन्वय कर रहे हैं। बौद्ध वेदों को अमान्य करते हैं। यही स्वामी जी ने कर दिया। बौद्ध प्रत्यक्षादि प्रमाणों को मानते हैं। स्वामी जी ने वह भी अमान्य कर दिया। उन्होने युक्ति को भी स्वीकार नही किया और अयुक्ति सगत वक्तव्य देने आरम्भ कर दिये।

वेद वाक्य में तथा महाभारत में जो अव्यक्त प्रकृति को तथा उनसे बनने वाले पदार्थों को अविद्या कहा है तो इस कारण नही कि उनका अस्तित्व ही नही। यह इस कारण कहा है कि उनके रूप-रूपान्तर स्थाई नही। उनके रूपों का स्वरूप सत्य नही, परन्तु वह जिसके ये रूप-रूपान्तर बनते हैं, वह तो स्थाई अविनाशी और अजन्मा हैं।

देखिये, शास्त्र इसमें क्या कहता है ? श्वेताश्वतर उपनिषद् का कथन है—

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः। (श्वे०—४-५)

अर्थात्—एक अजन्मा (अक्षर) रक्तवर्ण, श्वेतवर्ण और कृष्णवर्ण की (प्रकृति) है जो अनेक प्रकार को सृष्टि में अपने ही गुणों वाली प्रजा का सृजन करती है।

यहाँ प्रकृति को अजन्मा एतदर्थ अक्षर कहा है।

भगवद् गीता में भी लिखा है—

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि। (भ०-गी०—१३-१९)

अर्थात्—प्रकृति और पुरुष दोनों अनादि हैं।

अब एक वेद मन्त्र भी देखिए—

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न राज्या अह्न आसीत्प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास॥
(ऋ०—१०-१२९-२)

इसका अर्थ है कि उस समय (ब्रह्म रात्रि में) न मृत्यु थी और न ही अमृतत्त्व था। अर्थात् प्राणी मरते-जीते नही थे। न रात थी और न दिन था। कारण सूर्यादि अभी बने ही नही थे। उस समय (आनीद्) समीप ही (अवातम्) अविचल (तत् एक्य) वह एक (स्वधया) प्रकृति, जगत् का मूल पदार्थ अव्यक्त उससे अधिक परे (इन्द्रिय अगोचर) नहीं था।

स्वधया को विलियम मोनियर लिखते हैं 'Nature of the material universe, condition of universe

इस प्रकार अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं कि अनात्मतत्त्व और आत्मतत्त्व दोनों हैं। दोनों सत्य हैं और परमात्मा सर्वव्यापक होने से अनात्मतत्त्व में विद्यमान होता है। जब विद्यमान है तो अध्यास का प्रश्न नहीं। दोनों विद्यमान हैं।

परन्तु स्वामी जी ने हिन्दू समाज का सबसे अधिक अनिष्ट यह कह कर किया कि·····

अतः अह प्रत्यय (वृत्ति) वाला प्रत्यगात्मा अपने को ही अध्यास का साक्षी है। और वह प्रत्यगात्मा सबका साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से नैसर्गिक मिथ्या रूप कर्तृत्व तथा भोक्तृत्व आदि का प्रवर्तक सर्वलोक में विदित है।

स्वामी जी का मत है कि यह अनर्गल बात वेदान्त वाक्यों मे लिखी है। हमने ऊपर अनेक उपनिषद्, वेदादि ग्रन्थों से प्रमाण देकर बताया है कि ऐसा कुछ भी नही लिखा। शास्त्र के मिथ्या अर्थ कर स्वामी जो ने मानव समाज में एक ऐसी बात बता दी है जिसके परिणाम हिन्दू समाज में अति भयकर हुए हैं और हो रहे हैं।

अहं प्रत्यय का अभिप्राय यह कि पुरुष यह मानता है कि मैं मोटा हूं, मैं दुर्बल हूं, मैं सुखी हूं अथवा दुःखी हूं इत्यादि। यह मानता है। प्रत्यगात्मा और यह इस कारण मानता है कि वह सर्व साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से है। वह प्रत्यगात्मा सबके साक्षी प्रत्यगात्मा के अध्यास से स्वभाविक, परन्तु मिथ्या कर्तृत्व-भोक्तृत्व वाला, मानने लगता है।

स्वामी जो प्रत्यगात्मा का शब्द परमात्मा के लिये प्रयोग कर रहे हैं। उनके विचार में परमात्मा स्व-प्रकाशमान नही; अर्थात् वह अपने आप प्रत्यक्ष नही होता। जब परमात्मा का परमात्मा में अध्यास (भ्रम) होकर प्रत्यगात्मा हो जाता है तो वह प्रत्यगात्मा अपने को मिथ्या रूप में कर्त्ता और भोक्ता मानने लगता है।

यह एक वक्तव्य है। न तो इसमें प्रमाण है और न युक्ति। परमात्मा ही मिथ्या रूप में अपने को कर्त्ता और भोक्ता समझने लगता है। वह न तो कार्य कर रहा होता है और न भोग कर रहा होता है।

अर्थात् जब एक प्राणी अपनी पत्नी की हत्या कर दे तो वह हत्या कर रहा नही होता। अथवा जब कोई पुरुष किसी पर-स्त्री से व्यभिचार कर रहा हो तो वह कर नहीं रहा होता। यह सब मिथ्या भ्रम है।

स्वामी जी के उक्त वक्तव्य से अनुमान लगाया जा सकता है कि कितनी भयकर जीवन मीमांसा वह उपस्थित कर गये हैं।

(स्वामी जी स्वामी शंकर चार्य जी जानना चाहिये—सम्पादक)

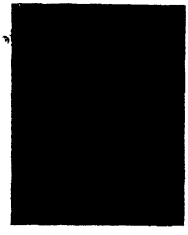
महर्षि-महिमा

(ले० मोहनदेव शर्मा पो० बगड़ (झुंझुनू) राज०)

पाखण्ड कुंगरू के कँगूरे ढह जाने लगे,
कुण्ठित हुये थे शस्त्र अबाल अरिन्द के।
टूटने लगे थे घेरे मिथ्या के दिखाऊ जब,
होने लगे मुक्त चहुं ओर बन्दी बन्द के॥
छूटने लगें थे छक्के अन्ध मतिमन्दन के,
ढीले पड़ गये फन्द सारे छल छन्द के।
"मोहन" तूणीर में से निकल निकल जब,
तीखे तीखे तीर चले वीर दयानन्द के॥

पंचायत पद्धति की सफलता निर्दलीय चुनाव पर

(श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री का आकाशवाणी द्वारा प्रसारित भाषण)



राष्ट्र के गणतन्त्र-जनराज्य का आधार पचायत प्रशासन प्रणाली होती है। पचायतों की नींव पचो की योग्यता पर प्रतिष्ठित होती है। कार्यपत्ति से इस सूत्र का भाव यह है कि जिन योग्य पचों से मिल कर पचायत बनती हैं वह पचायत दृढ होती है, उस में कुछ भी विकार नही हो सकता। इसी प्रकार पचायतो की स्वच्छ कार्यवाही पर जो राष्ट्र अपना अस्तित्व रखता है, वह अपने गणतन्त्र पर स्थिर हो कर ससार मे सब प्रकार से ऐश्वर्य सम्पन्न, सुदृढ और सब तरफ अर्थात् बाहर भीतर से सुरक्षित रहता है। राष्ट्र का अर्थ यही है कि वह सूर्य के समान ससार के सभी देशो मे चमके। वह अपनी जनता को उत्तम ढग से सुशिक्षित सभ्य सस्कृत और सच्चरित्र बना देवे। ऐसी जनता द्वारा ही पचो का चुनाव किया जाता है और वे ही पच मिल कर पचायतो का निर्माण करते हैं।

यह बात ठीक है कि सभी लोगो का स्वभाव और योग्यता एक जैसी नही होती और न ही हो सकती है, चाहे वे पुरुष हो वा स्त्री हो। दो सगे भाई भाई दो सगी बहिनें बहिनें और दो सगे भाई-बहन भी अलग-अलग स्वभाव और विचार वाले होते हैं। परन्तु आपस मे विचारो मे भेद होना कोई बुराई नही कही जा सकती, जब कि सब अपने-अपने विचारो की आपस मे टक्कर नही लगने देते। बल्कि आपस मे एक दूसरे के विचारों को जान कर सहयोग कर सकते हैं।

इस बात को भी सही माना जा सकता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने निजी कामो को करने मे अपनी अपनी शक्ति के अनुसार स्वतन्त्र होता है। उस की इस स्वतन्त्रता पर राष्ट्र की तरफ से कुछ रुकावट नही होती, परन्तु राष्ट्र, समाज और वर्गों के मिल-जुले कामो मे सब को मिलकर चलना होता है। सब लोगो के हित के कामो मे निजी स्वतन्त्रता का रूप यह रखना चाहिये कि दूसरो के निजी काम मे विघ्न न पड सके। सामूहिक कामों के करने मे निजी कामो की स्वतन्त्रता को अपनी इच्छा से ही कुछ नियन्त्रण रख कर परतन्त्रता को मानना चाहिये। कहने और सुनने मे यह परतन्त्रता कुछ अटपटी सी मालूम होती है, परन्तु सर्वजनहित के कामो को पूरा करने के लिये ऐसी परतन्त्रता भी सब की भलाई के लिये होती है। इस रीति मे निजी काम को इस ढग से करना चाहिये, जिससे अपना काम भी चलता रहे और दूसरे के कामो मे भी बाधा न पडने पावे। इस स्वतन्त्रता और परतन्त्रता को एक सीमा के भीतर रखने पर जनता की सामूहिक भलाई होती है।

इतना होने पर भी इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि कोई न कोई मनुष्य अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिये दूसरे मनुष्य के स्वार्थ से सघर्ष पैदा कर ही देता है। ऐसी अवस्था हो जाने पर यदि दोनो मनुष्य समझदारी से काम ले लेवें तो किसी बीच के रास्ते पर चल कर आपसी टक्कर को दूर कर सकते हैं और अपने-अपने स्वार्थों को सिद्ध करते रह सकते हैं, यहां तक कोई विवाद खडा नही होता। परन्तु जब आपसी समझौते से बात नही बनती, तब उसी क्षेत्र वा गाँव के जन प्रतिनिधि मिलकर ऐसे नियमो का निर्माण कर लेते हैं, जिन पर सभी लोगों को चलना पडता है तथा चलने में ही सब की भलाई होती है, नही तो राष्ट्र के वातावरण मे अशान्ति, द्वेष और कलह का कारण बन सकता है। इन दोषो को दूर रखने के लिए जनता के लोग आपस में सलाह कर के अपने मे से ही कुछ ऐसे व्यक्तियों को चुन लेते हैं, जिनके द्वारा दिये गये निर्णयों से आपसी झगडे दूर होते रहें।

जनता द्वारा चुने गये ऐसे लोगों को ही पच नाम से कहा जाता है। वे चाहे पुरुष हो वा स्त्री हो। ऐसे चुने गये पाच पचो से मिल कर जो प्रतिनिधि मण्डल बनाया जाता है उसी का नाम पचायत है। पाच एक सख्या है इस से यह पता चला है कि पचायत वही कहला सकती है, जिस मे पाच पच हो—असली अर्थ तो यही है, लेकिन पचायत के क्षेत्र की जनसख्या थोडी होवे तो तीन भी पच बनाये जा सकते हैं और जनसख्या अधिक हो तो पचो की सख्या भी पाच से बढ कर सात वा नौ आदि की जा सकती है। इसका मतलब यह है कि पचायत में तीन पाच सात नौ वगैरहा पच हो सकते हैं, लेकिन नाम उन का पच और पचायत ही कहलावेगा क्यो कि पाच की सख्या पचायत बनाने मे मूल है।

इस पच नाम मे एक और भी बात बडे महत्त्व की है। इस पर हमें पूरा ध्यान देना जरूरी है। क्यो कि इस पर अमल किये बिना पच बन ही नही सकता न ही बनाया जा सकता है। वह बात यह है कि 'पच' शब्द का अर्थ है न्यायकारी, ठीक-ठीक न्याय करने वाला, पक्षपात रहित, आपसी मेर-तेर को न्याय करने के मामले मे न रखने वाला जन ही पच कहला सकता है। पच सस्कृत का शब्द है। यह 'पचि' धातु से बनता है। पचि धातु न्याय करने के अर्थ को बतलाता है। इसी आधार पर न्याय का पक्ष लेने वाला पच" कहला सकता है। जिस व्यक्ति मे न्याय करने का गुण और साहस नही होता, वह पच नही कहला सकता और न ही पच बनाया जा सकता चाहे उसका नाम पच हो लेकिन पच के लायक नही होता। ऐसे ही उर्दू जबान मे इन्साफ करने वाले को मुन्सिफ कह सकते हैं। मुन्सिफ का मतलब है इन्साफ करने वाला और इन्साफ का भाव है कि निस्फ-निस्फ=आधा-आधा होना। जो मुन्सिफ होता है वह अपने को मुद्दई मुद्दालय की तरफ आधा आधा बाट देता है अर्थात किसी एक का पक्ष नही करता, बल्कि दोनो की बातो को ध्यान से और बिना किसी तरफ को लिहाज करके सुनता है और जो जाच करने पर ठीक समझता है, वही फैसला दे देता है। इसीलिये उस को इन्साफ करने वाला मुन्सिफ कहते हैं। ठीक यही अर्थ पच" शब्द का है कि जो पक्षपात छोड कर ठीक निणय देता है—वही पच कहला सकता है।

अब देखना यह है कि पच मे यह योग्यता कैसे मालूम पडे, जिससे उस को पच बनाया जा सके। जिस पचायत के क्षेत्र वा गाँव मे वह रहता है, तो उस गाँव के निवासी इस के स्वभाव गुण, काम चरित्र, शिक्षा, सभ्यता और योग्यता को पहिले से ही देखते आ रहे हैं, जो कि निजी स्वार्थ मे नही फसता बल्कि गाव के हित मे अपने स्वार्थ को छोड देता है। गाव मे कोई झगडा हो जावे, तो लोगो के बुलाने पर समझा बुझाकर ठीक-ठीक मामले को निपटा देता है। गाँव की शिक्षा, सफाई, खेती, कारीगरी दुकानदारी, मजदूरी आदि बातो का ध्यान रखता है। बिरादरी मतमतान्तर अमीर-गरीब, छोटे बडे की मेर-तेर से ऊपर उठा हुआ है। ऐसे गुणो वाले को पच बनाया जा सकता है।

अब यह भी विचार करने की बात है कि उस गाव वा क्षेत्र की जनता ऐसे गुणी व्यक्ति को किस ढग से अपना पच बना सकती है। गाँव मे रहने वाले लोग अपना अलग धन्धा करते है। इसी कारण कभी न कभी आपसी झगडे खडे हो जाना अचम्भे की बात नही होती। आपसी एक ही बिरादरी, मजहब और धन्धा करने वालो मे भी झगड हो ही जाते हैं। इस कारण गाँव मे भीतरी दल बन्दी रहती है। यद्यपि राजनीति के आधार पर गाँवो की पचायतो मे दलबन्दी नही है, फिर भी गाव मे रहने वाली जनता मे बाहर के मामलो मे राजनीतिक दलबन्दी पाई जाती हैं। पचायतो के चुनाव के समय यह बहुत बडा सकट पैदा कर सकती है। यद्यपि गाँव की पचायतो के सामने गाँव के ही मामले आते हैं, उन पर ही पचो को अपना निर्णय देना पडता है, परन्तु गाँव मे रहने वाले राजनीतिक स्वार्थ से बन्धे हुए लोग अपने स्वार्थ के लिए दलबन्दी की बातें करते रहते हैं और पचो पर भी प्रभाव डालना चाहते हैं, अत यह अत्यन्त आवश्यक है कि गाव के वे लोग जिनको चुनाव मे मत देने का अधिकार है, इस बात

शेष पृ० ९ पर

सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान रहेंगे ! पताक से आगे

(श्री भैरव दत्त शुक्ल स्थान पो० - लगुचा जिला - खीरी (उ०प्र०)



●

अधिकारों को दूर झिड़क कर,
कर्त्तव्यों से प्यार दिखाया;
बाधाओं से चुबित होकर,
विघ्नों को अभिसार सिखाया;
तमसावृत दोला के पथ के-
शैलों - झाड़ों से हिलमिल कर;
गिरकर-उठ कर, बिगड़ सुघर कर,
अथ- इति को आधार दिखाया;

अभिशापों में रहे विलमते, वे जग-हित वरदान रहेंगे,
सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान् रहेंगे ॥

जिनके शोणित- सीकर पा कर, किलक उठी ऊषा की लाली,
रक्त पिया, बन गयी अरुणतम, साघ्य गगन की मादक प्याली,
लगे पुलकने पल्लव सारे , किंचित सी मुख की आभा ले,
प्रलय मंच की बनी नर्त्तकी, रसना चमकाती कापाली,
अन्धों को प्रकाश- विनु देकर, बने दीप्त दिनमान रहेंगे।
सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान् रहेंगे ॥

जिनकी रक्त-शिराओं में आ, पानी-पानी ही कहलाया,
हुंकारा का अनुचर हो कर, अनिल-अनिल सचमुच बन आया,
अंतर का अंगार निगल कर, अनल उपाधि अनल ने पायी,
दिग्-दिग् गुंजित स्वर स्वर द्वारा, गगन नील निस्सीम सिहाया,
धरा-धरा बन गयी अंग ले, शाश्वत प्रभु-सम्मान रहेंगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदा महान् रहेंगे ॥
गर्भ किलोलें लेकर पावस, शैशव चुम्बित शरद् सुहायी,
हिम विहसी किशोर वय द्वारा, त्याग-भाव-प्रिय शिशर कहायी,
उन्नति, शक्ति, विकास, जवानी—की गाकर गौरव-गाथाएँ,
सब ऋतुओं का शासक बनकर, नव माधव ने धाक जमायी,
ग्रीष्म-शक्ति के लिए, चिता की—लपटों के भगवान् रहेंगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदामहान् रहेंगे ॥
शय्या नगी वसुधा जिनकी, बन वितान अम्बर-तन भाया,
स्वागत-आतुर तारक-दल-सज, दीपों-सा क्रम-बद्ध सुहाया,
नैश नीद क्षण लिपट न पायी, मिल न सका विश्राम दिवस में,
आग्रह हुआ न पूर्ण क्षुधा का, स्वत्व प्यास ने जना न पाया,
ध्येय-इष्ट के धवल पुजारी बने अटल हिमवान रहेंगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदा महान् रहेंगे ॥
व्यर्थ दिखावा लुभा न पाया, वदन विभव की ओर न मोड़ा,
नटी-नामक छल न सकी क्षण, ध्रुव से शाश्वत स्नेह न तोड़ा,
संचित सुकृतों के संबल से, स्वर्ग सदृश ससार सजाया,
पर, कोट इतिहास- पृष्ठ में, किंचित् अपना नाम न जोड़ा,
चिर साक्षी-से सभी युगों के अजर-अमर प्रिय गान रहेंगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदा महान रहेंगे ॥ ●

"किसान"

– श्री सोमीन्द्र पाण्डेय,



●

●

●

राजा तेरे बल राज करे, बनिया तेरे बल काज कर,
हाकिम का हुक्म रहे जारी, चूसे तुझको ही पटवारी।
भिखमगे तेरे गृह आते, झोली भर-भर कर ले जाते ॥
झंझट में तब जान किसान,
हे जगती की जान किसान।

रहँट, पुर औ चरस चलाते, हल सँग बैल खेत ल जाते,
पानी पौधों में हो देते, हो निज खेत जोत तुम लेते।
बीता दिवस कार्य में सारा तन मन, धन, सब कुछ ही वारा ॥
यह है नित की तेरी बान,
हे जगती की जान किसान।

था वट वृक्ष खड़ा इक पास, फैली कोमल-श्यामल घास,
बाल-वृंद का हुआ जमाव, प्रकटित करते अगणित भाव।
आपस में था अनुपम मेल, खेल रहे थे सुन्दर खेल ॥
थी सबको सबकी पहचान,
हे जगती की जान किसान।

थी सन-सन तप्त हवा चलती, गरमी में दहक रही धरती,
लू से झुलसा जाता था तन, दर्प दहाता था तव मन।
थे निज क्षेत्र में अड़े हुए, किस लालच मे थे खड़े हुए ?
देखा था तेरा खलिहान,
हे जगती की जान किसान।

था मुझको याद तभी आया, जब तपते तुझको था पाया,
गर्मी का था दुखद महीना, था तन भीगा सकल पसीना।
भूली है यह दुनिया सारी, करती पूजा नहीं तुम्हारी ॥
नित ही सध्या और विहान,
हे जगती की जान किसान।

—क्रम

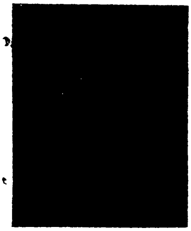
"वीर बालक की आवाज"

[श्री महेन्द्र कुमार "हिमकर" मोतीझील, वाराणसी—१]

मत बढो ईसाई भारत में अब नही चलेगी मनमानी।
भारत का बच्चा—बच्चा है उस दयानन्द का सेनानी ॥
ऋषिवर का सदेश लिये इस जग में धूम मचाना है।
हाथों में ओ३म पताका ले वेदों के पथ पर जाना है ॥
है लहू हमारा वीरों का पत्थर भी करता पानी।
भारत माँ ! तेरे चरणों में उस दयानन्द का सेनानी ॥
मैं बच्चा हूं नादान अभी फिर भी यह कार्य दिखाऊँगा।
वेदों का पथ अपना करके जन—जन को आर्य बनाऊँगा ॥
तेरे शोणित से लाखों नर होवेंगे जीवन के दानी।
ऐ ऋषि तुम्हें ना भूलूंगा ! मैं भी हूं तेरा सेनानी ॥

पंचायत पद्धति की सफलता निर्दलीय चुनाव पर

(श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री का आकाशवाणी द्वारा प्रसारित भाषण)



राष्ट्र के गणतन्त्र-जनराज्य का आधार पंचायत प्रशासन प्रणाली होती है। पंचायतों की नींव पंचों की योग्यता पर प्रतिष्ठित होती है। अर्थापत्ति से इस सूत्र का भाव यह है कि जिन योग्य पंचों से मिल कर पंचायत बनती है वह पंचायत दृढ़ होती है, उस में कुछ भी विकार नहीं हो सकता। इसी प्रकार पंचायतों की स्वच्छ कार्यवाही पर जो राष्ट्र अपना अस्तित्व रखता है, वह अपने गणतन्त्र पर स्थिर हो कर ससार में सब प्रकार से ऐश्वर्य सम्पन्न, सुदृढ और सब तरफ अर्थात् बाहर भीतर से सुरक्षित रहता है। राष्ट्र का अर्थ यही है कि वह सूर्य के समान संसार के सभी देशों में चमके। वह अपनी जनता को उत्तम ढग से सुशिक्षित, सभ्य, संस्कृत और सच्चरित्र बना देवे। ऐसी जनता द्वारा ही पचों का चुनाव किया जाता है और वे ही पच मिल कर पंचायतों का निर्माण करते है।

यह बात ठीक है कि सभी लोगों का स्वभाव और योग्यता एक जैसी नही होती और न ही हो सकती है, चाहे वे पुरुष हों वा स्त्री हों। दो सगे भाई भाई, दो सगी बहिनें-बहिनें और दो सगे भाई-बहन भी अलग-अलग स्वभाव और विचार वाले होते हैं। परन्तु आपस मे विचारो मे भेद होना कोई बुराई नही कही जा सकती, जब कि सब अपने-अपने विचारों की आपस में टक्कर नही लगने देते। बल्कि आपस में एक दूसरे के विचारों को जान कर सहयोग कर सकते हैं।

इस बात को भी सही माना जा सकता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने निजी कामो को करने में अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार स्वतन्त्र होता है। उस की इस स्वतन्त्रता पर राष्ट्र की तरफ से कुछ रुकावटें नहीं होती, परन्तु राष्ट्र, समाज और वर्गों के मिले-जुले कामों में सब को मिलकर चलना होता है। सब लोगों के हित के कामों में निजी स्वतन्त्रता का रूप यह रखना चाहिये कि दूसरों के निजी काम में विघ्न न पड़ सके। सामूहिक कामो के करने में निजी कामों की स्वतन्त्रता को अपनी इच्छा से ही कुछ नियन्त्रण रख कर परतन्त्रता को मानना चाहिये। कहने और सुनने में यह परतन्त्रता कुछ अटपटी सी मालूम होती है, परन्तु सर्वजनहित के कामो को पूरा करने के लिये ऐसी परतन्त्रता भी सब की भलाई के लिये होती है। इस रीति में निजी काम को इस ढग से करना चाहिये, जिससे अपना काम भी चलता रहे और दूसरे के कामो में भी बाधा न पड़ने पावे। इस स्वतन्त्रता और परतन्त्रता को एक सीमा के भीतर रखने पर जनता की सामूहिक भलाई होती है।

इतना होने पर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कोई न कोई मनुष्य अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिये दूसरे मनुष्य के स्वार्थ से संघर्ष पैदा कर ही देता है। ऐसी अवस्था हो जाने पर यदि दोनों मनुष्य समझदारी से काम ले लेवें, तो किसी बीच के रास्ते पर चल कर आपसी टक्कर को दूर कर सकते हैं और अपने-अपने स्वार्थों को सिद्ध करते रह सकते हैं, यहाँ तक कोई विवाद खड़ा नहीं होता। परन्तु जब आपसी समझौते से बात नहीं बनती, तब उसी क्षेत्र वा गाँव के जन प्रतिनिधि मिलकर ऐसे नियमों का निर्माण कर लेते हैं, जिन पर सभी लोगों को चलना पड़ता है तथा चलने में ही सब की भलाई होती है, नहीं तो राष्ट्र के वातावरण में अशान्ति, द्वेष और कलह का कारण बन सकता है। इन दोषों को दूर रखने के लिए जनता के लोग आपस में सलाह कर के अपने में से ही कुछ ऐसे व्यक्तियों को चुन लेते हैं, जिनके द्वारा दिये गये निर्णयों से आपसी झगड़े दूर होते रहें।

जनता द्वारा चुने गये ऐसे लोगों को ही पंच नाम से कहा जाता है। वे चाहे पुरुष हों वा स्त्री हों। ऐसे चुने गये पांच पंचों से मिल कर जो प्रतिनिधि मण्डल बनाया जाता है, उसी का नाम पचायंत है। पांच एक संख्या है, इस से यह पता चला है कि पंचायत वही कहला सकती है, जिस में पांच पच हों—असली अर्थ तो यही है, लेकिन पंचायत के क्षेत्र की जनसंख्या थोड़ी होवें, तो तीन भी पंच बनाये जा सकते हैं और जनसंख्या अधिक हो, तो पचों की सख्या भी पांच से बढ़ कर सात वा नौ आदि की जा सकती है। इसका मतलब यह है कि पचायत में तीन पांच सात नौ वगैरहा पच हो सकते हैं, लेकिन नाम उन का पंच और पंचायत ही कहलावेगा, क्यों कि पांच की संख्या पंचायत बनाने में मूल है।

इस पंच नाम में एक और भी बात बड़े महत्त्व की है। इस पर हमें पूरा ध्यान देना जरूरी है। क्यों कि इस पर अमल किये बिना पंच बन ही नही सकना न ही बनाया जा सकता है। वह बात यह है कि 'पंच' शब्द का अर्थ है न्यायकारी, ठीक-ठीक न्याय करने वाला, पक्षपात रहित, आपसी मेर-तेर को न्याय करने के मामले में न रखने वाला जन ही पंच कहला सकता है। पच संस्कृत का शब्द है। यह 'पचि' धातु से बनता है। पचि धातु न्याय करने के अर्थ को बतलाता है। इसी आधार पर न्याय का पक्ष लेने वाला "पच" कहला सकता है। जिस व्यक्ति में न्याय करने का गुण और साहस नही होता, वह पंच नही कहला सकता और न ही पच बनाया जा सकता, चाहे उसका नाम पच हो, लेकिन पच के लायक नही होता। ऐसे ही उर्दू जबान में इन्साफ करने वाले को मुन्सिफ कह सकते हैं। मुन्सिफ का मतलब है इन्साफ करने वाला और इन्साफ का भाव है कि निस्फ-निस्फ=आधा-आधा होना। जो मुन्सिफ होता है वह अपने को मुद्दई मुद्दालय की तरफ आधा-आधा बाट देता है, अर्थात् किसी एक का पक्ष नह करता, बल्कि दोनों की बातों को ध्यान से और बिना किसी तरफ व लिहाज करके सुनता है और जो जांच करने पर ठीक समझता है, वही फैसला दे देता है। इसीलिये उस को इन्साफ करने वाला मुन्सिफ कहते हैं। ठीक यही अर्थ "पच" शब्द का है कि जो पक्षपात छोड़ कर ठीक निर्णय देता है—वही पच कहला सकता है।

अब देखना यह है कि पंच में यह योग्यता कैसे मालूम पड़े, जिससे उस को पच बनाया जा सके। जिस पचायत के क्षेत्र वा गाँव में वह रहता है, तो उस गाँव के निवासी इस के स्वभाव, गुण, काम, चरित्र, शिक्षा, सभ्यता और योग्यता को पहिले से ही देखते आ रहे हैं, जो कि निजी स्वार्थ में नही फसता, बल्कि गांव के हित में अपने स्वार्थ को छोड़ देता है। गांव में कोई झगड़ा हो जावे, तो लोगों के बुलाने पर समझा-बुझाकर ठीक-ठीक मामले को निपटा देता है। गांव की शिक्षा, सफाई, खेती, कारीगरी, दुकानदारी, मजदूरी आदि बातों का ध्यान रखता है। बिरादरी, मतमतान्तर, अमीर-गरीब, छोटे-बड़े की मेर-तेर से ऊपर उठा हुआ है ऐसे गुणों वाले को पंच बनाया जा सकता है।

अब यह भी विचार करने की बात है कि उस गांव वा क्षेत्र जनता ऐसे गुणी व्यक्ति को किस ढग से अपना पच बना सकती है। गां में रहने वाले लोग अपना अलग धन्धा करते हैं। इसी कारण कभी न कभ आपसी झगड़े खड़े हो जाना अचम्भे की बात नही होती। आपसी एक ह बिरादरी, मजहब और धन्धा करने वालों में भी झगड़े हो ही जाते हैं इस कारण गांव में भीतरी दल बन्दी रहती है। यद्यपि राजनीति के इ पर गाँवों की पंचायतों में दलबन्दी नहीं है, फिर भी गांव में रहने जनता में बाहर के मामलों में राजनीतिक दलबन्दी पाई जाती हैं। पंचायतों के चुनाव के समय यह बहुत बड़ा संकट पैदा कर सकती है। यद्यपि गाँव की पंचायतों के सामने गाँव के ही मामले आते हैं, उन पर ही पचों को अपना निर्णय देना पड़ता है, परन्तु गाँव में रहने वाले राजनीतिक स्वार्थ से बन्धे हुए लोग अपने स्वार्थ के लिए दलबन्दी की बातें करते रहते हैं और पचों पर भी प्रभाव डालना चाहते हैं, अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि गांव के वे लोग जिनको चुनाव में मत देने का अधिकार है, इस बा

शेष पृ० ६ पर

सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान रहेंगे !

पताक से आगे

(श्री भैरव दत्त शुक्ल स्थान पो० - लगुचा जिला - खीरी (उ०प्र०)



अधिकारो को दूर झिडक कर,
कर्तव्यो से प्यार दिखाया;
बाधाओ से चुबित होकर,
विघ्नो को अभिसार सिखाया,
तमसावृत दोला के पथ के-
शैलो - झाडो से हिलमिल कर;
गिरकर-उठ कर, बिगड सुधर कर,
अथ- इति को आधार दिखाया;
अभिशापो में रहे विलमते, वे जग-हित वरदान रहेगे
सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान् रहेगे ॥

जिनके शोणित- सीकर पा कर, किलक उठी ऊषा की लाली,
रक्त पिया बन गयी अरुणतम, साध्य गगन की मादक प्याली,
लगे पलकने पल्लव सारे , किंचित सी मुख की आभाले,
प्रलय मच की बनी नर्त्तकी, रसना चमकाती कापाली,
अन्धो को प्रकाश- विनु देकर, बने दीप्त दिनमान रहेगे।
सह अभाव, सुख वितरित करने वाले सदा महान् रहेगे ॥

जिनकी रक्त-शिराओ में आ, पानी-पानी ही कहलाया,
हुकारों का अनुचर हो कर अनिल-अनिल सचमुच बन आया,
अतर का अगार निगल कर अनल उपाधि अनल ने पायी,
दिग-दिग गुजित स्वर स्वर द्वारा, गगन नील निस्सीम सिहाया,
धरा-धरा बन गयी अग ले शाश्वत प्रभु-सम्मान रहेगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदा महान् रहेगे ॥

गर्भ किलोले लकर पावस, शैशव चुम्बित शरद् सुहायी,
हिम विहसी किशोर वय द्वारा, त्याग-भाव-प्रिय शिशर कहायी,
उन्नति शक्ति विकास जवानी—की गाकर गौरव-गाथाएँ,
सब ऋतुओ का शासक बनकर नव माधव ने धाक जमायी,
ग्रीष्म-भक्ति के लिए चिता की—लपटो के भगवान् रहेगे।
सह अभाव, सुख वितरित—करने वाले सदामहान् रहेगे ॥

शय्या नगी वसुधा जिनकी, बन वितान अम्बर-तन भाया,
स्वागत-आतुर तारक-दल-सज, दीपो-सा क्रम-बद्ध सुहाया,
नैश नीद क्षण लिपट न पायी, मिल न सका विश्राम दिवस में
आग्रह हुआ न पूर्ण क्षुधा का, स्वल्प प्यास ने जना न पाया,
ध्येय-इष्ट के धवल पुजारी बने अटल हिमवान रहेगे।
सह अभाव सुख वितरित—करने वाले सदा महान् रहेगे ॥

व्यर्थ दिखावा लुभा न पाया, वदन विभव की ओर न मोडा,
नटी-नामक छल न सकी क्षण, ध्रुव से शाशवत स्नेह न तोडा,
सचित सुकृतो के सबल से, स्वर्ग सदृश ससार सजाया,
पर, कोट इतिहास- पृष्ठ में, किंचित् अपना नाम न जोडा,
चिर साक्षी-से सभी युगों के अजर-अमर प्रिय गान रहेगे।
सह अभाव सुख वितरित—करने वाले सदा महान रहेगे ॥

"किसान"

— श्री [illegible],



राजा तेरे बल राज करे, बनिया तेरे बल काज करे
हाकिम का हुक्म रहे जारी, चूसे तुझको ही पटवारी।
भिखमगे तेरे गृह आते, झोली भर-भर कर ले जाते ॥
झझट में तव जान किसान,
हे जगती की जान किसान।

रहँट, पुर औ चरस चलाते, हल सँग बैल खेत ले जाते
पानी पौधों में हो देते, हो निज खेत जोत तुम लेते।
बीता दिवस कार्य में सारा तन मन, धन सब कुछ ही वारा ॥
यह है नित की तेरी बान,
हे जगती की जान किसान।

था वट वृक्ष खडा इक पास, फैली कोमल-श्यामल घास
बाल-वृद का हुआ जमाव, प्रकटित करते अगणित भाव।
आपस में था अनुपम मेल, खेल रहे थे सुन्दर खेल ॥
थी सबको सबकी पहचान,
हे जगती की जान किसान।

थी सन-सन तप्त हवा चलती, गरमी मे दहक रही धरती,
लू से झुलसा जाता था तन, दर्प दहाता था तव मन।
थे निज क्षेत्र में अडे हुए, किस लालच म थे खडे हुए ?
देखा था तेरा खलिहान,
हे जगती की जान किसान।

था मुझको याद तभी आया, जब तपते तुझको था पाया,
गर्मी का था दुखद महीना, था तन भीगा सकल पसीना।
भूली है यह दुनिया सारी, करतो पूजा नही तुम्हारी ॥
नित ही सध्या और विहान,
हे जगती की जान किसान।

—[illegible]

"वीर बालक की आवाज"

[श्री महेन्द्र कुमार "हिमकर" मोतीझील, वाराणसी—१]

मत बढो इसाई भारत में अब नही चलेगी मनमानी।
भारत का बच्चा—बच्चा है उस दयानन्द का सेनानी ॥
ऋषिवर का सदेश लिये इस जग मे धूम मचाना है।
हाथों में ओ३म पताका ले वेदों के पथ पर जाना है ॥

है लहू हमारा वीरो का पत्थर भी करता पानी।
भारत माँ ! तेरे चरणों में उस दयानन्द का सेनानी ॥
मैं बच्चा हू नादान अभी फिर भी यह कार्य दिखाऊँगा।
वेदो का पथ अपना करके जन—जन को आर्य बनाऊँगा ॥

तेरे शोणित से लाखों नर होवेंगे जीवन के दानी।
ऐ ऋषि तुम्हें ना भूलूगा ! मैं भी हूँ तेरा सेनानी ॥

"क्या 'ईसा' खुदा था" ?

(श्री अनूपसिंह, एम ए दयानन्द भवन, मु० नगर ।



ईसा का जन्म यरुसलीम देश, बेथलीहेम' ग्राम में इस्राइल वंश में हुआ था। उनकी माता का नाम 'मरियम' और पिता का ना 'यूसुफ' था। ईसा के पिता बढई का काम करते थे और यहूदी मत के मानने वाले थे।

ईसाई मतावलम्बी 'ईसा' को खुदाका बेटा मानते हैं। परन्तु यदि ठीक-ठीक पक्षपातरहित होकर बाइबल' का अध्ययन किया जाय तो ईसा' का खुदा होना तो दूर रहा उसमे महापुरुष के लक्षण भी दिखाई नही देते। अग्रलिखित बाइबल के उद्धरण इस बात की पुष्टि करते हैं।

संसार मे आने का उद्देश्य—मत्तीरचित इजील मे ईसा के ससार मे आने का उद्देश्य लिखा है— यह न समझो कि मैं पृथ्वी पर शान्ति देने आया हू। मैं शान्ति नही तलवार देने आया हू। मैं पुत्र को अपने पिता के विरुद्ध, पुत्री को अपनी माता के विरुद्ध बहू को अपनी सास के विरुद्ध खडा करने आया हू।" [मत्ती अ० १० आ० ३४,३५] वाह ! क्या कहने ? ईसा के ससार मे आने का उद्देश्य अशान्ति फैलाना और आन्तरिक विघटन करना है। महापुरुष के ससार मे आने का उद्देश्य तो दूसरो के दुःखो को मिटाना होता है।

किसी का वचन है— न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापवगकम्।
कामये दुःखतप्ताना प्राणिनामार्तिनाशनम् ॥

अर्थात् मैं (महापुरुष) राज्य की कामना नही करता स्वर्ग व मोक्ष की कामना भी मैं नही करता। मैं तो यह चाहता हू कि दूसरो के दुःखो का नाश कर सकूं।

गुरुडम—'ईसा' के अन्दर अपने को गुरु मनवाकर पूजा करवाने की भावना कूटकर भरी हुई थी। सीधे-साधे मनुष्यो को बहकाकर वह कहता है—"मैं तुमसे सत्य कहता हू कि यदि तुम्हे राई के दाने के बराबर ईमान होता तो अगर तुम उस पहाड को कहते कि यहा से चला जा तो चला जाता और तुम्हारी कोई बात असम्भव न होती।" (मती अ १७ आ २०] "क्या तू विश्वास नही करता कि मैं बाप और बाप मुझमे।" [युहन्ना आ० १४ आ० ११] देखिए ईसा अपना सम्मान कराने के लिए कितना लालायित है—"ईसा ने कहा कि जिस प्रकार बाप मुर्दों को उठाता है और जीवित करता है उसी प्रकार बेटा [ईसा] जिन्हे चाहता है जीवित करता है। क्योकि बाप किसी का न्याय भी नही करता, वरन् उसने न्याय का सारा काम बेटे को सौंप दिया है ताकि सब लोग बेटे का आदर करे जिस प्रकार बाप का सम्मान करते हैं उसी प्रकार जो बेटे का सम्मान नही करता, वह बाप का जिसने उसे भेजा है, सम्मान नही करता।"

[युहन्ना अ० ५ आ० २१,२२,२३]

अपने मुंह मियाँ मिट्ठू बनना—'ईसा' अपने मुंह मियाँ मिट्ठू बनने से भी नही चूकता।" "ईसा ने कहा कि ससार का प्रकाश मैं हू जो मेरे पीछे चलेगा, वह अंधेरे मे नही चलेगा वरन् जीवन का प्रकाश पायेगा।" [युहन्ना अ० ८ आ० १२] "पृथ्वी और आकाश टल सकते हैं परन्तु मेरे कहे हुए वचन नही टल सकते।" [मरकुस अ० १३ आ० ३१] "मुझको पाप क्षमा करने का अधिकार है।" [मत्ती अ० ९ आ० ६]

भीरुता का उपदेश—'ईसा' अपने शिष्यो को विरोधियो से डर कर भाग जाने का उपदेश देता है। जब वे तुम्हे एक नगर मे सताए तो दूसरे नगर मे भाग जाना।" [मत्ती अ० १० आ० २३]

चमत्कार—'ईसा' ने जो चमत्कार दिखायें वे कोरा ढोंग हैं। तर्क और विज्ञान की कसौटी पर पूरे नही उतरते। "जब ईसा में यह सामर्थ्य था कि उन्होंने एक बार सात रोटियाँ और छोटी मछलियों से, स्त्री बच्चों को छोडकर चार हजार भूखे पुरुषो को तृप्त कर दिया था तो फिर सात टोकरे बचे टुकडों से भर गए। तो स्वय भूख से पीडित हो अजीर के फल क्यो खाते फिरे ?" [मत्ती अ० १५ आ० ३४ से ३९ तक] फासी के तख्ते पर लोगो ने ईसा के साथ मजाक करते हुए कहा था 'देखो यह लोगो को पापो से बचाने और मोक्ष दिलाने के लिए आया था किन्तु अपने को यह सूली से भी न बचा सका।"

प्रतिशोध— ईसा' प्रतिशोध जैसी निकृष्टतम भावना से भी न बच सका। "जो कोई मनुष्यो के सामने मेरी अस्वीकृति करेगा, मैं भी अपने बाप के सामने जो आकाश पर है, उसकी अस्वीकृति करूँगा।" [मत्ती अ० १० आ० २३] एक बार जब ईसा को भूख लगी तो वह अजीर के वृक्ष के पास गए। उस पर फल न पाकर उसको शाप देते हुए कहा, "तुझ मे फिर कभी फल न लगेंगे।" [मत्ती अ० २१ आ० १८, १९] परन्तु मेरे उन दुश्मनो को जो नही चाहते कि मैं उन पर राज्य करूँ, उनको यहाँ लाकर मेरे सामने कतल करो।" [लूका अ १९ आ २७]

चोरी—ईसा ने अपने शिष्यो से चोरी करवाई। "ईसा ने अपने शिष्यो से एक गधी मय बच्चे के खुलवाई धोखा देकर और शिष्यो को सिखलाया कि कोई पूछे तो कहना मालिक ने मगवाई है।" [मत्ती अ २१ आ १ से ७ तक] क्या चोरी करवाना और झूठ बोलना महापुरुषो को शोभा देता है ?

मृत्यु वेदना—जब ईसा को सूली से बाधकर उसके पाव मे कीलें ठोक दी गईं तब उसने एक जोर से चीख मारी और कहा 'ऐ मेरे परमात्मा ! तूने मुझे क्यो छोड दिया ? यह मोत का महादुःख मुझ से टाल दे।" यदि ईसा मे आत्मिक बल होता तो वह भी सुकरात, बन्दा बैरागी और ऋषि दयानन्द की भाति हँसते २ मृत्यु वेदनाको सहनकर लेता।

पादरी का सर्टिफिकेट—एग्लीकन चर्च के एक पादरी डा० स्टुअर्ट ने अपने पद से त्याग पत्र देते हुए कहा था— 'कोई भी विचारक इस बात मे विश्वास नही कर सकता कि किसी कुमारी से किसी का जन्म हो, या कब्र मे गडने के बाद कोई पुन जीवित हो। उन्होने कहा ' ईसा"खुदानही था। ●

पृ० ७ का शेष

का ध्यान रखना चाहिये कि इस राजनीतिक दलबन्दी के रोग को गाँव की पचायतो और पचो के चुनाव मे घुसने न देवे, उन को यह करना होगा कि चाहे उनके निजी विचार किसी भी राजनीतिक दल से मिलते हो, परन्तु इस दृष्टिकोण को दूर रख कर गाव की भलाई के लिये किसी भी निष्पक्ष, सदाचारी न्यायकारी, निःस्वार्थी उमीदवार को ही अपना मत दे कर पच बनावे।

यह भी असम्भव नही कि जिस पच को उसी गाव के निवासियो ने चुनना है तो उस पची की उमीदवारी वाले मनुष्य के भी किसी न किसी राजनीतिक दल से विचार मिलते हो, तब ऐसी अवस्था मे चुनने वाले मतदाताओ को यह देखना होगा कि वह उमीदवार बाहरी राजनीतिक दबाव मे आ कर गाव के मामले मे भी उस दल से प्रभावित तो नही हो जावेगा ? इसलिये पच को चुनने के समय चुनने वालो को यह ध्यान रखना आवश्यक होगा कि चुने जाने वाले पच मे यह गुण भी हो, कि वह पच चुने जाने पर गाव की पचायत के मामले मे गाव की जनता के हित को ही प्रमुखता देवेगा। इस की जाच गाँव के निवासी उस के पहिले रवैये को देख कर कर सकते है। तब ही ऐसे व्यक्ति को पच चुनना ठीक होता है और पच का चुनाव करने वाले भी इसी भावना से उस को पच बनाने के लिये अपने मत=वोट देवें कि हम उस के चुने जाने पर किसी भी दल विशेष से गाँव के मामले मे प्रभावित नही होगे। ऐसी व्यवस्था किये जाने पर ही उस पचायत के निष्पक्ष पच गाव वा अपने क्षेत्र की भलाई कर सकते है। मेरे कहने का भाव यह है कि गाव मे पचायत के निर्माण करने के लिये पच का चुनाव करने वाले स्वय पहिले निर्दली हो कर निर्वाचन मे भाग लेवे और निर्दली पच को ही चुनें। गाव की समस्याओ को सुलझाने और उन्नति तथा गाँव की पचायत को सफल बनाने के लिये मतदान करने वालो और पचो के उमीदवारो को अपना निर्दली रूप रखना अनिवार्य है। राजनीतिक अखाडे मे दलबन्दी मे पडे लोगो को चाहिये कि गाव की पचायत की सफलता को रखने के लिये वे स्वय भी अपनी दलबन्दी का प्रयोग न करें। इस से गाँव की जनता का जहा भला होगा वहा उन के हित की पूर्ति भी होती रहेगी। ऐसी पचायत का सौभाग्य बढ कर पचो के निष्पक्ष कार्यों का प्रभाव दूसरी पचायतो और उन के पचो पर भी पडेगा। इस से राष्ट्र की समस्याओं का समाधान होने मे सुविधा होगी। ●

राष्ट्रवादी युवकों की प्रतिनिधि संस्था—

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

(श्री ब्रह्मचारी इन्द्रदेव जी मेधार्थी)

आर्यसमाज का भविष्य क्या होगा ? इस प्रश्न पर चिन्तन करते हुए आर्यसमाज के संन्यासी, विद्वान्, नेता तथा मननशील आर्य गम्भीर हो जाते हैं। आज जिस प्रकार वेद विरुद्ध विचारों की देश में देशीय तथा विदेशीय लोगों द्वारा आन्धी चलाई जा रही है उसके प्रतीकार के लिए हमारे प्रयास तथा साधन कितने नगण्य हैं यह देख कर हृदय कांप उठता है। आर्यसमाज के पुराने महारथी जिनका निर्माण शास्त्रार्थ युग ने किया था, जो स्वामी श्रद्धानन्द भाई परमानन्द, स्वामी दर्शनानन्द और लाला लाजपतराय आदि के महान् व्यक्तित्व से प्रेरणा ले कर आगे बढ़े थे वे एक-एक कर के ससार से विदाई लेते जा रहे है। समाज की सभी सभाएँ तथा संस्थाएँ क्रियात्मक सघर्षमय कार्यक्रम तथा सबल नेतृत्व के अभाव में परस्पर ही झगड़ रही हैं। आर्यसमाज की अगली पंक्ति के नेता विभिन्न राजनीतिक दलों में स्थान प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील हैं। ऐसी स्थिति में आर्यसमाज का भविष्य सन्दिग्ध होना स्वाभाविक ही है।

"अग्निना अग्निः समिध्यते"—किसी भी सस्था का भविष्य युवा पीढ़ी पर निर्भर करता है। आर्यसमाज में युवक वर्ग को किस प्रकार लाया जाय यह विचार वर्षों से कुछ युवकों (जिन में लेखक भी एक है) की विचारणा का विषय बना हुआ था। पर्याप्त विचार विमर्श के पश्चात् वेद के प्रसिद्ध सिद्धान्त "अग्निना अग्निः समिध्यते" आग से आग जलती है, पर युवकों का ध्यान केन्द्रित हुआ। यदि कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से किसी कार्य की अपेक्षा रखे तो उसे स्वय आगे बढ़ कर उस कार्य को प्रथम करना चाहिये। आर्यसमाज में युवकों को दीक्षित करने का भी यही व्यावहारिक उपाय है कि अनेक युवकों को पहले स्वय इस दिशा में आगे बढ़ कर मुनिवर गुरुदत्त, पं० लेखराम, भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल आदि के समान अपने जीवन का बलिदान आर्यसमाज के लिए करना चाहिये। शनैः-शनैः इस विचार ने अपना पूर्ण प्रभाव युवकों के मस्तिष्क पर कर लिया और दर्जनों युवक अपने घर परिवार, नौकरी-व्यवसाय तथा विश्व विद्यालयों के अध्ययन अध्यापन को छोड़ कर कार्य क्षेत्र में निकल पड़े। और आर्यसमाज के मन्तव्यों को युवा पीढ़ी में फैला कर आर्य राष्ट्र के निर्माण के लिये स्वच्छ वातावरण बनाने को "आर्य युवक परिषद्" का निर्माण किया। पिछले वर्षों में इस संघटन की शाखाएं विस्तृत हो कर भारत के विभिन्न प्रदेशों तथा कुछ शाखाएं विदेश में भी होने से यह युवा संघटन सार्वदेशिक स्तर तक पहुंच गया।

आर्ययुवक परिषद् ही क्यों ?—परिषद् के मुख्य कार्यकर्त्ताओं के समक्ष प्रारम्भ से ही यह प्रश्न उठता रहा है कि आर्यसमाज के अन्तर्गत चलने वाली अनेक संस्थाएँ और कई तो विशुद्ध युवकों की संस्थाएँ होते हुये भी परिषद् के नाम से पृथक् संघटन का निर्माण क्यों किया गया ? परिषद् के नाम से पृथक् संघटन करने के अनेक कारणों में से यहाँ केवल एक कारण का उल्लेख करना पर्याप्त रहेगा। आज आर्यसमाज की छोटी-छोटी संस्थाओं से ले कर सर्वोपरि संस्थाओं तक में परस्पर झगड़े चल रहे हैं। जिसका कारण सैद्धान्तिक मत भेद नहीं, अपितु परस्पर का विद्वेष है। सभी संस्थाओं में अनेक दल हैं जो एक दूसरे की निरन्तर निन्दा करते रहते हैं। वर्तमान में प्रचलित आर्यसमाज के किसी एक दल में मिल कर काम करने से अन्य व्यक्ति अकारण विरोध करना प्रारम्भ कर देते हैं अतः अनेक हितैषी विद्वानों की बार-बार सम्मति ले कर युवकों ने यह उचित समझा कि वर्तमान के किसी दल विशेष की अपेक्षा न रखते हुये महर्षि दयानन्द के आदर्श को समक्ष रख कर युवक वर्ग को आर्यसमाज में दीक्षित करने के लिए सभी आर्यजनों से सहयोग प्राप्त किया जाय।

परिषद् की वर्तमान स्थिति—पिछले वर्षों में जिस समय कुछ युवकों ने कार्य प्रारम्भ किया उस समय यह संघटन नितान्त साधनहीन था। किन्तु इस थोड़े से कार्य काल में आर्य जनता ने जिस उदारता से युवकों को सहयोग दिया है उसे देख कर संघटन के युवकों का उत्साह कई गुणा बढ़ा है। आर्य युवक परिषद् के अन्तर्गत २१ योग्य युवक जीवन दान दे कर अहर्निश युवक संघटन के कार्य में संलग्न हैं। जिन में अनेक आचार्य, एम. ए. एम कॉम, एम. ए. सी, वेद वाचस्पति आदि उच्च उपाधियों से अलंकृत हैं। इस के अतिरिक्त सैकड़ों युवक अपने-अपने क्षेत्र में रह कर संघटन की रीति नीति के अनुसार पूर्ण अनुशासन को स्वीकार कर के कार्य कर रहे हैं।

रचनात्मक कार्य—पिछले सितम्बर १९६९ में परिषद् के अनुशासन में २०० आर्य युवकों ने कुरुक्षेत्र के मैदान से यात्रा प्रारम्भ कर के दिल्ली लाल किले तक १५० मील की पद यात्रा शराब के विरोध में की। १५ दिन की इस पद यात्रा में मार्ग में प्रत्येक रात्री को विशाल सम्मेलनों का आयोजन किया गया। जिन में आर्य जगत् के उच्च नेताओं ने पहुंच कर युवकों को आशीर्वाद दिया। अन्तिम दिन रात्री के समय मशालों के प्रकाश में लाल-किले के मैदान में युवकों ने आर्यसमाज के कार्यक्रम को युवा वर्ग में तीव्र गति से चलाने का निश्चय किया।

व्यायाम शिक्षण शिविर—पिछले १ वर्ष में परिषद् के व्यायामाचार्य तथा व्यायाम शिक्षकों ने ५० शिविरों का विभिन्न स्थानों पर आयोजन किया। जिन में हजारो युवकों ने आसन-प्राणायाम-व्यायाम-ब्रह्मचर्य-सध्या आदि का शिक्षण प्राप्त किया।

प्रचार कार्य—विभिन्न स्थानों पर आर्यसमाज के उत्सवों, युवक सम्मेलनों तथा मद्य मास निषेध सम्मेलनों का आयोजन किया। जिन से लोक मत को अनुकूल बनाने में सफलता मिली।

दक्षिण भारत में विशेष प्रचार—परिषद् के सयोजक प्रो. श्यामराव जी ने दक्षिण भारत में जा कर ५० व्याख्यान ईसाइयों के राष्ट्र विरुद्ध कार्यों के विरोध में दिये। तथा आर्यसमाज का सन्देश लोगों तक पहुंचाया।

साहित्य प्रकाशन—१—५०० सत्यार्थप्रकाश ३ रु० प्रति सत्यार्थ-प्रकाश को खरीद कर २ रु० प्रति की दर से युवकों में वितरित किये। हमारा विचार १ रु० प्रति की दर से सत्यार्थप्रकाश लोगों तक पहुंचाने का था, किन्तु धनाभाव के कारण विवशता रही।

२—१ हजार रुपयों का मद्य मांस विरोधी साहित्य प्रकाशित कर के निःशुल्क तथा नाम मात्र के मूल्य से लोगों में बितरित किया।

३—रामप्रसाद बिस्मिल की आत्म कथा १० हजार प्रकाशित कर के युवकों तक १ रु० प्रति के मूल्य से दी।

४—५ हजार "राष्ट्रवादी दयानन्द" पुस्तक प्रकाशित कर के १ रु० प्रति के मूल्य से बांटा।

५—हजारों रुपये का ब्रह्मचर्य तथा व्यायाम विषयक साहित्य विद्यार्थियों तक पहुंचाया।

राजधर्म (पाक्षिक) पत्र—नवम्बर १९६९ से परिषद् की ओर से राजधर्म नाम से पाक्षिक पत्र प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। जिसे सभी विद्वान् तथा आर्य बन्धु विशेष स्नेह पूर्वक अपना कर युवक वर्ग के कार्यक्रम का स्वागत कर रहे हैं। युवकों में इस पत्र को पढ़ कर कुछ कर गुजरने की भावनाऐं उत्पन्न हो रही हैं।

आगामी कार्यक्रम—परिषद् का संघटन तीव्र गति से बढ़ रहा है। भजन मण्डलियों द्वारा, व्यायाम शिक्षण शिविरों द्वारा, युवक सम्मेलनों द्वारा तथा अन्य इसी प्रकार के आकर्षक आयोजनों द्वारा युवक वर्ग को आर्यसमाज के सिद्धान्तों से परिचय कराने का निरन्तर प्रयास चल रहा है। मई मास में परिषद् का वार्षिक अधिवेशन होना निश्चित हुआ है। जिस में देश के कोने-कोने से पधारे हजारों युवक तीन दिन परस्पर मिल

शेष पृ० ११

शिक्षण-संस्था समाचार

कन्या गुरुकुल हरद्वार-कनखल

कन्या गुरुकुल कनखल का ३६वां वार्षिक महोत्सव भारी समारोह सहित सम्पन्न हुआ कन्या गुरुकुल में संस्थापक कर्मवीर ठाकुर ससार सिंह जी ने समारोह का उदघाटन किया।

भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री डा० वी०के० आर० वी० राव, आचार्य श्री भगवानदेव जी झज्जर देश भक्त राजा मन्हेन्द्र प्रताप जी श्री दाह्या भाई पटेल जी, एम० पी० ठाकुर यशपाल सिंह जी, एम० पी० सरदार कुलतार सिंह जी, (शहीद भगत सिंह के भाई) विद्वान् जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व एम० पी०, श्री आचार्य बाबूराम जी मिश्र अध्यक्ष नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ, कविराज हरनाम दास जी बी० ए० स्वामी आनन्द भिक्षु जी महाराज आदि अनेक लोक नेताओ ने महोत्सव की कार्यवाही मे सोत्साह भाग लिया। सस्था के मुख्याधिष्ठाता कविराज डा० योगेन्द्रपाल शास्त्री ने कन्या गुरुकुल की वार्षिक रिपोर्ट पढकर सुनायी। किसान सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन दीक्षान्त समारोह की कार्यवाहियों में जनता ने भारी सख्या में भाग लिया।

इस अवसर पर "कमला नेहरू छात्रावास" का शिलान्यास भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री डा० वी० के० आर० वी० राव ने किया।

डा० राव ने गुरुकुल की कन्याओं से आग्रह पूर्वक सस्कृत भाषा के कई व्याख्यान सुनकर स्वय को आह्लादित अनुभव किया आप ने कन्याओ को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपको चाहिए कि न केवल साहित्य और आयुर्वेद की शिक्षा ही सस्कृत के द्वारा प्राप्त करें अपितु अन्य विषयो एव अपनो दिनचर्या मे भा सस्कृत का उपयोग करें।

समाज कल्याण हाई स्कूल रोहट (जि० रोहतक)

छटा वार्षिकोत्सव चौ० चन्दगीराम रोहट निवासी की अध्यक्षता मे बडी धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। अध्यक्ष महोदय का जलूस गाँव से जब स्कूल के मुख्य द्वार पर पहुँचा तो स्कूल के छात्रों तथा उपस्थित जनता ने उनका भव्य स्वागत किया। इस अवसर पर श्रीमती ओम्प्रभा जैन, वित्त तथा माल मन्त्री हरयाणा विधान-सभा के कुछ सदस्य, प० चिरजीलाल शर्मा, एडवोकेट सोनीपत, श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती, भूतपूर्व ससद्-सदस्य तथा हरयाणा सरकार के वरिष्ठ अधिकारी और इलाके के गण मान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे।

स्कूल के मुख्याध्यापक श्री आर० एन० प्रधान ने स्कूल की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत की। आने वाले महानुभावो के व्याख्यानो और चौ० मनसाराम जी के भजनो द्वारा कार्यक्रम बडा रोचक बन गया।

यह स्कूल पिछले बारह वर्षों से इस इलाके की अमूल्य सेवा कर रहा है। यहाँ पर १००० विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। स्कूल में १५ क्लासरूम हैं। यहाँ का विज्ञान-भवन बहुत विशाल है। यह श्रीमती बोहती देवी, धर्मपत्नी स्व० चुन्नीलाल गोयल, नरेला निवासी की अमूल्य देन है। इसके लिए यह सस्था उस पवित्र आत्मा की सदा आभारी रहेगी तथा अन्य सहायक महानुभावों की भी आभारी है। स्कूल की सहायतार्थ अध्यक्ष महोदय ने २१०० रु० दान दिये और श्रीमती ओम्प्रभा जैन ने २५०० रु० का अनुदान-प्रदान किया। इसके अतिरिक्त उपस्थित दानी महानुभावों ने भी अनुमान नगद १००० रु० दिया। इस गाँव के एक पाने सन्नाण ने ७६००० ईंटे भी स्कूल को प्रदान की। यह स्कूल इस क्षेत्र के विशेष रूप से शोषित, पीडित और पिछडे वर्गों के छात्रो को शिक्षित कर रहा है।

डाक-तार घर का उद्घाटन भी भारत सरकार के सचार मन्त्री प्रो० शेरसिंह ने किया। इस अवसर पर प्रो० साहब ने अपने व्याख्यान मे लोगों को बताया कि हरियाणा राज्य ने पिछले ढाई साल में कठनाईयों के होते हुए भी इसका बजट ५५ करोड रुपये बढ कर १७५ करोड रु० हो गया है। उन्होंने मनुष्य जीवन के अन्दर डाक-तार सेवा का महत्त्व भी बताया। और रोहट ग्राम मे शीघ्र ही टेलीफोन सेवा भी उपलब्ध होगी।

स्थानीय जनता ने प्रो० साहब का हार्दिक स्वागत करते हुए उनके प्रति आभार प्रगट किया।

—मूलचन्द गुप्त

विद्याविभूषित नवविवाहित आर्यदम्पती



श्री देवदत्त जी भारती शास्त्री आचार्य, एम० ए० उपमन्त्री गुरुकुल गदपुरी (गुडगावा) तथा श्रीमती विभादेवी शास्त्री, ओ० टी० स्नातिक कन्या गुरुकुल नरेला (दिल्ली)

दोनो (पति-पत्नी) से आर्य समाज के कार्य के लिये अच्छी आशाए हैं। (सम्पादक)

काशी आर्य्य समाज

वार्षिकोत्सव ता० ८ ९ १०, ११ मई ६८ ई० बडे समारोह के साथ मनाया जायेगा। जिसमे अनेक प्रसिद्ध विद्वान् उपदेशक, सन्यासी पधार रहे हैं। —मन्त्री

आर्य समाज शिविल लाइन सहारनपुर

निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ—

प्रधान—श्री चण्डीप्रसाद शर्मा, मत्री—श्री जगदीशचन्द्र, कोषाध्यक्ष—श्री मुन्शीराम, पुस्तकाध्यक्ष—श्री चरणजीतलाल,

इसके अतिरिक्त ९ अतरग व प्रतिनिधि सदस्य निर्वाचित हुये।

—मिलखीराम प्रधान

प्रान्तीय आर्य महिला सभा दिल्ली

निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ—

श्रीमती सावित्री देवी जी—प्रधान श्रीमती सुशीला देवी—मन्त्री श्रीमती तारावेद् कोषाध्यक्ष प्रान्तीय आर्यमहिला सभा की यह बैठक कलकत्ता मे नारी जाति के नारीत्व पर गुडो द्वारा जो घृणित तथा लज्जास्पद आक्रमण हुआ उस पर अत्यन्त रोष प्रकट करती है। केन्द्रीय तथा बगाल राज्य की सरकार से, गुडो को उचित दण्ड देने तथा भविष्य में ऐसा लज्जास्पद कार्य न होने देने के आश्वासन की माँग करती है।

—सुशीलादेवी मन्त्री

पृ० १० का शेष

कर आगामी कार्यक्रम का निश्चय करेंगे। हम चाहते हैं कि आगामी वर्ष में १ हजार स्थानो पर परिषद् की दैनिक शाखाएँ व्यवस्थित रूप से चल सकें।

नम्र निवेदन—भारत भर के समस्त आर्यसमाजो से हमारी नम्र प्रार्थना है कि युवक सघटन को बलशाली बनाने के लिए पूर्ण उदारता से परिषद् को सहयोग प्रदान करें। प्रत्येक समाज मे आर्य युवक परिषद् की स्थापना होनी आवश्यक है। युवक सघटन जिन उपायो द्वारा व्यापक एव दृढ बन सकता है, इस सम्बन्ध मे जो व्यक्ति अपने अमूल्य सुझाव भेजेंगे उन्हे क्रियात्मक रूप देने का हम प्राणपणा से यत्न करेंगे। लाखो युवक आर्यसमाज के सिद्धान्तो मे दीक्षित हो कर ओम् ध्वजा ले कर वैदिक मान्यताओं की स्थापना के लिये कटिबद्ध हो कर जुट पडें—सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद् का यही लक्ष्य है, और आर्यसमाज के भविष्य को उज्ज्वल बनाने का वास्तविक पथ है।

विशेष—आर्य युवक परिषद् को उन्नत करने के लिये विवाद ग्रस्त शैली से रहित जिन उत्तम विचार तथा उपायों को "आर्य्यमर्यादा" में प्रकाशनार्थ भेजा जायगा, सहर्ष उनको स्थान दिया जायगा।

—सम्पादक

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,

आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियों के लिये २५), ५० प्रतियों के लिये १३)

२५ प्रतियों के लिए ८) ७५, १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैकड़ा
कलियुग की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित्र	१-५० ,,
मुक्ति के साधन १-०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१-५० ,,
वैदिक सत्संग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रेजी	२-०० ,,
जीवन ज्योति ले० प० पशुपति जी एम ए	३-०० ,,
प्रेम सरोवर ,, ,, ,,	३-०० ,,
The Principles of Aryasamaj ,	१-५० ,
Glimpses of Swami Daya Nand ,, ,,	१-०० ,,
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० ,,

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मंगवाइये। थोड़ी प्रतियां शेष हैं।

व्यवस्थापक—"आर्य मर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से विशेष निवेदन

आर्योदय के सभी ग्राहकों को जो कि विदेशों में निवास करते हैं, आर्योदय के बन्द होने पर उसी शुल्क में "आर्यमर्यादा" नियमपूर्वक भेजा जा रहा है।

आर्यमर्यादा का आर्थिक वर्ष (बजट) १५ अप्रैल को समाप्त हो चुका है। अतः इस सूचना द्वारा सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि नये वर्ष का वार्षिक शुल्क २०) तुरन्त बैंक ड्राफ्ट अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम चैक द्वारा भेजने की कृपा करें।

आशा है आप आर्योदय की भांति ही आर्यमर्यादा को अपना सहयोग एवं संरक्षण प्रदान करेंगे।

विनीत .

व्यवस्थापक "आर्यमर्यादा" .

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

आर्य समाज साण्डी (हरदोई)

वार्षिकोत्सव दिनांक बड़े समारोह के साथ मनाया गया। जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा के कई उपदेशक महानुभावों के प्रभावशाली प्रवचन, भजन व उपदेश हुये। आर्य जनता की उपस्थिति सराहनीय रही। प्रभाव अच्छा पड़ा।

—मन्त्री

आर्यसमाज मन्दिर [illegible] (दिल्ली)

प० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार तथा श्री [illegible] जी वेदोपदेश द्वारा अमृत वर्षा करते रहे साथ ही "[illegible]" भी प्रात होता रहा।

मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

सत्येन पन्था विततो देवयान " अर्थात सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य ही से विद्वानो का मार्ग विस्तृत होता है इस दृढ निश्चय के आलम्बन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासीन हो कर कभी सत्यार्थ प्रकाश करने से नही हटते ॥

—सत्यार्थप्रकाश-भूमिका

वर्ष १ }
अंक २२ }

२१ वैशाख वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ११ मई १९६९ रविवार,
सृष्टि स०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
, „ विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

तद् ब्रह्म कीदृशमित्युपदिश्यते ।

वह ब्रह्म कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है ॥—

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।
दिवीव चक्षुराततम् ॥ ऋ० १ २२ २०

पदार्थ —(तत) उक्त वक्ष्यमाण वा (विष्णो) व्यापकस्यानन्दस्वरूपस्य (परमम्) सर्वोत्कृष्टम् (पदम्) अन्वेष्य ज्ञातव्य प्राप्तव्य वा (सदा) सर्वस्मिन् काले (पश्यन्ति) सप्रेक्षन्ते (सूरय) धार्मिका मेधाविन पुरुषार्थयुक्ता विद्वास (दिवीव) यथा सूर्य्यादिप्रकाशे विमलेन ज्ञानेन स्वात्मनि वा (चक्षु) चष्टे येन तन्नेत्रम (आततम्) समन्तात् विस्तृतम् ॥

अन्वय —सूरया विद्वासो दिव्याततम् चक्षुरिव यद् विष्णोरातत परम पदमस्ति तत् स्वात्मनि सदा पश्यन्ति ॥

भावार्थ —अत्रोपमालङ्कार । यथा प्राणिन सूर्य्यप्रकाशे शुद्धन चक्षुषा मूर्त्तद्रव्याणि पश्यन्ति तथैव विद्वासो विमलेन ज्ञानन विद्यासुविचारयुक्ते शुद्धे स्वात्मनि जगदीश्वरस्य सर्वानन्दयुक्त प्राप्तुमर्हं मोक्षाख्य पद दृष्ट्वा प्राप्नुवन्ति । नैतत्प्राप्त्या विना कश्चिन्सर्वाणि सुखानि प्राप्तुमर्हति तस्यादेतत्प्राप्तौ सर्वे सर्वदा प्रयत्नोनुविधेय इति ॥

विलसनाख्येन परम पद इत्यस्यार्थो हि स्वर्गो भवितुमशक्य इति भ्रान्त्योक्तत्वान्मिथ्यार्थोऽस्ति । 'कुत ' परमस्य पदस्य स्वर्गवाचकत्वादिति ॥

पदार्थ —(सूरय) धार्मिक बुद्धिमान पुरुषार्थी विद्वान् लोग (दिवि) सूर्यादि के प्रकाश मे (आततम्) फैल हुए (चक्षुरिव) नेत्रो के समान जो (विष्णो) व्यापक आनन्दस्वरूप परमेश्वर का बिस्तृत (परमम्) उत्तम से उत्तम (पदम्) चाहने जानने और प्राप्त होने योग्य उक्त वा वक्ष्यमाण पद है (तत्) उसको (सदा) सब काल मे विमल शुद्ध ज्ञान के द्वारा अपने आत्मा मे (पश्यन्ति) देखते हैं ॥

भावार्थ —इस मन्त्र मे उपमालङ्कार है। जैसे प्राणी सूर्य्य के प्रकाश मे शुद्ध नेत्रो स मूर्त्तिमान् पदार्थों को देखते हैं, वस ही विद्वान् लोग निमल विज्ञान स विद्या वा श्रेष्ठ विचार युक्त शुद्ध अपने आत्मा मे जगदीश्वर को सब आनन्दो से युक्त और प्राप्त होन योग्य मोक्ष पद का देखकर प्राप्त होते है। इस की प्राप्ति के विना कोई मनुष्य सब सुखो के प्राप्त होने मे समर्थ नही हो सकता। इससे इसकी प्राप्ति के निमित्त सब मनुष्यो को निरन्तर यत्न करना चाहिये।

इस मन्त्र मे परम पद इन पदो के अर्थों मे यूरोपियन विलसन साहब ने कहा है कि इन का अर्थ स्वर्ग नही हो सकता यह उनकी भ्रान्ति है, क्योकि परमपद का अर्थ 'स्वर्ग' ही है ॥

(ऋषि दयानन्द के भाष्य से)

"भ्रान्ति निवारण" पुस्तक की भूमिका

विदित हो कि जो मैंने ससार के उपकारार्थ वेदभाष्य के बनाने का आरम्भ किया है, कि जो सब प्राचीन ऋषियो की की हुई व्याख्या और अन्य सत्य ग्रन्थो के प्रमाणयुक्त बनाया जाता है जिस से इस बात की साक्षी वे सब ग्रन्थ आज पर्यन्त वर्त्तमान हैं और मेरे बनाये मासिक अको में भी विद्वानो के समझने के लिये सङ्केत मात्र जहाँ-तहाँ लिख दिये हैं कि देखने वालो को सुगमता हो और किसी प्रकार की भ्रान्ति वा शङ्का मेरे लेख पर होकर वृथा कुतर्क खडी करके कोई मनुष्य मेरे काल को न खोवे, कि जिस से देशभर की हानि हो, और उस को भी कुछ लाभ न हो। परन्तु बहुधा ससार मे यह उलटी रीति है, कि लोग उत्तम कर्म कर चुके और करते हुए को देखकर, ऐसे प्रसन्न नही होते, जैसे कि निषिद्ध कर्म वा हानि को देखकर होते हैं।

जो मैं निरानिरी ससार ही का भय करता और सर्वज्ञ परमात्मा का कुछ भी नही कि जिस के आधीन मनुष्य के जीवन मृत्यु और सुख दु ख हैं, तो मैं भी ऐसे ही अनर्थक विवादा मे मन देता। परन्तु क्या करू मैं तो अपना तन, मन धन सब सत्य के प्रकाशार्थ समपण कर चुका। मुझ से खुशामद अब स्वार्थ का व्यहार नही चल सकता। किन्तु ससार को लाभ पहुचाना ही मुझको चक्रवर्त्ती राज्य के तुल्य है।

मैं इस बात को प्रथम ही अच्छे प्रकार जानता था कि न्यारिये के समान बालू से स्वण निकालने वाल चतुर कम होंगे, किन्तु मलीन मच्छी की नाईं निर्मल जल को गदला करन और बिगाडने वाल बहुत है। परन्तु, मैंने इस धर्म काय का सर्व शक्तिमान् ग्राहक और न्याय-सम्बन्धी परमात्मा के शरण मे शीस धर के, उसी के सहाय के अवलम्ब से आरम्भ किया है।

—महर्षि दयानन्द

भारत के राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन का देहान्त

आप भारत के तीसरे राष्ट्रपति थे। राष्ट्रपति काल मे ही इन का देहान्त हो गया। इस से पूर्व १० वर्षों तक उपराष्ट्रपति पद पर आसीन रह चुके थे। आप शिक्षा विशेषज्ञ नेता थे। जर्मनी मे भी उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। राष्ट्र के स्वतन्त्रता आन्दोलन मे सक्रिय भाग लिया था। स्वभाव से सरल और मिलनसार थे। घी दूध के लिये राष्ट्रपति भवन मे गाय साथ रखते थे। इनके शोक मे राष्ट्र शोक मग्न हो गया। "आर्य-मर्यादा' इस राष्ट्र दु ख मे शोक प्रकाशित करता है।

—सम्पादक

शतपथ रहस्य

(स्वा० विवेकानन्द सरस्वती, अध्यक्ष प्रभात आश्रम, टीकरी—जि० मेरठ)

"शतपथ क्या है" पूर्व लेख में मैंने शतपथ का सामान्य परिचय दिया था। अब हम इस लेख में शतपथ के उन रहस्यात्मक स्थलों का रहस्योद्घाटन करेंगे, जिनको न समझ कर पशुयागवादी मांसलप्रज्ञमीमासको ने ऐसो धमाचौकड़ी मचाई और ऐसो धूर्तता का अभिनय किया जिसको देखकर मारे लज्जा के सिर नीचे झुक जाता है तथा अच्छे से अच्छे व्यक्ति के हृदय में वेद और वैदिक संस्कृति के प्रति घृणा हुए बिना नहीं रह सकती।

पहला स्थल है मांसौदन भक्षण का तथा दूसरा है अश्वमेध याग का वह प्रकरण जिसको आधार मानकर महीधरादि भाष्यकारों ने यज्ञशाला में कपड़ा तानकर उसकी ओट में अश्व और महिषी का समागम कराया।

किसी भी ग्रन्थ को ठीक-ठीक समझने के लिए हमें ग्रन्थकर्त्ता की नवीन मान्यताओं तथा पारिभाषिकार्थों को आधार बनाना होगा, यदि हम ऐसा नही करेंगे तो निश्चय ही ग्रन्थ के ठीक अभिप्राय को समझने से वंचित रहेंगे तथा उस ग्रन्थ के प्रति घनघोर अन्याय कर बैठेंगे। उस ग्रन्थ के अन्दर पारिभाषिक अर्थों को छोड़कर लौकिक प्रसिद्धार्थ का ग्रहण करना महा अनर्थ उत्पन्न कर देगा। उदाहरणार्थ अष्टाध्यायी के आद्गुण. सूत्र को लीजिए, इसका अर्थ है अवर्ण से अच् परे रहने पर पूर्व-पर के स्थान मे 'गुण' एकादेश होता है। गुण किसे कहते हैं सो इसके उत्तर में आचार्य पाणिनि ने बताया अदेङ् गुण: अर्थात् 'अ', 'ए', 'ओ', की गुण सञ्ज्ञा होती है। आचार्य ने तो यह इसीलिये बताया कि कही कोई लौकिक प्रसिद्ध गुणादि का ग्रहण न कर लेवे। यदि कोई अध्येता आचार्य के बताये हुए गुण को न ग्रहण करके लौकिक प्रसिद्ध या सांख्य के सत्व, रज, तम, अथवा वैशेषिक दर्शन के रूपादि २८ गुणों का ग्रहण करने लगे तो 'आद्गुण:' सूत्र का वह अनर्थ होगा जिसके न सिर का पता लगेगा न पैर का, आचार्य का अमूल्य शब्दशास्त्र का ग्रन्थ मूर्खों की मूर्खता का पिटारा बन जायेगा। वैदिक साहित्य के साथ पाश्चात्य तथा इहदेशीय विद्वानों ने ऐसा ही व्यवहार किया जिसे देखकर हँसी भी आती है और रोना भी, हँसी तो इसलिये कि इन भाष्यकारों की कैसी विलक्षण प्रतिभा है जिसके बलबूते पर यह भाष्य करने चले है। रोना इसलिए कि इनकी इस भाष्य लीला ने भगवती श्रुति के हृदय को विदीर्ण कर डाला।

शतपथ में "मांसौदनाभ्यां जुहोति" "मांसौदनं भुङ्क्ते" ये तथा इनके समानार्थक वाक्य अनेक बार आए हैं। उदाहरण के लिए दो स्थल देते हैं—

अथ य इच्छेत् पुत्रो मे पण्डितो विजिगीषु: सर्वमायुरियादिति मासौदन पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयातामोश्वरो जनयिता वा औक्षेण वार्षभेण वा शत० १४-९-४-१७

क्षीरौदनमासौदनाभ्या ह् वा एव देवांस्तर्पयति शत० ११-५-७-९

आपात दृष्टि से यहाँ स्पष्ट ही मांस भक्षण तथा मांसहवि का उल्लेख है जिसका किसी प्रकार अपलाप नही किया जा सकता। किन्तु अब आप देखिये कि शतपथ में मांसमें का क्या अर्थ बताया गया है। "मासौदन हि वाकोवाक्यम्" शत० यह जो तर्क शास्त्र (वाकोवाक्यम्, है) यही तो मासौदन है। यद्वाऽय वाको वाक्यमधीते क्षीरौदनमांसौदनौ हैवं तौ।। शत० ११-५-७-५। यह जो वाकोवाक्य पढ़ता है वही तो मास ओदन और क्षीरौदन है। अब इससे अधिक कोई ग्रन्थकार क्या अपने अभिप्राय को अभिव्यक्त करेगा? किन्तु सत्य है—"अर्थी दोष न पश्यति" के अनुसार मासलोलुप याज्ञिको को यह वाक्य नही सूझा। मांसौदन का वाकोवाक्यम् अर्थ करने पर इसे पूरे प्रकरण के साथ संगति भी लग जाती है। अब कण्डिका का अर्थ यों होगा कि जो कोई यह चाहता है कि मेरा पुत्र पण्डित, प्रख्यात, सभा में जाने वाला रमणीयवाणी को बोलने वाला सभी वेदों का वक्ता तथा सम्पूर्ण आयु को प्राप्त हो वह मांसौदन अर्थात् तर्कशास्त्र घृत ललित साहित्य के साथ अध्ययन करावे। क्योंकि गूढ़ पांडित्य बिना तर्कशास्त्र के नहीं आ सकता। यदि यह शतपथ का बताया हुआ अर्थ यहाँ नहीं लेंगे तो बताइए कि विद्वान् यजुर्वेदवक्ता होने से मांसौदन का क्या सम्बन्ध? कुछ भी नही!

दूसरा स्थल है अश्वमेध यागका जिसको कण्डिका निम्न है—

निष्ठितेषु यत्तिजनेषु महिषीमश्वायोयनियादयन्त्यथेनाधिवासेन सम्प्रार्णुवन्ति स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथामिप्तेष वै स्वर्गो लोको यत्र पशु संज्ञपयन्ति निरायस्याश्वस्य शिश्न महिष्युपस्थे निधत्ते वृषा वाजीरेतोधा रेतोदधात्विति मिथुनस्यैव सर्वत्वाय" श० १३-५-२-२ सायणाचार्य ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है। निरायत्यबहिरायम्याकृष्य अश्वस्य शिश्नं महिषि आत्मन उपस्थे स्त्रीप्रजनने स्थापयति" देखा आपने इन कामुकों की भैरवी लीला को! यह अर्थ दादा सायण ने ही किया है सो बात नही बाबा महीधराचार्य तथा कात्यायन श्रौतसूत्र के टीकाकार विद्वत् शिरोमणि प्रात: स्मरणीय श्री विद्याधर शर्मा ने भी यही अर्थ किया है। अच्छा तो अब आप ही बताये कि ऐसे वेदार्थ को पढ़कर किसकी वेद में श्रद्धा रह जायेगी? इन वेद भाष्यकारों की तो क्या कहूं "धन्य भारत का भाग्य कि ऐसे वेदज्ञ मनीषी यहाँ पैदा हुए!

देखिए शतपथ के अनुसार इसका अर्थ क्या होता है। ऋषि दयानन्द ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में भाष्य करण शङ्का समाधानादि विषय में "ता उभौ चतुर: पद:" इस यजुर्वेद के भावार्थ में इसका अर्थ किया है सो वही देख लेवें। हम तो केवल यहाँ जो अति रहस्यात्मक वाक्य "अश्वस्य शिश्न महिषी उपस्थे निधत्ते" है उसका शतपथानुसार अर्थ दिखावेंगे। शेष कण्डिका तथा सारे अश्वमेधयाग की व्याख्या १३वें काण्ड के शतपथ भाष्य में करेंगे सो अभी उसकी प्रतीक्षा कीजिए। हां एक बात तो है कि इस अर्थ से पता लग जायेगा कि शतपथ के छोटे से वाक्य का भी कितना गूढ़ अर्थ है।

अश्व को शतपथ में क्षत्र कहा गया है और क्षत्र को राजा "क्षत्रं वा अश्व: क्षत्रं राजन्य:" श० १३-४-३-१ यहाँ अश्व कौन है क्या चार पैर वाला पशु? सो इसके उत्तर में कहा—नही यहाँ अश्व का अर्थ राजा है। अब शिश्न कौन है? सो शतपथ के ही शब्दों में सुनिये—'शिश्नमिन्द्र:' शत० १२-९-२-२ इन्द्र का अर्थ ऐश्वर्य वाला होता है यह सबको विदित है क्योंकि यह शब्द 'इदि' परमैश्वर्य धातु से रन् प्रत्यय करके बना है। महिषी का भी अर्थ शतपथ के ही शब्दों में सुनिये 'महिषी हि वाग्' ६-५-३-४ यह वाणी ही तो महिषी है, अब रह गया उपस्थ शब्द सो उसका भी अर्थ यहाँ लिङ्ग नहीं होगा, किन्तु 'गोद या अन्दर' होगा जैसे गीता में होता है 'एवमुक्त्वार्जुन: संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्' इस प्रकार कह कर अर्जुन रथ की गोदी में या अन्दर बैठ गया। अश्वमेध क्षत्रियों का याग है। "क्षत्रिययज्ञ उवा एष यदश्वमेध" शत० १३-४-१-२ अब उपर्युक्त वाक्य का अक्षरार्थ यह होगा कि राजा अपने शिश्नं (ऐश्वर्य तेज को महिषी) वाणी के अन्दर रखता है। इसका गूढ़ार्थ यह हुआ कि राजा को चाहिए कि जब वह प्रजा के लिए कोई आदेश देवे तब उसके अन्दर अपने तेज को अवश्य स्थापित कर देवे अन्यथा तेजोहीन वाणी की प्रजा परवाह नहीं करेगी।* अहा! कितना सुन्दर राजनीति का उपदेश याज्ञवक्य ने लोगों को दिया! किन्तु इन वेदमर्मानभिज्ञों को भगवती श्रुति के स्तनों में भी दूध के स्थान पर खून ही चूसने को मिला। धन्य है उस वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द को! जिसने इन पामरों के जाल से वेद की रक्षा करके हमें प्रवेश का मार्ग बताया। इति।।

*टिप्पणी—विद्वान् लेखक महोदय ने "अश्व" शब्द से राजा—राजन्य-क्षत्रिय का ग्रहण किया है। यह प्रकरण सगत है। इसका विशेष स्पष्टीकरण अश्वमेध की व्याख्या के समय किया जावेगा।

—[जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक]

आर्यसमाज पानीपत का वार्षिकोत्सव

बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से पूर्ण प्रबन्ध था। इस अवसर पर सभा को १००० रुपये वेद प्रचारार्थ भेंट किये गये। —निरंजनदेव

सम्पादकीय—

राष्ट्र की रक्षा कठोर दण्ड से

ऋषि दयानन्द स्वरचित ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के छटे समुल्लास मे प्रश्न और उत्तर रूप मे उपदेश देते हैं—

प्रश्न—यह कडा दण्ड होना उचित नही क्योकि मनुष्य किसी अग का बनाने हारा वा जिलाने वाला नही है इसलिये ऐसा दण्ड न दना चाहिये।

उत्तर—जो इस को कडा दण्ड जानते हैं वे राजनीति को नही समझते, क्योकि एक पुरुष को इस प्रकार दण्ड होने से सब लोग बुरे काम करने से अलग रहेगे और बुरे काम को छोड कर धर्म मार्ग मे स्थित होंगे। सच पूछो तो यही है कि एक राई भर भी यह दण्ड सब के भाग मे न आवेगा और जो सुगम दण्ड दिया जाय तो दुष्ट काम बहुत बढ कर होने लगें। वह जिस को तुम सुगम दण्ड कहते हो क्रोडो गुणा अधिक होने से क्रोडों गुणा कठिन होता हैं, क्योकि जब बहुत मनुष्य दुष्ट कर्म करेंगे तब थोडा-थोडा दण्ड भी देना पडेगा अर्थात् एक को मन भर दण्ड हुआ और दूसरे का पावभर तो पावभर अधिक एक मन दण्ड होता है तो प्रत्येक मनुष्य के भाग मे आध पाव बीस सेर दण्ड पडा तो ऐसे सुगम दण्ड को दुष्ट लोग क्या समझते हैं? जैसे एक को मन और सहस्र मनुष्यों को पाव पाव दण्ड हुआ तो ६ (सवा छ) मन मनुष्य जाति पर दण्ड होने से अधिक और यही कडा तथा वह एक मन दण्ड न्यून और सुगम होता है।

"जिसने जितना बुरा कर्म किया हो उसको उतना वैसा ही दण्ड देना चाहिये उसी का नाम न्याय है और जो अपराधी को दण्ड न दिया जाय तो दया का नाश हो जाय, क्योंकि एक अपराधी डाकू को छोड देने से सहस्रो धर्मात्मा पुरुषों को दु ख देना है। जब एक के छोडने मे सहस्रो मनुष्यो को दु ख प्राप्त होता है वह दया किस प्रकार हो सकती है? दया वहीं है कि उस डाकू को कारागार मे रख कर पाप करने से बचाना डाकू पर और उस डाकू को मार देने से अन्य सहस्रो मनुष्यो पर दया प्रकाशित होती है।" —सत्यार्थप्रकाश का ७ म समुल्लास॥

ऋषि दयानन्द द्वारा ऊपर दिये गये मन्तव्य से स्पष्ट है कि अपराधी को कठोर दण्ड होना चाहिय।

आज हमारे राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक दशा किसी भी समझदार व्यक्ति से अज्ञात नही है। सर्वत्र चोरी, डाके, बलात्कार, नारी अपहरण, लूटखसोट और बे-इमानी दिखाई पडती है, अनुशासनहीनता और उच्छृङ्खलता सब वर्गों मे छाई हुई है। जब ऐसी बुराइयो को राजनीतिक वर्ग-भेद का आश्रय मिल जाता है, तो अनाचार का क्या ठिकाना रह सकता है?

यह ठीक है कि बुराइयो को दूर करने के लिये उपदेश और प्रचार करना भी उत्तम काम है परन्तु उपदेश का प्रभाव अच्छे आचरण के मनुष्य पर ही पड सकता। उद्दण्ड व्यक्ति पर नही। उद्दण्ड मनुष्य को तो कठोर दण्ड से ही सीधा किया जा सकता है।

शासन दो प्रकार से चल सकता है। एक शास्त्र से और दूसरे शस्त्र से। शास्त्र के प्रवक्ता विद्वान् होते हैं और शस्त्र को धारण करने वाले राजनेता होते हैं। यदि शास्त्रोपदेश से राष्ट्र मे सुस्थिरता सुदृढता रहती है, तो बहुत अच्छी बात है परन्तु यह प्रत्यक्ष है कि शास्त्र से मानने वाले इने गिने कुछ व्यक्ति होते हैं, परन्तु शस्त्र के प्रहार=दण्ड से बडे-बडे अकडखां सीधे होते देखे जाते हैं। अत राष्ट्र के शासन को शुद्ध और मर्यादित रूप मे चलने के लिये शस्त्र=दण्ड का प्रयोग अनिवार्य है। हमारे पूर्वज ऋषि मुनियो ने शस्त्र=दण्ड को भी धर्म नाम से पुकारा है। यह विचार कोई थोड समय का नही अपितु ससार के इतिहास मे सर्वप्रथम सविधान के प्रशासक मनु द्वारा सचालित शासन पद्धति मे भी यही लिखा है—

दण्ड शास्ति प्रजा सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति।
दण्ड सुप्तेषु जागर्ति दण्ड धर्मं विदुर्बुधा॥

—मनुस्मृति अध्या ७, श्लोक १८"

अर्थ—दण्ड ही प्रजा का शासन करता है। दण्ड ही समस्त प्रजाओ की सब प्रकार से रक्षा करता है। इसीलिये सोती हुई प्रजाओ में दण्ड के भय से कोई अत्याचारी अन्यायी चोर डाकू छेडछाड नही करता। यही कारण है कि बुद्धिमान् लोग दण्ड को धर्म ही कहते हैं कि प्रजाओ को अपने-अपने कर्तव्यो को करते रहने पर दण्ड के भय से कुछ विघ्न-बाधा नही हो सकती।

जैसे ऊपर कहा जा चुका है कि दण्ड कठोर होना चाहिये, परन्तु न्यायपूण हो। यदि अन्याय से दण्ड का प्रयोग किया जाता है तो प्रजा मे विप्लव होकर राष्ट्र भ्रष्ट-भ्रष्ट होकर पराधीनता की बेडियो मे जकड दिया जाता है। जिन दुष्टकर्मकारी लोगो पर दण्ड-निपातन किया जाना चाहिये उन वर्गों के नाम भी मनुस्मृति मे कहे गये हैं—देखिये मनुस्मृति ९ अध्याय श्लोक २५६ से २६० तक—हम केवल भाषा मे ही इन उपर्युक्त श्लोको का भाव दे देते हैं जिस से लेख का कलेवर अधिक न हो सके।

"दूसरो के धन को अपहरण करने वालो के दो भेद हैं—एक जो जनता मे ही रहते हैं और देखते-देखते जनता के धन को लूट लेते हैं। (नानापण्योपजीविन) अनेक प्रकार से चीजो को खरीदना और बेचना इसी धन्धे मे जनता को चूस कर निर्धन बना दिया जाता है और दूसरे छुप कर जनता के धन को लूटने वाले वे दुष्ट हैं जो चोरी और डाका आदि डाल कर लूटते और प्राण भी हर लेते हैं। पहिली श्रेणी मे ये लोग आते हैं—(उत्कोचका) जो यह कह कर लोगो से धन ऐंठते हैं कि मैं तुम्हारा काम करा दूंगा। (औपधिका) जो डरा कर लोगो से उनका धन लेते रहते हैं। (कितवा) जुआरी (मगलादेशवृत्ता) लोगो को यह कह कर कि तुम्हे पुत्र हो जावेगा—इतना धन तुम्हें गडा हुआ मिल जावेगा इत्यादि का प्रलोभन देकर लूटते रहते हैं। (भद्रा) जो बाहर से सज्जन दिखाई देते हैं और भीतर से बडे पापी होते हैं जैसे पुत्र होने के कारण अनाज अथवा घर मे आग लगवा कर पाप कराते हैं। (ईक्षणिका) हस्तरेखाओ को देख कर धन्धा कमाते हैं कि यह बात शुभ है और यह अशुभ है। इत्यादि अनेक प्रकार के ठग होते हैं जो जनता में ही रह कर जनता का धन हरण करते रहते हैं। मनुस्मृति मे लिखा है कि ऐसे धूर्त लोगों को दण्ड से वश मे किया जाना चाहिये।

इसी भान्ति राजनीतिक क्षेत्र मे भी लुटेरे घुस कर राष्ट्र की बडी हानि करते हैं। ऐसे अन्याय करने वाले लोगो पर कठोर दण्ड डालना चाहिये।

२. भारत सरकार से—

सौभाग्य है कि हमारी केन्द्रिय सरकार भारत के उन महापुरुषो के सन्मान मे "डाक टिकट" चालू कर रही है, जिन्होंने राष्ट्र की स्वतन्त्रता प्राप्ति और उत्थान मे अपनी योग्यता का श्रेष्ठ दान दिया था।

भारत ही नही समस्त विश्व के विद्वान् महर्षि दयानन्द जी के शुभ नाम और कार्य से सुपरिचित हैं। महर्षि दयानन्द के गुरुवर परिव्राजकाचार्य स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी महाराज परम विद्वान् थे। जो कि प्रज्ञाचक्षु (चक्षु हीन) होते हुए वेद वेदाङ्ग और सस्कृत साहित्य के पारगन्ता विद्वान माने जाते थे। उस समय के वैयाकरणों मे वह सूर्य्य समझे जाते थे। उन्होने न केवल भारतीय सभ्यता और वैदिक सस्कृति का ही प्रचार और प्रसार किया था अपितु अंग्रेजी दासता को भारत से उखाड के लिये उन्होंने देशीय राजाओ तथा नेताओ से सम्पर्क स्थापित किया था भारतीय इतिहास के सुरक्षित पत्र इस तथ्य के साक्षी हैं। हमारे पास उस समय का लिखित प्रमाण रखा हुआ है।

आशा है भारत सरकार हमारे इस सवथा उचित निवेदन पर पूर्ण ध्यान देगी। इसी आगामी अक्टूबर ६९ के प्रथम सप्ताह मे स्वामी विरजानन्द जी महाराज की निर्माण शताब्दी मनाई जावेगी। अत उस पवित्र उत्सव के समय केन्द्रिय सरकार उन के नाम से डाक-टिकट चालू कर अपने कर्तव्य का पालन करेगी। इस आदर के पवित्र कार्य मे एक विशेषता यह भी है कि ससार भर के चक्षु हीन महाविद्वानो के प्रतिनिधि स्वरूप स्वामी विरजानन्द जी महाराज थे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

क्या यज्ञ में गर्भिणी गौ के अंगों की आहुति दें?

(डा० रामनाथ वेदालंकार एम०ए०पी०एच०डी० अध्यक्ष संस्कृत विभाग गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी)



वेदों में कुछ मन्त्र ऐसे आते हैं, जिन का सायण आदि भाष्यकारों ने पशुबलि परक अर्थ किया है। उनमें से एक मन्त्र यह है—

त्वं नो अग्ने भारतामने वशाभिरुक्षभि।
अष्टापदीभिराहुत ॥ ऋ० २।७।५

इसमें यज्ञाग्नि को सम्बोधन कर कहा गया है कि "हे अग्ने, तू 'वशाओं' से, 'उक्षाओं' से तथा 'अष्टापदियों' से आहुत होता है। सायण ने वशा का अर्थ वन्ध्या गाय, उक्षा का अर्थ सांड और अष्टापदी का अर्थ आठ पैरो वाली गर्भिणी गाय लिखा है। गर्भिणी गाय के चार अपने पैर और चार उदरस्थ बच्चे के पैर, इस प्रकार आठ पैर होने से वह अष्टापदी हुई। भाव यह लिखा है कि ऋत्विजो से उत्पन्न अग्नि बांझ गौओ, साडो और गर्भिणी गौओं की आहुति के द्वारा यज्ञ में आराधित किया जाता है।[1] सायण के इस अर्थ को देखकर वेदपाठी के मन में यह शंका होने लगती है क्या हमारे पवित्र यज्ञों की यही परम्परा है? जो साड गोवंश की वृद्धि द्वारा हमारा उपकार करते हैं, उनके उपकार का बदला क्या यही है कि उन्हें अग्नि में होम कर दिया जाये। जो गर्भिणी गौएं शीघ्र ही प्रसूता हो दुग्धामृत से हमें तृप्त करने वाली हैं, क्या उनके लिए यही नृशसता उचित है कि उन्हें अग्नि की बलि चढ़ा दिया जाये?

वशा की आहुति

वस्तुत इस मन्त्र का अर्थ अन्य ही है। यहाँ वशा का अर्थ वन्ध्या गौ नहीं, अपितु दुधार गौ है। अथर्ववेद में वशा की बहुत महिमा वर्णित हुई है जो दुधार गौ के पक्ष में ही चरितार्थ होती है। अतएव 'वैदिक इन्डैक्स' के लेखक कीथ तथा मैकडानल को भी लिखना पड़ा है कि वशा शब्द को वन्ध्या गौ के लिए ही रूढ़ नहीं समझना चाहिए। अब यह देखना है कि अग्नि दुधार गौओं से आहुत होता है, इसका क्या अभिप्राय है। वेद में अनेक स्थानों पर गौ तथा गोवाची इतर शब्दों से गोजन्य पदार्थ दूध, घी आदि का ग्रहण करना होता है। निरुक्तकार यास्क ने भी गो शब्द के अनेक अर्थ दर्शाते हुए इसे स्वीकार किया है[2] तथा "गोभि श्रीणीत मत्सरम्" में गो का अर्थ गोदुग्ध लेकर 'गोदुग्धों के साथ सोमरस को पकावे' यह अर्थ किया है। सायण ने भी इसी नियम का अनुसरण करते हुए बहुत से स्थानो पर गो का अर्थ गोदुग्ध, गोघृत, गोचर्म आदि किया है। मुख्यार्थबाध होने पर लक्षणा प्रवृत्त होती है। कहा तो पवित्र यज्ञ, जिसका नाम ही अध्वर (अर्थात जिसमे हिंसा नहीं होनी चाहिए)[3] है, और कहाँ चार गौ की आहुति? यह मुख्यार्थबाध हुआ। अत 'वशा' या दुधार गौ का लक्ष्यार्थ यहाँ गोघृत लिया जायेगा। तो अग्नि 'वशाओं' से आहुत होता है, इसका भाव यह हुआ कि अग्नि घृतधाराओं से आहुत होता है।

उक्षा की आहुति

फिर यह अग्नि उक्षाओं से आहुत होता है। वेद की रहस्यमय भाषा की ओर ध्यान न देने के कारण ही यहाँ उक्षा का अर्थ साड कर दिया गया है। अन्यत्र भाष्यकारो ने उक्षा से सूर्य पर्जन्य, अग्नि आदि ई अर्थ लिये हैं। बीसियो स्थानो पर वेद में स्वय सायणाचार्य साडवाची उक्षा और वृषभ शब्दों का अर्थ सोम औषधि करते हैं। एक मन्त्र मे तो उक्षण पशुम्' शब्द आये हैं पर वहाँ भी सायण ने साड पशु अर्थ न कर सोमं' अर्थ लिया है, भले ही पशु का अर्थ उसे 'द्रष्टा करना पड़ा है।[4] प्रस्तुत मन्त्र में भी उक्षा का अर्थ सोम औषधि है तथा वह सब औषधियो का भी उपलक्षक है। अत अग्नि उक्षाओं से आहुत होता है इसका भाव यह हुआ कि वह सोम आदि औषधियो से आहुत होता है।

अष्टापदी

अब अष्टापदी का अभिप्राय समझना चाहिए। अन्यत्र वेद स्वय अष्टापदी के रहस्य को खोल देता है, जब कि वह वाणी को अष्टापदी कहता है।[5] वाणी अष्टापदी इसलिए है, क्योंकि वह प्रथमा, द्वितीय आदि सात विभक्तियाँ तथा सबोधन इन आठ पैरो पर खड़ी होती है। अथवा उन गायत्री, अनुष्टप् आदि छन्दो को अष्टापदी वाक् कहेंगे, जिनके प्रत्येक चरण में आठ-आठ अक्षर होते हैं। तो अग्नि अष्टापदियों से आहुत होता है, इसका अभिप्राय यह हुआ कि घृतधाराओं (वशा) तथा सोम आदि औषधियो (उषा) की आहुति के साथ-साथ वेदवाणियों या मन्त्र (अष्टापदियो) का भी उच्चारण किया जाता है।

सायण के अनुकरण पर ग्रिफिथ ने भी ऋग्वेद के अपने अंग्रेजी अनुवाद मे अष्टापदी का अर्थ गर्भिणी गाय ही कर दिया है। किन्तु टिप्पणी मे वह लिखता है कि रॉथ तथा ग्रासमैन अष्टापदी से उन ऋचाओ का ग्रहण करते हैं, जिनमे आठ चरण, आठ विभाग या आठ अक्षर हो तथा बर्गेन इसे प्रार्थनामन्त्रो का प्रतीक समझते हैं।[6] यह आश्चर्य की बात है कि भारतीय संस्कृति के दूध से पले सायणाचार्य तो वेदमन्त्र को गर्भिणी गौ का आहुतिपरक बतलाते हैं, और विदेशी विद्वान् जिनका भारतीय संस्कृति से कोई वैसा अनुराग नहीं है, उसी मन्त्र के विषय में अपने अनुसधान से इस परिणाम पर पहुचते हैं कि यहाँ गर्भिणी गौ की आहुति का विधान नहीं अपितु इससे किन्हीं विशिष्ट ऋचाओं अथवा प्रार्थनामन्त्रों का ग्रहण अभिप्रेत है।

१ 'हे भारत ऋत्विजां पुत्रस्थानीय अग्ने, न' अस्मदीय. त्वं वशाभि वन्ध्याभिर्गोभि उक्षभि सेक्तृभिर्बलीवर्दै अष्टापदीभि गर्भिणीभिश्च आहुत आराधित असि"—सायण।

२ अथाप्यस्यां ताद्धितेन कृत्स्नवन्निगमा भवन्ति। गोभि श्रीणीत मत्सरम्, इति पयस। निरु० २।२

३ अध्वर इति यज्ञनाम, ध्वरति हिंसाकर्मा, तत्प्रतिषेध। निरु० १।७

४. ऋग्० १।१६४।४३, "तमेव सोम...उक्षणं सेक्तारं पशु द्रष्टारं। पशु पश्यते (निरु. ३।१६) इति निरुक्तत्"—सायण।

५ "गौरमीमेदनु वत्सं मिषन्तं ... अष्टापदी नवपदी ..." ऋग्० १।१६४।४१। सुबन्त की दृष्टि से वाणी अष्टापदी है तथा तिङन्त की दृष्टि से नवपदि (नौ कोष्ठों वाली)। तीन पुरुष तथा प्रत्येक में तीन-तीन वचन ये नौ कोष्ठ हुए।

6 "Roth and Grassmann understand 'verses' consisting of eight feet, divisions or syllables According to Bergaiyne, these cows represent prayers" —

इस मन्त्र पर ग्रिफिथ की टिप्पणी।

आर्यवीर दल का महासम्मेलन स्थगित

अम्बाला छावनी में १७, १८ मई में होने वाला आर्य वीरदल का महासम्मेलन विशेष कारणो से स्थगित कर दिया गया है। सम्बद्ध सज्जन इस सूचना को अंकित कर लेवें। —मन्त्री

आर्य समाज नागपुर

सर्व सम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए।

प्रधान—श्री रामगोपालजी, मन्त्री—श्री देवप्रकाश, कोषाध्यक्ष—श्री ऋषिदेव आर्य पुस्तकाध्यक्ष—आनन्दप्रकाश—राजेन्द्रकुमार।

शोक समाचार

डा० प्रेमनारायण जोहरी एम०एस सी पी०एच०डी० औफीसर इन्चार्ज पशु संस्थान बिरौल का देहान्त हो गया। आप के पीछे केवल आपकी विधवा धर्म पत्नी ही हैं। आर्यसमाज समस्तीपुर के तत्वाधान मे आप का दाह संस्कार किया गया। आर्यसमाज परमात्मा से स्वर्गीय डाक्टर साहिब की आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करता है और उनकी विधवा पत्नी तथा परिवार के साथ शोक सहानुभूति प्रकट करता है।

भावात्मक एकता

(श्री ला० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, पू० प्रधान सा० आर्य प्र० सभा)

भावनात्मक एकता का प्रश्न नये रूप मे देश के सम्मुख है। परन्तु एकता और अनेकता का प्रश्न सदैव से मनुष्यो के सम्मुख रहा है। बाहर की दुनिया को देखकर अनेकता सामने आती है और वह अनेकता पार्थक्य का आधार बन जाती है। आन्तरिक जगत् अर्थात् मनुष्य के अन्तरात्मा मे एकता का सचार है। मनुष्य की राजधानी अर्थात् उसके व्यक्तिगत राज्य की व्यवस्था का केन्द्र उसका हृदय या मन है। और उसकी सारी कार्य प्रणाली का सचालन उस केन्द्र से होता है। उस केन्द्र पर दो अनादि सत्ताओ का समन्वय है। ईश्वर या परमात्मा का सम्राट् के रूप मे प्रभाव है। और आत्मा का माण्डलिक राजा के रूप मे, बुद्धि मुख्य मन्त्री और मन स्वय गृह-मन्त्री के स्थान मे है। शेष ज्ञान इन्द्रिया व कर्म इन्द्रियाँ उसके सहयोगी और सहायता लेने वाले हैं

व्यक्तिगत जीवन मे यदि अध्यात्मवाद की दृष्टि से सारी कार्य-प्रणाली यदि ईश्वर और जीवात्मा को लक्ष्य मे रखकर काय किया जाय तो क्रियात्मक एकता का साम्राज्य अस्थाई और दृढता के साथ मनुष्य के अन्दर स्थान पा लेगा। और इसी प्रकार यदि सब मनुष्यो के अन्दर या अधिक मनुष्यो के अन्दर एकता की भावना का समावेश हो जावे तो सबके अन्दर का एक और एक मिलकर बाहर की दुनिया मे एकता का साम्राज्य हो जावेगा। और यही भावनात्मक एकता के उत्पन्न करने की अचूक औषधि है और इससे ही मानव के विचार, आचार और व्यवहार मे समानता, समता और एकीकरण उत्पन्न हो जावेगा। यह भावना ही वह भावना है जो भावनात्मक एकता का आधार बन सकती है। यह बात ध्यान मे रखनी है कि **एकता की भावना के लिए भावना की एकता आवश्यक है।** और भावना की एकता के लिये स्वभाव की मर्यादा अनिवार्य है। स्वभाव की मर्यादा से मनुष्य भाव और अभाव के चक्र से बच जावेगा और भव-सागर से पार होने के लिये सामर्थ्य उसके अन्दर आ जावेगा। और इसी से उसके जीवन का बेडा पार हो जावेगा। आजकल प्रजातन्त्र के प्रचार से भावना यह हो गई है कि घर राजा, दर राजा, जहाँ देखो वहाँ राजा ही राजा। यदि सभी राजा हैं तो कौन किसकी परवाह करे। एक प्रसिद्ध कहावत है कि 'तू रानी मैं रानी, कौन भरे कुए का पानी''। बाहर के राजा और रानियो का राजा हा बना रहना अच्छा, उनको दास बनाना कौन पसद करेगा। परन्तु ध्यान यह रखना है कि घर मे राजा और घर का राजा। यदि घर के राजा और घर मे राजा का ध्यान और उसकी आज्ञा का पालन करने का अभ्यास होगा तो अपने अन्दर अनुशासन की भावना सुरक्षित रहेगी। और फिर वह इस योग्य होगे कि बाहर के किसी शासन की उनके लिये आवश्यकता नही रहेगी और वह राजा होते हुये भी अपने को राजाओ के राजा, हृदय सम्राट् ईश्वर की प्रजा के रूप मे अनुभव करेंगे और यही अनुशासन और शासन का समन्वय है। और यह भी समझ लेना है कि जो अनुशासन के अन्दर रहना जानते हैं वह ही शासन के अधिकार प्राप्त करने के अधिकारी हैं। और वह दूसरो के शासन से मुक्त होने की आशा रख सकते हैं। यह बात भी स्पष्ट कर देनी है कि यदि विश्व को त्रिकोण के रूप मे लिया जाय तो ईश्वर जीव प्रकृति तीनो मिलकर सारे विश्व का चित्रण कर देते हैं।

ईश्वर रचियता और न्यायकारी है। प्राणी जगत् मे जीवो को भिन्न प्रकार के शरीर ईश्वर की न्याय व्यवस्था के निमित्त से मिलते हैं। जड जगत् मे प्रकृति अनादि है परन्तु उसमें रचना की शक्ति ईश्वर के निमित्त से आती है। जो प्रकृति से पदार्थ रचे जाते हैं उनका प्रयोजन यही है कि प्राणियो को रचित पदार्थ कर्मों के अनुसार कम या ज्यादा अच्छे या साधारण मिलते रहे। जीवात्मा कर्म करने के लिये है और भोग प्राप्त करने के लिये है। कम के लिये शक्ति और सामग्री ईश्वर के न्याय के निमित्त से है। और इसी प्रकार भोग पदार्थ भी ईश्वर के न्याय और निमित्त से ही मिलते हैं। यह त्रिकोण विश्व के चित्रण और एकीकरण को स्पष्ट करने के लिये बडा उपयोगी है। इसी प्रकार यदि विश्व को भूगोल माना जाय तो एक गोलाकार के रूप मे हमारे सामने आयेगा और गोलाकार के निर्माण का आधार उसका केन्द्र है। इस गोलाकार केन्द्र मे ईश्वर, जीव, प्रकृति हैं।

और इस विचार की पुष्टि इस सूत्र से होती है कि "भोगापवर्गार्थं दृश्यम्" अर्थात् इस दृश्य जगत् की उत्पत्ति भोग और अपवर्ग के लिये हुई है। इससे भी एकीकरण की भावना का समावेश हमारे अन्दर पूर्णत हो जाता है।

उपयुक्त अध्यात्मक एकीकरण की पुष्टि मे कुछ वेद मन्त्र नीचे दिये जाते हैं —

सघटन सूत्र के चार मन्त्र अर्थात् ऋग्वेद के अतिम सूक्त के चार मन्त्र भावात्मक एकता के लिये बडे उत्तम रीति से प्रकाश डालने वाले हैं। ऋग्वेद का समापन इन मन्त्रो से इसीलिये किया गया है कि इनमे वैदिक शिक्षा का सार है।

ससमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इडस्पेद समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥

हे (वृषन्) बलवन ? समस्त सुखो के वर्षाने हारे। हे (अग्ने) ज्ञान के प्रकाश, प्रभो। तू (अर्य) स्वामी, सबका प्रेरक होकर (विश्वानि स युवसे) समस्त प्राणियो और समस्त तत्त्वो को मिलता है। तू (इड पदे समिध्यसे) भूमि पर अग्नि के तुल्य इस अन्न के बने देह मे आत्मा के तुल्य (इडपदे) व्यापी के परम प्राप्तक ज्ञातव्य पद ओंकार रूप में प्रकाशित होता है। (स) वह तू (न) हमे (वसूनि) नाना ऐश्वर्य और लोक प्राप्त करा।

सङ्गच्छध्व स० वदध्व स वो मनांसि जानताम्।
देवा भाग यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥

हे मनुष्यो। आप लोग (स गच्छध्व) परस्पर अच्छी प्रकार मिलकर रहो। (स वदध्वम्) परस्पर मिलकर प्रम से बातचीत करो, विरोध छोडकर एक समान वचन कहो। (व मनासि) आप लोगो के सब चित्त (स जानताम्) एक समान होकर ज्ञान प्राप्त करें। (यथा) जिस प्रकार (पूर्वे देवा) पूर्व के विद्वान जन (भाग) सेवनीय और भजन करने योग्य प्रभु का (जानाना) ज्ञान सम्पादन करते हुये (सम् उपासते) अच्छी प्रकार उपासना करते रहे उसी प्रकार आप लोग भी ज्ञान सम्पन्न होकर (भाग सम् उपासते) सेवनीय अन्न और उपास्य प्रभु का सेवन और उपासना करो।

समानो मन्त्र समिति समानी समान मन सह चित्तमेषाम्।
समान मन्त्रमभि मन्त्रये व समानेन वो हविषा जुहोमि ॥

(एषाम् मन्त्र समान) इन सबका विचार एक समान हो। (समिति समानी) परस्पर सगीत, मेल जोल भी एक समान भेद-भाव रहित हो। (मन समानम्) इनका अन्त करण एक समान। (एषा चित्त सह) इनका चित्त एक दूसरे के साथ हो। (व समानम् मन्त्रम् अभि-मन्त्रये) मैं आप लोगो को एक समान विचारवान् करता हूँ और (व: समानेन हविषा जुहोमि) एक समान अन्न से प्रदान कर आप लोगो का पालित-पोषित करता हू।

समानी व आकूति समाना हृदयानि व।
समानमस्तु वो मनो यथा व सुसहासति ॥

(व आकूति समानी अस्तु) आप लोगो का सकल्प निश्चय और भाव, अभिप्राय एक समान रहे। (व हृदयानि समाना) आप लोगो के हृदय एक समान हों। (व मन समानम् अस्तु) आप लोगो के मन समान हो, (यथा) जिससे (व) आप लोगो का (सह सु असति) परस्पर का काय सर्वत्र एक साथ अच्छी प्रकार का हो सके।

ईश्वर के साम्राज्य को सिद्ध करने के लिये और ईश्वर को सदा को लक्ष्य में रखकर चरित्र घटन के लिये यजुर्वेद के ४० वें अध्याय का पहला मन्त्र या ईशोपनिषद् का पहला मन्त्र बडा शिक्षाप्रद है।

शेष पृ० ६ पर

विचार विमर्श—

परमात्मा के विचित्र नाम

(लेखक—श्री रामपालसिंह तेवतिया, एम. ए. एल. टी. सिद्धान्तशास्त्री, रिटायर्ड प्रिंसिपल, निवासी भूपखड़ी, पो. आमी जि० मेरठ)

आर्यमर्यादा साप्ताहिक दिनांक ३० मार्च ६९ में एक विद्वान् लेखक ने परमात्मा वाची कुछ शब्द कुछ भाषाओं के ऐसे बताए हैं, जो प्रचलित हैं, प्राय: प्रयोग में भी आते हैं, परन्तु उनका इतिहास और बनावट विचित्र है। लेखक ने ऐसे विचित्र नाम केवल चार ही गिनाए हैं। उन की बनावट व इतिहास भी बताया है ऐसा एक शब्द तो यहूदी भाषा का बताया है जो जेहोवा (Jehovoh) या जोहोवे (Johoweh) है इसी के स्थानापन्न इसी भाषा का एक बहुवचनान्त नाम इलोहिम (Elohim) बताया है। अरबी भाषा का अल्लाह शब्द भी इसी प्रकार का बताया है। और इसी प्रकार का एक शब्द सिखों (शिष्यों) का वाहिगुरु बताया है। उक्त प्रकार से उक्त लेखक ने इन चार नामों को ईश्वर वाची बताया है जो ठीक ही बताया है। मेरे अन्वेषण के अनुसार इन उपर्युक्त नामों के मूल संस्कृत में मिलते हैं। यथा यहूदी या इब्रानी भाषा का जेहोवा (Jehovoh) शब्द का मूल वैदिक 'यह्व:' है जो ऋग्वेद १०।११०।३ में वर्तमान है। और इलोहिम (Elohim) वा इलोआह् (Eloah) बहुवचनान्त का एकवचनान्त ईल (El) है जो अरबी में इलाह् (Elah) पूज्य वा स्तुत्य के अर्थ में कुर्आन् में अनेक स्थानों में आता है जिसका मूल वैदिक ईड्य: है जो ऋग्वेद १।१।२, ऋ० १०।११०।३ आदि में तथा यजुर्वेद में भी पूज्य वा स्तुत्य अर्थ में वर्तमान है।

अरबी का अल्लाह् शब्द कुछ लोगों की दृष्टि में रूढ शब्द है। यदि यह सत्य है तब तो इस शब्द का मूल संस्कृत का अल्ला शब्द जगदम्बा के अर्थ में वर्तमान है। पर प्राय: लोग अरबी के अल्लाह् शब्द को विशेष पूज्य वा विशेष स्तुत्य के अर्थ में अरबी के अल्+इलाह्=अल्लाह् के रूप में यौगिक शब्द मानते हैं। यदि यह सत्य है तब तो वैदिक ईड्य: से निकले अरबी के इलाह् शब्द के पूर्व अरबी के विशेष अर्थ वाची अल् उपसर्ग के योग से निपातन से अरबी का अल्लाह् शब्द बना है। यह द्वितीय विकल्प ही अधिक मान्य और प्रसिद्ध है। मैं भी यही मानता हूं। और सिखों का वाहगुरू शब्द संस्कृत के महागुरू शब्द का तद्भवरूप है।

मैं वैदेशिक भाषाओं के कुछ अन्य ईश्वर वाची शाब्दों की भी सत्य व्युत्पत्ति पाठकों के मनोरंजन के लिए दे रहा हूं जो निम्नांकित है।—

फारसी भाषा के खुदा व खुदाबन्द शब्द क्रमश: संस्कृत के स्वधा व स्वधावत् शब्दों से निकले हैं जो अथर्ववेद ४।१।३, ७ व ऋ० १०।१२९। २,५ में द्रष्टव्य: हैं। रूसी भाषा का ईश्वर वाची बौग (Bog) शब्द यजुर्वेद ३४।३६ के ईश्वर वाची भग शब्द से निकला है। इसी प्रकार जर्मन भाषा गौट (Cott) तथा अंग्रेजी भाषा का गौड (God) शब्द ऋग्वेद २।११।५। व ३।३९।६ के गूढ: शब्द से निकला है। इसी प्रकार पारसियों का ईश्वर वाची अहुर्मज्द व फ़ारसी का उर्मज्द शब्द भी वैदिक भाषा के असुरमहद् शब्द से निकले हैं।

इसी प्रकार बाइबिल का एमन (Amen) और कुर्आन् का आमीन शब्द भी वैदिक भाषा के ओमन् शब्द से निकले हैं। अर्थ भी प्राय: समान ही रक्षक के हैं। ईश्वर ही हमारा रक्षक है। विस्तार भय से अन्य अनेक वैदेशिक भाषाओं के ईश्वरवाची शब्दों की व्युत्पत्ति मैं यहां नहीं दे रहा हूं।

इत्यलम्

[सभी प्रतिष्ठित विद्वज्जनों से निवेदन है, कि इस विचार विमर्श में भाग लेकर कृतार्थ करें, आर्यमर्यादा में उन के विचारों को सहर्ष प्रकाशित किया जावेगा—सम्पादक]

●

पृ० ५ का शेष

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्य स्विद्धनम्॥

यह दृश्यमान् सब और जो कुछ भी त्रिलोकी में जगत् है—अखिल विश्व है, वह सब ईश्वर से बसने योग्य है—उसमें ईश्वर स्वशक्ति, सत्ता से विद्यमान है। भगवान् के नियम नियंत्रण में सम्पूर्ण संसार है। वही सर्व विश्व में बसे हुए चेतन जगत् का आत्मा है। उत्पत्ति, स्थिति, लय उसी मूल सत्ता के आश्रित हैं। सर्व समर्थ सर्वशक्तिमान् भगवान्, सारे संसार का स्वामी है तथा संचालक है, सब पदार्थ उसी के हैं। इस भावनामय त्याग से, हे उपासक तू पदार्थों को भोग, सब भोग भगवान् की देन जान। तू मत ललचा, वस्तुओं के संग्रह, सचय की लालसा न कर। तू विचार करके देख, किसका धन है? सब पदार्थ परमेश्वर ही के हैं।

आस्तिक बुद्धिमान् विवेकी उपासक यह विचार करे कि लोक-लोकान्तरों के मान का अन्तर का गतिविधि का, स्थिति-मर्यादा का जो नियन्ता है वह सर्व समर्थ चेतन तत्त्व है और जिस सत्ता द्वारा, तौल-मापपूर्वक, नित्य नये पदार्थों का निर्माण होता रहता है वह इस महारसायन शाला का संचालक पूर्ण ज्ञान स्वरूप है। वही शक्तिज्ञान-स्वरूप ईश्वर इस विश्व भवन में बसा हुआ इस मन्दिर के सभी पदार्थों का स्वामी, वही त्रिकाल में रहने वाला परम पुरुष है भक्त, इस भावमय समर्पणरूप त्याग से पदार्थों का भोग उपयोग करे। भोग्य पदार्थ न कभी किसी के साथ गये न जायेंगे। इस विवेक-विचार से लालच न करे और सोचे कि धन किस के साथ जाता है? वह तो यहीं पडा रह जाता है। ऐसी विचार-बुद्धि से संग्रह, परिग्रह की व्यर्थ प्रवृत्ति को वह संयम में रखे। अपने को आत्मिक दृष्टिकोण से देखने के लिये इसी अध्याय का सातवां मंत्र बड़ा शिक्षा प्रद है।

"यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानत:।
तत्र को मोह: क: शोक एकत्वमनुपश्यत:॥

अर्थात् जिस अवस्था अथवा परमेश्वर-स्वरूप में, ज्ञानी मनुष्य को सब भूत प्राणी अपने ही हो गये, ज्ञानी उपासक को सब भूतों में आत्मतत्त्व ही प्रतीत होने लगा, उस ब्राह्मी अवस्था में, एकत्व को अखण्ड परमात्मा को—देखने वाले को क्या मोह है और कौन शोक है। प्रिय वस्तु में ममता-जन्म मोह और वियोग-जन्म शोक हुआ करता है। आत्मवेत्ता को जब सब देहों में आत्मभाव दीखने लगे तो उस अवस्था में उसको बन्धु-बान्धव में मोह नहीं रहता और न ही इष्ट-वियोग में शोक ही होता है। आत्मज्ञानी मोह और शोक सागर को पार कर जाता है। वह सब में समदृष्टि बना रहता है!

और चरित्र—घटन के लिये इसी अध्याय का १८ वां मन्त्र बड़ा लाभदायक है।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठा ते नमउक्ति विधेम॥

हे अग्ने!—प्रकाशस्वरूप ईश्वर। हमें ऐश्वर्य के लिये तू सुपथ से ले चल, सुमार्ग से हमारा नेतृत्व कर। हे देव! हमारे सब कर्मों को तू जानता है—हमारे सब पाप कर्मों का और हमारी सब दुर्बलताओं का तुझे ज्ञान है। इस कारण, हम से कुटिल पाप तू दूर कर—तू आप हमें पवित्र कर। हम तेरे उपासक तुझे बहुत बार नमस्कार—वचन समर्पण करते हैं।

और मुण्डकोपनिषद के तीसरे मुण्डक पहले खण्ड का छटवां मंत्र सत्य पर बल देता है और जीवन की सफलता सत्य को जानने, मानने और उसको पालन करने में ही है।

"सत्यमेव जयते नानृतं, सत्येन पन्था विततो देवयान:।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्॥

अर्थात् सत्य का जय होता है झूठ का नहीं। देवों का ऐश्वर्ययुक्त मार्ग भी सत्य से ही फैला है। सत्य ही से धर्म का विस्तार हुआ है। जिस मार्ग से सत्यकाम ऋषिजन चलते हैं वह सत्य है। जहां वे पहुंचते हैं वह सत्य का परम निधि ब्रह्मधाम है।

●

वीरांगना देवी बाल ब्रह्मचारिणी रानाबाई

(चौ० किसना राम आर्य गाँव व डाक० ललानियो वाया नोहर
जि० श्री गगानगर (राजस्थान)

आपस की फूट से भारतीय आर्य सम्राटो को सार्वभौम राज्य सत्ता छिन्न-भिन्न होकर छोटे-छोटे राज्यो मे विभक्त हो चुकी थी। जब विदेशी आक्रमणकारियो ने भारत का राज्य हडपने की लालसा से आर्यधरा पर आक्रमण किया तो हम हमारे ही देश द्रोही भाइयो को गद्दारो से गुलामी की बेडियो मे जकडे जा कर अनुमान ९०० (नौ सौ) वर्षों तक अत्याचार सहते रहे। भारत के विलुप्त हुए स्वातन्त्र्य की महत्ता को पहचान जब भी आजादी के दीवानो ने रक्त का तर्पण कर आजादो की रूठी देवी को रिझाने के लिए रक्त का फाग खेलते-खेलते हुए आजादी का झण्डा अपनी सुख सम्पत्ति का त्याग कर के अनगिनत कष्टो को झेल कर खडा किया था। वहाँ भारत माता की लाडली ललनाओ ने भी वीरता का अद्भुत जौहर दिखा देश के इतिहास को स्वर्णाक्षरो से सुशोभित किया। विश्व का पथ प्रदर्शन करने वाली वीर भूमि की सती शिरोमणियो मे अग्रणी (१) पद्मावति (२) महारानी महामाया, (३) हाडी रानी (४) किरण, (५) महारानो किशोरी (६) रत्नावली और (७) वीरागना रानाबाई हो चुकी हैं। यहाँ रानाबाई के जीवन की एक घटना का वणन किया जायेगा। राना बाई के समय भारत मे बादशाह अकबर का राज्य था। इतिहासकारो ने अकबर को महान् बताते हुए उसमे अनेक गुण बताये हैं परन्तु यह बात सत्यता को कसौटी पर खरी नही उतरती उसकी प्रत्येक बात मे महत्ता और समानता मे छल कपट प्रलोभन भरा हुआ था। इस से हम पशु और दास मनोवृत्ति के हो गये। यह बात सत्य है कि दमन की क्रिया सदा जाति मे जन जाग्रति तथा नव चेतना उत्पन्न किया करती है लेकिन अकबर ने तो हमे ओहदा, जागीर, रिश्तेदारियाँ और नौकरियो आदि का मीठा विष पिलाया और प्रलोभन का मीठा फल खाने के कारण हम अपना महान् गौरव नष्ट कर बैठे। यही बात अकबर के समय मे हुई प्रलोभन रूपी पर्दे की ओट मे अकबर ने मीना बाजार जैसे अनेक कुकर्म रचे, जिसका हिन्दू दरबारियो तक ने भी खुले रूप मे विरोध नही किया। 'यथा राजा तथा प्रजा' के कथन के अनुसार शाह अकबर के राज कर्मचारी भी हिन्दू जनता पर अनेक अत्याचार किया करते थे। हिन्दू प्रजा का जीवन सकट मे था।

वीरागना राना बाई का जन्म विक्रमी सवत् १६०० (सोलह सौ) मे धाना गोती खानदान (वश) मे जोधपुर राज्यान्तर्गत हरनावा गाँव के चौधरी श्री जालम जी जाट के घर हुआ था। रानाबाई के माता पिता सीधे-साधे धार्मिक पुरुष थे। पालड के महापुरुष खोजी जी पुरोहित का सत्सग प्राय हरनावा गाँव मे जालम जी के घर होता रहता था। उनके इस सत्सग के प्रभाव से राना बाई बचपन मे ही ईश्वर भक्ति मे लग गई थी। जब १५ व १६ वर्ष की उम्र मे उसके माता-पिता को रानाबाई के विवाह की चिन्ता हुई। यह देख रानाबाई ने अपनी भीष्म प्रतिज्ञा कहते हुए कहा कि मैं अविवाहित रहूँगी। यह सुन उनके पिता श्री जालम जी ने कहा कि हे बेटी ! तू ऐसा हठ मत कर। इस समय विधर्मी मुसलमानो के अत्याचार से हिन्दू प्रजा दुखी है। बडे-बडे राजाओ की रूपवती कन्याओं को भी जुल्मी मुसलमान नही छोडते, फिर हम तो गरीब हैं। उन अन्यायियो के खूनी पजो से तुम्हें कैसे छुडा सकेंगे। यह सुन वीरागना ने माता-पिता को धीरज बधाते हुए कहा—मेरे परम पूज्य माता-पिता ! आप इतनी चिन्ता न करें। मेरी रक्षा परम पिता परमेश्वर करेगा। रानाबाई के हठ के आगे उनके परिवार के लोग लाचार हो चुप हो गये। हरनावा गाँव से उत्तर दो कोस की दूरी पर गाछोलाव नाम का बडा भारी तालाब था। उस तालाब के पास दिल्ली के बादशाह अकबर का एक मुसलमान हाकिम ५०० पाचसौ सवारो के साथ रहता था। यह हाकिम बडा भारी अन्यायी अत्याचारी और व्यभिचारी दुष्ट प्रकृति का था। 'किसी चुगलखोर ने रानाबाई के यौवन रूप लावण्य की प्रशसा सुना दी, तो उसने अपने मन मे ठान ली कि येन-केन प्रकारेण रानाबाई से विवाह करूँगा। एक दिन रानाबाई के पूज्य पिता जी सरकारी लगान ले कर गाछोलाव तालाब के पास से हो कर खिवाला के चौधरी के पास जमा कराने हेतु आ रहे थे। सरकारी राजदूत (हाकिम) को मालूम हो गया कि यही रानाबाई के पिता हैं।

उस अन्यायी राजदूत (हाकिम) जालम को अपने पास बुला कर कहने लगा कि तुम अपनी लडकी रानाबाई मुझे दे दो। तुम्हे मुह माँगा इनाम दिया जायेगा। यह सुन चौधरी जालम ने कहा कि जब मेरी लडकी हिन्दू से विवाह नही करती तो फिर विधर्मी से विवाह करने का तो सवाल ही नही उठता। यह सुन वह राजदूत आग बबूला होकर बोला। चौधरी जालम ! तुम अपनी लडकी को समझा कर राजी से हमारे साथ उसका विवाह कर दो, नही तो हम जबरदस्ती से छीन कर विवाह करलेंगे। उस दुष्ट के छुट्टी देने पर जालम जी ने अपने परिवार वालो को सब वृतात कह सुनाया। यह सुन कर रानाबाई के सारे परिवार मे दुख छा गया। रानाबाई के माता पिता ईश्वर से प्रार्थना करते कि हे ईश्वर हम को मौत दे दो, जिससे हम हमारी निर्दोष पुत्री को मलेच्छ के साथ जाती न देखें। रानाबाई अपने परिवार समेत माता पिता को धैर्य बधाती, कि आप दुखी ना होवो। मेरी रक्षा घट-घट वासी दयालु प्रभु करेगा। आप उस मलेच्छ को यहाँ आने तो दें। एक रात को उस राजदूत ने अपने पाच सौ सिपाही साथ लेकर जालिम के घर को आ घेरा गाँव के सभी लोग भयभीत होकर भाग गये। रानाबाई की भौजाइया तानाजनी करने लगी कि बाई जी आप ने तो सब परिवार का नाश करने का इरादा कर लिया है। आप पहले तो हिन्दू से भी विवाह करने से इनकार करती थी, परन्तु अब सब परिवार को मरा कर मुसलमान से विवाह करना पडेगा। रानाबाई ने किसी की बात पर ध्यान नही दिया और उस समय तक योगियो की तरह ईश्वर के ध्यान मे बैठी रही जब वह राजदूत रानाबाई को पकड़ ले जाने के इरादे से उनके सामने आकर खडा हो गया तब वह दुष्ट को सामने खडा देख कर कूद खडी हो गई और खूँटी से तलवार उतार कर म्यान से निकाल ली और उस राजदूत पर सिहनी की तरह झपटी और एक ही झटके से उसका सिर धड से अलग होकर गेंद की तरह भूमि पर लुढकने लगा। रानाबाई ने अपने बाए पैर से ठोकर मारी जिससे उस अत्याचारी का सिर फुटबाल की तरह उछलकर उसकी सेना मे जा गिरा। रानाबाई की बिजली सी चमचमाती तलवार को देख कर मुसलमानो की आँखें बन्द हो गईं।

बाल ब्रह्मचारिणी रानाबाई ढाल और तलवार लेकर मुसलमानों की फौज मे घुस गई, और गाजर मूली की तरह मलेच्छो के सिर काटने लगी। कहा जाता है कि वीरागना रानाबाई को तलवार की मार से थोडे ही मुसलमानो ने भाग कर प्राण बचाये। रानाबाई जसी ईश्वर भक्त थी, वैसी ही वीरागना भी थी। उसका कहना था कि जो अपनी रक्षा करता है, ईश्वर भी उसी की रक्षा करता है। हमारी माता बहनो बहुओ और बेटियो को बाल ब्रह्मचारिणी देवी रानाबाई जैसी आदर्श नारियो के जीवन से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। हिन्दू धर्म मे जहाँ अनेक अधविश्वासो ने अपना अड्डा जमा रखा है वहाँ अधिकाँश हमारी माताओ ने हमारे महापुरुषो की पत्थर की मूर्तियो पूजना आरम्भ कर दिया। पथ प्रदर्शन करने वाले महापुरुष और आदर्श नारियो के महान् गुणो को हम अपने जीवन मे नही ढालते। औरो की तरह वीरागना रानाबाई के धाम पर भी राजपूत, जाट, ब्राह्मण बणिया और अमीर गरीब सभी ने माथा टेकना (धोक मारना) स्थानपूजा करने के लिये आने लग गये। बच्चो के केश भी यही पर उतारते हैं। यह रीति पाखण्ड है। हमे महापुरुषों के जीवन से शिक्षा ग्रहण कर बुराइयाँ छोडनी चाहियें।

●

पुस्तक समालोचना

१. नाम पुस्तक—योग और स्वास्थ्य।
लेखक—आचार्य भद्रसेन जी, संचालक यौगिक व्यायाम संघ अजमेर।
प्रकाशक—आदर्श साहित्य निकेतन अजमेर।

पृष्ठ संख्या २६४, योग आसनों के चित्रों से सुशोभित (पंचमावृत्ति) मूल्य रु० ३.५० पैसे।

आलोचना—आचार्य श्री प० भद्रसेन जी ने पुस्तक को साधिकार रूप में लिखा है, स्थान-स्थान पर लेखक की योग्यता का प्रकाश मिलता है। पुस्तक में विषय-सूची देकर अच्छा कार्य किया है। पुस्तक को ५ अध्यायों हैं बांटा गया है। प्रथम अध्याय में योग ही रोग का नाशक है, दूसरे अध्याय में योगासनों के करने की विधि तथा उन के लाभ, तीसरे अध्याय में प्राणायाम का वर्णन है। चौथे अध्याय में यौगिक तथा प्राकृतिक चिकित्सा का उल्लेख है तथा पांचवें अध्याय में लेखक के निजी तथा अन्य महानुभावों के अनुभव का वर्णन है। निःसन्देह कहा जा सकता है कि पुस्तक अतीव उपयोगी है। अनेक आसनों के चित्रों को देखते हुए मूल्य अधिक नहीं है। कागज तथा छपाई अच्छी है। न केवल योगाभ्यासियों को ही अपितु सभी स्वास्थ्य रक्षा के इच्छुक महाशयों को इस पुस्तक के पठन और मनन तथा तदनुसार आचरण कर के लाभ उठाना चाहिये।

यदि योग्य विद्वान् लेखक नीचे लिखी दो बातों का अगले संस्करण में स्पष्टी करण देवें, तो अच्छा रहेगा।

(क) पृष्ठ संख्या २०२ पर भस्त्रिका प्राणायाम पर आप ने लिखा है—"श्वास को लम्बा कर के भली प्रकार अन्दर भरो, फिर दोनों नासिकाओं को अंगूठे तथा अनामिका और कनिष्ठा अंगुली से बन्द कर तथा जालिन्धर बन्द कर के कुम्भक करो।" निवेदन है कि ऋषि दयानन्द ने संस्कार विधि के गृहस्थ प्रकरण में सन्ध्या के मन्त्र "शन्नो देवी···" से पूर्व दूसरी पंक्ति में लिखा है—"नासिका को हाथ से न पकड़ें।" इस विषमता को दूर करना अच्छा रहेगा।

(ख) पृष्ठ १७६ पर सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः॥ योग दर्शन के सूत्र पर आप ने लिखा है कि "आयु का तात्पर्य वर्ष नहीं, अपितु प्राण हुआ करते हैं।" प्रतीत होता है कि यह भाव स्वामी दर्शनानन्द जी के ट्रेक्ट से लिया गया है। परन्तु निवेदन है कि सर्वत्र "आयु" शब्द से जन्म से मृत्यु के बीच के काल (जीवन) का ग्रहण किया गया है। प्राण तो इस काल के ज्ञापक=निमित्त हैं। कृपया इस समस्या पर किसी आर्ष प्रमाण का ग्रहण करना अच्छा था, परन्तु आर्ष प्रमाण आप को मिल सके तो ठीक अन्यथा उपर्युक्त दोनों बातों में संशोधन अपेक्षित हैं। उत्तम पुस्तक रचना पर हम लेखक महानुभाव को बधाई देते हैं।

२. नाम पुस्तिका—विष्णुपरिचय
लेखक तथा संग्रह कर्त्ता—**श्री छेदीलाल मित्तल**, वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राजस्थान)।
प्रकाशक—**छेदालाल अनिलकुमार** वनस्थली

पृ० संख्या २०, मूल्य २५ पैसे।

आलोचना—लेखक महानुभाव ने "विष्णु" के स्वरूप पर अनेक पुस्तकों के उद्धरण देकर अच्छा प्रकाश डाला है। समुद्र मथन के सम्बन्ध में तर्क पूर्ण भाव लिखने का यत्न किया गया है। स्वाध्याय प्रेमीजनों को इस को पढ़ कर उचित लाभ उठाना चाहिये। लेखक का परिश्रम सफल है।

३. नाम पुस्तक—**पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी**
लेखक—डा० रामप्रकाश, एम. एस. सी. (आनर्ज) पी. एच. डी.
रसायन-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़।
प्रकाशक—**श्री स्वामी आत्मानन्द** प्रकाशन मन्दिर, वैदिक आश्रम,
यमुनानगर, जि० अम्बाला (हरयाणा)।
पृष्ठ संख्या २०८ सचित्र। मूल्य १ रु० ३५ पैसे। प्रथम संस्करण।

समालोचना—लेखक महोदय आर्यसमाज की नवोदित सुशिक्षित तरुणपंक्ति के अग्रगन्ताओं में प्रमुख स्थान रखते हैं। जहां आप वैदिक मन्तव्यों पर ओजस्वी तथा संयत धारावाही भाषण करने में सिद्धहस्त हैं, वहाँ लेखन कला में साहित्यिक ढंग से स्व स्वकृत विषय को उत्तम रीति से वर्णन करने में भी निपुण हैं। पुस्तक के पाठक महानुभाव इस पुस्तक में इन गुणों की स्पष्ट झलक प्राप्त करेंगे। पं० गुरुदत्त विद्यार्थी एम. ए. आर्यसमाज के उज्ज्वल नक्षत्र थे। उन के जीवन की घटनाओं के ज्ञान से जहाँ सभी सज्जन लाभ उठा सकते हैं—वहाँ आर्यसमाज के शिक्षण संस्थानों के अधिकारी वर्ग को भी आन्तरिक चिन्तन का अवसर मिल सकता है। लेखक का एक लेख आर्यमर्यादा में पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी के सम्बन्ध में अभी प्रकाशित हो चुका था। तथा आर्य जगत् के ख्यातनामा विद्वान् डा० भवानीलाल भारती एम ए. पी. एच. डी. (राजस्थान) भी इस सम्बन्ध में लिख चुके हैं, उस लेख को भी पाठक पढ़ चुके हैं। उन्हीं लेखों का यह सप्रमाण विस्तार है। जीवन घटनाओं के साथ ही इस पुस्तक में आर्यसमाज की तात्कालिक स्थिति पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। पुस्तक सर्वथा उपादेय एवं संग्रह करने योग्य है। मूल्य उचित से भी कम ही है। हम इस उत्तम कृति पर लेखक तथा प्रकाशक को बधाई देते हैं।

—**जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री**

एक विचारणीय सुझाव

(**श्री कृष्णलाल**, आर्यसमाज हैवी इलेक्ट्रकल्स भोपाल)

मेरी ऐसी धारणा है कि "आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब" ही एक मात्र ऐसी संस्था है जो सच्चे अर्थों में महर्षि के विचारों को फैलाने का कार्य कर रही है। आज कल "आर्यमर्यादा" इससे पूर्व "आर्योदय" द्वारा प्रकाशित तथ्यों से यह मेरी धारणा बनी है। यह बात नहीं कि मैं अन्य आर्यसमाजों के पत्र पढ़ता ही नहीं "अन्य पत्र जैसे सार्वदेशिक" "वेद प्रकाश" "आर्य मार्तण्ड" इत्यादि भी पढ़ने को मिलते हैं। यह मेरे निजी विचार हैं। हो सकता है अन्य लोगों का इस से मतभेद हो।

आर्यसमाज की उन्नति के लिए बहुत दिनों से मेरे मन में एक विचार उठ रहा है उसे मैं आप तक पहुँचाता हूँ। आशा है आप इसको कार्यन्वित करने पर विचार करेंगे और यदि उपयुक्त समझें तो "आर्यमर्यादा में भी प्रकाशित कर देवें।

"गुरुकुलों एवं डी. ए. वी संस्थानों का समन्वय"

श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गुरुकुल पद्धति की नींव डाली जिससे आर्यसमाज को प्राण मिला। महात्मा हंसराज जी ने डी. ए. वी. संस्थानों को सम्पन्न किया, जिससे आर्यसमाज को यश मिला। किन्तु आज डी. ए. वी. संस्थान आर्य विचारधारा को फैलाने में इतने उपयोगी नहीं हैं, क्योंकि आज डी ए वी संस्थानों में शिक्षक अधिकांश आर्यसमाज-विचारधारा के नहीं। सो उस का प्रभाव यह है कि आर्यसमाज की शक्ति ९५ प्रतिशत स्कूलों पर व्यय हो जाती है किन्तु उसमें से पढ़ कर निकलने वाले लड़कों पर आर्यसमाज का प्रभाव नहीं के बराबर होता है "उधर हमारे गुरुकुलों में स्नातकों का भविष्य उज्ज्वल न होने का कारण आज कोई भी आर्यसमाज का पदाधिकारी अपने बच्चों को गुरुकुलों में भेजने को तैयार नहीं।"

इस समस्या का हल जो मेरी समझ में आया वह है—इन दोना का योजना-बद्ध समन्वय।

गुरुकुलों में शिक्षक तैयार किये जावें और डी. ए. वी. संस्थानों में गुरुकुलों के शिक्षक ही लिये जावें "इस से गुरुकुलों का उद्धार होगा इसमें जाने वाले विद्यार्थियों का भविष्य निश्चित होगा, तो आर्यसमाजों के पदाधिकारी भी अपने बच्चों को गुरुकुलों में भेजेंगे। "इस के साथ-साथ डी. ए. वी. संस्थानों की उपयोगिता भी बढ़ेगी।" यह सब कार्य आर्य-जगत् के विचारकों द्वारा सुनियोजित कार्यक्रम द्वारा होना चाहिए।

शेष पृष्ठ १० पर

तुलना करने की मानसिक निर्बलता से बचिये

(डा० रामचरण महेन्द्र एम ए, पी-एच० डी०)

पिता अपने पुत्र की तुलना किसी दूसरे के बेटो से करते हुए कहता है, "अमुक के पुत्रो को देखो। एक से एक कुशाग्र और आज्ञाकारी हैं। सब के सब निरन्तर बिना किसी सहारे के उन्नति करते चले जा रहे हैं। कोई पढाने वाला या उन्नति का रास्ता दिखाने वाला नही है, रुपये का कोई प्रबन्ध नही है, किन्तु उनके सब पुत्र समुन्नत होते जा रहे हैं। दूसरी ओर हमारे बेटे हैं जिन्हें उन्नति के सारे अवसर प्राप्त हैं, पर वे पत्थर की शिला की तरह जहाँ के तहाँ पडे भाग्य को कोस रहे हैं। हमारे तो भाग्य में ही ऐसे कुपुत्र बदे थे। भला ये क्या तो अपना भविष्य बनायेंगे और क्या हमें निहाल करेंगे।'

माता व्यग्य कसती निराश भरे स्वर मे कहती है, सरस्वती के बेटे ने व्यापार मे कितनी तरक्की कर ली है। मामूली आदमी के लडके होते हुए भाव न्यारे न्यारे कर दिये हैं। कैसी शानदार कोठी बनाई है। वाह उसकी शान ही निराली है स्कूटर पर बैठे फिरता है। घर मे लक्ष्मी की कैसी कृपा है। और दूसरी तरफ एक हमारे साहिबजादे हैं जिनकी दूकान पर ग्राहक भूल कर भी नही आता। शाम तक जो बिक्री होती है, उसमें दूकान का किराया तक नही निकाल पाते। मुहल्ले मे भीख मागते फिरेंगे।"

पत्नी बेबसी प्रकट करते हुए कहती है 'मैं सारे दिन घर का काम काज, झाडू बुहारू करती हू, बच्चो की चिल्ल-पो सहती हू, जब कि सुरजीत की पत्नी पखे के नीचे बैठी बस नौकरो पर हुक्म ही चलाती रहती है। मुह से बात निकलते ही पूरी हो जाती है। मेरे भाग्य मे तो बस जी हुजूरी ही बदी है।"

मित्र अपने से ऊँचे बडे घर के मित्र से अपनी तुलना करता है, तो अपने को नीचा पा कर दुःखी होता है। अपनी पत्नी की तुलना दूसरे की पत्नी से करता है, तो उसे साधारण पाता है। वह कहता है, "कमलाशकर की पत्नी एम ए पास है, सगीत में बहुत ऊँची है, क्लबगोष्ठी में कोकिल की तरह कुहकती रहती है, जब कि हमारी पत्नी बस खाना पकाना, कपडे धोना और घर साफ करना ही जानती है। ऐसी ग्रामीण औरत के साथ रह कर तो जिन्दगी बरबाद हो गई।"

एक व्यापारी दूसरे के व्यापार को श्रेष्ठ बताता है। एक विभाग का कर्मचारी दूसरे के विभाग को अच्छा बतलाता है। इन्जीनियर कहता है कि डाक्टर लोग सबसे अधिक कमा रहे हैं। डाक्टर कहते हैं कि हमारी जिन्दगी तो कशमकश और भागदौड से भरी है सारे दिन मरीज खोपडी खाये जाते हैं। हमसे तो वे प्रोफेसर अच्छे हैं जो मजे मे दो-दो महीने की छुट्टिया उडाते हैं। बस, दो-तीन घण्टे भाषण दिया और मौज मारी। वकीलो की कोठियाँ खडी होती चली जा रही हैं। धन के अटूट महल खडे हो गये हैं। वकीलो का पेशा सब से श्रेष्ठ है। वकील कहते हैं, "धत्त तेरी वकालत की। सारे दिन अपराधियो से ही पाला पडता है। चोर, डकैत, कातिल, खूनी, आवारा, बदमाश सभी इर्द गिर्द रहते हैं। कचहरियो में दौड-धूप करते फिरना पडता है। कभी पुलिस वालो की, तो कभी अदालत के छोटे-छोटे अफसरों की जी हुजूरी करनी पडती है। वकालत सब से गया बीता पेशा है।"

हर व्यक्ति हर दृष्टि से दूसरे से तुलना करता है और अपने को छोटा पा कर मन ही मन दुःखी होता है। वह किसी न किसी दृष्टि से दूसरों को अपने से बेहतर समझता रहता है। अपने से ऊँची स्थिति वाला आदमी ही हमारी उत्सुकता का केन्द्र रहता है। उसके जीवन और व्यवसाय का हम उजला पहलू ही देखते हैं और फिर अपने को कोसते हैं। तुलना में दूसरों को अपने से ऊंचा पा कर मन में कष्ट पाते हैं। अपने को अपूर्ण और दीन हीन समझते रहते हैं। यह तुलना करने की भावना हमारे [हीनत्व की भावना विकसित कर देती है। ऐसी तुलना मानव] के लिए अहितकर है। अस्वस्थ भावना है और दुःख का कारण है। यह मनुष्य को हतोत्साह करने वाली चिन्ता है। बार-बार ऐसी तुलना से आदमी की तमाम उच्च शक्तियाँ मारी जाती हैं।

ऐसी अहितकर अस्वास्थ्य पैदा करने वाली तुलना से सदैव सावधान रहना चाहिये। बचने के लिए एक बहुमूल्य स्वर्णसूत्र है —

'प्रायेण सामग्रविधौ गुणाना।
पराङ्मुखी विश्व-सृज प्रवृत्ति ॥

अर्थात्—सृष्टि रचयिता ईश्वर का स्वभाव सब गुणो को एक ही स्थान मे एकत्र करने के विरुद्ध है। वे कही कुछ रखते हैं तो कही कुछ और।

आप तुलना करें, तो उन्नति करने की दृष्टि से ही करे। यदि कोई व्यापारी अपने से ऊँचे व्यापारी के गुर सीखने की दृष्टि से, या कोई विद्यार्थी अपने से कुशाग्र विद्यार्थी के समान बनने की दृष्टि से तुलना करे, तो अच्छा है।

श्री 'प्रभाकर' जी के शब्दो मे, 'जीवन का सच्चा पथ यह नही है कि जो हमे प्राप्त नही उसके लिए रोते रहे। जीवन का सच्चा पथ यह है कि यत्न या योग से जो हमने पा लिया उसे पहचानें उसे अपने अनुकूल बनायें, उसमें रस लें और सतोष का सुख पावें। सब कुछ अधूरा हमे मिला, सब कुछ पूरा दूसरो को, यह मृगतृष्णा है, जीवन का विभ्रम है। जीवन का सबसे बडा सत्य है—अपूर्णता। मैं, तुम, वे सब अपूर्ण, अपने में सब अधूरे इस अपूर्णता का समन्वय इस अधूरेपन का सदुपयोग ही जीवन की सब से बडी कला है।"

तुलना कर के दुःखी मत हूजिए। ऊपर चढने और अच्छा बनने की कोशिश कीजिए। ●

दयानन्द का हुआ आगमन

श्री सूर्यकुमार पाण्डेय ५३, छोटा चाँद गज, लखनऊ-७

दयानन्द का हुआ आगमन, हर्षित हुए सभी प्राणी,
कवियों की चल पडी लेखनी, फूट पडी मन से वाणी।
दयानन्द का हुआ आगमन, हुए कार्य कुछ नये-नये,
भारत माता हुई प्रफुल्लित, सब दुख बन्धन छूट गये।
दयानन्द का हुआ आगमन, उदित नये रवि सूर हुए,
मिटी पोप की सारी माया, मिथ्याडम्बर दूर हुए।
दयानन्द का हुआ आगमन, भारत उन्नति शिखर चढा,
ऋषियो का सम्मान बढा औ वेदो का भी ज्ञान बढा।
दयानन्द का हुआ आगमन, आशा कलिका पुन खिली,
नयी चेतना मिली जनो को सत्य दीप की ज्योति मिली।
दयानन्द का हुआ आगमन, सत्यासत्य विचार हुआ,
तन मन-धन से सत्कार्यो का अपने आप प्रसार हुआ।
दयानन्द का हुआ आगमन, भारतवर्ष प्रधान हुआ,
दुराचार कुविचार मिट गये, जग मे पुन महान् हुआ।
दयानन्द का हुआ आगमन, हम सबको सम्मान मिला।
फैला अखिल विश्व मे यश तब पुन हमे वह मान मिला।
दयानन्द का हुआ आगमन, भारत मस्तक चमक उठा
भारत कर-धरणी पर ही क्या ? अम्बर सागर तलक उठा।
दयानन्द का हुआ आगमन, धन्य हुए भारतवासी,
हुआ प्रफुल्लित जन-साधारण, ऋषि-महर्षि-गण-सन्यासी।

●

आर्य समाज, कठूआ नगर

चुनाव सर्वसम्मति से निम्नलिखित हुआ —

प्रधान—ला० रूपलाल जी एडवोकेट, मन्त्री व पुस्तकाध्यक्ष—प्रभुसूर (M. S. C.) कोषाध्यक्ष—ला० रामरत्न जी—मन्त्री,

"विश्व एकता का एकमेव आधार वेद"

[श्री० अनूपसिंह एम ए दयानन्दभवन (मेरठ मार्ग) मुजफ्फरनगर]

क्रान्तदर्शी महर्षि दयानन्द जी महाराज ने अपनी अमर कृति "सत्यार्थप्रकाश" मे लिखा है—'जैसे माता-पिता अपने सन्तानों पर कृपा दृष्टि कर उन्नति चाहते हैं वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यो पर कृपा करके वेदो को प्रकाशित किया है, जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार भ्रमजाल से छूट कर विद्या विज्ञान रूप सूर्य को प्राप्त होकर अत्यानन्द मे रहें और विद्या तथा सुखो की वृद्धि करते जायें।" सब मनुष्यो की लौकिक और पारलौकिक उन्नति के लिए सृष्टि की आदि मे परम पिता परमात्मा ने वेद का ज्ञान कराया था। वेद की कुछ विशेषताए हैं जो अधोलिखित हैं—

(१) वेद का ज्ञान सृष्टि की आदि मे होता है।
(२) वेद का ज्ञान पूर्ण होता है।
(३) वेद का ज्ञान सार्वभौम होता है, अत उसमें किसी देश विशेष का भूगोल एव इतिहास नही होता।
(४) वेद का ज्ञान और सृष्टि के नियम परस्पर समन्वित होते हैं।
(५) वेद प्रमाण, तर्क और बुद्धिवाद का स्वागत करता है।
(६) वेद एकेश्वरवाद का प्रतिपादक है।
(७) वेदो मे जीवात्मा के कल्याणार्थ (मोक्षप्राप्ति तक का) आवश्यक ज्ञान-कर्म-उपासना और विज्ञान चारो का सुन्दर समन्वय है।
(८) वेद में मिथ्या कुछ भी नही होता।
(९) वेद मे ईर्ष्या—द्वेष—पक्षपात आदि का वर्णन नही होता।
(१०) वेद में शारीरिक-मानसिक और आत्मिक सब शक्तियो के विकास पर बल तथा उनके साधनो का उपदेश है। इस्लाम मजहब के पुस्तक "कुरआन" मे काफिर को कत्ल करने की आज्ञा की गई है। काफिर उसको कहते हैं, जो इस्लाम को नहीं मानता। कुरआन के शब्द हैं—"अल्लाह के मार्ग में लडो उनसे जो तुमसे लडते हैं। मार डालो तुम उनको जहाँ पाओ। कत्ल से कुफ्र बुरा है यहाँ तक उनसे लडो कि कुफ्र न रहे और होवे दीन अल्लाह का। उन्होंने जितनी ज्यादती करी तुम पर उतनी हो तुम उनके साथ करो।' (म० १। सि० सूर। २।आ०१७४।१७५।१७६।१७८।१७९।) जिस पुस्तक मे कत्ल करने की आज्ञा दी जाती है क्या उसके अनुसार विश्व एकता सम्भव है ? कदापि नही।

ईसाई मत के पुस्तक "बाइबल" ने भी मनुष्यो को मार डालने की शिक्षा दी है।" यदि तुम्हारा भाई, तुम्हारी ही माँ का पुत्र या तुम्हारा पुत्र या तुम्हारी पुत्री अथवा तुम्हारी प्रिय स्त्री या तुम्हारा प्राणप्रिय मित्र यह कहते हुए तुम्ह गुप्तरूप से बहकावे,' कि चलो ! हम दूसरे देवताओ की पूजा करें। "ऐसे देवताओ को जिन्हे न तुम और न तुम्हारे पूर्वज जानते थे किन्ही भी उन देवताओं की जो तुम्हारे आस पास की जातियो के हों, चाहे वे नजदीक रहें चाहे उसकी मत मानना और न उसकी कोई बात सुनना। उस पर दया न करना, न उसकी रक्षा करना न उसके दुष्कर्म छिपाना, प्रत्युत उसे मृत्यु दण्ड के लिए सौंप देना। उसे मार डालने के लिए सबसे पहले तुम्हारा ही हाथ उठे और इसके बाद अन्य लोगो के हाथ उठें। पत्थरो से मारमर उसे मृत्यु दण्ड दिया जावे।'

(व्यवस्था विवरण अ० १३ आ० ६-१०)

शायद तभी तो प्रसिद्ध विद्वान् 'दीनफरार" ने लिखा था," बाइबल जगली किताब है, जगली युग मे जगली मनुष्यो के लिए लिखी गई।" अत बाइबल की शिक्षा द्वारा भी विश्व एकता सम्भव नही।

पाठकगण। आप ऊपर वर्णित इस्लाम और ईसाईमत की किताबो की शिक्षा पढ चुके हो। आइए ! अब वेद की शिक्षा पर भी कुछ दृष्टि डालिए। यजुर्वेद के ३६ अध्याय का १८ वाँ मन्त्र है—

"दृते दृह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

अर्थात् हे जगदीश्वर ! जिससे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से मुझको देखें मैं मित्र की दृष्टि से सब प्राणियों को देखूं। इस विषय में हमको दृढ कीजिए। कितनी ऊंची शिक्षा है। मित्र के सदृश सबका सत्कार करें तथा किसी से द्वेष न करें।

साम्यवाद (कम्युनिज्म) से भी विश्व एकता सम्भव नहीं क्योंकि यह पूंजीपति और मजदूरों के बीच सघर्ष की खाई खडा करता है। जहाँ सघर्ष है वहा एकता असम्भव है। मार्क्स 'ने अपने' साम्यवादी घोषणापत्र' मे कहा है 'सर्वहारा वर्ग को अपने बन्धनो के अतिरिक्त कुछ भी नही खोना है वरन् उसे विश्व को विजय करना है। विश्व के समस्त श्रमिको ! परस्पर मिल जाओ ! 'साम्यवाद के पास श्रमिको की समस्याओ का तो हल है, अन्य लोगो का नही।

वैदिक तथ्यवाद से विश्व एकता सम्भव है। वेदभगवान् कहता है—

"अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सम्भ्रातरो वावृधु सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषा सुदुघा पृश्नि सुदिना मरुद्भ्य॥(ऋ०५।६०।५)

अर्थात् हे मनुष्यो ! तुम मे न कोई छोटा है न बडा। तुम सब परस्पर भाई-भाई हो सब मिलकर मानव और मानवता का निष्पादन करो। परमेश्वर तुम्हारा सबका पिता और पृथिवी सबकी माता है।

ससार के लोगो को एकता के सूत्र मे बाधने के लिए देखिए ! वेद कितनी सुन्दर एव व्यावहारिक व्यवस्था प्रस्तुत करता है।

सगच्छध्व सवदध्व स वो मनासि जानताम्।
देवा भाग यथा पूर्वे सजानाना उपासते॥(ऋ० १०।१९१।२)

मनुष्यो ! तुम सब मिलकर चलो, एक भाषा बोलो, तुम सबके मन एक जैसा ज्ञान रखने वाले हों।

समानी व आकूति समाना हृदयानि व।
समानमस्तु वो मनो यथा व सुसहासति॥ (ऋ० १०।१९१।४।)

हो सभी के दिल तथा सकल्प अविरोधीसदा
मन भरे हो प्रेम से जिससे बाढे सुख सम्पदा॥
मा भ्राता भ्रातर द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्च सव्रता भूत्वा वाच वदत भद्रया॥

अर्थात् भाई-भाई से द्वेष न रखे और बहिन-बहिन से द्वेष न करे। एकमत और एक व्रत वाले होकर उत्तम रीति से भाषण करें।

सहृदय सामनस्यमविद्वेष कृणोमि व।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्स जातमिवाघ्न्या॥ (अ० ३।३०।१)

अर्थात् सहृदय, समतापूर्ण मनवाला, द्वेष रहित तुम्हे मैं करता हूँ। प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक दूसरे को प्रेम करे, जैसे गाय नवजात बछडे को प्यार करती है। परमपिता परमेश्वर हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करें जिससे हम वेदोक्त मार्ग पर चलकर विश्व एकता स्थापित कर सकें। ●

पृष्ठ ८ का शेष

यह मैं मानता हू—कार्य बहुत कठिन है किन्तु योजना बद्ध कार्य स्थायी प्रभाव रखता है "जैसे मैकाले की शिक्षा पद्धति का प्रभाव आज भी कितना भयावह है ? ' (हमारे लिये घातक किन्तु उनके अपने देश के लिए कितना लाभप्रद रहा।)

यदि इसी प्रकार गुरुकुलो एव डी ए वी. सस्थानो का समन्वय हो पावे तो आर्यसमाज की उन्नति मे काफी प्रगति होगी "ऋषि की विचार धारा हम बहुत लोगो तक पहुँचा पायेंगे।"

मेरा यह दृढ विश्वास है कि योजना से आर्य विचारधारा को फैलाने मे बहुत सहायता मिलेगी। आवश्यकता है आर्य लोगो को भेदभाव मिटा कर स्वार्थ को छोड कर मिलकर कार्य करने की इस प्रकार की योजना बनाने को तथा कार्य रूप करने में समय अवश्य लगेगा किन्तु इस का प्रभाव इतना स्थायी होगा—इसका अनुमान आप हम क्रिश्चियन मिशनरी स्कूलो द्वारा लगा सकते हैं। उनके स्कूलो के आकर्षण का कारण सुनोयोजित कार्यक्रम है और अनुशासन। "हम भी अपने तैयार किये शिक्षकों द्वारा सस्थानो में आदर्श अनुशासन बना सकते हैं।"

मेरा यह मत है कि इस योजना द्वारा गुरुकुलो का उद्धार होगा और गुरुकुलों के उद्धार होने पर ही आर्यसमाज को नये प्राण मिलेंगे। ●

गुरु विरजानन्द स्मारक करतारपुर (जालन्धर)

हिन्दुओं में अगर कोई जीवित जागृत और रक्षक समाज और है तो वह केवल आर्यसमाज है। आर्यसमाज न होता यदि विरजानन्द न होते। सच्चे अर्थों में स्वामी विरजानन्द ही आर्यसमाज के आदिम गुरु हैं।

यह बड़े दुख की बात है कि आर्यसमाज के विद्वानो ने स्वामी विरजानन्द को वह स्थान नही दिया जो उसे देना चाहिए था इसलिए उन की जन्म तिथि की खोज न करने मे दोषी ठहरते हैं। श्री विरजानन्द का निर्वाणदिवस आश्विन बदि त्रयोदशी सम्वत् १९२५ था। यह हर्ष की बात है कि हैदराबाद मे सार्वदेशिक सभा ने अपने दशम सम्मेलन मे सर्व सम्मति से गुरु विरजानन्द की शताब्दी इस वर्ष ९ अक्टूबर १९६९ को मनाने का निश्चय किया है।

अत प्रत्येक आर्य हिन्दु भारतीय (जो सत्य के पुजारी हैं) का कर्तव्य है कि इस महोत्सव को पूरे समारोह से मनाएं और अपना भाग उदारता से उसको भेंट करे।

अत इस प्रार्थना पत्र के द्वारा आप से सानुरोध निवेदन करता हू कि —

(१) राज्य सभा से ९ अक्टूबर को सार्वजनिक अवकाश स्वामी विरजानन्द जी की निर्वाण दिवस शताब्दी के उपलक्ष्य मे मनवाये।

(२) राज्य से आर्थिक सहायता न्यून से न्यून ५ लाख रुपये स्वीकार कराये। (इस राशी का अधिक भाग वेद वेदाग सस्कृत विद्यालय के चलाने मे व्यय किया जाएगा जो मनुष्यमात्र के लिए खुला होगा। जाति पाति का कोई भेद भाव नही होगा पिछडे वर्ग के बालक, बालिकाओ की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा)

(३) निर्वाण शताब्दी के उपलक्ष्य मे यात्रियो को कम से कम एक मास के करतारपुर तक वापसी टिकट रियायती दर पर चालू कराएँ।

(४) स्वामी विरजानन्द के चित्र सहित डाक टिकट जारी कराए जाएँ।

(५) स्वयम् भाग ले तन, मन, धन से सहायता करें और उस को सफल बनाने के लिए भरसक प्रयत्न करे। (स्वा० विज्ञानानन्द सरस्वती) सचालक—गुरु विरजानन्द स्मारक समिति न्यास करतारपुर, (जालन्धर) तथा वैदिक भक्ति साधन आश्रम, आर्य नगर, रोहतक।

लोक सभा तथा राज्य सभा (ससद् के सदस्यो से निवेदन है कि इस सम्बन्ध मे भारत सरकार से सम्पर्क स्थापित कर के इस पवित्र कार्य मे सब प्रकार की सुविधाएँ तथा सहयोग दिलवायें। भारत भर के आर्यसमाजो, आर्यों और प्रतिनिधि सभाओ का भी कर्तव्य है कि वे पूज्य स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती के ऊपर लिखे पते पर धनादि भेजकर पूर्ण सहयोग देवें। तथा सरकार को प्रस्ताव भेजें। —सम्पादक

आर्यसमाज नरवाना

नरवाना आर्यसमाज दो शिक्षा सस्थाओ को चला रहा है (१) आर्य हायर सेकण्डरी स्कूल (२) आर्य कन्या महाविद्यालय। इस वर्ष आठवी कक्षा के परिणाम पिछले वर्षों की भाँति बहुत ही सतोष जनक रहे।

१ आर्य हायर सैकण्डरी स्कूल नरवाना विद्या प्रसारण के क्षेत्र में सदैव अग्रसर रहा है। इस वर्ष परिणाम इस प्रकार रहे।

कुल विद्यार्थी—१७५ सफल—१५७ परिणाम—९० प्रतिशत प्रथम श्रेणी—२१ द्वितीय श्रेणी—५७।

जिला जींद मे इस स्कूल के 'विजयकुमार' ५६० अक लेकर प्रथम रहे। इस के अतिरिक्त जिले में दूसरी, तीसरी तथा पाँचवीं पोजीशन भी इसी स्कूल की रही। इतने अच्छे परिणाम का श्रेय इस स्कूल के योग्य प्रिंसिपल श्री बलबीर जी एम ए. अथवा अनुभवी स्टाफ को है।

२ आर्य कन्या महाविद्यालय का परिणाम इस प्रकार रहा है।

कुल छात्राएँ—२९ सफल—२९ परिणाम—१०० प्रतिशत।

इस शानदार सफलता का श्रेय इस स्कूल की मुख्याध्यापिका तथा अन्य स्टाफ को जाता है। —जगन्नाथ शाही प्रधान

वैदिक साधु आश्रम रोपड (पंजाब)

वार्षिकोत्सव बडी धूम-धाम से मनाया गया, इस अवसर पर श्री अमृतानन्द जी महाराज तथा ब्रह्मचारी श्री बलदेव जी शुक्रताल वाले आदि विद्वान उपदेशक पधारे। चारो तरफ के समीपस्थ नगरो से आर्य महानुभावो ने आकर उत्सव मे भाग लिया। जनता मे आश्रम के प्रति अत्यन्त श्रद्धा है। श्री स्वामी वेदानन्द जी की देख-रेख मे चल रहा यह आश्रम इस क्षत्र की भरसक सेवा कर रहा है।

—दिलाराम आर्य व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि उप सभा लखीमपुर-खीरी

निर्वाचन–प्रधान–श्री निर्मलचन्द गोला, मन्त्री–श्री वीरेन्द्र बहादुर सिह एम ए, पुस्तकाध्यक्ष–श्री हर नरायन कुकरा टाउन तथा ५ अन्तरङ्ग सदस्य के साथ निम्न महत्वपूर्ण निश्चय किए गए —१ जून ६९ के तृतीय सप्ताह म गोला मे जिला आर्य सम्मेलन किया जाय। इसके पूर्व एक मई से जिल के भिन्न-भिन्न समाजो मे प्रचार की व्यवस्था की जाय।

—वीरेन्द्रबहादुर सिंह मन्त्री

वार्षिक निर्वाचन—

१ आर्यसमाज बुलन्द शहर

प्रधान—महाशय शिवलाल जी वर्मा, मन्त्री—श्री गजराजसिंह जी एडवोकेट, कोषाध्यक्ष—श्री भगवत प्रसाद जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री कुवर सिंह जी। २ आर्य कन्या इन्टर कालेज, बुलन्दशहर के प्रधान—महाशय शिवलाल जी वर्मा प्रबन्धक—डाक्टर मनवीर सरन जी गौतम। —मन्त्री

"आर्य समाज सिकन्द्राबाद का वार्षिकोत्सव"

समारोह से मनाया गया जिसमे ठाकुर यशपालसिंह जी सदस्य लोकसभा व प० प्रकाशवीर जी शास्त्री सदस्य लोकसभा व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के बहुत ही ओजस्वी भाषण हुए। आर्यसमाज सिकन्द्रबाद की ओर से १००१) का चैक प० प्रकाशवीर जी शास्त्री को सभा-भवन के निर्माण के लिए दिया गया।" —मन्त्री

गताक से आगे—

किसान

(श्री योगेन्द्र पाण्डेय ग्राम लखौलिया जिला बलिया)

निज सुख अपना ध्यय नही है, मद आसव तव पेय नही है,
पाकर नित ही ओट तुम्हारो, बनते नेता अरु अधिकारी,
करवाते हैं चोर बजारी, है यह लोला कैसी न्यारी ?
रहे सदा से तुम हैरान, हे जगती की जान किसान।
नाई ब्राह्मण भाट, पुजारी, नेटुआ, नागर, धोबी, बारी,
लेते अपना नेगाचारी, धोती, कुर्ता, रुपया, साडी,
धूमधाम तेरी बारात, धुतका तासा, तुरही साथ,
चढे पालकी भर अभिमान, हे जगती की जान किसान।
न्यौता पाकर के नर नारी, स्वागत करने चले तिहारी,
पैसारी की है तयारी, भीड भाड लोगो की भारी,
घोडो पर चढ गए सवार, सब दौडे समधी के द्वार,
जारी ब्याह का मगल गान, हे जगती की जान किसान।
अन्न आदि के तुम भडार, फसल काट लगता अम्बार,
तब तुम ही होते धनवान्, मेरे प्यारे एक किसान।
पैसा नही कर्ज ले लेते, पर फिर शीघ्र उसे दे देते,
यह निज का आदान-प्रदान, हे जगती की जान किसान।
सबकी रक्षा है धन-आकार, करते हो तुम अन्न उगाकर,
यदि हम सब लोग अन्न बो दें, सब कुछ थोडा तुमको जो दें,
यह देगा क्या छोटा प्राणी, पर देता है कवि की वाणी,
यह ही अर्पित दान किसान, हे जगती की जान किसान। ●

विदेशों में रहने वाले ग्राहकों से विशेष निवेदन

आर्योदय के सभी ग्राहकों को जो कि विदेशों में निवास करते हैं, आर्योदय के बन्द होने पर उसी शुल्क में "आर्यमर्यादा" नियमपूर्वक भेजा जा रहा है।

आर्यमर्यादा का आर्थिक वर्ष (बजट) १५ अप्रैल को समाप्त हो चुका है। अतः इस सूचना द्वारा सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि नये वर्ष का वार्षिक शुल्क २०) तुरन्त बैंक ड्राफ्ट अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम चैक द्वारा भेजने की कृपा करें।

आशा है आप आर्योदय की भाँति ही आर्यमर्यादा को अपना सहयोग एवं संरक्षण प्रदान करेंगे।

विनीत
व्यवस्थापक "आर्यमर्यादा"
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५ हनुमान रोड नई दिल्ली-१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाडी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्
सत्य मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)
वेदाः
आर्यमर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूं वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मतोन्नति वालो के साथ भी वर्त्तता हू। जैसा स्वदेश वालो के साथ मनुष्योन्नति के विषय मे वर्त्तता हू वैसा विदेशियों के साथ भी, तथा सब सज्जनो को भी वर्त्तना योग्य है।

—सत्यार्थप्रकाश भूमिका

वर्ष १ } अंक२३ } ५ ज्येष्ठ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १८ मई १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९
सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य
{ वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
, ,, विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

कीदृशा एतत्प्राप्तुमर्हन्तीत्युपदिश्यते

कैसे मनुष्य उक्त पद [परम पद] का प्राप्त हाने योग्य है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है"

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते ।
विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥ ऋ० १.२२.२१ ॥

पदार्थ—(तत्) पूर्वोक्तम् (विप्रास) मेधाविन (विपन्यव) विविध जगदीश्वरस्य गुणसमूह पनायन्ति स्तुवन्ति ये ते जागृवास) जागरूका (सम्)सम्यगर्थे (इन्धते) प्रकाशयन्ते (विष्णो) व्यापकस्य (यत्) कथितम् (परमम्) सर्वोत्तमगुणप्रकाशम् (पदम्)प्रापणीयम् ॥

अन्वय—विष्णोर्जगदीश्वरस्य यत्परम पदमस्तितद्विपन्यवो जागृवासो विप्रास समिन्धते प्राप्नुवन्ति ॥

भावार्थ—ये मनुष्या अविद्याऽधर्माख्या निद्रा त्यक्त्वा विद्याधर्माचरणे जागृता सन्ति त एव सच्चिदानन्दस्वरूप सर्वोत्तम सर्वै प्राप्तुमर्हं नैरन्तर्येण सर्वव्यापिन विष्णु जगदीश्वर प्राप्नुवन्ति ॥

भावार्थ—(विष्णो) व्यापक जगदीश्वर का (यत्) जो (परमम्) सब उत्तम गुणो से प्रकाशित (पदम्) प्राप्त होने योग्य पद है (तत्) उसको (विपन्यव) अनेक प्रकार के जगदीश्वर के गुणो की प्रशसा करने वाले (जागृवास.) सत्कर्म में जागृत (विप्रास) बुद्धिमान् सज्जन पुरुष हैं वे ही (समिन्धते) अच्छे प्रकार प्रकाशित करके प्राप्त होते हैं।

भावार्थ—जो मनुष्य अविद्या और अधर्माचरणरूप नीद को छोड कर विद्या और धर्माचरण मे जाग रहे हैं वे ही सच्चिदानन्दस्वरूप सब प्रकार से उत्तम सब को प्राप्त होने योग्य निरन्तर सर्वव्यापी विष्णु अर्थात जगदीश्वर को प्राप्त होते हैं ॥......

ओ३म् खब्रह्म (यजुर्वेद ४०-१७)

भावार्थ—मदीय निजस्य नामो३मिति वर्त्तते यो मम सत्याचरण भावाभ्या शरण गच्छति तस्यान्तर्यामिरूपेणाहमविद्या विनाश्य तदात्मानप्रकाश्य शुभगुणकर्मस्वभाव कृत्वा सत्यस्वरूपावरण स्थापयित्वा शुद्ध योगज विज्ञान दत्वा सर्वेभ्यो दु खेभ्य पृथक् कृत्य मोक्षसुख प्रापयमीत्यो३म् ॥

भावार्थ—मेरा निज का नाम "ओ३म्" यह है जो मेरा प्रेम और सत्याचरण से शरण लेता उनकी अन्तर्यामीरूप से मैं अविद्या का विनाश कर उसके आत्मा का प्रकाश कर के शुभ गुण कर्मस्वभाव, वाला कर सत्यस्वरूप का आवरण स्थिर कर योग से हुए विज्ञान को दे और सब दु खो से अलग कर के मोक्ष सुख को प्राप्त कराता हूं। इति ॥

—(ऋषि दयानन्द के भाष्य से)

सत्यासत्य विवेक (शास्त्रार्थ बरेली) २५.८.१८७७

विषयः—पुनर्जन्म

जोव, जोव के स्वाभाविक गुण कम और स्वभाव अनादि हैं। और परमेश्वर के न्याय करना आदि गुण भी अनादि हैं। जो कोई ऐसा मानता कि जीव की और उसके गुण आदि को उत्पत्ति होती है, उसको उस का नाश मानना भी अवश्य होगा और जिस के कारण आदि का भी निश्चय करना और कराना होगा। क्याकि कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति सर्वथा असम्भव है। जो-जो जीव के पाप और पुण्य आदि कर्मप्रवाह से अनादि चले आते हैं, उन का ठीक-ठीक फल पहुचाना ईश्वर का काम है। और जीवो का बिना स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर के सुख-दु ख का भोग करना असम्भव है। जब यह बात हुई तब बारबार शरीर का धारण करना भी जीव को अवश्य है क्योकि क्रियमाण कर्म नये-नये करता जाता है। उनका सचित और प्रारब्ध भी नया-नया हाता चला जाता है। जब इस सृष्टि मे विद्या की आख स मनुष्य देखे तो सृष्टिक्रम और प्रत्यक्षादि प्रमाणो से ठीक-ठीक सिद्ध होता है, कि देखो जो आज सोमवार है, वही फिर भी आता है। महीना, रात दिन आदि भी पुन पुन आते हैं। गेहूं का बीज बोने से फिर वही गेहूं आता है। तीन पदार्थ अनादि हैं एक ईश्वर एक कारण और सब जीव। जोव जन्म से कभी छुटकारा न पायेंगे। पुनर्जन्म दण्ड और पुरस्कार दोनो के लिये है। जीव के कर्म अनादि हैं और ईश्वर का न्याय करना इत्यादि भी अनादि हैं। जो कर्म का सिद्धान्त न माना जावे जो सृष्टि मे बुद्धिमान् निर्बुद्धि और दरिद्र, राजा और कगाल की अवस्था ईश्वर किस प्रकार कर सके, क्योकि इस मे तरफदारी आती है और पक्षपात से उस का न्याय ही नष्ट हो जाता है। जब कर्म के फल हैं, तो परमेश्वर पूर्ण न्यायकारी बनता है, अन्यथा नहीं और ईश्वर अन्याय कभी नहीं करता।

—महर्षि दयानन्द का पक्ष

[कारण से अभिप्राय मूल प्रकृति से है। सम्पादक]

भारत केसरी तथा भारत कुमार को बधाई

प्रथम भारत केसरी मास्टर चन्दगीराम ने दूसरी बार भी भारत केसरी का पट्ट और चान्दी की गुर्ज प्राप्त की तथा विद्यार्थी मुरारीलाल शर्मा ने प्रथम भारतकुमार का पट्ट और चान्दी की गुर्ज प्राप्त की —भारतीय दगल के विजेता हरयाणा के दोनो पहलवानो को आर्यमर्यादा के समस्त ग्राहकों तथा पाठकों की ओर से बधाई।

—सम्पादक

भारत की अभिनव वैज्ञानिक प्रगति

श्री मुकुलचन्द्र पाण्डेय ५३ छोटा चाँदगंज लखनऊ–७



वर्तमान युग को परमाणु युग की सज्ञा से अभिहित करते हैं क्योकि सम्प्रति ससार के प्रत्येक देश मे वैज्ञानिक सामर्थ्य के अनुसार एक पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता की भावना जागृत हो चली है। परमाणु शक्ति के कौतूहलपूर्ण ज्ञान ने भौतिक सुखो के अतिरिक्त मनुष्य को यन्त्रो का दास बना दिया है। किसी भी देश की आर्थिक व्यवस्था वैज्ञानिक उत्कर्ष पर ही अवलम्बित प्रतीत होती है। यह कहना अधिक तर्कसगत होगा कि जीवन के प्रत्येक पहलू पर वैज्ञानिक चाकचिक्य का एक छत्र साम्राज्य है। प्रत्येक नर नारी आबाल वृद्ध विज्ञान की नूतनतम गवेषणाओ के निकट सम्पर्क मे रहने की चेष्टा करता है। कल्पनाओ के साकार होने का प्रत्यक्ष उदाहरण देखकर रूढिवादी समाज को अपनी मान्यताओ के विरुद्ध विद्रोह की भावना जागृत हो उठी है। चन्द्रमा पर पहुँचने की नाना कथाय परिकल्पनाये तथा आख्यायिकाएँ दैनिक जीवन मे श्रवणेन्द्रियो को गुदगुदी पदा करने मे अमाघ अस्त्र सिद्ध हुई थी, उन मानदण्डो का स्पष्ट अतिक्रमण तथा अप्रत्याशित सफलता से जिज्ञासु वर्ग मे खुशी का लहर दौड पडी है। विज्ञान के चरमोत्कर्ष के युग मे प्राणिवर्ग इसके प्रभाव मे न्यूनाधिक मात्रा मे ओत प्रोत रहेगा।

परमाणु शक्ति के ज्ञान ने द्वितीय महायुद्ध (१९३९ ४५) के समय मे विनाश का ताण्डव उपस्थित कर अमरीका हालैण्ड फ्रास आदि के वज्ञानिको के सम्मिलित तथा सघटित प्रयत्न से शत्रपक्ष को आत्म समर्पण करने पर विवश कर दिया। उभय पक्षो ने इस युद्ध मे प्रयुक्त आयुधो के उन्नतिशील निर्माण मे भरपूर भाग लिया। परमाणु शक्ति को सहारकारी बमो के निर्माण मे वैज्ञानिको के एक दल ने साथ-साथ एक जुट होकर तीस वर्ष के विकट अनुसधान को मात्र चार पाच वर्षो मे ही पूरा कर लिया। भारत ने भी इस शक्ति की महत्ता की सहजानुभूति की तथा इस महत्वपूर्ण कार्य में अपने राष्ट्र के मेधावी वैज्ञानिको को जुटने के लिए प्रेरणा दी, फलत स्वावलम्बन के मुक्त वातावरण मे पूर्ण राजाश्रय तथा भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री स्व० प० जवाहरलाल नेहरू के सत्प्रयास से कतिपय युगीन शिस्वस्थ वैज्ञानिको के दल को मिलाकर परमाणु शक्ति आयोग का घटन सन् १९५८ मे किया गया। स्व० मेघनाथ साहा, स्व० होमी जहाँगीर भाभा सर शान्ति स्वरूप भटनागर, बीरबल साहनी तथा जगदीश चन्द्र वसु सदृश विश्वविख्यात वैज्ञानिको ने भारतीय वैज्ञानिक प्रगति की दशा मे अतुलनीय कार्य किया है। नोबलपुरस्कार विजेता सी० वी० रामन का नाम भारत मे बडे आदर पूवक लिया जाता है। जन्मना भारतीय वैज्ञानिक डा० हरगोविन्द खराना को अमरीका मे चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र मे उच्चकोटि के कार्य पर १९६८ का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया, यह भारतीय भूमि के गौरव का विषय है परन्तु भारतीय राष्ट्रिय अव्यवस्था से कुण्ठित वे वैज्ञानिक अपनी जन्म-भूमि का परित्याग कर अन्यत्र चले गये।

चीन के युद्ध काल मे भारतीय वैज्ञानिक क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई, वि वध प्रकार के अस्त्रास्त्रो तथा वैज्ञानिक सामग्रियो का बडे पैमाने पर उत्पादन होने लगा है। इसी अतराल मे अनेक मनीषियो का आविर्भाव हुआ जिससे अन्वेषण की दिशा मे असाधारण उन्नति हुई। जनता मे भी विज्ञान की चर्चाओ मे पर्याप्त अभिरुचि लेना आरम्भ कर दिया है, यही कारण है कि सम्प्रत्यपत्रो ने भी विज्ञान के स्तम्भों को अनिवार्य रूप से रखकर युग के अनुरूप वैज्ञानिक उपलब्धियों का सरल, बोधगम्य जनसामान्य की भाषा मे प्रस्तुतीकरण करने की दिशा में अग्रणी हैं। भारत सरकार के वैज्ञानिक अनुसधान मत्रालय की ओर से सार्वदेशिक स्तर वैज्ञानिक व औद्योगिक अनुसधान परिषद् (कौंसिल आफ साइटिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च) नामक सस्था की स्थापना की है जिसके तत्वावधान में अनेक अनुसधानशालाये जसे —केन्द्रीय औषधि अनुसधानशाला लखनऊ, राष्ट्रिय वनस्पति उद्यान कलकता लखनऊ आदि, राष्ट्रिय भौतिक अनुसधानशाला दिल्ली बगलोर स्थित अनुसधानशाला इस कार्य में दत्तचित्तता से तल्लीन हैं। इन शोधशालाओ में नाना प्रकार के उपयोगी अनुसधान हमेशा होते रहते हैं जो समस्त जनता के लिए लाभकर हैं।

वायुयानो जेटो, नाट तथा लडाकू हवाई जहाजो का निर्माण बगलोर कानपुर आदि स्थानो पर द्रुतगति से हो रहा है। इसके अतिरिक्त गोला बारूद बन्दूके मशीनगने तथा लडाई के अनेक हथियार भी सुरक्षा की दृष्टि से निरन्तर निर्मित होते रहते हैं। विशाखापट्टनम् मे युद्ध पोतो, साधारण जहाज (जलयान) आदि बडी मात्रा में निर्मित हो रहे हैं। चितरजन में रेल की सामग्रिया, टाटास्टील कम्पनी जमशेदपुर मे उन्नतीशील के रेलवे इजनो का उत्पादन होने लगा है, मडुआडीह (वाराणसी) मे डीजल इजन बनने लगे हैं।

कृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है उन्नतिशील बीजो, रोगरोधी किस्म के पौधो के बीज तथा उत्तम कोटि के पौधे सुलभ हैं। दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसधान परिषद् के सचालन में चल रहे भारतीय कृषि अनुसधानशाला पूसा कृषि अनुसधानशाला तथा गन्ना, चाय काफी और जूट आदि व्यापारिक वस्तुओ का बडे पैमाने पर सभरण हो रहा है। पन्तनगर (नैनीताल) मे कृषि विश्वविद्यालय अपनी उत्तमता की दृष्टि से किसी की उपमा नही रखता, जबलपुर स्थित जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय भी कृषि की प्रगति की दिशा मे प्राणपण से जटा है। कृषि उर्वरको का भी अब बडे पैमाने पर सिन्द्री (बिहार) गोरखपुर (उ० प्र०) जोरहट (असम) मे उत्पादन होने लगा है। कृषि उपकरणो, ट्रेक्टरो तथा अन्य उपयोगी यन्त्रो का भी भारत मे निर्माण सम्भावित हो चला है। कीटहन, अकित उर्वरक, रोगरोधी बीज आदि रेडियोसमस्थानिक (आइसोटोप) की सहायता से अब जनता की उपयोगिता की दृष्टि से उपलब्धि सम्भव हो गया है।

भाभा परमाणु अनुसधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई–७४ के सौजन्य से प्रत्येक क्षेत्र मे उपयोगी सामग्रियाँ उपभोक्ताओ के हित में लभ्य हैं। विद्युत शक्ति का सचार भी अब सम्भव हो गया है क्योकि जो अणु-बिजली शक्ति केन्द्र, खोला गया है उससे समूचे महाराष्ट्र को तथा उनके अपने उपयोग के लिए प्रचुर मात्रा मे शक्ति मिलना निश्चित प्राय हो गया है। हैदराबाद मे एक शक्तिशाली भट्ठी लगाये जाने की योजना है। इसके अतिरिक्त कलकप्पम (मद्रास), केरल तथा राणा प्रताप सागर (राजस्थान) में अणुशक्ति केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। परमाणु विखण्डन से जो शक्ति नि सृत होती है वह काम में लायी जाती है जब कि शेष भाग रेडियोसमस्थानिक (आइसोटोप) कृषि, उद्योग, चिकित्सा तथा बाँधो पर छिद्र अध्ययन, जल प्रवाह तथा धरातलीय जल अध्ययन की दिशा में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

ऊतक सवर्धन (टिशूकल्चर) के प्रयोग दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभाग के प्रयोगशाला मे बडी तीव्रगति से हो रहा है। बोतलो में बिना बीज के पौधे, बिना बीज वाले फल तथा अच्छी किस्म के पौधे अब बनने लगे हैं। मत्स्य तथा कुक्कुट पालन आदि की दिशा में भी सफलता मिली है।

शेष पृ० ४

सम्पादकीय

नये राष्ट्रपति का चुनाव

भारत के स्वर्गीय राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन के शव को भूमिसात् भी नहीं किया गया था, कि नये राष्ट्रपति के नामों की बाढ़ात्मक सूची समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने लग गई थी। सभी राजनीतिक दल और मतमतान्तर वादी अपने-अपने स्वार्थ को आगे रख कर विचार कर रहे हैं। यह बात आश्चर्यकर नहीं है।

दुर्भाग्य से भारत का प्रांगण एक ऐसे अखाड़े का रूप धारण किये हुए है, जिस में अनेक मतमतान्तरों, जाति-बिरादरियों, वर्गों और राजनीतिक दलों के नेता लंगोट कस कर पहलवान का रूप बना कर कुश्तियाँ कर रहे हैं। राष्ट्रपति का निर्वाचन यद्यपि राजनीति का ही विषय है, परन्तु भारत की राजनीति पर शुद्ध राष्ट्रियता के आधार पर नहीं, अपितु मतमतान्तर, अमीर-गरीब और ऊँच नीच के नाम पर विचार किया जाता है। ऐसा विचार अत्यन्त खेद का विषय है।

इतना ही नहीं, भारतीय राजनीति पर बाह्य विदेशी शक्तियाँ भी अपना प्रभाव डालती रहती हैं। कौन भारतीय इस बात को नही जानता, कि अमेरिका, रूस, चीन, अरब राज्य और पाकिस्तान आदि विदेश अपने-अपने दावपेंच भारत के राजनीतिक दलों को किसी न किसी रूप में सिखलाते ही रहते हैं। ऐसी विकट अवस्था में हमें राष्ट्रपति के निर्वाचन में अत्यन्त सावधानता बर्तनी चाहिये।

वेद में किसी मत, देश, वर्ग, जाति का इतिहास नहीं। इस विषय में हमें वेद के उपदेश पर ध्यान देना चाहिये।

१—आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम् ॥
॥ यजु० २२-२२ ॥

(राष्ट्रे) हमारे राज्य में (राजन्यः) सेना संचालक (शूरः) योद्धा (इषव्यः) शस्त्रास्त्र प्रयोग में निपुण (अतिव्याधी) शत्रुओं को परास्त करने वाला (महारथः) भू-जल-अन्तरिक्ष तीनों प्रकार के यानों को प्रयोग में लाने में समर्थ हो ऐसा राष्ट्र नेता (आ जायताम्) शासन को सम्भालने वाला होवे ॥

२—त्वां विशोवृणतां राज्याय···वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ॥
॥ अथर्व० ३-४-२ ॥

(विशः) राष्ट्र की प्रजाएँ (त्वां) तुझ को (राज्याय) राष्ट्र रक्षण, पालन, वर्धन के लिये (वृणताम्) चुनती हैं। (राष्ट्र रूप) राष्ट्र के (वर्ष्मन्-ककुदि) सुदृढ़ प्रशासक स्थान पर (श्रयस्व) विराज ॥

३—आ त्वाहार्षमन्तरभूर्ध्रुवस्तिष्ठ······मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत् ॥
अथर्व० ६-८७-१ ॥

हे राष्ट्र नेताः ! तुझ को मैं राष्ट्रजन (आहार्षम्) राष्ट्राध्यक्ष के लिये चुनता हूं, (अन्तर्भूः) हमारे राष्ट्र की आन्तरिक दशा को सम्भाल (ध्रुवः) शासन को दृढ़ता पूर्वक (तिष्ठ) रख··· (त्वद्) तेरे प्रशासन में (राष्ट्रम्) हमारा राष्ट्र (मा-अधिभ्रशत्) भ्रष्ट न होवे। खण्ड-खण्ड न होवे। किसी प्रकार का बाहरी-भीतरी विकार राष्ट्र में नहीं होवे।

मूलरूप में राष्ट्रनेता के लक्षण उपर्युक्त मन्त्रांशों में बता दिये गये हैं। किसी भी मत में, बिरादरी में, वर्ग में, राजनीतिक दल में उपर्युक्त गुणों से सुभूषित जो व्यक्ति होवे, वही राष्ट्रपति पद के योग्य हो सकता है।

राष्ट्र संचालन के गुरुतम कार्य में राष्ट्राध्यक्ष को सुदृढ होना अत्यावश्यक है। हमारे ही राष्ट्र की नहीं, अपितु सभी राष्ट्रों में स्थिरता नहीं है। एक दूसरे से सशङ्क हैं। भारत की सीमाओं में चीन और पाकिस्तान सदा छेड़-छाड़ करता रहता है। भीतरी रूप में भी राजनीतिक दलों में बाह्य हस्तक्षेप के चिह्न स्पष्ट दृष्टिगोचर होते रहते हैं।

राष्ट्रपति का स्थान राष्ट्र में सर्वोच्च है। तीनों प्रकार की सेनाओं का वह अध्यक्ष होता है। सेनाएँ ही राष्ट्र को बाह्य आक्रमण से बचाती हैं, अतः उनका नेतृत्व बहुत सबल हाथों मे रहना चाहिये। हमारे संविधान के अनुसार (राष्ट्रपति के चुनाव में मतदान के अधिकारी भारतीय लोक सभा और राज्य सभाओं के सदस्य तथा समस्त राज्यो की विधान सभाओं के सदस्य हैं। खेद है कि इस समय केन्द्र में भी कोई एक राजनीतिक दल प्रभाव पूर्ण मत नही रखता। राज्यों की विधान सभाओं के सदस्य तो भिन्न-भिन्न दलों मे विभक्त हैं। क्या ही अच्छा होवे कि हम राजनीतिक दल एक मत से राष्ट्रपति का निर्वाचन कर सकें, परन्तु ऐसी सम्भावना है नही।

हम सभी मतदाता महानुभावों से निवेदन करते हैं कि राष्ट्र की रक्षा का ध्यान रखते हुए किसी भी सच्चरित्र, राष्ट्रभक्त और सुदृढ महानुभाव को राष्ट्रपति पद के लिये अपना मत प्रदान कर के कर्तव्य का पालन करें।

२—राजनीतिक प्रभाव से झुकना—

इसी अंक में एक पत्र और उसका उत्तर प्रकाशित किया गया है। श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोकसभा सदस्य ने श्री सत्यनारायण सिंह मन्त्री भारत सरकार को यह पत्र लिखा और श्री सत्यनारायण सिंह मन्त्री ने उसका उत्तर दिया है। इस प्रश्नोत्तर से यह प्रगट होता है कि महात्मा गान्धी मुर्गी पालन के व्यवसाय से असहमत नही थे। महात्मा जी लन्दन की एक सोसाइटी के सदस्य थे, जिस में उस के सदस्य अण्डे का प्रयोग भी खाने में करते थे। महात्मा जी को इस पर आपत्ति नही थी। सब जानते हैं कि महात्मा जी मांस भक्षण और मद्य सेवन को बुरा समझते थे। वह नहीं चाहते थे कि भारत में गोहत्या होती रहे और शराब को चालू रखा जावे। परन्तु राजनीतिक नेता होने के कारण यह नहीं कहते थे कि गोहत्या को कानून से बन्द किया जावे, जैसा कि वह अण्डा भक्षण के विरुद्ध होते हुए भी यह नहीं चाहते थे जो खानेवाले लोग हैं—वे न खावें और मुर्गी पालन का धन्धा न करें। श्री सत्यनारायण सिंहा ने इस बात को महात्मा जी की उदारता कहा है। खेद है कि श्री सिंहा साहिब की सम्मति से हम सहमत नही हो सकते। क्योंकि महात्माओं का यह लक्षण किया गया है कि उन के मन, वचन और कर्म में एकरूपता होती है। अब स्वयं श्री सिंहा साहिब विचार कर लेवें कि अण्डा भक्षण न चाहते हुए भी भक्षण करने वालों के साथ महात्मा जी किस आधार पर उदारता दिखलाते थे ? हमारा तो मत स्पष्ट है कि महात्मा जी महात्मा होते हुए और प्राणी मात्र पर दया भाव रखते हुए भी यदि ऐसी उदारता दिखाते थे, तो यह राजनीतिक उदारता अथवा राजनीतिक झुकना ही समझना पड़ेगा। राजनीतिक नेता बहार भीतर दो रूप रखते हैं, परन्तु आप्त पुरुषो में बाहर भीतर एक ही भाव होता है। आप्त पुरुष सदा सब का कल्याण चाहते हैं और तदनुकूल अपने सत्य आचार और उपदेश द्वारा सब को सत्य का उपदेश करते हैं। ब्रह्मा से ले कर दयानन्द पर्यन्त सभी आप्त ऋषियों का यही मत चला आया है। आशा है श्री सत्यनारायण सिंहा साहिब अपने 'उदारता' शब्द की व्याख्या मे उचित परिवर्तन कर लेंगे, जिस से महात्मा गान्धी की उज्ज्वल कीर्ति पर शङ्का न की जा सके।

३—हरिजन कहे जाने वाले भाइयों से—

इस में सन्देह नहीं कि पुरी के श्री शङ्कराचार्य जी के द्वारा अस्पृश्यता पर अपने निजी विचार प्रकट करने से हरिजन बन्धुओं के हृदय पर ठेस पहुंचना अस्वाभाविक नहीं। कोई भी स्वाभिमानी मनुष्य अपना और अपने समूह का शक्ति रहते अनादर सहन नहीं कर सकता। हम स्पष्टतया कहते हैं कि श्री शङ्कराचार्य जी ने असामयिक और अशास्त्रीय विचार प्रकट किये हैं। इस सम्बन्ध में हम पहिले सम्पादकीय लेख में अपने भाव

शेष पृ० ४ पर

पृ० ३ का शेष

प्रकट कर चुके हैं। परन्तु इस आर्य बनाम हिन्दू वर्ग में केवल श्री शंकराचार्य जी के अनुयायी ही नहीं हैं। दूसरे लोग भी तो हैं, जो अस्पृश्यता को जन्म के आधार पर शास्त्र विरुद्ध मानते हैं। आर्यसमाज ने अपने जन्म काल से ही हरिजन कहे जाने वाले भाइयों के उत्थान में सदा डट कर कार्य किया है। यह हरिजन नाम भी महात्मा गान्धी जी ने राजनीतिक समस्या के समाधान रूप रख दिया था। किसी एक मत अथवा बिरादरी वालों पर यह शब्द घटित नही होता है। आर्यसमाज ने सामाजिक रूप में जो कीर्तिदायक कार्य किया है, उस के परिणाम स्वरूप हरिजन नामक समूह में से अनेक महानुभाव हिन्दू समाज में उच्च स्थान रखते हैं। राजनीतिक क्षेत्र में भी उन में भारतीय राजनीतिक नेताओं की प्रथम श्रेणी में अग्रगण्य हैं। वर्तमान भारतीय संविधान के प्रणेताओं में डा० भीमराव अम्बेदकर का स्थान प्रमुख था। उन का भारतीय नेताओं में सदा आदर के साथ उच्च स्थान रहा।

सभी समाजों में जहाँ उच्च विचारो के मनस्वी लोग होते हैं, वहाँ क्षुद्राशय के भी रहते हैं। आगे बढने वाले समाजो को क्षुद्र वृत्ति के लोगों की बातों को नगण्य कर के सर्वहितैषी महानुभावो के कार्य और व्यवहार को देखना चाहिये। भारतीय संविधान मे अनुसूचित कही जाने वाली बिरादरियो तथा पिछड़ेवर्ग के उत्थान में बहुत ध्यान रखा गया है। राजनीतिक रूप से आगे बढाने के लिए इन को विशेष संरक्षण दिया हुआ है। यह साधारण सहयोग नही है। इस बात को भूल नही जाना चाहिये।

कुछ मत वादी लोग हरिजन बन्धुओ को मत परिवर्तन के लिये उकसाते रहते हैं स्वयं हरिजन सज्जनो मे भी ऐसे अदूरदर्शी लोग हैं जो कि हरिजन समूह को हिन्दुओ से पृथक् हो जाने का प्रचार करते हैं। हम इस समस्या पर इतना हो इशारा करना चाहते हैं कि पाकिस्तान बनने पर हमारे लाखो हरिजन भाइयों को पाकिस्तान सरकार ने भारत में नही आने दिया जब कि वे आना चाहते थे, क्या पाकिस्तान सरकार उन के भले के लिये ऐसा चाहती थी ? नही ! कदापि नही ! ! अपितु उस सरकार ने जबरदस्ती उन हरिजन बन्धुओ को इस लिये रोका कि उन से नीच काम मैली उठाना आदि वह चाहती थी। हमारे हरिजन सज्जन क्या विचार करने का कष्ट करेंगे कि पाकिस्तानी स्वर में बोलने वाले सम्प्रदायवादी पत्रकार हरिजनों का भला चाहते हैं ? नही—वे जो हिन्दुओं की जनसंख्या को कम करवा कर जगह-जगह पाकिस्तानी टुकड़े करवाने के स्वप्न ले रहे हैं। उन से हरिजन भाई पूछ सकते हैं कि पाकिस्तान में रह गये हरिजन लोगो से कैसा व्यवहार किया जा रहा है ? इस का उत्तर वे लोग नहीं दे सकते हैं। उत्तर देने से उनके झूठे प्रलोभन को पोल खुलसकती है।

जितना अवसर हिन्दुओ के समझदार नेता, भारत सरकार सभी राजनीतिक दल और आर्यसमाज हरिजनों के कल्याण में दे रहे हैं, उतना देना सरल बात नही, आगे भी पग उठाया जा रहा है। किसी के बहकावे अथवा अपनो नासमझी में कुछ बात कर बैठना स्वयं अपने को ही हानि का कारण बन सकता है।

आशा है हरिजन भाई हमारे शब्दो को हित को दृष्टि से ग्रहण करेंगे। हम एक हैं=एक रहना है। हमें इस संघटन सूत्र को तोडना नही है। इसी में हम सब और हमारे राष्ट्र को भलाई और उन्नति निहित है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

एक सुझाव

श्री शकराचार्य के सम्बन्ध में उन के विरोध स्वरूप बहुत नेताओ, सभासंस्थाओ तथा राजनीतिक पार्टियो की ओर से पत्र-पत्रिकाओ मे बहुत प्रस्ताव प्रकाशित होते रहे हैं, परन्तु सारगर्भित, पक्षपात रहित और थोड़े शब्दो में जो भाव दर्शनो के पण्डित, गम्भीर विचारक आर्यमर्यादा के सम्पादक श्री सिद्धान्ती जी ने २७-४-६९ के अक में सम्पादकीय के रूप में लिखे हैं, वे वैदिक मन्तव्यों के सर्वथा अनुकूल हैं। अतः सभी आर्यसमाजों से निवेदन है कि वही सुझाव अपने-अपने समाजों में प्रस्ताव रूप स्वीकार करके भारत सरकार तथा बिहार प्रिय सरकार को भेजें, जिस से सब के सामने सत्यता प्रकट हो जावे।

—रामचन्द्र आर्य पुरोहित आर्यसमाज भालौर, रोहतक (हरयाणा)

आर्यसमाज के सार्वभौमिक नियम

पद्यानुवाद—

सत्य विद्या या पदार्थ, विद्या से जो जाने जाते हैं।
आदि मूल उन सब का ईश्वर जो माने जाते हैं॥
अनादि अनुपम सर्वाधार, भाव ऋषि का हो यह साकार॥१॥

अजर अमर सर्वान्तर्यामी, पावन सृष्टि कर्ता।
वही उपासना योग्य एक है, अभय त्रिलोकीभर्ता॥
सर्वव्यापक निर्भ्रान्त निहार भाव, ऋषि का हो यह साकार॥२॥

वेद सर्व सत्य विद्या के, पुस्तक परम कहाते।
पढ़े पढावे सुने सुनावे, किंचित नही अलसाते॥
आर्य जन ! परम धर्म उर धार, भाव ऋषि का……॥३॥

सत्य बात के ग्रहण करन में, देर निमिष नही लावे।
और छोडने में असत्य की, उद्यत सदा रहावे॥
अन्धविश्वास हटा निर्धार, भाव ऋषि का……॥४॥

काम धर्म अनुसार सर्व हो, विधि विपरीत न होवें।
दृढ निश्चय कर साच झूठ का मूल ! विवेक न खोवें॥
तर्क तलवार हाथ में धार, भाव ऋषि का……॥५॥

शारीरिक आत्मिक सामाजिक, करे उन्नति सब कोई।
चाह हृदय में परोपकार की, सकल जगत् की होई।
भेद भावो की हटा दीवार, भाव ऋषि का ……॥६॥

सब जन पूर्ण प्रीति पूर्वक, धर्म परायण वरते।
यथा योग्य को राख ध्यान में, जीवन यापन करते॥
वही पाते सुख का आधार, भाव ऋषि का……॥७॥

जगती तल से घोर अविद्या, की आँधी हट जावे।
उज्ज्वल किरण सद् विद्या की, सबको राह बतावे॥
बढे घर घर में वेद प्रचार, भाव ऋषि का……॥८॥

अपनी ही सुख समृद्धि के हित, जीवन को न बितावे।
सब की उन्नति बीच स्वयं ही उन्नति का पथ पावे॥
"विश्व वसुधैव"—कुटम्ब निहार भाव ऋषि का……॥९॥

सामाजिक प्रत्येक मनुज को, नियम सर्व हितकारी।
रह परतन्त्र पालने में दृढ, हित स्वतन्त्रता धारी॥
"अम्ब"—अविलम्ब नियम दस धार, भाव ऋषि का……॥१०॥

—श्री अम्बादान आर्य, कवि कुटीर कुरडायी (राज०)

पृ० २ का शेष

भारतीय विज्ञान अपने शैशवावस्था से गुजर रहा है, इसे साधनों की न्यूनता मार्ग में रोड़ा अटकाती हैं। विदेशी मुद्रा के अभाव में आयात द्वारा सामग्रियाँ आदि में विशेष कठिनाई होती है। यद्यपि विकास की सघन योजनाओं के अन्तर्गत विज्ञान को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है। युवावर्ग विज्ञान की ओर अभिमुख होकर कार्यरत है। इस दिन प्रतिदिन के उन्नतिशील शोध कार्यों से भारतीय भावी पीढ़ी का उत्थान संभव है, यदि इसी प्रकार विज्ञान संहारकारी पथ को त्याग कर सृजनात्मक व हित के कार्यों में लग रहा है तो इसमें संशय नहीं कि वह हर भौतिक सुखों का प्रदाता होकर देश की समृद्धि में योगदान देता रहेगा। इसी की महत्ता अक्षुण्ण बनी रहेगी।

ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य को ठीक-ठीक समझने की रीति

[लेखक :—पं० सुदर्शनदेव जी आचार्य, एम. ए., बालन्द (रोहतक)]



महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने जीवन का अधिकतम समय वेद भाष्य की रचना में लगाया और वेदों का अनुपम भाष्य किया। सर्वप्रथम आर्य भाषा (हिन्दी) में वेदों के अर्थों को प्रकाशित कराने का श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती को ही है। महर्षि चाहते थे कि वेद केवल विद्वत्समाज तक ही सीमित न रहें किन्तु साधारण जनता तक पहुंच सकें। इसी लिये महर्षि ने अपने वेद के संस्कृत भाष्य का आर्य भाषा में भी अनुवाद करवाया। साधरण जनता के विषय में तो क्या कहें आज संस्कृत भाषा के विद्वान् भी ऋषि के संस्कृत-भाष्य के समझने में कठिनाई की शिकायत करते हैं। इसी लिए विद्वानों ने जिस प्रकार से महर्षि के सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का प्रचार किया वैसा उनके किये वेदभाष्य का प्रचार नहीं किया। इस में कोई अत्युक्ति नहीं कि महर्षि का सत्यार्थप्रकाश ही अधिक प्रकाश में आया। सत्यार्थप्रकाश के समान वेदभाष्य आदि का भी हमें साधारण जनता में प्रचार एवं प्रसार करना चाहिए। यदि वास्तव में जो कोई वहाँ कठिनाई हो उसे आर्य विद्वानों को मिलकर दूर करना चाहिये।

वेदभाष्य की भाषा—

जितने भी आप ऋषिग्रंथ पढ़ेंगे उनमें एक यह विशेषता पायेंगे कि उनकी भाषा अत्यन्त सरल और भाव अत्यन्त गम्भीर होंगे। यही बात महर्षि के वेदभाष्य में भी है। महर्षि के वेदभाष्य की भाषा अत्यन्त सरल है। साधारण संस्कृत जानने वाला भी व्यक्ति उसे सरलता से समझ सकता है किन्तु भाव गाम्भीर्य यहाँ भी विद्यमान है। इसके विपरीत मनुष्यकृत ग्रंथों में भाषा बड़ी कठिन होती है सारा समय भाषा के समझने में ही व्यतीत हो जाता है, जब भाषा समझ में आ जाती है तो भाव कुछ नहीं होता। उक्त भाषा की कठिनाई तो ऋषि के भाष्य में कहीं भी नहीं है।

मन्त्र व्याख्या का प्रकार—

आप महर्षि का वेदभाष्य उठावें। उसका कोई भी मन्त्र पढ़ें। उसमें आप को क्रमशः ये बातें उपलब्ध होंगी। सब से पहले मन्त्र के ऋषि, देवता, छन्द और स्वर निर्देश के पश्चात् महर्षि मन्त्र की भूमिका अर्थात् मन्त्र का प्रतिपाद्य विषय का निर्देश करते हैं। तत्पश्चात् सस्वर मन्त्र पाठ दिया जाता है। फिर मन्त्र का सस्वर पद पाठ लिखा जाता है। इसके पश्चात् पदार्थ नाम का सन्दर्भ प्रारम्भ होता है जिस में जो मन्त्र में पदों का क्रम है उसी क्रम से प्रत्येक पद का सप्रमाण अर्थ दिया जाता है। तत्पश्चात् अन्वय नामक सन्दर्भ प्रारम्भ होता है। इस सन्दर्भ में वेद मन्त्र का अन्वय मात्र नहीं किया जाता किन्तु यत्र-तत्र आवश्यकता के अनुसार अन्वय में आये पदों का विशिष्ट अर्थ भी दर्शा दिया जाता है। तदनन्तर भावार्थ नाम का सन्दर्भ आरम्भ होता है। इसमें महर्षि वेद मन्त्र से झरने वाले तात्पर्यों का उल्लेख करते हैं। इसके पश्चात् पदार्थ और भावार्थ का आर्य-भाषा में भी अर्थ दर्शाया जाता है।

कुछ कठिनाई—

महर्षि के वेदभाष्य का स्वाध्याय करने वाले आर्य महानुभावों के सामने सर्वप्रथम कठिनाई यह उपस्थित होती है कि वह मंत्र में विद्यमान पदों का अर्थ वेदभाष्य के 'पदार्थ' नामक सन्दर्भ में पढ़ता है। महर्षि ने इस सन्दर्भ में पाणिनि व्याकरण के सूत्र निर्देश पूर्वक मन्त्र पदों की सिद्धियां भी दर्शा दी हैं। पदों के निर्वचन भी अर्थ के साथ-साथ दे दिये हैं। वेद में होने वाले व्यत्ययों का भी यथास्थान उल्लेख कर दिया है। निघण्टु 'निरुक्त और ब्राह्मण ग्रन्थ आदि के प्रमाण भी पदार्थ के साथ लिख दिये हैं। इससे जिन की शास्त्रीय योग्यता न्यून है उन्हें सीधा पदों का अर्थ समझने में कठिनाई का अनुभव होता है।

कठिनाई का समाधान—

ऋषि भक्त श्रद्धालु आर्यजन जो महर्षि के शब्दों में ही वेदभाष्य का स्वाध्याय करना चाहते हैं वे यदि व्याकरण सिद्धि, निर्वचन एवं ब्राह्मण ग्रंथ के प्रमाण आदि भाष्यांश को छोड़ कर केवल मन्त्र-पदो का ही अर्थ मात्र पढ़ते हैं तब उन्हें मन्त्र के प्रत्येक पद का अर्थ तो विदित हो जाता है किन्तु इतने से कार्य नहीं चलता। जब तक पदों के द्वारा बना वाक्य सामने प्रस्तुत न हो तब तक केवल पदों के अर्थ का तात्पर्य ही कुछ नहीं होता। अतः महर्षि ने इस का उपाय मन्त्र-पदों का अन्वय करके 'अन्वय' नामक सन्दर्भ में बतला दिया है। तात्पर्य यह है कि मन्त्र के पदार्थ ज्ञान के साथ-साथ मन्त्र के अन्वय को भी समझना चाहिये। जब आप ने मन्त्र के पदों का अर्थ समझ लिया और मन्त्र-पदों का अन्वय भी जान लिया अब आप अन्वय पूर्वक पदार्थ की योजना कीजिये। ऐसा करने से आप के सामने ऋषि के वेदभाष्य में एक सुन्दर संस्कृत वाक्यरचना प्रस्तुत होगी। जिससे आप को मन्त्र का अर्थ सर्वथा स्पष्ट हो जायेगा।

वेदभाष्य में जो भाषा में अर्थ दर्शाया गया है वहाँ अन्वय-पूर्वक पदों का अर्थ कर के भाषा बनाई गई है। और पहले यह सन्दर्भ 'पदार्थान्वय-भाषा' नाम से छपा भी है। संस्कृत में भी उक्त योजना करने से ऋषि के वेदभाष्य के समझने में कोई कठिनाई नहीं रहती। भाषा में महर्षि ने उक्त पद्धति का निर्देश मात्र कर दिया है। सम्भवतः महर्षि कार्याधिक्य और समयाभाव के कारण एवं विस्तारभय से ऐसा न कर सके। उक्त योजना को एक वेद मन्त्र के उदाहरण से स्पष्ट किया जाता है—

स पर्यगादित्यस्य दीर्घतमा ऋषिः। आत्मा देवता। स्वराड्जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

पुनः परमेश्वरः कीदृश इत्याह॥

परमेश्वर कैसा है अब इस विषय को कहते हैं॥

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः

॥ यजु० ४०।८ ॥

पदार्थ :—(सः) परमात्मा (परि) सर्वतः (अगात्) व्याप्तोऽस्ति (शुक्रम्) आशुकरं सर्वशक्तिमत् (अकायम्) स्थूलसूक्ष्मकारणशरीर-रहितम् (अव्रणम्) अच्छिद्रमच्छेद्यम् (अस्नाविरम्) नाड्यादिसम्बन्धबन्ध-रहितम् (शुद्धम्) अविद्यादिदोषरहितत्वात्सदा पवित्रम् (अपापविद्धम्) यत्पापयुक्तं पापकारि पापप्रियं कदाचिन्न भवति तत् (कविः) सर्वज्ञः (मनीषी) सर्वेषां जीवानां मनोवृत्तीनां वेत्ता (परिभूः) यो दुष्टान् पापिनः परिभवति तिरस्करोति सः (स्वयम्भूः) अनादिस्वरूपो यस्य संयोगेनोत्पत्ति-र्वियोगेन विनाशो मातापितरौ गर्भवासो जन्म वृद्धिक्षयौ च न विद्यन्ते (याथातथ्यतः) यथार्थतया (अर्थान्) वेदद्वारा सर्वान् पदार्थान् (वि) विशेषेण (अदधात्) विधत्ते (शाश्वतीभ्यः) सनातनीभ्योऽनादिस्वरूपाभ्यः स्वस्वरूपेणोत्पत्तिविनाशरहिताभ्यः (समाभ्यः) प्रजाभ्यः॥

अन्वय :—हे मनुष्याः! यद् ब्रह्म शुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धम-पापविद्धं पर्यगात् यः कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः परमात्मा शाश्वतीभ्यः समाभ्यो याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधात्स एव युष्माभिरुपासनीयः॥

भावार्थ :—हे मनुष्याः! यदनन्तशक्तिमदजं निरन्तरं सदामुक्तं न्यायकारि निर्मलं सर्वज्ञं सर्वस्य साक्षि नियन्तृ अनादिस्वरूपं ब्रह्म कल्पादौ जीवेभ्यः स्वोक्तैर्वेदैः शब्दार्थसम्बन्धविज्ञापिकां विद्यां नोपदिशेत्तर्हि कोपि विद्वान्न भवेत् न च धर्मार्थकाममोक्षफलं प्राप्तुं शक्नुयात् तस्मादिदमेव सदैवोपास्यम्॥

शेष पृ० ६ पर

पदार्थ :—हे मनुष्यो ! जो ब्रह्म (शुक्रम्) शीघ्रकारी सर्वशक्तिमान् (अकायम्) स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर से रहित (अव्रणम्) छिद्ररहित और नहीं छेद करने योग्य (अस्नाविरम्) नाड़ी आदि के साथ सम्बन्ध रूप बन्धन से रहित (शुद्धम्) अविद्यादि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र और (अपापविद्धम्) जो पापयुक्त पापकारी और पाप में प्रीति करने वाला कभी नही होता (परि, अगात्) सब ओर से व्याप्त है जो (कविः) सर्वत्र (मनीषी) सब जीवों के मनों की वृत्तियों को जानने वाला (परिभू) दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला और (स्वयम्भूः) अनादि स्वरूप जिस कार्य संयोग से उत्पत्ति वियोग से विनाश माता-पिता गर्भवास जन्म वृद्धि और मरण नहीं होते वह परमात्मा (शाश्वतीभ्यः) सनातन अनादिस्वरूप अपने-अपने स्वरूप से उत्पत्ति और विनाश रहित (समाभ्यः) प्रजाओ के लिये (याथातथ्यतः) यथार्थ भाव से (अर्थान्) वेद द्वारा सब पदार्थों का (व्यदधात्) विशेष कर बनाता है वही परमेश्वर तुम लोगों को उपासना करने के योग्य है ।

भावार्थ :—हे मनुष्यो ! जो अनन्त शक्तियुक्त अजन्मा निरन्तर सदा मुक्त न्यायकारी निर्मल सर्वज्ञ सब का साक्षी नियन्ता अनादि स्वरूप ब्रह्म-कल्प के आरम्भ में जीवों को अपने कहे वेदों से शब्द अर्थ और उन के सम्बन्ध को जानने वाली विद्या का उपदेश न करे तो कोई विद्वान् न होवे और न धर्म अर्थ काम और मोक्ष के फलों के भोगने को समर्थ हो इसी लिये इसी ब्रह्म की सदैव उपासना करो ॥—(ऋषि भाष्य)

महर्षि का यह बहुत ही प्यारा मन्त्र है। इस मन्त्र ने अत्यन्त विवादास्पद परमेश्वर के सच्चे स्वरूप को समझने में बड़ी सहायता प्रदान की है। इस मन्त्र की महर्षि के वेदभाष्य के अनुसार अन्वय पूर्वक पदार्थ योजना प्रस्तुत की जा रही है। पृथक्-पृथक् पदार्थ और अन्वय वेदभाष्य से आप ऊपर देख चुके हैं।

अन्वयपूर्वकपदार्थयोजना .—[हे मनुष्या ! यद् ब्रह्म] (शुक्रम्) आशुकरं सर्वशक्तिमत् (अकायम्) स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर रहितम् (अव्रणम्) अच्छिद्रमच्छेद्यम् (अस्नाविरम्) नाड्यादिसम्बन्धबन्धरहितम् (शुद्धम्) अविद्यादिदोषरहितत्वात् सदा पवित्रम् (अपापविद्धम्) यत् पाप-युक्तं पापकारि पापप्रियं कदाचिन्न भवति तत् (परि) सर्वतः (अगात्) व्याप्तोऽस्ति ।

भाषार्थ :—हे मनुष्यो ! जो ब्रह्म शीघ्रकारी, सर्वशक्तिमान्, स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर से रहित है। छिद्र रहित अर्थात् जिसके दो टुकड़े नही हो सकते, नाड़ी आदि के बन्धन से रहित है। अविद्या आदि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र है। जो कभी भी पाप से युक्त, पाप करने वाले और पाप से प्रेम करने वाला नहीं है वह सर्वत्र व्याप्त है।

अन्वय :—[यः] (कविः) सर्वज्ञः (मनीषी) सर्वेषां जीवानां मनो-वृत्तीनां वेत्ता (परिभूः) यः दुष्टान् पापिनः परिभवति तिरस्करोति सः । (स्वयम्भूः) अनादिस्वरूपो यस्य संयोगेनोत्पत्तिर्वियोगेन विनाशो, माता-पितरौ, गर्भवासो, जन्म, वृद्धिक्षयौ च न विद्यन्ते । (सः) परमात्मा (शाश्वतीभ्यः) सनातनीभ्योऽनादिस्वरूपाभ्यः स्वस्वरूपेणोत्पत्तिविनाश-रहिताभ्यः (समाभ्यः) प्रजाभ्यः (याथातथ्यतः) यथार्थतया अर्थात् वेद-द्वारा सर्वान् पदार्थान् (वि) विशेषेण (अदधात्) विधत्ते [स एव युष्माभिरु-पासनीय] ।

भाषार्थ .—जो सर्वज्ञ, सब जीवों की मनोवृत्ति को जानने वाला जो दुष्ट पापियों का विनाश करने वाला, अनादिस्वरूप वाला, जिसकी संयोग से उत्पत्ति और वियोग से विनाश नहीं होता, जिसके माता पिता कोई नही, और जिसका गर्भवास, जन्म, वृद्धि और क्षय नहीं होते हैं वह परमात्मा सनातन, अनादि स्वरूप वाली, अपने स्वरूप की दृष्टि से उत्पत्ति और विनाश से रहित प्रजा के लिये, यथार्थता से अर्थात् वेद के द्वारा सब पदार्थों की अच्छी तरह से उपदेश करता है। वही तुम्हारे लिये उपासना करने योग्य है।

इस उपरिलिखित संस्कृत की अन्वय पूर्वक पदार्थ योजना को भाषार्थ के साथ साथ मिलाकर के देखें। आप इस में पायेंगे कि संस्कृत की धारा-प्रवाह बनती जा रही है और भाषा में भी कहीं धारा नहीं टूटती है। वेद मन्त्र का अर्थ भी ठीक-ठीक समझ में बैठता जाता है। यहाँ जो पद या वाक्य [ ] चौखूंटे में दिये गये हैं उनके अर्थ की संगति के लिये ऋषि ने अध्याहार किया है। वे पद मन्त्र में नही हैं। प्रत्येक भाष्यकार को इस प्रकार का अध्याहार अर्थ की सगति के लिये करना ही पड़ता है। और जो पद ( ) कोष्ठक में दिये हैं वे सब वेद मन्त्र में विद्यमान हैं।

उपरि निर्दिष्ट योजना में मैंने एक मात्रा भी अपनी ओर से नहीं मिलाई है पद और वाक्य तो बहुत दूर की बात है। सब पद और वाक्य ऋषि के ही हैं। उनकी मैंने योजना मात्र की है।

भावार्थ :—महर्षि के वेदभाष्य के भावार्थ नामक सन्दर्भ के विषय में विद्वानों की यह धारणा है कि ऋषि मन्त्र का भावार्थ लिखते समय मंत्र की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं देते। अपना मनोवांछित भावार्थ लिखते रहते हैं। किन्तु ऋषि के वेदभाष्य का गम्भीरता से मनन करने के पश्चात् विद्वानों की उक्त धारणा असार सिद्ध होती है'

अब उपरिलिखित मन्त्र का महर्षि ने वेदभाष्य में जो भावार्थ दिया है वह आपकी सेवा में प्रस्तुत किया जाता है। और साथ में अपनी ओर से मन्त्र का केवल उतना ही अंश भावार्थ के साथ दिया जा रहा है जिसे मंत्र के अंश में ऋषि ने वेदभाष्य में भावार्थ सगृहीत कर के लिखा है। विद्वान् मनन के उपनेत्र से देखें कि महर्षि का भावार्थ साथ में निर्दिष्ट मन्त्रांश से टपकता है कि नही।

भावार्थ :—[स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम् । कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः] हे मनुष्या ! यदनन्तशक्तिमद्, अजं, निरन्तरं, सदामुक्तं, न्यायकारि, निर्मल, सर्वज्ञ, सर्वस्य साक्षि, नियन्तृ, अनादिस्वरूपं ब्रह्म [शाश्वतीभ्यः समाभ्यः, याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात्] कल्पादौ जीवेभ्यः स्वोक्तैर्वेदैः शब्दार्थसम्बन्धविज्ञापिकां विद्या नोपदिशेत् तर्हि—[फलमाह] कोऽपि विद्वान् न भवेत् न च धर्मार्थकाममोक्षफल प्राप्तु शक्नुयात् । [शिक्षामाह] तस्मादिदमेव सदैवोपास्यम् ।

भावार्थ भाषा :—हे मनुष्यो ! जो ब्रह्म अनन्त शक्तिशाली, अजन्मा, अखण्ड, सदा से मुक्त, न्यायकारी, पाप रहित, सर्वज्ञ, सब का द्रष्टा, नियन्ता और अनादि स्वरूप वाला है; यदि वह सृष्टि के प्रारम्भ में स्वयं प्रोक्त वेदों के द्वारा शब्द, अर्थ और सम्बन्ध को बतलाने वाली विद्या का उपदेश न करे तो कोई भी विद्वान् न बन सके और न धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप फल को प्राप्त कर सके। इसलिये इसी ब्रह्म की उपासना सदा करनी चाहिये।

हम ने चौखूंटे में मन्त्रांश को उद्धृत कर के आगे ऋषि का भावार्थ दिया है। आप मन्त्रांश से भावार्थ को स्वयं संगत कर सकते हैं। महर्षि ने भावार्थ में केवल मन्त्र के वाच्यार्थ मात्र को नहीं लिया है और वह लेना उचित भी नहीं क्योंकि वह तो पदार्थ में लिखा जा चुका है। प्रायः वाच्यार्थ की भ्रान्ति में पड़ कर ही लोगों को ऋषि के भावार्थ में सन्देह उत्पन्न होता है। यदि वे भाव एवं तात्पर्य की ओर अपनी दृष्टि झुकायें तो उन्हें भावार्थ सर्वथा स्पष्ट हो जायेगा। जैसे कि यहाँ भावार्थ में ऋषि ने अन्त में शिक्षा के रूप में लिखा है कि—"तस्मादिदमेव सदैवोपास्यम्" इसलिये इसी ब्रह्म की सदा उपासना करनी चाहिये। मन्त्र में परमेश्वर के स्वरूप का वर्णन है। और बतलाया है कि वह परमात्मा सारी प्रजा के लिये वेदों का उपदेश करता है। अतः भावार्थ में उसकी उपासना का उल्लेख करना परम आवश्यक था क्योंकि उसकी उपासना से ही हम पर-मेश्वर को, उसके द्वारा उपदिष्ट वेदों को तथा उसकी समस्त रचना को भली भांति समझ सकते हैं। लोग कहते हैं कि इस वेद मन्त्र में परमेश्वर की उपासना का उल्लेख कहां है ? आशा है वे उपर्युक्त विधि के अनुसार महानुभाव ऋषि के वेदभाष्य की गम्भीरता तक पहुंचने का प्रयास करेंगे।

शेष पृ० [illegible] पर

हमारी आँखें कब खुलेंगी ?

(श्री सुरेन्द्र सिंह कादियान शकूरबस्ती, नई दिल्ली)



हिन्दी में प्रकाशित जमायत इस्लामी के साप्ताहिक पत्र 'कान्ति" का २२ अप्रैल १९६९ का अंक पढ़ने को मिला जिसमे सामाजिक विषमता की पैदावार' नामक शीर्षक के अन्तर्गत जगद्गुरु शंकराचार्य के तथाकथित वक्तव्य पर कुछ विचार प्रस्तुत किये गये हैं। आर्य जगत को उन विचारों पर गम्भीरता पूर्वक मनन करने की आवश्यकता है, क्यो कि अपने जन्मकाल से आर्यसमाज अन्याय और शोषण के उन्मूलन के लिये सदैव उद्यत रहा है। उन विचारों को संक्षेप में यहाँ उद्धृत किया जा रहा है जिससे निर्णय लेने मे पाठक वृन्द को सुविधा हो।

पृष्ठ २ पर हैदराबाद मे आयोजित हरिजन सम्मेलन में पारित संयुक्त राष्ट्र संघ को भेजे जाने वाले उस स्मृति-पत्र के कुछ शब्दो को प्रकाशित किया गया है जो मानव-अधिकार के चार्टर की धाराओ १ २ ७ और १० पर अवलम्बित हैं। प्रकाशित शब्द इस प्रकार हैं

'हम यह बात खोल कर स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम अनुसूचित जातियों वाले न कभी हिन्दू थे और न कभी हिन्दू रह सकते हैं। हिन्दुओ को उस समय तक हमे अपने धर्म का अंग बनाने का अधिकार नही है जब तक कि हमे अलग रखा जाता है।

इसी संदर्भ मे सम्पादक महोदय ने अपनी विवशता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है,

"मुसलमानो की स्थिति इस विषय मे विचित्र सी है। वे यदि इन उत्पीड़ितों के लिए आवाज उठायें तो हिन्दू समाज के नेताओं को आभास होने लगता है—मानो मुसलमान उनकी पंक्तियो मे फूट डाल रहे हैं और यदि चुप रहते हैं तो अन्याय व अत्याचार के पक्षपात का आरोप उन पर लगता है। इस लिए हम अपनी ओर से कुछ कहे इस से पहले हम चाहते हैं कि हरिजन भाई स्वयं अपनी स्थिति निर्धारित करें और बतायें कि वे हिन्दू समाज और हिन्दू धर्म का अंग हैं या नही।"

अन्त में लिखा गया है,

"इस समस्या को हल करने के लिए हम भारतीय समाज के प्रमुख अंग मुसलमानों का ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं। आज इस गई गुजरी स्थिति में भी मुस्लिम समाज उदारता, समता और महान् भ्रातृत्व का परिचय कराता है, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। मुस्लिम समाज को इस समस्या के समाधान के हेतु आगे बढ़ना चाहिए।"

'कान्ति में' लिखे गए ये शब्द वास्तविक स्थिति का चित्रण प्रस्तुत करते हैं। न तो इसमें अतिशयोक्ति से काम लिया गया है और न ही इसमें किसी प्रकार का अहंभाव दृष्टिगत है। इन शब्दो के लिखने का मूल-उद्देश्य क्या है ? इस प्रश्न को जानबूझ कर उठाना नहीं चाहते। परन्तु इन शब्दो से एक बात स्पष्टत उभर कर सामने आती है और वह है कि प्राण होते हुए भी हिन्दू-जाति मृत-प्राय है। इसकी रगो में जो रक्त प्रवाहित हो रहा है उसमे जल की मात्रा अनुपात से अधिक बढ गई है।

वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन करते हुए ऐसा आभास होता है कि अन्याय और शोषण का सामना करने के लिये हिन्दू-जाति मे अपेक्षित साहस और धैर्य का अभाव है। क्या हमारे लिए यह डूब मरने का प्रश्न नहीं कि जो समस्या हमारी अपनी ही अज्ञानता और अदूरदर्शिता के कारण उत्पन्न हुई उसी समस्या के समाधान हेतु हम निश्चेष्ट हैं, अन्य सम्प्रदाय उसे सुलझा कर सहानुभूति और विश्व-भ्रातृत्व का श्रेय पाने में यत्नशील हैं ?

यह कैसी विडम्बना है कि हमारे ही हिन्दू-भाई अस्पृश्यता के नाम पर हमारे ही शोषणकारी मतवादी ग्रन्थों रूढिवादी धर्म गुरुओ और अन्ध-विश्वासी जनता द्वारा उपेक्षित एवं उत्पीड़ित हैं तथा अन्य मतावलम्बियों के हृदय मे इस शोषण के विरुद्ध प्रबल विद्रोह की भावना है।

आखिर इसका कारण क्या है ?

हम संकल्प तो बडे ही कल्याणकारी लेते हैं परन्तु वे किस सीमा तक लोक हित करते हैं ? हमारी जिह्वा उपदेश देते-देते होठो की सीमा को भी लाघ जाती है परन्तु हम उन उपदेशो को अपने जीवन मे कितना ढालते हैं ? धर्म ग्रंथो को लिखते-लिखते हमारी लेखनी ही नही घिस गई अपितु स्याही भी समाप्त होने को है, परन्तु उन धर्म-ग्रंथो के एक पृष्ठ को भी क्या हम ईमानदारी से अपने जीवन मे उतार सकने मे सफल हुए हैं ?

क्या हमारा धर्म जिह्वा का विषय मात्र बन कर नहीं रह गया ? क्या हमारा धर्म हमारा अपना धर्म न होकर लेखनी और स्याही का धर्म नही बन गया ? क्या हमारा धर्म मन्दिरों मे प्रयुक्त ईंट-पत्थरो को तैयार करने वाला भट्टा बन कर नही रह गया ?

यदि नहीं—

तो हरिजन—सम्मेलन मे तैयार स्मृति-पत्र को देख कर क्या हमारी आँखें खुलेंगी ? शायद नही !

हमारी आँखें तब नही खुली, जब बगाल मे वेदबाह्य हिन्दू सम्प्रदाय मुसलमानो को अपना रक्षक समझ रहे थे, जब पजाब में नाथो, निरजनों और पाशुपतो की अनेक शाखाएँ मुसलमान बन गई थी, जब कश्मीर के गाँव के गाँव स्वेच्छा से मुसलमान बनते जा रहे थे, तब आज हमारी आँखें कैसे, क्योकर खुलेंगी !

हमारी आँखें तब नही खुली, जब रमाई पंडित मुसलमानो की सेना को धर्म ठाकुर की सेना ब्रह्मा को मुहम्मद विष्णु को पैगम्बर महादेव को आदम, गणेश को गाजी कार्तिक को काजी नारद को शेख, इन्द्र को मौलाना चंडिका को हाया बीबी और पद्मावती को बीबी नूर उद्घोषित कर रहे थे, तब आज हमारी आँखें कैसे क्योंकर खुलेगी।

हमारी आँखें तब नही खुली, जब नागपुर मे १४ अक्तूबर १९४६ ई० को पाँच लाख लोगो की उपस्थिति मे डा० अम्बेदकर ने हिन्दू-धर्म का परित्याग करते हुए कहा था कि, "हिन्दू लोग भारत के रोग-ग्रस्त मनुष्य हैं।" तब आज हमारी आँखें कैसे खुलेंगी।

अरुणा, इन्दिरा और रवि ठाकुर की पौत्री का जब स्मरण हो उठता है तो मन के किसी अज्ञात कोने से एक कसक सी उठती है। प्रश्न चिह्न मे साकार होकर वह मानो पूछती है कि क्या हिन्दू-धर्म किसी अजगर के उदर से उत्पन्न हुआ था जो यह निरीह, निर्धन, सदियो से शोषित मनुष्य को निरन्तर हड़पता जा रहा है और अन्याय तथा शोषण जैसी गम्भीर समस्याओ को सुलझाने के लिए अपने अनुयायियो को प्रेरित नही करता, उन्हें सचेष्ट नही करता, उनमे उत्साह नहीं भरता।

राजा राममोहन राय ने हमें एक बार जगाया था परन्तु हम फिर सो गये। महर्षि दयानन्द ने एक बार हमारी आँखें खोली थी परन्तु वे पुन बन्द हो गईं। पूज्य गाँधी ने एक बार झकझोर कर हमे उठाया था पर हम पुन धराशायी हो चले। इसमें दोष किसका है ?

यदि हमारी आँखें खुली रहती तो क्या स्वामी श्रद्धानन्द की हमारी आँखो के सामने ही हत्या कर दी जाती ? स्वामी जी का आखिर वास्तविक हत्यारा है कौन ? मतान्ध अब्दुल रशीद या हमारा रूढिग्रस्त हिन्दू-धर्म अथवा हम स्वयम् ? इस प्रश्न का उत्तर जब तक हमारे मस्तिष्क में नही आवेगा तब तक न तो हम अपने आप को और अपने धर्म को समझ सकते हैं और न ही अन्य मतावलम्बियो को। अपनी कमजोरी का दोष दूसरो के सिर मढने की हमारी आदत सी बन गई है।

अपनी दुधार गाय को छोडकर यदि कोई हिन्दू किसी अन्य की गाय के थनो को जा पूँछता है तो इसमे दोष किसका है ? मुसलमान या ईसाई

शेष पृ० ८ पर

पृष्ठ ६ का शेष

यहाँ ऋषि ने ब्रह्म के लिये 'इदम्' पद का प्रयोग किया है। 'इदम्' पद प्रत्यक्ष द्रव्य के कथन में प्रयुक्त होता है। इस 'इदम्' पद के प्रयोग से सिद्ध होता है कि ऋषि को 'ब्रह्म' का प्रत्यक्ष था। द्रव्य के परोक्ष होने पर संस्कृत भाषा में 'तत्' पद का प्रयोग किया जाता है। ऋषि के इस प्रकार के अन्य भी प्रयोग यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं जो ऋषि की ब्रह्म-प्रत्यक्षता सिद्ध करते हैं।

ऋषि ने वेदभाष्य के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों में इस मन्त्र का बहुत उपयोग किया है। वहां प्रकरण के अनुसार किये गए उपयोग से भी मंत्रार्थ पर विशेष प्रकाश पड़ता है। वे स्थल ये हैं—

(१) ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश (सप्त० समु०) में इस मन्त्र के आधार पर परमेश्वर की सगुण और निर्गुण स्तुति विषय को समझाया है। इस मन्त्र में 'शुक्रम्' आदि सगुणस्तुति और 'अकायम्' आदि निर्गुण स्तुति के उदाहरण विद्यमान हैं। वहाँ इतना विशेष लिखा है कि—"केवल भांड के समान परमेश्वर के गुणकीर्तन करता जाता और अपने को नही सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है"।

(२) आगे चलकर सप्तम समुल्लास में ही "स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः" मन्त्र का इतना अंश, "परमात्मा प्रजा के कल्याण के लिये वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश करता है;" इसकी सिद्धि में उद्धृत किया है।

(३) सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास में इस मन्त्र में विद्यमान 'अकायम्' पद के प्रमाणसे अवतारवाद का खण्डन किया गया है।

(४) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में वेदनित्यत्व विचार, उपासना विषय, ग्रन्थ—प्रामाण्याप्रामाण्यविषय इन तीन स्थलों पर इस मन्त्र की व्याख्या की गई है। वेद— नित्यत्व विषय में इन पदों का अर्थ कुछ विशेष लिखा है—शुक्रम्=सब जगत् का कर्ता। अव्रणम्=परमाणु भी उसमें छेद नही कर सकता। परिभूः=सब के ऊपर विराजमान। परमात्मा सब प्रजा के हित के लिये सृष्टि के प्रारम्भ में वेदों का उपदेश करता है अतः वेद परमात्मा का ज्ञान होने से नित्य है। इस युक्ति से वहां वेदों की नित्यता इस मन्त्र के प्रमाण से सिद्ध की गई है।

ग्रन्थ प्रामाण्याप्रामाण्य विषय में इस मंत्र में वर्तमान 'अकायम्' पद से 'सब प्रकार के शरीर से रहित' ऐसा अर्थ दर्शा कर मूर्ति पूजा का निषेध तथा परमात्मा की उपासना का विधान किया है।

(५) आर्याभिविनय में भी ऋषि ने इस मंत्र का व्याख्यान किया है जिस में निम्न पदों का अर्थ विशेष लिखा है—अस्नाविरम्=अतिसूक्ष्म होने से ईश्वर का कोई आवरण नहीं हो सकता। कविः=त्रैकालज्ञ। मनीषी=सबके मन का दमन करने वाला।

वहां इतना और भी विशेष लिखा है कि—वेद पुस्तक ही ईश्वर कृत है; अन्य नही। इसमें युक्ति यह दी है कि जैसा पूर्ण विद्यावान् और न्यायकारी ईश्वर है वैसा ही वेद पुस्तक है।

इन थोड़ी से पंक्तियों के द्वारा मैंने वेदभाष्य जैसे गम्भीर विषय को समझाने का प्रयास किया है। यह तो ऋषि के भाष्य के प्रति ध्यान आकर्षण मात्र कहा जा सकता है। आशा है ऋषि भक्त आर्य विद्वान् महर्षि के अनुपम वेदभाष्यको साधारण जनता तक पहुँचाने का पूर्ण प्रयास करेंगे और इस मिथ्या धारणा को भी समाप्त करने के लिये कटिबद्ध होंगे कि ऋषि का वेदभाष्य क्लिष्ट है। आर्य विद्वानों को अनार्ष वेदभाष्यों की बाढ़ को भी रोकने का प्रयत्न करना चाहिये और ऋषि के वेदभाष्य के सम्बन्ध में ही मिलकर कार्य करना चाहिये। ऐसा करने से विश्व में ऋषि का सम्मान बढ़ेगा और हम ऋषि ऋण से अनृण हो सकेंगे।

[विशेष—हमारी विशेष प्रेरणा पर सर्वशास्त्र निष्णात लेखक महानुभाव ने ऋषि भाष्य की वेदार्थ शैली को समझने समझाने के लिये इस एक मन्त्र को प्रस्तुत किया है। आशा है आर्यमर्यादा के स्वाध्याय प्रेमी पाठक महानुभाव इस शैली पर मनन करके पूर्ण लाभ उठायेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० ७ का शेष

भाईयों का अथवा शूद्रों को जीवित श्मशान करार देने वाले हमारे धर्म-ग्रंथों अथवा धर्मगुरुओं का। निरीह प्राणियों को निरन्तर दबाये जाना और साधन-सम्पन्न चंडालों के चरणों की धूल चाटना जिस धर्म का महान् उद्देश्य रहा हो वह धर्म भले ही बैलगाड़ी-युग के लोगों को सान्त्वना दे दे परन्तु यह निश्चित है कि वह धर्म राकेट-युग के मानव को तसल्ली नहीं दे सकता। क्या हम अपने धर्म से शोषण-कारी तत्त्वों को जड़मूल से उखाड़ फेंकने के लिए कोई दृढ़ पग उठायेंगे ? मेरा यह प्रश्न शंकराचार्य से नहीं, आप सब से है।

आर्य-बन्धुओं से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि वे सिंह-गर्जना कर कान्ति-सप्ताहिक के विद्वान् सम्पादक श्री कौसर यजदानी साहब को यह विश्वास दिलादें कि जब तक इस आर्य-भूमि में महर्षि दयानन्द के अनुयायी जीवित हैं तब तक उन्हें अछूतोद्धार तुल्य ज्वलंत समस्या को अपने ढंग से सुलझाने का कोई नैतिक अधिकार नहीं है। अपने कोटिशः अपराधों का प्रायश्चित हम स्वयं करेंगे। परन्तु इससे पहले मेरी एक बात का उत्तर दे दो कि,

क्या यह चुनौती वाणी तक ही सीमित रहेगी, लेखनी तक ही सीमित रहेगी: पुस्तकों और मंचों तक ही सीमित रहेगी या श्मशानों को उर्वरा भूमि में बदल कर रहेगी ?

ईश्वर हमें सद्बुद्धि दे। हम एक बार पुनः अपने बिछुड़े भाइयों से उसी प्रकार जा मिलें जिस प्रकार भगवान् राम भिलनी से जा मिले थे, योगीराज कृष्ण विदुर से जा मिले थे, चैतन्य; रैदास से जा मिले थे, बुद्ध-महावीर शूद्रों से जा मिले थे और दयानन्द पतित मानव से तथा गाँधी अछूतों से जा मिले थे।

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शब्दों में, "संसार हमारे उपदेशों से नहीं, हमारे आचरण से हमारी जांच करता है।" आर्य-भाइयो ! यदि आप महर्षि के प्रति कुछ भाव रखते हो, यदि आप आर्यभूमि से अन्याय और शोषण को समाप्त करना चाहते हो, तो अंगड़ाई लेकर आगे बढ़ो। ऐ आर्यवीर ! उपदेशों के इस आवरण को उतार फेंको और आचरण का चोला ओढ़ कर कर्म-क्षेत्र में प्रवेश करो। युद्ध के नगाड़े बज रहें हैं और तेरा बसंती चोला खूँटी पर लहरा रहा है। समर, बातों से नहीं हाथों से जीता जाता है।

मनुज का प्यार चाहिए।

(श्री भैरवदत्त शुक्ल, लखुआ जिला खीरी)

मनुज का प्यार चाहिए ! मनुज का प्यार चाहिए !!
जहाँ विचार-शक्ति का, भली उदार भक्ति का।
सजी सुकर्म-युक्ति का, सबल असीम शक्ति का॥
उभार हो, उबार हो, प्रचार हो प्रसार हो।
वही नवीन ज्ञान का, विहान-द्वार चाहिए॥
मनुज का प्यार चाहिए॥

न शेष द्रोह—द्वेष हो, न पास कष्ट-क्लेश हो।
न खंड-खंड देश हो, अखण्ड विश्व-वेश हो॥
न जाति का विवाद हो, न ह्रास, भय, विषाद हो।
समस्त भू कुटुम्ब है, परम पुकार चाहिए।
मनुज का प्यार चाहिए॥

न तीर औ, कमान हो, न शक्ति औं, कृपाण हो।
न बम, न ध्वंस-यान हो, न तोप-युद्ध-गान हो॥
न कूटनीति-जाल हो, न द्वन्द्व का बवाल हो।
समस्त उष्ण विश्व के, लिए प्यार चाहिए॥
मनुज का प्यार चाहिए॥

जहाँ न रंग-भेद हो, तनिक न दोष खेद हो।
अमूल्य व्यक्तित्व-वेद हो, विवेक साम्य वेद हो॥
न तर्क-बल असीम हो, सुलक्ष्य दृढ़ असीम हो।
सहानुभूति, सान्त्वना, सदा अपार चाहिए॥
मनुज का प्यार चाहिए॥

अत्यन्त ध्यान देने योग्य पत्र-व्यवहार

श्री रघुवीरसिंह शास्त्री लोक सभा सदस्य ने श्री सत्यनारायण सिंहा, सूचना एव प्रसारण मन्त्री भारत सरकार को एक पत्र लिख कर पूछा कि मुर्गी पालन के सम्बन्ध में महात्मा गाधी के विचारो का स्पष्टी करण किया जावे। वह पत्र यह है—

माननीय सिंहा जी सप्रेम नमस्ते।

मैं आप का ध्यान एक अतीव आवश्यक कार्य की ओर दिलाना चाहता हूँ। आशा है आप उचित कार्यवाही कर कृतार्थ करेंगे तथा यथाशीघ्र उत्तर देकर अनुगृहीत करेंगे।

निवेदन है कि आप के मत्रालय की ओर गाधी शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में निकाली गई डायरी में जुलाई, १९६८ के सामने वाल पृष्ठ पर मुर्गी पालन का एक चित्र दिया है, जिसका अभिप्राय, कदाचित् जनता मे अण्डा एव मासभक्षण की प्रवृत्ति को बढ़ावा देना है। मैं समझता हू कि श्रद्धेय गाँधी की भावनाओ के प्रतिकूल है। उनकी स्मृति मे बनाये जाने वाले इस पवित्र वर्ष में सरकार की ओर से इस प्रकार का प्रचार अवाछनीय है और नहीं होना चाहिये। इस डायरी से अनेक लोगों को यह भ्रम हो सकता है कि स्वय गाधी जी भी अण्डा एव मास भक्षण पसन्द करते थे। अत आप से प्रार्थना है कि आप उन सब डायरियो का वितरण तुरन्त रुकवा दें जो अब तक वितरित नहीं की गई है। सधन्यवाद।

(भवदीय, रघुवीरसिंह शास्त्री)
१० महादेव रोड, नई दिल्ली ३ ४ ६ ६

श्री सत्यनारायण सिंहा का उत्तर नीचे दिया जाता है—

प्रिय रघुवीरसिंह जी

आप का ३ अप्रेल का पत्र मिला। जिस डायरी की ओर आप ने मेरा ध्यान दिलाया है वह इसी मन्त्रालय के विज्ञापन व दृश्य प्रचार निदेशालय द्वारा प्रकाशित की गई है।

उपरोक्त डायरी मे चित्रो का चयन बहुत सी बातो को ध्यान में रख कर किया गया है जिससे वह सभी वर्गों के लोगो मे पसन्द की जा सके। इस डायरी की ४२००० से भी अधिक प्रतियाँ भारत व दूसरे देशो मे, दो महीने से भी कम समय मे बिक गईं। साधारणतया सभी लोगों ने इस प्रयास को काफी पसन्द किया है।

जहाँ तक मैं समझता हूँ, गाँधी जी ने कही मुर्गी पालन का विरोध नही किया है। वह सभी नैतिक प्रयत्नो का समर्थन करते थे जिससे गाँव वालो की आय मे वृद्धि हो, वे आत्म-निर्भर बनें तथा उनका जीवन-स्तर ऊँचा उठ सके। मुर्गी-पालन के व्यवसाय मे मुर्गियो की उचित देखभाल व उनकी सुरक्षा पर जोर दिया जाता है, जहाँ तक अण्डो की बिक्री का सम्बन्ध है, आशा है आप यह स्वीकार करेंगे कि काफी सख्या मे लोग अण्डो को शाकाहारी भोजन मे ही शामिल करते हैं।

लन्दन में गाँधी जी जिस वैजीटेरियन सोसाइटी के सदस्य थे, उसमे वी० ई० एम० (वैजीऐबिल, एग एण्ड मिल्क) आहार को शाकाहारी माना जाता था। मेरा यह सब कहने का अभिप्राय है कि गाँधी जी का दृष्टिकोण इस सम्बन्ध मे काफी सहिष्णुतापूर्ण और उदार था। सादिवादन

आप का, ह० सत्यनारायण सिंह

श्री अमर स्वामी जी का स्वास्थ्य

सब आर्यसमाजो को सूचना दी जाती है कि "शास्त्रार्थ महारथी प० अमर सिंह जी आर्य पथिक नाम से प्रसिद्ध थे अब सन्यासी होकर श्री अमर स्वामी जी" महाराज हैं उनकी आँखो मे चार वर्ष से मोतिया था लिखना पढ़ना सर्वथा बन्द था।

भिवानी के लोक प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक श्री डाक्टर पुरुषोत्तम दत्त जी सिविल सर्जन ने अपने पास रखकर स्वामी जी महाराज की दोनों आँखों का बहुत अच्छा आपरेशन अपने पवित्र हाथों से कर दिया अब स्वामी जी स्वाध्याय लिख पढ़ सकते हैं।

ओम प्रकाश शर्मा पुरोहित आर्यसमाज दयानन्द मार्ग दिल्ली

द्वितीय वार्षिक योग शिविर विवरण

योग जीवन की वह श्रेष्ठतम विधि है जिसके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करता हुआ मानव अपने इस जीवन में। सुख, शान्ति, प्रसन्नता सफलता प्राप्त करता हुआ अन्त मे अपने आत्मा को उस परम पिता के साथ जोड कर मोक्ष का अधिकारी बन सकता है।

योग भारत वर्ष को समस्त ससार की एक महान देन है। प्राचीन समय मे योग शिक्षा के आरम्भ के साथ-साथ ८ वर्ष की आयु में सीखना आरम्भ किया जाता था। जब तक भारतवर्ष में योग और यज्ञ की भावना का पालन होता रहा तब तक भारत ससार का गुरु रहा। महर्षि दयानन्द आदि महापुरुषो के पुरुषार्थ के परिणाम स्वरूप अब पुन इसका प्रसार आरम्भ हुआ है। विदेशी लोग तो अब बडी तेजी के साथ इसे अपना रहे हैं। पूज्य गुरुवर महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के आशीर्वाद तथा यहाँ की उत्साही जनता के शुभ सहयोग से १५ जुलाई सन १९६५ को योग प्रसार सभा की स्थापना की गई। मानव समाज की हर श्रेणी में विशेष कर विद्यार्थियों में इसके प्रसार के लिए १३ अक्तूबर से २० अक्तूबर १९६८ तक द्वितीय योग प्रसार शिविर आयोजन मे कालेज के विद्यार्थी, छात्र और छात्राए प्रात साय योगासन प्राणायाम का शिक्षण प्राप्त करते रहे। स्थानीय सभी डी० ए० वी० एव राजकीय सस्थाओ के छात्र छात्राओ मे इस विद्या के प्रसार के लिए डायरेक्टर महोदय अपने स्टाफ तथा वैद्य रामसिंह सचालक स्थानीय सभा सहित जाते रहे। योग पर भाषण तथा क्रियात्मिक रूप से आसनो का प्रदर्शन होता रहा। प्रात साय दोनो समय नियत रूप से मुकन्दलाल कालेज हाल मे शिक्षण प्राप्त करते रहे। स्थानीय व्यक्तियो मे प्राय सभी प्रमुख सज्जन इसमें भाग लेते रहे। प्रशिक्षित व्यक्तियो को दिनाक १९-१०-६८ को प्रमाण-पत्र दिये गये। छात्र छात्राओं के लिए १ नवम्बर से ३० नवम्बर तक श्री ब्रह्मदत्त जी की देख-रेख में एक मास के लिए योग शिक्षण श्रेणी लगाई गई। जिस में ६७ छात्र और ३ छात्राओं ने भाग लिया और शिक्षण के उपरान्त प्रमाण-पत्र प्राप्त किये।

स्थानीय सस्थाओ के अतिरिक्त श्री देवबोहरा जी अपने स्टाफ एव वैद्य रामसिंह सहित भिन्न-भिन्न स्थानो पर योग प्रचारार्थ गए उनमें से निम्न सस्थाओ के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

गवर्नमेण्ट स्कूल दामला—गवनमेण्ट स्कूल मुलाना—एम० एस० एन० स्कूल रादौर इत्यादि। योग प्रसार सभा के लिए ५ बीघा भूमि तथा बीस हजार रुपया योग भवन निर्माणार्थ नगर पालिका ने पार्क मे प्रदान किया है। भवन का निर्माण आरम्भ हो चुका है और यह आशा की जाती है कि आगामी योग शिविर अपनी सभा के अपने नये भवन मे सम्पन्न हो सकेगा। सभा नगर पालिका के सभी सदस्यो का इस शुभ सहयोग के लिए बहुत ही धन्यवाद करती है (सब सज्जनो-भाईयो-बहनो और बच्चों का भी सभा धन्यवाद करती है जिन्होने इस शुभ राष्ट्र निर्माण के कार्य में भाग लेकर सभा का उत्साह बढाया। उस परम पिता परमात्मा के तो हम सदा ही धन्यवादी हैं। जिसकी अपार प्रेरणा से हमे इस शुभ काम मे सहयोग मिल रहा है। (कविराज रामसिंह वैद्य वाचस्पति)

कार्यालय—आरोग्य मन्दिर यमुना नगर सचालक —योग प्रसार सभा यमुना नगर

निवेदन

इस समय समस्त देश में जिस तरह के भेद कलह क्रोध, लोभ, वैमनस्य अभिमान द्वेष सदेह अनाचार तथा उच्छृङ्खलता रूप आसुरी सम्पत्ति को बढाने वाल व्यवहार-बर्ताव तथा साहित्य का प्रसार हो रहा है और इस कारण सर्वत्र जो भयानक पतन का प्रवाह अति वेग से चलने लगा है उसे देख कर विचार-शील सज्जन मात्र को देश के भविष्य की बडी चिन्ता हो गयी है। इस पतन के प्रवाह का रुकना अत्यन्त आवश्यक है, इसके लिये देश-कल्याण के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को यथासाध्य तन-मन-धन से सचेष्ट होना चाहिये। इसी के साथ-साथ हम स्वय अपने जीवन को सच्चे अर्थ में दैवी सम्पन्न बना कर जनता के सामने एक पवित्र आदर्श रखें —

—दुर्गाप्रसाद गुप्ता गोरखपुर

"परमेश्वर की प्राप्ति के साधन"

(श्री अनूपसिंह, दयानन्द भवन, मेरठ मार्ग मुजफ्फरनगर)

"यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः"—अर्थात् परमात्मा का आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है और उसका आश्रय न मानना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है। परमात्मा को प्राप्त करके ही प्राणी मृत्यु का उल्लङ्घन कर सकता है अन्यथा नहीं।

"तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय"

परमात्मा की प्राप्ति के लिए जिन साधनों का होना आवश्यक है वे अधोलिखित उपनिषद् मन्त्र में वर्णित हैं—

"सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः॥"—
(मुण्डकोपनिषद्)

उपर्युक्त मन्त्र का अर्थ महात्मा नारायण स्वामी जी ने किया इस प्रकार है—

(अन्तः शरीरे) शरीर के अन्दर (ज्योतिर्मयः) प्रकाशवान् (शुभ्रः) पवित्र (हि) निश्चय (एषः) इस (आत्मा) परमात्मा को (जो) (सत्येन) सत्य (तपसा) तप (सम्यग्) यथार्थ (ज्ञानेन) ज्ञान (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य से प्राप्त होने योग्य है, (उसे) (क्षीणदोषाः) दोष क्षीण हुए (यतयः) यतिगण (पश्यन्ति) देखते हैं।

प्रियतम परमात्मा को पाने के लिए ऊपर के मन्त्र में चार बातें बताई गई हैं (१) सत्य (२) तप (३) यथार्थज्ञान और (४) ब्रह्मचर्य।

सत्य :—सत्य केवल सत्य बोलने को ही नहीं कहते अपितु सत्य वह है जैसा मन में विचार आवे, वैसा ही वाणी से कहना और जैसा वाणी से कहे वैसा ही कर्म करना। यदि मन वचन और कर्म में एकता नहीं अर्थात् मन में कुछ और सोचता है, वाणी से कुछ और कहता है और कर्म से कुछ करता है तो वह सत्य नहीं। "नहि सत्यात्परो धर्मो"—सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं। "सत्यमेव जयते नानृतम्"—सत्य की ही विजय होती है असत्य की नहीं। आजकल उपयोगितावाद का जमाना है हर कार्य को करते समय हम पहले लाभ को देखते हैं तब उस कार्य को हम करते हैं। मन में विचार उत्पन्न हो सकता है कि सत्याचरण का कोई लाभ भी है अथवा नहीं। स्मरण रखना चाहिए कि सत्याचरण का सबसे बड़ा लाभ है मन की शुचिता। 'मनुस्मृति' में कहा गया है—"मनः सत्येन शुद्धयति" अर्थात् सत्याचरण से मन शुद्ध (पवित्र) होता है। जो भी हम कार्य करते हैं उसका सबसे पहले विचार मन में आता है। बुरा कार्य मनुष्य तब करता है जब उसके मन में बुरा विचार उत्पन्न होता है। यदि मन पवित्र विचार वाला बन जाय तो फिर उस में बुरा विचार उत्पन्न नहीं होगा। बुरा विचार उत्पन्न नहीं होगा तो मनुष्य बुरा कार्य कदापि नहीं करेगा। इसीलिए हम परमात्मा से प्रार्थना करते हैं—"तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु"

तप :—गर्मी-सर्दी-भूख और प्यास आदि द्वन्द्वों को सहन करना तप कहलाता है। मनुष्य को तपस्वी जीवन व्यतीत करना चाहिए। तपस्वी मनुष्य ही संसार में सुख से जीया करते हैं अन्य नहीं। हमारे आर्ष ग्रन्थों में जिस तप की बात कही गई है वह शारीरिक, मानसिक और वाचिक तीन प्रकार का है।

शारीरिक तपः—योगिराज श्रीकृष्ण जी महाराज ने 'भगवद्गीता' में शारीरिक तप के विषय में कहा है—

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते॥ (गीता १७-१४।)

अर्थात् सत्यनिष्ठ विद्वानों, सच्चे ब्रह्मज्ञानी द्विजों-ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यों, गुरुओं और बुद्धिमानों की पूजा करना, पवित्रता-सरलता-ब्रह्मचर्य का पालन और अहिंसा यह शारीरिक तप है।

मानसिक तप :—मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भाव संशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते॥
(गी० १७।१६।)

अर्थात् मन की प्रसन्नता और शान्तभाव एवं भगवत्-चिन्तन करने का स्वभाव, मन का निग्रह और अन्तःकरण की पवित्रता मानसिक तप कहलाता है।

वाचिक तप :—अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं उच्यते॥ (गी० १७।१५।)

अर्थात् जो उद्वेग न करने वाला, प्रिय और हितकारक एवं यथार्थ भाषण है, जो वेद शास्त्रों से पढ़ने का एवं परमेश्वर के नाम जपने का अभ्यास है वह वाणी सम्बन्धी तप कहलाता है।

तप की महिमा का वर्णन करते हुए महर्षि व्यास ने लिखा है—"ना तपस्विनो योगः सिद्धयति" अर्थात् तप रहित मनुष्य को योग सिद्ध नहीं होता। वेद भगवान् कहता है—"न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः" अर्थात् जब तक मनुष्य अपने को तप की भट्टि में तपा नहीं लेता तब तक वह ईश्वर की दया का पात्र नहीं बनता।

यथार्थज्ञान :—साधक जिस प्रियतम प्रभु की प्राप्ति करना चाहता है उसको उसके विषय में यथार्थज्ञान अर्थात् ठीक-ठीक ज्ञान होना चाहिए। परमात्मा के गुण कर्म और स्वभाव क्या हैं इनका ठीक ज्ञान साधक को होना चाहिए। बिना यथार्थ ज्ञान के परमात्मा की प्राप्ति असम्भव है। उपनिषद् में एक स्थान पर आया है—

"ज्ञानप्रसादेन विशुद्ध सत्वस्ततस्तु त पश्यते निष्कलं ध्यायमानः" अर्थात् साधन ज्ञान की महिमा से शुद्ध अन्तःकरण वाला होकर सदा मुक्त ब्रह्म को देखता है।

ब्रह्मचर्य :—ब्रह्मचर्य दो शब्दों से मिलकर बना है। ब्रह्म—ईश्वर-वेद-ज्ञान-वीर्य आदि। चर्य—चिन्तन-अध्ययन-उपार्जन-रक्षण आदि।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है (१) ईश्वर चिन्तन (२) वेदाध्ययन (३) ज्ञान उपार्जन (४) वीर्य रक्षण।

'योगदर्शन' में कहा गया है—

"ब्रह्मचर्य-प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः"—ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित होने से वीर्य लाभ होता है।

"वेद" में कहा गया है—

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत" (अथर्ववेद)

महर्षि दयानन्द सरस्वती और भीष्म जी ने ब्रह्मचर्य के बलबूते पर ही इच्छानुसार अपने प्राणों को छोड़ा। ब्रह्मचर्य के प्रेमी को मैथुनों से सदा बचना चाहिए। मैथुन आठ हैं—स्त्री का ध्यान-कथा-क्रीडा-स्पर्श-दर्शन-आलिंगन-एकान्तवास और समागम।

इस प्रकार प्रभु को प्राप्त करने के लिए मनुष्य में सत्य-तप-सम्यग् ज्ञान और ब्रह्मचर्य की आवश्यकता होती है। तभी मनुष्य इस योग्य भी होते हैं कि शरीर के अन्दर रहने वाले ज्योतिर्मय पवित्र परमात्मा के दर्शन कर सकें। यहाँ पर यह लिखना भी अप्रासंगिक न होगा कि परमपिता परमेश्वर के दर्शन इसी शरीर में होते हैं बाहर किसी स्थान पर नहीं। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज लिखते हैं—"कण्ठ के नीचे दोनों स्तनों के बीच में और ऊपर जो हृदय देश है, जिसको ब्रह्मपुर अर्थात् परमेश्वर का नगर कहते हैं, उसके बीच में जो गर्त है, उसमें कमल के आकार वेश्म अर्थात् अवकाश रूप एक स्थान है, और उसके बीच में जो सर्वशक्तिमान् परमात्मा बाहर और भीतर एक रस होकर भर रहा है, वह आनन्दरूप परमेश्वर उसी प्रकाशित स्थान के बीच में खोज करने से मिल जाता है। दूसरा उसके मिलने का कोई उत्तम स्थान वा मार्ग नहीं।"

(ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका)

दयानन्द वह

(श्री सूय कुमार पाण्डेय—कानपुर)



दयानन्द वह एक ज्योति था जो भारत मे
हुआ प्रज्वलित लिए सग मे एक यज्ञ नया
क्षण भगुर था नही देर तक जला वीर वह
कितनों को देकर प्रकाश फिर अस्त हो गया।

ज्ञानी था अज्ञानी को सज्ञान बनाने
विश्व वद्य ऋषि प्रवर एक विद्वान चला था
देने अपनी प्रखर बुद्धि की एक झलक वह
आर्यों के इस कीर्ति देश का ज्ञान चला था।

आडम्बर-मिथ्यापवाद को मिटा दिया फिर
वह अतीत का स्वप्न पुन साकार हो गया
सत्य-सत्य वह बता गया सारे स्वदेश को
कपट-दम्भ का स्वय यहाँ सहार हो गया।

पत्र भेजने वाले को सूचना

कुछ सज्जन पुराने काड तथा लिफाफो का भेज देते है जिन पर यहाँ आर्यमर्यादा के कार्यालय मे पत्रो का छुडाने के लिये विशष जुर्माना देना पडता है। अत निवेदन है कि यह ध्यान रखा जावे कि अब काड १० पैसे का है, अन्तर्देशीय पत्र १५ पैसे का है परन्तु इसमे कोई कागज नही रखा जा सकता, केवल समाचार इसी पर लिख कर भेजा जा सकता है। तथा लफाफा अब २० पैसे का है। इस मे भी तोल से अधिक कागज लिख कर भेजे नही जा सकते। कागज अधिक हो, तो डाकखाने से पूछ कर टिकट लगाने चाहियें। आशा है पत्र प्रेषक महाशय ध्यान रखने का अनुग्रह करते रहेगे। —व्यवस्थापक-आर्यमर्यादा

काश्मीर की यात्रा के इच्छुक आर्य महानुभावों से

आजकल काश्मीर मे बसन्त ऋतु का साम्राज्य है। हम अपने कर्मठ आर्य बन्धुओ को काश्मीर पधारने के लिये निमन्त्रित करते हैं। जो आर्य विद्वान् हमारे निमन्त्रण पर यहाँ पधारेंगे, उनसे प्रार्थना है कि अपने बहु-मूल्य समय मे कुछ थोडा समय यहाँ भी देव तथा प्रचार कार्य मे हमे सह-योग दे कर कृतार्थ करें। आर्य विद्वानो के यहाँ रहने तथा भोजन का प्रबन्ध किया जावेगा। जो महानुभाव इस कार्य मे हमे सहयोग देना चाहें, वे नीचे लिखे पते पर पत्र व्यवहार करने की कृपा करे।

—डा० मदनमोहन सबक मन्त्री—आर्य प्रतिनिधि सभा जम्मू काश्मीर
उप कार्यालय—आर्यसमाज हजूरी बाग, श्रीनगर

आर्यसमाज भिलाई नगर

आगामी वर्ष के लिये निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये।

प्रधान—डा० सत्येन्द्रकुमार मगोली वाल, मन्त्री—श्री भीमदेव सिंह, कोषाध्यक्ष—श्री भगवतशरण सिंहा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री जगन्नाथ साही तथा १० अन्तरग सदस्य और अन्य अधिकारी।—भीमदेव सिंह मंत्री

१—स्वर्गीय श्रीमती सत्यप्रिया जी (धर्मपत्नि श्री नवनीत लाल जी एडवोकेट) का जन्म दिवस

शनिवार १७ मई १९६९ को साय ४ बजे से डो २४ के सामने निजामुद्दीन पूर्वी नई दिल्ली मे गत वर्षों की भाति बड समारोह पूर्वक मनाया जावेगा। जिसमे भिन्न भिन्न कन्या पाठशालाओ की कन्याए गायन, कविता तथा भाषणादि का मनोरजक काय क्रम उपस्थित करगी। विजेता छात्राओ का पारितोषिक भी दिये जायगे। छात्र वत्ति प्राप्त करने वाली कन्याओ को भी सन्मानित किया जावेगा।

२—ब्रह्म पारायण यज्ञ

स्त्री आर्यसमाज निजामुद्दीन ईस्ट के तत्वावधान म यजुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ ११ मई प्रात से १८ मई ६९ प्रात तक सम्पन्न होगा। स्थान—डी २४ के बाहर का पाक ॥ —निज सवाददाता

कन्याओ के विवाह पर सभा को दान

श्री अमरसिंह जी ग्राम शाडिया जि० सि मौर हिमाचल प्रदेश की कन्याओ का शुभ विवाह सस्कार २ मई ६९ का वदिक रीत्यानुसार सम्पन्न हुआ। इस शुभावसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पजाव को १०३ रु० वेद-प्रचारार्थ दिया है। —निरजनदेव

आर्यसमाज राम कृष्ण पुरम्-नई दिल्ली

वार्षिक निर्वाचन इस प्रकार हुआ श्री हरवश लाल पुरी प्रधान श्री देवीचरण वसल—मन्त्री श्री राजेन्द्रलाल पुरी—कोषाध्यक्ष। —मन्त्री

प० शुकूराम जी का स्वर्गवास



आप जिला सिरमौर के नारग क्षत्र गाँव मलहोटी के प्रसिद्ध और कमठ आय कार्यकर्त्ता थे। इस पिछड क्षत्र मे चार महानुभावो ने वैदिक धम का प्रचार किया। प० दुर्गादत्त जी गाव भड़ूत ठा० धमदास जी गाव बन्नू प० बालकृष्ण जी गाव सराहा और प० शुकूराम जीवन पर्यन्त आर्यसमाज का कार्य करते रहे। चारो सज्जनो का देहान्त हो चुका है। सबसे पीछे प० शुकूराम जी का ९० वर्ष की आयु मे स्वर्गवास हुआ।

उपर्युक्त चारो सज्जन किसी कार्य से हरद्वार गये थे वहा सुना कि गुरुकुल कागडी का उत्सव हो रहा है वहा अनेक सयासी महात्मा और उपदेशको के व्याख्यान होते हैं ये चारो भी वहा पहुचे। वहाँ तब स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज का भाषण कर्म और फल के भोग विषय पर हो रहा था प० शुकूराम जी के हृदय पर भाषण का गहरा प्रभाव पडा निश्चय किया कि मैं तो आज से ही वैदिक धर्मी हूँ। चारो ही ने वही वैदिक धर्म की दीक्षा ले ली। वापस आकर अपने क्षेत्र मे खूब प्रचार किया। लोगो में हलचल हो गई कि ये तो विधर्मी हो गये। इनको बिरादरी से निकाल दिया गया। परन्तु ये डटे रहे। मास और शराब का प्रचलन ब्राह्मणो और राजपूतो मे बहुत था। बकरे और भैसे बलि पर चढाये जाते थे। इनके प्रचार का उत्तम प्रभाव पडा। ब्राह्मण और ठाकुर लोग इनका सन्मान करने स्वामी मगलानन्द जी प्रचार करते हुये मलहोटी भी पधारे। उन्होने सराहा आदि स्थानों पर आर्यसमाज की स्थापना की।

स्वर्गीय प० शुकूराम जी के अपने पुत्रो देवदत्त जी, ब्रह्मदत्त जी, बलभद्रदत्त जी और विद्यादत्त मे वैदिक धर्म के प्रति पूरी श्रद्धा है।

बलराज आर्य भजनोपदेशक
आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब, जालन्धर

आर्यसमाज चौरी मलेसा का चुनाव

प्रधान—श्री बन्सीलाल जी 'आर्य' विद्यावाचस्पति मन्त्री—श्री सूर्यराम जी आर्य' अध्यापक कोषाध्यक्ष—श्री रघुनाथ 'आर्य अध्यापक पुस्तकाध्यक्ष—श्री बन्सीलाल आर्य' अध्यापक। —बन्सीलाल आर्य

सार्व प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा जनता प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

जैसे पशु बलवान हो कर निर्बलो को दुःख देते और मार भी डालते हैं। जब मनुष्य शरीर पा के वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं किन्तु पशुवत हैं और जो बलवान् हो कर निर्बलो की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थ वश हो कर परहानि मात्र करता है वह जानो पशुओ का भी बडा भाई है।

—सत्यार्थप्रकाश भूमिका

वर्ष १ } अंक २४ }

१२ ज्येष्ठ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २५ मई १९६९ रविवार

सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
„ विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथ कीदृशा मरुद्गणा इत्युपदिश्यते ॥

अब वे पवनो के समूह किस प्रकार के हैं इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है।

इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवास पूषरातय.।
विश्वे मम श्रुता हवम् ॥ऋ० १ २३ ८॥

पदार्थ—(इन्द्रज्येष्ठा) इन्द्र सूर्य्यो ज्येष्ठ प्रशस्यो येषा ते (मरुद्गणा) मरुता समूहा (देवास) दिव्य गुणविशिष्टा (पूषरातय) पूषण सूर्य्याद्रातिर्दान येषा ते (विश्वे) सर्वे (मम) (श्रुत) श्रावयन्ति (हवम्) कर्तव्य शब्द-व्यवहारम् ।

अन्वय—ये पूषरातय इन्द्रज्येष्ठा देवासो विश्वे मरुद्गणा मम हव श्रुत श्रावयन्ति ते युष्माकमपि।

भावार्थ—नैव कश्चिदपि वायु गणेन विना कथन श्रवण पुष्टि च प्राप्तु शक्नोति। योऽय सूर्य्यलोको महान् वर्तते यस्य च एव प्रदीपन-हेतव सन्ति योऽग्निरूप एवास्ति नैते विद्युतया च विना कश्चिद्वाक्-मपि चालयितु शक्नोतीति।

पदार्थ—जो (पूषरातय) सूर्य के सम्बन्ध से पदार्थों को देने (इन्द्रज्येष्ठा) जिन के बीच में सूर्य्य ही प्रशसनीय हो रहा है और (देवास) दिव्यगुण वाले (विश्वे) (मरुद्गणाः) पवनों के समूह (मम) मेरे (हवम्) कार्य करने [illegible] शब्द व्यवहार को (श्रुत) [illegible] हैं वे ही आप लोगों को भी।

भावार्थ—कोई भी मनुष्य जिन [illegible] के बिना कहना, सुनना और [illegible] होना आदि व्यवहारों को प्राप्त होने को समर्थ नहीं हो सकता। जिन के मध्य में सूर्य्य लोक सब से बडा विद्यमान जो इस के प्रदीपन कराने वाले हैं जो यह सूर्य्य लोक अग्नि रूप ही है जिन वायु विद्युत् बिजुली के बिना कोई भी प्राणी अपनी वाणी के व्यवहार करने को भी समर्थ नहीं हो सकता इत्यादि इन सब पदार्थों की विद्या को जान के मनुष्यो को सदा सुखी होना चाहिये।

—(ऋषि दयानन्द के भाष्य से)

ये मन्त्रार्थान् विदितवन्तो धर्म-विद्ययो प्रचारस्यैवानुष्ठातार सत्योपदेशेन सर्वाननुगृह्णन्तो निष्छला पुरुषार्थिनो मोक्षधर्म-सिध्यर्थमीश्वरस्यैवोपासका कामार्थ-सिध्यर्थ भौतिकाग्न्यादिगुणज्ञानेन कार्य्यसिद्धि सम्पादयन्तो मनुष्यास्ते ऋषि शब्देन गृह्यन्ते।

जो मन्त्रो के अर्थों को जाने हुए धर्म और विद्या के प्रचार अपने सत्य उपदेश से सब पर कृपा करने वाले निष्कपट पुरुषार्थी धर्म के सिद्ध होने के लिये ईश्वर की उपासना करने वाले और कार्यों की सिद्धि के लिये भौतिक अग्नि के गुणों को जान कर अपने कार्यों को सिद्ध करने वाले होते हैं। वे पूर्ण विद्वान् शुभ गुण सहित होने पर ऋषि कहाते हैं।

(ऋ० १.१.२ ऋषि भाष्य)

पूज्य श्री महात्मा आनन्द स्वामीजी सरस्वती का आदेश

श्री दीवान रामसरन दास जी नमस्ते।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के झगडे निपटाने के लिये मैं प्रयत्नशील हूँ और उसके लिये मैंने ३१-३-६९ को यह आदेश दिया था कि आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब के दोनो पक्षो का कार्य अब प्रबन्धकर्त्री समिति किया करेगी। क्योंकि दोनो सभाएं भंग की जा चुकी हैं इस लिये इनका कोई प्रतिनिधि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा के अधिवेशन मे भाग नहीं ले सकता। अत आपने जिन लोगो के नाम सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा मे भेज रखे हैं, उन्हें आप सूचित कर दें कि वह सार्वदेशिक सभा के ३१ मई ६९ के अधिवेशन में [illegible]।

„ (ह०) सर्वकोर्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती
अध्यक्ष प्रबन्धकर्त्री समिति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब। दिनांक १९-५-६९

सेवा मे—दीवान श्री रामसरनदास जी [illegible] मण्डी लुधियाना।

प्रतिलिपि १—श्री मन्त्री जी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा, आसफअली रोड नई दिल्ली। २—प्रो० रामसिंह जी, नई दिल्ली।

श्री स्वामी आनन्द सरस्वती जी का वक्तव्य

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद के एक लाख आर्य नर-नारियों ने सर्व-सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत किया कि आर्यसमाजों में जो अभियोग सरकारी अदालतो मे चल रहे हैं—यह तत्काल लौटा लिए जाएँ और प्रान्तीय आर्यसभाओ के झगडो को समाप्त करने के सर्व अधि-कार आनन्द स्वामी को दिए जाएँ। यह प्रस्ताव ८ नवम्बर १९६८ को पारित हुआ। विधान ऐसा है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा की अन्त-रग जब तक स्वीकार न कर ले तब तक महासम्मेलन का प्रस्ताव कोई महत्त्व नहीं रखता और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अन्तरग बैठक बुलाने में साढे तीन महीने गुजार दिए—२३ फरवरी १९६९ को सार्वदेशिक की अन्तरग सभा ने महासम्मेलन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया—तब आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के दोनो पक्षो ने भी इसे स्वीकार किया—परन्तु प्रो रामसिंह जी वाले पक्ष ने केवल चुनाव कराने का सर्वा-धिकार दिया—फिर भी मेरा यत्न यह था कि दोनों पक्ष निकट ला कर, उन्हें मिल कर समाज सेवा के लिए तैयार करूँ—परन्तु मुझे इसमे अभी तक सफलता नहीं मिली।

हैदराबाद से लौटते ही मैंने सार्वदेशिक सभा के महानुभावो से और पंजाब आर्य प्रतिनिधिसभा के अधिकारियों से निवेदन किया कि वे अभि-योग लौटा लें—दोनों पक्षों ने इसे स्वीकार कर लिया—कितनी ही बार दोनों पक्षो को पृथक्-पृथक् तथा सम्मिलित रूप में बुला कर यही निवेदन करता रहा—उत्तर बड़ा अच्छा [illegible] होता—परन्तु अभियोग लौटाये न

शेष पृ० २ पर

"अनृण" शब्द शुद्ध है "उऋण" नहीं

श्री जगमोहन जी शास्त्री, अलेडी (मुजफ्फरनगर)

सस्कृत भाषा के अनेक शब्दो का मूल रूप मे ही हम आर्य भाषा (हिन्दी) मे प्रतिदिन प्रयोग करते हैं। उन मे कुछ ऐसे शब्द हैं जो कि अशुद्ध लिखे और बोले जाते हैं। हमारी भावना यह है कि हिन्दी में अधिक से अधिक सस्कृत भाषा के शब्दो को बोला और लिखा जावे। इस से हिन्दी भाषा सस्कृत के निकट होती जावेगी। बार-बार लिखने और बोलने पर ऐसे शब्द सामान्य व्यवहार मे आने लग जाते हैं और बिना लिखे-पढे सज्जन भी उन से बोलने और समझने लग जाते हैं।

अब सस्कृत के कुछ ऐसे शब्द आगे लिखते हैं जो कि हिन्दी मे अशुद्ध बोले और लिखे जाते हैं। अच्छा है उन को शुद्ध रूप मे लिखा और बोला जावे। १—महानतम और महानता हिन्दी में लिखे और बोले जाते हैं; परन्तु सस्कृत की दृष्टि से यह अशुद्ध प्रयोग है। शुद्ध प्रयोग महत्तम और महत्ता होना चाहिये। 'महान्' शब्द के उपर्युक्त दोनो रूप हैं। महानता और महानतम बोलने और लिखने वाले केवल हिन्दी भाषी ही नही अपितु सस्कृत जानने वाले भी ऐसा अशुद्ध प्रयोग करते देखे जाते हैं।

२—सस्कृत के 'बुद्धिमत्ता' शब्द को हिन्दी मे बुद्धिमानी कर के अशुद्ध रूप कर लिया गया है।

३—सस्कृत के पुल्लिङ्ग, शब्दो=वायु, अग्नि मृत्यु समाज और आत्मा आदि अनेक शब्दो का प्रयोग हिन्दी में स्त्रीलिंग मे अशुद्ध किया जाता है। जैसे वायु चलती है। अग्नि जलती है। मृत्यु हो गई। हमारी आर्य-समाज ! मेरी आत्मा। इस अशुद्धि का कारण हम पर उर्दू जबान का कुप्रभाव है—उर्दू मे वायु को हवा, अग्नि को आग, मृत्यु को मौत, समाज को जमायत और आत्मा को रूह बोला जाता है। ये सब शब्द उर्दू मे स्त्रीलिङ्ग हैं। हम बोलते तो हैं वायु सस्कृत का शब्द और आगे क्रिया लगा देते हैं 'चलती है'—इसी कारण यह खिचडी भाषा बना दी जाती है। अच्छा रहे कि सस्कृत शब्दो का व्यवहार करते समय उसी के अनुसार लिङ्ग आदि का प्रयोग किया जावे। आर्यस्त्री समाजो मे 'प्रधान' को 'प्रधाना' और 'मन्त्री' को 'मन्त्रिणी अथवा मन्त्राणी' लिखते हैं। ये तो पदवाची शब्द हैं, अत इन को स्त्री आर्यसमाज की प्रधान और मन्त्री लिखना उचित है, जैसे श्रीमती इन्दिरा गान्धी—प्रधान मन्त्री भारत सरकार ऐसे ही अनेक शब्दों के प्रयोग पर ध्यान रखना चाहिए, जिससे भाषा में विकार हो कर अर्थ का अनर्थ न होने लग जावे।

अब हम "अनृण" सस्कृत शब्द पर लिखते हैं जिस को केवल हिन्दी भाषी ही नहीं, अपितु सस्कृत का अपने को प्रकाण्ड विद्वान् मानने वाले वक्ता और लेखक महानुभाव 'अनृण' के स्थान पर 'उऋण' लिखते और बोलते हैं, हम जैसे साधारण पढे-लिखे ऐसी भूल कर देवें, तो कुछ सहन किया जा सकता है, परन्तु विद्वानो विशेषतया प्रसिद्ध वैयाकरणों को ऐसी अशुद्धि करना शोभा जनक तो होता ही नहीं, अपितु उन की देखादेखी दूसरे सज्जन भी 'उऋण' बोलने और लिखने लग जाते है, इस से अशुद्ध परम्परा पड कर शब्द भ्रष्ट हो कर अर्थ भ्रष्ट हो जाता है।

आगे हम कुछ प्रमाण ऐसे प्रस्तुत करते हैं कि जिन मे 'अनृण" शब्द का प्रयोग मिलता है।

१ ऋग्वेद १७१८ अनृणा" भवितु शक्नुवानो (ऋषि दयानन्द-भाष्य-भावार्थ)

२ यजुर्वेद १९-११ अनृणो भवामि" मूल मन्त्र का ही पद है। ऋषि दयानन्द अर्थ करते हैं—'अनृण '=ऋण रहित (भवामि) होता हूं।

३ ऋ० ७ ४ ८ पर श्री सायणाचार्य "अरणस्य" काअर्थ "अनृणस्य' अपने भाष्य मे लिखते हैं।

४ रामायण वाल्मीकीय बाल काण्ड ७६ २ मे—पितुरा नृण्यमास्थित

५ अयोध्या काण्ड ६ २५ मे अनृणोऽस्मि।

६ अयोध्या काण्ड २४ ३५—आनृण्यत्" प्राप्तौ।

७ अयोध्या काण्डे ५० २—अनृणी।

८ महाभारत आदि पर्व० १०५ ३१—अनृणो भूत्वा।

९ ,, ,, १५७ ७—कृताहमनृणा त्वया।

१० ,, ,, १०६ ३३—अहमनृण स्याम।

११ ,, वन पर्व० ३२ ४१—आनृण्यमवाप्नुते।

१२ ,, , ३२ ५०—आनृण्यमाप्नोति।

१३ ,, ,, २९७.२०—आनृण्यम्।

१४ ,, ,, ३१३ १५—अनृणो।

१५ ,, विराट पर्व० २२ ७९—अनृण।

१६ ,, २८ १६—अनृणा।

१७ ,, उद्योग पर्व० ३३ ८९—आनृण्यम्।

इस प्रकार आर्यमर्यादा के पाठक महानुभाव वेद के मूल मन्त्र, वेद मन्त्र के भाष्य मूल रामायण और मूल महाभारत के श्लोकों में ऋण रहित के लिये 'अनृण" शब्द का प्रयोग हुआ है। अत अनृण के स्थान पर 'उऋण' लिखना और बोलना अशुद्ध है। इस से हिन्दी जहाँ बिगड़ती है वहाँ सस्कृत का शब्द भी भ्रष्ट हो जाता है। अत ऐसे अनेक शब्द हैं जिन का दूषित प्रयोग होता है। अच्छा है, इस दोष को छोड दिया जावे जिस से अर्थ मे भी दोष न आ सके।

पृ० एक का शेष

जावे। अन्त मे मैंने ८ मार्च को दोनों पक्षो को हनुमान् रोड आर्यसमाज मन्दिर मे बुलाकर निवेदन किया कि यदि १६ मार्च तक अभियोग लौटाए न गए तो मैं और डा० मथुरादास आर्यसमाज हनुमान् रोड में बैठकर अनशन प्रारम्भ कर देंगे। महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने कहा कि तीसरा मैं भी साथ होऊँगा। तब दोनों पक्षों ने अपने-अपने अभियोग लौटा लेने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। देहली में जो अभियोग दोनों पक्षों की ओर से चल रहे थे उन्हें लौटाने में श्री नारायणदास जी कपूर और दोनों पक्षो के वकीलों ने पूरा सहयोग दिया। इसी प्रकार चडीगढ का अभियोग भी हटा लिया गया परन्तु जालन्धर के अभियोग प्राय ६ महीनों के पश्चात् भी अभी तक लौटाए नहीं गए। इसी बीच मे मैंने छ महानुभावों की एक प्रबन्धकर्तृ सभा नियुक्त कर दी ताकि वे पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के दोनों पक्षों से सारे कार्य का चार्ज लेकर सभा का सगठित रूप से कार्य करें। सभा के दोनों पक्षों को मने आदेश दिया कि वे अपना सारा चार्ज प्रबन्धकर्तृ समिति के सपुर्द कर दें।

दीवान रामसरणदास जिस पक्ष के प्रधान हैं उस पक्ष ने मुझे सर्वाधिकार दे रखे हैं। परन्तु अभी तक इसको क्रियात्मक रूप नही दिया गया। हाँ प्रो० रामसिह जिस पक्ष के प्रधान हैं उस की ओर से पर्याप्त सहयोग दिया गया। अपना कार्यालय और कार्यालय का पूरा स्टाफ मेरे सपुर्द कर दिया गया। मै चाहता था कि वेद प्रचार का काम जो दोनों पक्षों की ओर से हो रहा है वह महात्मा आनन्द भिक्षु जी की देख रेख मे सगठित रूप से होने लगे। परन्तु यह भी अभी तक नहीं हो सका। बैंको के जो हिसाब बन्द करा दिए गये थे वे अभी तक खुल नही सके। लाला रामनाथ जी भल्ला पर यह आरोप था कि उन्होंने सभा का ९० हजार रुपया निकलवा कर अपने नाम जमा करा लिया है। ऐसा प्रचार भ्रम के कारण था। यह धन बैंक के लाकर मे रखा गया था और इसमे से कुछ भी खर्च नही किया गया अपितु इसमें और धन डालकर इसे १ लाख ३० हजार रुपया बना दिया गया। मेरे आदेश देने पर श्री रामनाथ भल्ला जी ने यह १ लाख ३० हजार रुपया आर्य प्रतिनिधिसभा पजाब के नाम बैंक मे फिक्स्ड डिपाजिट के रूप मे जमा करा दिया है। पिछले लगभग छ महीनो से मैं और मेरे साथी इस प्रयत्न में लगे रहे कि किसी प्रकार दोनो पक्ष सगठित हो कर सभा का कार्य चलाएँ परन्तु ऐसा नहीं हो सका। अब आवाजें यह सुनाई दे रही हैं कि हरयाणा, पजाब तथा देहली मे पृथक्-पृथक् आर्य प्रतिनिधिसभाएँ स्थापित कर दी जाएँ परन्तु इस मे कितनी कानूनी अडचने हैं। इस सम्बन्ध में पूरा विचार करने और सुझाव देने के लिए कानून के चार विद्वानो की एक कमेटी बना दी गयी है। इसका अन्तिम निश्चय करने के लिए आर्यप्रतिनिधिसभा पजाब का साधारण अधिवेशन बुलाना होगा। पिछले महीनों मे कितने ही पत्र मेरे पास यह जानने के लिए आये कि आर्य प्रतिनिधिसभा पजाब के झगडे समाप्त करने के लिए क्या कुछ हो रहा है। उसी जिज्ञासा के उत्तर मे यह सूचना आर्य जगत् को दे रहा हूँ।

ह० आनन्द स्वामी सरस्वती दिनांक १८-५-६९

सम्पादकीय

भारतीय मल्ल विद्या का पुनरुत्थान

अति प्राचीन काल से भारतीय राष्ट्र में मल्लविद्या का प्रशिक्षण सदा से चला आया है। गाव की झोंपड़ी से लेकर राजभवनों तक के सभी बालक और बालिकाओ को मल्लविद्या सिखलाई जाती थी। सेनाओ में सैनिक से लेकर सेनापति तक को अनिवार्य रूप से मल्ल प्रशिक्षण लेना पड़ता था। मल्ल विज्ञान को धनुर्वेद की प्राप्ति के लिये नीव के समान समझा जाता था। भारतीय इतिहास के पन्ने इस बात की साक्षी रूप पुष्टि भाव भी करते हैं। ६४ प्रकार की कलाओ में मल्ल विद्या का भी समावेश किया गया था। महाभारत इतिहास में ऐसे अनेक मल्ल विद्या विशेषज्ञों के नामों का उल्लेख मिलता है। जैसे भीम, दुर्योधन, जरासन्ध, बलराम, शल्य, भगदत्त, कीचक और घटोत्कच आदि।

यह परम्परा मुसलमानी राज्य काल के अन्त तक भारत में बनी रही। कपूरचन्द सैनी जो आगे चलकर मलिक काफूर के नाम से कहलाया, हमारे राष्ट्र में एक प्रसिद्ध पहलवान था। उसकी टक्कर की जीन्द के पास की रहने वाली सोना देवी थी, जो कि मल्लविद्या में निष्णात थी। इस देवी का जन्म भंगी कुल में हुआ था। कपूरचन्द सैनी ने इस देवी का लोहा माना था। रोहतक के समीप की रहने वाली बालब्रह्मचारिणी भागीरथी देवी इस विद्या में पारगत मानी जाती थी। मुलतान के मैदानों में जफरखां के साथ इस वीराङ्गना का युद्ध हुआ था जफरखां भी बहुत बड़ा मल्ल योद्धा था। जब दोनों की टक्कर आमने-सामने हुई तो एक ओर मुगल सेना तथा दूसरी ओर हरयाणा के पहलवानों की सेना खड़ी होकर इन दोनों वीरों का युद्ध देखने लग गई। अढाई घण्टे के पश्चात् जफरखां की आंख झपक गई। उसकी आंखें अब तक खुलने न पाई कि वीराङ्गना भागीरथी देवी का भाला जफरखा की छाती को फाड़कर पार हो गया।

तैमूर की भारत पर आक्रमण की आंधी के सामने दिल्ली में रक्त बहने लगा, तब हरयाणा के वीर पहलवान योद्धा सामने आये। तैमूर देहली को छोड़कर मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर होता हुआ अपनी ९० हजार घुड़सवार सेना के साथ हरद्वार के पास पथरी के मैदान में रुका। वहां दोनों पक्षों का घोर सग्राम हुआ। हरयाणा के पहलवान योद्धाओं का प्रधान सेनापति जि० सहारनपुर के रहने वाला जोगराजसिंह गूजर था, जो कि ६३ धड़ी वजन का था। उसका उप मुख्य सेनापति जि० हिसार का रहने वाला धूला भगी था, वह ५३ धडी वजन का था। दुर्जन सिंह रेवाड़ी के पास का रहने वाला अहीर था जो कि मल्ल विद्या का पारंगत प्रशिक्षक था। इस वीर ने मेरठ के पास बलैनी के पास तैमूरी सेना के साथ युद्ध में राष्ट्र रक्षा के लिये वीर गति प्राप्त की थी। पत्थरी के मैदान में बादली (गुलिया) के रहने वाला २२ वर्षीय मल्ल हरवीरसिंह जाट था, उसने तैमूर की सेना में घुस कर तैमूर की छाती में भाला फेंक कर मारा था। परन्तु महाभारत के चक्रव्यूह में अभिमन्यु की भांति नौजवान हरवीरसिंह शत्रु दल को भारत से खदेड़ने के लिये अपने प्राणों का बलिदान दे गया। भारतीय पहलवानों में सभी बिरादरियों के मल्ल होते थे। भंगी कुल में उत्पन्न होने वाला हरफूल उत्तर भारत के पहलवानों का मुख्य प्रशिक्षक था। मान्दसौर (ग्वालियर) के रहने वाले यशोधर्मा पहलवान ने मल्ल सेनाओं के द्वारा हूणों को परास्त करके भारत से खदेड़ दिया था। दक्षिण के विजयनगर राज्य के योद्धाओं को युद्ध कला प्रशिक्षण देने के लिये उत्तर भारत के पहलवान वहां गये थे। भारत का कोई भी भाग ऐसा नहीं था, जहां उत्कट मल्ल विद्या विशारद पहवानों ने जन्म न लिया हो। यह इतिहास हम ने सर्वखाप पंचायत के हस्त लेख-पत्रों से लिया है। यह हस्तलेख जि० मुजफ्फरनगर के सौरमगांव के चौ० कबूलसिंह जी के घर में कुछ सुरक्षित रह गया है। इसको हमने कुछ वर्ष पूर्व अपने 'सम्राट्' साप्ताहिक पत्र में प्रकाशित किया था। १८५७ ई० के स्वतन्त्रता युद्ध का इतिहास भी सम्राट् से उद्धृत करके देहली के राजधानी पत्र ने प्रकाशित किया था।

अंग्रेजी राज्य मे जहां भारतीय सभ्यता पर पाश्चात्य प्रभाव पड़ा—वहां मल्ल विद्या की जगह फुटबाल, किरिकेट, वालीबाल आदि खर्चीले खेलों ने ले ली। अंग्रेजो ने १८५७ के भारतीय सैनिक जागरण से शिक्षा लेकर ऐसा किया है। परन्तु परमेश्वर की दया से मल्ल विद्या का प्रचार गांवों में कुछ-कुछ बना ही रहा। कुश्तियों के दंगल होते रहे हरयाणा के केन्द्र दिल्ली में भी यह विद्या केन्द्र चलते रहे, जिस से चारों दिशाओं के पहलवान आकर अखाड़ों में प्रशिक्षण लेते रहे।

देहली राज्य के प्रशासन का हम धन्यवाद करते हैं कि जिसने भारत केसरी और भारत कुमार के नाम पर भारतीय दङ्गल पद्धति को पुनरुज्जीवित किया। इसके शुभ परिणाम स्वरूप समस्त भारत के राज्यों में उच्चकोटि के पहलवान दिखाई देने लगे हैं। इससे शरीर को बलिष्ठ बनाने की पुरानी प्रथा को भी प्रोत्साहन मिला है। इतना ही नहीं भारतीय विद्यार्थियों का झुकाव भी इधर हो चला है। इससे कुमारों में ब्रह्मचर्य प्रणाली का प्रचार होगा। हमारा राष्ट्र पुन पहलवानों का देश बन जावेगा।

प्रतिवर्ष यह दङ्गल होने लगे हैं। सौभाग्य से हमारे सेठ लोग भी इधर रुचि लेने लगे हैं। श्री सेठ डालमिया के संयोजकत्व में इस बार जो अभी देहली में दगल हुआ है।

इसमें जि० हिसार के सिसाह गाव के निवासी मास्टर चन्दगीराम ने दूसरी बार भारत केसरी का पट्ट प्राप्त किया तथा विद्यार्थियों में भारत कुमार का पट्ट जि० महेन्द्रगढ के सतनाली गाव के रहने वाले विद्यार्थी मुरारीलाल वर्मा ने प्रथम बार प्राप्त किया है। इस विजय से केवल हरयाणा का ही नहीं, अपितु भारतीय राष्ट्र का नाम सर्वत्र उज्ज्वल हुआ है, इन दोनों विजेताओं को हम आर्यमर्यादा के गत अंक में ही बधाई दे चुके थे। दिल्ली राज्य के जन शासक वर्ग का पुनः धन्यवाद करते हैं। आशा है, यह पद्धति बराबर चालू रहेगी।

२. दूध और मांस

ऊपर दिये गये सम्पादकीय लेख को पढने से यह भी ज्ञात हो गया कि न केवल सामान्य जीवन में मांस हानिकर है और दूध-घी अत्यन्त पौष्टिक पदार्थ हैं। मांसाहारी पहलवान बहुत देर दंगल में ठहर नहीं सकते परन्तु घी और दूध का सेवन करने वाले पहलवानों का ओज बराबर अन्त तक एक समान बना रहता है। यह इस बार के दङ्गल ने भी सिद्ध कर दिया है। हम पहलवानी=मल्लविद्या का अभ्यास करने वालों से निवेदन करते हैं कि अण्डा, मछली और (पक्षी-पशुओं के मांस का सर्वथा त्याग रखें तथा घी-दूध-फल, मेवे, अन्न, शाक, सब्जी और दाल आदि सात्विक तथा पौष्टिक पदार्थों का ही सेवन करें। मांसाहारी पहलवानों की कुसंगत से दूर रहें। सेनाओं में भी ऐसे परीक्षण हो चुके हैं। आशा है, इधर राष्ट्रवासी ध्यान देंगे।

३. भारत सरकार से—

भारत सरकार का कर्तव्य है कि भारतीय ढंग की कुश्तियों के दंगल करवाने के लिये जनता को प्रोत्साहित करे। इससे युवकों में शरीर को सुदृढ़ बनाने की प्रवृत्ति बढ़ेगी। सेना और पुलिस के लिये सबल सैनिक और पुलिस के जवान मिलेंगे। बाह्य आक्रमण के समय सेना सुसज्जित रहेगी और आन्तरिक डाकू आदि दस्यु दलों को नष्ट करने के लिये पुलिस में दृढ़ांग जवान सदा तैयार रहेंगे। सैनिकों के लिये मास बन्द करके घी अधिक देना चाहिये। मांस खाने से मनुष्य जालिम तो हो सकता है परन्तु बहादुर नही सन् १९१४ में यूरोप के प्रथम महा युद्ध में भारतीय जवानों ने फ्रांस के युद्ध स्थल पर मांस नही खाया और थोड़े-थोड़े चनों पर गुजारा किया था और जर्मनों से द्वन्द्व युद्ध मे मोर्चा छीन लिया था। यूरोप के सैनिक शीघ्र हांप जाते थे और मोर्चा छोड़ कर भागते थे। अतः सेना में भी सरकार को घी और सब्जी के विशेष प्रबन्ध करके मांस को हटाना चाहिये।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

वर्तमान समस्या :—

पूर्णमद्यनिषेध "आर्यसमाज का आह्वान"

श्री मुकुलचन्द पाण्डेय ५३, छोटा चाँदगंज, लखनऊ—७

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय जनमानस में व्याप्त कतिपय कुरीतियों में मद्यपान का स्थान उल्लेखनीय है। यद्यपि इस दिशा में अनेक समाज सुधारकों, समाज सेवियो एव युगीन प्रबुद्ध जनों ने अथक प्रयास किये परन्तु अतीतकाल से समाज के अन्तरात्मा में स्थिर इसके प्रलोभन का त्याग करने का साहस सम्भवतः लोग नही कर पा रहे हैं। मद्यप—(सुरापापीजन) इसके लिए यह कुतर्क देकर जिज्ञासा को शान्त करते हैं कि आर्य आमोद-प्रमोद तथा दैनिक व्यवहार में 'सोम' का पान किया करते थे तो उनकी सन्तति वर्तमान आर्य जाति क्यों न मद्यपान करे? आखिर इस असंगत प्रलाप के पीछे निहित क्या भावना हो सकती है; यदि यह तर्क इसलिए प्रस्तुत किया जा सकता है तो तत्कालीन वैदिक परम्पराओं के अनुपालन तथा आचरण से आर्यजन अपने को विमुख क्यों पाते हैं? यदि वे अपने पूर्वजों का याथातथ्य अनुकरण करते तो यह दुर्दशा कदापि न होती। उस समय समाज में एक विलक्षण सौहार्द पूर्ण वातावरण था, सभी एक दूसरे से मिलकर राग-द्वेष का परित्याग कर वैदिक सिद्धान्तों पर आचरण करते थे, ऋग्वेद में विहित—'संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम्' की ऋचाओं पर अक्षरशः अनुगमन करते थे, किन्तु आज की यह वैविध्यमय विभीषिका जन साधारण में कुण्ठा, अतृप्ति तथा वैर विरोध का वातावरण समुपस्थित कर देती है। सोम का अर्थ मद्य=शराब नहीं है, किन्तु स्वास्थ्य तथा बल वर्धक औषधियों का रससार है।

गढ़वाल जिले में जितनी अधिक शराब बिकती है, सम्भवतः अन्य स्थानो पर इतनी बिक्री न होती हो। सरकार को इससे अप्रत्यक्ष रूप में पर्याप्त लाभ होता है, मद्यनिषेध के अन्तर्निहित सम्भवतः यही मौलिक कारण है कि पहाड़ों पर नाना चेष्टाओं के होते हुए भी पूर्ण क्या अंशतः भी मद्यनिषेध सम्भाव्य नही हो पा रहा है।

भारत के जलवायु को ध्यान में रखकर यह स्पष्ट है कि बिना मद्यपान किये भी जीवनयापन हो सकता है, ऐसा इस तथ्य से प्रकट होता है कि समस्त पर्वतवासी सुरापान को नही करते, एक समय था जब कि यह क्षेत्र बेहद पिछड़ेपन से संत्रस्त था, वहाँ नूतन सभ्यता की वे जड़े या आधुनिक भौतिकवादिता को बातें प्रवेश नही पा सकी थी; किन्तु इसके विपरीत आज स्थिति कुछ और है। आज वहाँ भी देश के अन्य भागों की भाँति ही समस्त वस्तुएं सुलभ हैं। किन्तु संकीर्णता, अन्धविश्वास तथा आदत की आड़ में साथ ही सरकारी नियन्त्रण के अभाव में वहाँ मद्यनिषेध पर ध्यानाकर्षण नहीं हो पा रहा है, जो राष्ट्र के लिए अभिशापस्वरूप है।

आज के सामाजिक जीवन के अभिन्न अंग के रूप में शराब ऊँचे वर्ग में स्थान पा रही है। नगरों में उत्तम कोटि के बार-रेस्टोरेन्ट तथा मद्य खाने अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उल्लेखनीय बात तो यह है कि संभ्रान्तजन, राष्ट्रनायक गण तथा समाज के मार्गद्रष्टा स्वयं वहाँ पधार कर अपनी कुत्सितवृत्ति की तृप्ति करते हैं, ऐसी दशा में क्या कोरे व्याख्यान या सभाओं से मद्यनिषेध कभी भी सभव है? व्यावहारिक रूप में पहले की अपेक्षा आज इसका प्रचलन कई गुना बढ़ गया है। पूज्य बापू, महर्षि दयानन्द आदि के मन्तव्यों का अतिक्रमण कर के सरकार व जनता खुल कर इसका प्रयोग कर रही है। गोहत्या के समान यह समस्या भी समाज में व्याप्त हो कर अपना अस्तित्व समाप्त होने में कठिनता की अनुभूति करा रही है। यद्यपि आज आर्यसमाज तथा कुछ अन्य सामाजिक सस्थायें इस दिशा में सचेष्ट हैं किन्तु सामूहिक जागरूकता की आवश्यकता है ताकि इस कुवृत्ति का निराकरण सुगमता से हो पावे।

गाँधी शताब्दी वर्ष बड़े धूमधाम से मनाने की अन्तराष्ट्रिय स्तर पर तैयारियाँ हो रही हैं। भारत ही नहीं अपितु विश्व के समस्त राष्ट्रों में बड़े मनोयोग पूर्वक 'गाँधी शताब्दी वर्ष' मनाने की तैयारियाँ की जा रही हैं। गाँधी शताब्दी वर्ष के लक्ष्यों व उद्देश्यों में मद्यनिषेध का सर्वोत्कृष्ट स्थान है। भारतीय राष्ट्रनायक इस बात की दुहाई देते तथा अपने वक्तव्यों से जनता को नशाआदि से विरत रहने का परामर्श देकर अपने कर्तव्य की पूर्ति मान बैठे हैं। वे स्वयं 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' का घोष करते हैं। आज समाज में सर्वत्र इसी बात की चर्चा है; प्रत्येक दृष्टि से सैद्धान्तिक रूप से हर प्रकार के नशों का बहिष्कार अब राष्ट्रियस्तर पर लागू हो गया है परन्तु अब भी अफीम, गांजा, चरस का तस्कर व्यापार समस्या का विषय बना हुआ है। नैपाल की तराई से अब भी प्रचुर मात्रा में, गाँजा, भांग आदि चोरी-छुपे उत्तर प्रदेश, बिहार आदि राज्यों में आती है। पुलिस विभाग के सदाचारी वर्ग को गुप्त रूप से पर्याप्त लाभ हो रहा है, यही कारण है कि आज यह तस्कर व्यापार अबाधगति से राष्ट्रिय समस्या बना बैठा है।

पाश्चात्यों का अनुकरण आधुनिक समाज भौतिकवादिता के रूप में दृष्टिगत हो रहा है। भौतिकवादिता के चकाचौंध में उन सारी बातो का अनुकरण करने की चेष्टा की जा रही है जो अंग्रेज या पश्चिम के निवासी करते हैं। शराब पीना अब एक साधारण बात हो गयी है, यह मद्यपान सामाजिक दोष के रूप में नस-नस में समाविष्ट हो गया है, इसका परिहार उच्च स्तर पर क्लेशदायक तथा दुष्कर हो चला है। यद्यपि हम अपने अतीत के गौरव को यदा-कदा स्मरण करते हैं परन्तु वे कोरी अव्यावहारिक बातें ही होने के कारण कड़वी घूट की भाँति भीतर नही जातीं।

आर्यसमाज का इस दिशा में सदा से सहयोग प्राप्त होता रहा है। भारत के समस्त आर्यसमाजों, आर्यजनों तथा राष्ट्रोद्धार के इच्छुक महानुभावों का यह परम दायित्व है कि वे इस शराबबन्दी के पवित्र कार्य को करने के लिए अपना सर्वस्व त्याग कर सामाजिक अभिशाप से मुक्ति दिलाने के लिए प्रयत्नशील होवें। स्थान-स्थान पर सभाएं, प्रचारकार्य तथा पुस्तिकाओं के प्रकाशन के माध्यम से जनता को इस मद्यनिषेध के प्रति निष्ठावान होवें। इसको व्यवहृत करने की दिशा में प्राणपण से जुट जाएं, तभी समाज का सही अर्थों में कल्याण सभव है। ●

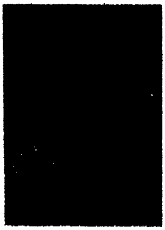
वीर विश्वास लेकर परम शक्ति का, विश्व के मार्ग को मोड़ दो

श्री भैरवदत्त शुक्ल मधुप (जोरी)

अर्थ का व्यर्थ साम्राज्य कटुघोर तम,
छा रहा आज कितना जटिल;
व्यक्ति अविवेक के पाश में बंध गये—
इस तरह, रंच सकते न हिल।
काम की वामगति साध्य-ईश्वर बनी,
हो उठा छिन्न संयम निबल;
बस 'सुरा सुन्दरी स्वर्ण' की धूम से,
काँपती दीन संसृति अखिल।
कर उदासीकरण, भ्रान्त जग के लिए,
खोज चिर शांति का छोड़ दो;
वीर विश्वास लेकर परम शक्ति का,
विश्व के मार्ग को मोड़ दो।
वर्ग की आड़ से द्वन्द्व-संघर्ष ले,
स्वार्थ हलकर रही खिलखिला—
स्वप्न मोहक दिखा 'क्रांति-परिणाम' के,
धूर्तिनी, पापिनी, पंकिला।
राष्ट्र का, राज्यका, देश का, विश्वका,
रक्त सब चूसती जा रही,—
पल रही है घृणा, स्नेह को मारकर,
दंभ—मद—मानवता को फिर खिला। ●

सांसारिक जीवन में सफलता और श्रेय का सरल साधन सदाचार

(श्री सत्येन्द्रसिंह एम० ए०, कानपुर)



सभी की यह इच्छा रहती है कि एक तो हमें जीवन में प्रत्येक कार्य में सफलता मिलती रहे और दूसरे हमें सदैव यश और कीर्ति मिले। यह एक ऐसी स्वाभाविक इच्छा है कि शायद ही कोई इसका अपवाद हो। बुरे से बुरा आदमी भी अपनी वास्तविकता दूसरे के मुख से सुनना पसंद नहीं करता, अपराधी अपने को अपराधी कहलाने में प्रसन्न नहीं, बस यही धुन लगी रहती है कि कोई हमारी बुराई न करे। सब हमें सद्भावना से सम्मानपूर्वक याद करें। जीवन में जिस कार्य पर भी हम हाथ डालें, वहां सफलता का ही वरण करें। इस मनोभावना की पूर्ति का एक सरल साधन वेद में बताया गया है।

परि माग्ने दुश्चरिताद्बाधस्वा मा सुचरिते भज ।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृतॉं अनु ॥ यजुर्वेद ४।२८

इस मंत्र में परम पिता परमात्मा से प्रार्थना की गई है कि हे (अग्ने) प्रकाशस्वरूप और ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! आप (मा) मुझे (दुश्चरितात्) दुराचार से (परिबाधस्व) दूर हटाओ, रोको और (मा) मुझको (सुचरिते) सदाचार की ओर (भज) लगाओ, प्रेरित करो, स्थापित करो। मैं (अमृतान्) श्रेष्ठ, सदाचारी, जीवन-मुक्त महापुरुषों का (अनु) अनुगमन करके अपने जीवन को उत्कृष्ट बनाऊं, दीर्घायु प्राप्त करू और उत्तम मार्ग में स्थिर रहूँ। यदि वास्तव मे कोई दुराचार के मार्ग पर जाने से रुककर सदाचार के मार्ग पर स्थिरता से अग्रसर हो जाय तो यह निश्चित है कि उसका जीवन श्रेष्ठ हो जायेगा। श्रेष्ठ जीवन की सर्वत्र प्रशंसा होती है। जब कोई अपयश का काम ही नहीं करेगा तो उसे अपयश क्यों मिलेगा ? दूसरी बात सदाचार से यह होगी कि हम उत्तम दीर्घ आयु को प्राप्त होंगे। सड़क के किनारे बैठकर मांगने वाला अपाहिज भी मरना नहीं चाहता। सब दीर्घायु होने की प्रबल इच्छा रखते हैं। सदाचार युक्त जीवन से ही आयु बढ़ती है। दुराचार को अपनाना तो मृत्यु को लिखित निमन्त्रण है। उदस्थाम्—हम उत्तम मार्ग में स्थित होंगे। हीनता और हेय से हटकर श्रेय को प्राप्त होंगे। हमारी महती इच्छा की पूर्ति का साधन यह सदाचार है। सरल साधन इसको इस लिए बताया है कि सदाचारी होना सब के लिए अपने बस की बात है, यदि हम इस मार्ग पर चलने के लिए कृत-संकल्प हों तो कोई हमें रोक नहीं सकता और न ही हम पर सदाचारी होने में ऐसा कोई अतिरिक्त व्यय पड़ेगा कि जिसका वहन करना कठिन हो—इसमें तो लाभ ही लाभ होंगे।

सदाचार के जो-जो लाभ हैं उनको सुनकर ही मन ललचाता है कि हम अवश्य सदाचारी बनें परन्तु जो इस लालच को अनुभव न करते हों वे मनुस्मृति का यह श्लोक अवश्य पढ़े जिसमें दुराचारी होने की हानियां बताई गई हैं। मेरा तो यह विश्वास है कि उन हानियों को दृष्टि में रखते हुए सब दुराचार को छोड़ने के लिए अवश्य प्रेरित होंगे।

दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः ।
दुःखभागी च सततं, व्याधितो अल्पायुरेव च ॥ मनु० ४।१५७

दुराचारी पुरुष की संसार में जीवन भर निन्दा होती है। कभी उसे यश नहीं मिलता। यह तो दुराचारी होने की प्रथम हानि है जिसने यश प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा को ठिकाने लगा दिया। दूसरी हानि है कि दुराचारी के हिस्से में सदैव दुःख ही दुःख आते हैं, सुख कभी नहीं। सुख आयेंगे भी कहां से, वे तो सब के सब सदाचारी मनुष्यों के हिस्से में जो चले गये। दुराचारी पर तो (सततम्) निरन्तर दुःख ही दुःख आते रहेंगे, वह कभी दुःखों से मुक्त नहीं हो सकता—यह निश्चित है। व्याधितः—तीसरी हानि दुराचारी होने की है कि वह सदैव रोग-ग्रस्त रहता है। हो सकता था कि केवल दुःखों से तो वह शायद जीवन भर संघर्ष करके निपटता भी रहता परन्तु उसका दुराचार उसे संघर्ष करने के योग्य छोड़ता ही नहीं। उसे व्याधियां चारों ओर से घेरे रहती हैं। एक रोग-ग्रस्त और दुःखी व्यक्ति लगभग असहाय जैसा ही हो जाता है। फिर उसे किसी काम में सफलता भी मिल सकती है—यह बात विश्वास के नाम पर गले से नीचे नहीं उतरती। तो जैसे श्रेय और यश उसके हाथ से गया वैसे ही सफलता भी जाती रही। और अभी चौथी हानि (च) और शेष है, वह यह कि वह (अल्पायुरेव) दीर्घायु नहीं प्राप्त कर सकता। उसकी दीर्घायु होने की कामना दिल को दिल में ही रह जाती है, जीवन को तो उसके दुराचार से आमंत्रित दुःख और व्याधियां भीतर ही भीतर क्षीण और अल्प बना देते हैं। इसीलिए तो भक्त परमात्मा से प्रार्थना करता है कि मुझे दुराचार से हटाकर सदाचार के मार्ग पर लगाओ। संस्कृत के एक कवि ने तो दुराचारी अर्थात् दुर्जन के सामीप्य को भी वर्जित बताया है।

दुर्जनेन समम् सख्यम् प्रीतिम् चापि न कारयेत् ।
उष्णो दहति चाङ्गारः शीतो कृष्णायते करम् ॥

दुर्जन (दुराचारी) के साथ कभी मित्रता और स्नेह न करे। उसका सम्पर्क इसी प्रकार हानिकारक है जैसे गरम आग हाथ में लेने से हाथ जल जाता है पर यदि ठण्डा होने पर भी उस आग को हाथ में उठावें तो हाथ जले भले ही नही, काला अवश्य हो जायेगा। यह कौन-सी कोई कम हानि है। इसलिए दुराचार तो सब प्रकार से त्याज्य ही है।

और जिस महर्षि दयानन्द सरस्वती को हम अपना गुरु मानते हैं उन्होंने तो वेद और वैदिक मान्यताओं को प्रकाश में लाने के लिए अपना जीवन ही लगा दिया। महर्षि ने एक मान्यता यह भी हम लोगों के सामने रक्खी कि आचार ही धर्म है इसलिए हम लोगों का तो वैसे भी कर्तव्य बनता है कि अपने गुरुवर महर्षि दयानन्द के उपदेश को मानें और आचार को "सत्" विशेषण सहित अपनावें। जैसे सदाचारी (आचारवान्) होना और धार्मिक होना पर्यायवाची है वैसे ही "दुराचारी" और "आचारहीन" शब्द भी समानार्थी हैं। अधर्म से युक्त होने की क्या हानियां हैं वे महाभारतकार ने निम्न श्लोक में बताई हैं।

अधर्मेण समायुक्तो यमस्य विषयम् गतः ।
महद्दुःखम् समासाद्य, तिर्यकयोनौ प्रजायते ॥

अधर्म से युक्त व्यक्ति यमलोक बन्धन रूप नरक को जाता है। जिस किसी से हमारी शत्रुता होती है उसके सम्बन्ध में कोई अन्य व्यक्ति आकर हमसे यदि कुछ कहने लगता है तो हम उपेक्षा भाव से यही कह देते हैं..."छोड़िए भी किसकी बात लेकर बैठ गये, हमारे हिसाब तो वह जहन्नुम में जाये"। अधर्म से युक्त व्यक्ति जिस यमलोक (जहन्नुम) में जाते हैं उसमें हम नहीं जाना चाहते, हम वहां अपने शत्रुओं को भेजना चाहते हैं। परन्तु यदि थोड़ी देर के लिए यह मान भी लें कि चलो नरक मिलेगा तो नरक ही सही, वहीं जाकर रह लेगें, इस जीवन में तो सदाचारी धर्मात्मा बनने के लम्बे चौड़े गोरखधंधे से बचें—कहीं ऐसा न सोच लेवें इसीलिए तो महाभारतकार ने श्लोक की दूसरी पक्ति में स्पष्ट कर दिया है कि वह यमलोक किसी ऐसी दूसरी दुनिया का नाम नहीं है कि जहां पहुंचकर अधर्मात्मा दुराचारी लोगों को रहने के लिए फ्लैट वगैरा मिलने की व्यवस्था हो। वह यमलोक तो इसी जीवन में महान् दुखों के रूप में प्राप्त होता है जीवन में प्राप्त होने वाले (महद्दुःखम्) महान दुःखों का नाम ही नरक है और रही सही कसर तब पूरी हो जाती है जब मृत्यु के पश्चात् कीट पतंगों की योनि में जन्म लेना पड़ता है। इंग्लैण्ड में किसी स्त्री को old cat कहना

शेष पृ० ६ पर

'विद्यार्थी जीवन'

(श्री रमाकान्त दीक्षित एम ए एल टी भिवानी)

पहले-पहल मनुष्य सामान्य अवस्था मे रहा करता था। समाज के आज जैसे विकसित रूप का किस को पता था। यह सब कुछ परस्पर मनुष्य की सहयोग भावना का ही परिणाम है। पहले न आज जैसे विद्यार्थी थे और न विद्यालय ही थे।

प्राचीनकाल मे जैसे-जैसे शिक्षा का प्रसार हुआ वैसे-वैसे कुछ विद्या के केन्द्र भी खुले। परन्तु ये केन्द्र किसी नगर में नही थे, बल्कि किसी ऋषि मुनि अथवा सन्यासी द्वारा, नगर के कोलाहल से दूर वन की प्राकृतिक छटा में खोले गये थे। जैसे मुनि वशिष्ठ, सदीपन ऋषि आदि के आश्रम। इन आश्रमो मे चाहे वह राजा का पुत्र हो अथवा रक का, सब एक साथ विद्या सीखते थे। उन्हें आश्रम में एक साथ रहना पडता था। आश्रम के नियमो का पालन करना होता था। विद्यार्थी गुरु के पास २५ वर्ष अथवा अधिक अवस्था तक विद्या ग्रहण करता था।

२५ वर्ष की अवधि का भी एक कारण है। साधारण रूप मे मनुष्य की आयु १०० वर्ष की मानी गई थी। उस आयु को २५-२५ वर्ष के चार भागो मे बाँटा गया था।

(१) ब्रह्मचर्याश्रम—आरम्भ से २५ वर्ष, (२) गृहस्थाश्रम —२६ से ५० वर्ष (३) वानप्रस्थाश्रम—५१ से ७५ वर्ष, (४) सन्यासआश्रम—७६ से १०० वर्ष।

ब्रह्मचार्याश्रम मे पहले २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य पूर्वक निष्ठा के साथ गुरु के पास आश्रम मे रह कर विद्या ग्रहण करने का विधान था। इसका कारण यह है कि यह आश्रम शेष तीन आश्रमो का आधार माना गया है। यदि किसी भवन की नीव कच्ची होगी तो वह कभी भी गिर सकता है। इसी प्रकार मनुष्य का जीवन भी एक महल के समान है, और ब्रह्मचर्याश्रम उसकी पक्की नीव है। यदि मनुष्य ने विद्यार्थी जीवन मे विद्या के समय को न समझकर अपना जीवन व्यर्थ की बातो मे खो दिया तो समझना चाहिए कि उसने अपने पैरो मे आप ही कुल्हाडी मार ली है। प्राचीनकाल के विद्यार्थी नियमो का बडी दृढता के साथ पालन करते थे। गुरु का आदर करते थे। मन लगाकर विद्या पढते थे। इसी लिए हमे राम, कृष्ण, सुदामा जैसे विद्यार्थी देखने को मिलते है, जिन्होने ससार के महापुरुषत्व को प्राप्त किया।

वास्तव मे देखा जाए तो विद्यार्थी जीवन, जीवन की कुञ्जी है। जिसने भी अपने विद्यार्थी जीवन को हर प्रकार से समाला और दृढ किया। उसे उसका बाद मे फल भी अच्छा ही मिला है।

विद्यार्थी यदि विद्या प्राप्त करना चाहता है तो उसे सुखो से मुह मोडना होगा। कहा भी है '—

"सुखार्थिन कुतो विद्या, विद्यार्थिन कुतो सुखम्।"

अर्थात् सुख चाहने वाले को विद्या कहाँ और विद्यार्थी को सुख कहाँ ?"

विद्यार्थी को विद्या ग्रहण करने में बगुले जैसा एकाग्रचित होना चाहिए कौव्वे जैसा फुर्तीला होना चाहिए। उसकी श्वान जैसी निद्रा होनी चाहिए और सात्विक आहार के साथ मन मे पवित्र विचार होने चाहियें। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी के हृदय मे अपने से बडो के प्रति आदर भाव होना चाहिए। छोटों के प्रति प्रेमभाव होना चाहिए। इसके साथ ही विद्यार्थी विनय भावना का होना भी परमावश्यक है। क्योकि विद्या विनय सिखाती है यदि विद्यार्थी जीवन मे विनय का अभाव हुआ तो विद्यार्थी जीवन का कुछ भी महत्त्व नही है। कहा भी है —

"विद्या ददाति विनयम्"

इस प्रकार जिस विद्यार्थी मे ये गुण होंगे वास्तव मे वही विद्यार्थी कहलाने का अधिकारी है। ऐसा विद्यार्थी ही आगे चलकर महापुरुष बनता है, और देश का नाम उज्ज्वल करता है। गांधी जी ऐसे ही विद्यार्थियों मे से थे।

आज हम देखते हैं कि विद्यार्थी ने अपने कर्तव्य को भुला दिया है और अपने अधिकारों की मांग बडे जोरदार शब्दों में करता है। आये दिन हडताल आदि कराना उसके खेल हो गए हैं। उसके हृदय मे गुरु के प्रति आदर भाव का अभाव उसकी हीनता का परिचायक है। आज का विद्यार्थी विद्या ग्रहण करने में तो उतना समय नही लगाता जितना कि सैर सपाटे, आवारा घूमने, सिनेमा देखने और अपने को सिनेमा के हीरों की तरह सजाने सवारने में लगाता है। यह विद्यार्थी के लिए एक दुखपूर्ण बात है। आज के विद्यार्थी को तो और सभल कर चलने की आवश्यकता है। उसे अनुशासन मे रह कर अपने जीवन को ऊंचा उठाना है। माता-पिता की और गुरु की सेवा करके उनसे आशीर्वाद लेना है और आज देश में फैली हुई अनेक राजनीतिक पार्टियो के हथकडो से बचना है तभी उसका विद्यार्थी जीवन सफल हो सकता है। ●

[विशेष—माननीय लेखक महोदय से निवेदन है कि कृपया गुरु के कर्तव्य पर भी प्रकाश डाल कर कृतार्थ करें।—सम्पादक]

पृ० ५ का शेष

बहुत बडी गाली है जिसे सुनकर बुरा मानना स्वाभाविक है परन्तु अधर्म से युक्त होने पर तो बिल्ली से भी हीन कीट पतगो की योनि मे जन्म लेना पडता है, केवल किसी योनि का नाम सुनना या लेना मात्र ही पर्याप्त नही हो जाता। यह है महाभारतकार का दृष्टिकोण।

जब हम दुराचार और सदाचार जैसे सामान्य समझे जाने वाले विषयो पर गहराई से विचार करते हैं तो इसी निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि इस ससार मे सफल व्यावहारिक जीवन के लिए सदाचार ही एक मात्र उपाय है। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने तो सदाचार और अच्छाइयो के महत्व पर बडा बल दिया है। इस प्रकार की प्रेरणा देने वाला एक अन्य मत्र महर्षि को बडा प्रिय था। प्रार्थना-मत्रो मे महर्षि ने उसको प्रथम स्थान पर रखा है।

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रम् तन्न आ सुव ॥ यजुर्वेद ३०।३

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप, सब के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुखो को दूर कर दीजिए। जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं वह सब हमको प्राप्त कीजिए। (ऋषि भाष्य से)

स्पष्ट है कि दुराचार और दुर्व्यसनों के साथ दु खो का योग है और सदाचार के साथ सुखो का, मगल का और कल्याण का योग होना अवश्यम्भावी है। मैंने अपने एक अन्य लेख मे भी निवेदन किया था कि 'आचार' (सदाचार) शब्द का अर्थ बडा विस्तृत है जिसके अन्दर व्यक्ति विशेष के गुण, कर्म, स्वभाव और विचारधारा आदि सब आ जाते हैं। जितना जितना हम आचारवान् बनते जायेंगे उतना ही हम श्रेय के भागी होगे। इस मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा वेद के मन्त्रो और वेदानुकूल ग्रथो के श्लोको तथा वाक्यो से मिलती है एक सुपरिचित श्लोक लिखकर मैं अपनी बात को समाप्त करूगा।

अभिवादनशीलस्य नित्यम् वृद्धोपसेविन ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयु विद्या यशो बलम् ॥ मनु० २।१२१

ऐसे-ऐसे नुस्खों को अवश्य प्रयोग में लाना चाहिए। साधारण-सी बातें हैं परन्तु इनको अपनाने से लाभ महान् होता है। जीवन मे सब प्रकार से सफलता हमे प्राप्त होती है, यश मिलता है और हम दीर्घायु को प्राप्त करते हैं। सदाचार का यह सिद्धान्त भूमण्डल के सभी प्रदेशों के लिए एक समान ही उपयोगी और व्यावहारिक है, इसके अभाव में सफलताए भी विफलताओ का रूप धारण कर लेती हैं॥ ●

प्रश्न-उत्तर

(प्रश्न) इतिहास को प्रमाण कोटि में मानना चाहिये। अथवा नही ?

—श्री अभिलाष सिंह, पचौमी (जि० बरेली)

उत्तर—इतिहास, शब्द प्रमाण के अन्तर्गत है। न्याय दर्शन १ १ ७ में कहा है—"आप्तोपदेश शब्द"॥ अर्थात् आप्त का वचन शब्द प्रमाण कहलाता है। पूर्ण आप्त तो परमेश्वर ही है अत उनका वेदवचन शब्द प्रमाण है। परन्तु वेद में कोई अनित्य इतिहास नही है। वेदानुकूल आचरण करने वाले आप्त विद्वानो ने जो इतिहास बनाये हैं। वे सब अनित्य हैं। इतिहास—पुराने वृत्तान्तो का वर्णन करता है, उनमे वैदिक सिद्धान्त की अनुकूलता अथवा प्रतिकूलता का प्रश्न ही नही, इतिहास मे वर्णित बातो को मानना चाहिये परन्तु उसमे सृष्टिक्रम के विपरीत बातो को नही। इतिहास मे नई-नई खोज होती रहती है, अत किसी विद्वान् ने जो इतिहास लिखा, उसमे नई खोज होने पर दूसरी घटना का पता चले तो इसमे सिद्धान्त की कुछ हानि नही। इतिहास चाहे एक व्यक्ति का हो समाज का हो, राष्ट्र का हो अथवा विश्व का है। सिद्धान्त का प्रश्न धार्मिक-दार्शनिक मन्तव्यो मे होता है। इतिहास मे नही।

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

यजुर्वेद वृहद्यज्ञ

हमारे घर (ग्राम शिकोहपुर निकट बडौत-मेरठ) मे यजुर्वेद वृहद्यज्ञ दिनाक २२ से २७ मई ६९ (गुरुवार मगवार) साय व प्रात दोनो समय सम्पन्न होने जा रहा है। यज्ञ की सफलतार्थ पण्डित मेधावी जी शास्त्री (मध्य प्रदेश), पण्डित हरपाल जी शास्त्री, आर्योपदेशक, श्री ब्रह्मसिंह जी आचार्य, जनता कालिज, बडौत, पधार रहे हैं इसी कार्यक्रम में उक्त महानुभावो के सुन्दर व मधुर प्रवचन तथा महाशय बेगराज जी के सुरीले व ओजस्वी भजन होगे। अत सभी भाई बहनो से प्रार्थना है कि इस महान् यज्ञ के शुभ अवसर पर ठीक समय पर पहुंचकर धार्मिक लाभ उठावें।

यज्ञ का समय

प्रात ७ बजे से ९॥ तक तथा साय ५ बजे से ६॥ तक

प्रवचन का समय

प्रात ९॥ से १०॥ मध्याह्न २॥ से ४॥ तथा रात्रि ८ से १०, पूर्णाहुति २७ मई साढे नौ बजे

निवेदक—राजेन्द्र-सतोष

आर्य कुमार परिषद् जि० मेरठ

१ आर्य समाजों से प्रार्थना —

आर्य समाजों को सूचित किया जाता है कि दिनाङ्क २१, २२, २३, जून को आर्यसमाज थापर नगर मेरठ में "भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्" का निर्माण किया जायेगा। जिससे की आर्यसमाज का प्रचार कुमारों में हो सके। अत सभी आर्य समाजें अपने नगर एव जिले की आर्य कुमार सभाओं की सूची शीघ्र भेजने का कष्ट करें। जिससे कि सभी आर्य कुमार सभाओ के प्रतिनिधियो को पधारने के लिए निमन्त्रित किया जा सके।

बहादुरगढ़ (रोहतक) में ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर

राष्ट्रधर्म तथा मानवता के सबल रक्षक आत्मशुद्धि आश्रम, सुखदेव-धर्मशाला, नई बस्ती बहादुरगढ में ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर का आयोजन २३ जून ६९ से २९ जून ६९ तक किया जा रहा है। जिसमे उच्चकोटि के विद्वानो तथा भजन उपदेशको के प्रतिदिन उपदेश हुआ करेंगे। शिविर में १० वर्ष की आयु से ऊपर के विद्यार्थी एव युवक ही भाग ले सकेंगे। शिविर में प्रतिदिन सन्ध्या, हवन, आसन, व्यायाम की रीति, वादविवाद तथा भाषणो की शिक्षा दी जाएगी।

सूचना—शिविर में पूर्ण रूप से भाग लेने वाले विद्यार्थी एक थाली, एक लोटा, एक कटोरी, एक चम्मच, आधा सेर घृत, आधा पाव तेल, कापी पेंसिल, दो लगोट, एक तौलिया तथा ऋतु अनुकूल बिस्तर साथ लावें। भोजन एव स्थान का प्रबन्ध आश्रम की ओर से किया जायेगा। शिविर मे भाग लेने वाले विद्यार्थी १५ जून से पहले कार्यालय आत्मशुद्धि आश्रम, बहादुरगढ मे अपने नाम तथा १ रुपया शिविर शुल्क भेज दें।

मन्त्री —सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् धर्मपाल आर्य बी, ए

व्यवस्थापक—धर्मवीर 'सन्तोषी'

-शिविराध्यक्ष सयोजक —सूबेसिंह पहलवान नूना माजरा

आत्मशुद्धि आश्रम, बहादुरगढ (जि० रोहतक) हरयाणा

२ आर्य कुमार सभाओं को सूचना —

आर्य कुमार सभाओ को सूचना दी जाती है कि सभी आर्य कुमार सभायें अपने प्रतिनिधियो के नाम शीघ्र भेजने का कष्ट करें। उत्सव में अनेक महानुभाव पधारेगे। पत्र व्यवहार मन्त्री, आनन्द प्रकाश आर्य, २४ खिडकी बाजार हापुड (मेरठ) से करें।

पुस्तक समालोचना

नाम पुस्तक युग निर्माण

लेखक—श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, आगरा

पूर्वप्रधान—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

पृष्ठ सख्या १२० मूल्य २ रु० ५० पैसे।

समालोचना- लेखक महानुभाव एक अनुभवी अच्छे वक्ता भी हैं समस्त जीवन वैदिक धर्म और आर्यसमाज के प्रचार मे व्यतीत किया है इस से पूर्व भी आप चरित्र निर्माण कर्म्म व्यवस्था और विश्व की पहेली आदि उत्तम पुस्तको का लेखन कर चुके हैं जिनसे सर्वसाधारण जनता भी पढकर भाल उठाती है। आलोच्य पुस्तक 'युग निर्माण" को आपने भूमिका और उपसहार के अतिरिक्त पाच भागो मे विभक्त किया है। १ युग निर्माण, २ अरमान का युग (विज्ञान का युग,)३ सामान युग, ४ पुन निर्माण का युग और ५ ईमान का युग। पुस्तक की भाषा सरल है पुस्तक मे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की आर्थिक समस्या का समाधान तथा इन तीनो का आध्यात्मिकता के साथ योग कैसे रह सकता है। इस पर मनोविज्ञान के रूप मे वर्णन किया है। पुस्तक मे ईमान निर्माण पर पूरा बल दिया गया है। भूमिका मे आप लिखते हैं—'ईमान की सुरक्षा के बिना आजादी बरबादी का रूप धारण कर सकती है। विज्ञान मनमानी करना सिखा सकता है और आर्थिक उन्नति अनर्थ का रूप धारण करके जीवन की प्रक्रिया को व्यर्थ बना देती है। यदि बडा बनना है तो पहले भला बनना होगा।" लेखक अपनी कृति मे सफल हुए हैं। पढे लिखे सज्जनों को इस पुस्तक को अवश्य पढना चाहिये, चाहे वे किसी विभाग मे कार्य करते हो। पुस्तक उपादेय है।

पत्रिका समालोचना—

"मधुरलोक" के मई मास का "आर्यवीर" विशेषाङ्क हमारे सामने हैं। इसके सम्पादक और मालिक श्री राजपालसिह शास्त्री हैं। यह पत्र मासिक रूप मे मधुर लोक-कार्यालय २८०४ बाजार सीताराम, दिल्ली-६ से प्रकाशित होता है विशेषाङ्क का मूल्य एक रुपया है। सचित्र है। पृष्ठ सख्या १४० है। मूल्य ठीक है। साधारण मूल्य पाच रुपये वार्षिक है।

वर्तमान विशेषाङ्क मे आर्यसमाज के अनेक सुप्रतिष्ठित विद्वानो के लेख और कविताए हैं। 'आर्यवीर" दल और आर्यसमाज की वर्तमान गतिविधि पर विशेष प्रभाव डाला गया है। इस सम्बन्ध मे अच्छी सामग्री एकत्र की गई है। आर्यसमाज के प्रख्यात विद्वान् प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" ने वैदिक युद्ध विद्या पर वेद मन्त्रो से उत्तम विवेचन किया है, लेख मनन योग्य है। वैसे लेखादि सामग्री सभी विचार करने योग्य है। "श्री ज्ञानीजी" का लेख किन्ही सज्जनो को रुचिकर हो अथवा न हो, परन्तु हम सब आर्यो को अपने-अपने अन्त करण से टटोलने की उत्तम प्रेरणा इसमे दी गई है। हितकारी कटु औषधि के ग्रहण से मुख कडवा हो सकता है। परन्तु शरीर को स्वास्थ्य प्रदान होता है, इस मे सन्देह नही। हम सभी लेखक महानुभावो और सम्पादक जी को इस कृति के प्रकाशन पर बधाई देते हैं।

—जगदेवसिहसिद्धान्तीशास्त्री

"वेदों में विज्ञान"

(ले० श्री अनूपसिंह, बी. ए. दयानन्दभवन, मुजफ्फरनगर)

१९ वीं शताब्दी के वेदों के सबसे बड़े विद्वान् महर्षि दयानन्दजी ाराज ने उद्घोषणा की कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है'। ु विद्वान् तो वेदों में केवल आध्यात्मिक विषय ही मानते थे परन्तु र्षि दयानन्द ने सप्रमाण सिद्ध किया कि, "वेदों में अवयव रूप विषय तो ेक हैं, परन्तु उनमें चार मुख्य हैं—(१) एक विज्ञान अर्थात् सब पदार्थों यथार्थ जानना (२) दूसरा कर्म (३) तीसरा उपासना और (४) था ज्ञान है। विज्ञान उसको कहते हैं कि जो कर्म, उपासना और ज्ञान ा तीनों से यथावत् उपयोग लेना, और परमेश्वर से लेके तृणपर्यन्त ार्थों का साक्षाद्बोध का होना, उनसे यथावत् उपयोग का करना, इससे ् विषय इन चारों में भी प्रधान है, क्योंकि इसी में वेदों का मुख्य त्पर्य है। सो भी दो प्रकार का है—एक तो परमेश्वर का यथावत् ज्ञान ोर उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना, और दूसरा यह है कि उसके वे हुए पदार्थों के गुणों को यथावत् विचार के उनसे कार्य सिद्ध करना र्थात् ईश्वर ने कौन-कौन पदार्थ किस-किस प्रयोजन के लिए रचे हैं।"

(ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका)

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुर.। पितरं च
प्रयन्त्स्वः ॥ यजु० अ० ३। मं० ६ ॥

सूर्य्यं एकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः ।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिराव पन महत् ॥

(यजु० अ० २३। म० १०।)

ऊपरलिखित वेद मत्रों की वैज्ञानिक व्याख्या करते हुए महर्षि यानन्द "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में लिखते हैं—"गौ नाम है पृथिवी, र्य्य, चन्द्रमा आदि लोको का। वे सब अपनी-अपनी परिधि में, अन्तरिक्ष े मध्य मे, सदा घूमते रहते है। परन्तु जो जल है, सो पृथिवी की माता े समान है। क्योंकि पृथिवी, जल के परमाणुओ के साथ अपने परमाणुओं े सयोग से ही उत्पन्न हुई है और मेघमण्डल के जल के बीच मे गर्भ के समान सदा रहती है। और सूर्य उसके पिता के समान है, इससे सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसी प्रकार सूर्य का पिना वायु और आकाश माता था चन्द्रमा का अग्निपिता और जल माता। उनके प्रति वे घूमते हैं। इसी प्रकार से सब लोक अपनी-अपनी कक्षा में सदा घूमते हैं।"

"इस संसार में सूर्य ही एकाकी अर्थात् अकेला विचरता और अपनी ही कील पर घूमता है, तथा प्रकाश स्वरूप होकर सब लोगों को प्रकाश करने वाला है। उसी सूर्य के प्रकाश से चन्द्रमा प्रकाशित होता है। शीत का औषध अग्नि है। पृथिवी साकार चीजों के रखने का स्थान तथा सब बीज बोने का बड़ा खेत है।"

महर्षि दयानन्द की वैज्ञानिक व्याख्या को देखकर ही उनके विषय में श्री 'अरविन्दघोष' ने लिखा है—"दयानन्द के इस विचार में कुछ भी अतिशयोक्ति नही कि वेद में विज्ञान तथा धर्म के समस्त तथ्य विद्यमान हैं। यहां मैं स्वयं भी अपनी धारणा देना चाहता हूं कि वेद में वे समस्त तथ्य भी विद्यमान हैं जिन्हें अभी तक आधुनिक विज्ञान नही खोज सका।"

बड़े खेद के साथ लिखना पड़ना है कि एतद्देशीय अधिकांश विद्वान् एवं नवयुवक मानसिक दासता के शिकार हो गए हैं। ऐसे सज्जन प्राचीन ऋषियों के बचनो एव धार्मिकग्रन्थों को प्रमाण न मानकर, पाश्चात्य विद्वानों के बचनों को ही प्रमाण मानते हैं। उनके लिए हम कुछ निष्पक्ष पाश्चात्य विद्वानों के मन को उनकी ही भाषा में उद्धृत करते है जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि वेदों में विज्ञान है।

"Astonishing fact ! The Hindu Revelation (the Veda) is all of relevations the only one whose ideas are in perfect harmony with modern science." (M Jacolliot)

"We have all heard and read about the ancient religion of India It is the land of the great Vedas, the most remarkable works containing not only religious ideals for a perfect life, but also facts which all the science has since proved true. Electricity, Redium, Electrons, Airship all seem to be known to the seers who found the Vedas." (Mrs. Wheeler Willax.)

W D.Brown, an english schelor writes in his book "Superiority of the Vedic Religion."

"It (Vedic Religion) recognises but one God. It is a throughly scientific religion, where religion and science meet hand in hand. Here theology is based upon science and philosophy."

कुछेक मंत्र श्री रामनाथ कश्यप द्वारा लिखित पुस्तिका "वेदों में विज्ञान" से प्रमाणरूप में प्रस्तुत करते हैं।

अतः परिज्मन्ना गहि दिवो वा रोचनादधि ।

समस्मिन्नृञ्जते गिरः ॥ (ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ६ मं० ९)

हे वायो ! हे (परिज्मन्) सब दिशाओं में जाने में समर्थ एवं सब पदार्थों को ऊपर नीचे फेंकने में समर्थ तू (दिवः) सूर्य के प्रकाश से (वा) और (रोचनात्) मेघमण्डल से (अधि आ गहि) आ। (अस्मिन्) इस तुझ में ही (गिरः) वाणियाँ सम् ऋञ्जते) प्रगट होती हैं। जिस प्रकार वायु ही सब दिशाओं में बहता है, वही मेघों में विचरता है उसी के कारण मेघ गर्जन रूप अन्तरिक्षस्थ वाणी प्रकट होती है।

अप्स्वन्तरममृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये ।
देवा भवत वाजिनः। (ऋ० मं० १ सू० २३ मं० १९)

हे (देवाः) विद्वान् पुरुषो ! (अप्सु अन्तः) जलों के भीतर (अमृतम्) मृत्युकारी रोग का निवारण करने वाला परमरस, जीवनरूप विद्यमान है और (अप्सु) जलों में ही (भेषजम्) सब रोगों को दूर करने का बल भी है। (उत) और (प्रशस्तये) उत्तम गुण और बल उन्नति के प्राप्त करने के लिए आप लोग (वाजिनः) उत्तम ज्ञान और बलयुक्त (भवत) होवे। (जलचिकित्सा)

शतं वा यः शुचीनां सहस्र वा समाशिराम्। एदु
निम्न न रीयते ॥ (ऋ० मं० १ सू० ३० मं० २)

वह विद्युत् (शचीना शतं) क्रान्ति वाले धातु के बने सैकड़ों और सहस्रों आश्रय द्रव्य के प्रति ऐसे वेग से आता है जैसे जल नीचे स्थान पर बह जाता है। विद्युत् सुवाहक धातु के बने पदार्थों और आश्रय स्थान मेघ पृथिवी आदि पदार्थों पर भी शीघ्रतया से जल के समान आ दौड़ता है। इसी प्रकार ताप भी जैसे जल नीचे आ जाता है वैसे संग लगे अल्प ताप वाले पदार्थों में सुगमता से फैल जाता है।

ऋतस्य देवा अनुव्रता गुर्भुवत् परिष्टिर्द्यौर्नभूम ।
वर्धन्तीमापः पन्वा सुशिश्विमृतस्य योना गर्भे सुजातम् ॥

(ऋ० मं० १ सू० ६५ मं० २)

जैसे सूर्य के प्रकाश से सब पदार्थ दृष्टि में आते हैं वैसे ही विद्वानों के संग से वेद विद्या के उत्पन्न होने और धर्माचरण की प्रवृत्ति में परमेश्वर और बिजली आदि पदार्थ अपने-अपने गुणकर्म स्वभावों से अच्छे प्रकार देखे जाते हैं॥ ऐसा तुम लोग जानकर अपने विचार से निश्चित करो॥

(ऋषि दयानन्द के भाष्य के भावार्थ से)

अग्नि और जल में विद्युत गुप्त रूप से निहित है।

एक प्रश्न जो युवा पीढ़ी के मन को आन्दोलित करता है यह है कि क्या कारण है जब वेदों में विज्ञान है तो आजकल वैदिक विद्वानों ने क्यों वैज्ञानिक आविष्कार नहीं किए। पाश्चात्य विद्वानों ने जिनमें से अधिकांश ने तो वेदों का नाम भी नहीं सुना होगा, जलतल, भूतल और नभस्तल में आश्चर्यजनक अन्वेषण कर दिखलाये।

आज से कुछ शताब्दियों पूर्व जबकि पाश्चात्य संसार के लोगों को अपने शरीर को ढकने का भी ज्ञान नहीं था; उस समय यह आर्यावर्त देश वैज्ञानिक उन्नति के शिखर पर था। यह एक ऐतिहासिक सत्य है। एतद्देशीय लोगों ने सब उन्नति वेदों के आधार पर ही की थी। अब क्यों

शेष पृ० ११ पर



महिलाओं का योगदान— रूढिवाद को मिटाने में

(कु० सुशीला आर्या एम० ए० विद्यावाचस्पति चरखी दादरी)

● आकाशवाणी द्वारा प्रसारित भाषण ●

बदलते रहना संसार का स्वभाव है। समय के प्रवाह में पड़ कर हर पुरानी वस्तु बह जाती है और नई उसका स्थान लेती रहती है। जो मनुष्य समय के इस बहाव का ध्यान न रख कर पुराने और पिछले से ही चिपटा रहता है वही रूढिवादी कहलाता है। विद्वानों का कहना है कि पुरानी होने से ही कोई चीज अच्छी नहीं कही जा सकती न ही नई होने से बुरी। यह तो हमारी समझ की बात है कि हम अच्छी बातें पुराने जमाने की भी ले लें किन्तु जिन विचारों रीति रिवाजों में कोई सार नही, जो नये जमाने के सांचे में फिट नही बैठते उनके भी हाथ धोकर पीछे पड़े रहने वाले लोग ही तो रूढ़िवादी कहे जाते हैं। गड़े मुर्दे उखाड़ना—जो जमाना लद चुका है उसका भी भार उठाए फिरना परले सिरे की मूर्खता है। ऐसा करने से जमाने के अनुसार चलने वाले लोगों के सामने हम लकीर के फकीर बनते हैं। इसलिए हमें रूढ़िवाद के पन्जे से छुटकारा तो अवश्य पाना है। अब देखना यह है कि हमारी बहिनें इस काम में क्या और किस प्रकार योगदान कर सकती हैं ?

इसमें सब से पहली बात तो यह है कि रूढ़िवाद की समस्या है ही नारी जाति की। पुराने विचारों की जितनी शिकार हमारी बहिनें हैं उतनी पुरुष जाति नहीं। हमारे भाई भी वैसे तो बहुत बार रूढिवाद के हाथों का खिलौना बने हुए देखने में आते हैं किन्तु वे पूछने पर यही कहेंगे क्या करें जी माता जी नहीं मानी घरवाली ने हमें तो इस झंझट में घसीट लिया, उनकी सुननी ही पड़ती है।

इस प्रकार वे अपना दोष महिलाओं पर थोप देते हैं। मेरा कहने का अभिप्राय यही है कि पुरुष समाज चाहते हुए भी रूढ़िवाद को मिटाने में सफल नही हो सका। इस मामले में उसे स्त्री जाति से हार खानी पड़ी है। यही कारण है कि रूढ़िवाद हमारे समाज में आज भी जोर जमाए बैठा है।

हमारी बहिनें तो— खास कर ग्रामीण बहिनें स्वभाव से इतनी भोली और सीधी हैं कि पीढ़ियों से चली आ रही परम्पराएं छोडने और नये रास्ते पर कदम बढाने से बहुत भय खाती हैं। हिचकिचाती हैं— न जाने क्या हो जाएगा। हमारी माताओं और बूढी ताई दादियों से तीज त्यौहार ब्याह शादी गमी के किसी रीति रिवाज को दकियानूसी कह कर बदलने की प्रार्थना करके तो देखो वे तुरन्त झल्ला उठेंगी — अरे बेटी ! तुम अंग्रेजी पढ़ लिख गई हो। पर हम से तो बाप दादों की विरासत पर ठोकर नहीं मारी जाती। कोई इनसे पूछे कि बाप दादों की विरासत जो किसी काम की नहीं उलटे हानि पहुंचा रही है उसे क्या घिस कर फोड़े पर लगाओगी ? यह तो वही बात हुई कि यह बाप दादों का कुआं है ऐसा कह कर नासमझ लोग खारा पानी बड़े चाव से पिया करते हैं। भला जब हमें नया कुआं खोद कर मीठा पानी पीने को मिल सकता है फिर पुरानी परम्परा का क्या ढोल पीटना ? इन हमारी महिलाओं को पुरुष लाख समझाएं पर ये खाक न सुनेंगी। इन्हें तो इनकी जाति की देवियां ही समझा सकती हैं।

अन्धविश्वास और रूढिवाद ने हमारे दिमाग में अपनी बदबू ऐसी भर दी है कि हम में सोचने की शक्ति ही गायब हो गई है। सीधी सादी ग्रामोण महिलाओं में तो यह बीमारी और भी बढ़ी चढी है। बालक को किसी रोग ने घेर लिया है बस हमारी बहिनें मन में पक्की धार लेंगी कि इसे जरूर टोक हो गई है। और इसके टोने टोटके झाड़ फूंक कराने में लग कर किसी डाक्टर वैद्य से इलाज करवाना ही भूल जाएंगी चाहे इस चक्कर में पड़ कर इन्हें अपने प्राणों से प्यारे बच्चे से हाथ क्यों न धोने पडें। देवी देवताओं की मनौतियां मनाते २ कितनी ही माताओं की गोदी सूनी होती देखने में आती है हमारी समझ में नही आता ये देवी देवता कैसे हैं जो बच्चों के रोग के रूप में आते हैं। सच तो यह है कि ये सब भय के भूत हैं जो नासमझ लोगों को सताते है आप की गाय अच्छा भला दूध देती है। कुछ ऐसा वैसा खा जाने से या बीमारी के कारण दूध से सूखती जा रही है। पर आप समझ रही हैं। अरे कल पड़ौसिन सुखदेवी के सामने धार निकाल ली जरूर उस मुहजली ने नजर लगा दी होगी। बस फिर क्या था आप आग में मिर्चें फूंकती रही और उधर गाय ने दूध से जवाब दे दिया। यही क्यों, यदि उस बेचारी की जान पर भी आ बने तो कौन बड़ी बात है ?

हमारी बहनें कोमल स्वभाव की भी तो खूब हैं। झट से कुम्हला जाने वाला दूध सा दिल इन के सीने में है। पिता भाई पति पुत्र की रक्षा की सारी जिम्मेदारो इन्हीं की है। भगवान् न करें इन पर कोई संकट आ पड़े तो हमारी बहनें—क्या पढी लिखी क्या अनपढ—सिट्टी-पिट्टी भूल जाती हैं। फिर तो इन्हें कोई ओझा सयाना या ज्योतिषी अपने फन्दे में फंसा लें। कुछ सोचती हैं—डाक्टर का इलाज भी कर लें इनकी भी सुन लें लग गया तो तीर नही तुक्का सही। जाने किधर से काम बन जाए ? इस तरह दो नावों पर पैर रखने से डूबने का खतरा और भी बढ़ जाता है।

बहिनो ! जरा ठंडे दिल से विचार करो कि क्या हम सदा इसी रूढिवाद की सड़ांद में घुटती रहेंगी ? जिसमें कहीं चैन नहीं। किसी ने छींक दिया तो यात्रा रुक गई। कुत्ते ने कान मार दिए तो निराशा ने घेर लिया। राह जाते किसी ने टोक दिया कि कहो कहाँ चले तो उसी से उलझ पड़े। कोई सपना आ गया तो उसी पर शकुन अपशकुन सोचने में दिन खो दिया, काम-काज भूल कर चिन्ता में डूबे रहे। आज दिशा शूल है। इस सप्ताह में ग्रह अच्छे नही आज शनीचर है। इस बालक का जन्म शुभ साइत में नहीं हुआ। एक पचड़ा हो तो गिनाएं। रूढिवाद में पग-पग पर शंका भय और बाधाएं हैं। बात की गहराई में न जा कर भेड़िया-धसान ही इसकी पक्की निशानी है। इसके जाल में फंसे रहने से हमारी सामाजिक दशा अस्त-व्यस्त हो गई है। धन की भी हानि होती है। मूल्य-वान समय बेकार जाता है। इसलिए जैसे हम अपने खेतों के गले सड़े फालतू घास पौधे आदि निकाल कर अपनी फसल को शुद्ध हवा में सांस लेने का मौका देते हैं ठीक उसी तरह अपने दिमाग को खुले विचारों का खेत बनाना हमारे देश में बहुतेरे सुधारक हुए जिन्होंने एक-एक रूढ़ि मिटाने के लिए प्राणों की बाजी लगा दी। राजा राममोहनराय ने सती प्रथा का कितना विरोध किया। स्वामी दयानन्द ने बाल-विवाह अनमेल विवाह आदि रूढियां तोडी किन्तु हमें भूलना नही है कि जब तक हम स्वयं होश में न आयेंगी हमारा रूढिवाद का रोग कोई काट नही सकता। हम चाहें तो हानिकारक पुराने विचारों की जडें उखाड़ सकती हैं और अपनी सन्तान को भी ऐसी शिक्षा दे सकती हैं कि आगे हमारा समाज इस रोग से छुटकारा पा ले। यह काम हमारी बहिनों के ही किए होगा आज करें या कल—यह उनकी इच्छा है। घर में, परिवार में खेत में, खलिहान में, त्यौहार पर, संस्कार पर सभी जगह रूढ़िवाद हमें मिटाने पर तुला हुआ

— शेष पृ० ११ पर

"सैनापत्य" शब्द शुद्ध है

खेद है कि आर्यसमाज में भी कुछ विद्वान् ऐसे हैं, जो कि छिद्रान्वेषी वृत्ति से यही ढूंढते रहते हैं, कि कहीं ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में कोई अशुद्धि ? उन्हें मिले और वे अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करें, ऐसी मनोवृत्ति निन्दनीय और दूषित है, अतः उन्हें इस कुविचार को त्याग देना चाहिये।

ऐसे लोग ऐसी अवस्था आने पर कहने और लिखने लग जाते हैं कि ऋषि दयानन्द ने स्वयं आर्यसमाज के नियम में कहा कि "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।" इस बात का निषेध कोई भी समझदार मनुष्य नहीं कर सकता। परन्तु विचारणीय पक्ष यह है कि "सत्य" और असत्य क्या है ? इस समस्या का समाधान कैसे हो यह तो मिथ्याभिमान करना है कि जो मैं जानता हूँ—वही सत्य है और इस से विपरीत असत्य है। ऐसे महानुभावों को चाहिए कि यदि उन्हें ऋषि दयानन्द के किसी शब्द, वाक्य, मन्तव्य और सिद्धान्त से मतभेद दिखाई देवे, तो उस पर गम्भीर दृष्टि से मनन करें। ऐसा करने पर उन लोगों को स्वयं अपनी भूल ज्ञात हो जाती है। यदि विचार करने पर भी उन्हें यही निश्चय प्रतीत होवे कि उन का पक्ष ही सत्य है और ऋषि दयानन्द के लेख अथवा कथन में त्रुटि है। तब वे उसी विचारणीय विषय को ऋषि के अन्य ग्रन्थों में देखें तथा अन्य ऋषियों और विद्वानों के ग्रन्थों में देखें। फिर भी सन्तुष्टि न होवे, तो परस्पर मिल कर विचार करें। सम्भव है इस से अपनी भूल और भ्रान्ति दूर हो जावे। परन्तु यह परिपाटी अच्छी नहीं कि उपर्युक्त उपायों को काम में लाये बिना ही केवल अपनी बुद्धि के बल पर उस विषय को पत्रों अथवा ग्रन्थों में लिख डालें। इसका एक भयङ्कर परिणाम यह होता है कि आर्यसमाज के सदस्यों में सन्देह की वृत्ति पैदा हो जाती है। यह कार्य सामाजिक संघटन का बाधक हो कर हानि पहुंचा सकता है। इस बात को ध्यान में रख कर उपर्युक्त शीर्षक से हम ने इस लेख को लिखना उचित और आवश्यक समझा है। ॥ अस्तु ॥

मनुस्मृति के अध्याय १२ में १००वां श्लोक इस प्रकार लिखा है—

"सेनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च। सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति।"

देखें चौखम्बा संस्कृत सीरिज, बनारससिटी द्वारा प्रकाशित श्री कुल्लूकभट्ट प्रणीत मन्वर्थ मुक्तावली टीकायुक्त मनुस्मृति (सं० १९९२ वि०)

इस श्लोक का अर्थ करना हमें अभीष्ट नहीं। केवल यह दिखाना प्रयोजन है कि इस टीकायुक्त मनुस्मृति पुस्तक में "सेनापत्यम्" पद का प्रयोग हुआ है और टीकाकार श्री कुल्लूकभट्ट ने भी अपनी टीका में "सेनापत्यम्" शब्द को ही लिखा है।

इस श्लोक को ऋषि दयानन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास में उद्धृत किया है, परन्तु यहां "सेनापत्यम्" के स्थान पर "सैनापत्यम्" लिखा है। इसी स्थान को लेकर एक आर्य विद्वान ने यह बवंडर खड़ा किया है। अब ऋषि दयानन्द के दूसरे ग्रन्थों को भी देखिये—

१—संस्कारविधि के गृहाश्रम प्रकरण में भी यही श्लोक मिलता है—वहां भी "सैनापत्यम्" पद ही दिया गया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द ने मनुस्मृति की मन्वर्थमुक्तावली टीका के विरोध में भी मनुस्मृति में "सैनापत्यम्" शब्द को ही स्वीकार किया है।

२—इतना ही नहीं ऋषि ने स्वतन्त्रता रूप में भी "सैनापत्यम्" शब्द का ही प्रयोग किया है जैसे—

(क) ऋग्वेद १-३२-३ मन्त्र के अन्वय में ऋषि भाष्य में यह लिखा है—एतादृग्गुणकर्मस्वभावपुरुषः सैनापत्यमर्हति ॥ यहाँ स्पष्ट "सैनापत्यम्" पद मिलता है।

(ख) ऋ० १-१००-६ के भावार्थ में ऋषिभाष्य में—"स एव सैनापत्याधिकारेऽभिषेक्तुमर्हति।" यहाँ भी "सैनापत्यम्" पद का प्रयोग स्पष्ट है।

(ग) यजु० ६-२ मन्त्र के भावार्थ में ऋषि लिखते हैं—न हि कश्चिज्जनः······कीर्त्यनुक्रमेण बिना सैनापत्यं, दण्ड नेतृत्व, सर्वलोकाधिपतित्वञ्च।"

इस स्थल पर भी "सैनापत्यम्" शब्द को ही ऋषि दयानन्द ने प्रयुक्त किया है।

इन प्रमाणों से स्पष्ट भाव प्रकट हो जाता है कि ऋषि दयानन्द सर्वत्र "सैनापत्यम्" पद का ही व्यवहार करते हैं।

३—आर्यमर्यादा के पाठक बन्धुओ ! हम अब ऋषि दयानन्द के पक्ष की पुष्टि में महाभारत ग्रन्थ के कुछ प्रमाण प्रस्तुत करते हैं, इन से स्पष्ट होता है कि महाभारत ग्रन्थ के रचयिता महर्षि व्यास भी "सैनापत्यम्" पद का ही व्यवहार ठीक समझते थे।

(क) "सैनापत्ये" यदा राजा गाङ्गेयमभिषिक्तवान् ॥
—उद्योग पर्व-अध्याय १५६ श्लोक ३१

(ख) "सैनापत्य" च सम्प्राप्य कौरवाणां धुरन्धरः ॥
—उद्योग पर्व० १६५-४

(ग) "सैनापत्यमनु" प्राप्य भीष्म. शान्तनवो नृप ॥
—उद्योग पर्व० १६५-६

(घ) सैनापत्ये" यथा स्कन्दपुरा शक्रमुखाः सुराः ॥
—द्रोण पर्व० ७-६

(ङ) "सैनापत्य" तु सम्प्राप्य भारद्वाजो महारथः ॥
—द्रोण पर्व० १२-३

(च) "सैनापत्यम्" आवाप्य कर्णो राजन् महारथः ॥
—कर्ण पर्व० ३-१८

(छ) कर्णमेवाभिषेक्ष्यामः "सैनापत्येन" भारत ॥
—कर्ण पर्व० १०-१६

(ज) "सैनापत्येन" सत्कर्तुं कर्णं स्कन्दमिवामरा ॥
—कर्ण पर्व० १०-४३

(झ) "सैनापत्य" तु सम्प्राप्य कर्णोवैकर्तनस्तदा ॥
—कर्ण पर्व० ११-१

(ञ) "सैनापत्येन" वरये त्वामहं मातुलातुलम् ॥
—शल्य पर्व० ६-२६

(ट) "सैनापत्यमनुप्राप्य" स्कन्दो देवगणस्य ह ॥
—शल्य पर्व० ४६-५३

(ठ) "सैनापत्येन" भद्र ते मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥
—शल्य पर्व० ६५-४१

(ड) द्रौणिं राज्ञो नियोगेन "सैनापत्ये"ऽभ्यषेचयत् ॥
—शल्य पर्व० ६५-४३

(ढ) "सैनापत्येन" तं देवा. पूजयित्वा गुहालयम् ॥
—अनुशासन पर्व० ८६-२८

हम समझते हैं कि महाभारत के इतने स्थानों में "सैनापत्यम्" पद को देखने पर किसी सज्जन को क्या सन्देह रह सकता है।

४—निरुक्त-दैवत काण्ड ७ में 'अग्रणीर्भवति' स्थल पर निरुक्त के प्रसिद्ध टीकाकार श्री दुर्गाचार्य लिखते हैं—सेनां वा अग्रे नयति "सैनापत्ये"ऽवस्थित इत्येके। यहाँ भी सेनापति पद पर अधिष्ठित सेनानी के लिये श्री दुर्ग ने भी अपनी ऋज्वर्थ व्याख्या में "सैनापत्य" शब्द का ही प्रयोग किया है।

५—व्याकरण शास्त्र में भी ढूंढ लेना अच्छा ही रहेगा, जिस से शब्द सिद्धि में भी किसी सज्जन को भ्रान्ति न रहे—

—दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः ॥ अष्टाध्यायी ४-१-८५ सूत्र

इस सूत्र से दिति आदि तथा 'पति' पद जिन पदों के उत्तर = अन्त में हो उन से "ण्यः', प्रत्यय होता है जैसे—सेनापति से सैनापत्य ॥

इस सूत्र की काशिका टीका में 'पत्युत्तरपद के उदाहरण में स्पष्ट "सैनापत्यम्" शब्द ही लिखा है।

आशा है, पाठक महानुभावों के सामने स्पष्ट हो गया होगा कि ऋषि दयानन्द "सैनापत्य" पद को स्वीकार करते थे और उस स्वीकृति की पुष्टि उपर्युक्त पंक्तियों द्वारा हो गयी है। यदि किसी महाशय को अब भी कुछ जिज्ञासा रह गयी हो तो वह "आर्यमर्यादा के कार्यालय में भिजवाकर कृतार्थ करें। जिससे जिज्ञासा पर भी विचार किया जा सके।

—[illegible] सिद्धान्ती शास्त्री

कर्णधारों से—

कपट त्याग सच्चे दिल से, मानवता की सेवा करना।
जीवित रहना देश के लिए, और देश के हित मरना ॥

होवे लक्ष्य एक जीवन का, नित-नित करो परोपकार ही।
सत्य सभी से बोला करना, कहना तुम कटु वचन नहीं ॥

ज्ञान प्राप्त सर्वत्र से करो, शुद्ध आचरण निज कर लो।
यही एक अक्षय धन होता, इसको तन-मन से धर लो।

धैर्यवान हो, शीलवान हो, वृद्धों का सम्मान करो
ज्ञान-वृद्धि तुम करते बरावर, कण-कण से अज्ञान हरो ॥

दृढ़ता से यह कार्य करो तुम, निज पथपर बढ़कर अपने।
पैरों पर तेरे लोटेगा, अखिल विश्व आकर अपने ॥

(श्री सूर्य कुमार पाण्डेय)

●

"जाग उठो"

[श्री० विनोद 'शाही" नरवाना]

अब कटक से शृगार करो,
पुष्प गध कोमलता त्याग जड मे जीवन सचार करो,
अब कटक का सहार करो।

प्रबल झझावात साथी, तुम प्रबलतम तूफा बनो
रिपु दानव के लिए जटिलतम, इन्सानो मे आसा बनो
माता का आशीष लेकर, तुम रिपु का अब सहार करो
अब कटक का सहार करो।

जीवन को अनमय मत समझो, चेतन को स्वीकार करो,
श्रम को दाव लगा देखो, विजय श्री का आगार हरो,
एक बार फिर हुकार भरो, सुप्त देश का उद्धार करो,
अब कटक का सहार करो।

तरुणो, रक्तिम टीका कर—, बलिदानों का स्मरण करो,
एक लक्ष्य की बलिवेदी पर, निष्ठा का अनुसरण करो,
धरा प्रकपित डोल उठे, भीम गदा तैयार करो,
अब कटक का सहार करो।

●

पृ० १ का शेष

है अच्छा है हम इसे मिटा डालें। हमें चाहिए न केवल अपने घर मे बल्कि कुनबे बिरादरी रिस्तेदारी अडोस-पडौस गली मुहल्ले गांव में जहाँ कही भी हमारा बस चले रूढिवाद के बश में हुई अनजान बहिनों को समझायें। शिक्षा का प्रचार जहाँ नही वहाँ इसकी कमी पूरी करें। पढी लिखी बहिनो में भी जहाँ यह दोष है उन से पढाई का लाभ उठाने की प्रार्थना करें। पिछले दस पन्द्रह सालो के समय मे हम ने इस विषय मे कुछ प्रगति की है। पहले तो बीमारी हो या मौत दुर्घटना हो या शुभ समय पुरानी रूढियाँ ठाठ से चलती थी अब इनकी दीवारें खोखली ही समझो। बहिनो! बस एक झटका और देने की जरूरत है। फिर तो रूढिवाद हमारे घरों से ऐसा दुम दबा कर भागेगा कि इसका कही खोज भी न मिलेगा। समझदारी ही इस बीमारी का सब से अचूक इलाज है। इसलिए आइए समझ से काम लें। जिससे हमारा समाज सुख शान्ति के वायुमण्डल में साँस लें सके।

●



मा० चन्दगीराम भारत केसरी गांव सिसाह जि० हिसार (हरयाणा) जिन्होने दूसरी बार फिर भारत केसरी पद को प्राप्त किया। इन का विचार है कि तीसरी बार फिर भारत केसरी पद के लिए दगल में उतरेंगे।

पृ० ४ का शेष

वैदिक विद्वान आविष्कार नही करते? इसका कारण है कि वेदो के पठन-पाठन की आर्य प्रणाली समाप्त हो गई। यदि तत्कालीन आर्य-प्रणाली को पुन प्रारम्भ किया जाय तो आज फिर यही देश वैज्ञानिक उन्नति के शिखर पर पहुच जायेगा। इसमे कुछ भी सदेह नही।

आर्यावर्त देश से ही समस्त ससार मे ज्ञान और विज्ञान फैला है। विदेशी विद्याध्ययन के लिए यही पर आया करते थे! आज पाश्चात्य वैज्ञानिक भले ही वेदो के नाम से अनभिज्ञ हो परन्तु उनकी वैज्ञानिक उन्नति का आधार भी वेद ही है। वेद मे सब विद्याए बीज रूप मे हैं। मनुष्य अपनी बुद्धि और प्रयत्नो द्वारा उनका विकास कर सकता है। यही विज्ञान है। हिन्दी के किसी कवि ने कहा है—

'जो खोजकर लो पहचान, उसे कहते है विज्ञान।"

सृष्टि की आदि मे परमपिता परमेश्वर ने जीवो के कल्याणार्थ वेदो का ज्ञान कराया था। वेद के ज्ञान के बिना किसी भी प्रकार की उन्नति सभव नही। देखिए! महर्षि दयानन्द जी महाराज ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका मे लिखा है—वेद के पढने और ज्ञान के बिना कोई भी मनुष्य विद्वान नही हो सकता। जैसे इस समय में किसी शास्त्र को पढके, किसी का उपदेश सुनके और मनुष्यो के परस्पर व्यवहारो को देखके ही मनुष्यो को ज्ञान होता है अन्यथा कभी नही होता। जैसे किसी मनुष्य के बालक को जन्म से एकान्त मे रख के उसको अन्न और जल युक्ति से देवे, उसके साथ भाषणादि व्यवहार लेशमात्र भी कोई मनुष्य न करे कि जब तक उसका मरण न हो तब तक उसको इसी प्रकार से रक्खे तो मनुष्यपने का भी ज्ञान नही हो सकता। तथा जैसे बडे बन में मनुष्यों को बिना उपदेश के यथार्थ ज्ञान नही होता, किन्तु पशुओ की नाई उनकी प्रवृत्ति देखने में आती है। वैसे ही वेदों के उपदेश के बिना भी सब मनुष्यो की प्रवृत्ति हो जाती।"

●

ऋषि दयानन्द की अज्ञात जीवनी—
आलोचनात्मक विश्लेषण

(ले० डा० भवानीलाल भारतीय, एम. ए पी एच डी. राजस्थान)

गत जनवरी से साप्ताहिक सार्वदेशिक में कलकत्ता आर्यसमाज के आचार्य प० दीनबन्धु वेदशास्त्री द्वारा प्रस्तुत महर्षि दयानन्द की अज्ञात (?) जीवनी का प्रकाशन हो रहा है। वेद शास्त्रीजी ने ऋषि दयानन्द के जीवन का अनुसंधान करने मे पर्याप्त काम किया है, यह कहने में हमें कुछ भी विप्रतिपत्ति नही है। हम यह भी स्वीकार करते हैं कि उक्त प्रशंसित व्यक्तित्व ने महर्षि के बंगाल प्रवास काल के तथ्यो की विस्तृत खोज करने का प्रशसनीय प्रयास किया है। आलोचना अज्ञात जीवनी के १६ लेखों का प्रकाशन हो गया है, भविष्य में और भी लेख प्रकाशित होंगे।

मैं स्वय महर्षि के जीवन और आर्यसमाज के इतिहास का एक जिज्ञासु विद्यार्थी हूँ। मैंने ऋषि के लगभग सभी हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और गुजराती भाषाओं में प्रकाशित जीवन-चरितों तथा ऋषि के जीवन विषयक अन्य सामग्री का विशद अध्ययन किया है। सम्प्रति ऋषि के जीवन के सम्बन्ध में मेरा शोध कार्य चल रहा है। मैं उन सभी ज्ञात और अज्ञात सदर्भों की सूची बना रहा हूँ जिनमें येन-केन प्रकारेण महर्षि का उल्लेख हुआ है। अस्तु। यद्यपि महर्षि के जीवन चरित की खोज करने में अमर शहीद प० लेखराम तथा धुन के धनी देवेन्द्र बाबू जैसे महापुरुषो ने कुछ भी नहीं उठा रक्खा तथापि यह निर्विवाद तथ्य है कि श्रीमहाराज का एक नितान्त प्रामाणिक जीवन-चरित अभी-लिखा जाना शेष है। अस्तु।

प० दीनबन्धु वेद शास्त्री द्वारा प्रस्तुत सामग्री को ध्यान पूर्वक मैंने पढ़ा। उसे समग्र रूप से विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता। अत सार्वदेशिक सभा के मुखपत्र सार्वदेशिक के लिये यह नितान्त उचित था कि वह इस सामग्री की पूर्व से ही छानबीन करा कर प्रकाशित करता अथवा इस लेखमाला के साथ यह आवश्यक टिप्पणी प्रकाशित करता कि यह सामग्री तथ्य की दृष्टि से अभी साध्यकोटि में ही है। ऋषि के जीवन से परिचित पाठक यह भलीभांति जानते हैं कि महर्षि ने अपने जीवन के प्रारम्भिक भाग पर प्रकाश डालते हुये अपनी आत्मकथा स्वय लिखी थी। उनकी स्वलिखित आत्मकथा मैडम एच० पी० ब्लैवेट्स्की द्वारा सम्पादित 'थियोसोफिस्ट' नामक अंग्रेजी पत्र मे धारावाही रूप मे ऋषि के जीवन-काल में ही प्रकाशित हुई थी। श्री महाराज ने पूना मे दिये अपने व्याख्यानो में अन्तिम व्याख्यान अपने आत्म वृत्तान्त का वर्णन करते हुये दिया था। अत निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि श्री महाराज के जीवन का प्रारम्भिक वृत्तान्त (नर्मदा स्रोत गवेषण पर्यन्त) वही प्रामाणिक है जो स्वय उनके श्रीमुख से कहा गया था तथा उनकी लेखनी से लिखा जाकर प्रकाशित हुआ था। यह सम्भव है कि श्री महाराज का यह स्वकथित वृत्तान्त सक्षिप्त हो और वेद शास्त्रीजी द्वारा प्रस्तुत इस काल की सामग्री कुछ अधिक विस्तृत तथ्यो पर प्रकाश डालती हो, परन्तु इस सामग्री की सत्यता को तो प्रमाणित करना ही होगा। अस्तु।

वेद शास्त्रीजी लिखते हैं कि अपने कलकत्ता प्रवास काल मे महाराज ने विभिन्न स्थानों पर विभिन्न लोगो के समक्ष अपने जीवन की घटनाओ का वर्णन किया था जिसे बगाल के तत्कालीन देवेन्द्रनाथ ठाकुर आदि महापुरुषों की आज्ञा से नियुक्त विभिन्न लोगो ने लेख बद्ध किया। यह सामग्री दशाब्दियो तक विलुप्त रही और अब उन्होंने (प० दीनबन्धुजी ने) इसका अत्यन्त परिश्रम पूर्वक जीर्णोद्धार किया है। हम प० दीनबधुजी की इस बात में शका नही करते परन्तु जो विवरण उन्होने अद्यतन प्रकाशित १३ लेखो मे प्रकाशित किया है उसमें से कुछ बातों पर हमारी स्पष्ट आपत्ति है। प० दीनबधु जी द्वारा प्रस्तुत सामग्री के महत्त्व को स्वीकार करते हुये भी हमारी यह मान्यता है कि महर्षि स्वामी द्वारा लिखित एव कथित आत्मकथा को पूर्ण रूप से प्रामाणिक मानना होगा, फलत जो तथ्य आत्मकथा में उक्त (कहे गये) तथ्यों के विपरीत पड़ेंगे उनकी सत्यता के आगे प्रश्नचिह्न लगाना ही पड़ेगा। द्वितीयतः देवेन्द्रबाबू की खोज का आदर करते हुये यह मानना पड़ेगा कि उन्होंने महर्षि के जीवन की जिन घटनाओं का संग्रह किया और पुण्य श्लोक महर्षि की जीवनी के प्रारम्भिक चार अध्याय लिखे, इन देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा प्रस्तुत जीवनी विषयक तथ्यों के विरुद्ध भी जो बातें प० दीनबधुजी द्वारा प्रस्तुत अज्ञात जीवनी में आई हैं, उन्हें अप्रामाणिक अथवा सदिग्ध मानने के लिये हम बाध्य हैं।

इस प्रारम्भिक कथन के पश्चात् हम 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित अज्ञात जीवनी के कतिपय अंशों की आलोचना करेंगे। १२ जनवरी के सार्वदेशिक में अज्ञात जीवनी का दूसरा लेख छापा है। इसमें अवधूतावस्था में श्री महाराज के भारत भ्रमण का उल्लेख करते हुये लिखा गया है कि स्वामीजी ने गंगोत्री से सेतुबन्ध रामेश्वर तक भ्रमण किया था। अब तक महर्षि के जीवन के विषय में जो अनुसंधान हुये हैं उनसे पता चलता है कि स्वामीजी का दक्षिणवर्त मे भ्रमण पूना पर्यन्त था। उससे आगे द्रविड भाषाभाषी प्रान्तों में उनका पधारना नहीं हुआ अत यह कथन साध्य कोटि मे ही है। इसी प्रकार स्वामीजी की मराठे नेता नाना साहब पेशवा और अंग्रेजी सेना के विद्रोही सिपाही मगल पाण्डे से भेंट और आशीर्वाद याचना भी साध्य कोटि में ही है।

६ अप्रैल के अक मे सिद्धपुर के मेले में ब्रह्मचारी शुद्धचैतन्य का पिता द्वारा पकडा जाना वर्णित है। इस प्रसग में अज्ञात जीवनी मे लिखा है कि "हमने एक पुराने सिपाही से पूछकर सुन भी लिया था कि मेरे शोक के कारण ही माताजी का देहान्त हो गया और श्राद्ध के लिये मेरा (दयानन्द का) वहाँ पहुचना जरूरी है" तथ्य यह है कि श्री महाराज के सिद्धपुर में पिता द्वारा गृहीत हो जाने तक उनकी मातु श्री का देहपात नहीं हुआ था। श्री महाराज ने अपनी आत्मकथा में इतना ही लिखा है— "पिता बोले—तू अपनी माता की हत्या किया चाहता है। इस कथन का यह अभिप्राय नहीं है कि अब तक महाराज की माता का देहान्त हो गया था और श्राद्ध के लिये उनकी तलाश की जा रही थी। थियोसोफिस्ट में प्रकाशित आत्मकथा तथा पूना प्रवचन में तो इतना ही उल्लेख है कि पिता ने ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य की गर्हा करते हुये यही कहा कि उसने अपने इस वैराग्य धारण रूपी कृत्य से कुल को अपयश का पात्र बनाया है—"He reproached me violently, accusing me of bringing an eternal disgrace upon my family" इसी आधार पर देवेन्द्रबाबू ने इतना ही लिखा "मेरे हाथ से तूम्बी छीनकर फेंक दी और मुझ पर गालियों की बौछार करने लगे और अन्त में मुझे कहा तू मातृहन्ता है।" यहाँ 'मातृहन्ता' को अभिधार्थ में न लेकर 'माता को कष्ट देने वाला' इस व्यग्यार्थ में ही लेना चाहिये। अस्तु।

अज्ञात जीवनी के १२ वें और १३ वें लेख पर कुछ विशेषरूप से आलोचना करनी है। स्वामी जी के सभी जीवनी लेखक इस बात से सहमत हैं कि ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य ने अपनी कुछ कठिनाइयो को ध्यान में रखकर पूर्णानन्द सरस्वती से सन्यास दीक्षा ली और 'दयानन्द सरस्वती' बने। परन्तु अज्ञात जीवनी लेखक ने उसे अपने १३ वें लेख तक शुद्ध चैतन्य ही लिखा है। परन्तु एक बडी आपत्ति तो दूसरी ही है। सन्यस्त होकर श्री महाराज ने जो उत्तरापथ की ओर प्रस्थान किया तो उनका भ्रमण का क्रम इस प्रकार था—चाणोद (करनाली) यहाँ महाराज ने सन्यास की दीक्षा ली। इसके पश्चात् क्रमश, वे व्यासाश्रम, पुन छिनूर (सिनोर), चाणोद, अहमदाबाद, आबू शिखर, हरद्वार, हृषीकेश, टिहरी, पुन उत्तराखण्ड (तुगनाथ, ओखीमठ, जोशीमठ, अलखनन्दा स्रोत, वसुधारा, बद्रीनाथ,) होकर रामपुर, काशीपुर, द्रोणसागर पुन मुरादाबाद में) आये। परन्तु अज्ञात जीवनी लेखक उन्हें चेतनमठ (बड़ौदा) से काशी भेज देता है और काशी में उनके विशद शास्त्रीय अध्ययन का उल्लेख करता है। हमारी आपत्तियां निम्न हैं—

श्री महाराज का प्रथमबार काशी गमन उनके उत्तराखण्ड भ्रमण के

शेष पृ० ४ पर

सम्पादकीय

आत्म-प्रवञ्चनम्

मनुष्य सत्य और असत्य को जानने वाला है, परन्तु अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए सत्य मार्ग को छोड़ कर असत्य की ओर झुक जाता है। वह यह समझता है कि मैं दूसरों को धोखा दे कर अपने को अच्छा प्रकट कर रहा हूं, परन्तु वह स्वयं इस तथ्य को अनुभव कर रहा होता है कि मैं अपने अन्तरात्मा के विरुद्ध ऐसा काम कर रहा हूं। इस पर वह भीतर से शङ्कित, लज्जित और भयभीत रहता है, परन्तु अपने इस स्वार्थ को दूसरे पर प्रकट होने देना नहीं चाहता। हो सकता है कि उस की इस अज्ञात चेष्टा से दूसरे धोखा खा जायं और इस को अच्छा समझते रहें। परन्तु अन्त में पोल खुल ही जाती है।

परन्तु मनुष्य के भीतर एक अन्तर्यामी परम आत्मा सदा वर्तमान रहता है। वह अनन्त सामर्थ्य, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान् है। वह हमारे आत्मा के भीतर रहता हुआ हमारे सब कार्यों को यथावत् जानता है और तदनुसार हमें हमारे कार्यों के अनुसार फल देता है। हम अपने अन्तर्व्यापक परम आत्मा को कैसे धोखा देते हैं? उस को धोखा देना तो असम्भव है ही, परन्तु स्वय भी अपने को धोखा नहीं दे सकते। हम खूब जानते हैं कि हमारे कर्म ऐसे हैं, फिर भी जानते हुए हमारी इच्छा यह रहती है कि कोई दूसरा मेरी इस चेष्टा को न जान सके, इसीलिये हम दूसरों को धोखा देने की रीति को पकड़ते हैं। हमे समझ लेना चाहिये कि हम दूसरों को इस प्रकार (धोखा) देने में सफल नही हो सकेंगे। दूसरे भी जान लेंगे कि वह हमें धोखे में डालने का यत्न करता है, अतः हम से दूसरे दूर रहने लगेंगे। इस का अर्थापत्ति से यह भाव निकलता है कि हम स्वयं आत्म प्रवचना में रहना चाहते हैं, परन्तु यह बात भी मिथ्या है कि जब दूसरों को हम धोखे में नहीं डाल सकते, तो अपने को कैसे डाल सकते हैं। हम इस बात को पूरी तरह जानते हैं कि यह सम्भव नहीं, फिर भी हम ऐसा करते रहते हैं। इस का स्थूल प्रयोजन यही है कि दूसरे हमें अच्छा समझें, जिस से हम उस की आड़ लेकर स्वार्थ सिद्ध करते रहें।

आर्यसमाज के अदम्य सेनानी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज अपने उपदेशों में कहा करते थे कि "लोग आत्म प्रवचना इस लिये करते हैं, जिस से दूसरे लोग उस की प्रशंसा करें। परन्तु दूसरों की यह प्रशंसा उस के किसी काम नही आ सकती, जब कि परमेश्वर की दृष्टि में उस के काम निन्दित हैं। दूसरे पक्ष में यदि उस के काम अच्छे हैं, फिर भी दूसरे लोग उस की निन्दा करते हैं, तो यह निन्दा उस का कुछ बिगाड़ नही कर सकती, क्यों कि ईश्वर की दृष्टि में उस के कार्य अच्छे हैं, अतः दूसरों से वाहवाही लूटने की अपेक्षा अपने काम को अच्छा करो—यही बात उस का साथ देगी।" यदि हम स्वामी जी महाराज की बात पर आचरण करें तो हम दूसरों को धोखा देने के जहां दोष से दूर रह सकते हैं, वहां आत्म-प्रतारणा से भी बच सकते हैं। परमात्मा की दया हम पर होवे कि हम दोष से स्वय दूर रहें और दूसरों को भी इस में डालने के दोष के भागी भी न बनें।

२. आर्यमर्यादा के दो विशेषांक—

(क) आगामी पर्व के शुभ अवसर पर "वेद का प्रादुर्भाव" विषय पर विशेषाङ्क प्रकाशित किया जावेगा। इस अंक में विवेचन से उस पद्धति पर विचार किया जावेगा, कि जिसके द्वारा परमेश्वर से वेदज्ञान मनुष्य तक पहुंचता है।

(ख) ऋषि दयानन्द जी के गुरुवर्य वेदादि सत्य शास्त्रों के अद्वितीय विद्वान् स्वामी विरजानन्द जी महाराज के पुण्य स्मरण के समारोह के अवसर पर आर्यमर्यादा का विशेषाङ्क प्रकाशित करने का विचार कर रहे हैं। हम आर्यमर्यादा के स्वाध्यायशील ग्राहक तथा प्रेमी पाठकों से निवेदन करना चाहते हैं कि उस पवित्र अवसर पर हम स्वामी विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में एक असली पत्र की शुद्ध प्रतिलिपि (फोटो रूप में) छापेंगे। जो पत्र कि उन के सम्बन्ध में सम्वत् १९१३ विक्रमी तदनुसार १८५६ ई० में एक मुसलमान लेखक "मीरमुश्ताक मीरासी" के हाथ का लिखा हुआ है। वह असली पत्र उर्दू जबान और फारसी लिपि में लिखा हुआ है। हम उस का ब्लाक बनवा कर उसी रूप मे छापेंगे। जिन महानुभाव की कृपा से हमें यह पत्र प्राप्त हुआ, उन का परिचय भी उसी अंक मे दिया जावेगा। विशेषांक की निश्चित तारीख पुनः प्रकाशित की जावेगी। अत. आर्यमर्यादा के ग्राहक और पाठक प्रतीक्षा करें। यह विशेषांक वास्तव में विशेषांक ही होगा—इस के बारे मे पूरा विवरण आगामी किसी अंक में प्रकाशित किया जावेगा। ऐसी अलभ्य ऐतिहासिक सामग्री बहुत ही सौभाग्य से प्राप्त होती है। इस सामग्री को आर्यमर्यादा के द्वारा हम सर्वत्र फैलाना चाहते हैं। इस अंक में केवल सूचना प्रकाशित की गई है।

३. पं० मेहरचन्द शर्मा का निधन

जालन्धर निवासी प० मेहरचन्द जी शर्मा वैदिक सिद्धान्तो और ऋषि दयानन्द के मन्तव्यो को दृढता से स्वीकार और तदनुसार उन पर आचरण करते थे। "आर्यवीर को पजाब के उर्दू के गढ में ही हिन्दी में प्रकाशित किया। आयुपर्यन्त अपने कर्तव्य पर अडिग रहे। घाटा सहा। शरीर धर्म पर होम दिया, परन्तु अपने पथ से विचलित न हुए। ऐसे आर्यवीर के स्वर्गवास से न केवल पजाब अपितु भारत का आर्यजगत् रिक्तता अनुभव करता है। आर्यमर्यादा के ग्राहक, पाठक तथा प्रेमियों की ओर से हम प० मेहरचन्दशर्मा के सुपुत्र श्री ओमप्रकाश जी शर्मा के साथ इस वज्रपात सम दुःख में शोक समवेदना प्रकाशित करते हैं। परमेश्वर आपके परिवार को धीरज देवे।

४. विद्यार्थियों से—

राष्ट्र के नौनिहालो विद्यार्थियो! अब आप अवकाश पर हैं। आप अपने विद्या-स्थान पर वा घर पर यत्न कीजिये कि शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिये भारतीय ढग के आसन, कबड्डी और कुश्तिया करते रहें। इन में बाहर का कुछ खर्च नही। विदेशी खेलों के महगे धन्धे को छोड़ कर वह राशि घी दूध, फल और शाक सब्जी खाने में व्यय कीजिये। इस से जहां शरीर बढेगा। बुद्धि बढेगी। आत्मा उन्नत होगा। विद्या का द्वार खुल जावेगा। दुर्व्यसनों से बचे रहोगे। राष्ट्र के उत्थान के कारण बनोगे।

जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

भारत केसरी और भारतकुमार का स्वागत

आर्यसमाज सदर बाजार दिल्ली ने अपने वार्षिकोत्सव के अवसर पर २४ मई की सायं को भारत केसरी मास्टर चन्दगीराम जी तथा भारतकुमार विद्यार्थी मुरारीलाल जी वर्मा का भव्य स्वागत किया। इस समारोह की अध्यक्षता प्रसिद्ध आर्य नेता प्रो० रामसिंह जी एम०ए० ने की। विभिन्न संस्थाओं ने पहलवानों का स्वागत किया। श्री श्यामचरण जी गुप्त उपाध्यक्ष महानगर परिषद तथा वैद्य प्रह्लाददत्त जी आदि नेताओं ने स्वागत करते हुए आर्य पहलवानो को बधाई दी। मास्टर चन्दगीराम जी ने जनता को बताया कि बचपन में ही मैने ऋषिदयानन्द के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के स्वाध्याय से निश्चय कर लिया था कि मांसमदिरा आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन नहीं करूंगा। आगे भी ऋषि दयानन्द के बताये हुए मार्ग पर चलने का यत्न करूंगा। इसी प्रकार भारतकुमार श्री मुरारीलाल जी वर्मा ने आभार प्रकट किया।

—केदारसिंह आर्य

पृ० २ का शेष

पश्चात् हुआ। हिमालय के पार्वत्य प्रदेश से उत्तर प्रदेश के मैदान मे उतरकर वे मुरादाबाद, सम्भल, गढमुक्तेश्वर, कानपुर, प्रयाग और मिर्जापुर होते हुये प्रथमबार काशी पहुंचे। उनका यह प्रथम काशी प्रवास केवल १२ दिन का रहा। इस समय वे वरुण सगम के पास एक गृह मे रहे और काशी के प्रसिद्ध काकाराम, राजाराम आदि विद्वानो से वार्तालाप करते रहे। अज्ञात जीवनीकार ने इस तथ्य की उपेक्षा कर श्रीमहाराज का लम्बा काशी निवास और कई पण्डितो से उनका विभिन्न शास्त्रो का अध्ययन बताया है। यह ११ मई के अक मे प्रकाशित सम्पूर्ण लेख ही कल्पित प्रतीत होता है। इसके निम्न कारण हैं।

अज्ञात जीवनीकार ने स्वामी जी के काशी में विद्या पढाने वाले अच्युतानन्द शास्त्री, रत्नाकर शिरोमणि, तथागत धर्मपाल (बौद्ध) युगल किशोर पारेख (जैन) साधु बेताल भैरव (तन्त्र शास्त्र के ज्ञाता, विभूतिभूषण तर्क वागीश, सच्चिदानन्द स्वामी आदि का उल्लेख किया है। यह सारी सूची ही कपोलकल्पित और मिथ्या है। कारण कि काशी के तत्कालीन पण्डितो की सूची का उल्लेख हमे प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ (१६ नवम्बर १८६९) के प्रसग मे मिलता है। उस समय काशी मे स्वामी विशुद्धानन्द, प० बालशास्त्री, जयनारायण तर्क पचानन प० शालिग्राम, प० वामनाचार्य, ताराचरण तर्क रत्न, प० माधवाचार्य, आदि पण्डित तो थे, परन्तु जो सूची अज्ञात जीवनीकार ने प्रस्तुत की है, उनके अस्तित्व में ही सदेह है। दूसरी बात यह है कि स्वामी ने इसी समय बौद्ध, जैन और तन्त्र सिद्धान्त का अध्ययन किया, यह कथन भी मिथ्या है। तन्त्रो के प्रति तो उनकी श्रद्धा कभी की समाप्त हो गई थी। सर्व प्रथम टिहरी (गढवाल) मे स्वामी जी ने तन्त्र ग्रन्थ पढे और उनकी अश्लीलता को देखकर उनके प्रति उनकी श्रद्धा ही समाप्त नही हो गई वे आजीवन तन्त्र साहित्य को घृणा की दृष्टि से देखते रहे। अत यह कहना नितान्त अनुचित है कि काशी मे रह कर किसी बेताल भैरव नामक तान्त्रिक से उन्होने तन्त्रो का अध्ययन किया था। वस्तुत काशी का यह अध्ययन का सम्पूर्ण प्रसग ही मन कल्पित प्रतीत होता है। जब स्वामी जी गुजरात से निकल कर आबू, हरद्वार होते हुये उत्तराखण्ड मे चले जाते हैं और वहाँ से उतर कर गगा के किनारे-किनारे भ्रमण करते नर्मदा के स्रोत तक पहुचते हैं और पुन नर्मदा स्रोत गवेषण के पश्चात् तुरन्त मथुरा मे दण्डिजी की सेवा मे पहुच जाते हैं पुन उनके काशी मे रह कर वह सब पढने का वर्णन करना एक गल्पमात्र कहा जा सकता है जो उक्त अक मे लिखा गया है।

जिस सच्चिदानन्द सरस्वती का अज्ञात जीवनीकार ने इस कल्पित काशी प्रसग में वर्णन किया है उनसे श्री महाराज की भेंट बडोदा अचल में ही हुई थी और वहाँ पर ही वे उक्त सच्चिदानन्द परमहस से तत्व ज्ञान विषयक वार्तालाप करते रहे थे। अज्ञात जीवनीकार ने लिखा है कि काशी में शिक्षा समाप्त होने पर शुद्ध चैतन्य (अभी तक वे दयानन्दसरस्वती के शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी ही लिखते हैं जब कि शुद्ध चैतन्य तो दयानन्द सरस्वती के रूप मे प्रव्रज्या ग्रहण करने के पश्चात् ही अपने प्रदेश गुजरात से बाहर निकले थे) को दरभगा नरेश ने ५०० रु० भेजे जिसे उन्होने अपने गुरुओ को दक्षिणा के रूप मे वितरित किया। यह सारा कथन भी उपन्यासवत् कल्पित ही है। इस अज्ञात और अप्रसिद्ध अवस्था मे न तो दयानन्द स्वामी का दरभगा या अन्य किसी नरेश से कोई परिचय ही हुआ और न उन्होने अपने इन गुरुओं को ५०० रु० दक्षिणा स्वरूप ही दिये। आर्य प्रतिभा को पुन प्रस्फुटित करने वाले अशेष मेधा सम्पन्न स्वगुरु विरजानन्द दण्डी को भी देने के लिये दयानन्द के पास सिवा लोगो के कुछ नहीं था और वह भी तब जब कि मथुरा के अनेक श्रीमानो से उनका परिचय हो गया था, पुन यह लिखना कितना उपहासास्पद है कि दयानन्द (शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी) ने एक नरेश से ५०० रु० लेकर अपने शास्त्र गुरुओ मे बाटे। अज्ञात जीवनीकार ने तो काशी के उन पण्डितो की एक लम्बी सूची दी है जिनसे महाराज ने कुछ न कुछ शास्त्र ग्रन्थो को पढा। रामनिरजन शास्त्री तो श्रीमहाराज के विद्या गुरु थे परन्तु उनके अतिरिक्त जो नाम आये हैं वे सभी गवेषणीय है—यथा, विश्वम्भर तर्क रत्न, हरप्रसाद विद्या रत्न, रासमोहन सिद्धान्त वागीश, निरविशेष शास्त्री, रुद्रदेव विद्यालकार, सोमदेव तर्क रत्न महादेव शास्त्री, विमलेन्दु काव्यनिधि, शशिकान्त भट्ट, अरविलानन्द भट्टाचार्य, महावीर शर्मा राहुलमणिभद्र (बौद्ध), क्षेमकरण दर्शनशास्त्री।

यह अप्रलोचना सकेत मात्र है। अभी तो अज्ञातजीवनी का शेष अश प्रकाशित होना है वस्तुत ऋषि जीवनी की खोज एक सकटाकीर्ण मार्ग है। आश्चर्य है कि सार्वदेशिक ने इस विवादास्पद सामग्री को बिना किसी टिप्पणी के प्रकाशित किया। वेद शास्त्री जी से प्रार्थना है कि वे हमारी शकाओं का समाधान करें।

आर्यमर्यादा

(लेखक श्री सकरसिंह वेदालंकार एम० ए०) आर्यसमाज गोहाटी आसाम

आर्यमर्यादा चलेगी, आर्य मर्यादित रहेंगे।
सत्य का सन्देश देते, वेद के पथ पर चलेंगे॥

दिन गया गोधूलि वेला आगयी आनन्द वाली।
तामसी छायी निशा निद्रा, कहाँ उज्ज्वल उजाली॥
रवि उदय होगा न गिनने को मलिन तारे रहेंगे।

आर्यमर्यादा चलेगी आर्य मर्यादित रहेंगे।
सत्य का सन्देश देते वेद के पथ पर चलेंगे॥

जिस घटा में है कला केवल घुमड़ नभ ढाँप लेना।
गर्जना भय भी दिखाना उपल भू पाट देना॥
इस तरह क्या अकुरित ये बीज भी पौधे बनेंगे।

आर्यमर्यादा चलेगी आर्य मर्यादित रहेंगे।
सत्य का सन्देश देते वेद के पथ पर चलेंगे॥

स्वार्थ के जकड़े पदो के लोभ मे जिह्वा बढाये।
श्वानवत दौड़े इधर तो जा उधर भी मुंह मिलाये॥
इस भाँति क्या कुटिलाचरण से फल कभी अच्छे मिलेंगे।

आर्यमर्यादा चलेगी आर्य मर्यादित रहेंगे।
सत्य का सन्देश देते वेद के पथ पर चलेंगे॥

आज श्रद्धा को हृदय में ला मधुर उत्सव मनाओ।
और उस भूली दया के छन्द भी स्वच्छन्द गाओ॥
बीत जायेंगे दिवस तब तो यही तानें रहेंगे।

आर्यमर्यादा चलेगी आर्य मर्यादित रहेंगे।
सत्य का सन्देश देते वेद के पथ पर चलेंगे॥

आया यह साप्ताहिक

श्री० अरुण कुमार पाण्डेय ग्राम सवरौलिया, (बलिया)

लेकर नई दिशा आई है 'मर्यादा' इस जग में।
वेदस्मृतियों के उपदेशों को, भरने रग-रग मे॥
ऋषिवर उपदिष्ट वेद ज्ञान को आर्यों मे फैलाने।
आया यह साप्ताहिक सोए, जग को पुनः जगाने॥

युग-निर्माण

बाबू पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट (आगरा)



खाने की समस्या—खाने की समस्या सबसे जटिल है। और ये समस्या और भी जटिल हो रही है। क्यों कि इसका सम्बन्ध बढती हुई आबादी के प्रश्न से जुडा हुआ है। खाने की सामग्री मे साधारणतया अनाज और फल समझ जाते हैं। परन्तु अनाज के अन्तर्गत मछली अन्डा और मुर्गी इत्यादि को भी सम्मिलित कर लिया गया है। मास भक्षण का प्रश्न भी खाद्य समस्या का आवश्यक अग बन गया है। उत्पादन मे क्या दृष्टिकोण होना चाहिए उस पर इस प्रसग मे विचार करना आवश्यक है।

उत्पादन का सम्बन्ध इस निर्माण अर्थात् (Plaining) से भी है। निर्माण की दृष्टि से उस पर विचार किया जायेगा।

उत्पादन का प्रश्न विज्ञान की उन्नति से भी सम्बधित है और निर्माण की व्यवस्था से भी विचार किया जावेगा। सबसे पूर्व उत्पादन के प्रश्न पर उत्पादन सम्बधी भावना और मनोविज्ञान पर विचार करना है।

उत्पादन और आवश्यकता—खाद्य सामग्री की वृद्धि के स थ साथ खाद्य सम्बन्धी भावना पर भी विचार करना है। उत्पादन की वृद्धि के साथ-साथ आवश्यकताओं को भी मर्यादित करना है। यदि आवश्यकताएँ मर्यादित न हुई तो खाद्य सामग्री का उत्पादन कितना भी बढ जाय आवश्यकताएँ भी बढती ही रहेगी। और असतोष बढता ही रहेगा और कमी अधिक प्रतीत होगी।

भाव अभाव और स्वभाव—खाने की समस्या के सम्बन्ध मे इसके साथ अन्य आवश्यक पदार्थों की प्राप्ति के सम्बन्ध मे केवल भाव अभाव का प्रश्न नही है। कभी कोई पदार्थ है कभी नही है। हर एक की इच्छा के अनुसार हर पदाथ की उपलब्धि की आशा नही की जा सकती। प्रश्न स्वभाव की मर्यादा का है। यदि व्यक्ति का स्वभाव मर्यादित है तो किसी समय या किसी परिस्थिति मे किसी पदार्थ का अभाव है तो भी उसमे असतोष का प्रवेश नही होगा। और वह व्याकुलता से बचा रहेगा। इसी प्रकार यदि स्वभाव मर्यादित है तो यदि किसी परिस्थिति मे किसी पदाथ का उत्पादन और उपलब्धि अधिक हो गई तो इसका प्रभाव यह नही होगा कि उसमे अभिमान उत्पन्न हो जाय और उन पदार्थों का दुरुपयोग होने लगे। यदि प्रयोग के समय अभिमान और असतोष दोनो से भोग-कर्ता मुक्त रहेगा, तो उत्पादन की समस्या ऐसी कठिन और चिन्ता जनक नहीं रहेगी जैसे इस समय प्रतीत होती है।

क्या हम केवल खाने के लिये ही जीते हैं—खाना जीवन की रक्षा के लिए अनिवार्य है। परन्तु जीवन का लक्ष्य केवल खाना ही नही है।
कि जीन।

नियत नही भरेगी।

नियत की खराबी—अकबर उर्दू का एक प्रसिद्ध कवि हुआ है उसने एक शेर लिखा है—

"तालीम का जोर इतना, तहजीब का शोर इतना,
बरकत जो नही होती नियत की खराबी है।"

नियत की खराबी का दूर होना या नियत का ठीक होने का अभिप्राय वही है जो स्वभाव की मर्यादा से है।

स्वास्थ्य और स्वाद—खाने की समस्या के साथ ही स्वाद और स्वास्थ्य के प्रश्न पर भी विचार करना आवश्यक है। जैसे ऊपर दर्शाया गया है। खाने का प्रश्न जीवन की रक्षा से सम्बन्धित है। जीवन की रक्षा के लिए स्वास्थ्य का ठीक होना अति आवश्यक है। खाने मे भूल होने से स्वास्थ्य के दूषित होने का भय उत्पन्न हो जाता है। अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं और खाने की भूल मृयु का कारण भी हो सकता है। स्वाद भी बडी आवश्यक अग खाने की समस्या का है। यदि स्वाद के प्रश्न की अवहेलना की जाय तो ये केवल सन्यासियो व योगियो के लिए ही सम्भव है। खाने के पदाथ स्वादिष्ठ यदि हो तो बडा अच्छा परन्तु स्वाद के नाम पर या स्वाद का आड मे स्वास्थ्य की हानि होना सम्भव है। तो स्वास्थ्य को ही प्रमुख स्थान देना होगा। स्वाद का प्रश्न गौण रूप से रहेगा।

भक्ष्य और अभक्ष्य—खाने के प्रश्न के साथ ये प्रश्न भी विचारणीय हैं कि क्या खाने योग्य है और क्या खाने योग्य नही। मास भक्षण का प्रश्न इस प्रश्न से जुडा हुआ है। मास भक्षण पाप है या पुण्य इस प्रश्न पर हम इस प्रसग मे विचार नही करना चाहते। ये बात निर्विवाद है कि देश के करोडो व्यक्ति ऐसे हैं जो मास भक्षण को पाप समझते हैं राष्ट्र की ओर से जो खाद्य सामग्री का प्रबन्ध हो उसमे उन्ही पदार्थों को उत्पादन पर बल देना चाहिए जो सब के लिए समान रूप से भक्ष्य हैं। खाने योग्य हैं।

भारत की सरकार—धर्म निर्पेक्ष है—अर्थात् Sceular है उसकी ओर से कोई प्रचार ऐसा नही होना चाहिए जिससे किसी की भावनाओ को ठस लगे। जो नागरिक मास भक्षक है वह निजी क्षेत्र मे इसकी व्यवस्था कर सकते हैं। सरकार की ओर से प्रोत्साहन नही होना चाहिए।

पेट के लिए—सामान के उत्पादन पर विचार करते समय ये ध्यान रखना आवश्यक है कि आज कल पेट भरने का सवाल सबसे बडा महत्त्व का हो गया है। पेट भरने की चिन्ता सबको है। और होनी भी चाहिए। परन्तु पेट का सवाल जिस रूप मे हमारे सामने आता है। वह विचारणीय है। आजकल जितने भ्रष्टाचार व अपराध हो रहे हैं वे सब इसी आधार पर किये जा रहे हैं कि क्या करें पेट नहीं भरता। पेट भरने का उपाय तो करना ही होगा। चाहे उचित उपायो से हो या अनुचित उपायो से और जब तक ये भावनाए प्रचलित रहेगी उस समय तक उत्पादन के क्षेत्र में अर्थ व्यवस्था ठीक नही हो सकेगी। पेट भरने के साथ ये भी विचार करना है कि किन उपायो से पेट भरा जाय और पेट भरने की मर्यादा क्या होनी चाहिए। आज कल यह भी देखा जा रहा है कि सैकडो हजारों भूखे एकत्र होकर बडे से बडा अपराध करने मे सकोच नही करते। खाना न मिलना एक कष्ट है। इसके निराकरण के लिए उपाय निश्चित है। उनको प्रयोग मे लाना है। खाना न मिलने पर इतने क्रोध और आवेश में आ जाना कि राष्ट्रिय सम्पत्ति को और सार्वजनिक सस्थाओं को हानि पहुचाना तथा हानि करना किसी भी दशा मे उचित नही है। खाने की कमी व्यक्तियो और सरकार दोनो के कारण से हो सकती है।

राष्ट्रिय सरकार और उत्पादन—राष्ट्रिय सरकार या कोई भी सरकार हो उसका कर्त्तव्य है कि वह जनता के लिए खाने की व्यवस्था करे। खाने की व्यवस्था के लिए बडे साधन चाहिए। यदि यह भी विचार किया जाय तो खेत और बाग जहाँ से खाना प्राप्त होता है दोनो के लिए दाना-पानी पहले चाहिए। खेतो मे बीज डालना है खाद डालनी है और उनमे पानी देना है। इन सबके लिए बहुत
लिए करोडो
बिना मर्यादा के नोट छापे या बाहर से ऋण लिए जाये या जनत
पर कर बढाए तीनो दशाओ मे अनेक कठिनाइयाँ आती हैं
यह समस्या ऐसी हैं जिसके सम्बन्ध मे सरकार को ही दोष नह
दिया जा सकता। सरकार और प्रजा दोनो का सहयोग आवश्यक है
यदि सरकार टैक्स लगाती है तो उसका भार जनता पर पडना स्वाभावि
है। यदि टैक्स नही लगाए तो सरकार के पास धन कहाँ से आए? अ
उत्पादन की व्यवस्था कहाँ से हो।

शेष पृ० ६ पर

पृ० ५ का शेष

खाद्य सम्बन्धी समस्या मनोविज्ञान की दृष्टि से जैसे स्वभाव की मर्यादा की चर्चा करते हुए दर्शाया गया है कि खाद्य की समस्या का समाधान केवल आर्थिक दृष्टिकोण से नहीं हो सकता। इस सम्बन्ध में समस्त राष्ट्र के अन्तर्गत ऐसा मनोविज्ञान जागृत करना पड़ेगा जिसके आधार पर हर व्यक्ति केवल खाने की पुकार ही न करे परन्तु उत्पादन की वृद्धि में हर प्रकार से पूरा सहयोग दे।

उत्पादन और मूल्य:—आवश्यक पदार्थों का मूल्य ऐसा बढ़ रहा है जिससे नागरिकों की कमर टूट रही है। और महंगाई के बोझ से दबे जा रहे हैं। आज कल जैसी महंगाई कभी न देखने में आई और न सुनने में। इस मँहगाई के क्या कारण हैं। यह एक अर्थशास्त्र का जटिल प्रश्न है। इसके अनेक कारण हैं और इसके उपचार भी अनेक हैं। सबसे प्रथम इस महँगाई के प्रश्न को सुलझाने के लिए उत्पादन के साथ ही बिक्री के प्रश्न पर भी ध्यान देना होगा। यदि बिक्री के क्षेत्र में चोर बाजारी जमाखोरी चलती रही तो उत्पादन का बढ़ना न बढ़ना एक-सा रहेगा। बिक्री के करने के साथ ही खरीददारों को भी जमा करने के रोग से बचाव न रखना बड़ा आवश्यक है।

खाना और यज्ञ भावना:—यज्ञ भावना के सम्बन्ध में भी विचार आवश्यक है यज्ञ भावना का सम्बन्ध सारी जीवन प्रक्रिया से है। इस स्थल पर खाने के सम्बन्ध में भी इस बात पर प्रकाश डालना आवश्यक है कि खाने के साथ खिलाने को भावना भी दृष्टि में रहे यह आवश्यक है। यदि खाने वालों ने केवल अपने पेट भरने और खाने पर दृष्टि रखी और इसका ध्यान न रखा कि उनके सम्बन्धित परिवार के अन्य लोग उनके अतिथि उनकी प्रजा व उनके पशुओं की व्यवस्था हुई है या नहीं तो खाने वाले का खाना पेट भरना न खाने से बहुतर होगा। उसके चारों ओर जो व्याकुलता व असंतोष का वातावरण होगा उससे उसका खाया पिया अंग नहीं लगेगा और न तृप्ति का साधन हो सकेगा। प्राचीन समय से भारत में खाने और खिलाने की प्रथा साथ रही है। ब्रह्मचारियों, वान-प्रस्थियों और संन्यासियों का पेट भरना और आदर व श्रद्धा से पेट भरना कर्त्तव्य रहा है। इसी प्रकार अतिथियों को खिलाकर फिर स्वयं खाना एक आवश्यक मर्यादा रही है।

खाना और दैविक प्रकोप:—अन्न के उत्पादन में सबसे बड़ी आवश्यकता जल की है। और जल तो वर्षा से ही प्राप्त होता है। वर्षा का पर्याप्त होना समय पर होना और आवश्यकता से अधिक न होना सब ही अत्यन्त आवश्यक हैं। वर्षा ईश्वर की व्यवस्था से है। ईश्वर की व्यवस्था हमारे कर्मों से सम्बन्धित है। यदि नागरिकों के कम और आचार अमर्यादित हैं तो उसका परिणाम कर्मों के फलस्वरूप दैविक आपत्तियों की आशा हो सकता है। ईश्वर के पास और उसके आधीन अग्नि, जल, वायु, प्रबल शक्तियाँ हैं। कर्मों के फल स्वरूप वह इन से ही मालामाल कर देता है और इन से ही पामालकर देता है। इसलिए जब दैविक आपत्तियों के सम्बन्ध में शिकायत हो वा दैविक आपत्ति के कारण उत्पादन के समाधान में विशेष कठिनाई सन्मुख आवे तो यह पर्याप्त नहीं है कि जनता सरकार की शिकायत करे और सरकार जनता के प्रत्येक व्यक्ति को अपने निकटवर्ती वातावरण पर ध्यान करके अपनी कार्य प्रणाली को संशोधित करने पर विचार करना चाहिए। इससे जनता अपना कर्त्तव्य भी पालन कर सकेगी। असंतोष से भी बच सकेगी। और समस्या का समाधान भी हो सकेगा।

कपड़े का प्रश्न:—खाने की समस्या के साथ कपड़े का उत्पादन भी एक जटिल प्रश्न है। बढ़ती हुई आबादी के लिए जैसे खाना अधिक चाहिए, वैसे ही कपड़ा भी अधिक चाहिए। कपड़े, के साथ भी कई प्रश्न लगे हुए हैं। रक्षा के लिए कपड़े चाहिए, सभ्यता के लिए कपड़ा चाहिए, मान और शान के लिए भी कपड़ा चाहिए। कपड़ा आवश्यकता के लिए तो होना ही चाहिए परन्तु जब दिखावा और फैशन का रोग कपड़े के साथ लग जाता है तो कपड़ा पर्याप्त होते भी कम प्रतीत होता है और फैशन के नाम पर नए-नए प्रकार के कपड़ों की मांग बढ़ती रहती है। कपड़ा स्वदेशी हो, सादा हो, मजबूत हो कपड़ों के उत्पादन में यह भावना होनी चाहिए। जिस प्रकार खाने के विषय में उत्पादन वृद्धि के साथ ही इच्छा और आवश्यकताओं को भी मर्यादित करना जरूरी है। इसी प्रकार कपड़े के विषय में भी ये भावना होनी चाहिए जब महात्मा गांधी ने खादी के प्रयोग का प्रचार आरम्भ किया तो उस समय खादी का उत्पादन केवल इतना सम्भव था कि एक व्यक्ति के हिस्से में दो-ढाई गज से ज्यादा नहीं आ सकता था। महात्मा गांधी ने चुस्त कपड़े सम्बन्धी अपनी आवश्यकता को घटा लिया और ढाई गज में ही निर्वाह करने का निश्चय कर लिया। इससे यह शिक्षा लेनी चाहिए कि जब तक आवश्यकताओं की भावना मर्यादित न होगी उत्पादन की मात्रा का प्रश्न का समाधान नहीं हो सकेगा।

आय और व्यय:—उत्पादन के साथ आय और व्यय का प्रश्न भी विचारणीय है। आप अपने पुरुषार्थ पर तो निर्भर हैं ही फिर भी आय के सम्बन्ध में दूसरों का सहारा लेना किसी न किसी रूप में अनिवार्य है।

सामान के सम्बन्ध में आय की वृद्धि के लिए बड़ी दौड़ धूप-खेंचा-तानी, लड़ाई-झगड़े, मारधाड़ हो रही है। वेतन बढ़े मजदूरी बढ़े, और टैक्स कम हो, ये सब की पुकार है। आय की वृद्धि के लिए यत्न करना सब का कर्त्तव्य और अधिकार है। आय पुरुषार्थ का परिणाम है और पुरुषार्थ करना सब का कर्त्तव्य है। आय के साथ यदि व्यय मर्यादित हुआ तो वही परिणाम होगा जो उत्पादन के साथ आवश्यकताओं के मर्यादित होने का है। व्यय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चाहिए। मनोरंजन के लिए चाहिए और किसी समय तो दुर्व्यसनों के लिए भी व्यय की आवश्यकता होती है। वर्तमान समय में भारत में साधारण जनता केवल साधरण आवश्यकताओं की पूर्ति की आशा कर सकती है। यदि बचे तो थोड़ा बहुत मनोरंजन के लिए भी व्यय निकाला जा सकता है। दुःख इस बात का है कि स्वतंत्र देश में भी शराबखोरी जैसे दुर्व्यसन बढ़ते जा रहे हैं और अधिक दुःख इस बात का है कि महात्मा गांधी की जय बोलने वाले और अपने आपको उनका अनुयायी कहने वाले शराब के उत्पादन की बिक्री से प्रतिबंध हटाते जारहे हैं और मद्य पान को प्रोत्साहन दे रहे हैं। जब तक दुर्व्यसनों पर कड़ा प्रतिबंध नहीं लगेगा उस समय तक आर्थिक परिस्थिति का सुधार होना सम्भव नहीं है।

मकान:—खाने और कपड़े के साथ-साथ मकान का प्रश्न भी एक बहुत विचारणीय समस्या बन गया है। बढ़ती हुई आबादी के लिए मकान भी अधिक ही चाहिएं।

मकान शान और दिखावा:—मकानों के सम्बन्ध में भी जो आवश्यक मनोविज्ञान है वह आवश्यकताओं की पूर्ति के आधार पर होना चाहिए। मकान सादा मजबूत, हवादार, और यह तो आवश्यक ही है परन्तु मकान के बनवाने में यदि दिखावा और फैशन का आवश्यक दृष्टिकोण रहे तो मकान पर्याप्त नहीं बन पायेंगे और मकानों की कमी के कारण देश में असंतोष बढ़ा ही रहेगा।

पूरब और पश्चिम:—पदार्थ विज्ञान के उन्नति के कारण पूरब के देशों का पश्चिमी देशों से सम्पर्क और आना जाना अधिक हो गया है। जो देश धनवान् हैं वह अपने मकान बहुत रुपया खर्च करके भी आलीशान से आलीशान बनवा सकते हैं। भारत जैसा गरीब देश उनके अनुकरण की आशा नहीं कर सकता यदि उनके अनुकरण की भावना से अभिलाषा बढ़ी तो निराशा का सामना करना ही पड़ेगा और मकानों के लिए सीमेण्ट चाहिए चूना चाहिए, ईंट, लोहा, लकड़ी सब चाहिए। इन सबके के लिए मशीन और कलों की आवश्यकता होती है और हो रही है। यह मानते हुए भी कि सीमेण्ट इत्यादि के उत्पादन में विशेष वृद्धि हुई है फिर भी जितनी मांग है उसका उत्पादन नहीं हो पाता है। जिस प्रकार खाने और

शेष पृ० ७ पर

"सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् कैसे सुदृढ़ बने ?"

(श्री अनूपसिंह बी ए बी टी दयानन्दभवन (मेरठमार्ग) मुजफ्फरनगर)

गत वर्ष २१ सुशिक्षित नवयुवको ने महर्षिदयानन्द के मिशन के प्रचार एव प्रसार के लिए अपना जीवन अर्पण कर सा० आ० यु० परिषद् का गठन किया था। एक वर्ष की अल्प अवधि में जो महत्त्वपूर्ण कार्य परिषद द्वारा किए गए हैं उनसे परिषद् के प्रधान श्री ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी ने 'आर्य मर्यादा' ४ मई मे प्रकाशित लेख द्वारा पाठको को अवगत कराया था। 'आर्यमर्यादा' के सुयोग्य सम्पादक एव आर्यसिद्धान्तो के मर्मज्ञ श्री० प० जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री जी ने परिषद् को सुदृढ एव व्यापक बनाने के लिए पाठको के सुझाव आमन्त्रित किए थे। कुछ सुझाव अधोलिखित हैं—

१—युवको को परिषद् की ओर आकृष्ट करने के लिए परिषद् की ओर से स्कूल एव कालेजो मे सामयिक एव वैदिक सिद्धान्तो पर आधृत भाषणो का आयोजन होना चाहिए। ऐसा करने से बहुत से नवयुवक परिषद मे आने को तैयार हो जावेंगे। युवक-युवक को अपनी ओर जल्दी आकर्षित कर लेता है।

२—ग्रीष्म अवकाश मे या त्यौहारो की लम्बी छुट्टियो में शिविर का प्रबन्ध करना चाहिए जिससे विद्यार्थी अधिक से अधिक सख्या मे भाग ले सकें। शिविर मे उनके बौद्धिक शारीरिक एव आत्मिक विकास की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। उनके दृष्टिकोण को अधिकाधिक वैज्ञानिक (तार्किक) एव अन्तर्राष्ट्रिय बनाना चाहिए।

३—जहाँ जहाँ आ० स० हैं वहाँ-वहाँ परिषद स्थापित होनी चाहिए। स्थापना का कार्य आयसमाज के पदाधिकारियो के सहयोग से सरल हो सकता है। आ० स० के पदाधिकारियो को भी उदारता का परिचय देना चाहिए। आ० स० के पदाधिकारी युवको की उत्तरोत्तर घटती हुई सख्या पर तो चिन्ता व्यक्त करते हैं परन्तु उनमे से अधिकाश नवयुवको को आगे नही बढने देते। मेरा सकेत पद लिप्सा की ओर है। बहुत से पदाधिकारी यह तो चाहते हैं कि कार्य तो युवक करें पर उनका श्रेय पदाधिकारी होने के नाते उनको ही प्राप्त होता रहे उनकी यह विचारधारा आर्योचित नही है।

४—परिषद् मे सम्मिलित होने वालो की लिखित एव मौखिक परीक्षा होनी चाहिए। सत्यार्थप्रकाश एव महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र को कम से कम एक बार प्रत्येक सदस्य ध्यानपूर्वक—आद्योपान्त अवश्यमेव पढले। मेरी ऐसी धारणा है कि जो युवक एकबार महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र को तथा उनकी कृति सत्यार्थप्रकाश को पढ लेगा तो अवश्य ही उसके दिल मे ऋषिवर के मिशन को पूरा करने की भावना जागृत होगी।

५—जिस स्थान पर भी परिषद् की शाखा स्थापित की जावे तो वहा से उस शाखा का मासिक विवरण प्रधान कार्यालय मे आना चाहिए। इससे युवक अधिकाधिक कार्यशील बनेंगे। परिषद् मे गतिशीलता आयेगी। किसी भी सघटन मे शिथिलता आने पर बहुधा युवक उस सघटन को छोड देते हैं। युवक तो स्वभाव से गतिशील सघटन को पसन्द करते है।

६—परिषद् द्वारा प्रकाशित पत्रिका के अधिक से अधिक ग्राहक बनाने चाहिए। परिषद् के प्रत्येक सदस्य के पास पत्रिका अवश्यमेव पहुचनी चाहिए। पत्रिका मे ब्रह्मचर्य, क्रान्तिकारी वीर, आर्य सस्कृति की सर्वोच्चता, पाश्चात्य सभ्यता का खोखलापन स्वदेश भक्ति एव स्वदेश प्रेम पर अधिक से अधिक लेख प्रकाशित होने चाहिए।

अन्त मे युवकों को भी आह्वान करता हूँ कि आओ! तन मन धन से सहयोग देकर परिषद् को सुदृढ बनावें। कुवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर के शब्दों में—

"जवानों जवानी में कुछ नाम करलो,
समझते हो जिसको जवानी, हवा है।" ●

जय-किसान

●

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान)



वसुन्धरा फिर से हिली, हैं कम न तेरी साधनाऐं।
बुझने लगा फिर शुक्र-दीप, अधूरी पडी हैं अर्चनाऐं॥
मिटायगी माँ का विषाद क्या तेरी सुभावनाऐं ?
उठायगी भारत का भाल क्या मनोहर प्ररणाऐं ?
तलवार-कलम से नही मिटी ले डूबी जो रे हमे भ्रान्ति।
तेरे हल की फाली से ही उठती-बढती है सदा क्रान्ति॥
स्वय नग्न रह पर न रहे यही तेरा परिधान है बस।
राष्ट्रभक्ति का इससे बढिया, नही और प्रमाण है बस॥२॥
हँस-हँस कर तुम बढे अगाडी आज तलक जिस धर्म-क्षेत्र के।
सूखी धरती को चीर-चीर अब बनो वीर इस कर्म-क्षेत्र के॥
श्रम की बूँदें फिर बहने दो न धरो आस अब मेघो मे।
आराम नही निश्चय ही भाग्य मे भरो पेट फिर भूखो के॥३॥
यही प्रात की सन्ध्या है तू करता चल निष्काम कर्म।
अविराम श्रम की धूआँधार है आज तेरा अभिराम धर्म॥
भूखी जनता को करो अतृप्त करो सुधार निज आँगन का।
बूढे भारत को करो सशक्त उद्धार करो जग प्राँगण का॥४॥
तुम हो गौरव भारत माँ के तुम ही भाग्य-विधाता।
वक्ष खोल पगडी सभाल ऐ भारत-भू के ज्ञाता॥
तुम जो चाहो इसी भूमि पर स्वर्ग अभी हो सकता।
अगडाई लो अभी धरा को गगन चूम है सकता॥५॥
भारत का निर्माण तुम्हारे, ही कर-कमलो से होगा।
शक्ति-भरना अणु-अणु मे, तुमसे ही सम्पन्न होगा॥
तेरे ही प्रयासो से दुग्ध-धाराऐं पुन बहेगी।
तेरे ही प्रयत्नो से सोना धरती फिर उगलेगी॥६॥
निज कर्मों मे उल्लास भरो, सिंगार करो अब जननी का।
आदर्शों मे मधुमास भरो उपकार करो अब धरणी का॥
हो कण-कण में प्रकाश सदा तेरे तप का ओ जय-किसान।
हो जनजन को आभास सदा तेरे श्रम का ओ जय किसान॥७॥

पृ० ६ का शेष

और कपड मे किफायतसारी आवश्यक है उसी प्रकार मकानो के निर्माण मे भी यह भावना आवश्यक है।

सामान का युग और चरित्र—चरित्र के प्रश्न पर ईमान के युग पर विचार करते हुए अधिक प्रकाश डालने का यत्न किया जायेगा इस प्रसग मे इतना लिखना आवश्यक है कि हमारी और हमारे देश की आवश्यकताऐं पूरी नही हो सकेंगी। जब तक इस देश के नागरिक और व्यक्ति अपनी आवश्यकताओ को मर्यादित करना न सीखेंगे। सामान के युग मे जो वृद्धि हो रही है वह कई अशो मे सराहनीय है। फिर भी जब तक व्यक्तियो का स्वभाव मर्यादित न होगा जैसा कि इसके पूर्व भी लिखा जा चुका है उस समय तक यह आशा नही की जा सकती कि देश मे कुशलता और शाति साम्राज्य हो।

अर्थ, अनर्थ और व्यर्थ—अर्थ की उत्पत्ति और वृद्धि के प्रश्न पर विचार करते हुए यह बात ध्यान मे रहनी चाहिए कि अर्थ के सचय के सम्बन्ध मे अनर्थ की भावना नही होनी चाहिए और न व्यर्थ की चेष्टाए॥ ●

...... तथा विचारणीय सुझाव—

आर्यसमाज की प्रचार योजना के विषय में

(प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर एम० ए० मुलखर्मा)

आर्यसमाज के प्रचार और प्रसार के विषय में आज प्रत्येक आर्य को गंभीरता से सोचना चाहिए। आर्यसमाज को स्थापित हुए आज लगभग १४ वर्ष हो गये पर 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का उसका नारा पूरे विश्व में तो क्या अभी पूरे भारतवर्ष में भी नहीं गूंज पाया है। और आर्यसमाज में व्याप्त वर्तमान शिथिलता को देखते हुए संदेह होने लगता है कि क्या वह सारे विश्व में कभी गूंजेगा भी ?

समय और परिस्थितयां बड़ी तेजी से करवट ले रही हैं। लोगों के सोचने और समझने के ढंग बदल रहे हैं। इन बदले हुए समय और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आज हमारी प्रचारयोजनाओं में भी आमूलचूल परिवर्तन अपेक्षित है। एक समय था जब हमने गुरुकुल आन्दोलन को जन्म दिया और उत्तरभारत में गुरुकुलों का एक जाल सा बिछा दिया। फिर शास्त्रार्थ का युग आया और हमने बड़े-बड़े दिग्गज शास्त्रार्थ महारथियों का निर्माण किया जिन्होंने वैदिकविचारधारा की धाक सारे विपक्षियों पर बिठा दी। फिर शुद्धि और संघर्ष का युग आया और आर्यसमाजों ने अपने ऊपर बलिदानों की गौरवगाथा से समूचा भारत मुखरित और आलोकित कर दिया।

किन्तु आज इन सभी में मात्रा भेद से परिवर्तन की आवश्यकता है। कोई धार्मिक संघटन तब तक नहीं फलता-फूलता जब तक उसकी जड़ें समाज के ऊंचे और बुद्धिमान् वर्ग में बद्धमूल नहीं होती। क्योंकि राजनीति में जहाँ नेता जनता का अनुसरण करते हैं वहाँ धार्मिक क्षेत्र में जनता नेताओं का अनुसरण करती है। अभी-अभी सम्पन्न आम चुनाओं में हमने देखा कि बड़े बड़े दिग्गज नेता जनता द्वारा परास्त हुए और कईयों का तो राजनीतिक जीवन ही समाप्त हुआ। जिस कांग्रेस-पार्टी ने भारत को विदेशियों की दासता से मुक्त कराने में सबसे बड़ा योग दिया था और जिसको गांधी, पटेल, नेहरू जैसे रथीमहारथियों ने अपने अतुल तप और त्याग से पाला-पोसा और खून से सींचा था वही पार्टी आज जनता द्वारा धराशायी होकर सिसकियाँ तोड़ रही है। किन्तु धार्मिक क्षेत्र में बात ठीक इसके विपरीत होती है। जो फतवा धार्मिक नेता देते हैं और जो व्यवस्था निश्चित करते हैं वही जनता को मान्य होती है। यदि हमको हमारी विचारधारा जनता में फैलानी है तो जनता के जो धार्मिक नेता हैं उनको हमें सर्वप्रथम चुनौती देनी होगी और उनके दिमाग पर अपना सिक्का जमाना होगा। जब वे हमारी बात मानने लग जायेंगे तो उनकी अनुगामी जनता सहज में हमारे पीछे आयेगी शायद इसीलिए आचार्य शंकर ने अपनी विचारधारा का लक्ष्य जनसाधारण की अपेक्षा चोटी के विद्वानों को बनाया और मंडनमिश्र जैसे प्रकाण्ड मीमांसक मृगराज की गुफा में जाकर उनको शास्त्रार्थ के लिए ललकारा और लाखों जनता की उपस्थिति में लगातार ४० दिन तक शास्त्रार्थ करने के पश्चात् उनको परास्त किया और उनके करोड़ों अनुयायी देखते-देखते उनकी विचारधारा में दीक्षित हुए। और जनसाधारण में आग की गति से फैलने वाले जैन और बौद्ध मत के विशाल भवन देखते-देखते धराशायी हो गये और भारत के बाहर सुदूरपूर्व में जाकर उनको आश्रय लेना पड़ा। महर्षि दयानन्द जी ने भी यही किया। काशी जैसे पौराणिकों के गढ़ में जाकर उनसे लोहा लिया और उन पर अपने पाण्डित्य की धाक जमाई। आज हमें भी अपने प्रचार और प्रसार का लक्ष्य इसी शिक्षित और बुद्धिमान् वर्ग को बनाना है। क्योंकि पाखण्डरूपी वृक्ष की जड़ तब तक हरी है तब तक उसकी शाखाओं और पत्तियों पर कितने भी वार कीजिए कुछ लाभ नहीं। जब तक जड़ हरी है वृक्ष अक्षुण्ण ही रहेगा।

पर आज तो हमने शास्त्रार्थों को ही समाप्त कर दिया है। सनातनी मेलों के जैसे कुछ भजन और भाषण प्रवचनों पर ही हमारे उत्सव समाप्त होते हैं और हजारों रुपया व्यय होकर भी साध्य कुछ नहीं होता। इसी लिए आर्यसमाज के इतने वर्षों में प्रचार के बाद भी महाराष्ट्र के पूना जैसे नगरों में आज भी वेद और शास्त्रों के नाम पर बड़े-बड़े वैदिक विद्वान् यज्ञों में पशुबलि का विधान करते हैं और वेदों के वही अर्थ करते हैं जो सायण और तदनुगामी पाश्चात्य विद्वानों ने किए हैं। महर्षि दयानन्द जैसे वेदों के अद्वितीय और मौलिक भाष्यकार को जानते भी नहीं। दयानन्द को वे एक केवल समाजसुधारक के रूप में ही जानते हैं। उनको असाधारण दार्शनिक कहा और प्रतिभा को उन्होंने कभी समझा नही। आज विश्वविद्यालयों के वेद के पाठ्यक्रमों में सायण, मैकडोनेल, ग्रीयर्सन आदि पाश्चात्य विद्वानों के भाष्य तो पढ़ाये जाते हैं। पर महर्षि दयानन्द का नाद कहीं सुनाई नहीं देता। डा० राधाकृष्णन् और दास गुप्ता जैसे विद्वानों के विश्वविख्यात दर्शनग्रन्थों में ऋषि दयानन्द का उल्लेख एक दार्शनिक के रूप में नहीं मिलता।

इस पूरे मानचित्र को हमें बदलना है। इसके लिए हमें योजनाबद्ध-रूप से काम करना होगा। पौराणिक मेलों का रूप धारण करने वाले हमारे जलसों और उत्सवों को तनिक विराम देकर उन पर होने वाले लाखों के व्यय को रोकना होगा और सार्वदेशिक सभा के तत्त्वावधान में एक देशव्यापी वैदिक अनुसन्धान और साहित्य निर्माण का कार्य आरम्भ करना होगा। साहित्य ही इस युग का सबसे बड़ा शास्त्र और प्रभावकारी साधन है। यही आर्यसमाज को जीवित रख सकता है। पर खेद की बात है कि आर्यसमाज उसकी ओर से उदासीन है क्या हमारे लिए यह लज्जा की बात नहीं है कि सौ साल होने पर भी हम ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का सुन्दर अनुवाद अंग्रेजी, फ्रेंच, रशियनादि भाषाओं में तो जाने ही दो भारतीय भाषाओं में भी नहीं कर पाये हैं। इस दिशा में स्व० पं० गंगाप्रसाद जी का कार्य बहुत सराहनीय है। पर एक्के-दुक्के व्यक्ति से यह कार्य होने वाला नहीं है। और केवल महर्षि के ग्रन्थों के अनुवाद से ही कुछ होने वाला नहीं है। हमारे सारसर्वस्व तो वेद ही हैं। उनका पढ़ना-पढ़ाना हमारा परमधर्म बतलाया है। पर आज तक वेद के नाम से सिवाय चिल्लाने के ठोस कार्य हम कुछ भी नहीं कर पाये हैं। वेद के केवल गुण-गानमात्र से तो उनका प्रचार नही होगा। आज भी वेद कतिपय विद्वानों तक ही सीमित हैं। जनसामान्य तक उसको पहुंचाने के लिए हमने कोई योजनाबद्ध काम नहीं किया है। इस दिशा में स्व० सातवलेकर जी ने जो कार्य किया है वह सचमुच अनुकरणीय है। पर वह भी अधूरा है। हमारे पास भी श्री पं० जयदेवजी विद्यालंकार, पं० तुलसीरामजी, पं० क्षेमकरणदास जी, पं० आर्यमुनिजी, पं० शिवशर्मा जी काव्यतीर्थ, पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड, पं० चमूपति जी पं० वैद्यनाथजी तथा स्व० श्री समर्पणानन्द जी जैसे विद्वानों ने वेदों पर कार्य किया है पर यह सभी कार्य तब तक अधूरे रहेंगे जब तक हम वेदों का एक प्रामाणिक बृहत्कोष तैयार नहीं करते जैसे कि बोर्टलिंग, राथ और ग्रासमन आदि के हैं। फिर वैदिक संस्कृत का एक बृहद् व्याकरण होना चाहिए और साथ ही प्रत्येक शब्द के विभिन्न अर्थ देने वाला एक विशाल संदर्भ कोष चाहिए तभी वेदों का अभ्यास बढ़ेगा। केवल वेदों के अनुसार करने से कुछ नहीं होता। वेद तो केवल पंडितों के विवाद का विषय बनकर रहेंगे। इस दिशा में पाश्चात्य विद्वानों के प्रयत्न त्रुटिपूर्ण होते हुए भी सराहनीय है। Macdonnel का vedic grammar सचमुच ही बड़ा अद्भुत ग्रन्थ है। आज भी वैदिक साहित्य का वह एकमात्र व्याकरण ग्रन्थ है। उसका अनुवाद भी कोई नहीं कर सका। हिन्दी में ऐसा ही एक बृहद् ग्रन्थ पंजाब विश्वविद्यालय के प्रो० रामगोपाल जी ने दो भागों में लिखा है। विश्वेश्वरानन्द रिसर्च इंस्टीट्यूट द्वारा एक बृहत् कोष वर्षों पूर्व तैयार हो रहा था पर उसका प्रथम भाग ही देखने में आया। एक ऐसा ही वैदिककोष पंजाब प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान् में स्व० चमुपति जी

शेष पृ० ९ पर

पृ० ८ का शेष

ने प्रकाशित किया था। जो अब अप्राप्य है। सार्वदेशिक सभा को यह कार्य अधिकारी चोटी के विद्वानों को एकत्र बिठाकर करा लेना चाहिए। ऋषि दयानन्द के पूरे ग्रन्थ भी हम शुद्ध छाप नहीं सके। उनका अष्टाध्यायी पाठ्य आज भी केवल चार अध्याय तक ही छपा है। उनकी वेद मन्त्र विषयानुक्रमणिका अर्थ छपने शेष हैं। इधर सत्यार्थप्रकाशादि ग्रन्थों के स्थूलाक्षर और विस्तृत टिप्पणियों सहित संस्करण निकले हैं। पर वेद के लिए जिसके ऋषि [दयानन्द दीवाने थे हमने बहुत कम कार्य किया है। हमारी हर सभा के पास एक वेद प्रचार विभाग है और एक निधि भी वेद प्रचार के नाम से जमा होती है पर कोई ठोस कार्य नहीं होता। पं० लेखराम जी की वसीयत को आर्यसमाज आज भूल गया है और साहित्य निर्माण का कार्य रुक सा गया है। ऋषि की निर्वाणशताब्दी पर मथुरा में एक योजना बनी थी पता नहीं उसको कहाँ तक कार्यान्वित किया गया। टकारा में भी सुनते हैं कुछ कार्य हो रहा है। ऐसे ही कई स्थानों पर भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के द्वारा अनुसन्धान कार्य हो रहा है। पर यह बिखरे हुए अनुसंधान संस्थान किसी सार्वदेशिक संघटन के अन्तर्गत एकत्र कार्य करें तो बहुत अच्छा और स्थायी कार्य होगा। समय रहते आर्यसमाज और सार्वदेशिक सभा को इधर ध्यान देना चाहिए।

आर्यसमाज के प्रचार की दृष्टि से और एक महत्वपूर्ण समस्या पर हमें ध्यान देना है और वह है युवक पीढ़ी को आर्यसमाज की ओर आकृष्ट करने की समस्या। यह एक अकाट्य सत्य है कि आज की युवा पीढ़ी आर्यसमाज की छाया से भी दूर है। उसमें अनैतिकता, अभारतीयता और भ्रष्टाचार बड़े जोरों से फैल रहा है। दूसरों की कौन कहे आज आर्यसमाजियों के बच्चे आर्यसमाज से दूर हैं। मैंने २०-२० साल के पुराने आर्यसमाजियों के घरों में जाकर देखा है मियां तो सध्या करते हैं और बीबी तुलसी की पूजा करती है और बेटा नास्तिक है। यह बहुत ही गंभीर समस्या है। इस पर हमें गंभीरता से सोचना चाहिए। हमारे यह बड़े जलसे और उत्सव इसका सही हल नहीं हैं। यदि हमने सही दिशा में इस ज्वलन्त समस्या पर विचार नहीं किया तो जल्द ही नये खून का प्रवाह रुक जायेगा और भयकर परिणाम का हमें सामना करना पड़ेगा। आज आर्यसमाज कुछ अधेड़ और बूढ़ों की जमायत बन गया है। नवयुवक और बच्चे उससे दूर चले जा रहे हैं। यह भयानक भविष्य की न्यारी है।

क्या कारण है कि राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघ की शाखाओं में तो हजारों की संख्या में छात्र देखे जाते हैं। पर हमारे अधिवेशनों में नहीं आते। हमारे साप्ताहिक अधिवेशन शायद उतने आकर्षक नहीं होते जितने R.S.S. के हमारे अधिवेशन बड़े नीरस और निरे आडबरपूर्ण होते जा रहे हैं। जिनमें बच्चों के लिए आकर्षक कोई चीज सिवाय भजनों के नहीं होती। हमारे समाजमंदिर कहीं सप्ताह में एक बार, तो कहीं महीने में एक बार खुलते हैं और पिटेपिटाये कार्यक्रम के बाद फिर बन्द हो जाते हैं। इसलिए हमारे समाज मन्दिरों में नित्य के साप्ताहिक कार्यक्रमों के साथ नैमित्तिक कार्यक्रम भी होने चाहिएं हर समाज में एक सुव्यवस्थित वाचनालय भी होना चाहिए जिसमें बालोपयोगी सुन्दर और आकर्षक साहित्य भी विपुल मात्रा में होना चाहिए। आर्य कुमार सभा को फिर से सक्रिय कर देना चाहिए। आर्य युवकपरिषद् हर समाज में होनी चाहिए। हो सके तो हर समाज में एक व्यायामशाला जरूर होनी चाहिए। इन सबके अतिरिक्त बालकों और कुमारों को आकर्षित और प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न प्रतियोगिताओं और स्पर्धाओं का आयोजन होना चाहिए। जिसमें विजेताओं को यथा योग्य पुरस्कार भी देने चाहिएं। उद्-बोधरात्री या आर्यसमाज स्थापना दिवस पर ऐसी प्रतियोगितायें यथासंभव स्थानीय भाषाओं में ही आयोजित करनी चाहिएं जिससे बालक और किशोर हमारी ओर आकृष्ट हो सकें। क्षेत्रीय भाषाओं में सुन्दर बालसाहित्य निर्माण कर सस्ते दामों पर बेचना चाहिए।

संविधान, जन-प्रियता तज कर, अपनाते दल-अनुशासन हैं;

श्री [illegible] शुक्ल अध्यक्ष वैदिक परिषद् लखुना (खीरी)

हाथ उठाना धर्म रह गया, क्यों विधियों का मान न सोये?
निर्बल-जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान् न सोये??

जहाँ 'कोड' की 'रोड' बनी हो, द्वेष, पतन, अघ, मद, मल वाली;
नैतिक बन्धन छोड़ मचलती, काम-पिपासा हो मतवाली;
होटल-रेस्ट्राँ बाँट रहे हों, हुस्न,-लाज-इज्जत की प्याली;
सभी परीक्षा-परिणामों की, भाग्य कर रहा हो रखवाली;

'डिप्लोमो' की बाढ़ देख कर, क्यों प्रज्ञा-सद्ज्ञान न सोये?
निर्बल जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान् न सोये??

जहाँ शिवा, बाप्पा, राणा की, दृढ़ दहाड़ बेकार हो चुकी;
जहाँ वीर बन्दा के धनु की सबल जयी टकार हो चुकी;
लक्ष्मी, दुर्गा, ताराओं की क्षीण गूँज ललकार हो चुकी;
ऊधम, भगत, हकीकत की भी बलि-गाथा निस्सार हो चुकी;

मान महिलाओं को मिलता लख, क्यों सुभाष की श्रमण न सोये?
निर्ब-लजर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान न सोये??

जननी का तनु काट जहाँ पर, महामोद-उल्लास मचा हो,
नस-नस छिन्न-भिन्न करने का, ही कोरा इतिहास बचा हो;
भाषा-प्रान्त-विशेष बढ़ा कर, चारों ओर विनाश मचा हो,
परानुकृति की होड़ मचाने का कटुतम उपहास रचा हो;

जनमत की हत्या के सम्मुख, क्यों जनतंत्र स- प्राण न सोये?
निर्बल-जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान न सोये??

जहाँ विवेका, सूरा, तुलसी—की वाणी पर विश्वास न हो;
मार्क्स, डारविन, फ्रायडवादी—अधानुकरण का नाश न हो;
रूसी-आँग्ल प्रभाव बिना ही, बजटों का निज आकाश न हो,
विभव करोड़ों का स्वाहा कर, फल पाने की कुछ आस न हो;

भूखे पेट राष्ट्र-भक्तों का, क्यों सुधर्म-ईमान न सोये?
निर्बल-जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान न सोये??

जहाँ गाय को हाय! काट कर, रक्त-माँस के हों व्यापारी;
अर्थ- प्राप्ति के लिए सुरा पर, देह-शक्ति लुटती हो सारी;
बुरे विनाशक 'वनास्पती' ने, अपनी सत्ता हो विस्तारी;
दधि, माखन, घृत दुग्ध कर रहे मर मिटने की हों तैयारी;

देख नरों का भी तनु बिकता, क्यों वैभव-सम्मान न सोये?
निर्बल जर्जर देख देश को, क्यों न्यायी भगवान न सोये??

पर इन सब से भी मौलिक बात है स्वयं आर्यसमाजी परिवारों में आर्यत्व का पूर्णतया ओत-प्रोत होना। आज इसका अभाव है प्रायः पुरुष ही आर्यसमाज में जाते हैं और दिखावे के लिए आँखें बन्द कर २-४ मिनट संध्या कर लेते हैं पर उनकी धर्मपत्नियाँ मूर्तिपूजा तुलसी पूजा आदि कई प्रकार के पौराणिक रीति-रिवाजों में फँसी रहती हैं। बच्चे प्रायः मात का ही अनुकरण करते हैं और आर्यसमाज से दूर चले जाते हैं। इसलिए हर आर्यसमाजी का कर्तव्य है कि "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" की अपेक्षा "कृण्वन्तो गृहमार्यम्" को चरितार्थ करने का पूरी निष्ठा से प्रयत्न करें। और सच्चे अर्थों में एक आर्यजीवन बिताने का प्रयत्न करें जो दूसरों के लिए एक उदाहरण बन जाए।



महिला आर्यसमाज का एक साप्ताहिक सत्संग

आत्मा की शक्ति बढ़ाओ

(श्रीमती इन्दिरा देवी द्वारा श्री शुकदेव नारायण जी वकील
ग्राम—पो० तुर्तीपार, बलिया)

महिला आर्यसमाज के सत्संग को उपयोगी और रोचक बनाने का निरन्तर प्रयत्न करती रहती हैं। 'जहां चाह वहां राह'। इसलिए हमारे समाज में प्राय: विदुषी महिलायें आती रहती हैं और जीवन के लिए उपयोगी अनेक तत्त्व बतलाती हैं। आज एक प्रसिद्ध महिला उपदेशिका श्रीमती·········के उपदेश की सूचना पाकर आर्यसमाज में महिलाओं की उपस्थिति पर्याप्त थी। उपदेशिका महोदया ने सभी उपस्थित महिलाओं से निम्नलिखित मन्त्र का अपने साथ पाठ करवाया और उसकी प्रभाव पूर्ण शब्दों में व्याख्या की :—

शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि।
आप्नुहि श्रेयां समति समं क्राम। अथर्व० २।११।

हे मनुष्य। तू (शुक्र=असि) वीर्यवान् है (भ्राज=असि) तेजस्वी है (स्व: असि) आत्म-शक्ति से युक्त है। (ज्योति: असि) तू स्वयं तेज रूप है, इसलिए (समं अतिक्राम) समानों के आगे बढ़ और (श्रेयासं आप्नुहि) श्रेष्ठ कल्याण प्राप्त कर।

उन्होंने कहा मनुष्य वीर्यवान्, शूर, बलवान्, तेजस्वी, ओजस्वी, उत्साही, आत्मिक शक्ति से सम्पन्न और स्वयं तेज की ज्योति ही है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य को अपने अन्दर इन शक्तियों का अस्तित्व जान कर उनको उन्नत कर के श्रेष्ठ तथा आदर्श बनना चाहिए। वास्तव में मनुष्य शक्ति का भंडार है। यदि वह उन्नति के मार्ग से प्रयत्न करें तो वह जीवन में बहुत अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है। ये शक्तियां मनुष्य के आत्मा में छिपी हुई हैं।

उपदेशिका महोदया ने आगे कहा कि उपनिषद् में एक कथा आती है—याज्ञवल्क्य ऋषि के पास महाराज जनक बैठे थे। जनक जी ने कहा, महाराज! मेरे मन में यह प्रश्न बार-बार उत्पन्न होता है कि हम जो वस्तुयें देखते हैं वे किस ज्योति से देखते हैं? याज्ञवल्क्य ने कहा, "सूर्यो-ज्योति" अर्थात् सूर्य की ज्योति से देखते हैं। जनक ने कहा, "सूर्य के अस्त होने पर हम किस ज्योति से देखते हैं?" उस समय "चन्द्रमा के प्रकाश" से। जब चन्द्रमा भी न हो, नक्षत्र भी न हों, अमावस्या के बादलों की घोर अंधेरी रात हो तब? महर्षि ने कहा, तब हम "शब्द की ज्योति" से देखते हैं। विशाल बन है। चहुं ओर अन्धेरा है, पथिक मार्ग भूल गया है, वह आवाज देता है मुझे मार्ग दिखाओ, तब दूसरा व्यक्ति दूर खड़ा उस शब्द को सुन कर कहता है, इधर आ जाओ मैं मार्ग पर खड़ा हूं "और वह व्यक्ति शब्द के प्रकाश से मार्ग पर पहुंच जाता है।" जनक ने पूछा, "जब शब्द भी न हों तब हम किस ज्योति से देखते हैं?" महर्षि ने कहा, "आत्मज्योति" तब हम आत्मा की ज्योति से देखते हैं। राजा जनक ने कहा, "कतम आत्माइति" "आत्मा क्या है?" ऋषि ने उत्तर दिया "योऽयं: विज्ञानमय: प्राणेषु हृदयन्तर्ज्योति: पुरुष:" यह जो विज्ञान से भरा हुआ, प्राणों इन्द्रियों और हृदय के अन्दर ज्योति वाला विराजमान है यह आत्मा दिखाई क्यों नहीं देता? इसका सीधा-साधा उत्तर यह है कि इन्द्रियों का यह विषय नहीं हैं। आनन्द स्वामी जी महाराज की जीवन कथा पुस्तक से उपर्युक्त अंश सुनाते हुये उपदेशिका महोदया ने कहा जिस मनुष्य को आत्मदर्शन की अभिलाषा हो जाती है वह संसार के पदार्थों के प्रति निरासक्त हो जाता है। उपनिषद् में नचिकेता की कथा आती है। यम ने उसे कहा, "तू हाथी, घोड़े संसार के ऐश्वर्य, भोग-विलास, प्रकृति पर शासन जो कुछ चाहे मांग ले, आत्म ज्ञान बड़ा कठिन है इसे मत मांग। नचिकेता आजकल का युवक न था। उसने कहा, "भौतिक वासनायें तो एक जन्म क्या सैंकड़ों जन्म लेते जायं तब भी नहीं मिटती पर आत्म-तत्त्व के दर्शन कर लेने पर भौतिक जगत् स्वयं हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता है। भगवन्! मुझे आत्मा का उपदेश दीजिये। मैत्रेयीयाज्ञवल्क्य का संवाद बृहदारण्यकोपनिषद् में आता है। याज्ञवल्क्य जब वानप्रस्थी होंने लगे तो उन्होंने अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहा, "जो तुम्हें कुछ धन दौलत देता चलूं जिससे तुम सुख पूर्वक जीवन बिता सको। मैत्रेयी पूछने लगी।" "यन्नु में इयं सर्वा पृथिवीवित्तेन पूर्णा स्यात् स्यामहं तेनामृता।" अगर सम्पूर्ण पृथ्वी के भोग के पदार्थ मुझे मिल जांय तो क्या मेरी आत्मा को उससे शांति मिल जायगी या नहीं? याज्ञवल्क्य ने कहा, 'नेति नेति' यथैव उपकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितं स्यात्। अमृत त्वस्य तु नाशास्ति वित्तेन" संसार के भौतिक साधनों के मिलने से तुझे आत्मिक शांति प्राप्त नहीं होगी, हां उपकरण अर्थात् साधन संपन्न व्यक्तियों का जीवन जितना सुखी हो सकता है उतना सुखी तू जरूर हो जायेगी। मैत्रेयी ने कहा, "येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्।" जिस वस्तु को प्राप्त करने से मेरे आत्मा को चिर स्थायी शांति न मिले उसके पीछे दौड़कर मैं क्या करूंगी? मुझे आत्म-दर्शन का मार्ग बताइये। मुण्डक उपनिषद् में इसके दर्शन का मार्ग बताया गया है। वहां आया है "हृदा मनीषा मनसाभिक्लृप्त:" यह हृदय से, बुद्धि से, मन से प्रकाशित होता है। इसको स्पष्ट करते हुये वहां लिखा है :—

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येषआत्मा सम्यक् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्त: शरीरे ज्योतिर्मयोहि शुभ्रो यं पश्यन्तियतय: क्षीण—दोषा:।
(मुण्डक ३-१-५)

अर्थात् यह आत्मा सत्य से तपस्या से सम्यक् ज्ञान से और ब्रह्मचर्य से प्राप्त होता है। यह प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर्जगत् में शुभ्र वर्ण का विद्यमान है इसे अपने हृदय को पाप रहित करने वाले योगी देख सकते हैं।

सत्य, तपस्या, सम्यक् ज्ञान और ब्रह्मचर्य ये चार चट्टानें हैं जो आत्मा की नींव और शक्ति को अचल और दृढ़ बनाती हैं। इन चट्टानों को आधार बनाकर जिस व्यक्ति, जिस समाज और जिस देश के जीवन रूपी भवन का निर्माण होगा वह अडिग होगा, उसे किसी तरह का भूचाल अपने लक्ष्य की तरफ जाने से रोक नहीं सकेगा, व्यक्ति, तथा समाज का जीवन इन्हीं से बंधकर ठीक दिशा की तरफ जायेगा।

सत्य से ही आत्मा के दर्शन होते हैं। आत्मा-अनात्मा का झगड़ा सत्यानृत का, अंधेरे-उजाले का झगड़ा है। जैसे प्रकाश का स्वरूप अपने को प्रकाशित करता है वैसे सत्य हर समय अपने को प्रकाशित करने को मार्ग पर जा रहा है। आगे बढ़ जाता है और तब आत्मा की शक्ति का बोध मनुष्य को और संसार को हो जाता है। उस समय उस सत्यवादी को किसी से न तो भय होता है, न वह कभी अन्याय के आगे झुकता ही है। इसलिये कहा भी है, 'सत्यमेव जयते नानृतम्' सत्य की विजय आत्म-शक्ति का दर्शन है। आत्मा की विजय का माग है।

इस प्रकार सत्य के जीवन में उतारते ही उसके लिये कष्ट सहन करना या तपस्या मनुष्य के जीवन में आ जाती है, सत्य से सम्यक् ज्ञान आता है और सम्यक् ज्ञान मनुष्य में ब्रह्मचर्य की भावना लाता है। मनुष्य आत्मदर्शन कर के किसी भी अन्याय और अत्याचार का मुकाबला करने में समर्थ हो जाता है। उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न होता है।

स्वामी श्रद्धानन्द 'भारतीय' स्वतन्त्रता के इतिहास के दिल्ली के एक बहुत बड़े जलूस का नेतृत्व कर रहे थे। जलूस आगे बढ़ रहा था। अंग्रेजों

शेष पृ० ११ पर

अणु-शक्ति : वरदान या अभिशाप

(श्री रमाकान्त दीक्षित एम. ए.)

किसी कवि ने कहा है :—

बोल, किस लिए, शान्ति को तू खो रहा है।
क्यों भला अणु का पुजारी हो रहा है॥
अब तो आंख रहते अन्धा न बन तू।
सम्भल ! नर-संहार जबकि हो रहा है॥ (र० का० दी०)

आज हरेक देश युद्ध की दौड़ में आगे निकल जाना चाहता है। जब से वैज्ञानिकों ने आधुनिक नवीन शस्त्रास्त्रों का निर्माण किया है, तब से तो युद्ध ने और भी भयंकर रूप धारण कर लिया है। प्रथम विश्व युद्ध सर्वप्रथम प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंसटीन ने यह बात खोज निकाली थी कि अणु तत्वों का विभाजन किया जा सकता है। आगे चल कर इसके आधार पर जर्मनी वैज्ञानिक प्रोफेसर ओटोहान ने १९३९ में अणु का विभाजन भी कर लिया। फिर तो जर्मन अंग्रेज और अमेरिकन सभी वैज्ञानिकों ने मिल कर अणुबम तैयार किया। सर्वप्रथम इसका परीक्षण आलमैगार्ड में किया गया। वह दिन दुर्भाग्य का ही था।

६ अगस्त १९३५ को अणु बम के परीक्षण के बाद अमेरिकन हवाई जहाजों ने जापान के प्रसिद्ध नगर हिरोशिमा पर पहला अणु बम फेंका। और उसके तीन दिन बाद ९ अगस्त को जापान के दूसरे नगर नागासाकी पर भी फेंका, जिस से दोनों नगर जल कर राख हो गये। सारे संसार में भय छा गया। लोगों को इस बात का स्वप्न में भी विश्वास न था कि कोई ऐसा भी बम बन सकता है, जो पलक मारते लाखों व्यक्तियों के एक समूचे नगर को ध्वस्त कर दे। यह बम इतने जोर का धमाका करता है कि इसकी आवाज से आदमी बहरा हो जाता है। इसकी चमक इतनी तेज होती है कि आदमी अन्धा हो जाता है। और यह ताप इतनी मात्रा में उगलता है कि मीलों तक मिट्टी लाल हो उठती है।

आज संसार के सारे राष्ट्र दो मुट्ठी मे बंधे हुए हैं। जिन में शक्तिशाली राष्ट्र रूस अमेरिका को माना जाता है। अमेरिका का कथन है कि आज अणुबम की हमें नितान्त आवश्यकता है। क्योकि हम शस्त्रीकरण की दौड़ में पीछे नहीं रहना चाहते। हम तो नवीनतम अणु शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित करना चाहते हैं। यदि साम्यवादी गुट हम पर आक्रमण करे तो हम इसके द्वारा प्रतिशोध कर सकें। किन्तु उसका यह विचार जहां उसकी भीरुता का परिचायक है, वहां विश्व शान्ति में भी बाधक है। उधर रूस शान्ति प्रिय देश है। वह अणु बम का नर संहार करने के लिए प्रयोग करना अनुचित बतलाता है। वह चाहता है कि अणु शक्ति पर अन्तर्राष्ट्रिय नियंत्रण लगा दिया जाए। किन्तु अमेरीका और ब्रिटेन इससे सहमत नहीं हैं।

संसार में किसी वस्तु में भी स्वभाव से गुण अथवा दोष नही हैं। किन्तु वस्तु के सदुपयोग में गुण और दुरुपयोग में दोष होता है। अणु बम जहां दुरुपयोग से नर संहार में अपनी उपमा नहीं रखता, वहां उसका सदुपयोग रचनात्मक कार्यों में भी बेजोड़ है। और मनाव के लिए वरदान के रूप में है। पर दुःख है तो यही कि मनुष्य आंखे बन्द किए बुराई की ओर दौड़ रहा है। अणु बम वाष्प और विद्युत के समान हमें शक्ति प्रदान कर सकता है। रूस में अणु शक्ति से विद्युत उत्पन्न की गई है वहां खाने खोदने तथा पहाड़ों को उड़ा कर समतल मैदान बनाने के लिए भी इसका प्रयोग किया जा रहा है। क्या रेल, क्या जलपोत, क्या विमान इन सब को चलाने के लिये अणु शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। जिस से कि पत्थर के कोयले, मिट्टी के तेल, पैट्रोल आदि की तो बचत होगी ही साथ ही मनुष्य जाति के लिए उन्नति का एक नया क्षेत्र भी खुल जाएगा। अणु शक्ति से कैंसर जैसे भयंकर रोग का भी उपचार सहज ही किया जा सकता है और अभी कुछ दिन हुए रेडियो में समाचार था कि एक वृद्ध के सभी दांत टूट गए थे। किन्तु इसके द्वारा उसका फिर से नया जबाड़ा निकल आया।

यदि विश्व के प्रमुख राष्ट्रों के नेता समझ से काम लें और सन्देह तथा अविश्वास को भुला कर इसके नर संहारक प्रयोग को बन्द कर के इसके रचनात्मक पहलू पर ध्यान दें तो अणु शक्ति मनुष्य जाति के लिए एक अपूर्व वरदान सिद्ध हो सकती है। परन्तु यदि विश्व के प्रमुख नेताओं ने विवेक से काम न लिया तो यह मानव जाति का दुर्भाग्य ही होगा। उस समय समस्त मनुष्य जाति के लिए यह भीषण अभिशाप बन कर रह जाएगी।

हिमाचल प्रदेश में वेद प्रचार की धूम !

(१) आर्य समाज नाग्ग का वार्षिकोत्सव बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। उत्सव को सफल बनाने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से पं० निरञ्जनदेव जी पं० रामनाथ जी प० बलराज जी, पं० अमरनाथ जी प्रेमी पं० रामनाथ जी यात्री, ठाकुर शमशेर सिंह जी, श्री मा० पुरुषोत्तमलाल जी पधारे प्रचार का अपूर्व प्रभाव पड़ा।

(२) आर्यसमाज सराहा (सिरमौर) का उत्सव भी पूर्ण रूप से सम्पन्न हुआ। उत्सव में उपर्युक्त उपदेशक पधारे।

(३) शाडिया में, प० निरञ्जनदेव जी तथा श्री अमरनाथ जी प्रेमी, ठा अमरसिंह जी की सुपुत्रियो के शुभ विवाह पर पधारे वहां भी वैदिक धर्म का प्रचार किया।

(४) दाडों में श्री प० रामनाथ जी सिद्धान्त विशारद, तथा प० बलराज जी, श्री ठाकुर अमरसिंह जी के लघु भ्राता श्री जगदीशचन्द्र जी के शुभ विवाह पर पधारे इन दोनों महानुभावों ने नाण तथा दाड़ों में खूब वैदिक धर्म का प्रचार किया जनता पर अपूर्व प्रभाव पड़ा।

—प्रतापसिंह प्रधान आर्यसमाज नारग

पृ० १० का शेष

की सनिक टोली अपने घातक अस्त्रो से सुसज्जित होकर सामने आकर खड़ी हो गई और जलूस को भग करने का आदेश दिया।

स्वामी श्रद्धानन्द सच्चे वीर थे। वे आगे बढकर बोले "जलूस आगे जायेगा, यदि तुम जलूस पर गोली चलाना चाहते हो तो पहले मेरी छाती पर गोली मारो।" यह सुन कर अफसर ने अपने जवानो को पीछे हटा लिया। शारीरिक और पशुता की शक्ति के सामने आत्म-शक्ति विजयिनी हुई।

उपदेशिका महोदया ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा बहनो ! तुम्हें मैंने स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन चरित्र पढने को दिया था। तुमने पढा होगा। महापुरुषों के जीवन चरित्र हमारा मार्ग प्रदर्शन करते हैं। स्वामी दयानन्द की आत्मिक शक्ति के सामर्थ्य से तो पुस्तक का पन्ना-पन्ना भरा है। विरोधी पत्थर बर्षाते हैं वह दिव्यात्मा दयानन्द सत्य का मडन और असत्य का खण्डन कर रहा है। पत्थरों की वर्षा से घबडा कर श्रोता भागने लगते हैं। स्वामी दयानन्द के भक्त चिन्तित हो उनसे भाषण बन्द करने की प्रार्थना करते हैं। स्वामी दयानन्द मुस्कराते हुए उत्तर देते हैं यह आज की पत्थरों की वर्षा कल की फूलों की वर्षा है। सत्य सकटों में विकसित होता है। सत्य कठिनाइयों में खिलता है। सत्य मुसीबतों में चमकता है।" खड़ा दिव्य दयानन्द अपने धीर गम्भीर स्वर से असत्य का खण्डन करता चला जाता है। किसी ने सांप स्वामी पर फेंक दिया। सभा में भगदड़ मचती है परन्तु उस सांप को पूछ से पकड़ कर स्वामी जी ने पाव से कुचल डाला। यह दयानन्द का साहस है। हम सत्य के द्वारा आत्म शोधन कर सकते हैं।

सत्य को धारण कीजिये। बालकों को सत्यवादी बनाइये। परिवारों को सत्य पर लाइये।

पूज्य संन्यासी, उपदेशक तथा आर्य नेताओं से निवेदन

आपके लोकप्रिय साप्ताहिक के द्वारा जिला आर्योपप्रतिनिधि सभा, बलिया का ध्यान बड़ीबज्जार, नवानगर (बलिया) मे एक आर्यसमाज मन्दिर बनाने तथा शिक्षित आर्यसमाज की स्थापना की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। कि इस क्षेत्र में मुसलमानो, ईसाईयो तथा कबिवादी आडम्बरवादी पाखण्डियो के उत्पीडन से जनता सन्त्रस्त है। नाना प्रकार की कुरीतियों में पड़कर यहाँ की जनता ठग विद्या का शिकार हो रही है। इस क्षेत्र में वैदिक विचारधारा के पर्याप्त सख्या में लोग हैं किन्तु पर्याप्त सहयोग, सघ तथा अध्यवसाय के अभाव मे वे शिथिल वा निष्क्रिय से हैं। कुछ क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा वैश्यजन इसके लिये उत्सुक तथा सन्नद्ध है।

दूहा-बिहरा के कान्यकुब्ज के लोग आर्यसमाज के अनुयायी हैं। वहाँ डा० सीताराम गुप्त इस कार्य के लिए सचेष्ट तथा कृत सकल्प हैं। बाबू [illegible]सिंह, ब्लाक प्रमुख, प० विश्वनाथ पाठक तथा श्रीनिवासपाठक (नरवाप) आदि भी इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। आवश्यकता इस बात की है कि वहाँ धर्मोपदेशक, प्रचारक भजनीक तथा आर्य नेता किसी समारोह को आयोजित कर जावें तथा डा० सीताराम गुप्त से सम्पर्क स्थापित कर उनके सहयोग लेकर एक आर्य कन्या पाठशाला तथा आर्यसमाज मन्दिर, ग्राम० हुसैनपुर अथवा हडसर मे खोलना आवश्यक है। नवानगर में भी आर्यसमाज के सत्सग हों तो उत्तम है।

आशा है सन्यासी राधामोहन जी, एडवोकेट प्रयत्नशील होंगे। प्रसन्नता है कि वे मेरे निवास स्थान सबौलिया गये थे तथा मेरे पूज्य पिता जी प० योगेन्द्र पाण्डे से मिले थे।

मुकुलचन्द्र पाण्डेय एम० ए०, एम० एस० सी—
५६, छोटा चान्दगंज लखनऊ-७

"सत्यार्थ प्रकाश परीक्षाएं"

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी ७ सितम्बर, १९६९ को सारे देश मे सत्यार्थ रत्न, भूषण, विशारद व शास्त्री की परीक्षाए होंगी। परीक्षा शुल्क, नाम मात्र, प्रमाण पत्र आकर्षक तथा प्रत्येक परीक्षा और केन्द्रो मे अनेक पारितोषिक होंगे। परीक्षा सम्बन्धी सभी प्रकार की जानकारी के लिए श्री चमन लाल जी एम ए० परीक्षा मन्त्री आर्यसमाज दरियागंज २ अन्सारी रोड दिल्ली से शीघ्र पत्र व्यवहार करें।

देवव्रत धर्मेन्दु आर्योपदेशक प्रधान
ओम्प्रकाश एम० एम० सी० प्रधान मन्त्री
आर्य युवक परिषद् दिल्ली (रजि०)

शोक प्रकाश

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के मुख्य कार्यालय जालन्धर के पुराने कार्यकर्ता श्री गोस्वामी रणिया राम जी के छोटे भाई का देहान्त होगया, अपने पीछे दो छोटी-छोटी कन्याओ और पत्नी को छोड गया है। श्री रणियाराम गोस्वामी जी पर दो परिवारों का भार पड गया है। हम इस वज्रपात रूप दुःख में गोस्वामी जी के परिवार के साथ शोक समवेदना प्रकट करते हैं। परमेश्वर उन्हें इस दुःख को सहन करने के लिये शक्ति और धैर्य देवे। परमेश्वर की कर्मफल व्यवस्था अटल है, अत धीरज रखने में ही भला है। सभा उपकार्यालय १५ हनुमान रोड के सभी कार्यकर्ता तथा "आर्यमर्यादा" आप के साथ शोक सहानुभूति प्रकाशित करते हैं।

शोक प्रकाशन—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री
सम्पादक—आर्यमर्यादा,

आर्यसमाज सिन्धपुर का निर्वाचन

श्री दुर्गादास सचदेव—प्रधान, श्री श्रीधर त्रिपाठी—मन्त्री, श्री राम कवल राय—कोषाध्यक्ष, श्री बहादुरसिंह—पुस्तकाध्यक्ष तथा ६ कार्य कारिणी के सदस्य।

—मन्त्री आर्यसमाज।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा जगत् प्रेस, चावड़ी बाजार, दिल्ली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

जैसा मैं पुराण, जैनियों के ग्रन्थ, बायबिल और कुरान का प्रथम ही बुरी दृष्टि से न देख कर उन में से गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग तथा अन्य मनुष्य जाति की उन्नति के लिये प्रयत्न करता हूं, वैसे सब को करना योग्य है।

वर्ष १ } २६ ज्येष्ठ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ८ जून १९६९ रविवार. { वार्षिक मूल्य स्वदेश में—१०)
अंक २६ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९ { „ „ विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

तत्रादिमेन प्रजापतिरुपदिश्यते ॥

पहले मन्त्र में प्रजापति का प्रकाश किया है।

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च ॥ ऋग्वेद १.२४ १॥

पदार्थः—(कस्य) कीदृशगुणस्य (नूनम्) निश्चयार्थे (कतमस्य) बहूनांमध्ये व्यापकस्यामृतस्याऽनादेरेकस्य (अमृतानाम्) उत्पत्तिविनाशरहितानां प्राप्तमोक्षाणां जीवानाम् (मनामहे) विजानीयाम (चारु) सुन्दरम् (देवस्य) प्रकाशमानस्य दातुः (नाम) प्रसिद्धार्थे (कः) सुखस्वरूपो देवः (नः) अस्मान् (मह्यै) महत्याम् (अदितये) कारणरूपेण नाशरहितायां पृथिव्याम् (पुनः) पश्चात् (दात्) ददाति (पितरम्) जनकम् (च) समुच्चये (दृशेयम्) दृश्यासम् इच्छां कुर्याम् (मातरम्) गर्भस्य धात्रीम् (च) पुनरर्थं ॥

अन्वयः—वयं कस्य कतमस्य बहूनाममृतानामनादीनां प्राप्तमोक्षाणां जीवानां जगत्कारणानां नित्यानां मध्ये व्यापकस्यामृतस्यानादेरेकस्य पदार्थस्य देवस्य चारु नाम नूनं मनामहे कश्च देवो नः प्राप्तमोक्षानप्यस्मान् मह्या अदितये पुनर्दात् ददाति येनाहं पितरं मातरं च दृशेयम् ॥

भावार्थः—अत्र प्रश्नः कोऽस्तीदृशः सनातनानां पदार्थानां मध्ये सनातनस्याविनाशिनोऽर्थोऽस्ति यस्यात्युत्कृष्टं नाम्नः स्मरेम जानीयाम कश्चास्मिन् संसारेऽस्मभ्यं केन हेतुना मोक्षसुखभोगानन्तरं जन्मान्तरं सम्पादयति कथं च वयमानन्दप्रदां मुक्तिं प्राप्य पुनर्मातापित्रोः सकाशात्पुनर्जन्मनि शरीरं धारयेमेति ॥

भाषार्थ—हम लोग (कस्य) कैसे गुण-कर्म-स्वभावयुक्त (कतमस्य) किस बहुतों (अमृतानाम) उत्पत्ति विनाशरहित अनादि मोक्ष-प्राप्त जीवों और जो जगत् के कारण नित्य के मध्य में व्यापक अमृत-स्वरूप अनादि तथा एक पदार्थ (देवस्य) प्रकाशमान सर्वोत्तम सुखों को देने वाले देव का निश्चय के साथ (चारु) सुन्दर (नाम) प्रसिद्ध नाम को (मनामहे) जान कि जो (नूनम्) निश्चय करके (कः) कौन सुखस्वरूप देव (नः) मोक्ष को प्राप्त हुए भी हम लोगों का (मह्यै) बडी कारणरूप नाशरहित (अदितये) पृथिवी के बीच में (पुनः) पुनर्जन्म (दात्) देता है जिस से कि हम लोग (पितरम्) पिता (च) और (मातरम्) माता (च) और स्त्री पुत्र बन्धु आदि को (दृशेयम्) देखने की इच्छा करें ॥

भावार्थ—इस मन्त्र में प्रश्न का विषय है कौन ऐसा पदार्थ है जो सनातन अर्थात् अविनाशी पदार्थों में भी सनातन अविनाशी है कि जिस का अत्यन्त उत्कर्ष युक्त का नाम का स्मरण करें वा जानें और कौन देव हम लोगों के लिये किस-किस हेतु से एक जन्म से दूसरे जन्म का संपादन करता और अमृत का आनन्द के कराने वाली मुक्ति को प्राप्त होकर भी फिर हम लोगों को माता-पिता से दूसरे जन्म में शरीर को धारण कराता है ॥······

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

नव निर्वाचन सन् १९६९-७० की सूची

प्रधान—प्रोफेसर श्री रामसिंहजी एम० ए० दिल्ली।············



उपप्रधान—(१) पंडित श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री संसत्सदस्य दिल्ली, (२) चौधरी श्री देशराज जी दिल्ली, (३) श्री नरदेव स्नातक, संसत्सदस्य दिल्ली, (४) श्री राजेन्द्र सिंह जी मलिक कलकत्ता (बंगाल प्रदेश)



····· **मन्त्री**—(१) श्री महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री एम०ए०,

उपमन्त्री—(१) श्री उमेशचन्द्र स्नातक एम०ए०, (२) श्री जंगीलाल जी कलकत्ता, (३) श्री अम्बिका प्रसाद जी सिन्हा बिहार, (४) श्री बेणीभाई अहमदाबाद।

पुस्तकाध्यक्ष—आचार्य श्री विश्वश्रवाजी व्यास एम०ए० दिल्ली।

कोषाध्यक्ष—मास्टर श्री शिवचरणदास जी दिल्ली।

अन्तरंग सदस्य—श्री प्रेमचन्द्र जी शर्मा एम० एस० ए०, उत्तर-प्रदेश की ओर से, (२) श्री धर्मेन्द्र आर्य एम०ए० उत्तर-प्रदेश की ओर से, (३) श्री रामनारायण जी शास्त्री बिहार, (४) श्री रामनगीना पाण्डे, बंगाल, (५) श्री हरगोविन्द कचवाला बम्बई, (६) श्री राधेलाल जी बम्बई (आजीवन), (७) श्री शिवकुमार शास्त्री संसत्सदस्य, (८) श्रीमती अक्षयकुमारी जी शास्त्री।

सुरक्षित सदस्य—आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब दो, आर्यप्रादेशिक सभा पंजाब एक सदस्य दो, आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान एक, आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश एक, आर्यप्रतिनिधि सभा मध्यभारत एक, आर्यप्रतिनिधि सभा मध्य-दक्षिण हैदराबाद।

—महेन्द्रप्रताप शास्त्री, एम० ए०
मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

क्या वेद के इन्द्र देवता भैंसे और हरिण का मांस पकाते हैं ?

(डा० रामनाथ वेदालंकार, एम. ए., पी–एच. डी. संस्कृत विभागाध्यक्ष, गुरुकुल वि० वि० कांगड़ी)

[पाठक महाशय विद्वद्वर लेखक महानुभाव के वेदमन्त्र के अर्थों को ध्यान से पढ़ें। उन्हें ज्ञात हो जावेगा कि वेद में कहीं भी मांस खाना नहीं लिखा है। —सम्पादक]

वेदोक्त देवों के नाम पर अनेक विदेशी तथा भारतीय विद्वानों में यह भ्रान्ति प्रचलित है कि वेद के देवता पशुओं का मांस खाते-खिलाते हैं। इसी लिए पशुबलि की प्रथा उनके मत में वेदानुमोदित है। इस प्रसंग में हम निम्नलिखित मन्त्र पर विचार करना चाहते हैं।

अर्भको न कुमारकोऽधितिष्ठन्नवं रथम्।
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम्॥ ऋग्० ८.६९.१५

यह मन्त्र इन्द्रविषयक है। इसका सामान्य अर्थ यह प्रतीत होता है—

"इन्द्र (अर्भकः कुमारकः न) छोटी आयु वाले कुमार के समान (नवं रथम्) नवीन रथ पर (अधितिष्ठन्) आरूढ़ होता है, और (सः) वह (पित्रे मात्रे) पिता-माता के लिए अर्थात् उन्हें खिलाने के निमित्त (विभुक्रतुम्) विशाल कर्मों वाले (महिषं) भैंसे को तथा (मृगं) हरिण को (पक्षत्) पकाता है।"

एवं इस मन्त्र से यह परिणाम निकलता प्रतीत होता है कि इन्द्र ससार के पिता-माता बने हुए सब नर-नारियों को भैंसे और हरिण का मांस खिलाना चाहते हैं। पर वस्तुतः यह मन्त्र एक पहेली है। इसकी प्रहेलिकात्मकता का पता मन्त्र से स्वयं लग जाता है। पहली बात यह कि यहां कहा गया है कि 'महिष मृग' को पकाने से पूर्व इन्द्र नवीन रथ पर आरूढ़ हुआ। विचारणीय है कि यदि इन्द्र को मांस ही पकाना था तो रथ पर चढ़ने की क्या आवश्यकता थी, उसके लिए तो उसे पाकशाला में जाना चाहिए था। रथ पर तो कोई तब चढ़ता है जब उसे यात्रा करनी होती है या युद्ध करना होता है। दूसरी बात यह है कि जिस 'महिष मृग' को पकाने का वर्णन है, वह साधारण 'भैंसा और हरिण' नहीं, अपितु उसे 'विभुक्रतु', अर्थात् अतिशय व्यापक कर्मों वाला कहा गया है। एवं मन्त्र स्वयं सूचित कर रहा है कि रहस्यार्थ कुछ और ही होना चाहिए।

अधिदैवत दृष्टि से यह इन्द्र आदित्य है, जो द्युलोक रूपी नवीन रथ पर आरूढ़ होता है। पिता-माता जगत् के नर-नार हैं। भैंसे के समान कृष्ण-वर्ण होने से तथा हरिण के समान आकाश में दौड़ते फिरने से मेघ ही महिष एवं मृग है। महिषाकृति तथा मृगाकृति धारण करने से भी यह महिष तथा मृग कहला सकता है। यह विभुक्रतु इस कारण है, क्योंकि ओषधि-वनस्पतियों का उत्पादन, प्राणप्रदान आदि विविध व्यापक कर्मों को करता है। इन्द्र द्वारा इस महिष मृग को पकाने का अभिप्राय है मेघ को वर्षोन्मुख करना। सायणाचार्य ने भी इस मन्त्र से यही अभिप्राय लिया है। केवल इतना अन्तर है कि 'महिष' का उन्होंने निघण्टु के अनुसार 'महान्' अर्थ लेकर 'महिष मृग' का अर्थ 'महान् बादल' किया है—

"स इन्द्रः महिषं महान्तं मृगं मृगवद् इतस्ततो धावन्तं सर्वैर्मृग्यं वा विभुक्रतुं बहुकर्माणं मेघं पक्षत् पचति वृष्ट्यभिमुखं करोतीत्यर्थः"—सायण

चारों वेदों के अंग्रेजी भाषान्तरकार ग्रिफिथ इस मन्त्र पर लिखते हैं—"The Buffalo is the dark rain-cloud which Indra Pierces with his lightning", अर्थात् इस मन्त्र में भैंसे (महिष) से अभिप्राय वर्षाऋतु के काले बादल से है, जिसे इन्द्र अपने विद्युद्वज्र से छिन्न-भिन्न करता है।

यह आश्चर्य की बात है कि इस मन्त्र में तो सायण, ग्रिफिथ आदि किसी को सचमुच के भैंसे या हरिण पशु को पकाने की गन्ध नहीं आती तथा इसे वे वर्षा की पहेली के रूप में ही व्याख्यात करते हैं, किन्तु ऋग्वेद में अन्यत्र जहां इन्द्र के लिए सौ महिषों (भैंसों) के पकाये जाने तथा इन्द्र द्वारा तीन सौ महिषों का मांस खाये जाने का वर्णन आता है, वहां वे यही भाव लेते हैं कि इन्द्र सचमुच के भैंसों को पकाता तथा उनका मांस खाता है।* वस्तुतः वहां भी भैंसे वर्षाकालीन काले बादल ही हैं तथा उन्हें पकाने और खाने का अभिप्राय वर्षोन्मुख करना तथा बरसा देना है।

अध्यात्म दृष्टि से इन्द्र आत्मा है, जो शरीर रूपी नवीन रथ पर अधिष्ठित है। कठोपनिषद् में कहा भी है कि आत्मा को रथी समझो और शरीर को रथ—"**आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु (कठ० ३.३)**।" महिष तमोगुण का तथा मृग रजोगुण का प्रतीक है। एवं **महिष तमोमय मन तथा मृग** रजोमय मन हुआ।† आत्मा जगत् के माता-पिताओं के लाभार्थ उनके ततोमय तथा रजोमय मन को पकाता अर्थात् परिपक्व कर के सत्त्वगुणयुक्त कर देता है।‡ यही इस मन्त्र का अध्यात्मपरक आशय है। विविध संकल्पों तथा कर्मों वाला होने से मन 'विभुक्रतु' भी है, अतएव यजुर्वेद के शिवसंकल्प मन्त्रों में मन के लिए कहा गया कि उसके बिना§ कोई कर्म नहीं होता।

उपर्युक्त दृष्टिकोण से विचार करें तो वेदों के मांसभक्षण परक प्रतीत होने वाले अन्य मन्त्रों की भी सुन्दर व्याख्यायें हो सकती हैं।● उनका मांसभक्षण परक अर्थ वेदसंमत नहीं है, यह बात स्वय उन मन्त्रों में या या जिस प्रकरण में वे मन्त्र आये हैं उस प्रकरण में विद्यमान रहती है।

*द्रष्टव्य. ऋग् ५-२९-८ और ६-१७-११ तथा इनका सायणभाष्य।

†पशु-पक्षियों के नामों द्वारा किसी प्रवृत्ति को सूचित करने की शैली वेद में अन्यत्र भी प्राप्त होती है। यथा—"उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्। ऋग्० ७-१०४-२२।"

‡वेद में परिपक्व मन से आचरण करने की बहुत महत्ता वर्णित है। यथा, "यो मा पाकेन मनसा चरन्तम्", ऋग्० ७-१०४-८। सज्जनों को वेद में पाकशंस, पाकस्थामा आदि नामों से स्मरण किया है और जो अपाक (अपरिपक्व) हैं, उन्हें शत्रु माना है (ऋग्० ८-२-३५)।

§यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।
यजु० ३४-३

●लेखक के अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध "वेदों की वर्णन-शैलियां" में प्रस्तुत मन्त्र तथा मांसभक्षण-सम्बन्धी कुछ अन्य मन्त्र भी व्याख्यात हुए हैं।

"झण्डा ओ३म् का। प्यारा कोम का॥"

(वेदाचार्य ब्र० जीवानन्द आर्य, गुरुकुल आर्य नगर—हिसार)

प्यारा झण्डा है लहराता। फर-फर फर-फर है फैराता॥
रक्षक ओ३म् का झण्डा प्यारा। सबकी की है आंखों का तारा॥
विश्व-विजयी ओ३म् का झण्डा। तुलना में नही सूरज चन्दा॥
दयानन्द की है याद दिलाता। आर्यों की है शान बढ़ाता॥१॥
प्यारा झण्डा है लहराता। फर-फर—फर-फर है फैराता॥
झण्डा ऊंचा रहे हमारा। हमको है प्राणों से प्यारा॥
देश-विदेश में यह लहराये। गंगा यमुना यश को गाये॥
इस झण्डे के नीचे जो आता। आर्य वीर है वही कहलाता॥२॥
प्यारा झण्डा है लहराता। फर-फर—फर-फर है फैराता॥
ईश्वर का मुख्य नाम ओ३म् है। मना करे ऐसा मूर्ख कौन है॥
देश-विदेश में जब लहरायेगा। सारा विश्व आनन्द उठायेगा॥
मर जायें पर झुकने न देंगे। जल जायें पर गिरने न देंगे॥
सारे विश्व का मान बढ़ाता। "ब्रह्मचारी" यह गान सुनाता॥३॥
प्यारा झण्डा है लहराता। फर-फर—फर-फर है फैराता॥

सम्पादकीय

कृतघ्नता दोष की निष्कृति नहीं ?

ब्रह्मघ्ने च सुरापे च गोघ्ने भग्नव्रते तथा।
निष्कृतिर्विहिता सद्भिः कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः ।।
वाल्मीकीय रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सर्ग ३४, श्लोक सख्या १२ ।।

जिस समय सीता जी की खोज में राम और लक्ष्मण घूमते हुए सुग्रीव की राजधानी ऋष्यमूक पर्वत के निकट पहुँचे, तब सुग्रीव के प्रमुख सहयोगी श्री हनुमान् उनके पास गये और उनका वृत्तान्त जानकर सुग्रीव के साथ राम की राजनीतिक मित्रता करा दी। उसके अनुसार राम ने बालि को मार कर सुग्रीव को उसका राज्य दिला दिया। इसके बदले में सुग्रीव ने अपनी सेना द्वारा सीता जी खोज का राम को विश्वास दिलाया था। परन्तु सुग्रीव के विलम्ब करने पर लक्ष्मण ने उसको खोज करने के लिए सेना न भेजने पर धमकाया कि तू मिथ्यावादी और कृतघ्न है और अनार्य है। इसी सम्बन्ध मे ऊपर दिया गया श्लोक लक्ष्मण ने सुग्रीव को कहा कि—

ब्रह्महत्यारे और ब्रह्महत्या करने में साथ देने वाले, शराबी और शराबियों के साथ गठजोड़ करने वाले, गोहत्यारे और गोहत्या में किसी भी प्रकार का सहयोग देने वाले तथा एक अच्छे नियम के पालन करने की प्रतिज्ञा को तोड़ देने वाले दोषीजनों को उनके आगे पाप न करने के निश्चय पर श्रेष्ठ आप्त पुरुषों ने निष्कृति=छुटकारा बतलाया है अर्थात् आगे ऐसे दोष न करने पर भविष्य में पाप करने से वह दोषी मनुष्य बच सकता है। इसका यह अभिप्राय नही कि पहले किये गये दोष का कुफल उस दोषी को न मिलेगा। क्योकि किया हुआ कोई भी कर्म सुख-दुःख रूप भोग फल दिये बिना नही हटता। हां वह दोषी आगे उस दोष को न करेगा, तो उस दोष का फल उसे मिलेगा ही नही। यही प्रायश्चित्त कहलाता है। प्रायश्चित्त का भाव यह नही कि प्रायश्चित्त करने पर पिछले पाप कर्मफल दिये बिना हट जावें। प्रायश्चित्त का अर्थ यह है कि वह मनुष्य भविष्य में ऐसी दोष की बात करने से अपने मन को हटा लेता है— यही प्रायश्चित्त है। सदाचारी विद्वान् लोग कहते हैं कि ब्रह्महत्या, सुरापान, गोहत्या और नियमभग रूप दोषों से तो भविष्य के लिये प्रायश्चित्त करने पर छुटकारा हो सकता है। परन्तु कृतघ्न किसी के द्वारा किये हुए उपकार को न मानने वाला इतना भयकर दोषी है कि प्रायश्चित करने पर भी उस कृतघ्नता दोष की निष्कृति=छुटकारा नही होता। क्योंकि कृतघ्न का मन इतना दूषित हो जाता है कि उसके चित पर दोष के प्रबल सस्कार पड़ जाते हैं, उनको हटाना सरल नही है। इसका अभिप्राय यह है कि उक्त चारों दोषों की अपेक्षा यह पाँचवां दोष महा दोष है, इसके लिये बहुत प्रबल प्रायश्चित्त की आवश्यकता होती है, यह कठिन इसलिये है कि अपने उपकारी का स्मरण करने पर उसके दोष के सस्कार उद्भूत होते रहते हैं। कृतघ्नता दोष से छुटकारा अति प्रबल प्रायश्चित्त से ही हो सकता है। इस बात को अर्थवाद रूप में यों कह दिया गया है कि कृतघ्न की निष्कृति नही होती। कठिनता से होने वाले भाव को साधारणतया असम्भव कह दिया जाता है। यही प्रयोजन उपर्युक्त श्लोक का समझना चाहिए।

इतनी बात तो राजनीतिक कृतघ्नता की है। यदि कोई मनुष्य धार्मिक क्षेत्र में रहता हुआ कृतघ्नता दोष का भागी बनता है तो उसके सम्बन्ध में क्या कहा जावे ? विद्वान् महानुभाव स्वय विचार कर लेवें। हम तो इतना कहकर ही बस करते हैं कि भगवान् के आश्रय को पाकर ही वह कृतघ्न अपने किये दुष्कर्म का फल भोग कर भविष्य के लिये अपने अन्तःकरण की शुद्धि के द्वारा सन्मार्ग पर चल सकता है। इस ढग से ही उसके कृतघ्नता दोष का छुटकारा हो सकता है।

वेद-आविर्भाव—पद्धति विशेषाङ्क

गत अंक में हमने आर्यमर्यादा के ग्राहको तथा पाठको को सामान्य रूप से सूचना दी थी कि श्रावणी पर्व के समय "वेदाविर्भाव पद्धति" पर विशेषांक प्रकाशित किया जावेगा। ऋषि दयानन्द ने वेदभाष्य, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका तथा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थो में यह वैदिक मन्तव्य लिखा है कि प्रत्येक सृष्टि के आदि मे परमात्मा अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा नामक ऋषियों के हृदयस्थ आत्मा में एक-एक वेद का प्रकाश करता है। अब विचारणीय यह है कि परमात्मा का वेदज्ञान उक्त ऋषियों के आत्मा में किस प्रणाली से पहुचता है ? यह विषय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसी विषय का स्पष्टीकरण उक्त विशेषाङ्क में होगा। इस भांति कुछ अवान्तर विषयों पर भी प्रकाश पड़ जावेगा। इसके लिए आर्य-जगत् के कुछ प्रतिष्ठित पूज्य विद्वानो की सेवा में निवेदन कर दिया गया है। विद्वद्वर लेखकों के लेख आर्यमर्यादा के कार्यालय में १५ जुलाई ६९ तक भिजवा देने के लिये प्रार्थना की जा चुकी है। आशा है यह विशेषांक अपने ढग का निराला और आवश्यक मन्तव्य का विवरण देने वाला होगा। आर्यमर्यादा के ग्राहक महानुभावों को साधारण ग्राहक शुल्क में ही यह विशेषाक भी दिया जावेगा। जिन ग्राहकों का शुल्क उस समय से पूर्व समाप्त होता हो तो उन्हे अपना नया शुल्क शीघ्र भेज देना चाहिए। इसके साथ ही जिन नये ग्राहको का १० रु० वार्षिक शुल्क अगस्त ६९ के प्रथम सप्ताह तक आर्यमर्यादा के कार्यालय में पहुंच जावेगा, उनको भी ग्राहक रूप में ही यह विशेषाक मिल सकेगा। इस प्रकार का महत्त्वपूर्ण विशेषांक अभी तक कही भी प्रकाशित नही किया गया है। अतः इस शुभ अवसर से स्वाध्यायशील महानुभावों को पूरा लाभ उठाना चाहिए। अगस्त के दूसरे सप्ताह में निश्चय किया जा सकेगा कि विशेषांक कितनी सख्या मे छापा जावे। आर्यसमाजो को भी अधिक संख्या में मंगवा कर वेद के इस महत्त्वपूर्ण मन्तव्य क प्रचार में योग देना चाहिए। जो सज्जन ग्राहक न होंगे उनको किस मूल्य में यह विशेषाङ्क दिया जावेगा, इसकी सूचना अगस्त के दूसरे सप्ताह मे दे दी जावेगी। एजेण्ट महाशय भी जितनी संख्या में मगवाना चाहें, उसकी सूचना अगस्त के दूसरे सप्ताह तक भिजवा देवें।

इस विशेषाङ्क के पश्चात् ऋषि दयानन्द के पूज्य गुरु श्री स्वामी विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में सितम्बर ६९ में दूसरा विशेषाङ्क निकाला जावेगा, जिसमें एक मुसलमान लेखक का सन् १८५६ में फारसी लिपि और उर्दू जबान में लिखा पत्र ब्लाक बनवा कर छापा जावेगा और उसका हिन्दी रूपान्तर भी दिया जावेगा। गुरु विरजानन्द जी महाराज के जीवन के सम्बन्ध में यह ऐतिहासिक पत्र है। इस अंक के विषय में सितम्बर के आरम्भ में सूचना दी जावेगी।

पंजाब के हिन्दी प्रेमियों से

पजाब राज्य मे हिन्दी और देवनागरी लिपि की रक्षा और प्रचार के लिये हम आर्यमर्यादा के सम्पादकीय लेख में पंजाब के समस्त हिन्दी प्रेमियों से निवेदन कर चुके है कि यह विकट समस्या तभी सुलझ सकती है जबकि साम्प्रदायिक और राजनीति भेदभाव को त्याग कर सभी हिन्दी प्रेमी एक वेदी पर एकत्र हो जावे। हम पुनः सुझाव देना उचित समझते हैं कि पजाब मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित जनसघ के सदस्य और बाहर के सभी हिन्दी प्रेमी मिलकर पूर्ण विचार करके एक मत तैयार करें। १९५७ में हिन्दी रक्षा आन्दोलन में जिस सच्चर फार्मूले का लागू करने का विरोध किया था। आज उसी का चालू रखने के लिये हिन्दी प्रेमियों की मांग है। आशा है हिन्दी प्रमियों की सघटित माग पर पजाब सरकार भी उचित ध्यान देगी। जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

ला० धर्मचन्द लड़ोहिया का स्वर्गवास

नवाशहर (जालन्धर) के प्रसिद्ध दानी आर्य श्री ला० धर्मचन्द जी लड़ोहिया का स्वर्गवास हो गया। आप सर्वप्रिय सोम स्वभाव सज्जन थे। हम उनके सुपुत्र श्री वेदप्रकाश जो के परिवार के प्रति आर्यमर्यादा की ओर से शोक समवेदना प्रकट करते है।

"बाइबल का विहंगावलोकन"

(ले०—श्री अनूपसिंह बी०ए०बी०टी०, दयानन्द भवन, मुजफ्फरनगर)

[जो ईसाई सज्जन बाइबल सम्बन्धी मत पर अपने विचार लिखगे। उनको भी हम आर्यमर्यादा मे सहर्ष प्रकाशित करते रहेगे। यह लेख सत्य-असत्य निर्णय के लिये है न कि द्वषभाव फलाने के लिए एक ईसाई महाशय श्री यूसुफ खा ने मुझ से फोन पर पूछा था—मैंने उन्हे यही उत्तर दे दिया था—सम्पादक)

ईसाईमतावलम्बी बाइबल को ईश्वरकृत मानते हैं परन्तु यदि कोई निष्पक्ष व्यक्ति इस तथाकथित ईश्वरोक्त, बाइबिल का अध्ययन करे तो वह इस निष्कर्ष पर पहुचेगा कि इसमे सृष्टि नियमो के विरुद्ध एव तर्क विरुद्ध, असम्भव, और परस्पर विरुद्ध बाते भरी पडी हैं।

सृष्टि नियम एव तर्क विरुद्ध बातें—(१) बाइबल के अनुसार ईश्वर ने सूर्य को चौथे दिन किया। (२) कुवारी लडकी से 'ईसा' का जन्म हुआ। (३) परमात्मा को सृष्टि की रचना करने मे ६ दिन लगे। (४) परमेश्वर ने 'आदम' को भूमि की मिट्टी से बनाया, उसके नथनो मे जीवन का श्वास फूक दिया और वह जोवित प्राणी वन गया। (उत्पत्ति अ० २ आ० ७) (५) आरम्भ मे ईश्वर की आत्मा जल पर डोलती थी। (उत्पत्ति अ० १ आ० २) (६) ईश्वर ने हव्वा' को आदम की पसली से बनाया। (७) यहोवा ने गधा का मुंह खाल दिया और बलाम' से कहने लगी, मैंने तेरा क्या किया है कि तूने मुझे तीन बार मारा। (गिनती अ० २२ आ० २८) (८) ईसा के विश्वासी को सप तथा विष हानि नहा पहुचा सकते। (मरकुस अ० १६ आ० १८) (९) यहोशू ने सूर्य और चन्द्रमा को रोक दिया। (यहोशू अ० १० आ० १२-१३) (१०) पत्थर को पिघलाकर पीतल बनाया जाता है। (अय्यूब अ० २८ आ० २)

उपर्युक्त बाते सृष्टिनियमो के प्रतिकूल अवैज्ञानिक एव तर्क की कसौटी पर पूरी नही उतरती।

असम्भव बातें—(१) जब ईसा मे यह सामर्थ्य था कि उन्होंने एक बार सात रोटियाँ और छोटी मछलियो से, स्त्री बच्चो को छोडकर चार हजार भूखे पुरुषो को तृप्त कर दिया था तो फिर सात टोकरे बचे टुकडो के भर गये। (मत्ती अ० १५ आ० ३४ से ३९ तक) (२) यहोशू ने लोगो से कहा सुनो यह पत्थर हम लागो का साक्षी रहेगा, क्योकि जितने वचन यहोवा ने हमसे कहे हैं उन्हे इस पत्थर ने सुना है इसलिए यह तुम्हारा साक्षी रहेगा ऐसा न हो कि तुम परमेश्वर से इन्कार कर दो। (यहोशू अ० २४ आ० २७) (३) शेमशन ने गध के जबडे की एक हड्डी मिली। उसने हाथ बढाकर उसे पकडकर उससे एक हजार पुरुषो को मार डाला। (न्यायियो अ० १५ आ० १५) (४) ईसा हमारे पापो के लिए मर गया और दफनाया गया और पवित्र शास्त्रानुसार तीसरे दिन जीवित हो उठा। (कुरैन्थियो अ० १५ आ० २, ३ ४) (५) देखो एक कुम्हारो गर्भवती होगी और पुत्र जनेगी और उस का नाम 'इम्मानुएल' रखेगी। (याशायाह अ० ७ आ० १४) (६) मे तुमसे सच सच कहता हू कि वह समय आता है और अब है जिसमे मरे हुए परमेश्वर के पुत्र को आवाज सुनेंगे। (यूहन्ना अ० ५ आ० २५) (७) यही ईसा जो तुम्हारे पास से स्वर्ग पर उठा लिया गया है फिर आयेगा। (प्ररितो अ० १ आ० ११) (८) शीशु ने सूखे हाथ वाले आदमी से कहा बोच मे खडा हो। अपना हाथ बढा उसने बढाया और उसका हाथ अच्छा हो गया। (मरकुस अ० ३ आ० ३ से ५ तक) (९) अजोर का एक पेड सडक के किनारे देखकर 'ईसा' उसके पास गया और पत्तो को तोडकर उसमे और कुछ न पाकर उससे कहा, अब से तुझमे फिर कभो फल न लगगे। अजोर का पेड तत्काल सूख गया। (मत्ती अ० २१ आ० १९) (१०) "'लोग एक गूगे का जिसमे दुष्टात्मा थी उसके (ईसा) के पास लाए। जब दुष्टात्मा निकाल दी गई तो गूगा बोलने लगा। (मत्ती अ० ९ आ० ३२ ३३) (११) योशु ने कोढी को हाथ बढाकर छआ और कहा मैं चाहता हू तू शुद्ध होजा और वह तत्काल कोढ से शुद्ध हो गया। (मत्ती अ० ८ आ० ३) (१२) ईसा ने अन्धो की आंखे स्पर्श की और उनकी आंखें खुल गई। (मत्ती अ० ९ आ० २९, ३०) किसी विद्वान दार्शनिक ने व्यग्य करते हुए कहा है—'यदि भगवान् के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए चमत्कारो की आवश्यकता है तो आज के वैज्ञानिको ने भगवान को मात दे दी है।"

फाँसी के तख्ते पर लोगो ने 'ईसा' से मजाक करते हुए कहा था, 'देखो यह लोगो को पापो से बचाने और मोक्ष दिलाने के लिए आया था, किन्तु अपने को यह सूली से भी न बचा सका।

व्यभिचार—(१) अब्राहम की पत्नी के कोई सन्तान नही पैदा हुई। उसकी पत्नी ने अपनी नौकरानी को फुसला कर अपने पति के फन्दे में फँसा दिया। अब्राहम ने उससे सम्भोग किया और वह गर्भवती हो गयी। (उत्पत्ति अ० १६ आ० १ से ४ तक)

(२) लूत ने अपनो पुत्रियो से सम्भोग किया। 'तब बडी बेटी ने छोटी से कहा हमारा पिता बूढा है और पृथ्वोभर म कोई ऐसा पुरुष नहीं जो ससार को रीति के अनुसार हमारे पास आए। आओ हम अपने पिता को दाख का रस पिलाये और उसके साथ शयन कर जिससे हम अपने पिता के वश को बचाए रक्खें। उन्होने उस दिन रात के समय अपने पिता को शराब पिलायी तब बडी बेटी जाकर पिता के पास लेट गई, पर उसने न जाना कि वह कब लेटी और कब उठी। ऐसा ही हुआ। दूसरे दिन बडी बेटी ने छोटी से कहा कल रात को मैं पिता के पास सोई थी आज भी रात को हम पिताजी को शराब (wine) पिलाय, तब तू जाकर उसके साथ शयन करना जिससे हम अपने पिता के द्वारा वश उत्पन्न करे। उन्होने उस दिन भी रात के समय अपने पिता को शराब पिलाई छोटी बेटी जाकर उसके पास लेट गयी, पर उसको उसके सोने और उठने के समय का ज्ञान न था। इस प्रकार से लूत की दोनो बेटियाँ अपने पिता से गर्भवती हुई। (उत्पत्ति अ० १९ आ० २१ से ३६ तक)

(३) पुत्री से शादी—"यदि कोई (बाप) यह समझे कि म अपनो कुवारी का हक मार रहा हू जिसकी जवानी ढल चुकी है और उसका प्रयोजन भी हो तो वह जैसा चाहे वैसा करे। इसमे पाप नही कि वे दोनो (पिता, पुत्री) विवाह करले।" (१ कुरैन्थियो अ० ७ आ० ३६)

इस प्रकार बाइबल से अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं परन्तु हम विस्तार और शिष्टता के भय से अधिक उदधत करना अच्छा नही समझते।

परस्पर विरोधी वचन—बाइबल मे परस्पर विरोधी वचनो की भी कमी नही। परमेश्वर अपने कार्यों से सन्तुष्ट है। परमेश्वर ने सब पर जो उसने बनाया था नजर की और देखा कि बहुत अच्छा है।"

परमेश्वर अपने कार्यो से असन्तुष्ट है—(उत्पत्ति अ० १ आ० ३१) 'तब परमेश्वर जमीन पर इन्सान के पैदा करने से पछताया और दुखी हुआ।" (उत्पत्ति अ० ६ आ० ६) परमेश्वर देखा व सुना जा सकता है—'यहोवा मूसा से इस प्रकार आमने-सामने बात करता था जिस प्रकार कोई अपने मित्र से बात कर।" (निर्गमन अ० ३३ आ० ११) परमेश्वर को देखा व सुना नही जाता— परमेश्वर का किसो ने कभी नही देखा।" (यूहन्ना अ० १ आ १८)' तुमने न कभी उसकी आवाज सुनी है और न कभी उसकी सूरत देखी है।" (यूहन्ना अ० ५ आ० ३७) परमेश्वर थक जाता है और विश्राम करता है—"६ दिन मे यहोवा ने आकाश और पृथ्वी को बनाया और सातव दिन विश्राम करके ताजा दम हुआ।" (निर्गमन अ० ३१ आ १७) परमेश्वर न कभी थकता न कभी विश्राम करता है—क्या तूने नही जाना ? क्या तूने नही सुना ? खुदावन्द, जो सनातन है, जमीन के किनारो का पदा करने वाला है वह थक नहा जाता।" (याशाशाह अ० ४० आ० २८) ईश्वर सर्वशक्तिमान्— खुदा से सब कुछ हो सकता है। (मत्ती अ० १९ आ० २६) ईश्वर सर्वशक्तिमान नही— यहोवा यहूदा के साथ रहा परन्तु तराई के निवासियो के पास लोहे के रथ थे इसलिए वह उन्हे न निकाल सका।" (न्यायियो अ० १ आ० १९)

शेष पृ० ६ पर

ओङ्कार-जप-विधिः

(१)

लें० पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली

[सुयोग्य विद्वान् लेखक महानुभाव ने अपने विषय को गहन विचार और अनुभव करके लिखा है अत स्वाध्यायशील पाठक सज्जन इस पर मनन करें। —सम्पादक]

१—जब मेरी आयु पूरे अट्ठारह वर्ष की भी न थी, तभी मैंने आर्य कुमार सभा कैथल जि० करनाल के माध्यम से आर्यसमाज मे प्रवेश किया था। फिर मुझे श्रीमद्दयानन्दोपदेशक विद्यालय लाहौर मे पूज्यपाद गुरुवर, आचार्य स्वर्गीय श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जो महाराज के चरणो में रहकर विद्याभ्यास का अवसर मिला था। एक आर्योपदेशक के रूप मे मेरे जीवन का आरम्भ सन् १९३१ ई० मे हो गया था। प्रथमवार मैं आर्य प्रतिनिधि सभा निजाम राज्य हैदराबाद दक्षिण का उपदेशक नियुक्त हुआ था। तभी कुछ काल तक मुझे आन्ध्र, कर्नाटक और महाराष्ट्र प्रदेशो मे धर्म-प्रचार करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तब से अब तक आर्यसमाज की वैदिक-धर्म प्रचारक प्रगतियो के निकट सम्पर्क मे रहकर, मैं अपनी शक्ति के अनुसार धर्म-प्रचार कार्यो मे सलग्न हूँ। इस कार्य मे मैंने अपनी वाणी और लेखनी दोनो का ही उपयोग किया है। प्रभु की कृपा से मुझे अवसर भी खब मिल गया है।

२—मैं आरम्भ से ही एक विनम्र उपासना-प्रेमी बना रहा हू। मेरा अभिप्राय है—ओङ्कारोपासना का प्रेमी। हमारे महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने अपने सत्यार्थप्रकाश, सस्कार-विधि पचमहायज्ञविधि और ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका प्रभृति ग्रन्थो मे जिस वैदिक उपासना विधि का उल्लेख किया है, उसमे उन्होंने प्रणव-जप अर्थात् "ओ३म्" नाम के जप का भी सुस्पष्ट विधान किया है। ओङ्कार-जप का विधान वेदो मे भी मौजूद है ब्राह्मण-ग्रन्थो मे भी आरण्यको और उपनिषदो मे भी मनुस्मृति आदि स्मृतिया मे भी, दर्शनो और गीता आदि ग्रन्थो मे भी। माण्डूक्योपनिषद् जो एक छोटा-सा उपनिषद् है, वह तो पूर्णतया ओङ्कार का व्याख्यान ही है। उपनिषदो की उद्गीथोपासना भी ओङ्कारोपासना ही है। ओङ्कारोपासना की महिमा और फल श्रुतियो से आर्यसाहित्य भरा पडा है।

३—आर्यसमाज आन्दोलन के प्रारम्भ काल मे—'हरे राम, हरे कृष्ण" आदि के पौराणिक जप-विधानो का बहुत जोरदार खण्डन किया गया था। तभी ओङ्कारोपासनाविधायक अत्यन्त प्रबल उपक्रम भी आरम्भ हुए थे। व्याख्यान-दाता ओङ्कारोपासना पर बल देते थे और लेखकगण ओङ्कारोपासना का प्रतिपादन अपने लेखो एव ग्रन्थो मे करते थे। कवियो ने भी सस्कृत और हिन्दी मे ओङ्कारोपासना विषयक सुन्दर-सुन्दर स्तोत्र और गीत आदि रचे थे। पौराणिक नाम जप का खण्डन तो दर हई ठण्डा हो चुका है। पौराणिक-नाम जपवाद नाम—सकीतन आदि रूपो मे विगत थोडे ही वर्षो मे बहुत अधिक बढा है। वदिक उपासनावाद का कोई विशेष प्रचार-प्रसार तो नही हो सका है, इसकी ओर किसी का कुछ ध्यान भी नही है, तथापि ओङ्कारोपासना की बाते अभी तक भी कुछ-कुछ चलती हैं। नई बात तो कुछ भी नही होती फिर भी लेख छपते है, भाषण होते हैं, गीत भी बनाये और गाये जाते है।

४—वैदिक-धर्म-प्रचारक आर्यसामाजिक प्रगतियो के साथ अपना दीर्घकाल व्यापी निकट-सम्पर्क होने के कारण ओङ्कारोपासना के विषय मे मैंने बहुत कुछ पढा भी है, सुना भी है, पूछताछ करके जाना भी है। ओङ्कारोपासना-विषायक छोटी बडी प्राय सभी पुस्तको का सग्रह भी मैंने प्रयत्नपूर्वक किया है। प्राचीन ग्रन्थो के ओङ्कारोपासना विषयक सन्दर्भों का बारम्बार पाठ और विचार करने मे मैंने पर्याप्त समय लगाया है। स्वर्गीय श्री पण्डित शिवशकरजी काव्यतीर्थ का उत्तम ग्रन्थ 'ओङ्कार-निर्णय" जब दुर्लभ हो गया था, तब मैंने उसे आद्योपान्त दोबारा लिखा था और सुसम्पादित रूप मे छपवा दिया था। एक सज्जन ने अपनी "आर्य-सस्कृति के तीन प्रतीक" नाम की पुस्तक रची थी। ए पुस्तक प्रकाशक के सहयोग से मैंने वह सुन्दर रूप में छपवादी थी ओङ्कारोपासना की महिमा का उल्लेख देखकर ही मैं उसकी ओर आकर्षित हुआ था। मेरे एक विद्वान मित्र ने ओङ्कारोपासना विषयक एक बडा ग्रन्थ "ओङ्कार-दर्शन" नाम का लिखा है। क्योकि इस विषय मे मेरी विशेष रुचि है, इसलिये मैंने उसकी पाण्डुलिपि को पुस्तकाकार मुद्रण के लिए श्रद्धापूर्वक दोबारा लिख डाला है। पुस्तक रूप मे ता न जाने वह कब छपेगा ? प्रसन्नता की बात है कि सुप्रसिद्ध मासिक-पत्र—"परोपकारी" अजमेर मे उसका मुद्रण अनुक्रमपूर्वक हो रहा है।

५—मै विनम्रतापूर्वक यह प्रगट करता हूँ कि ओङ्कारोपासना विधायक प्राचीन और नवीन साहित्य मे तथा अन्यत्र भी—"ओ३म् ईश्वर का सर्वोपरि एव निजनाम है, ओ३म् का जप होना चाहिए ओम् नाम का अर्थ विस्तार बहुत अधिक है, ईश्वर के सभी गुण, कर्म एव स्वभाव तथा उनका विचार ओम् नाम के ही अन्तर्गत आ जाता है, ओम् नाम के जप के लाभ बहुत अधिक है, व्याकरण-शास्त्र, भाषा-विज्ञान, ध्वनि-विज्ञान और मनोविज्ञान आदि के अनुसार भी ओम् नाम का जप ही सार्थक उत्तम, सिद्धिप्रद, दोष-रहित और दुख-निवृत्ति मे विशेष सहायक है यह सब मैंने बारम्बार पढा और सुना है। इस प्रकार सम्पूर्ण साहित्य मे ओङ्कार का महिमा-गान और अथवाद ही भरा पडा है। ओङ्कार-जप की विधि क्या है ? इसका तो कही कुछ भी उल्लेख है ही नही। यदि कही कोई उल्लेख होगा तो वह अभी तक मेरे देखने मे ही न आया होगा।

६ मेरे सामने बारम्बार यह प्रश्न आता रहा है कि हम ओङ्कारोपासना अथवा "नाम" नाम का जप कैसे करे ? श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वेदो और योग-दर्शन आदि प्राचीन ग्रन्थो के आधार पर आधुनिक युग मे ओङ्कारोपासना का पुनरुद्धार तो किया है परन्तु उन्होंने कोई सुस्पष्ट विधि ओङ्कारोपासना की कही लिखी नही है। ऐसी कोई प्राचीन या अर्वाचीन विधि भी इस समय कही मिलती नही है। पौराणिक और तान्त्रिक आदि उपासना पद्धतियो ने तो नये-नये नामो के जप और अनुष्ठान चला-चलाकर वेद प्रतिपादित तथा आर्ष 'ओङ्कारोपासना" तथा विशुद्ध "ओङ्कार-जप" का बहिष्कार ही कर रखा है।

७—सन् १९६१ ई० मे एक बार मेरा आसन कुछ काल के लिए श्री विरजानन्द साधु साधना-आश्रम वृन्दावन-मार्ग मथुरा मे रहा था। प्रबन्धको की कृपा से तब वहाँ प्रतिदिन दैनिक सत्सगो मे भाषण देने का अवसर भी मुझे मिला करता था। उसी अनुक्रम मे मैंने एक दिन ओङ्कारोपासना का प्रतिपादन करते हुए ओङ्कार-जप की बात भी कही थी। प्रभु की कृपा से उस दिन वह भाषण कुछ अधिक अच्छा बन पडा था। सत्सग के पश्चात् वहाँ उपस्थित श्री हरप्रसाद जी 'गर्भपी" नाम के एक वानप्रस्थी साधु-महात्मा मुझे वहा मिले थे। उनसे मेरा यह नया ही परिचय था। वे मुझसे 'ओङ्कार-जप विधि जैसी किसी नई या पुरानी पुस्तक के विषय मे पूछने लगे। मैंने अपनी अनभिज्ञता प्रगट की। वे मुझ से आग्रह करने लगे कि साधारण जनता के आरम्भिक उपयोग और अभ्यास के लिए मैं ही कोई ऐसी पुस्तक लिखकर प्रकाशित करा दू। तब मैंने उनके अनुरोध को स्वीकार किया था। उन्होंने मुझे यह भी बतलाया था कि बहुत वर्ष पहले उज्जैन से एक ओङ्कार-जप-विधि" प्रकाशित हुई थी। कभी कही मिले ता उसे भी देखना चाहिए।

८—फिर तो दैव लीलावशात् श्री शुभ ी जा महाराज के दर्शन अन्य नगरो मे भी जल्दी-जल्दी होने लगे। उनके पुत्र भी आने लगे। वह 'ओङ्कार-जप-विधि" बनी और छपी कि नहीं ? कब बनगी ? कब छपेगी ? जल्दी करो। ऐसा उनका आग्रह बढने लगा। कुछ न कुछ करना मेरे लिये आवश्यक हो गया। मन पुरानी और नई बहुत-सी उपासना-पद्धतियो को खोज खोजकर पढा और किसी परिणाम पर पहुँचना चाहा। कई साधु महात्माओ और आर्यविद्वानो से इसी कार्य के लिये सम्पर्क स्थापित किया। उन-उनक उपासना प्रकार और अनुभव की जानकारी चाही। मैं विनम्रतापूवक यह प्रगट करना चाहता हूँ कि कही

शेष पृ० ९ पर

वेद में ईश्वर का स्वरूप

(श्री सत्येन्द्रसिंह जी एम ए धामपुर)

ईश्वर का वास्तविक स्वरूप वेद मे बताया गया है।

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश ॥ यजुर्वेद ३२।३ ॥

जिस ईश्वर का महान् सामर्थ्य और यश है उस ईश्वर का कोई आकार और प्रतिमा नही है। वह ईश्वर निराकार है। एक अन्य वेद-मन्त्र ने परमात्मा का स्वरूप पूर्णरूपेण स्पष्ट है।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभू स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्य समाभ्य ॥ यजु० ४०।८

वह परमात्मा आकाश के समान सब जगह व्यापक है। सब जगत् का करने वाला वही है। "अकायम्" और वह कभी शरीर धारण नही करता, वह अखण्ड, अनन्त और निर्विकार होने से देह धारण नही करता। उससे अधिक कोई पदार्थ नही है। 'अव्रणम्" वह अखण्ड, एकरस, अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प और अचल है, उसमे छिद्र किसी प्रकार से नही हो सकता। "अस्नाविरम्" नस नाडी के बधन से रहित है। अति सूक्ष्म होने से ईश्वर का कोई आवरण नही हो सकता। "शुद्धम्" वह परमात्मा सदैव निर्मल, अविद्यादि जन्म मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषादि दोषोपाधियो से रहित है। अपापविद्धम्" परमात्मा कभी अन्याय नही करता, क्योकि वह सदव न्यायकारी ही है। 'कवि' त्रैकालज्ञ, (सर्ववित्) महाविद्वान् जिसकी विद्या का अन्त कभी कोई नही ले सकता। "मनीषी" सब जीवो के मन (विज्ञान) का साक्षी ज्ञाता है। परिभू" सब दिशाओ और सब जगह मे परिपूर्ण हो रहा है सब के ऊपर विराजमान है। "स्वयम्भू" जिसका आदि कारण माता, पिता, उत्पादक कोई नही किन्तु वही सब का निमित्त कारण है। 'याथातथ्यतोऽर्थान व्यदधाच्छाश्वतीभ्य समाभ्य" उस ईश्वर ने अपनी प्रजा को यथावत् सत्य, सत्यविद्या जो चार वेद उनका सब मनुष्यो के परम हितार्थ उपदेश किया है। उस हमारे दयामय पिता परमेश्वर ने बडी कृपा से अविद्यान्धकार का नाशक वेद-विद्या रूप सूर्य प्रकाशित किया है और सबका आदि निमित्त कारण परमात्मा है। (ऋषि भाष्य से)

यह है परमात्मा का यथाथ वास्तविक स्वरूप। इसके अतिरिक्त परमात्मा के सर्वशक्तिमान् होने का जो गलत अर्थ अन्य मतो के लोग लगाते हैं उसका निराकरण महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास मे यह लिखकर कर दिया है कि 'ईश्वर व्यापक है क्यो कि जो देश मे रहता है तो सर्वान्तर्यामी सर्वज्ञ सर्वनियन्ता, सबका स्रष्टा सबका धर्ता और प्रलयकर्ता नही हो सकता। ईश्वर निराकार है क्यो कि जो साकार होता तो व्यापक नही हो सकता जब व्यापक न होता तो सर्वज्ञादि गुण भी ईश्वर मे न घट सकते। क्योकि परिमित वस्तु मे गुण, कर्म, स्वभाव भी परिमित रहते हैं तथा शीतोष्ण, क्षुधा, तृषा, राग, द्वेष, छेदन, भेदन आदि से रहित नही हो सकता। इससे यही निश्चित है कि ईश्वर निराकार है। ईश्वर सवशक्तिमान् है परन्तु जैसा तुम (अन्य मत वाले) सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ जानते हो वैसा नही। किन्तु सर्वशक्तिमान् शब्द का यही अर्थ है कि ईश्वर अपने काम अर्थात् उत्पत्ति, पालन, प्रलय आदि और सब जीवो के पुण्यपाप की यथायोग्य व्यवस्था करने मे किंचित भी किसी की सहायता नही लेता अर्थात् अपने अनन्त सामर्थ्य से ही अपना सब काम पूर्ण कर लेता है। जो तुम कहो कि सब कुछ चाहता और कर सकता है तो हम तुम से पूछते है कि परमेश्वर अपने को मार, अनेक ईश्वर बना, स्वय अविद्वान् चारी व्यभिचारादि पाप कर्म कर और दु खी भी हो सकता है? जैसे ये काम ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से विरुद्ध हैं तो जो तुम्हारा कहना है कि वह सब कुछ कर सकता है, यह कभी नही घट सकता।"

मनुष्य मात्र का हित इसी मे है कि बौद्धिक और आध्यात्मिक ही क्या सासारिक जीवन के सभी विषयो पर वैदिक मान्यताओ का ही आश्रय लेव और वेद को ही प्रमाण माने। वैदिक मान्यताओ का अवलोकन करने पर अन्य मतो की भ्रान्त विचारधाराओ का खोखलापन और निस्सारता तुरन्त पता लग जाती है। बडा अच्छा हो यदि लोग वैदिक साहित्य के स्वाध्याय की ओर प्रवृत्त हो।

पृ० ५ का शेष

से भी कोई नई, क्रियात्मक, समाधानकारक, और विशेष महत्व की जानकारी मुझे नही मिली।

९—सन् १९६६ ई० मे जब मुझे आर्यसमाज उज्जैन के वार्षिक उत्सव और वेद-प्रवचन-प्रसग पर उज्जैन जाने और बारह दिन तक वहाँ रहने का अवसर मिला तब आर्य भाइयो के सहयोग से मैने उक्त "ओङ्कार-जप-विधि" भी खोज करके खरीद ली। यह एक छोटी-सी पुस्तक है। स्वर्गीय श्री पण्डित शिवदत्त जी उज्जैन निवासी सुधरे हुए विचारो के एक पौराणिक विद्वान् थे। अपने पौराणिक विचारो और सस्कारो के अनुसार उन्होने इस पुस्तक की रचना की थी। इसमे ओङ्कार-जप के लाभो का ही विशेष उल्लेख है। अर्थवाद इसमे केवल उतना वही है, जो श्री महर्षि दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास मे दर्शाया है। जप की विधि कुछ विशेष नही है। वह सीधी सरल ही है। जैसी कि माला की सहायता से नाम जप की प्रचलित पौराणिक विधियाँ होती हैं। विधि का समाधानकारक, सन्तोषप्रद, विज्ञानसम्मत और शास्त्रीय मर्यादा प्रतिपालक कोई उल्लेख इसमे नही है। ओङ्कार-जप से अमुक-अमुक व्यक्तियो को अमुक-अमुक असाधारण लाभ हुए थे, ऐसी कुछ कहानियाँ भी इसमे हैं।

१० "श्रीमद्दयानन्द-प्रकाश" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ के लेखक श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज एक अच्छे आर्य सन्यासी थे। अपनी राम-नाम दीक्षा, प्रेम-पन्थ प्रवर्त्तना और आर्यसमाज से विमुखता से पूर्व उन्होने "ओङ्कारोपासना" नाम की एक छोटी-सी पुस्तक लिखी थी। इस पुस्तक का प्रचार धर्मवीर श्री महाशय राजपाल जी ने बडे उत्साह से किया था। तब इसे आर्यजनता का आदर खूब मिला था। इसमे "ओम्" नाम का अर्थवाद, गौरव-गान और अर्थवाद तो है, जप की कोई विशेष विधि नही है। एक पुस्तक विक्रेता ने इसे अब फिर छापा है। ये स्वामी सत्यानन्दजी मथुरा अथवा हिण्डौन वाले स्वामी सत्यानन्द जी महाराज से भिन्न व्यक्ति थे।

११—स्वर्गीय श्री स्वामी सर्वदानन्द जो महाराज का एकमात्र ग्रन्थ—"सन्मार्ग-दर्शन" बडा उत्तम है। उसका प्रथम अध्याय—'नाम शक्ति" "ओम्" नाम की महिमा को बडी उत्तमता से दर्शाता है। ओम्-नाम-जप की विधि उसमे नही है। "ओङ्कार-निर्णय" मे ओम् नाम का व्याख्यान है, जप-विधान नही। योग-दर्शन छोटे-बडे, नये पुराने भाष्य मैने देखे। "ओम्" नाम जप का विधान तो सभी मे है, परन्तु उस जप का प्रकार क्या हो? इसका उल्लेख किसी मे नही है।

१२—उज्जैन से लौटने के बाद मैने विचारा था कि कोई 'ओङ्कार-जप-विधि" यदि मिल जाये, या बन जाये तो उत्तम होगा। मैं उसे प्रकाशित करवा दू गा। तब मैने बीस आर्य विद्वानो के पास बीस पत्र भेजे थे। ऐसे आर्य विद्वानो के पास जो कि सुप्रसिद्ध हैं, ग्रन्थ-निर्माता हैं, उत्तम अध्यापक हैं, नेता, सुवक्ता और आचार-विचार सम्पन्न हैं। जिनके चरणो मे मेरी अगाढ श्रद्धा है, और जिनके विषय मे मेरी धारणा है कि यदि वे 'ओङ्कार-जप-विधि" बना देंगे, तो उसे सहज मे ही प्रामाणिकता मिल सकेगी और आर्य जनता की उपासना विषयक एक गम्भीर उलझन भी सुलझ जायेगी। एक महती आवश्यकता की पूर्ति हो जायेगी। मैने 'ओङ्कार-जप-विधि" की आवश्यकता बतलाकर लिखा था कि—"आप यथाशीघ्र ही वदिक सिद्धान्तो और महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित आर्यसमाज के मन्तव्यो को ध्यान मे रखते हुए एक ऐसी व्यावहारिक "ओङ्कार-जप-विधि" तैयार करके भेजने की कृपा कर, जो साधारण आर्य जनता की उपासना विषयक आरम्भिक आवश्यकताओ को पूर्ण कर सके। मै उसे उत्तम रूप मे शीघ्र ही प्रकाशित करवा दू गा।" मेरे इस प्रयास का अभी तक भी कुछ लाभ नही हो सका है। [हा अपेक्षित "ओङ्कार-जप-विधि" मुझे प्राप्त हो गई है। उसका विस्तृत उल्लेख आगे किया जा रहा है।]

क्रमश:

[यह लेखमाला क्रमश आर्यमर्यादा के अको मे प्रकाशित होती रहेगी। इससे ग्राहक और पाठक, सहज ही लाभ उठा सकेंगे।—सम्पादक]

काश हम पूजा का असली मतलब समझ पाते !

यह कैसी पूजा ?

(एक सच्ची घटना)

(डा० रामचरण महेन्द्र एम०ए०,पी० एच०डी, नयापुरा, कोटा (राजस्थान)

"भागिये ! भागिये ! गजब हो गया !"

"क्यों ? आखिर क्या हुआ ? ऐसे घबड़ाये हुए क्यों हो ? कुछ कहो भी तो ? बड़े बदहवास नजर आ रहे हो ?"

वह कुछ बोल न सका।

मैं कालेज में पढा रहा था। मेरी तो हवाइयाँ उड़ गई।

"क्या बात है ?" मैंने आगन्तुक से फिर पूछा।

"चाची छत से गिर पड़ीं ! बड़ी चोट आई है। बुलाया है आपको।"

"ओह ! वे तो पहले ही कमजोर थीं ! अब कैसी हैं ?"

"वे सख्त घायल हो गई हैं ! आप तुरन्त चलिये ! डाक्टर को दिखाना है। देर मत कीजिए। उनके प्राण खतरे में हैं !" वह जल्दी-जल्दी कह उठा।

मैं भागा-भागा घर आया। देखा, सचमुच चाची के सर में चक्कर आने से वे छत से नीचे गिर पड़ी थीं। घातक चोट लगी थी। सर फट गया था। कई स्थानों से रक्त बह रहा था। अधिक रक्त निकल जाने से उन्हें मूर्छा आ गई थी। सभी मरहम पट्टी कर रहे थे। कुछ रोने से हो कर 'हाय' हाय ! अब क्या होगा ?" कह रहे थे।

दृश्य में भय और करुणा मिश्रित थी।

मैं एक दम किकर्त्तव्यविमूढ़ हो उठा। मुझे देख कर इतना भय लगा कि कुछ भी निश्चित न कर सका कि क्या करूँ ?

"फौरन् डाक्टर को बुला लाओ ! रुको मत ! प्राणों पर संकट है !"

अब मुझे याद आया कि सचमुच डाक्टर को फौरन् ले आने की बात मेरी स्मृति से गायब ही हो गई थी। हम मामूली समझ के चिकित्सा के मामले में कर भी क्या सकते थे ?

मैं ठीक तरह कपड़े भी न पहिन सका। उधर चाची के प्राण निकल रहे थे, भला कपड़ों को पहिनने की चिन्ता किसे पड़ी थी ? भागा-भागा डाक्टर के बगले पर पहुँचा। आध घण्टे का रास्ता पन्दरह मिनिट में ही तय कर लिया।

डाक्टर के दरवाजे पर एक चपरासी खड़ा था।

"अरे भाई, फौरन् डाक्टर साहब से मेरे यहाँ चलने को कहो !" "डाक्टर के घर पर खड़े चपरासी से मैंने बड़े विनीत स्वर में प्रार्थना की। "मरीज की हालत बड़ी खतरनाक है। मेरी चाची छत से गिर पड़ी हैं और सख्त घायल हो गई हैं ! उन्हें देख लेने के लिए फौरन् डाक्टर साहब से कहो। पूरी फीस दूगा।"

"जल्दी न कीजिए। डाक्टर साहब नहाने गुसलखाने में गये हैं। मैं अभी आया हूँ तो वे स्नान कर रहे थे। पन्दरह मिनिट में नहा लेंगे, तभी दुबारा बुलाने जाऊंगा। बार-बार जाने से वे नाराज हो जाते हैं। ऐसे मरीज तो यहाँ रोज-रोज ही भीड़ लगाये रहते हैं। कुछ डाक्टर साहब के स्नान ध्यान, पूजापाठ का भी ख्याल किया करो।"

"अरे यह ठीक है ! मरीज बड़ी नाजुक हालत में है। खून बह रहा है। इसीलिए तो जल्दी मचा रहा हूँ।"

जल्दी तो सभी मचाते रहते हैं !" उसने पाषाणहृदय से कहा।

मेरे मन में बड़ी धुकपुकी मची थी। न जाने चाची की तबियत कैसी होगी। पन्दरह मिनिट तक घड़ी की सुइयों पर आँखें गड़ी रहीं। अब पूरा समय हो गया तो बड़ी अजिजी से फिर प्रार्थना की—

"अब डाक्टर साहब नहा चुके होंगे, तुम जाकर मेरे मरीज के विषय में निवेदन करो। वे सख्त घायल हो गई हैं। बड़ी जल्दी उपचार की जरूरत है। प्राण खतरे में फँसे हैं। बहुत देर से यहाँ खड़ा हूँ। अब जल्दी से उन्हें ले आओ।"

"अच्छा जाता हूँ।"

नौकर अन्दर चला गया। मुझे पूर्ण उमीद थी कि वह अपने साथ ही डाक्टर साहब को ले कर आयेगा। वे कपड़े पहिन कर जल्दी ही तैयार हो चुके होंगे। नौकर के हाथ में दवाइयों का बेग होगा और हम लोग बिना देर किये घर पहुंच जायेंगे।

लेकिन थोड़ी देर बाद नौकर फिर अकेला ही आ गया। मेरी हवाइयाँ उड़ रही थीं।

"क्यों, क्या डाक्टर साहब ने कपड़े अभी तक नहीं पहिने ? मुझे तो बड़ी जल्दी है।" भर्राई हुई आवाज में बोला।

"डाक्टर साहब नहाने के बाद पूजा पर बैठ गये। उन्हें पूजापाठ से कौन हटा सकता है। उनका हुक्म है कि जब हम पूजा पाठ करें, तब तक हमें कोई भी परेशान न करे। हम पूजा में उन्हें कुछ भी नही कह सकते। वे भगवान की सेवा में हैं। मजबूरी है।"

"हाय ! मेरा दुर्भाग्य !" कह कर मैंने माथा पीटा। लगभग आध घण्टा प्रतीक्षा में पहले ही नष्ट हो गया था।

अब किसी नये डाक्टर के पास जाऊंगा, तो उसमें भी आधे घण्टे से अधिक लग जायेगा। क्यों न कुछ देर और प्रतीक्षा कर ली जाय।

मन को मसोस कर मैं फिर बाट देखने लगा। मेरे नेत्र निरन्तर डाक्टर के किवाड़ों की ओर लगे हुए थे कि अब वे पूजा से निकलें।

"ओफ डाक्टर, भगवान् का एक प्राणी दम तोड़ रहा है और तुम मूर्तिपूजा में निमग्न हो। किसी प्राणी के प्राण बचाने से बड़ी पूजा और क्या हो सकती है।"

एक-एक मिनिट पूरे दिन और सप्ताह की तरह मुश्किल से कर रहा था। मेरे मन में विचार हिलोरें ले रहे थे।

"उस पूजा से क्या लाभ जिससे किसी प्राणी को लाभ न हो ? जो समय किसी रोगी की प्राण रक्षा में लग सकता है, उससे बड़ी पूजा और क्या हो सकती है ! प्राणियों की सेवा ही सब से बड़ी पूजा हो सकती है। मानवता की रक्षा ही सबसे ऊँची साधना हो सकती है।" मैंने सोचा।

कोई घण्टेभर तक डाक्टर साहब की पूजापाठ का कार्यक्रम चलता रहा। मरीजों की भीड़ उनके बंगले के बाहर एकत्र हो गई। हर एक उत्सुक नेत्रों से उनके बाहर आने की प्रतीक्षा कर रहा था।

मरीजों में बड़ी आतुरता थी। हर पल मूल्यवान् था। कब डाक्टर आयें, और मरीजों की सुध लें ! हमारी दृष्टि डाक्टर के आगमन में लगी हुई थी।

अन्त में मेरे धैर्य की सीमा न रही।

आखिर वे निकले ! जैसे सब में नया प्राण आ गया हो।

उन्होने पूजापाठ की थी, पर इस सब मे वे डेढ़ घण्टे देरी से हमारे घर पहुंचे थे। तब तक चची की हालत और भी गिर चुकी थी। रक्त अधिक निकल गया था और शरीर निर्जीव सा हो गया था। वे मरे हुए व्यक्ति की तरह खाट पर पड़ी थीं। हम अत्यन्त चिन्तित हो उठे।

"डाक्टर साहब, कैसी हालत है ?"

"ओफ़ देर हो गई पहुंचने में...... हालत नाजुक है......पर......मैं अभी ताकत का इजेक्शन लगाता हूँ। स्वस्थ हो जाने की पूरी उमेद है।" उन्होंने ताकत का इजेक्शन लगा दिया।

"मैंने इन्जेक्शन लगा दिया है। ये कमजोर अवश्य हो गई हैं, किन्तु ठीक हो जायेंगी" डाक्टर साहब कहने लगे, "अच्छा हो यदि आप इन्हे अस्पताल ले जायं !"

मैं फीस देते हुआ बोला, "क्या वहाँ इन्हें भरती कर लिया जायेगा ?"

अपनी फीस वसूल कर वे बोले, "अवश्य ! मैं लिखे देता हू। भला मेरी बात कौन टाल सकता है।"

और उन्होंने नुस्खा लिख दिया। उसमें मरीज को भरती करने की सिफारिश भी की गई थी।

मुझे चाची की हालत खतरनाक दिखाई पड़ रही थी। हर क्षण

शेष पृ० ८ पर

विचारणीय स्थिति—

संस्कृत का ह्रास या विकास ?

(श्री रघुवीर मुमुक्षु शास्त्री वेदालंकार दिल्ली विश्वविद्यालय)

वर्तमान में संस्कृत पठन-पाठन की तीन प्रणाली देखने को मिलती हैं तथा—(१) सभी विषयों की शिक्षा देने वाले दिल्ली, मेरठ, आगरा इत्यादि विश्वविद्यालयों तथा इनसे सम्बन्धित कालेजों में संस्कृत विभाग द्वारा बी० ए० या एम० ए० की परीक्षायें।

(२) संस्कृत निष्ठ संस्था-गुरुकुल कांगड़ी वाराणसेय संस्कृत वि० वि० इत्यादि तथा इनसे सम्बन्धित विद्यालय। (३) परीक्षा का बिल्कुल बहिष्कार कर देने वाले गुरुकुल आदि। उपर्युक्त तीनों प्रकार की संस्थाओं में नियमित विद्यार्थी के रूप में मैंने अध्ययन किया है। इस अवधि में कुछ निवेद्य इस प्रकार है। (१) वि० वि० द्वारा चालित बी० ए० या एम० ए० की परीक्षायें—इस प्रकार के वि० विद्यालयों एवं कालेजों को संस्कृत प्रचारक कहना केवल उपहास है। पाठक चौंकेंगे नहीं कि मैं भी इस समय दिल्ली वि० वि० एम० ए० संस्कृत द्वि० वर्ष का छात्र हूं। जो देख रहा हूं वह लिख रहा हूं। इस प्रकार के वि० विद्यालयों का पाठ्य-क्रम मुख्यरूप से अंग्रेजी एवं पाश्चात्यता पर आधारित है। छात्र-छात्रायें अंग्रेजी की पुस्तकें पढ़ते हैं। परीक्षा में अंग्रेजी माध्यम से लिखते हैं। पाठ्यक्रम में अंग्रेजी में लिखी पुस्तकें निर्धारित हैं उनको ही परीक्षक लोग प्रधानता देते हैं। कुछ काव्य नाटकादि जो भी कोर्स में लगे हैं वहीं तक इनकी सीमा है। संस्कृत की कोई पंक्ति लिखना या कोई वाक्य बोलना इनकी सामर्थ्य के बाहर है। कहने को संस्कृतवादविवाद प्रतियोगितायें भी होती हैं किन्तु एक-एक अक्षर दूसरों से लिखाकर, घोटकर ही संस्कृत का एक वाक्य भी शुद्ध न बोल सकने वाले छात्र-विजयी होते हैं। एम०ए० में 'राम' के रूप तथा 'भवति पचति' की सिद्धि सिखलायी जा रही है। समझ में नहीं आता कि जिस एम० ए० के छात्र को रामः की सिद्धि तथा 'प्रश्नोऽयम्' एवं 'प्रश्नमिदम्' के भेद का भी पता न हो उस पर दो आँसू बहाये जाएं ? या इस प्रकार की शिक्षा पर हँसा जाए ? संक्षेप में भाव है कि संस्कृत समझना, लिखना, बोलना इन लोगों के वश की बात नहीं है। कुछ अपवाद अवश्य हैं किन्तु नाममात्र।

(२) दूसरी प्रकार की संस्थायें मूलरूप में संस्कृत को लेकर चली थी। धुरन्धर विद्वान् इसी प्रणाली ने अतीत में समाज को दिये किन्तु अब में तथा तब में आकाश पाताल का भेद है। इन संस्थाओं में अपना पाठ्यक्रम पूर्वापेक्षया अति सरल एवं संक्षिप्त कर दिया। जो कादम्बरी तथा न्यायदर्शन जैसे जटिल १०वी कक्षा से पूर्व ही समाप्त कर दिये जाते थे आज स्नातक परीक्षा में वह ग्रन्थ रक्खे हैं इतने पर भी विद्यार्थी को उनका ५० प्रतिशत भी आता हो, मैं विश्वास नही करता। अनुमान आप लोग भी लगा ले कि 'क्षोमं केनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा···' इस शाकुन्तल की पंक्ति में पठित 'पाण्डु' शब्द का अर्थ पाण्डु राजा एक त्रयोदश कक्षा का विद्यार्थी करता है जोकि परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त करता है। 'रसापकर्षक' साहित्य में एक प्रकार के दोष माने हैं किन्तु विद्यार्थी परीक्षा में लिखता है—'रसापकर्षक' एक साधु ···। बाहर से मैट्रिक तथा इण्टर पास विद्यार्थी इसमें प्रवेश पा जाते है। पाठ्यक्रम नितान्त सरल कर दिया है इसीलिए उपरोक्त अवस्था है। २-**वारा० सं० वि० विद्यालय**—इनकी परीक्षाओं का जाल समस्त उत्तर प्रदेश मे फैला है किन्तु केन्द्रों की क्या स्थिति रहती है यह मुझसे एक प्रत्यक्षदर्शी होने के नाते सुन लीजिए क्योंकि मध्यमा से आचार्य तक मैंने इस वि० विद्यालय की परीक्षायें दी हैं। केन्द्रों में खुलकर नकल होती है। स्वयं निरीक्षक तथा उस विद्यालय के प्रबन्धक अपने प्रबन्ध में नकल कराते हैं। अभी मैनपुरी एक रसानन्द महाविद्यालय से मैंने आचार्य की परीक्षा दी। श्रीमान् प्रकाश जी गौड निरीक्षणार्थ भी वहाँ पहुंचे। किन्तु विद्यार्थियों ने मेज पर पुस्तक रखकर नकलें कीं तथा निरीक्षकों ने सहायता दी। केवल यही नहीं अपितु इस विश्वविद्यालय के ७५ प्रतिशत केन्द्रों में यही होता है। महाविद्यालय ज्वालापुर से इसी कारण केन्द्र हटा था। ऋषिकुल हरद्वार से इसी कारण केन्द्र बदला। नाम कहाँ तक गिनायें जायें सर्वाधिक भ्रष्टाचार इन परीक्षाओं में है। गुरु लोगों की कृपा है। ३—कलकत्ता की 'तीर्थ' परीक्षा का केन्द्र विद्यार्थियों की कापियाँ तथा प्रश्न-पत्र तक उनके घर भेज देता है। ४—बंबई की शास्त्री, आचार्य आदि की परीक्षा में तो पुस्तकों की साक्षात् प्रतिलिपि होती है। (५) तृतीय प्रकार की संस्थायें जो परीक्षा नहीं दिलातीं कुछ ईमानदारी से कार्य कर रही हैं। किन्तु पोल-खाता यहाँ भी इतना है कि पाठविधि में तो समस्त व्याकरण, दर्शन, ब्राह्मण, वेद इत्यादि रक्खे होते हैं किन्तु पठन-पाठन केवल व्याकरण-निरुक्त तथा १-२ दर्शन तक सीमित है। योग्य अध्यापक अर्थात् धुरन्धर विद्वानों का इन संस्थाओं में अभाव है तथा टिढाण···पण्डित बनना ही इनका उद्देश्य प्रतीत होता है। आजकल इन संस्थाओं ने भी परीक्षा प्रणाली को अपनाना प्रारम्भ किया है तथा मान्यता के चक्कर में हैं। परिणाम वही होगा कि पाठ्यक्रम कम किया जाएगा तथा श्रीमती नकलदेवी जी भी एक समय अपना प्रभाव दिखलायेंगी।

उपरोक्त उदाहरण सुन-सुनाकर नहीं अपितु नियमित छात्र रहकर प्रत्यक्ष देखकर लिखे हैं। तीनों ही प्रणालियों में सुधार की आवश्यकता है। प्रथम बी० ए० तथा एम० ए० वाली प्रणाली तो संस्कृत के हित में १० प्रतिशत भी नहीं। इसमें आमूलचूल परिवर्तन की अपेक्षा है। संस्कृत विभाग का माध्यम संस्कृत या हिन्दी हो। पाश्चात्य लेखकों के स्थान पर भारतीय लेखकों तथा उनकी मान्यताओं को प्रश्रय दिया जाए। संस्कृत भाषा का अंग्रेजी माध्यम सर्वथा समाप्त किया जाए। दूसरे प्रकार के विश्वविद्यालय भी जरा समझें। अपने पाठ्य-क्रमको मान्यता या विद्यार्थियों के लिए उपहास्य न बनायें। गुरु लोग जो नकल करा कर संस्कृत की तथा उनसे भी बढ़कर छात्रों की जड़ काट रहे हैं कृपया इस धन्धे को छोड़ दें। अच्छा तो हो कि वारा० सं० वि० वि० के समस्त केन्द्र ऐसे विद्यालयों में रक्खे जायें जहाँ से कोई विद्यार्थी उक्तविश्वविद्यालय की परीक्षा न दे रहा हो। अन्यथा यह शास्त्री तथा आचार्य की उपाधि गलियों में बँटने वाली हो जायेगी। एक विद्यार्थी के स्थान पर दूसरा विद्यार्थी न बैठने पाये केवल मान्यता के लिए प्राइवेट विद्यार्थियों का नाम लिखकर ही वही खाता पूर्ति न की जाय। नकल बी० ए० एम० ए० वाले विश्वविद्यालयों में भी होती है परन्तु इतनी निर्लज्जा से नही। तृतीय प्रकार के विद्यालय भी अपने मूल को बनाये रखकर आगे परिष्कार करें तो अच्छा है। पूर्ण पाण्डित्य प्राप्त करना तथा पाश्चात्य प्रणाली से टक्कर लेना इनका ही उत्तरदायित्व है। दूसरे प्रकार के विश्वविद्यालय भी यह दायित्व रखते हैं अतः वे भी इसे समझें। एक ओर हम संस्कृत परीक्षाओं की मान्यता तथा समान वेतन की मांग करते हैं। एक ओर हैं ये घृणित कारनामे। प्रश्न है क्या यह सब कुछ संस्कृत के हित में है अथवा नाविक लोग स्वयं नाव को डबा रहे हैं ? ●

पृ०७ का शेष

मौत के आगमन का अमंगल सूचक था।

मैं चाची को फौरन अस्पताल ले गया। वहां उनका दाखला भी हो गया। यंत्रवत् चिकित्सा भी हुई।

"काश ! आप इन्हे डेढ घण्टा पूर्व यहाँ ले आते।" नर्स बोली, "तो इनकी अवस्था बेहतर होती। खतरे से ये बच जातीं।"

"मै क्या करू, तब डाक्टर साहब पूजा में बैठे थे। उन तक मेरी आत्मा की पुकार न पहुंच सकी।"

"क्या मनुष्य के प्राणों की रक्षा पूजा से कम महत्त्वपूर्ण है !" उसके मुंह से निकला।

"सो तो ठीक है, पर दूसरे इस तथ्य को समझें तब है न !"

डेढ़ घण्टे में चाची का बहुत ज्यादा खून निकल चुका था। इस लिए हाय ! वे बच न सकीं।

मुझे आज तक पूजा की उस घटना की याद है। उस पर दुःख भी है और क्षोभ भी ! आदमी पत्थर के भगवान् की पूजा करता है पर हाड़ मांस के ईश्वरपुत्रों की अवहेलना !

काश यह डाक्टर भगवान् की पूजा आदि की जगह अपने कर्त्तव्य को तत्परता से निबाहता, तो संभवतः मेरी चाची की जान बच जाती। ●

पृ० ४ का शेष

ईश्वर जो उसे तलाश करते हैं उन्हें मिल जाता है—"जो मुझको सवेरे तलाश करते हैं, मुझको पावेंगे।" (नीतिवचन अ० ८ आ० १७) ईश्वर जो उसे तलाश करता है, उन्हें नहीं मिलता—"वह सवेरे मुझको तलाश करेंगे पर मुझको न पावेंगे।" (नीतिवचन अ० १ आ० २८)

स्त्री जाति—ईसाई मत का धर्मग्रन्थ (बाइबल) स्त्री जाति को समाज में सम्मानजनक स्थान प्रदान नहीं करता।

"स्त्री का पद पुरुष से कम है। क्योंकि आदम पहले बनाया गया था और हव्वा बाद में। स्त्रियाँ गिरजाघरों में चुपचाप रहें क्योकि उन्हें बोलने की आज्ञा नहीं।" (१ कुरंन्थियों अ० १४ आ० ३४) "पुरुष स्त्री के लिए नहीं वरन् स्त्री पुरुष के लिए पैदा हुई है।" (१ कुरंन्थियों अ० ११ आ० ९)"…… "पति तुझ (स्त्री) पर शासन करेगा।" (उत्पत्ति अ० ३ आ० १६ (बाइबल में स्त्री जाति के प्रति अपमानजनक व्यवहार लिखा है। "व्यवस्था विवरण" के अ० २१ आ० ११ से १४ तक का सारांश इस प्रकार है—स्त्रियों को पकड़कर घर में ले आओ, उनको भ्रष्ट करो तथा धक्के देकर घर से बाहर निकाल दो।

स्त्री जाति के प्रति बाइबिल के उपरोक्त वचनों को पढकर ही सम्भवत: "एलिजेबेथ केडी स्टेण्टन" ने कहा था—"मै बाइबल के अतिरिक्त और कोई पुस्तक नहीं जानता जो स्त्रियों को परतन्त्रता एव पतन का पाठ पढाती हो।"

स्त्रीजाति के प्रति ईसाइयों द्वारा किए गए अत्याचार का उल्लेख करते हुए प्रसिद्ध दार्शनिक "सरबरट्रेण्ड रसेल" लिखते हैं—"तथा कथित धार्मिक युग में जब लोग वास्तव में पूर्णतया ईसाइ धर्म में विश्वाश करते थे तो लाखों की संख्या में अभागिनी स्त्रियाँ डायन के रूप में जीवित जला दी गयी।

मृत्युदण्ड:—बाइबल में मनुष्यों को मार डालने की शिक्षा दी गई है। "यदि तुम्हारा भाई, तुम्हारी माँ का पुत्र या तुम्हारा पुत्र या तुम्हारी पुत्री अथवा तुम्हारी प्रिय स्त्री या तुम्हारा प्राणप्रिय मित्र यह कहते हुए तुम्हें गुप्त रूप से बहकावे कि, "चलो! हम दूसरे देवताओं की पूजा करें।"—…………तुम उसकी मत मानना और न उसकी कोई बात सुनना। उस पर दया न करना, उसकी रक्षा न करना……प्रत्युत उसे मृत्युदण्ड के लिए सौप देना। उसे मारडालने के लिए सबसे पहले तुम्हारा ही हाथ उठे और इसके बाद अन्य लोगों के हाथ उठे। पत्थरों से मारकर उसे मृत्युदण्ड दिया जावे।" (व्यवस्था विवरण अ० १३ आ० ६ से १० तक)

पाप-क्षमा:—'ईसा' अपने शिष्यों को पापो को क्षमा करने का ठेका देते हुए कहते हैं—"जिन पापो को तुम क्षमा करोगे, वे क्षमा किए जावेंगे, जिन पापों को तुम क्षमा नही करोगे वे क्षमा नही किए जावेंगे।" (यूहन्ना अ० २० आ० २३) भला जो बाइबल पाप क्षमा करने का पाठ पढ़ाती है तो फिर उसके मानने वाले क्यों न अधिकाधिक पापों की ओर प्रवृत्त होंगे।

त्रैत मन्तव्य.—ईसाई मत का मूल सिद्धान्त ट्रिनिटि (तसलीस) है। तसलीस पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के समूह को कहते हैं। इन तीनों को ईसाई ईश्वर मानते हैं। प० शान्तिप्रकाश शास्त्रार्थ महारथी ने अपनी पुस्तिका "ईसाइयत की वास्तविकता" मे तसलीस का बड़े रोचक ढंग से वर्णन किया है जो इस प्रकार है—"आज तक समझदार लोगों को तसलीस का सिद्धान्त समझ में नही आया। बड़े-बडे तार्किक व फिलास्फरों ने इसके समझने से कानों पर हाथ धरे हैं। एक छोटे पादरी के काम देखने के लिए लाट पादरी पहुँचे इन्होंने तीन नए ईसाई बने पेश कर दिए कि मैंने इनको बपतिस्मा देकर अच्छी प्रकार ईसाइयत के सिद्धान्तों से परिचित करा दिया। लाट पादरी ने नए ईसाइयों से पूछा कि—वैल, तुम ईसाई बन गए। क्योंकि ईसा मसीह खुदा का इकलौता बेटा हमारे कन्धों का बोझ अपने कन्धों पर लेकर देने से हमें पवित्र करके हमारा मुक्तिदाता बनेगा। लाट पादरी ने पूछा कि तसलीस के सिद्धान्त के बारे में तुम क्या जानते हो? तसलीस को जाने उनकी बला! याद कराये शब्दों के सिवाय वे कुछ जानते न थे। उनमें से एक बोला जनाब! तसलीस का सिद्धान्त यों है कि एक खुदा नही अपितु तीन हैं। एक आसमान पर जिसको हम मसीह का बाप कहते हैं। दूसरे इब्न मरियम, जिसका नाम यसूमसीह और ईसा भी है। तीसरे वह जो कबूतर के समान दूसरे खुदा अर्थात् यसूमसीह पर उतरा। इस पर छोटा पादरी कहने लगा कि इनकी मति मारी गई है। कितनी बार समझा चुका हूँ परन्तु तसलीस का सिद्धान्त इनकी बुद्धि में आता ही नहीं।

लाट पादरी ने दूसरे से पूछा—तो उसने कहा पहले तीन खुदा थे परन्तु अब दो जीवित है। एक बेचारा सूली पर चढकर मर गया। इस पर छोटे पादरी ने आपे से बाहर होकर उस नए शिष्य को डांटते हुए कहा कि जा तेरा सत्यानाश हो। तू खुदा को मरा हुआ समझता है, लज्जा कर! अब तीसरे ने यों कहना आरम्भ किया कि जनाब पादरी साहब। तसलीस का अर्थ यह है कि पहले तीन खुदा थे और तीनों परस्पर एक थे। उनमें से एक मारा गया। अब तीनों पर संगठन की दृष्टि से नाश आ गया। अतः कोई भी न रहा। यह सुनकर लाट पादरी ने अपने कानों पर हाथ रक्खे अब तीनों ने लाट पादरी से कहा—आप ही हमें समझा दीजिए कि यह तसलीस का सिद्धान्त क्या है? बड़े पादरी साहब को मानना पड़ा कि भाई! समझा तो मैं भी नही कि तसलीस क्या है और कैसी है? तब छोटा पादरी बोल उठा कि—

"है तसलीस भाइयो खिरद इन्सानी से गो बाहिर। खिरद को छोड़कर ईमान लाये जिसका जी चाहे॥" पाठक वृन्द! लीजिए! अब पढ़िए! बाइबल के विषय में किसने क्या कहा है? प्रवक्ता, लेखक एव राजनीतिज्ञ "कर्नल रोबर्ट जी० इंगरसोल के अनुसार—"बाइबल जनता को भ्रष्ट करने वाली, गुलाम बनाने वाली तथा जनता पर जुल्म करने वाली पुस्तक है।"

दीन फरार के अनुसार—"बाइबल जगली किताब है, जंगली युग में जंगली मनुष्यों के लिए लिखी गई है।" "नक्षत्रमय ब्रह्माण्ड के विषय में बाइबल का मत मूर्खतापूर्ण है।" (प्रसिद्ध नाटककार जार्ज बरनार्ड शाह)

"यदि बेहूदा पुस्तकों को जलाया जाय तो उनमें सबसे बड़ा अग्नि का ढेर बाइबल की ही पुस्तकों का होगा।" (चार्ल्स स्मिथ)

महर्षि दयानन्द "सत्यार्थप्रकाश" में १३ वें समुल्लास में ईसाईमत विषयक थोड़ा-सा लिखकर अन्त में लिखते हैं—"…………अब कहाँ तक लिखे, इनकी बाइबल में लाखों बातें खण्डनीय हैं यह तो थोडा-सा चिह्न मात्र ईसाईयो की बाइबल पुस्तक का दिखलाया है, इतने से ही बुद्धिमान् लोग बहुत समझलेंगे…………सब झूठ भरा है जैसे झूठ के संग से सत्य भी शुद्ध नहीं रहता वैसा ही बाइबल पुस्तक भी माननीय नही हो सकता।"●

आर्यसमाजें सावधान रहें?

श्री अमरनाथ नामक व्यक्ति जो कि आर्यसमाजों को धोखा दे रहा है। वह मांस और शराब आदि सब प्रकार के दोषो से युक्त है।

अब से पूर्व वह आर्यसमाज भटिण्डा धूरी, कालका, शिमला और सोलन से धोखा देकर हजारो रुपया ठग लेगया है। अपने विषय में कल्पित नागालेण्ड की कहानी सुनाता है अपने को रहने वाला करौरा बुलन्दशहर का बताता है जबकि उसका गाव-जीन्द के पास है। अपने एक लड़का आसाम में पढ़ता हुआ और एक लड़की कन्या गुरुकुल देहरादून में पढ़ती हुई बताता है। जब कि यह सब असत्य है।

धर्मवीर आर्य शास्त्री प्रचार मन्त्री आर्यसमाज (सोलन शिमला हिल्ज)

आर्यसमाज लुधियाना रोड फिरोजपुर छावनी का चुनाव

श्री जे० सी० तलवाड प्रधान, श्री रोशनलाल मंत्री, श्री धर्मपाल जी कोषाध्यक्ष तथा श्री सदानन्द जी पुस्तकाध्यक्ष मन्त्री।

आर्यसमाज शक्तिनगर दिल्ली का निर्वाचन

प्रधान श्री जीवनलाल बरला, मन्त्री, श्री हंसराज रल्ही, कोषाध्यक्ष श्री प्रकाशचन्द्र जी पुस्तकाध्यक्ष श्री वेदप्रकाश मनचन्दा मन्त्री।

पुस्तक समालोचना—

१. नाम पुस्तक—"ऋषिदयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन।"
ले०—डा० भवानीलाल भारतीय, एम० ए० (हिन्दी-संस्कृत) पी० एच० डी०, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, पाली (राजस्थान)
प्रकाशक—श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट, अमृतसर

मूल्य ६ रु०, पृष्ठ संख्या ४०६, सचित्र, बढ़िया जिल्द। प्रथम बार १०००। फाल्गुन २०२५ विक्रमी।

समालोचना—लेखक महानुभाव आर्यजगत् के ख्यातनामा विद्वान् हैं। जहां उत्तम लेखक हैं वहां प्रसिद्ध प्रवक्ता भी हैं। वैदिक सिद्धान्तों और ऋषि दयादन्द के मन्तव्यों के ज्ञाताओं में अग्रगण्य हैं। आर्यसमाज के सभी पत्र और पत्रिकाएं आपके गवेषणात्मक लेखों से सुभूषित रहती हैं, इतना ही नहीं, अन्य पत्रों में भी आदर से आपके लेख प्रकाशित होते रहते हैं। यह प्रस्तुत पुस्तक राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा "आर्यसमाज का संस्कृत भाषा और साहित्य को योगदान" विषय पर पी० एच० डी० उपाधि के लिये स्वीकृत शोध प्रबन्ध का सशोधित और परिवर्द्धित रूप है। इसमें लेखक महानुभाव ने ८ अध्यायों में अपनी उच्च योग्यता और गहन चिन्तन तथा अथक खोज के द्वारा अपने विषय का प्रतिपादन किया है— (१) संस्कृत भाषा और साहित्य के इतिहास का सिंहावलोकन, उत्तर मध्यकाल में उत्पन्न संस्कृत साहित्य में गत्यवरोध तथा उसके कारण, (२) उन्नीसवीं शताब्दी के पुनर्जागरण आन्दोलनों की पृष्ठ भूमि में आर्यसमाज तथा उसका संस्कृत से सम्बन्ध निरूपण (३) आर्यसमाज के संस्थापक का विशिष्ट परिचय तथा आर्यसमाज की सार्वत्रिक सफलताओं में उस की संस्कृत के प्रति दृष्टि, (४) स्वामी दयानन्द की संस्कृत सेवा, (५) आर्यसमाजी विद्वानों द्वारा रचित शास्त्रीय साहित्य, (६) आर्यसमाजी साहित्यकारों द्वारा रचित रसात्मक तथा आलोचनात्मक साहित्य, (७) संस्कृत शोध कार्य में आर्यसमाज का योग दान, (८) संस्कृत भाषा के शिक्षण और प्रचार कार्य में आर्यसमाज का योगदान इन ८ अध्यायों के साथ परिशिष्ट १ में कुछ परिवर्धन तथा परिशिष्ट २ में उद्धृत, उल्लिखित एवं सहायक ग्रन्थों की सूची भी दी है। न केवल आर्यसमाज, अपितु सनातन धर्मावलम्बी विद्वानों द्वारा इस विषय में रचित साहित्य का वर्णन भी दिया गया है।

हम नि: संकोच कह सकते हैं, कि इस सम्बन्ध में प्रकाशित ग्रन्थों में यह पुस्तक अनुपमेय एवं अनूठा है। इतनी विपुल सामग्री अन्यत्र मिलनी संभव नहीं है, प्रत्येक अध्यायों में अनेक स्थलों पर लेखक की योग्यता, खोज, परिश्रम का परिचय मिलता है। ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों के प्रति अगाध श्रद्धा की भावना का प्रकाश किया गया है। प्रत्येक बात को प्रमाण और तर्क की कसोटी पर तोल कर लिखा गया है। ऐसा पुस्तक प्रत्येक आर्यसमाजों के पुस्तकालयों में तो अवश्य होना ही चाहिये, साथ ही स्वाध्याय प्रेमी इतिहास की रुचि रखने वाले आर्यों को भी इस का संग्रह करना चाहिए। पुस्तक का मूल्य बहुत थोड़ा रखा गया है। डा० भारतीय जी ऐसे श्रेष्ठ ग्रन्थ के लेखन के लिये बधाई के पात्र हैं। आपने अपनी इस उत्तम रचना से आर्यसमाज के गौरव को ही नहीं, अपितु वैदिक मन्तव्यों को भी प्रचारित तथा प्रसारित किया है।

साथ ही हमें श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट" के अधिकारियों के प्रति भी आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, जिन्होंने अपनी कीर्ति युक्त परम्परा की रक्षा करते हुए ऐसे ग्रन्थ रत्न को प्रकाशित करके यश प्राप्त किया है।

पुस्तक मिलने के पते (१) लेखक का उपर्युक्त पता (२) प्रकाशक का उपर्युक्त पता तथा रामलाल कपूर एण्ड संस, पेपर मर्चेंट्स······(३) गुरुबाजार, अमृतसर (४) नई सड़क देहली (५) बारी मार्केट, सदर बाजार, देहली। (६) बिरहाना रोड, कानपुर (७) ६१ सुतारचाल, बम्बई तथा (८) २३२ मोडल टाउन, सोनीपत (हरयाणा)॥

२—नाम पुस्तक—उपदेश मञ्जरी
प्रवक्ता —ऋषि दयानन्द
प्रकाशक —मन्त्री ऋषिदेवी रूपलाल कपूर पब्लिक ट्रस्ट, देहली।
पृष्ठ संख्या—१६४ सचित्र, मूल्य २ रु० ५० पैसे
प्रथमवार —चैत्र २०२६ वि, (मार्च १९६९ ई०)

समालोचना—स्वर्गीय श्री ला० रामलाल कपूर के पुत्रों द्वारा स्थापित ट्रस्ट ने वैदिक साहित्य तथा ऋषि दयानन्द रचित वेद भाष्य आदि ग्रन्थों का बड़ी श्रद्धा, स्वच्छता और योग्यता पूर्वक प्रकाशन करके आर्यजगत् को कृतार्थ किया है' सौभाग्य से उनके सभी उत्तराधिकारी भी इसी पवित्र सरणी पर आगे बढ़ रहे हैं। इस पुस्तक को श्री रामलाल कपूर के पुत्र श्री रूपलाल कपूर के पुत्रों ने अपनी पूज्यामाता और पिता की स्मृति में "ऋषिदेवी रूपलाल कपूर धर्मार्थ ट्रस्ट" स्थापना करके प्रकाशित किया है। आर्यजगत् के ये महानुभाव धन्यवादाई हैं।

"उपदेश मञ्जरी" नामक पुस्तक में ऋषि दयानन्द द्वारा सन् १८७५ में पूना में दिये गये प्रवचनों का संग्रह है। उस समय ऋषि के प्रवचनों के सार को तात्कालिक पत्रों में प्रकाशित कराया गया था। पुन: उन भाषणों का सारांश रूप में मराठी गुजराती तथा हिन्दी में अनुवाद किया गया। आर्यसमाज के प्रकाण्ड विद्वान् श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने बड़ी लग्न, परिश्रम और खोज करके इस संस्करण को तैयार किया है। श्री मीमांसक जी के प्रति भी आर्यसमाज आभार प्रकट करना अपना गौरव समझता है।

पुस्तक का कागज, छपाई और टाइप आदि सभी चीजें उत्तम हैं। सभी ऋषिभक्तों को इस पुस्तक को खरीद कर अवश्य लाभ उठाना चाहिये। यह संस्करण पुस्तकालयों में भी रखने योग्य है।

यह ठीक है कि इस पुस्तक में ऋषि के अपने वचन सीधे रूप में नहीं हैं, परन्तु उनके वचनों का सारांशरूप इस में मिलता है। इस की प्रामाणिकता का उत्तरदायित्व सीधा ऋषि दयानन्द पर नहीं रखा जा सकता, फिर भी ऋषि के उपदेशों और भाषा को परम्परा से प्राप्त करके उनसे यथेष्ट लाभ उठाया जा सकता है। हमें पूर्ण आशा है कि रामलाल कपूर ट्रस्ट तथा ऋषि देवी रूपलाल धार्मिक ट्रस्ट इसी प्रकार वैदिक साहित्य, को विशेषतया ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को सुन्दर, स्वच्छ और शुद्ध रूप में प्रकाशित करते रहेंगे।

पुस्तक मिलने का स्थान—
प्रकाशक तथा रामलाल कपूर ट्रस्ट, २३२ माडल टाउन, सोनीपत (हरयाणा) है।

३—महर्षि वेदभाष्य विशेषाङ्क

आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट के मासिक पत्र "दयानन्द सन्देश" का यह विशेषांक है. वास्तव में यजुर्वेदभाष्य के ४०वें अध्याय के ऋषि दयानन्द कृत भाष्य का यह विबोध-व्याख्यान है। इस विबोध के व्याख्याता आचार्य पं० सुदर्शनदेव जी शास्त्री एम० ए० हैं। दयानन्द सन्देश पत्रिका का यह अक्टूबर-नवम्बर ६८ का विशेषांक है। इसके प्रकाशक श्री दीपचन्द जी आर्य हैं। पृष्ठ संख्या ७२ है। मूल्य एक रुपया है। मिलने का स्थान—दयानन्द सन्देश कार्यालय २ एफ, कमलानगर दिल्ली है।

समालोचना—विबोध के लेखक विद्वद्वर पं सुदर्शनदेव जी ने भूमिका में ऋषिभाष्य की उत्तमता पर बहुत अच्छा प्रकाश डाला है। ऋषि भाष्य को समझने के लिये विद्वत्तापूर्ण टिप्पणियाँ दी हैं। मन्त्रों के अर्थ करने के लिए ऋषि-देवता आदि अंगों को खूब समझाया है। ऋषिभाष्य के ऊपर होने वाले आक्षेपों का तर्क और प्रमाणपूर्वक उत्तर दिया है। हम निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि ऋषिभाष्य को समझने और स्वाध्याय करने वाले महानुभावों को अवश्य इस "विबोध" से लाभ उठाना चाहिए। स्वाध्यायशील पाठकों के अतिरिक्त प्रत्येक पुस्तकालय में भी यह अंक संग्रह करने योग्य है। कागज तथा छपाई अच्छी है। मूल्य भी ठीक है :

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

"आर्य वीर ! अब तो जागो"

। श्री विनोद 'शाही' नरवाना ।

सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे
बाधा का सहार करें उस प्रचण्ड शौर्य का नाज तुझे।
सूनी अधियारी सी रातो मे, तारे टिमटिम करते हैं
किरणों की सुन्दर क्रीडा द्वारा, जीवन मे ज्योति भरते है
मानव उर मे भी तो किरणें, इच्छा की टिमटिम करती हैं,
पर रवि किरणे निज जाल बिछा, उनके ओज को हरती हैं,
इस व्यथा से पीडित मानव को, देना सुर-धुनि साज तुझे
सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे।
दुखो का ताडव शुरु हुआ, तूफान सा उठने वाला है,
श्रद्धा भ्रम से लुप्त हुई, छलका जहरो का प्याला है,
दिल मे घुटते अरमानो से, अब तूफानी भाव उठे हैं,
भूतल को स्वर्ग बनाने अब, आर्यज योद्धा आज उठे हैं,
आर्य ध्वजा को फहराने का दिया कटीला ताज तुझे,
सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे।
देख रहा आलोडन से ही रत्नो की लहरें आती हैं
युग मथन के बीच-बीच मे सुखो की किरण आती हैं
सुन ले राही बढ़ जाना न कदम कभी रुकने पाए
एक लय से, एक चाल से, एक ही धुन के गीत सुनाएं
आर्यो अब तुम चूक न जाना, कवि की यही आवाज तुझे
सघर्षों की नर्तन ज्वाला ने है, दिया निमत्रण आज तुझे।
देख रहा मानव की गाथा मजबूरी आहे सिसक रही हैं
सही नही पर देख-देख, भावो मे मेरे कसक रही हैं,
आशा का इक दीप ही जलता चलते तूफान अनेको हैं,
सघर्षों के इस महा-तीमिर मे भटके बेजान अनेको हैं,
उन भटको को राह पे लाना, दीप जलाना काज तुझे,
सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे।
फूल खिले हैं कभी यही पे, उभरे हैं काटे कभी यहीं,
छीनी जाती हर चीज यही पे, मिली है बाटे कभी यहीं
गिर-गिर कर मानव बढते हैं, कुछ मुरझाते दिखलाते हैं
कुछ बादल बरसात न कुछ बरसाने आते हैं,
इस प्रश्न और उपाय का, है खोलना राज तुझे
सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे।
सौख्य समेटा बदी राहे, पर आशा का सचार रहे,
घनघोर अधेरी रातो मे भी बढने की गुजर रहे,
राष्ट्र बलिवेदी पर निष्ठा से, एक बार फिर शीश कटा दें,
राहो मे जो भी बाधा आए ठोकर से उसे हटा दें,
आर्य ध्वजा ले वेद नाद को करना गुजित आज तुझे,
सघर्षों की ताडव क्रीडा ने है दिया निमत्रण आज तुझे।

उठ रहा काला धुआं

(श्री रमाकान्त दीक्षित एम ए बी टी भिवानी)

उठ रहा काला धुआ अब चाद तारो के नगर मे।
चोर-डाकू लूटने को घात मे हैं हर डगर मे।
हर दिशा मे झाक कर क्यो, हो रहे हो लाल-पीले।
वीर धारो कुछ विचारो
राह किसकी देखते हो, तोड दो बन्धन हठीले।
हर कुए मे जिन्दगी के, अब हलाहल घुल रहा है।
पुण्य पर कालिख चढी है, पाप दूधो धुल रहा है।
दफना रहे ढाक कर क्यो, स्वप्न पलको के सजीले।
वीर धारो कुछ विचारो
राह किसकी देखते हो, तोड दो बन्धन हठीले।
निष्ठुर करो ईमान को, फांसी गुमो से लग रही।
सूरज लिये दिन ऊंघता, हर रात पल-पल जग रही।
सुलझती निज झाक कर क्यो, कर रहे हो नयन गीले।
वीर धारो कुछ विचारोराह किसकी देखते हो, तोड दो बन्धन हठीले।

२२वें अङ्क से आगे— (शृङ्खला २)

किसान

श्री योगिन्द्र पाण्डेय ग्राम लखौलिया, (बलिया)

कुछ सोचो कुछ करो विचार तुम पर ही जग का भार।
सत्य जहाँ पर सुख होता है वही कुछ न कुछ दुख होता है,
सुख-दुख सदा साथ रहते हैं जो सुख पाते दुख सहते हैं,
प्रभु की माया अपरम्पार कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
गुण अवगुण का साथ रहा है विबुध जनो ने यही कहा है,
गुण हो तो अवगुण भी होगे दुर्गुण मे सद्गुण भी होगे,
इनसे नही मिले उद्धार कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
उचित यही है मिथ्या छोडो दुर्गुण मे अपना मुख मोडो
सत्य-सत्य को ही अपनाओ जागृति भाव स्वय मे लाओ
सद्ध्यान मे करो विहार कुछ सोचो कुछ करो विचार।
ले यथार्थ मिथ्या को तज दो अन्तर मुख से सदा मद् बदो
इस जगती का मूल सत्य है गुण सागर का कूल सत्य है
सत्य मात्र ही जग का सार कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

क्रमशः

[५ अको में यह शृङ्खला प्रकाशित रहेगी —सम्पादक]

गताक से आगे

आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म कर्म्म की होली ॥

श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर कुरडायां (राजस्थान)

घिसा हुआ पैसा ईश्वर है।
समझ रहा हुमति स नर है॥
धर्म्म-धाबिका श्याम सघर।
किंचित नही किसी का डर है॥
मन मे ठीक जँचे वही अमृत अन्य बात विष घोली॥
आज "आर्य-भूमि" पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली ॥७॥
मनुज अर्थ का दास निपट है।
सद् चरित्रता" नही निकट है॥
बना व्याधि का तन मरघट है।
पौरुषता का रीता तट है॥
कृतघ्नता टहनी पर कोचर बद उच्चे स्वर बोली॥
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली ॥८॥
सदन सुसोभित टट्टी स्थल है।
यज्ञ हित भूमि फुट मुश्कल है॥
सध्या काज समै नही पल है।
सुनत रडियो निश दिन चल है॥
वेद पाठ की जगह प्रात कर पत्र-पत्रिका तोली॥
आज आर्य भूमि पर हो धर्म्म-कर्म्म की होली ॥९॥
बाक चालिता के पटु पूरे।
ध्यान बान मे सफा अधूरे॥
स्वार्थ सिद्धि के प्रति-सूरे।
परमारथ से कोसो दूरे॥
बगल छुरी मुख राम राम रट सिर पर टोपी धोली॥
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली ॥१०॥
सुख समृद्धि कल्याण कारणी।
तीन देवियाँ दुख सहारिणी॥
जिन पर अपना बदन वारिणी।
आर्य जनता सौम्य धारिणी॥
भूमि-भाषा सस्कृति की पूजा-पद्धति डोली॥
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली ॥११॥

(क्रमशः

श्रीमद्दयानन्द आर्षविद्यापीठ की आवश्यक सूचनाएं

श्रीमद्दयानन्द आर्षविद्यापीठ की ११-५-६९ की बैठक में आगे लिखे निश्चय किये गये हैं—

१ नियम उपनियम में—महासभा का नाम तथा निर्माण के "ख" भाग मे सशोधन कर दिया गया है।

शिक्षा पटल के क ख ग घ भाग मे सशोधन और परिवर्धन किया गया है। शिक्षा पटल की तदर्थ समिति बना दी गई है।

२. परीक्षा शुल्क तथा प्रवेश शुल्क की राशियां निश्चित कर दी गई हैं।

३. प्रथमा तृतीय खण्ड तक परीक्षार्थी प्रश्न-पत्रो के उत्तर अपनी मातृभाषा के माध्यम से भी दे सकेंगे।

४ सन् १९७१ तक किसी परीक्षा मे बैठने की छूट में भी परिवर्तन कर दिया है।

५-६-७-८ और ९ शास्त्री, आचार्य के अन्तिम वर्ष, मध्यमा तृतीय खण्ड, शास्त्री प्रथम खण्ड द्वितीय खण्ड और अनुत्तीर्ण छात्रो के सम्बन्ध मे नये निश्चय कर दिये गये हैं।

हिन्दी ग्रन्थो मे परिवर्तन किया गया है, जोकि पाठ्यक्रम मे लगे हुए थे।

परीक्षा परिणाम

आचार्य, शास्त्री, मध्यमा, प्रथमा परीक्षाओ (क्रान्ति मार्च ६९ मे हुई थी) के परिणाम घोषित कर दिये गये हैं।

विशेष सूचनाए

(क) सितम्बर ६९ की परीक्षाए २७ सितम्बर आश्विन कृष्णा द्वितीया २०२६ शनिवार से होगी और प्रपत्र भरकर ५ जुलाई द्वितीय आषाढ कृ० ६ शनिवार तक प्रस्तोता के कार्यालय में पहुच जाने चाहियें। एक रुपया प्रतिपत्र भेजकर कार्यालय से प्रपत्र प्राप्त किये जा सकते हैं।

(ख) व्याकरणाचार्य के प्रमाण-पत्र प्रदान करने हेतु प्रथम दीक्षान्त समारोह २९ जून रविवार को गुरुकुल झज्जर में राज्यमन्त्री श्री [illegible] जी द्वारा सम्पन्न होगा।

सब प्रकार की जानकारी नीचे लिखे पते से प्राप्त की जा सकती है।

वेदानन्द वेदवागीश—प्रस्तोता श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ
कार्यालय—गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक (हरयाणा)

आर्यसमाज सोनीपत का वार्षिकोत्सव

सोनीपत नगर के सब से पुराने और बड़े आर्यसमाज का गतमास उत्सव बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से प्रचार का पूर्ण प्रबन्ध था। इस समय श्री स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी, प० समरसिंह वेदालङ्कार, प० निरजनदेव सिद्धान्त भूषण प० हरिदेव सिद्धान्त भूषण श्री धर्मपाल आर्य तथा प० ६ पाल शास्त्री के व्याख्यान और प० अमरनाथ प्रेमी तथा प० तेजभानु के भजन हुए। वेदप्रचारार्थ सभा को ३५१ रुपये भेंट रूप दिये गये।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज ग्राम खटोटी सुलतानपुर जिला सहे[illegible]

प्रथम वार्षिक उत्सव तारीख २४-२५ मई को बड़ी धूम-[illegible] से मनाया गया, जिसमे स्वामी धर्मानन्द जी, स्वामी [illegible] जी, [illegible] प्रकाशानन्द जी के भाषण और भजनों के साथ [illegible] हुआ।

—मन्त्री आर्य[illegible]

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सृष्टे मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र



यद्यपि आज कल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतो में हैं वे पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो जो बात सब के अनुकूल सब मे सत्य हैं उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरुद्ध बाते है उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्त्तें वर्त्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे।

—सत्यार्थप्रकाश।

वर्ष १)
अंक २७)

१ आषाढ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १५ जून १९६९ रविवार.
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

(वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०)
„ „ विदेश में—२०)
एक प्रति का मूल्य—१ पौंड

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

एतयोः प्रश्नयोरुत्तरे उपदिश्येते ॥

इन प्रश्नों के उत्तर अगले मन्त्र में प्रकाशित किये हैं ॥

अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम । स नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेय मातरं च ॥ ऋग्वेद १.२४.२॥

पदार्थः—(अग्नेः) यस्य ज्ञानस्वरूपस्य (वयम्) विद्वांसः सनातना जीवाः (प्रथमस्य) अनादिस्वरूपस्यैवाद्वितीयस्य परमेश्वरस्य (अमृतानाम्) विनाशधर्मरहितानां जगत्कारणानां वा प्राप्तमोक्षाणां जीवानां मध्ये (मनामहे) विजानीयाम (चारु) पवित्रम् (देवस्य) सर्वजगत्प्रकाशकस्य सृष्टौ सकलपदार्थानां दातुः (नाम) आह्वानम् (सः) जगदीश्वरः (नः), अस्मभ्यम् (मह्यै) महागुणविशिष्टायाम् (अदितये) पृथिव्यां (पुनः०) इत्यारभ्य निरुपितपूर्वार्थानि पदानि विज्ञेयानि ॥

अन्वयः—वयं यस्याग्नेर्ज्ञानस्वरूपस्यामृतानां प्रथमस्यानादेर्देवस्य चारु नाम मनामहे स एव नो अस्मभ्यं मह्या अदितये पुनर्जन्म दात् ददाति यतश्चाहं पुनः पितरं मातरं च स्त्रीपुत्रबन्ध्वादीनपि दृशेयं पश्येयम् ॥

भावार्थः—हे मनुष्या वयं यमनादिममृतं सर्वेषामस्माकं पापपुण्यानुसारेण फलव्यवस्थापकं जगदीश्वरं देवं निश्चिनुमः। यस्य न्यायव्यवस्थया पुनर्जन्मानि प्राप्नुमो यूयमप्येतमेव देवं पुनर्जन्मदातारं विजानीत न चैतस्मादन्यः कश्चिदर्थं एतत्कर्म कर्तुं शक्नोति। अयमेव मुक्तानामपि जीवानां महाकल्पान्ते पापपुण्यतुल्यतया पितरि मातरि च मनुष्यजन्म कारयतीति च ॥

भाषार्थ—हम लोग जिस (अग्नेः) ज्ञानस्वरूप (अमृतानाम्) विनाशधर्मरहितपदार्थं वा मोक्षप्राप्त जीवों में (प्रथमस्य) अनादि विस्तृत अद्वितीय स्वरूप (देवस्य) सब जगत् के प्रकाश करने वा संसार में सब पदार्थों के देने वाले परमेश्वर का (चारु) पवित्र (नाम) गुणों का गान करना (मनामहे) जानते हैं (सः) वही (नः) हमको (मह्यै) बड़े-बड़े गुण वाली (अदितये) पृथिवी के बीच में (पुनः) फिर जन्म (दात्) देता है जिससे हम लोग (पुनः) फिर (पितरम्) पिता (च) और (मातरम्) माता (च) और स्त्री पुत्र बन्धु आदि को (दृशेयम्) देखते हैं ॥

भावार्थ—हे मनुष्यो हम लोग जिस अनादि स्वरूप सदा अमर रहने वा जो हम सब लोगों के किये हुए पाप और पुण्यों के अनुसार यथायोग्य सुख-दुःख फल देने वाले जगदीश्वर देव को निश्चय करते और जिस की न्याययुक्त व्यवस्था से पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। तुम लोग भी उसी देव को जानो किन्तु इससे और कोई उक्त कर्म करने वाला नही है ऐसा निश्चय हम लोगों को है कि वही मोक्ष पदवी को पहुंचे हुए जीवों का भी महाकल्प के अन्त में फिर पापपुण्य की तुल्यता से पिता माता और स्त्री आदि के बीच में मनुष्य जन्म धारण कराता है। (ऋषि दयानन्द-भाष्य)

आर्य-विनय

रचनाकार—पं० जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ',—देहली

रुद्र ! सकल बल के भण्डार !
हे ज्योतिर्मय ! हे कर्तार !

हे भूपों के भूप ! अनूप !
शुद्ध ! बुद्ध ! हे विमल स्वरूप ॥
जन्म--मरण से रहित ! अपार !
रहे उपासक तुझे पुकार !!

सब कालों में हे भगवान् !
सब देशों--मे :कीर्तिमान् ॥
रहे सुरक्षित सब नर-नार !
बोलें तेरं जय--जय--कार !!

मुद--मंगलमय तव--प्रकाश !
नित आवे जन-जन के पास ॥
धर्म अर्थ हम काम और मोक्ष !
अनुभूति तेरी अपरोक्ष !!

पाय तुम से हे जगदीश !
सदा नवाये तुझ को सीस ॥
पाप--ताप, मृत्यु का भय !
राग--द्वेष, हे मंगलमय !!

तम सब का दो दूर हटा !
प्रभुवर ! लो हम को अपना ॥
नव--रक्षित होकर हम लोग !
भोगें शुभतर, शुचितर भोग !!

मांग रहे तुझ से वरदान !
प्रभुवर ! दो प्रज्ञा का दान ॥
शरणागत की रक्खो लाज !
हे अज ! शुभ-शुचितम-महाराज !!

शङ्का-समाधान

(शङ्का) क्या पूर्वजन्म को घटनाओं की स्मृति वैदिक सिद्धान्तों से अनुमोदित है ?

श्री दयानन्द बी०ए० आर्य हिन्दी महाविद्यालय चरखी दादरी, जि० महेन्द्रगढ़ (हरयाणा)

यह शङ्का बड़ी जटिल है, इसका समाधान करने से पूर्व कुछ विशिष्ट मौलिक मन्तव्यों को जान लेना आवश्यक है।

जीवन का स्वरूप और उसके समाधान

१—जीव चेतन स्वरूप है। अल्पज्ञ, अल्प, अल्पदेशस्थ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, और ज्ञान गुण वाला नित्य है। जीव का ज्ञान, प्रयत्न और सामर्थ्य सीमित है। जीव का ज्ञान परम अवधि तक भी बढ़े तब भी परिमित रहता है। जीव कभी भी अनन्त ज्ञान और अनन्त सामर्थ्य वाला नही हो सकता। कोई परम योगी भी ईश्वरकृत सृष्टिक्रम में परिवर्तन नहीं कर सकता। मुक्तजीव के ज्ञान और प्रयत्न तथा सामर्थ्य एक अवधि से बाहर नहीं बढ़ सकते। जीव के ये सब गुण, कर्म और स्वभाव सान्त ही रहेंगे।

२—जीव और कर्म का समवाय सम्बन्ध है। जीव में कर्तृत्व धर्म और कर्म करने की शक्ति सदा बनी रहती है। जीव के कर्म उत्पत्ति और विनाश धर्म वाले होते हुए भी प्रवाह से नित्य बने रहते हैं। अनादि काल से अनन्त काल तक यही सम्बन्ध बना रहता है।

३—मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, प्राण, ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों द्वारा शरीर में जीव जो चेष्टा विशेष करता है, वह कर्म कहाता है। कर्म के तीन भेद हैं—अच्छे, बुरे और मिले-जुले। वर्तमान काल में जीव जिन-जिन कर्मों को करता है, उनको क्रियमाण कर्म कहते हैं।

४—क्रियमाण कर्म के संस्कार जीव के ज्ञान द्वारा चित्त में जमा होते हैं। उन संस्कारों को ही सचित संस्कार कहा जाता है।

५—शरीर के बिना जीव कर्म नही कर सकता। स्थूल, सूक्ष्म और कारण भेद से शरीर तीन प्रकार के होते हैं। स्थूल शरीर जीव के जन्म के साथ नया-नया मिलता रहता है और मृत्यु के साथ नष्ट होता रहता है। सूक्ष्म शरीर जन्म-मरण दोनों अवस्थाओं मे जीव के साथ रहता है। सूक्ष्म शरीर में अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) पाँच प्राण, पाँच सूक्ष्म भूत और ५ ज्ञानेन्द्रियाँ रहती हैं। लौकिक सुख दुःख भोगने का आधार स्थूल शरीर है। स्थूल शरीर के आश्रय पर ही इन्द्रियाँ और अन्तःकरण रहते हैं।

६—जब पूर्व शरीर को छोड़कर जीव को कर्मफल व्यवस्था के कारण वर्तमान स्थूल शरीर दिया जाता है, तो पूर्वजन्म वाला सूक्ष्म शरीर जीव के साथ ही इसमें प्रविष्ट रहता है, इसी वर्तमान शरीर आदि साधनों के द्वारा जीव अपने पूर्वजन्म में किये हुए कर्मों के सुख-दुःख रूप फल को भोगता है और भविष्यत् काल के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक कर्मों को करता है, अर्थात् वर्तमान जन्म, पूर्वजन्म और भविष्यत् जन्म की मध्यस्थ कड़ी है। यह सब कुछ परमेश्वर की व्यवस्था से होता है।

७—जीव का स्वाभाविक ज्ञान सदा बना रहता है परन्तु वह ज्ञान अकिंचित् होता है। परन्तु नैमित्तिक ज्ञान सुषुप्ति के समय नहीं रहता, क्योंकि उस समय जीवात्मा का सयोग सम्बन्ध मन से और उसके द्वारा 'ज्ञानेन्द्रियों' से नही रहता। केवल प्राण नियमपूर्वक अपना काम करते रहते हैं।

उपर्युक्त प्रश्न (शङ्का) का समाधान करने से पूर्व हमने सामान्य बातों का उल्लेख इस लिये कर दिया है, जिससे कोई बात बार-बार न लिखनी पड़े।

समाधान

स्मृति की उत्पत्ति और विनाश—

८—(क) आत्ममनसोः संयोगविशेषात् संस्काराच्च स्मृतिः। वैशेषिक दर्शन ९-२-६ अर्थात् जीव और मन के विशिष्ट संयोग होने पर पूर्वानुभूत ज्ञान की स्मृति पैदा होती है तथा पूर्व किये हुए कर्मों के संचित संस्कारों से भी स्मृति की उत्पत्ति होती है। ये संचित संस्कार चाहे वर्तमान जन्म के कर्मों के चित्त पर पड़े हों अथवा पूर्वजन्म के कर्मों के संचित संस्कार हों। दोनों प्रकार के संचित संस्कारों से स्मृति की उत्पत्ति होती है, जिस से वह पूर्व अनुभूत ज्ञान का स्मरण करता है। अर्थापत्ति से यह भी सिद्ध हो जाता है कि जब स्मृति की उत्पत्ति होती है, तब इसका विनाश भी होता रहता है, क्योंकि कोई भी उत्पन्न पदार्थ सदा नहीं रह सकता। अर्थात् जिस निमित्त से स्मृति की उत्पत्ति होती है, उस निमित्त के हट जाने पर उस से पदा हुई स्मृति का भी नाश हो जाता है। वह स्मृति फिर कभी नहीं होती।

(ख) अनुभूत विषयासम्प्रमोषः स्मृतिः। योग दर्शन॥ १. ११

अर्थात् अनुभव किये हुए विषय को न भूल जाने पर स्मृति होती है। यदि अनुभूत विषय का ज्ञान नहीं रहा। जीव उस विषय को भूल गया, तो उसकी स्मृति भी पंदा नहीं होती।

(ग) जिस काम को हम बार-बार और ध्यान से करते रहते हैं, तब उसके संस्कार चित्त में जमा रहते हैं—यही संचित सस्कार हैं। जब उसी विषय से हम काम लेना चाहें, तो उन संचित संस्कारो से पूर्व अनुभूत उस काम की स्मृति होती रहती है। तब तक उस पूर्वानुभूत काम की स्मृति होती रहेगी, जब तक कि हम उस काम को बार-बार दृढ़ अभ्यास से करते रहेंगे। काम पूरा होने पर अथवा उसका अभ्यास छोड़ देने पर उस पूर्वानुभूत विषय की स्मृति भी नहीं रहती, क्योंकि उसका निमित्त अभ्यास भी नहीं रहा। उदाहरण—एक विद्यार्थी बड़े परिश्रम से अपने पाठ का बार-बार अभ्यास करता है और उसका मनन करता रहता है। परीक्षा के होने पर उसके अभ्यस्त पाठ की स्मृति हो जाती है और वह विद्यार्थी तद्विषयक प्रश्नों के उत्तर अपनी स्मृति के बल पर देकर उत्तीर्ण हो जाता है। यदि उसने अपने पाठ का अभ्यास नहीं किया होता, तो स्मृति कहाँ से बनती ? अतः प्रश्नों के उत्तर न दे सकने के कारण वह अनुत्तीर्ण रह गया, साथ ही एक पक्ष और है कि उत्तीर्ण होने पर भी यदि उस विद्यार्थी ने उस विषय का अभ्यास छोड़ दिया अर्थात् अपने विषय को भुला दिया, तब भी उसकी स्मृति नहीं रह जावेगी। अतः स्मृति उसी विषय की बनी रहती है, जिस के पूर्व अनुभूत विषय का हम अभ्यास करते रहें। हां दूसरे पक्ष में यह भी होता है कि जिस विषय में वह अनभ्यास के कारण अनुत्तीर्ण हुआ था, यदि आगे उस विषय का अभ्यास करे तो स्मृति बन कर उसको पास करा देगी। इसका अभिप्राय यह है कि स्मृति को बनाये रखने का कारण पूर्व अनुभूत विषय का अभ्यास बार-बार करते रहना है।

(घ) हम प्रतिदिन बहुत से काम ऐसे करते रहते हैं, जिनको फिर से करना नहीं पड़ता। ऐसी अवस्था में ऐसे कामों के संस्कार संचित रूप में नहीं जाते अथवा अत्यन्त दुर्बल रूप में चित्त पर पड़ते हैं कि फिर उनका कोई उद्बोधक कारण होने से उनकी स्मृति होती ही नहीं।

उदाहरण—मैं इस लेख की इन पंक्तियों को लिख रहा हूं। मैं जानता हूं कि मुझे फिर से इस लेख को लिखने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। ऐसी दशा में इसके संस्कार बनते ही नहीं; अथवा इतने दुर्बल हैं कि जिनसे स्मृति उत्पन्न नही हो सकती। एक घण्टा पूर्व लिखे अपने ही इस लेख को स्मृति में लाना चाहूं, तो भी नहीं ला सकता। प्रत्येक मनुष्य की यही अवस्था है। हम प्रायः दिन भर में कोई कभी ही किसी ऐसे कार्य को करते हैं, जिसको स्मरण रखना पड़े। अतः कुछ मिनट पूर्व की लिखी, सुनी, देखी बात भी जब याद नहीं रहती, तो बहुत दिनों की बात को कैसे स्मृति में रखी जा सकता है ? यह बात तो इसी जन्म के बारे में कही। तब पूर्वजन्म की बातों के स्मरण की बातें करना सामान्य विषय नहीं है।

पूर्वजन्म की स्मृति

पूर्वजन्म में जिन विषयों का आधार केवल स्थूल शरीर तक सीमित था—वह तो वर्तमान शरीर मिलने पर रहा ही नहीं, उनकी स्मृति की चर्चा तो व्यर्थ है।

शेष पृ० ४ पर

सम्पादकीय

काशीशास्त्रार्थ शताब्दी समारोह

आर्य्यमर्य्यादा के प्रेमी ग्राहक तथा पाठक सज्जनों को पूर्व से ही ज्ञात है कि ऋषि दयानन्द के साथ काशी में जो शास्त्रार्थ हुआ था, उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। सौभाग्य से आर्योपप्रतिनिधि सभा वाराणसी उस शास्त्रार्थ को समारोह पूर्वक मनाने का आयोजन कर रही है। इस अंक में भी इस का समाचार प्रकाशित हो रहा है। यह पवित्र कार्य केवल वाराणसी के आर्यजनों का ही नही है, अपितु समस्त आर्य जगत् का है।

आर्यबन्धुओं से—हम सभी आर्य भाई बहिनों से कहना चाहते हैं कि यथाशक्ति अवश्य धन की सहायता करें।

आर्यसमाजों से—राष्ट्र के प्रत्येक आर्यसमाज को भी अपने-अपने सामर्थ्यानुसार अनिवार्य रूप से अच्छी धनराशि वहां के कार्यकर्ताओं के पास भेजनी चाहिये। उन की आर्थिक शक्ति बहुत थोड़ी है। कार्य बड़ा है। देश-विदेश के विद्वानों के लेख इस समारोह के उपलक्ष्य में पुस्तकरूप में प्रकाशित किये जावेंगे। यह काय पर्याप्त धन के सहयोग से ही सिद्ध हो सकता है। यदि भारतभर के आर्यसमाज सहयोग देवें, तो यह ऐतिहासिक महत्त्व का आयोजन पूर्ण रूप से सफल हो सकता है, इस में कुछ भी सन्देह नही।

आर्य प्रतिनिधि सभाओं से—प्रत्येक राज्य की प्रतिनिधि सभाओं तथा सार्वदेशिक सभा को भी इस काम में योग देना चाहिये। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश का इस सम्बन्ध में कुछ धार्मिक कर्त्तव्य भी है। हमें पूर्ण आशा है कि उक्त सभा अवश्य ही वहां के कर्मठ कार्यकर्त्ताओं के उत्साह को बढावेगी। अकेला उत्तर प्रदेश इतना बड़ा है और इतने आर्यसमाज है, जो इस कार्य को पूर्ण कर सकते हैं। उत्तरप्रदेश राज्य मे अनेक आर्यसमाज बड़े, सम्पन्न हैं। इस अवसर पर उन्हे आगे बढ़ कर इस योजना को सफल बनाने में पूरा सहयोग देना अपेक्षित है।

धनाढ्य महानुभावों से—यह ठीक है कि आर्यसमाज एक मध्यम वृत्ति के लोगों का समूह है। परन्तु अनेक सम्पत्तिशाली आर्यपुरुष भी इसमे हैं, जिनके बड़े-बड़े धन्धे हैं। उनके दान पर ट्रस्ट चल रहे है। लाखो रुपया वे धर्मार्थ कार्य में देते रहते हैं। सौ वर्ष के पश्चात् यह अवसर आया है। इस को सफल बनाने में हमारे सम्पन्न आर्य महानुभावो को अवश्य अच्छी धनराशि वहां भेजनी चाहिये।

पूज्यविद्वानों से—विशेषरूप में संस्कृत के विद्वान् पूज्य आर्य सन्यासियों और पण्डितों से प्रार्थना है कि इस शुभ अवसर में अवश्य सम्मिलित होवें। हो सकता है कि काशी शास्त्रार्थ की पुनरावृत्ति हो जावे। यह सहयोग अन्य सहयोगों से कम नही है अपितु धन सहयोग से भी बड़ा है। आशा है पूज्य विद्वान् इस समारोह में सम्मिलित होने का अवश्य ध्यान रखेंगे।

समारोह संयोजकों से—

आपने बहुत पुण्य का कार्यभार संभाला है। ऋषि-चरण का शताब्दी भार भी हल्का करने में आप सफल हुए—तो यह असाधारण कार्य होगा। आप कर्मठता से लगे रहिए। आप सभी सहयोगी बन्धुओं से निवेदन कीजिये कि मान-अपमान-स्तुतिनिन्दा की चिन्ता किये बिना परस्पर मिल कर चलते रहिये शुभ कार्यों में आपत्ति भी आती रहती है। कभी-कभी निराशा भी झाकने लगती है। स्वयं परेशानी भी होती रहती है। जनहित के कार्यों मे भी ऐसी बातें आती रहती हैं, तो इस अपूर्व संयोजन में भी ऐसी बाधाए आवें, तब भी घबराना नही। सतत लगे रहना है। भगवान् की दया और परम सहायता पर विश्वास रख कर चलते रहिये। पुरुषार्थ को भूलकर भी हाथ से न जाने दीजिये। परमेश्वर की कर्म करते रहने की आज्ञा है। इसको सदा सामने रख कर बढते रहिये इस में आपका कुछ भी स्वार्थ नही है। मुझे आशा और विश्वास है कि उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा से आप को यथेष्ट सहयोग मिलेगा।

श्री जयदयाल जी डालमिया से

श्री डालमिया जी ने "अस्पृश्यता" के सम्बन्ध में ऋषि दयादन्द जी के सत्यार्थप्रकाश तथा वेदभाष्य से कुछ स्थल उद्धृत किये हैं। आर्यमर्यादा के लिये भी उन्होंने इनको अपनी टिप्पणी सहित उत्तरार्थ भेजा है। इस सम्बन्ध में हम आर्यमर्यादा में बराबर लिखते आरहे हैं। श्री डालमिया जी से निवेदन है कि अपने लेख को पुन. देखे। कि क्या ऋषि दयादन्द ने जन्म के आधार पर किसी भी व्यक्ति को "अस्पृश्य" माना है? यदि आपको कोई ऐसा स्थल मिले तो हमें लिखने की कृपा कीजिये। हमने छूत-छात तथा अस्पृश्यता के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द के विचार आर्यमर्यादा में प्रकट कर दिये हैं, उन्हें पढ़ने का अनुग्रह कीजिये।

विशिष्ट सज्जनों से—

आज कल ग्रीष्म ऋतु के कारण सरकारी क्षेत्रों मे १-१॥ मास का अवकाश रहता है। इस कारण विशिष्ट व्यक्ति चाहे व प्रोफेर हों, अध्यापक हों, डाक्टर हों, वकील हो, जज हों, मन्त्रिमण्डल के सदस्य हो, राज्य अधिकारी तथा कर्मचारी हो, जिस के पास भी आवश्यकता से कुछ अधिक पैसे हैं, व गीष्म ऋतु से त्राण पाने के लिये पर्वत के उन उच्च स्थानों पर चले जाते है, जहा अपने समय को काटते हैं। इसके पश्चात् लौट कर फिर जनता की भलाई? में सलग्न हो जाते हैं! परन्तु जिन लोगों के पास कमा "कर खाने" के योग्य ही साधन होते हैं—वे खेती, दुकानदारी और मजदूरी के काम मे लगे रहते है, अन्यथा गुजारा कैसे चले? देखा गया है कि परिश्रमी रोगी कम होते हैं, तथा निरुद्यमी अधिक रोगग्रस्त रहते है—चाहे पहाड़ के शिखर पर भी क्यो न चले जावें। यह परिपाटी भी अग्रेजी राज्य की दासता की निशानी है। क्या विशिष्ट व्यक्ति इस मानसिक दासता का जूआ उतार सकगे? तथा इन अवकाश के दिनों में जन सेवा का व्रत लेंगे? आश्चर्य यह है कि प्रचारक और उपदेशक भी इस मार्ग को पकड़ते जा रहे हैं। आशा है सभी इस मनोवृत्ति के सज्जन कुछ विचार करेंगे। जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

आर्यमर्यादा साप्ताहिक की अपूर्व भेंट

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर प्रचारोपयोगी साहित्य
वेद आविर्भाव पद्धति विशेषांक प्रकाशित हो रहा है

आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भान्ति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब क ओर से वेद प्रचार सप्ताह श्रावणी पर्व पर इस बार भी स्वाध्याय के लिये आर्यमर्यादा का वेद **आविर्भाव पद्धति विशेषांक** बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित किया जा रहा है। इस विशेषाक में **वेदों का ईश्वरीय ज्ञान चारों ऋषियों द्वारा किस पद्धति के अनुसार प्रकट हुआ** महत्व पूर्ण विषय पर प्रकाक डाला जावेगा। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास में आज तक इस प्रकार का विशेषाक अथवा ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हो सका। आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वानो तथा लेखकों के लेख वेद प्रचारार्थ बहुत ही उपयोगी सामग्री होगी। अत: आयसमाजों आर्य संस्थाओं और स्वाध्यायशील महानुभावो से प्राथना है कि वेद सप्ताह पर इस विशेषांक को भारी सख्या में मगवाकर अधिक से अधिक हाथों तक पहुंचा कर वेद प्रचार के पुनीत कार्य में सहयोग दीजिये।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

जो महानुभाव जाच करना चाहे अवश्य करः—

वाक् एवम् बौद्धिक शक्ति के विकास में

यज्ञ चिकित्सा पद्धति की एक आश्चर्यजनक सफलता



वैदिक वृष्टि विज्ञान के सुप्रसिद्ध अनुसन्धानकर्ता श्री प० वीरसेन वेदश्रमी, वेद सदन, महारानी रोड, इन्दौर ने अपने यज्ञों के आयोजनों के अवसर पर अनेक रोगियो को आश्चर्यजनक रूप से लाभ होते देखकर अपना अनुसन्धान क्षेत्र शारीरिक चिकित्सा की ओर भी करना निश्चय किया है।

अभी गत अप्रेल माह में १५ से २८ तक सूरत नगर में लक्षाहुति गायत्री महायज्ञ सम्पन्न आपने कराया। वहा पर ११ वर्ष की जन्म से गूगी एव नासमझ "ज्योति" नाम की कन्या का यज्ञ द्वारा आपने उपचार किया और वह अच्छी होकर बोलने एवम् समझने लगी। इस कन्या की चिकित्सा उसके पिताश्री ने अनेक वैद्य एव डाक्टरों से कराई थी और कुछ भी सफलता प्राप्त नही हुई थी।

यज्ञ द्वारा ११ दिन तक उपचार हुआ। प्रतिदिन ३ घटा यज्ञ का उपचार किया जाता था। उसमे ५-६ दिन के यज्ञ के उपचार से वाक् शक्ति एव बौद्धिक शक्ति का क्रमशः उत्तरोत्तर विकास दृष्टिगोचर होने लगा और वह प्रश्नो का उत्तर देने एव कार्य करने में समर्थ होती गई। ज्योति के पिता भूपेन्द्र अम्बाराम मोदी सूरत से २ मील दूर उत्राण ग्राम के उत्राण स्टेशन स्टोर में कार्य करते हैं।

श्री प० वीरसेन वेदश्रमी ने सन् १९६६ में जयपुर एव खण्डवा के अपने वृष्टि यज्ञों के अवसर पर बने यजमानों का रोगों से मुक्त होने में आश्चर्यजनक लाभ अनुभव किया था। इसी प्रकार से सन् १९६१ में वाक् शक्ति के विकास में यज्ञ का लाभ देखा था। आपने ऋग्वेद का "यज्ञेन-वाचः पदवीयमायन्"—तथा यजुर्वेद के—"वाक् च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्—सुमतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्"—आदि मन्त्र यज्ञ से वाक् एवम् बुद्धिशक्ति के विकास होने के लिये उपस्थित किये।

श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी एक विशेष यज्ञ का आयोजन करके कतिपय मूक एवं अविकसित मस्तिष्क व्यक्तियों पर इस यज्ञ पद्धति का परीक्षण करना चाहते हैं। यदि इस कार्य मे सफलता प्राप्त हो गई तो विश्व के सामने एक नई चिकित्सा का प्रादुर्भाव हो सकेगा।

[मेरे निवेदन पत्र के उत्तर में आर्य कन्या महाविद्यालय बडौदा के संचालक प्रसिद्ध आर्य नेता श्री प० आनन्दप्रिय जी बी० ए० एल० एल० बी, ने जो उत्तर भेजा वह भी साथ हो प्रकाशित किया जाता है।]

—सम्पादक

पत्र स० ४६२२ दिनाङ्क २८-५-६९

"सूरत में जो गायत्री महा यज्ञ हुआ था उसका आयोजन हमारी ओर से ही हुआ था। और प० वीरसेन जी और माता आनन्दा यती जी को ब्रह्मा के रूप में हमने ही बुलाया था। यह बात सर्वथा सत्य है कि चि० ज्योतिबाला जो जन्म से ही गूगी थी, निरन्तर प्रात.काल आरम्भ से ही यज्ञ में आती थी, उस को वाचा प्राप्त हो गई और सब से पहिले उसने गायत्री मन्त्र का उच्चारण किया था। इस के पिता जी ने कई डोरे धागे उपचार किये थे, पर गायत्री मन्त्र की कृपा से उसे वाचा प्राप्त होगई। यह सबने प्रत्यक्ष देखा और यज्ञ के प्रभाव से प्रभावित होकर एक सेठ के अनुदान से अब यह लडकी आर्य कन्या महा विद्यालय में प्रविष्ट को गई है।

हस्ताक्षर—आनन्द प्रिय

आर्य कन्या महाविद्यालय, आत्मारामपथ, बडौदा।"

पृ० २ का शेष

(क) अब उन बातों को हम लते हैं कि जिनको पूर्वजन्म में बहुत दृढता और अभ्यास से किया गया था, जिनके संस्कार सूक्ष्म शरीरस्थ चित्त पर प्रबलता से अंकित हुए। वर्तमान जन्म में उन सस्कारो का कोई निमित्तउद्बोधक प्रबल कारण उपस्थित हो गया, तो उन सस्कारों से पूर्व जन्म में किये हुए अनुभव की स्मृति होती है जैसे—

प्रेत्याऽऽहाराभ्यासकृतात्स्तन्यपानाभिलाषात् ॥ न्यायदर्शन ॥ ३-१-२२

बच्चा पैदा हुआ भूख लगी। भूख को दूर करने के लिए उस बच्चे की माता ने उसका मुख अपने स्तन=दूधी के साथ लगा दिया। बच्चा झट से दूध पीने लग जाता है। इसका कारण यह है कि पूर्वजन्म में भोजन करने का जो अभ्यास था, उसके प्रबल सस्कार बालक के चित्त पर सचित थे। भूख लगना उन सस्कारो को जगाने में कारण बन गया। इस लिये वह दूध पीने की इच्छा से माता का दूध पीने में पूर्वजन्म में अनुभव किये हुए विषय की स्मृति से प्रवृत्त हो गया। इसी भाँति कोई बहुत प्रबल सस्कार किसी उत्कट निमित्त के कारण उद्भूत हो गये तो पूर्वजन्म के अनुभूत विषय की स्मृति हो जाती है। सम्पूर्ण अनुभवों की नही। जब वर्तमान जन्म में किये हुए अनुभवों की स्मृति नही होती, तो पूर्वजन्म में किये हुए अनुभवों की स्मृति कैसे हो सकती है। इसमें एक प्रतिबन्धक कारण और भी है और वह है पूर्व और वर्तमान जन्म के बीच का महाघोर अन्धकार मृत्यु, यह अन्धकार समस्त साधारण पूर्वानुभूत विषयो को भुला देता है। और यह परमात्मा की दया है कि जिसके कारण पूर्वजन्म की सब बातें याद नहीं रहती। यदि ऐसे हो जाता, सब गृहस्थियो के घर बिगड़ जाते। कोई सामाजिक व्यवस्था नहीं बनती। परन्तु परमात्मा ने दया करके इन मिथ्या झगडों से जीव को बचा दिया। केवल उतना अश छोड़ दिया कि जो जीव को पिछले जन्म के किये हुए कर्मों से वर्तमान जन्म में फल भुगाना था।

(ख) अब एक बात पर ध्यान दीजिये कि मनुष्य की अंगुलियाँ एक हाथ में पाँच होती हैं। यह स्वमान्य नियम है। इस पर कुछ भी आपत्ति नही हो सकती। परन्तु कभी-कभी हजारों लाखों में किसी मनुष्य के हाथ में ६ अगुलियाँ होती हैं। माता के पेट में किसी कारणवशात् ऐसा हो सकता है, परन्तु वह छठी अगुली भी अपने साथ वाली से जुड़ी होती है। ऐसी अवस्था में क्या कोई यह कह सकता है कि हाथ में ६ अगुलियाँ होती हैं? नही, कदापि नही। यह सामान्य नियम ५ अगुलियो का ही है। अपवाद का क्षेत्र सामान्य नियम के भीतर ही बहुत थोड़े क्षेत्र तक सीमित होता है। अपवाद इस बात को सिद्ध करता है कि सामान्य नियम ही मूल है। इसी भाँति पूर्वानुभूत किसी विषय की अपवाद रूप में किसी व्यक्ति ने स्मरण किया तब भी यह सिद्ध होता है कि सामान्य नियम यही है कि पूर्वजन्म की बातों की स्मृति वर्तमान जन्म में नही होती।

(ग) समाचार-पत्रों में कभी-कभी ऐसी घटना के समाचार छपते हैं कि अमुक बालक वा बालिका ने अपने पूर्व जन्म की कुछ बातें बतलाई। इससे भी यही सिद्ध होता है कि यह अपवाद है। यदि यह नियम ही होता कि पूर्वजन्म की सब बातों की स्मृति हो जाती है, तो सबको होती, परन्तु ऐसी स्मृति केवल किसी व्यक्ति का अपवाद रूप में होती हैं, उससे नियम का बाधक अपवाद नही होता, अपितु नियम को सिद्ध ही करता है। साथ ही यह भी देखा गया है कि कुछ समय के पश्चात् वे बालक उन पूर्वजन्म की बातों को भूल जाते हैं। यह बात वर्तमान समय में घटी एक बालिका ने कही, ऐसा समाचार था।

(घ) उपर्युक्त लेख हमने विशेष बातों के जानने के प्रश्न पर लिखा है। सामान्य रूप से जो विद्या आदि का अभ्यास पूर्व जन्म में किया होता है उसके सस्कार वर्तमान में आते हैं। इसी से कुछ बालक थोड़े परिश्रम से अधिक ज्ञान प्राप्त करते देखे जाते हैं। अतः हमने पूर्वजन्म के संस्कारों का प्रभाव जो वर्तमान जन्म में पड़ता है, उसका निषेध नहीं किया, अपितु उन बातों पर प्रकाश डालताहै कि पूर्वजन्मकी बातें स्मरणमें क्योंनहीं आतीं।

आशा है विद्वज्जन इस समस्या पर और अधिक प्रकाश डालकर कृतार्थ करेंगे। हमने सामान्य समाधान करने का यत्न किया है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

Dowry System—A Dreadful Dragon

(By Girdhari Lal Arya, Chauri Chaura)

Steadily eroding into the Vitals of Hindu Society and womenfolk.

I wonder if the above caption of this article startles a large number of the Arya Maryada-readership. But it is without an exaggeration that the social evil of the dowry system has vitiated the pleasant atmosphere of our household life and has become a curse to the poor and lower-middle-class parents, who are unable to give a huge amount of money together with other paraphernalia in their daughter's wedding as a dowry It is better imagine than mention a deplorable plight of such a parents of girls of marriageable age. Alas ! more often the holy wedlock proves the wholly deadlock due to the very dowry system ! This is why many a parents plunges in deep sorrow and grief on the birth of their daughters instead of rejoicing, feasting and hilariting as when a son is born.

Because a bride is now judged by the dowry-money how much she brought with her in her marriage from her parents'. Similarly, marriage is a big business now-a-days. Worse still, matrimony is not a sacrament but a bargaining-counter for dowry. It is true that marriage makes or mars equally the lives of men and women together. In addition the dowry-oriented marriages have reached its climax in proving a bane instead of a boon to the conjugal love. It is astonishing to see that a good many socalled Arya Samajists and social reformists, besides orthodox Hindus rich and poor ; low or high, are being afflicted and affected with the contagious epidemic diseas of the dowry system. They want a good girl along with a big purse full of currency notes for the price of their sons the B.As.' or the M.As.' As if they are negotiating and carrying on a lucrative and booming sale and purchasetransaction, if not bidding in a public auction, of the disposal goods. They never refuse a good offer in the marriage affairs and always desirous for a good fortunes to get-rich-quick. Consequently, marriage has assumed a form of lottery in all the corners of our country. What a wide gap looming large in their precepts and practices, indeed. An example is better than a precepts. However, it might be recognized that there is an exception in everything and everywhere and seldom appears in the newspapers a good news of an ideal arranged marriage with no dowry at all. But a sporadic event cannot be suffice to rule the roost and make the summer come. It may not be out of place to narrate here a tale of woe of one Mr. B. He is residing in my locality with his family members, and he has also a good pretty young girl of 19 years old. He is very anxious and in much trouble in seeking so for in vain, a good bridegroom to marry her good daughter with little dowry But unfortunately, he could not find a suitable groom till today. Almost none has shown a least clemency in demanding less than five thousand in dowry ! This is one case of so many unmarried and of the age of puberty and Snehlatas and Shakuntlas who are rebuking their lots and spoiling their precious lives in silent due to dowry system badly prevailing also in socalled progressive and sophisticate society worth the name. I have read an episode in "Amrit Bazar Patrika" the other day that one Mr. K. has lived in London for eight years. He likes it here, has a good job as a welding inspector and owns a house and a car. Last year, he decided it was time he got married and although he had one or two English girl friends, he wanted to find a wife from his own country-India. Mr. K. took a month of work, booked a Charter flight to Calcutta and set off, armed with the address of a nice girl, the niece of an Indian neighbour in London. A month later, he returned with a brand new bride. Their families had taken over the negotiations, the couple had looked at each other for the first time at the wedding ceremony. Her dowry was the cost of an air ticket to LONDON. Well and good, this is a new technique, nay, a queer modus operandi for taking and giving dowry ! One may ask—Is there no remedy for this despicable malady ! How else can be curbed this inhuman tendency of extracting money from the parents of girls to enjoy an easy and luxurious life in these hard-hit-days ? More so, is not it an unlawful and immoral deeds ? In fact, dowry-money like bribe money taking & giving is an criminal offence according to the law of the land. As you know, in the hoary past in our country, there were Vadic talented amozan women like Gargi and Maitreyee whose names and fame are proudly being remembered and respected by all men, women & childern throughout the length and breadth of our country even today and surely shall be tomorrow. Remember, Manusmriti enjoins where women are honoured there gods dwell and if they are dishonoured and disgraced there poverty and miseries befall. Swami Dayanand writes the father of the girl (bride) should honour with the present of a Cow, the scholar, who has properly performed his duty of maintaining the due relation of the pupil and the precepter (teacher and taught) ; who has received from the father or the preceptor his due share of learning ; who has a garland (round his neck) and who has already presented a cow to the preceptor sitting on his seat. Marriage against liking always leads to constant quarrel. It is the bride and the bridegroom that have the chief concern in a marriage and not the or the father ; it is the marrying couple that enjoys pleasure by mutual love and suffers pain from discord. That country is prosperous in which marriages take place at a suitable age and the practice of brahmacharya (Celibacy) and education is fully observed. But country is sunk in misery in which brahmacharya and education are neglected and marriages take place in early age or between unsuitable matches. The reform of all reforms is the reform of marriage i.e marriages should take place only after full education and celibacy. Pandit Chamupati ji M.A. also writes—To the age at least of twentyfour in the case of a boy and of fifteen in the case of a girl this tutelage with the preceptor should continue. Then alone is the Snataka (graduate) whom the shastras call twice-born, because of his or her second birth from the Acharya's womb, allowed to marry. The bride and the bridegroom have free choice in selecting their mate. The Acharyas, who have been keeping a watch over the lives of their respective wards, and are most intimately acquainted with their inner temperaments compare between them, notes they have taken of their gradual unfolding, and recommend to their respective disciples, what spouse will suit them. The function of other elders is also advisory. The ultimate decision rests with the pair themselves. In the course of the ritual performed at the time of marriage, some very solemn Vows are taken by the prospective wife and husband. The latter undertakes to support her. forswearing Concealment of any enjoyment of his from her. While the wife is to remain at the house and look-after their joint concerns at home, all outside functions fall to the lot of the husband. They form, as it were, the centrifugal and centripetal forces of the family system. The idea not of equality or inequality, but of the capability to supplement each other by dint of their endowments peculiar to their respective sexes, is the keynote of the matrimonial relation. According to the Vedic ideal, marriage is not a contract but a spiritual necessity, solemnised by the performance of a sacrament. The bond it forges is indissoluble. Divorce is forbidden. Souls once mated are mated for life.

From these passages quoted here, is evident that there was never dowry system in Vogue in our society at all. After all, where there is a will there is a way to cut the Gordian Knot of the prevailent dowry system in our time. It needs only willpower to eradicate this ill. There are numerous illustrations to enumerate. Hence, it is high time we must have guts and gumptions to serve and sacrifice for the noble cause & we must reiterate here again our solemn pledge to banish from our holy land the one hundred & odd social evils, viz. corruption, dowry system, useless fireworks, pomp and show gorgeous and gaudy expenses in marriage, early and unsuitable marriage, extravagance, superstition, indiscipline, gambling intoxicating obscene film songs and half-naked dances in cultural activities, pornographic and pernicious foreign litteratures and untouchability and what not.

O, GOD protect us from the perishableness and darkness.

गत भाग १ से आगे—

ओङ्कार-जप-विधिः

(२)

(ले० पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली)

१—ओङ्कार-जप-विधिः बनाने का अनुरोध करते हुए विभिन्न विद्वानों की सेवा में मैंने जो पत्र लिखे थे, उनका परिणाम सामने आने पर यही पता चला कि वर्तमान पीढ़ी के विद्वानो की रुचि उपासना धर्म में नही है। दर्शन-शास्त्र के एक बड़े आचार्य ने उत्तर में लिखा—

"आपने पत्र द्वारा ओङ्कार-जप को व्यावहारिक विधि पर लिखने के लिये सुझाव दिया है। पर मेरा सुझाव है कि आप यह काय किसी अनुभवी अभ्यासी के द्वारा करायें तो ठीक होगा। आर्यसमाज में ऐसे योगियों की कमी नही है। मेरे नियमित लेख-कार्य के अतिरिक्त कुछ लिखने का मुझे अवसर भी नही मिलता।"

२—वेदों के एक प्रसिद्ध विद्वान्, अष्टाध्यायी-महाभाष्य के प्रकाण्ड पण्डित, अनेक पुरस्कार विजेता, अनेकों महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के निर्माता, संशोधक एवं महर्षि दयानन्द के परम भक्त एक महापण्डित जी ने लिखा था—"मैं इस कार्य को नहीं कर सकूगा।"

३—एक आचार्य और पण्डितराजजी बहुत विश्रुत हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा विरचित पंचमहायज्ञविधि के प्रथम यज्ञ—ब्रह्म-यज्ञ (सन्ध्या) का एक सुन्दर, स्थूलकाय भाष्य भी उन्होंने रचा है। उनसे मैंने कुछ अधिक ही आशा की थी; परन्तु उनका उत्तर हो नहीं आया।

४—एक बड़ी सभा के बड़े अनुसन्धानाध्यक्ष जी ने लिखा—"मुझे खेद है कि अन्य कार्यों में व्यस्त होने के कारण आप द्वारा चाही पुस्तक लिखने का समय नही निकाल सकूगा।"

५—सुप्रसिद्ध आर्य नेता, आर्य सिद्धान्तों के मर्मज्ञ, मेरे गुरुभाई श्री पण्डित जगदेवसिह जो सिद्धान्ती शास्त्री ने मुझे बुलाया। वे मेरे पास आये। मैं भो उनके पास गया। विचार-विमर्श होता रहा। श्री सिद्धान्ती जी के पास ओङ्कार-जप विषयक सामग्री और ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है। मैंने उनसे विधि तैयार करने का आग्रह किया। वे मुझे यह कार्य करने को कहते रहे। मैंने अपनी स्थिति स्पष्ट की। इस सम्बन्ध में जो संकोच मुझे है, वह भी मैंने उन्हें बतलाया। उन्होंने विधि बनाने का कोई वचन नहीं दिया। बात बनी नही।

६—वेदों के एक नये भाष्यकार और सुप्रसिद्ध कथाकार संन्यासी जी ने मेरे प्रस्ताव की सराहना की। कई पत्रों का आदान-प्रदान हो गया। अन्त में उन्होंने लिखा—"आपका आदेश नोट कर लिया है। यथा समय एक विधि तैयार करके प्रकाशित कराऊंगा।" इससे मुझे प्रसन्नता हुई थी। वह विधि बनी या नही? ईश्वर जाने।

७—प्राचीन काल में कोई विधि ओङ्कार-जप की अवश्य ही बनी और विकसित हुई होगी। मैं ऐसा समझता हूं। प्राचीन ऋषि एकता और समता प्रेमी थे। अपनी-अपनी डफली और अपना-अपना राग, उन्हें पसन्द न था। मानव-जीवन को उन्होंने स्वस्थ और सर्वहितकारी स्वेच्छया-स्वीकृत अनुबन्धों में बांधा और सुसस्कृत किया है, यह सुस्पष्ट ही है। प्राचीन-काल में गुरु-शिष्य-परम्परा भी प्रचलित और जीवित थी। पुस्तक-व्यापार भी तब आजकल जैसा न था। मुद्रण-कला भी न थी। तब मौखिक रूप से ही उस विधि का प्रचार होता होगा। आजकल तो लोग सब कुछ अपने घर बैठे पुस्तक रूप में ही जान लेना चाहते हैं। पूछताछ में भी प्रायः लजाते ही हैं। उपासनावाद में तो कम लोगों की ही रुचि होती है। वैदिक उपासनावाद और ओङ्कारोपासना के प्रेमी तो और भी कम होते हैं। प्राचीनतमविधि—विधान लुप्त भी हो गये हैं। उन विधानों का सरक्षण सशोधन वा पुनरुद्धार हो नही सका।

८—अपनी जानकारी, पूछताछ और अपने अन्तरात्मा की आवाज के आधार पर अब मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जिस वैदिक सन्ध्या-पद्धति का संकलन और प्रचलन किया था, वास्तव में तो वही ओङ्कारोपासना पद्धति है। वही ओङ्कार-जप-विधि भी है। वही गायत्री-मन्त्र जप-विधि भी है। महर्षि दयानन्दजी ने वैदिक उपासनावाद के उद्धार के लिये अपनी सवप्रथम लेखबद्ध रचना तो "ओङ्कार-जप-विधि" के रूप में ही तैयार की थी। परन्तु उनकी अन्य व्यस्तताओं एवं उनकी शीघ्र मृत्यु के कारण उनकी दर्शाई हुई विधि का सम्यक् विकास और प्रसार हो नहीं सका।

९—हमारे महर्षिजी की उक्त "ओङ्कार-जप-विधि" का ही प्रचार, विस्तार आजकल की प्रचलित सन्ध्या-पद्धति, वैदिक-सन्ध्या-विधि या ब्रह्म-यज्ञप्रणाली के रूप में हो गया है। महर्षि जी के बाद के उत्साही विद्वानों, प्रचारकों, पुस्तक-विक्रेताओं और श्रद्धावान् आर्य पुरुषों ने उत्साहवश एक दोषपूर्ण ढग सन्ध्या का प्रचलित कर दिया है, जोकि अधूरा भी है, विशेष लाभदायक भो नही है।

१०—प्रचलित सन्ध्या-पद्धति का नाम तो सन्ध्या ही चला आ रहा है, परन्तु उसके प्रचलित रूप में कोई भी स्थान किसी भी प्रकार के "सम्यक्-ध्यान" का नहीं है। आर्यसमाज मन्दिरों में सत्संग के दिन प्रायः जो पाठ सन्ध्या-मन्त्रों का होता है, वह तो एक नया रूढ़ीवाद ही है। न वह समय सन्ध्या का होता है, न उसमें विधिपूर्वक कार्य ही होते हैं। इस रिवाज को पहले इसलिए आरम्भ किया गया होगा कि सन्ध्या-मन्त्रों को कण्ठस्थ करने और विधिपूर्वक सन्ध्या करने का ढंग सीखने में साधारण लोगों को भी कुछ सुविधा हो जाये। इस दृष्टि से निस्सन्देह सन्ध्या-मन्त्रों के पाठ की कुछ-कुछ उपयोगिता भी है। परन्तु लोगों ने तो अब इस प्रशिक्षण-प्रकार को ही सन्ध्या समझ लिया है। जो लोग सायंकाल के सैर-सपाटों में होते हैं, अथवा सायंकाल की विवाद-गोष्ठियों में व्यस्त होते हैं। तब तो किसी को सन्ध्या कर लेने का ध्यान भी नही आता। साप्ताहिक सन्ध्या भी प्राय तोता-रटन्त ही होती है—विधि-रहित और अर्थ-ज्ञान-शून्य।

११—जप का महर्षि दयानन्द कृत आर्ष-विधान सन्ध्या-पद्धति में भो मौजूद है। परन्तु हमारे अधिक उत्साही नेताओं, आचार्यों और पथ-प्रदर्शकों ने कभी उसकी ओर उचित ध्यान दिया ही नही। बहुत से ब्रह्म-बन्धु तो उसे जानते भी न होंगे। मुझे स्वय भी उसको जानने में बहुत देर लगी। एक दूषित प्रचार-परम्परा ने सत्यता को रुद्ध कर रखा है। यदि आरम्भ से ही ठीक ढंग हमारी सन्ध्या का चला होता, तब तो बात बहुत पहले ही सुलझ जाती। मैं समझता हू कि आजकल जो कुछ भी सन्ध्या के नाम पर किया, बोला और लिखा जाता है, वह सन्ध्या नहीं है। वह सब कुछ तो सन्ध्या की तैयारी ही है। और सन्ध्या किये बिना ही, सन्ध्या की तैयारी के बाद कार्य की परिसमाप्ति मानो जा रही है। अर्थात् तैयारी को ही अब सन्ध्या समझा जा रहा है।

१२—पंचमहायज्ञविधिः के सन्ध्या-पद्धति प्रकरण में उपस्थान के गायत्री-मन्त्र के पश्चात् महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने लिखा है—

"एव प्रातः सायं द्वयोःसन्ध्योरेकान्तदेशं गत्वा शान्तो भूत्वा यतात्मासन् परमेश्वरं प्रतिदिनं ध्यायेत्।"

१३—इस संस्कृत वाक्य का अर्थ मुद्रित पुस्तकों के हिन्दी भाग में नहीं है, जोकि इस प्रकार होना चाहिए—

"इस प्रकार प्रातः सायं दोनों सन्धि वेलाओं में एकान्त देश में जाकर, शान्तचित्त होकर, अपने आत्मा को चेताकर=विवेकारूढ़ होकर प्रतिदिन ईश्वर को ध्यावे, अर्थात् धारणा, ध्यान और समाधि का अनुष्ठान करे। मैं ऐसा समझता हूँ कि ऊपर के संस्कृत-पाठ में जो अन्तिमपद "ध्यायेत्" है—यही धारणा, ध्यान, समाधि और ओङ्कार-जप का विधायक है।

१४—आगे महर्षि जी लिखते हैं—

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाम-मोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

शेष पृ० ७ पर

पृ० ५ का शेष

अर्थात् हे ईश्वर दया के सागर ! आपकी कृपा से इस जप और उपासना आदि कर्म के द्वारा हमको शीघ्र ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हो।

१५—यह उल्लेख उन्होंने सन्ध्या-पद्धति में गायत्री-मन्त्र के उल्लेख और उसके व्याख्यान के पश्चात् तथा नमस्कार-मन्त्र से पहले किया है। प्रकरण से स्पष्ट है कि यह सन्ध्या-वन्दन के उपसंहार और समापन का ही विधान है। प्रश्न यह है कि यहाँ पर महर्षि जी ने जिस जप का विधान किया है। वह क्या है ? वह जप कब किया जाता है ? अथवा वह जप कब करना चाहिए ? वह जप गायत्री-मन्त्र का होता है, या "ओम्" नाम का ? अथवा किसी अन्य मन्त्र वा अन्य नाम का ? जे सन्ध्यामन्त्रों का पाठ किया जाता है, क्या उसको यहाँ जप समझ लिया जाये ?

१६—प्रकरण के अनुसार मेरा उत्तर इस प्रकार है—(क) महर्षि जी ने जो जप का विधान किया है, वह प्राचीन वैदिक उपासना-पद्धति के अनुसार है। आजकल जिस रूप में सन्ध्या का अनुष्ठान किया जाता है। उसमें प्रायः "जप" कभी कहीं होता ही नहीं है जोकि अवश्य ही होना चाहिए। महर्षि जी ने जो "ध्यायेत्"=ध्यावे इस क्रिया पद का व्यवहार किया है, इसका अभिप्राय मेरी समझ के अनुसार यही है कि "अर्थ की भावना के साथ उपासक "ओम्" नाम का जप करे। और गायत्री मन्त्र के अर्थों का विचार करते हुए ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूप का ध्यान करे।"

(ख) जप नाम का ही होता है। शास्त्रों में "ओम्" नाम के जप का विधान है। मन्त्र का तो अनुष्ठान होता है, जप नहीं। ध्यान ही अनुष्ठान है।

(ग) गौणरूप में गायत्री मन्त्र के अनुष्ठान को भी गायत्री-जप कहा और समझा जाता है। इसी प्रकार "ओम्" नाम के जप को ओङ्कार का जपानुष्ठान कहा और समझा जाता है। जप और अनुष्ठान में कुछ भेद तो है ही।

(घ) महर्षि दयानन्द जी ने जिस जप का विधान किया है, वह "ओम्" नाम का ही जप है। जोकि सन्ध्या में गायत्री मन्त्र के अनुष्ठान=विचार और उसके द्वारा ध्यान के पश्चात् होना चाहिए। किसी अन्य नाम वा मन्त्र का जप यहाँ अभिप्रेत नहीं है। सन्ध्या-मन्त्रों के पाठ को ही जप समझने की भूल कोई न करे।

(ङ) जप "ओम्" नाम का ही होता है। किसी अन्य मन्त्र या नाम का तो जप होता ही नहीं है।

१७—जप के समय "ओम्" नाम के जिस अर्थ की भावना उपासकों को करनी चाहिये। उसका उल्लेख महर्षि दयानन्द जी ने पंचमहायज्ञविधि के सन्ध्या प्रकरण में किया है। उसे भी देखना चाहिए। उसे आगे उद्धृत भी किया जायेगा।

१८—"ओम्" पद का अर्थ बहुत विस्तृत है। हमारा सुप्रसिद्ध गायत्री-मन्त्र भी ओङ्कार का ही एक व्याख्या-विस्तार है। बहुत विचार करके अब मैंने ऐसा समझा है कि वैदिक-सन्ध्या-पद्धति के अनुसार शिखाबन्धन, आचमन, अंग-स्पर्श, मार्जन, प्राणायाम, अघमर्षण, पुनः आचमन, पुनः गायत्री-मन्त्र-पाठ, मनसा परिक्रमा, उपस्थान, उपस्थान के पश्चात् पुनः आचमन, करके दीर्घकाल तक गायत्री-मन्त्र का विचार किया जाये, ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव का विचार किया जाये, ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव को उपासक अपने-अपने जीवन में धारण करने के शुभ संकल्प करें और फिर देर तक "ओम्" नाम को भावना सहित जपें। काल मात्रा के परिज्ञान के लिए भी माला का उपयोग नहीं किया जा सकता है। इस जप के बाद ही ईश्वर प्रार्थना और समर्पण पूर्वक नमस्कार-मन्त्र के साथ सन्ध्या-कर्म को समाप्त किया जाये। तभी सन्ध्या सम्यक् ध्यान का रूप धारण कर सकेगी। यही है अब मेरी समझ के अनुसार महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा विरचित "ओङ्कार-जप-विधिः"।

१९—आर्य विद्वानों की सेवा में मेरा यह विनम्र निवेदन है कि यदि मेरे समझने में कोई भूल हो, तो उसे "आर्य-मित्र", "आर्य-मर्यादा" वा "परोपकारी" के माध्यम से सुधारने की कृपा करें। यदि कोई अन्य प्राचीन "ओङ्कार-जप-विधि" कहीं हो, तो उसे भी प्रकट करें। यह भी लिखें कि ओङ्कारोपासना-प्रसार के लिये विशेष उपाय क्या हो ? मेरा यह उद्योग इसीलिए है कि संसार में ईश्वर-भक्ति का प्रसार बढ़े और दुःखदारिद्रय-ग्रस्त जनता सुख, समृद्धि एवं शान्ति को प्राप्त कर सके। पर छिद्रान्वेषण की कल्पना कोई न करे।

ईश्वर की अद्भुत रचना

श्री कवि कस्तूर चन्द घनसार, उपाध्यक्ष-आर्य समाज पीपाड़
(शहर राजस्थान)

ईश्वर अद्भुत रचना करके, विश्वे-भवन सजाया।
व्योम, वितान तना कर जिसमें, द्यौ-नव तेज प्रकाशे।
निशी तिमर को, है हरते वह, सुन्दर सुखदा भासे॥
मयङ्क मनोहर मण्डप मध्ये' अमृत ले वरषाते।
शीतल, रश्मि ले छिटकाते, सर्व जीव हरषाते॥
मधुर बात के पङ्खे चलते, सुगन्ध सन्देशा लाया-
ईश्वर अद्भुत रचना करके, विश्वे भवन सजाया।

पृथिवी-पावन-प्रांगण में ये, रत्न जड़ित सोभाये।
अनन्त-पराग पुष्प ले सरसे, तरुवर, लता, सजाये॥
हेतु इसी के नभमें देखो, उमड़-घुमण घन आते।
सिन्धु धरा पर, गगन पन्थके, अमृत जल बरषाते।
सरस, सुधा फल भांति-भांति के, ईश्वर अनूप रचाया।
ईश्वर अद्भुत रचना करके, विश्वे भवन सजाया॥

दशों दिशा, दरवाजे, जिसके, प्रहरी अटल बनाये।
खड़े सचेत नियन्ता अपने, सद अनुशासन पाये॥
षट् ऋतुयें सुखदा जीवों की, समय-समय पलटाये।
फले फूल नियम बद्ध अजब से, सरसित सृष्टि सुभाये॥
चित्र-कला प्रभु की अति अनुपम, सामर्थ्य वही कहाया।
ईश्वर अद्भुत रचना करके, विश्वे भवन सजाया॥

भूधर, नदी तड़ाग, हिमालय, बन उपवन अति नाना।
कीर, मयूर विहङ्ग, बोलते, मधुवन कोकिल गाना॥
गगन-घोर घन, गर्जे, घर्रर, लगते परम सुहाना।
शशि श्यामला लहराती है, नये-नये अभियाना।
कृषिकार "घनसार" मुदित मन, मेघ देख हरसाया।
ईश्वर अद्भुत रचना करके, विश्वे भवन सजाया॥

'बनो ब्रह्मचारी !

ब्र० धर्मेन्द्रकुमार "हिमकर" पाणिनि महाविद्यालय, मोतीझील, वाराणसी-१

दयानन्द जी ब्रह्म धारण किये थे।
जगत् के दु:खों का निवारण किये थे॥
यही एक विनती है मानो हमारी।
बनो ब्रह्मचारी, बनो ब्रह्मचारी॥

सदा मुस्कराहट, अधर लाल होवें।
कुसुम की तरह ये खिले गाल होवें॥
करो दण्ड-बैठक इसी से ही फूलो।
दयानन्द को नर ! कभी भी न भूलो !

रहो स्वस्थ तेरा ये शृंगार होवे।
तुम्हें स्वास्थ्य से ही सदा प्यार होवे॥
सभी को मैं कहता हूँ, नर हो या नारी।
बनो ब्रह्मचारी ! बनो ब्रह्मचारी !

आर्यसमाज पूना के वार्षिकोत्सव में सर्व धर्म सम्मेलन

श्री० प० शान्तिप्रकाशजी शास्त्रार्थ महारथी, जंकमपुरा (गुड़गांवा छावनी)

विधर्मी जनता आर्यसमाज से शास्त्रार्थ करने को उद्यत नही होती किन्तु सर्वधर्म सम्मेलनों में भाग लेने से उन्हें कोई आपत्ति नही होती। यह भी एक प्रकार का शास्त्रार्थ ही होता है। अतः आर्यसमाजों को अपने उत्सवों में शास्त्रार्थों के अभाव में सर्वधर्म सम्मेलनों की प्रथा डालनी चाहिये।

केवल इतना ध्यान रहे कि आर्यसमाज का प्रतिनिधि योग्य विद्वान् हो जिसे मतमतान्तरों के विद्वानों के साथ निपटने का अवसर मिलता रहता हो और सर्वधर्म सम्मेलनों में बोलने का अनुभव भी हो। शास्त्रार्थों और सर्वधर्म सम्मेलनों में बोलने का विधिविधान कुछ भिन्न रहे।

सर्वधर्म सम्मेलनों में बोलने की विशेषता यह है कि आर्यसमाज का प्रतिनिधि समस्त धर्मों के प्रतिनिधियों के व्याख्यानों को ध्यानपूर्वक सुने और आवश्यक बातों को स्मरण रखे। अपने बोलने के सीमित समय में आर्यसमाज का पक्ष इस प्रकार से उपस्थित करे कि अपने धर्म की महत्ता प्रगट होती जाय और दूसरे मतों का नाम न लेकर सूक्ष्मदृष्टि से उनके विशिष्ट सिद्धान्तो की युक्तियुक्त समालोचना इस विधि से करता चला जाय कि अन्यमतवादी यह न कह सकें कि हमारा खंडन न हो रहा है। वह अपने मन में तो अनुभव करें कि हमारे सिद्धान्त की निर्बलता स्पष्ट है किन्तु मुख से कोई शिकायत न कर सकें।

पूना का सर्वधर्म सम्मेलन १८ मई की रात्रि साढ़े आठ बजे से साढ़े ग्यारह बजे तक श्री माननीय एच० वी० पाटस्कर उप कुलपति पूना विश्वविद्यालय के सभापतित्व में समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। सब से पूर्व आर्यसमाज की ओर से स्वागत भाषण के साथ विषय प्रवेश पूर्वक उद्घाटन भाषण मैंने दिया और सबसे अन्त में आर्यसमाज के प्रतिनिधि के रूप में भी मेरा भाषण हुआ। सम्मेलन का विषय था—"मेरे धर्म में ईश्वर का स्वरूप क्या है?

उद्घाटन के उपरान्त सम्मेलन में प्रथम पारसियों के प्रतिनिधि ने अपने धर्म के अनुसार ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा कि—

पालनहार ईश्वर की ओर से मानवजाति एक ही है। यही इसका प्रबन्धक है। उसने चोरी छल कपट से हमें रोका है और होम का विधान बताया है। अतः हम ईश्वर की आज्ञा से प्रतिदिन होम जप तप करते हैं। यह हमारा प्रायश्चित ही है। जिसके द्वारा भगवान् हमारे पापों को क्षमा कर देता है अतः हमें सदैव भगवान् के आगे तोबा करते और पापों की क्षमा की प्राथना करते रहना चाहिये इत्यादि।

दूसरे नम्बर पर सिखधर्म के प्रतिनिधि डाक्टर सगतसिंहजी ने कहा कि कलियुग के अवतार गुरु नानकदेव जी वेदीवंश में हुए। व्यासजी ने इसका वर्णन कल्की पुराण में किया है। सिख धर्म और हिन्दू धर्म में कोई अन्तर नही है। पुनः गुरुवाणी से ईश्वरीय स्वरूप पर प्रकाश डाला।

तीसरे नम्बर पर सरदार सरदूलसिंह ने एक ओंकार सतनाम की विस्तृत व्याख्या की और परमात्मा को निराकार बताया।

चौथे नम्बर पर जैन महोदय श्री कनकमल जी ने जैन समाज की ओर से बोलते हुए ईश्वर की संज्ञा का खंडन करते हुए भी मुक्तों के संघात का नाम ईश्वर बताया हिन्दुशास्त्रों को परस्पर विरुद्ध बताया इत्यादि।

पांचवे नम्बर पर बुद्ध प्रतिनिधि ने भी जैन महाशय की भांति हिन्दु धर्म और ईश्वर संज्ञा का खंडन किया।

छठे नम्बर पर इसलाम के प्रतिनिधि सय्यद मुसतफा ने भाषण दिया। ईश्वर को रहमान और रहीम बताया और अलहम्दोलिल्लाह की व्याख्या की कल्मा शरीफ पैगाम्बर के नाम को संयुक्त रखने का समर्थन किया। आर्यसमाज की भरपूर प्रशंसा की। स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनके सिद्धान्तों को लाभप्रद घोषित किया। एक निराकार ईश्वर के सिद्धान्त मानने पर आर्यसमाज को विशेष महत्व दिया और अन्त में ओ३म् जय हिन्द का जयघोष लगाकर बैठ गये।

सातवें नम्बर पर ईसाई धर्म के प्रतिनिधि श्री अरविंद कुसम ने ईसा-मसीह को निष्पाप और खुदा का इकलौता बेटा सिद्ध करने का यत्न किया। यसाया की भविष्यवाणी को खूब उछाला कि कुवारी बेटा जनेगी और वह खुदा का इकलौता होगा जिस पर ईमान लाने से पाप क्षमा होंगे इत्यादि, सत्य यह है कि स्वयं खुदा शरीर धारण करके जगत् में आया। वह प्रेम का स्वरूप है। गाड इज लव। वह मनुष्य से प्रेम करता और इसी के लिये उसे जगत् में आना पड़ता है। खुदा यसूमसीह में प्रगट हुआ, वह बिना बाप के था। तुम्हारे में कौन उसे पापी सिद्ध कर सकता है इत्यादि।

आठवें नम्बर पर आर्यसमाज के प्रतिनिधि के रूप में ईश्वर के वैदिक स्वरूप पर मैंने प्रकाश डालते हुए उपरिलिखित संप्रदायों के चुने सिद्धान्तों के साथ कुछ तुलनात्मक विवेचना इस ढंग से की कि उनके प्रतिनिधियों को कुछ शिकायत का अवसर न बने। मेरे पश्चात सभापति जी के भाषण के साथ कार्यवाई समाप्त हुई।

मेरे भाषण के मुख्य भाग टेपरिकार्ड कर लिये गये। सक्षेप यह है कि ईश्वर केवल एक है इसके लिये चारों वेदों के मन्त्र उपस्थित किये गये। ईश्वर के अनेक नाम हैं जो गौणिक कहलाते हैं। उसका निज नाम ओ३म् है जो सभी मत्रों के ग्रन्थों में अब तक मौजूद है। प्रमाण दिये गये।

चारो वेदों में केवल एक ईश्वर की उपासना का आदेश है। ईश्वर के अतिरिक्त अन्य को उपासना का खंडन करते हुए उसे दुःखों का कारण बताया है।

ईश्वर निराकार है। उसकी कोई मूर्ति शरीरादि नही है। देखो यजु अध्याय ३६।३। ईश्वर सृष्टि का कर्त्ता, धर्ता, संहर्ता है उसके लिये वेदों में युक्तियुक्त वर्णन है। जड़ वस्तु में स्वतः बनने नियम में चलने और संहृत होने की योग्यता नहीं होती। जब तक चेतन सत्ता उस में निमित्त बन कर उत्पत्ति स्थिति और प्रलय का कारण न बने। अन्यथा घड़े कुम्हार को सहायता की अपेक्षा न रखते। फोटो स्वयं खिच जाते। भोजन स्वयं बन कर मुख में जा पड़ता।

शास्त्रों में ऋषि दयानन्द ने युक्ति प्रमाण पूर्वक परस्पर विरोध का परिहार कर दिया है। कर्म फल प्रदाता परमेश्वर है। जीवात्मा कर्म करके उसके फल से बचने का प्रयत्न करता है। पुनरपि उसे फल भोगना पड़ता है। कर्म भी स्वयं फल प्रदाता नहीं क्यों कि वह जड़ है। और जड़ में यह शक्ति नहीं होती अतः ईश्वर ही कर्म फल प्रदाता है। वह सर्वज्ञ होने से कर्म फल की ठीक व्यवस्था कर सकता है। जैन ग्रन्थों में ओ३म् की महिमा का मान मौजूद है।

बौद्ध में ओं मणि पद्मे होम कर जाप बहुधा होता है। महात्मा बुद्ध आस्तिक थे। उनके पश्चात् बुद्धों में प्रकृतिवाद आया।

पारसियों में यज्ञ की महिमा बहुत है किन्तु पाप क्षमा का सिद्धान्त अमान्य है अन्यथा धर्म मर्यादा का लोप हो जायगा।

सिख धर्म में एक ओंकार कह कर उसे जन्म मरण के चक्र से पृथक् माना है। अवतारवाद का खंडन है। गुरु जी ने ठीक ही कहा कि—

एकोसिमरो नानका जो जल थल रहिया समाय।
दूजा काहे सिमरिये जो जन्मे ते मर जाय॥

अतः गुरु जी ने अपने लिये अवतार शब्द का प्रयोग नही किया। सिख मत को वैदिक धर्म में ही सम्मिलित हो जाना चाहिये जिस से पूर्ण शक्ति से वैदिक धर्म का उद्धार हो।

इसलाम में कलमा में एक खुदा के साथ पैगम्बर पर ईमान लाना

शेष पृ० ९ पर

महर्षि दयानन्द सरस्वती काशी शास्त्रार्थ की शताब्दी

४-५-६९ के 'आर्यमर्यादा' मे शताब्दी के कार्यों की प्रगति प्रकाशित हुई थी। उसके पश्चात् जो काय आगे हुआ है उसका विवरण आर्य जगत् के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है —

(क) शोध पत्र जो और प्राप्त हुवे—

(१) "महर्षि दयानन्द सरस्वती" श्री प० अनन्त शास्त्री फडके भूतपूर्व अध्यक्ष पुराणोतिहास विभाग संस्कृत वि० विद्यालय वाराणसी

(२) 'पूजा रहस्य" श्री डा० विश्वमित्र जी वेदोद्यानम्, गौरीविदनूर-मैसूर—

(३) ईश्वर का स्वरूप" श्री सत्यव्रत जी राजेश प्रवक्ता वेद विभाग गु० वि० वि० कागडी

इससे पूर्व २५ शोध पत्र प्राप्त हुवे थे जिनका विवरण दिया जा चुका है।

अब इन शोध पत्रो को ग्रन्थ का रूप प्रदान करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है जिसके ३० जून तक समाप्त होने की सम्भावना है। इस कार्य को सुचारू रूप से सम्पन्न करने हेतु श्री डा० विश्वमित्र जी वेदोद्यानम् गौरीबिदनूर, (मैसूर राज्य) जो कि कई उपयोगी ग्रन्थ आर्य जगत् को दे चुके हैं, से सहायता की प्रार्थना की गई, उन्होने सहर्ष हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर हमे कृतार्थ किया है वह शीघ्र ही काशी आकर इस महत्त्वपूर्ण कार्य को पूरा कर सकेंगे ऐसी आशा और विश्वास है।

(ख) दान मे जो धन प्राप्त हुआ है।

५१०० आचार्य कृष्णानन्द जी आर्यसमाज वाराणसी छावनी। १७०० श्री क्षेमचन्द्र जी आर्यसमाज वाराणसी छावनी (इक्यावन रु० मे अंश भुगतान) १०००० रूपनारायण जी कपूर आर्यसमाज छा० (इक्यावन रु० मे अंश भुगतान) १०००० वसन्तलाल जी मौर्य आर्यसमाज वाराणसी छा० (इक्यावन रु० मे अंश भुगतान) २५०० चन्द्रिका प्रसाद जी आर्यसमाज वाराणसी छ० (इक्यावन रु० मे अंश भुगतान) २००० पृथ्वीचन्द्र लीलावती आर्य प्रागपुर कागडा १०० चमनलाल जी शर्मा कलेरकला गुरुदासपुर ५०० कस्तूरीलाल जी आर्य, आर्यसमाज सार देवरिया २५०० कृष्णलाल जी आर्य, नामरूप यूनिट-लखीमपुर (आसाम) १०० मकरन्द पाठक शर्मा आय वैद्य बरादी जि० शाहाबाद आरा ५१०० सुश्री कृष्णाबाई जी अरदली बाजार वाराणसी १११०० सदस्य एव समाजो का शुल्क २०० तहसील वाराणसी के बन्धुओ का दान श्री गुरुप्रसाद द्वारा ५००० श्री रामबिलाससिह जी आर्य रसूलपुर फर्रुखाबाद ५०० श्री मन्त्री जी आर्यसमाज अशोकरोड मसूरी ४०० लौजारीसिह जी आर्य द्वारा गोरखपुर से दान (उनके मित्रो का) १००० ज्ञानभिक्षु जी वानप्रस्थो ५९ एल माडल टाउन सोनीपत (दस रु० ७-३-६९ को प्राप्त हुआ था) ५१०० भगवानदास जी अग्रवाल-तिनसुकिया (आसाम) ५२१०० योग १२६१ २५ पिछला योग १७८२ २५ कुल योग।

शोध पत्र भेजने वाले विद्वानो एव दानी महाशयो को बहुत धन्यवाद। शताब्दी समारोह के लिये स्वागत समिति के सदस्य २०-४-६९ को एक विशेष आयोजन द्वारा यज्ञ के पश्चात् बनाये जाने प्रारम्भ किये गये। प्रत्येक सदस्य इक्यावन रु० एक साथ अथवा तीन किस्तो मे ३१-७-६९ तक देकर सदस्य बन सकेगा। समारोह से अब तक १५ सदस्य बन चुके हैं जिन मे दो महिला भी हैं। २५० सदस्य बनाने का लक्ष्य रखा गया है।

३०-४-६८ तक रु० ५५६ ४० नये पै० व्यय किया जा चुका जिनका विवरण इस प्रकार है—

३८ ३५ लेखन सामग्री २७१ १५ डाक व्यय १९० ५० मुद्रण व टाइप २६ ४० मार्ग व्यय ३० ०० मन्त्री जी को नित्य प्रति के व्यय के लिये।

५५६ ४० कुल योग।

जो नकद रु० हाथ मे है उस के लिये सेविंग बेंक मे हिसाब खुलवाकर ६५० रु० उस मे जमा कर दिया है। आर्य जगत् के प्रसिद्ध नेता एव विद्वान् श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक एव आर्य-प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने हमारे पास कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव शताब्दी समारोह के लिये भेजे हैं परन्तु अब समय इतना कम रह गया है कि हम चाहते हुवे भी कार्य रूप मे प्रणीत करने मे अपने को असमर्थ पा रहे हैं। विपक्ष के कुछ विद्वानो के सन्देश इस अवसर पर शास्त्रार्थ के लिए भी आए हैं। आर्य जगत् के माननीय वेदी के विद्वानो से सादर नम्रनिवेदन है कि वह उस अवसर पर अपना अन्यत्र प्रोग्राम न रखें।

हम बार-बार आर्य जगत् को सूचित करते आ रहे है कि हमारे साधन अति सीमित और अपर्याप्त हैं। यह शताब्दी समारोह पूरे आर्य जगत् का सहयोग चाहता है। इसी हेतु हम बार-बार नम्रनिवेदन करते आए हैं अपीले निकालते आये हैं परन्तु उनका इतना प्रभाव नही हो सका है कि कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न हो सके। अत आर्य जगत् के सामने हम एक बार पुन अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि काशी पौराणिको का गढ है यहाँ की आर्यसमाजे उनकी शक्ति के सामने राई के समान हैं। जो भी हमारे पास तन-मन-धन है हम लगा रहे हैं मगर उससे काम कदापि नही चलेगा। आर्य जगत् गम्भीरता से इस अवसर की महत्ता और आवश्यकता को समझने की कृपा करे। हम एक बार और आर्य जगत् की दोनो शिरोमणि संस्था सार्वदेशिक एव आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश से निवेदन करेंगे कि वह इस ओर अपनी शक्ति का प्रयोग करे। इतनी देरी हो जाने पर भी अभी कुछ तो किया ही जा सकेगा। आशा है हमारी यह पुकार सुनी जायेगी। समय निकल जाने पर बाद को पछतावे के अतिरिक्त कुछ हाथ नही लगेगा। हम एक दूसरे पर दोष ही मढते रह जावेंगे। सारा जग हँसेगा।

क्षेमचन्द्र, प्रधान

आर्योपप्रतिनिधि सभा—कार्यालय आर्यसमाज भोजूवीर—वाराणसी छावनी

पृ० ८ का शेष

ईश्वर के ईमान लाने के साथ शरीक कर दिया गया है। जो कि बहुत बडा दोष है। खुदा रहमान रहीम अर्थात् सबसे बडा दयालु है। प्राणी मात्र पर उसकी दया जारी है तो उसके नाम को पढकर पशुओ की कुर्बानी क्यो की जाती है कुर्बानी का परित्याग होना चाहिये।

ईसाई धर्म मे यसाया की आयत के शब्द का अभिप्राय युवा स्त्री का है जो विवाहिता भी हो सकती है। इस शब्द का व्यवहार केवल कुवारी के लिये नही होता। अत आधार ही कमजोर है। खुदा का इकलौता बेटा कोई नही। सृष्टि भर के प्राणी मात्र उसकी प्यारी सन्तान हैं। खुदा स्वय मसीह मे प्रगट हुआ तो शेष प्राणियो के साथ यह पक्षपात है।

पाप क्षमा का सिद्धान्त मनुष्य मतो का ही बनाया हुआ है। जो पापो-न्नति का ही कारण है। पाप क्षमा नही होते। पाप एक प्रकार के रोग हैं। जिस का इलाज किया जाता है। क्षमा करना अथवा आख फेर लेना पाप रोगी के साथ अन्याय होगा। इस के अतिरिक्त मसीह ने माक मे खुद को निष्पाप न मान कर केवल ईश्वर को ही निष्पाप माना है। और ईसा को खुदा खुदा पुकारने वालो को पापी माना है।

वेद मे परमेश्वर को पिता के साथ माता भी कहा है। माता गदगी से लत-पत बालक को सहन नही करती। उसे पकड कर साबुन से धोती और और पानी से पवित्र करती है। चाहे बालक रोवे या चिल्लाये। ऐसे ही जगदम्बा माता पापियो को न्याय रूपी साबुन और दयारूपी जल से धोकर अपनी अमृतमयी गोद मे विश्राम देकर मोक्ष दुग्ध से मालामाल कर देती है बस यही वैदिकधर्म है। जिसकी आधारशिला त्यागयुक्त भोग पर रखी गयी है। जिसका ध्येय यज्ञ परोपकार और उसकी प्राप्ति मोक्ष सुख है। आर्य हमारा नाम है वेद हमारा धर्म। एक प्रभु को पूजना यज्ञ हमारा कर्म॥

जब तक वैदिक धर्म का भूमडल पर प्रचार नही होता। सब की एकता नही हो सकती। आओ ! ईश्वर के सत्य स्वरूप को वैदिक ज्ञान से यथावत् समझकर उसकी सच्ची उपासना से मोक्ष प्राप्ति के लिए सब यत्नशील हो।



आकाशवाणी द्वारा प्रसारित

शादी विवाह में आडबर

कु० सुशीलाजी आर्या एम० ए० का आकाशवाणी द्वारा प्रसारित भाषण

कौन नहीं जानता कि विवाह प्रसन्नता का अवसर होता है और स्वभाव से ही ऐसे अवसरों पर अपने हृदय की खुशी को प्रकट करने के लिए मनुष्य कुछ न कुछ करता है। किन्तु जहाँ खुशी प्रकट करने का ढंग ऐसा रूप धारण करले जिसका परिणाम हानि करने वाला हो, वही उसे हम आडम्बर कहने लगते हैं। आडम्बर का अर्थ है ऊपरी दिखावा बाहरी टीपटाप तड़क-भड़क।

हमारे घरों में विवाह के पवित्र अवसर पर कुछ ऐसे आडम्बर आज भी चलते हैं जो ठीक नहीं समझे जा सकते। हम सब को विशेष कर हमारी बहिनों को इन आडम्बरों से छुटकारा पाने की कोशिश करनी चाहिए क्योंकि विवाह शादी का मामला तो मुख्य रूप से हमारे ही अधीन है।

खुशी के समय रोशनी करना मनुष्य का स्वभाव है। विवाह में भी हम रोशनी करते हैं। रोशनी करना कोई बुरा नहीं परन्तु इसका आडम्बर करना अवश्य बुरा है। इसी आडम्बर के चक्र में कई बार भयानक दुर्घटनाएँ हो जाती हैं। जैसे हम धन की कमी से बिजली के बल्बों से सजावट का ठीक प्रबन्ध नहीं कर पाएँ तो रंग में भंग होने की सम्भावना रहती है।

विवाह में आतिशबाजी आदि छोड़ना भी एक ऐसा ही आडम्बर है इसमें व्यथ धन फूंकने के अतिरिक्त कई बार आग लगना या किसी को चोट लग जाना साधारण बात है। विवाह मे लड़के की घुड़चढी और लड़का की विदा पर सिक्के गिराने का रिवाज भी व्यर्थ है। इस अवसर पर निधनो को कुछ देना बुरा नहो किन्तु इस प्रकार पैसे फेंकने से गड़बड़ मचती है। पैसा उठाने के लालच में कई बच्चे कुचले तक जात हैं मारपीट को भी नौबत आ जाती है।

एक और रिवाज है समधी को थापा लगाने का। इससे भी बेकार कपड़े खराब होते हैं और मूर्खता भी प्रकट होती है। प्रेम तो हृदय से होना चाहिए थापा केवल बाहरी दिखावा है। वधू के आने पर वर वधू का आपस मे कगने की गाँठें खोलना तो फिर भी कुछ समझ में आता है किन्तु वरवधू एक दूसरे को पतली छड़ियों से पीटते हैं यह शक्ति की परीक्षा हमें तो कुछ समझ में नहीं आती।

विवाह शादी मे गहने कपड़े अपना अलग ही महत्त्व रखते हैं। जिस घर में रगबिरंगे झिलमिलाते कपड़ो की इन्द्रधनुषी छटा मन को नहीं मोहती गहनों के नगमोतियो की चमकार आंखो को चुंधिया नहीं देती पायल और बाजने नाड़े की रुनन झुनन गुञ्जार पैदा नहीं कर रही होती उसे विवाह का घर कहा ही कैसे जा सकता है किन्तु हमें दुल्हिन को इतने बेतरतीब गहनों तथा भारी भरकम कपड़ों से नहो लादना चाहिए कि उसे शरीर की भी सुधबुध न रहे साथ ही कभी-कभी उलझ-पुलझ होकर कोई कीमती गहना खोने की भी संभावना बनी रहे नहीं तो इसे आडम्बर ही कहा जाएगा।

सच तो यह है कि शक्ति से बढ़ कर काम करना ही आडम्बर और अपनी चादर देख कर पैर फैलाना ही सब से बड़ी बुद्धिमत्ता है।

विवाह में न तो सजावट करना बुरा है नहीं धूमधाम के लिए बाजे गाजे का प्रयोग। सगे सम्बन्धियों और मित्र-प्रेमियों के बुलाए बिना तो विवाह की शोभा ही क्या है। किन्तु केवल दूसरों की देखा देखी जरूरत से बढ कर जोर लगाने का परिणाम कितना बुरा होता है यह किसी से छिपा नहीं।

अभी तक हमने कुछ ऐसे आडम्बरों की चर्चा की है जो शिक्षा के प्रचार से धीरे-धीरे कम हो रहे हैं किन्तु एक ऐसे आडम्बर ने भी हमें जकड़ रखा है जो घटने के स्थान पर दिनों दिन बढता ही जा रहा है वह है लेन-देन का आडम्बर। क्योंकि विवाह के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं इसलिए हम इसे आडम्बर कहे बिना नहीं रह सकते। इस का प्रभाव लड़के लड़की दोनों के परिवार और रिश्तेदार या यों कहें कि सारे समाज पर बहुत बुरा दिखाई देता है। सच तो यह है कि इस आडम्बर ने विवाह को विवाह नहीं रहने दिया बल्कि एक प्रकार से सौदा बना दिया है। दूसरे सभी रीति रिवाजों की भांति यहां भी हम यही कहेंगे कि लेनदेन में कोई बुराई नहीं बस आपस की होड नहीं होनी चाहिए। अमुक ने अपनी लड़की के विवाह पर इतना खर्च किया हम क्यों पीछे रहे अमुक को लड़के के विवाह में यह सामान मिला हमें भी उनसे कम न रहना चाहिए लड़के का इतने हजार का टीका न आया तो नाक नीची हो जाएगी। अमुक ने बारात को १ रुपया गिलास दिया हम तो पाच-पांच बर्तन देंगे हम कौन से छोटे बाबा के हैं। बहू को इतना सोना-चाँदी बरी न चढ़ाने पर इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी सच पूछिए तो इसी देखादेखी की धुन में हमारी इज्जत दो कौड़ी की नहीं रही।

इस आडम्बर से किनारा करने की बड़ी आवश्यकता है। विवाह दो हृदयों के पवित्र मिलन का नाम है। यह जीवन भर के लिए किया गया समझौता है। प्रेम सम्बन्ध तभी स्थायी रह सकता है जब आरम्भ से ही कोई गांठ न पड़ने पाए। स्नेह से चिकने चित्त पर धन की धूल न जमने पाए। प्रीति में लेन देन वैर का मूल होता है। इसलिए अच्छा यही है कि हम इस दिखावे से दूर रहें। और भी जितने बड़े छोटे नये पुराने आडम्बर हैं सब से छुटकारा पाकर विवाह को सचमुच खुशी का अवसर बनाएँ व्यर्थ खर्चों को रोकें जैसे कई लोग विवाह में बहू या लड़की को इतने कपड़े गहने देते हैं कि वे पहनने से पहले ही रिवाज पुराना हो जाता है अब आप ही सोचिए इन पर खर्च किया धन बेकार गया या नहीं।

बहिनो! शादी को बरबादी बनने से रोकना है तो इस का पिंड आडम्बरों से छुड़ाना होगा और इसे प्रेम का पवित्र अवसर बनाना होगा। इसी में कल्याण है।

[सौभाग्य से सर्वखाप पंचायत ने विवाह आदि की कुरीतियों को दूर करने कराने में बड़ा कार्य किया है। बड़ी बारातें और शक्ति से अधिक आभूषण आदि रुकवाये हैं। यमुना नदी के दोनों तरफ ग्रामीण जनता में इसके प्रचार से निर्धन लोगों ने पूरा लाभ उठाया है। गोदान के समय कन्या पक्ष की तरफ वर को गौ के दान की प्रेरणा विशेषतया खेती करने वाले लोगों मे डलवाई है। —[सम्पादक

विश्व-जयी होना है!

—श्री सूर्य कुमार पाण्डेय (लखनऊ)

अपने कर्म-धर्म से आर्यों, तुमको विश्व जयी होना है।
त्यागो अब आलस्य सकल तुम, अब इस भाँति नहीं सोना है ॥१॥
तुम क्यों पीछे? किससे कम हो? किन बातों में? हमें बताओ।
उठो चलो सन्मार्ग दिखाने, फिर से जगाचार्य कहलाओ ॥२॥
वेद व्याप्त कर इस जगती में, प्राप्त करो अपने गौरव को।
सत्य-ज्योति ले चलो हस्त में, आर्य बनाओ जग-मानव को ॥३॥
रहो सदा ही तुम उपकारी, अपकारी का नाम मिटाओ।
मनु के उपदेशों पर चलकर, दयानन्द का सत्य दिखाओ ॥४॥

पुस्तक समालोचना—

१—नाम पुस्तक—कायाकल्प

२—लेखक स्वर्गीय स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती (पूर्व प० बुद्धदेव विद्यालङ्कार-विद्यामार्तण्ड)

३—सम्पादन—'राजधर्म' पाक्षिक पत्र का अनमोल विशेषाङ्क (१३+१४) द्वारा प्रो० श्यामराव एम० ए, एम० काम।

४—मिलने का पता—आर्यसमाज मन्दिर-मार्ग, नई दिल्ली—१

५—पृष्ठ संख्या १३४ सचित्र, मूल्य १-०० सौ प्रतिया ६० रु०।

समालोचना—पं० बुद्धदेव जी द्वारा लिखित इस पुस्तक को ही "राज धर्म" के विशेषाङ्क रूप में प्रकाशित किया गया है। प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार (स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती) को विद्या सन्देह से परे की बात है। आर्यसमाज के पूजनीय विद्वानों मे आप लेखक वक्ता और शास्त्रार्थ महारथी के रूप में सर्वमान्य माने जाते थे। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। न केवल आर्यसमाजी अथवा अन्य सम्प्रदायी अपितु सभी राजनीतिक दलों के लोगों विशेषतया विद्वान नेताओं को पढ़ने योग्य है। इसके मनन से धर्म, समाज और राष्ट्र के कल्याण मार्ग पर सरलता से आगे बढ़ा जा सकता है। छपाई, कागज सुन्दर है। मूल्य ठीक से भी कुछ कम ही है। प्रत्येक विचारशील मनुष्य को इस पुस्तक को पढ़ना और पुस्तकालयों में सुरक्षित रखना चाहिये।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

प्रभात-आश्रम टीकरी (मेरठ)

आश्रम का उत्सव २६-२७ जून १९६९ ई० को होगा। सामवेद पारायण यज्ञ भी २४ मई से आरम्भ होगा और २७ मई को पूर्णाहुति होगी, इसी समय २७ मई ६९ को वेदानुसन्धान विभाग "अग्नि लोक" का उद्घाटन गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के उपकुलपति आचार्य पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति के द्वारा सम्पन्न होगा। इस शुभ अवसर पर आर्यसमाजके अनेक सन्यासी, महात्मा, "नैष्ठिक विद्वान् पण्डित पधार रहे हैं। आर्य बन्धुओं कोउत्सव में पधारकर धर्मोपदेशों से पूरा लाभ उठाना चाहिये।

—स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, अध्यक्ष

आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के नव-निर्वाचित पदाधिकारी एवं अंतरंग सदस्य १९६९

प्रधान १—श्री शिवकुमार जी शास्त्री, ससद-सदस्य, नई देहली। उपप्रधान २—श्री प्रि० महेन्द्रप्रताप शास्त्री एम० ए० हाथरस ३—श्रीमती देवी शास्त्री वेदाचार्य, बरेली ४—श्री विश्वबन्धु जी शास्त्री, भूड़ बरेली, ५—श्री ईश्वरदयालु जी आर्य, बिजनौर, मन्त्री ६—श्री प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० ए० हाथरस, उपमन्त्री ७—श्री धर्मेन्द्रसिंह जी एम० ए० देहरादून, ८—श्री उमेशचन्द्र जी स्नातक एम० ए० हल्दवानी, ९—श्री आशाराम जी पांडे, मिरजापुर, १०—श्री सुरेशचन्द्र जी आर्य बी० ए० एल० एल० बी० कोसीकलां कोषाध्यक्ष ११—श्री मदनलाल आर्य, लखनऊ तथा १२—श्री देवेन्द्र जी आर्य, सरायतरीन, मुरादाबाद स० कोषाध्यक्ष पुस्तकाध्यक्ष १३—श्री नरदेव जी स्नातक संसद-सदस्य गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन (मथुरा) तथा १४—श्री विशुद्धानन्द जी शास्त्री एम० ए० बदायूं स० पुस्तकाध्यक्ष।

इनके अतिरिक्त ४७ अंतरंग सदस्य चुने गये।

—उमेशचन्द्र उपमन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान का वार्षिक चुनाव

आबूरोड में दि० १८ व १९ मई को हुआ, जिसमें श्री भगवानस्वरूप जी न्यायभूषण प्रधान, श्री डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० मंत्री, श्री जतनचन्द जी एडवोकेट कोषाध्यक्ष चुने गये।

बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी !

श्री भैरवदत्त जी शुक्ल अध्यक्ष वैदिक परिषद् लगुचा (जि० छोरी)

तुमने जीवन के सागर की, थाह लगाना सीखा है !
अरमामों को फूंक-फांक कर, चाह मिटाना सीखा है,
तज कर भाव पराया-अपना, ऐक्य बढाना सीखा है,
है कुटुम्ब की वसुधा सारी, राग सुनाना सीखा है;
सीमित जग में रहने-घुटने को करते क्यो नादानी ?
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

इतना आगे बढ़े कि दुनिया-साथ तुम्हारा कर न सकी ;
अपयश की मसि, विकृत पूत-मुख-वर्ण तुम्हारा कर न सकी,
हुए वार पर वार सहस्रों, जीवन-धारा मर न सकी,
तुम को क्षण भर का भी बन्दी, युग की कारा कर न सकी,
बन्दी तुम्हें बनाने में क्यों-युग-कारा को आसानी ?
बढ़ो सभी को राहादिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

'भोग-प्राप्ति ही चरम लक्ष्य है, सत्य बताओ कब माना ?
'प्राणि-वर्ग का पीड़न करना' अपथ तुम्हे है, कब जाना ?
महिला, सुरभि, राष्ट्र-रक्षण का, किस युग मे त्यागा बाना ?
कब भूले अरियों से लड़कर, विजय-पताका फहराना ?
देख रहे क्यो आज बतादो, धूर्त्त जनों की मनमानी ?
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

सतत साधना करके तुमने, विश्व-त्राण करना जाना,
निष्प्राणो मे निज सबल से, परम प्राण भरना जाना;
अधिकारों को डाट-डपट कर, हीन-मान करना जाना;
कर्त्तव्यों पर जीवन भर ही, सही मान, मरना जाना;
सबल 'पदों' की तुमने सत्ता-कभी न सीखो हथियाना;
बढो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

सौंप अग्नि मे माँ-बहनो को, शीष चढ़ा तलवारो पर;
बाणों की अनियों से छिद कर, पहुँच स्वर्ग के द्वारो पर;
घास-पात की रोटी खा कर, ध्यान न द शिशु-प्यारो पर;
कभी पताका पतित न देखी, हारे झेली हारो पर;
शोणित नीर समान बहा कर, रखा देश का खर पानी ?
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

'परदारेषु मातृवत्' भूले, 'परधन लोष्ठ समान' कहाँ ?
'अपने जैसा सभी प्राणियों को मानो' यह ज्ञान कहाँ ?
मातृभूमि के कण-कण के प्रति वह सच्चा सम्मान कहाँ ?
महाकाल के सकेतों पर थिर का भैरव-गान कहाँ ?
सही कहो, पाताल गमन की तुमने क्यों मन में ठानी ?
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

महिलाओं के चित्र छाप कर, भद्दे-भद्दे भड़कीले;
बेंच-बेंच मर्यादा अपनी, नही नयन करते गीले ?
अनाथालयों में क्या लखते, नहीं वासना के टीले ?
श्रवण करोगे महिलाश्रम के, कब तक गाने दर्दीले ?
द्रुपदाओं की लाज लूटते, गुप्त दुशासन अभिमानी !
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

मनु, वशिष्ठ की विधियाँ तज कर, अपना पन खाये जाते;
एकांगी उद्गार 'मार्क्स' के सब कुछ बतलाये जाते;
नंगे-भोंडे चित्रपटों से, अन्तर बहलाये जाते;
'फायड' के स्वर सांख्यगान से भारत में गाये जाते;
मुख से भी कुछ बोल न पाते, क्या सचमुच मति बौरानी ?
बढ़ो सभी को राह दिखाओ, परम शक्ति के वरदानी ॥

आर्य संन्यासी मण्डल की बैठक

रविवार २२ जून ६९ को मध्याह्न पूर्व ११ बजे आर्यसमाज केसरगंज अजमेर में होगी, जिस में गो-रक्षा, अस्पृश्यता और वेदप्रचार आदि सामयिक समस्याओं पर सुचारू रूप से विचार होगा। इस मे अनेक सन्यासी महानुभाव भाग लेंगे। —कन्हैयालाल आर्य, अजमेर

आर्य साधु वैदिक साधन आश्रम लाड़वा

जि० करनाल (हरयाणा) के कस्बे लाडवा मे यह आश्रम श्री स्वामी अभयानन्द जी सरस्वती द्वारा संचालित है। यहाँ आर्ष प्रणाली से शिक्षा चालू करने के लिये एक समिति बना दी गई है, जिस के ७ सदस्य हैं। यहाँ सरकारी परीक्षाएँ भी दिलाई जावेंगी। आश्रम में विद्यार्थियों के रहने का प्रबन्ध होगा। मांस, तथा किसी नशीली चीज का सेवन करने वाला और सिनेमा आदि देखने वाला विद्यार्थी प्रविष्ट न हो सकेगा। विशेष जानकारी के लिये अध्यक्ष से उपर्युक्त पते पर पत्र व्यवहार करें।

—स्वामी अभयानन्द सरस्वती

आर्यसमाज पीपाड़ शहर (राजस्थान)

छूआछूत निवारण दिवस मनाया गया। सभा में घोषणा की गई कि वेदादि सत्य शास्त्रों में जन्म के आधार पर अस्पृश्यता का विधान नही है, अतः आर्य जाति के सब अंगों को परस्पर मिल कर चलना चाहिये।

—मन्त्री प्यारेलाल आर्य

आर्य वर चाहिए

एक उच्च अग्रवाल बंसल गोत्रीय सच्चे कट्टर आर्य परिवार की, १८वर्षीया, मैट्रिक पास सर्वथा योग्य, स्वस्थ सुन्दर कन्या के लिए थोड़े दहेज में संतुष्ट आर्य वर चाहिए। सर्वानुकूलता में जाति बन्धन भी अनावश्यक।

फूलचन्द्र शर्मा 'निडर' प्रधान—आर्यसमाज, भिवानी (हरयाणा)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली १९६९-७० के लिए वार्षिक निर्वाचन की सूची :—प्रधान—श्री सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास (बम्बई)

उपप्रधान—श्री डा० डी० राम जी (पटना) श्री मिहिरचन्द जी धीमान (कलकत्ता), श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. (जालंधर), तथा श्रीकरण जी शारदा एडवोकेट (अजमेर)

मंत्री—श्री लाला रामगोपाल शालवाले संसद सदस्य (दिल्ली)

उपमन्त्री—श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ससद सदस्य श्री शिवचन्द्र जी (दिल्ली), श्री छोटूसिंह जी एडवोकेट (अलवर) तथा श्री आचार्य रामानन्द जी शास्त्री (बिहार) कोषाध्यक्ष—श्री बालमुकन्द जी आहूजा (दिल्ली)

पुस्तकाध्यक्ष—श्री वाचस्पति जी शास्त्री (आगरा)

अन्तरंग सदस्य—श्री दीवान रामशरण दास जी (पंजाब), डा० हरिप्रकाश (पजाब), श्री वासुदेव जी शर्मा (बिहार), श्री गुलजारी लाल आर्य (बम्बई), श्री विशम्भर प्रसाद शर्मा (मध्य-प्रदेश), बाबूलाल जी गुप्त (मध्य भारत), श्री बटूकृष्ण जी वर्म्मन (एडवोकेट), श्रीमती शकुन्तला जी गोयल (उत्तर प्रदेश), श्री आचार्य विशुद्धानन्द जी शास्त्री (उत्तर प्रदेश), श्री बनवारी लाल आर्य, श्री भगवान् स्वरूप जी न्यायभूषण, स्वामी रामेश्वरानन्द जी, सोमनाथ जी मरवाहा एडवोकेट, श्री देवराज जी चड्ढा तथा श्री भगवानदेव जी शर्मा

प्रतिष्ठित सदस्य—१—श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी २—श्री लाला रामगोपाल जी शालवाले ३—श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ४—श्री पं० ओम्प्रकाश जी शास्त्री ५—श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी।

श्री नारायण दास जी कपूर लेखा निरीक्षक नियुक्त हुए।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक ९.६.६९

[विशेष-आर्यमर्यादा में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के दोनो पक्षों के चुनावो की सूचना प्रकाशित कर दी गई है, इस सम्बध में आगे कुछ विवाद ग्रस्त सामग्री प्रकाशित नहीं की जावेगी —सम्पादक]

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदाः

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

विद्वानो के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़कर अनेक विध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। इस हानि ने जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है सब मनुष्यों को दुःख सागर में डुबा दिया है।

सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक २८ — ८ आषाढ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २२ जून १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
„ „ विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथ वायुसवितृगुणा उपदिश्यन्ते ॥

अब अगले मन्त्र में वायु और सविता के गुण प्रकाशित करते हैं।

अबुध्ने राजा वरुणो वनस्योर्ध्वं स्तूपं ददते पूतदक्षः।
नीचीनाः स्थुरुपरि बुध्न एषामस्मे अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥

ऋग्वेद १-२४-७।

पदार्थः—(अबुध्ने) अन्तरिक्षासादृश्ये स्थूलपदार्थे (राजा) यो राजते प्रकाशते (वरुणः) श्रेष्ठः (वनस्य) वननीयस्य संसारस्य (उर्ध्वम्) उपरि (स्तूपम्) किरणसमूहम् (ददते) ददाति (पूतदक्षः) पूत पवित्र दक्षोबल यस्य स. (नीचानाः) अर्वाचीना ऊधस्थाः (स्युः) तिष्ठन्ति (उपरि) अध्वंम् (बुध्नः) बद्धा आपो यस्मिन् (एषाम्) जगत्स्थानाम् पदार्थानाम् (अस्मे) अस्मासु (अन्तः) मध्ये (निहिताः) स्थिताः (केतवः) किरणाः प्रज्ञानानि वा (स्युः) सन्ति।

अन्वयः—हे मनुष्या यूयं यः पूतदक्षो राजा वरुणो जलसमूहस्सविता वा बुध्ने वनस्योर्ध्वं स्तूपं ददते यस्य नीचाना केतव एषामुपरि स्युस्तिष्ठन्ति पदान्तर्निहिता आप स्युस्सन्ति यदन्तःस्थो बुध्नश्च ते केतवोऽस्मेऽस्मास्वन्तर्निहिताश्च भवन्तीति विजानीत ॥

भावार्थः—न चैवाय सूर्य्यो रूपरहितेनान्तरिक्षं प्रकाशयितु शक्नोति तस्माद्यान्यस्योपर्य्यधःस्थानि ज्योतीषि सन्ति तान्येव मेघस्य निमित्तानि ये जलपरमाणवः किरणस्थाः सन्ति यथा नैवतेऽतीन्द्रियत्वाद् दृश्यन्ते एवं वाय्वग्निपृथिव्यादीनामपि सूक्ष्मा अवयवा अन्तरिक्षस्था वर्त्तमाना अपि न दृश्यन्त इति ॥

भाषार्थ—हे मनुष्यो तुम जो (पूतदक्षः) पवित्र बलवाला (राजा) प्रकाशमान (वरुणः) श्रेष्ठ जलसमूह वा सूर्य्यलोक (अबुध्ने) अन्तरिक्ष से पृथक् असादृश्य बड़े आकाश में (वनस्य) जो कि व्यवहारों के सेवने योग्य संसार है जो (ऊर्ध्वम्) उस पर (स्तूपम्) अपनी किरणों को (ददते) छोड़ता है जिसको (नीचानाः) नीचे को गिरते हुए (केतवः) किरणे (एषाम्) इन संसार के पदार्थों (उपरि) पर (स्थुः) ठहरती हैं (अन्तर्हिताः) जो उनके बीच में जल और (बुध्नः) मेघादि पदार्थ (स्युः) हैं और जो (केतवः) किरणें वा प्रज्ञान (अस्मे) हम लोगो में (निहिताः) स्थिर (स्युः) होते हैं उनको यथावत् जानो।

भावार्थ—जिससे यह सूर्य रूप के न होने से अन्तरिक्ष का प्रकाश नहीं कर सकता इससे जो ऊपरली वा निचली किरणें है वे ही मेघ की निमित्त हैं जो उनमे जल के परमाणु रहते तो हैं परन्तु वे अतिसूक्ष्मता के कारण दृष्टिगोचर नहीं होते इसी प्रकार वायु अग्नि और पृथिवी आदि के भी अतिसूक्ष्म अवयव अन्तरिक्ष में रहत तो अवश्य हैं परन्तु वे भी दृष्टिगोचर नहीं होते।

(—[illegible])

ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य आदि ग्रन्थों में

संशोधन के नाम पर हेराफेरी

श्री चन्द्रमोहनजी शास्त्री भलेड़ी (मुजफ्फरनगर)

ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त ३६ के चौथेमन्त्र में "प्रत्नम्" शब्द है। इस का अर्थ ऋषिदयानन्द ने ऐसे किया है – (प्रत्नम्) कारणरूपेणानादिम्।

भाषार्थ में भी ऐसे ही लिखा है (प्रत्नम्) जो कि कारण रूप से अनादि है। अपने अर्थ की पुष्टि के लिये ऋषि ने सस्कृत पदार्थ में ऐसे प्रमाण दिया है—"नश्च पुराणे प्राद्वक्तव्याः। अ० ५.४.३० इति पुराणार्थे प्रशब्दात्त्नप् प्रत्ययः।" अर्थात् उक्त प्रमाण से पुराण-अर्थ में "प्र" शब्द से "त्नप्" प्रत्यय लगा कर 'प्रत्नम्' शब्द बनता है।

महाभाष्य में भी अ० ५.४,३० सूत्र "लोहितान्मणौ" पर 'नश्च पुराणे प्रात्' वार्त्तिक देकर 'नश्च पुराणे प्राद्वक्तव्यः' अर्थ लिखा और उदाहरण में 'प्रत्नम्' शब्द दिया है।

अष्टाध्यायी की काशिका सूत्रवृत्ति में अ० ५.४.२५ सूत्र पर 'नश्च-पुराणे प्रात्' उपर्युक्त वार्त्तिक देकर यह अर्थ लिखा—'पुराणे वर्त्तमानात् प्रशब्दान्नः प्रत्ययो भवति' अर्थ=पुरातन काल में "प्र" शब्द से "न" प्रत्यय होकर 'प्रत्नम्" शब्द सिद्ध होता है।

वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी के तद्धित प्रकरण में भी इसी ५.४.२५ पर यही वार्त्तिक "नश्च पुराणे प्रात्" देकर "प्रत्नम्" शब्द को बनाया है। सिद्धान्त कौमुदी की बालमनोरमा टीका में भी स्पष्ट लिखा है "वार्त्तिकमिदम्" अर्थात् यह वार्त्तिक है।

परोपकारिणी सभा की प्रेरणा पर जिन सज्जन ने ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के इस प्रथम भाग का सशोधन किया है वह भाग तृतीयावृत्ति रूप में प्रकाशित हुआ है। श्री विद्वान् सशोधक ऋषि द्वारा दिये अ० ५.४.३० के प्रमाण 'नश्चप्राद्वक्तव्या" पर नीचे फुटनोट रूप यह टिप्पणी देते हैं—"नैत्यदृश कश्चित् सूत्र कार्त्तिक वा विद्यते" अर्थात् ऐसा कोई सूत्र अथवा वार्तिक नही है। आर्य विद्वानो से निवेदन है कि ऋग्वेद के उपर्युक्त मन्त्र का ऋषिभाष्य संस्कृत पदार्थ में दिया प्रमाण और नीचे फुटनोट रूप दी गई संशोधक की टिप्पणी देखें। हम ने उपर्युक्त प्रमाण की पुष्टि में महाभाष्य, काशिका, सिद्धान्तकौमुदी और उस की बालमनोरमा व्याख्या के उद्धरण दे दिये हैं, जिन से ऋषि द्वारा दिया प्रमाण पुष्ट होता है। इतना होने पर भी श्री संशोधक ने ऐसा लिखने का कैसे साहस किया ? पता नही !

इतना ही नहीं कि ऋषि के उपर्युक्त प्रमाण को मिथ्या बतलाकर श्री संशोधक शान्त हो गये हों। उसी टिप्पणी के दूसरे भाग में लिखते हैं—अतः "अगस्य छन्दसि गलोपश्च" अ० ४.३.२३ अनेक वार्तिकेन "प्रत्न"

शेष पृ० ३ पर

ओङ्कार-जप-विधिः

(३)

(पं० जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—आधुनिक युग में प्राचीनतम "ओङ्कार-जप-विधिः" का पुनरुद्धार महर्षि दयानन्दजी ने ही किया है। वे जैसे पूर्ण विद्वान्, प्रबल वाग्मी, सच्चे समाजसुधारक और अखिल मानवता के शुभ चिन्तक थे, वैसे ही वे एक सुदृढ़ ईश्वर-विश्वासी, उदार-चेता, उदात्तमना, सत्यशील और पूर्ण योगी भी थे। वे सच्चे अर्थों में एक पूर्ण आप्त पुरुष थे। ऐसे आप्त, जिन्होंने सब कुछ प्राप्त कर लिया था, अपने आप को भी, अपने प्रभु को भी। कोई कमी उन्हें न थी। कोई तुच्छ स्वार्थ उनका न था। ओङ्कारोपासना के साधकों के लिये महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों का पठन-पाठन विशेषरूप से हितकर है।

२—महर्षि जी ने जप-विज्ञान के विषय में कोई नई बात तो नहीं बतलाई है, परन्तु प्राचीन विधियों का अनुमोदन उन्होंने इतनी अधिक प्रबलता के साथ किया है कि सभी साम्प्रदायिक उपासनाओं के होते हुए भी वैदिक और सनातन "ओङ्कार-जप-विज्ञान" को ही अब पुनरपि सर्वोपरि स्थान मिल गया है। महर्षि जी के ग्रन्थों के ओङ्कारोपासना प्रतिपादक कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

३—अपने सुप्रसिद्ध और तत्त्वज्ञान प्रसारक उत्तम ग्रन्थ "सत्यार्थ-प्रकाश" के प्रथम समुल्लास के आरम्भ में महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं—

"(ओ३म्) यह ओङ्कार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है। क्योंकि इसमें जो अ, उ, और म् तीन अक्षर मिलकर एक (ओम्) समुदाय हुआ है। इस एक नाम से ईश्वर के बहुत नाम आते हैं। जैसे अकार से विराट्, अग्नि और विश्व आदि, उकार से हिरण्यगर्भ वायु और तैजस आदि, मकार से ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है। इसका ऐसा ही वेदादि सत्य शास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है।"

४—वे फिर लिखते हैं—

"ओ३म्" आदि नाम सार्थक हैं। जैसे—अवतीत्योम्, आकाशमिव व्यपकत्वात् खम्, सर्वेभ्यो बृहत्वात् ब्रह्म।

रक्षा करने से "ओ३म्", आकाशवत् व्यापक होने से "खम्" और सब से बड़ा होने से "ब्रह्म" ईश्वर का नाम है।"

५—वे फिर लिखते हैं—"सब वेदादि शास्त्रों में परमेश्वर का प्रधान और निज नाम (ओ३म्) को कहा है। अन्य सब गौणिक नाम हैं।"

६—वे फिर लिखते हैं—"क्योंकि ओ३म् और अग्न्यादि नामों के मुख्य अर्थ से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है। जैसाकि व्याकरण, निरुक्त, ब्राह्मण, सूत्रादि ऋषि-मुनियों के व्याख्यानों से परमेश्वर का ग्रहण देखने में आता है। वैसा ग्रहण करना सबको योग्य है। परन्तु "ओ३म्" यह तो केवल परमात्मा का ही नाम है और अग्न्यादि नामों से परमेश्वर के ग्रहण में प्रकरण और विशेषण नियमकारक हैं। इससे क्या सिद्ध हुआ कि जहाँ-जहाँ स्तुति, प्रार्थना, उपासना, सर्वज्ञ व्यापक, शुद्ध, सनातन, और सृष्टि-कर्त्ता विशेषण लिखे हैं। वहीं-वहीं इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण होता है।"

७—वे फिर लिखते हैं—"जो वैदिक लोग वेद के आरम्भ में "हरि ओ३म्" लिखते और पढ़ते हैं। यह पौराणिक और तान्त्रिक लोगों की मिथ्या कल्पना से सीखे हैं। वेदादि शास्त्रों में "हरि" शब्द आदि में कहीं नहीं। इसलिये "ओ३म्" वा "अथ" शब्द ही ग्रन्थ के आदि में लिखना चाहिए।"

८—सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास में महर्षिवर लिखते हैं :—"ओ३म्" इस परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्य प्रति जप किया करें। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवें।"

९—संस्कार-विधि नामक अपने ग्रन्थ के जातकर्म-संस्कार प्रकरण में महर्षि जी ने नवजात बालक की जिह्वा पर सोने की शलाका से "ओ३म्" नाम लिखने का विधान किया है। इसका अभिप्राय यही है कि माता-पिता स्वयं भी ओङ्कारोपासक बनें और अपनी सन्तान को भी ओङ्कारोपासक बनावें।

१०—"संस्कार-विधि" वेदारम्भ-प्रकरण में वे लिखते हैं—"(ओ३म्) यह मुख्य परमेश्वर का नाम है, जिस नाम के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं।"

११—संस्कार-विधि के गृहाश्रम-प्रकरण में वे लिखते हैं—"जिस परमात्मा का यह "ओम्" नाम है, उसकी कृपा और अपने धर्मयुक्त पुरुषार्थ से हमारे शरीर, मन, और आत्मा का त्रिविध दुःख जोकि अपने-दूसरे से होता है, नष्ट हो जाते और हम लोग प्रीति से एक दूसरे के साथ वर्त्त के धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि में सफल होके सदैव स्वयं आनन्द में रहकर, सबको आनन्द में रखें।"

१२—संस्कार-विधि के संन्यास-प्रकरण में वे संस्कार प्रकरण में लिखते हैं—"जो विविदिषा अर्थात् जानने की इच्छा करके गौण-संन्यास लेवे, वह भी विद्या का अभ्यास, सत्पुरुषों का संग, योगाभ्यास, और ओङ्कार का जप और उसके अर्थ परमेश्वर का विचार भी किया करे। यही अज्ञानियों का शरण अर्थात् गौण संन्यासियों और यही विद्वान् संन्यासियों का और यही सुख की खोज करने हारे, और यही अनन्त (अनन्त इतना ही है कि मुक्तिसुख के समय में अन्त अर्थात् जिसका नाश न होवे) सुख की इच्छा करने हारे मनुष्यों का आश्रय है।"

१३—महर्षि दयानन्द जी ने प्रसंगानुसार ओङ्कार-जप का विधान अपने ग्रन्थों में किया ही है; परन्तु उनका उपासना-कर्मविधायक मुख्य ग्रन्थ तो पंचमहायज्ञ-विधिः और उसका भी सन्ध्या-विधि प्रकरण ही है। जिसको मैंने अपनी अभीष्ट "ओङ्कार-जप-विधिः" के रूप में देखा है। "ओ३म्" नाम का जप करते समय उपासकों को "ओ३म्" नाम की जो भावना अथवा विभावना करनी चाहिये, उसका उल्लेख महर्षि जी ने "पंचमहायज्ञ-विधिः" में आगे लिखे अनुसार किया है।

१४—लिखते हैं—"अ, उ, म्" एतत्त्रयं मिलित्वा "ओ३म्" इत्यक्षरं भवति। यथाह मनुः—

अकारं चाप्युकारं च, मकारं च प्रजापतिः।
वेदत्रयान्निरदुहद्, भूर्भुवस्वरीति च॥ मनु० २। श्लोक ७६

१५—आगे लिखते हैं—"एतच्च सर्वोत्तम प्रसिद्धतम परब्रह्मणो नामास्ति। एतेनैकेनैव नाम्ना परमेश्वरस्यानेकानि नामान्यागच्छन्तीति वेद्यम्। तद्यथा—

अकारेण—विराडग्निविश्वादीनि—(विराट्) विविधं चराचरं जगद् राजयते प्रकाशयते स विराट् सर्वात्मेश्वरः। (अग्निः) अच्यते, प्राप्यते, सत्क्रियते वा वेदादिभिः शास्त्रैर्विद्वद्भिश्चेत्यग्निः परमेश्वरः। (विश्वः) विष्टानि सर्वाण्याकाशादीनि भूतानि यस्मिन् स विश्वः। यद्वा विष्टोऽस्ति प्रकृत्यादिषु यः स विश्वः। एतदाद्यर्था अकारेणविज्ञेयाः।"

१६—इसका महर्षि जी द्वारा कृत अर्थ इस प्रकार है—"जो आकार, उकार और मकार के योग से (ओ३म्) यह अक्षर सिद्ध है, सो परमेश्वर के सब नामों में उत्तम नाम है, जिसमें सब नामों के अर्थ आ जाते हैं। जैसे पिता पुत्र का प्रेम सम्बन्ध है। वैसे ही ओङ्कार के साथ परमात्मा का सम्बन्ध है। इस एक नाम से ईश्वर के सब नामों का बोध होता है। जैसे अकार से (विराट्) जो विविध जगत् का प्रकाश करने वाला है। (अग्निः) जो ज्ञानस्वरूप और सर्वत्र प्राप्त हो रहा है। (विश्वः) जिसमें सब जगत् प्रवेश कर रहा है और जो सर्वत्र प्रविष्ट है। इत्यादि नामार्थ अकार से जानना चाहिए।"

१७—वे आगे लिखते हैं—"उकारेण—हिरण्यगर्भवायुतेजसादीनि। तद्यथा—(हिरण्यगर्भः) हिरण्यानि सूर्य्यादीनि तेजांसि गर्भे यस्य, तथा सूर्य्यादीनां तेजसां यो गर्भोऽधिष्ठानं स हिरण्यगर्भः। अत्र प्रमाणम्—ज्योतिर्वै हिरण्यं ज्योतिरेषोऽमृतं हिरण्यम्। श० कां० ६। अ० ७। ब्रा० १। कं० २॥

१८—इसका महर्षि जी कृत अर्थ—"उपकार से (हिरण्यगर्भः) जिस के गर्भ में प्रकाश करने वाले सूर्य आदि लोक हैं, और प्रकाश करने हारे

शेष पृ० १० पर

सम्पादकीय

संस्कृति और सभ्यता

कुछ शब्दों का व्यवहार इस प्रकार होने लग जाता है, जिस से उस का अर्थ ठीक रूप से प्रचलित नहीं हो सकता। उन में एक शब्द संस्कृति है। संस्कृति और संस्कार पर्यायवाची शब्द हैं, केवल व्याकरण द्वारा इन दोनों की सिद्धि भिन्न भिन्न रूप से की जाती है। क्रिया के भाव को 'कृति' अथवा 'कार' कह सकते हैं। जो भाव क्रिया के द्वारा उत्तम रीति से किया जावे- वह संस्कृति कहला सकता है' संस्कृति मनुष्य मात्र की एक ही होती है' इस में देश भेद अथवा सम्प्रदाय भेद नहीं किया जा सकता। जिस भाव के द्वारा आत्मा, मन, इन्द्रियों और शरीर को उत्तम बनाया जा सके, उसको संस्कृति कहते हैं। प्रायः यह देखा और सुना जाता है कि लोग संस्कृति शब्द का प्रयोग राष्ट्र और सम्प्रदाय के साथ करते हैं। जैसे भारतीय संस्कृति, पाश्चात्य संस्कृति, हिन्दू संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति आदि। परन्तु यह विचार शुद्ध नहीं है। क्योंकि जीव अपने स्वरूप और मन आदि साधनों में किसी बाह्य सम्प्रदाय, देश और अन्य साधनों से पृथक् है। संस्कृति का सम्बन्ध जीव के भावों के साथ है, अतः मानवमात्र की संस्कृति एक ही होती है।

यजुर्वेद में कहा भी है कि —

"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा" अर्थात् संस्कृति वही है जो कि समस्त विश्व के मानवों द्वारा एक रूप में ग्रहण करने योग्य है। जो संस्कृति सब से पूर्व आरम्भ में और विस्तृत रूप में सदा स्वीकृति की जाती है। ऐसी संस्कृति वेदोक्त मानव संस्कृति ही है। अतः हमें संस्कृति शब्द का प्रयोग करते यह ध्यान रखना चाहिये कि इस मानव मात्र में व्यापक भाव को संकुचित न करके किसी राष्ट्र और सम्प्रदाय विशेष से न जोड़ें।

सभ्यता का अभिप्राय यह है कि जो सभ्य मनुष्यों द्वारा वर्ते जाने वाले ढंग होते हैं। हमें किस प्रकार एक दूसरे के साथ बर्ताव करना चाहिये, जिस से परस्पर आदर का भाव बना रहे। किस प्रकार का रहन सहन, खान पान और वस्त्र आदि का प्रयोग करना चाहिये। पंचायत आदि समूह में बैठ कर हम इस ढंग से बोलें और बैठें जिससे हमारा अपमान न होवे। अपने को अभिमान में भरकर उच्च आसन के योग्य न समझें। ऐसे स्थान पर बैठें, जिस से दूसरों के कहने पर उठना न पड़े। ऐसी बात प्रत्येक राष्ट्र में अपने अपने ढंग से प्रचलित होती है। जल, वायु और बाह्य परिस्थितियों में भिन्नता होने पर सभ्यता में अन्तर होता है। इंगलैण्ड आदि शीत प्रधान देशों में मोटा वस्त्र प्रयोग में लाया जाना उचित है और वस्त्रों के पहनने का ढंग भी ऐसा रखना पड़ता है, जिस से कार्य करने में असुविधा न होवे, परन्तु भारत में इससे भिन्नता रखनी आवश्यक है यहां सामान्य रूप में हल्के वस्त्रों का प्रयोग करना होता है, धोती कुर्ते आदि पहनने के वस्त्रों का रखना उचित है। जिन को शीघ्र जल आदि से शुद्ध किया जा सके। यदि भारत में रहकर इंगलैण्ड के रंग ढंग को स्वीकार करना है तो यह भारतीय सभ्यता नहीं कहला सकती। दोनों देशों के रहने सहने, खान पान और व्यवहार करने में जल, वायु और (ऋतु परिवर्तन क कारण भेद रखना आवश्यक है। यदि भारतीय जन दूसरे देशों के रंग ढंग का अनुकरण करता है तो उस को सभ्य नहीं कहा जा सकता। देखा जाता है कि युरोपीय रंग ढंग को धारण करके जो लोग गांव में जाते हैं, तो उन का परिहास होता है। चाहे वे स्वयं को सभ्य मानें, परन्तु ग्रामीण जनता की दृष्टि में वे असभ्य समझे जाते हैं। विदेशी वेश के कारण भारत में पढ़े लिखे विदेशी टाइप धारी लोग खड़े खड़े पेशाब करते हैं। यहां तक कि गलियों में भी खड़े होकर पेशाब करते देखे जाते हैं। यह निर्लज्जता है। खड़े खड़े एक ही मेज पर एक ही बर्तन से उठा उठा कर भोजन करते हैं। अपने को सभ्य समझते हैं, परन्तु यह रीति भोजन करने तथा पेशाब करने की मानवता को प्रकट नहीं करती किन्तु किसी दूसरी योनि की तरफ संकेत करती है। आशा है इसी से पर्याप्त बातों पर प्रकाश पड़ जावेगा। ऐसे ढंग सभ्यता के नहीं हैं। सभ्यता से रहन सहन और खान पान रखना अपनी परिस्थितियों के अनुसार उचित है।

संस्कृति मानव मात्र की एक ही हो सकती है, परन्तु सभ्यता में देश भेद से भिन्नता हो सकती है। अतः हमें मानव वैदिक संस्कृति और भारतीय सभ्यता पर चलना ही श्रेयस्कर है। ●

आर्यजगत् में शोक की लहर

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द (महात्मा मुंशीराम) की बड़ी सुपुत्री श्रीमती वेदकुमारी जी का स्वर्गवास बृहस्पतिवार १२ जून १९९९ को ९० वर्ष की आयु में हो गया। धर्म बलिदाता महात्मा मुंशीराम के दोनों पुत्रों और पुत्रियों ने भी अपने पिता के अनुकरणीय आदर्श पर चलते हुए वैदिक धर्म, आर्यसमाज और भारत राष्ट्र के हितार्थ महान् कार्य किया। स्वतन्त्रता युद्ध के लिये बार-बार जेलों के कष्ट सहन किये। श्रीमती वेद-कुमारी जी के अथक कार्यों से स्वतन्त्रता आन्दोलन में काम करने वाले देहली के राष्ट्रनेता और कार्यकर्त्ताओं में कौन ऐसा देश भक्त था और है जो कि श्रीमती वेद कुमारी जी के राष्ट्र कार्यों से अपरिचित था और है। यह देवी अपने पूज्य पिता और अपने दोनों भाईयों श्री पं० हरिश्चन्द्र जी तथा श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति को सहयोग देती हुई राष्ट्र संरक्षकों की अग्रिम पंक्ति में रहती थी। बच्चा-बच्चा आप के सामने नतमस्तक रहता था। इन के देहान्त की कष्टप्रद सूचना को पाकर हमारे मानस चक्षुओं के सामने देहली की पुरानी राष्ट्र घटनाओं की स्मृति प्रत्यक्ष रूप में उद्भूत हो गई। श्रीमती जी के पुत्र और पुत्रियां स्वतन्त्रता संग्राम में जुट कर भाग लेते रहे हैं।

आप के देहान्त से समस्त आर्यजगत् और राष्ट्रिय क्षेत्रों में शोक छा गया।

पंजाब, हिमाचल, चण्डीगढ, हरयाणा, देहली, जम्मू. काश्मीर के समस्त आर्य बन्धुओं तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बद्ध समस्त शिक्षण आदि संस्थानों की ओर से स्वर्गीया देवी जी के पुण्य कार्यों के प्रति हम श्रद्धापूर्वक कृतज्ञता प्रकाशित करते हैं। आर्यमर्यादा के सर्वत्र भारत में फैले ग्राहक एव पाठक महानुभावों की ओर से श्रीमती वेद कुमारी जी के उभय परिवारों (पितृ तथा पति कुल) के समस्त सदस्यों के प्रति शोक समवेदना प्रकट करते हैं। भगवान् से प्रार्थना है कि हमारे राष्ट्र और आर्यसमाज को धार्मिक सामर्थ्य प्रदान करे, जिस से इसी प्रकार की देवियां राष्ट्र में जन्म लेकर अपने पवित्र कार्यों के द्वारा धर्म, समाज और राष्ट्र के उत्थान के द्वारा योग दान देती रहें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० १ का शेष

शब्दः सिद्धयति।" अर्थात् उपर्युक्त अ० ४.३.२३ के इस वार्तिक से 'प्रत्न' शब्द बनता है। इस दूसरे भाग के लिखने का अभिप्राय स्पष्ट यह प्रतीत होता है कि ऋषि का प्रमाण अशुद्ध है।

वैयाकरण महानुभाव जानते हैं कि एक शब्द की सिद्धि भिन्न-भिन्न प्रकार से हो जाती है। श्री सशोधक ने इसी रूप में 'प्रत्न' शब्द की सिद्धि का दूसरा प्रकार दिया है। हम स्वीकार करते हैं कि इस प्रमाण से भी "प्रत्न" शब्द बन सकता है, इस मे विवाद नहीं। परन्तु श्री संशोधक का यह लिखना कि "ऋषि के प्रमाण से 'प्रत्न' शब्द नहीं बनता, जिस की पुष्टि अन्य प्रमाणों से हम ऊपर लेख में दिखा चुके हैं" अनुचित और ऋषि विरोध है।

आशा है परोपकारिणी सभा ऋषि के ग्रन्थों के संशोधन पर किसी विद्वान् की जांच करके नियुक्ति किया करेगी। मूल लेखक के शब्दों में परिवर्तन न किया जाय। हमारा भाव यह है कि ऋषि की कृति को पूरी रक्षा की जावे टिप्पणी मे नीचे सशोधक लिख सकते हैं। ●

"धा पद" का चमत्कार

श्री स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, अध्यक्ष वर्णाश्रम संघ, टीकरी (मेरठ)

हम वैदिक लोग वेद को अनादि निधना प्रभु की वाणी मानते हैं, हम अर्वाचीन लोग ही ऐसा मानते हैं सो नहीं, किन्तु महर्षि व्यास तो स्पष्ट घोषणा करते हैं—

अनादि निधना नित्या वाग् उत्सृष्टा स्वंभुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः॥

यही बात सायण ने भी कही है। "यस्य निःश्वसितं वेदाः" इसका कारण क्या? महाराज मनु ने कहा 'सर्वज्ञानमयो हि सः' अर्थात् वेद समस्त ज्ञान के भण्डार हैं, उस ज्ञान राशि को समझने के लिये व्याकरण का अवश्य अध्ययन करना चाहिए, इसी बात को ध्यान में रखकर भाष्यकार पतञ्जलि ने व्याकरण पढने के १२ प्रयोजन बतलाते हुए रक्षा का प्रथम परिगणन किया और उसकी व्याख्या में लिखा "रक्षार्थं वेदानामध्येयं व्याकरणम्" वेदों की रक्षा के लिए व्याकरण को पढ़ना चाहिए। यह तो हो सकता है कि व्याकरण पढ लेने पर भी वेद समझ में नहीं आए किन्तु यह कैसे हो सकता है कि व्याकरण ज्ञान शून्य वेदार्थ समझ ले? क्योंकि कहा है—"मुखं व्याकरणं प्रोक्तम्" उस वेदरूपी पुरुष का मुख व्याकरण है। व्याकरण ज्ञान के लिए पाणिनि, पतञ्जलि, कात्यायन का द्वार खटखटाना होगा, उनकी चरण शरण में कुछ दिन बैठना होगा तब कुछ वेदार्थ समझ में आयेगा। किन्तु पाश्चात्य विद्वान् बेचारे तो व्याकरण पढ़ने का कष्ट ही नहीं उठाते और झट वेद भाष्य करने बैठ जाते हैं। अब वह वेदार्थ कैसा होगा इसके लिये अथर्व वेद का मन्त्र उदाहरण रूप में रखता हूं। आप उसे देख झट समझ सकेंगे कि शब्दशास्त्र-ज्ञानशून्य पाश्चात्य विद्वानों ने कैसी वेद की मिट्टी खराब की।

उत् यत् पतयो दश स्त्रियाः पूर्वे अब्राह्मणाः।
ब्रह्मा चेद् हस्तमग्रहीत स एव पतिरेकधा॥
ब्राह्मणः एव पतिर्न राजन्यो न वैश्यः।
तत् सूर्यः प्रब्रुवन्नेति पञ्चभ्यो मानवेभ्यः॥ अ०५-१७-८ और ९

ग्रिफिथ ने इसका अनुवाद निम्न प्रकार किया है—

"Even if ten former husbands-none a Brahman-had espoused a dame, and then a Brahman took her hand, he is her husband, only he.

Not Vaishya. not Rajanya. no. the Brahman indeed her lord.

This Surya in his course proclaims to the five races of mankind.

अर्थात्—यदि किसी स्त्री के दस पहले पति हों परन्तु उनमें ब्राह्मण कोई नही और एक ब्राह्मण उसका हाथ पकड़ ले तो वहीं और केवल वही उसका पति होगा॥८॥

न वैश्य न क्षत्रिय दोनो में से कोई उसका पति नहीं, सूर्य देवता अपनी यात्रा में प्रतिदिन पाँचों वर्गों को (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इतर जन) यह घोषणा सुनाते हुए आते हैं॥९॥"

यदि इन दोनों मन्त्रों का ग्रिफिथ कृत अनुवाद दक्षिण में जहाँ इन पाश्चात्य वेद भाष्यकारों की कृपा से आर्य और अनार्य के नाम पर रात-दिन कलह मचा हुआ है वहाँ पढाया जावे तो अग्नि में घृत का काम करेगा या नही?

अब आप देखिये इन दोनो मन्त्रों का व्याकरण के अनुसार वास्तविक अर्थ क्या होता है?

यदि कोई व्यक्ति यह कहता है कि मैं दस नही केवल एक प्रकार का भोजन बनाना जानता हूं तो दस का अर्थ विरोधिता के नियमानुसार दस प्रकार मानना होगा अर्थात् मै दस प्रकार का नहीं केवल एक प्रकार का भोजन बनाना जानता हूं। यहाँ एकधा का अर्थ एक प्रकार कैसे हुआ, सो इसके लिये पाणिनि का सूत्र प्रमाण रूप में लीजिए। "संख्याया विधार्थे धा" अर्थात् संख्यावाची शब्दों से प्रकारार्थ में 'धा' प्रत्यय होता है। 'विधा' का शब्दार्थ प्रकार कैसे हुआ सो इसके लिए महावैयाकरण नागेश भट्ट तथा महाभाष्यकार पतञ्जलि अपने भाष्य में लिखते हैं 'विधा शब्दार्थः प्रकार एव प्रसिद्धः' विधा शब्द का अर्थ प्रकार में ही प्रसिद्ध है। 'यद्येवं क्रिया-प्रकारेऽयं भवति' क्रिया के प्रकार में 'धा' प्रत्यय होता है—इन प्रमाणों से यह सिद्ध हो गया कि प्रकारार्थ में ही 'धा' प्रत्यय संख्यावाची शब्दों से होता है।

अब इस "धा" को सामने रखकर मन्त्र को समझिये।

यदि किसी स्त्री के सामने पति दस प्रकार के रूप धारण करके आवे परन्तु उनमें ब्राह्मण रूप कोई न हो और फिर पति ब्राह्मण रूप धारण करके उसका हाथ पकड़ ले तो उस एक रूप में ही वह उसका पति होगा। अन्य दस रूपों में नही। तात्पर्य यह है कि क्षत्रिय तथा वैश्य भी पत्नी के प्रति अर्थात् दाम्पत्य जीवन में ब्राह्मण ही हैं। क्षत्रिय अथवा वैश्य नहीं। सूर्य देवता प्रतिदिन संसार भरके पांचों वर्गों को यही घोषणा करते आते हैं। सूर्य द्यौ का पति है, अपनी दीप्ति के कारण किसी जबरदस्ती से नहीं।

इसी प्रकार क्षत्रिय धरती पर भुजबल से शासन करता है, वैश्य धनबल से शासन करता है परन्तु ब्राह्मण के पास तो चरित्र बल है। वेद का पवित्र उपदेश यह है कि जिस प्रकार ब्राह्मण अपने चरित्र बल से दूसरों पर शासन करता है उसी प्रकार सभी क्षत्रिय वैश्य शूद्र चरित्रबल से ही पत्नी पर शासन करें, भुजबल, धन-बल, सेवा-बल, से नहीं, यदि भुजबल से जीतेंगे तो वह दासी होगी, धर्मपत्नी नहीं, धनबल से शासन करेंगे तो वेश्या होगी पत्नी नही इसलिये चरित्रबल से ही उसे इतना प्रभावित करो कि वह तुम्हारी अनुव्रता हो जाय सच्चे रूप में धर्मपत्नी हो जाय।

दाम्पत्य जीवन को सुखमय बनाने के लिए कितना पवित्रतम उपदेश वेद ने दिया किन्तु इन पाश्चात्य वेद-शत्रुओं ने उसकी दुर्दशा कर डाली है। दुःख तो यह है कि आज भी भारतीय विद्वान् इन पाश्चात्य विद्वानों का ही अन्धानुकरण करते जा रहे हैं। प्रभु कृपा से महर्षि दयानन्द ने हमारे हाथों में वेदार्थ की कुञ्जी पकड़ा दी, अतः हम इन वेद-विरोधियों की प्रत्येक धूर्तता और मूर्खता का भण्डा फोड़ करेंगे।

श्रीमान् ग्रिफिथ जी महाराज! 'एकधा' और है 'एक' और है 'एकधा' का अनुवाद होना चाहिये In that way, and in that way alone he is her husband, परन्तु आपने अनुवाद किया। He is her husband. only he ग्रिफिथ जो 'एक' विशेषण है (Adjective) है। एकधा Adveb क्रियाविशेषण।

क्रियाविशेषण अर्थ को सामने रख करके ही वैदिक वाङ्मय के प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी समर्पणानन्द जी ने यह उत्तम अर्थ किया है। मैंने जो अर्थ किया है यह उन्हीं का ज्ञान प्रसाद है। प्रभु सच्चे रूप में हमें गुरुतर्पण में समर्थ बनाये तथा इन पाश्चात्य वेद-शत्रुओं के अभेद्य दुर्ग को भेदन करने में समर्थ बनायें। इति॥

आगे बढ़ना ही है सीखा

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय ५३ छोटा चान्द गंज लखनऊ-७)

पीछे हटना कभी न जाना, आगे बढ़ना ही है सीखा।
तोड़ आपदाओं के बन्धन, होता यह प्रतिदिन का विघटन।
प्रकृति समर्थ सभी कर सकती, कर पर्वत को सागर सकती।
यह प्रतिदिन है सृष्टि बदलती, मानवता बस है कर मलती।
पर इनको मैंने न माना, आगे बढ़ना ही है सीखा॥
प्रतिदिन बाधाएँ आती हैं, औ हृत्तल पर छा जाती हैं।
मैं उनसे लड़ता रहता हूँ, औ उनको सहता रहता हूँ।
झेल यातनाओं को पथ पर, अपने मग में रहता तत्पर।
चाहूँ सतत लक्ष्य ही पाना, आगे बढ़ना ही है सीखा॥

श्री स्वामी शंकराचार्य एक महान् तार्किक

शारीरक भाष्य

शास्त्र की महिमा कम करने में संलग्न

(वैद्य श्री० गुरुदत्त जी एम० एस० सी० पंजाबी बाग, नई दिल्ली)



[विद्वद्वर माननीय लेखक महोदय के प्रमाण और तर्क से परिपुष्ट सुसगत विचार इस विषय मे आर्यमर्यादा के स्वाध्याय प्रेमी ग्राहक और पाठक महाशय पढ़ते और मनन करते आरहे हैं। स्वामी शङ्कराचार्य की सुललित सस्कृत और तर्क? का प्रभाव सर्वत्र माना जाता है। वर्तमान लेखों में उन के हेतुओ और तर्कों की हेत्वाभास और तर्काभास रूप में दिखलाने में लेखक के दार्शनिक पाडित्य को आप देखें।] —सम्पादक

यह हमारा मत है कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती स्वामी शंकराचार्य जी से अधिक तर्क शक्ति के स्वामी थे। यही कारण है कि स्वामी शकराचार्य जी स्थान-स्थान पर ठोकर खा गये थे और स्वामी दयानन्द जी के तर्कों का उत्तर नही है।

श्री स्वामी शकराचार्य जी तो दर्शन शास्त्रों के प्रयोजन को भी भली-भाँति समझे प्रतीत नही होते। दर्शन लिखने का प्रयोजन सत्य का दर्शन कराना है। वैदिक दर्शन शास्त्र यह स्वीकार करते हैं कि वेद सत्य विद्याओं के ग्रन्थ हैं। अत: वैदिक मान्यताओं को ये दर्शन शास्त्र सत्य सिद्ध करने के लिये वेदों के प्रमाणों से अतिरिक्त साधनों का प्रयोग करते हैं। अभिप्राय यह है कि अनुमान प्रमाण से वैदिक मान्यताओं को सत्य सिद्ध करत हैं।

ऐसा करने का प्रयोजन यह है कि वे लोग जो परमात्मा के अस्तित्व और उसके ज्ञान को वेदों में स्वीकार नही करते, उन्हे भी परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार कराया जाये। यह युक्ति से ही हो सकता है, परन्तु जब श्री स्वामीशंकराचार्य जी अनुमान प्रमाण को निम्न कोटि का और त्याज्य घोषित करते हैं तो वे वास्तव में दर्शन शास्त्रो की आवश्यकता और उपादेयता पर ही कुठाराघात करते हैं।

देखिये, स्वामी शङ्कर जी ब्रह्म सूत्र (ब्र०-सू०-१-१-२) के भाष्य में क्या लिखते हैं?

"एतदेवानुमान ससारिव्यतिरिक्तेश्वरास्तित्वादिसाधनं मन्यन्त ईश्वरकारणिनः। नन्विहापि तदेवोपन्यस्त जन्मादिसूत्रे। न, वेदान्तवाक्यकुसुमग्रथनार्थत्वात्सूत्राणाम्। वेदान्तवाक्यानि सूत्रैरुदाहृत्य विचार्यन्ते। वाक्यार्थविचारणाध्यवसाननिर्वृत्ता हि ब्रह्मावगतिः, नानुमानादिप्रमाणान्तरनिवृत्ता॥ (शारीरक भाष्य-१-१-२)

इसका अर्थ है कि इस (जन्माद्यस्य यत:) में अनुमान (प्रमाण) है क्या? संसारी (जीव) से अतिरिक्त ईश्वर को जगत् का कारण मानने वाले इस अनुमान को साधन (प्रमाण) मानते है कि ईश्वर जन्मादि का कारण है। तो यहां इस (अनुमान का) उपन्यास किया गया है क्या? नही। क्योकि सूत्र वेदान्त वाक्य रूपी पुष्पों को गूँथने के लिये हैं। सूत्रों द्वारा वेदान्त वाक्यों का उदाहरण देकर विचार किया जाता है। वाक्यों के अर्थ का विचार कर निश्चित तात्पर्य जानने से ब्रह्म गति प्राप्त होती है। अनुमानादि प्रमाणों से नही।"

जो लोग तो वेदान्त शास्त्रों को स्वत: प्रमाण मानते हैं, उनके लिये तो वेदान्त शास्त्र हैं ही। हमारा अभिप्राय है कि वदादि शास्त्रों में ब्रह्म का निरूपण इतना स्पष्ट किया है कि उन को और स्पष्ट करने के लिये सूत्र ग्रन्थों की आवश्यकता ही नही। उदाहरण के रूप में वेद मन्त्र है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय॥
(यजु—३१-१८)

यह मन्त्र परमात्मा को जानने और उससे मृत्यु को पार करने के विषय में सर्वथा स्पष्ट है, परन्तु जो व्यक्ति वेद को स्वत: प्रमाण नही मानता, उसके समक्ष परमात्मा के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिये अनुमान प्रमाण के अतिरिक्त अन्य कोई साधन ही नही। दर्शन शास्त्र यह ही करते है और जब स्वामी शकराचार्य अनुमान प्रमाण को ही अमान्य करते हैं तो व वास्तव में दर्शन शास्त्र की महत्ता पर ही कुठाराघात करते हैं।

अब तनिक उस सूत्र की ओर ध्यान करें जिसका भाष्य करते हुए स्वामी शङ्कराचार्य जी ने उक्त वाक्य लिखा है, तो प्रकट होगा कि वह सूत्र आद्योपान्त युक्ति हो है। वह शुद्ध और स्पष्ट युक्ति है। सूत्र है:—

'जन्माद्यस्य यत:'

अर्थात्—(जन्मादि) जन्म—उत्पत्ति, पालन और प्रलय (अस्य) इस जगत् की (यत:) जिससे होती है। वह ब्रह्म है। 'अस्य' से अभिप्राय कार्य जगत् का है। कार्य जगत् बना है, चल रहा है और विनष्ट होता है। यह बिना कर्त्ता के हो नही सकता। जगत् में कुछ भी बिना किसी के बनाये बनता नही। बिना किसी के बिगाड़ बिगडता नही। अत: इस काय जगत् के (जन्मादि बनाने, पालन करने और प्रलय करने वाले को ब्रह्म कहते हैं।

यह एक अकाट्य युक्ति (अनुमान प्रमाण) है। स्वामी शकराचार्य जी कह रहे हैं कि यह सूत्र अनुमान प्रमाण के रूप में नहीं है, वरञ्च यह तो वदान्त वाक्य पुष्पों को सूत्र की भाँति गूँथने के लिये है।

यही हम श्री स्वामी शकराचार्य जी की दुर्बलता मानते हैं। वह न तो वेदान्त शास्त्रो को ठीक प्रकार समझ सके हैं और न ही वे ब्रह्मसूत्रों के उद्देश्य को समझ सके हैं।

कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि स्वामी शकराचार्य जी के मतानुयायी उन के भाष्य की छान-बीन करने को उन का अनादर करना मानते हैं।

एक लेखक, जिनका एक लेख 'वैदिक धर्म' नाम की ऐप्रिल-मई की पत्रिका, जो पारडी से प्रकाशित होती है, में प्रकाशित हुआ है। उसमें लिखा है कि श्री स्वामी शंकराचार्य जी की युक्तियों के थोथापन को प्रकट करना स्वामी जी का अनादर है। आप अपने लेख के आरम्भ में ही लिखते हैं।

'पाश्चात्य विद्वान् हक्सले का कथन है, कि अपने पूर्वजों का अनादर पूर्वक उपहास करना या आलोचना करना सरल है, परन्तु उससे कहीं अधिक हितकर होगा, यदि हम इस बात के पता लगाने का प्रयास करें कि वे लोग जो वास्तव में हम महानुभावो से लेशमात्र भी कम विवेक शील नही थे, ऐसे तथ्यों पर किन कारणों से पहुंचे, जो कि हमें आज निरर्थक से प्रतीत होते हैं।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी का अनादर पूर्वक उपहास तो हम नहीं करना चाहते। वास्तव में दर्शन शास्त्रों पर विवेचना करने में आदर-अनादर का प्रश्न ही नही होता। यह तो स्वामी शङ्कराचार्य जी के भक्तों की व्यर्थ की भावुकता है, जिससे उनको ऐसा प्रतीत होता है।

उक्त लेख के लेखक, जो कोई भी हों स्वय इसी लेख में उन को बात की आलोचना कर गये हैं। आप इस लेख में तीन बार लिख गये हैं कि वास्तविक और अवास्तविक शब्द सदिग्ध हैं।

एक बार आपने पत्रिका के पृष्ठ सख्या ३५ प्रथम स्तम्भ की पंक्ति १७-१८ पर लिखा है कि:—

"यह सत्य है कि वेदान्त में प्राकृतिक (Material) और वास्तविक (Real) का अर्थ सदिग्ध है……।"

दूसरी बार इसी लेख में आपने पत्रिका के पृष्ठ सख्या ३६ के प्रथम स्तम्भ की पंक्ति २५ पर लिखा है:—

"पर यहां वास्तविक और अवास्तविक शब्द सदिग्ध हैं।"

तीसरी बार आप पत्रिका के पृष्ठ संख्या ३७ के प्रथम स्तम्भ की पंक्ति ९-१० में लिखते हैं:—

शेष पृ० ६ पर

पृ० ५ का शेष

"पर यहाँ वास्तविक और अवास्तविक का अर्थ कुछ संदिग्ध है।"

हमारा तो यह कहना है कि लेखक स्वय वास्तविकता, अवास्तविकता, व्यवहारिकता, अव्यवहारिकता का अर्थ नही समझे और शंकर जी के वेदान्त की व्यवहारिकता पर लिखने बैठ गये हैं।

आप (पत्रिका पृ० सख्या ३४ द्वितीय स्तम्भ पंक्ति ११-१८ पर) लिखते हैं :—

"पर शंकराचार्य के ब्रह्म सूत्रों पर शारीरिक भाष्य के अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि ये आरोप आधार-हीन हैं। क्योंकि शंकर के सिद्धान्तों का खण्डन करते समय विद्वान्, शकर द्वारा प्रतिपादित तीन सत्ताओं की अवहेलना कर जाते हैं। शकराचाय ने (१) व्यवहारिक सत्ता, (२) परमार्थिक सत्ता और (३) प्रातिभासित सत्ता, इन तीन सत्ताओं के स्तम्भों पर अपने सिद्धान्तों के महल को खड़ा किया है।"

लेखक का इन सत्ताओं का उल्लेख करना ही अपनी अनभिज्ञता प्रकट करना है। हम स्वामी शंकराचार्य जी के सिद्धान्तों को सारहीन मानने वाले इन सत्ताओं की अवहेलना नही करते। हम इन को मानते हैं, परन्तु ये सत्तायें जगत् की नही, वरंच जीवात्मा की हैं। जीवात्मा जब संसार के व्यवहार में रत रहता है तो वह व्यवहारिक सत्ता में कहलाता है, जब जीवात्मा यज्ञरूप जीवन चलाने लगता है तब उसकी परमार्थिक सत्ता होती है और जब वह वास्तविक तत्त्व, परमात्मा, जीवात्मा और मूल प्रकृति तथा कार्य जगत् के रहस्य को जान जाता है तो उसकी प्रातिभासित सत्ता होती है।

परन्तु जीवात्मा इन भिन्न-भिन्न सत्ताओं में रहता हुआ भले ही संसार में किसी प्रकार रहे किन्तु जगत् के उपादान कारण मूल प्रकृति तथा जीवात्मा और परमात्मा में भेद तो मिट नहीं सकता। न ही वह मिट जाता है।

मान लो कि एक मनुष्य दिन के समय आँखें मूदे हुए बैठा हो तो उसको जगत् अन्धकारमय प्रतीत होने लगेगा। दूसरा मनुष्य आँखें खोलकर देखता है तो उसको मकान, पेड़, पर्वत इत्यादि पदार्थ दिखाई देने लगते हैं। एक तीसरा व्यक्ति है। वह दूरबीन लगा लेता है तो उसको दूर के स्थान जो साधारण दृष्टि में नही आते, दिखायी देने लगते हैं। मनुष्य की सामर्थ्य में भेद आने से वह भिन्न-भिन्न प्रकार और विस्तार में देखता है, परन्तु जगत् तो सदैव सर्वत्र वैसा का वैसा ही है।

वैसे तो इस लेख के लखक महोदय भी यह लिखते हैं :—

'क्योंकि यदि किसी मनुष्य की किसी पदार्थ में आसक्ति नहीं हैं, तो उस पदार्थ के विद्यमान रहने से न उसे कोई लाभ है, और अविद्यमान रहने से न उसे कोई हानि ही है, अत. उस पुरुष के लिये उस पदार्थ की विद्यमानता तथा अविद्यमानता एक बराबर है, अतः यहाँ अभाव से तात्पर्य अनासक्ति है।

लेख—पत्रिका पृ०-३६, दूसरा स्तम्भ पंक्ति ४ से ६।

यह ठीक है, परन्तु क्या इससे यह सिद्ध हो गया ?

'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मव नापरः।'

स्वामी शकराचार्य जी ने तो जो कुछ लिखा, वह आलोचनीय है ही, परन्तु स्वामी जी को एक श्रेष्ठ युक्तिकार (Logicion) सिद्ध करने वालों ने और भी अधिक अनर्थ किया है ये महाशय श्री स्वामी शङ्कर के सिद्धान्तों को सत्य सिद्ध करने के लिये साक्षी देत हैं मैक्समूल्लर की और डा० राधा-कृष्णन् की। हम इन विद्वानो का उतना ही मान करते हैं जितना स्वामी शंकराचार्य जी का। यदि यह कहें कि स्वामी जी से कुछ कम हो तो अधिक ठीक होगा।

डा० राधा कृष्णन् का स्वामी शकराचार्य जी के विषय में एक मत हम अपने एक लेख (देखो, आर्यमर्यादा १६ मार्च १९६८) में प्रकाशित करा चुके हैं। वे मत उन्होंने अपने ग्रन्थ "Indian Philosophy Vol-2. P-P-47/, 472." पर प्रकट किये हैं।

स्वामी शंकराचार्य जी तो अनुमान से परमात्मा की सत्ता के सिद्ध करने को वर्जित करते हैं। आप इसी सूत्र के भाष्य में आगे चलकर लिखते हैं।

'सत्सु तु वेदान्तवाक्येषु जगतो जन्मादिकारणवादिषु तदर्थग्रहण-दार्ढ्यायानुमानमपि वेदान्तवाक्याविरोधि प्रमाणं भवन्न निवार्यते,।'

अर्थात्—जगत् के जन्मादि कारण का प्रतिपादन करने वाले वेदान्त वाक्यों के विद्यमान होने पर उनके अर्थ ग्रहण की दृढता के लिये वेदान्त वाक्यों के अनुकूल अनुमान प्रमाण होने पर भी (न निवार्यते) नहीं निवारण किया जाता। परन्तु ये सहायक है प्रमाण है।

इसका अभिप्राय यह है कि पहले वेदान्त वाक्यों को सत्य मान लो, पीछे परमात्मा का अस्तित्व स्वतः सिद्ध हो जायेगा। यह वेदान्त वाक्यों के प्रमाण की सत्यता को सिद्ध नहीं, वरंच असिद्ध करता है।

शङ्कर स्वामी जी युक्ति से इतने घबराते क्यों थे ? और फिर दर्शन शास्त्र जो आद्योपान्त युक्ति (अनुमान प्रमाण) पर ही आधारित हैं, पर लिखने क्यों लगे थे ?

स्वामी शंकराचार्य जी को युक्ति और बुद्धि से इतना भय लगता था कि वे इसे चिमटे से भी छूने को तैयार नही होते थे। आप इसी सूत्र के भाष्य में आगे चल कर लिखते हैं। आपके लिखे का अनुवाद इस प्रकार है।

'धर्म करना मनुष्य के अधीन है। इस कारण लौकिक अथवा वैदिक कर्म करने अथवा न करने में पुरुष समर्थ-स्वतन्त्र है……परन्तु।

न तु वस्त्वेवं नैवमस्ति नास्तीति वा विकल्प्यते। विकल्पनास्तु पुरुष-बुद्ध्यपेक्षाः : न वस्तुयाथात्म्यज्ञानं पुरुषबुद्ध्यपेक्षम्।—

अर्थात्—सिद्ध वस्तु इस प्रकार है अथवा नही है, वैसा विकल्प नहीं किया जा सकता। विकल्प तो पुरुष की बुद्धि के अपेक्षा से होता है। सिद्ध वस्तु का यथार्थ ज्ञान पुरुष बुद्धि की अपेक्षा नहीं करता।

तत्रैवं सति ब्रह्मज्ञानमपि वस्तुतन्त्रमेव, भूतवस्तुविषयत्वात्। ननु भूतवस्तुत्वे ब्रह्मणः प्रमाणान्तरविषयत्वमेवेति वेदान्तवाक्यविचारणानार्थिकैव प्राप्ता।—

इस कारण यदि ब्रह्म ज्ञान में भी, वस्तु, विज्ञान की भान्ति संसार को वस्तुओं के विषय की भान्ति परमात्मा को सिद्ध करने में भी अन्य प्रमाणों को लेंगे तो वेदान्त वाक्य अविचारणीय (व्यर्थ) सिद्ध हो जायेंगे।

आप आगे कहते हैं :—

तस्माज्जन्मादिसूत्र नानुमानोपन्यासार्थम्।—

इस कारण 'जन्मादि सूत्र' अनुमान प्रमाण का प्रदर्शन नहीं करते।

विस्मय इस बात पर है कि स्वामी शंकराचार्य जी के अनुयाईयों ने यह विख्यात कर रखा है कि स्वामी जी ने बौद्ध मत का खण्डन कर इसे भारत भूमि से निःशेष किया था। यह बात ऐतिहासिक तथ्यों के विपरीत है और स्वामी जी को युक्ति करने में शिथिलता से भी सिद्ध नहीं होती।

प्रथम तो स्वामी जी ईसा की सातवीं शताब्दी में उत्पन्न हुए थे। उससे पूर्व बौद्ध मत, शुग और गुप्त काल के वैष्णव मत उत्थान से सर्वथा परास्त और निःशेष हो चुका था। दूसरी बात यह कि क्या स्वामी शंकराचार्य जी बौद्धों को ये कहते होंगे कि ब्रह्म की सत्ता युक्ति से नहीं; केवल वेदादि शास्त्रों से सिद्ध होती है ? क्या इससे बौद्ध मतानुयायी बिना समझे और जाने वेद पढ़ना आरम्भ कर देते होंगे ? यह सब हास्यप्रद है। बौद्ध तो वेदादि शास्त्रो को मानते नही थे।

इतिहास के अध्ययन से हमारा तो यह मत बनता है कि स्वामी शंकराचार्य जी ने बौद्ध मत-खण्डन किया ही नही। उक्त शिथिल युक्ति के प्रकाश में तो यह कहा जा सकता है कि वे बौद्ध मत का खण्डन कर सकते हो नही थे।

हाँ, श्री रामानुजाचार्य के दादा गुरु श्री रामुनाचार्य के कथन के अनुसार यह कह सकते हैं कि आदि शंकराचार्य प्रच्छन्न बौद्ध थे और इनका पूर्ण प्रयास बौद्ध सिद्धान्तों की रक्षा में था।

श्री राधा कृष्णन् जी लिखते हैं कि :—

शेष पृ० ६ पर

विज्ञान की सार्वभौम उपादेयता

(श्री मुकुलचन्द पाण्डेय एम० ए० एम० एस०-सी०
५३, छोटा चान्दगंज, लखनऊ-७

विज्ञान मानवता का अन्यतम हितैषी है। यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि विज्ञान का उपयोग यदि सृजनात्मक कार्यों मे निरन्तर किया जावे तो वह मानवमात्र को चिरतन सुख वैभवो से परिपूर्ण कर सुख चैन से सहअस्तित्व के साथ रहने को शाश्वत प्रेरणा देगा। विज्ञान चरमसीमा तक उन्नति कर सुख के समस्त साधनो को जुटाने मे सहायक सिद्ध हुआ है किन्तु इसकी विध्वसात्मक विनाशकारी वृत्तियो से त्वरित मानव पाशविक कृत्यो का शिकार हो जाता है, पारस्परिक प्रेम सौहार्द, बहु सज्जन हिताय और सुखाय" की भावना का लोप होने लगता है। वैज्ञानिक आयुधो, शस्त्रास्त्रो से सपन्न मानव राजनीति की आड मे सत्ता को हथियाने का कुचक्र रचने लगता है। फलत अशान्तिमय वातावरण उपस्थित होकर उत्पीडन और शोषण का साम्राज्य-सा छा जाता है। गत महायुद्धो मे विज्ञान के गवेषणाओ का दुरुपयोग मानवता के सहार मे करने की दिशा मे तीव्रगति से हुआ। परिणामस्वरूप राकेट, बम, 'वी-टू', चालकहीन विमान तथा परमाणु, हाइड्रोजन, जैविक बमो सदृश दानवीय हथियारो का विपुल निर्माण होने लगा। वैज्ञानिक गति रचनात्मक कार्यों की ओर उन्मुख न होकर सत्ता के लोभ मे विनाश की ओर अग्रसर हो चली, यही कारण है कि अनेक प्रबुद्धविचारक, दूरदर्शी समाजशास्त्री तथा शान्तिप्रिय अग्रदूतो ने विज्ञान की इस विनाशमय लीला से भयाकान्त होकर इस कृतित्व को जघन्य बतलाते हुए इसे दो सौ वर्ष तक के किए भूमिस्थ करने की सलाह दी। उनके मतानुसार यदि यह इसी तरह कार्यरत रहा तो निश्चय यही सभ्यता और सस्कृति अनन्त के गर्भ मे सदा-सदा के लिए विलीन हो जायेगी।

समग्र बातो की विवेचना करने के लिए हमे कुछ गहराई मे बैठकर विचार करना होगा, क्या वर्तमान बेरोजगारी, महगाई, अन्ताराष्ट्रिय कटुता, वैमनस्य तथा वियतनाम, इसरायल आदि के भीषण युद्धो का दायित्व विज्ञान के कन्धो पर डाला जा सकता है? इन प्रश्नो के उत्तर मे विज्ञान के अन्वेषण की पिछली कहानी की पुनरावृत्ति की ओर ध्यानाकर्षण करना अपेक्षित होगा। वस्तुत मानव जिस जिज्ञासा की पूर्ति के लिए सत्यान्वेषण के पथ पर बढता चला गया, विज्ञान की कडियाँ भी त्यो-त्यो एक दूसरे से परस्पर जुडती गई। प्रकृति के रहस्योद्घाटन के सुसघटित तथा क्रमबद्ध प्रयत्नो के आधार शिला पर आधुनिक विज्ञान का निर्माण हुआ है। सहस्रो वर्षों की निरन्तर लग्न व अध्यवसाय के फलस्वरूप विज्ञान-मनीषियो ने प्रकृति की गुह्य शक्ति पर नियत्रण प्राप्त करने का गुर प्राप्त किया। वैज्ञानिको ने मानव के हाथो मे वह अमोघ अस्त्र दे दिया जिसकी सहायता से भूतल को महामारी, भुखमरी, वस्त्राभाव आदि को सदा-सदा के लिए मिटा दे।

अब यह विचारणीय प्रश्न समुपस्थित होता है कि वैज्ञानिक वरदान के परिवेश मे भौतिक व्यथाये क्यो व्याप्त हैं? इन सामाजिक व्याधियो को दूर करने मे आज का विज्ञान असमर्थ क्यो प्रतीत होता है? उत्तर बडा सरल है—विज्ञान को यदि हम अपने हाथ की कठपुतली न बनाकर उसके दुरुपयोग से सदा बच तो इन व्याधियो का सहज निराकरण सभाव्य है। आज का कुण्ठाग्रस्त समाज इसे दूसरे रूप मे प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है, वह विज्ञान की बाह्य-शक्ति को मानवता का भक्षक सिद्ध करता है। ये बाते कहते हुए कदाचित विचारक भूल जाता है कि विज्ञान एक 'मानवकृति' है, यह एक साधनमात्र है—इसका प्रयोग करना पूर्णतया मनुष्य के आधीन है। इसका मानव कल्याण या मानव अहित दोनो मे बृहत्तर रूप मे मनुष्य के हाथ मे है। किसी देश या समाज के लिए यदि विज्ञान के आविष्कार अनिष्टकारी बने तो इसके लिए मनुष्य ही उत्तरदायी होगा, अन्यथा यह उस बालक की शका के तुल्य होगा जो अगुली चाकू से काटकर चाकू को ही दोषी ठहराये।

प्राकृतिक विज्ञान का दुरुपयोग केवल युद्ध क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है, आर्थिक तथा औद्योगिक क्षत्र मे भी विज्ञान के दुरुपयाग द्वारा मानव क्लेश को नि सीम बढाया जा सकता है। जनसाधारण के लिए जीवनोपयोगी अथवा दैनिक उपयोग की वस्तुओ मे निर्माण का जगह थोड से लोगो के लिए विलास की सामग्री तैयार करने मे समय श्रम और धन व्यय करना इसका छोटा-सा प्रमाण है। उद्योगपतियो द्वारा मुनाफ की रकम बढाने के लिए उत्पादन को जान-बूझकर घटाना विज्ञान की शक्ति का दुरुपयोग है। इसी प्रसग मे यह भी कहना अनुचित न हागा कि वस्तुओ की उपादेयता को दृष्टिगत कर कुछ उद्योगपति कतिपय उत्पादनो को सीमित रखने की कुचेष्टा करते हैं।

विज्ञान के दुरुपयोग का ज्वलन्त उदाहरण जमनी के दयनीय पतन से लिया जा सकता है। बीसवी शताब्दी के विज्ञान के विकास मे जर्मन वैज्ञानिक अग्रणी रहे हैं। हाइसेन्वर्ग आइन्सटाइन मैक्सप्लैक, आरोहान, तथा मिस मितनेर सदृश शिखरस्थ वैज्ञानिको ने जर्मनी मे ही अपने महत्त्वपूर्ण अनुसधान पूरे किये थे किन्तु अपनी अभूतपूर्व वैज्ञानिक प्रगति के होने पर भी गत महायुद्ध मे जर्मनी को मुँह की खानी पडी और समस्त जर्मन राष्ट्र दासता की घोर यत्रणा मे कराहता रहा, यह इसलिए हुआ कि जर्मन लोगो ने विज्ञान मे ही अपनी आस्था रखी थी, विज्ञान को ही अपना सर्वस्व मान लिया था। विज्ञान को कोसने वाले प्राय जर्मनी के विनाश का यही कारण बतलाते हैं परन्तु यह तथ्य से परे हैं। नाजीवाद के उत्थान के आरम्भ मे ही उसकी काली छाया जर्मन विज्ञान पर पडी। जातिगत विद्वेष सदृश अवैज्ञानिक धारणाए विज्ञान के क्षत्र पर भी वृथा आरोपित की गयी फलस्वरूप फ्रायड, आइन्सटाइन तथा मिस मितनेर आदि को जर्मनी से पलायन करना पडा और जर्मन विज्ञान दूषित वातावरण मे पड गया। इसका दुरुपयोग 'कासेंट्रेशन कैम्प' मे यातना के नवीन तथा घृणित तरीको के खोजने मे तथा वी टू' और चालकहीन के निमाण मे किया जाने लगा। सर्वाधिक 'दुर्भाग्य की बात यह थी कि जमन विज्ञान ईमानदारी और सत्य के मार्ग से डिग गया। नाजी विज्ञान यह भूल गया कि विज्ञान का यह परम कर्त्तव्य है कि वह सत्य को ग्रहण करे—चाहे वह कितना ही अप्रिय क्यो न हो। नाजीवाद के इस विकृत दृष्टिकोण ने ही जर्मन विज्ञान को पराभव के गर्त मे डाल दिया। जातिगत पक्षपात के सकुचित घेरे के भीतर विज्ञान का दम घुट जाता है—उन्मुक्त तथा स्वच्छन्द वातावरण मे ही यह पनप सकता है।

नाजीवाद की घातक दुर्नीति से जमन विज्ञान को अपारक्षति किस प्रकार हुई इसका अनुमान केवल इस बात से लगाया जा सकता है कि भौतिक तथा रसायन विज्ञान मे १९१८-३१ की अवधि मे जर्मनी मे १५ नोबेल पुरस्कार आये जबकि उसी अवधि मे इङ्गलैंड मे ६ तथा अमरोका मे ३ पुरस्कार आये। नाजी विज्ञान के ह्रास का एक और उदाहरण द्रष्टव्य है—१९३९ मे बर्लिन के कैसर विल्हय सस्थान मे ही आटोहान ने सर्वप्रथम युरेनियम परमाणु के विघटन का रहस्योद्घाटन किया था किन्तु जर्मन वैज्ञानिक परमाणु बम का निर्माण न कर सके जबकि आटोहान के ही प्रयोग से लाभ उठाकर अमरीका और इङ्गलैंड के वैज्ञानिको ने अपने सम्मिलित प्रयत्न से परमाणु बम के निर्माण मे सफलता प्राप्त कर ली। अतएव जर्मनी का पतन इसलिए नही हुआ कि उसने विज्ञान मे आस्था रखी वरन इसलिए कि विज्ञान के सत्य के पथ से वह विचलित हो गया था।

परमाणु मे निहित अपार शक्ति का रहस्योदघाटन करके वैज्ञानिको ने आज के मानव का बल नि सीम बढा दिया है। साथ ही उसका अपना दायित्व भी गुरुतर हो गया है। कुछ समय पूव तक वैज्ञानिक तपस्वी की भाँति अपनी प्रयोगशाला मे बन्द रहकर अनुसधानो मे तल्लीन रहना ही अपना परम कर्त्तव्य समझता था। उसका आदर्श 'विज्ञान विज्ञान के किए' मात्र ही था। अपने अनुसधान फल को जनता के हाथो सौपकर अपने

शेष पृ० ८ पर

"अर्चिः" अस्त्रों से ही सुरक्षित होंगे

श्री द्वारकानाथ जी, आर्यसमाज लुध्याना रोड, फिरोजपुर छावनी

अभयं मित्रावरुणाविहास्तु नोर्चिषात्रिणो नुदतं प्रतीचः।
मा ज्ञातारं मा प्रतिष्ठां विदंत मिथो विघ्नाना उपयन्तु मृत्युम्॥
—अथर्व काण्ड ६ सूत्र ३२ मं. ३॥

दुष्टों का विनाश कैसे हो, प्रभु इस भेदनीति का उपदेश अर्थववेद के अन्दर कर रहे हैं। कि हे! (मित्रावरुणौ) मित्र, वरुण, राजन् अथवा सेनापते (इह) इस राष्ट्र में (अभयम् अस्तु) हम भयरहित हों (नः अत्रिणः) हम इन दुष्ट पुरुषों को, जो हमें खा जाना चाहते हैं (अर्चिषा) अपने तेजस्वी, चमकते हुये अस्त्रों से (प्रतीचः) पीछे (नुदतम्) धकेल दो, उलटे पांव लौटा दो, और (मा ज्ञातारं विदन्त) मत समझदार नेता उन्हें प्राप्त हों, अपितु अज्ञानता में मूर्खता में हो पड़े रहें (मा प्रतिष्ठाम्) मत अपनी दृढ़-स्थिति, कीर्ति और यश को प्राप्त होवें (मिथः) आपस में हो (वि-घ्नानाः) विरोध में रहें। इस तरह (मृत्युम् उप यन्तु) स्वय हो मृत्यु का ग्रास बन जायें। परस्पर लड़ते हुये अपने नाश का कारण स्वय ही बन जायें।

व्याख्याः—राष्ट्र भयरहित हो यदि कोई दुष्ट हमें खा जाना चाहता है, अर्थात् हमारा नाश करना चाहता है तो प्रभु को मित्रा वरुणा कहकर प्रार्थना की गई है कि हे! राजन्, मित्र, वरुण, अथवा सेनापते उस दुष्ट को, तू अपने चमकते हुये तेज शस्त्रों के बल से पीछे धकेल दे। जिधर से शत्रु चलकर आया हो, उलटे पांव लौटा कर राष्ट्र को भयरहित करदे। तो क्या हम ऐसा करने में सशक्त हैं? हमारे पास ऐसे चमचमाते अस्त्र हैं जिनका सामना दुष्ट पुरुष न कर सकें? यदि हम इस स्थिति में नहीं हैं, तो हमें भी अपनी स्थिति दृढ़ बनानी चाहिये! भले ही, हमें अपनी निर्धारित की हुई नीतियों का परिवर्तन करना पड़े। राष्ट्रहित में भले ही, भेदनीति अपना कर उसीका आश्रय लेना पड़े, परन्तु हमें अपनी कीर्ति, और यश वा अपनी शक्ति द्वारा सुरक्षित साधन अपनाने ही पड़ेंगे। कहने मात्र हम परमाणुशस्त्र बनाकर तैयार करने की नीति को न अपनायें, परन्तु इस की उपेक्षा भी तो हमारे सर्वनाश का कारण बन सकती है। इसे भी तो दृष्टि बाह्य करना अपने आप को पतन की ओर धकेलना होगा—एक ऐसे गढ़े में गिराना होगा जहां से फिर हम कितना ही चीखें, चिल्लायें हमारी और फिर कोई देखेगा तक भी नहीं—ताकेगा तक भी नही। फिर गिर कर उठेंगे या नहीं, कौन जाने। वेद इसी लिये संकेत करता है कि चमचमाते हुये, तेज अस्त्रों से शत्रु को भगादें—तो क्यों न हम वेद का कहा मान कर अपने आप को इस प्रकार के शस्त्रों का निर्माण कर सुरक्षित करलें (जब हमारे पास साधन भी उपलब्ध हों) ताकि राष्ट्र भी भयरहित हो जाये और हमारी कीर्ति, यश फैल कर दुष्टों को भी आतंकित करदे। रही बात यह कि हमने ऐसे घातक शस्त्रों के निर्माण न करने की घोषणा की है। आपत्तिकाल में उस का मूल्य ही क्या है? फिर राजनीति सदैव परिवर्तनशील है। राजनीति के अन्दर समय को ध्यान में रखते हुये ही चलना होता है।

इस मन्त्र के अन्दर संकेत है जब हमारी कीर्ति, यश, और बलशक्ति चमचाते हुये अस्त्र शस्त्रों से बढ़ेगी तो दुष्टों का यश, बल, कीर्ति सभी कुछ ढीला पड़ जायेगा उनके अन्दर वैमनस्य फैलेगा। दुष्ट जो हमें खा जाने की इच्छा रखते थे—पीड़ित हो उठेंगे। उन मे परस्पर विरोध पनपेगा। अनेक प्रकार की चर्चा हमारे यश को, हमारी कीर्ति को, हमारे सुरक्षित शस्त्रास्त्रों की (भले ही प्रयोग न करने की घोषणा कर रखी हो) हमारी राजनीति और भेदनीति की चर्चा प्रभावित होकर शत्रु देश के अन्दर उथल पुथल का वायुमण्डल बनायेगी—उनके विचारो में परिवर्तन आयेगा—उनका साधारण जीवन निकट परस्थितियों का रूप धारण कर लेगा—परस्पर विरोध की अग्नि प्रज्जवलित होगी—जिसमे उनके नेता भी विचलित होंगे। अपनी असमर्थता प्रगट करेंगे। परिणाम स्वरूप हमारी शक्तिशाली नीतियों के आगे उलटे पांव ही वे नहीं लौटेंगे अपितु मृत्यु का ग्रास भी स्वयं बनकर रह जायेंगे। परन्तु कब? जब हम भी ऐसे ही चमचमाते हुये अर्चिः= तेजधार अग्निप्रचण्ड परमाणु अस्त्रों द्वारा सुरक्षित होंगे। शेर की एक ही दहाड़ बन के सभी हिंसक पशुओं को स्तब्ध कर देती है। एक ही दहाड़ बन के हिंसक पशुआदिकों को भयभीत कर देती हैं—केवल दहाड़—मात्र ही तो"!

पृ० ७ का शेष

उत्तरदायित्व की इतिश्री मान बैठता था—वह इस बात की रंचमात्र भी परवाह नहीं करता था कि इस परिणाम का सदुपयोग हो रहा है अथवा दुरुपयोग। किन्तु गत कुछ दशाब्दियों से वैज्ञानिकों के अन्दर अपने दायित्व के प्रति नवीन चेतना व सतत जागरूकता का प्रादुर्भाव हुआ है। वे अब अनुभव करने लग गये हैं कि एक नागरिक के रूप मे वह अपने अनुसंधान परिणामों का मानवहित में ही उपयोग होने दें। परमाणु शक्ति के अभिज्ञान के उपरान्त तो यह चेतना और प्रबल हो उठी है। अमरीका, कनाडा तथा इंग्लैंड के वैज्ञानिक आज सुसंघटित होकर परमाणु शक्ति के संहारकारी प्रयोग के विरुद्ध आन्दोलित हो उठे हैं; वे इस बात पर कृत संकल्प हैं कि वे परमाणु शक्ति के रहस्य को राजनीति के हाथों नही जाने देंगे।

अमरीकी सरकार ने परमाणु विघटन सम्बन्धी प्रयोगों पर रहस्य का आवरण डाल रखा है। इसके विरुद्ध अमरीकी वैज्ञानिक सचेष्ट आन्दोलन कर रहे हैं। विज्ञान के अनुसंधान अभी तक देश और राष्ट्र की सोमा से मुक्त रहे हैं। विभिन्न देशों के वैज्ञानिक परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करके ही विज्ञान की अमर ज्योति को भविष्य की पीढ़ी के लिए प्रज्ज्वलित कर आगे बढ़ा सके हैं किन्तु आज विज्ञान की अन्ताराष्ट्रियता संकट में पड़ गई है—परमाणु राजनीति का अभ्युदय हो चला है। इस राजनीति के जाल से मुक्ति दिलाने के लिए वैज्ञानिक को स्वयं सन्नद्ध व कटिबद्ध होना पड़ेगा। विज्ञान सदा से अन्ताराष्ट्रिय रहा है—यह राष्ट्रियता तथा राजनीति के सीमित दायरे में दूषित हो जाता है; तभी यह मानवता के लिए अभिशापस्वरूप भी बन जाता है। निःसन्देह शुभ परिणामों तथा अभिशप्त बनने से रोकने के लिए वैज्ञानिकों को राजनीतिज्ञों से मुठभेड़ करनी पड़ेगी।

विज्ञान को कुमार्ग पर ले जाने में अमरीकी सरकार अग्रगण्य है, यही कारण है कि अमरीकी वैज्ञानिक इस कृतित्व के प्रति विद्रोह की भावना से उत्तेजित हो उठे हैं, उनमें आक्रोश की भावना व्याप्त है। वहां के वैज्ञानिक सरकारी प्रतिबन्धों से क्षुब्ध हैं। कई शीर्षस्थ वैज्ञानिकों पर अराष्ट्रियता के अभियोग लगाये गये फलतः अमरीकी राष्ट्रिय मानक ब्यूरो के निदेशक प्रोफेसर काण्डन ने अमरीकी परमाणु शक्ति आयोग के चैयरमैन के पास एक पत्र भेजा था जिसमें उन्होंने स्पष्ट शब्दों में लिखा था कि "जर्मनी, इटली और जापान ने व्यर्थ के दोषारोपण करके अपने देश के अनेक प्रसिद्ध-वैज्ञानिकों को विदेशों में चले जाने पर विवश किया, फलस्वरूप उनके देश में विज्ञान की प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो गया, ये देश अवनति के गर्त में जा गिरे—क्या अमरीका भी उन्हीं देशों का अनुसरण करना चाहता है?"

अतः विज्ञान को कोसना निष्प्रयोजन है। विज्ञान का क्षत्र, पहले से व्यापक व बृहत्तर हो चला है। मानव मस्तिष्क के भावावेश, हर्ष, विषाद के उद्रेक तथा समाज के अन्दर मनुष्य के परस्पर सम्बन्ध में सभी वैज्ञानिक अध्ययन की सीमा क अन्तर्गत आ गये हैं। वास्तव में आधुनिक विज्ञान न केवल कोटाणुओं तथा अन्य जीव-जन्तुओं की गतिविधि का निरीक्षण करता है अपितु वह स्वयं मानवचरित्र का भी विश्लेषण करता है। मानव-चरित्र को ग्रंथियां सुलझाने के निमित्त कार्य कारण के अटूट सिद्धान्त की सहायता ली जाती है। अतः विज्ञान की व्यापक सीमा और सार्वभौम उपादेयता से हम अछूते नहीं रह सकते। इसलिए विज्ञान से मुख मोड़कर आज के जीवन की असंगतियों का निराकरण नहीं किया जा सकता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान को भरपूर अपनाकर ही हम इन विसंगतियों को दूर कर सकते हैं। सम्प्रदायवाद, संकुचित राष्ट्रियता तथा परम्परागत रूढ़ियां इन सभी प्रतिबन्धों से मुक्ति पाने का मार्ग वैज्ञानिक दृष्टिकोण द्वारा ही प्रशस्त किया जा सकता है। जीवन और विज्ञान के बीच समन्वय स्थापित करने में ही मानवजाति का कल्याण है, उससे दूर भागने में नहीं।

(प्रथम कालम का शेष)

प्रभु हमारे शासनधिकारियों को वेदों की ओर आने में प्रेरणा दे। वेद शिक्षा हो हमारे राष्ट्र को सुरक्षित रखने में सर्वप्रकारेण सामर्थ्ययुक्त है।

सेनापत्यम्-सैनापत्यम्-सैन्यापत्यम्

२५ मई ६९ के अंक में "सैनापत्यम्" पद के विषय में अनेक प्रमाणों से परिपूर्ण लेख पढ कर बड़ी प्रसन्नता हुई। आप ने सत्यार्थप्रकाश ६ समुल्लास में "सैनापत्यम्" दर्शाया है किन्तु द्वितीय संस्करण में "सैन्यापत्यम्" पाठ है। संस्कारविधि गृहाश्रम प्रकरण में भी ऋषि ने यह श्लोक उद्धृत किया है वहां भी ऋषि का पाठ (सं० वि० २य सं०) "सैनापत्यम्" ही है॥ 'सेनाया वा' (अष्टाध्यायी ४.४.४५) सैन्यः। सैन्यस्य पतिः सैन्यापतिः। 'अन्येषामपि दृश्यते' (अ० ६.३.१३७) इति दीर्घत्वम्। सैन्यापतेः भावः कर्म वा सैन्यापत्यम्। 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' (अ० ५.१.१२८) इति यक्। इस प्रकार "सैन्यापत्यम्" शब्द सिद्ध होता है। ऋषि ने इस पद की सत्यार्थप्रकाश में विशेष व्याख्या यह लिखी है—'सेना और सेनापतियों पर राज्याधिकार'—यह सैन्यापत्य पद में निहित है। आशा है इस विषय में और विचार करेंगे। 'दित्यदिति···सूत्र से 'ण्य' प्रत्यय अपत्यादि अर्थों में होता है। यहां भाव कर्म अर्थ अभिप्रेत है।

—सुदर्शनदेव आचार्य एम ए०

श्री सुदर्शनदेव जी का मैं आभारी हूं कि उन्होंने "सैन्यापत्यम्" पद का पाठ भेद भी दिखलाया। मेरे पास सत्यार्थप्रकाश का १४ वां और संस्कारविधि का ११ वां सस्करण था। उन दोनों में "सैन्यापत्यम्" पाठ नहीं, किन्तु "सैनापत्यम्" पाठ ही है, जैसा कि मैंने २५ मई के अंक में दिखलाया है। श्री सुदर्शन देव जी के लिखते ही मैंने सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि के दूसरे संस्करण देखे। उन दोनों में जैसा कि श्री सुदर्शनदेव जी ने लिखा है—वही "सैन्यापत्यम्" पाठ ऋषि दयानन्द जी ने दिया है। इस पर मैंने खोज आरम्भ की। खोज से पता चला कि संस्कारविधि के दूसरे और तीसरे संस्करणों तक सैनापत्यम्" पाठ है, परन्तु चौथे संस्करण में उस पाठ की जगह "सैनापत्यम्" कर दिया गया, जो कि आज तक छपता आ रहा है। इसी भांति सत्यार्थप्रकाश के दूसरे संस्करण में "सैन्यापत्यम्" पाठ था, परन्तु ७ वें संस्करण में "सैनापत्यम्" कर दिया गया है। बीच के संस्करण मेरे पास नहीं हैं इस लिये नहीं कहा जा सकता कि सत्यार्थ प्रकाश के कौन से संस्करण में पहिले पहल यह पाठ भेद किया गया। इन पाठ भेदों के किये जाने का उत्तरदायित्व परोपकारिणी सभा अजमेर पर है, क्यों कि यही सभा वैदिक यन्त्रालय अजमेर में ऋषि के ग्रन्थों को छापती रही है। इससे स्पष्ट है कि ऋषि के ग्रन्थों में पाठ भेद होते आ रहे हैं।

इसी की ओर खोज करने के लिये आर्यसमाज कैराणा (जि० मुजफ्फरनगर) के पुस्तकालय को मैं देखने गया। वहां पर मनुस्मृति के अलग-अलग जगहों पर छपे हुए कई ग्रन्थ सुरक्षित रखे हैं। यह मनुस्मृति अध्याय १२, श्लोक १०० का पाठ भेद होता आरहा है। मनुस्मृति की कुल्लूक भट्ट व्याख्या के साथ ही मेधातिथि, सर्वज्ञनारायण, राघवानन्द, नन्दन और रामचन्द्र की सम्मिलित प्रकाशित मनुस्मृति में "सेनापत्यम्" पाठ है, परन्तु इसी श्लोक को सत्यार्थ प्रकाश और सस्कारविधि के भिन्न-भिन्न सस्करणो में सैन्यापत्यम् और सैनापत्यम् दो पाठ मिलते हैं। उक्त पुस्तकालय में अंग्रेजी अनुवाद सहित मनुस्मृति भी सुरक्षित है, जो कि श्री हाटन ने सन् १८२५ ई० में लन्दन में छपवाई थी, उसमें श्री हाटन ने लिखा है कि मनुस्मृति के बम्बई संस्करण में 'सेनापत्यम्' पाठ है और कलकत्ता सस्करण में "सैनापत्यम्" पाठ है। इस पर श्री हाटन ने "सैनापत्यम्" पाठ को अपने मूल में छपवाया है। उपर्युक्त संस्कृत टीकाएं पर्याप्त पुरानी हैं। देखने से पता चलता है कि कई सौ वर्षों से मनुस्मृति के श्लोकों में पाठ भेद होते रहे हैं। इन सब स्मृतियों को देखकर मैंने पुनः ऋषि दयानन्द के भाष्य को देखा। वहां आश्चर्य कर बात मिली है। वैदिक मन्त्रालय से (सं० १९६१ में) प्रकाशित ऋग्वेद प्रथम मण्डल के दूसरे भाग में १.१००.६ के भावार्थ में ऋषि के भावार्थ में "सैन्यापत्यम्" पाठ मिलता है। परन्तु ऋ० १-३२-३ के प्रथम भाग ऋषि भावार्थ में "सैनापत्यम्" पाठ मिलता है। जो कि दूसरे भाग से पहिले छपा था। यजुर्वेद के ६.२ के ऋषि भाष्य में प्रथम संस्करण में "सैन्यापत्यम्" है। श्री पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु द्वारा प्रकाशित यजुर्वेदके प्रथम दश अध्यायों में ६.२ पर "सैनापत्यम्" पाठ है।

इस प्रकार 'सेनापत्यम्' 'सैन्यापत्यम्' और 'सैनापत्यम्' तीन भिन्न-भिन्न पाठ मनु०, १२.१०० के मिलते हैं। न जाने ऋषिदयानन्द के पास मनुस्मृति का कौनसा पुस्तक था ?

सार यह है कि हमें इन भिन्न-भिन्न पाठों की खोज करनी चाहिये। इस से अर्थों पर सुन्दर प्रकाश पडता है जैसा कि श्री सुदर्शनदेव जी ने सैन्यापत्यम् और 'सैनापत्यम्' पदों की व्याकरण द्वारा सिद्धि से प्रकट किया है।

सत्यार्थप्रकाश का दूसरा संस्करण सन् १८८४ ई० (१९४१ वि० सं०) में छपा था। तथा १९४१ वि० सं० में ही सस्कारविधि का दूसरा संस्करण छपा था। उन संस्करणों में "सैन्यापत्यम्" पाठ था। उसके पश्चात् "सैनापत्यम्" कब हुआ-कैसे हुआ—यह बात मुझे ज्ञात नहीं। यह तो परोपकारिणी सभा से मालूम हो सकता है। आर्यसमाज के पूज्य विद्वानों से प्रार्थना है कि यदि कोई महानुभाव इस पाठ भेद के मूल पर और प्रकाश डाल सकें, तो बड़ी कृपा होगी।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० ६ का शेष

As to the novel theory of 'MAYA' propounded by person calling themselves vadantists,it is only a species of the subjective idealism (of Budhists) the theory is not the tent of vedant.

S. Radhakrishnan,Indian Philosply vol II P.471.

यहां इतना और जान लेना चाहिये कि स्वामी शकराचार्य जी ने वेदों (ऋक्, यजु, साम, अथर्व०) में से अपने पूर्ण लेख में एक भी प्रमाण, पक्ष अथवा विपक्ष में, नही दिया। इससे यह सिद्ध होता है कि आप वेदों से सर्वथा अनभिज्ञ थे।

×इस विषय में ऐतिहासिक विद्वानों में मतभेद है। ऋषि दयानन्द जो सत्यार्थप्रकाश ११ वें समुल्लास में लिखतेहैं—"बाई सौ वर्ष हुए कि एक शङ्कराचार्य द्रविड़ देशोत्पन्न ब्राह्मण ब्रह्मचर्य से व्याकरणादि सब शास्त्रों को पढ़कर सोचने लगे" इस वचन से पता चलता है कि शङ्कराचार्य ईसा से पूर्व हुए। हां, बुद्ध महात्मा उनसे पूर्व हो चुके थे। इतिहास खोज का विषय है इसमें सिद्धान्त की कुछ हानि नहीं। नई नई खोज होती रहती है। —सम्पादक]

"आर्य वीर अब बढ़े चलो"

श्री बिनोदशाही (नरवाणा)

आर्य वीर प्रलयकर, हो रव यह चहुँ ओर भयंकर।
सुन कपित हो रिपु दल बर्बर, बहे रक्त से उनके निर्झर॥
ओ३म् ध्वजा को शीष कर, भुजदण्ड उठा ले निज कर में,
तू महा-प्रचंड बन आर्य युवा! (धधका) ज्वाला सागर में,
बन भीषण काल महा सूर्य सम, असि से रक्त बहा ले,
रिपु के जर्जर मुडित मस्तक के, रक्त से आर्य! नहा ले,
बढ़ता चल तू आर्य-बल! अब, मिले न जब तक अत शिखर।
आर्य वीर हैं प्रलयकर, हो रव यह चहुँ ओर भयंकर॥
नियति के नील आवरण का, भेदन कर देखो उस पार,
या अपने अंदर झाक के देखो, या देखो नियति आधार,
स्रष्टा को ही पाओगे तुम, एक सहायक अपरम्पार,
भय त्यजो तुम आर्य लोक! अब, हां भर उठो महा हुंकार,
जगाओ बाड़व ज्वाल, महावीर्य का सोया है सागर।
आर्य वीर हैं प्रलयकर, हो रव यह चहुँ ओर भयकर

—०—

भारत-केसरीः—

मास्टर चंदगीराम को बाहर भेजा जाए ?



राजधानी दिल्ली के कारपोरेशन स्टेडियम में २८ अप्रैल से आयोजित हुए भारतीय कुश्ती के अखिल भारतीय भारत-केसरी-दंगल में क्रमशः सुरजीतसिंह, भगवान्‌सिंह, नवोदित सुखवंतसिंह, तथा रुस्तमे अमृतसर बंतासिंह को १० मिनट के भीतर अखाड़े से बाहर कर दिखाने वाले हरयाणा के नर-केसरी मास्टर चंदगीराम पहलवान ने १२ मई को निर्णायक टक्कर में गत वर्ष के उपविजेता मेहरदीन पहलवान को दोनों हाथ की फौलादी पकड़ से इतना परेशान कर दिया कि पहाड़ जैसे मेहरदीन को केवल ७मि० ४५ से० में भविष्य का आभास हो गया और उसने बिना चित हुए आगे लड़ने से इन्कार कर दिया और अपनी पराजय स्वीकार कर ली। दर्शकों को ऐसा कभी विश्वास नहीं था कि विशालकाय मेहरदीन हल्के फुल्के मा० चंदगीराम से इतना घबरा जाएगा कि बिना लड़ ही अखाड़ा छोड़ देगा। मा० चंदगीराम को फिल्मी जगत् के विख्यात पहलवान दारासिंह (निर्णायक) ने हजारों दर्शकों की उपस्थिति में विजेता घोषित किया तो तालियों की गड़गड़ाहट से सारा स्टेडियम गूंज उठा। मुख्य-कार्यकारी-परिषद श्री विजयकुमार मलहोत्रा ने दूसरी बार विजयी रहे मा० चंदगीराम को भारत केसरी के सम्मान जनक गुर्ज से अलकृत किया और इस प्रकार मा० चंदगीराम की श्रेष्ठता से असहमती प्रगट करने वाले आलोचकों को भी मौन साध लेना पड़ा।

गत वर्ष मा० चंदगीराम के नाम को लेकर 'भारतीय कुश्ती-संघ' तथा 'रेसलिंग -फेडरेशन-आफ-इंडिया' के अधिकारियों के बीच मैं मैं तू तू हो गई थी और राष्ट्र का पदक जीतने की क्षमता रखने वाला यह कुश्ती कला का माहिर पहलवान 'मेक्सिको-ओलंपिक' में अपने बाजुओं का जोर दिखाने से रह गया था। भारतीय- कुश्ती के मैदान में मा०चंदगीराम ने देश के अनेक भारी पहलवानों को आसमान दिखाकर अपनी शानदार लड़ंत का सिक्का जमाया है जिनमें इशाक शिरगुप्पी, हजरतपटेल, मारुती वडार, लक्ष्मण काकती, मुहम्मद चार्ली, संतोषसिंह निर्मलसिंह, सुखवंतसिंह, बंतासिंह, मेहरदीन, भीमसिंह, तथा पाकिस्तान के गुलाम कादर के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। महाराष्ट्र के यशस्वी मारुती माने से मा० चंदगीराम की कुश्ती २९ मार्च १९६६ को बेलगाम (मैसूर) में ३॥ घंटे चली थी परन्तु निर्णायकों को विवश होकर बराबरी पर कुश्ती छुड़ा देनी पड़ी थी।

लम्बी तथा जीदारी की कश्ती के लिये भारत तथा पाकिस्तान में विख्यात मा० चंदगीराम ने भारतीय-कुश्ती के हुनर स्वर्गीय चिरंजी गद के चरणों में बैठकर सीखे हैं तो अतः राष्ट्रिय-स्तर पर लड़ी जाने वाली, (प्रथम कालम का शेष) 'ओलंपिक-फ्रीस्टाइल' की बारीकियों का अध्ययन उन्होंने ईरान के कीर्तिलब्ध कुश्ती-प्रशिक्षक हमीदी के सांनिध्य में रहकर किया है। मा० चंदगीराम की देश व्यापी ख्याती, कुश्ती कला की जानकारी तथा लम्बी दम पर ध्यान देने से देशवासियों के हृदयों में नवीन आशाओं का संचार होने लगता है। समय की मांग है कि मा० चंदगीराम को अंतः राष्ट्रिय-प्रतियोगिताओं हेतु भारत का प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए जिससे कि वह राष्ट्रिय सम्मान की वृद्धि करने में योग दे सकें। ब्रजभूषण दुबे (कलकत्ता)

कमशः

किसान

श्री योगीन्द्र पाण्डेय, ग्राम लखौलिया (बलिया)

एक मार्ग बस यही नीति का, वर्णन कुछ करना कुरीति का,
जान सको जिससे यथार्थ को, मान सको जिससे यथार्थ को,
क्यों कि तुम्हीं करो यह संसार, कुछ सोचो, कुच करो विचार।
ऐसी तुममें जागृति होवे, जिससे प्रभु में भी रति होवे,
जान सको ईश्वर स्वरूप को, उस दयालु न्यायी अनूप को,
जानो वह ही जगदाधार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
जान सको प्रभु को अनन्त है, जिसका इस जग में न अन्त है,
एक निखिल ब्रह्माण्ड मध्य जो, सब प्रकार से है अबध्य जो,
जिसमें कुछ भी नहीं विकार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
जो प्रभु वेदों में वर्णित है, उसकी उपासना में हित है,
वेदों में यह बात कही है, जगन्नियन्ता एक वही है,
वह ही सबसे अधिक उदार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
प्रभु हैं सर्वज्ञ हमारा, वही हमें है सबसे प्यारा,
हिलें ईश के नाम अधर, 'ओ३म्' नाम हो नित जिह्वा पर,
प्रभु के वश में सब अधिकार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

—क्रमश

पृ० २ का शेष

सूर्यादि का आधार है, इससे ईश्वर को हिरण्यगर्भ कहते हैं। हिरण्य के अर्थ ज्योति, अमृत और कीर्ति हैं।"

१९—वे आगे लिखते हैं—"(वायुः) यो वाति जानाति वारयत्यनन्तबलत्वात् सर्वं जगत् स वायुः। स चेश्वर एव भवितुमर्हति नान्य,"। "तद्वायुः" (यजु० ३२।१) इति मन्त्रवर्णादिर्थात् ब्रह्मणो वायुसंज्ञास्ति।

२०—इसका महर्षि जी कृत अर्थ—"वायु जो अनन्त बल वाला और सबका धारण करने हारा है।

२१—"वायुः" पद का जो अर्थ महर्षि जी ने लिखा है वह मुद्रित पुस्तकों के हिन्दी भाग में पूरा नहीं है। पूरा हिन्दी अर्थ इस प्रकार है—

"जो सर्वगत है, सर्वज्ञ है और अपने अनन्त बल के द्वारा सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है, उसको वायु कहते हैं। ऐसा तो केवल ईश्वर ही हो सकता है, और कोई नहीं। यजुर्वेद के बत्तीसवें अध्याय के पहले मन्त्र में यह सुस्पष्ट उल्लेख मौजूद है कि ईश्वर का एक नाम वायु भी है।"

२२—वे आगे लिखते हैं—"(तैजसः) सूर्यादीनां प्रकाशकत्वात्स्वयं प्रकाशत्वात् तैजस ईश्वरः। एतदादयर्था उकाराद् विज्ञातव्याः।"

२३—इसका हिन्दी अर्थ वे इस प्रकार कहते हैं—"(तैजसः)जो प्रकाशस्वरूप और सब जगत् का प्रकाशक है। इत्यादि अर्थ उकार से जानना चाहिये।

२४—वे आगे लिखते हैं—"मकारेणेश्वरादित्यप्राज्ञादीनि नामानि बोध्यानि। तद्यथा—(ईश्वरः) इष्टेऽसौ सर्वशक्तिमान् न्यायकारीश्वरः। (आदित्यः) अविनाशित्वादादित्यः परमात्मा। (प्राज्ञः) प्रजानाति सकलं जगदिति प्रज्ञः, प्रज्ञ एव प्राज्ञश्च परमात्मैवेति। एतदादयर्था मकारेण निश्चेतव्या ध्यायाश्चेति।"

२५—इसका महर्षिकृत अर्थ इस प्रकार है—"तथा मकार से (ईश्वरः) जो सब जगत् का उत्पादक, सर्व शक्तिमान्, स्वामी, न्यायकारी है, (आदित्यः) जो नाशरहित है। (प्राज्ञः) जो ज्ञानस्वरूप और सर्वज्ञ है, इत्यादि अर्थ मकार से समझ लेना। संक्षेप से ओङ्कार का अर्थ किया गया।"

आलस्य

(श्री कन्हैया लाल गान्धी)

'उद्यमेन सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।'

आलस्य मनुष्यों का महान् शत्रु है। आलसी व्यक्ति भी कभी यह नहीं चाहते कि हम आलसी रहें, परन्तु फिर भी इस शत्रु से पीछा छुड़ा नहीं पाते। आलस्य का स्वभाव प्रायः शैशवकाल में ही पड़ जाता है और अधिकतर देखा जाता है, वह आयु भर सताता रहता है। साधारण रूप में हम देखते हैं कि प्रायः बासी भोजन, अधिक आहार, शक्ति से अधिक कार्य व अब्रह्मचर्य सेवन से आलस्य आता ही है। ये आलस्य के सामयिक कारण हैं। आलस्य के मुख्य तीन भेद हैं—(१) शारीरिक (शारीरिक कमजोरी, रोग, अस्वच्छता, थकान, अनियमितता आदि)।

(२) मानसिक (हवाई कल्पनायें, निराशायें और निरुत्साह, चिड़चिड़ापन, उदासीनता, लज्जाशीलता, अरुचिपूर्ण कार्य आदि)।

(३) सामाजिक (वातावरण, बेकारी, कुरीतियाँ आदि)।

उत्तम तो यही है कि आलस्य का स्वभाव पड़ने ही न पावे। पड़ने पर उसे दूर करने के लिए उसके कारणों को भी देखना उचित है। बच्चों के आलस्य को दूर करने के लिये तो कारणों पर विशेषरूप से ध्यान देना चाहिए।

शारीरिक कारणों से यदि आलस्य हो तो सबसे पहले नीरोग होने की आवश्यकता है। साथ ही व्यायाम खेलकूद व आसन आदि का अभ्यास करना चाहिए। मानसिक कारणों के लिए प्रसन्नता लग्न एवं उत्साह परम आवश्यक हैं। सामाजिक कारणों को दूर करने के लिए सामूहिक प्रयास अधिक हितकर होंगे। यहाँ कुछ साधारण उपाय भी दिये जा रहे हैं—(१) सदा प्रसन्नचित्त रहना, (२) कर्त्तव्यशील व्यक्तियों के संसर्ग में आते रहने से प्रेरणायें लेते रहना, (३) मन को सोत्साह रखना। (४) निराशा न होने देना, कार्य निसार करते रहना, (५) निराश न होना, (६) त्यौहार-पर्व व विविध उत्सवों पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते रहना। संक्षेप में आलस्य उड़ाने की कुंजी हम कह सकते हैं—आशा, उत्साह, और प्रसन्नता है।

आर्यसमाज जूवाँ जिला रोहतक का वार्षिकोत्सव

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी आर्यसमाज जूवाँ तहसील सोनीपत का वार्षिक उत्सव २१ से २३ जून १९६९ को बड़ी धूमधाम से हो रहा है। उत्सव से पूर्व छात्रों का व्यायाम शिक्षण शिविर का कार्यक्रम चल रहा है। आसपास की ग्रामीण जनता से प्रार्थना है कि यथा समय पधार कर वैदिक धर्म प्रचार से लाभ उठावें। इस अवसर पर आर्यसमाज के नेता, उपदेशक तथा भजन मण्डलियाँ पधार रही हैं।

धर्मपाल आर्य प्रचार मन्त्री।

आर्यसमाज फोर्ट, बम्बई का चुनाव

प्रधान—श्री एम० के० अमीन, मन्त्री—श्री एच० श्यामराव, कोषाध्यक्ष—श्री एच०शीना पुजारी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री भास्कर बगेर तथा ५ अन्तरंग सदस्य। —मन्त्री

आर्यसमाज सीवानी मण्डी (हिसार)

स्वामी बालक भोलानाथ प्रधान, मेहरचन्द मन्त्री, हनुमान वर्मा, कोषाध्यक्ष गौरीशंकर गोयल ८ अंतरंग सदस्य चुने गये।

—स्वामी बालक भोलानाथ

आर्य कुमार सभा रावौर का चुनाव

ठा० यशवन्तसिंह जी—अध्यक्ष, श्री राधेश्याम वर्मा—प्रधान, श्री अनिल मान—मन्त्री, श्री यशपाल जी—पुस्तकाध्यक्ष, श्री सत्तप्रकाश जी—कोषाध्यक्ष। —मन्त्री आर्य कुमार सभा

आर्यसमाज कृष्णनगर का चुनाव

प्रधान—प्रोफैसर बनारसी दास, मन्त्री—श्री सोहनलाल, कोषाध्यक्ष—श्री हजारीलाल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री देसराज थई तथा अन्य अन्तरङ्ग सदस्य। —सोहनलाल

आर्यसमाज बिठमड़ा जिला महेन्द्रगढ़ का उत्सव

तीसरा उत्सव धूमधाम से हुआ जिसमें स्वामी हरयाणानन्द जी, आचार्य भगवान् देव जी, ब्र० जगदीशचन्द्र जी "वसु" तथा आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के पण्डित रामनाथ जी प० शिवनारायण जी और प० तेजभानु जी पधारे। विशाल जलूस का नेतृत्व स्वामी हरयाणानन्द जी ने किया। आचार्य भगवान्देव जी की अध्यक्षता में शराब निरोध सम्मेलन हुआ। —निज संवाददाता द्वारा

वेदप्रचार मण्डल नरवाना की स्थापना

आस पास के क्षेत्र में प्रचार करने के लिये वेद प्रचार मण्डल नरवाना की स्थापना की गई, जिसके अधिकारी आगे लिखे निर्वाचित किये गये—

प्रधान—श्री ला० कृष्णचन्दजी आर्य नरवाना, मन्त्री—श्री धर्मपाल जी आर्य नरवाना, कोषाध्यक्ष—श्री रामकुमार जो आर्य नरवाना इस शुभ कार्य का श्रेय स्वामी हरयाणानन्द जी को है। —सीताराम आर्य

३९२ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री इतबारीलाल के प्रयत्न से ग्राम चान्दपुर मखियाली जिला मुजफ्फरनगर में ३९२ ईसाइयों को श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी द्वारा वदिक धर्म की दीक्षा देकर उनकी पुरातन चमार जाति में दीक्षित किया गया। मेरठ से श्री रामजीदास कलषाण प्रधान दलित वर्ग संघ ने भाग लिया, दिल्ली से श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष शुद्धि सभा ने इस कार्यक्रम की पूरी व्यवस्था सभाल कर शुद्धिशुदाओं का स्वागत एव बाहर से आने वाले सज्जनों का धन्यवाद किया। —द्वारिकानाथ प्रधानमन्त्री

मुसलमान युवती की शुद्धि

आदर्श विवाह मन्दिर पर देशीपुरा, इन्दौर में नजमा पुत्री अब्दुल सलामखाँ मुसलमान नया पीठा कढाव घाट के पास इन्दौर की शुद्धि कर वैदिक धर्म में दीक्षित किया गया। शुद्धि के पश्चात उसका नाम कमलेश देवी रखा गया, शुद्धि संस्कार शंकरसिंह आर्य ने सम्पन्न कराया।

—सचालक

जनता सावधान रहे

श्री सन्त जानकीदास जो रघुवर आश्रम पो० निहालवास (जि० महेन्द्रगढ से) सूचित करते हैं कि आबादी से १ मील दूर निर्जन भूमि में यह आश्रम है। यहा आवारा साधुओं का अड्डा है, जो कि जनता को धोखा देते और चोरी करते रहते है। एक रामगिरि नाम अपने को सन्यासी बताता था। जाति से ब्राह्मण और उदयपुर में गुरुद्वारा बतलाता था। आयु ३५ वर्ष के लगभग है। रग सावला है। मुख पर काला निसान है। नारनौल के निकट पटीकरागाँव में था। ऐसे कपटी धूर्त्त लोगो से जनता को सावधान रहना चाहिये। —सम्पादक

ला० जयराम सूरी का २५ हजार रुपये का दान

अम्बाला नगर के ला० जयराम सूरी तथा उनकी धर्म पत्नी श्रीमती पार्वती देवी ने डी० ए० वी० कालिज प्रबन्ध कर्त्री समिति को अम्बाला नगर में जयरामसूरी शिशु विकास मन्दिर खोलने के लिये २५ हजार रुपये दान दिया है। इसके लिये २० हजार रुपये और दान देंगे, इसी धन से श्रीमती पार्वती देवी प्रार्थना भवन बनेगा, जिसमें बच्चों के अन्दर शीलादि विकास गुणों का विकास किया जावेगा। —भगवान् दास आचार्य

झज्जर तथा महम (रोहतक) में वेद प्रचार

आर्यसमाज झज्जर तथा महम मे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के उपदेशक पं० रामनाथ जी और प० तेजभानु जी भजनोपदेशक पधारे। दोनों स्थानों पर बड़ी धूम धाम से प्रचार किया। जनता पर अपूर्व प्रभाव पड़ा। —निज संवाददाता

आर्यमर्यादा साप्ताहिक की अपूर्व भेण्ट

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर प्रचारोपयोगी साहित्य

वेद आविर्भाव पद्धति विशेषांक प्रकाशित हो रहा है

आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भान्ति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से वेद प्रचार सप्ताह श्रावणी पर्व पर इस बार भी स्वाध्याय के लिये आर्यमर्यादा का वेद आविर्भाव पद्धति विशेषांक बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित किया जा रहा है। इस विशेषांक में वेदों का ईश्वरीय ज्ञान चारों ऋषियों द्वारा किस पद्धति के अनुसार प्रकट हुआ महत्व पूर्ण विषय पर प्रकाश डाला जावेगा। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास मे आज तक इस प्रकार का विशेषांक अथवा ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हो सका। आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वानो तथा लेखको के लेख वेद प्रचारार्थ बहुत ही उपयोगी सामग्री होगी। अतः आर्यसमाजों आर्य संस्थाओं और स्वाध्यायशील महानुभावो से प्रार्थना है कि वेद सप्ताह पर इस विशेषांक को भारी संख्या मे मंगवाकर अधिक से अधिक हाथो तक पहुंचा कर वेद प्रचार के पुनीत कार्य में सहयोग दीजिये।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

आवश्यकता

गुरुकुल विद्यालय आश्रम में ब्रह्मचारियो के साथ रहने के लिए शिक्षित आर्य समाजी अधिष्ठाताओं को आवश्यकता है। आयु लगभग ४० वर्ष हो। अल्प पारिश्रमिक के अतिरिक्त आवास तथा भोजन निशुल्क होगा। इच्छुक व्यक्ति शीघ्र आवेदन करें। आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी (सहारनपुर)

शानदार परीक्षा परिणाम्

सुखानन्द आर्य हाई स्कूल तपा (संगरूर) मैट्रिकुलेशन का परीक्षा फल इस साल भी शानदार रहा है श्री जगदेव कुमार बंसल ६९९ अंक प्राप्त करके प्रथम आया है। पांच विद्यार्थियो ने ६०० से अधिक अंक प्राप्त किये और पास होने वाले ३३ विद्यार्थियों में से १० दस लड़के प्रथम तथा १० सेकेन्ड डिवीजन में है। तीन वजीफे आने की पूरी आशा हैं।

—प्रिंसीपल एस० एन० हाई स्कूल—तपा

आर्यमर्यादा साप्ताहिक का १०) वार्षिक शुल्क भेजकर स्वयं ग्राहक बनिये तथा अपने मित्रों को बनाइये

व्यवस्थापक

शोक सूचना

आर्य प्रतिनिधी सभा पंजाब के पुराने भजनोपदेशक पं० रामलाल जी यात्री के दो भतीजों का जिन की आयु ११ व १८ वर्ष थी, अकस्मात् देहान्त हो गया है। इस पर आर्य प्रतिनिधी सभा के अधिकारियों, उपदेशकों, भजनोपदेशकों तथा कार्यकर्ताओं को गहरा दुख हुआ। परमात्मा से प्रार्थना है कि श्री यात्री जी के सारे परिवार को धैर्य तथा असहाय कष्ट को सहन करने की शक्ति प्रदान करे। परमेश्वर की कर्म फल व्यवस्था अटल है। इस के आगे सिर झुकाना हो पड़ता है। बलराज आर्य भजनोपदेशक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा अजय प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः

वेदा

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

यह बात सिद्ध है कि पाच सहस्र वर्षों के पूर्व वेदमत से भिन्न दूसरा कोई भी मत न था क्योकि वेदोक्त सब बात विद्या से अविरुद्ध है। वेदो की अप्रवृत्ति होने का कारण महाभारत युद्ध हुआ। इनकी अप्रवृत्ति से अविद्याऽन्धकार के भूगोल मे विस्तृत होने से मनुष्यो की बुद्धि भ्रमयुक्त होकर जिसके मन मे जैसा आया वैसा मत चलाया। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक २९ } १५ आषाढ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २९ जून १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
" " विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

इदानीं वरुणशब्देनात्मवाय्वोर्गुणोपदेश क्रियते ॥

अब अगले मन्त्र मे वरुणशब्द से आत्मा और वायु के गुणो का प्रकाश करते है—

उरु हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ।
अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवक्ता हृदयाविधश्चित्॥

॥ ऋग्वेद १ २४ ८ ॥

पदार्थ—(उरुम) विस्तीर्णम (हि) चार्थे (राजा) प्रकाशमान परमेश्वर प्रकाशहेतुर्वा (वरुण) वर श्रेष्ठतमो जगदीश्वरो वरत्वहेतुर्वायुर्वा (चकार) कृतवान (सूर्याय) सूर्यस्य (पन्थाम) मार्गम् (अनु) अनुकूलार्थे (एतवै) एतु गन्तुम् (उ) वितर्के (अपदे) न विद्यन्ते पदानि चिह्नानि यस्मिन् तस्मिन्नन्तरिक्षे (पादा) पद्यन्ते गम्यन्ते याभ्या गमनागमनाभ्या तौ (प्रतिधातवे) प्रतिधातुम् (अक) कृतवान् (उत) अपि (अपवक्ता) विरुद्धवक्ता वाचयिताऽस्ति तस्य (हृदयाविध) हृदय विध्यति तस्याधर्मस्याधार्मिकस्य शत्रोर्वा (चित्) इव॥

अन्वय—हृदयाविधोऽपवक्ताऽपवाचयिता शत्रुरस्ति तस्य चिदिव यो वरुणो जगद्धाता जगदीश्वरो वायुर्वा सूर्याय सूर्यस्यान्तव उरु पन्था चकारोताप्यपदे पादा प्रतिधातवे सूर्यमक उ इति वितर्के सर्वस्यैतद्विधत्ते स सर्वैरुपासनीय उपजीवनीयो वास्तीति निश्चेतव्यम्॥

भावार्थ—अत्र श्लेषोपमालङ्कारौ। य परमेश्वर खलु यस्य महत सूर्यलोकस्य भ्रमणार्थं महती कक्षा निर्मितवान् यो वायुनेन्धनेन प्रदीप्यते य इमे सर्वे लोका अन्तरिक्षपरिधय सन्ति न च कस्याचिल्लोकस्य केनचिल्लोकान्तरेण सह सयागोऽस्ति किन्तु सव अन्तरिक्षस्था सन्त स्व स्व परिधि प्रति परिभ्रमन्त्येते सर्वे यस्येश्वरस्य वायोर्वाऽऽकषणधारणाभ्या स्व स्व परिधि विहायेनस्ततश्चलितु न शक्नुवन्ति नत्र यस्मात्कश्चिदन्य एषा धर्तार्थोऽस्ति यथा परमेश्वरोऽधार्मिकस्य वक्तुर्हृदयस्य विदारकोऽस्ति तथा प्राणोऽपि रागाविष्टोहृदयस्य विदारकोऽस्ति स सर्वैर्मनुष्यै कथ नोपासनीयो भवेदिति बोध्यम्॥

भाषार्थ—(चित्) जैसे (अपवक्ता) मिथ्यावादी छली दुष्टस्वभावयुक्त पराये पदार्थ (हृदयाविध) अन्याय से परपीडा करने हारे शत्रु को दृढ बन्धनो से वश मे रखते है वैसे जो (वरुण) (राजा) अति श्रेष्ठ और प्रकाशमान परमेश्वर वा श्रेष्ठता और प्रकाश का हेतु वायु (सूर्याय) सूर्य के (अन्वेतवै) गमनागमन के लिये (उरुम्) विस्तारयुक्त (पन्थाम) मार्ग को चकार सिद्ध करते (उत) और (अपदे) जिस के कुछ भी चाक्षष चिह्न नही है उस अन्तरिक्ष मे (प्रतिधातवे) धारण कराने के लिये सूर्य के (पादा) जिनसे जाना आना बने और आगमन गुणो को (अक) सिद्ध करते है (उ) और जो परमात्मा सब का धर्त्ता (हि) और वायु इस काम के सिद्ध कराने का हेतु है उसकी सब मनुष्य उपासना और प्राण का उपयोग क्यो न करे॥

भावार्थ—इस मन्त्र मे श्लेष और उपमा अलङ्कार हैं जिस परमेश्वर ने निश्चय के साथ जिस सबसे बडे सूर्यलोक के लिये बडी सी कक्षा अर्थात उसके घूमने का मार्ग बनाया है जो इस को वायु रूपा ईन्धन मे प्रदीप्त करता और जो सब लोक अन्तरिक्ष मे अपनी अपनी परिधि युक्त है कि किसी लोक का किसी लोकान्तर के साथ सग नही है किन्तु सब अन्तरिक्ष मे ठहरे हुए अपनी अपनी परिधि पर चारो ओर घूमा करते हैं और जो आपस मे जिस ईश्वर और वायु के आकर्षण और धारणा शक्ति से अपनी अपनी परिधि को छोड कर इधर-उधर चलने को समर्थ नही हो सकते तथा जिस परमेश्वर और वायु के विना अन्य कोई भी इन का धारण करने वाला नही है जैसे परमेश्वर मिथ्यावादी अधर्म करने वाले से पृथक् है वैसे प्राण भी हृदय क विदीण करने वाले रोग से अलग है उसकी उपासना वा कार्य्यों मे योजना सब मनुष्य क्यो न करें॥

(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

महात्मा श्री आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने प्रो० रामसिंह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को उनके सम्पूर्ण अधिकार लौटा दिये

लाला श्री दीवानचन्द जी,

सादर नमस्ते।

श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की ओर से कल निम्न तार प्राप्त हुआ —

Professor Ramsingh president 3/3 Rani Jhansi Road, New Delhi
Please Perform duty as president Arya Pratinidhi Sabha Punjab as performing before I took charge
—Anand Swami

उपरोक्त तार के आधार पर मैने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का पूर्ववत् पूर्ण अधिकार सम्भाल लिया है।

२—इसके उपरान्त प्रबन्धकर्त्री समिति स्वय समाप्त समझी जाये।

३—आप समिति के सदस्यो को स्वय ही सूचित करने की कृपा करें।

भवदीय

ह० —रामसिंह सभा—प्रधान

सेवा मे,

श्री दीवानचन्द जी, भूतपूर्व सयोजक प्रबन्धकर्त्री समिति।

प्रतिलिपि सेवा मे, सूचनार्थ :—

१—श्री नारायणदास जी कपूर २—श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी। ३—श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी। ४—श्री चौधरी रूपचन्द जी एडवोकेट। ५—श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती। ६—श्री रामचन्द्र जी जावेद। ७—मुख्य कार्यालय, जालन्धर। ८—उपकार्यालय, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली।

(दीवान चन्द)
३३ बी, पूसा रोड नई दिल्ली।

"मुस्लिम प्रचार-तन्त्र का औचित्य" ?

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान W 279, राजा पार्क दिल्ली- ४)



जमाअत इस्लामी के हिन्दी साप्ताहिक 'कान्ति' (१५ अप्रैल १९६९) मे 'विश्व हिन्दू धर्म सम्मेलन एक विश्लेषण" नामक शीर्षक के अन्तर्गत श्री मुहम्मद अमीन आजमी, आयुर्वेद रत्न का एक लेख प्रकाशित हुआ है। इस लेख मे उन्होने हिन्दू धर्म शास्त्रो की महत्ता पर सन्देह ही प्रकट नही किया बल्कि अस्पृश्यता सम्बन्धी श्री शकराचार्य जी के वक्तव्य का अनूठे ढग से समर्थन करते हुए हरिजनो को हिन्दू समाज से विलग करने का अदभुत षड्यन्त्र भी रचा है। इतना ही नही उन्होने उन व्यक्तियो पर जिन्होने श्री शकराचार्य के कथन की खुल कर भर्त्सना की है यह आरोप लगाया है कि वे व्यक्ति प्रगतिशील (सम्भवत नास्तिक) और राजनीतिक लोग है।

अमीन साहब के लेख का उत्तर मैंने कान्ति के ही माध्यम से शकराचार्य और अस्पृश्यता नामक लेख लिख कर दे दिया। पुन उस पर लिखने का कारण यह है कि आर्यजगत् मुस्लिम प्रचारतन्त्र से अनभिज्ञ न रह जाये और समय रहते इतनी शक्ति अर्जित करले कि अवसर मिलने पर असत्य को कुचल सके। इस लेख को पढ कर आर्यमर्यादा के विज्ञ पाठक स्वय अनुमान लगा ले कि मुस्लिम प्रचार तन्त्र का औचित्य कितना है?

श्री मुहम्मद अमीन के उस लेख के महत्त्वपूर्ण अशो का यहाँ उद्धृत करना अभीष्ट है ताकि उस पर निष्पक्षता से विचार किया जा सके। पृष्ठ ४ पर मुहम्मद अमीन साहब लिखते हैं।

१ छूआ छूत के विरोध मे लोकसभा से लेकर बाहर तक कुछ लोगो ने जगतगुरु के विचारो के विरोध मे आवाज उठाई है। परन्तु वे सभी प्रगतिशील और राजनीतिक लोग हैं और वे लोग जो हिन्दुओ के धार्मिक नेता समझे जाते हैं इस विषय मे अब तक चुप हैं। इसलिए कि हिन्दू धर्म मे छूत-छात मूल रूप से है।

२ आश्चर्य की बात है कि खाद्यमन्त्री अपने आपको हिन्दू कहते हैं और ४० वर्ष से हरिजनो के धर्म परिवर्तन न करने के लिए प्रयत्नशील हैं। यहाँ धर्म-परिवर्तन नही धर्म स्वीकार करने की बात है। जहाँ तक हमे ज्ञात है, हरिजनो का कोई धर्म नही न उनका कोई देवालय है न मन्दिर, न त्यौहार न पूजा-पाठ का कोई विधान। फिर वह धार्मिक कैसे और उनका धर्म कैसा? जब धर्म ही नही तो धर्म-परिवर्तन की बात करना असगत है। जगजीवनराम हिन्दू-धर्म के छुआछूत के मूल सिद्धान्त से अनभिज्ञ कैसे हैं? गुरु जी ने उनको सोच मे डाल दिया है परन्तु यदि कुछ धार्मिक लोग और धर्मशास्त्री तथा धर्माचार्य छूआ छूत के विरोध मे बयान दे दे तो उनको और हरिजनो को सन्तोष हो जाएगा। क्या कुछ बयान दे देने से हिन्दू-धर्म की प्राचीन मान्यताये बदल जायगी?

३ सयुक्त राष्ट्र ने माना है कि मानव-मात्र के उच्चतम हितो के लिए यह आवश्यक है कि धार्मिक और जातीय भेदभाव और इस प्रकार से दुख पहुँचाने को समाप्त किया जाये। इस नियम को सभी राष्ट्रो ने माना है। फिर भी अमेरिका मे नीग्रो, अफ्रीका मे कालो और भारत मे अछूतो और शूद्रो को इस कुचक्र मे पिसना पड रहा है।

४ क्या हरिजनो ने मनुस्मृति और दूसरे शास्त्रो के उद्धरणो से यह बात स्वय अनुभव नही किया किया कि उनमे शूद्रो और हरिजनो के बारे मे क्या कुछ है?

५ जगदगुरु ने क्या पाप किया है, उन्होने अपनी ओर से कुछ न कह कर केवल यह कहा है कि शास्त्रो के अनुसार छूतछात जन्म से है और छूतछात की शिक्षा धर्मशास्त्रो ने दी है। शास्त्रो के मानने जानने और गुरु होने के नाते स्पष्ट रूप से कहना उनका कर्त्तव्य था।

भ्रान्ति-निवारण

श्री अमीन साहब के इस कथन मे सत्य, अल्प और असत्य अधिक है कि जिन लोगो ने शकराचार्य के अस्पृश्यता सम्बन्धी विचारो की खुलेआम निन्दा की है वे केवल प्रगतिशील और राजनीतिक लोग हैं। क्या राजनीतिक लोग एक साथ ही राजनीति और धर्म को साथ-साथ लेकर नही चल सकते? गाधी जी तो धर्म को राजनीति का आवश्यक अग मानते थे। इतना ही नही, क्या मुस्लिम इतिहास राजनीति और धर्म का समन्वित रूप नही रहा। मुहम्मद सल्ल और उनके बाद के चारो खलीफाओं ने एक हाथ मे कुरान तथा दूसरे मे तलवार लेकर विश्व-दिग्विजय की ओर प्रस्थान नही किया था? क्या इन सबको उसी दृष्टि से देखने की श्री अमीन साहब हिम्मत करेंगे जिस दृष्टि से वे उन लोगो को देखते हैं शकराचार्य के तथाकथित विचारो की निन्दा कर रहे हैं?

न जाने प्रगतिशील शब्द से अमीन साहब का क्या तात्पर्य है। क्या धर्म को अफीम मानने वाले या ईश्वर को मृतक घोषित करने वाले ही प्रगतिशील हैं? यदि ऐसा है तो नास्तिक ही प्रगतिशील' का पर्यायवाची शब्द बन जाता है। इस नियम के अनुसार आस्तिक' और अविकसित मे कोई भेद नही रह जाता। फिर उस धर्म का क्या औचित्य रह जायेगा जो मनुष्य को पशुत्व से देवत्व की ओर ले जाता है? इस धर्म शब्द मे कुरआन भी समाहित समझी जा सकती है।

अमीन साहब के इस कथन मे भी सत्यता नही है कि छून-छात को हिन्दू धर्म मे प्रमुखता होने के कारण ही धार्मिक नेता मौन-व्रत लिये हुए हैं। इस सदर्भ मे कुछ प्रमाण प्रस्तुत हैं जिससे उनके खोखले प्रचार-तन्त्र का पर्दाफाश होगा।

आर्यसमाज के नेताओ और सन्यासियो तथा सभाओ ने सामूहिक रूप से शकराचार्य के वक्तव्य का विरोध किया है यह वही आर्यसमाज है जिसने गोहत्या आन्दोलन मे शकराचार्यके कन्धे से कन्धा मिलाकर अपने रक्तकणो से दिल्ली की सडको पर अपने बलिदान की अमिट कहानी लिखी है। शकराचार्य के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढने वाला आर्यसमाज आज शकराचार्य के मत के प्रतिकूल चल रहा है। क्या इसमे भी कोई राजनीतिक चाल है? यदि हा तो आर्यसमाज को इतना साहस न होता कि वह शकराचार्य को इस विषय मे शास्त्रार्थ के लिए ललकारता।

भारत साधु-समाज के महासचिव स्वामी हरिनारायण नन्द जी ने शकराचार्य के अस्पृश्यता सम्बन्धी वक्तव्य को उनका निज मत बताया है। राजस्थान के एक विद्वान् पुजारी श्री हरिस्वामी ने अपनी प्रतिक्रिया प्रदर्शित करते हुए कहा है कि समाज मे किसी महिला अथवा पुरुष की स्थिति क्या है इसका निर्णय जन्म से नही होता।

राजस्थान के ही कोठपीठ के वल्लभाचार्य और भानपुरा के शकराचार्य ने इस सम्बन्ध मे कहा है कि अस्पृश्यता मानवीय दृष्टि से उचित नही है। उरूवकोहडा के जगद्गुरु ने १० अप्रैल को कोयम्बतूर मे कहा है कि अस्पृश्यता का समर्थन करने वाली सभी विचारधाराओ की भर्त्सना की जानी चाहिए।

क्या ये सभी व्यक्ति किसी राजनीतिक-मैदान के खिलाडी हैं? यदि अमीन साहब केवल ज्योतिर्मठ के जगतगुरु शकराचार्य स्वामी श्री कृष्ण बोधाश्रम रामराज्य परिषद् के सस्थापक श्री करपात्री जी और काशी के प० राजराजेश्वर शास्त्री को, जिन्होने पुरी के शकराचार्य के विचारो का अनुमोदन किया है, को ही धार्मिक नेता मानते हैं तो मेरी दृष्टि मे वे स्वय से ईमानदारी से पेश नही आ रहे। हिन्दू-धर्म मे, इसकी विशालता के कारण, इतनी विविधता है कि किसी एक वर्ग को सम्पूर्ण हिन्दू-धर्म का आख्याता नही माना जा सकता। ऐसी उलझनपूर्ण स्थिति को सुलझाने के लिए वेदो की ओर अभिमुख होना अनिवार्य हो जाता है क्योंकि वेद ही

शेष पृ० ४ पर

सम्पादकीय

पंजाब सरकार के दो मुंह

पंजाब राज्य के मुख्यमन्त्री सरदार गुरुनामसिंह हरयाणा राज्य सरकार से बार-बार मांग करते हैं कि "हरयाणा में पंजाबी भाषा भाषी २० लाख लोग बसते हैं, अतः हरयाणा की दूसरी भाषा पंजाबी बनाई जावे।" इस का उत्तर चौ० बंशीलाल मुख्यमन्त्री हरयाणा राज्य ने स्पष्ट दे दिया कि पंजाब राज्य तथा विभाजन भाषा के आधार पर ही हुआ है, इसलिये हरयाणा केवल हिन्दी भाषी राज्य है, यहाँ पंजाबी को दूसरी भाषा बनाने का कुछ प्रश्न ही नहीं उठता।

सरदार गुरुनामसिंह दो परस्पर विरोधी बातें कर रहे हैं—"क्योंकि हरयाणा में पंजाबी बसे हुए हैं, अतः उनकी भाषा पंजाबी है।" परन्तु हम पूछते हैं कि पंजाब राज्य में जो हिन्दी भाषी बसे हुए हैं, क्या उनकी भाषा हिन्दी नहीं है? और पंजाब में हिन्दी भाषियों की संख्या ३३ प्रतिशत से अधिक नहीं है? संविधान के अनुसार हिन्दी भाषियों को अधिकार प्राप्त है कि वे पंजाब सरकार से माँग करें कि दूसरी भाषा पंजाब में हिन्दी होवे जो कि देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। हिन्दी भाषा का वहाँ और भी स्वत्व है, क्योंकि हिन्दी समस्त राष्ट्र की भाषा है। पंजाब सरकार इस पर कुछ भी ध्यान नहीं दे रही, अपितु इसके विपरीत पंजाब राज्य के समस्त स्कूलों में प्रथम श्रेणी से ही पंजाबी-गुरुमुखी लिपि में चालू कर रही है। राजकार्यों में पंजाबी गुरुमुखी में चालू की जा चुकी है। जिस सच्चर फार्मूले के विरुद्ध संयुक्त पंजाब में ५६-५७ में हिन्दी-रक्षा आन्दोलन चलाया गया था, उस सच्चर फार्मूले में अल्पसंख्यकों को जो कुछ भाषाई अधिकार दिये गये थे, पंजाब सरकार उनको भी समाप्त करने पर तुल गई है। पंजाब में इतनी बड़ी संख्या में हिन्दी भाषियों पर भाषाई अन्याय लादा जा रहा है, परन्तु पंजाब सरकार का उधर ध्यान ही नहीं है। सरदार गुरुनामसिंह पहले अपना हुलिया ठीक कर लेवें, तभी दूसरे पड़ौसी राज्य हरयाणा की तरफ मुंह खोलें।

हम पंजाब के हिन्दी भाषियों से निवेदन करते हैं कि अपनी मांग को भाषा के नाम पर ही रखते रहें। साम्प्रदायिकता के नाम पर नहीं। खेद है कि पंजाब के कुछ उर्दू पत्रकार पंजाब के हिन्दुओं को उलटा सुझाव देते रहते हैं। पंजाब के हिन्दू को हिन्दू नाम से नहीं, अपितु हिन्दी भाषा के नाम से बोलना चाहिए। क्या पंजाबी केवल सिक्खों की भाषा है? और हिन्दी केवल हिन्दुओं की है? नहीं, कदापि नहीं। दोनों सम्प्रदायों के लोगों की यथेच्छ दोनों भाषाएं हो सकती हैं। इनमें हिन्दू, सिख की बात को बीच में घसीटना राजनीतिक भूल है। यदि पंजाब के हिन्दी भाषी राजनीतिक दल बन्दी को छोड़ कर भाषा के प्रश्न को रखेंगे तो इससे उनकी मांग में पूरा बल होगा। यदि राजनीतिक प्रश्न को बीच में लाया जावेगा, तो हिन्दी भाषियों को उनका अधिकार मिलने में सन्देह हो सकता है।

एक बात की तरफ और ध्यान रखना चाहिए कि पंजाबी भाषा को दोनों लिपियों में लिखने की छूट की मांग करनी चाहिये। भाषा को किसी एक लिपि से बान्धना उस भाषा के क्षेत्र को कम कर देना होता है। पहले भी पंजाबी, फारसी, देवनागरी और गुरुमुखी लिपि में लिखी जाती रही है। अब क्यों न लिखी जावे? इसमें क्या तुक है कि भाषा को केवल एक विशिष्ट लिपि से ही नत्थी किया जावे? उस भाषा के समर्थक स्वयं अपनी भाषा को संकुचित करने के मार्ग पर चलेंगे, तो इससे उसी भाषा बोलने वालों की हानि होती है, दूसरों की नहीं, अतः गुरुनामसिंह की पंजाबी सरकार को अपनी बुद्धि पर बल देकर इस समस्या पर भी विचार कर लेना चाहिए, अन्यथा यह होगा कि "चौबे जी छब्बे होने गये थे दूबे होकर रह गये।" पंजाबी का जो लोग विस्तार चाहते हैं, उनका स्वयं यह कर्त्तव्य है कि पंजाबी भाषा को चाहे जिस लिपि में लिखने की छूट देवें अन्यथा यह साम्प्रदायिक हठ ही समझी जावेगी कि पंजाबी भाषा को केवल गुरुमुखी लिपि में ही लिखना चाहिए।

गुरुमुखी लिपि के पक्षपाती सज्जनों को यह भी देखना होगा कि क्या गुरुमुखी लिपि में पर्याप्त वर्ण है? स्वर और व्यञ्जन पूरे हैं? संयुक्त अक्षरों में लिखने का ढंग है? हम समझते हैं, गुरुमुखी लिपि में संस्कृत आदि भाषाओं के शब्दों को शुद्ध नहीं लिखा जा सकता। गुरुमुखी लिपि पर हठ करने वाला कोई भी सज्जन "ज्योत्स्ना" शब्द को गुरुमुखी लिपि में लिख कर स्वयं भी शुद्ध नहीं पढ़ सकता। दूसरे की तो बात ही क्या है। अतः हम सुझाव देते हैं कि गुरुमुखी लिपि में सुधार किया जावे, जिससे अन्य भाषाओं के शब्दों को वह अपने में खपा सके। इन सुझाव को मानने में गुरुमुखी लिपि के मानने वालों की ही भलाई है। ऐसी एकमात्र लिपि देवनागरी ही है जिसमें जो बोला जावे, वही लिखा जा सकता है, और उसको पुनः उसी रूप में बोला जा सकता है।

हम पंजाब सरकार को हृदय से सुझाव देते हैं कि वह पंजाबी भाषा का द्वार दूसरी लिपियों के लिए भी खोल दें, इससे पंजाबी बढ़ेगी, घटेगी नहीं। तथा गुरुमुखी लिपि में उचित सुधार के लिए भाषा लिपि-विशेषज्ञों की एक साधिकार उपसमिति नियुक्त कर देवे, जिस पर विचार करके पंजाबी भाषा का क्षेत्र बढ़ाया जा सके। हमारे ये सुझाव स्वयं गुरुमुखी लिपि के पक्षपातियों की भलाई के लिए है न कि किसी दुराग्रह से ग्रस्त हैं।

हरयाणा सरकार से

चौ० बंशीलाल मुख्य मन्त्री हरयाणा राज्य सरकार से भी हम कहना चाहते हैं, कि पंजाबी नाम की दूसरी भाषा का स्थान हरयाणा में नहीं दिया जा सकता, पश्चिमी पंजाब से जो भाई हरयाणा में आकर बस गये हैं, उन सब की भाषा पंजाबी नहीं है, अपितु प्रायः अधिक संख्या हिन्दी भाषियों की है। गत जनगणना के आंकड़ों से यह बात सिद्ध हो चुकी है। अतः पंजाब सरकार की दुरभिसन्धिग्रस्त माग पर कदापि झुकना नहीं चाहिये। हम तो यह कहते हैं कि विभाजन के पश्चात् भी हिन्दी बहुसंख्यक क्षेत्र पंजाब राज्य में रह गये हैं। पंजाब सरकार से कहना चाहिए कि अपनी मांग से पहले उन हिन्दी क्षेत्रों का हरयाणा राज्य को समर्पण करें समस्त पंजाब में हिन्दी भाषियों की बहुसंख्या थी, परन्तु भारत सरकार ने साम्प्रदायिक हठके सामने झुक कर हिन्दी बहुसंख्यक क्षेत्र को पंजाबी क्षेत्र में अल्पसंख्यक बना डाला है। शाह कमीशन के निर्णय को भी भारत सरकार ने अभी तक नहीं माना है। अतः हरयाणा राज्य सरकार को अपनी मांग पर दृढ़ रहना चाहिये। समस्त हरयाणावासी इस सम्बन्ध में सरकार के साथ हैं और रहेंगे।

सभी नक्षत्रों में मनुष्य बसते हैं

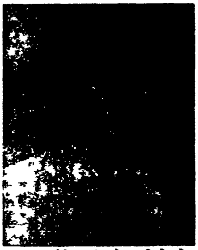
अभी अमेरिका ने घोषणा की है कि चांद पर प्रथम बार मानव को उतारा जावेगा। इससे चांद की अनेक बातों पर प्रकाश पड़ सकता है हम समझते हैं, कि पृथ्वी की भाँति चन्द्रमा में ही नहीं, अपितु सभी नक्षत्रों में मनुष्य आदि प्रजा बसती हैं। इस बात को सिद्ध करने के लिए हम "आर्यमर्यादा" के आगामी किसी अंक में अनेक प्रमाण प्रस्तुत करेंगे। इतना ही नहीं, जैसे पृथ्वी पर राज्यव्यवस्था है, अन्य नक्षत्रों में भी यही व्यवस्था है। आशा है, अमेरिका के इस सत्प्रयत्न से विज्ञान और इतिहास की अनेक गुत्थियाँ खुलेंगी।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ?
पूर्ण उद्धार करना शेष है !

श्री भैरवदत्त शुक्ल अध्यक्ष वैदिक परिषद् लगुचा (जि० खीरी)

देख ली पूर्ण स्वच्छन्दता की छटा।
मात चगेज की शक्ति होने लगी,
भ्रष्ट पाश्चात्य पथ का सहारा लिये
नीति भेद के बीज बोने लगी ॥
पगु शिक्षा मिली,व्यक्ति निबल बने,
लक्ष्य बेकार का एक बस नौकरी ।
शस्य-पशु-ह्रास लखकर निरन्तर
अमित,
भूति-लक्ष्मी सिसक क्षुब्ध रोने लगा ॥
किन्तु बन मूक तुम व्यर्थ बठ हुए,
जबकि हुकार करना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सारहे ?
पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !



शिशु विवाहो मे अन्तर न कुछ भी पडा वृद्ध भौरे कलो को अभी छेडते,
अथ-आधार लेकर मिटा प्रम-बल, चन्द सिक्के कुमारी-कटक घेरते।
जननियाँ बिक रही बकरियो की तरह, बेटियाँ प्राप्ति-उत्थान-साधन बनी,
वे नयी पीढियाँ राह पर मर रहो, भ्रण दम तोडते न्याय को टेरते,
रीतियो को अपावन युगो की जमी, मूल बेकार करना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ? पूर्ण उद्धार करना अभी शेष ! !
रूप-तन नैन के सामने बिक रहा, ल रहे सभ्य सज्जन सिहाये हुए।
लोटते राज पथ पर सुजन होश खो, पी सुरा-सुन्दरी, धन लुटाये हुए,
होटलो मे लिये ओट विश्राम की, बेच कौमार्य-मानुत्व हम पल रहे ॥
घोर नैतिक पतन बढ अकारण रहा, घूमते लाज-वैभव हटाये हुए,
कटु भयकर अनाचार अति चार का, पूर्ण सहार करना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ? पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !
हैं त्रिवेदी मगर वेद जाने नहीं, शुक्ल भी श्यामता से भरे दिख रहे ॥
मूल दीक्षित गये ज्ञान-दीक्षा सभी, दीन पाठक, दुबे दुबकना सिख रहे,
'जन्मना वर्ण' की रूढि पकडे हुए, 'कर्मणावर्ण' की त्याग व्याख्या सरल,
बीसवी कल-सदी मे युगो से घिसो, 'हानि से पूर्ण अस्पष्ट 'लिपि' लिख रहे ॥
त्याग कर्त्तव्य, सघष मे रत सभी, शुद्ध आधार करना अभी शेष !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ? पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !
खेद है ! बन्धु से बन्धु मिलना नही, ऐक्य सहयोग का नाम ही दूर है,
राग सब के अलग, तान सब की अलग, शाति उत्थान का काम ही दूर है,
दो गेटो मे सभी विश्व सिमटा हुआ, किन्तु परवाह अपनी न हमको तनिक।
रूसियो और अमरीकियो मे लगो,—होडविज्ञान की, शक्ति भरपूर है ॥
कर्णधारो ! न कर्त्तव्य भूलो जरा, विश्व-चीत्कार हरना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ?, पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !
आाइटम का न बम फूट पाया अभी हायड्रोजन अहकार बढने लगा,
एशिया खोल लोचन न पाया तनिक साज रण का धुंआधार दिखने लगा।
मत-मतान्तर बढा, 'वाद' पलने लगे एक ही रक्त के हो विपक्षी बने,
मौन भारत न मुख खोल कुछ कह सका, पाक-स्वर क्रूर विकराल
बनने लगा ॥
कूटनीतिक छलो मे न फँस भूलकर पुष्ट आकार करना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ?, पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !
दो विषमता मिटा, द्वद्व सारे हटा, हो पराधीनता दूर सब अर्थ की,
तीसरा गुट समन्वित सजा कर चलो, दूर कर जड कलह विश्व की व्यर्थ की।
जाति, मत, रग के भेद सब भूलकर, विश्व-कल्याण के राग गाते बढो !
मत्र जग-एकता का जगाते हुए, शुद्ध व्याख्या करो वेद के अर्थ की ॥
विश्वभर के कलह युद्ध-विद्वेष का, शान्त अगार करना अभी शेष है !
देश के नौनिहालो ! कहाँ सो रहे ? पूर्ण उद्धार करना अभी शेष है ! !

—!—

अत्यन्त आवश्यक संशोधन

"पाठक महानुभाव सुधार कर लेवें"—

'आर्यमर्यादा' के १५ जून ६९ के अक मे पृष्ठ दो के कालम दो के (ख) भाग की चौथी पक्ति मे "कोई उद्बोधक कारण होने से उनकी स्मृति होती ही नही" । इस पक्ति मे 'कारण' और 'होने' के बीच मे "न" बढा लिया जावे। यह दार्शनिक लेख है, अत उपर्युक्त सशोधन सहित उक्त पक्ति को पढा जावे। अब यह वाक्य इस प्रकार हो जावेगा—"कोई उद्बोधक कारण न होने से उन की स्मृति होती ही नही।"

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० २ का शेष

नित्य है और वही हिन्दू-धर्म का मूल है।

अमीन साहब का यह कहना कि हरिजनो का कोई धर्म, देवालय, मन्दिर, त्यौहार और पूजा-पाठ पद्धति नही है, वस्तु स्थति से अनभिज्ञता प्रकट करना है। यदि अमीन साहब की बात को सही मान ले तो प्रश्न उठता है कि ऐसी स्थिति मे जबकि हरिजनो का धर्म-देवालय आदि कुछ भी नही तो उन्हे इन चीजो को प्राप्त करने के लिए सघर्ष करने की क्या आवश्यकता थी ? ऐसी स्थिति मे जबकि उनका कोई धर्म नही है तो डा० अम्बेदकर को यह घोषणा करने की क्या आवश्यकता थी कि मैं हिन्दू-धर्म का परित्याग कर बौद्ध-धर्म ग्रहण कर रहा हू ? यदि हरिजनो का कुछ है ही नही तो भारतीय सविधान मे इस विषय के अन्तर्गत हरिजनो को सरक्षण देने की क्या आवश्यकता थी।

श्री जगजीवनरामजी यदि ४० वर्ष से हरिजनो को धर्मपरिवर्तन करने से रोक रहे हैं तो यह स्वय-सिद्ध है कि हरिजनो का कोई न कोई धर्म है अवश्य। यदि हरिजनो का कोई धर्म न होता तो अखिल भारतीय हरिजन सेवक सघ के अध्यक्ष श्री वियोगहरि को यह स्मरण दिलाने की आवश्यकता न पडती कि ३५ वर्ष पूव भारत के धुरधर शास्त्रियो ने व्यवस्था दी थी कि अस्पृश्यता शास्त्रोनुमोदित नही है।

शकराचार्य जी को ही हिन्दू-धर्म का एकमात्र प्रतिनिधि मानते हुए श्री अमीन साहब यह प्रश्न उठाते हैं कि 'क्या कुछ धार्मिक लोग, धर्मशास्त्री और धर्माचार्यों के अस्पृश्यता विरोधी बयान दे देने से हिन्दू-धर्म की प्राचीन मान्यतायें बदल जायेगी।' यदि महर्षि दयानन्द की कुरआन सम्बन्धी आलोचना को सत्यार्थप्रकाश मे पढने के उपरान्त सर सय्यद अहमद खाँ, मौलवी मुहम्मदअली एम० ए० और मौलाना आजाद आदि कुरआन भाष्य करते समय प्राचीन मुस्लिम कट्टरता का परित्याग कर उदारता का परिचय दे सकते हैं तो क्या यह सम्भव नही कि हिन्दू धर्म-शास्त्रियो व धर्माचार्यों के अस्पृश्यता विरोधी बयानो से हिन्दू-धर्म से अस्पृश्यता का, यदि वह उसमे है, उन्मूलन नही हो सकता ? यदि बयानों से प्राचीन मान्यताय बदल नही सकती तो वे शकराचार्य आदि के बयानो से मानव-समाज मे टिकी भी नही रह सकती।

हरिजनो की जो दयनीय अवस्था महाभारत युद्ध के पश्चात् से लेकर महर्षि दयानन्द के पूर्वकाल तक रही है उसमे आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ है। हरिजन भाई जिस मानसिक वेदना से पीडित होते रहे हैं वह भी प्राय. समाप्त होने को है। शास्त्रो मे वर्णित मान्यताओ को यदि जनमत नही मानता तो वे मान्यतायें लावारिस लाश की तरह शास्त्रो मे पडी दुर्गन्ध छोडती रहतो हैं। उससे जनता का नहीं शास्त्रो का ही अहित होता है। यदि स्पृश्यता सम्बन्धी मान्यतायें किसी धर्मग्रन्थ मे हैं भी तो उससे हरिजनो पर कुछ विशेष प्रभाव नही पडता क्योकि जनमत उन मान्यताओ के प्रतिकूल है। आज का हरिजन प्रत्येक दृष्टि से सम्पन्न होता जा रहा है। जो कमियाँ आज दिखाई दे रही हैं वे कल न रहेगी क्योकि भारत की आगामी पीढी इस योग्य बन जायेगी कि वह हरिजनो को स्वत अपने साथ लेकर आगे बढेगी।

अमीन साहब का हरिजनों की तुलना अमरीकी नीग्रो और अफ्रीकी हब्शियो से करना न्याय-सगत नही कहा जा सकता। भारत के हरिजन उन लोगो से कही ज्यादा सभ्य और मानवीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र मे व निरन्तर आगे बढ रहे हैं। (क्रमशः)

गताङ्क से आगे (क्रमश)

ओङ्कार-जप-विधिः

(४)

योग-दर्शन के अनुसार जप और उसका फल

(पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—पातजल योग-दर्शन मे ओङ्कार-जप-विज्ञान का प्रतिपादन सर्वाधिक उत्तमता के साथ किया गया है। ओङ्कारोपासना मे साधको को सर्वाधिक सहायता भी योग-दर्शन से ही प्राप्त होती है। अथवा यो को बात दूसरी है। व्यावहारिक जपानुष्ठान मे योग-दर्शन द्वारा मिलने वाली सहायता की अपेक्षा किसी प्रकार से भी नही की जा सकती। विज्ञजनो को इस विषय का अधिक विचार योग-दर्शन के किसी उत्तम भाष्य की सहायता से करना चाहिए। मुख्य जप-विधान और उस के प्रतिफल का सक्षिप्त उल्लेख यहा किया जा रहा है।

२—समाधि की सिद्धि के विभिन्न उपायो का उल्लेख करते हुए महर्षि पतजलि जी लिखते हैं —

ईश्वर प्रणिधानाद्वा ॥ [योग-दर्शन—१।२३]

ईश्वर के नाम का जप करने से और ईश्वर के प्रति परम-प्रेम=प्रगाढ भक्ति-भाव को अपने हृदय मे धारण करने से भी उत्तम=अधिकारी साधको और साधकाओ को समाधि की सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

३—यहा सूत्र मे "वा" पद का प्रयोग किया गया है। इस से विकल्प की सूचना मिलती है। "वा" का अर्थ हिन्दी भाषा मे "भी" होता है। इसका अभिप्राय यह है कि समाधि की सिद्धि के उपाय तो और भी कई हैं। उन मे से एक उत्तम उपाय यह ओङ्कार-जप अथवा ईश्वर के प्रति साधको का परम-प्रम भी है।

४—योग-दर्शनकार ईश्वर का स्वरूप दर्शाते हैं —

क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट पुरुष-विशेष ईश्वर ॥ [योग-दर्शन—१।२४]

क्लेश, कर्म, कर्म-फल और कर्म-फल की वासनाओ से असबद्ध जो सृष्टि रूपी पुरी मे वास करने वाला अर्थात् सर्वव्यापक=पुरुष विशेष है, उस को ईश्वर कहते हैं।

५—ईश्वर का यह लक्षण प्राचीन भी है, उत्तम भी। ईश्वरोपासना, साधना वा जपानुष्ठान आदि के कार्य-क्रम प्राय दो मुख्य कारणो से ही विफल हो जाया करते है। प्रथम कारण है ईश्वर के विषय मे सदोष मन्तव्यो का होना और दूसरा कारण है। अपेक्षित शारीरिक और मानसिक पवित्रता का अभाव। इन दोनो के विषय मे हम आगे चलकर कुछ विशेष उल्लेख करेंगे। ईश्वर के विषय में यहाँ इतना अवश्य जानना चाहिये कि ईश्वर के स्वरूप को परिमार्जित रूप मे भक्त-समुदायो के सन्मुख प्रस्तुत करने मे आधुनिक-युग के निर्माता और वैदिक उपासनावाद के पुनरुद्धारक महर्षि दयानन्द जी ने सर्वाधिक पुरुषार्थ किया था।

६—"स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश' के आरम्भ मे ही वे लिखते हैं —

"ईश्वर" कि जिस के ब्रह्म, परमात्मादि नाम है, जो सच्चिदानन्दादि लक्षण युक्त है, जिस के गुण, कर्म स्वभाव पवित्र है, जो सर्वज्ञ, निराकार सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सवशक्तिमान् दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवो को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षण युक्त है, उस को परमेश्वर मानता हूँ।'

७—'आर्योद्देश्यरत्नमाला" के आरम्भ मे लिखते है .—

"ईश्वर—जिस के गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूप सत्य ही है, जो केवल चेतन मात्र वस्तु है, तथा जो अद्वितीय, सर्वशक्तिमान्, निर्विकार, सर्वत्र व्यापक, अनादि और अनन्तादि सत्यगुणवाला है, और जिस का स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी, दयालु और अजन्मादि है, तथा सर्व जीवो को पाप-पुण्य के फल ठीक-ठीक पहुचाता है, उस को ईश्वर कहते हैं।"

८ (क)—महर्षि दयानन्द द्वारा निर्धारित आर्यसमाज का दूसरा नियम तो प्रसिद्ध ही है —

'ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टि-कर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

८ (ख)—सच्चिदानन्दादिरनन्तस्वरूप, नित्यशुद्धबुद्ध मुक्तस्वभाव, अद्वितीयानुपम, जगदादिकारण अज, निराकार, सवशक्तिमान् न्यायकारिन्, जगदीश, सवजगदुत्पादकाधार, सनातन, सर्वमगलमय, सवस्वामिन् करुणाकरास्मत्पित, परम सहायक, सर्वानन्दप्रद, सकलदु ख विनाशक, अविद्यान्धकारनिर्मूलक, विद्यार्कप्रकाशक, परमैश्वर्यदायक, साम्राज्यप्रसारक, अधमोद्धारक पतितपावन, मान्यप्रद, विश्वविनोदक, विनयविधिप्रद, विश्वासविलासक, निरजन, नायक, शर्मद, नरेश, निर्विकार, सर्वान्तर्यामिन्, सदुपदेशक, मोक्षप्रद, सत्यगुणाकर, निर्मल, निरीह निरामय, निरुपद्रव, दीनदयाकर, परमसुखदायक, दारिद्रयविनाशक, निर्वैर विधायक, सुनीतिवर्धक, प्रीतिसाधक, राज्यविधायक, शत्रुविनाशक, सर्वबलदायक, निर्बलपालक, सुधमसुप्रापक, अर्थसुसाधक, सुकामवर्धक, ज्ञानप्रद, सन्ततिपालक, धर्मसुशिक्षक, रोगविनाशक, पुरुषार्थप्रापक, दुर्गुणनाशक, सिद्धिप्रद, सज्जनसुखद, दुष्टसुताडन, गर्वकुक्रोधलोभविदारक, परमेश, परेश, परमात्मन् परब्रह्मन्, जगदानन्दक, परमेश्वर, व्यापक, सूक्ष्माच्छेद्य, अजरामृतामय-निर्बन्धानादे, अप्रतिमप्रभाव निर्गुणातुल, विश्वाद्य, विश्ववन्द्य, विद्वद्विलासक, इन्याद्यनन्तविशेषणवाच्य, मङ्गलप्रदेश्वर। इत्यादि अनेक नामो से ऋषि दयानन्द ने आर्याभिविनय के प्रथम मन्त्र के व्याख्यान मे ईश्वर को सम्बोधन रूप मे वर्णित किया है। यही ता ईश्वर भक्ति की पराकाष्ठा का द्योतक है।

९—योगिराज भर्तृहरिद्वारा विरचित "नीति-शतक" का प्रथम श्लोक भी ईश्वर के स्वरूप को बहुत उत्तमता से दर्शाता है। यथा—

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तत्तिन्मात्रमूर्त्तये।
स्वानुभूत्येकमानाय नम शान्ताय तेजसे ॥

अर्थ—जो दिशा और काल आदि के बन्धन से रहित, अनन्त गुण कर्म और केवल चेतन स्वरूप, (मूर्ति का भाव यहाँ स्वरूप से है) और स्वभाव युक्त, ज्ञानस्वरूप, शान्त, प्रकाशको का भी प्रकाश और केवल अपने-अपनी अनुभव से ही जानने योग है, उस एक और सर्वोपरि देवाधिदेव को मैं बारम्बार नमस्कार करता हू।

१०—यदि साधको और साधिकाओ के ईश्वर विषयक मन्तव्य सदोष वा धूमिल होगे, तब तो उन के जीवन भी सदोष और धूमिल बन ही जायेंगे। शारीरिक और मानसिक पवित्रता के अभाव मे तो उपासना का कोई विधान कभी भी सफल न होगा। पूर्ण पवित्रता-प्रसाधन के लिये साधक-साधिकाओ को पाचयमो और पाच नियमो का प्रतिपालन दृढतापूर्वक आमरण करना चाहिये। इस विषय का विस्तृत उल्लेख मैंने अपनी पुस्तक 'यम-नियम-प्रदीप" अर्थात् "सदाचार-चन्द्रिका" मे किया है। इस "ओङ्कार-जाप-विधि" मे भी यमो और नियमो का सक्षिप्त उल्लेख आगे होगा।

११—यहा पातजल-ईश्वरवाद को ही अनुक्रम पूवक दर्शाता हू —

तत्रनिरतिशय सर्वज्ञबीजम् ॥ [योग-दशन—१।२५]

उस ईश्वर मे निरतिशय सर्वज्ञता एक ऐसा निमित्त है, जो और किसी मे नही है।

१२—ज्ञान का सर्वप्रथम प्रकाशक ईश्वर ही है —

स एष पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात् ॥ [योग-दर्शन—१।२६]

वह यह [ईश्वर] पूर्वजो का भी गुरु है, क्योकि यह काल से कटत नही है।

१३—ईश्वर का निज नाम "ओम्' हो है—

तस्य वाचक प्रणव ॥ [योग-दर्शन—१।२७]

शेष पृ० ६ पर

पृ० ५ का शेष

उस ईश्वर का वाचक=निज नाम प्रणव=ओम् है।

१४ (क)—यहाँ ईश्वर का निज नाम अर्थात् प्रतिबोधक "ओम्" पद को बतलाया गया है। इस "ओम्" का और ईश्वर का वाच्य-वाचक-भाव सम्बन्ध है।

१४ (ख)—भावार्थ में ऋषि दयानन्द लिखते हैं—"मदीयं सुलक्षण पुत्र वत्प्राणप्रियं निजस्य नामौइमितिवर्तते ।। मेरे सुलक्षणों से युक्त पुत्र के तुल्य प्राणों से प्रिय प्यारा मेरा निज का नाम "ओ३म् यह है।"

१५—योग-दर्शन के भोज-वृत्ति नामक भाष्य में लिखा है—

प्रकर्षेण नूयते स्तूयते-अनेति नौति स्तौति—इतिवा प्रणव ओङ्कारः।

नम्रता से जिसकी स्तुति की जाये, जिस के द्वारा स्तुति की जाये, अथवा भक्त-समुदाय उत्तमता से जिसकी स्तुति करता है उस को प्रणव कहते हैं। यह प्रणव ओङ्कार ही है।

१६—योग-दर्शन के सुप्रसिद्ध भाष्यकार श्री स्वामी ओमानन्द जी महाराज अपने "पातंजल योग-प्रदीप" नामक उत्तम भाष्य में इस सूत्र पर अपने विशेष वक्तव्य में लिखते हैं:—

'शास्त्रों में कहीं-कहीं ऐसा वर्णन आया है कि प्रणव-ध्वनि केवल ध्यान द्वारा अनुभव करने योग्य है। उसका यथार्थ में मुख से उच्चारण होना असम्भव है। तथापि गौण रूपेण जो प्रणव-मन्त्र उच्चारण किया जाता है, वह अक्षरमय है। अर्थात् अ, उ और म् ओङ्काररूपी प्रणव होता है। जिस के तीनों अक्षरों में त्रिगुणमयी प्रकृति क्रमशः अपने तीनों गुणों तमस, रजस और सत्त्व अथवा स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों जगत् सहित तथा सर्वशक्तिमान् परमेश्वर उन के अधिष्ठाता विराट्, हिरण्यगर्भ और ईश्वर रूप से अथवा सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की अपेक्षा से ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूप से विद्यमान् हैं और प्रणव ही ईश्वर रूप है।"

१७—वे आगे लिखते हैं:—

"वैज्ञानिक-दृष्टि से प्रणव का स्वरूप यह है कि जहाँ कोई कार्य है, वहाँ अवश्य कम्पन होगा। और जहां कम्पन होगा, वहाँ अवश्य कोई शब्द होगा। सृष्टि के आदि कारण रूप कार्य की ध्वनि ही ओङ्कार है। प्रणव-ध्वनि ही ओङ्कार है। प्रणव-ध्वनि रूप ध्वनि-आत्मक शब्द का रूप वर्णात्मक प्रति शब्द होने के कारण शाब्दिक ओङ्कार अथवा शब्दातीत प्रणव दोनों ही पूर्वापर सम्बन्ध से ईश्वर वाचक हो कर "प्रणव" कहलाते हैं।"

१८—वे आगे लिखते हैं:—

"प्रणव ध्वनि-आत्मक होने के कारण उस का कोई भी अंग मुख से उच्चारण करने योग्य नहीं है। किन्तु मानसिक जप से परे केवल ध्यान की अवस्था में, अन्तःकरण में ही प्रणव-ध्वनि सुनाई दे सकती है। उसी ध्वनि-आत्मक प्रकृति के आदि शब्द, ईश्वर-वाचक प्रणव का वर्णात्मक प्रति शब्द उपासनाकाण्ड की सिद्धि के लिये बतलाया गया है। उसी वर्णात्मक प्रणव प्रति शब्द को "ओङ्कार" कहते हैं।

१९—वे आगे लिखते हैं:—

"यह ओङ्कार अर्थात् वर्णात्मक प्रणव अ, उ, म् के सम्बन्ध से कहा गया है। इस वाचक प्रणव और वाच्य ईश्वर में अनादि और अविमिश्र [नित्य] सम्बन्ध है। इस वाचक अर्थात् वर्णात्मक प्रणव के मानसिक जाप की परिपक्वावस्था के पश्चात् योगी केवल ध्यान-रूप ध्वनि-आत्मक प्रणव की भूमि में पहुँच जाता है। उस पर पूर्ण अधिकार को प्राप्ति असम्प्रज्ञात-समाधि के प्राप्त करने में सहायक होती है।"

२०—वे फिर लिखते हैं:—

"योग-मार्ग पर चलने वाले को उचित है कि "ओम्" नाम से ही ईश्वर की उपासना करे। क्योंकि यही उस का मुख्य, अनादि और नित्य नाम व्यापक अर्थ वाला है। अन्य सब गौण और संकीर्ण अर्थ वाले हैं। सारी श्रुतियाँ और स्मृतियां उसी "ओम्" का मुख्य रूप से वर्णन कर रही हैं।"

२१—अपने "पातंजल-योग,प्रदीप" की विस्तृत भूमिका में पृष्ठ—६५ पर श्री स्वामी ओमानन्द जी लिखते हैं:—

"यह "ओम्" की मात्राओं द्वारा उपासना है। अर्थात् "ओम्" के अर्थों की भावना करते हुए वाणी से जाप करना—एक मात्रा वाले अकार "ओम्" की उपासना है। इस में स्थूल-शरीर का अभिमान रहता है। इस लिये स्थूल-शरीर के सम्बन्ध से जो आत्मा की संज्ञा विशेष है, वह उपासक होता है और स्थूल-जगत् के सम्बन्ध से जो परमात्मा की संज्ञा विराट् है, वह उपास्य होता है।"

२२—आगे लिखते हैं:—

"ओम्" के मानसिक जप में अकार, उकार दो मात्रा वाले "ओम्" की उपासना होती है। इस में सूक्ष्म-शरीर का अभिमान रहता है। इस लिये सूक्ष्म-शरीर के सम्बन्ध से जो आत्मा की संज्ञा तैजस् है। वह उपासक होता है और सूक्ष्म-जगत् के सम्बन्ध से जो परमात्मा की संज्ञा हरिण्यगर्भ है, वह उपास्य होता है।"

२३—आगे लिखते हैं:—

"जब मानसिक जप भी सूक्ष्म होकर केवल "ओम्" का ध्यान अर्थात् ध्वनि ही रह जाता है, तब यह अकार, उकार, मकार तीनों मात्रा-वाले पूरे "ओम्" की उपासना है। इस में कारण-शरीर का अभिमान रहता है। इस लिये कारण-शरीर के सम्बन्ध से आत्मा की जो संज्ञा प्राज्ञ है, वह उपासक होता है। और कारण जगत् के सम्बन्ध से परमात्मा की जो संज्ञा ईश्वर है। वह उपास होता है।"

२४—आगे लिखते हैं:—

"जब यह तीन मात्रा वाली ध्यान रूप वृत्ति सूक्ष्म होते-होते निरुद्ध हो जाये, तो अमात्र विराम रह जाता है। यह कारण-शरीर और कारण-जगत् दोनों से परे शुद्ध परमात्मा प्राप्ति रूप स्वरूप स्थिति है, जो प्राणिमात्र का अन्तिम ध्येय है।"

२५—सांख्य और योग दोनों मार्गों के विषय में वे अपना निर्णय इन शब्दों में देते हैं।

"सांख्य में उत्तम अधिकारियों के लिये असम्प्रज्ञात-समाधि लाभ का विशेष उपाय—

"ध्यानं निर्विषयं मनः।"

इस के द्वारा जो वृत्ति आये, उस को हटाना होता है। अन्त में सब वृत्तियाँ रुक जाने पर निरोध करने वाली वृत्ति का भी निरोध कर के स्वरूप स्थिति को प्राप्त करना होता है। योग का, भक्ति का लम्बा मार्ग सुगम है। यह सांख्य के ज्ञान का छोटा मार्ग उस से कठिन है।" (क्रमशः)

गतांक से आगे—

किसान

श्री योगीन्द्र पाण्डेय, ग्राम लखौलिया, (बलिया)

ऐसे हैं अत्यल्प किसान, जो करते मद्यों का पान,
खाकर कम भोजन हैं जीते, फिर भी मद्य आदि हैं पीते,
गिर-पड़ करते हैं चीत्कार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
पी शराब, दारू औ' ताड़ी, कर्ज माँग, बेची घर बाड़ी,
पास नहीं पैसे रहते हैं, पूछो तो ऐसा कहते हैं—
'हम हैं आदत से लाचार', कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
पत्नी बच्चे रोया करते, दाने-दाने को हैं मरते,
मगर मोह उनका तुम तजकर, बिनाकाम भ्रमते हो दिनभर,
छोड़ सदा अपना घर-बार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
कौन तुम्हारे मन को जाने, प्रातः जाते ताड़ी खाने,
उस स्थल को नित ही जाते, जाकर वहाँ खड़े हो जाते,
बना बड़ी-सी एक कतार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
पी ताड़ी गिरते पड़ते हो, अपने में पिटते लड़ते हो,
नित अपना सिर फोड़ा करते, पर यह व्यसन न छोड़ा करते,
बहती तन से शोणित-धार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

—क्रमशः

विचारविमर्श—

यज्ञ के अधिकारी

(श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी, वेद सदन, महारानी पथ, इन्दौर-२ (म० प्र०)

पात्रता की आवश्यकता

यज्ञ करने एवं कराने के अधिकारीजनों को ही यज्ञ करना एव कराना चाहिये। सामान्य रूप से सभी वर्ण के जनो को यद्यपि यज्ञ का अधिकार है परन्तु उसकी पात्रता विशेष रूप से प्राप्त भी करनी चाहिये। जो व्यक्ति यज्ञ पात्रता सम्पादन नही करते हैं, वे अपात्र व्यक्ति सामान्य रूप से यज्ञ के अधिकारी होने पर भी अनधिकारी श्रेणी में परिगणित किये जाते हैं। उनको यज्ञ के साथ सयुक्त करने से अनेक दोष एव विघ्न उत्पन्न होकर यज्ञ के अभिष्ट फल की प्राप्ति में अनेक प्रकार से बाधक रूप में हो जाते हैं।

अपात्रता से दोषोत्पत्ति

'ये ते शत वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्त.।
तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुचन्तु मरुत स्वर्काः।।

इस मन्त्र में सैंकडों और सहस्रों प्रकार के यज्ञ सम्बन्धी पाशों से मुक्त होने की प्रार्थना का विधान हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने को बाध्य करता है कि हमारे ही अनेक प्रकार के दोषों से वे यज्ञ के पाश हमें दुःख के हेतु रूप होते हैं और यश द्वारा ही उनसे मुक्ति भी होती है। उन अनेक प्रकार के दोषों में अनधिकारी एवं अपात्र व्यक्तियों से अत्यधिक दोष एव विघ्नों की उत्पत्ति होने से ही उनको अधिकार से वंचित किया गया।

अपात्र अनधिकारी है

साधक एवं बाधक कर्मों मे जो जितना बलवत्तर इष्ट परिणाम देने वाला होता है तदनुसार यज्ञ से इष्ट की प्राप्ति होती है और जो बलवत्तर अनिष्ट परिणाम देने वाला होता है उससे अमंगल या अनिष्ट भी होता है इसलिये याज्ञवल्क्य ने शतपथ ब्राह्मण में लिखा:—

"एष तमः प्रविशति एनं वा तमः प्रविशति यो
अयज्ञियान् यज्ञेन प्रसजति।" (शतपथ. ५।३।२।२)

अर्थात्—'वह अन्धकार में प्रवेश करता है, अथवा इसमें अन्धकार प्रवेश करता है जो यज्ञ के अनधिकारियों को यज्ञ से सयुक्त करता है।' अतः यज्ञ के अधिकारी पुरुषों का ही यज्ञ में यजमान, ऋत्विजादि रूप में उपयोग करना चाहिये।

पापी अपात्र है

इसी प्रकार ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है :—
तस्माद् ब्राह्मणेन अयज्ञियः न पापः पुरुषो याज्यः।'
(ऐतरेय ब्राह्मण १९।३

अर्थात्—'इसलिये यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण ने जो यज्ञ का अधिकारी पुरुष नहीं है और जो पाप कर्मरत्त पुरुष है उसको यज्ञ न करावे अथवा उससे यज्ञ न करावे।' –जाति, अवस्था स्थिति, वर्ण, योग्यता आदि की दृष्टि से अधिकारी व्यक्ति को भी पापाचरण या मलिन आचरण के कारण यज्ञ करने कराने की पात्रता नही रहती है, यह इससे स्पष्ट है। अर्थात पवित्र आचरण वाला सदाचारी, धर्मात्मा, श्रद्धावान्, व्रतादि कर्म से दीक्षित, शुद्ध अन्तःकरण वाला व्यक्ति यज्ञ का अधिकारी है।

अयज्ञोपवीती को यज्ञ करने एवं कराने का भी अधिकार नहीं है

उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त और क्या विशेषता होनी चाहिये इसका प्रतिपादन ऐतरेय ब्राह्मण में निम्न प्रकार प्राप्त होता है:—

'यज्ञोपवीती एवं अधीयीत यजेत याजयेत वा यज्ञस्य प्रसृत्यै।

अर्थात् जिसने विधिवत् यज्ञोपवीत धारण किया हुआ है वही वेदाध्ययन का अधिकारी है। उसी को यज्ञ करने और कराने का भी अधिकार है। इस प्रकार जो यज्ञोपवीती उपरोक्त गुणों से युक्त हो उसे यज्ञ का अधिकार है। इसके विपरीत आचरण करने वाले को यज्ञ का अनधिकारी मानना चाहिये। क्योंकि अधिकारी व्यक्ति से यज्ञ कराने या उसके द्वारा यज्ञ करने से यज्ञ की विस्तृति, प्रसार, समृद्धि एवं व्यापकता होती है। इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि जिसने यज्ञोपवीत धार नही किया हुआ है उसे यज्ञ करने-कराने का अधिकार नहीं है।

अयज्ञोपवीती का यज्ञ निष्फल होता है

अयज्ञोपवीती व्यक्ति यदि यज्ञ करेगा या करावेगा तो दोष होग यज्ञ नष्ट होगा या निष्फल ही होगा। क्योंकि—

"विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम्।" (कात्यायन स्मृति

अर्थात—यज्ञोपवीत और शिखा से रहित व्यक्ति जो कुछ भी यज्ञादि का करता कराता है, वह निष्फल (इष्टफल रहित-सम्पादक) हो जाता है यह विधान स्पष्ट प्रतिपादित करता है कि यज्ञ करने कराने वाले को यज्ञ पवीत धारण करना ही चाहिये।

यज्ञोपवीती को ही यज्ञ का अधिकार है

महर्षि स्वामी दयानदजी ने संस्कारविधि में बालक के उपनयन यज्ञोपवीत हो जाने के पश्चात ही उसके हाथ से आहुतिया देने का विधा किया है तथा उपनयन के बाद ही वेदारंभ होता है, इससे पूर्व नहीं। त नित्य संध्योपासन एवं अग्निहोत्र विधि का शिक्षण एवं नित्य कर्मों उसको करने का विधान किया है।

इसी प्रकार महर्षि दयानदजी ने अपने यजुर्वेद भाष्य अ. ६ के म १० पर लिखा है कि 'अब यज्ञोपवीत होने के पश्चात् शिष्य को अत्या श्यक है कि विद्या, उत्तम शिक्षा ग्रहण और अग्नि होत्रादिक का अनुष्ठा करे --ऐसा उपदेश गुरु किया करे। इससे भी स्पष्ट है कि अग्नि होत्रादि के अनुष्ठान करने का अधिकार यज्ञोपवीती को ही है।

पत्नी रहित अपात्र है

अयज्ञिय पापी और यज्ञोपवीत रहित व्यक्ति के अतिरिक्त यज्ञ लिये अन्य कौन अपात्र है इसके लिये --

"अयज्ञो वा एष यो अपत्नीक । (तैतिरीय ब्रा०।२।२।२५) अर्था जो व्यक्ति पत्नी रहित है या जो बिना पत्नी का है वह भी यज्ञ के कर कराने का अधिकारो नही है। क्योकि--

"अथोअर्धोवा एष आत्मनः य पत्नी" (तै.ब्रा. ३।३।३।५)

पत्नी पुरुष का आधा भाग है। अत पत्नी रहित यज्ञ खड़ित यज्ञ हुअ यह मानना चाहिये। शतपथ में भी कहा है --

"अर्धोवा एष यज्ञस्य यत्पत्नी"। (शतपथ २।४।३।२९)

अर्थात् जो पत्नी है वह निःसन्देह यज्ञ का आधा भाग है। अखडित होक हो, सम्पूर्ण भाव से यज्ञ का अनुष्ठान करने की पात्रता होती है। खण्ड भाव ही आसुर भाव है और सम्पूर्ण भाव ही देवभाव है। यज्ञ में आसुर भाव, खण्डभाव का नाश और देव भाव की वृद्धि की जाती है। अत सपत्नीक व्यक्ति ही यज्ञ करने–कराने का अधिकारी होता है। तभी य को सफलता होती है।

पत्नी सहित यज्ञ करना चाहिये

सस्कार रत्न माला में इसकी पुष्टि निम्न प्रकार उपलब्ध होती है:

'न गृहं गृहमित्याहुः गृहणी गृहमुच्यते।
तयाहि सहितः सर्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते।।

अर्थात्—मृत्तिकादि से निर्मित घर की घर संज्ञा नहीं है अपितु वास्तविक रूप से पत्नी की ही घर संज्ञा है। क्योंकि पत्नी के साथ ही धर्मादि कार्यों के अनुष्ठान करने से समस्त पुरुषार्थों की सिद्धि होती है। इसलिये स्मृति में कहा है :-"यजमानः सपत्नीको जुहुयात्।"

यज्ञादि कर्मों में सपत्नीक यजमान आहुति प्रदान करे।

अंगहीन भी अपात्र है

यज्ञ के लिये पूर्वोक्त पात्रता होने पर भी "नागहीनम्"
अंगहीन व्यक्ति भी यज्ञ का अधिकारी नही है।

आश्रम व्यवस्थानुसार यज्ञों की पात्रता

परन्तु उपरोक्त पात्रता के आदेश नित्य के अग्निहोत्रादि कर्म एवं संस्कार कार्यों के लिये आवश्यक नही है क्योंकि नित्य का संध्याग्निहोत्र

शेष पृ० ८ पर

"यहोवा और उसके अनीश्वरीय कृत्य"

(ले०—अनूपसिंह बी ए बी टी दयानन्द भवन, मुजफ्फरनगर)



बाइबल मे ईश्वर को यहोवा नाम से पुकारा है। इस पुस्तक यहोवा का जो वर्णन आता है ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के कुल विपरीत है।

एकदेशी—"...... ईश्वर का मा जल के ऊपर डोलता था।" (उत्पत्ति अ० १ आ० २)

पश्चाताप—" तब आदमी को थवी पर उत्पन्न करने से पर-वर पछताया और उसे अतिशोक हुआ। तब परमेश्वर ने कहा कि आदमी जिसे मैंने उत्पन्न किया, आदमी से लेके पशुनलो और रेंगवयो को और काश के पक्षियो को पृथिवी पर से नष्ट करूँगा क्योकि उन्हे बनाने से मैं ताता हू।" (उत्पत्ति अ० ६ आ० ६ से ७ तक)

इस पर महर्षि दयानन्द समीक्षा करते हुए लिखते हैं—'इसलिय यह ईश्वर और न यह (बाइबल) ईश्वरकृत पुस्तक हो सकता है जस वेदाक्त मेश्वर सब पाप-क्लेश दु ख, शोकादि से रहित 'सच्चिदानन्दस्वरूप' है, सको ईसाई लोग मानते वा अब भी मान तो अपने मनुष्य जन्म को सफल र सके।"

यहोवा ऊपर चढ़ गया—"तब परमेश्वर ने इब्राहीम से बात करना बन्द और उसके पास से ऊपर चढ गया। (उत्पत्ति अ० १७ आ० २२)

क्या परमेश्वर पक्षी था जो ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर आता ाता रहता था?

औरत को नंगी करना—यहोवा परमेश्वर औरत का नंगी करने तथा से प्यास से मार डालने के लिए कहता है—" मै उसके (औरत) के स्त्र उतार कर उसको मरुस्थल के समान और मरुभूमि जैसी बनाऊँगा ौर उसे प्यास से मार डालूँगा।" (होशो अ० २ आ० ३)

सत्यानाश— जितने लोगो को तेरा परमेश्वर यहोवा तेरे वश मे कर गा, तू उन सब को सत्यानाश करना, उन पर दया की दृष्टि न रना......।" (व्यवस्था विवरण अ० १७ आ० १६)

निर्दयी यहोवा—"...... यहोवा ने आकाश से बडे-बडे पत्थर बरसाये ौर वे मर गए।" (यहोशू अ० १० आ० ११)

भाषा-भेद—व्यक्ति एक दूसरे की भाषा न समझ सके इसके लिए होवा ने भाषा मे भेद डाल दिया।" तब परमेश्वर ने कहा कि देखो य ोग एक ही है और उन सब की एक ही बोली है अब वे ऐसा-ऐसा कुछ रने लगे सो वे जिस पर मन लगावेगे उससे अलग न किए जावेगे। आओ म उतरे और वहाँ उनकी भाषा को गडबडावें जिससे एक दूसरे की बोली समझे। तब परमेश्वर ने उन्हे वहाँ से सारी पृथिवी पर छिन्न-भिन्न कया और वे उस नगर के बनाने से अलग रहे।"

(उत्पत्ति अ० ११ आ० ६ से ८ तक)

महर्षि दयानन्द की समीक्षा—'जब सारी पृथिवी पर एक भाषा और ोली होगी उस समय सब मनुष्यो को परस्पर अत्यन्त आनन्द प्राप्त हुआ ोगा परन्तु क्या किया जाय यह ईसाइयो के ईर्ष्यक ईश्वर ने सब की भाषा डबडा के सब का सत्यानाश किया उसने यह सब बडा अपराध किया। या यह शतान से भी बुरा काम नही?"

मास-भक्षण— 'अबिरहाम झुण्ड की ओर दौडा गया और एक अच्छा ोमल बछडा लेके दास को दिया और उसने भी उसे सिद्ध करने मे चटक कया। और उसने मक्खन और दूध और वह बछडा जो पकाया था लिया ौर उसके आगे धरा और आप उनके पास पेड तले खडा रहा और न्होने खाया।" (उत्पत्ति अ० १८ आ० ७ से ८ तक)

समीक्षा—"अब देखिए! सज्जन लोगो! जिनका ईश्वर बछडे का ास खावे और उसके उपासक गाय बछडे आदि पशुओ को क्यो छोडें? सनको कुछ दया नही और मांस के खाने मे आतुर रहे वह बिना हिंसक नुष्य के ईश्वर कभी हो सकता है? और ईश्वर के साथ दो मनुष्य न जाने कौन थे? इससे विदित ह ता है कि जंगली मनुष्यो की एक मण्डली थी उनका जो प्रधान मनुष्य था उसका नाम बाइबल मे ईश्वर रक्खा होगा इन्ही बातो से बुद्धिमान लोग इनके पुस्तक को ईश्वरकृत नही मान सकते और न ऐसे को ईश्वर को समझते हैं।" (सत्यार्थप्रकाश)

पाठको की सूचनार्थ ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव को लिखना अप्रासगिक न होगा। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के दूसरे नियम मे लिखा है—"ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।'

पृ० ७ का शेष

ब्रह्मचारी और वानप्रस्थ भी करते हैं। अत यज्ञ को भी आश्रम व्यवस्था के अनुसार पात्रता मान्य की गई है जो कि निम्न प्रकार है-

(१) ब्रह्मचारी क लिये यज्ञ-सध्या एव दनिक अग्निहोत्र आवश्यक है।
(२) गृहस्थ के लिये यज्ञ—पच महायज्ञ, सस्कार, काम्य इष्टिया, श्रौत स्मार्त्तादि यज्ञ हैं। गृहस्थ ही सब प्रकार के यज्ञो का अधिकारी है।
(३) वानप्रस्थ के लिय यज्ञ-सन्ध्यहवनादि पचमहायज्ञ तथा पर्वादि यज्ञ हैं।
(४) सन्यासी के लिय यज्ञ—केवल ब्रह्मयज्ञ है। अर्थात् सन्ध्योपासन, योगाभ्यास, स्वाध्याय, प्रवचन आदि हो उसके यज्ञ हैं। पूर्वोक्त अन्य आश्रमियो के अनुष्ठान करन योग्य यज्ञ उसक करने कराने क लिय नही है।

सन्यासियों के लिये यज्ञ नही है

महर्षि स्वामी दयानन्दजी सरस्वती ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका मे लिखा है—

"यदबाह्य क्रियामयमस्ति सन्यासिना तन्न।"

"जो बाह्य अग्नि मे यज्ञादि कर्मकाण्ड किये जाते हैं वे सन्यासियो के लिय नही है।" यही व्यवस्था प्राचीन काल से मान्यता को प्राप्त किये हुए है और तदनुसार व्यवहार ो भा है।

वर्ण व्यवस्थानुसार पात्रता

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र सभी को यज्ञ करने का अधिकार है। शूद्रादि सज्ञा जन्म जाति मूलक नही है अपितु गुण कर्म स्वभावानुसार है। प्रत्यक को यज्ञ का अधिकार है। अत अधिकार के कारण सभो को पात्रता प्राप्त करनी चाहिये। शूद्र को भी यज्ञ करना चाहिय। यज्ञ स सब प्रकार की उन्नति होती है ऐसा यजुर्वेद क १८ वें अध्याय मे वर्णित है। उन्नति करने का अधिकार सबको है। विद्वानो की सगति करना, उनका सत्कार, दान आदि शुभ कर्म करना सभी का अधिकार है। अत महर्षि स्वामी दयानन्दजी सरस्वती ने शूद्रो को भी यज्ञ का अधिकार प्रदान कर उनको उन्नत बनने बनाने का मार्ग प्रशस्त किया। सस्कार विधि म लिखा कि—

'सब सस्कारो मे मधुर स्वर से मन्त्रोच्चारण यजमान ही करे .... यदि यजमान न पढा हो तो इतने मन्त्र तो अवश्य पढ लेवे। यदि कोई कार्यकर्ता जड, मन्दमति, काला अक्षर भेंस बराबर जानता हो तो वह शूद्र है। अर्थात शूद्र मन्त्रोच्चारण मे असमर्थ हो तो पुरोहित ऋत्विज् मन्त्रोच्चारण करे और कर्म उसी मूढ यजमान के हाथ से करावे।'

यज्ञ कराने का अधिकार केवल ब्राह्मण को है

यज्ञ करने का अधिकार सबको है परन्तु यज्ञ कराने का अधिकार सबको नही है। कवल वेदज्ञ ब्राह्मण को ही यज्ञ कराने का अधिकार है, अन्यो को नही। न जानन वाले से यज्ञ कराने से यज्ञ यथाविधि हो ही नही सकता है। सस्कारविधि के गृहस्थाश्रम प्रकरण मे चारो वर्णो के स्वरूप लक्षण मे ब्राह्मण के लक्षण में ही - यजन याजन - ये दोनो लिखे हैं। अर्थात् यज्ञ करना और कराना। अन्य वर्णों के लिय यज्ञ करने का उल्लेख है परन्तु यज्ञ कराने का नही है। इसी प्रकार यज्ञ कराकर जीविकार्थ दान -दक्षिणा लेने का भी ब्राह्मण के लिये लिखा है अन्यो को नही। अत यज्ञ कराने का अधिकार वेदज्ञ ब्राह्मण को है और इसके द्वारा अपनी वृत्ति भी चलाने का अधिकार है। इसी प्रकार महर्षि स्वामी दयानन्द जी न उदयपुर महाराणा को भेजे पत्र में लिखा है कि चारो वेदो के ब्राह्मणो का वरण करके यज्ञ करावे।"

यदि अन्य वर्णस्थ जन यज्ञ करावे तो यज्ञ की व्यवस्था अवश्य बिगड जावेगी और वेद विद्या की बहुत अधिक हानि होगी। अत. वेदज्ञ, धार्मिक विद्वान ब्राह्मणो से हो यज्ञ कराना चाहिये अन्यों से नही। (क्रमश)

॥ मृत्युंजयी होने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग ॥

॥ ब्रह्मचर्य साधन ॥

चौ० किशनाराम आर्य, तलालियां, जि० गंगानगर (राजस्थान)

ब्रह्मचर्य ही जीवन है और वीर्यनाश ही मृत्यु है। ब्रह्मचर्य प्रेमी महापुरुषो का यह अमृत वचन जितना सत्य है; उतना ही जरूरी भी है। प्रभु की सृष्टि की सभी योनियों में मनुष्य योनि श्रेष्ठ है। इसलिये आदि सृष्टि में ईश्वर ने अपना ज्ञान (वेद) मनुष्य को ही दिया था। वेदो के परम पवित्र संदेश ब्रह्मचर्यरूपी अमृत को पाकर मनुष्य निहाल हो गया। असाधारण ज्ञान और दीर्घ जीवन प्राप्त कर मनुष्यों ने अद्भुत कार्य कर दिखाया। लेकिन आज हम अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मार कर दिन प्रति॰ दिन पंगु होते जा रहे हैं। आज राम कृष्ण की सन्तान ब्रह्मचर्य पालन में पशुओं से भी गिर चुकी है। कहाँ तो विश्वविख्यात, वीर्यवान, प्रतापी, शक्तिसम्पन्न और दीर्घजीवी हमारे पूर्वज जो पीढीदर पीढी वेदों को कंठाग्र किया करते थे; और वेदानुकूल पवित्र जीवन बिताया करते थे। कहाँ आज हमारी गिरी हुई दशा है, बहुतों को तो कल-परसों की बातें भी याद नही रहती। फिर वेदशास्त्रों को बातों पर कैसे ध्यान दिया जावे। आदिसृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त हमारे देश ने जो उन्नति की उसका प्रथम श्रेय ब्रह्मचर्य पालन को ही है। चारों आश्रमों में भी प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम ही है। दूसरा गृहस्थ जो आजकल की तरह पतित नहीं था। इस आश्रम में भी गृहस्थी ब्रह्मचर्य का पालन करते रहते थे, केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए ऋतु अनुकूल वीर्यदान अपनी पत्नी को दिया करते थे। इस सम्बन्ध में जो सज्जन अधिक जानना चाहें व विश्वगुरु महर्षि दयानन्द जी महाराज के अमर ग्रन्थ सस्कारविधि को पढ़ तदनुकूल चल अपने गृहस्थाश्रम को सुखी बना सकते हैं—प्राचीन ब्रह्मचारी (विद्यार्थी)—प्राचीन गुरुकुल एवं ऋषिकुलों के शान्त वातावरण मे रहकर ब्रह्मचारी विभिन्न विषयों की सांगोपांग विद्या प्राप्त कर अपना जीवन सफल बना कर अपने देश का गौरव बढ़ाया करते थे। राजा, रंक, अमीर, गरीब का कोई भेदभाव नही था। लड़के लड़की साथ नही पढ़ते थे। ब्रह्मचारियों को जहाँ इन्द्रिय निग्रह सध्या, हवन, प्राणायाम, व्यायाम करना जरूरी था वहाँ मनु के विधान—ब्रह्ममूहूर्त्त में उठ नित्य क्रम से निवृत्त होकर गुरु की आज्ञा से भिक्षान्न मांगकर लाना, यज्ञ के लिए समिधा लाना, गुरु घर में रहना। शहद, मास, चदन, इत्र, फूल मालाए, रस स्त्रियों और सब प्रकार के आसवों से बचना, अहिंसक रहना, शरीर में तेल न लगाना, आँखों में सुरमा न डालना, जूते न पहना, छाता न रखना, काम, क्रोध, लोभ का त्यागन करे। नृत्य न करे, गीत न गावे, बाजा न बजावे, जुवा न खेले, पर चर्चा न करे अकेला सोवे, वीर्य पात न करे इन्ही गुरुकुलों से निकले स्नातकों ने अपनी विद्या से हमारे देश को जगद्गुरु का श्रेष्ठ पद प्रदान संसार के देशों से कराया था।

ब्रह्मचर्य क्या है? ब्रह्मचर्य दो शब्दों के मेल से बना है—(१) ब्रह्म—इसका अर्थ है—ईश्वर, वेद, ज्ञान और वीर्यादि। (२) ब्रह्म—चिंतन, अध्ययन, उपार्जन और रक्षणादि। इस प्रकार ब्रह्मचर्य के—(१) ईश्वर चिंतन (२) वेदाध्ययन (३) ज्ञान (विद्या) उपार्जन और (४) वीर्यरक्षण आदि अर्थ हुए। जो मनुष्य विषय भोगों में फंसा रहता है वह वेद का अध्ययन, विद्योपार्जन और ईश्वर चिन्तन नही कर सकता। इसलिये हमें हमारा उद्धार करने के लिए ब्रह्मचर्य पालन करना जरूरी है। साधारणतया "वीर्य धारणं ब्रह्मचर्यम्"—वीर्य धारण ही ब्रह्मचर्य है। अब हमें यह देखना है कि वीर्य क्या है, कैसे उत्पन्न होता है। हमारे ग्रन्थों में लिखा है कि वीर्य सौम्य, श्वेत, स्निग्ध। बल और पुष्टि कारक है। यही गर्भ का कारण है शरीर का श्रेष्ठ सार और जीवन का प्रधान आश्रय है, तमाम शरीर में सूक्ष्मरूप में फैला हुआ है। जैसे दूध में घी और ईख के रस से गुड़ व्यापक है वैसे ही तमाम शरीर में वीर्य रमा हुआ है। जैसे दुग्ध से मक्खन निकालने पर दूध सारहीन हो जाता है; और ईख का रस निकालने पर ईख दंड खोखला हो जाता है वैसे ही वीर्यहीन शरीर बल-बुद्धि, विद्या रूप यौवन उत्साह तेज, यश, धन और स्वास्थ्य नष्ट हो जाते हैं। वीर्योत्पत्ति—वीर्य शरीर में जो सात धातु हैं इनका अन्तिम सार है। जो भी हम खाते, पीते, सूंघते, चखते और शरीर के लगाते हैं उसका पचकर प्रथम रस फिर क्रमशः रक्त, मांस, मेद, अस्थि मज्जा और वीर्य बनता है। इन धातुओं के एक के बाद दूसरी धातु बनने में ५ दिन का अन्तर होता है। इस प्रकार वीर्य बनने में एक मास से अधिक समय लगता है। १०० बूंद रक्त (खून) एक बूंद वीर्य बनता है। अनुमानतः एक मन अनाज से एक सेर खून पैदा होता है। एक तोला वीर्य एक सेर रक्त से बनता है। इस प्रकार एक तोला वीर्य नष्ट होने पर १ सेर रक्त का घाटा शरीर को सहन करना पड़ता है। एक बार के वीर्य पात से १० दिन की उम्र घटती है। हमारे पूर्वज वीर्यरक्षा में तन मन और धन से लगे रहते थे तभी तो हमारे देश में सौ साल से पहले कोई मरता नहीं था। अकाल और बाल-मृत्यु नहीं होती थी। वीर्यधारणा (ब्रह्मचर्य पालन) से मानबोचित सभी गुण केन्द्रित हो जाते जैसे—सदाचार, विद्वान, बलवान, रूपवान, धैर्यवान, यशस्वी, स्वतन्त्र, जितेन्द्रिय, सत्यवादी, धार्मिक, वेदवेत्ता, साहसी, पराक्रमी, जनहितैषी, लोकनायक, परोपकारी आदि गुण ही मनुष्य को महापुरुष बनाते हैं। वीर्यवान बालब्रह्मचारी महापुरुषो के अद्भूत कार्य—अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य की प्रशसा करते हुए कहा है कि ब्रह्मचर्य और तप से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया। महाराजा पवन के पुत्र हनुमान जी ने वेदो के उपरोक्त सदेश को सत्य कर दिखाया उन्होने अपने जीवनकाल में अनेक कार्य किये जैसे समुद्र पार लका में जाकर सोता माता का पता लाना, अक्षयकुमार वध, लकादहन अनेक योद्धाओ के साथ अकेले युद्ध करना, एक घूसे मे रावण को मूर्छित करना, अयोध्यागमन के समय राम से एक दिन पहले महात्मा भरत को मर्यादा पुरुषोत्तम राम के सकुशल आने का संदेश देना, अश्वमेघ यज्ञ में अश्व की रक्षा करना आदि। दूसरे पितामह भीष्म जो बालब्रह्मचारी होते हुए भो ससार के पितामह (दादा) कहलाये। महाभारत के घोर सग्राम में २९८ वर्ष की वृद्धावस्था में १० दिन तक कौरव सेना के सेनापति रहे और घमासान युद्ध करते हुए प्रतिदिन दस-दस हजार योद्धाओं को वीरगति प्राप्त कराते रहे। आखिर में अपनी मृत्यु आप बताकर इच्छित मृत्यु प्राप्त करते हैं। तीसरे आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द जी महाराज ने अनेक विघ्नवाधाओं को झेलते हुए आर्यधरा में फिर से वेदों का सदेश सुनाया, आलस्य में डूबी और अंधविश्वासों में गोते खाती हुई आर्य संतानों को नया जीवन दिया और भारत की डूबती हुई नय्या को पार लगाया आपकी मृत्यु ने गुरुदत्त जैसे नास्तिक को सच्चा ईश्वर भक्त बना दिया। आज जो भारत में अच्छे कार्य हो रहे हैं यह सब महर्षि दयानन्द की ही देन है। परशुराम, स्वामी शंकराचार्य, पं० रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद आदि हो चुके हैं। तथा प्रभुदत्त और आचार्य भगवानदेव जो तो आज भी हमारे बीच में हैं। आचार्य भगवानदेव ने ब्रह्मचर्य साधन पर अनेकों पुस्तकें लिखी है यदि हम उनके बताये साधनों पर चले तो हमारा बहुत भला हो सकता है।

वीर्य रक्षा—जिस प्रकार मूल्यवान वस्तुओं के अनेक चोर होते हैं। उसी प्रकार हमारे वीर्यरूपी रत्न खजाने के हमारे शरीर के भीतर बाहर अनेक चोर मौजूद हैं। लेकिन जैसे चोर डाकुओं का दमन करने के लिए पुलिस, फौज की जरूरत होती है वैसे ही ब्रह्मचर्य रूपी खजाने की रक्षा के लिये हमें व्यायाम, प्रणायाम, संध्या, हवन, स्वाध्याय और सत्सग के द्वारा शरीर पर कट्रोल रखना होगा।

सबसे प्रथम हमें लड़के लड़कियों के विवाह पर ध्यान देना चाहिए। बाल-विवाह और अनमेल विवाह ने हमारे देश को अवनति के गर्त्त में ढकेल दिया है। कम से कम १६ साल की लड़की और २५ साल का लड़का यह ब्याह अधम माना जाता है। १७ से १९ वर्ष तक की लड़की और ३० से ३८ वर्ष तक का लड़का यह ब्याह करें तो मध्यम माना जाता है। २० से २४ वर्ष तक उम्र की लड़की और ४० से ४८ वर्ष तक की उम्र का लड़का यह ब्याह करें तो ब्याह सर्वोत्तम माना जायेगा। ये ब्याह तो प्राचीन भारत में होते थे। आजकल तो शारदा बिल के अनुसार भी लोग नहीं चलते दूध मुंह बच्चों का ब्याह कर दिया जाता है। वही लड़कों से ८ वा १० साल तक की बड़ी उम्र की लड़की के साथ ब्याह होना यह कन्याओं पर भयंकर अत्याचार है। ऐसे विवाह हों, फिर राम, कृष्ण, भीम, अर्जुन, महाराणा प्रताप, सूरजमल, जवाहरमल और दुर्गादास जैसे वीर और महापुरुषों की उम्मीद करना व्यर्थ नही और क्या है?

आजकल की ज्वलंत समस्याओं पर विशेष लेख

"आर्यों तथा आर्यसमाज" की प्रतिष्ठा दांव पर

(लेखक—एक दुःखी आत्मा)

आर्यसमाजो हल्कों में एक अजीबसी विक्षुब्धता, अस्थिरता, अविश्वास तथा अनिश्चितता चारों ओर दिखाई व सुनाई पड़ रही है कारण चाहे कुछ भी हो, दोषी चाहे कोई भी हो पर यह तो निश्चित रूप से मानना ही पड़ेगा कि आर्यों तथा आर्यसमाज को प्रतिष्ठा आज दांव पर बनी हुई है देश भर की आँखें इस ओर लगी हुई हैं कि ऋषि दयानन्द के परोकार, स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं० लेखराम तथा गुरुदत्त विद्यार्थी के भक्त जिनको सत्य, त्याग, निष्ठा आदि गुण विरासत में मिले हैं अपने निजी स्वार्थों, गुटबन्दियों तथा पदलोलुपता आदि को त्याग कर आर्यसमाज की पाखण्ड खण्डनी पताका को ऊंचा उठाकर उसे दिग्दिगन्त तक फहराते हैं या आपसी मनोमालिन्य, क्षुद्र स्वार्थों तथा अधिकार लिप्सा के मोह में पड़कर सर्वनाश की ओर बढते हुए अपने को, समाज को तथा आर्यजनों को पतन, बदनामी तथा असत्य के गहन अन्धकार में पटक कर घर फूक तमाशा देख, जग हंसाई के पात्र बनते हैं।

वैसे तो प्रायः सभी जगह विशेषतः संस्थाओं में भ्रष्टाचार तथा आपाधापी का बोलबाला है जो भी एक बार अधिकार की कुर्सी पर बैठ जाता है वह उस पर अपना ही एकाधिकार समझने लगता है। नेतागिरि का मोह तथा शक्ति का मद उन्हे सत्य से असत्य क. ओर त्याग से भोग की ओर तथा सेवा से मेवा की ओर अग्रसर कर रहा है। पर आर्यसमाज की सदैव अपनी एक विशेषता रही है। आर्यों के परम श्रद्धेय तथा आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने समाज की बागडोर हमेशा चरित्रवान व्यक्तियो के हाथों में ही दिये जाने का आदेश दिया था। एक समय प्रारभ में ऐसा ही रहा भी है जब कि प्रत्येक आर्य, सत्यार्थप्रकाशादि आदि आर्ष तथा ऋषि प्रणीत ग्रन्थों का भली प्रकार अध्ययन कर अपने को आर्य सेना का वीर सिपाही मान कर असत्य, अन्याय तथा अन्धविश्वासों के नष्ट करने को सदैव ही तत्पर रहते थे। परन्तु खेद है आज उनके ही नाम लेवा शक्ति तथा भोग लिप्सा में पड़कर असत्यादि अवगुणों को प्रश्रय देने में एक दूसरे को पीछे छोड़ रहे हैं। "कृण्वतो विश्वं आर्यम्" का नारा आपसी कलह, विवाद तथा विघटनवाद में पड़कर दब गया, भूलसा गया है।

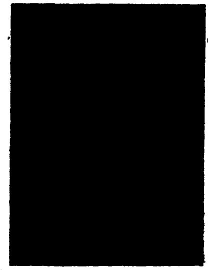
जब शरीर शक्तिहीन, क्रियाहीन हो जाता है तो कीड़े मकोड़े निशक होकर चढ़ने लगते हैं श्वान, शृगालादि अपनी ताक में लगे रहते हैं तथा गिद्ध व कोवे चोंचें मार कर चमड़ी व मांस नोचने में लग जाते हैं, समाज के साथ भी यही हो रहा है दुष्ट प्रकृति के अधम व्यक्तियों की बन आई है, वे स्वार्थ साधन में रत होकर चारों ओर अधिकारियों तथा श्रेष्ठ व्यक्तियों को एक दूसरे के विरुद्ध भड़का रहे हैं, फूट में ही उनकी बन आई है कमा के वे खा नहीं सकते, लूट का फोकट का माल वह भी तर माल उन्हें झगड़ों तथा आपसी कटुता व वैमनस्य द्वारा ही मिल सकता है बरबस कहना पड़ता है। "इस घर को आग लग गई घर के चिराग से" यदि समाज के कर्णधार समय रहते नहीं जागे तथा उन्होंने विनाशकारी व्यक्तियों से अपने को आगा नहीं किया तो आपस की यह फूट उन्हें तो रसातल पहुंचावेगी ही आर्यसमाज को भी अन्धकार में गिरादेगी।

आपसी मुकद्दमों तथा न्यायालयों के द्वार खटखटाते रहने, इन पर अनावश्यक अत्यधिक व्यय होते देखकर किस सच्चे आर्य का हृदय दुःखी नहीं होता, लोगों ने यहाँ तक ताने कसे कि आर्यसमाज के उद्देश्यों में मुकद्दमा लड़ना व लड़ाना और शामिल कर दिया जाना चाहिये। आर्यजगत् के नेताओं, अधिकारियों तथा संचालको! सोचो, समझो विचार करो इन सब बातों से जनता पर विशेषतः आर्यजनों पर क्या प्रभाव पड़ा होगा? महर्षि के मिशन के प्रति अश्रद्धा अनास्था तथा अरुचि उत्पन्न करने का कलंक किस के माथे पर लगेगा? अब भी समय है उठो, चेतो जागो तथा अपने मनोबल द्वारा फिर से ऋषि के सच्चे अनुयायी बन कर जगत् को दिखावो। अन्त में केवल यही कहना है कि घर की बात घर में ही निपटना उचित व श्रेयकर है यदि सब लोग थोड़ी नम्रता, विश्वास व सहयोग की भावना से काम लें तो बड़ी से बड़ी बात भी चुटकियों में हल हो सकती है।

आर्यजनों का सम्मान, आर्यसमाज की प्रतिष्ठा, अधिकारियों का ईमान आज कसौटी पर है, आर्यसमाज हर मोर्चे पर सदा विजयी रहा है, इस गृहयुद्ध के मोर्चे पर भी निश्चय है सत्य व न्याय की स्थापना के लिये महर्षि के मिशन के प्रसार प्रचार के लिये तथा ओ३म् की विजयी पताका को फहराने के लिये हम सब शान्ति, सद्भावना तथा सहनशीलता से काम लेकर आर्यजनों में एकता की स्थापना में अवश्य ही सफल होंवे।

एक कार्य

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय,
९३, छोटा, चांदगंज, लखनऊ—७



यह देख सोच दुख होता है, हे मनु-सपूत,
तुम सब में भी हा! फैला है यह छुआछूत!
क्या वेदों के उपदेशों को तुम गये भूल,
क्या यही तुम्हारा धर्म और यह धर्म-मूल?

क्या कहते तेरे धर्म-ग्रन्थ, है नहीं ज्ञात,
तुम स्वयं लगाये बैठे हो यह एक घात!
ठुकराते नीच जातियों को क्या सोच-सोच,
क्यों ऐसा निन्दित कर्म किया, लाओ संकोच!

बस एक भाव तुम जिससे हो सकते महान्,
वह यही, कहो—'सब मनुज एक से, हैं समान।'
कोई न बड़ा, कोई छोटा सब लोग एक,
क्या इतना करो विचार? नहीं तुम में विवेक!

जो भोग्य उसी का सब जन करें समान भोग,
सारी जगती के होवें एक समान लोग।
क्या रचा नहीं ईश्वर ने सब को एक भाँति?
जो बता रहे यह अमुक और यह अमुक जाति।

इस भाँति सोचने से होगा तब धर्म नष्ट,
क्या तब मन में होवेगा कुछ भी नहीं कष्ट।
इस लिए बताता हूं, करना है एक कार्य,
सबको समान बतलाओ, बनकर स्वयं आर्य।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरद्वार

गुरुकुल कागडी, हरद्वार मे नये (६ से १० वर्ष तक को आयु के) ब्रह्मचारियो का प्रवेश १ जुलाई १९६९ से आरम्भ होगा। शिक्षा नि शुल्क। सब विषयो की शिक्षा आश्रम वास। विशेष देख-रेख। सीधा-सादा भारतीय जीवन। कडा अनुशासन। एकसा रहम-सहन प्राकृतिक, सुन्दर, स्वास्थ्यप्रद वातावरण। सात्विक भोजन। पालन-पोषण का साधारण व्यय। उपाधियाँ सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त। नियमावली मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कागडी हरद्वार (जि० सहारनपुर) से मगाव।

—मुख्याधिष्ठाता

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन

ग्रीष्म कालीन अवकाश के पश्चात् ३ जुलाई ६९ को विद्यालय खुल जावेगा और नवीन शिक्षा सत्र प्रारम्भ हो जायेगा और उसी समय से नवीन बालको का प्रवेश भी प्रारम्भ हो जायेगा। गुरुकुल शिक्षा प्रेमी महानुभाव जो अपने बालको को गुरुकुल मे प्रविष्ट कराना चाहे, वे गुरुकुल वृन्दावन के कार्यालय से प्रवेश नियम तथा फार्म नि शुल्क मगाकर भरकर भेज दे और स्थान सुरक्षित करा ल। —मुख्याधिष्ठाता

जिज्ञासु सरलतम सस्कृत शिक्षण शिविर

आर्य जगत मे यह समाचार बडी प्रसन्नता के साथ सुना जायगा कि प्रयाग मे १ जून से तीन मास के लिये जिज्ञासु सरलतम सस्कृत प्रचार समिति प्रयाग (आर्यसमाज चौक) के तत्वावधान मे जो सस्कृत शिक्षण शिविर चलाए जा रहे हैं उसमे दो ढाई सौ नर-नारी बडी श्रद्धा व उत्साह के साथ नियमित रूप से भाग ले रहे हैं। इन शिविरो का विवरण इस प्रकार से है। इनमे अनेक विद्वानो के इस सम्बन्ध मे भाषण हो रहे हैं। विशेष जानकारी के लिए जिज्ञासु सरलतम सस्कृत प्रचार समिति आर्यसमाज चौक प्रयाग से पत्र-व्यवहार करे तथा लाभ उठावे।

—सम्पादक)

हिन्दू युवती की करुण गाथा

कानपुर के मूलगज के निकट फूस वाली गली के साथ एक मुस्लिम मोहल्ले अजीमबेग की गढिया स्थित एक बदनाम गुण्ड सलीम के मकान से आर्यनेता श्री देवीदास आर्य ने पूर्णसाहस के साथ काम लेकर एक १६ वर्षीय अपहृत हिन्दु युवती सन्तोष कुमारी को रहस्यमय ढग से बाहर निकाला। पुलिस को भी सूचना दे दी गई थी। सन्तोषकुमारी ने अपनी करुणा गाथा सुनाई उसके बताने पर दूसर दिन गगा और शीला को भी निकाला गया। पुलिस अधिकारियो से माग की गई है कि उक्त मोहल्ले की जाच की जावे, जिससे इसी प्रकार से हतभाग्य हिन्दू देवियो का पता लगाकर उन्हें निकाला जा सके। आर्य नेता श्री देवीदासजी आर्य के साहस की सर्वत्र प्रशसा की जा रही है। —शिवदयाल

८ नव मुस्लिमो के एक परिवार की शुद्धि

शुद्धि सभा के उपदेशक श्री प० गगालाल जी के परिश्रम से ग्राम अमरसिंह नगला जिला एटा मे एक मुस्लिम परिवार को श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी द्वारा वैदिक धर्म की दीक्षा देकर उनकी पुरातन राजपूत जाति मे प्रविष्ट किया गया। दिल्ली से श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष तथा श्री रामशरण दास जी मन्त्री शुद्धि सभा ने जाकर भाग लिया। शुद्धि के पश्चात् सहभोज मे स्थानीय कई ग्रामो के सैकडो ठाकुर व ब्राह्मण सम्मिलित हुए। —द्वारकानाथ

आवश्यक सूचना

आर्यसमाजो को सूचित किया जाता है कि सन्यासी आर्यसमाजो में प्रचार करते रहते हैं। एक समाज मे दक्षिणा लेने पर उन्होने झगडा किया उन्होंने यह धन्धा बना रखा है। व्याख्यानो में कई सिद्धान्त विरुद्ध बातें कह जाते हैं। —मन्त्री आर्यसमाज

(विशेष—हमने उन सन्यासी जी और आर्यसमाज का पता दोनो इस लिए छोड दिये हैं कि आर्यसमाज स्वय उनको बुलाते हैं। अच्छा यही है कि आयसमाज विचार कर उपदेशको को नियन्त्रित करें तथा अपरिचित से व्याख्यान न दिलाव। —सम्पादक

आर्यसमाज कोसली (रोहतक) का चुनाव

प्रधान श्री जगमालसिह जी मन्त्री बाबू अमृतलाल जी, कोषाध्यक्ष श्री रविन्द्रकुमार जी। —अमृतलाल मन्त्री

आर्यसमाज नया नगल का निर्वाचन

आर्यसमाज नया नगल (पजाब) का वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ। वी० पी० चावला—प्रधान श्री रतनलाल जारी—मन्त्री, श्री सत्यपाल शर्मा—पुस्तकाध्यक्ष श्री देशराज चढढा—कोषाध्यक्ष।—मन्त्री

आर्य समाज तपा मण्डी (संगरूर)

पिछले कुछ समय मे अकाली दल के कुछ वरिष्ठ सदस्यो व पंजाब के कुछ मन्त्रियो की तरफ से इस प्रकार मे वक्तव्य प्रकाशित हो रहे हैं। जिनमे ऐसा प्रतीत होता है। कि उन्हे पंजाब के हिन्दी भाषियो की भावनाओ की कोई चिन्ता नही और न ही वह उनका सम्मान करना चाहते हैं। सच्चर फारमूले को समाप्त करने का इसके अतिरिक्त और कोई अभिप्राय नही, कि पंजाब मे हिन्दी के महत्व को समाप्त किया जावे।

इस फारमूल के अनुसार माता पिता का यह अधिकार मिला हुआ था कि वह अपने बच्चो को जिस भाषा के माध्यम से शिक्षा देना चाहे दे सकते हैं। इस अधिकार मे पंजाबी के महत्त्व मे किसी प्रकार की कमी नही आ सकती। पंजाबी फिर भी सबने पढनी होगी। परन्तु जो बच्चे हिन्दी के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं। उन्हे इस अधिकार से वंचित कर दिया जायेगा। इस सभा की सम्पत्ति मे यह सीधी धक्केसाही है। और पंजाब के हिन्दी के सन्मान और प्रतिष्ठा को एक चुनौती है।

दीक्षान्त समारोह स्थगित

व्याकरणाचाय के प्रमाण पत्र देने हेतु दीक्षान्त समारोह की कार्यवाही २९ जून ६९ को होनी थी परन्तु कारण वशात वह स्थगित कर दी गई है।—प्रस्तोता श्री मद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

आर्यसमाज बनचारी (गुडगाँव) का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री खडगसिह जी वैद्य मत्री—श्री नारायण विद्यार्थी B A, कोषाध्यक्ष—मा० बुद्धीसिह पु० अध्यक्ष श्री खडकसिह।

—मत्री आय समाज बनचारी।

मानवता की पुकार

(श्री अरुण कुमार पाण्डेय, लखौलिया बलिया)

मानवता कर रही पुकार।
मानव-मानव मे भडकी है, द्वष अग्नि फुंफकार॥
करा रहा है लोभ जगत् मे, यह मानव सहार।
तृप्त नही नर मन होता है, चाह रहा तकरार॥
कोई नही शान्ति का खोजी, सब अशान्ति आगार।
विध्वसक हैं अस्त्र बन रहे, ले विज्ञान आधार॥
सबल जमाए राज्य हर जगह निबल कर चीत्कार।
है मानव जग के तुमको है बार-बार धिक्कार॥

मिटा स्वय को हमे विश्व को आर्य बनाना होगा।
देकर ज्ञान वेद का सबको, सत्य सिखाना होगा॥
ऊँच-नीच औ, छआछूत का भेद मिटाना होगा।
झूठ, दम्भ, छल, द्वेष घृणा को हमे हटाना होगा॥
सत्य, धैर्य, विश्वास, सुजनता, पौरुष लाना होगा।
दुख का कर अवसान, सुखी जीवन भी पाना होगा॥
उस अनादि ईश्वर मे रत हो, भव तरणी तरना होगा।
तम को हटा प्रभा को लाकर ज्ञान दान देना होगा॥

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए [illegible] प्रेस, [illegible], दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित



यह निश्चय है कि इन विद्वानों के विरोध ही ने सब को विरोध जाल में फंसा रक्खा है यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फस कर सब के प्रयोजन को सिद्ध करना चाहे तो अभी ऐक्यमत हो जावें ।।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ } अंक ३० }

२२ आषाढ़ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ६ जौलाई १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
" " विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथ यौ राजप्रजापुरुषौ स्तस्तौ कीदृशौ भवेतामित्युपदिश्यते ।।

अब जो राजा और प्रजा के पुरुष हैं वे किस प्रकार के हों इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ।।

शतं ते राजन् भिषजः सहस्रमुर्वी गभीरा सुमतिष्टे अस्तु ।
बाधस्व दूरे निर्ऋतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुग्ध्यस्मत् ।।

ऋ० १.२४.९ ।।

पदार्थ—(शतम्) असख्यातान्यौषधानि (ते) तव राज्ञः प्रजापुरुषस्य वा (राजन्) प्रकाशमान (भिषजः) सर्वरोगनिवारकस्य वैद्यस्य (सहस्रम्) असख्याता (उर्वी) विस्तीर्णा भूमिः (गभीरा) अगाधा (सुमतिः) शोभना चासौ मतिर्विज्ञानं यस्य सः (ते) तव (अस्तु) भवतु (बाधस्व) दुष्टशत्रून्दोषान्वा निवारय (दूरे) विप्रकृष्टे (निर्ऋतिम्) भूमिम् (पराचैः) धर्मात्पराङ्मुखैः (कृतम्) आचरितम् (चित्) एव (एनः) पापम् (प्र) प्रकृष्टार्थे (मुमुग्धि) त्यज मोचय वा । (अस्मत्) अस्माक सकाशात् ।

अन्वयः—हे राजन् प्रजाजन वा यस्य भिषजस्ते तव शतमौषधानि सहस्रसंख्याता गभीरोर्वी भूमिरस्ति तां त्वं सुमतिर्भूत्वा निर्ऋतिं भूमिं रक्ष दुष्टस्वभावं प्राणिनं दुष्कर्मणः प्रमुमुग्धि अस्पराचैः कृतमेनोऽस्ति तदस्मद् दूरे रक्षैतान् पराचो दुष्टान् शत्रुचोरदस्युमयाख्यात्पापात्प्रमुमुग्धि सम्यग्विमोचय ।।

भावार्थः—अत्र श्लेषालङ्कारः । मनुष्यैर्यौ राजप्रजाजनौ पापसर्वरोगनिवारकौ पृथिव्याधारकावुत्कृष्टबुद्धिप्रदातारौ धार्मिकेभ्यो दानप्रदानेन दुष्टानां बाधनहेतू भवतस्तावेव नित्यं सगन्तव्यौ नैव कस्यचित्पापं भोगेन विना निवर्त्तते किन्तु यद्भूतवर्तमानभविष्यत्काले च पापंकृतवान् करोति करिष्यति वा तन्निवारणार्था खलु प्रार्थनोपदेशपुरुषार्था भवन्तीति वेदितव्यम् ।।

भाषार्थ—(राजन्) हे प्रकाशमान प्रजाध्यक्ष प्रजाजन वा जिस (भिषज) सर्वरोग निवारण करने वाले (ते) आप की (शतम्) असख्यात औषधि और (सहस्रम्) असख्यात (गभीरा) गहरी (उर्वी) विस्तारयुक्त भूमि है उस (निर्ऋतिम्) भूमि की (त्वम्) आप (सुमतिः) उत्तम बुद्धिमान् होके रक्षा करो जो दुष्टस्वभाव युक्त प्राणी को (प्रमुमुग्धि) दुष्ट कर्मों को छुड़ा दे और जो (पराच) धर्म से अलग होने वालो ने (कृतम्) किया हुआ (एन) पाप है उस को (अस्मत्) हम लोगो से (दूरे) दूर रखिये और उन दुष्टो को उन के कर्म के अनुकूल फल देकर आप (बाधस्व) उन की ताड़ना और हम लोगों के दोषों को भी निवारण किया कीजिये ।।

भावार्थ—इस मन्त्र में श्लेषालङ्कार है । मनुष्यों को जानना चाहिये कि जो सभाध्यक्ष और प्रजा के उत्तम मनुष्य पाप वा सर्वरोग निवारण और पृथिवी के धारण करने, अत्यन्त बुद्धि बल देकर दुष्टों को दण्ड दिलाने वाले होते हैं वे ही सेवा के योग्य है और यह भी जानना कि किसी का किया हुआ पाप भोग के बिना निवृत्त नहीं होता और इसके निवारण के लिये कुछ परमेश्वर की प्रार्थना वा अपना पुरुषार्थ करना भी योग्य ही किन्तु यह तो जो कर्म जीव वर्त्तमान में करता वा करेगा उसकी निवृत्ति के लिये तो परमेश्वर की प्रार्थना वा उपदेश भी होता है ।।

(ऋषि दयानन्द—भा०

महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी का आदेश

(१)

कुकर नाग—२०-६-६९

मेरे प्यारे सिद्धान्ती जी, सप्रेम नमस्ते ।

आज यह तार मैने प्रो० रार्मसिह जी को दिया है कि वह आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान के रूप में अपना कर्तव्य पालन करें, जैसे मेरे चार्ज लेने से पूर्व आप पालन करते थे । आप यह समाचार आर्यमर्यादा में दे दीजिये ।

ह० :—आनन्द स्वामी सरस्वती

(२)

मेरे प्यारे श्री प्रो० रार्मसिह जी, सप्रेम नमस्ते ।

आप तत्काल आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का कार्यभार सम्भाल कर उचित कार्यवाही कीजिये और सब सम्बन्धित आर्यसमाजो को सरकुलर लेटर भेज़ कर निर्वाचन कराइये और विधिवत् कार्य करते रहिये । सेवक

ह० :—आनन्द स्वामी सरस्वती

[विशेष—इन दोनो आदेशो से पूर्व पूज्य श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी ने जो तार प्रो० रामसिह जी प्रधान ३/३ रानो झांसी रोड, नई दिल्ली के पते पर भेजा था— उसका प्रकाशन आर्यमर्यादा के गत अंक में प्रथम पृष्ठ पर किया जा चुका था । —सम्पादक]

* छपते-छपते *

महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी का आर्य जगत् के नाम वक्तव्य अगले अंक में पढ़िये । क्योंकि छपते-छपते प्राप्त हुआ है ।

—सम्पादक

सिद्धान्त विमर्श—

जीव ज्ञानस्वरूप है

श्री चन्द्रमोहन जी शास्त्री (भलेड़ो, जि० मुजफ्फरनगर)



आर्यसमाज के भी कुछ विद्वान् जीव को ज्ञानस्वरूप नही मानते। इस कारण जीवात्मा के स्वरूप के विषय में इन आगे लिखी पंक्तियों में विचार किया जाता है कि जीव ज्ञानस्वरूप है अथवा नही। [स्वाध्यायशील पूज्य दार्शनिक विद्वानों से निवेदन है कि अपने विचार प्रकाशित करने का अनुग्रह करें। "आर्य्यमर्य्यादा" में सहर्ष उन को प्रकाशित किया जावेगा। इस सरणि से तत्त्व का निश्चय होकर सभी आर्य बन्धुओं को एकमत होने में लाभ पहुंचेगा।"—सम्पादक] विषय का स्पष्टीकरण करने के लिये हम ऋषि दयानन्द तथा अन्य ऋषियों के ग्रन्थो से प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।—

१—ऋषि दयानन्द—

(क) (प्रश्न) जीव और ईश्वर का स्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव कसा है? (उत्तर) "दोनों चेतनस्वरूप हैं।"—

सत्यार्थ प्रकाश—सातवां "समुल्लास"

(ख) (प्रश्न) जीव शरीर में भिन्न विभु है वा परिच्छिन्न? (उत्तर) परिच्छिन्न, जो विभु होता तो जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, मरण, जन्म संयोग, वियोग, जाना आना कभी नही हो सकता, इस लिये "जीव का स्वरूप अल्पज्ञ, अल्प" अर्थात् सूक्ष्म है और परमेश्वर अतीव सूक्ष्यात्सूक्ष्मात्सूक्ष्मतर अनन्त, सर्वज्ञ और सर्वव्यापक स्वरूप है।—सत्यार्थप्रकाश ७ समुल्लास॥

(ग) जो इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख और ज्ञानादि गुणयुक्त अल्पज्ञ" नित्य है उसी को जीव करता हूं।

—सत्यार्थप्रकाश (स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश)

(घ) जीव का स्वरूप—जो चेतन अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञानगुण वाला तथा नित्य है वह जीव कहाता है॥ स्वभाव—जिस वस्तु का जो स्वभाविक गुण है" जैसे कि अग्नि में रूप और दाह अर्थात् जब तक वह वस्तु रहे "तब तक उस का वह गुण भी नही छूटता" इसलिये इस को स्वभाव कहते हैं। —आर्य्योद्देश्यरत्नमाला॥

(ङ) चेतन—जो पदार्थ "ज्ञानादि गुणो से युक्त है उस को चेतन कहते हैं।" —आर्य्योद्देश्यरत्नमाला॥

(च) भावार्थः—"यद्यच्चतनं ज्ञानादिगुणयुक्त वस्तु तज् ज्ञातृ···यच्च चेतन ब्रह्म विद्वदात्मस्वरूपं वा।" (भाषा भावार्थ)—"जो जो चेतन ज्ञानादि गुणयुक्त वस्तु है वह जानने वाला···और जो चेतन ब्रह्म तथा विद्वान् का आत्मा है।—यजुर्वेद अ० ४० (ऋषि दयानन्द का भाष्य)॥ "ज्ञानादिगुणयुक्तस्य चेतनस्य" सकाशाद्य उपयोगो भवितु योग्यः। (भाषा) "ज्ञानादि गुणयुक्त चेतन" से जो उपयोग होने योग्य है॥

—(यजुर्वेद अ० ४० का ऋषि भाष्य)॥

(छ) "यच्चेतनवत्त्वं तज्जीवत्वम्। जीवस्तु खलु चेतनस्वभावः।" अस्येच्छादयोधर्माः॥ वेदाहमेत पुरुषम्॥ यजु० ३१.१८। इति ज्ञानं र्मः॥ जीवश्चेतनस्वरूपत्वाद्यद्यदनुकूल तत्तत्सुखमिति विदित्वा सदेच्छति॥ ाद्यत्प्रतिकूल तत्तद्दुःखमिति ज्ञात्वा सदा द्वेष्टि॥ सुखप्राप्तये दुःखहानाय ा सदा प्रयतते॥ ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (प० भगवद्दत्त द्वारा काशित) अर्थात् जीव का स्वभाव चेतन है। ज्ञान, सुख, दुःख, इच्छा, ेष और प्रयत्न जीव के धर्म हैं॥

(ज) तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्॥ योगदर्शन समाधि पाद॥ जब योगी चित्त वृत्तियों का निरोध करता है, बाहर और भीतर से उसी समय द्रष्टा जो आत्मा उस के चेतनस्वरूप में ही स्थित हो जाता है अन्यत्र नहीं॥ —ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (पं० भगवद्दत्त द्वारा प्रकाशित)॥

(झ) ऋग्वेद १.१३.११ "अस्तु चेतनम्" ऋषि भाष्य (अस्तु) भवति (चेतनम्) चेतयति येन तत् (भाषार्थ), (चेतनम्) विज्ञान को उत्पन्न करने वाला (अस्तु) होता है।

(ञ) ऋग्वेद १.१७०.४ "अमृतस्य चेतनम्"=(ऋषि भाष्य (अमृतस्य) अविनाशिनो जीवस्य (चेतनम्) चेतति येन तत् (भाषार्थ) (अमृतस्य) विनाश रहित जीव मात्र के (चेतनम्) चेतन अर्थात् जिस से अच्छे प्रकार यह जीव जानता है।

(ट) ऋग्वेद २.५.१=होता अजनिष्ट चेतनः पिता ऋषि भाष्य=(होता) आदाता (अजनिष्ट) जनयेत् (चेननः) ज्ञानादिगुणयुक्तः (पिता) पालकः (भाषार्थ) (होता) आदाता अर्थात् गुणादिवा अन्य पदार्थों का ग्रहणकर्त्ता (चेतनः) "ज्ञानादिगुणयुक्त" (पिता) और पालन करने वाला जीव (अजनिष्ट) उत्पन्न करे॥

(ठ) ऋ० ३.३.८=अध्वराणा चेतनम् (ऋषि भाष्य) (अध्वराणाम्) अहिंसनीयानाम् (चेतनम्) सम्यग्ज्ञानस्वरूपम् (भाषार्थ) अध्वराणाम्) अहिंसनीय व्यवहारों के बीच (चेतनम्) अच्छे प्रकार ज्ञानस्वरूप॥

(ड) ऋ० १.१२.२=(जिगाति चेतनः) (ऋषि भाष्य) (जिगाति) गच्छति प्राप्नोति (चेतनः) सम्यग ज्ञाता (भाषार्थ) (चेतनः) उत्तम रीति से जानने वाला (जिगाति) शरण को प्राप्त होवे॥

(ढ) ऋ० ४७.२ (देवस्य चेतनम्) ऋषि भाष्य—(देवस्य) सुखदातुः सर्वत्र प्रकाशमानस्य (चेतनम्) अनन्तविज्ञानादि—युक्तम्) (भाषार्थ) (देवस्य) सुख देने वाले और सर्वत्र प्रकाशमान (चेतनम्) अनन्त विज्ञानादि से युक्त।

(ण) यजुर्वेद भाष्य के आरम्भ करने से पूर्व भूमिका रूप ऋषि लिखते हैं—"जीवस्य चेतनत्वादकर्मतया स्थातुमशक्यत्वात्॥ "(भावार्थ) कोई जीव ऐसा नही कि जो···एक क्षण भर भी मन प्राणवायु इन्द्रिय और शरीर के चलाये बिना रह सके, क्यों कि जीव अल्पज्ञ एकदेशवर्ती चेतन है॥

(त) ऋ० १.५८.१ योऽनादि नित्यं चेतनोऽल्यो ऽल्पज्ञोऽस्ति स एव जीवो वर्त्तते॥ जो अनादि नित्य चेतन अल्प एकदेशस्थ और अल्पज्ञ है वही जीव है॥

अन्य प्रमाण

(२) (क) प्रश्नोपनिषद ४.९ एष हि द्रष्टा स्प्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मता बोद्धा कर्त्ता विज्ञानात्मा पुरुषः स परेऽक्षर आत्मनि सप्रतिष्ठते॥" अर्थात् यह जीवात्मा देखता, छूता, सुनता, सूंघता, रस ग्रहणकर्त्ता, सङ्कल्प विकल्प करने वाला, बुद्धि से कार्य लेने वाला, कर्मों का करने वाला विज्ञानस्वरूप पुरुष शरीर में रहता है। परमात्मा अविनाशी ईश्वर में सस्थिति रहता है। यहाँ 'विज्ञानात्मा' का अर्थ विज्ञान स्वरूप है। उपनिषदों में अनेक स्थलों पर आत्मा का अर्थ स्वरूप ग्रहण किया जाता है। इस श्लोक के भाष्य में स्वामी शङ्कराचार्य भी अपने भाष्य में लिखते हैं "विजानातीतिविज्ञानंकर्तृकारकरूपं तदात्मा तत्स्वभावो विज्ञातृस्वभाव इत्यर्थः अर्थात् विज्ञान शब्द कर्तृकारक में प्रयुक्त हुआ 'जो विशेष रूप से जानता है वह विज्ञान तथा विज्ञान जिस का आत्मा स्वभाव है वह विज्ञातृस्वभाव है अर्थात् जीवात्मा ज्ञानस्वरूप है।

(ख) छान्दोग्योपनिषद् ८.१२ ४. "यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्मा" अर्थात् जो जीव इस शरीर में जानता है कि मैं इस सुगन्ध का ज्ञान रखता हूं वह आत्मा है अर्थात् जीव ज्ञानस्वरूप है।

(ग) बृहदारण्यकोपनिषद् ४.३.७. "कतम आत्मेति योऽयंविज्ञानप्राणेषु हृद्यंतर्ज्योतिः पुरुषः" अर्थात् कौन सा आत्मा है जो कि वह विज्ञानमय है और वह पुरुष शरीर में रहता हुआ प्राणों और हृदय की अन्तर्ज्योति

शेष पृ० ११ पर

सम्पादकीय

क्या हम ईमानदार हैं ?

प्रत्येक व्यक्ति स्वय अच्छी प्रकार से जानता है कि वह ईमानदार है या नही और हम यह भी अनुभव करते हैं कि सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर हमारे भीतर को सदा से ठीक-ठीक जानता है। हम उस से किसी अपने कार्य वचन और मन की वृत्ति को छिपा नही सकते। इस तथ्य को जानते हुए भी हम दूसरो को धोखे मे डालने का निन्द्य कर्म करते हैं, मिथ्या बोलते हैं और मानसिक वृत्तियो को दूषित करते रहते हैं। ऐसी अवस्था में हमारा आत्मा सदा लज्जित शङ्कित और भयभीत रहता है। फिर भी हम अपने निकृष्ट स्वार्थ को सिद्ध करने के लिये दूसरो को धोखे मे डालने का दूषित कृत्य करने से नही झिझकते। हमारा यत्न यही रहता कि हम चाहे कितने हो पतित हो परन्तु दूसरे हमे पतित न समझें अपितु हमे अच्छा समझे और हमारे काम को सत्य जान कर हमे सहयोग देवें। एक झूठ बात को सत्य दिखाने के लिये अनेक झूठ बातो का आवरण हम दूसरे के सामने खडा करते रहते हैं। हो सकता है कि दूसरे लोग हमारे दुष्ट व्यवहार की गुफा मे न पहुच कर हमे अच्छा समझें और घोषित करें, परन्तु क्या कोई भी व्यक्ति हम मे ऐसा हो सकता है, जो अपने दुष्कृत्य को अपने मन मे अच्छा समझ सके ? कदापि नहीं। फिर भी हम अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए ऐसा करते हैं, तो हम क्या ईमानदार हैं ? हर्गिज नही ! हम यह भी खूब जानते हैं कि ऐसे हमारे दुष्ट कर्मों का दुःख दायक फल हमे परमात्मा द्वारा लागू की हुई जीव-कर्म-व्यवस्था से अवश्य भोगना पडता है। हम दुःख रूप फल भोगते हैं, रोते हैं, चिल्लाते हैं, हाय हाय करते हैं, परन्तु वाह री-हमारी कुवृत्ति! हम पुनः फिर भी लिप्त रहते हैं। ऐसा दशा में क्या होता है और हो सकता है, प्रत्येक मनुष्य अपने हृदय पर हाथ रख कर जान सकता है। हमे इस का उत्तर देने की कुछ भी आवश्यकता नहीं।

दो मित्र हैं। ऐसी अवस्था में दोनो एक दूसरे के गुणों को जानते हैं और दुर्गुणो को भी। परन्तु जब तक मित्र हैं, तब तक एक दूसरे के दुर्गुणो को कभी किसी के सामने प्रकट नही करते, अपितु एक दूसरे को साधु स्वभाव प्रकाशित करते हैं। परन्तु जब स्वार्थ सघर्ष मे दोनो एक दूसरे के गुणो को भूल जाते हैं तब परस्पर के दुर्गुणो को ही जनता के सामने रखते हैं। अपने-अपने दुर्गुणो को परदे के पीछे छिपाये रखते हैं तथा अपने को दूध का धुला हुआ प्रकट करते हैं और जनता भी हमारी बात को सत्य समझे, इस के लिए जोर-जोर से ढोल पीटते रहते हैं। बेशक इन दोनों का बाहरी रूप अत्यन्त सफैद दिखाई पडता है, परन्तु इस मे सन्देह नही कि दोनो का भीतरी रूप कोयले के रग से भी काला है। ऐसे लोग अच्छे भले सज्जनो को भी अपनी मायावी वृत्ति और चाटुकारिता से साथ मिलाने मे सफल होते देखे जाते हैं। फिर व्यक्तियो का मामला न रह कर पार्टियों का अखाडा बन जाता है। भले लोग ऐसे दुष्टकर्मा स्वार्थियो को समझाने का यत्न भी करतें हैं, परन्तु थक कर अलग बैठ जाते हैं।

इस से जनता मे अविश्वास की लहर दौड जाती है और जनता अच्छे व्यक्तियों पर भी सन्देह और अविश्वास करने लग जाती है। समस्त वातावरण दूषित हो जाता है।

पारस्परिक सघर्ष का अन्त तो होना ही है, परन्तु जनमानस को तो मैला कर दिया जाता है। ऐसे दुष्कर्म क्या ईमानदारी की परिधि मे आ सकते हैं ? क्या इन कर्मों को करते हुए हम ईमानदार हैं ? प्रत्येक व्यक्ति स्वयं इन का उत्तर स्वय समझ सकता है।

हमारे इस व्यक्तिगत धोखे के दुष्ट व्यवहार का प्रभाव हमारे परिवार पर पडना अवश्यभावी है। इस से हमारे दुष्कृत्यो का अनुकरण घर मे परिवार के दूसरे सदस्य तथा बालक करने लगते हैं। हम उन को झू… व्यवहार पर डाटते है परन्तु बालक जानते हैं कि घर के बडे इन दुष्कृत्… को स्वय करते हैं, तब डाट डपट का उन पर कुछ प्रभाव नही पडता। इ… का परिणाम यह होता है कि वे बालक अपने अभिभावको से बढकर नि… कर्म करने लग जाते हैं।

हम साप्ताहिक सत्सगो मे जाते हैं, वहा व्याख्यान बाजी भी करते और सत्सग के पश्चात् उसी कला बाजी के मैदान मे उतर आते हैं। इ… बातो को देख और सुनकर आर्येतरो को तो आर्यसमाज मन्दिरों मे पहुंच… का प्रश्न ही नही रहता। अपितु अच्छे-अच्छे आर्य भी इस कुप्रवृत्ति से … रहना चाहते हैं तथा साप्ताहिक सत्सगो मे भी नहीं पहुंचते। यह कुप्र… पहुंचते-पहुंचते आर्यसमाज के अन्तिम छोर तक पहुच जाती है और … को भी दूषित करने लग जाती हैं। एक व्यक्ति के दुष्कृत्य का परिण… कहाँ तक जाता है—यह बात प्रत्यक्ष है—किसी से छिपी नहीं।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शा…

आवश्यक निवेदन

समस्त उपदेशकों को महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी के आदेश का पालन करना चाहिये

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के झगडे समाप्त करवाने के लिये आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा श्री दीवान रामसरन दास आदि ने महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी को पूर्ण अधिकार दिया था, उसके अनुसार उन्होंने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के सघटन को स्थगित करके सभा के सचालन आदि के लिये ३१–३–६९ को एक प्रबन्धकर्त्री समिति का निर्माण किया। उसमें वेद प्रचार कार्य की सारी जिम्मेदारी पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी को दी गई। प्रो० रामसिह जी सभा प्रधान ने अत्यन्त सद्भावना से मुझे परामर्श दिया कि मैं और मेरे अन्य सभी साथी उपदेशक महात्मा आनन्द भिक्षु जी की आज्ञानुसार कार्य करे ताकि महात्मा आनन्द स्वामी जी को अपने पवित्र उद्देश्य मे सफलता मिले। हम सब ने उपर्युक्त आज्ञाओ का धर्म और निष्ठा के साथ पालन किया। अब श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी ने प्रो० रामसिह जी सभा प्रधान को दि० २०–६–६९ को तार तथा पत्र द्वारा आदेश दिया है कि वे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान के रूप मे अपना कर्त्तव्य पालन कर जैसे स्वामी जी के चार्ज लेने से पूर्व वे पालन करते थे। श्री स्वामी जी के आदेशानुसार प्रो० रामसिहजी तथा उनकी अन्तरग सभा ने पजाब सभा के प्रबन्ध और नियत्रण का सारा कार्य यथापूर्व सभाल लिया। उपदेशको का तथा आर्य समाजो का मुख्य कार्य धर्म प्रचार करना है। इसी आधार पर उपदेशक महानुभावो को शनिवार ता० २८ जून ६९ को आर्य समाज मन्दिर फिल्लौर में एक आवश्यक बैठक हुयी, जिसमे यह सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि सभा के सभी उपदेशक तथा प्रचारक सघटन मे रह कर प्रोफेसर रामसिह जी सभा प्रधान की देख रेख मे कार्य करेंगे। सब उपदेशको, प्रचारको तथा [illegible] रहे और सघटन को दृढ करें।

सभा का कार्यालय यथापूर्व आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर नगर मे रहेगा। इसी पते पर वेद प्रचार विभाग की डाक मेरे नाम से तथा सभा सम्बन्धी अन्य प्रचार-पत्र व्यवहार श्री नवाबसिह, कार्यालयाध्यक्ष के नाम से ही करें। सभा के अधिकारियो से पत्र व्यवहार यथापूर्व १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली के पते पर करते रहने की कृपा करें।

—निरञ्जन देव, अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१

सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों तथा शिक्षण संस्थाओं के नाम परिपत्र

१—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में चल रहे संघर्ष की वास्तविकता को अब सब आर्य भाई समझ ही गये होंगे। (निर्विवाद है कि श्री राम गोपाल शालवाले ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली पर अधिकार बनाये [र]खने की भावना से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के १९६३ के पाकसभा (रोहतक) निर्वाचन के बारे में श्री रतन-[ला]ल जी प्रधान सार्वदेशिक न्याय सभा से अपने मतलब का निर्णय लिखवा कर पंजाब सभा के निर्वाचन का [अम्]बाला छावनी में ५-५-६८ को एक षड्यन्त्र रचा तथा सब जज दिल्ली की निषेधाज्ञा का उल्लंघन करके निर्वाचन [घो]षित कर दिया और सार्वदेशिक सभा के लिये अपने मतलब के १५ प्रतिनिधि घोषित करा लिये, जिससे उनका [सार्व]देशिक पर अधिकार बना रहे। दूसरी ओर समानान्तर पंजाब सभा खड़ी करके उनसे पंजाब सभा के कार्यालयों [व] सम्बन्धित आर्य समाजों और शिक्षण संस्थाओं पर जबरदस्ती अधिकार करने के प्रयास किये। इसके अतिरिक्त [उन] लोगों से हमारे विरुद्ध दिल्ली तथा जालन्धर में अभियोग भी कराये गये जिससे वेद प्रचार के स्थान पर संघर्ष [का] वातावरण बन गया और आर्य समाज का नाम बदनाम होने लगा जिससे सब विचारशील आर्य नेता चिन्तित हुए।

२—हैदराबाद में ८-११-६८ को सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन—श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी की अध्यक्षता [में] कार्यवाही आरम्भ होते ही आर्य जगत् के झगड़े समाप्त कराने का विषय प्रस्तुत हुआ। ५ घण्टे के विचार विमर्श [के] उपरान्त निश्चय हुआ कि महात्मा आनन्द स्वामी जी को आर्य जगत् के झगड़े समाप्त कराने का पूर्ण अधिकार [दिय]ा जावे। सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों ने स्वयं को महात्मा जी के अधिकार क्षेत्र से निकालने की भावना [से उ]क्त प्रस्ताव को बदल कर "प्रान्तीय समाजों के झगड़े सुलझाने तक ही सीमित रखा।" सार्वदेशिक सभा की [अन्त]रंग सभा ने अपनी बैठक दि० २३-२-६९ मे प्रस्ताव द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी जी को प्रान्तीय समाजों के [झगड़]े समाप्त कराने के पूर्ण अधिकार दिये। पजाब सभा के दोनों पक्षों ने भी इस प्रकार के महात्मा जी को [स्वी]कार दिये। उनके आधार पर महात्मा जी ने सर्व प्रथम अभियोग वापिस कराने का प्रयत्न किया। हमने सब [अभि]योग वापस ले लिये परन्तु श्री वीरेन्द्र आदि ने महात्मा जी को केवल आशा पर ही रखा।

३—११-३-६९ को महात्मा आनन्द स्वामी जी ने पंजाब सभा के दोनों पक्षों के संघटन को भंग करके सभा [के प्र]बन्ध व नियंत्रण के लिये अपनी अध्यक्षता में एक प्रबन्धकर्त्री समिति का निर्माण किया। हमने यहाँ अपने सब [अभि]योग वापस लिये वहाँ महात्मा जी की सेवा में अपना कार्यालय, कर्मचारी, रिकार्ड तथा धन आदि सब कुछ [अर्पित] कर दिया परन्तु श्री वीरेन्द्र आदि ने न अभियोग वापस लिये तथा न अन्य किसी प्रकार से सहयोग रखा। [महात्]मा जी ने १९-५-६९ को दीवान रामसरनदास जी को आदेश दिया था कि वह अम्बाला में घोषित एक पक्षीय [सार्वदे]शिक के १५ प्रतिनिधियों को सार्वदेशिक की ३१-५-६९ की बैठक में न आने दें। उन्होंने तथा सार्वदेशिक सभा [ने] आज्ञा का उल्लंघन करके महात्मा जी का घोर अपमान किया। महात्मा जी दुःखी तो हुए परन्तु समझौता की आशा न छोड़ी। अब जालन्धर कार्यालय भ्रम मूलक तथ्यों के आधार पर खुलवा कर उसका चार्ज [महात्म]ा जी के साथ हुए निश्चय के अनुसार महात्मा आनन्द भिक्षु जी को न देकर स्वयं ही कब्जा कर लिया। महात्मा जी को काश्मीर मे पता लगा तो उन्हे बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने मुझे तार दिया कि "मेरे चार्ज [पू]र्व जिस प्रकार आप आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान के रूप में कार्य करते थे, वही कर्तव्य करें।" उपरान्त जो स्वामी जी का पत्र आया है उसमे निम्न आदेश भी उन्होने दिया है।

"आप तत्काल आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का कार्य संभाल कर उचित कार्यवाही कीजिये और सब सम्बन्धित [सम]ाजो को सरकुलर पत्र भेज कर निर्वाचन कराइये और विधिवत कार्य करते रहिए।"

सेवक—आनन्द स्वामी सरस्वती
१०-६-६९

[महात्]मा जी के उपरोक्त आदेश और निर्णय द्वारा अब केवल मुझे तथा मेरी अन्तरंग सभा को ही आर्यप्रतिनिधि [सभा पं]जाब के प्रबन्ध तथा नियंत्रण का अधिकार प्राप्त हुआ है। इस प्रकार का अधिकार दीवान रामसरनदास [वीरे]न्द्र तथा श्री मुरारीलाल आदि को महात्मा जी ने नहीं दिया। ऐसी अवस्था में इन महानुभावों को सभा के नियत्रण तथा अन्य किसी कार्य मे हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं। आर्यसमाजें कृपा करके सतर्क [रहें और] केवल सभा उपकार्यालय १५, हनुमान रोड नई दिल्ली तथा कार्यालय, द्वारा—आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर, [जालन्ध]र नगर से अपना समस्त पत्र व्यवहार करें।

रामसिंह—प्रधान
आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

-६-६९

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की सूचनायें

१. ला० रामलाल जी गुप्त, सभा कार्यालय अधिष्ठाता नियुक्त

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के जालन्धर स्थित कार्यालय के प्रबन्ध तथा नियंत्रण के लिये और पंजाब में आर्यसमाज की गतिविधियों का ध्यान रखने के लिये और आर्यसमाजों की वेद प्रचार आदि की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिये सभा ने लाला रामलाल जी गुप्त, म्युनिसिपल कमिश्नर जालन्धर को सभा के जलान्धर कार्यालय का अधिष्ठाता नियुक्त किया है। पंजाब की सब आर्यसमाजें तथा आर्य भाई आवश्यकतानुसार उनसे निम्न पते पर सम्पर्क करने की कृपा करें।

घर का पता :—९ विक्रमपुरा, जालन्धर नगर।
फोन :—३९०३, जालन्धर

२. श्री देवदत्त कार्यालयाध्यक्ष पद से पृथक्

श्री देवदत्त जी कुछ वर्ष से सभा कार्यालयाध्यक्ष के रूप में कार्य कर रहे थे, उन्हें सभा तथा उसके अधिकारियों के विरुद्ध घातक गतिविधियों के कारण सभा की सेवा से पृथक् कर दिया गया है। अब उन्हें सभा तथा उससे सम्बन्धित आर्यसमाजों अथवा शिक्षण संस्थाओं के किसी कार्य में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं रहा।

३. श्री नवाबसिंह सभा कार्यालयाध्यक्ष नियुक्त

श्री देवदत्त को कार्यालयाध्यक्ष के पद से पृथक् किये जाने के उपरान्त रिक्त स्थान पर सभा गणक श्री नवाबसिंह को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कार्यालयाध्यक्ष नियुक्त किया गया है। उनका कार्यालय यथा पूर्व, "आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर, जालन्धर नगर" में रहेगा। आर्यसमाजें तथा सभा उपदेशक महानुभाव उनसे उपरोक्त पते पर सम्पर्क स्थापित करने की कृपा करें।

रघुवीरसिंह शास्त्री संसद् सदस्य
मंत्री—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

गतांक से आगे

ओङ्कार-जप-विधिः

(५)

पातंजल— जप-विधान और उसका फल—२

(पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—महर्षि पतंजलिजी ओङ्कार-जप का विधान करते हैं :—

तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥ [योग-दर्शन—१।२८]

उस "ओम्" नाम को जपना चाहिये और उसके अर्थ का विचार करना चाहिये।

२—आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वान् सामवेदभाष्यकार स्वर्गीय श्री पं० तुलसीराम जी स्वामी मेरठ निवासी ने अपने योग-दर्शन के भाष्य में इस सूत्र के विषय में यह टिप्पणी दी है:—

"योगी को ओङ्कार का जप करना चाहिये और ओङ्कार के अर्थ ईश्वर का परम प्रेम से भक्तिपूर्वक आत्मा में अनुभव करना योग्य है। ऐसा करने से ईश्वर की कृपा होती है और उसकी कृपा से योगी का चंचल चित्त भी स्थिरता को प्राप्त हो जाता है। चित्त के समाधान से पुरुष ख्याति [पुरुष का प्रकृति और उसके कार्यों से भेद समझे जाने] से वैराग्य होता है। और वैराग्य से फिर असम्प्रज्ञातयोग सिद्धि बहुत समीप रह जाती है।"

३—"ओम्" नाम के अर्थ विचार को ही "ओम्" नाम की भावना अथवा विभावना भी कहते हैं। यह भावना किस प्रकार करनी चाहिये ? इस विषय का थोड़ा उल्लेख इस लेख-माला में पहिले श्री महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों के उद्धरण में तथा श्री स्वामी ओमानन्द जी महाराज के "पातंजल-योगप्रदीप" के उद्धरणों में हो चुका है। इस कार्य के लिये ओङ्कार—विषयक छोटे-बड़े सभी ग्रन्थों से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सहायता प्राप्त होती है। अतः सुलभ होने पर ऐसे सभी ग्रन्थों को मनोयोग पूर्वक पढ़ना और उनका मनन करना चाहिये, जिनमें ओङ्कार के अर्थ दर्शाये गये हैं। ऐसे ग्रन्थों में प्रतिपादनक्रम और भाषा-शैली के भेद होने पर भी कोई तात्त्विक भेद नहीं है।

४—ओङ्कार के अर्थों का प्रतिपादन करने वाले कुछ ग्रन्थ इस प्रकार हैं :—

(१) श्री पं० शिवशंकर जी काव्यतीर्थकृत "ओङ्कार—निर्णय"। (२) श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी कृत "ओम् प्रत्यक्ष" (३) श्री स्वामी वेदानन्द जी कृत "सावित्री—प्रकाश" (४) श्री स्वामी सत्यानन्द जी कृत "ओङ्कारोपासना" (५) माण्डूक्योपनिषद् (६) श्री स्वामी सर्वदानन्द जी कृत "सन्मार्ग-दर्शन" का पहिला अध्याय नाम-गति। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने इसे बहुत सुन्दर रूप में पृथक् भी छपवाया था और उसका नाम "प्रणव-परिचय" रखा था। (७) श्री स्वामी विवेकानन्द जी व्याकरणाचार्यकृत "ओङ्कारोपासना" [संस्कृत में] (८) श्री स्वामी अमृतानन्द जी कृत "ओङ्कार-स्तोत्र" (९) श्री स्वामी लक्ष्मणानन्द जी कृत "ध्यान योग—प्रकाश" (१०) श्री पं० राजेन्द्र जी कृत आर्य संस्कृति के तीन प्रतीक" (११) श्री पं० प्रसादीलाल शर्मा कृत "ओङ्कार-दर्शन" (१२) श्री स्वामी विद्यानन्द जी "विदेह" कृत "योग-पद्धति"।

५—विद्यामूर्ति स्वर्गीय श्री पण्डित राजाराम जी प्रोफेसर डी० ए० वी० कालिज लाहौर ने योग-दर्शन का जो उत्तम भाष्य रचा था, उसका एक नया संस्करण श्री रामदित्ता जी वानप्रस्थी हौंदा-भवन, सन्नानगर हरद्वार की ओर से बहुत उत्तम रूप में कुछ वर्ष पूर्व छपा है। उसके पृष्ठ—३९ पर एक महत्त्वपूर्ण टिप्पणी में योगिराज श्री स्वामी सियाराम जी द्वारा निर्दिष्ट ओङ्कार—जप की एक सरल विधि का उल्लेख किया गया है।

६—वह टिप्पणी इस प्रकार है :—

"ईश्वर—प्रणिधान के प्रसङ्ग में महर्षि प्रणव-जप का विधान करते हैं। केवल जप से ही योग की सिद्धि हो सकती है; परन्तु बिना किसी क्रम और पद्धति के किया गया कोई भी काम ठीक फल को पैदा नहीं करता। जप से जिन महात्माओं ने लाभ उठाया है और उनके मार्ग पर चलने वाले असंख्य जिज्ञासुओं को भी जिन मार्गों से लाभ हुआ है, उनमें से एक पद्धति का उल्लेख यहाँ किया जाता है। यह पद्धति प्रातः स्मरणीय योगिराज स्वामी सियाराम जी महाराज के द्वारा जिज्ञासुओं को बतलाई जाती थी और इससे अनेक जिज्ञासुओं को बहुत जल्द शान्ति, आनन्द और आत्मानुभूति होने लग जाती थी। अब भी जो व्यक्ति इसको अपनाता है और विधिपूर्वक करता है, उसे लाभ होता है। "जप को मन करे और साथ ही बुद्धि उसे सुने।" इस प्रकार जप करने और सुनने वाले दो व्यक्ति पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। जप करने वाला मन और सुनने वाली बुद्धि की पृथकता से ही बुद्धि शान्त और स्थिर होने से आत्म-साक्षात्कार का मार्ग अपने आप सहज स्वभाव से ही खुल जाता है। यह विधि प्रकृति से पुरुष को अलग करने और अपनी सत्ता को अनुभव करने का एक सहज तथा सुगम उपाय है।"

७—श्री स्वामी सियाराम जी के जीवन-चरित्र में उनका एक पत्र है। उसमें भी ओङ्कार-जापकों के काम की बातें हैं। यथा—

"प्रिय ....मैंने तुम को बहुत स्पष्ट रूप से लिखा था; पर तुम ठीक नहीं समझ सके। इससे यह सिद्ध होता है कि पत्र-व्यवहार से कहीं न कहीं सन्देह रह ही जाता है। इसलिये जब कभी मिलना हो तब सन्देह निवारण कर लेना। तुम को पता है कि मानसिक जप सब से श्रेष्ठ है, दूसरे दर्जे में धीरे-धीरे का जप होता है। तीन दफा कर सको और अच्छा है। शुद्धता के साथ होना चाहिये। भीतर-बाहर स्थान का मतलब यह है कि गरमी के दिन होने की वजह से सम्भव है शाम या किसी समय भीतर न बैठ सको। बाहिर बैठने मे सुभीता हो तो दो जगह बन्दोबस्त कर सकते हो।... ..."

८—पूर्व टिप्पणी में और इस पत्र में मानसिक जप की जो बड़ाई है वह मनुस्मृति—२।८५ के अनुसार है। यथा—

विधियज्ञाज्जपयज्ञो, विशिष्टो दशभिर्गुणैः।
उपांशुःस्याच्छतगुणः, साहस्रो मानसः स्मृतः ॥

अर्थ—ज्योतिष्टोम, अश्वमेध, आदि विधियज्ञों से जप-यज्ञ दस गुणा अधिक श्रेष्ठ है। उपांशु अर्थात् जिस मे "ओम्" नाम को धीरे-धीरे कहा जाये, वह जप सौ गुणा अधिक श्रेष्ठ है। और मानस-जप, वह तो हजार गुणा अधिक श्रेष्ठ है।

९—गीता के विभूति-दर्शन प्रकरण [१०।२५] का वचन है—

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि।

यज्ञों में श्रेष्ठ जप-यज्ञ मैं ही हूं। यहां भी जप-यज्ञ की ही महिमा दर्शाई गई है।

१०—महर्षि पतंजलि "ओम्" नाम जप का फल दर्शाते हैं—

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाऽभावश्च ॥ [योग-दर्शन १।२९]

जब उपासक=योगी "ओम्" नाम का जप करता है, और उसके भरोसे पर ही अपने जीवन के सब व्यवहारों को करता है, तब उसे प्रत्यक् अर्थात् भीतरी चेतन [आत्म-स्वरूप] का ज्ञान हो जाता है। उसके जीवन में होने वाले विघ्नों का नाश भी हो जाता है।

११—वे विघ्न कौन-कौन से हैं ? दर्शाते हैं :—व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनाऽलब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥ [योग—दर्शन—१।३०]

(१) व्याधि-ज्वर आदि, वात, पित्त, कफ की विषमता। (२) स्त्यान—इच्छा होते हुए भी किसी काम को न कर सकना। (३) संशय—द्विविधा, यह करूं, या वह। (४) प्रमाद—ढील, यमनियमों के अनुष्ठान में प्रमाद। (५) आलस्य—सुस्ती, चित्त वा शरीर का भारीपन। (६) अविरति—चित्त का अन्य कार्यों में फंसना। (७) भ्रान्ति-दर्शन—मिथ्या ज्ञान, उलटा समझना। (८) अलब्धभूमिकत्व=योग-साधन में असफलता। (९) अनवस्थितत्व—योग-साधन में सफल होने पर भी साधन में स्थिरता और उन्नति का न होना।

शेष पृ० ९ पर

पृ० ५ का शेष

१२—चित्त को विक्षुब्ध करने वाले ये भी विक्षेप अर्थात् विघ्न बा
ंतराय हैं, जोकि "ओम्" नाम का जप करने और ईश्वरार्पण बुद्धि से
ावन व्यतीत करने से दूर हो जाते हैं।

१३—"ग्राम्' नाम के जप से और भी पाच दोष दूर होते हैं—
दु खदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुव ।
(योग-दर्शन १।३१)

(१) दु ख—आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक भेद से
न प्रकार के ताप।

(२) दौर्मनस्य—किसी इच्छा की पूर्ति के न होने से होने वाला
त्त का विक्षोभ।

(३) अगमेजयत्व—आसन और मन का स्थिर न होना, कम्पन,
डा, हाथ-पाव का टूटना।

(४) श्वास—इच्छा न होने पर भी वायु का भीतर जाना।

(५) प्रश्वास—इच्छा न होने पर भी वायु का भीतर से बाहर आना।
का अभिप्राय यह है कि प्राणायाम, गायन एव वार्तालाप के समय
ास प्रश्वास की गति का अनियमित होना।

१४—उन नौ विक्षपो और उनके इन पाँच साथियो के निवारण के
ये "ओम्" का जप और एकतत्त्व का अभ्यास=ईश्वर-भक्ति का अनु-
न प्रत्येक मनुष्य को अवश्य ही करना चाहिए। 'एकतत्व' केवल ईश्वर
है। जीवन तथा कारण रूप जड नाना है।

१५—समल अर्थात् अशुद्ध चित्त से ईश्वर की भक्ति का होना तो
म्भव ही है। चित्त की निर्मलता के कई साधन शास्त्रकारों ने बतलाये
दो मुख्य उपायों का उल्लेख यहाँ करते हैं। प्रथम उपाय है—यथा-
य व्यवहार—

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुखपुण्याऽपुण्यविषयाणां भावनातश्चित्त-
ादनम् ॥ (योग-दर्शन—१।३३)

सुखियो से मित्रता, दु:खियो पर दया, पुण्यात्माओं के प्रति हर्ष और
ष्यात्माओ के प्रति उपेक्षा का व्यवहार करने से चित्त निर्मल होता है।
ण रहे भले लोगो को ही पुण्यात्मा और पापियो—अपराधियो को ही
ष्यात्मा कहा जाता है।

१६—चित्त की निर्मलता का दूसरा उपाय है प्राणायाम—
प्रच्छर्दनविधारणाभ्या वा प्राणस्य। (योग-दर्शन—१-३४)

अथवा प्राण को बल से बाहर निकालने और यथाशक्ति बाहर ही
ने से भी चित्त निर्मल हो जाता है।

१७—प्राणायाम के विषय मे मेरा विशेष वक्तव्य यह है—

(१) प्राणायाम के अभ्यास से चित्त निर्मल होता है, रक्त की शुद्धि
वृद्धि होती है। क्षय आदि रोगो का प्रतिकार भी होता है।

(२) प्रात साय दोनो समय सन्ध्या के आरम्भ में, अथवा सन्ध्या की
ान विधि के पश्चात् और अघमर्षण की विधि से पूर्व, अथवा गायत्री
। के बाद ओम् नाम के जप से पूर्व प्राणायाम का विशेष अभ्यास सभी
ाक-साधिकाओं को अवश्य ही करना चाहिए। सन्ध्या के साधारण
ष्ठान मे तो अनुक्रमानुसार यथास्थान प्राणायाम करना ही चाहिये।

(३) सध्या और जप के बिना भी अभ्यास के लिये प्राणायाम का
ष्ठान किया जाये तो उत्तम है। साधक को अपने सभी कार्यों का यथो-
कार्यविभाग कर लेना चाहिये।

(४) प्राणायाम करने का स्थान सुन्दर, स्वच्छ और वातावरण शी
ल एवं कोलाहल रहित होना चाहिए। धूल, धुंआ, दुर्गन्ध, तेज वायु,
ड़र, मक्खियाँ, कीड़-मकोड आदि उस स्थान में न हो। साप, बिच्छू,
तथा किसी हिंसक पशु का भय भी वहाँ न होना चाहिए।

(५) प्राणायाम के विषय में विद्वानो ने छोटे-बडे कई ग्रन्थ रचे हैं।
उनसे कुछ विशेष जानकारी भी मिलती है। कुछ ऐसे प्राणायामों के
उल्लेख भी मिलते हैं, जोकि जटिल हैं। उनके अभ्यास मे कठिनाई होती
है। उनका करना सब किसी के लिये आवश्यक भी नही है। पुस्तको से
प्राणायाम के अभ्यासियों को बहुत ही कम सहायता मिल पाती है। पुस्तकों
के उल्लेख और उनके लेखक भी प्राय: सदिग्ध ही होते हैं। हा, आर्ष
पुरुषों के उल्लेख तो सरल और आचरणीय ही होते हैं। साधको को प्राणा-
याम के अभ्यास मे पुस्तको का उपयोग बहुत सोच-समझकर ही करना
चाहिए। अन्यथा हानि की ही सम्भावना है।

(६) प्राणायाम सिखलाने वाले सुयोग्य शिक्षको का मिलना आजकल
बहुत कठिन है। तथापि इस विषय में चिन्ता न की जाये। जो स्वाध्याय-
शील, बहुश्रुत, उत्तम आचार-विचार सम्पन्न साधक-साधिकायें हैं, उनका
अपना अनुभव ही उनके लिए यथा समय गुरु का काम करेगा। योग-मार्ग
का यह एक अचूक सिद्धान्त है।

(७) दौड, दौडने के खेलों में भाग लेने, गहरे सास लेने, घोड़े की
सवारी करने, भयरहित तालाबो में तैरने आदि से भी आंशिक रूप में
प्राणायाम से लाभ प्राप्त होता है।

(८) प्राणायाम के विषय मे मनु का वचन है—

दह्यन्ते ध्मायमानानां, धातूना हि यथा मला:।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते, दोषा: प्राणस्य निग्रहात् ॥ (मनुस्मृति—६-६१)

अर्थ—अग्नि में तपाने से जैसे सुवर्ण आदि धातुओं के मल नष्ट हो
जाते हैं, वैसे ही प्राणायाम के अभ्यास से इन्द्रियो के मल भी नष्ट हो
जाते हैं।

(९) प्राणायाम के प्रारम्भिक प्रकारो का निर्देश हमारे महर्षि दयानद
जी ने अपने ग्रन्थों में कई स्थानों में किया है। "सत्यार्थप्रकाश" के तीसरे
समुल्लास का एक प्रसग यह है—

"जैसे अत्यन्त वेग से वमन होकर अन्नजल बाहर निकल जाता है। वैसे
प्राण को बल से बाहर फेंक के बाहर ही यथाशक्ति रोक देवे। जब बाहर
निकालना चाहे, तब मूलेन्द्रिय को ऊपर खीच रखे। तब तक प्राण बाहर
रहता है। इसी प्रकार प्राण बाहर अधिक ठहर सकता है। जब घबराहट
हो, तब धीरे-धीरे भीतर वायु को लके फिर भी वैसे ही करता जाये,
जितना सामर्थ्य और इच्छा हो और मन मे (ओम्) इस का जप करता
जाये। इस प्रकार करने से आत्मा और मन की पवित्रता और स्थिरता
होती है।"

(१०) वे आगे लिखते हैं—

एक "बाह्यविषय" अर्थात् बाहर ही अधिक रोकना। दूसरा "आभ्या-
न्तर" अर्थात् भीतर जितना प्राण रोका जाये, उतना रोक के। तीसरा
"स्तम्भवृत्ति" अर्थात् एक ही बार जहाँ का तहाँ प्राण को यथाशक्ति रोक
देना। चौथा "बाह्याभ्यान्तरापेक्षी" अर्थात् जब प्राण भीतर से बाहर
निकलने लगे। तब उसके विरुद्ध न निकलने देने के लिए बाहर से भीतर
ले और जब बाहर से भीतर आने लगे, तब भीतर से बाहर की ओर प्राण
को धक्का देकर रोकता रहे।"

(११) वे फिर लिखते हैं—

"ऐसे एक दूसरे के विरुद्ध क्रिया करे, तो दोनो की गति रुककर प्राण अपने
वश में होने से मन और इन्द्रियं भी स्वाधीन होते हैं। बल, पुरुषार्थ बढ़कर
बुद्धि तीव्र सूक्ष्म रूप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को
भी शीघ्र ग्रहण करती है। इससे मनुष्य शरीर मे वीर्यवृद्धि को प्राप्त
होकर स्थिर बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोडे ही काल
में समझकर उपस्थित कर लेगा। स्त्री भी इस प्रकार योगाभ्यास
करें।"

(क्रमश:)

विचारविमर्श—

गतांक से आगे—

यज्ञ कराने का अधिकार गृहस्थ को ही है

(श्री पं० वीरसेन जी वेदश्रमी, महारानी पथ, इन्दौर)

यज्ञ जिससे करवाया जाता है या जो यज्ञ करता है वह यजमान सज्ञक है और जो यज्ञ कराते हैं वे ऋत्विज् सज्ञक है। इन्ही की पुरोहित, होता, अध्वर्यु उद्गाता, ब्रह्मा, आचार्य आदि सज्ञायें कार्य विशेष से होती हैं। वे भी सपत्नीक, गृहस्थ होने चाहिये, जैसा कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के निम्न वाक्यो से स्पष्ट है —

(१) "उत्तम गृहस्थ, धार्मिक विद्वानो का वरण कर ।" (सस्कार विधि)
(२) 'वेदप्रिय, पूजनीय, सर्वोपरि गृहस्थ को पुरोहित सज्ञा है।" („)
(३) "वेदवित्, धार्मिक होता आदि सपत्नीक ब्राह्मण ।" („)

अत यज्ञ कराने वाले ऋत्विजो की पात्रता सपत्नीक गृहस्थ विद्वानो को है। अपत्नीक को नही तथा गृहस्थ के अतिरिक्त ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एव सन्यासियो को भी नहीं है। वेद मे इसकी पुष्टि का निम्न प्रमाण उपलब्ध होता है —

ये देवाना ऋत्विजो ये च यज्ञिया येभ्यो हव्य क्रियते भागधेयम्।
इम यज्ञ सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्हविषा मादयन्ताम्॥
(अथर्व काण्ड ११।सूक्त ५८।म० ६)

इस मन्त्र मे विद्वानो के ऋत्विजो को जो कि यज्ञो को अच्छे प्रकार से कराने में कुशल हैं उनको यज्ञ में पत्नी सहित आने के लिए विधान किया है' अर्थात् यज्ञ कराने वाले ऋत्विज् भी पत्नी वाले गृहस्थ ही होने चाहिये। अपत्नीक ऋत्विज् कर्म कराने के लिये ग्राह्य नहीं है—इसकी पुष्टि इस पूर्वोक्त मन्त्र से होती है।

ऋत्विजों की अन्य योग्यता

सपत्नीक एव गृहस्थ होने के अतिरिक्त ऋत्विजों की अन्य क्या योग्यता होनी चाहिये, इस बारे मे महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने लिखा है।

(१) "अच्छे विद्वान्, धार्मिक, जितेन्द्रिय, कर्म करने मे कुशल निर्लोभ, परोपकारी, दुर्व्यसनो से रहित, कुलीन, सुशील वैदिक मत वाले ...।"

(२) धर्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि को पूर्ण रीति से जानने हारा विद्वान् सद्धर्मी, कुलीन, निर्व्यसनी, सुशील, वेदप्रिय, पूजनीय, सर्वोपकारी गृहस्थ की पुरोहित सज्ञा है।"

(३) "ऋत्विज्, होता, अध्वर्यु और ब्रह्मा का वरण करे जो कि धर्मात्मा विद्वान हो।"

(४) 'सुपात्र, वेदवित्, धार्मिक, होता आदि सपत्नीक ब्राह्मण ।"

(५) "उत्तम, गृहस्थ, धार्मिक विद्वानो का वरण .....।"

(६) "पुरोहितादि सद्धर्मी ।"

ऋत्विजो के सम्बन्ध मे उपरोक्त वाक्य सस्कारविधि मे महर्षि ने लिखे हैं। अत उपरोक्त लक्षणो से युक्त गृहस्थ को यज्ञ कराने का अधिकार है तथा अविद्वान्, अधार्मिक, पतित आचरण वाले गृहस्थ को यज्ञ कराने का अधिकार नही है। क्योकि ऐसे अनधिकारी से यज्ञ कराने से वेद विद्या का नाश तो होगा ही, साथ ही यज्ञ का भी नाश होगा।

अविद्वान् ऋत्विजों से यज्ञ का नाश

अविद्वान् ऋत्विजो से यज्ञ कराने से यज्ञ का नाश होता है इसकी पुष्टि निम्न वाक्य से होती है :—

"यद्वै यज्ञे अकुशला ऋत्विजो भवन्ति—यज्ञस्य विरिष्टिमित्याचक्षते।"
—(गोपथ ब्राह्मण)

अर्थात् जब यज्ञ कर्म के न जानने वाले, अयोग्य, अकुशल व्यक्ति ऋत्विज् बनकर यज्ञ कर्म कराते हैं तो उसे यज्ञ का नाश ही कहा जाता है। इसलिये विद्वान् वेदज्ञ, धार्मिक व्यक्तियो से ही यज्ञ कराना चाहिये क्योकि—
"विप्रो यज्ञस्य साधन" । (सामवेद)

यज्ञ को सम्पन्न कराने के लिये विप्र ही प्रमुख रूप से साधन है। बिना इस विप्र रूपी साधन के यज्ञ हो ही नही सकता। विद्वान्, वेदवित्, धार्मिक, कुलीन, ब्रह्मवेत्ता सद्धर्मी ब्राह्मण को ही विप्र कहा जाता है। परन्तु—

संन्यासी यज्ञ कराने का अधिकारी नहीं है

उपरोक्त विप्र लक्षणो से युक्त यदि सन्यासी है तो उसको य[ज्ञ मे] ऋत्विज् बनने का अधिकार नही है। जब उसे ऋत्विज् बनने का ही [अधि]कार नही तो उसका वरण भी होता, उध्वर्यु, उदगाता, ब्रह्मा [आदि] के रूप मे भी नही हो सकता है। इसका कारण यही है कि यज्ञ करने कराने के अधिकारी के लिये यज्ञोपवीत धारण करना आवश्यक बत[ाया] गया है। जैसा कि —

"ते सर्वे एव यज्ञोपवीतिनो भूत्वा इत्याय यजमानश्च
ब्रह्मा च पश्चात् परीत पुरस्तादग्नीत्।"
(शतपथ ब्राह्मण २।५।२।

अर्थात्—ये सब ब्रह्मा, होता अध्वर्यु, उद्गाता, यजमान आदि य[ज्ञो]पवीती होकर यजमान और ब्रह्मा इस प्रकार पश्चिम दिशा को चल[ते] और आग्नीध् पूर्व दिशा की ओर चलता है। यहाँ सबको यज्ञोपवीत कर अर्थात् बायें कन्धा पर यज्ञोपवीत धारण करके क्रिया सम्पन्न करने [का] उल्लेख है। यदि सन्यासी यज्ञ मे होता, ब्रह्मा आदि कुछ भी बनेगा तो यज्ञोपवीत धारण करना ही होगा—अन्यथा यज्ञविधि हीन तथा नि[ष्फल] हो जायगा। यदि सन्यासी यज्ञोपवीत धारण करेगा तो उसके यज्ञोप[वीत] त्याग की आश्रम मर्यादा का भग और प्रतिज्ञा की हानि होगी तथा उसका असत्य व्यवहार भी माना जावेगा। अत सन्यासियो को यज्ञ पर बैठाना अयुक्त ही है। इसी प्रकार लाटघायन श्रोत सूत्र मे लिखा

"सर्वेषा यज्ञोपवीतोदकाचमने नित्ये कर्मोपयताम्।" (१।२।१४)
"सर्वेषा उद्गातृ प्रभृतीना चतुर्णामपि आर्त्विजि उपक्रम वेलाया।
यज्ञोपवीतमुदकाचमन च नित्य कर्मोपयता कर्म कुर्वताम्।"

अर्थात् यज्ञों मे जो होता, अध्वर्यु, उदगाता ब्रह्मादि रूप से जो [व]रण किये गय ऋत्विज् हैं उनको कार्य के प्रारम्भ मे यज्ञोपवीत धारण, जल आचमन आदि कार्य करने चाहिये। इसी प्रकार—

"यज्ञोपवीती एव—याजयेत्" (एतरेय ब्राह्मण)

यह वचन भी यज्ञोपवीत धारी को ही यज्ञ कराने का अधिकार प्र[दान] करता है।

सन्यास ग्रहण करने पर तो यज्ञोपवीत का त्याग किया जाता है क्य[ोकि] यज्ञोपवीत का सम्बन्ध बाह्य कर्मकाण्ड की अग्नियो से है। इन्ही [...] यज्ञाग्नियो को सन्यासी त्यागता है और बाह्य कर्मकाण्ड को भी त्या[गता] है। अत इन बाह्य यज्ञो का अधिकार प्रदान करने वाले यज्ञोपवीत का उसे त्याग करना पडता है। ऐसी स्थिति मे यदि वह उन्ही त्यक्त यज्ञ करता है तो उसका त्याग ही क्या हुआ और फिर उसका सन्यास भी, हुआ? उसकी आश्रम मर्यादा भग हो जाती है तथा उसका सन्यास स्वाग मात्र रह जाता है। यदि उसे यज्ञ कराना ही अभीष्ट है तो सन्यास को छोडकर यज्ञोपवीत एव शिखा को धारण करके सपत्नीक [गृह]स्थ बनकर अधिकारी बन जावे और यज्ञ मे ब्रह्मादि बनने की [...] लालसा की तृप्ति कर ले। सन्यासी को तो लोकैषणा एव वित्तैषणा [के] वशीभूत होकर यज्ञादि कर्मों को कराना एव ब्रह्मादि बनना नितात [अयुक्त] है क्योकि वह तो इस एषणाओ का भी त्याग करके सन्यासी बनता है।

ब्रह्मा को यज्ञ मे आहुतियां भी प्रदान करनी होती हैं। यह का[र्य] सन्यासी की मर्यादा के विपरित है। यदि आहुति नहीं प्रदान करेगा तो [यज्ञ] की विधिहीनता और अपूर्णता रहेगी। इस प्रकार दोनो ही स्थितिया [...] लिये प्रतिकूल हैं। गोपथ ब्राह्मण मे ब्रह्मा को घृत की आहुति देने के [लिये] में विधान आता है तथा अन्यत्र भी पूर्णाहुति से पूर्व ब्रह्मा को प्रार्य आहुति देने का भी विधान आता है। ऐसी स्थिति मे लोकैषणा वित्तैषणाओ के वशीभूत होकर सन्यासियों का यज्ञ मे ब्रह्मादि के स्[थान पर बैठना] सर्वथा अयुक्त ही है।

इसके अतिरिक्त सन्यास लेते समय शिखा को भी त्यागना पडता [है।] शिखा रहित व्यक्ति द्वारा किया गया यज्ञ कर्म निष्फल होता है।

शेष पृ० ८ पर

पृ० ७ का शेष

—"विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम्"—यह कात्यायन स्मृति वचन निष्फलता की घोषणा कर रहा है। यदि कोई अपने यज्ञ को : करना ही चाहता है तो उसे बिना यज्ञोपवीत धारी, बिना शिखा वाले क्तियों से तथा जो आश्रम मर्यादा का उल्लंघन लोकैषणा एवं वित्तैषणा वशीभूत होकर कर रहे हैं ऐसे जो प्रतिज्ञा एवं व्रत को भंग करने वाले गैर जो धर्म की मर्यादा उल्लघन करने वाले संन्यासी हैं उनसे यज्ञ ाना चाहिए इसमें यदि कोई धर्म समझता है तो वह निःसन्देह धर्म की त ही करता है।

काठक गृह्य सूत्र में लिखा है :—

"निःशिखत्वं तु अमगलधर्मो अरिष्टहेतुः। तथा च पठन्ति

"अमेध्यमतेत् शिरो अशिखम्"—"यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा तखा इव"—"इति निन्दावादः।"

अर्थात् बिना शिखा का यज्ञ में होना अमगल का तथा अनिष्ट का हेतु शास्त्रों में बिना शिखा के शिर को अपवित्र, अयज्ञिय कहा है। क्योंकि वेद में—"यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव"—यह निन्दा ; वाक्य शिखा रहित शिरो के लिये कहा है। इसी प्रकार शिखा के वेद में प्रशसापूर्ण शब्द निम्न रूप में कहे गये हैं :—

"श्रिये शिखा" । (यजुः १९।९२)

अर्थात् शिखा, ऐश्वर्य, श्री, शोभा, लक्ष्मी, आदि के लिये होती है। यज्ञ को मंगलमय एवं श्रीयुक्त बनाने के लिये शिखा को जिनने त्यागा है ऐसे ही ऋत्विजों से यज्ञ कराना चाहिये तथा जिनने शिखा का ' कर दिया है ऐसे संन्यासी आदियों से यज्ञ नहीं कराना चाहिये। दि अनेक हेतुओं एवं प्रमाणों से संन्यासियों का ब्रह्मत्व या यज्ञाध्यक्षत्व ा असिद्ध है और अमंगलजनक होने से त्याज्य ही है। इससे वास्तव मगल हुआ भी है।

"निःशिखत्वं तु अमंगल धर्मः"—की मान्यता भी लोक में विद्यमान् इसलिये विवाहादि कार्यों के अवसर पर संन्यासियों को निमन्त्रित भी किया जाता है। यदि ऐसे अवसर पर संन्यासी आ जाता है तो अशुभ ाना जाता है। परन्तु अज्ञान से अब तो संन्यासियों से विवाह संस्कार कराते हैं। यह सब परिपाटी शास्त्र मर्यादा के विपरीत ही है।

कुछ लोग कहते हैं कि वेद में—"यतीनां ब्रह्मा भवति सारथिः"— ा है। इसका अर्थ वे करते हैं कि ब्रह्मा तो केवल संन्यासी ही होता है नही होता है। यदि यही अर्थ मान लें तो महर्षि स्वामी दयानन्दजी था सब शास्त्रकारों ने बहुत भारी गलती कर दी है कि उनने गृहस्थ ाह कर्म कराने का अधिकार प्रदान किया है और शिखा सूत्र त्यागने ां को यज्ञ के अधिकार से वंचित किया है। परन्तु साधारण से साधा- व्यक्ति भी जान सकता है कि उक्त मन्त्र का यह अर्थ नहीं है कि ासी ही ब्रह्मा होता है। अर्थ तो स्पष्ट है कि—यतियों का अर्थात् ासियों का सारथि अर्थात् उनको योग मार्ग पर चलाने वाला ब्रह्मा ' है। ब्रह्म को योग मार्ग से जानने वाला ही दूसरों को योग मार्ग का श करने वाला एवं मार्ग को बताने वाला आध्यात्मिक साधना कराने ोग्यता वाला ही ब्रह्मा पदवाच्य है। वही उन संन्यासियों का ब्रह्मा अर्थात् उपासना काण्ड के साधक यति—यत्नशीलों का एवं संन्यासियों ज्ञानोपदेष्टा एवं आध्यात्मिक क्रियात्मक अभ्यास मार्ग का जो श्रेष्ठ ; है वही उन यतियों का ब्रह्मा है क्योंकि सारथि तुल्य वह उनको ले वाला, पथ प्रदर्शक, नेता तुल्य है। "यतीनां ब्रह्मा"—का अर्थ यतियों ब्रह्मा यह होता है न कि यति ही ब्रह्मा होता है।

कुछ लोग यह भी कहते हैं कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने भी यज्ञ ाये थे। परन्तु उनका जीवन-चरित्र पढ़ने से ज्ञात होता है कि उसमें ही ऐसे प्रसंग आये हैं जिनमें श्री स्वामी जी का यज्ञ के साथ सम्बन्ध उल्लेख है। उनमें एक प्रसग यज्ञोपवीत संस्कार का है। वहां पर भी नहीं है कि उनने संस्कार का यज्ञ या विधि स्वयं ऋत्विज् बनकर कराई। यजमान ने उनसे यज्ञोपवीत लेने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने यज्ञोपवीत देना स्वीकार किया और यज्ञोपवीत विधिपूर्वक यज्ञ द्वारा दिया गया। इसमें संस्कार की विधि तो अन्य विद्वानों से ही सम्पन्न कराई जाकर यज्ञोपवीत श्री स्वामीजी द्वारा दिये जाने से यजमान तो गौरव से यही कह सकता है कि श्री स्वामीजी ने मेरा यज्ञोपवीत किया है। क्योंकि स्वामी जी की प्रेरणा से यज्ञोपवीत हुआ और वे स्वयं उपस्थित भी थे और उनने उस यजमान को यज्ञोपवीत धारण भी कराया। ऐसी स्थिति में यज्ञ कार्य के लिए उनका ब्रह्मा होना प्रमाणित नहीं है और शास्त्र मर्यादा के विरुद्ध होने से वे उसके ब्रह्मा हो भी नहीं सकते थे।

इसी प्रकार श्री स्वामीजी ने गायत्री अनुष्ठान कराया था। उसमें भी उनने बाहर से ही पंडितों को बुलवाकर कराया था ऐसा लिखा है। दक्षिणा भी स्वामी जी ने उनको दी थी। वहीं पर भी ऐसा नहीं है कि वे यजमान बनकर या ऋत्विज् ब्रह्मादि बनकर बैठे थे। श्री स्वामीजी ने उस यज्ञ का व्यय वहन किया था अतः श्री स्वामीजी ने कराया यही लोक में प्रख्यात हुआ।

संन्यासी अपने व्यय से वा द्रव्य संग्रह करके या अन्यों को प्रेरणा देकर यज्ञ करवा सकते हैं लोकोपकार के लिए, परन्तु शास्त्र मर्यादा का उल्लंघन करके वे स्वयं यजमान, होता, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा आदि नहीं बन सकते हैं। यदि संन्यासी यज्ञों में ब्रह्मा बन सकता है तो कम से कम संन्यास संस्कार के प्रकरण में तो वरण में अवश्य महर्षि स्वामी दयानन्दजी लिख देते कि संन्यासियों का वरण करके सस्कार करावे। परन्तु वहीं पर भी स्पष्ट शब्दों में यज्ञ कार्य के लिये गृहस्थ का ही वरण करने को लिखा है। अतः स्पष्ट सिद्ध है कि महर्षि कहीं भी यज्ञ में ब्रह्मा आदि नही बने थे और न यह वेद शास्त्रानुकूल ही है।

इसी प्रकार उदयपुर महाराणा को पत्र लिखते हुए श्री स्वामी जी ने लिखा—"आरोग्य और अधिक वर्षा होने के लिए एक वर्ष में दस हजार रुपये के घृतादि से जिस रीति से होम हुआ था उसी रीति से प्रतिवर्ष होम कराइये परन्तु उनमें से ५ हजार रुपयों के सुगन्धित घृत मोहन भोग का होम वर्षा ही में कि जिस दिन वर्षा का आर्द्रा नक्षत्र लगे उस दिन से लेके विजयदशमी तक चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण कराकर एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रखकर होम कराइयेगा।" यदि संन्यासी से ही यज्ञ कराना अभीष्ट होता या संन्यासी को यज्ञ कराने का अधिकार होता तो चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण करने के स्थान पर उत्तम, त्यागी संन्यासियों का वरण करके या उनके अधिष्ठातृत्व में यज्ञ कराने के लिये लिखते अथवा वे यह भी लिख देते कि मैं आकर के यह यज्ञ सम्पन्न करा दूंगा या मेरे निरीक्षण में यह होगा। परन्तु कोई भी ऐसा लेख स्वयं महर्षि का नहीं है जो संन्यासियों को ब्रह्मादि बनाने का पोषक हो। अतः जीवन-चरित्र में जो कुछ भी यज्ञोपवीत या गायत्री अनुष्ठान की बात आती है वह भी पूर्वोक्त रीति से स्पष्ट हो जाती है। ●

विशेष—"सपत्नीक ब्राह्मण को ही यज्ञ में होता आदि बनाया जावे। अपत्नीक को नहीं" ऐसा विधान मान्य लेखक के लेख से सिद्ध नहीं होता। ऋत्विक् रूप में गृहस्थ का वरण तो किया जाता है, परन्तु पत्नी सहित का ही 'ऐसा नहीं' होता आदि सपत्नीक यज्ञ में सम्मिलित होते हैं। यज्ञ में उनकी पत्नियों का भी आदर होता है, परन्तु उनकी पत्नियों को भी होता आदि के स्थान के लिए चुना नहीं जाता। "जिस गृहस्थ की पत्नी न हो, उसको भी ऋत्विक् वरण के लिये न लिया जावे," यह भी विधान नहीं है। अथर्ववेद १९-५८-६ में ऋत्विकों की पत्नियों का सत्कार लिया जाता है—यह अर्थ है न कि पत्नी रहित ऋत्विक् का यज्ञार्थ निषेध किया गया है।

तीसरे, यदि संन्यासी यज्ञ में आचार्य उपस्थित हों, तो उनका भी दानादि से सत्कार करना संस्कारविधि में लिखा है। (सं० वि०-सामान्य प्रकरण)। आशा है पूज्य विद्वान् लेखक पुनः अपने "पत्नी रहित ऋत्विक्" को यज्ञ कराने का अधिकार नहीं है, मन्तव्य पर विचार करके प्रकाशित कराके कृतार्थ करेंगे। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री सम्पादक)

गतांक से आगे—

मुस्लिम प्रचार-तन्त्र का औचित्य ?

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान W/Z 79 राजा पार्क, दिल्ली)

कुछ लोग प्राय: यह शका उठाते हैं कि जब तक हिन्दू-समाज का उच्च-वर्ग हरिजन-वर्ग से विवाह-सम्बन्ध स्थापित नही करता तब तक हरिजन-उद्धार असम्भव है। इस सदर्भ में यह ज्ञातव्य है कि इस प्रकार के वैवाहिक सम्बन्ध में जो बाधा पड़ती है वह धर्म के कारण नही, बल्कि जातीयता के कारण है। उच्च वर्ग की विभिन्न जातियाँ भी एकाध अपवाद को छोड़-कर, परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नही करती। ऐसी स्थिति में हरि-जनों की बात करना हास्यास्पद है। भगी जाति की तुलना में चमार जाति कुछ ऊँची समझी जाती है लेकिन ऐसा उदाहरण शायद ही कोई मिले जिसमें इन दोनों जातियों के वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की बात हो। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी जाति का क्यों न हो अपने में जातीय-अभिमान रखता है और अपने से नीची जाति को उपेक्षित दृष्टि से देखता है। इस जातीय-अभिमान के मध्य धर्म को घसीट लाना बुद्धिमत्ता नहीं है। लोगों में ज्यों-ज्यों जागृति आती जायेगी त्यों-त्यों यह स्थिति बदलती जायेगी।

मनुस्मृति और अन्य शास्त्रों को दुहाई देकर अमीन साहब हरिजनों से पूछते हैं कि 'क्या उन्होंने उन ग्रंथों को पढ़ कर स्वयं निर्णय नही लिया कि उनमें, उनके बारे में क्या लिखा है।' हिन्दू-धर्मशास्त्रों में मनुष्य को एक इकाई मानकर उपदेश दिया गया है। हिन्दू धर्म ने मनुष्य-मनुष्य के बीच न तो किसी प्रकार की खाई खोदने का प्रयत्न किया है और न ही दीवारें खड़ी करने की कोशिश की है। कुछ प्रमाण प्रस्तुत हैं।

१. अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते, संभ्रातरो वावृधु सौभगाय।
युवा पिता स्वया रुद्र एषां, सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥
ऋ० ५।६०।५.

२. सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या॥ अ० ३।३०।१.

३. समानी प्रपा सह वो अन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यंचोग्नि सपर्यतारा नाभिमिवाभितः अ० ६।३०।६.

४. मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे अ० ३।३०।२

५. यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥ ईशोपनिषद्

६. सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखभाग्भवेत्॥ महाभारत

इन उदाहरणों से शकराचार्य तथा उनके समर्थकों और मुस्लिम भाइयों को विदित हो जाना चाहिए कि हिन्दू-धर्म में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की आदर्शमयी भावना सदेव वर्तमान रही है। हिन्दू-धर्म में यह विशेषता है कि वह प्रत्येक मनुष्य को माँ की ममता, बहन के स्नेह, पिता के वात्सल्य, भाई के प्रेम और पत्नी के प्यार से आप्लवित करने की शक्ति रखता है। आवश्यकता है पूर्वाग्रहों से छुटकारा पाकर इस ओर अभिमुख होने की।

शास्त्रों में जिस वर्णव्यवस्था का विधान है वह जन्मानुसार न होकर गुण-कर्म-स्वभावानुसार है। यह व्यवस्था मनुष्यों में फूट नहीं डलवाती अपितु समाज को सुचारू रूप से चलायमान करने के लिये एक आदर्श, न्यायशील और वैज्ञानिक पद्धति प्रस्तुत करती है। आज जिस वर्णव्यवस्था का रूप जनता के समक्ष रखा जाता है वह उसके प्राचीन रूप से नितान्त भिन्न है। वर्तमान वर्णव्यवस्था निकृष्ट होने के कारण अमानवीय और अवैज्ञानिक है। प्राचीन वर्णव्यवस्था में शूद्र कुलोत्पन्न व्यक्ति यदि गुण-कर्म और स्वभाव में ब्रह्मा सदृश बन जाता था तो उसे समाज में ब्राह्मण कहा जाता था इसके विपरीत यदि कोइ ब्राह्मण-कुलोत्पन्न व्यक्ति शूद्र के समान कर्म करने लगता था तो उसे शूद्र पुकारा जाने लगता था। मनुस्मृति में यही व्यवस्था दी गई है;

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैव शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च॥ मनुस्मृति॥१०-६५॥

व्यास दासी-पुत्र होने पर भी विद्वानों द्वारा सम्मानित हुए। भगवान् कृष्ण असुर-वंश की कन्या के उदर से उत्पन्न हुए फिर भी भारतीय समाज ने उन्हें जो आदर दिया वह अब तक सुरक्षित है। विश्वामित्र, आर्ष्टिषेण, सिंधुद्वीप, देवापि, आदि क्षत्रिय ब्राह्मण हुए। इसी प्रकार राजा दिवोदास तप द्वारा ऋषि बने।

जब शक, यवन, काम्बोज, किरात और पल्लव आदि क्षत्रिय जातियाँ अपना क्षात्र-धर्म त्याग बैठी तो इक्ष्वाकु-वंश के राजा सगर ने उन्हें यथोचित दण्ड दिया तो वे क्षत्रिय जातियाँ शूद्रों में गिनी जानी लगी।

वायु-पुराण में शौनक के चार पुत्रों का कर्म-भेद के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र होने का उल्लेख मिलता है। हरिवंश पुराण में भार्गव-वंश में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्ण का वर्णन है। इसी प्रकार मत्स्य पुराण में वामदेव के पुत्र अपने गुणों-कर्मों और स्वभाव के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि हुए।

हिन्दू-धर्म इतना सकुचित कभी नही रहा कि वह लोगो का जन्मा-नुसार ब्राह्मण अथवा शूद्र का दर्जा निर्धारित करे। सभी मनुष्यों को प्रेरणा देते हुये हिन्दू-धर्म आह्वान करता है कि हे मानव तू शास्त्रों को काटने वाला शस्त्र है, तू दूषणो को दूषित कर देने वाली महाशक्ति है, तू चिन्ताओ का पहले से चिन्तन करने वाला अनागत विधाता है। उठ! जो तेरे साथ की पंक्ति में हैं उन्हें पीछे छोड़ और अगली पक्ति मे हैं, उनमें आ मिल।
—अथर्व० २।१।१।१

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दू-धर्म मे किसी मनुष्य को इस कारण दबाने की कुचेष्टा नही की गई कि अमुक व्यक्ति ने, किस कोख से जन्म लिया है।

अमीन साहब पूछते हैं कि शकराचार्य जी ने क्या पाप किया है? शकरा-चार्य जी का अपराध यही है कि उन्होंने प्राचीन परम्परा पर पदप्रहार कर वर्णव्यवस्था को जन्मानुसार माना है जब कि उस व्यवस्था को गुण-कर्म और स्वभावानुसार स्थापित करने का विधान है।

निसन्देह शकराचार्य जी ऐसे शास्त्रों का ढेर लगा सकते हैं जिनमें उनके मत की पुष्टि हो सकती है। परन्तु देखने की बात यह है कि वे शास्त्र किस काल में, किन लोगो के लिए, किन लोगों द्वारा, किस उद्देश्य से रचे गये। यह भी देखना अभीष्ट होगा कि बैल-गाडी के युग और राकेट युग में कुछ अन्तर भी है अथवा नही। यह भी जानना आवश्यक होगा कि पहले की अपेक्षा आज के जनमानस का मस्तिष्क परिष्कृत हुआ है अथवा नही।

शकराचार्य जो गुरु भी हैं और शास्त्रो के मानने-जानने वाले भी परन्तु शब्दों पर कुडली मार कर बैठ जाना तो अन्धविश्वास को पराकाष्ठा पर पहुचाना है। यह स्वय-सिद्ध है कि अन्धविश्वास से जगत् का न कभी भला हुआ है और न ही भविष्य मे कभी होगा।

शास्त्रों के रचयिता आखिर हैं कौन? यदि मनुष्य स्वय है तो उ परिवर्तनशील समय को देखते हुए अपना कदम उठाना चाहिए। यदि शास्त्र ईश्वरकृत हैं तो धर्माचार्यों को जनमत को नाड़ी पहचान कर शास्त्र में वेद-भावना के अनुकूल परिवर्तन करने चाहिएँ। उपनिषदों में मनुष्य व ओर से ईश्वर के समक्ष प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि,

असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय

शकराचार्य जी का महत्तम पाप यही है कि वे जन्मानुसार वर्णव्यवस्था को प्रोत्साहन देकर मनुष्य के इस मौलिक अधिकार को छीन रहे हैं। उच्च ब्राह्मण के गुणों से विभूषित शूद्र को अन्त तक शूद्र कहे जाना एक ऐसा भयानक मानसिक रोग है जो शूद्रों को सत्य और प्रकाश अर्थात् उन्नति की ओर जाने से रोकता है एव सभ्य समाज के सामने निर्भयता से मस्तक उठा कर चलने में बाधा डालता है।

शेष पृ० १० पर

महर्षि दयानन्द सरस्वती काशी शास्त्रार्थ आयोजन

सूचना एवं निवेदन

आर्य जगत् के प्रसिद्ध पत्र 'आर्यमर्यादा' ने अपने अग्रलेख दिनांक १५-६-६९ में इस विषय पर आर्य जगत् की समस्त संस्थाओं, विद्वानों और आर्यजनों का ध्यान आकृष्ट कर बड़ा उपकार किया है। हम इसके लिये 'आर्यमर्यादा' एवं उसके विद्वान् सम्पादक जी का आभार मानते हैं। उनके कृतज्ञ हैं। हम उन्हें धन्यवाद देते हैं। आर्यजगत् कृपाकर देखे कि यह कार्य कितना महान्, आवश्यक एवं कठिन है। वेदों के प्रति महर्षि की मान्यताओं पर पक्ष विपक्ष के विद्वानों के शोध पत्रों को ग्रन्थ के रूप में विश्व को भेंट करना, जिसमें संस्कृत, आर्यभाषा (हिन्दी) और इंगलिश में भी लेख होंगे, एक महान् उपलब्धि होगी। विपक्षी इस अवसर पर शास्त्रार्थ की तैयारी में जुटे हैं। उन्होंने काशी आकर शास्त्रार्थ करने को लिखा है। यदि हम असावधान रहे और हमारी किसी त्रुटि से हमारा यह आयोजन उस महान् अवसर के अनुरूप न मनाया जा सका तो इस से आर्यसमाज की उज्जवल कीर्ति को बट्टा लग सकता है और गहरी क्षति हो सकती है।

हम बार-बार आर्य जगत् का एव शिरोमणि संस्थाओं का ध्यान इस ओर आकृष्ट करते रहे हैं कि काशी के आर्यसमाजों एवं आर्यजनों के साधन बहुत सीमित और लघु हैं। वास्तव में यह कार्य तो पूरे आर्य जगत् का है। काशी की आर्योपप्रतिनिधी सभा ने अपना कर्त्तव्य समझ कर, आर्य-प्रतिनिधी सभा उ० प्र० के आदेश पर अपनी पूरी शक्ति इस ओर लगाई और कार्य को कुछ आगे बढाया, परन्तु यह कार्य तो इतना महान् और कठिन है कि उसकी पूर्ति किसी भी दशा में काशी के समाजों की शक्ति के बाहर ही थी, है और रहेगी भी। समय बहुत कम रह गया अब आगे यदि और उपेक्षा बर्ती गई तो बहुत बड़ा अनर्थ हो सकता है।

हमारी अन्तरग सभा ने निर्णय किया है कि हमारे माननीय प्रधान श्री खेमचन्द्र जी अब काशी छोड़ देश के बडे-बड़े समाजों में जावें, आर्य जगत् के धनी मानी सज्जनों से मिलें, शिरोमणि संस्थाओं के अधिकारियों से मिले और यहां की स्थिति से आर्य जगत् को जानकारी करावें और सहायता की याचना करें। देरी तो बहुत हो चुकी है, परन्तु अब भी यदि हमें आर्यजगत् का सहारा मिल गया तो हम रात दिन जुट कर इस यज्ञ को सफल बनाने में कुछ उठा न रक्खेंगे। ग्रन्थ के मुद्रण का कार्य प्रारम्भ हो गया है। भय लग रहा है कि कहीं धनाभाव के कारण बीच में बाधा न पड़ जावे। आर्यजगत् की सहायता के अनुरूप ही हम शास्त्रार्थों की योजना को पूर्ण कर सकेंगे।

हमें आर्य जगत् का पूर्ण विश्वास है। हम काशी के आर्य तो आपके ही हृदय में आपके सेवक की भांति अपना कर्त्तव्य समझ कर तन मन धन से जुटे हैं। हमारा प्रतिनिधि आपके द्वार पर अलख पुकारेगा आप उसे निराश न करें, यह ही हमारी नम्र विनय आर्यजगत् के प्रेमी श्रद्धालु ऋषि भक्त भाई-बहिनों से है। हमारा प्रतिनिधि सब स्थानों पर नहीं पहुंच सकेगा। दयालु आर्य भाई-बहिन उनके आने की प्रतीक्षा न करें, वह अपना सात्विक दान हमारे इस निवेदन को पढ़ते ही मनीआर्डर द्वारा भेज दें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के यश की पताका विश्व में फहरे, प्रभु की वेदों के प्रति जो भ्रम और भ्रान्ति फैली हैं उनका निराकरण हो और वेदों का शुभ कल्याणमय सन्देश विश्व के कोने-कोने में घर-घर पहुंचे, यह हमारी अभिलाषा पूरी हो।

आर्यजगत् के सेवक

२—६—६९ अन्तरंग सदस्य-आर्योपप्रतिनिधि, सभा-वाराणसी

कार्यालय—आर्यसमाज मन्दिर औजूबीर—वाराणसी छावनी

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ का सन्देश

'आर्यमर्यादा' के प्रेमी पाठक इसी पृष्ठ पर ऊपर बाईं ओर आर्योपप्रतिनिधि सभा वाराणसी की अन्तरग सभा की अपील पढ़ें! आर्य जनता को महर्षि दयानन्द के काशी शास्त्रार्थ शताब्दी का सन्देश सुनाने उससे सम्पर्क स्थापित करने और उस अनुपम पवित्र यज्ञ में सम्मिलित होने और हाथ बटाने का अनुरोध करने, सभा का प्रधान मैं खेमचन्द्र सभा के निश्चयानुसार हरयाणा और पंजाब की निम्नलिखित समाजों में जो तारीखें निर्धारित की हैं उनमें पहुंच रहा हूं! उन-उन समाजों के अधिकारियों से नम्र निवेदन है कि वे अधिक से अधिक आर्य भाई-बहनों के दर्शन कराने की कृपा करें, प्रत्येक स्थान पर यदि सम्भव हो तो रात्री में मन्को जी अपनी-अपनी समाजों में भाई-बहिनों को नियत समय पर बुला कर विशेष अधिवेशन की योजना बना लें! यूं मैं व्यक्तिगत तौर भी आर्य भाई-बहनों के द्वारे-द्वारे जाकर दर्शन करने का प्रयास करूंगा परन्तु इसमें प्रत्येक भाई बहन के दर्शन न हो सकेगें! अतएव मैं निवेदन करता हूं कि आर्य समाज मन्दिर में विशेष अधिवेशन बुलाये जायें जैसा कि अन्तरंग सभा ने लिखा है यह यज्ञ सारे विश्व के आर्य भाई-बहनों का है! काशी के आर्य भाई-बहनों को तो सौभाग्य से यह आर्य जगत् की सेवा करने व महर्षि की वेदों के प्रति मान्यताओं के प्रतिपादन का प्रभु कृपा से सुअवसर मिल गया है, जिसे वह स्वशक्ति अनुसार पूर्ण करने का भरपूर प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु इस यज्ञ का पूर्ण भार उठा पाना उनकी शक्ति के बाहर की चीज है। इसी कारण मुझ प्रधान को आपकी सेवा में भेजा जा रहा है! मैं आपके प्रेम की भिक्षा पाने के लिए आपके पास पहुंच रहा हूँ। बस इतना ही मेरा कर्त्तव्य है! मेरा प्रोग्राम इस पवित्र यज्ञ की सफलता चाहने एवं पूर्ण सहयोग प्रदान करने वाले आर्य जगत् के ऋषिभक्त प्रसिद्ध आर्य बन्धुओं ने निम्न प्रकार बनाया है—

मास जुलाई सन् १९६९—

५—नरेला ग्राम तक पहुंचना, ६—प्रातः सत्संग में भाग लेना ७—सोनीपत, ८—पानीपत, ९ और १०—करनाल, ११— यमुना नगर, १२—शाहाबाद, १३—अम्बाला छावनी १४—अम्बाला शहर, १५ और १६—लुधियाना, १७—जालंधर छावनी, १८ और १९—जालंधर शहर, २०—पठानकोट, २१—दीनानगर, २२—गुरुदासपुर, २३—बटाला, २४—अमृतसर, २५—फीरोजपुर, २६—मोगा, २७—रामामण्डी, २८—हिसार, २९—भिवानी, ३०—रोहतक, तथा ३१ जुलाई को देहली पहुंचना।

निवेदक—खेमचन्द्र प्रधान
आर्योपप्रतिधि सभा—वाराणसी

[हरयाणा तथा पंजाब के आर्यसमाजों तथा आर्य भाई-बहिनों से निवेदन है कि माननीय श्री खेमचन्द्र जी प्रधान आर्योपप्रतिनिधि सभा वाराणसी को सब प्रकार से सहयोग देकर सत्कृत करें। महर्षि दयानन्द के ऋण से अनृण होने में हमारा ही कल्याण होगा।]

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक आर्यमर्यादा

पृ० ६ का शेष

शास्त्रों में सत्पुरुष उन्हें माना गया है जो दूसरों के कल्याण के लिये जीते हैं। शंकराचार्य जी ने परोपकारिता को पराकाष्ठा पर पहुंचाते हुए यह उद्घोषणा की है कि वे शूद्रों का मल-मूत्र उठाने को भी तैयार हैं। भला कोई पूछे तो सही कि मल-मूत्र की ओर आकर्षित कौन होता है। क्या हिन्दू-धर्म में अब भी मक्खियों का पोषण होता रहेगा? यदि नहीं तो शंकराचार्य जी की इस घोषणा को सुन कर यही कहना पड़ेगा कि बकरी ने दूध तो दिया पर दिया बर्तन में मींगन डाल कर।

प्रश्न शूद्रों की बाह्य उन्नति का नहीं बल्कि आन्तरिक उन्नति का है। जब तक उनका हृदय विशाल नहीं होगा, उनका मस्तिष्क परिष्कृत नहीं होगा, उनके आत्मा का उदय नहीं होगा तब तक हम चाहे उनके हित में वाणी द्वारा राई का पहाड़ कितना ही ऊँचा क्यों न उठा लें, उससे उनका तिल भर भी भला नहीं हो सकता। देर-सबेर हमें इस बात को गाँठ बाँध लेनी चाहिए कि हरिजनों की भलाई में ही हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति की भलाई निहित है।

CONDUCT OF LIFE

(L. Diwan Chand, New Delhi)

Let us understand that whatever is done by man—good and true free from inordinate affection and hatred or whatever he feels to be right by the testamony of his innerself should be accepted as true conduct of life. Neither excessive desire for a certain thing nor its total indifference can lead to a virtous life because in both cases the height of pleasure to involved It is extremely impossible for any human being to be altogether free from desire because all actions proceed from it—be it any donation or help to any body, personal service, practice of virtue or sweetness of speech Even the most insignificant action is not free from recognition What-ever one does or behaves, be it the movement of his hand or any other part of his body is the outcome of his thought.

Let a man therefore, control his mind, mussles and measures and move and behave in such a way in the doing of which, he does not feel, fear, shame or distrust When a man tells a lie, or querrels with any body and beates him without any cause or steals some thing his soul pricks and is filled with shame or sorrow indicating thereby that his action was wrong and condemnable. Any one before behaving in some way good or bad or performing any action should first think within himself with a thought of wisdom or truth and then weigh his mind with the rules of social sense how far he is justified in doing it. If he practices like it. he will earn the appreciation of the society and feel satisfaction of his soul. Discrimmation of good and bad actions by practice and common sense is the true conduct of life This is also the true religion according to the Vedas. Good conduct requires that one should have honest way of earning wealth and stand aloof from the desires and low temptations. He should live perfect and clear life according to the sanskars as ordained by the Vedas. This will make his life peaceful and happy as well as that of his children and spread pragranee of truth and wisdom among his relatives and frends.

As a skilful driver keeps his horses well under control and directs them on the right path he wishes to go, so should we all humanbeings strive to keep our senses under control and right direction last they lead us to the persuit of sinful objects and low temptations. We should restrain them from devil designs and bad behaviour, and run them on the path of peace, purity of heart, rectitude and purposeful performances. Sensual gratifications and sinful temptations spoil character and health and social position.

Devotion to whatever promotes the good of humanity and abstinence from all actions that are harmful to the society should be the chief requisites of manhood Let us rightly sharpen on our own brain and breast and be not credulous and believe in dogmas, Let us never feel inferiority complex reason out intelligently with in ourself and assess the pros and cons or a thing Let us be not led away by surging emotions but maintain level headedness There is no best teacher or friend than our own diary of time and there is no higher Guru than the value of time. This is good conduct of life

"सत्यार्थप्रकाश परीक्षाएं"

प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी ७ सितम्बर, १९६९ को सारे देश में सत्यार्थ रत्न, भूषण, विशारद व शास्त्री की परीक्षाएं होंगी। परीक्षा शुल्क, नाम मात्र, प्रमाण पत्र आकर्षक तथा प्रत्येक परीक्षा और केन्द्रों में अनेक पारितोषिक होंगे। परीक्षा सम्बन्धी सभी प्रकार की जानकारी के लिए श्री चमन लाल जी एम ए० परीक्षा मन्त्री आर्य-समाज दरियागंज, २ अन्सारी रोड दिल्ली से शीघ्र पत्र व्यवहार करें।

देवव्रत: धर्मेन्दु आर्योपदेशक प्रधान
ओम्प्रकाश एस० एम० सी० प्रधान मन्त्री
आर्य युवक परिषद् दिल्ली (रजि०)

स्वर्गवास

पं० देवकीनन्दन का ७० वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। स्वर्गीय महाशय ४० वर्षों से आर्यसमाज शाहदरा (देहली) में प्रधान, मन्त्री तथा कार्यकर्ता के रूप में सेवा करते रहे थे। परमात्मा इनके प[illegible] को धीरज देवे।

—स्वा[illegible]

पृ० २ का शेष

है—जो कि हृदय को प्रकाशित करता है। यहाँ भी जीव को विज्ञानमय—विज्ञान स्वरूप कहा गया है। प० आर्यमुनि जी ने भी प्रश्नोपनिषद् के उपर्युक्त प्रश्न की व्याख्या में जीव को विज्ञानात्मा=विज्ञानस्वरूप ही लिखा है।

३—भारतीय वैदिकदर्शनों में अपने विषयों के वर्णन करने की दो पद्धतियाँ हैं। न्याय और वैशेषिक एक समान चलते हैं तथा सांख्य, वेदान्त और योग एक रूप मे वर्णन करते हैं, अत: हम दोनो पद्धतियों का एक-एक स्थल आगे प्रस्तुत करते हैं।—

(क) न्याय दर्शन—"स्मरणं त्वात्मनो ज्ञस्वाभाव्यात्" ३.२.४१ इस सूत्र पर वात्स्यायन मुनि अपने भाष्य में लिखते हैं "आत्मन एव स्मरणम्··· ज्ञस्वभावत्वात्। 'ज्ञ' इत्यस्य स्वभाव: स्वोधर्म:" अर्थात् स्मृति जीव का ही गुण है। क्योंकि जीव का स्वभाव=स्वधर्म "ज्ञ" जानने वाला है। जीव ज्ञान स्वभाव=ज्ञानस्वरूप है। इसी भाष्य पर विश्वनाथ अपनी वृत्ति में लिखते हैं "ज्ञस्वाभाव्यज्ञानवत्स्वाभाव्यात्" अर्थात् ज्ञस्वभाव्य का ज्ञान वाला स्वभाव्य, स्वरूप है। इस वृत्ति का भी यही भाव है कि जीव स्वाभाविक रूप ज्ञानस्वरूप है।

(ख) वेदान्त दर्शन—"ज्ञोऽत एव" २.३.१८ इस सूत्र पर स्वामी शङ्कराचार्य लिखते हैं—नित्यचैतन्योऽयमात्मा।' अर्थात् जीव स्वरूप से चेतन है। सूत्र का भाषार्थ यह है कि जीवात्मा ज्ञानवान् चेतन है। इसी लिये यह सदा ज्ञानस्वरूप रहता है।

सामान्य विवेचन

(३) कुछ सज्जन यह विचार रखते हैं कि जीवात्मा का ज्ञान बदलता रहता है, अत: उसका ज्ञान नित्य न होने से उस को ज्ञानस्वरूप नहीं कहा जा सकता। इस का समाधान यह है कि जीव का जो स्वाभाविक ज्ञान है, वह सदा बना रहता है। यदि जीव में स्वाभाविक ज्ञान न होवे, तो वह जड हो जावे और जड में ज्ञान का कार्य कभी नही हो सकता तथा जीव चेतन होने से उस में ज्ञान और क्रिया सदा बने रहते हैं। जीव में ज्ञान स्वाभाविक होने से ही उसमें नैमित्तिक ज्ञान ग्रहण करने की शक्ति है, अन्यथा वेदज्ञान ग्रहण करने का सामर्थ्य तो दूर रहा, उस को गुरुशिष्य रूप में अध्ययन अध्यापन क्रिया जन्य सामान्य ज्ञान की उपलब्धि भी नहीं हो सकती। खेद है कि दर्शनो की आधुनिक टीकाओं से विद्वज्जन भी भ्रांति में पड़ जाते हैं। आशा है स्वाध्याय प्रेमी पाठक महानुभाव इस लेख पर विचार करके उचित को ग्रहण करके कृतार्थ करेंगे।

"सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन"

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन २० जुलाई रविवार को १२ बजे से गुरुकुल इन्द्र-प्रस्थ में होना निश्चित हुआ है। आर्य कुमार सभा, आर्य युवक परिषद् तथा अन्य आर्य युवक संघटनों के स्थानीय अधिकारियों से प्रार्थना है कि अधिवेशन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों से प्रार्थना है कि अधिवेशन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों की सूची शीघ्र कार्यालय में भेज दें।

विशेष :—गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ दिल्ली से मथुरा जाने वाली सडक पर १२ मील दूरी पर स्थित है। बल्लभगढ-पलवल को जाने वाली बसें बराबर चलती रहती हैं।

—निवेदक, (बलजीत आर्य) मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्, आर्यसमाज मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली—१

आर्यसमाज जूवाँ (रोहतक) का उत्सव सम्पन्न

उत्सव से एक सप्ताह पूर्व आर्ययुवक परिषद् के व्यायाम शिक्षक ब्र० देवव्रतजी की देखरेख में आर्यकुमारों का शिक्षण शिविर २१ को ग्राम में शोभा यात्रा निकाली गई २२ को प्रात: यज्ञ में ग्रामीणों तथा छात्रों ने यज्ञोपवीत धारणा किया श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती शास्त्री, ब्र० इन्द्र-देवजी मेधार्थी, प्रो० श्यामराव जी, श्री धर्मपाल जी आर्य के व्याख्यान तथा दादा शिवनारायण जी, श्री विक्रमसिंह जी, श्री विश्वमित्र तथा श्री मांगेराम जी के प्रभावशाली भजन हुये।

—केदार सिंह आर्य

आर्यसमाज, मण्डी शाहदरा-दिल्ली

का वार्षिक चुनाव निम्न प्रकार हुआ—

प्रधान—श्री हरीचन्द, मन्त्री—श्री ओमप्रकाश, पुस्तकाध्यक्ष—श्री [illegible]कीरचन्द, कोषाध्यक्ष—श्री हरपालसिंह तथा ५ अंतरग सदस्य —मन्त्री

आर्यप्रतिनिधि सभा बंगाल-आसाम

साधारण सभा में आगामी कार्यकाल के लिये निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गये।

प्रधान—श्री मिहिरचन्द्रजी धीमान्, कार्यकर्ता प्रधान—श्री राजेन्द्रसिंह [illegible] मलिक, उपकार्यकर्त्ता प्रधान—श्री जगीलाल जी आर्य, उपकार्यकर्त्ता [illegible]धान—श्री प्रभासपाल जी, उपकार्यकर्त्ता प्रधान—श्री ओंकारनाथ जी [illegible]क्ल, उपकार्यकर्त्ता प्रधान—श्री देशराज जी चौधरी, मन्त्री—श्री बटु[illegible]ष्ण वर्मन्, सयुक्तमन्त्री—श्री गजानन्द जी आर्य, उपमन्त्री—श्री मोहन [illegible]ग्रवाल, प्रचारमन्त्री—श्री जगदीश प्रसाद शुक्ल, प्रचारमन्त्री—श्री [illegible]ज्ञेन्द्रनाथ देव वर्मन्, कोषाध्यक्ष—श्री चन्द्रवली गुप्त, पुस्तकाध्यक्ष—[illegible] सत्यनारायण जी शर्मा, हिसाब निरीक्षक—श्री ओनाथदास गुप्त।

—सभा प्रचार मन्त्री

आर्यसमाज राणी तालाब फिरोजपुर शहर

वार्षिक चुनाव निम्न है—प्रधान—श्री डा० साधुचन्द जी, मन्त्री—[illegible]हाशय मदनजित आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री सोहनलाल कम्बोज, पुस्तका[illegible]ध्यक्ष—श्री हुवनलाल महता तथा ४ अन्तरंग सभा के सदस्य। —मन्त्री

आर्यसमाज, अमर कालोनी, नई दिल्ली

चुनाव निम्नलिखित हुआ—प्रधान—पडित ज्ञानचन्द जी, मन्त्री—[illegible] मुलखराज जी वढेरा, कोषाध्यक्ष—श्री सुरेन्द्रनाथ जी सहगल, पुस्तका[illegible]ध्यक्ष—श्री श्रवण कुमार जी। —मन्त्री

आर्यसमाज चण्डीगढ़, सेक्टर २२

निम्नलिखित अधिकारी निर्वाचित हुए—प्रधान—श्री सन्तराम जी [illegible]ग्रवाल, मन्त्री—श्री जगन्नाथजी शर्मा वैद्य शास्त्री, कोषाध्यक्ष—श्री वेद[illegible]काशजी प्रभाकर, पुस्तकालयाध्यक्ष—श्री राजकुमार जी तथा ९ प्रति[illegible]ष्ठत सदस्य। —मन्त्री

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर

इस आर्यसमाज में ४ दिन तक वेद प्रवचन आयोजित किया गया। इस अवसर पर आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के वेदप्रचार अधिष्ठता पं० निरंजनदेव जी के ओजस्वी एवं प्रेरणाप्रद उपदेशों तथा प० चुन्नीलाल के भजनों से नगर की जनता अत्यन्त प्रभावित रही। —मन्त्री

शिक्षा निदेशालय से मान्यता प्राप्त कन्याओं की उच्चतम शिक्षा तथा सुरम्य आवास की सर्वोत्तम सस्था।

चन्द्र आर्य विद्यामन्दिर

(बालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय तथा छात्रावास) सन्त नगर, लाजपत नगर-४ नई दिल्ली का।

प्रथम वार्षिक समारोह

श्रीमती चन्द्रवती चौधरी के सप्तमस्मृति दिवस पर शनिवार ५ जुलाई १९६९ को प्रात: ८ बजे माननीय श्री के०के० शाह मन्त्री स्वास्थ्य, आवास व नगर निर्माण विकास की अध्यक्षता में मनाया जा रहा है। देश के गणमान्य नेताओं के शिक्षा-प्रद भाषण तथा बालिकाओं के सुन्दर कार्यक्रम होंगे। श्रीमती चन्द्रवती चौधरी स्मारक लेख, भाषण, वाद-विवाद, मैचों तथा खेलों की प्रतियोगिताओं में विजयी बालक बालिकाओं तथा टीमों को पुरस्कार तथा शील्ड़ें दी जायेंगी।

नोट—छठी, सातवी, नवीं और दसवी श्रेणियों में कुछ छात्राएं अब भी प्रविष्ट की जा सकती हैं। —महेन्द्रकुमार शास्त्री—मन्त्री

आर्य महाविद्यालय किरठल (मेरठ)

संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से शास्त्री एवं आचार्य कक्षा तक मान्यता प्राप्त आर्य महाविद्यालय किरठल, (मेरठ) में नवीन छात्रों का प्रवेश १ जुलाई ६९ से होगा। प्रवेशार्थी उक्त कार्यालय से जानकारी प्राप्त करें। —मुख्याधिष्ठाता

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेदा

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

(जब आर्य्यावर्त्तस्थ मनुष्यों में सत्यासत्य का यथावत् निर्णय करने वाली वेद विद्या छूट कर अविद्या फैल के मत मतान्तर खड़े हुए यही जैन आदि के विद्याविरुद्ध मत प्रचार का निमित्त हुआ।

सत्यार्थप्रकाश)

वर्ष १ } २९ आषाढ़ वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १३ जौलाई १९६९ रविवार,
अंक ३१ } सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
,, विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनः स कीदृश इत्युपदिश्यते ॥
फिर वह वरुण कैसा है इसका उपदेश अगले मन्त्र में किया है ॥

अव ते हेळो वरुण नमोभिरव यज्ञेभिरीमहे हविर्भिः ।
क्षयन्नस्मभ्यमसुर प्रचेता राजन्नेनांसि शिश्रथः कृतानि ॥

—ऋग्वेद १ २४.१४ ॥

पदार्थ—(अव) क्रियार्थे (ते) तव (हेळः) हिड्यते विज्ञायते प्राप्यते य स (वरुण) (नमोभिः) नमस्कारैरन्नैर्जलैर्वा (अव) पृथगर्थे (यज्ञेभिः) कर्मोपासनाज्ञान-सम्पादकैः कर्मभिः (ईमहे) बुध्यामहे (हविर्भिः) दातुं ग्रहीतुमर्हैः (क्षयन्) विनाशयन् (अस्मभ्यम्) विद्यानुष्ठातृभ्यः (असुर) असुषु प्राणेषु रमते तत्सबुद्धौ स वा (प्रचेत) प्रकृष्टं चेतो विज्ञानं यस्य तत्सम्बुद्धौ स वा (राजन्) प्रकाशमान (एनांसि) पापानि (शिश्रथः) विज्ञानदानेन शिथिलानि करोतु (कृतानि) अनुष्ठितानि ॥

अन्वय—हे राजन् प्रचेतोऽसुर वरुणास्मभ्यं विज्ञानप्रदाता भगवन् यस्त्वमस्मत कृतान्येनांसि क्षयन् सञ्शिश्रथस्तस्माद्वय नमोभिर्यज्ञैर्हविर्भिस्तव हेळोऽवेमह मुख्यप्राणस्य वा।

भावार्थ—यमनुष्यैर्यथा परमेश्वरतसृष्टौ विज्ञापितेन वाधन कृतपापकर्माणि फलैः शिथिलायन्तेऽनुष्ठानत्वम्। यथाज्ञानरहित पुरुषा फलानि पीडयन्ति तथा नैव ज्ञानसहितं पीडयितुं समर्थानि भवन्तीत्यम् ॥

भाषार्थ—हे (राजन्) प्रकाशमान (प्रचेत) अत्युत्तम विज्ञान (असुर) प्राणों में रमने (वरुण) अत्यन्त प्रशंसनीय (अस्मभ्यम्) हम को विज्ञान देने हारे भगवन् जगदीश्वर जिस लिये हम लोगों के (कृतानि) किये हुए (एनांसि) पापों को (क्षयन्) विनाश करते हुए (अव शिश्रथ) विज्ञान आदि दान से उन के फलों का शिथिल अच्छे प्रकार करते हो इसलिये हम लोग (नमोभिः) नमस्कार वा (यज्ञेभिः) कर्म उपासना और ज्ञान और (हविर्भिः) होम करने योग्य अच्छे-अच्छे पदार्थों से (ते) आप का (हेड) निरादर (अव) न कभी (ईमहे) करना जानते और मुख्य प्राण की भी विद्या को चाहते हैं ॥

भावार्थ—जिन मनुष्यों ने परमेश्वर के रचे हुए संसार में पदार्थ करके प्रकट किये हुए बोध में किये पाप कर्मों को फलों से शिथिल कर दिया वैसा अनुष्ठान कर। जैसे अज्ञानी पुरुष को पाप फल दुःखी करते हैं वैसे ज्ञानी पुरुष को दुःख नहीं दे सकते ॥

(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

आर्य जगत् स्वयं देख ले, कि इन झगड़ों का स्रोत कहाँ है ?

श्रद्धेय महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी का समस्त आर्य जगत् के नाम वक्तव्य



सबसे पूर्व मैं यह निवेदन करना आवश्यक समझता हूं कि मैं अपनी एक गलती का उल्लेख कर दूं और वह यह है कि सन्यास लेने के पश्चात् मेरा क्षेत्र वेद प्रचार तथा योग साधना रहा और बड़ी मस्ती के साथ मैं इस पथ पर चलता गया, परन्तु आर्य जगत् में एक आर्तनाद उठा 'कि आर्य समाजों तथा सभाओं के पारस्परिक झगड़े आर्यसमाज को कलंक लगा रहे हैं मुझे नाम ले ले कर पुकारा गया कि आर्य जगत् में आग लगी है और तुम्हें योग साधना की पड़ी है तब ला० मेलाराम जी प्रधान आर्यसमाज हनुमान रोड नई दिल्ली के भवन में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुखिया महानुभावों को श्री नारायणदास जी कपूर प्रधान केन्द्रीय आर्यसमाज दिल्ली ने निमन्त्रित किया—झगड़ों को मिटाने के लिए विचार हुआ और मेरे इन्कार करने पर भी सवसम्मति से यह निश्चय हुआ कि आनन्द स्वामी सरस्वती को सब अधिकार दिये जाते हैं कि वह सभाओं के झगड़े निपटा दें और सार्वदेशिक सभा तथा पंजाब सभा इसी विषय के प्रस्ताव अपनी अन्तरंग सभाओं से स्वीकार करायें।

पंजाब सभा ने तो स्पष्ट शब्दों में ऐसा प्रस्ताव पारित कर दिया और सार्वदेशिक सभा ने अपने बम्बई के अधिवेशन में यह स्वीकार किया कि झगड़े निपटाने के सर्वाधिकार सार्वदेशिक सभा के प्रधान को दिये जा चुके हैं वह आनन्द स्वामी सरस्वती का सहयोग ले सकते हैं—परन्तु मुझे इस सम्बन्ध में किसी ने कभी नहीं पूछा हां यह सुना गया कि पंजाब सभा के मुकाबले में एक नई पंजाब सभा की स्थापना कर दी गई है। इस पग ने वैमनस्य की अग्नि पर तेल का काम किया—और समस्या सुलझने की अपेक्षा अधिक उलझ गई। तब मुकदमे बाजी बढ़ने लगी—स्थिति अधिक गम्भीर हो गई, आर्यसमाज के इन झगड़ों तथा अभियोगों की चर्चा आर्य जगत से बाहर भी तीव्रता से होने लगी, तब हैदराबाद में सार्वदेशिक आर्य

शेष पृ० २ पर

पृ० १ का शेष

महा सम्मेलन में सबसे पूर्व इन झगड़ो को समाप्त करने की बात चली। इस महा सम्मेलन मे कहा जाता है कि एक लाख से अधिक आर्य नर-नारियों ने भाग लिया। झगड़ समाप्त कराने के लिए मेरे दुर्भाग्य से मुझ पर दृष्टि पड़ी—मैने कहा "मेरा पथ वेद प्रचार तथा योग साधना है, परन्तु बार-बार मुझे ही पुकारा गया—मैने कहा ऐसा यत्न पूर्व भो हो चुका है किन्तु सफल नहीं हुआ। इस पर सम्मेलन में उपस्थित सभी लोगों ने स्पष्ट तौर पर यह स्वीकार किया कि मेरे ऊपर अब कोई शर्त या पाबन्दी नहीं रहेगी। मुझे निर्णय करने का पूर्ण अधिकार होगा। इस स्पष्टीकरण के साथ मुझे पूर्ण अधिकार देने का प्रस्ताव सर्वसम्मित से पास हुआ।

इसके पश्चात्, मैंने सब सम्बन्धित पक्षों को अदालत में चल रहे सब अभियोग वापस लेने के आदेश दिये जिसे सबने स्वीकार किया, परन्तु कोई अभियोग लौटाया नहीं गया। बार-बार जब ऐसा हुआ तो फिर मैंने यह घोषणा की कि यदि एक सप्ताह के भीतर मुकदमें लौटाये न गये तो मैं तथा डा० मथुरा दास जी हनुमान् रोड, आर्यसमाज में आमरण-व्रत शुरू कर देगें, तब दोनो पक्षो ने मुकदमें लौटाने के हस्ताक्षर कर दिये। तब प्रो० रामसिह जी के पक्ष ने तुरन्त सारे अभियोग वापस ले लिये, परन्तु दीवान रामसरनदास वाले पक्ष ने नहो लिये।

मैंने सम्बन्धित पक्षों की अनेक सम्मिलित बेठके बुलाई, जिनमें दीवान रामसरन दास तथा उनके सहयोगी बार-बार मुकदमें वापस लेने के आश्वासन देते रहे परन्तु कोई फल न निकला।

इसी बीच मैंने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के दोनों पक्षों में सद्भावना उत्पन्न करने के उद्देश्य से दोनों पक्षों की अन्तरंग सभाओं को भंग करके एक प्रबन्धकर्त्री समिति बना कर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को प्रबन्ध व्यवस्था का संचालन शुरू कर दिया। दोनों पक्षों के वेद प्रचार विभाग का कार्य इकट्ठा करने के लिये महात्मा आनन्द भिक्षु जी को इंचार्ज बना कर दोनों से कहा कि अपने-अपने उपदेशकों तथा प्रचारकों के नाम भेजिये—प्रो० रामसिह पक्ष ने इस पर अमल किया परन्तु दीवान रामसरनदास पक्ष ने पत्र का उत्तर भी नहीं दिया।

दोनों पक्षों से कहा गया कि अपने कार्यालय समिति के हवाले कर दें। प्रो० रामसिह जी ने इस आदेश को तत्काल स्वीकार कर दिल्ली का कार्यालय, स्टाफ तथा सामान सहित समिति के सुपुर्द कर दिया। परन्तु दूसरे पक्ष की ओर से मौन ही रहा।

दोनों पक्षों से सारा हिसाब किताब मागा गया। प्रो० रामसिह जी के पक्ष के कोषाध्यक्ष श्री रामनाथ भल्ला ने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के नाम एक लाख तीस हजार रुपया जमा करा कर रसीद समिति के हवाले कर दी, परन्तु दूसरे पक्ष ने उत्तर ही नहीं दिया।

चूंकि मैं पजाब सभा के दोनों पक्षों की अन्तरंग सभाओं को भंग कर चुका था इसलिए किसी भी पक्ष का कोई प्रतिनिधि सार्वदेशिक में जा नही सकता था अत: मैंने दीवान रामसरनदास को पत्र लिखा कि आपने जिन प्रतिनिधियो के नाम सार्वदेशिक में भेज रखे है उन्हें सूचना दे दीजिये कि वे सार्वदेशिक की बैठक में भाग न लें परन्तु उन्होंने ऐसा नही किया। यहां मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैंने सार्वदेशिक में कोई हस्तक्षेप नही किया। न मैंने उनके नाम पत्र लिखा, केवल दीवान जो को इस विषय सम्बन्धी पत्र लिखा ताकि प्रान्तीय झगड़ा अधिक बढ़ने न पाये। भग हुई सभा के प्रतिनिधि हो ही नही सकते।

६ मास व्यतीत हो जाने के पश्चात् भी दीवान पक्ष वालों ने जब मुकदमें नहीं लौटाये तो मैंने महात्मा आनन्द भिक्षु जी से प्रार्थना की कि वह जालन्धर जाकर महाशय वीरेन्द्र तथा दूसरे महानुभावों को प्रेरणा करें कि मुकद्दमें समाप्त हो जाएं।

जो फौजदारी मुकद्दमा चल रहा था, उसमें यह समझौता हुआ कि सभा के कार्यालय को पोलिस का ताला लगा हुआ है, जब खुलेगा तो उस का चार्ज श्री प्रिं० मपन रामचन्द्र जावेद को दिया जावेगा। पोलिस का ताला खुला परन्तु महात्मा आनन्द भिक्षु जी को जो वचन दिया गया था उसे तोड़ कर दीवान रामसरनदास पक्ष के किसी एक सज्जन को चार्ज दे दिया गया। पिछले ६-७ मास से दीवान रामसरन पक्ष की ओर से इतने वचन भंग हुए कि मैं निराश हो गया और समझ लिया कि यह कार्य तो होने वाला नहीं।

यहां यह तथ्य भो लिखना उचित होगा कि जब सवसम्मति से मुझे सर्वाधिकार दिया गया तो मैंने दो तीन सज्जनों को कह दिया कि मेरा अन्तरात्मा यह कहता है कि "इस कार्य में सफलता नही मिलेगी और ऐसा ही हुआ।"

जालन्धर की इस घटना के पश्चात् मैंने उचित समझा कि जब एक पक्ष अपनी मनमानी कर रहा है तो मैं दूसरे पक्ष को दबाये क्यां रखूं। तब मैंने प्रो० रामसिह प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब को तार तथा पत्र द्वारा यह लिख भेजा कि आप प्रधान के रूप में आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का भार उसी प्रकार सभालें जैसे मेरे चार्ज लेने से पूर्व सभाले हुए थे और सभा के साथ जो संस्थाएँ, गुरुकुल, कालेज, स्कूल इत्यादि सम्बन्धित हैं उनका चार्ज भी संभालें। क्याकि इनका प्रबन्ध आप ही से लिया गया था।

अब तो इस झगड़े को निपटाने के सम्बन्ध में मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं। मैंने सर्वाधिकार लने की जो गलती की उसका फल मैंने पा लिया है, अब आर्य जगत् स्वयं देख ले कि इन झगड़ों का स्रोत कहां है?

प्रमाणित लिपि —ह० आनन्द स्वामी सरस्वती
ह० नारायणदास कपूर १.७.६६

महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी का पत्र

कुक्कर नाग २५ जून ६६

मेरे प्यारे प्रो० रामसिह जी, प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब,

सप्रेम नमस्ते।

मेरा तार और पत्र आप को मिल चुका होगा जिसमें मैंने यह निवेदन किया है कि आप आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का कार्य उसी प्रकार करते रहें जिस प्रकार मेरे चार्ज लेने के पूर्व आप अपनी अन्तरंग सभा द्वारा करते थे जिन गुरुकुलों, कालेजों, स्कूलों और संस्थाओं का सम्बन्ध आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साथ है उनका प्रबन्ध यथापूर्व आप करते रहें। इन पर आप की सभा का अधिकार था और मैंने एक समिति इनके प्रबन्ध के लिए बनाई थी परन्तु अब मैंने श्री नारायणदास जी कपूर को लिख दिया है कि वे अब इन संस्थाओं का प्रबन्ध करने का कष्ट न करें। इनके प्रबन्ध का अधिकार मैंने प्रो० रामसिह जो प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को दे दिया है क्योंकि उन्ही के हाथों से इन सस्थाओं का चार्ज हमने लिया था।

मुझे दु:ख है कि हम सब का प्रयत्न सफल नहीं हुआ। जिस प्रकार आपने और आप की सभा ने मुझे सहयोग दिया—यदि इसी भांति दूसरा पक्ष भी सहयोग देता तो आर्यसमाज का गौरव बढ़ जाता। अब आपका कर्तव्य यह है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का साधारण अधिवेशन अति शीघ्र बुलाएं और सारे प्रतिनिधियों को सरकुलर लेटर भेज कर निर्वाचन कराएं। निर्वाचन में जो अधिकारी चुने जाएं उनको चार्ज दे दें। जो कुछ कर सकता था झगडे निपटाने के लिये किया। परन्तु मेरा तप अभी अधूरा प्रतीत होता है। इसी लिये असफलता का मुंह देखना पड़ा।

भगवान् हम सब को सुबुद्धि दे ताकि हम सन्मार्ग पर चलते रहें।

सेवक

प्रो० रामसिह जी, ह० आनन्द स्वामी सरस्वती
प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली।

महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती का आदेश

श्री दीनदयालु शास्त्री को गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी के सदस्यों से पृथक् कर दिया गया

गुरुकुल कांगडी फार्मेसी में सुधार को भावना से मैंने अपने आदेश दि० १७-५-६६ द्वारा श्री दीनदयालु जी शास्त्री को गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी

शेष पृ० ११ पर

गताङ्क से आगे

ओङ्कार-जप-विधिः

मानव—धर्म—शास्त्र के आदेश—२

(७)

(प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—जो युवक और युवतियां नियमानुसार यज्ञोपवीत धारण नहीं करते और गायत्री-मन्त्र का उपदेश ग्रहण नही करते, वे तो निन्दित एवं पतित हैं—

आषोडशाद् ब्राह्मणस्य, सावित्री नातिवर्तते ।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः ॥

अर्थ—जो अपने लडके-लड़कियों को ब्राह्मण वर्ण का अधिकारी बनाना चाहें, उनको सोलह वर्ष की आयु से पूर्व ही उनका [यज्ञोपवीत=उपनयन]संस्कार करवा देना चाहिये और विधि पूर्वक गायत्री-मन्त्र का उपदेश दे-दिलाकर गुरुकुल में भेज देना चाहिये, जो अपने लडके-लड़कियों को क्षत्रिय वर्ण का अधिकारी बनाना चाहें वे उन्हे बाइस वर्ष की आयु से पूर्व और जो वैश्य वर्ण का अधिकारी बनाना चाहें वे चौबीस वर्ष की आयु होने से पूर्व ही उनका उपनयन-सस्कार कराकर,गायत्री-मन्त्र का उपदेश दे-दिलाकर गुरुकुल मे भेज दें। इस आयु तक ही उन का गायत्री-मन्त्रोपदेश ग्रहण का अधिकार रहता है, इसके बाद नही।

२—कालातिक्रमण में दोष दर्शाते हैं—

अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते, यथाकालमसंस्कृताः ।
सावित्रीपतिता व्रात्या, भवन्त्यार्यविगर्हिता ॥

अर्थ—इस अवधि के व्यतीत होने पर अर्थात् इस समय तक भी उपनयन-सस्कार न करने पर वे असस्कृत लड़के और लड़किया सावित्री-मन्त्र ग्रहण के अभाव में पतित और श्रेष्ठ पुरुषो द्वारा निन्दित होकर वे तीनों प्रकार के ब्राह्मणत्व इच्छुक,क्षत्रियत्व-इच्छुक,वैश्यत्व-इच्छुक लड़के-लड़कियां व्रात्य सज्ञा को धारण करते हैं। जो लोग विधिपूर्वक धर्मानुष्ठान नहीं करते वे व्रात्य=व्रत-हीन, आदर्शशून्य कहलाते हैं। व्रात्य होना आर्य-जीवन-पद्धति के अनुसार बहुत बुरी बात है।

३—टीकाकार महाशय इन श्लोकों की टीका में प्राय: भूल किया करते हैं। वे रूढिवाद के वशीभूत होकर माता-पिता के वर्ण को ही मुख्य मान कर अर्थ लिख देते हैं। माता पिता के वर्ण को नही, लड़के-लड़कियों के भावी वर्ण को लक्ष्य में रखकर ही इन श्लोकों का अर्थ लिखना—विचारना चाहिये। ब्राह्मण वर्ण के इच्छुक की तैयारी सोलहवें वर्ष से पूर्व ही आरम्भ की जाये, क्षत्रिय वर्ण के इच्छुक की बाइस वर्ष की आयु से पहिले और वैश्य वर्ण के इच्छुक की चौबीस वर्ष की आयु से पहिले ही तैयारी आरम्भ हो जानी चाहिये।

४—ब्राह्मण-वर्ण की प्राप्ति अधिक कठिन है, उसकी प्राप्ति के लिये अपेक्षाकृत अधिक समय अपेक्षित है, क्षत्रिय-वर्ण की प्राप्ति के लिये उससे कुछ कम समय अपेक्षित है, वैश्य वर्ण की प्राप्ति के लिये कम समय अपेक्षित है। आजकल भी सरकारी, सैनिक, व्यवसायिक, अध्यापन, वकालत आदि के कार्यों मे इस प्रकार आयु विचार होता है।

५—ब्राह्मण का बालक नही अपितु ब्राह्मणत्व का इच्छुक बालक, क्षत्रिय का बालक नही, अपितु क्षत्रियत्व का इच्छुक बालक, वैश्य का बालक नही अपितु वैश्यत्व का इच्छुक बालक, ऐसी बालक की भावी वर्ण-सज्ञा का विचार यहाँ कर्त्तव्य है। वर्णव्यवस्था का वैदिक और मानव-धर्म-शास्त्र सम्मत विधान तो गुण, कर्म, स्वभावानुसार ही चरितार्थ होता है। वैदिक समाज-व्यवस्था अर्थात् वर्णाश्रम-व्यवस्था में सर्वत्र ही यह ध्यान रखना चाहिये। "जन्मना वर्ण" का सिद्धान्त तो पौराणिक, अवैदिक, निन्दित, और हानिकारक है। अतः त्याज्य ही है।

६—सन्ध्या-कर्म द्वारा निष्पापता बताते हैं।

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठन् नैशमेनो व्यपोहति ।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम् ॥

अर्थ—प्रात.काल के सन्ध्या-वन्दन कर्मों में जब मनुष्य गायत्री-अथवा ओङ्कार-अक्षर का जप करता है, तब उसके रात्री के पाप निवृत जाते हैं। इसी प्रकार जब मनुष्य विधि पूर्वक सांयकाल का सन्ध्या-वन गायत्री-अनुष्ठान वा ओङ्कार-अक्षर का जप करता है, तब उसके दिन किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं।

७—यहा जो पाप-नाश का उल्लेख है, इसका यही अभिप्राय है जब मनुष्य की मनोवृत्ति सुधर जाती है, तब वह दोषो, पापो और राधों से बचता है, फलत दु खो से भी बच जाता। विचारक जन अ भूलों को स्वीकारते भी हैं, सुधारते भी है, भावी जीवन मे भूलो से ब भी हैं। बस, पाप-नाश यही है।

८—योग के नाम पर शरीर-पीडन अनुचित है—

वशे कृत्वेन्द्रियग्रामं, संयम्य च मनस्तथा ।
सर्वान्संसाधयेदर्थानक्षिण्वन् योगतस्तनुम् ॥

अर्थ—बुद्धिमान् मनुष्य को उचित है कि अपने दशो इन्द्रियो के को अपने वश मे करके, तथा मन का भी भली प्रकार सयम करके, शरीर को क्षीण अथवा पीडित न करता हुआ, योग-साधन के द्वारा अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चार फलो को सम्यकतया प्राप्त करे।

९—सन्ध्या-वन्दन का समय—

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत्सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
पश्चिमान्तु समासीनः सम्यगार्क्ष विभावनात् ॥

अर्थ—प्रभात-काल की सन्ध्या मे गायत्री-मन्त्र वा "ओ३म्" का जप करते हुए सूर्योदय पर्यन्त बैठना चाहिये। इसी प्रकार साय की सन्ध्या में जप करते हुए सूर्यास्त होकर नक्षत्रों=तारों के उदय पर्यन्त बैठना चाहिये। यह सामान्य नियम सभी के लिये है।

१०—उपासना—न करने वाले जनों का बहिष्कार—

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् ।
स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥

(यहां 'शूद्रवत्' की जगह "साधुभि" पाठ भेद मिलता है। अर्थ यह होगा कि सज्जन लोग उसको द्विज के कर्मों से पृथक् कर दे

अर्थ—जो न तो प्रभात-काल का सन्ध्या-वन्दन और जपा करता है, न सायकाल का ही सन्ध्या-वन्दन और जपानुष्ठान कर ऐसे उपासना—कर्म शून्य व्यक्ति का तो सभी द्विज-कर्मों से शूद्र के बहिष्कार कर देना ही उचित है। ऐसा व्यक्ति तो उपासकों के शुभ को बिगाडता है।

११—गायत्री—जप भी सन्ध्या के साथ ही कर्त्तव्य है—

अपां समीपे नियतो, नैत्यकं विधिमास्थितः ।
सावित्रीमप्यधीयीत, गत्वारण्यं समाहिता ॥

अर्थ—एकान्त जगल मे जाकर, मन को एकाग्र और सार चिन्ताओ से रहित करके, किसी रमणीय जलाशय के समीप सन्ध्या-वन्दन करने वाले उपासक को उचित है कि वह गायत्री-मन जप भी उसी समय करे। यह नित्यप्रति दोनो समय करने का कार्य

१२—सन्ध्या-वन्दनादि कार्यों मे अवकाश का नियम नही—

वेदोपकरणे चैव, स्वाध्याये चैव नैत्यके ।
नानुरोधो ऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि ॥

वेद प्रतिपादित धर्म के अनुष्ठान मे, वेदो के नित्य प्रति स्वाध्य सन्ध्या-वन्दन, जप और हवन में तो कभी छुट्टी के दिन भी छुट्टी होती। यदि कभी कही किसी सामाजिक वा राजकीय नियम के अ

शेष पृ० ६ पर

पृ० ५ का शेष

; कोई दिन अवकाश का नियत हो जाये, तब उस दिन भी वेदों का ध्याय और सन्ध्या-वन्दन, जप, हवन आदि सब कार्य सामान्य नियम ानुसार ही कर्त्तव्य है। इन कार्यों में अवकाश नहीं होता।

१३—संयम और शास्त्र विधान की श्रेष्ठता—

सावित्रीमात्रसारोपि वरं विप्रः सुयन्त्रितः।
नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि, सर्वाशी सर्वविक्रयी॥

मान् मनुष्य—

अर्थ—शास्त्रीय विधिविधान के अनुसार आचरण करने वाला यदि न गायत्री मन्त्र को ही अर्थ सहित जानता और जपता है, तो इतना पर्याप्त और उत्तम है। उसकी तुलना में सब कुछ खाने और सब कुछ । वाला शास्त्र विमुख और संयमशून्य मनुष्य तो चतुर्वेदी होने पर भी नहीं है।

१४—सन्ध्या-वन्दन के साथ ही जप भी कर्त्तव्य है—

आचम्य प्रयतो नित्यमुभे सन्ध्ये समाहितः।
शुचौ देशे जपञ्जप्यमुपासीत यथाविधि॥

अर्थ—प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि एकाग्रचित्त होकर, नियमपूर्वक मन आदि के द्वारा स्फूर्ति का सम्पादन करके, पवित्र और एकान्त । में दोनों समय विधिपूर्वक सन्ध्या करे और सन्ध्या के साथ ही अपने ' गायत्री-मन्त्र तथा—ओङ्कार-अक्षर को जपे।

१५—पंचमहायज्ञों की महिमा—

देवतातिथिभृत्यानां, पितॄणामात्मानश्च यः।
न निर्वपति पंचानामुच्छ्वसन्न स जीवति॥

अर्थ—जो मनुष्य विधिपूर्वक ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करता, अतिथियों, नौकर आदि आश्रितजनों, माता-पिता आदि पूज्य ां को सत्कारपूर्वक भोजन-छादनादि से सत्कृत्य नहीं करता, स्वाध्याय सत्संगादि के द्वारा अपने मन को उत्तम विचारों से परिपूर्ण नहीं । और अपने कल्याण=हानि-लाभादि को भी नहीं विचारता, वह तो लेने और जीवित होने पर भी मृतक ही माना जाता है।

ादि पंच यज्ञ—

अहुतं च हुतं चैव, तथा प्रहुतमेव च।
ब्राह्मं हुतं प्राशितं च पंच यज्ञान् प्रचक्षते॥

अर्थ—इन पाच महायज्ञों को ही अहुत, हुत, प्रहुत, ब्राह्महुत और त-यज्ञ भी कहते हैं।

१७—पांच महायज्ञों की एक प्राचीन व्याख्या—

जपोऽहुतो हुतो होमः, प्रहुतो भौतिको बलिः।
ब्राह्मं हुतं द्विजाग्र्यार्चा प्राशितं पितृतर्पणम्॥

र्थ—जप-यज्ञ को ही अहुत-यज्ञ भी कहते हैं। हुत-यज्ञ ही हवन-यज्ञ हुत-यज्ञ ही बलिवैश्वदेव-यज्ञ यज्ञ अथवा भूत-यज्ञ है। ब्राह्महुत-यज्ञ थ-यज्ञ और विद्वानों के आदर-सत्कार को ही कहते हैं। प्राशित-यज्ञ-ज्ञ का ही दूसरा नाम है।

८—पाँच महायज्ञों की एक और व्याख्या—

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः, पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो, नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्॥

र्थ—अध्यापन भी ब्रह्म-यज्ञ ही है। माता पिता और आचार्य आदि पुरुषों को आदर-सत्कार पूर्वक तृप्त और सन्तुष्ट रखना ही पितृ-यज्ञ तृ-तर्पण है। हवन को ही देव-यज्ञ कहते हैं, कौवे, कुत्ते, कृमियों और ागियों को पालना, पोसना, भोजन-दान आदि से सन्तुष्ट करना ही ज्ञ है। अतिथियों के आदर-सत्कार को ही नृ-यज्ञ=नर-यज्ञ कहते हैं। नर क्यों कहते हैं? जो संसार में सुख की वृद्धि करता है। वही नाम का अधिकारी है। अतः शुभकर्मानुष्ठान द्वारा संसार के सुख-। को बढ़ाना सब मनुष्यों का सर्वोपरि कर्त्तव्य है। (क्रमशः)

● सत्य पर ही बसा आज संसार है ●

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय ११ छोटा चान्द गंज, लखनऊ-७)

स्वप्न में भी नहीं सत्य को भूलना,
सत्य पर ही आज बसा संसार है॥
सत्य क्या कर रहा क्या करेगा अभी,
यह हमें ज्ञात क्या हो रहा है नहीं?
सत्य का ही बसाना हमें विश्व है,
हो रही है विजय सत्य की सब कहीं।
सत्य दिखला रहा ज्ञान का द्वार है।
सत्य पर ही बसा आज संसार है॥
सत्य से ही सभी राष्ट्र होते जयी,
इस कथन को सभी लोग है जानते।
सत्य बोलो, रहो सत्य की छाँव में,
सत्य में सुख यशआदिक अतुल मानते।
जानते सत्य ही विश्व आधार है।
सत्य पर ही बसा आज ससार है॥
वेद में सत्य का गान गुंजित सतत,
और सब मानते सत्य को श्रेष्ठ हैं।
कौन है सत्य महिमा नहीं जानता?
सत्य को हो बताते सभी ज्येष्ठ हैं।
आज करना हमें सत्य-विस्तार है।
सत्य पर ही बसा आज संसार है॥
सत्य में शक्ति है, सत्य से भक्ति है,
सत्य में ईश की मर्व अनुरक्ति है।
सत्य ही मात्र सम्मान का पात्र है,
नित्य पूजित सदा सत्य मय व्यक्ति है।
क्योंकि सब सत्य में ही निहित सार है।
सत्य पर ही बसा आज संसार है॥

राही!, आगे बढ़ते रहना!

(श्री भैरवदत्त शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद्, लगुवा, जि० खीरी)

आगे बढ़ते रहना! राही! आगे बढ़ते रहना!
तम ने क्रुद्ध-भयंकर हो कर, ऋजु मग जटिल बनाया;
अवरोधों ने आगे अड़कर, जो भर त्रास दिखाया;
नये कल्पनाकृत महलों को, मन में गढ़ते रहना!
राही! आगे बढ़ते रहना!!
पवन चल रहा, उमड़ रहा है—भव-सागर का पानी,
महापतन का गर्त्त देखकर, मति-प्रज्ञा चकरानी;
उच्च शिखर पर, संबल लेकर, निर्भय चढ़ते रहना!
राही! आगे बढ़ते रहना!!
निशा गयी, है भोर हो चुका, छोड़ यहाँ का डेरा;
रुक जाने का समय न आया, नगर दूर है तेरा;
'अमर डगर है, अमर नगर है! पद नित पढ़ते रहना!
राही! आगे बढ़ते रहना!!

हे दयानन्द!

(श्री अरुण कुमार पाण्डेय, लखौलिया-बलिया)

बार-बार करता प्रणाम तुझको मन,
हे दयानन्द तुम दया मूर्ति थे, कब भंगुर तन?
नव प्रकाश दे गए मनुज को, आलोकित करके जग जीवन।
तेरे उच्चादर्शों से, दीपित है सारा जन-मन॥
मिटा द्वेष औ, घृणा उरों से, सत्य प्रेम की राह दिए तुम।
वेद ज्ञान से पूरित करके, सत्य-सत्य की चाह दिए तुम॥
श्रद्धा नत होकर प्रणाम करता तुझको मन,
विश्व वन्द्य हे ऋषि। नए जीवन के जीवन।

वैदिक धर्म ही पूर्ण है

(ले० श्री पं० बिहारी लाल जी शास्त्री रामपुर बाग बरेली)

कोई भी संस्था समाज या समूह हो उसके नियन्त्रण के लिए कुछ नियम निर्धारित किये जाते हैं। परन्तु पक्षी, कीट, पतंग वृक्षादि में ये नियम प्राकृत रूप से विद्यमान हैं। घोड़ा, बैल, बन्दर मांस नहीं खायेंगे और भेड़िया, चीता अन्न तथा फल नहीं खायेंगे। मनुष्य में इन सब से बुद्धि अधिक है। प्रकृति से ऊपर भी वह काम कर सकता है। अतः उस की उच्छृंखलता एवं उद्दडता को नियन्त्रित करने के लिए कुछ नियम बनाये गये। और ये नियम उसी समय से होने चाहियें जब से मनुष्य सृष्टि प्रकट हुई है। ये नियम वही निर्धारित कर सकता है जिसे सृष्टि के नियम ज्ञात हों और जो नियमों के दूरगामी परिणामों का ज्ञाता हो, सर्वकालज्ञ सर्वज्ञ हो। अस्तु ऐसे नियम धर्म कर्मों के उपदेश का ग्रन्थ केवल वेद है। वह सृष्टि की आदि से है और ईश्वरोपदिष्ट है। यह तो अब सर्वमान्य सिद्धान्त हो गया है कि ज्ञान पुस्तकों में सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद ही हैं। ईश्वरोपदृष्टि हैं अथवा मानवीय ज्ञान का ही विकास हैं इस विषय पर विवाद को स्थान है। परन्तु गहराई के साथ वेदाध्ययन करने और अंतर्मुखी होकर चिन्तन करने से यह भी विश्वास हो जाता है कि आदि सृष्टि के ज्ञानियों के हृदयों में वेदज्ञान की स्फुरणा उसी सर्वव्यापक चेतन तत्त्व ने दी है जिसने कि आदि काल में मनुष्य को अक्षरमयी वाणी प्रदान की। (शास्त्रयोनित्वात्" वे० १।१।३) तो वह वेद क्या उपदेश देता है?

वेद मनुष्य को शारीरिक, पारिवारिक, सामाजिक राजनीतिक और आध्यात्मिक उपदेश तो देता ही है इससे भी ऊपर कुछ अलौकिक वैज्ञानिक गूढ़ उपदेश वेदों में पाये जाते है।

वेदों में शारीरिक उपदेश— स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसः (य० वे०)

हम स्थिर अंगों से संतुष्ट रहे। इसका उपाय भी वेद ने बताया— ब्रह्मचर्य—"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत सदाचार और संयम-युक्त रहने तथा ज्ञान और श्रमयुक्त जीवन बनाने से विद्वानों ने मृत्यु को मार दिया।

अब पारिवारिक शिक्षा देखिए—

अनुव्रतः पितुः पुत्रः, मात्रा भवतु संमनाः
जायापत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्।

पुत्र पिता के व्रत सदाचार के अनुकूल हो। माता के मनोरथों को पूरा करने वाला हो। पत्नी पति से मीठी वाणी बोले।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।

भाई भाई, साले बहनोई, बहिन बहिन, दौरानी जिठानी आपस में द्वेष न करें सीधे सरल और सदाचारी रहकर कल्याणयुक्त वाणी बोलें।

सामाजिक उपदेश—

सहृदयं साम्मनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः
अन्योऽन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।

सहृदय रहो—अन्यों के दुःखों में दयालु होकर सहायता करो। मनों में एकता, समन्वय रखो, एक दूसरे की भावना का आदर करो, द्वेषरहित रहो, एक-दूसरे के प्रति ऐसा प्रेम रक्खो जैसा गौ अपने सद्योजात वत्स पर रखती है।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः, समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः॥

तुम्हारा अन्नभाग समान हो, समाज में भूखा कोई न रहे। पानी सबों को मिले। कोई प्यासा न रहे, नियम-विधान सबके लिए समान हों, सब को पूरी उन्नति का अवसर मिले। निश्छल होकर अग्नि की, अगुआ अपने नेता की तथा ईश्वर की सेवा करो, आज्ञा मा[नो] उपासना करो। जैसे पहिये के अरे (डंडे) पहिये की नाभि में (पु[रे]) जुड़े रहते हैं इसी प्रकार तुम भी केन्द्र से—नेता से जुड़े रहो।

उक्त मंत्र अथर्व ३।३० के हैं।

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।(

जहाँ ज्ञान और बल सहयोग रखते हैं। जहाँ विद्वानों का अ[र्थ] जीवन पुरुषार्थ से सहयोग है वह देश पवित्र है, धन्य है।

यत्रेन्द्रश्च वायुश्च सम्यञ्चौ चरतः सह
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र सेदिर्न विद्यते। (य

जहाँ ऐश्वर्य सम्पन्न धनी और सर्वत्र वस्तुओं को पहुँचाने [वा]ले तुल्य व्यापारी हैं। जहाँ कंगाली भुखमरी नहीं है वह देश भाग्यशा[ली है]।

राजनीतिक—

राजा की स्थापना क्यों की जाती है तो वेद बताता है कि [राजा की] स्थापना का लक्ष्य है—

इमं देवा असपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय
महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्याय। (य०वे

इस राजा को अजात शत्रु बनाओ। शत्रुरहित हो, महा[न्] साधन के लिये, महान् महत्त्व के लिए, गौरव के लिए और ज[न के] लिए, जनता के राज्य के लिए।

राजा प्रधान है, जनता का। वह जनता की रक्षा के स[ाधनों से] सम्पन्न हो, देश के राष्ट्र के गौरव को बढ़ाने वाला है। जनतन्त्र [को] बनावे। फिर राजा कैसा हो—

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मात्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत्।
(अथ० ६।६।८

सब प्रजायें तुझे चाहें और तेरा राजभंग न हो, जो राजा [ऐसा] होगा। उसका राज्य अचल रहेगा ही।

सम्राडस्यसुराणां ककुन्मनुष्याणाम्।

शक्तिशाली भौतिकता भक्तों का तू सम्राट् हो। शासनक[र्ता] मनुष्यों का शिरोमणि हो, अधिष्ठाता हो, मननशीलों बुद्धि[मानों में] प्रमुख हो, अर्थात् शारीरिक बलयुक्त और बुद्धि विद्या संपन्न र[ाजा] होना चाहिए। और वह स्वयं तथा उसकी सभा ध्रुव हो, अचल[।] राष्ट्रपति और उसकी सभा के नियम अचल हों, विधान में ध्रु[व] राजनीति में निश्चयात्मक कार्य हों, जैसाकि—

सर्वा विशः समनसः सध्रीची ध्रुवाय ते समितिः कल्पता
(अथ० ६।६।८

सब प्रजायें एक मन हों, राष्ट्रपति को मन से चाहने वाली कपटरहित हों, सदाचार युक्त हों, राजसभा ध्रुव निश्चय वाली हो सभा की नीति ढुलमुल न हो, किन्तु अटल हो।

सेना—

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद् वीराणां जयतामेतु घ पृथग् घोषा उलूलयः केतुमन्त उदीरताम्। देवा इन्द्र[ज्येष्ठा] मरुतो यन्तु सेनया। (अथ० ३।१९।६)

हे इन्द्र घोड़े हिनहिनायें। वीरों का जयघोष उठे। जय[घोष] उल्लास और ध्वजायें लिये हुए विद्वान् राजा को आगे किये हुए [वे]वेग वाले मनुष्य सेना को साथ लिये हुए चलें। प्रजा और विजय[ि]का यह दृश्य है।

शेष पृ० ८ पर

पृ० ७ का शेष

से—

खूब कमाओ पर राष्ट्रहित में व्यय करो—

शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर (अथर्व०)

ने कहा सौ हाथों से कमाओ और सहस्र हाथों से व्यय करो। एक क्त दस-दस का पालन करने योग्य कमाई करे। यह जनहित के नी चाहिए। "पणी"—पैसे वाले धनलोलुप जो पैसे के लिए पाप डाले पूरे अर्थ पिशाच ऐसों की वेद में निन्दा की गई है। ऐसे ए" यज्ञ विरोधी दानहीनों पर राजा पूरी दृष्टि रक्खे, इन्हें वश में न्हें दान के लिए प्रेरित करे। उनके हृदयों को शिक्षा से बदले।

विस्मलं विवा घृणे पूषन् दानाय चोदय पणेश्चिद् । मनः। ३

घि पणीनामारया हृदया कवे। अथेमस्मभ्यं रन्धय। ५

विपूषन्नारया तुद पणेरिच्छ हृदि प्रियम्।

अथेमस्मभ्यम् रंधय। ६ (ऋग् ६।५३)

तापशाली प्रजा का पोषण करने वाले राजन् अदानी को दान के रेत करो, कृपण धनलोलुपों के मन को कोमल करो, हे प्रजा राजन् कंजूसों के हृदय को कोड़ों से (आरों से) प्रेरित करो, हृदय प्रिय बने। और हमारे (प्रजा के लिये) इन्हें वश में करो। न कहेंगे कि ये तो प्रार्थनायें हैं। परन्तु वेदों की शैली है यह कि जो वेद देना चाहता है वही प्रार्थना भगवान् मनुष्यों से कराते हैं। पदेश और इच्छाओं की एकात्मा हो जाती है। वेद ने ऊपर राजा य बताये कि यदि प्रजा के पोषक (पूषन) होना चाहते हैं तो के हृदयों को नम्र करो। उनको दान देने की आदत डालो और दंड से भी उनके हृदयों को बदलो।

प कह सकते हैं कि साम्यवाद होने से तो धनी कोई रहता ही पूंजी सब की हो जाय राष्ट्र भी फिर दान न मांगे. ऐसा वेद में क्यों न्तु वेदों में ऊल-जलूल सामयिक उपदेश न होकर त्रिकालाबाध्य है। मनुष्य की प्रवृत्ति है संग्रह की और सब मनुष्य एकसे बुद्धि- ही और न सबका पुरुषार्थ एकसा है तो फिर धन में भी सब एकसे सकते, अतः धनी निर्धनी के भेद अवश्य रहेंगे। अब यह काम ना है कि धनियों पर नियन्त्रण रक्खे उनके हृदयों को दानशील । बृहस्पति स्मृति का वचन है—

सभा प्रपादेवगृहास्तटाकारामसंस्कृतिः तथानाथदरिद्राणां रो योजनक्रियया पालनीया समर्थेस्तु यः समर्थो विसंवदेत् हरणं दण्डस्तस्य निष्कासनं पुरात्।

मा भवन, प्याऊ, देवमंदिर, तालाब, बाग आदि का संस्कार निर्माण तथा अनाथ और गरीबों के सस्कार पढ़ाना विवाह आदि तथा उन्हें र से लगाना यह सब काम समर्थ धनियों को करने चाहियें और ो इससे उलटा व्यवहार करे उसका सब कुछ छीनकर राजा उसे राज्य से (नगर से) निकाल दे। श्रद्धा से, राजभय से दान द्वारा ों को सहायता समर्थों से कराई जाये।

। ही क्यों?—दान प्रणाली से दान देने वाले हृदय में उदात्त भावना है और लेने वालों के हृदयों मे कृतज्ञता, नम्रता, विनयशीलता होती है। कम्युनिस्ट प्रणाली में ईर्षा, द्वेष, क्षोभ और कटुता होगी तथा विलास प्रियता बढ़ेगी। यह अब प्रत्यक्ष दीख रहा है।

रिवार, समाज, देश और दान पुण्य आदि सब शुभ कर्मों का माध्यम में "ईश्वर" इसीलिये सब धर्म कर्म पुण्य ईश्वरार्पण किये जाते विष्णु प्रीत्यर्थं ये।" संकल्प में बोला जाता है। वह ईश्वर क्या है— ?

"अकायम्, अव्रणम्, अस्नाविरम्, शुद्धम् अपापविद्धम्।

(य० ४०।८)

शरीर धारी नहीं। उसमें कोई व्रण छिद्र दोष नहीं, वह सब बंधनों से रहित है। शुद्ध है, उसमें पाप अज्ञान नहीं है। आगे—

ओतः प्रोतश्च स विभुः प्रजासु (अ० ३२)

प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतो मुखः (अ० ३२)

द्यावाभूमी जनयन् देव एकः (अ० १७)

उक्त प्रतीक यजुर्वेद के हैं—वह सर्वगत है। प्रजाओं में सर्वत्र व्यापक है। प्रत्येक जन के सामने है। उसका मुख (ज्ञान-शक्ति) सर्वत्र है। वह सर्वज्ञ है।

उस ने ही भूमि और द्यौ लोक को रचा है। वह एक है। उस एक ने ही यह सब कुछ रचा है। ईश्वर सत्ता के एकत्व की जो दलील (युक्ति) वेद में है वह अन्य किसी धर्मग्रंथ में नहीं। इस्लाम और ईसाइयत ईश्वर को एकता (तौहीद) को बड़े जोरों से पुकार का प्रचार करते हैं किन्तु बाइबिल और कुरान में एक भी युक्ति ऐसी नहीं जिससे कि ईश्वर का एकत्व सिद्ध हो। हां, वेद ने युक्ति पूर्वक बताया कि वह एक क्यों है?— ईश्वर सर्वव्यापक, है (सपर्यगात्) वह सब में है। जब वह सब में समाया हुआ है तो दूसरा ईश्वर कहाँ ठहर सकता है? एक बराबर स्थान में एक सी दो वस्तुएँ नही रह सकतीं। जितने आकाश को एक लोटे ने घेरा हुआ है उतने ही उसी आकाश में दो लोटे नहीं रह सकते। एक गिलास पाव भर दूध का है उस में आधा सेर नही समा सकता। हाँ उससे सूक्ष्म वस्तु उस में समा जायगी। जल पूर्ण एक घट में और जल नही समा सकता परन्तु वायु और उष्णत्व समा सकते हैं। ईश्वर सूक्ष्मातिसूक्ष्मतत्व है। निराकार है अतः वह सब में समा गया अब अन्य तत्व को व्यापकता का स्थान ही कहाँ रहा? दूसरा ईश्वर तब समावेगा जब पहले व्यापक से सूक्ष्म हो। और जो तत्त्व सूक्ष्मता की पराकाष्ठा पर पहुंचा हुआ है वही ईश्वर है। उसने सब आकाश घेरा हुआ है अब दूसरे को ठौर कहाँ? अरबी मन्तिक में माना हुआ है—"तदाखुल हमजिन्स महाल है" एक सी वस्तुओं को एक बराबर स्थान में रह सकना असम्भव है।

इसीलिये वेद ने कहा—

स एष एक एक वृदेक एव (अथ० १३।४।२०)

वह ब्रह्म एक ही है निश्चय एक ही है।

निराकार साकार का प्रश्न—

कुछ यदि मानते हैं वह निराकार भी है साकार भी उनके सामने वेदान्त का यह सूत्र है। इस पर विचार करें:—

अरूपवदेवहि तत्प्रधानत्वात् (३।२।१४)

ब्रह्म अरूप वाला निराकार ही है क्यों कि—वेदोपनिषद् की प्रधान श्रुतियाँ निराकार परक हो हैं। यहाँ सूत्र मे "एव" शब्द पर ध्यान दीजिये जिसका अर्थ "ही" है। ब्रह्म निराकार ही है "भी" नहीं।

वेदों में अनेक देवता—

वेदों में अग्नि, वरुण, इन्द्र, वायु आदि अनेक देवताओं की स्तुतियाँ हैं इससे विदित होता है कि वेदों के ऋषि प्रकृति की इन शक्तियों को ही ईश्वर मानते थे एक ब्रह्म का ज्ञान उन्हें न था। यह ब्रह्मैकत्व का ज्ञान तो उन्हें इस्लाम के भारत में आ जाने पर हुआ। श्री विनोबाभावे श्री हुमायूँ कबीर आदि महान् पुरुष भी ऐसा विचार प्रकट करते है—

हुमायूँ कबीर जी और विनोवा जी तो वेद पढ़े नही परन्तु जिन पर ये लोग विश्वास करते हैं वे स्वयं वेदों को आर्षशैली से नहीं पढ़े थे। ऋग्वेद के प्रथम मंडल में ही—एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति—एक ही अस्तित्व है (तत्त्व) है किन्तु ज्ञानीजन उसे बहुत प्रकार से कहते हैं। मन्त्र में बताया है कि इन्द्र मित्र वरुण अग्नि आदि से वही स्तुति किया जाता है। वस्तुतः ब्रह्म का एकत्व, अस्तित्व और शुद्ध स्वरूप जैसा वेदों ने निरूपित किया वैसा सेमिटिक मतों (बाइबिल कुरान आदि) में नहीं है। वेद निरूपित ब्रह्म का ही वर्णन उपनिषदों में हुआ। गुरु नानक देव की, श्री कबीर जी

शेष पृ० ९ पर

पृ० २ का शेष

का स्थायी रूप से व्यवस्थापक नियुक्त किया था। मुझे खेद है कि वह अपने कर्त्तव्य का पालन करने मे असमर्थ रहे हैं अत मैं उक्त आदेश को समाप्त कर के श्री दीनदयालु जी शास्त्री को गुरुकुल कागडी फार्मेसी के सब पदो से मुक्त करता हू। उसके उपरान्त श्री रामनाथ जी भल्ला व्यवस्थापक के रूप मे तथा प० धर्मपाल जी विद्यालकार व्यवसायाध्यक्ष के रूप मे यथापूर्व कार्य करेंगे। ह० आनन्द स्वामी सरस्वती अध्यक्ष

प्रतिलिपि सेवा मे, १—श्री दीनदयालु जी शास्त्री जस्सा राम रोड, हरद्वार (सहारनपुर) २—आचार्य प्रियव्रत जी उपकुलपति, गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय (सहारनपुर)

३—प० धर्मपाल जी विद्यालकार, व्यवसायाध्यक्ष गुरुकुल कागडी फार्मेसी।

४—प्रो० रामसिह जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब।

५—श्री रामनाथ जी भल्ला, व्यवस्थापक, गुरुकुल कागडी फार्मेसी।

आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली राज्य का चुनाव

प्रधान—श्री मक्खराम ऐडवोकेट, उपप्रधान—श्री प्रो० वेदमित्र पी-एच० डी०, प्रि० शान्ति स्वरूप, श्री लखपत राय श्री निरजन देव व श्री बख्शी खुशहाल, मन्त्री—श्री विद्यासागर उपमन्त्री—श्री देवेन्द्र कुमार, श्री राममिलन सिंह, कोषाध्यक्ष—श्री प्रकाश चन्द्र, पुस्तकाध्यक्ष—श्री लीलाधर, अन्तरग सदस्य—श्री रामेश्वर प्रसाद शास्त्री, श्री दुली चन्द, श्री लक्ष्मणदेव, श्री धर्मवीर, श्री कृष्ण कुमार, श्री चन्द्र सिंह श्री सत्यदेव, श्री सत्य काम, श्री चतुर सिंह लुप्त, श्री लखनलाल कन्नौजो श्री वासदेव तथा कर्मवीर। — विद्या सागर मन्त्री

शोक समाचार

समस्त आर्य जगत् विशेषकर हरयाणा की जनता मे यह दुखद समाचार एक दम वज्रपात सदृश सुना जायगा कि श्री प० भगवद्दत्त जी सिद्धान्त भूषण सालवन (जि० करनाल) निवासी का अचानक २१ जून को देहान्त हो गया है। आप केवल सालवन समाज के प्रधान ही नही, सालवन और असन्ध के आस-पास की लगभग २०, २५ मील के क्षेत्र मे स्थित सभी समाजो की वेदप्रचार समिति के अध्यक्ष व अथक कार्य कर्ता थे। बिना किसी वेतन भत्ता व किराया आदि के वानप्रस्थी रूप मे निष्कामभाव से दिन-रात वेदप्रचार मे सलग्न रहते थे। नई-नई जगह प्रचार करवाना, समाज स्थापित करना और आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बन्ध करवा के उत्सव आदि की व्यवस्था करना आप का जीवन लक्ष्य था। गुरुकुल और उपदेशक विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर लगभग १० वर्ष तक आप ने विधि पूवक सभा की सेवा की बाद मे स्वेच्छा से प्रचार शैली अपनाई आप के पूज्य पिता श्री चौ० शृङ्गार सिह जी पुराने दृढ आर्यसमाजी लग्नशील (मिशनरी स्पिरिट) के सज्जन थे। जिला करनाल मे सब से पहले राजपूतो के गढ अपने सालवन गाव मे आर्यसमाज की स्थापना और देहात मे वेदप्रचार का चक्र चलाना आप का ही काम था। पिता की इच्छानुकूल प० भगवद्दत्त जी ने भी उन की चलाई परम्परा को आगे बढाते हुए उन की आशाओ और कार्य को चार चाद लगाए। प० भगवद्दत्त जी जैसे निष्ठावान्, कार्यशील, शान्त स्वभाव निष्काम अथक कार्य कर्ता का रिक्त स्थान पूरा होना असम्भव सा है। उन्हे इन दिनो मे परिवार की अपेक्षा समाज से अधिक प्रेम रहता था अत आर्यसमाज और हरयाणा वेदप्रचार मण्डल सदा उन का ऋणी रहेगा। परमात्मा से याचना है कि दिवगत आत्मा को सदगति और उनके परिवार को धैर्य तथा सान्त्वना प्रदान करे।

—समरसिंह वेदालकार—अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल (जीन्द)

शोक समवेदन प्रकाशन

इसी अक मे पृ० ११ पर श्री प० भगवद्दत्त सिद्धान्त-भूषण के अचानक देहान्त का समाचार जान कर हम आर्यमर्यादा तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से स्वर्गीय पण्डित जी के परिवार तथा सम्बन्धियो के प्रति शोक समवेदन प्रकाशित करते हैं। जब वह गुरुकुल मे अध्ययन करते थे, तब मैं वहा अध्यापक था। वह आरम्भ से ही वैदिक धर्म और आर्यसमाज के प्रति श्रद्धा भाव रखते थे। उन के पिता जी का यह गुण मानो उन को दायभाग मे मिला था। ग्रामीण क्षेत्र मे कार्य करने वाला निष्काम और निःस्वार्थ आर्य कार्यकर्त्ता हम से पृथक् हो गया इस का हम सब को गहरा शोक है। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

वेदप्रचार विभाग की सूचनाएं

१ हमारे आर्यसमाज [illegible]गर (मध्यप्रदेश) के विशेष निमन्त्रण पर आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के दो सुयोग्य उपदेशक महानुभाव—श्री प० हरिदेव जी सिद्धान्त भूषण तथा श्री प० बलराज जी सगीत रत्न वेदप्रचारार्थ पधारें। दोनो महानुभावो के प्रचार का जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। १६० रु० मार्ग व्यय के अतिरिक्त २५१ रु० उक्त सभा को वेद-प्रचारार्थ भेंट दिए गये। —युधिष्ठिर पाल प्रधान आर्यसमाज

२ आर्यसमाज बीकानेर (महर्षि दयानन्द मार्ग) द्वारा सूचना पाकर आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के वेदप्रचार विभाग के अधिष्ठाता श्री प० निरजनदेव जी पधारे और ५ दिन तक आर्य जनता के लिए विशेष प्रवचन दिए। साथ ही श्री चुन्नीलाल जी भजनोपदेशक भी पहुचे हुए थे। दोनो उपदेशक महानुभावो के उपदेश और भजनो से जनता ने पूरा लाभ उठाया। आर्यसमाज परमानन्द बस्ती के अधिकारी महाशय भी प्रेम पूवक प्रचार मे सम्मिलित होते रहने मार्ग व्यय के अतिरिक्त उक्त सभा का १०१) रु० वेदप्रचारार्थ दिया गया। —रणजीत सिंह मन्त्री आर्यसमाज

३ आर्यसमाज कोका (तहसील झज्जर जि० रोहतक) का उत्सव समारोह से मनाया गया। श्री प० समर सिंह जी वेदालकार अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल तथा श्री मुन्शीलाल जी धर्मपाल जी की भजन मण्डली पधारे। सभा का १०१ रु० वेदप्रचारार्थ दिया गया।

—मन्त्री आर्यसमाज

आप तीनो आर्यसमाजो को सभा की तरफ से धन्यवाद दिया जाता है।

—निरजनदेव अधिष्ठाता वेदप्रचार विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

हरयाणा वेद प्रचार मण्डल के समाचार

विगत दिनो हरयाणा मे गर्मी और आधी का पूर्ण प्रकोप रहा। कुछ उपदेशक व प्रचारक महानुभाव साधिकार अवकाश पर भी रहे तथापि प्रचार कार्य पूरी तरह चलता रहा। मई जून मे निम्न समाजो के उत्सव हरयाणा वेदप्रचार मण्डल द्वारा धूमधाम से सम्पन्न हुए—आर्यसमाज अपलाना (करनाल) सुदकान कला (जीद), सोनीपत (रोहतक), बिठमडा (हिसार) गोली (करनाल) रायचन्द वाला (जीन्द), सौंघल (करनाल) कोका (रोहतक), पाढा (करनाल)। इन उत्सवो के अतिरिक्त शेष दिनो मे भजन मण्डलिया ग्रामो मे प्रचार करती रही। दालम वाला, धौड कापडो भौंगरा चानन खोवा खरवाडी और जयसिंहपुरा आदि ग्राम उल्लेखनीय है।

इन उत्सवो और प्रचार कार्य को सफल करने मे श्री मुन्शीलाल जी की और श्री जयलाल जी की भजन मण्डलियो ने विशेष कार्य किया। उत्साह प्रशसनीय है। समरसिंह वेदालकार

अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल (जीद)

आर्य हायर सेकण्डरी स्कूल लुधियाना,

परीक्षा परिणाम निम्न प्रकार से रहा।

१—मैडिकल ग्रुप मे १८ परीक्षार्थी बैठे—सब उत्तीर्ण हो गये। शत प्रतिशत परिणाम। २—ननमैडिकल ग्रुप मे ८४ विद्यार्थी परीक्षा मे सम्मिलित हुए जिन मे ६८ उत्तीर्ण हो गये। परीक्षा परिणाम ८२ प्रतिशत रहा। ३—ह्यू मैनिटीज—९८ बैठे जिनमे ८७ पास हुए। परीक्षा परिणाम ८९ प्रतिशत रहा—१ विद्यार्थी राज्य भर मे चतुर्थ नम्बर पास रहा। १५ लडके मैरिट लिस्ट पर आ गये तथा २१ ने प्रथम श्रेणी प्राप्त की। स्कूल का सामूहिक परिणाम ८६ २ प्रतिशत रहा। यह परिणाम लुधियाना जिला भर मे सर्वोत्तम है जब कि युनिवर्सिटी का परिणाम हमारे स्कूल से २२ प्रतिशत कम रहा है। इसी प्रकार खेल कूद आदि मे भी स्कूल का नाम अग्रगण्य है। इस उत्तम परिणाम का श्रेय स्कूल की प्रबन्धकर्त्री समिति, मैनेजर श्री विद्या भास्कर जी श्री प्रिंसिपल साहिब और उन के सहयोग को है। —निज सवाददाता

[नोट—कृपया समाचार हिन्दी भाषा-देवनागरी लिपि मे भिजवाना चाहिए। आशा है भविष्य मे इस बात का ध्यान रखा जावेगा।—सपादक]

जालन्धर आर्यसमाज का वार्षिक चुनाव

जालन्धर आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार (अड्डा होशियारपुर) निम्नलिखित अधिकारी चुने गए—



श्री प्रकाशचन्द जी बाहरी

प्रधान—श्री प्रकाशचन्द बाहरी, **उपप्रधान**—श्री सेठ शिवचन्द, लाला जगन्नाथ मित्तल, डा० दुर्गादत्त ज्योति, **मन्त्री**—श्री योगेन्द्रपाल सेठ, **उपमंत्री**—सर्व श्री प्रकाशचन्द कालड़ा, श्री दुनीचन्द थापर, श्री राजकिशन सेठ, **कोषाध्यक्ष**—श्री रामलाल गुप्त, **पुस्तकाध्यक्ष**—श्री सोहनलाल सेठ, **अन्तरंग सदस्य**—सर्व श्री कृपाराम कोहली, श्री लालचन्द सब्भरवाल, प्रो० ज्ञानचन्द सहगल, प्रो० सत्यपाल धीर, श्री रामलाल भसीन, श्री हरनामदत्त पुरी, श्री भगतराम सहगल, श्री टेकचन्द, श्री भगतराम सोधी।

—रामलाल गुप्त

आर्यसमाज सिरसा (हिसार) का उत्सव

१८ १९ २० जुलाई को होगा। इस अवसर पर आर्य जगत् के अनेक प्रतिष्ठित विद्वान् संन्यासी, उपदेशक और भजनोक महानुभावों को निमन्त्रित किया गया है। आस पास के क्षत्र के ग्रामवासी आर्य महानुभावों को भी उत्सव मे सम्मिलित होकर धर्म लाभ उठाया चाहिये।

—मन्त्री आर्य समाज

आर्यसमाज देवनगर मुल्तान नई दिल्ली वार्षिक चुनाव

प्रधान—हकीम नानक चन्द, मन्त्री—श्री प्रकाश बन्धु एम० ए० कोषाध्यक्ष—श्री श्रीगोपाल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री धर्म पाल।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्ययुवक दलों की सम्मिलित बैठक

महात्मा आनन्द भिक्षुजी की अध्यक्षता में आर्यवीर दल पंजाब-हरयाणा, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्, आर्यन यूथ लीग, प्रादेशिक आर्य युवक संघटन, आर्ययुवक सघ महाराष्ट्र के तत्त्वावधान में आर्ययुवक कार्यकर्त्ताओं की सम्मिलित बैठक हुई, जिसमें जिम्नलिखित निश्चय किये गये।

१. सभी वर्त्तमान युवक सघटनो का विलय होकर एक नया आर्य युवक संघटन बनाया जावे। इस के क्रियान्वित करने के लिये एक उपसमिति बना दो गई।

२ आर्यसमाज के दलगत झगड़ों के बारे में उचित पग उठाने के लिये श्री महात्मा आनन्दभिक्षुजो को अध्यक्षता में एक उपसमि.त बना दी गई है।

३. १९७५ में होने वालो आर्यसमाज की शताब्दो के लिये आर्य युवकों का विश्वव्यापी कार्यक्रम तैयार किया जावे।

—सयोजक श्यामराव

शोक समाचार

गाँव लूखी (जि० महेन्द्रगढ़) आर्यसमाजी गाव है। वहाँ के प्रसिद्ध आर्यसमाजी श्री सेठ तोखराम जो आर्य का देहान्त हो गया। परमात्मा उनके परिवार को धैर्य देवे। —बुधराम आर्य—बिसोहा (जि० रोहतक)

श्री सेठ तोखराम जा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के बहुत पुराने कर्मठ सदस्य चले आरहे थे। उनके देहान्त पर आर्यमर्यादा के द्वारा हम सभा की ओर से शोक समवेदना प्रकट करते हैं।—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

काशी के श्री खेमचन्द्र जी १३ जौलाई लखनऊ पहुंचें

आर्योपप्रतिनिधि सभा काशी के प्रधान श्री खेमचन्द्र जी जो शास्त्रार्थ शताब्दो के कार्य से हरयाणा पजाब भ्रमण कर रहे हैं। वे तत्क्षण १३ जौलाई रविवार आर्य प्रतिनिधिसभा यू० पी० के कार्यालय लखनऊ पहुंच। शताब्दी के सम्बन्ध में १३ जौलाई लखनऊ विशेष बैठक है। अब आगे से यू० पो० सभा क द्वारा और उसके नियन्त्रण में कार्य विभाग होगा।

—महेन्द्रप्रताप शास्त्री संयोजक
काशी शास्त्रार्थ कमेटी

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ओ३म्
सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)
वेदा
आर्यमर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र



जसे पढने से पण्डित होता है वैसे सुनने से बहुश्रुत होता है। यदि श्रोता दूसरे को नही समझा सके तथापि स्वय तो समझ ही जाता है, जो कोई पक्षपात रूप यानारूढ होकर देखत हैं उन को न अपना और न पराये गुण दोष विदित हो सकते हैं।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १
अंक ३२

५ श्रावण वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २० जोलाई १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

गवेर्वसिह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
" " विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पसे

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन स एवार्थ उपदिश्यते ॥

फिर भी अगले मन्त्र में वरुण शब्द ही का प्रकाश किया है।

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधम वि मध्यम श्रथाय।
अथा वयमादित्य व्रते तवानगसो अदितये स्याम ॥

ऋग्वेद १ २४.१५ ॥

पदार्थ—(उत्) अपि (उत्तमम्) उत्कृष्ट दृढम् (वरुण) स्वीकर्तमर्हेश्वर (पाशम्) बन्धनम् (वि) विशेषार्थे (मध्यमम्) उत्तमाधमयोर्मध्यस्थम् (श्रथाय) शिथिलीकुरु (अथ) अनन्तरार्थे (वयम्) मनुष्यादय प्राणिनः (आदित्य) विनाशररित (व्रते) सत्याचरणादावाचरिते सति (तत्र सत्योपदेष्टुस्सर्वगुरो (अनागस) अविद्यामनआगोऽपराधो येषा ते (अदितये) अखण्डितसुखाय (स्याम) भवेम ॥

अन्वय—हे वरुण त्वमस्मदधम मध्यममुदुत्तम पाश व्यवश्रथाय दूरतो विनाशयायेत्यनन्तर हे आदित्य तव व्रत आचरिते सत्यनागस सन्तो वयमदितये स्याम भवेम ॥

भावार्थ—य ईश्वराज्ञा यथावत्पालयन्ति ते पवित्रा सन्त सर्वेभ्यो दु खबन्धनेभ्य पृथग्भूत्वा नित्य सुख प्राप्नुवन्ति नेतर इति ॥

भाषार्थः—हे (वरुण) स्वीकार करने योग्य ईश्वर आप (अस्मत्) हम लोगो से (अधमम्) निकृष्ट (मध्यमम्) मध्यम अर्थात् निकृष्ट से कुछ विशेष (उत्) और (उत्तमम्) अति दृढ अत्यन्त दु ख देने वाले (पाशम्) बन्धन को (व्यवश्रथाय) अच्छे प्रकार नष्ट कीजिये (अथ) इस के अनन्तर, हे (आदित्य) विनाश रहित जगदीश्वर (तव) उपदेश करने वाले सब के गुरु आप के (व्रते) सत्याचरणरूपी व्रत को करके (अनागस) निरपराधी हो के हम लोग (अदितये) अखण्ड अर्थात् विनाश रहित सुख के लिये (स्याम) नियत होवे ॥

भावार्थ—जो ईश्वर की आज्ञा को यथावत् नित्य पालन करते हैं वे ही पवित्र और सब दु ख बन्धनो से अलग होकर सुखो को निरन्तर प्राप्त होते हैं।

—(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

प्रो० रामसिह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का वक्तव्य

नई दिल्ली १२ जुलाई— जालन्धर के एक समाचार पत्र में छपे कुछ लेखों तथा समाचार-पर टिप्पणी करते हुए आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान प्रो० रामसिह ने कहा है कि इन लेखों तथा समाचारों में यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि आर्य-समाजें, विशेष रूप से आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब पर जनसघ ने कब्जा कर लिया है। आर्य-

सीनियर सब जज जालन्धर का आदेश

दीवान रामसरण दास तथा श्री वीरेन्द्र आदि को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब, के अधिकारी घोषित करने तथा सभा के कार्यो व सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने पर रोक—

जालन्धर दिनाक १४–७–१९६९। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान प्रो० रामसिह जी तथा मत्री श्री रघुवीरसिह जी शास्त्री, ससद्-सदस्य की प्रार्थना पर श्री निरजनसिह जी भल्ला, सीनियर सब जज जालन्धर ने दीवान रामसरण दास, श्री वीरेन्द्र तथा श्री मुरारीलाल जी को निषेधआज्ञा द्वारा अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा के कार्य व सम्पत्ति मे दखल देने से रोक दिया है।

सभा प्रधान तथा सभा मत्री जी ने अपने प्रार्थना पत्र मे निवेदन किया है कि महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती जी को आर्यजगत् के सब सघटनो ने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के झगडे समाप्त करने का पूर्ण अधिकार दिया था। उक्त अधिकार के आधार पर पूज्य स्वामी जी ने प्रो० रामसिह जी को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रबन्ध, नियत्रण तथा सचालन आदि का पूर्ण अधिकार दे दिया। परन्तु अधिकार न होते हुए भी दीवान रामसरण दास तथा वीरेन्द्र आदि सभा के कार्यों मे हस्तक्षप करने का प्रयत्न कर रहे हैं। अत उन्हे रोका जाये। इसी कारण उपरोक्त निषेध-आज्ञा का आदेश हुआ है।

(प्रथम कालम का शेष)

समाज एक धार्मिक एव सास्कृतिक सघटन है। प्रत्येक व्यक्ति नियमानुसार उसका सदस्य बनने का अधिकारी है। इसी कारण काग्रेस जनसघ, हिन्दू महासभा तथा भारतीय क्राति-दल राजनीतिक पार्टियो के प्रतिष्ठित व्यक्ति भी इस सघठन के सदस्य हैं। अत ऐसी सस्था को किसी राजनीतिक दल के साथ जोडना सभा के साथ अन्याय करना है।

महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को आर्यजगत् के सब सघटनो द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के झगडे समाप्त करते का पूर्ण अधिकार मिला था। उन्होनें अपने तार दिनाक २०–६–६९ तथा पत्र दिनाक २६–६–६९ द्वारा मुझे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के सचालन का अधिकार सौंपा है। उक्त अधिकार का आदर करते हुए श्री देवदत्त जी तात्कालिक कार्यालयाध्यक्ष ने हमारा स्वागत किया तथा पूर्ण चार्ज सभाल दिया। उसी अधिकार के आधार पर हमने १–७–६९ से मुख्य कार्यालय गुरुदत्त-भवन जालन्धर में कार्य आरम्भ कर दिया। इसमें जनसघ तथा अकालियों आदि का कोई सम्बन्ध नहीं। इसलिए उनको इस झगडे में लपेटना उनके साथ अन्याय करना है।

यज्ञ के लिये व्रती बनने की आवश्यकता

[ले० श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी, वेद सदन, महारानी पथ, इन्दौर-२]

व्रतों से शुद्धता एवं पवित्रता—

यज्ञ करने-कराने के अधिकारियों को या इच्छुकों को यज्ञानुसार व्रतादि धारण कर के अपने को यज्ञ का व्रती बनाना चाहिये। यजमान यजमान. पत्नी, यजमान के परिवारिक जन, समस्त ऋत्विज गण तथा जो यज्ञ में भाग लेना चाहते हैं, उन सब को यज्ञ के पूर्व दिनों से ही व्रतादि का धारण और पालन करना चाहिये। व्रतों से ही शारीरिक आन्तरिक तथा मानसिक शुद्धता और पवित्रता होती है। वेद ने कहा है :—

"शुद्धाः पूता भवत यज्ञियाः" (अथर्व १२।२।२०)

अर्थात् शुद्ध-पवित्र हो कर यज्ञ के योग्य बनो। इस प्रकार यज्ञ के लिये बाह्य और आन्तरिक दोनों प्रकार की शुद्धता और पवित्रता की आवश्यकता होती है। बाह्य अर्थात् शारीरिक शुद्धि आवश्यक है ही। परन्तु उसके साथ आन्तरिक पवित्रता भी परमावश्यक है। आन्तरिक पवित्रता के बिना केवल बाह्य शुद्धि का कोई महत्व नहीं है। इसीलिये कहा है :—

"अन्तःस्नानविहीनस्य बहिस्नानेन किं फलम्।"

अर्थात् जिसकी आन्तरिक शुद्धि नहीं हुई है, जिसके अन्दर के मलों का नाश नहीं हुआ है उसकी बाह्य शुद्धता से यज्ञादि अनुष्ठान या योगादि कार्यों में कुछ भी फल या लाभ नहीं। इसीलिये वेद ने—"शुद्धाः पूताः" ये दो शब्द कह कर शुद्ध और पवित्र होकर यज्ञ के अनुष्ठान करने योग्य बनने को कहा। शुद्धता का सम्बन्ध शरीर की बाह्य स्वच्छता से है और पवित्रता का सम्बन्ध शरीर के अन्दर के प्राण, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, एवं अहंकारादि की पवित्रता से है। इन दोनों प्रकार की शुद्धता और पवित्रता से यह शरीर यज्ञ सम्बन्धी बनता है।

यह शरीर भी यज्ञ है—

शतपथ ब्राह्मण में—"पुरुषो वाव यज्ञः"—पुरुष निश्चय से यज्ञ हो—कह कर जीवन को यज्ञमय बनाने का सकेत किया है क्यों कि वेद ने इस शरीर को यज्ञ के लिये बताया है, जैसा कि :—

"इयं ते यज्ञिया तनूः।" (यजुः अ० ४।१।३)

अर्थात् यह शरीर यज्ञ के निमित्त है—यज्ञ सम्बन्धी है। मनु ने भी—"स्वाध्यायेन व्रतै र्होमैः" श्लोक द्वारा अपने शरीर को ब्रह्म सम्बन्धी बनाने के लिये इस शरीर द्वारा व्रतानुष्ठान एवं यज्ञादि के लिये आदेश दिया है।

व्रत का आदेश—

इस शरीर को यज्ञ योग्य बनाने का उपाय वेद ने निम्न शब्दों में कहा है:

"व्रतं कृणुत व्रतं कृणुत" (यजुः अ० ४।११)

अर्थात्—व्रत करो-व्रत करो। क्योंकि ब्रह्माण्ड में प्रकृति से ब्रह्म पर्यन्त सभी देव अपने-अपने व्रत पर स्थिर हैं। अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्रमा आदि सभी अपने-अपने व्रतों पर आरूढ़ होने से व्रतपति बने हुए हैं और व्रतपति होने से ही—अपने व्रत पर दृढ एवं अटल होने से ही वे देव संज्ञक हैं।

व्रतों से देवत्व की प्राप्ति—

यदि मनुष्य भी व्रतों पर आरूढ हो जावे तो यह भी देवत्व को प्राप्त कर सकता है, जैसा कि कहा है :—

देवान्वा एष उपावर्त्तते यो व्रतमुपैति" (शतपथ)

अर्थात् जो व्रत धारण करता है वह देवों को सब ओर से प्राप्त करता है। क्यों कि व्रतादि कर्मों से ही मन, इन्द्रियादि की पवित्रता एवं शरीर की शुद्धता होती है। शुद्धता एवं पवित्रता में ही देव भावों का वास होता है और अपवित्र भावों में ही असुरों का निवास होता है। आसुरी भावों की निवृत्ति से ही हमारी दैवी पवित्रता सम्पादित होती है। अतः यज्ञ कार्य के लिए व्रतादि द्वारा अपनी शारीरिक एवं मानसिक शुद्धता-पवित्रता सम्पादन करनी चाहिए—जैसा कि वेद के निम्न शब्दों में आदेश है :—

"दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं देवयज्यायै

यद्वोऽशुद्धाः पराजघ्नुरिदं वस्तच्छुन्धामि।" (यजु० १।१३)

अर्थात् दिव्य कर्मों के लिये तथा यज्ञादि कर्मों के लिये यज्ञ द्वारा शुद्ध होओ जिससे तुम में जो अशुद्ध तत्त्व हैं वे दूर या नष्ट हो जावें। इससे तुम को यज्ञ द्वारा शुद्ध करता हूँ।

व्रत के लिये तप की उपयोगिता—

यज्ञ के लिए व्रतानुष्ठान कर्त्ता—व्रती पुरुष को व्रत में मानसिक एवं शारीरिक तप ही करने से शुद्धता एवं पवित्रता प्राप्त होती है। जो शुद्धता एवं पवित्रता है वही ऋत है—वही सत्य है। जो अशुद्धि है वही अनृत है—असत्य है। तप की अग्नि से ही ऋत और सत्य का उद्भव या उपलब्धि होती है। इस ध्रुव सत्य को वेद निम्न शब्दों में प्रकट कर रहा है—

"ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।"

(ऋग्वेद १०।१९०।१)

इसी रहस्य का—"ओ३म् तपः। ओ३म् सत्यम्"—में भी दर्शन हो रहा है। अर्थात् तप से ही सत्य का उद्भव होता है। वह सत्य दो प्रकार का है। एक जो प्रकृति से सम्बन्धित है। दूसरा जो इससे भिन्न ज्ञान परमात्मा से सम्बन्धित है, वह सत्य विद्या है। इसी को परा विद्या कहते हैं। ऋत और सत्य, अपरा और परा, असंभूति और संभूति, अविद्या एवं विद्या संज्ञक हैं। अर्थात् प्रकृति और पुरुष दोनों का सत्य ज्ञान तप पूर्वक यज्ञानुष्ठान से देवत्व सम्पादन द्वारा होता है। अतः यज्ञ के व्रती व्यक्तियों को विविध प्रकार के व्रतों द्वारा—"व्रतं चरिष्यामि"—का संकल्प लेना ही पड़ता है।

शेष पृ० ४ पर

[ऋग्वेद, १०।१५१ के श्रद्धा सूक्त आधार पर]

श्रद्धा—माता

(रचयिता—श्री प० जगत्कुमार शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली)

श्रद्धा से जलता है अग्नि, श्रद्धा से होता हविर्दान।
भौतिक-धन से बड़ी है श्रद्धा, बतलाते हैं चतुर-सुजान॥
जीवन में श्रद्धा को धारो, श्रद्धा से मिलते भगवान्।
श्रद्धा-माता मुद-मंगलदा, सब का करती है कल्याण॥१॥
श्रद्धे! तुझे जो धारण करके, रखकर देश-काल का ध्यान।
श्रद्धामय संकल्पोंवाले, सत्यशील, दाता-यजमान॥
भोजों और यज्ञों में देते, पात्रजनों को इच्छित-दान।
सफल काज सब होवें उनके, उनका सब विधि हो कल्याण॥२॥
जीवन के सब विषम-प्रसंगों में श्रद्धा से जो नर-नार।
निज वीरों के सबल करो में, रख देते निज जीवन-भार॥
सब यज्ञों में, सब भोजों में, सब युद्धों मे हे कर्त्तार!
ऐसे सब श्रद्धावालों का, बेड़ा तो भव-सागर पार॥३॥
श्रद्धामय संकल्पोंवाले, शुभकर्मी तर जाते हैं।
श्रद्धामय संकल्पोंवाले, योगी सिद्धि पाते हैं॥
श्रद्धा है जीवन की ज्योति, श्रद्धा है जीवन का सार।
श्रद्धा से धन-वैभव मिलता, होता शुभ सन्तति-विस्तार॥४॥
सब गाओ श्रद्धा की महिमा, आया है जीवन-प्रभात।
सब गाओ श्रद्धा की महिमा, सुखमय मध्य दिवस में तात॥
सब गाओ श्रद्धा की महिमा, सुखमय रजनी आई है।
श्रद्धा है जिनके जीवन में, उनकी जोत सवाई है॥५॥
सांझ-सुबेरे, मध्य-काल में, हम गाते श्रद्धा के गान।
शुभे सुवरदे मातः श्रद्धे! सब का सबविधि हो कल्याण॥
गुरुजनों की कृपा-दृष्टि हो, सुख की वृष्टि करें भगवान्।
शुभे सुवरदे मातः श्रद्धे! सब का सबविधि हो कल्याण॥६॥

सम्पादकीय—

आर्यजगत् से निवेदन

यद्यपि आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब मे उसके प्रथम वार्षिक अधिवेशन से ही पारस्परिक सघर्ष चलता रहा है, परन्तु सन् १९५६ से पूर्व तक वह सघर्ष वार्षिक अधिवेशन की कार्यवाही चलने तक ही रहता था, बीच मे नही। परन्तु १९५६ के निर्वाचन मे जिन विशिष्ट सज्जनो को अधिकार प्राप्त न हो सके, तब से वार्षिक अधिवेशनो और बीच-बीच मे भी यह सघर्ष समाचार पत्रो मे प्रकाशित किया जाने लगा। इससे न केवल आर्य-जगत्, अपितु आर्यसमाज से बाहर की जनता को भी यह बताया जाने लगा कि सभा की दशा चिन्ताजनक है। बीच-बीच मे सघर्ष को दूर करने करवाने मे आर्यसमाज के प्रतिष्ठित नेता, सन्यासी और हितैषी यत्न करते रहे। कुछ वर्ष पूर्व वे ही विशिष्ट सज्जन अधिकार की लालसा पूरी न हो सकने पर अदालत मे गये, परन्तु ३ पूज्य सन्यासी महात्माओ के बीच में पड़ने पर उस समय के पजाब आर्यसमाज के लोह पुरुष मान्य श्री महाशय कृष्ण जी के परामर्श पर उभय पक्ष ने पूज्य श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त को निर्णय के सर्व अधिकार दे दिये। श्री गुप्त जी का निर्णय उसी विशिष्ट पक्ष वालो के विरुद्ध हुआ। इस पर भी उन्होने उस निर्णय को स्वीकार नही किया और अपना प्रोपगैण्डा यथा पूर्व समाचार पत्रो मे चालू रखा। ऐसी अवस्था मे आर्यजगत् की फिर माग होने लगी कि उक्त सभा के झगडो को निपटाया जावे। कुछ दिन पीछे एक साधारण यत्न हुआ, परन्तु वह विफल हो गया।

सार्वदेशिक हैदराबाद आर्य महा सम्मेलन मे सब से पूर्व सर्वसम्मत प्रस्ताव होने पर पूज्य महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती को किसी भी प्रतिबन्ध के बिना उक्त सघर्ष को निपटाने के लिये पूर्ण अधिकार दे दिये गये। इसी प्रस्ताव को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने स्वीकृत किया। चूकि सार्व-देशिक आर्य महा सम्मेलन समस्त आर्यजगत् द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो का वधानिक सम्मेलन था, अत वह धार्मिक होते हुए भी सरकारी कानून की दृष्टि मे भी वधानिक था। खेद है कि पूज्य श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी का यत्न अब भी सफल न हो सका। इसीलिये आर्यजगत् ने सर्वसम्मत रूप मे जो गुरुतम भार उन्हे सौंपा था, उसी के अनुसार अपने यत्न का विवरण आर्यजगत् के नाम वक्तव्य रूप मे उन्होने प्रस्तुत कर दिया है। अब आर्य-जगत् का कर्तव्य है कि उसी के द्वारा स्वीकृत सर्वसम्मत प्रस्ताव के अनुसार पूज्य स्वामी जी के वक्तव्य से निश्चय करे कि दोषी कौन सा पक्ष है? यदि पग उठाकर आगे का कार्य नही किया गया तो आर्यजगत् के निर्णय को कोई साधारण व्यक्ति भी क्यो मानेगा? अत अपने निश्चित निर्णय को न मानने वालो की शाब्दिक भर्त्सना पर ही इति-श्री (समाप्ति) न समझ ले, अपितु इस के कार्यान्वित कराने के लिये पूरी व्यवस्था करे। यह पग केवल धार्मिक ही नही है, अपितु कानून द्वारा स्वीकृत् आर्यजगत् के आर्य-प्रतिनिधियो का सर्वसम्मत निश्चय है। कोई भी एक व्यक्ति समस्त आर्य-जगत् के निश्चय का विरोध किसी भी बहाने से करे, तो उस को व्यवस्थित रूप मे अवश्य विवश किया जावे, जिससे भविष्य मे इस प्रकार के स्वार्थ-परक सघर्ष आर्यसमाज मे उत्पन्न होने से रुक जावें हमने बड़े नम्र शब्दो मे आर्यजगत् के समस्त प्रतिनिधि महानुभावो से ठीक अवसर पर निवेदन कर दिया है।

ऋषि दयानन्द के वैदिक मन्तव्यो का प्रचारक और प्रसारक स्वय ऋषि द्वारा स्थापित किया हुआ आर्यसमाज है। यह तो जीवित रहेगा और शान से बढता रहेगा, परन्तु इस समूह मे दोष पैदा करने वाले तुच्छ मनोवृत्ति के सघर्ष प्रिय स्वार्थी नामधारी आर्यों को उचित शिक्षा अवश्य मिलेगी। साध्य को सिद्ध करने वाले साधनो मे यथा आवश्यकता परिवर्तन हो सकता है, परन्तु सिद्ध पदार्थ अवश्य बना रहेगा।

[विशेष—इस सम्पादकीय लेख को पढने से पूर्व ही इसी अक मे प्रकाशित पृ० १ तथा २ पर श्री महात्मा स्वामी आनन्द सरस्वती जी के आर्यजगत् के नाम "वक्तव्य' को पढना अनिवार्य है, जिसमे उनके अन्तिम वाक्य को पढकर कर्तव्य का निश्चय करना चाहिये।]

ग्राहक तथा पाठकों से

आयमर्यादा के ग्राहक तथा पाठका से हम निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी के वक्तव्य को अधिक से अधिक आर्य बन्धुओ को पढावे और सुनावें। इस से आर्यसमाज के क्षेत्र मे फैली हुई अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ दूर होकर आर्यसमाज का गौरव बढकर वैदिक धर्म के प्रचार मे सहयोग मिलेगा। इससे मिथ्या प्रचार का बढना रुकेगा और स्वार्थी सघर्ष करने वाले लोगो का उत्साह गिरेगा, जिस से भविष्य मे इस प्रकार क सघर्ष से आर्यसमाज स्वच्छ होकर सर्वत्र एक रस शान्त वातावरण मे बना रहेगा।

श्री डाक्टर स्वामी महन्त जी

जि० मेरठ, मुजफ्फरनगर और सहारनपुर के ग्रामीण क्षेत्रो मे वैदिक धर्म के प्रचार और आर्यसमाजो की स्थापना म सदा लगे रहने वाले आदरणीय डाक्टर स्वामी महन्त जी एक आदर्श आर्य विद्वान् है। आयुर्वेद मे दक्ष, सरल जीवन और सात्विक वृत्ति के कर्मठ कार्य-कर्त्ता हैं। आर्यसमाज के उत्सवो मे पण्डाल खडा करना, यज्ञ वेदी तैयार करना, दरी और फर्श बिछाना और उपदेशको की श्रद्धापूर्वक भोजन व्यवस्था करना मानो इन की इजारेदारी है। छोटे से छोटा ऐसा कोई कार्य नही, जिसको स्वय नही करते, हवन कुण्ड की लिपाई के लिये गोबर लाकर उत्तम मिट्टी मे मिलाकर कार्य करना अपना गौरव समझते हैं। अभिमान छू तक नही गया। उत्सव का कार्यक्रम स्वय बनाते हैं। सन् १९३९ के हैदराबाद आर्य सत्याग्रह मे हम जेल मे साथ रहे। हमे तो विस्मृति हो गई थी, परन्तु मान्य डाक्टर साहिब को जेल की कथा ऐसी उपस्थित है। मानो आज हुई है।

प्रत्येक वर्ष गावो मे अनेक आर्यसमाजो की स्थापना उनका व्रत है। इन के वेश भूषा और कार्य करने की लग्न को देखकर इन के उच्च आत्मा को कोई जान नही सकता। एक सौ आर्य समाजो के निर्माण की साध लिये गरमी, सरदी और चौमासे की चिन्ता किये बिना लोगो को आर्य-समाज मे सम्मिलित होने के प्ररणा करते रहते है। इस समस्त क्षत्र मे आपका नाम व्यापक है। मुख्य स्थान मवाना (जि० मेरठ) मे रखा हुआ है। आपके आदेश के सामने नतमस्तक होने मे हम तो अपना ही सौभाग्य समझते हैं। भगवान् दया करे हमारे आर्यसमाज मे इसी प्रकार के नि स्पृह पवित्र आत्मा वैदिक धर्म के प्रचार मे योगदान करते रहे

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

कविवर बन्धुओं से

हमारा सौभाग्य है कि आर्यमर्यादा क लिये उदीयमान अनेक कवि महानुभावो का सहयोग प्राप्त है। हमारा यत्न यही रहता है कि क्रमा-नुसार प्राप्त कविताओ का प्रकाशन करते रहे। अत कुछ देरी प्रकाशन मे हो जाना असम्भव नही। छन्द शास्त्र मे निष्णात कवियों का जहाँ हमे प्रेम प्राप्त है वहा नवयुवको की बढती ज्योति का भी हम सहर्ष आर्य जनता के सामने प्रस्[illegible]ते रहते हैं, जिससे उन को प्रोत्साहन मिले और भविष्य मे वे भा[illegible]वि हो सकेंगे, ऐसी आशा है। अत काव्य मर्मज्ञो के सामने उन[illegible]ी कृति तुला पर पूरी न भी उतर सके, फिर भी उनको आर्यमर्यादा क प्रभ[illegible] और कृपालु श्रेष्ठ कवियो की उत्तम कृतियो से मार्ग मिलता रहता है। हम सभी क आभारी हैं।

आर्यमर्यादा क स्वाध्यायी शील ग्राहक तथा प्रेमी पाठक स्वय जानते हैं कि वैदिक धम क भिन्न-भिन्न मन्तव्यो और भिन्न विषयो के सम्बन्ध मे उच्च कोटि क विद्वान् लेखको क लेख प्रकाशित होते हैं। इसी कारण इतने अल्प समय मे 'आर्यमर्यादा' का स्थान आयजगत् मे उच्च बन चुका है। इस का श्रेय पूज्य लेखक महानुभावो को ही है। इनके प्रति हम आदर से नमन करने मे अपना अहोभाग्य समझते हैं।

लेखक तथा कवियों को सूचना

जो लेख वा कविता किसी अन्य पत्र मे आ चुकी हैं उन को आर्यमर्यादा मे प्रकाशित नही किया जायेगा। इस से पत्र का स्तर गिरता है।

—व्यवस्थापक

सभा कार्यालय गुरुदत्त भवन जालंधर पर प्रो० राम सिह जी सभा प्रधान का पूर्ण अधिकार

सब उपदेशक तथा कर्मचारी प्रो० रामसिंह जी के साथ कार्यालय में कार्य आरम्भ



श्री लालचन्द जी सब्भरवाल एडवोकेट
सभा उपप्रधान, जालन्धर नगर



श्री रामलाल गुप्त
सभा मुख्य कार्यालय अधिष्ठाता
जालधर नगर

(अपने विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

जालधर ७–७–६९ सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद, सार्वदेशिक सभा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि—सभा पजाब तथा श्री वीरेन्द्र आदि की ओर से आर्य प्रतिनिधि—सभा पजाब के झगड़े समाप्त कराने के पूर्ण अधिकार मिलने पर महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने पजाब सभा का ३१.३ ६९ को सघटन भग करके सभा का सब प्रबन्ध व नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया, ३ मास प्रयत्न करने के उपरान्त जब उन्होंने देखा कि श्रीवीरेन्द्र और उनके साथी किसी प्रकार से भी उन्हे सहयोग देने को तैयार नही तब उन्होंने कश्मीर से प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान को अपने तार दि० २०.६ ६९ व पत्र दि० २५.६.६९ द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा उसके अधीनस्थ स्कूलों, कालिजों, गुरुकुलो आदि के प्रबन्ध तथा नियंत्रण का यथापूर्व पूर्ण अधिकार सौंप दिया। उक्त अधिकार के आधार पर प्रो० रामसिंह जी ने जालंधर कार्यालय के प्रबन्ध तथा नियंत्रण के लिए श्री रामलाल जी गुप्त म्युनिसिपल कमिशनर—अन्तरग सदस्य आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब को कार्यालय का अधिष्ठाता नियुक्त कर दिया। उसी अधिकार के आधार पर वह ला० लालचन्द जी सब्भरवाल एडवोकेट—सभा उपप्रधान के साथ १ ७.६९ को सभा कार्यालय गुरुदत भवन में गये। कर्मचारियों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। उसी दिन से सब उपदेशक तथा अन्य कर्मचारी श्री रामलाल जी गुप्त की देख रेख में गुरुदत्त भवन कार्यालय जालंधर में विधिवत् कार्य कर रहे हैं।

२. श्री रघुवीर सिह जी शास्त्री ससत्सदस्य, सभा मंत्री भी शनिवार दि० ५ ७.६९ को दिल्ली से जालंधर कार्यालय में पधारे उनके स्वागत के लिए जालंधर तथा अन्य बड़े नगरों से बड़ी सख्या में अतिरिक्त आर्य भाई आये हुए थे। गुरुदत्त भवन में हवन आदि के पश्चात् श्री सभा मंत्री जी ने सभा की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डाला तथा सभा को पूर्ण सहयोग देने पर सब आर्य भाईयों का हार्दिक धन्यवाद दिया।

३. सायकाल ४ बजे एक प्रेस कांफ्रेंस का आयोजन किया गया, जिसमें लगभग एक दर्जन पत्रकार उपस्थित थे। उन्होंने सभा की गतिविधियों के सम्बन्ध में बड़े महत्वपूर्ण प्रश्न किये तथा श्री शास्त्री जी ने सन्तोषजनक उत्तरों द्वारा सभा के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से प्रकाश डाला। उन्होंने पंजाब की भाषा नीति पर भी सभा की दृष्टि से अपने विचार व्यक्त किये। ●

श्री वीरेन्द्र तथा दीवान रामसरन दास ने एक महान् संयासी को धोखा दिया है

पंजाब सभा का संघटन यथापूर्व रहेगा

श्री रघुवीरसिह शास्त्री सभा मंत्री ने शनिवार दि० ५-७-६९ को भिन्न-भिन्न नगरों से जालधर कार्यालय में पधारे प्रतिष्ठित आर्यबन्धुओं द्वारा स्वागत के उत्तर में कहा कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का संघटन एव कार्य दश भर में शानदार माना जाता है, परन्तु हमें खेद है कि कुछ लोग इसे छिन्न-भिन्न करना चाहते हैं। लगभग १३ मास तक सभा के मुख्य कार्यालय पर पोलिस के ताले लगे रहे, यह कम लज्जा की बात नही।

आज १३ मास बाद कार्यालय खुलने पर मैं सभी उपस्थित आर्य बन्धुओं का स्वागत करता हूं। कार्यालय के खुलवाने में श्री लालचन्द जी सब्भरवाल एडवोकेट उपप्रधान सभा, श्री रामलालजी गुप्त श्री योगेन्द्रपाल जी सेठ श्री बाहरी जी तथा आर्यसमाज जालन्धर के अन्य महानुभावों ने जो विशिष्ट सहयोग दिया है, उसके लिये न केवल सभा अपितु समस्त आर्यजगत् कृतज्ञ है। यह शुभ कार्य करके इन्होंने सभा के साथ-साथ सारे आर्यजगत् के सम्मान एवं गौरव की रक्षा की है। क्योकि ८ नवम्बर सन् ६८ को सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन में उपस्थित लाखों आर्यो ने पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी को इस सभा के विवाद को निबटाने को पूर्ण अधिकार दिया था। उसी के अनुसार महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा दिया गया निर्णय वैधानिक एव धार्मिक दोनों दृष्टियों से सारे आर्य जगत् का निर्णय है, जिसे सभी आर्यबन्धुओं को श्रद्धापूर्वक शिरोधार्य करना चाहिये।

श्री वीरेन्द्र तथा दीवान रामशरणदास पक्ष के लोग यदि यह कह कर खुशियाँ मनाते हों या कि उन्होंने बड़ी चालाकी से इस महान् सन्यासी को धोखा दिया है तो इसका अर्थ यही है कि वे सारे आर्यजगत् को धोखा देकर यह गर्वोक्ति कर रहे हैं। इतने ऊंचे स्तर पर हुए निर्णय की इस प्रकार अवहेलना करने वाले व्यक्तियों का संघटन में कोई स्थान न होना चाहिये।

आज के वातावरण से यह स्पष्ट है कि पंजाब के आर्यबन्धु इस प्रकार छल-कपट का व्यवहार करने वाले लोगों द्वारा अब भ्रम में नहीं डाले जा सकते।

श्री सब्भरवाल जी तथा आर्यसमाज जालन्धर के अधिकारियों ने पीछे भी अनेक संकटमय क्षणों में सभा के अस्तित्व एवं सम्मान की रक्षा में अमूल्य सहयोग दिया है अतः मैं उनका पुनः सभा की ओर से हार्दिक आभार प्रकट करता हूं।

कुछ लोग अपने कुत्सित स्वार्थों की पूर्ति के लिये सभा के संघटन को चार-पाच टुकड़ों में बांटना चाहते हैं, परन्तु उनका यह दूषित मनोरथ कदापि पूरा न हो पायगा। यह लोग वही हैं जो पजाब के बटवारे का तो विरोध करते थे, परन्तु अब सभा को उसी आधार पर बांटना चाहते थे। सरकार से तो यह मांग करते थे कि यदि पजाब को बाटना ही है तो गवर्नर, हाईकोर्ट आदि इकट्ठे रह जायें ताकि कुछ सामान्य सूत्र एकता के प्रतीक के रूप में बचे रह सकें, परन्तु वही लोग अब सभा रूपी धार्मिक सूत्र को तोड़ना चाहते हैं। मेरा निश्चित मत है कि सभा का संघटन ज्यों का त्यों बने रहने में ही पंजाब के आर्यों एवं हिन्दुओं का हित है। पंजाब तथा हरयाणा के आर्यों में परस्पर घृणा एवं कटुता पैदा करने से आर्य समाज दुर्बल ही होगा। घृणा एवं कटुता के व्यवसायी अपने व्यवसाय की दृष्टि से ऐसा करते ही रहेंगे, परन्तु आर्यबन्धुओं को इस षड्यन्त्र का रहस्य समझना चाहिये। ●

गताङ्क से आगे

ओङ्कार-जप-विधिः

मानव—धर्म—शास्त्र के आदेश—१

(६)

(प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—महर्षि मनु ने ओङ्कार-जप और गायत्री-जप का विधान साथ ही साथ किया है। विशेष उपयोगी समझकर उस प्रकरण को यहा उद्धृत किया जारहा है। ध्यान रहे कि ओकार-जप और गायत्री-जप मे स्वरूप भेद तो है, तात्त्विक-भेद नही। वैदिक-सन्ध्या मे विनियुक्त प्रसिद्ध गायत्री वा सावित्री-मत्र तो 'ओम्' की ही एक सुन्दर व्याख्या और भावपूर्ण गीतिका है।

२—मनुस्मृति के दूसरे अध्याय मे श्लोक सख्या—७४ से महर्षि मनु द्वारा निर्दिष्ट जप-विधान आरम्भ होता है—

ब्रह्मणः प्रणवं कुर्यादादावन्ते च सर्वदा ।
स्रवत्यनोंकृतं पूर्वं, परस्ताच्च विशीर्यति ॥

अर्थ—वेद का, वेद-मन्त्रो का पठन-पाठन करते समय [प्रत्येक वेद-मन्त्र के] आरम्भ मे और अन्त मे सदा ही "ओम्" पद का उच्चारण करना चाहिये। यदि आरम्भ मे "ओम्" पद न बोला जाये, तो पढा हुआ वेद-विषय क्षीण हो जाता है। अन्त मे "ओम्" पद, के न बोलने से वह क्षीण हो जाता है।

[यहाँ विशीर्यति' पाठ का पाठ भेद विशीर्यते' भी मिलता है—]

३—महर्षि दयानन्द द्वारा सन्ध्या-पद्धति मे निर्दिष्ट जप-विधान और उस का प्रकार मनु-सम्मत ही है।

प्राक् कूलान् पर्युपासीनः, पवित्रैश्चैव पावितः ।
प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत ओङ्कारमर्हति ॥

अर्थ—सामने अग्रभाग युक्त नूतन कुशाओ के आसन पर बैठकर, मार्जन-मन्त्रो से शारीरिक पवित्रता का, और कम से कम तीन प्राणायामो के द्वारा आभ्यान्तर पवित्रता का भी सम्पादन करके, इसके बाद ही "ओम्" नाम का जप आरम्भ करना उचित है।

४—यह ओङ्कार सम्पूर्ण वेदज्ञान का प्रतिपादक है—

अकारं चाप्युकारं च, मकारं च प्रजापति ।
वेदत्रयान्निरदुहद्, भूर्भुवः स्वरिति च ॥

अर्थ—प्रजापालक परमात्मा ने "ओम्" पद को तीन मात्राओ को—अकार, उकार और मकार को तथा भू, भुव और स्व इन तीन महा व्याहृतियो को ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का दोहन मन्थन करके निकाला है। जैसे कि दूध मे से मक्खन निकाला गया है।

५—इसका अभिप्राय यह है कि—

(१) जो अकार है, वही भू है वही सत् है, वही ऋग्वेद है। वही ज्ञान-काण्ड है।

(२) जो उकार है, वही भुव है। वही चित् है। वही यजुर्वेद है, वही कर्म-काण्ड है।

(३) जो मकार है, वही स्व है, वही आनन्द है, वही सामवेद है वही उपासना-काण्ड है।

इस विषय का अधिक विस्तार भी होता है।

६—महर्षि गायत्री-मन्त्र विषयक स्पष्टिकरण करते है—

त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः, पादं पादमदूदुहत ।
तदित्यृचोऽस्याः सावित्र्याः परमेष्ठी प्रजापति ॥

अर्थ—उस सर्वोपरि परमात्मा ने ही तीन वेदो=काण्ड-त्रयी मे से एक-एक पाद को लेकर "तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादि" शब्दो वाली इस सावित्री अर्थात् गायत्री-मन्त्र का भी समाहार किया है।

७—जप का फल दर्शाते है—

एतदक्षरमेतां च जपन्-व्याहृतिपूर्विकाम् ।
सन्ध्योर्वेदविद्विप्रो, वेदपुण्येन युज्यते ॥

अर्थ—वेद को जानने वाला, सदाचारी और श्रद्धावान् जो कोई मनुष्य इस विनाश तथा विकार रहित (अव्यय) एक 'ओम्' अक्षर विधिपूर्वक जपता है। अथवा "ओम्" पद और तीन महाव्यातृतियो—भू भुव और स्व को आरम्भ मे साथ मिलाकर, गायत्री मन्त्र को जपता है उसे वेद-पाठ का ही पुण्य प्राप्त होता है।

८—विशेष जप का विशेष लाभ है—

सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य, बहिरेतत् त्रिकं द्विजः ।
महतोऽप्येनसो मासात् त्वचेवाहिर्विमुच्यते ॥

अर्थ—जो कोई द्विज बाहिर=एकान्त और शुद्ध स्थान मे जाकर ती महाव्याहृतियो सहित इस गायत्री-मन्त्र को विधि-विधान पूर्वक, दो समय एक मास तक प्रतिवार एक-एक हजार के हिसाब से जपता है, व बडे-बडे कष्टो, पापो, चिन्ताओ, और रोगो से इस प्रकार छूट जाता जैसे कि कोई साप केचुली से छूट जाता है।

९—द्विजो के लिये चेतावनी—

एतयर्चा विसंयुक्तः, काले च क्रियया स्वया ।
ब्रह्मक्षत्रविद्योनिर्गर्हणां याति साधुषु ॥

अर्थ—यदि कोई द्विज=ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य इस गायत्री-म का नित्य प्रति नियमपूर्वक जप नही करता, और नियत समय पर नियम नुसार अपने स्नान, सन्ध्या, हवन आदि नित्य=नैमैत्तिक कर्म भी न करता, तब तो वह अवश्य ही सभ्य समाज मे निन्दा का पात्र बन जाता है

१०—सावीत्री की श्रेष्ठता—

ओङ्कारपूर्विकास्तिस्त्रो, महाव्याहृतयोऽव्ययाः ।
त्रिपदा चैव सावित्री, विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम् ॥

अर्थ—ओङ्कार को, ओङ्कारपूर्वक तीनो शुद्ध, पवित्र और विकार रहि महा व्याहृतियो—"ओ३म् भूर्भुव स्व" को, तथा "ओ३म् भूर्भुव स्व तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥" सावित्री अथवा गायत्री-मन्त्र को वेद का मुख समझना चाहिये। क्यो वेद-पाठ के आरम्भ मे इनका पाठ आवश्यक है और वेदज्ञान का सार त इन में बीजवत् सुरक्षित है।

११—अधिक जप का फल—

योऽधीतेऽहन्यहन्येतांस्त्रीणि वर्षाण्यतन्द्रितः ।
स ब्रह्मपरमभ्येति, वायुभूतः खमूर्तिमान् ॥

अर्थ—जो द्विज तीन वर्ष तक प्रतिदिन नियमपूर्वक ओङ्कार ओङ्कारपूर्वक तीन महाव्याहृतियो को, या ओङ्कार और तीन महाहृति सहित गायत्री-मन्त्र को [प्रात साय दोनो समय, कम से कम एक ह प्रतिवार के हिसाब से] जपता है, वह सबल प्राण, और कारण-शरीर धारण करके अवश्य ही उस परमपिता, विज्ञानस्वरूप, आनन्दमय परमा को प्राप्त कर लेता है।

१२—'ओङ्कार" एक ही अक्षर है, अथवा यह ओङ्कार एक न रहित अक्षर है—

एकाक्षरं परं ब्रह्म, प्राणायामाः परं तपः ।
सावित्र्यास्तु परं नास्ति, मौनात्-सत्यं विशिष्यते ॥

अर्थ—जो एकाक्षर "ओङ्कार" का वाच्यार्थ है, वही परम् ब्रह्म है सब से बडा तप प्राणायाम ही है। सावित्री-मन्त्र=गायत्री-मन्त्र से बढ और कोई मन्त्र नही। चुप रहने से तो सत्य कहना, तथा सत्य का प लेना ही उत्तम है।

शेष पृष्ठ ६ पर

[विच]ारणीय अत्युपयोगी सुझाव—

आर्य संस्थाओं के निर्वाचन के सम्बन्ध में मेरा एक आवश्यक सुझाव

(पूज्य श्री अमर स्वामी परिव्राजक, संन्यास आश्रम, गाजियाबाद)

आर्य सभाओं, प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक आर्य [प्र]तिनिधि सभा के निर्वाचन विषय में मेरा एक सुझाव यह है कि जो आर्य [स]ज्जन एम० एल० ए० या एम० पी० आदि हों वे उन संस्थाओं के पदा[धि]कारी न बनें।

मेरा ऐसे सज्जनों के साथ कोई द्वेष नहीं है अपितु इनमें से अधिकतर [स]ज्जन मुझ को बहुत ही प्रिय हैं सभी सज्जन मेरा सम्मान करते और मेरे [सा]थ सद्भावना रखते हैं पर मैं केवल आर्यसमाज के हित को सम्मुख [र]खकर यह सुझाव देता और प्रार्थना करता हूं।

यदि वे सज्जन स्वयं स्वेच्छया समाजों व सभाओं के पदों को त्याग [दें] तो गौरव बढ़ेगा ही घटेगा कदापि नहीं। जितना सम्मान उनका इन [पदों] पर रहते हुए होता है उससे अधिक पदों के त्यागने पर होगा। इसमें [कु]छ भी सन्देह नहीं है।

मेरा सुझाव उन महानुभावों के भी हित में है और आर्यसमाज के [अधि]काधिक हित में है।

प्रत्येक धार्मिक संस्था के कुछ मन्तव्य और कुछ अमन्तव्य होते हैं [उन]का प्रचार करते हुए धार्मिक संस्था को कुछ मंडन और कुछ खंडन [अव]श्य ही करना पड़ता है। और मन्तव्यों का मंडन और अमन्तव्यों का [खं]डन किये बिना कोई धार्मिक संस्था किसी प्रकार भी अपने स्वरूप में [स्थि]त नहीं रह सकती।

राजनैतिक क्षेत्र में उतरने वालों को सर्व मतावलम्बियों से वोट लेने [आ]वश्यक हैं। उनको अपने सिद्धान्त मानते हुए भी खडन मंडन से सर्वथा [पृथ]क् रहना ही पड़ेगा और रहना ही चाहिए भी। यदि वे ऐसा नहीं करेंगे [तो] उनको वोट नहीं मिलेंगे। कोई भी शास्त्रार्थ महारथी मुनाजिर और [मु]बाहिस एम० एल० ए० या एम० पी० नहीं बन सकता है।

इन पदों पर आने वालों को खंडन मंडन करने वाले उपदेशों के खंडन [मंड]न का उत्तरदायित्व भी अपने ऊपर नहीं लेना चाहिए।

इन पदों पर आने वालों के अधीन यदि कोई उपदेशक होंगे तो उनको [येन] केन प्रकारेण अपने उपदेशकों को खंडन मंडन से पृथक् रहने की प्रेरणा [अव]श्य ही करनी पड़ेगी, ऐसा करने से समाज को अवश्य हानि होगी और [हो] रही है यह प्रत्यक्ष है।

राजनीति में प्रगट रूप से जाने वाले आर्य समाजी ही नहीं रह सकते [ऐस]ा मेरा मत कदापि नहीं है। मैं उन लोगों को अन्य आर्यसमाजियों की [भां]ति ही आर्य समाजी मानता हूं। मेरे विचार में ऐसे लोगों को आर्य [सम]ाज से हटा भी कोई नहीं सकता बशर्ते वे स्वयं ही आर्यसमाज से न हट [जा]वें।

यह सभी जानते और मानते हैं कि राज्य वही अच्छा है जिसमें न्याय-[वि]भाग, प्रशासन-विभाग के अधीन न होकर पृथक् ही रहता है। यदि [प्रश]ासन के अधीन न्याय विभाग रहेगा तो कभी न्याय नहीं हो सकेगा। [प्रश]ासन का प्रभाव उस पर पड़ता ही रहेगा और निर्णय न्यायविभाग को [प्रश]ासन के पक्ष में ही सदा करना पड़ेगा। सरकार के अधीन न्यायविभाग [सर]कार के विरुद्ध निर्णय दे ही नहीं सकेगा। इसी प्रकार धर्मप्रचार-विभाग [रा]जनीतिक-विभाग से सदा पृथक् ही होना चाहिए।

ऋषि दयानन्द जी महाराज ने भी धर्मार्य-सभा और राजार्य-सभा की सभायें पृथक्-पृथक् मानी हैं, तीसरी विद्यार्य-सभा की भी।

धर्म-प्रचार विभाग राजनैतिक कार्य कर्ताओं के अधीन नहीं होना [चा]हिए और धर्म प्रचारकों के प्रचार के ढंग का उत्तरदायित्व राजनीतिक [का]र्यकर्ताओं के ऊपर नहीं पड़ना चाहिए।

मेरा निवेदन आर्यसमाज को आर्यसमाज के रूप में जीवित रखने के [लि]ये यह है कि जो राजनीतिक कार्यकर्ता अर्थात् एम० एल० ए० या [एम]० पी हैं उनको किसी भी आर्यसंस्था का पदाधिकारी नहीं बनना [चा]हिए-जो इस समय हैं उनको सभाओं के पदों को तुरन्त स्वयं त्याग देना [चा]हिए। साथ ही मेरा निवेदन यह है कि कोई सज्जन जब राजनीतिक [पदों] के प्रत्याशी बनें उससे पहले स्वयं सभाओं के पदों को छोड़ दें। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो उन पर यह आरोप लग सकता है कि उन्होंने धर्मसभा के पद से राजनीतिक लाभ उठाया। किन्हीं प्रत्याशियों को श्रीमती इन्दिरा जी आदि कांग्रेसी नेताओं से आशीर्वाद लेना पड़ता है, किन्हीं को श्री गोलवलकर जी से और, किन्हीं को करपात्रियों और सभा कथित जगत् गुरुओं के चरणों से आशीर्वाद प्राप्त करना आवश्यक है, उनको आर्यसमाज के प्रचार विभाग, आर्यसमाजों, प्रान्तीय सभाओं, और सार्वदेशिक सभा की बागडोर अपने हाथ में नहीं लेनी चाहिए। जिनको ऐसे आशीर्वाद नहीं लेने हैं उनको भी राजनीतिक नेता बनने के नाते इन संस्थाओं के पदों पर नहीं जाना और नहीं रहना चाहिए।

जो आर्य-समाज ऐसा प्रस्ताव पास करे वे अपने प्रान्त की सभा को इसकी एक प्रति भेजें, एक सार्वदेशिक सभा को, समाचार पत्रों को भी इसकी प्रतिलिपि प्रकाशनार्थ भेजें यदि अपने प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि मुझको भी भेजें तो आभार मानूंगा।

पृष्ठ ५ का शेष

१३—जप-यज्ञ ही सर्व श्रेष्ठ यज्ञ है—

विधियज्ञाज्जपयज्ञो, विशिष्टो दशभिर्गुणैः ।
उपांशुः स्याच्छतगुणः, साहस्रो मानसः स्मृतः ॥

अर्थ—ज्योतिष्टोम आदि विधियज्ञों से जप-यज्ञ दसगुणा अधिक श्रेष्ठ है। उपांशु-जप=धीरे-धीरे बोलकर जप करना सौगुणा अधिक श्रेष्ठ है। और मानसिक जप एक हजार गुणा अधिक श्रेष्ठ है।

[यहां मानसिक-जप की श्रेष्ठता ही दर्शाई गई है। इस श्लोक और इस विषय का उल्लेख पहिले भी हो चुका है।

श्री कुल्लूक भट्ट इस श्लोक के टीका–प्रसग में लिखते हैं :

विधिविषयो यज्ञो विधियज्ञो दर्शपौर्णमासादिस्तस्मात्प्रकृतानां प्रणवादीनां जपयज्ञो दशगुणाधिकः। सोऽप्युपांशुश्चेदनुष्ठितस्तदा शतगुणाधिकः। यत्र जिह्वौष्ठं मनागपि न चलति स मानसः।

जप के यहां तीन भेद टीकाकार ने स्मृति के अनुसार बताये :—

(क) प्राकृत प्रणवादि जप—ओ३म्, व्याहृति तथा सावित्री (गायत्री) ऋचा का उच्चारण रूप।

(ख)—उन्हीं पूर्वोक्त का मन्द स्वर से चुपचाप जप, जिसे पास बैठा हुआ मनुष्य भी न सुन सके।

(ग) मानस—उन्हीं ओ३म् आदि पूर्वोक्त का जिह्वा और ओष्ठ हिलाये बिना मन्त्रमात्र से। इसमें आत्मा और मन का संयोग ही होता है।

जप का मानस प्रकार ही सर्व श्रेष्ठ है।

१४—फिर जप-यज्ञ की श्रेष्ठता दर्शाते हैं—

ये पाकयज्ञाश्चत्वारो, विधियज्ञसमन्विताः ।
सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥

अर्थ—जो देव-यज्ञ (हवन) पितृ-यज्ञ (श्राद्ध एवं तर्पण) अतिथि-यज्ञ और बलिवैश्वदेव-यज्ञ ये चार पाक-यज्ञ हैं, तथा जो ज्योतिष्टोम आदि विधि-यज्ञ हैं, वे तो जप-यज्ञ=ब्रह्म-जप-यज्ञ की सोलहवी कला के बराबर भी नहीं हैं।

१५—स्मरण रहे कि जीवित माता पिता आदि गुरुजनों की सेवा सुश्रुषा को ही श्राद्ध और तर्पण कहते हैं। शास्त्रीय भाषा में एक वा अधिक वेद-मन्त्रों के पाठ को ब्रह्म-यज्ञ कहते हैं। सन्ध्या-कर्म को भी इसी दृष्टि से ब्रह्म यज्ञ कहा जाता है।

१६—फिर जप की श्रेष्ठता का कथन करते हैं—

जप्येनैव तु संसिद्धयेद्, ब्राह्मणो नात्र संशयः ।
कुर्यादन्यन्न वा कुर्यान्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते ॥

अर्थ—जो सच्चे वेदवादी और ईश्वर विश्वासी मनुष्य होते हैं, वे सब तो एक जप-यज्ञ के द्वारा ही अपने सब कर्मों को सिद्ध कर लेते हैं। किसी दूसरे यज्ञ को वे करें, या न करें। वेदज्ञ, ईश्वर-विश्वासी और सदाचारी मनुष्य तो अपने स्वभाव से ही प्राणी मात्र का मित्र होता है।

१७—मनुस्मृति के प्रायश्चित्त-विधान और दण्डविधान प्रसंगों में भी जप करने के उल्लेख हैं। (क्रमशः)

स्वर्गीय श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड

(श्री प्रोफेसर जनमेजय जी विद्यालंकार एम० ए० शास्त्री)

गुरुकुल काँगड़ी में—

श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार से मेरा परिचय ५० और ४, अर्थात् ५४ वर्ष पुराना है। तब मैं गुरुकुल की सप्तम श्रेणी में पढ़ता था और वह चतुर्दश श्रेणी में। बड़े ब्रह्मचारी कभी-कभी छोटे ब्रह्मचारियों को अध्ययनाध्यापन में सहायता देने के लिए उनकी श्रेणियों में आते जाते थे। इसी क्रम में वह हमारी श्रेणी में आने जाने लगे। मुझ पर उनका स्नेह और कृपा तभी से विशेष तौर पर होने लगी थी। हमारी श्रेणी को वह श्लोक याद करवाते थे, श्लोक गाना सिखाते थे, गुरुकुल की सब छोटी-बड़ी घटनाओं के समाचार सुनाते थे, बाहरी संसार के समाचार सुनाते थे और उन पर टीका-टिप्पणी करना भी सिखाते थे। अपनी बनाई हुई हिन्दी या संस्कृत की कवितायें वह बड़े उत्साह से हम लोगों को सुनाते थे। ऋषि दयानन्द के लिए और गुरुकुल के लिए ईमानदार और सच्चा बनने की प्रबल प्रेरणा मुख्यतया वह ही हमें दिया करते थे। उन्हीं के साहचर्य के कारण हमारी श्रेणी के अनेक छात्र प्रतिभाशाली तथा संवेदनाशील बन गये।

स्नातक होने के पश्चात् शुरू-शुरू के दो तीन वर्ष उन्होंने गुरुकुल काँगड़ी में ही संस्कृत के प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। उन वर्षों में भी हमारी श्रेणी पर उनका बहुत स्नेह रहा। हम लोगो ने महाकवि माघ का शिशुपाल-वध काव्य तथा विशाखदत्त का मुद्राराक्षस नाटक संस्कृत में अष्टम नवम श्रेणियों में उन्हीं से पढ़ा था। वह बड़े उत्साह से और बड़ी उमङ्ग से खूब रस ले लेकर पढ़ाते थे। हम लोग उनके प्रिय शिष्य थे।

कुछ साल बाद उनका कार्यक्षेत्र लाहौर बन गया, वह आर्यप्रतिनिधि सभा के महोपदेशक होकर पञ्जाब चले गये। परन्तु उनका मन हमेशा गुरुकुल में ही रमा रहता था। गुरुकुल शिक्षा की प्राचीन पद्धति से उन्हें अत्यन्त स्नेह था। वह बार-बार गुरुकुल आते रहते। परन्तु कार्यक्षेत्र अब लाहौर हो गया था और कार्य था "आर्यसमाज का प्रचार।" धीरे-धीरे उन्हें आर्यसमाज के प्रचार कार्य में, विशेषतया शास्त्रार्थों में, आनन्द आने लगा और वह आर्यसमाज के प्रकाण्ड पण्डितों में गिने जाने लगे। आर्यसमाज के मूर्धन्य नेता भी वह शीघ्र ही माने जाने लगे। किन्तु प्राचीन गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय सदा ही, प्रतिक्षण, सोते जागते, हर समय, उनके कल्पना-नेत्रों के सामने रहता था। शरीर से कहीं भी रहते हुए तथा कोई भी कार्य करते हुए उनका मन और आत्मा सदा गुरुकुल में ही रहते थे। उनका अपना बनाया हुआ वह संस्कृत का एक श्लोक, जो सैंकड़ों बार उनके मुख से सुना था, आज भी मुझे स्मरण है।

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीविजेता, वादीन्द्रमूर्धसु चिरं चरणं निवेश्य।
आधाय धर्मधुरमुद्भटशिष्यवर्गे, बुद्धः करिष्यति पदं पुनराश्रमेऽस्मिन् ॥

"अर्थात् सम्पूर्ण जगत् को वैदिकधर्म प्रचार के द्वारा तथा शास्त्रार्थों के द्वारा जीतकर, और प्रतिपक्षी लोगों को शास्त्रार्थों में चिरकाल तक पराजित करके, और फिर अपने सुयोग्य विद्वान् शिष्यों के हाथों में धर्म-प्रचार का कार्य सौंपकर, बुद्धदेव विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड पुन: इसी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आश्रम में लौट आएगा।" शोक है कि उनकी यह इच्छा पूर्ण न हो सकी और अपने अन्तिम दिनों में वह अपने स्वप्नों के उस प्राचीन गुरुकुल के दर्शन तक नहीं कर सके, निवास की तो बात दूर ही रही। अब तो यह भी नहीं मालूम कि वैदिकधर्म-प्रचार का कार्य अपने कौन से शिष्यों के हाथों में वह सौंपना चाहते थे, सौंपा भी था कि नहीं।

लाहौर में—

मैं लाहौर में पूरे सत्रह वर्ष रहा, १९३० से १९४७ तक। पूज्य पंडित जी से हमेशा ही भेंट होती थी। हर मामले में मुझे उनसे मार्ग-प्रदर्शन प्राप्त होता था, चाहे वह मामला आर्यसमाजी हो, चाहे शिक्ष सम्बन्धी, चाहे सामान्य जन साधारण सम्बन्धी, चाहे बिल्कुल वै उन सत्रह वर्षों में मुझ पर अनेक दु:ख भी पड़े और सुख भी। मैंने के साथ अनुभव किया कि मेरे हरेक दु:ख में वह सम्मिलि मेरे दु:खों की खबर न मालूम कैसे उन्हें मालूम हो जात वाणी द्वारा आश्वासन देने के लिए वह तत्काल मेरे पास हो जाते थे, क्रियात्मक रूप से भी यथाशक्ति सच्ची स और ठीक सहायता अवश्य देते थे। कठिन समयों में उन्होंने मे प्रदर्शन किया। मेरा और उनका कार्य-क्षेत्र कभी एक नह हमेशा ही भिन्न रहा। उनका कार्यक्षेत्र आर्यसमाज था और शिक्षा-क्षेत्र में कार्य किया, अब भी कर रहा हूँ। बिलकुल पृथ क्षेत्र होने पर भी उनका सहयोग और स्नेह और आत्मीयता मु प्राप्त रही।

लाहौर में वह और मैं एक ही मुहल्ले में रहते थे। अधिकतर उनके घर पर हाजिर हो जाता था, किन्तु कभी-कभी वह भी ह पर दर्शन देने की कृपा कर देते थे। ईश्वर, जीव, प्रकृति से लेकर रिक नोन, तेल लकड़ी तक सब विषयों पर घण्टों मेरा और उनक लाप होता था। उनकी दोनों कन्याओं के विवाह के अवसरों प उनके समीप ही था, सस्कार चाहे कोई भी करवाता हो किन्तु मन्त्रपाठ के लिए वह मुझे ही स्मरण करते थे। लाहौर से गुरुकुल तक की यात्रा में तथा छोटी-छोटी अन्य भी कई यात्राओं में मु साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है किन्तु हमारे कार्यक्षेत्र सद पृथक् ही रहे। गुरुदत्तभवन के जिस कमरे में बैठकर वह शतपथ क लिखा करते थे, वह उनके स्नेह के कारण मेरे लिए भी हमेशा खुल था। "शतपथ में एकपथ" अधिकाश प्राय: मेरे सामने लिखा ग शतपथ के भाष्यकार की अपेक्षा मुझे तो वह कवि ही अधिक प्रती अपने भाष्य का परिचय देते हुए जो श्लोक उन्होंने उस दिन बन वह अब तक मुझे स्मरण है, वह मेरी उपस्थिति में ही बनाया ग ओह, कैसी सरसता और प्रतिभा थी पण्डित जी की कविताओं में—

"गाम्भीर्यं यदि तच्छ्रु ते, रभिनवः पन्था यदि स्वीकृत: पूर्वाचा
र्यतो, यतिवरस्यानुग्रह: कस्यचित् शालिग्रामगुरोः कृपा, य
पाण्डित्यलेश: क्वचित्, किं किं नात्र परोपकारजनितं दोषास्तु ये ते

"अर्थात् मेरे बनाए हुए इस शतपथ भाष्य में यदि पाठकों गम्भीरता दिखाई पड़े तो समझ लेना कि वह वेद की अपनी प्रतीत हो कि प्राचीन आचार्यों से भिन्न कुछ नया ही मार्ग मैंने प तो इसका यश मुझे नहीं, किन्तु ऋषि दयानन्द को देना चाहिए कुछ पाण्डित्य और विद्वत्ता इसमें दिखाई दे तो गुरुवर श्री पण्डित ग्राम जी शास्त्री का आशीर्वाद समझना चाहिए, जो कि उस पुरा कुल काँगड़ी में संस्कृत के उपाध्याय थे। अधिक क्या कहूँ, मेरे ग्रन्थ भी अच्छाइयाँ पाई जायें वह सब ग्रन्थ महानुभावों का मुझ पर समझना चाहिए। हां, जो भी दोष इस भाष्य में पाए जाएं, वह निजू समझने चाहिएं।" वाह, कितना सरल और कितना हृ श्लोक है।

लाहौर की एक बात और भी याद आ गई। सर गगाराम ट्रस सञ्चालित विधवा विवाह सहायक सभा के एक उपदेशक महोद दिन गुरुदत्तभवन में पण्डित बुद्धदेव जी को मिलने के लिए आए उस समय पण्डित जी के समीप ही बैठा हुआ था। पण्डित जी प पत्नी कुछ समय पूर्व ही स्वर्गवासिनी हो चुकी थी। बातचीत उपदेशक महोदय ने पण्डित जी से कहा कि—"अब तो आप कृपया विवाह के पक्ष में प्रचार किया कीजिए और लेख लिखा कीजिए।' में उपदेशक महोदय ने अपने इस शब्दजाल की आड़ में पण्डित पुनर्विवाह करने की सलाह दी थी। पण्डित जी तुरन्त उपदेशक के हार्दिक अभिप्राय को समझ गए और तत्काल बोले—"अब

शेष पृ० ८ पर

पृ० ७ का शेष

वेवाह निषेध पर ही लेख लिखा करूंगा।" पण्डित जी के इस चय को सुनकर उन उपदेशक महोदय का मस्तक पण्डित जी के में स्वयमेव झुक गया।

में—

तो देहली में भी उनके साथ मेरी भेंट अनेक बार हुई, थोड़ो-र के लिये भी, बहुत-बहुत देर के लिए भी। हर बार वही स्नेह, त्मीयता, वही मार्ग प्रदर्शन। किन्तु सन् १९६१ की एक भेंट का तौर पर जिकर करना चाहता हूँ। अखिल भारतीय धर्मसंघ की जो हर वर्ष सर्ववेदशाखा सम्मेलन देश के किसी स्थान विशेष पर, सो उस वर्ष देहलो में हो रहा था। गत अनेक वर्षों की भाँति भी में विशिष्ट अतिथि के तौर पर निमन्त्रित होकर पूरे सात सम्मेलन में आदि से अन्त तक सम्मिलित हुआ था। सब कार्य-कदम संस्कृत में होती थी। संस्कृत के धुरन्धर विद्वान् वक्ता लोग रा प्रयत्न कर रहे थे कि शास्त्रार्थों और विचार विनिमयों का दम शास्त्रीय रहे, गम्भीर विद्वानों की शान के अनुरूप रहे। सना-र आर्यसमाजी, ऐसे दो पक्ष हरगिज न बनने पावें। तो भी सम्मे-तृतीय दिवस अधिवेशन में कुछ हलकी सी कटुता आ ही गई, घूम-किसी प्रकार "सनातनी और आर्यसमाजी" दो पक्ष खुल्लमखुल्ला गए। जो पक्ष आर्यसमाजी कहा जाता था उसके प्रमुख वक्ताओं में श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी और श्री वेदप्रकाश जी पातञ्जल थे। उस दिन के अधिवेशन के बाद मुझे अचानक सूझा कि इस शहर में तो श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड जैसा महाविद्वान् मौजूद है, उन्हें बुलाना चाहिए। मैंने सम्मेलन के र्त्ताओं से परामर्श किया और विशिष्ट सम्मानित अतिथि के तौर न्त्रित होकर अगले दिन श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार उस महाविद्वत्सम्मेलन के मञ्च पर उपस्थित दिखाई दिए। न में नवीन स्फूर्ति और नवीन जागृति आ गई। उस दिन का णीय विषय था. "वेदमन्त्राणां विनियोगः।" पण्डित बुद्धदेव जी की वन्तित सम्मति थी कि विनियोग गौण हैं और वेदमन्त्र मुख्य हैं। न्त्रार्थों के पीछे-पीछे विनियोग को चलना चाहिए, न कि वेदमन्त्र ोग के पीछे-पीछे चलेंगे। सो मैंने तथा अन्य कुछ वक्ताओं ने सलाह अपने प्रमुख प्रवक्ता के रूप में श्री पण्डित बुद्धदेव जी को खड़ा कर। पूज्य पण्डित जी का वही कवितापूर्ण ढंग, वही संस्कृत भाषा पर षा से भी अधिक अधिकार, वही तत्काल रचे हुए सरस संस्कृत-वही तेज, वही ओज। पण्डित बुद्धदेव जी ने बोलना, शुरू किया—

"स्वामी पीत्वा प्रसुप्तो, घनतिमिरमयी यामिनी,
मेघमालाघोरैर्वज्रप्रहारैर्जनयति हृदये वेपथुं मानवानाम्।
भित्ति स्वोयां खनन्ति प्रतिपलमितरे, ये क्वचिज्जागरूकाः-
त्वामेवाप्यावलम्ब्यं श्लथयति न करं स्वायुधैर्दुर्गपाल ।"
आर्याः, नास्तिकैर्बुराग्रहग्रहिलैः वेदविध्वं-
समये महासमरेऽस्माकं शास्त्रबान्धवा, ।।"
दृष्ट्वा वेदस्य विध्वंसं प्रवृत्तैरश्रुबिन्दुभिः।
भक्तानामर्चने जाता, अधरा मे करद्वयी ।।"

हे वेदभक्त आर्य लोगो, नास्तिक लोगो ने जब वेदों का विध्वंस करने ए युद्ध प्रारम्भ कर ही दिया है तब इस महायुद्ध में आप सब लोग मारे सशास्त्र मित्र हैं, बन्धु हैं साथी हैं।" वेदों का सर्वत्र होता हुआ स देखकर मेरे आँखो मे आँसू आ जाते है और मैं आप सब वेद-को अपने हाथो मे अश्रुमाला पहिनाना हूं।'

इस सम्बोधनमात्र से ही सभा मे एकता का वातावरण फल गया था। ने अपने पक्ष का सूत्र जोरदार समर्थन किया था किन्तु अधिवेशन 'आर्यसमाजी और सनातनी" इन दो भेदो में विभक्त नहीं होने दिया। सस्कृत के धुरन्धर विद्वान् लोग एक शास्त्रीय विषय पर गम्भीरता-पूर्वक विचार कर रहे हैं, यही वातावरण बराबर बना रहा। विद्वत्ता, वाग्मिता आदि गुणों के साथ-साथ शुद्ध निर्दोष परिहास का भी ऐसा बढिया पुट उनके व्याख्यान में था कि सब प्रसन्न हो गए। उन्होंने कहा कि वेदमन्त्रार्थ और विनियोग में जब असामञ्जस्य होता है तब मन्त्रार्थ को तोड़-मरोड़ कर अथवा खींचतान कर विनियोग के अनुकूल बनाने का प्रयत्न ऐसा ही हास्यापद है और अनुचित है जैसे यदि किसी के शरीर पर पाजामा ठीक फिट नही हो तो उसे (फिट) करने के लिए उस मनुष्य की टाँगों को काटना। पण्डित बुद्धदेव जी को यह अपनी विशेषता थी कि अपने प्रतिपाद्य विषय का सर्वोत्तम और ठीक प्रतिपादन करते हुए भो वह सभा के वातावरण को ठीक और अपने अनुकूल बनाए रखने में सफल होते थे। लगभग एक घंटे उनका व्याख्यान हुआ। उपस्थित मूर्धन्य विद्वानों में स्वर्गीय महामहोपाध्याय गिरिधरशर्मा महोदय का नाम मैं यहाँ विशेष तौर पर लेना चाहता हूँ। उस समय उनको आयु नब्बे वर्ष से कुछ अधिक ही रही होगी। पण्डित बुद्धदेव जो ने अपना व्याख्यान समाप्त करने के बाद कुछ झुककर तथा बहुत ही ऊँची आवाज में "अभिवादये" कहकर महामहोपाध्याय जी को प्रणाम किया। महामहोपाध्याय जी गद्‌गद् हो गए और उन्होने बुद्धदेव जो को आशीर्वाद दिया। सम्मेलन के प्रमुख सञ्चालक और अध्यक्ष श्री स्वामी करपात्री जी महाराज अतिथि सत्कार में परम प्रवीण हैं, सो उन्होने पण्डित बुद्धदेव जी को खूब खिलाया पिलाया।

उस महासम्मेलन में एक दिन "वेदभाष्यविषये पाश्चात्यविदुषा क्रिया-कलापाः" विषय पर विचार भी हुआ। उस दिन पण्डित भगवद्दत्त जो रिसर्चस्कालर भी सम्मेलन में पधारे थे और पाँच मिनट उन्होंने एक छोटा सा भाषण भी दिया था। एक अन्य दिवस जबकि "पाणिनीय व्याकरण यास्कीय निरु- क्तशास्त्रञ्च" विषय पर विचार विनिमय था, मेरे प्रिय मित्र पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक भी पधारे थे और उन्होंने "संस्कृत साहित्ये अपाणिनीयाः प्रयोगाः" इस विषय पर बड़ा अच्छा अपना एक लेख पढ़ा था।

कानपुर में—

सन् १९४७ से मैं कानपुर आ गया हूँ। यहां भी अनेक बार मेरी भेंट श्री पडित बुद्धदेव जी से हुई। शायद कानपुर शहर भी उनके हृदय मे विशेष स्थान रखता था। १९४७ के बाद जब कानपुर में मैंने उनके दर्शन किए तब वह गोरक्षा आदि आन्दोलनों के सिलसिले में यहाँ आये थे। फिर जब पञ्जाब में हिन्दी रक्षा आन्दोलन चल रहा था तब उसके सिल-सिले में पुनः उनका शुभागमन कानपुर में हुआ। दोनो बार उनके बहुत जोरदार भाषण हुए और कानपुर को जनता ने भी उनका खूब स्वागत सत्कार किया। इधर कई वर्षों में कानपुर की अनेक आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवो में भी उन्हे सादर निमन्त्रित किया गया और वे यहाँ आए। उनके ओजस्वी भाषणों की हमेशा ही धूम रही। खास तौर पर आर्य-समाजों के जलसों पर तो उनके आते ही नवीन जीवन का सञ्चार हो जाता था। आर्यसमाज की प्रतिष्ठा को इस नगर में भी उन्होंने बहुत ऊँचा उठाया।

मैं तो हर बार ही उनसे मिलता था और यह मिलना आदरपूर्वक, सहूलियत से, शान्तिपूर्वक, घण्टों तक रहता था। वही पुराना स्नेह, वही आत्मीयता, वही शुभ मार्ग-प्रदर्शन। अन्तिम दो तीन बार सन्यासी के रूप में भी (श्री स्वामी समर्पणानन्द जी महाराज होकर) वह कानपुर की आर्यसमाजों के उत्सवों में पधारे। तब भी घण्टों मिलने जुलने का सौभाग्य मुझ प्राप्त रहा। विशेषतया शास्त्रीय ज्ञानवृद्धि में उन्होने मुझे बड़ी ठोस सहायता दी। निरुक्त, व्याकरण, दर्शन, वैदिक-साहित्य, सभी विषयों पर गम्भीर और मूल्यवान् निर्देश उन्होने मुझे प्रदान किए। प्रतिभा, प्रत्यु-त्पन्नमतित्व, गम्भीरज्ञान, विज्ञान आदि का ऐसा बढ़िया समन्वय मैंने अन्यत्र कही नही देखा। References के विषय में, अर्थात् प्रतीक निर्देश के विषय में, अर्थात् अमुक पाठ किस ग्रन्थ का है और किस अध्याय का है

शेष पृ० १० पर

शङ्का--समाधान

(१) शङ्का—

(क) सैद्धान्तिक रूप से शूद्र एवं द्विज कौन हैं ?

(ख) क्या वेद मन्त्र न पढ़ने एवं समझने वाला शूद्र है ? यदि हा तो जो न समझ सके उसे वेद पढ़ाने से क्या लाभ ?

(ग) यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः···इस मन्त्र का शाब्दिक एवं भावात्मक अर्थ बताने की कृपा करें कि यहां शूद्र को वेद पढ़ना चाहिये ऐसा क्यों है ? जब कि वह नही समझ सकता है।

(घ) स्तुता मया वरदा···अथर्ववेद के इस मन्त्र का भी अर्थ स्पष्ट करने की कृपा करें यहां द्विज शब्द स्पष्ट है शूद्रों के लाभ नही दिखाये हैं।

(२) शङ्का—

सस्कारविधि में जन्म काल के नामकरण में महर्षि ने शर्मा वर्मा नामान्त में लगाने का क्या अभिप्राय है, क्या जाति जन्म सूचक नहीं है ? ये शब्द बच्चा तो कर्मकाण्डी है नहीं, फिर जाति जन्म से मानी गई है, ऐसा प्रतीत होता है।

(३) शङ्का—

वेद मन्त्र का अर्थ न जानने वाले को चन्दन ढोने वाले गदहे से उपमा दी है अर्थात् निरर्थक है ऐसा अभिप्राय समझ सका हू। दूसरे स्थान पर महर्षि मन्त्र शक्ति में लिखते हैं कि मन्त्रों में शक्ति है तो मन्त्र पढ़ने वाले के मुख में अग्नि आदि प्रज्वलित हो जाएं। मन्त्र का अभिप्राय सोच समझ कर जीवन में ढालना है किन्तु इसी १५ जून के अंक में एक गूगी बच्ची मन्त्रों के प्रभाव से बोलने लगी यह क्या करिश्मा है सिद्धान्त युक्त कैसे हैं।

—श्री ओमप्रकाश शर्मा चिकित्सा अधिकारी नरसेना (जि० बुलन्द शहर)

इन उपर्युक्त प्रश्नों का समाधान करने से पूर्व कुछ सामान्य सिद्धान्तों को जान लेना उचित होगा—

१. जन्मगत जाति और गुण कर्मानुसार वर्ण दोनों सर्वथा पृथक्-पृथक् मन्तव्य हैं। जाति जन्म के आधार पर मानी जाती है और वर्ण का चुनाव गुण कर्म स्वभाव के अनुसार किया जाता है।

२. अधिकार मनुष्य मात्र का एक समान होता है, परन्तु अधिकार की प्राप्ति मनुष्य के अपने सामर्थ्य पर निर्भर करती है।

३. मनुष्य एक सामान्य जाति है। उस के कर्म के अनुसार दो भेद होते हैं, एक आर्य और दूसरा दस्यु, दो सहोदर भाइयों में एक श्रेकर्मा आर्य बन जाता है दूसरा नीच कर्म करने से दस्यु हो जाता है। आर्य और दस्यु भिन्न-भिन्न जातियां नहीं हैं। मनुष्य के ही दो भेद हैं। फिर आर्यों में गुण कर्म स्वभाव की योग्यता के आधार पर चार वर्ण होते हैं, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आर्यों में द्विज कहलाते हैं, क्योंकि वेद पढ़े और तदनुसार आचरण किये बिना कोई भी आर्य द्विज पद का अधिकारी नहीं बन सकता। आर्यों में चौथा भेद शूद्र वेद पढ़ने के सामर्थ्य न होने से वह शूद्र कहलाता है। वर्ण का जन्मगत जाति सम्बन्ध नहीं होता जन्ममात्र से कोई आर्य वर्ण बाद का अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता। शूद्र भी जन्म से पैदा नहीं होता, किन्तु गुण कर्म स्वभाव से बनता है। अब शङ्काओं के समाधान के करने और समझने में सुविधा हो जावेगी।

(१) शङ्का का उत्तर

(क) मनुष्य, वेद पढ़ कर ही द्विज पद का अधिकारी बन जाता है, जिसमें वेद पढ़ने का सामर्थ्य नहीं है। वह शूद्र बन जाता है।

(ख) वेद पढ़ने में असमर्थ शूद्र होता है वेद को समझेगा तभी, जब वेद पढ़ने की उस में योग्यता हो—इस योग्यता के न होने से वह शूद्र बन जाता है। पढ़ने का उस को अधिकार है। पढ़ाने वाले भी उसको पढ़ाते हैं, परन्तु अपनी अयोग्यता के कारण अधिकारी होकर भी वह वेद न पढ़ सके तो शूद्र बन जाता है। यदि वह शूद्र बन जाने पर भी फिर वेद पढ़ना चाहे, तो उसे वेद पढ़ने का अधिकार प्राप्त है। यदि फिर वह वेद पढ़ गया, तो वह शूद्र न रह कर द्विज बन जाता है, अतः शूद्र को भी वेद पढ़ने से वंचि[त] नही किया गया।

(ग) "यथेमा, ···वाचम्" मन्त्र का शब्दार्थ और भावार्थ यजु[र्वेद] अध्याय २६, मन्त्र दो में ऋषि दयानन्द के भाष्य मे देखिये और विच[ार] कीजिये। वेद पढने का अधिकार मनुष्य मात्र को सदा रहता [है।] आर्य की तो बात ही क्या, दस्यु कभी भी वेद पढना चाहे, तो [उस] को पढने का अधिकार है। ईश्वर रचित समस्त पदार्थ मनुष्य म[ात्र] के लिये एक समान हैं। चक्षु–हीन होने पर कोई मनुष्य सूर्य से लाभ न[हीं] उठा सकता। यदि रोग निवृत्ति होने पर फिर नेत्र ज्योति लौट आवे, सूर्य से लाभ उठा सकता है, उसको कोई नहीं रोक सकता। वह पढ़ने [का] अधिकारी है। वेद का उपदेश सब के लिये समान होता है। [इस] में भेद नही होता।

(घ) 'स्तुता मया वरदा वेद माता' अथर्ववेद के इस मन्त्र का अ[र्थ] अत्यन्त स्पष्ट है जो वेद का स्तवन ग्रहण करता है, वह द्विज होता और वेद उस को ही पवित्र करता है। वेद ज्ञान रहित पवित्र नहीं [हो] सकता।

(२) शङ्का का उत्तर—

नाम करण के समय जो बालक जिस गुण कर्म स्वभाव वाले वर्ण [में] पैदा होता है, उसी के अनुसार शर्मा-वर्मा पद नामान्त में लगाने का विध[ान] है। इस का अभिप्राय यह है कि पढ़ाते समय आचाय को भी ज्ञात रहे [कि] यह बालक अमुक वर्ण में पैदा हुआ है। तदनुसार आचार्य उस को विद्या-दान देने का ध्यान रखता है। शूद्र वर्ण में पैदा हुए बालक पर विशेष ध्य[ान] गुरु देता है, क्योंकि उस बालक के माता-पिता वेद रहित होने से शूद्र [कहलाने] वाले रह गये, परन्तु उन के बालक को आचार्य अपने निकट रखता [है,] यज्ञोपवीत देता है और पढ़ाता है, फिर पढ़ने पर शूद्र वर्ण का बा[लक] अपनी योग्यतानुसार वर्ण पद को प्राप्त कर लेता है, यह ध्यान चा[हिये] कि अध्ययन काल तक ही शर्मा वर्मा पद नामान्त में रहते हैं। पढ़ने [के] समावर्तन के पश्चात् यह नामपद छूट जाते हैं। आज इससे विप[रीत] दशा है, बालक को तो शर्मा वर्मा पद देते नहीं, किन्तु गृहस्थ धा[रण] करते हैं। यह सिद्धान्तहीन मन्तव्य है, शर्मा वर्मा पद जन्मगत ज[ाति] सूचक नहीं हैं किन्तु उस बालक के माता-पिता के वर्ण के सूचक अ[वश्य] हैं। यहां जन्म जाति का प्रश्न ही नहीं उठता।

(३) शङ्का का उत्तर—

यह ठीक है कि जो वेद मन्त्रों को तो पढ़ता है परन्तु अर्थ नहीं जा[नता] तो वह भारवाहक ही है। वेद पढ़ने का श्रम तो करता है—परन्तु मन्त्र के अर्थ का जो आनन्द हो सकता है वह उस को नहीं मिल स[कता] अतः वह भारवाहक ही रहता है। वेद पढ़ना मात्र भी निरर्थक नह[ीं] पठन मात्र से वाणी पवित्र होती है और वेद मन्त्रों का स्मरण बना र[हता] है, अतः निरर्थक नहीं।

प्रसंग रहित प्रश्न के उत्तर में भी निवेदन है कि गूगी बच्ची की पद्धति से चिकित्सा की गई है न कि केवल गायत्री मन्त्र के सुनने मा[त्र से] वाक् शक्ति का पुनरुद्भव हुआ है। आप तो स्वयं चिकित्सा अधिकारी [हैं] आप भी प्रयोग कीजिये, १५ जून ६९ का अंक इस विषय में पुनः प[ढ़िये] वहां चिकित्सा का उल्लेख किया गया है।

(४) शङ्का 'ओंकार जप-विधि' लेख में श्री पं० जगत्कुमार [शास्त्री] जी ने लिखा है कि 'जप' केवल 'ओ३म्' का ही होता है। अन्य किस[ी का] नहीं। इस में यह शङ्का है कि योग दर्शन २ पाद, १ सूत्र के भा[ष्य में] लिखा है कि—

"स्वाध्यायः प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्षशास्त्राध्ययनं वा।" 'प्रण[व]-आदि पवित्राणां जपः' इस से यह प्रतीत होता है कि ओ३म् का ही [नहीं] अन्य का भी जप हो सकता है।"

(५) शङ्का—सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष ये जीव के स्वाभाविक गुण

शेष पृ० १० पर

पृ० ६ का शेष

ैमित्तिक ? यदि नैमित्तिक हैं तो निमित्त क्या है ? यदि स्वाभाविक हैं े कभी दूर न होंगे। स्वामी दयानन्द जी ने मोक्ष में भी इनको माना है ्हां पर निमित्त क्या है ?

—श्री मनुदेव जी मीमांसक, गुरुकुलसिंहपुरा सुन्दरपुर (रोहतक)

(४) शङ्का उत्तर—

आपके दिये उद्धारण में जप का नहीं किन्तु 'स्वाध्याय' का लक्षण किया ्या है। यहां 'आदि' पद का अर्थ "वगैरह" नहीं लेना चाहिये किन्तु ारम्भ' लेना उचित है। इसका अर्थ यह हुआ कि ओ३म् जिन के आदि में ्गाया हो उन (पवित्रणाम्) वेद मन्त्रों का जप स्वाध्याय है। माननीय श्री ० जगत्कुमार जी शास्त्री स्पष्ट कर चुके हैं कि वेदमन्त्रों का गायत्री आदि ्रा जप ओ३म् पूर्वक होता है। अतः केवल ओ३म् अथवा ओ३म् पूर्वक ्द मन्त्रों का जप होता है। कृपया इसी सूत्र की भोजवृत्ति देखिये-वहां ाखा है कि—'प्रणवपूर्वाणां मन्त्राणां' जपः "अर्थात् ओ३म् पूर्व करके ्त्रों के जप को स्वाध्याय कहते हैं। यहां 'जप' का लक्षण नहीं है, अपितु ्वाध्याय' का है।

५) शङ्का का उत्तर—

सुख, दुख, इच्छा, द्वेष जीव की सत्ता को बताने वाले नैमित्तिक गुण ै जिन पदार्थों से पहिले सुख, दुःख हुआ था, उनको फिर भी देखना ख, दुःख की स्मृति का कारण बन जाता है। ऋषि दयानन्द जी ने मुक्ति सुख दुःख को नहीं माना। सत्यार्थ प्रकाश को फिर से पढ़िये। वहां ्व की शक्ति के २४ भेद गिनाये है, उन में इच्छा द्वेष तो हैं, परन्तु ख, दुःख नहीं। मुक्ति में तो आनन्द ही जीव भोगता है। कृपया इस ्रण को पुनः ध्यान से पढ़िये, मुक्ति में इनका कोई निमित्त नहीं होता, ये गुण भी नहीं होते।

(६) शङ्का—इङ्गलैण्ड के कुलुम्बस आदि पुरुष अमेरिका में जब तक नहीं ै तब तक वे भी सहस्रों, लाखों, करोड़ों वर्षों से मूर्ख अर्थात् विद्याहीन पुनः सुशिक्षा के पाने से विद्वान् हो गये हैं।—(सत्यार्थप्रकाश ७ वां ्ल्लास) इस वाक्य पर शङ्का यह है कि पुर्तगाल के कोलम्बस के जाने लाखों और क्रोड़ो वर्ष पूर्व के मूर्ख कैसे थे, जब कि महाभारत और ्रायण में हम पाताल (अमेरिका) जाने आने का प्रसङ्ग पढ़ते हैं।

—ब्रह्मचारी विरजानन्द दैवकरणी गुरुकुल झज्झर (रोहतक)

६) शङ्का का उत्तर—

यहां इतिहास का खोज का प्रश्न है, इस में सिद्धान्त का कुछ सम्बन्ध ा। इतिहास की जैसे-जैसे खोज होती रहती है। वर्णन होता रहता है। ना होने पर भी ऋषि दयानन्द का वचन ठीक है। अमेरिका तो दूर ा भारत में आज भी आसाम, बिहार, उड़ीसा और मध्यप्रदेश के क स्थानों पर जगलों में रहने वाले वनवासी मूर्ख बने हुए हैं, जब कि ्त में पूर्व काल से विद्या चली आई है। जहाँ भारत के क्षेत्रों में विद्या प्रसार है वहीं अविद्या का डेरा आज भी पड़ा हुआ है। इसी भाँति रिका आदि देशों में था। शिक्षा मिलने पर लोग विद्वान् हो ही जाते जैसे अमेरिका में हो गये। ऐसे ही भारत में भी सर्वत्र विद्या का प्रसार से विद्वान् हो सकते हैं।

७) शङ्का—

मृत्यु के पश्चात् शव (मृतक का देह) को घर में रखकर वेदमन्त्रों का कराना चाहिये ?

८) शङ्का—

क्या शव के ऊपर पुष्प चढाना वैदिकता है ?

—श्री चन्द्रशेखर प्रधान—आर्यसमाज आसनसोल (ई० रेलवे) बंगाल

(७) उत्तर—दाह कर्म के पश्चात् "जब शरीर भस्म हो जावे पुनः जने वस्त्र प्रक्षालन स्नान करके जिसके घर मे मृत्यु हुआ हो उसके की मार्जन, लेपन, प्रक्षालन आदि से शुद्धि करके स्वस्ति वाचन, ्त प्रकरण और ईश्वरोपासना करके इन्हीं स्वस्तिवाचन और शान्ति ्ण के मन्त्रों से सच्चात्र में स्वाहा बोलते हुए सुगन्धादि मिले हुए की आहुति देवे जिससे मृतक का वायु घर से निकल जावे। संस्कार ेष्टि प्रकरण)।" इससे सिद्ध है कि शव को दाह से पूर्व घर मे रख-मन्त्र पाठ नहीं करना चाहिए। किन्तु दाह कर्म के पश्चात् घर में।

(८) उत्तर—शव पर पुष्प चढ़ाना सर्वथा अवैदिक प्रथा है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पुस्तक समालोचना—

१. नाम पुस्तक—"फिट्सूत्रप्रदीपः" (आचार्यशान्तनु प्रणीत)।

व्याख्याकार—श्री पं० सुदर्शन देव आचार्य एम० ए०, सम्पादक—स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश, प्रकाशक—हरयाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्झर (रोहतक)

पृष्ठ संख्या ६०, मूल्य एक रुपया (प्रथमावृत्तिः) समालोचना—यह छोटा सा पुस्तक व्याकरण शास्त्र के विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के लिए विशेष उपयोगी है, क्योंकि व्याख्याकार ने सूत्रों की व्याख्या उत्तम रीति से की है, वेदमन्त्रों के लिए स्वर प्रक्रिया का जानना अनिवार्य है। सुयोग्य विद्वान् ने स्वर रहस्य को बहुत उत्तम रीति से इसमें स्पष्ट किया है। जिससे समझने और स्मरण करने में सरलता और सुविधा हो गई है। संस्कृत शिक्षणालयों के छात्रों को इस से लाभ उठाना चाहिए। कागज छपाई आदि उत्तम है, पुस्तक उपादेय है।

एक निवेदन यह है कि फिट्सूत्रकार का परिचय और वंश का पता इतिहास के आधार पर दिया गया है, इसमें आचार्य शान्तनु को महाभारत कालिक प्रतीप राजा का पुत्र बताया है। हमारे मत में इस सम्बन्ध में अभी और खोज की आवश्यकता है।

२. "सत्यनिरूपण" (मासिक पत्रिका आर्यप्रेमी) का यह जून १९६९ का विशेषाङ्क है। एक प्रति का मूल्य २५ पैसे है। इस अङ्क के लेखक पं० जगत्प्रकाश शर्मा है और प्रकाशक वैद्य मोहनलाल वीरूमल आर्य प्रमो, नला बाजार अजमेर हैं। इस अङ्क में ऋषि दयानन्द जी सन् १८७८ ई० में जब मेरठ ठहरे थे, उस समय का कुछ वृत्तान्त जो उर्दू में उसी समय छपा था, उसी का यह हिन्दी अनुवाद है। इसमें सिद्धान्त विषयक कोई नई बात नहीं मिलती, किन्तु इतिहास के खोजी सज्जनों के लिए यह बड़े काम का है। आर्यसमाजों को इस अङ्क से लाभ उठाना चाहिए। उनके लेखक तथा प्रकाशक इतिहास रक्षा के लिये बधाई के पात्र हैं।

आर्य लोग भारत में बाहर से नहीं आये

(स्वामी शिवाचार्य जी इन्द्रलोक १६४, जवाहर स्ट्रीट शाहदरा-दिल्ली)

भारत के स्वतन्त्र होने के २२ वर्ष पश्चात् भी सरकारी स्कूलों और कालिजों में यही पढाया जाता है कि आर्य लोग भी विदेशी थे और मध्य-एशिया आदि स्थानों से भारत में पहुँचे थे।

परन्तु यह मिथ्या प्रचार अंग्रेजों ने किया था, जिससे उन पर यह आरोप न रहे, कि वे भारत में बाहर से आये-विदेशी हैं, अतः उनको यहाँ से हटाना चाहिए।

इस देश मे आर्यों से पहले कोई नहीं बसता था, उन्होंने ही इसको बसाया था, इसीलिये सर्वप्रथम इस देश का नाम आर्यावर्त्त ही रखा गया था।

भारत सरकार के शिक्षा विभाग को चाहिए कि इस प्रमाणरहित ऐतिहासिक कलङ्क को शिक्षा विभाग में पाठ्यक्रम से निकलवा देवे। तभी भारतीय छात्र और छात्राओं में देश के प्रति सच्ची श्रद्धा हो सकेगी।

पृ० ८ का शेष

और किसने कहा है इत्यादि के विषय में, उनकी जानकारी अनुपम थी। "विद्या कण्ठ" वाली लोकोक्ति उन पर पूर्णतया चरितार्थ होती थी। इधर-उधर की गपशप या बहानेबाजी करके किसी भी जिज्ञासु का अटकाए रखने को अथवा टाल देने की न कभी उन्हें आवश्यकता ही पड़ी, न कभी इच्छा ही हुई। जो कुछ भी उनसे पूछा, उसका ठीक उत्तर और नपा-तुला हुआ शुद्ध उत्तर तथा असली उत्तर तत्काल मिला। हाय, अब ऐसा सर्व-तोमुखी प्रतिभा का धनी पण्डित कहाँ मिलेगा। अब तो, बस उनकी सद्गति के लिए ईश्वर से प्रार्थना ही की जा सकती है।

ओ३म् तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः।
तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥१॥
ओ३म् ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो ये तनूत्यजः।
ये वा सहस्रदक्षिणास्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥२॥
ओ३म् ये चित्पूर्व ऋतसाता ऋतजाता ऋतावृधः।
ऋषीन्तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात् ॥३॥

आर्यसमाजों से आवश्यक निवेदन

वेद प्रचार सप्ताह की कथाएँ शीघ्र आरम्भ होने वाली हैं और दो मास तक चलेंगी। अपने आर्यसमाज में तिथि निश्चित कर के प्रबंध के लिये शीघ्र लिखें। विनीतः—

निरञ्जन देव-वेद प्रचार

[आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब १५ हनुमान रोड नई दिल्ली।

गुरु दत्त भवन जालधर म०,

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

१ डा० विश्वमित्र जी मयसुर से वाराणसी मे पहुच कर ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य सुचारु रूप मे करवा रहे हैं। अब तक ४ फर्मे २८ रायल साइज पर आलेख छप चुके हैं।

२ ३० जून तक कुल आय २४९९-२५ पैसा इस में १०३७ २५ पैसे कुल व्यय, १४५ रु० बेंक मे, ८ रु० कार्यालय मे हैं—

आर्य्यमर्यादा मे छप चुके विवरण से आगे आय-व्यय ब्यौरा—

(क) आर्यसमाज भोजूवीर बनारस छावनी से ३५७ रु०। आर्यसमाज मुगल सराय से १०२ रु०। गोरखपुर से २० रु०। हमीरपुर ५१ रु०। प्रताप गढ १५३ रु०। रायबरेली ५१ रु०। गोंडा ५ रु० कुल ७३९ रु०। आय की प्राप्ति गत अङ्क तक १७६२ २५ पैसे। कुल मिला कर २४९९ २५ पैसे।

कुल व्यय—९९ १५ लेखन सामग्री, २८७ रु० डाक व्यय, २०५-२५ टाइप मुद्रण नोटिस, २८४ २० ग्रन्थ प्रकाशनार्थ, विविध मार्ग व्यय ३१ ६५, विशेष मार्ग व्यय प्रधान जी को १०० रु०, ३० रु० श्री मन्त्री जी डाक व्यय। कुल व्यय १०३७ २५ पैसे।

३ श्री प्रधान खेम चन्द्र जी हरयाणा—पंजाब मे धन संग्रहार्थ गये हुये हैं। —नानकराम अन्तरग सदस्य, उपप्रधान आर्यसमाज भोजूवीर

एक पाठक का पत्र

सम्पादक महोदय,

ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन कार्य मे जहाँ एक ओर इस्लाम और ईसाइयत से मोर्चा लिया था वही उन्होंने सनातनी हिन्दुओ को भी लताडा था। क्या मैं मान लूँ कि ऋषि दयानन्द सच ही मर चुके हैं ? कि आर्य-समाज भी उनके साथ ही मर चुका है ? यदि नही तो क्या किसी आर्य-समाजी पडित को पुरी के शकराचार्य (?) की चुनौती स्वीकार करने का सामर्थ्य है ? क्या आर्यसमाज कोई दयानन्द, श्रद्धानन्द या लेखराम हिन्दू समाज को देगा जो आगे बढकर पुरी के शकराचार्य के शास्त्रार्थ के निमन्त्रण को स्वीकार कर उनके द्वारा खडे किए गए हिन्दू धर्म-ग्रथ-सम्मत अस्पृश्यता के महल को ढहा सके ? —आपका—एक पाठक [कृपया आर्यमर्यादा के सभी अको को पढिये—सम्पादक]

आर्य समाज करोल बाग, नई दिल्ली में अभिनन्दन समारोह

आर्यसमाज मदिर मे पण्डित सत्यपाल शास्त्री, एम ए वेद वाचस्पति को बडे समारोह पूर्वक सस्कृत मे अभिनन्दन प्रस्तुत किया गया तथा भावभरी बिदाई दी गई। श्री शास्त्री जी ने सात वर्ष तक बडी कुशलता से पुरोहित पदेन समाज की सेवा की। समाज के सभी अधिकारी तथा सदस्यो ने शास्त्री जी के पाण्डित्य एव कार्य-कुशलता की सराहना की। स्त्री समाज प्रधान ने कहा कि 'समाज के इतिहास मे यह पहला ही अवसर है जबकि सम्मान और आदर से श्री शास्त्री जी का अभिनन्दन किया गया है'। श्री सत्यपाल जी शास्त्री अब १ जुलाई १९६९ से इण्टर कालिज, मेरठ कैण्ट मे लैक्चरार नियुक्त हो गये हैं। —दयालचन्द मन्त्री

आर्यसमाज आर्यपुरा सब्जी मण्डी दिल्ली का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री सोमदेव आर्य, मन्त्री—श्री हरिसिंह, कोषाध्यक्ष—श्री रामचरण, पुस्तकाध्यक्ष—जगदीश शरण। —हरिसिंह गुप्त मन्त्री

आर्य समाज समस्तीपुर

१ वेद प्रचार साप्ताह दिनाक ११ से १७ जुलाई तक मनाया गया।
२ आगामी वार्षिकोत्सव १७ से २१ अक्टूबर १९६९ तक होगा। —मन्त्री

आर्यसमाज गुलाठी जि० संगरूर की सूचना

गाँव गुलाठी मे आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा वेदो का प्रचार किया गया। चौ० देवीसिंह भजनोपदेशक के प्रचार का गाँव मे अच्छा प्रभाव पडा। बडा हवन किया गया तथा समाज के पदाधिकारी चुने गये।

प्रधान—श्री मनसाराम आर्य, मन्त्री—श्री मंगेराम आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री रामस्वरूप आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री जालीराम आर्य।—मंगेराम मन्त्री

आर्यसमाज न्यू कालोनी गुडगावाँ का वार्षिक चुनाव

प्रधान—चौ० वजीर चन्द, मुख्य मन्त्री—श्यामलाल आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री कुन्दनलाल भल्ला, पुस्तकाध्यक्ष—मास्टर रामलाल जी, व्यवस्थापिका—आर्य विद्या मदिर श्रीमती अरुण प्रभा साह्निी, व्यवस्थापक—परोपकार आर्य होम्यो औषधालय—बाबू गुरदास मल जी, एव अन्य अधिकारी और अन्तरग सदस्य गण। —श्यामलाल आर्य मन्त्री

आर्यसमाज कलकत्ता १९, विधान सरणी कलकत्ता का निर्वाचन

नये वर्ष के लिये निम्नलिखित हुआ।

प्रधान—श्री रूलिया राम जी गुप्त, मन्त्री—श्री छबीलदास जी सैनी, कोषाध्यक्ष—श्री सत्यानन्द जी आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री महाशय रघुनन्दन लाल जी तथा अन्य प्रतिष्ठित तथा अन्तरग सदस्य। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यकुमार सभा गुरुकुल ततारपुर (मेरठ) का निर्वाचन

प्रधान—श्री प० यशपाल दर्शन-व्याकरणाचार्य, मन्त्री—प० धर्मपालार्य, पुस्तकालयाध्यक्ष—प० गौतमदेवार्य कोषाध्यक्ष—प० विजयकुमारार्य प्रथम —कु० धर्मपालार्यो व्रती

गताक से आगे—

किसान

●

—श्री योगेन्द्र पाण्डेय
ग्राम लखौलिया, (बलिया)



हो तुम सब श्रम करते जितना, क्या कोई कर सकता उतना ?
पर महत्व कुछ दिया न करते, सदुपयोग भी किया न करते,
करते हो पैसा बेकार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

कुछ तो ऐसे भी हैं लोग, करते हुक्के का उपयोग,
अपने गृह में पिया करें वे, औरो को भी दिया करें वे,
भले क्यो न हो रिश्तेदार, कुछ, सोचो कुछ करो विचार।

'हुक्का-प्रथा' चला करती है, मादक वस्तु जला करती है
लाभ समझते हो क्या इसमे ? तम्बाकू होता है जिसमे
तम्बाकू है क्षत्यागार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

तन में लाने के हित फुर्ती, खाया करते हो तुम सुर्ती,
नहीं झिझकते, लेते माँग, खाते पीस-पीसकर भाँग,
यह भी है कैसा व्यवहार ? कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

खाना करते हो यह मन मे, भग नशा करती है तन मे,
फिर भी बना बना कर गोली, खाया करते समझ ठिठोली,
नही ज्ञात यह दुखाधार कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

—क्रमश

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित



यहा सज्जनो की री है कि अपने वा पर दोषो को दोष अ गुणो को गुण जान व गुणो का ग्रहण अ दोषो का त्याग कर अ हठिया का हठ दुराग्र न्यून कर क्यो f पक्षपात से क्या क्य अनथ जगत मे न हु और न होते हैं।

—सत्यार्थप्रका

वर्ष १ } १२ श्रावण वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २७ जौलाई १९६९ रविवार { वार्षिक शुल्क स्वदेश म—१०)रु०
अङ्क ३३ } सृष्टि स०-१९६०८५३०६९ { विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पसे
सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूव लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन स कोदृश इत्युपदिश्यते ॥

फिर वह [वरुण] कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है।

इम मे वरुण श्रुधिहवमद्या च मृळय । त्वामवस्युराचके ॥
ऋ० १ २५ १९॥

पदार्थ—(इमम्) प्रत्यक्षमनुष्ठितम् (मे) मम (वरुण) सर्वोत्कृष्टजगदीश्वर विद्वन्वा (श्रुधि) शृण (हवम) आदातुमर्ह स्तुतिसमूह (अद्य) अस्मिनदिने (च) समुच्चये (मळय) सुखय (त्वाम्) विद्वासम (अवस्यु) आत्मनोरक्षण विज्ञान चेच्छ (आ०) समन्तात् (चुके) प्रशसामि ॥

अन्वय—हे वरुण विद्वन्नद्यावस्युरह त्वामाचके प्रशसामि त्व मे मम हव श्रधि शृणु मा च मृळय ॥

भावार्थ—यथेश्वर सत्पासक सत्यप्रम्णा या प्रयुक्ता स्तुति सर्वज्ञतया यथावच्छ्रुत्वा तदनुकूलतया स्तावकेभ्य सुख प्रयच्छति तथैव विद्वद्भिरपि भवितव्यम ॥

पदार्थ—हे (वरुण) सब से उत्तम विपश्चित् (अद्य) आज (अवस्यु) अपनी रक्षा वा विज्ञान को चाहता हुआ मैं (त्वाम्) आप की (आ चके) अच्छी प्रकार प्रशंसा करता हूँ आप (मे) मेरो की हुई (हवम्) ग्रहण करने योग्य स्तुति (श्रुधि) श्रवण कीजिये तथा मुझ को (मृळय) विद्यादान से सुख दीजिये ॥

भावार्थ—जैसे परमात्मा जो उपासको द्वारा निश्चय करके सत्य भाव और प्रम के साथ की हुई स्तुतियो को अपने सर्वज्ञपन से यथा वत् सुनकर उनके अनुकूल स्तुति करने वालो को सुख देता है वैसे विद्वान लोग भी धार्मिक मनुष्यो को योग्य प्रशसा को सुन सुखयुक्त किया कर ॥

—(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

आया था वह

दयानन्द सुसज्जित हुए, जब देश अन्ध विश्वासी था ।
मिथ्या आडम्बर फले थे सभ्य समाज विलासी था ॥
देख दशा अपने स्वदेश की, ऋषिवर को तब क्लेश हुआ ।
त्याग सभी कुछ उस महर्षि का, योगी जैसा वेश हुआ ॥
कर अध्ययन बहु शास्त्रो का, चला सत्य सिखलाने को ।
जगती को इस सार वस्तु का, मूल मन्त्र बतलाने को ॥
ईश्वर के उस ओ३म् नाम का, पाठन-पठन कराने को ।
आया था वह दयानन्द जब, जीवन मार्ग बताने को ॥

पजाब मे आर्यसमाज के सघटन को सुदृढ करने के लिये पजाब, हरयाणा, हिमाचल तथा दिल्ली के आर्य बन्धुओ का

जालन्धर में एक आवश्यक सम्मेलन

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब से सम्बन्धित आर्यसमाजो के अधिकारियों, प्रतिनिधियो तथा प्रतिष्ठित सदस्यो की एक बठक रविवार दि० २७-७-६९ को प्रात १० बजे आर्यसमाज मन्दिर अड्डा होशियारपुर जालन्धर नगर में प्रो० रामसिंह श्री सभा प्रधान की अध्यक्षता में निम्न विषयों पर विचार विमर्श के लिये होगी —

१ महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती के निर्णय के उपरान्त पजाब मे आर्यसमाज के सघटन को दढ करने तथा प्रचार को तीव्र करने पर विचार।

२ पजाब मे हिन्दी भाषा को सम्मान पूर्वक स्थान दिलाने पर विचार।

३ अन्य विषय श्री सभा प्रधान जी की आज्ञा से।

आर्यसमाजो के सब अधिकारियो प्रतिनिधियों तथा प्रतिष्ठित सदस्यों से प्रार्थना है कि बैठक मे उपस्थित हो कर भाग लेने की कृपा करें।

रघुबीरसिंह शास्त्री ससत्सदस्य
मन्त्री—आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

आर्यसमाजों को आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से इस वर्ष भी वेद प्रचार सप्ताह जुलाई अगस्त तथा सितम्बर १२ सप्ताह तक मनाया जावेगा। आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपनी सुविधा के अनुसार वेद सप्ताह के प्रबन्ध के लिये सभा के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर नगर (फोन न० ४२५०) तथा सभा के उपकार्यालय १५ हनुमान रोड नई दिल्ली (फोन न० ४८१५०) से पत्र व्यवहार तथा सम्पर्क स्थापित कर।

श्रावणी पर्व पर ही प्रबन्ध कराने का आग्रह न करें क्योकि प्रचार की माँग अधिक होने के कारण सबका प्रबन्ध कर सकना कठिन होगा। सभा की ओर से सभी आर्यसमाजो मे उपर्युक्त कार्यक्रम के अनुसार उत्तम प्रबन्ध करने का यत्न किया जावेगा।

विनीत—निरञ्जनदेव सिद्धान्त भूषण
वेद प्रचाराधिष्ठाता आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब,
मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर नगर

भाषा-विज्ञान के चमत्कार

लेखक—श्री नरसिंह वर्मा 'प्रभाकर' बी ए. सा० रत्न सि० शास्त्री, कोटा [राजस्थान]

विज्ञान के चमत्कारों से तो सामान्य जन भली भांति परिचित हैं ही, परन्तु भाषा विज्ञान के चमत्कारो से साधारणतया लोग अपरिचित ही रहते हैं क्यों कि इसके क्षेत्र में जन साधारण का प्रवेश उसी प्रकार कठिन एव दुष्कर है जिस प्रकार कुछ समय पूर्व हरिजन एव अछूतों का मन्दिरों में प्रवेश। बड़े-बड़े भाषा-शास्त्री ही इस क्षीर-सागर में अवगाहन करते हैं।

भाषा-विज्ञान, किसी भाषा का शास्त्र, क्रमबद्ध अध्ययन अथवा विज्ञान है जिसमें उस भाषा का तथा कई अन्य सामान्य भाषाओ का वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, और तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन एव तद् विषयक सिद्धान्तों का निर्धारण किया जाता है। भाषा-विज्ञान न केवल सहज कुतूहल एव ज्ञान पिपासा को ही शान्त करता है अपितु काव्यानन्द की प्राप्ति करा चित्त को आल्हादित भी करता है। भाषा का इतिहास बताने के साथ ही साथ मानव समाज की मनोवृत्ति भाव विचार एव परम्पराओ की ओर भी इंगित करता है। भाषा की उत्पत्ति स्थिति विकास एव ह्रास का ज्ञान भाषा-विज्ञान से ही सभव है। शब्द, अर्थ और ध्वनि मे किस प्रकार परिवर्तन होता है—'बैनरजी' महाशय बदर जी कैसे हो गये और 'वाजपेयी जी' [illegible] महाराज। हिन्दू का सिह उपाध्याय' का झा और 'आर्य' का 'जी' ही कैसे रह गया? संस्कृत शब्द क्रमेल (क्रम से पैर रखने वाला (ऊंट) अंग्रेजी में [illegible] कैमिल भूगोल' का 'ग्लोब माता' से 'मदर' 'श्री' से 'सर' [illegible], 'सूनू' (पुत्र) से son विशिष्ट' से Bert उक्ष (बैल) से Ox, 'दुहितर' से Daughter हस्त से Hand, अस्ति (है) से Yes कैसे बन गया? इसी प्रकार दुग्धाहार का 'दो गया हार' 'सूक्ष्म' का [illegible] [illegible] का 'सैंगापोता' 'मतलब' का 'मतलस' 'टिकट' का [illegible] [illegible] का [illegible] 'क्लीनर' का 'क्लींचर' 'चाइं' का [illegible] [illegible] का 'बाहुर' [illegible] जी का 'कैसू जी' साई का 'सई' कैसे हो गया यह जानना चाहते हो तो आप को भाषा-विज्ञान की शरण लेनी पड़ेगी। एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्द किस प्रकार अपना रूप बदल कर छिप जाते हैं और फिर उनको पहिचानना भी बड़ा कठिन होता है जैसे कि चन्द्र-गुप्त का सेण्ड्राकोटस (यूनानियों के पास चकार ध्वनि न होने के कारण), चरक का सरक कोटपाल का कोटवाल, गोप (ग्वाला) का गोवा, कौपीन का कफन, मनी का मनी, चक्र का चर्ख, वक्ष का वक्ष रूप अरबी भाषा में हो गया है। संस्कृत शब्द गोधूम (गेहूं) का गन्दुम, विस्टर का बिस्तर, अंगुष्ठ (अंगूठे) का अंगुस्त, अप्पा का अब्बा, पितर (पिता) से पिदर, हरिद्रा (हल्दी) का जरिद्र (जद) फारसी मे किस प्रकार हो गया, इसका एक मात्र उत्तर भाषा-विज्ञान ह दे सकता है। द्रविड भाषा में पिल्ला शब्द (मनुष्य का बच्चा) हिन्दी मे आकर पिल्ला (कुत्ते का बच्चा) अर्थ वाला कसे हो गया? संस्कृत शब्द वसु बगाली मे जाकर बोस (क्यों कि बगाली व का 'ब' और अ का ओ उच्चारण करते हैं। अंग्रेजी में Bose बना और इस तरह वह जब गुजरात एव महाराष्ट्र में पहुचा तो बोज (गुजराती मे) व बोक्ष (मराठी) बन गया। क्योकि अगरेजी के डीज दट को गुजराती डीज डैट कहते हैं।

भाषा मनुष्य जाति के परस्पर विचार विनिमय का सर्वोत्तम साधन है तथा वह कभी एक जैसी नही रहती। भाषा मन्थर गति से नदी की तरह सदैव प्रवाहित होती रहती है और समुद्र (पूर्ण विकास को प्राप्त होने तक) मे मिलने से पूर्व वह अपने मे अनेक भाषाओ, के जनपदीय बोलियो के शब्द जल को मिलाती और आत्मसात करती रहती हैं। वास्तव में भाषा रूपी नदी की शब्द-राशि नदी की जल राशि को तरह जितनी अधिक होती है, वह भाषा भी उतनी प्रसारवती होती है। यदि कोई भाषा अन्य भाषाओ के शब्दों को अपने मे पचाने की शक्ति खो देती है या नवा-गन्तुक शब्द महाशयों का प्रवेश निषिद्ध कर दिया जाता है तो वह शीघ्र ही मृत्यु को वर लेती है। जब तक शब्दो का आदान, रूप परिवर्तन, अर्थ परिवर्तन होता रहता है तो भाषा जीवित बनी रहती है। इस परिवर्तन के कारण कौन् [illegible] है? शब्दों की यात्रा कथा कितनी विचित्र एव कौतूहल जनक है? यह लोमहर्षक वत्तान्त ही हमारा अभीष्ट है।

अर्थ परिवर्तन—'चार कोस पर पानी बदले—आठ कोस पर बानी' वाली कहावत के अनुसार है जो कही सयोग [illegible], 'अभ्यास' निपुण, प्रवीण, गवेषणा, अधर, प्रवीण, स्याही, जयचन्द, विभीषण, नारद आदि शब्दों के अर्थ में विस्तार हुआ है। प्राचीन काल में इन शब्दों का अर्थ सकुचित रूप में लिया जाता था यथा—'तैल' से केवल तिल का तेल ही समझा जाता था परन्तु आज सभी तिलहनों के एक को तेल कहते हैं। 'अभ्यास' बाण चलाने के अर्थ में प्रयुक्त होता था परन्तु आज उसका अर्थ बिलकुल बदल गया है। इसी प्रकार प्राचीन काल में निपुण (पुण्य करने वाला) गवेषणा (गाय ढूंढने के लिए), स्याही (काला) अधर (केवल नीचे के ओष्ठ के लिए मगर आज कल दोनों ओष्ठों के अर्थ में), प्रवीण (वीणा वादक के लिए मगर आज कल चतुर व्यक्ति के लिए) आदि शब्द कुछ अन्य अर्थ रखते थे और अब कुछ और। जयचन्द, विभीषण नारद शब्दों की तो बड़ी मिट्टी कुटी है। सभी देश घातकों को जयचन्द, भ्रष्ट पुरुषों को विभीषण और वाचाल एव चुगल खोरों को नारद ही कहा जाता है। 'गुरु' शब्द की भी इस युग में क्या हालत हुई है, यह जान कर हमें तोबा होता है। आज कल गुरु शब्द चालाक एव बदमाश का अर्थ देता है। गुरु घटाल' का अर्थ तो सभी समझते ही हैं।

अब हम अप सकोच के बारे में बतलाते हैं। 'डियर' शब्द का बहुत प्रयोग होता है। अग्रजो का शब्द Deer और हिन्दी का मृग जानवर अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी में मृगा का अभिप्राय नदी विशेष से होता है मगर मारठी में यह शब्द नदी का ही पर्याय है। प्राचीन काल मे श्रद्धा से किये जाने वाले प्रत्येक कार्य को श्राद्ध कहा जाता था मगर आज केवल क्वार पक्ष में ब्राह्मण इन कौओं को भोजन कराने को ही श्राद्ध कहते हैं। मृत का अर्थ सींचने द्वारा (पानी) किया जाता था परन्तु अब पानी को घी नहीं कहा जाता। अशोक महान् को 'देवानां प्रिय' कहा जाता था किन्तु आज कल इसका अर्थ पण्डितों की कृपा से 'मूर्ख' हो गया है। भारत के इतिहास की बड़ी रोचक कथा इस शब्द में निहित है कि ब्राह्मण लोगों ने किस प्रकार ईर्ष्या वश 'देवाना प्रिय' का मूर्ख अर्थ प्रचलित करा दिया। बौद्धों को ब्राह्मण अपने कट्टर विरोधी समझते थे अत उन्होंने बौद्ध (महात्मा बुद्ध के अनुयायी) शब्द का अर्थ बुद्धू अर्थात् मूर्ख करना प्रारम्भ कर दिया और कालान्तर मे यही अर्थ 'देवानां-प्रिय' शब्द के लिए भी रूढ हो गया।

कुछ गिने चुने शब्दो को 'राम कहानी उनकी ही जबानी हो सुनिये, कि विचारो ने इस भूमडल की यात्रा नारद मुनि की तरह किस प्रकार पदल चल कर ही की है। इस कष्ट साध्य दीर्घ यात्रा मे वे स्वय यह भी विस्मृत कर चुके हैं कि वे पहले क्या थे और अब क्या हो गये हैं? सर्व प्रथम हम 'दाम' (पैसा) शब्द से ही प्रार्थना करते हैं कि वह अपनी आप बीती स्वय सुनायें। हमने 'दाम' शब्द को पहले विचार प्रकट करने का अवसर इस लिए दिया है कि आज सर्वत्र इसकी ही पहले पूछ और पूजा होती है।

दाम—प्राचीन काल में ग्रीक मे एक प्रकार के सिक्के को द्रिक्म (Drachma) कहा जाता था। ग्रीक से चल कर इस शब्द ने अरब प्रदेश में प्रवेश किया हो दिरहम् (अरबी में) हो गया। अरब से निकल कर ईरान मे पहुँचा तो वहाँ तीन अक्षर का दिरम् (फारसी मे) हो गया। बेचारे को पुन भारत दर्शन की इच्छा थी अत वह येन केन प्रकारेण पर्वतमाला और रेगिस्तान को पार कर जब यहाँ लौट आया तो भारत में वही पुराना दाम' 'नाम' हो गया।

क्रमेल से कैमिल तक—पहुचने में क्रमेल महाराज को नदिया लांघीं और आपने बहुरुपिये की तरह देशकाल के अनुसार बहुत रूप भी बदले। संस्कृत के क्रमेल शब्द का अर्थ है क्रम से पर रखने वाला अर्थात् ऊंट। यह अर्थ बहुत सार्थक है। इन महाशय का मन भारत में नही लगा तो पश्चिम दिशा की ओर विदेश यात्रा पर चल पडे। पश्चिमी एशिया में पहुच कर क्रमेल से कमेल और कैमेल गैमेल या 'जमल' हो गये। अरब वालो के लिए 'नाक'

(शेष अगले अंक में)

सम्पादकीय

दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः

'आर्यमर्यादा' के गत अंक में सम्पादकीय लेख में हमने लिखा था कि अपने दोष को दूर करने का सबसे उत्तम उपाय यही है कि भविष्य मे दोष से बचने के लिए स्वय प्रायश्चित्त करें। इससे आत्मा की शुद्धि होकर मनुष्य निर्दोष होने लग जाता है। परन्तु जो मनुष्य दोष करके भी दोष को दूर करना नही चाहता। उसके द्वारा किये जाते दोष का सामाजिक व्यवस्था पर भी कुप्रभाव पडता है। ऐसी अवस्था मे उसको भविष्य मे दोष से बचाने तथा दूसरो को ऐसे दोष करने की कुप्रवृत्ति को रोकने के लिये दण्ड व्यवस्था अनिवार्य होती है। इस लेख के शीर्षक मे हमने जो वचन दिया है यह मनुस्मृति का है तथा सत्यार्थप्रकाश मे इसका अर्थ छठे समुल्लास मे ऐसे किया है कि "बुद्धिमान् लोग दण्ड ही को धर्म कहते हैं।"

दण्ड निपातन करने की दो रीतियाँ है—एक राजदण्ड और दूसरी समाज दण्ड। इस लेख मे हम समाजदण्ड पर ही अपने कुछ विचार प्रकाशित करते हैं।

समाज द्वारा दोषी को दण्ड दिये जाने के भी कई भेद है, उनमे पहिला यह है कि दोषी मनुष्य को सामाजिक पचायत मे बुलाकर उसको समझाया जावे कि तुम्हारे दोष का कुप्रभाव अन्य लोगो पर भी पडता है, अत तुम अपने दोष को छोड दो। यदि वह दोषी पचायत की व्यवस्था को मान लेता है, तो बहुत उत्तम बात है और पचायत उस मनुष्य को भविष्य मे ऐसा दोष न करने की चेतावनी देकर छोड देती है। यह व्यवस्था एक प्रकार से उस दोषी को 'धिक्' कहकर सामाजिक कार्यों में मिला लिया जाता है।

यदि वह दोषी पचायत के बुलाने पर भी उपस्थित न होवे और दोष को निरन्तर करता ही रहे, तब समाज का कर्तव्य हो जाता है कि सामाजिक रूप से उसके दोष की घोषणा करे और उस पर दण्ड की व्यवस्था करे। दण्ड के कई प्रकार हो सकते हैं। प्रमुख प्रकार यही है कि उसको सामाजिक कामो मे न बुलाया जावे और उससे सामाजिक सम्पर्क तोड दिया जावे। प्रत्येक मनुष्य समाज का आवश्यक अंग होता है। कोई भी मनुष्य अपने सब काम स्वय नही कर सकता। ऐसी दशा मे स्वेच्छा से सभी लोग उसके कार्यों मे सहयोग करना छोड देते हैं। सहयोग हटा लेना एक सामान्य बात लगती है, परन्तु यह बडा असाधारण प्रभाव रखती है। ऐसा मनुष्य चारो ओर से घिर जाता है, भले लोगो मे बैठने से वञ्चित हो जाता है, उसके परिवार के सदस्यो को भी सब प्रकार की असुविधा हो जाती है। यह व्यवस्था एक प्रकार से सामाजिक बहिष्कार का रूप धारण कर लेती है। कोई भी मनुष्य बहुत दिन तक समाज के सहयोग से पृथक् नही रह सकता। अत इच्छा अथवा अनिच्छा से उस दोषी व्यक्ति को समाज के सामने झुकना ही पडता है।

कुछ मनुष्य ऐसे ढीठ भी होते हैं कि अपने साथ कुछ लोगो को मिलाकर एक दल खडा कर लेते हैं। तथा पचायत के काम मे गडबड पैदा करते हैं। पचायत के नेताओ को अनेक प्रकार के प्रलोभन और भय दिखलाते हैं। ऐसे दोषी समूह को दण्डित करने मे यद्यपि कुछ कठिनता हो जाती है, परन्तु पचायत के सदस्य और अधिकारी स्वार्थहीन और निष्पक्ष रूप मे काम लकर अपनी व्यवस्था देते हैं, तब उस दोषी समूह को भी झुकना पडता है। समाज के सामने ठहरना हसी खेल नही, जबकि दोषी रूप मे वह खडा होता है। यह सामान्य विवेचन बड-बडे लोगो और समूहो पर भी लागू होता है। समस्त समाज मे दुर्नाम हो जाना और पचायती आदेश को न मानना दोषी लोगो के हृदयो मे कालिमा पैदा कर देता है। यह हठ भी दोषी लोग इसीलिये करते हैं, क्योकि समाज दण्ड के साथ राजदण्ड नही होता। प्राचीनकाल मे समाज दण्ड को राजदण्ड ही माना जाता था, परन्तु अग्रेजी राज्य के शासन के समय पचायतो की सामाजिक शक्ति को नष्ट करने के लिये राजकीय अदालतें खडी की गईं पचायती दण्ड को राजदण्ड से नीचा कर दिया गया। इतना होने पर भी आज तक यह व्यवस्था बनी हुई है कि पचायती दण्डव्यवस्था को विवश होकर दोषी व्यक्ति अथवा अपराधी समूह को मानना ही पडता है।

मनु का तो यह कहना है कि सामाजिक और राजदण्ड दोनो धर्म का स्थान रखते हैं, अत समाज विरोधी दोषी लोगो को धर्म-आज्ञा के सामने सिर झुका देना ही एक उत्तम मार्ग है।

बहुरूपिया पैंतरेबाजी

आर्यमर्यादा के पाठक महानुभावो को ठीक ठीक मालूम है कि श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी ने वक्तव्य आर्यजगत् के सामने रख दिया है। उसको यहाँ दोहराना नही किन्तु उसके एक भाग की तरफ हम ध्यान दिलाना आवश्यक समझते है। पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी ने पजाब सभा के विवाद को दूर करने के लिये दोनो पक्षो का व्यवस्था को भङ्ग करके एक प्रबन्धकर्त्री समिति बनायी थी जिसमे पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज को वेदप्रचार का सब उत्तरदायित्व दिया गया था। 'इसी के अनुसार महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने दोनो पक्षो को आदेश दिया कि अपने अपने उपदेशको को एक ही जगह कर दिया जावे। एक जगह से ही सब प्रोग्राम दिया जायगा। वेदप्रचार का पिछला सब हिसाब भेजें। जालन्धर का मुख्य कार्यालय खुलने पर मुझ उसे सौप दिया जावे। तब मैं श्री जावेदजी को कार्यालय का नियन्त्रण भार सभाल दूगा।" इस आदेश का पालन प्रो० रामसिंह जी के पक्ष ने पूरी तरह किया। अपना १५ हनुमान रोड कार्यालय सब हिसाब किताब, सब उपदेशक और कार्यालय के कार्यकर्ता और रुपये महात्मा जी को तुरन्त सौप दिये परन्तु श्री रामसरणदास जी के पक्ष ने इन आदेशो की अवज्ञा ही नही, अपितु महात्मा आनन्दभिक्षु जी के पत्रो का उत्तर ही नही दिया। जालन्धर कार्यालय खुलने पर महात्मा जी को नही सौंपा गया, फिर श्री जावेद जी को कार्यालय का भार सम्भालने का प्रश्न ही नही रह गया। समाचार-पत्रो मे उलटे-सीधे वक्तव्य भी दिलाये गये।

अब वही लोग महात्मा आनन्दभिक्षु जी को आश्वासन देने की चर्चा पत्रो में करने लगे है। यह एक बहुरूपिये की पैंतरे बाजी नही है तो और क्या है? उनके प्रकाशित आश्वासनो का मूल्य तो तब होता, जब महात्मा जी के आदेशो का पहिले पालन किया होता। ऐसे लोग महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती और समस्त आर्यजगत् के निश्चय को ठुकराते हैं। महात्मा आनन्दभिक्षुजी को आश्वासन देना यही है कि आर्यजगत् द्वारा श्री महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती को दिये गये अधिकारो के अनुसार उनके आदेश का पालन कर। यह तो स्पष्ट पैंतरेबाजी है कि आर्य जनता को धोखे मे डाले कि महात्मा आनन्दभिक्षु जी को हम आश्वासन दे रहे हैं। हम आर्यजगत् से निवेदन करते हैं कि इस पैंतरे बाजी की कीच में न फसे। श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी को आश्वासन देना यही है कि श्री महात्मा आनन्दस्वामी सरस्वती के आदेश का पालन किया जावे।

आर्य युवक परिषद् के युवकों से

यही लोग लिखने लगे हैं कि "आर्ययुवक परिषद के युवक इस समस्या को सुलझाने मे आगे बढें।" हम आर्ययुवक परिषद् को सफल मनोरथ देखना चाहते हैं। आर्यमर्यादा मे इस का हम स्वागत कर चुके हैं। २० जुलाई ६९ को आर्ययुवक परिषद् के निमन्त्रण पर मे स्वय दर्शक रूप मे उन की बैठक मे सम्मिलित हुआ। मेरे मन पर उस कार्यवाही का जो प्रभाव पडा, उस से मैं आर्ययुवक परिषद् के युवको को निवेदन करना चाहता हूँ, कि अखाड बाज बडी नीति से आपके पवित्र सघटन मे दरार डालना चाहते हैं। आप इस से बचे। सस्ती मान-प्रतिष्ठा के प्रलोभन से दूर रह कर आर्यावर्त्त के आर्ययुवको को एक सूत्र मे सघटित करना ही आपका उद्देश्य है। यदि आर्ययुवक परिषद् ने बाह्य झगडे में हाथ डाला तो पार्टीबाज तो पहिले ही बिगड हुये हैं आप के सघटन को भी बिगाड देंगे। अत सावधान रहिये। हमने आपके सघटन की सुदृढता और सुरक्षा के लिये यह निवेदन कर दिया है। मानना अथवा न मानना आपका काम है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पंजाब के मुख्य मन्त्री के नाम खुला-पत्र

सेवा मे, माननीय श्री सरदार गुरनाम सिंह जी,

मुख्य मन्त्री—पजाब राज्य चण्डीगढ

आदरणीय महोदय, सादर नमस्ते।

मुझे 'वीरप्रताप' जालन्धर दि० १६ ७-६९ मे श्री रामगोपाल शालवाले द्वारा आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर के सम्बन्ध मे लिखा पत्र पढने का अवसर मिला। पजाब के प्रत्येक व्यक्ति को अब भली प्रकार ज्ञात हो चुका है कि श्री वीरेन्द्र और उसके समाचार पत्रो का दूसरो के ऊपर मिथ्या आरोप लगाना तथा असत्य प्रचार एक स्वभाव बन गया है। श्री रामगोपाल शालवाले भी उन्ही के साथी हैं और वह श्री वीरेन्द्र की प्रत्येक बात को सम्पुष्ट करने के लिये तत्पर रहते हैं। श्री शालवाले द्वारा लगाये आक्षेपो के विषय मे वस्तुस्थिति निम्न प्रकार है—

१—आर्यसमाज के सब सघटनो द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के झगड समाप्त करने का पूर्ण अधिकार मिला था। उसी के अनुसार उन्होने सभा का सारा प्रबन्ध और नियत्रण अपने हाथ मे ले लिया था श्री वीरेन्द्र तथा श्री रामगोपाल ने आश्वासन देकर भी महात्मा जी की किसी आज्ञा का पालन नही किया। दुखी होकर महात्मा जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रबन्ध, नियत्रण तथा सचालन का पूर्ण अधिकार अपने तार दि० २०-६ ६९ तथा पत्र दि० २५-६ ६९ द्वारा मुझे सौप दिया। उसी के अनुसार मेरी प्रेरणा और प्रार्थना पर सभा के उप-प्रधान श्री लालचन्दजो सब्बरवाल एडवोकेट तथा जालन्धर कार्यालय के अधिष्ठाता श्री रामलाल जी गुप्त म्युनिसपिल कमिश्नर १-७-६९ को सभा कार्यालय गुरुदत्त भवन मे गये और कार्यालयाध्यक्ष श्री देवदत्त को सारी स्थिति से अवगत किया। इससे प्रभावित होकर श्री देवदत्त जी ने दोनो अधिकारियो का स्वागत किया तथा तथा सारे कार्यालय की चाबियाँ उनके सुपुर्द कर दीं।

२—किन्ही गुण्डो द्वारा कार्यालय पर जनसघियो और अकालियों ने कब्जा किया—यह समाचार नितान्त असत्य और द्वेषपूर्ण है। श्री लालचन्द सब्बरवाल एडवोकेट और श्री रामलाल जी गुप्त म्युनिसपिल कमिश्नर जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियो को गुण्डा कहना और लिखना अत्यन्त ही अशोभनीय और अनुचित है।

३—श्री मनोहरसिह जो दण्डाधिकारी जालन्धर के निर्णय के विरुद्ध सेशन जज जालन्धर की सेवा मे अपील की जा चुकी है अत इस विषय मे हम किसी प्रकार की टिप्पणी करना आवश्यक नही समझते।

४—श्री वीरेन्द्र जी अपने समाचार पत्र द्वारा स्थानीय पोलिस अधिकारियो को बदनाम करने को खातिर ही यह प्रचार कर रहे हैं कि उन्होने श्री सब्बरवाल जो को इस काय मे सहायता की है। वस्तुस्थिति यह है कि श्रीवीरेन्द्र आदि द्वारा की गई रिपोट के आधार पर श्रीलालचन्द सब्बरवाल तथा श्री रामलाल गुप्त के विरुद्ध पोलिस ने एक केस धारा ४४८।१०७ मे रजिस्टर किया है। यदि पोलिस का उक्त कार्य मे अशमात्र भी हाथ होता तो उनके विरुद्ध यह केस ही रजिस्टड क्यो होता।

५—मेरी प्राथना पर श्री निरजनसिह जी मल्ला सीनियर सब-जज जालन्धर ने दि० ११-७ ६९ को निषधाज्ञा द्वारा दीवान रामसरनदास, श्री वीरेन्द्र तथा श्री मुरारीलाल आदि को, अपने आपको सभा के अधिकारी घोषित करने और सभा के कार्यों व सम्पत्ति मे हस्तक्षेप करने से रोक दिया है। ऐसी अवस्था मे उनको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी लिखना और कहना अवध तथा निषधाज्ञा (Injunction) के विरुद्ध है।

६—श्री वीरेन्द्र जी अवैध रूप से आयसमाज का नेता बनने तथा प्लटफार्म प्राप्त करने के लिये वह जहाँ कई अनुचित कार्य करते हैं वहाँ भोल-भाल आर्यबन्धुओ को भी गुमराह करते हैं, जिससे पजाब का वातावरण दूषित ही होता है।

उपरोक्त सारी स्थिति को ध्यान मे रखते हुए आशा है, आप श्री वीरेन्द्र तथा उनके साथी श्री रामगोपाल शालवाल आदि के भ्रममूलक, असत्य और तथ्य के विपरीत आरोपो पर ध्यान न देगे।

भवदीय

रामसिंह

दिनाक १७-७-६९ प्रधान आय प्रतिनिधि सभा पजाब

आर्यजगत् में शान्ति स्थापित करने के लिये आवश्यक सुझाव

(डॉ० पूर्णचन्द्र जी, एडवोकेट पूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा)

(१) मैंने २३ जुलाई के आय-मर्यादा मे महात्मा आनन्द स्वामी जी का वक्तव्य पढा। पढ कर बडा दु ख हुआ, इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सार्वदेशिक सभा के वार्षिक निर्वाचन मे पजाब के १५ प्रतिनिधियो को सम्मिलित कर लेने से एक बडी भूल हुई है। इस से दशम आर्य महा-सम्मेलन के प्रस्ताव और सार्वदेशिक सभा के अतरग सभा के निश्चय और महात्मा आनन्दस्वामी जी के आदेश की अवहेलना हुई है, जो धर्म, मर्यादा और राजकीय विधान और आयसमाज के विधान के प्रतिकूल हुआ है।

(२) आर्यसमाज का सघटन नीचे से आरम्भ होता है स्थानिक आर्य-समाजे पहले बनी फिर प्रान्तीय सभाओ का निर्माण हुआ और सबसे अन्त मे सार्वदेशिक सभा आयजगत् की शिरोमणि सभा का निर्माण हुआ। निर्माण नीचे से हुआ है खराबी ऊपर आई है उपचार भी नोचे से होगा। उपचार के लिये दो विचार हैं।

(क) ३ अगस्त ६९ को सारे देश मे प्रत्येक आयसमाज मे साप्ताहिक सत्सग के अवसर पर ये प्रस्ताव पास किया जाये कि सावदेशिक सभा का ३१ मई का निर्वाचन अवैध और अमान्य है और जब तक आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का विधिपूवक नया निर्वाचन न हो जाये उस समय तक सार्व-देशिक सभा का निर्वाचन पुन न हो और उस के साथ आर्य प्रादेशिक सभा के प्रतिनिधियो को भी मान्यता मिलनी चाहिये और आर्य प्रतिनिधि सभा गुजरात के प्रतिनिधियो को भी सम्मिलित होने का अवसर मिले।

महात्मा आनन्द स्वामी जी इस समय आयजगत् की विभूति हैं उनके आदेश की अवहेलना कभी सहन नही की जा सकती।

(ख) जिन्होने सार्वदेशिक सभा के अवैध निर्वाचन मे भाग लिया है वह किसी न किसी स्थानीय समाज के आर्य सभासद अवश्य होगे जिन आर्य समाजो के वे आर्य सभासद हैं उनको अपनी समाज का नैमित्तिक साधारण अधिवेशन बुलाना चाहिये और उन सज्जनो से अनुरोध करें कि वह अपनी भूल स्वीकार करें और सार्वदेशिक सभा से अपना सम्बन्ध विच्छेद करें और यदि वह न मानें तो एक या दो वर्ष के लिये उनको आर्य सभासद के अधिकार से वचित करने का प्रस्ताव स्वीकार करे।

(३) मेरी यह धारणा है कि आर्य समाज के कायकर्त्ता और सदस्य उत्साही हैं उनके अन्दर धर्म केलिये प्रम और लगन है वे मर्यादा की अवहे-लनाको स्वीकार नही करेंगे। मेरा यह भी अनुभव है कि केवल थोडे से ही आदमी हैं जो पदो के लिये लालायित होकर अनुचित उपायो को प्रयोग मे लाते हैं और दलबन्दी का सहारा लेते हैं उनको मुकदमे बाजी से सकोच नही होता वे भी एकान्त मे बैठ कर कभी-कभी उस दशा से दुखित होते हैं। परन्तु चक्कर मे फसे होने के कारण जाल से बाहर निकलना कठिन हो जाता है। साधारण सभासदो को ऐसी दलबन्दी से न कोई लाभ होता है और न उनको इसमे कोई रुचि। मैं यह भी मानता हूं कि जिन सज्जनो ने सार्वदेशिक सभा के निर्वाचन मे अवैध काय किया है उन्होने भी आर्य-समाज की कभी तो सेवा की है।

(४) मैं आयजगत् के महानुभावो से क्षमा याचना करता हूं और अपने व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध मे यह निवेदन करना चाहता हूं कि मैंने अपनी सामर्थ्य और सुविधा के अनुसार आर्यसमाज की सेवा ५०-५५ वष से अधिक समय की है। सार्वदेशिक सभा का प्रधान भी रहा हूं। सार्वदेशिक सभा के तीसरे वर्ष के निर्वाचन मे मेरे स्वामी ध्रुवानन्द जी के मुकाबले मे पाच सात वोट कम आये और मैं हार गया परन्तु न मुकदमे बाजी की सूझी न नोटिस बाजी की। आर्यसमाज को छोडा भी नही, बराबर सेवा करता रहा हूं। कई पुस्तकें छप गई हैं कभी-कभी लेख भी प्रकाशित हुये हैं और प्रचार भी करता रहा हूं। मुझे दलबन्दी और मुकदमे बाजी से बडा दु ख होता है।

मेरे ये सुझाव आर्यसमाज की आन्तरिक सुधार के लिये हैं इन से मुकदमे बाजी भी समाप्त होगी। घर की बीमारी का इलाज घर मे हो जायेगा और मुझे पूर्ण आशा है कि आर्य जनता इसका स्वागत करेगी। जिन सज्जनो को मेरा सुझाव अरुचिकर हो उन से क्षमायाचना करता हूं। मैंने डा० डी-राम जी को इस सम्बन्ध मे तीन पत्र लिखे हैं और श्री प्रताप जी भाई को भी लिखा है। कोई उत्तर अभी तक प्राप्त नही हुआ है। ये सुझाव उनके लिये खुली चिट्ठी समझी जाये।

ओङ्कार-जप-विधिः (९)

[गीतोक्त-विधान]

(प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—श्रीमद्भगवद्गीता के कई प्रसगो में ओङ्कारोपासना का प्रतिपादन बहुत उत्तमता से किया गया है। इस विषय मे गीता के छटे, सातवें आठवें और नौवे अध्याय का विचार विशेष रूप से करना चाहिये।

२—गीता के छटे अध्याय का आरम्भिक अंश देखिये :—

अनाश्रित कर्मफलं, कार्यं कर्म करोति यः।

स संन्यासी च योगी च, न निरग्नि र्न चाक्रियः ॥१॥

अर्थ—जो कर्म-फल की कामना न करता हुआ। करने योग्य कर्म को करता है, वही सच्चा सन्यासो है और वही यथार्थ योगी है। जिसने अग्निहोत्र का परित्याग कर दिया या जिसने शास्त्र विहित कर्म-काण्ड को छोड दिया [यह तो नाम मात्र का ही सन्यासी वा योगी है।] वास्तविक सन्यासी वा योगी वह नही है।

३—किसी कवि ने ठोक हा लिखा है—

अगर तेरे दिल को है यकसूई हासिल।
ता बाजार मे भी तू खिलवतनशीं है॥
अगर दिल गिरफ्तार हो मखमसो मे।
तो जगल भी बाजार से कम नहीं है॥

यकसूई—एकाग्रता। खिलवतनशी=एकान्तवासी। मखमसो मे,=उलझनो मे तर्क=वितर्कों मे।

४—सन्यास और याग एक ही है—

यं संन्यासमिति प्राहुः, योगं तं विद्धि पाण्डव।

न ह्यसंन्यस्तसंकल्पः, योगी भवति कश्चन ॥२॥

अर्थ—हे अर्जुन! जिसको सन्यास-मार्ग कहते हैं योग-मार्ग भी वही है। इस रहस्य को तू भली प्रकार समझ ले। अपने सकल्प—विकल्पो=कामना जालो का परित्याग किये विना तो कोई व्यक्ति योगी हो ही नही सकता।

५—सफलता का साधन कर्म-योग ही है—

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं, कर्म कारणमुच्यते।

योगारूढस्य तस्यैव, शमः कारणमुच्यते ॥३॥

अर्थ—जो मनुष्य योगारूढ होने की इच्छा करता है, उसके लिये कर्म करना हो सफलता का प्रधान साधन है। जो योगारूढ हो जाता है, अर्थात् योग-साधन की प्रारम्भिक सफलताओं को प्राप्त कर लेता है। उसके लिये तो सब सकल्प—किकल्पो का प्रशमन=कामना जालो का परित्याग ही प्रधान साधन है।

६—योगारूढ का स्वरूप दर्शाते हैं—

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु, न कर्मसु अनुषज्यते।

सर्वसंकल्प-संन्यासो, योगारूढस्तदोच्यते ॥४॥

अर्थ—जब कोई मनुष्य इन्द्रियो के विषय-भोगो मे और कर्म-फलो मे आसक्त नही होता और सब प्रकार के सकल्प—विकल्पो का परित्याग कर देता है, तब उसको ही योगारूढ कहते हैं।

७—स्वावलम्बी और आत्म-सन्मानी बनना चाहिये। परमुखापेक्षी कोई न बने—

उद्धरेदात्मनात्मानं, नात्मानमवसादयेत्।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुः, आत्मैव रिपुरात्मनः ॥५॥

अर्थ—मनुष्य को चाहिये कि अपना उद्धार अपने साधनों और अपने पुरुषार्थ के द्वारा अपने आप ही करे। कोई किसो विषम परिस्थिति के वशीभूत होकर भी अपने ही हाथो से अपनी अधोगति न करे। वास्तव में तो मनुष्य=जोवात्मा अपने आप हो अपना बन्ध है, और अपने आप ही अपना शत्रु है।

८—सयम का महत्त्व दर्शाते है—

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य, येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे, वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥६॥

अर्थ—आत्मा अपने आप ही उसका मित्र है जिसने अपने आत्मा द्वारा अपने मन और इन्द्रियो सहित शरीर को जोत लिया है। जिसने अपने आप को नहीं जीता उस के प्रति तो उसका अपना आत्मा ही शत्रु के समान व्यवहार किया करता है।

९—परमात्मा के साक्षात्कार को युक्ति—

जितात्मनः प्रशान्तस्य, परमात्मा समाहितः।

शीतोष्ण—सुख—दुःखेषु, तथा मानापमानयोः ॥७॥

अर्थ—जिसने अपने आप का अपने आधीन कर लिया है। और जिसका मन भी एकाग्र एव प्रशान्त हो चका है जो गरमी-सरदी, सुख-दुःख, और मान एव अपमान को भी एक समान शान्त चित्त मे ही सहन कर लेता है, उस के ज्ञान मे ही परमात्मा सम्यक प्रकार मे स्थित है।

१०—योगी का लक्षण—

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा, कूटस्थो विजितेन्द्रियः।

युक्त इत्युच्यते योगी, समलोष्टाश्मकांचन ॥८॥

अर्थ—जिसका अन्तरात्मा ज्ञान और विज्ञान से परितृप्त है। जिसकी स्थिति निरन्तर समता पूर्ण हो रहती है जिसने अपनी इन्द्रियो को पूर्णतया जीत लिया है। जो मिट्टा पत्थर और स्वर्ण आदि धातुओ को भी एक ही जैसी तात्त्विक दृष्टि मे देखता है। वही सच्चा योगी है।

११—समबुद्धि की विशेषता

सुहृन्मित्रार्युदासीन-मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।

साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥९॥

अर्थ—जो सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषियो और बन्धुओं के प्रति तथा धर्मात्माओ और पापियो के प्रति भी समता-बुद्धि रखता है, वह योगी श्रेष्ठ है। अर्थात् सत्कर्मों मे प्रीति और पाप कर्मों से विरति—यही समता कही जाती है।

१२—ध्यान का विधान—

योगी युंजीत सततं, आत्मानं रहसि स्थित।

एकाकी यतचित्तात्मा, निराशीरपरिग्रहः ॥१०॥

अर्थ—योगी को उचित है कि वह वासना रहित और सग रहित होकर अपने मन और इन्द्रियो सहित शरीर को जीत कर, एकान्त और शान्त स्थान मे अवस्थित होकर, अपने आप को निरन्तर ही परमात्मा के ध्यान में लगावे।

१३—स्थान और आसन—

शुचौदेशे प्रतिष्ठाय, स्थिरमासनमात्मनः।

नात्युच्छ्रितं नाति नीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

अर्थ—उपासक शुद्ध भूमि मे अपने ऐसे आसन की स्थापना करके, जो कि न बहुत ऊँचा हो न बहुत नीचा हो और कुशा, मृगछाला, एव वस्त्र जिसके ऊपर बिछा हो—

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रियः।

उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥१२॥

अर्थ—वहाँ मन को एकाग्र करके, चित्त को वृत्तियो और इन्द्रियो को सब क्रियाओ का अपने वश मे करके आसन पर बैठ कर, योगी को चाहिये कि आत्म-शुद्धि के लिये निरन्तर अभ्यास=जप और ध्यान करे।

समं कायशिरोग्रीवं, धारयन्नचलं स्थिरः।

संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं, दिशश्चानवलोकयन् ॥१३॥

अर्थ—अपने शरीर सिर और ग्रीवा को एक सीध में करके अचलता और [illegible] सुस्थिर होकर, अपने नाक के अग्रभाग पर अपनी दृष्टि

को जमा कर इधर-उधर बिना देखे हो—

प्रशान्तात्मा विगतभीः, ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तः, युक्त आसीत् मत्परः ।।१४।।

['यम् शब्द 'अहम् का रूप बनता है। यजु० ४०.१७ के अनुसार अहम्' शब्द से ईश्वर का ग्रहण होता है – ओ३म्खम्ब्रह्म ।"]

अर्थ—शान्त चित्त वाला भयरहित ब्रह्मचर्यव्रत में सुस्थिर, [वेद को पढने-पढ़ाने वाला, ईश्वर विश्वासी सदाचारी और वीर्य का स्तम्भन करने वाला] अपने मन को वश मे करके ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव का विचार करते हुए, सर्वतोभावेन ईश्वरार्पण बुद्धि से सावधानता पूर्वक बैठ कर—

युंजन्नेवं सदा मानं, योगी नियतमानसः ।
शान्तिनिर्वाणपरमां, मत्संस्थामधिगच्छति ।।१५।।

अर्थ—इस प्रकार निरन्तर ही अपने आत्मा को ईश्वर मे लगाने वाला, स्वाधीन और एकाग्र मन वाला योगी परमानन्द की पराकाष्ठावाली= सर्वोपरि शान्ति को एव ईश्वर के दिव्य आनन्द को प्राप्त करता है।

१४—भोजन और दिनचर्या—

नाति-अश्नतस्तु योगोऽस्ति, न चैकान्तमनश्नतः ।
न चाति स्वप्नशीलस्य, जाग्रतो नैव चार्जुन ।।१६।।

अर्थ—हे अर्जुन ! न तो बहुत अधिक खाने वाले का योग सिद्ध होता है, न बिल्कुल ही न खाने वाले का। जो अधिक सोता है, या अधिक जागता है, उसका भी योग सिद्ध नही होता।

युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा ।।१७।।

अर्थ—यथायोग्य रीति से आहार-विहार करने कर्तव्य कर्मों में यथा योग्य रीति से पुरुषार्थ करने, यथायोग्य रीति से ही सोने और जागने वाले का ही योग सिद्ध और दुःखों को नष्ट करने वाला होता है।

१५—साधक के स्वरूप, साधना के स्वरूप और ईश्वरभक्ति के लाभों का निरूपण गीता के छटे अध्याय में बहुत उत्तमता से किया गया है। साधकों को उसका विशेष मनन करना चाहिये।

एक शंका बहुत प्राचीन है। अर्जुन उसे प्रस्तुत करता है—

चंचलं हि मनः कृष्ण, प्रमाथि बलवद् दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।।३४।।

अर्थ—हे कृष्ण ! मन बडा चचल है। वह तो प्रमथन करने वाला= वध, नाश और दुःखो करने वाला, अत्यन्त दृढ और बलवान् है। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि उसको वश में करना तो वायु को वश में करने के समान ही अत्यन्त कठिन है।

१७—इस शंका का समाधान भी बहुत प्राचीन है। श्री कृष्णचन्द्र जी समाधान प्रस्तुत करते हैं—

असंशयं महाबाहो, मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते ।।३५।।

अर्थ—हे अर्जुन ! तेरी बात सच है। निःसन्देह मन बडा चंचल है, इसको वश में करना बहुत कठिन है, परन्तु अभ्यास और वैराग्य के द्वारा कठिन होने पर भी यह काय सिद्ध हो जाता है। मन को वश में करना असम्भव नहीं है।

१८—गीता के सातवें अध्याय के आठवें श्लोक में ओङ्कार को ही चारों वेदों का प्रतिपाद्य कथन किया गया है। यथा—

प्रणवः सर्ववेदेषु ।

चारों वेदों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय "ओ३म्" ही है। महर्षि दयानन्द जी का सिद्धान्त भी यही है, जो कि आगे इसी लेख की २३ वीं कण्डिका के अन्तर्गत लिखा गया है।

१९—गीता के दसवें अध्याय के पच्चीसवे श्लोक में जप-यज्ञ को ही सब यज्ञों में श्रेष्ठ कथन किया गया है।

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि

यज्ञों में जप-यज्ञ ही सर्व श्रेष्ठ है।

२०—ओङ्कार की श्रेष्ठता का प्रतिपादन गीताकार ने ठीक उसी प्रकार से किया है, जैसा कि कठोपनिषद् में किया गया है। आठवें अध्याय का ग्यारहवा श्लोक यह है—

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति,
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति,
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ।।

अर्थ—वेदो को जानने वाले विद्वान् जिम विनाशरहित परम-सत्ता= ओङ्कार का कथन करते हैं, जिस में प्रयत्नशील और आसक्ति रहित मुमुक्षुजन प्रवेश करते हैं। जिस परमपद की कामना करते हुए ही साधकजन ब्रह्मचर्यादि कठिन व्रतों का प्रतिपालन किया करते हैं, उसी पद=अक्षर= नाम का कथन अब मैं तेरे लिये संक्षेप से करूंगा।

सर्वद्वाराणि संयम्य । मनो हृदि निरुध्य च ।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणं आस्थितो योगधारणाम् ।।१२।।

अर्थ—सब इन्द्रियों के द्वारों को रोककर, मन को हृदय में स्थिर करके प्राण की स्थापना अपने मस्तक में करके, इस प्रकार योग-धारणा में सुस्थिर होकर—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं, स याति परमां गतिम् ।।१३।।

अर्थ—"ओ३म्" इस एक अक्षर=विनाश रहित ब्रह्म को बारम्बार जपता हुआ और "ओ३म्" अक्षर के वाच्य ब्रह्म का ही निरन्तर ध्यान= उद्भावन करता हुआ=स्मरण करता हुआ जो साधक पुरुष अपने शरीर को त्याग कर जाता है, वह अवश्य ही परमगति को प्राप्त होता है।

२१—गीताकार गीता के नौवें अध्याय के सतरहवें श्लोक में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है—

पिताहमस्य जगतः, माता धाता पितामहः ।
वेद्यं पवित्रमोङ्कार, ऋक्साम यजुरेव च ।।

अर्थ—ईश्वर ही इस जगत् का पिता, माता, विधाता और पितामह आदि भी है। वही जानने और मानने योग्य है। वही पवित्र ओङ्कार= ओ३म् है। चारों वेदों का प्रतिपाद्य भी वही है।

२२—महर्षि पतञ्जलि का सिद्धान्त भी यही है—

स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ।।

[योगदर्शन—१।२६]

अर्थ—वह यह ईश्वर ही पूर्वजों का भी गुरु है, क्योंकि वह काल के बन्धन में नहीं आता।

शेष पृष्ठ १० पर

---

†नासिका, भृकुटि तालु वा कण्ठकूप आदि स्थानों में ध्यान करने का उपदेश नये साधकों को दिया जाता है। यह त्राटक विधि या संयम कहलाता है। इस के अभ्यास से नये साधको को एकाग्रता सम्पादन में विशेष सहायता प्राप्त होती है। महर्षि दयानन्द जी का आदेश भी ऐसा ही है:—

"जब उपासना करना चाहे, तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर, बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभि प्रदेश में, वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर, अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके, परमात्मा में मग्न हो जाने से सयमी होवे।" वे आगे लिखते हैं—

"जब इन साधनो को करता है, तब उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर, सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्य प्रति ज्ञान-विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ प्रहर मे एक घड़ी भर इस प्रकार ध्यान करता है, वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है।"

[सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास सप्तम]

दार्शनिक दृष्टिपात—

"क्या ईश्वर है ?"

[ले० ब्र० वेदपाल (प्रभाताश्रम) टीकरी, जि० मेरठ]

[नवयुवक ब्रह्मचारी को दार्शनिक लेख लिखने पर हम प्रोत्साहन देना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। प्रयास करते रहने पर लेखनशली भी परिमार्जित रूप ले लेगी—सम्पादक]

यह कोई सार्वभौम नियम नही कि हमे सभी विषयो का ज्ञान केवल प्रत्यक्ष प्रमाण से ही हो परन्तु बहुत से ऐसे भी विषय हैं जो कि प्रत्यक्ष प्रमाण से अधिगम्य नही हैं।

फिर अब विचारणा यह होती है कि ईश्वर के अस्तित्व को कैसे स्वीकार किया जावे यह भी मान्य नही हो सकता कि जो पदार्थ हमे प्रत्यक्ष से नही दीखता परन्तु लोक मे वह प्रसिद्ध हो उसको नेत्रबन्द करके 'बाबावाक्य प्रमाणम" के न्याय से मान लिया जाये। और दार्शनिक निकाय उसको भी स्वीकार नही कर सकता कि यह हमारे धर्मागमो मे वर्णित है इसलिये मानना ही पडेगा। इसलिए हम इस पर कुछ दार्शनिक दृष्टि से विवेचन करते हैं। मैं सबसे पहले पाश्चात्य दार्शनिक डेकार्ट का दृष्टिकोण रखता हूँ। जिसकी विद्वत्ता को सुनकर स्वीडन की महारानी ने आमन्त्रित किया था। एक आक्षप जो कि भारतीय दार्शनिको पर लगाया जाता है वह यह है कि वे अपने पूर्व प्रचलित धार्मिक विचारो के दास थे, उनकी यह कल्पना की दौड कितनी सही है इस विवाद मे आज नही पडते। फ्रांस देश के दार्शनिक डकाट कहते थे कि हम किसी भी सिद्धान्त को इस प्रकार स्वीकार नही कर सकते कि इसको हमारे पूर्वज मानते थे वा यह हमारे धर्म ग्रन्थो मे उल्लिखित है। उन्होने एक नई विचार सरणी निकाली। उन्होने सोचना आरम्भ किया कि मै मान लेता हूँ कि मैं भी नही हूँ तथा ईश्वर भी नही है जो कुछ मै देखता हूँ वह सब सशयात्मक है, परन्तु मैं सोचता हूँ सशय करता हूँ, इसलिये मैं हूँ। इस प्रकार उन्होने एक स्वसिद्ध निकाला Cogito ergo som' अर्थात् मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ। इस सिद्धान्त से डकार्ट ने आत्मा की सिद्धि की, उन्होने कहा कि जैसे किसी को भूख लगी हो तो उसकी सिद्धि के लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नही वह स्वयसिद्ध है।" इसी प्रकार आत्मा की सिद्धि भी स्वय हो जाती है।

वास्तव मे यह डेकार्ट की कोई नई उपज्ञा नही है। इसकी मूल रूप-रेखा भारतीय दर्शनो मे विद्यमान है जैसाकि शङ्कराचाय जी ने अपने ब्रह्म-सूत्र भाष्य मे लिखा है—

"सर्वो हि आत्मास्तित्व प्रत्येति, नाहमस्मीति हि नात्मास्ति-स्वप्रसिद्धि स्यात् सर्वो लोको नाहमस्मीति प्रतीयात्"

वाक्यार्थ सुस्पष्ट है कि आत्मा के अस्तित्व को सर्वसाधारण भी स्वीकार करता है, यदि कोई कहे कि मैं नही हूँ तो किसी को किसी की प्रतीति नही होती। तथा अन्यत्र शङ्कर ने लिखा है कि—"य एव निराकर्ता तदेव तस्य स्वरूपम' अर्थात जो आत्मा निराकर्त्ता है वही तो आत्मा है।

अस्तु डेकार्ट ने इसी प्रकार के तीन स्वय सिद्धो से ईश्वर की सिद्धि की है। इस प्रकार है।

१—सत्ता मूलक प्रमाण=ईश्वर के अस्तित्व का ज्ञान हमे प्रकृति की सत्ता से होता है। मुझे इस सृष्टि को देखकर किसी पूर्ण सत्ता का विचार होता है। पूर्णता बिना अस्तित्व के हो नही सकती इसलिये पूर्ण ईश्वर का अस्तित्व है।

२—काय—कारण युक्ति—प्रत्येक घटना का कोई कारण अवश्य होता है। कार्य को उत्पन्न करने की शक्ति कारण मे होती है। इसलिये कारण कार्य से अधिकतर नही तो बराबर जरूर होगा। इस जड प्रकृति को कार्य रूप मे परिणत करने के लिये कोई निमित्त कारण होना चाहिये। जीव अपूर्ण है। अपूर्ण पूर्ण ससार की रचना नही कर सकता, इसलिए कोई पूर्णतम शक्तिमान् तत्त्व होना चाहिये जो पूर्ण होगा उसे आप चाहे ईश्वर कह लेवें अथवा अन्य किसी नाम से।

विश्व सम्बन्धी युक्ति—ससार के अस्तित्व से भी ईश्वर का प्र होता है। प्रश्न है कि हमको बनाने वाला कौन है, यदि मैं या मेरे पिता ही मेरे निर्माता हैं तो वे मुझे पूर्ण बनाते परन्तु वे मुझे पूर्ण अमर नही बना सके। इसलिये मुझ को बनाने वाला कोई अन्य है जि रचयिता स्वीकार करगे वही ईश्वर है। इस प्रकार डकाट ने ईश्व सिद्धि की है।

अब हम भारतीय दार्शनिको की विचारमाला पर विमर्श करते भारतीय दर्शनो मे साख्य दशन प्राचीन एव महत्त्वपूर्ण है इसलिये कापिल दर्शन पर विचार करते हैं। कुछ लोग जो कि ऋषियो के मम न समझ सके वे कपिल को नास्तिक तक कहने का दुस्साहस करते उनकी प्रगल्भता पूर्ण कुछ युक्तिया इस प्रकार हैं। प्रथम वे कहते हैं साख्य दर्शन मे ईश्वर विमर्श को स्थान नही दिया इसलिए वे नास्तिक भला विचारिये इन प्रक्षानुकारियो की प्रक्षा पर दुजनतोष न्याय से मान लेते हैं कि उन्होने अपने दर्शन मे ईश्वर का विश्लेषण नही कि परन्तु इतने मात्र से तो कोई नास्तिक या आस्तिक नही बन जाता। र किसी ने भूगोल का ग्रन्थ लिखा और वह उसमे इतिहास नही लिखता उस पर यह दोषारोपण तो नही किया जा सकता कि वह अशोक प्र ऐतिहासिक पुरुषो की सत्ता का स्वीकार नही करता। यह कल्पना मे ही तर्क की उपज नही अपितु महर्षि वात्स्यायन अपने न्याय दर्शन के भा को करते हुये चतुर्थ सूत्र के भाष्य मे सुस्पष्ट उल्लेख करते हैं।

"परमतमप्रतिसिद्धमनुमतमिति हि तन्त्रयुक्ति"

अर्थात् शास्त्रकारो का यह नियम है कि जिस विषय का 'जिस सिद्धा का जो शास्त्रकार न तो विधान करता है न उसका प्रत्याख्यान करता तथा उस विषय का इतर सच्छास्त्र मे विधान है तो उसका अभिप्राय र होगा कि तच्छास्त्रकार भी उस सिद्धान्त को स्वीकार करता है। अब ज कि वात्स्यायन की यह पक्ति वतमान है तो हम कैसे मानल कि कपि ग्रन्थ मे ईश्वर विषयक विमर्श नही इसलिय वे नास्तिक थे। इस प्रका शायद यह बात पूर्वोक्त प्रकथन स निर्भ्रान्त हो गई होगी। इस पर १ यदि कोई गोपायसी—न्याय से आक्षेप करेगा तो उसका वह वाग्व्यापा गगनरोमन्थ की तरह निरर्थक प्रमत्त प्रलाप मात्र ही होगा।

ईश्वरासिद्धे (१—९६) इस कापिल सूत्र को लेकर भी कुछ लोग ज सूत्र रचना के महत्त्व को नही समझते अपने स्वतन्त्र मुख से महर्षि कपि को नास्तिक कह बैठते है। यदि सूत्र का सामान्य दृष्टि से अर्थ किया जावे तो अर्थ होगा कि ईश्वर असिद्ध है अर्थात् ईश्वर नही है। अब हम सूत्र पर सूक्ष्म बुद्धि से विचार करते है। सूत्रार्थ से पूर्व हमे सूत्र रचना को प्रणाली का महत्त्व देखना चाहिये। व्याकरण के अनुसार सूत्र **शब्द षिवु तन्तुसन्ताने** धातु से **बनता है** इस प्रकार सूत्र शब्द का **अर्थ हुआ "सीव्यत्यनेनेति सूत्रम्"** अर्थात् जिससे सीया जाये उसे सूत्र कहते हैं। सीते समय हम क्या करते है दो कपडो का परस्पर सम्बन्ध जोड देते हैं इसी प्रकार सूत्रो मे भी अर्थो को परस्पर जोडा जाता है। इसी भाव को स्पष्ट करने के लिये पाणिनि ने अपने व्याकरण शास्त्र मे 'स्वरितेन अधिकार' का सूत्र परिणयन किया है। यदि सूत्राथ करते समय इस प्रक्रिया का आश्रय न लिया जाये तो सब सूत्र ग्रन्थो की अधोगति हो जायेगी और वे एक प्रमत्त प्रलाप की भाति प्रतीत होगे। अब हम आम्रान्पृष्ट, को विदारानाचष्टे" लोकोक्ति के शिकार न बनकर सूत्रार्थ पर विचार करते हैं। सूत्र के पूर्व यह विचार उठाया गया है कि इस ससार का उपादान कारण कौन है तो कोई शङ्का कर सकता है कि ईश्वर को ही जगत् का उपादान कारण मान लेना चाहिये। इसमे अनेक दोष आते हैं। अत आचार्य कपिल कहते हैं कि "ईश्वरासिद्ध" अर्थात् इस जगत् का उपादान कारण होने मे ईश्वर असिद्ध है। भाव यह है कि ईश्वर जगत् का उपादान कारण नही है। इतने सुसम्बद्ध एव सुस्पष्ट अर्थ को न समझकर लोगो ने कितना अनर्थ कर डाला इसको पाठक गण स्वय समझ गये होगें। साख्य दशन मे कुछ और भी स्थल हैं जहाँ सन्देह हो जाता हैं परन्तु शान्त चित्त होकर मनन करने से वे सब सन्देह दूर हो जाते हैं। हाँ, परन्तु जिनका लक्ष्य ही महर्षियो को

ैक सिद्ध करना है। उनके लिये तो भर्तृ की यही पंक्ति ही उपस्थित ा सकती है कि—

"अज्ञस्य नास्त्यौषधम्"

अर्थात् सत्यासत्य के जिज्ञासु एव बुद्धिमानो के लिए तो शास्त्रकारों ने कुछ अवगत करा दिया है परन्तु सत्य को जानना जिनका उद्देश्य ही है उनको समझाने के लिये कोई औषधि नही है।

अस्तु उपर्युक्त लेख विन्यास से यह तो स्पष्ट हो गया कि कपिल र को मानते थे। क्योकि उन्होने अपने ग्रन्थ में ईश्वर का प्रत्याख्यान कया नही। अब उनका एतद्विषयक स्पष्ट निर्देश भी पाठकों को ात हैं। एक बात हम सब वैदिक लोग मानते हैं कि महर्षियों के मुखार- ः से उच्चारित शब्द विन्यास की भाव गरिमा को सामान्य जन नही झ पाते। इसलिय तो ऐसे लोगो के लिये परम कारुणिक आचार्य ञ्जलि ने एक परिभाषा का उल्लेख करना अपरिहेय समझा। वह इस ार है।"

व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिर्न हि सन्देहादलक्षणम्"

इसका भाव यह है कि 'यदि कभी शास्त्रीय बात पर सन्देह हो जाये उस पर विचार करना चाहिये न कि सन्देह मात्र से उसको भ्रान्त झना चाहिये। इस प्रकार सूक्ष्मता से विचार करने पर अनेक वचन द् विषयक साख्य सूत्रो मे उपलब्ध हो जायेगे। यथा—

तत्सनिधानादधिष्ठातृत्व मणिवत्। इस सूत्र मे महर्षि कपिल ईश्वर स्वरूप का वर्णन करत हैं। वैदिक दार्शनिक ईश्वर को ससार का ादान कारण नही मानते, फिर प्रष्टव्य यह होता है कि ईश्वर का ससार साथ क्या सम्बन्ध है तो सूत्रकार कहते हैं कि ईश्वर इस जगत् का घेष्ठाता है। अब विचारना यह है कि इस जगत् को अधिष्ठातृत्व की वश्यकता क्यो पडी ? इसका उत्तर साफ शब्दो मे यह होगा कि प्रकृति ड है, चेतन-विहीन है प्रकृति को गतिशील अथवा यूँ कहिये ससार को र रूप मे लाने के लिए कोई शक्ति तो होनी चाहिये। यदि प्रकृति स्वय तेमती है तो उसमे जडता की हानि का दोष आयेगा। इसलिए एक परम क्ति है जो इस प्रकृति को गतिशील बनाये हुये है, साख्य के शब्दो मे उसे धिष्ठाता या ईश्वर कहेगे। इस में एक शङ्का यह होती है कि ईश्वर इस सार को कैसे गतिशील बनाता है? उसके लिये सूत्रकार कहते हैं "मणिवत्" र्थात् जैसे अयस्कान्त मणि (चुम्बक) अपने नैकटय मात्र से ही लोहे में क्रया उत्पन्न कर देता है, बस इसी प्रकार वह ईश्वर अपने सामीप्य व्यापकता) मात्र से इस प्रकृति को क्रियावती बना देता है। बुद्धि का धनी कह सकता है कि इस ईश्वर के पचडे मे क्यो पडा जाये, जीव को ही ससार का अधिष्ठाता मान लेंगे, इस से लाघव भी आयेगा जिसके लिए वैयाकरण लोग पुत्रोत्सव मनाते, लघुता एक गुण है इसको तो हम भी मानते हैं परन्तु क्या इस लघुता के लिये हम अपने शिर को काट दें ? परन्तु इस लघुता के लिए तो कोई तैयार नही होगा। इससे सिद्ध हुआ कि लाघव गुण का महत्त्व भी सब जगह नही। किसी प्रकार जीव को ससार का कर्ता मान भी ले, तो शिरच्छेदन जैसा महद्दोष आयेगा जो कि अत्यन्त असह्य है। स प्रकार स्पष्ट एव युक्ति युक्त सिद्ध होता है कि कपिल ईश्वर भक्त एव आस्तिक थे। परन्तु धन्य है उन मतिमान्नरो की मति पर जो इतने पर भी निर्दोष ब्रह्मध्यानपरायण महर्षि को भी नास्तिक कहने का दुस्साहस करते हैं। और तो और शङ्कर, सायण, उदयनादि आदि सस्कृतज्ञ भी इस दलदल मे फस गये। आशा हैं मेरा यह उपर्युक्त विवेचन उनके विचार प्रवाह को रोकने मे सेतु की एक ईट का काम करेगा।

नास्तिक दुग को दुर्गति करने मे जितने शङ्कर मान्य एव अग्रणी हैं उतने नयायिक भी हैं। कहने मे शायद मैं भ्रान्त नही हूँगा। न्याय दर्शन के प्रणता महर्षि गोतम थे वे पक्के आस्तिक थे इसमे कोई विवाद् नही। यहाँ तो हमे यह देखना है कि उन्होने ईश्वर की सिद्धि किन तर्कों से की है तथा उनके तर्को मे कितना बल है। उनका इस विषयक सूत्र यो है—

ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्यदर्शनात् (४।१।१८)

नैयायिक ईश्वर की सिद्धि फल प्रदाता के रूप मे करते हैं। उनका तर्क इस प्रकार है। मनुष्य बहुत सी क्रियाये प्रतिदिन करता है। परन्तु उन सब क्रियाओ का फल उसे तत्समय में ही उपलब्ध नहीं होता और सभी प्राणी चाहते हैं कि उनकी क्रियाओ का फल उसी समय ही मिलना चाहिए और यदि जीव फल लेने मे स्वतन्त्र होता तो वह स्वानुकूल फल को ले लेता एव प्रतिकूल का स्पर्श तक नही करता। इस प्रकार ससार मे कोई प्राणी सन्तापित नही होना चाहिए। परन्तु व्यवहार में इसका बाध हो जाता है। जिसका बाध हो जाता है वह कभी सत्य नही हो सकता, इससे सिद्ध होता है कि ससार के सभी प्राणी किसी महती शक्ति के अधीन हैं जैसा कि सुगृहीत—नाम आचार्य वात्स्यायन इसी सूत्र के भाष्य मे लिखत हैं—

"पुरुषोऽयं समीहमानो नावश्यकं फलं प्राप्नोति तेनानुमीयते- पराधीनं पुरुषस्य कर्म फलाराधनमिति तस्येश्वरः कारणमिति।"

इसमे एक शङ्का यह हो सकनी है कि जब कर्म फल ईश्वर के अधीन है तो जीव परिश्रम क्यो करे। जैसा ईश्वर को फल देना अभीष्ट होगा वैसा फल देगा। इसके लिए महर्षि गोतम कहते हैं कि—

"तत्कारित्वादहेतु." (१-११)

सूत्रार्थ यो है कि यह हेतु ठीक नही क्योकि ईश्वर जीव कृत कर्मो के फल देने मे अनुग्रह मात्र करना है अथवा यो समझिये कि ईश्वर मनुष्य विहित कर्मों के अनुसार यथोचित देश काल मे फल प्रदाता है। इसलिए यह युक्ति हम कम फल भोगने मे परतन्त्र हैं इसलिये परिश्रम क्यो कर केवल कर्महीनो का आश्रय स्थान है। इस प्रकार नैयायिको ने आकाटय युक्तियो से ईश्वर को सिद्ध किया है।

नास्तिक पुरुष भोग-वादिता मे फसा होता है यह एक सार्वभौम नियम है। इसके उदाहरणार्थ सारा नास्तिक जगत् उपस्थित है। कुछ पण्डित-मानियो ने जिन्होने ऋषियो की भाव-गरिमा को नही समझा वे कणाद को भी नास्तिक कहते हैं, परन्तु उनकी यह स्थापना बालु के सेतु की तरह विचार प्रवाह मे प्रवाहित हो जाती है। भला जो इतना बुद्धि-सम्पन्न होते भी एक-एक कण को चुनकर अपना जीवन यापन करता हो वह कभी नास्तिक हो सकता है? तथापि कोई पण्डितमानी कह सकता है कि हमें इस से क्या प्रयोजन की वे कणभुक् थे। तो हम उनसे पूछते हैं कि बताओ ! इसमें क्या प्रमाण है कि वे नास्तिक थे तो वे वही पूतिकूष्माण्डवत् (गलासडा) प्रमाण देंगे कि उन्होंने स्वग्रन्थ मे ईश्वर का विवेचन नहीं किया जो कि पूर्ववद् हेय है।

हम सब भारतवासियो की महर्षियो के मुखारविन्द से मुखरित हुये शब्दविन्यास पर बडी श्रद्धा है। परन्तु उनकी भावभरी गुत्थियो को समझने के लिये हमें आर्ष भाष्य शैलियो की शरण लेनी पडेगी। उन्ही आर्ष-भाष्य कर्त्ताओ मे एक पातञ्जलि हैं जिन्होने हमें ऋषि प्रोक्त ग्रन्थों की ग्रन्थियो को समझाने के लिए एक मार्ग रखा। वे महाभाष्य के सप्तम अध्याय के दूसरे पाद के तीसरे सूत्र मे एव सूत्रित करते हैं।

"इहेङ्गितेन चेष्टितेन निमिषितेन महता वा सूत्रनिबन्धेन आचार्याणामभिप्रायो लक्ष्यते।"

बात बिलकुल स्पष्ट है कि आचार्यों के सकेत से, चेष्टा से, भाव भङ्गिमा से या बडे-बडे सूत्रो से उनके अभिप्राय जाने जाते हैं। इस दृष्टि से जब हम कणाद के दर्शन पर विचार करते हैं तो अनेक स्थल आस्तिकता प्रकट करने वाले मिलेगे। वेदो मे उनकी अगाध श्रद्धा थी इस लिये तो उन्होने इस "तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् इति" सूत्र को अपने शास्त्र में दो बार सूत्रित किया। भला जो मनुष्य वेद को परम प्रमाण मानता हो वह कभी नास्तिक हो सकता है ? और भी छ-सात सूत्रो में वेद तथा आगम का आश्रय लकर महर्षि कणाद ने आस्तिकता को सुस्पष्ट प्रकट किया है। भला अब रोयें या हसें उनकी उच्चतम प्रतिभा पर जो इतने

शेष पृ० ११ पर

परिवार नियोजन आन्दोलन का अन्धकारमय पक्ष—

समाज घास-फूँस से भर जायगा !

(डाक्टर रामचरण महेन्द्र गवर्नमेंट कालिज कोटा राजस्थान)

१—तस्वीर का एक पहलू

"बच्चे के मुंह से झाग निकल रहे हैं। बदन ऐंठ रहा है !"

"ऐसा मालूम होता है कि आपके पुत्र को किसी ने विष दे दिया है !"

"जल्दी करो ! इसे फौरन अस्पताल ले चलो !'

इजीनियर साहब घबडाये हुए थे। वे जिस मकान मे किरायेदार थे, उसी से उनका मकान खाली कर देने के सम्बन्ध में मुकदमा चल रहा था। "मुए मकान मालिक ने मेरे पुत्र को कुछ कर दिया" उनकी धर्मपत्नी झुंझलाए हुए स्वर मे बोली।

लडके की हालत खराब होती जा रही थी। इजीनियर साहब ने उसे फौरन अस्पताल पहुँचाया। उसके मुह से लगातार झाग निकल रहे थे। पूरा शरीर ऐंठा जा रहा था। जान को खतरा था।

"इट इज ए केस आफ पौएजन !' डाक्टर ने परीक्षा करके अपना निर्णय दे दिया।

'डाक्टर ! मेरे लडके को बचा दीजिए ! यह मेरा इकलौता पुत्र है ! जिन्दगी का एकमात्र सहारा !" रोते हुए इजीनियर साहब ने कहा।

"हम अपना सा कुछ न छोडेगे। अभी इसे कय कराते है जो विष दिया गया है, वह बाहर आ जायगा। घबडाइये नहा। क्या आपके और औलाद नही है ?' डाक्टर ने पूछा।

'जी एक छोटी लडकी और है।

"उसके बाद कोई और नही हुआ ?'

"परिवार नियोजन का आपरेशन करा लिया था। बस, दो ही सन्तानें हैं। बडा लडका, छोटी लडकी। सुना है बस दो ही बच्चे अच्छे रहते हैं भीड-भाड ठीक नही। लडके की हालत कैसी है अब ?

इजेक्शन लगाते हुए डाक्टर बोला—

"हम कोशिश कर रहे हैं। आप धैर्य रक्खे। सभी बच्चे को बचाने मे लगे हैं।"

"अरे ! यह तो पीला पडता जा रहा है ! हाय ! हाय !! मेरे पुत्र को किसने विष दे दिया। मेरी तो जिन्दगी ही तबाह हो जायगी अगर इसे कुछ हो गया तो !"

इतने मे बाहर से किसी ने आकर कहा—

"इजीनियर साहब, आपकी कन्या भी इसी तरह बीमार है। उसके मुंह से भी इसी प्रकार झाग निकल रहे हैं। आपकी पत्नी उसे लेकर आई हैं। कन्या की हालत भी नाजुक है। बाहर आकर देखिए।" उन्होने सुना, तो दिल दहल उठा। अर्ध-पगल से आपरेशन रूम के बाहर आये। जनरल वार्ड में देखा तो सचमुच उनकी कन्या का भी वही हाल था, जो पुत्र का।

पत्नी रोकर कहने लगी, "आपके जाने के बाद इसकी भी हालत वैसी ही हो गई। मुंह से जामुनी झाग आने लगे। गला बन्द हो गया। सारा शरीर ऐंठने लगा। मेर हाथ पैर फूल उठे। फौरन इसे अस्पताल लाई हूं। हाय मेरे दोनो बच्चो को किसी ने कुछ दे दिया। अब क्या होगा !"

इजीनियर साहब के काटो तो खून नही।

वे भागे-भागे फिर डाक्टर के पास गये। वहाँ वे गुमसुम दुखी खडे थे।

"डाक्टर ! डाक्टर ! चुप क्यो हो ? बच्चा कैसा है ?"

डाक्टर चुप रहा ! एक आँसू उसके नेत्र से ढुलक कर गाल पर आ गिरा !

इजीनियर साहब समझ गये कि उनका इकलौता पुत्र चल बसा था। वे रोने लगे।" हाय ! मेरी दुनिया ही लुट गई ! अब क्या होगा ? लेकिन चलूं, अपनी बिटिया को तो देखूं।"

अब वे बदहवास से फिर पहल स्थान पर आये। वहाँ उससे भी दर्द-नाक दृश्य था। उनकी पुत्री भी विष देने के कारण सदा सर्वदा के लिए सो चुकी थी। उनकी पत्नी बिलख-बिलख कर रो रही थी। दृश्य करुणा से परिपूर्ण था।

दोनो बच्चे आनन-फानन चल बसे थे।

अब उनके सामने अन्धेरा ही अन्धेरा था। जिन्दगी ही सूनी हो चुक थी। मालिक मकान ने प्रसाद की मिठाई मे विष देकर उनसे प्रतिशो निकाला था। उसकी मार पडो थी, निरीह अबोध बच्चो पर !

इजीनियर साहब ने परिवार-नियोजन के हामी होने के कारण अपना आपरेशन कराया हुआ है। अब उनके कोई सन्तान न होगी। पति पत्न का जीवन शुष्क अन्धेरी रात्रि के समान अधकारमय हो गया है। अब उन्हे समाज या अपनी जिन्दगो मे कोई दिलचस्पी नही रह गई है।

२—तस्वीर का दूसरा पहलू

"बचाओ ! इस बच्चे को साइकिल के आगे से हटाओ ! हाथ य पाँव कुचल जाएगा ! कितने अधिक बच्चे खेलते है इस सडक पर तौबा !

नास गये सारे दिन सडक पर मिट्टी पत्थरो से खेलते रहते हैं !

फटे कपडे, मिट्टी से सने सूअरो जैसे गन्दे, बदबूदार गलिया मे छीना झपटी करते हुए लडको को गाली देते हुए एक गडरियन बोली।

'क्या बताऊ बाबू, ये बच्चे तो मुझसे सम्हलते ही नही, न मेरा कहना ही मानते हैं। ढेर के ढर है। कोई पतग उडाता है, तो कोई जुआ खलता है या मारपीट करता है। कोई पान खा सिगरेट मुंह मे लगा छैला बना पान की दुकान के आगे बाल सँवारा करता है। कमाते एक पैसा नही हैं। सब का रोटी देना मुश्किल हो रहा है हमे।'

गर्डरियन के एक बच्चा गोदी म स्तन पी रहा था दूसरे ने उसको अँगुली पकड रखी थी।

"तुम्हारे कितने बाल-बच्चे है ?

"मेरे तेरह हैं और मेरी सौत के ग्यारह कुल चौबीस हैं अजो बस पलटन है। हमारे यहाँ तो बच्चो की खेती होती है। मुए घास-फूंस को तरह बढते ही जाते हैं अब बताओ किस-किस को सम्हालें।

'तुम्हारे पति ने परिवार-नियोजन का आपरेशन क्यो न करा लिया ? सब मुसीबत से बच जाते ?

"न, न, हमे आने वाले बच्चो को रोककर या मारकर पाप नहो कमाना है। जो भाग्य मे होंगे, वे तो देर सबेर मिलकर रहेगे ही। गाँव मे खेतीबाडी, मेहनत-मजदूरी, देखभाल, गाय या बकरियो को चराने के लिए हमे बहुत से आदमियो की जरूरत पडती रहती है। खेत पर मजदूर भी तो रखने होते ही हैं। फिर दो-चार लडके आवारा बदमाश या लफगे निकल जाये, या मर जाय, तो भी सात-आठ तो बच ही जायेंगे फिर, क्यो कराये हम आपरेशन यह सब फालतू बेवकूफी की बात हैं। हम तो परिवार को बढाने मे विश्वास करते हैं जिसने मुह फाडा है, वह भोजन भी देगा ही।'

उसका उत्तर सुनकर मे अवाक् रह गया !

सोचने लगा, 'कैसी है, यह गवारिन जो अपनी या अपनी सौत के बच्चो पर कोई रोकथाम नही लगाना चाहती ! इसे यह परवाह नही कि अधिक बच्चे होने पर उनके पालन-पोषण, शिक्षा और विकास मे कितनी अधिक कठिनाई उपस्थित होगी ! 'छोटा परिवार सुखी परिवार' के पक्ष मे दिये हुए सारे तर्क बेकार सिद्ध हुए। उलटे वह मुझे मूर्ख बताने लगी, क्योकि म प्रकृति की योजना मे रुकावट पैदा कर रहा था।

और आज मे सोचता हूं कि एक ऐसा युग आनेवाला है जब हमारे समाज से सबसे बुद्धिमान्, योग्य, प्रतिष्ठित, प्रबुद्ध वर्ग के लोग परिवार-नियोजन द्वारा बढिया किस्म को नस्ल समाप्त कर देगे। वे लोग, जो बडे-से-बडे इजीनियर, डाक्टर उद्योगपति, प्रोफेसर, वकील, या मेधावी सन्तानें पैदा करते, आज अपनी सन्तान को कम से कम करते जा रहे हैं। योग्य और उन्नतिशील परिवारो मे नही के बराबर बच्चे हैं। बुद्धिमान् लडको तथा योग्य कन्याओ की सख्या निरन्तर कम होती जा रही है। होते-होते यह मेधावी और अच्छे लोगो की पीढी समाप्त हो जायेगी।

दूसरी ओर अपढ, मूर्ख, गवार, किसान, मजदूर, गाँव वाले, भिखारी, अपग, बुद्धिहीन वर्ग के लोग, जिन्हे परिवार-नियोजन की असली जरूरत

शेष पृष्ठ ११ पर

क्या थे कभी हम !!

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान राजा पार्क, शकूर बस्ती, देहली)

क्या थे कभी हम आज क्या जाना कभी है ?
कितने उठे कितने गिरे क्या आँका कभी है ?
वेद के अनुरूप रहते थे हमारे निज कर्म ।
सब भूतानि सर्व सुखानि था सभी का शुभ धर्म ॥
वसुधैवकुटुम्बकम् को भावना थी सर्वव्यापक ।
परमार्थ को माना स्वार्थ थे सभी उसके अराधक ॥
प्राचीनता को त्याग कर कितने गिरे जाना कभी है ॥१॥
शुभाचरण शृंगार था, थी सरस्वती लक्ष्मी यहाँ ।
मानते थे सत्य को सब लोग परमशक्ति यहाँ ॥
राजा से लेकर रक तक सब धैर्य के पुज थे ।
युवा वृद्ध सबके हृदय में विनम्रता के कुंज थे ॥
पश्चिमी गगन में भर उड़ारी कितने गिरे जाना कभी है॥२॥
आलस्य का न नाम था, मिल कर सभी करते कर्म ।
स्वेद-कणो को धन समझ दिन-रात करते थे श्रम ॥
शत-हस्त से वे धन कमाकर सहस्र से थे बाँट देते ।
यज्ञो से लेकर साम्यभाव धन-अन्न सभी मिल बाँट खाते॥
भोगवाद के गह्वर में कितने गिरे जाना कभी है ॥३॥
एक कर में था श्रम दूसरे में थी सफलता ।
उनके वज्र हाथों समक्ष दम तोड़ती थी विफलता ॥
श्रम उन्हीं का धर्म था, धर्म मे भगवान् था ।
साहस और दृढ़ता का प्रतीक वह इन्सान था ॥
अकर्मण्यता को धर्म जान कितने गिरे जाना कभी है॥४॥
पूर्वजों की परम्परा का समादर करते थे सभी ।
पाखण्ड को पर विष समझ समाप्त करते थे तभी ॥
रूढ़ियों को धर्म की शैवाल मान हटाते सभी ।
निज स्वार्थ से ग्रथित धर्म, न रहा उनका कभी ॥
स्वार्थ को स्वधर्म जान कितने गिरे जाना कभी है ॥५॥
प्रजा रही थी पुत्रवत् राजा पिता था देश का ।
था भार कंधे पर उसी के राष्ट्र के उन्मेष का ॥
यद्यपि राजतन्त्र रहा, पर लोग सब समृद्ध थे ।
लोकोपकारी राजगण विश्व में प्रसिद्ध थे ॥
राजनीति को भक्ष कर कितने गिरे जाना कभी है ॥६॥
स्वर्ग से बढ़ कर सभी थे मातृ-भू को मानते ।
आरूढ़ होकर धर्म पर इसको सदा वे संवारते ॥
गव का अनुभव थे करते भारत-भू में जन्म लेकर ।
अपवर्ग सा सुख उन्हे मिलता सर्वस्व त्याग कर ॥
राष्ट्रभक्ति त्याग कर कितने गिरे जाना कभी है ॥७॥
सयम का साम्राज्य था शिक्षास्थल थे मन्दिरों से
रास-क्रीड़ा के कभी न क्षेत्र बने वे बन्दरों के ।
नर-नारी का मिलन वहाँ सर्वथा निषेध था
भारत की परम्परा का यही शुभ आदेश था ॥
सहशिक्षा को भली जान कितने गिरे जाना कभी है
गुरुकुलों में मनोयोग से विद्याध्ययन चलता रहा ।
गुरुचरणों में देश मेरा पुत्रवत् पलता रहा ॥
साग-भाजी की तरह न बिकते कभी थे गुरुजन ।
न धन की तुला मे तोल कर विद्या ले सके दुर्जन ॥
गुरुकुलो को छोड़ कितने गिरे जाना कभी है ॥९॥
सुरा-सुन्दरी ये भूलकर, न लुटता यौवन था कभी ।
कब्रिस्तान पशुओं का न उदर में पनपा कभी ॥
सात्विकता लक्ष्य था, सयम के थे महाधनी ।
सभ्यता को नग्न करना सोच सकते थे नहीं ॥
पश्चिम को सर्वस्व बेच कर कितने गिरे जाना कभी है॥१०॥
प्राच्य के बल-शौर्य का ध्यान धर तू भारती ।
आन पर जो मर-मिटे उनकी उतारी आरती ॥
संकल्प लेकर तू युवा उस परम्परा को याद रख ।
लड़ते रहे जो जिन्दगी से हथेली पर निज प्राण रख ॥
प्राचीनता को भूल कर कितने गिरे जाना कभी है ॥११॥
उठ-जाग ! कुछ काम कर ऐ देश के यौवन अमर ।
देश को प्रसुप्त शक्ति को पुनः करदे उजागर ॥
श्रम और विवेक के सगम स्थल पर से युवा ।
प्राचीन आर्यावर्त्त की स्थापना कर दे वहां ॥
भारत भाग्य अस्ताचल को जा रहा जाना कभी है ॥१२॥

पृ० ६ का शेष

२३—महर्षि दयानन्द सरस्वती का सिद्धान्त भी यही है। महर्षि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में वेदान्त-दर्शन के सूत्र—"तत्तु समन्वयात्" [१।१।४] की व्याख्या के प्रसग मे लिखते हैं :—

"तदेव ब्रह्म सर्वत्र वेदवाक्येषु समन्वितं प्रतिपादितमस्ति । क्वचित् साक्षात् क्वचित् परम्परया च । अतः परमोऽर्थो वेदानां ब्रह्मैवास्ति ।"

अर्थ—वह ब्रह्म ही सब वेदवाक्यों में समन्वित अर्थात् व्याप्तिरूप से प्रतिपादित है। कही साक्षात् रूप में और कहीं परम्परा की रीति से। अतः चारों वेदों का प्रधान अर्थ—मुख्य प्रतिपाद्य विषय तो ब्रह्म ही है।

२४—गीताकार का कथन [१७।२३] है—

ओं तत्सदितिनिर्देशो, ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥

अर्थ—वह "ओ३म्" एक वास्तविक और सर्वोपरि सत्ता है। यह कोई काल्पनिक कथन मात्र नहीं है। ब्रह्म के विषय में अकार, उकार और मकार [अ+उ+म्=ओ३म्] यह तीन प्रकार का निर्देश तीन प्रकार का प्रसिद्ध है। इस तीन प्रकार के अक्षर-बोध के आधार पर ही प्राचीन काल में वेदों का प्रकाशन, ब्राह्मण ग्रन्थों का निर्माण और यज्ञों का प्रचार हुआ था। इस श्लोक को जो अर्थ पौराणिक करते हैं कि—"ब्रह्म का कथन—ओम्-तत्-सत् यह तीन प्रकार का माना गया है।" सो नासमझी की बात है।

२५—सब शुभ कार्यों के आरम्भ में ईश्वरोपासना और "ओ३म्" नाम के जप का विधान [१७।२४] करते हैं—

तस्मादोमित्युदाहृत्य, यज्ञदानतपःक्रियाः ।
प्रवर्त्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥

अर्थ—क्योंकि "ओ३म्" ही सब का उपास्य देव और इस सृष्टि का निर्माता [निमित्त कारण] है। इसलिये सभी आस्तिक पुरुषों, वेदवादियों और शिष्टजनों के धर्म-शास्त्रोपदिष्ट यज्ञ, दान, तप आदि सभी व्यवहार आरम्भ में "ओ३म्" ऐसा बोलकर अर्थात् विधिपूर्वक ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करके ही आरम्भ होते हैं।

२६—गीताकार ने जो वाणी का तप बतलाया है, [१७।१५ में] इस प्रकार है—

अनुद्वेगकरं वाक्यं, सत्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव, वाङ्मयतप उच्यते ॥

अर्थ—जो क्रोध को न भड़काने वाला, प्रिय, सत्य और हितकारक सम्भाषण, वेदों और ऋषियों के ग्रन्थों का पठन-पाठन तथा ईश्वर के ओ३म् नाम का जप है। उस को ही वाणी का तप कहते हैं।

२७—गीता के अन्य प्रसगों में भी ओ३म् नाम के जप और ईश्वर-भक्ति की अत्यन्त गहरी और दोषरहित पुट विद्यमान है। गीता के विरुद्ध जो कुछ लिखा वा बोला जाता है, उसके कई कारण हैं। यथा—गीता के टीकाकारो की खींचतान, गीतामर्म को समझने में लोगों की असमर्थता, गीता विषयक भ्रामक प्रचार, पूर्वाग्रह के साथ गीता-विचार में प्रवृत्ति और गीता की पृष्ठभूमि का घोर अज्ञान। इस विषय का विस्तृत प्रतिपादन फिर कभी होगा। (क्रमशः)

पृ० ८ का शेष

पर बाद नहीं करते और कणाद को अनीश्वरवादी कहने का दुराग्रह करते हैं।

दार्शनिक निकाय में वैशेषिक दर्शन पर प्रामाणिक भाष्य प्रशस्त मुनि का माना जाता है। भाष्यकार सूत्रानुसारी तथा आचार्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भाव को जानने वाले थे। इसलिये तो उन्होंने सृष्टि संहार प्रकरण में उल्लेख किया है—

"संसारखिन्नानां सर्वप्राणिनां निशिविश्रामार्थं सकलभुवनपतेर्महेश्वरस्य संजिहीर्षा समकालं शरीरेन्द्रियमहाभूतोपनिबन्धक इत्यादि।

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि महर्षि कणाद और उनके दर्शन के मर्मज्ञ भाष्यकार सभी ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते थे। वे ईश्वर को सिद्धि ईश्वर को संसार के कर्तृत्व रूप में करते हैं। उनकी अखण्डनीय युक्तियाँ यूँ हैं—इस संसार का कोई कर्ता होना चाहिए। क्योंकि "यद्यत् कार्यं तत् तत् कर्तृजन्यं कार्यत्वात् घटवत्।" अर्थात् जो भी किसी कारण से कार्यरूप में परिणति होती है। इसका कर्ता जरूर होता है। जैसे कि मिट्टी से घड़ा बनाने के लिये कुम्भकार का होना आवश्यक है। ठीक इसी प्रकार प्रकृति रूप कारण से कार्यरूप जगत् को बनाने वाला कर्ता जरूर होना चाहिये। कोई शङ्का कर सकता है कि जैसे भूमि में बीज स्वयमेव अङ्कुरित हो जाता है उसके लिये किसी कर्ता की आवश्यकता हम नहीं देखते इसी प्रकार इस संसार को मान लेंगे। परन्तु यह शङ्का दोषपूर्ण है। क्योंकि साध्य कभी उदाहरण नहीं बन सकता। इस प्रकार मैंने यह कुछ दार्शनिकों के दिक्मात्र विचार का उल्लेख किया है जो विशेष विचार करना चाहें वह उनके आकर ग्रन्थों में रमण करके सत्यासत्य निर्णय कर सकते हैं। यद्यपि वास्तविकता यह है कि जितने भी शान्तचित्त होकर सत्यासत्य के निर्णय के लिए चिन्तन किया है वे दार्शनिक इस स्तर पर पहुँच गये हैं, जैसाकि पाश्चात्य विद्वान् प्लेटो ने आजीवन ब्रह्मचारी रहकर दार्शनिक चिन्तन के बाद स्पष्ट उद्घोषणा की—

God is truth and light his shadow अर्थात् इस संसार को संचालित करने वाली कोई सत्ता है। तथा सूर्य का प्रकाश उसकी प्रतिबिम्ब मात्र दिखाता है।

परन्तु इतना सुस्पष्ट तथा तर्क सिद्ध ईश्वर के होने पर भी इसकी अनुभूति सबको बुद्धि में क्यों नहीं होती। इसका उत्तर उपनिषद् अति सुन्दर तथा लघुतम शब्दों में यों देती है—

एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मा न प्रकाशते दृश्यते त्वग्र्या बुद्ध्या सूक्ष्मदर्शिभिः। ●

पृष्ठ ६ का शेष

है, जो घास-फूंस की तरह बढ़ रहे हैं और खाद्य पदार्थों को खा-खाकर नष्ट कर रहे हैं, खेत में बढ़ती हुई जंगली घास की तरह लगातार संख्या में बढ़ते जायेंगे।

होते होते एक ऐसा जमाना आयेगा, जब समाज में बुद्धिमान् वर्ग समूचा ही नष्ट हो जायेगा और गंवार मूर्ख तथा अविकसित लोग छा जायेंगे। हमारी अधिकांश आबादी घास-फूंस जैसे बेकार के आदमियों की हो जायगी।

अमीर समझदार और सुविधा सम्पन्न व्यक्ति अधिक सन्तानों को भी योग्य बना कर समाज के उपयोगी अंग बना सकते हैं जबकि मूर्ख और गंवार समाज में कूड़ा-करकट ही पैदा करेंगे। गाँवों तथा पिछड़े प्रदेशों में मूर्ख लोगों की आबादी उत्तरोत्तर अभिवृद्धि पर है, जबकि ऊँचे तबके के बुद्धिमान् लोग कम होते जा रहे हैं।

हमारे समाज में उपयोगी और बुद्धिमान् वर्ग ही बढ़ना चाहिए। ●

आर्यसमाज राणा प्रताप बाग दिल्ली का चुनाव

प्रधान—श्री राधाकृष्ण गांधी, मन्त्री—विद्याधर वर्मा, कोषाध्यक्ष—करमचन्द कपूर, पुस्तकाध्यक्ष—नरेन्द्रकुमार मदान। —मन्त्री आर्यसमाज

विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी में पी-एच०डी० की व्यवस्था

इस वर्ष विश्वविद्यालय के तत्वावधान में पी-एच० डी० (हिन्दी, संस्कृत, वेद,) की विशेष सुविधा प्रदान की गई है। पी-एच० डा० में प्रवेश इच्छुक शोधार्थी की न्यूनतम योग्यता एम० ए० द्वितीय श्रेणी अवश्य होनी चाहिए। इस विषय में विशेष एव पूर्ण विज्ञप्ति 'प्रस्तोता कार्यालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय' के प्राप्त की जा सकती है। योग्य छात्रों को १५०) रु० प्रतिमास की छात्रवृत्ति भी प्रदान की जा सकती है।

आर्यसमाज दयानन्द मार्ग (अकूर बस्ती) दिल्ली का चुनाव

प्रधान—श्री ज्वालाप्रसाद, मन्त्री—श्री रामसिंह शर्मा, कोषाध्यक्ष—डा० भारतभूषण तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री हजारीमल चड्ढा और अन्य अन्तरंग सदस्य। —मन्त्री

संभालका जि० मुजफ्फरनगर की सूचना

मेरे गांव संभालका (शामली) मे आर्यसमाज की स्थापना हो गई है। आर्यसमाज का उत्सव बड़ समारोह से सम्पन्न हुआ। इसमें आर्यसमाज के अनेक पूज्यसंन्यासी, वानप्रस्थी, पण्डित और भजनोपदेशक पधारे थे। साथ ही आगामी वर्ष के लिए निम्नलिखित निर्वाचन भी किया गया—

प्रधान—चा० वेदपालसिंह जी, मन्त्री—प० जयभगवान् जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—चा० ईश्वरसिंह जी तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री देवराजजी आर्य।

संस्थापक कु० वीरेन्द्र सिंह "वीर" आर्योपदेशक

आर्यसमाज दीवान हाल दिल्ली का वार्षिक निर्वाचन

प्रधान—श्री बालमुकुन्द जी आहूजा, मन्त्री—श्री पुरुषोत्तम दास जी, कोषाध्यक्ष—ला० परमानन्द जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सुरेन्द्रकुमार जी शास्त्री। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज कन्नौर (जिला रोहतक) का वार्षिक चुनाव

प्रधान—डा० प्रेमनाथ जी आर्य, मन्त्री—श्री जयदेव जी आहूजा, कोषाध्यक्ष—श्री० होन्याराम जी चुघ, पुस्तकाध्यक्ष—श्री किशन चन्द जी मनोचा। —जयदेव आहूजा

आर्यसमाज नके गांव (जिला उस्मानाबाद) का चुनाव

प्रधान—श्री रघुनाथ राव शिन्दे, मन्त्री—श्री काशीनाथ राव म्हस्कारे, कोषाध्यक्ष—श्री हीरालाल जी कोम्बेकर, पुस्तकाध्यक्ष—वेद-एम-बारा-आयुर्वेदाचार्य। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज कलकत्ता का गो-रक्षा का विशेष कार्यक्रम

पश्चिम बंग सरकार की ओर से समय-समय पर उन गायों बछड़ों को नीलामी की जाती है, जिन्हें सरकार अपने हरिणघाटा व कल्याणी पशु केन्द्रों में नहीं रखना चाहती। यह नीलाम यद्यपि उन्हे ही दिया जाता है जो इन पशुओं को पालना चाहते हैं, किन्तु यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि ये पशु सरकारी केन्द्रों से निकल कर जीवन के अन्तिम क्षणों की प्रतीक्षा कहाँ करते हैं। कई गोभक्तों के परामर्श से आर्यसमाज कलकत्ता ने सरकार से प्रार्थना की कि इन पशुओ के जीवन की रक्षा होनी चाहिये। आर्यसमाज की इस प्रार्थना पर सरकार ने आर्यसमाज को नीलामी के भाव पर इन पशुओं को देना स्वीकार कर लिया। कलकत्ता के गोभक्त समाज ने आर्यसमाज के साथ चेष्टा की और गोभक्त दानियों के पुण्य दान ४१०००) रुपये एकत्र करके ६६१ पशुओं को सरकार से लेकर कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को सौंप उनके जीवन की रक्षा की गई। जिनमें काफी गाय गर्भवती हैं तथा कुछ दूध भी देती हैं। गोभक्त समाज का यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है। यह कार्य चलता रहेगा लगभग ३०० पशु प्रति मास केन्द्रों से विक्री किये जाते हैं। आर्थिक सहायता प्रार्थनीय हैं।

—छबीलदास सभी

मन्त्री—आर्यसमाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कलकत्ता-६

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,
'आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियो के लिये २५) ५० प्रतियो के लिये १३)
२५ प्रतियो के लिए ८) ७५ १० प्रतियो के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैंकड़ा
ईश्वरक्रम को निराधारप्राय दृ कूट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैंकड़ा
आयसमाज का सद्धान्तिक परिचय	० ५० पैसे
महान् दयानन्द ०० ७५ दयानन्द चरित्र	१ ५० "
मक्ति के साधन १ ०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१ ५०
वैदिक सन्ध्या पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रजी	२ ००
जीवन ज्योति ले० प० चमूपति जी एम ए	२ ००
सोम सरोवर	३ ००
The Principles of Aryasamaj	१ ५०
Glimpses of Swami Daya Nand	१ ००
Subject Matter of the Vedas	१ ००
The Vedas ०० ५० philosophy of Vedas	० ५०

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मगवाइये । थोड़ी प्रतियाँ शेष हैं।

प्राप्ति स्थान

व्यवस्थापक— 'आयमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर प्रचारोपयोगी साहित्य

आर्यमर्यादा साप्ताहिक की अपूर्व भेंट

वेद प्रादुर्भाव पद्धति विशेषांक प्रकाशित हो रहा है

आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रति वर्ष की भांति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से वेद प्रचार सप्ताह श्रावणी पर्व पर इस बार भी स्वाध्याय के लिये आर्यमर्यादा का वेद प्रादुर्भाव पद्धति विशेषांक बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित किया जा रहा है। इस विशेषांक में वेदों का ईश्वरीय ज्ञान चारों ऋषियों द्वारा किस पद्धति से प्रादुर्भूत हुआ महत्व पूर्ण विषय पर प्रकाश डाला जावेगा। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास मे आज तक इस प्रकार का विशेषांक अथवा ग्रन्थ प्रकाशित नही हो सका। आर्यजगत के उच्चकोटि के विद्वानो तथा लेखको के लेख वेद प्रचारार्थ बहुत ही उपयोगी सामग्री होगी। अत आर्यसमाजो आर्य सस्थाओ और स्वाध्यायशील महानुभावो से प्रार्थना है कि वेद सप्ताह पर इस विशेषांक को भारी सख्या मे मगवाकर अधिक से अधिक हाथो तक पहुचा कर वेद प्रचार के पुनीत कार्य मे सहयोग दीजिये।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

पुरोहित की आवश्यकता

आर्यसमाज करोलबाग नई दिल्ली को एक सुयोग्य विद्वान पुरोहित की आवश्यकता है—इच्छुक सज्जन अपनी योग्यता का परिचय देकर १० अगस्त तक प्रार्थना पत्र भेज देव—

मन्त्री आर्यसमाज करोल बाग नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली ६ मे मुद्रित और १५ हनुमान रोड नई दिल्ली १ से प्रकाशित।

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् साम्राज्य सार्वजनिक धर्म जिस को सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेगे भी इसी-लिये उस को सनातन नित्यधर्म कहते हैं कि जिस का विरोधी कोई भी न हो सके ।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ३४ | १६ श्रावण वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ३ अगस्त १९६९ रविवार, सृष्टि स०-१९६०८५३०६९

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
„ विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन स ईश्वर कीदृश इत्युपदिश्यत ॥

फिर वह परमात्मा कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है ।

त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि ।
स यामनि प्रति श्रुधि ॥ ऋ० १. २५.२० ॥

पदार्थ—(त्वम्) यो वरुणो जगदीश्वर (विश्वस्य) सर्वस्य जगतो मध्ये (मेधिर) मेधाविन् (दिव) प्रकाशसहितस्य सूर्यादि (च) अन्येषा लोकलोकान्तराणां समुच्चये (ग्म) पृथिव्यादे. (च) अनुकर्षणे (राजसि) प्रकाशसे (स) (यामनि) यान्ति गच्छन्ति यस्मिन् कालावयवे प्रहरे तस्मिन् (प्रति) प्रतीतार्थे (श्रुधि) शृणु ॥

अन्वय—हे मेधिर वरुण त्व यथा यो जगदीश्वरो विश्वस्य ग्मश्च विश्वस्य यामनि राजति सोऽस्माकं स्तुतिं प्रतिशृणोति तथतन्मध्ये राजसि यामे स्तुतिं प्रतिश्रुधि शृणु ॥

भावार्थ—अत्र वाचकलु० यथे-श्वरेण सर्वस्य जगतो द्विधा भेद कृतोऽस्ति । एक प्रकाशसहित सूर्यादिर्द्वितीय प्रकाशरहित पृथि-व्यादिश्च यस्तयोरुत्पत्तिविनाश-निमित्त. कालोऽस्ति तत्राभिव्याप्त सर्वेषां प्राणिना सकल्पोत्पन्ना अपि वार्ता शृणोति तस्मान्नैव केनापि क्वचिदप्यधर्मानुष्ठानकल्पना कर्त्त-व्यास्तीत्येवं सर्वे मानवै विज्ञा-नानुचरितव्यमिति ॥

पदार्थ—हे (मेधिर) अत्यन्त विज्ञान युक्त वरुण विद्वान् (त्वम्) आप जैसे जो ईश्वर (दिव) प्रकाशवान् सूर्य्यादि (च) वा अन्य सब लोक (ग्म) प्रकाशरहित पृथिव्यादि (विश्वस्य) सब लोको के (यामनि) जिस जिस काल मे जीवो का आना जाना होता है उस मे प्रकाश हो रहे हैं (स) सो हमारी स्तुतियो को सुन कर आनन्द देते है वैसे होकर इस राज्य के मध्य मे (राजसि) प्रकाशित हूजिये और हमारी स्तुतियो को (प्रतिश्रुधि) सुनिये ॥

भावार्थ—इस मन्त्र में वाचक लु० जैसे परब्रह्म ने इस सब ससार के दो भेद किये हैं एक प्रकाश वाला सूर्य आदि और दूसरा प्रकाशरहित पृथिवी आदि लोक जो इन की उत्पत्ति और विनाश का निमित्त कारण काल है उस मे सदा एक सा रहने वाला परमेश्वर सब प्राणियो के सकल्प से उत्पन्न हुई बातो को भी श्रवण करता है इस से कभी अधर्म के अनुष्ठान की कल्पना भी मनुष्यो को नही करनी चाहिये वैसे इस सृष्टि क्रम को जान कर मनुष्यो को ठीक-ठीक वर्तना चाहिये ॥

—(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

सीनियर सब जज जालंधर का निर्णय

श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा अपने को आर्य-प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने पर स्थायी रोक लगी ।

जालन्धर २८ ७-६९ प्रो० रामसिंह सभा प्रधान तथा श्री रघुवीरसिंह शास्त्री सभा मन्त्री की प्रार्थना पर श्री निरजनसिंह जी भल्ला सीनियर सब जज जालधर ने ११-७-६९ को अपनी निषेध आज्ञा द्वारा दीवान रामशरण दास, श्री वीरेन्द्र श्री सोमनाथ मरवाह, श्री रामदत्त एडवोकेट, डा० हरिप्रकाश, श्री मुरारीलाल बधरामलाल, श्री क्षितीशकुमार, तथा श्री विश्वनाथग्रोवर को अपने आप को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा कार्यो व सम्पत्ति मे हस्तक्षेप करने से रोक दिया था । २६-७-६९ को विपक्षी दल की ओर से उत्तर आने पर दोनो वकीलो की बहस सुनने के बाद जज महोदय ने घोषित किया कि सार्वदेशिक आर्य महा सम्मेलन दि० ८-११-६८, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिनाक २३-२-६९ तथा आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब दि० ७-३-६९ के निश्चयो के आधार पर महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के विवाद का निणय करने का पूर्ण अधिकार था । उन्होने कहा कि श्री देवराज सैनी एडिशनल सेशन जज जालधर के दि० २५-१-६९ के निर्णय का वतमान अभियोग पर कोई प्रभाव नहीं क्योंकि यह अभियोग नई परिस्थितियों तथा नये आधार पर किया गया है । दि० २३-२-६९ के प्रस्ताव के आधार पर महात्मा जी को सब झगडे समाप्त करने का पूर्ण अधिकार था । उपरोक्त निश्चय के आधार पर महात्मा जी को पूर्ण अधिकार था कि प्रो० रामसिंह जी को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के कार्यों की देख भाल करने के लिये प्रधान नियुक्त कर दें । इस लिए उपरोक्त अधिकार के आधार पर प्रो० रामसिंह जी की नियुक्ति वैधानिक है । ऐसी अवस्था मे ११ ७-६९ को दी गयी अस्थाई निषेधाज्ञा को माननीय जज ने स्थिर कर दिया । अब अम्बाला छावनी मे घोषित किये गये उपरोक्त तथा कथित अधिकारी सभा के कार्यों मे किसी प्रकार से हस्तक्षेप न कर सकेगे ।

आर्यमर्यादा साप्ताहिक का १० रु०) शुल्क भेज कर स्वयं ग्राहक बनिये तथा अपने मित्रों को बनाइये

वेद की रक्षा कैसे हुई

(श्री प० भगवान् स्वरूप जी प्रधान आ० प्र० निधि सभा राजस्थान)

सृष्टि के आदि में परम कारुणिक प्रभु ने मानव के कल्याण के लिये ज्ञान का भण्डार चारो वेदो के रूप मे अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा ऋषियों द्वारा प्रदान किया जो लाखो करोडो वर्षों तक सारे ससार की मानव मात्र के लिए धर्म गन्थ के रूप में रहे। परन्तु महाभारत के पश्चात् सारे ससार की स्थिति परिवर्तित हो गई और विद्वानो, विचारकों एव तत्वज्ञानियो के कम हो जाने के कारण एक प्रकार से अन्धकार का वातावरण सारे ससार मे छा गया परिणाम स्वरूप अनेक मत मतान्तर यत्र-तत्र प्रादुर्भूत हो गये।

पिछले दो तीन सहस्र वर्षों मे पवित्र वेद के सम्बन्ध में कुछ जान बूझ कर और कुछ अज्ञानवश अनेक भ्रान्तियाँ फैला दी गयी। भारत के तथाकथित विद्वानो ने वेद मन्त्रो के ऐसे अर्थ किये जिससे वेदो के प्रति लोगो की आस्था क्षीण शीघ्र होने लगी। विदेशी विद्वानो ने तो यहाँ तक प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि वेद गडरियो के गीत हैं। विद्यालयो में पढाई जाने वाली इतिहास की पुस्तको मे लिखा गया कि आर्य लोग मध्य एशिया से भारत मे आये, उस समय ये लोग गाय बैल आदि चराते फिरते और उजाड जगलो वाले देश भारत में बसे। अग्नि वायु जल, सूर्य, बादल, बिजली आदि को देख कर उन्हे देवता माने और उनकी स्तुति के गीत गाने लगे, वही वेद हैं। इस प्रकार हमारे देश के बालको के कोमल मस्तिष्क पर यह प्रभाव डाले गये कि वेदो का कोई महत्त्व नही। शोध के नाम पर देशी तथा विदेशी ये दोनो वेद मे पचनद अयोध्या वशिष्ठ, जमदग्नि आदि नाम देख कर वेदो मे इतिहास है यह कह कर उसकी अपौरुषेयता पर कुठाराघात करने लगे तो दूसरी ओर देश के अनेक पडित नामधारी लोगो ने यह प्रचार शुरू कर दिया कि वेद तो लुप्त हो गये। अब तो श्रीमद्भगवद् गीता, आदि ही वेद के स्थान पर हैं। भागवत को पचम वेद बतला कर सर्वसाधारण की दृष्टि से वेदो को परे कर दिया। इतना होते हुए भी ब्राह्मणों की वेदो के प्रति श्रद्धा अटूट रही। उसे अध श्रद्धा कह सकते हैं, क्योकि उन्हें अर्थ का ज्ञान बिल्कुल नही था परन्तु वेदो की रक्षा करने मे इनका बडा भारी हाथ रहा।

यवन शासन काल मे भारतीय प्राचीन वाङ्मय को नष्ट करने का अभियान चलाया गया। नालन्दा विश्वविद्यालय का पुस्तकालय अग्नि की ज्वाला में भस्म किया जिसमे महीनों लगे। इतना ही नही, जहा कही भी सस्कृत का कोई ग्रन्थ मिला उसे जलाया गया। तब ब्राह्मणो ने यह निश्चय किया कि समस्त वेद को कठस्थ कर लिया जाये। इसके लिए चार वर्ग निश्चित किये। एक-एक वर्ग ने एक-एक वेद को कठस्थ करने का दायित्व लिया। ये ही ऋग्वेदी यजुर्वेदी, सामवेदी और अथर्ववेदी ब्राह्मण कहलाये। जब यह बात शासको को ज्ञात हुई तो जिन्हे वेद कठस्थ हैं ऐसा ज्ञात होने पर उसे मृत्यु के हवाले करना शुरू किया। इससे भयभीत ब्राह्मण चुप चाप छिप कर घरो मे वेद का पाठ करते जिससे कोई सुन न सके। इस प्रकार छिप कर वेद का पाठ करते और कराते कि किसी को पता न लगे। आगे चल कर यह एक रूढि बन गई।

बहुत दिनों की बात है मैं दक्षिण महाराष्ट्र मे एक स्थान पर गया। वहाँ एक वृद्ध दक्षिणी ब्राह्मण यजुर्वेद के स्वर, पद, क्रम, जटा, माला, घन पाठ मे निपुण थे। उनके यहाँ मैं पाठ सुनने के लिए गया। उन्होने पाठ आरम्भ करने के पूर्व अपने शिष्य को भेज कर यह दिखलवाया कि कोई बाहर है तो नही। जब उन्हे विश्वास हो गया बाहर कोई अब्राह्मण नही है तब पाठ सुनाना आरम्भ किया। उनके मस्तिष्क मे यह बात घर कर गयी थी कि वेद पाठ केवल जाने माने व्यक्तियो के सामने ही करना। ऐसी परिपाटी क्यो पडी थी इसको खोज करना उनकी विचार शक्ति के बाहर की बात बन गयी। ऐसा होता आया है अब वैसा ही करते रहना यह धारणा बन गयी।

निस्सन्देह उन लोगो ने प्राणो की बाजी लगा कर वेदो की रक्षा की इसके लिए हम सब कृतज्ञ हैं और रहेगे। परन्तु जब वातावरण अनुकूल हो गया तब भी वेदों को छिपाये रखने से बडी भारी हानि हुई। केवल कुछ गिने चुने लोगो मे वेद रहे और वह भी केवल पाठ मात्र करते उन्हे उनके अर्थ का कोई ज्ञान नही। वे अर्थ की आवश्यकता भी नही समझते थे, केवल पाठ मात्र से ही अभीष्ट की सिद्धि हो जायगी, यह मान्यता बन गयी।

जन्म के ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य किसी को वेद मन्त्र के पढने सुनने का अधिकार नही, अब क्षत्रियों, वैश्यों तथा अन्यों के लिए मन घडन्त मंत्र बना लिए और सब के अलग-अलग मन्त्र 'नमो भगवते वासुदेवाय, ओ नम शिवाय' आदि द्वादशाक्षरी पचाक्षरी मन्त्र बना कर लोगो को दिये और वेद मन्त्र गायत्री (गुरु) मन्त्र केवल जन्म के ब्राह्मणो के लिए सुरक्षित कर दिया। जन्म के ब्राह्मणो को भी गुरु मन्त्र जब गुरु जी देते तो अर्थ के सम्बन्ध मे कह देते कि यह वेद मन्त्र है। वेद मन्त्र का अर्थ नहीं होता। इस प्रकार वेद मन्त्र को निरर्थक बना कर रख दिया गया था। मुझे स्मरण है सत्तर वर्ष पूर्व की बात है जब मेरा यज्ञोपवीत हुआ और गुरु जी ने गुरु मन्त्र कान मे सुनाया तो मैंने उनको निवेदन किया कि इसका अर्थ भी बताइये। तो डाट कर उत्तर दिया, मूर्ख कही वेद मन्त्र का अर्थ हुआ करता है? मैं बालक था दस वर्ष की अवस्था थी, चुप हो गया। परन्तु मन मे यह उथल पुथल होने लगी कि वे मन्त्र किस काम के जिनका कोई अर्थ ही नही।

कुछ लोगों ने मन्त्रो को भिन्न भिन्न कार्य के लिए नियत मान लिया, यथा 'शन्नो देवी''''' मन्त्र को शनि का 'त्र्यम्बक' यजामहे को महामृत्युजय मन्त्र बनाया और यह बताया कि इन के जाप करने से शनि ग्रह के प्रकोप शान्त होगा एव महा मृत्युजय मन्त्र का जाप कराने से मृत्यु का योग टल जायगा इत्यादि। दूसरी ओर वाम मार्गियो ने वेद मन्त्र के ऐसे अर्थ करके प्रसारित किये जिसके अनुसार यज्ञों में पशु बलि होने लगी, और अहिंसा का मूर्त्त रूप यज्ञ वधशाला बन गया। इस जघन्य कृत्य से भगवान् बुद्ध के हृदय में विद्रोह उत्पन्न हुआ। उन्होंने हिंसा युक्त यज्ञ का घोर विरोध करना शुरू किया। उन याज्ञिको ने कहा 'इसका वेद में विधान है, कैसे विरोध करते हो ? बुद्ध ने कहा' मैं ऐसे वेद को नही मानता, जो निरीह पशुओ के वध का विधान करता है। उन याज्ञिको ने कहा 'वेद तो ईश्वर की वाणी है" तो बुद्ध ने कहा मैं ऐसे ईश्वर को भी मानने को उद्यत नही जो इस प्रकार जघन्य कृत्य करने का आदेश देता है। इस प्रकार नास्तिकता का प्रचार और प्रसार हो गया।

ऐसे अधकार के युग मे जब कि वेद के पवित्र ज्ञान के प्रकाश के अभाव मे मानव जाति भटक रही थी, भगवान् दयानन्द का ससार मे आगमन हुआ जिन्होंने वेद के वास्तविक तत्त्व को सर्वसाधारण के सम्मुख प्रस्तुत किया और बताया कि वेद अपौरुषेय अनन्त ज्ञान के भण्डार हैं। मानव जीवन पद्धति का पूरा-पूरा विवेचन इनके अन्दर है। वशिष्ठ जमदग्नि आदि जो शब्द मन्त्रों मे आये हैं वे रूढि नहीं यौगिक हैं। निरुक्त और निघण्टु के आधार पर यौगिक प्रक्रिया से वास्तविक अर्थ समझाया और घोषणा की कि वेद किसी वर्ण विशेष के लिए नही मानव मात्र को इनके पढने पढाने, सुनने सुनाने का अधिकार है। बताया कि जिस प्रकार परमात्मा ने सूर्य का प्रकाश वायु, वृष्टि किसी वर्ण विशेष के लिए सुरक्षित नही की हैं, इसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान वेद सारे ससार के लिए हैं। इसकी घोषणा महर्षि ने—

'यथेमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य' मन्त्र का प्रमाण और यथार्थ अर्थ करके की। इसी प्रकार अनेक मन्त्रों के वास्तविक अर्थ करके महर्षि ने उन भ्रान्तियो का निवारण किया जो कि अशुद्ध अर्थ के कारण हो रही थी। उदाहरणार्थ निम्न मन्त्र यजुर्वेद अध्याय ३४ का ११वां मन्त्र प्रस्तुत है—

शेष पृ० ९ पर

सम्पादकीय

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का वार्षिक अधिवेशन

१० अगस्त ६९ को रोहतक मे प्रतिनिधि सज्जन पूरी सख्या मे पहुचे

श्रद्धय श्री आनन्द स्वामो सरस्वती जी महाराज के आदेशानुसार आयप्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान प्रो० रामसिह जी एम० ए० ने १० अगस्त १९६९ रविवार को प्रात १० बजे उक्त सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन रोहतक मे बुलाया है। सभा से सम्बद्ध आयसमाजो के सभी प्रतिनिधियो की सेवा मे अधिवेशन का एजण्डा और सभा मे भाग लेने के अधिकार प्रवेश पत्र अण्डरपोस्टल सर्टिफिकेट द्वारा भेजे जा चुके है। आशा है सबको मिल चुके होंगे। अधिवेशन मे सम्मिलित होने के लिय अपना प्रवेश-पत्र अवश्य साथ लाव। साथ लाना न भूल। अधिवेशन सनी हाई स्कूल रोहतक मे १० अगस्त को प्रात १० बजे होगा। अत वहाँ प्रात ९ बजे तक अवश्य पहुँच जाव। अच्छा तो यह रहे कि दूर से पहुचने वाले प्रतिनिधि सनी हाई स्कूल रोहतक मे ९ अगस्त शनिवार को सायकाल तक हो पहुँच जाव। निकट से पहुचने वाल भा ऐसा ध्यान रख कि रेल अथवा बसो स १० ता० को ९ बजे स पूव हा पहुच सक। यदि ऐस महानुभाव भा ९ ता० को ही पहुच सक तो अधिक अच्छा रहेगा।

सनी हाई रोहतक शहर स देहली सोनीपत को जान वाली सडक पर दो फरलाग पर ही है। देहली को जाने बाये हाथ और देहली स रोहतक पहुचत दाय हाथ पर हे। पुलिस लाइन के पास रोहतक शहर का तरफ है। सडक पर सैनी हाई स्कूल का बोड लगा हुआ है। बड़ा सडक से स्कूल तक भो सडक जाती है। सब प्रतिनिधिया के ठहरने और भोजनादि का व्यवस्था स्कूल म हो होगी। रोहतक पहुचन के लिय सब ओर स रेल तथा बसो के माग हैं। (१) देहली से रोहतक रेलवे से भा और बसो द्वारा भी जा सकते हैं। दिल्ली की ओर से जान वालो बस रोहतक की तरफ सनी हाई स्कूल के पास मे ही ठहर जाती है।

(२) पानीपत की तरफ स पहुचने वाले सज्जन साध बस स रोहतक पहुच जाते हैं। (३) नारनौल सिरसा हिसार भिवानी महेन्द्रगढ चरखी-दादरी और रेवाडी से रोहतक को बस मिलती रहती हैं। (४) पटियाला से जीन्द होकर भी बस रोहतक पहुचती है। (५) जालन्धर और लुधियाना से पहुचने वाले सज्जन पानीपत रेल अथवा बस से पहुच कर पानीपत स रोहतक पहुच सकते हैं। (६) लुधियाना से रेल द्वारा भो जाखल होकर रोहतक पहुच सकते हैं। फिरोजपुर से ट्रन द्वारा भटिण्डा जाखल नरवाना जीन्द होते हुए सीध रोहतक पहुच सकते है। (७) गुडगावा से देहली होकर रेल अथवा बस से पहुच सकते हैं। अच्छा यह रहे अपने-अपने स्थान से चलने स दो दिन पूव ट्रन और बस अडडो से पूछ लिया जावे जिससे सुविधा होवे और वैसे ही कर लिया जावे। (८) अम्बाला से पानीपत होकर हा पहुचना चाहिए।

यह ठीक है कि वर्षा अभी देर मे हुई है और हो रही है। किसानो पर खेतो के काम का पूरा भार पड रहा है। एक फसल की बिजाई और अगली फसल की तैयारी दोहरा काम है। परन्तु अपने काम का प्रबन्ध करके जरूर ही १० अगस्त को प्रात ९ बजे से पहले रोहतक पहुचकर सभा के अधिवेशन मे भाग ल। सायकाल तक ही घर लौटने का ढग हो सकेगा।

यह वार्षिक अधिवेशन बहुत महत्वपूण है। इसमे अनेक कार्यों पर प्रभाव पडगा। चरखी दादरी के बाद जीन्द का अधिवेशन विपक्षो दल ने अदालत स रुकवा दिया था। इसलिये विवशता मे कई वर्षो के बाद यह अधिवेशन किया जा रहा है। अधिवेशन जल्दी इसलिये बुलाया गया है कि पूज्य श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज का आदेश एसा हो है कि शीघ्रता की जावे।

निवेदन है कि सब आय बन्धुवग प्रतिनिधि रूप मे अवश्यमेव १० अगस्त को प्रात ९ बजे से पूव अधिवेशन मे भाग लेने के लिए रोहतक सैनी हाई स्कूल मे पहुच जावगे ढील बिल्कुल नही कर।

पूज्य स्वामी आनन्द सरस्वती जी के आदेश का एक और उल्लघन

आर्यमर्यादा के द्वारा समस्त आयजगत को मालूम हो चुका है कि हैदराबाद मे पूज्य स्वामी जी महाराज को पूण अधिकार आयप्रतिनिधि सभा पजाब के झगडा मिटाने के लिये दे दिये थे। परन्तु पूज्य स्वामी जी के पवित्र काय का आदेश श्री रामशरणदासजी के पक्ष ने नही माना। जिसमे उनके साथ सावदेशिक आयप्रतिनिधि सभा के तात्कालिक अधिकारियो का स्पष्ट हाथ था। अब इस बात की पुष्टि हो गई है कि जहाँ प्रो० रामसिह जी प्रधान आयप्रतिनिधि सभा पजाब ने पूज्य स्वामीजी के आदेश का पालन करते हुए रोहतक मे १० अगस्त को उक्त सभा का अधिवेशन बुला लिया है। परन्तु २१ ७-६९ को श्री ला० रामगोपाल जी शालवाले ससत्सदस्य ने पजाब के आयसमाजियो को रोहतक पहुचने से मना किया है और भ्रान्ति फैलाई है कि प्रो० रामसिह जी और श्री रघुवीरसिह शास्त्री आयप्रतिनिधि सभा पजाब क प्रधान और मन्त्री नही है। जबकि आय समाज क सभी वर्गो को पता है कि पूज्य स्वामी जी ने प्रो० रामसिह जी के पक्ष को उक्त सभा के पूण अधिकार दे दिय और अधिवेशन बुलाने का भी आदेश दिया। श्री शालवाल जी ने भ्रम फलाकर पूज्य स्वामी जो महाराज के आदेश का स्पष्ट उल्लघन किया है। इससे यह भी सिद्ध हो गया कि श्री रामशरणदास जा के पक्ष का यही सज्जन स्वामी जी क आदेश को न मानने क लिय उभारत रहे है। इस बात को सिद्ध करने के लिये अब किसी दूसरे प्रमाण का आवश्यकता नही रह गई।

श्रावणी उपाक्रम वेदसप्ताह (२७ अगस्त से ३ सितम्बर पर)

आर्यमर्यादा का वेदाविर्भाव विशेषांक

२४ अगस्त को प्रकाशित होगा

आयमर्यादा क गत अको म पाठको को सूचित किया जा चुका है कि श्रावणी उपाक्रम वद सप्ताह के समय पर पाठको को स्वाध्याय सामग्री देने के लिए वेदाविर्भाव पद्धति विशेषाक प्रकाशित किया जावेगा। इस विशेषाक मे **"वेदो का ईश्वरीय ज्ञान" "चारो ऋषियो पर किस पद्धति के अनुसार प्रकट हुआ"** इस महत्त्वपूर्ण विषय पर प्रकाश डाला जावेगा। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास मे आज तक इस प्रकार का विशेषाक अथवा ग्रन्थ प्रकाशित नही हो सका। आर्य जगत के उच्च कोटि क विद्वान् लेखको के खोज पूर्ण लेख वेद प्रचार मे बहुत ही उपयोगी होगे। इस विशेषाक मे पुस्तकाकार २०×३०¯१६ साईज मे लगभग १०० पृष्ठ होगे। एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे होगा। परन्तु ५० प्रतियो तथा इस से अधिक एक साथ मगाने पर एक प्रति का मूल्य ५० पैसे और २५ प्रतिया मगाने वालो को एक प्रति ६० पैसे के हिसाब से अग्रिम मूल्य प्राप्त होने पर ही दी जावेगी।

जिन का धन मनीआर्डर से १२ अगस्त तक कार्यालय मे प्राप्त हो जावेगा, उन्हे भी यह विशेषाक २४ अगस्त से पूव भेज दिया जावेगा।

अत आर्यसमाजो आर्य शिक्षण सस्थाओ तथा स्वाध्यायशील महानुभाओ से निवेदन है कि वेद प्रचार सप्ताह पर प्रचारार्थ अधिक से अधिक सख्या मे इस विशेषाक को मगवाकर लाभ उठाव।

जो पुरान ग्राहक है उन्हे ग्राहक रूप मे ही अधिक मूल्य के बिना ही मिलेगा तथा जिन नये ग्राहको का वार्षिक शुल्क दश रुपये १२ अगस्त से पहिल पहिल कार्यालय मे पहुँच जावगा, उनको भी पुरान ग्राहको की भाति यह विशेषाक मिल सकेगा।

नोट—चेक किसो अवस्था मे स्वीकार नही किये जावग।

—व्यवस्थापक आयमर्यादा १५ हनुमान रोड नई देहली-१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा आयोजित सम्मेलन सम्पन्न

महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा दिये गये आदेशों की पुष्टि

जालधर, दिनांक २७-७-६९

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से आज आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर में एक विशेष सम्मेलन १० बजे से लेकर १ बजे तक प्रो० रामसिंह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। उसमें श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री संसत् सदस्य ने सर्वप्रथम महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेश के आधार पर उत्पन्न हुई स्थिति का वर्णन किया और आर्यसमाज को उन्नति, संघटन तथा हिन्दी भाषा की रक्षा आदि के लिये विचार प्रकट किये। उसमे भिन्न भिन्न विषयों के संबंध में ४ प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुये। उक्त बैठक में लुधियाना, नवांशहर, शिमला, बटाला, सिरसा, गुरदासपुर, अम्बाला, रोहतक, जीद, देहली, पठानकोट, पटियाला, फगवाड़ा होशियारपुर तथा जम्मू काश्मीर आदि स्थानों से अधिकारी तथा प्रतिष्ठित आर्य महानुभाव लगभग ५०० की सख्या में उपस्थित थे।

प्रस्ताव संख्या–१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा आयोजित पंजाब के आर्यसमाजों का यह सम्मेलन आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के विवाद के सम्बन्ध में महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज द्वारा दिये गये निर्णय का स्वागत करता है। जो थोड़े से व्यक्ति स्वार्थवश इतने उच्चस्तरीय निर्णय को भी न मान कर सभा के कार्यों में अनुचित हस्तक्षप करना चाहते हैं, यह सम्मेलन उन की निन्दा करता हुआ पंजाब के समस्त आर्यसमाजियों से अनुरोध करता है कि आर्यसमाज के संघटन की रक्षा की दृष्टि से महात्मा आनन्द स्वामी के निर्णय का पूर्ण. सम्मान किया जाय। यह भी स्पष्ट कर देना सामयिक होगा कि महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेश के अनुसार ही सभा के प्रधान प्रो० रामसिंह जी ने सभा के मुख्य कार्यालय का कार्य भार सम्भाला है। और कर्मचारियो ने स्वामी जी के आदेश का सम्मान करते हुए कार्यालय का सारा चार्ज स्वेच्छा पूर्वक सभा अधिकाररियों को सौंप दिया कुछ लोग अपने समाचार पत्रो द्वारा यह प्रचार कर रहे हैं कि वह बलपूर्वक कब्जा किया गया उन का यह कथन मिथ्या एवं निराधार है। ऐसे मिथ्या प्रचार की यह सम्मेलन घोर निन्दा करता है।

प्रस्ताव संख्या–२

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब द्वारा आयोजित आर्यसमाजों का यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आर्यसमाज एव हिन्दुओं के हितों का यह प्रबल अनुरोध है कि आर्य-प्रतिनिधि सभा पजाब का वर्तमान संघटन जो कि पजाव, दिल्ली, हरयाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू तथा काश्मीर में फैला हुआ है यह ज्यों का त्यों बना रहे। जो कुछ थोड़े से लोग अपने स्वार्थों से प्रेरित हो कर इस सघटन का विभाजन करने का यत्न करते हैं, उस का यह सम्मेलन आर्यसमाज एवं हिन्दुओं के हितों और सघटन पर एक कुठाराघात है। अतः ऐसे यत्नों का पूरी शक्ति से सब आर्यों को विरोध करना चाहिए।

प्रस्ताव संख्या–३

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब द्वारा आयोजित पजाब में आर्य समाजियों के इस सम्मेलन को यह निश्चित सम्मति है कि शिक्षा के माध्यम की भाषा क्या हो ? इस के चुनने का अधिकार बालकों के माता-पिता को है, सरकार को नही। विश्व में यह सिद्धान्त आज सर्वत्र स्वीकृत है हो चुका है कि मातृभाषा की घोषणा का अधिकार केवल नागरिकों को है।

इसलिये यह सम्मेलन पजाब सरकार से मांग करता है कि वह पंजाब के नागरिकों को अपने बालकों की शिक्षा के माध्यम की भाषा को चुनने की पूरी छूट दे। यह सम्मेलन पंजाब सरकार को चेतावनी देता है कि यदि उसके माता-पिता ने इस मौलिक अधिकार में हस्तक्षेप किया तो पजाब का आर्यसमाज उसका पूरी शक्ति के साथ प्रतिरोध करेगा। साथ ही यह सम्मेलन स्पष्ट करना चाहता है कि पजाब में आर्यसमाज ने अपने जन्म काल से ही हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिये बहुत ठोस काम किया है। इसलिये पजाब में हिन्दी के प्रति आर्यसमाज का विशेष उत्तरदायित्व है। यदि सरकार ने हिन्दी के शिक्षण एव प्रसार में कोई बाधा खड़ी की तो आर्यसमाज इसे कदापि सहन न करेगा।

प्रस्ताव संख्या–४

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब द्वारा आयोजित पजाब के आर्य समाजों का यह सम्मेलन चाहता है कि पजाब की निजी शिक्षण सस्थाय ब्रिटिश शासन के समय से ही स्थापित एव संचालित हैं इन सस्थाओं के कार्य अथवा संचालन में ब्रिटिश शासकों ने कभी हस्तक्षेप न किया और न इनके साथ किसी प्रकार का भेद भाव बरता। यह सस्थायें धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ हिन्दुओं की सस्कृति के सरक्षण के उद्देश्य से स्थापित की गयी थी। इन सस्थाओं को अनेक हिन्दू सन्यासी, साधु सन्तों तथा महा पुरुषों ने अपने बलिदान तप एवं निष्काम त्याग भाव से पाला पोषा है। हिन्दू जाति सदा इन सस्थाओं को अपनी सस्कृति की प्रतीक मान कर पूजती रही है।

इस सारी स्थिति को ध्यान में रखते हुए यह सम्मेलन पंजाब सरकार को चेतावनी देना चाहता है कि हिन्दू जाति किसी भी दशा मे इन सस्थाओं की स्वतन्त्रता में किसी भी रुकावट को सहन नही करेगी। साथ ही यह सम्मेलन पंजाब सरकार का ध्यान इस तथ्य की ओर खींचना चाहता है कि सविधान के अन्तर्गत सरकार द्वारा ली जाने वाली वित्तीय सहायता आदि मामलो में किसी सस्था के साथ भेदभाव का बरताव नहीं किया जा सकता। —**रामलाल गुप्त, अधिष्ठाता** सभा मुख्य कार्यालय जालन्धर

श्री योगेन्द्रपाल जी सेठ मन्त्री आर्यसमाज जालधर अड्डा होशियारपुर ने इस आर्य सम्मेलन में पधारने वाले सभी आर्य बन्धुओं का स्वागत तथा भोजनादि से पूर्ण आतिथ्य सत्कार किया। इस के लिये आर्य-प्रतिनिधि सभा पजाब इन के प्रति आभार प्रकट करती है।



योगेन्द्रपाल जी सेठ, मन्त्री आर्यसमाज जालन्धर, – अड्डा होशियारपुर

बालको ! बढ़े चलो

[कुमारी सुधाबाला, चतुर्थ कक्षा, सुपुत्री श्री जगन्नाथ जी पुस्तकाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब]

बालको बढ़ चलो, बालको बढ़ चलो,
हाथ में ध्वज रहे, बच्चे दल सजा रहे।
ध्वज कभी झुके नहीं, ध्वज कभी रुके नहीं।
बालको बढ़े चलो, बालको बढ़े चलो।
चाहे सामने पहाड़ आयें, चाहे शेर दहाड़ते रहें।
बालको डरो नही, बालको हटो नही।
बालको बढ़े चलो, बालको बढ़े चलो।
चाहे मेघ गरजते रहें, चाहे बिजलियाँ चमकती रहे।
चाहे बिजलियाँ चमकती रहे, चाहे पानी बरसते रहें।
बालको बढ़ चलो, बालको बढ़ चलो
सुबह हो या रात हो, चाहे तुम अकेले हो।
सूर्य से बढ़े चलो, चन्द्र से बढ़े चलो।
बालको बढ़े चलो, बालको बढ़े चलो।

ओङ्कार-जप-विधि--(६)

(लेखक-श्री प० जगत्कुमार शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली)

१—परम्परा से ऐसा प्रसिद्ध मत चला आता है कि श्री आद्य शकराचार्य जी महाराज ने विभिन्न आचार्यों के मतामतो को सक्षिप्त रूप मे दर्शाने के लिये ही—'नव-दर्शन-सग्रह" नामक सुप्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ की रचना की थी। उक्त ग्रन्थ मे महर्षि पतजलि जी का योग-मार्ग भी बहुत उत्तमता से दर्शाया गया है। 'पातजल-ओङ्कार-जप-विधान" का उल्लेख इस लेख-माला मे पहिले हो चुका है, तथा "नव-दर्शन-सग्रह" के आधार पर पुनरपि उसी विषय का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

२—कर्म-योग का आदेश—

क्रियायोगं प्रकुर्वीत, साक्षाद्योगप्रवर्त्तकम् ॥१४॥

अर्थ—साधको का उचित है कि विधिपूर्वक कर्म-योग का अनुष्ठान कर। क्योकि कम-योग के अनुष्ठान से योग-माग की उच्चतर भूमिकाओ की प्राप्ति सहज मे ही हो जाती है।

३—कर्म-योग का स्वरूप—

क्रियायोगस्तपो मन्त्रजपो भक्तिर्दृढेश्वरे ।
क्लेशकर्मविपाकादिशून्य सर्वज्ञ ईश्वरः ॥१५॥

अर्थ—तपस्या के आचरण, 'ओ३म्" नाम के जप और ईश्वर के प्रति परम-प्रेम के समुच्चय को कर्म-योग कहते हैं। वह ईश्वर सब प्रकार के क्लेशो, तथा कम-फल के बन्धनो से रहित है और सर्वज्ञ है।

स कालेनानवच्छेदाद् ब्रह्मादिनां गुरुर्मत ।
तद्वाचकः स्यात्-प्रणवस्तज्जपो वाच्य भावनम् ॥१६॥

अर्थ—क्योकि वह ईश्वर काल के बन्धन से परे है, अत ब्रह्मा आदि प्राचीनतम ऋषि-मुनियो और प्रसिद्ध विद्या प्रचारक गुरुओ का भी गुरु वही है। प्रणव अर्थात् "ओ३म्" उस का निजनाम है। साधको को इस "ओ३म्" नाम का जप प्रेमपूर्वक करना चाहिये। उस जप के साथ ही साथ "ओ३म्" नाम के वाच्यार्थ=ईश्वर का चिन्तन भी मनोयोग पूर्वक करना चाहिये।

४—कर्म-योग के अनुष्ठान में समय-समय पर किसी न किसी कारण-वशात् नाना प्रकार के विघ्न भी आ उपस्थित होते हैं। उनके निवारण का उपाय दर्शाते हैं—

ईश्वरप्रणिधानेन तस्माद् विघ्नान् विनाशयेत् ।
मैत्र्यादिभिर्मनः—शुद्धिं कुर्याद्योगस्य साधनम् ॥२०॥

अर्थ—साधक को उचित है कि वह अपने ईश्वर-विश्वास अर्थात् ईश्वर के प्रति परम-प्रेम को बढाकर, योग-साधन मे उपस्थित होने वाले विघ्नो का निवारण करे। और मैत्री आदि के व्यवहारो से अपने मन को भी शुद्ध करे। यह मैत्री आदि व्यवहारो का आचरण तथा मानसिक सशुद्धि का सम्पादन ही योग का वास्तविक साधन है।

मैत्रीं कुर्यात् सुखो लोके, करुणां दुःखिते जने ।
धर्मेऽनुमोदनं कुर्यादुपेक्षामेव पापिनाम् ॥२१॥

अर्थ—साधक को उचित है कि बुद्धिमानो=सुखी जनो के साथ मित्रता और दुखियो के साथ दया का व्यवहार करे। धर्मात्माओ के धर्म कार्यों का अनुमोदन करना चाहिये। पापियो=दुराचारी जनो के प्रति उपेक्षा का व्यवहार करना ही उचित है।

५—उपेक्षा उसे कहते हैं कि न मित्रता की जाय न शत्रुता। दुष्टो को सुधारने का निषेध यहा नही है। यदि कोई सुधरा हुआ प्रबल सुधारक किसी बिगडे हुए व्यक्ति को सुधार सके, तो वह उसे सुधारने की कृपा अवश्य ही करे। दूसरो को सुधारना सब किसी के वश मे नही होता। स्वय बिगडे हुए लोगो को दूसरो को सुधारने का कार्य आरम्भ करने से पूर्व अपना सुधार अवश्य ही कर लेना चाहिये। ऐसा भी न हो कि जो सुधार का बीडा उठावे, वह बिगडे हुए लोगों के ससर्ग में आकर स्वय भी बिगड जाय और बिगाडक बन जाये।

६—ऐसा भी न हो कि जब बिगडे हुए लाग सच्चे सुधारक को अपना शत्रु समझे, तब वह सुधारक अपनी किसी दुर्बलतावश हिम्मत हार बैठे, दुष्टो से समझौते करे, तुष्टिकरण की नीति अपनाये और बिना आवश्यक तैयारी के ही सुधार-मार्ग मे पग बढाकर अशान्त बन जाय। अत योग-मार्ग मे यह उपेक्षा का उपदेश मध्यम-मार्ग के रूप मे ही दिया जाता है। एक सीमा तक तो दुष्टो की दुष्टता को सहन भी किया जा सकता है। सहनशीलता सबलता की निशानी भी है, सज्जन का आभूषण भी। यदि कभी आवश्यक हो जाय तब उचित मात्रा मे अपनी शक्ति और नीतिमत्ता का परिचय भी साधको को दे ही देना चाहिये।×

७—ठीक यही उपदेश महर्षि दयानन्द जी के शब्दो मे इस प्रकार है—"सदा तमोगुण अर्थात् क्रोध, मलीनता, आलस्य, प्रमाद, आदि रजोगुण अर्थात् ईर्ष्या, द्वेष, काम, अभिमान, विक्षेप आदि दोषो से अलग होके, सत्व अर्थात् शान्त प्रकृति पवित्रता, विद्या विचार आदि गुणो को धारण करे। (मैत्री) सुखी जनो मे मित्रता (करुणा) दु खी जनो पर दया, (मुदिता) पुण्यात्माओ से हर्षित होना (उपेक्षा) दुष्टात्माओ मे न प्रीति और न वैर करना।" [सत्यार्थप्रकाश समुल्लास नवम]

न हलवा बन कि चटकर जायें भूके ।
न कडवा बन कि जो चखे सो थूके ॥

८—कम-योग का प्रतिफल दर्शाते है —

जपेन देवताकर्षः, समाधिस्त्वीशसेवया ।
आसनं स्यात् स्थिरसुख द्वन्द्वनाशस्ततो भवेत् ॥३३॥

अर्थ— ओ३म् नाम का जप करन म देवना (दिव्यगुण) का आकर्षण होता है, अर्थात् साधक पर ईश्वर की विशेष कृपा होती है। ईश्वर-प्रणिधान से अर्थात पूर्णतया ईश्वर-विश्वासी=ईश्वर का परम-प्रेमी बन जाने से समाधि की सिद्धि बहुत शीघ्र ही हो जाती है। सुखपूर्वक सुस्थिर होकर बैठने का नाम ही आसन है। आसन की सिद्धि होने पर साधक गरमी-सरदी आदि के द्वन्द्वो को सहन करने मे कुछ विशेष समर्थ हो जाता है।

९—योग-मार्ग की उच्चतर भूमिकाओ की प्राप्ति न होने पर किसी को घबराना न चाहिये। ईश्वर के प्रति परम-प्रेम के भरोसे पर ही अभ्यास को आगे बढाते रहना चाहिये। आवश्यक होने पर साधको का—अपना-अपना अनुभव ही उनका पथ-प्रदर्शन करेगा।

१०—श्री प० राजारामजी योग दर्शन के अपने भाष्य की भूमिका मे लिखते हैं-योग के अनुष्टान के लिय ऐसे गुरु की शरण लेनी चाहिये,जो स्वय इस मार्ग पर चलकर सब कुछ साक्षात देख चुका हो। वही इस मार्ग का दर्शक हो सकता है। पर अनुष्ठानकर्ता के लिये उसका अनुष्ठान भी गुरु का काम देता है। जैसा व्यासभाष्य [३।६] मे कहा है—

भूमेरस्या इयमनन्तरा भूमिरित्यत्र योग एवोपाध्यायः, कथं, एवमुक्तम्—

योगेन योगो ज्ञातव्यो, योगो योगात् प्रवर्त्तते ।
योऽप्रमत्तस्तु योगेन, स योगे रमति चिरम् ॥

यह भूमि इसके अनन्तर [व्यवधानरहित पीछे] की है। इस विषय मे योग ही उपाध्याय [गुरु] है। जैसा कि कहा है—"योग से योग को जानना चाहिये। योग योग से प्रवृत्त होता है। [पहिला योग अगले योग की प्रवृत्ति का हेतु है।]जो योग से अप्रमत्त रहता है, वह योग मे चिर तक आनन्द मनाता है।"

११—इस योग-मार्ग का अधिकारी वह है जिसकी आत्मा मे और परलोक में श्रद्धा है। वह श्रद्धा शुभकर्मों के अनुष्ठान से बढती है। मोक्ष-

×मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्त प्रसादनम्। [योग-दर्शन—१।३३]

मार्ग को सुनते ही जिनके रोम खड़े हो जाते हैं। आंखों में आंसू आ जाते हैं। जिसने पूर्वजन्मों में शुभ कर्म किये हैं। वे इसके अधिकारी हैं। और जिनका हृदय शुभकर्मों की वासना से शून्य है, उनको इस अलौकिक विषय में आक्षेप करने में ही रुचि हाती है। न कि निर्णय में।

दोषाद् येषां पूर्वपक्षे रुचिर्भवति, अरुचिश्च निर्णये।

दोष वश जिनकी पूर्वपक्ष [अर्थात् कोई कर्मो का फल नही, न परलोक है, न कोई परलोक में जाने वाला है। इत्यादि] में रुचि होती है। और पच्चीस तत्त्वों के निर्णय में रुचि नही होती उसे अभी न्याय, वैशेषिक से शिक्षा लेनी चाहिये। वे उसे योग का अधिकारी बनायेंगे।"

१२—यह "ओङ्कार-जप विज्ञान" वा "गायत्री-जप-विज्ञान" अति प्राचीन है। हमारे पूर्वज ऋषि मुनि महात्मा और श्री रामचन्द्र जी, श्री कृष्णचन्द्र जी आदि राजा-महाराजा भी श्रद्धा पूर्वक जपानुष्ठान किया करते थे। यह विज्ञान किसी मनुष्य विशेष का आविष्कार नहीं है। सृष्टि के आरम्भ में स्वय उस आनन्दमय और विज्ञानस्वरूप परमात्मा ने ही अखिल मानवता के कल्याण के लिये "ओङ्कार-जप-विज्ञान" का प्रकाश वेदो के द्वारा किया था। इस विषय का विस्तृत उल्लेख आगे होगा। ऋषियों का कथन है कि जपानुष्ठान ऐसा ही है, जैसा किसी डूबते हुए मनुष्य को जल-यान का सहारा।

१३—श्री राम, लक्ष्मण और विश्वामित्र प्रभृति भी जप करते थे—

तस्यर्षेः परमोदारं वचः श्रुत्वा नरोत्तमौ।
स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ, जपेतुः परमं जपम्॥

[बा० रा० बाल० २३।३]

अर्थ—श्री विश्वामित्र जी के परमोदार वचन को सुनकर राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों ने स्नान करने के पश्चात् परम-जप [ओ३म्-जप] किया।

१४—जब श्रीकृष्ण जी और पाँचो पाण्डव, श्री भीष्म पितामह जी से उपदेश ग्रहण करने के लिये हस्तिनापुर से कुरुक्षेत्र को ओर गये थे तब—

याममात्रार्धशेषायां, यामिन्यां प्रत्यबुध्यत।
अवलोक्य ततः पश्चात् दध्यौ ब्रह्म सनातनम्॥
ततः उत्थाय दाशार्हः स्नातः प्रांजलिरच्युतः।
जप्त्वा गुह्यं महाबाहुरग्नीनाश्रित्य तस्थिवान्॥

[महाभारत, शान्ति पर्व अ० ५३]

अर्थ—[श्री भीष्म जी से उपदेश ग्रहण करने के दिन युधिष्ठिर की राजधानी में सुखपूर्वक निद्रा लेने के बाद] एक पहर रात्रि शेष रहने पर श्रीकृष्ण जी जगे, तब प्रात स्मरणीय मन्त्रो से उन्होने सत्य-सनातन ब्रह्म का ध्यान किया। फिर स्नानादि से निवृत्त होकर ओङ्कार-जप, सन्ध्या-वन्दन और अग्नि-होत्र करके वे वहा से रवाना हो गये।

१५—जब श्रीकृष्ण जी और पाँचो पाण्डव श्री भीष्म पितामह जी से उपदेश ग्रहण करके लौटे, तब मार्ग में सब दृषद्वती नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ—

दृषद्वतीं अवगाह्य सुव्रताः स्नाताः
कृतोदकार्थाः कृतजप्यमंगलाः।
उपास्य सन्ध्यां विधिवत् परंतपाः।
ततः पुरं ते विविशुर्गजाह्वयम्॥

[महाभारत, शान्तिपर्व अ० ५८]

अर्थ—दृषद्वती नदी में स्नान करके, उन्नमव्रतों का पालन करने वाले उन शत्रु सन्तापकारी वीरो ने विधिपूर्वक ओङ्कार का जप किया। सन्ध्या-उपासना की, फिर वहाँ से वे सब हस्तिनापुर नगर में चले गये।

१६—"गोपथ-ब्राह्मण" में कहा है—

आत्मभैषज्यमात्मकैवल्यमोङ्कारः।

अर्थ—ओङ्कार तो आत्मा की दवा=चिकित्सा और आत्मा को मोक्ष प्रदान कराने वाला है।

१७—फिर लिखा है—

अमृतं वै प्रणवः, अमृतेनैव मृत्युं तरति।

अर्थ—प्रणव=ओ३म् तो अमृत है, जीवन है। इस अमृत को प्राप्त करके ही तो उपासक मृत्यु को पार करता है।

१८—योगिराज याज्ञवल्क्य का आदेश है —

मांगल्यं पावनं धर्म्यं, सर्वकामप्रसाधकम्।
ओंकारं परमं ब्रह्म, सर्वमन्त्रेषु नायकम्।
प्रजापतेर्मुखोत्पन्नं, तपःसिद्धस्य वै पुरा।
जपेन दहते पापं, प्राणायामैस्तथा ऽसमम्॥

अर्थ—ओ३म् मगलमय है पवित्र और पवित्रताकारक है। सब शुभ कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। जिस को परमब्रह्म कहते हैं, यह ओ३म् उसी का वाचक है। सब मन्त्रों में श्रेष्ठ यह ओ३म् ही है। क्योंकि यह सभी वेद-मन्त्रों के आरम्भ में बोला जाता है। ओ३म् के प्रकाश और जप-विधान को स्वयं परमपिता परमात्मा ने ही किया था। महर्षियों और सिद्ध पुरुषों ने अपने-अपने तप आदि शुभ कर्मो द्वारा ओङ्कार के महत्त्व को स्वीकारा था और ओङ्कार जप का प्रचार किया था। ओ३म् के जप और प्राणायाम के अभ्यास से सभी पाप दग्ध हो जाते हैं।

१९—आचार्य चमुपति जी को एक प्रचलित दोहा मिला था। उन्होंने उसे थोड़ा-सा परिवर्तित कर दिया। देखिये—

मुख से ओं के कहत ही। निकसत पाप-पहाड़।
फिर आवन पावत नहीं। देत मकार किवाड़॥

क्रमशः

गतांक से आगे:—

आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म कर्म्म की होली॥

श्री अम्बादान आर्य कवि-कुटीर कुरडायां (राजस्थान)

चाटुकार ईसा के चेले, दीन सहायता का व्रत लेले।
छाद्म वेष में फिर-गिरि-गेले, पैसों के बल देते हेले॥
मसीह स्वप्न साकार रहे कर लखि जनता बुद्ध भोली।
आज आर्य भूमि पर हो रही, धर्म्म कर्म्म की होली॥१२॥

हर औचित्य कूट नीति से, ले चगुल में सद् रीति से।
प्रथम मुक्त कर भय भीति से फिर छीने सर्वस प्रीति से॥
सारा दिया शरीर जकड़ पर देखा आँख न खोली।
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म कर्म्म की होली॥१३॥

सत्य-सूर्य्य कब होय प्रकाशित, झट से हो अन्धड़ निष्काशित॥
"आर्यमर्यादा"—सम्मानित, घर-घर हो सुख शान्ति सुशोभित॥
बहे अक्षुण्ण जन-जीवन में भद्र भाव भर झोली।
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥१४॥

सारे जगत् जगाने-वाला, भ्रान्ति भूत भगाने वाला॥
"आर्य विश्व" बनाने वाला, ऐक्य पाठ पढ़ाने वाला॥
प्रलय ज्वाल बुझा सकती क्या? दयानन्द की टोली।
आज आर्य भूमि पर हो रही धर्म्म-कर्म्म की होली॥१५॥

अस्पृश्यता

(लेखक —श्री कालीचरण प्रकाश आर्योपदेशक हैदराबाद)

कुछ दिन पूर्व पुरी के शकराचार्य श्री निरजनदेव जो तीथ ने पटना मे एक भाषण दिया था जो आज समूचे देश मे चर्चा का विषय बना हुआ है। इस प्रकरण को लेकर पक्ष-विपक्ष मे मनीषियो ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए हैं। और बिहार राज्य ने श्रीशकराचार्य जी के इस भाषण को लेकर न्यायालय मे जाच का विषय भी बना दिया गया था।

अस्पृश्यता पर विचार किया जाए तो इसके तोन प्रकार हमारे सम्मुख आते हैं। प्रथम जिसे धार्मिक दृष्टि से अस्पृश्यता कहा जा सकता है, वह मनुष्य के जीवन का और जीवनोत्थान एव स्वास्थ्य का विषय है। दूसरा अस्पृश्यता का वह रूप है जो पौराणिकता के आधार पर मनुष्य से मनुष्य के लिए घृणा और द्वेष उत्पन्न करता है। अस्पृश्यता का तीसरा रूप आज के प्रशासक दल सघटन और उसके जन्मदाता महात्मा गाधी द्वारा प्रस्तुत किया हुआ है। यदि इन्ही तीनो रूपो पर विचार किया जाए तो इस अस्पृश्यता का वास्तविक मूल हमारे सम्मुख आ सकेगा। अन्यथा यह भूल भुलियाँ है और रहेगी।

'अस्पृश्यता" "स्पृश्यता" का उलटा शुद्ध सस्कृत भाषा का ठीक वसा ही है जैसा कि "अहिंसा' "हिंसा" का विरोधी भाव वाला। अस्पृश्य का अर्थ न छुए जाने वाला बनता है, जो सर्व मान्य है। न छुए जाने वाली वस्तुओ मे अग्नि अदृश्य पदार्थ एव मल-मूत्र वा ऐसे हो पदार्थ हैं जो स्वास्थ्य वर्द्धकता मे बाधक हो। इस दृष्टि से सर्व सामान्य यही अभिप्राय इस शब्द का लगे अन्य नही। इस मे एक ही मत होगा, मतभेद नही।

व्यक्ति के लिए हिन्दु धर्म जो वैदिक धर्म का विकृत हुआ नाम है वण व्यवस्था पर आधारित है, जन्म पर नही। वर्ण की दृष्टि से चारो वर्ण ही हिन्दु धर्म के अविभाज्य ढग हैं। इस दृष्टि से भी शूद्र अस्पृश्य नही बनता। वैदिक परिभाषा में मनुष्य और मानव समुदाय के लिए यदि अस्पृश्यता देखनी हो तो वह नहीं मिलेगी। अपितु कर्म, पदार्थ और व्यवहार तथा जोवन गति में बाधकता की दृष्टि से इसका अस्तित्व अवश्य मिलेगा। जैसे रजस्वला स्त्री, व कुष्ट आदि रोगो से पीडित प्राणी, मल-मूत्र तथा कर्मों में पैशाचिक व चाण्डालिक आदि दुष्ट कर्म अवश्य अस्पृश्यता का रूप धारण कर सकते हैं। इनके लिए युग निर्माता महर्षि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश आदि मे अनेक स्थान पर उल्लख मिल सकता है।

वेदादि वैदिक शिक्षा के लुप्त हो जाने पर जहा आय जाति और वैदिक धर्म का मूलाधार "वर्णाश्रम धर्म' 'मर्यादा का स्थान "जाति' ने ग्रहण कर लिया वही अस्पृश्यता मनुष्य के साथ आ जुटी, यह इतिहास सिद्ध बात है। वैदिक शिक्षा के अभाव मे मनुष्यो के कर्म बदले और आचार-विचार की भ्रष्टता से कर्मो से भ्रष्ट होने वाला व्यक्ति और समुदाय को अस्पृश्य समझा जाने लगा। इसको दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द से पूर्व कई महापुरुषो ने प्रयास किया। जिसके फलस्वरूप वे कइयो को महान् पद तो दिला सके परन्तु मानव समुदाय से यह कलक सर्वांश मे दूर न कर सके। एकमात्र इसे ठीक करने का श्रेय यदि किसी को दिया जा सकता है तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती को। चूंकि महर्षि का सिद्धान्त कर्म, गुण और स्वभाव से मनुष्य को आचरण से बदलने का रहा है।

तीसरा रूप प्रस्तुत कांग्रेस और कांग्रेस के नेता महात्मा गान्धी जी द्वारा शूद्रो को "हरिजन" सज्ञा देने का है।

पौराणिक काल मे जिन लोगो ने पौराणिक मतानुसार अपना आचार-विचार नही रखा, उन्हे लोगो ने पृथक् भावना से देखना प्रारभ किया। यही से प्रस्तुत अस्पृश्यता का सूत्रपात होता है। समय व्यतीत होते-होते इसका रूप बदला। तब एक-दूसरे वर्ग के लिए स्पृश्य और अस्पृश्य कहलाने लगे। जब गान्धी जी का सुधारवाद चला तो इसके द्वारा इस वर्ग को "हरिजन" की सज्ञा दे दी गई। जो अब भी इनके लिए एक विशेष अवस्था दर्शाती है।

महात्मा गान्धी जी से पूव स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी ने जो दलितोद्धार सबन्धी कार्य प्रारभ किया था वह महात्मा गान्धी जी के कार्य से भिन्न था। ऋषि दयानन्द का मत था कि प्रत्येक व्यक्ति को जन्म के कार[illegible] मात्र से द्विज बनने से नही रोका जा सकता। अवसर प्रत्येक मानव मा[illegible] को मिलना चाहिए। अवसर प्राप्त होने के उपरान्त उसके लिए [illegible] अनिवार्य था कि वह आयमर्यादाओ का पालन करे और इसका जीव[illegible] आर्यों के जोवन सदृश हो। ऋषि दयानन्द को इस शैली के सदृश महात्[illegible] गान्धी के हरिजनोद्धार मे यह बात नही मिलती। हरिजन के लिए खा[illegible] पान और आचार अनाचार की शर्त नही दिखाई देती जो ऋषि दयान[illegible] के मन्तव्यो मे थी।

जबसे देश मे इस प्रकार को बातो पर विचार न किया जाकर पाश्चात[illegible] प्रणाली को लक्ष्य बना, मानव जीवन निर्माण किया जा रहा है उस[illegible] परिणामस्वरूप लोगो की अस्पृश्यता का निवारण यदि हम करना चाहे त[illegible] इसके लिए एक ओर हमे बिना किसी जन्ममूलक जाति पाति भेद [illegible] प्रत्येक को शिक्षा धनोपार्जन और आचार-विचार [illegible] पालन मे अवसर देन[illegible] होगा। तो दूसरी ओर जो अस्पृश्य नही कहलाना चाहे उन्ह भी आवश्यक[illegible] होगा कि वे स्वय भी द्विज कहलाने के लिए द्विजो की मर्यादा का आचरण[illegible] करें। अन्यथा इसका निवारण मौलिक नही हो सकेगा। निसर्ग का नियम[illegible] है कि फूटे पात्र मे पानी नही ठहरता।

शङ्का—समाधान

प्रश्न—(क) इच्छा द्वेष और सुख दु ख का द्रव्य कौनसा है ? जिसके ये स्वभाविक गुण है।

(ख) मुक्ति मे इच्छा द्वष रहगे तो जोव को पूण आनन्द किस प्रका[illegible] हो सकता है ? वहाँ पर इनका निमित्त कौन बन सकता है ?

—श्री मनुदेव जी मीमासक, गुरुकुल सिह पुरा—सुन्दरपुर (रोहतक

उत्तर—(क) इन का द्रव्य जाव है। जीव के ये गुण हैं परन्तु स्वाभाविक नही। नैमित्तक हैं। दो विरोधी गुण एक साथ एक द्रव्य मे नही र[illegible] सकते। बाह्य कारण से जीव कभी इच्छा करता है, कभी द्वष करता है अनुकूल पदार्थ के ग्रहण मे इच्छा करता है। प्रतिकूल पदार्थ से अप्रीति करके उसको छोडना चाहता है।

(ख) मुक्ति मे इच्छा द्वेष जीव नही करता, अत उस अवस्था मे पूर्ण आनन्द प्राप्त करता रहता है। मुक्ति मे भी जीव की २४ प्रकार की जो शक्तियां=सामर्थ्य हैं वे बनी रहती हैं, परन्तु उन से कार्य नही लेता। जैसे दण्डे मे घट बनाने की शक्ति है, परन्तु जब कुम्भकार (घडा) बनावेगा तभी दण्ड की शक्ति का प्रयोग करता है, अन्यथा नही।

जहा से ये प्रश्न उठाये जाते हैं सत्यार्थप्रकाश को ध्यान से पढने पर उत्तर भी वही मिल सकता है। अत सत्यार्थप्रकाश का स्वाध्याय मनोयोग पूर्वक करते रहना चाहिये।

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

शङ्का प्रेषक सज्जनों से

यह सौभाग्य है कि आयमर्यादा" मे वैदिक सिद्धान्तो और ऋषि दयानन्द के मन्तव्यो पर पाठक सज्जन शङ्काए भेजते रहते हैं और यथा मति उनका समाधान भी दिया जाता रहता है। इस सम्बन्ध मे प्रार्थना यह है कि शङ्का भेजने वाले महाशय एक बार मे भिन्न भिन्न विषयो के सम्बन्ध मे तथा अनेक शङ्काए एक साथ न भेजा करे। इस मे उत्तर देने मे असुविधा होती है और आर्यमर्यादा का स्थान भी अधिक लेना पडता है। शङ्काए भी सार रूप मे लिखनो चाहिये। विस्तार से नही। शङ्का करना सरल होता है, परन्तु समाधान करने मे स्वाध्याय करने की आवश्यकता होती हैं, दार्शनिक ग्रन्थो आदि पुस्तको के प्रमाण भी उद्धृत करने होते हो हैं, अत विलम्ब हो जाना भी आश्चय कर नही।

साथ ही यह भी निवेदन है कि यदि आयमर्यादा मे प्रकाशित किसी लेख पर शङ्का हो, तो अच्छा यह है कि अपनो शङ्का लेखक महानुभाव के पास भेज दी जावे, जिस से वह शङ्का और उसके अपने समाधान को आर्यमर्यादा मे भेज सकेंगे। इसमे सुविधा होती है। आशा है स्वाध्याय प्रिय पाठक इस निवेदन पर ध्यान रखते रहेंग।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के लिए एक लाख रुपये की अपील

आर्यजगत् को यह भली भांति विदित है कि विरजानन्द दीक्षा शताब्दी मथुरा आदि कई महत्त्वपूर्ण कार्य अखिल भारतीय और सार्वदेशिक स्तर पर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश ने अपने इतिहास में किये हैं। उसी प्रकार यह शास्त्रार्थ शताब्दी महोत्सव सार्वदेशिक स्तर पर उत्तर प्रदेशस्थ काशी नगरी में १६ नवम्बर ६९ से २१ नवम्बर ६९ तक मनाने की घोषणा अभी से की जाती है जिससे विदेश के आर्य भाई भी इसमें भाग लेने के लिए आने को तैयारी कर सकें।

इस समारोह में कई विशिष्ट भाग हैं जैसे—(१) अन्ताराष्ट्रिय सर्व-धर्म विद्वत्सम्मेलन, (२) समस्त भारत में शास्त्रार्थ दिग्विजय यात्रा, (३) प्राचीन कोई यज्ञ, (४) सार्वदेशिक महिला सम्मेलन। (५) विशिष्ट प्रकार की शोभायात्रा काशी में, (६) शोधपत्र और सम्मति पत्र तथा अन्ताराष्ट्रिय सर्वधर्म विद्वत्सम्मेलन निबन्ध प्रकाशन।

इत्यादि कार्यो के सम्पादन में एक लाख रुपये का व्यय होना साधारण बात है। इस समय भारतवर्ष में दस आर्यप्रतिनिधि सभायें हैं प्रत्येक सभा और उसकी आर्यसमाजें अपने क्षेत्र से दस-दस हजार की राशि संग्रह करके भेजें तो यह व्यय पूरा हो सकता है।

विदेश के विश्वविद्यालयों से जो स्कालर पधारेंगे उन पर भी व्यय, स्वागत, प्रबन्ध आदि पर होगा। अत: भारत से बाहर देशों में स्थित आर्यजगत् का कर्त्तव्य है कि उस व्यय को पूर्ति वे देश करने की कृपा करें। आर्यजगत् का कत्तव्य है कि इन चार मास तक सामूहिक शक्ति से इस कार्य में जुट जावें। इस समारोह को सफलता से आर्यसमाज विद्या और सिद्धान्त के संसार में शिरोमणि बन जावेगा।

प्रेमचन्द शर्मा—आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश लखनऊ

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति, के निश्चय

आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ में ता० १३-७-६९ मध्याह्न १२ बजे काशी शास्त्रार्थ समिति की बैठक हुई। जिस में आर्योपप्रतिनिधिसभा वाराणसी के प्रधान श्री खेमचन्द जी तथा मंत्री श्री कैलाशनाथ सिंह जी तथा श्री केदारनाथ जी कोषाध्यक्ष वाराणसी से इस बैठक में भाग लेने आये थे। इस बैठक में नीचे लिखे निश्चय किये गये।

(१) यह शताब्दी समारोह आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश द्वारा आनन्द बाग वाराणसी में १६ नवम्बर से २१ नवम्बर तक मनाया जावेगा जिसमें देश-विदेश के तथा सर्वधर्मालम्बी विद्वान् भाग लेंगे। विषय—(१)वेद ईश्वरोयज्ञान।(२)१६ अक्टूबर से १५ नवम्बर तक सारे देश में आर्य विद्वानों को शास्त्रार्थ यात्रा होगी। विषय मूर्ति पूजा वेदानुकूल है या नहीं। (३) प्राचीनकाल की शैली पर एक श्रौतयज्ञ। इस अभूतपूर्व यज्ञ की रूपरेखा भी पृथक् प्रकाशित को जावेगी। (४) सार्वदेशिक स्तर पर एक महिला सम्मेलन भी होगा। (५) आज से एक सौ वर्ष पूर्व संसार की जो विचार धाराएं थी, उनमें हमने कितना परिवर्तन किया है, उस पर ससार की सम्मत्तियाँ संग्रह करके प्रकाशित की जावेगी। (६) शोध-पत्र जो जिला सभा वाराणसी ने मगाये हैं वे सब आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश, लखनऊ को काशी के लोग भेज देगे, जिनका संपादन श्री आचार्य विश्वश्रवा: जी व्यास वेदाचार्य करगे। (७) आगे से धन-संग्रह का कार्य आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के तत्त्वावधान में यू०पी० सभा द्वारा प्रकाशित रसीदो और नोटों से ही होगा। (८) जिला सभा वाराणसी ने जो धन सग्रह अब तक किया है उसका हिसाब यू०पी० सभा को दे दिया जावेगा। अब आगे धन-संग्रह का कार्य काशी के आर्य भाई भी यू० पी० सभा द्वारा करेंगे। (९) शास्त्रार्थ शताब्दी समिति के प्रधान श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री ससत्सदस्य तथा प्रचार मत्री, श्री आ० विश्वश्रवा: जी व्यास एम०ए० वेदाचार्य निर्वाचित हुए। (१०) काशी के पाँच विशिष्ट व्यक्ति शास्त्रार्थ शताब्दी समिति में रहेंगे। (११) स्वागत समिति के निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया जावे, फिर काशी में स्वागत समिति का निर्वाचन होकर कार्य विभाजन होगा, जिसमें सब प्रान्तों के प्रमुख कार्यकर्त्ता विशेषरूप से रखेंगे।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री संयोजक—काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

गतांक से आगे

भाषा-विज्ञान के चमत्कार

लेखक—श्री नाहरसिंह वर्मा 'प्रभाकर' बी० ए० सा० रत्न, सि० शास्त्री, कोटा [राजस्थान]

बोलना कठिन होता है और वे आज भी 'ग' की जगह 'ज' ही बोलते हैं। इस प्रकार 'गमल' का अरबी में 'जमल' बन गया। एक रूप इसका 'कैमेल' से इंगलिस्तान में पहुच कर 'कैमिल' Camel बन गया किन्तु मुख्य धातु अर्थ आज भी संस्कृत के शब्द क्रमेल में ही निहित है। जो ऊँट को 'गमल' बोले वह मिस्री और 'जमल' बोले वह अरबी कह कर भेद किया जाता है।

माता से मदर—माता शब्द सस्कृत को 'मा' धातु से निकला है माता का अर्थ जन्म देने वाली। फारसी में यही माता शब्द 'मादर' हो गया और अंग्रेजी में अकार का लोप होकर 'मदर'। यदि कोई यह कहे कि फारसी के 'मादर' शब्द से हिन्दी का माता शब्द बना है तो मान्य नहीं हो सकता क्योंकि फारसी में ऐसी कोई धातु नहीं है जिससे फारसी शब्द 'मादर' बन सके।

मौसी—सस्कृत शब्द मातृष्वसा (माता को बहिन) बिगड़ कर प्राकृत भाषा में 'माउसी' हो गया और फिर बिगड़ते-बिगड़ते हिन्दी में आकर मौसी बन गया। यह भाषा का नियम है कि वह सदैव कठिनता से सरलता की ओर बढ़ती है। प्राय: जो लोग संयुक्ताक्षरों का शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते हैं वे उन शब्दों को बिगाड़ कर ही बोला करते हैं। जैसे स्टेशन को टेशन, स्कूल को सकूल, स्त्री को इस्त्री 'इन्सपेक्टर' को सिपट्टर आदि। मौसी शब्द का इतिहास जानने से हमें अपनी प्राचीन परिवार व्यवस्था के विषय में भी पता चलता है कि प्राचीन काल में मौसी और फूफी को तो संयुक्त परिवार का सदस्य माना जाता था। इसी प्रकार स्त्री के लिए विधवा शब्द संस्कृत में है और पुरुष के लिये विधुर शब्द है।

इसी प्रकार भूगोल से ग्लोब, त्रिफला से फारसी में इतरोफल महाराष्ट्रिक से मराठा, तमिल से द्रमिल और द्रविड़ शब्द कैसे बने और एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में किस प्रकार प्रवेश कर गये हैं यह सब बताने लगें तो एक रामायण ही बन जायेगी। 'पाव रोटी' एटलस, 'दुहिता', 'वायकाट', 'न्यूज', गैस सेंडोकट, गवाक्ष सेंधव (घोड़ा, नमक), अकादमी आदि शब्दों की रामकथा भी बड़ी ही मनोरंजक है। आप को यह जान कर आश्चर्य होगा कि अरबी के शब्द सिफर, ज़ीरो, मेगज़ीन, एलबम किस प्रकार अंग्रेजी भाषा के स्थायी सदस्य बन गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि आज के दल बदल विधायकों के प्रेरणा स्रोत ये शब्द ब्रह्म ही हैं जो कि प्राय: एक भाषा के दल को छोड़ कर अन्य भाषा दलों में घुस पैठ करते रहते हैं। शब्द ब्रह्म की लीला भी परम ब्रह्म—परमेश्वर के समान बड़ी विचित्र और अकथनीय है।

[विशेष—लेखक महानुभाव से निवेदन है कि समस्त संसार की मूल भाषा वैदिक सस्कृत है। उसकी धातुओं को अवश्य ध्यान में रखते रहें। पाश्चात्य भाषा विज्ञान सदोष एवं त्रुटि पूर्ण है। —सम्पादक]

भूल सुधार

आर्यमर्यादा २७.७.६९ के अंक में पृष्ठ २ पर भाषा विज्ञान के चमत्कार के लेखक "श्री नाहरसिंह वर्मा" के नाम के स्थान पर "श्री नरसिंह वर्मा" छप गया है। इस भूल का हमें खेद है। पाठक महानुभाव "श्री नरसिंह" के स्थान पर "श्री नाहरसिंह" पढ़ें।

महात्मा आनन्द भिक्षु जी की सेवा में निवेदन

श्रद्धेय स्वामी आनन्द भिक्षुजी की अध्यक्षता म सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद का वार्षिक अधिवेशन २०-७-१९६९ को गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की पुण्य भूमि मे सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। युवको ने श्रद्धेय स्वामी जी एव पूज्य पडित जगदेवसिह सिद्धान्ती के शुभ आशीर्वाद प्राप्त किए पडित जगदेवसिह सिद्धान्ती ने युवको को अमूल्य एव दूरदर्शिता पूर्ण सुझाव दिया कि युवको की वाणी एव लेखनी मे कटुता के स्थान पर माधुर्य होना अत्यन्त आवश्यक है। उनके इस सुझाव का सहर्ष स्वागत किया गया।

स्वामी आनन्द भिक्षु जी ने आर्य युवको को सघटित रहने पर बल दिया। साथ मे यह सकेत दिया कि आर्य समाज मे जो झगडा चल रहा है यदि वह झगडा समाप्त नही किया गया तो मैं इस को समाप्त कराने के लिये उचित प्रयास करूंगा। यदि मेरा बातचीत से झगडा सुलझाने का प्रयास विफल रहा तो मै आमरण अनशन करूंगा। स्वामी जी से निवेदन है कि वे बातचीत द्वारा झगडे का सुलझाने का प्रयास करे। आमरण अनशन करना वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए उचित नही है। आर्ययुवक आप जैसे अमूल्य जीवन को खोने देना नही चाहते। ये शब्द सकेत रूप मे इस लिये लिखे जा रहे हैं कि आप और पूज्य आनन्द स्वामी जी ने बातचीत के द्वारा झगड सुलझाने का प्रयत्न कर पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लिया। आर्य समाज के दो वर्गों मे से एक वर्ग ने आप का पूर्ण सहयोग दिया था और दूसरे वर्ग ने आप के पुण्य प्रयास को विफल कर दिया। जिस पर आनन्द स्वामी जी ने जो कि झगडे को सुलझाने के लिये सर्वाधिकारी थे, अपना सूझबूझ पूर्ण निर्णय दे दिया है। जिस का आर्य युवको ने स्वागत किया है।

ऐसी अवस्था मे आपके सामने झगडा करने वाले कौन है, यह स्पष्ट हो चुका है। उन लोगो को मनाने के लिये आमरण अनशन करेंग तो आप का जीवन सकट से खाली नही है। अत विनम्र निवेदन है कि आप अनशन का विचार त्याग कर पुन बातचीत का ही ढग अपनाएं।

एक दो युवको ने हाँसी और महरोली आदि नगरो मे तथा जीन्द के क्षेत्र मे आर्य समाज के सिद्धान्तो के विरुद्ध अनेक बातें कही है। उदाहरण स्वरूप "सध्या एड हवन कम्पनी प्राईवेट लिमिटेड को समाप्त करना है' और "सध्या करने की क्या आवश्यकता है,' ये युवक युवक-शक्ति के ठेकेदार बनने का स्वप्न ले रहे है और सिद्धान्तहीन बात कह कर आर्य समाज से आस्तिकता को जड से उखाडने का प्रयास कर रहे हैं। युवा पीढी और पुरानी पीढी मे मतभेद पैदा कर झगडा बढा रहे हैं। इन सज्जनो से निवेदन है कि अपनी वाणी एव लेखनी पर काबू पाओ और राजधर्म आदि पत्रिकाओ मे गालियाँ न देकर उचित सुझाव एव वैदिक मान्यताओ का प्रचार करें अन्यथा आपका आर्य समाज की वेदी पर कोई स्थान नही होगा।

माननीय ब्रह्मचारी इन्द्रदेव जी प्रधान, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद लोकप्रिय एव युवको के हृदय सम्राट् हैं। आप से युवको को अनेक आशाएँ हैं। आप युवको को सगठित कर आर्य समाज के लिये बहुत बडा महान कार्य कर रहे हैं। आप से निवेदन है कि जो एक दो युवक आर्य मान्यताओ का अपमान करने का प्रयास कर रहे है उनको उचित मार्ग पर लाने के लिए उचित पग उठाएँ। आशा है ये शब्द जो निवेदन रूप मे लिखे गये है उन पर ध्यान देकर आर्य समाज के हित के लिये कार्यान्वित किये जावेंगे।

मागेराम आर्य एम० ए०
प्रधान आर्य समाज बाकनेर, दिल्ली।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र (करनाल) में आचार्य प्रियव्रत जी की पुनर्नियुक्ति

गुरुकुल कुरुक्षेत्र आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के साथ सम्बन्धित सस्था है। जिसकी प्रबन्धकर्त्री सभा गुरुकुल के समुचित प्रबन्ध के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब द्वारा नियुक्त की जाती है। लगभग ३ वष हुए जो प्रबन्धकर्त्री सभा प्रतिनिधि सभा द्वारा नियुक्त है, की प्रधान श्रीमती मानकौर जी अम्बाला छावनी निवासी और मुख्याधिष्ठाता श्री दलीपसिह आर्य पानीपत निवासी और आचाय श्री प० प्रियव्रत जो हैं जो गुरुकुल कुरुक्षेत्र का प्रबन्धादि कर रह है।

आदरणीय माता मानकौर जी प्रधान गुरुकुल कुरुक्षेत्र ने एक बैठक अपने निवास स्थान अम्बाला छावनी ३-३-६९ को बुलाई जिसमे निश्चय कर लिया कि ६० वष से अधिक आयु वाले अध्यापको को सेवा से मुक्त कर दिया जावे पर उनका ऐसा करना सब प्रबन्धकर्त्री सभा का निश्चय नही माना गया अन १ **बैठक** २५-५-६९ को सभा को बैठक गुरुकुल सभा भवन मे पुन रखी गई जिसमे इस पर विचार का निश्चय हुआ कि आचाय जो को ५ वष काय करने का अवसर दिया जावे अन्य अध्यापको की उनके प्रार्थना अनुसार १-१ **वर्ष की अवधि मे वृद्धि की जा सकती है।** उस बैठक मे माता जी नही पधारी बल्कि माता जी ने ३-७-६९ को गुरुकुल मे पधार कर स्वय बिना प्रबन्धकर्त्री सभा की अनुमति लिये स्वेच्छा से आचार्य पद के लिये श्री सत्यप्रिय जी को नियुक्त कर उनको नियुक्ति पत्र दे दिया और **साथ ही सत्यप्रिय जी नये आचार्य ने भी बिना किसी सभा के निश्चय किये स्वय ही अन्य अध्यापको की नियुक्त कर डाली।**

यह सब जान कर गुरुकुल कुरुक्षेत्र को प्रबन्धकर्त्री सभा की आवश्यक बैठक १३-७-६९ को गुरुकुल सभा भवन मे अधिष्ठाता द्वारा बुलाई गई जिसमे गुरुकुल की गम्भीर स्थिति पर विचार कर समुचित प्रबन्ध किया जाना विषय था, पर इस मीटिंग मे माता जी नही पधारी। प्रबन्धकर्त्री सभा की बैठक १३-७-६९ को मध्याह्न दो बजे गुरुकुल भवन मे श्री मेजर कपूर अम्बाला निवासी की प्रधानता मे हुई, जिसमे सर्व सम्मति से निश्चय किया कि गुरुकुल कुरुक्षेत्र का काय २५-५-६९ के निश्चय अनुसार श्री प० प्रियव्रत जी गुरुकुल के आचार्य का भार सभाले रहे और श्री प० सत्यप्रिय जी से पुन श्री प्रियव्रत जी को गुरुकुल का चार्ज दिला दिया, गया, अन्य ६० वष से अधिक आयु वाले अध्यापको को भी २५-६-६९ के निश्चय अनुसार एक-एक वर्ष की सेवा मे वृद्धि दे दी गई।

साथ हो माता जो के इस अवधानिक काय की निन्दा की गई और उनके स्थान पर श्री मेजर कपूर को प्रधान बनाया गया। किसी भी अध्यापक की नियुक्ति प्रबन्धकर्त्री सभा के दिये अधिकार पर ही हो सकती है और आचार्य जी को नियुक्ति सभा द्वारा ही हो सकती है।

—दलीपसिंह आर्य १९-७-६९

पृ० २ का शेष

पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्।

इस मन्त्र मे पञ्च नद्य' और 'सरस्वती शब्द देख कर लोगो ने इससे पजाब और सरस्वती नदी की धारणा बनायी और अपौरुषेय वेद ज्ञान को एक देशीय तथा इतिहास युक्त बनाने मे प्रयत्नशील हो गये। यह नहो देखा कि कोई भो नदो अपने स्रोत की ओर नही जाती।

महर्षि ने बताया पाच ज्ञान इन्द्रियाँ रूपी नदिया अपने स्रोत की ओर जाती और फिर वहाँ से कर्मेन्द्रिय रूपी नदियो के द्वारा बाहर आती है। अर्थात ज्ञानेन्द्रिय द्वारा सूचना मन के पास पहुचती है और वहाँ से कर्मेन्द्रिय को आदेश होता है। आँख ने देखा सामने से भयकर पशु आ रहा है, कर्मेन्द्रिय हाथ को आदेश हुआ कि सम्भल जाओ। इसी प्रकार अन्य ज्ञानेन्द्रियो द्वारा भी सूचना जाती है और कर्मेन्द्रियो को आदेश होता है। यह बात इस मन्त्र मे है ऐसा महर्षि के भाष्य से विदित हुआ। ऐसे अनेक मन्त्र है।

दीर्घ जीवी बनने की अद्भुत रीति

ब्रह्मचर्य के साधन (वीर्य रक्षा के उपाय)

चौ० किशनाराम आर्य, ललानियां जि० श्री गंगा नगर-(राजस्थान)

सर्व प्रथम हम परम पिता परमात्मा से विनययुक्त प्रार्थना करें, कि घट-घटवासी दयालु प्रभु हमें सद् बुद्धि प्रदान करे; जिससे सब नर नारी सदाचारी तेजस्वी, यशस्वी, ओजस्वी, और वीर्यवान् होकर हमारे देश भारत को विश्व का ब्रह्मचर्य पालन और सदाचार की शिक्षा देने में पथ प्रदर्शक बना सकें। प्राचीन काल में हमारे देश के प्रत्येक घर में सदाचारी एवं एक नारीव्रती पुरुष और पतिव्रता नारी थी। वे शास्त्रानुकूल प्रजा उत्पन्न किया करते थे। आज भी यदि हम ब्रह्मचर्य प्रेमी महापुरुषों के बताये रास्ते पर चले तो हमारा जीवन सुखी बन सकता है। आज जो निराशा का वातावरण छाया हुआ है। यह सब ब्रह्मचर्य का साधन न रखने का ही फल है। जीवन सुखी बनाना है तो सर्व प्रथम ता सब कुटेव छोड़ने होंगे। दूसरे अपनी दिन चर्या आचार के नियमो के अनुसार बनानी होगी।

(१) ब्रह्ममुहूर्त में उठना:—ब्रह्मचारी हो अथवा गृहस्थी अपने जीवन को उन्नत बनाने के लिए प्रातःकाल उठने का अभ्यास करना चाहिये किसी कवि का कथन है अमृत वेला जाग, पवित्र होकर आसन ले जमा। ईश्वर के गुण धारण करके, समीप दिन-दिन होता जा। (२) चक्षुस्नान और उषःपान :—रात को छान कर ताम्रपात्र में रखा हुआ शुद्ध शीतल जल जितना मुख में आ सके उतना जल मुँह में भरले फिर दोनों आंखो पर बारी-बारी से छींटे मारकर आखें, धावें। इससे आयु पर्यन्त आँखों की ज्योति बनी रहेगी। पश्येमशरदः शतम्—हमें सो वर्ष तक आंखा से दिखता रहे। इसके बाद भली प्रकार कुल्ला करके मुख नासिक आदि साफ करके नाक से जल पीवे और मुँह से निकाल दे, उसके बाद कुछ पानी अवश्य पीवे। आयुर्वेद में लिखा है खूब सबेरे प्रात. काल उठकर प्रतिदिन नियम पूर्वक जो मनुष्य नाक द्वारा पानी का प्रयोग करता है। वह बड़ा बुद्धिमान् होता है, उसके नेत्रों की ज्योति तेज हो जाती हैं। बुढ़ापे में चमड़े का सिकुड़न नहीं होती है, और बाल जल्दी सफेद नहीं होते। (३) प्रतिदिन कम से कम दो मील का भ्रमण तो शौचादि से निवृत्त होकर अमृत वेला में अवश्य ही करना चाहिये। भ्रमण के समय ओ३म् का स्मरण करें तो और भी अच्छा रहेगा। भ्रमण आबादी से दूर खुले मैदान में पैदल करना चाहिये। मोटर, रथ, गाड़ी, घोड़ा ऊँट आदि की सवारी से नही। (४) कीकर, नीम, पहाड़ी एरंड, मौलसरी, जाल आदि की दातुन प्रति दिन प्रातःकाल: शौच जाने के बाद करें। दातुन से दांत रोग दूर होंगे नेत्रों की ज्योति बढ़ेगी। चित प्रसन्न रहेगा। (५) स्नान:—शरीर के असख्य रोमकूपों के द्वारा जो रोजाना प्रतिक्षण पसीना निकलता है। उसके साथ मल भी निकलना है। पसीना तो हवा में उड़ जाता है लेकिन मल त्वचा पर रह जाता है। इसलिए शरीर को शुद्ध रखने के लिये प्रति दिन प्रातःकाल कुए के ताजे, शीतल जल से घर्षण स्नान करना चाहिए। घर्षण स्नान:—पहले कोमल अंगों को छोड़ कर खद्दर के मोटे सूखे कपड़े से शरीर को रगड़ें, इसके बाद उत्तम जल से स्नान करे। साबुन की जगह मेट. उत्तम चिकनी मिट्टी, का प्रयोग अच्छा रहेगा। स्नान करने के बाद गीले कपडे से शरीर को थोड़ा जोर देकर रगड़े, इसके बाद सूखे वस्त्र से पूँछले : कुछ देर शरीर के हवा लगने दे, बाद में वस्त्र धारण करे।

(६) सध्या और प्राणायाम:—संध्या सुबह शाम दोनों समय करें। संध्या के लिए स्थान, एकान्त व शान्त होना चाहिए। सध्या करते समय जब प्राणायाम मत्र ओ३म् भू ओ३म्भुवःओ३म् स्वःओ३म् जनः ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्। आवे तब कम से कम ३ और ज्यादा से ज्यादा प्राणायाम २१ करें। प्राणायाम योग्य गुरु से सीखे बिना शुरू नही करना चाहिये। क्यों कि यह योग विद्या के आठ अगों.—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारण, ध्यान और समाधि का चौथा अग है। नित्यप्रति प्राणायाम करते रहने से लम्बे श्वास लेने की उत्तम आदत पड़ जाती है। इससे उम्र बढ़ती है। और ब्रह्मचर्य पालन में सहायता मिलती है। जो भाई बहिन वैदिक संध्या और प्राणायाम नहीं जानते हैं। उन्हें ईश्वर के निज नाम ओ३म् के स्मरण से ही संध्या करनी चाहिये। नाम का स्मरण ध्यान से करते रहें। (७) व्यायाम:—जो भोजन करता है उसके लिये व्यायाम करना जरूरी है। ब्रह्मचर्य प्रेमी के लिये तो व्यायाम भोजन से भी जरूरी है। आसन, कबड्डी. मुग्दर घुमाना, पानी में तैरना, रस्सा खेंचना, दौड़ लगाना, ऊँचा वा लम्बा कूदना परिश्रम करना आदि ही श्रेष्ठ व्यायाम हैं।

(८) भोजन.—दूध, फल, अन्न, मेवा हरे शाक सब्जी आदि शुद्ध सात्विक नित मात्रा में आहार करना चाहिये। भोजन दो समय करे। भोजन करते समय प्रसन्न चित रहें। आदमी के मुंह में ३२ दात होते हैं इसलिये भोजन की प्रत्येक कोर को कम से कम ३२ बार अवश्य चबायें। जल का अंश अगर भोजन में कम हो तो भोजन करते समय धीरे-धीरे दो चार घूट शुद्ध जल पीवे, ज्यादा भोजन कर चुकने के घटा दो घटा बाद में जल पीवें।

अभक्ष्य:—मिर्च, मसाला, खटाई, चटनी, राई, प्याज लहसन, तेल की तली चीजें बासी, सड़ी गली चीज, मास मछली, अडा, जरदा, चाय काफी, तम्बाकू, शराब, भग, अफीम, पोस्त चडू आदि अभक्ष्य पदार्थो का सेवन राक्षसी पन है। इसलिये ब्रह्मचर्य प्रेमी सज्जन इनसे बचते रहें। सद्ग्रन्थो का स्वाध्याय विद्वानों के लिए तो वेद, शास्त्र, उपनिषद, स्मृतियां और ऋषि-महर्षियों के रचित अनेक ग्रन्थ हैं, परन्तु साधारण जनता के लिये भी रामायण, महाभारत, गीता, महर्षि दयानन्द तथा आर्य विद्वानों के राष्ट्रभाषा में लिखे ग्रन्थ। विद्या प्रेमी ज्ञानी एवं ब्रह्मचारी विद्वानों द्वारा लिखी पुस्तकें। (१०) शृंगार और सह शिक्षा:—अंग्रेजी पहनावा, सूट, बूट, जुल्फ, तरह-तरह का तेल, इत्र, साबुन, क्रीम, स्नो, पाउडर आदि के द्वारा कृत्रिम सौन्दर्य का प्रदर्शन, नग्न अर्द्धनग्न चित्र कमरों में लगाना। छात्र छात्राओं का साथ-साथ सिनेमा देखना, अश्लील गाना, महापुरुषों के जीवन में अनेक दोषारोपण करना असंयमी जीवन बिताना ये सब वेद सभ्यता और सदाचार के लिये घातक हैं। (११) सत्सग:—धर्मात्मा और सदाचारी सज्जनों का सग करें जिससे हमें चरित्र बनाने में महान् सहायता मिले। हमें यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि कोमल बुद्धि बच्चों के सामने अश्लीलता न बरतें, गदे रेकार्डो को न बजायें रेडियों के भद्दे गायन न सुनें व किस्से, कहानी उपन्यास, आदि न पढ़ें सिनेमा सम्बन्धी पत्र पत्रिकाएं घरों में न रखें ब्याह शादियों में होने वाले अश्लील स्वांग नृत्य पर रोक लगावें, होली के त्यौहार पर अश्लीलतापूर्ण गंद (फाग) न खलें। शराब पीकर या ऐसे ही आपस में गन्दा हास्य विनोद न करे। जीजा साला, देवर भौजाई आदि के गन्दे गीत गाना आदि हमें बन्द करके निम्नांकित बातों पर ध्यान देना होगा।

ब्रह्मचारी, सदाचारी, परोपकारी महापुरुषों के सदुपदेशों का संग्रह—

(१) अपने जीवन में एकाग्रता, एकाग्रता में आत्म विश्वास, आत्मा के विश्वास में व्यवहारिक योग्यता, इससे उत्साह फिर शक्ति, शक्ति में बोध और बोध में पूर्णता केवल ब्रह्मचर्य धारण से ही हो सकती है। (२) समय का सदुपयोग, मित्रों का सहयोग, सयम से भोग, और आत्मा से योग करने से मनुष्य उन्नति करता है। (३) नित्य सत्संग, सत्सग से सद्भाव, सद्भाव से सद्बोध, सद्बोध से सदाचार, सदाचार से सद्गुण, सद्गुण सत्कर्म, सत्कर्म से संतोष, संतोष से सफलता और सफल मनोरथ होने से सच्चा सुख होगा। (४) दुष्टों के संग से दुर्भाव, दुर्भाव से दुर्बोध, दुर्बोध से से दुर्व्यसन, दुर्व्यसन से दुष्कर्म, दुष्कर्म से दुष्परिणाम," इसस आगे दुख। (५) माता, पिता, भाई, बन्धु स्त्री, पुत्र सबके पवित्र प्रेम स सुखी परिवार बनता है। अनेकों सुखी परिवारों के सघटन से सभ्य समाज बनता है, सभ्य समाज के विस्तार से स्वतत्र देश बनता है। स्वतत्र देश में

शेष पृ० ११ पर

विद्यार्थियों की काम की बातें

(संकलनकर्ता—अनूपसिंह बी०ए०, बी०टी०, दयानन्द भवन, मुजफ्फरनगर)

विद्यार्थियों के दोष

आलस्य, अभिमान, नशा करना, मूढ़ता, चपलता, व्यर्थ इधर उधर की अण्ड-बण्ड बातें करना, जड़ता कभी पढ़ना, कभी न पढना, अभिमान और लोभ लालच ये सात विद्यार्थियों के लिए विद्या के विरोधी दोष हैं क्योंकि जिसको सुख-चैन करने की इच्छा है, उसको विद्या कहाँ और जिसका चित्त विद्या ग्रहण करने में लगा है, उसको विषय सम्बन्धी सुख चैन कहाँ ? इसलिए विषय सुखार्थी विद्या को छोड़ें और विद्यार्थी, विषय सुख से अवश्य अलग रहे।

विद्या प्राप्ति के उपाय

विद्या चार प्रकार से आती है—आगम, स्वाध्याय, प्रवचन और व्यवहारकाल। आगमकाल उसको कहते हैं कि जिससे मनुष्य पढाने वाले से सावधान होकर ध्यान देके विद्यादि पदार्थ ग्रहण कर सके स्वाध्यायकाल उसको कहते हैं कि जो पठनसमय में आचार्य के मुख से शब्द, अर्थ और सम्बन्धों की बाते प्रकाशित हों, उनको एकान्त मे स्वस्थचित्त होकर पूर्वापर विचार करके ठीक-ठीक हृदय में दृढ कर सकें। प्रवचनकाल उस को कहते हैं जिससे दूसरे को प्रीति से विद्यार्थों को पढा सकना। व्यवहारकाल उसको कहते हैं कि जब अपने आत्मा में सत्यविद्या होती है तब यह करना यह न करना, वही ठीक-ठीक सिद्ध होके वैसा ही आचरण करना हो सके, ये चार प्रकार हैं। तथा अन्य भी चार कर्म विद्या प्राप्ति के लिए हैं—श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार। श्रवण उसको कहते हैं कि आत्मा मन के और मन श्रोत्र इन्द्रिय के साथ यथावत् युक्त करके अध्यापक के मुख से जो-जो अर्थ और सम्बन्ध के प्रकाश करने हारे शब्द निकलें उनको श्रोत्र से मन और मन से आत्मा में एकत्र करते जाना। मनन उसको कहते हैं कि जो-जो शब्द अर्थ और सम्बन्ध आत्मा में एकत्र हुए हैं, उनका एकान्त में स्वस्थचित्त होकर विचार करना कि कौन शब्द किस अर्थ के साथ और कौन अर्थ किस शब्द के साथ सम्बन्ध अर्थात् मेल रखता है और इनके मेल में किस प्रयोजन की सिद्धि और उलटे होने में क्या-क्या हानि होती है ? इत्यादि। निदिध्यासन उसको कहते हैं जो-जो अर्थ और सम्बन्ध सुने विचारे हैं वे ठीक-ठीक हैं वा नहीं इस बात की विशेष परीक्षा करके दृढ़ निश्चय करना और साक्षात्कार उसको कहते हैं कि जिन अर्थों के शब्द और सम्बन्ध सुने विचार और निश्चय किए हैं उन को यथावत ज्ञान और क्रिया से प्रत्यक्ष करके व्यवहारों की सिद्धि से अपना और पराया उपकार करना आदि विद्या की प्राप्ति के साधन हैं।

आचार्य के साथ विद्यार्थी कैसा बर्ताव करें

मिथ्या को छोड़कर सत्य बोलें, सरल रहें, अभिमान न करें, आज्ञा पालन करें, निन्दा न करें, नीचे आसन पर बैठें, ऊँचे न बैठें, शान्त रहें, चपलता न करें आचार्य की ताड़ना पर प्रसन्न रहें, क्रोध कभी न करें जब कुछ वे पूछें तो हाथ जोड़कर नम्र होकर उत्तर देवें, घमण्ड से न बोलें जब वे शिक्षा करें चित्त देकर सुनें, ठट्ठे में न उड़ावें। शरीर और वस्त्र शुद्ध रक्खें, मैले कभी न रक्खें, जो कुछ प्रतिज्ञा करें उसको पूरी करें, जितेन्द्रिय होवें, लम्पटपन व्यभिचार कभी न करें, उपकार मानके कृतज्ञ होवें, किसी के अनुपकारी होकर कृतघ्न न होवें, पुरुषार्थी रहें, आलसी कभी न रहे, जिस-जिस कर्म से विद्या प्राप्ति हो उसको करते जायें, जो-जो बुरे काम-क्रोध-लोभ-मोह-भय-शोक आदि विद्या विरोधी हों, उनको छोड़कर सदा उत्तम गुणों की कामना करें, बुरे कामों पर क्रोध, विद्याग्रहण में लोभ, सज्जनों में मोह, बुरे कामों से भय, अच्छे काम न होने में शोक करके विद्यादि शुभगुणों से आत्मा और वीर्य आदि धातुओं की रक्षा से जितेन्द्रिय हो शरीर का बल सदा बढ़ाते जावें।

"आर्ययुवक सभा हरयाणा" की स्थापना और चुनाव

हरयाणा के प्रगतिशील युवकों ने २० जुलाई ६९ को गुरुकुल झज्जर में सघटित होकर "आर्ययुवक सभा हरयाणा" की स्थापना की। इसका मुख्य कार्यालय दयानन्द मठ रोहतक में है और जिला-स्तर के कार्यालय विभिन्न स्थानो पर रहेंगे। प्रत्येक जिले के लिए सयोजक नियुक्त किए गये हैं। आगामी वर्ष के लिए निम्नलिखित अधिकारी सर्वसम्मति से चुने गये हैं—

प्रधान—श्री दरियावसिंह जी रोहणा, रोहतक। मन्त्री—श्री सत्यवीर शास्त्री गढी बोहर, रोहतक, कोषाध्यक्ष—श्री वेदव्रत शास्त्री, आचार्य प्रिंटिंग प्रेस रोहतक। अन्तरंग सदस्यों का चुनाव प्रधान जी करेंगे। तथा अन्य महानुभाव सरक्षक चुने गये। —सत्यवीर शास्त्री

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन १० जुलाई ६९ को उत्साह के वातावरण में सम्पन्न हुआ। पिछले वर्ष की सफलताओं पर सभी युवक प्रतिनिधियो ने सन्तोष एव हर्ष व्यक्त किया। आगामी वर्ष के कार्यक्रम को पूरा करने के लिये दो लाख रुपये का बजट स्वीकृत हुआ।

१—सार्वदेशिक स्तर के पदाधिकारी

प्रधान—ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी, मन्त्री—प्रो० श्याम राव जी, कोषाध्यक्ष—श्री रामनाथ जी सहगल, पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० जगदीश जी 'विद्यार्थी'।

२—हरयाणा प्रान्तीय स्तर के पदाधिकारी

प्रधान—प्रो० उमेदसिंह जी, मन्त्री—श्री धर्मपाल जी आर्य कोषाध्यक्ष—श्री रामफूल जी। —सत्यव्रत कार्यालयाध्यक्ष

आर्यसमाज, नांगल राया, नई दिल्ली का वार्षिक चुनाव

प्रधान—चौ० रामचन्द्र जी वर्मा, मन्त्री—मा० रघुराज शर्मा, सिद्धांत शास्त्री, कोषाध्यक्ष—भगवान दास आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—अजीत कुमार तथा अन्य अन्तरंग सदस्य। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज करोलबाग नई दिल्ली का चुनाव

प्रधान—श्री गोदड़मल जी सर्राफ, मन्त्री—श्री कुलभूषण जी साहनी, कोषाध्यक्ष—श्री हरिदास गाडी जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री चेतनस्वरूप जी। —मन्त्री कुलभूषण साहनी

निजामुद्दीन आर्यसमाज नई दिल्ली का वार्षिक चुनाव

श्री सन्तराम जी विद्यार्थी—प्रधान, श्री रामदेव मित्रा मन्त्री, श्री जगदीशचन्द जी दामरा—कोषाध्यक्ष, श्री नरेन्द्रसिंह जी भल्ला—पुस्तकालयाध्यक्ष। —मंत्री आर्यसमाज

आर्यवीर दल का शिक्षण शिविर

बीकानेर छोटी (गुड़गांवा) की ओर से लगाया गया, जिसमें स्वामी सन्तोषानद जी आदि सज्जन पधारे, ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी का दीक्षांत भाषण बड़ा ही प्रभावशाली रहा। —व्यवस्थापक हीरालाल आर्य

पृ० १० का शेष

रहने से ही सच्चा सुख और शांति मिलती है। (६) ब्रह्मचर्य से उत्तम स्वास्थ्य, स्वास्थ्य से उत्तम बुद्धि, उत्तम बुद्धि से सद्भावना, सद्भावना से शांति, शांति से प्रसन्नता और प्रसन्नता से बुद्धि दृढ होकर जीवन को सफल बनाती है। (७) यौवन शरीर की समस्त शक्तियों को पूर्णता प्रकट करता है। जो उत्साह एक नौजवान में होता है वह फिर उसको आयु में होना असभव है। (८) मन बुद्धि, चित और अहकार के चारों घोड़ो से जुते हुए। इस दिव्य रथ रूपी शरीर को इन्द्रियों को नियन्त्रण में रखने पर आत्मा निश्चय ही संसार में विजयी होता है। ब्रह्मचर्य की कमी से आज नौजवानों का चेहरा फीका पड़ रहा है। ये सब ब्रह्मचर्य, सदाचार और सयम की शिक्षा दी जाय तो देश के लिये युवक लाभ दायक रहेगा।

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य,

आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियो के लिये २५) , ५० प्रतियो के लिये १५)

२५ प्रतियो के लिए ८) ७५ ; १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैंकड़ा
वैदिकधर्म की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैंकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित्र	१-५० ,,
मुक्ति के साधन १-०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१-५० ,,
वैदिक सत्सग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अंग्रेजी	२-०० ,,
जीवन ज्योति ले० प० चमूपति जी एम ए	३-०० ,,
सोम सरोवर ,, ,, ,,	३-०० ,,
The Principles of Aryasamaj ,, ,	१-५० ,,
Glimpses of Swami Daya Nand ,, ,,	१-०० ,,
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० ,,

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मगवाइये । थोडी प्रतियाँ शेष हैं ।

प्राप्ति स्थान

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

आर्यसमाज विनय नगर (नई दिल्ली) का चुनाव

प्रधान—डा० धर्मानन्द केसरवानी, मन्त्री—डा० महेन्द्रपाल सिंह शास्त्री, कोषाध्यक्ष—श्री ओम्प्रकाश बहल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री मनोहरलाल चौधरी । —महेन्द्रपाल सिंह आर्य (शास्त्री)

आर्यसमाज भिवानी का निर्वाचन

श्री प० फूलचन्दजी शर्मा 'निडर'—प्रधान, श्री मनीरामजी आर्य—मन्त्री, श्री पूनमचन्द जी पसारी—कोषाध्यक्ष ।—प्रधान आर्यसमाज भिवानी

'आर्य कन्या विद्यालय' भिवानी में भवन निर्माण का कार्य आरम्भ

'वैदिक शिक्षा प्रचारक ट्रस्ट' की ओर से सैकडो प्रतिष्ठित व्यक्तियों की उपस्थिति मे वेद मन्त्रो के साथ 'आर्य कन्या विद्यालय' के भवन निर्माण का कार्य आरम्भ हुआ । श्री मनीराम आर्य अध्यक्ष ट्रस्ट तथा ट्रस्ट के अन्य सदस्यो ने स्वय नीम खोदो तथा ट्रस्ट को ओर से सबको मिष्टान्नादि का वितरण किया गया ।—निज संवाददाता

आर्य समाज कस्तूरबा नगर नई दिल्ली का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री भागमल जी, मन्त्री—श्री हरीचन्द जी, कोषाध्यक्ष—श्री जतीन्द्रनाथ कपूर ।—मन्त्री

आर्य-स्पैशल ट्रेन

अजमेर के ऋषि निर्वाणोत्सव तथा गोआ के आर्य सम्मेलन मे भाग लेने के लिए आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के तत्त्वावधान मे आर्य भाईयो की एक विशेष रेलगाडी जा रही है । यह गाडी १२ नवम्बर १९६९ की रात्रि को दिल्ली जक्शन से रवाना होगी और २ दिसम्बर १९६९ की प्रातः नयी दिल्ली रेलवे स्टेशन पर लौट आयेगी । इस सम्बन्ध मे सारी जानकारी आर्य केन्द्रीय सभा १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली (फोन न० ४३२८०) तथा श्री रामलाल जी ५२/७८ रामजस रोड, करोल बाग (फोन न० ५६८०१७) से प्राप्त की जा सकती है। —रामलाल



जहाँ-जहाँ सर्वज्ञादि विशेषण हो वहाँ-वहाँ परमात्मा और जहाँ-जहाँ इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और अल्पज्ञादि विशेषण हों वहाँ-वहाँ जीव का ग्रहण होता है। ऐसा सर्वत्र समझना चाहिये।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ३५

२६ श्रावण वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १० अगस्त १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
" " विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनः स [परमेश्वर] कीदृश इत्युपदिश्यते ॥

फिर वह परमेश्वर कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ॥

उदुत्तमं मुमुग्धि नो विपाशं मध्यमं चृत । अवाधमानि जीवसे ॥

—ऋ० १.२५.२१ ॥

पदार्थः—(उत्) उत्कृष्टार्थे क्रियायोगे वा (उत्तमम्) उत्कृष्टम् (मुमुग्धि) मोचय (नः) अस्माकम् (वि) विविधार्थे (पाशम्) बन्धनम् (मध्यमम्) उत्कृष्टानुष्टयोरन्तर्भवम् (चृत) नाशय (अव) क्रियायोगे (अधमानि) निकृष्टानि बन्धनानि (जीवसे) चिरंजीवितुम् ॥

अन्वयः—हे वरुणाविद्यान्धकारविदारकेश्वर त्वं करुणया नोऽस्माकं जीवस उत्तमं मध्यमं पाशमुन्मुमुग्ध्यधमानि बन्धनानि च व्यवचृत ॥

भावार्थः—यथा धार्मिकाः परोपकारिणो विद्वांसो भूत्वेश्वरं प्रार्थयन्ते तेषां जगदीश्वरः सर्वाणि दुःखबन्धनादीनि निवार्य्यैतान् सुखयति तथास्माभिः कथं नानुचरणीयम् ॥

भाषार्थः—हे अविद्यान्धकार के नाश करने वाले जगदीश्वर आप (नः) हम लोगों के (जीवसे) बहुत जीने के लिये हमारे (उत्तमम्) श्रेष्ठ (मध्यमम्) मध्यम दुःखरूपी (पाशम्) बन्धनों को (उन्मुमुग्धि) अच्छे प्रकार छुड़ाइये तथा (अधमानि) जो कि हमारे दोषरूपी निकृष्ट बन्धन हैं उन का भी (व्यवचृत) विनाश कीजिये।

भावार्थः—जैसे धार्मिक परोपकारी विद्वान् होकर ईश्वर की प्रार्थना करते हैं जगदीश्वर उन के सब दुःख बन्धनों को छुड़ा कर सुखयुक्त करता है वैसे कर्म हम लोगों को क्यों न करना चाहिये ॥

सभा का वार्षिक अधिवेशन

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का वार्षिक अधिवेशन १० अगस्त ६९ रविवार को सैनी हाई स्कूल रोहतक में प्रातः १० बजे हो रहा है। अतः चुने गये समस्त प्रतिनिधि महानुभावों को १० अगस्त को प्रातः ९बजे तक वहाँ पहुँच जाना चाहिये। जिस से समय पर कार्य प्रारम्भ हो जावे और सायंकाल के समय लौट सकें। यह अधिवेशन बहुत महत्वपूर्ण है। यद्यपि वर्षा होने से आर्य किसान बिजाई में लग चुका है, फिर भी प्रबन्ध करके एक दिन के लिये अवश्य पहुँचना चाहिये। दूर वाले प्रतिनिधियों को तो ९ अगस्त की रात्री तक पहुंचना उचित रहेगा। आशा है प्रतिनिधि ध्यान रखेंगे

आर्यसमाज नयाबांस, दिल्ली का महत्वपूर्ण निचश्य

साधारण सभा की बैठक डा० रामस्वरूप जी प्रधान आर्यसमाज की अध्यक्षता में हुई। उसमें ६५ सभासद् उपस्थि थे। बैठक में निम्न दो महत्वपूर्ण निश्चय हुए:—

१. प्रधान जी ने निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत किया। "आर्यसमाज' नयाबांस का यह साधारण अधिवेशन निश्चय करता है कि आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के सम्बन्ध में पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने जो निणय तथा जो आदेश दिया है उसकी पुष्टि करते हुए अपना दशांश भेज दिया जाये तथा १०-८-६९ को रोहतक में होने वाले चुनाव में भाग लेने के लिए प्रतिनिधि भेज दिये जायें। प्रस्ताव पक्ष में ६१ सभासद् और विरोध मे केवल ४ ने वोट दिया।

२. श्री राधेश्याम जी उप-मन्त्री ने प्रस्ताव रखा कि आज को साधारण सभा निश्चय करतो है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए आज की परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए वर्तमान प्रतिनिधियों में परिवर्तन करके निम्न चार नवीन् प्रतिनिधि भेजे जायें:—

(१) डा० रामस्वरूप जी शर्मा, (२) श्री दीपचन्द जी आर्य, (३) श्री त्रिलोक चन्द जी आर्य और (४) श्री धर्मपाल जी आर्य। उपरोक्त प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ।

मन्त्री आर्यसमाज

वेद सप्ताह पर आर्यमर्यादा का वेदाविर्भाव विशेषांक

जैसा कि आर्यमर्यादा के गत अंकों में सूचना दी जा चुकी है कि वेद सप्ताह पर वेदाविर्भाव विशेषांक पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। आर्य समाजों तथा संस्थाओं के अधिकारियों से प्रार्थना है कि अपना आदेश (आर्डर) १२ अगस्त तक धनसहित कार्यालय में भेजने की कृपा करें। इस विशेषांक का मूल्य निम्न प्रकार रखा गया है:—

एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे ...... १० प्रतियों का मूल्य ७रु०
२५ .... १५रु० ...... ५० .... २५रु०

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली, १

ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि अपना वार्षिक शुल्क १० रु० भेजकर कृतार्थ करें

क्या यज्ञ में बकरे की बलि दें ?

यजुर्वेद का एक प्रसंग

महीधर तथा स्वामी दयानन्द के अर्थों की तुलना

(डा० रामनाथ वेदालंकार, एम०ए०, पी-एच० डी०)

यजुर्वेद के षष्ठ अध्याय के मन्त्र ७ से २२ तक कर्मकाण्डपरक पौराणिक व्याख्यानुसार अग्नीषोमीय पशु का प्रयोग आता है। कात्यायन पशु से बकरे का ग्रहण करते तथा इसमें बकरे को देवताओं के लिए काटा जाता है। प्रथम अध्वर्यु तृण ले उसे पशु के मुख के आगे कर पशु को अभीष्ट स्थान पर ले जाता है। उस पशु को सम्बोधित कर कहता है कि तेरी हवि देवताओं को स्वादिष्ठ लगे। फिर तीन लड़ वाली कुशा की रस्सी पशु के सींग में बाँध वधकर्ता के हाथ में पकड़ा देता है। फिर पशु को यज्ञस्तम्भ से बाधा जाता है, उस पर जल छिड़कते हैं, मुख में पानी की बूंदें डालते हैं और ललाट, कन्धों तथा श्रोणियों पर घृत लगाते हैं। तदनन्तर अध्वर्यु छुरे को घृत से लिप्तकर उससे पशु के ललाट को स्पर्श करता है तथा पशु काटा जाता है। फिर यजमानपत्नी पात्र से जल ले मृत पशु के मुख, नासिका चक्षु, श्रोत्र आदि अंगों को जल छिड़क कर शुद्ध करती है। पश्चात् यजमान और अध्वर्यु दोनों शेष जल से पशु के सिर, मुख आदि अंगों को मन्त्रोच्चारण करते हुए धोते हैं। फिर सब अंगों पर जल छिड़कते हुए कहते हैं कि जो पकड़ना, बांधना, काटना आदि क्रूर व्यवहार हमने पशु के साथ किया है वह शान्त हो। फिर मृत पशु की नाभि के अग्रभाग में चार अंगुल के व्यवधान से तृण बांध, बद्ध स्थान में घी लगा, छुरे से उदर के समीप की त्वचा भेदन करते हैं।

तब नाभि के अग्रभाग में जो तृण बांधा था, अध्वर्यु बायें हाथ से उसका अगला भाग तथा दाहिने हाथ से मूल भाग पकड़कर उसे दुहरा कर, नाभि के रक्त में भिगोता है। फिर कुछ चर्बी ले, उसमें घृत मिला, कुछ बूदें आहवनीय अग्नि में डालता है। फिर पत्नी सहित यजमान और ऋत्विज् सब एकत्र हो जल द्वारा मार्जन करते हैं और जलों से प्रार्थना करते हैं कि पशु के वध का जो पाप हमने किया है उसे दूर करो। तत्पश्चात् पशु के हृदय को छुरे से काट कर उस पर धारापात करता हुआ कहता है कि तेरा मन देवताओं के मन से मिले, तेरा प्राण देवताओं के प्राण से मिले। फिर मांसपाकपात्र से आज्यपात्र में चर्बी लेकर छुरे से उसे मिलाता है और उसमें कुछ चर्बी अग्नि में होम करता है। तदनन्तर मृत पशु के सब अंगों को शरीर के अनुसार जोड़कर उन्हें स्पर्श कर कहता है कि इस पशु के अंग-अंग में प्राण निहित किया और पशु को कहता है कि तुम जीवित होकर देवताओं के समीप जाओ। फिर काटे हुए पशु का हृदय-मांस जिस शलाका पर पकाया था उसे शुष्क और आर्द्र भूप्रदेश की सन्धि में गाड़ देता है। अन्त सब ऋत्विज् और यजमान वरुण से प्रार्थना करते हैं कि आप हमें भयमुक्त करें।

यज्ञ में बकरे को बलि का यह सब विधि-विधान यजुर्वेद के उपर्युक्त प्रसंग पर कर्मकांडियों द्वारा कल्पित किया गया है। परन्तु वस्तुतः इस प्रसंग में बकरे को बलि की कोई चर्चा नहीं है। हम अपनी ओर से इस प्रसंग की कोई व्याख्या न करते हुए इसमें आये कतिपय मन्त्रों की महीधरकृत तथा स्वामी दयानन्दकृत व्याख्या उपस्थित करते हैं, जिससे पाठक सत्यासत्य का विवेक कर सके। महीधर का भाष्य पशुबलिपरक है, जबकि स्वामी दयानन्द भिन्न अर्थ करते हैं। इस प्रसंग का नवम मन्त्र इस प्रकार है—

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनज्मि। अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः। अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि॥ यजु० ६।९

प्रथम महीधरकृत अर्थ देखिये। उसके अनुसार इस मन्त्र का विनियोग बलि के बकरे को यज्ञस्तम्भ से बाँधने, उस पर जल छिड़कने आदि में किया गया है। 'देवस्य त्वा' से आरम्भ कर 'नियुनज्मि' पर्यन्त मन्त्र से बकरे को यज्ञस्तम्भ से बांधते हैं। अर्थ किया है— "हे पशु, (सवितुः देवस्य प्रसवे) सविता देव की आज्ञा से (अश्विनोः बाहुभ्याम्) अश्वीदेवों की भुजाओं से (पूष्णः हस्ताभ्याम्) तथा पूषादेव के हाथों से अर्थात् अपनी भुजाओं और हाथों में इन देवों की भुजाओं तथा हाथों की भावना करके (अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं त्वा) अग्नि और सोम देवताओं के प्रीतिपात्र तुझको (नियुनज्मि) मैं बांधता हूं।" फिर 'अद्भ्यस्त्वा' आदि से उस बंधे हुए बकरे पर प्रोक्षणियों से जल छिड़कते हैं। अर्थ किया है— "(अद्भ्यः ओषधीभ्यः) जलों ओषधियों से (त्वा प्रोक्षामि) जल छिड़क कर मैं तुझे पवित्र करता हूँ। हे पशु, इस प्रकार जलसेचन द्वारा पवित्र हुए, (त्वा) तुझे (माता अनुमन्यताम्) तेरी माता अनुमति दे, (पिता अनुमन्यताम्) पिता अनुमति दे, (सगर्भ्यः भ्राता अनुमन्यताम्) तेरा सगा भाई अनुमति दे, (सयूथ्यः सखा अनुमन्यताम्) तेरे साथ एक झुंड में रहने वाला तेरा साथी अनुमति दे।

परन्तु स्वामी दयानन्द के अनुसार इस मन्त्र में बकरे की कोई चर्चा नहीं है, अपितु यह मन्त्र आचार्य द्वारा शिष्य को उस अवसर पर कहा गया है, जब बालक के माता-पिता विद्याध्ययनार्थ उसे गुरुकुल में प्रविष्ट कराने लाये हैं। इस मन्त्र के स्वामिभाष्य में अन्वयार्थ तथा भावार्थ इस प्रकार है।

अन्वयः—हे शिष्य, अहं सवितुर्देवस्य प्रसवे, अश्विनोर्बाहुभ्यां, पूष्णो हस्ताभ्यां त्वा त्वाम् आददे। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं त्वा त्वां मे ब्रह्मचर्यधर्मानुकूला आपः ओषधयश्च सन्ति ताभ्योऽद्भ्यः ओषधीभ्यो नियुनज्मि। त्वां मत्समीपे स्थातुं माता जननी अनुमन्यताम्, पितानुमन्यताम्, सगर्भ्यो भ्रातानुमन्यताम्, सखानुमन्यताम्, सयूथ्योऽनुमन्यताम्। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं प्रीतियुक्तं त्वामहं प्रोक्षामि तद्गुणैरभिषिञ्चामि।

अर्थात् हे शिष्य, मैं समस्त ऐश्वर्ययुक्त, वेदविद्या प्रकाश करने वाले परमेश्वर के उत्पन्न किये इस जगत् में, सूर्य और चन्द्रमा के गुणों से वा पृथिवी के हाथों के समान धारण और आकर्षण गुणों से तुझे स्वीकार करता हूँ, तथा अग्नि और सोम के तेज और शान्ति गुणो से प्रीति करते हुए तुझको जो ब्रह्मचर्य धर्म के अनुकूल जल और ओषधि हैं उन जल और गोधूम आदि अन्नादि पदार्थों से नियुक्त करता हूं। तुझे मेरे समीप रहने के लिए तेरी जननी अनुमोदित करे, पिता अनुमोदित करे, सहोदर भाई अनुमोदित करे, मित्र अनुमोदित करे, और तेरे सहवासी अनुमोदित करें। अग्नि और सोम के तेज और शान्ति गुणों में प्रीति करते हुए तुझको उन्हीं गुणों से ब्रह्मचर्य के नियम पालने के लिये अभिषिक्त करता हूं।

भावार्थः—अस्मिन् संसारे मात्रादिभिः पित्रादिभिर्बन्धुवर्गमित्रवर्गैश्च स्वापत्यादीनि सुशिक्ष्य तैर्ब्रह्मचर्यं कारयितव्यं यतस्ते सद्गुणिनः स्युरिति।

अर्थात् इस संसार में माता, पिता, बन्धुवर्ग और मित्रवर्गों को चाहिए कि वे अपने सन्तान आदि को अच्छी शिक्षा देकर ब्रह्मचर्य करावें, जिससे वे गुणवान् हों।

महीधर तथा स्वामी दयानन्द दोनों के अर्थ देखने के पश्चात् यह पाठक स्वयं निर्णय करें कि बकरे के यज्ञ में बलि होने का उसके माता, पिता, भाई तथा मित्र अनुमोदन करें इस अर्थ में चमत्कार है या विद्याध्ययनार्थ बालक के गुरुकुलवास का उसके माता, पिता, भ्राता और साथी अनुमोदन करें, यह अर्थ चमत्कारजनक है।

क्रमशः

सम्पादकीय

नये नारे की चीरफाड़

आर्यसमाज मे फैले पारस्परिक झगडो से सभी आर्य लोग दु खी हैं, इस मे कुछ भी सन्देह नही। इस विपत्ति को दूर करने के लिये उपाय किये जा रहे हैं। इन उपाय करने वाले सभी सज्जनो के प्रति हमारे हृदय मे सन्मान का स्थान है।

कुछ सुझाव भी दिये जा रहे हैं। जिनमे—(१) यह है कि सार्वदेशिक तथा प्रान्तीय सभाओ के प्रधान तथा मन्त्री सघटन को २४ घण्टे का पूरा समय देने वाले हो। बात बहुत अच्छी है, परन्तु यह बात काम मे कसे लाई जा सके, इस पर हम थोडा निवेदन करते हैं।

आर्यसमाज का सघटन ऊपर से नही, अपितु नीचे से चलता है। अत अच्छा यह रहे कि प्रत्येक आर्यसमाज के प्रधान और मन्त्री भी अपना पूरा समय आर्यसमाज को देने वाले हो। फिर प्रत्येक आर्यसमाज अपने जिन प्रतिनिधियो को प्रान्तीय सभाओ मे चुन कर भेजे, उन मे कम से कम एक प्रतिनिधि तो ऐसा भेजे जो प्रान्तीय सभा मे जाकर अपना पूरा समय प्रान्तीय सभा के सघटन के लिये दे सके, जिससे प्रान्तीय सभा के प्रधान और मन्त्री पद के योग्य वह सभा की जा सके। ऐसे ही प्रान्तीय सभाओ के भी सार्वदेशिक सभा मे अपने प्रतिनिधि भेजते समय कम से कम एक प्रतिनिधि तो वैसा ही भेजना चाहिये, जो पूरा समय आर्यसमाज के सघटन के लिये दे सके इससे यह लाभ होगा कि सार्वदेशिक सभा को भी ऐसे दो आर्यमहानुभाव मिल सकने मे सुविधा हो सकेगी कि उन मे से अपना प्रधान और मन्त्री चुन सके। अत यह पवित्र कार्य आर्य समाजो की इकाई से आरम्भ होना चाहिये। ऐसे सज्जन किस वर्ण के हो, किस आश्रम के हो, कितनी आयु हो, शिक्षा की योग्यता कितनी हो, यदि वे गृहस्थी हो, तो उनके परिवार की आजीविका का प्रबन्ध उन्होने कर रक्खा है वा नही। यदि नही, तो उन के भरण पोषण के भार किस प्रकार पूरा किया जा सकेगा इन प्रश्नो पर हम अभी विचार ही नही कर रहे।

(२) सुझाव यह है सार्वदेशिक सभा, प्रान्तीय सभा और आर्यसमाजो के अधिकारी तथा अन्तरङ्ग सदस्य भी अवैदिक राजनैतिक दलो के सदस्य न हो। यह सुझाव भी शिर झुकाकर मानने योग्य होना चाहिये, परन्तु इस सूत्र का प्रथम भाग भी स्थानीय आर्यसमाजो से आरम्भ होना अनिवार्य है। यदि आर्यसमाजो के सदस्य भिन्न-भिन्न राजनीतिक दलो मे सम्मिलित हैं तो ऊपर कैसे राजनीतिक दलो से अछूते प्रतिनिधि जा सकते? क्या एक भी आर्यसमाज दृढता से कह सकता है कि उसका कोई भी आर्य सदस्य किसी भी राजनीतिक दल मे सम्मिलित नही है। हम समझते हैं, कि कोई भी आर्यसमाज ऐसी स्वीकृति नही दे सकता। फिर ऊपर प्रान्तीय और सार्वदेशिक सभाओ से कैसे आशा रखी जा सकती है, क्योकि उनका निर्माण करने वाले घटक हो राजनीतिक दलो मे बटे हुये हैं इस सुझाव के साथ राजनीतिक दलो के साथ अवैदिक विशेषण लगा होना चाहिये। हम नम्र शब्दो मे पूछना चाहते हैं कि राष्ट्र मे कोई भी राजनीतिक दल ऐसा है जो वैदिक कहा जा सके? अथवा कोई पृथक् वैदिक राजनीतिक दल हैं? उत्तर नकारात्मक ही होगा।

इस के साथ इस पवित्र सुझावो के प्रस्तावक आर्य बन्धुओ को क्या यह मालम नही है कि बहुत पुराने समय से सार्वदेशिक सभा मे ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत किया हुआ कि 'आर्यसमाज कोई पृथक् राजनीतिक सघटन नही है, अत इसके प्रत्येक सदस्य को यह अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुसार किसी भी राजनीतिक दल मे सम्मिलित होकर राष्ट्र का कार्य कर सकता है।

अत यह आवश्यक है कि सबसे पहिले सार्वदेशिक सभा के उस प्रस्ताव मे सशोधन-परिवर्तन किया जावे अन्यथा तब तक किसी आर्यसदस्य को कैसे रोका जा सकता है कि वह अमुक राजनीतिक दल मे भाग न ले। जब ऐसी व्यवस्था नही है तो सभाओ के अधिकारियो को कैसे रोका जा सकता है? क्योकि वे भी मूलत आर्यसदस्य ही है और आर्यसदस्यो द्वारा चुन कर ऊपर तक पहुँचे हैं। अत सुझाव के रखने वाले सज्जन शान्त हृदय से इस वैधानिक आपत्ति को दूर करने के उपायो पर विचार करे।

प्रत्येक आर्यसमाज इस बात पर विचार करे कि क्या किसी की आर्यसमाज मे किसी न किसी वर्तमान राजनीतिक दल मे सम्मिलित आर्यसदस्यो का बहुमत नही है? इस का प्रत्यक्ष प्रमाण उन उन आर्यसमाजो के उत्सवो से स्पष्ट चल जाता है कि किस आर्यसमाज मे किस राजनीतिक दल के नेता (चाहे वे आर्यसमाजो हो) बुलाये जाते हैं।

उपर्युक्त दोनो सुझाव देने वाले सज्जनो के आर्यत्व और भावना पर आक्षप नही किया जा सकता परन्तु अच्छा होता, इन प्रस्तावो को कार्य रूप देने मे कौन-कौन सी बाधाएं हैं, जिन को पहिले दूर करने के उपायो को विचार पूर्वक काम मे लाया जावे।

(३) तीसरे प्रस्ताव की भी भावना अच्छी है परन्तु इस को रोष पूवक भाषा मे प्रकट किया गया है। आर्यसमाज साधारण सघटन नही है। दुर्भाग्य से आज वैयक्तिक विघटन के चिह्न होने पर भी ऐसा शक्तिशाली सुदृढ सघटन राष्ट्र मे और नही है। खेद है कि तीसरे प्रस्ताव मे इस सघठन का जड पर कुठाराघात अनजाने मे किया गया है। इस प्रस्ताव मे कहा गया है—कि यदि प्रान्तीय और केन्द्रिय सघटन पार्टीबाजी छोड कर काम नही करेगे तो आर्यसमाज उन सभाओ से सम्बन्ध विच्छेद कर लेंगे बडे विनीत भाव से हम कहना चाहते हैं कि प्रत्येक आर्यसमाज अपनी-अपनी सभाओ से वैधानिक रूप से सम्बन्ध रखता। सभाएं रजिटर्स्ड सस्थान हैं। उनसे सम्बद्ध आर्यसमाजो की सब चल अचल सम्पत्ति उन उन सभाओ के नाम पर रजिटर्स्ड है। यदि कोई आर्यसमाज सम्बन्ध विच्छेदकरने का विचार करेगा, तो उसको सभा की सम्पति से हटना पडेगा। सभा की सम्पत्ति को उन्हे काम मे लेने का तभी तक अधिकार है जब तक कि वे सभा से सम्बद्ध हैं। यदि विच्छेद करने की बात की जावेगी तो उन विच्छिन्न समाजो की सभा को सम्पत्ति को छोड कर अपना पृथक् अस्तित्व बनाना पडेगा। प्रान्तीय सघटन के कारण अनेक आर्यसमाजो को कानूनी सहयोग मिलता है। मुकदमे होने पर सभा ही खर्च करती है समाज पर वह खच नही पडता। स्थानीय समाज तो सभा की सम्पत्ति के सरक्षक हैं। यदि वे दुर्भाग्य से ऐसा सम्बन्ध विच्छेद का विचार करेंगे, तो आर्यसमाज मे सम्पत्ति की अपार क्षति हो जावेगी। इस समस्या पर रोष पूर्ण अवस्था मे विचार नही करना चाहिये, अपितु आर्यसमाज के सघटन को पूर्ण ध्यान मे रखनाहोगा।

समाजो के अधिकारी सदा बदलते रहे हैं। आगे भी बदलगे। कोई भी सदा नही रह सकता।

अत पार्टीबाजी को दूर करने तक पवित्र भावना का हम आदर करते हैं, परन्तु आर्यसमाज को ही छिन्न भिन्न करने के सुझाव पर सहमति प्रकट नही कर सकते। यह तो ऐसी बात है नाक मे दोष होने पर नाक को ही काट देना।

जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

कवि बन्धुओ से निवेदन

आर्यमर्यादा पर मान्य कवियो की कृपा है। परन्तु एक निवेदन आवश्यक है कि एक दो लम्बी कविताओ के प्रकाशित होने पर अनेक कवियो को कई-कई पृष्ठ लम्बी कविताए कार्यालय मे पहुँच रही हैं। आर्यमर्यादा मे इतना स्थान नही कि इतनी लम्बी-लम्बी कविताओ का प्रकाशन होता रहे। अत निवेदन है कि २५ ३० पक्तियो से अधिक की कविताए भेजने का कष्ट न करें। साथ ही सामान्य ढग की कविता न लेकर आर्यसमाज के किसी भी मन्तव्य और समाज सुधार सम्बन्धी होनी चाहिय। आशा है, कवि महानुभाव इस निवेदन पर ध्यान रखते रहेगे।

—व्यवस्थापक

रेडियो भाषण की सूचना

कुमारी सुशीला जी एम० ए० विद्या वाचस्पति का भाषण महिला कार्यक्रम मे आकाशवाणी दिल्ली द्वारा १२ अगस्त् मगलवार दो पहर बाद २-२॥ बजे के बोच मे १० मिनट के लिये प्रसारित किया जावेगा।

सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि-सभा

२४-ई०. सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली-६ दिनांक २ अगस्त, १९६९

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बद्ध समस्त आर्य समाजों की सेवा में आवश्यक विज्ञप्ति।

श्री प्रधान एवं मंत्री महोदय,

आर्य समाज ....

श्रीमान्,

श्री रामगोपाल शालवाले के नाम से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली की ओर से छपी एक विज्ञप्ति दिनांक २१-७-६९ हमें देखने को मिली। इस विज्ञप्ति से आर्यसमाजो को कुछ भ्रम हो सकता है, अतः निम्नलिखित रूप से स्थिति स्पष्ट को जाती है.—

१. श्री रामगोपाल शालवाले ने उक्त विज्ञप्ति निकाल कर अनधिकार चेष्टा की है, क्योंकि अब वे सार्वदेशिक सभा के मंत्री नहीं हैं।

२. सार्वदेशिक दशम आर्य महा-सम्मेलन हैदराबाद दिनांक ८-११-६८ तथा सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा दिनांक २३-२-६९ द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव के अन्तर्गत प्राप्त अधिकार के अनुसार महात्मा आनन्द स्वामो जी ने आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब के विवाद का जो निर्णय दिया है, प्रत्येक आर्यसमाज के लिये वह मान्य है। महात्मा जी ने प्रो० रामसिंह जी प्रधान तथा श्री रघुवीरसिंह जो शास्त्री मंत्री एवं उनको अन्तरंग सभा को वैध आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब घोषित किया है और उन्हें ही सभा का सारा कार्य सौंपते हुए साधारण अधिवेशन बुला कर निर्वाचन कराने का भी अधिकार दिया है। अतः प्रो० रामसिंह जो प्रधान द्वारा १० अगस्त, १९६९ को रोहतक में बुलाया गया आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब का साधारण अधिवेशन सर्वथा वैध है। सभी आर्यसमाजों एवं प्रतिनिधियों को इसमें अवश्य सम्मिलित होना चाहिये।

३. गत कई वर्षों से चले आ रहे विवाद का एक बहुत उच्च स्तरीय सुन्दर निणय हुआ है, इस पर सब आर्यों को प्रसन्नता होनी चाहिये। खेद है कि कुछ लोग अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से प्रेरित होकर अभी भी इस विवाद को चालू रखना चाहते हैं। परन्तु महात्मा जी के निर्णय एवं वक्तव्य से सारी स्थिति इस प्रकार स्पष्ट हो चुको है कि अब आर्य जनता को भ्रम में नहीं डाला जा सकता। सब आर्यसमाजो का कर्त्तव्य है कि वे प्रो० रामसिंह जी प्रधान तथा श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री मंत्री आदि को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वैध अधिकारी मानते हुये पूर्ण सहयोग दें तथा महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेशानुसार रोहतक में १०-७-१९६९ को रखे निर्वाचन में भाग लेने के लिये अपनी आर्यसमाज के प्रतिनिधियों को आग्रह पूर्वक प्रेरणा दें।

—महेन्द्र प्रताप शास्त्री मंत्री

डगमग डगमग डोल न राही !

श्री भैरवदत्त शुक्ल स्थान पो०—लगुचा जि०—खीरी (उ० प्र०)

बन घोर प्रभंजन गरजे, किंचित् ज्योति-प्रकाश नहीं है,
शूल प्रहार कुटिलतम करते, गति-मति का विश्वास नहीं है,
ऊबड़-खाबड़ भूमि-कलेवर,
शोभन स्वच्छ खगोल न राही ! डगमग डगमग डोल न राही !!
जिसको तू ने प्यार दिखाया, वही तुझे फटकार रहा है;
जिसको दिल के पास बसाया, वही झिड़क-दुतकार रहा है,
अपना अन्तर निडर बनाकर,
मति-बल कुछ कम तोल न राही, डगमग डगमग डोल न राही!!
दोला पहने कालो साड़ी, आँख दिखा भय गति सुनाये,
करुणा कंपित-सहमी लगती, समय सभी यह बीत न जाये,
साहस देता शान्ति-सान्त्वना,
कामर-सा-रुक-बोल न राही ! डगमग डगमग डोल न राही !!
बाधा सुरसा-सो मुख बाये, उससे डरना धर्म नहीं तेरा;
अपना लक्ष्य धवलतम तजना, भावन-शोभन कर्म न तेरा,
ध्रुव तारा पथ दिखा रहा है,
जोवन यों बे-मोल न राहो ! डगमग डगमग डोल न राही !!

सभा से सम्बन्धित आर्यसमाजों तथा उनके प्रतिनिधयों की सेवा में आवश्यक विज्ञप्ति

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब उप कार्यालय १५ हनुमान् रोड, नईदिल्ली। दिनांक ४ अगस्त, १९६९।

श्री रामगोपाल शालवाले के नाम से सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की ओर से छपी एक विज्ञप्ति दिनांक २१-७-६९ देखने को मिली। सभा से सम्बन्धित सब आर्यसमाजों तथा उनके प्रतिनिधियों में जो भ्रम पैदा करने का यत्न किया गया है, उसका निवारण करना आवश्यक है।

श्री रामगोपाल शालवाले गत ३१ मई, १९६९ से सार्वदेशिक सभा के मंत्री नहीं रहे। उनका और उनके साथियों का सार्वदेशिक सभा से कोई सम्बन्ध नहीं रहा। अत. उनकी यह अनधिकार चेष्टा है।

यह सर्व विदित है कि महात्मा आनन्द स्वामो जी ने सार्वदेशिक.दशम आर्य महासम्मेलन हैदराबाद दिनांक ८-११-६८ तथा सार्वदेशिक सभा दिनांक २३-२-६९ द्वारा दिये गये अधिकार के अनुसार अपना निर्णय देते हुए मुझे और मेरी अन्तरंग सभा को ही वैध आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब माना है और इसी आधार पर मुझे आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का साधारण अधिवेशन बुला कर निर्वाचन कराने का आदेश दिया है। महात्मा जी के निर्णय और आदेशों का पालन करते हुए ही मैंने आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का साधारण अधिवेशन १० अगस्त, १९६९ को रोहतक में बुलाया है। उसमें समस्त आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों को भाग लेना चाहिए।

शंका है कि ये लोग इसी ढंग से कुछ और भी भ्रम आर्यप्रतिनिधि पंजाब के इस अधिवेशन में विघ्न डालने की नीयत से फैलाने को चेष्टा करेंगे, परन्तु आर्यसमाज तथा प्रतिनिधि ऐसे मिथ्या प्रचार के भ्रम में न पड़ें। प्रतिनिधि महानुभाव अधिक से अधिक संख्या में अधिवेशन में सम्मिलित होने का प्रयत्न करें।

बिना तिथि के एक विज्ञप्ति दीवान रामसरनदास आदि के नाम से भी प्रसारित करके सभा के प्रतिनिधियों को रोहतक में १०-८-१९६९ को प्रातः १० बजे होने वाले अधिवेशन में भाग न लेने की प्रेरणा की गई है। यह सर्व विदित है कि दीवान रामसरनदास आदि पर श्री निरंजन सिंह जी भल्ला सोनियर सब जज जालन्धर के निर्णय के अनुसार अपने आपको सभा के अधिकारी घोषित करने तथा उसके कार्यों में हस्तक्षेप करने पर रोक लग चुकी है, अतः उन की इस प्रकार की अवैध विज्ञप्ति को कोई महत्त्व न दें।

—रामसिंह सभा प्रधान

ओ३म् संकीर्तन

ओ३म् तेरा नाम प्रभु, ओ३म् तेरा नाम। टेक।
तू सर्वशक्तिमान् प्रभु, सर्वशक्तिमान् ॥ ओ३म् तेरा०
रहे तेरा ही ध्यान प्रभु, तेरा ही ध्यान।
तू कृपानिधान प्रभु, कृपानिधान ॥ ओ३म् तेरा०
तू दीनों का दिन बन्धु, दुःखियों का दयालसिन्धु।
तू सागर मैं एक बिन्दु, करता कल्यान ॥ ओ३म् तेरा०
तू न कभी राम प्रभु, तू न कभी श्याम।
नहीं तेरा ग्राम प्रभु, नहो तेरा धाम ॥ ओ३म् तेरा०
तू न रिझे झाल से, नाच व करताल से।
ढोल पोल जाल से, प्यारा भगवान् ॥ ओ३म् तेरा०
मिलता तू ज्ञान से, भोग और ध्यान से।
आठों प्रमान से, वेदों का ज्ञान ॥ ओ३म् तेरा०
निराकार मान उसे, 'निर्विकार जान।
मन में पहचान, छोड़ मूर्ति का ध्यान ॥ ओ३म् तेरा०
तू दाता अनादि है, नहिं अन्त और आदि है।
दूर करता दुःखादि है, विद्या की खान ॥ ओ३म् तेरा०

—श्री गिरिधारीलाल जी आर्य चौरा चौरा

एकता : शक्ति विकास तथा समृद्धि का मूलमंत्र

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियाण W/Z 79 राजा पार्क शकूरबस्ती दिल्ली)

'सगच्छध्वम सवदध्वम' का सघटन मूक्त आर्यों द्वारा भुला देने का ही यह परिणाम निकला था कि भारत को विदेशियो के दासत्व मे सैकडो वष व्यतीत करने पर बाध्य होना पडा। फारसी यूनानी शक कुषाण हूण यवन ईसाई आदि आये और इसके गौरव प्रतिभा शौय एव शक्ति को मिट्टी मे मिलात चल गये। इन आक्रमणो से भारत की राजनीतिक एकता ही भग नही हुई वरन धार्मिक तथा सामाजिक एकता भी नष्ट भ्रष्ट हो गई। भारत जिसने कभी विश्व भर मे अपनी सास्कृतिक विजय का डका बजाया था पश्चात्ताप की अग्नि मे इस प्रकार झुलस रहा था कि उसे अपना रहा सहा गौरव बचाना भी कठिन प्रतीत हो रहा था।

राम-कृष्ण अर्जुन-भीम और शिवा-प्रताप की गौरवशाली मातृभूमि की यह दुर्दशा देख कर ऋषि दयानन्द ने खून के आंसू बहाये थे। अपने उज्जवल अतीत की तुलना जब ऋषिवर ने परतन्त्र भारत से की तो उनका हृदय पसीज उठा था। ऋषि के आत्मा ने भारत को पुन उस गौरवमयी अतीत की ओर ले जाने का शिव-सकल्प लिया। यह सकल्प ही आर्यसमाज के रूप मे चरितार्थ हुआ। ऋषि की तीव्र इच्छा थी कि भारत पुन राजनीतिक धार्मिक तथा सामाजिक एकता को प्राप्त कर उन्नत हो। यह कार्य उन्होने आर्यसमाज के माध्यम से करना चाहा।

एकता का महत्व सर्वविदित है। जीवन की प्रत्यक इकाई इसकी आवश्यकता पर बल देती है। जिस परिवार समाज तथा राष्ट्र को एकता भग हो जाती है उसका अस्तित्व स्थायी रूप मे विद्यमान नही रह सकता। बौद्ध साहित्य मे एक स्थल पर एकता का अत्यन्त सुन्दर उदाहरण मिलता है। वह उदाहरण शिक्षात्मक तथा प्ररणाप्रद भी है। यदि तुम उसके अनुरूप तनिक भी चलने मे समर्थ हुए तो आयसमाज सुसघटित हो कर आगे बढता जावेगा।

छठी शती ई० पू० मे मगध पर अजातशत्रु शासन करता था। अजातशत्रु वीर तथा महत्वाकाक्षी शासक था। वह विजय प्राप्त कर अपने राज्य की सीमाओ को विस्तृत करना चाहता था। परन्तु गगा के उत्तर मे स्थित वज्जियो का गण—सघ उसकी इच्छाओ पर तुषारापात कर रहा था। वज्जियो की शक्ति का रहस्य उसकी समझ मे नही आ रहा था। अजातशत्रु हतोत्साहित नही हुआ। आक्रमण करने से पूर्व अजातशत्रु ने विचार-विमर्श के लिए महात्मा बुद्ध के पास अपने मन्त्री वस्सकार को भेजा। महात्मा बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द को सम्बोधित करते हुए जो उत्तर वस्सकार को दिया उस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। बुद्ध ने अपना अभिमत इन शब्दो मे प्रकट किया —

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग अपने परिषद का पूर्ण और सामयिक अधिवेशन करते हैं, उन का ह्रास नही होगा अपितु वे समृद्ध बने रहेंगे।

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग सौहार्द से परिषद् मे मिलगे सौहार्द से उठगे और सौहार्द से सघ के कार्यों का सम्पादन करेंगे उन का ह्रास नही होगा अपितु वे समृद्ध बने रहेगे।

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग ऐसा कोई अधिनियम नही बनायगे जो प्रतिष्ठित सविधान के प्रतिकूल हो ऐसा कोई अधिनियम भग नही करेंगे जो पहले से स्वीकृत हो और प्राचीन नियमो के अनुरूप काय करगे उन का ह्रास नही होगा, अपितु वे समृद्ध बने रहेगे।

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग अपने श्रेष्ठजनो का सम्मान, आदर और समर्थन करेंगे और उनके वचनो का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझेंगे, उन का ह्रास नही होगा, अपितु वे समृद्ध बने रहेंगे।

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग अपने चत्यो (देवालयो। धर्मस्थानो) का सम्मान आदर और समथन करेंगे उन का ह्रास न होगा अपितु वे समृद्ध ही बने रहगे।

तब तक आनन्द! जब तक कि वज्जि लोग अपन अर्हतो (पूज्या) सरक्षण आदर और समथन करते रहगे उन का ह्रास नही होगा अपि समृद्ध बने रहगे।

आयसमाज के हम सदस्यो के समक्ष यही एक ऐसी कसौटी है जि पर हमे निष्पक्ष होकर अपने विचारो अथवा स्वार्थो का कसना चाहिए इसी मे हमारी तथा आयसमाज की भलाई व सुरक्षा निहित है।

बुद्ध वाणी का श्रवण कर वस्सकार ने मन ही मन मे निण ले लिया कि वज्जि सघ अजातशत्रु द्वारा अजेय है। उसने सारी बा अजातशत्रु का जा सुनाई। दोनो ने मिलकर वज्जि सघ के विरुद्ध ए षडयन्त्र रचा। अजातशत्रु ने वस्सकार को अपमानित कर अपने राज्य निर्वासित कर दिया। कुछ समय उपरान्त वस्सकार वज्जि सघ की राज धानी वैशाली पहुच गया। वज्जियो को भी इस घटना का पता चल गय कि वस्सकार अपमानित व निर्वासित होकर वैशाली की शरण मे आया है ताकि अजातशत्रु से अपने अपमान का प्रतिशोध ले सके। कुछ ही दिनो मे वह वज्जियो का विश्वास पात्र बन गया। फिर उसने प्रशसा निन्दा चुगली आदि का सहारा लेकर वज्जियो मे द्वेष सन्देह सघष कलह और वैर पैदा कर दिये। वस्सकार और अजातशत्रु का षडयन्त्र सफल हुआ वज्जियो की एकता भग हो गई थी। वज्जि सघ का नैतिक पतन हो चुका था। वस्सकार का सन्देश पाकर अजातशत्रु ने वैशाली पर आक्रमण कर दिया। अन्त मे वज्जियो को रणभूमि मे घुटने टेकने पर बाध्य होना पडा। यदि समय रहते आय-जनता ने उचित पग न उठाया तो वज्जि-सघ की भाँति हमे भी विनाश के आगे घुटने टेकने पर बाध्य होना पडेगा। महर्षि दयानन्द द्वारा निर्धारित लक्ष्य को हम अभी शताश रूप मे भी नही कर पाये हैं। ईसाइयो तथा मुसलमानो का काय उत्तरोत्तर आगे बढता जा रहा है, किन्तु हम कहा हैं? इसी तथ्य को जान कर और तदनुसार आचरण कर के ही हम स्वय बढ सकते हैं और आयसमाज को आगे बढा सकते हैं।

———

गताक से आगे—

किसान

श्री योगीन्द्र पाण्डेय ग्राम लखौलिया (बलिया)

बीडी पीते हो छिन छिन मे, सौ-सौ तक पी जाते दिन मे
क्यो इसमे तुम रहे उलझते? इससे क्षति को नही समझते,
इससे होता व्याधि-प्रसार कुछ सोचो कुछ करो विचार।

धुआ सदा क्षति ही करता है उदर नही इससे भरता है,
और नही ही स्वास्थ्य बनाता, वह बस हानि कार्य हित आता,
करता तन मे धूम्र विकार, कुछ सोचो कुछ करो विचार।

चरस अफीमादिक पदार्थ भी होते क्षति के अर्थ हैं सभी
इनसे दुबल तन होता है, व्यर्थ खर्च सब धन होता है,
ये तन-वनहित हैं अगार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

गाँजा भर-भर 'चिलम' चढाकर अन्य नशीले द्रव्य मिलाकर,
पीते तजते नही बानि को, सोचा करते नही हानि को,
पीते दिन मे कितनी बार, कुछ सोचो कुछ करो विचार।

चहिए फल-सब्जी ही खाओ, स्वास्थ्य वर्ध्य सब्ज्यादि उगाओ,
बोओ ऐसा अन्न आदि भी आवे जिससे नही व्याधि भी,
हो मादक-पदार्थ-सहार, कुछ सोचो कुछ करो विचार।

—क्रमश

पृ० ६ का शेष

२३—आत्मा के एक ओर ससार के विषय-भोग हैं, दूसरी ओर ब्रह्म। जो ईश्वर-विमुख जन हैं, उन के लिये ससार जीवित है, ब्रह्म-मृत। जो मु के परम प्यारे हैं, उनके लिये ब्रह्म जीवित है, ससार मृत। ओङ्कार ो मात्रा का ध्यान ब्रह्म को जीवित कर देता है, और ससार को मृत बना ता है। ये मात्रायें आपस मे एक दूसरी से सटी हुई—मिली-जुली हैं। एक दूसरी मात्रा पर अभ्यासी भक्त अनायास ही पहुच जाता है। इन त्राओ मे कोई काल्पनिक सीमा रेखा बनाना भी कठिन है।

२४—जो पूर्ण ज्ञानी मनुष्य अपनी बाह्य, आभ्यन्तर और मध्यम सभी क्रयाओ से—मनसा, वाचा, कर्मणा—त्रिमात्र ओकार का जप—प्रयोग—मान करता है, वह कम्पायमान नही होता, अपने मार्ग से विचलित ही होता।

२५—महर्षि उपदेश पूरा करते हैं—

"ऋग्वेद के परिज्ञान से पृथिवी-लोक के भोग-ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। जुर्वेद से अन्तरिक्ष के भोग ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। यहो चन्द्र-लोक, ध्य-लोक वा सौम्य-लोक की प्राप्ति है, अर्थात् मनोमय-जगत् को ाप्ति, सौम्य गुणो की उपलब्धि। कवियो का कथन है कि साम-द के परिज्ञान से उपासको को सूर्य का तेज प्राप्त होता है। यदि कोई ओकार को साधन बनाता है, तो वह ऋग्वेद, सामवेद की सहायता के बना भी ओकारोपासना के द्वारा ही ये सब कुछ प्राप्त कर लेता है। योकि ऋग्वेद और सामवेद प्रतिपादित परिज्ञान प्राप्त कर चुका होता है। ओकार की उपासना से उपासक उस शान्त, अजर अमर, अभय, ब्रह्म को ाप्त कर लेता है।

२६—योगशिखोपनिषद् मे लिखा है—

मनः सर्वत्र संयम्य, ओकारं तत्र चिन्तयेत्।
ध्यायेत सततं प्राज्ञो, हृत्-कृत्वा परमेष्ठिनम्॥

अर्थ—ज्ञानवान् साधक को उचित है कि अपने मन का सयम करके अपने मन से "ओ३म्" का जप और चिन्तन करे। इस प्रकार परमात्मा को अपने हृदय मे स्थापित करके, निरन्तर उसके जप और ध्यान में ही मग्न बना रहे।

२७—महर्षि श्वेताश्वतर तो ओकार—जप को ही ईश्वर-दर्शन का साधन बताते हैं—

वह्नेर्यथायोनिगतस्य मूर्त्तिः न दृश्यते नैव च लिंगनाशः।
स भूय एवेन्धनयोनिगृह्यः, तद्वोभयं वै प्रणवेन देहे॥

—श्वेताश्वतरोपनिषद्—१।१३

जसे अपने कारण मे लीन होने वाले अग्नि को स्थूल आकृति दिखाई नही देती और उसका अत्यन्त-अभाव अर्थात् सर्वनाश भी नही होता, वह अग्नि ईधन—प्रज्वलनशील तत्त्वो के योग से पुनरपि मूर्तरूप मे ग्रहण किया जा सकता है, उसी प्रकार हम दोनो—जीवात्मा और परमात्मा को भी प्रणव-जप—अर्थात् ओकारोपासना के द्वारा अपने शरीर मे ही देखा और प्राप्त किया ज सकता है।

२८—वे युक्ति बताते हैं—

स्वदेहमरणिं कृत्वा, प्रणवं चोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्मथनाभ्यासाद् देवं पश्येन्निगूढवत्॥

श्वेताश्वतरोपनिषद्—१।१४

अपनी देह को नीचे की अरणि [यज्ञ मे रगड कर अग्नि को जलाने की एक विशेष प्रकार की लकडी] बना कर और "ओ३म्" नाम को ऊपर की अरणि बनाकर, ध्यान और जप रूपी रगड के द्वारा ईश्वर दर्शन को सिद्धि को प्राप्त कर लेना चाहिये। जैसे कि अरणियो की रगड से लकडियो मे निगूढ रहने वाले अग्नि को सुप्रकाशित किया जाता है।

२९—वे निर्णय करते हैं—

अग्निर्यत्राभिमथ्यते, वायुर्यत्राभि युज्यते।
सोमो यत्रातिरिच्यते, तत्र संजायते मनः॥

श्वेताश्वतरोपनिषद्—२।६

जब अग्नि का मन्थन होता है, अग्निहोत्र किया जाता है, वा सब के अग्रणी—जीवन-ज्योति और जागृति प्रदाता ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना की जाती है, जहाँ सोमरस टपकाया जाता है, अथवा [स+ओम् =सोम्] वह ओम् नाम वाच्य ब्रह्म ही शेष रह जाता है, तब मन भली प्रकार शान्त हो जाता है।

३०—ओम् और सोम का विचार यहाँ विशेष रूप से कर्त्तव्य है। जिस अग्नि-मन्थन का यहाँ पर निर्देश है, वह पूर्वोक्त ओकार—जप और "ओ३म्" नाम का अर्थ विचार ही है। (क्रमश)

पृ० ७ का शेष

क्योकि तप से ही ऋत अर्थात् सापेक्ष ज्ञान जो प्रकृति के पदार्थों से प्राप्त होता है और सत्य अर्थात् त्रिकालाबाधित ब्रह्म का सत्य ज्ञान प्राप्त होता है। जैसा कि—"ओ३म् तप।" के पश्चात् "ओ३म् सत्यम्"—का क्रम है। तप से ही—"ऋत च सत्य चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत"—ऋत और सत्य प्रकट होते हैं। उसी सत्य से—"सत्य पुनातु पुन शिरसि"—अपनी मेधा को शुद्धि होती है और उसी सत्य से "मन सत्येन शुध्यति"—मन की भी शुद्धि है। तथा इस सत्य विद्यारूप तप से "विद्यातपोभ्यां भूतात्मा"—आत्मा की भी शुद्धि होती है। अत वेद मे—

"इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि" (यजुः १।५)

इस मन्त्र से—"मैं अनृत-असत्य को त्याग कर सत्य को प्राप्त करता हू—यह प्रतिज्ञा-व्रत करने का विधान किया गया है।

सत्य से देवत्व की प्राप्ति

शतपथ मे कहा है—"सत्य वै देवा अनृत मनुष्या। एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम्। तस्मात् ते यशो यशो ह भवति य एव विद्वान् सत्य वदति'—अर्थात् देव सत्य बोलते हैं और मनुष्य असत्य बोलते है। इस सत्य भाषण के व्रत का पालन देव करते हैं, अत उनकी सर्वत्र यश-कीर्त्ति प्रतिष्ठा निश्चय से होती है। ऐसा सुनिश्चित जान कर जो इस व्रत पर आचरण करते हैं उनको भी यश प्राप्त होता है।

यज्ञ से देवत्व की साधना

यज्ञ मे देव भाव को प्राप्त करने के लिये सत्य बोलना चाहिये। इसलिये वेद ने कहा—"वाच ते शुन्धामि" (यजु ६।४)—यज्ञ के द्वारा तेरी वाणी की शुद्ध करता हू। वाणी की शुद्धि असत्य के त्याग से ही होती है। इसी प्रकार 'सत्य च मे श्रद्धा च मे ··· यज्ञेन कल्पन्ताम्' (यजु १८।५) "ऋत च मे यज्ञेनकल्पन्ताम्"—(यजु १८।६)—"वाक् च मे मनश्च मे ···· यज्ञेन कल्पन्ताम्" (१८।२)—आदि मन्त्रो मे यज्ञ के द्वारा सत्य भाषण वाणी, मन, श्रद्धा आदि को समर्थ बनाने के लिये कहा गया है। यह सब यज्ञ के व्रत कर्मों की साधना से ही सम्पन्न होता है।

"मैथुनं वर्जय"

मैथुन का त्याग तो ब्रह्मचर्य के लिये परमावश्यक है। शास्त्रकारो ने मैथुन आठ प्रकार का कहा है, यथा—

"दर्शनं स्पर्शनं केलिः, कीर्त्तनं गुह्यभाषणम्।
संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया निवृत्तिरेव च॥
एतन्मैथुनमष्टाग प्रवदन्ति मनीषिणः॥"

अर्थात् रागपूर्वक स्त्रियो का दर्शन, स्पर्शन, उनके साथ परिहास, उनके सौन्दर्य प्रेमादि का वर्णन, उनके साथ एकान्त मे गुप्त वार्ता करना, उनके प्रति यह सकल्प कि यह मेरी हो और इसके लिये प्रयत्न करना और विषयानुभव करना आदि आठ प्रकार का मैथुन त्याग करना मनीषियो ने कहा है। इसी मैथुन त्याग के लिये अन्य प्रकार से कहा है— (क्रमश

परीक्षा प्रधान शिक्षा

कु० प्रेमकुमारी वर्मा एम० ए०, संस्कृत विद्यापीठ बडौत (मेरठ)

एक युग था जबकि छात्र की शिक्षा का उद्देश्य आज की भांति केवल परीक्षा मे उत्तीर्ण होना या डिग्री प्राप्त करना ही न था बल्कि घोर यातनाओ को सहकर सदा गुरु की छत्र-छाया मे रहकर गूढ अध्ययन करके भी सरस्वती के मन्दिर को सुशोभित करना था। वे छात्र जब किसी विषय पर अपनी लेखनी चलाते थे तो उसकी सूक्ष्म विवेचना करते थे और जब बोलते थे तो अल्पज्ञ मानव के जीवन मे नवचेतना का सचार कर देते थे। क्योकि वे भली-भाँति जानते थे कि—

"सुखार्थिन कुतो विद्या, विद्यार्थिनः कुतः सुखम्।"

परन्तु खेद है कि आज का विद्यार्थी उपर्युक्त तथ्य को भली-भाँति जानते हुए भी माँ सरस्वती को अनाथ किये जा रहा है। आज यह अपने अध्ययन से मुख मोडकर, अपनी कोर्स की पुस्तको के पैसे बनाकर सिनेमा के लिए प्रथम श्रेणी का टिकट खरीदता है। इसका जीवन विलासपूर्ण हो चुका है। अपनी आवारागर्दी के सामने यह चरित्र का कुछ मूल्य ही नही समझता। किसी कवि ने कहा है कि—

'मैट्रिक मरने से बचे बी० ए० का बेहाल।
एम० ए० कट गये रेल से, शिक्षा का यह हाल॥"

एक समय था, जबकि हमारे देश का चरित्र-बल विश्व मे ऊंचा था और हमी दुनिया को ललकार कर कहा करते थे कि—

"एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवा॥"

अर्थात्—हे दुनिया के लोगो आओ और हम से अपने चरित्र की शिक्षा लो।

भला जो देश विश्व का गुरु कहा जाता था विश्व के लोग जिससे शिक्षा लेने आया करते थे। आज उसी देश के जिज्ञासु अपनी जिज्ञासा शान्त करने के लिए विदेशो की राह देख रहे हैं। विदेशी सभ्यता का अनुकरण करके अपने को गौरवान्वित समझते हैं। अपना अध्ययन समाप्त कर लेने पर भी अपने विषय के पूर्ण ज्ञानी नहो हो पाते। बन्धुओ! प्रेरणा लो दीपक के टिमटिमाते प्रकाश मे काली रातें गुजार कर पढने वाले बगाल के ईश्वरचन्द विद्यासागर के जीवन से, जिन्होने परिस्थितियो के प्रतिकूल होते हुए भी अपने गूढ अध्ययन से एक दिन अपने को विश्व के महान् विद्वानो की श्रेणी मे ला खडा किया।

आज शिक्षा का स्तर दिनोदिन गिरता जा रहा है कारण यह है कि विद्यार्थियो की मनोवृत्ति कुत्सित हो चुकी है। परीक्षा में उत्तर-पुस्तिकाओ से या अन्य किसी विधि से नकल करना उनकी लत बनती जा रही है। अपनी पाठ्य पुस्तको से याद कर तो करें कैसे, उनके आत्म-विश्वास को तो कैंसर का रोग लग जाता है। वे अपने आत्म-विश्वास से हाथ धो बैठे हैं। ऐसी विकट स्थिति मे ऐसे परीक्षार्थियो की परीक्षा केवल 'ग्योर गैस पेपस' पर हो आधारित रह गयी है। ऐसे छात्र बन्धुओ को मेरा यह सुझाव है कि वे नियमित अध्ययन की ओर ध्यान दें और अपने अध्ययन में एकाग्रचित्तता को महत्त्व दें। ईश्वर उनके परिश्रम का फल अवश्य देगा

आर्य हायर सैकण्डरी स्कूल पानीपत का परीक्षा परिणाम १९६९

इस वर्ष हमारे स्कूल के विद्यार्थी अमरजीत सिंह बजाज ने हायर सैकण्डरी (प्रथम भाग) ७१८ अक प्राप्त करके पजाब विश्वविद्यालय मे प्रथम स्थान प्राप्त करके विद्यालय के नाम को चार चाँद लगा दिये हैं। हायर सैकण्डरी द्वितीय भाग मे ससम्मान उत्तीर्ण चार छात्रों ने छात्रवृत्ति प्राप्त की। हायर सैकण्डरी प्रथम भाग मे ८ छात्रो ने विशेष अक प्राप्त किये तथा मिडिल स्तर परीक्षा मे दो छात्रो ने उत्तम अक प्राप्त किये। इस उत्तम परीक्षा परिणाम के लिये श्री नित्यानन्द जी एम ए: प्रिंसिपल, उनके सहयोगी अध्यापक तथा प्रबन्धक समिति धन्यवाद के पात्र हैं। छात्रों को भी हार्दिक बधाई।

आर्यकालिज पानीपत का परीक्षा परिणाम १९६९

	कालिज का परिणाम	युनिवर्सिटी का परिणाम
१. बी० कॉम पार्ट III	९१	७८
" " II	८६	६०
" " I	७६	५७
प्री युनिवर्सिटी	७४	५४
२ बी० ए० पार्ट III	९०	६५
" " " II	८५	५२
" " " I	८४	४७
प्री युनिवर्सिटी	५८	४९
३ बी०एस०सी० पार्ट III	९२	६७
" " " " II	७०	५६
" " " " I	८२	५१
प्री युनिवर्सिटी	६८	४५
कन्या विभाग		
४ बी० ए० पार्ट III	९६	६५
" " " II	९८	५२
" " " I	१००	४७
प्री युनिवर्सिटी	८२	४९
५. बी०एस०सी० पार्ट II	८६	५६
" " " I	१००	५१

इस उत्तम शिक्षा परिणाम के प्राप्त करने पर सभी छात्र छात्राओ को बधाई तथा आर्यकालिज के प्रिंसिपल श्री ल० द० दीक्षित महोदय उसके सभी सहयोगी उपाध्याय महानुभाव एव कालिज की प्रबन्धकत्री समिति के अधिकारी तथा सदस्य महाशयो को आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से धन्यवाद।

—रघुवीरसिंह शास्त्री, ससससदस्य—मन्त्री सभा

वैदिक साधु-आश्रम, रोपड (पजाब) मे वेद प्रचार

इस वैदिक सस्थान के अधिष्ठाता स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी ने एक-एक सप्ताह आर्यसमाज चमकौर साहिब तथा आनन्दपुर साहिब मे प्रभावशाली रूप मे वेद मन्त्रो का अत्युत्तम ढग से प्रवचन किया। श्रोताओ पर प्रवचनो का अच्छा प्रभाव पडा। इस से आनन्दपुर साहिब मे भी आर्यसमाज की स्थापना हो गई। जिसके प्रधान प० विष्णुदत्त जी शर्मा चुने गये। इन के अतिरिक्त आश्रम मे हो आर्यकुमारो का एक शिविर एक सप्ताह तक चला। कुमारो को ब्रह्मचर्य, व्यायाम तथा नित्यकर्म की शिक्षा दो गई, इस मे भिन्न भिन्न नगरो तथा ग्रामो से ३८ बालको ने भाग लिया। सभी सहयोगी सज्जनो का धन्यवाद।

—हिलाराम आर्य व्यवस्थापक-शिविर

अजमेर में ऋषि मेला

१० नवम्बर से १६ नवम्बर तक ऋषि उद्यान अजमेर मे ऋषि मेला आयोजित किया गया है जिसमे आर्य जगत् के नेता उपदेशक व भजनीक भाग लेंगे।

—सभा मन्त्री

आर्यसमाज (बी ब्लाक) गोविन्दनगर (कानपुर) की स्थापना

प्रधान—श्री रामलाल जी आनन्द, मन्त्री—श्री ओम्प्रकाश जी आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री रामजी दास।

—मन्त्री आर्यसमाज

गुरुकुल सिकन्द्राबाद में "वाग्वर्द्धिनी सभा" का चुनाव

प्रधान—श्री महावीर प्रसाद, मन्त्री—ब्र० सोमदत्त आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री ब्र० नीलमणि आर्य।

—मन्त्री वा० व सभा गु० कु० सिकन्द्राबाद

सभा अधिवेशन रोहतक में पधारने वाले महानुभावों को सूचना

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के वार्षिक अधिवेशन रोहतक १० अगस्त को पधारने वाले प्रतिनिधि, आर्यसमाजों के अधिकारी महानुभावों को सूचित किया जाता है कि सभा तथा आर्यमर्यादा का कार्यालय ९ अगस्त को ही रोहतक पहुँच जावेगा अत जिन आर्यसमाजों तथा ग्राहक महानुभावों की ओर सभा का धन वेद प्रचार, दशांश, आर्यमर्यादा का शुल्क प्राप्तव्य हैं और जो महानुभाव आर्यमर्यादा के विशेषांक की अधिक प्रतियां मंगवाना चाहते हैं, का धन भी अपने साथ रोहतक लाने की कृपा करें। इस प्रकार मनीआर्डर तथा वी. पी. आदि से कार्यालय में धन भेजने का अनावश्यक व्यय बच जावेगा। इस शुभावसर पर सभा के साहित्य विभाग की साहित्य की दुकान भी लगाने का प्रबन्ध किया जावेगा। अतः सभी आर्यबन्धु अवसर से लाभ उठा सकते हैं।

—रघुवीरसिंह शास्त्री, मन्त्री आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

नगर आर्यसमाज शाहदरा दिल्ली का निर्वाचन

प्रधान—श्री हरिदास आर्य, मन्त्री—श्री भोलाराम आर्य, कोषाध्यक्ष—निर्मल कुमार।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज खलीलपुर (गुड़गांव) का चुनाव

प्रधान—श्री बुधराम आर्य भूतपूर्व सरपंच, मन्त्री—महाशय चन्द्रसिंह, कोषाध्यक्ष—अध्यापक बलबीर सिंह आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—महाशय अमीलाल

—बनवारीलाल उपमन्त्री

आर्यसमाज लक्ष्मी बाई नगर (नई दिल्ली) का निर्वाचन

प्रधान—श्री रघुनन्दन लाल गुप्त, मन्त्री—श्री सत्यपाल घई, कोषाध्यक्ष—श्री रमेशचन्द्र गुप्त, पुस्तकाध्यक्ष—श्री राजसिंह वर्मा।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज बस्ती टैंकावाली फिरोजपुर छावनीका निर्वाचन

प्रधान—श्री देवीराम शर्मा, मन्त्री—श्री गोवर्धन सिंह, कोषाध्यक्ष—श्री शंकरदास, पुस्तकाध्यक्ष—श्री अमरचन्द, तथा आर्य स्त्री समाज प्रधान—जनक दुलारी, मन्त्री—प्रकाश कुमारी।

—मन्त्री आर्यसमाज

वाग्वर्धिनी सभा गुरुकुल झज्जर का वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ।

प्रधान—ब्र० ऋषिपाल जी, मन्त्री—ब्र० देवसेन जी, पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० राजपाल जी।

—मन्त्री ब्र० देवसेन

आर्यसमाज फिल्लौर का वार्षिक निर्वाचन

प्रधान—श्री प्राणनाथ जी एडवोकेट, महा मन्त्री—वैद्य श्री अमीरचन्द जी पासी, कोषाध्यक्ष—श्री ला० टेकचन्द जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री इन्द्रजित् जी तथा अन्य अन्तरङ्ग सदस्य आदि।

—मन्त्री हेमन्तकुमार

आवश्यकता है

परोपकारिणी सभा के प्रकाशन विभाग के लिये एक योग्य संस्कृत के विद्वान् की आवश्यकता है, जो संस्कृत व्याकरण, निघण्टु, निरुक्त आदि पर पूर्ण अधिकार रखता हो तथा महर्षि कृत ग्रन्थो वेदभाष्य आदि का ज्ञाता और उन पर पूर्ण आस्था रखता हो। महर्षि कृत ग्रन्थो के शुद्ध प्रकाशन की दृष्टि से आवश्यकतानुसार हस्तलेख का मिलान कर प्रेस कापी तैयार करना तथा तदनुसार मुद्रण हो, इसको देखरेख रखना होगा। प्रूफ संशोधन का अभ्यास होना आवश्यक होगा। आवेदन पत्र अपने पूर्व कार्य के अनुभव के विवरण तथा प्रमाण पत्रो की अधिकृत प्रतिलिपि सहित १५ अगस्त तक आना चाहिये। आवेदन पत्र मे यह भी लिखें कि न्यूनतम वेतन क्या स्वीकार करेंगे।

—श्रीकरण शारदा मन्त्री
परोपकारिणी सभा, अजमेर

ओ३म्

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

वेद

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र



जैसे परमेश्वर के सत्य न्याय, सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञत्वादि अनन्त गुण हैं वसे अन्य किसी जड पदार्थ या जीव के नहीं हैं। जो पदार्थ सत्य है उस के गुण कर्म स्वभाव भी सत्य होते है। इस लिये मनुष्यो को योग्य है कि परमेश्वर ही की स्तुति प्रार्थना और उपासना कर।।—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ३६

१ भाद्रपद वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १७ अगस्त १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु०
„ „ विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनस्ते [मनुष्या परस्परम्] कथ वर्त्तरन्नित्यु दिश्यते ।।

फिर वे [मनुष्य परस्पर] कैसे वर्त्तें इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ।।

विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिमं यज्ञमिदं वचः । चनो धाः सहसो यहो ॥

ऋ० १.२६.१० ॥

[illegible] (अग्ने) विद्यासुशिक्षायुक्त विद्वन् (अग्निभि) विद्युत् सूर्य्यप्रसिद्धैः कार्यरूपैस्त्रिभि (इमम्) प्रत्यक्षाप्रत्यक्षम् (यज्ञम्) सगन्तव्यम् (इदम्) अस्माभि प्रयुक्तम् (वच) विद्यायुक्त स्तुतिसम्पादक वचनम् (चन) भक्ष्यभोज्यलेह्यचष्याख्यमन्नम् (धा) हितवान् (सहस) सहते सहा वायुस्तस्य बलस्वरूपस्य (यहो) क्रियाकौशलयुक्तस्यापत्य तन्सम्बुद्धौ ।।

अन्वय —हे अग्ने यहो त्व यथा दयालुर्विद्वान् सर्वसुखार्थ सहसो बलाद्विश्वेभिरग्निभिरिम यज्ञमिद वचश्चनश्चधा हितवास्तथा त्वमपि सतत धेहि ।।

भावार्थ—अत्र वाच०। मनुष्यैरेव स्वसन्तानानि नित्य योज्यानि य कारणरूपोऽग्निर्नित्योऽस्ति तस्मादीश्वररचनया विद्युदादिरूपाणि कार्याणि जायन्ते पुनस्तेभ्यो जाठरादिरूपाण्यनेकानि च तान् सर्वानिमान् कारणरूप एव धरति यावन्त्याग्निकार्य्याणि सन्ति तावन्ति वायुनिमित्तेनैव जायन्ते सर्व जगत् तत्रस्थानि वस्तूनि च धरन्ति नवाग्निवायुभ्या विना कदाचित्कस्यापि वस्तुनो धारण सम्भवतीति ।।

भावार्थ —हे (यहो) शिल्पकर्म में चतुर के अपत्य कार्यरूप अग्नि विद्वान् जैसे आप सब सुखों के लिये (सहस) अपने बल स्वरूप से (विश्वेभि) सब (अग्निभि) विद्युत सूर्य्य और प्रसिद्ध कार्यरूप अग्नियो से (इमम्) इस प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष (यज्ञम्) ससार के व्यवहार रूप यज्ञ और (इदम्) हम लोगो ने कहा हुआ (वच) विद्यायुक्त प्रशसा का वाक्य (चन) और खाने स्वाद लेने चाटने और चूसने योग्य पदार्थो को (धा) धारण कर चुका हो वैसे तू भी सदा धारण कर ।।

भावार्थ —इस मन्त्र मे वाच०। मनुष्यो को योग्य है कि अपने सन्तानो को निम्न लिखित ज्ञान कार्य्य मे युक्त करे जो कारणरूप नित्य अग्नि है उससे ईश्वर की रचना मे बिजुली आदि कार्य्यरूप पदार्थ सिद्ध होते है फिर उन से जो सब जीवो के अन्न को पचाने वाले अग्नि के समान अनेक पदार्थ उत्पन्न होते है उन सब अग्नियो को कारणरूप ही अग्नि धारण करता है जितने अग्नि के कार्य हैं वे वायु के निमित्त से ही प्रसिद्ध होते है उन सब को पदार्थ धारण करते हैं अग्नि और वायु के विना कभी किसी पदार्थ का धारण नहीं हो सकता है इत्यादि ।।

—ऋषि दयानन्द भाष्य

अमृतसर में सर्वदलीय हिन्दी रक्षा सम्मेलन की अभूतपूर्व सफलता

पंजाब के प्रमुख आर्य बन्धुओ की ओर से अमृतसर मे सर्वदलीय हिन्दी रक्षा सम्मेलन का १०-८-६९ का एक शानदार आयोजन किया गया, इस सम्बन्ध मे सम्मेलन के सभापति प्रो० रामसिह प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का शनिवार ९ अगस्त ६९ को एक बड़ा भारी जुलूस निकाला गया, जो नगर के बडे-बड़े बाजारो से होता हुआ रात्रि के ९ बजे समाप्त हुआ। हजारों की सख्या मे नर-नारियों ने इसमें भाग लिया।

अगले दिन १२ बजे कार्य निर्धारिणी समिति की स्थानीय टाउन हाल मे बैठक हुई जिसमे पजाब, हरयाणा, दिल्ली, हिमाचल आदि प्रान्तो से लगभग ४०० प्रतिनिधियो ने भाग लिया। दिन को भारी वर्षा होने के कारण सायकाल ६ बजे खुला अधिवेशन कटरा जयमलसिह के चौक मे किया गया। उस मे भी हजारो नर-नारियो ने भाग लिया। सम्मेलन मे ५ प्रस्ताव स्वीकार हुए। जिनमे निम्न प्रस्ताव उल्लेखनीय हैं—

(क) भारत सरकार से प्रार्थना की गई कि अग्रेजी का स्थान प्रत्येक स्तर पर हिन्दी भाषा ले और विदेशो मे भी हिन्दी के प्रचार का समुचित प्रबन्ध हो। (ख) जनता से प्रेरणा की गई कि वे अपने प्रतिदिन के कायव्यवहार तथा व्यक्तिगत पत्र व्यवहार मे हिन्दी का ही प्रयोग करे और अपने हिसाब हिन्दी मे ही रखे तथा उन्ही बैंको के साथ व्यवहार रखे जो उनके हिन्दी मे लिखे पत्रो का हिन्दी मे उत्तर दे। (ग) पजाब सरकार से कहा गया कि छात्रो को प्राइवेट तथा राजकीय स्कूलो मे शिक्षा का माध्यम चुनने का अधिकार दिया जावे तथा हिन्दी और पजाबी को स्कूलो मे अनिवार्य किया जावे परन्तु अग्रेजी का पढना छात्रो की इच्छा पर रखा जावे (घ) पजाब सरकार से यह भी माग की गई कि बजट, बिल और नोटिस आदि हिन्दी मे भी छापे जावें तथा हिन्दी के प्रचार के लिये काफी धन सुरक्षित रखा जावे। उपर्युक्त प्रस्तावो के समर्थन मे प्रसिद्ध आर्य नेता आचार्य भगवानदेव जी, श्री जगदेवसिह जी सिद्धान्ती सम्पादक आर्यमर्यादा, डा० वेदोराम जी, मन्त्री-आर्य प्रादेशिक सभा श्री चुन्नीलाल जी नय्यर आदि आदि ने भाषण दिये। प्रो० रामसिह जी ने अपने १।। घण्टे के अध्यक्षीय भाषण मे पजाब सरकार से प्रेरणा की कि पजाब मे हिन्दी को समुचित स्थान दिया जावे।

यह उल्लेखनीय है कि श्री वीरेन्द्र आदि ने भी उपर्युक्त सम्मेलन को असफल करने की भावना से अमृतसर मे उपर्युरोक्त सम्मेलन के समीप ही अपना एक सम्मेलन रख दिया परन्तु उन के सम्मेलन मे पास देकर ही अन्दर जाने दिया गया और किवाड बन्द रखे तथा खुला अधिवेशन नहीं किया गया।

—विशेष संवाददाता

गतांक से आगे—

क्या यज्ञ में बकरे की बलि दें ?

यजुर्वेद का एक प्रसंग (२)

महीधर तथा स्वामी दयानन्द के अर्थों की तुलना

(डा० रामनाथ वेदालंकार, एम०ए०, पी-एच० डी०)

आगे देखिये। इसी प्रसंग में ११ वें मन्त्र का प्रारम्भिक भाग यह है—"घृतेनाक्तौ पशूंस्त्रायेथाम्"। कर्म काण्ड की विधि में छुरे और स्वरू को घृत से लिप्त कर उनसे बकरे के ललाट को स्पर्श करते हैं। महीधर ने अर्थ किया है—"हे स्वरू और छुरे, तुम दोनों घृत से लिप्त होकर इस पशु की रक्षा करो"। यहां शंका उठती है कि बलि का पशु तो एक ही है, फिर मन्त्र में 'पशून्' ऐसा बहुवचन क्यों रखा ? इसका उत्तर महीधर ने दिया है कि बहुवचन यहां पूजा अर्थ में है। पर मुख्य शंका का उत्तर तो महीधर ने दिया ही नहीं। वह यह कि आप तो पशु का वध करने की तैयारी कर रहे हैं और मन्त्र कहता है कि पशु की रक्षा करो। इसकी संगति कैसे बैठेगी ?

अब स्वामी जी का अर्थ लीजिये। वे कहते हैं कि आचार्य शिष्य का उपनयन संस्कार कर उसे यह उपदेश करे कि तुम्हें विद्या सुशिक्षाग्रहण और अग्निहोत्रादि रूप यज्ञ का अनुष्ठान अवश्य करना है। इसी प्रसंग में यज्ञ के करने और कराने वाले दोनों को सम्बोधन कर उक्त मन्त्रांश कहा गया है, जिसका अर्थ है—"हे **यज्ञकर्तृकारयितारौ घृतेनाक्तौ घृतमनस्कौ युवां पशून् त्रायेथाम्**," अर्थात् हे यज्ञ के करने और कराने हारो, तुम घृत को चाहने वाले होते हुए गौ आदि पशुओं की रक्षा करो। प्रकरण में यज्ञ को करने-कराने वाले शिष्य और आचार्य हैं, वे यज्ञार्थ घृत को चाहते हैं, अतः उन्हें प्रेरणा की गयी है कि तुम घृत देने वाले गौ आदि पशुओं की रक्षा करो। देखिये, महीधर के अर्थ में जो विसंगति प्रतीत होती थी स्वामी जी के अर्थ में वह नहीं रही। स्वामी जी के अर्थ में यह दोष नहीं रहा कि तैयारी तो कर रहे हैं पशु को काटने की, और बात करते हैं रक्षा की।

आगे १४ वां मन्त्र देखिये—

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि पायुं ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि ॥ यजु: ६.१४

कर्मकाण्ड के पशु हिंसापक्ष के अनुसार यजमानपत्नी उस मृत बकरे के समीप बैठ कर इन मन्त्रभागों से मन्त्रोक्त मुख, प्राण आदि अंगों का शोधन करती है, अर्थात् उन-उन अंगों को जल से स्पर्श करती है। महीधर अर्थ करते हैं—"हे पशु, मैं तेरे मुख का शोधन करती हूं, नासिका का शोधन करती हूं, आंख का शोधन करती हूं, श्रोत्र का शोधन करती हूं, नाभि का शोधन करती हूं, जननेन्द्रिय का शोधन करती हूं, गुदा का शोधन करती हूं तथा चरित्रों अर्थात् पैरों का शोधन करती हूं।" पाठक विचार करें यह कैसा अंगशोधन हुआ ! पहले पशु को काटा-मारा, फिर मृत पशु के अंगों का शोधन किया जा रहा है। पशु के ही अंगों का शोधन करना था तो जीवित के अंगों का किया जाता।

स्वामी दयानन्द के अनुसार यह मन्त्र आचार्य द्वारा शिष्य को कहा गया है। वे लिखते हैं—"**अथ कथं ता गुरुपत्न्यो गुरवश्चे यथायोग्यशिक्षया स्वस्वान्तेवासिन सद्गुणेषु प्रकाशयन्तीत्युपदिश्यते**" अर्थात् वे गुरुपत्नी और गुरुजन यथा योग्य शिक्षा से अपने-अपने विद्यार्थियों को अच्छे-अच्छे गुणों में कैसे प्रकाशित करते हैं यह इस मन्त्र में बताया गया है। पुनः अन्वयार्थ यह लिखते हैं—"**हे शिष्य विविधशिक्षाभिस्तेऽहं वाचं शुन्धामि, ते प्राणं, शुन्धामि, ते चक्षुः शुन्धामि, ते श्रोत्रं शुन्धामि, ते नाभिं शुन्धामि, ते मेढ्रं शुन्धामि, ते पायुं शुन्धामि, ते चरित्रान् शुन्धामि।**" अर्थात् गुरु या गुरुपत्नी कहते हैं कि हे शिष्य या शिष्या, विविध शिक्षाओं से मैं तेरी वाणी को, तेरे प्राण को, तेरी आंख को, तेरे श्रोत्र को, तेरी नाभि को, तेरी मूत्रेन्द्रिय को, तेरी गुदेन्द्रिय को और तेरे चरित्रों को शुद्ध, पवित्र, धर्मानुकूल करता या करती हूं। भावार्थ में लिखते हैं—"**गुरुभिर्गुरुपत्नीभिश्च वेदोपवेदवेदाङ्गोपाङ्गशिक्षया देहेन्द्रियान्तःकरणात्ममनःशुद्धिशरीरपुष्टिप्राणसंतुष्टीः प्रदाय सर्वे कुमाराः सर्वाः कन्याश्च सद्गुणेषु प्रवर्तयितव्या इति।**" अर्थात् गुरु और गुरुपत्नियों को चाहिए कि वेद और उपवेद तथा वेद के अंग और उपांगों की शिक्षा से देह, इन्द्रिय, अन्तःकरण, आत्मा और मन की शुद्धि, शरीर की पुष्टि तथा प्राण की संतुष्टि देकर समस्त कुमार और कुमारियों को अच्छे-अच्छे गुणों में प्रवृत्त करावें।

अगला मन्त्र इस प्रकार है—

मनस्त आप्यायतां वाक्त आप्यायतां प्राणस्त आप्यायतां चक्षुस्त आप्यायतां श्रोत्रं त आप्यायताम्। यत्ते क्रूरं यदास्थितं तत्त आप्यायतां निष्टयायतां तत्ते शुध्यतु शमहोभ्यः। ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनं हिंसीः ॥ यजु: ६.१५

कर्मकाण्ड में इस मन्त्र से पांच विधियां की जाती हैं। महीधर की व्याख्यानुसार (१) प्रथम अध्वर्यु तथा यजमान मृत पशु के सिर आदि अंगों को धोते हुए कहते हैं—हे पशु, (ते मनः आप्यायताम्) तेरा मन अर्थात् सिर शान्त हो, (ते वाक् आप्यायताम्) तेरा मुख शान्त हो, (ते प्राणः आप्यायताम्) तेरी नासिका शान्त हो, (ते चक्षुः आप्यायताम्) तेरी आंखें शान्त हों, (ते श्रोत्रम् आप्यायताम्) तेरे कान शान्त हों। (२) फिर एक साथ अवशिष्ट सब अंगों पर जल सिंचन करते हैं—हे पशु, (यत् ते क्रूरम्) जो तेरे प्रति बन्धन, निरोध आदि क्रूर कर्म हमने किया है, (यत् आस्थितम्। और जो छेदनकर्ता ने छेदन आदि कर्म किया है (तत् ते आप्यायताम्) वह तेरा सब शान्त होवे, (निष्टयायताम्) संहृत होवे अथवा दोषशून्य होवे, (तत् ते शुध्यतु) वह तेरा सब शुद्ध होवे। (३) फिर पात्र में बचे हुए जल से पशु के जघन प्रदेश पर सिंचन करते हैं—अहोभ्यः) सब दिनों में (शम्) हमें अथवा पशु को सुख प्राप्त हो। (४) फिर पशु को उत्तान लिटा कर नाभि के अग्रभाग में चार अंगुल के व्यवधान से तृणबन्धन करते हैं— (ओषधे) हे ओषधि, (त्रायस्व) तू इस पशु की रक्षा कर। (५) फिर घृताक्त असिधारा को तृण के ऊपर रख चुपचाप तृणसहित उदर की त्वचा का छेदन करते हैं—(स्वधिते) हे खड्ग, (एनं) इस पशु को मा हिंसीः मत मार।

यहां पांचों विधियां ही विचारणीय हैं। प्रथम जब पशु के अंगों का हम ने निर्दयतापूर्वक छेदन कर दिया, फिर उसके मन, प्राण आदि के शांत होने की प्रार्थना व्यर्थ है। दूसरी विधि में कहा है कि 'हे पशु, जो तेरा बन्धन, छेदन आदि क्रूर कर्म हमने किया है वह शान्त हो।' जब हम स्वयं समझ रहे हैं कि यह कर्म क्रूर है, तब यह कर्म किया ही क्यों ? और अब कर चुकने के पश्चात् उसकी शान्ति कराने का भी क्या अभिप्राय ? तीसरी विधि को करते हुये कहते हैं कि हमें या इस पशु को सुख प्राप्त हो। पशु को जब हमने मार डाला तब भला उसे सुख कैसे प्राप्त होगा ? और पशु-मारण रूपी क्रूर कर्म करने-कराने वाले हम भी सुख के अधिकारी क्यों कर हो सकते हैं ? चौथी विधि में पशु का पेट फाड़कर चर्बी निकालने की तैयारी में हम उसकी नाभि के अग्रभाग में तृण बांधते हैं, और प्रार्थना उलटी करते हैं कि हे ओषधि, तू इस पशु की रक्षा कर। रक्षा का मन्त्र बोलना है तो हमें रक्षा ही करनी चाहिये, न कि हिंसा। पांचवीं विधि में उसी प्रकार क्रिया करते हैं छुरे से पशु का पेट फाड़ने की और प्रार्थना करते हैं कि हे छुरे, तू इस पशु को हिंसा मत कर। यह सब विधि-विधान कहां तक संगत है यह पाठक स्वयं विचारें।

[क्रमशः]

सम्पादकीय—

तीन महत्त्वपूर्ण पर्व

१—स्वतन्त्रता दिवस—

जब से विदेशी आक्रमणकारियो ने भारत मे फैली हुई साम्प्रदायिक फूट को देख कर हमारे राष्ट्र की पवित्र भूमि पर अधिकार करना आरम्भ कर दिया तथा क्षात्र शक्ति भी बौध और जनमत के प्रचार के कारण शिथिल हो गई। तब गजनी और गौरी आदि विदेशियो के आक्रमणो से भारत मे विदेशी शासन की सत्ता जम गई। पुन गौराङ्ग विदेशियो ने समस्त भारत पर एक छत्र शासन जमा लिया। ऋषि दयानन्द जी ने सब से पूर्व विदेशी सत्ता को भारत से हटाने के लिये बल लगाया। तत्पश्चात भारतीय सेनाओ और जनता के आन्दोलनो तथा भारतीय सैनिको मे बढते असन्तोष और क्रान्तिकारियो के बढते हुए पग को देखकर अंग्रेज न चाहता हुआ भी हमारे राष्ट्र को दुर्बल बना कर छोड गया। इस प्रकार सन १९४७ को १५ अगस्त के दिन भारत परतन्त्रता की बेडिया को काट कर स्वतन्त्रता के उन्मुक्त वातावरण मे विचरने लग गया है। अत समस्त राष्ट्रवासियो को यह स्वतन्त्रतादिवस बड उत्साह से मनाना चाहिये।

२—श्रावणी पर्व—

हमारे राष्ट्र मे धार्मिक सामाजिक और प्राकृतिक रूप से अनेक पर्व—त्यौहार मनाये जाते है। आर्यसमाजी जगत मे श्रावणी पर्व से सर्वत्र वेद प्रचार सप्ताह मनाया जाता है। वास्तव मे यह पर्व सीधा वेद स्वाध्याय से सम्बन्ध रखता है। इस का प्राकृतिक और धार्मिक रूप मे सदा से आर्य लोग मनाते आये है। हमारा मत है कि श्रावणी पर्व के समय ही सृष्टि की उत्पत्ति मानव आदि प्राणियो की उत्पत्ति और वेद का प्रादुर्भाव परमेश्वर प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ मे करता है। इस सम्बन्ध मे आर्यमर्यादा के स्वाध्यायशील पाठको के सामने समयानुसार अपने विचार रखेगे और पूज्य आर्य विद्वानो से भी अपने अपने विचार रखने के लिये नम्र निवेदन करेगे। इस समय आर्य ब्रह्मचारी वेद आदि सत्यशास्त्रो के पारायण और मनन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। २५ अगस्त का यह पर्व सर्वत्र मनाया जाता है उस समय पर्व पद्धति के अनुसार यज्ञ उपदेश तथा भाषण प्रत्येक आर्यसमाज मे किये जाने चाहिये। इसी समय आर्यमर्यादा का वेदाविर्भाव विशेषाङ्क प्रकाशित किया जा रहा है। यह अक श्रावणी पर्व से पूर्व ही स्वाध्याय स्वभाव ग्राहक तथा पाठक महाशयो के पास पहुच जावेगा।

इसी पर्व को रक्षा बन्धन नाम से भी कहा जाता है। वास्तव मे गुरुजन अपने शिष्यो को वेदाभ्यास कराके उनके ज्ञान की रक्षा करते है। जैसे गायत्री मन्त्र मे शिखाबन्धन किया जाता है। परन्तु कालान्तर मे कारणवशात भाइयो और बहिनो का त्योहार भी इसी मे सम्मिलित होगया है। बहिन अपने भाईयो के हाथो मे रक्षा सूत्र बान्धती है और भाई अपनी बहिनो को यथाशक्ति द्रव्यादि पदार्थो से सत्कृत करते है। वर्तमान समय मे इस प्रथा को भी विशेष रूप से मनाना चाहिये जिस से स्त्री जाति के सम्मान की रक्षा का व्रत लिया जाता रहे।

कृष्णजन्माष्टमी

हमारे इतिहास मे श्री कृष्ण का स्थान बहुत ऊचा है। उन्होने सामान्य कृष्णि कुल मे जन्म लेकर बड बड राजाओ द्वारा भी सत्कार प्राप्त किया। यद्यपि वह स्वय राजा नही थे। उनकी महत्ता के दो प्रमाण उपस्थित करते है। [१] युधिष्ठिर के राजसूयज्ञ मे जब यह प्रश्न आया कि किस को पूजा सबसे पहिले की जावे तब गुरुकुल के पितामह महायोद्धा और विद्वान भीष्म ने कहा कि मै कृष्ण को आज समस्त भूमण्डल मे सब से पूज्य मानता हू। [२] ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश मे लिखा है कि देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत मे अत्युत्तम है उन का गुण कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषो के सदृश है जिस मे कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नही लिखा। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये है। दूसरे स्थान पर लिखा है कि १९१४ के वर्ष मे तोपो के मारे मूर्तिया अग्रजो ने उडा दी थी जो श्रीकृष्ण के सदृश कोई होता तो इन के धुर्रे उडा देता और ये भागते फिरते।

१५ अगस्त पर

"याद करो 'आजाद' ने कभी अपना लहू बहाया था"

(श्री ब्रजभूषण दुबे ३० गोरा चन्द रोड, कलकत्ता—१४)

भूल रहे हो लाल जी ने गोरो को दहलाया था
भूल रहे हो नेता जी ने कितना जोर लगाया था
भूल रहे हो भगतसिंह और इन्कलाब के नारे को—
भूल रहे हो पडित को जो कफन बाधकर आया था ॥१॥
भूल रहे हो मदनलाल ने कैसे कर्जन को मारा था
भूल रहे हो हरदयाल को जनम दुश्मन हारा था
भूल रहे हो कभी देश मे नहर क्रान्ति की आई था—
भूल रहे हो सावरकर ने अपना सब कुछ वारा था ॥२॥
भूल रहे हो खदीराम को फास पर लटकाया था
भूल रहे कन्हाईलाल को दुश्मन ने मरवाया था
गीत शान्ति के गाने वालो याद करो कुछ वीर को—
याद करो 'आजाद' ने कभी अपना लहू बहाया था। ॥३॥

सकेत—लाला लाजपतराय नेता जी सुभाषचन्द्र बोस सरदार भगतसिह हुतात्मा रामप्रसाद बिस्मिल मदनलाल धीगरा लाला हरदयाल एम ए वीर सावरकर खदीराम बोस कन्हाईलाल दत्त पडित चन्द्रशेखर आजाद

वेद वृष्टि

(कविवर प्रणव शास्त्री एम ए फीरोजाबाद)

विश्व मे वेद घटा घन घोर ज्ञान की वर्षा तान है
मानस के सुन्दर स्व जहा मन्हार गाता आता है ॥१॥
श्रवण से श्रवण मे सौन्दर्य मनन मे मदिरा आई है
आय जन मानस विप्पो मे मन नदियो आई है
गजहवो भूले भटके को निरखा जो कि लुभाती है ॥२॥
ईश या जीव प्रकृति ये तत्त्व अनादी सदा कहाते है
सृष्टि की उज्वल वाणी पर मुरछना रात सुजान है
त्रिवेणी भूमण्डल मे यही ताप त्रयताप मिटाती है ॥३॥
जीव का आवागमन ललाम जगत का पुण्य पहेली है
प्रकृति की शोभा नित्य नवीन मनाती सङ्ग सहेली है
ईश है सर्वत्र अज मा एक यही बस तान सुनाता है ॥४॥
कर्म—वचित्र्य हिन्डोले मे भूलते सब ही प्राणी है
भिन्न है रूप रङ्ग मति भोग भूप है दानी रानी है
कुशलता कर्मो को रानी सभी को नाच नचाती है ॥५॥
वेद है ऋक यजु साम अथर्व जो कि विज्ञान पिटारी हैं
इसी को कहते है इलहाम इसी के सभी भिखारी हैं
सृजन के आदि काल मे जिन्ह ऋषि को मेधापाती है ॥६॥
मिटाता त्रयतापो को जीव मुक्ति मन्दिर मे जाता है
अवधि मे आनन्दो को भोग गर्भ मे फिर भी आता है
कर्म का यह है अटल विधान मुक्ति भी नित्य न थाती है ॥७॥
गुण या कर्म स्वभाव समेत वर्ण है राष्ट्र व्यवस्था रूप
व्यक्ति के जीवन के आव र चार है आश्रम आधा अनूप
व्यवस्था समुचित यही अनित्य शान्ति के स्रोत बहाती है ॥८॥
यथेमा वाच कल्याणीम ऋचा को सुनो सभा ललकार
सभी का सतत प्राप्त है सत्यवेद के पढने का अधिकार
धरा वन आय पुकारे यही प्रणव की कविता भाती है ॥९॥

अत वेदप्रचार सप्ताह के अतिम दिन ४ सितम्बर को कृष्ण जन्माष्टमी को राष्ट्रिय त्यौहार के रूप मे बड उल्लास से मनाया जाये। जहा श्रावणी पर्व से ब्राह्म शक्ति ब्रह्म वर्चस बढगा वहा कृष्णाष्टमी पर्व से क्षात्र शक्ति और क्षात्र तेज का उद्भव होगा। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

याज्ञिक आचार संहिता—(४)

"व्रत कर्म"

(ले० श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी, वेद सदन, महारानी पथ, इन्दौर--२)

"कामेन मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ॥"

अर्थात् शरीर, मन और वाणी से सब अवस्थाओं में सदा सब स्थानों में मैथुन का त्याग ब्रह्मचर्य कहाता है। अतः यज्ञ के व्रती को इसके पालन करने पर प्रमुख रूप से ध्यान देना चाहिये।

"उपरिशय्यां च वर्जय"

पलंग, खाट आदि पर न सोवे। यज्ञ के दिनों में नीचे भूमि पर ही शयन करना चाहिये। शतपथ में भी—"अधःशयीत"—यह आदेश यजमान एवं यजमान पत्नी के लिये यज्ञ के दिनों में आहवनीयाग्नि की वेदी के पास नीचे भूमि पर शयन करने के लिये लिखा है। क्योंकि यज्ञ का अनुष्ठान करने पर देवगण यज्ञशाला में आते हैं। उनसे ऊपर अपनी स्थिति नहीं होनी चाहिये अतः नीचे भूमि पर ही शयन और उपस्थिति रहनी चाहिये।

"कौशीलवगन्धनांजनानि वर्जय"

गाना बजाना, नृत्य, गन्ध लगाना तथा आँखों में अजनादि के प्रयोग को छोड़ना चाहिये। इस का तात्पर्य यह है कि व्यर्थ का गाना, बजाना, एवं नृत्य जिसका यज्ञ, उपासना आदि से कोई सम्बन्ध नहीं है, जो केवल राग की ही तृप्ति के लिये है और जो यज्ञ की क्रिया का अंग नहीं है उसको छोड़ना चाहिये। अर्थात् लोक नृत्य, गीत, वाद्य श्रवण एवं दर्शन में मनोरंजनार्थ भाग नहीं लेना चाहिये।

इसी प्रकार यज्ञ क्रिया के अंग-भूत चन्दनादि सुगन्ध लेपन आदि कार्यो को छोड़कर अन्य प्रकार के गन्ध जो शौकिया ही लगाये जाते हैं, उनका यज्ञ में त्याग करना चाहिये। इसी प्रकार भस्मलेपनादि के अतिरिक्त शृंगारिक पाउडर, लिपस्टिक, रंजक आदि तथा अंजनादि का प्रदर्शनार्थ प्रयोग त्याग कर सात्विक वृत्तियुक्त रहना चाहिये।

"अत्यन्तं स्नानं, भोजनं निद्रां जागरणं निन्दां लोभमोहभयशोकान् वर्जय"

अधिक स्नान, अधिक भोजन, अति निद्रा, अति जागरण आदि यज्ञ के व्रती को नहीं करना चाहिये। किसी की निन्दा मन से भी नहीं करनी चाहिये। लोभ-वश भी कार्य नहीं करना चाहिये तथा शोक आदि में भी लिप्त नहीं रहना चाहिये।

"क्षुरकृत्यं वर्जय"

यज्ञ के दिनों में क्षौर कर्म (हजामत बाल, दाढ़ी आदि बनवाना) नहीं करना-करवाना चाहिये अपितु इनका धारण करना चाहिये। यजुर्वेद अ. १९ मं ८१ में 'लोमानि शष्पैर्बहुधा दधुः' शब्द है। इनका भाव यज्ञ के लिये दाढ़ी बढ़ाने से भी है, जैसा कि महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती इस मन्त्र के भाष्य में लिखते हैः—

"जो बहुत काल पर्यन्त दाढ़ी मूछ धारण पूर्वक ब्रह्मचारी अथवा पूर्ण विद्यावाले जितेन्द्रिय भद्रजन है, वे ही यज्ञ धातु के अर्थ को जानने योग्य अर्थात् यज्ञ करने योग्य होते है। अन्य बाल बुद्धि, अविद्वान् नहीं हो सकते।" अतः "क्षुरकृत्यं वर्जय" पूर्वाचार्यो द्वारा उपदिष्ट आदेश वेदानुकूल है। इसलिये यज्ञ के लिये जिन यजमान एवं ऋत्विजों को दीक्षित किया जाता है उनको जब तक यज्ञानुष्ठानादि कार्य पूर्ण न हो जावे तब तक क्षौरादि नहीं कराना चाहिये।

यदि क्षौर कराते है तो व्रत भंग हो जाता है। व्रत भंग नहीं करना चाहिये। ये क्षौरादि कर्म भी ब्रह्मचर्य के लोप करने में परोक्ष रूप से सहायक होते है। इसीलिये 'अचरितेना ब्रह्मचर्य अपराग्या वा' जो अब्रह्मचारी हैं और रागश्च गारादि में लिप्त हैं ऐसे ऋत्विजो से 'यज्ञस्य विरिष्टिमित्याचक्षते' यज्ञ का नाश होता है, ऐसा गोपथ ब्राह्मण मे लिखा है।

"मांस रूक्षाहारं मद्यादिपानं च वर्जय"

मांस, रूखा-सूखा, अस्निग्ध भोजन, मादक द्रव, तमाखू, बीड़ी, सिगरेट, गांजा, भाग, ताड़ी, मद्यादि का सेवन या पान करना किसी भी प्रकार से नहीं करना चाहिये। यज्ञ के दिनों मे "भोजन मधुर स्निग्धम्" मधुर रस युक्त और स्निग्धता से युक्त घृत माखनादि पदार्थों से युक्त होना चाहिये और सात्विक होना चाहिये।

"अत्यन्त-अम्लातितिक्तकषायक्षाररेचनद्रव्याणि मा सेवस्व"

अत्यधिक खट्टे पदार्थ इमली आदि, चरपरे पदार्थ लालमिर्च आदि, कसैले पदार्थ, क्षार, लवण आदि और द्रव्य इनका भी यज्ञ के दिनों में सेवन नहीं करना चाहिये।

यज्ञ के दिनों में नमक रहित भोजन करें

संस्कार के लिये व्रती को नमक आदि से युक्त भोजन का निषेध महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने संस्कारविधि में निम्न प्रकार किया है:—

(१) "तीन दिन तक क्षार, लवण रहित पदार्थ का भोजन ब्रह्मचारी किया करें।"-(वेदारंभ संस्कार)

(२) "वधू वर क्षार आहार रहित व्रतस्थ होकर"-(विवाह संस्कार)

(३) जिस दिन बालक का यज्ञोपवीत करना हो उससे तीन दिन अथवा एक दिन पूर्व तीन वा एक व्रत बालक को करना चाहिये। उन व्रतों में······दुग्ध-पान,·······यवागू······और आमिक्षा ·· इन तीन ही पदार्थों का सेवन करे अन्य पदार्थ कुछ न खायें पीवें। (उपनयन संस्कार) ये तीनों ही पदार्थ नमक रहित एवं मीठे ही हैं।

इन लेखों से ज्ञात होता है कि यज्ञ के लिये व्रती होना चाहिये और व्रती को नमक रहित भोजन करना चाहिये। शास्त्रकारों ने भी कहा है "क्षार क्षौर च लवणं मधु मांसं च वर्जयेत्।"

"अन्तर्ग्रामनिवासोपच्छत्रधारणं च वर्जय"

अर्थात् ग्राम के अन्दर निवास, जूता का पहनना एवं छत्रादि का धारण नहीं करना चाहिये। यज्ञ के अनुष्ठान करने वालों को ग्राम के अन्दर भी निवास नहीं करना चाहिये जिससे वे ग्राम की लौकिक प्रवृत्तियों के वशीभूत या उनसे प्रभावित न होकर यज्ञ के ही अनुष्ठान कार्य में पूर्ण रूप से लगे रहे। यजमान एवं ऋत्विजों का सम्पर्क अनुष्ठान के दिनों में यज्ञादि में ही लगा रहना चाहिये। अतः अपने व्यवसाय से भी अवकाश लेने के लिये ग्राम का निवास त्यागकर यज्ञ प्रदेश में ही निवास करना उचित है। इस प्रकार साधना की सिद्धि में ही मन लगाना उद्देश्य है।

यज्ञ के दिनों में चर्मादि के जूते, चप्पल, बूट आदि का त्याग करना चाहिये और उन दिनों में काष्ठ की पादुका, खड़ांऊ या कपड़े के जूते आदि चर्म रहित पगरखाओं का ही धारण करना चाहिये। ब्रह्मचर्य के नियमों में जूता पहिनना वर्जित है अतः यज्ञ के दिनों में चर्म के जूते एवं अन्य भी चर्ममय वस्तुओं का परित्याग ही करना चाहिये।

"सुशीलो मितभाषी सभ्यो भव"

अर्थात् उत्तम स्वभाव वाला, अनावश्यक न बोलने वाला और सभ्य होना चाहिये। अतः यज्ञ के दिनों में हास-परिहास, क्रीडा, ताश, चौपड़ आदि खेलना अनावश्यक एवं अधिक बोलना, अनावश्यक गाना तथा किसी भी प्रकार की कुचेष्टा या असभ्यता, अनादर, अशान्ति आदि नहीं करनी चाहिये तथा सभ्यता का बर्त्ताव सबमें करना चाहिये।

"प्रतिदिनं रात्रेः पश्चिमे यामे चोत्थाय आवश्यकं कृत्वा दन्तधावन-स्नानसन्ध्योपासनेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनायोगाभ्यासान्नित्यमाचर"

अर्थात् प्रतिदिन रात्रि के चतुर्थ प्रहर में जागकर आवश्यक कर्म शौच, दन्तधावन, स्नान, सन्ध्योपासन, ईश्वर स्तुति प्रार्थना और उपासना तथा योगाभ्यास का आचरण नित्य किया करें। अर्थात् ब्राह्ममुहूर्त्त मे ही यजमान एवं ऋत्विज् उठें। तभी स्नानादि से निवृत्त होकर केवल सन्ध्योपासनादि कार्य में ही लग जावे। उन्हें प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्त्त में शयन नहीं करना चाहिये और उठने के बाद अन्य बाह्य किसी भी चर्चा में संलग्न नहीं रहना चाहिये। प्रातः उठते ही रेडियो सुनना या लौकिक प्रवृत्तियों में लगना उचित नहीं है। मौन होकर जप, उपासना आदि में लग जाना चाहिये।

पूर्वोक्त नियम ब्रह्मचारी के लिये ऋषियों ने पालन करने के लिये लिखे है। यज्ञानुष्ठाता यजमान एवं ऋत्विजों को भी ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है अतः ब्रह्मचर्य को साधना के अंग-भूत पूर्वोक्त नियमों का भी पालन उन्हे करना चाहिये। इनके अतिरिक्त यज्ञ के लिये अन्य भी नियमों का पालन शास्त्रकारों ने बताया है। यथा— (क्रमशः)

ओङ्कार-जप-विधिः—११

[वेदोक्त—विधान—१]

(ले० श्री पं० जगतकुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—ओङ्कार-जप का उपदेश, विज्ञान और विधान वेद में भी सुस्पष्ट रूप में विद्यमान है। विशेषज्ञों और आचार्यों ने ओङ्कारोपसना के उपदेश में पात्रता का विशेष ध्यान रखा था। बात तो उत्तम थी। परन्तु स्थिति ऐसी बन गई कि यह विज्ञान ही संकट में पड़ गया और लुप्त होने लगा। महर्षि दयानन्द जी ने इस विज्ञान को पुनरपि जीवित और प्रचलित किया है। उनके ग्रन्थों के कुछ उद्धारण पहले लिखे जा चुके हैं। उनके वेद-भाष्य के दो प्रसिद्ध प्रसंग तथा कुछ अन्य वैदिक सन्दर्भ अब दर्शाते हैं।

२—यजुर्वेद के चालीवें अध्याय का पन्द्रहवां मन्त्र हैं :

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्त ७ शरीरम्।
ओम् क्रतो स्मर, क्लोबे स्मर, कृत ७ स्मर॥

३—ओङ्कार-जप का साक्षात् आदेश यहां मौजूद है। इस मन्त्र के अर्थ निदेशन में विद्वानों ने अच्छा कौशल दर्शाया है। कुछ अन्य विद्वानों के अर्थ और व्याख्यान भी आगे दर्शाये जायेंगे। अधिक गौरवपूर्ण समझकर उपर्युक्त मन्त्र का महर्षि दयानन्दकृत भाष्य यहां दर्शाते है।

४—वे लिखते हैं :—

पदार्थः—(वायुः) धनञ्जयादिरूपः (अनिलम्) कारणरूपं वायुम् (अमृतम्) नाशरहितं कारणम् (अथ) (इदम्) (भस्मान्तम्) भस्म अन्ते यस्य तत् (शरीरम्) यच्छीर्यते हिंस्यते तदाश्रयम् (ओ३म्) एतन्नामवाच्यमीश्वरम् (क्रतो) यत् करोति जीवस्तत्सम्बुद्धौ (स्मर) पर्यालोचय (क्लिबे) स्वसामर्थ्याय (स्मर) (कृतम्) यदनुष्ठितम् (स्मर) तत्॥

भावार्थः—मनुर्ष्यैर्यथा मृत्युसमये चित्तवृत्तिर्जायते शरीरादात्मनः पृथग्भावश्च तथैवेदानीमपि विज्ञेयम्। एतच्छरीरस्य भस्मान्ता क्रिया कार्या नातो दहनात्परः कश्चित्संस्कारः कर्तव्यो वर्तमानसमय एकस्य परमेश्वरस्यैवाज्ञापालनमुपासनं स्वसामर्थ्यवर्द्धनञ्चैव कार्यम्। कृत कर्म विफलं न भवतीति मत्वा धर्मे रुचिरधर्मेऽप्रीतिश्च कर्तव्या।

५—पदार्थ और भावार्थ का हिन्दी अनुवाद—

हे (क्रतो) कर्म करने वाले जीव! तू शरीर छूटते समय (ओ३म्) इस नामवाच्य को (स्मर) स्मरणकर। (कृतम्) अपने किये का (स्मर) स्मरण कर। इस सम्कार का (वायुः) धनजय रूप वायु (अनिलिम्) कारणरूप वायु को (अमृतम्) अविनाशीकारण को धारण करता (अथ) इसके अनन्तर (इदम्) यह (शरीरम्) नष्ट होने वाला सुखादि का आश्रय शरीर (भस्मान्तम्) अन्त में भस्म होने वाला होता है, ऐसा जानो।

भावार्थः—मनुष्यों को चाहिये कि जैसी मृत्यु समय में चित्त की वृत्ति होती है, और शरीर से आत्मा का पृथक् होना ज्ञात होता है, वैसे ही इस समय भी जानें। इस शरीर को जलाने पर्यन्त क्रिया करें। जलाने के पश्चात् शरीर का कोई संस्कार न करें। वर्तमान समय में एक परमेश्वर की ही आज्ञा का पालन, उपासना और अपने सामर्थ्य को बढ़ाया करें। किया हुआ कर्म विफल नहीं होता, ऐसा मानकर धर्म में रुचि और अधर्म में अरुचि किया करें।

६—यजुर्वेद का अन्तिम और उसके चालिसवें अध्ययाय का भी अन्तिम=सतरहवां मन्त्र यह है—

हिरण्मयेन पात्रेण, सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओम्। खं ब्रह्म॥

७—महर्षि दयानन्दकृत भाष्य—

पदार्थः—(हिरण्मयेन) ज्योतिर्मयेन (पात्रेण) रक्षकेण (सत्यस्य) अविनाशिनः यथार्थस्य कारणस्य (अपिहितम्) (आच्छादितम्) (मुखम्) मुखवदुत्तमाङ्गम् (यः) (असौ) (आदित्ये) प्राणे सूर्यमण्डले वा (पुरुषः) पूर्ण परमात्मा (सः) (असौ) (अहम्) (ओ३म्) योऽवति सकल जगत् तस्या (खम्) आकाशवद् व्यापकम् (ब्रह्म) सर्वेभ्यो गुणकमस्वरूपतो बृहत्

भावार्थः—सर्वान् मनुष्यान् प्रति ईश्वर उपदिशति। हे मनुष्या योऽहमत्रास्मि स एवान्यत्र सूर्यादौ योऽन्यत्र सूर्यादवस्मि स एवाऽत्रास्मि। सर्वत्र परिपूर्णः खवद् व्यापको न मत्तः किञ्चिदन्यद् बृहदहमेव सर्वेभ्यो महानस्मि मदीयं सुलक्षणपुत्रवत् प्राणप्रियं नाम ओमिति वर्तते यो मत्त प्रेमसत्याचरणभावाभ्यां शरण गच्छति तस्यान्तर्यामिरूपेणाहमविद्यां विनाश्य तदात्मानं प्रकाश्य शुभगुणकर्मस्वभावं कृत्वा सत्यस्वरूपावरणं स्थापयित्वा शुद्धं योगजं विज्ञानं दत्वा सर्वेभ्यो दुःखेभ्य पृथक्कृत्वा मोक्षसुखं प्रापयामीत्यो३म्॥

८—पदार्थ और भावार्थ का हिन्दी अनुवाद—

हे मनुष्यो! जिस (हिरण्मयेन) ज्योतिः स्वरूप (पात्रेण) रक्षक मुझ से (सत्यस्य) अविनाशी यथार्थ कारण के (अपिहितम्) आच्छादित (मुखम्) मुख के तुल्य उत्तम अंग का प्रकाश किया जाता (यः) जो (असौ) यह (आदित्ये) प्राण या सूर्यमण्डल में (पुरुषः) पूर्ण परमात्मा है (सः) वह (असौ) परोक्षरूप (अहम्) मैं (खम्) आकाश के तुल्य व्यापक (ब्रह्म) सबसे गुण, कर्म और स्वरूप करके अधिक हूँ (ओ३म्) सब का रक्षक जो मैं उसका (ओ३म्) ऐसा नाम जानो।

भावार्थ—सब मनुष्यों के प्रति ईश्वर उपदेश देता है कि हे मनुष्यो! जो मैं यहां हूं, वही अन्यत्र सूर्यादि लोक में, जो अन्य स्थल सूर्यादि लोक में हूं, वही यहां हूं। सर्वत्र परिपूर्ण आकाश के तुल्य व्यापक मुझ से बड़ा कोई नहीं है। मैं ही सब से बड़ा हूं। मैं सुलक्षणों से युक्त पुत्र के तुल्य प्राणों से प्यारा मेरा निज नाम "ओ३म्" यह है। जो मेरा प्रेम और सत्याचरण से नाम लेता, उनकी अन्तर्यामी रूप से मैं अविद्या का विनाश कर उसके आत्मा का प्रकाश करके शुभ गुण कर्म स्वभाव वाला कर सत्यस्वरूप का आचरण स्थिर कर योग से हुए विज्ञान को दे और सब दुःखों से अलग करके मोक्ष सुख को प्राप्त कराता हूं।

९—ऊपर महर्षि जी ने "पात्रेण" पद का अर्थ "रक्षकेण" किया है। "पात्र", शब्द का यह "रक्षक" अर्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह "पात्र" शब्द भी उसी रक्षण, पालन, पोषण अर्थ वाले "पा" धातु से बना है, जिससे पिता और पति शब्द बने। पात्र बर्तन को भी कहते हैं आवरण वा आच्छादन को भी। इस मन्त्र का पूर्वार्ध ज्यो का त्यों "ईशोपनिषद" में भी है। यजुर्वेद की काण्व शाखा का चालीसवां अध्याय "ईशोपनिषद्" कहलाता है। श्री शंकराचार्य जी के इस शाखा के भाष्य के कारण उसे विशेष प्रसिद्धि मिली है। हम तो समझते हैं कि "ईशोपनिषद्" के रूप में भी यजुर्वेद की माध्यन्दिन शाखा के चालीसवें अध्याय को ही मानना और पढ़ना-पढ़ाना चाहिये। क्योंकि काण्वशाखा में मूल यजुर्वेद भिन्न बहुत-से पाठ-भेद अनुक्रम-भेद मौजूद हैं। शाखा होने के कारण काण्व-शाखा को गणना मूल वेदो में नहीं है। अस्तु।

१०—कण नाम के इतिहास प्रसिद्ध ऋषि कई हो चुके हैं। उनमें से न जाने यह शाखाकार कण्व कौन-सा था? और उस का काल क्या था? शाखकार ने मूल-पाठ क्यों बदले? यह भी एक बड़े विवाद का विषय है। शाखाओं को गणना वेदभाष्य श्रेणी में ही होती है। ऐसा ही होना भी चाहिये। अर्थात् शाखायें स्वतः प्रमाण नहीं हैं। मूल वेद ही स्वतः प्रमाण हैं। ये काण्व आदि शाखायें परत. प्रमाण श्रेणी में हैं। वेदानुकूल अथवा वेदविरुद्ध होने से ही शाखाओं को प्रामाणिक स्वीकारा जा सकता है।

११—काण्व-शाखा अर्थात् प्रचलित "ईशोपनिषद्" में उक्त मन्त्र का उत्तरार्द्ध इस प्रकार है —

तत्त्वं पूषन्नपावृणु, सत्यधर्माय दृष्टये॥

अर्थात् हे सब के पालक पोषक तू उस [पद] को हटा दे=दूर करदे, सत्य-धर्म के दर्शन के लिये। इस उत्तरार्द्ध के अनुसार उस पूर्वार्द्ध में वर्तमान "पात्रण" पद का अर्थ आच्छादक, आवरण वा पर्दा प्रसिद्ध हो गया और

शेष पृ० ७

"व्रत कर्म"

श्री शंकराचार्य के भ्रामक विचार

(प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर एम० ए० गवर्नमेंट कालिज गुलबर्गा)

आगे सब को परस्पर मित्र की दृष्टि से देखने का उपदेश करते हुए वेद कहता है कि "मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।" इतना सब कुछ होते हुए भी श्री० शंकराचार्य जी अस्पृश्यता को वेद सम्मत होने का दावा करते है और फिर तुर्रा यह कि शास्त्रार्थ को चुनौती देते है। चारों वेदों में एक भी ऐसा शब्द नहीं है जिससे मनुष्यो में अस्पृश्यता का समर्थन होता हो। निषादाधिपति गुह को अपनी छाती से लगाने वाले और परम भक्त भीलनी के झूठे बेर भी बड़े प्रेम से खाने वाले हिन्दु धर्म के आराध्यदेव भगवान् राम के उपासक श्री शंकराचार्य को यह कहते हुए जरा भी संकोच नही हुआ कि शूद्र को वे अपने चरण का भी स्पर्श करने नही देंगे। सोमनाथ और संकड़ों हिन्दु मंदिरों का मुसलमान आततायियो द्वारा किया हुआ विध्वस देखकर भी शंकराचार्य को यह कहते हुए जरा भी पसोपेश नही हुआ कि शूद्रों को मंदिरों मे जा कर पूजा करने का कोई अधिकार नही। उनको तो मंदिर का कलश देखकर हो संतोष कर लेना चाहिए।

श्री० शंकराचार्य जी को यह भली प्रकार जान लेना चाहिए कि अब तो उनके अनुयायी भी मंदिर में जाना नही चाहते; उन की संतान तो नास्तिकता की ओर तेजी से बढ रही है। तब इन शूद्रों के मंदिर प्रवेश का तो अब प्रश्न ही नही। वे तो अब सभी प्रकार के मानवो अधिकार चाहते हैं। आर्थिक और सामाजिक समानता की मांग कर रहे हैं। हमारे संविधान ने ही अब इन अधिकारों की घोषणा कर दी है। अब लाख शंकराचार्य आयें, यह रुकने वाली बात नही।

हिन्दु धर्म के संरक्षक इन शंकराचार्यो को यदि हिन्दु धर्म की चिन्ता होती तो सैंकड़ों वर्षों से होते आये हिन्दुधर्म ह्रास को रोकने का वे अवश्य प्रयत्न करते। एक समय संसार का सब से बड़ा और सब से प्राचीन कहलाने वाला हिन्दुधर्म आज केवल भारत तक ही सीमित होकर सब से छोटा धर्म हो गया है। इसका कारण वैदिक धर्म के यमनियमादि मूल प्रेरक तत्त्वों को भुला कर छूत-छात जैसी अमानवीय प्रथाओं को ही गलती से धर्म का अंग मान लेना है। करोड़ों हिन्दु छूत-छात के इसी अभिशाप के कारण मुस्लिम, ईसाई, जैन और बौद्ध बन गये और इसी कुप्रथा के कारण अज्ञात काल से अखण्ड प्रिय भारत माँ के दो टुकड़े हो गए। नागालैण्ड, मिजोलंड, झारखण्ड जैसे ईसाई स्थान आज भी बन रहे हैं। किन्तु आज भी हमारे तथाकथित यह धर्माध्यक्ष छूतछात को धर्म का अंग मानने का बेसुरा राग आलाप रहे है। हिन्दुधर्म की विशालता और उदात्तता को इन्होंने कभी समझा ही नही। "यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः" अर्थात् जिससे इहलौकिक और पारलौकिक कल्याण की प्राप्ति होती है वही धर्म है। "चोदना-लक्षणोऽर्थो धर्मः।" अर्थात् वेद प्रतिपादित शुभ कर्मों की प्रेरणा देना ही धर्म का लक्षण है। भगवान् मनु ने तो धर्म के दस लक्षण ही गिना दिये हैं।

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।"

अर्थात् धृति, क्षमा दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध, ये धर्म के दस लक्षण है। इन मे ऋषि दयानन्द ने ११ वां 'अहिंसा' भी जोड़ दिया। इन में कहीं अस्पृश्यता का नाम भी नही। महाभारतकार व्यास जी ने तो स्पष्ट शब्दो मे धर्म का सार बतलाते हुये कहा है कि—

"श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥"

अर्थात् धर्म का सार सर्वस्व सुनिये और सुनकर उस पर आचरण कीजिए कि अपने आत्मा के विरुद्ध किसी के प्रति कोई व्यवहार कदापि न करें। यजुर्वेद के चालीसवे अध्याय में स्पष्ट शब्दों में कहा है—

"यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति॥"

अर्थात् जो सब प्राणियों को अपने आत्मा में देखता है और सब प्राणियों में अपने आत्मा को, वह कभी संशय और दुःख को प्राप्त नहीं होता। परम पिता परमात्मा की इस विशाल सृष्टि में चारों वर्णों के साथ समता का व्यवहार होता है। भेदभाव और छूतछात कही भी नजर नही आती। शूद्रों के घर में भी वैसी ही वर्षा होती है जैसी ब्राह्मण के घर में होती है। जैसा ब्राह्मणों की भूमि में अन्न उपजता है वैसा ही शूद्रों के घर में भी उपजता है। हवा यह नही कहती कि मैं शूद्रो का स्पर्श नहीं करूंगी। पानी यह नही कहता कि मैं शूद्रों की प्यास नहीं बुझाऊँगा; आग यह नहीं कहती कि मैं शूद्रों के घर मे भोजन नहीं पकाऊँगी। फिर क्या कारण है, कि मनुष्य ही आपस में छूतछात बरतता है। यह संकीर्ण मनोवृत्ति वैदिकधर्म का अंग न होकर अर्वाचीन काल में उस पर लगा भयंकर कलंक है।

वैदिक धर्म इतना विशाल और सर्वसमावेशक है कि उसमें यवन, शक, सीथियन आदि सैंकड़ो म्लेच्छ जातियाँ बिल्कुल समा गयी। कभी ये भी क्षत्रिय जातियाँ थी—वेदप्रचार के न रहने से भटक गई। उनका अलग अस्तित्व तक नही रहा। अति प्राचीन काल में इसकी गौरवमयी पताका को लेकर सैंकड़ों ऋषि और उपदेशक देशदेशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में गये और वहाँ के निवासियों को वैदिक धर्म की दीक्षा दी। यदि वे छूतछात को धर्म का अंग मानते तो अपने घर से बाहर ही नही निकलते। इसके विपरीत पौराणिक काल में समुद्र पार करना धर्म विरुद्ध समझा जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि सार्वभौम वैदिक धर्म संकीर्ण हिन्दुधर्म बनकर भारत तक ही सीमित हो गया। विशाल वैदिक धर्म इतना कच्चा धागा नहीं है कि किसी के छू जाने मात्र से टूट जाय। इसकी पाचन-शक्ति इतनी कमजोर नही है कि किसी के हाथ का खाते ही वह बिगड़ जाय। वह पारसमणि ही क्या जो लोहे के छू जाने से स्वयं लोहा बन जाय। वह प्रकाश का केन्द्र सूर्य ही क्या जो अन्धकार के छूते ही स्वयं अन्धकार में परिणत हो जाय। वह ज्ञानी ही क्या जो अज्ञानी के संपर्क में आने से स्वयं अज्ञान में बदल जाय। विशुद्ध वैदिकधर्म पर लगे छूतछात के इस भयंकर कलंक को समूल नष्ट करने के लिए इस युग के महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और गांधी जी ने युगान्तरकारी महान् कार्य किया, जिसके लिए हिन्दुधर्म उनका सदैव कृतज्ञ रहेगा। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने वैदिक धर्म का शुद्ध स्वरूप संसार के सामने रखा और "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" की वैदिक पताका को फिर से गगन में फहराया और वैदिक-धर्म के बन्द द्वार चाण्डाल और म्लेच्छों के लिए फिर से खोल दिये। उनके द्वारा प्रवर्तित इस धर्म चक्र को गतिमान करने के लिए उनके अनेक शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द, प० लेखराम, प० राजपाल तथा सैकड़ों वीरों ने अपने प्राणो की बलि चढ़ाई और वैदिकधर्म की रक्षा और प्रसार का ऐतिहासिक महान् कार्य किया जो सहस्रों शंकराचार्य मिलकर भी नहीं कर सके।

"विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥"

जब गीता के इस श्लोक का हवाला देते हुये उनसे पूछा गया कि क्या गीता के अनुसार सब मनुष्य मात्र समान नहीं हैं? तब इस समता का मजाक उडाते हुये उन्होंने कहा कि क्या ऐसा कहने वाले कुत्तों के साथ भोजन करेंगे? माननीय शंकराचार्य को यह कहते हुये जरा भी संकोच नही हुआ कि उनके इस वक्तव्य से पददलित बन्धुओं की भावनाओं को कितनी गहरी ठेस पहुंचेगी? ऐसे गैर जिम्मेवार वक्तव्य और उस पर आधारित गैर जिम्मेवार कृतियाँ ही करोड़ों पददलित भाईयों को हिन्दुधर्म से अलग करने मे कारण हुई हैं। इसी कारण डॉ० आम्बेडकर और उनके लाखों अनुयायी निराश और तंग होकर बुद्ध की शरण गये। यदि कहीं वे इसलाम या ईसाईयत की शरण जाते तो भारत और हिन्दुधर्म को जिस भयंकर दुर्दिन का सामना करना पड़ता इसका इन तथाकथित धर्माचार्यों को जरा भी विचार नही।

(क्रमश)

कलकत्ता नगर के गोभक्तों के लिये स्वर्ण अवसर

(रचनात्मक सेवा कार्यों में सहयोग देकर सच्ची गोभक्ति का परिचय दें)

गत दिनो यहाँ के दैनिक अखबारो एव देश के अन्य भागो से प्रकाशित समाचार पत्रो के द्वारा आपने जान लिया होगा कि आर्यसमाज कलकत्ता अपनी रुचि व कर्तव्यनिष्ठा की गरिमापूर्ण परम्परा के अनुकूल एक महान सेवा कार्य मे जटा हुआ है।

पश्चिम बङ्ग सरकार के दुग्ध आपूर्ति केन्द्र क्रमश हरिनघाटा व कल्याणी से प्रतिवष प्राय ४००० हजार गायें बछडी एव बछडे नीलाम किये जाते हैं। इसके लिये लगभग तीन लाख रुपये की आवश्यकता होगी। इनमे से अधिकाश की नस्ल अच्छी व उपयोगी भी होती है आपको विदित ही है कि इनमे से अधिकतर पशु कसाइयो द्वारा खरीद लिये जाते हैं। इस कार्य को बन्द कराने हेतु आर्यसमाज ने एक कार्यक्रम बनाया है। कायक्रम का प्रथम चरण गत दि० ८ जुलाई १९९९ को ४४०००) रुपयो से कल्याणी केन्द्र से कुल ६६१ पशु (जिनमे ४१७ गाये एव २४४ बछडे हैं) हस्तगत कर स्थानीय कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को देकर सम्पन्न किया है। इस तरह भविष्य मे नीलाम बन्द करवा कर सारे पशु लेने का निणय आर्यसमाज ने किया है।

पश्चिम बग सरकार से विशेष अनुरोध एव सम्पर्क कायम कर इन पशुओ को लेने के लिये कम से कम कीमत लगे इसकी व्यवस्था की गई है। सरकार इन पशुओ को नीलाम से आधी कीमत पर देने के लिये राजी हो गई है एव इस तरह पूर्ण सहयोग एव सौहार्द का परिदर्शन किया है।

यह कार्य निर्बाध गति से किया जा सके इसके लिये एक कमेटी के गठन का निश्चय भी आर्यसमाज ने किया है। यह शीघ्रातिशीघ्र घटित की जायगी।

अतिशीघ्र द्वितीय चरण को चालू करने का सकल्प किया गया है। इसके लिये ७०००) रुपयो की आवश्यता है। इस बार कुल १०२ पशु लिये जायेंगे। अत आप महानुभावो से प्रार्थना है कि इस पवित्र कार्य को आगे बढाने मे सहयोग प्रदान करें।

ये प्राप्त किये जाने वाले पशु कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को दिये जायगे। अगर कुछ पशु सोसाइटी लेने मे अपने को असमर्थ पाती है तो उन्हे लेने को उत्तर प्रदेश और बिहार की अनेक गोशालायें तैयार हैं। इस आशय के पत्र भी हमे मिल चुके हैं। जो सज्जन प्रथम चरण मे प्राप्त पशु देखना चाहे वे कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी के अधिकारियो से सम्पर्क कर कचडापाडा केन्द्र में उन्हें देख सकते हैं। आपको अचम्भा होगा कि इन पशुओ में से अधिकतर गायें गर्भवती होकर दूध देने लायक हैं जबकि बछडे सुन्दर साड या बैल बन सकते हैं।

आशा है आप लोगो का सहयोग प्राप्त होगा। विशेष जानकारी के लिये सम्पर्क करें —

श्री दलियाराम गुप्त २१,सीनागोग स्ट्रीट, कलकत्ता-१ फोन २२-३२४८,
श्री पुनमचन्द आर्य २०, महर्षि देवेन्द्र रोड, कलकत्ता-७ फोन ३३-५६९३,
आर्यसमाज कलकत्ता १९, विधान सरणी, कलकत्ता-६ फोन ३४-२८०३

—छबीलदास सैनी-मन्त्री आर्यसमाज कलकत्ता, विधान सरणी कलकत्ता-६

गोविन्दनगर (कानपुर) में महिला आर्यसमाज की स्थापना

आर्य समाज गोविन्दनगर बी० ब्लाक क अन्तर्गत स्त्री आर्य समाज का भी घटन कर दिया गया है। इसक वैदिक सत्सग प्रति मगलवार दोपहर पश्चात् ३ बजे से ५॥ बजे तक ब्लाक १२ बी मकान न १२४/२४१ मे हुआ करेंगे। —मन्त्री आर्यसमाज बी० ब्लाक, गोविन्दनगर

श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यापीठ को उपाधियों की मान्यता

अखिल भारतीय स्तर पर विभिन्न प्रान्तो के गुरुकुलो का एक सङ्गठन है, जिसका नाम श्रीमददयानन्द आष विद्यापीठ है। यह सस्थान अपनी परीक्षाओ को वर्तमान काल मे गुरुकुल झज्जर (रोहतक) मे कार्यालय बनाकर चला रहा है। इसकी उपाधियाँ केन्द्रोय सरकार दिल्ली राज्य, पजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला और गुजरात विश्वविद्यालय अहमदाबाद ने तो पहले ही स्वीकार कर ली थी। अब उक्त सस्थाओ के छात्रो को विश्व-विद्यालय गुरुकुल कागडी (सहारनपुर) ने पत्र स० ५१ १-६९ दिनाङ्क ३० ७ ६९ से अपने यहा प्रवेश देने के लिये इस प्रकार की व्यवस्था की है कि—१ प्रथमा (अग्रजी सहित) विद्याधिकारी प्रथम खण्ड मे २ मध्यमा (अग्रजी सहित) विद्याविनोद द्वितीय खण्ड मे, ३ शास्त्री (अ ग्रजी सहित), एम० ए० (सस्कृत दशनशास्त्र वेद) मे ४ आचार्य एम० ए० (सस्कृत, दर्शनशास्त्र वेद मे॥ —प्रस्तोता वेदानन्द वेदवागीश

तथाकथित रामनारायण शास्त्री से सावधान

यह व्यक्ति आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के नाम पर सारे देश मे भ्रमण कर आर्यो की भावनाओ के साथ खिलवाड कर डी० ए० वी स्कल के भवन निर्माण आदि के नाम पर धन सग्रह कर रहा है। इस व्यक्ति के पास अनेक प्रकार की जाली रसीदे व रसीद बुकें हैं। इससे आर्य जनता सावधान रहे।

स्मरण रहे, यही व्यक्ति विगत दो सप्ताह पूर्व इन्दौर आया था और वेद-सुधा, तथा स्मारिका के नाम से धन सग्रह कर रहा था परन्तु भेद प्रगट हो जाने पर यह रातोरात यहा से भाग गया।

—उपमन्त्री आर्यसमाज, मल्हार गज, इन्दौर

गुरुकुल खेडा खुर्द मे धर्म-प्रचार

रवीवार १७ अगस्त १९६९ की मध्याह्न १२ बजे दिल्ली प्रान्त के आर्य युवक तथा उनके हितैषी गुरुकुल खेडा खुद मे धर्म प्रचारार्थ पहुंचेंगे।

निवेदक—जलसिंह सयोजक आय युवक परिषद दिल्ली

आर्यसमाज प्रेमनगर, करनाल का वार्षिकोत्सव,

१२, १३ एव १४ सितम्बर १९६९ को सम्पन्न होगा। इस अवसर पर आर्य जगत् के अनेक सुप्रसिद्ध सन्यासी, महात्मा, विद्वान, सगीताचार्य पधार रहे हैं। ईश्वर चन्द्र मन्त्री

आर्यसमाज नरेला का चुनाव

प्रधान प० टेकचन्द जी मन्त्री, श्री सूरतसिंह जी कोषाध्यक्ष, श्री हरिचन्द जी पुस्तकाध्यक्ष, श्री राजबीर जी शास्त्री तथा अन्य अतरग सदस्य निर्वाचित हुए। —हरिचन्द

पृ० ५ का शेष

अधिक गौरवपूर्ण रक्षक अर्थ लुप्त होगया। रक्षक अर्थ इस लिये अधिक गौरवपूर्ण है कि "अव" धातु से निष्पन्न "ओ३म्" पद का मुख्य अर्थ रक्षक ही है। उपासक सरक्षण के अभाव मे, रोटी की चिन्ता मे उलझकर ही तो उपासना से विमुख हो जाया करते हैं। काण्व शाखाकार ने जो उत्तरार्द्ध दर्शाया है। उसके अनुसार भी पूरे मन्त्र का एक उच्चतर अर्थ बन तो जाता है, परन्तु वह उच्चतम अर्थ नही है।

१२—मूल यजुर्वेद जो उत्तरार्द्ध का पाठ है, उसके साथ ही पूरा मन्त्र उच्चतम अर्थो को दर्शाता है। तथा उत्तरार्द्ध मे "ओ३म्" जप का विधान भी है। परन्तु शाखाकार ने इस ओङ्कारोपसना विषायक उत्तरार्द्ध को क्यो हटाया, निकाला या बदला? क्या वह ओङ्कारोपासना का विरोधी था? क्या यह प्रक्षेप किसी वेद विरोधी ने किया जो भी हो, काण्व-शाखा का गौरव तो इससे घटता ही है। (क्रमश)

वेद सप्ताह के अवसर पर

आर्यमर्यादा का अगला अंक वेदाविर्भाव विशेषांक प्रकाशित होगा

आर्यमर्यादा के ग्राहकों एव पाठकों को जानकर प्रसन्नता होगी कि वेद सप्ताह पर प्रकाशित होने वाले वेदाविर्भाव विशेषांक की तैयारी पूर्ण हो चुकी है। आर्यजगत् के चुने हुये उच्च कोटि के विद्वानों के खोज पूर्ण लेख इस विशेषाक में आपको पढने को मिलेंगे। पुस्तक के रूप में इस विशेषांक को आप आर्यसमाज के बाहर के व्यक्तियों को भी वेदों के प्रति आकृष्ट करने के लिये भेण्ट कर सकेंगे। इस विशेषाक में १०० से ऊपर पृष्ठ होंगे टाइटलकवरभी दोरगा बढिया आर्ट पेपर होगा।

आर्यसमाज तथा आर्य सस्थाओ के अधिकारियों से प्रार्थना है कि इस विशेषांक को वेद सप्ताह के अवसर पर अधिक से अधिक हाथों तक पहुंचाकर वेद प्रचार के कार्य में सहयोग प्रदान करे। इसी विशेषांक की तैयारी के कारण हम प्रस्तुत अक को १२ के स्थान पर ८ पृष्ठ का ही निकाल सके हैं ताकि विशेषांक समय पर आपकी सेवामें २० अगस्त को डाक द्वारा भेज सकें।

विशेषांक का मूल्य निम्न प्रकार है :—

एक प्रति का मूल्य	७५ पैसे	१० प्रतियों का मूल्य	७.००
२५ प्रतियों का ,,	१५ रु० ५०	,, ,,	२५.००

व्यवस्थापक आर्यमर्यादा १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

जनता सावधान रहे

आर्यसमाज दयानन्द मार्ग (रेल्वेरोड) शकूरबस्ती दिल्ली ३४ के नाम के साथ इस समय किसी महिला विभाग अथवा स्त्री आर्यसमाज का कोई सम्बन्ध नही है। इसलिये जनता से प्रार्थना है कि, इस नाम से किसी को कोई दान आदि न देवे। **रामसिंह शर्मा मंत्री आर्यसमाज मन्दिर दयानन्दमार्ग (रेल्वे रोड) शकूरबस्ती, दिल्ली-६**

रोहतक में सभा का वार्षिक अधिवेशन क्यों स्थगित हुआ

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सब प्रतिनिधियों को सूचित किया गया था कि महात्मा आनन्दस्वामी जी के आदेशानुसार सभा का वार्षिक अधिवेशन १० अगस्त १९६९ को प्रात: १० बजे रोहतक में होगा। परन्तु जालन्धर के शैशन जज महोदय सभा के विवाद के सम्बन्ध में समझौता करवाने का शुभ प्रयत्न कर रहें हैं। इसोलिये हमने उनका सुझाव स्वीकार करके उपरोक्त स्थगित करने का निश्चय किया और सब प्रतिनिधि महानुभावों को जालन्धर कार्यालय से ही पत्र द्वारा सूचित कर दिया। हो सकता है कि कुछ प्रतिनिधियों को सूचना न मिली हो और इस प्रकार जो उन्हें कष्ट हुआ होगा इसका हमें बड़ा खेद है। आशा है शैशनजज महोदय के प्रयत्नों का कोई शुभ परिणाम निकलेगा जिसकी सूचना आर्यमर्यादा में देने का प्रयत्न करेंगे।—**रामसिंह सभा प्रधान**

आवश्यकता है आर्य नेता की

आर्यजगत् को एक ऐसे त्यागी, तपस्वी, बुद्धिमान्, विद्वान् नेता की, जो कि स्वामी दयानन्द एवं स्वामी श्रद्धानन्द जैसा आर्य सामाज का नेतृत्व कर सके तथा आर्यसमाज को पुन: संघटित, स्वच्छ एवं प्रभावशाली संस्थान बना सके। दक्षिणा रूप में आर्यजगत् द्वारा सन्मान।

हरिचन्द्र पूर्व मंत्री आर्यसमाज नरेला

आर्यसमाज टौंक नगर का वार्षिक चुनाव

श्री फूलचन्दजी बजाज प्रधान, श्री प्यारेलालजी चौधरी मन्त्री, श्री सिधुराम जी कोषाध्यक्ष। —[illegible]

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

वर्ष १ अंक ११ | १३ श्रावण वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २७ जौलाई १९६९ रविवार, सृष्टि सं०—१९६०८५३०६९ | वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१०) रु० , विदेश में—२०) रु० एक प्रति का मूल्य—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

कहो सज्जनों की ... है कि अपने या ... दोषों को दोष ... गुणो को गुण जान... गुणो का ग्रहण ... दोषो का त्याग करें ... हठियो का हठ दुराग्रह न्यून करें कर्मो ... पक्षपात से ... अनर्थ जगत् में न ... और न होते हैं।

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

... ह्र हणीयस्व ... ॥

फिर वह [वरुण] कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे ...

... सुमितुहवमद्या च मृळय । त्वामवस्युराचके ॥

ऋ० १ । २५ । १९ ॥

पदार्थ—हे (वरुण) सब से उत्तम विपश्चित (अद्य) आज (अवस्यु) अपनी रक्षा वा विज्ञान को चाहता हुआ मैं (त्वाम्) जिस की (आ चके) अच्छी प्रकार प्रशंसा करता हूँ आप (मे) मेरी की हुई (हवम्) ग्रहण करने योग्य स्तुति (श्रुधि) श्रवण कीजिये तथा मुझ को (मृळय) विद्यादान से सुख दीजिये ॥

अन्वयार्थ—(मे) मम (वरुण) सर्वोत्कृष्टजगदीश्वर विद्वन्वा (श्रुधि) शृण (हवम्) आदातुमर्हं स्तुतिसमूह (अद्य) अस्मिन्नदिने (च) समुच्चये (मृळय) सुखय (त्वाम्) विद्वांसम (अवस्यु) आत्मनोरक्षण विज्ञान चेच्छु (आ०) समन्तात् (चके) प्रशसामि ॥

अन्वय—हे वरुण विद्वन्वाऽवस्युरहं त्वामाचके प्रशंसामि त्व मे मम हव श्रुधि शृणु मा च मृळय ॥

भावार्थ—यथेश्वर स्वलूपासक सत्यप्रेम्णा या प्रयुक्ता स्तुति सर्वज्ञतया यथावच्छ्रुत्वा तदनुकूलतया स्तावकेभ्य सुख प्रयच्छति तथैव विद्वद्भिरपि भवितव्यम ॥

भावार्थ—जैसे परमात्मा जो उपासको द्वारा निश्चय करके सत्यभाव और प्रेम के साथ की हुई स्तुतियो को अपने सर्वज्ञपन से यथावत सुनकर उनके अनुकूल स्तुति करने वालो को सुख देता है वैसे विद्वान लोग भी धार्मिक मनुष्यो की योग्य प्रशसा को सुन सुखयुक्त किया कर ॥

—(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

आया था वह

दयानन्द सुसज्जित हुए, जब देश अन्ध विश्वासी था ।
मिथ्या आडम्बर फसे थे सभ्य समाज विलासी था ॥
देख दशा अपने स्वदेश की, ऋषिवर को तब क्लेश हुआ ।
त्याग सभी कुछ उस महर्षि का, योगी जैसा वेश हुआ ॥
कर अध्ययन वेद शास्त्रों का, चला सत्य सिखलाने को ।
असली ... हर सार वस्तु का, मूल मंत्र बतलाने को ॥
ईश्वर के उस ओ३म् नाम का, पाठन-पठन कराने को ।
आया था वह दयानन्द जब, जीवन मार्ग बताने को ॥

पंजाब मे आर्यसमाज के सघटन को सुदृढ करने के लिये पंजाब, हरयाणा, हिमाचल तथा दिल्ली के आर्य बन्धुओ का

जालन्धर में एक आवश्यक सम्मेलन

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब से सम्बन्धित आर्यसमाजों के अधिकारियों प्रतिनिधियों तथा प्रतिष्ठित सदस्यों की एक बैठक रविवार दि० २७-७-६९ को प्रात १० बजे आर्यसमाज मन्दिर, अड्डा होशियारपुर, जालन्धर ... में श्री० रामसिंह जी सभा प्रधान की अध्यक्षता में निम्न विषयों पर विचार ... विमर्श के लिये होगी —

१ महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती के निर्णय के उपरान्त पजाब में आर्यसमाज के सघटन को दृढ करने तथा प्रचार को तीव्र करने पर विचार ।

२ पजाब मे हिन्दी भाषा को सम्मान पूर्वक स्थान दिलाने पर विचार ।

३ अन्य विषय श्री सभा प्रधान जी की आज्ञा से ।

आर्यसमाजो के सब अधिकारियो प्रतिनिधियो तथा प्रतिष्ठित सदस्यों से प्रार्थना है कि बैठक मे उपस्थित हो कर भाग लेने की कृपा कर ।

रघुवीरसिंह शास्त्री ससत्सदस्य
मन्त्री—आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

आर्यसमाजों को आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से इस वर्ष भी वेद प्रचार सप्ताह जुलाई अगस्त तथा सितम्बर १२ सप्ताह तक मनाया जावेगा। आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपनी सुविधा के अनुसार वेद सप्ताह के प्रबन्ध के लिये सभा के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर नगर (फोन न० ४२५०) तथा सभा के उपकार्यालय १५ हनुमान रोड नई दिल्ली (फोन न० ४८१५०) से पत्र व्यवहार तथा सम्पर्क स्थापित कर ।

श्रावणी पर्व पर ही प्रबन्ध कराने का आग्रह न करें क्योंकि प्रचार की मांग अधिक होने के कारण सबका प्रबन्ध कर सकना कठिन होगा। सभा की ओर से सभी आर्यसमाजो मे उपर्युक्त कार्यक्रम के अनुसार उत्तम प्रबन्ध करने का यत्न किया जावेगा।

विनीत—निरञ्जनदेव सिद्धान्त भूषण
वेद प्रचाराधिष्ठाता आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब,
मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर नगर

भाष-विज्ञान के चमत्कार

लेखक—श्री नरसिंह वर्मा प्रभाकर' बी. ए सा० रत्न सि० शास्त्री,
कोटा [राजस्थान]

विज्ञान के चमत्कारो से तो सामान्य जन भली भाँति परिचित हैं ही, परन्तु भाषा विज्ञान के चमत्कारो से साधारणतया लोग अपरिचित ही रहते हैं क्यों कि इसके क्षेत्र मे जन साधारण का प्रवेश उसी प्रकार कठिन एवं दुष्कर है जिस प्रकार कुछ समय पूर्व हरिजन एव अछूतों का मन्दिरों में प्रवेश। बडे-बडे भाषा शास्त्री ही इस क्षीर सागर में अवगाहन करते हैं।

भाषा-विज्ञान, किसी भाषा का शास्त्र, क्रमबद्ध अध्ययन अथवा विज्ञान है जिसमें उस भाषा का तथा कई अन्य सामान्य भाषाओं का वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, और तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन एव तद् विषयक सिद्धान्तों का निर्धारण किया जाता है। भाषा-विज्ञान न केवल सहज कुतूहल एव ज्ञान पिपासा को ही शान्त करता है अपितु काव्यानन्द की प्राप्ति करा चित्त को आल्हादित भी करता है। भाषा का इतिहास बताने के साथ ही साथ मानव समाज की मनोवृत्ति, भाव विचार एव परम्पराओं की ओर भी इंगित करता है। भाषा की उत्पत्ति स्थिति विकास एव ह्रास का ज्ञान भाषा-विज्ञान से ही सम्भव है। शब्द, अर्थ और ध्वनि में किस प्रकार परिवर्तन होता है—'बैनरजी' महाशय बनर जी कैसे हो गये और 'वाजपेयी जी' बाजपेयी महाराज। हिन्द का 'सिंह उपाध्याय' का झा और 'आर्य' का 'जी' ही कैसे रह गया? संस्कृत शब्द क्रमेल (क्रम से पैर रखने वाला (ऊंट) अंग्रेजी में आकर कैमिल भूगोल' का ग्लोब' माता' से 'मदर' 'श्री' से 'सर' (Sir), सूनू' (पुत्र) स son विशिष्ट से Bert उक्ष (बैल) से Ox, दुहितर' से Daughter हस्त से Hand, अस्ति (है) से Yes कैसे बन गया? इसी प्रकार दुग्धाहार का 'दो गया हार' 'सूक्ष्म' का 'चूमिनम' 'वाजपेय' का 'सेंगापोगा' 'मतलब' का 'मतबल' 'टिकट' का 'सिगनल' 'स्टेशन' का 'टेशन' 'कलीनर' का 'कलीनर' 'माई' का 'नाट' 'मास्टर' का 'माटुर' वकील जी का 'वेंग जी' वाई का 'नई' कैसे हो गया यदि जानना चाहते हो तो आप को भाषा-विज्ञान की शरण लेनी पडेगी। एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्द किस प्रकार अपना रूप बदल कर छिप जाते हैं और फिर उनको पहिचानना भी बडा कठिन होता है जैसे कि चन्द्र-गुप्त का सेण्ड्राकोटस (यूनानियो के पास चकार ध्वनि न होने के कारण), नरक का नरक कोटपाल का कोटवाल, गोप (ग्वाला) का गोवा, कौपीन का कफन, धनी का गनी, चक्र का चक्र यक्ष्म का जक्म रूप अरबी भाषा में हो गया है। संस्कृत शब्द गोधूम (गेहूं) का गन्दम, विस्तर का बिस्तर, अंगुष्ठ (अंगूठे) का अंगुश्त, अप्पा का अब्बा, पितर (पिता) से पिदर, हरिद्रा (हल्दी) का जरिद्र (जद) फारसी मे किस प्रकार हो गया, इसका एक मात्र उत्तर भाषा-विज्ञान ही दे सकता है। द्रविड भाषा में पिल्ला शब्द (मनुष्य का बच्चा) हिन्दी मे आकर पिल्ला (कुत्ते का बच्चा) अर्थ वाला कैसे हो गया? संस्कृत शब्द वसु' बंगाली मे जाकर बोस (क्यों कि बंगाली व का ब' और अ का ओ उच्चारण करते हैं। अंग्रेजी मे Bose बना और इस तरह वह जब गुजरात एव महाराष्ट्र में पहुंचा तो बोस (गुजराती मे) व बोक्ष (मराठी) बन गया। क्योकि अंगरेजी के दीज दैट को गुजराती धीज दैट कहते हैं।

भाषा मनुष्य जाति के परस्पर विचार विनियम का सर्वोत्तम साधन है तथा वह कभी एक जैसी नही रहती। भाषा मन्थर गति से नदी की तरह सर्वदा प्रवाहित होती रहती है और समुद्र (पूर्ण विकास को प्राप्त होने तक) मे मिलने से पूर्व वह अपने में अनेक भाषाओ, के जनपदीय बोलियों के शब्द-जल को मिलाती और आत्मसात करती रहती हैं। वास्तव में भाषा रूपी नदी की शब्द-राशि नदी की जल राशि की तरह जितनी अधिक होती है, वह भाषा भी उतनी प्रसारवती होती है। यदि कोई भाषा अन्य भाषाओ के शब्दों को अपने मे पचाने की शक्ति खो देती है या नवा-गन्तुक शब्द महाशयो का प्रवेश निषिद्ध कर दिया जाता है तो वह शीघ्र ही मृत्यु को वर लेती है। जब तक शब्दों का आदान रूप परिवर्तन, अर्थ परिवर्तन होता रहता है तो भाषा जीवित बनी रहती है। इस परिवर्तन के कारण और विस्तार ... अर्थ संकोच, अर्थ विस्तार कौतूहल जनक है ... उदाहरण बतलाना ही इसका प्रयोजन है।

अर्थ-विस्तार—'तेल' केवल ... 'मांग' ... तेल का अर्थ ... अनुसार है ... प्रत्येक तेल', 'चम्पा', 'कुशल', अधिकार, प्रवीण, स्याही, अधरम्य, निर्जीव, ... आदि शब्दों के अर्थ में विस्तार हुआ है। प्राचीन काल में इन शब्दों का ... तिल से निकाला गया द्रव—'तैल' है केवल तिल का तेल ही कहलाता था परन्तु आज सभी तिलहनों के रस को तेल कहते हैं। 'चम्पार' काढ़ बनाने के अर्थ में प्रयुक्त होता था परन्तु आज उसका अर्थ बिल्कुल बदल गया है। इसी प्रकार प्राचीन काल में निपुण (पुण्य करने वाला) गवेषणा (गाय ढूंढने के लिए), स्याही (काला) अधर (केवल नीचे के ओष्ठ के लिए मगर आज कल दोनों ओष्ठों के अर्थ में), प्रवीण (वीणा बजाने के लिए मगर आज कल चतुर व्यक्ति के लिए) आदि शब्द कुछ अन्य अर्थ रखते थे और अब कुछ और। अधरम्य, निर्जीव, ... शब्दों की तो बडी मिट्टी कुटी है। सभी देश बालकों को अधरम्य, अन्ध पुरुषों को निर्जीव और बालक एव भूखल ... को गाय ही कहा जाता है। 'गुरु' शब्द की भी इस युग में क्या हालत हुई है, यह जान कर हमें रोना होता है। आज कल गुरु शब्द चालाक एवं बदमाश का अर्थ देता है। 'गुरु घंटाल' का अर्थ तो सभी समझते ही हैं।

अब हम अर्थ सकोच के बारे में बतलाते हैं। 'डियर' शब्द का बहुत प्रयोग होता है। अंग्रेजी का शब्द Deer और हिन्दी का मृग जानवर अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी मे गंगा का अभिप्राय नदी विशेष से होता है मगर मराठी में यह शब्द नदी का ही पर्याय है। प्राचीन काल मे श्रद्धा से किये जाने वाले प्रत्येक कार्य को श्राद्ध कहा जाता था मगर आज केवल क्वार पक्ष में ब्राह्मण एव कौओं को भोजन कराने को ही श्राद्ध कहते हैं। मृग का अर्थ सींचने वाला (पानी) किया जाता था परन्तु अब पानी को ... नहीं कहा जाता। अशोक महान् को 'देवानां प्रिय' कहा जाता था किन्तु आज कल इसका अर्थ पंडितो की कृपा से 'मूर्ख' हो गया है। भारत के इतिहास की बडी रोचक कथा इस शब्द में निहित है कि ब्राह्मण लोगों ने किस प्रकार ईर्ष्या वश 'देवानां प्रिय' का मूर्ख अर्थ प्रचलित करा दिया। बौद्धों को ब्राह्मण अपने कट्टर विरोधी समझते थे अत उन्होंने बौद्ध (महात्मा बुद्ध के अनुयायी) शब्द का अर्थ बुद्धू अर्थात् मूर्ख करना प्रारम्भ कर दिया और कालान्तर में यही अर्थ देवानां-प्रिय' शब्द के लिए भी रूढ़ हो गया।

कुछ गिने चुने शब्दो की 'राम कहानी उनकी ही जबानी हो सुनिये, कि विचारों ने इस भूमंडल की यात्रा नारद मुनि की तरह किस प्रकार पैदल चल कर ही की है। इस कष्ट साध्य दीर्घ यात्रा मे वे स्वय यह भी विस्मृत कर चुके हैं कि वे पहले क्या थे और अब क्या हो गये हैं? सर्व प्रथम हम 'दाम' (पैसा) शब्द से ही प्रार्थना करते हैं कि वह अपनी आप बीती स्वय सुनायें। हमने 'दाम' शब्द को पहले विचार प्रकट करने का अवसर इस लिए दिया है कि आज सर्वत्र इसकी ही पहले पूछ और पूजा होती है।

दाम—प्राचीन काल में ग्रीक मे एक प्रकार के सिक्के को ड्रेक्मा (Drachma) कहा जाता था। ग्रीक से चल कर इस शब्द ने अरब प्रदेश में प्रवेश किया हो दिरहम् (अरबी में) हो गया। अरब से निकल कर ईरान मे पहुंचा तो वहां तीन अक्षर का दिरम् (फारसी में) हो गया। बेचारे को पुन भारत दर्शन की इच्छा थी अतः वह येन केन प्रकारेण पर्वतमाला और रेगिस्तान को पार कर जब यहां लौट आया तो भारत में वही पुराना 'दाम' 'नाम' हो गया।

क्रमेल से कैमिल तक—पहुचने में क्रमेल महाराज को नदिया नदीं और आपने बहुरुपिये की तरह देशकाल के अनुसार बहुत रूप भी बदले। संस्कृत के क्रमेल शब्द का अर्थ है क्रम से पर रखने वाला अर्थात् ऊंट। यह अर्थ बहुत सार्थक है। इन महाशय का मन भारत में नहीं लगा तो पश्चिम दिशा की ओर विदेश यात्रा पर चल पडे। पश्चिमी एशिया में पहुंच कर क्रमेल से कैमेल और कैमेल कैमेल या 'जमल' हो गये। अरब भाषा के लिए 'जाल'

(शेष अगले अंक में)

सम्पादकीय

दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः

आयमर्यादा के गत अक मे सम्पादकीय लेख मे हमने लिखा था कि अपने दोष को दूर करने का सबसे उत्तम उपाय यही है कि भविष्य में दोष से बचने के लिए स्वय प्रायश्चित्त कर। इससे आत्मा की शुद्धि होकर मनुष्य निर्दोष होने लग जाता है। परन्तु जो मनुष्य दोष करके भी दोष को दूर करना नही चाहता। उसके द्वारा किये जाते दोष का सामाजिक व्यवस्था पर भी कुप्रभाव पडता है। ऐसी अवस्था मे उसको भविष्य मे दोष से बचाने तथा दूसरो को ऐसे दोष करने की कुप्रवत्ति को रोकने के लिये दण्ड व्यवस्था अनिवाय होती है। इस लेख के शीषक मे हमने जो वचन दिया है यह मनुस्मृति का है तथा सत्याथप्रकाश मे इसका अथ छठ समुल्लास मे ऐसे किया है कि बुद्धिमान लोग दण्ड ही को धम कहते हैं।

दण्ड निपातन करने की दो रीतियाँ है—एक राजदण्ड और दूसरी समाज दण्ड। इस लेख मे हम समाजदण्ड पर ही अपने कुछ विचार प्रकाशित करते हैं।

समाज द्वारा दोषी को दण्ड दिये जाने के भी कई भेद हैं उनमे पहिला यह है कि दोषी मनुष्य को सामाजिक पचायत मे बुलाकर उसको समझाया जावे कि तुम्हारे दोष का कुप्रभाव अन्य लोगो पर भी पडता है अत तुम अपने दोष को छोड दो। यदि वह दोषी पचायत की व्यवस्था को मान लेता है तो बहुत उत्तम बात है और पचायत उस मनुष्य को भविष्य मे ऐसा दोष न करने की चेतावनी देकर छोड देती है। यह व्यवस्था एक प्रकार से उस दोषी को धिक् कहकर सामाजिक कार्यों मे मिला लिया जाता है।

यदि वह दोषी पचायत के बुलाने पर भी उपस्थित न होवे और दोष को निरन्तर करता ही रहे तब समाज का कत्तव्य हो जाता है कि सामाजिक रूप से उसके दोष की घोषणा करे और उस पर दण्ड की व्यवस्था करे। दण्ड के कई प्रकार हो सकते हैं। प्रमुख प्रकार यही है कि उसको सामाजिक कामो मे न बुलाया जावे और उससे सामाजिक सम्पक तोड दिया जावे। प्रत्येक मनुष्य समाज का आवश्यक अग होता है। कोई भी मनुष्य अपने सब काम स्वय नही कर सकता। ऐसी दशा मे स्वेच्छा से सभी लोग उसके कार्यों मे सहयोग करना छोड देते हैं। सहयोग हटा लना एक सामान्य बात लगती है परन्तु यह बडा असाधारण प्रभाव रखती है। ऐसा मनुष्य चारो ओर से घिर जाता है भले लोगो मे बैठने से वञ्चित हो जाता है उसके परिवार के सदस्यो को भी सब प्रकार की असुविधा हो जाती है। यह व्यवस्था एक प्रकार से सामाजिक बहिष्कार का रूप धारण कर लेती है। कोई भी मनुष्य बहुत दिन तक समाज के सहयोग से पृथक नही रह सकता। अत इच्छा अथवा अनिच्छा से उस दोषी व्यक्ति को समाज के सामने झुकना ही पडता है।

कुछ मनुष्य ऐसे ढीठ भी होते हैं कि अपने साथ कुछ लोगो को मिला कर एक दल खडा कर लते हैं। तथा पचायत के काम मे गडबड पैदा करते हैं। पचायत के नेताओं को अनेक प्रकार के प्रलोभन और भय दिखलाते हैं। ऐसे दोषी समूह को दण्डित करने मे यद्यपि कुछ कठिनता हो जाती है परन्तु पचायत के सदस्य और अधिकारी स्वाथहीन और निष्पक्ष रूप में काम लकर अपनी व्यवस्था देते हैं तब उस दोषी समूह को भी झुकना पडता है। समाज के सामने ठहरना हसी खेल नही जबकि दोषी रूप मे वह खडा होता है। यह सामान्य विवेचन बड बड लोगो और समूहो पर भी लागू होता है। समस्त समाज मे दुर्नाम हो जाना और पचायती आदेश को न मानना दोषी लोगो के हृदयो मे कालिमा पदा कर देता है। यह हठ भी दोषी लोग इसीलिये करते हैं क्योकि समाज दण्ड के साथ राजदण्ड नही होता। प्राचीनकाल मे समाज दण्ड को राजदण्ड ही माना जाता था परन्तु अग्रजी राज्य के शासन के समय पचायतो की सामाजिक शक्ति को नष्ट करने के लिये राजकीय अदालतें खडी की गई। पचायती दण्ड को राजदण्ड से नीचा कर दिया गया। इतना होने पर भी आज तक यह व्यवस्था बनी हुई है कि पचायती दण्डव्यवस्था को विवश होकर दोषी व्यक्ति अथवा अपराधी समह को मानना ही पडता है।

मनु का तो यह कहना है कि सामाजिक और राजदण्ड दोनो धम का स्थान रखते हैं, अत समाज विरोधी दोषी लोगो को धम आज्ञा के सामने सिर झुका देना ही एक उत्तम माग है।

बहुरूपिया पंतरेबाजी

आयमर्यादा के पाठक महानुभावो को ठीक ठीक मालूम है कि श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी ने वक्तव्य आयजगत के सामने रख दिया है। उसको यहा दोहराना नही किन्तु उसके एक भाग की तरफ हम ध्यान दिलाना आवश्यक समझते हे। पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी ने पजाब सभा के विवाद को दूर करने के लिये दोनो पक्षो का व्यवस्था को भङ्ग करके एक प्रबन्धकर्त्री समिति बनायी थी जिसमे पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज को वेदप्रचार का सब उत्तरदायित्व दिया गया था। इसी के अनुसार महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने दोनो पक्षो को आदेश दिया कि अपने अपने उपदेशको का एक ही जगह कर दिया जावे। एक जगह से ही सब प्रोग्राम दिया जावेगा। वेदप्रचार का पिछला सब हिसाब भेज। जाल धर का मुख्य कार्यालय खलने पर मुझ उसे सौप दिया जावे। तब म श्री जावेन्द्रजी को कार्यालय का नियन्त्रण भार सभाल दूगा। इस आदेश का पालन प्रो० रामसिह जी के पक्ष ने पूरी तरह किया। अपना १५ हनुमान रोड कार्यालय सब हिसाब किताब सब उपदेशक और कार्यालय के कायकर्त्ता और रुपये महात्मा जी को तुरन्त सौप दिये परन्तु श्री रामसरणदास जी के पक्ष ने इन आदेशो को अवज्ञा ही नही अपितु महात्मा आनन्दभिक्षु जी के पत्रो का उत्तर ही नही दिया। जालन्धर कार्यालय खुलने पर महात्मा जी को नही सौंपा गया फिर श्री जावेद जी को कार्यालय का भार सम्भालने का प्रश्न ही नही रह गया। समाचार पत्रो मे उलटे-सीधे वक्तव्य भी दिलाये गये।

अब वही लोग महात्मा आनन्दभिक्षु जी को आश्वासन देने को चर्चा पत्रो मे करने लगे है। यह एक बहुरूपिये की पतरे बाजी नही है तो और क्या है? उनके प्रकाशित आश्वासनो का मूल्य तो तब होता जब महात्मा जी के आदेशो का पहिले पालन किया होता। ऐसे लोग महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती और समस्त आयजगत के निश्चय को ठुकराते हैं। महात्मा आनन्दभिक्षुजी को आश्वासन देना यही है कि आयजगत द्वारा श्री महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती को दिये गये अधिकारो के अनुसार उनके आदेश का पालन कर। यह तो स्पष्ट पतरेबाजी है कि आय जनता को धोख मे डाल कि महात्मा आनन्दभिक्षु जी को हम आश्वासन दे रहे हैं। हम आयजगत से निवेदन करते हैं कि इस पंतरे बाजी की कीच मे न फसें। श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी को आश्वासन देना यही है कि श्री महात्मा आनन्दस्वामी सरस्वती के आदेश का पालन किया जावे।

आर्य युवक परिषद के युवको से

यही लोग लिखने लगे हैं कि आययुवक परिषद के युवक इस समस्या को सुलझाने मे आगे बढ। हम आययुवक परिषद को सफल मनोरथ देखना चाहते है। आयमर्यादा मे इस का हम स्वागत कर चुके हैं। २० जुलाई ६१ को आययुवक परिषद के निमन्त्रण पर मे स्वय दशक रूप मे उन की बैठक मे सम्मिलित हुआ। मेरे मन पर उस कायवाही का जो प्रभाव पडा उस से मैं आययुवक परिषद के युवको को निवेदन करना चाहता हूँ कि अखाड बाज बडी नीति से आपके पवित्र सघटन मे दरार डालना चाहते हैं। आप इस से बच। सस्ती मान प्रतिष्ठा के प्रलोभन से दूर रह कर आर्यावत्त के आययुवको को एक सूत्र मे सघटित करना ही आपका उद्देश्य है। यदि आययुवक परिषद ने बाह्य झगड मे हाथ डाला तो पार्टीबाज तो पहिले ही बिगड हुये हैं आप के सघटन को भी बिगाड देंगे। अत सावधान रहिये। हमने आपके सघटन की सुदढता और सुरक्षा के लिये यह निवेदन कर दिया है। मानना अथवा न मानना आपका काम है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पंजाब के मुख्य मन्त्री के नाम खुला-पत्र

सेवा में, माननीय श्री सरदार गुरनाम सिंह जी,
मुख्य मन्त्री—पंजाब राज्य चण्डीगढ

आदरणीय महोदय, सादर नमस्ते।

मुझे 'वीरप्रताप' जालन्धर दि० १६-७-६९ में श्री रामगोपाल शालवाले द्वारा आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर के सम्बन्ध में लिखा पत्र पढने का अवसर मिला। पंजाब के प्रत्येक व्यक्ति को अब भली प्रकार ज्ञात हो चुका है कि श्री वीरेन्द्र और उसके समाचार पत्रो का दूसरों के ऊपर मिथ्या आरोप लगाना तथा असत्य प्रचार एक स्वभाव बन गया है। श्री रामगोपाल शालवाले भी उन्ही के साथी हैं और वह श्री वीरेन्द्र की प्रत्येक बात को सम्पुष्ट करने के लिये तत्पर रहते है। श्री शालवाले द्वारा लगाये आक्षेपों के विषय में वस्तुस्थिति निम्न प्रकार है—

१—आर्यसमाज के सब सघटनों द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के झगड़े समाप्त करने का पूर्ण अधिकार मिला था। उसी के अनुसार उन्होने सभा का सारा प्रबन्ध और नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया था। श्री वीरेन्द्र तथा श्री रामगोपाल ने आश्वासन देकर भी महात्मा जी की किसी आज्ञा का पालन नहीं किया। दुखी होकर महात्मा जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रबन्ध, नियंत्रण तथा सचालन का पूर्ण अधिकार अपने तार दि० २०-६-६९ तथा पत्र दि० २५-६-६९ द्वारा मुझे सौंप दिया। उसी के अनुसार मेरी प्रेरणा और प्रार्थना पर सभा के उप-प्रधान श्री लालचन्दजो सब्बरवाल एडवोकेट तथा जालन्धर कार्यालय के अधिष्ठाता श्री रामलाल जी गुप्त म्युनिसपिल कमिश्नर १-७-६९ को सभा कार्यालय गुरुदत्त भवन में गये और कार्यालयाध्यक्ष श्री देवदत्त को सारी स्थिति से अवगत किया। इससे प्रभावित होकर श्री देवदत्त जी ने दोनों अधिकारियों का स्वागत किया तथा तथा सारे कार्यालय को चाबियाँ उनके सुपुर्द कर दीं।

२—किन्हीं गुण्डों द्वारा कार्यालय पर जनसंघियों और अकालियों ने कब्जा किया—यह समाचार नितान्त असत्य और द्वेषपूर्ण है। श्री लालचन्द सब्बरवाल एडवोकेट और श्री रामलाल जो गुप्त म्युनिसपिल कमिश्नर जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियों को गुण्डा कहना और लिखना अत्यन्त ही अशोभनीय और अनुचित है।

३—श्री मनोहरसिंह जो दण्डाधिकारी जालन्धर के निर्णय के विरुद्ध शेशन जज जालन्धर की सेवा में अपील की जा चुकी है अत: इस विषय में हम किसी प्रकार की टिप्पणी करना आवश्यक नही समझते।

४—श्री वीरेन्द्र जी अपने समाचार पत्र द्वारा स्थानीय पोलिस अधिकारियों को बदनाम करने की खातिर ही यह प्रचार कर रहे हैं कि उन्होंने श्री सब्बरवाल जो को इस कार्य में सहायता की है। वस्तुस्थिति यह है कि श्रीवीरेन्द्र आदि द्वारा की गई रिपोर्ट के आधार पर श्रीलालचन्द सब्बरवाल तथा श्री रामलाल गुप्त के विरुद्ध पोलिस ने एक केस धारा ४४८।१०७ में रजिस्टर किया है। यदि पोलिस का उक्त कार्य में अक्षमात्र भी हाथ होता तो उनके विरुद्ध यह केस ही रजिस्टर्ड क्यो होता।

५—मेरी प्रार्थना पर श्री निरजनसिंह जी भल्ला सीनियर सब-जज जालन्धर ने दि० ११-७-६९ को निषधाज्ञा द्वारा दीवान रामसरनदास, श्री वीरेन्द्र तथा श्री मुरारीलाल आदि को, अपने आपको सभा के अधिकारी घोषित करने और सभा के कार्यों व सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने से रोक दिया है। ऐसी अवस्था में उनको आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारी लिखना और कहना अवंध तथा निषेधाज्ञा (Injunction) के विरुद्ध है।

६—श्री वीरेन्द्र जो अवंध रूप से आर्यसमाज का नेता बनने तथा प्लेटफार्म प्राप्त करने के लिये वह जहाँ कई अनुचित कार्य करते हैं वहाँ भोले-भाल आर्यबन्धुओं को भी गुमराह करते हैं, जिससे पंजाब का वातावरण दूषित ही होता है।

उपरोक्त सारो स्थिति को ध्यान मे रखते हुए आशा है, आप श्री वीरेन्द्र तथा उनके साथी श्री रामगोपाल शालवाले आदि के भ्रममूलक, असत्य और तथ्य के विपरीत आरोपो पर ध्यान न देंगे।

भवदीय
रामसिह
प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

दिनांक १७-७-६९

आर्यजगत् में शान्ति स्थापित करने के लिये आवश्यक सुझाव

(ला० सूर्यभान जी, एडवोकेट पूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा)

(१) मैंने १३ जुलाई के आर्य-मर्यादा मे महात्मा आनन्द स्वामी जी का वक्तव्य पढ़ा। पढ कर बड़ा दु:ख हुआ, इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सार्वदेशिक सभा के वार्षिक निर्वाचन में पजाब के १५ प्रतिनिधियों को सम्मिलित कर लेने से एक बड़ी भूल हुई है। इस से दशम आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव और सार्वदेशिक सभा के अतरंग सभा के निश्चय और महात्मा आनन्दस्वामी जी के आदेश की अवहेलना हुई है, जो धर्म, मर्यादा और राजकीय विधान और आर्यसमाज के विधान के प्रतिकूल हुआ है।

(२) आर्यसमाज का सघटन नीचे से आरम्भ होता है स्थानिक आर्यसमाजें पहले बनी फिर प्रान्तीय सभाओं का निर्माण हुआ और सबसे अन्त में सार्वदेशिक सभा आर्यजगत् की शिरोमणि सभा का निर्माण हुआ। निर्माण नीचे से हुआ है खराबी ऊपर आई है, उपचार भी नोचे से होगा। उपचार के लिये दो विचार हैं।

(क) ३ अगस्त ६९ को सारे देश में प्रत्येक आर्यसमाज में साप्ताहिक सत्संग के अवसर पर ये प्रस्ताव पास किया जाये कि सार्वदेशिक सभा का ३१ मई का निर्वाचन अवैध और अमान्य है और जब तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का विधिपूर्वक नया निर्वाचन न हो जाये उस समय तक सार्वदेशिक सभा का निर्वाचन पुन: न हो और उस के साथ आर्य प्रादेशिक सभा के प्रतिनिधियों को भी मान्यता मिलनी चाहिये और आर्य प्रतिनिधि सभा गुजरात के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित होने का अवसर मिले।

महात्मा आनन्द स्वामो जी इस समय आर्यजगत् की विभूति हैं उनके आदेश की अवहेलना कभी सहन नही की जा सकती।

(ख) जिन्होंने सार्वदेशिक सभा के अवैध निर्वाचन में भाग लिया है वह किसी न किसी स्थानीय समाज के आर्य सभासद अवश्य होंगे जिन आर्य समाजों के वे आर्य सभासद हैं उनको अपनी समाज का नैमित्तिक साधारण अधिवेशन बुलाना चाहिये और उन सज्जनों से अनुरोध करें कि वह अपनी भूल स्वीकार करें और सार्वदेशिक सभा से अपना सम्बन्ध विच्छेद करें और यदि वह न मानें तो एक या दो वर्ष के लिये उनको आर्य सभासद के अधिकार से वंचित करने का प्रस्ताव स्वीकार करें।

(३) मेरी यह धारणा है कि आर्य समाज के कार्यकर्ता और सदस्य उत्साही हैं उनके अन्दर धर्म केलिये प्रेम और लगन है वे मर्यादा की अवहेलनाको स्वीकार नही करेंगे। मेरा यह भी अनुभव है कि केवल थोडे से ही आदमी हैं जो पदों के लिये लालायित होकर अनुचित उपायों को प्रयोग मे लाते हैं और दलबन्दी का सहारा लेते हैं उनको मुकदमे बाजी से संकोच नहीं होता वे भो एकान्त में बैठ कर कभी-कभी उस दशा से दुखित होते हैं। परन्तु चक्कर में फसे होने के कारण जाल से बाहर निकलना कठिन हो जाता है। साधारण सभासदों को ऐसी दलबन्दो से न कोई लाभ होता है और न उनको इसमें कोई रुचि। मैं यह भो मानता हूँ कि जिन सज्जनों ने सार्वदेशिक सभा के निर्वाचन में अवैध काय किया है उन्होंने भी आर्यसमाज की कभी तो सेवा की है।

(४) मैं आयजगत् के महानुभावों से क्षमा याचना करता हूं और अपने व्यक्तिगत जोवन के सम्बन्ध में यह निवेदन करना चाहता हूं कि मैंने अपनी सामर्थ्य और सुविधा के अनुसार आर्यसमाज का सेवा ५०-५५ वष से अधिक समय की है। सार्वदेशिक सभा का प्रधान भी रहा हूं। सार्वदेशिक सभा के तीसरे वर्ष के निर्वाचन में मेरे स्वामी ध्रुवानन्द जी के मुकाबले में पांच सात वोट कम आये और मैं हार गया परन्तु न मुकदमे बाजी की सूझी न नोटिस बाजो की। आर्यसमाज को छोड़ा भी नहीं, बराबर सेवा करता रहा हूं। कई पुस्तकें छप गई हैं कभी-कभी लेख भी प्रकाशित हुये हैं और प्रचार भो करता रहा हूं। मुझे दलबन्दी और मुकदमे बाजी से बड़ा दु:ख होता है।

मेरे ये सुझाव आर्यसमाज की आन्तरिक सुधार के लिये हैं इन से मुकदमे बाजी भी समाप्त होगी। घर की बीमारी का इलाज घर में ही जायेगा और मुझे पूर्ण आशा है कि आर्य जनता इसका स्वागत करेगी। जिन सज्जनों को मेरा सुझाव अरुचिकर हो उन से क्षमायाचना करता हूँ। मैंने डा० डी-राम जी को इस सम्बन्ध में तीन पत्र लिखे हैं और श्री प्रताप जी भाई को भी लिखा है। कोई उत्तर अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। ये सुझाव उनके लिये खुली चिट्ठी समझी जाये।

ओङ्कार-जप-विधिः (८)

[गीतोक्त-विधान]

(प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—श्रीमद्भगवद्गीता के कई प्रसगो मे ओङ्कारोपासना का प्रतिपादन बहुत उत्तमता से किया गया है। इस विषय मे गीता के छटे, सातवें आठवे और नौवे अध्याय का विचार विशेष रूप से करना चाहिये।

२—गीता के छटे अध्याय का प्रारम्भिक अश देखिये :—

अनाश्रित कर्मफलं, कार्यं कर्म करोति यः।

स संन्यासी च योगी च, न निरग्नि नं चाक्रियः ॥१॥

अर्थ—जो कर्म-फल की कामना न करता हुआ। करने योग्य कर्म को करता है, वही सच्चा सन्यासी है और वही यथार्थ योगी है। जिसने अग्नि-होत्र का परित्याग कर दिया या जिसने शास्त्र विहित कर्म-काण्ड को छोड दिया [यह तो नाम मात्र का ही सन्यासी वा योगी है।] वास्तविक सन्यासी वा योगी वह नही है।

३—किसी कवि ने ठीक ही लिखा है—

अगर तेरे दिल को है यकसूई हासिल।
ता बाजार मे भी तू खिलवतनशीं है॥
अगर दिल गिरफ्तार हो मखमसों मे।
तो जगल भी बाजार से कम नहीं है॥

यकसूई—एकाग्रता। खिलवतनशी=एकान्तवासी। मखमसो मे,=उलझनो मे तक=फिक्रों मे।

४—सन्यास और योग एक ही है—

यं संन्यासमिति प्राहुः, योगं तं विद्धि पाण्डव।

न ह्यसंन्यस्तसंकल्प., योगी भवति कश्चन ॥२॥

अर्थ—हे अर्जुन! जिसको सन्यास-मार्ग कहते हैं योग-मार्ग भी वही है। इस रहस्य को तू भली प्रकार समझ ले। अपने सकल्प—विकल्पो=कामना जालो का परित्याग किये बिना तो कोई व्यक्ति योगी हो ही नही सकता।

५—सफलता का साधन कर्म-योग ही है—

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं, कर्म कारणमुच्यते।

योगारूढस्य तस्यैव, शमः कारणमुच्यते ॥३॥

अर्थ—जो मनुष्य योगारूढ होने की इच्छा करता है, उसके लिये कर्म करना ही सफलता का प्रधान साधन है। जो योगारूढ हो जाता है, अर्थात् योग-साधन की प्रारम्भिक सफलताओं को प्राप्त कर लेता है। उसके लिये तो सब सकल्प—विकल्पो का प्रशमन=कामना जालो का परित्याग ही प्रधान साधन है।

६—योगारूढ का स्वरूप दर्शाते हैं—

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु, न कर्मसु—अनुषज्यते।

सर्वसकल्प-सन्यासी, योगारूढस्तदोच्यते ॥४॥

अर्थ—जब कोई मनुष्य इन्द्रियो के विषय-भोगो मे और कर्म-फलो मे आसक्त नही होता और सब प्रकार के सकल्प—विकल्पो का परित्याग कर देता है, तब उसको ही योगारूढ कहते हैं।

७—स्वावलम्बी और आत्म-सम्मानी बनना चाहिये। परमुखापेक्षी कोई न बने—

उद्धरेदात्मनात्मानं, नात्मानमवसादयेत्।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुः, आत्मैव रिपुरात्मनः ॥५॥

अर्थ—मनुष्य को चाहिये कि अपना उद्धार अपने साधनो और अपने पुरुषार्थ के द्वारा अपने आप ही करे। कोई किसी विषम परिस्थिति के वशीभूत होकर भी अपने ही हाथो से अपनी अधोगति न करे। वास्तव में तो मनुष्य=जीवात्मा अपने आप ही अपना बन्धु है, और अपने आप ही अपना शत्रु है।

८—सयम का महत्त्व दर्शाते है—

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य, येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे, वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥६॥

अर्थ—आत्मा अपने आप ही उसका मित्र है जिसने अपने आत्मा द्वारा अपने मन और इन्द्रियो सहित शरीर को जीत लिया है। जिसने अपने आप को नही जीता उस के प्रति तो उसका अपना आत्मा ही शत्रु के समान व्यवहार किया करता है।

९—परमात्मा के साक्षात्कार की युक्ति—

जितात्मनः प्रशान्तस्य, परमात्मा समाहितः।

शीतोष्ण—सुख—दुःखेषु, तथा मानापमानयोः ॥७॥

अर्थ—जिसने अपने आप को अपने आधीन कर लिया है। और जिसका मन भी एकाग्र एव प्रशान्त हो चुका है जो गर्मी-सरदी, सुख-दुःख, और मान एव अपमान को भी एक समान शान्त चित्त से ही सहन कर लेता है, उस के ज्ञान मे ही परमात्मा सम्यक् प्रकार मे स्थित है।

१०—योगी का लक्षण—

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा, कूटस्थो विजितेन्द्रियः।

युक्त इत्युच्यते योगी, समलोष्टाश्मकांचन ॥८॥

अर्थ—जिसका अन्तरात्मा ज्ञान और विज्ञान से परितृप्त है। जिसकी स्थिति निरन्तर समता पूर्ण हो रहती है जिसने अपनी इन्द्रियो को पूर्णतया जीत लिया है। जो मिट्टी पत्थर और स्वर्ण आदि धातुओं को भी एक ही जैसी तात्त्विक दृष्टि से देखता है। वही सच्चा योगी है।

११—समबुद्धि की विशेषता—

सुहृन्मित्रार्युदासीन—मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।

साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥९॥

अर्थ—जो सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषियो और बन्धुओं के प्रति तथा धर्मात्माओ और पापियो के प्रति भी समता—बुद्धि रखता है, वह योगी श्रेष्ठ है। अर्थात् सत्कर्मों मे प्रीति और पाप कर्मों से विरति—यही समता कही जाती है।

१२—ध्यान का विधान—

योगी युञ्जीत सततं, आत्मानं रहसि स्थित।

एकाकी यतचित्तात्मा, निराशीरपरिग्रहः ॥१०॥

अर्थ—योगी को उचित है कि वह वासना रहित और सग रहित होकर अपने मन और इन्द्रियो सहित शरीर को जीत कर, एकान्त और शान्त स्थान मे अवस्थित होकर, अपने आप को निरन्तर ही परमात्मा के ध्यान मे लगावे।

१३—स्थान और आसन—

शुचौ देशे प्रतिष्ठाय, स्थिरमासनमात्मनः।

नात्युच्छ्रित नाति नीच चेलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

अर्थ—उपासक शुद्ध भूमि मे अपने ऐसे आसन की स्थापना करके, जो कि न बहुत ऊँचा हो न बहुत नीचा हो और कुशा, मृगछाला, एव वस्त्र जिसके ऊपर बिछा हो—

तत्रैकाग्र मनः कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रियः।

उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये : ॥१२॥

अर्थ—वहाँ मन को एकाग्र करके चित्त को वृत्तियो और इन्द्रियो की सब क्रियाओ को अपने वश मे करके आसन पर बैठ कर, योगी को चाहिये कि आत्म-शुद्धि के लिये निरन्तर अभ्यास=जप और ध्यान करे।

समं कायशिरोग्रीव, धारयन्नचल स्थिरः।

संप्रेक्ष्य नासिकाग्र स्व, दिशश्चानवलोकयन् ॥१३॥

अर्थ—अपने शरीर सिर और ग्रीवा का एक सीध मे करके अचलता और दृढता के साथ सुस्थिर होकर, अपने नाक के अग्रभाग पर अपनी दृष्टि

को जमा कर। इधर-उधर बिना देखे हो—

प्रशान्तात्मा बिगतभी·, ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।

मनः संयम्य मच्चित्तः, युक्त आसीत् मत्परः ॥१४॥

['यम् शब्द 'अहम् का रूप बनता है। यजु० ४० १७ के अनुसार 'अहम्' शब्द से ईश्वर का ग्रहण होता है – योऽसवहम् ।"]

अर्थ—शान्त चित्त वाला भयरहित ब्रह्मचर्यव्रत में सुस्थिर, [वेद को पढने-पढाने वाला, ईश्वर विश्वामा मदाचारा और वीर्य का स्तम्भन करने वाला] अपने मन को वश मे करके ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव का विचार करते हुए, सर्वतोभावेन ईश्वरार्पण बुद्धि से सावधानता पू ंक बठ कर—

युंजन्नेवं सदा मानं, योगो नियतमानसः ।

शान्तिनिर्वाणपरमां, मत्संस्थामधिगच्छति ॥१५॥

अथ—इस प्रकार निरन्तर ही अपन आत्मा को ईश्वर मे लगाने वाला, स्वाधीन और एकाग्र मन वाला यागा परमानन्द की पराकाष्ठावाली= सर्वोपरि शान्ति को एव ईश्वर क दिव्य आनन्द को प्राप्त करता है ।

१४—भोजन और दिनचर्या—

नाति-अश्नतस्तु योगोऽस्ति, न चंकान्तमनश्नतः ।

न चाति स्वप्नशीलस्य, जाग्रतो नैव चार्जुन ॥१६॥

अथ—हे अर्जन ! न तो बहुत अधिक खाने वाले का योग सिद्ध होता है, न बिल्कुल ही न खाने वाले का। जो अधिक सोता है या अधिक जागता है, उसका भी योग सिद्ध नही होता ।

युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दु.खहा ॥१७॥

अथ—यथायोग्य रीति से आहार-विहार करने कर्त्तव्य कर्मों में यथा योग्य रोति से पुरुषार्थ करने, यथायोग्य रीति से ही सोने और जागने वाले का हो योग सिद्ध और दु खों को नष्ट करने वाला होता है ।

१५—साधक के स्वरूप, साधना के स्वरूप और ईश्वरभक्ति के लाभों का निरूपण गोता के छटे अध्याय में बहुत उत्तमता से किया गया है। साधको को उसका विशेष मनन करना चाहिये ।

एक शंका बहुत प्राचीन है । अर्जुन उसे प्रस्तुत करता है—

चंचलं हि मनः कृष्ण, प्रमाथि बलवद् दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥३४॥

अथ—हे कृष्ण ! मन बडा चचल है। वह तो प्रमथन करने वाला= वध, नाश और दु खो करने वाला, अत्यन्त दृढ और बलवान् है। मैं तो ऐसा समझता हूं कि उसको वश में करना तो वायु को वश में करने के समान ही अत्यन्त कठिन है ।

१७—इस शका का समाधान भी बहुत प्राचीन है। श्री कृष्णचन्द्र जी समाधान प्रस्तुत करते हैं—

असंशयं महाबाहो, मनो दुर्निग्रहं चलम् ।

अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते ॥३५॥

अर्थ—हे अर्जुन ! तेरी बात सच है। नि. सन्देह मन बडा चचल है, इसको वश मे करना बहुत कठिन है, परन्तु अभ्यास और वैराग्य के द्वारा कठिन होने पर भी यह काय सिद्ध हो जाता है। मन को वश मे करना असम्भव नही है ।

१८—गीता के सातवें अध्याय के आठवे श्लोक में ओङ्कार को ही चारों वेदो का प्रतिपाद्य कथन किया गया है । यथा—

प्रणवः सर्ववेदेषु ।

चारो वेदों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय "ओ३म्" ही है। महर्षि दयानन्द जो का सिद्धान्त भी यही है, जो कि आगे इसी लेख की २३ वी कण्डिका के अन्तर्गत लिखा गया है ।

१९—गीता के दसवें अध्याय के पच्चीसवे श्लोक मे जप-यज्ञ को ही सब यज्ञो में श्रेष्ठ कथन किया गया है ।

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्ति

यज्ञो में जप-यज्ञ ही सर्व श्रेष्ठ है ।

२०—ओङ्कार की श्रेष्ठता का प्रतिपादन गीताकार ने ठीक उसी प्रकार से किया है, जैसा कि कठोपनिषद् मे किया गया है। आठवे अध्याय का ग्यारहवा श्लोक यह है—

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति,
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति,
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥

अथ—वेदो को जानने वाले विद्वान् जिस विनाशरहित परम-सत्ता= ओङ्कार का कथन करते हैं, जिस मे प्रयत्नशील और आसक्ति रहित मुमुक्षुजन प्रवेश करते है। जिस परमपद की कामना करते हुए ही साधकजन ब्रह्मचर्यादि कठिन व्रतों का प्रतिपालन किया करते हैं, उसी पद=अक्षर= नाम का कथन अब मैं तेरे लिये सक्षेप से करूगा ।

सर्वद्वाराणि संयम्य । मनो हृदि निरुध्य च ।

मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणं आस्थितो योगधारणाम् ॥१२॥

अथ—सब इन्द्रियो के द्वारों को रोककर, मन को हृदय में स्थिर करके प्राण की स्थापना अपने मस्तक में करके, इस प्रकार योग-धारणा में सुस्थिर होकर—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।

यः प्रयाति त्यजन्देहं, स याति परमां गतिम् ॥१३॥

अर्थ—"ओ३म्" इस एक अक्षर=विनाश रहित ब्रह्म को बारम्बार जपता हुआ और "ओ३म्" अक्षर के वाच्य ब्रह्म का ही निरन्तर ध्यान= उद्भावन करता हुआ=स्मरण करता हुआ जो साधक पुरुष अपने शरीर को त्याग कर जाता है, वह अवश्य हो परमगति को प्राप्त होता है ।

२१—गोताकार गीता के नौवें अध्याय के सतरहवे श्लोक मे अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है —

पिताहमस्य जगतः, माता धाता पितामहः ।

वेद्यं पवित्रमोङ्कार, ऋक्साम यजुरेव च ॥

अर्थ—ईश्वर ही इस जगत् का पिता, माता, विधाता और पितामह आदि भी है। वही जानने और मानने योग्य है। वही पवित्र ओङ्कार= ओ३म् है। चारो वेदों का प्रतिपाद्य भी वही है ।

२२—महर्षि पतञ्जलि का सिद्धान्त भी यही है—

स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥

[योगदर्शन—१।२६]

अर्थ—वह यह ईश्वर ही पूर्वजों का भी गुरु है, क्योंकि वह काल के बन्धन में नही आता ।

शेष पृष्ठ १० पर

।नामिका, भृकुटि तालु वा कण्ठकूप आदि स्थानो में ध्यान करने का उपदेश नये साधको को दिया जाता है। यह त्राटक विधि या सयम कहलाता है। इस के अभ्यास से नये साधको को एकाग्रता सम्पादन मे विशेष सहायता प्राप्त होतो है। महर्षि दयानन्द जी का आदेश भी ऐसा ही है —

"जब उपासना करना चाहे, तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर, बाह्य विषयो से इन्द्रियो को रोक, मन को नाभि प्रदेश में, वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर, अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके, परमात्मा मे मग्न हो जाने से सयमी होवे ।" वे आगे लिखते हैं—

"जब इन साधनो को करता है तब उसका आत्मा और अन्त:करण पवित्र होकर, सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्य प्रति ज्ञान-विज्ञान बढ़ाकर मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ प्रहर मे एक घडी भर इस प्रकार ध्यान करता है, वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है ।"

[सत्यार्थप्रकाश, समुल्लास सप्तम]

दार्शनिक दृष्टिपात—

"क्या ईश्वर है ?"

[ले० ब्र० वेदपाल (प्रभाताश्रम) टीकरी, जि० मेरठ]

[नवयुवक ब्रह्मचारी को दार्शनिक लेख लिखने पर हम प्रोत्साहन देना अपना कर्तव्य समझते है। प्रयास करते रहने पर लेखनशली भी परिमार्जित रूप ले लेगी—सम्पादक]

यह कोई सार्वभौम नियम नही कि हमे सभी विषयो का ज्ञान केवल प्रत्यक्ष प्रमाण से ही हो, परन्तु बहुत से ऐसे भी विषय हैं जो कि प्रत्यक्ष प्रमाण से अधिगम्य नही हैं।

फिर अब विचारणा यह होती है कि ईश्वर के अस्तित्व को कैसे स्वीकार किया जाये, यह भी मान्य नही हो सकता कि जो पदार्थ हमे प्रत्यक्ष से नही दीखता परन्तु लोक मे वह प्रसिद्ध हो उसको नेत्रबन्द करके 'बाबावाक्य प्रमाणम्" के न्याय से मान लिया जाये। और दार्शनिक निकाय उसको भी स्वीकार नही कर सकता कि यह हमारे धर्मग्रन्थो मे वर्णित है इसलिये मानना ही पडेगा। इसलिए हम इस पर कुछ दार्शनिक दृष्टि से विवेचन करते हैं। मैं सबसे पहले पाश्चात्य दार्शनिक डेकार्ट का दृष्टिकोण रखता हूँ। जिसकी विद्वत्ता को सुनकर स्वीडन की महारानी ने आमन्त्रित किया था। एक आक्षेप जो कि भारतीय दार्शनिको पर लगाया जाता है वह यह है कि वे अपने पूव प्रचलित धार्मिक विचारो के दास थे, उनकी यह कल्पना की दौड कितनी सही है इस विवाद मे आज नही पडते। फ्रास देश के दार्शनिक डकार्ट कहते थे कि हम किसी भी सिद्धान्त को इस प्रकार स्वीकार नही कर सकते कि इसको हमारे पूर्वज मानते थे वा यह हमारे धर्म ग्रन्थो मे उल्लिखित है। उन्होने एक नई विचार सरणी निकाली। उन्होने सोचना प्रारम्भ किया कि मै मान लेता हूँ कि मैं भी नही हूँ तथा ईश्वर भी नही है जो कुछ मैं देखता हूँ वह सब सशयात्मक है, परन्तु मैं सोचता हूँ, सशय करता हूँ, इसलिये मैं हूँ। इस प्रकार उन्होने एक स्वसिद्ध निकाला "Cogito ergo som" अर्थात् मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ। इस सिद्धान्त से डकार्ट ने आत्मा की सिद्धि की, उन्होंने कहा कि जैसे किसी को भूख लगी हो तो उसकी सिद्धि के लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नही वह स्वयसिद्ध है।" इसी प्रकार आत्मा की सिद्धि भी स्वय हो जाती है।

वास्तव मे यह डेकार्ट की कोई नई उपज्ञा नही है। इसकी मूल रूप-रेखा भारतीय दर्शनो मे विद्यमान है जैसाकि शङ्कराचाय जी ने अपने ब्रह्म-सूत्र भाष्य मे लिखा है—

"सर्वो हि आत्मास्तित्वं प्रत्येति, नाहमस्मीति हि नात्मास्तित्वप्रसिद्धि स्यात् सर्वो लोको नाहमस्मीति प्रतीयात्"

वाक्यार्थ सुस्पष्ट है कि आत्मा के अस्तित्व को सर्वसाधारण भी स्वीकार करता है, यदि कोई कहे कि मैं नही हूँ तो किसी को किसी की प्रतीति नही होती। तथा अन्यत्र शङ्कर ने लिखा है कि—'य एव निराकर्ता तदेव तस्य स्वरूपम्" अर्थात् जो आत्मा निराकर्त्ता है वही तो आत्मा है।

अस्तु डेकार्ट ने इसी प्रकार के तीन स्वय सिद्धो से ईश्वर की सिद्धि की है। इस प्रकार हैं।

१—सत्ता मूलक प्रमाण=ईश्वर के अस्तित्व का ज्ञान हमे प्रकृति की सत्ता से होता है। मुझे इस सृष्टि को देखकर किसी पूर्ण सत्ता का विचार होता है। पूर्णता बिना अस्तित्व के हो नही सकती इसलिये पूर्ण ईश्वर का अस्तित्व है।

२—काय—कारण युक्ति—प्रत्येक घटना का कोई कारण अवश्य होता है। कार्य को उत्पन्न करने की शक्ति कारण मे होती है। इसलिये कारण कार्य से अधिकतर नही तो बराबर जरूर होगा। इस जड प्रकृति को कार्य रूप मे परिणत करने के लिये कोई निमित्त कारण होना चाहिये। जीव अपूर्ण है। अपूर्ण पूर्ण ससार की रचना नही कर सकता, इसलिए कोई पूर्णतम शक्तिमान् तत्त्व होना चाहिये जो पूर्ण होगा उसे आप चाहे ईश्वर कह लेवें अथवा अन्य किसी नाम से।

विश्व सम्बन्धी युक्ति—ससार के अस्तित्व से भी ईश्वर का प्रतिभा होता है। प्रश्न है कि हमको बनाने वाला कौन है, यदि मैं या मेरे मात पिता ही मेरे निर्माता हैं तो वे मुझे पूर्ण बनाते परन्तु वे मुझे पूर्ण ए अमर नही बना सके। इसलिये मुझ को बनाने वाला कोई अन्य है जिसव रचयिता स्वीकार करग वही ईश्वर है। इस प्रकार डकार्ट ने ईश्वर व सिद्धि की है।

अब हम भारतोय दार्शनिको को विचारमाला पर विमर्श करते हैं भारतीय दर्शनो मे साख्य दशन प्राचीन एव महत्त्वपूर्ण है इसलिये ह कापिल दर्शन पर विचार करते हैं। कुछ लोग जो कि ऋषियो के मर्म क न समझ सके वे कपिल को नास्तिक तक कहने का दुस्साहस करते हैं उनकी प्रगल्भता पूर्ण कुछ युक्तिया इस प्रकार हैं। प्रथम वे कहते हैं वि साख्य दर्शन मे ईश्वर विमर्श को स्थान नही दिया इसलिए वे नास्तिक थे भला विचारिय इन प्रेक्षानुकारियो की प्रक्षा पर, दुजनतोष न्याय से हम मान लेते हैं कि उन्होने अपने दशन मे ईश्वर का विश्लेषण नही किया परन्तु इतने मात्र से तो कोई नास्तिक या आस्तिक नही बन जाता। यदि किसी ने भूगोल का ग्रन्थ लिखा और वह उसम इतिहास नही लिखता त उस पर यह दोषारोपण तो नही किया जा सकता कि वह अशोक आदि ऐतिहासिक पुरुषो की सत्ता का स्वीकार नही करता। यह कल्पना मेरी ही तर्क की उपज नही अपितु महर्षि वात्स्यायन अपन न्याय दर्शन के भाष्य को करते हुये चतुर्थ सूत्र के भाष्य मे सुस्पष्ट उल्लेख करते हैं।

"परमतमप्रतिसिद्धमनुमतमिति हि तन्त्रयुक्तिः"

अर्थात् शास्त्रकारो का यह नियम है कि जिस विषय का 'जिस सिद्धान्त का जो शास्त्रकार न तो विधान करता है न उसका प्रत्याख्यान करता है तथा उस विषय का इतर सच्छास्त्रो मे विधान है तो उसका अभिप्राय यह होगा कि तच्छास्त्रकार भी उस सिद्धान्त को स्वीकार करता है। अब जब कि वात्स्यायन की यह पक्ति वतमान है तो हम कैसे मानल कि कपिल ग्रन्थ मे ईश्वर विषयक विमर्श नही इसलिय वे नास्तिक थे। इस प्रकार शायद यह बात पूर्वोक्त प्रकथन से निर्भ्रान्त हो गई होगी। इस पर भी यदि कोई गोपायसी—न्याय से आक्षेप करेगा तो उसका वह वाग्व्यायाम गगनरोमन्थ की तरह निरर्थक प्रमत्त प्रलाप मात्र ही होगा।

ईश्वरासिद्धे (१—५६) इस कापिल सूत्र को लेकर भी कुछ लोग जो सूत्र रचना के महत्त्व को नही समझते अपने स्वतत्र मुख से महर्षि कपिल को नास्तिक कह बैठते है। यदि सूत्र का सामान्य दृष्टि से अर्थ किया जावे तो अर्थ होगा कि ईश्वर असिद्ध है अर्थात् ईश्वर नही है। अब हम सूत्र पर सूक्ष्म बुद्धि से विचार करते है। सूत्रार्थ से पूर्व हमे सूत्र रचना को प्रणाली का महत्त्व देखना चाहिये। व्याकरण के अनुसार सूत्र **शब्द षिवु तन्तुसन्ताने** धातु से बनता हैं इस प्रकार सूत्र शब्द का **अर्थ हुआ** "सीव्यत्यनेनेति सूत्रम्" अर्थात् जिससे सीया जाये उसे सूत्र कहते हैं। सीते समय हम क्या करते हैं दो कपडो का परस्पर सम्बन्ध जोड देत हैं इसी प्रकार सूत्रो मे भी अर्थो को परस्पर जोडा जाता है। इसी भाव को स्पष्ट करने के लिये पाणिनि ने अपने व्याकरण शास्त्र मे 'स्वरितेन अधिकार' का सूत्र परिणयन किया है। यदि सूत्राथ करते समय इस प्रक्रिया का आश्रय न लिया जाय तो सब सूत्र ग्रन्थो की अधोगति हो जायेगी और वे एक प्रमत्त प्रलाप की भाति प्रतीत होगे। अब हम 'आम्रा॰पृष्ट, को विदाराना चष्टे" लोकोक्ति के शिकार न बनकर सूत्रार्थ पर विचार करते हैं। सूत्र के पूर्व यह विचार उठाया गया है कि इस ससार का उपादान कारण कौन है तो कोई शङ्का कर सकता है कि ईश्वर को ही जगत् का उपादान कारण मान लेना चाहिये। इसमे अनेक दोष आते हैं। अत आचार्य कपिल कहते हैं कि "ईश्वरासिद्ध" अर्थात् इस जगत् का उपादान कारण होने मे ईश्वर असिद्ध है। भाव यह है कि ईश्वर जगत् का उपादान कारण नही है। इतने सुसम्बद्ध एव सुस्पष्ट अर्थ को न समझकर लोगो ने कितना अनर्थ कर डाला इसको पाठक गण स्वय समझ गये होगें। साख्य दर्शन मे कुछ और भी स्थल हैं जहाँ सन्देह हो जाता हैं परन्तु शान्त चित्त होकर मनन करने से वे सब सन्देह दूर हो जाते हैं। हाँ, परन्तु जिनका लक्ष्य ही महर्षियो को

ास्तिक सिद्ध करना है। उनके लिये तो भर्तृ की यही पंक्ति ही उपस्थित ो जा सकती है कि—

"प्रज्ञस्य नास्त्यौषधम्"

अर्थात् सत्यासत्य के जिज्ञासु एव बुद्धिमानों के लिए तो शास्त्रकारों सब कुछ अवगत करा दिया है परन्तु सत्य को जानना जिनका उद्देश्य ो नहीं है उनको समझाने के लिये कोई औषधि नही है।

अस्तु उपर्युक्त लेख विन्यास से यह तो स्पष्ट हो गया कि कपिल श्वर को मानते थे। क्योंकि उन्होंने अपने ग्रन्थ में ईश्वर का प्रत्याख्यान ो किया नही। अब उनका एतद्विषयक स्पष्ट निर्देश भी पाठकों को दखात हैं। एक बात हम सब वैदिक लोग मानते हैं कि महर्षियों के मुखार-वन्द से उच्चारित शब्द विन्यास की भाव गरिमा को सामान्य जन नही समझ पाते। इसलिये तो ऐसे लोगों के लिये परम कारुणिक आचार्य ातञ्जलि ने एक परिभाषा का उल्लेख करना अपरिहेय समझा। वह इस कार है।"

व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिर्न हि सन्देहादलक्षणम्"

इसका भाव यह है कि "यदि कभी शास्त्रीय बात पर सन्देह हो जाये ो उस पर विचार करना चाहिये न कि सन्देह मात्र से उसको भ्रान्त समझना चाहिये। इस प्रकार सूक्ष्मता से विचार करने पर अनेक वचन तद् विषयक सांख्य सूत्रों में उपलब्ध हो जायेंगे। यथा—

तत्सनिधानादधिष्ठातृत्वं मणिवत्। इस सूत्र में महर्षि कपिल ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हैं। वैदिक दार्शनिक ईश्वर को ससार का उपादान कारण नही मानते, फिर प्रष्टव्य यह होता है कि ईश्वर का संसार के साथ क्या सम्बन्ध है तो सूत्रकार कहते हैं कि ईश्वर इस जगत् का अधिष्ठाता है। अब विचारना यह है कि इस जगत् को अधिष्ठातृत्व की आवश्यकता क्यों पडी ? इसका उत्तर साफ शब्दों में यह होगा कि प्रकृति जड़ है, चेतन-विहीन है प्रकृति को गतिशील अथवा यूँ कहिये संसार को इस रूप में लाने के लिए कोई शक्ति तो होनी चाहिये। यदि प्रकृति स्वयं गतिमती है तो उसमे जड़ता की हानि का दोष आयेगा। इसलिए एक परम शक्ति है जो इस प्रकृति को गतिशील बनाये हुये है, सांख्य के शब्दों में उसे अधिष्ठाता या ईश्वर कहेंगे। इस में एक शङ्का यह होती है कि ईश्वर इस संसार को कैसे गतिशील बनाता है? उसके लिये सूत्रकार कहते हैं "मणिवत्" अर्थात् जैसे अयस्कान्त मणि (चुम्बक) अपने नैकटय मात्र से ही लोहे में क्रिया उत्पन्न कर देता है, बस इसी प्रकार वह ईश्वर अपने सामीप्य (व्यापकता) मात्र से इस प्रकृति को क्रियावती बना देता है। बुद्धि का धनी कह सकता है कि इस ईश्वर के पचड़े में क्यों पड़ा जाये, जीव को ही संसार का अधिष्ठाता मान लेंगे, इस से लाघव भी आयेगा जिसके लिए वैयाकरण लोग पुत्रोत्सव मनाते, लघुता एक गुण है इसको तो हम भी मानते हैं परन्तु क्या इस लघुता के लिये हम अपने शिर को काट दें ? परन्तु इस लघुता के लिए तो कोई तैयार नही होगा। इससे सिद्ध हुआ कि लाघव गुण का महत्त्व भी सब जगह नहीं। किसी प्रकार जीव को संसार का कर्ता मान भी लें, तो शिरच्छेदन जैसा महद्दोष आयेगा जो कि अत्यन्त असह्य है। इस प्रकार स्पष्ट एवं युक्ति युक्त सिद्ध होता है कि कपिल ईश्वर भक्त एव आस्तिक थे। परन्तु धन्य है उन मतिमान्नरों को मति पर जो इतने पर भी निर्दोष ब्रह्मध्यानपरायण महर्षि को भी नास्तिक कहने का दुस्साहस करते हैं। और तो और शङ्कर, सायण, उदयनादि आदि संस्कृतज्ञ भी इस दलदल में फस गये। आशा हैं मेरा यह उपर्युक्त विवेचन उनके विचार प्रवाह को रोकने मे सेतु की एक ईंट का काम करेगा।

नास्तिक दुग को दुगति करने में जितने शङ्कर मान्य एवं अग्रणी हैं उतने नयायिक भी हैं। कहने में शायद मैं भ्रान्त नहीं हूँगा। न्याय दर्शन के प्रणेता महर्षि गोतम थे वे पक्के आस्तिक थे इसमें कोई विवाद् नही। यहाँ तो हमें यह देखना है कि उन्होने ईश्वर की सिद्धि किन तर्कों से की है तथा उनके तर्कों मे किनना बल है। उनका इस विषयक सूत्र यों है—

ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्यदर्शनात् (४।१।१८)

नैयायिक ईश्वर की सिद्धि फल प्रदाता के रूप में करते हैं। उनका तर्क इस प्रकार है। मनुष्य बहुत सी क्रियायें प्रतिदिन करता है। परन्तु उन सब क्रियाओं का फल उसे तत्समय में ही उपलब्ध नहीं होता और सभी प्राणी चाहते हैं कि उनको क्रियाओं का फल उसी समय ही मिलना चाहिए और यदि जीव फल लेने में स्वतन्त्र होता तो वह स्वानुकूल फल को ले लेता एवं प्रतिकूल का स्पर्श तक नहीं करता। इस प्रकार संसार में कोई प्राणी सन्तापित नहीं होना चाहिए। परन्तु व्यवहार में इसका बाध हो जाता है। जिसका बाध हो जाता है वह कभी सत्य नहीं हो सकता, इससे सिद्ध होता है कि संसार के सभी प्राणी किसी महती शक्ति के अधीन हैं जैसा कि सुगृहीत—नाम आचार्य वात्स्यायन इसी सूत्र के भाष्य में लिखते हैं—

"पुरुषोऽयं समीहमानो नावश्यकं फलं प्राप्नोति तेनानुमीयते-पराधीनं पुरुषस्य कर्म फलाराधनमिति तस्येश्वरः कारणमिति।"

इसमें एक शङ्का यह हो सकती है कि जब कर्म फल ईश्वर के अधीन है तो जीव परिश्रम क्यों करे। जैसा ईश्वर को फल देना अभीष्ट होगा वैसा फल देगा। इसके लिए महर्षि गोतम कहते हैं कि—

"तत्कारित्वादहेतुः" (१-११)

सूत्रार्थ यों है कि यह हेतु ठीक नहीं क्योंकि ईश्वर जीव-कृत कर्मों के फल देने में अनुग्रह मात्र करता है अथवा यों समझिये कि ईश्वर मनुष्य विहित कर्मों के अनुसार यथोचित देश काल में फल प्रदाता है। इसलिए यह युक्ति हम कर्म फल भोगने में परतंत्र हैं इसलिये परिश्रम क्यों करें केवल कर्महीनो का आश्रय स्थान है। इस प्रकार नैयायिकों ने आकाटय युक्तियों से ईश्वर को सिद्ध किया है।

नास्तिक पुरुष भोग-वादिता में फंसा होता है यह एक सार्वभौम नियम है। इसके उदाहरणार्थ सारा नास्तिक जगत् उपस्थित है। कुछ पण्डित-मानियों ने जिन्होंने ऋषियों की भाव-गरिमा को नहीं समझा वे कणाद को भी नास्तिक कहते हैं, परन्तु उनकी यह स्थापना बालु के सेतु की तरह विचार प्रवाह में प्रवाहित हो जाती है। भला जो इतना बुद्धि-सम्पन्न होते भी एक-एक कण को चुनकर अपना जीवन यापन करता हो वह कभी नास्तिक हो सकता है? तथापि कोई पण्डितमानी कह सकता है कि हमें इस से क्या प्रयोजन की वे कणभुक् थे। तो हम उनसे पूछते हैं कि बताओ ! इसमें क्या प्रमाण है कि वे नास्तिक थे तो वे वही पूतिकूष्माण्डवत् (गलासड़ा) प्रमाण देंगे कि उन्होंने स्वग्रन्थ में ईश्वर का विवेचन नहीं किया जो कि पूर्ववद् हेय है।

हम सब भारतवासियों की महर्षियों के मुखारविन्द से मुखरित हुये शब्दविन्यास पर बड़ी श्रद्धा है। परन्तु उनकी भावभरी गुत्थियों को समझने के लिये हमें आर्ष भाष्य शैलियों की शरण लेनी पड़ेगी। उन्हीं आर्ष-भाष्य कर्त्ताओं में एक पातञ्जलि हैं जिन्होंने हमें ऋषि प्रोक्त ग्रन्थों की ग्रन्थियों को समझाने के लिए एक मार्ग रखा। वे महाभाष्य के सप्तम अध्याय के दूसरे पाद के तीसरे सूत्र में एवं सूत्रित करते हैं।

"इहेङ्गितेन चेष्टितेन निमिषितेन महता वा सूत्रनिबन्धेन आचार्याणामभिप्रायो लक्ष्यते।"

बात बिलकुल स्पष्ट है कि आचार्यों के संकेत से, चेष्टा से, भाव भङ्गिमा से, या बड़े-बड़े सूत्रो से उनके अभिप्राय जाने जाते हैं। इस दृष्टि से जब हम कणाद के दर्शन पर विचार करते हैं तो अनेक स्थल आस्तिकता प्रकट करने वाले मिलेंगे। वेदों में उनकी अगाध श्रद्धा थी इस लिये तो उन्होने इस "तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् इति" सूत्र को अपने शास्त्र में दो बार सूत्रित किया। भला जो मनुष्य वेद को परम प्रमाण मानता हो वह कभी नास्तिक हो सकता है ? और भी छः-सात सूत्रो में वेद तथा आगम का आश्रय लेकर महर्षि कणाद ने आस्तिकता को सुस्पष्ट प्रकट किया है। भला अब रोयें या हसें उनकी उच्चतम प्रतिभा पर जो इतने

शेष पृ० ११ पर

परिवार नियोजन आन्दोलन का अन्धकारमय पक्ष—

समाज घास-फूँस से भर जायगा !

(डाक्टर रामचरण महेन्द्र गवर्नमेंट कालिज कोटा, राजस्थान)

१—तस्वीर का एक पहलू

"बच्चे के मुँह से झाग निकल रहे हैं। बदन ऐंठ रहा है !"

"ऐसा मालूम होता है कि आपके पुत्र को किसी ने विष दे दिया है।"

"जल्दी करो ! इसे फौरन अस्पताल ले चलो !"

इंजीनियर साहब घबड़ाये हुए थे। वे जिस मकान में किरायेदार थे, उसी से उनका मकान खाली कर देने के सम्बन्ध में मुकदमा चल रहा था। "मुए, मकान मालिक ने मेरे पुत्र को कुछ कर दिया" उनकी धर्मपत्नी झुँझलाए हुए स्वर में बोली।

लड़के की हालत खराब होती जा रही थी। इंजीनियर साहब ने उसे फौरन अस्पताल पहुँचाया। उसके मुँह से लगातार झाग निकल रहे थे। पूरा शरीर ऐंठा जा रहा था। जान को खतरा था।

"इट इज ए केस आफ पौएज़न !" डाक्टर ने परीक्षा करके अपना निर्णय दे दिया।

"डाक्टर ! मेरे लड़के को बचा दीजिए ! यह मेरा इकलौता पुत्र है ! जिन्दगी का एकमात्र सहारा !" रोते हुए इंजीनियर साहब ने कहा।

"हम अपना सा कुछ न छोड़ेंगे। अभी इसे क़य कराते हैं जो विष दिया गया है, वह बाहर आ जायगा। घबड़ाइये नहीं। क्या आपके और औलाद नहीं है ?" डाक्टर ने पूछा।

"जी एक छोटी लड़की और है।"

"उसके बाद कोई और नहीं हुआ ?"

"परिवार नियोजन का आपरेशन करा लिया था। बस, दो ही सन्तानें हैं। बड़ा लड़का, छोटी लड़की। सुना है बस दो ही बच्चे अच्छे रहते हैं भीड़-भाड़ ठीक नहीं। लड़के की हालत कैसी है अब ?

इंजेक्शन लगाते हुए डाक्टर बोला—

"हम कोशिश कर रहे हैं। आप धैर्य रक्खें। सभी बच्चे को बचाने में लगे हैं।"

"अरे ! यह तो पीला पड़ता जा रहा है ! हाय ! हाय !! मेरे पुत्र को किसने विष दे दिया। मेरी तो जिन्दगी ही तबाह हो जायगी अगर इसे कुछ हो गया तो···।"

इतने में बाहर से किसी ने आकर कहा—

"इंजीनियर साहब, आपकी कन्या भी इसी तरह बीमार है। उसके मुँह से भी इसी प्रकार झाग निकल रहे हैं। आपकी पत्नी उसे लेकर आई हैं। कन्या की हालत भी नाजुक है। बाहर आकर देखिए।" उन्होंने सुना, तो दिल दहल उठा। अर्ध-पगल से आपरेशन रूम के बाहर आये। जनरल वार्ड में देखा तो सचमुच उनकी कन्या का भी वही हाल था, जो पुत्र का।

पत्नी रोकर कहने लगी, "आपके जाने के बाद इसकी भी हालत वैसी ही हो गई। मुँह से जामुनी झाग आने लगे। गला बन्द हो गया। सारा शरीर ऐंठने लगा। मेरे हाथ पैर फूल उठे। फौरन इसे अस्पताल लाई हूँ। हाय मेरे दोनों बच्चों को किसी ने कुछ दे दिया। अब क्या होगा !"

इंजीनियर साहब के काटो तो खून नहीं।

वे भागे-भागे फिर डाक्टर के पास गये। वहाँ वे गुमसुम दुःखी खड़े थे।

"डाक्टर ! डाक्टर ! चुप क्यों हो ? बच्चा कैसा है ?"

डाक्टर चुप रहा ! एक आँसू उसके नेत्र से ढुलक कर गाल पर आ गिरा !

इंजीनियर साहब समझ गये कि उनका इकलौता पुत्र चल बसा था। वे रोने लगे। "हाय ! मेरी दुनिया ही लुट गई ! अब क्या होगा ?······ लेकिन चलूँ, अपनी बिटिया को तो देखूँ।"

अब वे बदहवास से फिर पहले स्थान पर आये। वहाँ उससे भी दर्दनाक दृश्य था। उनकी पुत्री भी विष देने के कारण सदा सर्वदा के लिए सो चुकी थी। उनकी पत्नी बिलख-बिलख कर रो रही थी। दृश्य करुणा से परिपूर्ण था।

दोनों बच्चे आनन-फानन चल बसे थे।

अब उनके सामने अन्धेरा ही अन्धेरा था। जिन्दगी ही सूनी हो चुकी थी। मालिक मकान ने प्रसाद की मिठाई में विष देकर उनसे प्रतिशोध निकाला था। उसकी मार पड़ी थी, निरीह अबोध बच्चों पर !

इंजीनियर साहब ने परिवार-नियोजन के हामी होने के कारण अपना आपरेशन कराया हुआ है। अब उनके कोई सन्तान न होगी। पति पत्नी का जीवन शुष्क अन्धेरी रात्रि के समान अंधकारमय हो गया है। अब उन्हें समाज या अपनी जिन्दगी में कोई दिलचस्पी नहीं रह गई है।

२—तस्वीर का दूसरा पहलू

"बचाओ ! इस बच्चे को साइकिल के आगे से हटाओ ! हाथ या पाँव कुचल जाएगा ! कितने अधिक बच्चे खेलते हैं इस सड़क पर तौबा !

"नास गये, सारे दिन सड़क पर मिट्टी पत्थरों से खेलते रहते हैं !" फटे कपड़े, मिट्टी से सने सूअरों जैसे गन्दे, बदबूदार गलियों में छीना-झपटी करते हुए लड़कों को गाली देते हुए एक गड़रियन बोली।

"क्या बताऊं बाबू, ये बच्चे तो मुझसे सम्हलते ही नहीं, न मेरा कहना ही मानते हैं। ढेर के ढेर हैं। कोई पतंग उड़ाता है, तो कोई जुआ खेलता है या मारपीट करता है। कोई पान खा सिगरेट मुँह में लगा छैला बना पान की दुकान के आगे बाल सँवारा करता है। कमाते एक पैसा नहीं हैं। सब को रोटी देना मुश्किल हो रहा है हमें।"

गड़रियन के एक बच्चा गोदी में स्तन पी रहा था, दूसरे ने उसकी अँगुली पकड़ रखी थी।

"तुम्हारे कितने बाल-बच्चे हैं ?"

"मेरे तेरह हैं और मेरी सौत के ग्यारह, कुल चौबीस हैं······अजी बस पलटन है। हमारे यहाँ तो बच्चों की खेती होती है। मुए, घास-फूंस की तरह बढ़ते ही जाते हैं··· अब बताओ किस-किस को सम्हालें।"

'तुम्हारे पति ने परिवार-नियोजन का आपरेशन क्यों न करा लिया ? सब मुसीबत से बच जाते ?"

"न, न, हमें आने वाले बच्चों को रोककर या मारकर पाप नहीं कमाना है। जो भाग्य में होंगे, वे तो देर सवेर मिलकर रहेंगे ही। गाँव में खेतीबाड़ी, मेहनत-मजदूरी, देखभाल, गाय या बकरियों को चराने के लिए हमें बहुत से आदमियों की जरूरत पड़ती रहती है। खेत पर मजदूर भी तो रखने होते ही हैं। फिर दो-चार लड़के आवारा बदमाश या लफंगे निकल जायें, या मर जाय, तो भी सात-आठ तो बच ही जायेंगे··· फिर, क्यों करायें हम आपरेशन· यह सब फालतू बेवकूफी की बातें हैं। हम तो परिवार को बढ़ाने में विश्वास करते हैं ···जिसने मुँह फाड़ा है, वह भोजन भी देगा ही।"

उसका उत्तर सुनकर मैं अवाक् रह गया !

सोचने लगा, "कैसी है, यह गवारिन जो अपनी या अपनी सौत के बच्चों पर कोई रोकथाम नहीं लगाना चाहती ! इसे यह परवाह नहीं कि अधिक बच्चे होने पर उनके पालन-पोषण, शिक्षा और विकास में कितनी अधिक कठिनाई उपस्थित होगी ! 'छोटा परिवार, सुखी परिवार' के पक्ष में दिये हुए सारे तर्क बेकार सिद्ध हुए। उलटे वह मुझे मूर्ख बताने लगी, क्योंकि मैं प्रकृति की योजना में रुकावट पैदा कर रहा था।

और आज मैं सोचता हूँ कि एक ऐसा युग आनेवाला है जब हमारे समाज से सबसे बुद्धिमान्, योग्य, प्रतिष्ठित, प्रबुद्ध वर्ग के लोग परिवार-नियोजन द्वारा बढ़िया किस्म की नस्ल समाप्त कर देंगे। वे लोग, जो बड़े-से-बड़े इंजीनियर, डाक्टर, उद्योगपति, प्रोफेसर, वकील, या मेधावी सन्तानें पैदा करते, आज अपनी सन्तान को कम से कम करते जा रहे हैं। योग्य और उन्नतिशील परिवारों में नहीं के बराबर बच्चे हैं। बुद्धिमान् लड़कों तथा योग्य कन्याओं की संख्या निरन्तर कम होती जा रही है। होते-होते यह मेधावी और अच्छे लोगों की पीढ़ी समाप्त हो जायेगी।

दूसरी ओर अपढ़, मूर्ख, गंवार, किसान, मजदूर, गाँव वाले, भिखारी, अपंग, बुद्धिहीन वर्ग के लोग, जिन्हें परिवार-नियोजन की असली जरूरत

शेष पृष्ठ ११ पर

क्या थे कभी हम !!

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान राजा पार्क, शकूर बस्ती, देहली)

क्या थे कभी हम आज क्या जाना कभी है ?
कितने उठे कितने गिरे क्या आंका कभी है ?
वेद के अनुरूप रहते थे हमारे निज कर्म ।
सब भूतानि सर्वं सुखानि था सभी का शुभ धर्म ॥
वसुधैवकुटुम्बकम् को भावना थी सर्वव्यापक ।
परमार्थ को माना स्वार्थ थे सभी उसके आराधक ॥
प्राचीनता को त्याग कर कितने गिरे जाना कभी है ॥१॥

शुभाचरण शृंगार था, थी सरस्वती लक्ष्मी यहाँ ।
मानते थे सत्य को सब लोग परमशक्ति यहाँ ॥
राजा से लेकर रंक तक सब धैर्य के पुंज थे ।
युवा वृद्ध सबके हृदय में विनम्रता के कुंज थे ॥
पश्चिमी गगन मे भर उडारी कितने गिरे जाना कभी है॥२॥

आलस्य का न नाम था, मिल कर सभी करते कर्म ।
स्वेद-कणो को धन समझ दिन-रात करते थे श्रम ॥
शत-हस्त से वे धन कमाकर सहस्र से थे बाँट देते ।
यज्ञो से लेकर साम्यभाव धन-अन्न सभी मिल बाँट खाते॥
भोगवाद के गह्वर मे कितने गिरे जाना कभी है ॥३॥

एक कर मे था श्रम दूसरे में थी सफलता ।
उनके वज्र हाथो समक्ष दम तोडती थी विफलता ॥
श्रम उन्ही का धर्म था, धर्म मे भगवान् था ।
साहस और दृढता का प्रतीक वह इन्सान था ॥
अकर्मण्यता को धर्म जान कितने गिरे जाना कभी है॥४॥

पूर्वजों की परम्परा का समादर करते थे सभी ।
पाखण्ड को पर विष समझ समाप्त करते थे तभी ॥
रूढियों को धर्म की सेवाल मान हटाते सभी ।
निज स्वार्थ से ग्रथित धर्म, न रहा उनका कभी ॥
स्वार्थ को स्वधर्म जान कितने गिरे जाना कभी है ॥५॥

प्रजा रही थी पुत्रवत् राजा पिता था देश का ।
था भार कंधे पर उसी के राष्ट्र के उन्मेष का ॥
यद्यपि राजतन्त्र रहा, पर लोग सब समृद्ध थे ।
लोकोपकारी राजगण विश्व में प्रसिद्ध थे ॥
राजनीति को भक्ष कर कितने गिरे जाना कभी है ॥६॥

स्वर्ग से बढ कर सभी थे मातृ-भू को मानते ।
आरूढ होकर धर्म पर इसको सदा वे संवारते ॥
गर्व का अनुभव थे करते भारत-भू में जन्म लेकर ।
अपवर्ग सा सुख उन्हे मिलता सर्वस्व त्याग कर ॥
राष्ट्रभक्ति त्याग कर कितने गिरे जाना कभी है ॥७॥

सयम का साम्राज्य था शिक्षास्थल थे मन्दिरों से ।
रास-क्रीड़ा के कभी न क्षेत्र बने वे बन्दरों के ॥
नर-नारी का मिलन वहाँ सर्वथा निषेध था ।
भारत की परम्परा का यही शुभ आदेश था ॥
सहशिक्षा को भली जान कितने गिरे जाना कभी है ॥८॥

गुरुकुलो में मनोयोग से विद्याध्ययन चलता रहा ।
गुरुचरणो मे देश मेरा पुत्रवत् पलता रहा ॥
साग-भाजी की तरह न बिकते कभी थे गुरुजन ।
न धन की तुला मे तोल कर विद्या ले सके दुर्जन ॥
गुरुकुलो को छोड कितने गिरे जाना कभी है ॥९॥

सुरा-सुन्दरी ये भूलकर, न लुटता यौवन था कभी ।
कब्रिस्तान पशुओं का न उदर मे पनपा कभी ॥
सात्विकता लक्ष्य था, सयम के थे महाधनी ।
सभ्यता को नग्न करना सोच सकते थे नहीं ॥
पश्चिम को सर्वस्व बेच कर कितने गिरे जाना कभी है॥१०॥

प्राच्य के बल-शौर्य का ध्यान धर तू भारती ।
आन पर जो मर-मिटे उनकी उतारी आरती ॥
सकल्प लेकर तू युवा उस परम्परा को याद रख ।
लड़ते रहे जो जिन्दगी से हथेली पर निज प्राण रख ॥
प्राचीनता को भूल कर कितने गिरे जाना कभी है ॥११॥

उठ-जाग ! कुछ काम कर ऐ देश के यौवन भ्रमर ।
देश को प्रसुप्त शक्ति को पुन. करदे उजागर ॥
श्रम और विवेक के संगम स्थल पर से युवा ।
प्राचीन आर्यावर्त्त की स्थापना कर दे यहां ॥
भारत भाग्य अस्ताचल को जा रहा जाना कभी है ॥१२॥

पृ० ६ का शेष

२३—महर्षि दयानन्द सरस्वती का सिद्धान्त भी यही है। महर्षि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका मे वेदान्त-दर्शन के सूत्र—"तत्तु समन्वयात्" [१।१।४] की व्याख्या के प्रसग मे लिखते हैं :—

"तदेव ब्रह्म सर्वत्र वेदवाक्येषु समन्वितं प्रतिपादितमस्ति । क्वचित् साक्षात् क्वचित् परम्परया च । अतः परमोऽर्थो वेदानां ब्रह्मैवास्ति ।"

अर्थ—वह ब्रह्म ही सब वेदवाक्यो मे समन्वित अर्थात् व्याप्तिरूप से प्रतिपादित है। कही साक्षात् रूप में और कही परम्परा की रीति से। अतः चारों वेदो का प्रधान अर्थ—मुख्य प्रतिपाद्य विषय तो ब्रह्म ही है।

२४—गीताकार का कथन [१७।२३] है—

ओं तत्सदितिनिर्देशो, ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥

अर्थ—वह "ओ३म्" एक वास्तविक और सर्वोपरि सत्ता है। यह कोई काल्पनिक कथन मात्र नही है। ब्रह्म के विषय में अकार, उकार और मकार [अ+उ+म्=ओ३म्] यह तीन प्रकार का निर्देश तीन प्रकार का प्रसिद्ध है। इस तीन प्रकार के अक्षर-बोध के आधार पर ही प्राचीन काल में वेदों का प्रकाशन, ब्राह्मण ग्रन्थों का निर्माण और यज्ञों का प्रचार हुआ था। इस श्लोक को जो अर्थ पौराणिक करते हैं कि—"ब्रह्म का कथन—ओम्-तत्-सत् यह तीन प्रकार का माना गया है।" सो नासमझी की बात है।

२५—सब शुभ कार्यों के आरम्भ में ईश्वरोपासना और "ओ३म्" नाम के जप का विधान [१७।२४] करते हैं—

तस्मादोमित्युदाहृत्य, यज्ञदानतपःक्रियाः ।
प्रवर्त्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥

अर्थ—क्योंकि "ओ३म्" ही सब का उपास्य देव और इस सृष्टि का निर्माता [निमित्त कारण] है। इसलिये सभी आस्तिक पुरुषों, वेदवादियों और शिष्टजनों के धर्म-शास्त्रोपदिष्ट यज्ञ, दान, तप आदि सभी व्यवहार आरम्भ में "ओ३म्" ऐसा बोलकर अर्थात् विधिपूर्वक ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करके ही आरम्भ होते हैं।

२६—गीताकार ने जो वाणी का तप बतलाया है, [१७।१५ में] इस प्रकार है—

अनुद्वेगकरं वाक्यं, सत्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव, वाङ्मयतप उच्यते ॥

अर्थ—जो क्रोध को न भडकाने वाला, प्रिय, सत्य और हितकारक सम्भाषण, वेदों और ऋषियों के ग्रन्थों का पठन-पाठन तथा ईश्वर के ओ३म् नाम का जप है। उस को ही वाणी का तप कहते हैं।

२७—गीता के अन्य प्रसगो में भी ओ३म् नाम के जप और ईश्वर-भक्ति की अत्यन्त गहरी और दोषरहित पुट विद्यमान है। गीता के विरुद्ध जो कुछ लिखा वा बोला जाता है, उसके कई कारण हैं। यथा—गीता के टीकाकारो की खीचतान, गीतामर्म को समझने में लोगों की असमर्थता, गीता विषयक भ्रामक प्रचार, पूर्वाग्रह के साथ गीता-विचार में प्रवृत्ति और गीता की पृष्ठिभूमि का घोर अज्ञान। इस विषय का विस्तृत प्रतिपादन फिर कभी होगा। (क्रमशः)

पृष्ठ ८ का शेष

पर आप-ऋषि मुनि और कणाद को अनीश्वरवादी कहने का दुस्साहस करते हैं।

दार्शनिक-निकाय के वैशेषिक दर्शन पर प्रामाणिक भाष्य प्रशस्त मुनि का माना जाता है। भाष्यकार सूत्रानुसारी तथा आचार्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भाव को जानने वाले थे। इसलिये तो उन्होंने सृष्टि संहार प्रकरण में उल्लेख किया है—

"संसारखिन्नानां सर्वप्राणिनां निशिविश्रामार्थं सकलभुवनपतेर्महेश्वरस्य संजिहीर्षा समकालं शरीरेन्द्रियमहाभूतोपनिबन्ध इत्यादि।

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि महर्षि कणाद और उनके दर्शन के मर्मज्ञ भाष्यकार सभी ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते थे। वे ईश्वर की सिद्धि ईश्वर को संसार के कर्तृत्व रूप मे करते हैं। उनकी प्रमाणभूत युक्तियाँ यूँ हैं—इस संसार का कोई कर्ता होना चाहिए। क्योंकि यद्यत् कार्यं तत् तत् कर्तृ जन्य कार्यत्वात् घटवत्।' अर्थात् जो भी किसी कारण से कार्यरूप में परिणति होती है। उसका कर्ता जरूर होता है। जैसे कि मिट्टी से घड़ा बनाने के लिये कुम्भकार का होना आवश्यक है। ठीक इसी प्रकार प्रकृति रूप कारण से कार्यरूप जगत् को बनाने वाला कर्ता जरूर होना चाहिये। कोई शङ्का कर सकता है कि जैसे भूमि मे बीज स्वयमेव अङ्कुरित हो जाता है उसके लिये किसी कर्ता की आवश्यकता हम नहीं देखते इसी प्रकार इस संसार को मान लेंगे। परन्तु यह शङ्का दोषपूर्ण है। क्योंकि साध्य कभी उदाहरण नही बन सकता। इस प्रकार मैंने यह कुछ दार्शनिकों के दिङ्मात्र विषय का उल्लेख किया है जो विशेष विचार करना चाहें वह उनके आकर ग्रन्थो मे रमण करके सत्यासत्य निर्णय कर सकते हैं। यद्यपि वास्तविकता यह है कि जिसने भी शान्तचित्त होकर सत्यासत्य के निर्णय के लिए चिन्तन किया है वे दार्शनिक इस स्तर पर पहुँच गये हैं, जैसाकि पाश्चात्य विद्वान् प्लेटो ने आजीवन ब्रह्मचारी रहकर दार्शनिक चिन्तन के बाद स्पष्ट उद्घोषणा की—

God is truth and light his shadow अर्थात् इस संसार को प्रकाशित करने वाली कोई सत्ता है। तथा सूर्य का प्रकाश उसकी प्रतिबिम्ब मात्र दिखाता है।

परन्तु इतना सुस्पष्ट तथा तर्क सिद्ध ईश्वर के होने पर भी इसकी अनुभूति सबकी बुद्धि मे क्यों नहीं होती। इसका उत्तर उपनिषद् अति सुन्दर तथा लघुतम शब्दों में यो देती है—

एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मा न प्रकाशते दृश्यते त्वग्र्या बुद्ध्या सूक्ष्मदर्शिभिः। ●

पृष्ठ ९ का शेष

है, जो घास-फूंस की तरह बढ़ रहे हैं और खाद्य पदार्थों को खा-खाकर नष्ट कर रहे हैं, खेत में बढ़ती हुई जंगली घास की तरह लगातार संख्या में बढ़ते जायेंगे।

होते होते एक ऐसा जमाना आयेगा जब समाज मे बुद्धिमान् वर्ग समूचा ही नष्ट हो जायेगा और गंवार मूर्ख तथा अविकसित लोग रह जायेंगे। हमारी अधिकांश आबादी घास-फूंस जैसे बेकार के आदमियों की हो जायगी।

अमीर समझदार और सुविधा सम्पन्न व्यक्ति अधिक सन्तानों को भी योग्य बना कर समाज के उपयोगी अंग बना सकते हैं जबकि मूर्ख और गंवार समाज में कूड़ा-करकट ही पैदा करेंगे। गांवों तथा पिछड़े प्रदेशों में मूर्ख लोगों की आबादी उत्तरोत्तर अभिवृद्धि पर है, जबकि ऊँचे तबके के बुद्धिमान् लोग कम होते जा रहे हैं।

हमारे समाज मे उपयोगी और बुद्धिमान् वर्ग ही बढ़ना चाहिए। ●

आर्यसमाज राजा प्रताप बाग दिल्ली का चुनाव

प्रधान—श्री रामकृष्ण गांधी, मन्त्री—विद्याधर वर्मा, कोषाध्यक्ष—करमचन्द कपूर, पुस्तकाध्यक्ष—नरेन्द्रकुमार मदान। —मन्त्री आर्यसमाज

विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी में पी-एच०डी० की व्यवस्था

इस वर्ष विश्वविद्यालय के तत्त्वावधान में पी-एच० डी० (हिन्दी, संस्कृत, वेद,) की विशेष सुविधा प्रदान की गई है। पी एच० ड० मे प्रवेशेच्छुक शोधार्थी की न्यूनतम योग्यता एम० ए० द्वितीय श्रेणी अवश्य होनी चाहिए। इस विषय मे विशेष एव पूर्ण विज्ञप्ति 'प्रस्तोता कार्यालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय' के प्राप्त की जा सकती है। योग्य छात्रों को २५०) रु० प्रतिमास की छात्रवृत्ति भी प्रदान की जा सकती है।

आर्यसमाज दयानन्द मार्ग (सब्जी बस्ती) दिल्ली का चुनाव

प्रधान—श्री ज्वालाप्रसाद, मन्त्री—श्री रामसिंह शर्मा, कोषाध्यक्ष—डा० भारतभूषण तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री हजारीमल चड्ढा और अन्य अन्तरंग सदस्य। —मन्त्री

सभालका जि० मुजफ्फरनगर को सूचना

मेरे गाव सभालका (शामली) मे आर्यसमाज की स्थापना हो गई है। आर्यसमाज का उत्सव बड़ समारोह से सम्पन्न हुआ। इसमें आर्यसमाज के अनेक पूज्यसन्यासी, वानप्रस्थी, पण्डित और भजनोपदेशक पधारे थे। साथ ही आगामी वर्ष के लिए निम्नलिखित निर्वाचन भी किया गया—

प्रधान—मा० वेदपालसिंह जी मन्त्री—प० जयभगवान् जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—मा० ईश्वरसिंह जी तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री देवराजजी आर्य।

संस्थापक कु० वीरेन्द्र सिंह वीर" आर्योपदेशक

आर्यसमाज दीवान हाल दिल्ली का वार्षिक निर्वाचन

प्रधान—श्री बालमुकुन्द जी आहूजा मन्त्री—श्री पुरुषोत्तम दास जी, कोषाध्यक्ष—ला० परमानन्द जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सुरेन्द्रकुमार जी शास्त्री। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज मन्दौर (जिला रोहतक) का वार्षिक चुनाव

प्रधान—डा० प्रेमनाथ जी आर्य, मन्त्री—श्री जयदेव जी आहूजा, कोषाध्यक्ष—चौ० [illegible] जी गुप्त, पुस्तकाध्यक्ष—श्री किशन चन्द जी मनीषा। —जयदेव आहूजा

आर्यसमाज नके गांव (जिला उस्मानाबाद) का चुनाव

प्रधान—श्री रङ्गनाथ राव शिकरे, मन्त्री—श्री काशीनाथ राव व्यवहारे, कोषाध्यक्ष—श्री हीरालाल जी कोष्केकर, पुस्तकाध्यक्ष—वद-एम-बारा-आयुर्वेदाचार्य। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज कलकत्ता का गो-रक्षा का विशेष कार्यक्रम

पश्चिम बंग सरकार की ओर से समय समय पर उन गायों बछड़ो को नीलामी की जाती है, जिन्हें सरकार अपने हरिघाटा व कल्याणी पशु केन्द्रों में नही रखना चाहती। यह नीलाम यद्यपि उन्हें ही दिया जाता है जो इन पशुओं को पालना चाहते हैं किन्तु यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि ये पशु सरकारी केन्द्रो से निकल कर जीवन के अन्तिम क्षणो की प्रतीक्षा कहां करते हैं। कई गोभक्तों के परामर्श से आर्यसमाज कलकत्ता ने सरकार से प्रार्थना की कि इन पशुओ के जीवन की रक्षा होनी चाहिये। आर्यसमाज की इस प्रार्थना पर सरकार ने आर्यसमाज को नीलामी के भाव पर इन पशुओ को देना स्वीकार कर लिया। कलकत्ता के गोभक्त समाज ने आर्यसमाज के साथ चेष्टा की और गोभक्त दानियों के पुण्य दान ४४०००) रुपये एकत्र करके ६६१ पशुओ को सरकार से लेकर कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को सौंप उनके जीवन की रक्षा की गई। जिनमें काफी गाय गर्भवती हैं तथा कुछ दूध भी देती हैं। गोभक्त समाज का यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है। यह कार्य चलता रहेगा लगभग ३०० पशु प्रति मास केन्द्रो से बिक्री किये जाते हैं। आर्थिक सहायता प्रार्थनीय है।

—छबीलदास सैनी

मन्त्री—आर्यसमाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कलकत्ता-६

ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार करने के लिये

सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम भाग स्वमन्तव्यामन्तव्य, आर्योद्देश्यरत्नमाला आर्यसमाज के नियम टिप्पणियों सहित

१०० प्रतियों के लिये २५), ५० प्रतियों के लिये १५)

२५ प्रतियो के लिए ८) ७५, १० प्रतियों के लिए ४)

वैदिक सन्ध्या अर्थ सहित	मूल्य १०) सैकड़ा
वैदिकधर्म की विशेषताएँ ट्रैक्ट लेखक प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-५० पैसे
महान् दयानन्द ००-७५ दयानन्द चरित्र	१-५० ,
मुक्ति के साधन १-०० प० लेखराम जीवन चरित्र	१-५०
वैदिक सत्सग पद्धति व्याख्या सहित हिन्दी अग्रेजी	२-०० ,,
जीवन ज्योति ले० प० चमूपति जी एम ए	१-००
सोम सरोवर	१-००
The Principles of Aryasamaj	१-५० ,,
Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
Subject Matter of the Vedas	१-०० ,
The Vedas ००-५० philosophy of Vedas	०-५० ,

अपना आदेश पत्र भेजकर शीघ्र मगवाइये। थोड़ी प्रतियाँ शेष हैं।

प्राप्ति स्थान

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर अत्युपयोगी साहित्य

आर्यमर्यादा साप्ताहिक की अपूर्व भेंट

वेद आविर्भाव पद्धति विशेषांक प्रकाशित हो रहा है

आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रति वर्ष की भांति आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की ओर से वेद प्रचार सप्ताह श्रावणी पर्व पर इस बार भी स्वाध्याय के लिये आर्यमर्यादा का वेद आविर्भाव पद्धति विशेषांक बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित किया जा रहा है। इस विशेषांक में वेदों का ईश्वरीय ज्ञान चारों ऋषियों द्वारा किस पद्धति के अनुसार प्रकट हुआ महत्व पूर्ण विषय पर प्रकाश डाला जावेगा। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास में आज तक इस प्रकार का विशेषांक अथवा ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हो सका। आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वानो तथा लेखकों के लेख वेद प्रचारार्थ बहुत ही उपयोगी सामग्री होगी। अत आर्यसमाजों आर्य सस्थाओं और स्वाध्यायशील महानुभावो से प्रार्थना है कि वेद सप्ताह पर इस विशेषाक को भारी सख्या मे मगवाकर अधिक से अधिक हाथों तक पहुचा कर वेद प्रचार के पुनीत कार्य मे सहयोग दीजिये।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

पुरोहित की

आयसमाज करोलबाग नई दिल्ली को एक सुयोग्य विद्वान पुरोहित की आवश्यकता है—इच्छुक सज्जन अपनी योग्यता का परिचय देकर १० अगस्त तक प्रार्थना पत्र भेज देवें—

मन्त्री आर्यसमाज, करोल बाग नई दिल्ली

ग्रीष्म ऋतु का उपहार



गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से ही क्यों खरीदें ?

क्योंकि—

● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण पूर्ण शास्त्रोक्त ढंग से तथा सर्वश्रेष्ठ उपादानों द्वारा करती है।

●● गुरुकुल कागडी फार्मेसी की आय किसी व्यक्ति को जेब में नहीं जाती, वरन् आप के ही बच्चों की शिक्षा आदि पर व्यय होती है।

●●● गुरुकुल कांगडी फामसो द्वारा निर्मित औषधि क्रय करने पर आप जहाँ निश्चय ही श्रेष्ठ औषधि प्राप्त करते हैं वहाँ आपकी जेब से निकला एक-एक पैसा भी राष्ट्र के निर्माण तथा जनता की सेवा में खर्च होता है।

●●●● इसलिए आप अपनी आयुर्वेदिक औषधियों तथा तैल आदि सम्बन्धी किसी भी खरीद के समय गुरुकुल कागडी फार्मेसी(हरिद्वार)का नाम अवश्य ही याद रखें

आपका संतोष हमारा उद्देश्य है।

नोट:—१ किसी भी रोगी के सम्बन्ध मे पत्र द्वारा या मिल कर सम्मति प्राप्त कर।

२ गुरुकुल कागडी फामसी की औषधियां बेचने के लिये नियम मुफ्त मगाव।

शाखा कार्यालय·

१ ६३ गली राजाकेदारनाथ चावडी बाजार दिल्ली-६
२ गोविन्द मित्र रोड पटना ४ (बिहार)
३ नेहरू रोड केल्वारपुरा, रामबिहार के पास [illegible], म० प्र०

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी [हरिद्वार]

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रस, पहाड़ी धीरज देहली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड नई दिल्ली १ से

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

तीन बार शान्ति पाठ का प्रयोजन यह है कि त्रिविध ताप अर्थात् इस ससार मे तीन प्रकार के दु ख हैं। 'एक आध्यात्मिक' जो आत्मा शरीर मे अविद्या, राग द्वेष, मूर्खता और ज्वर पीडादि से होते हैं। दूसरा 'आधिभौतिक' जो शत्रु व्याघ्र और सर्पादि से प्राप्त होता है। तीसरा "आधिदैविक" अर्थात् जो अति वृष्टि, अति शीत, अति उष्णता मन और इन्द्रियो की अशान्ति से होता है। इन तीन प्रकार के क्लेशो से परमेश्वर दूर करे। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ३८ | २२ भाद्रपद वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ७ सितम्बर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१०) रु०
" " विदेश मे—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य —२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

तत्रादिमे इन्द्रशब्देन शूरवीरगुणा उपदिश्यन्ते ॥

इस सूक्त के पहले मन्त्र में इन्द्र शब्द से शूरवीरो के गुणो का प्रकाश किया है।

आ व इन्द्रं क्रिविं यथा वाजयन्तः शतक्रतुम् ।

मंहिष्ठं सिञ्च इन्दुभिः ॥ ऋ० १.३०.१

पदार्थ—(आ) सर्वत. (व.) युष्माकम् (इन्द्रम्) परमैश्वर्यहेतु- [illegible]) [illegible] [illegible] कर्माणि [illegible] (महिष्ठम्) अतिशयेन महान्तम् (सिञ्च) (इन्दुभिः) जलैः।

अन्वय—हे सभाध्यक्ष मनुष्या यथा कृषीवला क्रिविं कूप सम्प्राप्य तज्जलेन क्षेत्राणि सिंचन्ति यथा वाजयन्तो वायव इन्दुभि शतक्रतु महिष्ठमिन्द्र च तथा त्वमपि प्रजा सुखं सिंच सयोजय।

भावार्थ—अत्रोपमालङ्कार। यथा मनुष्या पूर्वं कूप खनित्वा तज्जलेन स्नानपानक्षेत्रवाटिकादि सिचनादिव्यवहार कृत्वा सुखिनो भवन्ति तथैव विद्वांसो यथावत्कलायन्त्रेष्वग्नि योजयित्वा तत्सम्बन्धेन जल स्थापयित्वा चालनेन बहूनि कार्य्याणि कृत्वा सुखिनो भवन्ति।

भाषार्थ—हे सभाध्यक्ष मनुष्य (यथा) जैसे खेती करने वाले किसान [illegible] ([illegible]) [illegible] [illegible] ([illegible]) [illegible] (शतक्रतुम्) जिस से अनेक कर्म होते हैं (मंहिष्ठम्) बड़े (इन्द्रम्) सूर्य्य को सींचते वैसे तू भी प्रजाओं को सुखो से अभिषिक्त कर।

भावार्थ—इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे मनुष्य पहिले कूएँ को खोद कर उस के जल से स्नान पान और खेत बगीचे आदि स्थानो को सींचने से सुखी होते हैं वैसे ही विद्वान् लोग यथायोग्य कला यन्त्रो मे अग्नि को जोड के उस की सहायता से कलो मे जल को स्थापन कर के उन को चलाने से बहुत कार्य्यों को सिद्ध कर के सुखी होते हैं।

(—ऋषिदयानन्द का वेदभाष्य)

"पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥"

वह सम्पूर्ण है और यह भी सम्पूर्ण-सम्पूर्ण में से सम्पूर्ण निकाल लेने से भी सम्पूर्ण बच रहता है।

यह इनफिनिटी का सबसे प्रथम आविष्कार "ईशोपनिषद्" के प्रणेता हमारे ऋषि ने लाखो वर्ष पूर्व किया था जब कि यूरोपीय विद्वानो ने अब किया है। —श्री पूज्य घनश्यामसिंह गुप्त, दुर्ग (म० प्र०)

वैदिक धर्म प्रचाराथ विदेश यात्रा



आर्यजगत् के सर्वमान्य पूज्य श्री महात्मा स्वामी आनन्द सरस्वती जी महाराज वैदिक धर्म प्रचारार्थ अमेरिका के कई देशो मे यात्रा के लिये १५ अगस्त १९६९ को हवाई जहाज से जा चुके हैं। पालम (दिल्ली) के हवाई अड्डे पर प्रो० रामसिंह जी एम.ए. प्रधान सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा [illegible] अनेक गणमान्य आर्य [illegible] परमेश्वर [illegible] पूर्ण सफल करे—यही प्रार्थना है।

—सम्पादक

नमस्कार

रचयिता—श्री पं० जगत्कुमार शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली

दिक्कालादि—विमुक्त, ज्ञान मूरत, बे-अन्त कर्त्तार को,
निज-अनुभव-अधिगम्य, रम्यतर को, शकर, निराकार को।
जगदाधार, अनाम, तेज--राशी, सर्वज्ञ, सर्वेश को,
वारम्वार प्रणम्य, विश्वधर को, मेरा नमस्कार हो ॥१॥

सच्--चित्--आनन्दरूप, न्यायकारी, आदित्य को, सोम को,
शुचितर, शिवतर, नित्य, सर्वरक्षक, तक्षक, परम, ओम् को।
व्यापकतम, गुणधाम, व्योम--वत् जो, अखिलेश है, एक हो,
अजरामर, करुणेश, पूज्यवर को, मेरा नमस्कार हो ॥२॥

भूपो का भी भूप, काल का भी, जो काल है, सर्वदा—
मनसा, वाचा, कर्मणा मैं उसके हो गीत गाता रहूं।
मानव-तन अनमोल, भोग-विविधा का दान जिससे मिला,
गुरुओ के गुरुदेव, विज्ञवर को, मेरा नमस्कार हो ॥३॥

रचना-कौशल देख-देख उसका, जिसने अलख को लखा,
भज-भज कर गुण-धाम नाम उसका भव से हुआ पार जो।
उस साधु--समुदाय--सम--चलन की, है मेरी भी लालसा,
चिर-ईप्सित, निष्काम, प्रेम-धय को, मेरा नमस्कार हो ॥४॥

छुट जाये त्रय-ताप, पाप सबके, यज्ञो का विस्तार हो,
प्रज्ञा का शुभ-दान-मान जग का कल्याण करता रहे।
मानवता, आरोग्य, मोद, मगल, सत्पथ-प्रदा--सम्पदा—
के दाता भगवान्, मान्यवर को, मेरा नमस्कार हो ॥५॥

ओङ्कार—जप—विधि—१२

वेदोक्त—विधान—२

(लेखक श्री प० जगकुमार जी शास्त्री 'साधुसोमतीर्थ" देहली)

१—यजुर्वेद के दूसरे अध्याय का तेरहवा मन्त्र है —

१—मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिम तनोत्वरिष्टं यज्ञ समिम दधातु। विश्वे देवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ ॥

अथ—अत्यन्त वेगवान् (मन) मन (आज्यस्य) ईश्वर क, ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना रूपी यज्ञ के (जूति) आनन्दप्रद आवेगो को, आनन्द-धाराओ को (जुषताम्) उपयोग मे लावे। [ईश्वर-भक्ति के आनन्द मे निमग्न रहे।] (बृहस्पति) ज्ञान-विज्ञान का प्रशिक्षक गुण, कर्म और स्वभाव मे सब का सर्वोपरि स्वामी=परमेश्वर (इमम्) इस (यज्ञम) ईश्वर-भक्ति रूप ब्रह्म-यज्ञ को (तनोतु) सम्पूण ससार मे प्रचारे, प्रसारे। [वह सवत्र] (अरिष्टम्) आरोग्य, आनन्द, सरस एव माधुर्य युक्त जीवन को (समदधातु) सम्यकतया विस्तारे, प्रदान करे। (विश्वे) सब (देवास) दिव्य गुण, कर्म और स्वभाव वाले देव=उत्तम नर और उत्तम नारिया (इह) इस ससार मे, इस जीवन मे तथा हृदय मे (मादयताम्) आनन्दित रहे। [हे ससार के लोगो!] (ओम् प्रतिष्ठ) ओम् की शरण मे रहकर प्रतिष्ठा को प्राप्त करो, ओङ्कारोपासना करो।

२—परोक्ष की अपरोक्ष-अनुभूति प्राप्त कीजिये।

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्, यस्मिन् देवा अधिविश्वे निषेदु:।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति, य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ॥

ऋ० १।१६४।३९

अर्थ—(यस्मिन्) जिस (परमे) सर्वोपरि (अक्षरे) विनाश-रहित [illegible] (व्योमन्) व्योमन्=वि+ओम+अन्=व्योमन् मे (विश्वे) सब (देवा:) दिव्य अन्तस्थ और तत्त्वज्ञानी उपासक (अधिनिषेदु) निवास करते हैं, अधिकार पूर्वक आश्रय पाते हैं, (तत्) उसको (य) जो (न वेद) नही जानता नही प्राप्त करता [उसके लिये] (ऋच) ऋग्वेदादि मे प्रतिपादित ज्ञान-विज्ञान (किम्) क्या (करिष्यति) करेगा? उसके लिये तो ऋग्वेद का वा सब वेदो का पठन-पाठन व्यर्थ हो हो जायेगा।] और (य) जो विद्वान् उपासक (तत्) उस विनाशरहित परम अक्षर "व्योमन" को (विदु) जान लेते है, प्राप्त कर लेते हैं, (ते इमे) वे ये सब प्राप्त पुरुष तो (समास्ते इत्) [उस सर्वोपरि अविनाशी स्वामी की शरण मे [सुख से रहते ही हैं।]

३—वेदो मे यह "व्योमन्" पद कई प्रसगो मे दृष्टिगोचर होता है। इस के अर्थवाद भी कई प्रकार के मिलते हैं। इसका विशेष विचार यहाँ कर्तव्य है।

४—यह "व्योमन्" अक्षर=पद तीन पदो के मेल से बना है—वि+ओम्+अन्=व्योमन्। इस समुच्चय अथवा समस्त पद का अथ इस प्रकार है—

वि=विविध रूपा, विविध प्रकार के विशेषणो से युक्त विशेषो के आधार पर जानी जाने वाली विशिष्टा प्रकृति इस सृष्टि का उपादान कारण। दाशनिक इसे प्रधान भी कहते हैं।

ओम्=परम पुरुष परमात्मा, सर्वरक्षक, सर्व विधाता, गुण, कम और स्वभाव मे सर्वोपरि एक, अखण्ड अमर विकार रहित, सत्ता, इस विश्व का निमित्त कारण।

अन्=अनति, प्राणिति प्रकर्षेण गतिशीलो भवति। चेतन जीवात्मा समुदाय।

[आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् लेखक की "व्योमन्" पद की उपयुक्त यह 'निरुक्ति' आपके गहन स्वाध्यय और सूक्ष्म का परिचय देती है। इस पर स्वाध्याय रत वैदिक विद्वानों को विचार करना चाहिये। हम इसे 'निरुक्ति' के आविष्कार के लिये लेखक महोदय के सामने नतमस्तक हैं।
—[सम्पादक]

५—यह जड—जगम स्वरूप, नाम-रूपमय विश्व इन तीनो मे ही समाविष्ट है। एक "व्योमन्" पद के कथन से ही सब का ग्रहण हो जाता है। इस विचार को ही "त्रैतवाद" कहते हैं। इसके अनुसार इस सृष्टिरूपा पहेली का समाधान यह है कि जिस ईश्वर ने, कारणरूपा नित्य प्रकृति से, नित्य जीवात्माओ के लिये इस सृष्टि की रचना की है। जब सृष्टि-रचना की इस प्रक्रिया को कोई मनुष्य अपने अन्तरात्मा की साक्षी से पूर्णतया यथावत् रूप मे जान लेता है, तब वही आप्त अथवा तत्त्वज्ञानी कहलाता है। वही सद्गति और ईश्वर-दर्शन की सिद्धि को पाता है।

६—वेद का यह ४ सकेत देखिये—

तिस्रो वाचा उदीरते, गावो मिमन्ति धेनव:।
हरिरेति कनिक्रदत् ॥ ऋ० ९।३३।४

अथ—(तिस्र) तीन (वाचा) वाणिया ध्वनिया, सत्तायें—अ, उ, म्=ओम वि+ओम्+अन्=व्योमन् ईश्वर, जीव, प्रकृति=विश्व मे (उत्-ईरते) ऊँचे स्वर मे गूज रही है, पुकार-पुकार कर अपनी-अपनी सत्ता और महत्ता का पता दे रही हैं, मानो (गाव) गौवें (धेनव) दूध की कामना वाले बच्छडो को (मिमन्ति) पुकार रही है। अथवा मानो (धनव) दुधारू गौव (गाव) अपने बच्छडे-बच्छडियो को (मिमन्ति) पुकार रहो है। [जब भक्तो का भगवान् के प्रति यह परम-प्रम का सम्बन्ध जुड जाता है ईश्वर प्रणिधान सम्यक्तया हो जाता है, जब प्रम-पुकार होने नगती है तब] (हरि) दु खहत्त ईश्वर (एति) [भक्त के हृदय दर्शन पथ मे] आता है प्रत्यक्ष हो जाता है। (कनिक्रदत्) गरजता हुआ, आनन्द बरसाता हुआ, आश्वासन देता हुआ।

७—यह परम-प्रम ही भक्ति का उत्तम लक्षण है। गाये और बच्छड़े का पारस्परिक प्रेम ही प्रेम-योग का सर्वाधिक सुन्दर उदाहरण है। भक्तों को अपने हृदय मे भगवान् के प्रति वैसा ही परम-प्रेम धारण करना चाहिये, जैसा कि बच्छडे-बच्छडियो के हृदय मे अपनी-अपनी माताओ के लिये होता है। अथवा गौ-माताओ के हृदय मे अपने-अपने बछडे-बच्छड़ियो के हृदय मे होता है। इस परम-प्रेम को जगाकर और आत्मसात् करके ही भक्तिवाद द्वारा सफलता की आशा की जा सकती है।

८—आचार्य चमुपति जी का कथन है—

खड़े मूक उपहार सम, भक्त और भगवान्।
भक्त मूर्त्त अर्चन बना, प्रभु रूप वर-दान ॥

९—सन्त कबार का कथन है—

प्रेम न जाने नियम व्रत, प्रेम न बुध-व्यवहार।
प्रेम-मगन जब मन भया, कौन गिनु तिथिवार ॥

१०—एक लालची भक्त की लालसा देखिये—

यह ख़ाहिश है कि हम तुम से, तुम्हीं को माग लें साहिब।
हमारी आरज़ू तुम हो, हमारा मुदआ तुम हो ॥

११—भक्तवरो! प्रेमपूर्वक ओङ्कार भजो —

ओम् ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओम्, ओ३म्, ॥

१२—एक और पावन-प्रसग है—

ओमासश्चर्षणी धृतो, विश्वे देवास आगत।
दाश्वांसो दाशुष: सुतम् ॥ ऋ० १।३।७

अर्थ—कोई सदगृहस्थ प्रभु के उपासको और ब्रह्मवाद के प्रचारको को प्रेम पूर्वक अपने घर पर आमंत्रित कर रहा है—

(विश्वे देवास) हे सम्पूर्ण विद्वानो! (आगत) आजाओ, [मेरे घर

शेष पृ० ५

सम्पादकीय

आर्य जनता ध्यान देवे

आर्य जनता को यह ठीक ठीक ज्ञात हो चुका है कि आर्यसभाओं में फैले हुए विवादों को हैदराबाद आर्य सम्मेलन में दूर करने की सवसम्मत मांग और आग्रह पर पूज्य श्री स्वामी आनन्द जी सरस्वती ने बिना किसी शर्त के आधार पर इन विवादों को निष्पक्ष रूप से दूर करवाने का कार्य आरम्भ कर दिया था। कई महिने के यत्न करने पर उन के हृदय मे जो भाव हुआ, उस को "आर्यजगत् के नाम वक्तव्य" में रख दिया। जब यह पवित्र भाव पूरा होता न जान पड़ा, तो पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज ने अपने प्राणों की बाजी को लगाकर इस उत्तम कार्य को करने के लिये यत्न आरम्भ कर दिया है। भगवान् करे कि पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज अपने इस पवित्र यत्न में सफल हों, जिससे श्रद्धेय श्री स्वामी आनन्द सरस्वती जी की असफलता पर इन महात्मा जी को हृदय पर लगे आघात से आर्यसभाओं के नेता अब भी संभल कर पूज्य महात्मा जी के प्राणो पर संकट न आने देवें। तथा महात्मा जी के आदेश पर चल कर उन की आज्ञा के सामने शिर झुका देवें। जिससे दोनों पूज्य महात्माओं के शुभ आशीर्वाद से आर्यसमाज फूलता फलता आगे बढ़ता रहे।

पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज के इस कार्य के परिणाम स्वरूप अभी तक जो हल चल हुई। आर्यजनता को उस की जानकारी देने के लिये हमने इसी पृष्ठ पर सार्वदेशिक सभा नं० १ का प्रस्ताव दे दिया है, जिसके विषय में पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज ने "वीर अर्जुन" दैनिक देहली में अपना वक्तव्य प्रकाशित कराया है, उसका भी हमने "वीर अर्जुन" के प्रति आभार प्रकट करते हुए प्रकाशित कर दिया है। इसके साथ ही सार्वदेशिक सभा नं० २ के प्रधान का पत्र पूज्य महात्मा जी के नाम का भी दे दिया है। इन तीनों के अतिरिक्त 'आर्यसमाज संगठन समिति' का वक्तव्य भी अन्त में प्रकाशित कर दिया है। इन चारों को आर्यजगत् पढ़कर पिछली जानकारी रखे जिससे भविष्य में जो होगा उस पर आर्यजगत् अपना निष्पक्ष विचार बना सके। जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली नं० १ की अन्तरंग दिनांक २४-८-६९ का प्रस्ताव

हैदराबाद आर्य महा सम्मेलन के निश्चयानुसार प्रान्तीय सभाओं के विवाद निपटाने के लिए श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी ने दायित्व लिया था। खेद है कि श्री स्वामी जी ने पंजाब सभा के विवादों का कोई सम्भव हल निकालने से पूर्व इस दायित्व को बीच में ही छोड़ दिया जिससे यह विवाद और उग्र रूप में सामने आने लगे।

अतः यह सभा श्री आनन्द स्वामी जी द्वारा छोड़े गये अधूरे काय को पूर्ण रूप से निर्णायक स्थिति तक पहुंचाने का दायित्व निम्नलिखित तीन संन्यासी महानुभावों को सौंपती है कि वे न्याय सभा के निर्णय तथा सार्वदेशिक सभा के नियमोपनियम के अनुसार आर्य समाज में चल रहे विवादों का हल निकाल कर सभा को सूचित करें जिससे उस निर्णय को वैधानिक रूप देने में भी अपने अधिकार का प्रयोग कर सके।

१ महात्मा आनन्द भिक्षु जी
२. स्वामी रामेश्वरानन्द जी
३. स्वामी विद्यानन्द जी विदेह

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नं० २

३/३ रानी झांसी रोड, नई दिल्ली

दिनांक २५-८-६९

आदरणीय महात्मा जी, सादर नमस्ते।

सार्वदेशिक सभा में चल रहे संघर्ष को समाप्त करने के सम्बन्ध में आप के सब पत्र मिले। आप की भांति हम भी बहुत इच्छुक हैं कि सार्वदेशिक सभा का संघर्ष समाप्त हो और वहां शान्त वातावरण उत्पन्न हो ताकि आर्य जगत् में भी उससे शान्ति स्थापित की जा सके। महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज द्वारा दिये आदेशों का जिस प्रकार श्री रामगोपाल शालवाले आदि ने उल्लघन किया है, और उसके उपरान्त खुले पत्र छाप कर उनका निरादर किया है, उसे कोई भी आयसमाजी सहन नही कर सकता। हमें उन लोगों की धाधलो-को देख कर ही सार्वदेशिक का दूसरा सगठन बनाना पड़ा हम सब सच्चे हृदय से सार्वदेशिक के झगड़े समाप्त करना चाहते हैं। आप द्वारा इस विषय म उठाये पगो का हम सब आदर और सत्कार करते हैं तथा आप को सार्वदेशिक सभा की ओर से पूर्ण अधिकार देते हैं कि आप कई वर्षो से सावदेशिक सभा में चल रही धाधली को दृष्टि में रखते हुये झगड़े समाप्त करा दे। इस विषय में जो भी हम से मांगेंगे हम निस्संकोच प्रस्तुत करेगे और आप की सब आज्ञाओं का पालन करेगे।

भवदीय—रामसिंह

श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी, आर्यसमाज, नया बांस, दिल्ली।

आर्यसमाज विवादों के निराकरण हेतु समिति

महात्मा आनन्द भिक्षु द्वारा सदस्य होने से इन्कार

नई दिल्ली २९ अगस्त। महात्मा आनन्द भिक्षु ने एक वक्तव्य में कहा है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से समाचार पत्रों में एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि उसने प्रान्तीय सभाओं के विवाद समाप्त कराने के लिये तीन व्यक्तियों को एक समिति नियुक्त की है। इस समिति में दो अन्य संन्यासियों के अतिरिक्त मेरा नाम भी दिया हुआ है। मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि मैं ऐसी किसी समिति में नही हूं और न ही किसी सार्वदेशिक सभा को मैंने इस प्रकार की कोई स्वीकृति दी है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को अपनी ओर से निर्णायक नियुक्त करने का कोई अधिकार नहीं क्योंकि वह भी स्वयं एक विवादग्रस्त पक्ष है। अतः जब तक सभी विवादग्रस्त पक्ष निर्णायकों को स्वीकार न करें तब तक किसी समिति का कोई मूल्य नहीं। —वीर अर्जुन से साभार

महात्मा आनन्द भिक्षु जी सर्वाधिकारी घोषित

३१ अगस्त नई दिल्ली। आर्यसमाज सगठन समिति द्वारा आयोजित एक विशाल बैठक महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में आर्य समाज मन्दिर मार्ग में मध्याह्न २ बजे से हुई। जिसमें दिल्ली गुड़गावां, मेरठ, करनाल, आदि स्थानों के २५० आर्य समाजों के प्रधान-मन्त्री तथा कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त पं० शिवकुमार जी शास्त्री लाला रामगोपाल जी शाल वाले पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री, पं० रघुवीरसिंह जी शास्त्री, सोमनाथ जी मरवाहा, उमेशचन्द्र जी स्नातक, रामनाथजी भल्ला, स्वामी अखिलानन्द जी, स्वा० विज्ञानानन्द जी, अमर स्वामी जी, नारायणदास जी कपूर लाला नवनीतलाल जी, माता विद्योत्तमा जी यति आदि आर्यसमाजों के प्रमुख नेताओं ने भी भाग लिया। सभी उपस्थित कार्यकर्त्ताओं ने आर्यसमाज में चल रहे पारस्परिक विवादों के प्रति दुःख प्रकट करते हुए अतिशीघ्र सर्वसम्मत समाधान ढूढने के लिये नेताओं से प्रार्थना की। ४ घण्टे के विचार विमर्श तथा सुझावों के बाद सभी नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओं ने सब विवादों को सुलझाने के लिये महात्मा आनन्दभिक्षु जी महाराज से सर्वाधिकारी बनने तथा अनशन का निश्चय स्थगित करने की प्रार्थना की, जिसे महात्मा जी ने स्वीकार कर लिया। महात्मा जी ने चारों पक्षो से प्रार्थना की है कि वे अपनी ओर से अधिकार प्राप्त दो-दो व्यक्ति अपने पक्ष के स्पष्टीकरण के लिए १० सितम्बर तक दे दें। जिन के सहयोग से वास्तविक स्थिति को जान कर अन्तिम निर्णय लिया जा सके। सब पक्षों को ओर से महात्मा जी को सर्वाधिकारी स्वीकार करने के बाद आर्यजगत में पुनः प्रसन्नता की लहर दौड़ गई है। हमारी सभी पक्षों से प्रार्थना है कि वे आर्यसमाज की प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हुए महात्मा जी को निर्णय करने में पूर्ण सहयोग करेंगे तथा उसे सर्वात्मना स्वीकार करके आर्योचित आदर्श उपस्थित करें।

मन्त्री आर्यसमाज संगठन समिति

महात्मा आनन्द भिक्षु जी का आमरण अनशन आर्य जगत् में चिन्ता

(श्री रामनाथ जी भल्ला, कोषाध्यक्ष, आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब)

आर्यसमाज संगठन समिति की ओर से आर्यसमाजों को एक परिपत्र गया था उसमें कहा गया था कि अपने-अपने साप्ताहिक सत्संगों में प्रस्तावों द्वारा आर्य नेताओं से प्रेरणा करे कि वह आर्यसमाज के झगड़े समाप्त करे। दूसरी विज्ञप्ति में सार्वदेशिक सभा के दोनो संगठनों तथा आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के दोनो संगठनो से प्रेरणा की गई थी कि वह महात्मा आनन्द-भिक्षु जी को झगड़े समाप्त कराने के २४-८-६९ तक अधिकार दें अन्यथा वह इस प्रकार का अधिकार न देने वाले संगठन के विरुद्ध आमरण अनशन २७-८-६९ से करेंगे। आर्य समाजो से जो प्रस्ताव आ रहे है उससे आर्यजगत् में महात्मा जी के अनशन से उत्पन्न हुई चिन्ता का अनुमान लगाया जा सकता है। वस्तुस्थिति यह है कि जिन्हें अधिकारों की लालसा नही वह महात्मा जी को सारे झगड़े सौंपने को तैयार हैं जैसा कि अन्य पृष्ठ पर प्रो० रामसिंह जी, प्रधान, सार्वदेशिक सभा के महात्मा जी को लिखे पत्र से स्पष्ट प्रतीत ही होता है। इसके विपरीत श्री रामगोपाल शालवाले की सार्वदेशिक की अन्तरग सभा दिनांक २४-८-६९ का प्रस्ताव भी वही देख लें। उन्होंने महात्मा जी को कोई अधिकार नही दिया।

२. वास्तव में झगड़ा सार्वदेशिक सभा पर कब्जा बनाये रखने का है। इसीलिये श्रीरामगोपाल आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के षड्यंत्र रचते रहते हैं। ५-५-६८ से पूर्व आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रतिनिधियों को सार्वदेशिक सभा की बैठकों में भाग न लेने देने की भावना से उसके प्रतिनिधियों को स्वीकार न किया। फिर ५-५-६८ को न्यायालय की निषेधाज्ञा के बावजूद एक समानान्तर सभा बनाकर पंजाब सभा के १५ प्रतिनिधि स्वीकार करके अपनी बैठक में बैठा लिए। उनका गत ५ वर्ष का पंचमांश भी दिया तथा अन्य व्यय भी किये जो लगभग १२००० रु० बनते हैं। अपनी गद्दी बनाये रखने के लिए पंजाब सभा के अधिकारियों के विरुद्ध अभियोग आदिमें व्यय करके आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम कर्जे में डाल दिये। इससे ज्यादा समाज के धन का दुरुपयोग और क्या हो सकता है? सारी आर्यसमाजें, संस्थाय सम्पत्ति, धन तथा दोनों कार्यालय हमारी सभा के पास हैं। जालन्धर के सैशन जज के समक्ष केवल एक आर्यसमाज तथा ३ शिक्षण संस्थाओं पर श्री वीरेन्द्र आदि अपना कब्जा दिखा सके हैं और उनके विरुद्ध निषेधाज्ञा लगी हुई है जिस कारण वह अपने आपको न सभा के अधिकारी लिख सकते हैं तथा न सभा के कार्यों व सम्पत्ति में हस्तक्षेप कर सकते हैं। ला० रामगोपाल ने सार्वदेशिक सभा पर कब्जा रखने के लिये दूसरे पक्ष के प्रतिनिधि ले रखे हैं। इसी कारण ही उत्तरप्रदेश के नव-निर्वाचित १५ प्रतिनिधि भी नही लिये। इसके विपरीत श्री वाचस्पति शास्त्री तथा श्रीमती शकुन्तला गोयल जो उत्तर प्रदेश सभा के सदस्य भी नही उन्हें सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग में ले रखा है।

३. सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन हैदराबाद ने महात्मा आनन्द स्वामी जी को प्रान्तीय सभाओं के झगडे निपटाने के सम्पूर्ण अधिकार दिये थे। सार्वदेशिक की अन्तरंग ने भी २३-२-६९ को उसे स्वीकार किया था। २४-२-६९ का सार्वदेशिक सभा का जो प्रस्ताव अन्य पृष्ठ पर छपा है। उसमें निम्न बातें उल्लेखनीय हैं—

(क) सर्वप्रथम महात्मा आनन्द स्वामी जी को दोषी ठहराने का यत्न किया गया है जबकि श्री रामगोपाल तथा श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी के आदेशों का उलंघन तथा अपमान ही होता रहा है और महात्मा जी अपने निर्णय के अनुसार ने पंजाब सभा के प्रबन्ध, और नियंत्रण निर्वाचन का आदेश प्रो रामसिंह जी को देकर इस विवाद से मुक्त हो गये।

(ख) सार्वदेशिक सभा के झगड़े निपटाने का उक्त प्रस्ताव में कोई उल्लेख नहीं हालांकि आर्य जगत् में झगड़ों का मूल कारण सार्वदेशिक की पार्टीबाजी ही है।

(ग) महासम्मेलन ने सार्वदेशिक के नियम उपनियम तथा न्याय सभा के निर्णयों की कोई शर्तें नही लगाई थी तथा न सार्वदेशिक सभा में २३-२-६९ के प्रस्ताव में लगाई थी। अब यह नई शर्तें लगाकर महासम्मेलन के प्रस्ताव का महत्त्व ही घटा दिया है।

(घ) महात्मा आनन्द भिक्षु जी को अधिकार न देकर तीन संन्यासियों की कमेटी बना दी, जिसमें स्वामी रामेश्वरानन्द कथित सार्वदेशिक की अन्तरंग के हो सदस्य हैं तथा स्वामी विद्यानन्द जी विदेह से प्रतिबन्ध हटाते ही उन्हें इस कमेटी में डाल दिया। इसके विपरीत महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने उक्त उप-समिति में कार्य करने से इन्कार कर दिया। शेष दो व्यक्तियों की उप-समिति पर जिन्हें प्रत्येक दृष्टि से कथित सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि समझा जाता है, निष्पक्ष सिद्ध नही हो सकते।

(ङ) उपरोक्त उप-समिति पर स्वयं लाला रामगोपाल आदि को विश्वास नहीं इसीलिये उन्हें निर्णय का अधिकार भी नही दिया। उसकी रिपोर्ट मंगाकर निर्णय सार्वदेशिक स्वयं करेगी। जब वह प्रत्येक स्थान पर स्वयं झगड़ा उत्पन्न कर रहे हैं अथवा करा रहे हैं तो उनसे न्याय की भला कौन आशा कर सकता है।

४. महात्मा आनन्द स्वामी जी को झगड़े निपटाने के महासम्मेलन द्वारा पूर्ण अधिकार मिले थे। क्योंकि श्री वीरेन्द्र आदि इसके पक्ष में नहीं थे इसीलिए यह अनुरोध किया कि सार्वदेशिक न्याय सभा के निश्चयों को दृष्टि में रखते हुए ही निर्णय हों। अपने एक निकट सम्बन्धि के प्रभाव मे आकर महात्मा आनन्द स्वामी जी ने मंत्री सार्वदेशिक सभा को २५-३-६९ को एक पत्र लिख स्पष्टिकरण मांगा हालांकि महात्मा जी यह अनुभव करते थे कि उन्हें इस विषय में पूर्ण अधिकार है। ला० रामगोपाल ने उत्तर दिया कि वह जो भी निर्णय करें उसे सार्वदेशिक सभा के नियम उपनियम तथा न्याय सभा के निश्चयों को ध्यान में रखें परन्तु महात्मा जी ने उसे कभी स्वीकार नहीं किया। अब उसी व्याख्या को ला० रामगोपाल महत्त्व दे रहे हैं। परन्तु महासम्मेलन के प्रस्ताव की व्याख्या करने का महासम्मेलन को ही अधिकार हो सकता है। सैशन जज जालन्धर ने लाला जी की व्यक्तिगत उपरोक्त व्याख्याइसी कारण अस्वीकार कर दी थी। इसके उपरान्त लाला रामगोपाल की इस प्रकार की व्याख्या करके आर्य जनता को गुमराह करना तथा महात्मा जी का अपमान करना शोभा नहीं देता और इसका आर्य जनता पर कोई प्रभाव पड़ने की भी सम्भावना नहीं।

५. यह असत्य है कि महात्मा आनन्द स्वामी जी ने विवादों को सुलझाने का दायित्व लिया था। वह झगड़े में पड़ना नही चाहते थे। जैसा कि लाला रामगोपाल ने अपने खुले पत्र दिनांक २६-७-६९ में लिखा, समस्त विवादों को सुलझाने का दायित्व महात्मा जी पर डाला गया था। अत: २४-८-६९ का प्रस्ताव इस विषय में भ्रम-मूलक है।

६. लाला रामगोपाल आदि बार-बार यह प्रचार कर रहे हैं कि आ० प्र० नि० सभा पंजाब ने महात्मा जी को केवल निर्वाचन का अधिकार ही दिया था। वह प्रस्ताव लाला जी के मित्र श्री एन० डी० कपूर के पास अब भी है जाकर देख लें। हमारी सभा ने सार्वदेशिक महासम्मेलन द्वारा पारित प्रस्ताव को स्वीकार किया तथा यह भी निश्चय किया कि महात्मा जी अपनी देख-रेख में पंजाब सभा का निर्वाचन करा दें। आखिर झगड़ा तो निर्वाचन का ही था।

७. साईक्लोस्टाइल विज्ञप्ति जिसको २६-७-६९ के पत्र में लालाजी बहुत महत्त्व दिया है उस विज्ञप्ति में महात्मा जी का न नाम है तथा न उनकी ओर से छापा गया था और न वह जनता में बाँटा हो गया था। वह सभा के निजी कार्य के लिए ही बनाया था। इसके अतिरिक्त श्री रामगोपाल तथा श्री वीरेन्द्र आदि ने प्रचार कर रखा है कि महात्मा जी की ओर से

शेष पृ० १० पर

क्या यज्ञ में बकरे की बलि दें

यजुर्वेद का एक प्रसंग—२

(डा० रामनाथ वेदालकार एम ए पी एच डी गु वि वि कागडी)



अब स्वामी दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित इस मन्त्र का अर्थ देखिये—"हे शिष्य, मदीयशिक्षणेन ते तव मन आप्यायता, ते प्राण आप्यायता, ते चक्षुराप्यायतां ते श्रोत्रमाप्यायतां, ते तत् क्रूर दुश्चरित्र तत् निष्ट्यायता दूरीगच्छतु यत् ते तवास्थित निश्चित तद् आप्यायताम् इत्थ ते सर्व शुध्यतु। अहोभ्यो दिनेभ्यस्तुभ्य शमस्तु । अथ स्वस्वामिनि शिष्यलालनापर गुरुपत्नीवाक्यम्—हे ओषधे विश्व प्रवराध्यापक ! त्वमेन शिष्य त्रायस्व मा हिंसी । स च स्वपत्नीं प्रत्याह—हे स्वधितेऽध्यापिके स्त्रि ! त्वमेना त्रायस्व मा हिंसीश्च ।"

आचार्य शिष्य से कहता है कि हे शिष्य, मेरी शिक्षा से तेरा मन पर्याप्त गुण युक्त हो, तेरा प्राण बलादिगुणयुक्त हो, तेरी चक्षु निमल दृष्टि वाली हो, तेरे कर्ण सद्गुणव्याप्त हो, तेरा जो दुष्ट व्यवहार है वह दूर हो और जो तेरा निश्चय है वह पूरा हो। इस प्रकार से तेरा समस्त व्यवहार शुद्ध हो और प्रतिदिन तेरे लिए सुख हो। फिर गुरुपत्नी अपने पति से कहती है कि हे प्रवर अध्यापक ! आप इस शिष्य की रक्षा कोजिये और व्यर्थ ताडना मत कीजिये। फिर आचार्य अपनी पत्नी से कहता है कि हे प्रशस्त अध्यापिके ! तू इस सुमारिका शिष्या की रक्षा कर और इसको अयोग्य ताड़ना मत दे।

२० वें मन्त्र से कर्मकाण्डी मृत बकरे को स्पर्श करते हुये उसका प्राणबोधन करते हैं, अर्थात् उसे देवार्पण करने के लिए पुन जीवित करते हैं। मन्त्र यह है—

ऐन्द्रः प्राणो अंगे अंगे निदोध्यदैन्द्र उदानो अंगे अंगे निधीतः । देव त्वष्टर्भूरि ते सं समेतु सलक्ष्मा यद् विषुरूप भवाति । देवत्रा यन्तमवसे सखायोऽनुत्वा मातापितरो मदन्तु ।। यजुः ६.२०

महीधर के अनुसार पशु को स्पर्श द्वारा जिलाते हुये कहते हैं कि आत्मासम्बन्धी प्राण इनके अग-अग मे निहित किया, आत्मासम्बन्धी उदान इसके अग-अग मे निहित किया। फिर त्वष्टा को सम्बोधन कर कहते हैं कि हे त्वष्टा देव ! पशु के जो सुडौल अग छेदन से विरूप हो गये हैं, वे आप की कृपा से पुन सुरूप हो जायें। पुन पशु को कहते हैं कि देवो के पास जाते हुये तुझे तेरे साथी और तेरे माता-पिता अभ्यनुज्ञा द।

यजुर्वेद के एक हिन्दी भाष्यकार श्री प० ज्वाला प्रसाद जी मिश्र ने अपने भाष्य मे इस मन्त्र पर निम्न टिप्पणी लिखी है—"महर्षिजनो की प्रार्थना से उसके (पशु के) अग उनकी सत्य भक्ति और तपस्या के कारण पूर्ववत हो जाते थे। फिर उसमे प्राणो का सचार होने से सबके देखते-देखते वह पशु देवलोक को गमन करता था। इस प्रकार यज्ञ का निर्वाह और पशु का उद्धार भी हो जाता था। ······कालक्रम से तप क्षीण होने के कारण महर्षियो का अभाव है, इस कारण वही मन्त्र होने पर भी उनकी शक्ति लुप्तप्राय हो रही है।" स्वामी दयानन्द के जीवन काल मे भी ऐसा कहने वाले अनेक श्रद्धालु (?) लोग थे अतएव सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास मे श्री स्वामी जी ने निम्न प्रश्नोत्तर दिये हैं—

प्रश्न—यज्ञकर्ता कहते हैं कि यज्ञ करने से यजमान और पशु स्वर्गगामी तथा होम करके फिर पशु को जीता करते थे, यह बात सच्ची है या नही ?

उत्तर—नहीं, जो स्वर्ग को जाते हो तो ऐसी बात कहने वाले को मार के होम कर स्वर्ग मे पहुँचाना चाहिये वा उसके प्रिय माता पिता स्त्री और पुत्रादि को मार होम कर स्वर्ग मे क्यो नही पहुँचाते ? वा वेदी मे से पुन क्यो नहीं जिला लेते हैं ?

प्रश्न—जब यज्ञ करते हैं तब वेदो के मन्त्र पढते हैं। जो वेदो मे न होता तो कहाँ पढते ?

उत्तर—मन्त्र किसी को कही पढने से नही रोकता क्योकि वह एक शब्द है। परन्तु उनका अर्थ ऐसा नही है कि पशु को मार के होम करना।"

वस्तुत उपर्युक्त मन्त्र मे मृत पशु मे प्राण सचार का वर्णन नही अपितु जीवित शिष्य के अन्दर पूर्वापेक्षा द्विगुणित प्राणादि शक्तियो के प्रदान का उल्लेख है। आचार्य शिष्य को कहता है कि मैंने गुरुकुल मे ब्रह्मचर्य पूर्वक निवास करा कर तेरे अग-अग मे प्राण, उदान आदि को निहित कर दिया है। पुन अन्य जन आचार्य से कहते हैं कि हे त्वष्टा अर्थात् गढ-छील कर, सुसस्कृत कर शिष्य को आदमी बना देने वाले आचार्यप्रवर ! इस शिष्य मे जो किसी कारण विषमरूपता आ गयी है वह आप की कृपा से दूर हो जाये तथा यह सस्कृत हो जाये ! पुन आचार्य शिष्य को कहता है कि मैं तेरे अज्ञान, कुसस्कार आदि को दूर कर तुझे विद्वानो की श्रेणी मे प्रविष्ट करा रहा हू, उस श्रेणी मे जाते हुए तुझे देख कर तेरे सखा, माता पिता आदि प्रसन्न हो। इस मन्त्र का सेनापति परक अर्थ भी है जो श्री स्वामी जी के भाष्य मे देखना चाहिए।

इस प्रकार बकरे की यज्ञ मे बलि का जो अभिप्राय विनियोगकारो तथा भाष्यकारो ने लिया है वह वेदसमत नही है। —समाप्त

पृ० २ का शेष

पर पधारने की कृपा करो] (सुतम् [यहाँ पर आप के पान करने के लिये सोम-रस] तैयार हो चुका है। [आप तो (ओमास) ओम् के पास बैठने वाले, ओङ्कारोपासना करने वाले ओम्, प्रभु के सच्चे उपासक, (चर्षणी) सदाचारी, ब्रह्मज्ञानी, (धृत) धैर्य पूर्वक धारणा ध्यान और समाधि को धारण करने वाले, (दाश्वांस) अपने अन्नदान उपदेश दान आदि व्यवहारो से जनता का हित-साधन और मार्ग-दर्शन करने वाले, तथा (दाशुष) निरन्तर दान शीलता का ही, परोपकार का ही विचार रखने वाले हैं।

१३—यहा इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है कि समय-समय पर गृहस्थ जनो को अपने अपने घरो पर पारिवारिक सत्सगो पारिवारिक सम्मेलनो, का पारिवारिक उपासनाओ का आयोजन करते रहना चाहिये। और ऐसे प्रसगो मे अपने मित्रो एव उत्तम विद्वानो को उपदेशादि के लिये आमन्त्रित करना चाहिये। सभी अभ्यागतो का यथोचित आदर-सत्कार भी करना चाहिये।

१४—आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान पण्डित राज श्री आचार्य विश्वश्रवा व्यास जी एम० ए की महाविदुषी धर्मशीला धर्मपत्नी श्रीमती सौभाग्यवती देवी वेद शास्त्री, वेदाचाय [वाराणसी] ने 'ओम्" पद की व्याकरणस्वरप्रक्रिया इस प्रकार प्रदर्शित की है—

"ओम्—अव्ययम् अवतेष्टिलोपश्च) उणा० १।१४२।। इति अवधातोर्मन् प्रत्यस्य टि लोपश्च। अव+म् (ज्वरत्वर०) अष्टा ६।४।२०।। इति धातोरूपधाभूतस्य अकारस्य वकारस्य च ऊठ। ऊम् । गुण । ओम् । प्रकारान्तरेण सिद्धिस्तु सन्ध्यामीमासाया द्रष्टव्या।

(ओमभ्यादाने) अष्टा० ८।२।८७ इति स्वाध्यायारम्भे प्लुत । धातुस्वरेणोदात्त ।" "सन्ध्या पद्धति-मीमासा के पृष्ठ स० ३९७ से उद्धृत।

याज्ञिक आचार संहिता—(४)

"व्रत कर्म"

(ले० श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी वेद सदन महारानी पथ इन्दौर–२)

"नैवाश्नीयात्"

यज्ञ के व्रती जनो को आवश्यक है कि वे यज्ञ के पूर्व कुछ न खावें अर्थात उपवास करें। उपवास का यहा तात्पर्य प्रधान रूप से अनशन से ही है। यही व्रत है। इसीलिये शतपथ मे यज्ञ करने वाले के लिये लिखा है कि—अनशनमेव व्रत मेने—अर्थात अनशन–न खाने–निराहार रहने को ही व्रत माना है। शरीर इन्द्रियो तथा मन को अपने अपने दैनिक प्रवृत्तिमय आहारो से पृथक रख कर उन्हे निराहार बनाने के लिये ही कहा है—नवाश्नीयात। यज्ञ मे देवो की आहुति देने से पूव भी कुछ भी नही खाना चाहिये।

यज्ञ से पूर्व खाने से दोष

यदि यज्ञानुष्ठाता यज्ञ से पूव खा लेते हैं तो महर्षि याज्ञवल्क्य ने शत पथ मे लिखा है— यद्युतदश्नाति यस्य हविन गृह्णन्ति ते नो देवान्नात्यश्नाति —अर्थात यदि यजमान यज्ञ के पूव खा लेता है तो उसकी हवि को देवता ग्रहण नही करते हैं। अपने यज्ञ को इस प्रकार नष्ट होने से बचाने के लिये और उसकी सफलता के लिये बिना खाये ही यज्ञ मे देवो को हवि अर्पित करनी चाहिये।

"अतिथि से पूर्व न खावे"

बिना खाये ही यज्ञ मे आहुति देने का अन्य प्रयोजन यह भी है कि वेद मे अतिथि को खिलाने के बाद ही खाने का विधान है। यदि अतिथि से पूर्व खा लेता है तो उसको पाप का भागी बनना पडता है।

यज्ञाग्नि भी अतिथि है

यज्ञ की अग्नि को भी अतिथि माना गया है। वह अतिथि रूप मे ही उपस्थित होती है। यह देव अतिथि है। मानुषी अतिथि से दैवी अतिथि और अधिक पूजनीय होता है। वेद ने—'समिधाग्नि दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम —इस मन्त्र मे अग्नि को अतिथि कहा है। अत इस अतिथि रूप यज्ञाग्नि को हवि प्रदान करके ही जो खाता है वह गीता के शब्दों मे—'यज्ञशिष्टाशिन सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषै —अर्थात यज्ञाग्नि को आहुति प्रदान करने के उपरान्त जो भोजन करता है वह सब पापों से मुक्त होता है। और इसके विपरीत आचरण करने वाला— भुजते ते त्वघ पापा ये पचन्त्यात्मकारणात —अर्थात जो स्वार्थ परायण होकर अतिथि को यज्ञ को—आहुति प्रदान न करके स्वय मे ही आहुति प्रदान करने वाले, अपने ही उदर को भरने वाले हैं वे पाप के ही भागी होते हैं अत यज्ञाग्नि मे आहुति देने से पूव यज्ञ करने कराने वालो ने कुछ नही खाना चाहिये।

यज्ञ से पूर्व खाना आसुरी सभ्यता है

यज्ञ से पूव खाने की प्रवृत्ति आसुरी प्रवृत्ति या आसुरी सभ्यता है। यह अपने यज्ञ को नष्ट करने वाली और स्वय के लिये भी अनिष्ट कारक है। इस बात को स्पष्ट करने के लिये शतपथ ब्राह्मण(५।१।१।१)मे लिखा है— तत असुरा अतिमानेन एव कस्मिन् जुहुयाम इति स्वेषु आस्येषु जुह्वत चेरू। ते अतिमानेन एव परा बभूवु। —अर्थात असुर अपने को सब से श्रेष्ठ मानने एव अभिमान से यह सोचकर कि अन्य किसको हम खिलाव, वे अपने मुख मे ही भोजन प्रदान रूप यथेच्छ आचरण करने लगे। वे इसी अतिमान से ही अग्नि मे पहले आहुति न देकर अपने को ही उससे श्रेष्ठ समझकर खाने के कारण ही पराभव को प्राप्त हो गये।

इस आसुरी सभ्यता या व्यवहार से मानव जाति को पृथक रखने के लिये स्वय पर सयम का अकुश स्थापित करने के लिये पूर्वाचार्यों ने लिखा—

अस्नात्वा त्वमल भुक्ते ह्यजप्त्वा पूयशोणितम्।
अजुहू इव कृमीन्कीटानेव च शकुसथा॥

अर्थात् भोजन करने से पूव अन्य अतिथि कृमि कीट पशु पक्षियो को भोजन, अन्नादि का दान करना चाहिये—इसके भी पूव अग्नि में हवि को अर्पित करना चाहिये। यज्ञ से पूर्व सन्ध्या जपादि करना चाहिये और इससे पूव स्नान करना चाहिये। इस प्रकार स्नान, सन्ध्याजप, होम और अतिथि यज्ञ करके जो भोजन करता है वह पवित्र भोजन—प्रसाद को प्राप्त करता है। जो बिना स्नान किये बिना सन्ध्या किये, बिना होम किये और बिना अतिथि को भोजन कराये भोजन करते हैं वे अन्न नहीं अपितु मल, पीप कीट, विष्ठादि को खाते हैं ऐसा समझना चाहिये। अत यज्ञ से पूर्व कुछ नहीं खाना चाहिये।

उपवास में खाना चाहिये क्या ?

उपवास में निराहार भी रहना पडता है और स्वशरीर के बल को क्षीण न होने देने के लिये नियत आहार भी करना पडता है। इसीलिये गोभिल गृह्य सूत्र मे लिखा है—'उपवासदिननियतस्याथ औपवसथिकम्"—अर्थात् यज्ञ के दिनों में उपवास के समय केवल नियत आहार—खाद्य जो उपवास के नियमो के अनुकूल है वही थोडी मात्रा मे ग्रहण करना चाहिये।

उपवास मे क्या खाना चाहिये ?

उपवास के दिनो मे हविष्यान्न फल, दूध, दही, यवागू आमिक्षा आदि लेना चाहिये। बिलकुल निराहार नही रहना चाहिये। हविष्य अन्न मे यज्ञ शेष जौ का सत्तू तथा जौ आदि हैं। अन्यत्र भी ग्रन्थो मे यज्ञ के दिनो मे किन अन्नादि पदार्थों का ग्रहण करना चाहिये इस बारे मे लिखा है—

व्रीहिषष्टिकमुद्गाश्च कलाय सतिल पय
श्यामाकाश्चैव नीवारा गोधूमाद्या व्रते हिता॥

अर्थात व्रतादि मे जो चावल मूंग मटर तिल प्रियगु पतह के चावल, गेहूं आदि कुलथी कन्दमूल आदि को ग्रहण करना चाहिये। यह आहार व्रतो मे हित कर हैं क्योंकि व्रत कर्मो मे सात्विक लघु एव सुपाच्य आहार ही होना चाहिये। यह आहार सूर्यास्त के पश्चात रात्रि के प्रारम्भ मे किया जाता है। अर्थात दिन मे अन्न ग्रहण न करें—रात्रि के मध्य भी न कर अपितु रात्रि के प्रारम्भ में करें। अनुष्ठान कर्त्ताओं को 'नक्ताशिन" (ऋग्विधान)— सक्तुयावक भैक्षाशी नक्त मनुज सत्तम" (ऋग्विधान), "हविष्यव्रत नक्ताद आदि काय की सफलता के लिये रात्रि मे भोजन करने का सकेत करते और 'नोरू रात्र कथचन"—रात्रि के मध्य में खाने का निषेध भी करते हैं। ऐसी स्थिति में यज्ञ मे दिवस के मध्य दूध, फल, आमिक्षा आदि का ग्रहण एक या अनेक बार थोडी मात्रा में किया जा सकता है।

परन्तु जो बीमार हैं उनके लिये यज्ञ से पूर्व न खाने का नियम नहीं है वे आवश्यकतानुसार स्वास्थ्य की रक्षा के लिये यज्ञ से पूर्व भी औषध, पथ्य आदि ले सकते हैं और जो सस्कार्य बालक है उनको भी यज्ञ से पूर्व कुछ खिलाकर बैठाना चाहिये जिससे वे शान्तचित्त होकर यज्ञ मे बैठ सकें।

यज्ञ के दिनों मे त्याज्य आहार

यज्ञ के दिनो मे जो आहार ग्रहण किया जाता है वह नमक, क्षार, आदि रहित होना चाहिये। जसा कि— लवण मधु मास च क्षाराणो येन भूयते। उपवासे नैव भुजीत नोरूरात्र कथचन"—में आदेश है। इसी प्रकार महर्षि दयानन्द जी ने सस्कारविधि मे लिखा है कि—'क्षार लवण रहित पदार्थ का भोजन करें। इसी प्रकार जो पदाथ तामसी प्रकृति के एव वातवर्धक हैं उनका भी त्याग करना चाहिये। व्रत मे निषिद्ध शाकादि के बारे में एक ग्रन्थ लिखा है —

कूष्माण्डालाबुवार्ताकपालकीज्योत्स्निकास्त्यजेत"

अर्थात व्रतादि के अवसरों पर कद्दू तूबी, बैगन, कुकरू पपीता आदि का सेवन न करे।

यज्ञ के दिनों मे मट्टी के पात्रों में भोजन न करें

यज्ञ के दिनो मे मट्टी के पात्रो में भोजन आदि नही करना चाहिये। क्योंकि जो यजमान या ऋत्विज् हैं उनको गायत्री का उपदेश पहले दिया हुआ होना ही है और जिनको गायत्री का उपदेश हो चुका होता है उनको उसके पश्चात् मट्टी पात्र मे खान पान वर्जित है जैसा कि गोभिल गृह्य सूत्र मे लिखा है—"आदेशनात् प्रभृति न मृण्मये अश्नीयात् न पिबेत्"—अर्थात सावित्री के उपदेश के पश्चात् वे ही मट्टी के पात्रों में न खावे और न पीवे ही। अत यज्ञ के अवसर पर तो इस पर आचरण करना चाहिये ही।

गतांक से आगे—

श्री शंकराचार्य के भ्रामक विचार

(प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर, एम ए. गवर्नमेंट कालिज गुलबर्गा)

आप इसी भेंटवार्ता में उन्होंने कहा कि चातुर्वर्ण्य वेद और सभी धर्म-ग्रन्थों के अनुसार गुणकर्मों पर आधारित न होकर जन्म पर ही अवलंबित है। उनके अनुसार मनुष्यों की ही नहीं निर्जीव वस्तुओं की भी स्थिति उनके जन्म के साथ ही निश्चित हो जाती है। उदाहरणस्वरूप चंदन, नीम, देवदार आदि लकड़ियों की भिन्न-भिन्न जातियाँ ही हैं। इस लकड़ी की साधारण कुर्सी बनाई जाय या राजा का सिंहासन बनाया जाय उससे लकड़ी की स्थिति में कुछ फरक नहीं पड़ता। संगमरमर के पत्थर का संडास बनाया जाय या मंदिर बनाया जाय उसकी जातिगत स्थिति नहीं बदलती। जाति और जन्म समानार्थक हैं। चातुर्वर्ण्य भी जन्म पर ही आधारित हैं। इससे भिन्न अर्थ करने वालो को इसका सही अर्थ मालूम ही नहीं इत्यादि।

इस लंबे उद्धरण की संक्षेप में मीमांसा करनी है। पता नहीं शंकराचार्यजी के धर्मग्रंथ कौन से हैं। वेदो में तो जन्मपरक वर्णव्यवस्था का समर्थक एक अक्षर भी नहीं। गुणकर्मपरक वर्णव्यवस्था के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥ यजु० ३१.११

मानव समाज मे चारों वर्णों के कार्यों का विभाग करता हुआ यह मंत्र बतलाता है कि मनुष्य शरीर में जो स्थान मुख आदि अवयवो का है, वही स्थान समाज मे इन वर्णों का है। मुख सभी ज्ञानेन्द्रियो का केन्द्र है। ब्राह्मण भी ज्ञान और विद्या का केन्द्र होता है। समाज के अज्ञान को दूर करना उसका कर्तव्य है। वह ज्ञानी और विद्वान् होने के साथ-साथ तपस्वी भी होता है। भूख, दुःख आदि सभी द्वन्द्वों को सहन करता है। मुख भी हमेशा खुला ही रहता है। सारा शरीर ढकने पर भी मुख को नहीं ढकते। सर्दी, गर्मी सभी को वह सहता है। विद्वान् और तपस्वी होने के साथ ब्राह्मण त्यागी भी होता है। मुख भी अपने पास आया हुआ अन्न पेट की ओर भेज देता है। इस प्रकार ब्राह्मण-ज्ञानी, त्यागी और तपस्वी होता है। इसी की आज्ञा पर सारा समाज कार्य करता है। पर जब इस पर आक्रमण होता है, तब हाथ रक्षा के लिए आगे बढ़ते हैं। इन हाथो का काम ही अन्याय से पूरे शरीर को रक्षा करना है। समाज मे क्षत्रियो का भी यही कार्य है। अर्थात् अन्याय का प्रतिकार करना। यश ही इसका धन होता है। पेट और जंघाओ का काम सारे शरीर में शक्ति का संचार करना है। यही पर अन्न आता है और यही से रक्त बनकर सारे शरीर में पहुंचता है। यदि पेट इस अन्न को अपने ही पास रख दें तो सारा शरीर रोगी हो जाय। यही समाज मे वैश्य का कार्य है। अर्थात् संपत्ति निर्माण कर उसको समाज के हित मे व्यय करना और सभी प्रकार के अभाव से समाज को बचाना। श्री ही इसका धन है। 'श्री' वह धन है जो किसी को आश्रय प्रदान करे। जो धन दूसरो को आश्रय नहीं देता वह 'श्री' नही है। शरीर मे चौथा स्थान पैरो का है। सारा शरीर ही इन पर अवलंबित है। मुख बाहु और जंघाओ की आज्ञा का पालन करना इनका काम है। यदि पैर सिर की आज्ञा न मानें तो बड़ी अव्यवस्था उत्पन्न हो जाए। पूरा शरीर जिस प्रकार इन अवयवो के पारस्परिक सहयोग पर अवलंबित है, उसी प्रकार समाज भी इन चार वर्णों के सहयोग और सहकार्य पर अवलंबित है। जिस प्रकार इन अवयवों में न कोई बड़ा है न छोटा है, सब अपने-अपने स्थान पर समान महत्त्व रखते हैं, उसी प्रकार समाज में वर्ण भी ऊँच-नीच के भाव से रहित समान महत्त्व के भागी हैं। जो व्यक्ति उपर्युक्त तीन कार्यों मे से किसी भी कार्य को नहीं कर सकता वह शूद्र कहाता है। और उसका कार्य केवल सबकी सेवा करना है। इससे वह दूसरे तीन वर्णों से किसी प्रकार भी कम महत्त्व नही रखता। सिर या मुख की आज्ञा पाकर बाहू, जंघा और पैर दौड़ पड़ते हैं। उसी प्रकार पैरो मे कांच चुभते ही आँखो मे आँसू आते हैं और हाथ पैर की ओर दौड़कर कांटे को बाहर निकालते हैं। यही स्थिति समाज मे इन वर्णों की भी है।

वर्ण का निश्चय ब्रह्मचारी, गुरु के घर जाने पर गुरु उसकी प्रवृत्ति, रुचि और गुण कर्मों को देखकर ही करता था। वर्ण शब्द 'वृञ्' धातु से बनता है, जिसका अर्थ है—चुनना। समाज के अन्दर वर्तमान, अज्ञान, अन्याय और अभाव इन तीनो मे से एक को चुनना और उसको दूर करने के लिए अपने जीवन को अर्पित करना यही इन तीनो वर्णों का रहस्य है। जब तक यह कार्य व्यक्ति के गुण और कर्म के अनुसार होता था तब तक समाज मे सुख, शांति व समृद्धि का साम्राज्य था, किन्तु जबसे इन वर्णों का आधार जन्म ही माना जाने लगा तबसे से समाज का सर्वांगीण पतन हो गया। चारो वेद, स्मृतियाँ और धर्मशास्त्र इसी बात का प्रतिपादन करते हैं। मनुस्मृति और गीता का भी यही मतव्य है। इतना ही नहा जन्म से ब्राह्मण बालक यदि विद्यादि ब्राह्मणोचित गुणो को धारण न कर तो वह शूद्र बन जाता है और जब शूद्र बालक ब्राह्मणोचित गुण कर्म धारण करे तो ब्राह्मण बन जाता है। ऐसी व्यवस्था बनाये रखना राजा का काम है। मनुमहाराज लिखते हैं—

"शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च ॥"

अर्थात्—शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शूद्र बन जाता है। इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य से भी ब्राह्मण और शूद्र बन जाते हैं। जन्म से इस वर्ण-व्यवस्था का कोई सम्बन्ध नही था। ब्राह्मण बनने के लिए किन-किन साधनो का अवलंबन करना पड़ता था इसका वर्णन करते हुए मनु महाराज लिखते हैं—

"स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनु. ॥"

अर्थात् ब्राह्मण का शरीर (माता-पिता के) जन्म से नही, अपितु उपर्युक्त जप तप आदि कठोर कर्मों से बनता था। और जो ब्राह्मण वेदादि नहीं जानता था वह इसी जन्म मे शूद्र बन जाता था इसी को स्पष्ट करते हुए मनु जी लिखते हैं—

"योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥"

गीता मे तो स्पष्ट घोषणा की गई है कि 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।' अर्थात् चारो वर्णों की सृष्टि मैंने गुण और कर्मों के अनुसार ही की है। उपनिषद् ब्राह्मण, रामायण, महाभारतादि ग्रन्थो में ऐसे सैकड़ो उदाहरण हैं जहाँ पर गुण और कर्मों को ही वर्णव्यवस्था का आधार बताया गया है। महाभारत मे अजगर का रूप धारण किये हुए नहुष के द्वारा पूछे गये "ब्राह्मण को भवेद्राजन्।" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए युधिष्ठिर ने कहा है कि—

सत्य दान क्षमा शीलमानृशस्य तपो घृणा।
दृश्यन्ते यत्र राजेन्द्र स ब्राह्मणः इति स्मृतः ॥

अर्थात् सत्य, दान, क्षमा, शील, अहिंसा, तप दया जहाँ पर नजर आते हैं, उसी को ब्राह्मण कहते हैं। सर्प ने प्रश्नो को और तेज करते हुए कहा—"लोक मे तो चार वर्ण माने जाते हैं। तुमने जो दान, दया, क्षमादि ब्राह्मणो के लक्षण कहे हैं, वे तो शूद्र मे भी होते हैं। तो क्या शूद्र को भी ब्राह्मण कहेंगे? बुद्धि को झकझोर देने वाले भारतीय समाज व्यवस्था के इस शाश्वत महाप्रश्न का जो उत्तर महामति युधिष्ठिर ने दिया है। वह सुनने योग्य है।

(क्रमशः)

बैठ शान्त-चित्त ! सोचें !! समझें नेता आर्यसमाज के



(श्री अम्बादान आर्य, कविकुटीर
कुरडायाँ-राजस्थान)

फसी भँवर मे डग मग नया ।
चप्पू कौन लगाये—भैया ॥
लेऊँ जिस की लाख बलया ।

पार करे तट दृढ हाथो से गहन 'कुहर' से आजके ॥
बैठ शान्त-चित सोच ! समझ ! नेता आयसमाज के ।१॥

फाड-फाड मच्छादि आँखे ।
क्रूर कुन्तात दृष्टि से झाँखे ॥
छल छिद्रादि मे अति बाँके ।

आनन्द स्वामी जी भी रह गये हार खाय दिल दाजके ॥
बैठ शान्त-चित सोचें ! समझे ! ! नेता आर्यसमाज के ॥२॥

आर्य महा सम्मेलन अन्दर ।
सोच समझ सारे मन मन्दर ॥
पास किया प्रस्ताव भी सुन्दर ।

देय 'सर्व अधिकार"—मुकर्ना क्या ? लक्षण यह लाज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्यसमाज के ॥३॥

प्रमुख स्वय अधिकार दिया क्यो ।
देकर फिर उपहास किया क्यो ॥
व्यर्थ अमान्य निर्णय लिया क्यो ।

सब कछु देख रहा है ईश्वर घट-घट बीच विराज के ॥
बैठ शान्त चित सोचें ! समझ ! ! नेता आयसमाज के ॥४॥

शुध हृदय निष्पक्ष वृत्ति का ।
किया भूल अपमान यति का ॥
गया दिवाला निकल मति का ।

क्या ? शोभा देता है ऐसे जीना 'आर्य"—बाज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझे ! नेता आयसमाज के ॥५॥

नियमो की खल हत्या करना ।
डूब चल्लू भर जल मे—मरना ॥
परमेश्वर से भी नही डरना ।

इस प्रकार कब तक हथकण्डे होगे सफल अकाज के ॥
बैठ शान्त-चित्त सोच ! समझ ! ! नेता आयसमाज के ॥६॥

वेद प्रचार 'सुचारु'—कार्य ।
पडा रुका सा अनिवार्य ॥
झूझ रहे झगडो मे आर्य ।

हँसत विपक्षी मार ठहाका बन कर सिंह अवाज के ॥
बठ शान्त चित्त सोचे ! समझें ! नेता आर्यसमाज के ॥७॥

प्रवाह किसे जो हो रही हानी ।
मिलकर धींगा मस्ती ठानी ॥
त्याग नियम करते मन मानी ।

किस हक से वो कह सकते हैं शिष्य-' दिव्य ऋषि" राज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आयसमाज के ॥८॥

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के सम्बन्ध में भारतवर्ष की सब आर्य प्रतिनिधि सभाओं और जिला सभाओं से सादर निवेदनः—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के प्रसग मे १६ अक्टूबर से १५ नवम्बर तक आर्य विद्वानो की समस्त भारत मे शास्त्रार्थ यात्रा होगी । आर्य प्रतिनिधि सभाओं के पास और जिला सभाओ के पास कही-कही अपनी मोटर आदि हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे अपनी गाडियाँ उस शास्त्रार्थ यात्रा के लिये निश्चित रखें । कुछ प्रतिनिधि सभाए और जिला सभाए स्कीम बनाती रहती हैं कि प्रचारक अपनी गाडी खरीदगे उन्हे शीघ्र खरीद लेना चाहिये ।

प्रान्तीय सभाओ से यह भी प्रार्थना की है कि वे अपने प्रान्त के उन आर्य विद्वानो के नाम शीघ्र लिखें जो शास्त्रार्थ यात्रा मे सहयोग दे सकें । उनके नाम और पते आने पर हम उन्हे विषय निर्देश करेंगे कि जिससे वे इन मासो मे उस विषय को तैयारी कर सकें और जो सुविधाए उन्हें चाहिये वे सुविधाए आर्य विद्वानो को देनी चाहियें ।

प्रान्तीय सभाए अपनें प्रान्त का मार्गचित्र भी भेजें कि प्रधान रूप से आप के प्रान्त मे कहाँ कहाँ जाना चाहिये और उसका क्रम और मार्ग क्या हो ।

आचार्य विश्वश्रवा व्यास एम० ए०
प्रचार मन्त्री काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

जिसने यह उद्यान 'लगाया' ।
सींच-सींच किस विधि विकसाया ॥
सोचा किसने कष्ठ—उठाया ।

लहलाते में आग लगामा लक्षण दानव राज के ॥
बैठ शान्तचित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्यसमाज के ॥९॥

श्रद्धानंद किस भाँति बलाया ।
पण्डित लेखराम को भाया ॥
पूर्ण स्व की अर्पण काया ।

गुरुदत्त नित्यानद सरस्वती गये सुसज्जित साज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्य समाज के ॥१०॥

पूज्य जहाँ नहिं पूजे—जाते ।
दुष्ट वहाँ पर राज्य जमाते ॥
गीत स्वार्थ सिद्धि के गाते ।

बनकर रह जाता जग अड्डा जालिम जुल्म जहाज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्यसमाज के ॥११॥

जो पदवी के रूखे—भूखे ।
जिन ढिग क्यो न सारदा कूके ॥
अक्षर एक हिये नहिं ढूके ।

सत्य कहूँ उठाय भुजा मैं, आर्य बन्धु अस आज के ॥
बैठ शात चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आयसमाज के ॥१२॥

द्वेष-हटा सद् भाव जगावे ।
समता शुचिता को अपनावे ॥
"आर्य" साधक शब्द बनावे ।

"समानी प्रपा"—वेद मन्त्र को धारे उर में लाज के ॥
बठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्यसमाज के ॥१३॥

आर्य जगत् से नम्र निवेदन ।
भरा विवाद करे गढ़ भेदन ॥
हो कटुता सब सिर छेदन ।

सनेह सूत्र मे बँधे सभी जन 'भने अम्ब' सुख साज के ॥
बैठ शान्त चित्त सोचें ! समझें ! ! नेता आर्यसमाज के ॥१४॥

आचार्य भगवान्देव जी का सन्मान



सस्कृत के प्रकाण्डे विद्वान कमठ जन सेवी इतिहास वेत्ता तपस्वी त्यागो आचाय भगवान देव जी को राष्ट्रपति ने सन्मान पत्र द्वारा सत्कृत किया। २८ ८ ६६ को अलीपुर श्रद्धानन्द कालिज मे दिल्ली राज्य के उप राज्यपाल श्री झा की अध्यक्षता मे एक भव्य समारोह सम्पन्न हुआ जिसमे श्री आचाय जी को उनकी सस्कृत एव राष्ट्र सेवाओ के उप लक्ष्य मे ताम्रपत्र भेंट किया है। सावदेशिक आयप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री रामसिह जी आदि नेताओ ने श्री आचाय जी के गुणो का वणन किया और राष्ट्रपति का आभार प्रकट किया। —निजसवाद दाता

हिन्दी सम्बंधी आदेश और कार्यालय साहित्य

२६ जनवरी १६६५ से हिन्दी केन्द्रीय सरकार के काम काज की प्रमुख भाषा घोषित हो चुकी है। अग्रजी का प्रयोग सह भाषा के रूप मे जारी रहेगा यह भी स्पष्ट किया जा चुका है। ससद मे राजभाषा सशोधन अधिनियम १६६७ पारित होने के पश्चात गृह मत्रालय ने ६ जुलाई १६६८ को जो आदेश जारी किये हैं उनके अनुसार अनेक सरकारी कार्यों के लिए हिन्दी को अग्रजी के साथ अनिवाय रूप से प्रयोग किया जाना है। कमचारियो को विभिन्न काम हिन्दी मे करने की यथोचित छूट दे दी गई है। फिर भी अनेक ऐसे कमचारी हैं जिन्हे हिन्दी के सबन्ध मे समय समय पर जारी किये गये आदेशो का पूरा ज्ञान होने के कारण वे अपना सरकारी कार्य हिन्दी मे करने से झिझकते हैं। इसके लिये केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद ने हिन्दी सबन्धी सरकारी आदेशो का सार तयार कर दिया है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि अधिकारिक रूप से किन किन सरकारी कामो में हिन्दी का प्रयोग हो सकता है। यह सार कोई भी कमचारी परिषद कार्यालय (एक्सवाई ६८, सरोजिनी नगर नई दिल्ली २३) को डाक व्यय के लिये १५ पैसे का टिकट भेजकर नि शुल्क मगा सकता है।

कुछ ऐसे व्यक्ति भी है जो हिन्दी मे काम करना चाहते हैं, परन्तु अग्रजी मे काम करने के लम्बे अभ्यास के कारण हिन्दी लिखते समय उपयुक्त शब्दो के लिए अटक जाते हैं। उस कठिनाई को दूर करने के लिये विभिन्न विभागों के उपयोग के लिये वहा प्रयोग मे आने वाली शब्दावली के पृथक् पृथक चाट परिषद द्वारा तयार किये गये हैं। इन चार्टों को गत्त पर चिपका कर सभी की सुविधा के लिये दीवार पर टाग सकते हैं। इसकी प्रतियाँ सम्बधित कार्यालय की लिखित माग पर उन्हे नि शुल्क मिल सकती हैं।

आज सरकारी काम काज मे हिन्दी के प्रयोग के लिये आदेश भी हैं। सहायक साहित्य भी है और अनुकल समय भी केवल कमी है तो निजी सकल्प की। स्वतन्त्रता की वषगाठ के पुनीत अवसर पर सरकारी कमचारी यह सकल्प कर कि वे सकोच छोडकर अपने-अपने काय क्षत्र मे हिन्दी का प्रयोग आरम्भ करने। उन्हे जिस प्रकार की सहायता अथवा सहयोग की आवश्कता होगी वह उन्हें परिषद से मिलता रहगा।

—राजेन्द्र कुमार वाजपेयी कार्यालय मन्त्री
केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद
एक्स वाई–६८ सरोजनी नगर नई दिल्ली–२३

समालोचना

"आर्यजीवन' का वेदविशेषाङ्क"

आय प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिणी का यह मासिक पत्र है। इसके प्रथम वष का ७ ८ वा सम्मिलित अक वेदविशेषाङ्क के रूप मे प्रकाशित किया गया है। इस मे वेद के सम्बन्ध मे महर्षि दयानन्द के मन्तव्यो के अनुसार आय जगत के कई लब्ध कीर्ति प्रकाण्ड विद्वानो ने उत्तम प्रकाश डाला है। इस के पढने से भली प्रकार प्रकट हो जाता है कि ऋषि दयानन्द को वेद भाष्य शली का वत्तमान मे वेदो के सम्बन्ध मे भाष्य अथवा लेखो के रूप मे लिखने वाले भिन्न भिन्न सम्प्रदाओ के विद्वानो पर गहरा प्रभाव पडा है। यह अङ्क ध्यान से पढने और मनन करने योग्य है। हम अक के सभी सुयोग्य लेखक महानुभावो का अभिनन्दन करते हैं कि जिन्हो ने अपनी अपनी श्रष्ठ कृतियो से इस विशेषाङ्क को विशिष्ट रूप प्रधान किया है। पत्र के मुख्य सम्पादक प० मदन मोहन विद्या सागर वेदालङ्कार जी का प्रयत्न स्तुत्य है। इस के साथ ही श्री प० नरेन्द्र जो सभा प्रदान भी बधाई के पात्र हैं जिन के प्ररणा स्रोत का प्रवाह रूप यह अक है। स्वाध्याय प्रमो आय बन्धुओ को इस अक के लेखो पर विचार करके लाभ उठाना चाहिये।

पुस्तक—समालोचना

१ नाम पुस्तक–यज्ञ और पूर्णता।

१ लेखक–श्री बाबू पूणच द जी एडवोकेट, पूव प्रधान सावदेशिक आय प्रतिनिधि सभा।

पृष्ठ सख्या ५६ मूल्य एक रुपया। प्रथम सस्करण। पुस्तक मिलने का स्थान बाबू पूण चन्द्र एडवोकेट द्वारा डा० एम सिंह सूद प्रिंसिपल नारायण कालिज शिकोहाबाद (उ० प्र०)।

इस छोटी सी पुस्तिका मे देवयज्ञ को मीमासा की गई है। इसमे मामान्य हवनादि ५८ विषयो पर प्रकाश डाला गया है। लेखक महोदय आयसमाज के गण्य मान्य विद्वान नेताओ मे हैं और अनेक पुस्तको के रचयिता हैं। इस पुस्तक से साधारण विद्यार्थी से लेकर सभी पेशे-धन्ध के लोग लाभ ले सकते हैं। अभिप्राय गूढ और भाषा सरल है। आशा है स्वाध्याय प्रमी इस का पठन और (मनन करगे)।

२ नाम पुस्तक जीवनामृत

लेखक श्री प्रम प्रकाश जी मिलने का पता–आयसमाज धूरी (जि० सगरूर (पजाब) प्रकाशक भी यही है। पृष्ठ सख्या ७२ मूल्य ५० पसे, प्रथम वार इस पुस्तक मे १६ विषयो को निबन्ध रूप मे लिखा गया है। आय बालक बालिकाओ तथा विद्यार्थियो के लिये विशेष उपयोगी है वसे सभी इससे लाभ उठा सकते हैं।

३ नाम पुस्तक–आत्मध्वनी

लेखक श्री प्रमप्रकाश जी प्रकाशक महाशय श्री कुन्दन लाल प्रम प्रकाशक तथा मिलने का पता—आयसमाज धरी (जि० सगरूर) पजाब पृष्ठ सख्या १०८ मुल्य ७५ पैसे प्रथम वार।

इस पुस्तक मे भी श्री प्रम जी ने दूसरो उपयुक्त पुस्तक की भाँति १६ प्रस्ताव लिख हैं। पढने और मनन करने योग्य है। विशेष रूप से आय-सज्जनो को अपने बाकल और समाजो बालिकाओ को इस पुस्तक को पढवे की प्ररणा करनी चाहिये।

४ नाम पुस्तिका–वीर तरङ्ग

लेखक—उपयुक्त श्री प्रमप्रकाश जो प्रकाशक प्रान्तीय आयवीर दल हरयाणा पजाब, मिलने का पता–आयवीर दल प्रम नगर करनाल (हरयाणा) और आयसमाज धूरी (सगरूर) पजाब। पृष्ठ सख्या ४० मूल्य ३० पसे प्रथम वार।

इसके लेखक भी उपयुक्त श्री प्रम जो ही हैं। यह पुस्तक भी उपयुक्त दोनो पुस्तको को भाति सब के लिये लाभदायक है। इस मे भिन्न भिन्न विषयो पर ४३ भजन दिये गये हैं। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्र

होनहार आर्य युवक को बधाई



श्री मनोहर लाल सेठ एडवोकेट इस वर्ष एम० ए० (एकोनोमिक्स) की द्वितीय वर्ष परीक्षा मे ४९८ अंक लेकर पंजाब युनिवर्सिटी मे प्रथम रहे। केवल यही एक विद्यार्थी है जो कि प्रथम डिवीजन मे आये हैं। यह बडी प्रसन्नता है कि आप श्री सेठ योगेन्द्र पाल जी मन्त्री आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर नगर के सुयोग्य सुपुत्र हैं। आप पी० एच० डी० के लिए अमेरिका जा रहे हैं।

—केदारसिंह आर्य व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेद प्रचार विभाग का संक्षिप्त कार्य विवरण

१ मुरादाबाद—आर्यसमाज मुरादाबाद के वेद प्रचार सप्ताह में श्री अमरनाथ जी प्रेमी शामिल हुए। कथा सफल रही। २ रादौर—आर्य-समाज का वार्षिकोत्सव बडी धूम धाम से मनाया गया। श्री प्रेमी जी के भजन बहुत पसन्द किये गये। दोनो स्थानो से सभा को वेद प्रचार का धन दिया गया। ३ बीकानेर—बीकानेर (राजस्थान) के उत्साही आर्य पुरुषो ने अपनी केन्द्रीय, सभा बना कर प्रचार की नगर मे धूम मचा रखी है। प० रामनाथ जी सिद्धान्त विशारद ने बडी सफलता से वहाँ प्रचार किया २०१ रुपये वेद प्रचार मिला। आजकल श्री प० बलराज जी आर्य संगीत रत्न वहाँ पधारे हुए हैं। खूब प्रचार हो रहा है। ४ मलहोटी—मलहोटी (हिमाचल) आर्यसमाज का उत्सव बडी धूम-धाम से मनाया गया। जिस मे श्री प० निरञ्जनदेव जी, श्री प० बलराज जी के अतिरिक्त श्री मुन्शी लाल की भजन मण्डली ने भाग लिया। उत्सव बडा सफल रहा। व्यवस्था का श्रेय श्री प० विद्यादत्त जी के भाइयो एव उनकी माता जी को है। १८६) रुपये वेद प्रचार मिला। ५ मुकेरियाँ—आर्यसमाज मुकेरियाँ तथा निकट के ग्रामो मे आजकल श्री रामनाथ जी यात्री व ठा० शमशेरसिंह जी की भजन मण्डली बडी सफलता से प्रचार कर रही है। ६ सराहा—(हिमाचल) मे श्री मुन्शीलाल की मण्डली ने कई दिन तक प्रचार किया। जनता बडी प्रभावित हुई। ७ करनाल तथा अम्बाला—जिलो मे श्री प० रामनाथ जी, प० तेजभानु जी सहित खूब प्रचार कर रहे हैं।

इस वर्ष वेद प्रचार सप्ताह मनाने के लिए समाजो ने बडी लग्न दिखायी है। जालधर, करनाल जींद नरवाणा संगरूर, नीलोखेडी तथा नारायण-गढ गुडगाव आदि का प्रबन्ध हो चुका है। शेष आर्य समाजो से प्रार्थना है कि सितम्बर के प्रथम सप्ताह को छोडकर अन्य तिथिया निश्चित करके प्रबंध के लिए मुझे सूचित करें।

विशेष—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत है। योग्य उपदेशक और भजनोपदेशक अपेक्षित हैं। इन दिनो सभा ने श्री प० जितेन्द्र जी बी०ए० को उपदेशक पद पर नियुक्त किया है। समाजें उन की सेवा से लाभ उठावें। —निरञ्जनदेव वेद प्रचार अधिष्ठाता

मुफ्त

आर्यविद्यापीठ, दिल्ली

भारत सरकार द्वारा पंजीकृत आर्य विद्यापीठ दिल्ली (भारतीय आर्य साहित्य परिषद्) द्वारा साहित्य सुमन साहित्य भूषण, साहित्य विशारद, साहित्य प्रभाकर स्नातक पूर्व मानक की तथा साहित्य शास्त्री सा० वाच-पति टी० एच० डी० (डाक्टर आफ थियालाजी और डी० ए० लिट् (डाक्टर आफ आर्यन लिटरेचर) स्नातकोत्तर मानक की शोध उपाधि परीक्षाए ली जाती हैं। उल्लेखनीय है कि अब तक संस्था को दस शोध-ग्रन्थ-लेख प्राप्त हो चुके हैं।

स्नातक पूर्व मानक की परीक्षायें आगामी अक्तूबर १९६९ के दूसरे रविवार को समस्त भारत तथा विदेशो मे होगी। माध्यम हिन्दी है किन्तु शोध उपाधियो के प्रबन्ध हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, पंजाबी, मराठी गुजराती तमिल तेलुगु, मलयालम कन्नड भाषाओ मे से किसी भी भाषा मे लिखे जा सकते हैं जो परीक्षार्थी के नाम से ही प्रकाशित कराये जाते हैं। स्मरण रहे कि विद्यापीठ को देश विदेश के अनेक विद्वानो रिसर्च स्कालरो तथा उच्च साहित्यकारो का सहयोग प्राप्त है। संस्था की स्मारिका तथा परीक्षा-नियमावलियाँ २५ पैसे के डाक टिकट भेजकर नि शुल्क प्राप्त की जा सकती हैं।

डा० श्यामसिंह शशि—अवैतनिक मन्त्री
आर्य विद्यापीठ (भारतीय आर्य साहित्य परिषद्)
एच० ४६ साउथ ऐक्सटेंशन पार्ट-१ नई दिल्ली-३

पृ० ४ का शेष

जो आदेश तथा वक्तव्य छपे हैं वह मिथ्या हैं अथवा उनमे अपनी ओर से इन लोगो ने कुछ जोड दिया है। श्री रामगोपाल की अन्तरंग के दो प्रति-ष्ठित महानुभावो ने जो अन्य प्रान्त के थे इस विषय मे शंका की तो उनको महात्माजी के असली पत्र दिखाये जिससे उन्हें पूर्ण संतोष हुआ साथ ही उन्हें उन तथाकथित सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों द्वारा भ्रममूलक प्रचार पर खेद भी हुआ। यदि किसी अन्य को भी इस विषय में शंका हो तो वह महात्मा जी के असली पत्र देख सकते हैं।

८ श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री ने अपनी सभा की ओर से महात्मा आनन्द भिक्षु जी को पूर्ण सहयोग का विश्वास दिलाया है। सुना है कि श्री वीरेन्द्र ने भी ऐसा ही एक पत्र महात्मा जी को लिखा है। महात्मा आनन्द स्वामी जी को पहले इसी प्रकार का अधिकार देकर श्री वीरेन्द्र मुकर गए थे हालांकि इसी अधिकार के आधार पर वह ३ मास महात्मा आनन्द स्वामीजी द्वारा बुलाई बैठको मे आते रहे। कौन जानता है कि वह कब फिर मुकर जावे। वैसे भी सभा का अंश भाग भी उनके पास नही है। इसलिए उनके अधिकार का महत्त्व भी कोई नही। श्री वीरेन्द्र आज श्री रामगोपाल की तथाकथित सार्वदेशिक सभा के उप-प्रधान हैं तथा ४ अन्य उनके साथी इसको अन्तरंग सभा के सदस्य हैं। यदि उनका मन साफ होता तो महात्मा आनन्द भिक्षु जी की इच्छानुसार वे अपनी २४-८-६९ की अन्तरंग सभा से महात्मा जी को अपनी भाँति झगडे निपटाने के पूर्ण अधिकार दिलाते परन्तु ऐसा नही किया। उन्हे तो पंजाब सभा के अधि-कार की लालसा है ताकि पंजाब मे लोगो को कोसने और गालियाँ देने के लिए मंच मिल जावे।

९ श्री रामगोपाल आदि महात्मा जी को अधिकार देने को तैयार नही। इसलिए चिन्ता है कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी आमरण अनशन करेंगे। इसका जो भयंकर परिणाम होगा उसे सारे आर्य जगत् को भुगतना पडेगा। आज सब विचारशील आर्य नेताओं को महात्मा आनन्द भिक्षु जी की इस पवित्र कार्य मे सहायता करनी चाहिए ताकि आर्य जगत् का यह संकट टल जावे।

सर्वोत्तम ग्रन्थ पर १२००) पुरस्कार दिया जायगा

आर्य सिद्धान्तो पर साहित्य निर्माण करने, शोध सम्बन्धी कार्य मे रुचि उत्पन्न करने, सद्ग्रन्थो के पठन, अध्ययन और मनन करने मे सुविधा प्रदान करने एव प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से इस पुरस्कार की योजना बनाई गई थी।

गगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति की प्रबन्धक सभा ने दिनाक २० जुलाई १९६९ को निश्चय किया है कि गगाप्रसाद उपाध्याय-पुरस्कार-समिति द्वारा सचालित (१२००) के पुरस्कार की घोषणा की जाय।

लेखको को सूचित किया जाता है कि इस घोषणा के अनुसार अपनी पुस्तक तैयार कर शीघ्र भेजने की कृपा करें तथा नियम मगवा लेव।

—राधे मोहन मन्त्री, गंगाप्रसाद उपाध्याय-पुरस्कार-समिति, इलाहाबाद

मसूराश्रम में सम्पन्न विशेष शुद्धि एवं विवाह समारोह

(१) सुश्री० एस० वाय० कोली नामक रोमन कैथालिक ईसाई युवती ने हिन्दूधर्म का स्वीकार किया। इसका नाम 'सुरेखा' रखा गया तथा धारावी के तडफदार हिन्दू युवक वासुदेव कोली के साथ हुआ। (२) करीम महमद साहब नामक मुस्लिम युवक ने हिन्दूधम का अगोकार कर करमजीतसिह नाम धारण किया। श्रीमती हरचरण कौर (हिन्दू सिख युवती) एम० एस० सी० के साथ शुद्धिकृत करमोजसिह का विवाह विधि-पूर्वक सम्पन्न हुआ। (३)वसईस्थित वहेरीनिका एफ् लापिस नामक ईसाई युवती का शुद्धिकरण कर रेवती' नाम के साथ उसे हिन्दूधम मे समाविष्ट कर लिया गया। कर्नाटकीय वैष्णव ब्राह्मण श्री प्रकाश देशपाड नामक होनहार युवक की धर्मपत्नी बनकर शुद्धिकृता रेवनी अब हिन्दूसमाज मे सुप्रतिष्ठित हो गई है। (४) लव्हिनीया फेरेरा नामक सुशिक्षित कैथालिक युवति ने हिन्दूधर्म की दीक्षा ग्रहण करते हुए 'मिनाक्षी' नाम धारण किया। तथा श्री मोहन पेंडपेकर नामक हिन्दुभण्डारी युवक के साथ मे इसका विवाह हुआ। (५) उपरोक्त सभी कार्यक्रम श्री हार्डीकर शास्त्री के पौरोहित्य मे आश्रमीय बटुओ के सहयोग से आश्रमप्रमुख ब्रह्मचारी विश्वनाथ जी द्वारा सपन्न किये गये।

ब्रह्मचारी विश्वनाथ मसूराश्रम गोरेगाव (पूर्व), मुबई क्र० ६३

वैदिक साधनाश्रम यमुना नगर का अठारहवां वार्षिक शिविर

इस वर्ष पहली से पाँच अक्टूबर १९६९ ई० तदनुसार १६ से २० आश्विन स० २०२६ विक्रमी दिन बुद्ध, वीर, शुक्र शनि तथा रविवार को श्रद्धा व समारोह पूर्वक लगाया जायेगा। गतवर्षों की भाँति वेदपारायण महायज्ञ मे ब्रह्मचारियो व विद्वानो द्वारा वेद-पाठ होगा। प्रभात को योग प्रशिक्षण हुआ करेगा। इस शुभ अवसर पर उच्चकोटि के सन्यासी-वान-प्रस्थी प्रसिद्ध विद्वान् पधार रहे हैं। धर्म-प्रेमी-सज्जनो को सादर निमन्त्रित किया जाता है।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती,
अध्यक्ष, वैदिक साधन आश्रम, यमुना नगर (जिला अम्बाला)

आर्यसमाज होली मोहल्ला (करनाल)

वार्षिकोत्सव ३ अक्टूबर ६९से५ अक्टूबर तक बडे समारोह से मनाया जायेगा। इस अवसर,पर आर्य जगत् के पूज्य सन्यासी, महात्मा, व्याख्याता और भजनोपदेशक पधारेंगे। वेद प्रचार सप्ताह भी उत्साह पूर्वक मनाया गया। —भद्रसेन अग्रवाल प्रबन्धक

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य का निर्वाचन

प्रधान—श्री नारायण दास जी कपूर, मन्त्री—श्री देवराज जी चड्ढा एम० ए०, कोषाध्यक्ष-श्री बलवन्त राय जी खन्ना तथा अन्य अन्तरग सदस्य। —ओम्प्रकाश प्र० मन्त्री

आर्य हाई स्कूल, तपा (संगरूर)

जे० बी० टी० दूसरे साल का परीक्षा परिणाम बहुत अच्छा रहा है। केवल तीन विद्यार्थी कम्पार्टमैंट मे आये। शेष सभी विद्यार्थी प्रथम और द्वितीय श्रेणी मे रहे, विद्यार्थियो तथा श्री प्रिंसिपल साहिब तथा उनके सहायक अध्यापक सज्जनो को बधाई। —निज सवाददाता

आर्य समाज समस्तिपुर का निर्वाचन

श्री प० आत्माराम मिश्र-प्रधान, श्री प्रभुदीप प्रसाद वर्मा-मन्त्री, डा० हरिराम कोषाध्यक्ष तथा अन्य अधिकारी तथा अन्तरगसदस्य —मन्त्री

नगरआर्य समाज, देहली शाहदरा दयानन्द भवनका चुनाव

श्री गोविन्दराम प्रधान, श्री रघुवीरसिंह मन्त्री, श्री रामकिशन कोषाध्यक्ष। —काशीनाथ गुप्त उपप्रधान।

नोट —इस समाज के निर्वाचन की सूचना आर्यमर्यादा मे छप चुकी थी। इस सूचना से प्रतीत होता है कि यहा दो चुनाव हो गये हैं। इन दोनो सूचनाओ का हम पर कोई उत्तरदायित्व नही है। सम्पादक

प्रतीवाद तथा निर्वाचन

१७ ८ ६९ के अक मे जनता सावधान" समाचार सखेद खण्डन किया जाता है, आर्य स्त्रीसमाज मन्दिर-दयानन्दमार्ग, रेलवे रोड, शकूर बस्ती (दिल्ली) भ्रम फैलाने वाले की निन्दा करती है इस स्त्री आर्य समाज का निर्वाचन इस प्रकार हुआ—

प्रधान—श्रीमती विद्यावती कालडा, मन्त्री—श्रीमती सन्तोष गुप्ता, कोषाध्यक्ष—श्रीमती राजरानी रखेजा,।

—सत्यारानी, उप मन्त्री, ३१४ रानीबाग

समाचार का प्रतिवाद

'आर्यमर्यादा' मे १७ अगस्त ६९ के अक मे पृष्ठ ७ पर श्री मनुदेव अभय उपमन्त्री, आर्यसमाज मल्हार गज, इन्दौर ने "तथा कथित राम-नारायण शास्त्री से सावधान" शीर्षक से एक सूचना प्रकाशित कराई है। इस का मैं स्वय प्रतिवाद करता हू मैं अखिल भारतीय आर्य युवक परिषद बम्बई का महासचिव हू, मैं परिषद् के प्रचारार्थ इन्दौर गया। मेरे कई व्याख्यान हुए। इस परिषद के आधीन कई सस्थान चल रहे हैं। मेरे पास परिषद् की रसीदे और पद रहने है, कोई जाली रसीद आदि नही थी न हैं। श्री उपमन्त्री जी ने जिस कारण यह मिथ्या प्रचार मेरे विरुध किया है, उस को वह स्वय और उनके साथी जानते हैं। मुझ इतना प्रति-वाद करना ही पर्याप्त प्रतीत होता है।-रामनारायण शास्त्री, योद्धा, भवन, बम्बई—५४

नोट—इस सम्बन्ध मे इसके आगे किसी पक्ष का कुछ समाचार आर्य मर्यादा मे प्रकाशित नही किया जावेगा। —सम्पादक

आर्य समाज जमालपुर का वार्षिक निर्वाचन

आर्य समाज जमालपुर का वार्षिक निर्वाचन दिनाक ३।८।६९ को माननीय श्री सुकदेव चौधरी जी की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ जिसमे निम्न लिखित पदाधिकारी चुने गये।

श्री सुकदेव चौधरी जी—प्रधान, श्री केशव लाला गुप्ता—मन्त्री, श्री बनारसी दास जी—कोषाध्यक्ष, श्री मुन्शी शर्मा जी—पुस्तकाध्यक्ष।

—केशव लाल गुप्त मन्त्री आर्यसमाज जमालपुर

आर्य समाज अजमेर का वार्षिक अधिवेशन तथा चुनाव

भारत की कुछेक प्रमुख आर्य समाजो मे एक तथा राजस्थान की सबसे बडी आर्य समाज अजमेर का वार्षिक अधिवेशन अपनी गौरवशाली पर-म्परा के अनुरूप बहुत ही शान्त रूप मे सम्पन्न हुआ,।

तथा चुनाव निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ —

प्रधान—श्री दत्तात्रेय जी वाव्ले मन्त्री श्री सूर्यदेव जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री मक्खनलालजी शर्मा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सदाविजय जी आर्य तथा अन्य सदस्य। —उपमन्त्री

आर्य समाज लुध्याना रोड़ फिरोजपुर छावनी।

हिन्दी रक्षा आन्दोलन के सत्याग्रही फिरोजपुर सेंट्रल जेल मे शहीद हुतात्मा वीर सुमेरसिंह जी का बलिदान दिवस बडे समारोह के साथ मनाया गया। जिसमे हिन्दी रक्षा आन्दोलन के इतिहास पर प्रभावशाली भाषण हुवे और शहीद के प्रति अपनी श्रद्धाजली अर्पित की।

—मन्त्री रोशनलाल

पूजनीय कुलपिता का स्वर्गवास

अत्यन्त शोक का विषय है कि आर्य कन्या गुरुकुल तथा महिला महाविद्यालय सस्थापक तथा सचालक परम पूज्य कुलपिता श्रीमान सेठ नानजी भाई कालिदास महेता का २५ अगस्त १९६६ सोमवार को प्रात ९-४५ बजे उनके निवासस्थान शातिकुटीर मे स्वगवास हो गया। वे कुछ समय से बीमार थे परतु किसी को ऐसी आशका नही थी कि वे एकाएक ही हम से सदा के लिये विलग हो जायगे। महान परोपकारी धर्म सस्कृति, विद्या और समाज के परम पुजारी अपने सत्कर्मों से पुण्यशालो हो गये। परम पिता परमात्मा उनकी दिवगत आत्मा को शाति और सुगति प्रदान करें। शोक सतम समस्त कुलवासी जन।

आर्य कन्या गुरुकुल तथा महिला महाविद्यालय, पोरबन्दर

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब भी इस दु ख समाचार पर शोक प्रकाशित करतो है—सभा मन्त्री

आर्यसमाज बिठमडा का चुनाव

श्री मुन्शीराम जी प्रधान श्री सोताराम शर्मा मन्त्री, श्री पिंडीदास-कोषाध्यक्ष श्री काशीराम-पुस्तकाध्यक्ष—मन्त्री

ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि अपना वार्षिक शुल्क १० रु० भेजकर कृतार्थ करें

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साहित्य विभाग का सूची पत्र

१	सत्यार्थ प्रकाशन या सस्करण—ले० स्वा० दयानन्द मूल्य	३-००
२	धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जो	१-२५
३	सुशोला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतो का सग्रह	१-००
४	आत्मानन्द लेखमाला —स्वा० आत्मानन्द लेखक सग्रह	१-२५
५	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६	वैदिक सत्सग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७	कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८	स्वमन्तव्यमन्तव्य प्रकाश—ले० स्वा० उमानन्द	०-४०
९	वेदाविभाव—वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकार विधि	०-७५
१०	जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम ए	३-००
११	सोमसरोवर „ „ „	३-००
१२	Princile of Arya Samaj „	१-५०
१३	Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१४	Snbject Mattea Vedas	१-००
१५	आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-६०
१६	मुक्ति के साधन—प० मनदमोहन विद्यासागर	१-००
१७	प० गुरुदत्त विद्यार्थी—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-३५
१८	वैदिकधम को विशेषताएं—प० हरिदेव जा	१०) सैकडा

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाडी धीरज देहली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

अप्त मर्यादा कवयस्ततक्ष (ऋग्वेद)

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

४८वे वर्ष से आगे पुरुष और २४वे वर्ष से आगे स्त्री को ब्रह्मचर्य न रखना चाहिये, परन्तु यह नियम विवाह करने वाले पुरुष और स्त्रियों का है और जो विवाह करना ही न चाहे वे मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सके तो भले ही रहे परन्तु यह काम पूर्ण विद्यावाले जितेन्द्रिय और निर्दोष योगी स्त्री और पुरुष का है। यह बडा कठिन काम है कि जो काम के वेग को थाम के इन्द्रियो को अपने वश में रखना। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ३९ — २९ भाद्रपद वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १४ सितम्बर १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१०) रु०
„ „ विदेश में—२०) रु०
एक प्रति का मूल्य —२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथेन्द्रशब्देन सभासेनाध्यक्ष उपदिश्यते ॥

अब अगले मन्त्र मे इन्द्र शब्द से सभा वा सेना के स्वामी का उपदेश किया है।

स्तोत्रं राधानां पते गिर्वाहो वीर यस्य ते ।
विभूतिरस्तु सूनृता ॥ ऋ० १.३०.५ ॥

पदार्थ—(स्तोत्रम्) स्तुवन्ति येन तत् (राधानाम्) राध्नुवन्ति सुखानि येषु पृथिव्यादिधनेषु तेषाम् (पते) पालयितः (गिर्वाहः) गीर्भिर्वेदस्थवाग्भिरुह्यते प्राप्यते यस्तत्संबुद्धौ (वीर) अजति वेत्ति जानाति प्रक्षिपति विनाशयति सर्वाणि दुःखानि वा यस्तत्सम्बुद्धौ (यस्य) स्पष्टार्थः (ते) तव (विभूतिः) विविधमैश्वर्यम् (अस्तु) भवतु (सूनृता) सुष्ठु ऋत यस्या सा।

अन्वयः—हे गिर्वाहो वीर राधानापते सभासेनाध्यक्ष विद्वन् यस्य ते तव सूनृता विभूतिरस्ति तस्य तव सकाशादस्याभिर्गृहीत स्तोत्र नोस्माकं मदाय शुष्मिणेऽस्तु।

भावार्थः—अत्र पूर्वस्थान्मन्त्रात् (मदाय) (शुष्मिणे) (न) इति पदत्रयमनुवर्त्तते। मनुष्यैर्यः सर्वस्य स्वामी वेदोक्तगुणाधिष्ठानो विज्ञानरतः सत्यैश्वर्यः यथायोग्यन्यायकारी सभाध्यक्षः, सेनापतिर्वा विद्वानस्ति स एवास्माभिर्न्यायाधीशो मन्तव्य इति।

भावार्थ—हे (गिर्वाह) जानने योग्य पदार्थों के जानने और सब दु:खों के नाश करने वाले तथा (राधानाम्) जिन पृथिवी आदि पदार्थों में सुख सिद्ध होते हैं उनके (पते) पालन करने वाले सभा वा सेना के स्वामी विद्वान् (यस्य) जिन (ते) आप का (सूनृता) श्रेष्ठता से सब गुण का प्रकाश करने वाला (विभूतिः) अनेक प्रकार का ऐश्वर्य है सो आप के प्रकाश से हम लोगों के लिये (स्तोत्रम्) स्तुति (न.) हमारे पूर्वोक्त (मदाय) आनन्द और (शुष्मिणे) बल के लिये (अस्तु) हो।

भावार्थ—इस मन्त्र में पिछले तोसरे मन्त्र से (मदाय) (शुष्मिणे) (नः) इन तीन पदो की अनुवृत्ति है। हम लोगों का सब का स्वामी जो कि वेदो से परिपूर्ण विज्ञानरत ऐश्वर्ययुक्त यथायोग्य न्याय करने वाला सभाध्यक्ष वा सेनापति है उसी को न्यायधीश मानना चाहिये।

(—ऋषिदयानन्द का भाष्य)

क्षुद्रबुद्धि और शूद्र का संवाद

क्षुद्रबुद्धिरुवाच—"सभी विद्वान् हो जावेंगे तो हम को कौन पूछेंगे। और आप ही आप सब पुस्तकों को बाच कर अर्थ समझ लेंगे, पूजापाठ में भी न बुलावेंगे। विशेष विघ्न धनाढ्य और राजाओं के पढ़ाने में है, क्योंकि उन लोगों से हम लोगों की बड़ी जीविका होती है।" जब किसी शूद्र ने उनके पास पढ़ने की इच्छा से जाके कहा कि 'मुझको आप कुछ पढ़ाइये' तो (अल्पबुद्धि)—"तू कौन है ? क्या काम करता है ? और तेरे घर में क्या व्यवहार होता है ?" दास—"मैं तो महाराज ! आपका दास शूद्र हू, कुछ जिमीदारी खेतीबाड़ी भी होती है और घर में कुछ लेनदेन का भी व्यवहार है।" (नष्टमति) छी ! छी !! छी !!! तुझ को सुनने और हमको सुनाने का अधिकार नहीं है, जो तू अपना धर्म छोड़कर हमारा धर्म करेगा तो क्या नरक में न पड़ेगा ? हां, तुझको वेदों से भिन्न ग्रन्थों की कथा सुनने का तो अधिकार है। जब तेरी सुनने की इच्छा हो तो हम को बुला लेना सुना देंगे परन्तु आप से आप मत बांच लेना नहीं तो अधर्मी हो जावेगा। जो कुछ भेंट पूजा लाया हो सो घर के चला जा और सुन, हमारे वचन को मान ले, नही तो तेरी मुक्ति कभी न होगी। खूब कमा और हमारी सेवा किया कर इसी मे तेरा कल्याण और तुझ पर ईश्वर प्रसन्न होगा।" दास—"महाराज मुझको तो पढने की बहुत इच्छा है, क्या विद्या का पढना बुरी चीज है कि दोष लग जाय। (बकवृत्ति) बस बस तुझे किसी ने बहका दिया है जो हमारे सामने उत्तर प्रत्युत्तर करता है। हाय ! क्या करे कलियुग आ गया, विद्या को पढ़ कर हमारा उपदेश नही मानते, बिगड़ गये।" (दास)—"क्या महाराज ! हमारे ही ऊपर कलियुग ने चढाई कर दी कि जो हमको ही पढने और मुक्ति से रोकता है।" (स्वार्थी)—"हा हा जो सत्ययुग होता तो तू हमारे सामने ऐसा बर-बर कर सकता !" (दास)—"अच्छा तो महाराज जी ! आप नही पढाते तो हमको जो कोई पढावेगा उसके चेले हो जावेंगे।" (अन्धकारी)—सुन-सुन कुलियग मे और क्या होना है।" (दास)—"आपकी हम सेवा करें उसके बदले आप हमको क्या दगे ?" (मारजारलिङ्गी)—"आशीर्वाद" (दास)—"उस आशीर्वाद से क्या होगा ?" (धूर्त)—"तुम्हारा कल्याण।" (दास)—"जब आप हमारा कल्याण चाहते हैं तो क्या विद्या के पढने से अकल्याण होता है ?" (पोप उवाच)—"अब क्या तू हम से शास्त्रार्थ करता है।"

विद्या और शिक्षा की रीति

आचार्य समाहित हो कर ऐसी रीति से विद्या और सुशिक्षा करे कि जिस से उस के आत्मा के भीतर सुनिश्चित अर्थ होकर उत्साह ही बढता जाये। ऐसी चेष्टा वा कर्म कभी न करें कि जिस को देख वा करके विद्यार्थी अधर्मयुक्त हो जावें। दृष्टान्त, हस्तक्रिया, यन्त्र, कलाकौशल विचार आदि से विद्यार्थीयों के आत्मा में पदार्थ इस प्रकार साक्षात् करावें कि एक के जानने से हजारो पदार्थ यथावत् जानते जावे। अपने आत्मा में इस बात का ध्यान रखें कि जिस प्रकार से ससार में विद्या धर्माचरण की बढती और मेरे पढाये मनुष्य अविद्वान् और कुशिक्षित होकर मेरी निन्दा के कारण न हो जाये कि मैं विद्या के रोकने और अविद्या की वृद्धि का निमित्त गिना जाऊ। ऐसा न हो कि सर्वात्मा परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव मेरे गुण कर्म स्वभाव विरुद्ध होने से मुझ को महा दु:ख भोगना पड़े। धन्य वे मनुष्य हैं कि जो अपने आत्मा के समान सुख मे सुख और दु:ख में दु:ख अन्य मनुष्यों का जान कर धार्मिकता को कदापि नही छोड़ते, इत्यादि उत्तम व्यवहार आचार्य लोग नित्य करते जायें। विद्यार्थी लोग भी जिन कर्मों से आचार्य की प्रसन्नता होती जावे वैसे कर्म करे, जिस से उस का आत्मा सन्तुष्ट होकर चाहे कि ये लोग विद्या से युक्त हो कर सदा प्रसन्न रहे, रात दिन विद्या ही के विचार में लगकर एक दूसरे के साथ प्रेम से परस्पर विद्या को पढ़ाते जावें, जहा विषय वा अधर्म की चर्चा भी होती हो वहां कभी खड़े भी न रहें। जहां जहा विद्यादि व्यवहार और धर्म का व्याख्यान होता हो, वहा से अलग कभी न रहें। भोजन छादन ऐसी रीति से करें कि जिस से कभी रोग, वीर्य हानि वा प्रमाद न बढ़े। जो बुद्धि के नाश करने हारे नशों के पदार्थ हों, उनको ग्रहण कभी न करें किन्तु जो-जो ज्ञान बढ़ाने और रोग नास करने हारे पदार्थ हो, उन्हीका सेवन सदा किया करें। नित्य प्रति परमेश्वर का ध्यान, योगाभ्यास, बुद्धि का बढाना, सत्य धर्म की निष्ठा और अधर्म का सर्वथा त्याग करते रहें। जो जो पढ़ने में विघ्नरूप कर्म हों उन को छोड़ कर पूर्ण विद्या को प्राप्त करें इत्यादि दोनों के गुण कर्म हैं। —(ऋषि दयानन्द रचित 'व्यवहारभानु' पुस्तक)

गतांक से आगे—

श्री शंकराचार्य के भ्रामक विचार

(प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर, एम. ए. गवर्नमेण्ट कालिज गुलबर्गा

"शूद्रे तु यद् भवेल्लक्ष्म द्विजे तच्च न विद्यते ।
न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो न च ब्राह्मणः ॥
यत्रैतल्लक्ष्यते सर्प वृत्तं स ब्राह्मणः स्मृतः ।
यत्रैतन्न भवेत् सर्प तं शूद्रमिति निर्दिशेत् ॥"

अर्थात् शूद्र में यदि सत्य, दान, अक्रोध आदि आचार के लक्षण हों तो वह शूद्र नहीं रह जाता। ब्राह्मण में यदि ये लक्षण न हों तो वह ब्राह्मण नहीं होता। हे नागराज, जिसमें चरित्र है, वही ब्राह्मण है, जिसमें चरित्र नहीं, वह शूद्र है। इसी प्रकार यक्ष युधिष्ठिर वार्त्तालाप के प्रसंग में यक्षद्वारा पूछे गये इस प्रश्न का जन्म, आचार, स्वाध्याय, और ज्ञान इन में से ब्राह्मण बनने में कौन कारण बनता है? युधिष्ठिर ने जो निश्चयात्मक उत्तर दिया वह भी श्रवणीय है—

"शृणु यक्ष कुलं तात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् ।
कारणं हि द्विजत्वे तु वृत्तमेव न संशयः ॥
वृत्तं यत्नेन न संरक्ष्यं ब्राह्मणेन विशेषतः ।
अक्षीणवृत्तो न क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः ॥
चतुर्वेदोऽपि दुर्वृत्तः स शूद्रादतिरिच्यते ।
योऽग्निहोत्रपरो दान्तः स ब्राह्मण इति स्मृत ॥"

अर्थात् हे यक्ष ! ब्राह्मण बनने में न जन्म कारण है न अध्ययन न ज्ञान। ब्राह्मण बनने में तो सदाचार ही कारण है। इस आचार को प्रयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए और विशेष रूप से ब्राह्मण को। चारों वेदों का विद्वान् भी पर दुराचारी ब्राह्मण, शूद्र से भी बदतर है और जो अग्निहोत्र करने वाला संयमी और आचारवान् है, वही ब्राह्मण है।

ये तो हुए गुणकर्मपरक वर्णव्यवस्था के शास्त्र-प्रमाण। भारतीय इतिहास में ऐसे सैकड़ों उदाहरण पाये जाते हैं। जहां पर इस शास्त्र मर्यादा का प्रत्यक्ष व्यवहार में पालन होता था। महीदास ऐतरेय मही नामक दासी के पुत्र थे। वह नीच जाति की थी इसीलिए उसको इतरा भी कहते थे। दासी पुत्र होने पर भी वेदों के इतने बड़े विद्वान् हुये कि उनके रचे हुये "ऐतरेय ब्राह्मण" ऐतरेय उपनिषदादि ग्रन्थ पढ कर लोग आज ऋग्वेद के रहस्य को समझते हैं और ब्राह्मण बनते हैं। दूसरे ऋषि हैं कवष एलूष। वह भी एक दासी पुत्र थे जिनको इनकी आचार भ्रष्टता के कारण ऋषियों ने यज्ञ में से निकाल दिया था। पर जब ये आचारवान् बने, तब उनको बुलाकर यज्ञ का आचार्य बनाया गया। तृतीय उदाहरण है दासी पुत्र सत्यकाम जाबाल का। यह जबाला नामक एक दासी के पुत्र थे। केवल इनकी सत्यवादिता और शुद्धता के कारण महर्षि गौतम ने उनको ब्राह्मण वर्ण प्रदान किया और बाद में विद्या पढ़कर वह बहुत बड वेदज्ञ पण्डित बने। स्वयं आदि कवि वाल्मीकि भृगु कुलोत्पन्न होते हुए भी पहले महादुराचारी व्यक्ति थे जो बाद में बहुत बड़े ऋषि बने। विश्वामित्र भी क्षत्रिय से ब्राह्मण बने। महाभारत और पुराणों में ऐसे सैकड़ों राजाओं के नाम आते हैं जो ब्राह्मण से क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और इसके विपरीत शूद्र से क्षत्रियादि बने। उदाहरणार्थ पृषध्र, करूष, नाभाग, अग्निवेश्य, रथीतर, हारित, शौनक, गृत्समति, वीतहव्यादि।

आदि काल में शूद्र का दर्जा दूसरे तीन वर्णों से किसी प्रकार कम नहीं था। वह भी सदाचारी और सत्कर्मी होता था। उसका भी उपनयन होता था। किन्तु, कठोर शारीरिक परिश्रम कर वह समाज की सेवा करता था। इसीलिए वेद में कहा है "तपसे-शूद्रम्" वेदों में स्थान-स्थान पर तीनों वर्णों के साथ शूद्र को समानता का अधिकार दिया गया है और उसके लिए भी प्रार्थना की गई है—

"रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि ।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥ यजुर्वेद ॥
प्रियं मा दर्भ कृणु ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च ।
यस्मै च कामयामहे सर्वस्मै च विपश्यते ॥ अथर्व० ॥

अति प्राचीन काल में चोर, डाकू और दुराचारी को दास, दस्यु और राक्षस कहते थे।

वर्ण और जाति

श्री० शंकराचार्य जी तथा कई अन्य विद्वान् वर्ण और जाति को समान मानते हैं यह उनकी बड़ी भारी भूल है। वर्ण के विषय में हमने देख लिया कि वह एक मनुष्यों के अपने गुणकर्मों द्वारा निर्मित चीज है। उसका जन्म से कोई सम्बन्ध नहीं। किन्तु जाति इसके विपरीत है। वह मनुष्यकृत न होकर ईश्वर द्वारा निर्मित है। संसार में हम सैकड़ों प्रकार की चीजें देखते हैं, जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, पत्थर, लता, वृक्षादि। ये सब भिन्न-भिन्न जातियाँ हैं जो जन्म से ही पैदा होती हैं। शंकराचार्य जी ने इन सब जातियों को और वर्णों को समान रूप से जन्मसिद्ध माना है जो उनकी बड़ी भारी भूल है। महर्षि गौतम ने न्याय दर्शन में जाति की व्याख्या करते हुए लिखा है कि—"समानप्रसवात्मिका जातिः" ॥ न्याय सू० ॥ इस सूत्र पर भाष्य करते हुये वात्स्यायन मुनि लिखते हैं—"या समानां बुद्धिं प्रसूते भिन्नेष्वधिकरणेषु, यया बहूनीतरेतो न व्यावर्तन्ते, योऽर्थोऽनेकत्र प्रत्ययानुवृत्तिनिमित्तं तत् सामान्यम्। यच्च केषांचिदभेदं कुतश्चिद्भेदं करोति सामान्यविशेषो जातिरिति।" अर्थात् जो भिन्न-भिन्न वस्तुओं में एकता स्थापित करती है, जिसमें कारण भिन्न-भिन्न वस्तुएँ एक दूसरे से अलग नहीं समझी जातीं, और जो अनेक स्थानों पर रहते हुये भी एकत्व को प्रतीति कराती है वह सामान्य जाति है। और जो किन्हीं वस्तुओं में अभेद और किन्हीं दूसरी वस्तुओं में भेद उत्पन्न करती है वह सामान्य विशेष जाति कहलाती है। उदाहरणार्थ-मनुष्य जाति, पशु, जाति, पक्षी जाति, वृक्ष जाति आदि सामान्य जातियाँ हैं। क्योंकि वह-वह जाति उस वर्ग के सभी वस्तुओं में समान रूप से पायी जाती है जैसे पशुत्वादत्वादि-पशु जाति गाय, घोड़ा, ऊंट आदि सभी पशुओं में समान रूप से पायी जाती है। किन्तु, गोत्व, अश्वत्व आदि सभी पशुओं में न पायी जाकर केवल गौवों और अश्वों आदि में ही पायी जाती है यद्यपि पशुत्व जाति सब में समान है। गो जाति सभी गौवों के साथ तो अभेद उत्पन्न करती है किन्तु, दूसरे पशु घोड़ों के साथ भेद उत्पन्न करती है, इसीलिए गाय, घोड़ा आदि सामान्य विशेष जातियाँ हैं। इसी प्रकार तोता, कौवा, मोर, चिड़ियां आदि पक्षी विशेष और चंदन, नीम, आम्र आदि वृक्ष विशेष, सामान्य विशेष जातियाँ हैं जो परस्पर भिन्न भी हैं और समान भी हैं। यह भिन्नता और समानता उनमें जन्म से ही पायी जाती है और इतनी स्पष्ट रूप से पायी जाती है कि छोटा-सा बच्चा भी पहचान सकता है कि यह गौ है यह घोड़ा है, यह कौवा है, यह चंदन है इत्यादि। किन्तु मनुष्य जाति केवल सामान्य जाति है। उसमें सामान्य विशेष जाति का बिल्कुल भेद नहीं है। चारों वर्णों के मनुष्य समान रहते हैं। बिना बताये कोई नहीं कह सकता कौन किस वर्ण का है। यदि शंकराचार्य जी के सामने चारों वर्णों के बालक रख दिये जायं, तो क्या वे पहचान सकेंगे कि कौन किस वर्ण का है? शंकराचार्य तो क्या बड़े-बड़े ऋषि भी नहीं पहचान सके। सत्यकाम जाबाल के वर्ण को गौतम और एकलव्य के वर्ण को द्रोणाचार्य नहीं समझ सके। इस प्रकार मनुष्यों को सामान्य जाति की पशु पक्षियों आदि की सामान्य विशेष जाति से तुलना करना वस्तुतः बड़ी दार्शनिक भूल है। कम-से-कम शंकराचार्य जैसे दार्शनिक विद्वान् को तो यह शोभा नहीं देती।

वर्ण और जाति में भेद

(१) वर्ण, मनुष्य के अपने गुणकर्म से उत्पन्न होता है, किन्तु, जाति ईश्वर द्वारा नियतिकृत होने से जन्मजात होती है।

(शेष पृष्ठ १० पर)

सम्पादकीय—

आचार की रक्षा धर्म ही कर सकता है

कोई दिन ऐसा नहीं जाता, जिस दिन भारतीय कुमारी छात्राओं के साथ अश्लीलतापूर्ण अशिष्टता की घटनाओं की चर्चा दैनिक पत्रों में खेद एवं दुःख पूर्वक पढ़ने का न मिलती हो ! क्या ये छात्राएं हमारी ही बहिन और बेटियां नहीं हैं ? क्या ये छात्र हमारे ही भाई और बेटे नहीं हैं ? क्या इन पढ़ने वाले लड़कों और लड़कियों के माता-पिता=अभिभावक इन दुर्घटनाओं पर दुःखी नहीं हैं ? अवश्य हैं ! फिर क्यों नहीं कुछ उपाय ऐसे किये जाते, जिन से ऐसी गन्दगी भरी घटनाएं घटने न पावें ? शिक्षा के नाम पर भारतीय युवक और युवतियों में खुल कर अनाचार फैलाया जा रहा है। इस अनाचार की रोकथाम अत्यावश्यक है। राष्ट्र को बलिष्ठ और आचारवान् रखना जहां सरकार का काम है, वहां जनता का भी कर्तव्य है। दोनों मिल कर ही इस भयङ्कर बुराई को दूर कर सकते हैं।

हम आगे की कुछ पंक्तियों में दो प्रकार के उपायों का सुझाव देते हैं, जिन में कुछ उपायों से बुराई को दूर हटाया जा सकता है तथा कुछ उपायों से अच्छाई को ग्रहण किया जा सकता है। पहिले हम कुछ बुराइयों का नाम निर्देश करके उन से दूर रहने के उपाय लिखते हैं, क्योंकि बुराई को दूर करने पर ही अच्छाई ग्रहण की जा सकती है, आर्यसमाजी भाई बहिन प्रतिदिन "विश्वानि दुरितानि परासुव" इस मन्त्र गत इन पदों को स्मरण करते रहते हैं। इन का स्थूल भाव यही है कि हम दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को ईश्वरोपासना, सत्सग, उत्तम शिक्षा और सदाचार द्वारा हटाते रहें। वस्त्रों आदि पर मैल अवश्य लगता रहता है और हम उस को हटाते रहते हैं। इसी प्रकार आत्मा मन और बुद्धि पर भी मल लगता रहता है, उस मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक मल को भी हमें दूर करते रहना अनिवार्य है। भारतीय प्रथम संविधान के अनुसार शासन करने वाला मनु कहता है कि "मनः सत्येन शुध्यति" "बुद्धि र्ज्ञानेन शुध्यति" तथा "विद्यातपोभ्या भूतात्मा [शुध्यति]" अर्थात् सत्य=ठीक-ठीक व्यवहार करने से मन का मैल दूर होता है। मन ही सब सङ्कल्प विकल्पों का मूल है। इसी पर मैल की तहें जमती रहती हैं, इन को दूर करना सर्वप्रथम कर्तव्य है। इस का उपाय मन, वचन और कर्म की एकता रख कर लोक व्यवहार करना है। यद्यपि यह देखने में दुःसाध्य है, परन्तु थोड़ा साहस करने में मनुष्य इस मल को दूर करने में समर्थ हो सकता है, कुछ कष्ट तो उठाना पड़ता ही है। गांव के साधारण भाई बहिन भी कहा करते हैं कि झाड़ के बेरियों से बेर चुनने में कांटे तो चुभेंगे ही, परन्तु कांटो में हाथ डाले बिना बेर भी तो नही मिल सकते। इस लिये थोड़ा साहस कर के मन के मैल को हटाना चाहिये। बुद्धि पर लगने वाले मैल को उत्तम धार्मिक शिक्षा से दूर किया जा सकता है, उच्च और उत्तम शिक्षा यही है कि जिस से मनुष्य अपनी माता, बहिन, बेटी के समान अन्य लोगों की माता, बहिन और बेटी को मान मर्यादा का पालन करे। मानसिक मैल के दूर हटाने पर बौद्धिक मैल सरलता से दूर किया जा सकता है। यही बौद्धिक मल हमारे राष्ट्र के होनहार छात्र और छात्रों में भयङ्कर रूप से जड़ जमाये हुए है। इस को दूर करने के लिये माता-पिता और परिवार के लोगों को अपने बालक बालिकाओं की आरम्भिक अवस्था में भी पूरा ध्यान रखना चाहिये। अपने बच्चों को गलियों में गन्दी गालियों के सुनने और देने से बचाते रहना चाहिये। इस मैल को हटाने की सीढ़ी का यह प्रथम डंडा है। यदि किसी अज्ञान, मोह अथवा प्रमाद वश माता-पिता इस बात पर ध्यान नहीं देते, वे स्वयं अपने बालक बालिकाओं को कुमार्ग पर चलने और आगे बढ़ने की दुष्ट प्रेरणा करते हैं। आरम्भ ही में इस महामारी को सरलता से रोका जा सकता है। बढ़ने पर कोई भाग्य शाली युवक और युवती इस उन्मार्ग पर चलने से बचा रह सकता है। इस उपर्युक्त दोनों मैलों को मन और बुद्धि से दूर रखने का सफल अस्त्र है—विद्या और तप। इन दोनों से ही बालक से लेकर वृद्ध तक का आत्मिक मल दूर होता रहता है। पदार्थ के स्वरूप को ठीक जान कर उस से उचित उपयोग लेना हो विद्या कहाती है। विद्या प्राप्ति का परम सहायक तप है। मान-अपमान, दुःख-सुख, गर्मी-सरदी को सहन करना ही परम तप है। तपस्वी बालक को सरल जीवन, सादा पहिनावा, सात्विक भोजन और श्रेष्ठ चाल चलन के साथियों की संगति बहुत सहायता देती है। वास्तव में आत्म-शुद्धि ही परम लक्ष्य है। मानसिक और बौद्धिक शुद्धियां इस को ऊँचा उठाने में साधन हैं। ये कुछ बात हम ने व्यक्तिगत लाभ के लिये लिखी हैं।

व्यक्तियों से ही समाज बनता है। समाज में भी मैल चढ़ता है, उन को भी हटाते रहना अत्यावश्यक है। सामाजिक मैलों में पहिला जड़ रूप मैल कुसङ्ग है। इस कुसङ्ग से अपने बालक-बालिकाओं को दूर रखते रहना माता-पिता आदि का काम है, इस सामाजिक मैल की जहरीली जड़ नाच, स्वांग और सिनेमा हैं। इन मलों में हमारे छात्र और छात्राएं बुरी तरह लिप्त हैं। माता पिता इन मलों से दूर रखना तो एक बात है, अपितु स्वयं अपने अबोध बालक और बालिकाओं को लेकर शहरों में सिनेमा देखने जाते हैं। फिर यह आशा रखें कि हमारे बालक और बालिकाएं शुद्ध मन वाले रह सकें। नितान्त मिथ्या बात है, खेद से कहना पड़ता है कि सरकार द्वारा नियुक्त खोसला समिति ने सिनेमाओं के लिये ऐसे गन्दे सुझाव दिये हैं कि जिन को जान और सुन कर सिनेमाओं के अभिनेत्रियां भी शर्मा गई हैं और विरोध प्रकट करने लगी हैं। जब ऐसे गन्दे वातावरण से भरे सिनेमाओं के घेरे में छात्र और छात्राएं इकट्ठे जावें, तो क्या कुछ कुकर्म नहीं हो सकते, कई निर्लज्ज माता-पिता यह कहते सुने जाते हैं कि हम तो अपने नौजवान लड़कों अथवा लड़कियों को इस लिये सिनेमाओं में जाने की स्वय प्रेरणा देते रहते हैं कि इन के विवाहों का उत्तरदायित्व हम पर नही रहेगा ! ! ! इस से बढ़ कर अपने होनहार युवक छात्रों और युवती छात्राओं के गले को काटने के लिये कुन्द छुरी कोई हो सकती है ?

इसी मैल के कारण अनुशासन नाम को कोई चीज छात्र और छात्राओं में रह नही गई है। जब तक इन दुर्गुणों से छात्र और छात्राओं को दूर नही रखा जावेगा, तब तक इन राष्ट्र की नवपीढ़ियों में सद्गुण कैसे ढाले जा सकते हैं।

आर्यसमाज मन्दिरों के साप्ताहिक सत्संगों में छात्र और छात्राएं दिखलाई नही पड़ती। रविवार की छुट्टी है, तब छात्र और छात्राएं कहाँ जाती हैं, कहने को बात नही है। मानो उपदेश सुनने और सुनाने के लिये वृद्ध पुरुष और वृद्धा देवियां ही रह गई हैं।

आर्यसमाज की स्थापना तो आदित्य ब्रह्मचारी देव दयानन्द ने की है। उस महर्षि ने अपने सत्यार्थप्रकाश आदि सुप्रसिद्ध ग्रन्थों में छात्र और छात्रों को इन मलों से दूर रखने के लिये अचूक नुस्खे वर्णित किये हैं। यदि नुस्खे को घोट लिया जावे और उस को मल-रोग दूर करने में काम में न लाया जावे, तो क्या कभी बीमारी दूर हो सकती है।

पूज्या आर्य देवियों=माता और बहिनों से हाथ जोड़ कर प्रार्थना है कि इस बीमारी को रोकने के लिये कोई सक्रिय योजना बना कर राष्ट्र देवियों का नेतृत्व करें। साथ ही हम प्रत्येक आर्य परिवार के अभिभावकों से साग्रह निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि वे भी अपनी बढ़ती हुई जीवित पीढ़ी की सम्भाल सावधानता पूर्वक करें।

इन पंक्तियों में हम ने केवल तीन मलों के दूर करने पर विचार किया है। ये तीनों मल सभी मलों की खान हैं। इन को दूर करने पर इन के अनुषङ्गी मल सरलता से दूर किये जा सकते हैं।

पंजाब राज्य में प्राइवेट स्कूल

जहाँ पंजाब में हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि का घोर संकट मुँह बाये खड़ा है। प्राइवेट स्कूलों में भी हिन्दी को पढ़ाई पर प्रतिबन्ध की काली घटाएं छा रही हैं, जब कि उनमें भी पंजाबी गुरुमुखी लिपि में पढ़ाई जाना अनिवार्य है। इस संकट का मूल साम्प्रदायिक मनोवृत्ति ही कहा जा सकता है। हिन्दी प्रेमी जगत् में सर्वत्र असंतोष व्याप्त हो रहा है, जो कि स्वाभाविक है। यदि पंजाब में हिन्दी-देवनागरी की उपेक्षा की गई, तो स्वयं पंजाब की हानि होगी, क्योंकि पंजाब से बाहर कार्यव्यवहार चलाने के लिये हिन्दी देवनागरी का जानना आवश्यक है। हम पंजाब की

(शेष पृष्ठ ११ पर)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

कार्यालय–आर्यसमाज–२, दरियागंज दिल्ली–६

SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA
(International Aryan League)

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते । दिनांक ८-९-६९

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा देहलीकी अन्तरंगसभाने निर्णय किया है कि :

रविवार १४ सितम्बर १९६९ को हिन्दी-दिवस मनाया जावे

आपको ज्ञात होगा कि भारतीय संसद् द्वारा हिन्दी को भारत की राष्ट्र-भाषा स्वीकार किया गया था, परन्तु इतने वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी व्यावहारिक रूप से हिन्दी को अभी तक वह स्थान नहीं मिला । केन्द्र तथा अहिन्दी प्रदेशों की बात तो दूर रही, जो हिन्दी प्रदेश हैं उनमें भी अभी तक हिन्दी ने पूर्णतया अंग्रेजी का स्थान नहीं लिया । इससे भी अधिक दुःख की बात है कि जन-साधारण में भी हिन्दो को उचित स्थान नहीं मिल रहा । इस लिये आवश्यकता है कि शासन तथा जनता का ध्यान इस तरफ खींचा जावे और हिन्दी को वास्तविक राष्ट्र-भाषा बनाने का आन्दोलन किया जावे ।

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

आगामी नवम्बर मास में वाराणसी में आर्यों का सार्वदेशिक समारोह होगा, जिसमें महर्षि दयानन्द के प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ की शताब्दी मनायी जावेगी । यह शास्त्रार्थ महर्षि के रूढिवाद को उखाड़ने के लिये किये गये विशेष कार्यों में एक था । उसी कार्य को चालू रखना अत्यन्त आवश्यक है । महोत्सव का कार्यक्रम उपयोगी तथा रोचक बनाया जा रहा है । सब आर्यसमाजों और आर्य नर-नारियों को उसमें पूरा सहयोग देना चाहिये ।

गुरु विरजानन्द निर्वाण शताब्दी

अक्तूबर १९६९ में करतारपुर, जिला जालन्धर (पंजाब) में यह शताब्दी मनायी जावेगी । इसमें भी आपको पूरा सहयोग देना चाहिये । इसी वर्ष आठ-दस वर्ष से अधूरे पड़े "गुरु विरजानन्द स्मारक, मथुरा" को आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश आर्यजनता की सहायता से पूरा करने का यत्न कर रही है ।

उपर्युक्त तीनों कार्यों के सम्बन्ध में आप जो भी कार्य करे उसकी सूचना इस सभा को भेजने की कृपा करें । निवेदक—

रामसिंह प्रधान महेन्द्रप्रताप शास्त्री मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्लो की अन्तरंग सभा के विशेष निश्चय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ने अपनी अन्तरंगसभा की बैठक में आयसमाज के संघटन को सुदृढ करने तथा आगामी १४ सितम्बर को "हिन्दी दिवस" मनाये जाने आदि कार्यों के सम्बन्ध में निम्न विशेष निश्चय किये —

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब को सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध किया गया । २. सभा की न्याय सभा, विद्यार्य सभा एवं धर्मार्य सभा के निर्माण पर विचार किया गया । ३. जिन प्रदेशों में आर्य प्रतिनिधि सभायें नही हैं, उनमें सभायें स्थापित किये जाने का निश्चय किया गया । ४ निश्चय हुआ कि आर्यसमाजों को महर्षि दयानन्द काशो शास्त्रार्थ शताब्दी तथा गुरु विरजानन्द निर्वाण शताब्दी में पूर्ण सहयोग देने को लिखा जावे । ५. आर्यजगत् में १४ सितम्बर १९६९ को "हिन्दी दिवस" मनाया जावे । ६. निश्चय हुआ कि यह सभा, आर्यसमाज संघटन समिति के अध्यक्ष महात्मा आनन्द भिक्षु जी को आर्यजगत् के विवादों को निपटाने मे पूर्ण सहयोग देगो और उनके निर्णय को स्वीकार करेगी ।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री मन्त्री

महात्मा आनन्द भिक्षु जी को आर्य समाज के झगड़े निपटाने का पूर्ण अधिकार मिला

[दिल्ली तथा आसपास के ५०० प्रतिष्ठित आर्यों का निश्चय केवल सार्वदेशिक सभा के चार व्यक्तियों द्वारा विरोध]

नई दिल्ली १ सितम्बर ६९ :—आर्य समाज संघटन समिति द्वारा दिल्ली तथा आस पास के आर्य समाजों के अधिकारियों तथा प्रतिष्ठित सदस्यों की एक बैठक आर्य समाज मन्दिर (अनारकली) रीडिंग रोड नई दिल्ली में रविवार दिनांक ३१-८-६९ को मध्याह्नोत्तर २ बजे हुई । उसमें लगभग ५०० व्यक्ति उपस्थित थे । सर्व प्रथम प्रो० श्यामराव ने सारी स्थिति पर प्रकाश डाला तथा पंजाब की दोनों सभाओं तथा श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री को सार्वदेशिक सभा द्वारा प्राप्त प्रस्ताव जिनमें महात्मा आनन्द भिक्षु जी को झगड़े निपटाने के अधिकार दिये हैं, पढ़ कर सुनाया । श्री रामगोपाल शालवाले की सार्वदेशिक सभा की ओर से महात्मा जी को कोई अधिकार पत्र नही मिला परन्तु बाहर द्वार पर बट रहे उनके २४-८-६९ को छपे प्रस्ताव की प्रति पढ़ कर सुनाई, जिसमें झगड़ों का हल ढूढ़ने के लिये ३ संन्यासियों अर्थात् महात्मा आनन्द भिक्षु जी, स्वामी रामेश्वरानन्द जी तथा स्वामी विद्यानन्द जी विदेह की समिति बनाई है, जो अपनो रिपोर्ट सार्वदेशिक को देगी । महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने सेठ प्रतापसिंह शूरजी बल्लभदास से हुई बातों का ब्योरा दिया तथा सुझाव दिया कि उन पर (महात्मा आनन्द भिक्षु जी पर) इतना बड़ा बोझ न डाल कर सब पक्ष मिल कर हल ढूढें अथवा अपना-अपना प्रतिनिधि दें जो हल निकालें । आर्य समाज दीवान हाल के सदस्य श्री विश्वबन्धु तथा आर्यवीर दल के मन्त्री आदि ने आर्य समाज से संघटन समिति द्वारा झगड़े समाप्त करने के इन सब कार्यों को अनधिकार चेष्टा सिद्ध करने का प्रयत्न किया, जिसे सदन ने पसन्द नही किया । महाशय किशनचन्द जी ने श्री रामगोपाल शाल वाले की सार्वदेशिक सभा दि० २४-८-६९ के प्रस्ताव की कटु आलोचना की तथा कहा कि वह स्वयं झगड़ों में पार्टी हैं । अत: उनकी न्याय सभा तथा सार्वदेशिक सभा पर किसी को न्याय को आशा नहीं हो सकती । ला० दीवानचन्द जी ठेकेदार ने कहा कि श्री वीरेन्द्र ने हमें कई बार पूर्ण अधिकार का विश्वास दिलाया था तथा अभियोग भी वापस लेनें का वचन दिया था । सार्वदेशिक के श्री सोमनाथ जी मरवाहा तथा श्री रामगोपाल जी साक्षी हैं, परन्तु श्री वीरेन्द्र ने कोई वचन पूरा नहीं किया । उन्होंने सुझाव दिया कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी को पूर्ण अधिकार दिया जावे वह जिस की सहायता चाहे ले लें । कुछ व्यक्तियों के आग्रह पर श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री ने अपनी सार्वदेपिक सभा के निर्माण का कारण बताया तथा निवेदन किया कि महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेश के बावजूद ला० रामगोपाल ने पंजाब सभा के १५ प्रतिनिधि अवैध रूप से बैठक में बुला लिये । विरोध करने पर इन लोगों ने महात्मा जी के विरुद्ध अत्यन्त अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया । वह सहन नहीं कर सके तो ५८ में से ३१ प्रतिनिधियों ने अपना पृथक् निर्वाचन कर लिया । श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री ने बताया कि ३१-१२-६७ की बैठक में महात्मा आनन्द स्वामी जी को पजाब सभा के निर्वाचन का अधिकार देकर सार्वदेशिक सभा के अधिकारी मुकर गये । फिर पण्डित शिवकुमार जी शास्त्री के प्रयत्न भी सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों के द्वारा असफल किये गये और अन्त में आर्य महासम्मेलन द्वारा प्रदत्त अधिकार पर महात्मा आनन्द स्वामी जी ने जो प्रयत्न किये उन्हे भी सार्वदेशिक सभा तथा श्री वीरेन्द्र आदि ने विफल कर दिया । अब श्री रामगोपाल शालवाले की सभा ही विरोध रही है । श्री सोमनाथ मारवाहा ने सारी घटनाओं पर प्रकाश डालते हुए व्यक्तिगत आक्षेप का प्रयत्न किया, जो सदन ने पसन्द नहो किया । उन्होंने अपने भाषण में महात्मा आनन्द स्वानी जी पर ही दोष थोपने का प्रयत्न किया, जिससे सदन का वातावरण अत्यन्त रोषपूर्ण हो गया, उन्होंने पंजाब सभा

शेष पृष्ठ ९ पर

पृ० ५ का शेष

और सभी कामनाओं वाले लोगों को अर्थ-दान, रस-दान और विज्ञान देने वाली है। यह बालकों का बाल-बोध भी है, विज्ञवरों का शास्त्र-बोध भी। नीतिकारों का नीतिज्ञान भी है, समाज-शास्त्रियों का समाज-विज्ञान भी। यह भौतिकता वादियों की रसायन-विद्या भी है, अभौतिकतावादियों की "ब्रह्म-विद्या" भी। यह एक ऐसी अद्भुत कुंजी है, जिस से मानव-जीवन विज्ञान के सभी ताले खुल जाते हैं और सहज में ही खुल जाते हैं। संध्या का विग्रह=सम्यक्-ध्यान सारे रहस्यों को सहज में ही प्रगट कर देता है। जो ध्यान करता है सम्यक्तया, उस के संशय मिट जाते हैं, उन्नति के द्वार उस के लिये खुल जाते हैं।

९—"गायत्री-मन्त्र" के अर्थों का प्रतिपादन करने के अनन्तर महर्षि दयानन्द जी लिखते है, "वैदिक-संध्या पद्धति" में—

"एवं प्रातः सायं द्वयोःसन्ध्ययोरेकान्तदेशं गत्वा शान्तो भूत्वा यतात्मा सन् परमेश्वरं प्रतिदिनं ध्यायेत्।"

१०—इस संस्कृत वाक्य का अर्थ मुद्रित पुस्तकों के हिन्दी-भाग में नहीं है, जोकि इस प्रकार होना चाहिये :—

"इस प्रकार प्रातः सायं दोनों सन्धि वेलाओं में एकान्त देश में जा कर, शान्त चित्त हो कर, अपने आत्मा को चेता कर=विवेकारूढ होकर, प्रतिदिन ईश्वर को ध्यावे अर्थात् धारणा, ध्यान और समाधि का अनुष्ठान करे।" मैं ऐसा समझता हूँ कि ऊपर के संस्कृत-वाक्य में जो अन्तिम पद "ध्यायेत्" है, यही धारणा, ध्यान, समाधि और ओङ्कार—जप का विधायक है।

११—इस के आगे महर्षि जी लिखते हैं "अथ समर्पणम्"—

"हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यःसिद्धिर्भवेन्नः।"

अर्थात् हे ईश्वर दया के सागर ! आप की कृपा से इस जप और उपासना आदि कर्म के द्वारा हम को शीघ्र ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हो।

१२—ऊपर की प्रार्थना में जो "अनेन" पद है यह उस जप और उपासना आदि कर्म का निर्देशक है, जो उपासक ने अभी-अभी किया है। अतः मेरा नम्र निवेदन अब यह है कि वैदिक-सन्ध्या के अनुष्ठान में गायत्री-मन्त्र के पश्चात् देर तक "ओ३म्" नाम का जप करना चाहिये और जब कभी भी ओ३म् नाम का जप करना हो, तब विधि पूर्वक सभी संध्या-मन्त्रों का पाठ-आचमन, मार्जन, प्राणायाम आदि-आदि करके गायत्री मन्त्र के बाद "ओ३म्" नाम का जप हो तथा वह समर्पण-विधि और नमस्कार के साथ समाप्त हो।

१३—"योग-दर्शन" के सूत्र "तज्जपस्तदर्थभावनम्" [१।२८] पर श्री महात्मा नारायण स्वामी जी अपने "योग-रहस्य" नामक प्रसिद्ध भाष्य में लिखते हैं—

"क्यों जप करना चाहिये ? इस का उत्तर यह है कि जप करने से ईश्वर के दिव्यगुणों का प्रभाव जपने वालों के हृदय पर पड़ता है और पर्याप्त जप से यह गुण उपासक में आ भी जाते हैं। मनुष्य यदि प्राणायाम के साथ स्थिर आसन होकर तीन घण्टे निरन्तर जप करे और चित्त को ईश्वर के अनुभव करने में लगाये रक्खे, तो यह अनुभूत बात है कि उस का चित्त ठहर जाता है। (समाप्त)

मुफ़्त

पृष्ठ ४ का शेष

के अधिकारियों के चरित्र की जाँच करने के लिये कमीशन नियुक्त करने का सुझाव दिया। श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री ने तुरन्त सुझाव रखा कि अभी तीन सन्यासियों का कमीशन नियुक्त किया जावे जो उनके (श्री शास्त्री के) तथा श्री सोमनाथ मरवाहा के चरित्रों की जाँच करें।

अन्त में श्री बालदिवाकर हंस तथा श्री श्यामराव जी ने सुझाव रखा कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी को झगड़े निपटाने के पूर्ण अधिकार दिये जावें, वह चारों पक्षों अर्थात् दोनों सार्वदेशिक सभाओं तथा दोनों पंजाब सभाओं के बराबर-बराबर प्रतिनिधि लेकर अथवा जैसा उचित समझें झगड़ों का निर्णय कर दें। सार्वदेशिक सभा के चार व्यक्तियों (श्री सोमनाथ मरवाहा तथा श्री शिवचन्द्रगुप्त के नाम उल्लेखनीय हैं) के अतिरिक्त सारे सदन ने हाथ खड़े करके तथा करतल ध्वनि के साथ उपरोक्त प्रस्ताव को स्वीकार किया। सार्वदेशिक सभा के चार व्यक्तियों के विरोध में हाथ खड़े देख कर लोगों ने कहा इस सिण्डीकेट के अतिरिक्त सब लोग महात्मा जी के साथ हैं। इसके उपरान्त आशा करनी चाहिये कि श्री रामगोपाल भी महात्मा आनन्दभिक्षु जी को अपनी अन्तरंग सभा से अधिकार दिलाने की कृपा करें जिससे महात्मा जी को बल मिले तथा वह अपना कार्य कर सकें। शान्ति पाठ के पश्चात् कार्यवाही ५॥ बजे समाप्त हुई।

[विशेष प्रतिनिधि द्वारा प्राप्त]

सो चुके जागो जवानो !
जा चुकी है रात, कहती भारती !

तुम उलूकों के स्वरों से डर गये इतना कि उठना है कठिन;
हो गये बेसुध, विभव जो पास था सारा गया है हाय ! छिन;
रह गये कंकाल केवल, रक्त का संचार सारा बन्द है;
हो रहे आलस्य, मल, दौर्बल्य के आखेट तुम तो दिन बदिन;
क्लांति-संयुत क्लीवता पर क्रोध से भागीरथी धिक्कारती !
सो चुके, जागो जवानो ! जा चुकी है रात कहती भारती !!
कर्णधारो ! तुम यहीं पतवार यदि हो छोड़ देना चाहते
भूत के संबंध दृढ़, बेकार ही हो तोड़ देना चाहते
देश का विकलांग-चित्रण-वासना ही ध्येय अपना जानकर
व्यर्थ ही कोई अपावन पंथ पर, पग मोड़ देना चाहते
भर गयी वह खल-खटाई पुष्ट पावन दुग्ध को जो फाड़ती !
सो चुके, जागो जवानो ! जा चुकी है रात, कहती भारती !
एक दिन था : मातृभूमि की आन का अपमान हो पाया नहीं;
विदुषियों, प्रिय जननियों का रंच भी सम्मान जा पाया नहीं,
किन्तु अब तो आक्रमण हर—पक्ष पर होते दिखायी पड़ रहे;
स्वाभिमानी भावना पर कुछ—तुम्हारा ध्यान जम पाया नहीं;
दुष्ट दुर्जन-मंडली दृढ मूल पर ही बढ़ कुल्हाड़ी मारती !
सो चुके, जागो जवानो ! जा चुकी है रात, कहती भारती !!
यह सही है : ज्ञान के आलोक की कुछ-कुछ अभी मध्यम किरण
शान्ति का गत राज्य, जमते जा रहे अविवेक के दृढ़तम चरण
एकता-बल-हीन जग के सिन्धु में वड़वाग्नि धधकी दिख रही
लुप्त पावनता हुई, पथ कर चुका अज्ञान-कश्मल का वरण
किन्तु, देखो ! पूर्व में ऊषा दुलारी है सँभाले आरती !
सो चुके, जागो जवानो ! जा चुकी है रात, कहती भारती !!

—भैरवदत्त शुक्ल
अध्यक्ष वैदिक परिषद्, स्थान पो० लगुचा, जिला खीरी (उ० प्र०

शङ्का समाधान

(प्रश्न) १—(क) महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास के अन्तिम भाग में लिखा है "इङ्गलेण्ड के कुलुम्बस आदि पुरुष जब तक अमेरिका में नहीं गये थे।" कुलुम्बस इङ्गलेण्ड का रहने वाला नहीं था—ऐसा क्यों लिख गया है ?

(ख) यज्ञ में मन्त्र बोलकर उत्तर दिशा में फिर दक्षिण दिशा में आहुतियाँ दी जाती हैं, क्या इसमें कोई वैज्ञानिक रहस्य है ?

—श्री अनूपसिंह बी० ए, बी० टी० मुजफ्फरनगर

उत्तर—(क) यह ठीक है कि कुलुम्बस इङ्गलैण्ड का निवासी नहीं था। परन्तु जब उसके अपने देश ने आर्थिक सहायता नहीं दी, तब उसने इङ्गलैण्ड से सहायता प्राप्त की और अमेरिका को खोज के लिये गया। अतः सत्यार्थप्रकाश का ऐतिहासिक वचन ठीक है।

(ख) उत्तर दिशा विद्युत प्रधान है और इस दिशा में बैठने वाले "ऋत्विज् को देव" संज्ञक माना जाता है। 'देव' बढ़ती हुई शक्ति का द्योतक है, अतः पहिले उत्तर दिशा में आहुति दी जाती है, तथा दक्षिण दिशा में बैठने वाले पितृसंज्ञक होते हैं, जो घटती शक्ति का बोध कराते हैं। इस लिये पितृसंज्ञा के लिये दक्षिण दिशा में आहुति दी जाती है। यह पूर्णतया वैज्ञानिक आधार पर अवलम्बित है।

(प्रश्न) २—(क) ऋषिदयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में मनुष्यों की रचना युवा-अवस्था में बताई है, क्या इसमें वेदादि का भी कोई प्रमाण है ?

(ख) ऋषि जी ने प्रकृति की व्याख्या करते हुए महत्तत्त्व बुद्धि और इससे अहंकार, किन्तु इसके विपरीत स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज ने सांख्य सूत्र की व्याख्या करते हुए सत्व, रज तम के पश्चात् महत्तत्त्व को मन कहा है। किसको ठीक मानें किसी एक का प्रमाणों सहित पुष्ट कीजिये?

(ग) ऋषि दयानन्द ने सूक्ष्म शरीर को सतरह तत्त्वों का बताते हुए पाँच प्राण, पाँच सूक्ष्म भूत, पांच ज्ञानेन्द्रिय, मन तथा बुद्धि इस प्रकार कहा है किन्तु स्वामी दर्शनानन्द जी ने सांख्य दर्शन का अपने भाष्य में पांच प्राण, पाँच उपप्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, मन तथा अहंकार लिखा है, किसको मानें कृपा कर किन्हीं अकाट्य प्रमाणों द्वारा संशय निवृत्त कीजिये ?

(घ) ऋषि ने सूक्ष्म शरीर के दो भाग किये हैं जैसे भौतिक अभौतिक। इसको भौतिक और अभौतिक स्वरूप की लक्षणों द्वारा सिद्ध कीजिये।

—श्री पं० रामचन्द्र जी आर्य, मन्त्री आर्यसमाज भालौठ (जि० रोहतक)

(उत्तर) २—(क) "तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये॥" यजु० ३१.९ अर्थात् सृष्टि आदि में विद्वान्, योगाभ्यासी और ऋषि लोग एक साथ इसी रूप में उत्पन्न हुये। यही अर्थ इसी मन्त्र का ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में भी किया है। इससे भी स्पष्ट और पुष्टप्रमाण ऋग्वेद ३.५५.५ का है। वहाँ कहा है—"सद्योजातासु तरुणोष्वन्तः" अर्थात् एक ही समय में उत्पन्न हुई प्रजाओं में युवतियों के समान वर्तमान उत्पन्न होते और होती हैं। भावार्थ—समान दिन में उत्पन्न और युवा अवस्था वालियों के सदृश समान प्रजाओं के बीच में चारों ओर सर्वत्र बसता है। ऋषि दयानन्द का भाष्य अर्थात् सृष्टि के आदि में सभी जीवधारी युवा अवस्था में पैदा होते हैं—पूर्ण वैज्ञानिक है।

(ख) ऋ० ३.५६.२ में 'गुहा' के अर्थ ऋषि दयानन्द अपने भाष्य में महत्तत्त्वाख्या समष्टिबुद्धौ" भावार्थ—'गुहा महत्तत्त्व नामक सम्पूर्ण बुद्धि में' करते हैं। ऋ० १.१६४.१५ में "सप्तथम्" का अर्थ ऋषि दयानन्द जी 'महत्तत्त्व' करते है॥ यजुर्वेद अध्याय २३ के मन्त्र ५४ और ५५ में 'महः' का अर्थ महत्तत्त्व करते हैं। इसी प्रकार सत्यार्थप्रकाश में प्रकृति महत्तत्त्व अर्थात् बुद्धि किया है। ८ म समुल्लास। अतः श्री स्वामी दर्शनानन्द जी का 'महत्तत्त्व' का अर्थ मन करना सर्वथा अशुद्ध है। श्री स्वामी दर्शनानन्द जी तार्किक विद्वान् थे परन्तु वेदमन्त्रार्थ द्रष्टा, परमयोगी, मन्तत्त्वज्ञ और महावैज्ञानिक ऋषि दयानन्द के सामने उनका कुछ भी प्रमाण नहीं हो सकता।

(ग) इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर का अर्थ ऋषि दयानन्द का ठीक है। स्वामी दर्शनानन्द जी का अशुद्ध है। एक दो जगह स्वामी दर्शनानन्द जी ने कपिल ऋषि के सांख्य सूत्रों को बदल भी दिया है। यह उनकी अनाधिकार चेष्टा कही जा सकती है।

(घ) सूक्ष्म शरीर के भौतिक अभौतिक भेदों को ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ९वें समुल्लास में स्पष्ट किया है।

[विशेष निवेदन—कृपया शंका भेजने वाले सज्जन एक ही विषय की एक हो शङ्का भेजा करें। जिससे सुविधापूर्वक समाधान किया जा सके। यह निवेदन पहिले भी किया जा चुका है। एक सज्जन ने एक साथ ही ३०-३५ शंकाएं भेज दी थीं। उनको मैंने व्यैक्तिक उत्तर भेज दिया था, क्योंकि आर्यमर्यादा में अनेक विषयों पर लेखादि देने पड़ते हैं, अतः स्थान थोड़ा-थोड़ा, दिया जा सकता है]

मासिक पत्र—समालोचना

नाम पत्र—वेदस्वाध्याय।

सम्पादक—डा० वेदमित्र जी एम० ए, पी०एच०डी० विद्यावाचस्पति।

प्रकाशक—श्रीमती शकुन्तला रानी

मिलने का पता—वेदस्वाध्याय मण्डल, आनन्दपुरी, टैंक रोड, देवनगर, करोल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक शुल्क—३ रु० ५० पैसे। पृष्ठ संख्या १६

आलोचना। पत्र का उद्देश्य पवित्र एवं श्रेष्ठ है। छपाई तथा कागज उत्तम है। हमारे सामने इसके तीन अंक हैं—(१) जुलाई १९६९, (२) अगस्त १९६९ तथा (३) अक्टूबर १९६९ प्रत्येक अंक में स्वाध्याय के लिये वेद मन्त्रों, रामायण, महाभारत तथा अन्य नीतिग्रन्थों का अच्छा संकलन किया जाता है। विशेषता यह है कि वेदमन्त्रों का आंगल भाषा तथा रोमन लिपि में भी अनुवाद दिया जाता है। सम्पादक मण्डल में स्वयं श्री सम्पादक जी, पं० रामगोपाल जी शास्त्री वैद्यभूषण तथा कुमारी स्वर्णकान्ता एम० ए, (पूर्व) बी०टी० सम्मिलित हैं।

वेद-अनुवाद-समिति में उपर्युक्त सम्पादक जी तथा वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री के साथ-साथ श्री प० युधिष्ठिर जी मीमांसक, पं० उदयवीर जी शास्त्री तथा प० चारुदेव जी शास्त्री एम०ए-पी०एच०डी० भी सम्मिलित हैं। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती का आशीर्वाद भी इस पत्र को प्राप्त है। हम समझते हैं कि पत्र का भविष्य उज्ज्वल है। प्रत्येक स्वाध्याय प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि इस पत्र को प्रश्रय देवें। और स्वयं भी लाभ उठावें। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री सम्पादक

(पृष्ठ २ का शेष)

(२) जाति की पहचान आकृति और अवयव रूप लिङ्ग से हो जाती है, किन्तु वर्ण की पहचान केवल गुणकर्म से ही होती है।

(३) दो समान वर्णों के मेल से समान वर्ण की उत्पत्ति आवश्यक नहीं होती, किन्तु दो समान जातियों के मेल से समान जाति की ही उत्पत्ति होती है।

(४) यथार्थ में विभिन्न जातियाँ एक दूसरे के कार्य को नकल नहीं कर सकती। जैसा मधुमक्षिका मधु बनाती है वैसा दूसरी मक्खियाँ नहीं बना सकतीं। जैसा शब्द गाय करती है, वैसा घोड़ा नहीं कर सकता। किन्तु, शूद्र वर्ण का बालक ब्राह्मण वर्ण का अनुकरण कर ब्राह्मण बन सकता है।

(५) वास्तव में दो भिन्न जातियाँ परस्पर कभी नहीं बदल सकतीं। लाख प्रयत्न करने पर भी एक घोड़ा गाय नहीं, बन सकता। किन्तु, वर्ण-परिवर्तन होता है। हिन्दु से मुसलमान क्रिश्चियन आदि भी बनते हैं।

(६) वास्तव में दो भिन्न जातियां एक दूसरे में संतान उत्पन्न नहीं कर सकतीं। जैसे, गाय और ऊँट के मेल से संतान नहीं होती, किन्तु, सभी वर्ण धर्मों के लोग परस्पर प्रीति करते और संतान उत्पन्न करते हैं। यद्यपि गधे और घोड़े से समान योनि धर्म होने पर सतान उत्पन्न होती है जिसे खच्चर कहते हैं, पर इस खच्चर से आगे संतान नहीं उत्पन्न होती।

इस प्रकार संसार के मनुष्यों को केवल एक ही जाती है। उस में जाति भेद नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि गुण कर्मों के आधार से उत्पन्न होने से उन की तुलना जाति से करना नितान्त गलत है।

॥ समाप्त ॥

गुरुकुल आश्रम अमरसेना (उड़ीसा) में संस्कृत दिवस

अमरसेना ग्राम में विधिवत अति उत्साह के साथ पहले यज्ञ पूर्वक श्रावणी पर्व मनाया गया। जनता को चारों वेदों के पुस्तक दिखलाये और वेद मन्त्र सुनाये। तत्पश्चात् संस्कृत दिवस का आयोजन हुआ। ब्रह्मचारियों ने संस्कृत गीतिका और श्लोकों द्वारा लोगों को संस्कृत भाषा के माधुर्य का आस्वादन कराया और आचार्य धर्मदेव जी स्नातक तथा ब्र० जयकृष्ण जी उपाध्याय ने संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता और विशेषता बताई। वेदप्रचार सप्ताह समारोह से सम्पन्न हुआ। —धर्मदेव स्नातक

अन्तःकुलोत्पन्न विवाह

आर्यसमाज इटारसी (होशंगाबाद) में भिन्न भिन्न कुलों में उत्पन्न स्त्री-पुरुष के जोड़े का विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ। नगर के अनेक प्रतिष्ठित सज्जन इस समारोह में सम्मिलित हुए। साथ श्रावणी पर्व और हैदराबाद सत्याग्रह बलिदान दिवस भी मनाये गये।

आर्य इन्टर कालिज सुभाष नगर (देहरादून)

में उपनयन संस्कार हुआ। जिसमें लगभग १५० छात्र और छात्राओं ने यज्ञोपवीत धारण किया। —श्यामसिंह रघुवंशी प्रधानाचार्य

आर्यसमाज बी. ब्लाक, गोविन्द नगर (कानपुर)

में वेद प्रचार सप्ताह वैधानिक रूप से समारोह पूर्वक मनाया गया। स्त्री आर्यसमाज में देवियों ने उत्साह पूर्वक योग दान दिया।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज मुरलीपुर (जि० कानपुर,) का वार्षिक निर्वाचन

प्रधान—डा० रामप्रसाद शर्मा, मन्त्री श्री शिवनारायण आर्य, कोषाध्यक्ष श्री देवकरण आर्य तथा पुस्तकाध्यक्ष—श्री बाबू राम। वेदप्रचार सप्ताह भी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्य समाज इटारसी (होशंगाबाद, में कृष्ण जन्मोत्सव)

दि० ४।९।६९ को आर्य कन्याशाला में श्री कृष्ण जी का जन्मोत्सव बड़े ही समारोह के साथ मनाया गया। श्री कृष्ण जी के जीवन चरित्र की मुख्य घटनाओं, उनकी नीति और निपुणता, निर्भीकता, वीरता, विद्वता, शालीनता आदि गुणों पर विस्तार से प्रवचन हुआ। शांतिपाठ के बाद श्री नाथूराम-मानकचन्द व अग्रवाल जी की ओर से प्रसाद वितरित किया गया। —चन्द्रभूषण शर्मा मंत्री।

वाक् प्रतियोगिता

आर्य कुमार सभा गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर (मेरठ) में श्रावणी के पुण्य अवसर पर आर्य कुमारों की वाक् प्रतियोगिता हुई जिसमें तिन ब्रह्मचारियों का पारितोषिक भेंट हुआ—

—मन्त्री ब्र० धर्मपालार्यो "व्रती"

आर्यसमाज रामनगर (अमेठी) में संस्कृत दिवस

जि० सुलतानपुर में वेद प्रचार सप्ताह के उपलक्ष्य में श्रावणी पर्व तथा रक्षा बन्धन दिवस पर श्री राजारणञ्जय सिंह एम. एल. ए. की अध्यक्षता में संस्कृत दिवस समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री राजा साहिब ने संस्कृत में भाषण दिया तथा कई अन्य महानुभावों ने अपने व्याख्यानों में संस्कृत प्रचार के लिये बल दिया। —केशवप्रसाद उपमन्त्री

शोक प्रकाश

ठाकुर सरदारसिंह जी गांव अरणिया (जि० बुलन्दशहर) का ८१ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हो गया। आप ने आयु पर्यन्त कर्मठ रूप में वैदिक धर्म का प्रचार आस पास के क्षेत्र में किया। पूज्य श्री अमर स्वामी (श्री प० अमरसिंह जी शास्त्र महारथी) के दिवगत ठाकुर साहिब बड़े भाई थे। आप "उपदेशक" पद से ही पुकारे जाते थे। आप के देहान्त से आर्य सामाजिक क्षेत्र में बड़ी क्षति पहुंची है। जि० बुलन्दशहर तथा जि० अलीगढ़ दोनों क्षेत्रों में आप बड़े सम्मान से देखे जाते थे।

—ओम्प्रकाश आर्य पुरोहित, आ० स० दयानन्द वाटिका (देहली)

पंजाब हरयाणा तथा दिल्ली में वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रबन्ध में अगस्त मास ही से आ समाजें लगातार वेद प्रचार सप्ताह मना रही हैं और अभी तक कार्य च चल रहे हैं। २९ अगस्त से अब तक निम्न स्थानों पर यह सप्ताह उत्साह से मनाये गये।

जालंधर— आर्य समाज अड्डा होशियार पुर जालंधर में २९ अगस से लेकर ७ सितम्बर तक ६९, तक श्री प० हरपाल शास्त्री के प्रभाव शाली वेद प्रवचन और श्री अमरनाथ प्रेमी के मनोहर भजन होते रहे।

सुजान पुर—जन्माष्टमी महोत्सव आर्य समाज ने बड़े उत्साह मनाया। इस अवसर प० निरंजन देव जी के ३ भाषण हुये।

नारायणगढ़—२९ अगस्त से ४ सितम्बर तक वेद प्रचार सप्ताह आर्य समाज मंदिर में बड़ी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। श्री प० समर सिं जी वेदालंकार के प्रवचन और प० तेजभानु जी के भजन बहुत पसं किये गये।

गांधी नगर दिल्ली—१ से ७ सितम्बर आर्य समाज गांधी नगर दिल्ली में वेद प्रचार सप्ताह बड़ी सफलता पूर्वक मनाया गया। सभा की ओर से श्री जितेन्द्र जी बी, ए और श्री प० बलराज जी संगीत रत्न पधारे।

नरवाणा—आर्य समाज नरवाणा में २९ से ४ सितम्बर तक वेद प्रचार सप्ताह बड़ी शान से सम्पन्न हुआ। सभा की ओर से श्री प० रामनाथ जी आर्योपदेशक और श्री मुन्शी लाल धर्मपाल मंडली ने भाग लिया।

न्यूकालोनी गुड़गावां—२९ अगस्त से ४ सितम्बर तक श्री रामनाथ यात्री की मण्डली ने वेद सप्ताह में भाग लिया।

—निरंजनदेव सभा वेदप्रचाराधिष्ठाता

पृष्ठ ३ का शेष

समस्त हिन्दी प्रेमी जनता को अपनी पुरानी बात का स्मरण दिलाते हैं कि सम्प्रदाय, वर्ग, बिरादरी, राजनीतिक दल इनकी भिन्नताओं को अलग रख कर हिन्दी हित की रक्षा के लिये एक वेदी पर एकत्र हो जावें, परस्पर सहयोग भावना से चलें, एक दूसरे की उपेक्षा अथवा अवहेलना से हिन्दी कार्य को हानि ही हो सकती है। आशा है, पजाब की हिन्दी प्रेमी जनता हमारे निवेदन पर कुछ विचार करेगी।

पंजाब में हरिजन संकट

न जाने इस हिन्दू नाम समुदाय में कैसी कैसी भिन्नता है, जिसके कारण इसके किसी एक अंग को नहीं, अपितु समूचे अंगों को हानि पहुंच रही है। सिख गुरुओं ने जिस पवित्र उद्देश्य से सिख मत की स्थापना की थी, आज हमारे वही सिख भाई उस पवित्र उद्देश्य से साम्प्रदायिक आधार पर परे हट रहे हैं। खेद से कहना पड़ता है कि अस्पृश्य=अछूत=हरिजन कहने वाले वर्ग को अपने ही धर्मबन्धुओं से कितने कष्ट झेलने पड़े। इसकी साक्षी इतिहास के पन्ने दे रहे हैं। मजहब के नाम पर ही पौराणिक काल में इन पर अत्याचार हुए। मुसलमानी काल में भी इनके मत परिवर्तन की घटनायें घटीं। ईसाई लोगों द्वारा भी अपने सम्प्रदाय में इनको मिलाने के प्रलोभन दिये जाते रहे। दुर्भाग्य से वर्तमान काल में पंजाब से ऐसी सूचनाएं पहुंच रही हैं कि पंजाब के ग्रामों में इन श्रमिक हिन्दू हरिजनों पर मत परिवर्तन के लिये अनेक प्रकार के दबाव डाले जा रहे हैं। राजनीतिक षड्यन्त्रों से भी काम लिया जा रहा है। हिन्दू वर्ग आज भी उन्हीं कुरीति और रूढ़िवाद में अभी तक फसा पड़ा है। पौराणिक मतावलम्बी नेताओं के इस घोर-विपत्तियों में भी आँखें नही खुली हैं। केवल एक संघटन आर्यसमाज को ही ऐसी चिन्ता हैं, परन्तु खेद से कहना पड़ता है कि वह भी आज पारस्परिक रागद्वेष ईर्ष्या के कुचक्र में फसा हुआ है। फिर भी हमें पजाब के हरिजन संकट को दूर करने के लिये कुछ उपाय करने ही चाहियें। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

्शों में रहने वाले ग्राहक महानुभावों से निवेदन

'आर्योदय की भान्ति हम सभी ग्राहक महानुभावो की सेवा आर्यमर्यादा" नियम पूर्वक भेज रहे है। हमे प्रसन्नता है कि महानुभावो ने अपना वार्षिक शुल्क बिना पत्र लिखे ही भेज ग्राहक बने रहने की कृपा की है।

जिन ग्राहक महानुभावो ने अभी तक अपना शुल्क नही भेजा है उनसे निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क समुद्री डाक का २०)या पौंड और हवाई डाक का ३०) यथाशीघ्र भेजने का कष्ट । "आर्यमर्यादा" आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का पत्र होने के ारण इस का बैक मे पृथक् खाता नही है। अत अपना चैक र्यप्रतिनिधि सभा पजाब (Arya Pratinidhi Sabha Punjab) ाम भेजने की कृपा करे। विदेशो की आर्यसमाजो से निवेदन के अपने यहा के समाचार आर्यमर्यादा मे प्रकाशनार्थ भेज लाभ उठावे।

व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा हिन्दी साप्ताहिक
१५ हनुमान रोड नई दिल्ली -१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साहित्य विभाग का सूची पत्र

१	सत्यार्थ प्रकाश नया सस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२	धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३	सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतो का सग्रह	१-००
४	आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखो का सग्रह	१-२५
५	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६	वैदिक सत्सग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७	कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९	वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५
१०	जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम० ए	३-०
११	सोमसरोवर " " "	३-०
१२	Principle of Arya Samaj " "	१-५०
१३	Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१४	Subject Matter of Vedas	१-००
१५	आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	०-६०
१६	मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर	१-००
१७	वैदिक सिद्धान्त " "	१ ००
१८	प० गुरुदत्त विद्यार्थी—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-३५
१९	वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

सन्ध्या और अग्निहोत्र सायं प्रातः दो ही काल में करे। दो ही रात दिन की सन्धि वेला हैं अन्य नही न्यून से न्यून एक घण्टा ध्यान अवश्य करें। जैसे समाधिस्थ हो कर योगी लोग परमात्मा का ध्यान करते हैं वैसे ही सन्ध्योपासन भी किया करें। तथा सूर्योदय के पश्चात् और सूर्यास्त के पूर्व अग्निहोत्र करने का समय है। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ } ६ आश्विन वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २१ सितम्बर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९ { वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु० „ , विदेश मे २० रु० एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनरय कीदृश इत्युपदिश्यते ॥

फिर वह सभाध्यक्ष वा सेनापति कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया जाता है।

ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन्वाजे शतक्रतो। समन्येषु ब्रवावहै ॥

ऋ० १ ३० ६ ॥

पदार्थ —(ऊर्ध्व) सर्वोपरि विराजमान (तिष्ठ) स्थिरो भव (न)अस्माकम् (ऊतये)रक्षणाद्याय (अस्मिन्) वर्त्तमाने (वाजे) युद्ध (शतक्रतो) शतानि बहुविधानि [illegible] वा बहुविधा प्रज्ञा यस्य [illegible] ([illegible]) [illegible] षु कार्येषु (ब्रवावहै) परस्परमुप[illegible] नित्य कुर्य्यावहै।

अन्वय —हे शतक्रतो नोस्माकमूतये ऊर्ध्वस्तिष्ठैव सति वाजेऽन्येषु कर्मसु त्व प्रतिजनोह च द्वौ द्वौ सब्रवावहै।

भावार्थ —सत्याचारैर्ध्यानावस्थितैरात्मस्थानान्तर्यामिजगदीश्वरस्याज्ञया सेनाधिष्ठात्रा सभाध्यक्षण च सत्यासत्ययो कर्तव्याकर्तव्ययोश्च सम्यङ् निश्चय कार्यो नैतेन विना कदाचित्कस्यचिद्विजयसत्यबोधौ भवत। ये सर्वव्यापिन जगदीश्वर न्यायाधीश मत्वा धार्मिक शूरवीर च सेनापति कृत्वा शत्रुभि सह युध्यन्ति तेषा ध्रुवो विजयो नेतरेषामिति।

भाषार्थ —हे (शतक्रतो) अनेक प्रकार के कर्म वा अनेक प्रकार की बुद्धियुक्त सभा वा सेना के स्वामी जो आप के सहाय के योग्य हैं उन सब कार्यों मे हम (सब्रवावहै) परस्पर कह सुन सम्मति से चल और तू (न) हम लोगो की (ऊतये) रक्षा करने के लिये (ऊर्ध्व) सभो से ऊँचे (तिष्ठ)बैठ इस प्रकार आप [illegible] प्रतिजन अर्थात् [illegible] हो कर (वाजे) युद्ध तथा (अन्येषु)अन्य कर्तव्य जो कि उपदेश वा श्रवण है उस को नित्य करें।

भावार्थ —सत्य प्रचार के विचारशील पुरुषो को योग्य है कि जो अपने आत्मा मे अन्तर्यामी जगदीश्वर है उस की आज्ञा से सभापति वा सेनापति के साथ सत्य और मिथ्या वा करने और न करने योग्य कामो का निश्चय करना चाहिये इस के विना कभी किसी को विजय वा सत्य बोध नही हो सकता जो सर्वव्यापी जगदीश्वर न्यायाधीश को मान कर धार्मिक शूरवीर को सेनापति कर के शत्रुओं के साथ युद्ध करते हैं उन्ही का निश्चय से विजय होता है औरो का नही।—ऋषि दयानन्द का वेदभाष्य

'वेदाविर्भाव विशेषाङ्क'' पर सम्मति

मैंने आप द्वारा सम्पादित आर्यमर्यादा का वेद विशेष—अङ्क विहगम दृष्टि से देखा है। अपने विषय का यह प्रथम अङ्क मेरी दृष्टि से निकला है। अत्यन्त उपयोगी है। सब आर्यसमाजो मे इसका पाठ होना चाहिए। प्रत्येक आर्य को यह अङ्क अपने पुस्तकालय में रखना चाहिए। विद्वानो के लिये भी यह स्थायी महत्त्व की पुस्तक है। यदि इसका कागज और अच्छा होता तो विषय व सामग्री के अनुरूप इस अङ्क का आकार प्रकार भी आकर्षक हो जाता। आपको इस सुन्दर वेदांक के लिए हार्दिक बधाई भेंट करता हू।

प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु एम ए बी. टी
दयानन्द कालिज सिदड़बहा मण्डी (पजाब)

सार्वदेशिक न्याय सभा का १६-११-६७ का निर्णय तथा उस आधार पर किया ५-५-६८ का तथाकथित पजाब सभा का निर्वाचन अवैध घोषित।

सार्वदेशिक सभा की साधारण सभा के निश्चय

सार्वदेशिक न्याय सभा को आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के पाकस्मा (रोहतक) मे हुए २४ ११ ६३ के निर्वाचन की वैधानिकता का विषय निर्णयार्थ दिया था। न्याय सभा के प्रधान श्री रतनलाल ने अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जा कर पक्षपात पूर्ण ढग से जो १६-११ ६७ को निर्णय दिया उसे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी बैठक दिनांक ३१ ५-६९ मे अवैध होने के कारण अस्वीकार कर दिया। उस आधार पर अम्बाला छावनी मे ५-५-६८ को हुआ तथाकथित पजाब सभा का निर्वाचन भी अवैध घोषित किया। प्रस्ताव निम्न प्रकार है —

प्रस्ताव सख्या—११

श्री उमेशचन्द जी स्नातक सभा उप-मन्त्री ने प्रस्ताव किया कि श्री रतनलाल जो प्रधान सार्वदेशिक न्याय सभा का आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के पाकस्मा (रोहतक) मे हुये २४ ११ ६३ के निर्वाचन के सम्बन्ध मे दिया १६-११-६७ का निर्णय उसके अधिकार क्षेत्र के बाहर होने तथा पक्षपात पूर्ण होने के कारण अमान्य है। अत अस्वीकार किया जावे।

निश्चय हुआ कि प्रस्ताव स्वीकार है।

प्रस्ताव सख्या—१२

श्री धर्मेन्द्रसिह जी आर्य ने प्रस्ताव रखा कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के एक पक्ष ने ५ ५ ६८ को अम्बाला छावनी मे ला० रतनलाल प्रधान सार्वदेशिक न्याय सभा के पक्षपात पूर्ण तथा अमान्य निर्णय की आड मे, दिल्ली के सबजज की निषेधाज्ञा का उल्लघन करके अवैध तथा अस्वीकृत प्रतिनिधियो को इकट्ठा करके एक नाटकीय ढग से जो निर्वाचन घोषित किया था वह अवैध तथा अमान्य होने के कारण अस्वीकार किया जावे।

निश्चय हुआ कि प्रस्ताव स्वीकार है।

महेन्द्रप्रताप शास्त्री
मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

ग्राहकों तथा पाठकों को आवश्यक सूचना

१२ अक्टूबर १९६९ के अक मे गुरु विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध मे सम्वत् १८५६ का एक मुसलमान द्वारा हस्तलिखित उर्दू पत्र प्रकाशित किया जायेगा।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

अछूतपन : एक संक्रामक रोग :

लेखक—श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, (आगरा)

इसकी उत्पत्ति और उपचार पर मनोवैज्ञानिक अध्ययन—

अछूत कौन है—सब से बड़ा और पहला अच्छूत वह है जो दूसरे को अछूत किसी भ्रम के कारण कहता है और समझता है ! यह स्पष्ट है कि जो दूसरे को अछूत समझता है वह अपने को स्वयमेव अछूत घोषित करता है ! मैं दूसरे को नही छऊंगा इसका अर्थ हुआ कि दूसरा मुझे नही छू सकता !

यह अछूतपन अर्थात् छुआछूत का प्रश्न एक पृथक् करण, अलगाव और परस्पर की फट का बाह्य चिह्न और रूप है ! यह एक मानसिक रोग है। दूसरे शब्दों में यह दूषित भावनाओ का परिणाम है। भावनाओं का सम्बध मन और हृदय की परिस्थिति से है। और इसलिये इस पृथक् करण संबंधी रोग की उत्पत्ति और इसके उपचार पर मनोविज्ञान की दृष्टि से विचार करना चाहिये।

रोग की उत्पत्ति—सारे भारत में महाभारत के युद्ध तक वैदिक धर्म का राज्य था और वैदिक मर्यादायें प्रचलित थी ! छोटे, बड़े, काले, गोरे, देशी, परदेशी, ब्राह्मण, अब्राह्मण कोई प्रश्न सामने नही आता था। [महाभारत के समय तक महाराजा युधिष्ठिर के यज्ञ में संसार के अनेक भागों से प्रतिनिधि सम्मिलित होने आये थे ! अर्जुन का विवाह अमरीका में भी हुआ था।] महाभारत युद्ध के पश्चात् वैदिक मर्यादाओं का लोप होने लगा और उसके स्थान में अनेक दूषित प्रथायें प्रचलित होने लगीं ? वाम-मार्ग का प्रचार भी इसी का एक रूप हुआ। वाम मार्ग के प्रचार से भोग-विलास की भावना प्रज्वलित हुई और खान-पान की व्यवस्था नष्ट हो गई। बहुत से लोग शराब पीने और माँस खाने के अभ्यासी हो गये और इनको धर्म का रूप देने की चेष्टा करने लगे। मदिरा और माँस के प्रयोग से काम वासना प्रज्वलित हुई और दुराचार फैलने लगा और यह दुराचार भी एक भैरवी चक्र का अंग बन गया। इससे जो परिवार और व्यक्ति इस दूषित प्रपंच से थोड़ा या बहुत बचे रहे उनके अन्दर अपनी सुरक्षा के लिये दूषित मनोवृत्ति वालों से बचे रहने की भावना उत्पन्न हुई और जब इस भावना ने जब एक विशाल क्षेत्र में प्रभाव उत्पन्न किया तो उसका परिणाम यह हुआ कि अपने को बचाने वालों का एक दल हो गया और दूसरा दल उनका रहा जो खाओ पियो और मोजे करो के मत के अनुयायी थे। इसके साथ-साथ यह प्रश्न भी सामने आया कि किसके साथ खायें, किसके साथ न खाये, किसके हाथ का पका हुआ खायें और किसके हाथ का न खाय, भक्ष्य और अभक्ष्य का प्रश्न भी उग्र रूप से सामने आया ! खान-पान पर प्रतिबन्ध लगने के साथ-साथ विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्ध भी सम्मुख आया। बेटी किसको दें और किसकी लें—यह एक विचारणीय समस्या हुई और यह पृथक् करण की भावना जो आरम्भ में सुरक्षा के लिये उत्पन्न हुई था, बढते-बढते एक भयानक फूट या अनेकता के विस्तार का आधार बनी। व्यक्तिगत जीवन में चौके की प्रथा एक पारिवारिक मर्यादा का अग बन गई। कच्ची, पक्की, के सवाल आने लगे चिलम किसका द, किसका ल।

जातीय विवादों के आधार—चार वर्गो के स्थान में हजारों जन्म सूचक जातियाँ एव उपजातियाँ बन गईं भिन्न-भिन्न व्यवसाय वाले भी पृथक् उपजाति बन गये जैसे स्वर्णकार, लुहार, कुम्हार, तेली, तमोली, इत्यादि। भिन्न-भिन्न दिशाओं मे रहने के कारण भी उप जातियाँ बनी जैसे दक्षिणी उत्तरीय, पहाडी, पुरबिये इत्यादि ! भिन्न-भिन्न स्थानों पर रहने वालों की भी पृथक् जातियाँ बनी, मथुरिये, कनौजिये इत्यादि।

इस परस्पर के पृथक् करण का कई दृष्टि-कोण से बड़ा दूषित परिणाम हुआ और सामाजिक सघटन के क्षेत्र मे छुआछूत का प्रश्न इसी का परिणाम बिरादरी के चौधरी बिरादारी से निकालने के लिये तत्पर रहते हैं। किसी दूसरी बिरादरी को अपने मे सम्मिलित करने का विचार भी नही करते ! इस छुआछूत के दूषित विचार ने सामाजिक संघटन को ही दूषित नही किया, परन्तु आर्य हिन्दुओ की सख्या घटाने में यह एक प्रबल कारण बनी। ईसाई और मुसलमान उन आय हिन्दुओं को अपने में मिलाने के लिये उद्यत हो गये और हिन्दू सकुचित मनोवृत्ति के कारण अपने भाइयों को बचाने में असमर्थ रहे और उनको बचाने का विचार भी नही आया केवल मुसलमानों के साथ या उनके हाथ का खाने से ही हिन्दू, हिन्दू संघटन से पृथक् नहीं किया गया मुसलमानों का खाना सूंघ लेने से ही उसको बिरादरी से पृथक् किया गया।

इस छुआछूत और संकुचित जातिवाद का प्रभाव आर्थिक उन्नति पर भी हुआ। व्यवसाय के लिये या ज्ञान उपार्जन के लिये विदेशी यात्रा पर प्रतिबन्ध लगा और देशी-परदेशी का प्रश्न उग्र रूप से सन्मुख आया ! देश के अन्दर भी व्यवसाय और उद्योगों पर इसका दूषित प्रभाव पड़ा। चमड़े का व्यापार केवल एक समुदाय विशेष ही कर सकता है।

इस पृथक् करण भावना ने केवल समाजिक संघटन और आर्थिक उन्नति पर ही बुरा प्रभाव नही डाला इसका प्रभाव धार्मिक क्षेत्र में भी उत्पन्न हो गया।

मन्दिर प्रवेश—जिस प्रकार कट्टर पंथी हिन्दू अपने घरों को रक्षा चाहते थे, वही भाव सार्वजनिक मंदिरों तक पहुंचा ! देवता पतित पावन समझे जाते थे। इस दूषित मनोवृत्ति के कारण जो व्यक्ति और [illegible] रूप से पतित समझे जाने लगे उनके दर्शन मात्र से पतित पावन देवता स्वयं पतित माने जाने लगे,और मन्दिरों में प्रवेश रोका गया। इसी प्रकार दूषित, संकुचित-भावना के कारण सार्वजनिक स्थानों के प्रयोग में बाधा पड़ी ! जैसे कुएं से पानी भरना और इसी के कारण ग्रामों और शहरों की आबादी में Segrigation सैग्रीगेशन अर्थात् अलगाव एक आवश्यक अंग हो गया।

इस प्रकार यह विदित होता है कि यह छुआछूत का प्रश्न पृथक् करण की भावना का एक भयंकर रूप बन गया।

इसका उपचार—रोग की उत्पत्ति समझ लेने से उपचार के साधन भी सन्मुख सुगमता से आजायेंगे !

महर्षि दयानन्द ने इस रोग को अनुभव किया और इसके दूषित परिणामों से बचाने के लिये अनेक उपाय प्रस्तुत किये ! जन्म की जातियों का बहिष्कार करना आवश्यक समझा और वर्णों की स्थापना भी आवश्यक बताई ! ऋषि दयानन्द ने गये भाइयों को वापिस लेने के लिये शुद्धि की प्रथा चलाई और जो आर्य हिन्दुओं में सम्मिलित थे उनके संघटन के लिये दलित उद्धार का कार्यक्रम अपनाया। खान-पान को मर्यादित करने के लिये उन्होंने केवल भक्ष्य-अभक्ष्य के प्रश्न पर ही बल दिया और यह कहकर कि चौके नें भारत पर चौका फेर दिया है। खान पान के प्रश्न को अनुचित संकोच से मुक्त किया है ! महात्मा गांधी ने ऋषि दयानन्द के कार्य क्रम को अपनाया और अपने आन्दोलन का आवश्यक अंग अछूत पन के कलंक को मिटाना बनाया महात्मा गांधी के प्रचार और प्रभाव से कांग्रेस के कार्य क्रम का यह अंग बना और उनके ही प्रभाव से कांग्रेस वालों का बहुमत होने के कारण भारत के विधान में इस कलंक को मिटाने पर एक उचित स्थान दिया गया और इसके साथ-साथ इसके मौलिक रूप जन्म की जातियों का भी बहिष्कार विधान में सम्मिलित किया गया।

न केवल विधान परन्तु एक विशेष विधि भी अस्पृष्यता निवारण के लिये बनाई गई अस्पृष्यता निवारण कानून।

स्वराज्य मिले बाईस वर्ष हुये परन्तु ये रोग कभी न कभी और किसी न किसी स्थान पर प्रकट होता रहता है ! आचार्य शंकर ने आर्य हिन्दुओं की रक्षा के लिये, और नास्तिकों एवं निंदको के दूषित प्रभाव से बचाने के लिये भारत के ४ कोनों पर अर्थात् पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में चार मठों की स्थापना की। दूसरे शब्दों में धार्मिक और सामाजिक सुरक्षा के लिये चार दुर्ग बनाये। जिसमें एक-एक सेनापति या दुर्ग का अधिपति हर समय रहे ! जिससे देश के बाहर से भी आक्रमण न हो सके और देश के अन्दर भी किसी प्रकार का उत्पात प्रचलित न हो ! आज देश का दुर्भाग्य है कि उनमें से एक दुर्ग के अधिपति ने अछूत पन के सम्बन्ध में बड़े संकुचित विचारों को प्रकट किया। जिससे सारे देश में एक कोलाहल मचा हुआ है ! ऊपर रोग की उत्पत्ति पर विचार करते हुये यह दर्शाया गया है। कि यह पृथक् करण की भावना का दूषित परिणाम है। इसका मौलिक उपचार एकता की भावना उत्पन्न करना है ! आजकल भावनात्मक एकता का प्रश्न केन्द्रीय सरकार के और भारत के नागरिकों के रूप में एक गम्भीर विचार का प्रश्न बना हुआ है। सम्मेलन और विचार गोष्ठियाँ हो रही है उपाय सोचे जा रहे हैं। (क्रमशः)

सम्पादकीय

अनुशासनहीनता रोकने का प्रमुख सुझाव

अनुशासनहीनता सारे राष्ट्र मे एक व्यापक रोग हो चुका है। चाहिये तो यह था कि इस महामारी को प्रारम्भ होते ही कठोरता से दबा दिया जाता। परन्तु इस की उपेक्षा करने पर यह दोष दु साध्य हो चला है। जब ग्रन्थि को अगुलियो से खोला जा सकता था, उस को खोलने के लिये अब मशीन की आवश्यकता है।

पहिले हमें यह जान लेना चाहिये कि अनुशासनहीनता का मूल कारण क्या है ? जब तक इस दोष को जड से नहीं उखाडा जावेगा, तब तक इस दोष का अकुर बार-बार फूटता रहेगा। जड के विनाश से ही इस दोष रूप वृक्ष के टहने, टहनिया, पत्त, फूल और फल स्वय सूख कर गिर सकते हैं।

पदार्थों के भावो मे मुनाफे के लालच से अनुचित वृद्धि करना ही इस राष्ट्र रोग की जड है। जब तक इस रोग पर पूरी शक्ति से कुल्हाडा नही चलाया जावेगा, तब तक अनुशासनहीनता नही हटाई जा सकती। एक मुनाफाखोर दस्यु=खुले बाजार मे भावो को बढान की कुचष्टा करता है, तभी सरकारी तथा गर सरकारी कर्मचारियो मे हल चल मच जाती है। कर्मचारी चाहे गाँव का चौकीदार हो अथवा शासन का उच्च अधिकारी हो, सभी बेचैन हो उठते हैं। सरकारी प्रशासन को चलाने वाले पुरान दर्रे के उच्च अफसर अपने नता मन्त्रियो को भावो के गिरान की सलाह न दे कर कर्मचारियो के वेतन मे वृद्धि करने का सुझाव देते हैं, क्यो कि इस हैं उन का अपना भी स्वार्थ सिद्ध हो सकता है। सरकार कहती है कि वेतन में वृद्धि करना सम्भव नही, तब ये उच्च अफसर कहते हैं कि अस्थिर रूप से महगाई भत्ता बढा देना चाहिये। अति खेद से कहना पडता है कि वे मुनाफाखोर ऐसे अफसरों को यही परामर्श देते हैं कि भाव न गिरा कर महगाई भत्ता देना ठीक रहेगा। जब विवश हो कर सरकार महगाई भत्ता बढा देती है, तब गरीब कर्मचारी को तो कुछ लाभ नही होता और ये बड़े बड़े सत्ताधारी कर्मचारी पूरा लाभ उठा लेते हैं। साथ ही मुनाफाखोर लोग इन उच्च अफसरो की समय-समय पर भेंट पूजा भी करते रहते हैं। जब-जब कुछ आन्दोलन महगाई बढ़वाने के लिये होता है, तब-तब यही ढंग बरता जाता है।

कुछ समय प्रतीक्षा करके मुनाफाखोर देख लेते हैं कि सरकार, कर्मचारी और सामान्य जनता ने रो-धो कर बढाये गये भावो को सहन कर लिया, तब फिर वही सिलसिला चालू कर दिया जाता है। भाव बढाये गये महगाई बढाई गई। इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि गरीब पिसता गया। कर्मचारी रोते रहते हैं परन्तु ये भाव बढाने वाले दिनधौले धनाते रहते हैं, इनका कुछ बिगडा नही होता। यह मर्ज इतना बढ चुका है कि भाव बढाने वाले लोग सरकारी चेतावनी की कुछ परवाह नही करते, अपितु सरकार को धमकी देते हैं कि भाव नही गिराये जावेंगे। यदि भाव गिराने का सरकारी यत्न किया गया तो ऐसा आन्दोलन छिड जावेगा कि सरकार के होश गुम हो जावगे। बात भी ठीक ही है वे भाव बढाने वाले मुनाफाखोर कहते हैं, क्योकि सरकारी शासन सत्ता का आधार वोट पर टिका हुआ है। ये मुनाफाखोर उस राजनीतिक दल की सहायता कर देते हैं जो इनके अनुचित लाभो पर अकुश न डालें। राजनीतिक दल अपने-अपने चुनाव आन्दोलनो मे बडे-बड दमगज्ज चलाते हैं, परन्तु वे जानते हैं कि तुम्हारी जड किसके सहारे टिकी हुई है। चुनाव समाप्त। सरकार बनी। नई घोषणा हुई और जनता को खुशहाली के सुनहरे स्वप्नो की घोषणा कर दी। परन्तु परिणाम मे वही लोकोक्ति चरितार्थ होती है कि "ढाक के तीन पात।"

इन कुछ पक्तियो में हमने रोग के मूल कारण का ही वर्णन किया है। इस रोग को दूर करने का एक अचूक रामबाण नुस्खा यही है कि साहस करके सरकार भावो को गिरावे। भावो के गिरते ही महगाई छूमन्त्र हो जावेगी। सामान्य जनता को अपनी दैनिक आवश्यकताओ की चीजें सस्ते दामों पर मिल सकेंगी।

हम समझते हैं कि इस पग को उठाने मे सरकार को आगे पीछे के हालात को देखना पडेगा परन्तु हम विश्वास से कह सकते हैं कि सरकार के इस साहस के साथ भारतीय जनता का ९० प्रतिशत भाग है। सरकार अपने सलाहकारो को स्पष्ट कह देव कि अब तक हमने तुम्हारी नेक सलाह मानी है, जिसका दुष्परिणाम राष्ट्र को आर्थिक सकट मे डाल रहा है। कृपया अब हमारी पद्धति पर शासन भार को उठाओ फिर पता चलेगा कि इसका सुपरिणाम राष्ट्र का कितना उत्थान कर रहा है। (विशेष—हमने जान-पूछकर उर्दू शब्दो का प्रयोग इस पक्तियो मे किया है—सम्पादक]

गुरु विरजानन्द दिवस पर अपूर्व भेंट

जैसा कि इसी अक के प्रथम पृष्ठ पर व्यवस्थापक द्वारा आर्यमर्यादा के ग्राहक तथा पाठको को विशेष सूचना दी है कि गुरु विरजानन्द जी महाराज के स्मृति दिवस पर १२ अक्टबर ६९ के अक मे एक मुसलमान लेखक द्वारा उर्दू जबान फारसी लिपि मे लिखा सन् १८५९ ई० का पत्र प्रकाशित किया जावेगा। तदनुसार हम ने उस मूल पत्र का पूरा ब्लाक बनवा लिया है। इस मे पर्याप्त व्यय हुआ है। परन्तु उस लाभ के सामने यह व्यय कुछ नही कि जिस को आर्य जगत के सामने गुरु विरजानन्द जो महाराज क सम्बन्ध मे एक मुसलमान लेखक ने जो बहुमूल्य विचार प्रकट किये हैं, वे आर्यमर्यादा द्वारा प्रकाशित होकर एक ऐतिहासिक अमूल्य सामग्री मे वृद्धि होगी। पत्र का हिन्दी देवनागरी रूपान्तर भी साथ ही प्रकाशित किया जावेगा। यह पत्र प्रकट करता है कि गुरुविरजानन्द जी महाराज भारत को अग्रेजी दासता से छुडाने के लिये क्या कुछ कर रहे थे। मथुरा में उन का अभूतपूर्व सत्कार करने और भेंट देने वाले लोगों मे देहली क अन्तिम बादशाह बहादुरशाह 'जफर" के बेटे तथा नाना साहिब पेशवा आदि भी स्वय उपस्थित हुए थे। उसी पत्र मे गुरु विरजानन्द जी महाराज का सक्षिप्त उपदेश भी दिया गया है।

यह पत्र हमें जिस महानुभाव से प्राप्त हुआ है, उनका शुभ नाम, पता तथा ब्लाक भी आर्यमर्यादा के उसी अक मे प्रकाशित किया जावेगा।

इस अक की एक प्रति का मूल्य यही साधारण अक के रूप मे २० पसे ही होगा। हम चाहते हैं कि प्रत्येक आर्य के घर मे यह अक पहुचे। अतः ग्राहक महानुभावो के अतिरिक्त जो सज्जन इस अक को लेना चाहें, वे एक प्रति के लिये केवल २५ पैसे के डाक टिकट लफाफे मे आयमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली १ के पते पर ३० सितम्बर ६९ तक अवश्य भिजवा देवें। एजेण्टो को यथा पूर्व भेजा जावेगा। जिस सज्जन को अधिक अक मगवाने हो तो वे सख्या लिख देवें। निश्चित परिमाण मे अक का प्रकाशन होगा। बाद मे मगवाने वाले इस ऐतिहासिक अवसर से लाभ उठाने में वञ्चित रह जावगे।

आर्यसमाजों तथा आर्यनेताओं से निवेदन

सितम्बर मास से आयसमाजो के उत्सव आरम्भ होने लग जाते हैं। सभी आर्यसमाज अपने उत्सव को सफल बनाने के लिये पूण यत्न करते हैं। पूज्य सन्यासियो विद्वानो तथा अच्छे भजनोपदेशको को निमन्त्रित किया जाता है। साथ ही आयसमाज के राजनीतिक नेताओ को भी साग्रह पहुचने के लिये निवेदन करते हैं। हम आयसमाज के अधिकारियो से प्रार्थना करते हैं कि पूज्य सन्यासी और उपदेशको को भाषण तथा भजनो के लिये प्राथमिकता देनी चाहिये। कई बार देखा गया है कि सभा के उपदेशको को समय ही नही दिया जाना। बाहर से बुलाये महाशय ही समय ले जाते हैं। हम आयसमाज के राजनीतिक नेताओ से भी निवेदन करते हैं कि वे भी यह ध्यान रखें कि आर्यसमाज की वेदी को दलगत बातो मे न घसीटें। आयसमाज के राष्ट्र मन्तव्यो पर राजीतिक भाषण देवें। इससे आर्यसमाजो के उत्सवो की सफलता होगी। आशा है, हमें शुद्धभाव से निवेदन पर आयसमाजो के अधिकारी तथा आय नेता ध्यान देकर कृतार्थ करेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गौ का महत्त्व

(श्री किशनाराम आर्य मु० पो० ललानियाँ वाया नौहर जि० श्री गंगानगर)

हमारे देश में गाय को जननी और जन्मभूमि के सदृश्य पूज्य माना गया है। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, स्मृतियाँ, रामायण और महाभारत इतिहास मे गौ-महिमा के अनेक स्थल भरे पडे हैं। वेदो मे 'अघ्न्या, पद का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद मे गाय को माना है—"माता रुद्राणं दुहिता वसूना, स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः। प्रनु वोच चिकितुषे जनाय, मा गामानागामदितिं वधिष्ट।।" गाय रुद्र ब्रह्मचारियो की माता है, वसुओ की पुत्री है, आदित्यो की बहन है, अमृत का केन्द्र है, अत प्रत्येक विवेकी पुरुष को मैं यह कहता हूँ कि ऐसी भोली-भाली निरपराध तथा अवध्य गाय का वध कभी मत करो। इतनी पूज्या होने क कारण ही गाय को सुरभि, कामधेनु, अर्च्या (पूज्या) विश्वमाता विश्व को आयु, गौ, गाय, गऊ और गइया आदि अति महान् यथा उत्तम नामो से आदर के साथ पुकारा जाता है। महाभारत के समय हमारे देश मे ९६ करोड गायें थी, उस समय जिसके पास १० लाख गायें होती थी, उसको वृषभानु कहते थे। नौ लाख गायो का पालन करने वाला नन्द पदवी से विभूषित किया जाता था। पाँच लाख गाय रखने वाला उपनन्द कहलाता था। गायें जहाँ अधिक पाली जाती उस पवित्र भू देश (भाग) का नाम ही गोकुल होता था। हमारे देश मे गौ धन श्रेष्ठ धन माना जाता रहा है। मजबूत बैल हल गाडी मे जोते जाते थे। जमीन की जुताई, बुआई गहराई तक होती थी तभी अन्न मे अधिक शक्ति होती थी, कम वर्षा से ही उत्तमोत्तम अनाज पदा होता था। देश मे लूले-लगडे अपाहिज गाय बैलो के लिये पिंजरापोल तथा गोशालाय जरूरत के मुताबिक होती थी।

खेतो मे गाय बैल, बच्छी और बछडो के गोबर को खाद प्रचुर मात्रा मे उचित तरीके से डाली जाती थी। जिससे भूमि काफी उपजाऊ होती थी। घी दूध, दही की नदी बहती थी। घी, मक्खन, दूध दही, पनीर, खीर छाछ ही उस समय का सर्वश्रेष्ठ भोजन था, अन्न का प्रयोग अति कम होता था। जिससे मनुष्यो का स्वास्थ्य श्रेष्ठ रहता, बुद्धि लोगों की तेज होती थी। गौ घी से प्रत्येक घर मे रोजाना दोनो समय यज्ञ होता था, लोग सदाचारी होते थे। आपस मे बैर विरोध नही होता था। यह सब शुद्ध खान-पान का ही प्रभाव था। मुसलमानी समय मे भीएक रुपये का १६ सेर घी बिकता था। अग्रजो के राज्य मे भी एक रुपये का पाँच सेर तक घी बिकता था। आइने अकबरी का लख है कि एक गाय के रोजाना २५ सेर दूध होता था। गाय का मूल्य उस समय १० रुपया प्रति गाय था। बैल घोडे से तेज चलते थे। २४ घटे मे ८० कोस का सफर बैल किया करते थे। गौ हत्या होने की वजह से दुधारू गाय और बलवान् बैल नही के बराबर हैं अब गाय का औसतन दूध अनुमानत दो सेर रहा है।

(१) गौ दुग्ध—दूसरे दुधारू पशुओ के दूध से गाय का दूध अति लाभदायक होता है। गौ दुग्ध मे शरीर के लिए सभी आवश्यक अश जैसे– चिकनाई, मिठास, धातु विटामिन आदि मौजूद होते हैं। इसलिये कहा है — 'गव्यहीन कुभोजनम्' यानी बिना गव्य हमारा भोजन पूर्ण नही होता है। वैद्यक के ग्रन्थभाव प्रकाश मे लिखा है कि "दूध दोपहर के पहले वीर्यवर्द्धक और अग्निदीपक तथा दोपहर को बलकारक, कफ नाशक पित्त को हरने वाला और मदाग्नि को नष्ट करने वाला है। बालकपन में वृद्धि करने वाला और बुढापे मे क्षयनाशक तथा वीर्यवर्द्धक है। रात्रि मे सेवन करने से बहुत से रोगो को दूर करता है। दूध सदा सेवनीय है।" गाय का दूध बच्चे, बूढे, मद, औरत, रोगी, नीरोग सभी के लिए उपयोगी है। पृथ्वी पर गाय के दूध के समान दूसरा कोई खाद्य पदार्थ नही है।

(२) गाय के मक्खन, घी, से सातों धातुओ की पुष्टि होती है। नेत्रो को ज्योति स्थिर रहती है। वात, पित्त, कफ तीनो दोषो का नाशक है। मदाग्नि को दूर करता है। शारीरिक सौन्दर्य और तेज को बढाने वाला है। आयुवर्द्धक, बलवर्द्धक तथा श्रेष्ठ रसायन है।

(३) गाय के गोबर और पेशाब में अनेक गुण हैं जैसे गोबर के कण्डे मंगलकार्य में थोपे जाते हैं। गोबर का धुआं से अनेक बीमारियों के कीटाणु मर जाते हैं। चर्म रोग में गाय के गोबर से फायदा होता है। गाय के गोबर को उबाल कर लेप करने से गठियावाय में फायदा होता है। सांप का विष भी काटे हुए स्थान पर बार-बार ताजा गाय का गोबर मलें अथवा सर्प दंश वाले भाग को गाय के ताजे गोबर के ढेर मे लम्बे अर्से तक रखने से साप का विष दूर होता है। गोमूत्र खुजली, कोढ, पेट और कान दर्द में उचित मात्रा मे क्रम से प्रयोग किया जाये तो फायदा करता है। कान बहना, आँख दर्द, आँख का फूला, मोतिया बिन्दु में भी गोमूत्र फायदा करता है। दो तीन बूँद गोमूत्र की कान में अगर बोला (बहरा) आदमी डाले तो लगातार ४० दिन सुबह शाम दोनो समय ऐसा करने से बहरापन दूर होगा। गौ मूत्र अति पवित्र माना जाता है।

(४)—गाय का दही—चिकना, रुचिकर, पेट को अग्नि बढाने वाला, बल,वीर्य वर्द्धक, वायु हरता, तासीर मे शीतल है। पेट के अनेक रोगो को दूर करता है। गाय की छाछ (मठा) तो मानो गरीबो के लिये दयालु प्रभु ने अमृत ही पैदा किया है। क्योकि छाछ मे अनेक गुण हैं। 'सर्वरोगहर तक्रम्'—छाछ मानव शरीर के सब रोगो को दूर करती है। 'न तक्रसेवी व्यथते कदाचन' छाछ का सेवन करने वाला कभी रोगी नही होता।

(५) परिवार मे गौ का स्थान—घर मे गाय का व्यावन न हो, मगल गावती कामन न हो। गुणी जनो का आवन न हो, वह नगरो किस काम की।। कहावत सत्य है। जो घर वेदो की ध्वनि से गूजता न हो गाय को बोली 'हुम्बा" अम्बा, अम्मा शब्द न सुनाई देते हो। तो वह घर श्मशान के समान है। घर मे गाय के दूहने का कार्य अधिकतर पुत्री पर होता था इसलिये तो कुमारी कन्या का एक नाम दुहिता है। विवाह के समय वर कन्या प्रतिज्ञा वचन बद्ध होकर करते हैं उस समय कन्या एक वर वह भी मागती है कि 'घर के घी दूध पर मेरा अधिकार होगा। गृहस्थ जीवन में आठ सुख माने हैं जिन मे सातवा सुख गाय को ही माना गया है यथा — स्वस्थ शरीर, घरे मे धन धान्य, पतिव्रता नारी, पुत्र, पोते के लिये उचित मात्रा मे मीठा जल, राज्य कर्मचारी वर्ग से प्रेम जोल, घर मे ब्याई हुई गाय हो और गुरुकुलो मे सतान पढे इससे बढ कर और सुख क्या होगा।

अनगिनत गुणो की खान होने पर भी गौ हत्या जारी है यह हमारे देश आर्यधरा पर कलक है। अनेक सत्याग्रह किये गये जेलो मे सडे गौ भक्तो ने सीने पर गोलीयाँ खाई। घर बार उजडे। सर्व प्रथम महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने गो करुणानिधि नाम की हिन्दी (देवनागरी) में रचना (पुस्तक) प्रकाशित कर तथा गोकृषि आदि रक्षिणी सभा, को स्थापना की। महर्षि दयानन्द जी महाराज ने बताया कि एक गाय के दूध से तथा बैलो द्वारा उत्पन्न अन्न से ४१०४४० मनुष्यो को एक बार मे तृप्ति हो सकती है। उन की इच्छा थी कि "भारत के राजाओ महाराजाओं, रईसो और प्रजा वग के तीन करोड हस्ताक्षर कराकर गोवद्ध बद कराने के लिये एक मेमोरेडम महारानी विक्टोरिया की सेवा मे भेजा जाये। इस योजना के अनुसार कार्य करने मे विदेशी-शासन काल में जो बाधाए थी वे अब हट चुकी हैं। स्वतन्त्र-भारत में इस योजना के अनुसार कार्य किया जाये, और इस कार्य के लिये विशेष उत्साह भारतीय जनता में उत्पन्न किया जाये, यह इस समय की सब से बड़ी मांग है।। बात वास्तव में सत्य है। अगर अभक्ष्य पदार्थों को बन्द कर के गाय के घी दूध दही का सेवन किया जाय तथा उत्तमोत्तम फल मेवा और अन्न का ही भोजन किया जाय तो भारत फिर से ससार के देशों में सोने की चिड़िया भारत यह गौरव पूर्ण पद फिर से प्राप्त कर सकता है।

शंकर एक महान् तार्किक (४)

(लेख श्री गुरुदत्त जी एम० एस० सी० पंजाबी बाग, दिल्ली)

'शंकर एक महान् तार्किक' शृंखला का यह चौथा लेख है। कुछ समय पूर्व आर्यसमाज वारसिया कालौनी—बड़ौदा के एक सज्जन ने मेरे पास एक कतरन, आकाशवाणी आषाढ़ १ शक सं० १८९१ तदनुसार २२ जून सन् १९६९ को भेजी थी। वे चाहते थे कि मैं उसमें उद्धृत लेख 'शंकर एक समन्वय कर्त्ता' के विषय में अपने विचार लिखूं। वर्तमान लेख इस आकाशवाणी के लेख से प्रेरणा लेकर ही लिख रहा हूँ।

श्री स्वामी शंकराचार्य भारत की एक विशेष विभूति हुए हैं। उन्होंने जहाँ अपने मत अद्वैतवाद का घोरनाद दुदुमित किया है, वहाँ उन्होंने तात्कालिक प्रचलित मत-मतान्तरों का भारतीय समाज में समन्वय करने में भी भारी प्रयत्न किया था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि दोनों कार्य श्री स्वामी जी ने किये। कार्य तो उपाय थे, देश में रहने वाले लोगों को एक सूत्र में बांधने के लिये; परन्तु ये उपाय उद्देश्य पूर्ति में सफल नहीं हुए।

जब कोई उपाय ईमानदारी से प्रयोग किया जाये और वह सफल न हो तो पीछे आने वाले विद्वानों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि उपाय का निरीक्षण करें और देखें कि वह क्यों सफल नहीं हुआ ?

स्वामी शंकराचार्य जी का 'पंचायतन' यह था कि तात्कालिक प्रचलित देवताओं के पुजारियों में वैमनस्य मिटा कर समाज में एकमयता उत्पन्न की जाये। विष्णु, शकर, दुर्गा, सरस्वती एवं गगा, नर्मदा इत्यादि के उपासक अपनी-अपनी ढपली बजाते थे और अपने मत के अतिरिक्त दूसरों की निन्दा करते थे। ऐसा 'शकर दिग्विजय' में वर्णन है। स्वामी जी का यह कहना था कि सब एक ही हैं। सब देवी-देवता ब्रह्म का रूप ही हैं। अतः किसी की भी उपासना ब्रह्म की ही उपासना है। उनका विचार था कि इस प्रकार के समझाने से समाज में उत्पन्न हो रहा विघटन मिट जायेगा और समाज में समन्वय उत्पन्न होगा।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आपने "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापरः" के सिद्धान्त का प्रचार आरम्भ किया।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुए। इस विफलता में कारण, मैं यह समझता हूँ कि उनका सिद्धान्त मिथ्या था। एक मिथ्या बात के प्रचार से कल्याण नहीं हो सकता। यह निर्विवाद है।

भारतीय समाज, जो आज हिन्दू समाज के नाम से विख्यात है, श्री स्वामी जी के घोर प्रचार के उपरान्त भी वैसा ही विखण्डित रहा, जैसा कि पहले था। यदि यह कहा जाये कि द्वेष और वैमनस्य कुछ अधिक ही हुआ तो अधिक ठीक होगा। यह तो स्पष्ट ही है कि एक अन्य मत, "अद्वैतवाद" जिसने समाज की जड़ों को खोखला करके रख दिया, प्रचलित हो गया। पाँच पथों के स्थान यहाँ छः पंथ हो गये और सांस्कृतिक विघटन पहले से उग्र हो गया। सबसे बड़ी बात यह हुई कि स्वामी शंकराचार्य जी के द्वारा कर्म की निन्दा करने के कारण समाज अकर्मण्य हो गया।

जब समाज के विद्वान् लोग ही कर्म को निन्दनीय मानने लगे तो समाज में अकर्मण्यता का व्यापक प्रचार स्वाभाविक था और कर्म अर्थात् धर्म-कार्य का स्थान स्वार्थ व्यवहार ने ले लिया। एक भंगी, चमार से लेकर राजा-महाराजा तक इस मन्त्र की माला जपने लगे 'कबीरा तेरी झोंपड़ी गलकटयों के पास, जो करेंगे सो भरणगें तुम क्यों भये उदास।"

यह ठीक है कि अद्वैतवाद पहले भी उपस्थित था, परन्तु यह भी सत्य है कि विद्वान् लोग इसको अमान्य कर चुके थे। महाभारत भगवद्गीता आदि ग्रन्थों में इसको स्वीकार नहीं किया गया। यही कारण है कि श्री स्वामी शंकराचार्य को इस मिथ्यावाद के प्रचार के लिये भारतीय समाज के मुख्य ग्रन्थों पर अपने नवीन भाष्य लिखने की आवश्यकता अनुभव हुई।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी के परिश्रम की तो प्रशंसा की जा सकती है, परन्तु वह परिश्रम उतना ही मिथ्या था, जितना कि वर्तमान युग के देवता श्री पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू का हिन्दू-मुसलमानों में ऐक्य उत्पन्न करने का प्रयास रहा है। श्री नेहरू जी का प्रयास सर्वथा असफल हुआ है। हिन्दु और मुस्लमान में भेद बढ़ता ही जा रहा है। भारत देश की एक निष्ठावान् देश भक्त जाति विघटित हो देश द्रोहियों की संख्या में वृद्धि हो रही है। यह भी उच्च उद्देश्य के लिये एक मिथ्या उपाय के प्रयोग का परिणाम है। ठीक वैसे ही जैसे कि श्री स्वामी शकराचार्य जी को अपने मिथ्यावाद के लिये उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्रों का भ्रान्त भाष्य करने की आवश्यकता अनुभव हुई थी। वैसे ही आज श्री जवाहर लाल जी के चेले-चाण्टों को भारत के मिथ्या इतिहास को लिखने की आवश्यकता अनुभव हो रही है।

इसी अर्थ अपने इस लेख शृंखला 'शंकर एक महान् तार्किक' के लिखने की आवश्यकता अनुभव हुई है। श्री स्वामी शकराचार्य जी के भ्रान्त भाष्यों में से कुछ उदाहरण मैं अपने पूर्व लेखों में दे चुका हूँ। वर्तमान लेख में ब्रह्मसूत्रों में से एक अन्य उदाहरण देकर यह बताने का यत्न किया है कि किस प्रकार एक अयुक्ति-युक्त अप्रमाणित बात को श्री स्वामी जी ने समाज के सम्मुख उपस्थित किया है। ऐसी तर्कहीन बात से समाज का कल्याण नहीं हुआ, वरन् समाज मिथ्या दिशा में चल पड़ा और यह चलता जायेगा, जब तक समाज में बुद्धिवाद का प्रचार नहीं हो जाता। बुद्धि की बात तो किसी अन्य लेख में लिखूंगा। यहा बुद्धिवाद को छोड़ने से अकल्याण की बात ही से प्रयोजन है।

ब्रह्मसूत्र प्रथम अध्याय के दूसरे पाद से 'सवत्र प्रसिद्ध अधिकरण को आरम्भ करते हुए आप लिखते हैं—

"अर्थान्तरप्रसिद्धानां च केषांचिच्छब्दानां ब्रह्मविषयत्वहेतुप्रतिपादनेन कानिचिद्वाक्यानि स्पष्टब्रह्मलिङ्गानि संदिह्यमानानि ब्रह्मपरतया निर्णीतानि। पुनरप्यन्यानि वाक्यान्यस्पष्टब्रह्मलिङ्गानि संदिह्यन्ते—किं परं ब्रह्म प्रतिपादयन्त्याहोस्विदर्थान्तरं किंचिदिति। तन्निर्णयाय द्वितीयतृतीयौ पादावारभ्येते।"

इसका अर्थ इस प्रकार है :—

दूसरे अर्थों में प्रसिद्ध कुछ वाक्यों का ब्रह्म विषय के हेतु से प्रतिपादित कुछ वाक्य स्पष्ट ब्रह्म का वर्णन करते हैं, परन्तु फिर भी सन्देह होता है कि वे ब्रह्म विषयक है अथवा नहीं। इनके अतिरिक्त कुछ वाक्य हैं जिनमें स्पष्ट सन्देह है कि वे ब्रह्म विषयक नहीं है। अतः इस बात का निर्णय करने के लिये इस (ब्रह्म सूत्रों के प्रथम अध्याय) के द्वितीय और तृतीय पाद को आरम्भ करते हैं।'

यह स्वामी शकराचार्य जी ने अपनी बात बलपूर्वक पाठकों के समक्ष लाने के लिये लिखा है। इस लेख के दो परिणाम हुए हैं। एक तो यह कि उपनिषद् वाक्यों में जहाँ जीवात्मा का उल्लेख है, उसको तोड़-मरोड़ कर परमात्मा परक करने का यत्न किया है। जहाँ जीवात्मा से अभिप्राय है और परमात्मा को जीवात्मा से पृथक् वर्णन किया है, वहां दोनों के एक होने प्रकट होने का यत्न कर दिया है। इस प्रकार उपनिषद्-अर्थों को विकृत करने का यत्न किया है। इससे एक दूसरा परिणाम उत्पन्न हुआ है कि ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय के द्वितीय एवं तृतीय पाद का मिथ्या प्रयोजन वाला बना दिया है।

वर्त्तमान लेख में हम उपनिषदों में अर्थ भ्रष्ट करने की बात को छोड़ ब्रह्मसूत्रों में अर्थ के अनर्थ की बात ही करना चाहते हैं।

श्री स्वामी शंकराचार्य जो लिखते हैं कि ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय का द्वितीय पाद उपनिषदों में संदिग्ध अर्थों का निर्णय करने के लिये है और अपनी बात को सिद्ध करने के लिये आप इस पाद के प्रथम सूत्र पर ही अपनी विशेष बुद्धि का परिचय देते है। सूत्र है :—

"सर्वत्र प्रसिद्धोपदशात् ॥"

सूत्र का अन्वय है सर्वत्र+प्रसिद्ध +उपदेशात्।

अर्थ है—सब स्थान पर प्रसिद्ध अर्थात् स्वय सिद्ध बात के कहने से। कहने से क्या होता है ? ज्ञान की उपलब्धि होती है। यह समस्या की पूर्ति है, परन्तु प्रश्न तो यह है कि प्रसिद्ध बात क्या है ? स्वामी शंकराचाय और उनके पद्चिह्नों पर चलने वाले भाष्यकार यह कहते हैं।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

वेदों का आविर्भाव—ईश्वरीय

[लेखक आचार्य प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ)
आनन्द कुटीर ज्वालापुर]



आर्यों का परम्परागत विश्वास—

१—वेदो के विषय मे आर्यो का यह परम्परागत विश्वास रहा है कि वे मानव सृष्टि के प्रारम्भ मे परम पिता मगलमय परमेश्वर द्वारा मनुष्य मात्र के कल्याण के लिये दिये हुए पवित्र ज्ञान के भण्डार है जिनमे मानव मात्र की वैयक्तिक पारिवारिक सामाजिक और राष्ट्रिय उन्नति तथा विश्व शान्ति के सूचक सब तत्त्व पाये जाते हैं।

२—वेद की शिक्षाए सार्वभौम और सार्वकालिक हैं। उन पर आचरण करने से ही सारे जगत का कल्याण हो सकता है अन्यथा नही।

३—क्योकि शारीरिक मानसिक आत्मिक सब प्रकार के विकास के लिये उत्तम उपदेश वेदो मे पाये जाते है और उन मे न केवल आध्यात्मिक विषयो के उपदेश मे प्रत्युत विविध विद्याओ और विज्ञानो का भी मूल उन मे पाया जाता है अत उन के अध्ययन और प्रचार की आज भी ससार को उतनी ही आवश्यकता है जितना पहिले थी।

४—ज्ञान कर्म और भक्ति श्रद्धा और तर्क त्याग और भोग व्यष्टिवाद और समष्टिवाद धर्म और विज्ञान आध्यात्मिकता और भौतिक विज्ञान इत्यादि प्राय परस्पर विरुद्ध समझी जाने वाली बातो का युक्तियुक्त समन्वय और सर्वोपयोगी मध्यमार्ग का यथार्थ प्रदर्शन वेदो के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है।

आर्यो का यह परम्परागत विश्वास स्वय वेद भगवान के—

तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋच सामानि जज्ञिरे।
छन्दासि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥'
(ऋग्वेद १० ९०, ८॥ यजु० ३१ ८)

'पश्य देवस्य काव्य न ममार न जीर्यति।'(अथर्व १० ८ ३२)

'यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम्।
स्कम्भ त ब्रूहि कतम स्विदेव स ॥ (अथर्व १० ७ २०)

'होता देवो अमर्त्य पुरस्तादेति मायया विदथानि प्रचोदयन्।'
(ऋग्वेद० ३ २७ ७ साम १४७७)

इत्यादि वचनो से प्रमाणित होता है जिन मे वेदो को यज्ञ अर्थात पूजनीय परमेश्वर (यज्ञो वै विष्णु शत० १ १ २ १३ गोपथ ब्राह्मण ३ ४ ६ ताण्ड्यब्राह्मण ९ ६ १०) से उत्पन्न और अतएव उस सर्वसुखदाता सर्वज्ञ परमदेव का अजर अमर काव्य बताया गया है।

तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूपनित्यया।
वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥ (ऋग्वेद ८ ७५ ६)

इत्यादि मन्त्रो म वेदवाणी को विरूप अर्थात विविध विद्याओ का निरूपण वा प्रतिपादन करने वाली और नित्य कहा गया है।

ये प्रमाण प्रारम्भ मे देने की इसलिये आवश्यकता हुई है कि रेर जैसे अनेक पाश्चात्य विद्वानो ने Original Texcts आदि मे यह सिद्ध करने का दुस्साहस किया है कि वेदो को ईश्वरीय ज्ञान मानने का सिद्धान्त पीछे से घडा गया स्वय वेदो मे उस का प्रतिपादन नही पाया जाता।

इस पर कोई कह सकता है कि यह तो आत्मश्लाघा वा अपने मुह मिया मिट्ठू बनने वाली बात हुई। इस का क्या महत्त्व है?

इस के विषय मे अभी इतना ही कथन पर्याप्त है कि सर्वज्ञ भगवान ने मनुष्यमात्र के कल्याणार्थ इन तथा अन्य मन्त्रो द्वारा वेदो के यथार्थ स्वरूप का प्रतिपादन किया है जिसका न केवल अत्यन्त बुद्धिमान और दार्शनिक तत्त्वज्ञानियो और शास्त्रकारो ने पूर्णतया समर्थन किया है अपितु जिसका तर्क और युक्तियो द्वारा भी भली भाँति समर्थन किया जा सकता है। जैसा कि सक्षेप से इस लेख मे दिखाया जाता है।

ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता तर्क सम्मत—

आजकल के अनेक सुशिक्षित जो डार्विन हर्बर्ट स्पेन्सर आदि द्वारा प्रसारित विकासवाद से विशेष रूप से प्रभावित है ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता से भी इन्कार करते हैं। वे कहते है कि ईश्वर की सत्ता को मानते हुए भी ईश्वरीयज्ञान मानने की आवश्यकता ही क्या है? क्यो न माना जाये कि मनुष्य को क्रम से ज्ञान प्राप्त होता जाता है। विकासवाद के अनुसार मनुष्य के ज्ञान की स्वयमेव क्रमश उन्नति होती चली जाती है। ईश्वरीयज्ञान वा Revelton मानने की आवश्यकता ही क्या है जब कि विकासवाद (Evolutin Theory) से ज्ञान की समस्या का हल हो जाता है। इस विषय मे हमारा कथन यह है कि जब तक कोई सिखाने वाला न हो तब तक स्वय ज्ञान की प्राप्ति नही हो सकती। इस बात को हम ससार मे स्पष्टतया देखते हैं। यदि ऐसा न होता तो विद्यालयो और महाविद्यालयो के खोलने की कोई आवश्यकता न होती। लोग अपने आप ही सब प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर लेते। पर जब तक माता पिता आचार्य वा अन्य शिक्षक सिखाने वाले न हो तब तक बालक बालिकाओ को ज्ञान की प्राप्ति नही होती यह प्रत्यक्ष सिद्ध है। इस के विषय मे समय समय पर अनेक परीक्षण भी किये गये है जिनमे से असीरिया के सम्राट असुरवाणी पाल युनान के राजा सेमेरिकल सम्राट फ्रेडरिक द्वय स्काटलण्ड के जेम्स चतुर्थ और मुगल सम्राट अकबर ने इस विषय मे जो परीक्षण किये वे कुछ अंशो तक क्रूरता पूर्ण होते हुये भी महत्त्वपूर्ण और विश्वास जनक हैं। इन लोगो ने कुछ बहुत छोटे बच्चो को जगलो मे रखवा दिया और उन के पालन पोषण के लिये गूगी दाइयो का प्रबन्ध किया। परिणाम यह हुआ कि वे मानवीय भाषा को न सीख सके और उन का व्यवहार तथा चाल चलन पशुओ जैसा ही रहा। नीग्रो तथा अन्य सभी असभ्य जातियो का इतिहास इस बात का साक्षी है कि वे जब तक सुशिक्षित लोगो के सम्पर्क मे नही आये तथा उन को अच्छे अध्यापको से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नही मिला तब तक वे स्वय ज्ञान प्राप्त करने मे हजारो वर्ष व्यतीत होने पर भी समर्थ न हो सके। रामू नामक एक भेडिये द्वारा पोषित बालक का ५ अगस्त १९६० का समाचार छपा था।

इसी प्रकार के भेडिया पालित बच्चो के अनेक उदाहरण गत वर्ष १९ सितम्बर १९६८ के नवभारत टाइम्स देहली के अङ्क मे भी मे बच्चे जिन्हे भेडियो ने पाला है। इस शीर्षक से प्रकाशित हुये है। हमारे मान्य मित्र वेदो के स्वाध्यायशील और वेद विषयक उत्तम अग्रेजी पुस्तको के लेखक मौरीशस वासी श्री वासुदेव विष्णुदयाल जी ने भी कई ऐसे ही उदाहरण पत्रो मे प्रकाशित कराये थे।

इस लिये जैसे पिता पुत्र के कल्याणार्थ उपदेश करता है वैसे ही सब के पितृ स्थानीय आदि गुरु परमेश्वर ने सब मनुष्यो के कल्याणार्थ अन्तर्यामि रूप से जीवो को धर्माधर्म पाप पुण्य शारीरिक मानसिक आत्मिक सामाजिक उन्नति के साधन मनुष्य जीवन का उद्देश्य परमानन्द शाश्वत सुख और शान्ति की प्राप्ति इत्यादि विषयो का वेदो के द्वारा मानव सृष्टि के प्रारम्भ मे उपदेश दिया यह बात सर्वथा तर्कानुमोदित है। स्वय हैकल जैसे जडवादी ने इस प्रकार ईश्वरीयज्ञान की सम्भावना को निम्न शब्दो मे स्वीकार किया है—

इस विषय मे कोई वैज्ञानिक बाधा नही है अथवा कोई कारण नही कि क्यो इस सम्भावना को स्वीकार न किया जाए।

जब एक हैकल जैसा जडवादी भी ऐसी बात कह सकता है तो सब आस्तिको के लिये ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता को मानना सरल और स्वाभाविक है। इसी प्रकार एक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० फ्लेमिंग द्वारा ईश्वरीय ज्ञानवाद का समर्थन किया गया। जैसे कोई भी सभा संस्था बनाने, सरकार का कार्य चलाने अथवा कारखाने इत्यादि चलाने से पूर्व उनके नियमो का बना डालना अत्यावश्यक है इसी प्रकार ससार रूपी इस विशाल संस्था को नियमपूर्वक चलाने के लिये भगवान ने सब के हितार्थ

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादकीय

अनुशासनहीनता रोकने का प्रमुख सुझाव

अनुशासनहीनता सारे राष्ट्र में एक व्यापक रोग हो चुका है। चाहिये तो यह था कि इस महामारी को आरम्भ होते ही कठोरता से दबा दिया जाता। परन्तु इस की उपेक्षा करने पर यह दोष दु साध्य हो चला है। जस ग्रन्थि को अगुलियो से खोला जा सकता था, उस को खोलने के लिये अब मशीन की आवश्यकता है।

पहिले हमे यह जान लेना चाहिये कि अनुशासनहीनता का मूल कारण क्या है? जब तक इस दोष को जड से नही उखाडा जावेगा, तब तक इस दोष का अकुर बार-बार फूटता रहेगा। जड के विनाश से ही इस दोष रूप वृक्ष के टहने, टहनिया, पत्त, फूल और फल स्वय सूख कर गिर सकते हैं।

पदार्थों के भावो मे मुनाफ क लालच से अनुचित वृद्धि करना ही इस राष्ट्र रोग की जड है। जब तक इस रोग पर पूरी शक्ति से कुल्हाडा नही चलाया जावेगा, तब तक अनुशासनहीनता नही हटाई जा सकती। एक मुनाफाखोर दस्यु=खुले बाजार मे भावो को बढान की कुचष्टा करता है, तभी सरकारो तथा गर सरकारी कर्मचारियो मे हल चल मच जाती है। कर्मचारी चाहे गाँव का चौकीदार हो अथवा शासन का उच्च अधिकारी हो, सभी बेचैन हो उठते हैं। सरकारी प्रशासन को चलान वाले पुरान दर्रे के उच्च अफसर अपने नेता मन्त्रियो को भावों के गिरान की सलाह न दे कर कर्मचारियो के वेतन मे वृद्धि करने का सुझाव देते हैं, क्यो कि इस मे उन का अपना भी स्वार्थ सिद्ध हो सकता है। सरकार कहती है कि वेतन में वृद्धि करना सम्भव नहीं, तब ये उच्च अफसर कहते हैं कि अस्थिर रूप से महगाई भत्ता बढा देना चाहिये। अति खेद से कहना पडता है कि वे मुनाफाखोर ऐसे अफसरो को यही परामर्श देते हैं कि भाव न गिरा कर महगाई भत्ता देना ठीक रहेगा। जब विवश हो कर सरकार महगाई भत्ता बढा देती है, तब गरीब कर्मचारी को तो कुछ लाभ नही होता और ये बडे बडे सत्ताधारी कर्मचारी पूरा लाभ उठा लेते हैं। साथ ही मुनाफाखोर लोग इन उच्च अफसरो की समय-समय पर भेंट पूजा भी करते रहते हैं। जब-जब कुछ आन्दोलन महगाई बढवाने के लिये होता है, तब-तब यही ढग बरता जाता है।

कुछ समय प्रतीक्षा करके मुनाफाखोर देख लेते हैं कि सरकार, कर्मचारी और सामान्य जनता ने रो-धो कर बढाये गये भावो को सहन कर लिया तब फिर वही सिलसिला चालू कर दिया जाता है। भाव बढाये गये महगाई बढाई गई। इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि गरीब पिसता गया। कर्मचारी रोते रहते हैं, परन्तु ये भाव बढाने वाले दिनधौले दनदनाते रहते हैं, इनका कुछ बिगडा नही होता। यह मर्ज इतना बढ चुका है कि भाव बढाने वाले लोग सरकारी चेतावनी की कुछ परवाह नहीं करते, अपितु सरकार को धमकी देते हैं कि भाव नही गिराये जावेंगे। यदि भाव गिराने का सरकारी यत्न किया गया तो ऐसा आन्दोलन छिड जावेगा कि सरकार के होश गुम हो जावगे। बात भी ठीक ही है वे भाव बढाने वाले मुनाफाखोर कहते हैं, क्योकि सरकारी शासन सत्ता का आधार वोट पर टिका हुआ है। ये मुनाफाखोर उस राजनीतिक दल की सहायता कर देते हैं जो इनके अनुचित लाभो पर अकुश न डालें। राजनीतिक दल अपने अपने चुनाव आन्दोलनो मे बडे-बड दमगज्ज चलाते हैं, परन्तु वे जानते हैं कि तुम्हारी जड किसके सहारे टिकी हुई है। चुनाव समाप्त। सरकार बनी। नई घोषणा हुई और जनता को खुशहाली के सुनहरे स्वप्नो की घोषणा कर दी। परन्तु परिणाम मे वही लोकोक्ति चरितार्थ होती है कि "ढाक के तीन पात।"

इन कुछ पंक्तियो मे हमने रोग के मूल कारण का ही वर्णन किया है। इस दोष को दूर करने का एक अचूक रामबाण नुस्खा यही है कि साहस करके सरकार भावों को गिरावे। भावो के गिरते ही महगाई छूमन्त्र हो जावेगी। सामान्य जनता को अपनी दैनिक आवश्यकताओ की चीजें सस्ते दामों पर मिल सकेंगी।

हम समझते हैं कि इस पग को उठाने मे सरकार को आगे पीछे के हालात को देखना पडेगा परन्तु हम विश्वास से कह सकते हैं कि सरकार के इस साहस के साथ भारतीय जनता का ९० प्रतिशत भाग है। सरकार अपने सलाहकारो को स्पष्ट कह देवे कि अब तक हमने तुम्हारी नेक सलाह मानी है, जिसका दुष्परिणाम राष्ट्र को आर्थिक सकट मे डाल रहा है। कृपया अब हमारी पद्धति पर शासन भार को उठाओ फिर पता चलेगा कि इसका सुपरिणाम राष्ट्र का कितना उत्थान कर रहा है। (विशेष—हमने जान-पूछकर उर्दू शब्दो का प्रयोग इस पंक्तियो मे किया है—सम्पादक]

गुरु विरजानन्द दिवस पर अपूर्व भेंट

जैसा कि इसी अक के प्रथम पृष्ठ पर व्यवस्थापक द्वारा आर्यमर्यादा के ग्राहक तथा पाठको को विशेष सूचना दी है कि गुरु विरजानन्द जी महाराज के स्मृति दिवस पर १२ अक्टबर ६९ के अक मे एक मुसलमान लेखक द्वारा उर्दू जबान फारसी लिपि मे लिखा सन १८५६ ई० का पत्र प्रकाशित किया जावेगा। तदनुसार हम ने उस मूल पत्र का पूरा ब्लाक बनवा लिया है। इस मे पर्याप्त व्यय हुआ है। परन्तु उस लाभ के सामने यह व्यय कुछ नही कि जिस को आर्य जगत के सामने गुरु विरजानन्द जो महाराज क सम्बन्ध मे एक मुसलमान लेखक ने जो बहुमूल्य विचार प्रकट किये हैं, वे आर्यमर्यादा द्वारा प्रकाशित होकर एक ऐतिहासिक अमूल्य सामग्री मे वृद्धी होगी। पत्र का हिन्दी देवनागरी रूपान्तर भी साथ ही प्रकाशित किया जावेगा। यह पत्र प्रकट करता है कि गुरुविरजानन्द जी महाराज भारत को अग्रेजी दासता से छुडाने के लिये क्या कुछ कर रहे थे। मथुरा मे उन का अभूतपूर्व सत्कार करने और भेंट देने वाले लोगो मे देहली के अन्तिम बादशाह बहादुरशाह जफर" के बेटे तथा नाना साहिब पेशवा आदि भी स्वय उपस्थित हुए थे। उसी पत्र में गुरु विरजानन्द जी महाराज का सक्षिप्त उपदेश भी दिया गया है।

यह पत्र हमें जिस महानुभाव से प्राप्त हुआ है, उनका शुभ नाम, पता तथा ब्लाक भी आर्यमर्यादा के उसी अक में प्रकाशित किया जावेगा।

इस अक की एक प्रति का मूल्य यही साधारण अक के रूप में २० पसे ही होगा। हम चाहते हैं कि प्रत्येक आर्य के घर मे यह अक पहुचे। अत ग्राहक महानुभावो के अतिरिक्त जो सज्जन इस अक को लेना चाहें, वे एक प्रति के लिये केवल २५ पैसे के डाक टिकट लफाफ मे आर्यमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान रोड नई दिल्ली १ के पते पर ३० सितम्बर ६९ तक अवश्य भिजवा देवे। एजेण्टो को यथा पूर्व भेजा जावेगा। जिस सज्जन को अधिक अक मगवाने हो तो वे सख्या लिख देव। निश्चित परिमाण मे अक का प्रकाशन होगा। बाद मे मगवाने वाले इस ऐतिहासिक अवसर से लाभ उठाने म वञ्चित रह जावगे।

आर्यसमाजों तथा आर्यनेताओं से निवेदन

सितम्बर मास से आयसमाजो के उत्सव प्रारम्भ होने लग जाते हैं। सभी आयसमाज अपने उत्सव को सफल बनाने के लिये पूण यत्न करते हैं। पूज्य सन्यासियो विद्वानो तथा अच्छे भजनोपदेशको को निमन्त्रित किया जाता है। साथ ही आयसमाज के राजनीतिक नेताओ को भी साग्रह पहुचने के लिये निवेदन करते हैं। हम आर्यसमाज के अधिकारियो से प्रार्थना करते हैं कि पूज्य सन्यासी और उपदेशका को भाषण तथा भजनो के लिये प्राथमिकना देनी चाहिये। कई बार देखा गया है कि सभा के उपदेशको को समय ही नही दिया जाना। बाहर से बुलाये महाशय ही समय ले जाते हैं। हम आयसमाज के राजनीतिक नेताओ से भी निवेदन करते हैं कि वे भी यह ध्यान रख कि आर्यसमाज को वेदी को दलगत बातो मे न घसीटें। आयसमाज के राष्ट्र मन्तव्यो पर राजीतिक भाषण देवें। इससे आर्यसमाजो के उत्सवो की सफलता होगी। आशा है हमे शुद्धभाव से निवेदन पर आयसमाजो के अधिकारी तथा आर्य नेता ध्यान देकर कृतार्थ करेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गौ का महत्त्व

श्री किशनाराम आर्य मु० पो० ललानियाँ वाया लौहर जि० श्री गंगानगर)

हमारे देश मे गाय को जननो और जन्मभूमि के सदृश्य पूज्य माना गया है। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, स्मृतियाँ, रामायण और महाभारत इतिहास मे गौ-महिमा के अनेक स्थल भरे पडे हैं। वेदो में 'अघ्न्या, पद का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में गाय को माता है—"माता रुद्राण दुहिता वसूना स्वसादियानाममृतस्य नाभि। प्रनु वोच चिकितुषे जनाय, मा गामानागामदितिं वधिष्ट॥' गाय रुद्र ब्रह्मचारियो की माता है, वसुओं की पुत्री है, आदित्यो की बहन है, अमृत का केन्द्र है, अत प्रत्येक विवेकी पुरुष को मैं यह कहता हूँ कि ऐसी भोली-भाली निरपराध तथा अवध्य गाय का वध कभी मत करो। इतनी पूज्या होने क कारण ही गाय को सुरभि, कामधेनु अर्घ्या (पूज्या) विश्वमाता विश्व को आयु, गौ, गाय, गऊ और गइया आदि अति महान्, यथा उत्तम नामो से आदर के साथ पुकारा जाता है। महाभारत के समय हमारे देश मे ९६ करोड गायें थो, उस समय जिसके पास १० लाख गाये होती थीं उसको वृषभानु कहते थे। नौ लाख गायो का पालन करने वाला नन्द पदवी से विभूषित किया जाता था। पाँच लाख गाय रखने वाला उपनन्द कहलाता था। गायें जहाँ अधिक पाली जाती उस पवित्र भू देश (भाग) का नाम ही गोकुल होता था। हमारे देश में गौ धन श्रेष्ठ धन माना जाता रहा है। मजबूत बैल हल गाडी में जोते जाते थे। जमीन की जुताई, बुआई गहराई तक होती थी तभी अन्न मे अधिक शक्ति होती थी, कम वर्षा से ही उत्तमोत्तम अनाज पदा होता था। देश मे लूले-लगडे अपाहिज गाय बैलो के लिये पिंजरापोल तथा गोशालाय जरूरत के मुताबिक होती थी।

खेतो मे गाय बैल बच्छी और बछडो के गोबर को खाद प्रचुर मात्रा मे उचित तरीके से डाली जाती थो। जिससे भूमि काफी उपजाऊ होती थी। घी दूध, दहीं की नदी बहती थी। घी, मक्खन, दूध दही, पनीर, खीर छाछ ही उस समय का सर्वश्रेष्ठ भोजन था, अन्न का प्रयोग अति कम होता था। जिससे मनुष्यो का स्वास्थ्य श्रेष्ठ रहता, बुद्धि लोगो की तेज होती थी। गौ घी से प्रत्येक घर मे रोजाना दोनो समय यज्ञ होता था, लोग सदाचारी होते थे। आपस मे बैर विरोध नही होता था। यह सब शुद्ध खान-पान का ही प्रभाव था। मुसलमानी समय मे भीएक रुपये का १६ सेर घी बिकता था। अंग्रजो के राज्य मे भी एक रुपये का पाँच सेर तक घी बिकता था। आइन अकबरी का लख है कि एक गाय के रोजाना २५ सेर दूध होता था। गाय का मूल्य उस समय १० रुपया प्रति गाय था। बैल घोडे से तेज चलते थे। २४ घटे मे ८० कोस का सफर बैल किया करते थे। गौ हत्या होने की वजह से दुधारू गाय और बलवान् बैल नही के बराबर हैं अब गाय का औसतन दूध अनुमानत दो सेर रहा है।

(१) गौ दुग्ध—दूसरे दुधारू पशुओ के दूध से गाय का दूध अति लाभदायक होता है। गौ दुग्ध मे शरीर के लिए सभी आवश्यक अश जैसे– चिकनाई मिठास, धातु विटामिन आदि मौजूद होते हैं। इसलिये कहा है — गव्यहीन कुभोजनम ' यानी बिना गव्य हमारा भोजन पूण नही होता है। वैद्यक के ग्रन्थभाव प्रकाश मे लिखा है कि 'दूध दोपहर के पहले वीर्यवर्द्धक और अग्निदीपक तथा दोपहर को बलकारक, कफ नाशक पित्त को हरने वाला और मदाग्नि को नष्ट करने वाला है। बालकपन मे वृद्धि करने वाला और बुढापे मे क्षयनाशक तथा वोर्यवर्द्धक है। रात्रि मे सेवन करने से बहुत से रोगो को दूर करता है। दूध सदा सेवनीय है।" गाय का दूध बच्चे बूढे मद, औरत, रोगो, नोरोग सभो के लिए उपयोगी है। पृथ्वी पर गाय के दूध के समान दूसरा कोई खाद्य पदार्थ नही है।

(२) गाय के मक्खन, घी, से सातो धातुओ की पुष्टि होती है। नेत्रो की ज्योति स्थिर रहती है। वात, पित्त, कफ तीनो दोषो का नाशक है। मदाग्नि को दूर करता है। शारीरिक सौन्दर्य और तेज को बढाने वाला है। आयुवर्द्धक, बलवर्द्धक तथा श्रेष्ठ रसायन है।

(३) गाय के गोबर और पेशाब में अनेक गुण हैं जैसे गोबर से कच्चे आँगन लीपे पोते जाते हैं। गोबर की बू से अनेक बीमारियों के कीटाणु मर जाते हैं। प्लेग, चर्म रोग में गाय के गोबर से फायदा होता है। गाय के गोबर को उबाल कर लेप करने से गठियावायु में फायदा होता है। साँप का विष भी काटे हुए स्थान पर बार-बार ताजा गाय का गोबर मलें अथवा सर्प दश वाले भाग को गाय के ताजे गोबर के ढेर में लम्बे अर्से तक रखने से साँप का विष दूर होता है। गोमूत्र खुजली, कोढ, पेट और कान दर्द में उचित मात्रा में ढग से प्रयोग किया जाये तो फायदा करता है। कान बहना, आँख दर्द, आँख का फूला, मोतिया बिन्दू मे भी गोमूत्र फायदा करता है। दो तीन बूँद गोमूत्र की कान में अगर बोला (बहरा) आदमी डाले तो लगातार ४० दिन सुबह शाम दोनो समय ऐसा करने से बहरापन दूर होगा। गौ मूत्र अति पवित्र माना जाता है।

(४)—गाय का दही—चिकना, रुचिकर, पेट को अग्नि बढ़ाने वाला, बल,वीर्य वर्द्धक, वायु हरता, तासीर मे शीतल है। पेट के अनेक रोगो को दूर करता है। गाय की छाछ (मठा) तो मानो गरीबो के लिये दयालु प्रभु ने अमृत ही पैदा किया है। क्योकि छाछ में अनेक गुण हैं। 'सर्वरोगहर तक्रम्'—छाछ मानव शरीर के सब रोगो को दूर करती है। 'न तक्रसेवी व्यथते कदाचन' छाछ का सेवन करने वाला कभी रोगी नही होता।

(५) परिवार मे गौ का स्थान—घर मे गाय का व्यावन न हो, मगल गावती कामन न हो। गुणी जनो का आवन न हो, वह नगरो किस काम की॥ कहावत सत्य है। जो घर वेदों की ध्वनि से गूजता न हो गाय की बोली 'हम्बा" अम्बा, अम्मा शब्द न सुनाई देते हो। तो वह घर श्मशान के समान है। घर मे गाय के दूहने का कार्य अधिकतर पुत्री पर होता था इसलिये तो कुमारी कन्या का एक नाम दुहिता है। विवाह के समय वर कन्या प्रतिज्ञा वचन बद्ध होकर करते हैं उस समय कन्या एक वर यह भी मागती है कि 'घर के घी दूध पर मेरा अधिकार होगा। गृहस्थ जीवन में आठ सुख माने हैं जिन मे सातवा सुख गाय को ही माना गया है यथा — स्वस्थ शरीर, घर मे धन धान्य, पतिव्रता नारो, पुत्र, पोने के लिये उचित मात्रा मे मीठा जल, राज्य कमचारी वर्ग से मेल जोल, घर में ब्याई हुई गाय हो और गुरुकुलो मे सतान पढ इससे बढ कर और सुख क्या होगा।

अनगिनत गुणो की खान होने पर भी गौ हत्या जारी है यह हमारे देश आर्यधरा पर कलक है। अनेक सत्याग्रह किये गये जेल मे सडे गो भक्तो ने सीने पर गोलीयाँ खाईं। घर बार उजडे। सर्व प्रथम महर्षि स्वामो दयानन्द जो महाराज ने गो करुणानिधि नाम की हिन्दी (देवनागरी) में रचना (पुस्तक) प्रकाशित कर तथा गोकृषि आदि रक्षिणो सभा, को स्थापना की। महर्षि दयानन्द जो महाराज ने बताया कि एक गाय के दूध से तथा बैलो द्वारा उत्पन्न अन्न से ४१०४४० मनुष्यो को एक बार मे तृप्ति हो सकतो है। उन की इच्छा थी कि "भारत के राजाओ महाराजाओ, रईसो और प्रजा वग के तीन करोड हस्ताक्षर कराकर गोवद्ध बद कराने के लिये एक मेमोरेंडम महाराणी विक्टोरिया की सेवा मे भेजा जावे। इस योजना के अनुसार कार्य करने मे विदेशी-शासन काल मे जो बाधाए थी वे अब हट चुकी हैं। स्वतन्त्र-भारत मे इस योजना के अनुसार कार्य किया जाये, और इस कार्य के लिये विशेष उत्साह भारतीय जनता में उत्पन्न किया जाये, यह इस समय की सब से बडी माग है॥ बात वास्तव में सत्य है। अगर अभक्ष्य पदार्थो को बन्द कर के गाय के घी दूध दही का सेवन किया जाय तथा उत्तमोत्तम फल मेवा और अन्न का ही भोजन किया जाय तो भारत फिर से ससार के देशों में सोने की चिड़िया भारत यह गौरव पूर्ण पद फिर से प्राप्त कर सकता है।

शंकर एक महान् तार्किक (४)

(वैद्य श्री गुरुदत्त जी एम० एस० सी० पंजाबी बाग, दिल्ली)

'शंकर एक महान् तार्किक' श्रृंखला का यह चौथा लेख है। कुछ समय पूर्व आर्यसमाज वारसिया कालौनी—बड़ौदा के एक सज्जन ने मेरे पास एक कतरन, आकाशवाणी आषाढ १ शक स० १८९१ तदनुसार २२ जून सन् १९६९ को भेजी थी। वे चाहते थे कि मैं उसमें उद्धृत लेख 'शंकर एक समन्वय कर्त्ता' के विषय में अपने विचार लिखूं। वर्त्तमान लेख इस आकाशवाणी के लेख से प्रेरणा लेकर ही लिख रहा हूं।

श्री स्वामी शकराचार्य भारत की एक विशेष विभूति हुए हैं। उन्होंने जहां अपने मत अद्वैतवाद का घोरनाद दुदुभित किया है, वहां उन्होंने तात्कालिक प्रचलित मत-मतान्तरों का भारतीय समाज में समन्वय करने में भी भारी प्रयत्न किया था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि दोनों कार्य श्री स्वामी जी ने किये। कार्य तो उपाय थे, देश में रहने वाले लोगों को एक सूत्र में बांधने के लिये; परन्तु ये उपाय उद्देश्य पूर्ति में सफल नहीं हुए।

जब कोई उपाय ईमानदारी से प्रयोग किया जाये और वह सफल न हो तो पीछे आने वाले विद्वानों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि उपाय का निरीक्षण करें और देखें कि वह क्यों सफल नहीं हुआ?

स्वामी शंकराचार्य जी का 'पंचायतन' यह था कि तात्कालिक प्रचलित दे -देवताओं के पुजारियों में वैमनस्य मिटा कर समाज में एकमयता उत्पन्न की जाये। विष्णु, शंकर, दुर्गा, सरस्वती एव गगा, नर्मदा इत्यादि के उपासक अपनी-अपनी ढपली बजाते थे और अपने मत के अतिरिक्त दूसरों की निन्दा करते थे। ऐसा 'शकर दिग्विजय' में वर्णन है। स्वामी जी का यह कहना था कि सब एक ही हैं। सब देवी-देवता ब्रह्म का रूप ही हैं। अतः किसी की भी उपासना ब्रह्म की ही उपासना है। उनका विचार था कि इस प्रकार के समझाने से समाज में उत्पन्न हो रहा विघटन मिट जायेगा और समाज में समन्वय उत्पन्न होगा।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आपने "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापरः" के सिद्धान्त का प्रचार आरम्भ किया।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुए। इस विफलता में कारण, मैं यह समझता हूं कि उनका सिद्धान्त मिथ्या था। एक मिथ्या बात के प्रचार से कल्याण नहीं हो सकता। यह निर्विवाद है।

भारतीय समाज, जो आज हिन्दू समाज के नाम से विख्यात है, श्री स्वामी जी के घोर प्रचार के उपरान्त भी वैसा ही विखण्डित रहा, जैसा कि पहले था। यदि यह कहा जाये कि द्वेष और वैमनस्य कुछ अधिक ही हुआ तो अधिक ठीक होगा। यह तो स्पष्ट ही है कि एक अन्य मत, "अद्वैतवाद" जिसने समाज की जड़ों को खोखला करके रख दिया, प्रचलित हो गया। पांच पथों के स्थान यहां छः पंथ हो गये और सांस्कृतिक विघटन पहले से उग्र हो गया। सबसे बड़ी बात यह हुई कि स्वामी शंकराचार्य जी के द्वारा कर्म की निन्दा करने के कारण समाज अकर्मण्य हो गया।

जब समाज के विद्वान् लोग ही कर्म को निन्दनीय मानने लगे तो समाज में अकर्मण्यता का व्यापक प्रचार स्वाभाविक था और कर्म अर्थात् धर्म-कार्य का स्थान स्वार्थ व्यवहार ने ले लिया। एक भंगी, चमार से लेकर राजा-महाराजा तक इस मन्त्र की माला जपने लगे 'कबीरा तेरी झोंपड़ी गलकटयों के पास, जो करेंगे सो भरणगें तुम क्यों भये उदास।"

यह ठीक है कि अद्वैतवाद पहले भी उपस्थित था, परन्तु यह भी सत्य है कि विद्वान् लोग इसको अमान्य कर चुके थे। महाभारत भगवद्गीता आदि ग्रन्थों में इसको स्वीकार नहीं किया गया। यही कारण है कि श्री स्वामी-शंकराचार्य को इस मिथ्यावाद के प्रचार के लिये भारतीय समाज के मुख्य ग्रन्थों पर अपने नवीन भाष्य लिखने की आवश्यकता अनुभव हुई।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी के परिश्रम की तो प्रशंसा की जा सकती है, परन्तु वह परिश्रम उतना ही मिथ्या था, जितना कि वर्तमान युग के देवता श्री पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू का हिन्दू-मुसलमानों में ऐक्य उत्पन्न करने का प्रयास रहा है। श्री नेहरू जी का प्रयास सर्वथा असफल हुआ है। हिन्दू और मुसलमान में भेद बढ़ता ही जा रहा है। भारत देश की एक निष्ठावान् देश भक्त जाति विघटित हो देश द्रोहियों की संख्या में वृ हो रही है। यह भी उच्च उद्देश्य के लिये एक मिथ्या उपाय के प्रयो का परिणाम है। ठीक वैसे ही जैसे कि श्री स्वामी शकराचार्य जी ने अपने मिथ्यावाद के लिये उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्रों का भ्रान्त भाष्य करने की आवश्यकता अनुभव हुई थी। वैसे ही आज श्री जवाहर लाल के चेले-चाण्टों को भारत के मिथ्या इतिहास को लिखने की आवश्यकता अनुभव हो रही है।

इसी अर्थ अपने इस लेख शृखला 'शंकर एक महान् तार्किक' के लिख की आवश्यकता अनुभव हुई है। श्री स्वामी शकराचार्य जी के भाष्यों में से कुछ उदाहरण मैं अपने पूर्व लेखों में दे चुका हूं। वर्त्तमान लेख में ब्रह्मसूत्रों में से एक अन्य उदाहरण देकर यह बताने का यत्न किया है कि किस प्रकार एक अयुक्ति-युक्त अप्रमाणित बात को श्री स्वामी जी ने समाज के सम्मुख उपस्थित किया है। ऐसी तर्कहीन बात से समाज का कल्याण नहीं हुआ, वरंच समाज मिथ्या दिशा मे चल पड़ा और यह चलता जायेगा, जब तक समाज मे बुद्धिवाद का प्रचार नहीं हो जाता। बुद्धि की बात तो किसी अन्य लेख में लिखूंगा। यहां बुद्धिवाद को छोड़ने से अकल्याण की बात ही से प्रयोजन है।

ब्रह्मसूत्र प्रथम अध्याय के दूसरे पाद से 'सर्वत्र प्रसिद्ध अधिकरण' का आरम्भ करते हुए आप लिखते हैं—

"अर्थान्तरप्रसिद्धानां च केषांचिच्छब्दानां ब्रह्मविषयत्वहेतु प्रतिपादनेन कानिचिद्वाक्यानि स्पष्टब्रह्मलिङ्गानि संदिह्यमानानि ब्रह्मपरतया निर्णीतानि। पुनरप्यन्यानि वाक्यान्यस्पष्टब्रह्मलिङ्गानि संदिह्यन्ते—किं परं ब्रह्म प्रतिपादयन्त्याहोस्विदर्थान्तरं किंचिदिति। तन्निर्णयाय द्वितीयतृतीयौ पादावारभ्येते।"

इसका अर्थ इस प्रकार है:—

दूसरे अर्थों में प्रसिद्ध कुछ वाक्यों का ब्रह्म विषय के हेतु से प्रतिपादित कुछ वाक्य स्पष्ट ब्रह्म का वर्णन करते हैं, परन्तु फिर भी सन्देह होता कि वे ब्रह्म विषयक है अथवा नहीं। इनके अतिरिक्त कुछ वाक्य हैं जिनमें स्पष्ट सन्देह है कि वे ब्रह्म विषयक नहीं है। अतः इस बात का निर्णय करने के लिये इस (ब्रह्म सूत्रों के प्रथम अध्याय) के द्वितीय और तृतीय पाद को आरम्भ करते हैं।'

यह स्वामी शकराचार्य जी ने अपनी बात बलपूर्वक पाठकों के समक्ष लाने के लिये लिखा है। इस लेख के दो परिणाम हुए हैं। एक तो यह कि उपनिषद् वाक्यों में जहां जीवात्मा का उल्लेख है, उसको तोड़-मरोड़ कर परमात्मा परक करने का यत्न किया है। जहां जीवात्मा से अभिप्राय और परमात्मा को जीवात्मा से पृथक् वर्णन किया है, वहां दोनों के एक होने प्रकट होने का यत्न कर दिया है। इस प्रकार उपनिषद्-अर्थों को विकृत करने का यत्न किया है। इससे एक दूसरा परिणाम उत्पन्न हुआ है कि ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय के द्वितीय एवं तृतीय पाद का मिथ्या प्रयोजन वाला बना दिया है।

वर्त्तमान लेख में हम उपनिषदों में अर्थ भ्रष्ट करने की बात को छोड़ ब्रह्मसूत्रों में अर्थ के अनर्थ की बात ही करना चाहते हैं।

श्री स्वामी शकराचार्य जी लिखते हैं कि ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय का द्वितीय पाद उपनिषदों में संदिग्ध अर्थों का निर्णय करने के लिये है और अपनी बात को सिद्ध करने के लिये आप इस पाद के प्रथम सूत्र पर ही अपनी विशेष बुद्धि का परिचय देते हैं। सूत्र है:—

"सर्वत्र प्रसिद्धोपदेशात् ॥"

सूत्र का अन्वय है सर्वत्र+प्रसिद्ध+उपदेशात्।

अर्थ है—सब स्थान पर प्रसिद्ध अर्थात् स्वय सिद्ध बात के कहने से। कहने से क्या होता है? ज्ञान की उपलब्धि होती है। यह समस्या की पूर्ति है, परन्तु प्रश्न तो यह है कि प्रसिद्ध बात क्या है? स्वामी शंकराचार्य और उनके पदचिह्नों पर चलने वाले भाष्यकार यह कहते हैं।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

वेदों का आविर्भाव—ईश्वरीय

[लेखक—आचार्य पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ) आनन्द कुटीर ज्वालापुर]



आर्यों का परम्परागत विश्वास—

१—वेदों के विषय में आर्यों का यह परम्परागत विश्वास रहा है कि वे मानव सृष्टि के प्रारम्भ में परम-पिता मंगलमय परमेश्वर द्वारा मनुष्य मात्र के कल्याण के लिये दिये हुए पवित्र ज्ञान के भण्डार हैं जिनमें मानव मात्र की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रिय उन्नति तथा विश्व शान्ति के सूचक सब तत्त्व पाये जाते हैं।

२—वेदो की शिक्षाएँ सार्वभौम और सार्वकालिक हैं। उन पर आचरण से हो सारे जगत् का कल्याण हो सकता है अन्यथा नही।

३—क्योंकि शारीरिक, मानसिक, आत्मिक सब प्रकार के विकास के उत्तम उपदेश वेदो में पाये जाते हैं और उन में न केवल आध्यात्मिक यों के उपदेश में प्रत्युत विविध विद्याओं और विज्ञानों का भी मूल उन या जाता है अत. उन के अध्ययन और प्रचार की आज भी ससार को ी हो आवश्यकता है जितनी पहिले थी!

४—ज्ञान कर्म और भक्ति, श्रद्धा और तर्क, त्याग और भोग, व्यष्टि-और समष्टिवाद, धर्म और विज्ञान, आध्यात्मिकता और भौमिकान इत्यादि प्राय परस्पर विरुद्ध समझी जाने वाली वातो का युक्ति- समन्वय और सर्वोपयोगी मध्यमार्ग का यथार्थ प्रदर्शन वेदों के द्वारा प्राप्त हो सकता है।

आर्यो का यह परम्परागत विश्वास स्वयं वेद भगवान् के—

"तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत॥"
(ऋग्वेद १०.९०, ८॥ यजु० ३१.८)

"पश्य देवस्यकाव्यं, न ममार न जीर्यति।" (अथर्व १०.८.३२)

"यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम्।
स्तम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः॥" (अथर्व १०.७.२०)

होता देवो अमर्त्यः पुरस्तादेति मायया विदथानि प्रचोदयत्।"
(ऋग्वेद० ३.२७.२ साम १४७७)

इत्यादि वचनो से प्रारम्भ होता है जिन में वेदो को यज्ञ अर्थात् पूजनीय श्वर ('यज्ञो वै विष्णुः' शत० १.१.२ १३, गोपथ ब्राह्मण ३.४ ६ पथब्राह्मण ९ ६ १०) से उत्पन्न और अतएव उस सवसुखदाता सर्वज्ञ देव का अजर अमर काव्य बताया गया है।

"तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूपनित्यया।
वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम्॥" (ऋग्वेद ८.७.६)

इत्यादि मन्त्रो में वेदवाणी को विरूप अर्थात् विविध विद्याओं का पण वा प्रतिपादन करने वाली और नित्य कहा गया है।

ये प्रमाण प्रारम्भ में देने की इसलिये आवश्यकता हुई है कि रैर जैसे पाश्चात्य विद्वानो ने Original Texcts आदि में यह सिद्ध करने का हस किया है कि वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानने का सिद्धान्त पीछे से गया, स्वय वेदो में उस का प्रतिपादन नही पाया जाता।

इस पर कोई कह सकता है कि यह तो आत्मश्लाघा वा 'अपने मुँह मियां ठू' बनने वाली बात हुई। इस का क्या महत्त्व है?

इस के विषय में अभी इतना ही कथन पर्याप्त है कि सर्वज्ञ भगवान् ने मात्र के कल्याणार्थ इन तथा अन्य मन्त्रों द्वारा वेदों के यथार्थ स्वरूप तिपादन किया है जिसका न केवल अत्यन्त बुद्धिमान् और दार्शनिक तत्त्वज्ञानियों और शास्त्रकारों ने पूर्णतया समर्थन किया है अपितु जिसका तर्क और युक्तियों द्वारा भी भली-भाँति समर्थन किया जा सकता है। जैसा कि संक्षेप से इस लेख में दिखाया जाता है।

ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता तर्क सम्मत—

आजकल के अनेक सुशिक्षित जो डार्विन, हर्बर्ट स्पेन्सर आदि द्वारा प्रसारित विकासवाद से विशेष रूप से प्रभावित है, ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता से भी इन्कार करते है। वे कहते हैं कि ईश्वर की सत्ता को मानते हुए भी ईश्वरीयज्ञान मानने की आवश्यकता ही क्या है? क्यों न माना जाये कि मनुष्य को क्रम से ज्ञान प्राप्त होता जाता है। विकासवाद के अनुसार मनुष्य के ज्ञान की स्वयमेव क्रमश: उन्नति होती चली जाती है। ईश्वरीयज्ञान वा Reveltion मानने की आवश्यकता ही क्या है जब कि विकासवाद (Evolutin Theory) से ज्ञान की समस्या का हल हो जाता है। इस विषय मे हमारा कथन यह है कि जब तक कोई सिखाने वाला न हो तब तक स्वय ज्ञान की प्राप्ति नही हो सकती। इस बात को हम संसार में स्पष्टतया देखते हैं। यदि ऐसा न होता तो विद्यालयों और महाविद्यालयों के खोलने की कोई आवश्यकता न होती। लोग अपने आप ही सब प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर लेते। पर जब तक माता-पिता आचार्य वा अन्य शिक्षक सिखाने वाले न हों तब तक बालक बालिकाओं को ज्ञान की प्राप्ति नही होती यह प्रत्यक्ष सिद्ध है। इस के विषय में समय-समय पर अनेक परीक्षण भी किये गये हैं जिनमें से असीरिया के सम्राट् असुरवाणी-पाल, युनान के राजा सेमेरिकल, सम्राट् फ्रेडरिकद्य, स्कॉटलैण्ड के जेम्स चतुर्थ और मुगल सम्राट् अकबर ने इस विषय मे जो परिक्षण किये वे कुछ अशो तक क्रूरता पूर्ण होते हुये भी महत्त्वपूण और विश्वास जनक हैं। इन लोगो ने कुछ बहुत छोटे बच्चों को जगलो मे रखवा दिया और उन के पालन पोषण के लिये गूँगी दाइयो का प्रबन्ध किया। परिणाम यह हुआ कि वे मानवीय भाषा को न सीख सके और उन का व्यवहार तथा चाल चलन पशुओं जैसा ही रहा। नीग्रो तथा अन्य सभी असभ्य जातियों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि वे जब तक सुशिक्षित लोगों के सम्पर्क में नहीं आये, तथा उन को अच्छे अध्यापकों से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला तब तक वे स्वयं ज्ञान प्राप्त करने में हजारों वर्ष व्यतीत होने पर भी समथ न हो सके। रामू नामक एक भेड़िये द्वारा पोषित बालक का ५ अगस्त १९६० का समाचार छपा था।

इसी प्रकार के भेडिया पालित बच्चो के अनेक उदाहरण गत वष १९ सितम्बर १९६८ के 'नवभारत टाइम्स देहली के अङ्क मे भी 'ये बच्चे जिन्हे भेड़ियो ने पाला है।' इस शीर्षक से प्रकाशित हुये है। हमारे मान्य मित्र वेदों के स्वाध्यायशाल और वेद विषयक उत्तम अग्रजी पुस्तको के लेखक मौरीशस वासी श्री वासुदेव विष्णुदयाल जो ने भी कई ऐसे ही उदाहरण पत्रों में प्रकाशित कराये थे।

इस लिये जैसे पिता पुत्र के कल्याणार्थ उपदेश करता है वैसे ही सब के पितृ-स्थानीय आदि गुरु परमेश्वर ने सब मनुष्यो के कल्याणार्थ अन्तर्यामि-रूप से जीवों को धर्माधर्म, पाप पुण्य, शारीरिक मानसिक आत्मिक सामाजिक उन्नति के साधन, मनुष्य जीवन का उद्देश्य, परमानन्द, शाश्वत सुख और शान्ति की प्राप्ति इत्यादि विषयो का वेदो के द्वारा मानव सृष्टि के प्रारम्भ मे उपदेश दिया यह बात सवथा तर्कानुमोदित है। स्वय हैकल जैसे जड़वादो ने इस प्रकार ईश्वरीयज्ञान की सम्भावना को निम्न शब्दों में स्वीकार किया है—

'इस विषय में कोई वैज्ञानिक बाधा नही है अथवा कोई कारण नहीं कि क्यों इस सम्भावना को स्वीकार न किया जाए।'

जब एक हैकल जैसा जड़वादी भी ऐसी बात कह सकता है तो सब आस्तिकों के लिये ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता को मानना सरल और स्वाभाविक है। इसी प्रकार एक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० फ्लेमिंग द्वारा ईश्वरीय ज्ञानवाद का समर्थन किया गया। जैसे कोई भी सभा सस्था बनाने, सरकार का कार्य चलाने, अथवा कारखाने इत्यादि चलाने से पूर्व उनके नियमों का बना डालना अत्यावश्यक है, इसी प्रकार ससार रूपी इस विशाल संस्था को नियमपूर्वक चलाने के लिये भगवान् ने सब के हितार्थ

(शेष पृष्ठ ७ पर)

(पृष्ठ ५ का शेष)

इदमाम्नायते—सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत। अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथाक्रतुरस्मिँल्लोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति स क्रतुं कुर्वीत; 'मनोमयः प्राणशरीरो भारूपः' (छा०३-१४-१,२) इत्यादि। तत्र संशयः॥

आप इस उपनिषद् वाक्य को सदिग्ध मानते हैं।

हमारा मत है कि यह उपनिषद् वाक्य सदिग्ध नही है। उपनिषद् का अर्थ करने मे स्वामी शकराचार्य की फैलायी भूल से अर्थ सदिग्ध हो गये है।

देखिये, उपनिषद् वाक्य सदिग्ध कैसे हुए हैं? उक्त (ब्र० सू०—१-२-१) के अर्थ हैं कि प्रसिद्ध बात के विषय मे उपदेश हैं।

क्या प्रसिद्ध बात है? श्री स्वामी जी के मत से प्रसिद्ध परमात्मा है। बस भूल यहा से ही आरम्भ होती है। परमात्मा को सिद्ध करने के लिये तो दर्शन शास्त्र लिखा जा रहा है। यदि वह प्रसिद्ध होता तो इस शास्त्र के लिखने की आवश्यकता क्या थी? साथ ही यह भी निर्विवाद है कि परमात्मा को अस्वीकार करने वाले आदि सृष्टि से आज तक चले आ रहे हैं।

परमात्मा है। परन्तु यह प्रसिद्ध (स्पष्ट सिद्ध) नही। इसी कारण लिखा जा रहा है।

प्रसिद्ध बात है कि यह कार्य जगत् है। यह चल रहा है। यह नष्ट होता भी देखा जाता है। यह प्रसिद्ध बात है। आगे (ब्रह्मसूत्र द्वितीय पाद मे) इसी प्रसिद्ध बात के विषय मे बताया जा रहा है।

इस सन्दर्भ मे यह लाभप्रद होगा कि महाभारत मे दक्ष-युधिष्ठिर सवाद मे इस विषय पर लिखा स्मरण करा दिया जाये। दक्ष ने पूछा था कि वार्त्ता (चर्चा) क्या है? युधिष्ठिर ने कहा था कि चर्चा है इस मोहमय ससार का कढाई मे काल सूर्याग्नि द्वारा सब प्राणियो का पका रहा है। अत प्रसिद्ध बात यह है।

स्वामी शकराचार्य समस्या को हो नही समझ। अत उसकी पूर्ति में भी भूल कर बठ हैं।

उक्त सूत्र का अर्थ है कि द्वितीय पाद मे प्रसिद्ध बात (अर्थात् कार्य जगत् इसके मूल कारण इसके सचालक और इसके प्रलय) के विषय मे कार्य जगत् से अधिक प्रसिद्ध कुछ नही है।

कार्य जगत् एक घडे के कुम्हार के समान निमित्त कारण रखता है। घड को मिट्टी के समान उपादन कारण रखता है और घड के ग्राहक के समान जोवात्मा, जो कार्य जगत् का भोग कर रहा है, रखता है।

द्वितीय पाद मे परमात्मा और जीवात्मा की समानता और विलक्षणता के विषय मे लिखा है। इसी बात का एक सूत्र है।

"गुहां प्रविष्टावात्मानौ हि तद्दर्शनात्॥"

अर्थ है—गुहा मे प्रविष्ट हुए दो आत्मा है। उनके दर्शन से यह निश्चय होता है।

आगे के सूत्र मे दोनो के पृथक् पृथक् दर्शन करने मे सहायता करते है।

परन्तु स्वामी शकराचाय जी जगत् को मिथ्या मानते है। जीव को ही ब्रह्म मानते हैं। यह बात न तो ब्रह्मसूत्रो से सिद्ध होती है और न ही उपनिषद् ग्रन्थो से। वेद मे तो स्पष्ट जीवात्मा का परम्परा से पृथक् उल्लेख है।

श्री स्वामी शकराचार्य जी उक्त मिथ्या धारणा को लेकर चले हैं और अपनी बात सिद्ध करने के लिये वेदो का तो बहिष्कार कर रहे है। उपनिषद् भगवद्गीता और ब्रह्मसूत्रो का अर्थ भ्रष्ट कर रहे है। इस पर भी वर्तमान युग के काग्रेसी नेता भारतवर्ष के इतिहास को भ्रष्ट कर हिन्दु-मुस्लमान ऐक्य सम्पन्न करने का असफल यत्न कर रहे हैं, वैसे हो स्वामी जी ने "जीवो ब्रह्मैव नापर." का असफल प्रयत्न किया है।

पृष्ठ ६ का शेष

वेदो के रूप मे नियमो का निदश कर दिया जिन पर चल से ही प्रत्येक नर-नारी का कल्याण हो सकता है अन्यथा नही। यह बात स्पष्ट है कि यदि किसी देश मे चोरी, मद्यपान, व्यभिचार आदि के विरुद्ध कानून न बने हो तो ऐसा करने वालो को दण्ड देना भी न्याय सङ्गत नही कहा जा सकेगा। इसलिये और नही तो व्यवहार सहिता, नियम ग्रन्थ (Code of Laws) या वेद के शब्दो मे ऋत और सत्य का प्रतिपादन करने वाले ज्ञान का मानव सृष्टि के आरम्भ मे मङ्गलमय भगवान के द्वारा मनुष्यमात्र के पथप्रदर्शक के तौर पर दिया जाना बडा युक्ति-युक्त है। इसीलिये अफलातून और जमनी के काण्ट जैसे सुप्रसिद्ध दाशनिको ने भी धार्मिक तथा नैतिक विषयो मे पथप्रदर्शन के लिये ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता को स्पष्ट शब्दो मे अनुभव और प्रकट किया है। परमेश्वर क्योकि सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है अत उसे वेदो का ज्ञान देने के लिये मानव शरीर धारण करन अथवा कलम पेन्सिल कागज इत्यादि किसी साधन की आवश्यकता नही। सर्वव्यापक सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् होने के कारण अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा इन ऋषियो के पवित्र हृदयो मे सर्वान्तर्यामी रूप से प्रेरणा कर दी और उन के द्वारा ऋग्वेद यजर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का आविर्भाव हुआ यह सब शास्त्र सम्मत सिद्धान्त सर्वथा युक्ति-युक्त है।

कविता

श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर, कुरड़ायां (राज०)

पूज्य! आनन्द स्वामी जी का', पढ वक्तव्य कष्ट हुआ।
दोषी कौन? यह आर्यजगत् को 'सत्यमेव' स्पष्ट हुआ॥१॥
गत-सर्वोच सभा अधिकारी, की निर्वाचन मे हुई गलती।
प्रतिनिधि ल पजाब सभा के, शिर पर रखी अंगीठी जलती॥२॥
आर्य सम्मेलन प्रस्तावो की, उड गई दृढ निश्चय की बुलबुल।
आर्य जगत के सम्मुख आ गये दोषी सत्य तुला से तुल तुल॥३॥
स्वामी जी के आदेशो की हत्या को, मिल जिस प्रकार से।
झुकती है लज्जा से गर्दन, खिलबत्तियो के कार्य भार से॥४॥
धर्म्म-मर्यादा राज नियम से, कार्य सर्व अवैध हुआ है।
देख 'स्वय' सच्चे 'आर्य'—को पढ सुन गहरा खेद हुवा है॥५॥
पूज्यवरो के अपमानो को, आर्य समाज न सहन करेगा।
ऋषि निर्धारित नियम बगीचा, भूल न कोई दहन करेगा॥६॥
दु शासन दुर्योधन दुर्जन सदभावो से बाज न आये।
करिये! अवलोकन महाभारत दुराग्रहो को लाज न आये॥७॥
आर्यसमाज का सुधवेदा पर, कैसा धीगा-मस्ती हो रही।
निकल कौन? होय गुरु गोविन्द आर्यजनता बाट जो रही॥८॥
सत्य समालोचक कवि लेखक, किस प्रकार बैठ चुप साधा।
कहा मरल शब्दो म ऋषि ने अधिक सहन करता अपराधा॥९॥
ईश्वर के सद् अमृत पुत्रो आया अवसर न्याय दिला दो।
होला के उस हुड दगा को सबक अम्ब' अविलम्ब सिखा दो॥१०॥

मुझे रहे तुम्हारा ध्यान

प्रो० ओम् कुमार एम० ए० दयानन्द कालेज, शोलापुर

मुझे रहे तुम्हारा ध्यान प्रभुजी रहे तुम्हारा ध्यान।
विषय वासना म न खाऊ, लोभ मोह के वश न होऊ।
कभी न बीज बदी के बोऊ, अहकार का भार न ढोऊ।
करूं लोक कल्याण प्रभु जी करूं लोक कल्याण॥
वेद माग पर चलू चलाऊ, सत्कर्मो से नेह लगाऊ।
वैर भाव मन मे न लाऊ गीत मधुर भक्ति के गाऊ।
यह वर दो कृपा निधान मुझे यह वर दो कृपा निधान॥
यम नियम जीवन मे धारू, दुर्गुण सभी नाश कर डारू।
सत्सग से निज चलन सुधारू, छवि तुम्हारी सदा निहारू।
रखू लक्ष्य महान्, प्रभु जी रखू लक्ष्य महान्।
बस इतनी सी कृपा कर दो, दिव्य गुणो से जीवन भर दो।
व्यथा पीर मम मन की हर दो, अभयदान हे अभयकर दो।
करू तेरा गुणगान प्रभु जी करू तेरा गुणगान॥

कृ से आगे—

Vedas and all holy Scriptures forbid Idolatry.

(Shri Girdharilal Arya, Chauri Chaura)

2. Millions of coins being wasted on temples, it leads to enury and idelness. 3. Men and women throng promiscuously in ·mples giving rise to fornication, quarrels and diseases. 4. y believing that idol-worship is the chief means of obtaining ıe four boons-righteousness, prosperity, happiness and emanciation (Dharm, Artha, Kama & moksha) man generally become ıactive and wastes his life. 5. Idols being of different forms, ifferet names and different natures, there arise differences of cults nd creeds among the worihippers which brings the country to ltimate destruction. 6. They depend upon the idols for the defeat f their enemies and the victory of their own cause. Thus are they anquishtd and the loss of their country and their liberty puts ll the resourees of their prosperity in the hands of the enemies. 'hey are deprived of all happiness and live a life of slavery like he pony of the inn-keeper or the ass of the potter. 7. When anyone ays to a man, "I shall put a stone on your seat or name," the nan resents it and is ready to abuse or beat him, similarly these oolish persons put stone idols on their hearts which are the seat f God and on God's name. Why should not God then punish uch fool? 8. They wonder from temple to temple and place to lace in an illusory expectation to find God and suffer afflictions by osing their religion, their worldly prosperity, their love of beneolence besides falling victim to the mischiefs of thieves and cheats. . They give monny to wicked priests who spend it on prostiution, adultery, drinking, flesh-eating and mutual quarrels. It mounts to striking at the root of the donor's happiness and causng him pain. 10. They honour the stone idols and thereby ishonour their mother, father etc. Thus they commit the sin of ngratitude. 11. When any body breaks the idols or steals them way, they bitterly weep. 12. Priests lead sinful lives with other omen and priestesses with other men and thus they are deprived f the happiness of conjugal love. 13. The relation between the naster and the servant get strained, quarrels increase and they are uined in the end 14. Those who constantly contemplate upon nert substances, themselves become inert, as what yon think about ffects your souls through the iternal organs and the inertness of he objects is bound to percolate to the self. 15. God has created diferous flowers etc. in order to offect the purification of air, water tc. If they were allowed to pass, on the trees, their natural like, hey would have emitted a very great amount of odour in the tmosphere and would have purified air and water to a great extent. lut these priests nip them in the middle and deprive the world of hat immense advantage which could have accrued in natural course. 'hose flowers etc. fall into water, rot and give rise to steach. Does God create these flowers and other odiferous things to offered to be he blocks of stone? 16. The flowers, Sandal-paste, rice offerings resented to the stone idols mix water and dust in the drain or in the eservoir and produce small as horribly offensive as of human faces nd render the whole atmosphere unhealthy. Thousands of germs are roduced therein; they die and rot there and as much harm. These nd many other defects there are in the practice of idol-worship nd it is the duty of all good men to abondon it Those who perormed idol-worship in the past, those who are doing so in the resent and those who will ever do so in future, can never keep hemselves immuna from these evils.

Shri Ganga Prasad Upadhaya M.A. Comments that Swami Dayanand has depicted those evils which are inseparable concomiittants of idolatry and can well be illustrated from actual facts nd figures gathered from the temples of idols all over the world. or instance, go to the temples of Puri, Bhuvaneshwar, Banaras or ıny place, great or small, examine the condition of the worshippers, the idol, the main altar, the room where the idol is set up, the floor of the room, the drains, the tank and the whole neighbourhood and then you will be able to realize the justification of Swami Dayanand's criticism Swami-Dayanand's arguments are very comprahensive, not only metaphysical and actual; logical and psychological both." It is well known to all pandits that Pujari means literally worship-enemy. Is it not funny? In this context, here is an eye-opener lesson to the devotees and votaries of man-god or god-man. Hardly a year ago, the humble writer of this article happened to come across an interesting and thought-provoking news of voluptuous and lecherous affairs of one humbug Moni Bawa (speechless, recticent or mum-keeping Mahatma, so to say) of Gangotri, a holy and hilly place of pligrimage in Uttara Khand, who has had an illicit cohabitation with a young virgin village girl of that place. The said depraved Bawa defiled and outraged her modesty and clandestinely enjoyed sexual-intercourse many a time with her, with the result she soon became pregnant, there-upon the people of her village, when knew about this stirred up and compelled the innocent girl to disclose all the facts. And she at last, revealed the evil deeds of the said beelzebub Bawa to them. After all, he had not only confessed his sinful acts, in toto, but also bestowed his one lakh of rupees worth building to her in repentence thus paid the costly price of his illict-lust. It is amusing, but not amazing to note here that the socalled fake Bawa has owned to lovely and luxurious magnificent building there which wanting of three "W" Hence, he has also decoyed, coaxed and snared the eldr unmarried sister of that girl and is living and enjoying honey-moon with her in his second building. The first girl in due course of time, gave birth of a child.

Therefore we should abandon the personality cult and idol-worship and cheap way of devotion. Atheists and idolworshippers both are on the wrong paih. Let us return to the Vedas lest we should astray aimless hither and thither. God in the beginning of the creation of the world reveal the Vedas in the hearts of the Rishi, namely Agni, Vayu, Aditya and Angira. And He grants His knowledge of the Vedas to the learned, to be imported alika to all without distinction of caste, colour or creed. His knowledge is ment for all mankind and not for the chosen few. A wise person, with verses of God's poetry, the Vedas, the instructor of mankind, having attained salvation, contemplation upon God, the purifier of the fallen crosses the bondage of Karma. So you must know God first through the regular study of the four Vedas and realise Him inner most recesses of your hearts by the Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahar, Dharna, Dhyana and Samadhi the eight phases of moksha-ultimate beatitude. Recite the name of God-Om. Because this is the chief, first; foremost and most comprehensive name of God for the mental recitation and meditation in a quiet, calm, clean solitude and seclude place whether in home or in forest or in mountain cave or at the bank of a river.

Ten attributes of religion-Dharma are: Fortitude, Forgiveness, self-command, non-theft, Purity, control over senses, calmness. Learning, Truth and Freedom from anger. And there are also ten limbs of Yama and Niyama-Non-Voilence, Truth, Freedom from theft, celibacy, Rennuciation, Purity, Contentment, Austerity, Study and Resignation to the will of Almighty God. These are the only righteous way for the attainment to God and not otherwise. It is ridiculous, ludicrous and wonderful that man manufactures, sells and purchase, the multifarious idols of God, the creator of the whole world. For, God never taketh birth nor get incarnation of any sort. Because he is Omnipresent, Omnipatent, Omniscient, Omnipercipient, Immortal, Eternal, Everpresent, Everlasting and Formless, and All-prevading, Lustrous, Bodiless, Flawless, Sinewless, Pure, Unpierced by evil. Knower of the hearts of all. Censurer of the sinful, and Self-existent. He truly reveals through the Vedas all things for His subjects from His immemorial attributes, free from birth and death. They who worship the Matter are spiritually degraded, and are put to suffering. Those who worship and enjoy the material object of the world are more degraded. Therefore God alone is worthy of worship & adoration.

काशी शास्त्रार्थ वेदी (आनन्द बाग)

लेखक-श्री सत्यनारायण उपाध्याय, बी० ए०

लगभग दो मास अब शेष रह गये हैं जब काशी के उस ऐतिहासिक शास्त्रार्थ की शताब्दी मनायी जायगी जो अपने ढंग का अपूर्व था जिसमें संसार शिरोमणि संस्कृत विद्या के प्रकाण्ड पण्डितो ने प्रतिमा पूजन पर विचार किया था, जिसमे एक ओर थे काशी के सर्वश्रेष्ठ पण्डित श्री बाल शास्त्री तथा स्वामी विशुद्धानन्द आदि और एक ओर थे अकेले महर्षि दयानन्द।

यह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ अमेठी राज्य के आनन्द बाग में कार्तिक शु० १२ स० १९२६ वि० (१६ नवम्बर १८६९) को हुआ था। उसी आनन्द बाग मे महर्षि दयानन्द लगभग एक मास से ठहरे हुए थे। समस्त काशी में कोलाहल मच गया था कि वेद विद्या का एक धुरन्धर विद्वान् आया हुआ है जो कहता है कि प्रतिमा पूजन तथा मृतक श्राद्ध आदि का विधान वेदों में नही है। उक्त सन्यासी इन्हें अवैदिक कृत्य कहता है तथा ललकार रहा है कि जिसे इस विषय मे वाद विवाद करना हो, सामने आवे।

काशी नरेश महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह ने पण्डित गण को बुलवा कर शास्त्रार्थ करने के लिये कहा तब विद्वान् मण्डली ने १५ दिन का समय तैयार करने के लिये मागा और तब शास्त्रार्थ का प्रबन्ध किया गया।

उक्त दिग्विजय प्रदायक शास्त्रार्थ के स्मारक के रूप मे आनन्द बाग में एक शिला पट्ट लगवाने का प्रस्ताव मौलवी आलिम फाजिल प्रो० महेश-प्रसाद ने वर्त्तमान अमेठी नरेश राजा रणञ्जयसिंह जी से किया और उन्होंने अपने पूज्य पिता स्व० राजर्षि राजा भगवान्‌बक्ससिंह जू देव से अनुमति लेकर आनन्द बाग के उस पवित्र स्थल पर जहाँ महर्षि दयानन्द निवास कर रहे थे और शास्त्रार्थ हुआ था, अमेठा राज्य के काशीस्थ सम्पत्ति के प्रबन्धक श्री गौरीशकर तिवारी को आदेश देकर १९५१ ई० में काशी शास्त्रार्थ वेदी का निर्माण करवा दिया। अब सोचा यह जाने लगा कि शास्त्रार्थ वेदी पर शिला पट्ट लगवाकर किसी महापुरुष से उसका अनावरण कराया जाय।

प्रो० महेशप्रसाद जी का विचार था और श्री पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु भी उनसे सहमत थे कि शिला पट्ट पर किसी की हार जीत न लिखी जाय जिससे कि आर्य समाजी और सनातन धर्मी सभी उसका समान भाव से आदर करे।

दो वर्ष हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से अनुमति लेकर आर्य जगत् के मूर्धन्य सन्यासी तपोमूर्ति महात्मा आनन्द स्वामी के कर कमलो द्वारा शिला पट्ट का अनावरण सम्पन्न हुआ। श्रीमान् राजा रणञ्जयसिंह जी ने अपने स्वागत भाषण मे कहा था कि इसी आनन्द बाग मे महर्षि दयानन्द और स्वामी विशुद्धानन्द प्रभृति का शास्त्रार्थ हुआ था। अध्यक्षता दयानन्द वैदिक महा विद्यालय के प्राचार्य श्री कृष्णानन्द कर रहे हैं, सयोजक श्री आनन्द प्रकाश हैं। सभी आनन्द से सम्पन्न हैं, मेरे ही नाम मे आनन्द नहीं है परन्तु मैं अत्यन्त आनन्दित हू। राजा साहिब ने यह भी कहा कि शिला पट्ट पर किसी की हार जीत नही लिखी गयी है, वह तो वैदिक प्रेस अजमेर में मुद्रित पुस्तक काशी शास्त्रार्थ से स्पष्ट ही हो जाती है। आपने यह भी प्रस्ताव किया कि स० २०२६ वि० (१९६९ ई०) मे काशी शास्त्रार्थ शताब्दी विशेष रूप से समारोह पूर्वक मनायी जानी चाहिए और हर्ष की बात है कि उसका आयोजन किया जा रहा है। आर्योपप्रति-निधि सभा वाराणसी के प्रधान श्री खेमचन्द्र जी उसकी सफलता के लिये अथक परिश्रम कर रहे हैं और आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने भी उसे अखिल भारतीय स्तर पर मनाने का निर्णय किया है।

शिला पट्ट पर निम्नलिखित श्लोक अकित हैं और भाषा मे प्राय सभी विद्वान् महानुभावों के नाम भी अकित हैं।

> षाण्मुख-दृग्नाग-चन्द्रेऽब्दे शुक्ले कार्तिके सिते।
> द्वादश्यां भास्वाद्दिने दिव्ये मूर्तिपूजा विनिर्णये ॥१॥
> अमेठ्यानन्द-बागेऽस्मिन् काशिराजसभापतौ।
> जनौघे विपुले वादः प्रवृत्तः श्रुतितत्परः ॥२॥
> विशुद्धानन्दसुप्रख्यैर्बालशास्त्र्यादिभिर्बुधैः।
> शास्त्रार्थमकरोत्साकं दयानन्दो यतिर्महान् ॥३॥
> भगवान्‌बक्स-भूपाल-वचनात्तत्सुतः सुधीः।
> अलेखयच्छिलालेखं श्रीमान् राजा रणंजयः ॥४॥

राजा रणञ्जयसिंह के पितामह महाराजा माधवसिंह बहादुर उस समय अमेठी राज्य के अधीश्वर थे जब महर्षि दयानन्द काशी पधारे थे, आनन्द बाग में निवास किया था और वह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ। राजा माधवसिंह बहादुर महर्षि दयानन्द के सम-वयस्क थे। स्वयं विद्वान् थे। अनेक ग्रन्थो के रचयिता थे और कविता मे अपना नाम क्षिति पाल रखते थे सनातन धर्मी थे परन्तु साधु महात्माओ का बडा सम्मान करते थे। तत्कालीन काशी नरेश महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह जी से उनकी घनिष्ठ मित्रता थी।

काशी मे यह बाग दुर्गाकुण्ड के समीप है। बडी रमणीक वाटिका है। अमेठी नरेश स्वर्गीय राजर्षि महाराजा भगवान् बक्शसिंह जूदेव के गुरु परम योगी स्वामी भास्करानन्द जो इस आनन्द बाग मे रहा करते थे जिनके दर्शनो के लिये यूरोप तथा अमेरिका आदि से बड बडे लोग आया करते थे। आनन्द बाग मे स्वामी भास्करानन्द जी की समाधी है। सग मरमर का यह धवल मन्दिर काशी का ताज कहा जाता है। नगर महा पालिका (वाराणसी) से पूर्व निगम की योजना थी कि इसका विस्तार किया जाय और अमेठी राज्य के दो और बाग (नीची बाग तथा गुलाब बाग को मिला कर बहुत बडा उद्यान बना दिया जाय। निगम के प्रशासक ने इसके लिये अमेठी नरेश को पत्र लिख कर इन्हे मोल लेना चाहा परन्तु श्री रणञ्जयसिंह जी ने तय किया कि काशी शास्त्रार्थ वेदी को कोई हानि न पहुचे और इन तीनो बागो को मिला कर जो बडा उद्यान बने उसका नाम राजा भगवान्‌बक्ससिंह अमेठी पार्क रहे तब बिना मूल्य लिये ये सब बाग निगम को दे दिये जायगे महाराज अमेठी ने दान पत्र लिख दिया काशी के इस ताज के समीप ही अति दर्शनीय सुरेता मानस मन्दिर है वह स्थान भी पहले अमेठी राज्य का दुर्गा बाग था। शताब्दी पर पधारने पर ऐसे अनेक ऐतिहासिक तथा महत्वपूर्ण स्थान देखने को मिलेंगे।

राजा रणञ्जयसिंह का विचार था कि आनन्द बाग को बारहदरी मे एक वैदिक पुस्तकालय स्थापित कर दिया जाय। यदि प्रयत्न किया जायगा तो नगर महापालिका सम्भवत इस सुन्दर योजना को स्वीकार कर लेगी इस विशाल पार्क के दानदाता के उत्तराधिकारी राजा रणञ्जयसिंह को तो प्रसन्नता ही होगी।

आशा है कि आर्य जन इस पर ध्यान देंगे और बिना मूल्य लिये इतनी सम्पत्ति के दान दाता के विचारो को कार्यान्वित करके आर्य जगत् की महती सेवा करेंगे। काशी नगरी मे वदिक ध्वज फहरायेगा, विदेशो तक मे इसकी कीर्ति फैलेगी और वैदिक साहित्य के प्रचार के लिए यह एक केन्द्र बन जायगा॥

"क्या राहें उपदेश किया करतीं ?"

श्री विनोद शास्त्री, नरवाना (जीन्द)

इस कंटक पर या फूल खिले, बने ऋजु राह जटिल चाहे,
मानव, स्वत प्रमाण मिले, करती उपदेश क्या राहे ?
बाह्य द्युति किसलेय कलेवर, क्या झझा सम सहसा आए ?
नही अवयव दौर्बल्य यहा, मद ज्ञान और सयम पाए।
घन घहर दामिनि ज्वाला सम, टूटे द्युति शेषाश्रु आहे,
स्वर्ण नही हुए द्युति होती बने ऋजु राह जटिल चाहें।
नही आहें, साहस, पारस, साहस, दुर्गम सकल्प गठन,
जटिल हो चाहे, कुटिल नही, है कुटिल राह का अवगुठन।
राष्ट्र धर्म की सेवा राह, मानव-मानव सेवक चाहें,
दृढ़ प्रतिज्ञ बन ज्ञानवान्, करतीं उपदेश न राहें।

बाल-जगत्

भोली मक्खी और मक्कार मकड़ा

(श्री प० जयकुमार शास्त्री 'साधु सोमतीर्थ', देहली)

कभी पढ़ी थी एक कहानी। हमको है वह याद जबानी ।।
आओ बच्चो! तुम्हें सुनायें। मौज मनायें शिक्षा पायें ।।
एक बहुत मक्कार था मकड़ा। मोटा ताजा, चोखा तकड़ा ।।
पड़ी जो मक्खी उसे दिखाई। तब मकड़ ने बात चलाई ।।
आओ प्यारी मौसी! आओ। हंसी खुशी की बात सुनाओ ।।
आज सुनूंगा एक कहानी। राजी तो है मेरी नानी ।।
पाकर आज तुम्हारे दर्शन। सफल हुआ यह मेरा जीवन ।।
नहीं हर्ष का मेरे ठिकाना। शुभ हो मौसी जी का आना ।।
बहुत दिनो से सेज बिछाकर। तेरे पथ पर आंख लगाकर ।।
इन्तजार मे हूं मैं तेरी। हे कल्याणी! मौसी मेरी ।।
आने मे क्यो देर लगाई? बहुत दिनो मे शकल दिखाई!
आओ, आज गले मिल जायें। खेलें, कूदे, नाचें, गायें ।।
मक्खी बोली—ओ शैतान! लुच्चे! गुण्डे!! बे-ईमान!!!
तू प्रतिदिन मक्खियो को खाता। कुछ नही मेरा-तेरा नाता ।।
जन्म-जन्म के दुश्मन मेरे। पास नही आऊंगी तेरे ।।
सेज कहां? यह जाल है तेरा। मेल नही कुछ तेरा-मेरा ।।
मीठी, लम्बी बात बनाकर। बहका-फुसलाकर, बहकाकर ।।
मुझे चाहता है तू खाना। असली मतलब मैंने जाना ।।
जो बैरी की चाल न जाने। मित्र-अमित्र नहीं पहिचाने ।।
शत्रु का विश्वास कर जो। वह पाता है महानाश को ।।
अपना तो है काम भलाई। कान खोल कर सुनले भाई!
कोई काम हो तो बतला दे। दूर-दूर से ही जतला दे ।।
मकड़ा बोला—मक्खी रानी। माना तुम हो खूब सयानी ।।
तेरी बात ज्ञान भरी हैं। सच्ची, सीधी, खरी-खरी हैं ।।
लेकिन मेरी करुण-कहानी। शायद तूने है नहीं जानी ।।
बीवी-बच्चे मेरे प्यारे। जो थे, वे सब स्वर्ग सिधारे ।।
जग से नाता तोड़ चुका हूं। मक्खिया खाना छोड़ चुका हूं ।।
कुछ रोना, कुछ राम भजन है। मेरा दुखपूरण जीवन है ।।
गिनता हूं जीवन की घड़िया। लगती हैं आंखों से झड़ियां ।।
कड़वे, खोटे बोल सुनाकर मुझे सताकर और ठुकराकर ।।
चैन नही पाओगी प्यारी। मौसी! सुनलो बात हमारी ।।
मैंने था यह आज विचारा। सुन कर मीठा गीत तुम्हारा ।।
भूल सकूंगा अपने दुःख को। भोग सकूंगा थोड़ सुख को ।।
कोई जग मे नही हमारा। आया भेद समझ मे सारा ।।
चलो हटो अब भागो, जाओ। अब मत खोटी बात सुनाओ ।।
सोचा था हम दोनो मिलकर। साथ रहेंगे अब जीवन-भर ।।
तेरा कोई दोष नही है। पर मुझको अफसोस यही है ।।
तूने मित्र को शत्रु जाना। भले बुरे को न पहिचाना ।।
इस का फल तुम भी पाओगी। हाथ मलोगी पछताओगी ।।
तब बोली वह मक्खी रानी। मकड़ तेरी करुण-कहानी ।।
सुन सुन कर फटती है छाती। दूरी मुझको नही सुहाती ।।
मिटे सभी भय-संशय मेरे। मैं अब आती पास हूं तेरे ।।
मिल करके गायेंगे गाना। कहा सुना सब भूल ही जाना ।।
भिन भिन भिन भिन गाती गाती। देखी मक्खी पास जो आती ।।
मकड़े ने झट उसे दबोचा। पकड़ा, जकड़ा कुछ-कुछ नोचा ।।
नही जरा भी वह शर्माया। मकड़े ने मक्खी को खाया ।।
वे सब चिकनी-चुपड़ी बातें। थी सब उसकी चालें घातें ।।
उसने मक्खी को फुसलाकर। मारा, खाया, पास बुलाकर ।।
चापलूस लोगों से बचकर। दुष्टजनो की संगत तजकर ।।
मित्रो! सत्पथ को अपनाकर। जीना सीखो ज्ञान बढ़ाकर ।।
जो जन होते हैं मतवाले। निर्बुद्धि, या भोले-भाले ।।
उनको खा जाते हैं मकड़े। खाकर हो जाते हैं तगड़े ।।
मकड़ो की भरमार है जगमे। बचकर चलना कठिन है मगमें ।।
जिसे हो जीवन अपना प्यारा। चापलूस से करे किनारा ।।
चाल समझ शत्रु की लेना। नही किसी को धोका देना ।।
धोका नहीं किसी से खाना। यही कवि का है समझाना ।।
हलवे को चट करते भूके। कड़वे को सब थू-थू थूके ।।
बनो न हलवा, बनो न कड़वा। यूं देखो जीवन का जलवा ।।
सब का अब आदर्श यही। आप जियो, सबको जीने दो ।।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् द्वारा

हिन्दी भाषी राज्यों और केन्द्र के बीच हिन्दी पत्र-व्यवहार सम्बन्धी प्रतियोगिता

हिन्दीभाषी राज्यों और केन्द्र के बीच होने वाले हिन्दी पत्र-व्यवहार के आधार पर एक प्रतियोगिता का आयोजन केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, नई दिल्ली के द्वारा किया जा रहा है। प्रतियोगिता के अन्तर्गत हिन्दीभाषी राज्यो के उन सरकारी कर्मचारियों को पुरस्कार दिए जायेंगे, जो केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को अधिकतम पत्र हिन्दी में लिखेंगे। राजपत्रित अधिकारियो और अराजपत्रित कर्मचारियो के लिए अलग-अलग पुरस्कारो की व्यवस्था की गई है। प्रतियोगिता की अवधि दिनाक १५ नवम्बर, १९६९ से १४ जनवरी, १९७० तक रखी गई है। इस प्रतियोगिता मे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरयाणा, पंजाब, गुजरात महाराष्ट्र शासनों के सचिवालय के सभी कर्मचारी और अधिकारी भाग ले सकेंगे।

केन्द्रीय सरकार ने हिन्दी के प्रयोग के सम्बन्ध मे जुलाई, १९६८ में आदेश निकाले थे जिनके आधार पर हिन्दी भाषी राज्यों और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयो के बीच होने वाले पत्र-व्यवहार में हिन्दी का प्रयोग करने की छूट दे दी गई थी। नई व्यवस्था के अनुसार डाकतार, रेलवे आदि कुछ विभागों के लिये हिन्दी भाषी राज्यो को भेजे जाने वाले पत्र मूलरूप से हिन्दी में ही भेजने का निश्चय किया जा चुका है। इस प्रकार सभी हिन्दीभाषी राज्यो के कर्मचारी केन्द्र के साथ हिन्दी में पत्र-व्यवहार करने में पूर्ण स्वतन्त्र हैं। परिषद् को आशा है कि वे इस प्रतियोगिता में अधिक से अधिक सख्या मे भाग लेकर केन्द्र और राज्यों के कार्यालयों के मध्य होने वाले पत्राचार में हिन्दी के प्रयोग की मात्रा बढ़ायेंगे।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् इस प्रतियोगिता के अलावा अन्य कई प्रतियोगितायें भी कई वर्षों से आयोजित करती आ रही है।

—महेन्द्र चतुर्वेदि, प्रतियोगिता मन्त्री,
एफ० आई० ६८, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली।

पशु-वध

[श्री सूर्यकुमार पाण्डेय, ५१ छोटा चाँदगंज, लखनऊ-७]

पशु मूक और अनाथ है, रहता तुम्हारे साथ है।
जो चाहते, तुम कर रहे, सब कुछ तुम्हारे हाथ है ।।१।।
वध हो रहा पशु मर रहे तुम आज यह क्यो कर रहे।
क्यो अवनितल से दुग्ध दधि, साम्राज्य को हो हर रहे ।।२।।
यो हो रहा संहार है, कुछ भी तुम्हे न विचार है।
क्या अब नही तुममें रहा, कुछ जीव के प्रति प्यार है ।।३।।
क्या कुछ मनुजता शेष है या दनुजता मय वेश है।
कुछ तो विचारो, क्या यही, उस वेद का उपदेश है ।।४।।
यह व्यर्थ तेरी देह है, जिसमें नही कुछ स्नेह है।
जा कर न सुख-वर्षण सके वह अधम मन्मथ-मेह है ।।५।।
अज्ञान भी तुमसे हटा, विज्ञान भी तुमसे पटा।
तो बात क्या जो विश्व मे, पशु-हनन एक नहीं घटा ।।६।।
यह सबल का ससार है, या हनन ही आधार है।
क्या दीन जीवित रह सकें, उनको नहीं अधिकार है ।।७।।
यदि है, तुरत वध बन्द हो, सब ठौर मे आनन्द हो।
जीवें सभी शुभकर्म कर, अति पाप-रव की मन्द हो ।।८।।
जो भी जगत् को प्राप्त है, भगवन् सबमें व्याप्त है।
वैसा न कोई दूसरा, वह प्राण जग मे आप्त है ।।९।।
कोई अगर इसान हो, देवे उसे सम्मान हो।
फिर कष्ट क्यों देकर देते उसे, जिसमें भला भगवान् हो ।।१०।।
तुम ज्ञान पूरित लोग हो, ऐसा करो सुख-योग हो।
पशु-वध मिटे, पशु कर्म भी, दुग्धादि का उपभोग हो ।।११।।

(पृष्ठ ५ का शेष)

इदमाम्नायते—सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत । अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथाक्रतुरस्मिल्लोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति स क्रतुं कुर्वीत; 'मनोमयः प्राणशरीरो भारूपः' (छा०३-१४-१,२) इत्यादि । तत्र संशयः ।।

आप इस उपनिषद् वाक्य को संदिग्ध मानते हैं ।

हमारा मत है कि यह उपनिषद् वाक्य संदिग्ध नही है । उपनिषद् का अर्थ करने में स्वामी शकराचार्य की फैलायी भूल से अर्थ संदिग्ध हो गये हैं ।

देखिये, उपनिषद् वाक्य सदिग्ध कैसे हुए है ? उक्त (ब्र० सू०—१-२-१) के अर्थ हैं कि प्रसिद्ध बात के विषय म उपदेश हैं ।

क्या प्रसिद्ध बात है ? श्री स्वामी जी के मत से प्रसिद्ध परमात्मा है । बस भूल यहा से ही आरम्भ होती है । परमात्मा को सिद्ध करने के लिये तो दर्शन शास्त्र लिखा जा रहा है । यदि वह प्रसिद्ध होता तो इस शास्त्र के लिखने की आवश्यकता क्या थी ? साथ ही यह भी निर्विवाद है कि परमात्मा को अस्वीकार करने वाले आदि सृष्टि से आज तक चले आ रहे हैं ।

परमात्मा है । परन्तु यह प्रसिद्ध (स्पष्ट सिद्ध) नही । इसी कारण लिखा जा रहा है ।

प्रसिद्ध बात है कि यह कार्य जगत् है । यह चल रहा है । यह नष्ट होता भी देखा जाता है । यह प्रसिद्ध बात है । आगे (ब्रह्मसूत्र द्वितीय पाद मे) इसी प्रसिद्ध बात के विषय में बताया जा रहा है ।

इस सन्दर्भ में यह लाभप्रद होगा कि महाभारत में दक्ष-युधिष्ठिर संवाद में इस विषय पर लिखा स्मरण करा दिया जाये । दक्ष ने पूछा था कि वार्त्ता (चर्चा) क्या है ? युधिष्ठिर ने कहा था कि चर्चा है इस मोहमय संसार को कढ़ाई में काल सूर्याग्नि द्वारा सब प्राणियों को पका रहा है । अतः प्रसिद्ध बात यह है ।

स्वामी शंकराचार्य समस्या को हो नही समझे । अतः उसकी पूर्ति में भी भूल कर बठे हैं ।

उक्त सूत्र का अर्थ है कि द्वितीय पाद में प्रसिद्ध बात (अर्थात् कार्य जगत् इसके मूल कारण, इसके संचालक और इसके प्रलय) के विषय में कार्य जगत् से अधिक प्रसिद्ध कुछ नही है ।

कार्य जगत् एक घड़े के कुम्हार के समान निमित्त कारण रखता है । घड़े को मिट्टी के समान उपादन कारण रखता है और घड़े के ग्राहक के समान जोवात्मा, जो कार्य जगत् का भोग कर रहा है, रखता है ।

द्वितीय पाद में परमात्मा और जीवात्मा की समानता और विलक्षणता के विषय में लिखा है । इसी बात का एक सूत्र है ।

"गुहां प्रविष्टावात्मानौ हि तद्दर्शनात् ।।"

अर्थ है—गुहा में प्रविष्ट हुए दो आत्मा है । उनके दर्शन से यह निश्चय होता है ।

आगे के सूत्र में दोनों के पृथक् पृथक् दर्शन करने में सहायता करते हैं ।

परन्तु स्वामी शंकराचार्य जी जगत् को मिथ्या मानते हैं । जीव को ही ब्रह्म मानते हैं । यह बात न तो ब्रह्मसूत्रों से सिद्ध होती है और न ही उपनिषद् ग्रन्थों से । वेद में तो स्पष्ट जीवात्मा का परम्परा से पृथक् उल्लेख है ।

श्री स्वामी शंकराचार्य जी उक्त मिथ्या धारणा को लेकर चले हैं और अपनी बात सिद्ध करने के लिये वेदों का तो बहिष्कार कर रहे हैं । उपनिषद् भगवद्गीता और ब्रह्मसूत्रों का अर्थ भ्रष्ट कर रहे है । इस पर भी वर्त्तमान युग के कांग्रेसी नेता भारतवर्ष के इतिहास को भ्रष्ट कर हिन्दु-मुस्लमान ऐक्य सम्पन्न करने का असफल यत्न कर रहे हैं, वैसे ही स्वामी जी ने "जीवो ब्रह्मैव नापरः" का असफल प्रयत्न किया है ।

पृष्ठ ६ का शेष

वेदों के रूप में नियमों का निर्देश कर दिया जिन पर चल से ही प्रत्येक नर-नारी का कल्याण हो सकता है अन्यथा नही । यह बात स्पष्ट है कि यदि किसी देश मे चोरी, मद्यपान, व्यभिचार आदि के विरुद्ध कानून न बने हो तो ऐसा करने वालो को दण्ड देना भी न्याय सङ्गत नही कहा जा सकेगा । इसलिये और नही तो व्यवहार सहिता, नियम ग्रन्थ (Code of Laws) या वेद के शब्दों में ऋत और सत्य का प्रतिपादन करने वाले ज्ञान का मानव सृष्टि के प्रारम्भ मे मङ्गलमय भगवान के द्वारा मनुष्यमात्र के पथप्रदर्शक के तौर पर दिया जाना बड़ा युक्ति-युक्त है । इसीलिये अफलातून और जर्मनी के काण्ट जैसे सुप्रसिद्ध दार्शनिकों ने भी धार्मिक तथा नैतिक विषयों में पथप्रदर्शन के लिये ईश्वरीयज्ञान की आवश्यकता को स्पष्ट शब्दों में अनुभव और प्रकट किया है । परमेश्वर क्योकि सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है अतः उसे वेदों का ज्ञान देने के लिये मानव शरीर धारण करने अथवा कलम पेन्सिल कागज इत्यादि किसी साधन को आवश्यकता नही । सर्वव्यापक सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् होने के कारण अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा इन ऋषियो के पवित्र हृदयो में सर्वान्तर्यामी रूप से प्रेरणा कर दी और उन के द्वारा ऋग्वेद, यजर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का आविर्भाव हुआ यह सर्व शास्त्र सम्मत सिद्धान्त सर्वथा युक्ति-युक्त है ।

कविता

श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर, कुरड़ायों (राज०)

पूज्य ! "आनन्द स्वामी जी का", पढ वक्तव्य कष्ट हुआ ।
दोषी कौन ? यह आयजगत् को 'सत्यमेव' स्पष्ट हुआ ।।१।।
गत-सर्वोच सभा अधिकारी, की निर्वाचन मे हुई गलती ।
प्रतिनिधि ले पंजाब सभा के, शिर पर रखी अगीठी जलती ।।२।।
आर्य सम्मेलन प्रस्तावों की, उड़ गई दृढ़ निश्चय को बुलबुल ।
आय जगत् के सम्मुख आ गये, दोषी सत्य तुला से तुल तुल ।।३।।
स्वामी जी के आदर्शों की हत्या की, मिल जिस प्रकार से ।
झुकती है लज्जा से गर्दन, खिलवत्तियों के कार्य भार से ।।४।।
धर्म्म-मर्यादा राज नियम से, कार्य सर्व अवैध हुआ है ।
देख 'स्वय' सच्चे "आर्य"—को पढ़ सुन गहरा खेद हुवा है ।।५।।
पूज्यवरो के अपमानो को, आर्य समाज न सहन करेगा ।
ऋषि निर्धारित नियम बगीचा, भूल न कोई दहन करेगा ।।६।।
दुःशाशन दुर्योधन दुर्जन, सदभावों से बाज न आये ।
करिये ! अवलोकन महाभाग्त दुराग्रही को लाज न आये ।।७।।
आर्यसमाज को सुघवेदी पर, कैसी धीगा-मस्ती हो रही ।
निकले कौन ? होय गुरु गाविन्द आर्यजनता वाट जो रही ।।८।।
सत्य समालोचक कवि लेखक, किस प्रकार बैठे चुप साधो ।
कहा सरल शब्दा मे ऋषि ने, अधिक सहन करता अपराधो ।।९।।
ईश्वर के सद् अमृत पुत्रो, आया अवसर न्याय दिखा दो ।
होली के उस हुड़ दगो को, सबक 'अम्ब' अविलम्ब सिखा दो ।।१०।।

मुझे रहे तुम्हारा ध्यान

प्रो० ओम् कुमार एम० ए० दयानन्द कालेज, शोलापुर

मुझे रहे तुम्हारा ध्यान प्रभुजो रहे तुम्हारा ध्यान ।
विषय वासना मे न खोऊ, लाभ मोह के वश न होऊं ।
कभी न बीज बदी के बोऊ, अहकार का भार न ढोऊ ।
करूं लोक कल्याण प्रभु जी करू लोक कल्याण ।।
वेद मार्ग पर चलू चलाऊ, सत्कर्मो से नेह लगाऊ ।
वैर भाव मन में न लाऊ, गीत मधुर भक्ति के गाऊ ।
यह वर दो कृपा निधान मुझे यह वर दो कृपा निधान ।।
यम नियम जीवन में धारूं, दुर्गुण सभी नाश कर डारूं ।
सत्सग से निज चलन सुधारूं, छवि तुम्हारी सदा निहारूं ।
रखू लक्ष्य महान्, प्रभु जी रखू लक्ष्य महान् ।।
बस इतनी सी कृपा कर दो, दिव्य गुणों से जीवन भर दो ।
व्यथा घोर मम मन की हर दो, अभयदान हे अभयंकर दो ।
करूं तेरा गुणगान प्रभु जी करूं तेरा गुणगान ।।

गतांक से आगे—

Vedas and all holy Scriptures forbid Idolatry.

(Shri Girdharilal Arya, Chauri Chaura)

2. Millions of coins being wasted on temples, it leads to penury and idelness. 3 Men and women throng promiscuously in temples giving rise to fornication, quarrels and diseases. 4. By believing that idol-worship is the chief means of obtaining the four boons-righteousness, prosperity, happiness and emancipation (Dharm, Artha, Kama & moksha) man generally become inactive and wastes his life. 5. Idols being of different forms, differet names and different natures, there arise differences of cults and creeds among the worihippers which brings the country to ultimate destruction. 6. They depend upon the idols for the defeat of their enemies and the victory of their own cause. Thus are they vanquishtd and the loss of their country and their liberty puts all the resourees of their prosperity in the hands of the enemies. They are deprived of all happiness and live a life of slavery like the pony of the inn-keeper or the ass of the potter. 7.When anyone says to a man, "I shall put a stone on your seat or name," the man resents it and is ready to abuse or beat him, similarly these foolish persons put stone idols on their hearts which are the seat of God and on God's name Why should not God then punish such fool? 8. They wonder from temple to temple and place to place in an illusory expectation to find God and suffer afflictions by losing their religion, their worldly prosperity, their love of benevolence besides falling victim to the mischiefs of thieves and cheats. 9. They give monny to wicked priests who spend it on prostitution, adultery, drinking, flesh-eating and mutual quarrels. It amounts to striking at the root of the donor's happiness and causing him pain. 10 They honour the stone idols and thereby dishonour their mother, father etc. Thus they commit the sin of ingratitude. 11. When any body breaks the idols or steals them away, they bitterly weep. 12. Priests lead sinful lives with other women and priestesses with other men and thus they are deprived of the happiness of conjugal love 13. The relation between the master and the servant get strained, quarrels increase and they are ruined in the end 14. Those who constantly contemplate upon inert substances, themselves become inert, as what yon think about affects your souls through the iternal organs and the inertness of the objects is bound to percolate to the self. 15. God has created odiferous flowers etc. in order to offect the purification of air, water etc. If they were allowed to pass, on the trees, their natural like, they would have emitted a very great amount of odour in the atmosphere and would have purified air and water to a great extent. But these priests nip them in the middle and deprive the world of that immense advantage which could have accrued in natural course. Those flowers etc. fall into water, rot and give rise to steach. Does God create these flowers and other odiferous things to offered to be the blocks of stone ? 16. The flowers, Sandal-paste, rice offerings presented to the stone idols mix water and dust in the drain or in the reservoir and produce small as horribly offensive as of human faces and render the whole atmosphere unhealthy. Thousands of germs are produced therein; they die and rot there and as much harm. These and many other defects there are in the practice of idol-worship and it is the duty of all good men to abondon it. Those who performed idol-worship in the past, those who are doing so in the present and those who will ever do so in future, can never keep themselves immuna from these evils.

Shri Ganga Prasad Upadhaya M.A. Comments that Swami Dayanand has depicted those evils which are inseparable concommittants of idolatry and can well be illustrated from actual facts and figures gathered from the temples of idols all over the world. For instance, go to the temples of Puri, Bhuvaneshwar, Banaras or any place, great or small, examine the condition of the worshippers, the idol, the main altar, the room where the idol is set up, the floor of the room, the drains, the tank and the whole neighbourhood and then you will be able to realize the justification of Swami Dayanand's criticism Swami-Dayanand's arguments are very comprahensive, not only metaphysical and actual; logical and psychological both." It is well known to all pandits that Pujari means literally worship-enemy. Is it not funny ? In this context, here is an eye-opener lesson to the devotees and votaries of mangod or god-man. Hardly a year ago, the humble writer of this article happened to come across an interesting and thought- provoking news of voluptuous and lecherous affairs of one humbug Moni Bawa (speechless, recticent or mum-keeping Mahatma, so to say) of Gangotri, a holy and hilly place of pligrimage in Uttara Khand, who has had an illicit cohabitation with a young virgin village girl of that place. The said depraved Bawa defiled and outraged her modesty and clandestinely enjoyed sexual-intercourse many a time with her, with the result she soon became pregnant, there-upon the people of her village, when knew about this stirred up and compelled the innocent girl to disclose all the facts. And she at last, revealed the evil deeds of the said beelzebub Bawa to them. After all, he had not only confessed his sinful acts, in toto, but also bestowed his one lakh of rupees worth building to her in repentence thus paid the costly price of his illict-lust. It is amusing, but not amazing to note here that the socalled fake Bawa has owned to lovely and luxurious magnificent building there which wanting of three "W" Hence, he has also decoyed, coaxed and snared the eldr unmarried sister of that girl and is living and enjoying honey-moon with her in his second building. The first girl in due course of time, gave birth of a child.

Therefore we should abandon the personality cult and idolworship and cheap way of devotion. Atheists and idolworshippers both are on the wrong paih. Let us return to the Vedas lest we should astray aimless hither and thither. God in the beginning of the creation of the world reveal the Vedas in the hearts of the Rishi, namely Agni, Vayu, Aditya and Angira. And He grants His knowledge of the Vedas to the learned, to be imported alika to all without distinction of caste, colour or creed His knowledge is ment for all mankind and not for the chosen few. A wise person, with verses of God's poetry, the Vedas, the instructor of mankind, having attained salvation, contemplation upon God, the purifier of the fallen crosses the bondage of Karma. So you must know God first through the regular study of the four Vedas and realise Him inner most recesses of your hearts by the Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahar, Dharna, Dhyana and Samadhi the eight phases of moksha-ultimate beatitude. Recite the name of God-Om Because this is the chief, first; foremost and most comprehensive name of God for the mental recitation and meditation in a quiet, calm, clean solitude and seclude place whether in home or in forest or in mountain cave or at the bank of a river.

Ten attributes of religion-Dharma are: Fortitude, Forgiveness, self-command, non-theft, Purity, control over senses, calmness. Learning, Truth and Freedom from anger. And there are also ten limbs of Yama and Niyama-Non-Voilence, Truth, Freedom from theft, celibacy, Rennuciation, Purity, Contentment, Austerity, Study and Resignation to the will of Almighty God. These are the only righteous way for the attainment to God and not otherwise. It is ridiculous, ludicrous and wonderful that man manufactures, sells and purchase, the multifarious idols of God, the creator of the whole world. For, God never taketh birth nor get incarnation of any sort. Because he is Omnipresent, Omnipatent, Omniscient, Omnipercipient, Immortal, Eternal, Everpresent, Everlasting and Formless, and All-prevading, Lustrous, Bodiless, Flawless, Sinewless, Pure, Unpierced by evil. Knower of the hearts of all. Censurer of the sinful, and Self-existent. He truly reveals through the Vedas all things for His subjects from His immemorial attributes, free from birth and death. They who worship the Matter are spiritually degraded, and are put to suffering. Those who worship and enjoy the material object of the world are more degraded. Therefore God alone is worthy of worship & adoration.

●

काशी शास्त्रार्थ वेदी (आनन्द बाग)

लेखक-श्री बलनारायण उपाध्याय, बी० ए०

लगभग दो मास अब शेष रह गये हैं जब काशी के उस ऐतिहासिक शास्त्रार्थ की शताब्दी मनायी जायगी जो अपने ढग का अपूर्व था जिसमे संसार शिरोमणि सस्कृत विद्या के प्रकाण्ड पण्डितो ने प्रतिमा पूजन पर विचार किया था, जिसमें एक ओर थे काशी के सर्वश्रेष्ठ पण्डित श्री बाल शास्त्री तथा स्वामी विशुद्धानन्द आदि और एक ओर थे अकेले महर्षि दयानन्द।

यह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ अमेठी राज्य के आनन्द बाग में कार्तिक शु० १२ स० १९२६ वि० (१६ नवम्बर १८६९) को हुआ था। उसी आनन्द बाग मे महर्षि दयानन्द लगभग एक मास से ठहरे हुए थे। समस्त काशी मे कोलाहल मच गया था कि वेद विद्या का एक धुरन्धर विद्वान् आया हुआ है जो कहता है कि प्रतिमा पूजन तथा मृतक श्राद्ध आदि का विधान वेदों मे नही है। उक्त सन्यासी इन्हें अवैदिक कृत्य कहता है तथा ललकार रहा है कि जिसे इस विषय मे वाद विवाद करना हो, सामने आवे।

काशी नरेश महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह ने पण्डित गण को बुलवा कर शास्त्रार्थ करने के लिये कहा तब विद्वान् मण्डली ने १५ दिन का समय तैयार करने के लिये मागा और तब शास्त्रार्थ का प्रबन्ध किया गया।

उक्त दिग्विजय प्रदायक शास्त्रार्थ के स्मारक के रूप मे आनन्द बाग में एक शिला पट्ट लगवाने का प्रस्ताव मौलवी आलिम फाजिल प्रो० महेशप्रसाद ने वर्तमान अमेठी नरेश राजा रणजयसिह जी से किया और उन्होंने अपने पूज्य पिता स्व० राजर्षि राजा भगवानबक्शसिंह जू देव से अनुमति लेकर आनन्द बाग के उस पवित्र स्थल पर जहाँ महर्षि दयानन्द निवास कर रहे थे और शास्त्रार्थ हुआ था, अमेठी राज्य के काशीस्थ सम्पत्ति के प्रबन्धक श्री गौरीशंकर तिवारी को आदेश देकर १९५१ ई० में काशी शास्त्रार्थ वेदी का निर्माण करवा दिया। अब सोचा यह जाने लगा कि शास्त्रार्थ वेदी पर शिला पट्ट लगवाकर किसी महापुरुष से उसका अनावरण कराया जाय।

प्रो० महेशप्रसाद जी का विचार था और श्री पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु भी उनसे सहमत थे कि शिला पट्ट पर किसी की हार जीत न लिखी जाय जिससे कि आर्य समाजी और सनातन धर्मी सभी उसका समान भाव से आदर करें।

दो वर्ष हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से अनुमति लेकर आर्य जगत् के मूर्धन्य सन्यासी तपोमूर्ति महात्मा आनन्द स्वामी के कर कमलो द्वारा शिला पट्ट का अनावरण सम्पन्न हुआ। श्रीमान् राजा रणजयसिंह जी ने अपने स्वागत भाषण मे कहा था कि इसी आनन्द बाग मे महर्षि दयानन्द और स्वामी विशुद्धानन्द प्रभृति का शास्त्रार्थ हुआ था। अध्यक्षता दयानन्द वैदिक महा विद्यालय के प्राचार्य श्री कृष्णानन्द कर रहे हैं, सयोजक श्री आनन्द प्रकाश हैं। सभी आनन्द से सम्पन्न हैं, मेरे ही नाम में आनन्द नहीं है परन्तु मैं अत्यन्त आनन्दित हू। राजा साहिब ने यह भी कहा कि शिला पट्ट पर किसी की हार जीत नही लिखी गयी है, वह तो वैदिक प्रेस अजमेर में मुद्रित पुस्तक काशी शास्त्रार्थ से स्पष्ट ही हो जाती है। आपने यह भी प्रस्ताव किया कि स० २०२६ वि० (१९६९ ई०) में काशी शास्त्रार्थ शताब्दी विशेष रूप से समारोह पूर्वक मनायी जानी चाहिए और हर्ष की बात है कि उसका आयोजन किया जा रहा है। आर्योपप्रतिनिधि सभा वाराणसी के प्रधान श्री खेमचन्द्र जी उसकी सफलता के लिये अथक परिश्रम कर रहे हैं और आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने भी उसे अखिल भारतीय स्तर पर मनाने का निर्णय किया है।

शिला पट्ट पर निम्नलिखित श्लोक अकित हैं और भाषा मे प्राय सभी विद्वान् महानुभावों के नाम भी अकित हैं।

शास्त्र-इन्द्वांक-चन्द्रेऽब्दे वैक्रमे कार्तिके सिते।
मौने शास्त्रार्थिनो दिव्ये मूर्तिपूजा विनिर्णये ॥१॥
अमेठ्यानन्द-बागेस्मिन् काशिराजसभापतौ।
जर्मीघे विपुलेर्वादः प्रवृत्तः श्रुतितत्परः ॥२॥
विशुद्धानन्दसुप्रख्यैर्बालशास्त्र्यादिभिर्बुधैः।
शास्त्रार्थमकरोत्साकं दयानन्दो यतिर्महान् ॥३॥
भगवान्गबक्श-भूपाल-वचनात्सत्सुतः सुधीः।
अलेखयच्छिलालेखं श्रीमान् राजा रणंजयः ॥४॥

राजा रणजयसिंह के पितामह महाराजा माधवसिंह बहादुर उस समय अमेठी राज्य के अधीश्वर थे जब महर्षि दयानन्द काशी पधारे थे, आनन्द बाग़ में निवास किया था और वह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ। राजा माधवसिंह बहादुर महर्षि दयानन्द के सम-वयस्क थे। स्वय विद्वान् थे। अनेक ग्रन्थो के रचयिता थे और कविता मे अपना नाम क्षितिपाल रखते थे सनातन धर्मी थे परन्तु साधु महात्माओ का बडा सम्मान करते थे। तत्कालीन काशी नरेश महाराजा ईश्वरीनारायणसिंह जी से उनकी घनिष्ठ मित्रता थी।

काशी मे यह बाग दुर्गाकुण्ड के समीप है। बडी रमणीक वाटिका है। अमेठी नरेश स्वर्गीय राजर्षि महाराजा भगवान् बक्शसिंह जूदेव के गुरु परम योगी स्वामी भास्करानन्द जी इस आनन्द बाग मे रहा करते थे जिनके दर्शनो के लिये यूरोप तथा अमेरिका आदि से बडे-बडे लोग आया करते थे। आनन्द बाग मे स्वामी भास्करानन्द जी की समाधी है। सगमरमर का यह धवल मन्दिर काशी का ताज कहा जाता है। नगर महापालिका (वाराणसी) से पूर्व निगम की योजना थी कि इसका विस्तार किया जाय और अमेठी राज्य के दो और बाग (नीची बाग तथा गुलाब बाग को मिला कर बहुत बडा उद्यान बना दिया जाय। निगम के प्रशासक ने इसके लिये अमेठी नरेश को पत्र लिख कर इन्हे मोल लेना चाहा परन्तु श्री रणजयसिंह जी ने तय किया कि काशी शास्त्रार्थ वेदी को कोई हानि न पहुचे और इन तीनो बागो को मिला कर जो बडा उद्यान बने उसका नाम राजा भगवानबक्शसिंह अमेठी पार्क रहे तब बिना मूल्य लिये ये सब बाग निगम को दे दिये जायगे महाराज अमेठी ने दान पत्र लिख दिया। काशी के इस ताज के समीप ही अति दर्शनीय सुरेता मानस मन्दिर है। वह स्थान भी पहले अमेठी राज्य का दुर्गा बाग था। शताब्दी पर पधारने पर ऐसे अनेक ऐतिहासिक तथा महत्वपूर्ण स्थान देखने को मिलेगे।

राजा रणजयसिंह का विचार था कि आनन्द बाग की बारहदरी मे एक वैदिक पुस्तकालय स्थापित कर दिया जाय। यदि प्रयत्न किया जायगा तो नगर महापालिका सम्भवत इस सुन्दर योजना को स्वीकार कर लेगी। इस विशाल पार्क के दानदाता के उत्तराधिकारी राजा रणजयसिंह को तो प्रसन्नता ही होगी।

आशा है कि आर्य जन इस पर ध्यान देगे और बिना मूल्य लिये इतनी सम्पत्ति के दान दाता के विचारो को कार्यान्वित करके आर्य जगत् की महती सेवा करेंगे। काशी नगरी मे वैदिक ध्वज फहरायेगा, विदेशो तक मे इसकी कीर्ति फैलेगी और वैदिक साहित्य के प्रचार के लिए यह एक केन्द्र बन जायगा॥

"क्या राहें उपदेश किया करतीं ?"

श्री विनोद साही, नरवाना (जीन्द)

इस कंटक पर या फूल खिले, बने ऋजु राह जटिल चाहे,
मानव, स्वत प्रमाण मिले, करती उपदेश क्या राहे ?
बाह्य द्युति किसलेय कलेवर, क्या झझा सम सहसा आए ?
नहीं अवयव दौर्बल्य यहा, मद ज्ञान और सयम पाए।
घन घहर यामिनि ज्वाला सम, टूटे द्युति शेषाश्रु आहें,
स्वर्ण नही हर द्युति होती बने ऋजु राह जटिल चाहें।
नहीं आहें, साहस, पारस, साहस, दुर्गम सकल्प गठन,
जटिल हो चाहे, कुटिल नही, है कुटिल राह का अवगुठन।
राष्ट्र धर्म की सेवा राह, मानव-मानव सेवक चाहें,
दृढ प्रतिज्ञ बन ज्ञानवान्, करतीं उपदेश न राहें।

बाल-जगत्

भोली मक्खी और मक्कार मकड़ा

(श्री प० जगत्कुमार शास्त्री 'साधु सोमतीर्थ', देहली)

कभी पढी थी एक कहानी । हमको है वह याद जबानी ॥
आओ बच्चो ! तुम्हे सुनायें । मौज मनायें, शिक्षा पायें ॥
एक बहुत मक्कार था मकडा । मोटा ताजा, चोखा तकडा ॥
पडी जो मक्खी उसे दिखाई । तब मकडे ने बात चलाई ॥
आओ, प्यारी मौसी ! आओ । हसी-खुशी की बात सुनाओ ॥
आज सुनूगा एक कहानी । राजी तो है मेरी नानी ॥
पाकर आज तुम्हारे दर्शन । सफल हुआ यह मेरा जीवन ॥
नही हर्ष का मेरे ठिकाना । शुभ हो मौसी जी का आना ॥
बहुत दिनो से सेज बिछाकर । तेरे पथ पर आख लगाकर ॥
इन्तजार मे हूँ मैं तेरी । हे कल्याणी ! मौसी मेरी ॥
आने मे क्यो देर लगाई ? बहुत दिनों मे शकल दिखाई !
आओ, आज गले मिल जायें । खेलें, कूदे, नाचें, गायें ॥
मक्खी बोली—ओ शैतान ! लुच्चे ! गुण्डे ! ! बे-ईमान ! ! !
तू प्रतिदिन मक्खियो को खाता । कुछ नही मेरा-तेरा नाता ॥
जन्म-जन्म के दुश्मन मेरे । पास नही आऊगी तेरे ॥
सेज कहाँ ? यह जाल है तेरा । मेल नहीं कुछ तेरा-मेरा ॥
मीठी, लम्बी बात बनाकर । बहका-फुसलाकर, बहकाकर ॥
मुझे चाहता है तू खाना । असली मतलब मैंने जाना ॥
जो बैरी की चाल न जानें । मित्र-अमित्र नही पहिचानें ॥
शत्रु का विश्वास कर जो । वह पाता है महानाश को ॥
अपना तो है काम भलाई । कान खोल कर सुनले भाई !
कोई काम हो तो बतला दे । दूर-दूर से ही बतला दे ॥
मकडा बोला—मक्खी रानी । माना तुम हो खूब सयानी ॥
तेरी बात ज्ञान-भरी हैं । सच्ची, सीधी, खरी-खरी हैं ॥
लेकिन मेरी करुण-कहानी । शायद तूनें है नहीं जानी ॥
बीबी-बच्चे मेरे प्यारे । जो थे, वे सब स्वर्ग सिधारे ॥
जग से नाता तोड चुका हू । मक्खिया खाना छोड चुका हू ॥
कुछ रोना, कुछ राम भजन है । मेरा दुखपूरण जीवन है ॥
गिनता हू जीवन की घडिया । लगती हैं आँखो से झडियाँ ॥
कडवे, खोटे बोल सुनाकर मुझे सताकर और ठुकराकर ॥
चैन नही पाओगी प्यारी । मौसी ! सुनलो बात हमारी ॥
मैंने था यह आज विचारा । सुन कर मीठा गीत तुम्हारा ॥
भूल सकूँगा अपने दु ख को । भोग सकूगा थोड सुख को ॥
कोई जग मे नही हमारा । आया भेद समझ मे सारा ॥
चलो हटो अब भागो, जाओ । अब मत खोटी बात सुनाओ ॥
सोचा था हम दोनो मिलकर । साथ रहेगे अब जीवन-भर ॥
तेरा कोई दोष नही है । पर मुझको अफसोस यही है ॥
तूने मित्र को शत्रु जाना । भले बुरे को न पहिचाना ॥
इस का फल तुम भी पाओगी । हाथ मलोगी पछताओगी ॥
तब बोली वह मक्खी रानी । मकड तेरी करुण-कहानी ॥
सुन-सुन कर फटती है छाती । दूरी मुझको नही सुहाती ॥
मिटे सभी भय-सशय मेरे । मैं अब आती पास हू तेरे ॥
मिल करके गायेंगे गाना । कहा-सुना सब भूल ही जाना ॥
भिन भिन, भिन भिन, गाती गाती । देखी मक्खी पास जो आती ॥
मकडे ने झट उसे दबोचा । पकडा, जकडा कुछ-कुछ नोचा ॥
नही जरा भी वह शर्माया । मकडे ने मक्खी को खाया ॥
वे सब चिकनी-चुपडी बातें । थी सब उसकी चालें घातें ॥
उसने मक्खी को फुसलाकर । मारा, खाया, पास बुलाकर ॥
चापलूस लोगो से बचकर । दुष्टजनो की सगत तजकर ॥
मित्रो ! सत्पथ को अपनाकर । जीना सीखो ज्ञान बढ़ाकर ॥
जो जन होते हैं मतवाले । निर्बुद्धि, या भोले-भाले ॥
उनको खा जाते हैं मकडे । खाकर हो जाते हैं तकडे ॥
मकडो की भरमार है जगमे । बचकर चलना कठिन है मगमें ॥
जिसे हो जीवन अपना प्यारा । चापलूस से करे किनारा ॥
चाल समझ शत्रु की लेना । नही किसी को धोखा देना ॥
धोखा नही किसी से खाना । यही कवि का है समझाना ॥
हलवे को चट करते भूके । कडवे को जग थू-थू थूके ॥
बनो न हलवा, बनो न कडवा । यू देखो जीवन का जलवा ॥
सब का अब आदर्श यही । आप जियो, सबको जीने दो ॥

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् द्वारा

हिन्दी भाषी राज्यों और केन्द्र के बीच हिन्दी पत्र-व्यवहार सम्बन्धी प्रतियोगिता

हिन्दीभाषी राज्यो और केन्द्र के बीच होने वाले हिन्दी पत्र-व्यवहार के आधार पर एक प्रतियोगिता का आयोजन केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, नई दिल्ली के द्वारा किया जा रहा है। प्रतियोगिता के अधीन हिन्दीभाषी राज्यो के उन सरकारी कर्मचारियो को पुरस्कार दिए जायेंगे, जो केन्द्रीय सरकार के कार्यालयो को अधिकतम पत्र हिन्दी मे लिखेंगे। राजपत्रित अधिकारियो और अराजपत्रित कर्मचारियो के लिए अलग-अलग पुरस्कारों की व्यवस्था की गई है। प्रतियोगिता की अवधि दिनांक १५ नवम्बर, १९६९ से १४ जनवरी, १९७० तक रखी गई है। इस प्रतियोगिता में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरयाणा, पजाब, गुजरात, महाराष्ट्र शासनो के सचिवालय के सभी कर्मचारी और अधिकारी भाग ले सकेंगे।

केन्द्रीय सरकार ने हिन्दी के प्रयोग के सम्बन्ध में जुलाई, १९६८ में आदेश निकाले थे जिनके आधार पर हिन्दी भाषी राज्यों और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयो के बीच होने वाले पत्र-व्यवहार मे हिन्दी का प्रयोग करने की छूट दे दी गई थी। नई व्यवस्था के अनुसार डाकतार, रेलवे आदि कुछ विभागो के लिये हिन्दी भाषी राज्यों को भेजे जाने वाले पत्र मूलरूप से हिन्दी में ही भेजने का निर्णय किया जा चुका है। इस प्रकार सभी हिन्दीभाषी राज्यों के कर्मचारी केन्द्र के साथ हिन्दी मे पत्र-व्यवहार करने में पूर्ण स्वतन्त्र हैं। परिषद् को आशा है कि वे इस प्रतियोगिता मे अधिक से अधिक सख्या में भाग लेकर केन्द्र और राज्यों के कार्यालयों के मध्य होने वाले पत्राचार में हिन्दी के प्रयोग की मात्रा बढ़ायेंगे।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् इस प्रतियोगिता के अलावा अन्य कई प्रतियोगितायें भी कई वर्षों से आयोजित करती आ रही है।

—महेन्द्र चतुर्वेद, प्रतियोगिता मन्त्री,
एस० बाई० ६८, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली।

पशु-वध

[श्री सूर्यकुमार पाण्डेय, ५१ छोटा चौकसंज, लखनऊ-७]

पशु मूक और अनाथ है, रहता तुम्हारे साथ है।
जो चाहते, तुम कर रहे, सब कुछ तुम्हारे हाथ है ॥१॥
वध हो रहा पशु मर रहे, तुम आज यह क्यो कर रहे।
क्यो अवनितल से दुग्ध-दधि, साम्राज्य को हो हर रहे ॥२॥
यो हो रहा सहार है, कुछ भी तुम्हे न विचार है।
क्या अब नही तुममे रहा, कुछ जीव के प्रति प्यार है ॥३॥
क्या कुछ मनुजता शेष है, या दनुजता मय वेश है।
कुछ तो विचारो, क्या यही, उस वेद का उपदेश है ॥४॥
यह व्यर्थ तेरी देह है, जिसमें नहीं कुछ स्नेह है।
जा कर न सुख-वर्षण सके वह अधम मानव-मेह है ॥५॥
अज्ञान भी तुमसे हटा, विज्ञान भी तुमसे पटा।
तो बात क्या जो विश्व में, पशु-हनन एक नही घटा ॥६॥
यह सबल का ससार है, या हनन ही आधार है।
क्या दीन जीवित रह सकें, उनको नहीं अधिकार है ॥७॥
यदि है, तुरत वध बन्द हो, सब ठौर मे आनन्द हो।
जीवें सभी शुभकर्म कर, गति पाप-रथ की मन्द हो ॥८॥
जो भी जगत् को प्राप्त है, भगवन् सबमें व्याप्त है।
वैसा न कोई दूसरा, वह मात्र जग में आप्त है ॥९॥
कोई अगर इसान हो, वैसे उसे सम्मान हो।
फिर कष्ट क्यो देकर देते उसे, जिसमें भला भगवान् हो ॥१०॥
तुम ज्ञान पूरित लोग हो, ऐसा करो सुख-योग हो।
पशु-वध मिटे, पशु कर्म भी, दुग्धादि का उपभोग हो ॥११॥

विश्ववारा-संस्कृति रक्षा-निधिः

इस सस्कृति की समुचित रक्षा हो और भारत फिर अपनी प्राचीन उन्नति की दशा को प्राप्त हो इसलिये निधिकी स्थापना की गई। इसके लक्ष्य निम्न हैं—

१— विश्ववारा सस्कृति के माध्यम से सस्कृत भाषा का प्रचार। व्यक्ति, परिवार तथा समाज में सस्कृत के प्रचार का प्रयत्न। २—वैदिक साहित्य का प्रचार, वेदमन्त्रो की व्याख्या, वैदिक व्याख्यान प्रकाशन, उनके आधार पर वेदानुकूल सस्कृत साहित्य की रचना वैदिक साहित्य के ग्रथो को अन्य भारतीय भाषाओ मे अनुवाद कर या करवा कर प्रकाशित करना। ३—प्रथम राष्ट्रभाषा हिन्दी मे उपर्युक्त साहित्य की रचना व उनका प्रकाशन। पश्चात् सस्कृत को राष्ट्रभाषा बनानेका प्रयास। ४—प्रान्तीयभाषाओ मे उपर्युक्त साहित्य की रचना। ५—उपर्युक्त साहित्यका मुद्रण व प्रचार। ६—मासिक पत्रका प्रकाशन, सस्कृत तथा अन्य भाषाओ मे। आर्थिक सहायता।

१—दानदाताओ और रक्षकोसे दान लेना। २—पुस्तकादिको विक्रीसे प्राप्त लाभके द्वारा निधिकी वृद्धि। ३—सदस्यता जो इस निधिमे वार्षिक १२) रु देंगे, वे इस निधि के सदस्य माने जाएगे।

दानदाताओ एव सदस्यो को निधिसमिति द्वारा प्रकाशित साहित्य न्यूनतम मूल्य मे दिए जायेंगे।

अत दानदाताओ से हार्दिक प्रार्थना है कि वे यथाशक्ति दान देकर तथा इस समिति के सदस्य बनकर हमारी योजनाको सफल बनाने की कृपा कर।

इस समितिका मुख्य कार्यालय 'गोरी बिदनूर' (मैसूर राज्य) मे होगा, अत कृपया दानदाता एव सदस्य बननेके अभिलाषी सज्जन अपना धन अध्यक्ष विश्ववारा सस्कृति रक्षक-निधि समिति, 'वेदोद्यान' गोरीबिदनूर (Gauribidnur) (मैसूर) के पत्ते पर भेजें, एव उस पर हस्ताक्षर करके अपने दानके साथ भेजनेकी कृपा करें। सदस्यता के लिये कार्यालय से पत्र व्यवहार करना चाहिये।

१ श्री मुब्बी वीरराघवाचार्य, एम ए। निवृत्त शिक्षाधिकारी, बंगलूर (उपाध्यक्ष) २ डा विश्वामित्र वैश्वामित्र दयानन्द, अध्यक्ष गोरीबिदनूर, मैसूर राज्य। ३ श्री प सत्यपालशर्मा, वेदशिरोमणी, सा रत्न, एम. ए (मंत्री)

आर्यसमाज शक्तिनगर दिल्ली में नेत्र चिकित्सा शिविर

दयानद धर्मार्थ औषधालय (आर्य समाज शक्तिनगर) के तत्वावधान मे डा० मथुरादास (मोगा वाले) आखो का मुफ्त इलाज तथा औपरेशन २८ ९ ६९ को अग्रवाल भवन २११५ शक्तिनगर मे करेंगे-ठहरने और भोजन का प्रबन्ध भी मुफ्त होगा। —धृतराम खोसला

वेदप्रचार मण्डल नजफगढ रोड देहली का चुनाव

प्रधान म० सदाराम आनन्द, मन्त्री प० लखपति शास्त्री

—सन्तराम अजमानी, मोतीनगर

आर्यसमाज श्री तलैया गंजीपुरा (जबलपुर)

नगर का यह आर्यसमाज सब से पुराना है। इस के तत्त्वावधान मे आर्य कार्यकर्त्ता शिक्षण शिविर, गोरक्षा विधवा अनाथ तथा अछूतोद्धार, योगाभ्यास शारीरिक व्यायाम, सस्वर वेद पाठ का सचालन तथा नवयुको मे धर्म भाव प्रोत्साहन आदि शुभ कार्य समय समय पर होते रहे हैं।

—रामलालसाहू आर्य मन्त्री

आर्यसमाज शक्तिनगर का १२वां वार्षिकोत्सव

वेदप्रचार सप्ताह द्वारा धूम धाम से मनाया गया। कृष्ण जन्माष्टमी के दिन और ७ सितम्बर को विशेष कार्य क्रम रहा ऋग्वेदीय यज्ञ सम्पन्न हुआ। श्री ब्रह्मानन्द जी सरस्वती को राऊरकेला के वन वासियो ने प्रचाराथ ५३४-०० रु० का ड्राफ्ट भेंट किया गया। जिससे शुद्धि का कार्य धीमा न पड। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज देहरादून

वेदप्रचार सप्ताह धूम धाम से मनाया गया तथा श्री कृष्ण जीवन के महत्त्व पर ओजस्वी भाषण भी हुये। —विद्याभास्कर शास्त्री उप मन्त्री

आर्यसमाज कंथल का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री चौधरी सोमप्रकाश जी वकील, मन्त्री—श्री मदनगोपाल वर्मा सर्राफ, कोषाध्यक्ष—श्री हरीराम जी बजाज, पुस्तकाध्यक्ष—श्री ओम प्रकाश जी मदान —मन्त्री मदनगोपाल वर्मा

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज का ८६ वां निर्वाणोत्सव

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य के तत्त्वावधान मे दिल्ली राज्य की समस्त आर्य समाजो तथा आर्य सस्थाओ की ओर से श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज का ८६ वा निर्वाणोत्सव रविवार ९ नवम्बर को प्रात ८ से १२ बजे तक रामलीला मैदान मे मनाया जायेगा। इस उत्सव को सफल बनाने के लिये आर्यकेन्द्रीय सभा ने पूरे जोर शोर से इसकी तैयारी आरम्भ कर दी है ओम्प्रकाश—सभा मन्त्री

आर्यसमाज मुगलसराय

वेद प्रचार सप्ताह बड धूम-धाम के साथ मनाया गया। अन्तिम दिन श्री कृष्ण जन्मोत्सव मनाया गया। अन्त मे प्रसाद वितरण हुआ।

—शिव प्रसाद मन्त्री

आर्य समाजों को आवश्यक सूचना

आर्यमर्यादा के वेदाविर्भाव विशेषाक की थोडी प्रतिया शेष रह गई हैं। आर्यसमाज के साहित्य के इतिहास मे यह विशेषाक अपने ढग का निराला तथा स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त (वेदईश्वरीय ज्ञान है और वह चारो ऋषियो द्वारा मनुष्य को मिला है) के प्रचार का साधन है। जिन आर्यसमाजो ने अभी तक इस विशेषाक को नही मगवाया है वे शीघ्र मगवाने का आदेश भेजने की कृपा कर। इस का मूल्य निम्न प्रकार है—

एक प्रति का मूल्य ०० ७५ पैसे १० प्रतियो का मूल्य ७) ००

२५ प्रतियो का मूल्य १५) ०० ५० ,, ,, २५) ००

व्यवस्थापक आर्यमर्यादा १५ हनुमानरोड नई दिल्ली

शोक समाचार

श्री स्वा० ज्ञानेश्वरानन्द जी महाराज दि० ६ ९ ६९ को स्वर्ग सिधारे। स्वामी जी महाराज ६० वर्ष से आर्यसमाज देवलाली का कार्य सपादन कर रहे थे। आप ने अपना जीवन वेद प्रचार के लिये दक्षिण मे दे रखा था। ७० वर्ष की आयु तक वेदप्रचार करते रहे, और आर्यसमाज के भी आन्दोलनो मे अग्रणी रहे अपनी पूर्ण आयु वेदप्रचार मे व्यतीत की।

—मन्त्री आर्यसमाज देवलाली

शोक समाचार

आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान, वक्ता, प्रचारक, सामाजिक कार्यकर, एव आर्यसमाज लुणसावाडा (अहमदाबाद गुजरात) के प्रमुख तथा सी एन विद्यालय अहमदाबाद के सस्कृत व हिन्दी के शिक्षक और गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडी-हरद्वार (उत्तर प्रदेश) के स्नातक श्री पडित सत्यव्रतजी वेदालकार (उर्फ गुणवतलाल त्रिकमलाल) का देहान्त (जूनागढ-सौराष्ट्र मे जन्माष्टमी के दिन हो गया।

—खेमचन्द भाई राईचन्द भाई आर्य

आर्यमर्यादा साप्ताहिक का १०) वार्षिक शुल्क भेजकर स्वयं ग्राहक बनिये तथा अपने मित्रों को बनाइये।

विदेशों में रहने वाले ग्राहक महानुभावों से निवेदन

आर्योदय की भान्ति हम सभी ग्राहक महानुभावों की सेवा में "आर्यमर्यादा" नियम पूर्वक भेज रहे हैं। हमें प्रसन्नता है कि कुछ महानुभावों ने अपना वार्षिक शुल्क बिना पत्र लिखे ही भेज कर ग्राहक बने रहने की कृपा की है।

जिन ग्राहक महानुभावों ने अभी तक अपना शुल्क नहीं भेजा है उनसे निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क समुद्री डाक का २०) या एक पौंड और हवाई डाक का ३०) यथाशीघ्र भेजने का कष्ट करें। "आर्यमर्यादा" आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का पत्र होने के कारण इस का बैंक में पृथक् खाता नहीं है। अत: अपना चैक आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब (Arya Pratinidhi Sabha Punjab) के नाम भेजने की कृपा करें। विदेशो की आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपने यहां के समाचार आर्यमर्यादा में प्रकाशनार्थ भेज कर लाभ उठावें।

व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा हिन्दी साप्ताहिक
१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साहित्य

१. सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२ धर्मवीर पं० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३. सुशोभा गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४. आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह	१-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६. वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९. वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५
१०. जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम. ए.	३-००
११. सोमसरोवर ,, ,, ,,	३-००
१२. Principle of Arya Samaj ,, ,,	१-५०
१३. Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
२४ Subject Matter of Vedas	१-००
१५. आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	५०-०
१६. मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर	१-००
१७ वैदिक सिद्धा त—प० चमूपति जी एम ए.	१.००
१८ प० गुरुदत्त विद्यार्थी—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-३५
१९. वैदिकधर्म को विशेषताएं—प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
२० पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद	२ ००

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् (ऋग्वेद)

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

(प्रश्न) तो मन्त्र पढ के होम करने का क्या प्रयोजन है, (उत्तर) मन्त्रो मे वह व्याख्यान है कि जिस से होम करने के लाभ विदित हो जायें और मन्त्रो की आवृत्ति होने से कण्ठस्थ रहे वेद पुस्तको का पठन पाठन और रक्षा भी होवे। (प्रश्न) क्या इस होम करने के विना पाप होता? (उत्तर) हा क्योकि जिस मनुष्य के शरीर से जितना दुर्गन्ध उत्पन्न हो के वायु और जल को बिगाड कर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियो को दुःख प्राप्त होता है उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४१ — १३ आश्विन वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २८ सितम्बर १९६९, रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
" विदेश मे २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

अथेश्वरसभाध्यक्षयो प्रार्थना सवमनुष्य कार्यत्युपदिश्यते ॥

अब ईश्वर और सभाध्यक्ष की प्रार्थना सब मनुष्यो को करनी चाहिये इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है ॥

अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम् ।

य ते पूर्वं पिता हुवे ॥ ऋ० १. ३० ९ ॥

पदार्थ —(अनु) पश्चादर्थं (प्रत्न- [illegible] (नरम्) सब [illegible] तमसो नेतारम् (यम्) जगदीश्वर सभासेनाध्यक्ष वा (ते) तव (पूर्वम्) प्रथमम् (पिता) जनक आचार्यो वा (हुवे) गृह्णात्याह्वयति ॥

अन्वय —हे मनुष्य ते पिता य प्रत्नस्यौकस सनातनस्य कारणस्य सकाशात्तुविप्रतिं बहुकार्यप्रतिमातार नर परमेश्वर सभासेनाध्यक्ष वा पूर्वं हुवे तमेवाहमनुकूल हुवे स्तौमि॥

भावार्थ —ईश्वरो मनुष्यानुपदिशति। हे मनुष्या युष्माभिरेवमन्यान्प्रत्युपदेष्टव्य योऽनादिकारणस्य सकाशादनेकविधानि कार्याण्युत्पादयति किं च यस्योपासन पूर्वे कृतवन्त, कुर्वन्ति करिष्यन्ति च तस्यैवोपासन नित्य कर्तव्यमिति। अत्र कश्चित्प्रति कश्चित्पृच्छेत्व कस्योपासन करोषीति तस्मा उत्तर दद्याद् यस्योपासन तव पिता करोति यस्य च [illegible] विद्वास। य वेदा निराकार सर्वव्यापिन सर्वशक्तिमन्तमनादिस्वरूप जगदीश्वर प्रतिपादयन्ति तमेवाह नित्यमुपासे ॥

भाषार्थ —हे मनुष्य (ते) तेरा (पिता) जनक वा आचार्य (यम्) जिस (प्रत्नस्य) सनातन कारण वा (ओकस) ध्रुव के ठहरने योग्य [illegible] (नरम्) सब को यथायोग्य कार्यो में लगाने वाले परमेश्वर वा सभाध्यक्ष का (पूर्वम्) पहिले (हुवे) आह्वान करता रहा उनका मैं भी (अनुहुवे) तदनुकूल आह्वान वा स्तवन करता हू ॥

भावार्थ —ईश्वर मनुष्यो को उपदेश करता है, कि हे मनुष्यो तुम को औरो के लिये ऐसा उपदेश करना चाहिये कि जो अनादि कारण से अनेक प्रकार के कार्यो को उत्पन्न करता है, तथा जिस की उपासना पहिले विद्वानो ने की वा अब के करते और अगले करेंगे उसी की उपासना नित्य करनी चाहिये। इस मन्त्र मे ऐसा विषय है कि कोई किसी से पूछे कि तुम किस की उपासना करते हो उस के लिये ऐसा उत्तर देवे कि जिस को तुम्हारे पिता वा सब विद्वान् जन करते तथा वेद जिस निराकार सर्वव्यापी सर्वशक्तिमान् अज और अनादिस्वरूप जगदीश्वर का प्रतिपादन करते हैं उसी की उपासना मैं निरन्तर करता हूं ॥

श्री जगदीश विद्यार्थी आर्यसमाज संघटन समिति के मन्त्री पद से पृथक्

प्रो० रत्नसिह जी मन्त्री नियुक्त

महात्मा आनन्द भिक्षु जी का आदेश

विशेष प्रतिनिधि द्वारा —

नई दिल्ली—२२-९-६९, महात्मा आनन्द भिक्षु जी की अध्यक्षता मे आर्यसमाज सघटन समिति सार्वदेशिक सभा तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के आपसी झगडो को निपटाने का गत दो तीन मास से प्रयत्न कर रही है। महात्मा जी को श्री रामगोपाल शालवाले की तथाकथित सार्वदेशिक सभा के अतिरिक्त सब सघटनो से सहयोग का आश्वासन मिल चुका है और उन संघटनो ने बातचीत के लिये २-२ प्रतिनिधि भी भेज दिये हैं। श्री रामगोपाल शालवाले आदि को भय है कि महात्मा जी आर्य जनता मे सारी स्थिति रखेंगे तो उससे सिद्ध हो जायगा कि केवल श्री रामगोपाल शालवाले और उनके साथी ही आर्यजगत मे झगडा बढा रहे हैं और उन्हे निपटाने के लिये महात्मा जी को कोई सहयोग नही देते। ऐसी अवस्था मे आर्य जनता मे श्री रामगोपाल शालवाले के विरुद्ध रोष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। उक्त स्थिति को रोकने की भावना से ही श्री रामगोपाल आदि ने महात्मा आनन्द भिक्षु जी को झगडे निपटाने का अधिकार न देकर स्वामी रामेश्वरानन्द (जो रामगोपाल की तथाकथित सार्वदेशिक के अन्तरग सदस्य हैं) तथा स्वामी विद्यानन्द विदेह (जिनके ऊपर आर्यसमाज की वेदी का प्रतिबन्ध श्री रामगोपाल ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये उसी दिन हटाया) को इन कार्यो के लिये नियुक्त किया है। इसके अतिरिक्त लगभग दो तीन सप्ताह से आर्यसमाज सघटन समिति के मन्त्री श्री जगदीश विद्यार्थी (जिनका चिरकाल से श्री रामगोपाल शालवाले तथा ओम्प्रकाश त्यागी से गुप्त समझौता है। उन्हे उक्त सघटन समिति से हटाने का प्रयास कर रहे थे। विश्वस्त सूत्रों से पता लगा कि श्री रामगोपाल शालवाले ने श्री जगदीश विद्यार्थी से परामर्श करके उनके घर पर श्री भगवान्देव जी शर्मा की भूख हडताल का एक षडयन्त्र रचा ताकि उसका बहाना बना कर श्री विद्यार्थी आर्यसमाज सघटन समिति को छोड सकें। महात्मा आनन्द भिक्षु जी को श्री जगदीश विद्यार्थी की गतिविधियो से तीन चार सप्ताह से सन्देह था परन्तु ज्यो ही महात्मा जी को उपरोक्त षडयन्त्र का पता लगा तो महात्मा जी ने श्री जगदीश विद्यार्थी को आर्यसमाज सघटन समिति के मन्त्री पद से पृथक् कर दिया है तथा उनके स्थान पर प्रो० रत्नसिह जी जो आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् और कर्मठ आर्य नेता है उन्हें मन्त्री बना दिया। श्री महात्मा जी द्वारा उठाये गये उपरोक्त दोनो पगो की आर्यसमाज सघटन समिति ने अपनी बैठक दि० २१-९-६९ मे सम्पुष्टि कर दी है।

श्री रामगोपाल शालवाले के असहयोग के कारण सघटन समिति की प्रगति मैं शिथिलता आ गई है परन्तु आर्य जगत् मे इसका बडा रोष है। श्री महात्मा जी सहयोग के लिये श्री रामगोपाल की सार्वदेशिक सभा को

शेष पृ० ३ पर

ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि अपना वार्षिक शुल्क भेजकर कृतार्थ करें।

आर्षभाष्य-अध्ययनविधि

(स्वर्गीय विद्वद्वर श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु)

[श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु आर्यजगत् के प्रकाण्ड विद्वानों में बहुत उच्च स्थान रखते थे। उन्होंने महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य तथा मन्तव्यों का प्रचार और प्रकाश करने के लिये अपना जीवन अर्पण किया हुआ था, इसी पवित्र प्रयोजन मध्य उन्होंने यजुर्वेद के ऋषिभाष्य को समझने के लिये यजुर्वेद भाष्य पर विवरण-भूमिका लिखी, यह उत्तम भूमिका यजुर्वेद के ऋषिभाष्य के प्रथम दश अध्यायों के साथ प्रथम संस्करण रूप में सं० २००२ वि० सन् १९४५ ई० में ऋषि भक्त और ऋषि ग्रन्थों के प्रकाशक स्वर्गीय श्री रामलाल कपूर, मन्त्री रामलाल कपूर ट्रस्ट सोसाइटी (अनारकली, लाहौर (अब पश्चिमी पाकिस्तान में छापी थी। उसी विवरण-भूमिका के पृष्ठ १२३ से १२५ तक "ऋषिभाष्य-अध्ययनविधि" प्रकरण दिया गया है। आर्यमर्यादा के स्वाध्यायशील ग्राहकों तथा पाठकों के लाभार्थ हम उस प्रकरण को अविकल रूप से प्रकाशित कर रहे हैं। एतदर्थ हम 'कपूर ट्रस्ट' के सचालकों के प्रति आभार प्रकट करते हैं।—सम्पादक]

"अब हम यहाँ ऋषिभाष्य के अध्ययन विषयक कुछ विशेष निर्देश कर देना भी आवश्यक समझते हैं। जिससे इस भाष्य का अध्ययन करने वालों की बाधायें पर्याप्त दूर हो सकती है।

(१) ऋषिदयानन्दकृत वेदभाष्य का अध्ययन करने वाले अनेक सज्जनों की एक ही जैसी शङ्कायें हमारे सम्मुख समय-समय पर आती रही है—

(क) संस्कृतपदार्थ देखने से मन्त्र का अभिप्राय कुछ भी समझ में नही आता।

(ख) संस्कृत और भाषा मेल नही खाती।

जिन महानुभावों को ऐसी शङ्का होती है, वह उनका भ्रममात्र है। मन्त्र का अभिप्राय: अन्वय से ही ज्ञात हो सकता है। इसलिये मन्त्रोच्चारण के पश्चात् अर्थ समझने के लिये सबसे प्रथम अन्वय को ही देखना चाहिये। तत्पश्चात् ही संस्कृत पदार्थ को देखने से ज्ञात होगा कि आचार्य (ऋषि दयानन्द) उक्त अभिप्राय मन्त्र के किन-किन शब्दों से और कैसे-कैसे निकाला। इसका रहस्य आर्षशैली से संस्कृत पढ़े लिखे ही यथावत् रीति से अनुभव कर सकते हैं।

इस प्रक्रिया को न समझ कर बहुत से संस्कृत के पढ़े लिखे भी भूल करते देखे गये हैं, यह भी ज्ञात रहे कि भाषार्थ भाषा जानने वालों को सुगमता को लक्ष्य में रख कर अन्वय के अनुसार ही किया गया है। देखो "भ्रान्तिनिवारण" पृष्ठ ६ में ऋषि का लेख निम्न प्रकार है—

'भाषा में संस्कृत का अभिप्रायमात्र लिखा है। केवल शब्दार्थ ही नही, क्योंकि भाषा करने का तो यह तात्पर्य है कि जिन लोगों को संस्कृत का बोध नही उन को विना भाषार्थ के यथार्थ वेदज्ञान नहीं हो सकता।'

इस भाषार्थ को संस्कृत के पढ़े लिखे अपनो संस्कृत के अभिमान में नहीं देखते, वास्तव में मन्त्र का अभिप्राय "अन्वय" से यथावत् ज्ञात हो जाता है। भाषार्थ देखने से वह और भी स्पष्ट विदित हो जाता है। कुछ भी सन्देह नहीं रह जाता। श्री स्वामीजी महाराज के उक्त अर्थ का प्रमाण क्या है, तथा सब प्रक्रियाओं को लक्ष्य में रखते हुये तत्-तत् पद का अर्थ क्या होगा? बस इस के लिये संस्कृत पदार्थ है। ऋषि भाष्य में यह विशेष रहस्य की बात है, जिस को साधारण संस्कृत पढ़े लिखे समझ नहीं सकते। वास्तव में संस्कृत पदार्थ ही ऋषि दयानन्द का मुख्य वेदार्थ है, अन्वय उस का एक अंग है, इसी में आचार्य [ऋषि] की अपूर्व योग्यता और अगाध पाण्डित्य का परिचय मिलता है।

आशा है विज्ञ पाठक इतने से समझ लगे कि संस्कृत पदार्थ और भाषार्थ के मेल न मिलने की बात सर्वथा अज्ञानतापूर्ण है, तथा संस्कृत में पदार्थ देखने का क्या प्रकार है, यह भी उन की समझ में आ जायेगा, जिन को इस विषय में सन्देह हो, वे सज्जन मिल कर समझ सकते है।

(२) श्री स्वामी जी के संस्कृत पदार्थ में सब प्रक्रियाओं का अर्थ विद्यमान है, यह समझना चाहिये, जहा दो प्रकार का अन्वय है, वहां भी कहीं तो अन्वय सब का सब समान है, केवल अर्थ भेद दिखा दिया है जैसे यजु० १.८ पृ० ५६। कहीं-कहीं तीन प्रकार का अन्वय दिखाया है जैसे [यजु०] १.११ पृष्ठ ६४, ६५ यहां तीनों अन्वय भिन्न हैं।

(३) महर्षिकृत भाष्य में जड़ पदार्थों के सम्बोधन में सर्वत्र व्यत्यय मानकर प्रथमान्त में अर्थ किया गया है, यह बात प्रत्येक पाठक को ध्यान में रखनी चाहिये। वर्त्तमान भ्रान्त संसार को जड़ पदार्थों की पूजा वा उपासना से अभीष्ट कामनाओं की प्राप्ति होती है, इस मिथ्या विचार को दूर करने की भावना से ऋषि दयानन्द ने जड़ पदार्थों के सम्बोधन में उपर्युक्त प्रकार वर्ता है, जो वर्तमान अवस्था में तो सर्वोत्कृष्ट ही कहा जायगा। हां वेदार्थ का सच्चा ज्ञान होने पर सम्बोधन मान कर भी अर्थ किया जा सकता है। जब हम वेद मन्त्रों का मुख्य अर्थ आध्यात्मिक मानते हैं (जो वास्तव में मुख्य ही है), तो अलौकिक अर्थ मे स्वभावत: सम्बोधन पदों को प्रथमा में ही समझने से हमें वेद में सब सत्यविद्याओं का ज्ञान हो सकता है। नहीं तो जैसे विदेशी विद्वान् कहते हैं कि वेद जङ्गलियों की भौतिक पदार्थ सम्बन्धी प्रार्थना मात्र है, यही मानना पड़ेगा, चाहे इस के लिये उन्हें विग्रहवती (शरीरधारी) देवताओं की कल्पना ही करनी पड़ी, जैसा कि पिछले लगभग दो तीन सहस्र वर्षों से की जा रही है, जिन विग्रहवती देवताओं का मीमासा शास्त्र के आचार्य कुमारिलभट्टादि ने भी स्पष्ट खण्डन किया है (देखो मीमासा ९.१.५)।

(४) यजु० १.२ पृष्ठ ३५ आदि में जहां-जहां "यज्ञो वै वसु" इत्यादि शतपथ तथा अन्य ब्राह्मणों के प्रमाणों में "वै" शब्द का प्रयोग है, वहां कोई-कोई सज्जन शङ्का उठाया करते हैं कि यह 'वै' शब्द अर्थ बोधक नहीं है। उन की जानकारी के लिये हम यहां केवल एक ही स्थल उपस्थित करते हैं। लौगाक्षिगृह्यसूत्र का भाष्यकार देवपाल पृष्ठ ३२ में लिखता है—'वै' शब्दोऽवधारणार्थ:।'

(५) (क) पाठकों को विदित होगा कि हम ने भाषा पदार्थ की संगति, जो संस्कृत संगति के साथ ही थी, पाठकों को सुगमता के लिये भाषा पदार्थ से पहिले रखी है। इस विषय में यह विदित रहे कि तीन अध्याय तक की 'क' हस्तलेख कापी में भी भाषा संगति भाषा पदार्थ से पूर्व में ही है। (ख) भाषा (पदार्थ) के स्थान में 'पदार्थान्वयभाषा' ऐसे बहुत से मन्त्रों में उपलब्ध होता है। अर्थात् भाषा 'पदार्थ' अन्वय के आधार पर है। (ग) संस्कृत पदार्थ में प्रत्येक व्याख्येय पद के अन्त में [।] इस प्रकार के विराम हैं, सो वे यजु० ५-३४ तक तो हैं, आगे ४० वें अध्याय के अन्त तक नहीं। हाँ जहाँ प्रमाण आ जाता है, वहां तो प्रमाण के अन्त में विराम है। भाषा पदार्थ में भी यजु० ५.३५ से आगे विराम नहीं हैं। (घ) द्वितीय अध्याय ९ वें मन्त्र से लेकर २०वें मन्त्र तक आचार्य [ऋषि] प्रदर्शित मंत्र की संगति विशेष देखने योग्य है।

(६) वेद मन्त्रों में एक ही मन्त्र के अनेक अर्थ होने में यह हेतु है कि यह सृष्टि जीव के ज्ञान की अपेक्षा अनन्त है। कोई भी एक जीव इस का पारावार नहीं पा सकता, क्योंकि यह उस की शक्ति से बाहिर है, इस अनन्त [असंख्य] सृष्टि में अनन्त [असंख्य] पदार्थ हैं, उन में से यदि एक-एक का वर्णन होने लगे तो एक-एक ग्रन्थ बन जावे। केवल अग्नि, वायु, जल, मिट्टी, तुलसी की पत्ती वा आक (मदार) का ही वर्णन करने लगें, तो एक-एक पृथक् ग्रन्थ की रचना करनी पड़े। परमात्मा ने जीवों का ऐसा ज्ञान [नैमित्तिक] दिया कि एक ही मन्त्र से जिस ऋषि को जिस विषय की प्रौढता प्राप्त थी, उस ने उस उस विषय का ज्ञान उस उस मन्त्र से उपलब्ध किया। इन्हीं से वेदाङ्ग तथा उपाङ्गों की रचना पृथक्-पृथक् हुई।

इस प्रकार ही ज्ञान देने से विश्व भूमण्डल का ज्ञान जीवों को दिया जा सकता था। यह बात तभी हो सकती है, जब एक-एक शब्द के अनेक अर्थ हों। अन्यथा "सर्वज्ञानमयो हि स:" मनु के इस वचनानुसार सम्पूर्ण विद्याओं का समावेश वेद में हो ही कैसे सकता है? सब व्यवहार तथा सर्वविध ज्ञान का भण्डार तो वेद ही है। वेद का स्वाध्याय करने वालों को यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये।

(७) वेद के प्रत्येक मन्त्र का अर्थ आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधियज्ञ परक होता है, यह हम पृ० १८ तथा ३०,३१ पर सविस्तार निरूपण कर चुके हैं। याज्ञिक अर्थ मुख्य अर्थ नहीं, यह भी कह चुके हैं।

शेष पृ० ६ पर

सम्पादकीय

मानसिक परिवर्तन

(प्रो० रामसिंह जी एम० ए० प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब)

विश्व के देशो में पारस्परिक विश्वास और सहिष्णुता का ह्रास इस स्थिति को पहुँच गया है कि आधुनिक विचारक और वैज्ञानिक अत्यन्त चिन्तित हैं और भयभीत हैं कि न जाने किस समय युद्ध का ज्वाला मुखी फट पड़े और ससार भर की संस्कृति सभ्यता मानव—जाति सहित भस्म हो जाय। हमे इस स्थिति पर कोई आश्चर्य नहीं।

बड़े २ राष्ट्रो की बात क्या कहें प्रत्येक देश में शान्ति नाम की वस्तु अब दोख नहीं पड़ती। क्या अमरीका क्या रूस क्या चीन और क्या पूर्व और पश्चिम के देश सभी आन्तरिक कलह और वर्ग जाति धर्म के आन्तरिक विवाद, लड़ाई झगड़ो से ग्रस्त हैं।

हमारा देश तो चिरकाल से इस महामारी का शिकार होता चला आ रहा है। यहाँ हिन्दू मुसलमानो के झगड़ों का अन्त नही हुआ। ब्रिटिश राज्य की कृपा से और हमारी अकमण्यता से भारत का विभाजन भी हुआ, पर इस भयङ्कर राज रोग ने पीछा नहीं छोड़ा।

अभी अहमदाबाद के दगे की सूचना मिली है। कितनी भयानक है दो सौ के लगभग व्यक्ति मारे गये तथा इससे भी अधिक घायल हो गये। लाखो की बहुमूल्य सम्पत्ति नष्ट हो गयी अथवा जला दी गयी। लूट-मार का कोई ठिकाना न रहा। कानून और व्यवस्था भंग हो गयी।

अब हमारे सामने बार २ उभर कर आता है कि आखिर इस प्रकार की [illegible] अथवा बर्बर सांप्रदायिक मार-काट का क्या कारण है? विज्ञान के युग मे इतनी सूझ-बूझ क्यो नहीं? सरकार का धर्म-निर्पेक्ष-रूप इन दगो को क्यों नहीं दबा सका? सरकार और तथा कथित राजनीतिक पार्टियो द्वारा साम्प्रदायिक एकता बनाये रखने के अनेको प्रयास और प्रयत्नों के बावजूद विभिन्न वर्गों मे सर-फुटव्वल क्यों? उन्हे शान्ति, प्रम और सौहाद बनाये रखने मे सफलता क्यो नही मिली? इन प्रश्नों का उत्तर आसान नही। केवल समय २ पर सम्भ्रान्त व्यक्तियो द्वारा अथवा शासन द्वारा यह कहने से काम नहीं चल सकता कि कुछ अवाञ्छनीय समाज विरोधी तत्व समय पाकर सक्रिय होते हैं और ऐसे दगो का कारण बन जाते हैं। हमारी सम्मति में इतना कह देने से इस गम्भीर और भयावह स्थिति की न रोक-थाम हो सकती है और न हो भविष्य मे होगी।

इस समस्या के समाधान के लिये निश्चय ही गहरे अध्ययन और पक्षपात रहित चिन्तन की आवश्यकता है। ऐतिहासिक घटनाय और राजनीतिक क्रान्तिया भी इन समस्याओं को उत्पत्ति मे अधिक सीमा तक जिम्मेवार हैं। अत उन्हें भी ओझल नही किया जा सकता। धार्मिक-सभ्य और मतानुरोध की मान्यतायें कहाँ तक विभिन्नता और वमनस्य का कारण बनी हैं यह सोचना भी पड़ेगा ही।

उपर्युक्त कारण तो वर्ग और जाति विद्वेष के कारण निस्सन्देह हैं ही और इन को सामने रखकर पक्ष-पात रहित सरकार कड़े कानून और प्रभावी व्यवस्था भी कर सकती है, परन्तु यह समाधान न चिर स्थायी होगा और न ही विभिन्न जातियों और मतावलम्बियो मे एकात्मता उत्पन्न करने वाला।

बहुत गहरे अनुशीलन के पश्चात् कतिपय वैज्ञानिक विद्वानों का मत है कि भारत में साम्प्रदायिक दगों का कारण मतान्धता कही जाने वाली मान्यतायें हैं। इस सदर्भ मे मुस्लिम मनोवृत्ति कहाँ तक जिम्मेवार है यह जान कार व्यक्तियों से छुपा हुआ नही। हिन्दू स्वभावत अत्यन्त उदार है और उस की सहिष्णुता से भी किसी को इन्कार नही-यहा तक कि अनेक राजनीतिज्ञ हिन्दू को कमजोर डरपोक और दब्बू भी इसी कारण मानते और कहते हैं। इस लिये हमारा अनुरोध है कि मुस्लिम मतान्धता और हिन्दू-कायरता का इलाज इन दोनो सम्प्रदायो मे परिवतन से ही हो गया। एक की धार्मिक सकीर्णता और दूसरे का दब्बू पन बहुत पुराना है। करवलत से यह रायभवना दूर होने वाला नहीं। फिर भी यदि हमारे सामाजिक नेता और राष्ट्रिय शासक सच्चे हृदय से इसे दूर करने का प्रयास करें तो (राष्ट्रिय एकता अथवा भावात्मक-एकता) का मार्ग मनो विज्ञान के आधार पर ही प्रशस्त हो सकता है। वर्ग विशेष को Minority (अल्प वर्ग) के नाम पर अवाञ्छनीय रियायत देना विभाजी को बढावा देने के सदृश ही है। धर्म निरपेक्षता बहुत अच्छी है और उपादेय भी, परन्तु इसके नाम पर किसी की दुष्प्रवृत्तियों पर परदा डालना अमन और शान्ति पर कुठाराघात है।

अब प्रश्न यही रह गया कि मुख्यतया भारत के हिन्दू और मुसलमानो में राष्ट्रिय एकात्मता कैसे हों और उन का मानसिक-परिवर्तन किस प्रकार किया जावे। इस प्रश्न से वस्तुत दो ही भाग हैं। हिन्दुओ की कायरता और धर्म के प्रति उदासीनता दूर की जाये और उन में आत्माभिमान धर्म के प्रति उत्कर भावना का सचार हो। इसी प्रकार मुस्लिम मतान्धता और मानसिक सकीर्णता को सहिष्णुता और उदारता में बदलने के लिये कठोर पग उठाये जायें।

सौभाग्य से यह कार्य 'आर्य समाज ने अपने कधो पर उठाया था। बहुत सीमा तक आर्यसमाज इस मे सफल भी हुआ। यह उसी के प्रयत्नो का फल है कि वैदिक धर्म पर अब किसी को सहसा प्रहार करने का साहस नही। हिन्दू में धर्म के प्रति प्रम और अभिमान भी जागा है परन्तु दुर्दव से कुछ समय से आर्यसमाज जैसा अपनी ही समस्याओ मे उलझ गया। भगवान शीघ्र ही आर्य बन्धुओ को सुमति प्रदान करें जिस से उन का भी मानसिक-परिवर्तन हो और अपने कर्तव्य का पालन करने मे पुन सन्नद्ध हो सकें।

विशेष—यह लेख मान्य प्रो० रामसिंह जी एम० ए० ने लिखा है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पृ० १ का शेष

दो रजिस्टर्ड पत्र लिख चुके हैं। उत्तर न देकर कुख्यात व्यक्ति भारतेन्द्रनाथ को समिति की गतिविधियों का भेद पाने तथा श्री रामगोपाल आदि के विरुद्ध पग उठाने मे विघ्न डालने के लिये भेजते रहते हैं। स्वामी विद्यानन्द विदेह भी इसी भावना से महात्मा आनन्द भिक्षु जी के पास चक्कर लगा रहे हैं। आर्यसमाज सघटन समिति की एक आवश्यक बैठक रविवार दि० २८ ९ ६९ को अगली योजना पर विचार करने के लिये हो रही है।

महात्मा आनन्द भिक्षु जी का श्री जगदीश विद्यार्थी को पृथक् किये जाने सम्बन्धी पत्र —

श्री जगदीश जी विद्यार्थी, आर्यसमाज मन्दिर मार्ग
सप्रेम नमस्ते। १८—९—६९

आप का पत्र मिला। बड़ा खेद हुआ। कि जिसे हम सोना समझते थे वह पीतल निकला। आप ने ११ दिन बिना सूचना के अनुपस्थित रह कर अनुशासनहीनता का परिचय दिया था। जिस कारण मैंने आप से ७ सितम्बर को त्याग पत्र देने को कहा था परन्तु आप ८ सितम्बर को कार्यालय मे आकर टूटे दिल से काम करते रहे और कल को आने का वचन दे गय। आप ने जो कार्य समिति के विरुद्ध कार्य किया है वह विश्वासघात किया है। वह मिलने पर सब कह दूंगा। आप इस अनुशासनहीनता के कारण जब कि आप के कल दो फोन आये तो हमने आप को एक पत्र लिख कर सूचित किया है कि आप के कर्तव्य न पालन करने के कारण आप को मन्त्री पद से पृथक् किया जाता है। यह पत्र कल रात्रि को लिखा गया था। अत शालीनता के नाते आप को चाहिये कि यहा आकर अपना चार्ज नियुक्त मन्त्री को दे जायें। आगे आप की मर्जी है। मैं तो अपने साथियों से ९ सितम्बर से कह रहा हू कि जगदीश जी को मन्त्री पद से पृथक् किया जाय। ऐसे अनुशासनहीन व्यक्ति का मन्त्री पद पर रहना बड़ा घातक है। कुछ बातें मैं जुबानी भी कहूंगा।

शुभेच्छु
आनन्द भिक्षु आ० प्र० प्रधान समिति



आकाशवाणी द्वारा प्रसारित —

गाँवों की समस्याएँ—आपसी झगड़े

(कुमारी सुशीला आर्या एम ए विद्यावाचस्पति)

झगड़े और बीमारी से बचना तो सभी चाहते हैं लेकिन इनसे छुटकारा पाना किसी के वश की बात नहीं। किसी भी समय का इतिहास उठा कर देख लें गाँव में जाएँ या शहर मे अनपढ से मिलें या पढ़े लिखो से सब मे आपसी झगड़े चलते ही रहते हैं। कहावत भी है—जहाँ चार बर्तन होंगे खटकेंगे ही। फिर गाँवो मे तो ये झगड़े इतने बढ़े चढ़े हैं कि एक बड़ी समस्या का रूप धारण कर चुके हैं। सच तो यह है कि गाँवो की दरिद्रता पिछड़ापन जैसी सभी समस्याएं आपसी झगडो से ही पैदा होती हैं। यदि हमारे ग्रामीण भाई मिलजुल कर काम करना सीख लेते तो पता नहीं कहाँ से कहाँ पहुँच गये होते। किन्तु हम तो इतने नासमझ हैं कि मुकदमे बाजी मे अपनी खून पसीने की कमाई बहा देने मे तनिक नही हिचकिचाते। भूमि के चाहे दस गज के टकड़े पर ही झगड़ा क्यो न हो और उस पर हजारो रुपये क्यो न फूंकने पड जाएँ पर इतना नहीं सोचेंगे कि आपस में समझौते से काम ले लें।

भाइयो के आपसी झगडो से भी बढ कर समस्या है ग्रामीण बहिनों के झगड़ों की। पुरुषों के झगडो का कारण तो घर धरती या पानी आदि ही हो सकते हैं पर हमारी बहिनो के झगड़े बे बात की बातों पर भी चलते हैं। घर धरती किसी का साझा न भी हो, गली मुहल्ला आंगन एक ही होना ही काफी है। कहते हैं द्रौपदी के कारण महाभारत का युद्ध हुआ पर हमारी बहिनो के कारण तो महाभारत का कोई-न-कोई अध्याय रोज ही खुला रहता है। बच्चो को ही ले लीजिए। इन्हें चाहे आप कितना ही रोको इकटठ खेलगे जरूर और खेलगे तो लडेंगे भी। हम मे इतना धीरज कहाँ कि उन्हे अपने झगडो का फैसला आप करने दें। हम उनके छोटे मोटे झगडो में कूद पडती हैं यह सोचने का कष्ट कभी नही करती कि झगडने का कोई कारण भी है या नहीं। उसके लडके ने मेरे बेटे को मारा। किस की मजाल है जो मेरे बेटे को हाथ भी लगा दे। आने दे अब की बार टाँगें न तोड दूं तो। बस साधारण सी बात पर गाली-गलौज मार-पीट ताने-मेहने। होने अनहोने दोष लगाये जाते हैं। पिछली सात पीढियो का कच्चा चिट्ठा खोल कर धर दिया जाता है।

आपस के ये झगडे दो प्रकार के हो सकते हैं। एक अड़ोस-पड़ोस गली-मोहल्ले या गाँव वालों के साथ दूसरे अपने ही घर में [illegible]नी जेठानी सास बहू या ननद भावज अथवा भाई भाई पिता पुत्र के। पुरुषो के आपसी झगडे होने पर भी स्त्रियाँ बिना कारण एक दूसरे से बैर बाँध लेती हैं। जहाँ तक पुरुषो का सम्बन्ध है अगर वे मेल से रहना ही चाहें तो हमारी बहिनें न उनकी आपस मे बनने देती हैं और न खुद मेल से रह सकती हैं। साँझे का घर तो खाने पीने पहनने ओढने देने-लेने के कई मामलों पर झगड होते रहते हैं। घी दूध किसके हाथ मे रहे ? पीसने पासने का चौके चूल्हे का खेत क्यार का कौन सा काम किसने करना है यह बँटवारा तब तो बडी आसानी से हो जाता है जब घर मे कोई बडा हो और उसकी सब मानते भी हो किन्तु दुर्भाग्य से यदि माता पिता की न चलती हो तो बडा भाई और उसकी पत्नी औरो को दबाने लगती हैं। ऐसी दशा मे हर चीज जो घर में आती है झगड़े का कारण बन जाती है चाहे खाने-पीने की हो या पहनने ओढने की। भाइयों की आपस में साँझा न भी हो तो भी सास बहू ननद भावज की टक्कर तो होती ही रहती है। क्योंकि इन्हें किसी न किसी के पास रहना ही है।

इसमे कोई सन्देह नहीं कि आपसी झगड़े मे कोई एक पक्ष दोषी नहीं होता। ताली कभी एक हाथ से नही बज सकती। यदि दोनों में से एक तरफ भी कुछ समझदारी हो तो काम चल सकता है। कई सासें तो बिल्कुल बूढ़ी और शरीर से बेकार सी होने पर भी कुठारी की चाबी किसी को सौंपने के लिये तैयार नही होती। [illegible]हुएं बस चले तो सास ननद को फूटी आँखो देखना पसन्द नहीं क[illegible] कहा जा सकता है कि इन आपसी झगडों से बचने का उपाय यही है कि सब अलग अलग रहें परन्तु यह बात कहने में जितनी आसान है उतनी करने में नहीं। अब सोचना यह है कि जब रहना एक ही घर में है तो कलह क्लेश से उसे नरक क्यो बनाया जावे ?

हमारे ग्रामीण लोगो मे झगडों का सब से बडा कारण यही है कि हम मे जबान का संयम नही। गन्दी गालियाँ बुरे शब्द जैसे हमारी जबान का हार बन गये हैं। और यह तो सभी जानते हैं कि जबान ही हाथी चढ़ावे जबान ही सिर कटावे। झगड बढ़ते ही इसलिए हैं जब एक दूसरे को कुछ न कुछ कह दिया जाता है। बस अब झगड का असली कारण भुला दिया जाता है और बात यही आगे आती है—तू मुझे ऐसा कहने वाली होती कौन है मैं तेरा यह कर दूंगी वह कर दूंगी। बस आप जानो लडाई और झगड़े का बढाना कौन कठिन काम है ?

यदि ये लडाई झगड आपसी कहासुनी में ही निबट जाते फिर भी कोई बात नही थी किन्तु इनके कई बार इतने बुरे परिणाम देखने सुनने में आते हैं कि इनका हल ढूंढ़ना आवश्यक हो गया है। इनसे आपस का मनमुटाव बढ़ जाता है। कई बार मार-पीट व दूसरी दुर्घटनाएं भी हो जाती हैं। बदला लेने की भावना से राई का पहाड़ बना दिया जाता है। यहाँ तक कि कई बार तो एक दूसरे की जान लेने तक का कारण ये आपसी झगड़े बन जाते हैं। झगड़ा एक परिवार का हो या सारे गाँव का [illegible] प्रकार की तरक्की रुक जाती है क्योंकि सारा समय और शक्ति इन्हीं झगडों में लग जाती है इसलिए इन झगडों को दूर करना हमारे लिए बहुत आवश्यक है।

इस विषय मे सब से पहली बात यही है कि हम अपनी समझ को बढाएं। नासमझी ही इन सब झगडों की जड है। कुछ बातें ऐसी हैं जिन पर सब के विचार एक जैसे नहीं हो सकते। पर उन्हें आपस में मिल बैठ कर सुलझाया जा सकता है। बच्चों की अनबन जैसी छोटी बातें [illegible] के लिए बड़ी हानि का बीज बोना झगड़े के परिणाम को बिना सोचे [illegible] इत्यादि कुछ ऐसी मूर्खताएं हैं जो हमें चैन से जीने [illegible] कई बार केवल गैरहाजिर में की जाती है चाहे इसमें हमारी [illegible] भी क्यों न हो।

समझदारी इसी में है कि झगड़े के मूल कारण को समझ कर उसे दूर करने का प्रयत्न किया जावे। साँझे परिवार का झगड़ा है और [illegible] रहा जा सकता है तो लड झगड कर इकट्ठ रहने की बजाय प्यार से अलग रहना कहीं अच्छा है। रुपये पैसे का झगडा है तो गाँव के माने हुए लोगों या पञ्चायत से फैसला करा लेना चाहिए। किसी की कही सुनी बातों पर विश्वास कर के कोई झगडा खडा नहीं करना चाहिए कई बार विरोधी लोग तोड-फोड के लिए झूठी सच्ची बातें मिला देते हैं। बच्चों को स्कूलों में पढ़ने के लिए भेज देना चाहिए। शिक्षा का प्रचार झगड़ों की बीमारी की सब से अच्छी दवाई है हमें अपना समय किसी न किसी काम में लगाना चाहिए खाली पड रहने से ही लड़ाई झगड़े सूझते हैं। मिल कर रहने के लाभ और लडाई झगड की हानियाँ हमें सदा ध्यान में रखनी होंगी। अन्त में हम यही कहेंगे—

लड़ोगे-भिड़ोगे तो होगे खराब।

मिलकर चलोगे तो आएगी आब॥

Indian Renaissance and Swami Dayanand

(Dr. M.K. Shastri M A. Bombay)

Ninteenth century occopies and unique place in the history of our country. It is unique in many ways. While it has witnessed the downfall of old India and at the sometime has also the privilage of giving birth to new India. Moreover it is the only century, which can boast of giving birth to several outstanding Indians, who carved a place for India in the community of nations, uplifted and refloated it's ships from its moorings, where it was placed by foreigners.

Dayananda was one of such illustrious son of mother India, who has changed the outlock of Indians, specially of hindus in the north, regarding social, religious and cultural matters and ushered them into modern era from the stinking depth and darkness of orthodoxy, gave them new vision and a mission to fulfill.

He was born in a rich brahman jagirdar family of Saurashtra, the land of Gandhi and Patel, the makers of Modern India, in the middle of ninteenth century.

He resembles in many ways to Lord Buddha. Like Buddha death of near and dear one's and utter helplessness of man before it, aroused great cariosity in his mind about the phenomena of life and death. In there no escape from it? Must everything decay and die? These and other such questions agitated his mind and a keen desire to know the truth about it took possession of his soul.

Not stisfied with the answers and replies of pandits and scholars of his day, like Buddha, he decided to solve the mystry of life and death himself. Gradualy a great resolve formed in his mind and he decided to leave his home, full of its comfort and luxuries in search of truth. In the year 1842 A.D. at the tender age of twenty years, one night he left his home, and since then his determined mind steadily set on this purpose.

For full seventeen years, as an itinerary monk he travelled though the length and breadth of India, visiting places of pilgrimage, abodes of learning monks and yogis, from the height of the Himalayas to the sea shore, in search of true God and the secret of life and death, learning and practicing yoga and performing various type of tapasyas But all this failed to Quench his thirst for true knowledge.

Ultimately he met sage Virjanand of Mathura, who opened at him the door of Vast treasene of ancient knowledge called "Vedas" which gave him full satisfaction to all his querees and thus Dayananda he reached the state of Paramhansa.

Thus fully equipped with true knowledge and practical experience, he set forth on his mission, as per command of his perceptor Virjanand to spread the message of Vedas and to revile India of Vedic age, full of life and vitality, leading the world towards happiness through truthfull and righteous conduct. Having complete faith in the teaching of Vedas that "Truth must prevail and untruth must fail and that truth alone expend the path of the learned". His slogan was "*Back to the Veda*". Vedas form the very basis of Hinduism. No Hindu can challange the authority of Vedas and they can be united only on the basis of Vedas. Vedas are according to Hindu traditions, repository of knowledge, revealed to the four rishis of yore, in the begining of human civilisation. All schools of Indian philosophy and religions spring from them. Dayananda realised the importance of Vedas fully and based his teaching on the authority of Vedas and Vedas alone.

He was a fine example of Rishis of vedic age, straight-forward, upright, fearless, seeker of truth and having a dynamic personality, strong physically and spiritualy, who renounce the world for the service of God and for the benefit of mankind. Truth was his religion and truth was his God. He was open minded and was ever ready to accept truth, and change his views. One of the rule of "Arya Samaj, the society which he founded to carry out his mission is that "One must always be ready to accept truth and reject untruth".

He writes in his famous book "Satyarth Prakash" "(The light of truth)" that truth and reightcousness should never be foresaken either through lust, fear or greed, even when there is chance of saving one's life by foresaking it Righteousness is permanent, pain and pleasures are fleeting and soul is immortal *There is no greater religion then truth and no knowledge better than truth*

Being a person open to conviction, and without any dogma he could treat all sects and religions impartially without making any distinction, between Hindus, Muslims or Christians That is why he had very cordial relations with the leaders of all communities. Sir Sayed Ahmed Knan was one of his admiress. Once a Hindu Land Lord, incensed with Swami's criticsm of Idol worship, rejected him from his place; then a Muslim land Lord of Lahore provided him with accommodation to carry out his work, inspite of the knowledge that he criticise superstitions of Islam also, because he knew that Swami's heart was pure and his mission was high He did not want to injure feelings of any person, but only wanted to preach truth and wished that people should accept truth and reject untruth He says "It is not out desire to injure feelings of anybody. Our objeot is that mankind may prosper and progress, man may know truth and untruth and accept truth". There is no other way to improve humanity.

"Let the people judge for themselves as to what is truth and what is untruth The innerself of man is knower of truth Thus Dayananda was the first Indian Acharya, who showed his implicit faith in the wisdom and judgement of common man. He based the constitution of Aryasamaj on purely democratic basis even before the birth of Congress and other movements based on democratic ideas

He emancipated wisdom from the bondage of Gurus, Priests and authoritarianism and exhorted the people with his ideas such as, do not accept anything, because it is said by this or that Guru or authority, use your own brain and accept only when you are fully convinced. He supported this statement with the quotations from Upnishadas.

In fact, he was the founder and pillar of numerous causes of national and human importance, which awakened India from her long slumber during the ninteeth century. Nothing escaped his attentian. He was the champion of Women, untouhables orphans, widows, and all other oppressed people. He advocated abolition of caste system based on birth, education and equality for woman, free and compulsory education to all children, equality for all among society etc. and above all he opened the door of Hinduism to all those who wanted to embrace it. All this he did up on the authority of Vedas and challenged the orthodox section of Pandits to disaprove his theories, which thay could not do because they know little about teachings of Vedas.

With single minded devotion, he fearlessly and relentlessly continued to attack the citadel of orthodoxy, inspite of combined opposion of all the funatical leaders of various sects and communities, although he was threated and poisoned several times and was also offered tempting wordly attractions, before which any other person, except true sanyasin, like Dayananda and Swami Vivekananda, would have easily succumbed. Thus he defied death on many occasions and proved himself to be a true Mritunjaya (Victor of Death). His fearlessness and boldness and adherent to

(*Contd on page 6*)

माता गान्धारी का आशीर्वाद

(श्री पण्डित जयत्कुमारकु जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

जब दुर्योधन युद्ध के लिये कुरुक्षेत्र की ओर जाने लगा, तब उसने आकर अपनी माता गान्धारी की चरण-वन्दना की और उससे विजय का आशीर्वाद मागा। गान्धारी एक विदुषी, आस्तिक एवं धार्मिक नारी थी। वह न्याय-प्रायण भी थी, प्रसिद्ध पतिव्रता भी। अपने अन्धे पति राजा धृतराष्ट्र के अनुगमन के लिये वह अपनी आँखों पर पट्टी बांधे रहती थी। माँगने पर यह आवश्यक ही था कि वह अपने पुत्र को आशीर्वाद दे दे। अपने पुत्र के पक्ष की दुर्बलता को भी वह भली प्रकार जानती थी। मिथ्या और अन्याय सम्मत वा पक्षपातपूर्ण आशीर्वाद देना उचित न था।

बोली—"बेटा! यदि तू सन्मार्ग पर चल रहा है, तो विजय तेरी ही हो। यही मेरी कामना है, यही मेरा आशीर्वाद।"

कोई सच्चा आस्तिक नर या नारी, भगवान् से यह प्रार्थना न करेगा कि मुझे विजय प्रदान कर। वह तो कहेगा कि यदि मेरा पक्ष सत्य है, तो हे मेरे प्रभु! मुझे विजय प्रदान कर। वह अपनी इच्छा या पसन्द को ईश्वर के ऊपर लाद देगा नहीं। वह तो सर्वत्र ईश्वर की इच्छा के आधीन होकर ही रहेगा। वह तो प्रयत्नपूर्वक बच्चों जैसे भोलेपन को धारण करेगा। कहेगा—"परमात्मन्! मैं नहीं जानता कि मेरे लिये क्या हितकर है और क्या उचित? अत. हे मेरे मालिक! जो कुछ मेरे लिये हितकर और उचित है, वही तू कर। यदि मैं कभी कोई अनुचित प्रार्थना करूं। तो उसे तू अस्वीकार ही कर। जो कल्याणकारक है, वही तू कर।

"यद्भद्रं तन्न आसुव।

चाहिए क्या हमें कटु क्षणों में विराम?

(श्री भैरवदत्त जी शुक्ल, अध्यक्ष वैदिक परिषद्, लगुचा, जि० खीरी)

चेतना खो चुके देश के नव जवान, हो चुकी कुठिता तेज-तीखी कृपाण।
लुप्त सद् ग्रथ सारे, न है शेष ज्ञान, कंठ गत हो चुके अंब के दीन प्राण।
हाय! 'ऊफ्' का न लेकर तनिक भूल नाम!
चाहिए क्या हमे कटु क्षणों में विराम?

बाहु दोनों कटे बद्ध-सा दिव्य भाल, पर न चिन्ता तनिक सो रहे आर्य लाल।
बध हो बन रहे विष भरे नोच व्याल, राग सबके पृथक् कार्य की मद चाल।
अर्थ गत नीति गत 'अन्य' के हो गुलाम!
चाहिए क्या हमे कटुक्षणो में विराम?

मूल शोभन सभी ज्ञान के स्रोत वेद, शर्म! छि! व्याप्त हममें नहीं रंच खेद।
सीख दे विश्व को ला रहे खुद विभेद, रक्त सब चूस कर मर रहे व्यर्थ स्वेद।
स्वावलबन भुला बुद्धि से ले न काम!
चाहिए क्या हमे कटु क्षणों में विराम?

वे कुटिल कुप्रथाएँ हुई है न चूर, भूमि-वितरण-समस्या अभी भी न दूर।
'सूर' कब के बने रह सके कुछ न 'शूर', घोरतम बढ रहे छल, कपट, दभ क्रूर।
देख कर इन सलों का हृदय धूर्त श्याम!
चाहिए क्या हमें कटु क्षणो में विराम?

पृ० २ का शेष

यहां इतनी बात ध्यान में रखनी योग्य है, कि महर्षि दयानन्द ने "यज्ञ" शब्द से देवपूजा, सगतिकरण और दान इन तीन अर्थों के आधार पर अति विस्तृत अर्थ लिये हैं। ससार के समस्त शुभ कार्य "यज्ञ" शब्द के अन्तर्गत आ जाते हैं। इस भाष्य का स्वाध्याय करते हुये यह बात ध्यान में रखनी अनिवार्य है, तभी इस भाष्य का स्वरूप समझ में आ सकता है।

(च) भविष्य में वेदार्थ गवेषण का कार्य बहुत ही योग्यता और गम्भीरता से होने की आवश्यकता है। इस के लिए विपुल सामग्री और प्रौढ पाण्डित्य चाहिये, तथा अनेक श्रद्धापूर्ण विद्वानों द्वारा निरन्तर परिश्रम से ही यह कार्य हो सकता है। भावी में वेदार्थ की खोज में ऋषि का भाष्य प्रकाश का काम देगा, यह हमें पूर्ण विश्वास है। हमारा विवरण इस ओर एक छोटा सा यत्न है। विज्ञ पाठक महानुभाव हमारे इस विवरण को इसी दृष्टि से देखने का कष्ट करें; तभी इस की उपयोगिता का ज्ञान हो सकता है।

आशा है पाठक ऋषि भाष्य का अध्ययन करते समय हमारे इन निर्देशों पर अवश्य ध्यान देंगे और उन से लाभ उठावेंगे।"

(Contd. from page 5)

truth was due to his immense faith in the following saying "Let diplomats condemn or praise, let prosperity come and go, let death come this very moment or after ages, the brave do not deter from the path of truth and justice (Bhartari hari" Truth ultimately triumphs and untruth never prevails (Satyarth Prakasha).

Although a Sanyasin, whose outlook is universal and who is above the narrow nationalism, he was nevertheless patriotic to the core. His following words are worte remembering. *There is no country like India in the world The foreign rule cannot be perfectly beneficial, even when it is free from racial prejudices embued with parental justice and mercy. Whatevet it may be do the indigenous rule is the best.* (Satyrath Prakasha). No wonder his disciples, like Lala Lajpat Rai, Shyam ji Krishna Varma, Swami Shardhanand were first rank freedom fighters.

He bemoans the loss of independence in the following words "How due to illuck and idleness, venity as well as mutual animosities the Indians have come to such a pass, that not to speak ruling other countrries, they do not enjoy at present even the indivisible independenc, free and fearless away even over their own home"

All this was written and preached just two decades after the great uprising of 1857, when there was no congress and no public opinion to exert itself in favour of such a bold writers. This was the time when people thought that the rule of England was divine dispensation ordained for the holiest and the highest of ends.

Knowing the causes of slavery, our disunity and discord he realised the importance of unity among Indians. To attain this he called the first unity conference of the then Indian leaders of all shade and opinions, incluing Sir Sayed Ahmad Khan, at the time of Delhi Darbar during 1971 A.D. He appealed to leaders to unite on a common platform by accepting what is common in all religions and by rejecting the differences He knew that the differences among learned people aggravate the differences among common people, with the result that miseries and happiness disappears We know the truth of this statement to our cost, as we have witnessed the miseries at the time of partition of our country The fate of this unity conference was no better than the fate of such conferences held afterwards. It founded on the rock of personal prejudices, religious and communal fanaticism.

Again he was the first to realise the necessity of a common language "Hindi" to unite the country. He wrote all his books, including the commentry of Vedas in Hindi, inspite of his mother tongue being Gujarati and he being a top most sanskrit scholar of his time, who defeated all Sanskrit pandits of Kashi in discussion

Let us remember this great sanyasin of our age on this age of turmoil & confusion and pay homage to him by emulating his example of selfless devotion to duty and principles he preached.

Let us emulate his example of courage, determination, devotion to duty and self sacrifice at this juncture of great danger to our country, civilisation and whatever dear to us, when our country is threatened from within and without by powerful and cunning enemies and try to build India (Aryavarta) a strong, dynomic, and prosperous country, which may lead to Chkravarti Rajya of Aryas in the world and bring real peace, prosperity to this strife torn world through the twin principles of Justice and truth according to the teachings of Vedas.

(तख्ते—ताऊस) मयूर सिंहासन

(श्री सत्यसिंह वर्मा ना० सूबेदार–सोरम जि० मुजफ्फरनगर)

नोट—जोधपुर के महाराजा अजेसिंह की आगरा स्थित हवेली में बनाया गया था।

शाहजहाँ ने लाल किला दिल्ली, मोती मस्जिद आगरा, जामा मस्जिद दिल्ली, ताज महल आगरा शाली मार उद्यान कश्मीर आदि बनवाये। परन्तु सब प्रथम शाहजहाँ ने मयूर सिंहासन का निर्माण कराया था क्यों कि राज्य की शोभा ताज तथा सिंहासन से ही थी।

(२) कोष—शाहजहाँ के कोष मे ५५ अरब रुपया इतने ही मूल्य के हीरे तथा इतने ही मूल्य का सोना कुल १६५ अरब रुपये के मूल्य का कोष था।

(३) व्यय कोष—शाहजहा ने अपने कोष से ८६ लाख रुपये के बहुमूल्य रत्न जो वजन मे ६ मन २० सेर २ छटाक थे तथा ३१॥ मन सोना और १४ लाख रुपयों की धन राशी पृथक् रख कर शाही सुनार बेवदलखाँ को सिंहासन बनाने के लिये नियुक्त किया। इसके अतिरिक्त दयाराम हिन्दु सन्त जरगर, भोला प्रसाद, कवि सुलेखक तथा चित्रकार भी इस कार्य में सहायक थे।

(४) आकार—इस सिंहासन का आकार ३॥ गज लम्बा २॥ गज चौडा तथा ५ गज ऊचा था।

(५) बनावट—यह मयूर सिंहासन २॥ फुट ऊचे ६ पायो पर बनाया गया था। जो ठोस सोने के हीरो से जडा था। इसमें १०८ याकूत तथा १६० जमुरद जडे हुये थे। सिंहासन के चतुर्दिक मोतियो को झालर लगाई गई थी। हासिया सोने के तारो से बनाया गया था। हीरो के अतिरिक्त एक ऐतिहासिक हीरा लाले यमन' इसके मध्य मे जडा हुआ था। यह लाले यमन जिस बादशाह के अधिकार में रहा उसी बादशाह ने उस पर अपना नाम खुदवाया इसलिये इस हीरे पर बहुत से बादशाहो के नाम खुदे हुये थे जिन में अमीर, तैमूर, शाहुबे किरान, मिर्जा शाहरुख, मिर्जा राफबेग, अब्बास सफवी शाह ईरान, आदि के नाम खुदे थे। शाहजहा ने भी अपना नाम खुदवाया था। इस लाले यमन का मूल्य एक लाख रुपया था।

(६) तकिया—सिंहासन के मध्य भाग मे सम्राट् के तकिया लगाने के लिये बना था। इस तकिये के निर्माण मे १० लाख रुपयो का व्यय हुआ था। इस तकिये के मध्य मे एक तारा जडवाया गया था। जिसकी किरण विद्युत की भाति प्रकाशित थीं। यह कृत्रिम तारा घुमाया जा सकता था, चारो ओर को।

(७) छत—सिंहासन की छत गोलाकार बनी थी। जो १२ जमुरंद तथा जडित महरावो पर स्थित थी। अन्दर की ओर मीना का काम तथा बाहर की ओर लाल पन्ना तथा माणिक लगे थे। चतुर्दिक सुन्दर ढलवाँ मोतियो की झालर लटकाई गई थी। स्थान स्थान पर मोतियो की लडियो के बस बने थे। जिन मे शाही शस्त्र, गदा तलवार कमान और खड्ग इत्यादि लटकाये गये थे।

(८) मध्य की महराव पर एक वृक्ष चित्र बनाया गया था जिसमे जमुरंद तथा नीलम के फूल फल तथा पत्त बनाकर लगाये गये थे। इस वृक्ष के इधर उधर दो मयूर पख फलाये खड किये गये थे। शिल्प कारो ने उक्त मयूरों को ऐसी उत्तमता से पख फैलाये हुये दर्शाया कि मानो नृत्य करने को उद्यत हैं। पखों मे अतिसुन्दरता से पिरोजे तथा पुखराज जडे थे। तथा भाति भाति के हीरो जवाहरातो से सुशोभित किया गया था।

(९) तस्बी—इन मयूरों की चोंच में एक एक तस्बी (माला) जो १०१ दानों की थी। ऐसे सुन्दर ढग से लटकाई गई थी। कि जब बादशाह सिंहासनारूढ होते थे तो ये मयूर नृत्य करते दिखाई देते थे। तथा प्रत्येक मान चमक उठता था। यह दृश्य बडा ही आश्चर्य जनक था। तस्बी (माला) का एक एक दाना चलता था तथा माला घूमती हुई दृष्टि गोचर होती थी। प्रत्येक दाने के साथ कठ से ध्वनि आती थी। अल्ला हो अकबर, ओ३म् हरि हर।

(१०) सीढी—सिंहासन पर चढने के लिये तीन सीढिया जो ठोस सोने की बनी थी, लगाई गई तथा यह तख्त भिन्न भिन्न भागो मे बनाया गया था। अर्थात् जोडा-तोडा जा सकता था।

(११) सिंहासन व्यय—मयूर सिंहासन के निर्माण करने का कुल व्यय उस समयनुसार २ करोड १४ लाख ५० हजार ४५५ (२१४५०४५५) रुपयों का व्यय हुआ था।

(१२) दरबार—इस मयूर सिंहासन पर बादशाह शाहजहा ने ३ फरवरी सन् १६३४ दिन शुक्रवार १२ बजे दिन के दोपहर अकबरा बाद आगरे मे दरबार किया था। इस शुभ अवसर पर १५५ उर्दू शाईरो ने अपने शेर (कविता) से सिंहासन की प्रशसा मे पाठ किया गया। बादशाह नें प्रसन्न होकर प्रत्येक शाईर का मुह मोतियो से भर दिया था। यह सम्मेलन १० दिन तक मनाया गया था।

सन् १६४८ ई० (सम्वत १७०५ व०) मे राजधानी आगरा से दिल्ला स्थानान्तर को गई तो सिंहासन भी लाल किले मे स्थापित किया गया। ३० वष पर्यन्त इस सिंहासन पर बैठने के उपरान्त बादशाह शाहजहाँ को उसके पुत्र औरगजेब ने बन्दी बना लिया तब यह सिंहासन भी औरगजेब के अधिकार म आ गया था।

सम्वत् १७१६ वि० उतरते ज्येष्ठ (५जून सन १६५९ ई०) मे यह मयूर सिंहासन औरगजेब के दरबार मे लाया गया। जो कि औरगजेब के दरबार का पहला दिन था।

(१३) घटना—औरगजेब जब शनै शन सिंहासन पर बठने को जा रहा था तब खतीब बन्दी जनो ने भारी कण्ठ स्वर मे कहा- बा मुलाहिजे होशियार स्वर्गस्थ हुमायू स्वर्गाधिकारी अकबर स्वर्गीय ईश्वर कृपा पात्र, जहागीर स्वर्गस्थ (दो आलमजाविदानो आकाश मृत्यु लोक के राजा) अब शाहजहा का नाम आया ता औरगजेब का मस्तक लज्जा से नत हो गया कि न जाने मेरे जीवित पिता को क्या कहा जायेगा। सहसा खतीब ने कहा शाहजहा ससार त्यागी के उत्तराधिकारी प्राप्त औरगजेब जिन पर ईश्वर का छत्र छाया है। पदार्पण करते हैं।

यह सुन औरगजेब दर्प से ऊचा मस्तक किये सिंहासन पर जा बठा। इस घटना के दो चार वर्ष बाद औरगजेब ने सोचा कि सिंहासन मे से २-४ रत्न निकाल देश के कामो मे लगा दिये जाय। इस पर बन्दी शाहजहा नें क्रुद्ध होकर कहला भेजा कि औरगजेब ? देख बुद्धिमत्ता तथा न्याय से राज्य का काय करता रह। यदि फिर ऐसा कहा तो सिंहासन को काट-छाट चूर्ण करा दूगा। औरगजेब चुप हो गया तथा सिंहासन पर बैठ कर इस्लामी नीति को ऐसी बर्बरता से प्रचालित किया कि अमुस्लिम सहम गये। मन्दिरो की दीवारे काप उठी परन्तु उसके मरने के बाद उसके उत्तराधिकारी दुर्बलता गृहकलह स्वार्थपरता तथा विलासिता के शिकार, हो गये।

(१४) लूट—औरगजेब के पौत्र मुहम्मदशाह रगीले मिया के शासन काल मे नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण किया और उसे उजाड दिया। वह दो मास पर्यन्त दिल्ली मे रह कर ईरान को लौट गया। और अपने सग दिल्ली तथा लखनऊ के नवाबो के सब कोष मुगल बादशाहो के अगणित रत्न धन बेगमात के जेवरात अच्छे अच्छे घोड हाथी भारी मार की तोप बहुमूल्य अतलस किखबवाब का वर्दिया आदि सत्तर करोड रुपये के लगभग ले गया।

कोहनूर हीरा मयूर सिंहासन भी ईरान भिजवा दिया बहुत सी सुन्दर स्त्रिया तथा रगीले की पुत्री शेहनाज बानो हाथ लगी जिसका विवाह उसने अपने होनहार पुत्र मिर्जा नसरुल्ला खा से कर दिया।

ईरान जाकर उसने ४ जून १७५० के दिन सिंहासन पर बठ कर दरबार किया। सैनिक युवाओ को मदिरा के ड्रम खोल दिये गये। परन्तु उन्हें वचन दिया गया था कि जो कुछ लूट का माल होगा सब सैनिको को बराबर बाट दिया जायेगा परन्तु यह वचन पूरा न होने के कारण सैनिको ने १७४७ को रात्री को क्रान्ति द्वारा नादिरशाह का वध कर कोष लूट लिया अन्य वस्तुओ के साथ मयूर सिंहासन को हजारो खण्ड कर परस्पर बाट लिया। पीछे उसके खण्ड बाजार मे बेच कर अपनी घरेलू आवश्यकतायें पूर्ण की इस प्रकार यह ऐतिहासिक स्मृति ससार से सर्वदा के लिये मिट गई। [इस विषय में ऐतिहासिको का मत भेद है।—सम्पादक]

यह मयूर सिंहासन सन १६२८ ई० से १७४७ ई० तक ११९ वर्ष तक रह सका। जो कि बहुमूल्य ऐतिहासिक सम्पति थी। जो नादिरशाह के वध के साथ साथ यह सम्पति भी ससार से उठ गई तथा आज के युग में केवल नाम ही रह गया है।

आर्य युवक संघटन

श्री मांगेराम आर्य एम०ए० प्रधान आर्यसमाज बाकनेर (देहली)

युवक-शक्ति किसी भी देश के इतिहास का मूल रूप है। युवको के बिना देश की उन्नति का स्वप्न लेना मानो बून्दो को पकड कर आकाश मे चढना है। प्रत्येक विवेकशील मानव युवक-शक्ति का उपासक है। देवता भी युवक (परिश्रमी) को ही चाहते हैं —

"इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति ।
यन्ति प्रमादमतन्द्राः ।" ऋग्वेद ८-२-१८ ॥ अथर्व०२०-१८-३ ॥

अर्थात् (देवा) विद्वान् लोग (सुन्वन्त) यज्ञ कम करते हुये की (इच्छन्ति) इच्छा करते हैं, (न स्वप्नाय स्पृहयन्ति) निद्राशील सुस्तो को नहीं चाहते। (अतन्द्रा) स्वय आलस्य रहित ये देव लोग (प्रमाद) गलती भूल करने वाले प्रमादीका नियमन करते है।

अत दिव्यगुणी लोगो की भी प्यारी युवक-शक्ति का सघटन जनहित के लिए अत्यन्त आवश्यक है। युवक अवस्था लगभग २० वर्ष से आरम्भ होती है। सघटित युवको ने ही अपनी युवा-अवस्था मे इतिहास का निर्माण किया है। उदाहरणस्वरूप फ्रास मे नेपोलियन आदि युवको ने १७८९-१८०९ मे, इटली मे मजिनी गैरीबाल्ड ने १८३०-५०, १८५०-६० मे जर्मनी मे विश्वविद्यालयो के अध्यापको एव विद्यार्थियो ने १८३०-५० मे, बिस्मार्क आदि युवको ने १८५०-७० मे, रूस मे निकोलस द्वितीय (१८९४-१९१७) के अत्याचारो के विरुद्ध लेनिन आदि युवको ने, इगलेण्ड मे ओलीवर क्रामवैल आदि युवको ने १६२९-१६४७ मे अपने-अपने देश के इतिहासो मे अपनी सघटित युवक-शक्ति के बल से अविस्मरणीय अध्याय जोड दिए। भारत के इतिहास मे भी १९०७-२६ मे लाला लाजपतराय आदि युवको नें सघटित शक्ति के बल पर प्रेरणात्मक अध्याय जोड दिये हैं। किन्तु १९४७-१९६७ के बीच डा० राजेन्द्र प्रसाद, सरदार पटेल, लाल बहादुर शास्त्री आदि महान् व्यक्तियो के विरोधी अवसरवादी गुट ने अपने स्वार्थपूर्ति मे बाधक युवक-शक्ति को प्राय नष्ट करने का दुस्साहस किया है। सघटित युवक शक्ति के अभाव मे इन २० वर्षों में घूसखोरी, हराम-खोरी, सीनाजोरी, दुराचार पराकाष्ठा पर पहुच गए। सत्य और ज्ञान का गला घोटा गया। गिने-चुने व्यक्तियो की जेबो मे धन जमा हो गया। देश की इस दयनीय अवस्था को देखकर विवेकशील युवको ने इतिहास को दोहराने का श्रीगणेश १९६७ के निर्वाचन मे देश, जाति तथा धर्म विरोधी तत्त्वो को हराकर किया। इस उमडती हुई अगडाई लेती हुई युवक-शक्ति को देशहित मे सघटित करना परमविचारणीय विषय है। आज भारत मे विभिन्न उद्देश्यो की पूर्ति के लिए 'लोकसेना', 'शिवसेना', 'गोपाल सेना', 'लचित सेना', 'तमिल सेना', 'हरिसेना' आदि सघटन युवक-शक्ति का उपयोग के लिए ही बनाये जा रहे हैं।

युवको के सघटन पर विचार करने से पहले युवक कैसे होने चाहिएँ तथा ये कैसे तैयार किये जा सकते हैं? इस बात पर विचार करना आवश्यक है। अच्छे युवक से ही अच्छा सघटन बन सकता है। एरण्ड की लकडी का यदि शहतीर चढाया जावे तो वह विनाशकारी सिद्ध हो सकता है। अत युवक स्वय आदर्श युवक होना चाहिए। यदि स्वय नास्तिक स्वेच्छाचारी, पाखडी, अहकारी, मूर्ख, विवेकशून्य तथा शान्तिहीन हो और दूसरो को शक्ति देने का दावा करें तो यह धारणा उपहास मात्र सिद्ध होगी। जैसे उदाहरण से स्पष्ट है —एक बार एक कुम्हार ने ज्यो ही यह मन्त्र धरती बाधू, अग्नि बाधू, जल बाधू, बाधू सारा आकाश" पढा त्यो-ही उसको दु खी पत्नी ने कहा "पतिदेव! आकाश बाधने से पहले अपनी टूटी छान तो बाध लो।" अत सघटन के लिए वाछित आदर्श युवक कैसे तैयार किये जा सकते हैं? पहले इस पर विचार किया जायेगा।

॥ मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है, युवक को बनाने वाले तीन उत्तम शिक्षक हैं— एक माता, दूसरा पिता तथा तीसरा आचार्य। माता और पिता को रोगरहित तथा बलवर्द्धक भोजन करना चाहिए जिससे सतान बलवान् तथा बुद्धिमान् होवे। बच्चे को पाच वर्ष की आयु तक माता उसका पालन पोषण उत्तम ढग से करे। पाच से आठ वर्ष तक पिता बच्चों को देवनागरी तथा अन्य देशीय भाषाओ के अक्षरो का ज्ञान कराये। अच्छी शिक्षा, विद्या, धर्म, परमेश्वर, माता, पिता, आचार्य, विद्वान्, अतिथि, राजा, प्रजा, कुटुम्बियों से कैसे-कैसे वर्ताव करे इन बातो के मन्त्र तथा सूत्र अर्थ सहित कठस्थ करावे। आठ से पच्चीस वर्ष तक (विद्या अध्ययन काल) आचार्य बच्चे को सत्याचार के ग्रहण करने की शिक्षा करें, चोरी, जारी, आलस्य मिथ्या भाषण आदि दोषों से 'प्यार तथा ताडना' द्वारा दूर रखें। इस अवस्था मे सतान और शिष्यो को ताडना अमृत पिलाने के तुल्य है, किन्तु जो बच्चे आर्ष विद्यालय मे न पढकर के सरकारी विद्यालयों में पढते हैं वे छ घण्टे विद्यालय मे और १८ घण्टे घर में रहते हैं। अत इस अवस्था में माता पिता का भी बडा उत्तरदायित्व है। बच्चे का दैनिक जीवन बडा पवित्र होना चाहिए। सन्ध्या, व्यायाम तथा स्वाध्याय उसकी दिनचर्या का आवश्यक अग होने चाहिएं। समय-समय पर बच्चों को समस्याओ एव सुविधाओं पर विचार करने के लिये माता-पिता और बच्चो को बैठकें होनी चाहिएं। अवकाश के दिनो मे विशेषकर धार्मिक पुस्तको का अध्ययन एव विद्वानों का उपदेश बच्चो को घर मे कराना चाहिये। बच्चे की ग्राह्य-शक्ति के लिए उपदेश एव अध्ययन का सार लिखवाना चाहिए। धार्मिक परीक्षाओ, शिविरो, भाषण तथा लेख आदि प्रतियोगताओ एव उत्सव आदि का प्रबन्ध कराने मे भाग दिलाना चाहिए। तथा उत्साहवर्धन के लिए पारितोषिक देना चाहिए। इस प्रकार बच्चे का आत्मिक, शारीरिक तथा सामाजिक विकास हो जायेगा और वह बच्चे (कुमार) से युवक बन जाएगें। बच्चे को इस अवस्था मे वीर्यरक्षा का पाठ उत्तम ढग से पढाना चाहिए क्योकि "यही सब सुधारो का सुधार सब उन्नतियो की उन्नति करने वाला कर्म है" —महर्षि दयानन्द। वृद्धि अवस्था के बाद बच्चा युवक बन जाता है। जिसमे निम्न गुण होने चाहिएं —

माता-पिता तथा आचाय के परिश्रम से युवक को निर्भीक होना चाहिये। उसे मृत्यु, भय तथा जीवन से मोह न होकर के कर्तव्य परायण होना चाहिये। "बातकम तथा काम अधिक" के सिद्धान्त का अनुयायी बनकर गुरुदत्त विद्यार्थी, प० लेखराम नारायण स्वामी, स्वामी आत्मानन्द, महात्मा हसराज, स्वामी श्रद्धानन्द आदि त्यागी एव परिश्रमी महानुभावो के अधूरे काम को पूरा करने पर तत्पर रहना चाहिये। शहीदों के बहे रक्त की शान को बार बार [illegible] चाहियें। शहीद कभी [illegible] नही। उसका रक्त रग लाता है कवि के शब्दो में—

मरते बिस्मिल रोशन, लहरी, अश्फाक अत्याचार से ।
होंगे पैदा सैंकड़ों इनके रुधिर की धार से ॥

युवको! डरपोक अनेक बार किन्तु शहीद एक ही बार मौत का चुम्बन करता है। शेक्सपीयर के शब्दो मे—

"Cowards die a thausands times before their death, the Valiant taste of death but once"

युवको के पराक्रम की प्रतीक्षा मे आज रोगी भारतवर्ष बेचैन है। युवको! याद रखो औषधि के होते हुए बीमार को मरने देना पाप है। आप इस बीमार भारत की औषधि हैं। अपने जीवन को भारत के अर्पण कर दो। आपत्ति काल मे आपके पैर न डगमगायें। निर्जीवों मे जीवन डालने के लिए यह सन्देश घर घर में पहुचा दो कि—

"हम जियें भी तो ऐसे जियें, जैसे तूफां में जलते हैं दिये।

युवक के लिये ईश्वर का ज्ञान कर्मयोग के विस्तृत आकाश में खुला है। सेवा की अमर साधना मे साक्षात्कार सभव है। "We live in deeds and not in years" की लोकोक्ति को चरितार्थ करने के लिए युवको को अपनी आयु वर्षों मे नही पुण्य कर्मों मे गिननी चाहिये।

'No sweat, No sweet" परिश्रम के बिना मीठा फल नहीं तथा "A barking dog is often more useful then a sleeping line" निष्क्रिय विद्वानों से सामान्य कार्यकर्ता उपयोगी होता है आदि व्यवहारिक बातो को ध्यान मे रखना चाहिये। कुचिन्ता आदि मनुष्यो के प्रबल शत्रुओ से दूर रहना चाहिये। इस प्रकार से युवक अग्नि में तपे हुए सोने के मूल्य के समान होगा। ऐसे निडर पराक्रमी तथा कर्मशील युवकों की सूची आर्य युवक परिषद् द्वारा प्रकाशित की जानी चाहिए। ऐसे युवक आयकुमार सभा आर्यवीर दल, आर्ययुवक समाज तथा आर्यसमाज के

शेष पृ० ९ पर

गतांक से आगे—

अछूतपन एक संक्रामक रोग

ले० श्री डा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट (आगरा)

मेरी सम्मति में भावनात्मक एकता के प्रचार का क्षेत्र और उसके विचार की सीमा आपस के लडाई झगडो तक सीमित नही समझी जाती। इसके क्षेत्र मे चरित्र निर्माण और नैतिक उत्थान भी सम्मिलित करना होगा। और इसके साथ-साथ जो पृथक् करण-रूढिवाद (वश परम्परा होती आई है) के नाम पर किसी न किसी रूप में प्रचलित है। उस पर भी गम्भीरता से विचार करना होगा। एकता के प्रश्न पर प्राचीन वैदिक आदेशो के आधार पर विचार करना आवश्यक है। और इसके साथ ही प्रचलित राजनीति की दृष्टि से इस पृथक् करण पर विचार करना आवश्यक है। राजनीति के क्षेत्र में आज पृथक् या अलगाव की भावना अनेक रूपों में प्रचलित है जिसे हम भाषावाद, प्रान्तवाद, जातिवाद के रूप मे देख सकते हैं। इन सब विवादो में से देश की महती हानि हो रही है। इन विवादो का एक प्रबल रूप सम्प्रदायवाद है। सम्प्रदायवाद का ही अग यह अछूतपन की भावना है। इसका सम्बन्ध जातिवाद से निराकरण के लिये शुद्ध प्राचीन वैदिक सार्वजनिक धर्म की प्रणाली के विस्तार और प्रसार की आवश्यकता है। और जब तक इस विचारधारा का विस्तार नही होगा वास्तविक रूप से मर्यादा की स्थापना नही होगी। राजनीति और प्रशासन के दृष्टिकोण से अछूतपन के कलक को मिटाने के लिये अच्छा प्रयत्न किया गया है। परन्तु मैं लिखने के लिये विवश हूं, कि मनोविज्ञान की दृष्टि से जो विधि अपनाई गई है उससे मौलिक रूप से विचार करने से पता चलता है कि उससे अलगाव को पुष्टि होती है। जैसा ऊपर बताया गया है कि महर्षि दयानन्द ने अछूतपन के कलक को मिटाने का आन्दोलन इस सार्वजनिक आधार पर किया कि कोई अछूत नहीं है सब बराबर हैं। महात्मा गाधी ने भी इसको स्वीकार की। महात्मा जी ने हरिजन का नाम दिया परन्तु अलगाव के लिये नहीं, इनसे प्रेम और सहानुभूति प्रकट करने के लिये दिया परन्तु यह नाम भी पृथक् करण का कारण आज बन गया है। महात्मा जी के जीवन में जब अछूत कहे जाने वाले भाइयो को निर्वाचन की दृष्टि से पृथक् पृथक् सघटन या समुदाय बनाने का प्रस्ताव हुआ तो महात्मा जी ने उपवास किया और अपनी जान की बाजी लगा कर इस अलगाव को देश के लिये अत्यन्त हानिकारक मान कर ठुकरा दिया। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् कुछ नई विचार धारा इस प्रसग में सम्मुख आई यह बात सत्य है कि पिछले कई सौ वर्षों से जिन भाइयों को अधिकारों से वञ्चित रखा जा रहा है और सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में कई प्रतिबध लगे हैं। उनसे छुटकारा दिलाना आवश्यक है। किन्तु यह उद्देश्य इस प्रकार पूरा होना चाहिये था कि अलगाव की भावना दृढ न हो। राज्य के पश्चात् पृथक् सूचियाँ बनाकर मैम्बरी और नौकरी आदि के सम्बन्ध में विशेष अधिकार दिलाने की व्यवस्था की गई है। इससे हरिजन भाइयों को लाभ अवश्य हुआ है परन्तु मनोविज्ञान की दृष्टि से अलगाव और पुष्ट ही हुआ है। मेरा अभिप्राय यह है कि हरिजन नामक भाइयो को विशेष अधिकार अवश्य मिलें—उनके सम्बन्ध के सब प्रतिबन्ध कानून से हटा लिये जावें और उनके हर प्रकार की अवहेलना दण्डनीय अपराध हो। परन्तु इस सूची बनाने की विधि में परिवर्तन एकता की भावना लाने के लिये अवश्य होना चाहिये।

यह कैसे हो? इसके लिये हरिजन कहे जाने वाले भाई विचार करके सुझाव दे सकते हैं। प्रशासन वाले भी अपने ढग से विचार करें। मैं तो स्वतन्त्र विचारक होने के नाते परिस्थिति अनुकूल होने पर अपने विचार प्रस्तुत करने का यत्न करूंगा। आजकल की प्रचलित राजनीति में प्राय ऐसे शब्द सुने जाते हैं। "मैं भी हरिजन होता तो अच्छा था" "मैं भी हरिजनों की सूची में नाम लिखाऊंगा" 'कभी हमारा भी नंबर आवेगा देखेंगे" इससे आन्तरिक कटुता का परिचय मिलता है और उसका प्रदर्शन कहीं-कहीं देखने को मिलता भी है। यह समस्या है, इसका भी समाधान होना चाहिये। ●

पृ० ८ का शेष

प्रतिनिधि के रूप मे प्रान्तीय युवक परिषद् और भावी युवक सघटन के वार्षिक अधिवेशन में मतदाता के रूप मे भाग लें।

प्रत्येक युवक सघटन के वार्षिक अधिवेशन की तीन बैठकें हो। प्रथम बैठक पहले दिन सायकाल ८ से ११ बजे तक दूसरी बैठक दोपहर बाद दो से पाच बजे होनी चाहिए। (परिस्थिति के अनुसार हेरफर सभव है।) प्रथम बैठक मे तीन विशेष विद्वानो के व्याख्यान होने चाहिय। दूसरी बैठक मे वार्षिक कार्यवाही पर विचार एव अधिकारियो का निर्वाचन यथासम्भव सवसम्मति से होना चाहिए। तीसरी बैठक मे प्रतिनिधियो के प्रस्तावों एव अगले वष के कार्यक्रम पर विचार होना चाहिये।

वार्षिक योजना मे कार्यकर्ता एव विद्यार्थी शिविर व्यायाम प्रशिक्षिण शिविर, धार्मिक परीक्षाओ का आयोजन साहित्य प्रकाशन तथा सदस्यता अभियान को विशेष महत्व देना चाहिए। केवल चन्दा मागकर कार्यकर्त्ताओ को मूल्यवान् समय एव स्वाभिमान नष्ट नही करना चाहिये। सदस्यता शुल्क आय का मुख्य साधन समझना चाहिये। प्रतिदिन कुछ न कुछ अपने युवक सघटन को योगदान देने का जीवन मे सत्यता लाने का व्रत करना चाहिये। सत्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है वेद के शब्दो मे—

ओ३म् व्रतेन दीक्षाम् आप्नोति दीक्षया आप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धाम् आप्नोति श्रद्धया सत्यम् आप्यते ॥

यजुर्वेद १९-३०।

व्रत के द्वारा मनुष्य अधिकार का, अधिकार से चतुरता को दक्षिणा से श्रद्धा को प्राप्त करता है। श्रद्धा से सत्य को प्राप्त किया जाता है।

सत्याचारी युवक ही सघटन को सबल बना सकते हैं। यदि सघटन द्वारा देश को युवक शक्ति एक सूत्र में बध गयो तो देश १९८७ तक अन्याय एव अज्ञान से तथा १९८७-२००७ तक अभाव रूपी दोष से मुक्त हो सकता है। सवत् २०६५ (सन् २००८) मे भारत महान् राष्ट्रो की श्रेणी मे प्रथम नम्बर पर हो सकेगा। इस बीच भारतीय युवको को चीन तथा पाकिस्तान से निर्णायक युद्ध लडने पड सकते हैं। आदर्श युवक ही सघटित अपने पराक्रम द्वारा शत्रु को दबा सकते हैं।

चालीस वर्ष बाद के समृद्धिशाली भारतवर्ष को युवको की दो पीढियो के पराक्रम की अत्यन्त आवश्यकता है। इस आवश्यकता को पूरा करने में आने वाली कठिनाइयो का कारण उत्तर देने वाले युवको को वास्तव मे युवक बनना ही पडेगा।

"धर्मेण निधन श्रेयो न जय पापकर्मण"—महाभारत के वचन को चरितार्थ करते हुये आगे बढने वालो को ससार मे कोई शक्ति नही रोक सकती। कवि के शब्दो मे—

विपदाएं कब रोक सकी हैं आगे बढ़ने वालों को।
बाधाएं कब बांध सकी हैं मरकर जीने वालों को॥
युवक संगठन! अमर रहे!!! ●

किसान

[श्री योगेन्द्र पाण्डेय] लखीमिया (बलिया)

सब लोगो के सग मृदु बोल, बोले अपने मन से तोल,
छूतछात का करके त्याग, टेरे 'सब समान' का राग,
रख सबसे उत्तम व्यवहार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
रखें नित्य ही मन को शुद्ध, काय न होवें वेद-विरुद्ध,
मन बाहर हो एक समान, जिनको प्रिय हो सभी किसान,
तोडो जाति की तब दीवार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
अपना कर वेदों की लीक, रहें, यही होवेगा ठीक,
ईश देय से ही लोग, करें, प्रेम से रह उपभोग,
अन्य कार्य का तब विस्तार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
करते वह बडी ही भूल, जो नित खाते हैं ताम्बुल,
खाते हैं इसको सोल्लास, नही सोचते जीवन-ह्रास,
कहते, 'यह मुख का शृंगार', कुछ सोचो, कुछ करो विचार।
मुख-श्री-वृद्धि भले करता है, पर जीवन को यह हरता है,
यह अवश्य तन दुख पाता है, जो कोई इसको खाता है,
इससे बढ़ता दुख-अम्बार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।—क्रमश

मांसाहार पाशविक मनोवृत्ति है

(श्री निहालसिंह आर्य बी० ए०, २७७४ किनवर, देहली-३१)

हमारे धर्मशास्त्रकार मनीषियों ने हमें सर्वांगीण जीवन को सुखी एव समुन्नत बनाने की सारी शिक्षाय दी हैं। उन्हीं में आहार की भी उत्तम शिक्षा दी है क्योंकि आहार ही इस स्थूल भौतिक शरीर का प्रथम आधार है। इसीलिए तो आहार शरीर के अन्नमय कोष की पुष्टि करता है। जितना हमारा आहार शुद्ध सात्विक होगा उतना ही हमारा मन, बुद्धि तथा शरीर भी शुद्ध एव सात्विक होगा। "आहारशुद्धौ सत्वशुद्धि" शास्त्र-वचन के अनुसार आहार की शुद्धि से ही हम सत्वगुण प्रधान ज्ञानवान् बन सकते हैं, अन्यथा नहीं। परन्तु आजकल अविद्या के कारण एक प्रबल भ्रामक विचारधारा भी समूचे देश और ससार में फैल रही है कि मांस भी आहार मे सम्मिलित है। बहुत से लोग प्रायः मास खाते हैं। कुछ तो स्वाद की पूर्ति के लिए और कुछ अन्न के अभाव की पूर्ति के लिए मास खाते हैं। परन्तु यह विचारधारा सर्वथा निराधार एव निर्मूल है। मास जीवों की हत्या के बिना प्राप्त नही हो सकता और निरपराधी उपकारी जीवों की हत्या करना महापाप तथा अत्याचार है। इस विषय मे धर्मशास्त्रकार महामुनि श्री महाराज ने कितना सुन्दर कहा है।

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।

संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातका॥

अर्थात् अनुमति दाता, मारने वाला, काटने वाला, बेचने-मोल लेने वाला, पकाकर तैयार करने वाला, परोसने वाला और खाने वाला ये आठ प्रकार के घातक=हत्यारे होते हैं। और जीवो की हत्या करना पशुओं की मनोवृत्ति है। मनुष्यो का धर्म नही। महान् परोपकारी अतीव हितकारी आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश की भूमिका में स्पष्ट कहा है कि "जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं। जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निबलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहलाता है। और जो स्वार्थ-वश होकर परहानि मात्र करता है वह जानो पशुओ का भी बड़ा भाई है।" अतः अपने स्वाद पूर्ति के लिए असमर्थ निरीह पशुओ का वध करके मास खाने वाले महानिन्द्य एव पापी हो तो हैं। अयं शास्त्रादेशानुसार "आत्मन. प्रतिकूलानि परेषाम् न समाचरेत्" अपने आत्मा के विरुद्ध दुःखदायी व्यवहार औरो के साथ भी नही करना चाहिए। परमात्मा की सृष्टि मे अनेक योनियो के जीव निर्वाह करते हैं, उनमे से बिना कारण किसी को भी मारना धर्म का ही हनन करना है। परन्तु सृष्टि के आदि विद्वान् मनु जी के अनुसार रक्षा किया हुआ धर्म हमारी रक्षा करता है और हनन किया हुआ धर्म भी हमारा महाहनन कर देता है, यह अकाट्य सिद्धान्त कभी मत भूलो। जब किसी दुर्घटनावश एक मनुष्य अपने हाथ पैर में लगी हुई थोड़ी सी चोट के कारण ही पीड़ा से रोने चिल्लाने लगता है, वैद्य डाक्टरों के पास पट्टी बंधवाता फिरता है। किसी फोड़े आदि के चीरा-फाड़ी (Operation) के समय पीड़ा के कारण अचेत करना पड़ता है। विशूचिका वा मलेरिया ज्वर के निवारणार्थ टीका लगाने वाले को देखकर छोटे बालक भाग जाते हैं और बड़े पुरुष छुप जाते हैं। तो भला इन भेड़-बकरियो और गायो आदि पशुओ के आत्मा चेतना शून्य थोड़े ही हैं? जो इनको काटते समय दर्द ही नहीं होता। अवश्य होता है और ये निरपराधी परोपकारी पशु हत्यारे को कोसते रहते हैं। जिनका रोदन हिंसक के विनाश का भी कारण बन जाता है। जो मनुष्य इन अत्यन्त सरलता अहिंसक परोपकारी भेड़, बकरी गाय आदि—पशुओं का वध करते हैं। वे सब अपने राष्ट्र की ही सम्पत्ती का नाश करते हैं। वे राष्ट्रघातक एव राष्ट्र द्रोही हैं।

जिस देश मे पशुओ का हनन और नारी का अनादर किया जाता है उस देश में दरिद्रता आ जाती है और भाई भाई में ईर्ष्या द्वेष बढ़ जाता है जैसा कि आजकल भी देखने में आ रहा है। आज तक किसी भी वैदिक शास्त्र व आर्ष ग्रन्थ मे पढने सुनने में नहीं आया कि मास खाना धर्म है और उचित है। हा इन सूक्ष्मदर्शी विद्वानो महात्माओ के उपदेशों में मास भक्षण का निषेध तो अवश्य आया है। जैसा मनु जी महाराज कहते हैं—

वर्जयेन्मधुमांसं च गन्धं माल्यं रसान् स्त्रियः।

शुक्तानि यानि सर्वाणि प्राणिनां चैव हिंसनम्॥ मनु०२-१७७

अर्थात् मनुष्यो को शराब, मांस, अति शृगार, चटपटे रस स्त्रियों का अति सग सभी प्रकार की खटाइया और सभी प्राणियों की हिंसा सर्वथा छोड़ देनी चाहिए।

धर्मं शनैः संचिनुयाद्वल्मीकमिव पुत्तिकाः।

परलोके सहायार्थं सर्वभूतान्यपीडयन॥ मनु० ४-२३८

अर्थात् जिस प्रकार दीमक शनै शनै. थोड़ी-थोड़ी मिट्टी सचय करके पूरी बम्बी बना देती है, इसी प्रकार मनुष्य को भी किसी भी प्राणी को कोई पीड़ा देते हुये परलोक की सहायतार्थ प्रतिदिन आजीवन धर्म का सचय करना चाहिये।

मनु जी ने धर्म के चार प्रधान लक्षणों मे एक "स्वस्य च प्रियमात्मन" भी कहा है मनु० २-१२ अर्थात् जो व्यवहार अपने आत्मा को प्रिय लगे केवल वही दूसरो के साथ भी करना अपेक्षित है। हम सदैव चाहते हैं कि हम पूर्ण स्वस्थ, सुखी, शान्त और निरोग रहें तो हम भी दूसरे प्राणियों को स्वस्थ सकुशल रहने द उन्हें कभी न मारें।

ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा।

नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत्॥ मनुः ४-२१

अर्थात् मनु जी ने प्रत्येक मनुष्य के लिए कर्तव्य पांचों महायज्ञों में एक भूत यज्ञ भी बताया है जिसमें वे किसी भी (भूत) प्राणी को न मारें अपितु गाय, कुत्ता, कौवा चींटी आदि प्राणियों को अन्न दान और रक्षा आदि से सन्तुष्ट रखें।

द्यूतं च जनवादं च परिवादं तथानृतम्।

स्त्रीणां च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च॥ मनु० २-१७९

अर्थात् मनुष्य को जूआ खेलना, चाहे जिसकी व्यर्थ कथा, निन्दा करना स्त्रियों का कामुकदर्शन और दूसरे सभी प्राणियों की हिंसा का सर्वथा निषेध है।

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थम् इन्द्रियनिग्रहः।

ब्रह्मचर्यपरं तीर्थं अहिंसा तीर्थं उच्यते॥ महाभारत

अर्थात् इस भवरूपी सागर से पार करने वाले सत्यव्रत, क्षमा, इन्द्रियों पर विजय, ब्रह्मचर्य आदि (नौका) तीर्थों के साथ अहिंसा भी एक तीर्थ है जिससे किसी भी जीव की हत्या नही करना लक्षित है। महर्षि दयानन्द जी एक स्थान पर कहते हैं कि "ऐ मासाहारी लोगो! जब तुम को पशु पक्षी आदि खाने को न मिलेंगे तो क्या मनुष्यो को भी छोड़ोगे वा नहीं?" एक बार महर्षि दयानन्द को किसी ने भोजन का निमन्त्रण दे दिया। स्वामी जी ने आग्रहवश मान लिया परन्तु जब उसके घर भोजन समय पर गए तो प्रवेश द्वार पर मारे हुए पशुओं के सींग पूंछ और हड्डी आदि को देख कर उलटे पैरों चले आये और कोई भोजन नहीं खाया। जब इतने महान योगी परम तपस्वी वीतराग महर्षि मांसाहार का निषेध करते हैं तो आज के इस धर्महीन युग के रोगी भोगी जर्जर लोगों की मांस भक्षण की बात किस प्रकार मान्य हो सकती है? सत्यार्थप्रकाश के दशम समुल्लास में ऋषि ने कितना स्पष्ट उपदेश किया है "जो लोग मास भक्षण और मद्यपान करते हैं उनके शरीर और वीर्य आदि धातु भी दुर्गन्धादि से दूषित होते हैं इसलिये उनके सग करने से आर्यों अर्थात् श्रेष्ठजनों को भी यह कुलक्षण न लग जायें।" अत मांस भक्षण को दूषित एव कुलक्षण कहा है। "हां इतना अवश्य चाहिये कि मद्य मांस का ग्रहण कदापि भूल कर भी न करें"

सत्यार्थप्रकाश समु० १०

'हा, मुसलमान ईसाई आदि मद्य मांसाहारियों के हाथ के खाने में आर्यों को भी मद्यमांसादि खाना पीना अपराध पीछे लग पड़ता है"

स० प्र० समु० १०

"देखो! जब आर्यों का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु

शेष पृ० ११ पर

विदेश में रहने वाले हमारे एक पाठक का पत्र

Paramaribo 3 sept. 1969 219 zwartenhoven brucsstraat suriname S. A. Behary kalloe.

आर्यमर्यादा की सम्पाक जी

मैं अपनी सलीना चन्दा भेज रहा हु और साथ ही साथ अपनी भाई Autar. Ramanennd की सालीना चन्दा जीस का पता है Pontcwer fstraat 14 आप के पत्र से हम सब पुरा लाभ उठा रहा हु यदि मैं कीसी तरह् की सहायता आप की कर सकु तो मैं हमेसा तैयार हुं दयानन्द के सेवक के तरह्।

ईस देस मे आर्यसमाज स्थापना हुवे चालीस बर्स 28 September के होगा ईस उपलछ मे यहा बहुत समरोह के साथ ईस दिवस मनाया जायगा हम सब ईस सुभ काम के लिये अन्दंस्वामी सरस्वती को भार्त से मगाय है वेद प्रचार के लिये ।। मैंनें खुद आप से मिल ने भार्त आय थो गत ।। august 1969 लेकीन से मील न आप सका आप के कारोबार मे कुछ बाधा था ईस पत्र के अन्दर एक चेक दो पोन्दस्तेरलीग के भेजता हूं। मैं बिहारी कल्लु

[विशेष—विदेश में एक आर्य भाई का यह पत्र हम उन की ही लिखाई में प्रकाशित कर रहे हैं। इस से पता चलता है कि विदेशों में रहने वाले हमारे प्रवासी भाइयों को धर्म और भाषा से कितना प्रेम है। साथ ही आर्यमर्यादा पर भी पूर्ण स्नेह वे रखते हैं —व्यवस्थापक

कानपुर में कुख्यात ईसाई पादरी का हिन्दू धर्म में प्रवेश

आर्यसमाज गोविन्द नगर कानपुर में एक विशाल सभा में आर्यसमाजी नेता श्री देवीदास आर्य ने कुख्यात ईसाई पादरी (मिशनरी) श्री एलफरेड डाइनियल को शुद्ध करके हिन्दू धर्म में प्रवेश कराया। उन का नाम मनोहरलाल बाली रखा गया।

श्री डाइनियल ने बताया कि अन्तर राष्ट्रिय ईसाई सम्मेलनों में मुझे विदेशों में जाना पड़ता था वहां पर हम से एक ही प्रश्न किया जाता था कि ६८ ईसाई देशों का करोड़ों रुपया भारत में लग रहा है फिर भी अब तक भारत ईसाई क्यों नहीं बना? हम भारतीय पादरी इस का जवाब दिया करते थे कि हमारे कार्य में सब से अधिक रुकावट आर्यसमाज है। हम जहां लाखों रुपया खर्च किया करते हैं वहां आर्यसमाज चन्द सौ रुपया खर्च करके हमारे किये कराये पर पानी फेर देता है। इस समारोह के पश्चात् केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर के तत्वावधान में एक विशाल समारोह श्री देवीदास आर्य की अध्यक्षता में लाजपतनगर में हुआ जहां श्री डाइनियल का स्वागत किया गया। —मन्त्री आर्यसमाज

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस (जि० अलीगढ़)

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस में संस्कृत भाषा में भाषण श्लोक, अन्त्याक्षरी, नाटकादि में भाग लिया। शिक्षक वर्ग के भी ओजस्वी भाषण हुये।

कन्या गुरुकुल तथा स्थानीय आर्यसमाज द्वारा श्रावणी उपाक्रम से कृष्णजन्माष्टमी पर्यन्त प्रचार सप्ताह मनाया गया जिसमें प्रातः सायं यजुर्वेद पाठ सहित बृहद् यज्ञ किया गया।

हरयाणा के आर्यसमाजों में वेद सप्ताहों की धूम

इस वर्ष आर्य समाजों ने बड़े उत्साह से वेद प्रचार में भी अपेक्षाकृत अधिक बल दिया है और कार्य में बड़ी प्रगति हुई है। निम्न समाजों में वेद सप्ताह सम्पन्न हुये।

१. जींद—यहां के प्रतिष्ठित आर्य परिवार में यज्ञ तथा कथा का कार्यक्रम रहा। सभा की ओर से श्री पं० समरसिंह जो वेदालकार, श्री पं० रामनाथ जी आर्योपदेशक तथा श्री पं० तेजभानु जो ने भाग लिया। जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

२. नीलोखेड़ी—आर्य समाज के शानदार मंदिर में वेद प्रचार सप्ताह बड़ी धूम धाम से मनाया गया। सभा को ओर से श्री पं० निरंजनदेव जी वेदप्रचार अधिष्ठाता तथा श्री पं० अमरनाथ जी प्रेमी ने भाग लिया। संख्या बहुत होती रहो, समाज का सेवा भाव अति प्रसशनीय है।

३. गोहाना—आर्यसमाज का वेद प्रचार सप्ताह बहुत सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री पं० हरिदेव जो श्री पं० विद्या निधि शास्त्री, श्री पं० रामनाथ जी आर्योपदेशक, श्री पं० तेजभानु जी तथा श्री अमरनाथ प्रेमी ने इस कार्य में अच्छा योग दिया।

४. पानीपत—नगर की पुराने और बड़े आर्यसमाज में वेद प्रचार सप्ताह बड़े उत्साह से मनाया गया। श्री पं० ओमप्रकाश जी शास्त्री, तथा श्री प० रामनाथ जी यात्री भजनोपदेशक का कार्यक्रम बहुत पसंद किया गया।

निम्नलिखित आर्य समाजों के उत्सवों की स्वीकृति सभा को ओर से भेजी जा चुकी है। बरनाला, जि० सगरूर कसौली हिमाचल प्रदेश, जाखल तथा आयसमाज होलीमोहल्ला करनाल आदि। अन्य आर्य समाजों से प्रार्थना है कि अपने उत्सवों की तिथिया शीघ्र निश्चित करके प्रबंध के लिये मुझे लिखें। सभा की ओर से उपदेशका तथा भजनोकों का उत्तम प्रबन्ध यथा समय किया जावेगा।

—निरंजनदेव वेदप्रचाराधिष्ठाता
आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब गुरुदत्त भवन जालन्धरनगर

पृ० १० का शेष

नही मारे जाते थे। तभो आर्यावर्त्त वा अन्य भूगोल देशों में बड़े आनन्द में मनुष्यादि प्राणी वर्त्तते थे। जब से विदेशी मांसाहारो इस देश में आके गौ आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपानी राज्य अधिकारो हुए हैं तब से क्रमशः आर्यों के दु ख की बढती होती जाती है क्योंकि—"नष्टे मूले नैव फलं न पुष्पम्।"

"एक गाय के शरीर से दूध घी बैल गाय उत्पन्न होने से एक पीढ़ी में चार लाख पछत्तर सहस्र छः सौ मनुष्यों को सुख पहुंचता है वैसे पशुओं को न मारें, न मारने दें। बकरी के दूध से २५९२० (पच्चीस सहस्र नौ सौ बीस) आदमियों का पालन होता है। वैसे हाथी, घोड़े, ऊंट गधे, भेड़ आदि से भी बड़े उपकार होते हैं। इन पशुओं को मारने वालों को सब मनुष्यों की हत्या करने वाले जानियेगा—स० पु० समु० १०

इन उपर्युक्त सभो वचनों में महर्षि दयानन्द जो ने मांसाहार सर्वथा हानिकारक, दुखदायो निषिद्ध एवं पापाचरण ही माना है। भला जो गाय भैंस, भेड़ बकरी आदि पशु और मुर्गी, तीतर कबूतर, आदि पक्षी मल-मूत्र त्यागने पर न तो कभी अपने अपवित्र हुए गुप्तांगों की शुद्धि करते और न कभी स्नान आदि करते हैं अपितु अपने और दूसरों के भी मलमूत्र तथा कीचड़ आदि में पड़े रहकर घसे रहते हैं तो उनके इस रक्त मास आदि धातुयें भी तो सर्वथा मलीन विकृत होती हैं, अतः इनके मलीन मांस के भक्षण से मनुष्यों का शरीर, मन और बुद्धि भी तो अति मलीन होने में कोई सन्देह नहीं है। कई लोग इतिहास के नाम से प्राचीन राजाओं के शिकार खेलने की बात कहते हैं परन्तु यह बात भी भ्रमपूर्ण है क्योंकि रामायण महाभारत आदि किसी भी आर्षग्रन्थ में ऐसे प्रमाण नहीं मिलते। हां वे राजा लोग शेर, चीता, भेड़िया, रीछ आदि हिंसक पशुओं को अवश्य मरवाकर गडवा देते थे। मांसाहारी मनुष्यों से तो ये गाय बकरी घोड़े आदि पशु लाख दर्जे अच्छे हैं जो हमारा उपकार करके भी अत्यन्त क्षुधार्त्त होने पर भी मांस को मुंह तक नहीं लगाते हैं। शेर चीता रीछ आदि जिन पशुओं को या पंजे लम्बे मुड़े हुए हों और जिह्वा से चपल-चपल करके जल पीते हों वहीं मांस खाते हैं और जिनके दांत छोटे और सीधे तथा पैरों में सुम, खुर हों, जो पूरी घूट भर कर पानी पीवें वे मांस नहीं खाया करते। मनुष्यों के पंजे न होकर नाखून छोटे-सीधे, दांत भी सीधे और घूंट भरकर पानो पीते हैं। ये तो लक्षण ही साकाहारी के हैं अतः ऐ मेरे आर्यबन्धुओ और माताओ! जब परम पिता परमात्मा ने हमारे लिये अपनो उत्तम सृष्टि में अति मधुर फल फूल कंद अन्न मेवे खाने को पुष्कल दिये हैं, तो इन निरीह पशुओं को मार इनका मांस खाना महामूर्खता भ्रष्टता तथा पाप है। परमात्मा हम सबको सुबुद्धि दें कि हम महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदत्त इस उपदेश को जीवन में चरितार्थ कर आनन्दित हों।

"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनो चाहिये।"

आर्यसमाज नारनौल का वार्षिक निर्वाचन

निम्न प्रकार से पदाधिकारी चुने गये।

प्रधान—श्री प्रभुदयाल जी, मन्त्री—श्री प्रह्लाद जी, कोषाध्यक्ष—श्री तोलाराम जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री डा० मंगलसेन जी।

—मन्त्री आ० स० नारनौल

आर्यसमाज होलीमोहल्ला करनाल का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज होलीमोहल्ला करनाल का वार्षिकोत्सव ३ से ५ अक्टूबर ६९ को धूम धाम से होगा। इस शुभावसर पर आर्यमर्यादा के सम्पादक श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री श्री रघुवीरसिंह शास्त्री संसत्सदस्य सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान प्रो रामसिंह जी एम ए एवं आर्य जगत् के सन्यासी विद्वान् और सभा की प्रसिद्ध भजन मण्डलियां पधार रही हैं। —मन्त्री आर्यसमाज

धार्मिक परीक्षाएं

सरकार से रजिस्टर्ड आर्य साहित्य मण्डल अजमेर द्वारा संचालित भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्या विनोद, विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या वाचस्पति की परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। किसी भी परीक्षा में कोई भी बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में सुन्दर सुनहरी उपाधि पत्र प्रदान किया जाता है। इनमें धर्म के अतिरिक्त साहित्य, इतिहास, भूगोल, राजनीति समाज-विज्ञान आदि का कोर्स भी है। निम्न पते से पाठविधि व आवेदन पत्र मुफ्त मंगा कर केन्द्र स्थापित करें। परीक्षा शुल्क भी बहुत कम है। कोई भी सज्जन कहीं पर भी केन्द्र बना सकते हैं। डा० सूर्यदेव शर्मा शास्त्री, एम०ए०डी० लिट्

परीक्षा मन्त्री, आर्य विद्यापरिषद, अजमेर।

विदेशों में रहने वाले ग्राहक महानुभावों से निवेदन

आर्योदय की भान्ति हम सभी ग्राहक महानुभावों की सेवा में "आर्यमर्यादा" नियम पूर्वक भेज रहे हैं। हमें प्रसन्नता है कि कुछ महानुभावों ने अपना वार्षिक शुल्क बिना पत्र लिखे ही भेज कर ग्राहक बने रहने की कृपा की है।

जिन ग्राहक महानुभावों ने अभी तक अपना शुल्क नहीं भेजा है उनसे निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क समुद्री डाक का २०) या एक पौंड और हवाई डाक का ३०) यथाशीघ्र भेजने का कष्ट करें। "आर्यमर्यादा" आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का पत्र होने के कारण इस का बैंक में पृथक् खाता नहीं है। अतः अपना चैक आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब (Arya Pratinidhi Sabha Punjab) के नाम भेजने की कृपा करें। विदेशों की आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपने यहां के समाचार आर्यमर्यादा में प्रकाशनार्थ भेज कर लाभ उठावें। व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा हिन्दी साप्ताहिक

१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

आर्यसमाज बस्ती शेख, जालन्धर में वेद सप्ताह

जालन्धर की ओर से ८-९-६९ से १४-९-६९ तक वेद सप्ताह पूर्ण उत्साह के साथ मनाया गया। —मन्त्री रामकृष्ण

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

अप्न मर्यादा कवयस्ततक्ष (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

[illegible] घृत और सुगन्धादिपदार्थ एक मनुष्य खाता है उतने [illegible] होम से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है परन्तु जो मनुष्य लोग घृतादि उत्तम पदार्थ न खावें तो उनके शरीर और आत्मा के बल की उन्नति न हो सके। (प्रश्न) प्रत्येक मनुष्य कितनी आहुति और एक एक आहुति का कितना परिमाण है? (उत्तर) प्रत्येक मनुष्य को सोलह सोलह आहुति और छः छः माशे घृतादि एक एक आहुति का परिमाण न्यून से न्यून चाहिये और जो इस से अधिक करे तो बहुत अच्छा है ॥

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४२ | २० आश्विन वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ५ अक्तूबर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१० रु०
" " विदेश में २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

तस्मात्किं किं स्थापयित्वा सर्वे. सुखयितव्यमित्युपदिश्यते ॥

उस में क्या क्या स्थापन करके सब मनुष्यों को सुखयुक्त होना चाहिये इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ॥

रेवती नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः ।
क्षुमन्तो याभिर्मदेम ॥ ऋ० १. ३०.१३ ॥

पदार्थः—(रेवतीः) रयिः शोभा धनं प्रशस्तं विद्यते यासु ताः प्रजाः (नः) अस्माकम् (सधमादे) मादेनानन्देन सह वर्त्तमाने (इन्द्रे) पर- [illegible] तुवि बहुविधो वाजो विद्याबोधो यासां ताः (क्षुमन्तः) बहुविधं क्षुन्नं विद्यते येषां ते (याभिः) प्रजाभिः (मदेम) आनन्द प्राप्नुयाम ॥

अन्वयः—यथा क्षुमन्तो वय याभिः प्रजाभिःसधमादे मदेम तुविवाजा रेवतीः रेवत्यः प्रजा इन्द्रे परमैश्वर्ये नियुक्ताः सन्तु ॥

भावार्थः—अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः । मनुष्यैः ससभासेनाध्यक्षेषु सभासत्सु सर्वाणि राज्यविद्याधर्मप्रचारकराणि कार्य्याणि संस्थाप्य प्रशस्तं सुख भोज्य भोजयितव्य च वेदाज्ञया समानविद्यारूपस्वभावानां युवावस्थानां स्त्री पुरुषाणा परस्परानुमत्या स्वयवरो विवाहो भवितु योग्यस्ते खलु गृहकृत्ये परस्परसत्कारे नित्य प्रयतेरन् सर्वे एते परमेश्वरस्योपासने तदाज्ञाया सत्पुरुषसमाज्ञायां च सर्वदा वर्त्तेरन् नैतद्भिन्ने व्यवहारे कदाचित् केनचित्पुरुषेण कयाचित् स्त्रिया च क्षणमपि स्थातु योग्यमस्तीति ॥

भावार्थः—(क्षुमन्तः) जिन के अनेक प्रकार के अन्न विद्यमान हैं वे हम लोग (याभिः) जिन प्रजाओं के साथ (सधमादे) आनन्दयुक्त एक [illegible] (तुविवाजाः) बहुत प्रकार के विद्याबोध वाली (रेवतीः) जिन के प्रशंसनीय धन है वे प्रजा (इन्द्रे) परमैश्वर्य के निमित्त (सन्तु) हों ॥

भावार्थ—यहा वाचक लुप्तोमालङ्कार है। मनुष्यों को सभाध्यक्ष सेनाध्यक्ष सहित सभाओं में सब राज्य विद्या और धर्म का प्रचार करने वाले कार्य स्थापन करके सब सुख भोगना वा भोगाना चाहिये और वेदकी आज्ञा से एक से रूप स्वभाव और एक सी विद्या तथा युवा अवस्था वाले स्त्री और पुरुषों की परस्पर इच्छा से स्वयंवर विधान से विवाह होने योग्य हैं और वे अपने घर के कामों तथा एक दूसरे के सत्कार में नित्य यत्न करें और वे ईश्वर की उपासना वा उस की आज्ञा तथा सत्पुरुषों की आज्ञा सदाचित देवें किन्तु उक्त व्यवहार से विरुद्ध व्यवहार में कभी किसी पुरुष वा स्त्री को क्षणभर भी रहना न चाहिये ॥

ग्राहकों तथा पाठकों को आवश्यक सूचना

१२ अक्टूबर १९६९ के अंक में गुरु विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में सम्वत् १८५६ का एक मुसलमान द्वारा हस्तलिखित उर्दू पत्र प्रकाशित किया जायेगा।

—व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

श्री रामगोपाल शालवाले का सार्वदेशिक सभा द्वारा आर्यसमाज संघटन समिति के कार्यों में विरुद्ध विषवमन

आर्यसमाज संघटन समिति के कार्यों में विघ्न का प्रयास

नई दिल्ली २९-९-६९ आर्यजगत् के झगडे समाप्त कराने तथा शान्ति स्थापना कराने के महात्मा आनन्द भिक्षु जी तथा उनकी आर्य संघटन समिति के प्रयत्नों को श्री रामगोपाल शालवाले तथा उनके साथी पूरी शक्ति के साथ विफल करने पर लग गये हैं। "सार्वदेशिक साप्ताहिक" दिनांक २१-९-६९ तथा २८-९-६९ मे महात्मा जी तथा उनकी संघटन समिति के विरुद्ध अवांछनीय लेखों द्वारा उन्हें बदनाम करने का पूर्ण प्रयास किया गया है। महात्मा जी द्वारा आर्यजगत् को पता लग गया है कि श्री रामगोपाल शालवाले तथा उनके [illegible] ही झगडे कर रहे हैं। वर्तमान स्थिति आर्यजनता के आगे महात्मा जी द्वारा रखने पर श्री रामगोपाल आदि के सब भेद खुल जावेंगे इसलिए उन्होंने महात्मा जी तथा उनकी संघटन समिति के विरुद्ध ही आन्दोलन आरम्भ कर दिया है। इस सारे षड्यंत्र के लिए श्री रामगोपाल को आर्यजगत् के एक कुख्यात व्यक्ति श्री भारतेन्द्रनाथ की सेवाएँ उपलब्ध हैं और सार्वदेशिक मे छप रहे निम्नस्तरीय लेखो मे उनका मुख्य हाथ है। श्री भारतेन्द्रनाथ का तो यह पेशा है। उन्हें चाँदी के कुछ सिक्के देकर जैसा मर्जी कार्य करा लें परन्तु ला० रामगोपाल भूल गये कि श्री भारतेन्द्रनाथ जिसके साथ लगेगा उसे भी ले डूबेगा। कल संघटन समिति की बैठक मे उपरोक्त लेखो के विरुद्ध बहुत रोष था। पता लगा है कि शीघ्र महात्मा जी सारी स्थिति आर्यजगत् के समक्ष रखेंगे। हालांकि सेठ प्रताप जी शूर बल्लभदास को वर्ष भर की २-३ अन्तरंगो की बैठको का सभापतित्व करने के लिए ही श्री रामगोपाल आदि ने साथ रखा हुआ है फिर भी महात्मा जी उन्हें भी सार्वदेशिक पत्र में छपे लेखो द्वारा हुए नैतिक पतन की ओर उनका ध्यान आकर्षित करेंगे

१४-९-६९ को श्री रामगोपाल की सार्वदेशिक के अतिरिक्त अन्य तीन पक्षों के प्रतिनिधि महात्मा जी को मिले थे। श्री प्रकाशवीरजी शास्त्री ने त[illegible] श्री राजसिंह जी आदि ने महात्मा जी को बताया था कि झगडा सार्वदेशिक सभा का है। अत. जब तक वह समाप्त न होगा प्रान्तीय सभाओं तथा आर्यसमाजो में शान्ति न होगी। इस विषय मे महात्मा जी प्रयत्नशील हैं। आम लोगो का मत है कि श्री रामगोपाल और उनके साथी महात्मा जी की कोई बात न सुनेंगे।

श्री वीरेन्द्र की तथाकथित पंजाब सभा की ओर से डा० हरिप्रकाश [illegible] उपस्थित थे। उन्होंने कहा कि वह तो सार्वदेशिक सभा को [illegible] ही नहीं उन्हें तो सार्वदेशिक की गोद में धकेला गया है। उन्होंने अन्त मे कहा कि आचार्य भगवान् देव जी पंजाब सभा के झगडों का जो फैसला कर दें उन्हें स्वीकार है। महात्मा जी के साथ डा० हरिप्रकाश, आचार्य जी के पा[illegible] जाने को कह गये थे परन्तु अभी तक कोई प्रोग्राम नहीं बना। संघटन समि[illegible] के प्रमुख सदस्यो का मत है कि डा० हरीप्रकाश पर न तो श्री रामगोपा[illegible]

शेष पृ० तीन पर

अमेरिका में भारतीय संस्कृति

(डा० शिवपूजन सिंह कुशवाहा एम.ए., साहित्यालङ्कार, विशारद, कानपुर)



अमेरिका एक महाद्वीप है और मुख्यत: उत्तर-अमेरिका, मध्य-अमेरिका तथा दक्षिणी-अमेरिका के नामो से तीन हिस्सो मे बँटा हुआ है। उत्तर से दक्षिण तक यह ४६०० मील, पूर्व से पश्चिम तक ३१२० मील तक लम्बा व चौडा है। भूपरिमाण प्राय ८३,१९,७११ वर्गमील पर्य्यन्त है। आज यह महा देश विश्व मे सबसे धनी माना जाता है।

अमेरिका के आदिम निवासी ताम्रवर्ण के होते हैं आकार मे ये बौने, ओठ और गाल मोटे तथा लम्बे-लम्बे काले बालो वाले हैं। ये लोग अमेरिका में सर्वत्र देखने को मिलते हैं। अंग्रेज लोग इन्हे 'रेड इण्डियन' (Red Indian) कहते हैं। शरीर में लाल रग लगाने से ये लोग लाल (Red) इण्डियन कहे जाते हैं। ये लोग हिन्दू धर्म के महान् आदि देव भगवान् सूर्य के उपासक हैं। तेरह सौ वर्ष पूर्व 'तोलतेक' नामक कोई सुसभ्य जाति इस देश के उत्तर 'अना-हु-याक' स्थान में बस गई थी। अना-हु-याक को इस समय 'मेक्सिको' कहते हैं।

अमेरिका में नाग लोक निवास करते हैं। यहा नागलोक आज भी हैं। इनके आर्यत्व का बोध कराने वाला एक प्रमाण है कि अमेरिका में ये एक देवता बनाते हैं जिसका शरीर मनुष्य का और सिर हाथी का होता है। यह मूर्ति 'गणेश' से नितान्त मिलती-जुलती है। अमेरिका में हाथी तो होता नही है अत यह देवता भारत से ही वहाँ गया है। इसकी उत्पत्ति 'ओ३म्' से हुई है, क्योकि यही प्रारम्भ में मङ्गलाचरण के लिये लिखा जाता है। यही लिखते-लिखते शीघ्रता के कारण 'गजानन' (गणेश) बन गया है। लोकमान्य प० बालगगाधर तिलक लिखते हैं—"प्राचीन शोधको ने यह निश्चय किया है, कि पहले अमेरिका के पेरू तथा मेक्सिको देश में स्वस्तिक चिह्न शुभदायक माना जाता था।"[1]

यह 'स्वस्तिक' 卐 भी ओ३म् का ही अपभ्रंश है। 'चरकपूजा' बगाल और दक्षिण अमेरिका के बहुत राज्यो मे मनायी जाती थी। किसी समय मेक्सिको, गाटेमाला, पेरू, बोलीविया, में भारत से अधिक देवताओं के मन्दिर थे। मध्य और दक्षिण अमेरिका में शिव, गणेश, सूर्य, इन्द्र, हनुमान्, विष्णु और कूर्मावतार तथा अन्य हिन्दू देवताओं की पूजा होती थी। पेरू मे शिव, गणेश, डीगो (Diago) के गणेश मन्दिर, हनुमान् और शिव गाटेमाला म्यूजियम में, मेक्सिको में वेराक्रूज में शिवलिंग और विष्णु की मूर्ति मेक्सिको नगर के नेशनल म्यूजिम में है। मेक्सिको के विष्णु की मूर्ति के हाथ मे गदा व चक्र है। मेक्सिको नेशनल म्यूजियम में इन्द्र और वामनावतार की मूर्ति सुरक्षित है।

महाभारत से ज्ञात होता है कि—

"ऐरावतकुले जात, कौरव्यो नाम पन्नग:।
तस्याहं दुहिता पार्थ, उलूपी नामपन्नगी॥"

(महा० भा० अ० २०२ श्लो० १८)

ऐरावत कुल मे कौरव्यो नामक पन्नग उत्पन्न हुआ। उसकी लडकी उलूपी थी। इसी उलूपी से अर्जुन का विवाह आर्यरीति से हुआ था। इससे सिद्ध होता है कि कोलम्बस के अन्वेषण के पूर्व वहाँ आर्यधर्म था। उस समय अमेरिका 'पाताल' कहलाता था।

"अमेरिका के आदि वासी समाज में भगवान् रामचन्द्र जी और साध्वी श्रेष्ठा माता सीता का उत्सव अत्यन्त धूमधाम से मनाया जाता है।"[2] श्री उमेशचन्द्र विद्यारत्न लिखते हैं—"एखन उ दक्षिण अमेरिकाय रामसीतोया उत्सव सम्पन्न हइया थाके।"[3] अर्थात्—आज भी दक्षिण अमेरिका में राम सीता का उत्सव होता है।

प्राचीन मेक्सिको में वर्षा ऋतु में पहाडों की प्रतिष्ठा के लिये धार्मिक उत्सव मनाया जाता है जैसे भारत में पर्वत शिखर पवित्र माना जाता है। भारत और अमेरिका दोनो मे तालाब की मछलियो को पवित्र समझ कर पूजा की जाती है। विष्णु के दस अवतारो में 'मत्स्य' अवतार हिन्दुओं में प्रचलित ही है। मेक्सिको निवासी 'नाने याह्' 'ईश्वर की पहाडी' कहते हैं। वे उच्च स्थानो को 'पवित्र गृह' अथवा 'परमात्मा का गृह कहते हैं। हिन्दू लोग देवेली (देवालय), देव हवेली 'देवगृह कहते हैं। "ऋषि पुलस्त्य धर्म प्रचार करने के लिये आस्ट्रेलिया गये, वेदव्यास अमेरिका और वलख को गए, बौद्ध सन्यासी पेलिस्टाइन, ग्रीस और चीन को जाते रहे।"

प्रसिद्ध गवेषक श्री कीम्मीक (Kimmick) और दक्षिण अमेरिका का इतिहासज्ञ ३० वर्ष पूर्व लिखता है—"मैं विश्वास करता हू कि वे (प्राय) मलाया के काटामारा (नाव के लिये तामील शब्द) जो एक सौ टन भार ले जाता था, के द्वारा अमेरिका में पहुंचे। मलाया के निवासी और उनके सम्बन्धी पोलिनेशियन इस नाव द्वारा सम्पूर्ण प्रशान्त महासागर को पार किए और पाचवी शताब्दी में मारकीसस द्वीप समूह और हवाई में आये।"

'पेरू' शब्द तो भारत में बहुत दिनों से प्रसिद्ध है। कुछ ऐतिहासिक विद्वान् ऋग्वेद मे 'पेरू' शब्द को देखकर पेरू के साथ भारतीयों का पुराना सम्बन्ध स्थिर करते हैं। वेदो में कोई भौगोलिक व ऐतिहासिक नाम नही हैं। वेदो के सभी शब्द यौगिक हैं। अत: ऐतिहासिकों की कल्पनामात्र ही है। वे मत्र यो हैं—

"युक्तो ह यद्वां तौग्र्याय पेरुर्विमध्ये अर्णसोधायि पज्र:।"

(ऋ० मण्डल १ सूक्त १५८ मत्र ३)

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती—इस मन्त्र का भाष्य करते हुए संस्कृत में अर्थ करते हैं—"(पेरू:) पाता" और हिन्दी भाषा में "(पेरू:) धर्मों की पालना करने वाला।"[4]

"अन्नो अपांनपात्पेरुरस्तु" (ऋ० मण्डल ७, सूक्त ३५ मन्त्र १३)।

महर्षि दयानन्दजी —"(पेरू.) पारयिता।" हिन्दी में—"पेरू.) पार करने वाला।"[5]

अपां पेरूं जीवधन्यं" (ऋ० मण्डल १०, सूक्त ३६, मंत्र ८)।

इस मण्डल पर महर्षि दयानन्द जी का भाष्य नही है। पं० जयदेव शर्मा, विद्यालङ्कार, मीमासा तीर्थ—"(अपा पेरूम्) जलों के पालक मेघ वा समुद्रवत् प्रजाओं, और प्राणों के रक्षक।"[6]

इस प्रकार अमेरिका में भारतीय सस्कृति का प्रभाव है।

---

१. "गीता रहस्य" पृष्ठ ५१० (सन् १९४८ ई०, सस्करण, श्री माधवराव सप्रे द्वारा अनूदित) तुलना करो। The secret of the Pacificley C Reginald Euoch, 1912, PP. 248-252.

२. "Asiatic Researches" VoL. XI तुलना करो—"Harmsworth History of the word", "PP. 2018.

३ "बगभाषा की पुस्तक" "मानवेर आदि जन्मभूमि" उद्धृत "वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय सस्करण, पृष्ठ ४५३।

४ 'ऋग्वेद भाष्यम्, तृतीयभागात्मकम्, तृतीयावृत्ति' पृष्ठ २८७।

५ वही नवम् भागात्मकम्, पृष्ठ ३११ (सवत् १९८९ वि० वैदिक मन्त्रालय अजमेर मे मुद्रित व प्रकाशित)।

६. "ऋग्वेद सहिता" भाषाभाष्य, षष्ठ खण्ड, प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ६१२। ●

सम्पादकीय :—

राष्ट्र में व्याप्त अस्थिरता का एक कारण

सूर्य के प्रकाश के समान यह बात सर्वथा प्रत्यक्ष है कि वर्तमान काल में हमारे राष्ट्र की स्थिति में सर्वत्र अस्थिरता छाई हुई है। इस परिस्थिति का दोष हम किसी व्यक्ति, वर्ग, समाज और शासन पर नहीं डालते, क्योंकि जीवर फूक कर देखा जावे, तो इस का कारण हम सब राष्ट्रवासी है। यदि राष्ट्र का प्रत्येक निवासी अपने कर्तव्य को भली प्रकार समझ ले और तदनुसार अपने काम को इस ढंग से आगे बढ़ावे, कि जिस से उस का अपना काम भी ठीक होता रहे और दूसरे पड़ोसी के काम में भी बाधा न पड़े। इस एक व्यापक सामान्य नियम पर हृदय से आचरण करने में राष्ट्र में फैली सब प्रकार की अस्थिरता दूर हो सकती है तथा राष्ट्र सुदृढ़ आधार पर खड़ा हो सकता है। आगे की इन कुछ पंक्तियों में केवल एक विशिष्ट बात की चर्चा करते हैं और उस के मन्तव्यों का विश्लेषण करते हुये राष्ट्र के सामान्य हित को प्रस्तुत करते हैं।

धर्म और रूढ़िवाद—धर्म उसी तत्त्व को कहते हैं कि जिस का स्वरूप तीनों कालों में सदा एक समान रहता है। उदाहरण के लिये इस वचन को लीजिये—"आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्" अर्थात् जो बात अपने को अच्छी न लगे, तो वैसी बात दूसरों के साथ भी न करे—यही धर्म है। परन्तु हम धर्म के स्थान पर रूढ़िवाद—कुछ निजी परम्पराओं को धर्म मानकर चलेंगे, तो इस से मानव समाज मे विभिन्नता फैल जाती है। इसी विभिन्नता ने धर्म को बदनाम किया है और मतवाद के झगड़े खड़े किये हैं। इन्हीं मतविवादों ने संसार में रक्त बहाया है और आज भी बहाया जा रहा है। इन रूढ़िवादो को किसी न किसी आर्थिक अथवा राजनीतिक स्वार्थों को तत्तद् मतों के विद्वान् ही बढ़ावा देते हैं। स्वयं पीछे हट जाते हैं और निरीह जनता नर-हत्याकाण्ड की चक्की में पीस कर अपने प्राणों और सम्पत्ति से हाथ धो बैठती है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है—

"जब विद्वान् लोगों में सत्य असत्य का निश्चय नहीं होता तभी अविद्वानों को महा अन्धकार में पड़ कर बहुत दुःख उठाना पड़ता है"। "जो स्वार्थवश [illegible] हानि मात्र करता रहता है वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।"

राष्ट्र के शासन का कर्तव्य है कि वह सभी मतमतान्तरों को ऐसी शिक्षा दे जिस से रूढ़िवाद को दूर किया जावे। चाहे कोई भी मत क्यों न हो, उस के यदि किसी मन्तव्य से राष्ट्र को हानि पहुँचती है तो उस मन्तव्य को शासन दण्ड से रोक देवे, चाहे उस मत के मानने वाले मन्तव्य को अपना धर्म कहकर पुकारते हों। राष्ट्र को हानि पहुँचाने वाला काम धर्म क्यों कर हो सकता है? यदि भारत सरकार इसी एक उद्देश्य को सामने रख कर दृढ़ता से काम लेवे, तो निश्चय से कहा जा सकता है कि राष्ट्र में फैली प्रशासन की अस्थिरता कम से कम आधी दूर हो सकती है।

सभी मतों के प्रतिष्ठित सहिष्णु राष्ट्रहितैषी विद्वानों को एक स्थान पर बिठाकर सत्य-असत्य का निर्णय और निश्चय करवाने को प्रेरित ही न किया जावे, अपितु शासन आदेश से उन्हें विवश किया जावे, कि वे अपने मन्तव्यों की स्वयं भी जाँच करें और दूसरे मत वालों के सामने जाँच के लिये रखें। इस जाँच के समय परस्पर हितभावना से काम लिया जावे। जो मन्तव्य राष्ट्र हित से विरुद्ध पाया जावे, उसको राष्ट्र आदेश से दूर करें। किसी भी मतवादी का यह कुतर्क न माना जावे कि उक्त मन्तव्य उसके धर्म का अंग है। हम अभी कह चुके हैं, कि राष्ट्र को हानि करने वाला मन्तव्य कभी भी धर्म नहीं माना जा सकता।

राष्ट्र में फैली अस्थिरता को दूर करने का यह एक अचूक उपाय है, किन्तु इस में सरकार को साहस से काम लेना पड़ेगा।

—[illegible] सिद्धान्ती शास्त्री

पुरानी सार्वदेशिक सभा के रवैये की निन्दा

१ नई दिल्ली—आज २८ सितम्बर को आर्यसमाज संघटन समिति की बैठक हुई। बैठक मे सर्वसम्मति से पुरानी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उप-मन्त्री श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी के दिनांक २८ ९ ६९ के सार्वदेशिक साप्ताहिक में प्रकाशित लेख की निन्दा की गई। समिति ने कहा कि यह लेख असत्यता एवं अशिष्टता से परिपूर्ण है। समिति ने श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी की इस बात पर बड़ा आश्चर्य व्यक्त किया कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी सब विवादो के स्वयं ही सर्वाधिकारी बनना चाहते हैं। जब कि महात्मा जी प्रारम्भ से ही चारो पक्षों से विवाद समाप्त करने की प्रार्थना कर रहे हैं। महात्मा जी का सुझाव स्पष्ट रूप से प्रकाश में आ चुका है कि प्रत्येक पक्ष अपनी ओर से दो-दो प्रतिनिधि दें और वे आठो किसी भी सर्वसम्मत व्यक्ति को अपना अध्यक्ष मान लें। उस के बाद उस अध्यक्ष का निर्णय चारो पक्षो को सर्वथा मान्य होना चाहिये। इतने स्पष्ट वक्तव्य के बाद भी महात्मा जी के प्रति छोटे स्तर के शब्द प्रयोग करना यह पुरानी सार्वदेशिक सभा के उप-मन्त्री को शोभा नही देता।

२ श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ने अपने उक्त लेख मे आर्यसमाज संघटन समिति को समाप्त करने की भी अनधिकार घोषणा की है। समिति का निर्माण आर्य समाजों के विवाद समाप्त कराने के लिए किया गया है, जब तक उक्त सभाओ के विवाद समाप्त नही होंगे तब तक यह समिति निश्चय से कार्य करती रहेगी और विवाद समाप्त होने पर आर्यसमाज संघटन समिति उसी क्षण समाप्त कर दी जायेगी। पुरानी सार्वदेशिक सभा जो स्वयं एक विवाद ग्रस्त पक्ष है उसे इस प्रकार का वक्तव्य देने का कोई अधिकार नही है। उन के इस प्रकार के उत्तरदायित्वहीन वक्तव्य से सार्वदेशिक सभा के गौरव को हानि पहुँचती है।

३ संघटन समिति ने पिछले तीन मास के अपने कार्य-क्रमो के प्रति आर्य जनता द्वारा दिये गये सहयोगो की सराहना की। तथा दोनों आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और नई सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा दिये गये सद्भावना पूर्ण सहयोग के लिये उन के अधिकारियो का धन्यवाद किया। समिति ने चौथे पक्ष पुरानी सार्वदेशिक सभा से पुनः प्रार्थना की है कि वे भी अपने दो प्रतिनिधि देकर आर्यसमाज के विवाद सुलझाने में सहयोग दें। अन्त में समिति के सर्वाधिकारी महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने अपनी पूर्व प्रतिज्ञा को पुनः दोहराया कि यदि विवाद नहीं सुलझे तो मुझे आमरण अनशन करना पड़ेगा।

—मन्त्री आर्यसमाज संघटन समिति

शेष पृ० ६ का

[illegible] का [illegible] श्री वीरेन्द्र का विश्वास है। [illegible] भी इस विषय [illegible] जानते ही हैं। जिन लोगों को महात्मा आनन्द स्वामी जी तथा महात्मा आनन्द भिक्षु जी पर विश्वास न रहा उनको आचार्य भगवान् देव जी (जो कि दूसरे पक्ष के एक स्तम्भ हैं) पर कैसे विश्वास हो सकता है। आचार्य भगवान् देवजी का अब तक श्री वीरेन्द्र, दीवान रामसरनदास, डा० हरिप्रकाश, व श्रीसोमनाथ मरवाह आदि अपनी तथा कथित पंजाब सभा की ओर से स्टम्प पेपर पर लिख कर अधिकार न देंगे उन द्वारा इस कार्य मे पड़ने की कोई संभावना नही। परन्तु उपरोक्त महानुभावो से इस प्रकार का अधिकार पत्र मिलने की कोई संभावना नहीं क्योंकि पंजाब से तो इन महानुभावों ने महात्मा आनन्द भिक्षु को अधिकार दिया है और सार्वदेशिक सभा में बैठ कर वह अधिकार स्वामी रामेश्वरानन्दजी को दिया है और अब महात्मा जी के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ कर रखा है। यदि इन महानुभावो का महात्मा आनन्द भिक्षु पर अणुमात्र भी विश्वास होता तो वह सार्वदेशिक सभा से भी ऐसा ही अधिकार महात्मा जी को दिलाते। उनके इन सब कार्यों के पीछे लोग गहरा षड्यन्त्र अनुभव करते हैं।

डा० हरिप्रकाश तथा उनके साथियों का मत है कि आचार्य भगवान्देव जी से वह पंजाब सभा के विभाजन की योजना स्वीकार करा लेंगे परन्तु उनको पता नहीं कि अब आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारी सभा के विभाजन के बारे में कोई बात न करेंगे तथा न इस विषय में अथवा सभा के प्रबन्ध के विषय में किसी को कोई अधिकार देंगे। झगड़ा केवल निर्वाचन का है। महात्मा आनन्द भिक्षु जी अपनी देख रेख में निर्वाचन करा दें तो सारा झगड़ा समाप्त हो जावेगा।

डा० रामगोपाल जी सार्वदेशिक सभा के घृणित प्रचार के बावजूद महात्मा आनन्द भिक्षु जी तथा उनकी आर्यसमाज संघटन समिति आर्य-जगत में शान्ति स्थापित करने मे दृढ़ संकल्प है। परमात्मा उन्हें सफलता दे

(विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

आर्यजनता सावधान रहे

[श्री विद्यानन्द विदेह पर प्रतिबन्ध यथापूर्व है]

आर्यजगत के मध्य एक भ्रान्ति उत्पन्न की जा रही है कि श्री विद्यानन्द विदेह के सम्बन्ध मे सावदेशिक सभा ने पूर्व घोषित प्रतिबन्ध समाप्त कर दिये हैं।

समाचार पत्रो मे श्री रामगोपाल शालवाले के हस्ताक्षरो से जो विज्ञप्ति प्रकाशित की गई है, उस सम्बन्ध मे आयजनता को सावधान और सूचित करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि सार्वदेशिक सभा की ३१ अगस्त ६९ की अन्तरग बैठक मे श्री विदेह पर लगाये प्रतिबन्ध को समाप्त करने का कोई प्रस्ताव पारित नही किया गया है। अभी तक श्री विदेह पर १४ वर्ष पूर्व लगा प्रतिबन्ध यथापूर्व है।

आर्यजनता की जानकारी के लिये हम सार्वदेशिक सभा के साधारण अधिवेशन मे श्री विदेह सम्बन्धित पारित एव सम्पुष्ट कार्यवाही को अविकल रूप मे उद्धृत कर रहे हैं और हमे आशा ही नही पूर्ण विश्वास है कि आयजनता वास्तविकता को समझ सकेगी और प्रचारित भ्रम से अपने को सावधान रखेगी। यह भी एक सम्वधानिक प्रक्रिया है कि जिस प्रतिबन्ध की पुष्टि साधारण सभा ने की हो, उसकी समाप्ति भी साधारण सभा की सम्पुष्टि से ही हो सकती है। इस तरह का कोई कार्य सावदेशिक सभा के ३१-५-६९ के साधारण अधिवेशन मे नहीं हुआ।

इसी के साथ हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि जिन लोगो ने प्रतिबन्ध हटाने का विज्ञापन किया है वे श्री विदेह को १४ वर्ष के प्रतिबन्ध के बाद आर्यसमाज के विवादो मे निर्णायक बनाने की घोषणा कर रहे हैं। इसी से आयजनता समझ सकती है कि प्रतिबन्ध हटाने का नाटक किस भावना से युक्त हो सकता है ऐसा व्यक्ति जिस पर से १४ वर्ष के बाद कृपा कर प्रतिबन्ध हटाने की बात हो वह कहाँ तक और कितना निष्पक्ष रह सकेगा क्या वह कृतज्ञता के भार से दबा न रहेगा ?

साथ ही आर्यजनता को सोचना चाहिये कि आर्यसमाज के विवादो का निर्णय करने के लिये ऐसा ही व्यक्ति उस वर्ग को मिला है कि जिसका १४ वर्ष से आर्यसमाज से सम्पर्क प्रतिबन्धित रहा है। क्या आयसमाज के जीवनेतृत्व और विद्वानो का यह अपमान नही कहा जायगा ?

अत आर्यजनता को अच्छी प्रकार समझ लेना चाहिये कि श्री विदेह पर सावदेशिक सभा की ओर से लगा प्रतिबन्ध यथावत् है और श्री विदेह सावदेशिक सभा की ओर से आर्यजगत के विवादो का निर्णय करने कराने मे किसी प्रकार भी निर्णायक नही बनाये जा सकते।

उमेश चन्द्र स्नातक
उप मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

सार्वदेशिक सभा का ४७ वां वार्षिक वृत्तान्त

(१ ३-५४ से २८-२-५५ तक)

धर्मार्य सभा—वर्ष के अन्त मे यह सभा ६१ सदस्यों का समुदाय थी। इस वर्ष इस सभा की साधारण सभा का १ (३०-४-५४) और अन्तरग सभा के ५ अधिवेशन (६ ३ ५४, २१-४-५४, और २७-६-५४ तथा १६-२-५५ को) हुए।

सभा के अधिकारी और अन्तरग सदस्य निम्न प्रकार रहे—

सभा के अधिकारी—१ श्री रामदत्त जी शुक्ल-प्रधान २-श्रीयुत स्वामी आत्मानन्द जी उपप्रधान ३ श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति-मन्त्री ४-श्री प० राजेन्द्रनाथ शास्त्री उपमन्त्री।

अन्तरग सदस्य—

१-श्री रामनानन्द जी शास्त्री बिहार
२-स्वामी ध्रुवानन्द जी,
३-श्री प० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड,
४-आचार्य विश्वश्रवा जी,
५-प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति,
६-श्री बृहस्पति जी वेदशिरोमणी,
७-श्री द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री,
८-श्री स्वामी अभयानन्द जी,
९-श्री सोमसेन जी एम० ए०, शुक्र,

श्री विद्यानन्द जी विदेह की पुस्तकों के सम्बन्ध में जो निश्चय हुआ है वह इस प्रकार है—

सार्वदेशिक धर्मार्यसभा की अन्तरग सभा का अधिवेशन २६-६-५४ को मध्याह्न २ बजे श्री श्रद्धानन्द बलिदान भवन देहली में श्री पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में हुआ। श्री विद्यानन्द विदेह भी उपस्थित थे। उनका १४-५-१९५४ का श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के नाम लिखा पत्र पढ़ कर सुनाया गया। श्री विद्यानन्द जी ने प्रारम्भ में यह कहा कि मुझे जो दण्ड दिया गया है वह अति कठोर है। उसे नरम किया जाए, इस पर सदस्यों ने उनसे प्रश्न किया कि आप अपने को अपराधी समझते हैं और अपनी भूलों को स्वीकार करते हैं या नहीं ? दण्ड की कठोरता आदि के विषय में उसके पश्चात् ही विचार किया जा सकता है। इस पर श्री विद्यानन्द जी विदेह ने श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के नाम निम्नलिखित पत्र लिख कर दिया-श्री प्रधान जी धर्मार्य सभा देहली।

सभा के ६-५-५४ के पत्र के साथ जो आपत्तिजनक स्थल उद्धृत किये गये हैं मैं उन्हें तब तक अशुद्ध नहीं मान सकता जब तक कि मुझे यह न समझाया जाता कि वे अशुद्ध अथवा सिद्धान्त विरुद्ध हैं। मैं अभी अपनी किसी ग्रन्थ में भूल नहीं मानता हूँ। ह०-विद्यानन्द विदेह २६-६-५४।

इसके बाद श्री विद्यानन्द जी की पुस्तकों के विषय में विचार प्रारम्भ हुआ। श्री बुद्धदेव जी विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड ने 'विदेह गीताञ्जलि" के पृष्ठ १२८ भजन स० १८५ को पढ़ कर सुनाया और श्री विद्यानन्द जी से प्रश्न किया कि ऐसी बातो को क्या आप आर्यसमाज में प्रचार योग्य और ठीक समझते हैं ? ।

एक पुरानी बात याद आ गई आज, मैं सोई थी अचेत, आये तुम सचेत।
धर अधरो पर अधर तुमने चूमे अधर, मैं उठी अधर देखा इधर उधर।
सकुचाई देख, तुम्हें अपो दृग हुई आई लाज
रही स्तब्ध खड़ी अभागिन बड़ी रही यूं निहारती दामन संवारती।
उठे नयन खोल जब तुम हुए ओझल, देखा इधर उधर न दीखे विभूराज।
उमड़ा हृदय सन्ताप करने लगी विलाप, आकाशवाणी हुई क्यों रोती अरी दुई,
यदि मिलने की चाह, मत रो मत भर आह
मुझ से चाहती मिलना, तो तज लोक लाज।'

इस पर श्री विद्यानन्द जी ने स्वीकार किया कि विदेह गीताञ्जलि में छपाई जायेगी। मैं इसे भूल मानता हूँ। इसके पश्चात् सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरग सभा के ६-३-५४ के अधिवेशन मे स्वीकृत प्रस्ताव के अंशों को एक-एक करके लिया गया। सबसे पहले "वैदिक योग पद्धति" के पृष्ठ ३ के निम्न वाक्य को लिया गया—

'परमात्मा के समान आत्मा भी अणु, सूक्ष्म, शक्तिवान्, निष्पाप, शुद्ध, पवित्र, अकाय, अमर, कवि, मनीषी, प्रेरक और सचालक है, जो गुण परमात्मा में हैं वे ही आत्मा मे हैं इत्यादि।

परमात्मा के समान आत्मा को भी अणु, पवित्र अकाय और निष्पाप कहना ठीक नही है। श्री विद्यानन्द जी ने कहा कि मेरा तात्पर्य अणु से सूक्ष्म का ही था किन्तु जब विद्वान् सदस्यो ने उन्हे बताया कि सूक्ष्म के साथ अणु शब्द का प्रयोग परिणाम वाचक हो जाता है जो अनावश्यक और दार्शनिक दृष्टि से भ्रमोत्पादक है। श्री विद्यानन्द जी ने अपनी भूल स्वीकार की।

आत्मा को अकाय कहना भी ठीक नही। श्री विद्यानन्द जी ने इसका अर्थ अभौतिक बताया इसकी अशुद्धि का व्याकरण की दृष्टि से जब निर्देश अनेक सदस्य महानुभावों ने किया तब कहा कि मुझे व्याकरण का ज्ञान नहीं। उन्होने यह भी स्वीकार किया कि मेरी दर्शन गति नहीं। मैं संस्कृत भी उतनी नहीं जानता। अकाय में बहुव्रीहि समास है। इस शब्द का जीवात्मा के साथ प्रयोग होने से यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि जीवात्मा भी कार्य बन्धन में नहीं आता। यह बात सिद्धान्त विरुद्ध है। आत्मा को निष्पाप कहना भी सिद्धान्त विरुद्ध है। अपापविद्धम्, यह विशेषण वेदों में केवल ब्रह्म के लिये आता है आत्मा के लिये नहीं। वैदिक योग पद्धति पृष्ठ ९, आत्मा और परमात्मा परिणामी और एक रूप हैं। सारे

शेष पृ० ९ पर

आकाशवाणी द्वारा प्रसारित भाषण—

साइंस और सदाचार

(श्री अभयदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री, देहली)

साइंस विदेशी भाषा का शब्द है। भारतीय भाषा मे इस शब्द के लिये ज्ञान, विद्या, तत्त्वज्ञान, तत्त्वविद्या और विज्ञान शब्द का प्रयोग किया जाता है। किसी भी पदार्थ के स्वरूप को ठीक-ठीक जानने के साधन का नाम साइंस है। जिस साधन से पदार्थ के स्वरूप को ठीक नही जाना जा सके, उस को विज्ञान नही कह सकते, किन्तु वह मिथ्या ज्ञान कहलाता है।

विज्ञान के क्षेत्र का विस्तार तिनके के ज्ञान से लेकर आत्मा के ज्ञान पर्यन्त है। नीम, पीपल, बड, आम और जामुन आदि वृक्षो के पत्तो को हम सभी साधारण मनुष्य जानते हैं, परन्तु इन पत्तो के रस रूप स्वाद, आकृति, विस्तार और इन के बीच मे पडी हुई अनेक लकीरो की भिन्नता का अति सूक्ष्मज्ञान ही वस्तुत विज्ञान है, इस भिन्नता और विचित्रता को वैज्ञानिक ही जान सकता है, साधारण मनुष्य नही। इसी भाँति मनुष्य, पशु, पक्षी और कीट पतगो के बाहरी शरीर को हम जानते हैं परन्तु इन सब जीव जन्तुओ के शरीरो मे जो आश्चर्य उत्पन्न करने वाली भिन्नता है इस को जानना हसी खेल नही। इस भेद को जानने का एकमात्र साधन विज्ञान ही है। इन सब प्राणियो, जीवधारियो के शरीर की भीतरी रचना, अन्त करण और जीव के स्वरूप का बोध तो अत्यन्त कठिन है परन्तु वैज्ञानिक महा विद्वान् इस बोध को भी निरन्तर अभ्यास चित्त की एकाग्रता सूक्ष्म बुद्धि और बाहर भीतर के परीक्षणो द्वारा जान सकता है। सदा से वैज्ञानिक लोग इस समस्या को सुलझाने और समझने का यत्न करते आये हैं आज भी करते हैं और आगे भी करते रहेंगे।

घास के साधारण तिनके से ले कर सूर्य तक प्रत्येक पदार्थ में एक विशिष्ट नियम पाया जाता है। उसी को आधार मान कर वैज्ञानिक लोग खोज कर सकते हैं और जिस तत्त्व को जानना और प्राप्त करना चाहते हैं, उस को प्राप्त कर लेते हैं। इस भौतिक ब्रह्माण्ड मे सर्वत्र एक, क्रमबद्ध नियम अनुस्यूत है, जिस के कारण सम्पूर्ण लोक एक दूसरे के साथ तथा सूर्य और वायु के साथ सम्बद्ध रहते हैं। सर्वान्तर्यामी, नियामक, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् मूलचेतन तत्त्व के द्वारा यह नियम चलाया जाता है। यदि भौतिक जगत् के पदार्थों मे कोई नियम और ज्ञानपूर्वक रचना न होवे, तो विज्ञान एक पग भी आगे नहीं बढ सकता। जगत् मे प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाली व्यवस्था ही इस नियम को नियन्त्रित करने वाली चेतन और मूल जड रूप शक्ति का पता देती है। यदि जगत् में ऐसी व्यवस्था न होवे तो ससार में विज्ञान की गति एक क्षण के लिये भी प्राप्त नही की जा सकती है।

सौभाग्य से पाश्चात्य देशो में आज भौतिक विज्ञान बहुत उच्च शिखर तक पहुचा हुआ है तथा आगे ही बढता जा रहा है, परन्तु आध्यात्मिक जगत् की तरफ वैज्ञानिको का ध्यान अभी तक नहीं गया है। आशा है, इस दिशा मे भी विज्ञान प्रगति करेगा।

यह नहीं समझना चाहिये कि प्राचीन काल में भौतिक विज्ञान का प्रसार नही था। प्राचीन काल के सस्कृत ग्रन्थो से पता चलता है कि महर्षि विश्वामित्र ने ब्रह्माण्ड मे सौर्य मण्डल की अनुकृति में एक नूतन कृत्रिम सौर मण्डल का निर्माण कर के आकाश मे गतियुक्त कर दिया था। पहिले भी भौतिक और आत्मिक विज्ञान के बल पर हमारे पूर्वज भारतीय विज्ञान वेत्ता ऋषि मुनि भिन्न-भिन्न नक्षत्रो में आते जाते थे। उसी के अनुकरण में वर्तमान काल में अमेरिका और रूस के वैज्ञानिक चन्द्रमा आदि नक्षत्रो में पहुच कर वहां का पता लगाने के लिये पर्याप्त आगे बढ चुके हैं। वह दिन सौभाग्य का होगा कि जिस दिन पृथिवी के वासियों का चन्द्र लोक के निवासियों के साथ वैज्ञानिक सम्पर्क पर प्रकाश पडेगा। पृथिवी के वैज्ञानिक इस बात का पता लगाने के लिये अति सचेष्ट हैं।

पाश्चात्य विज्ञान में यह बडी चर्चा है कि परमाणु के भी टुकडे किये जा चुके हैं। वस्तुत परमाणु उस अन्तिम टुकडे को कहते हैं जिस से आगे और टुकडे न हो सकें। जिस भौतिक पदार्थ की सत्ता है, उस का सर्वथा अभाव नही हो सकता। जिन अत्यन्त सूक्ष्म तत्त्वो से यह सूर्य आदि जगत् बना है उन को परमाणु कहते हैं। प्राचीन काल के भारतीय वैज्ञानिक दर्शनकार ऋषियों की यह अपूर्व खोज है। उन मूल अति सूक्ष्म तत्त्वो का नाश कभी नही हो सकता, वे तत्त्व-अवयव अन्तिम टुकड़े के रूप मे सदा बने रहते हैं, उन का सर्वथा अभाव नही हो सकता। पाश्चात्य जगत् मे परमाणु नाम उन का अपना रखा हुआ है, वह भारतीय दार्शनिक परमाणु पर नहीं घटता। फिर भी पाश्चात्य वैज्ञानिको द्वारा किये गये और किये जा रहे आविष्कारो के प्रति ससार उस का ऋणी है और सदा रहेगा।

अब हम आप को विज्ञान के दूसरे पक्ष के बारे मे बताते हैं। विज्ञान एक साधन है, इस के द्वारा बनाये गये पदार्थों का प्रयोग करना वैज्ञानिक के आधीन होता है। वैज्ञानिक के बिना विज्ञान का कुछ उपयोग नही लिया जा सकता। वैज्ञानिक का स्वरूप भी ज्ञान तथा कार्य युक्त चेतन है। शरीर आदि जड पदार्थ इसी के साधन हैं। जीव अपने सामर्थ्य के अनुकूल कार्य करने मे स्वतन्त्र है। मनुष्य पशु पक्षी आदि सभी अपने-अपने ज्ञान के अनुसार कार्य करते रहते हैं। मनुष्य चाहे अच्छा काम करे अथवा बुरा। यदि वह अच्छा काम करता है, तो अपनी भलाई के साथ साथ दूसरो की भलाई भी कर सकता है। यदि वह बुरा काम करेगा तो अपनी हानि के साथ दूसरो को हानि भी कर सकता है। जब साधारण मनुष्य ऐसा लाभ अथवा बुरा काम कर सकता है तब वैज्ञानिक के लिये तो कहना ही क्या है? क्योकि उस के पास भौतिक शक्ति का भण्डार है उस से वह जगत् का उपकार भी कर सकता है और नाश भी। वह दोनो रूपो मे अपनी वैज्ञानिक शक्ति का प्रयोग कर सकता है। विज्ञान तो एक शक्ति है। जब एक साधारण मनुष्य भी अपने छोटे से चाकू से अपने और दूसरो के अच्छे काम कर सकता है और वह बुरा काम करना चाहे तो उसी चाकू से अपनी गर्दन भी काट सकता है और दूसरो की भी क्योकि चाकू तो उस का एक साधारण हथियार है, उस को वह चाहे जैसे चला सकता है। इसी भाँति वैज्ञानिक भी अपनी विज्ञान शक्ति का सदुपयोग कर के जगत् का कल्याण कर सकता है अथवा दुरुपयोग कर के जगत् का नाश भी कर सकता है। विज्ञान भी एक जड शक्ति है, वह स्वय बुरा भला नही कर सकती, किन्तु उस से कार्य लेने वाला वैज्ञानिक ही भला बुरा कर सकता है। भौतिक जगत् के समस्त कार्य रूप सूर्य और वायु आदि पदार्थों मे सवप्रथम अति सूक्ष्म भौतिक परमाणुओ को सघटित करने वाली अत्यन्त सूक्ष्म बिजुली रहती है। इसी सघटन से ससार मे समस्त ब्रह्माण्ड के लोक लोकान्तर बनते हैं, एक दूसरे के साथ सम्पर्क रखते हैं और इस बिजुली के कारण रूप शक्ति के द्वारा सारे नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह, वायु और सूर्य के साथ सम्बद्ध रहते हैं। विश्व का व्यवहार चलता रहता है। यही शक्ति जब परमाणुओ में विघटन पैदा कर देती है, तो समस्त ससार का नाश हो जाता है। व्यवहार के समय यह बिजुली सभी पदार्थों मे व्यापक रूप से रहती हुई भी कुछ बिगाड नही करती, परन्तु यदि उस मे विकार आ जावे तो वह महा विनाश कर सकती है इस शक्ति का अन्तिम नियन्ता सर्वज्ञ चेतन एक तत्त्व है। उसी के कारण बिजुली नियन्त्रित रहती है। इसी प्रकार वैज्ञानिक भी अपने द्वारा नियन्त्रित बिजुली के द्वारा जगत् का कल्याण कर सकता है, यदि वह इस शक्ति को विकृत कर दे तो ससार मे जगह-जगह राख की ढेरी ही दिखाई दे सकती है। आज वैज्ञानिको मे अपनी शक्ति के उत्पादन में होड लगी हुई है। अत यह आवश्यक है कि विज्ञान का प्रयोग जगत की भलाई के लिये ही वैज्ञानिक करें न कि बुराई के लिये।

इस का एक ही उपाय है, जिस से वैज्ञानिक भलाई करे। वह यह है कि वैज्ञानिक को आचारवान् होना चाहिये। आचार का साधारण भाव यही है कि नेक चलन होना। जो मनुष्य सदाचारी होता है, वह अपने सुख दु ख के समान हो दूसरो के सुख दु ख को समझता है। वह सुख की प्राप्ति और दु ख को दूर करने के लिये अपने साधनो का प्रयोग कर के स्वय सुखी रहता है और दूसरों को भी सुखी रखने के लिये अच्छा काम करता है। अपने परिश्रम की कमाई से ही अपने कामो को करता है, दूसरो की कमाई पर लालच की दृष्टि नही डालता। अपनी माता, बहिन और बेटी के समान ही दूसरों की माता, बहिन और बेटियो की तरफ अच्छी दृष्टि रख कर

शेष पृ० ६

तथाकथित योगिराज भगवानदेव का तथाकथित अनशन एक पूर्व नियोजित षड्यंत्र

(श्री ओम्प्रकाश जी, आजीवन सदस्य, सार्वदेशिक सभा)

जब से आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब से श्री रामगोपाल शालवाले तथा उनके साथियों का सफाया हुआ तब से वह पजाब सभा को किसी न किसी विवाद में फसाये रखने का षड्यन्त्र रचते चले आ रहे हैं। गत ४-५ मास मे आर्य जनता ने भली भाति देखा और समझ लिया कि किस प्रकार इन तथाकथित नेताओ ने आर्यसमाज के पूज्य सन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी जी का अपमान किया और हैदराबाद महासम्मेलन के प्रस्ताव को स्वय स्वीकार करके भी सफल नहीं होने दिया। इसका कारण स्पष्ट है कि यदि महासम्मेलन का प्रस्ताव सफल होता तो इन स्वय भूनेताओ का आर्य समाज से अस्तित्व ही समाप्त हो जाता और इनके सहयोगियो का जो तरह तरह के वक्तव्य दे कर आर्य जगत् को भ्रम मे डालते चले आ रहे हैं, सदा के लिए समाप्त हो जाते। श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी को पहले निर्णायक मान कर और पीछे इकार कर उनका घोर अपमान करने की दुखद घटना को आर्यजगत अभी भूला नही और अब उसकी पुनरावृत्ति यह स्वार्थी तत्त्व महा आनन्द भिक्षु जी के साथ भी दोहराने का षड्यन्त्र रच रहे हैं। ये सार्वदेशिक न्याय सभा के निर्णय की दुहाई देते हैं कि कोई भी निर्णय न्याय सभा के निर्णय के आधार पर ही चल सकता है अन्यथा विवाद को सुलझाने का अन्य कोई विकल्प नही। इनकी बुद्धि इससे आगे सोचने मे असमर्थ है। सार्वदेशिक सभा का निर्णय क्या है, इसका पूर्ण विवरण आर्यजगत् को आज तक नही दिया गया। फिर जिस विधि-विधान तथा नियमो की दुहाई यह गला फाड फाड कर देते हैं, उनका यह स्वय पालन नहीं करते। न्याय सभा की सारी कार्यवाही नियमो के सर्वथा विरुद्ध हुई है। सार्वदेशिक न्याय सभा के प्रधान को किसी भी विवाद का निर्णय स्वय करने का कोई अधिकार नही जब तक न्याय सभा के अन्य सभी सदस्य उक्त विवाद को बैठकर न सुनें लेकिन उक्त सभा के प्रधान ने उन सारे नियमों का उल्लघन करके अपने नियोजकों की इच्छानुसार एक अवैध निर्णय लिखा दिया जो उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर था। सबसे बड़ा आश्चर्य तो यह है कि ऐसा अविवेक व्यक्ति आर्यसमाज के सर्वोच्च सघटन की न्याय सभा का प्रधान हो सकता है? कोई भी नि पक्ष विचारक किसी व्यक्ति विशेष के लाभ के लिये किसी सस्था को हानि पहुचानेका कार्य नही कर सकता। इसीलिये इन तथाकथित नेताओ ने ऐसे व्यक्तियो को न्याय सभा का प्रधान बनाया जिसका अपना कोई प्रभाव नही। अब तो सार्वदेशिक सभा के साधारण अधिवेशन दिनाक ३१-५ ६९ मे उक्त निर्णय को अवैध घोषित कर दिया है।

इसी तरह के परमुखापेक्षी व्यक्तियो की खोज में श्री रामगोपाल शाल वाले अपने व्यक्तिगत उद्देश्यो को सफल बनाने में लगे रहते हैं। दिल्ली, पजाब राजस्थान हरयाणा हिमाचल तथा उत्तर प्रदेश आदि सभी प्रदेशो में श्री रामगोपाल का असली रूप प्रकट हो चुका है। यहा की आर्यजनता ने इन पर तथा इनके दल पर किसी तरह का विश्वास करना समाप्त कर दिया है और अपने अपने समाजो द्वारा प्रस्ताव पास करके इन्हें सूचित कर दिया है कि यदि महात्मा आनन्द भिक्षु जी द्वारा सस्थापित आर्यसमाज सघटन समिति जो आर्यसमाज के विवादो को मूलत समाप्त करने के लिये कृत-सकल्प है उन्हे सहयोग न दिया गया तो आर्यसमाज श्री रामगोपाल शालवाले और उनके पदानुगामियो का बहिष्कार कर देगा।

अब श्री रामगोपाल शालवाले एक तथाकथित भगवानदेव नामी एक योगिराज को टकारा से पकड कर लाये हैं और शिखण्डी की भाति उसी के पीछे खडे होकर वह अपने असफल प्रयासो को सफल होने का दिवास्वप्न देख रहे हैं। यह योगिराज महाशय क्या है, इसे दिल्ली, पजाब तथा उत्तर प्रदेश की आर्यजनता नही जानती है परन्तु इतना जरूर पता है कि यह श्री रामगोपाल द्वारा ही दिल्ली लाये गये है और इनके दिल्ली निवास के अड्डे भी कुछ विशेष शरारती तत्त्वो से सम्बन्धित हैं। इन्हें आर्यसमाज से कितना प्रेम है इनकी कितनी शुद्धता है अथवा कितना लालच मिला हुआ है यह तो समय ही बतायेगा। लेकिन इतना स्पष्ट है कि जिस आर्यसमाज सघटन समिति के ऊपर यह तथाकथित योगिराज महाशय कम्युनिस्ट होने तथा अन्य घृणित लाछन लगा रहे हैं, उन पर यहा की आर्यजनता तनिक भी विश्वास न करेगी क्योंकि उक्त समिति के संस्थापक तथा प्रधान आर्य जगत् के तपोनिष्ठ महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज हैं। उन पर तथा उनके द्वारा सस्थापित किसी भी सस्था पर इस तरह के घृणित लाछन लगाने वाला व्यक्ति आर्यसमाज का शत्रु ही हो सकता है, हितैषी नहीं।

श्री भगवानदेव नामी योगीराज जिस के द्वारा श्री रामगोपाल ने श्री जगदीश विद्यार्थी, मत्री आर्यसमाज सघटन समिति के घर १७-९-६९ को मरण व्रत रखाया था वह आर्य श्री भारतेन्द्र नाथ, (जिन्हें भिन्न भिन्न दोषो के कारण आर्यमित्र, आर्योदय तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की सेवाओं से पृथक् किया गया था तथा जिनका काम कल पेशा झगडे बढाना और पैसे कमाना ही है) उनके घर करोल बाग हरध्यानसिंह रोड पर रहते हैं। यह भी सर्वविदित है कि श्रीजगदीश विद्यार्थी को सदा ही श्री रामगोपाल तथा श्री ओम् प्रकाश त्यागी के साथ सहानुभूति रही। अत उन्हें समिति से तोडने के लिए श्री भगवानदेव द्वारा भूख हड़ताल कराने का एक षड्यन्त्र रचा गया। १७-९-६९ को प्रात ९ बजे भूख हड़ताल की तथा ३-४ बजे सिद्धि प्राप्त करके तोड दी। फिर उसका समाचार पत्रो मे प्रचार किया गया। महात्मा आनन्द भिक्षु जी को श्री जगदीश विद्यार्थी की गतिविधियो का पूर्ण ज्ञान था इसलिए उनके इन घातक कार्यों के कारण आर्य समाज सघटन समिति के मत्री पद से उन्हे पृथक् कर दिया। आर्य-जनता को शीघ्र ही इस षड्यन्त्र का पता लग जावेगा। खेद है कि श्री रामगोपाल आदि का यह पाखण्ड भी असफल रहा।

यदि यह महाशय आर्यसमाज के हित का ढोंग रच कर कोई षड्यन्त्र रचते हैं तो यह केवल व्यक्ति विशेष की स्वार्थपूर्ति के लिए है न की आर्य समाज के हित के लिए। ऐसे षड्यन्त्र श्री रामगोपाल शालवाले ने आर्य जगत् को भ्रम में डालने के लिए पहले भी कई बार रचे। अत इन महाशय को स्पष्ट ज्ञात होना चाहिए कि यहा की आर्य जनता ऐसे षड्यन्त्रो को हमेशा विफल करती रही है। श्री रामगोपाल जी को चेतावनी देते हैं कि श्री भारतेन्द्र नाथ तथा श्री भगवानदेव जी जैसे बदनाम व्यक्तियों के सहयोग तथा सम्मति से उनकी बची हुई प्रतिष्ठा भी समाप्त हो जावेगी। समय है अब भी समझने का प्रयत्न करें। महात्मा आनन्द भिक्षु जी की सभाओ के झगडे मिटाने के लिये सहयोग मे ही आर्यसमाज का और स्वय उन का हित है।

पृ० २ का शेष

चलता है किसी प्रकार के दुर्व्यसन में नही फंसता। अच्छे सदाचारी सत्पुरुषो की सगति में रह कर अपने आचरण को सुधारता है। मानव मात्र की सेवा को सदाचार समझता है। निर्धन, पीडित, शोषित दीन दु खियो की यथा शक्ति सहायता करता है। उन को ऊपर उठाने मे सहयोग देता है। आपत् काल मे निजी स्वार्थ को छोड कर भी दूसरों की विपत्ति को दूर करने में अपना तन, मन और धन लगाता है। अपना, अपने परिवार का, अपने समाज का और अपने राष्ट्र का कल्याण कर के विश्व मे भलाई का वातावरण पैदा करता है। यही तो सदाचार है। सदा से आचारवान् आप्त लोग इसी मार्ग पर चलते आये हैं। इसी कारण ससार मे भलाई होती रहती है और बुराइयों में कमी होती है।

जब साधारण मनुष्य के सदाचारी होने से इतना जनहित होता है, फिर वैज्ञानिक का सदाचारी होना तो अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि जब वह सदाचारी होता है तब अपनी वैज्ञानिक शक्ति का सदुपयोग कर के ससार का महान् कल्याण कर सकता है। आज पाश्चात्य विज्ञानवेत्ता अपने राष्ट्र की उन्नति का ही विशेष रूप से ध्यान रखते हैं। यदि वे सदाचारी बन कर अन्य राष्ट्रों की भलाई का भी ध्यान रखते रहें और उन को भी ऊपर उठाने में सहयोग देते रहें, तो विज्ञान संसार के लिये सुख का वरदान बन सकता है। इसमे सन्देह नहीं कि विज्ञान सर्वोत्तम वस्तु है, परन्तु इसका सदुपयोग मानव मात्र के लिये किया जाना चाहिये। यह तभी सम्भव है जब कि साइंस और सदाचार इकट्ठे हो कर एक साथ चलें। इसी में लोकहित सन्निहित है।

मुक्ति में जीवात्मा की शक्तियाँ

(विद्वर श्री प० महामुनि जी शास्त्री, आचार्य हरयाणा गुरुकुल विद्यापीठ, भैंसवाल—रोहतक)

जीवात्मा में २४ प्रकार की शक्तियाँ ऋषिदयानन्द जी ने मानी हैं उन का शुद्ध स्वरूप और पूर्ण विकास योगी सन्यासीगण जीवन्मुक्त दशा में कर लेते हैं। वे ही सब शुद्ध शक्तियाँ—सामर्थ्य मोक्ष मे भी जीवात्मा के साथ रहकर उसके आनन्द भोगने में यथावत् सहायक होती हैं।

जीव स्वभाव से पवित्र है अत उसकी शक्तिया भी स्वभाव से पवित्र हैं। किन्तु सासारिक दशा मे अविद्या—(मिथ्या ज्ञान, अपवित्र कर्म-उपासना) के कारण आत्मा में मलिनता के योग से शक्ति भी मलिन (दूषित) हो जाती हैं। अशुभ शक्ति से अशुभ कर्म ही होंगे उससे दु ख होगा।

सुख दु ख द्रव्याश्रयी (आत्माश्रयी) होने से गुण तो हैं परन्तु शक्ति नहीं है। सुख दु ख तो फल (परिणाम) हैं। जीव की शुद्ध शक्तिया स्वाभाविक हैं। सुख दु ख स्वाभाविक नही। शक्तियो द्वारा जीव शुभाशुभ कर्म करता है उससे धर्माधर्म अर्जित होते हैं, धर्म-अधर्म से सुख दु ख मिलते हैं। इस प्रकार सुख का निमित्त धर्म है, दु ख का निमित्त अधर्म है, जिस प्रकार शुद्ध ज्ञान जीवात्मा की स्वाभाविक शक्ति है तथा द्रव्याश्रयी (आत्माश्रयी) होने से गुण भी है इसी प्रकार इच्छा भी है।

यथा मिथ्याज्ञानेन मिथ्याकर्म (अशुभं कर्म), ततो दुःखम्। सत्यज्ञानेन शुभं कर्म, ततःसुखम्, एवमसत्येच्छया (मिथ्यसंकल्पेन) रागादयो दोषाः जायन्ते तैः प्रवर्तितो जीवोऽशुभं कर्म अनुतिष्ठति ततश्च दुःखभागी भवति।

मुक्ति मे यदि इच्छा न हो (वा इससे काय न लेवे) तो जीवात्मा उदासीनवत् एक स्थान पर पड़ा रहेगा, कही पर भी जाना आना न होगा, न कोई चेष्टा करेगा, न किसी से मिले जुलेगा। जिस प्रकार इहलोक में जीव (प्राणी) इच्छापूर्वक ही सब व्यापार करता है उसी प्रकार मुक्तात्मा भी सब कर्म (देखना आदि) इच्छापूर्वक ही करता है। संकल्प नाम इच्छा का ही है। मुक्त पुरुष का सकल्पमय शरीर (सकल्परूप शरीर) होता है। उससे आनन्द भोग करता है।

इसी प्रकार द्वेष भी शक्ति है तथा द्रव्याश्रयी (आत्माश्रयी होने से गुण भी है, वह भी अपने शुद्ध रूप मे मुक्ति मे यथावत् रहता है, वह आनन्द के भोग मे बाधक नहीं अपितु सहायक होता है।

मुक्त पुरुष मे मिथ्या द्वेष नही होता क्योंकि वह पूर्ण ज्ञानी होता है।

द्वेष क्रोध मन्यु पर्यायवाची हैं। सत्य क्रोध (अशुभ कर्मादिके प्रति क्रोध) रहते हुए भी मुक्तात्मा आनन्दित रह सकता है जैसे—ईश्वर (परमात्मा)।

हम प्रार्थना करते हैं—'मन्युरसि मन्यु मयि धेहि' हे ईश्वर! आप दुष्ट काम और दुष्टों पर क्रोधकारी हैं मुझको भी वैसा ही कीजिये। इस प्रकार उचित क्रोध दुर्गुण नही सद्गुण है। सद्गुण सुख कारक ही होता है।

किञ्च यथा परमात्मा सर्वज्ञ होने से एक ही काल मे किसी पर क्रोध किसी पर प्रेम (अनुग्रह) करने पर भी एक रस रह सकता है तद्वत् मुक्तात्मा भी स्वकर्तव्य अकर्तव्य मे पूर्ण ज्ञानी होने से द्वेष करता हुआ भी एकरस (आनन्दित) रह सकता है क्योंकि मुक्तात्मा द्वेषवश पापकर्म तो नही करता जिससे दु ख भागी हो।

"मुक्ति में भी जीवकी २४ प्रकार की शक्तियाँ—सामर्थ्य हैं वे बनी रहती हैं, परन्तु उनसे कार्य नहीं लेता।"

इस लेख का क्या यही अभिप्राय (भाव) है कि—जीव भी २४ प्रकार की शक्तियों का उपयोग इहलोक में ही है। ब्रह्मलोक में उनका कोई उपयोग नहीं है?

मेरे विचार में यह ठीक नहीं। मेरे विचार में तो सासारिक दशा में उसकी शक्तियाँ शुद्ध अशुद्ध वा मिश्रित हो सकती हैं, होती हैं, परन्तु मोक्षदशा मे उनमे (शक्तियो मे) मिथ्यात्व (अशुद्धिपने) का अभाव होता है।

यदि मुक्त अपनी शुद्ध शक्तियो से कार्य न लेगा तो आनन्द का उपयोग कैसे करेगा?

उसकी शक्तियो मे कुछ कर्मरूप हैं, कुछ गुण हैं। गुणों में भी कुछ सामान्य गुण कुछ विशेष गुणो मे परिगणित हैं। ऐसा मैं ऋषि जी के ग्रन्थ पढ़ने से (अब तक) समझा हू।

[विशेष—यह लेख-गत ३४व अक में प्रकाशित शङ्का समाधान के प्रत्युत्तर में माननीय आचार्य जी ने लिखा है। विद्वज्जन विचार करेंगे। आशा है अन्य विद्वान् महानुभाव भी अपने विद्वत्तापूर्ण विचार आर्यमर्यादा में प्रकाशनार्थ भेजते रहेंगे।—सम्पादक]

आग जेरूसलम में–धुआं कलकत्ता में

श्री भूषण "द्विवेदी" (कलकत्ता)

मैं नहीं जानता कि धर्म या मजहब राष्ट्र से भी श्रेष्ठ होता है? मजहब इन्सान को हैवानियत से दूर रखने वाली चीज का नाम है और उसका मतलब है समझदारी की तरक्की। २१ अगस्त को जेरूसलम के इस्लामी मजहब की एक पुरानी मस्जिद मे किसी कारण से आग लग गई और इमाम के पुराने तख्त के साथ ही मस्जिद की छत भी राख बन गई। इस घटना को लेकर जेरूसलम मे जो कुछ हुआ वह अवर्णनीय है परन्तु सुदूर हिन्दुस्तान में रहने वालो के बौखलाने की अजीब तस्वीर सामने आई। हैदराबाद और बम्बई में एकत्र हुई भीडों के बारे मे चर्चा हो चुकी है। 'हिन्दू विजय' के ८ सितम्बर के अक में हैदराबाद की खेदजनक घटनाओ पर सक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। मैं देशवासियो को जानकारी के लिये कलकत्ता की तस्वीर प्रस्तुत करना चाहूगा।

२९ अगस्त ६९ को देश के दूसरे बडे आबादी वाले शहर कलकत्ता में सार्वजनिक हडताल मनाने की कोशिश तो सफल न हो सकी अत मस्जिद से सम्बन्धित सम्प्रदाय के लोगो ने अपना निजी कारोबार बन्द रखकर शोक प्रकट किया। शहर मे व्यवस्था बनाए रखने के लिये सबेरे से ही सशस्त्र पुलिस के दस्ते तैनात कर दिये गये थे। शोक मनाया जा रहा था परन्तु वातावरण मे न जाने क्यो आतक की गध फैल रही थी। यहाँ-वहाँ लोग आपस मे खडे होकर कानाफूसी कर रहे थे। जगह-जगह काले रग के मातमी झडे फहरा रहे थे। नगर की अनेक प्रमुख सडकें खाली नजर आती थी। दोपहर को मस्जिद के गम मे सम्बन्धित मजहब के लोगो ने मस्जिदो मे नमाज पढना शुरू किया तो अनेक स्थानो पर रास्ता बद हो गया। हम नही जानते कि मजहब के नाम पर आवागमन के मार्ग को घटो अवरुद्ध करने की क्या आवश्यकता थी?

सध्या समय शहीद-मीनार के पास आयोजित हुई शोक-सभा मे लाखो लोगो की भीड का जमाव दर्शनीय था। मुझे ही नही हिन्दुस्तान को अपनी जन्मभूमि, मातृभूमि, पितृभूमि तथा धर्म-भूमि मानने वाले करोडो देश-भक्तो को नाज होता यदि ऐसी भीड चीनी अथवा पाकिस्तानी हमलो के समय एकत्र हुई होती? मजहब के नाम पर इतना तूफान उठाने वालो में से कितने माई के लाल ऐसे हैं जो हिन्दुस्तान की शोहरत के लिये कुछ करते हैं? मैं नही जानता कि २९ अगस्त को चौरगी-मैदान मे एकत्र हुए लोगो का दृष्टिकोण किसी भी प्रकार राष्ट्रियता का द्योतक कहा जा सकता है? भारतीय शासन से इजराइल पर दबाव डालने की बात इस देश की सम्पूर्ण जनता की आवाज भी नही हो सकती। एक मजहब की माग राष्ट्रिय दायित्व भी नही बन सकती?

हम जानते हैं कि वोट से गद्दी पाने के विचार के कारण ही काग्रेस विगत २२ वर्षों से मजहब-परस्तों की मालिश करती आ रही हैं और २९ अगस्त को पश्चिम बंगाल की युद्ध मोर्चे की सरकार ने भी मजहब के दीवाने जमात को खुश करने के लिये ही मातम बनाने की छूट दी थी। यह तो हिन्दुओ का सौभाग्य ही था जोकि कलकत्ते मे शाति भग होने से किसी तरह बच गई।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की अद्वितीय देन

[लेखक—श्री कालीचरण प्रकाश आर्योपदेशक हैदराबाद आन्ध्र]

महर्षि दयानन्द सरस्वती आधुनिक भारत के निर्माण में अग्रगण्य महापुरुष कहे जा सकते हैं। भारत के अन्य महापुरुषों ने जहा भारत के निर्माण मे मकान-दुकान, सडको के निर्माण पर बल दिया तो महर्षि ने आगे बढ़कर इन सबसे प्रथम मानव निर्माण पर बल दिया। चूंकि मानव प्राणी के उपयोगार्थ ही ससार के ये सभी पदार्थ हैं। यदि मानव प्राणी वस्तुओ का सदुपयोग अपने सुख और समृद्धि के लिये कर सकता है तो वह सुखी है और अन्यो को भी सुखी बना सकता है। अन्यथा ससार की सारी वस्तुयें मनुष्य को सुखी बनाने की अपेक्षा दु खी बनाने का कारण हो सिद्ध हो सकती हैं। ससार में आज जो मानव के दु खो का कारण है उन सबका मूल रहस्य यही है कि आज मानव-मानव नही है और वह दैवी शक्तियो का लाभ उठाने की अपेक्षा उनसे हानि उठा रहा है।

बहुधा देखा जाता है कि मानव निर्माण की दिशा में प्रगति हुई है। जैसे मनुष्य वस्त्र-आभूषण, भाषा और आवास आदि सज्जित है। विज्ञान की कृपा से वह आकाश में उड रहा है, गगन चुबी अट्टालिकाओ मे रह रहा है। बोल-चाल में प्रवीण है और नाना प्रकार की वेश भूषाओ से विभूषित भी। परन्तु सर्वत्र एक ही स्वर जो सुनाई दे रहा है, वह है दु ख और मनुष्य का त्रस्त होना। आखिर क्यों ? यह इस लिये कि मानव का शरीर तो सज्जित हुवा है पर उसका मन मस्तिष्क और आत्मा सज्जित नही। आज मनुष्य की ठीक वही अवस्था है जैसे शव को नवीन वस्त्रो आदि से सज्जित कर दिया जाता है पर विचारणीय है कि यह सुसज्जा शव के लिये कितनी और क्या लाभदायक है ?

महर्षि दयानन्द सरस्वती चाहते थे कि परमात्मा की अद्वितीय और श्रेष्ठ रचना मनुष्य का जहा बाह्य निर्माण हो वहीं भीतरी निर्माण भी हो। तभी उन्होने आर्यसमाज के छटे नियम मे कहा है कि शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति स्वय करना और कराना। इसी चीज को सार्थक करने के लिए ऋषि ने षोडश सस्कार चयन किए और उनकी विधि भी बताई जो सस्कार विधि के नाम से प्रख्यात होकर आज विद्यमान है। षोडश सस्कार विधि का यदि विश्लेषणात्मिक अध्ययन करें तो इसे तीन खण्डो मे विभक्त होता पायेंगे। प्रथम खण्ड गर्भाधान से उपनयन तक शरीर निमाण खण्ड है जो माता-पिता के द्वारा सपादन होता है। स्वस्थ आत्मा के लिये स्वस्थ शरीर को अनिवार्यता है। अस्वस्थ शरीर में प्रबल आत्मा पहले तो रहना समव नही और यदि रह भी गई तो प्रगति-आत्मकता के लिये इसकी कोई उपयोगिता भी नहीं। ऋषि के इस संकेत पर यदि विचार किया जाए तो प्रतीत होता है कि कैसे स्वस्थ शरीर को सन्तान उपलब्धि हो सकेगी ? ऋषि कहते हैं" जिन को पुत्र की इच्छा हो वे छठी आठवीं दशवी, बारहवीं, चौदहवी, और सोलवीं रात्री मे व जिनको कन्या की इच्छा हो वे पाचवो, सातवी, नववी, और पन्द्रहवी रात्री मे गर्भाधान किया जावे। तत्पश्चात् गर्भिणी के लिये भोजन-छादन मे ऋषि कहते हैं कि ' कोई मादक मद्यादि, रेचक, हरीतकी आदि क्षार, अतिलवणादि अत्यम्ल अधिक खटाई, रूक्ष चणे आदि तीक्ष्ण अधिक लाल-मिर्च आदि स्त्री कभी ना खावे। किन्तु घृत, दुग्ध,मिष्ट सोमलता अर्थात् गुड़-च्यादि औषधि चावल मिष्ट दधि, गेहू, उद, मूग, तूअर आदि अन्य और पुष्टिकारक शाक खावें। 'विशिष्ट इस सबन्ध मे निर्दिष्ट आत" युक्त आहार विहार सदा किया करें" ध्यान देने योग्य है। इसका लाभ ऋषि बलदेव बताते हैं ' जिससे सन्तान अति बुद्धिमान, रोगरहित, शुभ गुण स्वभाव वाली होवे।"

तत्पश्चात नामकरण, चौलकम, कर्णवेध तथा उपनयनादि सस्कार शरीर निर्माण की दिशा मे प्रेरणा व मार्ग दर्शन वाले हैं। बाद यहा से अब क्रम शरीर के उपरान्त मन और मस्तिष्क के बनने का आरम्भ होता है। देखेंगे कि ऋषि निर्देश करते हैं कि माता-पिता सन्तान को अपने पास न रख बल्कि इसे आचार्य के आश्रम और गुरुकुल आदि में उपनयन सस्कार कर भिजवादें। यहा यही मुख्य हेतु है कि बालक को अति स्नेह बबाद् ज्ञान प्राप्ति मे बाधकता न होवे। आचार्य "मम व्रते हृदय ते दधामि" से आरभ कर "बृहस्पतिट्वा नियनक्तु मह्यम्" द्वारा प्रतीज्ञाबद्ध होकर बालक के मन और मस्तिष्क को बनाने में कुछ तत्पर होते हैं। यह बारह, चौबीस अथवा छत्तीस या अड़तालीस वर्ष तक बालक का मन और मस्तिष्क का निर्माण सांगोपांग वेदाध्ययन द्वारा होता है यह क्रम है कि जहाँ मनुष्य का निर्माण शरीर, मन मस्तिष्क के निर्माण द्वारा हो रहा है। अभी यह सब क्रम ज्ञानात्मक है, कर्मात्मक नहीं। कर्मात्मक तो वह गृहस्थी मे पहुच कर करेगा।

जो कुछ ज्ञानात्मक उसने आचार्य से बोध प्राप्त किया उसे क्रियात्मक भी बनाता है। इसका प्रयोग विवाह सस्कार से होगा। परन्तु ऋषि कहते हैं कि दुर्बलेन्द्रीय गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट न होवे। तथापि बलवान् शरीर, धैर्यवान् मन को लेकर जब वह गृहस्थी में प्रविष्ट होगा तो आने वाली सभी बाधाओ को शरीर, मन और विचारो द्वारा मुकाबिला करेगा। गृहस्थाश्रम भी श्रेष्ठाश्रम है। क्योकि वहाँ पहुच कर लेने के साथ देने का अभ्यासी बनेगा। क्योकि अब आगे उसे देना है।

गृहस्थाश्रम के उपरान्त दो हो आश्रम और दो सस्कार शेष रह जाते हैं। आश्रमों में वानप्रस्थ एवं सन्यासी, और सस्कारो मे वानप्रस्थ वा अन्त्येष्टि, यह दोनो भी आश्रम और सस्कार मनुष्य के आत्मा का निर्माण करने वाले हैं। शरीर, और मन, के निर्माण मात्र को पूर्ण निर्माण वैदिक सस्कृत नही मानती। पूर्ण निर्माण तो मस्तिष्क और आत्मा के निर्माणोपरान्त ही माना जाता है। जो कुछ भी मनुष्य "ज्ञानात्मक" और "कर्मात्मक" उसने अपना निर्माण किया, उसे वानप्रस्थाश्रम मे पहुच कर मनन द्वारा विचारो की दृढता का रूप देता है। और जब इस प्रकार अपने बोध को ' नवनीत " रूप मे मनन द्वारा पालता है तो "सन्यासाश्रम" का रूप अग्निमय धारण कर ससार के कल्याण की दृष्टि से सब कुछ शरीर कुटुब वा राष्ट्र और अपने पराए के भेद व मोह को समाप्त कर उपनिषदों की भाषा मे ससार के प्राणीमात्र को अपने आत्मा में और ससार के प्राणियो की आत्मा मे अपने आपको देखता है। इस प्रकार आत्मा-पूर्णात्मा अर्थात् आत्मा का निर्माण कर पाता है। जिस मे न मोह है न द्वेष। बल्कि "वसुधैव कुटुम्बकम्" की पूर्णात्मा वाली भावना। यही है महर्षि दयानन्द सरस्वती को ससार को महान् देन।

महान् ऋषि के उत्तराधिकारी आर्यसमाज मे ऋषि द्वारा जो अद्वितीय देन सस्कारों का वरदान प्राप्त किया है, यह ससार के मानवों के कल्याणार्थ अधिकाधिक फैलावें, यह उसका दायित्व है। परन्तु इस और संगठन, नेता तथा विद्वानो और पुरोहितों द्वारा यथार्थ प्रयास नहीं किया जा रहा है। अब आवश्यकता है कि हम ऋषि की इस अद्वितीय देन को अधिकाधिक प्रसारित कर ऋषि ऋण से अनृण होवें।

साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ! साथी पढ़ा सत्यार्थ-प्रकाश !

[श्री कन्हैयालाल आर्य कविकुटीर कुरड़ावाँ (राज०)]

वैदिक ज्ञान-भानु चमकेगा। दिव्य सुहृदय भाव दमकेगा ॥
सम-दम श्रद्धा के सुमनोका, होगा पूर्ण विकास ॥
साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ॥१॥

भ्रम को भग बहेगी। ईर्षा-द्वेष विचार ढहेगी ॥
"विश्व बन्धुत्व"—की चिनगारी। भभक उठेगी आप ॥
साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ॥२॥

ईश्वर भक्ति बेल बढ़ेगी। यह लहराकर अती उच्च चढ़ेगी ॥
दानवीय दुर्गन्ध-हटेगी। पाप सुगम प्रकाश ॥
साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ॥३॥

नाना भ्रान्त विचार हटेगा। बीच-कोच के अंक घटेगा ॥
स्वार्थ की सीमा समझोगे, परमार्थ-अभिलाष ॥
साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ॥४॥

जीवन को सद् किम्मत होगी। सरल-कर्म हित हिम्मत होगी ॥
सच्चे अर्थों में आत्मबल, प्रकटे-कर अभ्यास ॥
साथी ! पढ़ सत्यार्थ-प्रकाश ॥५॥

(क्रमशः)

पृ० ४ का शेष

एक रूप शब्द संशयोत्पादक है। वैदिक योग पद्धति पृष्ठ २१ जगत् मिथ्या है, माया प्रकृति असत्य है, नितान्त असत्य है, अत सब कुछ जो भौतिक है मिथ्या असत्य है—"असत्य का साक्षात्कार असत्य अनिश्चित और संदिग्ध होता है।" यह सिद्धान्त विरुद्ध है।

पृष्ठ २१ "आत्मा और शरीर व्यापक होने से एकाकार और अभिन्न है।" इसके विषय में उनके साथ विचार विमर्श के पश्चात् सभा ने निश्चय किया कि यह सारा वाक्य सिद्धान्त के विरुद्ध है। पृष्ठ २ पातञ्जल योग के विषय में विद्यानन्द जी का यह लिखना कि "यह अतिशय जटिल और सर्व साधारण के दैनिक जीवन में सर्वथा अव्यवहार्य है।" पर्याप्त समय तक उनके साथ विचार विमर्श के पश्चात् निश्चय हुआ कि श्री विद्यानन्द जी का यह कथन असंगत है। पृ० २-३ "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध" यह योग की परिभाषा अपूर्ण है। वास्तव में चित्तवृत्ति निरोध योग का साधन है योग नहीं। इस पर अनेक सदस्य महानुभावों ने व्यासभाष्य के उद्धरण और व्याकरण की प्रक्रिया को श्री विद्यानन्द जी के सम्मुख रखा और श्री विद्यानन्द जी ने स्वीकार किया कि व्याकरण और दर्शन का मुझे ज्ञान नहीं वेद ही मेरा विषय है। इस पर विचार विनिमय के पश्चात् सभा ने निश्चय किया कि श्री विद्यानन्द जी की योग विषयक यह कल्पना शास्त्रीय परिभाषा के विरुद्ध और अशुद्ध है।

सत्यनारायण की कथा पृ० २९ सत्यनारायण ब्रह्म को ज्ञानियों ने जो साकार वर्णन किया है। वह भी सत्य है। व्याप्य-व्यापक भाव से ज्ञानी जन ब्रह्मयुक्त ब्रह्माण्ड को अथवा ब्रह्माण्डयुक्त ब्रह्म को सरकार ब्रह्म अथवा ज्येष्ठ ब्रह्म कहते हैं। इस लेख के सम्बन्ध में श्री प० बुद्धदेव जी विद्यामार्तण्ड ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के प्रमाण से श्री विद्यानन्द जी द्वारा उपस्थित "यस्य भूमि प्रमा" इत्यादि मन्त्रों का वास्तविक अर्थ महर्षि के भाष्यानुसार बताते हुए स्पष्ट किया कि विराट् से तात्पर्य वहाँ ब्रह्माण्ड से है जो ईश्वर सिद्धि में प्रमाणरूप से वर्णित है। विचार विनिमय के पश्चात् निश्चय हुआ कि श्री विद्यानन्द जी का साकार ब्रह्म शब्द प्रयोग सिद्धान्त विरुद्ध है। पृ० ३७ यदि तुम उस "सत्यनारायण कथा" का साक्षात्कार करना चाहते हो तो उसके दर्शन के लिये आकुल-व्याकुल और विह्वल हो जाओ। यदि उससे एकाकार होना है तो तड़प उत्पन्न करो। निश्चय हुआ कि यहाँ एकाकार शब्द का प्रयोग बड़ा भ्रमजनक है।

सत्यनारायण की कथा को यज्ञ पद्धति मे जो केवल ३ भावना मन्त्र रखे गये हैं तथा 'प्रपन्न इदम् आत्मा' उड़ा दिया गया है और स्वस्ति वाचन शान्ति प्रकरण के कुछ थोड़े ही मन्त्र रखे गये हैं। निश्चय हुआ कि यह सब महर्षि दयानन्द कृत संस्कारविधि मे निर्दिष्ट पद्धति के विरुद्ध है अत संशोधनीय है। दिव्य भावना के "शिवोस्मि पूर्णोस्मि" तथा मुक्तोस्मि के विषय मे भी विचार विनिमय के पश्चात् सार्वदेशिक धर्मार्यसभा की ६-३-५४ की अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव का समर्थन किया गया कि दिव्य भावना में शिवोस्मि, पूर्णोस्मि तथा मुक्तोस्मि इत्यादि कुछ भावनाओं का झुकाव नवीन वेदान्त की ओर प्रतीत होता है यद्यपि 'शिवोस्मि' का अर्थ श्री विद्यानन्द जी शुभकर्मा हैं यह कर दिया है। वस्तुत परमेश्वर के अतिरिक्त पूर्ण कोई नहीं।

यह सब कार्यवाही आद्योपान्त श्री विद्यानन्द जी की उपस्थिति में हुई और अन्त मे उन्होंने निम्नलिखित वाक्य कार्यवाही पर लिख कर दिया—"मैं इन संशोधनों को स्वीकार करता हूं।" ह० विद्यानन्द विदेह २६-६-५४

यहा यह बात आवश्यकता को सूचनार्थ उल्लेखनीय है कि ये सब संशोधन वही हैं जो ६-३-५४ को धर्मार्यसभा की अन्तरंग सभा मे स्वीकृत हुये थे और जिनके विरुद्ध उन्होंने अपील की थी इतनी कार्यवाही होने के पश्चात् भी विषय के महत्त्व के कारण मध्याह्न २ बजे से रात्रि पौने आठ बजे तक चलती रही, सभा अगले दिन ७ बजे के लिये स्थगित कर दी गई।

२७-६-५४ को प्रात ७ बजे से सार्वदेशिक धर्मार्यसभा की अन्तरंग सभा का अधिवेशन श्री स्वामी आत्मानन्द जी की अध्यक्षता मे प्रारम्भ हुआ। श्री विद्यानन्द जी का १४-५-५४ का श्री प्रधान जी सार्वदेशिक धर्मार्यसभा के नाम लिखा पत्र अविकल रूप मे पढ़ कर सुनाया गया। इस पर विचार आरम्भ ही हुआ था कि विद्यानन्द जी ने निम्नलिखित पत्र लिख कर श्री प्रधान धर्मार्यसभा को दिया—

श्री प्रधान जी धर्मार्यसभा देहली—मैं आप को लिखे १४-५-५४ के अपने पत्र को वापस लेना हू। ह० विद्यानन्द विदेह २७-६-५४।

इस के पश्चात् श्री विद्यानन्द जी ने प्रधान जी धर्मार्य सभा के नाम निम्नलिखित पत्र लिख कर दिया—'मैं निवेदन करता हू कि मेरे ७-४-५४ के क्षमा पत्र को पत्रों मे प्रकाशित न किया जाय।"

ह० विद्यानन्द विदेह

इन पत्रों को ध्यान में रखते हुए विचार विनिमय के पश्चात् निश्चय हुआ कि पत्रों मे केवल सार्वदेशिक धर्मार्यसभा की अन्तरंग सभा की २६ और २७ जून के अधिवेशनों की कार्यवाही ही प्रकाशित की जाए। साथ ही सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि —

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा का यह अन्तरंग सभा निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति नियत करती है जो श्री विद्यानन्द जी की समस्त पुस्तकों का अनुशीलन करके उचित संशोधन प्रस्तुत करे और उसे धर्मार्य सभा का संशोधन समझा जाये। इस संशोधित रूप मे ही विद्यानन्द जी अपनी पुस्तकों के आगामी संस्करण निकालें और जब तक ऐसा न हो जाय तब तक उन पुस्तकों का वितरण और प्रचार स्थगित रखें।

श्री विद्यानन्द जी ने इसको स्वीकार किया।

उप-समिति के सदस्य

१-श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती। २-श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति। ३-श्री आचार्य विश्वश्रवाः।

(क्रमशः)

इतिहासज्ञों के लिए शोध का विषय—

पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गोरी

(श्री देवदत्त शास्त्री बी ए पत्रकार देहरादून)

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने लिखा है कि यदि हमारे आर्य सज्जन लोग इतिहास और विद्या पुस्तकों का खोज कर प्रकाश करेंगे तो देश को बड़ा ही लाभ पहुंचेगा, (सत्यार्थप्रकाश, एकादश समुल्लास)। इसी ऋषि-वाक्य के अनुसार, इतिहास के शोध को मैं अत्यन्त महत्त्व देता हू। सत्य इतिहास का उद्घाटन इसलिए आवश्यक होता है कि उसका अध्ययन कर वर्तमान पीढी यह जान सके कि हमारे पूर्वजों के क्या उपलब्धियां प्राप्त कीं और कहा-कहा ठोकर खाई, और अध्ययन के पश्चात् शिक्षा ग्रहण कर सके ताकि वह पहले से भी अधिक उन्नति और यश को प्राप्त करें और भूलों से बची रहे।

ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थप्रकाश' के एकादश समुल्लास मे लिखा है कि नाथद्वारा से प्रकाशित होने वाली पाक्षिक पत्रिकाओं 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' और 'मोहन चन्द्रिका' के सम्मिलित प्रकाशन में संवत् १९३९ के मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष १९-२० किरण मे महाराज युधिष्ठिर से लेकर इन्द्रप्रस्थ पर मुसलमानों का शासन स्थापित होने तक सभी आर्य राजाओं की सूची दी है। सम्पादक ने अपने किसी मित्र के पास विद्यमान वि० स० १७८२ की लिखी हुई किसी इतिहास-पुस्तक से उसे लिया था।

ऋषि ने उस सूची को भावी इतिहासकारों के लिए सुरक्षित करने हेतु अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में अनुवाद करके दिया है। इस सूची की विशेषता यह है कि इसमें प्रत्येक राजा के राज्यकाल को वर्ष मास, दिन मे ठीक-ठीक अंकित करने का प्रयत्न किया गया है। 'सत्यार्थप्रकाश' में दी इस सूची को पढ़ कर पता चलता है कि गोर के शहाबुद्दीन गोरी ने इन्द्रप्रस्थ का राज पृथ्वीराज से नही छीना था बल्कि पृथ्वीराज चौहाण के वंश के पाचवें राजा यशपाल से छीना था। उस मे लिखा है कि शहाबुद्दीन गोरी ने राजा यशपाल को पकड़ कर स० १२४९ मे प्रयाग के किले मे कैद कर दिया था।

इतिहास के प्रचलित ग्रंथों में प्राय यही पढ़ने को मिलता है कि पृथ्वीराज चौहाण को परास्त कर शहाबुद्दीन गोरी ने इन्द्रप्रस्थ पर अधिकार किया जब कि उपर्युक्त सूची मे पृथ्वीराज के बाद चार राजे और गिनाये गये हैं। यह शोध के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय है।

क्या ही अच्छा हो यदि इतिहास मे रुचि रखने वाले सज्जन पृथ्वीराज चौहाण वाले विषय पर खोज करें।

आर्यसमाज का प्रथम मासिक-पत्र

मुन्शी बख्तावर सिंह का आर्यदर्पण

(डा० भवानीलाल भारतीय एम ए पी एच डी दयानन्द कालेज अजमेर)

आर्यसमाज की पत्रकारिता के क्षेत्र में मुन्शी बख्तावरसिंह सम्पादित आर्यदर्पण की गणना सर्वप्रथम होगी। यह मासिक-पत्र जनवरी १८७८ में प्रकाशित होना आरम्भ हुआ। इसके मुख पृष्ठ पर निम्न इबारत छपती थी—

आर्यदर्पण मासिक-पत्र

जिसमें वेदादि सत्य शास्त्रानुकूल सनातन धर्मोपदेश विषय की वार्ता, श्रीमद्दयानन्द सरस्वती के व्याख्यान और उनके अधीन मत वालों से शास्त्रार्थ आर्यसमाजों के वृत्तान्त और ऐडिटोरियल नोट्स इत्यादि प्रकाशित होते हैं।

इस पत्र की एक विशेषता यह थी कि यह हिन्दी तथा उर्दू दोनों भाषाओं में छपता था। एक ही विषय के लेख दो पृथक्-पृथक् कालमों में नागरी और फारसी लिपि में प्रकाशित होते थे।

जनवरी १८८० के अंक में गायत्री मन्त्र की व्याख्या प्रकाशित हुई। लक्ष्मण प्रसाद, प्रधान आर्यसमाज जेहलम का लिखा 'सृष्टि और स्रष्टा का वर्णन' शीर्षक लेख भी छपा है। इसी अंक में स्वामी जी का काशी जाना तथा काशी में सर्वप्रथम १९२६ वि० मे काशी के पण्डितों से शास्त्रार्थ का विवरण छपा है। इस विवरण से ज्ञात होता है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सम्पादित 'कवि वचन सुधा' में स्वामी जी के विरोध में कई लेख उस समय लिखे गये थे जिनका उत्तर 'आर्यमित्र' नामक किसी पत्र में छपा था। निश्चय ही यह आर्यमित्र इस प्रसिद्ध आर्यमित्र से भिन्न है जो उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख पत्र है। काशीशास्त्रार्थ के पश्चात् पण्डित समुदाय ने स्वामी जी का पराजय घोषित करते हुये 'दयानन्द पराभूति' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की जो काशी नरेश के यन्त्रालय में छपी थी। 'काशी शास्त्रार्थ' सर्वप्रथम १९२६ वि० में मुन्शी हरिवंशलाल के लाइट प्रेस में प्रकाशित हुआ। सम्भवतः यह अपने मूल रूप में केवल संस्कृत में ही छपा था। इसका हिन्दी और उर्दू अनुवाद आर्यदर्पण के इसी अंक में छपा। अनुमान होता है कि दोनों भाषाओं मे मूल संस्कृत लेख (जो निश्चय ही स्वामी जी का होगा) का अनुवाद मुन्शी बख्तावरसिंह ने किया था। शास्त्रार्थ के विवरण के पश्चात् सम्पादक की एक टिप्पणी भी इस पर छपी है।

इससे पूर्व तक स्वामी जी के ग्रन्थ तथा वेद भाष्य बम्बई के प्रेसों में छपते थे, परन्तु वैदिक यन्त्रालय की काशी में स्थापना के साथ-साथ इस अंक के अन्त में यह सूचना प्रकाशित हुई है कि आगे से स्वामी जी का वेद-भाष्य वैदिक यन्त्रालय से ही छपा करेगा। उस समय उक्त मुन्शी जी ही यन्त्रालय के प्रबन्धक थे। इस अंक के टाइटल के तीसरे पृष्ठ पर स्वामी जी के वेदभाष्य का विज्ञापन 'प्रज्ञापन' शीर्षक से छपा है। इस में यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है, जिसमे यह कहा गया है कि इस भाष्य में एक-एक मन्त्र की सात-सात प्रकार की व्याख्या होती है। एक प्रत्येक मन्त्र के पूर्व संस्कृत में भूमिका (मन्त्र का विषय निर्देश) दूसरी भाषा में भूमिका, तीसरी संस्कृत मे प्रत्येक पदों के प्रमाण सहित अलग अलग अर्थ, चौथी अन्वय, पांचवीं भावार्थ, छठी पदार्थ और अन्वय को मिला के भाषा में अर्थ और सातवीं भाषा मे भावार्थ। अर्थात् चार प्रकार की संस्कृत और तीन प्रकार की भाषा में व्याख्या होती है।

फरवरी के अंक में 'विश्वानि देव' मन्त्र की 'ज्ञानप्रकाश' शीर्षक से व्याख्या छपी है। सत्यार्थप्रकाश शीर्षक से एक पद्य 'श्याम' छन्द में छपा है जिसमें सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास के प्रारम्भ में 'ओम्' शब्द की व्याख्या को काव्य बद्ध किया गया है। एक लेख यथार्थप्रकाश शीर्षक छपा है जो प्रश्नोत्तर शैली में है। इसी अंक में 'शिक्षा' शीर्षक उस व्याख्यान का भावानुवाद छपा है जो आर्यसमाज काशी में प० [illegible] संस्कृत में दिया था। इसी अंक में शास्त्रार्थ हुगली का विवरण छपा है जो सम्वत् १९२९ में स्वामी जी तथा ग्राम भाटपाड़ा निवासी प० ताराचरण के बीच हुआ था। यही शास्त्रार्थ विवरण कालान्तर में पृथक् पुस्तकाकार भी छपा था। श्री स्वामी जी महाराज का काशी में [illegible] प्रसिद्ध [illegible] १४ व० १९३६ [illegible] के दिन हुआ था। इस अवसर पर उनके लेखक प० भीमसेन शर्मा के नाम से एक शास्त्रार्थ का [illegible] को किया था। यह निम्नलिखित रूप से प्रकाशित शास्त्रार्थ का [illegible] १८८० के आर्यदर्पण में छपा है।

इसी अंक में श्रीमहाराज के काशी शास्त्रार्थ के विषय में 'प्रेरित पत्र' शीर्षक एक वक्तव्य छपा है। यह पत्र किस व्यक्ति ने सम्पादक के नाम लिखा यह ज्ञात नहीं होता, क्योंकि पत्रान्त में पत्र लेखक का नाम नहीं है। उन दिनों में भी आज की ही भांति पाठक अपने विचार पत्र के रूप में पत्र सम्पादक के पास प्रकाशनार्थ भेजते थे। इस वर्ष काशी शास्त्रार्थ का शताब्दी महोत्सव है, अतः प्रासंगिक जान कर यह पत्र यहां पाठकों के ज्ञान वृद्धि हेतु उद्धृत किया जाता है—

नमस्ते—आप ने जो गत मास के पत्र में शास्त्रार्थ काशी मुद्रित किया था उस में जो किसी को कुछ संदेह पड़ा हो तो दिसम्बर १८६९ के 'हिन्दू कमेन्टेटर' पत्र (The Hindu Commeantator) में देख लेवें। उस मे संस्कृत में यह शास्त्रार्थ बहुत उत्तम रीति से काशी वालों की ओर से छपा है। यदि उस मे बहुत जगह गड़बड़ कर दी है परन्तु सत्य छिपा नहीं है। उस में से दो चार बातें जैसी की तैसी लेकर और नीचे उन पर कुछ नोट्स लिख कर भेजता हूं कृपा करके मुद्रित कर दें।

दयानन्दो नाम साधु[1] सद्धर्मातिक्रमविनाशसद्धर्मपरिलोपनेऽद्धृत-संकल्प।

दयानन्द स्वामी—स्वर्गादौ इन्द्रादयो देवा सन्ति न वा।

विशुद्धानन्द स्वामी—मन्त्रमयो देवता [महाराज [illegible][2]]

द० कथमुपासना?

वि० प्रतीकोपासना शालिग्रामादौ[3]।

द० क्ववेदेलिखितमिदम्।

वि० एकस्य हि सामवेदस्यैव सहस्र शाखा, भवता सर्वा एव दृष्टा?[4]

द० शृणु, शृणु सहस्रशाखा सामवेद सहस्रमार्गम् —इति-तत्सर्वार्थ संहिता तु सर्वत्र शाखासु एका एव।

वि०[5] स एव ईश्वर।

द० [उपहसन्] हे! स-ए-व-ई-श्वर।

द० अस्मगर्वविचारस्येन यत्नकरण तद्वद।

---

१ यह पत्र बनारस के सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् प० सत्यव्रत सामश्रमी लिखते थे। वे ही काशी शास्त्रार्थ में दोनों पक्षों की ओर से लेखक नियुक्त हुये थे।

१ यह एडीटर 'हिन्दूकमेन्टेटर' का वाक्य है।

२ जब विशुद्धानन्द जी ने केवल मन्त्र भाग ही को देवता कहा किया तो महाराजे काशी नरेश ने समझा होगा कि प्रतिमापूजन का खण्डन तो अपनी ही ओर से हो गया।

३ पहले तो वेदों के अंश मात्र ही को देवता बतलाया अब शालिग्रामादि आदि को देवता कहने लगे। अच्छा गड़बड़ है। किस को सत्य मानें।

४ जब प्रश्न का उत्तर न दे सके तो प्रकरणान्तर इस बात पर दौड़ पड़े। इससे इनका अभिप्राय यह जान पड़ता है कि कुछ न बन्द हो जो चाहो अण्ड-बण्ड कहते रहो।

५ जहां कि वेदों के विषय विशुद्धानन्द जी ने यह पूछा था कि वेद ईश्वर का क्या सम्बन्ध है उस पर स्वामी जी ने कहा था कि कार्य कारण सम्बन्ध है। फिर विशुद्धानन्द जी ने कहा कि कार्य कारण [illegible] वेद नहीं रह सकते। इस पर स्वामी जी ने कहा कि परमेश्वर में जो कुछ भी नहीं रह सकता तो आकाश में किसी वस्तु का [illegible] ही सकेगा यह [illegible], विशुद्धानन्द [illegible] ईश्वर बताने लगे। [illegible] तीन आकाशों को ईश्वर कहें तो फिर [illegible] ईश्वर समझें।

शेष पृष्ठ ६४ पर

सफल धर्मोपदेश

(ले० श्री पं० जगत्कुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

भगवान् बुद्ध का एक शिष्य धर्म-प्रचार करता था। धर्म के मर्म को वह बहुत ही सुन्दर, ललित, प्रभाव पूर्ण और सारगर्भित शब्दों में प्रस्तुत किया करता था। उसने एक व्यक्ति को देखा और जाकर अपना उपदेश उसे देना आरम्भ कर दिया।

उस व्यक्ति ने उपदेश की ओर यथोचित ध्यान नहीं दिया। शिष्य ने बारम्बार समझाया, झंझोड़ा, फटकारा, कई-कई प्रकार के उपाय किये। उस व्यक्ति ने उपदेश को स्वीकारा नहीं। उसने तो उपदेश की ओर कुछ ध्यान भी नहीं दिया।

शिष्य ने जाकर भगवान् बुद्ध को बतलाया कि किस प्रकार उस व्यक्ति ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया और उपदेशदान का उस का सारा आयोजन व्यर्थ हो गया।

भगवान् बुद्ध ने कहा—"जाओ, किसी प्रकार उस व्यक्ति को यहां मेरे पास ले आओ। मैं उसे उपदेश दूंगा।"

शिष्य गया। समझा-बुझा कर उस व्यक्ति को भगवान् बुद्ध के समीप ले आया। बुद्ध भगवान् ने उस व्यक्ति की स्थिति और मनोदशा को समझा। भूख के मारे उस का बुरा हाल था। अपने शिष्यों से उन्होंने कहा—"देखो, भोजन की कुछ सामग्री यहां होगी। उसे इस व्यक्ति के लिये ले आओ।"

भोजन आ गया। परोसा गया। खा-पीकर वह व्यक्ति जाने लगा। अधीर होकर उस धर्म-प्रचारक शिष्य ने भगवान् बुद्ध से कहा—"भगवन्! यह तो जा रहा है। वह धर्मोपदेश भी तो इसे दे दो। आप शायद भूल गये।"

उत्तर में भगवान् बुद्ध बोले—"भद्र! मैं कुछ भूला नहीं हूं। आज इस के लिये इतना उपदेश ही पर्याप्त है, शेष उपदेश फिर किसी दिन दे दिया जायेगा।"

सुजानपुर जि० गुरदासपुर में वेद सप्ताह

आर्यसमाज सुजानपुर जि० गुरदासपुर में वेद प्रचार सप्ताह १४ से २१ सितम्बर तक सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब के वेद प्रचार अधिष्ठाता पं० निरजंनदेव जी तथा प्रसिद्ध भजनमण्डली श्री रामनाथ जी यात्री के द्वारा प्रभावशाली प्रचार हुआ। —मन्त्री आर्यसमाज

प्रांतीय आर्य महिला सभा दिल्ली

भारत सरकार से मांग करती है भारतीय सभ्यता की रक्षा के लिये खोसला आयोग की सिफारिशों को लागू होने से रोके और समस्त देश के लिये कानून बना कर कामोत्तेजक अश्लील चित्रों पर प्रतिबन्ध लगाये।

—शकुन्तला आर्या उपमन्त्री

गुरु विरजानन्द निर्वाण शताब्दी महोत्सव करतारपुर

५ अक्टूबर से १२ अक्टूबर १९६९ तक करतारपुर (पंजाब) में बहुत ही समारोह से मनाया जावेगा। इस शुभ अवसर पर प्रति दिन प्रातः यज्ञ योग-साधना तथा प्रातः और सायम् यजुर्वेद यज्ञ किया जावेगा तथा इस के अतिरिक्त अनेक सम्मेलन—महिला, आर्य युवक, वेद तथा वेद प्रचार, संन्यास, संगीत, हिन्दी रक्षा तथा कवि दरबार होंगे। सभी महानुभावों को बड़ी संख्या में महोत्सव में भाग लेना चाहिये।

—निवेदक सेठ शिवचन्द्र प्रधान स्वागत समिति

वार्षिक—उत्सव स्थगित

अति वृष्टि के कारण वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर का १ से ५ अक्टूबर तक मनाये जाने वाला उत्सव स्थगित कर दिया गया। सब सज्जनों को सूचनार्थ यह पत्र प्रकाशित किया गया है।

पृ० १० का शेष

वि० (पृष्ठ दत्तवामहस्तः)[1] अरे बाबा, तू अभी कुछ पढ़ा नहीं कुछ दिन पढ़।

द० (हस्तबला दूरीकृत्य) भवता सव पठितम्।

वि० (प्रहस्य) सर्वम्।

द० (पुनः प्रत्युपविश्य) व्याकरणमपि।

वि० तदपि।

द० (रक्तेक्षणः) कल्मसंज्ञा कस्य? (गर्जयन्) वद वद?

२. पं० बालशास्त्री—कल्मसंज्ञा महाभाष्ये........।

श्रीमन्महाराजस्तु गभीरघोश्चारुचचक्षुर्दृष्ट्वाऽऽद्यन्तं विचारकोलाहल नहि तृप्तिजगाम। ततः प्रकाशितवांश्चक्रादिदं स्वागतम्। अस्तु। दयानन्दो धृष्टोमूर्खश्च[2] परं न स एकेन केनचित्कोविदेन पराजेयः संभाव्यते। स हि षड्भिः करणी निपातित इति न्यायेन ध्वस्तबलो निरस्तः अपि च नहि तन्निरासेनैव विचारः शेषतां गतः। उद्भावयन्तु कोविदा मिश्राः।

खण्डनमण्डनं मण्डनखण्डनं च ग्रन्थाकारेण[1] प्रकाशमेतु च तत्समस्तं भवाज्ञया इति।

अपरे! श्रीहरेकृष्ण व्यासः, श्री जयनारायण तर्कपंचाननः, श्री शिवकृष्ण वेदान्तसरस्वती इत्येवमादयो विद्वद्प्रगण्याः कतिपया वदन्ति विचारस्तु सम्यक् न भूत परं दयानन्दः पराजित इति तु सत्यम्।

प्रत्नक्रमनन्दिनी के इस उद्धरण पर आर्यदर्पण के सम्पादक की टिप्पणी 'एडीटोरियल नोट्स' शीर्षक छपी है, जिसका सार यह है कि यद्यपि स्वामी विशुद्धानन्द एवं बालशास्त्री आदि पण्डितों ने कई व्यक्तियों से एकान्त में कहा कि जो कुछ स्वामी दयानन्द कहते हैं, सब सत्य है, परन्तु क्या करें, यदि हम भी ऐसा ही कहने लगें तो लोग हमको छोड़ दें, हमसे बैर-भाव रखने लगें, फिर हम लोगों की जीविका कैसे चले। आदि।

इस अंक के टाइटिल के तीसरे पृष्ठ पर आर्यसमाज फर्रुखाबाद के मन्त्री श्री कालीचरण के नाम से एक विज्ञापन छपा है जिसका सार यह है कि अति व्यस्तता के कारण अकेले स्वामी जी वेद भाष्य का कार्य नहीं कर पायेंगे अतः उनको सहायता के लिये दो पण्डित १०० रु० के मासिक वेतन पर लगाये जाने चाहियें। आर्यपुरुषों से यह अपील की गई है कि जो लोग इस व्यय को एक वर्ष या अधिक के लिये उठा सकें वे मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद को लिखें।

---

१. यह लो शास्त्रार्थ तो संस्कृत में हो रहा था, भाषा पर जा कूदे। सभा के बीच ऐसी अयोग्य बात कहना, और ऐसा काम अविद्वानों के सदृश करना पण्डितों का कर्म नहीं होता। यहाँ स्पष्ट ज्ञात होता है कि स्वामी विशुद्धानन्द जी से जब उत्तर न बन पड़ा तो क्रोध में आकर ऐसा अनुचित काम किया।

२. जब व्याकरण जानने की प्रतिज्ञा कर ली तो फिर आप ही उत्तर न दिया? उस समय स्वामी विशुद्धानन्द जी का चुप रह जाना और स्वामी जी के प्रश्न के उत्तर को पं० बालशास्त्री का उद्यत होना पाठकगण ही विचारें कि क्या प्रसिद्ध करता है।

३. ऐसे बड़े राजा महाराजाओं के मुख से ऐसे दुर्वचनो का निकलना बड़ी शोक की बात है।

४. जब तृप्ति तो हुई नहीं और अपने मुख से कहते हैं कि यह विचार ठीक-ठीक नहीं हुआ, तो फिर न जाने कि यह कैसे विदित हो गया कि स्वामीजी की हार हो गई, यहाँ पूर्वापर विरोध होने से कहने वालों का पक्षपात स्पष्ट ज्ञात होता है। जब आप लोगों के कथनानुसार विचार ठीक-ठीक नहीं हुआ तो इसी प्रकार हम भी कह सकते हैं कि काशी के पण्डितों की हार हुई। पण्डितों को उचित है कि सर्वदा सत्य ही कहें—किसी के दबाव से अन्यथा कहना योग्य नहीं है।

१. जब यहाँ ही यह गड़बड़ है तो न जाने ग्रन्थ में क्या-क्या भरा होगा।

२. यहाँ नोट संख्या ४ गत पृष्ठ का देखो—न० द०

(क्रमशः)

ग्राहकों तथा पाठकों को शुभ सूचना
आगामी गुरु विरजानन्द विशेषांक होगा

आर्यमर्यादा के ग्राहक तथा पाठक महानुभावों को सूचना दी गई थी कि १२ अक्तूबर ६९ का अंक गुरु विरजानन्द शताब्दी के उपलक्ष में स्वामी विरजानन्द विशेषांक प्रकाशित होगा। सभी ग्राहकों की सेवा में ११ अक्तूबर तक पहुंच जावेगा। इस अंक का मूल्य साधारण अंक वाला केवल २० पैसे ही रखा है अतः जो आर्यसमाजें प्रचारार्थ मंगवाना चाहें वे तुरन्त सूचित करें। —व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा

१५—हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

धार्मिक परीक्षाएं

सरकार से रजिस्टर्ड आर्य साहित्य मण्डल अजमेर द्वारा संचालित भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् की विद्या विनोद, विद्यारत्न, विद्या विशारद, विद्या वाचस्पति की परीक्षायें आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। किसी भी परीक्षा में कोई भी बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में सुन्दर सुनहरी उपाधि पत्र प्रदान किया जाता है। इनमें धर्म के अतिरिक्त साहित्य, इतिहास, भूगोल, राजनीति, समाज-विज्ञान आदि का कोर्स भी है। निम्न पते से पाठविधि व प्रोवेदन पत्र मुफ्त मंगा कर केन्द्र स्थापित करें। परीक्षा शुल्क भी बहुत कम है। कोई भी सज्जन कहीं पर भी केन्द्र बना सकते हैं। डा० सूर्यदेव शर्मा शास्त्री, एम०ए०डी० लिट्

परीक्षा मन्त्री, आर्य विद्यापरिषद्, अजमेर।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१	सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२	धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३	सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४	आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह	१-२५
५	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६	वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५६
७	कुल्लियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९	वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५
१०	जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम ए	३-००
११	सोमसरोवर " " "	३-००
१२	वैदिक सिद्धान्त—प० चमूपति जी एम ए	१ ००
१३	Principle of Arya Samaj " "	१-५०
१४	Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१५	Subject Matter of Vedas	१-००
१६	आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	५०-०
१७	मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर	१-००
१८	प० गुरुदत्त विद्यार्थी—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-२५
१९	वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी	१०) सैकड़ा
२०	पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद	२ ००

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित।

मुग्ग मर्यादा कवयस्ततक्षु (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणा परमविदुषा श्रीविर-जानन्दसरस्वतीस्वामिना शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतो-स्वामिना विरचित स्वमन्तव्याम-तव्यसिद्धान्तसमन्वित सुप्र-माणयुक्त सुभाषाविभूषित सत्यार्थप्रकाशो ग्रन्थ ॥

—सत्यार्थप्रकाश का अन्तिम वचन

वर्ष १ अंक ४३ } २७ आश्विन वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १२ अक्तूबर १९६९ रविवार, सृष्टि स०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
विदेश मे २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनरीश्वरो जीवेभ्य कि करोतीत्युपदिश्यते ॥

फिर वह ईश्वर जीवो के लिये क्या करता है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है।

त्व तमग्ने अमृतत्व उत्तमे मर्तं दधासि श्रवसे दिवे दिवे ।
यस्तातृषाण उभयाय जन्मने मय· कृणोषि प्रय आ च सूरये ॥

ऋ० १ ३१ ७ ॥

पदार्थ—(त्वम्) जगदीश्वर. (तम्) पूर्वोक्त धर्मात्मानम् (अग्ने) [illegible] (अमृतत्वे) अमु- [illegible] (च) मनु- [illegible] (तातृषाण·) पुन पुनर्जन्मनि तृष्णन् (उभयाय) पूर्वपराय (जन्मने) शरीरधारणेन प्रसिद्धाय (मय) सुखम् (कृणोषि) करोषि (प्रय) प्रीयते काम्यते यत्तत्सुखम् (आ) समन्तात (च) समुच्चये (सूरये) मेधाविने ॥

अन्वय —हे अग्ने जगदीश्वर त्व य सूरिर्मेधावी दिवेदिवे श्रवसे सन्मोक्षमिच्छति त मर्त्तं मनुष्यमुत्तमे ऽमृतत्वे मोक्षपदे दधासि यश्च सूरिर्मेधावी मोक्षसुखमनुभूय पुनरुभयाय जन्मने तातृषाण संस्तस्मात्पदान्निवर्तते तस्मै सूरये मय प्रयश्चाकृणोषि ॥

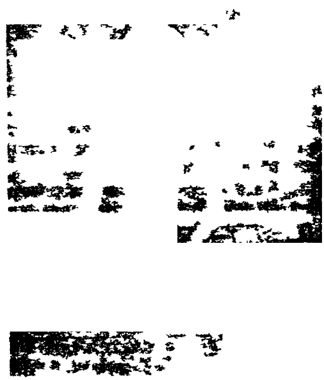
भावार्थ—ये ज्ञानिनो धर्मात्मानो मनुष्या मोक्षपद प्राप्नुवन्ति तदानीं तेषामाधार ईश्वर एवास्ति । यज्जन्मातीत तत्प्रथम यच्चागामि तद् द्वितीय यद्वर्त्तते तत्तृतीय यच्च विद्याचार्य्याभ्यां जायते तच्चतुर्थम् । एतच्चतुष्टय मिलित्वैक जन्म यत्र मुक्ति प्राप्य मुक्त्या पुनर्जायते तद् द्वितीय जन्मी तदुभयस्य धारणाय सर्वे जीवा प्रवर्तन्ते इतीय व्यवस्थेश्वराधीनास्तीति वेद्यम् ॥

भावार्थः—हे (अग्ने) जगदीश्वर है उस (मर्तम) मनुष्य को (उत्तमे) अत्युत्तम (अमृतत्वे) मोक्षपद में स्थापन करते हो और (यश्च मोक्ष-सुखमनुभूय पुन) और जो बुद्धिमान् अत्यन्त सुख भोग कर फिर (उभयाय) पूर्व और पर (जन्मने) जन्म के लिये चाहना करता हुआ उसमोक्ष-पद से निवृत्त होता है (तस्मै) उस (सूरये) बुद्धिमान् सज्जन के लिये (मय) सुख और (प्रय) प्रसन्नता को (आकृणोषि) सिद्ध करते हो ॥

भावार्थ —जो ज्ञानी धर्मात्मा मनुष्य मोक्षपद को प्राप्त होते हैं उन का उस समय ईश्वर ही आधार है जो जन्म हो गया वह पहिला और जो मृत्यु वा मोक्ष हो के होगा वह दूसरा, जो है वह तीसरा और जो विद्या वा आचार्य से होता है वह चौथा जन्म है ये चार जन्म मिल के जो मोक्ष के पश्चात होता है वह दूसरा जन्म है इन दोनो जन्मो को धारण करने के लिये सब जीव प्रवृत्त हो रहे हैं मोक्षपद से छूटकर ससार की प्राप्ति होती है यह भी व्यवस्था ईश्वर के आधीन है ॥ (ऋषि दयानन्द भाष्य)

कृपया इस विशेषाङ्क को सम्भाल कर रखिये, क्योंकि आर्यसमाज, राष्ट्र तथा वैदिक धर्म के अनुयायियों के लिये यह ऐतिहासिक महत्त्व का परिचायक है।

परमहंस महा विद्वान् गुरु श्री विरजा- नन्द सरस्वती



—धन्य विरजानन्द—

(कविवर 'प्रणव' शास्त्री एम० ए० आर्यनगर (फिरोजाबाद)]

धन्य मुनि दण्डिन् विरजानन्द गुणो के गौरवमय आगार ।
तपोधन त्यागी विद्यानन्द नमन है तुम को बारम्बार ॥१॥
प्रथित प्रिय पावन पौरुष ने प्रशसा पूरी पाई है ।
धरा के कोने-कोने मे गूँजती शुचि शहनाई है ॥
पुरातन प्रतिभा सागर का नहो कुछ भी है पारावार ॥२॥
जानते सब ही ज्ञानी हैं कि तुम थे भौतिक नेत्र विहीन ।
साधना श्रद्धा मे निष्णात ईश में तुम थे अन्तर्लीन ॥
तुम्हारे सूक्ष्म निरीक्षण पर वारतें पण्डित नेत्र हजार ॥३॥
योग का पा सुन्दर सयोग बने तुम योगीराज महान् ।
जय श्री शास्त्रार्थों मे चरण चूमती जाने सकल जहान ।
विपक्षी पहिन हार का हार आप को देते जय-उपहार ॥४॥
निगम आम की सुन्दर सेतु आर्ष महिमा के मञ्जमराल ।
कर्म-कौशल के अद्भुत केतु तर्क के हिमगिरि उच्च विशाल ॥
व्याकरण विद्या के भास्वान, मानता तुम को सब ससार ॥५॥
विरत निष्काम निरीहि नितान्त नियति के निर्माता निर्भीक ।
सुकृति शोभा के शूर प्रशान्त धैर्य के ध्रुवतम परमप्रतीक ॥
प्रतिष्ठा पूजा के अभिषक नृपति मण्डल के देव उदार ॥६॥
भागीरथ भूप समान सुविज्ञ वेद की गङ्गा ले आये ।
पान कर ज्ञानामृत स्वच्छन्द जनो के मानस मुसकाये ॥
डूबती सस्कृति तरणो के, बने तुम दृढतम प्रियपतवार ॥७॥
तुम्हीं से पाकर ज्ञानमहान् दयानन्द वेदो के विद्वान् ।
धरा को देकर जीवन-दान होकर वेदी पर बलिदान ॥
गूँजता नभ मे नित्य नवीन राष्ट्र जागृति का जयजय कार ॥८॥
अमर है जीवन मुक्त महान अमर है अविचल अविरल भक्ति ।
अमर है प्रणव पिता वरदान अमर है अविकल अनुपम शक्ति ॥
मान्यवर मानी मुदित मुनीन्द करो शुभ श्रद्धाञ्जलि स्वीकार ॥९॥

महर्षि दयानन्द जी का ही वेद भाष्य क्यों ठीक है ?

(श्री स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती अध्यक्ष, प्रभात-आश्रम, टेक, जि० मेरठ)

[लेखक महोदय ने स्वर्गीय श्री स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती (पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार विद्या मार्तण्ड) से शतपथ ब्राह्मण का विधि पूर्वक अध्ययन किया है अतः पाठकों को ध्यान पूर्वक लेख का मनन करना चाहिये। —सम्पादक]

आज कुछ मन्द-मन्द ध्वनि में कहीं-कहीं पर यह शब्द सुनाई दे रहा है कि 'आर्यसमाज' पहले तो कुछ अच्छा था पुरानी रूढ़ी अन्ध-परम्पराओं का खण्डन करके नये बुद्धिवादी मार्गों को दर्शाता था किन्तु अब वह भी बुद्धि पर ताला लगा कर बुद्धिहीनों की तरह लकीर का फकीर होता हुआ ऋषि दयानन्द के लेखों को "बाबा वाक्यम् प्रमाणम्" कह कर सत्य मानता जा रहा है जब सायण और महीधर दोनों ही वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् थे, और दोनों ने ही वेदभाष्य किये तथा मोक्षमूलर आदि पाश्चात्य विद्वानों ने भी वेदभाष्य किये हैं तो उनका वेदभाष्य ठीक नहीं है किन्तु जो वेदभाष्य ऋषि दयानन्द का है वही ठीक है, यह मानना रूढ़िवादिता तथा पक्षपात नहीं तो और क्या है आदि ?

इस में पहला आक्षेप जो आर्यसमाज के ऊपर किया गया है कि आर्य-समाज ऋषि दयानन्द के वाक्यों वा लेखों, को बाबा वाक्यम् प्रमाणम् कह कर सत्य मान लेता है। यह बिलकुल निराधार है क्योंकि आर्यसमाज ऋषि दयानन्द की बातों को सत्य इसलिये नहीं मानता कि उस बात को ऋषि ने कहा है किन्तु बात इस के ठीक विपरीत है वह यह कि "जो-जो सत्य है उसी को ऋषि दयानन्द ने लिखा है और उसी बात को आर्यसमाज सत्य मानता है।

यही बात वेदभाष्य की जो उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया, तो आज हम इस शास्त्रार्थ शब्दों के अवसर पर महीधर के वेदभाष्य के केवल एक प्रकरण की मीमांसा करेंगे कि उसका भाष्य क्यों ठीक नहीं है और ऋषि का वेदभाष्य ही क्यों ठीक है वह प्रकरण है यजुर्वेद का छठा और सातवाँ अध्याय जिसकी व्याख्या शतपथ ब्राह्मण में सोमयाग प्रकरण में तीसरे तथा चौथे काण्ड में की गई है। शतपथ के अनुसार सोम गुरुकुल से अधीतविद्य निकले हुये ब्रह्मचारी को कहते हैं जो स्नातक बनने के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने जा रहा हो 'इस के लिये प्रमाण शतपथ के ही सोमयाग के प्रकरण का ही लीजिये 'दीक्षा तपसोर्हं वा कुक्ष्योरन्तर्निहित सोम आस" शत० अर्थात दीक्षा और तपस्या के गर्भले में साम अन्तर् निहित था वहीं से लाया गया। दूसरा वाक्य—"सोम कस्मिन् प्रतिष्ठित दीक्षाया दीक्षा कस्मिन् प्रतिष्ठिता सत्य इति" सोम किस में स्थित था दीक्षा में दीक्षा किस पर आधारित थी सत्य पर। इन दो प्रमाणों से स्पष्ट हो दीख रहा है कि सोम नाम गुरुकुल के ब्रह्मचारी का ही है क्यों कि ब्रह्मचारी ही दीक्षा और तपस्या के गर्भल में पलता है और वहीं से स्नातक होने के पश्चात् घर लाया जाता है, दूसरी बात जो सोम के प्रतिष्ठा के विषय में कही वह सारी सोमयाग का प्राण है। सोम अर्थात् ब्रह्मचारी किस में प्रति-ष्ठित था दीक्षा में क्यों कि बिना दीक्षा के शिक्षा उद्देश्य हीन हो कर किसी काम की नहीं, और दीक्षा का भी यदि सत्य आधार नहीं हो तो इस दीक्षा का भी कोई मूल्य नहीं, क्यों कि दीक्षित हो कर ही क्या करेगा ? जब उस पर दृढ ही नहीं रहेगा इसलिये दीक्षा का आधार सत्य को बतलाया। "दीक्षा कस्मिन् प्रतिष्ठिता सत्य इति" इसी अभिप्राय को वेद में भी कहा" सत्ये-नोत्तभिता भूमि" पृथिवी सत्य पर खड़ी है, इस सोमयाग में यजुर्वेद के ४ से ८ अध्याय तक के मन्त्रों का विनियोग तथा उनकी व्याख्या की गई है जिस में विश्वविद्यालय का निर्माण तथा आचार्य का व्यवहार, ब्रह्मचारी को क्या कैसी शिक्षा मिलनी चाहिये उसका शारीरिक तथा मानसिक आत्मिक विकास कैसे और कितना होना चाहिये इसका विस्तृत वर्णन है, जिस प्रक-रण में ब्रह्मचारी के शारीरिक विकास का वर्णन है उसी प्रकरण को आधार मान कर महीधरादि भाष्यकारों ने 'पशुयाग' बकरी के बच्चे को काट कर उसके अङ्गो प्रत्यङ्गो को हवि के रूप में देने के लिये लिखा। मन्त्र निम्न है :

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनज्मि। अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि ॥ यजु० ६-९ ॥

महीधरकृत अर्थ.—हे पशो अद्भिरोषधिभिश्च, त्वां प्रोक्षामि मेध्यं करोमि। किं भूत त्वा। अग्नीषोमाभ्या जुष्ट प्रीतेदंभेरपाङ्कृत्वात्त्वद्दोष-धीनामपि प्रोक्षणसाधनत्वमस्त्येव। स्वमातृभक्षिनाभ्यां तृणोदकाभ्यां पयोस्त्पत्यत्वात्तेनोभयेन प्रोक्षणम् युक्तम्। किंच हे पशो, एव प्रोक्षित त्वां माता भूमिरनुमन्यता तथा पिता द्यौरनुमन्यताम्, सगर्भ्य समानगर्भे उदरे भव सोदरो भ्राता अनुमन्यताम्। सयूथ्य समानयूथे भव सखा सुहृत् अनुमन्यताम् ॥९॥ हे पशु पानी और ओषधि से तुझे पवित्र करता हूं। किस प्रकार का तू है ? अग्नी सोम से प्रेम किया गया है कुशा से जल के पवित्र होने से ओषधियां भी पवित्र करने की साधन हैं ही, अपनी माता से घास और जल पीये जाने से ही पशु के उत्पन्न होने से दोनों ओषधि और पानी से शुद्ध करना ठीक ही है और हे पशु इस प्रकार शुद्ध किया हुआ तुझ को तुम्हारी माता भूमि और पिता द्यौ तुमको अनुमति प्रदान करें, सहोदर भाई तथा मित्र भी अनुमति देवें। यह अनुमति किस लिए मांग रहे हैं, इसका उत्तर यह है कि इस से पहले मन्त्र का अर्थ महीधर ने यूप में बकरी के बच्चे को बांधा जाना बताया तथा इस से अगले मन्त्र के अर्थ में आप देवी को खिलायेगा उनको खिलाने के लिये बकरे के माता-पिता भाई साथी से स्वी-कृति ले रहा है यह है महीधर का वेदार्थ। जिसके सत्य होने की कुछ लोग झूठी वकालत करते हैं।

अब महर्षि दयानन्द जी ने जो इस मन्त्र का अर्थ किया है उसे देखिये :—

हे शिष्य ! मैं (सवितुः) समस्त ऐश्वर्ययुक्त (देवस्य) वेद विद्या प्रकाश करने वाले परमेश्वर के (प्रसवे) उत्पन्न किये हुए इस जगत् में (अश्विनोः) सूर्य और चन्द्रमा के (बाहुभ्याम्) गुणों से वा (पूष्णः) पृथिवी के (हस्ताभ्याम्) हाथों के समान धारण और आकर्षण गुणों से (त्वा) तुझे (नियुनज्मि) स्वीकार करता हूं तथा (अग्नीषोमाभ्याम्) अग्नि और सोम के तेज और (पिता) अनुमोदित करे, (सखा) मित्र (अनुमन्यताम्) और शान्ति गुणों से (जुष्टम्) प्रीति करते हुए (त्वा) तुझ को जो ब्रह्मचर्य धर्म के अनुकूल जल और ओषधि हैं उन (अद्भ्य) जल और (ओषधीभ्यः) गोधूम अन्नादि पदार्थों से (नियुनज्मि) नियुक्त करता हूं तुझे मेरे समीप रहने के लिये तेरी (माता) जननी (अनु-मन्यताम्) अनुमोदित करे और (सयूथ्य) तेरे सहवासी (अनुमन्यताम्) अनुमोदित करें (अग्नीषोमाभ्याम्) अग्नि और सोम के तेज और शान्ति गुणों में (जुष्टम्) प्रीति करते हुए (त्वा) तुझ को (प्र—उक्षामि) उन्हीं गुणों से ब्रह्मचर्य के नियम पालने के लिये अभिषिक्त करता हूं ॥९॥

अब इन दोनों अर्थों में ठीक कौन-सा है इस को जानने के लिये शब्दार्थ ज्ञान के निर्णय के लिये अनेक कारण होते हैं जिनमें प्रकरण भी है, देखिये शब्द शास्त्र के स्वतन्त्र स्वतन्त्र विद्वान् भर्तृहरि जी महाराज अपने ग्रन्थ वाक्यपदीय में क्या लिखते हैं—

संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता,
अर्थः प्रकरणं लिङ्गं शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः ॥
सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः,
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः ॥ इति ॥

अतः हम पहले प्रकरण देखेंगे और दूसरी बात है शतपथ ब्राह्मण और कात्यायन श्रौतसूत्र की जिसके आधार पर ही महीधर का वेदभाष्य खड़ा किया गया है। महर्षि दयानन्द जी भी शतपथ ब्राह्मण को प्रमाण मानते हैं और अपने यजुर्वेद भाष्य के आरम्भ में ही लिखा—"प्रमाणैर्निबद्ध शतपथ निरुक्तादिभिरपि" तथा स्थान-स्थान पर इसका प्रमाण भी दिया। अतः उभयवाद सम्मत होने के कारण हम शतपथ के आधार मान कर ही दोनों भाष्यों की तुलना करते हैं। इस मन्त्र की व्याख्या से पहले आठवां मन्त्र आया है उसकी व्याख्या शतपथ में आया है।

शेष पृ० ७

सम्पादकीय

देवं बृहस्पतिं स्वामिनं विरजानन्दं स्मरामः

विद्यादिदिव्यगुणो से सुभूषित, वेदनिधिरक्षक, स्वामी विरजानन्द सरस्वती का स्मरण हम आर्य लोग अपने हृदयस्थ मन की चित्तवृत्ति के द्वारा करते हैं।

जहा जहा ऋषि दयानन्द द्वारा रचित वेदभाष्य तथा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थ पहुचे हैं वहा वहा गुरु विजानन्द जी महाराज के नाम का यश भी पहुचा है।

गुरु महाराज ने अपनी अगाध विद्या के रहस्यो को अपने निकटतम शिष्य दयानन्द के हृदय में प्रकाशित किया जिन के कारण दयानन्द महर्षि पद को प्राप्त कर सके। ऋषि दयानन्द ने अपनी अलौकिक गुरु भक्ति के साथ कृतज्ञता और आत्मसमपण करके गुरु के विद्या तेज को ससार मे सूर्य-प्रकाश सम प्रख्यापित किया।

विरजानन्द और दयानन्द का गुरु शिष्य रूप मे ऐसे समय मे सम्मिलन हुआ था जब कि भारत मे से वैदिक आर्ष ब्रह्मचर्य शिक्षा प्रणाली लुप्त प्राय हो चुकी थी। वेद के नाम पर ब्राह्मण ग्रथो एव उपनिषदो का प्रचार प्रसार हो रहा था। ईश्वरीयज्ञान वेद को ऐतिहासिक ग्रन्थ समझा जाने लगा था। वेद के अध्यापन की तो बात ही क्या,अध्ययन का अधिकार भी सब मनुष्यो को नहीं रह गया था। शब्द शास्त्र की प्राचीन प्रक्रिया के स्थान पर नवीन ग्रन्थो को प्रमाण माना जाता था। षड् दर्शनो मे परस्पर विरोध बताया जाता था। कपिल ऋषि जैसे वेदवेत्ता और ईश्वर के साक्षात् किये हुए परमयोगी को नास्तिक नाम दिया जा चुका था। व्यास ऋषि के वेदान्त दर्शन को 'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या' का प्रतिपादक बतलाकर नवीन अद्वैतवाद की घोषणा सर्वत्र विरक्त आश्रमियों में की जा रही थी। पातञ्जल योग के स्थान पर तान्त्रिक अवैदिक हठ योग की प्रणाली चलाई जा रही थी। गौतम और कणाद का विज्ञान वाद प्रमाण पद से दूर कर दिया गया था। वेद के स्थान पर मतमतान्तरो द्वारा रचित पुराण आदिक ग्रन्थो को ही मुक्ति का सोपान समझा जाता था। वैदिक सिद्धान्तो और आर्ष मन्तव्यो के नाम पर मूर्तिपूजा आदि आडम्बरो ने घर कर लिया था।

बौद्ध और जैन साहित्य ने वैदिक कर्मवाद को धक्का देकर अहिंसा वाद के नाम पर राष्ट्र का सब विध पतन कर डाला था। ब्राह्म और क्षात्र तेज को निस्तेज कर दिया गया जिस के दुष्परिणाम स्वरूप भारत विदेशी आक्रान्ताओं के सामने मार खाकर परतन्त्रता की बेडियो मे बलात् जकड दिया गया। ईसाईमत की मीठी साम्प्रदायिक गोलियो ने राष्ट्रवासियो से वैदिक परम्परा और रीतियो को दूर कर के भारतीयो की बुद्धि मे विमोह उत्पन्न कर दिया था। कहा तक लिखा जावे ऐसे राष्ट्रिय पतन के समय दो दिव्यविभूतिया मथुरा मे एकत्र हुई। दोनो गुरु शिष्यो ने सब दुखस्था पर विचार किया। इसी के परिणाम स्वरूप गुरु विरजानन्द ने विद्या पूर्ति के समय में अपने दृढ-प्रतिज्ञ शिष्य दयानन्द से परम्परागत गुरुदक्षिणा मे वेद प्रचार की प्रतिज्ञा कराई। गुरुभक्त दयानन्द ने गुरु के चरणो मे अपना शीश धर के गुरु द्वारा आदेश का सर्वात्मना पालन किया।

आर्य्यमर्यादा के इस विशेषांक में राष्ट्र के पुनरुत्थान के लिये गुरु विरजानन्द महाराज के प्रति तात्कालिक राष्ट्र नेताओ को अटूट श्रद्धा की एक प्रामाणिक ऐतिहासिक झलक का प्रकाश किया गया है। न जाने गुरु विरजानन्द और शिष्य दयानन्द ने किन-किन योजनाओ को कार्यान्वित करने की रूप रेखा तैयार की थी। उन योजनाओ का स्पष्ट उल्लेख न होते हुए भी ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों और तत्समय दिये गये भाषणो से सुस्पष्ट परिचय मिलता है।

गुरु विरजानन्द जी महाराज के महत्त्व का प्रकाशक "असली पत्र"

चौ० कबूलसिंह महामन्त्री सर्वखाप पचायत शोरम—जि० मुजफ्फरनगर



परमहस गुरु विरजानन्द सरस्वती जी महाराज के सम्बन्ध मे सन् १८५६ मे मीर मुश्ताक नाम के एक मिरासी द्वारा उर्दू फारसी लिपि मे लिखा आर्यमर्यादा के इसी अक मे पृष्ठ ४ और ५ पर असली पत्र का ब्लाक बनवा कर प्रकाशित किया गया है। मीर मुश्ताक मिरासी सर्वखाप पचायत के प्रतिनिधि स्वरूप लेखक रूप मे मथुरा की पचायत मे गया था जैसा कि उस ने अपने पत्र मे प्रकट भी किया है।

सर्वखाप पचायत जनतन्त्र के रूप मे बहुत पुराना सघटन चला आ रहा है। अग्रजो राज्य मे अदालतो को सरकारी रूप दिय जाने के कारण इस सघटन की शक्ति को नष्ट किया गया परन्तु सामाजिक रूप मे यह सघटन बना ही रहा। देहली के चारो ओर १५०-१५० मील तक के क्षेत्र मे सर्वखाप पचायत का व्यापक प्रभाव रहा है। दक्षिण भारत तथा अन्य भागो मे भी पचायत के योद्धा पहलवान सैनिक प्रशिक्षण देने के लिये जाते रहते थे। इसी पचायत का कार्यालय पचायती रूप मे आज भी जि० मुजफ्फरनगर की बालायन खाप के शोरम ग्राम मे है। इस पचायत के वर्तमान महामन्त्री चौ० कबूलसिंह जी शोरम निवासी हैं। इन के पूर्वज इस सघटन के मन्त्री रहते आये थे। इसी कारण मीर मुश्ताक मिरासी ने अपना पत्र लाकर सर्वखाप पचायत के तात्कालिक महा मन्त्री को द दिया था। इसी खाप का प्रसिद्ध गाव सिसौली जि०मुजफ्फरनगर मे ही है। सौभाग्य से अनेक बहुमूल्य कागजी सामग्री मे यह पत्र भी सुरक्षित रहा। कुछ कागजात नष्ट भी हो गय। चौ० कबूलसिंह जो ने इस असली पत्र को हमे सौप दिया। यह पवित्र कार्य इन के आर्यत्व और ऋषि भक्ति का द्योतक है। हम ने इस अमूल्य ऐतिहासिक पत्र का ब्लाक बनवाकर असली रूप मे ही प्रकाशित कर दिया है। आर्य बन्धुओ के लिये तो यह पत्र गौरव का स्थान रखता ही है, साथ ही राष्ट्र को अग्रजी दासता से मुक्त कराने वाले तात्कालिक अग्रगण्य नेताओ मे गुरु विरजानन्द जी महाराज भी प्रमुख थे—इस पत्र से यह भी राष्ट्र के सामने सुप्रकट हो गया है। चौ० कबूलसिंह जो ने यह अमूल्य पत्र हमे ही क्यो सौंपा ? इस का कारण यह है कि इन पक्तियो का लेखक आज कल सर्वखाप पचायत के प्रधान पद की सेवा पर निर्वाचित किया हुआ है।

हम समस्त आर्यजगत् और भारतीय राष्ट्र की ओर से बालायन खाप की सब बिरादरियो के नेताओ तथा चौ० कबूलसिंह जी के प्रति शतश आभार प्रकट करते हुए इन का फोटो भी यही प्रकाशित कर रहे हैं।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

स० १९१४ वि० के काल मे भारत को अग्रजो दासता से मुक्त कराने के लिये जिन महापुरुषो ने भाग लिया था, उनमे गुरु विरजानन्द सरस्वती एक एसे परम विद्वान् सन्यासी थे, कि जिनके चरणो मे साम्प्रदायिक भेद भाव को छोड कर सभी जन श्रद्धा से शिर झुकाते थे। इस हमारे कथन के प्रमाण रूप मे आर्य्यमर्यादा के स्वाध्याय शील ग्राहक तथा पाठक इसी अक मे पृष्ठ ४-५ पर प्रकाशित मीरमुश्ताक मिरासी के प्रथम बार छापे गये उर्दू-फारसी पत्र को उसके देव नागरी लिपि और हिन्दी भाषा मे परिवर्तित रूप मे पढें और गौरव अनुभव करे। साथ ही इस बहुमूल्य पत्र को प्रकाशनार्थ भेट करने वाले चौ० कबूलसिंह मन्त्री-सर्व-खाप पचायत के प्रति भी आभार प्रकट करें। हम मीरमुश्ताक मिरासी के प्रति भी आदर प्रकट करते हैं। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गुरु विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में मीर मुश्ताक मिरासी के असली पत्र का ब्लाक तथा नीचे देव नागरी लिपि में इसका परिवर्तन



देवनागरी लिपि में परिवर्तित

बिस्मिल्लाह उर्रहमानुर्रहीम

सन् १८५६ बमुताबिक सम्बत १९१३ को एक पचायत मथुरा के तीर्थ गाह पर मुर्वकिद हुई उस में हिन्दू मुसलमान और दूसरे मजहब के लोगो ने शरकत की थी इस पचायत मे एक नाबीना हिन्दू दरवेश को लाया गया था एक पालकी मे बिठाकर उनके आने पर सब लोगो ने उनका अदब किया जब यह चौकी पर बैठ गया तब हिन्दू मुसलमान फकीरों ने इन की कदम बोसी की इस के बाद सब हाजरीन पचायत के लोगो ने उनका अदब किया सब के अदब के बाद नाना साहब पेशवा मौलवी अजीमुल्ला खान रगू बाबू और शहशा बहादुरशाह का शहजादा इन सब ने इन के अदब मे कुछ सोने की अशरफिया पेश की। इस के बाद एक हिन्दू एक मुसलमान फकीर ने यह कहा कि हमारे उस्ताद साहिबान की जबान मुबारिक से जो तकरीर होगी उसे तसल्ली के साथ सब साहबान सुने और वह मुल्क के लिये बहुत मुफीद साबित होगी और यह वली अल्लाह शाधु बहुत जबानो का आलिम और हमारा और हमारे मुल्क का बुजुर्ग हैं खुदा को मेहरबानी से ऐसे हमे मिले यह खुदा का हम पर बडा अहसान हैं।

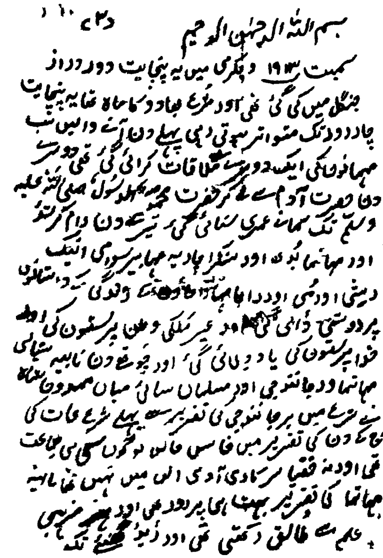
दरवेश की तकरीर का आगाज

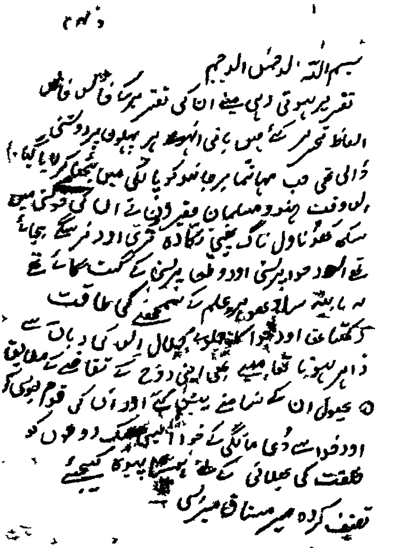
सब से पहले उन्होने खुदा की तारीफ की और फिर उर्दू मे उसका तरजुमा किया इस बुजुर्ग ने यह कहा था कि आजादी जन्नत है और गुलामी दोजख है अपने मुल्क की हकूमत गैर मुल्क की हकूमत के मुकाबले मे हजार दर्जे बहतर है दूसरो की गुलामी हमेशा बे इज्जती और बेशरमी का बायस है हमे किसी कौम से और किसी मुल्क से कोई नफरत नही हैं हम तो खलके खुदा की बहबूदी के लिये खुदा से रोज दुआ मांगते है मगर हुकमराह कौम खास कर फिरगी जिस मुल्क में हकूमत करते हैं उस मुल्क के बाशन्दो के।

बिस्मिल्लाह उर्रहमानुर्रहीम

साथ इन्सानियत का बरताव नही करते और कितनी ही भी अच्छाई की तारीफ करें मगर उस मुल्क के बाशदों को साथ मवेशियो से गिरा हुआ बरताव करते हैं खुदा की खलकत मे सब इन्सान भाई-भाई हैं मगर गैर मुल्की हुकमराह कौम इन्हें भाई न समझ कर गुलाम समझती हैं किसी भी मजहब की किताब मे ऐसा हुकम नही है कि अशरफुलमखलूकात के साथ दगा की जावे और अल्लाह के हुकम के खिलाफ वरजी की जावे इस वास्ते मातहत लोगो का न कोई इमीन हैं न कोई उन की शान हैं फिरंगियों मे बहुत सी अच्छो भी बात है मगर सियासी मसले में आकर वह अपने कौल फेल को न समझकर फौरन बदल जाते हैं और हमारी अच्छाई और नेक सल्लाह को फौरन ठुकरा देते हैं इस असिल वजूहात यह है कि हमारे मुल्क को वह अपना वतन नही समझते हैं हमारे मुल्क का बच्चा-बच्चा उनकी खैर ख्वाही का दम भरे फिर भी अपने वतन के कुत्ते को हमारे इन्सानों

शेष पृ० ५


بسم اللہ الرحمن الرحیم


بسم اللہ الرحمن الرحیم

تصنیف کردہ میر مشتاق میراثی

पृ० ४ का शेष

वे अच्छा समझते हैं यह सब कर्मा का बायस है इन्हें अपने ही वतन से मुहब्बत है इस लिये मैं सब बाशिन्दगान हिन्द से इलतजा करते हैं कि जितना वह अपने मजहब से मुहब्बत करते हैं उतना ही इस मुल्क के हर इन्सान का फर्ज है कि वह वतन परस्त बनें और मुल्क के हर बाशिन्दे को भाई-भाई जैसी मुहब्बत करे तब तुम्हारे दिलो के अन्दर वतन परस्ती आ जायगी तो इस मुल्क की गुलामी यहा से खुद ब खुद जुदा हो जायगी हिन्द के रहने वाले सब आपस में हिन्दो भाई हैं और बहादुरशाह हमारा बादशाह है।

तसनीफ करदह मीर मुश्ताक मिरसी-कासिद् सर्व खाप पचायत

नोट—महात्मा सन्यासी का नाम मालूम किया तो इन का नाम स्वामी विरजानन्द था और बहुत अरसे से मथुरा मे रहते हैं और संस्कृत की तालीम देते हैं और अल्लाह ताला के मौतकिद हैं।

बिस्मिल्लाह उर्रहमानुर्रहीम

सम्वत् १९१२ विक्रमी में यह पंचायत दूर दराज जंगल में की गई थी और दूर मांटू का मौह था यह पंचायत चार रोज तक मतवातर होती रही पहले दिन आने वाले सब महमानों की एक दूसरे से मुलाकात कराई गई थी दूसरे दिन हजरत आदम से लेकर हजरत मुहम्मद रसूल सले अल्लाह अलैह व सलम तक सबकी समरी सुनाई गई तीसरे दिन रामकिशन और महात्मा बुद्ध और शंकराचार्य महावीर स्वामी जैन ऋषि और गुरु और रोशन महात्माओं के जिन्दगी के दास्तानों पर रोशनी डाली गई और गैर मुल्की वतन परस्तों और खुदा परस्तों याद दिलाई गई और चौथे दिन नाबीना सन्यासी महात्मा विरजानन्द जी और मुसलमान साई मियां महमूद साहू ने शुरू में विरजानन्द जी की तकरीर से पहले मुख्तसर की बात के दिन तकरीर मे खास-खास लोगो की ही जमायत थी और न खुफिया सरकारी आदमी इसमे नही था। नाबीना महात्मा को तकरीर बहुत ही पुर जोर थी और हर मजहबी इल्म से ताल्लुक रखती थी और डेढ घण्टे तक।

बिस्मिल्लाह उर्रहमानुर्रहीम

तकरीर होती रही मैं ने इन की तकरीर के खास-खास इलफाज तहरीर किये हैं बाकी उन्होंने हर पहलो हर रोशनी डाली थी जब महात्मा विरजानन्द को पालकी मे बिठा कर लाया गया उस वक्त हिन्दू मुसलमान फकीरो उन की खुशी में शख घड़नावल नागफणी निकाडा तुरही और नरसिंघे बजाये थे और खुदा परस्ती और वतन परस्ती के गीत गाये थे यह नाबीना साधु हर इल्म के समझने की ताकत रखता था और खुदा का जलवे जुमाल इसकी जबान से जाहिर होता था मैं ने भी अपनी रूह के तकाजे के मुताबिक ५ फूल इन के सामने पेश किये और उनकी कदमबोसी की और खुदा से दुआ मांगी कि खुदा ऐसी नेक रूहो को खलकत की भलाई के लिये हमेशा पैदा कीजिये।

तसनीफ करदह मीर मुश्ताक मिरासी

[विशेष—पाठक-विशेषरूप मे उर्दू-फारसी लिपि को जानने वाले देखेंगे कि मीर मुश्ताक मिरासी की लिखाई मे लिखने की अनेक कमियां हैं, परन्तु हमने देवनागरी लिपि में भी उन कमियो को ठीक इस लिये नहीं किया कि हिन्दी-देवनागरी लिपि को ही जानने वाले सज्जन भी उन को जान सकें।

मीर मुश्ताक मिरासी का स्वय हाथ का लिखा उर्दू-फारसी लिपि का मूल पत्र हमारे पास सुरक्षित है। उसी के जो ब्लाक बनवाये हैं— वे भी हमारे पास हैं। यदि कोई सज्जन मूलपत्र को देखना चाहें, तो आर्यमर्यादा के कार्यालय १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ पहुंच कर देख सकते हैं।]

—सम्पादक

मुन्शी बख्तावर सिंह का आर्यदर्पण (२)

(डा० भवानीलाल भारतीय, एम ए पी एच डी गवर्नमेंट कालेज अजमेर)

आयदर्पण क माच १८८० क अक के टाइटिल के द्वितीय पृष्ठ पर यह सूचना छपी है कि आयसमाज अमृतसर ने मुन्शी इन्द्रमणि के मुकद्दमे की सहायता के लिये ४०० रु० देने का प्रबन्ध किया है। साथ ही उत्तर प्रदेश तथा पजाब के कई नगरो मे आयसमाजें स्थापित होने की सूचना भी प्रकाशित हुई है। यह भी लिखा है कि स्वामी जी आजकल मेरठ विराजमान हैं।' अक के प्रारम्भ मे 'तद्विष्णो परम पद' इस मन्त्र की ज्ञान प्रकाश शीर्षक व्याख्या तथा सत्याथप्रकाश और यथार्थप्रकाश शीर्षक दो अन्य प्रश्नोत्तर परक लेख हैं। तदनन्तर सत्यधम विचार' शीर्षक से मेला चादापुर मे हुये स्वामी दयानन्द और ईसाई पादरियो तथा मौलवियो के शास्त्राथ का विवरण छपा है। यह विवरण बाद मे पुस्तकाकार छपा। इसका भाषालेख मुन्शी बख्तावरसिंह ने ही तैयार किया ऐसा अनुमान होता है। आज भी यह ग्रथ इसी रूप मे वैदिक यत्रालय अजमेर से छपता है।

इसो अक मे आयसमाज गुजरावाला के मत्री का एक प्रेरित पत्र छापा है। स्वामी जी ने सत्याथप्रकाश के प्रथम सस्करण के द्वादश समुल्लास मे जैन मत का जैसा खण्डन किया, उसे देखकर गुजरावाला के एक ठाकुरदास नामक जैन ने स्वामी जी को लिखा था कि वे उन ग्रन्थो के नाम बतायें जिनके आधार पर उन्होने जैनमत की आलोचना की है। सतोषजनक और समाधान कारक उत्तर न आने पर उक्त व्यक्ति ने स्वामी जी पर अभियोग चलाने की भी धमकी दी थी। इसी प्रसग मे उक्त पत्र के लेखक ने लाहौर के मित्रविलास पत्र के १९ जुलाई १८८० के अक में प्रकाशित एक सूचना की ओर पाठको का ध्यान आकृष्ट किया है जिसमे लिखा था कि जन मतावलम्बी लोगो ने मिलकर दयानन्द सरस्वती पर नालिश करने का बोडा उठाया है।" यह प्रसग काफी लम्बा चला था। ठाकुरदास का स्वामीजी तथा आर्यसमाज गुजरावाला तथा आयसमाज मेरठ से जो पत्राचार हुआ था उसे उक्त सज्जन ने दयानन्द मुख चपेटिका' शीषक पुस्तक मे छपाया। इसी प्रसग का आलोचनात्मक उल्लेख प० गोपाल राव हरि लिखित दयानन्द दिग्विजयार्क' भाग २ मे भी हुआ है जो स्वामी जी के जीवनकाल मे ही प्रकाशित हुई थी। इसमे वस्तुस्थिति का यथाथ चित्रण किया गया है। जैनियो से हुये इस वाद मे जैन धम के एक प्रसिद्ध साध प० आत्माराम जी का नाम भी आया था।

मुरादाबाद निवासी मुन्शी इन्द्रमणि इस्लाम के मर्मज्ञ विद्वान् थे। उन्होने मुसलमानो द्वारा हिन्दू धम पर किये गये आक्षपो के उत्तर मे 'तुहफए हिन्द' और 'समसाम हिन्द' दो पुस्तकें छापीं। इस पर मुसलमानो ने मुन्शीजी पर अपने धर्म का अपमान करने का अभियोग चलाया तथा अदालत ने मुन्शीजी पर ५०० रु० जुर्माना कर दिया। मुन्शी इन्द्रमणि के इस अभियोग का प्रसग आर्यसमाज के इतिहास मे विस्तारपूर्वक उल्लिखित हुआ है। मुन्शीजी की कानूनी सहायता करने के लिये स्वामी जी की प्रेरणा से एक कोश बनाया गया था। इन्द्रमणि के मुकद्दमे के सम्बन्ध में इस अक में तीन लेख छपे हैं। इसी प्रसग मे उन पुस्तकों की सूची भी छपा है जो मुसलमानो द्वारा हिन्दूधर्म की आलोचना के रूप में लिखे गये। ऐसे ग्रथ निम्न हैं—रदहिन्दू, सोतअलहअल बाबर, अलामतुलकफ्फार, रदनिसारह, खिलअतुल हनूद, हदोयतुलअसनाम, ऐजाज मुहम्मदो, असूलदीन हिन्दजफरमल, तेगमिल, शरह हकगोई, मसनवी सलोई आदि। मुरादाबाद के जामेजमशेद नामक पत्र के १६ मई १८८० के अक में गवनमेट से यह प्रार्थना की गई थी कि मुन्शी इन्द्रमणि रचित उक्त दोनों पुस्तक जलवा दे और यन्त्रालय (जिसमें ये छपी थीं) बन्द करा दे। आर्यदर्पण के सम्पादक ने जामेजमशेद के विचारो की आलोचना की है तथा मुन्शीजी के लेखन कार्य को औचित्यपूर्ण सिद्ध किया है।

राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द से स्वामी जी का 'ब्राह्मण ग्रन्थों के वेदत्व' विषय को लेकर जो विचार हुआ था उसके सम्बन्ध में राजाजी ने निवेदन शीर्षक एक लघु पुस्तक प्रकाशित कर अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया। इसके उत्तर में स्वामी जी ने भ्रमोच्छेदन लिखी। इस भ्रमोच्छेदन की पक्षपातपूर्ण समालोचना (Review) कविवचन सुधा (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की पत्रिका) के २६ जुलाई तथा भारतबन्धु के ३० जुलाई के अकों मे प्रकाशित हुई थी। एक सज्जन ने इन समालोचनाओं की समालोचना 'मिथ्याभाषण पक्षपात का कारण' शीर्षक से आर्यदर्पण के मई १८८० के अक में प्रकाशित की।

आर्यसमाज और थियोसोफिकल सोसाइटी के सम्बन्ध विच्छेद की घोषणा इतिहास प्रसिद्ध है। घोषणा का यह स्वामी दयानन्द के हस्ताक्षर युक्त विज्ञापन इस अक के टाइटिल के तृतीय और चतुर्थ पृष्ठ पर छपा है। विज्ञापन पर श्रावण बदी ५ सोमवार सवत् १९३७ वि० की तिथि अकित है। श्री महाराज ने 'सस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक जो पुस्तक लिखी उसमें मुद्रण जन्य प्रमाद के कारण कतिपय अशुद्धियाँ छप गई थी। काशी की ब्रह्मामृत वर्षिणी सभा ने इस पर कुछ आक्षेप किये जो प० अम्बिकादत्त व्यास तथा रामकृष्ण वर्मा के नाम से 'अबोधनिवारण' पुस्तक के रूप में छपे। इनका समाधान 'एक पण्डित' नाम से इस अक में दिया गया है। प० युधिष्ठिर मीमासक के मतानुसार यह उत्तर स्वामीजी ने ही दिया था।

जून १८८० के अक मे 'सपर्यगाच्छुक्रम्" यजुर्मन्त्र की व्याख्या छपी है। बाद में सत्यार्थप्रकाश शीर्षक के अन्तर्गत एक पोप और एक आर्य का वार्तालाप लिखा गया है। पुन 'यथार्थप्रकाश' शीषक मे 'पुराण' विषयक चर्चा है। 'आगे मतमतान्तर विचार' शीषक एक बृहत् लेख छपा है जो व्याख्यान के रूप मे एक सभासद ने आर्यसमाज गुरुदासपुर मे दिया था। इसमें भारत मे व्याप्त मतमन्तारो का विस्तृत परिचय दिया गया है। पौराणिको ने आराध्य देवताओ का भी वर्णानुसार वर्गीकरण कर दिया था, यह निम्नश्लोक से स्पष्ट होता हैं—

विप्राणां दैवतं शम्भुः क्षत्रियाणां तु माधवः।
वैश्यानां तु भवेद् ब्रह्मा शूद्राणां गणनायकः॥

यह लेख धारावाहिक रूप से अगले कई अको में छपा है। इसी अक में शास्त्रार्थ अजमेर शीर्षक से एक शास्त्रार्थ का विवरण प्रकाशित हुआ है जो स्वामी जी तथा पादरी ग्रे के बीच १८७८ ई० में हुआ था। यह विवरण पत्र सम्पादक के पास किसने भेजा, यह ज्ञात नहीं होता, परन्तु पाद टिप्पणियो मे 'स० द०' यह सक्षिप्त नाम छापा है। सम्भवत यह समर्थ दान का सक्षिप्त रूप हो। इसी अक मे मुन्शी इन्द्रमणि के अभियोग की पुन चर्चा हुई है। जिन समाचारपत्रों ने मुन्शी जी के पक्ष समर्थन मे लेख लिखे उनके नामों का उल्लेख किया गया है। ये पत्र हिन्दी और उर्दू दोनो भाषाओ के थे। आर्यसामाजिक पत्रो मे आर्यदर्पण के अतिरिक्त मेरठ से प्रकाशित होने वाले आर्यसमाचार का नामोल्लेख है।

अगस्त १८८० का अक हिरण्यगर्भ' इस यजुर्मन्त्र की व्याख्या से प्रारम्भ होता है। मतमतान्तर विषयक परिचयात्मक लेख इसमें भी छपा है तथा विष्णु स्वामी द्वारा प्रवर्तित केन्द्र सम्प्रदाय की विस्तृत आलोचनात्मक समीक्षा इसमे प्रकाशित हुई है। तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में सस्कृत के प्रबोध चन्द्रोदय नाटक की प्रतीकात्मक शैली का अनुकरण करते हुये देश दशा का वर्णन करने वाले लेख और नाटक आदि लिखे जाने की परिपाटी प्रचलित थी। इस प्रणाली पर लिखा गया 'आर्यावर्त में फूट' शीर्षक एक लेख इस अक में छपा है। इसी समय के आसपास मुन्शी बख्तावरसिंह जो अब तक वैदिक यत्रालय के प्रबन्धक थे, हिसाब सम्बन्धी अनियमितताओ के कारण यत्रालय से पृथक् कर दिये गये। अब उन्होंने शाहजहाँ पुर में अपना पृथक आर्यदर्पण प्रेस स्थापित कर लिया और आर्यदपण इसी प्रेस से छपने लगा। अब वैदिक यत्रालय की व्यवस्था प० भीमसेन शर्मा के सुपुर्द कर दी गई।

सितम्बर के अक में वैष्णवो के ब्रह्म, सनकादि, रामानन्दी, राधावल्लभी आदि सम्प्रदायों का विस्तृत परिचय दिया गया है जो अतीव ज्ञानवर्धक है। इसी अक में स्वामी जी की भ्रान्तिनिवारण पुस्तक की समालोचना भी प्रकाशित हुई है। इस समालोचना से ज्ञात होता है कि प० गोविन्दराम नामक किसी व्यक्ति ने स्वामी जी के वेदभाष्य का खण्डन करते हुये कोई पुस्तक लिखि थी और लाहौर के पं० शिवनारायण अग्निहोत्री ने भी कई लेख अपने 'बिरादरे हिन्द' नामक पत्र में लिखे

शेष पृ० ८ पर

पृ० २ का शेष

रेवतीरमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि । ऋतस्य त्वा देव हविः पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुषः ॥यजु०६-८ ॥

पाश कृत्वा प्रति मुञ्चति ऋतस्य त्वा देवहवि पाशेन प्रति मुञ्चामि वरुण्या वा एषा यद्रज्जुस्तदेनमेतदतस्यैव पाशेन प्रतिमुञ्चति तथो हैनमेषा वरुण्या रज्जुर्न हिनस्ति । धर्षा मानुष इति न वा एतमग्रे मनुष्योऽधष्णोत्स यदेवऽस्य पाशे न नैनद्देवहवि प्रतिमुञ्चत्यथैन मनुष्यो धृष्णोति तस्मादाह धर्षा मानुष इति । शतपथ ३-७-४-१ मन्त्र मे आये हुए प्रतिमुञ्चामि का अर्थ शतपथ महीधर तथा सायण बध्नामि करते हैं किन्तु महर्षि दयानन्द जी त्यजामि करते हैं सो इन दोनों भिन्न अर्थों से भी प्रकरणार्थ मे कोई विरोध नही आता क्योकि ऋषि नें वसूनि का सम्बन्ध ऋत के साथ जोडा है और अर्थ किया है बृहस्पते त्व तू ऋतस्य वसूनि धारय" सत्य न्यायादि के धन को धारण करो, शतपथ कार तथा महीधर ने पाश का सम्बन्ध ऋत के साथ किया है ऋतस्य पाशेन त्वा प्रतिमुञ्चामि= सत्य के पाश से तुझे बाधता हूँ । यहा तक तो दोनो शब्दार्थ मे विरोध होते हुए भी प्रकरण मे कोई विरोध नहीं होता किन्तु आगे चलकर महीधर जिसको सत्य के बन्धन में बधवाता है उसे बकरी का बच्चा बतलाता है और उसके अङ्गो को अलग-अलग काटकर अग्नि में हवन करवाता है" इसलिये पहले ऋत के अर्थ का निर्णय करें । ऋत शब्द सत्य के पर्याय में इतना प्रसिद्ध है कि इसके प्रमाण के लिये अन्य प्रमाणो को आवश्यकता नही तथापि एक प्रमाण हम महीधर का ही दे रहे हैं । ऋत =सत्यस्वरूप यजुर्वेद भाष्ये १७-२२ "जो सत्य के पाश से बाधा जाता हो वह बकरा कैसे हो सकता है क्योंकि बकरा बेचारा तो सत्य असत्य को कुछ समझता ही नहीं तो फिर सत्य और असत्य के पाश को क्या समझेगा अत· सोम याग प्रकरण में पशु शब्द का अर्थ मनुष्य या मनुष्य का बालक जो गुरुकुल में प्रविष्ट हो चुका है या प्रवेशार्थी है । स्वय वेद ने ही मनुष्य को पशु कहा है "देवा यद् यज्ञ तन्वाना अबध्नन् पुरुष पशु" यजुर्वेद पुरुष सूक्त=देवता लोग जब यज्ञ का विस्तार करने लगे तब पुरुषरूपी पशु को बाधें । 'पुरुषो वै पशूना पराध्यं ,, शत० पुरुष ही पशुओ मे श्रेष्ठ हैं, पाश का अर्थ भी रस्सो न होकर यहा नियम होगा क्योकि 'पाशयति बध्नाति येन स पाश' जिससे बांधा जाता हो वह पाश जैसे कोई कहे कि तू गृहस्थ के पाश मे बंध गया या सामाजिक पाश कठोर होना चाहिये तो इन दोनो स्थलो पर पाश या बन्धन का अर्थ नियम होगा न कि रस्सी, तो पाश का अर्थ नियम होने से मन्त्रार्थ यह होगा कि मैं तुझे सत्य के नियम से बाधता हूं और यही अर्थ शतपथानुसार ठीक है इसी पाश और प्रतिमुञ्चामि के मर्म को न समझ कर महीधर ने जो धाधली मचाई वह उनकी अज्ञता का परिचायक है । अब रही बात पाश्चात्य विद्वानो की, सो उन बेचारे शब्दशास्त्रज्ञान हीनो को क्या कहा जाय, उन्हें तो साधारण सस्कृत भी नही आती । यदि आती भी है तो वेदार्थ को कलुषित करना वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं, उनका वेदार्थ क्या है यदि इसको एक वाक्य में कहा जाय तो उसे हम यों कह सकते हैं "पाश्चात्य विद्वानो का वेद भाष्य सायण और महीधर का का प्रतिध्वनि मात्र है ।

जिन स्थलो पर शतपथ में भी आदि पशुओ के बांधने या मारने का वर्णन है वहीं इन शब्दो का कुछ और ही अर्थ है और जो अर्थ वहां होना चाहिये उसको याज्ञवल्क्य ने निर्णय के लिये पाठको के ऊपर नहीं छोडा कि पाठक भ्रम में पडकर मनमानी कल्पना करते रहें किन्तु स्वय उसे बतला दिया । "अतसो वै दक्षिणा हिरण्य'गौ र्वासोऽश्वो न वै तदवकल्पते यदश्वस्य पादमवध्यात्तस्माद्वाहोमीये वासांसि हिरण्य प्रबध्यावधाय जुहोति शत० ४-३-४-७ हिरण्य गौ वास: अश्व: का वास्तविक अर्थ याज्ञवल्क्य क्या मानते हैं सो पशु यागवादी आखें खोल कर देखें नही तो फिर वैदिक साहित्यो भी पशुओं की हिंसा करने लगेंगे ।

आयुर्हि हिरण्यम् श० ४-३-४-२४, प्राणो हि गौरन्न हि गौरन्न हि प्राण: शत० ४-३-४-२५, त्वग्वि वास शत० ४-३-४-२५, वज्रो वा अश्वः शत० ४-३-४-२७, इतना स्पष्ट गौ आदि शब्दों के पारिभाषिकार्थ को बता देने पर भी भारतीय 'वैदिक' संस्कृति के घोर शत्रु महीधर को जो वेद का विद्वान् कह कर आर्यसमाज को जो लकीर का फकीर कहते हैं इन वेदार्थ के व्याख्याताओं को मै ललकारते हुए कहता हूँ कि क्या कोई है जो महीधर को बचायेगा । महर्षि दयानन्द का वेदार्थ सत्य और प्रबल युक्ति प्रमाणों की चट्टान पर खडा है जिससे हजारो वेद विरोधी विद्वानो के जहाज टकरा कर चकना चूर हो जायेंगे । प्रभु हमें शक्ति प्रदान करे जिससे इन वेद विरोधियों के दल का दलन कर दयानन्द के वेदार्थ ज्ञान प्रकाश को प्रसारित कर 'अगन्महि तमसो ज्योतिरागात्' का नाद गुंजायें ।

गुरुवर विरजानन्द की सुशिक्षा

(रचनाकार श्री जगत्कुमार शास्त्री, साधुसोमतीर्थ' देहली)

मात-पितृ-विहीन अन्ध बालक दर-दर भटकता फिरा,
निर्धनता वचनीयता, बुभुक्षा के ताप जिसने सहे ।
प्रज्ञा का वरदान जिसने पाया करके प्रबल साधना
गुरुवर विरजानन्द दण्डधारी योगी महापुरुष था ॥१॥
जन्मा था करतारपुर नगर मे हर द्वार मे था पढा,
सस्कृत का विद्यालय खुला था सोरो मे उसका कभी ।
दर्शन वेद व्याकरण प्रभृति का मूर्धन्य ज्ञाता अहो,
विरजानन्द यती श्रुति स्मृति का रक्षक प्रशिक्षक बना ॥२॥
जिज्ञासुवर्गों में उसके यश का प्रसार होने लगा,
विद्या के अनुरागी शिष्य विद्या का दान पाने लगे ।
अलवर का महीपाल शिष्य उनका करके अनुनय-विनय,
अलवर मे ले आया उनको उनके चरणो मे पढने लगा ॥३॥
बीता यॅं कुछ काल, फिर यतिवर जा कर भरतपुर रहे,
फिर कर मथरावास दान विद्या का जग को देने लगे ।
प्रेरा था जगदीश्वर ने उनको, सुस्पष्ट सब हो चका,
मथुरा मे सच्छिष्य आगमन को प्रतीक्षा करने लगे ॥४॥
फिर आई वह शुभ घडीकि जिसकी वे इन्तजारी मे थे
"खट-खट खट-खट" द्वार की ध्वनि को सुनकर मुनी ने कहा ।
कौन आया ? क्या नाम ? काम क्या है ? उत्तर मिला खुश हुए,
"जिज्ञासु चरणनुरागी भगवन ! हू आप का एक मैं" ॥५॥
जिज्ञासु के शब्द फिर मुनि के थे कर्णगोचर हुए,
"अष्टाध्यायी, वेद, योग-विद्या की है मेरी कामना ।
ज्ञानार्जन पूरो, किवाड खोलो, सशय मेरे मेट दो,
शरणागत हू, आप का, दयानन्द, भगवन् ! मेरा नाम है ॥६॥
अब जग मे करतारपुर की महिमा दिन-दूनी बढने लगी,
गगा, हर का द्वार, सोरो, अलवर जग मे उजागर हुए ।
गुरुवर विरजानन्द को दयानन्द अधिकारी चेला मिला,
सदगुरु और सुशिष्य के मिलने से विद्या की शोभा बढी ॥७॥
मथुरा का सन्मान था कृष्ण ने जग मे बढाया कभी,
अत्याचार-अन्याय -ग्रस्तनामी नृप कस को मार कर ।
सदगुरु और सुशिष्य ने पछाडे, अज्ञान-अविद्या-असुर,
सत्यार्थ-प्रकाश जग मे फैला, मथुरा का गौरव बढा ॥८॥

आर्षेय-साहित्य का जगत् मे फिर मान होने लगा,
वैदिक-धर्म-विजय-निनाद गूजे, आशा के दीपक जले ।
मानवता सुख-चैन, ऋद्धि-सिद्धि पाकर सुरक्षित हुई,
भारत-भाल विशाल जग मे ऊंचा गुरु-शिष्य ने कर दिया ॥९॥
गुरुवर विरजानन्द द्वारा प्रेरित ऋषिवर दयानन्द ने,
वैदिक-धर्मालोक को प्रसारा, अन्धकार जग का हटा,
फैलाकर नवचेतना ऋषि ने, स्वराज्य-सिद्धि-प्रदा,
भारत के स्वाधीन प्राक् युग का आयोग फिर रच दिया ॥१०॥

सद्गुरु और सुशिष्य के मिलन के देखो चमत्कार को,
जग में अमल, मोद, शान्ति-सौरभ की वृद्धि करते रहो ।
है यह मानवता, यही मनुज के जीवन का आदर्श है,
मित्रो ! ईश्वर साथ है तुम्हारे, कर्तव्य-पालन करो ॥११॥

सद्गुरु और सुशिष्य के सुमार्ग को छोडना ना कभी,
सत्यासत्य-विवेक को न खोना, मित्रो ! कभी भूलकर ।
जीवन का साफल्य बस यहीहै—"जय तो सदा सत्य की"
गुरुवर विरजानन्द की सशिक्षा का सार है बस यही ॥१२॥

हमारा प्यारा आर्यसमाज

[डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार एम०ए०डी०लिट अजमेर]

(टेक)—हमारा प्यारा आर्यसमाज ।
धाक जमी थी जिसकी सब पर धर्मों का सरताज ॥
शास्त्रार्थ के मैदानो में जिसके जमे अखाडे थे ।
मियाँ मौलवी, पोप पादरी, जिसने सभी पछाडे थे ॥
दिग्गज पडित पौराणिक, बुध जैन न आये आडे थे ।
नगर नगर अरु देश विदेशो मे, विजय-ध्वज गाडे थे ॥
गिरा जो अघ पर बनकर गाज ।
हमारा प्यारा आर्यसमाज ॥१॥

अमरीका के योगी एण्ड्रू जैक्सन ने पहचाना था ।
"धरती पर प्रज्वलित अग्नि" की ज्वाला जिसको जाना था ॥
दमन द्वेष का दाहक, जग मे शान्ति प्रवाहक माना था ।
पाश्चात्य विद्वानो ने भो जिसका विभव बखाना था ॥
बनता जग का बिगडा काज ।
हमारा प्यारा आर्यसमाज ॥ २॥

फ्रास के रोमन रोलाँ ने जिसको 'दृढ चट्टान" कहा ।
जिस पर टकराई यूरोप को ईसाइयत की लहर महा ॥
चूर चूर हो गई लहर पर दृढ समाज "चट्टान" रहा ।
विरोधियो के आक्रमणो को जिसने रहकर वीर सहा ॥
रखो भारत माता की लाज ।
हमारा प्यारा आर्यसमाज ॥३॥

जिसके प्रकाड विद्वानो ने साहित्य-सृजन स्वीकार किया ।
गायक कवियो ने जन जन मे नव-जागृति का सचार किया ॥
जिसके उपदेशक सन्यासी गण ने सद्धर्म प्रचार किया ।
निज देश-धर्म की रक्षा मे कितनो ने जीवन वार दिया ॥
"आर्य मर्यादा" की रख लाज ।
हमारा प्यारा आर्यसमाज ॥४॥

क्या पुण्य पूर्वजो की गाथा, अब आर्य पुरुष सब भूल गये ।
क्या उनके ऊँचे लक्ष्य आज, भ्रम के झूले मे झूल गये ॥
क्या जग मे वेद प्रचार हुआ, क्या हट सब सकट शूल गये ।
"कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्" के नारे से हो बस फूल गये ॥
सूर्य" क्या उदय वेद का आज ।
बता दे प्यारे आर्यसमाज ॥५॥

स्वामी विरजानन्द ?

[श्री प० योगीन्द्र जी पाण्डेय, व्यायाम-विशारद
ग्राम लखौलिया, पो० भरथाव, जि० बलिया—उत्तर प्रदेश]

कही न तुमसा जग मे आज, जो रक्खे फिर सबकी लाज !
मर्यादा की सीमा तजकर, बढ़े आ रहे पशुता पथ पर ।
वेद-ज्ञान से हीन हो चुके, निज पौरुष का गर्व खो चुके ।
करें हाय ! हम किस पर नाज ? कहीं न तुमसा जग में आज !

इज्जत बिकती बाजारो में, नहीं शिष्टता व्यवहारों में ।
सब मे नीच-भाव फैला है, तन भी मैला, मन मैला है ।
दूषित होता नित्य समाज, कही न तुमसा जग में आज !
सबमें फूट-द्वेष की पीड़ा, अधरों पर मिथ्या की क्रीडा ।
'आर्य' देखते यह दुर्बलता, रह जाता हर जन कर मलता,
करता निज अन्यायी गाज, कही न तुमसा जग में आज !

मिथ्या-भाषण से पूरित हो, रहते दुर्बल आतंकित हो ।
सबल आज अधिकार जमाए, जाते निर्बल सतत सताए ।
नित होता अधर्म का ब्याज, कही न तुम-सा जग मे आज ।
पशु-बध, नर-बलि पाप हो रहे, सम्प्रति से बढ पाप हो रहे ।
देख 'आर्य' करते मस्तक-नत, आज, तुम सी पड़ी जरूरत ।
ऐसे मे फिर तेरा काज, कही न तुम सा जग में आज !

पृ० ६ का शेष

थे । ये अग्निहोत्री महाशय पहले ब्रह्मसमाज के सभासद् थे तथा लाहौर में स्वामी जी के भाषणो की व्यवस्था करने वालो मे अग्रगामी थे, परन्तु बाद में वेद के अर्थ को लेकर स्वामी जी से इनका मतभेद हो गया । इन्होने 'दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य पर रिव्यू' शीर्षक एक पुस्तक भी लिखी । बाद में उन्होंने 'देवसमाज' के एक नाम से पृथक् सम्प्रदाय स्थापित किया ।

अक्टूबर १८८० के अक मे देश के विभिन्न भागो म ईद के अवसर पर होने वाले गोवध को लेकर अत्यन्त चिंता व्यक्त की गई है । मत सम्प्रदाय विषयक लेख मे बगाल के वैष्णव मतो की समालोचना है । नवम्बर के अक में कलकत्ता मे आयोजित आर्य सन्मार्ग-सन्दर्शिनी सभा का विवरण दिया गया है जो स्वामी दयानन्द के विरोध में प० महेशचन्द्र न्यायरत्न के उद्योग से बुलाई गई थी। यह सभा २२ जनवरी १८८१ को कलकत्ता विश्वविद्यालय के सेनेट हाल म आयोजित को गई । 'सारसुधानिधि' नामक मासिक पत्र मे इसका विवरण छपा था । कलकत्ता सस्कृत कालेज के प्रिन्सिपल प० महेशचन्द्र न्याय रत्न के अतिरिक्त इसमें प० जीवानन्द विद्यासागर आदि बगाली पण्डित तथा प० रामसुब्रह्मण्य शास्त्री नामक दक्षिणी विद्वान् भी इस सभा मे उपस्थित थे । कलकत्ता के प्रतिष्ठित पुरुषो मे महाराजा यतीन्द्र मोहन ठाकुर, राजा सौरीन्द्रमोहन ठाकुर, राजा राजेन्द्र लाल मल्लिक, कृष्णदास पाल आदि व्यक्ति भो थे । प० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा प्राच्य विद्या विशारद राजेन्द्रलाल मित्र उपस्थित नही हुये, परन्तु अपनी सम्मति सभा के मत के अनुकूल हो प्रदर्शित की ।

सभा के समक्ष प० महेशचन्द्र न्याय रत्न ने पाँच प्रश्न उपस्थित किये—
(१) क्या वेद के सहिता भाग के तुल्य ही ब्राह्मण भाग का भी प्रामाण्य है या नही । मनुस्मृति की भाँति अन्य स्मृतियाँ भी प्रामाणिक हैं या नहीं?
(२) क्या प्रतिमा पूजन, मृतकश्राद्ध तथा तीर्थ सेवन शास्त्रसम्मत है ?
(३) 'अग्निमीड़' इत्यादि ऋग्वेद के मन्त्र अग्निपरक हैं या परमात्मा परक?
(४) अग्निहोत्र का विधान जलवायु की शुद्धि के लिये है या स्वर्ग प्राप्ति के लिये । (५) वेदगत ब्राह्मण भाग की निंदा करने मे दोष है या नही ? सब प्रश्नो के उत्तर दक्षिण के प० रामसुब्रह्मण्य शास्त्री नें ही दिये और उनका भाव यही था कि इन प्रश्नो के सम्बन्ध में स्वामी दयानन्द की धारणाय शास्त्रो से प्रतिकूल हैं । अन्त मे इन्हो शास्त्री जी ने स्वामी दयानन्द के विरोध मे लिखी अपनी पुस्तक 'दयानन्द कण्टकोद्धार' पढ कर सुनाई । सभा का कार्य विवरण प्रकाशित कर आर्यदर्पण के सम्पादक ने अपनी सम्मति भी लिखी है । जिसमे यह स्पष्ट कर दिया है कि उक्त सभा के आयोजको का सम्पूर्ण कार्य पूर्वाग्रह युक्त तथा पक्षपातपूर्ण था, अन्यथा ३०० पण्डितो की सभा अत्यल्प समय मे ही कुछ निर्णय करले, यह असम्भव था । स्त्रियो के अधिकारो तथा गोरक्षा पर भी दो लेख इस अक में छपे हैं । अन्त में एक लेख ऐतरेय ब्राह्मण के लेखक शूद्रा इतरा के पुत्र ऐतरेय के कथानक को लेकर लिखा गया है ।

ये ग्रामा यदरण्यं याः सभा अधिभूम्याम् ।
ये संग्रामाः समितयः तेषु चारु वदेम ते ॥ अथर्व० १२-१ ५६ ॥

व्याख्या—(ये) जो (ग्रामा) ग्राम, (यद्) जो (अरण्यम्) वन (याः) जो (सभा.) सभाएं (ये) जो (संग्रामाः) युद्ध तथा (समितयः) समितियां (भूम्यामधि) भूमि पर हैं, (तेषु) उन सब स्थानों में हे 'मातृभूमि' ! (ते) तेरी (चारु) उत्तम स्तुति (वदेम) हम करें ।

॥पद्यानुवाद॥

समिति सभा ग्राम नगर वन युद्ध क्षेत्र है बीच महान् ॥
करें सर्वत्र "मातृभूमि का"—मंगल चारु विमल यशोगान ॥

पन्नालाल आर्य कवि कुटीर गुरकमी (राज०)

याज्ञिक आचार संहिता (६)

यज्ञ के वस्त्र

(श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी—वेदसदन, महारानी पथ, इन्दौर-२)

यज्ञ में रेशमी वस्त्र पहनें

यज्ञ कार्य में विशेष प्रकार के वस्त्रों का विशिष्ट प्रकार से ही परिधान अर्थात् उनको धारण करना होता है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने संस्कारविधि में जो प्रमाण वस्त्र के लिये उद्धृत किया है, वह निम्न प्रकार है :—

पत्नीयजमानपरिधानार्थं क्षौमवासश्चतुष्टयम् ।

अर्थात् यजमान पत्नी और यजमान के पहनने के लिये ४ रेशमी वस्त्र होने चाहियें। दो-दो वस्त्र दोनों के लिये होते हैं जिनमें एक-एक वस्त्र अधोवस्त्र और दूसरा उपवस्त्र होता है। अधोवस्त्र को कटि के नीचे पहना जाता है, वह धोती कहाती है और उपवस्त्र जिसको ऊपर शरीर पर दुपट्टा या चादर के रूप मे धारण करते हैं वह होता है।

खण्डित, फाड़ा या फटा हुआ वस्त्र न पहनें

पुन. ये वस्त्र कैसे हों, इसके लिये कात्यायन श्रौत सूत्र ४।७।१२ मे लिखा है :—

क्षौमे वस्त्रे ईसद् धौते

अर्थात् यज्ञ के लिये जो दो वस्त्र धारण किये जावें वे रेशम के होने चाहियें। वे फटे हुए या फाड़कर बनाये गये या काट कर सीकर बनाये न हों और वे धुले होने चाहिये। तैत्तिरीय ब्राह्मण (३।८।१) मे भी लिखा है :

अहतं वासः परिधत्ते

अर्थात् अखंडित वस्त्र धारण करे। फाड़ा हुआ या फटा हुआ न हो। अहत का तात्पर्य बिना फटा हुआ अखण्डित सम्पूर्ण वस्त्र है। जैसे कि चादर, धोती आदि जो बनकर अपनी सम्पूर्णता के द्योतक हैं। वे भी नवीन ही हों। गोभिल गृह्यसूत्र में "अहतेन वसनेन" का अर्थ-अखण्डेन वसनेन ही श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने किया है। किसी के द्वारा पहने हुए भी न हों। किसी थान या बड़े वस्त्र के खण्ड करके जो वस्त्र बनाये जाते हैं चाहे वे धोती एव चादर के समान ही लम्बे, चौड़े क्यों न हों परन्तु वे खण्ड भाव को प्राप्त हो जाते हैं। अत किसी भी प्रकार से खण्ड भाव को प्राप्त हुए वस्त्र यज्ञ में उपयोग में नही लेने चाहियें। अखण्डित अर्थात् सम्पूर्ण-भाव देवत्व का बोधक है और खण्ड-भाव, असुरभाव का द्योतक है। यज्ञ में असुरभाव का त्याग ही किया जाता है। जैसाकि "प्रत्युष्ट रक्ष" (यजु॰ १।७)

मन्त्र में असुरभाव को नष्ट करने का सकेत है तभी—'उर्वन्तरिक्षमन्वेमि' (यजु॰ १।७) अर्थात् उन्नति के विस्तृत अवकाश को यज्ञ द्वारा प्राप्त होता है।

पहना हुआ वस्त्र न पहनें

अहत वस्त्र का यह भी अभिप्राय है कि धोने के पश्चात भी किसी प्रकार से धारण न करके उसको अविकृत या सल रहित रखा गया हो। जैसा कि निम्न श्लोक से ज्ञात होता है :—

ईषद् धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम् ।
अहतं तद्विजानीयात्सर्व कर्मसु पावनम् ॥

अर्थात् जो नया श्वेत वस्त्र कुछ धोया जाकर उसके दोनो लम्बाई के प्रान्तों से धारण न किया गया हो अर्थात् कटि पर धोती रूप से धारण न किया गया हो वह अहत वस्त्र सब पवित्र कार्यों में उपयोगी होता है।

सिले हुये वस्त्र न पहनें

खण्डित वस्त्रों को सीकर के भी वस्त्र बनाये जाते हैं और उनसे विविध फैशन के सुन्दर वस्त्र बनते ही हैं। परन्तु यज्ञ में इस प्रकार के सिले हुये वस्त्र अहत रूप से मान्य नही है। वे हत वस्त्र ही हैं, अत. यज्ञ के लिये ग्राह्य नही है जैसा कि कहा है :—

न कुर्यात् संधितं वस्त्रं देवकर्मणि भूमिप ।
न दग्धं न च वै छिन्नं पारक्यं र तु धारयेत् ॥

देवकर्म अर्थात् सन्ध्याग्निहोत्र यज्ञादि कार्यो मे सन्धि वाले वस्त्र अर्थात् सिले हुए वस्त्रों का प्रयोग न करें। जले हुये वस्त्र, अलग किये हुये, फाड़े हुए वस्त्र भी धारण न करें दूसरों के वस्त्र भी धारण न करें। अर्थात् यज्ञ कार्य में नवीन शुद्ध अखंडित वस्त्र ही धारण करें। इसी प्रकार के भाव को अन्यत्र भी निम्न प्रकार प्रकट किया गया है—

सूचीविद्धेन वस्त्रेण प्रारवुब्धेन वा द्विजः ।
कटिशून्येन होवेद्वि, सर्वस्नानफलं हरेत् ॥

अर्थात् सूई से सिले वस्त्र, चूहे कीड़े आदि के द्वारा कटे हुये वस्त्र धारण करके धार्मिक स्नानादि कार्य जो करता है और जो नग्न होकर स्नादि कर्म करता है उसके स्नान का सब फल नष्ट होजाता है।

यह दर्शाने का प्रयोजन यही है कि यज्ञ में बिना सिले, सम्पूर्ण, अखंडित वस्त्र ही धारण करने चाहिये। सिले हुये वस्त्र जैसे कुरता, कमीज, पाजामा, पेंट, कोट आदि को यज्ञ में धारण न करे और वस्त्रों के टुकडों को ही धारण करे जैसा कि लोग यज्ञों में गले में छोटा सा टुकडा डाल लेते हैं। खंडित एवं सिले वस्त्रों के धारण करने से अपने मन पर तथा आचार-विचार पर भी प्रभाव पड़ता है और वह प्रभाव धार्मिक भावनाओं के विपरीत पडता है, अतः इनका यज्ञों में पहनने का निषेध है।

सिले हुए वस्त्रों का धर्म कार्यों पर कुप्रभाव

सिले वस्त्रों का अपने धर्म कर्म एव शुभ विचारो पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, ऐसा महर्षि स्वामी दयानन्दजी मानते एव अनुभव करते हुए जोधपुर नरेश को पत्र मे लिखते है—"जैसे मुसलमान और ईसाई आदि के टोपो पाजामा, मुडे जूते, कोट पतलून, टोपी आदि धारण से आप अपने उत्तम विचारों से पृथक् रहे हैं।" ये शब्द अत्यन्त मनन योग्य हैं और विचार करना चाहिये कि महर्षि दयानन्द इस प्रकार के सिले हुए वस्त्रों के कदापि पक्ष मे नही थे। अत क्या हमे यज्ञो में ऐसे वस्त्र धारण करने योग्य हैं ? इससे स्पष्ट है कि यज्ञ मे सिले हुए वस्त्र जैसे पाजामा, कोट, पतलून, कमोज आदि नही धारण करना चाहिये। यज्ञ के लिये सम्पूर्ण वस्त्र अर्थात् बिना सिला हुआ वस्त्र ही धारण कर यज्ञ कार्य करना चाहिये। यज्ञ में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति भी तग वस्त्र मौजे, चूडीदार पाजामा आदि नही पहनें और न नैनोल, टेरालीन आदि के वस्त्र या फटे, कटे, जले और मैले वस्त्र ही धारण करें।

बिना सिले अखंडित वस्त्रों का लाभ

यज्ञ में यदि सम्पूर्ण वस्त्र अखण्डित बिना सिला हुआ वस्त्र पहनकर भाग लेंगे तो शरीर ऐसा आच्छादित नही हो सकेगा जैसे कि शरीर पर पट्टी सी बाध दी हो। उसमें पर्याप्त अवकाश रहेगा जिससे कि यज्ञ की वायु का वस्त्र के भीतर प्रवेश एव निवास भी हो सके। यज्ञ के द्वारा जो आरोग्यप्रद वायु एव धूम्र उत्पन्न होगा उसका यज्ञ कर्त्ता क वस्त्रों के मध्य से शरीर क प्रचुर भाग से सम्पर्क हो सकेगा जिससे उसको विशेष लाभ होगा। यह लाभ तग वस्त्र पहनने वालो को नही हो सकता।

नैनोल, टैरीलीन आदि यज्ञ में न पहनें

टेरीलीन, नैनोल आदि के वस्त्र ताप को सहन नही कर सकते और अग्नि को तो बिल्कुल भी सहन नही कर सकते। अत॰ यज्ञाग्नि के पास ऐसे वस्त्रों को पहनकर कदापि नही बैठना चाहिये। इसके अतिरिक्त नैनोल सदृश वस्त्रो मे वायु के अवरोधन की शक्ति होती है। छिद्रों के अभाव के कारण उनमें यज्ञ का वायु प्रवेश न होने से शरीर को यज्ञ के आरोग्यप्रद वायु का स्पर्श का लाभ प्राप्त होनें से वचित रहना पडता है। (क्रमश)

दे गए सारे जग को नेत्र, स्वयं तुम होकर नेत्र विहीन !

(श्री सूय कुमार पाण्डेय, ५३, छोटा चांद गज लखनऊ ७)

तुम्हारी अभिलाषा थी एक, राष्ट्र अपना न रहे परतत्र
अत ऋषि के कानो में फूंक, दिया कैसा अद्भुत यह मत्र
पूर्ण करने को गुरु की चाह, कि जिसने लिया यही व्रत धार
'पुन फहरेगा-आर्य निशान' चला ले कर मे सत्य-कटार
वेद का तुमसे पाकर ज्ञान, जगा सोया उसका अभिमान
प्रकाशित किया सत्यमय तेज, हो गया अन्यायी पाषाण
तुम्हें हम विस्मृत करके आज, बने जाते हैं दिन-दिन दीन !
दे गये सारे जग को नेत्र, स्वय होकर तुम नेत्र-विहीन !

हमारे कुछ सिरफिरे "लीडर"

(श्री सत्यव्रत जी भारती, दिल्ली)

लीडर अंग्रेजी का शब्द है। इसका अर्थ है वह व्यक्ति जो दूसरों को रास्ता दिखाये, पेशवाई करे- अथवा पथ-प्रदर्शन करे। इस शब्द का हम सरल अनुवाद अगुआ अथवा आगे चल कर उचित पथ दिखाने वाला कर सकते हैं इसी परिभाषा को अपने ध्यान में रखकर ही आज हम कुछ कहने जा रहे हैं।

प्रत्येक देश में जन-साधारण को जटिल समस्याएं सुलझाने के लिए किसी न किसी अगुआ की आवश्यकता सदा पड़ती रही है, और आगे चल कर भी ऐसे ही पड़ती रहेगी। महाभारत की कथा हमारे सामने है। पांडवों के पास सब कुछ हो था वह बड़ योद्धा भी थे परन्तु पथ-प्रदर्शन योगीराज कृष्ण ने ही किया। कौरवो का पलड़ा इसी कारण हल्का पड़ा कि उनका अगुआ ही उन्हें गढ़े की ओर ले गया सर्वनाश करवा दिया। कुछ ऐसी ही दशा आज फिर भारत में दिखाई पड़ रही है। थोड़ा यह भेद अवश्य हो है। आज भारत मे लीडर कहलाने वाले को कुछ कमी नही परन्तु बहुदा उनका काम जन-साधारण को सर्वनाश के गढ़े को ओर ले जाना ही है। इसी का कुछ सक्षिप्त वर्णन हम यहा करना चाहते हैं।

जिस समय अंग्रेजी सरकार ने १८५७ में भारत पर अपना राजनीतिक प्रभुत्व जमा लिया तो अंग्रेज जाति को अपने इस राज्य को स्थायी बनाने की चिन्ता सताने लगी। उसके लीडर इसी विचार-गोष्ठी में लीन हो गये कि किस प्रकार भारत को स्थायी राजनैतिक और मानसिक दासता में बांधा जाये। बहुत सोच-विचार के बाद उन्होने यह निर्णय किया कि भारतीयों को राजनीतिक, सामूहिक, मानसिक और धार्मिक एकता के टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें छोटी-छोटी टुकड़ियो में बांट दिया जाये। उनको यह पूर्ण विश्वास था कि यदि ऐसा न हुआ तो इग्लैण्ड के लिये जिसकी आबादी १८५७ में केवल १७,९२७६०९ थी भारत को कब्जे में रखता' जिसकी जन-संख्या तब इससे कहीं अधिक थी, असम्भव हो जायेगा। इसी हेतु सबसे पहिले अंग्रेज जाति ने भारत में आर्य और द्राविड़ का प्रश्न उठाया। इस विचार को शन:-शन: बच्चों और बड़ो के मस्तिष्क में डालने को कोशिश की, इसी लक्ष्य को लेकर पुस्तकें लिखी गईं, लेक्चर दिये गये और इस विचार को ग्रहण करने वालों को प्रोत्साहन दिया गया। यह दुर्भाग्य की बात ही है कि इस देश के लीडर कहलाने वाले कुछ लोग इस विषैले विचार को लेकर मानो हवा में हो उड़ने लगे। इस विष का जो परिणाम हुआ वह हमारे सामने है।

एक सत्र पर आग लगाने के बाद अब अंग्रेज जाति ने अपना मुंह दूसरो ओर किया और भारत में ब्राह्मण और अब्राह्मण का झगड़ा खड़ा कर दिया। पहिले की भान्ति इसे फिर कुछ पिछलग्गु लोग मिल गये जिनका काम ही विदेशी सरकार की हा में हा मिलाना रहा है। अपना स्वार्थ सीधा करने के लिये अंग्रेज सरकार ने ऐसे लोगो की फली हुई झोलियों मे फिर खुले हाथो रुपये-पैसे और प्रतिष्ठा की भीख डाल कर उनको लालसा को और भी तीव्र कर दी। जिन लोगों ने इस अंग्रेजो चाल में योग दिया उन्हे रसर्च-स्कालर कहा जाने लगा, वह प्रोफेसर बना दिये गये अथवा ऐसा कहलाने लगे। यही लोग जिन्होने अंग्रेज जाति के मुंह से उगले हुए निवाले का उठा लिया था एक बार फिर लीडर बन बैठे। बिन समझे-बूझे कुछ दाम लेकर अथवा वैसे ही तालियाँ पीटने वालों की कमी राजनैतिक दासता से ग्रस्त देश में कमी नही रही न हो सकती है। ऐसे हो लीडरों में से कुछ ने इसी ब्राह्मण-अब्राह्मण वाद-विवाद का सहारा लेकर राजनीतिक पार्टीया बना ली और राज्य-सभा और लोकसभा के सदस्य बन बैठे अथवा सदस्य बनने के स्वप्न देखने लगे। इन लीडरों ने अंग्रेज की चाल में फंस कर एक बार फिर जन-साधारण को उल्टे रास्ते पर डाल दिया।

हमारे देश के दो आँख वाले कुछ लीडरों की आँखों पर जो विदेशी विचारों की पट्टी बंधी है उसका एक बहुत बड़ा उदाहरण हमें शिक्षा क्षेत्र में मिलता है। जब किसी अंग्रेज राजनीतिज्ञ ने यह कह दिया कि अंग्रेजी भाषा संसार की खिड़की है और इसके बिना हिन्दुस्तान पंगु हो जायेगा तो इन्ही रंगे-सियारों (गीदड़ों) ने सोते न हो कर भी बहकना शुरु कर दिया और अंग्रेज की तारीफ में पुल ही तो बांध दिये। इन्होंने बढ़-चढ़ कर की बातें कह डालीं जिनसे अंग्रेजो के मालिक अंग्रेज स्वयं भी अनभिज्ञ थे। हिन्दु भी कहने लगे कि अंग्रेजी की नाव बिन हिन्दुस्तान का बेड़ा पार नहीं हो सकता। अंग्रेजी ही में भारत का उद्धार छिपा है। इन विचारहीन और विवेकहीन लीडरों ने कभी थोड़ी देर के लिये भी सबर से यह नहीं सोचा कि वे जो कुछ टर्रा रहे हैं अंग्रेज उससे सहमत नहीं। यह लीडर यह कहते और मानते हुए बिल्कुल शर्माते अथवा लज्जाते नहीं कि अंग्रेजी तो भारतीयों को शिक्षित और सभ्य बनाने के लिये ही अंग्रेज सरकार ने शुरु की थी। इसके विरुद्ध अंग्रेज स्वय यह कहे जा रहे थे कि अंग्रेजी स्कूल इस लिए खोले गये हैं कि हिन्दुओं को ईसाई बनाकर संसार से हिन्दुत्व का नाम और निशान मिटा दिया जाये। कुछ भारतीय लीडर यह सब स्वीकार करने के लिए तैयार न थे। भारत में अंग्रेजी शिक्षा की नींव लार्ड मैकाले ने १८३५ ई० में रखी थी। इन्ही लार्ड मैकाले ने अपने १२ अक्टूबर १८३६ ई० के पत्र में जो इन्होंने कलकत्ता से अपने पिता को लिखा था यह स्पष्ट कहा कि यदि हमारी अंग्रेजी शिक्षा की स्कीम हिन्दुस्तान में सफल हो गई तो १८६६ ई० आते-आते बगाल में शायद ही कोई हिन्दु बचेगा। ईसाई मिशनरी संस्थायें बार-बार यह कहती रहती हैं कि इनके स्कूलों, पाठशालाओ और कालेजों का उद्देश्य भारतीयों को ईसाई बनाना ही है। इस पर भी हमारे यह लीडर जो कोल्हू के बैल से कुछ बढ-चढ कर नही हैं यह कहते हिचकचाते नही कि अंग्रेज जाति ने भारत में अंग्रजी स्कूल इसलिए खोले कि भारतीयों को शिक्षित बनाया जाये। क्या ससार मे कभी और कहीं भी इससे बड़ा उदाहरण मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त का किसी के देखने में आया है ?

अंग्रेज जाति इतने पर हो सब्र करने वाली न थी, वह तो भारत और भारतीयों के टुकड़े टुकड़ करने पर उधार खाये बैठी थी। अब उसने भारत में हिन्दु-मुस्लिम एक नया प्रश्न खड़ा कर दिया। इसमें भी अंग्रेजी सरकार को अपने इशारे पर नाचने वालों की कुछ कमी नहीं रही। अंग्रेजी राजनीतिज्ञों ने खूब रंग चढ़ाया और उसका फल यह मिला कि एक देश के दो टुकड़े हो गये। १९६५ में अब कुछ अंग्रेज चालबाजों ने यह कहना शुरु कर दिया है कि भारत और पाकिस्तान का एक हो जाना ही ठीक है। क्यों? उन्होंने यह देख लिया कि जिस चक्र-व्यूह की रचना उन्होने की थी और जिसके पीछे उनको यह आशा छिपी थी कि हिन्दु जाति का सर्वनाश हो जायेगा और वह मलियामेट हो जायेगी, उनकी वह आशा पूरी नही उतरी। हिन्दु जीवित रहें, अथवा चैन की नींद सो सकें यह उसे एक आंख भी नही भाता। इसलिए वह फिर एक बार इस उधेड़-बुन में लगी हुई है कि किस तरह एक बार फिर उसी हिन्दु-मुस्लिम झगड़े के कालेनाग को हिन्दुओं के गले में डलवा दे।

आज से बहुत वर्ष पहिले अंग्रेज जाति ने हिन्दु और सिख भाई-भाई में भी फूट डाल कर झगड़ा करवाने की कोशिश की थी परन्तु उसे सफलता न मिली। अंग्रेज जाति ने निराश होना नही सीखा। वह इस पाप कार्य में निरन्तर लगी रही और इस ढंग का प्रचार और प्रसार छोटी-छोटी पुस्तकों द्वारा करती रही कि खालसा खालिस्तान चाहता है, वह हिन्दु के आधीन नही रहेगा। राजनितिक सत्ता का स्वप्न इस शताब्दी में बहुत से लोग दिन में भी देखते हैं। ऐसे ही कुछ लोगों ने इस नई अंग्रेजी चाल में अपने पांव और पंख फसा दिये। आज फिर एक नया प्रश्न भारतवासियो के सामने खड़ा हो गया। यह बड़े हर्ष की बात है कि जनता का अधिक भाग इस अंग्रेजी चाल को खूब समझता है। खालसा भाई भी अभी यह भूले नही कि अंग्रेज जाति ने ही धोखा देकर महाराजा रणजीत सिंह के राज्य को हथियाना था। वह यह भी खूब समझते हैं कि इसके पीछे अंग्रेजी की वही विभाजन नीति काम कर रही है जिस पर उसे सदा गर्व रहा है। वह केवल भारतीयों को छोटी-छोटी टुकड़ियों में बांट कर फिर एक-एक करके उन सबको नष्ट करने के मंसूबे लगाये बैठी है। ऐसी दशा में भी ऐसे लीडरों की कमी दिखाई नहीं पड़ती जो जनता को इसी आग से खेलने के लिए प्रेरित कर रहे हैं जो घर और घाट दोनों को जला कर भस्मीभूत कर डालने वाली है।

शेष पृ० ११ पर

ब्रह्मर्षि स्वामी विरजानन्द

—कवि कस्तूरचन्द "घनसार" आर्यसमाज पीपाड़ शहर

जागृत ज्योति वेद-ज्ञान की—थी मथुरा में रही प्रकाश।
अविद्या का निबिड़ अंधेरा था, जिसमें नहीं ज्ञान सवेरा था।
अन्यायि खलोका राज्य रहा, न आर्य्यों का समाज रहा॥
पोपोंका पाप पसारा था, सद् वैदिक-धर्म विसारा था।
न कर्म-धर्म सद् नीति रही, देश हुआ था निरस हुतास॥
जागृत-ज्योति वेद-ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥१॥
विरजानन्द स्वामी एक रहे, बहु विपुल-विभाति विषाद सहे।
बचपन मे प्रज्ञा चक्षु हुए, नै व्यवस्था थी वह भिक्षु हुए॥
उपराम हुए घर छोड़ चले, सम्बन्ध का नाता तोड़ चले।
कौन ' जानते होंगे ऐसे, वेद-ज्ञान का विमल विकास॥
जागृत-ज्योति वेद-ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥२॥
ऋषिकेश की ओर प्रस्थान किये, वहाँ जाकर ईश्वर ध्यान किये।
कनखल औ काशी अलवर में, फिर आये थे मथुरापुर में॥
वह गया गये कर भ्रमण को, वेदों के हित सद् स्मरण को।
पढ़े-पढ़ाते रहे आप फिर—राजाओं के भवन-निवास॥
जागृत-ज्योति वेद-ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥३॥
व्याकरण के सूर्य्य कहलाते, वह मुमुक्षु जनों को समझाते।
तपस्या की पावन प्रतिमा आर्य्यावर्त की थी गरिमा॥
श्रुतिका—स्रोत बहाये थे, वर-वैदिक-बाग लगाये थे।
फिर इसी बात को सिंचन हेतु, दयानन्द को सौंपा खास॥
जागृत-ज्योति वेद-ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥४॥
ब्रह्मर्षि थे वो निष्कामी, योगेश्वर पूरे सद् स्वामी।
वर वरिष्ठान सन्यासी थे, वेदो का पूर्णाभ्यासी थे॥
असीम विद्वत्ता भर आये, भारत मे पीयूष बरषाये।
जन-जन का जागृत जीवन हुआ—भ्रम-प्रमादिक हो तम नाश॥
जागृत-ज्योति वेद ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥५॥
गंगापुर-पावन भूमि रही, आर्यों का गौरव मान सही।
धन्य धन्य वही वतन रहे, जिसमे वर स्वामी जन्म लहे॥
आर्यों का ठीक उत्थान हुआ, वेदो का जब से गान हुआ।
घनसार ' अपार-विचार बढ़ा, घर-घर अन्दर विद्याभ्यास॥
जागृत ज्योति वेद ज्ञान की—थी मथुरा मे रही प्रकाश॥६॥

भजन

(स्वर्गीय पण्डित बस्तीराम जी का बहुत पुराने भजन का एक अंश)

टेक—नेता भारत के रोए दुर्दशा देख भारत की।
हट कर सो अब सुलझेगी हम कहे पुजारी पड़े से।
ईश्वर कृपा करें जब सुलझे हट डंडे से।
धर्म के पंजे छूट जाय फिर आवें ठिकाने डंडे से।
खेती करें किसान बैल को चलना आवे डंडे से॥
चार अंगुल लकड़ी पर बकरा पैर जमावे डंडे से।
वेद बतावें शास्त्र बतावें मार्ग पावें डंडे से॥
राजकुमार सवार चतुर घोड़ों को नचावें डंडे से।
सास का पानी भरतो मूसी चमक दिखावें डंडे से।
बैठ पिंजरे सिंह मनुष्य को शीस झुकावें डंडे से।
राजा करे इन्साफ नित प्रजा हुक्म बजावें डंडे से॥
माता पालन करें पुत्र का फिर सुख पहुंचावें डंडे से।
नारी पुरुष के साथ नियम से प्रेम निभावें डंडे से।
आकाश से बादल पृथ्वी पर मेह बरसावें डंडे से।
बड़ से बड़े छोटे से छोटे शिक्षा पावें डंडे से॥
योगीश्वर तप करें समाधी सिद्ध लगावें डंडे से।
महा मूर्ख को महा चतुर विद्वान् बनावें डंडे से॥
कहे से माने मनुष्य गंवार की समझ में आवे डंडे से।
जितने दुर्गुण दुखदाई सब डण्डे ने खोए—
बस्तीराम बतिया सत की दुर्गण सब डंडे ने खोए॥
दुर्दशा देख भारत की—नेता भारत के रोए।

पृ० १० का शेष

जब १९४७ में भारत स्वतन्त्र हुआ तो इसी अंग्रेज जाति ने इस देश के ऐसे ही लीडरों के दिमाग में यह विचार घुसेड़ दिया कि भारत को ब्रिटिश-कामनवेल्थ का सदस्य बना रहना चाहिए। बस इसी का राग अलापने वाले लीडर बरसात के मेंढक की तरह न जाने कहां से निकल आये। जब तीन मास पहिले पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया तो अंग्रेजी पत्र और पत्रकारों ने यह लिखना शुरु कर दिया कि यदि इंग्लैण्ड ने अपनी चाल-ढाल न बदली तो भारत कामनवेल्थ से बाहर आ जायेगा। ऐसा पढ़ने और सुनने भर की देर थी कि क्विट कामनवेल्थ के नारे लगाने वाले कुछ लीडर पैदा हो गये। उन्होंने कभी यह नहीं सोचा कि शायद इसके पीछे कोई गहरी चाल छिपी हो? यदि ऐसा हो जाये तो इंलैण्ड खुले हाथ और बिना किसी शर्म और लिहाज पाकिस्तान का साथ देने लगेगा। हमारे कुछ लीडर जिनके मस्तिष्क में स्वतन्त्र रूप से सोचने की शक्ति के अतिरिक्त सब कुछ परमात्मा ने दिया है शत्रु के इन सुझावो पर इस भान्ति उछल पड़ते हैं जैसे भोली मछली शिकारी के फेंके हुए केंचुए पर। लीडर कहलाने वाले यह दुम कटे सियार (गीदड़) शोर मचा-मचा कर अपने पीछे तमाशा देखने वाले कुछ बच्चो को इकट्ठा कर ही लेते हैं।

अंग्रेज जाति की इन सब चालो के पीछे ईसाइयत का बहुत बड़ा हाथ है और इसे ईसाइयत का पूरा सहयोग प्राप्त है। ईसाइयत बराबर इस प्रयत्न मे लगी हुई है कि हिन्दुओं की देशभक्ति को नष्ट कर दिया जाये। इसी उद्देश्य से कितने हो ईसाई पत्रो मे इस बात का प्रचार किया जा रहा है कि मनुष्य को देशभक्त न होकर अंतरराष्ट्रिय भक्त होना चाहिये। देशभक्ति एक संकोचपूर्ण आदर्श है। जैसे ही अंग्रेज जाति और ईसाइयत ने यह नया निवाला फेंका कि लीडर कहलाने के शौकीन कुछ लोग इस पर लपके और कुछ ने तो इन्ही विचारो को लेकर देशी पत्रो मे लेख भी लिख डाले। हमारे आश्चय की कुछ सीमा न रही जब इन्ही चुराये हुए विदेशी विचारों की चर्चा हमने एक बार आर्य समाज के एक साप्ताहिक मे पढ़ा। लिखने वाले अपने आपको वेदो का अनुयायी कहते तो हैं परन्तु वह यह भूल गये मालूम होते हैं कि वेदो ने मातृभूमि को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया है। इसी का एक रूप हमे और तब देखने को मिला जब १९६२ मे चीन ने भारत पर आक्रमण किया था। तब एक भारतीय लीडर ने यहां तक कह दिया कि जो लड़ाई मे जाना न चाहे उसे मजबूर न किया जाये। लीडर अपने आपको भारतवासी न कहकर जगदवासी समझते हैं। उनका हृदय और दृष्टिकोण ऐसा विशाल है। इनका विचार है कि कोई भी यहां पैदा हो सकता है खा पी कर बड़ा हो सकता है रह सकता है, धन कमा सकता है और यहा इस देश के देशवासियो का लीडर भी बनने का शौक फरमा सकता है परन्तु यदि कोई शत्रु इस देश पर आक्रमण करे तो यह उसका कर्तव्य नही कि वह जरूर देश की रक्षा करने मे भी देश को लीड करे क्योंकि वह तो सारे संसार को अपना देश मानता है। भला यह विचार कहाँ से आये? लीजिये हम बताते हैं। ईसाईयो की एक टुकड़ी जिसे क्वेकर कहते हैं ने यह प्रचार खूब किया है कि यदि कोई किसी युद्ध मे न जाना चाहे तो उसे इसकी छूट होनी चाहिये। बस क्या था कायर लोगो के हाथ अन्तरराष्ट्रिय के नाम पर एक मूल-मन्त्र लग गया ईसाइयत का प्रयोजन सीधा हो गया और कुछ चतुर लोग सस्ते मे ही जनता के लीडर बन बैठे। स्वयं कुछ सोचना तो इनके हिस्से में आया ही नही। जो मानसिक विचार विदेशी लोग इनमे कूटनीति का प्रयोग करके फैला देते हैं, इन्ही टुकड़ो पर ऐसे लीडर पलते रहते हैं।

जिस समय भारत का संविधान बनाये जाने की चर्चा हो रही थी उस समय ईसायत ने ही यहां सैकूलरिज्म का बीज बोया। इसको पानी दिया और सींचा उन लोगो ने जो अपने आपको हरफन मौला (लीडर) समझते हैं। ईसाई लोग आज यह कहते फिरते हैं कि भारत का सैकूलरिज्म (धर्म-निरपेक्षता) ईसाइयत की बहुत बड़ी जीत है। ईसाइयत जानती है कि उसने भारत को एक ऐसी मानसिक उलझन मे फंसा दिया है जिससे उस का छुटकारा कठिन है। क्या अब हम यह अनुभव नही कर रहे कि सैकूलरिज्म (धर्म-निरपेक्षता) का मतलब समझने वाले इस देश मे बिरले ही लोग होंगे।

(क्रमश)

विदेशों में रहने वाले ग्राहक महानुभावों से निवेदन

आर्योदय की भान्ति हम सभी ग्राहक महानुभावों की सेवा में "आर्यमर्यादा" नियम पूर्वक भेज रहे हैं। हमें प्रसन्नता है कि कुछ महानुभावो ने अपना वार्षिक शुल्क बिना पत्र लिखे ही भेज कर ग्राहक बने रहने की कृपा की है।

जिन ग्राहक महानुभावो ने अभी तक अपना शुल्क नहीं भेजा है उनसे निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क समुद्री डाक का २०)या एक पौंड और हवाई डाक का ३०) यथाशीघ्र भेजने का कष्ट करें। "आर्यमर्यादा" आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का पत्र होने के कारण इस का बैंक मे पृथक् खाता नही है। अत अपना चैक आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब (Arya Pratinidhi Sabha Punjab) के नाम भेजने की कृपा करें। विदेशो की आर्यसमाजों से निवेदन है कि अपने यहा के समाचार आर्यमर्यादा मे प्रकाशनार्थ भेज कर लाभ उठावें। व्यवस्थापक—आर्यमर्यादा हिन्दी साप्ताहिक

१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली —१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१.	सत्यार्थ प्रकाश तथा [illegible]—ले० स्वामी [illegible]	मूल्य १-००
२	धर्मवीर पं० लेखराम—ले० [illegible] जी	१-२५
३	सुबोला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४.	आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह	१-२५
५	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६	वैदिक सत्सग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७	कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९	वेदनिर्णय—(वेद ईश्वरीय ज्ञान [illegible])	०-[illegible]
१०	जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम ए	३-००
११	सोमसरोवर ,, ,, ,,	३-००
१२	वैदिक सिद्धान्त—प० चमूपति जी एम ए	१.००
१३	Principle of Arya Samaj ,, ,,	१-५०
१४	Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१५	Subject Matter of Vedas	१-००
१६	आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय	५०-०
१७	मुक्ति के साधन—प० मनदमोहन विद्यासागर	१-००
१८	प० गुरुदत्त विद्यार्थी—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-३५
१९	वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी	१०) सैंकड़ा
२०	पजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद	२००

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली ६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१ से प्रकाशित।

आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

आर्य वर शिरोमणि महाशय ऋषि, महर्षि, राजे महाराजे लोग बहुत सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगो से रहित और सुखो से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाय। ये दो यज्ञ अर्थात् एक ब्रह्म यज्ञ जो पढना पढाना सन्ध्योपासन ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना करना। दूसरा देव यज्ञ जो अग्नि होत्र से लेके अश्वमेध पर्यन्त यज्ञ और विद्वानो की सेवा संग करना परन्तु ब्रह्मचर्य में केवल ब्रह्मयज्ञ और अग्निहोत्र का ही करना होता है ॥ —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४४ | ३ कार्तिक वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १९ अक्टूबर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
" " विदेश मे २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनस्तदुपासक प्रजाय कोदश इत्युपदिश्यते ॥

फिर परमात्मा का उपासक प्रजा के वास्ते कैसा हो इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र मे किया है ॥

त्वं नो अग्ने सनये धनानां यशसं कारु कृणुहि स्तवानः ।
ऋध्याम कर्मापसा नवेन देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः ॥

ऋ० १. ३१ ८

पदार्थ—(त्वम्) जगदीश्वरोपासक (न) अस्माकम् (अग्ने) कीर्त्युत्साहप्रापक (सनये) सविभागाय (धनानाम्) विद्यासुवर्णचक्रवर्त्तिराज्यप्रसिद्धानाम् (यशसम्) प्रशस्त कीर्तियुक्तानि कर्माणि विद्यन्ते यस्य तम् (कारुम्) य उत्साहेनोत्तमानि कर्माणि करोति तम् (कृणुहि) कुरु (स्तवान) य स्तौति स (ऋध्याम) वर्द्धेम (कर्म) क्रियमाणमीप्सितम् (अपसा) पुरुषार्थयुक्तेन कर्मणा सह (नवेन) नूतनेन (देवै) विद्वद्भि सह (द्यावापृथिवी) भूमिसूर्य्यप्रकाशौ (प्र) प्रकृष्टार्थे (प्रावतम्) अवतो रक्षतम (न) अस्मान् ॥

अन्वय—हे अग्ने त्व स्तवान सन् नोऽस्माक धनाना सनये सविभागाय यशस कारु कृणुहि सपादय यतो वय पुरुषार्थिनो भूत्वा नवेनापसा सह कर्म कृत्वा ऋध्याम नित्य वर्द्धेम विद्याप्राप्तये देवै सह युवा नो ऽस्मान द्यावापृथिवी च प्रावत नित्य रक्षतम् ॥

भावार्थ—मनुष्यैरेतदर्थं परमात्मा प्रार्थनीयः। हे जगदीश्वर भवान कृपयाऽस्माक मध्ये सर्वासामुत्तमधनप्रापिकाना शिल्पादिविद्याना वेदितॄनुत्तमान् विदुषो निर्वर्त्तय यतो वय तै सह नवीन पुरुषार्थं कृत्वा पृथिवीराज्य सर्वेभ्यः पदार्थेभ्य उपकारांश्च गृह्णीयामेति ॥

भाषार्थ—हे अग्ने कीर्ति और उत्साह के प्राप्त कराने वाले जगदीश्वर वा परमेश्वरोपासक (स्तवान) आप स्तुति को प्राप्त होते हुए (न) हम लोगो के (धनानाम्) विद्या सुवर्ण चक्रवर्तिराज्य प्रसिद्ध धनो के (सनये) यथायोग्य काम्यों में व्यय करने के लिये (यशसम्) कीर्तियुक्त (कारुम) उत्साह से उत्तम कर्म करने वाले उद्योगी मनुष्य को नियुक्त (कृणुहि) कीजिये जिससे हम लोग (नवेन) नवीन (अपसा) पुरुषार्थ से नित्य नित्य (ऋध्याम) वृद्धियुक्त होते रहे और आप दोनो विद्या की प्राप्ति के लिये (देव) विद्वानो के साथ करते हुए (न) हम लोगो को और (द्यावापृथिवी) सूर्यप्रकाश और भूमि को (प्रावतम्) रक्षा कीजिये ॥

भावार्थ—मनुष्यो को परमेश्वर की इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये कि हे परमेश्वर कृपा करके हम लोगों मे उत्तम धन देने वाली सब शिल्प विद्या के जानने वाले उत्तम विद्वानों को सिद्ध कीजिये जिस से हम लोग उनके साथ नवीन नवीन पुरुषार्थ करके पृथिवी के राज्य और सब पदार्थो से यथायोग्य उपकार ग्रहण करें ॥

(ऋषि दयानन्द का भाष्य)

ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि अपना वार्षिक शुल्क भेजकर कृतार्थ करें।

"आर्य—लोक! निज शक्ति जगा"



(श्री विनोद 'शाही' नरवाना)

अधकार छाया है जग में, घुटन व्याप्त है कण-कण मे,
ऐसे मे असहाय हुए, इस जग ने तुम्हे पुकारा,
आर्य लोक! निज शक्ति जगा, अब तू ही एक सहारा,
हाँ तू ही एक सहारा।

अरे! हाथो मे ले ओ३म् ध्वजा, अब जग को आर्य बना दे,
प्रस्तरा चरण कर भग, तोड तम, प्रकाश सिन्धु लहरा दे,
अज्ञान ध्वस कर, घुटन फोड दे, रुद्र! भैरवी नाद बजा दे,
आर्य युवा! बन भीषण रौद्र, प्रवढर सम प्रलय मचा दे,

मुख मे तेरे मधुर सत्य हो, तू वेद नाद का गुजन कर दे,
एक हाथ असि-गर्जन-ज्वाला हो, एक हाथ सयोजन कर दे,
जहाँ मित्र हो मित्र रहे, पर रिपु का तू मद भजन कर दे,
प्रियजन तेरा हर जन हो, कुछ ऐसा काय यहाँ पे कर दे,

आर्य लोक! निज शक्ति जगा, अब तू ही एक सहारा,
ऐसे मे असहाय हुए, इस जग ने तुझे पुकारा,
हाँ तू ही एक सहारा!

अधकार छाया है जग मे घुटन व्याप्त है कण-कण मे ॥
अब तू ही एक सहारा, हाँ तू ही एक सहारा!
मोह त्याग, सघर्ष तू कर, वेगवान्! द्रुतवेग तू हो जा,
टकरा राह को हर बाधा से तू, अब शोलो को भडका जा,
अरे! हर शोले की अग्नि से तू, राहो पै नव दीप जला जा,
और उन्ही शोलो से फिर तू, निज को प्ररक दीप बना जा,
ओह! देख देख निशा छाई है, तू आसमान की ओर देख,
मोह त्यागा तारक सडो ने, तू तारो की ही ओर देख,
अति वेगवान् हो तारक टूटा, सघर्षो की तू ओर देख,
और देख तारक प्रकाश की, शिक्षा ले इसी ओर देख,
आर्य लोक! निज शक्ति जगा, अब तू ही एक सहारा,
ऐसे मे असहाय हुए, इस जग ने तुझे पुकारा,
हाँ तू ही एक सहारा।
अधकार छाया है जग मे, घुटन व्याप्त है कण-कण मे,
अब तू ही एक सहारा, हाँ तू ही एक सहारा

उपासना-प्रदीप—१

आत्म-बोध और परमात्म-बोध

श्री प० जगत्कुमार शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली

विशेष वक्तव्य

उपासनावाद के अधिकतर आयोजन इसी लिय विफल हो जाते हैं कि उपासको को न तो अपने स्वरूप का परिज्ञान हो रहा है, न अपने उपास्यदेव का सम्यक् बोध। उपासना के साधन-पथ के विषय मे भी आवश्यक जानकारी उन्हे नही होती। कुछ क्षत्रो मे तो रूढियो और रस्मोरिवाजो को ही साधन पथ माना जाता है। अत यह आवश्यक प्रतीत होता है कि उपासना-कम का सिद्धान्त और साधन पक्ष भी सक्षप मे ओङ्कारोपासको की सेवा मे प्रस्तुत कर दिया जाये। इस लेख-माला को 'ओङ्कार-उपलब्धि" का परिशिष्ट ही समझना चाहिये।

—जगत्कुमार शास्त्री "साधुसोमतीर्थ"

१—जिसने अपने आप को नही जाना, अपने स्वरूप को नही पहचाना, अपने कर्त्तव्य और अपनी अधिकार सोमा का सम्यक बोध प्राप्त नही कया। वह तो ईश्वर को भो जान न सकेगा। ब्रह्म बोध की सिद्धि तो आत्म बोध के बाद ही प्राप्त होती है। जो जन-विधिपूवक अपने कर्त्तव्यो का पालन करते हैं उनको उनके अधिकार भो मिल जाते हैं। कर्त्तव्य-विमुख होकर रोना, गिडगिडाना वा झगडा करना तो अनुचित भो है, हानिकारी भी।

२—आत्म बोध के लिये, चतन्य की प्राप्ति के लिये, अपनो प्रसुप्त शक्तियो को जगाने के लिय अब इस मन्त्र का पाठ और विचार करो।

अहमिन्द्रो न पराजिग्य इद् धन, न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन।
सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु, न मे पुरवः सख्ये रिषाथन॥

ऋ० १०।४८।५

(१) अथ—(अहमिन्द्र) मै इन्द्र हू। मैं अपनी देहपुरी का राजा। अविद्या आदि दोषो का निवारण करने मे मैं पूण समथ हू। मैं ऐश्वर्य-शाली हूँ। मेरो इन्द्रियाँ मेरे वश मे है। मैं अपनो इन्द्रियो के वश मे नही हू।

(२) (इद धनम न पराजिग्ये) नि सन्देह, अपने धन वैभव को मैं भो, कही किसी भी अवस्था मे गवा नही सकता, हार नही सकता।

(३) (कदाचन मृत्यवे न अवतस्थे) मैं कभी भा मर नही सकता। मृत्यु भी मुझ खा नही सकता। मैं तो अमर हूँ।

(४) सोम सुन्वन्तोइत् मा वसु आ याचत) सोम का सवधन करते हुए, संसार मे सुख और शान्ति की अभिवृद्धि करते हुए हो मुझसे धन-धान्य की कामना=याचना किया करो। तुम पुरुषाथ शून्य बनकर प्राथनायें मत किया करो।

(५) (पुरव ! मे सख्ये न रिषाथन) हे ससार रूपी महा नगरी के निवासियो ! ससार के नर-नारियो ! जो मेरी मित्रता मे रहेगा, जो आत्म-बोध की सिद्धि प्राप्त करेगा, वह न तो कभी अभाव-ग्रस्त होगा, न कष्ट पायेगा, न नष्ट होगा।

प्रवचन

३—भोले साधको ! सुनो यह तुम्हारे अपने अन्तरात्मा की ही उद्घोषणा है। अपने आप को जानो पहिचानो। निष्पाप, निर्भय, पुरुषार्थी, त्यागी और मुमुक्षु बनो।

सनातन नाम मेरा है इन्द्र, मैं निजवैभव सकता नहीं हार।
पाप से करता नही हूँ मेल, मौत को भी देता हूँ मार॥
यज्ञ है सुख-सम्पत् का मूल, यज्ञ है कल्प तरु गुण-धाम।
यज्ञ है आत्म-बोधप्रद ज्ञान, यज्ञ है कर्म योग निष्काम॥
करो सब सोम-सुधाका पान, सुनो सब जगति के नर-नार।
यज्ञ का करता हूँ विस्तार, मुझ है यजमानो से प्यार॥
सोम का कर करके विस्तार, माग लो मन चाहे वरदान।
जो नरवर करते मुझसे प्यार, सदा होता उनका कल्याण॥

४—अपना-अपना दार्शनिक दृष्टिकोण ठीक करलो। उलझनपूर्ण दार्शनिक-ज्ञान के कारण ही बहुत से साधक जपानुष्ठान और भक्तिवाद की सफलताओ को प्राप्त करने मे असमर्थ हो जाया करते हैं।

५—"इस" को जानो। यह सनातन प्रकृति, इसके सब विकार और इसके सब प्रवाह जड हैं। यह है तो भोग्य, परन्तु केवल आवश्यकतानुसार उपभोग की वस्तु। इस के साथ अधिक अनुराग बढ़ाना ठीक नही।

६—'मैं" को जानो। जो 'मैं" और 'मेरा" ऐसा बोलता है, उसको जानो। अपने आप को जानो। यह "मैं" और 'मेरा" बोलने वाला ही तो "आत्मा' है। ऐसे आत्मा इस सृष्टि मे असख्य हैं, बहुत हैं। आत्मा एक चेतन तत्त्व है। तथापि वह अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्यवान् और एकदेशी है। यद्यपि आत्मा का कोई रग, रूप या आकार नही है, तथापि ईश्वर तो इस आत्मा-जीवात्मा मे भी व्यापक है। यत्न करने पर, थोड या अधिक समय के लिए आत्मा का ज्ञान तथा सामर्थ्य कुछ बढ भो जाया करता है। इस यत्न को ही भक्तिवाद कहते हैं।

७—'उस" को जानो। वह परमात्मा है। इस दृश्य-जगत् का निमित्त कारण वही है। यह प्रकृति तो इस जगत् का उपादान-कारण मात्र ही है। वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु और अजर, अमर आदि अनन्त विशेषणो और अनन्त गुण, कम एव स्वभाव आदि से युक्त है। उस की कृपा से ही आत्मा के जपानुष्ठान=भक्तिवाद के सब प्रयत्न सफल होते हैं। ईश्वर आदि सब=उसके गुण, कम और स्वभाव सूचक अनन्त नाम—उस एक ही दिव्य सत्ता के प्रतिबोधक हैं। उसके अनन्त नामो को देखकर कोई विभ्रम मे न पड।

त्रैतवाद

८—ईश्वर नें प्रकृति से असख्य जीवात्माओ के लिय इस दृश्य-जगत् की रचना की है। वही इसका उत्पादक है, वही व्यवस्थापक और वही इसका सहारक भी है। सहारक से डरने की क्या जरूरत है ? सहार तो परिवतन का एक खेल ही है। विभिन्न तत्त्वो के न्यूनाधिक मात्रा मे मेल से नाना प्रकार के खेल सम्पन्न होते हैं, उन्ही तत्त्वो के वियोग स वे खेल बिखर भी जाते हैं।

९—अपने स्वरूप की सूचना, वह प्रभु स्वय ही हमे दे रहा है—

अयमस्मि जरितः पश्य मेह, विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना।
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्ति, आदर्दिरो भुवना दर्दरीमि॥

ऋ० ८।१००।४

(१) (जरित ! मा—इह पश्य) ओ मेरे भक्त ! ओ मेरे स्तुति गायक ! मुझको इस जीवन में ही देख, इस ससार मे ही देख।

(२) (अयम अस्मि) मैं तो यह हूँ। मैं तो तेरे पास ही हूँ, प्रत्यक्ष ही हूँ। मुझ ढूढने के लिये तुझे कही दूर जाने की कोई जरूरत नही है।

(३) (मह्ना विश्वा जातानि अभि-अस्मि) अपने सामर्थ्य से मैं इस सम्पूर्ण जगत् को और नाम-रूप वाले इसके सभी पदार्थों को अपने वश में रखता हूँ।

(४) (ऋतस्य प्रदिश मा वर्धयन्ति) सत्यशील, सत्य के प्रचारक, सच्चाई और भलाई के मतवाले जो मेरी महिमा को गाते हैं, वे मुझे पा भी जाते हैं, अधिकाधिक पा जाते हैं, वे दूसरो को जता भी देते हैं।

(५) (आदर्दिर) मैं तोडने-बखेरने, पीसने वाला भी हू। जिसको मैं बनाता हू, उसे उसके उपयोग के बाद मैं तोड भी देता हू, बखेर भी देता हू, पीस भी डालता हूँ।

(६) (भुवना दर्दरीमि) मैं तो लोक-लोकान्तरों को भी पीस देता हू, बखेर देता हूं, तोड देता हू, किसी छोटे मोटे पदार्थ का तो कहना ही क्या है ? मैं विधाता भी हू धाधाता भी हू और सहारक भी हू।

१०—सब प्रकार के दु खो का अन्त तो आत्म-बोध के बाद परमात्मा-बोध की सिद्धि मिलने पर ही हो सकेगा। क्योकि—

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः।
तदा देवमविज्ञाय दु खस्यान्तं भविष्यति॥

(श्वेताश्वतरोपनिषद्, ६।२०)

अर्थ=जब लोग अनन्त विस्तार वाले आकाश को चमडे में लपेट लेंगे, तब उस परमात्मा-देव को बिना जाने भी दुःख का अन्त हो जाया करेगा। जैसे आकाश को चमडे मे लपेटना असम्भव है, वैसे ही उस परमात्म-देव को जाने बिना दु खों से छुटकारा मिलना भी असम्भव ही है। (क्रमशः)

सम्पादकीय

विजया-दशमी-महोत्सव

स्थिरा व सन्तु आयुधा

वीरवर योद्धा क्षत्रियो को परमेश्वर उपदेश करता है कि—'तुम्हारे अस्त्र शस्त्र अत्यन्त स्थिर सुदृढ होवें। (ऋग्वेद) युद्ध और बल के बिना शत्रु नही डरते —ऋषिदयानन्द वेदभाष्य।

युद्ध वै राजन्यस्य वीर्य्यम —शतपथ० १३ १ ५ ३ ६। अर्थात जो राजा को युद्ध करना है वही उसका बल होता है। उसके बिना बहुत धन और सुख की प्राप्ति कभी नही हो सकती। निघण्टु मे सग्राम ही का नाम महाधन है कि उससे बड बड उत्तम पदाथ प्राप्त होते है।'

—ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका

'वय जयेम त्वया युजा।' ऋ० १ १०२ ४ अर्थात हम वीर योद्धा सैनिक शुभ सेनापति के साथ मिलकर शत्रुओ को जीत।

आ राष्ट्रे राजन्य शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम।'

यजु० २२ २२॥

अर्थात हमारे राष्ट्र मे वीर अस्त्र शस्त्रधारी शत्रुओ को नष्ट करने और सब प्रकार के यानो का प्रयोग करने मे अद्वितीय क्षत्रिय हमारे राष्ट्र मे सब ओर प्रसिद्धि को प्राप्त होवें। जो क्षत्रिय अहिंसाव्रत को ग्रहण करता है वह स्वय तो नष्ट होना ही है साथ ही अपने राष्ट को डुबा देने का कारण भी बन जाता है।

विजयादशमी पव इसी भाव की शिक्षा हमे प्रतिवष देता रहता है। सामाजिक कुरीतियो को छोडकर इस समय क्षत्रियो को अस्त्र शस्त्र सचालन के प्रशिक्षण शिविर लगाने चाहियें। शारीरिक बल के बिना आत्मिक बल अधूरा होता है।

हमारे राष्ट्र का यह प्राचीन काल से चला आ रहा त्यौहार है। गावो मे अब भी यह प्रथा है कि किशोर अवस्था के लडके खाण्ड बनवा कर परस्पर मिलते हैं। यह भाव युद्धविद्या के प्रशिक्षण का द्योतक ही तो है।

दशमी नाम मृत्यु और १०० वष की आयु के लगभग अवस्था का है। हमारे क्षत्रिय वीरवर मृत्यु की कुछ भी चिन्ता न करके मृत्युञ्जयी होकर अति वृद्धावस्था तक क्षात्र धम का पालन करते हुए युद्धो मे भाग लेते थे। महाभारत युद्ध के महारथ अद्वितीय योद्धा भीष्म आदि इसका प्रमाण हैं।

आजकल राम रावण के युद्ध के नाम पर भारत का करोडो रुपया रामलीला की कुरीतियो मे फूका जाता है। यदि इस अपव्यय को रोकर राष्ट्र के सभी राज्यो मे युद्ध विद्या की शिक्षा देने वाले महाविद्यालय खोले जाव तो राष्ट्र को इनसे निकलने वाले योद्धा ससार को चुनौती दे सकते हैं। परमेश्वर करे—हमे सुमति प्राप्त हो और हम अपने राष्ट्र को प्राचीन समय के समान वैभवशाली बना सकें।

हरयाणा सरकार से

हम हरयाणा सरकार से बलपूवक निवेदन करना चाहते हैं कि हरयाणा का पृथक राज्य होने पर भी अभी तक राष्ट्र और राज्य भाषा हिन्दी को जो प्रोत्साहन मिलना चाहिये था वह नही मिला है। अब भी हरयाणा के स्कूलो मे पजाबी गुरुमुखी लिपि चल रही है। पजाब राज्य मे पजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ के शिक्षा बन्धन को तोडा जा चुका है। पजाबी भाषा के विश्वविद्यालय का आयोजन हो चुका है। परन्तु न जाने हरयाणा सरकार चण्डीगढ पजाब विश्वविद्यालय से क्यों चिपटी हुई है? क्यो नही उससे सम्बन्ध विच्छिन्न कर लेती? १ नवम्बर ६९ को हरयाणा राज्य का स्थापना दिवस पुन मनाया जाने वाला है। यह अवसर है कि हरयाणा सरकार हरयाणा राज्य मे हिन्दी को ही सर्वोच्च-राज्य भाषा घोषित करके चण्डीगढ विश्वविद्यालय से मुक्ति प्राप्त करे। तथा ऐच्छिक भाषाओ मे सस्कृत को प्राथमिकता देने की घोषणा करे।

आर्यसमाज सगठन समिति

इस समिति के मन्त्री प्रो० रत्नसिंह जी एम० ए० ने उक्त समिति के विरुद्ध मिथ्या प्रवाद फैलाये जाने का निराकरण किया है जो आयमर्यादा के इसी अक मे पृ० ४ ९ १० तथा ११ पर प्रकाशित किया गया है। प्रो० रत्नसिह जी के इस भ्रान्ति निवारण वक्तव्य से अनेक बातें स्पष्ट हो जाती है जिसकी जानकारी आय जगत के लिये आवश्यक है। यह आय जगत को पता है ही कि इस समिति के अध्यक्ष पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज हैं।

समाचार सूचना भेजने वालो से

प्राय आयसमाजो तथा आय सस्थाओ के समाचार बहुत थोड समय पूव भेजते हैं और इच्छा करते हैं कि आयमर्यादा के आगामी अक मे ही इसका प्रकाशन हो सके। उन्हे यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आय मर्यादा साप्ताहिक पत्र है। स्थिति स्पष्ट करने के लिये यह बताना आवश्यक है कि जिस रविवार की तारीख अक पर प्रकाशित की जाती है, उससे पहले बुधवार को अक डाकखाने को दे दिया जाता है। वह अक मगलवार को छप लेता है। एक-दो दिन मे सब पृष्ठो का कम्पोज नही किया जा सकता। इस लिये जो समाचार मगलवार से पहले बृहस्पति अथवा शुक्रवार तक कार्यालय मे पहुचते हैं उनको ही प्रकाशित किया जा सकता है अर्थात प्रकाशित होने की तारीख से १० ११ दिन पहले समाचार कार्यालय मे पहुच जाने चाहिय। यह ध्यान रखने की बात है।

समालोचनार्थ पुस्तको के लिये

कुछ सज्जन ऐसी पुस्तिकाय अथवा पत्रिकाय भेज देते है जिनमे लेख का विषय अति न्यून होता है पर तु उसमे बीच बीच मे प्राय प्रत्येक पृष्ठ पर विज्ञापन होते है तथा बाहर से मगवाई हुई सम्मतिया होती है। ऐसे महानुभावो से निवेदन है कि इस प्रकार का पुस्तिकाओ को समालोचना करन पर उस पत्र का स्तर गिरता है। इसम अच्छे पत्रो को वचना पडता है। वैदिक सिद्धान्तो और सामाजिक मन्तव्या पर जिस पुस्तक मे सामग्री होती है उनकी समालोचना करना ठीक होता है। समालोचना केवल समालोचना क नाम पर नही की जाती। आशा है समालोचनाथ पुस्ति काओ और पत्रिकाओ को भेजने वाले सज्जन इस निवेदन पर अवश्य ध्यान दगे। इसस आय बन्धुओ को अ छे पुस्तको का परिचय मिलता रहता है। समालोचनाथ दो पुस्तको का भेजना आवश्यक है।

व्यक्ति विशेष की शिकायत

ऐसी शिकायत भेजने वालो क निराधार कोई ऐसी बात नही लिखनी चाहिये जिसका प्रतिपक्ष की ओर से प्रतिवाद भेजा जाने की आशका हो। स्पष्ट निवेदन है कि ऐसी शिकायतो के प्रकाशन का उत्तरदायित्व पत्र पर नही होगा।

विज्ञापनो के लिये

कई सज्जन विज्ञापनो की दर घटाने के लिये लिखते है। आयमर्यादा मे ऐसी विज्ञापन दर निश्चित की जा चको है। विज्ञापन भेजने वालो को ऐसी सूचना कार्यालय से मगवा लेनी चाहिये। कुछ सज्जन समाचार इस ढग से बनाकर भेजते हैं कि वह सूचना विज्ञापन का भी काम दे सके और बिना विज्ञापन शुल्क दिये प्रकाशित भी हो जावे। अत ऐसी बात पर भी ध्यान रखना चाहिये।

कुछ आर्यसमाजो से

कुछ आयसमाज ऐसे भी हैं कि वे चाहते है कि उनका समाचार कई बार छपता ही रहना चाहिये और लम्बे लम्बे समाचार भेजते हैं। खेद यह है कि वे आयमर्यादा के ग्राहक बनना नही चाहते। चुनावो के समाचारो मे प्रधान मन्त्री कोषाध्यक्ष तथा पुस्तकाध्यक्ष का नाम ही भेजना चाहिये। उपप्रधान उपमन्त्री अथवा अन्तरङ्ग सदस्यो के नाम नही। इससे अनेक आयसमाजो के चुनाव दिये जा सकते है। साथ ही भाषण आदि मे व्यक्ति विशेषो के नाम का प्रचार इष्ट नही होना चाहिये। सार यह है कि समाचार सक्षिप्त होने चाहिय।

विशेष

क्योकि आर्यमर्यादा आयप्रतिनिधि सभा पजाब का मुख पत्र है अत सभा के समाचारो का प्रकाशन मुख्य स्थान रखता है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आर्य्य समाज संगठन समिति द्वारा भ्रम निवारण

●प्रो० रत्नसिंह एम. ए. मन्त्री आर्य समाज संगठन समिति

सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं:—"मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है। तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है"। महर्षि का यह लेख आर्य समाजों के वर्तमान नेताओं पर अक्षरश: घटता है। गत पांच वर्षों से इन आर्य नेताओं की पद लोलुपता, हठ व दुराग्रह के कारण आर्य समाजों में उत्पन्न पारस्परिक विवादो व वैमनस्य से आर्य जगत् में एक विचित्र स्थिति व्याप्त है। इन सभाओ के विरोधी पक्ष अपने को सत्य व दूसरे को असत्य सिद्ध करने में अहर्निश-रत हैं। आरोप प्रत्यारोप की झड़ी लगी हुई है। विवाद सिद्धान्त का नहीं है। ईश्वर निराकार है या साकार, जीवात्मा विभु है या परिच्छिन्न, मुक्ति से पुनरावृत्ति है या नहीं, श्राद्ध जीवित का होता है या मृतक का, इन बातो पर विवाद नहीं है। विवाद का विषय है केवल कुर्सी। आर्य समाज के सभी रचनात्मक कार्यों के प्रति हमारे नेता सर्वथा उदासीन हैं। श्रद्धालु आर्य जनता का दान में दिया हुआ पैसा निर्दयता के साथ सरकारी न्यायालयों मे चल रही मुकदमें बाजी मे पानी की तरह बह रहा है। सभाओं पर अपना अपना अधिकार जमाये रखने के लिए संविधान व नियम की दुहाई देने वाले ये नेता ऐसे असम्वैधानिक व अनैतिक हथकण्डे प्रयोग करते आ रहे हैं कि जिनको सुनकर सर्व साधारण आर्य जनता यह सोचने पर विवश हो रही है कि क्या सचमुच ये ही वे नेता हैं जो महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार करने की तमन्ना अपने दिलों मे सजोये रखने की दिन रात घोषणा करते रहते हैं। आर्य समाज की इस दुरवस्था से दु खी होकर आर्य नेताओं के पारस्परिक वैमनस्य को दूर कराने के कतिपय सज्जनों द्वारा कई प्रयास किए गये, जिनमे से नवीनतम प्रयास दशम आर्य महा सम्मेलन हैदराबाद में दिनाक ८-११-६८ को सर्व सम्मति से आर्य जगत् के सर्व मान्य सन्यासी पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज को समाजों के पारस्परिक विवाद निपटाने का अधिकार दिया जाना था।

आर्य महा सम्मेलन में स्वीकृत तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली की अन्तरंग सभा दि० २३-२-६९ द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव निम्न प्रकार है:—"यह दशम आर्य-महा सम्मेलन (हैदराबाद) प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं मे उत्पन्न विवाद तथा न्यायालयो मे चल रहे मुकदमो के लिए चिन्ता प्रगट करते हुए उनके निपटारे के लिए अभियोगो से सम्बद्ध व्यक्तियों को सानुरोध आदेश देता है कि वे राजकीय न्यायालयो से अविलम्ब मुकदमे वापिस लेवें साथ ही यह सम्मेलन सर्व सम्मति से निश्चय करता है कि परम पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी को पूर्णत: सर्वाधिकार देता है कि वे उपर्युक्त सभी विवादों का निपटारा शीघ्र करा दें"।

आर्य महासम्मेलन मे सर्व सम्मति से स्वीकृत उक्त प्रस्ताव के आधार पर पूज्य महात्मा जी ने पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के दोनों पक्षों के पारस्परिक विवादों को निपटाने का प्रयत्न किया किन्तु खेद है कि वे अपने कार्य मे सफल न हो सके। महात्मा जी ने अपने वक्तव्य दिनाक २८-२-६९ में इस असफलता को इन शब्दों में स्वीकार किया है—"पिछले लगभग छ: महीनों से मैं और मेरे साथी इस प्रयत्न में लगे रहे कि किसी प्रकार दोनो पक्ष सगठित होकर सभा का कार्य चलायें परन्तु ऐसा न हो सका। यद्यपि महात्मा जी ने यह अनुभव किया कि दोनों पक्षों में से एक पक्ष श्री वीरेन्द्र पक्ष जान-बूझ कर उनसे असहयोग कर रहा है। जिसके कारण सफलता प्राप्त नहीं हो रही, तथापि साधु सन्तों की पद्धति का अनुसरण करते हुए महात्माई ढंग से उन्होंने असफलता का समस्त दायित्व इन शब्दों मे अपने ऊपर ले लिया—"मैं जो कुछ कर सकता था झगड़े निपटाने के लिए किया। परन्तु मेरा तप अभी अधूरा प्रतीत होता है इसी लिए असफलता का मुंह देखना पड़ा।"

पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के जिस पक्ष ने पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी के साथ असहयोग किया, उस पक्ष को पुरानी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियो का पूर्ण सहयोग व समर्थन मिलता रहा है। यही कारण है कि महात्मा जी के व्यवहार तथा असफलता का सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री रामगोपाल जी शालवाले ने सर्वथा विरोधी मूल्यांकन किया है। उनके शब्दों में "महात्मा आनन्द स्वामी जी ने एक पक्ष [अर्थात् प्रो० रामसिंह पक्ष] का पूरी तरह साथ देकर जलती आग बुझाने के स्थान पर तेल ही छिड़का है।······महात्मा जी स्वयं ही यह अनुभव करेंगे कि चन्द व्यक्तियो के बहकाने में आकर उन्होंने जो पग उठाया है उनसे आर्य समाज को कितनी महती क्षति हुई है।·········हम आज आर्य समाज को विनाश करने वाले व्यक्तियों पर महात्मा जी का वरद हस्त देखकर आश्चर्य चकित हैं। पूज्यपाद स्वामी जी के सम्बन्ध में की गई उपर्युक्त आलोचना को पढ़कर श्रद्धालु आर्य समाजी का बुद्धि व्यापार कुछ देर के लिए शिथिल हो जाता है। जिस आनन्द स्वामी के प्रवचनो व पुस्तको तथा लेखोने लाखों व्यक्तियों के हृदय में आस्तिकता उत्पन्न कर उन्हें आर्य समाज मे दीक्षित किया है, जिनकी कथाएं सुनने के लिए जनता का अपार समुद्र उमड पडता है, जिस स्वामी ने अपने जीवन काल में आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के माध्यम से लाखों अकाल पीड़ितों को मृत्यु के मुंह से निकाला जिसने हजारों हिन्दुओं को विधर्मी होने से बचाया, जिसने अनेक वर्ष सच्चे योगियों के चरणों में बैठकर योग विद्या प्राप्त की और अन्त में जिसने अपना हरा भरा परिवार तथा लाखों की सम्पत्ति को त्याग कर देश-विदेश में दयानन्द के मिशन की अलख जगाई, जिस महात्मा के दर्शन मात्र से सच्चे आस्तिक शान्ति प्राप्त करते हैं, क्या सचमुच वही आनन्द स्वामी सरस्वती अब इतना पतित हो जाये कि वह अपना विवेक खोकर दूसरे लोगों के बहकाने में आने लगे और तुल जाये वह अपने प्यारे दयानन्द के आर्य समाज का विनाश करने पर? अपने आर्य सन्यासियों की इस प्रकार की आलोचना को देखकर सीधा सच्चा साधारण आर्य समाजी निराश व हताश होकर अपने घर बैठ जाता है और यही सोचने पर बाध्य हो जाता है कि आनन्द स्वामीजी की तरह शायद दयानन्द के तप में भी कुछ कमी थी जिसके कारण उसके द्वारा लगाया हुआ पौधा [आर्य समाज] अपने जीवन के १०० वर्ष भी पूरे न कर पाया और मुरझाने लगा जब कि महात्मा बुद्ध, महात्मा ईसा के वृक्ष दो सहस्र वर्ष से फल फूल रहे हैं।

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज तो अपनी असफलता की घोषणा कर आर्य नेताओ के आचरण से अति क्षुब्ध व दुःखी होकर अपने पूर्व निश्चित प्रोगाम के अनुसार इग्लैण्ड और अमेरिका में वैदिक धर्म का प्रचार करने चले गये। उनके यहीं भारत मे रहते हुए ही ३१ मई को आर्य जगत् के लिए एक अत्यन्त लज्जाजनक घटना घटी। वह थी दो सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओ का बनना। दोनो सार्वदेशिक सभाएं अपने निर्वाचन की वैधानिकता का डंका पीट रही हैं। आर्य जगत् के नाम दोनों के कार्यालयों से परस्पर विरोधी विज्ञप्तियां प्रसारित हो रही हैं। आर्य जनता किंकर्तव्य विमूढ हो रही है। वह सोच रही है कि कौन सी सार्वदेशिक सभा का आदेश माना जावे। कितने ही आर्य समाज तो इन विज्ञप्तियों को अपने साप्ताहिक सत्सगो में सुनाते भी नही और उन्हे रद्दी की टोकरी में फेंक देते हैं। यह है हमारी वर्तमान शोचनीय स्थिति!

आर्यसमाज संगठन समिति का उदय

आर्यसमाज की इस दयनीय अवस्था को देखकर आर्यसमाज के कुछ नवयुवको ने निर्णय लिया कि अब हम आर्यसमाज का मज़ाक उड़ता देख नहीं सकते। यदि आर्य-समाज की यह स्थिति रहे तो "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का नारा हमारे लिए सबसे बड़ा पाखण्ड है। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् को सार्थक करने व वर्तमान पाखण्ड का विनाश करने के लिए तथा आर्यसमाजों के दलगत विवादो का निपटारा करा विनाशोन्मुख आर्यसमाज की रक्षा करने के लिए आर्य जगत् के गौरव परम तपस्वी, वीतराग पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता मे कतिपय आर्य युवक संगठनों ने १० जून ६९ की बैठक में निम्न निर्णय लिया।

यह सम्मेलन सार्वदेशिक एवं प्रान्तीय स्तर पर हो रहे विघटनात्मक नेतृत्व को आर्यसमाज के पवित्र सगठन एवं आर्यों के लिए अत्यन्त दुःखद तथा लज्जाजनक समझता है। इस संदर्भ में नैतिक मूल्यों को भुला कर सार्वजनिक प्रचार और परस्पर विवादास्पद झगड़ों को लेकर राजकीय न्यायालयों में जाना संगठन की दृष्टि से अत्यन्त घातक, अशोभनीय एवं अवांछनीय है। सार्वदेशिक सभा के वर्तमान निर्वाचन से दो सार्वदेशिक सभाओं के बन जाने से आर्य जगत् के उच्चतम नेतृत्व के पतन की भी आशंका दिखाई देने लगी है जो इस सम्मेलन की दृष्टि में अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। इन परिस्थितियों में युवकों की यह गोष्ठी आर्य जगत् की प्रतिक्रियात्मक भावनाओं का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करने के उपरान्त सर्वसम्मति से इन सभी विवादों को समाप्त कराने और शान्तिमय वातावरण निर्माण कराने की दृष्टि से महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज को सर्वाधिकारी घोषित करता है जो अधिक से अधिक ११ व्यक्तियों की परामर्शदातृ सर्वोच्च समिति बनाकर आर्यजगत् पर आये हुए अप्रत्याशित संकट को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त कराने का प्रयत्न करें। यह सम्मेलन स्वामी जी तथा इस सर्वोच्च समिति को पूर्ण विश्वास दिलाता है कि उसके आदेश एवं निर्देश पर सारे भारत की आर्य युवा शक्ति तथा भद्र आर्यजन हर प्रकार का बलिदान करने के लिये उद्यत रहेंगे।

स्वामी जी ने उसी समय ११ सदस्यों की समिति गठन की घोषणा कर दी। कुछ सदस्यों को स्वामी जी ने बाद में अपने अधिकार से मनोनीत किया है। इस समिति में ७ प्रोफेसर १ प्रिंसिपल, २ पत्रकार व कई सुयोग्य वक्ता व समाज सेवी हैं। प्रिंसिपल भगवान दास इस समिति के गौरव हैं। गत हिन्दी रक्षा आन्दोलन के संचालन में आपका बहुत बड़ा योग रहा। आपकी सौजन्यता, शालीनता, मधुरता, गम्भीरता व साधुता सर्व विदित है। इस समिति में एक जिन्दा शहीद भी हैं। वे हैं श्री प्रो० राजेन्द्र जी जिज्ञासु। हिन्दी रक्षा आन्दोलन में आपको कैरों सरकार के द्वारा असह्य कष्ट झेलने पड़े। आपके हाथों की हथेलियों पर कुर्सी रखकर उस पर घण्टों तक पुलिस वाले बैठे रहे। डिब्बे में पाखाना भरकर आपके गले में लटकाया गया परन्तु यह वीर सेनानी अपने मार्ग से विचलित न हुआ। श्री ब्रह्मचारी इन्द्रदेव जी मेधार्थी ने अपना समस्त जीवन आर्यसमाज के लिए अर्पित किया हुआ है। आप एक गम्भीर व सुलझे हुए विचारक हैं। प्रो० श्यामराव जी एम. ए. एक विवाद-ग्रस्त व्यक्तित्व हैं। कई नेताओं के विचारानुसार आप एक कम्युनिस्ट हैं और आर्य-

(शेष पृष्ठ ९ पर)

गतांक का शेष

याज्ञिक आचार संहिता—(६)

यज्ञ के वस्त्र

श्री पं० वीरसेन वेदश्रमी वेदसदन, महारानी पथ इन्दौर—२

रेशमी वस्त्रों की यज्ञ के लिये उपयोगिता

सूती वस्त्र भी अग्नि को ग्रहण करने वाले हैं। यज्ञ करते समय यदि किसी भी असावधानता से वस्त्र में अग्नि लग जावे तो वह ईंधन के रूप में प्रज्वलित होने लगता है। इससे भी यज्ञ कार्य में हानि होती है। शुद्ध रेशमी वस्त्र तथा ऊनी वस्त्रों को अग्नि लगने का भय नहीं रहता है। यदि कोई पतंगा आदि ऐसे वस्त्रों पर पड़ जावे तो वह उतने ही स्थान को जला सकेगा परन्तु स्वयं वह वस्त्र अग्निमय होकर शेष वस्त्र को नहीं जला सकता है। अतः यज्ञ के लिये रेशमी वस्त्रों का जो विधान प्राचीन ऋषि-मुनियों ने लिखा है और जिसको महर्षि ने भी प्रमाण रूप में उपस्थित किया है वह अवश्य मान्य करना चाहिये और इसमें किसी प्रकार का बहाना नहीं ढूंढना चाहिये। नकली रेशम का भी व्यवहार यज्ञ में नहीं करना चाहिये। उपासना के सम्बन्ध में रेशम के वस्त्र की उपयोगिता और भी है जिसका अभी यहां उल्लेख नहीं कर रहे हैं।

किन वस्त्रों को धारण करें

यज्ञ के जो अधोवस्त्र और उपवस्त्र कहे हैं उनको कैसे धारण करें— यह भी प्रश्न उपस्थित होता है। सबसे प्रथम यही सोचना चाहिये कि अधोवस्त्र किसे कहते हैं? कोई कह सकते हैं जो कमर के नीचे पहना जाय। चाहे वह नेकर, पाजामा, पतलून, तहमद लुंगी आदि कुछ भी हो, वे सब अधोवस्त्र ही हैं। परन्तु महर्षि स्वामी दयानन्द जी अधोवस्त्र का अर्थ संस्कारविधि के समावर्त्तन प्रकरण में "अधोवस्त्र अर्थात् धोती वा पीताम्बर धारण"—यह कहते हैं। पीताम्बर नाम से यज्ञादि कार्य के लिये एक विशेष प्रकार की रेशमी रंगीन व सफेद धोतियां आती हैं। उससे ही तात्पर्य यहां है। अर्थात् यज्ञादि कार्य के लिये विशेष बनी हुई धोतियाँ जिन्हें पीताम्बरी कहते हैं, वह होनी चाहिये अथवा उसके अभाव में सूती धोती हों। इन्हीं की अधोवस्त्र संज्ञा है। इन्हें ही धारण करके यज्ञ करना चाहिये।

उपवस्त्र से तात्पर्य ऊपर धारण करने वाले वस्त्र से है। सम्भव है कि ऊपर धारण करने वाले वस्त्र से कोई कमीज, कोट, बुशशर्ट आदि ग्रहण कर लें परन्तु महर्षि स्वामी दयानन्द जी संस्कार विधि में जातकर्म संस्कार में "उपवस्त्र ओढ़ के"—इन शब्दों का प्रयोग करते हैं, जिससे स्पष्ट है कि उपवस्त्र ओढ़ा जाता है। ओढ़ा जाने वाला उपवस्त्र चादर, शाल, दुशाला आदि होते हैं और वे इतने छोटे भी नहीं होते हैं कि वे केवल गले में लटका लिये जावें जो तौलिया या अंगोछे के तुल्य लम्बे हों।

एक ही वस्त्र पहन कर कर्म न करें

दो वस्त्रों का विधान बताता है कि नीचे का वस्त्र ऊपर न ओढ़ा जावे। ओढ़ने का वस्त्र पृथक् ही रहेगा। अतः एक वस्त्र को पहन एवं उसी को ओढ़कर भी यज्ञ न करे। इसीलिये गोभिलाचार्य ने लिखा—

"नान्तरीयकस्यैकदेशस्य कल्पयित्वोत्तरीयताम्"

अर्थात् एक ही वस्त्र को पहनकर उसी के एक अंश को ओढ़कर भी क्रिया न करें। इसी को निम्न श्लोक में भी कहा है।

होमदेवार्चनाद्यासु क्रियासु पठने तथा
नैकवस्त्रः प्रवर्त्तेत द्विजो नाचमने जपे ॥

यज्ञ होमादि देवार्चन क्रियाओं में अध्ययनादि कार्य में, जप एवं आचमनादि कार्यों को एक वस्त्र को ही पहनकर या उसी को ऊपर भी धारण करके नहीं करना चाहिये। अतः दो वस्त्र यज्ञों में होने ही चाहियें।

धोती को कैसे धारण करें

अधोवस्त्र अर्थात् पीताम्बरी या धोती को कैसा पहना जावे? क्या तहमत या लुंगी बांध ले जैसा कि संन्यासी पहनते हैं अथवा मुसलमान नमाज के समय पहनते हैं? या एक लांग की धोती पहने या दो लांग की बांधे? इस सब के समाधान के लिये शास्त्रकारों ने यह व्यवस्था रखी है।

वस्त्रमूलं समुद्धृत्य पृष्ठवंशे षडंगुलम्।
दशायां त्र्यंगुलं त्यक्त्वा नाभिमात्रे विनिर्दिशेत्।
दशाहीनं न कर्त्तव्यं परिवर्त्तनं कारयेत् ॥

अर्थात् धोती का एक सिरा पीछे कमर में छः अंगुल खोसे और सामने का दूसरा सिरा तीन अंगुल नाभी में इस प्रकार सामने लगावे कि आगे पीछे के दोनों सिरे जो वस्त्र की लम्बाई की समाप्ति के सूचक हैं वे दीखे नहीं। दोनों सिरों को सीकर के सिराहीन भी न करे, न लपेटें ही।

सिले वस्त्र आसुरी सभ्यता के जनक हैं

कटा, फटा, असम्पूर्ण, खंडित एवं सिलावस्त्र असुरविद्ध है। वस्त्रों को काट कर ही नाना प्रकार के फैशन, राग-रंग की वृद्धि से आसुर भाव एवं आसुरी सभ्यता की वृद्धि होती है जिनसे राजसिक एवं तामसिक भावनाओं का उदय तथा सात्विक भावनाओं का लोप होता है। यही राग-जन्य प्रवृत्तियां शारीरिक एवं मानसिक रोगों की जनक हैं और जन समाज को भी दूषित एवं प्रभावित करती हैं। यज्ञ में ये भाव त्याज्य ही हैं।

यज्ञ में अतिश्रेष्ठ वस्त्र धारण करें

वस्त्रों के बारे में महर्षि दयानन्द जी ने पूर्वाचार्यों का प्रमाण देकर रेशमी वस्त्रों का यज्ञ में विधान प्रदर्शित किया है। महर्षि ने यजुर्वेद भाष्य में अ०१६ के ८६ वें मन्त्र में भी "रेशमी व ऊनी वस्त्र शाल आदि का विधान किया है। उत्तम से उत्तम वस्त्रों में रेशमी और शालों की गणना होती है। अतः यज्ञ में इन्हीं का उपयोग करना चाहिये। ईश्वरस्तुति-प्रार्थनोपासना के मन्त्रों के भाष्य में महर्षि स्वामी दयानन्द जी संस्कार विधि में लिखते हैं—"परमात्मा की उपासना अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके भक्ति विशेष करे" —"परब्रह्म की प्राप्ति के लिये सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करे"—इन वाक्यों में भी उपासना के लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री और सब सामर्थ्य का उल्लेख प्रकट करता है कि यज्ञ में हमें सभी वस्त्र, पात्र, सामग्री आदि उत्तमोत्तम ही ग्रहण करनी चाहिये—सामान्य नहीं—अथवा अपनी सामर्थ्य से हीन कोटि के भी नहीं रखने चाहिये।

संस्कार विधि में विविध संस्कारों के अवसर पर भी जो वस्त्र धारण करने का लिखा है उनसे भी अतिश्रेष्ठ, उत्तम वस्त्र ही यज्ञ में धारण करना चाहिये यह ज्ञात होता है। जैसा कि—

(१) "शुद्धवस्त्र"—	(नामकरण, वेदारंभ एवं विवाह संस्कार में)
(२) "उत्तमवस्त्र"—	(चूडा कर्म एव उपनयन संस्कार में
(३) अतिश्रेष्ठ वस्त्र धारण—	(समावर्तन संस्कार में)
(४) "सुन्दर वस्त्र"—	(निष्क्रमण संस्कार में)

त्याज्य वस्त्र

यज्ञों में कैसे वस्त्र नहीं होने चाहियें इस बारे में यद्यपि ऊपर के विवेचन से बहुत कुछ प्रकट हो जाता है तथापि इस विषय में और भी कुछ ज्ञातव्य विशेष है ही। निम्न प्रकार के वस्त्र धर्मकार्यों में वर्जित हैं।

कटिवस्त्रं धृतं तु यद्वस्त्रं पुरीषो येन वा कृतः।
मूत्रमैथुनकृद्वस्त्रं धर्मकार्ये विवर्जयेत् ॥

अर्थात् जिस वस्त्र को एक बार अधोवस्त्र रूप में धारण किया हो उसको धोकर ही पुनः पहनना चाहिये। जिस वस्त्र को पहन कर मलमूत्र का विसर्जन किया हो उस वस्त्र को भी नहीं धारण करना चाहिये—धोने के बाद ही प्रयोग में लिया जा सकता है। इसी प्रकार जिस वस्त्र को धारण करके मैथुन कर्म किया हो उसका भी धर्मकार्य में उपयोग नहीं लेना चाहिये।

आज सार्वजनिक यज्ञों में उपवस्त्र के रूप में गले में एक पीली सी चिन्दी स्कार्फ, पट्टी या टाईसदृश वस्त्र खण्ड यज्ञ के अवसर पर आहुति-दाताओं के गले में डाल देते हैं और फिर उसी को उतारकर दूसरे के गले में भी डाल देते है, पुनः उनसे भी उतार कर औरों को क्रमशः पहना देते हैं। यह प्रथा ठीक नहीं है। क्या इसी प्रकार यज्ञोपवीत भी एक का दूसरे को पहनाया जा सकता है? शास्त्रकारों ने तो—"वस्त्रमन्यधृतं चैव सदैव परिवर्जयेत्"—अर्थात् दूसरे का धारण किया हुआ वस्त्र यज्ञ में कभी भी धारण नहीं करे—यह आदेश दिया है। अतः यह प्रथा

शेष पृ० ७ पर

गतांक का शेष

हमारे कुछ सिरफिरे "लीडर"

(श्री ब्रह्मदत्त जी भारती, दिल्ली)

जब प्लैनिंग-कमीशन की नींव रखी गई तो किसी विदेशी एजेण्ट ने भारतीय दिमाक में यह डाल दिया कि विदेशी उद्योग को यहां पत्ती दी जानी चाहिये, इससे भारतीय उद्योग का विकास होगा। इसी को चर्चा होने लगी और यही तूती बोलने लगी। इसकी रट लगाने वाले एक रात में ही लीडर और प्लैनर बन गये और नौबत यहां तक पहुँची कि विदेशी उद्योग को ५१ प्रतिशत पत्ती देने की बात चलाई जाने लगी। ऐसा प्रतीत होने लगा कि भारतीय प्लैनरस् की सूझ-बूझ को दीमक चाट गई हो। उनको यह भी दिखाई देना बन्द हो गया कि जो ५१ प्रतिशत हिस्सेदार होगा वह मालिक समान ही हुआ। बच्चा भी यह बात समझ सकता है परन्तु लीडर तो फिर लीडर ही ठहरा। उसे समझ से क्या वास्ता? अब एक और दूसरा दौर चला है। किसी ने अमरीका में यह कह दिया कि भारत कब तक दूसरों पर निर्भर रहेगा, उसे अपने पांओं पर खड़ा होना चाहिये। लीडरों को नई खुराक मिली और उन्होंने भी यह रट लगा कर जनता का दिल मोहने की कोशिश प्रारम्भ कर दी। लीडर-लीडर जो ठहरा, लीड करना उनका व्यवसाय है और अपना कारोबार चलाने का कुछ न कुछ नया ढंग लीडर कहीं न कहीं से ढूंढ ही निकालता है। यही उसकी सफलता की कुंजी है।

अंग्रेज जाति और ईसायत चैन से बैठने वाली नहीं। वह भी इसी ताक में लगी है कि किस प्रकार हिन्दु और हिन्दुस्तान को नष्ट किया जा सके। एक अंग्रेज विशेषज्ञ ने एक बार कहा कि यदि इसी प्रकार इंगलैण्ड के लोग परिवार-नियोजन करते रहेंगे तो वह दिन दूर नहीं कि जब अंग्रेज जाति इस संसार से समाप्त हो जायेगी। इस विशेषज्ञ की इस खोज में अंग्रेज जाति को हिन्दुओं को नष्ट करने का एक और नया नुस्खा मिल गया। उसने यह प्रचार शुरू कर दिया कि हिन्दुस्तान के सब दुखों और कष्टों की जड़ इसकी बढ़ती हुई आबादी है। यदि भारत को प्रगति करनी है तो अपनी आबादी को जल्द से जल्द कम करना होगा। भारत के मस्तिष्कहीन लीडरों का पथ-प्रदर्शन हुआ। अंधे को अंधेरे में बहुत दूर की सूझी। वह सोचने लगे कि वह तो अभी तक बड़ी भूल में ही पड़े थे। सब प्रगति की कुंजी तो यही है जो हमारे हितैषी अपनी जेब में छिपाये हुए थे। इन्होंने भी परिवार-नियोजन का राग अलापना शुरू कर दिया। भारतीय प्लैनरस् सब काम छोड़ इसी में जुट गये। जो इंगलैण्ड के लिए विष था उसे अमृत समझ यह भारतीय जनता को निःशुल्क खिलाने पर कटिबद्ध हो उठे। ईसाई पत्रों में परिवार-नियोजन की प्रशंसा में लिखे लम्बे-लम्बे लेखों ने सोने पर सुहागे का काम किया। जैसे-जैसे विदेशी बीन तीव्रता से बजने लगा हमारे लीडर नाचने ही तो लगे। इन दो आंखों वाले अंधों को यह दिखाई न दिया कि जिस परिवार नियोजन की बात ईसाई पत्र और पत्रकार इतना बढ़ा-चढ़ाकर रहे हैं उसी परिवार-नियोजन के विरुद्ध ईसाई गिरजाघरों में दिन-रात सर्मन (लेक्चर) दिये जा रहे हैं। हिन्दुस्तान सकट में है, खाद्य समस्या जटिल होती जा रही है। हिन्दुओं को अपने परिवार छोटे कर लेने चाहियें। क्या संकट और खाद्य समस्या का फिकर हिन्दु को ही खा जाने वाला है? क्या दूसरों का यह देश नहीं है? क्या परिवारों को छोटा करना उनका भी कर्त्तव्य नहीं है? शायद नहीं है, ऐसा ही कुछ देखने में आ रहा है। केवल यही बात है, ऐसा भी नहीं है। इस परिवार-नियोजन के पीछे एक बहुत बड़ा और भयंकर ईसाई राजनीतिक षड्यन्त्र काम कर रहा है जिसका एक मात्र ध्येय है चुने हुए इलाकों में हिन्दुओं को बहुसंख्यक जाति से अल्पसंख्यक जाति में बदल कर राजनीतिक कठिनाईयां पैदा करना। कनाडा में बिल्कुल यही हुआ ही चाहता है। वहां जो फ्रैंच कैनेडियन कभी अल्पसंख्यक थे वे आज दूसरे लोगों में परिवार-नियोजन के कारण बहुसंख्यक बनने ही वाले हैं। यह फ्रैंच कैनेडियन रोमन कैथोलिक ईसाई हैं जो परिवार-नियोजन को अधर्म मानते हैं। यही रोमन कैथोलिक ईसाई इस देश में भी सरकार की परिवार-नियोजन की योजनाओं को अस्वीकार करते हैं क्योंकि अपनी संख्या बढ़ाना ही इनका इस देश में भी लक्ष्य है।

इस परिवार-नियोजन के कई पहलू हैं। ईसाई क्षेत्रों से ही यह बात भी चलाई गई है कि भारत में स्त्री डाक्टर (लेडी डा०) काफी संख्या में पर्याप्त नहीं और इस कारण सरकार की यह अमूल्य योजना शायद सफल न हो सके। यह सत्यतः एक चतुर सुझाव सरकार को दिया गया है ताकि वह और स्त्री डा० के लिये इधर-उधर अपनी आंख घुमाये। अब बहुत शीघ्र ही एक और सुझाव मित्र देशों से आने ही वाला है कि यदि भारत सरकार चाहे तो यह ईसाई मित्र देश कई हजार स्त्री डाक्टरों की सेवाएँ भारत सरकार को इस पुण्य कार्य के लिए ऋण दे सकते हैं। एक पन्थ दो काज यानि एक पत्थर से दो प्रहार। इस पर्दे की ओट से कई हजार ईसाई (पादरी) स्त्री डा० भारत के कोने-कोने में फैल जायेंगे। जहां से वे सरकारी संरक्षण में ईसायत फैलने का काम हिन्दुओं की जनसंख्या कम करने का महत्त्वपूर्ण राजनीतिक कार्य और घुसपैठ का काम एक ही साथ करने में समथ हो जायेंगे। यह सब क्या है? हमारे लीडरों की दूरदर्शिता का नीलाम और इस नीलाम में सफल खरीदार होगी अंग्रेज जाति और उसकी सहकारी ईसाइयत।

अभी तो आरम्भ ही हुआ है, आगे-आगे देखिये क्या कुछ होता है और क्या-क्या नये रंग खिलते हैं। ईसाइयत की प्रेरणा पर और इसकी सहायता से जो परिवार-नियोजन की विशाल योजना इस देश में खड़ी की जाने वाली है उसके अन्तर्गत इस पर उन इलाकों में विशेष जोर दिया जाने वाला है जहां अपनी मत-संख्या बढ़ाना ईसायत का पहिला लक्ष्य है। यह सब कुछ सिर-फिरों की सी बात दिखाई भले ही दे परन्तु यह सब है शत-प्रतिशत सत्य। हिन्दु जाति ने सदा यही कह कर और सोचकर धोखा खाया और अपने आप को धोखा दिया है, कि "नहीं कहीं ऐसा भी हो सकता है?" जिसे वह एक स्वप्न समझे बैठी है, उसी स्वप्न को साकार बनाने के लिये समस्त ईसाई जगत् तन-मन-धन को बाजी लगाये हुए हैं। अपने कथन की पुष्टि में हम यहां केवल एक उदाहरण देकर ही संतोष करेंगे। दिल्ली से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी स्टेट्समेन दैनिक पत्र ने १७ दिसम्बर १९६५ को पृष्ठ ११ पर यह समाचार छापा था।

इसी समाचार में यह भी बताया गया था कि पूर्वोत्तरी आसाम के चाय के क्षेत्रों में काम करने वाली स्त्रियों में यह प्रचार खूब जोर से किया जा रहा है और इस कार्य में भारत-सरकार का स्वास्थ्य विभाग दिल खोल कर सहायता दे रहा है। क्या कुछ संदेह शेष रह जाता है कि इस कार्य के फलस्वरूप पूर्वोत्तरी सीमा पर हिन्दुओं को ईसाई बनाने के साथ-साथ उन की जन-संख्या कम करने के प्रयत्न जारी हैं। इसके फलस्वरूप इनकी जन-संख्या घट कर अल्प संख्या में परिवर्तित हो जाने वाली है और ईसाइयों की संख्या वैसे ही बढ़ती रहेगी। हमारे लीडरों की आंखें उस समय ही खुलेंगी जब उनको जनता के सामने एक बार फिर वोट लेने के लिये भिखारी बन कर अपनी झोली फैलानी पड़ेगी। फिर क्या होगा? यह विवेकहीन लीडर जिनकी समझ का दीवाला निकल गया मालूम पड़ता है फिर ईसाई गिर्जाघरों की दहलिजों की राख चाटने पर और पादरियों से चनाव संधियां करने पर विवश हो जायेंगे अन्यथा उनकी कुर्सी उनके नीचे से खिसकती मालूम देगी।

इस समय यह लीडर भले ही कुछ क्यों न कहें परन्तु यदि उन्होंने समय रहते अपनी आंखें न खोलीं तो निस्सदेह यही होने वाला है। आश्चर्य तो इस बात पर है कि हमारे इन सरकंडे के लीडरों को यह क्यों नहीं खटकता कि केरल में भी तो चाय, रबड़ और काफी के खेत हैं, वहां भी तो आबादी घनी और निर्धन है, फिर वहां क्यों परिवार-नियोजन का यह पुण्य-कार्य, जिसे आसाम में ईसाइयत का सहयोग और आशीर्वाद प्राप्त है, जोर से नहीं चलाया जाता? वहां तो उल्टा यह कहा जाता और गिर्जाघरों में यह लेक्चर दिये जाते हैं कि ऐसा परिवार-नियोजन उनके धर्म के विरुद्ध है। जिनकी स्मरण-शक्ति अभी ठीक है उन्हें याद होगा कि जब पोप पाल ३८ वीं अन्तर्राष्ट्रिय यूकीरस्टिक कांग्रेस में सम्मिलित होने के लिये दिसम्बर १९६४ में बम्बई आये थे ता उन्होंने एक कैथोलिक को केवल इसलिए पदक दिया था कि वह पूरे १२ बच्चों का बाप था। क्या इसे ही नहीं कहते कि "हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और?"

शेष पृ० ७ पर

पृ० ५ का शेष

समाप्त करनी चाहिये तथा यज्ञ के लिये उपवस्त्र जो कि पूर्ण चादर या शाल के तुल्य हो उसे हो धारण करना चाहिये। वह नवीन वस्त्र हो या अपने ही उपयोग मे पूर्व लिया हुआ हो।

वस्त्रों के रंग का शरीर पर प्रभाव

रंगों का प्रभाव अपने शरीर पर होता है। अतः यज्ञ में जिन वस्त्रों को धारण किया जाता है उनका भी हमारे शरीर पर प्रभाव पड़ता है। यज्ञ में ध्यान, शान्ति, सब के कल्याण आदि की कामना, सात्विक भावों का उदय इत्यादि की प्रधानता प्रायः रहती है और दैनिक यज्ञादिकर्मों में भी एक हो प्रकार की भावना रहती है अतः दैनिक सन्ध्योपासन यज्ञादि अनुष्ठान जपादि में इन्हीं भावनानुकूल वस्त्रों को धारण करना चाहिये। इन पूर्वोक्त भावना के अनुकूल श्वेतवर्ण के वस्त्र हैं जो शुद्धता, शान्ति, सात्विकता, ध्यान एवं सर्व मांगल्य की भावना के उद्बोधक हैं। वर्णों से अपने अन्दर भी वर्ण की उत्पत्ति होती है। पीत रंग और केसरिया रंग भी उपयोगी हैं। उनसे सत्व एवं रज मिश्रित प्रभाव उत्पन्न होता है। परन्तु जिनसे रज तम मिश्रित या केवल तमोभाव उत्पन्न होते हैं ऐसे रग के वस्त्रों को पहनकर उपासना करना निषिद्ध है। जैसा कि कहा है:—

न रक्तं मलिनं चैव न नीलं च प्रशस्यते ।

अर्थात् लाल, नोला और मैला वस्त्र या मैलखोर वस्त्र यज्ञ में निषिद्ध माने जाते हैं। ऐसे वस्त्रों को पहनकर शुभ दैनिक धर्म कार्य करने से मन-पर प्रभाव अनुकूल नहीं पड़ता है और मलिन, तामसिक भावों का उदय होता है अतः साधना विफल होती है जैसा कि कहा है:—

नीली रक्तेन वस्त्रेण यत्कर्म कुरुते द्विजः ।
स्नानं दानं जपं होमं तत्सर्वं विफलं भवेत् ।।

(प्राणतोषिणी)

अर्थात नीला या लाल वस्त्र पहन कर जो कर्म स्नान, दान, जप होम आदि का द्विज करते है वह सब निष्फल हो जाता है। चूंकी संन्यासी होमादि सब को त्याग देता है अतः वह रक्त वर्ण के ही एक भेद विशेष काषाय वर्ण के वस्त्रों को धारण कर इन कर्मों के प्रति अपनी अकर्त्तव्यता को विज्ञापित करता है जिससे यज्ञादि कर्मों के प्रति उसकी असमर्थता एवं निष्फलता का ज्ञान अन्यों को भो होता रहे और वे उसे यज्ञादि कर्म कराने में लिप्त न कर सकें। परन्तु काम्य कर्मों में कामनानुकूल दैनिक काय में निषिद्ध वर्ण के वस्त्रों का भी उपयोग करना होता है। अतः जहां ऊपर लाल वस्त्र का सात्विकता शान्ति आदि की दृष्टि से निषेध प्रदर्शित किया था वहां अब राजसिक एवं तामसिक भावना के काम्य कर्मों में उसकी उपयोगिता "वश्ये रक्तं"—के द्वारा प्रकट की गई है।

वेद में वर्ण विज्ञान

रंगीन परिधान का शरीर की प्रकृति पर प्रभाव पड़ता है, इसका संकेत यजुर्वेद के अध्याय २४ में विशद रूप से वर्णित है। वहां भिन्न-भिन्न प्रकार के रंगों के पशुपक्षियों के रंगों के कारण ही उनमें भिन्न तत्त्वों एवं गुणों की प्रधानता का प्रतिपादन किया गया है। जिससे ज्ञात है कि उनमें तत्तत् तत्वों की एवं गुणों की प्रधानता उनके विशिष्ट वर्णों के ही कारण है। यथा—यजु. अ. २४ म. १ में

(१) कृष्णग्रीव आग्नेयः =कालीग्रीवावाले पशु अग्नि तत्त्व प्रधान हैं।
(२) सौमापौष्णः =श्यामोनाभ्याम् कालो नाभिवालो से सोम और पूषा तत्त्व प्रधान है।
(३) सौर्ययामौ श्वेतश्च=कृष्णश्च पार्श्वयोः श्वेत और काली पसलियों सदृश धारीवालों मे सूर्य और यम तत्त्व प्रधान है।
(४) वायव्यः श्वेतः =श्वेत रंग के वायु तत्त्व प्रधान पशु है।

मन्त्र २ में:—

(५) रोहितो धूम्ररोहितः कर्कन्धु=रोहितस्ते सौम्याः लाल या कपिल वर्ण वाले पशु सोम-शक्ति से सम्पन्न हैं।
(६) बभ्रुररुणबभ्रुः शुक बभ्रुस्तेः =वारुणाः भूरे या लाल मिश्रित भूरे हरितवर्ण के साथ भूरे वर्णवाले वरुण तत्त्व प्रधान हैं।

मन्त्र १६ में:—

(७) श्वेताः सौर्याः=श्वेत सूर्य तत्त्व वाले हैं।

अर्थात् विविध वर्णों के परिधानों का अपने शरीर, प्रकृति, मन, बुद्धि, विविध प्रकार की भावना एवं प्रवृत्तियों पर प्रभाव पडता है। जब वर्ण विशेष का प्रभाव पड़ता है तो उस वर्ण के विपरीत या प्रतिकूल प्रभाव की उत्पत्ति का अभाव या शमन भी होता है, यह भी परिणामतः ज्ञात हो जाता है। जिस प्रकार रे बाह्य वर्ण के आवरण का प्रभाव अपने मन पर पड़ता है, ठीक उसी प्रकार हमारी आन्तरिक अग्नि, तेज एवं मन की वृत्तियां जब हमारे वर्णात्मक परिधान से विश्व के मानसिक क्षेत्र में प्रवेश करती हैं तो उनका भी प्रभाव बाह्य जगत् या अन्य व्यक्तियों पर पडता है। वर्ण (रंग) का सम्बन्ध रूप से है। रूप का सम्बन्ध अग्नि से है। इस प्रकार वर्ण के रूप के माध्यम से एक अग्नि का दूसरी अग्नि में वण-रंजन रूप से प्रभाव होता है। वर्ण-शब्द में भी वर्ण-रंग है। उसको अपने में से प्रसारित करने के लिये विशेष रूप से रंजित करने के लिये शरीर पर विशिष्ट वर्ण के वस्त्र धारण किये जाते हैं उनका भी प्रभाव उन पर होता है। अतः यज्ञ में वस्त्रों के वर्ण का भी अपना पृथक् महत्त्व है।

पृ० ६ का शेष

यह सब हमारे देश में क्यों होता है और होता रहता है, यह प्रश्न अनिवार्य उठता है? लीजिये हम इसका उत्तर भी दिए देते हैं। इस देश में कितने ही ऐसे व्यक्ति हैं जो अपने आप को किसो न किसो प्रकार का लीडर मानते और समझते हैं। उनके पोछे तालियां बजाने वाले भी उन्हें इस पचास करोड़ की आबादो वाले देश में मिल ही जाते हैं। कुछ लीडर ऐसे भी हैं जो तालियां बजाने वालों को योजनाबद्ध दाम देकर मजदूरों की तरह दैनिक वेतन पर अपने साथ रखते हैं। ऐसे लीडरों को पैसा भी कहीं न कहीं से आ ही जाता है क्योंकि कुछ विदेशी देशों को भी ऐसे भारतीय लोडरों की जरूरत बराबर बनी रहती है जिनके मुंह से वे वह सब कहलाना चाहते रहते हैं जिससे भारत और भारतीयों में मानसिक विभाजन बढ़ता हो रहे। यह कहना ही सत्य नही कि हमारे सब लीडर हो ऐसे हैं। परन्तु यह तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि बहुधा इन में ऐसे लीडर हैं जो अपने मस्तिष्क से कुछ सोच ही नहीं सकते। वे तोते की तरह उसी एक बात की रट लगाते हैं जो उनके दिमाग में बार-बार चालाकी से प्रविष्ट करवा दी जाती है। फिर वे इसी को उनकी खोज बता कर जनता को प्रभावित करने का प्रयत्न करने लगते हैं। वे इस देश में तो जनता के लीडर और अगुआ होने का स्वांग रचते-फिरते हैं परन्तु स्वयं भेड़-बकरी की तरह विदेशी विशेषज्ञों के पीछे-पीछे दुम सिकोड़े इसी लिए घूमते रहते हैं कि कब कोई उनको कुछ मानसिक विचारों की नई घास डाले कि वह अपनी मानसिक भूख मिटा सकें। क्या अद्भुत हैं हमारे लीडर और क्या निराला है उनका ढंग जनता को लोड करने का? वह अंधे पथ-प्रदर्शक की भान्ति जिसे रास्ता दिखाने का दावा करते हैं अपने साथ-साथ उन्हे भी सर्वनाश के गढ़े को ओर ले जाते हैं।

वह भी कोई देश कहाता !!

(श्री सूय कुमार पाण्डेय, ५३ छोटा चान्दगंज, लखनऊ)

जहाँ पाप-विस्तार हो रहा, पशुओं का संहार हो रहा।
जहाँ वेद की ज्योति नही है, कुविचारों से व्याप्त मही है।।
जहाँ नीति मय काम नहीं है, और सत्य का नाम नही है।
जहाँ उपजते नित कायर हैं, तथा नही मुनि या ऋषिवर हैं।।
जहां न्याय से स्नेह नही है. सुख वर्षी सुख-मेंह नहीं है।
जहाँ अधम शासन करते हैं, सबका दूषित मन करते हैं।।
जहाँ द्वेष है व्याप्त जनों में, क्रोध आदि हैं भरे मनों में।
जहाँ विवेकी लोग नही हैं, कोई कही रोग नही हैं।।
जहाँ जनों में वैर-भाव है, कुटिल-क्रूर सबका स्वभाव है।
जहाँ कलह है और भ्रांति है, नहीं शक्ति है नहो शान्ति है।।
जहाँ नहीं दानी उदार हैं, और न कर्त्तव्याधिकार हैं।
जहां न जन को ज्ञान प्राप्त है, क्लेश आदि सर्वत्र व्याप्त है।।
जहाँ सभी मिथ्या के वश में, कपट छिपा सबकी नस,नसमें।
जहाँ न जन प्रसन्न होते हैं, सदा दुखित हो-हो रोते हैं।।
जहाँ नहीं उपकारी जन हैं, तथा नहीं-जन मन पावन हैं।
जहाँ न उत्तम गुण रह पाता, वह भी कोई देश कहाता।।

सिनेमा-कुसंस्कार

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियाण, W/Z, 79, राजा पार्क, शकूरबस्ती, दिल्ली-३४)

जिस समस्या की ओर मैं पाठकवृन्द का ध्यान दिलाना चाहता हूँ वह यह है कि क्या धार्मिक स्थानों का अस्तित्व इस सिनेमा की कुप्रथा के प्रचार-प्रसार के लिये ही बनाये रखा जा रहा है। ऐसी बात नही कि मन्दिर ही इस विनाशकारी कार्य में सहयोग दे रहे हों अपितु जहाँ कहीं भी विभिन्न धर्मावलम्बियो द्वारा सार्वजनिक रूप से कोई उत्सव या पर्व मनाया जाता है वहाँ सिनेमा के कुप्रभाव से ग्रसित भाइयों के दर्शन हो जाते हैं। गान-विद्या से हमें घृणा नही परन्तु गाने ऐसे होने चाहिएं जो हमें सन्मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित करें। ऐन्द्रियिक तत्त्वों को उभाड़ने तथा उद्दाम वासना को प्रदीप्त करने वाले फूहड़ गानो को प्रोत्साहन देना मानवीय दृष्टि से सर्वथा अनुचित है। निःसन्देह इन गानों का श्रवण कर मानस में कुछ ऐसा परिवर्तन आता है कि जिस श्रद्धा और उत्साह से हम मन्दिरों आदि की ओर अभिमुख होते हैं वह श्रद्धा क्षीण हो जाती है, उत्साह ठंडा पड़ जाता है।

धार्मिक संस्थाओं द्वारा पर्व-उत्सवों के मनाने में क्या प्रयोजन है, उस का लक्ष्य क्या है, इस पर पुनर्विचार होना चाहिये। क्या हमारे धर्म अथवा पर्व-उत्सवों में इतनी पवित्रता एवं शक्ति नहीं रही कि जो हमें अपने मन्दिरों में या मंचों के सामने भीड़ एकत्र करने के लिये नग्नता के प्रसारक कामोत्तेजक गानों का आश्रय लेना पड़ता है।

सिनेमा को अधिकांश भाई मनोरञ्जन व तरोताजगी का अनुपम साधन मानते हैं। किन्तु बात इससे आगे बढ़ गई है। मनोरञ्जन का प्रभाव अस्थायी होता है, कुछ क्षण उपरान्त वह विस्मृत हो जाता है। जिस क्रिया का प्रभाव स्थायी और जीवन धारा को बदलने वाला हो उस क्रिया को मनोरञ्जन के अन्तर्गत न लाकर सस्कार रूप मे माना जाना चाहिये। संस्कारों से ही सस्कृति का उद्भव और विकास होता है। सिनेमा ने मानव जीवन को गहरे तक प्रभावित किया है, सो उसे मनोरञ्जन या तरोताजगी का साधन न मान कर एक ऐसी कुसंस्कृति का सर्जनकर्ता मानना चाहिये जो हमें निश्चय ही विनाश की ओर ले जा रही है। हमारे रहन-सहन, खान-पान पहनावे, वार्त्तालाप करने के ढंग, एक दूसरे से व्यवहार करने तथा धन कमाने के साधनों आदि मे जो परिवर्तन विकार आ गये हैं वे सिनेमा की प्रवृत्ति के प्रभाव का स्पष्ट परिणाम हैं।

मैं यह समझने में नितान्त असफल रहा हूँ कि अपार धनराशि को धर्म-कर्म, शील-संकोच अथवा लज्जा-मर्यादा का नष्ट करने वाली फिल्मों के निर्माण में व्यय करना, वह भी केवल मनोरञ्जन के नाम पर, कहाँ की बुद्धिमत्ता है? मैं यह भी जानने को उत्सुक हूँ कि जो फिल्में हमे जेब काटने, चोरी करने, डाका डालने की नवीन कलायें सिखाती हैं—बदमाशी, गुंडागर्दी और उपद्रव मचाने के नये ढग सिखाती हैं—मांस-मदिरा तथा धूम्रपान के प्रति शौक जागृत करती हैं—निर्लज्जता, निकृष्टता एवं व्यभिचार भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देती हैं तथा यथेच्छाचार को बढ़ावा देकर सभी पारिवारिक, सामाजिक तथा धार्मिक मर्यादाओं का मूलोच्छेद करती हैं, उन फिल्मो के प्रदर्शन की अनुमति, इस आध्यात्मिक देश भारत में, मनोरञ्जन का साधन मानकर क्योंकर दी जाती है?

मनोरञ्जन व स्वाभाविकता के नाम पर खोसला-आयोग ने भारतीय फिल्मो पर लगे चुम्बन और आलिंगन प्रतिबन्ध को विशेष परिस्थितियों में हटाने की जो सिफारिश की है, उससे तो यह और अधिक स्पष्ट हो जाता है कि सिनेमा का लक्ष्य मनोरञ्जन न रहकर कुछ और ही है। खोसला आयोग की सिफारशों पर टिप्पणी करते हुये दैनिक हिन्दुस्तान के सम्पादकीय में उचित ही कहा गया है कि—

"यदि इस समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया जाता है तो रजत पट पर अनैतिकता के लिये द्वार खुल जायेगा। यों भी सिनेमा समाज में गन्दी प्रवृत्तियाँ पैदा करने और युवकों के चारित्रिक पतन का बहुत बड़ा कारण है। अगर यह नई प्रवृत्ति उसमें प्रविष्ट हो गई तो 'नीम चढ़े करेले' वाली उक्ति चरितार्थ हो जायेगी। खोसला समिति ने यद्यपि चुम्बन और नग्नता की अनुमति वहीं देने की बात कही है जहां वह कहानी के चित्रण के लिये तर्क संगत और आवश्यक हो। परन्तु इन शर्तों और सीमाओं का निर्धारण कौन करेगा और क्या कथानक को ही इस ढंग से ढाल कर कुरुचिपूर्ण नहीं बनाया जायेगा कि उसके लिए ये दोनों तत्त्व अनिवार्य दिखाये जा सकें? इसलिए यह अनिवार्य है कि प्रारम्भ में ही कामुकता भड़काने वाले इन दोषों के रजत पट पर सामाजिक रूप से प्रदशन की अनुमति न दी जाये, ताकि हमारे सिनेमाघर पश्चिम के नाइट-क्लबें न बनने पायें।"

इसी सन्दर्भ में सार्वदेशिक आर्यवीर दल का वह वक्तव्य भी विचारणीय है जिसमें कहा गया है कि भारतीय फिल्मों में इस प्रकार की बातों का लाना पाश्चात्य विचारों की नकल है। यह भारतीयता के विरुद्ध है। हमारे समाज के अन्दर प्रेम-प्रदर्शन ? को वासनापूर्ति का साधन न मान कर इसे पवित्र आत्मिक सम्बन्धों का आधार माना गया है। यदि पाश्चात्य देशों के सामाजिक आचारों का अंधानुकरण कर नग्नता प्रदर्शन को व्यापार का माध्यम बनाया गया, तो वहाँ की सामाजिक उच्छृंखलता का दुष्परिणाम हमारे देश को भुगताना पड़ेगा।

प्रसिद्ध निर्माता—निर्देशक श्री-शान्ताराम ने खोसला आयोग पर टिप्पणी करते हुए कहा कि चुम्बन और नग्न प्रदर्शन के मैं विरुद्ध हूँ क्योंकि इस प्रकार के प्रदर्शन भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल हैं। मेरा अनुभव बतलाता है कि अच्छे कलात्मक चित्र बनाने में चुम्बन और नग्न प्रदर्शन की कतई आवश्यकता नहीं। ऐसे समय में जबकि पश्चिम के अनेक देशों में अश्लील-प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगाने की बात इस कारण चल रही हो कि वहाँ का जन-जीवन बहुत भ्रष्ट हो चुका है तथा इस नैतिक पतन का प्रमुख कारण फिल्मो के नग्न-प्रदर्शन को माना जा रहा है तो हमारे यहाँ उन्हीं कमजोरियों को क्रियान्वित करना अनावश्यक सा लगता है।"

यदि खोसला आयोग की सिफारिशों को लागू कर दिया जाता है तो क्या उस स्थिति में पाश्चात्य सभ्यता में पालित-पोषित नग्नतावादी संतोषपूवक बैठ जायेंगे। स्यात् नहीं क्योकि उनका मुख्य लक्ष्य जनता को भड़का कर उनसे पैसा ऐंठना है। पैसे का लोभ उनके मस्तिष्क पर इस प्रकार छा गया है कि उन्हें भले-बुरे की पहचान ही नहीं रही। अपने को प्रगतिशील मानने वाले ये भाई यह भूल रहे हैं कि उनका प्रत्येक कदम बाबा आदम के युग की ओर जा रहा है। इंग्लैंड के युवक फिल्मी निर्माता पीटर स्नेल का मन्तव्य जान कर तो और आश्चर्य हुआ। वे चाहते हैं कि फिल्मों में नग्नता और संभोग का प्रदर्शन किया जाना चाहिए। उनका विचार है कि सिनेमाओ को यह न बता कर कि जनता कैसी हो, यह बताना चाहिए कि वह कैसी है। स्नेलपूर्ण विश्वास से कहते हैं कि सिनेमा के प्रेम-प्रदर्शन के दृश्यों में संभोग इस लिए दिखाया जाना चाहिए क्योंकि यह प्रेम की चरम-परिणति है तथा जहाँ यह महान् भावनात्मक अनुभव है वहाँ यह आमोद भी प्रदान करेगा।"

स्नेल का स्वर पाश्चात्य सभ्यता की परिणति का साक्षात् रूप है। यदि इसे पूर्व अर्थात् अध्यात्मवादी भारत के मुँह से सुनना चाहें तो यही सुनाई पड़ेगा कि स्नेल का स्वर सम्पूर्ण मानव जाति पर अभिशाप स्वरूप है। प्रेम शाश्वत सत्य है जो वासना प्रेम न होकर संयम एवं सात्विकता का प्रेरणा-स्रोत है। डा० राधाकृष्ण ने एक स्थान पर प्रेम के विषय में बहुत ही सुन्दर लिखा है जिस पर पूर्व तथा पश्चिम के नग्नतावादियों को विचार करना चाहिए। डा० साहब लिखते हैं—

"जब काम की स्वाभाविक मूल प्रवृत्ति मस्तिष्क और हृदय द्वारा, बुद्धि और कल्पना द्वारा नियंत्रित रहती है, तब प्रेम होता है"...प्रेम न तो कोई रहस्यपूर्ण उपासना है और न पशु-तुल्य उपभोग—यह उच्चतम भावों की प्रेरणा के आधीन एक मानव-प्राणी का दूसरे मानव-प्राणी के प्रति आकर्षण है—प्रेम केवल ज्वाला का ज्वाला से मिलन नहीं आत्मा को आत्मा की पुकार है"...प्रेम एक न बुझने वाली ज्वाला है, जिसे हम अपने जीवन के अन्त तक बनाए रह सकते हैं। इस प्रकार के प्रेम का निम्न, पाशविक, स्वार्थपूर्ण, उग्र या तुच्छ मानवीय लालसाओं या भंगुर ऊपरी तथा थकाने वाली भावनाओं से कोई मेल नहीं है।.......प्रेम पवित्रतम सम्बन्ध है, जो हमें आन्तरिक दृष्टि से पूर्ण और सन्तुष्ट बनाता है।"

आगे चल कर डा० साहब लिखते हैं— (क्रमशः)

(पृष्ठ ४ का शेष)

समाज में विघटन उत्पन्न करना ही आपका लक्ष्य है। हमारे सामाजिक जीवन मे इतना पतन आ चुका है कि किसी व्यक्ति से तनिक भी मतभेद होते ही हम उसे बदनाम करना शुरू कर देते हैं। न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्षं न त सदा निन्दति नात्र चित्रम् ॥ पिछले दो मास से मुझे श्री श्यामराव जी को बहुत निकट से देखने का अवसर मिला है। मैं तो यही कह सकता हूँ कि व्यक्ति उनके जितना जितना निकट आता है उनके प्रति उतनी-उतनी श्रद्धा बढ़ती जाती है। श्री श्यामराव जी कई वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में कामर्स के प्रोफेसर रह चुके हैं। वहा आर्यसमाज के सम्पर्क मे आये और आर्यसमाज व इसके सिद्धान्तों के प्रति ऐसा आकर्षण हुआ कि अपनी सर्विस छोड़कर सर्वात्मना आर्यसमाज की सेवा मे जुट गये। आजन्म अविवाहित रहने का सकल्प लेकर अपने परिवार से भी सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। इन महानुभावो के अतिरिक्त आर्यसमाज सगठन समिति के अन्य सदस्य इस प्रकार हैं—सर्व श्री प्रो० रामप्रकाश जी, प्रो० वेदीराम जी वीरराम जी एम ए रामनाथ सहगल पूर्व मन्त्री केन्द्रीय आर्य सभा दिल्ली, बाल दिवाकर हस ईश्वरी प्रसाद 'प्रेम' सूर प्रकाश बन्धु, कृष्णदत्त दीक्षित, धर्मपाल जी आर्य दिल्ली, त्रिलोक चन्द्र आर्य तथा हरिश्चन्द्र जी बतरा भिवानी।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि आर्यसमाज सगठन समिति का एकमात्र उद्देश्य आर्य सभाओ के पारस्परिक विवाद समाप्त कराकर आर्यसमाज को शक्तिशाली बनाना है। आर्य सभाओ पर अधिकार करना हमें अभीष्ट नही है। व्यर्थ में ही कुछ व्यक्ति आर्यसमाज सगठन समिति से चिन्तित हो रहे हैं। सभाओ के अपने अपने विधान हैं। उन्ही के अनुसार निर्वाचित होकर अधिकारी बनते हैं और बनेंगे, यह सभी को मालूम है।

संगठन समिति की प्रगति

३० जून १९६९ को आर्यसमाज सगठन समिति का गठन हुआ। १ जुलाई १९६९ से २ अगस्त तक पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज और समिति के सदस्यो ने विवादग्रस्त चारो पक्षो [पुरानी सार्वदेशिक सभा जिसके मन्त्री लाला रामगोपाल जी शाल वाले हैं। नई सार्वदेशिक सभा जिसके मन्त्री श्री प० महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री हैं। तथा पुरानी आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब जिसके मन्त्री श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री हैं, व नई आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब जिसके मन्त्री श्री डा० हरिप्रकाश जी हैं] के नेताओ से मिलकर कोई सर्व सम्मत हल खोजने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु सफलता नही मिली। अत समिति के सर्वाधिकारी श्री पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज ने ३-८ ६९ को समिति की एक आवश्यक बैठक उस समय तक की गतिविधि पर विचार करने के लिए बुलाई। समस्त परिस्थिति के अवलोकन के पश्चात् सभी सदस्यो को अत्यन्त आश्चर्य, खेद एव दुःख के साथ पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी के आमरण अनशन के प्रस्ताव को बाध्य होकर स्वीकार करना पड़ा।

समिति में निम्न निर्णय हुए—

१ दोनों पक्ष ९ अगस्त १९६९ तक अपने सार्वदेशिक एव प्रान्तीय सभाओं के सभी मुकदमें वापस लें और नये मुकदमें न करें।

२ दोनों पक्ष १४ अगस्त १९६९ तक अपने झगड़ों का कोई सर्वसम्मत समाधान घोषित करें।

३ यदि वे ऐसा करने में असमर्थ रहे तो १७ अगस्त १९६९ को ३ बजे आर्यसमाज नया बांस में आर्यसमाज सगठन समिति द्वारा आयोजित एकता गोष्ठी में अपने-अपने अधिकार प्राप्त ३-३ प्रतिनिधि भेजें जो पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी की अध्यक्षता मे निर्णय लेंगे। सभी पक्षों को मान्य होगा।

किसी भी पक्ष द्वारा उपयुक्त मार्गों के न मानने अथवा अवहेलना करने की स्थिति में समिति के सर्वाधिकारी पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी २७ अगस्त १९६९ श्रावणी पर्व से आमरण अनशन कर अपने प्राणो की आहुति देंगे और यह क्रम आगे भी चलेगा।

आर्यसमाज सगठन समिति की बैठक दिनाङ्क ३ ८-६९ में किये गये निश्चय के आधार पर चारों पक्षो को पत्र द्वारा सूचना दे दी गई। पुरानी सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने १७ अगस्त १९६९ को होने वाली बैठक में अपने पांच प्रतिनिधि भेजना स्वीकार न कर अपने प्रेक्षक के रूप में कुछ सज्जन उस मीटिंग में भेजे। शेष तीनो पक्षों ने अपने-अपने प्रतिनिधि भेजे। दिनाङ्क १७ अगस्त १९६९ को मध्याह्नोत्तर ३ बजे आर्यसमाज मन्दिर नया बांस, दिल्ली में समिति के सर्वाधिकारी पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में विवादग्रस्त सभाओ के प्रतिनिधियो की एक आवश्यक बैठक अत्यन्त सद्भावना पूर्ण वातावरण में हुई। बैठक में आर्यसमाज के अनेक शुभ चिन्तक भी उपस्थित थे। बैठक में चौधरी देशराज जी, प्रो० रामसिंह जी, श्री नवनीत लाल जी एडवोकेट, लाला रामगोपाल जी शालवाले, कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, श्री सत्यदेव विद्यालंकार प० शिव कुमार शास्त्री स्वामी अखिलानन्द, महाशय वीरेन्द्र, श्री बालमुकन्द आहूजा, श्री सोमनाथ मरवाह श्री शिवचन्द्र जी, लाला चतुरसेन गुप्त, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

पूज्य स्वामी जी महाराज ने सभी उपस्थित व्यक्तियो से प्रार्थना की कि वे सभाओं के वर्तमान विवादों को हल करने के लिये अपने अपने उपयोगी सुझाव प्रस्तुत करें जिससे किसी सर्वसम्मत निर्णय पर पहुँचा जा सके। अनेक उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किये गये। श्री वीरेन्द्र जी ने कहा कि मैं अपनी (नई) आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से बिना किसी शर्त के महात्मा आनन्द भिक्षु जी को विवाद समाप्त कराने के सर्वाधिकार सौंपता हू। स्वामी जी महाराज का प्रत्येक निर्णय हमे सर्वथा मान्य होगा। प्रो० रामसिंह जी [प्रधान (पुरानी) पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा तथा (नई) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा] ने आश्वासन दिया कि वे दोनो सभाओ की अन्तरग सभा की बैठक २४ अगस्त १९६९ तक बुलाकर उसमें यह निर्णय कराने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे कि वे अपने सब विवाद पूज्य स्वामी जी को सौंप दें। लाला रामगोपाल जी शालवाले ने कहा कि (पुरानी) सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प्रतापसिंह शूरजी से पूज्य स्वामी जी अविलम्ब सम्पर्क स्थापित कर उनसे आग्रह करें कि वे भी इस सम्बन्ध मे कोई निर्णय लेकर स्वामी जी महाराज को सूचित करें।

पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी का आमरण अनशन

इस बैठक की समाप्ति के पश्चात् आर्यसमाज संगठन समिति की बैठक हुई जिसमे उपयुक्त सभा मे लिये गये निर्णयो पर सन्तोष प्रगट करते हुए निश्चय किया गया कि यदि २४ अगस्त तक चारो पक्षो के विवाद समाप्त होने की दिशा मे अनुकूल परिणाम न निकला तो असहयोग करने वाले पक्ष के विरुद्ध अपने पूर्व घोषित निर्णय के अनुसार महात्मा आनन्द भिक्षु जी २७ अगस्त १९६९ श्रावणी से अपना आमरण अनशन आरम्भ कर देंगे।

इसी बीच यह सूचना मिलने पर कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (पुरानी) की अन्तरग सभा की बैठक रविवार दिनाङ्क २४ अगस्त को दिल्ली मे हो रही है, महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज ने सभा प्रधान श्री सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास को बम्बई पते पर पत्र लिखकर उनसे दिल्ली में २४ तारीख को भेंट करने का समय मागा। उन्होने २४ अगस्त को २ बजे दयानन्द भवन नई दिल्ली में मिलने का समय दिया। स्वामी जी महाराज की प्रधान जी से बातचीत हुई। बातचीत के प्रारम्भ में सभा प्रधान जी ने बिना हस्ताक्षर किया हुआ सार्वदेशिक सभा की अन्तरग सभा द्वारा उसी दिन की बैठक मे पारित निम्न प्रस्ताव दिखाया।

हैदराबाद आर्य महासम्मेलन के निश्चयानुसार प्रान्तीय सभाओ के विवाद को निपटाने के लिए श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी ने दायित्व लिया था। खेद है कि श्री स्वामी जी ने पजाब सभा के विवादो का कोई सर्वसम्मत हल निकालने से पूर्व इस दायित्व को बीच में ही छोड दिया विवाद और उग्र रूप मे सामने आने लगे। अत यह सभा श्री आनन्द स्वामी जी द्वारा छोडे गये अधूरे कार्य को पूर्ण रूप से निर्णायक स्थिति तक पहुँचाने का दायित्व निम्नलिखित तीन सन्यासी महानुभावो को सौंपती है कि वे न्याय सभा के निर्णय तथा सार्वदेशिक सभा के नियमोपनियम के अनुसार आर्यसमाज मे चल रहे विवादो का हल निकाल कर सभा को सूचित करें जिससे उस निर्णय को वैधानिक रूप देने में सभा अपने अधिकार का प्रयोग कर सके।

१ श्री स्वामी आनन्द भिक्षु जी।
२ श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी।
३ श्री स्वामी विद्यानन्द जी विदेह।

इस प्रस्ताव को पढ़ कर पूज्य महात्मा जी ने उसी समय सभा प्रधान जी से निवेदन किया कि तीन व्यक्तियों की सूची में उनका नाम न रक्खा जाये। शेष दोनों महानुभावों को ही रहने दिया जाये और इसी प्रकार शेष पक्षो के भी दो प्रतिनिधि लेकर इन चारों की एक बैठक बुलाई जाये। वह समिति स्वय सर्वसम्मत हल खोजने का प्रयत्न करे। यदि ऐसा करने में वह असमर्थ रहे तो वे अपने से पृथक् किसी एक व्यक्ति को सर्व अधिकार सौंप दें और उसका निर्णय सर्व मान्य हो। सभा प्रधान जी ने स्वामी जी का यह सुझाव स्वीकार न किया। फलत स्वामी जी ने सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त समिति का सदस्य बनने मे अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। किन्तु दो दिन बाद सार्वदेशिक सभा की ओर से यह समाचार प्रकाशित हुआ कि प्रान्तीय सभाओ के विवाद निपटाने के लिए महात्मा आनन्द भिक्षु जी सहित तीन व्यक्तियो की समिति निर्मित की है। महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने इस समाचार का निम्न प्रतिवाद प्रकाशित किया।

आर्यसमाज विवादों के निराकरण हेतु समिति

महात्मा आनन्द भिक्षु द्वारा सदस्य होने से इन्कार

नई दिल्ली २९ अगस्त। महात्मा आनन्द भिक्षु ने एक वक्तव्य में कहा है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से समाचार पत्रो मे एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि उसने प्रान्तीय सभाओ के विवाद समाप्त कराने के लिए तीन व्यक्तियो की एक समिति नियुक्त की है। इस समिति में दो अन्य सन्यासियो के अतिरिक्त मेरा नाम भी दिया हुआ है। मैं स्पष्ट करना चाहता हूँ कि मैं ऐसी किसी समिति में नहीं हूँ और न ही किसी सार्वदेशिक सभा को मैंने इस प्रकार की कोई स्वीकृति दी है।

(शेष पृष्ठ १० पर)

(पृष्ठ ६ का शेष)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को अपनी ओर से निर्णायक नियुक्त करने का कोई अधिकार नही क्योकि वह भी स्वय एक विवादग्रस्त पक्ष है। अत जब तक सभी विवादग्रस्त पक्ष निर्णायको को स्वीकार न करें तब तक किसी समिति का कोई मूल्य नहीं।

महात्मा आनन्द भिक्षु जी का अनशन स्थगित

आर्यसमाज सगठन समिति ने १७ अगस्त को अपनी बैठक में यह निश्चय किया था कि विवादग्रस्त चारो पक्षो ने यदि २४ अगस्त तक विवाद समाप्त करने की दिशा में सन्तोषजनक प्रगति न की तो महात्मा आनन्द भिक्षु जी २७ अगस्त १९६९ श्रावणी से अपना आमरण अनशन प्रारम्भ कर देंगे। २५ अगस्त तक कोई सन्तोषजनक हल सामने न आने के कारण महात्मा जी २७ अगस्त को अनशन प्रारम्भ करने वाले थे। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि पुरानी सार्वदेशिक सभा के अलावा शेष तीनो पक्षो ने महात्मा जी को पूर्ण अधिकार के लिखित पत्र दे दिये थे। किन्तु २५ अगस्त को प्रात ४ बजे के लगभग महात्मा जी के उदर में भयकर शूल उत्पन्न हुआ। डाक्टरो के परामर्श से उन्हें दीवान नर्सिंग होम मे दाखिल करा दिया, जहाँ लगभग ८-१० दिन तक उनकी चिकित्सा होती रही। महात्मा जी की आकस्मिक अस्वस्थता के कारण २७ अगस्त को उनका अनशन आरम्भ न हो सका। सगठन समिति के अधिकारियो ने इस समय की स्थिति पर विचार करने के लिए दिल्ली तथा आस-पास के स्थानो के लगभग २५० आर्यसमाजो के प्रधान, मन्त्री तथा कार्यकर्त्ताओ की एक आवश्यक बैठक ३१ अगस्त को आर्यसमाज, मन्दिर मार्ग नई दिल्ली में मध्यान्होत्तर २ बजे बुलाई। यद्यपि महात्मा जी अस्वस्थ थे, तथापि बैठक की महत्ता को दृष्टि मे रखकर डाक्टरो से विशेष आज्ञा प्राप्त कर महात्मा जी को बैठक मे बुलाया गया। बैठक में सर्वश्री प० शिवकुमार जी शास्त्री, लाला रामगोपाल जी शालवाले, प० प्रकाशवीर जी शास्त्री प० रघुवीरसिंह जी शास्त्री, सोमनाथ जी मरवाहा, उमेशचन्द्र जी स्नातक रामनाथ जी भल्ला स्वामी अखिलानन्द जी, अमर स्वामी जी नारायण दास कपूर, नवनीत लाल एडवोकेट आदि अनेक आर्य नेताओ ने भाग लिया।

बैठक के आरम्भ में कई सज्जनो ने आर्यसमाज सगठन समिति की वैधानिकता का प्रश्न उठाया। सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी ने खडे होकर कहा कि ऐसे कार्यों मे वैधानिकता, अवैधानिकता का प्रश्न उठाना नही चाहिए। प्रत्येक आर्यसमाजी को अधिकार है कि वह आर्यसमाज की भलाई व उसके विवादो को निपटाने के लिए कार्य करे। आगे चल कर उन्होने कहा कि इस प्रकार के प्रयासों का वह स्वागत करते हैं।

सभी उपस्थित कार्यकर्त्ताओ ने आर्यसमाज मे चल रहे पारस्परिक विवादो के प्रति दु ख प्रकट करते हुए अतिशीघ्र सवसम्मत समाधान ढूँढने के लिए नेताओ से प्रार्थना की। ४ घटे के विचार विमर्श तथा सुझावो के बाद सभी नेताओ तथा कार्यकर्त्ताओ ने सब विवादो को सुलझाने के लिए महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज से सर्वाधिकारी बनने तथा अनशन का निश्चय स्थगित करने की प्रार्थना की, जिसे महात्मा जी ने स्वीकार कर लिया। महात्मा जी ने चारो पक्षो से प्रार्थना की कि वे अपनी ओर से अधिकार प्राप्त दो-दो व्यक्ति अपने पक्ष के स्पष्टीकरण के लिए १० सितम्बर तक दे दे। जिनके सहयोग से वास्तविक स्थिति को जानकर अन्तिम निर्णय लिया जा सके। सब पक्षो की ओर से महात्मा जी को सर्वाधिकारी स्वीकार करने के बाद आर्यजगत् में पुन प्रसन्नता की लहर दौड गई।

३१ अगस्त को दिल्ली तथा आस पास के सभी आर्य समाजो के गणमान्य अधिकारियो के निर्णयानुसार महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज ने चारो पक्षो को रजिस्टर्ड पत्र द्वारा प्रार्थना की कि वे अपनी अपनी सभा से अधिकार प्राप्त दो दो प्रतिनिधियो के नाम १० सितम्बर तक भेज द और उनसे प्रार्थना कर दें कि वे १४ सितम्बर को आर्यसमाज मन्दिर मार्ग में होने वाली बैठक में उपस्थित होने की कृपा करें। सार्वदेशिक सभा (पुरानी) ने न तो पत्र का उत्तर दिया और न ही अपना कोई प्रतिनिधि बैठक मे भाग लेने के लिए भेजा। शेष तीनो पक्षों ने अपने दो-दो प्रतिनिधि भेजे। नई सार्वदेशिक सभा की ओर से सभा उप-प्रधान माननीय श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री एव श्री धर्मेन्द्रसिंह जी, पुरानी पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से श्री जगन्नाथ जी एव श्री रामसिंह जी तथा नई पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से सभा मन्त्री श्री डाक्टर हरिप्रकाश जी एव सत्यदेव जी विद्यालकार उपस्थित हुए। उपस्थित प्रतिनिधियो ने बडी सद्भावना के साथ परस्पर वार्तालाप किया श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री ने मत अभिव्यक्त किया कि वर्तमान समस्त विवादो का मूल पुरानी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा है। अत जब कि उसके विवाद शान्त नही होते तब तक कोई स्थायी हल निकलने की सम्भावना नहीं है। श्री डा० हरिप्रकाश जी व श्री सत्यदेव जी ने श्री शास्त्री जी के मत से असहमति प्रकट करते हुए कहा कि हम पजाब प्रतिनिधि सभा के दोनो पक्ष अपने विवाद स्वय हल कर लें, उसके बाद सार्वदेशिक सभा का विवाद हल करना सरल हो जायेगा। श्री डाक्टर हरिप्रकाश जी ने अपनी सभा की ओर से घोषणा की कि वे अपने सब विवाद निर्णय के लिए बिना किसी शर्त के श्री आचार्य भगवानदेव जी को सौंपते है, उनका कोई भी निर्णय हो वह उन्हें मान्य होगा। पुरानी पंजाब सभा से प्रतिनिधियों ने डाक्टर साहब की इस घोषणा का स्वागत किया और उन्होंने भी सब विवाद श्री आचार्य भगवानदेव जी को सौंपना स्वीकार किया। दुर्भाग्यवश श्री आचार्य जी की अति व्यस्तता के कारण अभी तक उनसे दोनो पक्षों का मिलना सम्भव नहीं हो सका। श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री के सुझाव पर निश्चय हुआ कि पुरानी सार्वदेशिक सभा से सहयोग देने की पुन प्रार्थना की जाये।

१४ सितम्बर की बैठक में किये गये निश्चयानुसार समिति के अध्यक्ष पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने पुनः पुरानी सार्वदेशिक सभा के मन्त्री माननीय श्री लाला रामगोपाल जी शालवाले से अपनी सभा की ओर से दो प्रतिनिधि भेजकर विवाद शान्त कराने के शुभ काय मे सहयोग देने की पत्र द्वारा प्रार्थना की। किन्तु खेद है कि महात्मा जी द्वारा सहयोग की प्रार्थना सार्वदेशिक सभा द्वारा ठुकरा दी गई। सभा की ओर से सभा के उप मन्त्री श्री शिवचन्द्र जी ने जो उत्तर महात्मा जी के पास भेजा उसकी अविकल प्रति निम्न प्रकार है'—

ओ३म्

स० १८८१/६९ — सार्वदेशिक आय प्रतिनिधि सभा,
महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान,

रजि० ए० डी० — नई दिल्ली—१
दिनाङ्क २०-९-६९

आदरणीय महात्मा जी,

सादर नमस्ते,

आपका १८-९-६९ का रजिस्टर्ड पत्र मिला।

निवेदन है कि इस सभा की अन्तरग ने अपनी २४ ८-६९ की बैठक में पजाब सभा के विवादों के निपटाने के सम्बन्ध मे तीन महानुभावो की एक समिति बना दी है जिसके आप भी एक सदस्य रखे गय हैं और श्री स्वामी विद्यानन्द जी विदेह उसके सयोजक नियुक्त किये गये हैं। आपको इसकी नियमित सूचना दी जा चुकी है तथा सभा प्रधान के साथ वार्तालाप मे आपने इसके अनुसार कार्य करना स्वीकार भी किया था। आर्यसमाज के सगठन, अनुशासन एव मान-मर्यादा का आदर करते हुए आपको उद्देश्य की पूर्ति के लिए उक्त समिति को ही अपना सहयोग देकर कार्य करना चाहिये।

सभा के उक्त प्रस्ताव के होते हुए इसके प्रकाश में यह स्पष्ट है कि यह सभा किसी एक व्यक्ति को सर्वाधिकार के रूप मे अथवा किसी अन्य कथित संगठन को जिस की आर्यसमाज के सगठन मे कोई वैधानिक स्थिति नहीं है विवादों के निपटारे के लिए नियमित अधिकारी स्वीकार नहीं करती है। ऐसी अवस्था मे इस सभा द्वारा किसी भी अवैधानिक कार्य के लिए प्रतिनिधि भेजने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है।

आपके तथा आपकी अवैधानिक समिति द्वारा समस्या को हल करने के प्रयास का ढंग आर्यसमाज के महान संगठन के विधि और विधान के नितान्त विपरीत है।

श्रीयुत महात्मा आनन्द भिक्षु जी — भवदीय
आर्यसम ज मन्दिर मार्ग — शिवचन्द्र
नई दिल्ली—१ — उप मन्त्री

उक्त सार्वदेशिक सभा के दूसरे उप-मन्त्री श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी ने सार्वदेशिक साप्ताहिक दिनाङ्क २८ सितम्बर १९६९ के सम्पादकीय मे श्री शिवचन्द्र जी से दो कदम आगे बढाते हुए आर्यसमाज सगठन समिति को सहयोग देना तो दूर रहा उन्होने तो स्पष्ट घोषणा कर दी कि ये लोग आर्यसमाज के सबसे बडे शत्रु प्रमाणित हो रहे हैं और इन्हें कोई भी आर्य समाजी सहयोग न दो। लीजिए उन्ही के लिखे शब्द पढ लीजिए —"बहुत विचार करने पर भी यह निर्णय करना कठिन है कि आखिर अपने को आर्यसमाज का हितैषी कहने वाले ये व्यक्ति किस प्रेरणा से आर्य समाज के सबसे बडे शत्रु प्रमाणित हो रहे हैं।"

सार्वदेशिक सभा, आर्य समाज संगठन समिति नाम से गठित समिति के कार्यों और उनकी गतिविधियों को आर्य समाज के लिए अत्यन्त हानिकर समझती है और यह घोषणा करना अपना दायित्व समझती है कि आर्य जनता और आर्य समाज अनुशासन और सगठन की दृष्टि से इस शब्द में संगठन अर्थो में व्यवहार में विघटन करने वाली सगठन समिति के कार्यों को प्रोत्साहन न दें।"

उक्त सार्वदेशिक सभा के उक्त पत्र एव घोषणा से यह स्पष्ट है कि समाजों के पारस्परिक विवादो को प्रेम पूर्वक निपटाने के लिए वह सभा किसी भी व्यक्ति को अथवा सगठन को सहयोग देने के लिए तैय्यार नहीं है। जहाँ तक आर्य समाज सगठन समिति तथा उसके अध्यक्ष का सम्बन्ध है, उनके लिए तो इसने उक्त घोषणा कर इनकी समिति तथा उसके अध्यक्ष का सम्बन्ध है, उनके लिए तो इसने उक्त घोषणा कर इनकी मौत का वारण्ट जारी कर दिया सार्वदेशिक सभा सर्वोपरि से विवाद निपटाने का अधिकार केवल किसी वैधानिक संगठन को ही दे सकती है। सार्वदेशिक सभा तो वैधानिक सगठन है ही, इसी प्रकार आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब भी एक वैधानिक सगठन है। विवाद भी मुख्यतः दो ही पक्षों में है अर्थात्

(शेष पृष्ठ ११)

(पृष्ठ १० का शेष)

पुरानी सार्वदेशिक सभा और पुरानी पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा जैसा कि सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी शालवाले के द्वारा प्रकाशित एक पैम्फलट से प्रकट है पैम्फलेट का शीर्षक है "आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि के विवाद की वास्तविक स्थिति क्या है ?" इस पैम्फलेट के होते हुए सार्वदेशिक सभा इस तथ्य से इन्कार नहीं कर सकती कि वह स्वय भी एक विवाद ग्रस्त पक्ष है भले ही उसकी दृष्टि में अधिक दोष आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का हो। अत हम सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों से प्रार्थना करेंगे कि वे पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधियो को बुलाकर उनके साथ वार्तालाप करें और पारस्परिक विवादो को समाप्त करें। यदि सार्वदेशिक सभा ने ऐसा किया तो हमें अत्यन्त प्रसन्नता होगी और उस अवस्था मे आर्य समाज सगठन समिति का कार्य बहुत हलका हो जायगा। सार्वदेशिक सभा एक सर्वोच्च सगठन है। इसकी सर्वोच्चता का आदर करना प्रत्येक आर्य समाजी का कर्त्तव्य है। परन्तु सर्वोच्च होने के नाते इसके कर्त्तव्य भी सबसे बडे हैं सभाओं के समस्त विवादो को निपटाने की पहल इसी को करनी चाहिए। किन्तु यह कार्य अपनी ओर से तीन व्यक्तियो की समिति बनाने से न चलेगा। दूसरे पक्षो के भी व्यक्ति निमन्त्रित कीजिए, उन्हें एक स्थान पर बिठाइए और जिस जिस दिन क्षण सार्वदेशिक सभा अपने व प्रतिनिधि सभाओ के विवाद समाप्त कर सौहार्द पूर्ण वातावरण उत्पन्न करा सकेगी। उसी क्षण आर्य समाज सगठन समिति को भग कर दिया जायेगा।

अपने तीन मास के प्रयास करने के उपरान्त आर्यसमाज संगठन समिति ऐसा अनुभव करती है कि चारो पक्षों में समझौता कठिन नहीं है, क्योंकि चार पक्षो मे से पुरानी सार्वदेशिक सभा के अतिरिक्त शेष तीनों पक्षो ने अब तक विवादों को समाप्त कराने के लिए अत्यन्त उदारता का परिचय देते हुए पूर्ण सहयोग दिया है। इस प्रसग में हम नई आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के नेता श्री वीरेन्द्र जी के साहस व उदारता की प्रशसा किए बिना नहीं रह सकते। सगठन समिति के अध्यक्ष पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी को अपनी सभा की ओर से पूर्ण अधिकार व सहयोग देने की पहल उन्होंने ही की। पुरानी आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के मन्त्री श्री प० रघुवीरसिंह जी शास्त्री के भी हम आभारी हैं। उन्होने अपने पत्र दिनाक २५ अगस्त द्वारा महात्मा जी को अधिकार देते हुए उन्हें विश्वास दिलाया है कि "आर्य समाज के सभी झगडो को निपटाने में हम उन्हें पूर्ण सहयोग देंगे तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करेंगे।" अपने इस आश्वासन को उन्होंने अपने पत्र दिनांक ११ सितम्बर १९६९ द्वारा मूर्त रूप भी दिया है। वे लिखते हैं—"आर्य सभाओं के विवादों को सुलझाने के लिए आपके आदेशानुसार हम अपनी सभा की ओर से निम्न दो महानुभावों को १४-९-६९ को दो बजे आर्यसमाज अनारकली में होने वाली बैठक के लिए मनोनीत करते हैं ··· ।" हमे प्रसन्नता है कि नई सार्वदेशिक सभा भी हमें सहयोग देने मे पीछे नहीं रही। इस सभा के मन्त्री श्री प० महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री अपने पत्र दिनाक ९-९-६९ में अपने दो प्रतिनिधियो के नाम भेजते हुए महात्मा जी को लिखते हैं—"आपके सत्प्रयत्नो की सफलता के लिए प्रभु से प्रार्थना है। प्रभु आपको स्वस्थ रखें और आपके मनोरथ पूर्ण करें।"

समझ में नहीं आता कि पुरानी सार्वदेशिक सभा को सहयोग देने में क्यो सकोच व घबराहट है। हम पुन. इस सभा को विश्वास दिलाते हैं कि आर्य समाज सगठन समिति का सार्वदेशिक सभा पर कब्जा करने का इरादा बिल्कुल नही है। मालूम नही सभा अधिकारियो को यह भ्रम कैसे उत्पन्न हो गया। हम यह भी निवेदन करना चाहते हैं कि विधान व नियम साधन होते हैं, साध्य नही। बाड खेतों के लिए होती है, खेत बाड के लिए नही। यदि बाड़ खेत को खाने लगे तो ·····। वैधानिकता की रट लग रही है और विवाद बढ़ रहे हैं। स्थिति गम्भीर है। शान्ति से बैठ कर विचार करने की आवश्यकता है। ये सब सभाएं आर्य समाज की रक्षा के लिए हैं। यदि आर्यसमाज ही मर गया तो सभाएं कैसे जीवित रहेंगी।

अत सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों से पुन प्रार्थना है कि आर्य समाज की रक्षा के लिए अपने दायित्व को अनुभव करते हुए आर्य समाजो के विवाद समाप्त कराने के लिए आप आर्य समाज सगठन समिति को अपना पूर्ण सहयोग देने की कृपा कीजिए। आप से एक विनम्र प्रार्थना और है। आप स्वय भली भाति जानते हैं कि आर्य समाज में उच्चकोटि के सन्यासियो व वानप्रस्थियों का पहिले से ही अभाव है। यदि आप लोग उन्हें खरी खोटी सुनाने लगे तो भविष्य में इधर कौन आएगा ? पूज्यपाद आनन्द स्वामी जी के साथ जो व्यवहार हुआ वह तो हुआ ही, आपने तो महात्मा आनन्द भिक्षु जी को भी नहीं छोडा। आपने लिखने से पूर्व तनिक भी नहीं सोचा कि आप कर क्या रहे हैं ? सार्वदेशिक साप्ताहिक में महात्मा जी के प्रति लिखे गए शब्द ये हैं—'और यह जानते हुए भी कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी आज आर्य समाज को हानि पहुँचाने वाले तत्वों के हाथ मे खेल रहे हैं ····· । हम आपके इस लेख पर कोई टिप्पणी करना उचित नहीं समझते। दोपहर के समय आकाश में चमकते हुए सूर्य के बारे में क्या किसी को यह भी बतलाना पड़ेगा कि इस समय सूर्य प्रकाशित हो रहा है ? इसी प्रकार क्या आज हमें पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी के सम्बन्ध मे भी यह सिद्ध करना होगा कि वे आर्य समाज को हानि पहुँचाने वाले तत्वो के हाथ मे नहीं खेल रहे हैं ?

आर्य जनता से निवेदन

हमने आर्य समाज सगठन समिति द्वारा अब तक का कार्य विवरण आपके सामने प्रस्तुत कर दिया। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज तथा आर्य समाज सगठन समिति के पवित्र उद्देश्य से सहमत हैं। अत आप से प्रार्थना है कि आप पत्र द्वारा तथा परस्पर मिलकर आर्य नेताओ से प्रार्थना कीजिए कि अविलम्ब अपने विवाद समाप्त कर आर्य समाज को शक्तिशाली बनावें। हम सब मिलकर इनसे निवेदन करें कि :—

पिछली सब कटु बातें भूल जाइये। बीति ताहि बिसार दे आगे की सुध ले। और यह जानलें "जब भाई को भाई मारने लगे तो नाश होने में क्या सन्देह ? विनाश काले विपरीत बुद्धि। जब नाश होने का समय निकट आता है तब उल्टी बुद्धि होकर उल्टे काम करते हैं। कोई उसको सूधा समझावे तो उल्टा माने और उल्टा समझावें उसको सूधी मानें।" (सत्यार्थ प्रकाश समु० ११)

अजमेर में ऋषि मेला

परोपकारिणी सभा के तत्वावधान मे महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के ८६ वें निर्वाण दिवस पर इस वर्ष ऋषि मेला दिनाक १० नवम्बर से १६ नवम्बर तक ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर मे समारोह पूर्वक मनाया जावेगा। उस समय यजुर्वेद पारायण यज्ञ कवि सम्मेलन, वाद-वाद प्रतियोगिता, ईसाई निरोध सम्मेलन तथा शोभा यात्रा का कार्य क्रम रखा गया है।

—श्रीकरण शारदा मन्त्री

आर्य दिवाकर की ४० वीं जयन्ती मे महात्मा आनन्द स्वामी

सस्था आर्य दिवाकर सुरिनाम को स्थापित हुवे ता० २९ सितम्बर को ४० वर्ष हो गये। जिसकी जयन्ती समारोह शनिवार ता० २७ सितम्बर से ४ अक्टूबर तक वेद यज्ञ भजन उपदेश एव विविध विद्वानो व महानुभावो के भाषण द्वारा मनाया गया। इस अवसर में देशदेशान्तर के विद्वान् व महानुभावो को आमन्त्रित किया गया था। हमारी वर्षों की योजना थी कि किन्हो शुभावसर पर भारत के पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती को यहा बुलाया गया।

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी शुक्रवार ता० १५ अगस्त को प्रात देहली से अपनी यात्रा आरम्भ कर साम को जरमन पहुचे जहा आप ५ दिन मे ६ व्याख्यान दे ता० २० अगस्त को लण्डन के लिये रवाना हुवे। यहा भी सारा देश भ्रमण कर ७ व्याख्यान के बाद ता० ५ सितम्बर को अमेरिका पधारे। यहाँ के मशहूर शहर निउ-यार्क क्लैफलेण्ड पितसबर्ग, शिकागो आदि स्थानो मे अपना भाषण दिये। महात्मा जी को ता० २१ सितम्बर को यहा पहुचने की सूचना मिल गई थी। इस दिन महात्मा जी के स्वागत के लिये काफी जनता हवाई अड्डा (सान्द्रई) पधार ते जो पारामारिबो से ३० मोल पर है। साम को ठीक ८ बजे महात्मा जी हमारे देश भूमि को स्पर्श कर पवित्र बनायें। सज धज से महात्मा जी को हम स्वागत कर सैंकडो मोटर के साथ रवाना हुवे। यात्रा पथ पर प्रान्तिक आर्य समाज का मन्दिर जो बन कर तैयार हुआ है (और निकट भविष्य मे महात्मा द्वारा उद्घाटन होगा) यहा पर महात्मा जी का स्वागत किया गया। रात्रो मे १० बजे हम आर्य दिवाकर पहुच गये जहा महात्मा जी का स्वागत अनाथ बच्चो द्वारा हुआ। सोमवार ता० २२ सितम्बर को प्रात सुरिनाम के गवरनर से मुलाकात कराया गया और मगलवार ता० २३ सितम्बर को सोस्यल और वेलफार का मिनस्टर श्री विश्वामित्र जी से मुलाकात कराया गया इसी रात्रो मे स्वामी जी का पहला भाषण आर्य दिवाकर मन्दिर मे हुआ जहाँ हजारो लोग भाग लियें।

आर्य दिवाकर जयन्ती के बाद डढ महीने तक विविध स्थानो मे उपदेश करने के बाद २ सप्ताह के लिये त्रिनिडाड और २ सप्ताह के लिये गयाना मे स्वामी जी पधारेंगे। विशेष सूचना वेद यज्ञ के बाद लिखूंगा।

—आर० शिवरतन।

व्यवसाय पटल, गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी का निर्माण

आर्य विद्या सभा ने अपनी बैठक दि० २१-९-६९ को गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी के व्यवसाय पटल का निम्न प्रकार से निर्माण किया है—

श्री नवनीत लाल जी एडवोकेट, उप-प्रधान (चेयरमैन), श्री रामनाथ जी भल्ला, कोषाध्यक्ष व्यवस्थापक तथा आचार्य भगवान् देव जी, आचार्य प्रियव्रत जी, वेदवाचस्पति, श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री, सभा-मन्त्री, डा० अनन्तानन्द जी, श्री जगन्नाथ जी एम ए, एल. एल बी, श्री कपिलदेव जी शास्त्री, श्री तीर्थ राज जी वैद्य, मोगा, श्री देसराज जी चौधरी और कैमिस्ट गुरुकुल कांगड़ी। —रघुवीरसिंह शास्त्री सभा, मंत्री

आर्यसमाज होली मोहल्ला (करनाल)

वार्षिकोत्सव बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेदप्रचार विभाग के अधिष्ठाता प० निरञ्जन देव जी ने उपदेशकों और भजन मण्डलियों का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। प० समरसिंह जी वेदालङ्कार अध्यक्ष हरयाणा वेद प्रचार मण्डल, प० जितेन्द्र जी बी ए, के व्याख्यान और प० बलराज जी तथा प० मुन्शीराम जी और प० रामकरण जी की भजन मण्डलियाँ, प० तेजभानु और प० अमरनाथ प्रेमी के प्रभाव शाली भजन हुए। स्वामी रामेश्वरानन्द जी, प्रो० रामसिंह जी एम ए, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, और श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री सम्पादक आर्यमर्यादा के भाषण वैदिक मन्तव्यों के स्पष्टीकरण के लिये हुए। सभा को ५१५ रु० वेद प्रचारार्थ भेंट किये गये।

—भद्रसेन अग्रवाल, प्रबन्धक

आर्यसमाज नया नंगल का उत्सव

२५-२६-२७ अक्तूबर १९६९ से मनाया जायेगा। प्रात यजुर्वेद का यज्ञ हुआ करेगा। —[illegible] शर्मा

आर्यसमाज [illegible] (रेवाड़ी)

वार्षिकोत्सव बड़े समारोह से श्री बाबू [illegible]सिंह जी [illegible] की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आर्य जगत् के कई प्रसिद्ध सन्यासी, महात्मा, पण्डित और भजनोपदेशक पधारे। १६५० रु० दान प्राप्त हुआ और १००० रुपये वेद प्रचार सम्बन्ध में व्यय हुआ श्रीमती [illegible] देवी जी द्वारा अतिथिशाला को आधार शिला रखी गई।

—हीरालाल आर्य, प्रचार मंत्री।

आर्यसमाज [illegible] (रेवाड़ी)

वार्षिकोत्सव सफलता से मनाया गया। आर्यसमाज के विद्वान् सन्यासी महात्मा, उपदेशक और प्रचारक पधारे अच्छा प्रभाव हुआ।

—[illegible]

जिला आर्य महा सम्मेलन सहारनपुर

१२ १३,१४ अक्टूबर ६९ को आर्यसमाज मन्दिर लालापार में समारोह से मनाया गया। इस समय अनेक योग्य सन्यासी, वानप्रस्थी, उपदेशक और प्रचारक पधारे। —राजेन्द्र प्रसाद आर्य मंत्री

आर्यसमाज बस्ती हरफूलसिंह देहली

वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ प्रधान—श्री नानक चन्द हांडा, मन्त्री—श्री रामनाथ सहगल, कोषाध्यक्ष श्री सेठ मुरारी लाल, तथा स्त्री आर्यसमाज की प्रधान—श्रीमती सुशीला वर्मा, मन्त्री—श्रीमती जानकी देवी। —रामनाथ सहगल, मन्त्री

कानपुर के[illegible] आर्य सभा का वार्षिक अधिवेशन

निम्नलिखित अधि[illegible]री एव अन्तरग सभासद सर्व सम्मति से निर्वाचित हुए —प० [illegible] जी, मन्त्री श्री योगेन्द्र जी सरीन, कोषाध्यक्ष ला० बन्सी लाल जी [illegible] ११ अन्तरंग, सदस्य। —योगेन्द्र सरीन मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, [illegible] देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

देखो आर्यावर्त्त के राजपुरुषो की स्त्रिया धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छे प्रकार जानती थी क्योकि न जानती होती तो केकयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध मे क्योकर जा सकती ? और युद्ध कर सकती ? इस लिये ब्राह्मणी और क्षत्रिया को सब विद्या, वैश्या को व्यवहार विद्या और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या अवश्य पढनी चाहिये। जैसे पुरुषो को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढनी चाहिये वैसे स्त्रियो को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्पविद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिये।—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४५ } १० कार्तिक वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २६ अक्टूबर १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९
सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
" " विदेश में २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पसे

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन' स कीदृश इत्युपदिश्यते ॥

फिर वह कैसा है इस विषय का उपदेश अगले मन्त्र में किया है ॥

त्वन्नो अग्ने पित्रोरुपस्थ आ देवो देवेष्वनवद्य जागृविः।
तनूकृद्बोधि प्रमतिश्च कारवे त्वं कल्याण वसु विश्वमोपिषे ॥

—ऋ० १ ३१. ९ ॥

पदार्थ—त्व सर्वमगलकारक: सभाध्यक्षः (न) अस्मान् (अग्ने) विज्ञानस्वरूप (पित्रो) जनकयो (उपस्थे) उपतिष्ठन्ति यस्मिन् तस्मिन् (आ) अभितः (देव) सर्वस्य न्यायविनयस्य द्योतकः (देवेषु) विद्वत्सु अस्मदादिषु अयस्मिन्नहिंस्यगुणेषु वा (अनवद्य) न विद्यते वद्य निन्द्य कर्म यस्मिन् तत्सम्बुद्धौ (जागृवि) यो नित्य धर्म्य पुरुषार्थे जागर्ति सः (तनूकृत्) यस्तनूषु पृथिव्यादिविस्तृतेषु लोकेषु विद्या करोति स. (बोधि) बोधय (प्रमतिः) प्रकृष्टा मतिर्ज्ञान यस्य स (च) समुच्चये (कारवे) शिल्पकार्यसम्पादनाय (त्वम्) सर्वविद्यावित (कल्याण) कल्याणकारक (वसु) विद्याचक्रवर्त्यादिराज्यसाध्यधनम् (विश्वम्) सर्वम् (आ) समन्तात् (ऊपिष) वपसि ॥

अन्वय—अनवद्याग्ने सभास्वामिन् जागृविर्देवस्तनूकृत्त्व देवेषु पित्रोरुपस्थे नोस्मानोपिषे तपसि सर्वत प्रादुर्भावयसि हे कल्याण प्रमतिस्त्व कारवे मह्य विश्वमाबोधि समन्ताद्बोधय ॥

भावार्थ—पुनरित्थ जगदीश्वर प्रार्थनीयः हे भगवन् यदास्माक जन्म दद्यास्तदा तदा विद्वत्समाना सम्पर्के जन्म दद्यास्तत्रास्मान् सर्वविद्यायुक्तान् कुर्व्यतो वय सर्वाणि धनानि प्राप्य सदा सुखिनो भवेमेति ॥

भाषार्थ—हे (अनवद्य) उत्तम कर्मयुक्त सब पदार्थों के जानने वाले सभापते (जागृवि) धर्मयुक्त पुरुषार्थ मे जागने (देवः) सब प्रकाश करने (तनूकृत्) और बडे-बडे पृथिवी आदि बडे लोको मे ठहरने हारे आप (देवेषु) विद्वान् वा अग्नि आदि तेजस्वी दिव्य गुणयुक्त लोकों मे (पित्रो) माता पिता के (उपस्थे) समीपस्थ व्यवहार मे (न) हम लोगो को (ऊपिषे) वार-वार नियुक्त कीजिये (कल्याण) हे अत्यन्त सुख देने वाले राजन् (प्रमति) उत्तम ज्ञान देते हुए आप (कारवे) कारीगरी के चाहने वाले मुझ को (वसु) विद्या चक्रवर्ति राज्य आदि पदार्थों से सिद्ध होने वाले (विश्वम्) समस्त धन का (आबोधि) अच्छे प्रकार बोध कराइये ॥

भावार्थ—फिर भी ईश्वर को इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये कि हे भगवन् जब-जब आप जन्म द तब तब श्रेष्ठ विद्वानो के सम्बन्ध मे जन्म दें और वहा हम लोगो को सर्वविद्यायुक्त कीजिये जिस से हम लोग सब धनो को प्राप्त हो कर सुखी हो ॥ (ऋषि दयानन्द का भाष्य)

गुरुकुल कांगड़ी के सम्बन्ध में भ्रामक प्रचार

प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति, उपकुलपति, गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय

गुरुकुल कागडी के सम्बन्ध मे कुछ लोगो द्वारा बडा भ्रामक प्रचार किया जा रहा है और गुरुकुल के अधिकारियो के बारे मे तरह तरह की गलत बातें कह कर उन्हे बदनाम किया जारहा है। एक प्रचार यह किया जारहा है कि गुरुकुल के अधिकारी पिछले कई महीनो से कर्मचारियो को अपनी ह्ठधर्मी के कारण वेतन नही दे रहे हैं। गुरुकुल के अधिकारो किसी प्रकार की ह्ठधर्मी कर रहे हैं और जानबूझ कर कर्मचारियो को वेतन नही दे रहे हैं, यह बात विल्कुल मिथ्या है। गुरुकुल के अधिकारो कर्मचारियो को वेतन देना चाहते हैं और उनके पास वेतन देने के लिये रुपया भी है पर अधिकारियो की लाचारी यह है कि वे बैंक से रुपया नही निकलवा पा रहे। पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा मे चुनाव को लेकर दो दल बने हुए हैं। एक पक्ष पुराने चले आरहे सभा प्रधान प्रो० रामसिह जी और उनके साथियो का है और दूसरा पक्ष श्री दीवान रामसरन दास जी और उनके साथियो का है। दोनो पक्षो का यह चुनाव सम्बन्धी विवाद न्ययालय मे पहुचा हुआ है और मुकदमे चल रहे हैं। चाहिये तो यह था कि गुरुकुल कागडी को इस विवाद से और झगडे से अलग रहने दिया जाता, पर श्री दीवान रामसरन दास जी और उनके साथियो ने प्रो० रामसिह जी और उनके साथियो पर दबाव डालने और उन्हे परेशान करने के लिये गुरुकुल कागडी को भी इस विवाद मे घसीट लिया। श्री दीवान रामसरन दास जी आदि ने गुरुकुल के अधिकारियो के लिये बैंक बन्द करवा दिये और बैंको ने पजाब सभा के दोनो पक्षो के चुनाव सम्बन्धी मुकद्मो का फैसला होने तक गुरुकुल के अधिकारियो को रुपया देना बन्द कर दिया। जब एक बैंक को रुपया देने के लिये गुरुकुल के अधिकारियो ने मिल जुल कर कुछ तैयार कर लिया तो श्री दीवान रामसरन दास जी के पक्ष के लोगो ने उस बक पर भी मुकद्मा कर दिया कि बैंक गुरुकुल के अधिकारियो को रुपया देना चाहता है, उसे ऐसा करने से रोका जावे। यह समस्या है, जिसके कारण गुरुकुल के अधिकारी कर्मचारियो को वेतन नही दे पारहे। बैंक मे रुपया है, गुरुकुल के अधिकारी कर्मचारियो को वेतन भी देना चाहते हैं, पर श्री रामसरन दास जी आदि द्वारा बैंक एकाउण्टो का आपरेशन बन्द करवा दिये जाने के कारण गुरुकुल के अधिकारी वेतन नही दे पा रहे। उनकी लाचारी है, कर्मचारियो को वेतन न देनें में गुरुकुल के अधिकारियो की अनिच्छा या हठधर्मी का सवाल हो नहीं उठता। विरोधी पक्ष के लोग यदि आज बैंक खुलवा दें तो गुरुकुल के अधिकारी आज ही कर्मचारियो को उनका बचा हुआ वेतन बाटने के लिये तैयार हैं।

एक प्रचार यह भी किया जारहा है कि भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय द्वारा गुरुकुल विश्वविद्यालय के प्रोफेसरो के लिये उनके वेतन ग्रेड देने का निश्चय कर लिया जानें पर भी गुरुकुल के अधिकारी हठधमी के कारण उनक ग्रेड उ हे नही द रह हैं। यह बात भी बिल्कुल मिथ्या है। अब तक गुसुकुल मे प्राध्यापको को २५०-१५-५०० तथा विभागाध्यक्षो को ३५०-२०-८०० का ग्रेड मिलता रहा है। प्रोफेसर चाहते हैं कि प्राध्यापको को ४००-से ९५० का तथा विभागाध्यक्षो को ७००-१२०० का ग्रेड मिले।

शेष पृ० २ पर

श्री रामनाथ जी भल्ला, कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सुपुत्र प्रदीप कुमार का शुभ विवाह संस्कार सम्पन्न



श्री प्रदीप कुमार का पाणिग्रहण सस्कार कुमारी शैलबाला सुपुत्री श्री प्रेमरनाथ जी सिंगल के साथ रविवार दिनाक १२-१०-१९६९ को पूर्ण वैदिक रीति के साथ सम्पन्न हुआ। उक्त अवसर पर आर्य जगत् के प्रसिद्ध नेता, विद्वान् तथा कार्यकर्त्ता बडी सख्या मे उपस्थित थे, जिनमें ला० हसराज जी गुप्त, महापौर दिल्ली, प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान, श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री ससत्सदस्य, सभा-मन्त्री, आचार्य भगवान् देव जी, वानप्रस्थी रामपत जी, आचार्य प्रियव्रतजी प० धर्मपाल जी विद्यालकार, श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती प्रिंसिपल लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित ला० दिलीपसिंह जी मिलओनर पानीपत, लाला हसराज जी ढाडा (लुधियाना), श्री विद्याभास्कर जी (लुधियाना), श्री देवेन्द्रकुमार जी (नवाशहर), ला० देसराज जी चौधरी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त पानीपत, नवाशहर, जालधर, लुधियाना गुरुकुल कागडी रोहतक कपूरथला, भटिंडा आदि-आदि स्थानो से कई प्रतिष्ठित महानुभाव भी बडी सख्या में उपस्थित थे। श्री भल्ला जी को उस दिन सैकडो मित्रों तथा आर्य भाइयो से शुभ कामना व आशीर्वाद के तार प्राप्त हुये।

श्री भल्ला जी ने अपनी दोनों सुपुत्रियों का विवाह पहले ही कर दिया था। अपने इकलौते सुपुत्र का विवाह करने के उपरान्त अब वह पारिवारिक चिन्ता से मुक्त हो गये हैं तथा वे भारत सरकार की सेवा से भी दिसम्बर मास मे मुक्त हो जायेंगे। तब जीवन का शेष सारा समय आर्यसमाज की सेवा में ही लगाने का उनका दृढ सकल्प है। श्री प्रदीप कुमार ने २३ वर्ष की आयु में चारटेड एकाउण्टस की परीक्षा पास कर ली थी। अब वह एक बहुत बडी कम्पनी में सैक्रेट्री के रूप में १२०० रु० मासिक वेतन पर काम करते हैं। विवाह सस्कार ठीक समय पर समाप्त होने के कारण सब अतिथियों का भोजन कार्य भी रात्री ८ बजे तक सम्पूर्ण हो गया था। वधू पक्ष ने सब अतिथियों का उत्तम भोजन तथा फल आदि से सत्कार किया जिसकी सब अतिथि भूरि-भूरि प्रशसा करते गये। श्री भल्ला जी ने भिन्न-भिन्न सस्थाओ के लिएं १०१ रुपये दान की घोषणा की।

—निज सवाददाता

विशेष—आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के समस्त मण्डल की ओर से श्री भल्ला जी को बधाई तथा वरवधू को आशीर्वाद।— सभा कार्यालयाध्यक्ष

ग्राहकों तथा पाठकों की सेवा में नम्रनिवेदन

३० नवम्बर तक एक नया ग्राहक बनाकर सहयोग दीजिये

आर्यमर्यादा के ग्राहक तथा पाठक महानुभावो को सूचनार्थ निवेदन है कि ३० नवम्बर १९६९ को आपके सहयोग से आर्यमर्यादा का एक वर्ष पूरा हो रहा है। हमें प्रसन्नता है कि एक वर्ष के भीतर ही आर्यमर्यादा ने हिन्दी साप्ताहिक पत्रो में अपना विशेष स्थान बना लिया है। इसके विशेषाको की आर्य विद्वानो तथा जनता ने प्रशसा की है। वैदिक सिद्धान्तो के प्रचार एव प्रसार के लिये यह आवश्यक है कि इसकी ग्राहक सख्या में वृद्धि हो। अतः प्रत्येक ग्राहक तथा पाठक से नम्रनिवेदन है कि ३० नवम्बर तक कम से कम एक नया ग्राहक बनाकर वेद प्रचार के कार्य में सहयोग देने की कृपा करें। नये ग्राहक बनने वालो को इस वर्ष के विशेषाक मुफ्त दिये जायेंगे। वार्षिक शुल्क १०) मनीआडर द्वारा भेजने की कृपा करें।

विनीत—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक

पृ० १ का शेष

गुरुकुल के अधिकारियों ने इसके लिये पूरा प्रयत्न किया। लगभग तीन वर्ष तक सरकार से पत्रव्यवहार और बातचीत होती रही। सरकार ने हमारी माग के अनुसार ग्रेड न देकर प्राध्यापकों के लिये ३००-२५-६०० का तथा विभागाध्यक्षों के लिये ४००-४०-९५० का ग्रेड स्वीकार किया। गुरुकुल के अधिकारी यह ग्रेड देने के लिये तो तैयार हैं ही यदि सरकार पुनर्विचार करके ग्रेडों को और अधिक बढाने के लिये तैयार हो सके तो गुरुकुल के अधिकारी उसके लिये प्रयत्न करने के लिये भी तैयार हैं और इस कार्य में अपने शिक्षको का सहयोग लेने के लिये भी उद्यत हैं, पर जब तक सरकार और अधिक ऊंचे ग्रेड देना स्वीकार न कर ले तब तक गुरुकुल के अधिकारी वे ग्रेड नहीं दे सकते। क्यो कि गुरुकुल तो वे ही ग्रेड और उतना ही वेतन दे सकेगा जितना उसे सरकार से मिलेगा।

ईसी प्रकार और भी कितनी ही मिथ्या बातें गुरुकुल और उसके अधिकारियों के विरुद्ध फैलाई जा रही हैं। जनता को उनसे सावधान रहना चाहिये। विरोध के वातावरण में प्रायः मिथ्या बातें फैला दी जाया करती हैं।

यह दुख की बात है कि सारी स्थिति का स्पष्ट पता होने पर भी गुरुकुल के कर्मचारी भी क्रोध मे आकर इस प्रकार की मिथ्या बातें फैलाते हैं तथा हडताल और भूख हडताल का मार्ग अपनाते हैं। उनके हडताल और भूख हडताल करने पर भी बैंक नहीं खुल सकते जब तक वे लोग बैंक न खुलवा दें जिन्होंने बैंक बन्द करवा रखे हैं। यदि कर्मचारियों ने हडताल और भूख हडताल का मार्ग ही अपनाना है तो उन्हें उन लोगों के यहा जाकर हडताल करनी चाहिये जिन्होंने बैंक बन्द करवा रखे हैं यों हडताल आदि का रास्ता ठीक नहीं है। इसी प्रकार हडताल और भूख हडताल से ग्रेड भी नहीं बढ सकते। बैंक खुलवाना और ग्रेड बढाना गुरुकुल के अधिकारियों के वश की बात नहीं है। यह तो जिन लोगो ने बैंक बन्द करवाये हैं उनके तथा भारत सरकार के बश को बात है कर्मचारी गुरुकुल के अधिकारियो के विरुद्ध क्यो हडताल कर रहे हैं यह समझ में नहीं आता। उन्हें शान्ति पूर्वक सारी स्थिति पर विचार करना चाहिये और हडताल तथा भूख हडताल का रास्ता त्याग देना चाहिये।

"राजा भोज का संस्कृत प्रेम"

(ब्र० रामदेव आर्य, गुरुकुल आर्य नगर (हिसार)

अपने राज्य में भोज ने यह घोषणा कर दी थी कि :—

"कुम्भकारोऽपि यो विद्वान् स तिष्ठतु पुरे मम।
ब्राह्मणश्चापि यो मूर्खः स गच्छतु पुराद् बहिः ॥"

अर्थात् कुम्हार भी जो विद्वान् है वह मेरे राज्य में रहे, और ब्राह्मण भी जो मूर्ख है वह मेरे राज्य से बाहर ही जावे॥

राजा भोज के राज्य में विद्वानो और कवियों को बडे-बडे पुरस्कार दिये जाते थे कहा जाता है कि राजा भोज के समय में लकडहारों तक को कविता बनाने का चाव पैदा हो गया था।

एक बार राजा भोज घूमने के लिये जा रहे थे, तो किसी लकडहारे को इन्धन के भार से अति श्रान्त होते हुये देख कर राजा भोज ने पूछा कि :—

'भूरिभारभराक्रान्तस्तव स्कन्धो न बाधति ?"

अर्थात् बहुत भार धारण करने के कारण तेरे कधे को दुःख नहीं हो रहा है क्या ?

ब्राह्मण ने उत्तर दिया —

"न तथा बाधते राजन्! यथा बाधति बाधते।"

अर्थात् हे राजन्! वैसा दुःख नहीं हो रहा जैसे 'बाधते' के स्थान पर 'बाधति' पीडा दे रहा है। इस घटना से पता चलता है, कि राजा भोज के काल में सस्कृत का अच्छा और साधारण प्रचार था।

विज्ञापन दाताओं से निवेदन

"आर्यमर्यादा" आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का पत्र है और यह अर्धलक्ष सख्या में छपकर भारत के कोने-कोने में प्रत्येक श्रेणी तक पहुचता है। हिन्दी के साप्ताहिक पत्रों में यह सर्वप्रिय बन रहा है।

अतः विज्ञापन दाताओं से निवेदन है कि अपने व्यापार का विज्ञापन देकर व्यापार में वृद्धि कीजिये। विज्ञापन सम्बन्धी पत्रव्यवहार निम्न पते पर कीजिये। व्यवस्थापक विज्ञापन विभाग "आर्यमर्यादा"

१२ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

सम्पादकीय

दीपमाला त्योहार

वैदिक संस्कृति किसी देश, सम्प्रदाय अथवा वर्ग विशेष से हो सम्बन्ध नहीं रखती, किन्तु इस का रूप सार्वभौम है। इस के भिन्न-भिन्न प्रकार के सामाजिक चिह्न वर्तमान काल में भी विश्व की मानव जाति में न्यूनाधिक रूप में सर्वत्र मिलते हैं। मनुष्यों में श्रेष्ठकर्मा आर्य लोगो ने अपनी आर्य सभ्यता का आधार आरम्भ से ही वैदिक संस्कृति को माना था। मनुष्यों में गुणकर्म और स्वभावों में भिन्नता के अनुरूप सामाजिक कर्तव्यो के पालन करने के लिये आर्यों ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण मे अपने कर्मों का विभाजन कर लिया था। इसी पद्धति के रूप में आर्यों ने प्राकृतिक नियमों के अनुसार समाज को सुव्यवस्थित, शुद्ध, उन्नत तथा हर्षोउल्लास सहित बनाये रखने के लिये अनेक पर्वों (त्योहारो) की नीव डाली थी। यद्यपि सभी पर्व सभी लोगों से सामान्य रूप मे सम्बन्ध रखते हैं, परन्तु कार्य विभाजन के कारण इन त्योहारो मे वर्णों के अनुसार विशिष्टता देखी जाती है।

श्रावणी पर्व का विशेष सम्बन्ध ब्राह्मण वर्ण से है, क्यो कि उस मे वेद विद्या के पठन-पाठन का भाव मिलता है। इस मे ब्रह्मवर्चस् का वैशिष्ठ्य है। विजयादशमी का सम्बन्ध विशेष रूप से क्षत्रिय वर्ण के साथ है। वर्षा ऋतु बीत जाने पर गमनागमन के साधन ठीक हो जाते हैं। इसी लिये क्षात्र कार्यों के लिये इसी समय विजय यात्रा का कार्य आरम्भ किया जाता है। शस्त्रास्त्र ठीक कर लिये जाते हैं, अत विजयादशमी की विशिष्टता 'क्षात्रतेज' के साथ स्वीकार की गई है। दीपमाला त्योहार को दिवाली आदि नामों से कहा जाता है अर्थात् प्रकाश की पंक्ति का आयोजन इस समय होता है। इस पर्व का विशेष सम्बन्ध वैश्य वर्ण के साथ है। प्राचीन काल में वर्ष का प्रारम्भ कार्तिक से माना जाता था। दुकानदार लोग अपने खातों का हिसाब साफ कर नया हिसाब चलाते थे। नये उद्योग आदि कार्यों मे धन लगाते थे। श्रावणी की फसल कट कर अन्न सब के घरों मे पहुंच जाता था। आषाढ़ी की फसल की बिजाई हो जाती थी। प्रसन्नता के द्योतक प्रदीपों की पंक्तियां घर-घर मे रात्रि के अन्धकार को चीर कर प्रकाश फैलाती हैं। चारो वर्णों मे सख्या की दृष्टि से वैश्य वर्ण का बहुमत होता है। 'विश' शब्द से वैश्य शब्द बनता है और विश का अर्थ जनता भी है, इस कारण जनता मे उल्लास का द्योतक प्रकाश होता है। यही वैश्य वर्ण की विशेषता है।

आज कुरीतियां हमारे समाज मे फैल गई हैं, इन के कारण त्योहारो का वास्तविक स्वरूप हमारे सामने नही रह गया। पूज्य आर्योपदेशक सन्यासियो का कर्तव्य है कि जनता को इस का शुद्ध स्वरूप बतलावे। कोई भी अच्छा कार्य ऐसा नही है, जिस को यज्ञ के नाम से कहा जा सके। यज्ञ का सर्वसामान्य रूप हवन प्रत्येक पर्व मे किया जाना आवश्यक माना गया है। दैनिक यज्ञ तथा पंचमहायज्ञों से लेकर आर्य लोग सार्वभौम यज्ञ करते थे। इसीलिये संसार सुख का धाम बना हुआ था। हमारा यह कर्तव्य है कि हम अपने शुद्धपवित्र वेदोक्त मार्ग पर स्वय चले तथा अन्यो को चलावें।

दिवाली के समय भी पर्व पद्धति के अनुसार घर-घर मे वैयक्तिक यज्ञ किया जावे तथा सामूहिक रूप में विशेष समारोह किया जावे।

इस त्योहार में ऐतिहासिक विशेषता भी जुड़ गई है कि वैदिक धर्म के पुनरुद्धारक आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज मानव मात्र को वेद प्रतिपादित कल्याण का उपदेश देते हुए विश्व के हितार्थ अपने प्राणों की बलि चढ़ा कर अमरत्व को प्राप्त हुए थे। आर्य-जगत् का इस पर्व के साथ यह अति विशेष सम्बन्ध है। इस समय ऋषि जीवन से शिक्षा लेकर उन पर आचरण करने का व्रत सभी आर्यों को लेना चाहिये। इसी से हमारा कल्याण होगा।

अध्यात्म उपदेश के उपदेष्टा

आर्यसमाज के क्षेत्र मे जिस ऊंचे स्तर का प्रचार कार्य होना चाहिये, वैसा सम्प्रति हो नही रहा है, इस के कुछ कारण हो सकते हैं, परन्तु अध्यात्म विद्या की शिक्षा और उपदेश का प्रचार सर्वोपरि समझना चाहिये। यद्यपि कुछ सस्थान ऐसे हैं, परन्तु उन मे वैदिक सिद्धान्तो को आधार नही रखा जा रहा, अपितु सन्त परिपाटी का अनुकरण किया जाता है। इस दिशा में गिनती के दो चार हो आर्य विद्वान व्यक्तिगत कार्य कर रहे हैं। यद्यपि अन्य भी अनेक विद्वान् इस कार्य को करने मे समर्थ हैं, परन्तु उन्होंने भिन्न-भिन्न कार्यों को सम्भाल रखा है। आर्यमर्यादा के स्वाध्यायी पाठकों के सामने ऐसे पूज्य विद्वानो के लेख यदा-कदा पढने को मिलते रहते हैं, परन्तु इतने से तो अधिक कार्य नहीं हो सकता, अत कुछ श्रद्धेय अध्यात्मविद्या के उपदेशक आर्य विद्वानो से आर्यसमाजो को लाभ उठाने का यत्न करते रहना चाहिये। अपने-अपने समाजो मे इन के एक-एक मास, पन्द्रह-पन्द्रह दिन अथवा कम से कम एक-एक सप्ताह वेद और उपनिषदो पर प्रवचन तथा रामायण और महाभारत के अन्तर्गत अध्यात्म अंशो की कथा होवे। साथ ही दर्शन आदि आर्ष ग्रंथो और ऋषि दयानन्द कृत वेदभाष्य, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आर्याभिविनय और सत्यार्थप्रकाश के उपदेश शङ्का समाधान पूर्वक होते रहने चाहियें। यह प्रचार कार्य आडम्बर शून्य हो कर शान्त रूप मे श्रद्धा से किया जाना चाहिये। बाह्य अनावश्यक व्यय रोक कर पूज्य विद्वानो की सेवा और सत्कार मे अपने धन का सदुपयोग करना उत्तम है। हम आर्यसमाजो के अधिकारी महानुभावो को सुझाव देते हैं कि इस पर विचार कर। इस से वैदिक धर्म का स्थिर प्रचार होता रहेगा।

हम समय-समय पर ऐसे पूजनीय विद्वानो से निवेदन करते रहते हैं, कि अपना बहुमूल्य कुछ समय इस परिपाटी के अनुसार आर्यसमाजो को देते रहने का अनुग्रह करते रहें। सौभाग्य से दो विद्वानो ने हमे ऐसा वचन दिया है कि यदि आर्यसमाजो के अधिकारी चाहेगे, तो हम इस प्रकार से अध्यात्म विद्या का प्रचार करते रह सकते हैं। इन उच्चकोटि के उपदेष्टाओ के नाम ये हैं—

(१) श्री प० मदन मोहन जी विद्यासागर। यह गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पुराने स्नातक हैं। इन्होने स्वदेश, ब्रह्मा और पश्चिमी अफ्रीका में भी पहुंच कर उपदेश किया है। कई उत्तम ग्रंथो की रचना की है। यद्यपि यह पंजाब क निवासी हैं, परन्तु इन्होंने अपने प्रचार कार्य का केन्द्र आन्ध्र राज्य की राजधानी हैदराबाद मे रखा हुआ है—इनका पत्र व्यवहार का पता यह है—श्री प० मदन मोहन जी विद्यासागर, प्रम मन्दिर—नारायण गुडा, महर्षि दयानन्द मार्ग हैदराबाद (आन्ध्र)। इन के द्वारा लिखित किसी वेद विषय पर आर्यमर्यादा अपना विशेषाङ्क भी प्रकाशित करने का विचार रखता है।

(२) दूसरे उपदेशक महानुभाव हैं श्री प० जगत्कुमार जी शास्त्री साधु सोमतीर्थ। इन के उत्तम लेख 'ओंकार जप विधि' पर आर्यमर्यादा में महीनो से प्रेमी पाठक पढ कर लाभ उठा रहे हैं तथा अभी यह लेख प्रवाह इसी सम्बन्ध मे क्रमश आगे चलेगा। हमारा विचार है कि आर्यमर्यादा का एक विशेषांक इन के द्वारा लिखित विषयपर भी प्रकाशित किया जावे। यह विद्वान् उपदेशक भी कई बार भारत भर मे उपदेश देते आ रहे हैं। इन का पता यह है—श्री प० जगत्कुमारजी शास्त्री साधु सोमतीर्थ, ३९ ए. रामनगर नई देहली–१। यह दयानन्दोपदेशक महा विद्यालय लाहौर के पुराने स्नातको तथा पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के प्रमुख शिष्यो में से एक हैं। इन्होने भी अनेक ग्रन्थ लिखे हैं।

एक निवेदन हम आर्यसमाजो के अधिकारी महानुभावो से कर देना आवश्यक समझते हैं कि यदि ऐसे श्रद्धेय उपदेशको को निमन्त्रित किया जावे, तो उन के रहने, भोजन और आतिथ्य का पूरा ध्यान रखा जावे। आर्यघरो मे प्रीति पूर्वक भोजन कराया जावे न कि होटल पर। प्रवचन समाप्ति पर अच्छी धन राशी भेंट स्वरूप दी जावे। यदि इस प्रकार की पवित्र परिपाटी आर्यसमाजो मे चल जावेगी, तो बड़ा लाभ होगा। इस से प्रेरित होकर अन्य पूजनीय विद्वानों को भी हम आर्यसमाज के प्रचार कार्य में ला सकेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

राजनीतिक पार्टियों के सदस्य समाओ के अधिकारी न बनें।

गुरु विरजानन्द शताब्दी समारोह का निश्चय। सार्वदेशिक सभा विधान में आवश्यक संशोधन करे।

जालधर—१५-१०-६९ गुरु विरजानन्द शताब्दी समारोह का कार्यक्रम करतारपुर मे ५ अक्तूबर से १२ अक्तूबर तक हुआ। सगीत सम्मेलन, युवक सम्मेलन हिन्दी रक्षा सम्मेलन, गो रक्षा सम्मेलन तथा आर्य सम्मेलन हुये। सगीत सम्मेलन के श्री नन्दलाल वानप्रस्थी युवक सम्मेलन के प्रो० रामप्रकाश, हिन्दी रक्षा सम्मेलन के ला० रामगोपाल तथा आर्य सम्मेलन के डा० दुखनराम सभापति थे। इन सब मे से युवक सम्मेलन अधिक सफल रहा और आर्य भाइयो ने उसकी कार्यवाही मे बडी रुचि ली। उस मे प्रस्ताव द्वारा निश्चय किया गया कि राजनीतिक व्यक्ति जो ससद् अथवा विधान सभाओ के सदस्य हो उन्हे सार्वदेशिक सभा अथवा प्रान्तीय सभाओ के अधिकारी न बनाया जावे तथा इसके लिये आवश्यकतानुसार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा विधान मे सशोधन का प्रबन्ध करे। प्रो० रामप्रकाश जी ने अपने प्रभावशाली भाषण मे बताया कि राजनीतिक व्यक्ति सभाओ का अपने व्यक्तिगत हितार्थ लाभ उठाते हैं। इसीलिए वह उनके अधिकारा के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। यही कारण है कि सभाओ के झगडे समाप्त नही होते। सभाओ तथा आर्यसमाजो मे शान्ति स्थापन करने का एकमात्र यही उपाय है कि राजनीतिक व्यक्तियो को सभाओ के अधिकारी बनने से वचित किया जावे। आर्यसमाज सघटन समिति के वर्तमान कार्यक्रम का उल्लेख करते हुये उन्होने कहा कि इस समिति का निर्माण केवल सभाओ के झगडे समाप्त करने के लिए किया गया है। ज्यो ही वह समाप्त हो जावगे सघटन समिति को समाप्त कर दिया जावेगा। प्रो० श्यामराव एम ए ने श्री रामगोपाल शालवाले की सार्वदेशिक सभा द्वारा आर्यसमाज सघटन समिति तथा उसके अधिकारियो के विरुद्ध "साप्ताहिक सार्वदेशिक पत्र दिनाक २१-९-६९ तथा २२-९-६९ और विज्ञप्तियो द्वारा मिथ्या व भ्रम-मूलक प्रचार का उल्लेख करते हुये उन सब का खण्डन किया तथा बताया कि वह न तो सार्वदेशिक सभा पर अधिकार जमाना चाहते हैं तथा न आर्य जगत के नेता बनने की कामना रखते हैं। उन्होने कहा कि गौ रक्षा आन्दोलन की आड मे ससत्सदस्य बनने वाले व्यक्तियो ने गौ रक्षा का कार्य भुला दिया और अब सिवाए सभाओ मे झगडे कराकर सार्वदेशिक सभा पर अधिकार बनाये रखने के उनका अन्य कोई उद्देश्य नही। उन्होने खेद व्यक्त किया कि ला० रामगोपाल तथा उनकी सार्वदेशिक सभा महात्मा आनन्द भिक्षु जी तथा आर्यसमाज सघटन समिति के झगडे निपटाने के पवित्र कार्य मे केवल सहयोग ही नही देते अपितु उनका विरोध कर रहे हैं। प्रो० श्यामराव के भाषण की ३-४ हजार उपस्थित आर्य नर-नारियो ने बार-बार करतल ध्वनि करके बडी सराहना की। अन्त मे वह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हुआ। आर्य सम्मेलन मे बोलते हुये कहा कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा मे कोई अधिकारी भी पूरा समय देकर कार्यालय मे नही बैठता तथा न कोई उपयोगी कार्य करता है केवल बिल्डिग ही खडी है। जब तक लग्नशील सारा समय देने वाले व्यक्ति सभा के अधिकारी न होगे, आर्यसमाज की उन्नति रुकी रहेगी।

१२-१०-६९ को एक भव्य जुलूस निकला जिसमे पजाब के भिन्न-भिन्न नगरो से आये नर नारियो के अतिरिक्त दिल्ली के भी लगभग २०० आर्य भाई जो ४ लारियो द्वारा आये थे उन्होने भी भाग लिया। आर्य जनता मे बडा जोश था। प्रत्येक साधारण व्यक्ति का मत था कि आर्य-समाज यथापव जीवित है कमी है तो आर्य-नेताओ की। यदि वह पूरी हो जावे तो महर्षि दयानन्द का उद्देश्य सरलता से पूरा हो सकता है। हिन्दी रक्षा सम्मेलन मे पजाब मे हिन्दी की रक्षा तथा गौ रक्षा सम्मेलन मे गौओ की रक्षा के लिये प्रस्ताव स्वीकार हुआ। —विशेष प्रतिनिधि द्वारा

आर्यसमाज इटारसी

मे गुरु विरजानन्द दिवस बड समारोह से मनाया गया।

—चन्द्रभूषण शर्मा मत्री

भारत केशरी ने 'भारत-भीम गुर्ज' भी जीता

गाधी-शताब्दी समारोह के अवसर पर लखनऊ में अखिल भारतीय 'भारत-भीम' दगल का आयोजन किया गया था। इस दगल मे एक ओर महाराष्ट्र के उदयीमान पहलवान चबा मुतनाल मोतीबाग तालीम कोल्हापुर ने क्रमश निर्मलसिंह सदोषसिंह तथा महीन्दरसिंह को अपनी ज्ञानवान लडत के आधार पर पीछे धकेलकर निर्णायक दौर मे प्रवेश किया तो दूसरी ओर भारतीय कुश्ती के माहिर मा० चदगीराम ने क्रमश शेरसिंह, सरवणसिंह, जीतसिंह, तथा नवोदित पहलवान सुखवतसिंह को अल्प समय मे पराजित करके निर्णायक चक्कर मे प्रवेश किया। कुश्ती प्रेमी इन दो अच्छे पहलवानो को निर्णायक टक्कर देखने को स्टेडियम मे बैठ हुए थे। चबामुतनाल ने कुश्ती शुरू होते ही भारत-केशरी पर आक्रमण करने की चेष्टा की तथा चौथे मिनट मे मा०चन्दगीराम को नीचे ले लिया। मुतनाल की इस फुर्ती को देखकर दर्शक वाह-वाह कर उठे। कुछ लोगो ने सोचा कि फिल्मी-दुनिया मे चल जाने से समवत मा चदगोराम लडना भूल गये हैं परन्तु दूसरे ही क्षण मा० चदगीराम निकल कर सामने आ गए और कुश्ती खडे-खड आगे बढने लगी। सात मिनट समाप्त होते-होते मुतनाल ने मा० चदगीराम की फौलादी पकड से घबरा कर मेहरदीन के समान अखाडा छोड दिया और पराजय स्वीकार कर ली। मा० चदगीराम को विजेता घोषित करके जब भारत-भीम की उपाधि तथा 'गुर्ज' प्रदान किए तो तालियो की गडगडाहट से स्टेडियम गूंज उठा। हम आर्यमर्यादा के मच से भारत भीम' का हार्दिक अभिनदन करते हैं।

—ब्रजभूषण दुबे एम० एस० सी० कलकत्ता

शोक समाचार



गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के २२ वर्षीय ब्रह्मचारी अवनीन्द्र कुमार का स्वर्गवास २८ सितम्बर ६९ को गुरुकुल भूमि मे हो गया। स्नातक बनने में २-३ महीने की ही कमी रही थी। थोडी रुग्णता पर ही खिलती कलि मुरझाकर सूल गई। ब्रह्मचारी के पिता प० निरजनदेव जी शास्त्री ग्राम भवीसा जि० मुजफ्फर नगर के निवासी हैं, दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर के पुराने स्नातक हैं। आर्यसमाज के दृढ स्तम्भ और शिक्षक हैं। ब्रह्मचारी की माता श्रीमती लक्ष्मी देवी जी कन्या गुरुकुल हाथरस की पुरानी स्नातिका हैं। ब्रह्मचारी के देहान्त से उसके परिवार और रिश्तेदारी मे ही शोक नहीं छाया, अपितु जिला मुजफ्फर नगर तथा मेरठ के आर्य परिवारो मे वज्राघात के समान दु ख हुआ।

हम आर्यमर्यादा के द्वारा स्वर्गस्थ ब्रह्मचारी के समस्त परिवार के साथ शोक सहानुभूति प्रकट करते हैं। प० निरजनदेव जी शास्त्री वर्षों आर्यप्रतिनिधि सभा के उपदेशक रहते रहे हैं अत आर्य प्रतिनिधि सभा के समस्त उपदेशको के द्वारा भी शोक समवेदना प्रकाशित की जाती है।

मेरा उक्त आर्य परिवार के साथ १९३० से विशेष सम्बन्ध रहता आया है अत मैं वैयक्तिक रूप मे भी प० निरजनदेव जी शास्त्री के समस्त परिवार के साथ शोक सहानुभूति प्रकट करता हू। परमात्मा ब्रह्मचारी को उसके कर्मफल न्यायानुसार श्रेष्ठगति देवे और उसके परिवार-माता-पिता आदि जनो को धैर्य देवे, जिससे वे इस मर्माघात दु ख को सहन कर सकें। —शोक समवेदक जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गतांक से आगे

सिनेमा-कुसंस्कार

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान, W/Z 79 राजापार्क ठाकुर बस्ती दिल्ली—३४)

"हम किसी पुरुष या स्त्री से प्रेम नही करते, अपितु उसके अन्दर निहित व्यक्ति से प्रेम करते हैं, पद या सम्पत्ति, नौकरी या सुन्दरता, चारुता या लालित्य से प्रेम नहीं करते वरन् इनके पीछे छिपे व्यक्ति से प्रेम करते हैं।"

स्नेल ने जिस प्रेम का वर्णन अपने वक्तव्य में किया है, पूर्व में उसे वासना कहा जाता है। इसी की ओर संकेत करते हुए डा० साहब ने एक आदर्श स्थापित किया है :

"जब हम वासना की शक्ति के अधीन होते हैं तो हम अपने आप में नहीं होते। वासना मनुष्य का अपने हृदय में ही बैठा हुआ शत्रु है, जिससे उसे संघर्ष करना है। यह एक दूषित अतिरेक है प्रकृति की एक ऐसी शक्ति, जो प्रेमियों को जकड़ देती है और सामान्यतया उनका विनाश करके ही समाप्त होती है। प्रेम कोई बौरा नहीं है, यह तो अपने प्रियतम के प्रति गम्भीर आत्मसमर्पण और उसके साथ एकात्मीयकरण है। हमें परमोच्च वस्तु को तुच्छ वस्तु से समता नहीं करनी चाहिए। वासनात्मक प्रेम की उत्तेजनाओं का गम्भीर प्रेम के साथ चपला नहीं करना चाहिए।"

नारी को विषय जन्य सुख का साधन समझ कर उसकी कोमल भावनाओं से जहाँ क्रीड़ा की जाती है वहाँ मानवता सुन्दर रूप में मुखरित नहीं हो सकती। स्नेल जिस प्रेम का राग अलाप रहे हैं उस के अस्तित्व में नारी नारीत्व के सर्वोत्तम अंश को कभी भी अभिव्यक्त नहीं कर सकती। यह नारी जाति के लिए ही नहीं वरन् पुरुष-जाति के लिये भी कलंक है। पाश्चात्य कुसंस्कृति के दबे-घुटे नग्न वातावरण की दुर्गन्ध से बचने के लिए कुछ महानुभाव भारत की ओर भागे आ रहे हैं ताकि यहाँ शुद्ध वातावरण में खुल कर श्वास ले सकें। परन्तु हमारे तथाकथित सिनेमा की विकृत संस्कृति के पोषक यदि भारत में पाश्चात्य-विकारों के पौधों का रोपण कर वैसा ही विषैला वातावरण तैयार कर देंगे तो न जाने मानव-जाति कहाँ आश्रय ढूंढेगी ?

युवकों द्वारा अपने जीवन में उठाये गये कदम ही किसी देश के भविष्य की नींव के पत्थर हैं। देश का भविष्य कैसा होगा, यह समाज पर निर्भर है और नागरिक समाज के रूप में अपने को अभिव्यक्त करते हैं। आदर्श नागरिकों के पारस्परिक सहयोग से ही आदर्श समाज और आदर्श राष्ट्र की स्थापना होती है। जब तक भारत में यह मर्यादा पूर्णरूपेण सुरक्षित रही तब तक भारत को विश्व भर ने आध्यात्मिक गुरु के रूप मे सम्मान दिया। परन्तु आधुनिक भारत उस मर्यादा के भंग हो जाने से विकट परिस्थितियों में से गुजर रहा है। इसका आत्मबल क्षीण होता जा रहा है। जहाँ वासना और उच्छृंखलता के गीत गाये जाते हों वहाँ ऐसी बीभत्स और लज्जाजनक स्थिति का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। सिनेमा विकृति का हमारे युवा भाईयो पर जो दुष्प्रभाव पड़ा है, उसके परिणामस्वरूप ही उनके और सात्विकता के मध्य जो कड़ी थी वह टूट गई। यह परिवर्तन जिस तीव्र गति से हुआ उसका कारण युवकों का संस्कारहीन होना तथा उनका नवीन के प्रति उत्साह है। युवाओं की ग्रहण-शक्ति असंयमित होती है। भले-बुरे का निश्चय वह बाद में करती है लेकिन अब निर्णायक घड़ी आ पहुची है। इस सदर्भ में विचार-विमर्श को प्रोत्साहन देना सामयिक है।

उत्तरप्रदेश के तत्कालीन शिक्षा-मन्त्री श्री हरगोविन्दसिंह जी ने इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर घटित घटना का उल्लेख करते हुये जो कहा उस पर चिन्तन करना अपेक्षित है। उनके शब्द इस प्रकार है :

"इलाहाबाद स्टेशन पर एक फिल्म अभिनेत्री की जय के नारे लगा कर विद्यार्थियों ने जिस शिक्षा और नैतिक स्तर का परिचय दिया है क्या यही आजकल की शिक्षा का उद्देश्य है ? यदि हाँ, तो मैं समस्त विश्वविद्यालयों और कालिजों का सदैव के लिये बन्द किया जाना ही श्रेयस्कर समझूंगा। क्या हम 'ऐसी जय' बोलने के लिए ही उन्हें तैयार कर रहे हैं?"

वास्तव में यह स्थिति बड़ी ही दुर्भाग्यजनक है। ऐसे वातावरण में आदर्श और अनुशासन अपना महत्व खो देते हैं। खेद है कि छात्रों का आदर्श राम-कृष्ण दयानन्द-गाँधी न रह गये विद्यार्थियों का समूचा जीवन इन कलाकारों के फिल्मी जीवन के इर्द-गिर्द घूमता है। उनक मूँछों, बालों और कपड़ों का स्टाइल, चलने-फिरने, वार्तालाप तथा व्यवहार करने का ढंग, सोचने-समझने एवं निर्णय करने का प्रकार, सभी पर फिल्मी-सितारों का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अभिभावक तथा प्रबुद्ध अध्यापकगण इस असमंजस में पड़े हुये हैं कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य क्या है। जब समाज में जागृति आती है तो वह शुभ फल ही लाती है परन्तु यह जागृति कैसी आई है जो सरस्वती-मन्दिरों की भव्यता और पवित्रता को ही कलुषित किये जा रही है।

आध्यात्मिक भारत के लिये तो यह सौदा और भी मँहगा पड़ता जा रहा है कि कुछ दिशाहीन भाइयों को बहनो का समर्थन व सहयोग मिल रहा है। पतोन्मुख इस दौड़ में बहनों का भाग लेना शायद ही कभी भारत के अतीत में घटित हुआ हो। बहनों पर समाज के आदर्श को जीवित रखने का जो महान् उत्तरदायित्व है, उसके महत्व को, गुरुता को ध्यानावस्थित करके ही उन्हे कोई नया कदम उठाने का निर्णय लेना चाहिए।

'मातृदेवो भव' कह कर जिस भारत ने नारी को अपने सर-आँखों पर बिठा कर गर्व अनुभव किया था, वह गर्व नारी के तामसिक रूप धारण कर लेने से नष्ट हो रहा है। प्रगति अर्थात् आधुनिकता का अथ धर्म विमुखता लगा कर नारीत्व ने स्वय को एक अनजाने अभिशाप से ग्रसित कर लिया है। इस विघटन में सिनेमा प्रमुख योगदान दे रहा है। नारी पर ही आदर्शों को क्रिया रूप देने का गम्भीर उत्तरदायित्व आया है, क्योंकि वह जननी अर्थात् वसुन्धरा का साक्षात् रूप है। आदर्शों को केवल पुस्तक का विषय मान कर जीवनयापन करने वाली बहनों को देख कर तो यही अनुमान लगता है कि उनका मानस शायद इतना जर्जरित हो चुका है कि इस दायित्व को वहन करने से वे घबराती और संकोच करती हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास के आरम्भ में ही लिखा है कि, "सन्तानो को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों के मुख्य कर्म है……क्योंकि आभूषणो के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी है।"

ऋषिवर के उपर्युक्त कथन मे भारतीय परम्परा के महान् आदर्श, जीवन उच्च विचार की स्पष्ट झलक दृष्टिगोचर है। किसी ने सच ही कहा है कि विद्वानो का आभूषण सात्विक गुण तथा कर्म है और मूर्खों का आभूषण कृत्रिम-शृंगार सामग्री तथा दुष्कृत्य। सिनेमा से प्रभावित युवावर्ग इस परम्परा की नितान्त अवहेलना करता हुआ दिखाई पड़ता है, जिसके फलस्वरूप नित्य ही समाचार-पत्रों मे हमें ऐसे लज्जाजनक समाचार पढने को मिलते हैं जिससे मानवता शर्म खा झुक जाती है।

सिनेमा के विस्तृत प्रचार के कारण ही आदर्शों से हमारी आस्था उठ चुकी है। भोगवाद के गह्वर में हम इतने नीच तक चले गये हैं कि धर्मप्रकाश वहाँ पहुंचते-पहुंचते क्षीण हो जाता है। उत्तर वियतनाम के दिवगत राष्ट्रपति डा० हो ची मिह्न ने इस सन्दर्भ मे उचित ही कहा था कि, "विलास एव रसभोग वस्तुत फौलाद के कवच हैं जिन्हे बड़े से बड़े सिद्ध पुरुष के वचन भी भेद नही सकते।"

पाश्चात्य जगत् के वे महानुभाव जो भोगवाद का स्वाद भली-भाँति चख चुके हैं निराश व परेशान होकर अध्यात्मवाद की ओर झुक रहे हैं परन्तु आश्चर्य है कि भारत की युवा-पीढ़ी इस प्रयत्न रूढ़िवाद की ओर प्रस्थान समझती है। अर्थात् अन्धकार से प्रकाश की ओर असत्य से सत्य की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर जाना उनकी दृष्टि में गर्हित कृत्य हैं।

यूनान के महान् दार्शनिक प्लेटो का कथन है कि मनुष्य सुन्दर वस्तुओं से सुन्दर विचारों की ओर और सुन्दर विचारों से सुन्दर जीवन की ओर अग्रसर होता है और सुन्दर जीवन से सर्वनिरपेक्ष परम सौन्दर्य की ओर बढ़ता है। विचारणीय है कि हमारी फिल्में इस शर्त को कहाँ तक पूर्ण करती हैं। मनोरञ्जन के नाम पर यदि मनुष्य की कुत्सित भावनाओं को जागृत किया जा सकता है तो क्या मानवता के नाम पर मनुष्य की सात्विकवृत्ति को चेतन नही किया जा सकता ? मनोरञ्जन के नाम पर जब मनुष्य को अभिनेता-अभिनेत्री बनने के लिए उत्साहित किया जाता है तो

शेष पृ० ६ पर

अश्लील सिनेमा

(कवि कस्तूरचन्द घनसार, उपाध्यक्ष आर्य समाज चोपाड़ शहर-राजस्थान)

पावन प्यारो मर्यादा भारत को होती भङ्ग।
आर्य-नीती से बन्धे हुए हैं, आर्य्य उज्जवल देश।
पालन करे धर्म-सन्मानव, नरपति विश्व-सुरेश॥
जिसका रहा सुयश विश्वमे, संयम था जिस साथ।
विचलित कभी न होते थे वह, रीति-प्रीति-प्रिय साथ॥
आज बदलते जा रहे हैं, विशद-व्यवस्था रङ्ग।
पावन प्यारी मर्यादा-भारत को होती भङ्ग॥१॥
लज्जा हीन चारित्र सामने, चले सिनेमा आज।
मा बेटी भी देखें जाकर, तनिक न लगती लाज॥
विद्यार्थी बच्चो का जीवन, डूब रहे मझधार।
होते नही कहीं देश सुधार, बढता है व्यभिचार॥
निर्लज्ज बन भ्राता भगिनी को, ले जाते हैं सङ्ग।
पावन-प्यारी-मर्यादा-भारत को होती भङ्ग॥२॥
अश्लीलें के हावभाव मे, चढें-बढें हैं लोग।
"बोले राधे ! बोल कहते-कब होगा सँयोग॥"
प्रोत्साहन इनको फिर देवे, नेता हैं कर्णधार।
कैसे ? होगा देश सुधारा, आता परम विचार॥
स्वतन्त्रता मे दिखा रहे हैं, बरबादी के रङ्ग।
पावन-प्यारी मर्यादा भारत को होती भङ्ग॥३॥
राम पुरुषोत्तम, मर्यादा को, आर्यभूमि ये देश।
कृष्ण कलाधर नरपति नेता, ब्रह्मवेत्ता योगेश॥
महर्षि तपे दयानन्द इसमे, मर्यादा ले मान।
जिस भूमि मे दिखा रहे है ये पाश्चात्य विधान॥
नृत्य-नग्न नारियाँ करती, आँचल बिना कुढङ्ग।
पावन प्यारी मर्यादा-भारत को होती भङ्ग॥४॥
भारत के कर्णधार सुधारक, इन्द्रकुमार गुजराल।
केन्द्रीय के सूचना मन्त्री, अवश्य करे सभाल॥
सिनेमा समिति के प्रमुख, जो० डी० खोसला साहब।
गन्दे-गीत अश्लील सिनेमा, बन्द हो बिगडे भाव॥
मूल यही है सब विघ्नो का, रचे इसी से जग।
पावन-प्यारी भारत की-मर्यादा होती भङ्ग॥५॥

फिल्मी जहर

(गजल)

(श्री गिरधारी लाल आर्य, चौरी चौरा)

फिल्मवाले फिल्म में अब, चुम्बन दिखाना चाहते॥ टेक॥
भारतीय संस्कृति सभ्यता, को मिटाना चाहते॥
नग्नता अश्लीलता और गन्दे गानो से भरी।
ऐसी फिल्मो को दिखा, हमको गिराना चाहते॥
शोरबा सिगरेट और, शौको शरावे जाम से।
हालीऊड की राह पर, हमको चलाना चाहते॥
'लव इन टोकियो' स्पाई इन रोम' की भी सम्पुल देखिये।
ओल्ड वाइन इन न्यू बाटल' से, रग जमाना चाहते॥
भाव में अग्रजियत, भाषा मैं भी अंग्रेजियत।
इस तपो भूमि को, वे लन्दन बनाना चाहते॥
देख कर फिल्मो को हम, कैसे बचें अभिशाप से।
जब कि वे विषयो का प्याला, हमको पिलाना चाहते॥
देख कर इनके तमाशे, हम बन गये तमाशाई।
नये जमाने की तरक्की मे, हमको डुबाना चाहते॥
फिल्म के हीरो हिरोइन, सैर करते रूस को।
फूंक कर दौलत वतन की, 'पिकनिक' मनाना चाहते॥
सरकार और सेंसर सभी, उनके लिए कुछ भी नही।
लेकर के वे थोथी दलीलें, सबको झुकाना चाहते॥
देश के अए नौजवानो, प्यारे बच्चो ! तुम सभी।
छोड दो फिल्मो मे जाना, गर गौरव बचाना चाहते॥

पृष्ठ ५ का शेष

क्या संस्कृति के नाम पर उन्हें आदर्श व्यक्तित्व के निर्माण की प्रेरणा नहीं दी जा सकती ? मनोरंजन के नाम पर जब किसी कुरूप और समाजविरोधी तत्त्व को उभार-उभार कर चित्रित किया जाता है तो क्या सभ्यता के नाम पर आदर्श सामाजिक मानदण्डों को स्थापित नही किया जा सकता ?

आवश्यकता इस बात की है कि हमारी फिल्मों में यथार्थ के साथ-साथ आदर्श का भी उच्च प्रतिनिधित्व हो, संयम पर वासना हावी न होने पावें, शिष्य मनोरञ्जन के साथ-साथ आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति भी होती रहे, मन में शिव-संकल्प जागृत हो ताकि जीवन मे आने वाली असफलताओं को देख कर घबरा न उठें, सत्यता जीवन में साकार हो उठे, संघर्ष की कठिन घडियो मे भी कल्याण का सृजन होता चला जावे। प्रत्येक विधा जो मनुष्य को गिराती है कभी भी ग्राह्य नही हो सकती। यदि ऐसा होता भी है तो वह भ्रम या स्वार्थ के कारण होता है। यह दोनो कमजोरियाँ जहाँ अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेती हैं वहाँ विनाश के अतिरिक्त और क्या मिलेगा।

जब तब सिनेमा-परिपाटी के रक्षकों और पोषको को स्वच्छन्दता पर अंकुश लगाने की चर्चा की जाती है तो भारतीय संविधान की दुहाई देकर वे कहते हैं कि हमारे विचार-प्रकाशन के स्वातन्त्र्य पर निरंकुश आक्रमण किया जा रहा है। आवश्यकता यह जानने की है कि स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता मे अन्तर क्या है। एक मनुष्य यदि वैध ढंग से धन अर्जित करता है तो उसका श्रम स्वतन्त्रता के अन्तर्गत माना जायेगा, लेकिन यदि वह मनुष्य अवैध ढंग अर्थात् चोरी-बदमाशी द्वारा धनार्जन करता है तो उसका यह प्रयत्न स्वच्छन्दता के अन्तर्गत माना जायेगा। स्वतन्त्रता आदर्श समाज की पोषक है जबकि स्वच्छन्दता विनाशमूलक क्रिया है।

यदि कोई जेबकतरा पुलिस के हस्ताक्षेप को अपनी स्वतन्त्रता पर अंकुश समझ भारतीय संविधान का नाम लेकर पुलिस पर अभियोग लगाता है या उसके कार्य की निन्दा करता है तो उसे हास्यास्पद या बाल-क्रीडा मात्र ही समझा जायेगा।

विचार-प्रकाशन के स्वातन्त्र्य का अर्थ यह नहीं कि किसी को इस बात की पूर्ण स्वीकृति प्रदान कर दी जाये कि वासना को भड़काने वाली, चरित्र को भ्रष्ट करने वाली, समाज-विरोधी तत्त्वों को उभारने वाली, धार्मिक भावनाओं पर प्रहार करने वाली, आध्यात्मिक प्रवृत्ति पर कुठाराघात करने वाली फिल्मों का स्वेच्छा से निर्माण किया जावे।

पाश्चात्य-प्रणाली के नग्नतावाद के समर्थकों के हथकण्डों से अपने धर्म, अपने आदर्श अपनी आस्थाओं अथवा अपनी संस्कृति एवं सभ्यता की रक्षा तभी सम्भव है जब सभी धर्मावलम्बी, समाज-सेवक तथा साहित्यकार एक मंच पर एकत्र होकर विचार-विमर्श करें। रूप और रुपये का यह दुष्प्रभाव सम्मिलित प्रयत्नो से ही नष्ट होगा।

वत्स अब उठो आज ललकार

(श्री अरुण कुमार पाण्डेय (सकोलिया, जि० बलिया)

छोड वसुधा का माया मोह, चला जब यों विचार कर मूल।
सत्य का पंथ खोजना तभी, मार्ग में फूल मिलें या शूल।
बुलाती एक अजानी पुकार। वत्स अब उठो आज ललकार॥

छोड दो जग की अब यह नीति, नहीं है इसमें कुछ भी सार।
मधुर है किन्तु जहर का घूंट, अन्त में जाओगे तुम हार।
बुलाती है आओ इस पार। वत्स अब उठो आज ललकार॥

धर्म है आज पतन की ओर, स्वार्थ है करा रहा विद्रोह।
विश्व में वस्तु-दुराग्रह जाल, वंचना बाह रही है जोह।
बुलाती है अजान चीत्कार। वत्स अब उठो आज ललकार॥

मूर्ति पूजा का फैला राज्य, पड़े हैं सभी मोह के बीच।
पापियो के पाशों से ग्रस्त, पड़े हैं सभी सच्चो की कीच।
बुलाती है यह हाहाकार। वत्स अब उठो आज ललकार॥

गतांक से आगे—

उपासना-प्रदीप— १

आत्म-बोध और परमात्म-बोध

(श्री पं० अमरकुमार जी शास्त्री "साधुलोमतीर्थ" देहली)

११—कुछ लोग, बातें बनाकर, वाग्जाल फैलाकर और व्याख्यान बाजी बढ़ा कर ही उसे प्राप्त करने का दम्भ करते हैं। यह मार्ग ठीक नहीं। अनुभवी ऋषि बतलाते हैं—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया न बहुना श्रुतेन।

यमेवैष वृणुते तेन लभ्य स्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम्॥

कठोपनिषद्-२।२३॥ मुण्डकोपनिषद्—३।३

अर्थ—यह परमात्मा प्रवचन करने या बहुत पढ लेने से नही जाना जाता, बौद्धिक चमत्कारों से भी नहीं, बहुत कुछ सुनने से भी नही, जिसको यह ब्रह्म चुनता है, पसन्द करता है, अर्थात् जिसका वह स्वयं वरण करता है, उसे ही यह परमात्मा प्राप्त होता है। उसके लिये तो वह अपने स्वरूप को सुप्रकाशित ही कर देता है।

१२—प्रभु का यह वरण भक्त वा भक्त-समुदाय की पात्रता के आधार पर ही होता है। इस पात्रता की प्राप्ति निरन्तर साधना से की जाती है। जप और उपासना के ये कार्यक्रम ही साधना कहलाते हैं। परमात्मा का एक नाम "वरुण" इसी रूप में सार्थक है कि वह वरण करने योग्य भी है और वरण करने वाला भी है। भक्त उसका वरण करते हैं, तथा जब भक्तों की पात्रता प्रमाणित हो जाती है। तब परमात्मा भक्तों का वरण करता है। आचार्य चमूपति जी ने इस प्रेम-मिलन का सुन्दर शब्द चित्र प्रस्तुत किया है—

खड़े मूक उपहारसम, भक्त और भगवान्।

भक्त मूर्त्त अर्चन बने, प्रभु रूप वरदान॥

१३—मुण्डकोपनिषत्कार एक बात और कहते हैं—

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो न च प्रमादात्तपसो वाप्यलिङ्गात्।

एतैरुपायैर्यतते यस्तु विद्वांस्—तस्यैष आत्मा विशते ब्रह्मधाम॥

मुण्डकोपनिषद्—३।४

अर्थ—दुर्बल, शरीर दुर्बल मन वाले और आत्मिक-बल-शून्य जन इस परमात्मा को प्राप्त नही कर सकते। जो अभिमानी या प्रमादी हैं, । वे भी नहीं, जो शिखा-सूत्र आदि का परित्याग करके तपस्वी या संन्यासी होने के ढोंग रचते हैं, वे भी नहीं। जो ज्ञानी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों और वेद प्रतिपादित उपायों से विधि पूर्वक प्रयत्न करते हैं, केवल वे ही प्रभु की कृपा से प्रभु को जानने और मोक्ष प्राप्ति में सफल होते हैं।

१४—गीताकार का कथन है—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।

न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं, न परां गतिम्॥ गीता—१६।२३

अर्थ—जो मनुष्य शास्त्र की विधि का परित्याग करके अपने मनमाने ढंग से उच्छृंखलता पूर्ण व्यवहार किया करता है, उसको सफलता नहीं मिलती, शान्ति और श्रेष्ठगति भी नहीं।

१५—महर्षि मनु का कथन है—

वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च, नियमाश्चैव तपांसि च।

न विप्रदुष्टभावस्य, सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्॥ मनु० २।९१

अर्थात्—

करें तप, त्याग, यज्ञ, व्रत, नियम, फिरें वा वेद जानने वाले।

जो होते दुष्टभाव के विप्र, नहीं वे सिद्धि को पाते॥

१६—ओङ्कार-जप का कार्य कोई महीने-बीस दिन का, दो-चार मास, या दो चार वर्ष में पूरा होने वाला कार्य नहीं है। यह तो आजीवन चलने वाला अनुष्ठान है। यह तो एक ऐसी यात्रा है, जिसका अन्त दूर है, बहुत दूर। यह जीवन ही नहीं, हो सकता है कि आगामी दो-चार जन्म और भी इस कार्य में व्यतीत हो जायें। यदि निरन्तर प्रगति होती रहे और दो-चार जन्मों में भी यह सिद्धि मिल सके, तब भी इसे महंगा-सौदा न समझना चाहिये। हां, सिद्धि तो मानव-योनि में ही मिलेगी। अपने इस मानव-जन्म का पूरा-पूरा लाभ हमें उठा लेना चाहिये।

१७—योग-दर्शन का वचन है—

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः॥—१।१४

अर्थ—वह अभ्यास दीर्घ-काल-पर्यन्त, निरन्तर, व्यवधान-रहित, ठीक-ठीक, श्रद्धाभक्ति पूर्वक किया हुआ ही दृढ़ अवस्था वाला=सफलता प्रद होता है।

१८—गीताकार का कथन है—

प्रयत्नाद् यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्॥ गीता—६।४५

अर्थ—प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करने वाला योगी सम्पूर्ण पापों से अच्छी प्रकार सशुद्ध होकर अनेको जन्मो में सिद्धि को प्राप्त हुआ—हुआ परमगति को प्राप्त करता है।

१९—केनोपनिषद् में चेतावनी दी गई है—

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति, न चेदिहावेदीन्महति विनष्टिः।

भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति॥

—केनोपनिषद्—२।५

अर्थ—यदि इस जन्म में हो परमात्मा को जान लिया गया, तो बहुत-अच्छा है। मानो अमृत की प्राप्ति होती गई। यदि आत्म-बोध और परमात्मा बोध की ये अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धियां इस जन्म में न मिली, तब तो निश्चय जानो कि बहुत बड़ी हानि हो गई। धीर पुरुष सभी तत्त्वों, सभी प्राणियों=सभी भूतों में खोज-खोज कर, बारम्बार विचार करके, उसे भली प्रकार पहिचान करके, इस लोक में—इसी जन्म में उसे आत्म तत्त्व और परमात्म-तत्त्व को जान लेते हैं, और देह का परित्याग करके मुक्त हो जाते हैं। ○

परिनियोजन

(डा० भवानीलाल भारतीय एम ए पी. एच. डी, प्रा० गवर्नमेण्ट कालेज अजमेर)

आज हमारे देश में परिवार नियोजन का सर्वत्र शोर सुनाई पड़ता है। अमरीकी सहायता से प्राप्त धन का उपयोग लोगों को पुंसत्वहीन बनाने में किया जा रहा है देश की जनशक्ति का ह्रास करने का यह एक नियोजित षड्यन्त्र है और खेद है कि सरकार के द्वारा ही इसका प्रचार किया जाता है। यह सत्य है कि आर्थिक स्थिति का सुधार तभी सम्भव है जब कि परिवार के सदस्यों की संख्या मर्यादित हो, परन्तु सन्तान का कम उत्पन्न होना कृत्रिम उपायों को काम में लाने पर उतना निर्भर नहीं है जितना आत्म संयम से। बात-बात में महात्मा गांधी की दुहाई देने वाले लोग यह भूल जाते हैं कि गांधी जी परिवार नियोजन के लिये कृत्रिम उपायों को काम में लाने के घोर विरोधी थे।

परन्तु समस्या का एक दूसरा पहलू भी है। यह परिवार नियोजन का विचार आज भारत में हिन्दुओं में ही अधिक व्यापक हो रहा है। मुसलमान और कैथोलिक ईसाई उसे अपनी धार्मिक मान्यताओं के विरोध में होने के कारण स्वीकार नहीं करते। ऐसी दशा में यह सोचना पड़ेगा कि यदि परिवार नियोजन के कार्यक्रम को एकांगी रूप से केवल हिन्दुओं ने ही स्वीकार किया तो इससे उनका अल्पमत में हो जाना सुनिश्चित है। हिन्दुओं को तो कानूनन एक पत्नीव्रती होने के लिये बाध्य किया जाता है जब कि मुस्लिम सामाजिक विधान में संशोधन करने में सरकार को हिचकिचाहट होती है। यद्यपि श्री मुहम्मद करीम छागला जैसे सुशिक्षित और प्रगतिशील मुसलमान यह स्पष्ट कर चुके हैं कि कुछ कट्टर पंथी मुल्ला मौलवियों की चिन्ता किये बिना ही सरकार को मुस्लिम कानूनों में संशोधन करना ही चाहिये।

आर्य और आर्यसमाज—एक विश्लेषण

(श्री सत्येन्द्रसिंह आर्य एम० ए० स्टेट बैंक ग्रोफ इण्डिया—घामपुर)

वर्तमान समय में पाश्चात्य विद्वानों के प्रभाव के कारण हमारे राष्ट्र में अधिकांश राष्ट्रवासी आर्य शब्द के वास्तविक अर्थ और समुचित प्रयोग से अनभिज्ञ से हैं। आर्यसमाज के सघटन के प्रति भी उनकी भावना उदासीनता की है और फलतः बहुत अंशों तक भ्रान्त एवं पक्षपातपूर्ण भी है। अंग्रेज शासकों ने अपने शासनकाल में सदैव यही प्रयत्न किया कि भारतीय विशेष रूप से हिन्दू (आर्य) अपने धर्म और संस्कृति को भूल जावें। अपनी इच्छा को मूर्तरूप देने के लिए उन्होने यहाँ के इतिहास में वास्तविकता के विरुद्ध फेर बदल करके यह लिख दिया कि आर्य लोग भारत में बाहर से आये। यह असत्य बात इतिहास में उन्होंने इसलिए प्रचलित की कि जिससे भारतीयों में पारस्परिक विद्वेष पैदा करके (Divide and rule की नीति के अनुसार) यहां पर चिरकाल तक शासन करते रहें। आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने अपने महान् ग्रंथ "सत्यार्थप्रकाश" में अग्रज शासकों द्वारा फैलाई गई इस भ्रान्ति का निवारण अकाट्य तर्क और प्रमाणों से किया है। अपने वास्तविक नाम 'आर्य' के सम्बन्ध में अपने पौराणिक भाईयो ने तो यहाँ तक कह दिया कि आर्य और आर्यसमाज नाम का नया मत स्वामी दयानन्द सरस्वती ने चलाया है। आर्य विद्वानो ने सदैव इन निराधार बातों का बड़ा विद्वत्तापूर्ण उत्तर दिया है। जहां तक आर्य शब्द का सम्बन्ध है यह तथ्य स्पष्ट करना आवश्यक है कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत के समय तक समस्त भूमण्डल पर आर्यों का ही चक्रवर्ती साम्राज्य था। यह शब्द कोई नया नही है। जो लोग वेद से दूर रहे हों उन्होने भी संस्कृत के रामायण और महाभारत महाकाव्यों का नाम अवश्य सुना होगा। दोनों महाकाव्यों में आर्य शब्द का प्रयोग श्रेष्ठ, गुणवान् सदाचारी, विद्वान् यशस्वी लोगों के लिए हुआ है। शब्द के साधारण अर्थ का संस्कृत के एक श्लोक से ही पता चल जाता है।

शान्तः दान्तश्च तितिक्षुश्च सत्यवादी जितेन्द्रियः।

दाता दयालु र्नम्रश्च आर्यः स्यादष्टभिर्गुणैः॥

आर्य वह है जो स्वभाव से शान्त हो, अकारण ही विवाद, कलह, द्वेष, शोक न करता हो। विपत्ति के समय भी घबराता न हो प्रत्युत धैर्यपूर्वक उसका सामना करता हो। श्री रामचन्द्र जी महाराज के जीवन में यह गुण स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। अपने जीवन के प्रथम चरण में ही राज्य प्राप्ति से वंचित हो जाने पर भी वे शान्त ही रहे, लेशमात्र भी उद्विग्नता उनमें नही आई। आर्य का दूसरा गुण यह है कि वह दमनशील हो। आत्म संयमी हो। तितिक्षा भी आर्य का एक निजी गुण है। स्वजनों और श्रेष्ठ आर्यों के प्रति सहनशीलता और सद्भाव का दृष्टिकोण भी आर्य में अवश्य होना चाहिये। आर्य का चौथा गुण है सत्यवादी होना। आर्यसमाज का चौथा नियम भी यही है कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने मे सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। अहिंसा आदि बहुत से गुण पाप से बचने के लिए हैं परन्तु सत्य सबका मूल है। जो मनुष्य सत्य को त्याग देता है उसके जीवन में पाप और दुर्गुण बिना बुलाये ही समाविष्ट होते चले जाते हैं और जो मनुष्य अपने जीवन में सत्य का आश्रय ले लेता है उसके व्यवहारिक जीवन में दुर्गुणों, दुर्व्यसनों और पापों की दाल नही गल सकता। सत्य के सम्मुख अवगुण टिक ही नही सकते। मन, वचन और कर्म से सत्यनिष्ट होना आर्यत्व की चौथी पहचान है। आर्य का पाँचवां गुण जितेन्द्रियता है। आर्य और जितेन्द्रिय लगभग पर्यायवाची हैं। आर्य शब्द का तो एक अर्थ भी 'इन्द्रियों का स्वामी' होता है। तप और सदाचार के अभाव में मनुष्य इन्द्रियों का दास हो जाता है और आर्यत्व से गिर जाता है। यदि इन्द्रियों के सुख की प्राप्ति को ही जीवन में लक्ष्य बना लिया जाय तो फिर व्यक्ति किसी भी प्रकार का पापाचरण करने में नहीं हिचकिचाता। इन्द्रियो का स्वामी होने का साधारण अर्थ यही लिया जा सकता है कि इन्द्रियो से वही काम लिया जाना चाहिये जिससे आत्मा की उन्नति हो, उसका पतन न हो। जो इस प्रकार का आचरण करता है वही आर्य है। दानवीर होना भी आर्यत्व की प्रमुख पहचान है। यथा समय अपनी सामर्थ्यानुसार पात्र की पात्रता को देखते हुये दान करते रहना चाहिये। मनुस्मृति और वेद में कितने ही श्लोक और मन्त्र आते हैं जिनमें दान की महिमा और अनिवार्यता पर प्रकाश डाला गया है। चाणक्य ने तो दान को धर्म की संज्ञा तक इसी अभिप्राय से दी कि लोग इस गुण को कही त्याग न दें। दया का भाव भी मानवीय गुणों का प्रतीक है और नम्रता का भी महत्त्व कुछ कम नहीं। इन दोनों के अभाव में मनुष्य आर्य तो क्या साधारण मनुष्य की कोटि में भी नहीं रहता। क्रूरता, कर्कशता आदि के विरुद्ध नम्रता और दया होनी चाहिये। चाहे संसार के किसी भी कोने में कोई क्यों न रहता हो परन्तु यदि किसी मनुष्य में ये गुण हैं तो वह आर्य है उसकी राष्ट्रियता या वर्ण इसमें बाधक नही हो सकते।

आर्य का एक अर्थ ईश्वर पुत्र भी है। वैसे तो सभी मतमतान्तरों के मानने वाले ईश्वर को पुत्र होने के दावेदार हैं। परन्तु पुत्र कहलाने का अधिकारी वही है जो पिता की आज्ञा मानता हो। यदि कोई अपने को ईश्वर का पुत्र कहता है तो उसका यह कर्त्तव्य बनता है कि वह ईश्वर की आज्ञा भी माने। ईश्वर की आज्ञाएं मनुष्यमात्र के अनुपालन के लिये वेद में हैं। जो कोई भी वेद की आज्ञाओं के अनुकूल जीवन यापन करेगा वही आर्य कहलायेगा। वेदानुयायी और आर्य समानार्थी है।

जैसे जर्मनी में रहने वाले जर्मन और इटली में रहने वाले इटेलियन हैं उस प्रकार आर्यावर्त में रहने वाले सब लोग आर्य नही कहला सकते क्योंकि आर्य शब्द गुणवाचक है, जातिसूचक या राष्ट्रियतावाचक नहीं है। 'आर्य' के सम्बन्ध में एक वेद मन्त्र भी विचारणीय है।

विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवो, बर्हिष्मते रन्धय शासदव्रतान्।

मनुष्य मात्र के लिये वेद का आदेश है कि यदि सुख, समृद्धि और शान्ति चाहो तो आर्यों को जानो और जो दस्यु (अनार्य) हैं उनको भी जानो। ईश्वरीय नियमो का पालन न करने वाले जो अव्रती लोग हैं उन पर नियन्त्रण रखो। अभिप्राय यही है कि मनुष्य आर्य और दस्यु (अनार्य) के भेद को जान लेवें। आर्यों की सदैव वृद्धि करें। उन्हें आर्यत्व से न गिरने दें और जो आर्य नही हैं उन्हें आर्य बनाने का प्रयत्न करें। दस्यु का अर्थ है जो विनाशकारी प्रकृति और प्रवृत्ति का हो जैसे—समय का नाश, धन का नाश, बल का नाश, राष्ट्र का नाश। ऐसे लोगों के दुर्गुण समाप्त करके उन्हें आर्य बनाना चाहिये। यदि वे अपने कुसंस्कारों के कारण आर्य न बन पाये तो आर्य लोग उन पर कठोर नियंत्रण रखें जिससे वे राष्ट्र और समाज की हानि न कर सके।

अब प्रश्न उठता है कि आर्य कैसे बनें और बनायें। इसका बड़ा सरल उपाय है कि हम अपनी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक अशुद्धियां और मैल प्रयत्नपूर्वक दूर करें। मनुस्मृति का एक श्लोक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश में दिया है।

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति, मनः सत्येन शुध्यति।

विद्यातपोभ्यां भूतात्मा, बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति॥

शरीर और तत्सम्बन्धी वस्त्र आदि की (बाह्य) शुद्धि जल से हो जाती है, कपड़े धोना, स्नान करना आदि इसके अन्तर्गत हैं। मन सत्य के अपनाने से शुद्ध होता है। मन निर्मल हो जाने पर आर्य बनने में कोई लम्बी-चौड़ी कसर नही रह जाती। आत्मा की शुद्धि विद्या और तप से होती है। जो जैसा है उसे वैसा ही जानना और मानना विद्या है। योगसूत्र के अनुसार—अनित्य में नित्य बुद्धि, अनात्मा में आत्मा की बुद्धि, अशुचि में शुचि की बुद्धि, दुःख में सुख की बुद्धि अविद्या है अर्थात् इसके प्रतिकूल बुद्धि को ही विद्या मानना चाहिये। तप का अर्थ भी स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में तैत्तिरीय० का वाक्य लिखकर स्पष्ट कर दिया है।

ऋतं तपः सत्यं तपः श्रुतं तपः

शान्तं तपो दमस्तपः स्वाध्यायस्तपः।

यथार्थ शुद्धभाव, सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करना, मन को अधर्म मे न जाने देना, बाह्य इन्द्रियों का अन्याय-आचरणों में जाने से

शेष पृ० १० पर

काशीशास्त्रार्थ समारोह के अन्तर्गत एक सुझाव

ब्र० वेदव्रत मीमांसक, गुरुकुल सिंहपुरा (रोहतक)

भारत के विद्याकेन्द्र काशीनगर मे' काशी शास्त्रार्थ शताब्दि समारोह" नाम से पावन समारोह होने जा रहा है। वास्तव मे यह ऋषिवर का दिग्विजय है। हमारे लिये यह एक सस्मरण वा उद्बोधन है। इसका सार्वभौम स्तर से मनाया जाना आर्यसमाज के लिये गौरव का विषय है। वेद धर्म का प्रचार ऋषिवर का लक्ष्य था। विलुप्त वेद-धर्म के पुनरुद्धार और उसी का विस्तार प्रसार करने मे उनका सवस्व समर्पित हुआ। वेदार्थज्ञान के लिये पठन पाठन का निर्देश किया है यह क्रम सत्यार्थप्रकाश, सस्कारविधि, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका और सस्कृत वाक्य प्रबोध मे लिखा है। वेदार्थ ज्ञान के लिये ज्योतिष् का अध्ययन आवश्यक ही नही अपितु अनिवार्य है। ऐसा ही परम्परागत मत है और ऋषिवर को भी अभिमत था इसीलिए पठन पाठन मे स्थान दिया है। इतने महत्वपूर्ण शास्त्र की उपेक्षा आर्यसमाज ने क्यो की है यह विचारणीय है।

सक्षिप्तरूप से ज्योतिष् शास्त्र के निम्न प्रयोजन हैं.—

(१) वेदार्थ की त्रिविध प्रक्रिया मे से आधिदैविक प्रक्रियापरक अर्थ सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति गति प्रलय के ज्ञान से ही हो सकता है। उस अर्थ को ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन के बिना कैसे जान सकेगे वेद को कस पढ वा पढा सकगे ? (२) ज्योतिष काल विषयक शास्त्र है। काल से सम्बद्ध जीवन को कालशास्त्र की अनभिज्ञता से कैसे सार्थक किया जा सकता है ? दिन, दिनमान, अहोरात्र, वार, तिथि, मास, अधिमास, क्षयमास, सक्रान्ति, अयन, ऋतु, वष और युगादि की गणना किस आधार पर करगे ? इस ज्ञान के बिना नित्यकम, सन्ध्या, अग्निहोत्रादिक, पर्व, नैमित्तिक, इष्टयादिक, ऋतुसम्बद्ध पर्व, सक्रान्ति, उत्तरायण, दक्षिणायनादिक कर्म किस आधार पर कर सकेंगे ? (३) सिनीवाली, कुहू, अनुमति राका, दर्शपौर्णमास, उपाकर्म, अश्विनो, भरणी, ससप, ग्रहसस्पति इत्यादि वैदिक शब्दो का वेद मे और लोक मे किन-किन अर्थों मे ग्रहण होता है इसका ज्ञान किस से होगा ? (४) ब्रह्माण्ड, ग्रह, नक्षत्र, तारकाओ का ज्ञान इत्यादि सृष्टि का ज्ञान कैसे होगा ? यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे, तथा ब्रह्माण्डे तथा पिंडे का अर्थ ज्ञान कैसे होगा ? (५) फलित ज्योतिष के आधार पर जो स्वार्थी ज्योतिर्विदाभास ससार को किस प्रकार गर्त मे डालते हुवे स्वार्थ को सिद्ध कर रहे हैं इसका ज्ञान और इसके निराकरण का क्या उपाय है ? (६) किं बहुना मानवमात्र दिन-मास, तिथि वर्ष ऋतु का परिगणन करता है। तब इतने महत्वपूर्ण शास्त्र की उपेक्षा आर्यसमाज द्वारा क्यो ? क्या ऋषिभक्तो का इस विषय मे कोई समाधान है ? ज्योतिष् के अध्ययन के बिना इस अन्धपरम्परा-पक-मग्नो का उत्थान नही हो सकता। विद्वानो ने इसकी उपेक्षा की है किन्तु सस्थाओ ने भी कोई सफल प्रयत्न नही किया। ऋषिभक्तो का यह कर्तव्य है कि ऋषि के निर्दिष्ट माग का अनुसरण करके अपना और ससार का हित करें। ऋषि के दिग्विजयो इस समारोह मे इस पर विचार किया जाकर ज्योतिष् शास्त्र के अध्ययनाध्यापन को मूर्तरूप दिया जाना चाहिये। एतदर्थ एक सम्मेलन रखा जाय और प्रस्ताव बनाकर इसके लिए प्रयत्न प्रारम्भ किया जाय जिससे आर्यजनो को इसका दिग्ज्ञान मिले और इस विषय मे भी आर्यों का यत्न प्रारम्भ हो। ऐसे अवसर पर ज्योतिष् शास्त्र के विषय मे लोगो का जिज्ञासुदय करना हमारा कर्तव्य है।

यदि कोई इस अवसर पर यह आक्षेप करे कि —

(१) ऋषिदयानन्द के सिद्धान्त के अनुसार वेदागो के अध्ययन के बिना आर्यसमाजियो का वेदार्थ भ्रमपूर्ण है अथवा अपूर्ण है। (२) ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन ऋषिवर को अभिमत था तो आर्यसमाज ने इस शास्त्र की क्या प्रगति की है ? तो आर्यसमाज की ओर से इसका क्या समाधान किया जायगा ?

आशा है ऐसे स्वर्ण अवसर पर ऋषि के वेदोद्धार सूत्र के एक आवश्यक अंश को मूर्तरूप दिया जाने के प्रयत्न का प्रारम्भ होगा जिससे भविष्य का इतिहास हमे दोषी सिद्ध न करे। इस शास्त्र की उपेक्षा करते हुए हम वेदज्ञान के प्रचार मे बाधक न बनेगे। इसके लिये परमात्मा हमे शक्ति दे।

—ब्र० वेदव्रत मीमांसक

वर्तमान आर्यसमाज, उज्जैन (मध्यप्रदेश)

बादशाह खान अनर्गल बातें न करें ?

(श्री भूषण 'द्विवेदी" (कलकत्ता)

गाधी-शताब्दी समारोह के अवसर पर सीमातगाधी के नाम से विख्यात गाधीवादी पख्तूनी नेता खान अब्दुलगफ्फार खा का भारत की राजधानी दिल्ली मे विशेष रूप से आगमन हुआ है। राजधानी के विभिन्न महत्त्वपूर्ण स्थानो पर बादशाह खान का भव्य स्वागत किया जा रहा है। स्वाधीनता सग्राम के एक तपस्वी नेता का स्वाधीन भारत की जनता द्वारा जो हार्दिक स्वागत किया जा रहा है वह अवर्णनीय है। यह सब भारतीय जनता की महती उदारता का द्योतक ही कहा जाएगा, जो कि एक छोटे से भूखड के नेता को ५५ करोड आबादी वाले देश मे राष्ट्रिय-स्तर पर सम्मानित किया जा रहा है।

बादशाह खान शायद यह भूल बैठे हैं कि वह विश्व के एक बडी आबादी वाले देश मे सम्मानित हो रहे हैं। गाधी शताब्दी के अवसर पर बादशाह खान का स्वागत करके भारतीय जनता ने अपनी शाति प्रियता एव उदारता का महान् परिचय दिया है, परन्तु बादशाह खान ने दिल्ली की सभाओ मे काश्मीर की समस्या पर कुछ ऐसा आपत्तिजनक बयान देना आरम्भ कर दिया है जिससे कि जयप्रकाशनारायण जैसे शात स्वभाव वाले नेता का मिजाज भी गरम हो उठा है। जनसघ के अध्यक्ष श्री वाजपेयी तथा भारतीय क्रातिदल के महामत्री श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने बादशाह खान के आपत्तिजनक भाषण की कटुतम आलोचना करते हुए काश्मीर के सम्बन्ध मे भारत का दृष्टिकोण स्पष्ट किया है।

काग्रेसी नेताओ ने हमेशा ऐसी भूल की हैं जिनके दुस्परिणाम इस देश को जनता को भोगने पड हैं। गाधी-शताब्दी के अवसर पर बादशाह खान के आगमन से यदि देश को शाति को किसी भी प्रकार की क्षति हुई तो उसकी जिम्मेदारी देश के उन गाधीवादी नेताओ के सिर पर होगी जिन्होने बादशाह खान को निमन्त्रित करके इच्छानुसार वक्तव्य देने की छूट दे रखी है।

बादशाह खान को इस देश को जनता ने स्वतन्त्रता प्रेमी, स्वाभिमानी तथा कष्ट सहिष्णु नेता के रूप मे स्वीकार करके ही इस विशेष अवसर पर आमन्त्रित किया है। बादशाह खान का कर्त्तव्य है कि वे जनता की उदार भावना एव अवसर की उपयोगिता का ध्यान रखते हुए कुछ ऐसी ही बातें कहे जिससे कि उनके प्रति हमारी भावनाये पूर्ववत् हो बनी रहे। यदि बादशाह खान ने सकीर्ण साप्रदायिकता से प्रभावित होकर किसी जाति या वग के समर्थन मे कुछ अनावश्यक दलीलें देना प्रारम्भ कर दी तो उन्हे एक बडे पमाने पर अपमानित होने की आशका हो सकती है। अत समय की माग है कि बादशाह खान भारत की शाति एव सुरक्षा को क्षति पहुचाने वाली ऐसी कोई भी बात अब न कहे जिससे की स्वय उनका सम्मान दाव पर लगता हो।

गताक से आगे —

किसान

[श्री योगीन्द्र पाण्डेय, लखौलिया, पो० भरथांव जि० बलिया (उ० प्र०)]

करते हैं मासादिक भक्षण, नही सोचते सबका रक्षण,
नही जानते सब समान हैं पशु हैं वा मानव महान् हैं
सबमे एकमेव कर्त्तार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार ॥
जीवो का वध करते रहते, इसी भाति सब मरते रहते,
कहते हैं हम सब हैं आर्य, पर करते अघ पूरित कार्य,
यह भी है कैसा आहार ? कुछ सोचो, कुछ करो विचार ॥
उचित आर्य जन फिर से जागे, हनन दीन पशुओ का त्याग,
उनके हित वध अनुचित होगा, इससे कभी नही हित होगा,
यह न जीव के प्रति है प्यार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥
दुग्ध-सुधा जो देती गाय, उसका भी वध करते हाय,
मातृ तुल्य गौ को भी खाते, फिर भी इसे नही तज पाते,
निज मा पर ही चला कटार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥
उचित, मास भक्षण तज देते, भोजन तथा उचित ही लेते,
दधि दुग्धादिक को ही खाते, हनन जीव का हा ! तज पाते,
भक्षक को शत-शत धिक्कार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ (क्रमश)

शङ्का समाधान

(प्रश्न) आज से दो चार वर्ष बाद मैंने जो काम करना है, क्या ईश्वर उसे जानता है। यदि जानता है तो मैं कर्म करने मे स्वतन्त्र नही हू।

—श्री राजरूप, सभासद् आर्यसमाज करौल बाग, देहली

(उत्तर) आप अपनी स्वतन्त्रता से कार्य करते हैं और ईश्वर अपनी सर्वज्ञता से जानता है, इससे जीव के कर्म करने और ईश्वर के जानने मे कोई कार्य कारण भाव नहीं। दोनो बातें निरपेक्ष हैं। इसलिये ईश्वर के जानने पर भी जीव स्वतन्त्र ही है। ईश्वर के ज्ञान से जीव के कर्म पर कुछ बन्धन नही। यह प्रश्न बडे बडे विद्वानों को भी उलझाये हुए है, क्योकि वे सत्यार्थप्रकाश को ध्यान से नहीं पढते। आप कृपया सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास मे दिये (प्रश्न) "परमेश्वर त्रिकालदर्शी है इससे जीव स्वतन्त्र नहो"—तथा इसका (उत्तर) "ईश्वर को त्रिकालदर्शी कहना मूर्खता का काम है हा जीवो के कर्मों की अपेक्षा से त्रिकालज्ञता ईश्वर में है, स्वत नही इसलिये इसमे कोई दोष नही आता।"

सत्यार्थप्रकाश के इस प्रकरण को ध्यान से पढना अत्यन्त आवश्यक है। इससे प्रश्नरूप शङ्का का उत्तर रूप समाधान हो जावेगा।

पुस्तक समालोचना

(१) पुस्तक—मास मनुष्य का भोजन नही।
लेखक—आचाय भगवान् देव जी।

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) के मासिक पत्र "सुधारक" का यह विशेषाङ्क है। इस अकका मूल्य एक रुपया है। पृ० १०६, मिलने का पता—गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक।

आलोचना—श्री लखक ने अपने विषय का प्रतिपादन अच्छी प्रकार से किया है। मास खाने के विरुद्ध बहुत सामग्री पुस्तक मे दी गई। सभी को पुस्तक से लाभ उठाना चाहिये।

(२) "सामाजिक पद्धतिया" (५ म सस्करण) लेखक—महाशय मदनजित् जी आर्य, प्रकाशक—डा० साधुचन्द विनायक, प्रधान—आयसमाज गुरुकुल विभाग फिरोजपुर शहर पृ० ११६, मूल्य एक रुपया।

आलोचना—लखक महोदय आर्यसमाज के तपेमजे विद्वान लखक हैं। पुस्तक के ५ सस्करण निकलने से सिद्ध होता है कि आर्यजनता में इसकी माग है। इसमे विशेषता यह है कि सामाजिक लौकिक रीति रिवाज की सिद्धि के लिये वेद-मन्त्रो के प्रमाण प्रस्तुत किये गये हैं। आशा है आर्यजनता पुस्तक से यथापूर्ण लाभ उठाती रहेगी।

(३) 'कन्या दान और उसके घर का खान-पान" यह कुल १६ पृष्ठ की पुस्तिका है। इसके लखक आय जगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् सन्यासी श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी गुरुकुल ततारपुर (जि० मेरठ) हैं। प्रकाशक—ला० रामजीदास जानकी नाथ सुभाष बाजार, मेरठ हैं। मूल्य १० पैसे।

इसमे सिद्ध किया गया है कि कन्या के विवाह के पश्चात् उसके पतिकुल मे पिता आदि को भोजन करने मे कुछ दोष नही है। पुस्तिका प्रमाणो से परिपुष्ट है। गृहस्थ लोगों को इसे पढ़ना चाहिये।

(४) 'गुरु शिष्य सवाद' (दस भाग) मूल्य १ ५० पैसे

( ) नित्य कर्मविधि, मूल्य ४० पैसे।

(६) आयसमाज के लोकोपकारी काय म० ७५ पैसे।

(७) सुमगली मूल्य एक रुपया।

(८) सत्यार्थप्रकाश (एक मूल्याकन) मू० ३५ पैसे।

(९) पतन के कारण, मू० ३५ पैसे।

(१०) प्यारा ऋषि, मू० ७५ पैसे।

आलोचना—पुस्तक सख्या ४ से १० तक के मिलने का पता—भारतवर्षीय वैदिक सिद्धान्त परिषद् अलीगढ है। यद्यपि लेखक इनके भिन्न हैं, परन्तु पुस्तकें उपयुक्त परिषद की ही हैं। श्री आचार्य मित्रसेन जी एम ए. इस परिषद के प्राण हैं। आर्यसमाज के प्रसिद्ध कर्मठ विद्वान् हैं। उक्त सभा ने पुस्तकों को परीक्षा के लिये तैयार किया गया है, जिससे कुमारों और कुमारियों मे आर्यत्व के भाव जागृत होवें और सिद्धान्तों से परिचय होवें। आय समाजों को चाहिये कि इन पुस्तकों से लाभ उठाकर परिषद् को सहयोग देवें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती [illegible]

(पृ० ८ का शेष)

रोकना अर्थात्, शरीर, इन्द्रियो और मन से शुभ कर्मों का आचरण करना आदि उत्तम धर्मयुक्त कर्मों का नाम तप है, धातु को तपा के चमडी को जलाना तप नही कहाता।

और बुद्धि की शुद्धि ज्ञान से होती है। यहा ज्ञान का तात्पर्य आत्म ज्ञान से है। जब आत्म ज्ञान की झलक हमारे गुण, कर्म, स्वभाव में आ जाती है तभी बुद्धि निर्मल हो जाती है।

इस ऊहापोह से स्पष्ट है कि आर्य जातिसूचक नहीं, गुणसूचक शब्द है। वेद के मानने वाले आर्य कहीं बाहर से नहीं आये, न यह कोई नया मत है। सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक दो ही प्रकार के लोग थे एक आर्य और दूसरे वे जो अपने अज्ञान और प्रमादवश आर्यत्व से गिरकर अनार्य (दस्यु) बन गये। उस समय समस्त भूखण्ड पर आर्यों का ही चक्रवर्ती साम्राज्य था। परन्तु महाभारत काल के पश्चात् ससार में अनेक मत मतान्तर प्रचलित हो गये, लोग वर्ण व्यवस्था जन्मना मानने लगे और वैदिक धर्म लुप्त प्राय हो गया। उस अन्धकार और निराशा के समय में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने हम आर्यों को हमारा वास्तविक स्वरूप बताया और वेदों तथा वैदिक धर्म को पुन प्रकाश में स्थापित किया।

अब प्रश्न रहता है आर्य समाज का। स्वामी दयानन्द सरस्वती अपने जीवन काल मे ब्रह्म समाज के तात्कालिक नेता केशवचन्द्र सेन से कलकत्ता मे मिले थे। ब्रह्म समाज ने भी सती-प्रथा बाल-विवाह आदि सामाजिक कुरीतियो को हिन्दू-समाज से दूर करने का प्रयत्न किया था। महर्षि की इच्छा थी कि यदि इन ब्रह्मसमाज वालो ने हमारे सोचे हुये वेदानुकूल ढग से समाज सुधार के कार्यों मे सहयोग देना स्वीकार कर लिया तो सगठित रूप से कार्य करने पर हिन्दू-समाज का बहुत बडा उपकार होगा। परन्तु वैदिक मन्तव्यों पर ब्रह्मसमाज वालों के मतभेद के कारण महर्षि की यह सद् इच्छा पूर्ण न हो सकी। कलकत्ता से महर्षि वेदप्रचार करते-करते बम्बई पहुंचे। नगर मे स्थान स्थान पर वैदिक धर्म पर विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान देकर जब महर्षि बम्बई से आगे जाने लगे तो महर्षि के वेद ज्ञान और वैदिक धर्म की श्रेष्ठता सम्बन्धी व्याख्यानों से प्रभावित लोगो ने महर्षि से कहा कि यह वेद भाष्य, वेद प्रचार और समाज सुधार का कार्य अति आवश्यक है और आपके जीवनोपरान्त, भी चलता रहना चाहिये इसलिये आप कोई ऐसा सगठन बना देवें जो आपके पश्चात् भी आपके द्वारा आरम्भ किये गये महान् कार्य को सदैव करते रहने का उत्तरदायी हो। तब महर्षि ने यह 'आर्यसमाज" नाम का सगठन स्थापित किया। इसमे समाज शब्द तो "ब्रह्मसमाज" मे पहले स ही समाज सुधार के एक सगठन में प्रयुक्त था। क्योकि महर्षि ने श्रेष्ठ लोगो का सगठन बनाया था और सबको श्रेष्ठ (आर्य) बनाना इस सगठन का उद्देश्य था तो महर्षि ने इस सगठन का नाम आर्यसमाज रख दिया। सगठन के उद्देश्यों की श्रेष्ठता और निःस्वार्थता के कारण शीघ्र ही सारे देश भर मे और अब विदेशो मे भी बहुत बडी सख्या में आर्यसमाजों की स्थापना हो गई। अब आर्यसमाज का उद्देश्य महर्षि दयानन्द सरस्वती के मन्तव्यो की पूर्ति करना ही है उसी में समाज लगा हुआ भी है। यह दूसरी बात है कि कुछ आन्तरिक विवादों के कारण इस महान् कार्य में कुछ बाधा आ गई है। परमात्मा हम सबको सद्बुद्धि दे कि हम पारस्परिक विवादों से ऊपर उठकर महर्षि के मन्तव्यों की पूर्ति में तन, मन, धन से लग जावें।

पुस्तिका समीक्षा

"परिवार नियोजन राष्ट्रीय सकट" सग्रह कर्त्ता श्री छगनलाल कश्यप। प्राप्ति स्थान—भगत आयुर्वेद गृह उपयोग सदन, आना सागर कृष्णगज, अजमेर, मूल्य ३० पैसे।

श्री कश्यपजी ने इस पुस्तक मे परिवार नियोजन से उत्पन्न राष्ट्रिय विभीषिका का ज्वलन्त चित्र उपस्थित किया है। इसमें अनेक नेताओ तथा धर्माचार्यों की सम्मतियों का सग्रह कर इस लघु पुस्तिका में स्पष्ट कर दिया गया है कि परिवार नियोजन के क्रियान्वित होने से हिन्दुओं के ऊपर आने वाले आसन्न सकट की सभावना कम नहीं है। अधिक सख्या में वितरण करने के लिये आर्य संस्थाओ तथा दानी सज्जनों को लागत मात्र पर १२) रु० सैकड़ा के भाव से यह पुस्तक उपयु क्त पते पर अथवा वैदिक यत्रालय केसरगज अजमेर से उपलब्ध कर सकते हैं।

डा० भवानीलाल भारतीय एम०ए० पी०एच०डी०
प्राध्यापक गवर्नमेंट कालेज, अजमेर एव मन्त्री
आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान

एक जटिल समस्या

श्री रमीलाल आर्य, एम० ए० साहित्यरत्न पो० असमोर, जिला सहारनपुर ने एक विज्ञापन प्रकाशित किया है, इसमे आर्यसमाज को आत्म-पर्यालोचन करने का परामर्श दिया है। जिससे जाति-पाति उन्मूलन, शुद्धि तथा सघटन की दिशा मे एक सरल और सफल आन्दोलन का सुझाव दिया है। विज्ञापन बिना पैसे वितरित किया गया है। हम समझते हैं कि आर्यसमाजों को इस विज्ञापन को मगवा कर पढना चाहिये। सुझाव के किसी अश और उसके उपाय से मतभेद हो सकता है, परन्तु एक जटिल समस्या का समाधान अवश्य करना चाहिये। हम लेखक महानुभाव के पवित्र भाव के प्रति आभार प्रकट करते हैं।—सम्पादक

पंजाब तथा हरयाणा प्रांत मे वेद प्रचार की धूम

इन दिनो प्रभु कृपा तथा आर्य भाईयो के सहयोग के कारण प्रचार कार्य में बडी वृद्धि हुई है। निम्न स्थानो के उत्सव बडे उत्साह से मनाये गये। १ बरनाला—सभा की ओर से श्री प० हरिदेव जी महोपदेशक श्री प० जितेन्द्र जी तथा श्री प० अमरनाथ जी प्रेमी पधारे। सभा को १५०) रु० वेद प्रचार मिला। २ बाजल—वेद प्रचार अधिष्ठाता श्री प० निरजनदेव जी, श्री प० बलराज जी के अतिरिक्त श्री रामनाथ श्री समशेरसिंह जी पधारे। खूब प्रचार हुआ। ३ कसौली—८ वर्ष के पश्चात् यह उत्सव हुआ और बहुत ही सफल रहा। सभा की ओर से प रामनाथजी प जितेन्द्रजी, प० बलराज जी त-। प० तेजभानु जी उपस्थित थे। सभा को ३००) रु० वेद प्रचार निधि में प्राप्त हुआ। —वेद प्रचार अधिष्ठाता

(हरयाणा वेद प्रचार मण्डल)

हरयाणा वेद प्रचार मण्डल की ओर से पूर्ववत् विगत सप्ताह भी पाच भजनोपदेशक और मण्डलिया तथा ५ उपदेशक और वानप्रस्थी महानुभाव निरन्तर ग्रामों और समाजों में प्रचार करते रहे। उल्लेखनीय स्थान निम्न हैं:—

मुआना, खरकाली, कोअर बरसोला, कोथ, कमोपुरा, दहा (बजोदा) आदि जिला करनाल और जींद के अन्तर्गत है बवानी, सुरेहती आबादनगर बोव खुर्द और कलों तिहाड फरमाण। गुहाण आदि गांव जिला रोहतक के हैं। उमरा, भगाना, डोबी, लाडवा और जुगलान आदि जिला हिसार के ग्रामों मे प्रचार हुआ। भवानी मे शहीदी मेले पर प्रचार हुआ। मुआना मे जैन मत वालो से सम्वाद तथा शका समाधान हुआ। कोअर गाव मे इसा सम्प्रदाय का प्रभाव था उनसे शका समाधान हुआ। विरोध के बावजूद वहां वैदिक धर्म का तीन दिन तक निरन्तर प्रचार हुआ। परिणाम स्वरूप वहां के राजपूतो ने यज्ञोपवीत धारण कर वैदिक धर्म की दीक्षा ली। विधि पूर्वक आर्यसमाज का सघटन कर समाज के अधिकारियो का चुनाव हुआ। इसी प्रकार गोवर मे बढ़ते हुए इसा सम्प्रदाय के प्रभाव को निर्बल करने के लिए तीन दिन प्रचार करवाया गया। गोवर मे पुराना समाज है। इस ग्राम प्रचार के अतिरिक्त यथा समय होने वाले उत्सवों मे भी उपदेशको ने भाग लिया। प्रचार के इच्छुक समाजो को आर्यसमाज जींद के पते पर सूचना देनी चाहिए। —समरसिंह वेदालकार
अध्यक्ष हरयाणा वेदप्रचार मण्डल

आर्यसमाज मन्दिर पर जबरदस्ती कब्जा करने के प्रयत्न की निन्दा

आर्यसमाज मन्दिर दयानन्द नगर में गाजियाबाद के सभी आर्यसमाज व आर्य सस्थाओं की एक विशाल सभा प्रो० रत्नसिंह की अध्यक्षता मे हुई कुछ स्वार्थी तत्व आर्यसमाज मन्दिर पर कब्जा करने के षडयन्त्र कर रहे हैं। गत सप्ताह आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्सग मे कुछ गुण्डो ने आकर उत्पात मचाने का प्रयत्न किया।

सभा ने सर्व सम्मति से घोषणा की कि यदि आर्यसमाज की भूमि पर अनधिकृत कब्जा करने का कुछ शरारती लोगो ने फिर प्रयत्न किया तो उनका डटकर विरोध किया जायेगा और आर्यसमाज मन्दिर की रक्षा के लिए प्रत्येक बलिदान किया जावेगा। साप्ताहिक सत्सग में विघ्न डालने की गुण्डागर्दी की भी निन्दा की गई। —हरिश्चन्द्र दत्ता प्रधान

आर्यसमाज चौक, मथुरा

रजत जयन्ती समारोह दि० २४ से २८ अक्टूबर तक बडे उत्साह के साथ मनाया जा रहा है। इस अवसर शोभा यात्रा, शास्त्रार्थ, अराष्ट्रीय तत्व निरोध, शिक्षा, महिला, वैदिक राष्ट्र निर्माण, वेद, अध्यात्म, तथा आर्य युवक (आर्यवीर), सम्मेलन होगे)।

मथुरा जिले के अतिरिक्त अन्य कई जिलो तथा प्रान्तों के आर्य भाई-बहिन, आर्य जगत् के मूर्धन्य तपस्वी महात्मा, विद्वान्, महोपदेशक, आर्य भजनोपदेशक एव मान्य नेतागण इस आयोजन मे पधार रहे हैं। इस विराट् आर्य सम्मेलन मे सभी आर्यगण सादर आमन्त्रित हैं।

—ईश्वरीप्रसाद प्रेम एम ए,

आर्य युवक विद्यार्थी सभा चिरपाली (राजस्थान)

निर्वाचन सव सम्मती से हुआ जिसके प्रधान—श्री अमरसिंह जी, मन्त्री—श्री ईश्वरसिंह जी, कोषाध्यक्ष—श्री आसूसिंह जी।

विरजानन्द निर्वाण शताब्दी

सुखानन्द आर्य हाई स्कूल तपा की ओर से समारोह से मनाया गया। इसी उपलक्ष मे स्कूल मे छुट्टी रही। —हैडमास्टर आ० हा० स्कूल

आर्यसमाज, परमानन्द बस्ती (रथखाना), बीकानेर

वार्षिकोत्सव २६ अक्टूबर से २ नवम्बर ६९ तक यज्ञ तथा कथा के आयोजन के साथ सम्पन्न होगा। इस समय आर्य जगत् के अनेक संन्यासी, वानप्रस्थी महात्मा विद्वान् उपदेशक और भजन प्रचारक पधारेंगे।

—प्रतापसिंह मन्त्री

"वार्षिकोत्सव"

आर्यसमाज (बी० ब्लाक) गोविन्द नगर कानपुर का वार्षिकोत्सव दिनाङ्क १ से ४ नवम्बर ६९ तक बडे ही धूमधाम एव समारोह पूर्वक मनाया जायगा जिसमे आर्य जगत् के उच्चकोटि के सन्यासी, मूर्धन्य विद्वान् एव भजनोपदेशक पधार रहे हैं। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्य युवक संघटन नारनौल

महाशय ताराचन्द जी आर्य के प्रयत्न से सघटन किया गया है। आगे लिखे अनुसार निर्वाचन हुआ। प्रधान—श्री अमरसिंह सेवरा, मन्त्री—ब० बुद्धदेव यादव, कोषाध्यक्ष—श्री रामनरेश। आर्यसमाज के मन्त्री श्री प्रह्लाददत्त जी का पूरा सहयोग प्राप्त हुआ। —निज सवाददाता

आर्य जनता सावधान

आर्यसमाज बडोदा के मन्त्री जी ने किसी विनोद दूबे उपनाम श्रुति भिक्षु के विरुद्ध सूचना प्रकाशित करवाई है। आर्यमर्यादा का सम्पादक समाचार के प्रकाशन के प्रति उत्तरदायी नहीं है। —व्यवस्थापक

शुद्धि समाचार

आर्यसमाज शक्ति नगर दिल्ली मे कुमारी मेरी एन मरियम्स को वैदिक धर्म की दीक्षा देकर 'मीना' नाम रखकर 'मनमोहन कुमार कपूर' माडल टाउन के साथ विवाह सम्पन्न हुआ। —मन्त्रीआर्यसमाज

होशंगाबाद मे शुद्धि समारोह

आर्यसमाज मंदिर मे सुशीला नामक ईसाई युवती को उसके लिखित अनुरोध पर हिन्दु धर्म में दीक्षित करके उसका वही पुराना नाम सुशीला रक्खा गया है और उसका विवाह होशगाबाद निवासी श्री नरेन्द्र कुमार मालवीय के साथ वैदिक रीति से कर दिया गया।—चन्द्रभूषण शर्मा मन्त्री।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१ सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द मूल्य ३-००
२ धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी १-२५
३ सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतो का सग्रह १-००
४ आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखो का सग्रह १-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द १-२५
६ वैदिक सत्सग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित ०-५०
७ कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी ६-००
८. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित) ०-४०
९ वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि) ०-७५
१० जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम ए ३-०
११. सोमसरोवर " " " ३-०
१२ वैदिक सिद्धान्त— १ ०
१३ Principle of Arya Samaj " " १-५०
१४ Glimpses of Swami Daya Nand १-०
१५ Subject Matter of Vedas १-०
१६ आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी ०-५०
१७ मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर १-०
१८ प० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित्र—ले० प्रो० रामप्रकाश १-३५
१९ वैदिकधर्म की विशेषताएँ—प० हरिदेव जी १०) सकड़ा
२० पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद २ ००
२१ सन्ध्या, क्या, क्यो, कैसे, ले० प० मनसाराम उपाध्याय २-००
२२ मैं और मेरा भगवान्, " १-५०
२३ सनातन धर्म, " " " ०-७५
२४ Budha & Daya nand " " " २-००
२५ नीहारिकावाद और उपनिषदें ले० प० चमूपति जी एम ए ०-२५
२६ काया कल्प ले० प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार १-००
२७ बाल कहानियाँ आर्यसामाजिक कहानियों का सग्रह ०-७५
२८ मर्यादा पुरुषोत्तम राम ले० कु. सुशीला आर्या एम ए ०-२५
२९ आर्यसमाज क्या मानता है, ले० प० मदनमोहन विद्यासागर १०) सैकड़ा
३० गोकरुणानिधि, ले० स्वामी दयानन्द जी १०) "
३१ आर्य नेताओ के वचनामृत डा० काईदास भण्डारी १०) "
३२ देवयज्ञ रहस्य, ले० प० चमूपति जी एम० ए० ००-१५
३३ ऋषि का चमत्कार " " " " ००-५०
३४ वेदों का यथार्थ स्वरूप ले० प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ५-००
३५ वीर भूमि हरयाणा ले० आचार्य भगवान् देव जी ३-००
३६ मास मनुष्य का भोजन नही " " " " १-००
३७ विदेशो मे एक साल ले० स्वा स्वतन्त्रानन्द जी २-२५
३८ वैदिक कर्त्तव्य शास्त्र २-००
३९ ईशोपनिषद भाष्य १-००

व्यवस्थापक—"आर्यमर्यादा" १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

जैसे ऋग् यजुः साम और अथर्व चारो वेद ईश्वर कृत् हैं, वैसे एतरेय, शतपथ, साम और गोपथ चारो ब्राह्मण, शिक्षा कल्प, व्याकरण, निघण्टु निरुक्त छन्द और ज्योतिष् छः वेदो के अंग, मीमांसा आदि छः शास्त्र वेदो के उपांग, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्व वेद और अर्थवेद ये चार वेदो के उपवेद इत्यादि सब ऋषि मुनि के किये ग्रन्थ हैं इन मे भी जो जो वेद विरुद्ध प्रतीत हो उस उस को छोड़दे ना चाहिये। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४६ | १७ कार्तिक वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २ नवम्बर १९६९ रविवार,
सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९
सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१० रु०
,, ,, विदेश में २० रु०
एक प्रति का मूल्य २० पैसे

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनः स कीदृशः किं कुर्यादित्युपदिश्यते ॥

फिर वह कैसा है और क्या करे, इसका उपदेश अगले मन्त्र में किया है"

त्वामग्ने प्रथममायुमायवे देवा अकृण्वन्नहुषस्य विश्पतिम् ।
इळामकृण्वन्मनुषस्य शासनीं पितुर्यत्पुत्रो ममकस्य जायते ॥

—ऋ० १. ३१. ११ ॥

पदार्थः—(त्वाम्) प्रजापतिम् (अग्ने) विज्ञानान्वित (प्रथमम्) सर्वेष्वग्रगन्तारम् (आयुम्) य एति न्यायेन प्रजास्तम् (आयवे) यथा विज्ञानाय (देवाः) विद्वांसः (अकृण्वन्) [illegible] (विश्प- [illegible] वाचम् (अकुर्वन्) कुर्युः (मनुषस्य) मनुष्यस्य (शासनीम्) शास्ति सर्वान् विद्याधर्माचरणशीलान् यया सत्यनीत्या ताम् (पितुः) जनकस्य सकाशात् (यत्) यथा (पुत्रः) यः पितृपावनशीलः (ममकस्य) मामकस्य (जायते) उत्पद्यते ॥

अन्वयः—हे अग्ने विज्ञानान्वित सभाध्यक्ष देवा नहुषस्यायव इमामिळामकृण्वन् विद्यामकुर्वन् मनुष्यस्य शासनीं सत्य शिक्षां चाकृण्वन् प्रजा च यत्-यथा ममकस्य पितुः पुत्रो जायते तथा भवति ॥

भाषार्थः—हे अग्ने विज्ञानयुक्त सभाध्यक्ष (देवाः) विद्वानों ने (नहुषस्य) मनुष्य की (आयवे) विज्ञान वृद्धि के लिये इस (इळाम्) वेदवाणी को (अकृण्वन्) प्रकाशित किया [illegible] (अकृण्वन्) प्रकाशित किया और (यत्) जैसे (ममकस्य) हम लोग (पितुः) पिता होते हैं उनका (पुत्रः) पुत्र अपने शील से पितृवर्ग को पवित्र करने वाला (जायते) उत्पन्न होता है वैसे राजवर्गों के प्रजाजन होते हैं ॥

भावार्थः—नचेश्वरप्रणीतेन व्यवस्थापकेन वेदशास्त्रेण राजनीत्या च विना प्रजापालकः प्रजां पालयितु शक्नोति प्रजाजनश्च राज्ञोऽपत्यसन्तान वद्भवत्यतः सभापती राजाऽपुत्रमिव प्रजां शिष्यात् ॥

भावार्थ:—ईश्वरोक्त व्यवस्था करने वाले वेद शास्त्र और राजनीति के बिना प्रजा पालने हारा सभापति राजा प्रजा नहीं पाल सकता है और प्रजा राजा के अज्ञ सन्तान के तुल्य होती है इस से सभापति राजा पुत्र के समान प्रजा को शिक्षा देवे ॥

(ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य से)

हैदराबाद में झगड़ों को निपटाने का दायित्व मैंने स्वयं नहीं लिया था अपितु मेरे ऊपर डाल दिया गया था। मेरे साथ (श्री रामगोपाल की सार्वदेशिक सभा द्वारा) अन्याय पर अन्याय हो रहा है और मै संन्यासी होने के कारण चुप हूं।

महात्मा आनन्द स्वामी जी का कथन

महात्मा आनन्द स्वामी जी को सार्वदेशिक सभा की अन्तरग दिनांक २४-८-६९ का निम्न प्रस्ताव सूचनार्थ भेजा था तथा यह भी बता दिया था कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने निम्न उस समिति मे रहने से इन्कार कर दिया है।

प्रस्ताव—"हैदराबाद आर्य महा-सम्मेलन के निश्चयानुसार प्रान्तीय सभाओं के विवाद को निपटाने के लिये श्री महात्मा आनन्द [illegible] मे पंजाब सभा के [illegible] सर्व सम्मत हल निकालने से पूर्व इस दायित्व को बीच मे ही छोड़ दिया जिससे यह विवाद और उग्र रूप मे सामने आने लगे।

अतः यह सभा श्री आनन्दस्वामी जी द्वारा छोड़े गये अधूरे कार्य को पूर्ण रूप से निर्णायक स्थिति तक पहुंचाने का दायित्व निम्नलिखित तीन संन्यासी महानुभावों को सौंपती है कि वे न्याय सभा के निर्णय तथा सार्वदेशिक सभा के नियमोपनियम के अनुसार आर्यसमाज में चल रहे विवादों का हल निकाल कर सभा को सूचित करे जिससे उस निर्णय को वैधानिक रूप देने मे सभा अपने अधिकार का प्रयोग कर सके—

१. श्री स्वामी आनन्दभिक्षु जी, २. श्री स्वामीरामेश्वरानन्द जी, ३. श्री स्वामी विद्यानन्द जी 'विदेह'।

उपर्युक्त प्रस्ताव की भाषा से दुःखी होकर महात्मा जी ने निम्न पत्र लिखा :—

("सत्य प्रतिलिपि")

आर्य दिवाकर, वानिका स्ट्रीट, २१० पारमारबो (सुरिनाम), साऊथ अमरीका, १५-१०-६९

मेरे प्यारे श्री मल्ला जी, सप्रेम नमस्ते।

पत्र आपका मिला, हजारों मील दूर मैं पाताल देश में बैठा हूं और वेद सन्देश सुनाने में निरन्तर लगा हू। मेरी गैर हाजरी में सार्वदेशिक सभा ने यह गलत और अधूरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, मैं तो इधर सार्वदेशिक सभा के गुण गा रहा हू और वह मेरे ऊपर ऐसी कृपा कर रहे हैं।

हैदराबाद में झगड़ों को निपटाने का दायित्व मैंने स्वयं नहीं लिया था, अपितु मेरे ऊपर डाल दिया गया था—फिर मुझे सफल होने में बाधा किसने डाली—यह भी तो लिखना चाहिए था, मेरे साथ अन्याय पर अन्याय हो रहा है, और मैं सन्यासी होने के कारण चुप हू। मैं जब से इधर आया

शेष पृ० ४ पर

आकाशवाणी द्वारा प्रसारित—

ग्रामीण जीवन में रहन-सहन

(ले०—कु० सुशीला आर्या एम० ए० विद्यावाचस्पति
राजकीय उच्च० मा० कन्या विद्यालय, चरखी दादरी)

रहन-सहन मनुष्य जीवन का एक आवश्यक अंग है। कौन मनुष्य कितने पानी मे है वह पढा लिखा है या अनपढ निर्धन है या धनी, इसका अनुमान बहुत बार हम उसके रहन-सहन को देखकर ही करते हैं। वैसे तो कई बार जेब कतरे भी भले आदमियो की सी वेशभूषा मे देखने को मिल सकते हैं और अच्छे धनी व्यक्ति भी उचित रहन-सहन की कमी मे कगाली दिखाते नजर आते हैं। फिर भी किसी की योग्यता आर्थिक दशा और कुल परिवार को समझने के लिए रहन-सहन का महत्त्व भुलाया नहीं जा सकता। रहन-सहन मे जीवन की तीन आवश्यकतायें रोटी-कपडा और मकान की गिनती की जाती है।

गाँव के लोगो का रहन सहन मुख्य रूप से सीधा सादा होता है। वे केवल शरीर की रक्षा के लिये कपडे पहनते हैं, सजावट के लिए नही, किन्तु हमारी ग्रामीण बहिनो मे ऐसी बात नही। वे अपने लहंगे, चोली या चूनरी के रगो या गोटे सितारे की चमक दमक के चुनाव मे नये-से नये फैशन वाली शहरी बहनो से किसी भी प्रकार कम नही हैं किन्तु अवश्य कहना पडेगा कि हमारे गावो के लोग कपडो की सफाई पर बिल्कुल ध्यान नही देते। रूमाल और तौलिये का प्रयोग करना तो वे बहुत कम जानते हैं इसलिये धोती या ओढने के ही एक पल्ले से बर्त्तनो को पोछ लेना आम रिवाज है। इस काम मे बच्चे भी बडो का ही अनुकरण करते हैं। वे कमीज से हाथो का मैल स्याही और नाक तक पोछ लेना साधारण बात समझते हैं एक तो इन कपडो का प्रयोग ही गलत ढग से किया जाता है फिर हमारे ग्रामीण भाई बहिन कपडो को धोते भी जल्दी से नही। कुछ लोग तो ऐसे हैं जो कपडा पहन लिया सो पहन लिया, फट भले ही जाए पर धलेगा नही। खास तौर पर स्त्रियो के भारी-भारी लहंगे धोए जा भी नहीं सकते। उनमे नाक को चुभने वाली गन्ध आती रहती है। भाई भी कपड सिलाते समय [illegible] का ध्यान नहीं रखते कि वे धुलाई में कैसे रहेंगे।

ग्रामीण जीवन के रहन-सहन में गहनों का महत्त्व खूब बढा चढा है, हमारी बहिन तो हर आयु में सिर से पैर तक गहनो की जंजीरो से जकडी रहती हैं इनसे धन का व्यर्थ खर्च तो होता ही है क्योकि सेरो चान्दी का बोझ जो हम शरीर पर लादे फिरती हैं यह धन यदि देश के उद्योग धन्धो में लगाया जाता तो कितना लाभ होता। साथ ही ये गहने शरीर के लिये रोगो को निमन्त्रण देते हैं। हमारी ग्रामीण बहनो के हाथ, पैर, नाक, कान, कमर, अंगुलियाँ सब गहनो से जकडी रहती हैं। शरीर पर काले दाग पड जाते हैं। हाथो के गहनो मे मैल फँस जाता है। जो खाना बनाने खाने में भीतर जाकर हानि करता है इतना जरूर है कि ग्रामीण के रहन-मे एक मर्यादा है। स्त्रियो के पहनावे से आप उनकी स्थिति का पता आसानी से लगा सकते हैं। लडकियों की पोशाक की सादगी के विषय में हमारे ग्रामीण समाज में एक कहावत है—जावे बेटी गुदडे लपेटी। बूढी स्त्रियाँ अथवा विधवा का पहनावा भी अलग होता है जैसा कि शहरी समाज मे अब नहीं रहा। इस सादगी मे कोई दोष नहीं परन्तु मैल से छुटकारा पाना आवश्यक है।

कपडो की भाति ही खान-पान की दृष्टि से भी ग्रामीण लोग पिछडे हुए हैं। हमारे ग्रामो मे सौन्दर्य की कमी नही किन्तु वह निखरने नही पाता। कारण एक तो ग्रामीण लोग खान पान के नियमो का पालन नही करते। रातबासी दलिया या खिचडी खा लेने में उन्हे कोई सकोच नही होता जिनके सयोग से घी दूध का प्रयोग भी बेकार हो जाता है। खाने के बर्त्तन मैले रखना भी हम ग्रामीणो का स्वभाव सा हो गया है। इनमे बना भोजन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। बडे छोटे सभी रोग का शिकार होते रहते हैं। बच्चो को प्राय चर्म रोग घेरे रहते हैं। हुक्का और दूसरे नशीले पदार्थों का सेवन करने से बूढे दिन-रात खो-खो करते है। फूल से सुन्दर कोमल बच्चो को खुरदरे मैले कपडो में लपेटे रखना, उनके स्वास्थ्य व सफाई का ख्याल न करना आम बात है। ग्रामीणो के रहन-सहन के स्तर को गिराने मे मुकद्दमेबाजी का भी बडा हाथ है। क्योकि उनके धन का बहुत सा भाग इन्ही पर खर्च हो जाता है।

मकान का रहन-सहन से गहरा सम्बन्ध है। किन्तु हमारे ग्रामीण भाई मकान बनाने मे भी ज्यादातर ना समझी बरतते हैं। हमारे गाँवो में कच्चे मकानो का स्थान तो पक्के घरो ने ले लिया है किन्तु एक तो वे स्थान बहुत घेरते हैं। दूसरे उनमे किसी काम के लिए स्थान नियत नही। जहाँ देखो वही चारपाई बिछा ली, जहा बैठें वही खाना खाने लगे। साफ सुथरी धरती पर बोरी या आसन बिछा कर खाना खा लेना फिर भी इतना खटकता नही किन्तु खाट पर ही थाली रख कर खाने बैठ जाना हमें तो फूटी आँखो नही सुहाता। इससे खाट भी खराब, खाना भी और गिर जाये तो खाने की चीज भी बेकार गई।

सच पूछे तो ग्रामीणो के रहन-सहन मे कोई तरतीब नही। बस जीवन की गाडी घसीटी जा रही है। जिन्दगी है कि गले पडा ढोल बजाना पड रहा है। बिना योजना का हर काम है। कभी लौटे भर दूध तो कभी रूखी रोटी ही सही। कुछ बातो में हमार ग्रामीण भाई बहन शहर के लोगो का अनुकरण भी करते हैं तो अधकचरापन रह जाता है। जैसे कि गावो में चाय का प्रचार बढा है। किन्तु एक प्याला नही बल्कि लोटा भर चाय पी जाती है। जो अधिक मात्रा मे होने के कारण हानि करती है। बसो में गाडियो मे हमने अपने ग्रामीण भाइयो को बडल के बडल बीडी पीते देखा है। कहने पर वे किसी की सुनते भी तो नही। फिर भी वे लोग स्त्रियो का सम्मान करते हैं। गाडी या बस मे स्वय खडे होकर महिलाओ को स्थान दे देना उनके लिए साधारण बात है।

ग्रामीण पारिवारिक जीवन छिन्न-भिन्न सा है। बच्चे भी बडो की देखा-देखी बुरी आदत सीख जाते हैं। सवेरे उठते ही न हाथ मुह धोयगे न कुल्ला करेगे, जब देखें तब खाने लगगे। स्कूल मे पढने जाय तब भी बस्ता कहीं पटक दिया। हमारे ग्रामीण घरो में रस्सियो पर मैले कपडे झूल रहे हैं तो चक्की पर बिस्तरो का ढेर। हमारी बहने बाल इस ढग से बाधती हैं कि न जल्दी धोए जाय, न साफ हो। बोलने का ढग भी बहुत बार बडा अखरने वाला होता है। कमरो के सब दरवाजे बन्द रखना मुह सिर लपेटकर सोना, धुएं से सारे घर को काला करना, छतो पर [illegible] रखना, जैसे अनेक दोष ग्रामीणो के रहन-सहन में पाए जाते हैं।

हम चाहे गाव में रहते हैं या शहर में पढे-लिखे हैं या अनपढ अपने गावो को सुधारने का सभी को यत्न करना चाहिये। भारत की आत्मा गावो मे बसती है। जब तक हम ग्रामीण जीवन में रहन-सहन के स्तर को नही सुधारेंगे तब तक देश का कल्याण नहीं हो सकता।

नया-तराना

(लेखिका—कु० सुशीला आर्या एम० ए० चरखी दादरी)

विशेष—महेन्द्रगढ जिला के राजकीय कन्या विद्यालयों की वार्षिक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रतियोगिता में समूह-गीत के रूप में प्रथम पुरस्कार प्राप्त गान।

आया नया प्रभात, तराना नया सुनायेंगे,
विश्व के सब मुस्कायेंगे।
हम मे गगा का गौरव, हिमगिरि की ऊँचाई,
हम लाए सूरज की प्रात किरण की अरुणाई,
भारत मा का भाग, जगाने सब मिल जायेंगे,
धरा पर स्वर्ग बसायेंगे। आया नया· ·
हम युग बदले, युग की माया बदल दिखा देंगे,
मानव को मानव बन कर, जीना सिखला देंगे,
भूल चुके जो राह उन्हें भी राह दिखायेंगे,
तभी मञ्जिल को पायेंगे। आया नया···
आँच देश पर आए जिससे वह न काम करें,
तोड-फोड हिंसा से न भारत बदनाम करें,
नगर डगर घर बीच, आशा का दीप जलायेंगे,
अन्धेरा दूर भगायेंगे। आया नया ··
तरुणाई के अगडाई सुख सम्पत्ति मुस्काए,
हो आराम हराम, सफलता पग छूने आए,
देकर श्रम का दान, नई खुशहाली लायेंगे,
बहारें पास बुलायेंगे। आया नया ··

सम्पादकीय

राष्ट्रिय एकता का आधार

१—"यद्यपि मैं आर्य्यावर्त्त में उत्पन्न हुआ और बसता हू तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरो की झूठी बातो का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हू वैसा स्वदेश वालो के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्त्तता हू वैसा विदेशियो के साथ भी। तथा सब सज्जनो को भी वर्त्तना योग्य है।"

२—"यह निश्चय है कि इन विद्वानो के विरोध ही ने सब को विरोध जाल में फसा रक्खा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फस कर सब के प्रयोजन को सिद्ध करना चाहे तो अभी ऐक्य मत हो जायें।"

३—'जब विद्वान् लोगो मे सत्य-असत्य का निश्चय नही होता तभी अविद्वानो को महा अन्धकार मे पड कर बहुत दु ख उठाना पडता है।"

४—'जो जो सर्वमान्य सत्य विषय है वे तो सब मे एक से हैं झगडा झूठे विषयो मे होता है। अथवा एक सच्चा और दूसरा झूठा हो तो भी कुछ थोडा सा विवाद चलता है। यदि सत्य-असत्य निश्चय के लिये वाद प्रतिवाद करें तो अवश्य निश्चय हो जाय।"

५—"सज्जनों की यही रीति है कि अपने वा पराये दोषो और गुणो का गुण जान कर गुणो का ग्रहण और दोषो का त्याग करें और हठियो का हठ दुराग्रह न्यून करें करावें क्योकि पक्षपात से क्या क्या अनर्थ जगत् न हुए और न होते हैं।"

६—'हम तो यही मानते हैं कि सत्यभाषण, अहिंसा, दया आदि शुभ गुण सब मतो मे अच्छे हैं। बाकी वाद, विवाद, ईर्ष्या, द्वेष, मिथ्याभाषणादि कर्म सब मतो मे बुरे हैं।"

७—"मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत अन्यो के सुख दु ख और हानि लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।"

८—"सत्य बोलना सबके सामने अच्छा और मिथ्या बोलना बुरा है ऐसे सिद्धान्तो को स्वीकार करता हू और जो मतमतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं उन को मैं प्रसन्न [पसन्द] नही करता क्योकि इन्ही मत वालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फसा के परस्पर शत्रु बना दिये हैं। इस बात को काट सर्व सत्य का प्रचार कर सब को ऐक्य मत में करा द्वेष छुड़ा परस्पर में दृढ प्रीति युक्त कराके सब से सब को सुख लाभ पहुचाने के लिये मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है॥"

ये उपर्युक्त आठ सन्दर्भ-वचन सम्वत् १९३१ विक्रमी मे अर्थात आज से ८७ वर्ष पूर्व ऋषि दयानन्द ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश मे लेख बद्ध किये थे।

आज हमारे राष्ट्र में जो बाह्य और आन्तरिक द्वेष और पारस्पारिक विरोध फैला हुआ है, इसके समाधान के लिये ऋषि के उपर्युक्त अक्षर अक्षर आज भी प्रयोग मे लाये जा सकते हैं। जब तक हमारे राष्ट्र के नेता सत्य-असत्य को नही पहिचानेगे और पहिचान कर सत्य पर आचरण नही करेंगे, तब तक बाहरी और भीतर झगडे कभी शान्त नही हो सकते।

राजनीतिक नेता लोग कितना ही निष्पक्षपात होने का राग अलापें कितना ही ढोल पीटें कि राष्ट्र मे से साम्प्रदायिकता=मजहबी उन्माद को मिटा कर रहेंगे। परन्तु दो और दो चार अटल सिद्धान्त के आधार पर निश्चय से कहा जा सकता है कि ये कभी इस साम्प्रदायिकता के विष की बेल की जडो को उखाड नही सकते। दिखावटी राष्ट्र एकता सम्मेलनो का बार बार आयोजन किया जाता है और बाह्य आडम्बर के प्रस्ताव पास करके छुट्टी पा लेते हैं। और यह महारोग उसी प्रकार फूलता फलता रहता है और समय-कुसमय इस रोग के बीज बखेर दिये जाते है। जब तक रोग के कीटाणुओ को कठोर चीर फाड के द्वारा राष्ट्र शरीर से बाहर करके नष्ट नहीं कर दिया जावेगा तब तक ये सम्मेलन केवल ढोंग ही बने रहेंगे।

विरोधी सम्प्रदायो के विषय मे समान रूप से निन्दा कर देने से कभी काम नहीं चल सकता। कौन सम्प्रदाय राष्ट्र की एकता पर खुल कर कुल्हाड़ा चलाता है, जब तक उसके विरोध में खुल कर घोषणा नही की जावेगी और उस के विरुद्ध कठोर कार्यवाही नहीं की जावेगी, तब तक एकता का नाम भी लेना आकाश से फूल तोडने के समान है।

"सब मत सच्चे नही हो सकते। सत्य बातो मे सब का ऐक्य हो सकता है, परन्तु परस्पर विरुद्ध मतो मे दोनो कभी सच्चे नहीं हो सकते।

खेद से कहना पडता है कि वर्त्तमान जन शासन प्रणाली मे मतों=वोटो के आधार पर शासन सूत्र कभी निष्पक्ष रूप मे सभाला नही जा सकता। वोट मागते समय साम्प्रदायक और बिरादरी वाद के नग्न ताण्डव मे सब राजनीतिक खिलाडी खल के खेलते हैं। जिन के वोट लेकर सफल और शासन सूत्र सभाला, उन की माग के विरोध मे उन का मुख कदापि खुल नही सकता।

भारतीय राष्ट्र के वासियो! पढिइये—इस महा अपराध को दूर करने का भी एक ही उपाय है—लीजिये—

"भिन्न भिन्न भाषा पृथक् पृथक् शिक्षा अलग व्यवहार का विरोध छटना अतिदुष्कर है। विना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है।" —सत्यार्थप्रकाश

यदि हमारे राजनीतिक नेताओ मे ऐसा साहस होता तो देश विदेश में अपमान के कडवे घूंट बार बार पीने को न मिलें। हमे तो ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रशासन प्रणाली के थैले कई जगह से उधडे हुए हैं। पहिले इन पुराने घिसे पिटे राजनीतिक थैलो को परे फेंक कर नये सुदृढ आधार नहीं ढूंढे जावेंगे, तब तक देश की नैया मझधार मे इधर उधर डोलती ही रहेगी। समय आ सकता है कि शासन सूत्र की पद्धति मे परिवर्तन करना पडे, जैसा कि नमूने के रूप मे राष्ट्रपति के वर्त्तमान निर्वाचन राष्ट्र देख चुका है।

जिन मतमतान्तर रूपी पौधो वृक्षो की जडे खेत मे गुप्त रूप से अन्यत्र फैली हुई हैं, उन जडो को जानना ही एक कठिन समस्या है। जो अपना नही है उस से भलाई की क्या आशा की जा सकती है? ग्रामीण लोकोक्ति मे कहा गया है कि अपना मारेगा, तो भी छाया मे तो डालेगा ही।"

आशा है राष्ट्र की एकता के चाहने वाले देश वासी इन पंक्तियो के भावो पर कुछ विचार करेंगे।

लेखक और कवियों से पुनर्निवेदन

कई महानुभाव एक ही लेख अथवा कविता को भिन्न भिन्न आर्य पत्रो मे प्रकाशनार्थ भेज देते हैं। आर्य पत्रो मे लेख भेजना पत्रो को पूरा सहयोग देना है इस को हम हृदय से स्वीकार करते हैं। परन्तु लेखक महानुभावों को चाहिये कि अनेक पत्रो मे अपनी रचना भेजते रहें, परन्तु भिन्न भिन्न पत्रो में भिन्न भी रचना भेजें। एक ही रचना अनेक पत्रों मे नहीं, इस से यह होता है कि उनकी रचना यदि किसी पत्र मे बाद मे प्रकाशित होती है, तो जो पाठक अनेक पत्रो को पढते हैं, तो उनकी दृष्टि मे पीछे छपने वाले पत्र के प्रति अरुचि हो जाती है। इस से पत्र का स्तर कम हो जाता है। यह प्रकाशन तो एक प्रकार की झूठन खिलाना है, जो कि दोष नही। कई बार ज्ञात न होने पर एक प्रकाशन हो जाता है और दूसरे पत्र मे भी उस को प्रकाशित हुए देखा, तो हमे भी खेद होना स्वाभाविक है। कुछ पूज्य विद्वानो की रचनाए अनेक पत्रो मे प्रकाशित होती हैं, परन्तु भिन्न भिन्न विषयो पर। इस परिपाटी मे कुछ दोष नही आये तो पाठक बन्धुओ के लिए लाभ ही होता है। आशा है हमारे आदरणीय लेखक तथा कवि सज्जन हमारे पुनर्निवेदन पर ध्यान देकर कृतार्थ करेंगे।

श्री ओम्प्रकाश शर्मा को सहयोग दीजिये

स्वर्गीय प० मेहरचन्द जी शर्मा आर्य वीर के नाम से पजाब हरयाणा और देहली के सभी आर्यसमाज तथा आर्य भाई परिचित रहे हैं। पजाब मे उर्दू का गढ होते हुए भी उन्होंने अपने मासिक आर्य वीर" जालन्धर हिन्दी देवनागरी मे बदल दिया था। श्री ओमप्रकाश जी उन्ही के सुपुत्र हैं। इन के पिता जी कई वर्ष बीमार रह कर स्वर्ग सिधार गये। इन पर ही सब बाल बच्चो का भार पड गया है। पिता जी की बीमारी मे सब जमा पूजी खर्च कर दी। इस का काम पुस्तके बेचने का है। अब पुन अपने धन्धो मे लगे हैं। हम समस्त आर्यसमाजो से निवेदन करते हैं कि पुस्तकें खरीद कर इन्हें अपने पाव पर खडा होने मे सहयोग देवें। दुकान पुनः चालू करने मे कुछ आर्थिक सहयोग भी चाहिये। अत स्वर्गीय पण्डित जी के प्रेमियो से कुछ आर्थिक सहायता की भी अपेक्षा है। आशा है आर्य भाई बहिन इन्हे सहयोग देकर एक आर्य को अपने पाव पर खडा होने का अवसर देंगे।

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

अधिकारियों द्वारा सहायता का आश्वासन देने पर

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों आदि द्वारा अनशन आन्दोलन समाप्त।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुछ प्राध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियों ने १९-१०-६९ को वेतन न मिलने तथा ग्रेडों की उन्नति के लिये अनशन आरम्भ किया था। प्रो० रामसिंह जी कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने डा० अनन्तानन्द जी प्रिंसिपल आयुर्वेद कालेज द्वारा उन्हें लिखित आश्वासन दिये हैं कि बैंकों के खुलते ही उन्हें वेतन दे दिया जावेगा तथा शिक्षा मन्त्रालय द्वारा उन्नत ग्रेड स्वीकार होने पर लागू कर दिये जावेंगे। उपर्युक्त आश्वासन के आधार पर सबने शनिवार दि० २५-१०-६९ सायं अनशन समाप्त कर दिया है। अब वहां वातावरण शान्त है। स्मरण रहे कि श्री दीवान रामशरनदास तथा श्री दीनदयालु शास्त्री की रिपोर्टों के आधार पर बैंकों ने गुरुकुल कांगड़ी तथा फार्मेसी के सब एकाउण्ट बन्द कर रखे हैं। जब भी कभी एकाउण्ट खुलने की आशा होती है, श्री दीनदयालु शास्त्री तथा अन्य कुछ स्नातक एकाउण्ट बन्द रखने के लिये बैंकों के अधिकारियों को तार तथा पत्र लिखना आरम्भ कर देते हैं। फिर भी बैंक वाले धन देने को तैयार हैं परन्तु खेद है कि श्री दीनदयालु शास्त्री ने रुड़की न्यायालय में अभियोग करके बैंकों का धन निकालने में रोक लगवा रखी है। सभा अधिकारियों द्वारा प्राध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियों को सारी स्थिति का पता लगने पर वहां अब श्री दीनदयालु शास्त्री तथा उनके अन्य कुछ साथियों के उपर्युक्त अनुचित कार्यों से सब कर्मचारी अत्यन्त क्षुब्ध हैं। आशा है कि वह अब श्री दीनदयालु शास्त्री को बैंकों को लिखी रिपोर्ट वापस लेने तथा बैंक एकाउण्ट खुलाने के लिये बाधित करेंगे।

—(विशेष प्रतिनिधि-हरकारा, २७ १० ६९)

श्री गुरु विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में और मुल्लाक के पत्र का हिन्दी में

॥ पद्यानुवाद ॥

(श्री अम्बादान आर्य, कवि, कुटिर) [illegible] (राजस्थान)

तीर्थ गाह पर मथुरा मध्य, हुई विशाल एक पचायत।
वर्तमान साल पुनि तेरह, था उन्नीस विक्रमी सम्वत ॥१॥
हिन्दू मुस्लिम सब मजहबों के, नेता शामिल हुए विशेष।
आया एक इसी [illegible] में, [illegible] [illegible] में [illegible] ॥२॥
आने पर मजलिस में सब ने, बड़े प्रेम से [illegible] किया।
मजहबी सभी फकीरों ने मिल, कर अगवानी [illegible] लिया ॥३॥
विद्यमान पचायत के सब, लोगों ने सत्कार किया।
था वो दृश्य देखने लायक, हो हर्षित जयकार किया ॥४॥
प्रथम नाना साहब पेशवा, मौलवी मुन्शी मुल्लाखान।
[illegible] बहादुरशाह का, साथ [illegible] शाहजादा जान ॥५॥
इन्हें सबके सोने की मोहरें, करी भेंट आदर के साथ।
नत मस्तक हो नम्र भाव से, परम प्रेम से कर प्रणिपात ॥६॥
मुस्लिम एक फकीर खड़ा हो, हिन्दू सन्त [illegible] कर एक।
कहा—हमारे पूज्य गुरु की, सुने शान्ति से बानी नेक ॥७॥
देश वासियों के हित होगी, "सत्य सिद्ध" यों कहा बखान।
[illegible] का यह [illegible], मिला हमें प्रभु का [illegible] ॥८॥
प्रथम उसने प्रभु स्तुति, प्रसन्न चित्त की [illegible] प्रकार।
फिर उर्दू में कर भाषान्तर, समझाया 'गुरु' ने सार ॥९॥
कहा कि आजादी जन्नत है, दोजख है रहना परतंत्र।
साहस भरे सरल शब्दों में, निकला उनके मुख से यह मन्त्र ॥१०॥

"ब्रह्मचर्य"

[ब्र० रामदेव आर्य अध्यक्ष गुरुकुल आर्यनगर पो० पुरड़ी (हिसार)]

"ब्रह्मचर्य" यह पद दो शब्दों से बना है। ब्रह्म और चर्य, 'ब्रह्म' का अर्थ है ईश्वर, वेद, ज्ञान, वीर्य और 'चर्य' का अर्थ है चिन्तन, अध्ययन, उपार्जन और रक्षणादि। इस प्रकार ब्रह्मचर्य के अर्थ ईश्वर चिन्तन, वेदाध्ययन, विद्योपार्जन वीर्य रक्षणादि हुए।

वैसे ब्रह्मचर्य का अर्थ लोग वीर्य-रक्षण ही समझते हैं किन्तु इसके साथ ही ईश्वर चिन्तन, वेदाध्ययन तथा ज्ञान, विद्या उपार्जन करने का नाम भी ब्रह्मचर्य है। जो व्यक्ति वीर्य की रक्षा नहीं करता और विषय में फंसा रहता है, वह ईश्वर चिन्तन, वेदाध्ययन और विद्योपार्जन कभी भी नहीं कर सकता। वीर्य क्या वस्तु है?—भोजन, रस, रक्त मांस, मेद हड्डी, मज्जा, वीर्य। एक मन भोजन से एक सेर रक्त और एक सेर रक्त से एक तोले से कम वीर्य। सौ बूंद रक्त से एक बूंद वीर्य। इस वीर्य की रक्षा करना ही परम धर्म है। वीर्य रक्षा जीवन और वीर्य नाश ही मृत्यु है। यदि एक तोला वीर्य शरीर से निकल जाए तो एक सेर रक्त अर्थात् एक मन भोजन का सार समाप्त हो गया। हमारे पूर्वज सदा वीर्य-रक्षा में लगे रहते थे। इसीलिये पहले हमारे देश में १०० वर्ष से पूर्व कोई भी नहीं मरता था। अतः ब्रह्मचर्य के पालन पर पूरा ध्यान रखना आवश्यक है।

वैदिक साधु आश्रम रोपड़ में साधन शिविर

१७ से १९ अक्तूबर तक लगाया गया, जिसमें भारी संख्या में सम्मिलित होकर साधकों ने योगाभ्यास रूपी आध्यात्मिक गंगा में स्नान करके आनन्द उठाया, श्री स्वामी वेदानन्द सरस्वती ने वेद वाणी के [illegible] के साथ साथ साधकों को प्राणायाम, योगाभ्यास, योगासन, तथा ध्यान लगाने की भिन्न-भिन्न विधियों पर प्रकाश डाला तथा क्रिया सिखाई।

—[illegible]

पृ० १ का शेष

महात्मा आनन्द स्वामी का कथन

हूं भारत तथा आर्यसमाज का कोई समाचार नहीं मिलता—ऊपर के पते पर मैं १५ नवम्बर तक रहकर फिर घियाना और त्रिनिडाड चल दूंगा—वहां से मैं यू०एस०ए० पहली दिसम्बर को पहुंच कर वेद कथायें करूंगा।

श्री रामनाथ भल्ला, सेवक
६-सी, मीरदर्द रोड, नई दिल्ली, इण्डिया ह० आनन्द स्वामी सरस्वती

आर्य सम्मेलन हैदराबाद के प्रस्ताव दिनांक ८-११-६९ के आधार पर सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी बैठक दिनांक २१-२-६९ को निम्न प्रस्ताव स्वीकार किया था।

प्रस्ताव—'यह दशम आर्य महासम्मेलन प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं के उत्पन्न विवाद तथा न्यायालय में चल रहे मुकदमों के लिये चिन्ता प्रकट करते हुए उनके निपटारे के लिये अभियोगों से सम्बद्ध व्यक्तियों को सानुरोध आदेश देता है कि वे राजकीय न्यायालयों से अविलम्ब मुकदमे वापस लेवें। साथ ही यह सम्मेलन सर्वसम्मति से निश्चय करता हुआ परम पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी को पूर्णतः सर्वाधिकार देता है कि वे उपर्युक्त सभी विवादों का निपटारा शीघ्र कर दें।"

उपर्युक्त प्रस्ताव से स्पष्ट प्रतीत होता है कि आर्यमहासम्मेलन तथा सार्वदेशिक सभा ने महात्मा जी को झगड़े निपटाने के लिये पूर्णतः सर्वाधिकार दिये थे। परन्तु महात्मा जी के विदेश चले जाने के बाद यह कहना कि महात्मा जी ने विवादों को निपटाने का दायित्व स्वयं लिया था वह उसे बीच में छोड़ गये—यह महात्मा जी के साथ घोर अन्याय है। इस प्रस्ताव को हजारों की संख्या में छाप कर सारे भारतवर्ष में बांटने पर महात्मा जी के विरुद्ध मिथ्या प्रचार से उनका क्षुब्ध होना स्वाभाविक है। सन्यासियों का तो पहले ही अभाव है परन्तु श्री रामगोपाल आदि द्वारा आर्य जगत् के सर्वोच्च सन्यासी के साथ इस प्रकार का व्यवहार होने पर कौन पंथ सन्यासी बनेगा तथा धर्मप्रचार का प्रचार करेगा। आर्य जनता स्वयं देख ले।

उपासना-प्रदीप—२

[सत्यार्थ-प्रकाश के सातवें समुल्लास के आधार पर]

(पं० जगत्कुमार जी शास्त्री 'साधु सोमतीर्थ' देहली)

१—जो सब दिव्यगुण, कर्म, स्वभाव विद्यायुक्त और जिसमें पृथिवी सूर्यादि लोक स्थित हैं, और जो आकाश के समान व्यापक, सब देवो का देव परमेश्वर है, उस को जो मनुष्य न जानते, न मानते और उसका ध्यान न करते, वे नास्तिक मन्दमति सदा दुःख सागर मे डूबे ही रहते हैं। इस लिये सर्वदा उसी को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं।

२—(प्रश्न) वेद में ईश्वर अनेक हैं। इस बात को तुम मानते हो वा नही ?

(उत्तर) नहीं मानते, क्योंकि चारों वेदो में ऐसा कहीं नहीं लिखा जिससे अनेक ईश्वर सिद्ध हों। किन्तु यह तो लिखा है कि ईश्वर एक है।

३—(प्रश्न) वेदों में जो अनेक देवता लिखें हैं, उस का क्या अभिप्राय है ?

(उत्तर) देवता दिव्यगुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं। जैसे कि पृथिवी। परन्तु इसको कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना है। परमेश्वर देवो का देव होने से महादेव इसीलिये कहाता है कि वही सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्त्ता, न्यायाधीश अधिष्ठाता है।

४—(प्रश्न) आप ईश्वर-ईश्वर कहते हो, परन्तु उस की सिद्धि किस प्रकार करते हो ? (उत्तर) सब प्रत्यक्षादि प्रमाणो से।

५—(प्रश्न) ईश्वर मे प्रत्यक्षादि प्रमाण कभी नही घट सकते।

(उत्तर) जो श्रोत्र, त्वचा, चक्षु जिह्वा, घ्राण और मन का शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध सुख, दुःख, सत्यासत्य, विषयों के साथ सम्बन्ध होने से ज्ञान उत्पन्न होता है, उस को प्रत्यक्ष कहते हैं, परन्तु वह निर्भ्रम हो। अब विचारना चाहिये कि इन्द्रियो और मन से गुणो का प्रत्यक्ष होना है, गुणी का नहीं। जैसे चारों त्वचा आदि इन्द्रियो से स्पर्श, रूप, रस और गन्ध का ज्ञान होने से गुणी जो पृथिवी उस का आत्मायुक्त मन से प्रत्यक्ष किया जाता है, वैसे इस प्रत्यक्ष सृष्टि से रचना-विशेष, ज्ञानादि गुणो के प्रत्यक्ष होने से परमेश्वर का भी प्रत्यक्ष है।

६—जब आत्मा मन, और मन इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता वा चोरी आदि बुरी वा परोपकार आदि अच्छी बात करने का जिस क्षण मे आरम्भ करता है, उस समय, जीव की इच्छा ज्ञानादि उसी इच्छित विषय पर झुक जाती है। उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने मे भय, शका और लज्जा, तथा अच्छे कामो के करने मे अभय, निःशकता और आनन्दोत्साह उठता है, वह जीवात्मा की ओर से है। और जब जीवात्मा शुद्ध हो के परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है, उस को उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं। जब परमेश्वर का प्रत्यक्ष होता है, तो अनुमानादि से परमेश्वर के ज्ञान होने में क्या सन्देह है ? क्योंकि कार्य को देख के कारण का अनुमान होना है।

७—अर्वाचीन-युग के आचार्य नाना प्रकार के भ्रान्तवादों के वशीभूत हो कर "ईश्वर-प्रत्यक्षवाद" के इस महान् सिद्धान्त को विस्मृत कर बैठे थे। वे केवल अनुमान और शब्द प्रमाणो का ही आश्रय लेते थे। महर्षि दयानन्द ने अपने योग-बल और वैदुष्य के द्वारा इस शुद्ध सिद्धान्त को पुनरपि सुप्रतिष्ठित कर दिया है।

८—सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास के आरम्भ में महर्षि दयानन्द जी ने तैत्तिरीय उपनिषद् का यह पाठ उद्धृत किया है :—

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि, ऋतं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु अवतु मामवतु वक्तारम् ॥

९—इस का अर्थ इस प्रकार है :—

ब्रह्म को मेरा नमस्कार। हे सर्वशक्तिमन् ! प्राणरूप परमात्मन्। तुझे मेरा नमस्कार। तू ही प्रत्यक्ष ब्रह्म है। मैं तुझ को ही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूंगा। मैं ऋत ही बोलूंगा। मैं सत्य ही बोलूंगा। मेरी रक्षा कर। वक्ता की रक्षा कर। मेरी रक्षा कर। ऋत और सत्य के उपदेशक की रक्षा कर।

१०—"सत्यार्थप्रकाश" के अन्त में महर्षिवर फिर उद्घोषित करते हैं

नमो ब्रह्मणे । नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम् । ऋतमवादिषम् । सत्यमवादिषम् । तन्मामावीत् । तद्वक्तारमावीत् । आवीन्माम् । आवीद्वक्तारम् ॥

११—इस का अर्थ भी ऊपर लिखे अर्थानुसार ही होता है। यहा हमारे महर्षि जी की यह आर्ष-पद्धति और विलक्षणता ध्यान देने योग्य है कि जिस ईश्वर-प्रत्यक्षवाद का कथन करके उन्होने सत्यार्थ-प्रकाश को आरम्भ किया, उसी ईश्वर-प्रत्यक्षवाद के साथ उन्होने सत्यार्थ-प्रकाश को सम्पूर्ण भी कर दिया। यह वास्तव मे एक बहुत बडी बात है।

१२—(प्रश्न) ईश्वर व्यापक है या किसी देश-विशेष मे रहता है ?

(उत्तर) व्यापक है, क्यो कि जो एक देश में रहता, तो सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सब का स्रष्टा, सब का धर्त्ता और प्रलयकर्त्ता नहीं हो सकता। अप्राप्त देश मे कर्त्ता की क्रिया असम्भव है।

१३—(प्रश्न) परमेश्वर दयालु और न्यायकारी है, वा नही ? उत्तर—है।

१४—(प्रश्न) ये दोनों गुण परस्पर विरुद्ध हैं। जो न्याय करे तो दया और दया करे तो न्याय छूट जाय। क्यो कि न्याय उस को कहते हैं कि जो कर्मों के अनुसार, न अधिक, न न्यून सुख दुःख पहुचाना। और दया उस को कहते हैं कि जो अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड देना।

(उत्तर) न्याय और दया का नाम मात्र ही भेद है। क्योंकि जो न्याय से प्रयोजन सिद्ध होता है, वही दया से। दण्ड देने का प्रयोजन है कि मनुष्य अपराध करने से बन्द हो कर, दुःखो को प्राप्त न हो। वही दया कहाती है, जो पराये दुःखो को छुडाना। और जैसा अर्थ दया और न्याय का तुमने किया, वह ठीक नहीं। क्यो कि जिसने जैसा जितना बुरा कर्म किया हो, उस को उतना वैसा ही दण्ड देना चाहिये। उसी का नाम न्याय है। और जो अपराधी को दण्ड न दिया जाये, तो दया का नाश हो जाय। क्योंकि एक अपराधी डाकू को छोड देने से सहस्रो धर्मात्मा पुरुषो को दुःख देना है। जब एक के छोडने से सहस्रो मनुष्यो को दुःख प्राप्त होना है, वह दया किस प्रकार हो सकती है ? दया वही है कि उस डाकू को कारागार मे रख कर, पाप करने से छुडाना डाकू पर और उस डाकू को मार देने से अन्य सहस्रो पर दया प्रकाशित होती है।

१५—(प्रश्न) फिर दया और न्याय दो शब्द क्यो हुए ? क्योंकि उन दोनों का अर्थ एक ही होना है तो दो शब्दो का होना व्यर्थ है। इस लिये एक शब्द का रहना तो अच्छा था। इससे क्या विदित होता है कि दया और न्याय का एक प्रयोजन नही।

(उत्तर) क्या एक अर्थ के अनेक नाम और एक नाम के अनेक अर्थ नही होते ?

१६—(प्रश्न) होते हैं। उत्तर—तो पुनः तुम को शका क्यों हुई ?

१७—(प्रश्न) ससार में सुनते हैं, इस लिये।

उत्तर—ससार मे तो सच्चा झूठा दोनो सुनने मे आते हैं। परन्तु उस का विचार से निश्चय करना अपना काम है। देखो, ईश्वर की पूर्ण दया तो यह है कि जिसने सब जीवों के प्रयोजन सिद्ध होने के अर्थ जगत् में सकल पदार्थ उत्पन्न करके दान दे रखे हैं। इस से भिन्न दूसरी बडी दया कौन-सी है ? अब न्याय का फल प्रत्यक्ष दीखता है कि सुख दुःख की व्यवस्था अधिक और न्यूनता से फल को प्रकाशित कर रही है। इन दोनो का इतना ही भेद है कि जो मन मे सब को सुख होने और दुःख छूटने की इच्छा और क्रिया करना है [वह दया] और बाह्य चेष्टा अर्थात् बन्धन छेदनादि यथावत् दण्ड देना न्याय कहाता है। दोनो का एक प्रयोजन यह है कि सब को पाप और दुःखो से पृथक् कर देना।

१८—(प्रश्न)—ईश्वर साकार है, वा निराकार ?

उत्तर—निराकार, क्योंकि जो साकार होता, तो व्यापक नही हो

शेष पृ० ६ पर

टेलीविजन द्वारा कृषि संबंधी नवीनतम जानकारी

दिल्ली के चारों ओर स्थित ८० गावो मे पहली बार वैज्ञानिक विधि से खेती करना सिखाया जा रहा है। इन सभी गावो मे एक एक टेलीविजन है और यहा के किसानो को टेलीविजन द्वारा कृषि सबधी नवीनतम जानकारी दी जाती है।

टेलीविजन सेट अणुशक्ति विभाग द्वारा दिए गए हैं, जिसने कृषि-विकास मे टेलीविजन का प्रयोग प्रदर्शित करने के लिए एक कार्यक्रम शुरु किया है। साक्षरता और सचार के उपयुक्त साधनो की कमी के कारण किसानों ने खेती के वैज्ञानिक तरीके को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रचार के ऐसे साधन की बहुत आवश्यकता थी।

टेलीविजन सेट दिल्ली के चारो ओर स्थित उन ८० गावो मे लगाये गए है जहा बिजली है। ये सभी गाव दिल्ली से २३ मील की परीधि मे हैं। इन सभी गावो मे किसानो के फार्म गोष्ठी दल गठित किए गए हैं। इस दल के सदस्य रोज टेलीविजन कार्यक्रम देखते हैं और बाद मे उस पर विचार विमर्श करते हैं। विचार विमर्श की रिपोर्ट, प्रश्न और सुझाव आकाशवाणी को भेज दिए जाते हैं, जो उन पर यथोचित कारंवाई करता है तथा प्रश्नो के उत्तर देता है।

प्रत्येक बुधवार और शुक्रवार को २० मिनट तक हिन्दी में 'कृषि दर्शन' कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है। इस कार्यक्रम मे पहले किसानो के प्रश्नो के उत्तर दिए जाते हैं। इसके बाद गावो मे चालू किए गए कार्यक्रम की रिपोर्ट सुनाई जाती है। इसके बाद उस दिन का कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है। आकाशवाणी ने इस कार्यक्रम के लिए दो प्रोड्यूसरो की विशेष रूप से व्यवस्था की है, जो कार्यक्रम के तकनीकी पहलू के बारे में भारतीय कृषि अनुसधान परिषद् और दिल्ली प्रशासन के विशेषज्ञो से विचार विमर्श करते हैं। कार्यक्रम मे अनाज और साग सब्जी की खेती और बागवानी के सबध में उपयोगी जानकारी आदि दी जाती है। कार्यक्रम में विशेषज्ञो के भाषण आदि बहुत ही कम होते हैं। अधिकाश कार्यक्रमों में दिल्ली के आस पास के किसानो के जीवन, सघर्ष और सफलता की कहानी पेश की जाती है।

कार्यक्रम के मूल्याकन से पता चलता है कि टेलीविजन कार्यक्रम रोज देखने वाले किसानों ने इससे काफी लाभ उठाया है। जिन किसानों से इस सबध मे भेंट की गई, उनमें ६३ प्रतिशत का कहना है कि हमें 'कृषि दर्शन' कार्यक्रम से फार्म विधियो के बारे मे उपयोगी और सामयिक सूचना मिली। सत्रह प्रतिशत किसानो ने बताया कि हमे कार्यक्रम से ऐसी महत्वपूर्ण सूचना मिली जो अन्यत्र उपलब्ध नही है। इस कार्यक्रम के पक्ष मे एक बात यह है कि इससे वे अपढ और छोटे किसान लाभ उठा सकते है, जिन तक खेती की नवीनतम जाकारी सामान्यत नही पहुचती है।

—(पत्र सूचना कार्यालय भारत सरकार)

यह लाटरी

यह लाटरी यह लाटरी, यह लाटरी यह लाटरी।
हर तरफ है लाटरी के, पोस्टरों की ठाटरी॥
हो गये दो चार दौलतमन्द लेकर लाटरी।
बिन कमाये लाखो पायें, बढती जाती चाटरी॥
गर लगाती टैक्स तो सरकार खाती डाँटरी।
हम उसे देते हैं पैसे, अब बचरिए लाटरी॥
था खरीदा मैने भी, एक बार दो की लाटरी।
इन्तजारी मे कटे थे, किस तरह दिन साठ री॥
अफसोस। पाया मैं नहीं, ईमान मे इक छाँट री।
मैं अभागा ही रहा, है घर मे टूटी खाट री॥
था मुकद्दर मे लिखा, खाने भारी डाट री।
पूछता हूं तुमसे भगवन्, कैसे खोलूं गाँठ री॥
क्या गरीबो के लिए, बेकार है यह लाटरी।
लक मे भी आगे बढी है, लेडिया फर्राट री॥
छोड धन्धा बन निठल्ला, ड्रा की जोहूं बाट री।
ह्वाट मिस्टर ल्लाटरी की गाट री कि नाट री॥

—गिरिधारीलाल आर्य चौरी चौरा

पृ० ५ का शेष

सकता। जब व्यापक न होना, तो सर्वज्ञ आदि गुण भी ईश्वर में न घट सकते। क्योंकि परिमित वस्तु मे गुण, कर्म्म, स्वभाव भी परिमित रहते हैं। तथा शीतोष्ण, क्षुधा, तृषा, और रोग, दोष, छेदन, भेदन आदि से रहित नही हो सकता। इस से यही निश्चित है कि ईश्वर निराकार है। जो साकार हो, तो उस के नाक, कान, आँख आदि अवयवो का बनाने हारा दूसरा होना चाहिये। क्योंकि जो सयोग से उत्पन्न होता है, उस को सयुक्त करने वाला निराकार चेतन अवश्य होना चाहिये। जो कोई यहा ऐसा कहे कि ईश्वर ने स्वेच्छा से आप ही आप अपना शरीर बना लिया। तो भी यही सिद्ध हुआ कि शरीर बनने के पूर्व [ईश्वर[निराकार था। इस लिये परमात्मा कभी शरीर धारण नही करता। किन्तु निराकार होने से सब जगत् को सूक्ष्म कारणो से स्थूलाकार बना देता है।

१९—(प्रश्न) ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, वा नहीं?

(उत्तर) है, परन्तु जैसा तुम सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ जानते हो, वैसा नहीं। किन्तु सर्वशक्तिमान् शब्द का यही अर्थ है कि ईश्वर अपने काम अर्थात् उत्पत्ति, पालन, प्रलय आदि और सब जीवों के पुण्य-पाप की यथायोग्य व्यवस्था करने में किंचत् भी किसी की सहायता नही लेता। अर्थात् अपने अनन्त सामर्थ्य से ही सब अपना काम पूरा कर लेता है।

२०—(प्रश्न) हम तो ऐसा मानते हैं कि ईश्वर चाहे, सो करे, क्योंकि उस के ऊपर दूसरा कोई नही है।

(उत्तर) वह क्या चाहता है? जो तुम कहो कि सब कुछ चाहता और कर सकता है तो हम तुम से पूछते हैं कि परमेश्वर अपने को मार, अनेक ईश्वर बना, स्वय अविद्वान [हो], चोरी व्यभिचार आदि पाप-कर्म कर और दु खी भी हो सकता है? जैसे ये काम ईश्वर के गुण, कर्म्म, स्वभाव से विरुद्ध हैं तो जो तुम्हारा कहना है कि वह सब कुछ कर सकता है। यह कभी नही घट सकता। इसलिये सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ जो हमने कहा, वही ठीक है।

२१—(प्रश्न) ईश्वर सादि है, वा अनादि?

(उत्तर) अनादि, अर्थात् जिसका आदि कोई कारण वा समय न हो, उस को अनादि कहते हैं। इत्यादि सब अर्थ [सत्यार्थ-प्रकाश के] प्रथम समुल्लास में किया है, देख लीजिये।

२२—(प्रश्न) परमेश्वर क्या चाहता है?

(उत्तर) सब की भलाई और सब के लिये सुख चाहता है। परन्तु स्वतन्त्रता के साथ किसी को विना पाप किये पराधीन नहीं करता।

२३—(प्रश्न) परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये, वा नही?

(उत्तर) करनी चाहिये।

२४—(प्रश्न) क्या स्तुति आदि करने से ईश्वर अपना नियम छोड़ स्तुति, प्रार्थना करने वाले का पाप छुड़ा देगा? (उत्तर) नहीं।

२५—(प्रश्न) तो फिर स्तुति प्रार्थना क्यों करना?

(उत्तर) उन के करने का फल अन्य ही है।

२६—(प्रश्न) क्या है?

(उत्तर) स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उस के गुण, कर्म स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उस का साक्षात्कार होना।

२७—वह परमात्मा सब में व्यापक, शीघ्रकारी, और अनन्त बलवान्, जो शुद्ध, सर्वज्ञ सब का अन्तर्यामी, सर्वोपरि विराजमान् सनातन, स्वयसिद्ध, परमेश्वर अपनी जीव रूप सनातन अनादि प्रजा को, अपनी सनातन विद्या से यथावत् अर्थों का बोध वेद द्वारा कराता है। यह सगुण-स्तुति अर्थात् जिस-जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह सगुण, वह कभी शरीर धारण वा जन्म नही लेता, जिस मे छिद्र नहीं होता, नाड़ी आदि के बन्धन में नही आता, और कभी पापाचरण नहीं करता, जिसमें क्लेश, दु ख, अज्ञान कभी नहीं होता। इत्यादि जिस जिस राग-द्वेषादि गुणो से पृथक् मानकर परमेश्वर की स्तुति करना है, वह निर्गुण-स्तुति है। जैसे वह न्यायकारी है, तो आप भी न्यायकारी होवे। और जो केवल भाण्ड समान परमेश्वर के गुण कीर्तन करता जाता, और अपने चरित्र नहीं सुधारता, उसका स्तुति व्यर्थ है।

(क्रमशः)

शास्त्र प्रमाणवाद और ऋषि दयानन्द

(डा० भवानीलाल भारतीय, एम० ए०, पी० एच० डी०, अजमेर)

मैंने अपनी पुस्तक 'महर्षि दयानन्द और राजा राममोहनराय' में इन दोनों महापुरुषों के शास्त्र प्रमाण विषयक विचारों की विस्तृत तुलना की है। ऋषि दयानन्द ने सर्वाधिक बल वेद के स्वतः प्रमाणत्व पर दिया। पुरातनकाल के ऋषि महर्षियों ने एक स्वर से वेद के सर्वोपरि प्रमाण होने के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। स्मृतिकारों के शिरोमणि भगवान् मनु कहते हैं—'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' अर्थात् वेद ही धर्म का मूल है। धर्म के विषय में श्रुति को ही परम प्रमाण मानना मनु को इष्ट है।

'धर्मंजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।'

इसी प्रकार समस्त दर्शनकारों ने भी वेदप्रमाण को धर्मनिर्णय में प्रथम स्थान दिया है। मीमांसा का तो आधार ही 'वेद' है। धर्म का लक्षण करते हुये महर्षि जैमिनी लिखते हैं कि वेद जिन कर्मों के करने की प्रेरणा करता है, वही धर्म है। वेदान्त दर्शन में महर्षि बादरायण ने ब्रह्म को ऋग्वेदादि शास्त्रों की योनि बताया है—'शास्त्र योनित्वात्' और उनके नित्यत्व की घोषणा की है—'अतएव च नित्यत्वम्'। (वेदान्त १. ३. २९) न्याय दर्शन ने आयुर्वेद का दृष्टान्त देकर वेद की प्रामाणिकता का उद्घोष किया है (न्याय० २.१.६७) और वैशेषिक भी 'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्' (१.१ ३) सूत्र के द्वारा वेद को ईश्वर का वचन मान कर उस को प्रमाण मानता है।

वेद के स्वतः प्रमाणत्व की सिद्धि में अन्याय ग्रन्थों-यथा उपनिषद्, ब्राह्मण, स्मृति, इतिहास और पुराणों के प्रमाण भी दिये जा सकते हैं, (आर्य जगत् जालन्धर में प्रकाशित लेख का "शास्त्र प्रमाण" लेख) परन्तु ग्रन्थ की कलेवर वृद्धि के भय से ऐसा नहीं किया जा सकता। वेदों की प्रामाणिकता के विषय में जो सिद्धान्त इन ऋषियों का था, वही स्वामी दयानन्द का भी था। कुल्लूक भट्ट ने अपनी मनुस्मृति टीका में यह स्पष्ट कर दिया है कि जहां श्रुति और स्मृति का विरोध होता है वहां श्रुति वचन का आदर करना चाहिये स्मृति का नहीं। जाबाल स्मृति, मीमांसा दर्शन और भविष्यपुराण के वचनों को उद्धृत कर उन्होंने इस विषय की सम्यक् रीति से मीमांसा की है जो दर्शनीय है।[1]

१. "धर्मं च ज्ञातुमिच्छतां प्रकृष्टं प्रमाणं श्रुतिः। प्रकर्षबोधनेन च श्रुतिस्मृतिविरोधे स्मृत्यर्थः नादरणीय इति भावः। अतएव जाबाल— "श्रुतिस्मृत्यर्थविरोधेतु श्रुतिरेव गरीयसी। अविरोधे सदा कार्यं स्मार्तं वैदिकवत् सदा॥" भविष्यपुराणेऽपि उक्तम्—"श्रुत्या सह विरोधे तु बाध्यते विषयं विना।" जैमिनिरप्याह—"विरोधे त्वनपेक्ष स्यादसति ह्यनुमानम्॥" १।३३ श्रुतिविरोधे स्मृतिवाक्यमनपेक्ष्यम् अप्रमाणम् अनादरणीयम्। असति विरोधे मूलवेदानुमानम् इत्यर्थः।' कुल्लूक कृत मनुस्मृति टीका २।१३॥"

स्वामी दयानन्द के शास्त्रप्रमाण विषयक सिद्धान्त की दो विशेषतायें हैं—प्रथम तो यह कि स्वामी जी ने इस सिद्धान्त को केवल सिद्धान्त तक ही सीमित नहीं रक्खा, अपितु उसे उन्होंने अपने धर्मान्दोलन का आधार बनाकर इसे व्यावहारिक रूप भी प्रदान किया। शास्त्रार्थों में स्वामीजी की विजय का यही रहस्य था। जब जब मूर्तिपूजा, अवतार और श्राद्ध आदि अवैदिक सिद्धान्तों पर उनके विपक्षियों से शास्त्रार्थ हुये तब तब उन्होंने इन सिद्धान्तों की यथार्थता के लिये वेदों के प्रमाण मांगे। काशी के पण्डित वर्ग की परेशानी और हैरानी दर्शनीय थी, जब प्रथम बार वहां जाकर दयानन्द ने उन्हें मूर्तिपूजा के समर्थन में वेद का प्रमाण प्रस्तुत करने के लिये आहूत किया? काशी नरेश द्वारा शास्त्रार्थ के लिये प्रेरित किये जाने पर पण्डित मण्डली ने अपनी विवशता इन शब्दों में व्यक्त की— "संन्यासी मूर्तिपूजा की सिद्धि के लिये वेदप्रमाण मांगता है और वेदों से प्रमाण देना तो दूर रहा हमने उनके दर्शन भी नहीं किये हैं।"

स्वामी दयानन्द के वेदप्रमाण वाद की दूसरी विशेषता है उनका संहिता भाग को ईश्वरकृत, अपौरुषेय मानकर ब्राह्मण और उपनिषदों को उनसे पृथक् करना। कुछ शताब्दियों से यह विचार चल पड़ा था कि वेद के अन्तर्गत ब्राह्मण और मंत्र दोनों ही आते हैं। इस भ्रान्ति के मूल में कात्यायन के नाम के प्रसिद्ध एक सूत्र है (मन्त्रब्राह्मणयो र्वेदनामधेयम्) जिसकी आलोचना स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में की है। स्वामी जी ने अनेक युक्तियों और प्रमाणों से यह सिद्ध किया कि ब्राह्मण भाग को मंत्र भाग का महत्व नहीं दिया जा सकता क्योंकि ब्राह्मणों की रचना याज्ञवल्क्य ऐतरेय महीदास आदि ऋषियों ने की है और उनमें अनेक उपाख्यान, इतिहास आदि मनुष्यकृत रचनाओं का समावेश हो गया है। स्वामी जी द्वारा प्रवर्तित यह 'संहिता प्रमाणवाद' का सिद्धान्त यद्यपि कुछ लोगों को अटपटा सा लगता है, कल्याण के वेदान्त अंक में प्रकाशित भारती कृष्णतीर्थ (शंकराचार्य) ने अपने एक लेख में स्वामी जी के इस सिद्धान्त की आलोचना की है। तथापि उसकी सत्यता में कुछ भी संशय नहीं है क्योंकि वह शास्त्रानुमोदित तथा युक्ति-तर्क समन्वित है।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द के शास्त्र विषयक सिद्धान्तों का अनुशीलन करने के पश्चात् हम केशव के एतद् विषयक विचारों से उनकी तुलना प्रारम्भ करते हैं। ब्राह्मसमाज के संस्थापक राजा राममोहनराय की दृष्टि में वेदों के प्रति अत्यन्त आदर का भाव था, यह हम अपनी पुस्तक में बता चुके हैं। यद्यपि वे स्वयं वेदों के तत्वज्ञान से अनभिज्ञ थे, तथापि उपनिषदों से अच्छा परिचय होने और शास्त्रीय परम्परा के जानकार होने के कारण वे धर्मालोचना में वेदादि शास्त्रों के सर्वोपरि महत्व को स्वीकार करते थे। महर्षि के नाम से विख्यात ब्राह्मसमाज के द्वितीय नेता श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर भी शास्त्रों के विषय में पर्याप्त श्रद्धाभाव रखते थे, यद्यपि वैदिक संहिताओं की प्रामाणिकता को वे अस्वीकार कर चुके थे। देखो परिशिष्ट में देवेन्द्रनाथ ठाकुर के विचार उपनिषदों के प्रति उनकी श्रद्धा भावना वैसी ही दृढ थी जैसी उनके पूर्ववर्ती की, परन्तु ईसाई मत के ग्रन्थों के प्रति इनका विशेष अनुराग नहीं था।

केशवचन्द्र तक आते-आते ब्राह्मसमाज की शास्त्र विषयक धारणाओं में परिवर्तन हो चला। राममोहनराय की मृत्यु के पश्चात् ब्राह्मसमाज ने स्पष्ट रूप से वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानने से इन्कार कर दिया।

२. मैक्समूलर ने लिखा है—Members of Brahama Samaj after be coming better acquainted with their own Sacred writings than they eveen had been before Should Solemnly have declared in the year 1850 that the clain of being divinely inspired could no longer the maintained in favour of the hymns of Brahmans or the veda" Ram Mohn to Rama krishna P. 64

सत्येन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर की आत्मकथा के अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका में लिखा है— "At a general meeting of the Brahmas, it was agreed that the vedas, upnishads and other ancient writings were not to be accepted as in fallible guides" Introductoy chapter.)

शास्त्र विषयक ब्राह्मसमाज के मत का निर्देश करते हुये केशव ने एक स्थान पर लिखा है—"सारा विश्व ही परमात्मा का मंदिर है। बुद्धि ही पवित्र तीर्थ स्थान है। सत्य ही अनन्त शास्त्र है। विश्वास ही सम्पूर्ण धर्म का मूल है। प्रेम ही सच्ची आध्यात्मिक शिक्षा है। स्वार्थ त्याग ही सच्चा वैराग्य है, ऐसा ब्राह्मसमाजियों का मत है।" केशवचन्द्र सेन—ले० एक भारतीय आत्मा।

अपनी 'जीवनवेद' नामक पुस्तक में केशव ने लिखा है—'किसी पुस्तक विशेष का दास बनकर मैं वंदना नहीं कर सकता।" जहाँ एक ओर हिन्दू धर्म के शास्त्रों के प्रमाण मानने को वे 'पुस्तक विशेष का दास बनना' कहते हैं वहाँ ईसाई मत पुस्तक बाइबल के विषय में उनकी सम्मति सुनिये—

"Possessed of the Bible and Shakespeare, a man is above the word" अर्थात् बाइबल और शेक्सपियर को लेकर एक मनुष्य संसार से ऊँचा उठ जाता है।

उन्होंने वेदों की अपौरुषेयता का विरोध किया। वेद को प्रमाण स्वीकार करने का अर्थ उन्होंने यह लगाया कि इससे शास्त्रों को सीमित

शेष पृ० ८ पर

आर्यसमाज के शिरोमणि संघटनों की दल-बन्दी हल करने हेतु एक सुझाव

(श्री [illegible] गुप्त बी० एस० सी० इन्जीनियर प्रधान आर्यसमाज काशीपुर, कलकत्ता-२)

प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभाओं के शीर्ष पर हमारे देश में भारतवर्षीय आर्यप्रतिनिधि सभा नहीं है। सार्वदेशिक सभा अवश्य है और उसमें भारतवर्ष के बाहर की प्रतिनिधि सभायें भी सम्मिलित हैं। पर वेद प्रचार के अतिरिक्त जो कुछ भी कार्य सार्वदेशिक सभा द्वारा भारतवर्ष की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थिति के कारण होता है, उसके कारण भारत के बाहर की आर्यसमाजों की स्थिति वहाँ की सरकारों के सामने कुछ अजीब हो जाती है। विदेश-प्रचार हेतु इसीलिये सार्वदेशिक सभा कुछ नहीं कर पाती है क्योंकि वह इस देश की राजनीति में उलझी रहती है। गाय का प्रश्न, हिन्दी का प्रश्न सिनेमाओं में अश्लीलता का प्रश्न अथवा शराब-बन्दी विषयक राज्य सरकारों के कानून—इन सब समस्याओं से विदेश की आर्यसमाजों का कोई सम्बन्ध नहीं है और न यह स्थिति ठीक है कि विदेशों के प्रतिनिधि सार्वदेशिक सभा में बैठ कर इन विषयों पर निर्णय लेने से अपनी स्थिति को फसायें। दूसरी बात यह है कि एक-एक विदेश का सादृश्य भारतवर्ष के एक सूबे के समान ही रह जाता है जो कि अनुचित है। तीसरे सार्वदेशिक सभा का सीमित बजट भारत में आर्य संघटन में खर्च करके विदेश प्रचार के लिए जन-धन बचा ही नहीं पाता है। अत मेरा सुझाव है कि सार्वदेशिक सभा अतिशीघ्र भारतवर्षीय आर्यप्रतिनिधि सभा का निर्माण करे (ऐडहोक रूप मे) सब एम०पी० एव एम०एल०ए० जो आर्यसमाज से रुचि रखते हैं, इस संघटन मे पहुंच कर अपने जौहर दिखावें और आर्य राज्य स्थापित करने का यत्न करें। हमारे नये उदीयमान युवक भी इसी संघटन से सम्बद्ध रहें। इस भारतीय आर्यप्रतिनिधि सभा को राजनीति मे भाग लेने की भी कुछ-कुछ स्वतन्त्रता विधान मे दी जावे।

और फिर सार्वदेशिक सभा विद्वानों को सौंप दी जावे। दयानन्द भवन के किराये मे से एक पंडित जी ८००) मासिक ले लेंवे तब भी लगभग १०,०००) मासिक बचेगा जो विदेश प्रचार तथा भारतीय आर्यप्रतिनिधि सभा पर साधारण कन्ट्रोल के लिये यथेष्ट होगा। आचार्य विश्वश्रवा जी इसमे अवश्य रहे और सारे सैद्धान्तिक विद्वान् इसमें चले जावें।

इस कार्य—पार्थक्य के सिद्धान्त को अपनाने से आय के जिन स्रोतों पर जो कब्जा जमाये रखना चाहते हैं, उनका कब्जा बना रहेगा। आखिर वही से प्रेम का कारण आय के स्रोतों पर कब्जा बनाये रखना ही है। हो सकता है कि सत्ताधारी व्यक्ति यह समझते हों कि उनके हटने से उन आय स्रोतों को उनके उत्तराधिकारी दुरुपयोग करेंगे। शायद यह ठीक भी हो। कार्यकर्त्ताओं को सोचना चाहिये कि उनके कंठ में लक्ष्मी बसती है। यह आय स्रोत इस पीढ़ी के साथ लोगों को मुबारिक हो। नई पीढ़ी अपनी कर्त्तव्य निष्ठा से नये स्रोत का निर्माण कर लेगी।

पर दोनों संघटनों की ऐडहोक सत्तावान स्थिति ६ मास के लिये ही होगी। आर्यसमाज के संघटन क्षेत्र के बाहर के किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति कि या किसी भारत के बाहर स्थित आर्यप्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष को चुनाव अधिकारी घोषित करके चुनाव करवाये जा सकते हैं। निष्पक्ष बाहर के चुनाव अधिकारी के तत्वावधान में हुये चुनाव द्वारा यह प्राय सुनिश्चित है कि जिनका बहुमत वास्तविक है उनका यत्र-तत्र अधिकार बना रहेगा। जब तक चुनाव की प्रजातान्त्रिक प्रणाली हमारे विधानों मे है, कोई साधु सन्यासी या युवक वृन्द बहुमत प्राप्त दल को उस-उस संस्था पर अधिकार बनाये रखने से वंचित नहीं कर सकते। आशा है नेता गण इस पर विचार करेंगे।

पताक के बाले—

किसान

[श्री प० [illegible], [illegible] पो० [illegible], जिला बलिया (उ० प्र०)]

माना सब कामों में दक्ष, पर न कभी रह पाते स्वच्छ,
रखो सदा ही साफ स्व देह, रहे मैल से भरी न देह,
करो पुष्ट भोजन-उप भोग, जिससे तुम रह सको नीरोग,
होओ कभी नहीं बीमार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

बच्चा रज में लोट रहा है, नख से भूमि खरोंट रहा है,
मगर कहीं कुछ [illegible] खबर है, वह कैसे है, कहां, किधर है,
कभी धूल मुख में भर लेता, कभी उसे सिर पर धर लेता,
वह क्या जाने, यह बेकार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

उसे [illegible] में ले समझाओ, वहां न [illegible] उसे बताओ,
उस को [illegible] नहलाओ, लोट न पाये पुनः बचाओ,
पढ़े लगाओ उसका ध्यान, बने [illegible] होवे विद्वान,
क्योंकि देश का वह आधार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

ये जो सड़कें कच्ची सारी, वर्षा में कुछ देती भारी,
सभी जगह कीचड़ हो जाता, कोई कहीं नहीं जा पाता,
समझ रहे क्या इसमें हित है, तुमको तो बस यही उचित,
इनका मिलकर करो सुधार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार।

अगर सदा तुम स्वच्छ रहोगे, व्याधि आधि को नहीं सहोगे,
इसी भाँति बलवान् बनोगे, योग्य सुकर्मों के भी होगे,
बनो संयमी त्याग दुर्व्यसन, रखो पवित्र सदा अपना मन,
करने छोडो सभी कुचार, कुछ सोचो, कुछ करो विचार। —क्रमशः

पृ० ७ का शेष

किया जाता है। इसलिये उन्होंने लिखा है—"The Indian Scriptures are not closed, New chapters are added every where What the Lord will reveal to us in ten year's time who can say excepht himself" Quotet in the Life of Rama krishna. P. 13-H

अर्थात् भारतीय शास्त्रों का द्वार बंद नहीं हो गया है। इसमें नये अध्याय सदा जोड़े जाते हैं। ईश्वर के अतिरिक्त यह कौन कह सकता है कि आगामी दस वर्षों में वह हमें क्या आज्ञा देगा? ऐसा प्रतीत होता है मानो केशव इस बात को मानते हैं कि ईश्वर समय-समय पर मनुष्यों के नये नये इल्हाम प्रचारित करता है और नई-नई आज्ञायें जारी करता है। यह तो इस्लाम की इस धारणा से अधिक मिलता जुलता है, जिसमें यह माना जाता है कि खुदा ने इंजील, तौरेत, जबूर आदि आसमानी किताबों के रूप में समय-समय पर अपने आदेश भेजे हैं और कुरान उसका अन्तिम इल्हाम है जिसके अवतरण के साथ-साथ पुरानी किताबें रद्द हो जाती हैं। भिन्नता केवल इतनी ही है कि केशव ऐसे किसी अन्तिम इल्हाम को स्वीकार नहीं करते, और वे प्रतिक्षण ईश्वरीय आदेश के अवतरण की सम्भावना स्वीकार करते हैं। परन्तु केशव की यह धारणा नितान्त अयुक्त है। यदि ईश्वर सर्वज्ञ है तो क्या इससे उसकी सर्वज्ञता पर बट्टा नहीं लगता कि वह प्रतिक्षण अपने आदेशों में परिवर्तन करता रहता है और उसे समय-समय पर मनुष्यों के लिए आज्ञायें प्रेषित करने की आवश्यकता रहती है। आर्य लोग तो अपने इस परम्परागत विश्वास को मान कर ही सन्तुष्ट और आश्वस्त हो जाते हैं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जिसे परम कारुणिक, मंगलमय, सर्वज्ञ, भगवान् ने मनुष्यमात्र के कल्याणार्थ सृष्टि के प्रारम्भ में ऋषियों के अन्तःकरणों में प्रादुर्भूत किया था। कोई भी विचारवान व्यक्ति इस बात को नहीं मानेगा कि परमात्मा की आज्ञायें क्षण मे बदली हैं।

केशव ने न केवल वेदों की अपौरुषेयता का खण्डन ही किया, अपितु उनकी अप्रामाणिकता और अमान्यता को सर्वसाधारण के समक्ष घोषित करने में भी उन्हें कोई संकोच नहीं हुआ।

नई पीढ़ी और चरित्र निर्माण

(ब्र० योगानन्द स्नातक, गुरुकुल झज्जर—रोहतक)

किसी भी समाज अथवा राष्ट्र का भविष्य उसकी अपनी आने वाली नई पीढ़ी पर निर्भर होता है। किसी पिता का लड़का यदि अच्छा भला चरित्रवान् और योग्य है तो फिर उसको यह चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं रह जाती कि इसके लिये मैं अधिक से अधिक धन इकट्ठा करू, बड़े से बड़े मकान हवेलियां खड़ी कर दू, जिससे कि इसका जीवन सुख से बीत सके। अपितु सज्जनो की विचारधारा के अनुसार तो सन्तान का चरित्र निर्माण कर देना ही उसके लिये सर्वस्व जुटा देना है। यह एक ध्रुव सत्य है कि यदि सन्तान अच्छी भली है तो मार्ग दिखा देने पर वह स्वय अपने पैरों पर खड़ी हो जायेगी और यदि सन्तान अच्छी नहीं बन सकी तो माता पिता की खून-पसीने की कमाई भी बेकार ही हो जाती है। ठीक इसी प्रकार देश की नई पीढ़ी यदि चरित्रवान् कर्त्तव्यपरायण और आत्म-विश्वासी है तो उस देश का अपना भविष्य महान् है। राष्ट्र की वर्तमान परिस्थिति में यदि विपत्ति अथवा अन्धकार के बादल भी मडरा रहे हों परन्तु यदि उसकी भावी पीढ़ी वास्तव में चरित्रवान् हो तो राष्ट्र के कर्ण-धारों को भविष्य के प्रति सदा आशावान् बना रहना चाहिये। दूसरी ओर दुर्भाग्य से यदि हम नई पीढ़ी का ठीक ढग से चरित्रनिर्माण नही कर पाये और राष्ट्र के बाह्यनिर्माण मे ही लगे रहे तो ये सब बड़ी-बड़ी गगनचुम्बी अट्टालिकायें, लम्बी चौड़ी सुन्दर सड़कें और बड़े-बड़े बांध नई पीढ़ी के लिये अभिमान की वस्तु बनकर अभिशाप सिद्ध हो सकते हैं। आप सब भी इस बात को अवश्य स्वीकार करेंगे कि बड़प्पन इस बात में नही कि कौन सी चीज अच्छी है अपितु बड़ाई तो इसमें है कि कौन उस चीज का कितने सुन्दर ढग से उपयोग कर सकता है कि वह सब के चित्त को हर ले और एक दूसरी अच्छी सुन्दर चीज का निर्बुद्धि व्यक्ति ऐसा रूप भी बना सकता है कि दूसरे व्यक्ति उसको बुरा ही समझें और कहें। इस प्रकार भोग्य की अपेक्षा भोक्ता का अधिक महत्त्व है। यही कारण था कि प्राचीनकाल से हमारे देश में बालक के चरित्रनिर्माण पर बहुत अधिक बल दिया जाता रहा है। बालकपन में माता-पिता तो "त्वम पुत्र ब्रह्मणोऽयो मे दुहिता विराट" कहकर अपनी लोरियों में बालक का चरित्रनिर्माण करते ही थे साथ ही जब वे बालक को आचार्य के पास गुरुकुल में विद्या पढ़ने के लिये भेजते थे तो गुरु भी बालक को प्रविष्ट करते समय ही 'चरित्रास्ते सुन्धामि' कहकर बालक के चरित्रनिर्माण करने की प्रतिज्ञा करते थे। प्राचीनकाल में गुरु को आचार्य कहा जाता था। आचार्य शब्द का अर्थ है जो अक्षर ज्ञान के साथ-साथ तथा चरित्रनिर्माण की शिक्षा देकर बुद्धि को स्वस्थ बनाये।

स्वतन्त्रता मिलने से पहिले महर्षि दयानन्द ने तो शिक्षा मे वैदिक मूल्यो की शिक्षा देने पर जोर दिया ही, साथ ही महात्मा गान्धी लोकमान्य तिलक और सरदार पटेल आदि नेताओ ने भी चालू शिक्षण प्रणाली से व्याप्त सदाचार की शिक्षा की कमी को दूर करने पर बल दिया। पर दुर्भाग्य से स्वतन्त्रता मिलते ही कुछ ऐसी समस्याओ के सुलझने मे इतनी गहराई से उलझ गये कि हमें इस ओर ध्यान देने का अवसर ही नही मिला जब कि इस ओर सब से पहिले ध्यान जाना चाहिये था। यही मूल कारण है कि आज जब कभी हमें अपनी नई पीढ़ी में असन्तोष और निराशा छाई दिख-लाई देती है।

पौधा जब तक नया एवं छोटा रहता है तो उसका अधिक ध्यान रखना पड़ता है। माली देखता है कि इस नये पौधे में कहीं पानी की कमी तो नहीं रही, बाड़ तो थोड़ा नहीं बाड़ तो छोटी नहीं है और कहीं कोई दूसरा बड़ा पेड़ इसको बढ़ने से तो रोक नही रहा है। यह सब कुछ पौधे के बाल-कपन मे ही किया जाता है। इस प्रकार यदि पौधे की ठीक देख भाल कर ली जाय तो यह शीघ्र ही बड़ा होकर हमको अपने स्वादु फल देता है। ठीक इसी प्रकार बालक के बचपन में ही माता-पिता और गुरुजनों को उसके चरित्रनिर्माण के लिये हर उचित आवश्यक सामग्री और शिक्षा का प्रबन्ध करना पड़ेगा। तभी हम राष्ट्र को ऐसी चरित्रवान् नई पौद तैयार करके दे सकेंगे, जो भविष्य में हमारे राष्ट्र को एक आदर्श और महान् राष्ट्र बनायेगी।

नई पीढ़ी के लिये आवश्यक है कि हम एक ऐसा जिसके लिये एक ऐसा स्वस्थ वातावरण तैयार करें जिसमें रहकर वह सरलता से अपना ऊंचा चरित्र बना सके। इसके लिये यह जरूरी है कि हम अपनी उन पुरानी रूढ़ियों को छोड़ दें जो बहुत पहिले से ही हमारे सोचने विचारने और दूसरों को समझाने का मूल आधार बन गई हैं। हमारे समाज मे कई ऐसी गलत मान्यतायें चल रही हैं जो देखने और सुनने मे तो बड़ी ही सुन्दर और कल्याणकारी लगती है किन्तु गहराई से देखा जाये तो वे हमारी नई पीढ़ी के लिये और देश के लिये बड़ी ही घातक सिद्ध हो रही है। इनमें सब से मुख्य है हमारा 'भाग्यवादी दृष्टिकोण "तकदीर में जो लिखा है वह ही होगा" यह वाक्य प्राय आये दिन हमे अपने बड़े बूढ़ो से सुनने को मिल जाता है। 'होना वही जो राम रचि राखा" यह कहकर हम अपने मन को थोड़ी देर सन्तोष भले ही दे लें, पर इसका स्वय हमारे जीवन पर और विशेष कर नई सन्तति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इस कहने का मतलब तो यह हुआ कि मनुष्य को परिश्रम करने की कोई बड़ी आवश्यकता नही है। क्योंकि आखिर मेहनत करोगे तब भी और न करोगे तब भी होगा तो वही जो भाग्य मे लिखा है। विधाता के अक टारे नहीं टरते यह प्राय प्रतिदिन हमारे घरो मे कहा जाता है। कहने को तो हम कह देते हैं किन्तु यह नहीं विचार करते कि इसका कितना बुरा असर बच्चों पर होगा। ये विचार हमे पुरुषार्थ करने से रोकते हैं और हमारे चरित्रनिर्माण मे बाधक होते हैं। यह ठीक है कि प्रारब्ध एक चीज है। दार्शनिक विचारधारा के अनुसार प्रारब्ध पिछले जन्म के उन कर्मों के फल को कहते हैं जो हम उस समय न भोग सके और अब भोगेंगे। प्रारब्ध पुरुषार्थ का फल है। इस प्रकार पुरु-षार्थ कारण होने से कार्यरूप प्रारब्ध से बड़ा है और पुरुषार्थ करने से अच्छा प्रारब्ध न होते हुये भी ऊचा चरित्रनिर्माण करके महान् बनाया जा सकता है। श्री लालबहादुर शास्त्री का उदाहरण हमारे सामने है। दुनियावी दृष्टि से उनका प्रारब्ध बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता। वह केवल एक साधारण से प्राइमरी स्कूल के अध्यापक पिता के घर जन्मे, अनेक कष्ट सहकर पढ़े और अपने पुरुषार्थ से ससार के सर्वोच्च व्यक्तियो की श्रेणी मे पहुच गये। उन्होने सिद्ध कर दिया कि प्रारब्ध से पुरुषार्थ बड़ा है।

ठीक ऐसी ही एक लुभावनी विचार धारा हमारे समाज में प्रचलित यह है कि "यह जगत् मिथ्या है" यह सपना झूठा है और मायाजाल है। कई बुजुर्ग कहते सुने जाते हैं कि ये अमुक का महल है, ये अकबर का किला है, यह उसका दरबार है, यह सब अब खाली पड़ा है। बड़े-बड़े राजे महा-राजे खाली हाथ पसार कर चले गये, हम हैं किस खेत की मूली "हमे भी एक दिन ऐसे आये थे वैसे ही जाना है। क्या रखा है ईंट गारे जोड़ने में यह सब धरा का धरा रह जायेगा।" फिर इसका यह मतलब निकाला जाता है कि मकान और महल बनाने वालो को भी एक दिन खाली हाथ जाना है तो मेहनत करने से क्या लाभ ? जबकि झोपड़ी मे रहकर भी दिन काटे जा सकते हैं।

इन सबका हमारी नई पीढ़ी पर यही असर पड़ता है कि मेहनत करने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि मेहनत करो या न करो यहा से तो सबको जाना ही है। हमारा यह विश्वास हमे और हमारी पीढ़ी को पुरुषार्थ करने से रोकता है और समाज मे निठल्लेपन को जन्म देता है। कुछ दार्श-निको का मत जगत् मिथ्या है और थोथी दलील को कुछ देर के लिये सामने रखें, तब भी सामाजिक दृष्टि से इसका प्रचार बड़ा ही घातक है। सामाजिक सभाओं, बैठकों और समूहो में इस प्रवृत्ति का प्रचार अच्छा नही। क्योंकि अधिक आदमी इससे उलटा अर्थ लेकर परिश्रम से उदासीन हो जाते हैं। जब हमको रहना ही उसको झूठा कहने से क्या लाभ ? यदि हम दुनिया को छोड़ना भी चाहे तो भी दुनिया हमको नहीं छोड़ेगी। हम जगत् को मन के अन्दर झूठा मानते रहें और हमे आचरण करना पड़ता है कि जगत् सच्चा है। मन मे कुछ और, और कदम कुछ और हमे उठाने पड़ें तो हमे कभी भी सफलता नहीं मिलेगी।

इन प्रवृत्तियो से केवल नई पीढ़ी ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण समाज कर्म-हीन और निकम्मा बनता है। फिर जो व्यक्ति निठल्ला हो जावेगा उसे खाली मन शैतान का घर वाली कहावत के अनुसार चाड़ जिसके ही सूझेंगे। राष्ट्र की भावी कर्णधार नई पीढ़ी को तो ऐसी शिक्षा देना ही विनाश की

शेष पृ० १० पर

कौन कह प्रज्ञा चक्षु ?

(कवि श्री कस्तूरचन्द "घनसार" उपाध्यक्ष, आर्यसमाज पीपाड़शहर राजस्थान)

आर्य्यवर्त्त अविद्या से रहे थे आवत जब,
पाखण्ड-पसार थे असार गहे भूल से।
सस्कृति विशद-विचार वेदानुकूल सद,
धम-रीति नीति प्रीति छूट चली मूल से ॥

रसातल देश पहुँच गये अक्रिम बन,
मिथ्याचारी बने थे व्यवहार प्रतिकूल से।
एक ही सहारा मथुरा मे जब रह गये,
वही विरजानन्द बचाया दुःख सूल से ॥१॥

पौराणिक पाहन पुजारियो का पाठ रहा,
भ्रम भव सिन्धु में लगाते कभी गोते ना।
अधर्म अन्याय पाप-पोप दम्भ स्वार्थियो के
वशीभूत होके सद सस्कृति खोते ना॥

मानव मानव साथ घृणा कर दूर रखे,
अविद्या अंधरी दुख यामनी मे सोते ना।
वेदो का प्रकाश ब्रह्मर्षि बदोलत आज,
विरजानन्द होने न तो दयानन्द होते ना ॥२॥

व्याकरण के मार्तण्ड सस्कृत के सिन्धुवर,
इन्दुवर वेदामृत योगी निषकामी थे।
षट् दर्शनाचार्य निपुण ब्रह्मवत्ता वर,
विद्याधर वर वरिष्ठान वेद गामी थे॥

आर्ष ग्रन्थ अध्यापक महान विभूति एक,
परिव्रजकाचार्य वो सद् सुख धामा थे ॥
कौन ? कह प्रज्ञाचक्षु चक्षु दिव्य ज्ञान के थे,
लगोट-कोपीन धारी विरजानन्द स्वामी थे ॥३॥

पजाब भूमि मे एक विभूति प्रकाश लेके,
अवतरे एक महा-वेद-विद्यावान् थे।
"सर्व भवन्तु सुखिन सर्व सन्तु निरामया."
यही था हृदय में भव्य-भाव पवमान थे॥

भारत अनार्य बने आर्य बनाने आये,
भरद्वाज ऋषिकुल-कल्याण की शान थे।
धन्य 'घनसार" देश धन्य धन्य तपोभूमि,
कलित कर्त्तापुर का वत्तन महान् थे॥४॥

शशि-किरणों से

(कविवर "प्रणव" शास्त्री एम०ए० आर्यनगर, फीरोजाबाद)

सुधा विन्दु दे सको न यो ही शशि किरणें बदनाम हुईं ॥१॥
प्रबल प्रतीक्षा थी किरणो से अमृत स्रोत झरेगा,
मानवता के गञ्जु महल की अविकल तपन हरेगा।
प्रगति कल्पतरु महाकाव्य की, अविचल अर्द्ध विराम हुईं ॥२॥
चतुर चकोरो के चित्तो में छाई घोर उदासी,
भक्तिभाव भरी धरा यह रही आज भी प्यासी।
आशाओ की सुघड सहेली मृगतृष्णा सी वाम हुईं ॥३॥
भावोदधि मे उल्लासो का उठा ज्वार सा आया,
किन्तु तरङ्गो ने पूनम मे केवल शोषण पाया।
हृदय कालिमा की रेखाए मावस की सी शाम हुईं ॥४॥
मनोविभाजन कालकूट को पचा न पाया कोई,
अत आज तो महादेव भी कहा न पाया कोई।
आलिङ्गत जीवन, इतिश्री से, श्वासें ही सर साम हुईं ॥५॥
कीर्ति हसनी स्वर्ग पक्ष के वक को नही वरेगी,
मानस की पावनता इनसे अत विद्रोह करेगी।
क्योंकि 'पारिग्रह' से अभाव की, चर्चा आठो याम हुईं ॥६॥

अन्वेषणीय वैज्ञानिक लेख—

सुषुम्णा रश्मि और चन्द्रभूमि

(श्री उमादत्त जी मो० पो० जोनिहाँ जि० फतहपुर)

सूर्य की पुरुरूपा किरणों में एक की सज्ञा सुषुम्ण' है। सु+सुम्न=सुषुम्ण; सु उपसर्ग अनेकार्थक है। सुम्न पद यास्कीय निघण्टु के सुख नामो में पठित है। इस का अन्वर्थ महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने यजु० १८।४० मन्त्र के भाष्य मे निम्नाकित किया—सु—शोभन सुम्न सुख यस्मात् स। जिस से उत्तम सुख हो वह 'सुषुम्ण' है।

इस विशिष्ट रश्मि का पृथिवी के अत्यन्त समीपस्थ लोक चन्द्रमा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। एतद् विषयक प्रमाण हम निम्नाकित करते हैं—

"अथाप्यस्यैको रश्मिश्चन्द्रमस प्रति दीप्यते।" निरुक्त २।६।

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम् इत्था चन्द्रमसो गृहे। ऋ० १।-४।१५

(अत्र) यहा (अह) निश्चय पूर्वक (गो) गतिशील एक किरण (सुषुम्ण) को (अमन्वत) माना स्वीकार किया। (नाम) (Bending course) नमन=झुकने प्रतिहत होकर परावर्तन को (त्वष्टु) आदित्य की (अपीच्यम) अन्तर्हित अन्दर स्थापित (under Layer) मे गई हुई अन्य रश्मियों ने (इत्था) इस प्रकार (चन्द्रमसो) चन्द्रमा के (गृहे) मण्डल में।

श्री० स्कन्द स्वामी ने भी अपने वेद भाष्य मे लिखा है—

"सुषुम्णो नाम सूर्य रश्मिश्चन्द्रमस गतः अम्मयत्वात् चन्द्रमण्डलस्य। तत प्रतिहत. सन् परावृत्य ज्योत्स्नारूपेण पृथिव्यां दीप्यते ॥"

इन वचनो से यह भाव अभिव्यक्त होना है कि सुषुम्ण रश्मि चन्द्रमा को पारित तथा विवर्धित करती है। सूर्य की सहस्त्र रश्मियो में से एक मात्र यही रश्मि चन्द्रमण्डल (चन्द्रगृह) से प्रतिहित होकर (Reflect) परावर्तित होती है। तब प्रकाश रूप में पृथिवी मे प्रकाशित होती है। अन्य रश्मियाँ चन्द्रमण्डल में अन्तर्हित हो जाती हैं।

अर्थात्—चन्द्रमा की मृत्तिका इन्हें अपने में स्वायत्त कर लेती है। सूर्य की अन्य रश्मियो को absorb कर लेने से चन्द्रमा की मिट्टी में क्या परिवर्तन होते हैं यह तो अज्ञात है। परन्तु इतना निश्चित है कि इसकी मिट्टी (Soil) में absorber गुण अत्यधिक है।

चन्द्रमा की मिट्टी सूर्य की एक किरण को छोड़कर अन्य (Radiations) की शोषक सिद्ध होती है, तब तो इस की (Crust) को dead block (A short heavy piece) की बाहुल्य से निर्मित होनी चाहिये क्योंकि gamow and cleveland नाम की पुस्तक के पृष्ठ ४१८ में लिखा है—'a block of lead, is a good absorber of Radiations of all kinds"।

या इस की मिट्टी इसी प्रकार के किसी दूसरे अदभुद तत्त्वो से निर्मित हो ऐसी सभावना की जा सकती है। यह खोज का विषय है।

[विशेष—रश्मिवाचक 'सुषुम्ण" पद है और शरीरान्तर्गत नाडी॥ वाचक 'सुषुम्णा" बालक व्यवहार दोनो को सुषुम्णक' कहते हैं।]

पृ० ९ का शेष

ओर ले जाना है। नई सन्तति के उच्च चरित्रनिर्माण के लिये हमें उसको सदा कर्मशील रहने का स्वभाव करना पडेगा। उसको विश्राम और मनोरजन के समय भी हमे ऐसा वातावरण तैयार करना पडेगा कि उससे भी उसे देश भक्ति, चरित्रनिर्माण, आत्मविश्वास और राष्ट्रियता की शिक्षा मिले। शिक्षा मे भी नैतिकता पर जोर देना पडेगा। तभी नई पौध का ऊचा चरित्रनिर्माण हो सकता है। चरित्र शब्द मे वे सब आवश्यक गुण विद्यमान हैं जो एक अच्छे भले ईमानदार आदमी मे होने चाहियें। चरित्र एक ऐसा वृक्ष है जिसकी जडें अवश्य मनुष्य के अपने व्यक्तित्व मे गडी होनी हैं किन्तु जिसका विकास समाज के खुले आकाश मे होता है जिसकी शाखायें खुली हवा मे फैलती हैं और जिसके फल ससार के दूसरे लोग भी आनन्द से खाया करते हैं।

ऊचा चरित्र बनाने के लिये बच्चो को दबाना तो अच्छा नहीं किन्तु खुली छूट देना भी उचित नही। छूट हो किन्तु मर्यादित हो। कई बार मां-बाप बचपन से ही बच्चों में दीनता का बीज बो देते हैं। जिस बालक को माता पिता का मर्यादित प्यार हो जिसे खुद गिरकर चलने का अभ्यास न डाला गया हो। इस प्रकार बालक के चरित्र निर्माण के लिये पूरी सावधानता रखनी आवश्यक है॥

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

इस अवसर पर "आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी" नाम से पुस्तक तैयार करनी है। आर्यसमाज के अनुभवी लेखक श्री प० शिवदयालु जी ने इसका सम्पादक बनना स्वीकार कर लिया है। इस सम्बन्ध मे विभिन्न आर्यप्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजो तथा सर्वसाधारण मे जो भी सुझाव और मसाला वे दे सके, अतिशीघ्र पण्डित जी के पास "आर्य वानप्रस्थाश्रम पो० ज्वालापुर, जिला सहारनपुर" के पते पर भेजने की कृपा कर। इस सम्बन्ध में यदि कोई पुस्तकें छपी हुई हो, या शास्त्रार्थ महारथियो के जीवन, कार्य आदि के बारे में ज्ञात हो, सब भेज दें।

—महेन्द्र प्रताप शास्त्री संयोजक

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के संबंध में आवश्यक सूचनाएँ

समारोह की तिथियों में परिवर्तन

पूर्व प्रकाशित सूचनाओं के आधार पर काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह की तिथियां १८-२१ नवम्बर निर्धारित की गई थीं। अब तिथियो मे परिवर्तन कर दिया गया है। शताब्दी समारोह अब २३ दिसम्बर से २८ दिसम्बर ६९ तक हो गया है।

(२) पुस्तक विक्रेताओं और प्रकाशकों की दुकानें

शास्त्रार्थ शताब्दी पर विक्रेताओ तथा प्रकाशको को दुकानें लगाने को विशेष सुविधा दी जाएगी। शताब्दी पर पुस्तको की दुकान लगाने वाले सज्जनो से अनुरोध है कि वे इस सम्बन्ध मे आवश्यक पत्र व्यवहार कर अपना स्थान सुरक्षित करवा लें ताकि बाद मे उन्हें असुविधा न हो।

(३) शताब्दी कार्यालय

आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र० के नारायण स्वामी भवन लखनऊ मे शताब्दी कार्यालय खोल दिया गया है ताकि शताब्दी सबन्धी समस्त पत्र व्यवहार सुगमता से किया जा सके। शताब्दी समारोह सम्बन्धी पत्रो के शीघ्र उत्तर देने की व्यवस्था की गई है। पत्र व्यवहार करने वालों को चाहिए कि वे पत्र पर पूरा पता अर्थात् 'काशी शास्त्रार्थशताब्दी कार्यालय,' नारायण स्वामी भवन, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ—१ लिखें।

(४) धन संग्रह के लिए नोट

शताब्दी समारोह के लिए धन सग्रह के १००) २५) १०) ५) व १) के नोट प्रकाशित किये जा रहे हैं। समस्त आर्य समाजो को चाहिये वे अपनी आवश्यकताओं से तुरन्त सूचित करें ताकि उन्हे नोट भिजवाये जा सके।

कृपया स्मरण रखें कि काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समस्त आर्य जगत् की अपनी शताब्दी है। इसमें तन मन धन से पूर्ण सहयोग देना प्रत्येक आर्य नर-नारी का नैतिक कर्त्तव्य है।

मन्त्री, काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ

अबोहर में चित्र तथा निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन

आर्य युवक समाज अबोहर की ओर से इस वर्ष ऋषि निर्वाण पर्व (दीपावली) पर चित्र प्रदर्शनी तथा निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। जिसका मन्तव्य जनसाधारण में फैल रहे नग्न चित्रो के प्रति अनुराग दूर करके महापुरुषो, महात्माओ, शहीदो आदि के शिक्षाप्रद चित्र लगाने की प्रेरणा देना है। जिसके फलस्वरूप हम सब में नैतिकता, राष्ट्रीयता एव सच्चे स्वाभिमान की भावना बलवति होगी।

इस विषय के प्रत्येक पाठक से हमारा निवेदन है कि वह न केवल अपने मकान दुकान या कार्यालय आदि से अवाञ्छनीय चित्र उतार कर उनके स्थान पर महापुरुषो के चित्र लगायें। इन प्रतियोगिताओ मे आप व्यक्तिगत तथा किसी सस्था के रूप मे भाग ले सकते हैं।

इस सम्बन्ध में सब जानकारी नीचे लिखे से मगवाई जावे।

व्यवस्थापक, आर्य युवक समाज दयानन्द कालिज अबोहर

(विशेष—सूचना देर से पहुंचने के कारण २६-१०-६९ वाले अंक में प्रकाशित नहीं हो सकी। —व्यवस्थापक आर्यमर्यादा

आर्यसमाज समस्तीपुर, जि० दरभंगा (बिहार)

उत्सव की तारीखो मे परिवर्तन कर दिया गया है। अब वार्षिकोत्सव १३ दिसम्बर से १७ दिसम्बर ६९ तक मनाया जावेगा। इस से पूर्व घोषित तारीख रद्द कर दी गई हैं। —मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज गोरखपुर (उ० प्र०)

वार्षिकोत्सव १ नवम्बर से ५ नवम्बर ६९ तक समारोह से मनाया जावेगा। इस समय आर्यसमाज के अनेक पूज्य सन्यासी वानप्रस्थी, पण्डित और भजनोपदेशक पधार रहे हैं। —मन्त्री आर्यसमाज

गोरखपुर शहर में आर्यसमाज की प्रगति

आर्यसमाज के कार्य को बढ़ाने के लिये गोरखपुर शहर के समस्त आर्यसमाजो की बैठक आर्यसमाज गोरखपुर मे हुई। अनेक प्रतिनिधियो ने भाग लिया और केन्द्रीय आर्यसमाज का सघटन किया गया। आगे लिख अधिकारी चुने गये—प्रधान-श्री मोहनलाल जी मन्त्री श्री तिलेश्वर प्रसाद जी, कोषाध्यक्ष श्री बाबूलाल जी।—सुरेशचन्द्र वेदालङ्कार-मन्त्री जिला आर्य प्र नि सभा गोरखपुर

आर्यसमाज नारनौल (जि० महेन्द्रगढ़)

आर्यसमाज नारनौल मे कुछ समय से चले आ रहे मत भेदो को दूर करने के लिये ६-१०-६९ को नगर के लब्ध प्रतिष्ठ वकील चौ० अजायबराम जी ने अपने निवास स्थान पर स्थानीय प्रमुख आर्य सज्जनो को आमन्त्रित किया। पारस्परिक विचार विनिमय के पश्चात सर्वसम्मति से श्री जगत् प्रिय जी वेदालङ्कार जिला भाषा अधिकारी को सर्वाधिकार देकर प्रार्थना की गई कि वह सभी पक्षो से विचारो से अवगत हो कर समाज के हित मे १९-१०-६९ को साप्ताहिक सत्सग मे अपना जो निर्णय प्रस्तुत करगे वह हम सभी को मान्य होगा। तदनुसार श्री वेदालङ्कार जी ने उभय पक्ष के प्रधानो के परामर्श एव सहमति से नये चुनाव होने तक आर्यसमाज के कार्य को सुचारु रूप से सचालना निम्न सम्मिलित कार्य कारिणी परिषद् एव अन्तरङ्ग सभा के गठन की घोषणा की।

कार्यकारिणी

प्रधान—चौ० अजायबराम जी वकील, उपप्रधान-प्रो० प्रभुदयाल जी यादव सहायक, प्रधान-श्री हनुमान जी वकील, मन्त्री-श्री प्रह्लाद जी आर्य, उपमन्त्री-वैद्य हरिश्चन्द्र जी, कोषाध्यक्ष-श्री गयाराम जी बुकसेलर, पुस्तकाध्यक्ष-ला० ब्रजलाल जी।

अन्तरङ्ग सदस्य

प्रिंसिपल श्री जगदीश मित्र शर्मा, श्री उदमीराम जी वकील, ला० देवराज जी, मा० जवाहरलाल जी आर्य पथिक, श्री भगवानदास जी भाटिया, डाक्टर मगलसिंह जी, श्री रामेश्वर दयाल जी, महाशय दीनदयाल जी और मा० टेकचन्द जी मोहल्ला जोहड़न पर।

—मा० प्रह्लादराय, मन्त्री

विशेष—प० जगत्प्रिय जी वेदालङ्कार के इस सद्भावना पूर्ण दिये गये निर्णय को सभा ने स्वीकार कर लिया है।

—भगतसिंह (महाशय) उपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

आर्य दिवाकर (सुरीनाम) की ४० वीं जयन्ती

आर्य दिवाकर का ४० वी जयन्ती का समारोह ता० २७ सितम्बर से ४ अक्टूबर तक वेद यज्ञ के साथ कुशल पूर्वक मनाया गया। इसके बाद पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का वैदिक प्रवचन विविधि समाजो में जोरशोर से हो रहा है। अभी तक आर्यसमाज क्वाटा, श्री सनातन धर्म, आर्यसमाज हुसु, आर्यसमाज लैदेग मे वैदिक प्रवचन हो चुके हैं। महात्मा जी के वैदिक प्रवचनो का प्रोग्राम ता० २२ नवम्बर तक का बना है।

इसके बाद स्वामी जी गयाना और त्रिनिडाड पधारेगे। यहा की लोग अपना प्रचार प्रोग्राम बना कर स्वामी जी की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

आर्य दिवाकर की जयन्ती विवरण मैं सार्वदेशिक सभा को पठाया हूं। कुछ भाषण व अन्य विवरण छप रहे हैं जिसे मैं आपको शीघ्र पठाऊगा।

प्रान्तिक आर्यसमाज का भव्य मन्दिर का उदघाटन ता० २ नवम्बर को होगा और ८ दिवस तक वेद यज्ञ का अनुष्ठान भी हुआ है।

शिवरत्न, सुरीनाम (डच गायना)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१ सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द मूल्य ३-००
२ धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी १-२५
३ सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह १-००
४ आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह १-२५
५ स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द १-२५
६ वैदिक सत्सम पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित ०-५०
७ कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी ६-००
८ स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित) ०-४०
९ वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि) ०-७५
१० जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम ए ३-००
११ सोमसरोवर ,, ,, ,, ३-००
१२ वैदिक सिद्धान्त— १ ००
१३ Principle of Arya Samaj ,, १-५०
१४ Glimpses of Swami Daya Nand १-००
१५ Subject Matter of Vedas १-००
१६ आर्यसमाज का सैद्धान्तिक [illegible] स्वा० अनुभवानन्द जी ०-५०
१७ मुक्ति के साधन—प० मन[illegible] विद्यासागर १-००
१८ प० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन [illegible]त्र—ले० प्रो० रामप्रकाश १-३५
१९ वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी आचार्य १०) सैंकड़ा
२० पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद २ ००
२१ सन्ध्या क्या, क्यों, कैसे, ले० प० गंगाप्रसाद उपाध्याय २-००
२२ मैं और मेरा भगवान्, ,, १-५०
२३ सनातन धर्म, ,, ,, ,, ०-७५
२४ Budha & Daya nand ,, ,, ,, २-००
२५ नीहारिकावाद और उपनिषदें ले० प० चमूपति जी एम ए ०-२५
२६ काया कल्प ले० प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार १-००
२७ बाल कहानियाँ आर्यसामाजिक कहानियों का संग्रह ०-७५
२८ मर्यादा पुरुषोत्तम राम ले० कु सुशीला आर्या एम ए. ०-२५
२९ आर्यसमाज क्या मानता है ? ले० प० मदनमोहन विद्यासागर १०) सै०
३० गोकरुणानिधि, ले० स्वामी दयानन्द जी १०) ,,
३१ आर्य नेताओं के वचनामृत सं० [illegible] १०) ,,
३२ देवयज्ञ रहस्य, ले० प० चमूपति जी एम० ए० ००-१५
३३ ऋषि का चमत्कार ,, , ,, ,, ००-५०
३४ वेदों का यथार्थ स्वरूप ले० प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ६-००
३५ वीर भूमि हरयाणा ले० आचार्य भगवान् देव जी ३-००
३६ मास मनुष्य का भोजन नहीं , , ,, ,, १-००
३७ विदेशों में एक साल ले० स्वा स्वतन्त्रानन्द जी २-२५
३८ वैदिक कर्तव्य शास्त्र ले० प० धर्मदेव सिद्धान्तालंकार २-००

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, [illegible] देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

ऋण्वन्तो विश्वमार्यम् (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

(प्रश्न) जो त्याज्य ग्रन्थों में सत्य है उस का ग्रहण क्यों नहीं करते ? (उत्तर) जो-जो उन में सत्य है सो-सो वेदादि सत्य शास्त्रों का है और जो मिथ्या है वह उन के घर का है वेदादि सत्य शास्त्रों के स्वीकार में सब सत्य का ग्रहण हो जाता है जो कोई इन मिथ्या ग्रन्थों से सत्य का ग्रहण करना चाहे तो मिथ्या भी उस के गले लिपट जावे इस लिये "असत्यमिश्रं सत्यं दूरतस्त्याज्यमिति" असत्य से युक्त ग्रन्थस्थ सत्य को भी वैसे छोड़ देना चाहिये जैसे विषयुक्त अन्न को ॥—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ अंक ४७ } २४ कार्तिक वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ९ नवम्बर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१० रु० „ „ विदेश में २० रु० एक प्रति का मूल्य २० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

दिवाली अंक

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन: स एवार्थ: प्रकाश्यते ॥

अगले मन्त्र में भी उसी अर्थ का प्रकाश किया है ॥

इमामग्ने शरणिं मीमृषो न इममध्वानं यमगाम दूरात् ।
आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां भृमिरस्यृषिकृन्मर्त्यानाम् ॥

॥ ऋ० १.३१.१६ ॥

पदार्थ:—(इमाम्) वक्ष्यमाणाम् (अग्ने) सर्वसहाद्युत्तम विद्वन् (शरणिम्) अविद्यादिदोषहिंसिकां क्रियाम् (मीमृष:) अत्यन्त निवारयसि (न:) अस्माकम् (इमम्) वक्ष्यमाणम् (अध्वानम्) धर्ममार्गम (यम्) मार्गम (अगाम) जानीयाम् प्राप्नुयाम वा (दूरात्) विप्रकृष्टात् (आपि.) य: प्रीत्या प्राप्नोति स: (पिता) पालक: (प्रमति) प्रकृष्टा मतिर्यस्य (सोम्यानाम्) ये सोमे साधव: सोमानर्हन्ति तेषां पदार्थानाम् (भृमि) यो नित्य भ्रमति (असि) (ऋषिकृत्) ऋषीन् ज्ञानवतो ऋषीन् ज्ञानवतो मन्त्रार्थद्रष्टॄन् कृपया व्याख्योपदेशाभ्यां करोति (मर्त्यानाम्) मनुष्याणाम् ॥

अन्वय:—हे अग्ने विद्वंस्त्वं सोम्यानां मर्त्यानामापि: पिता प्रमतिर्भृमिर्ऋषिकृदसि न इमां शरणिं मीमृषो वयं दूरादध्वानमतीत्यागाम नित्यमभिगच्छेम तं त्वं वयं च सेवेमहि ॥

भावार्थ:—यदा मनुष्या: सत्यभावेन सन्मार्गं प्राप्तुमिच्छन्ति तदा [illegible] सत्पुरुषसङ्गाय प्रीतिं जिज्ञासां जनयति ततस्ते श्रद्धालव: सन्तोऽतिदूरेऽपि वसत आप्तान् योगिनो विदुष उपसङ्गम्याभीष्टं बोधं प्राप्य धर्मात्मानो जायन्ते ।

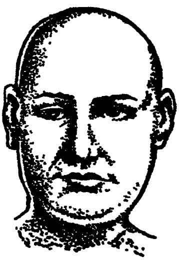
भाषार्थ:—हे (अग्ने) सब को सहने वाले सर्वोत्तम विद्वन् जो आप (सोम्यानाम्) शान्त्यादिगुणयुक्त (मर्त्यानाम्) मनुष्यों को (आपि:) प्रीति से प्राप्त (पिता) और सर्वपालक (प्रमति:) उत्तम विद्यायुक्त (भृमि:) नित्य भ्रमण करने और (ऋषिकृत) वेदार्थ का बोध कराने वाले हैं तथा (न:) हमारी (इमाम्) इस (शरणिम) विद्यानाशक अविद्या को (मीमृष:) अत्यन्त दूर करने हारे हैं वे आप और हम (यम्) जिस को हम लोग (दूरात्) दूर से उल्लघन कर के (अध्वानम्) धर्ममार्ग के (अगाम) सम्मुख आवें उस की सेवा करें ॥

भावार्थ:—जब मनुष्य सत्यभाव से अच्छे मार्ग को उत्तम ज्ञान का प्रकाश करने वाले विद्वानों का संग होने के लिये प्रीति और जिज्ञासा अर्थात् उन के उपदेश जानने की उत्पन्न करता है इस से वे श्रद्धालु हुए अत्यन्त दूर भी बसने वाले आप्तवादी योगी विद्वानों के समीप जाय उन का संग कर अभीष्ट बोध को प्राप्त हो-कर धर्मात्मा होते हैं ॥

(महर्षि दयानन्द-वेदभाष्य)

"आर्यमर्यादा साप्ताहिक का १० रु०) शुल्क भेजकर ग्राहक बनिये तथा अपने मित्रों को बनाइये

आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने



दिवाली के समय मोक्षपद को प्राप्त किया

❁ दीवाली ❁

(श्री० कविवर "प्रणव" शास्त्री एम. ए. फीरोजाबाद)

दिवाली लिए दिव्य दीपक करों में अँधेरा मिटाती चली आ रही है ॥
घमण्डी घनों ने रमासी अमा को दिया योग पूरा सुहागिनि बनाया ।
भुलावे मे भले भटकते रहे ये सदा देव-मार्गों को धुँधला बनाया ॥
किरण किन्नरी किन्तु कोमल स्वरों में प्रभाती सी गाती चली आ रही है ।१।
सजी सृष्टि की सीढियों में चढे तो यहाँ पीढियों ने करामात की है ।
विषय वासनाओं के आसन डिगाये यहाँ योग ने भोग को मात दी है ॥
निधन की भजायें अमर आत्म जय का कि डङ्का बजाती चली आ रही है ।२।
हुई मौन थी वेद की जो ऋचाएं उन्हें आज फिर से मिली वाग्वाणी ।
युगों के पिपासु हुए धन्य प्यारे निराले कृती पी पीयूष प्राणी ॥
द्विजों की प्रतिष्ठा पुरानी प्रथा को संदेशा सुनाती चली आ रही है ।३।
चली शास्त्र-सम्मान की चारु चर्चा कि अर्चा यहाँ वर्ण आश्रमों ने पाई ।
हुए दर्शनों के सुदर्शन जनों को मार्गों ने मुनि स्मृति की सुस्मृति जगाई ॥
युगों से पड़ी सो रही संस्कृति को सहेली जगाती चली आ रही है ।४।
अनादित्व आस्था लिए जीव, ईश्वर प्रकृति को मिली ये तरंगित त्रिवेणी ।
तुला तक में जो तुली मान्यताएँ मिली धर्म को ही प्रथम एक श्रेणी ॥
मतों की बनी जो कि मीनार ऊंची उन्हीं को गिराती चली आ रही है ।५।
करोड़ों सहे कष्ट योगी न ऊबे भले जाम कोई विषैले पिला दे ।
उसी को दयानन्द बोलने ज्ञानी सुधाधार प्यारी धरा को पिला दे ॥
'प्रणव' नास्तिकों को तु आस्तिक बना दे कि जादू चलाती चली आ रही है ।६।

अनोखादीप

(श्री सत्यभूषण जी वेदालकार एम ए)

पीडित मानवता दुर्दम्य दानवी प्रहारो से अभिभूत, कलुषित विचारो से दोलायमान, अन्धविश्वासो से विमूढ, पथभ्रान्त, वैषम्य के कुठाराघात से म्रियमाण मानव समाज, पग-पग पर मन विचलित भ्रान्त चेतना मूर्छित, स्वरलहरी विकृत, त्राहि त्राहि की करुण पुकार—व्यथा, वेदना के हाहाकार से गुजायमान जल थल अम्बर।

नितान्त तिमिरावृत्त वेला मे नैराश्य घन कुहर जाल मे युग युग पीडित अभिशप्त मानव के उद्धार के लिए नैराश्य की सन्ध्या मे एक दीप चाहिये था जो अपने आलोक पुञ्जसे तप पूत ज्वाला से दिव्यालोक से अवतरित होकर, पूर्ण श्रद्धा एव ज्ञान का सबल लेकर समष्टि की मगल कामना के स्नेह से भूतल के कणकण को पुन आलोकित कर सके।

दासता पराधीनता आत्महीनता की निबिड श्रृखलाओ से वह भारतीय समाज, पोप-पाखण्डियो के आडम्बर मिथ्या विश्वासो से विवेक शून्य कुप्रथाओ से जजरीभूत जन समूह को पुन आन्दोलित कर सन्माग पर लाने के लिए उस दिव्य दीप दयानन्द ने अपना सवस्व बलिदान कर दिया। अखिल धन वभव प्रतिष्ठा को ठुकराकर कई बार विष पीकर भी स्नेह दान कर जन जन को अपने आलोक स अनुप्राणित कर कृताथ किया। उस परम तेजस्वी दीप की ज्वाला न केवल भारत मे अपितु अमेरिका, यूरोप के विशाल क्षेत्रो, अफ्रीका के जगलो रेगिस्तानो मे भी प्रज्वलित हुई। इस सतत पवित्र आज्वल्यमान ज्वाला को बुझाने के लिए आत्मीयो तथा परकीयो की ओर से कितने ही तूफान झझावात चले, किन्तु दीपक अविचल रूप से जलता ही रहा।

अनोखा अनुपम दीप था वह। उसके मधुर माधुरी मूर्ति तेजस्विता, अर्चस्विता अदम्य आकाक्षा चित्त पर हृदय पटल पर सदा के लिए अकित हो गई है। उसकी छाप अमिट है मिटाए नही मिटती। दीपक बुझ चुका है, पर ज्योति शाश्वत है, साधना चिरन्तन है। विश्व के कोने कोने मे उसकी आलोक पुञ्ज की रश्मिया विराजमान है। काल के महागर्त में कौन नहीं समाया, किन्तु काल की गति को नया मोड देने वाले, नई क्रान्ति का शखनाद करने वाले, नव जागरण के सदेशवाहक उस दीप को कौन भूल सकता है!

दीप वह बुझने न पाए

(ले० श्री सत्यभूषण" वेदालकार एम ए नई-दिल्ली)

दीप वह बुझने न पाए।
जो कि शाश्वत साधना से, विश्व का निर्माण करने।
प्रज्वलित हो युग युगो से, अनवरत उत्थान करने॥
अवतरित हो नव-प्रभा से, विलसती अनुपम विभा से।
ज्योति पुज विकीर्ण करता, पाप ताप अनन्त हरता॥
देखना उसकी प्रगति क्षण भर कही रुकने न पाए।
दीप वह बुझने न पाए॥

एक अनुपम दीप अन्तर, में अमित अभिलाष लेकर।
दलित पीडित मानवो को, सदयता का हाथ देकर॥
विषमता जग से मिटाने, सुप्त मनुजो को जगाने।
जो कि तिल तिलकर जला, उसकी शिखा झुकने न पाए॥
दीप वह बुझने न पाए॥

काल को भी मार ठोकर, जो बना था वीतरागी।
त्याग कर सुख-विभव सब, जिसने लगाई थी समाधि॥
जो कि नव-आलोक देकर, वेद का सदेश देकर।
काल गह्वर मे समा चैतन्य नूतन भर गया है।
पोप, पाखण्डी न जाने, शक्ति से किस दल गया है॥
आज भी उसका सुनहली, कान्ति वह घुटने न पाए॥
दीप वह बुझने न पाए॥

दिल के दीप

दिल में वैदिक-दीप जगाले-मिटे अंधेरा सारा!

(श्री कवि-कस्तूरचन्द घनसार, उपाध्यक्ष आर्यसमाज पीपाड़ शहर)

भ्रम-भूतका रहा अधरा, अविद्या-आवरण छाय रहा!
क्यो ? अब इसमे भटक रहा है, सुपथ-सूझ न पाय रहा!!
बढता रहे द्वेष का-आवरण अमभाव, दिखाय रहे!
जगा हुआ था दिव्य दीप ये, जिसको आज बुझाय रहे!!
आज वही हैं जगाने वाले, चल रहे उलटी धारा!
दिल मे वैदिक दीप जगाले मिटे अधेरा सारा॥१॥
वैदिक-दीप, जगाये थे वह, द्वेषाज्ञान, हटाने को।
आया था वह ऋषि दयानन्द, "सत्यार्थप्रकाश" बढाने को!!
जन-जन घट प्रकाश हुआ है, आवरण सभी भगाय चले!
वह था ऋषिवर महामेधावी ज्योति एक जगाय चले!!
जिससे आज प्रकाश बढा है, हुआ विमल है उजियारा।
दिल मे वैदिक दीप जगाले-मिटे अधेरा सारा॥२॥
स्वय सदन में, भरा अधेरा, क्या ? मिटावे औरो का!
क्या ? आशा है करते उसकी, जोर दिखावें औरो का!!
ऐसे नही सुधरा होगा-उलटा बसे अधेरा ये!
आर्यमार्तण्डोदय, हुआ है, उल्लू न जाने सवेरा ये!!
नैन खोल कर देख दीवाना, कितना पावन है प्यारा।
दिल मे वैदिक दीप जगाले-मिटे अधेरा सारा॥३॥
मेधावी सद् लक्ष्मी विराजे, बढती रहे दिव्य-ज्योति!
दीपक वेदमन्त्र रहे जलते, सद विचार चमके मोती!!
निशीय महातम छाई हुई-जिसमें यह दीप जगाले!
सदाचार-व्यवहार श्रेष्ठोत्तम, आर्य परिवार सजाले!!
"घनसार" दीपाली जब माने, वै गौरव रहे हमारा।
दिल मे वैदिक दीप जगाले, मिटे अधेरा सारा॥४॥

महर्षि दयानन्द के उपकार

(ब्र० बलवीर व्याकरण शास्त्री, गुरुकुल झज्जर)

महर्षि दयानन्द ने जो उपकार ससार के मानव नहीं, प्राणी मात्र के लिये किये हैं, उन की गणना करना इन पक्तियो में सभव नहीं, उन उपकारों में से कुछ का निर्देश आगे नाममात्र रूप में किया जाता है वेद के आधार पर ही सत्य असत्य का निश्चय करना। चार मूल सहिताएं ही वेद से कही जाती हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान है। जीव का कल्याण ईश्वर की उपासना वेद के ज्ञान और श्रेष्ठ कर्म करने से ही हो सकता है।

वर्णव्यवस्था का आधार जन्म से नही किन्तु गुण कर्म स्वभाव से है। स्त्री और शूद्र सब को वेद पढने का अधिकार है। अनाथो, विधवाओ और पीडितो की रक्षा और पालन के उपाय बतलाये।

आर्ष शिक्षा ब्रह्मचर्य प्रणाली का पुनरुद्धार किया। स्थान-स्थान पर गुरुकुल खोलने का आदेश दिया। बाल विवाह का निषेध किया। शुद्ध कर्म काण्ड करने के लिए सस्कारविधि पुस्तक की रचना की। गोहत्या बन्द करने का पूर्ण यत्न किया। इसीलिये गोकरुणा निधि पुस्तक भी लिखा। अछूतो को समाज में समान अधिकार देने पर बल दिया। ऋषि के उपदेशो का प्रभाव देश विदेश पर सभी जगह हुआ। स्वराज्य का घोष सब से पूर्व ऋषि ने ही दिया।

यह बतलाया कि मनुष्य जाति एक है। इस के आर्य और दस्यु दो भेद हैं जो कि कर्म के आधार पर हैं। हमारे देश का सर्व प्रथम नाम आर्यावर्त्त है। आर्य लोग बाहर से नही आये। राष्ट्र की रक्षा ब्राह्म और क्षात्र शक्ति मिलकर ही कर सकती है। कुरीतियों को दूर करके समाज में अच्छी रीतिया चलानी चाहियें।

युवा अवस्था मे स्वय वर विधि से विवाह होने चाहिये।

सभी मत मतान्तरो की असत्य बातो का खण्डन करके सत्य वेदमत पर चलने की प्रेरणा दी।

कहा तक कहें सारा विश्व उनके ऋण से दबा पड़ा है। जो उनकी आज्ञाओ के अनुसार चलेगा-वही बढेगा, चाहे किसी देश का हो।

हमे व्रत लेना चाहिये कि उनके द्वारा प्रदर्शित वैदिक आदर्शों पर स्वय आचरण करें और दूसरों को ऐसा करने के लिये उत्साहित करें।

सम्पादकीय

देव दयानन्द-दिव्यदर्शन

दयानन्द ऋषि उसी कोटि के महापुरुष हुए हैं, जिस कोटि में वर्त्तमान सृष्टि के आरम्भ से ब्रह्मा से लेकर महाभारत काल के जैमिनि पर्यन्त ऋषि मुनि होते आये थे। उन्ही की भांति ऋषि दयानन्द ने भी अपने मन्तव्यों का आधार चार मूल संहिताओं (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद) को स्वतः प्रमाण के रूप मे स्वीकार किया। अन्य ऋषि मुनियों के वचनों को वेद से अनुकूल होने पर परतः प्रमाण रूप में साक्षिवत् माना।

यद्यपि महाभारत के पश्चात् भी विद्वान् होते रहे, जिन्होंने वेदों, ब्राह्मण-ग्रन्थों, उपनिषदों, षडंगों और उपाङ्गों पर अपने भाष्य और टीकाओं की रचनाएं की हैं। परन्तु ये अर्वाचीन भाष्य एवं टीकाकार ऋषि कोटि के नही थे। यह तथ्य उनके रचित ग्रन्थों के पढने और मनन करने से स्पष्ट हो जाता है, "ऋषि" शब्द का निर्वचन निरुक्त में "दर्शनात्" क्रिया से किया है—"स्तोमान ददर्श" अर्थात् जिस महापुरुष ने योग द्वारा पृथिवी से लेकर ईश्वर पर्यन्त सभी तत्वों को साक्षात् किया, वेदमन्त्रों के वास्तविक अर्थों को जाना और उन का लोकहित के लिये प्रचार किया वही ऋषि पद को प्राप्त हुआ।

आगे हम उन अर्वाचिन भाष्य और टीकाकारों के कुछ मन्तव्यों को प्रस्तुत करते हैं और उनके वेदों और दर्शनों के विरुद्ध अर्थों का वर्णन करते हैं, जिन को उन्होने ऋषियों के नाम पर व्याख्यात किया।

१—मुक्ति से लौटकर जीव फिर ससार मे जन्म नही लेता। (२) मुक्ति से पूर्व सब कर्म और उनकी वासनाओ का नाश हो जाता है। (३) मुक्ति का साधन केवल ज्ञान ही है। (४) ईश्वर और जीव अभिन्न हैं। (५) जीव और ईश्वर का सयोग सम्बन्ध है। (६) जीव सर्वज्ञ हो जाता है। अर्थात् उस का ज्ञान अनन्त हो जाता है। (७) गृहस्थ मे रहता हुआ मनुष्य मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता। (८) जब तक स्त्री किसी जन्म मे पुरुष का शरीर धारण नही करेगी और पुरुष होकर भी सन्यास आश्रम मे नही जावेगी, तब तक उसकी मुक्ति नही हो सकती।

(९) ईश्वर की सिद्धि प्रत्यक्ष प्रमाण से नही हो सकती। (१०) ईश्वर विभु है अतः ईश्वर मे क्रिया नही हो सकती। (११) जीव भी स्वरूप से विभु है। (१२) केवल उपासना से ही जीव मुक्ति को पा सकता है, उस को ज्ञान की आवश्यकता नही होती। (१३) वर्णव्यवस्था का आधार जन्म मात्र ही है। इत्यादि अनेक अवैदिक और अनार्ष वचन इन भाष्य और टीकाकारों की कृतियों में मिलते हैं।

ऋषि दयानन्द ने वेद विरुद्ध इनके मतों का स्पष्ट खण्डन करके शुद्ध वैदिक मन्तव्यों को अपने ग्रन्थों मे प्रकाशित किया है। इस तथ्य को जानने के लिये आर्यमर्यादा के स्वाध्यायी आर्य बन्धुओं को सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, आर्याभिविनय, सस्कारविधि और ऋषि दयानन्द कृत वेदभाष्य को पढ़ना और उन पर मनन करना चाहिये। इन कुछ सम्पादकीय पंक्तयों में हम उपरि लिखित अवैदिक मन्तव्यों के खण्डन विषयक ऋषि के वचनों का पूर्णतया उद्धृत नही कर सकते, क्योंकि एक-एक मन्तव्य एक-एक विस्तृत लेख की अपेक्षा रखता है। फिर भी ऋषि के वचनों का साररूप में दिग्दर्शन करा देना उचित समझते हैं। क्रमशः पढ़िये—

(१) जीव मुक्ति प्राप्त करके परान्त काल की अवधि के पश्चात् फिर संसार मे जन्म लेता है। परान्त काल की अवधि ३६ हजार बार सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के काल की बराबर है अर्थात् एक सृष्टि और प्रलय के काल ८ अरब ६४ करोड़ वर्ष को ३६ हजार से गुणा करें, तो इतने काल तक जीव मुक्ति में आनन्द भोगकर फिर संसार में जन्म लेता है।

(२) मुक्ति से पूर्व सब कर्म और वासनाएं नष्ट नहीं होती, केवल दुःखदायक कर्म और उन की वासनाओं का नाश होता है। जिन पुण्य दायक कर्मों का फल मुक्ति मे भोग लिया जाता है और जिन कर्मों का फल ससार मे ही जन्म लेकर भोगा जाता है, उन के कारण परमेश्वर पुनः जीव को ससार मे भेजता है। (३) मुक्ति के साधन कर्म और ज्ञान दोनों हैं, केवल ज्ञान नही। ज्ञान कर्म के स्वरूप का प्रकाशक है और कर्म ज्ञान का पूरक है। (४) ईश्वर और जीव अपनी अपनी भिन्न सत्ता रखते हैं। (५) जीव और ईश्वर का व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। ईश्वर जीव से सूक्ष्म है। जीव चेतन सत्ता है, प्राकृत नही, अतः ईश्वर उस मे व्यापक होते हुए भी जीव में सावयवता नही होती। (६) जीव स्वरूप से अल्प अल्पज्ञ है। परमावधि तक ज्ञान बढ़ने पर भी जीव का ज्ञान और सामर्थ्य असीम नहीं हो जाता। अतः जीव सर्वज्ञ नही हो सकता और न ही उन का ज्ञान अनन्त हो सकता है, हा योगाभ्यास से जीव नैमित्तिक ईश्वरीय ज्ञान को प्राप्त करके तत्वज्ञ हो सकता है। एक काल मे जीव सब कुछ को नही जान सकता। (७) मुक्ति प्राप्ति के योग्य ज्ञान, कर्म-उपासना करता हुआ गृहस्थ भी मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। (८) स्त्री भी स्त्री रूप मे ही मुक्ति प्राप्त कर सकती है। न उस को पुरुष शरीरधारण करने की आवश्यकता होती है और न ही संन्यास आश्रम मे जाने की। वह भी शुद्ध ज्ञान कर्म को प्राप्त करती हुई मुक्ति को प्राप्त कर सकती है। (९) ईश्वर की सिद्धि अनुमान और शब्द प्रमाण के साथ-साथ प्रत्यक्ष प्रमाण से भी होती है, यदि किसी भी जीव को किसी भी अवस्था में, किसी भी काल में और किसी भी देश में प्रत्यक्ष ज्ञान न होवे तो उस को अनुमान प्रमाण भी नही हो सकता। (१०) ईश्वर विभु है, परन्तु चेतन होने के कारण उसमें क्रिया भी है। अन्यथा सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय आदि क्रियाएं ईश्वर नही कर सकता। (११) जीव स्वरूप से अल्प है विभु नही है। जीव का सब सामर्थ्य अल्प एक देशी है, अतः वह विभु नही हो सकता। (१२) जीव को ज्ञान और कर्म दोनों के करने से मुक्ति प्राप्त होनी है। उपासना भी आन्तरिक क्रिया विशेष है ज्ञान विशेष नही। अतः कर्मोपासना अविद्या होने से जड है, इस कारण ज्ञान विद्या भी मुक्ति के लिये आवश्यक है। (१३) वर्ण शब्द के अर्थ से ही प्रकट हैं कि वर्णव्यवस्था का मूल जन्म नही है। जन्म से सब मनुष्य उत्पन्न होते हैं और गुण, कर्म तथा स्वभाव के कारण भिन्न भिन्न वर्णों के अधिकार को प्राप्त होते हैं। इत्यादि अनेक अवैदिक मन्तव्यों के खण्डन और वैदिक मन्तव्यों के मण्डनार्थ ऋषि दयानन्द प्रणीत ग्रन्थों का बार-बार पारायण करते रहना चाहिये। क्योंकि ऋषिदयानन्द वेद मन्त्रार्थ द्रष्टा, परम योगी, पूर्ण तत्त्वज्ञ और महावैज्ञानिक थे वह ईश्वर का प्रत्यक्ष कर चुके थे।

राष्ट्रिय एकता का शुद्ध उपाय

भारत सरकार यदि राष्ट्र में साम्प्रदायिक मत भेदों को मिटा कर वास्तविक एकता स्थापित करना चाहती है, तो एक सरल उपाय यह है कि सभी मतों और सम्प्रदायों के विद्वानों को एक जगह इकट्ठा करे। उन मे परस्पर वार्त्तालाप कराये। शास्त्रार्थ की योजना चलाये। तथा सभी मतों सम्प्रदायों के तत्त्वों को जानने वालों को भी उपस्थापित करे और सभी मतों के सहयोग से एक प्रश्नावली तैयार करावें उस प्रश्नावली के लिखित उत्तर उन उन मतों के विद्वानों से लिये जायें। उस प्रश्नावली में वे प्रश्न रखे जायें जिन से प्रायः साम्प्रदायिक झगड़ें खड़े किये जाते हैं। हम स्पष्ट रूप मे निवेदन करना चाहते हैं कि यही एक शुद्ध उपाय राष्ट्रिय एकता का है। राजनीतिक आधार पर एकता कभी नही हो सकती, जैसा कि हम पूर्व एक अंक सम्पादकीय स्तम्भ में लिख चुके हैं। भारत सरकार साहस करे तो यह पवित्र कार्य हो सकता है। अन्यथा लीपा-पोती से स्थिर ऐक्य कभी नही हो सकते। हम पुनः कहते हैं कि इस समस्या को राजनीति का क्षेत्र नही बनाया जावे। —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गुरुकुल कांगड़ी के बारे में मिथ्या प्रचार

(प० प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति, उपकुलपति,
गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी)

गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के बारे मे कुछ लोग तरह तरह की भ्रम मे डालने वाली बात फैला रहे हैं। और भांति भांति की मिथ्या बातें लिख कर गुरुकुल के अधिकारियो को बदनाम कर रहे हैं। यह लोग इस बात पर निर्भर करते हैं कि झूठ को ही बार-बार दोहराया जाता रहे तो लोग उसे सत्य समझने लगते हैं। श्री निगम शर्मा ने २१ अक्तूबर ६६ के नवभारत टाइम्स मे इसी प्रकार का एक वक्तव्य प्रकाशित कराया है। यह पहले भी इस पत्र मे ऐसी बातें लिखते रहे हैं। पाठको को उनकी मिथ्या बातो से भ्रम मे नही पड़ना चाहिये।

एक बात बार बार यह कही जाती है कि पिछले कई मास से गुरुकुल के अधिकारियो ने कर्मचारियो को उनका वेतन नही दिया है। कुछ असंतुष्ट लोगो ने अवैध चुनाव करा के गुरुकुल की एक अवैध और बोगस प्रबन्धकर्त्री सभा बना कर गुरुकुल के अधिकारियो के लिये बैंक बन्द करवा दिये हैं। बैंक बन्द करवा दिये जाने के कारण गुरुकुल के अधिकारी रुपया नहीं निकलवा पा रहे हैं। जिन लोगो ने बैंक बन्द करवा रखे हैं यदि वे लोग आज बैंक खुलवा दें तो गुरुकुल के अधिकारी आज ही वेतन बाटने के लिये उद्यत हैं। श्री निगम शर्मा को मालूम है कि किन लोगो ने बैंक बन्द करवाये हैं उन्हें उन लोगो पर बैंक खुलवाने के लिये जोर डालना चाहिये। मामला कोर्ट मे है कोर्ट की आज्ञा से बैंक खुलते ही कर्मचारियो को वेतन बांट दिया जावेगा। गुरुकुल के अधिकारियो ने तो इस विकट परिस्थिति मे भी कुछ कुछ वेतन बाटने की व्यवस्था की है।

इसी प्रकार कर्मचारियो के वेतनमानो की बात है। भारत सरकार ने जो वेतनमान स्वीकार किये है उन्हें देने मे गुरुकुल के अधिकारियो को जरा भी आपत्ति नही है। गुरुकुल के वर्तमान उपकुलपति पर श्री निगम शर्मा आदि जो अन्य आरोप लगाते हैं वे भी सब मिथ्या हैं और व्यक्तिगत नाराजगी के कारण वे वैसा करते हैं। उपकुलपति ने अपनी आयु कभी कम नही लिखाई। उपकुलपति ने अपनी प्रोवीडेण्ट फण्ड का धन भी [illegible] नहीं लिया। अपनी पुरानी सेवा समाप्त हो जाने पर उस सेवा काल मे जमा प्रोवीडण्ट फण्ड का धन नियमानुसार सभा के उच्चाधिकारियो की स्वीकृति से लिया है। उपकुलपति के रूप मे उनका प्रोवीडेण्ट फण्ड कटता ही नही है। अन्य लोगो को भी प्रोवीडेण्ट फण्ड का धन नियमानुसार ही दिया गया है। जिन दो एक कर्मचारियो को प्रोवीडेण्ड फण्ड का धन नहो दिया जा सका है वह बैंक बन्द हो जाने के कारण नही दिया जा सका। बैंक खुलने पर दे दिया जावेगा। गुरुकुल के अधिकारियो ने किसी पर कोई मुकद्दमा नही चला रखा उल्टा विपक्ष के श्री दीनदयालु जी शास्त्री ने एक मुकद्दमा रुड़की मे गुरुकुल के अधिकारियो पर कर रखा है। उसमे बचाव के लिये गुरुकुल के अधिकारियो को कोर्ट मे जाना पड़ता है। गुरुकुल के अधिकारियो द्वारा मुकद्दमेबाजो मे रुपया बहाते रहने का सवाल ही नही उठता।

कर्मचारियो को उनके प्राप्तव्य अवकाश नियमानुसार और सुविधानुसार दिये जाते हैं। इस मे किसी प्रकार की जाति या गुट की भावना को स्थान नही दिया जाता। एम एस सी की कक्षाएं परीक्षण के रूप मे प्रारम्भ की गई थी। विचार था कि थोड़े खर्च से ही काम चल जावेगा। पर अनुभव से पता चला कि प्रति वर्ष एक लाख से ऊपर रुपये की व्यवस्था किये बिना वे कक्षाएँ नही चलाई जा सकती। गुरुकुल अपने साधनो से इतन अधिक धन की व्यवस्था नही कर सकता था। इस कारण प्रबन्धकर्त्री सभा के अधिकारियो के परामर्श से उक्त कक्षाएँ बन्द करनी पड़ीं। साइस कालेज पहले आगरा और मेरठ यूनिवर्सिटियो से सम्बन्धित था। अब उसे गुरुकुल विश्वविद्यालय के अन्तर्गत ले लिया गया है और यू० जी० सी० तथा भारत सरकार से उसके लिये धन प्राप्त करने का प्रयत्न हो रहा है। सरकार से धन मिल जाने पर पुन एम एस सी की कक्षाएँ प्रारम्भ कर दी जावेगी। गुरुकुल में नियुक्तियां कभी भी जाति और दल के आधार पर नहीं की जाती। कभी किसी प्रार्थी से उसकी जाति नहीं पूछी जाती। नियमानुसार बनी हुई चुनाव समितियां, जिनमें उस-उस विषय के विशेषज्ञ बाहर से बुलाये जाते हैं, उपयुक्त व्यक्तियों का चुनाव करती हैं किसी व्यक्ति को अधिक वृद्धियां देकर रखने की सिफारिश भी चुनाव समिति ही करती हैं। ऐसा सभी सस्थाओं में होता है।

श्री निगम शर्मा ने यू० जी० सी० के जिस पत्र स० एफ। १-१३२-६८। सी डी एन का उल्लेख किया है उसके अनुसार शिक्षकेतर कर्मचारियों ग्रेड वृद्धि करने के सम्बन्ध मे भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय व्यवहार और बातचीत चल रही है। क्योंकि उसका रुपया शिक्षा म ने देना है। शिक्षा मन्त्रालय से उत्तर आया है कि इस सम्बन्ध मे हो रहा है। उपकुलपति और रजिस्ट्रार ने स्वयं अपने वेतन नहीं बढाये हैं। प्रबन्धकर्त्री सभा ने उन्हें यह वेतन मान दिये हैं। वर्तमान रजिस्ट्रार की नियुक्ति अवैध नही है, वह सर्वथा वैध है। फिर, उनकी नियुक्ति वर्तमान उपकुलपति ने नही की है। उनकी नियुक्ति तो वर्तमान उपकुलपति से पूर्व के तीसरे उपकुलपति श्री प० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार के समय मे हुई थी।

श्री निगम शर्मा और उनके साथियों को गुरुकुल के अधिकारियो के बारे मे इस प्रकार की मिथ्या बातें फैला कर उन्हें बदनाम करने की चेष्टा करना शोभा नहीं देता है।

---

३० नवम्बर तक एक नया ग्राहक बनाइये

ग्राहकों तथा पाठकों से आवश्यक निवेदन

आर्यमर्यादा १ दिसम्बर १९६८ को प्रकाशित होना आरम्भ हुआ था। अत ३० नवम्बर ६९ तक एक वर्ष पूरा हो जावेगा। हमें प्रसन्नता है कि एक वर्ष के समय मे ही आर्यमर्यादा ने हिन्दी साप्ताहिक पत्रों में अपना विशेष स्थान बना लिया है। इसके विशेषांको की आर्यजगत् के विद्वानों ने भूरि-भूरि प्रशंसा एवं सराहना की है। वैदिकधर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिये यह आवश्यक है कि इसकी ग्राहक सख्या मे वृद्धि की जावे। अत हम अपने सभी पाठको तथा ग्राहक महानुभावो से विनम्र निवेदन करते हैं कि आर्यमर्यादा के नव वर्ष के उपलक्ष में एक-एक नया ग्राहक बना कर १०) वार्षिक शुल्क ३० नवम्बर तक भिजवाने की कृपा करें। नये ग्राहको को इस वर्ष के 'विशेषांक स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश" तथा वेदाविर्भाव" मुफ्त भेंट किये जावेगे।

विनीत—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक

शोक समाचार

श्री प्रहलाददत्त जी मन्त्री आर्यसमाज नारनौल के पिता चौधरी श्री हेमराज जी का चार पाच दिन की बीमारी के बाद मैडिकल कालेज, रोहतक के हस्पताल में अकस्मात् ही देहावसान हो गया। स्थानीय आर्यसमाज नारनौल के साप्ताहिक सत्संग के पश्चात् २६-१०-६९ को दिवंगत आत्मा की शान्ति एवं सद्गति के लिए परम पिता परमात्मा से प्रार्थना की गई तथा एक शोक प्रस्ताव द्वारा स्वर्गीय चौधरी जी के शोक सन्तप्त स्वजन परिजनो को इस असह्य वज्रपात को सहने तथा उनके त्यागमय जीवन से प्रेरणा लेकर देश व जाति के हित के लिए अपने जीवन को उत्सर्ग कर देने के लिए प्रार्थना की गई। चौधरी जी अजमेर शताब्दी के अवसर पर ऋषि दयानन्द के आदर्शों के प्रति आकृष्ट हुए थे। तब से जीवन पर्यन्त आपने एक कर्मठ ऋषि भक्त के रूप में अपना सारा जीवन सामाजिक सेवा कार्यों में अर्पित किया। आप के निधन से इस क्षेत्र को जो हानि हुई है वह सुगमता से पूरी नहीं की जा सकती।

—शोकातुर—वैद्य हरिश्चन्द्र, उपमन्त्री

अपमान—रामायण का नहीं कुरआन का हुआ

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान, डब्ल्यु-जेड-७१ राजा पार्क शकूर बस्ती, दिल्ली-३४)



महर्षि दयानन्द रचित सत्यार्थ-प्रकाश का अन्य मतावलम्बियों पर जो स्पष्ट प्रभाव पड़ा वह था अपने-अपने धर्मग्रन्थों पर पुनः विचार करने के लिये प्रेरित करना। पुराण, बाईबिल और कुरान आदि ग्रन्थों के भाष्य-अनुवादों का अवलोकन करने से हम सहज ही इनमें हुए परिवर्तन का अनुमान लगा सकते हैं। वास्तव में बाईबिल और कुरआन की व्याख्याओं में इतना अधिक संशोधन हुआ है कि हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि धर्मप्रचार के लिये ईसाई-मुसलमानों ने हिंसा का कभी आश्रय लिया था। ईसाई और मुस्लिम धर्म निरन्तर उदार होते जा रहे हैं जो निःसन्देह मानव-जगत् के लिये प्रसन्नता एवं संतोष का विषय है। परन्तु समय-समय पर कुछ पथभ्रष्ट लोग ऐसा कदम उठा जाते हैं जिससे धर्म का अशुद्धतम रूप उभर कर मनुष्यत्व को चुनौती दे जाता है।

अहमदाबाद का समाचार प्रकाशित हुआ है कि जन्माष्टमी के दिन बहरामपुरा क्षेत्र के रामायण-पाठ के दौरान पुलिस इंस्पेक्टर श्री शेख ने पाठ करने वाले श्री बाल-कृष्ण महाराज और श्रोताओं पर लाठीचार्ज किया तथा रामायण को लात से ठोकर मार कर फेंक दिया। उक्त महाराज तथा श्री सेवकराम टक्कर ने अनशन कर यद्यपि इंस्पेक्टर महोदय को निलम्बित करा दिया है परन्तु कोई भी स्वाभिमानी एवं साम्प्रदायिक भावना से विमुक्त व्यक्ति इतने भर से सन्तुष्ट नहीं हो जायेगा।

निलम्बित कर देने अथवा उक्त भाई को दण्ड या सजा दे देने से वह भाव तो समाप्त नहीं हो सकता जिसके वशीभूत होकर यह दुष्कार्य किया गया। न जाने मेरे प्रिय मुस्लिम भाई यह क्योंकर भूल जाते हैं कि हिन्दू जनता की श्रद्धा रामायण के प्रति उससे कम नहीं है जितनी कि मुस्लिम जनता की अल-अक्सा मस्जिद के प्रति। मेरी दृष्टि में यदि हिन्दू जनता ने रामायण के प्रति हुए अनादर को लेकर उस प्रकार का उग्र प्रदर्शन नहीं किया जैसा कि अल-अक्सा अग्निकांड को लेकर हुआ तो इसका कारण हिन्दुओं की धार्मिक सहिष्णुता है। हिन्दुओं का आदर्श सनातन-काल से विश्व-भ्रातृत्व की उपलब्धि रहा है और इसकी सफलता इसी में निहित है कि वे स्वयं को सभ्य और सुसंस्कृत रूप में विश्व-मंच पर उतारें।

धार्मिक सहिष्णुता के कारण ही हिन्दू जनता को अनेक बार क्षोभ अपमान के घूंट पीने पर बाध्य होना पड़ा, सत्य धर्मावलम्बियों की धर्म-विरुद्ध वे सिर-पैर की बातों को स्वीकार करना पड़ा और अधार्मिक तत्वों का खुल कर खण्डन भी न कर सके। इसी धार्मिक सहिष्णुता ने हिन्दुओं के अहिंसक भाव को पराकाष्ठा पर पहुंचा कर उन्हें संकुचित स्वभाव का प्राणी बना दिया जिसके कारण वे अर्ध-सभ्य और दब्बू किस्म के मनुष्य माने जाने लगे। इसी धार्मिक सहिष्णुता के कारण वैदिक धर्म न जाने कितने सम्प्रदायों की खिचड़ी बन गया और विदेशियों को दृष्टि में भारतीयों के उच्च ज्ञान एवं आदर्श परम्पराओं का महत्त्व नगण्य रहा।

इतनी भारी हानि यदि हिन्दू जनता को धार्मिक सहिष्णुता के कारण उठानी पड़ी तो इसका कारण तो यही है कि अपवाद रहित सहिष्णुता को हिन्दू सभ्यता का मूलभूत सिद्धान्त माना हुआ है। किसी हिन्दू-धर्मावलम्बी ने न तो आज तक किसी पर धर्म लादने की धृष्टता की और न ही किसी अन्य धर्मावलम्बी को धर्म से विमुख करने के लिये बाध्य किया है। अपवाद रूप में यदि एकाध उदाहरण ऐसा मिल भी जावे तो उसे हिन्दू-धर्म को मूल-भावना के विपरीत ही समझा जाता है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दू-धर्म में किसी व्यक्ति पर बलात् धर्म लादने का न तो उपदेश दिया गया है और न ही प्रेरणा।

ऐसा इस कारण सम्भव हो सका कि भारत में धर्म को आत्मा का विषय मान कर ग्रहण किया गया। मनुष्य को धर्म की ओर आकर्षित करने के जितने भी ढोंग आज हिन्दू-धर्म में प्रचलित हैं उनका प्रारम्भिक-काल में अस्तित्व नहीं था। उस समाज के मनुष्य आत्मप्रेरणा से ज्ञान-भिक्षा लेने हेतु महात्माओं की शरण में जाते थे। उस काल में धर्म को उदरपूर्ति का साधन बनाना कोई जानता ही न था।

महाभारत युद्धोपरान्त ही जबकि शिक्षा का घोर ह्रास हुआ और जनता का बौद्धिक स्तर नीचे गिर गया ते ढोंग अपना अस्तित्व कायम रखने में सफल हुए। अनार्य लोगों से समझौते के कारण जो अनार्य परम्पराएँ आर्यों में मिल कर उसे हिन्दू अथवा पौराणिक धर्म बना बैठी, वे वैदिक धर्म की मौलिक विशेषताएँ नहीं मानी जा सकती। विदेशी आक्रमणों ने भी विशुद्ध वैदिक धर्म मे विघटन की स्थिति उत्पन्न की, परन्तु दयानन्द जी महाराज की कृपा से वैदिक-धर्म का विशुद्ध रूप आज हमारे सामने है। अस्तु आरम्भ से ही मनुष्य द्वारा स्थापित विचारों, आस्थाओं और परम्पराओं में परिवर्तन होता आया है अनेक आचार्यों एवं महात्माओं ने धर्म को अपनी बुद्धि द्वारा परिभाषा मे बांधने का प्रयत्न किया, तो भी मूलभूत उद्देश्य सब का समान रहा। किन्तु ऐसा कहीं नहीं हुआ कि अपने मत को सिद्धान्त बनाने के लिए अथवा अपने विचारों को दूसरे में ठूंसने के लिये हिंसा का मार्ग अपनाया गया हो। पश्चिम के विदेशी आक्रान्ता लोगों ने ही सर्वप्रथम प्रत्यक्ष रूप में तलवार की धार पर धर्म को आरूढ किया। ऐसा विद्वानों का कथन है कि इस्लाम धर्म के प्रारम्भिक खलीफाओं के एक हाथ में तलवार तथा दूसरे में कुरआन रहती थी। महात्मा यीशु और जरथुस्त्र के अनुयायियों ने भी इसी प्रकार हिंसा से समझौता किया।

आज स्थिति बदल चुकी है और उन सम्प्रदायों के लोग उदारता से काम ले रहे हैं। फिर भी कहीं कहीं ऐसा उपद्रव खड़ा कर दिया जाता है, जिससे मानवता सिहर उठती है और धर्म कलुषित हो जाता है। अल-अक्सा की लज्जास्पद घटना के समाचारों की स्याही अभी सूखने भी नहीं पाई थी कि एक मतान्ध भावुक मुस्लिम ने रामायण पर पदप्रहार कर मुहम्मद सल्ल० का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहा।

विचारणीय बात यह है कि एक धर्मावलम्बी का दूसरे धर्मावलम्बियों के प्रति मानवीय व्यवहार का माप दण्ड क्या होवे? हम मुस्लिम भाईयों से यह नहीं पूछना चाहते हैं कि श्री शेख ने क्या सोचकर रामायण का अपमान किया, किन्तु करबद्ध हो यह अवश्य पूछना चाहेंगे कि क्या इस असभ्य कृत्य का कुरआन समर्थन करती है? मुस्लिम जनता से हम यह नहीं जानना चाहते कि उनके एक भाई ने रामायण पर वक्र दृष्टि क्योंकर डाली किन्तु उनसे यह जानने का आग्रह अवश्य करेंगे कि क्या कुरआन यह आदेश देती है कि उसके अतिरिक्त जहां कहीं भी ज्ञान है, वह ज्ञान न होकर अज्ञान है? मुस्लिम भाईयों से हम यह प्रश्न नहीं करते कि उनके एक मतान्ध भाई ने रामायण पर पदप्रहार कर कौनसी विजय-श्री प्राप्त करली परन्तु हम यह जानने के जिज्ञासुक हैं कि क्या कुरआन अपने अनुयायियों के बौद्धिक-स्तर को ऊंचा उठाने में कहीं तक सफल सिद्ध हुई है? मुस्लिम भाईयों से हम यह आग्रह नहीं करते कि वे हमें बतायें कि उनके एक बन्धु के हृदय मे रामायण के प्रति अनादर का भाव कैसे उत्पन्न हुआ किन्तु हमारी उनसे सानुरोध प्रार्थना है कि वे हमें इस तथ्य से अवगत करायें कि इस प्रकार का अमानवीय व्यवहार एक धर्मशील मानव पर क्या स्वस्थ प्रभाव डाल सकेगा? और क्या ऐसे व्यवहार की दुराशा कुरआन से भी रखी जा सकती?

हमें खेद है कि एक ओर तो मुस्लिम साहित्य अपनी उदारता का ढिंढोरा पीट रहा है तथा दूसरी ओर मुस्लिम भाई इस प्रकार के औचित्य-हीन कदम उठाने में भी संकोच नहीं करते, मितव्ययता अथवा कृपणता से काम नहीं लेते। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कथनी और करनी क्रमशः आकाश-पाताल को छू रहे हैं। इस अन्तर को जब तक मिटाया नहीं जाता तब तक दिल का मैल कैसे छूटेगा? काफिर और जिहाद के रूढ़ीवादी अर्थों से मुस्लिम साहित्य ने यद्यपि निजात पाने का प्रयत्न किया है परन्तु कुछ मुस्लिम भाई इस उदारवादी दृष्टिकोण को काफिराना समझ कर इसके विरुद्ध ही जिहाद छेड़ने पर तुले हुए से प्रतीत होते हैं। इन विघटनकारी तत्वों से धर्म की रक्षा कैसे हो यह विद्वानों को परामर्श द्वारा निर्णय लेना चाहिए।

शेष पृ० १२ पर

महर्षि और देश का आर्थिक विकास

(आचार्य प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति उपकुलपति गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय)



महर्षि दयानन्द मनुष्यो के तीनो प्रकार के दु खो को मिटा कर उन्हे पूर्ण सुखी बनाना चाहते थे। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक यह तीन प्रकार के दु ख प्राणियो को सताते रहते हैं। दु खो की यह तीन मोटी श्रेणिया हैं। इन तीनो श्रेणियो की अलग अलग अनेक शाखा प्रशाखाए हो जाती हैं। और इस प्रकार प्राणी अनेक प्रकार के दु खो मे फसते रहते हैं जिन से उनका जीवन अशान्त रहता है और भांति भांति के कष्ट भोगता रहता है। महर्षि दयानन्द मनुष्यो के इन सभी प्रकार के दु खों और कष्टो को दूर करके उन्हे सदा आनन्द की गगा मे गोते लगाते हुए देखना चाहते थे। ऋषि ने वेदादि शास्त्रो के आधार पर अपने सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थो मे जो कल्याणकारी उपदेश दिये हैं, यदि मनुष्य उनके अनुसार अपना जीवन बिताने लग जायें तो उनके जीवन मे से सभी प्रकार के दु ख दूर हो सकते हैं और उनके जीवन मे सदा आनन्द ही आनन्द की धारा बहती रह सकती है। ऋषि यह चाहते थे कि मनुष्य के जीवन मे किसी प्रकार का पाप और अधर्म न रहे, उसका जीवन पूर्ण रूप से पवित्र हो जिसके कारण वह अपना यहा का जीवन पूर्ण सुख मे बिता सके तथा मरने के बाद मोक्ष में जाकर परमानन्द को प्राप्त कर सके। ऋषि ने यह आदर्श स्थिति कैसे प्राप्त की जा सकती है इसके क्रियात्मक उपाय भी बताते हैं। इन उपायो को जानने के लिये हमे ऋषि के ग्रन्थ पढने चाहियें।

जो दु ख हमे पचभूतो से बने पदार्थों की कमी से प्राप्त होते हैं अथवा दूसरे व्यक्तियो द्वारा प्राप्त होते हैं उन दु खो को आधिभौतिक दु ख कहते हैं पहनने को पर्याप्त वस्त्र न मिल सकना, रहने को मकान न होना, खाने के लिये भोजन उपलब्ध न हो सकना, रोगी होने पर दवा प्राप्त न हो सकना आदि आधिभौतिक दु ख हैं। दूसरे शब्दो मे निर्धनता और गरीबी के कारण प्राप्त होने वाले दु ख भी एक प्रकार के आधिभौतिक दु ख हैं, यों आधिभौतिक दु ख और भी अनेक तरह के होते हैं। ऋषि दयानन्द ने देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अनेक बार भ्रमण किया था। उनका देश की सर्व साधारण जनता से व्यापक सम्पर्क रहता था और उन्होने जनता की स्थिति को गहराई से अनुभव किया था। उन्होने विदेशी राज के कारण जनता में फैली असीम निर्धनता के कष्टदायक परिणामो को अपनी आंखों से देखा था। देश की सर्वसाधारण जनता की जो दयनीय दशा निर्धनता के कारण हो रही थी ऋषि उससे विचलित हो उठे थे। एक बार ऋषि गगा के किनारे विचरण कर रहे थे उसी समय एक देवी फटे पुराने चीथडे पहने हुए वहा आई, उसकी गोद में एक मरा हुआ बालक था। उस देवी ने उस बालक को गगा मे प्रवाहित कर दिया परन्तु जिस कपडे में बालक के शव को लपेट रखा था वह कपडा उसने बालक के शव पर से उतार लिया। ऋषि यह देख कर आश्चर्यान्वित हुए और उन्होंने उस देवी से पूछा कि माता! तुमने शव पर से कपडा क्यो उतार लिया? उसे शव के साथ ही नदी मे क्यो नही प्रवाहित किया। देवी ने उत्तर दिया कि बाबा जी! मैं बडी गरीब हू। मैं अपने बच्चे के लिये कफन का कपडा नही खरीद सकती थी। मैंने अपनी फटी पुरानी धोती ही आधी फाड कर मृत बालक को उसमे लपेट लिया। शव को मैंने प्रवाहित कर दिया है पर अपनी आधी धोती बचा ली है उसे सीकर धोती पूरी करके फिर मैं अपनी लाज ढकूगी। ऋषि यह देख और सुन कर स्तब्ध रह गये थे। ऋषि ने निर्धनता को इस प्रकार के दहला देने वाले दृश्य अनेक बार और देश के कोने-कोने मैं देखे थे।

ऋषि ने अपने वेद भाष्य आदि विविध ग्रन्थो में मनुष्यो की व्यक्तिगत और सामूहिक या सामाजिक रूप में आर्थिक स्थिति को उन्नत करने के सम्बन्ध में अनेक उपायो का उल्लेख किया है। कृषि और व्यवसायों की उन्नति करके व्यक्ति और समाज की आर्थिक स्थिति को उत्तम बनाने के सम्बन्ध मे ऋषि ने अपने ग्रन्थों मे बडे उत्तम उपदेश किये हैं। महर्षि उपदेशों तक ही सीमित नहीं रहे थे, इस सम्बन्ध में क्रियात्मक पग भी उठा रहे थे, वे भारत में विविध प्रकार के व्यवसाय और कारखाने खोलने के सम्बन्ध में भी सोच रहे थे। वे इसके लिये विदेशों से पत्र व्यवहार करने की बात भी सोच रहे थे। जर्मनी के एक प्रतिष्ठित विद्वान् डा० वीस महोदय से उन्होंने पत्र व्यवहार भी आरम्भ कर दिया था। ऋषि का विचार था कि भारत से कुछ युवकों को जर्मनी भेज कर उन्हें कोई उद्योग सिखाये जायें, जिन्हें वापस आकर वे भारत में चालू करें और देश की आर्थिक स्थिति को उन्नत करने का कार्य करें। डा० वीस महोदय ने महर्षि को सलाह दी थी कि पहले भारत में घडियो का एक कारखाना आरम्भ करना ठीक होगा। महर्षि और डा० वीस महोदय का पत्र व्यवहार अभी चल ही रहा था कि महर्षि रोगी पड गये और उनका देहान्त हो गया। यदि ऋषि कुछ वर्ष और जीवित रह पाते तो वे देश की आर्थिक स्थिति को उन्नत करने की दिशा में जो जो कुछ कर जाते उसे देख कर लोग अचम्भित रह जाते।

ऋषि की प्रतिभा निराली थी। उनकी प्रतिभा की गति सभी दिशाओं में थी। वे मनुष्य जीवन के हर एक सभी पहलुओं पर विचार करते थे और उन्हें सुधारने और उन्नत करने के उपाय बताते थे। यदि हम महर्षि द्वारा बताये गये मार्ग पर चलने का व्रत ले लें तो हमारे सभी क्लेश दूर हो सकते हैं। ○

किसान

●

[श्री योगीन्द्र पाण्डेय जी,
व्यायाम विशारद,
ग्राम लखौलिया डा० भरथौव,
जिला बलिया (उ० प्र०)]

●



जल-सुनकर होता है खेद-तुमम जन्मादिक का भेद,
यह अछूत है, यह है नीच, किया विभाजन सबके बीच,
हैं क्या यह भी अच्छी बात, कहो कभी न भिन्न हर भ्रात,
तजो हृदय से यह आचार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ १ ॥
कुछ तुममे से ऐसे लोग, जो नित करते हैं नव ढोंग,
ठगते सबको सीधा जान, समझ रखा तुमको अज्ञान,
रच रच कर नित नये उपाय, करते तुम पर सब अन्याय,
होते उनके तुम्ही शिकार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ २ ॥
वेद-शास्त्र का तनिक न ज्ञान, पर बनते निज को विद्वान्,
पढ़ पुराण-बायबिल-कुरान, प्राप्त किया सारा अज्ञान,
ऐसे ही अज्ञा से हीन, होते गुरु-पद पर आसीन,
करते सबको उसी प्रकार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ ३ ॥
अन्य और जिनमें अविवेक, एक नहीं हैं, कई अनेक,
शूद्र म्लेच्छ, नीच, गुणहीन, इन पर करना नहो यकीन,
जब तुममे हैं ऐसे लोग, फिर फैलेगा कैसा रोग?
करो सतत उसका उपचार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ ४ ॥
जगन्नियन्ता हे! भगवन, दो सबको तुम ऐसा ज्ञान,
होवें जग में नहीं कुकर्म, सबका हो बस वैदिक धर्म
करें सभी जन नित सत्कार्य, वेद-ज्ञान-पूरित हों आर्य,
यही प्रार्थना बारम्बार, कुछ सोचो कुछ करो विचार ॥ ५ ॥ ●

[विशेष— श्री प० योगीन्द्र जी पाण्डेय सुशिक्षित योग्य विद्वान् लेखक हैं। आर्य 'मर्यादा' के लिए आपने 'किसान' वर्ग को कुरीतियो से दूर हटा कर सन्मार्ग पर चलने की अपनी श्रृंखला बद्ध उत्तम कविता द्वारा प्रेरित किया है। यह कविता प्रसग इस माला का अन्तिम मणि है। हम श्री पाण्डेय जी के प्रति आर्यमर्यादा के द्वारा हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। आशा है, इसी प्रकार आर्यमर्यादा' पर कृपा बनवाये रखेंगे।

विनीत—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री, सम्पादक]

प्रकाशोपासना और आत्म-निरीक्षण

(श्री पण्डित अमरकुमार शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" आर्योपदेशक,
२१ ए, रामनगर, नई देहली—५५)



२—मैं नही चाहता कि कोई मुझे निराशावादी कहे। मैं नही जानता कि इस लेख को पढ़ने के बाद कोई मेरे विषय मे अपनी क्या धारणा बनायेगा? जब मैं लगभग अट्ठारह वर्ष का था, तभी आर्यसमाज के सम्पर्क मे आने का अवसर मुझे मिला था। आर्यसमाज क्या है? यह जानने में पर्याप्त समय लगा। कोई कहता था—आर्यसमाज यह है, कोई कहता था—वह। कोई कहता था—ऐसा है, आर्यसमाज, कोई कहता था—वैसा।

२—मैं विनम्रता पूर्वक अपने अनुभव के आधार पर यह प्रगट करना चाहता हूँ कि आर्यसमाज के विशुद्ध स्वरूप के देखने और उसके मुख्य ध्येय को समझने में बहुत-से लोग उसी प्रकार से विभ्रम ग्रस्त हो गये हैं, जिस प्रकार से कि प्रसिद्ध कहानी के चार अन्धे हाथी के वास्तविक स्वरूप को समझने मे विभ्रम ग्रस्त और असमर्थ हो गये थे, और फिर एक दूसरे को अनजान कहने लगे थे।

३—कुछ लोग जोश मे होश को खो बैठे और, विभ्रम मे पड गये। कुछ लोगो ने अपने किसी विशेष स्वार्थ की सिद्धि के लिये आयसमाज को अपने किसी मन चाहे रूप में चित्रित करना चाहा। किसी ने अपनी अल्प-गति मति के अनुसार आर्यसमाज को एक साधारण सुधारक-लहर के रूपमें देखा। किसी ने आर्यसमाज की किसी एक अच्छी बात को स्वीकारा, और, आर्यसमाज की अन्य विशेषताओ को भुलाकर अथवा अनदेखा-सा करके, अपनी पसन्द की उस एक विशेष बात में ही सीमित कर दिया। ऐसा भी हुआ कि समय-समय पर कुछ लोग अपने आप को ही अन्य सब से बड़ा वेद-भक्त, ऋषि-भक्त और सच्चा आर्य पुरुष प्रकट करते रहे।

४—महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन और उनके जीवन के मुख्य उद्देश्य को समझने मे मेरे सामने वे सभी कठिनाइया आई, जो कि आर्य-समाज के स्वरूप और ध्येय को समझने में आती रही तथापि यह बताना मेरा कर्त्तव्य है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के विषय मे विशेष जानकारी प्राप्त करने का अवसर मेरे जीवन में तभी आया था, जब कि आर्यसमाज और उसके सिद्धान्तो का कुछ-कुछ परिचय मुझे मिल चुका था और, मेरे ऊपर आर्यसमाजी-पन का गहरा रंग चढ़ चुका था। ,तो

५—इस समय मेरी आयु ५७ वर्ष की है। मैंने अपने जीवन का ९ समय और श्रम आर्यसमाज के स्वरूप और उसके ध्येय को जानने पर महर्षि दयानन्द जी के जीवन एव उनके मुख्य उद्देश्य को समझने लगाया है। अपने इस प्रयास में मैं एक अपना पूरा समय लगाने वाला आर्योपदेशक भी बन चुका हूँ और आर्य लेखक भी। किसी अन्य आन्दोलन की विचार-धारा ने मुझे अपनी ओर ऐसा आकर्षित नहीं किया जैसा आर्यसमाज ने। इसी प्रकार किसी अन्य महापुरुष ने भी मुझे अपनी ओर आकर्षित नहीं किया, जैसा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने।

६—मैंने ससार के विभिन्न मत-मतान्तरों का अध्ययन पूर्ण तल्लीनता के साथ किया है और उनके विषय मे विस्तार के साथ बहुत कुछ लिखा भी है। मैंने राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, अशोक, ईसा, मुहम्मद, कबीर, नानक, दयानन्द, राम-कृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, रामतीर्थ, गान्धी, सावरकर, गोलवल्कर, कार्लमार्क्स, चाणक्य, सुकरात और देवी जोन आफ आर्क के जीवन-चरित्र समय-समय पर लिखे और वे छपते भी रहे। मैंने बहुत-से भारतीय और विदेशी वीरो, महापुरुषों, सुधारको, मत-पन्थ-प्रवर्तकों और साहित्यकारों के जीवन-चरित्र एव ग्रन्थ और इतिहास भी श्रद्धापूर्वक पढ़े और समझे। एक आर्योपदेशक और आर्य साहित्यकार के रूप में विभिन्न धार्मिक एव सामाजिक प्रगतियों का अध्ययन करना मेरा एक आवश्यक कर्त्तव्य भी था, अधिकार भी तथापि ऐसा कभी नही हुआ जब कि मेरे आर्य-समाज-प्रेम में अथवा मेरे महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुगमन के उत्साह मे कभी कोई ढील आई हो। यह बात मैं अपने हृदय को भली भांति टटोल कर, और, अपने सम्पूर्ण जीवन-क्रम का सम्यक् विचार करके लिख रहा हूं। इसमें मेरी बनावट कुछ भी नहीं है।

७—यद्यपि मेरा जीवन आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करने, उनके मुख्य उद्देश्य को समझने और अपनी समझ एव शक्ति के अनुसार आर्यसमाज के सिद्धान्तो तथा महर्षि दयानन्द के मन्तव्यो का प्रचार और व्यवहार करने मे ही बीता है और व्यतीत हो रहा है, तथापि मैं ऐसा कहने या लिखने की स्थिति मे नहीं हू कि मैने आयसमाज और महर्षि दयानन्द के विषय मे सब कुछ जान लिया है। मैं ऐसा भी नहीं कहता कि जो कुछ मैंने जाना, वही पूर्णतया ठीक है। अपनी अल्पगति मति के कारण, अपनी जानकारी मे त्रुटियो की सम्भावना को मैं स्वीकार करता हूँ। फिर भी मैं यह नही चाहता कि कोई मेरी ईमानदारी पर किसी प्रकार का सन्देह करे।

८—समय-समय पर मेरे जीवन में भी पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक, व्यावसायिक और कानूनी भेद से कई प्रकार की कठिनाइया आई थी। प्रभु की कृपा से मैं अपने जीवन के सभी क्षत्रों में ऐसी सफलता प्राप्त की है, जिस पर मुझे सन्तोष है। आर्यसमाज के सिद्धान्तो की जानकारी आर्यपुरुषों का ससर्ग और सहयोग एव महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जीवन मेरे लिये निरन्तर ही ज्योतिस्तम्भ का काम करता रहा है। यहा अपनी जीवन कथा लिखना मेरा अभिप्राय नहीं। एक पुराने आर्योपदेशक के रूप में यह मेरा विनम्रतापूर्ण आत्म-निवेदन है।

९—मैं फिर लिखता हूँ आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के सम्पर्क में आकर मैंने धर्म प्रचार तथा समाज सेवा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया था। प्रभु की कृपा से श्रीमद्दयानन्दोपदेशक विद्यालय गुरुदत्त भवन लाहौर मे पूज्यपाद श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के चरणों में रह कर आवश्यक तैयारी करने का अवसर भी मुझे मिला था। जैसे मेरे अन्य सैकड़ो गुरु भाई विभिन्न सेवा क्षेत्रो में विभिन्न प्रकार के सेवा कार्य कर रहे हैं, उसी प्रकार मैं भी प्रयत्नशील हूँ। मैंने पैसे को कभी भी अपना मुख्य-उद्देश्य नहीं बनाया था। फिर भी मैंने देखा कि गरीबी और निर्धनता

[श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन की एक घटना]

"ब्रह्मचर्य की अद्भुत शक्ति"



●

श्री सम्बादान आर्य,
कवि कुटीर कुरडायाँ (राजस्थान)

जालधर में एक दिवस की घटना आज सुनाता हू।
विश्व वन्द्य महर्षि जीवन की दिव्य झाँकी दरशाता हू।।
विक्रमसिंह की सदिच्छा से देख गुरु भक्ति अधिकाई।
श्रुति सम्मत यथार्थ ऋषि ने ब्रह्मचर्य की महिमा गाई।।

र्किंचित नही मिथ्या इस में समझो सत्यमेव शास्त्रोक्त।
किन्तु उर सतुष्ट हुवा नही सुन सरदार कथन उपरोक्त।।
सत्सग के पश्चात् लोग सब जाने लगे हर्ष के साथ।
चला उठकर विक्रमसिंह भी झुका ऋषि को सादर माथ।।

कोचवान हैरान हो गया टस से मस नही होते घोडे।
लेते नहीं नाम बढ़ने का हिन-हिनात वही खाकर कोड।।
बैठा स्वय सरदार बग्घी मे मुड-उसने पीछे को देखा।
खड ऋषि पकडे गाडी को पूरा हुवा हृदय का लेखा।।

पाय प्रत्यक्ष प्रमाण अपूर्व चकित हो गये कोटिश व्यक्ति।
कहने लगा अम्ब निज मुख से- 'ब्रह्मचर्य की अदभुत शक्ति।।

वैदिक योगाश्रम शुकताल जिला मुजफ्फरनगर

गगा के तीर्थ ग्राम शुकताल में गगा स्नान के मेले के अवसर पर वैदिक योगाश्रम के विशाल प्रागण मे १८ से २१ नवम्बर १९६१ ई० तक विशाल आर्य महासम्मेलन बडी धूम धाम से सम्पन्न होगा। जिसमें अनेक उच्चकोटि के नेता, विद्वान, महात्मा तथा गायक पधार रहे हैं। इस समय ऋग्वेद से महायज्ञ योगाभ्यास प्रशिक्षण तथा अनेक सम्मेलन होगे।

नोट —भोजन और ठहरने की व्यवस्था आश्रम की ओर से रहेगी। ऋतु अनुसार वस्त्र, पात्र आदि साथ लावें। निवेदक —बलदेव नैष्ठिक

पृ० ५ का शेष

हम यह समझने में नितान्त असमर्थ हैं कि रामायण में ऐसा कौनसा स्थल है जिससे मुस्लिम भाईयों के धार्मिक अधिकारों का हनन होता है या उनकी धार्मिक भावना को आघात पहुँचता है। महर्षि दयानन्द ने मुसलमानों की भलाई हेतु मान लेते हैं कि कुरान के मत की आलोचना की, परन्तु रामायण तो कुरआन के आविर्भाव से पूर्व ही अस्तित्व में आ चुकी थी, तब इससे चिढ़ किस बात की ?

रामायण को मुस्लिम भाईयो ने किस कारण उपेक्षित समझा है ? क्या रामायण पर इस कारण पदप्रहार हुआ कि इसमें माँ-बेटे, पिता-पुत्र, आचार्य शिष्य, भाई भाई, पति-पत्नी मित्र मित्र, देवर-भाभी, सास-बहू आदि के पावन सम्बन्धो का यशोगान हुआ है ?

मानवीय दृष्टिकोण को महत्ता देकर यदि हम इस अशोभाजनक घटना पर धैर्य से विचार करें तो अन्ततोगत्वा यही निर्णय निकलेगा कि शेख साहब ने पदप्रहार द्वारा रामायण का नही प्रत्युत कुरआन का ही अपमान किया है। ऐसा निकृष्ट जीवन व्यतीत करने वाले प्राणी यदि अलभ्यता अग्निकांड पर विलाप करते हैं तो उसे हास्यास्पद ही माना जायेगा। जो धर्मावलम्बी किसी अन्य धर्मावलम्बी की धार्मिक भावना को ठेस पहुचाने का दुष्प्रयास करता है उसे यह नैतिक अधिकार प्राप्त नही हो सकता कि वह स्वय भी उस स्थिति मे पडकर आसमान सिर पर उठाले और क्रोधावेश मे धरती को फाड डालने का दम भरे।

अन्त में मुस्लिम जनता से हमारा विनम्र निवेदन है कि वह कोई ऐसा प्रयास करे जिससे इस प्रकार की निर्लज्ज घटनाओ की पुनरावृति भविष्य में न होने पाये। सौहार्दपूर्ण वातावरण में ही धर्म को व्यावहारिक जीवन में उतारा जा सकता है। ऐसी घटनाओ से तनाव और फिर इस तनाव से सघर्ष उत्पन्न होता है जिससे धर्म की पवित्रता पर आँच आती है और धर्म ...रा विश्व-भ्रातृत्व स्थापित करने का दावा झूठा पड जाता है। पारस्परिक मिलन-सहयोग और प्रेम द्वारा ही धर्म मुखरित होता है तथा जीवन ...अणु मे प्रवाहित होकर उसे उल्लासमय बनाया जाता है। कटुता-और सघर्ष की स्थिति मे ज्ञान शिखायें प्रस्फुटित होने से वचित हो ...ते हैं।

हमारा यह सौभाग्य है कि विश्व के आध्यात्मिक गुरु भारत का ...त्य हमे जन्म घुट्टी के रूप मे मिला। इस प्रभु-कृपा को हमे व्यर्थ नहीं ...न देना है। हमें ऐसा जीवन व्यतीत करने का शिव सकल्प लेना चाहिए जिससे मनुष्यत्व का ससार को बोध हो। जिसे निज भावनावश होकर हम इन्सानियत को दाँव पर न लगा बैठें।

हमारा मनुष्य योनि में जन्म लेना तभी सार्थक होगा जब हम इस धरा पर बहिश्त अथवा स्वर्ग को पुनर्जीवित कर लेंगे। बहिश्त अथवा स्वर्ग को भौतिक वस्तु या स्थान विशेष न मानकर एक ऐसा आदर्श सिद्धान्त मानना अधिक अर्थपूर्ण रहेगा कि जिससे ऐसे समाज का निर्माण सम्भव हो सके। इसमे सन्देह नहीं कि आदर्श मानवीय गुणो से विभूषित मनुष्य ही देवताओं की कोटि में आते हैं। सो मानवीय गुणों को अपने जीवन मे प्रमुखता देकर ही इस वसुन्धरा की गोद में स्वर्ग को लाया जा सकता है किन्तु यह निश्चित है कि स्वर्थ-आग्रह करते हुए हम समष्टि के सोपान पर आरूढ नहीं हो सकते।

४॥

●

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन. जालन्धर नगर

उप-कार्यालय :
१५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१
दिनांक ४-११-६९

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित आर्य समाजों की सेवा में आवश्यक परिपत्र

माननीय महोदय, सादर नमस्ते।

दीवान रामसरनदास, डा० हरिप्रकाश तथा श्री मुरारीलाल शर्मा के नाम से दिनांक १५-१०-६९ का आर्यसमाज पक्काबाग जालन्धर से छाप कर भिन्न-भिन्न स्थानों में भेजा गया परिपत्र हमें देखने को मिला। जैसा कि हम पूर्व भी आर्य जनता को बता चुके हैं कि उपरोक्त महानुभाव श्री निरञ्जनसिंह जी भल्ला सीनियर सब-जज जालन्धर के निर्णय दि० २६-७-६९ तथा माननीय सैशन जज जालन्धर के निर्णय दि० १-८-६९ के अनुसार न अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारी लिख सकते हैं तथा न पजाब सभा के कार्यों में और सम्पत्ति में हस्तक्षेप कर सकते हैं। फिर भी इन महानुभावों ने आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब से किसी प्रकार का सम्बन्ध तथा अधिकार न होने के बावजूद अपने आपको आर्य जनता के समक्ष पंजाब सभा के अधिकारी घोषित करके विज्ञप्ति द्वारा यह प्रयत्न किया है। जैसे स्वामी विरजानन्द जी निर्वाण शताब्दी का करतारपुर में हुआ उत्सव इन्होंने ही किया है। वस्तुस्थिति यह है कि वह सारी की सारी सम्पत्ति आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम है और उस सारे समारोह का प्रबन्ध एक स्थानीय रजिस्टर्ड सोसायटी ने किया है जिसे सभा के करतारपुर स्थित भवन में कार्यक्रम करने की आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने सहर्ष आज्ञा दे रखी है। ऐसी अवस्था में उपरोक्त महानुभावों द्वारा उस उत्सव की सफलता के बारे में परिपत्र छाप कर बांटने से कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति इन लोगों को सभा का अधिकारी नहीं मान लेगा। पंजाब में आर्यसमाज जीवित है इसमें किसी को शंका नही। हां जालन्धर का 'प्रताप' तथा 'वीर प्रताप'-ही आर्यसमाज को प्रायः पंजाब में समाप्त होने की घोषणा करता रहता है और स्वयं ही उसको जीवित रखने के उपायों की डोण्डी पीटता रहता है परन्तु इस समाचार पत्र और इसके मालिक श्री वीरेन्द्र के इन हथकण्डों का पजाब की आर्य जनता पर न कभी प्रभाव हुआ न होगा। आर्यजनता की महर्षि दयानन्द और उनके गुरु परमपूज्य स्वामी विरजानन्द जी के प्रति असीम श्रद्धा थी जिस कारण उसमें वह इतनी भारी संख्या में उपस्थित हुई। यदि इसका श्रेय श्री वीरेन्द्र और उनके अन्य साथी लेने का अनायास प्रयत्न करें तो यह व्यर्थ की बात है।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारी भिन्न-भिन्न स्थानों पर व्यस्त रहने के कारण उन दिनों उपस्थित न हो सके और वैसे भी प्रबन्ध करने वाली समिति ने उन्हें निमंत्रित करने का कोई सम्माननीय प्रयत्न नहीं किया। सभा के अधिकारियों को पंजाब सभा के ऊपर कब्जा बनाये रखने की कोई इच्छा नहीं वह सब तो निर्वाचन करके सभा का संचालन नये अधिकारियों को देना चाहते हैं परन्तु खेद है कि जब भी निर्वाचन का एजेण्डा निकाला जाता है तो श्री वीरेन्द्र और उनके साथी न्यायालय से उसके विरुद्ध निषेधाज्ञा ले आते हैं। श्री वीरेन्द्र आदि तो न्यायालयों की निषेधाज्ञाभंग करने में निपुण हैं परन्तु हम उसे भंग नहीं कर सकते इसलिये हमें निर्वाचन स्थगित करना पड़ता है और इसी कारण हम किसी अन्य को सभा का संचालन भी नहीं सौंप पाते। आर्य जनता स्वयं देख ले कि श्री वीरेन्द्र आदि पंजाब सभा के अधिकारियों को बदनाम करने के लिये १२ वर्ष से क्या हथकण्डे अपना रहे हैं। गत मास से प्रचार किया जा रहा है कि सभा के अधिकारी, सभा मुख्य कार्यालय से रिकार्ड तथा साहित्य व पुस्तकालय की पुस्तकें ट्रक भर कर ले गये। वस्तुस्थिति यह है कि श्री वीरेन्द्र आदि की कृपा से सभा कार्यालय १३-१४ मास बन्द रहा जिस कारण हजारों रुपये मूल्य की पुस्तकें तथा साहित्य का नाश होने लगा। उसे बचाने तथा साहित्य प्रचार की भावना से उसे हम वहां से ले आये हैं और आज उस साहित्य का सारे भारत में प्रचार किया जा रहा है।

श्री रामगोपाल शालवाले ने निषेधाज्ञा के बावजूद कुछ लोग इकट्ठा करके अम्बाला छावनी में ५-५-६८ को पंजाब सभा की ओर से सार्वदेशिक सभा के लिये १५ प्रतिनिधि मनोनीत कराने की भावना से एक षड्यंत्र रच कर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का निर्वाचन घोषित किया और उन १५ व्यक्तियों को अवैध रूप से अपनी बैठकों में बिठाने का प्रयत्न किया। नियम के विरुद्ध स्वनिर्मित पंजाब सभा का चार वर्ष का पचमाश भी सार्वदेशिक सभा के कोष से दिया और अन्य कई प्रकार के व्यय भी उनकी ओर से करके आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के ऊपर १२००० रुपया ऋण चढ़ा दिया। यदि श्री वीरेन्द्र आदि को अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का अधिकारी कहलाने का इतना चाव है तो इनके लिये, सार्वदेशिक सभा के कोष से दिये गये १२०००) के ऋण को क्यों नही उतार देते। श्री रामगोपाल आदि ने श्री वीरेन्द्र के साथ मिलकर सार्वदेशिक सभा पर कब्जा बनाये रखने का जो षड्यंत्र रचा इससे आर्य जनता में बड़ी निराशा उत्पन्न हुई जिस कारण सार्वदेशिक सभा के बहुपक्ष ने अपना निर्वाचन करके अधिकारी घोषित कर दिये।

अन्त में हम पुन: सभा से सम्बन्धित समस्त आर्य समाजों को बताना अपना कर्त्तव्य समझते हैं कि उपरोक्त महानुभावो का आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से कोई सम्बन्ध नही और न उनका कोई सगठन है। श्री वीरेन्द्र पजाब में अपनी स्थिति बनाये रखने के लिये कोई प्लेटफार्म चाहते हैं। खेद है कि न कांग्रेस ने उन्हें अपनाया और न जनसंघ ने और न सदाचार समिति ने तथा न हिन्दुओ ने ही। उनका प्रतिदिन का काम सिक्खों, अकालियों, जनसंघियों, कांग्रेसियों आदि को अपने समाचार पत्र द्वारा केवल गालियां देना है। यदि समाचार पत्र में कुछ स्थान बच जाये तो फिर वह आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारियों को गालियां देने के काम में आता है। स्मरण रहे कि आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के सम्बन्ध में जो भी समाचार प्रताप में छपते हैं तथा परिपत्र भेजे जाते हैं वह सब श्री वीरेन्द्र द्वारा ही बनाये हुए होते हैं और ऐसे मिथ्या प्रचारों से श्री वीरेन्द्रजी मानसिक सतोष का अनुभव करते हैं।

यह भी विशेष ध्यान देने की बात है कि सभा का कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर में है, पक्काबाग में सभा का कोई कार्यालय नहीं है अतः समाजें उस पते पर कोई पत्र व्यवहार न करें। सभा के सभी कर्मचारी गुरुदत्त भवन के कार्यालय में ही कार्य करते हैं। समाजों के उत्सवों का प्रबन्ध तथा अन्य सभी प्रकार की व्यवस्था के लिये गुरुदत्त भवन, जालन्धर के पते पर अथवा १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली के पते पर पत्र-व्यवहार करने की कृपा करें। भवदीय—(रघुवीरसिंह शास्त्री) सभा-मन्त्री ●

पृ० ११ का शेष

विस्तार बहुत अधिक कर लिया है और संस्थाओं के संचालन के लिये अर्थोपार्जन के अनुचित उपाय भी यहां काम में लाये जाने लगे हैं। तीसरे यह कि हानिकारक संस्थाओं को तोडने और अवाञ्छनीय सम्पर्कों को छोड़ने का वह नैतिक बल अब यहां किसी मे दिखाई नहीं देता, जिसके आधार पर महर्षि दयानन्द ने अपेक्षित परिणामों के न होने पर अपने संस्कृत के विद्यालय तोड़ दिये थे, बहुत से धनी, मानी और विद्वान् पुरुषों के सम्पर्क छोड़ दिये थे और बड़े-से-बड़े राजाओं, महाराजाओं, शासकों-प्रशासकों के सामने भी महर्षिवर सत्य का ही पक्ष ग्रहण किया करते थे। मेरा विश्वास है कि आत्म-निरीक्षण द्वारा हमें भी वह उत्साह, प्रकाश और नैतिक बल प्राप्त हो सकता है, जो कि हमारे महर्षि दयानन्द जी को प्राप्त हुआ था और बड़ी-बड़ी सफलताओं को प्राप्त करने के लिये जिसकी हम सभी को नितान्त आवश्यकता है। ●



दयानन्द का जय जयकार

[रचयिता—श्री राजेन्द्र जिज्ञासु
एम०ए०बी०टी०
प्राध्यापक दयानन्द कालेज,
अबोहर (पजाब)]

जिसके तेजोमय जीवन से जाग उठा सारा ससार।
उस नर नामी योगी ध्यानी दयानन्द का जयजयकार॥
धीरज सयम साहस विद्या थे जिसका शृगार।
उस नर नरनामी योगी ...॥१॥
प्रबल युक्तिया सुनकर जिसकी हुए विरोधी सब लाचार।
भागे पोगा पथी ढोगी जिसकी सुनकर के हुकार॥
जिसने खण्डन खड्ग चलाकर किया अविद्या का सहार।
उस नर नामी योगी ॥२॥
जिसने तोले तर्क तुला पर सब ग्रन्थो के सकल विचार।
जिसने भद्दे भेद भगाए सिखला करके सद्व्यवहार॥
जिसने बिछड गले लगाए पाए जन जन ने अधिकार।
उस नर नामी योगी ॥३॥
जिसने पीडित दुखिया दीनो का कीना आकर उद्धार।
भारत ने नवजीवन पाया, जिसके पाकर विमल विचार॥
कौन सुनाए कौन गिनाए जिज्ञासु' उसके उपकार।
उस नर नामी योगी ॥४॥

इस युग का सूर्य ऋषि दयानन्द

(प० रामचन्द्र आर्य पुरोहित आर्यसमाज भालौठ—रोहतक)

जिस प्रकार रात्रि के अन्धकार को दूर करने के लिये प्रात काल सूर्य का उदय होता है उसी प्रकार विश्व मे सब प्रकार के फैले अविद्या अधकार को ऋषि दयानन्द ने दूर किया। ससार के अनेक महापुरुषो ने ऋषि के इस गुण की मुक्त कण्ठ से सराहना की, चाहे उन्होने ऋषि की सब बातो को नही माना। परन्तु उन्होने अपने अपने विचार के अनुसार ऋषि के प्रति अपने आदर भाव प्रकट किये थे। ये महानुभाव भिन्न भिन्न सम्प्रदायो से सम्बन्ध रखते थे उन मे से कुछ देशी तथा विदेशी सज्जनो के नाम आगे दिये जाते हैं।

महात्मा गान्धी, माता कस्तूरबा, ला० लाजपतराय, कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मौलाना हसरत मोहानी, श्री एन सी केलकर, ला० हरदयाल एम ए, श्री एस एल पोलक, 'नेता जी' श्री सुभाष चन्द्र वसु, सरि मोहम्मद यूनिस श्री पाल रिचार्ड कर्नल अल्काट श्री रमजे मेक्डा-नल्ड लोक मान्य तिलक, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, प्रजीडेण्ट विट्ठल भाई पटेल सरदार पटेल, डा० सर्वपल्लि राधाकृष्णन्, महात्मा सी एफ. एण्ड्रूज, प्रो० मैक्समूलर, योगी अरविन्दघोष, डा० डी डी स्टाक इत्यादि।

यदि पक्षपात रहित हो कर ससार का बुद्धिवादी वर्ग ऋषि दयानन्द के गुणों और कामो पर विचार करे, तो विद्वानों मे ऐकमत्य हो सकता है। इसी उपाय से ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदत्त सन्मार्ग पर चलने और चलाने से सर्वत्र सुख और शान्ति का सार्वभौम राज्य स्थापित हो सकता है।

श्री स्वामी भीष्म जी कवीश्वर



आप निरन्तर ६५, ७० वर्ष से वैदिक धर्म का उपदेश देते आ रहे हैं यू तो भारत के सभी भागो में आप की कविताओं के रस का पान आर्य जन करते रहते हैं परन्तु उत्तर भारत मे तो आप के भजनोपदेशो को सुनने के लिये ग्रामीण जनता सदा प्रतीक्षा करती रहती है। आप न केवल कवि और भजनोपदेशक ही हैं, अपितु वैदिक सिद्धातो तथा ऋषि दयानन्द के मन्तव्यो के विद्वान् विचारक हैं। आप ने जहा अनेक भजन-पुस्तकें लिखी हैं, वहा दार्शनिक आधार पर भी पुस्तक रचना की है। इससमय आप की आयु ९० वर्ष से ऊपर है, ऐसा हम समझते हैं। आर्यसमाज के आप वास्तव में दादा भीष्म ही हैं। आर्यमर्यादा आपके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करता है।

[विशेष-इसी प्रकार अन्य आर्य उपदेशको का भी परिचय समय समय परआर्य मर्यादा में प्रकाशित होता रहेगा।] —सम्पादक

पुस्तक समालोचना—

(१) नाम—अष्टाङ्ग योग प्रकाश। लेखक आचार्य भगवान्देव शर्मा। प्रकाशक—महर्षि दयानन्द योग आश्रम, टङ्कारा (गुजरात) मूल्य १ ५० पैसे। पृष्ठ सख्या ८२ सचित्र। मिलने का स्थान प्रकाशक का ही है।

आलोचना—लेखक महोदय स्वय योगाभ्यासी हैं। पुस्तक के भीतर भिन्न भिन्न आसनो के चित्रो से पता चलता है कि आप आसनो की प्रक्रिया मे बहुत उत्तम जानकारी ही नहीं, अपितु इन पर अधिकार रखते हैं। पुस्तक बहुत उपयोगी है। आसनो के चित्र लाभ और विधि भी सक्षेप में लिखी है बालक बालिकाओ से लेकर, युवक, युवतियो तथा वृद्ध एव वृद्धा देवियो को इसका क्रियात्मक अभ्यास और मनन तभी हो सकता है कि जब क्रिया के साथ पुस्तक मे लिखे विवरण को आचरण में धारण किया जावे। हम नि सकोच निवेदन कर सकते हैं कि पुस्तक से सभी को लाभ उठाना चाहिये। इस मे सम्प्रदाय और देश भेद नही होता। लेखक महानुभाव इस उत्तम कृति के लिये बधाई के पात्र हैं। सचित्र होने के कारण मूल्य सर्वथा उचित है। छपाई कागज आदि उत्तम है।

(२) नाम पुस्तक—आसन प्राणायाम। यह पुस्तक सार्वदेशिक आर्य-युवक परिषद् के पाक्षिक पत्र "राजधर्म" के विशेषाङ्क रूप मे प्रकाशित किया गया है। इस अक का १ रु० मूल्य है। पृष्ठ सख्या-१२०। अनेक चित्रो से चित्रित है।

पुस्तक प्राप्ति का स्थान—सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद्, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली—१

आलोचना—इस पुस्तक का प्रायोजन ब्रह्मचर्य साधना के लिये बताया गया है, जोकि सर्वथा ठीक है। पुस्तक में अनेक आसनो के चित्र, विधि तथा लाभ बताये गये हैं। आसनो के अतिरिक्त कई बन्धो की रीति लिखी गई है तथा अन्य उपयोगी व्यायामो के अभ्यास के लाभ भी दिये गये हैं। इस के द्वितीय भाग मे प्राणायाम की विधि रीति लाभ और प्राणायाम करते समय सावधानता पर पूरा प्रकाश डाला गया है। योग दर्शन, सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखे उपासना प्रकरण से यथेष्ट उद्धरण दिये गये हैं। प्रथम भाग (आसन) के लेखक (ब्र० देवव्रत व्याकरणाचार्य हैं और दूसरे भाग (प्राणायाम) के लेखक सार्वदेशिक आर्य कुमार परिषद् के प्रधान, सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् योगाभ्यासी ब्रह्मचारी इन्द्रदेव जी मेधार्थी हैं। दोनो लेखकों को इस उत्तम कृति के लिये हम बधाई देते हैं। इन पुस्तक से न केवल युवक अपितु सभी अवस्थाओं के पुरुष तथा देवियां लाभ उठा सकती हैं। हम इस पुस्तक का अधिक से अधिक प्रचार चाहते हैं।

उपर्युक्त दोनों पुस्तको को खरीद कर अवश्य पढना चाहिये और इन में वर्णित लाभो का प्रत्यक्ष करना चाहिये। —जयदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

वेद प्रचार विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

१—आर्यसमाज बस्ती गुजां जालन्धर का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज बस्ती गुजा जालधर का ६२ वा वार्षिकोत्सव अब के बडी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। उत्सव पर सभा की ओर से श्री प० निरजनदेव जी, श्री प जितेन्द्र जी श्री प समरसिंह जी वेदालकार, श्री प बलराज जी सगीत रतन, श्री प अमरनाथ जी प्रेमी रेडियो कलाकार, पधारे। उत्सव पर इन सब महानुभावो के अतिरिक्त श्री मनमोहन कालिया (मत्री पंजाब सरकार,) श्री लालचन्द जी सभ्रवाल (उप प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब) श्री डा० दुर्गादत्त ज्योति (उप प्रधान आर्यसमाज म्हू। होशियारपुर) इत्यादि महानुभाव विशेष रूपेण निमन्त्रित थे। उत्सव अत्यन्त सफल रहा। समाज की ओर से लंगर का बडा शानदार प्रबन्ध था। सभा को ३५०) रु० वेदप्रचार मे दिये गये। आर्यसमाज के अधिकारियो का बहुत २ धन्यवाद।

सभा द्वारा ऋषि निर्वाणोत्सव तथा अन्य प्रचार प्रबन्ध

नारायणगढ, -श्री जितेन्द्र जी आर्योपदेशक, श्री अमरनाथ जी प्रेमी सहित ६ से ६ नवम्बर ऋषि निर्वाणोत्सव मे। कुल्लू,श्री प निरजनदेव जी, श्री प बलराज जी सगीत रतन सहित, ६ नवम्बर तक आर्यसमाज मे प्रचार। लुहारी राघो—(हिसार) श्री प रामनाथ जी उपदेशक तथा श्री श्री प तेजभानु जी भजनोपदेशक, २४ नवम्बर से ऋषि निर्वाणोत्सव तक वहो प्रचार करते रहेगे उनका प्रचार आरम्भ हो चुका है। सुजानपुर—ऋषि निर्वाणोत्सव पर श्री प० मुन्शीलाल धर्मपाल मण्डली, सुजानपुर आर्यसमाज में कार्य करेगी। दसूहा-आर्यसमाज के उत्सव के सम्बन्ध मे श्री प० रामनाथ जी यात्री मण्डली कथा कर रही है। पठानकोट, और दसूहा के उत्सव मे श्री प जितेन्द्र जी के भाषण होगे।

आर्यसमाजों को आवश्यक सूचना

ईश्वर की अपार कृपा से सभा के पास इतने उत्सवो का कार्य क्रम पहुचा है कि सभी की माग का पूरा करना असम्भव हो गया। जिन आर्यसमाजो के कार्य क्रम नहीं लिये जा सके उनसे मैं क्षमा प्रार्थी हू। निम्नलिखित स्थानो की आर्यसमाजों के उत्सवों का उनकी इच्छानुसार प्रबन्ध हो गया है। धारीवाल, पठानकोट,(गुरदासपुर) सुहाना (रोपड),फिल्लोर (पजाब) मंडि, सोनीपत माडल टाउन्द यमुनानगर, (हरयाणा) आर्यसमाज बिरला लाईन दिल्ली। देवनगर, दिल्ली, राणा प्रताप बाग दिल्ली, इत्यादि।

—निरजनदेव वेद प्रचाराधिष्ठाता

आर्य प्रतिनिधिसभा पजाब, गुरुदत्त भवन, जालन्धर

आर्यसमाज लुध्याना रोड़ फिरोजपुर के समाचार

१ आर्यसमाज द्वारा खरीदी हुई भूमि पर भवन निर्माण का कार्य चल रहा है इस कार्य के लिये, अभी तक भिन्न-भिन्न सज्जनों से ५८०२ रु० दान प्राप्त हुआ है।

—मन्त्री रोशनलाल आर्यसमाज लुध्याना रोड, फिरोजपुर छावनी।

२—आर्यसमाज का वार्षिक उत्सव ३१।१०।६६ से ३।११।६६ तक सफलता से हुआ। —मन्त्री

आर्यसमाज कोडगल (हैदराबाद)

विजयदशमी पर्व सफलता पूर्वक मनाया गया। अनेक महानुभावों के भाषण हुए। —भीमराव हिन्दी पण्डित।

आर्य कन्या शाला में विजय दशमी महोत्सव

बड़े ही उल्लास के साथ मनाया गया। —आर्यचन्द्रभूषण शर्मा मन्त्री।

आभार प्रदर्शन

मेरे पुत्र वीरेन्द्र कुमार के स्वर्गवास होने पर 'आर्यमर्यादा' ने जो आत्मीयता पूर्ण शोक सहानुभूति प्रकट की है, इस से हमारे परिवार को धैर्य और सान्त्वना मिली है। 'आर्यमर्यादा' के द्वारा ही मैं अपने परिवार की ओर से आर्य प्रतिनिधि पजाब, उस के उपदेशक बन्धुओ और सम्राट् प्रस के प्रति आभार प्रकट करता हू।

—निरजनदेव शास्त्री, भवीसा (मुजफ्फरनगर)

आर्यसमाज हरिनगर (घंटाघर) नई दिल्ली का चुनाव

वार्षिक निर्वाचन निम्न प्रकार हुआ—प्रधान-श्री सोहन लाल जी मत्री श्री आनन्द प्रकाश, कोषाध्यक्ष-श्री जगदीश शर्मा, पुस्तकाध्यक्ष-श्री भोलानाथ कोविद।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

(श्री भक्तराम-अफ्रीका वाले-दिल्ली)

महर्षि दयानन्द के प्रचार का ही परिणाम है कि सब मतों मे खलबली मच गई। प्रत्येक मत अपने विचारों को वदिक धम के अनुकूल बनाने में प्रयत्नशील है। अजील कुरान और पुराणों के दीपक वेदरूपी प्रकाश से मद पड गये। वेदो को गडरियो के गीत कहने वाले वैदिक धर्म की शरण में आ रहे हैं। वे सब सचाइयाँ जो सम्प्रदायों में पायी जाती हैं वे वेदो से ही ली गयी हैं परन्तु उन मतो की सच्चाइयों में कुछ अपना कीचड मिल गया है। अनादि सच्चाइयाँ शुद्ध अवस्था मे वेदों ही मे पायी जाती हैं जो उन का आदि स्रोत हैं।

प्रोफेसर मेक्स मूलर, जो वेदो को बच्चों की बिलबिलाहट बताते थे और वेद की शिक्षा को पाशविक शिक्षा कहते थे, महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका पढ कर लिखते हैं-'सब से उत्तम पुस्तक' दयानन्द सरस्वती की' ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका है। दयानन्द का दृष्टिकोण ठीक है। अमरीका के डाक्टर ऐंड्रि+यु जोकसन के शब्दो मे योगी दयानन्द की शिक्षा की भट्टी मे असत्य और अविद्या का विनाश हो जायेगा। दयानन्द ने जो गति चलाई है वह रोके भी रुक नही सकती समय आयेगा जब ससार महर्षि दयानन्द को पूर्ण रूप से समझेगा और एक स्वर से बोल उठगा 'वैदिक धर्म की जय'

आर्यसमाज अमर कालोनी लाजपतनगर नई दिल्ली

वार्षिकोत्सव ११ से १३ अक्तूबर बडी धूम धाम से मनाया गया एक सप्ताह पूर्व कथा होती रही जिस मे सभा की ओर से प० अमरनाथ जी प्रेमी ने भाग लिया। उत्सव मे प० हरिदेव सिद्धान्त भूषण प० जितेन्द्र बी ए, प० निरजनदेव जा अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग प० बलराज जी सगीत रत्न ने अपने मनोहर भजनो से प्रभावशाली प्रचार किया। को उत्सव हर प्रकार से सफल रहा। इस अवसर पर श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती जी सम्पादक आर्यमर्यादा तथा श्री रघुवीरसिंह शास्त्री एम पी सभा मन्त्री के भी भाषण हुए। अधिकारी महानुभावो ने जहां उदारता से वेद प्रचार दिया वहां सेवा मे भी कोई त्रुटि नही छोडी, इस सफलता का श्रेय श्रा प० ज्ञानचन्द जी प्रधान आर्यसमाज तथा उनके साथी योग्य अधिकारी महानुभाओ को है।

—निरजनदेव वेदप्रचाराधिष्ठाता

आर्यसमाज बांकनेर दिल्ली का प्रस्ताव

"युवको मे आर्यसमाज के सिद्धान्त-परिचय एव गौरव की रक्षा हेतु 'सार्वदेशिक आर्य युवक समाज' नाम का सगठन बनाया जावे। जिसके विधान निर्माण के लिये एक समिति बनाई जावे।" आर्यसमाज बाकनेर ने प्रत्येक आर्य सगठन तक कार्यक्रम पहुचाने के लिये एक समिति बनाई, जिसके सदस्य श्री मागेराम एम० ए० (सयोजक), श्री जयप्रकाश वर्मा एम ए श्री ओमप्रकाश गुप्त बी ए, श्री ओमप्रकाश आर्य एम ए, श्री रणवीर सिंह जी बी ए हैं। प्रत्येक आर्यसमाज, आर्य ,गुरुकुल, आर्य विद्यालय के अधिकारयो से निवेदन है कि अपने यहा आर्य युवक समाज की स्थापना करे फिर प्रान्त स्तर पर सगठन बनाया जाय। इसके पश्चात् सब प्रान्त मिलकर सार्वदेशिक युवक समाज नाम का सगठन बनाय। इस सगठन के लिये विधान समिति भी उसी समय बनाई जावे। इस सम्बन्ध मे सहयोगी जन पत्र व्यवहार मे निम्न पते पर करें।

मागेराम आर्य एम ए सयोजक, आर्य युवक समाज बांकनेर दिल्ली-४०

दीवाली के अवकाश के कारण अगला अंक बन्द रहेगा

पाठकों तथा ग्राहको को सूचित किया जाता है कि दीवाली के अवकाश पर प्रेस के कार्यकर्त्ता अवकाश पर रहने के कारण आर्यमर्यादा का अगला अक १६ नवम्बर को बन्द रह कर २३ नवम्बर को प्रकाशित होगा।

दीवाली पर प्रस्तुत अंक १२ के स्थान पर १६ पृष्ठ का दीवाली अक के रूप मे भेंट कर रहे हैं। ग्राहक तथा ऐजन्ट महानुभाव अंकित कर लेवें। —व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१ सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द मूल्य ३-००
२. धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी १-२५
३. सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह १-००
४. आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह १-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द १-२५
६ वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित ०-५०
[illegible] कुल्लियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी ६-००
[illegible] प्रकाश (टिप्पणी सहित) ०-४०
[illegible]—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि) ०-७५
१० [illegible]—[illegible] चमूपति जी एम ए १-००
११. [illegible] " " " १-००
१२. वैदिक सिद्धान्त— १ ००
१३ Principle of Arya Samaj " " १-५०
१४ Glimpses of Swami Daya Nand १-००
१५. Subject Matter of Vedas १-००
१६. आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी ०-५०
[illegible] मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर १-००
१८. [illegible] गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित्र—ले० प्रो० रामप्रकाश १-३५
१९ वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी आचार्य १०) सैकड़ा
२० पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद २ ००

२१ सन्ध्या क्या, क्यों कैसे, ले० पं० [illegible] २-००
२२ मैं और मेरा भगवान्, " १-५०
२३ सनातन धर्म, " " " [illegible]
२४ Budha & Daya nand " " " [illegible]
२५ नीहारिकावाद और उपनिषदें ले० पं० [illegible] एम. ए. [illegible]
२६ काया कल्प ले० प० [illegible] [illegible]
२७ बाल कहानियाँ [illegible]
२८ मर्यादा पुरुषोत्तम राम ले० कु० [illegible] एम. ए. [illegible]
२९ आर्यसमाज क्या [illegible] ? ले० पं० [illegible]
३०. लोकव्यवहार, [illegible] [illegible]
३१ आर्य नेताओं के वचनामृत डा० [illegible] [illegible]
३२ वेदवश रहस्य, ले० प० चमूपति जी एम० ए०. [illegible]
३३ ऋषि का चमत्कार " " " " [illegible]
३४ वेदों का यथार्थ स्वरूप ले० प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड [illegible]
३५ वीर भूमि हरयाणा ले० आचार्य भगवान् देव जी [illegible]
३६ मांस मनुष्य का भोजन नहीं " " " " [illegible]
३७ विदेशों में एक साल ले० स्वा. स्वतन्त्रानन्द जी २-२५
३८ वैदिक कर्तव्य शास्त्र ले० प० धर्मदेव सिद्धान्तालंकार २-००

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

शरद् ऋतु का उपहार



गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से ही क्यों खरीदें ?

क्योंकि—

● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण पूर्ण शास्त्रोक्त ढंग से तथा सर्वश्रेष्ठ उपादानों द्वारा करती है।

●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की आय किसी व्यक्ति की जेब में नहीं जाती, वरन् आप के ही बच्चों की शिक्षा आदि पर व्यय होती है।

●●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी द्वारा निर्मित औषधि क्रय करने पर आप जहाँ निश्चय ही श्रेष्ठ औषधि प्राप्त करते हैं वहाँ आपकी जेब से निकला एक-एक पैसा भी राष्ट्र के निर्माण तथा जनता की सेवा में खर्च होता है।

●●●● इसलिए आप अपनी आयुर्वेदिक औषधियों तथा [illegible] आदि सम्बन्धी किसी भी खरीद के समय गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी हरिद्वार का नाम अवश्य ही याद रखें

आपका संतोष हमारा उद्देश्य है।

नोट।—१ किसी भी रोगी के सम्बन्ध में पत्र द्वारा या मिल कर सम्मति प्राप्त करें।
२ गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियां [illegible] के लिये नियम मुफ्त मंगावें।

शाखा कार्यालय।

१. ६२ गली राजा केदारनाथ, चावड़ी बाजार दिल्ली-६
२ गोविन्द मित्र रोड, पटना-४ बिहार

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी [हरिद्वार]

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये [illegible] सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा [illegible] प्रेस, [illegible], देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से।

ओ३म् ... (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

(प्रश्न) तुम्हारा मता क्या है ? (उत्तर) वेद अर्थात जो-जो वेद मे करने और छोडने की शिक्षा की है उस-उस का हम यथावत् करना छोडना मानते हैं जिस लिये वेद हम को मान्य है इस लिये हमारा मत वेद है ऐसा ही मान कर सब मनुष्यो को विशेष आर्यों को एकमत्य होकर रहना चाहिये ।

वर्ष १ } ८ मार्गशीर्ष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २३ नवम्बर १९६९ रविवार | वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१० रु०
अंक ४८ } | विदेश मे २० रु०
पृष्टि सं०-११६०८५३०६९ | एक प्रति का मूल्य २० पसे
सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुन स कीदृशो भवेदित्याह ॥

फिर वह कैसा हो इस का प्रकाश अगले मन्त्र मे किया है ।

एतेनाग्ने ब्रह्मणा वावृधस्व शक्ती वा यत्ते चकृमा विदा वा । उत प्रणेष्यभि वस्यो अस्मान्त्सं नः सृज सुमत्या वाजवत्या ॥

॥ ऋ० १ ३१ १८ ॥

पदार्थ —(एतेन) वक्ष्यमाणेन (अग्ने) पाठशालाध्यापक (ब्रह्मणा) वेदेन (वावृधस्व) भृशमेधस्वैधय वा (शक्ती) आत्मसामर्थ्येन (वा) शरीरबलेन (यत्)आज्ञापालनाख्यं कर्म (ते) तव (चकृम) कुर्महे (विदा) विदन्ति येन ज्ञानेन (वा) योगक्रियया (उत) अपि (प्र) प्रकृष्टार्थे [illegible] ... (नः) [illegible] (सृज) निष्पादय (सुमत्या) शोभना चासौ मतिर्विचारो यस्यां तया (वाजवत्या) वाज प्रशस्तमन्न युद्ध विज्ञान वा विद्यते यस्या तया ॥

भावार्थ —हे (अग्ने) सर्वोत्कृष्ट विद्वन् आप (ब्रह्मणा) वेद-विद्या (वाजवत्या) उत्तम अन्न युद्ध और विज्ञान वा (सुमत्या) श्रेष्ठ विचार और (शक्ती) शक्ति से (न) हमारे लिये (वस्य) अत्यन्त धन (अभिसृज) सब प्रकार से प्रगट कीजिये (उत) और प्रकार (विदा) [illegible] नित्य उन्नति को प्राप्त हूजिये (ते) आप का (यत) जो प्रेम है वह हम लोग (चकृम) करें और आप (अस्मान्) हम लोगो को (प्रणेषि) श्रेष्ठ बोध को प्राप्त कीजिये ॥

अन्वय .—हे अग्ने विद्वस्त्वं ब्रह्मणा वाजवत्या सुमत्या [वस्यो नो अभिसृज] त्वमुत विदा वावृधस्व हे तव यद् प्रियाचरण तदय चकृम त्वं अस्मान् प्रणेषि सद्बोध प्रापयसि ॥

भावार्थ —ये मनुष्या वेदरीत्या धर्म्यं व्यवहार कुर्वन्ति ते ज्ञानवन्तः शुभमतयो धार्मिका भूत्वा व धार्मिकपुरुषान् विपश्चित सेवन्ते स तान् श्रेष्ठ-सामर्थ्यवद्विद्यायुक्तान् सम्पादयतीति ॥

भाषार्थ —जो मनुष्य वेद की रीति से धर्मयुक्त व्यवहार को करते हैं वे ज्ञानवान और श्रेष्ठमति वाले हो कर उत्तम विद्वान् की सेवा करते हैं वह उन को श्रेष्ठ सामर्थ्य और उत्तमविद्या सयुक्त करता है ॥

—(महर्षि दयानन्द-भाष्य)

श्री वीरेन्द्र व मुरारी लाल आदि के विरुद्ध निषेधाज्ञा यथापूर्व रही

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के कार्यों में हस्तक्षेप पर रोक

गुरुदत्तभवन कार्यालय मे प्रवेश बन्द । शेसन जज जालन्धर का निर्णय

जालन्धर १५ ११-६९ श्री निरञ्जनसिंह भल्ला सीनियर सब-जज जालन्धर ने श्री वीरेन्द्र, श्री मुरारीलाल तथा श्री दीवान रामसरन दास आदि को स्थायी निषधाज्ञा द्वारा अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का अधिकारी घोषित करने तथा उसकी सम्पत्ति व कार्यों मे हस्तक्षेप करने से रोक दिया था । उसके विरुद्ध उनकी श्री सुखदेवसिंह शेसन जज के न्यायालय मे १ ८-६९ से अपील चल रही थी । इस बीच मे श्री वीरेन्द्र आदि की प्रेरणा पर सभा के निर्वाचन के लिये निश्चित १०-८-६९ की बैठक पर रोक लगा दी गई थी । शेसन जज महोदय ने १४-११-६९ को अपने निर्णय द्वारा सीनियर सब-जज महोदय द्वारा लगायी निषेधाज्ञा को यथापूर्व रखते हुए श्री वीरेन्द्र आदि की अपील खारिज कर दी है । परन्तु उन्हे, केवल मोगा के दो कालेज और शिमला की समाज व पाठशाला के सचालन की मुख्य अभियोग के निर्णय तक [illegible] रोक दिया गया है शेसन जज महोदय ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि श्री सैनी के पूर्व के अस्थायी निषेधाज्ञा का वर्तमान अभियोग पर कोई प्रभाव नही है अब प्रो० रामसिंह जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा अन्य अधिकारी सभा का प्रबन्ध व नियन्त्रण अधिक स्वतन्त्रता से कर सकेंगे तथा सभा का निर्वाचन करा सकेगे ।

रघुवीरसिंह शास्त्री
मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

श्री वीरेन्द्र आदि न्यायालय द्वारा दण्डित

श्री बख्शीशसिंह सब-जज जालन्धर का आदेश

जालन्धर १७-११-६९ आर्य महासम्मेलन हैदराबाद के निश्चय दिनाक ८-११-६८ के अनुसार महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने जब आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के झगडो को निपटाने का कार्यभार सम्भाला तो सर्वप्रथम उन्होने दोनो पक्षो को आदेश दिया कि एक दूसरे के विरुद्ध चल रहे अभियोग वापिस लिये जावे । प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान ने अत्यन्त पवित्र भावना से दिल्ली तथा जालन्धर के सब अभियोग दो तीन दिन के भीतर वापिस ले लिये तथा श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा श्री सैनी अतिरिक्त सेशन जज जालन्धर से प्राप्त अस्थाई निषधाज्ञा के विरुद्ध पजाब हाई कोर्ट मे चल रही अपनी अपील भी वापिस ले ली । परन्तु महात्मा आनन्द स्वामी जी तथा महात्मा आनन्द भिक्षु जी के बार-बार प्रेरणा करने पर भी श्री वीरेन्द्र आदि ने जालन्धर के न्यायालयो के दो अभियोग वापिस न लिये । अन्त मे महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेशानुसार श्री नवनीतलाल जी एडवोकेट सुप्रीमकोर्ट ने श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा हस्ताक्षरयुक्त अभि-

शेष पृ० २ पर

महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा विदेशों में प्रचार

कई देशों में वेद संदेश तथा प्रवचनों की धूम



महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती विदेशो मे आर्यसमाज का प्रचार करने तथा वेदो का सदेश सुनाने के लिए जून मास मे भारत से गये। आर्यसमाज बडा भाग्यशाली है कि महात्मा आनन्द स्वामी जी जैसे उच्च कोटि के सन्यासी ने ८५ वर्ष की आयु मे वेदो का प्रचार विदेशो मे करने के लिए इतनी लम्बी यात्रा का कष्ट उठाया है। आर्यसमाज महात्मा जी द्वारा किये उपकारो को कभी भूल न सकेगा। महात्मा जी ने इस विषय मे जो पत्र श्री रामनाथ जी भल्ला कोषाध्यक्ष, आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब को लिखा है वह निम्न प्रकार है —

ओ३म्

पारामारी बो, (सुरीनाम)
सऊथ अमरीका, दिनाक ५ ११-६९

मेरे प्यारे श्री भल्ला जी सप्रेम नमस्ते।

कृपा पत्र भी मिला तथा आर्यमर्यादा के अक भी मिले—ध्यान से पढा। सारी गति विधि का पता लगा। यह भी पढा कि आपके सुपुत्र का शुभ विवाह भी समारोह से सम्पन्न हुआ—मेरा हार्दिक आशीर्वाद। यह भी पढा कि अब आप रिटायर्ड होने वाले हैं। आप कर्मठ योगी हैं और समाज की सेवा कर रहे हैं और अब तो सर्वथा समाज सेवा ही मे लगे रहेगे। सेवा करने वालो का विरोध हुआ ही करता है। गालिया तो उनके लिए आशीर्वाद होती हैं—अत इनकी परवाह न करके आर्यसमाज की सेवा निरन्तर करते रहिये। साथ ही प्रतिदिन आत्म निरीक्षण आत्म चिन्तन तथा प्रभु भजन मे भी समय लगाया कीजिये। परमात्मा आपको शक्ति भक्ति प्रदान करते रहें।

मैं अब यहा से १७ नवम्बर को गायना तथा त्रिनिदाद में जाकर वेद कथाय २७ नवम्बर तक करूंगा—फिर १८ नवम्बर को यू० एस० ए० में पहुच कर २२ दिसम्बर तक अमरीकन लोगों को वेद सन्देश सुनाकर लदन चल दूंगा—योरोप मे लगभग एक मास सेवा करके फिर से अमरीका जाकर कथाय करूंगा—भारत तो शायद फरवरी मे पहुच सकूं।

सेवक—ह० आनन्द स्वामी सरस्वती

पृ० १ का शेष

योग वापिस लेने के प्रार्थना पत्रो को स्वय २-६-६९ को जालन्धर जाकर न्यायालयो मे दाखिल कर दिये। वह दोनो अभियोग अब श्री बक्शीशसिंह जी सब जज जालन्धर के न्यायालय मे पडे हैं। श्री वीरेन्द्र आदि किसी-न-किसी बहाने नई तिथियाँ लेते रहते हैं ताकि उन्हें अभियोग वापिस न लेने पड। इसी बीच ७-८-६९ को श्री वीरेन्द्र आदि ने सेशन जज जालन्धर के समक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा के १० ८-६९ को रोहतक मे होने वाली बैठक पर रोक लगाने का प्रार्थना पत्र दे रखा था। सैशन जज को प्रसन्न करने की भावना से उनके वकील ने श्री बक्शीशसिंह के न्यायालय के दोनो अभियोगो को वापिस लेने के लिए पुन सब के सामने प्रार्थना पत्र दिये। उस दिन से कई पेशिया पड चुकी हैं परन्तु अभियोग लगने नही देते। ११-११-६९ को जज महोदय ने १५-११-६९ की तिथि लगाते हुए आदेश दिया कि अभियोग करने वाले चारो व्यक्ति अपने वकील के साथ १५-११-६९ को उपस्थित हो परन्तु वह उपस्थित न हुए तो जज महोदय ने उन पर दण्ड लगा दिया और पुन १ १२-६९ की तिथि निश्चित करते हुए आदेश दिया कि उस दिन बहस होगी। यदि पुन वह अनुपस्थित रहे तो जज महोदय को इकतरफा निश्चय करने का अधिकार होगा।

—विशेष प्रतिनिधि द्वारा प्राप्त

---

३० नवम्बर तक एक नया ग्राहक बनाइये

ग्राहकों तथा पाठकों से आवश्यक निवेदन

आर्यमर्यादा १ दिसम्बर १९६९ को प्रकाशित होना आरम्भ हुआ था। अत ३० नवम्बर ६९ तक एक वर्ष पूरा हो जायेगा। हमें प्रसन्नता है कि एक वर्ष के समय में ही आर्यमर्यादा ने हिन्दी साप्ताहिक पत्रों में अपना विशेष स्थान बना लिया है। इसके विशेषांकों की आर्यजगत् के विद्वानों ने भूरी-भूरी प्रशसा एव सराहना की है। वैदिकधर्म के प्रचार एव प्रसार के लिये यह आवश्यक है कि इसकी ग्राहक सख्या में वृद्धि की जाये अत हम अपने सभी पाठकों तथा ग्राहक महानुभावो से विनम्र निवेदन करते हैं कि आर्यमर्यादा के नव वर्ष के उपलक्ष में एक-एक नया ग्राहक बना कर १०) वार्षिक शुल्क ३० नवम्बर तक भिजवाने की कृपा करें। नये ग्राहको को इस वर्ष के 'विशेषाक स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश" तथा वेदाविर्भाव" मुफ्त भेण्ट किये जायेंगे।

विनीत—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री—सम्पादक

शोक समाचार

प्रिंसिपल रामनारायण कपूर का स्वर्गवास



राधा कृष्ण आर्य कालिज नवाशहर (जालन्धर) के सुयोग्य तथा सर्वप्रिय प्रिंसिपल श्री रामनारायण जी कपूर के शनिवार दि० १५-११ ६९ को प्रात ३॥ बजे मेडिकल इस्टीटयूट नई दिल्ली मे हुये देहान्त के सम्बन्ध मे जब ८ बजे फोन आया तो विश्वास न हुआ, परन्तु क्योकि फोन करने वाले प्रिंसिपल कपूर के सुपुत्र थे इस लिये समाचार को सत्य मान कर सभा के अन्य अधिकारियो को सूचित किया और ट्रक काल द्वारा लुधियाना तथा नवाशहर के अधिकारियो को दु खद समाचार दिये तथा वहा की शिक्षण सस्थाए बन्द करने की प्रेरणा की।

श्री कपूर साहिब गत ७ जुलाई को ६३ वर्ष की आयु के हो गये थे और नियमानुसार उन्होंने दो वर्ष और सेवा करनी थी। परन्तु परमात्मा को स्वीकार न था। १९६४ से हमे नवाशहर कालिज के लिये कोई सुयोग्य प्रिंसिपल नही मिलता था जो स्थायी रूप से वहा कार्य करे तथा कालिज की स्थिति को सुधारे। प्रिंसिपल कपूर ने आर्य कालिज लुधियाना का निर्माण किया और सर्वप्रिय बने। इच्छा न होते हुए भी नवाशहर कालिज के हित मे दो वर्ष पूर्व उन्हें नवाशहर भेजा। उन्होने शीघ्र ही कालिज की स्थिति मे सुधार कर दिया और पूर्ण शान्ति स्थापित की। सितम्बर मास के अन्त मे मानसिक कष्ट हुआ तो १-१०-६९ से अवकाश ले लिया। मेडिकल इस्टीट्यूट नई दिल्ली मे मस्तिष्क का आपरेशन किया गया। १५-१६ दिन बेहोश रहे। थोडा सा होश आये २-३ दिन ही हुए थे कि १५-११-६९ की प्रात ३॥ बजे परलोक सिधार गये। उनके स्वर्गवास से आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब एक सुयोग्य शिक्षा विशेषज्ञ से रहित हो गई। ऐसा व्यक्ति अब भाग्यशाली सस्था को ही मिलेगी।

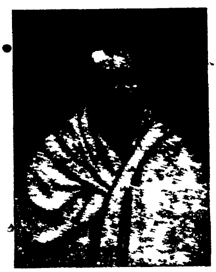
प्रिंसिपल कपूर कई वर्ष सभा के आधीन डी० एम० कालिज मोगा में साइस के प्रोफेसर रहे। फिर उसी पद पर आर्य कालिज लुधियाना में आ गये। बाद मे प्रिंसिपल सूरी के रिटायर्ड होने पर उन्हे प्रिंसिपल बना दिया गया। गत ८ वर्षों में छात्रो की सख्या ३०० से १३०० कर दी। कालिज को अपने पैरो पर खडा कर दिया। इतनी अल्प आयु मे उनका हमसे वियोग होना अत्यन्त दु खदायी है। परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा के परिवार व इष्ट मित्रो को धैर्य तथा उनके आत्माको सद्गति प्रदान करे।

(रामनाथ भल्ला, प्रस्तोता आर्य विद्यापरिषद्, पजाब)

सम्पादकीय

आर्यसमाज का शक्ति केन्द्र

१७ नवम्बर ६९ को भारतीय संसद् के वर्तमान अधिवेशन के प्रथम दिन ही हरयाणा निवासियों ने चण्डीगढ़ के अधिकार की अपनी माग के लिये भारत की राजधानी पुरानी तथा नई दिल्ली में अभूतपूर्व प्रदर्शन किया। यह प्रदर्शन राजघाट, पुरानी देहली के रेलवे पुल से आरम्भ करके लाल-किले के पीछे रिंगरोड के सहारे से चल कर नई दिल्ली ससद् भवन के सामने बोट क्लब पहुंचा। पहिली कड़ी बोट क्लब के मैदान में आकर शान्ति पूर्वक बैठी चुकी थी और शेष चलने वाले राजघाट से प्रदर्शन की प्रतीक्षा मे चलने की तैयारी मे थे। कई मील लम्बा प्रदर्शन देहली के इतिहास मे अद्भुत और अनोखा था। रेडियो और भारत के पत्रकारों की यह सर्वसम्मत स्वीकृति थी, कि इतना बड़ा प्रदर्शन देहली के इतिहास में नही निकला। भारत की प्रधान मन्त्री ने स्वय बोट क्लब के मैदान में पहुंच कर हरयाणा वासियो का ज्ञापन स्वीकार किया।



यह अति सक्षिप्त वर्णन हम ने इस लिये दिया है कि इस प्रदर्शन के स्रोत और नेतृत्व का पता चल सके। हरयाणा सघर्ष समिति के नेतृत्व मे और आह्वान पर यह अति विशाल प्रदर्शन का आयोजन सफलता से सम्पन्न हुआ। यद्यपि इस सघर्ष मे सभी राजनीतिक दलो के नेता सम्मिलित रहे, परन्तु हम आर्यजगत् को यह सुनाने मे अत्यन्त हर्ष है, कि इस सब सफलता का केन्द्र हरयाणा का आर्यसमाज है। आर्यसमाज की प्रचण्ड ओजस्विनी शक्ति हरयाणा के समस्त क्षेत्र पर व्यापक रूप से छाई हुई है। आर्यजगत् के प्रख्यात कर्मठ तपस्वी त्यागी विद्वान् पूज्य आचार्य भगवान् देव जी इस सघर्ष समिति के अध्यक्ष, सचालक और नेता हैं। हरयाणा के आर्यसमाज की समस्त शक्ति एक है। उसी के परिणाम स्वरूप यह अति विशाल आयोजन पूर्ण सफलता को प्राप्त हुआ है।

हरयाणा में अनेक राजनीतिक दल हैं, परन्तु यह शत प्रतिशत सत्य है कि कोई भी राजनीतिक दल आर्यसमाज के सहयोग के बिना सफलता पूर्वक आगे नही बढ़ सकता। भारत भर के आर्यसमाजों के लिये यह गौरव का स्थान है कि वह सिर ऊंचा उठाकर कह सकता है कि हरयाणा राज्य का आधार आर्यसमाज की प्रचण्ड और वेगवाहिनी शक्ति है। इस राज्य में गांव की झोंपड़ी से लेकर नगरों की अट्टालिकाओं तक आर्यसमाज की शक्ति पहुंची हुई है। हरयाणा की बसतियो और जगलों में ऋषि दयानन्द की शिक्षा रूपी जय की ध्वनि सुनाई देती है। जिस कार्य में आर्यसमाज हाथ डालता है, अन्य सभी जन मण्डल विश्वास पूर्वक उस में सहयोग देते हैं। जिस कार्य को आर्यसमाज उचित नही समझता, उस कार्य की सफलता हरयाणा में हो ही नही सकती। इस विशाल देहली प्रदर्शन में हजारों ओ३म् के झण्डे लहरा रहे थे। सैकड़ों आर्यसमाज के बोर्ड दिखाई दे रहे थे। बालक और बालिकाओं के गुरुकुल, कालिज और अन्य आर्य सस्थानों के पट्ट ओ३म् ध्वज के साथ आकाश में फहरा रहे थे। भारत के आर्यसमाज को समझ लेना चाहिये कि भारत भर में सर्वप्रथम आर्यसमाज की राज्य सरकार हरयाणा में बन सकती है।

हम आर्यसमाज के नेताओं से निवेदन करना चाहते हैं कि वे इस आवश्यक, अनिवार्य और गम्भीर समस्या पर पूर्णतया विचार करें भारत के राजनीतिक क्षेत्र में प्रभाव डालने का यही एक प्रथम मार्ग है कि जहां हमारी शक्ति का पुज है, वहां सब सामर्थ्य लगा कर यत्न कर, जिससे हम आगे बढ सकें।

आर्यसमाज के लिये विचारार्थ

प्राय. यह देखा जाता है कि आर्यसमाज अपने उत्सवों आदि में गैर आर्यसमाजी नेताओं को आदर पूर्वक बुलाता है और उनके विचार आर्यसमाज को सुनाने के लिये अवसर देता है। ऐसे सज्जन आते हैं आर्यसमाज के मन्तव्यों के विरुद्ध बोलते हैं। ऐसी ३ घटनाओं में स्वयं उपस्थित था। एक गैर आर्यसमाजी नेता ने एक शिक्षण सस्था के उत्सव में बोलते हुए कहा है कि वेदों को ऋषियों ने बनाया। अच्छा किया गया कि उसी वेदी पर एक आर्यसमाज के प्रतिष्ठित विद्वान् ने स्पष्टी करण कर दिया कि 'वेद ईश्वरीय ज्ञान है।' ऋषियो के द्वारा वेद नही रचे गये। दूसरी एक जगह एक नेता गैर आर्यसमाजी ने कहा कि गीता में अहिंसा का उपदेश दिया गया है। उन का उत्तर भी एक आर्यसमाज के विद्वान् ने नम्रता पूर्वक दे दिया। अभी एक विशाल उत्सव में एक गैर आर्यसमाजी नेता ने कहा कि "ऋषि दयानन्द ने कटु भाषा में दूसरे मतों का खण्डन किया।" हमें मालूम नही कि किसी विद्वान् आर्य पण्डित ने इस का उत्तर दिया या नही, क्योंकि उस उमय हम वहा उपस्थित नही थे। यदि निराकरण हो जाता तो अच्छा था। इन घटनाओं के लिखने का हमारा प्रयोजन यह है कि आर्यसमाज अथवा ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व के लिये किसी गैर से प्रमाण पत्र लेने की आवश्यकता नही। अत' हमारे उत्सवो की पवित्र वेदी को सावधानता से वर्तना चाहिये। किसी नता को आदर देना और बात है और अवैदिक मन्तव्यों की बातों का अपनी ही वेदी से प्रचार करवाना और उसका उत्तर देना अन्य बात है। आर्यसमाज के भी विद्वान् नेताओ से निवेदन है कि वे इस समस्या पर गम्भीरता से विचार करे, अन्यथा आर्यसमाज की साधारण जनता मे भ्रान्ति फैल जाना असम्भव नही।

सत्य—असत्य—विवेक

कुछ आर्य महानुभाव भावुकता वश हमे अनेक बातों के सम्बन्ध में पत्र लिखते रहते हैं। हम उनके बड़े आभारी हैं। इससे यह भी पता चलता है कि हमारे ग्राहक सज्जन तथा पाठक महाशय आर्यमर्यादा को ध्यान से पढ़ते हैं। पढ़ने पर यदि उनके हृदय में कोई भाव उत्पन्नत होता है, तो नि सकोच रूप में पत्र भेज कर हमें कृतार्थ करते रहते हैं। इस सम्बन्ध में हम विशेष रूप से निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि यदि घटना विशेष के सम्बन्ध में कुछ लिखना होवे, तो पत्र भेजने से पूर्व उस घटना की सत्यता अथवा असत्यता के विषय में ठीक ढग से जांच कर ली जावे। आर्यसमाज के इस नियम कि "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोडने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये" के आधार पर जाच कर लेना उत्तम है। इससे यह लाभ रहता है कि कई बार भ्रान्ति में पड़ कर अन्यथा बोला तथा लिख दिया जाता है। फिर सत्य प्रकट होने पर स्वय चित्त में खेद अनुभव होता है, तथा दूसरे के सम्बन्ध मे अन्यथा लिखने मे लज्जा अनुभव होती है। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश मे कहा है कि ससार में सच्चा और झूठा दोनों सुनने में आते हैं, परन्तु विवेक से उनकी जाच करना अपना काम है। इस ऋषि निर्देश का पालन करने से हम प्राय: असत्य मार्ग से हटकर सन्मार्ग पर चल पड़ते हैं। यह मार्ग सज्जन पुरुषों के लिये होता है। परन्तु जिन महाशयों ने ईर्ष्या और द्वेषवश सच्चे को झूठा और झूठे को सच्चा बतलाना और लिखना ही अपना प्रयोजन बना लिया है, तब ऐसी अवस्था मे चुप रहना भी असत्यता को फैलने में सहयोग देना है अत: उस समय शिष्ट शब्दों में असत्य का खण्डन करके सत्य की स्थापना में अवश्य योग देना चाहिये। अन्यथा जनता का अहित होकर जो परिणाम निकलता है, उस का उत्तरादायित्व उन सज्जनों पर अवश्य होता है जो कि जान पूछ कर असत्य की उपेक्षा करते हैं और सत्य का पक्ष नही लेते हैं। यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक आर्य निजी उचित कर्म करने में स्वतन्त्र है, परन्तु जनता के हितकारी नियमों मे चलने में परतन्त्र है। यह परतन्त्रता दोष उत्पन्न नही करती, अपितु सामाजिक नियमों के पालन करने और करवाने में सहयोग देती है। अत: हम विनीत रूप आर्य महानुभावों से निवेदन करते हैं कि सत्य-असत्य को स्वयं विवेक से जांचते रहें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

श्री दीनदयालु शास्त्री गुरुकुल कांगड़ी के विनाश पर उतारू

गुरुकुल के बैंक एकाउण्ट बन्द रखने पर कटिबद्ध

कर्मचारियों मे घोर चिन्ता तथा असन्तोष

(विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

हरद्वार, दि० १७-११-६९ श्री दीनदयालु शास्त्री ने २७-७-६९ को मुंसिफ रुडकी के न्यायालय में गुरुकुल कागडी के बैंक एकाउण्ट बन्द कराने के लिये अभियोग द्वारा निषेधाज्ञा मागी। वह तो न मिली परन्तु मुसिफ महोदय ने निषेधाज्ञा मिलने तक यथापूर्व की स्थिति" रखने का आदेश दिया। बैंक वाले उसमे भ्रम मे पड गये तथा मुसिफ महोदय से इसका स्पष्टीकरण पूछा। मुसिफ महोदय ने ८-११-६९ को स्पष्टीकरण द्वारा साफ कर दिया कि अभियोग से पूर्व जो महानुभाव बैंको के एकाउण्ट आपरेट करते थे केवल उन्हे ही धन निकालने का अधिकार होगा अन्य किसी को नही। इस आदेश के अनुसार आचार्य प्रियव्रत तथा प० धर्मपाल विद्यालकार बैंको से धन निकालने का प्रबन्ध कर रहे थे कि श्री दीनदयालु शास्त्री ने सैशन जज सहारनपुर के न्यायालय से मुसिफ महोदय के उपरोक्त निर्णय पर १३-११-६९ को रोक लगवा कर बैंको से धन निकालना पुन कठिन कर दिया।

२—आर्यजनता को यह पता होगा कि आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब ने श्री रामनाथ जी भल्ला को गुरुकुल कागडी फार्मेसी का व्यवस्थापक तथा प० धर्मपाल विद्यालकार को व्यवसायाध्यक्ष बना रखा था। श्री दीनदयालु शास्त्री आदि को बोगस पजाब सभा ने गुरुकुल कागडी का उपकुलपति घोषित कर रखा था परन्तु उन्हे न कोई गुरुकुल मे तथा न फार्मेसी मे मे घुसने देता था। सभाओ के झगडे समाप्त करने की भावना से महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने ३१-५-६९ को पजाब सभा का सघटन भग करके उनके सचालन के लिये एक एडहाक कमेटी का निर्माण कर दिया। गुरुकुल तथा फार्मेसी का प्रबन्ध भी वही करने लगी। इससे पूर्व श्री दीनदयालु शास्त्री ने बैंको को रिपोर्ट करके गुरुकुल व फार्मेसी के एकाउण्ट बन्द करा रखे थे। आचार्य प्रियव्रत जी उपकुलपति का मत था कि यदि दीनदयालु शास्त्री अपनी रिपोर्ट बैंको से वापस ले लें तो एकाउण्ट खुल सकते हैं। श्री नारायणदास कपूर महात्मा आनन्द स्वामी जी के दामाद होने के नाते अपने को उस समय सर्वेसर्वा समझे हुये थे। उन्होने आचार्य जी का सुझाव श्री सत्यदेव विद्यालकार आदि के समक्ष रखा जिसका उन्होने दुरुपयोग किया अर्थात कहा कि यदि श्री दीनदयालु शास्त्री को फार्मेसी का व्यस्थापक बना दिया जावे तो बैंको को खुला दगे। पूज्य महात्मा जी, श्री कपूर जी तथा स्नातको की कुटिल नीति मे फस गये तथा १७-५-६९ को श्री दीनदयालु शास्त्री को फार्मेसी का व्यवस्थापक नियुक्त कर दिया और नियुक्त पत्र मे उन्हे ही व्यवसायाध्यक्ष भी घोषित कर दिया। सब व्यवस्थापक आज तक नि शुल्क कार्य करते रहे परन्तु स्नातको ने श्री दीनदयालु शास्त्री को ५००) मासिक वेतन, नि शुल्क मकान, पानी बिजली का लाभ महात्मा जी से लिखा लिया। उपरोक्त शर्त पूरो होने पर उन्हे एकाउण्ट खुलाने के लिये लिखा तो शास्त्री जी ने कहा कि उन्हे बैंको का आपरेटर नियुक्त करे तो वह एकाउण्ट खुलावेंगे। यह कार्य केवल सीनेट ही कर सकती थी। शास्त्री जी कर्तव्य का पालन करने मे असमर्थ रहे इसलिये महात्मा जी ने २०-६-६९ को उन्हें फार्मेसी के सब पदो से मुक्त कर दिया। तब शास्त्री जी ने कहना आरम्भ कर दिया कि उन्हे तो दीवान रामसरनदास ने नियुक्त किया था, महात्मा जी ने तो नियुक्ति की पुष्टि की थी। स्वामो श्रद्धानन्द के सुयोग्य शिष्य के चरित्र का इससे पता लगता है।

३—आचार्य प्रियव्रत जी को असफल करने के लिये व्यवसाय पटल के पूर्व निश्चयो के विरुद्ध फार्मेसी से गुरुकुल को मिलने वाली २००००) मासिक सहायता बन्द कर दी। छात्रों के सक्षको को लिख कर उनके फीस आदि के मनिआर्डर भी बन्द करा दिये। फिर डाकखाने वालो को लिख कर गुरुकुल की डाक भी बन्द करा दी। इससे भी सतोष न हुआ तो गुरुकुल मे हडताल करा दो। बाद मे कुछ व्यक्तियो को प्रोत्साहित करके अनशन सत्याग्रह करा दिया। गुरुकुल तथा सभा के अधिकारियों के विरुद्ध विज्ञप्तिया छपवाने मे पूर्ण सहायता हो रही है।

४—आर्यजनता को सम्भवत पता होगा कि शास्त्री जी फार्मेसी के कई वर्ष पूर्व मैनेजर रहे थे। ६० वर्ष की आयु हो जाने के बाद जबकि उन्हें सन्यास ले लेना चाहिये था सभा के झगडों को दुरपयोग करने की भावना से पुन ५००) मासिक का उन्होने फार्मेसी पर बोझ डाल दिया। परन्तु दूसरी ओर प्रतिदिन गुरुकुल का नाश करने वाले कार्य करते रहते हैं। वह अपने आपको गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक होने का गौरव रखते हैं। जिस सस्था मे किसी ने शिक्षा प्राप्त की, सब उसकी सहायता ही करते हैं। उसे हानि पहुंचने का कोई साहस नहीं करता परन्तु गुरुकुल का नाश कराने का गौरव श्री दीनदयालु शास्त्री तथा उनके कुछ सहयोगी स्नातकों को दिल्ली मे बैठे हैं को ही मिलेगा। गुरुकुल कागडी ऐसी अवस्था में बन्द हो जावे तो उसे पाप के भागी यही स्नातक होवे।

आर्य विद्या परिषद् पंजाब

(आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब)

उप-कार्यालय १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली—१

आर्य विद्यालयों के मुख्याध्यापकों व मुख्याध्यापिकाओं के नाम

आवश्यक परिपत्र

१५ जनवरी १९७० को होने वाली धर्मप्रवेशिका धर्माधिकारी व धर्मज्ञानी परीक्षाओ मे बैठने वाले छात्रो एव छात्राओं के नाम भर कर भेजने के लियेफार्म भेज रहा हूं।

नियम—

१—इस वर्ष आर्य विद्या परिषद् की धार्मिक परीक्षाएं १५ जनवरी १९७० को होंगी।

२—परीक्षा-फार्म भली-भांति (कार्बन पेपर के प्रयोग से) भर कर प्रत्येक स्थिति मे ५ दिसम्बर १९६९ तक कार्यालय मे पहुच जानी चाहिए।

३—धर्मप्रवेशिका का परीक्षा-शुल्क १), धर्माधिकारी का १ ५० व धर्मज्ञानी का २) प्रति परीक्षार्थी है।

४—धर्मप्रवेशिका का प्रश्न-पत्र १०० अको का तथा धर्माधिकारी व धर्मज्ञानी का १५० अको का होगा।

५—प्रत्येक परीक्षा में प्रथम, द्वितीय, तृतीय श्रेणी में आने वाले परीक्षार्थी को विद्या परिषद् की ओर से पारितोषिक दिये जायेंगे।

पाठ-विधि

धर्मप्रवेशिका (पूर्णांक १००)

१—धर्म कथा (भाग ५वीं) अक ८० मूल्य ० ९० पैसे नया सस्करण
२—स्वामी दयानन्द का जीवन ,, २० ,, ० ७५ ,

धर्माधिकारी (पूर्णांक—१५०)

१—धर्म कथा (भाग ८वीं) ,, १२५ ,, १ ०० रु० नया सस्करण
२—वैदिक शिष्टाचार ,, २५ ,, ० २५ पैसे

धर्मज्ञानी (पूर्णांक—१५०)

१—धर्म कथा (भाग १०वीं) ,, १०० ,, ० ९० ,, नया सस्करण
२—छात्रोपयोगी विचारमाला ,, ५० ,, ० ६२ ,,

नोट · १—धर्म कथा पुस्तक दस भागो में प्रकाशित है और प्रथम से दशम कक्षा तक क्रमानुसार धर्म-शिक्षा विषय के लिए परिषद की ओर से निर्धारित है। २—धर्म-कथा का मूल्य—प्रथम भाग २५ पैसे, द्वितीय भाग ३५ पैसे, तृतीय भाग ५५ पैसे, चतुर्थ भाग ७५ पैसे, पचम भाग ९० पैसे, छठा भाग ७५ पैसे, सातवां भाग ९० पैसे आठवां भाग १), नवां भाग ९० पैसे, दसवां भाग ९० पैसे।

पुस्तक-प्राप्ति-स्थान—(१) प्रस्तोता आर्य विद्या परिषद् पजाब, १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१ (२) पजाब पुस्तक भण्डार, १५७१ फैजगज, दिल्ली—६

आवश्यक प्रार्थना कक्षा ५ के छात्र-छात्राओ को धर्मप्रवेशिका मे, कक्षा ८ के धर्माधिकारी मे और कक्षा १० के धर्मज्ञानी मे अधिक-से अधिक सख्या मे बैठाने की कृपा करे। अभी से तैयारी आरम्भ करा दें। इसके साथ ही प्रत्येक कक्षा मे धर्म-कथा के शिक्षण का प्रबन्ध अनिवार्य रूप से किया जाये। सब छात्र-छात्राओ के लिए धर्म-कथा आदि पुस्तको का प्रबन्ध करने की अभी से व्यवस्था कर।

—रामनाथ भल्ला, प्रस्तोता (रजिस्ट्रार)
आर्य विद्या परिषद् पजाब

ईसाईयत पतन की कगार पर

(श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान, डबल्यू जेड १७ राजा पार्क,
शकूरबस्ती, दिल्ली–३४)

समाचार प्राप्त हुआ है कि स्वीडन के उदारवादी पादरियों ने आर्क बिशप के नेतृत्व में एकत्र होकर एक ऐसे आन्दोलन को हवा दी है, जिसका उद्देश्य बाईबिल की नैतिक आचार संहिता से सम्बन्धित कुछ मूल तत्त्वों को जड़मूल से उखाड़ फेंकना है। इन मूल तत्त्वों के अन्तर्गत विवाह तथा लैंगिक सम्बन्धों से सम्बन्धित चर्च की मान्यतायें आती हैं। आत्म-निर्णय और विचार-स्वातन्त्र्य की दुहाई देकर ही इस आन्दोलन को सफल बनाने का षड्यन्त्र रचा गया है।

पाठक-वृन्द की सुविधा के लिये मैं समाचार के महत्त्वपूर्ण अंशों को 'कान्ति-साप्ताहिक' से यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ ताकि यह निर्णय लिया जा सके कि ईसाईयत का रुख किधर है और ईसाई भाई विगत १९९९ वर्षों में महात्मा यीशु को कितना समझ सके हैं :—

१. बाईबिल-अवतरण के समय और आधुनिक समय में गम्भीर परिवर्तन हुए हैं और दुनिया एक तरह से बिल्कुल बदल गई है। मानव जीवन तथा मानव-सम्बन्धों को समझने के लिए जितनी सामग्री आज उपलब्ध है, उतनी उन दिनों नहीं थी। सो हमें चर्च द्वारा स्थापित मान्यताओं को बदलना होगा।

२. समलैंगिक-सम्बन्धों का निषेध बाइबिल में इसलिए किया गया था कि इनसे जनसंख्या बढ़ने में बाधा उपस्थित होती थी। परन्तु आज स्थिति भिन्न है, सभी राष्ट्र बढ़ती हुई आबादी से चिन्तित हैं। जनवृद्धि को रोकने का समुचित उपाय सहजातीय-मैथुन है। इस उपाय को लोक-प्रसिद्ध बनाने के लिये चर्च द्वारा समलैंगिक-सम्बन्धों को मान्यता प्रदानकर देनी चाहिए।

३. विवाह करना, तलाक देना और पुनर्विवाह करना ये दायित्व व्यक्ति के हैं, न कि किसी सामाजिक व्यवस्था के। सो इस विषयान्तर्गत जितने भी नियन्त्रण बाईबिल ने मनुष्य पर लगा रखे हैं उन्हें समाप्त किया जाये ताकि वह इस धार्मिक-यन्त्रणा से मुक्त हो सुख की साँस ले।

४. विवाह से पूर्व होने वाले सम्भोग को पाप नही समझना चाहिए वरन् यह समझना चाहिए कि जब दो व्यक्ति परस्पर गम्भीर प्रेम का अनुभव करते रहते हैं तो लैंगिक-सम्बन्ध उसका अनिवार्य परिणाम है।

उपरोक्त उद्धृत अंशो मे मूल भावना को पूर्णरूपेण सुरक्षित रखने का प्रयास किया है। केवल शब्दों के परिवर्तन का कारण यह है कि पाठक-वृन्द आसानी से वस्तुस्थिति के निकट आ लगें। स्वीडन के उदारमना पादरियों द्वारा रखे गये इन विचारों से हम सहमत नही हैं। इन्हे जानकर जो शंकायें हमारे मन में उठनी स्वाभाविक हैं वे इस प्रकार हैं।

१. ईसा-युग और आधुनिक-युग के मानव मे जो परिवर्तन दिखलाई पड़ता है वह केवल बाह्य है अथवा आन्तरिक भी? इस परिवर्तन के फलस्वरूप क्या मनुष्य के आत्मा में भी कोई परिवर्तन अथवा विघटन हुआ है? धर्म का वास्तविक सम्बन्ध मनुष्य के आन्तरिक जीवन से है अथवा बाह्य जीवन से? क्या केवल भौतिकवाद पर ही यह संसार आश्रित है या अध्यात्मवाद पर भी? जब बाईबिल ईश्वरीय पुस्तक है, फिर इसमें अभाव की सम्भावना क्यों कर व्यक्त की गई? क्या ईसाइयों का प्रभु कोई मानवीय आकृति है जो समयानुकूल अपने कृत्यों में परिवर्तन आवश्यक समझता है, अर्थात् क्या वह इस लोकोक्ति मे विश्वास रखता है कि गंगा गये तो गंगादास, जमुना गये तो जमुनादास? यदि ईश्वरीय-सामग्री में भी अभाव खटकने लगे तो वह सामग्री ईश्वर-प्रदत्त कैसे हुई? चर्च ने जो मान्यतायें स्थापित की थीं क्या वह बाईबिल की शिक्षा अथवा यीशु के आचरण के प्रतिकूल थी? यदि हां तो अब तक संसार को धोखा क्यों दिया जाता रहा? यदि नहीं तो मनुष्य को ईश्वरीय पुस्तक मे परिवर्तन करने का अधिकार कैसे, किससे, क्योंकर प्राप्त हुआ? यदि उत्तर 'हाँ' या 'न' में नही बनता तो क्या यह मानने पर विवश हो जायं कि बाईबिल अपूर्ण पुस्तक है जो मानवीय समस्याओं का उचित समाधान प्रस्तुत करने में असमर्थ है? अपूर्णता के कारण बाईबिल ईश्वरकृत-रचना नही मानी जा सकती, यदि मान भी ली जाये तो साथ ही साथ क्या यह भी स्वीकार करना नहीं पड़ेगा कि ईसाइयों का ईश्वर मानवीय बुद्धि, गुण, स्वभाव और कर्म से परिपूर्ण होने के कारण अल्पज्ञानी और अदूरदर्शी है? यदि यह सब भी नही है तो क्या हम यह मान ले कि बाईबिल के चिन्तन-मनन और यीशु का नाम रटने से स्वर्ग पृथ्वी के निकट नहीं आयेगा? क्या भोग-लिप्सा के जागृत होने से यह सम्भव है? पादरी ही जब बाईबिल और ईसा पर हावी होने की धृष्टता कर रहे हैं तो सामान्य ईसाई-बन्धु किधर जायेंगे? बाड़ ही जब खेत को खाने लगे तो फसल कितनी हाथ लगेगी? गड़रिया ही जब झाड़ियों को काट कर ईंधन बनाना शुरू करदे तो उसकी बकरियों की क्या अवस्था होगी? मानव जीवन तथा मानव सम्बन्धों को इन उदारवादी पादरियों की दृष्टि में जब ईश्वर ही पूर्णतया नही जान सका तो ईसा के ये शिष्य-गण किस प्रकार जान लेगे? क्या ये पादरी ईसा और इसके पिता (ईश्वर) से भी अधिक योग्य हैं?

२. बाईबिल के अनुसार ईसा (यीशु) ने एक सीमित क्षेत्र का भ्रमण किया था—सो ईसा को कैसे पता लगा कि ससार में जनवृद्धि की आवश्यकता है? जनसंख्या बढ़ाने का प्रयोजन क्या था, साम्राज्यवादी शासकों की लिप्सा पूर्ण करना अथवा कुछ और? जनवृद्धि से पूर्व क्या उनके पालन-पोषण का प्रबन्ध ईशा ने कर लिया था, यदि हाँ तो क्या, कैसे? यदि जनवृद्धि का मुख्य कारण बाईबिल है तो ईश्वरीय नियन्त्रण का क्या औचित्य रहा? जनवृद्धि रोकने के जो साधन आज प्रयुक्त हो रहे हैं क्या वे ठीक नही हैं? यदि नहीं तो किस दृष्टि से सहजातीय मैथुन आदर्श है? क्या इससे उत्तम उपाय आत्म-संयम अथवा इन्द्रिय-निग्रह नही है? समलैंगिक सम्बन्धों से जो भयावह भ्रष्टाचार और असाध्य विकार क्रमशः मनुष्य के जीवन तथा उसके शरीर में उत्पन्न होंगे, क्या उनका उपचार बाईबिल में है? क्या ऐसी भयानक और महाविनाशक स्थिति में नारी का गौरव और पुरुष की नैतिकता स्थायी बनी रह सकेगी? समलैंगिक सम्बन्ध का औचित्य उस समय तो समझ में आ सकता था जब सृष्टि में केवल नर या केवल नारी उत्पन्न होती, यदि नही तो ईश्वर ने इन दोनों का निर्माण एक साथ क्यों किया? स्वीडन के पादरियों ने धार्मिक जगत् में जो नग्न-प्रदर्शन किया है क्या उसके द्वारा बाईबिल की पवित्रता और ईसाई-बन्धुओं का नैतिक-मानदण्ड सुरक्षित रह सकेगा? क्या पश्चिम की अध्यात्मिकता भोगवाद से उदित होगी? क्या तुच्छ और नग्न-का भोगवाद निर्माण करना ही ईसाईयत का आगामी उद्देश्य बनेगा?

३. विवाह करना यदि मनुष्य का अपना दायित्व है तो क्या उसे गान्धर्व, राक्षस अथवा पैशाच विवाह करने की भी छूट दे दी जाये? क्या किसी संभ्रान्त कुलोत्पन्न नारी को किसी चरित्रहीन, विश्वासघाती, असत्यवादी नास्तिक, चोर, बदमाश, लुटेरे, शराबी अथवा जुआरी आदि से वैवाहिक-सम्बन्ध स्थापित करने की अनुमति दे दी जाये? क्या विद्या, विनय, शील, रूप, आयु, बल कुल और शरीर की परिभाषा का भलि-भाँति निरीक्षण करने से पूर्व ही वैवाहिक-सम्बन्ध स्थापित कर लेना उचित होगा? माता-पिता, आचार्य और धर्म सदैव अपनी सन्तान, शिष्य और अनुयायी को सन्मार्ग पर चलने को प्रोत्साहित करते हैं तो यदि वे वैवाहिक सम्बन्धो मे तनिक बुद्धि अथवा विवेक से कार्य करने का आग्रह करते हैं, उसमें बुराई क्या है?

तलाक और पुनर्विवाह से नियन्त्रण हटा लेने का प्रत्यक्ष परिणाम क्या यह नही निकलेगा कि नारी अपना नारीत्व और पुरुष अपना पुरुषत्व खो देगा? धर्म का आग्रह है कि पथभ्रष्ट लोगों को उपेक्षित कर मुँह न मोड़ो बल्कि उनका हाथ पकड़ कर सन्मार्ग पर घसीट लाओ। क्या तलाक और पुनर्विवाह से इस मर्यादा का पालन हो सकता है? क्या तलाक और पुनर्विवाह का अर्थ पारिवारिक समस्याओं से पलायन करना नही है? समस्याओं से भयभीत हो आत्मसमर्पण करना क्या कायरता नही है? वैधव्य-अवस्था (अथवा पत्नी के मरणोपरान्त) में पुनर्विवाह करना एक पृथक् मत है परन्तु पति या पत्नी के जीवित रहते किसी अन्य पुरुष अथवा नारी के सौन्दर्य पर रीझ कर उससे विवाह करना नितान्त मूर्खतापूर्ण कृत्य तथा सामाजिक दोष होने से सर्वदा असह्य है। इस असह्य को किसी निर्लज्ज कृत्य द्वारा सह्य बनाना क्या बुद्धिमत्ता की बात होगी?

शेष पृ ६ पर

पृ० ५ का शेष

४ विवाह से पूर्व यदि सम्भोग क्रिया सम्पन्न हो जाती है तो क्या इस घृणित कर्म से विवाह का उद्देश्य ही समाप्त नहीं हो जाता? विवाह संयमित सम्भोग की मौन स्वीकृति है सो विवाह से पूर्व ही जघन्य पाप रूपी सम्भोग करना क्या अपनी कामेच्छा और अपने विवेक को घोर पतन रूप में प्रकट करना नहीं है? इस क्रूर कर्म द्वारा उत्पन्न वर्णसंकर सन्तान क्या समाज में मस्तक ऊंचा उठा कर चलने का साहस करेगी? क्या धर्म द्वारा मनुष्य को इतनी छूट देना श्रेयस्कर रहेगा कि वह (मनुष्य) वासना रूप में साकार हो उठे? यदि हाँ तो क्या हमें धर्म और मनुष्य के मध्य नये आयामों की रचना नहीं करनी पड़ेगी? क्या ये आयाम निकृष्ट कोटि के न होंगे?

क्या गम्भीर-प्रेम की अभिव्यक्ति लैंगिक-सम्बन्ध द्वारा ही होगी? यदि हाँ तो एक नर, दूसरे नर के प्रति अथवा एक नारी दूसरी नारी के प्रति, अथवा माता पिता या गुरु अपनी सन्तान एवं शिष्य के प्रति या एक मालिक अथवा मालकिन अपने प्यारे कुत्ते के प्रति अथवा कृषक अपने पालतू पशुओं के प्रति अपने गम्भीर प्रेम को किस प्रकार प्रकट करेगा? मनुष्य के प्रेम की सीमा नहीं। एक मनुष्य वृक्ष-लताओं से गहरा प्रेम रखता है तो दूसरा मनुष्य पत्थरों या हीरे-मोतियों से एक मनुष्य पुस्तकों से प्रेम रखता है तो दूसरा किसी अन्य वस्तुओं से, इस स्थिति में मनुष्य अपने गम्भीर-प्रेम का प्रदर्शन किस रूप में करेगा? एक पुत्र अपनी माँ से गम्भीर प्रेम करता है एक भाई अपनी बहन से गम्भीर प्रेम करता है, एक ईसाई अपने मार्ग-दर्शक यीशु से गम्भीर प्रेम करता है तो इस गम्भीर प्रेम का अनिवार्य परिणाम क्या होगा?

इसी प्रकार अन्य शंकाएं भी मन में उठ सकती हैं जिनका समाधान उन लोगों को ढूंढना चाहिए जो स्वीडन पादरियों के समर्थक हैं। यदि हम बाईबिल की नैतिक आचार संहिता और महात्मा यीशु के सदाचारमय जीवन का मनन करें तो स्वीडन पादरियों द्वारा चलाये गये इस नग्न अभियान को मूर्ख और पथभ्रष्ट लोगों का प्रलाप ही समझा जायेगा। एक पवित्र ईसाई आत्मा ईश्वर से प्रार्थना करता है।

"अपनी पवित्र सत्ता की सत्प्रेरणा द्वारा हमारे मन के विचारों को पवित्र बना ताकि हम पूर्ण रूप से तुझे प्यार कर सकें तथा तेरे पवित्र नाम की सुयोग्य रीति से स्तुति कर सकें।"

पहाड़ी पर दिये गए अपने सुप्रसिद्ध उपदेश में यीशु लोगों को कहता है, "परस्त्री से व्यभिचार करना पाप है। केवल इतना ही नहीं किसी स्त्री को अपने मन में बुरे विचार रख कर देखना भी उतना ही बड़ा पाप है।"

एक अन्य स्थल (६-२२-२३ मत्ती रचित सुसमाचार) पर यीशु कहते हैं 'शरीर का दीपक आँख है, इसलिए यदि तेरी आंख निर्मल हो, तो तेरा सारा शरीर भी उजियाला होगा। परन्तु यदि तेरी आंख बुरी हो तो तेरा सारा शरीर भी अन्धियारा होगा।"

तलाक और पुनर्विवाह सम्बन्धी नीतियों का स्पष्टीकरण देते हुए मत्ती रचित सुसमाचार १६ ६ में कहा गया है कि "जो कोई व्यभिचार को छोड़ और किसी कारण से, अपनी पत्नी को त्याग कर, दूसरी से ब्याह करे, वह व्यभिचार करता है और जो उस छोड़ी हुई से ब्याह करे, वह भी व्यभिचार करता है।" यद्यपि कुछ विशेष परिस्थितियों में इस नीति का महत्त्व नगण्य है परन्तु फिर भी उस पवित्रता का इससे बोध होता है जिसे महात्मा यीशु ईसाई समाज में लाना चाहते थे।

उपरोक्त सभी बातें जो बाईबिल में कही गई हैं इनका उद्देश्य एक स्वच्छ समाज का निर्माण करना रहा है। इतना जानते हुए भी यदि स्वीडन के पादरियों ने नग्न-सभ्यता के निर्माण की ओर अपना कदम उठाया है तो उसका प्रमुख कारण यही समझा जा सकता है कि बाईबिल में किसी जिज्ञासुक को सन्तुष्ट करने का पूर्ण सामर्थ्य नहीं है। पाश्चात्य संस्कृति अथवा सभ्यता में जो विकार उत्पन्न हुए तथा हो रहे हैं, उसका कारण भी बाईबिल की अपूर्णता में ढूंढा जा सकता है। स्वीडन के पादरी वासना, उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार, व्यभिचार और पतनपर से जो धर्म का नियन्त्रण हटा देना चाहते हैं, उसका तात्पर्य भी यही है कि उन्हें भली भाँति धर्म बोध प्राप्त नहीं हुआ, ऐसा इसी कारण सम्भव है कि बाईबिल में धर्म तत्त्वों का अभाव है।

स्वीडन के जो पादरी मर्यादा-अमर्यादा, विवेक-अविवेक, संयम-वासना, आद्य निकृष्ट और उत्तम-भ्रष्ट के भेद को मिटा कर जिस स्वतन्त्रता को प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें यह बतलाया ही नहीं गया कि धार्मिक परतन्त्रता में कितना आनन्द है। सम्भवतः बाईबिल में यह बतलाने की शक्ति ही नहीं। स्वर्ग का लोभ अज्ञानियों को आकृष्ट कर सकता है उन लोगों को नहीं जिन्होंने विश्व की विस्तृत ज्ञान शिला पर अपनी आँख खोली हो।

संक्षेप में हम इतना आग्रह करते हैं कि धर्म में परिवर्तन नहीं हुआ करता क्योंकि धर्म शाश्वत सत्य है। मजहब अथवा सम्प्रदाय की बात भिन्न है क्योंकि उन्होंने अपना अस्तित्व धर्म के विरुद्ध जाकर स्थापित किया होता है। ईश्वरीय-पुस्तक में परिवर्तन लाना हास्यास्पद अपमानजनक और धृष्टता है।

समलैंगिक-सम्बन्धों का विधि-विधान धर्म-शास्त्रों में न ढूंढ कर काम-शास्त्रों में ढूंढा जाना चाहिए। धर्म पवित्रता का स्रोत है न कि वासना का। इस मर्यादा की अवहेलना करना कम से कम किसी धर्मावलम्बी के लिये तो शोभाजनक नहीं हो सकता। जनवृद्धि को रोकने का सबसे उत्तम उपाय आत्म-संयम है। इस संयम को धारण करने का उपाय यदि कोई धर्म नहीं बतलाता हो तो वह धर्म अपूर्ण समझा जाना चाहिए। सहजातीय-मैथुन अप्राकृतिक होने से महाविकारों का स्रोत सिद्ध होगा जिसके भयंकर परिणाम मानव-जाति को सदियों तक भुगतने पड़ेंगे।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है सो उस पर समाज का भार वहन करने का दायित्व स्वयमेव आ पड़ता है। प्रत्येक आदर्श समाज की यह आकांक्षा वर्तमान रहती है कि उसके सदस्य चरित्रवान् हृष्ट-पुष्ट और समृद्धशाली बने रहें। अपनी इस आकांक्षा पूर्ति के लिये वह जो मार्ग प्रशस्त करता है, उस पर हम बिना धूल उड़ाये एक सभ्य मनुष्य की तरह चलते रहना चाहिए। निःसन्देह विवाह मनुष्य की व्यक्तिगत-समस्या है जिसका समाधान ढूंढने के लिये वह पूर्ण स्वतन्त्र है, परन्तु क्या इस स्वतन्त्रता के मद में उसे उन परम्पराओं के उल्लंघन की स्वीकृति प्रदान करना उचित होगा जो आदर्श-समाज की आधारशिला हैं?

लैंगिक-सम्बन्ध को गम्भीर-प्रेम का अनिवार्य परिणाम नहीं माना जा सकता क्योंकि प्रेम (मोह) एक उन्माद है पर उस उन्माद में भी विवेक-रूपी माधुर्य बिखरा पड़ा है—प्रेम एक ज्वाला है पर उसमें दहकते हृदयों को शान्त करने की क्षमता भी है—प्रेम एक वासना है परन्तु संयमरूपी स्वच्छता के परिधान में लिपटी हुई-प्रेम एक विष है लेकिन सहस्रों को जीवनदान देने वाला अमृत भी।

प्रेम का अर्थ भौतिक-सुख नहीं, आध्यात्मिक शान्ति है। प्रेम दो शरीरों का बन्धन न होकर दो आत्माओं का मिलन है। प्रेम का रास्ता अवनति का नहीं प्रगति का हेतु है। पाशविक प्रेम मनुष्यत्व को कलुषित ही करता है। पशु और मनुष्य को एक दूसरे से विभाजित करने वाली रेखा को मिटा कर ही यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं तो धर्म का जीवन में कुछ महत्त्व नहीं रह जायेगा। पशु भी योनिज कार्यों का उल्लंघन नहीं करता परन्तु मनुष्य अब पशु कोटि से भी गिरना चाहता है।

कहते है महात्मा यीशु ज्ञान की खोज में भारत आये थे, परन्तु लगता ऐसा है कि उनके हाथ अधूरा ज्ञान ही लगा, क्यों कि उस समय भारत के वैदिक-धर्म में बहुत से विकार आ गये थे। आज स्थिति भिन्न है- महर्षि दयानन्द की कृपा दृष्टि से उन विकारों का समूलोच्छेदन हो गया है। महात्मा-यीशु का भौतिक-शरीर तो आज हमारे मध्य नहीं, सो हम विचारवान् ईसाई बन्धुओं से ही आग्रह करेंगे कि यदि वे सच्चे ज्ञान की प्राप्ति में अपना जीवन लगा बैठे हैं तो उनके लिए यह श्रेयस्कर रहेगा कि वे यीशु का अनुसरण करते हुए पूर्व की शरण लें।

उपासना—प्रदीप—३

[सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास के आधार पर]

(श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधुसोमतीर्थ" देहली)

आस्तिकवाद के लाभ ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना के द्वारा ही प्राप्त होते हैं। प्रार्थना-योग का अनुष्ठान विशेष समझदारी के साथ करना चाहिये। यथा-

१—प्रार्थना—

असतो मा सद् गमय,तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय।

हे परमगुरो परमात्मन्! आप हम को असत् मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग में प्राप्त कीजिये। अविद्यान्धकार को छुड़ा के विद्यारूप सूर्य को प्राप्त कीजिये। और मृत्युरोग से पृथक् करके मोक्ष के आनन्दरूप अमृत को प्राप्त कीजिये।

२—जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है, उस को वैसा ही वर्तमान करना चाहिये। अर्थात् जैसे सर्वोत्कृष्ट बुद्धि की प्राप्ति के लिये परमेश्वर की प्रार्थना करे। उस के लिये. जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

३—ऐसी प्रार्थना कभी न करनी चाहिये और न परमेश्वर उस को स्वीकार करता है कि जैसे—हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रुओं का नाश, मुझको सब से बड़ा, मेरी ही प्रतिष्ठा, और मेरे आधीन सब हो जाये। इत्यादि, क्योंकि जब दोनों शत्रु एक दूसरे के नाश के लिये प्रार्थना करे। तो क्या परमेश्वर दोनों का नाश कर दे? जो कोई कहे कि जिसका प्रेम अधिक, उस की प्रार्थना सफल हो जावे, तब हम कह सकते है कि जिसका प्रेम न्यून हो, उसके शत्रु का भी न्यून नाश होना चाहिये। ऐसी मूर्खता की प्रार्थना करते-करते कोई ऐसी भी प्रार्थना करेगा-हे परमेश्वर! आप हम को रोटी बनाकर खिलाइये। मेरे मकान में झाड़ू लगाइये। वस्त्र धो दीजिये। और खेती बाड़ी भी कीजिये। इस प्रकार जो ईश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं, वे महामूर्ख हैं। क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है, उस को जो कोई तोडेगा, वह सुख कभी नहीं पावेगा।

४—उपासना —

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो, निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा, स्वयन्तदन्तःकरणेन गृह्यते॥

[मैत्रायणीयोपनिषद् ४।३।६]

यह उपनिषद् का वचन है। जिस पुरुष के समाधि योग से अविद्यादि सब मल नष्ट हो गये हैं, आत्मस्थ होकर परमात्मा में चित्त जिसने लगाया है, उस को जो परमात्मा के योग का सुख होता है, वह वाणी से कहा नहीं जा सकता। क्योंकि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्तःकरण से ग्रहण करता है।

५—उपासना का अर्थ समीपस्थ होने, और उसको सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामी रूप से प्रत्यक्ष करने के लिये, जो-जो काम करना होता है, वह-वह सब करना चाहिये।

६—जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रखे सर्वदा सब से प्रीति करे। सत्य बोले, मिथ्या कभी न बोले, चोरी न करे, सत्य व्यवहार करे, जितेन्द्रिय हो, लम्पट न हो, और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे। [ये] पांच प्रकार के यम मिलके उपासना-योग का प्रथम अंग है।

७—राग—द्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहे, धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर, आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे। सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े-पढ़ावे, सत्पुरुषों का संग करे और "ओ३म्" इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्य-प्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पांच के नियमों को मिला के उपासना- योग का दूसरा अंग कहाता है।

८—जब उपासना करना चाहें, तब एकान्त शुद्ध देश में प्राणायाम कर, बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभि प्र हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थ स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके, परमा मग्न हो जाने से संयमी होवे।

९—जब इन साधनों को करता है, तब उसका आत्मा और अन्त पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्य प्रति ज्ञान-विज्ञान ब मुक्ति तक पहुंच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भर इस ध्यान करता है, वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है।

१०—वैदिक और महर्षि दयानन्द सम्मत "आत्मा" विषयक सि जैनियों एवं वैष्णव, शैव, वेदान्ती आदि पौराणिक सम्प्रदायों से है। नीचे की पक्तियों में "आत्मा के भीतर-बाहर व्यापक" शब्दो के वि से यह स्पष्ट हो जाता है—

"वहां सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी स और द्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्शादि गुणों से पृथक् मान अति सूक्ष्म आ के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थित हो जाना निर्गुणोपास कहाती है।"

११—इस का फल—जसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास ज से शीत निवृत्त हो जाता है, वैसे परमेश्वर के पास प्राप्त होने से सब द दु:ख छूटकर, परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गु कर्म, स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इस लिये परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थ और उपासना अवश्य करनी चाहिये। इस से इस का फल पृथक होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा [कि] वह पर्वत के समान दुःख प्रा होने पर भी न घबरावेगा, और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोट बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करत वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है। क्योंकि जिस परमात्मा ने इ जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रखे हैं, उस का गुण भू जाना, ईश्वर को ही न मानना, कृतघ्नता और मूर्खता है।

१२—(प्रश्न) जब परमेश्वर के श्रोत्र, नेत्रादि इन्द्रियाँ नहीं हैं, फि इन्द्रियों का काम कैसे कर सकता है?

(उत्तर)—

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता, पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति विश्वं न च तस्यास्ति वेत्ता, तमाहुरग्र्यं पुरुषं पुराणम्॥

[श्वेताश्वतरोपनिषद् ३।१९]

परमेश्वर के हाथ नही, परन्तु, अपनी शक्ति रूप हाथ से सब का रचन ग्रहण करता, पग, नही, परन्तु व्यापक होने से सब से अधिक वेगवान्, चक्षु का गोलक नही, परन्तु सब को यथावत् देखता, श्रोत्र नहीं, तथापि सब की बातें सुनता, अन्तःकरण नहीं, परन्तु सब जगत् को जानता है। और उसको अवधि सहित जानने वाला कोई भी नही। उसी को सनातन, सब से श्रेष्ठ, सब मे पूर्ण होने से पुरुष कहते हैं। वह इन्द्रियों और अन्तःकरण से होने वाले सब काम अपने सामर्थ्य से करता है।

१३—(प्रश्न) उस को बहुत से मनुष्य निष्क्रिय और निर्गुण कहते हैं।

(उत्तर)—

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते, न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते, स्वाभाविकी ज्ञान-बल-क्रिया च॥

[श्वेताश्वतरोपनिषद् ३।८]

परमात्मा से कोई तद्रूप कार्य और उस को करण अर्थात् साधकतम दूसरा अपेक्षित नहीं। न कोई उसके तुल्य और न अधिक है। सर्वोत्तम शक्ति अर्थात् जिस में अनन्त ज्ञान, अनन्त बल और अनन्त क्रिया हैं, वह स्वाभाविक अर्थात् सहज उस में सुनी जाती हैं। जो परमेश्वर निष्क्रिय होता, तो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय न कर सकता। इसलिये वह विभु तथापि चेतन होने से उस में क्रिया भी है।

शेष पृ० ९ पर

मक-प्रतारक

पं० दीनानाथशास्त्री का व्याकरण ज्ञान

शिव पूजनसिंह कुशवाहा एम ए.पो.एच. डी. साहित्यालंकार कानपुर)



स्वर्गत प० कालूराम शास्त्री, अखिलानन्द शर्मा कविरत्न, माज व महर्षि दयानन्द जी ती को गालियां प्रदान करते श्री कालूराम शास्त्री का त ज्ञान नाम मात्र का था, पर ह धूर्त्त व कुतर्काचार्य थे। कवि- जी सस्कृत के विद्वान् थे पर सामाजियों से मतभेद होने कारण आर्यसमाज से अलग र 'रमा-महर्षि-सम्वाद' आदि न्त अश्लील व शरारतपूर्ण के लिखी थीं। इस समय श्री मी हरिहरानन्द जी सरस्वती दण्डी (करपात्री जी) महाराज, श्री नाथ शास्त्री, श्री माधवाचार्य, श्री प्रेमाचार्य प्रभृति वैदिक सिद्धान्तों पर ठाराघात करते रहते हैं। श्री माधवाचार्य तो सस्कृत के नाम मात्र के छकूल ज्ञाता हैं और गाली देने वालों में शिरोमणि हैं। मैंने प्राय: सभी लेखों का उत्तर देने का प्रयास किया है। मैं सरकारी कर्मचारी हूं और झे अवकाश कम मिलता है फिर भी आर्यसमाज की सेवा करता हूँ। ोमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के नेताओं को चाहिए क इन लोगों से शास्त्रार्थ की व्यवस्था करें।

लगभग २० वर्ष से मैं श्री दीनानाथ शास्त्री से अकेले टक्कर लेता आया हूं। श्री माधवाचार्य की तो लेखनी टूट गई है, पर श्री दीनानाथ शास्त्री 'श्री सनातनधर्मालोक' नामक ग्रन्थ के द्वारा महर्षि दयानन्द जी सरस्वती और आर्य विद्वानों पर व्यक्तिगत आक्षेप तथा वैदिक सिद्धान्तों पर व्यर्थ का कुठाराघात करते रहते हैं।

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने "वेद का स्वरूप और प्रामाण्य" नामक दो भागों मे पुस्तक लिख कर वैदिक सिद्धान्तों की आलोचना की है जिस की प्रत्यालोचना=वेद संज्ञा-विमर्श नामक पुस्तक में की गई है।

उनकी पुस्तक के द्वितीयभाग में "ब्राह्मणों के वेदत्व पर विशिष्ट विचार" का उत्तर मैंने अपने लेख 'ब्राह्मणों के वेदत्व पर विशिष्ट-विचार-पर्यालोचन" में मासिक पत्र "परोपकारी" अजमेर के फरवरी १९६६ ई० से अगस्त १९६७ ई० तक के अङ्कों में दिया है। मेरे लेख की आलोचना करने की शक्ति न तो श्री स्वामी करपात्री जी तथा अन्य किसी पौराणिक पण्डित में है। लगभग ४ वर्ष हो रहे हैं पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। समस्त लेख में कोई त्रुटि तो मिली नहीं पर श्री दीनानाथ शास्त्री को मार्च १९६७ ई० में "कस्यचित् खलु महर्षे: वह्वा:...... ।" के हिन्दी अनुवाद में मुद्रण की अशुद्धि को लेकर श्री सनातनधर्मालोक (१०) के मुखबन्ध (ख) में कटूक्ति करने की सूझी।

श्री माधवाचार्य और श्री दीनानाथ जी शास्त्री का कई अशुद्धियों की ओर मैंने ध्यान दिलाया था। श्री माधवाचार्य ने तो चुप होकर अपनी अशुद्धियां मान ली और शास्त्री जी ने भी अशुद्धि मानी। इससे चिढ़कर उन्होंने मुद्रण अशुद्धि पर टीका-टिप्पणी की है। सनातन—धर्म के ठेकेदार श्री माधवाचार्य व आपने क्यों नहो मेरे लेख की सभ्यता पूर्ण आलोचना की?

मैंने मासिक "परोपकारी" अजमेर के नवम्बर १९६३ ई० के अंक में "श्रीमद्भागवत महापुराण में अशुद्धियां" शीर्षक लेख में पाणिनि के व्याकरण से त्रुटियां प्रदर्शित की थी। श्री प्रेमाचार्य ने मुझे गाली देकर अपना क्रोध प्रकट कर दिया था। पर श्री दीनानाथ शास्त्री ने श्री सनातधर्मालोक (९) में "महर्षि दयानन्द जी कृत" ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व सस्कारविधि में आए एक ब्राह्मण वचन के हिन्दी अर्थ पर व्याकरण की त्रुटियां लिखकर अपना पाण्डित्य-प्रदर्शन करने का प्रयास किया है। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के सस्कृत वेदभाष्यों में व्याकरण की त्रुटियां दिखलाते तो उनकी विद्वत्ता भी ज्ञात होती। आदरणीय पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु ने अपने "यजुर्वेद भाष्य विवरण" के दश अध्यायों तक महर्षि जी के वेद-भाष्य को व्याकरण के प्रमाणों से पुष्ट किया है। उनके प्रमुख शिष्य श्रीयुत पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने "महर्षि दयानन्द की पद-प्रयोग शैली" नामक पुस्तक में व्याकरण की त्रुटियों पर विद्वतापूर्ण विचार किया है। श्री घनश्याम शर्मा ने "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" की आलोचना संस्कृत व हिन्दी में "भूमिकाभास" नामक पुस्तक में की थी जिसकी प्रत्यालोचना अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण पं० द्विजेन्द्रनाथ शर्मा 'सिद्धान्त शिरोमणि' ने "भूमिका-प्रकाश:" नामक पुस्तक में सस्कृत भाषा में की थी। यह पुस्तक आज से ४५ वर्ष पूर्व पं० राजेन्द्रनाथ वैद्यभूषण, ३२० कालबादेवी रोड, बम्बई २ द्वारा प्रकाशित हुई थी उसके प्रत्युत्तर देने में समस्त पौराणिक पण्डितो की लेखनी टूट गई।

अब श्री दीनानाथ शास्त्रा में विद्वत्ता है तो भूमिका-प्रकाश: का प्रत्युत्तर देना चाहिए। अब वे 'आलोक' (९) (८०) पृष्ठ ५४२ से ५५० तक में आक्षेप करते हैं:—

"......श्रीमद्भागवतादि पुराणों में जो अशुद्ध प्रयोग आदि बताता है उसमें उसे याद रखना चाहिए कि—वे पाणिनि से पूर्व अन्य व्याकरणों का आश्रय लिये हुए थे;

"..... व्यास जी का पुराणो में माहेन्द्र-व्याकरण के अनुसार चलने से उन पाणिनि विरुद्ध पौराणिक प्रयोगों को अपाणिनीय तो कहा जा सकता है, पर अशुद्ध नहीं।"...

समीक्षा– आप ने मेरे "श्रीमद्भागवत महापुराण में अशुद्धियां" के उत्तर में टाल मटोल किया है। केवल 'माहेन्द्र-व्याकरण' नाम ले देने से अशुद्धियां ठीक हो गईं? आपने "पाणिनि विरुद्ध" लिख कर उन अशुद्धियों को स्वीकार कर लिया है।

'माहेन्द्र व्याकरण' के अनुसार उन अशुद्धियों को ठीक बतलाना चाहिए। पृष्ठ ५४४, (१, २, ३, ४, ५, ६, ७) में आपने "सहनाववतु सह नौ भुनक्तु" के अर्थ पर आक्षेप किया है।

समीक्षा–(१) "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" में तैत्तिरीय आरण्यक के नवम प्रपाठक और 'सस्कारविधि' गृहाश्रम प्रकरण में 'अष्टम प्र० मुद्रित है। प्रमाण तो सही है। क्या आपके श्री माधवाचार्य के ग्रन्थों में प्रमाणों की अनेकों अशुद्धियां नहीं हैं जिनको मैंने "नीर-क्षीर विवेक' व 'वैदिक सिद्धान्त मार्तण्ड' में प्रदर्शित कर दिया है। अत: यह आक्षेप निर्मूल है।

(२) 'नौ' द्विवचनान्त है,पर स्वामी जी ने द्विवचन का अर्थ नहीं किया ..... स्वामी जी ने बहुवचन अर्थ किया है। यह आक्षेप निर्मूल है। अष्टाध्यायी (८।१।२०)=युष्मदस्मदो:......सूत्र के अनुसार महर्षि जी का अर्थ सही है। आप हिन्दी अर्थ पर व्यर्थ आक्षेप करके अपनी अयोग्यता प्रकट कर रहे हैं, क्योंकि हिन्दी में केवल एक वचन व बहुवचन होता है, द्विवचन नहीं होता। सस्कृत में जहां द्विवचन होगा उसका हिन्दी अनुवाद बहुवचन ही होगा। आपके ३, ४, ५ आक्षेपों का उत्तर भी इसी में आ गया।

(क) भुज् धातु के ..... खाना, भोगना, रक्षा करना। .....आत्मनेपद है। ..... कण्डिका में 'भुनक्तु' परस्मैपद है, सो इसका अर्थ 'रक्षा' .....स्वामी जी ने यहां 'भोगना' अर्थ किया है......भोगना अर्थ होने पर आत्मनेपद होता। यह आक्षेप भी निर्मूल है।

'भुजोऽनवने' (अष्टा. १।३।६६) के अनुसार वैदिक व लौकिक साहित्य में परस्मैपद व आत्मनेपद दोनों होते है। कई स्थलों में ऐसा प्रयोग है। महर्षि जी ने "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" में 'भोगना' अर्थ किया है पर 'सस्कारविधि' में 'रक्षा' अर्थ करके परस्मैपद का प्रयोग किया है। अत: दोनों स्थलों के अर्थ उचित हैं।

(७)अष्टा०(२।४।३९, ७३,७६)='बहुलं छन्दसि' और 'व्यत्ययो बहुलम्' (३।१।८५) के अनुसार महर्षि जी का अर्थ सर्वथा उचित है।

(८१)..... आर्यसमाजानुसार यह वेद का मंत्र नहीं,.....यह कृष्ण यजुर्वेद का है........व्यत्यय करने वाले को कृष्णयजुर्वेद को भी वेद मानना पड़ेगा........।

शेष पृ० ९ पर

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

(२३ दिसम्बर से २८ दिसम्बर तक

(१) महर्षि द्वारा हरद्वार के कुम्भ के अवसर पर गाड़ी गई पाखण्ड खण्डिनी पताका को भी एक सौ वर्ष हो गये हैं। इसलिए निश्चय किया है कि शास्त्रार्थ शताब्दी के साथ साथ (पाखण्ड खण्डिनी पताका शताब्दी) भी मनायी जावेगी। यह सौभाग्य की बात है कि यह घटना भी उत्तर प्रदेश की है। अतः आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश द्वारा उसका आयोजन करना उचित ही होगा।

(२) बारानसी में स्वागत समिति का निर्माण हो रहा है उसके कई सौ सदस्य बन चुके हैं एक हजार सदस्य बनाने का लक्ष्य है। वहां के आर्य भाई तथा आर्य समाजे उत्साह से कार्य कर रही हैं।

(३) शताब्दी के अवसर पर कई प्रदर्शनियां लगाई जावेगी। एक प्रदर्शनी में महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित ग्रन्थ, उनके खड़ाऊ, वस्त्र आदि रखे जावेगे। दूसरी में आर्यसमाज से सम्बन्धित साहित्य का प्रदर्शन होगा।

अन्य आकर्षक तथा शिक्षा-प्रद आयोजन करने पर विचार किया जा रहा है, जिसकी सूचना यथा समय दी जावेगी।

महेन्द्रप्रताप शास्त्री संयोजक

पृ० ८ का शेष

यह ठीक है कि आर्यसमाज 'कृष्णयजुर्वेद' को संहिता भाग के अन्तर्गत नहीं मानता है। उसका यह वचन वेद संहिता के विरुद्ध नहीं है। क्या आप आरण्यक व कृष्णयजुर्वेद को वेद नहीं मानते हैं? जब आप मानते हैं तो आपका प्रश्न भी व्यर्थ है।

(८२) ·····स्वामी पहले ब्राह्मण भाग-आरण्यक, उपनिषद् तथा सभी शाखाओं को वेद मानते थे, पीछे बदल गए।

(क) ऋ. भा. भू., संस्कारविधि, सत्यार्थप्रकाश में आरण्यकादि का क्यों मंगलाचरण किया है?

समीक्षा—क्या आपको इलहाम हुआ था कि महर्षि दयानन्द जी सरस्वती पहिले ब्राह्मणभाग, आरण्यक, उपनिषद् तथा सभी शाखाओं को वेद मानते थे। उन्होंने इन्हें कभी वेद संहिता नहीं माना और न किसी ग्रन्थ में लिखा है। यह तो आपकी कपोल कल्पना मात्र ही है। उन्होंने 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' सत्यार्थप्रकाश में केवल चार संहिता भाग को ही वेद माना है। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' के ब्राह्मणों को वेद सिद्ध करने पर उन्होंने 'भ्रमोच्छेदन' तथा पं० भीमसेन शर्मा ने 'अनुभ्रमोच्छेदन' नामक पुस्तकें लिखीं। अतः आपका आक्षेप व्यर्थ है।

वे संहिताभाग को स्वतः प्रमाण और अन्य ग्रन्थों को परतः प्रमाण मानते थे। ऋ. भा. भू. 'संस्कारविधि' 'सत्यार्थप्रकाश' में जो मंगलाचरण किया है वह वेदानुकूल होने से उचित ही है। जब वे प्रमाण वेदों के विरुद्ध नहीं हैं तब आपको आक्षेप करने की क्या आवश्यकता पड़ी?

इस प्रकार आपके व्यर्थ आक्षेपों का निराकरण कर दिया है।

अब मैं आज श्री शङ्कराचार्य जी महाराज के भाष्यों में कुछ व्याकरण की अशुद्धियां प्रदर्शित करता हूं। आशा है भविष्य में आप दुर्नीति छोड़ देंगे।

(क) छान्दोग्योपनिषद् १।६।१ के भाष्य में:—"···ऋक्सामनी नात्यन्तं भिन्ने···" है+

यह अर्थ अशुद्ध है। पाणिनि ऋषि के अष्टाध्यायी (५।४।७७)= अचतुर विचतुर ···" के अनुसार 'ऋकसामे' होना चाहिए।

(ख) छान्दोग्योपनिषद् ८।८।४ के भाष्य में "····गच्छेयाताम्···'—'है, जो 'गच्छेतां' होना चाहिए।×

(ग) छान्दोग्योपनिषद् ८।१२।३ में "अहमसुष्य पुत्रो जातो जीर्णो मरिष्ये इत्येवं प्रकारं·····"● है। परन्तु यहां 'मृ' धातु के भविष्यकाल में परस्मैपदी है, इसलिए 'मरिष्ये' के स्थान में 'मरिष्यामि' होना चाहिए।"

+द्रष्टव्य—छान्दोग्योपनिषद् (सानुवाद शाङ्कर भाष्य सहित) पृष्ठ १० (संवत् २०१३ वि. में, गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित, तृतीय संस्करण)

×वही, पृष्ठ ८८४,

●वही, पृष्ठ ९२५.

पृ० ७ का शेष

१४—(प्रश्न) जब वह क्रिया करता होगा, तब अन्तवाली क्रिया होती होगी, वा अनन्त?

(उत्तर) जितने देश-काल में क्रिया करनी उचित समझता है, उतने ही देश-काल में क्रिया करता है। न अधिक, न न्यून, क्योंकि वह विद्वान् है।

१५—(प्रश्न) परमेश्वर अपना अन्त जानता है, वा नही?

(उत्तर) परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है। क्योंकि ज्ञान उस को कहते है कि जिससे ज्यों का त्यों जाना जाये अर्थात् जो पदार्थ जिस प्रकार का हो, उसी प्रकार जानने का नाम ज्ञान है। जब परमेश्वर अनन्त है, तो उस को अनन्त ही जानना ज्ञान, उससे विरुद्ध जानना अज्ञान अर्थात् अनन्त को सान्त और सान्त को अनन्त जानना भ्रम कहाता है। "यथार्थ दर्शनं ज्ञानमिति" जिस का जैसा गुण, कर्म, स्वभाव हो, उस पदार्थ को वैसा ही जान कर मानना ही ज्ञान और विज्ञान कहाता है। [इससे] उलटा अज्ञान।

१६—(प्रश्न) ईश्वर अवतार लेता है, वा नहीं?

(उत्तर) नही। वेद-वचनों से सिद्ध है कि परमेश्वर जन्म नही लेता।

१७—(प्रश्न) जो ईश्वर अवतार न लेवे, तो कस रावणादि दुष्टों का नाश कैसे हो सके?

(उत्तर) प्रथम जो जन्मा है, अवश्य मृत्यु को प्राप्त होता है, जो ईश्वर अवतार शरीर धारण किये बिना जगत् की उत्पत्ति, स्थिति प्रलय करता है। उस के सामने कंस और रावणादि एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह सर्व व्यापक होने से कस, रावणादि के शरीरों में भी परिपूर्ण हो रहा है। जब चाहे, उसी समय मर्मच्छेदन कर नाश कर सकता है। भला इस अनन्त गुण, कर्म, स्वभावयुक्त परमात्मा को एक क्षुद्र जीव के मारने के लिये जन्ममरणयुक्त कहने वाले को मूर्खपन से अन्य कुछ विशेष उपमा मिल सकती है? और जो कोई कहे कि भक्त जनों के उद्धार करने के लिये जन्म लेता है, तो भी सत्य नही। क्योंकि जो भक्त जन ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं, उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है। क्या ईश्वर के पृथिवी, सूर्य, चन्द्रादि जगत् को बनाने, धारण और प्रलय करने रूप कर्मों से कंस रावणादि का वध और गोवर्धनादि पर्वतों का उठाना बड़े कर्म हैं? जो कोई इस सृष्टि में परमेश्वर के कर्मों का विचार करे, तो "न भूतो न भविष्यति" ईश्वर के सदृश्य कोई न है, न होगा।

१८—और युक्ति से भी ईश्वर का जन्म सिद्ध नहीं होता। जैसे कोई अनन्त आकाश को कहे कि गर्भ में आया, वा मुट्ठी में धर लिया, ऐसा कहना कभी सच नहीं हो सकता। इस से न आकाश बाहर आता, और न भीतर जाता, वैसे ही अनन्त सर्वव्यापक परमात्मा के होने से उस का आना, जाना भी सिद्ध नही हो सकता। जाना वा आना, वहां हो सकता है, जहां न हो। क्या परमेश्वर गर्भ में व्यापक नही था, जो कहीं से आया? और बाहर नहीं था, जो भीतर से निकला? ऐसा ईश्वर के विषय में कहना और मानना विद्याहीनों के सिवाय कौन कह और मान सकेगा? इस लिये परमेश्वर का जाना-आना, जन्म-मरण कभी सिद्ध नही हो सकता। इस लिये "ईसा" आदि भी ईश्वर के अवतार नहीं, ऐसा समझ लेना। क्योंकि राग, द्वेष, क्षुधा, तृषा, भय, शोक, दुःख, सुख, जन्म-मरण आदि गुण युक्त होने से मनुष्य थे।

१९—(प्रश्न) ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है, वा नहीं?

(उत्तर) नहीं, क्योंकि जो पाप क्षमा करे, तो उसका न्याय नष्ट हो जाय और सब मनुष्य महापापी हो जायें। क्योंकि क्षमा की बात सुन ही के उन को पाप करने में निर्भयता और उत्साह हो जाये। जैसे राजा अपराध क्षमा कर दे, तो वे उत्साह पूर्वक अधिक-अधिक बड़े-बड़े पाप करें। क्योंकि राजा अपना अपराध क्षमा कर देगा, और उन को भी भरोसा हो जाय कि राजा से हम हाथ जोड़ने आदि चेष्टा कर अपने अपराध छुड़ा लेंगे। और जो अपराध नहीं करते, वे भी अपराध करने से न डरकर पाप करने में प्रवृत्त हो जायेंगे। इस लिये सब कर्मों का फल यथावत् देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं॥

गतांक से आगे—

FROM-"GLIMPSES OF WORLD HISTORY"

Jesus, Christianity & Crusades.

(By Giridhari Lal Arya Chauri Chaura)

20. A great part of Europe was, indeed, ruined by these wars. They were not only peasant wars, but, as we shall see, religious wars between Protestant and Catholic, national wars of freedom, as in the Netherlands, and the revolt of the Bourgeoisie against the absolute power of the King.

21. The Renaissance was the re-birth of learning the growth of art and science and literature, and the languages of European countries. The Reformation was a rebolt against the corruption of the Church; it was also a rebolt of the princes of Europe against the claims of the Pop to lord it over them; and thirdly it was an attempt to reform the Church from within.

22. During this period the fifteenth to the seventeenth centuries-science also gradually forges ahead and comes into its own. It had a stiff fight with the Church, for the Church did not believe in making people think and experiment. For it the earth was the centre of the universe and the sun went round it and the stars were fixed points in the heavens. Any one who said otherwise was a heretic and might be dealt with by the Inquisition. In spite of this a Pole, named Copernicus, did Challege this belief and proved that the earth went round the sun. Thus he laid the foundations of the modern idea of the universe. He lived from 1473 to 1543. Somehow he managed to escape the wrath of the Church for his revolutionary and heretical opinions. Others who came after him were not so fortunate. Giordano Bruno, an Italian, was burned in Rome by the Church in 1600 for insisting that the earth went round the sun, and the stars were themselves suns. A contemporary of his, galilo, who made the telescope, was also threalened by the Church, but he was weaker than Bruno, and thought it more expedient to recant. So he admitted to the Church that he was mistaken in his folly and that the earth was of course the centre of the universe, and the sun went round it. Even so, he had to spend some time in prison doing penance.

23. Even before the times of the Renaissance there had been rumblings in the body of the Roman Church. Both the Princes and peoples of Europe were beginning to feel the heavy of the Church, and to grumble a little, and to doubt. Frederick II, the Emperor, you will remember, had quite an argument with the Pope, and cared little even for excommunication. These signs of doubt and disobedience angered Rome, and it resolved to crush the newheresy. For this purpose the Inquisition was created, and there was burning of unhappy men who were styled heretics, and women who were accused of being witches, all over Europe. John Huss of Prague was tricked and burnt, and thereupon his followers in Bohemia, the Hussites, raised the banner of revolt. Not all the terrors of the Inquisition could put down this new spirit of revolt against the Roman Church. It spread, and to it was added, no doubt, the feeling of the peasantry against the Church as a big landowner. And the princes in many places encouraged this spirit for selfish reasons. They were casting unvions and covetons eyes on the vast properties of the Chruch. They printing of books and Bibles added to the smouldering fire.

23. Early in the sixteenth century there rose in Germany Martin Luther, who was to become the great leader of the revolt against Rome. He was a Christian priest who after a visit to Rome became disgusted with the corruption and luxury, of the Church. This controversy grew and grew till it split up the Roman Church into two, and divided western Europe into two camps, religious as well as political. The old orthodox Greek Church of Russia and eastern Europe Kept apart from this controversy. So far as it was concerned, Rome was itself far removed from the true faith. In this way began the Protestant revolt. It was called Protestant because it protested against various dogmas of the Roman Church. Ever since them there have been two main divisions of Christianity in western Europe—Rome Catholic and Protestant. But the Protestants are divided up into many sects. This movement against the Church is called Reformation. It was in the main a popular revolt against corruption as well as authotrrianism of the Church. Side by side with this, many princes wanted to put an end to all attempts by the Pope to dominate over them. They resented very the interference of the Pope in their political affairs. There was also a third phase of the Reformation, an attempt by loyal Churchmen to reform the Church of its abuses from within.

24. You will perhaps remember the two orders of the Church the Franciscan and the Dominican. In the sixteenth century, just about the time of Martin Luther was gaining in strength, a new Church order was started by a Spaniard, Ignations of Loyola. He called it the "Society of Jesus", and its members were called Jesuits.

25. Luther was the great Protestant, and he opposed the authority of Rome. But do not imagine that he was tolerant in religion. He was as intolerant as the Pope he was fighting. So the Reformation did not bering religious liberty to Europe. It bred a new type of fanatic—the Puritan and the Calvinist. Calvin was one of the later laders of the Protestant movement. He was a good organizer, and for a while he controlled the City or Geneva. Do you remember the great monument to the Reformation in the part at Geneva? The huge expanse of wall with statues of Calvin and others? Calvin was so intelerant that he burnt many persons because they simply did not agree with him and were free thinkers. Luther and the Protestants were helped greatly by the mass of the people because there was a strong feeling against the Roman Church. As I have told you, the peasantry were very miserable and there were frequent riots. These riots developed into a regular Peasants, war in Germany. The poor peasants rose against the system which crushed them and demanded the most ordinary and reasonable rights—that serfdom should cease, and the right to fish and hunt. But even these were denied them, and princes of Germany tried to crush them with every species of barbarity. And Luther, the great reformer, what was his attitude? Did he side with the poor peasants and support their just demands? Not he! On the peasants' demand that serfdom should end, Luther said: "This article would make all men equal and so change the spiritual Kingdom of Christ into an external worldly one. Impossible! An earthly kingdom cannot exist without inequality of persons. Some must be free, others serfs, some rulers, others subjects." He curse the peasants and calls for their destruction. Therefore let all who are able hew them down, slaughter and stab them, openly or in secret, and remember that there is nothing more poisonous, noxious and utterly diabolical than a rebel. You must kill him as you would a mad dog if you do not fall upon him, he will fall upon you and the whole land." Pretty language this, especially coming from a religious leader and a reformer.

26. Italy, Austria, France, and Spain were Catholic; Germany half Catholic and half Protestant; England Protestant simply because her king chose to be so. And because England was Protestant, this was enough reason for Ireland, Whom England tried to conquer and oppress, to remain Catholic.

27. France has always thought that her strength and security lay in the weakness of Germany. So Richelieu, who was a great Catholic priest, and who crushed Protestants mercilessly

(Continued to be next issue)

विदाई समारोह

आर्यसमाज कठूआ के लगनशील युवक नेता प्रो० प्रभुधूर जी एम एस सी. मन्त्री आर्यसमाज का स्थानान्तर जम्मू को हो गया। उनको आर्यसमाज की ओर से विदाई पार्टी दी गई। —वेदप्रकाश मन्त्री

आर्यसमाज की स्थापना

गाव लोहारी राघो में आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के उपदेशक श्री प० रामनाथ जी तथा प० तेजभानु जी के सफल प्रचार से आर्यसमाज की स्थापना की गई। जिसका चुनाव निम्न प्रकार है—

प्रधान-श्री ज्वालादास, मन्त्री—श्री प्रभुदत्त, कोषाध्यक्ष—डा० धनश्यामदास, पुस्तकाध्यक्ष—श्री राजेन्द्र। —प्रभुदत्त आयुर्वेदालङ्कार

नाम करण संस्कार समारोह

ग्राम बनार (जयपुर) श्री छाजूराम आर्य अध्यापक के पुत्र का नाम करण सस्कार प० ताराचन्द वैदिक तोप तथा श्री योगेन्द्र पुरुषार्थी ने विधि पूर्वक कराया। इस शुभ अवसर पर १३७ रु० सस्थाओ को दान दिया गया। इसमे २५ रु० आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब को भी दिये हैं।

—निज सवाददाता

ऋषि दयानन्द निर्वाण दिवस

निम्नलिखित आर्यसमाजो मे सब जगह बडे समारोह से मनाया गया। प्रत्येक स्थान पर आर्यसमाज के पूज्य सन्यासी, पण्डित और भजनोपदेशक पधारे। प्रचार का अच्छा प्रभाव रहा—

१ आर्यसमाज गाजियाबाद (सब समाजो द्वारा)।
२ आर्यसमाज, न्यु कालोनी गुडगावा।
३ आर्यसमाज गोविन्द नगर (बी ब्लाक) तथा वार्षिकोत्सव भी धूम-धाम से मनाया गया।
४ आर्यसमाज इटारसी (होशगाबाद)
५. आर्यसमाज जुवा (रोहतक)

आर्यसमाज दसूहा का वार्षिकोत्सव

बडे समारोह से मनाया गया। आर्य जगत् के अनेक सन्यासी विद्वान् वानप्रस्थी, पण्डित और भजनोपदेशक पधारे। इसी समय तहसील वेदप्रचारिणी सभा की स्थापना भी की गई। जिस का निर्वाचन यह है—प्रधान श्री स्वामी विचारानन्द जी तथा मन्त्री श्री हरवसलाल मुकरिम।

—सुरेन्द्रमोहन मन्त्री आर्यसमाज दसूहा

आर्यसमाज रजपुर (मेरठ) का वार्षिक उत्सव

१२ १३ १४ दिसम्बर ६८ को बडे समारोह से होगा। इस अवसर पर आर्यसमाज के पूज्य सन्यासी, पण्डित भजनोपदेशक तथा नेता पधारेगे। आर्य सम्मेलन श्री डा० स्वामी महन्त जी की सरक्षता मे होगा।

—मन्त्री आर्यसमाज

शुद्धि समारोह

आर्यसमाज जामनगर मे न्यूयार्क (अमेरिका) के एक अमेरीकन यहूदी नागरिक श्री स्टेनली जहरोफका जो की अमेरिकन युनिवर्सीटी के समाज शास्त्र के स्नातक हैं। शुद्धिसस्कार समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। उनका श्री सुभाष नाम रखा गया। —मन्त्री आर्यसमाज-जामनगर

हरिजन बन्धुओं को पुनः स्वधर्म में लावें

आपके सम्मानित पत्र द्वारा बलिया जिला आर्योपप्रतिनिधि सभा का ध्यान बासडीह तहसील के अतर्गत करसी पो० भरथांव ग्राम के ईसाईयो की ओर आकर्षित करना चाहता हू। यहाँ के हरिजन लोभवश ईसाई मत, स्वीकार कर आर्थिक रूप से बहुत लाभान्वित हुए, लेकिन वे लोग अब सब सुहावताओं से वचित हो जाने तथा सामाजिक मान्यताओ के अभाव से अत्यधिक व्यथित हैं। ये लोग मार्ग भ्रष्ट होकर घोर पश्चाताप कर व्याकुल हैं। वर्तमान हरिजन समाज उनसे घृणा करता है तथा निर्धनता व आर्थिक विपन्नता के फलस्वरूप वे लोग भ्रान्ति मे पडे हुये हैं।

स्वजाति में लेने का उपक्रम कराना आर्यसमाज का परमदायित्व है। लगभग १५० हरिजन सकुटुम्ब पुनः हरिजन हो कर ईसाई मत से मुक्ति प्राप्त कर लेंगे यह कार्य अत्यन्त आवश्यक तथा शीघ्र ही करने के योग्य है। ऐसी स्थिति में आर्य उपदेशक, सन्यासी तथा महात्मा आनन्द स्वामी सदृश व्यक्ति आकर शुद्धि कर उन्हे स्वधर्म में विलय करने में सहयोगी सिद्ध हों। —योगीन्द्र पाण्डेय ग्राम लखौलिया, पो० भरथांव, जि० बलिया

श्री पं० माधवाचार्य जी को खुला चेलेंज

प० माधवाचार्य जी ने "क्यो ?" नाम की एक पुस्तक छपाई है उसमें व्यर्थ ही आर्यसमाजियो को दकियानूस दयानन्दी आदि गालिया स्थान-स्थान पर लिखी हैं उन गालियो का उत्तर तो हम नही देंगे, पर शास्त्रार्थ सम्बन्धी जो बातें हैं उन पर लिखना तो आवश्यक ही है।

क्यो ? के पूर्वार्ध पृष्ट ५० पर लिखा है कि—

"आर्यसमाज भी यदि किसी एक दर्शन को भी मानले तो उसकी रेत की दीवार धम्म से गिर जाय, सभी दर्शनो मे—मूर्तिपूजा, ईश्वर का अवतार, मतक के श्राद्ध, जन्मना वर्ण व्यस्था तीर्थ और छुवा-छूत आदि विषय ओत प्रोत हैं।"

प० माधवाचार्य जी इन विषयो को न कभी वैदिक सिद्ध कर सके न कभी कर सकगे। अब इन विषयो को दर्शनो मे ओत प्रोत बताते हैं।

मैं अमर स्वामी परिव्राजक और प० बिहारी लाल शास्त्री काव्यतीर्थ हम दोनो इन विषयो पर शास्त्रार्थ करने को उद्यत हैं, पहिला शास्त्रार्थ मूर्ति पूजा पर होगा दूसरा ईश्वर के अवतार पर और तीसरा मृतक श्राद्ध पर होगा, इसी प्रकार अन्य विषयो पर होगे।

रजिस्ट्री पत्र प० माधवाचार्य जी को भेज दिया गया है। यदि वह शास्त्रार्थ करने से कतरायेगे तो उनकी पराजय मानी जायेगी।

अमर स्वामी परिव्राजक — बिहारीलाल शास्त्री काव्यतीर्थ
सन्यास आश्रम गाजियाबाद — रामपुर गार्डन-बरेली

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के सम्बन्ध में एक सुझाव

अब से सौ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द जी महाराज ने काशी के पण्डितो से पूछा था कि वेदो मे मूर्ति पूजा का विधान कहा है ? उस समय काशी के मूर्धन्य विद्वान् महर्षि के सम्मुख आये पर मूर्ति पूजा के विधान का एक भी मन्त्र वेदो से वह लोग न दिखला सके। इसको सौ वर्ष बीत गये, अब आर्यसमाजी पण्डितो को काशी मे पहुच कर काशी के शीर्षस्थ विद्वानो से कहना चाहिये कि—इन सौ वर्षों मे आपने वेदो मे मूर्ति पूजा विधायक मन्त्र यदि ढूढ लिये हैं तो हमको दिखाइये और बताइये। और यदि हमारी तरह आप भी यह मान गये हैं कि—वेदो मे मूर्ति पूजा का विधान नही है तो हमारे साथ मिलकर एक बार ऋषि दयानन्द जी की जय बोलिये।

काशी को छोडकर इधर उधर शास्त्रार्थ के लिये भ्रमण करने की इस समय विशेष आवश्यकता नही है।

सारे देश मे आर्यसमाजो के उत्सवो पर सभी उपदेशक जाते हैं। मूर्ति पूजा का खण्डन और शास्त्रार्थ के लिये आह्वान भी करते हैं देश मे बहुत से शास्त्रार्थ हुए भी हैं। आर्यसमाज की विजय दुन्दुभी ऐसी बज गई कि— अब मूर्ति पूजा ईश्वरावतार, मृतक श्राद्ध, जन्म की वर्ण व्यवस्था आदि विषयो पर शास्त्रार्थ करने को एक भी पौराणिक पण्डित नही उठता है।

मैंने तो कई कई सहस्र शास्त्रार्थ चेलज छपा कर कई बार बाटे पर एक भी पौराणिक पण्डित का साहस मूर्ति पूजा आदि विषयो पर शास्त्रार्थ करने का न हुआ।

फर्रुखाबाद मे मैंने मनादि कराई कि—पौराणिक पण्डित आज नियोग पर शास्त्रार्थ करे। कविरत्न प० अखिलानन्द जी और श्री माधवाचार्य जी दोनों हमारे सम्मुख शास्त्रार्थ ही के लिये लाये गये थे। नियोग पर शास्त्रार्थ करने से दोनो ने इन्कार कर दिया। सत्यार्थप्रकाश पर ७ प्रश्न माधवाचार्य जी ने किये मैंने उनके कडे उत्तर दिये तो पौराणिको ने उस समय के डिटी मजिस्ट्रेट को कार मे लाकर शास्त्रार्थ बन्द करवाया।

अब तो मूर्ति पूजा आदि विषयो पर शास्त्रार्थ करने से पौराणिक पण्डित कोसो दूर भागते हैं। केवल काशी के पण्डितो से पूछ लेना चाहिये इधर उधर घूम कर समय, धन और शक्ति का अपव्यय करना व्यर्थ है।

—वैदिक धर्म का सेवक-अमर स्वामी परिव्राजक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१. सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२. धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३. सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४. आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह	१-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६. वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७. कुलियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९. वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५
१०. जीवन ज्योति—पं० चमूपति जी एम ए.	३-००
११. सोमसरोवर " " "	३-००
१२. वैदिक सिद्धान्त—	१ ००
१३. Principle of Arya Samaj " "	१-५०
१४. Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१५. Subject Matter of Vedas	१-००
१६. आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी	०-५०
१७. मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर	१-००
१८. प० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित्र—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-२५
१९. वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी आचार्य	१०) सैकड़ा
२०. पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद	२ ००

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
१५ हनुमान् रोड दिल्ली—१

विवाह सम्बन्धी विज्ञापन

(१) आवश्यकता है एक ४५ वर्षीय जाट [illegible] के लिये जिसके पास लगभग १०० बीघा जमीन, पक्का मकान आदि सम्पत्ति है, विधवा अथवा तलाक शुदा ३०,३५ वर्षीया [illegible] की सजातीयता को प्राथमिकता दी जायेगी।

पत्रव्यवहार का पता
द्वारा आर्यमर्यादा साप्ताहिक (अ) १५ हनुमान् रोड नई दिल्ली-१

(२) ३१ वर्षीय ब्राह्मण आर्य विधुर के लिए एक [illegible] विधवा चाहिए, वर सरकारी कर्मचारी, मासिक आय २८०) रु०, जाति [illegible] दहेज बन्धन नहीं, साधारण विवाह द्वारा स्वीकार।

आर्यमर्यादा साप्ताहिक (इ) १५ हनुमान रोड नई दिल्ली—१

(३) उम्र ४५ वर्ष, गौर वर्ण, मझला कद, अच्छा प्राइवेट डाक्टरी, आय ३००) रु० मासिक, बीमा दस हजार का जाति महाजन के लिए धर्म पत्नी चाहिए, प्रौढ उम्र गृहकार्य कुशल विनीत हो, दहेज जाति पाति का प्रतिबंध नहीं।

पता
डा० पन्नालाल मणि आर्य (रतलाम वाले) पोस्ट बावला स्टेशन—सरदार पटेल मार्ग १५५ सुवेगढ़ (जिला झाबुआ) (म०प्र०)

[illegible] द्वारा [illegible] प्रेस, [illegible] में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

जो महाशय महर्षि लोगो ने सहजता से महान विषय अपने ग्रन्थो में प्रकाशित किया है वैसा इन क्षुद्राशय मनुष्यो के कल्पित ग्रन्थो मे क्योकर हो सकता है। महर्षि लोगो का आशय जहा तक हो सके वहां तक सुगम और जिस के ग्रहण मे थोडा समय लगे इस प्रकार का होता है और क्षुद्राशय लोगो की मनसा ऐसी होती है कि जहा तक बने कठिन रचना करनी जिस को बड परिश्रम से पढ के अल्प लाभ उठा सक। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष १ } १५ मार्गशीर्ष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ३० नवम्बर १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१०
अंक ४१ } सृष्टि स०-१९६०८५३०६९ विदेश मे २०
एक प्रति का मूल्य २०
सह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

इन्द्रशब्देन पुन स एवार्थ [शूरवीरगुणा] उपदिश्यते ॥

अगले मन्त्र मे इन्द्र शब्द से उसी के गुणों का उपदेश किया है ॥

वधीर्हि दस्यु धनिन घनेन एकश्चरन्नुपशाकेभिरिन्द्र ।

धनोरधि विषुणक्ते व्यायन्नयज्वानः सनकाः प्रेतिमीयु ॥

॥ ऋ० १ ३३ ४ ॥

पदार्थ —(वधी) हिन्धि (हि) निश्चयार्थे (दस्युम) बलान्यायभ्या परस्वापहर्तारम् (धनिनम्) धार्मिक धनाढ्यम् (घनेन)* बलादनेन [illegible] (सूर्यलोकः) उपशाकाभी वै शक्तिमत्तैः (इन्द्र) ऐश्वर्ययुक्त शूरवीर (धनो)धनुषो ज्याया (अधि) उपरिभावे (विषुणक) वैविध्यधर्मेण ये ते विषवस्तान नाशयति स (ते) तव (वि)विशेषार्थ (आयन) यन्ति प्राप्नुवन्ति (अयज्वान) अयाज्ञुस्ते यज्वानो न यज्वानोऽजज्वान (सनका) सनन्ति सेवन्ते परपदार्थान ये ते (प्रतिम) प्रयन्ति म्रियन्ते येन त मृत्युम (ईयु) प्राप्नुयु ॥

अन्वय —हे इन्द्र शूरवीर यथे श्वर: सूर्यलोकश्चोपशाकेभिरे-कश्चरन दुष्टान हिनस्ति तथैकाकी त्व घनेन दस्यु वधीर्हिंधि विनाशय विषुणक त्व धनोरधि बाणान सृत्वा [illegible] धनिन वर्धय। यथेश्वरस्य [illegible] सूर्यलोकस्य शत्रवो घनेन सामर्थ्येन किरणसमूहेन वा नाश व्यायन् वियन्ति तथा हिते तवायज्वान सनकाः प्रेतिमीयुर्यथा प्राप्नुयुस्तथैव यतस्व ॥

भावार्थ —अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार । यथेश्वरोऽजातशत्रु सूर्यलोकोऽपि निवृत्तमेघो भवति। तथैव मनुष्यैः दस्यून् हत्वा धनिनो धार्मिकाऽजातशत्रवोऽभिरक्षितव्या इति ॥

भाषार्थ —हे (इन्द्र) ऐश्वर्ययुक्त शूरवीर एकाकी आप जैसे ईश्वर वा सूर्यलोक (उपशाकेभि) सामर्थ्य [illegible] (घनेन) घनरूपी वज्र से (दस्युम) बल और अन्याय से दूसरे के धन को हरने वाले दुष्ट को (वधी) नाश कीजिये और (विषुणक) अधम से धर्मात्माओ को दु ख देने वालो के नाश करने वाले आप (धनो) धनुष के (अधि) ऊपर बाणो को निकाल कर दुष्टो को निवारण कर के (धनिनम) धार्मिक धनाढ्य की वृद्धि कीजिये जैसे ईश्वर की निन्दा करने वाले तथा सूर्यलोक के शत्रु मेघावयव (घनेन) सामर्थ्य वा किरणसमूह से नाश को (व्यायन) प्राप्त होते हैं वैसे (हि) निश्चय करके (ते) तुम्हारे (अयज्वान) यज्ञ को न करने तथा (सनका) अधर्म से औरो के पदार्थो का सेवन करने वाले मनुष्य (प्रतिम) मरण को (ईयु) प्राप्त हों वैसा यत्न कीजिये ॥

भावार्थ —इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालकार है। जैसे ईश्वर शत्रुओं से रहित तथा सूर्य लोक भी मेघ से निवृत्त हो जाता है वैसे ही मनुष्यों को चोर डाकू, वा शत्रुओं को मार और धन वाले धर्मात्माओं की रक्षा कर के शत्रुओ से रहित होना अवश्य चाहिये ॥

—(ऋषिदयानन्द का भाष्य)

रजिस्टर पोस्टल सर्टिफिकेट

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

गुरुदत्त भवन, जालन्धर नगर

साधारण सभा के सदस्यो कि सेवा मे

ओमन्नमस्ते !

आय महा सम्मेलन हैदराबाद सावदेशिक आय प्रतिनिधि सभा दिल्ली आय प्रतिनिधि सभा पजाब तथा दीवान रामसरन दास द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती को आय प्रतिनिधि सभा पजाब के झगड समाप्त कराने का पूर्ण अधिकार मिला था। उक्त अधिकार के आधार पर महात्मा जी ने अपने [illegible] २० ९ ६९ तथा [illegible] दि० २५-६ ६९ द्वारा मुझ सभा प्रधान के रूप में यथापूर्व सभा का [illegible] अब २१ १२ ६९ रविवार को प्रात: ११ बजे [illegible] कालिज आफ एजूकेशन रोहतक मे होगा। सब प्रतिनिधियो से प्राथना है कि बैठक मे निश्चित समय पर पधार कर महात्मा जी के आदेश का पालन कर।

विचारणीय—विषय

१ गत अधिवेशन तिथि २८ २९ नवम्बर ६४ की कायवाही सम्पुष्टि।

२ स्वगवास हुए सभासदो तथा प्रतिष्ठित आय महानुभावो के वियोग पर शोक प्रस्ताव ।

३ वार्षिक वृत्तान्त ।

४ सभा मुख्य कार्यालय वेद प्रचार विभाग दयानन्द उपदेशक विद्यालय गुरुकुल कांगडी तथा कन्या गुरुकुल देहरादून आदि संस्थाओ के सम्वत २०२५ के आय-व्यय के ब्योरे तथा सम्वत २०२६ के लिए प्रस्तावित बजट।

५ सम्वत २०२५ के अन्त का शेष पत्र ।

६ सम्वत २०२६ २७ के लिए अधिकारियो अन्तरग सभा न्याय सभा राजाय सभा सीनेट गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय आदि के सदस्यों का चुनाव।

७ अन्य आवश्यक विषय श्री सभापति जी की आज्ञा से।

नोट —(क) प्रवेश पत्र एजेंडा के साथ प्रषित है अधिवेशन मे सम्मिलित होने के लिए प्रवेश पत्र अपने साथ लाव इसके बिना प्रवेश मे कठिनाई होगी ।

(ख) अपनी आयसमाज का वेद प्रचार तथा दशांश तुरन्त सभा उपकार्यालय, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली भिजवाने की कृपा करें।

(ग) आवश्यकतानुसार कायवाही के क्रम मे परिवतन किया जा सकता है।

(घ) उपरोक्त बैठक किसी अवस्था में भी अब स्थगित न की जावेगी।

भवदीय—रामसिंह सभा प्रधान

दिनांक २०-११ ६९

केशवचन्द्र सेन का नवविधान (New Dispensation) और आर्यसमाज

(डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० पी० एच० डी०
मन्त्री राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा अजमेर)

श्री केशवचन्द्र ने ब्राह्मसमाज में उस समय प्रवेश किया, जब श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर समाज के आचार्य पद को सुशोभित कर रहे थे। वृद्ध आचार्य देवेन्द्रनाथ नवयुवक केशवचन्द्र से अत्यन्त सुहृद्भाव रखते थे। उन्हें केशव से बड़ी आशायें थी, परन्तु केशव के अत्यन्त प्रगतिशील विचारों से पुराने ब्राह्मों का मत नहीं मिलता था। धीरे-धीरे देवेन्द्रनाथ को ऐसा भास होने लगा कि जिस व्यक्तिगत सम्बन्ध के कारण सिद्धान्तों में अन्तर होते हुये भी अभी तक ये दोनों व्यक्ति जुड़े हुये हैं, वह ऐक्य का क्षीण तन्तु शीघ्र ही भंग होने वाला है और एक दिन वह परिस्थिति सामने आ भी गई। देवेन्द्रनाथ ने अपने पुरातन पंथी मित्रों के आग्रह पर पूव से हटाये हुये यज्ञोपवीत धारी ब्राह्मणों को एकदिन: पुन: ब्राह्मवेदी पर आसीन कर दिया। यज्ञोपवीत के विरोधी केशव और उनके मित्र इसे सहन नहीं कर सके, फलस्वरूप वे ब्राह्मसमाज के तात्कालिक संघटन से पृथक् हो गये और उन्होंने सन् १८६६ के ११ नवम्बर को जिस नये संघटन की नीव डाली वह कहलाया—भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज (Brahmo Samaj of India) इस दिन से देवेन्द्रनाथ का समाज आदि ब्राह्मसमाज कहलाने लगा।

अपनी पुत्री के विवाह को लेकर एक बार और केशव तथा उनके साथियों में संघर्ष हुआ। कूच-विहार विवाह काण्ड से असंतुष्ट ब्राह्मसमाजियों की एक सभा २२ मार्च १८७८ शुक्रवार को हुई और उसमें यह निश्चय हुआ कि केशवचन्द्र ने अपनी पुत्री का विवाह ब्राह्म मैरिज बिल से निर्धारित आयु से पूर्व किया है और उस विवाह में मूर्तिपूजादि अनेक अनुचित कृत्य हुये हैं अतः सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ कि वे आचार्य पद पर रहने के योग्य नहीं हैं।

"He was not fit to continue in the office of minister."

परिणाम स्वरूप केशव को अपना सम्बन्ध इन लोगों से तोड़ लेना पड़ा। अब केशव ने अपने अनुयायियों और भक्तों की सहायता से नवविधान (The Church of New Dispensation) को जन्म दिया और उनसे पृथक् हुये साथियों की समाज "साधारण ब्राह्मसमाज" कहलाई। इस प्रकार हम देखते हैं कि थोड़े ही समय के भीतर ब्राह्मसमाज को घोर आन्तरिक विद्रोहों का सामना करना पड़ा जिसके फलस्वरूप उसका संघटन कमजोर हो गया और सार्वदेशिक रूप धारण करने की अपेक्षा यह आन्दोलन बंगाल तक ही सीमित रह गया। राममोहन राय जैसे युग-पुरुष ने जिस महान् क्रान्तिकारी सुधार आन्दोलन को जन्म दिया, उसकी यह असामयिक मृत्यु किसे कष्ट नहीं पहुंचायेगी ?

हमें उन कारणों पर भी विचार करना चाहिये जिनके परिणाम स्वरूप ब्राह्मसमाज का यह करुणापूर्ण अन्त हुआ। इसका प्रधान कारण है ब्राह्मसमाज द्वारा ईसाई आदर्शों की स्वीकृति। राममोहन राय ने स्वय भी ईसाई आदर्शों को ग्रहण करने में सर्वाधिक उत्साह प्रदर्शित किया था। आगे चलकर केशव में यह मनोवृत्ति इतनी घनीभूत और केन्द्रित हो गई कि उन्होंने तो इसाइयत को ब्राह्मसमाज में अधिक से अधिक प्रविष्ट कराना ही अपना उद्देश्य बना लिया था।

1. "Christ had touched him, and it was to be his mission in life to introduce him in to the Brahamo Samaj." The life of Rama Krishna by Romas' Rolland P 115

केशव पर व्यक्तिगत रूप से ईसा का प्रभाव कितना प्रखर था, हम इसकी चर्चा एक विगत अध्याय मे कर चुके हैं। प्रस्तुत: अध्याय में तो यह देखना है कि केशव द्वारा स्थापित नव विधान में ईसाई तत्त्व किस प्रकार प्रविष्ट हुये और उसके अस्तित्व और उसकी लोकप्रियता के लिये किस प्रकार हानिकर सिद्ध हुये।

केशव ने अपने नव विधान को ईसाई परम्परा पर स्थापित किया। उसने कहा—

The old Testament was the First Dispensation, the New Testament the second; unto us in these days has been vouchsafed the Third Dispensation."

Lectures in India. Vol. II P. 43.

अर्थात् यहूदियों का पुराना अहदनामा प्रथम आदेश था, ईसाइयों का नवीन अहदनामा दूसरा विधान था, अब हमें नव विधान के रूप में तीसरा विधान प्राप्त हुआ है। नवविधान में केशव ने ईसा की भविष्यवाणी को पूरा हुआ देखा।

"The New Dispensation is the Prophecy of Christ fulfilled."

Kesab's Sermon : Behhold the Light of Heaven in India. P. 1875.

ईसाई आदर्शों पर प्रतिष्ठित होने के कारण केशव के नवविधान के सम्बन्ध में श्री दिनकर ने अपनी पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय में एक व्यंजनापूर्ण पद्य लिखा है—

शेख ने काबा बना मिस्मार बुतखाना किया।
तब तो इक सूरत भी थी, अब साफ वीराना किया॥

त्रित्ववाद के ईसाई आदर्श को स्वीकार कर केशव ने किस प्रकार एकेश्वरवादी ब्राह्मसमाज के मूल पर ही कुठाराघात किया था, यह पूर्व अध्याय में दिखलाया जा चुका है। यह भी बतलाया जा चुका है कि ईसाई आचारों और ईसाई कर्मकाण्ड को ग्रहण करने में केशव ने कुछ भी विलंब नहीं किया। साक्षियों से यह भी प्रमाणित हो सकता है कि नव-विधान समाज में भी केशव ने ईसाई आचारों को प्रतिष्ठित कर दिया था। फर्कुहर के मत से बपतिस्मा और 'लार्ड्स सपर' (Lord's Supper) दोनों ही नवविधान के कर्म-काण्ड में प्रविष्ट कर दिये थे। ऐसी स्थिति में मैक्समूलर ने यदि केशव के उत्तराधिकारी प्रतापचन्द्र मजूमदार से नवविधान को ईसाई धर्म घोषित कर देने की प्रेरणा की हो तो इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं। वस्तुतः नवविधान तो ईसाई नाम न रखते हुये भी ईसाई संघटन का ही रूप धारण कर चुका था।

नवविधान की दूसरी कमजोरी थी, उसके संस्थापक केशव के व्यक्तित्व को विशेषरूप से प्रतिष्ठित करना और उन्हें एक अलौकिक धरातल पर पहुंचा कर ईश्वर द्वारा प्रत्यादिष्ट पैगम्बर का पद प्रदान करना। स्वयं केशव इसके लिये अत्यन्त उत्सुक रहते थे। उन्होंने कहा,—

Christ's Dispensation is said to be divine. I say that this Dispensation is equally divine.[1]"

अर्थात् ईसा का विधान दैवी कहलाता है। मैं कहता हूँ कि यह विधान (New Dispensation) भी उतना ही दैवी है। एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा—

"The spirit of God and my innerself are knit together. If you have seen me, you have seen him."

मेरा आत्मा ईश्वरीय आत्मा से सम्बद्ध हो चुका है। यदि तुमने मुझे देख लिया, तो समझ लो भगवान् को देख लिया।

केशव के इन वक्तव्यों को पढ़कर कौन यह कहने का साहस करेगा कि इससे गुरुडम और अंधविश्वास की वृद्धि नहीं हुई है। एक ओर तो अंध श्रद्धा को प्रश्रय देने के लिये अपने आपको प्रत्यादिष्ट पुरुष मानना और दूसरी ओर ईसाई तत्त्वों की स्वीकृति। परिणाम स्वरूप केशव का यह संघटन हिन्दू धर्म से निरन्तर दूर ही होता गया। इसके संस्थापक को भी यह चिंता नही थी कि हम भारत की प्राचीन परम्पराओं से दूर हटते जा रहे हैं। इसके विपरीत इन्होंने तो अपने मत के विषय में स्पष्ट घोषणा कर दी।

Our religion is a Christianised Hinduism or a Hinduised Christianity, and I can say that we are not Hindus."

अर्थात् हमारा धर्म ईसाइयत लिये हुये हिन्दू धर्म है अथवा हिन्दूपन लिये हुये ईसाई मत है। इतना अवश्य कह सकता हूं कि हम हिन्दू नहीं हैं। इस प्रकार साहस के साथ अपने आपको अहिन्दू घोषित करना ब्राह्मसमाज की समाप्ति का एक प्रमुख कारण बना, यह बार-बार कहना आवश्यक है।

(शेष अगले अंक में)

सम्पादकीय

१—आर्यमर्यादा के प्रथम वर्ष का अन्तिम अंक

'आर्यमर्यादा' का प्रथम अंक १-१२-६९ को प्रकाशित हुआ आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का यह मुख पत्र है। सभा ने जिस कारण से इस को चालू किया, उस उद्देश्य को यह पूरा करता आ रहा है। इसका कारण हम ने इस के प्रथम अंक में ही प्रकट कर दिया था। उस को दोहराने की आवश्यकता नहीं।

हमें यह निवेदन करने में प्रसन्नता है कि जहां आदरणीय लेखकों और कवियों ने इसको अपनी-अपनी रचनाओं से अलङ्कृत किया, वहां स्वाध्याय प्रेमी ग्राहकों और कवियों ने भी इस को अपनाया। सभी लेखों और कविताओं में वैदिक सिद्धान्तों और आर्य मन्तव्यों की पुष्टि की गई है। साथ ही कई विशेषाङ्क भी प्रकाशित किये गये। जो आर्यसमाज के स्थिर साहित्य में स्थान ग्रहण कर चुके हैं। हमने यह पूरा ध्यान रखा है कि पत्र में मौलिक सामग्री ही प्रकाशित की जावे। पुराने लेखों को कहीं से संग्रह कर के पृष्ठ पूरे करना प्रयोजन नहीं रहा। गुरु विरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में तात्कालिक एक लेख को प्राप्त कर के उस को प्रकाशित किया, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि गुरु विरजानन्द जी महाराज विदेशी शासन को भारत से हटाने का यत्न करने वाले नेताओं में प्रमुख स्थान रखते थे। यह ऐतिहासिक पत्र राष्ट्र की बहुमूल्य निधि है। यह गत वर्ष कैसा रहा, इस को आर्यमर्यादा के मान्य ग्राहक और पाठक स्वयं जानते हैं। इस पर हमें कुछ अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

२—आर्यसमाजियों की गन्दगी का अनुकरण

हमें लिखते हुए अत्यन्त दुःख है कि आर्यसमाजियों में जो पारस्परिक फूट की गन्दगी घुसी, वह अभी तक आर्यसमाज के पवित्र नाम और काम को कलङ्कित कर ही रही है। आश्चर्य है कि इसी गन्दगी के ढेर के अनुकरण ने कांग्रेस को भी गन्दा कर दिया है। अब तक कांग्रेस में इस गन्दगी का जो कुछ गन्दा धूंआ उठ रहा है, वह ठीक आर्यसमाजियों के गन्दे धूएं का गन्दा अविवेक पूर्ण छाया चित्र है। जानने वालों को स्पष्ट पता है कि ठीक वही गन्दगी दोहराई गई है। हमें दूसरी किसी संस्था के झगड़ों में टांग अड़ाना नहीं, परन्तु बड़े खेद से कहना पड़ता है कि हमारी गन्दगी का दुष्प्रभाव अन्यत्र भी फैल गया है। आर्यसमाज का इस में कुछ भी दोष नहीं, परन्तु आर्यसमाजियों का पाप इस में कारण है। इस बारे में आर्यसमाजी अन्यों को गन्दगी दूर करने के लिये क्या कह सकते हैं, जब कि अपने ही मुख पर कालिमा पोत रखी है। भगवान् दया करे, हमारे मुख यथा पूर्व उज्ज्वल होवें। कैसे होंगे, इस का ज्ञान प्रत्येक सजग आर्यसमाजी को है, उस को यहां लिखने की कुछ भी आवश्यकता नहीं।

३—वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर

योगारूढ़ तपस्वी प्रकाण्ड विद्वान् वीतराग स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती ने इस आश्रम की स्थापना की। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने भी आर्थिक आदि सब प्रकार का सहयोग दिया। यह आश्रम विशेष रूप में आर्य बन्धुओं में योग पद्धति के प्रचार का पवित्र कार्य करता आया है। इस के वर्तमान अध्यक्ष और संचालक पूज्य श्री स्वामी सत्यानन्द जी सरस्वती हैं। इन को स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने स्वयं अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था, यह नियुक्ति सर्वथा वैधानिक और उचित थी। साथ ही कार्य संचालन के लिये श्री स्वामी सत्यानन्द जी को सहायक रूप में एक दो अन्य महानुभावों को भी स्थान दे दिया था। खेद है कि इस उत्तम आश्रम में भी भीतर से कुछ असन्तोष खड़ा करके आर्यजगत् में भ्रान्ति फैलाई जा रही है। मैं व्यक्तिगत रूप से निवेदन कर सकता हूं कि पूज्य श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज एक उत्तम कोटि के निःस्वार्थी, निःस्पृह, राष्ट्रभक्त कर्मठ विद्वान् संन्यासी हैं। पंजाब के हिन्दी आन्दोलन के समय इन्होंने स्वयं चण्डीगढ़ पहुंच कर मुझे जो परामर्श दिया था, उसी एक परामर्श से मेरा मस्तक इन के चरणों में झुक गया था। फिर यह आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के दो वर्ष तक प्रधान रहे और इस की अधीनता में रहते हुए मैंने इन की आज्ञानुसार सभा के मन्त्री का कार्य किया है। मैंने निकट से इन को परखा है। आर्यजगत् में सर्वात्मना विश्वास पूर्वक निवेदन कर सकता हूं कि पूज्य स्वामी जी महाराज के कार्य में कोई भी सज्जन विघ्न न डाले, अपितु यथा पूर्वक इन की आज्ञा में रह कर आश्रम को उत्तम बनायें। श्रद्धेय श्री स्वामी अमृतानन्द जी तथा माननीय विद्वान् स्नातक पं० विद्याधर जी जैसे उच्चकोटि के सहयोगियों से भी मैं प्रार्थना करता हूं कि वे भी यथा पूर्व डा० राजारामसिंह जी के नियन्त्रण में आश्रम के कार्य को अग्रसर करते रहें। किसी भी संस्था को बिगाड़ देना सरल है और बनाना बड़ा ही कठिन है। परस्पर मत भेद होने पर आपसी शङ्काएं निर्मूल रूप में हृदयों के स्थान पा लेती हैं। उन को दूर करना ही उचित है आशा है वैदिक साधन आश्रम आगे बढ़ता रहेगा।

४—खेद जनक दुर्घटना का कुछ पता नहीं चला

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुख पत्र 'आर्यजगत्' साप्ताहिक के सम्पादक प्रकाण्ड विद्वान् माननीय श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री बी. ए. महामहोपदेशक के प्रिय सुपुत्र का दो नवम्बर ६८ से कुछ पता नहीं चला। उन का नाम श्री दयानन्द एम. ए है। महर्षि दयानन्द का दृढ़ अनुयायी है। योग्य आर्य युवक है। आर्यसमाज का दीवाना है। माननीय विद्वद्वर आचार्य पं विश्व बन्धु जी शास्त्री के नेतृत्व मे चल रहे वैदिक अनुसन्धान आश्रम होशियारपुर (पंजाब) में वह युवक कार्य करता था। २-११-६८ के पश्चात् श्री "दयानन्द" एम ए. युवक का कुछ भी पता नहीं चल रहा सभी गृहस्थी अनुभव कर सकते हैं कि उन के पुत्र का पता न चलने के कारण उन के पिता, परिवार और रिश्तेदारों को कितनी चिन्ता होती है। सब कुछ सरकारी गैर सरकारी यत्न किये गये, परन्तु कुछ पता नहीं मिल रहा। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री श्री प० रघुवीरसिंह जी शास्त्री लोकसभा सदस्य ने पंजाब राज्य के मुख्य मन्त्री सरदार गुरुनामसिंह को इस सम्बन्ध में पत्र भी लिखा, उन का खोज करने विषयक उत्तर भी वापस पहुंचा। दोनों पत्र श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री के पास भेज दिये गये थे। परन्तु न जाने क्या कारण है कि सरकारी मशीनरी भी क्यों नहीं कार्य कर रही? हम सरदार गुरुनामसिंह जी से पुनः साग्रह निवेदन करते हैं कि इस की खोज दृढ़ता से करावें। वह तो स्वयं न्यायाधीश रह चुके हैं। सरकार चाहे तो खोज कराने में पूरी शक्ति लगा सकती है। यह आरोप पंजाब सरकार को अपने ऊपर नहीं लगने देना चाहिये कि सरकारी तौर पर खोज नहीं हो रही। भारत सरकार का भी कर्तव्य है कि केन्द्र की सी. आई. डी. द्वारा गुप्त जांच करावे। इस सम्बन्ध में मैं आर्य ससत्सदस्यों से प्रबल अनुरोध करता हूं कि वे मिल कर इस दुःखद दुर्घटना की जांच कराने मे अपना बल लगावें। तप्त-हृदय पिता को सान्त्वना देना हम सब का कर्तव्य है।

५—काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह

भारत तथा विदेशों में रहने वाले सभी आर्य बन्धुओं को यह शुभ समाचार पहुंचाया जा चुका है कि महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह बड़े विशाल रूप में आगामी २३ दिसम्बर से २८ दिसम्बर १९६९ तक वाराणसी में मनाया जा रहा है। सौभाग्य से यह अवसर आर्यों को मिल रहा है, अतः इस समारोह को पूर्ण सफल बनाने के लिये सभी स्थानों से आर्यों को वाराणसी पहुंच कर सम्मिलित होना चाहिये। शताब्दी समारोह समिति की ओर से कार्यक्रम प्रकाशित किया जायेगा हम सभी आर्य बन्धुओं से नम्र तथा प्रबल अनुरोध करते हैं कि शताब्दी समारोह के भारी व्यय को पूरा करने के लिये अवश्य धन भेजें। ऐसे अवसर बार-बार नहीं आते। आशा है आर्य सज्जन धन भेज कर समारोह को सफल बनाने मे पूर्ण सहयोग देंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

एक ऐतिहासिक अनुसन्धान

मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी का बनवास से आगमन काल का निर्णय—

(श्री पं० महामुनि जी शास्त्री विद्या भास्कर
आचार्य हरयाणा विद्यापीठ गुरुकुल भैंसवाल—(रोहतक)

आजकल अपठित तथा संस्कृत साहित्य से विशेष अपरिचित पठित जनता को भी भ्राम (अधिकता से) धारणा बनी हुई है कि विजया दशमी के दिन लंकापति रावण का श्री रामचन्द्र जी ने वध किया था तथा दिवाली के दिन अयोध्या में आये थे। इस कारण तभी से ये पर्व उसी रूप में आर्य जनता द्वारा प्रसन्नता प्रदर्शन के लिए मनाये जाते आ रहे हैं। किन्तु यह धारणा ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वथा भ्रान्त है। किसी भी संस्कृत भाषा की वा प्राकृत भाषा की पुस्तक से इस बात की पुष्टि नहीं होती। मैं इस विषय में वाल्मीकीय रामायण के आधार पर कुछ प्रकाश डालने का यत्न करूँगा। आशा है इस पर पाठक गण गम्भीरता से विचारेंगे।

यह तो सर्वजन विदित है कि श्री रामचन्द्र जी को चौदह वर्ष का बनवास तथा उनके स्थान पर श्री भरत जी को चौदह वर्ष का युवराज कैकेयी (भरत की माता) ने तात्कालिक राजा दशरथ जी से मागा था। जिस दिन श्री राम जी के युवराज बनने की घोषणा हुई उससे अगले ही दिन राम सीता और लक्ष्मण ने बनवास के लिए प्रस्थान कर दिया था।

चित्रकूट पर्वत पर जब श्री भरत तथा समस्त मन्त्री मण्डल के आग्रह करने पर भी बनवास त्याग कर राज्य करने को उद्यत नहीं हुए तब श्री राम जी के प्रति श्री भरत जी ने कहा था

"चतुर्दशे हि सम्पूर्णेऽहनि रघूत्तमः। न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्॥" अयोध्या काण्ड, सर्ग ११२, श्लोक २५-२६

अर्थात् हे रघुकुल श्रेष्ठ राम! यदि चौदह वर्ष पूर्ण होने पर अगले दिन ही मैं तुम्हारे दर्शन न करूँगा। (यह स्मरण रखना) राम ने भी "तथेति" प्रतिज्ञातम्। अगले ही दिन आने का वचन दिया।

इस से यह बात सिद्ध होती है कि राम को जिस मास की जिस तिथि को बनवास हुआ था उसी मास की उसी वा उस से अग्रिम तिथि को बनवास से लौटना हुआ था। (वापस आना हुआ था।)

अब विचारणीय है उनको बनवास कब हुआ?

इस विषय में वाल्मीकीय रामायण अयोध्या काण्ड से कुछ प्रकाश पड़ता है। जैसे— श्री रामचन्द्र जी के समस्त राज्य की प्रजा द्वारा सर्व सम्मति से युवराज" निर्वाचित हो जाने पर महाराजा दशरथ कहते हैं - 'चैत्र श्री मानय मास पुण्य पुष्पितकानन।' सर्ग ३ श्लोक ४

अर्थात यह श्रीमान (प्रशस्त शोभा वाला) पुण्य (पवित्र) का हेतु पुष्पित-वनो वाला चैत्र का महीना है।

"श्व एव पुष्यो भविता श्वोऽभिषेच्यस्तु मे सुतः॥ सर्ग ४ -श्लोक २

"कल को पुष्य नक्षत्र है इसलिए कल ही मेरे पुत्र का अभिषेक कर देना चाहिए।

इस से सिद्ध है कि राचन्द्र जी आदि का बनवास चैत्र मास में हुआ था। तदनुसार आगमन काल भी चैत्र मास ही होना चाहिये। अन्य मास नहीं। अब शेष बात विचारणीय रह जाती है पक्ष तथा तिथि सम्बन्धी। इस विषय मे लंका (युद्ध) काण्ड से कुछ प्रकाश पड़ता है। जैसे—लक्ष्मण द्वारा मेघनाद उपनाम इन्द्रजित के वध को सुनकर रावण को महान् दुःख और क्रोध हुआ तब था

तस्य क्रुद्धस्य नेत्राभ्यां प्रापतन्नश्रुबिन्दवः। दीपाभ्यामिव दीप्ताभ्यां सार्चिषः स्नेहबिन्दवः॥' लंका काण्ड अर्थात् क्रुद्ध हुए रावण की आँखों से अश्रु कण इस प्रकार गिरने लगे जिस प्रकार अत्यन्त प्रदीप्त दो दीपकों से भासमान तैल बिन्दु गिरते हैं।

इस प्रकार क्रोध के वशीभूत हुआ रावण इन सब अनर्थों का कारण सीता को समझ कर तलवार से उसका वध करने को उद्यत हो गया। यह देखकर उसके (रावण के) सुयोग्य मन्त्री सुपार्श्व ने रावण को समझाया 'वेद-विद्याव्रतस्नातः स्वकर्मनिरत सदा।

स्त्रियाः कस्माद् वधं वीर मन्यसे राक्षसेश्वर॥"

अर्थात् हे राक्षसेश्वर रावण! आप विद्याव्रत स्नातक होकर तथा धर्म से धर्मपालन करते हुए भी स्त्रीवध रूपी पाप कर्म को किस प्रकार करने पर उद्यत हो गये? ६३

"तस्मिन्नेव सहास्माभिराहवे क्रोधमुत्सृज"

अर्थात् हम सब के साथ मिलकर युद्ध क्षेत्र में ही अपने क्रोध को मुख्य शत्रु राम पर उतारिये। युद्धकाण्ड सर्ग ९३, श्लोक ६३ से ६५

"अभ्युत्थानं त्वमद्यैव कृष्णपक्षचतुर्दशीम्। कृत्वा निर्याह्यमावास्यां विजयाय बलैर्वृतः॥ सर्ग ९३-६६

अर्थात् आज कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि है इसमें आप युद्ध की तैयारी करें कल अमावस्या को समस्त सेना के साथ अपनी विजय के लिए प्रस्थान (प्रयाण) करें। राम और रावण का घोर संग्राम है। जो दिन और रात में अविराम गति से होता रहा। तद्यथा—

'नैव रात्रिं न दिवसं न मुहूर्तं न च क्षणम्। रामरावणयोर्युद्धं निरामुपगच्छति॥

"पश्यतां तद् महद् युद्धं सर्वरात्रमवर्तत।"

रावण के दाहकर्म कर चुकने तथा सीताजी के आ जाने पर विभीषण ने राम जी से कहा—आप भी अब स्नानादि करके उत्तम वस्त्रालंकार धारण कीजिए और यहीं पर (लंका में) वास कीजिये। तब श्री रामचन्द्र जी ने कहा—

"स तु ताम्यति धर्मात्मा मम हेतोः सुखोचितः।
सुकुमारो महाबाहुर्भरतः सत्यसंश्रयः॥" सर्ग १२-३५

तं विना कैकेयी पुत्रं भरतं धर्मचारिणम्।
न मे स्नानं बहुमतं वस्त्राण्याभरणानि च॥ ६॥

अर्थात् मेरे कारण से सुख पाने योग्य सुकुमार महाबाहु धर्मात्मा सत्य सन्ध (सत्य पर आश्रित) भरत जी दुःख उठा रहे हैं। उसके (देखे) बिना मुझे अब स्नान वस्त्रालंकार धारण करना अच्छा नहीं लगता॥

"एतत्पश्य यथा क्षिप्रं प्रतिगच्छाम तां पुरीम्॥ ७॥
स तु मे भ्रातरं द्रष्टुं भरतं त्वरते मनः।
मां निवर्तयितुं योऽसौ चित्रकूटमुपागतः॥ ९॥

अब तो आप ऐसा कीजिए जिससे हम शीघ्र ही अयोध्या नगरी में पहुँच जावें। मेरा मन भरत को शीघ्राति शीघ्र देखना चाहता है। जो भरत मुझे बनवास से वापिस ले जाने के लिए चित्रकूट पर्वत पर आया था। इसलिए—

"उपस्थापय मे शीघ्रं विमानं राक्षसेश्वर।
कृत कार्यस्य मे वासः कथं स्यदिह सम्मतः॥ सर्ग-श्लोक १२३-२२

अर्थात् हे विभिषण आप मेरे लिए विमान शीघ्र ही उपस्थित कीजिये। कृतकार्य मेरे लिए यहां रहना अब कैसे सम्भव हो सकता है।

ऊपर वर्णित बातो से सिद्ध होता है कि रावण का वध (युद्ध की समाप्ति) अमावस्या को हुआ। वह अमावस्या फाल्गुन मास की भी हो सकती है और चैत्रमास की भी सम्भव है। इसका यथार्थ ज्ञान नक्षत्रों से हो सकता है। नक्षत्रों का भी रामायण में निर्देश यत्रतत्र मिलता है तिथि विषयक विचार-

"पूर्णे चतुर्दशे वर्षे पञ्चम्यां लक्ष्मणाग्रजः।
भरद्वाजाश्रमं प्राप्य ववन्दे नियतो मुनिम्॥ युद्ध १२६-१,

बनवास के चौदह वर्ष पूर्ण होने पर पञ्चमी तिथि को राम ने भारद्वाज ऋषि के आश्रम में आकर उन को नमस्कार किया।

भारद्वाज ऋषि ने कहा —

"अर्घ्यं प्रति गृहाणेदं अयोध्यां श्वो गमिष्यति। युद्ध० १२७-१७

हे राम तुम अयोध्या कल जाना आज हमारे कहने से यहीं रहो और हमारा आतिथ्य सत्कार स्वीकार करो।

तब रामचन्द्र जी ने हनुमान् से कहा—

अयोध्यां त्वरितो गत्वा शीघ्रं प्लवगसत्तम।
भरतस्तु त्वया वाच्यः कुशलं वचनान्मम॥
सिद्धार्थं शंस मां तस्मै सभार्यं सह लक्ष्मणम्।

हे हनुमान् तुम शीघ्र ही अयोध्या जाओ और भरत जी को हमारे तीनो की कुशलता कहो तथा मैं जिस उद्देश्य से बनवास गया था उसकी सफलता का भी वर्णन करना।

इस से राम लक्ष्मण और सीता को बनवास को जाना पञ्चमी तिथि को ही सिद्ध होता है और अयोध्या में लौट कर आना छठी तिथि को हुआ।

शेष अगले अंक में

उपासना-प्रदीप—४

["सत्यार्थ-प्रकाश" के सातवें समुल्लास के आधार पर]

(पं० [illegible]कुमारजी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१ प्रश्न—जीव स्वतन्त्र है वा परतन्त्र ?

उत्तर—अपने कर्त्तव्य कर्मों में स्वतन्त्र और ईश्वर की व्यवस्था मे परतन्त्र है। "स्वतन्त्र कर्त्ता" यह पाणिनीय व्याकरण का [१।४।५४] सूत्र है। जो स्वतन्त्र अर्थात् स्वाधीन है, वही कर्त्ता है।

२. प्रश्न—स्वतन्त्र किसको कहते हैं ?

उत्तर—जिसके आधीन शरीर, प्राण, इन्द्रिय और अन्त करण आदि हों। जो स्वतन्त्र न हो, तो, उसको पाप-पुण्य का फल प्राप्त कभी नहीं हो सकता। क्योकि जैसे भृत्य, स्वामी और सेना, सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मार के अपराधी नही होते, वैसे परमेश्वर की प्रेरणा और अधीनता से काम सिद्ध हों, तो जीव को पाप वा पुण्य न लगे। उस फल का भागी परमेश्वर होवे। जैसे किसी मनुष्य ने शस्त्र विशेष से किसी को मार डाला, तो वही मारने वाला पकडा जाता है और वही दण्ड पाता है, शस्त्र नही। वैसे ही पराधीन जीव पाप-पुण्य का भागी नही हो सकता। इस लिये अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में जीव स्वतन्त्र, परन्तु जब वह पाप कर चुकता है, तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर, पाप के फल भोगता है। इस लिये कर्म करने मे जीव स्वतन्त्र और पाप के दुःखरूप फल भोगने मे परतन्त्र होता है।

३ प्रश्न—जो ईश्वर जीव को न बनाता और सामर्थ्य न देता, तो जीव कुछ भी न कर सकता। इस लिये परमेश्वर की प्रेरणा से ही जीव कर्म करता है।

उत्तर—जीव उत्पन्न कभी न हुआ, अनादि है। जैसा ईश्वर और जगत् का उपादान कारण नित्य है। और जीव का शरीर तथा इन्द्रियों के गोलक परमेश्वर के बनाये हुए हैं, परन्तु वे सब जीव के आधीन हैं। जो कोई मन, कर्म, वचन से पाप-पुण्य करता है, वही भोक्ता है, ईश्वर नही। जैसे किसी ने पहाड से लोहा निकाला, उस लोहे को किसी व्यापारी ने लिया, उसकी दुकान से लोहार ने ले तलवार बनाई, उससे किसी सिपाही ने तलवार ले ली, फिर उससे किसी को मार डाला। अब यहा जैसे वह लोहे को उत्पन्न करने, उससे लेने, तलवार बनाने वाले और तलवार को पकड कर राजा दण्ड नही देता, किन्तु जिसने तलवार से मारा, वही दण्ड पाता है, इसी प्रकार शरीर आदि की उत्पत्ति करने वाला परमेश्वर उसके कर्मों का भोक्ता नहीं होता, किन्तु जीव को भुगाने वाला होता है। जो परमेश्वर कर्म कराता होता, तो कोई जीव पाप नही करता, क्योकि परमेश्वर पवित्र और धार्मिक होने से किसी जीव को पाप में प्रेरणा नही करता। इस लिये जीव अपने काम करने मे स्वतन्त्र है। वैसे जीव अपने कर्मों के करने मे स्वतन्त्र है। वैसे ही परमेश्वर भी अपने कर्मों के करने मे स्वतन्त्र है।

४ प्रश्न—जीव और ईश्वर का स्वरूप, गुण, कर्म, और स्वभाव कैसा है ?

उत्तर—दोनो चेतनस्वरूप हैं। स्वभाव दोनो का पवित्र, अविनाशी और धार्मिकता आदि है। परन्तु परमेश्वर के सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, सबको नियम मे रखना, जीवो को पाप-पुण्य के फल देना आदि धर्मयुक्त कर्म हैं। और जीव के सन्तानोत्पत्ति, उनका पालना शिल्पविद्यादि अच्छे-बुरे कर्म हैं। ईश्वर के नित्य, ज्ञान, आनन्द, अनन्तबल आदि गुण हैं। और जीव के (इच्छा) पदार्थों की अभिलाषा, (द्वेष) दुःख आदि की अनिच्छा, (प्रयत्न) पुरुषार्थ बल, (सुख) आनन्द, (दुःख) विलाप, अप्रसन्नता (ज्ञान) विवेक, पहिचानना, ये न्याय-दर्शन के अनुसार तुल्य हैं। परन्तु वैशेषिक में (प्राण) प्राणवायु को बाहर निकालना, (अपान) प्राण को बाहर से भीतर को लेना, (निमेष) आंख को मीचना, (उन्मेष) आख को खोलना, (मन) निश्चय, स्मरण और अहकार करना, (गति) चलना, (इन्द्रिय) सब इन्द्रियों को चलाना, (अन्तर-विकार) भिन्न-भिन्न क्षुधा, तृषा, शोकादियुक्त होना, ये जीवात्मा के गुण परमात्मा से भिन्न हैं। इन्हीं से आत्मा की प्रतीति करनी, क्योकि वह स्थूल नही है। जब तक आत्मा देह मे होता है, तभी तक ये गुण प्रकाशित रहते हैं, और जब शरीर छोड चला जाता है, तब ये गुण शरीर मे नही रहते। जिसके होने से जो हो, और न होने से न हो, वे गुण उसी के होते हैं। जैसे दीप और सूर्यादि के न होने से प्रकाशादि का न होना, और होने से होना है, वैसे ही जीव और परमात्मा का विज्ञान गुण द्वारा होता है।

५ प्रश्न—ईश्वर त्रिकालदर्शी है। इससे भविष्यत् की बात जानता है। वह जैसा निश्चय करेगा, जीव वैसा ही करेगा, । इससे जीव स्वतन्त्र नही। और जीव को ईश्वर दण्ड भी नही दे सकता। क्योकि ईश्वर ने अपने ज्ञान से जैसा निश्चय किया है, वैसा ही जीव करता है।

उत्तर—ईश्वर को त्रिकालदर्शी कहना मूर्खता का काम है। क्योकि जो होकर न रहे, वह भूतकाल, और न हो के होवे, वह भविष्यत्काल कहाता है। क्या ईश्वर को कोई ज्ञान होके नही रहता, तथा न होके होना है ? इसलिये परमेश्वर का ज्ञान सदा एक रस, अखण्डित वर्तमान रहता है। भूत, भविष्यत् जीवो के लिये हैं। हाँ। जीवो के कर्म की अपेक्षा से त्रिकालज्ञता ईश्वर मे है, स्वतः नही। जैसा स्वतन्त्रता से कर्म जीव करता है, वैसा ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है। और जैसा ईश्वर जानता है, वैसा जीव करता है। अर्थात् भूत, भविष्यत्, वर्तमान के ज्ञान और फल देने मे ईश्वर स्वतन्त्र और जीव किंचित् वर्तमान और कर्म करने मे स्वतन्त्र है। ईश्वर का अनादि ज्ञान होने से जैसा कर्म का ज्ञान है, वैसा ही दण्ड देने का भी ज्ञान अनादि है। दोनो ज्ञान उसके सत्य हैं। क्या कर्म ज्ञान सच्चा और दण्ड ज्ञान मिथ्या कभी हो सकता है ? इस लिये इसमे कोई भी दोष नही आता।

६. प्रश्न—जीव शरीर मे भिन्न विभु है वा परिच्छिन्न।

उत्तर—परिच्छिन्न, जो विभु होता, तो जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, मरण, जन्म, सयोग, वियोग, जाना, आना कभी नही हो सकता। इसलिये जीव का स्वरूप अल्पज्ञ, अल्प अर्थात् सूक्ष्म है और परमेश्वर अतीव सूक्ष्मतर, अनन्त, सर्वज्ञ, और सर्वव्यापक स्वरूप है। इसीलिये जीव और परमेश्वर का व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है।

७ प्रश्न—जिस जिस जगह मे एक वस्तु होती है, उस जगह मे दूसरी वस्तु नही रह सकती। इस लिये जीव और ईश्वर का सयोग सबन्ध हो सकता है, व्याप्य-व्यापक नही।

उत्तर—यह नियम आकार वाले पदार्थों मे घट सकता है, असमानाकृति नही। जैसे लोहा स्थूल, अग्नि सूक्ष्म होता है, इस कारण से लोहे मे विद्युत अग्नि व्यापक होकर एक ही अवकाश मे दोनो रहते हैं। वैसे जीव परमेश्वर से स्थूल और परमेश्वर जीव से सूक्ष्म होने से परमेश्वर व्यापक और जीव व्याप्य है। जैसे यह व्याप्य व्यापक सम्बन्ध जीव ईश्वर का है। वैसे ही सेव्य-सेवक, आधाराधेय, स्वामी भृत्य, राजा प्रजा और पिता-पुत्र आदि भी सम्बन्ध है।

८ प्रश्न—परमेश्वर को आप निराकार मानते हो, वा साकार ?

उत्तर—निराकार मानते हैं।

९ प्रश्न—जब निराकार है, तो वेद विद्या का उपदेश विना मुख के वर्णोच्चारण कैसे हो सका होगा ? क्योकि वर्णों के उच्चारण मे ताल्वादि स्थान, जिह्वा का प्रयत्न अवश्य होना चाहिये।

उत्तर—परमेश्वर के सर्व शक्तिमान् और सर्वव्यापक होने से जीवो को अपनी व्याप्ति से वेदविद्या के उपदेश करने मे कुछ भी मुखादि की अपेक्षा नही है। क्योकि मुख जिह्वा से वर्णोच्चारण अपने से भिन्न के बोध होने के लिये किया जाता है. कुछ अपने लिये नही। क्योकि मुख जिह्वा के व्यापार करे बिना ही मन मे अनेक व्यवहारो का विचार और शब्दोच्चारण होता रहता है। कानो को उगलियो से मूद के देखो, सुनो कि बिना मुख, जिह्वा, ताल्वादिस्थानो के कैसे-कैसे शब्द हो रहे हैं ? वैसे जीवो को अन्तर्यामी रूप से उपदेश किया है। किन्तु केवल दूसरो को समझाने के लिये उच्चारण करने की आवश्यकता है। जब परमेश्वर निराकार, सर्वव्यापक है, तो अपनी अखिल वेदविद्या का उपदेश जीवस्थ स्वरूप से जीवात्मा मे प्रकाशित कर देता है। फिर वह मनुष्य अपने मुख से उच्चारण करके दूसरो को सुनाता है। इसलिये ईश्वर मे यह दोष नही आ सकता।

आर्य युवक समाज

(श्रीमांगेराम आर्य एम० ए० संयोजक आर्ययुवक समाज, बांकनेर, दिल्ली ।)

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।

पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥ऋ० ५।५१।१५॥

"सूर्य और चन्द्र की भांति हम कल्याणकारी मार्ग पर चले और दानी अहिंसक तथा विद्वान् पुरुषों का साथ करे।" वेद हमें स्पष्ट आज्ञा दे रहा है कि हमारा कल्याण, गौरव, देव पुरुषों के साथ रहने में, उनके द्वारा सुझाए गए मार्ग पर चलने में है। आर्य युवको ! इस गौरव की रक्षा हेतु महत्त्वपूर्ण कल्याणकारी मार्ग पर चलने का व्रत ले।

दानी, अहिंसक तथा विद्वान् तीनों देव हैं। दाता हैं। 'दान' पर टिप्पणी करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ-प्रकाश के तृतीय समुल्लास के पृष्ठ ६५ पर लिखते हैं कि "ससार में जितने दान हैं अर्थात् जल, अन्न, गौ, पृथिवी, वस्त्र, तिल, सुवर्ण और घृतादि इन सब दानों से वेद विद्या का दान अति श्रेष्ठ है—जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार होता है वही देश सौभाग्यवान् होता है" स्पष्ट है कि वैदिक विद्वान् के साथ रहना ही श्रेयस्कर है। इसी में हमारा और देश का सौभाग्य है। अत: बेलगाम अवैदिक वक्ता का साथ न करके, शिष्ट वैदिक विद्वान् के साथ रहकर 'आर्य युवक समाज' को शक्तिशाली बनाकर आर्य समाज रूपी माला में उपयोगी, यशस्वी मनके का रूप धारण करें।

'आर्य युवक समाज' का मुख्य उद्देश्य आर्यसमाज के सिद्धान्तों, सघटन तथा शक्ति का परिचय प्रत्येक आर्य युवक को कराना है। तभी तो वह इसका उपयोगी सदस्य बन सकता है। १९ वी शताब्दी में निराशा की लहर में भारतीय गाढ़ निद्रा में सो रहा था। इस सुषुप्त समाज को जागृत कर क्रान्ति लाने के लिए १८७५ ई० में महर्षि दयानन्द सरस्वती न 'आर्यसमाज' को स्थापना की, जिसे अमेरिकन विद्वान् डा० एण्ड्रू जेक्सन डेविस ने "अग्नि" तथा महात्मा गांधी ने "जीवन-ज्योति" की सज्ञा दी। ऐसे प्राणप्रद सघटन का सौभाग्य बढ़ाना 'आर्य युवक समाज' का काम है, किसी एक का नही। आर्यसमाज का आधार वेद है। यह एक आस्तिक, बुद्धिवादी, धार्मिक तथा सामाजिक संस्था है। आर्यसमाज के सामाजिक स्वरूप को इसका छटा नियम स्पष्ट बतला रहा है—'संसार का उपकार करना'। इसमें राजनीतिक तथा आर्थिक दोनों स्वरूप निहित हैं। तभी तो इतिहासकारों ने देव दयानन्द को राष्ट्र निर्माता कहा है। 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता हैं।' महर्षि जी के ये शब्द उनके शिष्य स्व० श्यामजीकृष्ण वर्मा का मार्ग प्रदर्शन करते रहे। आर्थिक क्षेत्र में 'गोकरुणानिधि' पुस्तक ने महत्त्वपूर्ण मार्ग प्रदर्शन किया। आर्यसमाज धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में मार्ग दर्शक का काम करता रहा है, कर रहा है और करता रहेगा। ऐसे पवित्र सघटन को "सन्ध्या हवन एण्ड कम्पनी, प्राइवेट लिमिटेड" कहने वाला तथाकथित युवक नेता भ्रम में है। उन्हें कुछ समय के लिए अवकाश पाकर किसी अज्ञात स्थान में सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास की अपेक्षा ७,८,९वा समुल्लास अधिक पढ़ना चाहिए। जिसको पढकर स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी आर्य समाजी बने थे।

ससार में लगभग ५००० आर्य समाज २२ आर्यप्रतिनिधि सभाएं; ५४० आर्यवीर दल; २०० युवक तथा कुमार सभाएँ; १००० शिक्षण संस्थाएँ; ६० गुरुकुल; ४०० अछूत पाठशालाएं; २०० अनाथालय; ५०० व्यायामशालाए; ५०० प्रेस तथा पत्र पत्रिकाए; १००० उपदेशक 'आर्यसमाज' के सिद्धान्तो का प्रचार एव प्रसार, वैदिक सस्कृति के गौरव-की रक्षा में जुटे हुए हैं। आर्यसमाज के इस पवित्र कार्य में योगदान देने के लिए 'आर्य युवक समाज' को संघटित रूप से कार्य करना अपना परम कर्त्तव्य समझना चाहिए। अर्थात् लगभग दस हजार आर्य संघटनों के प्रहरी के रूप में दस हजार "आर्य युवक समाज" बनाए जायें और उनके मार्ग दर्शन के लिए "सार्वदेशिक आर्य युवक समाज" का घटन शीघ्र होना चाहिए।

आर्यसमाज के स्वर्णमय इतिहास के पृष्ठों पर दृष्टि डालते रहना आर्य युवकों का महान् कर्त्तव्य है। दयानन्द-जन्म-शताब्दी (फरवरी १९२५) मथुरा में, दयानन्द निर्वाण अर्धशताब्दी (अक्टबर १९३३) अजमेर में, दयानन्द-दीक्षा-शताब्दी (दिसम्बर १९५९) मथुरा में मनाए गए सफल समारोहों ने आर्यसमाज के इतिहास को गौरवशाली बनाया है। काशीनगरी में २२ से २८ दिसम्बर १९६९ को काशी-शास्त्रार्थ शताब्दी मनाई जानी है। इसकी सफलता में आर्य युवक समाज को योगदान करना चाहिये। आर्यसमाज द्वारा चलाए गए हैदराबाद सत्याग्रह (१९३९), सिंध सत्याग्रह (१९४७) पजाब में हिन्दी रक्षा सत्याग्रह (१९५७) तथा गोरक्षा आन्दोलन (१९६६-६७) ने आर्यजगत् में बहुत जागृति फैलाई। ८० से अधिक बलिदान हुए, जिनके रक्त ने आर्यसमाज के इतिहास को स्वर्णमय बनाया। लगभग ८० साहित्य-कारों और ५० से अधिक शास्त्रार्थ महारथियों ने वेद के ज्ञान को जन-साधारण तक पहुंचाया। इस जीवित, प्रकाशप्रद, संस्था को बल देने का समस्त उत्तरदायित्व 'आर्य युवक समाज' पर ही है।

आज अधिकतर युवक धर्म को तिलाञ्जली देकर साम्यवाद-रूसी-चीनी साम्यवाद के पुजारी बनने का असफल प्रयास कर रहे हैं। आर्य युवकों की जानकारी के लिए यहां पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि उपर्युक्त साम्यवाद धनी व्यक्तियों के निर्धनों पर किए गए अत्याचारों के कारण आया। उदाहरण के लिए-शिकार से लौटकर दासों को मारकर उनके रक्त से पांव धोने में आनन्द समझना, गरीबों के मुहल्लों में आग लगाकर तमाशा देखना; दासों को सिंहों से लड़ाकर उनको मरवाकर प्रसन्न होना इत्यादि वीभत्स अत्याचारों के प्रतिवाद स्वरूप निर्धन जनता ने साम्यवाद-अर्थ-साम्यवाद का नारा लगाया। किसी सीमा तक यह नारा रूस तथा चीन देशों में निर्धनों को सुख की सांस दिलाने में सफल रहा। किन्तु केवल अर्थ पर ही आधारित यह साम्यवाद स्थिर न रह सका। आए दिन कोई न कोई नीति बदलती रहती है और धर्म की ओर जाने के संकेत मिल रहे हैं। वैदिक साम्यवाद तो सदा स्थिर रहता है क्योंकि यह धर्म-अर्थ दोनों पर आधारित है। वेद में स्पष्ट कहा है।—

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय ।

युवा पिता स्वपया रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ॥

ऋ० ५।६०।५

"सब मनुष्य आपस में भाई-भाई की तरह मिलकर सौभाग्य के लिए वृद्धि करें। इनमें कोई बड़ा या छोटा नहीं है। सर्वशक्तिमान् (रुद्र) परमेश्वर इन सबका पिता और अनेक प्रकार के भोजनादि (धन धान्य) देने वाली पृथिवी सबकी माँ है।" वैदिक साम्यवाद कितना सरल, समानता लाने वाला, सौभाग्य को बढ़ाने वाला प्रेम उत्पन्न करने वाला, अहिंसा पर आधारित है। भाई-भाई की तरह मिलकर चलने का आदेश देने वाला, कोई छोटा या बड़ा न बताने वाला साम्यवाद इस तथाकथित साम्यवाद से कितना अच्छा एवं सुखदायी है। अत: आर्य युवकों को मानव हित में वैदिक साम्यवाद को ग्रहण कर इसका प्रचार एवं प्रसार करना श्रेयस्कर है, इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हम सबने नास्तिक, स्वेच्छा-चारी, पाखण्डी, मूर्ख, अहंकारी अधर्मी युवकों के चुंगल में न फंसकर आस्तिक परोपकारी, संयोजकवृत्ति वाले एवं ओजस्वी युवकों के सहयोग में रहकर आर्य युवक समाज का कल्याण करना है। आर्य युवक समाज की इस आशा को पूर्ण सफल बनाने का यत्न आर्य युवकों को मिलकर करना चाहिये।

विचार विमर्श—

'आर्यसमाज धार्मिक-एकता आन्दोलन चलाए'

(श्री जयदेव आर्य्य एम० ए० छाजूराम स्मारक जाट महाविद्यालय, हिसार)

(लेखक के मत से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नही है।)

आज साम्प्रदायिक विवादों के कारण सारे देश का वातावरण क्षुब्ध हो उठा है और इस के समाधान के लिए सब ओर से विभिन्न प्रकार के सुझाव दिए जा रहे हैं। जहां अनेक महान् पुरुषों, मतमतांतरों तथा संघटनों के नेताओं के विचार विविध समाचारपत्रों तथा क्रियाकलापों के माध्यम से जनता के सामने रखे जा रहे हैं, वहां आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के विचार किसी सार्वजनिक सभा अथवा समाचार-पत्र में दृष्टिगोचर नहीं होते—यह बड़े खेद की बात है। [आर्यमर्यादा के गत दो अंकों में सम्पादकीय सुझाव दिये जा चुके हैं खेद है कि लेखक महानुभाव ने उनको देखने का कष्ट नहीं किया—सम्पादक] महर्षि दयानन्द ने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व ही देश में भावात्मक तथा राष्ट्रिय एकता के लिए गम्भीर प्रयास किया था, उसको चर्चा आर्यसमाजो पत्रों के अतिरिक्त अन्यत्र कही भी नही होती, जिससे सारे देश की विशाल जनसंख्या आर्यसमाज के दृष्टि कोण को जान सके। इससे आर्यसमाज के प्रभाव उसके दृष्टिकोण की श्रेष्ठता एवं उसके अस्तित्व की अनुभूति की भावना विना देश में एक निराशाजनक वातावरण बन रहा है और बनता रहेगा। यह स्थिति आर्यसमाज के विस्तार के लिए अत्यन्त हानिकर है। अतः आर्य विद्वानों, नेताओं तथा जनता—सभी का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे आर्य-समाज मन्दिरों तथा पत्रों की चार दीवारी से बाहर निकल कर समाज के विस्तृत क्षेत्र में पदार्पण करें और विभिन्न भाषाओं के दैनिक, साप्ताहिक, मासिक आदि उन पत्र-पत्रिकाओ तथा सार्वजनिक सभाओं एवं मंचों के माध्यम से महर्षि दयानन्द एवं आर्य-समाज को विचारधारा जनता के समक्ष रखें, जिन्हें सब प्रकार की सामान्य जनता पढ़ती, सुनती तथा गुनती है, उससे पूर्व इस विषय में आर्य विद्वानों तथा नेताओं को अपने घर में भी कोई स्पष्ट नीति बनानी चाहिए और फिर उसे जनता एवं देश के नेताओं के सामने बलपूर्वक प्रस्तुत करना चाहिए, ऐसी मेरी मान्यता है। इसी दृष्टि से कुछ विचार यहां प्रस्तुत कर रहा हूं। आशा है, अन्य आर्य विद्वान् भी इस विषय पर ऊहापोह कर अपने विचार प्रस्तुत करेंगे।

आज सब ओर से 'सर्वधर्मसमभाव' के गगनभेदी घोष सुनाई पड़ रहे हैं और नेता लोग इस नारे के बल पर अपनी नेतागिरी चमका रहे हैं। पर क्या इस घोष से साम्प्रदायिक शान्ति की स्थापना में कोई सहायता मिल रही है! नहीं। महर्षि दयानन्द इस विचार को आंशिक रूप से ठीक मानते थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में एक जिज्ञासु, एक आप्त और सब मतवादियों के सम्वाद के सन्दर्भ में सत्यभाषण, विद्याध्ययन, सत्संग, पुरुषार्थ, अहिंसा आदि कार्यों को सब धर्मों के अनुकूल स्वीकार किया है, फिर चाहे वह ऊपर ऊपर से ही क्यों न हों। इसी आधार पर उन्होंने धार्मिक एकता का प्रश्न उठाते हुए 'स्वमन्तव्यामन्तव्य' के प्रारम्भिक वाक्य में ही "सर्वतन्त्र अर्थात् साम्राज्य सार्वजनिक धर्म जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेंगे भी, इसीलिए उसको सनातन नित्यधर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न हो सके इन शब्दों में सर्वतन्त्र या सार्वभौम या मानव धर्म की बात कही है मनु के दश लक्षण भी इसी मानव धर्म की व्याख्या करते हैं। एक रूप में इस प्रकार के धार्मिक नियम के आजकल के राजनीतिक दलों की सामान्य आचार संहिता या 'न्यूनतम सामान्य कार्यक्रम' (Minimum Programme) की तरह सब मतों के सामान्य नियम हैं, जिनके स्वीकार करने में किसी को भी आपत्ति नहीं हो सकती। जो भी व्यक्ति, चाहे वह अपने आप को अधार्मिक ही क्यों न कहता हो, इन नियमों का पालन करता है, वह वस्तुतः धार्मिक है, मनुष्यधर्म से युक्त है। महर्षि दयानन्द के अनुसार 'आर्य' है। इस दृष्टि से हम इस नियम पर पहुंच जाते हैं कि अधार्मिक व्यक्ति जो इन नियमों को न माने उसके साथ हमारा समझौता कभी नहीं हो सकता, न हम उस के साथ किसी कार्य में सहयोग कर सकते हैं हमारे अनुसार वह दण्डनीय है, समाज का शत्रु है, अवांछनीय है।

इस सिद्धान्त पर पहुंच जाने पर हमारे समक्ष महर्षि दयानन्द के १८७७ के एकता प्रयास के औचित्य की परीक्षा का प्रश्न उपस्थित होता है। अब तक मेरे देखने मे यह नही आया कि महर्षि दयानन्द ने दिल्ली दरबार के अवसर पर क्या भाषण दिया था। जुलाई ६९ के 'जनज्ञान' में पृ० २३ पर श्री सन्तराम M S C. द्वारा यह भाषण प्रस्तुत किया गया है, पर कहां से? यह समस्या है। इसकी भाषा शैली सर्वथा इसे सन्दिग्ध बता रही है। यदि किन्हीं महानुभाव को उस समय के सर सैय्यद अहमद आदि के लेख से या अन्य किसी स्रोत से उसका पता लग सके, तो उन्हे इसकी खोज करनी चाहिए, अस्तु! प्रश्न यह है कि इस सामान्य धर्म की बात मान लेने पर आर्यसमाज का 'वेद' के स्थान के सम्बन्ध में क्या दृष्टि कोण है। कुछ बातें स्पष्ट हैं। यथा

१. वेद ईश्वरीय ज्ञान है—यह मान्यता सब मतों की नहीं है।

२. वैदिक दर्शन, इतिहास, पशुहिंसा, वेदकर्तृत्व आदि प्रश्न विवादास्पद हैं।

३. जिन लोगों का वेद के सम्बन्ध में दृष्टिकोण आर्य समाज या ऋषि दयानन्द के प्रतिकूल है, सब स्वार्थी, अविवेकी तथा पक्षपाती नहीं हैं। इनमें अनेक लोग ऐसे हैं, जो ऋषि दयानन्द के श्रद्धालु हैं या आर्यसमाजी रहे भी हैं पर किसी मतभेद के कारण आर्यसमाज से अलग हो गए।

४. ऋषि का कथन है, "देख! जिस बात में यह सहस्र एक मत हों, वह वेदमत ग्राह्य है। और जिसमें परस्पर विरोध हो वह कल्पित झूठा, अधर्म, अग्राह्य है।" पुनः "जो पक्षपातरहित न्यायाचरण, सत्यभाषणादियुक्त ईश्वराज्ञा, वेदों से अविरुद्ध है, उसको "धर्म" [और जो......ईश्वराज्ञाभङ्ग, वेद विरुद्ध है [उसको "अधर्म" मानता हूं। पर सत्य भाषणादि में सब एकमत होते हुए भी 'वेदमत' में एक मत नहीं हैं तब 'वेदप्रामाण्य' सर्वतन्त्र सिद्धान्त न रह कर 'प्रतितन्त्र सिद्धान्त' की कोटि में आता है जो आर्यों के लिए स्वतः प्रमाण है, पर विदेशी मतो के लिए नही। अतः ऋषि ने इसे 'धर्म के लक्षण में क्यों रखा! मनु के दश लक्षणों में 'वेद' कही नहीं है। 'मुक्ति से पुनरावृत्ति' 'सृष्टि की आयु' 'चन्द्रमा में मनुष्य, आदि विषय विवादास्पद हैं अतः ये 'मानवधर्म' के अन्तर्गत न माने जाकर 'मत' के अन्दर माने जाने चाहियें। ये विषय दार्शनिक हैं। यदि इन्हें और फलतः 'वेद' को हम 'एक धर्म' के मूलभूत सिद्धान्त मान कर सब मतों में एकता चाहें तो यह ऐसी ही बात है, जैसे दस झगड़ते हुओं में एक व्यक्ति अपनी बात मान कर सबको एक हो जाने की बात कहे। इस आधार पर तो सभी व्यक्ति अपनी-अपनी मान्यता के स्वीकार किए जाने पर ही बल देने के अधिकारी हो जाएगे। अतः 'वेद' का स्वत. प्रामाण्य आर्यसमाज के सदस्यों के लिए मूलभूत सिद्धान्त हो सकता है, सब मतों के लिए नही। कहा जाता है, ऋषि वेद को छोड़ने को तैयार न हुए, अतः वार्ता असफल हो गई। प्रश्न यह है, कि सर सैय्यद आदि से यदि वह कुर्आन का प्रामाण्य छुड़वाना चाहते थे तो स्वय वेद का प्रामाण्य छोड़ने को उद्यत क्यों न हुए! आर्यसमाज के विद्वान् इस विषय पर प्रकाश डाले।

मेरे विचार में इस ग्रन्थ-प्रामाण्य को 'धर्म' की परिधि से निकाल कर यदि 'मत' की परिधि में रखा जावे तो 'एकधर्म' की स्थापना के लक्ष्य की ओर बढ़ा जा सकता है और वेद का प्रचार तभी हो सकता है। [(प्रश्न) तुम्हारा मत क्या है? (उत्तर) वेद अर्थात् जो जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है उसका हम करना छोड़ना मानते हैं। जिस लिये वेद हम को मान्य है इस लिए हमारा मत वेद है ऐसाही मान कर सब मनुष्यों को विशेष आर्यों को ऐकमत्य हो कर रहना चाहिए। सत्यार्थ-प्रकाश ३ समुल्लास।—सम्पादक] जैसे यदि कहा जाए कि सत्य, अहिंसा आदि धर्म हैं तो सम्प्रदायी उत्तर देगें 'हां'। तो बस, जो व्यक्ति जिस बात को असत्य समझता है, उसे उसका खण्डन करने अर्थात् अपने विचार रखने की स्वतन्त्रता मिल जाएगी और हर व्यक्ति को अपनी समझ के अनुसार बर्तने की। फिर जो सम्प्रदायी किसी को ऐसा करने से रोकेगा, वह अधर्म करने के कारण राज्य से दण्ड का भागी होगा। इस नियम से मुसलमान को वेद का खण्डन करने की अनुमति होगी और आर्यसमाजियों को कुर्आन का खण्डन करने की। साथ ही 'मुहम्मद का चांद तोड़ने' 'हनुमान् का सूर्य को मुंह में रखने' 'ईसा का मुर्दे जिलाने' आदि बातें धार्मिक मान्यताओं की परिधि से बाहर निकलने के कारण उनका खण्डन 'धर्म का खण्डन' न कहलाएगा और विचार स्वतन्त्रता का सिद्धान्त मान्य होगा। इसी प्रकार 'अहिंसा' के सिद्धान्त के मान लिए जाने के कारण सब मतवादियों की

शेष पृष्ठ ९ पर

सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है

(श्री निर्भीक अग्रवाल)

(धुन:— आओ बच्चो तुम्हे दिखायें झाँकी हिन्दुस्तान की)

सब धर्मों की छान बीन कर, लिखा ग्रन्थ लासानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की, एक अनमोल निशानी है।
लिखा गया है ग्रन्थ समूचा, कुल चौदह समुल्लास में,
सब धर्मों का सार दिया है, सत्यार्थप्रकाश में,
किया दूध का दूध है जिसमे, और पानी का पानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की, इक अनमोल निशानी है।।

सर्व मतों के ग्रन्थ खोज कर, सच्ची बात है बतलाई,
टीका टिप्पणी उन पर कर के, खोल के रख दी सच्चाई,
ब्रह्मचारी की तर्क शक्ति, सब विद्वानों ने मानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की, इक अनमोल निशानी है।।

ऋषि ने इसके लिखने का, उद्देश्य है पहले समझाया,
सत्य असत्य का निर्णय करना, परम धर्म है बतलाया,
इसके हर इक शब्द में देखो, कैसी साफ बयानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

दिया प्रभु ने आदि सृष्टि में मानव को जो ज्ञान है,
उसी वेद का मंडन इसमें किया गया गुण गान है,
जिसको पढ़ कर हर जिज्ञासु बनता पंडित ज्ञानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

उत्तम नाम है ओम् प्रभु का, वेद ईश्वरी ज्ञान है,
वेद के पढ़ने का अधिकारी, विश्व का हर इन्सान है,
दयानन्द ने सिद्ध किया यह परमेश्वर की वाणी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की, इक अनमोल निशानी है,

ईश उपासना, सन्ध्या वन्दन, इसने हमें सिखाया है,
जन्म मरण से रहित ब्रह्म को निराकार बतलाया है,
कबरें, मढ़ी मसान जो पूजे, वह बुद्धि अज्ञानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की, इक अनमोल निशानी है।।

मदिरा, माँस नशों का सेवन, इसमें निन्दित बतलाया,
क्या खाये हम, भक्ष्य अभक्ष्यका, निर्णय करके समझाया,
ब्रह्मचर्य गृहस्थ की महिमा, इसमें खूब बखानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

जन्म से कोई नही ब्राह्मण, ऊंच नीच इन्सान है,
वर्ण का निर्णय करने वाला, कर्म धर्म बलवान् है,
छुवा छूत जो करे किसी से, स्वयम् नीच अभिमानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

मानव चोला मिला हमें यह उत्तम कर्म कमाने को,
जन्म अमोलक नही यह पाया, खाने और मर जाने को,
सब जीवों में तभी कहाता सर्व श्रेष्ठ यह प्राणी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

नारी शिक्षा, गो रक्षा में छुपा हुआ इक मर्म है,
स्वतन्त्रता पर मर मिटना हर देश भक्त का धर्म है,
आज देश के सब लोगों ने बात ऋषि की मानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

फिर शुद्धि की रीति चला कर, लाखों का उद्धार किया,
पतित हुए बिछुड़े भाइयों पर, खोल वेद का द्वार दिया,
लेखराम औ श्रद्धानन्द ने, दी इस पर बलिदानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

पाप दुर्ग की नीव हिला दी, खंडन की तलवार से,
सत्यार्थ की शिक्षाओं से जगा सकल ससार है,
हूर फरिश्ते भूत प्रेत का, किस्सा खतम कहानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।।

पाखडों का इसके आगे टिकना बहुत महाल है,
आर्य जाति पर करे आक्रमण किसकी आज मजाल है,
सुप्त हिन्दू को होश में लाने वाला यह सेनानी है,
सत्यार्थप्रकाश ऋषि की इक अनमोल निशानी है।। ●

"ऋषिराज"

(श्री—विश्वनाथ प्रसाद, बरारी (भागलपुर)

ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।
तूने दिया जो अमृत जग पान कर सका ना।।

वेदों की सत्यता को तूने किया प्रकाशित।
सब को बता के जग, होता होगा हर्षित।।
तेरे एक सत्य रवि से चहुँ दिश मिथ्या थी कंपित।
या करके अद्भुत् शक्ति फिर भी वंचित।।

तेरी महत्ता का जग ध्यान कर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।।

पाखंड के विरोधी, हे सत्य के प्रचारक।
शुचिता स्वधर्म रक्षक दुखियों के तुम थे तारक।।
तेरी दहाड़ सुन के पाखंड काँपता था।
मत पंथ स्वार्थ का घर सब बगल झाँकता था।।

तेरी पवित्रता पर अभिमान कर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।।

स्वदेश के पुजारी परतंत्रता के नाशक।
तुम धर्म के सुधारक हे! सत्य के प्रचारक।।
निज जाति की दशा पर तेरा नमन तरल था।
लाने को जागरण नव तू भी तो अटल था।।

रुढ़ियों में फँसा देश, सद्-ज्ञान भर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।।

परतंत्रता से बढ़कर अपमान कुछ नहीं है।
स्वतंत्रता से बढ़कर सुखधाम कुछ नहीं है।।
तेरी इस स्पष्ट वाणी से अंग्रेज भी चकित थे।
पर देश भक्त तुझ पर मन प्राण समर्पित थे।।

लोभ और भय से तेरा ईमान मर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।।

जड़ पूज-पूज कर नर अज्ञान में फँसा था।
पाखंड कुचालों के दल-दल में वह धँसा था।।
भारत जगत् गुरु था जब आर्य कहाते थे।
जब ज्ञान की गंगा हर घर में बहाते थे।।

ललकार सुनी सबने पर कान धर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।।

लोभी छली जगत् ने तुझको बहुत सताया।
पर "सर्वे भवन्तु सुखिन:" का पाठ ही पढ़ाया।।
ज्ञानामृत के बदले तूने लिया गरल ही।
ज्योति जगा के जग में अपना दिया बुझाया।।

रोशनी दी फिर भी दृग् पान कर सका ना।
ऋषिराज तेरा भारत सम्मान कर सका ना।। ●

माँ

(पं० सूर्यकुमार पाण्डेय, ७३ छोटा चान्द गंज, लखनऊ)

जो बढ़ सके निज शक्ति से,
चाहूं न मैं धन की सता।
जो भोग्य अन्य पदार्थ हैं,
वह राज्य आदि न चाहता।।
बस एक शक्ति प्रदान कर,
कर दो कृतार्थ जननि! मुझे।
जग काव्य पूर्ण रहे सदा,
कवि कीर्ति दीप नहीं बुझे।। ●

(Continued from previous Issue)

in France, actually encouraged Protestants in Germany. This was intended to encourage mutual conflict and disorder in Germany, and thus to weaken her. This policy met with great success. There was, as we shall see, civil war of the worst kind in Germany, which ruined her.

28. Philip II, the ruler of the Netherlands, tried to crush the privileges of the cities as well as the new religion. He sent as governor-general the Duke of Alva, who has become famous for his oppression and tyranny. The Inquisition was established and a "Blood-Council" which sent thousands to the stake or the scaffold.

29. Let us look at Germany to complete our picture of Europe. There was a terrible civil war here from 1618 to 1648, called the Thirty years' War. And think of it !—this lasted for thirty years : massacre and destruction and looting going on year after year. There could be little or no trade ; there could be hardly any cultivation. And so there was less and less food, and more and more starvation. And this of course resulted in more brigands and more looting. Germany became a kind of nursery for professional and mercenary soldiers.

30 I feel tempted to tell you something more of Akbar, but I must restrain myself. I cannot, however, resist giving you some more quotations from the accounts of the Portuguese missionaries Their opinions are of far greater value than those of courtiers, and it is well to remember that they were greatly disappointed in Akbar because he did not become a Christian. Still they say that "indeed he was a great King ; for he knew that the good ruler is he who can command, simulaneously, the obedience, the respect, the love and the fear of his subject

31. Sir Thomas Roe, an ambassador of James I of England, managed to reach Jahangir's Court in 1615, and he gained concessions from the Emperor and laid the foundations of the East India Company's trade. In 1629 there was war between Shah Jahan and the Portuguese in Hugli The Portuguese were carrying on a regular slave trade and were making forcible conversions to Christianity. Hugli was captured by Moghals after a gallant defence. The little country of Portugal was exhausted by these repeated wars. She retired from the contest for empire, but she clung on Goa and a few other places.

32. The Inquisition actually condemned in one sentence in 1568 all the inhabitants of the Netherlands to death as heretics, with a few named exceptions. This was an amazing sentence unique in history—three or four lines condemning 3,000,000 of people.

33. The bitter religious wars between Catholic and Protestant, the intolerance of both the Catholic and the Calvinist, and the Inquisition, all resulted from this intense religious and communal outlook. Think of it ! Many hundred of women are said to have been burnt in Europe as witches, mostly by Puritans. New ideas in science were suppressed because these were in conflict with the Church's view of thing. It was a static, an unmoving view of life ; there was no question of progress. Voltaire, a Frenchman, criticized Christianity, he was fiercely hated by orthodox Christians and was imprisoned and banished, and who ultimately lived at Ferney near Geneva.

34. It is worth noticing that all the early intrigues of French in these countries were carried on through French missionaries. One of these missionaries was sentenced to death for some reason or other.

35. Religion was the background of the governments, and the officials were mostly missionaries and Churchmen. It has been called a "Missionaries Empire". No attempt was made to improve the condition of the people There was misgovernment and oppression and heavy taxation, and attempts at forced conversions to Christianity. These conditions naturally led to many revolts. As they refused to become Christians, massacres of them were organized.

36. There were Catholic colonies, and colonies founded by Cavalier nobles from England and Quaker colonies—Pennsylvania is named after the Quoker Penn There were also Dutchmen, and Germans and Danes and some Frenchmen. They were a mixed lot, but by far the greatest number of them were English colonists The Dutch founded a town and called it New Amsterdam When the English took this later they changed the name to New York—so well known now The clergymen, the men of religion, who are supposed to be men of peace were as bloodthir-ty, or even more so, than the others Even pacifists and socialists lost their heads and forgot their principles All—but not quit all A tiny minority of people in each country refused to become hysterical, and would not allow themselves to be smitten by this war fever. They were jeered at and called cowards, and many were even sent to prison for refusal to do war services Some of these were socialists, some were religious people, like Quakers, who have conscientions objections to war

37 The English-educated class grew slowly in the cities, and at the same time a new middle class arose consisting of proffessional people—that is, lawyers, and doctors and the like, and merchants and traders There had been, of course, a middle class in the past, but this was largely crushed by the early British policy The new bourgeoisie, or middle class, was a direct outcome of British rule in India ; in a sense they were the hangers-on of this rule They shared to small extent in the exploitation of the masses , they took the crumbs that fell from the richly laden table of the British ruling classes. They were petty officials helping in the British administration of the country , many were lawyers assisting in the working of the law courts and growing rich by litigation ; and there were merchants, the go-betweens of British trade and industry, who sold British goods for a profit or commission Little attention was paid to the grinding poverty of the masses or their needs.. And Chtistain missionaries also played their very dirty game of conversions

Tailpiece—Vivekanand's nationalism was Hindu nationalism, and it had its roots in Hindu religion and culture. Those were days of an amazing comradeship and good-will among the Hindus and Muslims of Delhi, and the remarkable sight was witnessed of Swami Shardhanand, a great leader of the Arya-Samaj, addressing huge audiences in the famous Jame Masjid of Delhi On March 31, the police and military tried to disperse the great crowds in the street and shot at them, killing some people Swami Shardhanand, tall and stately in his sanyasin's garb, faced with bared chest and unflinching look the bayonet of the Gurkhas in the Chandni Chowk He survived them, and India was thrilled by the incident , but the tragedy of it is that less than eight years later he was treacherously stabbed (shot) to death by a Muslim fanatic, as he lay on his sick-bed Concluded

पृष्ठ ७ का शेष

बलिप्रथा सिद्धान्त रूप से अधर्म मानी जाकर प्रतिबन्धित हो सकेगी और उन्हें या तो अपने ग्रन्थों के उन स्थलों को निकालना पड़ेगा या उनका अर्थ में परिवर्तन करना पड़ेगा जिनमें हिंसा का विधान है। तब 'कुर्बानि' का खण्डन धर्मखण्डन न कहलाकर मतखण्डन कहलाएगा और इस पर कोई आपत्ति न कर सकेगा । इसी प्रकार दार्शनिक मान्यताएं 'धर्म' का क्षेत्र छोड़ कर शुद्ध 'तर्क' के क्षेत्र में आजायेंगी और इस प्रकार 'बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे' के सिद्ध करने का क्षेत्र बढ़ जायेगा और इन बातों पर सम्प्रदायों के झगड़े करने का अवकाश न रह जायेगा । यदि एक स्थान पर इकट्ठे हुए वे लोग इस 'सामान्य मानव धर्म' को स्वीकार न करेंगे तो उस अवस्था में भी आर्यसमाजियों का पक्ष अधिक ऊंचा और आकर्षक सिद्ध होगा। इस दृष्टि से मेरे विचार में आर्यसमाज के विद्वानों को शीघ्र ही निश्चय कर देश में जोर-शोर से 'सामान्य आचार संहिता' की तरह 'सामान्य मानव धर्म' के विकास के लिए जनमत तैयार करने और सरकार द्वारा इसके लिए सम्मेलन बुलाये जाने के लिए प्रबल आन्दोलन चलना चाहिए ।



लार्ड मैकाले उवाच

(श्री ० सत्यभूषण वेदालंकार
एम० ए० नई दिल्ली)

हम शासक हैं शासन सत्ता स्थापित करनी है शीघ्र हमे,
तो ऐसा माध्यम प्रस्तुत कर अधिकार बढाना उचित हमे।
ये कोटि कोटि जन इंगित पर, नौकरशाही के नाचेंगे,
वे फलफली बनकर के निज उत्तम संस्कृति से भागेंगे।
हो हाड-मास भी रक्त आर्य या भारतीय परवाह नही,
गौराग बन आचार विचारो से मन से है चाह यही।
मैकाले ने प्रस्ताव नया पुष्पित पन्नो पर लिख डाला,
जो खड्ग न कर पाई मुस्लिम, उसने क्षण भर मे कर डाला॥

महर्षि दयानन्द उवाच—

प्राचीन सभ्यता, संस्कृति का उद्धार शीघ्र ही करना है,
जिसने खोया है स्वाभिमान उसका जीना भी मरना है।
हम भारतीय हैं आय प्रथम आर्यत्व हमारी नस नस मे,
है रमा हुआ आर्यों की है यह पुण्य धरा अपने वश में॥
शिक्षा, भाषा, भूषा सब पर वैदिक संस्कृति की छाप पडी,
होवें कणाद, गौतम फिर से मेरे मन में अभिलाष यही।
कितना सुन्दर पर-राज्य रहे औ मात-पिता सम हितकारी,
हो पक्षपात से शून्य सभी सुख मिलें, मिटे आपद सारी॥
औ हो स्वराज्य कितना दुःखद कितने ही क्लेश मिलें उसमें,
है उत्तम वह परकीय राज्य से सत्ता जब अपने वश मे।

पटाक्षेप—

जब ऋषि ने यह उद्घोष किया भागे मैकाले-मतवाले,
गुरुकुल खुल गये और जागे फिर युग-युग से सोने वाले।
प्राणो मे रक्त नया छाया, बिजली सी मानो कौंध गई,
फिर दास्य भावना भूत भगा, ऋषिवर ने छेडी तान नई॥
आता है हमको याद पुन दीपावलि का सदेश सुनो,
जो दीप जला जन-जागृति कर, उसका हितकर उपदेश सुनो। ●

शङ्का-समाधान

१ शङ्का—(क) क्या आत्माओ को बुलाया जा सकता है?
(ख) क्या आर्यसमाज भूत प्रेत आदि पर विश्वास रखता है?

—श्री सत्यप्रकाश जी

उत्तर—(क) मृत आत्माओ को नही बुलाया जा सकता।
(ख) भूत प्रेत पर आर्यसमाज विश्वास नही रखता।
२ प्रश्न—(क) मन और हृदय मे क्या अन्तर है?
(ख) हृदय का शरीर मे स्थान कहा है?
(ग) अगुष्ठ मात्र हृदय का क्या अर्थ है?
(घ) क्या हृदय रक्त सचालक है?

—डा० धर्मदेवजी धर्मशाला (कागडा)

उत्तर—(क) मन, बुद्धि चित्त और अहकार ये चारो अन्त करण हैं। इनमे मन सकल्प विकल्प का साधन है।

(ख) मन का स्थान हृदय है—देखिये यजुर्वेद अध्याय ३४, मन्त्र ६ मूल मन्त्र मे ही है हृत्प्रतिष्ठम्' अर्थ में भी मन हृदय मे प्रतिष्ठित है।

(ग) अगुष्ट मात्र का अर्थ सूक्ष्म है। दोनो स्तनो के बीच में, नाभि से ऊपर? और कण्ठ के नीचे हृदय का स्थान है। देखिये—ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका (उपासना प्रकरण) मे छान्दोग्योपनिषद् ८-१-१ के भाष्य में

(घ) हृदय का प्राकृतिक भाग रक्त का सचालन करता है, परन्तु अवकाश रूप भाग प्रकाशित स्थान है, यही योगियो को ईश्वरका प्रत्यक्ष होता है। प्रमाण वही जो ऊपर दिया गया है।

३ प्रश्न—(क) भो वाक्-वाक् आदि ये वचन वेद अथवा किस ग्रन्थ के हैं?

(ख) 'भू पुनातु शिरसि वाले वचनो में कानों का नाम क्यों नही आया?

(ग) वृक्षो में जीव है या नही?

(घ) परमाणुओ मे आकाश है या नही?

—श्री भद्रसेन चन्द्रसेन आढति हसनपुर (जि० गुडगावा)

उत्तर—(क) वाक्-वाक् आदि वेद मन्त्रों के पदों को प्रतीकें लेकर ऋषियों द्वारा बनाये गये वचन हैं। ऐसा करने का विधान वेद, उपनिषद् और महाभाष्य में लिखा है। इसी के आधार पर गृह्य सूत्रो के ये वचन हैं।

(ख) सब अगों के नाम न होने पर भी उपलक्षण से उनका ग्रहण हो जाता है। पहिले में "श्रोत्र" शब्द आया है। तथा पहिले मे जिन अगों के नाम गिनाये हैं, उनमें कई दूसरे मन्त्र में नहीं है। मिलाकर देखिये एक मे दूसरे मन्त्र से ग्रहण हो जाता है।

(ग) वृक्षो में जीव है। देखिये अथर्ववेद ६ काण्ड, ४४ सूक्त का पहिला मन्त्र "अस्थुर्वृक्षा ऊर्ध्वस्वप्ना:" अर्थात् वृक्ष गहरी नीन्द में खडे हैं। नीन्द (स्वप्न) जीव को ही आती है। जड को नहीं।

(घ) परमाणुओं मे आकाश नहीं है।

[विशेष—विस्तृत जानकारी के लिये ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का स्वाध्याय करना आवश्यक है।]

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

श्री स्वामी नित्यानन्द जी



आप की आयु इस समय ८०-८२ वर्ष के लगभग है। सन्यासी होने से पूर्व आपका नाम चौ० ज्योतिन्दसिंह था प्रारम्भ से ही आप निर्लोभी नि स्वार्थी, कर्मठ तपस्वी जीवन व्यतीत करते आ रहे हैं। हरयाणा, राजस्थान तथा उत्तरप्रदेश के पश्चिमी जिलो मे आपका प्रचार कार्य विशेष रूप से रहा है। ग्रामीण आर्य जनता आपके प्रचार से प्रभावित होती है। आर्यसमाज गौ रक्षा और कांग्रेस के सभी आन्दोलनो मे आपने सक्रिय भाग लिया और अनेक बार जेल यात्राए की हैं। पजाब के हिन्दी आन्दोलन मे आप मई की तपती धूप मे नगे शिर और केवल एक आसन पर चण्डीगढ मे सत्याग्रह करते रहे हैं। आप त्याग रूप से रहते हैं। हरयाणा के सभी गुरुकुलो को सहयोग देते आ रहे हैं। ५५-६० वर्ष से आर्यसमाज और राष्ट्र का कार्य कर रहे हैं। ●

आर्य जनता से अपील

वैदिक वाङ्मय के अद्वितीय विद्वान् स्व० स्वामी समर्पणानन्द जी द्वारा लिखित अमूल्य साहित्य का प्रकाशन स्वामी जी का उत्तराधिकारी वर्णाश्रम सघ करा रहा है जिसमें लगभग १ लाख रुपये का व्यय होगा रुपये एकत्र करने का भार प्रसिद्ध विद्वान् श्री आचार्य कृष्णजी को दिया गया है आर्य जनता से निवेदन है कि आचार्य जी को अधिक से अधिक धनराशि भेंट कर इस उत्तम कार्य को सफल बनाये। आचार्य जी के पास वर्णाश्रम सघ की रसीद भी हैं।

—विवेकानन्द सरस्वती अध्यक्ष
वर्णाश्रम सघ प्रभात आश्रम, पो० टीकरी, (मेरठ)

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ एवम् पाखण्ड खण्डिनी पताका शताब्दी

गत दो सप्ताहों में हमें शताब्दी के सम्बन्ध में लखनऊ, वाराणसी, मथुरा, दिल्ली सभी स्थानों के आर्यों में शताब्दी के लिये उत्साह की लहर का संचार देखा। आर्य जन तन, मन, धन से सहायता करने को उद्यत देखे। अनेक स्थानों पर जाने वालों की सूची तैयार की जा रही है और दान एकत्रित किया जा रहा है। वाराणसी में स्वागत समिति तथा उसके अधीन विभिन्न प्रबन्ध कार्यों के लिये उपसमितियों की स्थापना हो गई है। स्वागत समिति का सदस्यता-शुल्क १०) रु० से १००) रु० तक रखा गया है। ५१ रु० देने वाले अनेक सदस्य बन चुके हैं। स्वागत समिति का ४०,००० रु० का बजट रखा गया है। यात्रियों के ठहरने का प्रबन्ध डी० ए० वी० डिग्री तथा इन्टर कालेज आदि में किया गया है। २५-३० हजार नर-नारियों के बैठने के लिये सभा मण्डप बनाने का निश्चय किया गया है।

लखनऊ में आर्य प्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष श्री मदनलाल जी, श्री कृष्ण बलदेव जी आदि धन-संग्रह आदि में सहयोग दे रहे हैं यहां से कम से कम तीन एक-एक हजार रुपये की दक्षिणा देने वाले यजमान बन रहे हैं। शताब्दी का कार्यालय-५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ में खुल गया है, जहां से सब प्रकार की सूचनायें मिल सकती हैं।

देहली में तो आशातीत उत्साह देखा। सर्व श्री प्रकाशवीर शास्त्री, शिवकुमार शास्त्री, रामनाथ जी सहगल डेपुटेशन के रूप मे प्रतिष्ठित दानी महानुभावों से मिल रहे हैं। उन्हे आशा से अधिक सफलता मिल रही है। कई सज्जन यजमान बनने अतिथियों का आतिथ्य करने को तैयार हो गये हैं। उनकी सूची अगले सप्ताह दी जावेगी।

स्वागत समिति का कार्यालय "आर्यसमाज बुलानाला, वाराणसी" में खुल गया है। आर्यसमाजों को चाहिये कि अपने यहाँ से आने वाले नर-नारियों की संख्या पहुंचने के दिन, समय आदि की सूचना भेज देनी चाहिये। व्यक्तिगत रूप से आने वालों को भी ऐसा ही करना चाहिये।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री, संयोजक (मन्त्री काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, सरोजनी नगर, नई दिल्ली द्वारा आयोजित प्रतियोगिता

१५ नवम्बर १९६९ से १४ जनवरी १९७० तक सरकारी काम-काज में हिन्दी का अधिकतम प्रयोग करके, अर्थात्—फाइलों पर टिप्पणियाँ लिखकर, पत्रों, ज्ञापनों, परिपत्रों आदि के प्रारूप तैयार करके, अनुस्मारक (रिमाइंडर) भेजकर, आवेदन (applications) देकर रसीदें काट कर हस्ताक्षर करके, परमिट, लाइसेंस, पी० टी० ओ० आदि के फार्म हिन्दी में भरकर, लिफाफों पर पते लिखकर, नक्शे बनाकर, आवश्यक पुरस्कार दिए। सरकारी कामो मे लिखे गए प्रति १० हिन्दी शब्दों के लिए एक अंक दिया जाएगा। अंको की अधिकतम संख्या के आधार पर ही पुरस्कार दिए जाएंगे।

हिन्दी व्यवहार प्रतियोगिता

(सरकारी काम-काज में हिन्दी के प्रयोग की मात्रा पर आधारित)

अवधि :—इस प्रतियोगिता की अवधि १५ नवम्बर, १९६९ से १४ जनवरी, १९७० होगी। इस अवधि में किए गए हिन्दी कार्य की मात्रा पर ही विजेताओं का निर्णय किया जाएगा।

पुरस्कार :—सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को निम्नलिखित पुरस्कार दिए जाएंगे :—(क) अखिल भारतीय रूप से (१) प्रथम पुरस्कार १०१ रुपये, द्वितीय पुरस्कार ५१ रुपये, तृतीय पुरस्कार २५ रुपये, (२) इसके अतिरिक्त प्रति ५० प्रतियोगियों के पीछे एक के अनुपात से अनेक प्रोत्साहन पुरस्कार। (३) पाच विशेष पुरस्कार उन अधिकारियों के लिए जिनके अधीन कर्मचारियों को इस प्रतियोगिता के सम्बन्ध में मिले अंकों का जोड़ सबसे अधिक होगा। (ख) जिन शाखाओं में कम से कम २० व्यक्ति प्रतियोगिता में भाग लेगें वहां प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान पाने वालों को क्रमश: १५ रुपये, १० रुपये, तथा ५ रुपये के पुरस्कार दिए जाएगे। इनके अतिरिक्त अन्य कार्यालयों के प्रतिनिधि भी पुरस्कार पाने के पात्र होंगे। (ग) जिन प्रतियोगियों के अंक १००० से अधिक होंगे उन सब को प्रशस्ति-पत्र दिए जाएंगे।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेद प्रचार विभाग की सूचनाएं

सभा के सभी उपदेशक महानुभावों तथा भजन मण्डलियो द्वारा आर्यसमाजों के उत्सवों तथा अन्य अवसरो पर पूर्ण लग्न एव निष्ठा से प्रचार किया जा रहा है। भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न उपदेशक पधारे यथा पं० निरंजनदेव जी अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग, प० समरसिंह जी वेदालङ्कार अध्यक्ष हरयाणा वेद प्रचार मण्डल, प० हरिदेवजी सिद्धान्त भूषण, प० जितेन्द्र जी बी० ए०, प० रामनाथ जी यात्री, प० अमरनाथ जी प्रेमी कलाकार, प० बलराज जी सगीत रत्न, प० रामनाथ जी, ठाकुर समशेरसिंह जी, पं० मशीराम-धर्मपाल जी की मण्डली, प० रामकरण जी की मण्डली तथा प० तेजभान जी। इन्होंने पृथक्-पृथक् रूप में निम्नस्थ आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवों ऋषि-निर्वाण समारोह यथा अन्य अवसरो पर प्रचार किया—आर्यसमाज नारायण गढ (जि० अम्बाला) से १०१ रु० भेंट प्राप्त। (२) आर्यसमाज कुल्लू (कांगड़ा) से ५५१ रु० प्राप्त। यहा श्री स्वामी विवेकानन्द जी को श्री रोशनलाल जी ने पूर्ण सहयोग दिया। (३) आर्यसमाज सुजानपुर (जि० गुरुदासपुर) से ३०१ रु० प्राप्त हुये। यहां दयानन्द मठ दीनानगर के अध्यक्ष श्री स्वामी सर्वानन्द जी भी पधारे। (४) आर्यसमाज मोडल टाउन सोनीपत (जि० रोहतक) से ३०० रु० प्राप्त। (५) आर्यसमाज मोडल टाउन यमुनानगर (जि० अम्बाला) से ११० रु० प्राप्त (६) आर्यसमाज बाघडू (जि० जीन्द) से १२१ रु० प्राप्त। (७) देहली मे आर्यसमाज बिरला लाइन तथा (८) आर्यसमाज देवनगर (मुलतान) करोल बाग के उत्सव पूर्ण सफलता से सम्पन्न हुए। इनमे सभा के माननीय अधिकारीयों तथा अन्य विद्वानो के भी भाषण हुए। आर्यसमाज देवनगर के उत्सव पर काशीशास्त्रार्थ योजना मे सनातन धर्म के विद्वानों से शास्त्रार्थ हुआ। इस की कार्यवाही अगले अक में जावेगी।

सभा के उपदेशकों को वे आर्यसमाज भी निमन्त्रित करते हैं, जो कि सभा से सम्बद्ध नहीं हैं। इस प्रकार आर्यसमाज देहरादून (उत्तर प्रदेश), आर्यसमाज कपूरथला तथा आर्यसमाज सुलतानपुर (पजाब) में भी सभा के उपदेशक पधारे और प्रभावशाली प्रचार किया।

—वेद प्रचार विभाग-अधिष्ठाता

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा देहली का निश्चय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा देहली की अन्तरंगसभा ने निश्चय किया है कि २३ से २८ दिसम्बर १९६९ को होनेवाले महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ एव पाखण्ड खण्डिणी पताका शताब्दी समारोह आर्यो के सार्वजनिक सार्वभौम महोत्सव हैं। उन्हे सफल बनाने के लिए आर्य जनता को तन, मन, धन से सहयोग देना चाहिये और आर्य समाज को शक्ति का विराट प्रदर्शन करने के लिए वहा अधिक से अधिक संख्या में पहुंचना चाहिये। —उत्तमचन्द्र स्नातक उपमन्त्री सभा

आर्यसमाज देहरादून का ९० वां वार्षिकोत्सव

इस अवसर पर आर्य जगत के कई प्रतिष्ठित नेता, विद्वान महोपदेशक, सन्यासी और भजनोपदेशक पधारे, उत्सव पूर्ण सफलते से सम्पन्न हुआ।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज पानीपत

वार्षिक निर्वाचन निम्न रूप में सर्व-सम्मति से सम्पन्न हुआ—

प्रधान—श्री दिलीपसिंह जी आर्य, मन्त्री—श्री मेघराज आर्य, कोषाध्यक्ष—"ईश्वरचन्द्र निरमोही —मेघराज आर्य मन्त्री, आर्यसमाज पानीपत

गुरुकुल आश्रम अमरसेना (उड़ीसा)

खरियार रोड में दशहरे और दिवाली पर होने वाले, विशाल, मेले में गुरुकुल की ओर से वैदिक धर्म का प्रचार समारोह से किया गया।

इसी समय गुरुकुल की ओर आचार्य धर्मदेव जी ने निर्धन व्यक्तियों को वस्त्र प्रदान किये। विद्यार्थियो ने आसन तथा योग क्रियाओं के प्रदर्शन किये। साथ ही यज्ञ भी किया। —रामसेवक दास व्यवस्थापक गुरुकुल अमरसेना ग्रा० पो० खरियार रोड, जि० कालाहांडी (उड़ीसा)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१	सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२	धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३	सुबोला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४	आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह	१-२५
५	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६	वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७	कुल्लियात आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९	वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५
१०	जीवन ज्योति—प० पशुपति जी एम ए	३-००
११	सोमसरोवर „ „	३-००
१२	वैदिक सिद्धान्त—	१ ००
१३	Principle of Arya Samaj „ „	१-५०
१४	Glimpses of Swami Daya Nand	१-००
१५	Subject Matter of Vedas	१-००
१६	आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी	०-५०
१७	मुक्ति के साधन—प० मनदमोहन विद्यासागर	१-००
१८	प० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित्र—ले० प्रो० रामप्रकाश	१-३५
१९	दयानन्द की विशेषताएं—प० हरिदेव जी आचार्य	१०) सैकड़ा
२०	पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद	२ ००

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी पर दिल्ली से बसयात्रा का कार्यक्रम

आर्य जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि दिल्ली से विशेष बसें काशी शताब्दी के लिये जावेगी जिनका कार्यक्रम निम्न प्रकार बनाया गया है—२४-१२-६९ को ये बस दिल्ली की भिन्न-भिन्न आर्यसमाजों से दो बजे चल कर ६ बजे मुरादाबाद पहुचेंगी। वहां आर्यसमाज की ओर से स्वागत तथा भोजन का प्रबन्ध होगा। वहां से रात्रि के ८ बजे चलकर ११ बजे शाहजहानपुर पहुचेगी और वहां रात्रि में विश्राम करके अगले दिन प्रात चलकर ११ बजे लखनऊ पहुच जावेगी। २५ दिसं० सायं को लखनऊ रहेगी और २६ को प्रात चलकर अयोध्या ११ बजे पहुंच जावेगी। वहां से चलकर ४ बजे वाराणसी पहुच जावेगी वहां २६ से २८ दिसम्बर तक शताब्दी समारोह मे भाग लेंगे। वापसी पर इलाहाबाद तथा कानपुर होते हुये ३० को प्रात दिल्ली पहुच जावेंगे। इस यात्रा का आने जाने का मार्ग व्यय ४३ रु० ५० पैसे होगा। कृपया अपनी सीट १०-१२ ६९ तक १५ हनुमान रोड नई दिल्ली आर्यसमाज कीर्ति नगर आर्यसमाज करोल बाग, आर्यसमाज नया बास, आर्यसमाज शक्ति नगर दिल्ली के पते पर सुरक्षित करवा लीजिये।

निवेदक—शिवकुमार शास्त्री एम० पी०
७ मीना बाग नई दिल्ली-१

आर्यसमाज गोण्डा (उ० प्र०)

आर्यसमाज गोण्डा अपनी हीरक जयन्ती महोत्सव दिनांक ३०-११-६९ से ४ १२ ६९ तक बड धूम धाम से मनाने जा रहा है। इस अवसर पर देश के बड बडे विद्वान भाग ले रहे हैं। प्रसिद्ध भजनोपदेशक भी पहुंचेंगे।

—मन्त्री आर्यसमाज

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा जनतादृ प्रेस, पहाड़ी धीरज, देहली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु (ऋग्वेदे)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

जैसे वद्य और औषधो की आवश्यकता रोगी के लिये होती है वसी नीरोग के लिये नही। इसी प्रकार जिस पुरुष वा स्त्री को विद्या धर्मवृद्धि और सब ससार का उपकार करना ही प्रयोजन हो वह विवाह न करे। जैसे पचशिखादि पुरुष और गार्गी आदि स्त्रिया हुई थी, इसलिये सन्यासी का होना अधिक उचित है और जो अनधिकारी सन्यास ग्रहण करेगा तो आप डूबेगा औरो को भी डबावेगा। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष २ अंक १ } २२ मार्गशीर्ष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार ७ दिसम्बर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु० , ,, विदेश मे—२० रु० एक प्रति का मूल्य ००—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ प्रवचन

अथ सूर्य्यलोकगुणा उपदिश्यन्ते ॥

अब अगले मन्त्र मे सूर्य्यलोक के गुणो का उपदेश किया है ॥

आ कृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥

॥ ऋ० १ ३५ २ ॥

पदार्थ —(आ) समन्तात् (कृष्णेन) कर्षति येन स कृष्णस्तेन। यद्वा कृष्णवर्णेन लोकेन (रजसा) लोकसमूहेन सह (वर्त्तमान) वर्त्तते असौ वर्त्तमान (निवेशयन्) नितरां स्वस्वसामर्थ्ये स्थापयन् (अमृतम्) अन्तर्यामितया वेदद्वारा च मोक्षसाधक सत्य ज्ञान वृष्टिद्वाराऽमृतात्मक रस वा (मर्त्यम) कर्मप्रलयप्राप्तिव्यवस्थया कालव्यवस्थया वा मरणधर्मयुक्त प्राणिनम् (च) समुच्चये (हिरण्ययेन) ज्योतिर्मयेनानन्तेन यशसा तेजोमयेन वा (सविता) सर्वथा प्रसविता प्रकाशवृष्टिकर्त्ता च प्रसविता (रथेन) [illegible] यानाति गच्छति गमयति वा [illegible] (आ) समन्तात् (देव) दीव्यति प्रकाशयतीति (याति) प्राप्नोति प्रापयति वा (भुवनानि) भवन्ति भूतानि येषु तानि (पश्यन्) प्रेक्षमाणो दर्शयन् वा ॥

अन्वय —अय सविता देव परमेश्वर आकृष्णेन रजसा सहाभिव्याप्य वर्त्तमान सर्वस्मिन् जगत्यमृत मर्त्यं च निवेशयन् सन् हिरण्ययेन यशोमयेन ज्ञानरथेन युक्तो भुवनानि पश्यन्नायाति समन्तात् सर्वान् पदार्थान् प्राप्नोतीति पूर्वोऽन्वय ।

अय सविता देव. सूर्य्यलोक. कृष्णेन रजसा सह वर्त्तमानोऽस्मिन् [illegible] मर्त्यं च निवेशयन् हिरण्ययेन [illegible] भुवनानि पश्यन् दर्शयन् [illegible] समन्तात् वृष्ट्यादिरूप- [illegible] च प्रापयतीत्यपरोऽन्वय ॥

भावार्थ —अत्र श्लेषालङ्कार । यथा पृथिव्यादयो लोका सर्वान् मनुष्यादीन् धरन्ति सूर्य्यलोक आकर्षणेन पृथिव्यादीन धरति । ईश्वर स्वसत्तया सूर्यादीन् लोकान् धरति। एव क्रमेण सर्वलोकधारण प्रवर्त्तते नैतेन विनान्तरिक्षे कस्यचिद गुरुत्वयुक्तस्य लोकस्य स्वपरिधौ स्थिते सम्भवोऽस्ति । नैव लोकाना भ्रमणेन विना क्षणमुहूर्त्तप्रहराहोरात्रपक्षमासर्तुसवत्सरादय कालावयवा उत्पत्तु शक्नुवन्तीति ।

भाषार्थ —यह (सविता) सब जगत् को उत्पन्न करने वाला (देव) सब से अधिक प्रकाशयुक्त परमेश्वर (आकृष्णेन) अपनी आकर्षक शक्ति से (रजसा) सब सूर्य्यादिलोको के साथ व्यापक (वर्त्तमान) हुआ (अमृतम्) अन्तर्यामिरूप वा वेद-द्वारा मोक्ष साधक सत्य ज्ञान (च) और (मर्त्यम्) कर्मों और प्रलय की व्यवस्था से मरण युक्त जीव को (निवेशयन्) अच्छे प्रकार स्थापना करता हुआ (हिरण्ययेन) यशोमय (रथेन) ज्ञानस्वरूप रथ से युक्त (भुवनानि) लोकों को (पश्यन्) देखता हुआ (आयाति) अच्छे प्रकार सब पदार्थों को प्राप्त होता है ॥ (१)

यह (सविता) प्रकाश, वृष्टि और रसो का उत्पन्न करने वाला (कृष्णेन) प्रकाश-रहित (रजसा) पृथिवी आदि लोको के साथ (आवर्त्तमान) अपनी आकर्षण शक्ति से वर्त्तमान इस जगत् में (अमृतम्) वृष्टि द्वारा अमृत स्वरूप रस (च) तथा (मर्त्यं) काल व्यवस्था से मरण को (निवेशयन्) अपने अपने सामर्थ्य मे स्थापन करता हुआ (हिरण्ययेन) प्रकाश स्वरूप (रथेन) गमन शक्ति से (भुवनानि) लोको को (पश्यन्) देखता हुआ (आयाति) अच्छे प्रकार वर्षा आदि रूपो की अलग-अलग प्राप्ति करता है ॥

भावार्थ —इस मन्त्र मे श्लेषालङ्कार है। जैसे सब पृथिवी आदि लोक मनुष्यादि प्राणियो वा सूर्यलोक अपने आकर्षण से पृथिवी आदि लोको वा ईश्वर अपनी सत्ता से सूर्य्य आदि सब लोको का धारण करता है। ऐसे क्रम से सब लोको का धारण होता है, इस के विना अन्तरिक्ष मे किसी अत्यन्त भारयुक्त लोक का का अपनी परिधि मे स्थिति होने का सभव नही होता और लोको के घूमने विना क्षण, मुहूर्त्त, प्रहर, दिन, रात, पक्ष, मास, ऋतु और सवत्सर आदि कालो के अवयव नहीं उत्पन्न हो सकते हैं ॥

—(ऋषिदयानन्द का भाष्य)

तीर्थ-विवेचन (ऋषि दयानन्द)

(प्रश्न) जिस से मनुष्य लोग तर जाते हैं अर्थात जल और स्थान विशेष वे क्या तीर्थ नहीं हो सकते ? (उत्तर) नही, क्योकि उन मे तारने का सामर्थ्य ही नहीं और तीर्थ शब्द करणकारकयुक्त लिया जाता है, जो जल वा स्थान विशेष अधिकरण वा कर्मकारक होते हैं उन मे नाव आदि अथवा हाथ और पग से तरते हैं। इस से जल वा स्थल तारने वाले कभी नही हो सकते, इस लिये, कि जो जल मे हाथ वा पग न चलावे वा नौकादि पर न बैठे तो कभी नही तर सकते। इस युक्ति से भी काशी, प्रयाग, गङ्गा यमुना, समुद्र आदि तीर्थ सिद्ध नही हो सकते। इस कारण से सत्यशास्त्रोक्त जो तीर्थ हैं, उन्ही को मानना चाहिये, जल और स्थान विशेष को नही।

(प्रश्न) (इम मे गङ्गे) यह मन्त्र गङ्गा आदि नदियो को तीर्थ विधान करने वाला है फिर इन को तीर्थ क्यो नही मानते ?

(उत्तर) हम लोग उन को नदी मानते हैं और उन के जल मे जो गुण हैं, उन को भी मानते हैं परन्तु पाप छुड़ाना और दुखो से तारना इन का सामर्थ्य नही, किन्तु सामर्थ्य तो पूर्वोक्त तीर्थों मे ही है। तथा इस मन्त्र मे गगा आदि नाम इळा पिङ्गला, सषुम्णा, कर्म और जाठराग्नि की नाडियो के हैं, उन में योगाभ्यास से परमेश्वर की उपासना करने से मनुष्य लोग सब दुखो से तर जाते हैं। क्यो कि उपासना नाडियो ही के द्वारा करनी होती है। इस हेतु से इस मन्त्र मे उन की गणना की है। इस लिये उक्त नामो से नाडियो ही का ग्रहण करने योग्य है। सित=इडा और असित=पिङ्गला, ये दोनो जहा मिली हैं उस को सुषुम्णा कहते हैं। उस मे योगाभ्यास से स्नान कर के जीव शुद्ध हो जाते हैं। फिर शुद्ध रूप परमेश्वर को प्राप्त हो के सदा आनन्द में रहते हैं। इस में निरुक्तकार का भी प्रमाण है कि सित और असित शब्द शुक्ल और कृष्ण शब्द के वाची हैं। इस अभिप्राय से विरुद्ध मिथ्या अर्थ कर के लोगो ने नदी आदियो का तीर्थ नाम से ग्रहण कर लिया है ॥

—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका।

विचारार्थ—

'आर्यसमाज का संघटन कैसे ?'

(श्री जयदेव आर्य्य एम ए छाजूराम स्मारक जाट महाविद्यालय हिसार)

कई वर्षों से आर्यसमाज मे चल रहे पारस्परिक विवादो ने आर्यसमाज के सघटन की कमर तोड कर रख दी है। इस स्थिति से हर आर्यसमाजी खिन्न है। अनेक प्रकार के प्रयत्न इन विवादो को सुलझाने के लिये किए गये हैं और सुझाव भी दिए गये हैं—पर समस्या सुलझी नही। गत दो वर्षों से मैं भी अपने कुछ विचार कई बार लिख कर आर्यसमाज से सम्बन्ध रखने वाले कई पत्र और पत्रिकाओ मे भेजता रहा हू, पर खद है कि किसी न किसी कारण से वे लेख प्रकाशित नही हो पाए। अब २ नवम्बर के 'आर्यमर्यादा' मे श्री रामेश्वर दयाल गुप्त के लेख को देखकर पुन अपने वचार 'आर्यमर्यादा' के लिए लिखने का उत्साह आया, अत इनके प्रकाशन की आशा लिए हुए पुन उन विचारो को यहा रख रहा हू।

हम आर्यसमाजी इस बात पर गर्व करते हैं कि हिन्दुओ का कोई एक धर्मग्रन्थ तथा एक उपास्य न था, आर्यसमाज ने एक सघटन का आदर्श हिन्दु समाज के आगे रखा। यह बात तो ठीक है, पर खेद यह है कि हमारी अब स्वय की अवस्था यह हो गई है कि हमारे घर का कोई एक नेता नही है। उर्दू शायर के शब्दो में—लोडरो की धूम है, और फॉलोवर कोई नही। सब तो जनरल हैं यहा आखिर सिपाही कौन है ? और ऐसे देश, घर या समाज की अवस्था सस्कृत कवि के शब्दो मे—

> "सर्वे यत्र विनेतार, सर्वे चाऽभिमानिन ।
> सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति, कुल तदवसीदति ॥"

अर्थात जहा सभी नेता हो अभिमानी और महत्त्वाकाक्षी हो, वह कुल विनष्ट हो जाता है। तब सारी दुनिया को एकता के सदेश का ठेका लेने वाले हम स्वय एक न हो, एक सर्वमान्य नेता के पीछे न चल सके तो क्या यह हमारे लिए लज्जा की बात नही है ? नेतृत्वविहीन हम लोगो की अवस्था उस किसान के समान नही है ? जो अपने बिना नकेल के परिवार को लेकर भूत' को बाधने का भय दिखाकर उससे धन लेने गया था और उसकी झाड खाकर अपना सा मुह लेकर वापस लौट आया। महर्षि ने लिखा है कि जिसके देवता मार खाते हो, भला उसके भक्तो को मार पडे तो इसमे आश्चर्य क्या है ? फिर भला जब हमारे नेता ऐसे हो कि जिन्हें हम अपने से भी हीन समझें, स्वय हमारे ही मन में उनके लिए आदर का भाव न हो, तो उन नेताओ और हम उनके अनुयाइयो को कोई भी घास डालने को तैयार न हो, तो इसमें कौन आश्चर्य ? जो लोग उन व्यक्तियो को अपना नेता मान कर चलें, जिन्हें वे अपने से भी हीन समझते हो, तो उन व्यक्तियो से हीन व्यक्ति कौन हो सकता है ? उन लोगो का क्या जीवन है, जिन लोगो के नेताओ का हर ऐरा-गरा नत्थूखैरा, जब चाहे, जैसे, अपमान कर दे। धिक्कार है उन लोगों को !

तो हमें चाहिये ऐसा नेता, जिसका व्यक्तित्व हिमालय की तरह ऊंचा हो, शुभ्र हो, जिसके सामने पडते ही हर व्यक्ति का सिर उसके चरणों में झुक जाये, जिसकी बात टालने का किसी को साहस न हो, जिस पर कोई भी अगुली न उठा सके और यदि कोई अनुचित रूप से उस पर अगुली उठाये तो वह अगुली तोड दी जाए, यदि कोई उसके लिए अपशब्द प्रयोग करे तो उसकी जबान बन्द कर दी जाए। हा ! स्वाभिमानी समाज और उसका नेता ऐसा ही होना चाहिए। उसी समाज का सदस्य बनने में हर व्यक्ति को गर्व होता है, आनन्द होता है। फिर उस नेता का चनाव कैसे हो ? इस पर विचार करें।

महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि एक विद्वान् का मत हजार मूर्खों के मत से अधिक मान्य है, परन्तु इस आदेश का पालन हमे आर्यसमाज में कहीं भी दिखलाई नही पडता। फिर भला हम कैसे ऋषिभक्त हैं ? आर्यसमाजी हैं ? अत हमारे सघटन के नियमो मे आमूल चूल परिवर्तन होकर इस नियम के पालन का मार्ग निकालना चाहिए। मेरे विचार में सार्वदेशिक सभा का प्रधान—सन्यासी हो, पोप की तरह आजीवन प्रधान रहे, वेद-शास्त्र का विख्यात विद्वान हो, योग और अध्यात्म-विद्या में अच्छी गति रखता हो, मितभाषी हितभाषी तथा मधुरभाषी हो, अच्छा हो—अन्य भाषाओ सभ्यताओ देशविदेश के इतिहास तथा मान्यताओं में भी गति रखता हो अर्थात् जिसे हम 'सर्वतन्त्रस्वतन्त्र' कह सके, तथा वर्तमान राज-नीति से दूर हो।

प्रश्न हो सकता है कि ऐसा सज्जन कहां से आए ? मेरा प्रति-प्रश्न है कि शङ्कराचार्य की गद्दी पर ऐसा व्यक्ति कैसे आता है ? पोप की गद्दी पर कैसे आता है ? यदि रामकृष्ण मिशन में योग्य व्यक्ति आ सकते हैं तो आर्यसमाज में क्यो नहीं ? क्या आर्यसमाज सब से गया गुजरा है ? बस आवश्यकता इस बात की है कि हमारे दिलों में ईमानदारी हो। कैसे ? यह प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचन की पद्धति समाप्त कर आर्यसमाज के उच्च स्तर के विद्वानो की एक सर्वोच्च समिति घटित की जाये। वह परिषद् सर्वसम्मति से सर्वोच्च नेता को चुने। यदि सन्यासी न हो, तो उस समय सन्यास लेकर प्रधानपद पर अभिषिक्त हो। उस पर किसी प्रकार से सार्व-जनिक रूप में दोषारोपण करने वाले व्यक्ति को आर्यसमाज की प्रारम्भिक सदस्यता से भी तुरन्त निलम्बित कर दिया जाय। यदि किसी को उसके किसी आचरण पर आपत्ति हो तो वह गुप्त रूप से सर्वोच्च परिषद् के पास उसे भेजे और यदि उसमें तनिक भी सत्यता का अश हो तो वह विद्वत्-परिषद् उसे पद-च्युत कर दे। अन्यथा परिवाद-कर्ता का समाधान कर दे। पर सामान्य जनता को उस शिकायत का पता निर्णय के बाद लगे, पूर्व नहीं। आर्यसमाज के सघटन की दृढता के लिए यह नियम बहुत आवश्यक है। इसी प्रकार का नियम सर्वोच्च-विद्वत्-परिषद् के सदस्यो पर भी लागू हो। वह प्रधान जहा जाए, वही उसे विशिष्ट रूप से सम्मानित किया जाए, नागरिक अभिनन्दन हो, आर्यों के घरों में विशेष उत्सव हो और आर्यजनो के पारस्परिक विवाद उन के आगे रख कर उनके निर्णय को अन्तिम स्वीकार किया जाये।

हम लोग देश में Federal System (सघीय प्रणाली) को समाप्त कर एकात्मक प्रणाली (Unitary Form of Govt.) चाहते हैं, तो फिर अपनी इस मान्यता को हम पहले आर्यसमाज में लागू क्यो न करें ? प्रधान प्रत्येक प्रान्त में एक गवर्नर नियुक्त करे और समाजों द्वारा चुने गये प्रति-निधियो की सभा उसकी सलाहकार-परिषद् रहे। यदि किसी समाज में कोई अवाछित व्यक्ति अधिकारी बन जाए तो गवर्नर उसे पदच्युत करने का अधिकारी हो। प्रधान के पास अपील करने का उसे अधिकार हो, इसके आगे कुछ नहीं। विशेष उत्सवो में ही राजनीतिक सम्मेलन रखे जाएं, जिनमें विशेष पूर्व निर्धारित समस्याओं पर ही अपने-अपने विचार प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न राजनीतिक दलों के एक समान स्तर के नेताओं को आमन्त्रित किया जाए, इसके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी राज-नीतिक नेताओं के स्वागत सत्कार की प्रथा को आर्यसमाज से बन्द किया जाए। आर्यसमाजों में शिक्षाक्षेत्र के विद्याव्यसनी लोगों को विशेष अधि-कार दिया जाए और उन को शिक्षा क्षेत्र में पद दिये जाएं तथा समाजों की सलाहकार परिषद् के लिए उन्हें प्रतिनिधि बनाया जाए। ऐसे ही धर्म और राज सभा के योग्य सदस्य चुने जावें। अच्छा हो, इस प्रकार की व्यवस्था के लिए आगामी किसी आर्य सम्मेलन में या अन्य किसी माध्यम से सार्वदेशिक सभा में प्रस्ताव लाया जाए, जनता को समझाया जाये और जो लोग इस कल्याणमयी व्यवस्था का विरोध करें, उनको निष्कासित किया जाए। इस प्रकार ऋषि-निर्दिष्ट व्यवस्थाओं में अवस्थित हो ये समाजो के विवाद सदा-सर्वदा के लिए शान्त हो सकते हैं और अच्छे व्यक्ति आत्मतोष संभालने के लिए इसमें [illegible]

शुभ कामनाओ सहित —

"आर्यमर्यादा" ! स्वागत तेरा नूतन वर्ष

(श्री गिरिधारी लाल आर्य, चौरी चौरा)

"आर्यमर्यादा" का शुभ, आरम्भ हुआ वर्ष है।
करते स्वागत आज हमको, हो रहा अति हर्ष है॥
नाम पैदा कर दिया, पजाब के इस "पत्र" ने।
हर जगह पाखण्डियो से, ले रहा सघर्ष है॥
दे रहा सर्वत्र यह सन्देश वैदिक धर्म का।
लोगो में अब इसका ही, होता विचार-विमर्श है॥
है बधाई हार्दिक ! "सिद्धान्ती जी" आपको।
आपके हाथों में ही, इस "पत्र" का उत्कर्ष है॥
आज परमोल्लास से, इसका है यह शुभागमन।
नव वर्ष के इस अङ्क का, यह हो रहा विमर्श है॥
है आज से अभियान "ग्राहक वृद्धि" का चालू यहा।
लाभ फुर्सत का उठाए, यह काम चित्ताकर्ष है॥
"आर्यमर्यादा" का यह, आरम्भ नूतन वर्ष है॥

सम्पादकीय

आर्यमर्यादा का द्वितीय वर्ष-आरम्भ

(१) १ १२ ६८ से आरम्भ हो कर ३० ११ ६९ को आर्यमर्यादा का प्रथम वर्ष सम्पन्न हो गया। इस मत एक वर्ष मे आर्यमर्यादा को द्वारीकृत्य हमने सम्पादकीय लेखो द्वारा भूलें भी की हैं। जीव स्वभाव से अल्पज्ञ होने के कारण अपने कर्तव्यो को करने और अकर्तव्यो के न करने मे शुद्ध भाव रखने पर भी भूल कर सकता है। हम जैसे अल्पमति की तो बात ही क्या है? फिर भी हमने यह ध्यान रखा है कि हमारे लेखो से वैदिक सिद्धान्तों और आर्षमन्तव्यो का अन्यथा प्रतिपादन न हो कर यथार्थता का प्रकाश होता रहे। किन्ही विशिष्ट सज्जनों के मन्तव्य से मत भेद प्रकट करते हुए भी यह ध्यान रखा कि उनके व्यक्तित्व के प्रति अशिष्ट शब्दो का प्रयोग न हो जावे।

हमारी प्रार्थना पर समयानुसार आर्यजगत् के सुप्रतिष्ठित विद्वानो और कवि महानुभावो ने अपने अपने उत्तम भावो का आर्यमर्यादा द्वारा प्रकाश करके हमे तो कृतार्थ किया ही है, इन्होने आर्यजगत और राष्ट्र के हित को सदा आगे रखा है। हम उन सभी आदरणीय सज्जनो के प्रति आभार प्रकट करते हैं, तथा पुनर्निवेदन करते हुए आशा रखते हैं कि इस आगामी वर्ष भी यथा पूर्व आर्यमर्यादा पर कृपा बनाए रखेंगे।

आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का यह मुख पत्र है। सभा ने बहुत आर्थिक भार उठा कर भी सभा के हितो की रक्षा के लिये इसकी स्थापना की। हमने भी सभा के नियमों और उद्देश्य को सामने रख कर सभा के माननीय अधिकारियो की आज्ञा का पालन करते हुए इसको आगे बढाते रहने का यथा सम्भव यत्न किया है। सभा जहां इस पत्र की स्वामिनी शक्ति का आधार है, वहां सम्पादक के भी अपने कुछ कर्तव्य होते हैं। जहा तक हमसे हो सका है, सम्पादकीय मान को ठेस न पहुंचने दी तथा सभा के हितो की रक्षा भी करते रहे हैं।

आर्यमर्यादा का प्रथम यह वर्ष सघर्ष का काल रहा है आर्यजगत् को पूर्णतया इस भीतरी सघर्ष का ज्ञान है, इसके विषय में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं। हमने अपने कर्तव्य का पालन करते हुए सत्य के प्रकाशन का द्वार बन्द नही होने दिया, जिससे आर्यबन्धुओ को सघर्ष के बीच और विस्तार का ज्ञान होता रहे। सत्य को किसी कारण-विशेष से प्रकट न करना भी दोष है। सत्यार्थप्रकाश की भूमिका मे ऋषि दयानन्द लिखते हैं—

"जो मिथ्या बात न रोकी जाय, तो ससार मे बहुत से अनर्थ प्रवृत्त होय।"

कुछ सज्जनो का मत होता है कि बात सत्य भी हो, परन्तु लोक हित में उसका प्रकाश न किया जाय, परन्तु ऋषि के इस उक्त वचन से यह समझना ठीक नहीं। हा सत्य बात के प्रकाश को करते हुए भी यह ध्यान रखना उत्तम है कि किसी प्रकार की अशिष्टता का प्रयोग भाषण अथवा लेखो में न किया जावे। यह शिष्टमर्यादा है। हम समझते हैं कि गत वर्ष सघर्ष होते हुए भी इस प्रवृत्ति का ध्यान रखा गया है।

"स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु" (वेदे) बृहस्पति सब सृष्टि का रचयिता है, सब जीवों के कल्याणार्थ सृष्टि के आरम्भ मे सदा वेद का उपदेश देता रहता है। इसी रूप में हम भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि हमें सब प्रकार के अभद्र से मुक्त रखे।

"अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्" (वेदे) हे सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! हमे लोक हित के ऐश्वर्य को बढाते रहने के लिये निष्कण्टक श्रेष्ठ मार्ग पर चलते रहने का सामर्थ्य देते रहिये आपही वास्तविक रूप में जीव मात्र के नेता हैं।

"व्रत चरिष्यामि" (वेदे) हम परमेश्वरोपदिष्ट मार्ग पर चलते हुए सत्य धर्मों-श्रेष्ठ वैदिक कर्तव्यों का सदा पालन करते रहेंगे।

"ऋत वदिष्य" (उपनिषदि) हम अपने कर्तव्यो के पालन के लिये सत्य-व्यवहार का प्रयोग वाणी और लेख द्वारा करते रहेंगे।

इन्ही वेदोक्त भावनाओं को अपने हृदय में रख कर आर्यमर्यादा के आयामो प्रकाशन को निरन्तर चालू रखने का श्रम करत रहेगे। यही निवेदन हम अपने सहयोगी माननीय लेखक तथा कवि महाशयो से भी करते हैं कि वे भी यथापूर्व गतवर्ष की भान्ति इस आगामी द्वितीय वर्ष मे भी हमारे प्रति प्रेम भाव बनाए रखगे और आर्यमर्यादा को सप्रकाशित रखते रहेगे।

"असतो मा सद गमय" (शत०ब्राह्मण) हे परम गुरो परमात्मन! आप हमको असत् मार्ग से पृथक् कर सन्मार्ग मे प्राप्त कीजिये।' (सत्यार्थप्रकाशन)

(२)—आर्य समाजो से निवेदन

कुछ आर्यसमाजो के अधिकारी सज्जन हमे लिखते रहते हैं कि उनके समाचार पूरे रूप मे प्रकाशित नही किये जाते। उनकी बात ठीक है। कि उनके समाचार इतने लम्बे और विशिष्ट सज्जनो के नामो से भरे रहते हैं कि प्रति सप्ताह केवल २-३ समाजो के ही समाचार आयमर्यादा मे दिये जा सकते हैं। यह बात सम्भव नही है। हमारा निवेदन है कि सक्षिप्त समाचार ही भेजने चाहिये जिससे उन उन समाजो का नाम आर्य जगत् के सामने आ जावे। इसी प्रकार समाजो के निर्वाचनो मे भी प्रधान, मन्त्री कोषाध्यक्ष और पुस्तकाध्यक्ष के नाम ही भेजने चाहिये, समाचार मे कोई ऐसी बात न होवे जिससे उसको विज्ञापन समझा जा सके। इस प्रकार समाचार प्राप्त होने से अधिक आर्यसमाजो के समाचार प्रकाशित हो सकते हैं। कुछ आर्यसमाज और सस्थान ऐसे भी हैं, जो प्रति सप्ताह अपने समाचार भेज कर आशा करते हैं कि उनके समाचारो को प्राथमिकता दी जाय, खेद से लिखना पडता है कि जब उनको आर्यमर्यादा का ग्राहक बनने को लिखा जाता है, तो निषेध कर देते हैं। कुछ वी पी को भी लौटा देते हैं। इसका तो भाव यही प्रतीत होता है कि ऐसे सस्थान पैसे खर्चा किये बिना अपना नाम का विज्ञापन चाहते हैं, यह प्रवत्ति शोभा जनक नही कही जा सकती, आर्यमर्यादा में प्रकाशित विवाहो के समाचार और चित्रो का प्रकाशन देखकर ऐसे समाचार भी भेजते रहते हैं, परन्तु उन्हे ज्ञात होना चाहिये कि ऐसे समाचार और चित्र उनके ही प्रकाशित होते हैं जो कि शुभ अवसरों पर सभा को अपना दान देते रहते हैं। अत ऐसे मगल समारोहों के समय समाचार प्रेषित करने वालो को सभा को दान भेजने की प्रवृत्ति भी रखनी उचित है। सम्भव है कि कुछ सस्थानो को यह बात अप्रिय लगे, परन्तु आर्यमर्यादा के हित के रूप मे आदर पूर्वक निवेदन करना उचित समझा है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

आभार-प्रकाश

पाठको के हाथ मे दूसरे वर्ष का प्रथम अक प्रस्तुत करते हुये हमें हर्ष हो रहा है। जब १ दिसम्बर १९६८ को प्रथम अक निकाला गया था तो हम एक प्रकार से खाली हाथ थे। आर्योदय का सभी प्रकार का स्टाक (रजिस्टर, ब्लाक लेखन सामग्री ग्राहको के पते एव फाइल गुम हो गया था)। हमे सभी प्रकार की आवश्यक सामग्री सग्रह करने मे कितना परिश्रम करना पडा उसे लिखना आवश्यक नहो समझते। ३,४ मास तक हमे आर्यमर्यादा की एक प्रति पर डाकघर मे २ पसे के स्थान पर १० पैसे की टिकटे लगानी पडी और जिन ग्राहको ने शुल्क श्री भारतेन्द्र नाथ के घर के पते पर आर्योदय के नाम पर भेज दिया था उन्हें भी वर्ष भर आर्योदय के स्थान पर आर्यमर्यादा भेजा गया।

हम उन ग्राहको के आभारी हैं जिन्होने आर्योदय की भाति आर्यमर्यादा का ग्राहक बनना सहर्ष स्वीकार किया। हमारे मार्ग मे अनेक प्रकार की बाधाए आई परन्तु ईश्वर की दया से तथा ग्राहको के सहयोग से आगे ही बढते गये। शीघ्र ही आर्यमर्यादा ने आय जगत् मे अपना स्थान बना लिया।

आर्योदय के ऐजण्ट महानुभावो ने भी आर्यमर्यादा का ऐजण्ट बन कर उदारता का परिचय दिया।

हमारे अनेक हितैषियो ने नये ग्राहक बनाने में भी अमूल्य सहयोग दिया श्री सत्येन्द्रसिंह आर्य बिजनौर, महाशय ताराचन्द्र आर्य नारनौल, श्री गिरधारीलाल आर्य चोरी चौरा एव कई आर्यसमाजो के तथा आर्य सस्थाओं के अधिकारियों ने ग्राहक सख्या मे वृद्धि करके आर्यमर्यादा को अपनाया है। हम सभी सहयोगियो के हृदय से आभारी हैं।

—व्यवस्थापक

१ दिसम्बर जिनका स्मृति दिवस है—

आर्यसमाज के गगन मंडल के चमकते सितारे

आचार्य रामदेव जी

(प० दीनानाथ जी सिद्धान्तालकार १५।४७ पजाबी बाग, दुर्गा निवास नई दिल्ली—२६)

जालन्धर से शिवालक के जंगल में



इस शती के पहिले दो दशक हिमालय की शाखा शिवालक की पहाडियो की उपत्यका-क्रम मे चडी की पहाडी की तराई मे हरद्वार से लगभग ६ मील गगा पार नीलधारा तट पर घने जगल मे एक सिरफिरे, दीवाने, भोग साधनो के प्राचुर्य को सहज ही लात मार देने वाले व्यक्ति जिसने चमकाती हुई वकालत के जूए को फक कर प्रव्रज्या का वेश धारण कर लिया था—के अटल और अविचलित दृढ निश्चय का प्रतीक-गुरुकुल काँगडी। अनोखे व्यक्ति का नाम था, उस समय, महात्मा मुशीराम, बाद मे अमरशहीद स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से भारत के इतिहास मे देदीप्य—मान। लोकोत्तर व्यक्ति जब कही अगद के पैर की तरह डट जाता है, तब लग्नशील सहयोगी, चुम्बक को ओर लोहे की तरह अनायास ही उधर आकृष्ट हुए चले आते हैं। आचार्य श्री महात्मा मुशीराम जी द्वारा सचलित तात्कालिक उलटी गगा से अपने को आप्लावित करने हेतु जो सहयोगी इस दिशा मे आये, उनमें प्रमुख रामदेव जी थे, जिन्हें उस समय गुरुकुल के हम छात्र-मास्टर श्री कहा करते थे। इस सस्था में आने से पहिले वे विक्टर हाई स्कूल, जालन्धर, छावनी में प्रधानाध्यापक थे। महात्मा जो के त्यागमय और सात्विक जीवन से प्रभावित हो पुत्र रूप में अपने को उनकी सेवा में अर्पित कर दिया। पर, आचार्य श्री उन्हें अपना कनिष्ठ बन्धवत् ही समझते थे।

गुरुकुल को पडित मडली से मुक्ति

एक विशिष्ट विचारधारा की उन दिनो गुरुकुल मे प्राबल्य पडित मडली का था जिसमे शामिल थे, प० भगदत्त जी शास्त्री (बाद में श्री स्वामी शुद्धबोधतीर्थ) प० भीमसेन जो प० नरदेव जी शास्त्री, प० पद्मसिंह शर्मा इत्यादि। यह पडित वग गुरुकुल को मात्र ऊच स्तर की एक सस्कृत पाठशाला का रूप देने हेतु दृढसकल्प था। मास्टर रामदेव जी वेद और प्राचीन भारतीय वाडमय की शिक्षा के साथ अग्रेजो, विज्ञान और आधुनिक नव्य विद्याओ के कट्टर पक्षपाती थे। सघष स्वाभाविक था। यह पडित वग अपने को हारा हुआ समझ सामूहिक रूप मे गुरु-कुल से पृथक हो ज्वालापुर (हरद्वार के पास) स्वामी दर्शनानन्द जी के विद्यालय मे चला गया। इसी का नाम आजकल गुरुकुल महाविद्यालय" है जो उस समय नि शुल्क कहा जाता था।

आचाय जी गुरुकुल के मूर्धन्य

गुरुकुल कागडी का द्रुतगति से विस्तार होने लगा। विद्यालय की १० कक्षाओ के साथ महा विद्यालय की चार कक्षाए प्रारम्भ की गयी। फिर इसने विश्व विद्यालय का रूप धारण कर लिया। अब मास्टर रामदेव जो १९१२ में गुरुकुल के प्रथम आचाय पद पर आसीन हुए। महात्मा मुशीराम जी सस्था के कुलपति और मुख्याधिष्ठाता के रूप में सस्था के मूर्धन्य थे। १९१८ में जब महात्मा मुशीराम जी ने मायापुर वाटिका (कनखल) मे श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज से सन्यास आश्रम की दोक्षा ली तब आचाय रामदेव जी गुरुकुल विश्वविद्यालय के मुख्याधिष्ठाता भी बने। अब आचाय जी गुरुकुल के सर्वोच्च अधिकारी थे। आचाय जी का गुरुकुल के साथ आजीवन घनिष्ठ सम्बन्ध रहा, आचार्य और मुख्याधिष्ठाता के रूप में, फिर, इस दायित्व से मुक्त होकर आर्य प्रतिनिधि सभा, पजाब, के प्रधान के रूप में। १९२४-२५ में गंगा में भयकर बाढ आने के कारण जब गगापार गुरुकुल के भवन, अधिकांश रूप में, भूमिसात् और धराशायी हो गये, तब निश्चय किया गया कि गुरुकुल को गगापार से उठाकर कनखल और ज्वालापुर के बीच, गग-नहर के पास लाया जाए। गुरुकुल का यह एक प्रकार से दूसरा जन्म था। इसके लिए विशाल धनराशि और अन्य साधनों की आवश्यकता थी। इस भागीरथ प्रयत्न मे सफलता का श्रेय मुख्यत आचार्य रामदेव जी को ही है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का तो २३ दिसम्बर, १९२६ को दिल्ली मे बलिदान हो चुका था। इस प्रकार आचार्य जी ऐसे विश्व विख्यात महापुरुष के नेतृत्व से वचित होते हुए भी हतोत्साह नहीं हुए। गुरुकुल कागडी के निर्माता होने के अतिरिक्त आचार्य जी कन्या गुरुकुल देहरादून के आदि सस्थापक थे। वर्षों तक आप इस सस्था के मुख्याधिष्ठाता रहे।

ऋषि के परम भक्त

आचार्य रामदेव जी महर्षि दयानन्द के अत्यन्त कट्टर भक्त थे और उनके सिद्धान्तो मे अविचल विश्वास इतना अटूट था कि कई बार लोग उन्हे, भूल से अन्धविश्वासी समझ लेते। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण दयानन्द आर्यसमाज, और गुरुकुल के प्रति अर्पित था। ऋषि के सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए उनके सम्पादकत्व मे "वैदिक मैगजीन" नामक अग्रेजी मासिक पत्र, पहिले गुरुकुल से फिर, लाहौर सभा कार्यालय से प्रकाशित होता था। देश-विदेश के शिक्षित वर्ग मे यह पत्र पर्याप्त लोक-प्रिय था।

प्रगल्भ विद्वान और ओजस्वी वक्ता

आचार्य जी प्रगल्भ विद्वान् स्वाध्यायशील, विचारक और प्रभावशाली वक्ता थे। इतिहास, दर्शन, साहित्य, विश्व के धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन—इत्यादि विषयों पर—विशेषतः पाश्चात्य दृष्टिकोण से—आचार्य जी के भाषण श्रोताओ को मन्त्रमुग्ध कर देते थे। गुरुकुल कांगड़ी और बच्छोवाली लाहौर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सवों पर आचार्य जी के भाषण प्रति वर्ष नवीनता से भरपूर होते थे। आर्यसमाज के उत्सवों में आप के भाषण, प्राय, रविवार को, ३ या ४ बजे के बीच होते जब हजारो की सख्या मे जनता—विशेषत युवक—केवल आप के ही व्याख्यान सुनने के लिए आते थे। आचार्य जी जब मच पर व्याख्यान देने के लिए आते, तब, मेज पर एक ओर पृष्ठ चिह्नो से पूरित सस्कृत, हिन्दी, अग्रेजी पुस्तको के अबार लग जाते और दूसरी ओर दूध भरा या केवल पानी का गिलास रख दिया जाता। आचाय जी के मंच पर आते ही खचाखच भरा हुआ पडाल जोरदार करतल ध्वनि से गूज उठता। उन दिनों उच्चध्वनि यन्त्र तो होते नही थे पर आचार्य जी की ऊची आवाज पडाल के बाहर तक सुनायी देती थी। आचाय जी की स्मरणशक्ति गजब की तेज थी। अनेक विद्वानो के लम्बे-लम्बे उद्धरण आपको कठस्थ थे। आप की वाणी असाधारण रूप से द्रुतगति से चलती थी। सामन्यतः अगर १ मिनिट मे एक वाक्य बोला जा सकता है, तब आचार्य जी की ओजस्वी वाणी १ मिनिट मे तीन वाक्य बोल जाती थी। मंच पर आप मेज के तीनो ओर घूम-घूम कर भाषण देते थे। आपके भाषणो में, सिद्धान्त की पुष्टि में, नयी से नयी मिली व उपलब्ध पुस्तकों के प्रमाण और उद्धरण होते थे। उन दिनों अधिकाश भारतीय युवक डार्विन के "विकास वाद" से विशेष प्रभावित थे, वेद को ईश्वरीयज्ञान और अपौरुषेय नही मानते थे, भारतीय सभ्यता की अपेक्षा पाश्चात्य सभ्यता की नकल करने में गौरव मानते थे तथा महर्षि दयानन्द के महत्त्व का समुचित मूल्याकन नही जानते थे। आचार्य जी के तर्क और प्रमाणो से भरपूर ओजस्वी भाषण श्रोताओं को ऋषि दयानन्द, आर्यसमाज, वेद, गुरुकुल-शिक्षा पद्धति, प्राचीन भारतीय सभ्यता, राष्ट्रप्रेम, तपोमय जीवन, उज्ज्वल गृहस्थी, सन्यास धर्म—इत्यादि विषयों का परम विश्वासी और दृढ़ अनुगामी बना देता था।

भाषण के पश्चात् जल की वर्षा

हमने कई बार देखा कि दूध व पानी पीने के बावजूद आचार्य जी का

(शेष पृ० १० पर)

उपासना-प्रदीप—५

(श्री प० जयकुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—"सत्यार्थ-प्रकाश" के सातवे समुल्लास के आधार पर, महर्षि दयानन्द जी के [लगभग] अपने शब्दो मे ही साधन-पथ विषयक मुख्य-मुख्य बातों का उल्लेख पहले हो चुका है। कुछ अन्य बातो को अब बताते हैं।

प्रात जागरण

२—महर्षि दयानन्द लिखते हैं—

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत, धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान, वेदतत्त्वार्थमेव च॥ मनु०—४।९२

रात्रि के चौथे पहर अथवा चार घडी रात से उठे। आवश्यक कार्य करके धर्म और अर्थ, शरीर के रोगो का निदान और परमात्मा का ध्यान करे। कभी अधर्म का आचरण न करे। [सत्यार्थ-प्रकाश, चौथा समुल्लास]

धर्म के दस लक्षण

[३—पाच यमो और पाच नियमो का प्रतिपालन सभी साधको को आजीवन करना चाहिये। महर्षि मनु और महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित धर्म के दस लक्षणो का उल्लेख यहा करते हैं। तात्त्विक दृष्टि से यमनियमो और धर्म के लक्षणो मे कोई भेद नही है।

धृति क्षमा दमोऽस्तेय, शौचमिन्द्रिय-निग्रह।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो, दशक धर्मलक्षणम्॥ मनु० ६।९१

(१) धृति —सदा धैर्य रखना। (२) क्षमा—जो कि निन्दा, स्तुति, मानापमान, हानि-लाभ आदि दु खो मे भी सहन शील रहना। (३) दम—मन को सदा धर्म मे प्रवृत्त कर अधर्म से रोक देना, अर्थात् अधर्म करने की इच्छा भी न उठ।(४) अस्तेय—चोरी, त्याग, अर्थात् विना आज्ञा वा छल, कपट, विश्वास-घात तथा वेदविरुद्ध उपदेश से पर-पदार्थ को ग्रहण करना चोरी और उस को छोड देना साहूकारी कहाती है। (५) शौच—राग-द्वेष, पक्षपात छोड के भीतर और जल मत्तिका मार्जन आदि से बाहर की पवित्रता रखना। (६) इन्द्रिय-निग्रह—अधर्माचरण से रोक के इन्द्रियो को धर्म मे ही सदा चलाना। (७) धी —मादक-द्रव्य, बुद्धिनाशक अन्य पदार्थ दुष्टो का सग, आलस्य-प्रमाद आदि को छोड के श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन, सत्पुरुषो का सग, योगाभ्यास से बुद्धि को बढाना। (८) विद्या—पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त यथार्थ-ज्ञान और उस से यथायोग्य उपकार लेना। [सत्य] जैसा आत्मा मे वैसा मन मे, जैसा मन में वैसा वाणी मे, वैसा वाणी मे वैसा कर्म मे वर्तना विद्या, इससे विपरीत अविद्या है। (९) सत्य—जो पदार्थ जैसा हो, उस को वैसा ही समझना, वैसा ही बोलना, और वैसा ही करना भी। (१०) अक्रोध—क्रोधादि दोषो को छोड के शान्ति आदि गुणो को ग्रहण करना धर्म का लक्षण है। इस दश लक्षण युक्त पक्षपात-रहित न्यायाचरण धर्म का सेवन चारो आश्रमो वाले करें। और इसी वेदोक्त धर्म ही मे आप चलना और दूसरो को समझा कर चलाना सन्यासियो का विशेष धर्म है। [सस्कार विधि मे इन दश के साथ ११वाँ अहिंसा को भी ऋषि दयानन्द ने सम्मिलित किया है।]

सशोधन-विधिः

४—पवित्रता के अभाव में तो उपासना का कोई भी कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता। पवित्रता से प्रेम करना तो मानो परम पावन भगवान् से प्रेम करना ही है।

सर्वेषामेव शौचानामर्थशौच परस्मृतम्।
योऽर्थे शुचिर्हि स शुचि नं मद्वारिशुचि शुचि॥ मनु० ५-१०६

जो आर्थिक [लेन-देन और हिसाब-किताब की] पवित्रता है, वही सर्वश्रेष्ठ पवित्रता है। जो आर्थिक रूप में पवित्र, हिसाब और लेन-देन का सच्चा तथा पवित्र कमाई करने वाला है, वही पवित्रात्मा है। मिट्टी या पानी से पवित्रता करने वाला उससे बढकर नही।

५—एवमेव—मनु० ५।१७ मे भी लिखा है—

क्षान्त्या शुध्यन्ति विद्वांसो, दानेनाकार्यकारिण।
प्रच्छन्नपापा जप्येन, तपसा वेदवित्तमा॥

शान्ति=क्षमाशीलता से विद्वान्, दान से पापी, जप से गुप्त-पापी और तप से वेदज्ञ शुद्ध होते हैं। अर्थात् क्षमाशीलता से ही विद्वानो की और तपस्या से वेदज्ञो की शोभा निरन्तर बढती है।

६—तथाच। मनु० ५।१०९

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति, मन सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्या भूतात्मा, बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति॥

शरीरादि जल से शुद्ध होते हैं। मन सत्य से शुद्ध होता है। विद्या और तप से जीवात्मा शुद्ध होता है। बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है।

७—महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं —

नाधर्मश्चरितो लोके, सद्य फलति गौरिव।
शनैरावर्तमानस्तु, कर्तुर्मूलानि कृन्तति॥ मनु० ४।१७२

किया हुआ अधर्म निष्फल कभी नहीं होता, परन्तु जिस समय अधर्म करता है, उस समय फल भी नही होता। इसलिये अज्ञानी लोग अधर्म से नही डरते। तथापि निश्चय जानो कि वह अधर्माचरण धीरे-धीरे कर्त्ता के सुख के मूलो को काटता चला जाता है।

८—वे फिर लिखते हैं —(मनु० ४।१७४)

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति।
तत सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति॥

जब अधर्मात्मा मनुष्य धर्म की मर्यादा छोड [जैसा तालाब के बन्धन को तोड जल चारो ओर फैल जाता है, वैसे] मिथ्याभाषण, कपट, पाखण्ड, अर्थात् रक्षा करने वाले वेदो का खण्डन और विश्वासघातादि कर्मों से पराये पदार्थों को लेकर प्रथम बढता है, पश्चात धनादि ऐश्वर्य से खान, पान, वस्त्र, आभूषण यान स्थान, मान प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है, अन्याय से शत्रुओ को भी जीतता है, पश्चात् शीघ्र नष्ट हो जाता है, जैसे जड कटा हुआ वृक्ष नष्ट हो जाता है, वैसे अधर्मी नष्ट भ्रष्ट हो जाता है।

९—चेतो! चेतो!!, भोले लोगो! चेतो!!

प्रथम होता पापी विस्तार, भोगता भोग रचाता रास।
वह लेता शत्रु-दल को जीत, शीघ्र फिर उस का नाश॥
कहाँ है रावण का परिवार? कहा है बली? कहा है कस?
सुयश है राम-कृष्ण का शेष कलकित हो गये पापी वस॥
जगत् का यही सनातन धर्म, सत्य का होता बेडा पार।
मगर पापी की भर कर नाव, डूब जाती है बीच मझधार॥
कर तप, त्याग, यज्ञ, व्रत, नियम, फिर या वेद-शास्त्र गाते।
जो होते, दुष्टभाव के विप्र, नही वे सिद्धि को पाते॥

१०—ढोग से भी बचो, ढोगियो से भी—

अविद्यायामन्तरे वर्तमाना, स्वय धीरा पण्डितम्मन्यमाना।
जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा, अन्धेनैव नीयमाना यथान्धा॥
—मुण्डकोपनिषद्—२।८

जो अविद्या के भीतर खेल रहे, अपने को धीर और पण्डित मानते हैं, वे नीच गति को जाने हारे मूढ जैसे अन्ध के पीछे अन्धे दुर्दशा को प्राप्त होते हैं, वैसे दु खो को पाते हैं। —[सत्यार्थ-प्रकाश पाचवा समुल्लास]

११—फिर लिखते हैं—मुण्डकोपनिषद्—२।९

अविद्यायां बहुधा वर्तमाना, वय कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बाला।
यत्कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्, तेनातुरा क्षीणलोकाश्च्यवन्ते॥

जो बहुधा अविद्या मे रमण करने वाले बालबुद्धि, हम कृतार्थ हैं, ऐसा मानते हैं, जिसको कर्मकाण्डी लोग राग मे मोहित होकर नही जान और जना सकते, वे आतुर होके जन्म-मरण रूप दु ख मे गिरे रहते हैं।
—[सत्यार्थ-प्रकाश, पाचवा समुल्लास]

१२—किसी कवि ने ढोगियो का खाका उडाया है—

गीता पुस्तक हाथ साथ विधवा, माला विशाला गले,
गोपीचन्दन चर्चित सुललित, भाले च वक्षस्थले।
बैरागी नटवा कलाल, पटवा धोबी धुना धीवरा,
हा! वैराग्य!! कुतो मत? कलियुगे गुण्डा पर वैष्णवा॥

१३—गीताकार का कथन है—गीता—७।३

मनुष्याणां सहस्रेषु, कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां, कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वत॥

अर्थ—ईश्वर-दर्शन की सिद्धि को प्राप्त करने के लिये हजारो मनुष्यो में से कोई एक-आध ही प्रयत्न करता है। और, जो प्रयत्न करते हैं, उन साधकों में से भी कोई एक-आध ही ईश्वर को तात्त्विक रूप में जान लेने में सफल होता है।

आकाशवाणी द्वारा प्रसारित—

सुघड़ गृहिणी-पारिवारिक आर्थिक व्यवस्था

(ले०—कु० सुशीला आर्या एम० ए० सुख निवास, बरली बावरी)

हमारे यहाँ एक पुरानी कहावत है "बिन घरनी घर भूतों का डेरा।" इसका नमूना आप किसी भी ऐसे घर में जाकर बड़ी आसानी से देख सकते हैं, जो दुर्भाग्यवश घरवाली से सूना हो। सच तो यह है कि गृहिणी ही घर है। बिना उसके घर नहीं, उसे मकान भले ही कहलें। फिर गृहिणी यदि सुघड हो तो क्या कहना? उसके राज्य मे हर चीज ठिकाने पर मिलेगी। एक-एक पैसा ठीक स्थान पर खर्च होगा। यहा तक कि बेकार वस्तुए भी घर की शोभा बढाने का कारण बनेगी। ऐसी कुछ व्यवस्था होगी कि देखने वाले दान्तो तले अगुलि दबाए।

इसमे कोई सन्देह नही कि परिवार की आर्थिक व्यवस्था सुघड गृहिणी ही करती है। चाहे वह धन खुद कमाए या घर के पुरुष उसे कमा कर दे उस पैसे को ऐसे ढग से खर्च करना कि परिवार सुख से बसे हमारी बहिनो के ही हाथ मे है।

आज के जमाने मे यह शिकायत हमे आम तौर पर सुनने को मिलती है—क्या करें हाथ तग है गुजारा नहीं होता। घर में कमाने वाला एक हो या कई, आमदनी ज्यादा हो या कम, पैसे की तगी ने सब को तग कर रखा है। क्योकि सौभाग्य से जिनकी आय काफी है उनके खर्चे भी बढे चढे हैं। इस बदलते युग मे हमारी आवश्यकताए बहुत बढ गई हैं। केवल रोटी कपडा और मकान ही समस्या का समाधान नही रह गया, बल्कि पूरा आधुनिक साज सामान भी साथ ही चाहिए। एक समय था जब एक आदमी कमाता था और आठ दस का परिवार सुख से खाता था किन्तु अब तो जैसे अ गुलियो मे छेद हो गए हैं। पैसा है कि दीखता है। वस्तु है कि दीखती ही नही। धन को हाथों से फिसलते देर ही नही लगती। लक्ष्मी की चञ्चलता जसे पहले से कई गुणा बढ गई है। कुछ इने गिने लोगो की बात जाने दीजिए साधारण लोगो की यह दशा है कि महीना पूरा भी नही हो पाता और रकम छूमन्तर हो जाती है। सचमुच यह सुघड गृहिणी के लिए अग्नि परीक्षा का समय है। उसे अपने परिवार की आर्थिक व्यवस्था कुछ इस प्रकार से करनी है कि इस बढती महगाई और जरूरतो के दो पाटो के बीच मे आकर भी उसे ठेस न पहुचे। परिवार की हरियाली और खुशहाली धन की ठीक व्यवस्था पर ही निर्भर है।

इस विषय में सब से पहली बात यह है कि सोचे विचारे बिना यह व्यवस्था ठीक नही चल सकती। यदि हम अन्धाधुन्द खर्चे करते ही चले जाए तो बडी से बडी रकम भी हाथो से निकल जाएगी और हम देखते ही रह जाएगे। इस लिए पहले से ही हमारे दिमाग में एक नक्शा होना चाहिए। अपनी आमदनी और खर्च की पूरी जानकारी सुघड गृहिणी को हो। फिर यह भी कि धन का कितना भाग किस काम पर खर्च करना है। भूलना नहीं है कि धन कमाना जितना कठिन है उसे ठीक खर्च करना उससे भी ज्यादा कठिन है। हमारे कितने ही परिवार ऐसे हैं जो धन की कमी से दुखी नही उलटे बिना विचारे खर्च करने से परेशान हैं।

सुघड गृहिणी को चाहिए कि अपने परिवार के खर्चों मे सन्तुलन पैदा करे। न तो किसी वस्तु पर बहुत अधिक खर्च हो न बहुत कम। हमारे जीवन मे दो प्रकार को जरूरते हैं। एक वे जो टाली नहीं जा सकती। जैसे रोटी, कपडा, पढाई और स्वास्थ्य आदि पर होने वाला खर्च आदि। दूसरी जो सब के लिए एक सी जरूरी नही होती। जैसे कीमती फर्नीचर, नित्य नये बदलते फैशन के कपडे व गहने और दूसरा साज समान। ये चीजें हमे मिल सक तो बडी खुशी से खरीदें लेकिन चादर देख कर ही तो पैर पसारे जाते हैं। यह कोई समझदारी नहो कि देखा-देखी की धुन में हम परिवार की आर्थिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न कर दें। पडौसिन ने इस नमूने की साडी ली है देवरानी ने अमुक डिजायन के झमके बनवाए हैं मेरे जूते नई टाइप के नही, हमारा फर्नीचर बदले हुए फैशन का नही अमुक के यहा बिल्कुल माडर्न बर्तनो का सैट है—यही वे मागे हैं—जो हमारा दिवाला निकाने जा रही हैं। सुघड गृहिणी का कर्त्तव्य है अपनी कमाई के हिसाब से नई पुरानी हर चीज को उपयोगी बनाकर रखना। कौन नही जानता नया नौ दिन पुराना सौ दिन। कई बहिनों मे तो ऐसी बुद्धि होती है कि पुरानी चीजो में ही कुछ फेर बदल करके उसे नया रूप दे देती हैं यहा तक कि नई के खरीदने की जरूरत ही न रहे। टूटी फूटी, पुरानी, बेकार सी दीखने वाली वस्तुओ से भी कुछ लाभ उठा लेना ही हमारी सुघडता की निशानी है। नमी बनाई सजधज वाली तो दर्जनों चीजें बाजार में मिलती ही हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए कि हम अपने खून पसीने की कमाई का धन इन पर खर्च कर दें और बच्चे दूध के लिए मु ह ताकते रह जाए। बीमार को दवाई न मिल सके। या स्कूल कालिज को फीस समय पर न दी जाए, बिजली पानी का बिल देर से चुकाने के कारण जुर्माना भुगताना पडे।

विशेष ध्यान देने की बात यही है कि हममें इतनी समझ होनी चाहिए हमारी सब से महत्त्वपूर्ण आवश्यकता कौन सी है? क्योंकि सब की सभी जरूरतें पूरी होना बडा कठिन है जरूरते ज्यादा हैं साधन कम। एक तरफ तो खाने, पहनने, पढाई और बीमारी पर खर्च जैसी आवश्यकताए हैं दूसरी तरफ केवल मनोरञ्जन या लोक दिखावे के लिए सामने आने वाली जरूरते हैं। इनमें से पहला स्थान उन चीजों को मिलना चाहिए जिनके बिना हम जिन्दा नही रह सकते, स्वस्थ नही रह सकते।

इसके साथ ही आर्थिक व्यवस्था में समानता हो। यह नहीं कि कभी 'घी घना, कभी मुट्ठी चना और कभी वह भी मना।" या फिर विवाह शादी तीज त्योहार को तो खूब रग मौज उडे पीछे हाथ मलते रह जाए। गहने कपडो पर ताकत से बढकर खर्च करें फिर कभी भोजन के भी लाले पड जाए। महीने के पहले दस दिन तो होटलो और रेस्तरा के दरवाजे खटखटाते रहें और पिछले दस दिनो उधार का पैसा मागने वालो की शर्म से सैर के लिए निकलना भी बन्द हो जाए। हमारा अभिप्राय यही है कि घर के सब खर्चों को ठीक ठीक चलाने के बाद भी कुछ न कुछ बचा लेना ही अच्छी आर्थिक व्यवस्था है। इस प्रकार हमे न किसी के आगे हाथ फैलाना पडेगा, न ही पछताना होगा। क्योकि जीवन में जहा फूल हैं वहा काटे भी वहा कमाने के दिन हैं वहा हारी बीमारी बेकारी जैसे सकट भी हैं। उन्हे आखो से ओझल करके हम सुखी नहीं रह सकते।

कौन नहीं चाहता कि हम अधिक से अधिक कमाए? किन्तु वह पारस पत्थर कहा है जिसके छूने से लोहा सोना बन जाता है? उत्तर मिलेगा—हम शरीर या बुद्धि या दोनो से ही काम लेकर धन कमा सकते हैं। इसलिए अधिक कमाने की इच्छा है तो गृहिणी को इस ढग से धन खर्च करना चाहिए ताकि परिवार के सब लोगो का शरीर स्वस्थ रहे। बुद्धि बुरे कामो में न लगे। ऐसी बचत किसी काम की नहीं जो हमारे कमाने की शक्ति को ही कम कर दे।

आर्थिक व्यवस्था मे और भी कई बातें ध्यान रखने की हैं जैसे घरका जरूरी समान ठीक समय पर जुटाना, फसल के मौके पर अनाज खरीदना उधार पर कोई वस्तु न लेना, बचत के धन को ऐसे काम में लगाना कि धन भी बढे और देश को भी लाभ हो। "आम के आम गुठलियो के दाम।" ऐसा भी न हो कि घर के किसी सदस्य की तो सभी जरूरतें पूरी हो जाए और कोई अपना सा मु ह लेकर रह जाए। परिवार में कई खर्चे ऐसे भी होते हैं जिनसे लाभ कुछ समय बाद मिलता है। जैसे बच्चो की पढ़ाई पर होने वाला खर्च। ऐसे खर्चों मे कमी-कमी नहीं करनी चाहिए। इसे आगे के समय के लिए बचत समझना चाहिए। इसी प्रकार स्वास्थ्य पर होने वाले जरूरी खर्च में भी कटौती करनी ठीक नहीं।

सच पूछो तो अच्छी पारिवारिक आर्थिक व्यवस्था वही कहलाएगी कि न तो हम पैसा-पैसा दान्तो से पकडें न इतना खुला हाथ हो कि ऋण लेकर मौज उडाए। न बाहरी ठाट बाट पर इतना कम खर्च करें कि लोग हमें फटेहाल कहें, न ही खाने पीने में इतनी कजूसी हो कि मु ह पिचका पेट खाली रह जाए।

एक बात और भी घर से बाहर काम करने वाली बहिनों के लिए परिवार की आर्थिक व्यवस्था को ठीक रखना और अधिक कठिन हो जाता है। ऐसी दशा में नौकरों पर नियन्त्रण में बडी सावधानी होगी। जो बहिनें कोई स्थायी नौकरी नही भी करती हैं वे भी परिवार की जरूरतें पूरी करने के लिए घर में कोई छोटा मोटा धन्धा करने का यत्न करें। मेहनत से कमाना, आखें खोलकर खर्च करना और बचत से पूरा लाभ उठाना यही परिवार की आर्थिक व्यवस्था की कुञ्जी है। चाहे हम अनपढ़ हैं या पढी लिखी, गाव मे रहती हैं या शहर में, हमारी कमाई कम है या ज्यादा हमें अपनी पारिवारिक आर्थिक व्यवस्था पूरी ईमानदारी और दूरदर्शिता से करनी चाहिए तभी हम सुघड़ गृहिणी कहलाने का गौरव प्राप्त कर सकेंगी। ●

गतांक से आगे—

केशवचन्द्र सेन का नवविधान (New Dispensation) और आर्यसमाज

(डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० पी० एच० डी०
मन्त्री राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा अजमेर)

इधर तो ईसाई विचारो को प्रधानता दी गई और उधर हिन्दुओ के प्रचलित रूढिवाद से समझौता करने का यत्न किया गया। नव विधान चू चू का मुरब्बा बन गया। ब्राह्मसमाज की क्रान्तिकारिणी विचारधारा को धीरे धीरे तिलाञ्जलि दे गई और मूर्तिपूजा बहुदेवोपासना तथा अन्य धार्मिक अंधविश्वासो और रूढियो की नई-नई व्याख्याये की जाने लगीं। अब रामकृष्ण परमहस के सम्पर्क और चैतन्य के प्रभाव के फलस्वरूप केशव एक भावुक भक्त के रूप मे जनता के समक्ष अवतरित हुये। सकीर्तन भजन नृत्यगान आदि का खूब प्रचार होने लगा। केशव ने समझा कि अब मैदान मार लिया। रूढिवादी हिन्दुओ को प्रसन्न करने का सबसे आसान तरीका यही दीख पडा कि उनकी बातो को अपना लेना चाहिये। परन्तु हमारी सम्मति मे अनुचित तुष्टीकरण की नीति जहा जहा भी अपनाई गई है, उसका परिणाम विपरीत ही हुआ है। न तो केशव के अनुयायी ही इससे सतुष्ट हो सके और न केशव कट्टर पथी हिन्दुओं को ही अपनी ओर आकृष्ट कर सके।

रोमा रोला ने केशव की इस नीति के विश्लेषण के अनन्तर लिखा है—
' He believed that he had found the key to the popular polytheism so repugnant to the Brahmo Samaj and that he could make an alliance between it and pure theism He was obliged to convince himself (he failed to convince the polytheists) that their gods were at bottom nothing but the names of different attributes of the one God

' अर्थात उन्हें यह विश्वास हो गया था कि वे प्रचलित बहुदेवतावाद की व्याख्या करने की कुंजी पा गये हैं, वह बहुदेवतावाद जो ब्राह्मसमाज के लिये इतना असहनीय है। अब वे शुद्ध एकेश्वर और बहुदेवोपासना के बीच समझौता करा सकेंगे। उन्होंने अपने आपको तो यह कहकर समझा लिया कि ये देवता ईश्वर के विभिन्न गुणो के ही प्रतीक हैं, परन्तु दुर्भाग्यवश यह सिद्धान्त उन लोगो को मान्य नही हो सका जो स्वय बहुदेवादी थे। अनुचित तुष्टीकरण की नीति का तो यही फल होना था। वस्तुत आप पौराणिक अंधविश्वासों की कितनी ही नूतन व्याख्यायें करें, इससे वे लोग सतुष्ट और प्रसन्न नहीं होंगे जो अंधविश्वासो को अंधविश्वास के रूप में ही मानते हैं और मानना चाहते हैं। वे अपने विश्वासो को [illegible] के आधार पर खडा करना नही चाहते। ऐसी स्थिति मे केशव का उनका समर्थन 'मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त' वाला दृष्टान्त उपस्थित करता है। केशव के लिये यह नीति घातक सिद्ध हुई। जिस पौराणिक [illegible] को सतुष्ट करने के लिये केशव ने मूर्तिपूजा और बहुदेवतावाद से समझौता किया था, उनका तो निकट आना दूर, उल्टे उनके द्वारा इस [illegible] जनित व्यामोह उत्पन्न किये जाने के कारण उनके बुद्धिवादी [illegible] ही उनका साथ छोड बैठे।

ऐसी शोचनीय स्थिति में नवविधान के सार्वदेशिक रूप धारण करने की तो सम्भावना ही नहीं थी। केशव की मृत्यु के पश्चात प्रतापचन्द्र मजूमदार जैसे उनके इने-गिने उत्साही भक्तो और साथियों को छोडकर संस्था का नाम ही शेष रह गया। कालान्तर में नवविधान मे भी फूट पड गई। ब्राह्मसमाज के इतिहास लेखक के अनुसार १९१२ ई० में नवविधान के अनुयायियो के चार विभिन्न दल थे।

(i) The Lily Cottage Party (ii) The Durbar Party (iii) The Youngmen's Parrty (iv) The Keshub Academy Party 1 D C Sarma लिखित 'द रेनेसां आफ हिन्दूइज्म' के पृ० ११० पर उद्धृत। शेष लोग ईसाई हो गये और ब्राह्मसमाज छिन्न-भिन्न हो गया।

उपर्युक्त विवेचन में नवविधान के पतन के जिन कारणो का विश्लेषण किया गया है उन्हें सारारूप में हम इस प्रकार उपस्थित कर सकते हैं।

(१) नवविधान पर ईसाइमत का प्रभाव।

(२) केशव का अपने आपको पैगम्बर पद पर प्रतिष्ठित करना।

(३) हिन्दू रूढिवाद से समझौता करना।—प्रसिद्ध किया।

अब हमे यह देखना है कि आयसमाज का इन बातो के प्रति कसा रुख रहा? सवप्रथम ईसाई प्रभाव की समस्या को लीजिये। आयसमाज ने ईसाईमत प्रचार को भारतवष के प्रति विदेशियो की आक्रमण नीति का अग समझा। अत ईसाइयो से प्रभावित होना तो दूर आयसमाज ने उनके प्रति प्रारम्भ से ही कडी नीति का व्यवहार किया। इसमे उस मत के प्रति किसी प्रकार का द्वषभाव किंचितमात्र भी नही था। दयानन्द की राष्ट्रिय विचारधारा ईसाइयो के प्रभुत्व को सहन करने मे असमर्थ थी। दयानन्द ईसाइयो के ऐसे किसी सावभौम चच के समक्ष आत्म-समपण करने के विरुद्ध थे जो राष्ट्रियता का घातक हो और जो जाति के स्वाभिमान को कुचल कर उसे प्रत्येक बात मे यूरोप वालो का परमुखापेक्षी बनाये। रोमा रोला ने आयसमाज की राष्ट्रियता और उसके सस्थापक के व्यक्तित्व का वणन करते हुये लिखा है—

Indian religious thought raised a purely Indian Samaj against all Keshab s Brahmo Samaj against attempt at Westernisation even during his life and its head was a personality of the highest order Dayanand Sarasvaty

केशव के जीवनकाल मे ही भारत की धार्मिक चिन्ता ने एक विशुद्ध भारतीयसमाज का सघटन किया जो ब्राह्मसमाज और उसकी पाश्चात्यीकरण को सभी प्रवृत्तियो के विरुद्ध था। इसका प्रधान या सर्वोच्च व्यक्तित्व वाला पुरुष दयानन्द सरस्वती।

दयानन्द द्वारा किये गये ईसाईमत के विरोध मे जहा और अनेक भावधाराय काय कर रही थी, वहाँ उनमे सवप्रमुख थी ईसाइयत की अराष्ट्रिय मनोवृत्ति का विरोध करने की भावना। दयानन्द की राष्ट्रियता सकुचित नही थी इसलिये यह नही समझना चाहिये कि उन्होने ईसाइयत का जो विरोध किया वह किसी पूर्वाग्रह और पक्षपात से युक्त होकर किया। यदि दयानन्द की राष्ट्रियता की यह समझ कर ही व्याख्या की जाय कि उन्होने विशुद्ध भारतीय परिस्थितियो और समस्याओ को ही अपने दृष्टि-पथ मे रख कर अपना कायक्रम बनाया था तो यह सम्भवत उनके साथ अन्याय होगा। वस्तुत दयानन्द के मानववादी सिद्धान्त का राष्ट्रियता तो एक अग मात्र है। उससे प्ररणा पाकर किसी भी देश का निवासी अपने राष्ट्र का निष्ठावान भक्त बन सकता है। अत दयानन्द के राष्ट्रवाद की व्याख्या इसी बात को ध्यान मे रखते हुए करनी चाहिये, अन्यथा उसके वास्तविक स्वरूप का पता लगाना कठिन हो जायगा क्योकि राष्ट्रियता का एक अथ—My country Right or wrong भी होता है। दयानन्द ऐसे सकुचित राष्ट्रवाद को पसद नही करते थे तभी तो उन्होंने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका मे अपने द्वारा किये गये परमत परीक्षण की सफाई देते हुये लिखा है—

'यद्यपि मैं आर्यावत देश मे उत्पन्न हुआ और बसता हूं तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरो की झूठी बातो का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हू वैसा ही दूसरे देशस्थ वा मतोन्नति वालो के साथ वतता हू वैसा स्वदेश वालो के साथ मनुष्योन्नति के विषय मे वर्तता हू वसा विदेशियो के साथ भी, तथा सब सज्जनो को वर्तना योग्य है। क्योकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निंदा, हानि और बद करने मे तत्पर होते हैं वैसे ही मैं भी होता परन्तु ऐसी बात मनुष्यपन से बाहर हैं।" यह है दयानन्द की उत्कृष्ट मानवता।

जब आर्यसमाज का आधार ही विशुद्ध मानववाद और समग्र ससार के प्राणियो की सेवा जैसे उदात्त भावो से परिपूण है तो उसके सस्थापक अथवा उसके किसी अनुयायी द्वारा गुरुडम को प्रश्रय देने या अपने आपको अद्भुत प्रभुत्व सम्पन्न और अलौकिक शक्तिशाली देवदूत या पैगम्बर सिद्ध करने की आवश्यकता ही नही थी। स्वामी दयानन्द यह भलीभाति जानते थे कि जो लोग ऐसा पाखण्ड रचते हैं उनकी एक दिन कलई अवश्य खुलती है। अत उन्होने आर्यसमाज की नीव व्यक्तिवाद के स्थान पर

शेष पृष्ठ ९ पर

गतांक से आगे— [एक ऐतिहासिक अनुसन्धान]

मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी का बनवास से आगमन काल का निर्णय—

[श्री प० महामुनि जी शास्त्री विद्याभास्कर
आचार्य हरयाणा-विद्यापीठ गुरुकुल भैसवाल—(रोहतक)]

इसकी पुष्टि के लिए अन्य घटनाओ का काल ज्ञान भी सहायक होगा। अत उन पर भी कुछ दृष्टिपात कर लेना उचित है।

जैसे सीता हरण कब हुआ? अर्थात् कौन से वर्ष मे तथा किस ऋतु मे? रावण की कैद मे सीता कितने समय तक रही? सीता की खोज के लिए वानरो का प्रस्थान किस वर्ष मे किस ऋतु मे हुआ?

वानरो और राक्षसो का युद्ध किस समय आरम्भ हुआ और कितने दिन तक होता रहा? अर्थात् युद्ध कितने दिनो मे समाप्त हो गया? इत्यादि। चित्रकूट पर्वत से प्रस्थान करके श्री राम दण्डकारण्य मे ऋषि मुनियो के आश्रमो मे दस वर्ष तक घूमते फिरते रहे। किसी आश्रम मे चार मास किसी मे दस मास किसी मे वर्ष भर इस प्रकार दस वर्ष हो जाने पर उनका (श्री रामचन्द्र जी का) विचार अगस्त्य ऋषि को देखने का हुआ जो सब ऋषियो से सुदूर दक्षिण मे निवास करते थे। सुतीक्ष्ण मुनि के निर्देशानुसार अगस्त्य जी के आश्रम मे गये। अगस्त्य ऋषि से मिलकर वनवास काल के शेष दिन व्यतीत करने के लिए उनसे अपने निवास योग्य स्थान पूछा। अगस्त्य जी ने सोच विचार कर उनको पञ्चवटी मे स्व आश्रम बनाकर रहने का परामर्श दिया। तदनुसार श्री राम, लक्ष्मण और सीता जी ने वहा जाकर लगभग तीन वर्ष तक निवास किया।

चौदहवे वर्ष के आरम्भ मे तेरहवे वर्ष के अन्त मे सीता जी का रावण द्वारा अपहरण हुआ। इस मे निम्नलिखित प्रमाण हैं—

तत्र संवसतस्तत्र मुनीनामाश्रमेषु वै।
रमतश्चानुकूल्येन ययु सम्वत्सरा दश॥"

अरण्य काण्ड सर्ग ११, श्लोक २६

अस्मिन्नरण्ये भगवानगस्त्यो मुनिसत्तमः।
वसतीति मया नित्य कथाः कथयतां श्रुतम्॥
न तु जानामि तं देशं वनस्यास्य महत्तया"।

अरण्य० ११-३०, ३१

अर्थात मुनियो के एक आश्रम से दूसरे आश्रम मे निवास करते हुए रामचन्द्र जी के दश वर्ष व्यतीत हो गये। परन्तु अगस्त्य मुनि का आश्रम नहीं आया, तब सुतीक्ष्ण जी से उनके आश्रम की जिज्ञासा की।

"वसतस्तस्य तु सुखं राघवस्य महात्मनः।
शरद् व्यपाये हेमन्त : ऋतुरिष्ट प्रवर्तते॥' अरण्य० १६-१,
तं देश राक्षसी काचिदाजगाम यदृच्छया॥
सा तु सूर्पणखानाम दशग्रीवस्य रक्षस।
भगिनी राममासाद्य ददर्श त्रिदशोपमम्॥

अरण्य० सर्ग. १७-५-६

पञ्चवटी मे सुख पूर्वक निवास करते हुए रामचन्द्र जी के एकदा शरद् ऋतु के व्यतीत हो जाने पर हेमन्त ऋतु का आगमन हुआ। उन दिनो मे अचानक ही एक दिन रावण की बहन सूर्पणखा घूमती हुई वहा आ गई। सीता जी का अन्वेषण करते हुए जब लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जी शबरी तापसी से मिलकर पम्पासर पहुचे तब वसन्त ऋतु का आगमन हो चुका था। यथा —

"अदृश्यमाना वैदेही शोकं वर्धयतीह मे।
दृश्यमानो वसन्तश्च स्वेदसंसर्गपूर्वकः॥

किष्किन्धा. सर्ग १-३४

वसन्तो यदि तत्रापि यत्र मे वसति प्रिया।
नूनं परवशा सीता सापि शोचत्यहं यथा॥ कि० सर्ग १-४७

सुग्रीव से मित्रता के पश्चात् बालिवध होने तक वर्षा ऋतु का आगमन हो गया था। जैसे —

पूर्वोऽयं वार्षिको मास. श्रावणः सलिलागमः।
प्रवृत्ताः सौम्य चत्वारो मासा वार्षिकसंज्ञकाः॥

कि० सर्ग २६-१४

नायमुद्योगसमयः प्रविश त्वं पुरोमिमाम्।
अस्मिन् वत्स्याम्यहं सौम्य पर्वते सह लक्ष्मणः॥ २६-१५
कार्तिके समनुप्राप्ते त्वं रावणवधे यत। २६-१७

रामचन्द्र जी ने सुग्रीव से कहा—हे प्रिय चातुर्मास आ गया है जिसका यह प्रथम (प्रसिद्ध) मास श्रावण है। अब उद्योग काल का समय नही है—इस लिए तुम अपनी नगरी किष्किधा मे जाकर रहो मैं यहा पर्वत पर लक्ष्मण सहित निवास करूगा' कार्तिक मास के आ जाने पर तुम रावण के निवास आदि का पता ज्ञात करके उसके नाश का यत्न करना।

इसी प्रकार वर्षा के चार मास व्यतीत हो जाने पर श्री रामचन्द्र जी ने लक्ष्मण से कहा—

'चत्वारो वार्षिका मासा गता वर्षशतोपमाः।
मम शोकाभितप्तस्य तथा सीतामपश्यतः॥'

किष्किधा काण्ड सर्ग ३०-६८

वर्षा समयकालं तु प्रतिज्ञाय हरीश्वरः।
व्यतीतांश्चतुरोमासान् विहरन् नावबुध्यते॥

कि० सर्ग ३०-७८

अर्थात् हे लक्ष्मण! सीता के वियोग मे वर्षा ऋतु के चारो मास व्यतीत हो गये परन्तु सुग्रीव वचन (प्रतिज्ञा) देकर भी अभी तक नही आया। वह अभी तक समझा ही नही कि वर्षा ऋतु समाप्त हो गई। मुझे सीता का पता लगाना चाहिए।

"मयस्य माया विहितं गिरिदुर्गं विचिन्वताम्।
तेषां मासो व्यतिक्रान्तो यो राज्ञा समयः कृतः॥

कि० सर्ग ५३-२

ततः पुष्पातिभाराग्रान् लताशतसमावृतान्।
द्रुमान् वासन्तिकान् दृष्ट्वा बभूवुर्भयविह्वलाः॥ कि० ५३-४
ते वसन्तमनु प्राप्तं प्रतिवेद्य परस्पर
नष्टसन्देशकालार्था निपेतुर्धरणीतले॥ कि० ५३-५
वयमाश्वयुजे मासि कालसंख्याव्यवस्थिताः।
प्रस्थिताः सोऽपि चातीत किमतः कार्यमुत्तरम॥ कि० ५३-६

अंगद हनुमान् आदि प्रमुख वानर गण दक्षिण दिशा में सीता जी के अन्वेषणार्थ भेजे गये थे। सामान्य रूप से एक मास के अन्दर-अन्दर समस्त दिशा का अवलोकन करके आना था। दक्षिण दिशा में ही रावण का निवास स्थान था, उसका पता इनको नहीं हुआ। समुद्र पर्यन्त ये अन्वेषण कर चुके। अन्त में इनको ज्ञात हुआ कि रावण का निवास स्थान यहां से सौ योजन दूर समुद्र के मध्य मे त्रिकूट पर्वत पर लंका नामक नगरी है जो १०(दश) योजन चौडी और बीस(२०)योजन लम्बी है वहा पर सीता जी हैं। तब हनुमान् लंका नगरी में गये और सीता जी से मिलकर आये। जब हनुमान् जी लंका मे गये, तब शुक्ल पक्ष था तथा जब रामचन्द्र जी सुग्रीवादि सहित लंका मे युद्धार्थ आये, तब युद्ध से प्रथम दिन पूर्णमासी थी, ऐसा रामायण से विदित होता है।

हनुमान् जी जब लंका में गये तब सीता जी को वहा निवास करते हुए दस मास हो गये थे। रावण से सीता जी ने एक वर्ष की अवधि मांगी थी। इन सब के लिए निम्न प्रमाण हैं—

'चन्द्रोऽपि साचिव्यमिवास्य कुर्वंस्तारागणैर्मध्यगतो विराजन्।
ददर्श चन्द्रं स कपिप्रवीरः पोप्लूयमानं सरसीव हंसम्।'

सुन्दर काण्ड सर्ग २-श्लोक ५७-५८

(शेष पृष्ठ ६ पर)

(पृष्ठ ८ का शेष)

सीता जी का हनुमान् के प्रति कथन—

स वाच्यः संत्वरस्वेति यावदेव न पूर्यते ।
अयं सम्वत्सर कालः तावद्धि मम जीवितम् ।।

सुन्दर० ३७-७

वर्तते दशमो मासो द्वौ तु शेषौ प्लवगम ।
रावणेन नृशंसेन समयो यः कृतो मम ।।

सुन्दर० ३७-८

रावण का सीता के प्रति कथन—

"द्वौ मासौ रक्षितव्यौ मे योऽवधिस्ते मया कृतः ।"
ततःशयनमारोह मम त्वं वरवर्णिनि ।।
द्वाभ्यामूर्ध्वंन्तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छतीम् ।
मम त्वां प्रातराशार्थे सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः ।।

सुन्दर० सर्ग २२-८,९.

रावण का प्रहस्तादि के प्रति कथन—

"सा तु सम्वत्सरं कालं मामयाचत भामिनी ।"
तन्मया चारुनेत्रायाः प्रतिज्ञातं वचः शुभम् ।

युद्धकाण्ड सर्ग १२ श्लोक १८-१९.

युद्धार्थ प्रायाण करने के लिए सुग्रीव के प्रति रामचन्द्र जी का कथन—

"अस्मिन् मुहूर्ते सुग्रीव प्रयाणमभिरोचये ।
युक्तो मुहूर्तो विजये प्राप्तो मध्यं दिवाकरः ।।
उत्तराफाल्गुनी ह्यद्य श्वस्तु हस्तेन योक्ष्यते ।
अभिप्रयाम सुग्रीव सर्वानीकसमावृताः ।।

युद्धकाण्डे सर्ग ४ श्लोक ३-५

इसी प्रकार के प्रमाण के समय अन्य नक्षत्रों की भी स्थिति का वर्णन किया गया है। जिनको देख कर ज्योतिर्विद्यावित् काल निर्णय कर सकते हैं।

वहां पूर्वोक्त वचन—

'प्राप्तो मध्य दिवाकर' यह वाक्य विचारणीय है यहा वक्ता का क्या अभिप्राय है ? यहा दक्षिणायन और उत्तरायण की सन्धि का प्रतिपादन तो नही किया गया ?

युद्ध से प्रथम दिन रामचन्द्र जी ने सुग्रीव और विभीषण से कहा—

"सुवेलं साधु शैलेन्द्रमिमं धातुशतैश्चितम् ।
अध्यारोहामहे सर्वे वत्स्यामोऽत्र निशामिमाम् ।। युद्ध.सर्ग.३८-३.
ततोऽस्तमगमत् सूर्यः सन्ध्यया प्रतिरञ्जितः ।
पूर्णचन्द्रप्रदीप्ता च क्षपा समभ्यवर्तत ।।

युद्ध. सर्ग ३८-श्लोक १९.

सारांश—

इस समस्त लेख से सिद्ध हुआ कि-श्री रामचन्द्र जी—का वनवास-गमन चैत्र सुदि पचमी को हुआ था। और अयोध्या मे पुनरागमन चैत्र सुदि षष्ठी को हुआ। जिनके मत में मास अमावस्या को समाप्त होता है तदनुसार युद्ध समाप्ति का दिन फाल्गुन वदि ३० (तीस) अमावस्या थी। जो कृष्ण पक्ष से मास आरम्भ करके शुक्ल पक्ष—की पौर्णमासी को मास समाप्त करते हैं तदनुसार युद्ध की समाप्ति चैत्र की अमावस्या को हुई। तात्कालिक किन्तु इनका भी विशिष्ट ज्ञान ग्रह नक्षत्रों की विशिष्ट स्थिति गति से किया जा सकता है। ●

पृष्ठ ७ का शेष

प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों पर ही रक्खी। आर्यसमाज का विधान ही यह बताने के लिये पर्याप्त है कि यहाँ किसी प्रकार की धार्मिक तानाशाही या पोपलीला के लिये कोई सम्भावना नही है। आर्यसमाज मे स्वामी दयानन्द का महत्त्व केवल उनके आर्यसमाज के संस्थापक होने के नाते ही है। इसके अतिरिक्त वे उतने ही पूज्य और वरेण्य हैं जितने पुरातन काल के अन्यान्य ऋषि महर्षि। दयानन्द के लिये अपने आपको ईश्वरीय दूत कहलाना तो दूर रहा, वे तो पैगम्बरवाद के सिद्धान्त के ही विरोधी थे, और जब जब उन्हें अवतार या शकराचार्य का स्थानापन्न घोषित किये जाने का लालच दिया गया, तब तब उन्होने ऐसे आकर्षक प्रलोभन को तिरस्कारपूर्वक अस्वीकार कर दिया। अत कोई आश्चर्य नही कि प्रजातान्त्रिक विधान मे विश्वास रखने वाले आर्यसमाज ने ब्राह्मसमाज के सभी वर्गों से अधिक सफलता, लोकप्रियता और ख्याति अर्जित की हो।

केशव के विरोधियो को ब्राह्मसमाज मे प्रजातान्त्रिक भावो का अभाव जोरो से खटकने लगा। साधारण ब्राह्मसमाज के अनुयायियो ने श्री आनन्द मोहनबोस के नेतृत्व मे ब्राह्मसमाज के विधान का निर्माण किया। इन्होने केशव की तानाशाही एव एकतन्त्रात्मक प्रधान हरकतो का विरोध करते हुए निम्न वक्तव्य दिया—

The look upon the enjoyment of uncontrolled authority by a single individual in any religious community as a calamity that they regard the belief in an individual calling him self a link between God and man as a belief unworthy of a Theist"

अर्थात् किसी भी धार्मिक सस्था मे एक व्यक्ति की अनियन्त्रित, स्वेच्छाचारी सत्ता को हम दुखपूर्ण मानते हैं और एक व्यक्ति द्वारा यह कहा जाना कि वह ईश्वर और मनुष्य के बीच की शृखला है, आस्तिको के विश्वास के प्रतिकूल है।

अब रूढियो से समझौते वाली समस्या पर विचार करे। दयानन्द ने तो अपने सम्पूर्ण जीवन में ही कभी असत्य से समझौता नही किया। "सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिये सदा सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।" आर्यसमाज क इस नियम का निर्माण कर उन्होने अवसरवादिता और समझौता परस्तो को सदा के लिये समाप्त कर दिया। उनका यह कथन था कि यदि मूर्तिपूजा और बहुदेवतावाद के सिद्धान्त त्रुटिपूर्ण हैं तो त्रिकाल मे भी उनकी सत्यता या उपयोगिता सिद्ध नहीं की जा सकती। ऐसी परिस्थिति मे दुर्जनतोष न्याय की आड लेकर अथवा अन्य किसी प्रकार से उनका समर्थन करना आत्म हनन के तुल्य है। अत. दयानन्द ने पौराणिक सम्प्रदायो का भी खण्डन अन्य विदेशी मतों के तुल्य ही किया परन्तु किसी द्वेषभाव से अनुप्राणित होकर नही, अपितु सत्याग्रह के लिये और सत्य के प्रचार के लिये। फलस्वरूप उनकी स्वस्थ आलोचना और उनके दृष्टिकोण की ईमानदारी को बुद्धिमान् लोग समझ सके और उन्होने दयानन्द और आर्यसमाज का सम्मान किया।

अन्त मे निष्कर्ष रूप मे हम इतना ही कह सकते हैं कि ब्राह्मसमाज के स्थापित होने पर समाजसुधार और देशोन्नति की जो एक क्षीण आशा रेखा उत्पन्न हुई थी, वह नवविधान के ईसाईयत से आक्रान्त आडम्बरपूर्ण घटाटोप से छिन्न-भिन्न हो गई। लोक जीवन मे उसकी प्रतिष्ठा नहीं हो सकी और न भविष्य के लिये ही उसने कोई आशाप्रद सदेश प्रदान किया। मैक्समूलर की इस भविष्यवाणी मे हमे कोई सार दिखाई नही देता, जब वह कहता है कि यदि कोई भारत का भावी धर्म होगा तो वह राममोहनराय और उसके सुयोग्य शिष्यो—देवेन्द्रनाथ ठाकुर और केशवचन्द्र सेन से प्रभावित होगा—

"If there is ever to be a new religion in India it will I believe, owe its very life blood to the large heart of Ram Mohan Roy and his worthy disciples D N Tagore and Keshabchandra Sen'

Biographical Essays P 83 1884 ●

पृ० ४ का शेष

गला बठ जाता पर ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज का परमभक्त फिर भी, जबरन बोलता ही जाता।

फिर, आप के ओजस्वी और विद्वत्तापूर्ण भाषण के पश्चात् हम देखते थे कि महिलाए अपने आभूषण और पुरुष अपनी जेबों से सिक्को और नोटो की गठिठया स्वय सेवको की बाल्टी मे स्वत डालते जाते थे।

भाषण मे जनता के उत्साहपूर्ण जयकारे

आपके भाषण मे एक और विशेषता होती थी। गम्भीर से गम्भीर विषय को भी आप इतने सरल और सहज ढग से उपस्थित करते कि सामान्य श्रोता भी समझ लेता। बीच-बीच मे आप विषय से सम्बद्ध एक-दो चटकले भी सुना देते—वे भी शिक्षा पूर्ण जिनसे श्रोता कभी ऊबता नही था। आपके भाषण के बीच जनता स्वय इतने जयकारे लगाती और बार-बार करतलध्वनि करती जिससे स्पष्ट प्रतीत होता था कि आपके शब्द जनता के अन्तस्तल मे गहराई तक पहुच रहे हैं।

शिक्षक रूप मे आचार्य जी

आचार्य जी एक शिक्षक के रूप में भी बडे सफल थे। गुरुकुल में हमारा ऐच्छिक विषय आर्य सिद्धान्त' था और यह आचार्य रामदेव जी हमे स्वय पढाते थे आप अपने पाठय विषय को खब तैयार करके लाते और हम छात्रो की शकाओ का अच्छी प्रकार समाधान करते।

ब्रह्मचारियों के प्रति व्यवहार

सस्था के आचार्य और मुख्याधिष्ठाता के रूप में आचार्य रामदेव जी अत्यन्त अनुशासन प्रिय पर साथ ही ब्रह्मचारियो के प्रति स्नेह और सहानुभूति का भाव रखते थे। छात्रो की व्यक्तिगत कठिनाइयों का हल, आप हमदर्दी के साथ करने के लिए सदा तत्पर रहते थे।

अत्यन्त सादा, तपस्वी जीवन

आचार्य जी का व्यक्तिगत जीवन अत्यन्त सादा, तपोमय और त्याग पूर्ण था। बढिया कपडे पहनने, चेहरे मोहरे का श्रृंगार करने, बालो को क्यारियो की तरह बनाने व फैशन से कटवाने—इत्यादि मामलों में आचार्य रामदेव जी एकदम उलट थे। उनकी पोशाक गर्मियों में कमीज, धोती और सर्दियों में कमीज के ऊपर पटटू का बन्दगले का कोट, नीचे धोती—यही प्राय होती थी। धोती तो वे ऐसे ढग से बाधते थे जिसमें वह घुटनो तक। प्रतीत होता था कि यह व्यक्ति अपनी पोशाक के प्रति अगर लापरवाह नहीं, तो, लापरवाह तो अवश्य है। जहां तक हमें स्मरण है, हमने आचाय जी को कभी पायजामे पहने नही देखा।

गुरुकुल मे विदेशी यात्रियों पर प्रभाव

गुरुकुल में जब विदेशी यात्री अथवा देश का कोई प्रमुख, अग्रगण्य व्यक्ति आता तब आचाय रामदेव जी उसे गुरुकुल, आर्यसमाज, स्वामी दयानन्द आय सभ्यता—इत्यादि का भक्त बनाये बिना कभी न छोडते। दीनबन्धु सी० एफ० एण्ड्रूज ने अपने सस्मरणों मे एक जगह लिखा है कि जब वह पहिली बार दिल्ली से हरद्वार गुरुकुल जाने के लिए आये तब स्टेशन पर जिस व्यक्ति ने उनका स्वागत किया और गुरुकुल भूमि तक ले गये, वह सारे रास्ते वैदिक धम ऋषि दयानन्द गुरुकुल, भारतीय सभ्यता—इत्यादि के सम्बन्ध मे इतने बोलते रहे कि मेरे लिए सिवाय=हा ' कहने के अन्य कोई चारा ही नही रहा था।

आर्यसमाज का चलता फिरता प्रचारक

वस्तुत आचार्य रामदेव जी ऐसे आर्यसमाजी नही थे जो केवल फैशन के लिए इस सस्था मे आ जाते हैं अथवा जिनकी चमडी की पहिली सतह तक ही आर्यसमाज का प्रवेश होता है। आचार्य जी ऐसे आर्यसमाज के दिलदादा और ऋषि के ऐसे परम भक्त थे कि जिन के रक्त के एक-एक कण मे और नस नाडी के एक-एक अश मे आर्यसमाज और ऋषि के शब्द अकित थे जो आपादमस्तक चलते-फिरते आयसमाज के प्रचारक, उपदेशक और व्याख्याता थे।

दो पुस्तकों के लेखक

आचाय जी ने अपने गम्भीर स्वाध्याय के आधार पर=भारत का प्राचीन इतिहास दो भागो में तथा=पुराण मत पर्यालोचन—ग्रन्थ लिखे जिनमें अमूल्य सामग्री भरी पडी है।

शास्त्रार्थ-अभियान—

आर्यसमाज मुलतान-देवनगर नई दिल्ली

वार्षिकोत्सव के अवसर पर काशी शास्त्रार्थ शताब्दि के सम्बन्ध में प्रथम शास्त्रार्थ अभियान श्री प्रो० रामसिह जी एम ए की अध्यक्षता में आर्यसमाज के विशाल एव भव्य पडाल मे सनातन धर्म के साथ मूर्तिपूजा के विषय पर ८ बजे से १० बजे तक बडे उल्लासपूर्ण वातावरण मे सौहार्द एव प्रेम पूर्वक शास्त्रार्थ सम्पन्न हुआ।

आर्यसमाज के मच से श्री अमर स्वामी जी अपने पक्ष का प्रतिपादन कर रहे थे और उनके सहायक श्री आचार्य विश्वश्रवा तथा उनकी वेदाचार्या धमपत्नी श्री प० सुरेन्द्र शर्मा गौड तथा प० श्यामसुन्दर जी शास्त्री (लखनऊ) मच पर सुशोभित थे, एव विपक्ष के मच पर श्री रामेश्वराचार्य जी अपने पक्ष के प्रमुख वक्ता थे उनके सहायक थे श्री प० बालकृष्ण शर्मा तथा आचार्य जगन्नाथ जी। आरम्भ मे आयसमाज देवनगर के प्रधान जी ने आगन्तुक सनातन धर्मी विद्वानों को मालायें पहिनाई इसके बाद मूर्ति पूजा 'वेदानुकूल है" इस विषय का पूव पक्ष स्थापित करते हुए श्री रामेश्वराचार्य जी ने १० मिनट तक वर्तमान समय मे शास्त्रार्थ का आयोजन मनोमालिन्य पैदा करता है—तथा सगठन विच्छेद करता है अत अनावश्यक है इत्यादि का उल्लेख करते हुए 'आ० स० को कौन-कौन से वेद मान्य हैं ?' प्रश्न किया—आ० स० की ओर से श्री अमर स्वामी जी ने उत्तर देते हुए बताया कि आ० स० की मान्यता सर्व विदित है, आप कृपया चारो वेदो मे से कोई भी मन्त्र प्रस्तुत कर सिद्ध कर कि आप के मन्दिरो मे जो मूर्तिया विभिन्न प्रकार की रखी हैं और जिनको ईश्वर की मूर्ति मान कर आप लोग पूजते पुजवाते हैं, उनका वर्णन वेदो में है, सनातनी विद्वान् ने केवल सस्कारविधि के अन्दर छुरे और मूसल की पूजा का प्रसग उपस्थित कर मूल प्रश्न को टालना चाहा और बारम्बार मूसल और छुरे का उत्तर पाने पर भी उस से अडिग रहे बहुत काल पश्चात्—'चत्वारिश्रृगा" तथा "न तस्य प्रतिमा अस्ति" "सवत्सरस्य तां त्वा रात्रिम्" इत्यादि मन्त्रों से मूर्ति पूजा वेदानुकूल सिद्ध करने की असफल चेष्टा करते रहे इसके उत्तर में स्वामी जी ने अनेको पौराणिक श्लोकों से भी मूर्ति पूजा घृणित कार्य है' सिद्ध कर दिखाया और वेद के उपर्युक्त मन्त्रो का समुचित अर्थ बता कर जनता को अपने प्रमाणो तथा विद्वत्तापूर्ण युक्तियों से प्रभावित कर दिखाया—अन्तत पौराणिक विद्वान् कोई मन्त्र न प्रस्तुत कर केवल वाग्विलास में समय काटते रहे और उपस्थित जनता मन ही मन खूब उभयपक्ष को समझ कर प्रमुदित हो रही थी दो घण्टे का समय बीत जाने पर सानन्द सभा विसर्जित हो गई और सभाध्यक्ष श्री प्रोफेसर महोदय ने उभय पक्ष को हार्दिक धन्यवाद दिया—।

—हरप्रकाश बन्धु एम० ए० मन्त्री आर्यसमाज देवनगर मुलतान

मेला कपाल मोचन मे वैदिक धर्म प्रचार

सदा की भाति आय प्रतिनिधि सभा पजाब के उपदेशक महानुभावों ने व्याख्यानो भजनो और यज्ञ द्वारा मेले मे प्रचार का आयोजन किया, यह प्रचार शिविर सभा की अपनी भूमि पर ही सदा लगाया जाता है। प० रामनाथ जी, प अर्जुनदेव जी उपदेशक तथा पं० रामकरण जी की मण्डली ने प्रचार में भाग लिया। सभा के उपदेशकों के अतिरिक्त अन्य उपदेशकादि प्रचार में सम्मिलित हुए। —निरजनदेव, अधिष्ठाता

सन्तानों की शिक्षा गुरुकुल में

आचार्य जी ने अपने दोनो पुत्रो को गुरुकुल कांगडी में पढाया और अपनी चारों पुत्रियो को आर्य सस्थाओं में ही शिक्षित किया। और जात-पात तोडकर विवाह किये उस समय तक कन्या गुरुकुल स्थापित नहीं हुआ था। आपके ज्येष्ठ पुत्र प० यश पाल जी सिद्धान्तालकार आजीवन आर्यसमाज के उपदेशक और वर्षों तक आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के वेद प्रचार के अधिष्ठाता रहे। यश पाल जी का देहान्त हो चुका है।

आचार्य रामदेव जी का स्वर्गवास ९ दिसम्बर १९३२ को पक्षाघात से देहरादून कन्या गुरुकुल में हुआ।

आशंका को आर्य निर्मूल कर देवें

श्री इन्द्रसेन जी गुलाटी, हरिपुरा—मेनरोड, सूरत—३ एक स्वाध्यायशील और वैदिक सिद्धान्तों के दृढ़ अनुयायी हैं। आप आर्यमर्यादा के ग्राहक हैं। समय-समय पर शकाएं तथा सुझाव भेजते रहते हैं। इस अवसर पर भी आप ने एक आशका भेजी है। आप लिखते हैं—

"ऋषि दयानन्द ने जो शास्त्रार्थ "मूर्तिपूजा" के सम्बन्ध मे वाराणसी के अग्रगण्य पौराणिक विद्वानो के साथ किया था, उस के उपलक्ष मे काशी-शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह मनाया जा रहा है—यह बहुत उत्तम आयोजन किया जा रहा है। इस शुभ अवसर पर वहा अनेक सम्मेलन और प्रदर्शनियो का कार्यक्रम सम्पन्न किया जावेगा। वहा ऋषि दयानन्द द्वारा रचित पुस्तक, पत्र और चित्रो की प्रदर्शनी होगी, तथा उन के सामान वस्त्र और खडाऊं आदि वस्तुएं भी प्रदर्शनी में रखी जावेंगी। यहा पर यह आशका हो सकती है कि अन्धश्रद्धालु आर्य लोग इन खडाऊं आदि जड वस्तुओ के आगे माथा टेकें अथवा हाथ जोड कर शिर झुकावें। तब ऐसी व्यवस्था की जावे कि समारोह के समय वहा कोई आर्य ऐसी अवैदिक प्रथा न कर सके। जिस जड पूजा को ऋषि दयानन्द ने जड से उखाड फेंकने के लिये पूर्ण बल लगाया, उसी जड पूजा को आर्य लोग अन्धी भक्ति मे फस कर कर, तो यह कार्य शास्त्रार्थ समारोह के वास्तविक उद्देश्य को ही जड से काट देने के समान होगा। अत समारोह के मान्य अधिकारी महानुभावो से साग्रह निवेदन है कि इस आशका को ध्यान मे रख कर पहिले ही ऐसा प्रबन्ध कर देवें कि यह कुप्रथा पड ही न सके।"

श्री मान्य गुलाटी जी की यह आशका निर्मूल नही है। अजमेर मे ऋषि-निर्वाण अर्ध शताब्दी के समय ऋषि के खडाऊं और पलग आदि पदार्थ रखे हुए थे। हम ने स्वय देखा कि ऋषि के कई अन्धे भक्त चारपाई के चारो ओर हाथ जोड कर चक्र लगाते थे। अत काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह मे भी ऐसी आशका हो जाना आश्चर्य की बात नही। हम भी समारोह के प्रबन्धक महोदयो से निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि इस आशका को स्थान ही न मिल सके—ऐसी योजना पहिले ही करने का अनुग्रह करें।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

साप्ताहिक पत्र समालोचना

१. सनातन-ज्योति-साप्ताहिक हिन्दी पत्र, दूसरे वर्ष का १९-२० वां अंक (दीपावली विशेषाङ्क) ४-११ नवम्बर ६९ का सम्मलित अक है। केन्द्रीय सनातन धर्म महासभा का यह प्रमुख पत्र है। वार्षिक मूल्य १० रु०, मासिक १ रु० तथा एक प्रति का २५ पैसे है। इस सम्मिलित अक में १२पृष्ठ हैं। पता शिव मन्दिर, फैजरोड, करील बाग, नई दिल्ली है।

आलोचना—श्री तर्कभास्कर जी का सम्पादकीय, लेख सामयिक, तथा मानवोत्थान के लिये उपयुक्त है। सम्प्रदाय मतमतान्तर भेद भाव के बिना सभी मत के लोग इस से लाभ उठा सकते हैं। अन्य लेखसामग्री भी सनातन धर्मावलम्बी सज्जनों के लिये पठनीय एव मननीय है। हम हृदय से अपने सहयोगी पत्र की उन्नति के लिये शुभ कामना करते हैं।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

पुस्तक समालोचना

नाम पुस्तक—हीरा हर-गीत

रचयिता—श्री हीरालाल अग्रवाल, सर्वजन कल्याण कार्यालय, फोर्ट रोड, रीवा (म० प्र०)। बिना मूल्य रचयिता से मिल सकती है।

आलोचना—यह पुस्तक भजनो और दोहों में लिखी गई है। इसमें किसी मत मतान्तर के भेद बिना आचार-व्यवहार, सुधार, भक्ति और राष्ट्र के लाभ के लिए कविताएं दी गई हैं। इसमें पुराने साधु-सन्तो की वाणी की तरह रचना है। सब मत वादियो को प्रसन्न करने का यत्न किया गया है जैसे—

"तुमरी, जय गोविन्द मुरारी, तुमी हो ईसा, तुम हो मूसा, तुमी
मुहम्मद भारी। राम-कृष्ण तुम, हरि-नाराण नरसिंहनाथ, साहरी,
कच्छ-मच्छ-वाराह, आदि तक, सगुण निर्गुण-वपु धारी।"

इन पदों में ईश्वर के रूप में सभी मतों के अवतार पीर पैगम्बरों के दे दिया दिये हैं। अत वैदिक सिद्धान्त की दृष्टि से यह पुस्तक सदोष है। अच्छा होता, यदि रचयिता जन सुधार पर ही कुछ लिखते। स्वाध्यायशील सज्जनों को बिना मूल्य मिलने पर भी अनुपयोगी है।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

विवाह सस्कार



आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार मड्डा होश्यारपुर जालन्धर के मन्त्री श्री योगेन्द्रपाल सेठ की सुपुत्री सरोज का शुभ विवाह आर्यसमाज माडल टाउन के उप प्रधान श्री साईदास जी के सुपुत्र श्री अशोक कुमार के साथ वैदिक रीति के अनुसार सम्पन्न हुआ।

काशीशास्त्रार्थ शताब्दी अभियान

आर्यसमाज (बी० ब्लाक) गोविन्दनगर (कानपुर) के तत्त्वावधान में उक्त अभियान का आयोजन किया गया तथा श्री मन्त्री जी ने तन, मन, धन से सहयोग देने की अपील की।

—ओमप्रकाश आर्य मन्त्री

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

श्री प्रकाशवीर शास्त्री ससद सदस्य के आवास पर देहली के आर्यों की एक सभा हुयी। श्री शास्त्री जी तथा शताब्दी के सयोजक प० महेन्द्र-प्रताप शास्त्री ने शताब्दी का महत्त्व बताया, समारोह की रूपरेखा रखी और देहली के आर्यों को भारी सख्या मे शताब्दी के अवसर पर (२३ से २८ दिसम्बर) वाराणसी पहुचने को आमन्त्रित किया। उत्तर मे आर्य समाजो के उपस्थित प्रतिनिधियो ने तन मन, धन, से सहयोग देने का आश्वासन दिया। वही पर निम्नस्थ दान घोषित किये —

५०००) आर्यसमाज अनारकली, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली। ११००) आर्यसमाज हनुमान् रोड, नई दिल्ली। ११००) आर्यसमाज नया बास, दिल्ली। १०००) श्री रतनलाल जी सूद।

आर्यसमाज, करोल बागसे ५०००) की आशा है। लखनऊ के श्री कृष्ण-बलदेव जी, प्रधान आ० स० शृंगार नगर १०००) दान देकर २८ दिसम्बर को यजमान होगे। श्री रतनलाल सूद २५ दिसम्बर को यजमान होंगे। सबका हार्दिक धन्यवाद है।

—महेन्द्र प्रताप शास्त्री, सयोजक

'वाद विवाद' एवं 'संस्कृत वाक् प्रतियोगिता'

२८ दिसम्बर ६९ को मध्याह्नोत्तर ३ बजे "आधुनिक सिनेमा अहित-कर है?" विषय पर वाद विवाद तथा 'शिव सङ्कल्प' मन्त्र पाठ की सस्कृत वाक् प्रतियोगिता आर्यसमाज चूना मण्डी पहाडगज में होगी। वाद विवाद मे पक्ष तथा विपक्ष मे एक एक बच्चा हर सस्था से आना चाहिये। दोनो प्रतियोगिताओ मे अलग-अलग सर्व प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय को पारितोषिक भी दिये जावेंगे। भाग लेने वाले बच्चो के नाम श्री गुमानसिंह जी आर्य १७६७ वजीरसिंह स्ट्रीट चूना मण्डी, पहाडगज, नई दिल्ली के पास २७ दिसम्बर तक भेज दिये जावें।

मन्त्री-आर्य युवक परिषद् १६५४, कूचा दखिनी राय, दरियागज, दिल्ली-६

"वैदिक योगाआश्रम शुक्रताल (मुजफ्फरनगर)

कार्तिक गगास्नान के मेले के अवसर पर वैदिक योगाश्रम शुक्रताल का पचम वार्षिकोत्सव बडी धूम धाम और सफलता के साथ सम्पन्न हुआ, जिसमे हजारो नर नारियो ने श्रद्धा भक्ति के साथ भाग लिया

उत्सव मे आर्य युवक, अराष्ट्रिय धर्म निरोध, गोरक्षा, तथा शिक्षा सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया था। साथ ही साधना प्रेमियो को योगाभ्यास का प्रशिक्षण भी दिया गया। योगासन, प्राणायाम, व्यायाम के प्रदर्शन ब्रह्मचारियो द्वारा दिखाये गये। भोजनार्थ ऋषि लगर चलता रहा, जिसमें सब नर नारियो के लिये भोजन का सुप्रबन्ध था। ठहरने की सुव्यवस्था की गई।

ऋग्वेद से महायज्ञ की पूर्णाहुति पर विद्वद्वर श्री विद्याधर जी "स्नातक" वैदिक साधना आश्रम यमुनानगर के द्वारा यज्ञशाला की आधार शिला रखी गई। दानी महाभावो ने यज्ञशाला के निर्माण के लिए बढ कर दान दिया।

ब्र० बलदेव नैष्ठिक, सस्थापक तथा सचालक
वैदिक योगाश्रम शुक्रताल (मुजफ्फरनगर)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१	सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द	मूल्य ३-००
२	धर्मवीर प० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी	१-२५
३	सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह	१-००
४.	आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखो का संग्रह	१-२५
५.	स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द	१-२५
६.	वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित	०-५०
७.	कुल्लियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी	६-००
८.	ईशमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)	०-४०
९	वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)	०-७५

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

देवनागरी मे तार

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् एक्स० वाई० ६८ सरोजिनी नगर, नई दिल्ली २३ के द्वारा "देवनागरी में तार ३२ पृष्ठ की पुस्तिका छापी गई है। इसका मूल्य ३० पैसे है। उपर्युक्त पते से मिल सकती है। इसमे बताया गया है कि देवनागरी लिपि में तार भेजने पर अंग्रेजी मे भेजने की अपेक्षा कम दाम लगते हैं। अब अनेक तारघरो में देवनागरी लिपि मे तार भेजने और प्राप्त करने की व्यवस्था है। यह लाभ तभी मिलता रहेगा कि जब इस प्रक्रिया से तार भेजे जाव। विभिन्न विषयो पर बहुधा भेजे जाने वाले तारो के कई सौ नमूने भी इस पुस्तिका मे दे दिये गये हैं। इससे कोई भी साधारण पढा लिखा व्यक्ति स्वयं तार लिख सकता है। व्यापारियो को इस पुस्तक को मंगवाना तथा इस सुविधा से अवश्य लाभ उठाना चाहिये—महामन्त्री केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्

आर्यसमाज दानापुर का ६१वां वार्षिकोत्सव

उत्सव बडे समारोह से सम्पन्न हुआ। इस शुभ अवसर पर आर्यजगत् के अनेक पूज्य सन्यासी विद्वान व्याख्याता, भजनोपदेशक और नेता पधारे। विशेष यज्ञ के साथ-साथ वेद आर्यमहिला-राष्ट्ररक्षा तथा आर्यकुमार सम्मेलन हुए। शङ्का समाधान का अवसर दिया गया। यौगिक क्रिया का प्रदर्शन तथा छात्र छात्राओ की वाद विवाद प्रतियोगिता भी हुई। उत्सव का उत्तम प्रभाव पडा। —सुरेन्द्रकुमार सिंह 'सुशील'

३३० ईसाईयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा दिल्ली की ओर से सभा के उपदेशकों ने ग्राम सढोरा (जिला० सहारनपुर) में २०० तथा ग्राम मूपकेड़ी (जि० मुजफ्फरनगर) मे १३० ईसाइयों को शुद्ध करके वैदिक धर्म की दीक्षा दी।

—द्वारका नाथ प्रधान मन्त्री

शोक प्रस्ताव

आर० के० आर्य कालेज नवाशहर के प्रिंसपल श्री रामनारायण कपूर जी के आकस्मिक देहावसान पर हम, आर्यसमाज नवाशहर (जालन्धर) के सब सदस्य, हार्दिक शोक प्रकट करते हैं। दिवगत आत्मा को परमात्मा शान्ति व सदगति प्रदान करे तथा उनकी शोकग्रस्त धर्मपत्नी और अन्य बन्धु जनो को इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति दे।

—मन्त्री आर्यसमाज

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज हनुमान् रोड नई दिल्ली अपने प्रतिष्ठित अन्तरंग सदस्य तथा दिल्ली के मेयर श्री ला० हंसराज जी गुप्त की पूज्या माता जी के देहान्त पर हार्दिक शोक तथा सहानुभूति प्रकट करता है। परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवगत आत्मा को सद्गति तथा श्री लाला जी के दुखित परिवार को धैर्य तथा शान्ति प्रदान करे। —मन्त्री आर्यसमाज

... के लिये ... द्वारा ... प्रेस, ... दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षुः (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

आज कल के सम्प्रदायी और स्वार्थी ब्राह्मण आदि जो दूसरो को विद्या सत्सग से हटा और अपने जाल मे फसा के उन का तन, मन धन नष्ट कर देते हैं और चाहते हैं कि जो क्षत्रियादि वर्ण पढ़ कर विद्वान् हो जायगे तो हमारे पाखण्ड जाल से छूट और हमारे छल को जान कर हमारा अपमान करगे इत्यादि विघ्नो को राजा और प्रजा दूर कर के अपने लडको और लडकियो को विद्वान् करने के लिये तन, मन, धन से प्रयत्न किया करें।

—सत्यार्थप्रकाश

वर्ष २ } २१ मार्गशीर्ष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार १४ दिसम्बर १९६९ रविवार, { वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
अंक २ } सृष्टि स०-१९६०८५३०६९ { ,, ,, विदेश मे—२० रु०
एक प्रति का मूल्य ००—२० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनस्तयो [वायुसूर्य्ययो] दृष्टान्तेन राजकृत्यमुप दिश्यते ॥

फिर भी अगले मन्त्र में उन दोनो (वायु और सूर्य्य) के दृष्टान्त से राजकार्य्य का उपदेश किया ॥

अभीवृतं कृशनैर्विश्वरूपं हिरण्यशम्यं यजतो बृहन्तम् ।
आस्थाद्रथं सविता चित्रभानुः कृष्णा रजांसि तविषीं दधानः ॥ ऋ० १.३५.४ ॥

पदार्थ —(अभीवृतम) अभित सर्वत सावने पूर्णो वर्तते सोऽभीवृतम् (कृशनै) तनूकरणै. सूक्ष्मत्वसम्पादकै किरणैर्विविधै रूपैर्वा (विश्वरूपम्) विश्वानि बहूनि रूपाणि यस्मिन् प्रकाशे तम् (हिरण्यशम्यम) हिरण्यसुवर्णान्यानि वा ज्योतीषि शम्यानि शमितु योग्यानि यस्मिंस्तम् (यजत) सङ्गतिप्रकाशयोर्दाता (बृहन्तम्) महान्तम् (आ) समन्तात् (अस्थात्) तिष्ठति (रथम्) यस्मिन् रमते तम् (सविता) ऐश्वर्यवान् राजा सूर्य्यलोको वायुर्वा (चित्रभानु) चित्रा भानवो दीप्तयो यस्य यस्माद्वा स (कृष्णा) कृष्णान्याकर्षणयुक्तानि पृथिव्यादीनि (रजांसि) लोकान् (तविषीम्) बलम (दधाना) धरन् ॥

अन्वय —हे सभेश राजंस्त्व यथा यजतश्चित्रभानु. सविता सूर्य्यो वायुर्वा कृशनै किरणै रूपैर्वा बृहन्त हिरण्यशम्यमभीवृत विश्वरूप रथ कृष्णानि रजांसि पृथिव्यादिलोकांस्तविषीं बल च दधान सन्नास्थात् समन्तात् तिष्ठति तथा भूत्वा वर्त्तस्व ॥

भावार्थ —अत्र श्लेषवाचकलुप्तोपमालङ्कारौ । यथा सूर्य्यादिकारणनिमित्त सूर्य्यादिलोकधारको बलवान् सूर्य्यान् लोकानाकर्षणाख्य बल च धरन् वायुर्वर्त्तते यथा च सूर्य्यलोक स्वसन्निहितान् लोकान् धरन् सर्वं रूप प्रकटयन् बलाकर्षणाभ्या सर्वं धरति नैताभ्या विना कस्यचित् स्थूलस्याणोरपि धारण सम्भवति । तथैव राज्ञा शुभगुणाढ्यो भूत्वा राज्य धर्तव्यम् ॥

भाषार्थ —हे सभा के स्वामी राजन् आप जैसे (यजत) सगति करने वा प्रकाश का देने वाला (चित्रभानु) चित्र विचित्र दीप्तियुक्त (सविता) सूर्य्यलोक वा वायु (कृशनै) तीक्ष्ण करने वाले किरण वा विविध रूपो से (बृहन्तम्) बडे (हिरण्यशम्यम्) जिस मे स्वर्ण वा ज्योति शान्त करने योग्य हो (अभीवृतम्) चारो ओर से वर्त्तमान (विश्वरूपम्) जिस के प्रकाश वा चाल मे बहुत रूप हैं उस (रथम्) रमणीय रथ (कृष्णा) आकर्षण वा कृष्णवर्ण युक्त (रजांसि) पृथिव्यादिलोको और (तविषीम) बल को (दधान) धारण करता हुआ (आस्थात्) अच्छे प्रकार स्थित होता है वैसे अपने वर्त्ताव कीजिये ॥

भावार्थ —इस मन्त्र में श्लेष और वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्यादि की उत्पत्ति का निमित्त, सूर्य्यादि लोक का धारण करने वाला, बलवान्, सब लोको और आकर्षण रूपी बल को धारण करता हुआ वायु विचरता है और जैसे सूर्य्यलोक अपने समीप स्थलों को धारण और सब रूप विषय को प्रकट करता हुआ बल वा आकर्षण शक्ति से सब को धारण करता है और इन दोनों के बिना किसी स्थूल वा सूक्ष्म वस्तु के धारण का सम्भव नहीं होता वैसे ही राजा को होना चाहिये कि उत्तम गुणों से युक्त हो कर राज्य का धारण किया करे ॥

—(ऋषिदयानन्द का भाष्य)

पंजाब हरयाणा हाई कोर्ट में भी श्री वीरेन्द्र आदि को न्यायधीश ने निषेध आज्ञा देने से इन्कार किया

श्री निरजन सिह, सीनियर सब जज जालन्धर ने अपने निणय दिनाक २६ ७-६९ द्वारा श्री वीरेन्द्र आदि को अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा के कार्यों व सम्पत्ति मे हस्ताक्षेप करने पर रोक लगा दी थी। श्री वीरेन्द्र आदि ने श्री सुखदेव सिंह सैशन जज जालन्धर के न्यायालय मे उपरोक्त निणय के विरुद्ध अपील की परन्तु उन्होने भी अपने निणय दिनाक १४ ११ ६९ द्वारा श्री भल्ला के निर्णय को सम्पुष्ट किया। इसके उपरान्त श्री वीरेन्द्र आदि ने पजाब हरयाणा हाई कोर्ट चण्डीगढ मे अपील की और प्रार्थना की कि सैशन जज जालन्धर के निर्णय को कार्यान्वित करने पर रोक लगा दी जावे। परन्तु जस्टिस नरुला जी ने उनकी इस प्रार्थना को गत ४-१२-६९ को अस्वीकार कर दिया। उनकी अपील की सुनवाई ११-१२-६९ को चण्डीगढ में होगी।

श्री वीरेन्द्र आदि को सीनियर सब जज जालन्धर का नोटिस

निषेधाज्ञा का उल्लंघन करके बैठक क्यों रखी।

न्यायालय की मानहानि की कार्यवाही क्यों न की जावे।

जालन्धर ८-१२-६९ श्री वीरेन्द्र आदि के विरुद्ध श्री निरजनसिह जी भल्ला सीनियर सब जज जालधर के निणय दिनाक २६ ७-६९ तथा श्री सुखदेवसिह जी सैशन जज जालधर के निर्णय दिनाक १४-११-६९ के अनुसार श्री वीरेन्द्र आदि पर अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा की सम्पत्ति व कार्यों मे हस्ताक्षेप करने पर स्थायी निषधाज्ञा द्वारा रोक लगी हुई है, फिर भी उन्होने डा० हरिप्रकाश के हस्ताक्षरो से एक एजण्डा द्वारा २१-१२-६९ को दिल्ली में सभा की अवैधरूप से बैठक बुलाने की घोषणा की है। प्रो० रामसिह जी सभा प्रधान ने सीनियर सब जज जालधर को उपरोक्त बैठक को रोकने तथा न्यायालय की मानहानि मे उन्हें दोषी घोषित करने के लिए प्राथना पत्र दिया है। जिसके आधार पर सीनियर सब जज ने दीवान रामसरनदास, श्री वीरेन्द्र, श्री सोमनाथ मरवाह, श्री रामदत्त, डा० हरिप्रकाश, श्री मुरारीलाल, श्री रामलाल वैद्य, श्री विश्वनाथ गोवर तथा श्री क्षितीशकुमार को आज नोटिस द्वारा आदेश दिया है कि वह १५-१२-६९ को न्यायाय मे प्रो० रामसिह जी के आवेदन पत्र का उत्तर दें कि उनके विरुद्ध क्यो न कार्यवाही की जाय। (विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा विदेश में वेद प्रचार

सोमवार ता० १७ नवम्बर को प्रात पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी हमारे सुरिनाम देश मे ५८ दिन रात तक कुल ७० व्याख्यान देने के बाद गयाना देश पधारे हैं।

यहा महात्मा जी केवल ४ दिन तक वैदिक प्रचार कर ता० २१ नवम्बर को त्रिनिडाड पधारे जहा एक सप्ताह तक वैदिक प्रचार कर ता० २१ नवम्बर को नोर्थ अमेरिका स्थित डालास नगर में पहुचे।

हमारे देश मे स्वामी जी को आने से यहा के भारतीय जन-समाज मे नई जागृति और अन्यो में उत्तम प्रभाव पडा है। श्री सनातन धर्म महा सभा के प्रधान जो ने अपने भाषण मे यहा तक कहा—इस से पूर्व इतने महान् विद्वान् और सन्यासी के रूप मे हमारे देश तो क्या तमाम वेस्ट इण्डीज मे नही आये। अगर इसी तरह अन्य विद्वान भी सिलसिलेवार यहा आते रहे तो निसन्देह हम सुरिनाम देश को वैदिक क्षेत्र बना सकगे।

महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती
सुरिनाम क गवर्नर महोदय
श्री मोहनफेरयई
उनके साथ आर्य दिवाकर क
प्रधान श्री चेतरामसिहजी



महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती
सुरिनाम के प्रधान मन्त्री
श्री अ० ये० यई जी
और आर्य दिवाकर क उपप्रधान
श्री आर० भटोस जी



स्वामी जी के भाषण मे सहस्रो की सख्या आर्यसमाजी सनातन धर्मी व अन्य लोग भाग लेते रहे हैं। स्वामी जी का प्रचार प्रोग्राम इतना बढ चला था कि खासकर सस्था आर्य दिवाकर के ८ समाजों और कई महत्व सुदूर स्थानो में प्रचार नही होने पाया। योग साधन व प्राणायाम दीक्षा के लिये कुल ६० व्यक्ति भाग लेते रहे हैं।

मन्दिर उद्घाटन

श्रीमती प्रान्तिक आर्य प्रतिनिधि सभा का भव्य मन्दिर का उद्घाटन सजधज से हुआ और ८ दिन तक गायत्री महा यज्ञ सहस्रों की उपस्थिति में होता रहा। इस मन्दिर निर्माण मे १२ वर्ष लगे जिसमें लगभग एक लाख गिल्डर खच हुये हैं। इस निर्माण में यदि लोग द्रव्य दान के साथ श्रमदान न किये होते तो नि सन्देह खर्च अधिक बढ जाता। मंदिर का सौंदर्य इतना आकर्षक है कि देशदेशान्तर के लोग देखने व फोटो बनाने आते हैं। उद्घाटन में पं० शिवरत्न जी ने सम्पूर्ण चारों वेद प्रदान किये। मदिर का चित्र आर्यमर्यादा को प्रकाशनार्थ अलग से भेज रहा हूं।

सुरिनाम अमरीका में भव्य
आर्यसमाज मन्दिर
आर्य प्रान्तीय सभा का
कार्यालय
जिसका उद्घाटन
महात्मा जी ने किया



उपदेशक विद्यालय

सस्था आर्य दिवाकर का कार्यक्षेत्र विशाल होते हुये केवल १० उपदेशक सलग्न हैं जिन्हें केवल यज्ञ सस्कार से अवकाश नहीं मिलती कि वे व्यवस्थापक प्रचार कर सकें। हमारी वर्षों की योजना है कि भारत से एक सुयोग्य वैतनिक आचार्य बुलाये जाय जो यहा व्यवस्थापक प्रचार करते हुये एक उपदेशक विद्यालय द्वारा देशीय प्रचारक तैयार करे। अब तक भारत से उपयुक्त आचार्य नहीं उपस्थित हैं तब तक उक्त विद्यालय का संचालन-भार श्री प० सत्यव्रत दाताबीन, श्री प० शिवरत्न, श्री प० विश्वेश्वर जी पर महात्मा जी ने सौंप कर इसका उद्घाटन किया है। स्वामी जी से कुल १० पुरुष और ३ स्त्रिया यज्ञोपवीत सस्कार ले अब उपदेशक बनने की तैयारी कर रहे हैं। रविवार ता० १६ नवम्बर को १ नीग्रो जाति ने भी शुद्धि और यज्ञोपवीत सस्कार लिया है जो प० शिवरत्न से उपदेशक क्रम की दीक्षा डच भाषा में ले रहा है। इसने सन् १९६० ई० मे सत्यार्थप्रकाश को अंग्रेजी से डच में भाष्य किया है, केवल इसे अभी हिन्दी पढ़ना है। जन्म का नाम हम्फी ग्रेव से बदल कर अब धर्मदेव नाम पडा है। डच व अंग्रेजी मे जब यह वैदिक सिद्धान्त से उत्तीर्ण होगा तब इसे इनके गिरोह का प्रचारक नियत किया जायगा। —प० आर० शिवरत्न-सुरिनाम

पुस्तक समालोचना

१ नाम पुस्तक=वेद ज्योति [Light of Vedas]

प्रकाशक=श्री रामलाल जी, ७१ रिंगरोड, लाजपतनगर III, नई दिल्ली २४। पृ० १५० पक्की बढ़िया जिल्द १ ७५ साधारण १ २५पै०। पुस्तक श्री प्रकाशक जी के पते पर मिल सकती है।

आलोचना श्री मान्य रामलाल जी ने भिन्न भिन्न विषयों के सम्बन्ध मे वेद मन्त्रो का चयन करके उनका हिन्दी में सरल भावार्थ दिया है। साथ ही English मे भी अक्षरार्थ को न लेकर हिन्दी भावार्थ को अच्छे शब्दो में प्रस्तुत कर दिया है। हम समझते हैं कि आगल भाषाविज्ञ स्वाध्याय प्रेमी सज्जनो के लिये वेद मन्त्रार्थ की महत्ता को समझने के लिये सराहनीय प्रयास किया गया है। कागज बढ़िया और स्वच्छ है। छपाई उत्तम है। मूल्य भी कम ही रखा गया है। हम इस पुस्तक का अधिक से अधिक प्रचार चाहते हैं। प्रत्येक आर्यसमाज को भी अपने पुस्तकालय मे इसका सग्रह करना चाहिये। साथ ही अंग्रेजी पढ़ने वाले विद्यार्थियों की वादविवाद प्रतियोगिता में पुरस्कार रूप उसका वितरण करना लाभदायक सिद्ध होगा। श्री रामलाल जी को ऐसे उत्तम पुस्तक के प्रचार के लिये हृदय से बधाई देते हैं। साथ ही एक परामर्श देना भी उचित समझते हैं कि अगली आवृत्ति में उन वेद मन्त्रों का भावार्थ महर्षि दयानन्द के भाष्यानुसार दिया जावे, जो कि इस पुस्तक में संग्रह किये गये हैं। दार्शनिक शब्दो का अनुवाद करते समय गुण और गुणी वाचक शब्दो का आगल भाषा मे अर्थ करते समय ध्यान रखा जावे, तो उत्तम होगा।

२ काशी शास्त्रार्थ (शताब्दी सस्करण)

प्रकाशक परोपकारिणी सभा अजमेर पृ० स० ४० मूल्य २० पैसे। सुन्दर रगीन कवर।

आलोचना-स० १९२६ वि० मे ऋषि दयानन्द का काशी के विद्वानों के साथ मूर्ति पूजा पर जो शास्त्रार्थ हुआ था और वह वैदिक यन्त्रालय द्वारा प्रकाशित हो चुका था। अब ठीक एक सौ वर्ष पश्चात् उसी पुस्तक का परिष्कृत रूप में पुन छापा गया है। माननीय डा० भवानीलाल जी एम० ए० पी० एच० डी० अजमेर ने बड़ी खोज के साथ तात्कालिक समाचार पत्रों से शास्त्रार्थ वृत्तान्त को एकत्र किया है और उस समय के सस्कृत के उद्भट विद्वान प० सत्यव्रत जी सामश्रमी के लेख को भी इसमें स्थान दिया है श्री सामश्रमी जी उस शास्त्रार्थ में स्वयं उपस्थित थे और उन्होंने शास्त्रार्थ को लेख बद्ध भी किया था। पुराने सस्करण को सर्वथा नया रूप उत्तम ढंग से दिया गया है। हम कहते हैं कि इसी वर्ष महानुभाव इस सस्करण को अवश्य खरीद लेवें। पुस्तकालयों के लिये तो यह ऐतिहासिक सग्रह हो ही जावेगा। —[illegible]

सम्पादकीय—

राष्ट्र द्रोही को गोली से उड़ाया जाना चाहिये

हम नहीं जानते कि राष्ट्रद्रोही का अपराध सिद्ध हो जाने पर हमारे राष्ट्र के न्यायालय उसको कितना दण्ड दे सकते हैं। हमारी प्रबल माग होनी चाहिये कि राष्ट्रद्रोही को कानून से गोली से उड़ाये जाने की सजा से कम दण्ड नहीं होवे। राष्ट्र हत्यारे पर किसी भी प्रकार से नरमी दिखाना राष्ट्र में विद्रोह करने वालों की सख्या में वृद्धि करना हो सकता है। यद्यपि राष्ट्रद्रोह के कई प्रकार हैं, परन्तु इनमे दो महा भयङ्कर अपराध हैं (१) राष्ट्र की गुप्त बातो विशेषतया सैनिक रहस्यों का पता शत्रु देशों को पहुचाना। (२) राष्ट्र के भीतर अराजकता को फैला कर हत्याए करना और करवाने के लिये षड्यन्त्रो का जाल रचना। हमें अति गहरे मानसिक खेद के साथ लिखना पड रहा है। कि वत्तमान समय मे हमारे राष्ट्र मे उक्त दोनो प्रकार के भयङ्कर अपराधो की जड गहराई तक पहुची हुई है। समय समय पर ऐसे राष्ट्र द्रोह के काण्डो के दु खद समाचार हमारे राष्ट्र के पत्रो मे प्रकाशित होते रहते हैं। इनका पता भी दिनो नही महीनो नहीं, अपितु वर्षों तक चल पाता। लोक सभा की कायवाही मध्ये यह प्रकट हुआ है कि चण्डीगढ स्थित केन्द्रिय वैज्ञानिक उपकरण सघटन के कार्यालय से सेना के महत्त्वपूण नक्शे उडाय जा चुके हैं। यह पता भी कब चला इस को राष्ट्रवासी खेद से सुन— चण्डीगढ के केन्द्रिय वज्ञानिक उपकरण सघटन के निदेशक डा० पी०एस० गिल ने बताया कि शस्त्रास्त्रो मे काम आने वाले एक सामरिक उपकरण के महत्त्वपूण नक्शे =काग जात इस सघटन के कार्यालय स चुरा लिये गये। अत्यन्त आश्चय का बात और सुनिये। उक्त डाक्टर साहिब का यह भी कहना है कि ये केन्द्रिय रक्षा मन्त्रालय ने अनुमान ३ वष पूर्व इस चण्डीगढ स्थित सघटन को दिये थे। आशका है कि सघटन के किन्ही कमचारियो ने ये नकशे शत्रु देश को सौंप दिये हैं। डा० साहिब यह भी बतलाते हैं कि इन नक्शो के गुम होने का सबसे पहिले पता उन्हे तब लगा जब रक्षा मन्त्रलय ने इस सघटन से ये नक्शे वापस मागे।' हा ! राष्ट्र के दुर्भाग्य! ! राष्ट्र द्रोह की ऐसी घटना का पता केन्द्रिय रक्षा मन्त्रालय को भी चण्डीगढ सघटन से वापस मागने पर चले ! ! ! इस असावधानता के प्रति कौन जिम्मेदार है? पता नही, कि कानून किसको उत्तरदायी ठहरा सकता है परन्तु हम दृढता पूवक कह सकते हैं कि विदेशो मे ऐसी दुघटना का पता मिलते ही तात्कालिक सरकार का पतन हो जाना अवश्यभावी है हमारे राष्ट्र मे एक दूसरे पर आरोप डाल देने की प्रथा है क्या हम पूछ सकते हैं कि इस राष्ट्र द्रोह काण्ड का मूल उत्तरदाता कौन हो सकता है?

इन पक्तियो के लेखक का स्वभाव नहीं कि अपने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में स्वय कुछ लिखे। परन्तु एक घटना का उल्लेख करना इस प्रकरण के [illegible] के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकता है, अत नि'सकोच लिखता हू। [illegible] मैं लोक सभा का सदस्य था, उस समय एक वृद्ध व्यक्ति मेरे पास [illegible] और कहा कि मेरा लडका सरकार के गुप्त भेद देने के आरोप मे पकड लिया गया है, तुम उसको छुडवाने में मेरा सहयोग करो। मैंने उस की बात पूछी और उत्तर में कहा कि आपके लडक का अपराध सिद्ध होने पर मैं उसे छुडाने की बात को तो सहन ही नहीं कर सकता, अपितु यह कहता हू कि ऐसे राष्ट्रद्रोही सरकारी कर्मचारी को कानून के अनुसार कठोर से कठोर दण्ड दिया जाये, यह मेरे अन्त करण का भाव है। न जाने आपको किसने मेरे पास पहुचने को कह दिया? मैंने न उनका नाम पूछा और न ही उनके लडके सरकारी कर्मचारी का। जाते समय उनको कह दिया कि अपने घर बैठ जाइये, ऐसे नीच राष्ट्रद्रोही के पिता होने को भी भूल जाइये।" इस घटना के लिखने का अभिप्राय यह है कि हमारे राष्ट्र में राष्ट्रद्रोहियो को येन केन प्रकारेण छुडवाने का यत्न करने वाले भी हैं और हो सकता है, कोई नीच व्यक्ति इस नीच कर्म में सहयोग देने वाला भी मिल जावे। राष्ट्रवासी बन्धुओ! राष्ट्र रक्षा के लिये सदा सचेत रहिये

२—अराजकता के षड्यन्त्र

इस मे नाम को भी सन्देह नहीं कि आज देश में अराजकता फैलाने के षड्यन्त्र बहुत जोर से हो रहे हैं। दिन दहाडे हो रहे हैं और प्रशासन के उत्तरदायी व्यक्ति षड्यन्त्र करने वाले राष्ट्रघातकों को अभय दे रहे हैं। राष्ट्र की जनता को भिन्न-भिन्न राजनीतिक दल व्यामोह मे फसा रहे हैं, जिससे राष्ट्र-प्रजा जनता नहीं समझ पाती कि वास्तविक बात क्या है? इस [illegible] का दुष्परिणाम यह हो रहा है कि राष्ट्र की भीतरी [illegible] शत्रु देशों को हमारी भीतरी दुर्बलता से दुस्साहस होता है। न जाने कब कौन शत्रु देश हमारे राष्ट्र की ओर आख उठा लेवे। राष्ट्र के भीतरी षडयन्त्रकारी सभी सरकारी कामो मे घुसने का कुकृत्य करने लगे हैं। राष्ट्र मे तोड फोड और नर हत्या तथा राष्ट्र की सम्पत्ति को नष्ट करना इन भीतरी राष्ट्र के शत्रुओ के राष्ट्र घातक प्रचार का कुफल है। राज्यो की सकार सूखा गजन वाले मेघो की भान्ति निषक्रियता का प्रतिरूप हैं। आपसी सघष में डूब कर राज्य सरकार जनता के हित मे काम करने की इच्छा रखती हुई भी नही कर सकती। रह जाती है केन्द्रिय राष्ट्र सरकार उसके हाथमे राष्ट्र की सब प्रकार की शक्ति निहित है। उसको चाहिये कि दृढता से काम लेकर इन अराजक तत्त्वो को रिममता और निदयता से कुचल डाले। भीतरी षडयन्त्रकारियो के नष्ट किये जाने पर बाहरी शत्र देश पहिले सौ बार सोचगे और तब हमारे राष्ट्र की ओर देखगे।

३—साम्प्रदायिकता का अभिशाप

राष्ट्र के प्रशासक भली प्रकार जानते हैं कि साम्प्रदायिक का स्वरूप क्या है? परन्तु राजनीतिक कुचक्र मे फस कर जबान से कहने मे असमथ हैं कि कौन साम्प्रदायिक है? ऊपर ऊपर से घोषणा होती रहती है कि साम्प्रदायिकता को कुचल डालना चाहिये। उनके सामने साम्प्रदायिक घटनाओ का चित्र आ जाता है परन्तु उस चित्र के परिणामो से राष्ट को बचाने के लिये साहस नही किया जाता। जगह जगह साम्प्रदायिक दगे होना भी साम्प्रदायिक षडयन्त्र हैं। जब दोषियो के विरुद्ध कठोर काय वाही नही की जाती तो ये साम्प्रदायिक झगड जगल की आग की तरह राष्ट्र की सम्पत्ति को नष्ट कर डाल तो अचम्भा क्या है? गत दो बार हम सम्पादकीय पक्तियो मे लिख भी चके हैं कि यह साम्प्रदायिक रोग राजनीतिक औषधोपचार से कभी दूर नही हो सकता। इसका एक ही उपाय है कि सरकार भिन्न भिन्न सम्प्रदायो के मतो के विद्वान नेताओ को अनिवाय रूप से बुलाकर उनके सामने राष्ट्र के उत्थान और सरक्षण के सम्बध मे तैयार की हुई प्रश्नावली रखे तथा उन उन के मतानुसार उन की स्पष्ट स्वीकृति लेवे। यदि कोई सम्प्रदाय ऐसी स्वीकृति देने मे ननुनच करता है जो कि राष्ट्र के हित मे है तब ऐसी अवस्था मे स्पष्ट घोषणा करे कि कौन सम्प्रदाय राष्ट्र के हित के काम मे अपने सम्प्रदाय को प्ररित नही करना चाहता। साथ ही उस प्रश्नावली और मतवादी के उत्तरो को भी सवसाधारण के लिय प्रकाशीत कर दे। हमारी सम्पति मे यह सरल और अनिवाय उपाय है। सरकार को इस पर विचार करके उचित पग उठाना चाहिये।

४—हरयाणा के आर्य जागते रहे

चण्डीगढ के सम्बन्ध मे हरयाणा की जनता का जो अभूत पूव प्रदर्शन देहली मे हुआ। उस का प्रकाश विदेशो मे भी पहुचा। अब पजाब का अकाली तत्त्व अग्नि से खेलने लगा है। सन्त फतहसिह जी चण्डीगढ को लेने के लिये आत्मदाह को धमकी दे रहे हैं। पजाब के मुख्यमन्त्री सरदार गुरनामसिंह जी भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमति इन्दिरा जी पर दबाव डाल रहे हैं। एक अकाली नेता कहते हैं कि चण्डीगढ को पजाब में सम्मिलित नही किया गया तो राष्ट्र के सामने एक भयकर अनथ खडा हो सकता है।

इधर हरयाणा राष्ट्र का दृढ प्रहरी है। राष्ट्र की सम्पति को सुरक्षित रखता है। कोई अनुचित दबाव अथवा धमकी देना हरयाणा के स्वभाव में नहीं है। परन्तु अपने स्वत्व की रक्षा के लिये हरयाणा प्रणापण से सचेष्ट है। अकाली बन्धुओ को जान लेना चाहिये कि हरयाणा सामने है। हरयाणा का नेतृत्व राजनीतिक रूप मे नही किन्तु जनता रूप में आर्यसमाज के हाथों मे सुरक्षित है। सभी राजनीतिक दलो में तपे मजे आर्यसमाजी सम्मिलित हैं। सभी दल हरयाणा के स्वत्व की रक्षा के लिये एक मत हैं। आर्यसमाज का व्यापक प्रभाव हरयाणा की ग्रामीण जनता पर है। उसके आह्वान पर लाखों हरयाणा वाले तुरन्त उपस्थित हो जाते हैं। अत हम हरयाणा के आर्य बन्धुओ से निवेदन करते है कि सावधान रहे। भारतसरकार कहती है कि आगामी बजट से पूर्व चण्डीगढ का निणय कर दिया जावेगा। हम कहते हैं चण्डीगढ हरयाणा का घर है। इसको पजाब को सौंपने के जो दुष्परिणाम हो सकते हैं, उन का ध्यान पजाब का अकाली दल और भारतसरकार भी रखे। हरयाणा अपने स्वत्व को कभी नहीं छोड सकता। चण्डीगढ राजनीतिक समस्या है। राजनीति में किसी भी व्यक्ति विशेष के आश्वासन का कुछ मूल्य नहीं होता, अत हरयाणा को यह बात मन में रखनी चाहिये।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

Untouchability-A malignant ulcer.

(Shri Giridhari Lal Arya Chauri Chaura)

Badly uglifying the fair face of our religious Dagacity.

लो अछूतों को छाती लगा हिन्दुओं। वर्ना ये लाल गैरों के घर जायेंगे॥

—कविवर कुं० सुखलाल जी

Over three decades ago, when India was in bondage of the British rule, the above monumental poetic warning of awakening was given by a fearless and indomitable Aryan poet Mr. Kr. Sukhlal "Arya Musafir" to those dogmatic, obstinate, intransigent, recalcitrant orthodox, hypocrite, superstitious, narrow-minded and short sighted men, who were abhorrent of the down-troddens and the lowest classes (Shudras) at that time. Coincidently, Mahatma Gandhi too along with Dr. Ambedkar, stupendous by endeavoured their utmost to solve the burning question of castism, untouchability Backward classes and Harijan-Help. More or less, their tremendous efforts had bored fruits and changed the aberrants' hearts and minds for the betterment of the untouchables, resulted Poona-Pact and rejected the communal Award. Now, in free India the Governments of all States and Centre have since been providing with various facilities, amenities, materials, means and money to Harijans and scheduled castes and the like. By the grace of glorious God, the Arya Samaj, from its inception, is also contiinuously championing the common causes of the shudras, untouchables, Harijans, menials and depressed clases etc. and achieved its splendid goal in giving them their basic, fundamental and legitimate rights of human equality in all espects and respects. Our Government and the people have been deriving very much moral inspirations from the Arya Samaj, Undoubtably, all kinds & credirs must go to it for its selfless services, sacrifies, dedications and broadways and means for the mutual love and universal brotherhood. It is true, there are also so many cynics, critics and detractors of Arya Samaj Nevertheless, the carvan of the Arya Samaj is moving on while dogs are barking. Never forget, deeds speak louder than words. And beggars can not be choosers. And God's mill grinds slow but sure.Because the Arra Samaj beeing a religious body, with acomprehensive programme of indivisual and social reform, has a wider scope of functions than any other Corporate authority. And it is one for all wisher and Dympathizer and is needed for ever. So. pure gold does not fear the flame.

However, inspite of all this, the history repeats itself today again, because the doomed untouchability is still lengering in fool's paradise and in nincompoop's mind respeetively, so much so that it could not die its natural or unnatural death to make its way to go to Hell. That is why from time to time the untouchability-mania comes out to follow the same rancourous and cankrous footpath of race-hatred by the big to words the small and the high to the low, despite the existing law of the Court. Of course, it is heartening to come across a good news broke out in the newspapers just a few days back that our hon'ble law Minister, Mr. P. Govinda menon, has referred to the report of Elayaperumal Committee which had said that untouchability was still being practised widely and that scheduled caste students were being refused admission even in Government Colleges and hostels. Mr. Menon said that he was in favour of a ceniral law to provide deterrent punishment to those practising untouchability provided the States were prepared to delegate the powers. He disclosed that he had written to Chief Ministers to set up committees of the ligislature to deal with the problem on a continuing basis and one of them, the Chief Minister of Uttar Pradesh, had agreed to it already I am sure that the Government would act speedily and expeditiously otherwise further delay in this matter will be dangerous and big bloomer no doubt. The wisemen's full sympathy and cooperaiion will surely be with the Government in this regard, so that the tyrannous, tortuous of atrocitious attitude and behaviour can be liquidated. The Arya Samaj is always first and formost in combating with the social evils and vices and is ever ready for the polemic debates and discussions on the basis of the Vedas and the holy shastras about the untouchability and fanctiscism but fortunately non dared to come forward to accept its challange. How then the niminypiminy and highhandedness of the wooden-headed can be falsified and exposed bare to the people ? The castism and untouchability have shaken the foundation of ediflee of the Hindu unity and solidarity. The fanaticism is an unpardonable deed. We must unite and consolidate our strength to root out this soeial pest. As the whole world shocked to see and hear the horrible stories of blood-baths and wide destrnctions wrought by the wrong policy of the Aparthism in South Africa, racilism in America, revanchatisism once in Germany and bloodly revolutionism now in Red China. In a nutshell, the absurdities of these "ism" are well-known to everywhere. Therefore, it is never too late to mend and set our house in order which is under continual or continuous fire. We should not became a prey of the political stunt and dirty games of this or that party or faction. Because the Vedas are ment for the good of all high or low. Those who restrict their study to the high castes and deprive the shudras and the untouchables from reading or hearing them read, disobey the mandate of God and thus commit sin.

The vedic verses preaches that the elder should great the younger with Namaste and Vice Versa. Brahmans, Kshatriyas, Vaishes and Shudras should great each other with Namaste. No sense of superiority or inferiority should prevail amongst the great and small, high and low. Here, I cite some few iines also from the instruction of the Vedas, the holy Shastras and from the books of several distinguished authors. Tho teachings of the vedas are universal. Yajur Veda 26-2 clearly enjoins all learned persons to preach the Vedic truths to all, the Brahmans, the Kshatriyas, the Naishyar the Shudras, the Chandals, the degraded and the forlorn. Dwijas (the twice-born) alone are not entitled to study the vedas. Shudras and even women are equally entitled to read the Vedas. Persons like Kavish Ayulush (the seer of R.V.X.20) a shudra by birth, Vide Aitareya Brahman 11-19 and woman like Lopa Mudra were the seers of the meanings of vedic texts and their names are from time immemorial attached to Vedic Verses. God is not expected to be partial to one portion of mankind, and antagonistie to the other by depriving them of their birth-right to study the Vedas. In the eyes of God all men, high or low, are equally entitled to God's gifts and bounties say, air, water, sunshine and His knowledge. In the Vedic church none is religiously great or small. All are brothers who should cooperate to Conduce to the prosperiety and amelioration of mankind. All men are Shudras by birth. Vyas, Vishwamitra Valmiki etc. are all also Sudras by birth. verily, untouchables are not the Shudras but the Venomons snakes and scorpions are. Furthermore, woman is the mother of man. Suppose, if she is a Shudra, we can not escape ourselves from being a Shudra. We should grasp the significance of toe meaning of and the difference & distinction between Caste and class. The Varnas and Ashramas also depend on the merits, actions and Condnct. Manu says that a Shudra attains the status of a Brahmana and becomes entitled to his privilege if he possesses qualities of the latter such as Complete knowledge and learning and a calm and good temperament etc. In the same way, a Brahamana deceeds to the Status of a Shudra and becomes liable to all the duties imposed on a Shudra if he the disqualifications of the latter such as dulness of intellect, stupidity, dependece on the service of others etc. The rule is applicable to persons, born of Kshatriya and of Vishya parents, in i.e., one

(Continued to be next issue)

उपासना-प्रदीप—६

(प० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ' देहली)

भोजन—विवेक

१—सभी योगाचार्यों ने भोजन के विषय में साधको को आवश्यक निर्देश प्रदान किये हैं। गीताकार ने गीता के १७वे अध्याय मे, महर्षि दयानन्द जी ने "सत्यार्थ-प्रकाश" के दसवें समुल्लास मे विशेष प्रकाश डाला है। भोजन विषयक कुछ उत्तम पुस्तके भी बाजार मे मिलने लगी हैं। उनको देखना और भोजन विषयक उत्तम सिद्धान्तो का दृढ़ता के साथ परिपालन करना चाहिये। परन्तु मास-मदिरा और मछली-अण्डा-प्रचारक सरकारी और गैर सरकारी सभी आयोजनो से सभी सज्जन पुरुषा को दूर रहना चाहिये। यह विषय बडे परिताप का है कि विदेशी शिक्षा मे निष्णात् और विदेशी खान-पान-पहिरान मे निमग्न भारत के देशी शासक विदेशियो और अधार्मिक जनो का अन्धानुकरण करते हुए भारत मे नाना प्रकार के उपायो से मास, मदिरा, मछली, अण्डा आदि अभक्ष्य एव हानिकारक पदार्थों का प्रसार कर रहे हैं, भारत के पशु-धन का नाश कर रहे हैं और भोजन छादन की उत्तम और सात्त्विक प्रणालियो को बिगाड रहे हैं। अब तो पाठशालाओ के अबोध बालको को भी नाना प्रकार के अनुचित साधनो से मास-भक्षी बनाने के आयोजन होने लगे हैं। इन दोषो का निवारण करने के लिये धार्मिक और सहृदय सज्जनो को कोई प्रभावी पग अब शीघ्र ही उठाना चाहिये।

२—साधक उपासको को उचित है कि बिना भूख भोजन न कर। जितनी भूख है, उस से अधिक भोजन न करे। भोजन का हल्का, सात्त्विक, शीघ्र पचने वाला और सन्तुलित होना आवश्यक है। दूध, फलो, शहद एव ऋतु-ऋतु की शाक-भाजियो आदि का उपयोग रुचि और सुविधा के अनुसार करना चाहिये। नशो, नशीले पदार्थों, तमोगुणी और रजोगुणी भोजनो से प्रयत्न पूर्वक बचना चाहिये। एक विद्वान् से किसी ने पूछा कि भोजन कब करना चाहिये ? उसने उत्तर दिया कि—"अमीर को जब भूख लगे और गरीब को जब मिले।"

३—अजीर्ण, मन्दाग्नि, अफारा, उदर-शूल, कोष्ठ-बद्धता, विरेचन, मरोड और आलस्य-प्रमाद, निद्रा-तन्द्रा आदि को बढाने वाले पदार्थों को न खाये। जपयोग और प्राणायाम के साधको को अधिक समय तक बैठना पडता है। अत अपच और मन्दाग्नि आदि के खटके तो लगे ही रहते हैं। मन्दाग्नि तो मानो सब रोगो की खान ही है। इस का निवारण जरूरी है। आवश्यक होने पर जप और प्राणायाम के अभ्यास खडे होकर भी किये जा सकते हैं।

४—गीता में अर्जुन के प्रति श्री कृष्ण जी का कथन है —

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति, न चैकान्तमनश्नतः।
न चातिस्वप्नशीलस्य, जाग्रतो नैव चार्जुन॥
युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा॥ ६।१६, १७

हे अर्जुन! यह योग न तो बहुत खाने वाले के लिये है, न बिल्कुल न खाने वाले के लिये, न बहुत सोने या बहुत जागने वाले के लिये। जिस का आहार-विहार युक्त अर्थात् परिमित और सात्त्विक है, जिस की अन्य सब चेष्टायें भी उचित, युक्त एवं शिष्टजनानुमोदित हैं तथा जिस का सोना, जागना भी युक्तियुक्त है अर्थात् जिस का समय-विभाग सुनियन्त्रित है उस के लिये ही यह जप और ध्यान आदि का अनुष्ठान दु ख निवारक, आरोग्य वर्धक और सफलताप्रद होता है।

५—आयु, उत्साह, बल, आरोग्य सुख और प्रीति को बढाने वाले, रसीले, स्नेह सयुक्त, सारवान्, सुरुचिवर्धक भोजन सात्त्विक स्वभाव वालो को प्रिय होते हैं। [गीता—१७।८]

६—कड़वे, खट्टे, नमकीन, अधिक गर्म, तीखे, तेज, चरपरे, रूखे और दाहकारक आहार रजोगुणी लोगो को प्यारे होते हैं। इन से दुःख, शोक और रोग बढ़ते हैं। [गीता—१७।९]

७—देर का बना हुआ, रस रहित, दुर्गन्धयुक्त, बासी सडा हुआ और अपवित्र भोजन तमोगुणीजनो को प्यारा होता है। [गीता—१७।१०] यह तीसरा प्रकार अधिक हानिकर है।

८—जिस को मन वा अन्त करण कहते हैं, वह तो प्रकृति का पुत्र है। अत वह साधको की प्रवृत्ति को प्रकृति की ओर ही धकेला करता है। जैसा खाये अन्न, वैसा बने मन। जो सात्विक भोजन करते हैं, उन का मन सत्त्विक होता है। जो रजोगुणी भोजन करते हैं, उनका मन रजोगुणी और जो तमोगुणी भोजन करते हैं, उन का मन तमोगुणी होता है। अपने-अपने अन्त करण की निमलता का सम्पादन करने के लिये रजोगुणी और तमोगुणी भोजनो से बचना सभी साधको क लिये परमावश्यक है।

९—मनुष्य को चाहिये कि अन्न की निन्दा न करे अन्न की उपज बढाने का प्रयत्न सभी नर-नारियो को मिल-जुल कर करना चाहिये। खाने के समय परोसने वाले अधिक न परोस। खाने वाले आवश्यकतानुसार भोजन ले और उसे झूठा न छोडे। झूठ न खाने-पीने से बच तथा झूठन खाने-पीने के दूषित व्यवहारो को बढावा न द। हाथ पाव और मुह धोकर भोजन करें। भोजन के पश्चात भी हाथ एव मुह भली प्रकार धो ल।

१०—रसोई और भोजन बनाने के पात्र पूणतया शुद्ध हो। पाक-शाला के कर्मचारी यदि कोई हो, तो वे सब भी साफ सुथरे एव उत्तम आचार विचार वाले तथा अपने अपने कार्यों मे सुदक्ष हो। जन्म की जात-पात के आधार पर छूत-छात या सखरी-नखरी आदि के बखेड फैलाने उचित नही, परन्तु पवित्रता का पूरा ध्यान खान-पान आदि के सभी आयोजनो मे आवश्यक है। मासाहारियो के साथ खान पान न कर। उन से ससर्ग करना भी ठीक नही।

११—जो अन्याय या छल-कपट से आजीविकोपार्जन कर। उन का अन्न-जल ग्रहण करने से भी पवित्रता और साधना नष्ट हो जाती है। भोजन का स्थान भी शुद्ध-पवित्र हो और भोजन परोसने वाले भी, भोजन के परोसने का प्रकार भी। भोजन के समय यदि कभी कोई वार्तालाप हो, तो वह भी उत्तम ही हो।

१२—गृहस्थियो और गृहस्वामियो को अतिथियो के पश्चात् ही भोजन करना चाहिये। बच्चो, बूढो, रोगियो और गर्भवती स्त्रियो को भी भोजन पहिले ही करा दे। स्वादु वस्तु को अकेला न खाय। यथाशक्ति बाटकर ही खाये। मिलकर रहे। पाक-शाला के कर्मचारियो को सन्तुष्ट रख। खान-पान मे दो-भान्त न रखे। अपनी आजीविका यथाशक्ति अपने ही सात्त्विक पुरुषार्थ से प्राप्त करे। भोजन के विषय मे पराधीन या परमुखापेक्षी न बनें। उपकारियों का धन्यवाद कर। अभिमान को हटाने के लिये विरक्तो को भिक्षा माग कर खाने का विधान उत्तम है। परन्तु भिक्षावृत्ति को ही अपना पेशा बना लेना किसी के लिये भी उचित नही है।

१३—उपकारियो का किसी न किसी रूप मे प्रत्युपकार भी अवश्य ही करें। अतिथि, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और सन्यासी जो दूसरो का प्रदान किया हुआ अन्न ग्रहण कर वे भी प्रियाचरण, लोकोपकार, आत्म-साधन और उपदेश-दान आदि द्वारा ससार का निरन्तर हित-साधन अवश्य ही करते रहें।

१४—अनुसन्धान द्वारा पता चला है कि अधिक भोजन करने से आयु घटती है और मिताहार से आयु की वृद्धि होती है। अत विशेषज्ञो का कथन है कि जो अधिक भोजन करता है, वह थोडा काम करता है, जल्दी मरता है। इस के विपरीत जो थोडा भोजन करता है, वह अधिक काम करता है, और अधिक काल तक जीवित रहता है। उपासको को कभी-कभी बिना भोजन के भी रहना चाहिये। भोजन मात्रा और उसके ग्रहण करने का समय नियमित होना चाहिये। विशेष अवस्थाओ मे ऐसे नियमो को कुछ ढीला भी कर सकते हैं।

१५—भोजन के विषय मे साधको का विशेष दृष्टिकोण होता है। वे जीने और काम करने के लिये ही भोजन ग्रहण करते हैं, न कि खाने के लिये ही जीते हैं। काम करने, सास लेने से शरीर की जो शक्ति क्षीण होती है, भोजन से उसकी पूर्ति होती रहती है। भोजन का पूर्णतया परित्याग सम्भव नहीं।

शेष पृष्ठ ९ पर

भारतीय—

युवक और क्रान्ति

(तपोनिष्ठ श्री आचार्य भगवान्देव जी, गुरुकुल झज्जर, जि० रोहतक)

युवक और क्रान्ति इन दोनों का परस्पर अत्यन्त मेल होता है। प्रायः सभी युवक क्रान्तिप्रिय होते हैं। आज भी कुछ सघटन क्रान्ति का कोलाहल करते हैं, उन्हें रूस के क्रान्तिकारियों के अनुभव से शिक्षा लेनी चाहिये। रूस के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी प्रिंस क्रोपाटकिन के संस्मरणों पर श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने इस प्रकार प्रकाश डाला है—

"सन् १८६०-६५ में आज से ९५ वर्ष पूर्व रूसी नवयुवकों ने जो कार्य कर दिखाया था, वह अभी हमारे यहां प्रारम्भ ही नहीं। क्रोपाटकिन लिखते हैं—'हजारों ही रूसी नवयुवक सादा जीवन व्यतीत करते हुए सर्वसाधारण की सेवा कर रहे थे। उनका ध्येय था 'जनता की ओर चलो सर्वसाधारण की तरह रहो।' (To tht people, Be the people) उस समय रूस के अमीर घरानों के माता-पिताओं तथा पुत्र-पुत्रियों में एक तरह का संघर्ष-सा छिड़ा हुआ था। मता-पिता यह चाहते थे कि हमारे लड़के तथा लड़कियां प्राचीन परम्परा को बनाये रक्खें, यह नई पीढ़ी अपने जीवन को आदर्शों के ढांचे में ढालना चाहती थी। नवयुवकों ने सेना की, बैंकों को तथा दुकानों की नौकरी छोड़ दी और वे उन नगरों में आकर इकट्ठे हो गये, जहां विश्वविद्यालय थे। बड़े-बड़े घरानों की लड़कियां बिना पैसे के सैण्ट पीटर्स वर्ग तथा मास्को को आती थीं और वहां आकर कोई ऐसा धन्धा सीखती थीं, जिससे उन्हें स्वाधीनता मिले। बड़ी-बड़ी कठिनाइयों के बाद उन्हें यह स्वाधीनता मिली, पर यह स्वाधीनता उन्होंने अपने सुखोपभोग के लिये प्राप्त नहीं की थी, बल्कि वे यही चाहती थीं कि उस ज्ञान को वे साधारण जनता तक—गरीब किसान मजदूरों तक ले जायें, जिसने उन्हें पराधीनता से मुक्त किया था। रूस के प्रत्येक नगर में और सेंटपीटर्स-वर्ग के प्रत्येक मुहल्ले में लड़कों तथा लड़कियों के छोटे-छोटे समूह बन गये थे, जिनका उद्देश्य था—आत्मशिक्षण तथा आत्मोन्नति।

धीरे-धीरे ये युवतियां और नवयुवक इस परिणाम पर पहुंचे कि साधारण जनता की सेवा करने का एक ही उपाय है, अर्थात् उनके बीच में जाकर बसना और उन्हीं जैसी जिन्दगी व्यतीत करना। ये नवयुवक डाक्टर, कम्पाउंडर, शिक्षक, लुहार, बढ़ई तथा मजदूर इत्यादि बनकर ग्रामों में पहुंचे और गांववालों के साथ रहने लगे। लड़कियों ने शिक्षिकाओं तथा दाइयों और नर्सों का काम सीखा और सैकड़ों की संख्या में गांवों में पहुंचकर वहां गरीब से गरीब मनुष्यों की सेवा करने लगीं। ये नवयुवक और युवतियां समाज संघटन या क्रान्ति के विचारों के उद्देश्यों से ग्रामों में नहीं गये थे। उस समय उन्हें इसका ध्यान भी नहीं था। तब तो उनका उद्देश्य केवल यही था कि जनता को लिखना-पढ़ना सिखाया जावे, बीमार पड़ने पर उसके लिये दवा का प्रबन्ध किया जाये। तथा अज्ञानान्धकार से उन्हें निकालकर ज्ञान के प्रकाश में लाया जाये। साथ ही ये युवक ग्रामवासियों के विचारों से भी परिचित होना चाहते थे। वे यह जानना चाहते थे कि समाज-सुधार के विषय में इनकी क्या भावनायें हैं?'

हमारे भारत के नवयुवक प्रिंस क्रोपाटकिन की इन बातों को पढ़ें और फिर सोचें कि क्रान्ति किस चीज को कहते हैं और उसके लिये प्रारम्भिक तैयारी किस तपस्या तथा त्याग के साथ की जाती है। क्रान्ति का नारा लगाना आसान काम है, किन्तु सच्ची क्रान्ति की तैयारी में योग देना बड़ा ही कठिन है।

सत्साहित्य का प्रचार

उन दिनों रूस की ठीक वैसी ही हालत थी, जैसी कि कुछ वर्ष पहले भारतवर्ष की थी। षड्यन्त्रों का सफलतापूर्वक सञ्चालन करना सम्भव नहीं था। सन १८६९ में नोचेफ नामक एक रसियन ने एक षड्यन्त्रकारिणी संस्था स्थापित की थी, पर उसे सफलता नहीं मिली। जितने सदस्य इस सभा के बने थे, सब पकड़ लिये गये और रूस के सर्वश्रेष्ठ युवकों को देशनिकाला देकर साइबेरिया भेज दिया गया। बेचारे कुछ काम भी न कर पाये।

षड्यन्त्रकारियों को प्राय असत्य और धोखेबाजी का भी आश्रय लेना पड़ता है और नीचेफ के साथी भी उन सब धूर्त्तताओं से काम लेते थे। उन्हीं दिनों इन षड्यन्त्रकारी युवकों की कार्यपद्धति के विरोध में दूसरे युवकों ने एक और संस्था बनाई थी, जिसका नाम था 'चेकोवस्की का सत्संग।' इस सत्संग ने रूस के सामाजिक आन्दोलन में काफी भाग लिया था और इसके द्वारा आगे चलकर बड़ा जबरदस्त काम हुआ। प्रिंस क्रोपाटकिन इस सत्संग के सदस्य बन गये। इस संस्था का उद्देश्य था—आत्मशिक्षण। इस संस्था के सदस्यों ने यह बात पहले ही समझ ली थी कि यदि हम किसी संस्था को चिरस्थायी बनाना चाहते हैं तो उसकी नींव सच्चरित्रता पर रक्खी जानी चाहिये। प्रिंस क्रोपाटकिन ने इसकी चर्चा करते हुये एक बड़ा महत्त्वपूर्ण वाक्य लिखा है, जिसकी ओर उन सबको जो भारत में संस्थाओं के सञ्चालक हैं, ध्यान देना चाहिये। वे लिखते हैं—"उन थोड़े-से मित्रों ने, जिन्होंने चेकोवस्की के सत्संग की स्थापना की थी, यह बात अच्छी तरह समझ ली थी और उनकी यह समझ बिल्कुल ठीक भी थी कि प्रत्येक संस्था के मूल में नैतिक दृष्टि से विकसित (सच्चरित्रयुक्त) व्यक्तित्व होना चाहिये, आगे चलकर उस संस्था का चाहे जो राजनीतिक रूप हो और भविष्यत् में वह चाहे जो कार्यक्रम निश्चित करें।"

प्रिंस क्रोपाटकिन की यह बात कितने अनुभव की है। जो लोग झूठ दगाबाजी और फरेब का आश्रय लेकर देश का उद्धार करना चाहते हैं और जो अपने विरोधियों के पतन के लिये किसी भी तरह के हेय उपाय काम में ला सकते हैं, वे इन पंक्तियों को पढ़ें।

चेकोवस्की के सत्संग में ऐसे ही व्यक्ति थे, जो नीतिवान् थे। क्रोपाटकिन लिखते हैं—"यही कारण था कि चेकोवस्की के सत्संग का कार्यक्रम धीरे-धीरे काफी व्यापक बन गया और उसकी शाखायें सारे रूस देश में फैल गईं। आगे चलकर जब सरकार के घोर अत्याचारों के कारण देश में क्रान्तिकारी संग्राम शुरू हुआ, तो इस सत्संग ने कितने ही ऐसे स्त्री और पुरुष उत्पन्न किये, जिन्होंने रूस की जारशाही के विरुद्ध युद्ध करते हुये अपने प्राण अर्पित कर दिये।"

"प्रारम्भ में सन् १८७२ में इस सत्संग के सामने कोई क्रान्तिकारी कार्यक्रम नहीं था। उस समय उसका एक मात्र उद्देश्य था 'आत्मशिक्षण', पर यदि इसका उद्देश्य यहीं तक परिमित रहता, तब तो जैसाकि प्रायः मठों में हुआ करता है, उसकी उन्नति रुक जाती, पर सदस्यों ने एक उपयुक्त कार्य अपने लिये चुन लिया था और वह था सत्साहित्य का प्रचार। सत्संग के सदस्य इन पुस्तकों को खरीदकर प्रान्तीय नगरों के पाठकों तक पहुंचाते थे। थोड़े दिनों में यह कार्य इतना व्यापक हो गया कि रूस के ३८ प्रान्तों में एक भी प्रान्त ऐसा नहीं बचा कि जहां इस प्रकार के साहित्य के प्रचारक न हों। धीरे-धीरे यह सत्संग शिक्षितजनों में साम्यवादी साहित्य के प्रचार करने का केन्द्र बन गया। आगे चलकर विद्यार्थियों तथा किसानों और मजदूरों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने में यह सत्संग बड़ा सहायक हुआ।

इस सत्संग में प्रवेश संस्कार करते समय मुझे क्या-क्या रस्में अदा करनी पड़ीं और कौन-कौन-सी शपथें खानी पड़ीं, पर ऐसे पाठकों को निराश ही करना पड़ेगा। इस सत्संग के कोई विशेष नियम नहीं थे, केवल एक बात का ध्यान रक्खा जाता था, वह यह कि केवल उन्हीं लोगों को इसका सदस्य बनाया जाय, जिनकी परीक्षा संकट में की जा चुकी हो और जो कष्टों की कसौटी में खरे उतर चुके हों।

किसी नये सदस्य को सम्मिलित करने से पूर्व उसके चरित्र की पूर्ण स्पष्टता तथा गम्भीरता के साथ आलोचना की जाती थी। स्पष्टता तथा ईमानदारी निहिलिस्ट लोगों का विशेष गुण था। यदि किसी व्यक्ति में थोड़ा भी फरेब या अहंकार पाया जाता तो उसका प्रविष्ट होना असम्भव था! सत्संग वालों को इस बात की चिन्ता नहीं थी कि उसके सदस्यों की संख्या खूब बढ़ जावे, सत्संग यह भी नहीं चाहता था कि देश की भिन्न भिन्न संस्थायें जो काम कर रही हैं, वह सब हमारे द्वारा ही हो। उस समय रूस में जनता की सेवा के लिये कितने ही गिरोह काम कर रहे थे। चेकोवस्की का सत्संग यह नहीं चाहता था कि वे हमारे अधीन हो जावें। अधिकांश संघटनों के साथ सत्संग का मित्रतापूर्ण सम्बन्ध था। सत्संग उनकी सहायता भी करता था और वे भी सत्संग के सहायक थे। परन्तु एक दूसरे की स्वाधीनता में कोई बाधा नहीं था। (शेष पृष्ठ १० पर)

उपन्यासकार श्री गुरुदत्त वैद्य

श्री रामशंकर अग्निहोत्री, मण्डी हाउस, नई दिल्ली,



कुछ लोगो के इस कथन मे आज के साहित्य-जगत् का एक बडा तथ्य छिपा हुआ है कि यदि उपन्यासकार श्री गुरुदत्त जी ने साहित्य में सोद्देश्यता का तिरस्कार किया होता तथा सत्रास, कुण्ठा, विफलता आदि के जालो से बुनी अतृप्त भोग-लालसाओ द्वारा सामाजिक मूल्याकन की दिशा आकने वाली प्रचलित कला का पल्ला पकड लिया होता, यदि श्री गुरुदत्त जी ने भी भोगे हुए क्षणो की स्मृतियो के चित्रण और निष्कर्षहीन अधूरे पात्रो के असम्बद्ध अन्तर्द्वन्द्वों के शब्द-विस्फोटो को ही प्रधानता दी होती तो उनका भी एक समा होता, जिसे प्रगतिशील लेखक कहा जाता।

दूसरी भी एक बात कही जाती है कि यदि उन्होने अपने विचार-साहित्य में भारतीय जीवन दर्शन तथा मूल्यो की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने का रास्ता न पकडा होता, धर्म, सस्कृति, समाज एव राष्ट्र की ऋषि प्रणीत व्याख्याओ को छोड कर मिली-जुली सभ्यता, सामाजिक सस्कृति, खिचडी राष्ट्रवाद और अवसरवादी राजनीति की ढफली पर थापे देते हुए जन-जीवन मे फैले हुए भ्रम, अनास्था, अस्थिर विचारो के सुर मे ही अपना सुर मिला दिया होता तो कभी का उन्हे साहित्यकार मान लिया गया होता।

उपरोक्त दोनो बात भिन्न-भिन्न अवसरो पर अलग-अलग तरीको से कही जाती रही हैं, जो इस बात को सिद्ध करती हैं कि श्री गुरुदत्त जी ने लीक-लीक चलने से इन्कार किया। वे अपनी बात को कितने जोर से कह पाये, कितनी सारगर्भिता, स्पष्टता, सरलता और तर्कसगतता से कह पाये?

यह बिल्कुल अलग विषय है। इस पर जिज्ञासु पाठको और चिन्तनशील विद्वानो के मत भिन्न हो सकते हैं, किन्तु यही एक सत्य कि उन्होनें साहित्य मे प्रचलित हो हल्ले से मुक्त अपना अलग स्वर दिया, उनके प्रयत्नो की यथार्थता सिद्ध कर देता है। उनकी निर्भयता, अडिगता का बोध कराता है। विचारो में उनके विश्वास को स्पष्ट करता है।

सशक्त शब्द चित्र

वैसे किसी भी साहित्यकार को उसकी साहित्यिक मान्यता की स्वीकृति पाठक गण ही प्रदान करते हैं। रचनाये पाठको के बीच समादृत होती हैं और साहित्यकार के विचारो की गूज उठने लगती है। श्री गुरुदत्त जी को यह मान्यता सन् १९४२ के 'स्वाधीनता के पथ पर' उपन्यास से लेकर सन् १९५३ के "देश की हत्या" तक दस वर्षों में भली भाति प्राप्त हो चुकी उसके बाद तो उन्होंनें इतना लिखा है कि लोग आश्चर्य करते हैं। ११५ के लगभग उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। मुझे ऐसे कई परिवारो का पता है जो श्री गुरुदत्त जी के नये उपन्यास की बाट जोहा करते हैं। उन्होंनें इस प्रकार एक विशाल पाठक-वर्ग का यह विश्वास सम्पादित कर लिया है कि उनके द्वारा खींचे गये शब्द चित्रो मे ऐसी शक्ति होती है जो समस्याओ को कची कसती है धुधलको को फटकारती है और चारो ओर की निरर्थकता मे व्याप रही खीझ को समेटकर एक सार्थकता का पुट निर्माण करती है। श्री गुरुदत्त जी की इस सफलता से कोई इन्कार नही कर सकता।

श्री गुरुदत्त जी का नाम वैसे मेनें भी पहले सुन लिया था, जब कि उनके साथ भेंट वार्ता का अवसर मुझे सन् १९५२-५३ में सर्व प्रथम प्राप्त हुआ। भारतीय जनसघ के सस्थापक डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में सचालित 'कश्मीर आन्दोलन' की वेला थी। दिल्ली से 'आकाशवाणी' नामक एक सान्ध्य दैनिक के प्रधान सम्पादक के नाते उन दिनो लगभग दो वर्ष मुझे दिल्ली में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। सत्याग्रह की सरगर्मी के बीच एक तेजस्वी व्यक्तित्व और ओजस्वी वक्ता के रूप मे श्री गुरुदत्त जी का परिचय मुझे प्राप्त हुआ था। दिल्ली में स्थान स्थान पर सभायें होती थीं। कई बार श्री गुरुदत्त जी के विचारों का अध्ययन करने का अवसर मिला।

'आर्यमर्यादा' साप्ताहिक के सम्पादक को बधाई

रविवार ३० नवम्बर १९६९ को प्रकाशित अक के साथ आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के मुख पत्र 'आर्यमर्यादा' साप्ताहिक का एक वर्ष पूर्ण हो गया है। विपक्ष के द्वारा खडी की गई अनेक बाधाओ के होते हुए भी पूरे वर्ष 'आर्यमर्यादा' के माध्यम से वैदिक सिद्धान्तो का प्रचार और प्रसार अतिउत्तम ढग से होता रहा है। पत्र के विद्वान् सम्पादक श्री प० जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री वैदिक सिद्धान्तो के मर्मज्ञ और आर्षग्रन्थो के प्रकाण्ड पण्डित हैं और उन्होनें पहले भी वर्षों तक 'सम्राट्', 'आर्य', 'आर्योदय' आदि आर्यसामाजिक पत्रो का सम्पादन किया है। श्रद्धेय सिद्धान्ती जी ने आर्यजगत् मे सम्पादन का एक विशिष्ठ मार्ग प्रशस्त किया है जो कि आर्यसमाजी पत्र पत्रिकाओ के सम्पादको के लिये अनुकरणीय है। पत्र के विद्वतापूर्ण सफल सम्पादन कार्य के लिए हार्दिक बधाई है।

—सत्येन्द्रसिह एम० ए० आर्यउपदेशक

साहित्य यात्रा का दर्शन

उसके बाद आज तक मैं बडे चाव से उनकी साहित्य यात्रा का दर्शक रहा हूं। साहित्य में प्रचलित वादो और आन्दोलनो के घेरो से ऊपर उठ कर उन्होने अपनी एक विशिष्ट शैली द्वारा विगत २०-२५ वर्षो मे अनेक पडाव डाले। शैक्षणिक उपाधि मे विज्ञान की एम० एस० सी० की डिग्री, व्यवसाय मे आयुर्वेद चिकित्सक, मुख्याध्यापकी और अमेठी राजा के निजी सचिव आदि के सघर्ष पूर्ण उतार चढाव के बीच उनके अनुभवो का भण्डार बढता गया। इसलिए उन्हें उपन्यासो मे पात्रो के चयन मे सरलता प्राप्त होनी है। उनका यह कहना कि उपन्यास लिखते समय किसी न किसी अध्ययन का प्रतीत चित्र मेरा निर्देशक बन बैठता है और मेरे लिए मार्ग प्रशस्त करता है। ऐसी अधिकाधिक घटनाय हुई हैं, जब कि कोई अपरिचित, अनजाना व्यक्ति मेरे सन्मुख आ खडा हुआ हो और मुझे अपना परिचय मेरे किसी उपन्यास के किसी पात्र के रूप मे देता रहा हो। उनकी जीवन अध्ययन की क्षमता का ही प्रमाण है। सामान्य पाठक तक सरल और प्रचलित भाषा मे प्रवाहात्मक शैली के माध्यम से वे जब अपनी कथा-वस्तु को पहुचाते हैं तो वे कभी इस बात को नजरअन्दाज नही करते कि वे अपनी विशेष विचारधारा का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। इतना ही नही, श्री गुरुदत्त जी का उपन्यासकार खुले आम घोषणा करता चलता है कि कथानक का चुनाव विचारविशेष के लक्षानुसार ही किया गया है। उनकी इसी विशेषता को कुछ लोग उनका प्रचार तत्र कह कर मुह पिचकाने का यत्न करते हैं, किन्तु आश्चर्य तब होना है, जब रेलगाडी, फुटपाथो दफ्तरो और घरो मे लोग उनके उपन्यासो को प्रचार की पुडिया जैसा नहीं, अपने भीतर की भूख जैसी घनिष्ठ आत्मीयता प्रदान करते हैं।

हिन्दुत्व के प्रति व्याप्त उपेक्षा की दीवारों को हिला दिया

आज जब कि सम्पूर्ण देश मे ही शुद्ध राष्ट्रवाद और धर्म, सस्कृति, सभ्यता की अवहेलना करना फैशन बन गया है, उसमे आश्चर्य करने जैसी बात नही है कि श्री गुरुदत्त जी जैसे स्पष्ट वक्ता की जानबूझ कर उपेक्षा की गयी। हिन्दू, हिन्दुत्व इतिहास और चिरतन जीवन मूल्यो के प्रति उपहास करने की आत्मघाती प्रवृति मे जकडा हुआ तथाकथित विचारक यदि उनकी उपेक्षा न करता तो क्या करता? हमे प्रसन्नता और गौरव तो इसी बात का है कि उन्होने स्वय के प्रति हुई उपेक्षा को पिया और हिन्दू-हिन्दुत्व के प्रति व्याप्त उपेक्षा की दीवारो को हिला दिया। हम उनका सम्मान कर उनके प्रयत्नो की दिशा का ही सम्मान कर रहे हैं। परमात्मा उन्हे दीर्घजीवी करे और भारतीय समाज को उनसे वैचारिक क्षेत्र मे असीम चेतना प्राप्त होती रहे। "युगवार्ता"

[श्रद्धेय विद्वद्वर! आर्यमर्यादा के समस्त ग्राहक तथा पाठकमहाशय-मण्डल की ओर से आपके जन्म दिवस के शुभ अवसर पर हार्दिक बधाई देते हुए हम प्रार्थना करते हैं कि परमेश्वर आप को चिरायु करे, जिस से वैदिक धर्म, वैदिक सस्कृति, वैदिक समाज और वैदिक राष्ट्र समस्त विश्व में यथा पूर्व स्थान पा सके।

[विनीत जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री —सम्पादक]

केशवचन्द्र सेन और शास्त्र प्रमाणवन्द

(डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० पी० एच० डी० अजमेर)

स्वामी दयानन्द के शास्त्र प्रमाण विषयक दृष्टिकोण के अन्य पहलुओ पर भी विचार किया जा सकता है परन्तु वह हमारे आलोच्य विषय से कुछ अधिक सम्बन्ध नही रखता। अब हमे केशव की शास्त्र विषयक धारणाओ का अध्ययन करना है। केशव ब्राह्मसमाज के नेता थे, अत उनके दृष्टिकोण को देखने से पूर्व ब्राह्मसमाज की शास्त्र विषयक दृष्टि का सिंहावलोकन कर लेना भी अनुपयुक्त न होगा। ब्राह्मसमाज के संस्थापक राजा राममोहन राय की दृष्टि मे वेदो के प्रति अत्यन्त आदर भाव था। यद्यपि वे वेदो के तत्त्वज्ञान से पूर्णतया परिचित नहीं थे तथापि उपनिषदो के दार्शनिक सिद्धान्तो से अच्छा परिचय होने तथा शास्त्रीय परम्परा के जानकार होने के कारण वे धर्मालोचना मे वेदादि शास्त्रो के सर्वोपरि महत्त्व को स्वीकार करते थे। ब्राह्मसमाज के द्वितीय नेता देवेन्द्रनाथ ठाकुर भी शास्त्रो के विषय मे पर्याप्त श्रद्धा भाव रखते थे यद्यपि वैदिक संहिताओ की प्रमाणिकता को वे अस्वीकार कर चुके थे (देखें परिशिष्ट मे देवेन्द्रनाथ ठाकुर के विचार) उपनिषदो के प्रति उनकी श्रद्धा भावना वैसी ही थी जसी उनके पूर्ववर्ती राजा महोदय की परन्तु ईसाई ग्रन्थो के प्रति उनका विशेष अनुराग नही था।

केशव तक आते आते ब्राह्मसमाज की शास्त्र विषयक धारणाओ मे परिवर्तन हो चला। राममोहन राय की मृत्यु के पश्चात ब्राह्मसमाज ने स्पष्ट रूप से वेदो को ईश्वरीय ज्ञान मानने से इन्कार कर दिया। इस सम्बन्ध मे सुप्रसिद्ध जर्मन विद्वान मैक्समूलर की सम्मति द्रष्टव्य है—

Members of Brahmo Samaj after hecomrıng better Acquaınted with theır own Sacred wrıtıngs than they ever had been before shoud Solemnly have declared ın the year 1850 that the claım of beıng dıvınely ınspıred could no longer be maıntaıned ın favour of the hymns of brahmans or the veda Ram mohen to Ramkrıshna p 64

अर्थात ब्राह्मसमाज के सदस्यो ने अपने पवित्र धर्म ग्रन्थो से अधिक परिचय प्राप्त करने के अनन्तर १८५० मे स्पष्ट घोषणा कर दी कि ब्राह्मण ग्रन्थो या वेदो को ईश्वर प्रेरित ग्रन्थ नही कहा जा सकता।'

भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज के शास्त्र विषयक मन्तव्यो का उल्लेख करते हुए केशव ने एक स्थान पर लिखा है सारा विश्व ही परमात्मा का मन्दिर है। बुद्धि ही पवित्र तीर्थ स्थान है। सत्य ही अनन्त शास्त्र है। विश्वास ही सम्पूर्ण धर्म का मूल है। प्रेम ही सच्ची आध्यात्मिक शिक्षा है। स्वार्थ त्याग ही सच्चा वैराग्य है। ऐसा सत्येन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने पिता देवेन्द्र नाथ ठाकुर की आत्मकथा के अंग्रजी अनुवाद की भूमिका मे लिखा है—

At a general meetıng of the brahmos t was agreed that the vedas Upnıshads and other ancıent wrıtıngs were not to be accepted as ınfallıble guıdes

अर्थात ब्राह्मसमाज के अनुयायिओ की एक साधारण सभा मे यह निश्चय किया गया कि वेद उपनिषद या अन्य कोई पुराना ग्रन्थ स्वत प्रमाण न माना जाय।

ब्राह्मसमाजियो का मत है" (केशवचन्द्रसेन एक भारतीय हृदय पृ०
Dıalogues on Hındu Relıgıon P 348)

अपने ब्राह्मधर्म के आधार (Basıs of Brahmoısm) नामक ट्रक्ट मे केशव ने यह स्पष्ट घोषित किया कि ब्राह्ममत किसी लिखित शास्त्र का आधार लेकर नही चलता। एक अन्य ट्रक्ट मे पुस्तकीय इलहाम की सम्भावनाओ के विषय स्वय ही प्रश्न उठा कर समाधान करते हैं—(Brahmoısn rests on no wıtten revelatıon" Dıalogues on Hındu Relıgıon के पृ० ३४६ पर उधृत) ब्राह्म लोग किसी ग्रन्थ के ईश्वर रचित होने को क्यो अस्वीकार करते है ? इसके उत्तर मे वे स्वय ही लिखते हैं इलहाम Subjectıve होता है objectıve नही। (वही) (Because revelatıon ıs subjectıve not objectıveve)

अपने जीवन वेद नामक ग्रन्थ मे केशव ने लिखा है किसी पुस्तक विशेष का दास बन कर मैं वन्दना नहीं कर सकता। (केशवचन्द्र सेन एक भारतीय हृदय पृ०) जहां एक ओर हिन्दू धर्म के शास्त्रो के प्रमाण मानने को वे पुस्तक विशेष का दास बनना कहते हैं वहां ईसाई मत के ग्रन्थ बाइबिल के विषय में उनकी सम्पति सुनिये— possessed of the Bıble and shakespeare, a man ıs above the world अर्थात् बाइबिल और शेक्सपियर (के नाटको) को लेकर एक मनुष्य ससार से ऊंचा उठ जाता है।

केशव के उपर्युक्त कथनों का जब हम आलोचनात्मक विश्लेषण करते हैं तो हमे ज्ञात होता है कि सम्भवत उन्होंने वेद के प्रामाण्य के सिद्धान्त को बाइबिल और कुरान के इल्हामी ग्रन्थ होने के सेमेटिक सिद्धान्त के तुल्य ही समझा। वस्तुतः इन दोनों को एक ही तुला पर रख कर तोलना नितान्त अनुचित है। केशव जब लिखित इल्हाम की प्रामाणिकता को अस्वीकार करते हैं तो उनके समक्ष बाइबिल और कुरान का वह तथाकथित पुस्तक रूप में निबद्ध ईश्वरीय ज्ञान होता है जिसके विषय में सेमेटिक मतो के अनुयायिओ की यह धारणा है कि वह उन्हें पैगम्बरों के माध्यम से प्राप्त हुआ है। परन्तु वेद के अपौरुषेय और ईश्वरीय ज्ञान होने का सिद्धान्त उक्त मत से पूर्णत भिन्न है। भारतीय परम्परा के अनुसार ईश्वर की तरह वेद भी शाश्वत और अनादि ज्ञान है जो सृष्टि के प्रारम्भ में मनुष्यो के कल्याणार्थ ऋषियो के हृदय मे प्रस्फुटित होता है। कुरान के विषय में मुसलमानो की धारणा यह है कि मुहम्मद साहब के द्वारा परमात्मा ने अपना आदेश कुरान के रूप मे भेजा, यह उनका अन्तिम आदेश है। कुरान के अस्तित्व में आ जाने के कारण उसके पूर्व की इल्हामी पुस्तको तौरेत जबूर बाइबिल की अब आवश्यकता नहीं रही। कहने का अभिप्राय यह है कि समेटिक विश्वास मे जो वहां ईश्वरीय पुस्तको की प्रामाणिकता एक निश्चित अवधि तक ही रहती है और उसके पश्चात वह समाप्त हो जाती है उस प्रकार की मान्यता वेदो के विषय मे वैदिक धर्मियो की नही है। उनकी दृष्टि मे वेद आदि अन्त से रहित पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान के प्रतीक हैं जिनकी महत्ता और उपयोगिता सार्वकालिक सार्वदेशिक और सार्वजनीन है। यह ईश्वरीय अपौरुषेय ज्ञान ऋक यजु, साम और अथर्व० संज्ञक है। वेद पुस्तक अपौरुषेय नहीं हैं।

केशव जब लिखित शास्त्र या पुस्तकीय इल्हाम का विरोध करते हैं तो उनके मस्तिष्क मे यही भ्रान्ति उपस्थित रहती है कि कुरान और बाइबिल की भांति ही वेद भी एक सीमित और साम्प्रदायिक अर्थ में ही प्रयुक्त होता है तब वे यह लिखने के लिये बाध्य हो जाते हैं—

भारतीय शास्त्रो का द्वार बन्द नही हो गया है। प्रति वर्ष इनमे नये अध्याय जोड जाते हैं। ईश्वर के अतिरिक्त यह कौन कह सकना है कि आगामी दश वर्षों मे वह हमें क्या आज्ञा देगा ?

(The Indıan scrıptures are not closed new chapters one added year what the Lord wıll reveale to us ın ten years tıme who can say except hımself ? Quoted ın the Lıfe of R K P (B)

इस कथन का उल्लेख कुछ शब्दो क परिवर्तन क साथ Dıalogues on hındu relıgıon क पृ० ३५५ पर इस प्रकार मिलता है—

Our Scrıpture ıs not closed but fresh chapter s are still beıng wrıtten and added year after year What the Lord wıll reveal to us ten years hence who knows save he Our Faıth and Experıence, Annıversary Address 1876)

मानो केशव इस बात को मानते हैं कि ईश्वर समय समय पर मनुष्यो के लिये नये नये इलहाम प्रचारित करता और नई नई आज्ञायें जारी करता है। केशव के इस कथन में ईश्वरीय ज्ञान में नित्यप्रति नये नये अध्याय जोड़े जाते हैं और ईसाई मुसलमानो की इस कल्पना मे कि खुदा ने इञ्जील तौरेत जबूर, कुरान आदि के रूप मे समय समय पर अपने आदेश भेजे हैं—कहां अन्तर रह जाता है ? अगर कोई अन्तर है तो वह केवल इतना ही कि केशव ऐसे किसी अन्तिम इलहाम को स्वीकार नही करते और वे प्रतिक्षण ईश्वरीय आदेश के अवतरण की सम्भावना स्वीकार करते हैं जब कि मुसलमानों के अनुसार कुरान आखिरी आसमानी किताब है।

परन्तु केशव का उक्त कथन भी तर्क का प्रहार सहन करने मे असमर्थ है यदि ईश्वर सर्वज्ञ है (उसे ऐसा सभी मानते हैं) तो क्या इससे उसकी सर्वज्ञता में कुछ भी क्षति नहीं पहुंचती कि वह प्रतिक्षण अपने आदेशों में परिवर्तन करता रहता है और उसे भिन्न-भिन्न समयो में मनुष्यो के लिये आज्ञायें प्रचित करने की आवश्यकता रहती है। इससे तो यह वैदिक मान्यता ही अधिक विश्वसनीय लगती है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जिसे परम कारुणिक मंगलमय सर्वज्ञ भगवान ने मानव जाति के हितार्थ इस सृष्टि के आदि में ऋषियों के अन्तःकरणों में प्रादुर्भूत किया था। कोई भी विचारवान् व्यक्ति इस बात को नहीं मानेगा कि परमात्मा की आज्ञायें क्षण क्षण बदलती हैं।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

पृ० ८ का शेष

केशव को 'केवल वेदों की अपौरुषेयता का निषेध करने से ही सतोष नहीं हुआ अपितु उन्होंने निस्सकोच भाव से उनकी अप्रामाणिकता और अमान्यता की घोषणा की। सरकार के समक्ष ब्राह्म विवाह अधि-नियम विषयक ज्ञापन (Memorandum) प्रस्तुत करते समय उन्होंने वेदों के प्रति अपनी अश्रद्धा को बलपूर्वक व्यक्त किया।

"ब्राह्म लोगों की गणना 'हिन्दू' शब्द के अन्तर्गत नही की जा सकती क्योंकि वे वेदों की प्रामाणिकता को अस्वीकार करते हैं, वे ब्राह्मण धर्म के प्रत्येक रूप के विरोधी हैं और हिन्दू मुसलमान ईसाई तथा अन्य लोगों को अपने मत मे सम्मिलित कर लेते हैं।"

("Term Hindu does not include Brahmos, who deny the authority—Of the Vedas, are opposed to every form of Brahmanical religion and being eclectic, admit proselyties from Hindus, Mohamedans, Christians and other religions sects")

इसका उल्लेख करते हुये सुप्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान् रोमा रोलां लिखते हैं— केशव ने अपनी सस्था के द्वार सब देशों और युगों के लोगों के लिये खोल दिये तथा प्रथम बार ब्राह्मसमाज के उपासना विषयक सग्रह मे बाइबल, कुरान और जेंदावस्ता के उद्धारण भी सम्मिलित कर लिये।

("He threw open his Church to men of all countries and all ages, and introduced for the first time expacts from the Bible, the Koran, the Zenda-Avesta into the manual of devotianal lessans for the use of the Brahmo Samaj" The Life of R K P 121.

यह बात नही कि स्वामी दयानन्द ने अन्य मत के लोगो के आर्य धर्म मे प्रवेश के अधिकार को स्वीकार न किया हो, इसके विपरीत हम देखते हैं कि उन्होंने अपने जीवनकाल में तथा उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके स्थानापन्न आर्यसमाज ने ईसाई मुसलमानों के हिन्दू धर्म ग्रहण (शुद्धि) करने के आन्दोलन को बलपूर्वक सचालित किया, परन्तु उन्होंने इसके लिये केशव की भांति वेद प्रमाण को तिलाञ्जलि देने की आवश्यकता अनुभव नहीं की और न आर्यों की उपासना प्रणाली में कुरान बाइबिल आदि साम्प्रदायिक ग्रन्थों के उद्धारणों को ही समाविष्ट किया। केशव की तरह महात्मा गांधी की प्रार्थना में भी कुरान और बाइबिल की आयतें पढ़ी जाती थी परन्तु स्वामी दयानन्द से यदि इसके विषय मे पूछा जाता तो उनकी सम्मति प्रतिकूल ही होती। कारण कि उनकी यह धारणा थी कि वेदों और तदनुवर्ती उपनिषदादि ग्रन्थों मे ईश्वर के स्वरूप का जो वर्णन है वह नितान्त उदात्त, भावपूर्ण और उच्च है। उसकी तुलना मे बाइबिल और कुरान में जिस जेहोवा या खुदा का वर्णन है वह एक स्वेच्छाचारी शासक के तुल्य है जिसके प्रति भक्ति भाव उत्पन्न न होकर आतक का भाव ही पैदा होता है। ऐसी दशा में वेद मन्त्रों और उपनिषद् वाक्यों के समकक्ष कुरान और बाइबिल की आयतों को रखना कहाँ तक युक्ति युक्त हो सकता है ?

इसके विपरीत केशव ने १८७६ में दिये गये अपने वार्षिक भाषण में ...से की पवित्र आत्मा और उपनिषदों के परम ब्रह्म में ऐक्य के दर्शन ... उसका प्रतिपादन भी किया।

(In it he endeavoured to identify the Holy spirit of Bible with Supreme Spirit of the Upnishads" The Dialogue on Hindu Religion P. 355.)

यों देखने के लिये तो एकता के दर्शन आपाततः विरोधी प्रतीत होने वाली वस्तुओं में भी किये जा सकते हैं परन्तु उससे कुछ तात्विक लाभ नहीं होता। अस्तु।

चाहे केशव ने पुस्तकीय इल्हाम को स्वीकार न किया हो परन्तु उन्होने इल्हाम के सिद्धान्त को ही एक अन्य रूप में प्रतिपादित किया। अपने Greatmen शीर्षक भाषण में उन्होंने तीन प्रकार के ईश्वरीय इल्हाम को स्वीकार किया। उनके अनुसार सर्वप्रथम ईश्वर की अभिव्यक्ति हमें प्रकृति में दिखाई देती है।

(Behold the Supreme Creator and Rules of the universe immanent in matter.

दूसरी अभिव्यक्ति है इतिहास में

(He who created and upholds the vast universe, also governs the destinies and affairs of Nations.)

और तीसरी है मनुष्य की आत्मा में।

(The highest revelation is inspiration where Spirit communes with Spirit, face to face, without any mediation whatever. Extracts of the speech.)

इस सिद्धान्त से ही उनका ईश्वरीय प्रेरणा या आदेश का सिद्धान्त जुड़ा हुआ है जिसकी चर्चा हम आगे चलकर करेंगे।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि केशव ने भारतीय शास्त्रीय परम्परा को कोई महत्त्व या स्वीकृति प्रदान नही की। महत्त्व देना तो दूर, वे उसकी उपेक्षा तथा अवहेलना करते रहे। हिन्दू शास्त्रों की अपेक्षा बाइबिल के प्रति उनकी धारणा अधिक श्रद्धा समन्वित थी। इसके विपरीत स्वामी दयानन्द ने शास्त्र विषयक परम्परागत विचारो को स्वीकार करते हुये भी इस बात का ध्यान रक्खा कि श्रद्धा और बुद्धि, शास्त्र और युक्ति का समन्वय होना अत्यन्त आवश्यक है। उन्होंने वेदों के ईश्वर कृत होने तथा अन्य ग्रन्थो के वेदानुकूल होने पर ही प्रमाणिक माने जाने के सिद्धान्त का बलपूर्वक समर्थन किया, परन्तु उनका यह सिद्धान्त अंधविश्वास की भित्ति पर टिका हुआ न होकर पूर्णत. युक्तियुक्त, वैज्ञानिक और स्पष्ट था, जिसे स्वीकार करने में भारतीय समाज को कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी। फिर वह उनकी परम्परागत मान्यताओ और विश्वासों के अनुकूल तो था ही अत उसे पूर्णतया मनोवैज्ञानिक भी कहा जा सकता है।

परवर्ती ब्राह्मसमाज तथा केशव की असफलता का एक कारण यह भी है कि उन्होने शास्त्रप्रमाणवाद के इस पहलू पर कभी गम्भीरतापूर्वक विचार नही किया और न यह सोचने का कष्ट ही किया कि भारतीय समाज मे शास्त्रप्रमाणवाद की जड़े कितनी गहराई तक गड़ी हुई हैं। स्वामी दयानन्द की सफलता का एक रहस्य यह भी है कि उन्होंने शास्त्र-प्रमाण की दृढ आधार शिला पर ही अपने विचारों के भवन का निर्माण किया।

पृ० ५ का शेष

कबिरा क्षुधा है कूकरी करे भजन में भंग।
इस को टुकड़ा डालकर, करिये भजन निसंग॥
साईं इतना दीजिये, जा में कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाये॥
साधु गांठ न बांधता, उदर समाता लेय।
आगे-पीछे हरि खड़े, जब मांगे तब देय॥
आधी और रूखी भली, सारी सों सन्ताप।
जो चाहेगा चूपड़ी, अधिक करेगा पाप॥

१६—दाल, भात, रोटी आदि तो प्रसिद्ध भोजन है ही, आखों का भोजन रूप है, श्रोत्र का भोजन शब्द है, नाक का भोजन गन्ध है, त्वचा का भोजन शीतोष्ण स्पर्श है, रसना का रस। यह पांच प्रकार का भोजन भी शुद्ध, सात्त्विक, पोषक और सुरुचिवर्धक ही हो। इस विषय में भी पूर्ण सतर्कता होनी ही चाहिये।

१७—औषधोपचार का अत्यन्त निषेध तो नहीं है; परन्तु औषधियों के भरोसे पर कुपथ्य करना तो बुरा है हो। रोगादि की अवस्था में अनुभवी चिकित्सकों से परामर्श करके दवा ले लेनी चाहिये। बिना दवा प्राकृतिक साधनों से ही रोग-निवृत्ति का अभ्यास करना चाहिये। रोग तो होते ही तब हैं, जब आहार-विहार के उत्तम नियमों को तोड़ा जाता है। रोगों से बचना और दूसरों को बचाना भी आवश्यक है। जो वकीलों के भरोसे पर अपराध और वैद्यों के भरोसे पर कुपथ्य करें, वे भले लोग नहीं हैं।

१८—साधारणतया एक स्वस्थ मनुष्य को नित्यप्रति तीन और चार सेर के बीच शुद्ध जल पी लेना चाहिये। इस की रीति ऐसी है कि सात या आठ अवकाशों में लग-भग आध-आध सेर जल पी लिया जाये। जल-पान के समय भी नियत किये जा सकते हैं। शुद्ध जल का सचय कर रखना चाहिये, विशेष रूप से उन स्थानों में जहां जल की कमी है, या जल अशुद्ध होता है। दुग्ध-पान और रस-पान को जल-पान से पृथक् ही मानें। जल-पान के प्रत्येक अवसर पर कुछ न कुछ खाना जरूरी नहीं। यह जल-पान तो बस जल-पान ही है। बिहार-बंगाल वाला नाश्ता या विशेष-भोजन यह नहीं है।

पृ० ६ का शेष

इस प्रकार हमारा सत्सग थोडे से मित्रो का दृढ समूह था। जिन पन्द्रह-बीस स्त्री-पुरुषो से मेरा परिचय इस सत्सग मे हुआ, वैसे नीतिवान् और सच्चरित्र व्यक्ति मुझे जीवन मे अन्यत्र नहीं मिले।

क्रान्तिकारणी लडकिया

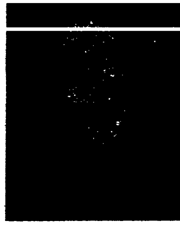
उस समय रूस मे जो लडकिया देशोद्धार के लिये सेवाकार्य कर रही थीं, उनके चरित्र का वृत्तान्त सचमुच उत्साहप्रद है। प्रिंस क्रोपाटकिन लिखते हैं—

'एक लडकी का नाम था सोफिया पीरोवस्काया। यह एक अत्यन्त उच्च घराने की थी। इस लडकी का पिता पहले सेंट पीटर्सबर्ग का फौजी गवर्नर रह चुका था, इस लडकी की माता उसे बहुत प्रेम करती थी। यह उससे आज्ञा लेकर हाई स्कूल मे पढने चली आई थी। इसने अन्य तीन लडकियो के साथ 'आत्मशिक्षण' का एक सगठन बना लिया था। इस लडकी के घर पर हमारी अनेक मीटिंग हुआ करती थी। यह लडकी पहले सेंटपीटर्सबर्ग के ऊचे-ऊचे भवनो मे अच्छी से अच्छी पोशाक पहने हुये दीख पडती थी। अब यह बिल्कुल मजदूर लडकियो की भाति रहती थी। वह मोटे सूती कपडे पहनती थी। पुरुषो के समान जूते पहनती थी और जब वह अपने कन्धे पर पानी के भरे हुये डोल रख कर लाती थी, तो उसे देखकर यह कोई भी नही कह सकता था कि यह किसी उच्च घराने की लडकी है। नैतिक दृष्टि से वह बडी सयमशील थी, किन्तु वह उपदेश देने वाली नही थी। जब उसे किसी सदस्य की कोई बात अनुचित लगती, तो वह बडी कठोरता से उसकी ओर दृष्टिपात करती। चरित्र सम्बन्धी मामलो मे वह बडी कठोर थी। एक व्यक्ति की चर्चा करते हुये उसने कहा था—

'वह तो जनखा (नपुसक) है।" उसने येशब्द इस ढग से कहे थे, वे मुझ अब तक भली-भांति स्मरण हैं और मैं उन्हें कभी नही भूल सकता। उसकी वह मुद्रा मेरी स्मृति में जमकर बैठ गई है। यह लडकी क्रान्तिकारी विचारो की थी और बडी दृढप्रतिज्ञ तथा वीर आत्मा थी। किसानो और मजदूरो के लिये कार्य करना ही उसके जीवन का एकमात्र ध्येय था। एक दिन उसने मुझसे कहा—'हमारे समुदाय ने बडा भारी काय उठाया है। इसके पूर्ण करने मे दो पीढिया बीत जावेंगी, पर यह कार्य होना अवश्य चाहिये और पूर्णरूप से।'

हमारे साथ कार्य करने वाली लडकियो मे एक भी ऐसी नही थी जो फासी से डरती हो। समय आने पर सभी फासी तख्ते क पर हसी खुशी क साथ चढ सकती थी। किन्तु जिस समय हम सत्साहित्य के प्रचार मे लगे हुये थे, उस समय हम में से किसी को यह विचार भी नहीं था कि फासी का अवसर भी आयेगा। जब आगे चलकर यह लडकी पीरोवस्काया पकडी गई और उसको फासी का दण्ड मिला, तो उस समय मृत्यु के कुछ घटे पहले उसने जो पत्र अपनी माता को लिखा था, वह बडा ही करुणाजनक है और उसमे एक देवी की प्रेममय आत्मा का सच्चा स्वरूप प्रतिबिम्बित है।

इसी प्रकार एक दिन आधीरात के समय तक दूसरी लडकी से मिलने के लिये क्रोपाटकिन अपने एक मित्र सहित गये। वह लडकी अभी जाग रही थी। उसके कमरे मे दीप जल रहा था। वह अपने सघटन के कार्यक्रम की नकल कर रही थी। क्रोपाटकिन ने उससे उस समय एक मजाक किया। वे बोले—"हम लोग तुम्हें बुलाने के लिये आये हैं। बात यह है किल मे हमारा जो साथी कैद है, आज हम छापा मार कर उसे छुडाना चाहते हैं उसी के लिये तुम्हारी आवश्यकता पडी है।" उसने हमसे एक भी प्रश्न नही पूछा। तुरन्त ही लेखनी रखकर कुर्सी पर से उठ बैठी और बोली—"तो चलो।" ये शब्द उसने इतनी सरलता और भोलेपन के साथ कहे थे कि मुझे अपनी मजाक की मूर्खता पर लज्जित होना पडा। जब मैंने उसे बतलाया कि हमने तो केवल मजाक किया था तो वह अपनी कुर्सी पर बैठ गई। उसकी आंखो में आसू आ गये और निराशा पूर्वक उसने कहा—"क्या सचमुच तुम्हारा यह मजाक ही था? भला ऐसा मजाक क्यो करते हो?" उसका यह उत्तर सुनकर मुझे लगा कि मैंने कैसा निर्दयता पूर्ण कार्य किया है।



श्री रामनाथ जी सहगल

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

आप ८ दिसम्बर १९६९ को भारत सरकार की सेवा से निवृत्त हो गये हैं। आपने सकल्प किया है कि आगे भी यथापूर्व आर्यसमाज की सेवा करते रहेंगे।

—निज सवाददाता

सभा के अधिवेशन में रोहतक पहुंचें

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का महत्वपूर्ण वार्षिक साधारण अधिवेशन २१.१२.६९ को रविवार के दिन ११ बजे छोटूराम कालिज आफ एजुकेशन मे होगा। अत सभी प्रतिनिधियो को ११ बजे से पूर्व ही सभास्थान पर पहुच जाना चाहिये। यह ध्यान अवश्य रखें कि छोटूराम कालिज रोहतक से देहली जाने वाली सडक पर जाट कालिज से पहिले ही मिलता हुआ है। छोटूराम पार्क मे अधिवेशनका स्थान नही है, बल्कि छोटूराम कालिज मे है। छोटूराम पार्क और है और छोटूराम कालिज और है। देहली की तरफ से पहुचने वाले सज्जन छोटूराम कालिज के पास सामने ही उतर लेवें। और स्थानो से पहुचने वाले रोहतक पहुचकर छोटूराम कालिज में पहुचें। (ध्यान रहे दिल्ली में सभा का कोई अधिवेशन नही हो रहा)

उपर्युक्त कथन से ज्ञात होता है कि उस समय रूस की लडकियो के कितने ऊचे चरित्र थे। उनके हृदय मे स्वार्थत्याग तथा आत्म—बलिदान के भाव किस प्रकार कूट-कूट कर भरे थे।

इसके विपरीत भारत के युवक है जो बात तो क्रान्ति की करते हैं, किन्तु 'देश की सेवा करेंगे लेकिन आराम के साथ" के अनुसार भोगविलास का जीवन है, नारे क्रान्ति के हैं। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी प० रामप्रसाद बिस्मिल ने इसका बडा अच्छ चित्रण अपनी आत्मकथा मे किया है। वे लिखते हैं—

"भारतवर्ष मे सब से बडी कमी यही है कि इस देश के युवकों में शहरी जीवन व्यतीत करने की बाण पड गई है। युवकवृन्द साफ सुथरे कपडे पहनने, पक्की सडको पर चलने, मीठा, खट्टा तथा चटपटा भोजन करने, विदेशी सामग्री से सुसज्जित बाजारों में घूमने, मेज कुर्सी पर बैठने तथा विलासिता में फसे रहने के स्वभाव वाले हो गये हैं। ग्रामीण जीवन को वे नितान्त नीरस तथा शुष्क मानते हैं। उनके विचार मे ग्रामो मे अर्धसभ्य या जंगली लोग निवास करते हैं।...... ......उनपर इतनी बुरी तरह से फैशन का भूत सवार हो जाता है कि उसके मुकाबले में फैशन बनाने की चिन्ता किसी को भी नहीं। स्कूल के गन्दे लडकों के हाथों में पडकर बडी बुरी-बुरी कुटेवों (आदतों) के घर बन जाते हैं। उनसे जीवन पर्यन्त अपना ही सुधार नहीं हो पाता, फिर वे ग्रामवासियो का सुधार क्या खाक कर सकेंगे?"

वे लिखते हैं—"जिसके हृदय में भारतवर्ष की सेवा के भाव उपस्थित हों, उसे उचित है कि ग्रामीण संगठन करके कृषकों और श्रमजीवियों में शिक्षा तथा सदाचार का प्रचार करें। मैं इस समय इस परिणाम पर पहुचा हूं कि यदि हम लोगो मे प्राणार्पण से जनता को शिक्षित बनाने में पूर्ण प्रयत्न किया होता, तो हमारा उद्योग क्रान्तिकारी आन्दोलन से कहीं अधिक लाभदायक होता, जिसका परिणाम स्थायी होता। अति उत्तम होगा यदि भारत की भावी सन्तान तथा नवयुवक वृन्द क्रान्तिकारी सघटन करने की अपेक्षा जनता की प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगाने का प्रयत्न करें।"

निष्कर्ष यह है कि त्यागी, तपस्वी, ब्रह्मचारी और पुरुषार्थी युवक ग्रामों में जाकर सेवा करें तथा शिक्षा, ... उपकार, ... का प्रसार अपने पवित्र जीवन के द्वारा करें, तभी कोई क्रान्ति हो सकती है, ... बातों और बनावटी जीवन से कुछ नहीं बनेगा।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब वेद प्रचार विभाग की सूचना

इन दिनों हरयाणा की दोनो भजन मण्डलियां श्री मुन्शीलाल धर्मपाल जी तथा श्री रामकरण मण्डली ने हरयाणा के अनेक ग्रामो मे प्रचार किया। दादरी विद्यालय के उत्सव पर श्री जयलाल की मण्डली पहुची। इस के अतिरिक्त निम्न स्थानों पर उत्सव सम्पन्न हुए। राणा प्रताप बाग दिल्ली के उत्सव मे प० तेजभानु जी भजनोपदेशक उपस्थित हुए। आर्यसमाज दिल्ली कैन्ट का वार्षिकोत्सव २८ से ३० नवम्बर को बडी धूम-धाम से सम्पन्न हुआ। सभा की ओर से प० जितेन्द्र जी और प० अमरनाथ जी प्रेमी ने उत्सव मे भाग लिया। आर्यसमाज जींद का वार्षिकोत्सव अबकी बार बडी धूम-धाम से सम्पन्न हुआ, सभा की ओर से निम्न महानुभाव पधारे। प० समरसिंह जी वेदालंकार, प० निरंजनदेव जी वेदप्रचाराधिष्ठाता, प० हरिदेव जी सिद्धान्त भूषण, प० रामनाथ जी सि० वि०, प० मुंशीलाल धर्मपाल जी की मण्डली, प० रामकरण तथा श्री जयलाल जी उपस्थित थे। लंगर का प्रबन्ध एक ही दानी श्री जियालाल जी ने किया। समाज के अधिकारियों ने बहुत अच्छा प्रबंध किया। वेदप्रचार मे ३५०) रु० सभा को प्राप्त हुआ। सारा दिसम्बर मास भी उत्सव जारी रहेंगें। —निरंजन देव, वेदप्रचार अधिष्ठाता

हरयाणा वेदप्रचार मण्डल के समाचार

वार्षिकोत्सवो के अतिरिक्त निम्न ग्रामो मे विशेष प्रचार कर के नये समाज बनाने का प्रयत्न किया गया तथा कुछ पुराने समाजो मे प्रचार कर उन को उत्साहित किया —

मगनखेडी, सेखुपुरा, नहला, सिवानी, किरमारा करोढी, डोबी, किरतान, लाडवा बरवाला, हासी, डाबडा कण्डूल और पाबडा आदि जिला हिसार और महेन्द्रगढ के गावो मे प्रचार श्री जयलाल जी की मण्डली ने किया। जिला करनाल के सालवन छूडा और कुडलान आदि गावो मे श्री मुंशीलाल जी की मण्डली ने प्रचार किया, श्री रामकरण जी की मण्डली से जीन्द के आस-पास तथा श्री रामपत जी वानप्रस्थी तथा प० अर्जुनदेव जी ने जिला रोहतक में प्रचार किया। यथासमय इन मण्डलियो ने शहर कस्बो के उत्सवो में भाग लिया। —समरसिंह वेदालकार-अध्यक्ष

दिल्ली मे स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान जयन्ती

अमर हुतात्मा श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की ४३वी बलिदान-जयन्ती बृहस्पतिवार, २५ दिसम्बर, १९६१ को राजधानी की सभी आर्य समाजो तथा आर्य सस्थाओ की ओर से आर्य केन्द्रीय सभा के तत्वावधान मे पूरी शान से मनाई जा रही है। इस उपलक्ष्य में गत वर्षों की भाति एक विशाल जलूस मध्याह्न १२ बजे श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार (नया बाजार) से आरम्भ होगा और नया बांस, लाला कुआ, चावडी बाजार, नई सडक, चादनी चौक, फव्वारा, दरीबा होता हुआ ४ बजे साय गांधी [illegible] मे समाप्त होगा। वहा उसी समय एक विराट् सार्वजनिक सभा [illegible] जिसमें अनेक महानुभाव अमर शहीद के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करेंगे।

(१) सब बहन-भाइयो से अनुरोध है कि वे २५-१२-६१ को प्रात ग्यारह बजे श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार के सामने पहुच जाए। (२) २१-१२-६१ के साप्ताहिक सत्सङ्ग में स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन के सम्बन्ध मे ही भजन, व्याख्यान तथा अन्य कार्य-क्रम हों। (३) २५-१२-६१ से पहले कम से कम तीन दिन प्रात अपने-अपने क्षेत्र में प्रभात-फेरियो का आयोजन कर जनता को जयन्ती का सन्देश दें। (४) नगर कीर्तन मे भाग लेने के लिए सब सदस्य सपरिवार अपने-अपने समाज-मन्दिर अथवा सस्था में एकत्रित हो कर बस ट्रक से अथवा जलूस के रूप में बलिदान भवन पहुंचें और वहां से पूरे अनुशासन से जलूस में चलें। (५) प्रत्येक आर्यसमाज तथा स्कूल आदि को अपने नाम-पट्ट के साथ अलग-अलग मण्डली हो, जिससें आर्य केन्द्रीय सभा की ओर से निश्चित गीत ही गाये जाये। (६) सब आर्य सस्थाओं तथा समाजो के पास 'ओ३म्' ध्वज हों। (७) पुरुष केसरी पगडी या टोपी और महिलाए केसरी साडी या दुपट्टा पहन कर आने की कृपा करें। (८) स्वामी श्रद्धानन्द जी के चित्र वाले बैज उन दिन अपनी छाती पर अवश्य लगाए। (९) जिन आर्य बन्धुओं के पास स्कूटर हैं वे जलूस के आगे-आगे चलने लिए अवश्य पधारें और अपनी स्वीकृति अपने घर के पते सहित शीघ्र सभा के कार्यालय में भेज दें। —ओम्प्रकाश प्रधान मन्त्री

तलाव (रोहतक) में सदाचार शिक्षण शिविर

आर्य युवक सभा (हरयाणा) के तत्वावधान मे तारीख २४ से २८ दिसम्बर (१९६१) तक सदाचार शिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। जिसमे नवयुवकों विशेषतया विद्यार्थियो को सदाचार-शिक्षण का अच्छा प्रबन्ध किया गया। इस शिविर मे उच्चकोटि के सन्यासी त्यागी तपस्वी विद्वान् एव उत्साही नवयुवको को निमन्त्रित किया गया है। इस मे भाग लेने वाले विद्यार्थी की आयु १४ वर्ष से अधिक होनी चाहिये। प्रत्येक विद्यार्थी अपने साथ ऋतु अनुकूल वस्त्र, २ लगोट, थाली, कटोरी, लोटा, घी, कापी, पेंसिल साथ लावे। भोजन की नि शुल्क व्यवस्था शिविर की ओर से की गई है। प्रवेश शुल्क २) रु० है। शिविर में भाग लेनें वाले छात्र अपने पहुचने की सूचना पूरे पते सहित नीचे लिखे पते पर देने का कष्ट करें। —सत्यवीर शास्त्री

राजकीय उच्च विद्यालय, तलाव त० झज्जर जि० रोहतक

वैदिक योगाश्रम शुक्रताल (जि० मुजफ्फरनगर)

इस आश्रम मे वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिये उपदेशक महाविद्यालय तथा गुरुकुल प्रारम्भ हो गया है। पूरी जानकारी के लिये तथा विद्यार्थियों के प्रवेश के लिये निम्न लिखे पते पर पत्र व्यवहार कर।

—ब्र० बलदेव नैष्ठिक सस्थापक गुरुकुल महाविद्यलय शुक्रताल (जि० मुजफ्फरनगर)

योग प्रसार सभा यमुना नगर (जि० अम्बाला)

तीसरा वार्षिकोत्सव समारोह से मनाया गया। बाहर से अनेक सज्जन उत्सव में पधारे। योग क्रियाओ का प्रदर्शन किया गया। योग पर उत्तम भाषण दिये गये। इस सस्थान को राज्य अधिकारी तथा कई प्रतिष्ठित महानुभावो को सहयोग प्राप्त है। कविराज रामसिंह जी वैद्यवाचस्पति इस सभा के सस्थापक एव सचालक हैं। —निज सवाददाता

आर्यसमाज पीपाड शहर का निर्वाचन

बडे ही उत्साह व शान्ति के साथ सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ जिसमे निम्न पदाधिकारी निर्वाचित किये गये।

प्रधान—श्री भानीराम जी लड्ढा, मन्त्री—श्री रामरख जी आर्य (पुरोहित) कोषाध्यक्ष—श्री भवरलाल जी वैष्णव पुस्तकाध्यक्ष—श्री हीरालाल जी आर्य। —उप मन्त्री आर्यसमाज मन्दिर, पीपाड

श्री प्रभुदयाल चैरिटेबल ट्रस्ट, द्वारा छात्र वृत्तियां

श्री प्रभुदयाल चैरिटेबल ट्रस्ट की ओर से दस-दस रु० मासिक की दो छात्र वृत्तियो के लिये निर्धन, परिश्रमी योग्य एव सच्चरित्र स्कूल छात्र-छात्राओ से आवेदन-पत्र आमन्त्रित किये जाते हैं जो प्रमाण पत्रो सहित ३१ दिसम्बर १९६१ तक मन्त्री श्री प्रभुदयाल चैरिटेबल ट्रस्ट ५७ मौडल बस्ती दिल्ली-५ के पास पहुच जाने चाहिए। —मन्त्री हरिदत्त

शुद्धि सस्कार

राची जिला अन्तर्गत सिमडगा थाने मे श्री रामरेखा धाम पवित्र तीर्थ के मेले मे ५४ व्यक्तियो के ९ परिवारो को शुद्ध करके आर्य धर्म मे दीक्षित किया गया। श्री गोविन्द प्रसाद आर्य ने सस्कार कराया। श्री महन्त जयराम जी प्रपन्न और ब्र० देशपाल जी दीक्षित के यत्न का यह शुभ फल है। मेले में उपस्थित २० हजार व्यक्तियो ने सस्कार मे भाग लिया। यह मेला प्रति वर्ष कार्तिक की पूर्णमाशी को लगता है। —निज सवाददाता

ग्राहक वृद्धि अभियान आरम्भ है

आर्यमर्यादा के गत अको मे अनेक ग्राहक तथा पाठक महानुभावो की सेवा मे अपील की गई थी कि आर्यमर्यादा के दूसरे वर्ष आरम्भ के उपलक्ष में नये सदस्य बनाये जावें। हमे प्रसन्नता है कि हमारे ग्राहको तथा हितैषियो ने आर्यमर्यादा के नये सदस्य बनाने का अभियान आरम्भ कर दिया है।

श्री अर्जुन जी अग्रवाल ने झरिया से २ नये ग्राहको का शुल्क २०) भेजा है। इसी प्रकार श्री सत्येन्द्रसिंह जी आर्य तथा श्री बनवारीलाल आर्य ने हमे नये ग्राहक बनाने की शुभ सूचना भेजी है। हमारी सभा के उपदेशक एव भजनोपदेशक भी यत्नशील हैं।

आशा है कि हमारे अन्य ग्राहक भी इस अभियान मे हमारा हाथ बटा कर आर्यमर्यादा को अपनावेंगे। —व्यवस्थापक

आर्यसमाज दीवानहाल

८५ वां वार्षिकोत्सव १९ २० २१ दिसम्बर ६९ को गान्धी मैदान में समारोह पूर्वक सम्पन्न होगा। नगर कीर्तन का भव्य जलूस १४ दिसम्बर रविवार मध्याह्न २॥ बजे निकलेगा—मन्त्री आर्यसमाज दीवान हाल दिल्ली

वाराणसी में शताब्दी समिति की बैठक

३२,००० रुपये से अधिक के दानों की घोषणा

२९ नवम्बर १९६९ को आर्यसमाज बुलानाला वाराणसी में शास्त्रार्थ शताब्दी समिति की बैठक प० [illegible] जी शास्त्री की अध्यक्षता में हुई। श्री प० शिवकुमार जी शास्त्री प० प्रभचन्द्र शर्मा श्री कैलाशनाथ, सिंह जी आदि के अतिरिक्त वाराणसी और गोरखपुर मण्डलों के लगभग ८० प्रतिनिधि उपस्थित थे। सब प्रथम संयोजक तथा उप संयोजक ने अब तक हुये कार्य का विवरण तथा भावी कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत की। उसके पश्चात अनेक प्रतिनिधियों ने अपने सुझाव दिये। अन्त में प्रधान जी ने धन के लिये अभ्यर्थना की, जिसके परिणाम स्वरूप वहीं पर ३२००० रुपये से अधिक की घोषणाएं की गई। उनका विवरण अलग से दिया जा रहा है। रात्रि को दूसरी बैठक हुई, जिसमें शताब्दी समारोह का विभिन्न कार्यक्रम निश्चित किया गया। यह शीघ्र ही प्रकाशित कर आर्यसमाजों में भेजा जावेगा।

२—शास्त्रार्थ शताब्दी कार्यालय काशी को—

शताब्दी का कार्यालय ८ दिसम्बर १९६९ से लखनऊ से वाराणसी चला गया है। अतः समस्त आर्य बन्धुओं को सूचित किया जाता है कि शताब्दी सम्बन्धी पत्र-व्यवहार नीचे लिखे पते पर करने की कृपा करें।

—महेन्द्रप्रताप शास्त्री संयोजक आर्यसमाज—बुलानाला वाराणसी

कन्या की आवश्यकता

२४ वर्षीय बी काम आर्य युवक जो देहली में एकाउन्टेंट जनरल के आफिस में ३५०) पर लिपिक है। उसके लिए एक सुयोग्य बी० ए० बी० टी० कन्या की आवश्यकता है आयु २२ से अधिक न हो।

पत्र व्यवहार का पता—रविदेव शास्त्री [illegible] महाविद्यालय हिसार

हरयाणा के आर्यों को शुभ सूचना

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी की ओर से रोहतक से श्री यात्रियों की सुविधा के लिये २४ दिसम्बर ६९ को प्रातः १० बजे बस काशी रवाना होगी। अतः जो महानुभाव काशी शताब्दी में भाग लेना चाहें वे ४१) ५० पैसे दयानन्द मठ रोहतक में जमा करवा कर अपना स्थान सुरक्षित करवा लेवें।

निवेदक
शिवकुमार शास्त्री
सदस्य लोक सभा

शोक प्रकाश

आर्यसमाज मोगरगा, जि० उस्मानाबाद (महाराष्ट्र राज्य) के प्रधान श्री माणिकराव जी पाटील की वृद्धा माता श्रीमती सेवन्ता बाई जी पाटील का देहान्त हो गया। आर्यसमाज मोगरगा इस दुःखद अवसर पर श्री प्रधान जी और उनके परिवार के साथ शोक सहानुभूति प्रकाशित करता है। परमात्मा से प्रार्थना करता है कि मृतात्मा को सद्गति प्रदान करें।

—इन्द्रजित् कुमार मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के लिये जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री द्वारा प्रकाश प्रेस, चावड़ी बाजार, देहली-६ में मुद्रित और ५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् (ऋग्वेद)

आर्यमर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र

जो कोई अपने वर्ण को छोड़ नीच, अन्त्यज अथवा कृश्चीन, मुसलमान हो गया हो उसको भी ब्राह्मण क्यों नहीं मानते ? यहां यही कहोगे कि उसने ब्राह्मण के कर्म छोड़ दिये इसलिये वह ब्राह्मण नहीं है। इससे यह भी सिद्ध होता है जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुणकर्म स्वभाव वाला होवे तो उसको भी उत्तम वर्ण में और जो उत्तम वर्णस्थ होके नीच काम को उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिये। —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष २ } ७ पौष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २१ दिसम्बर १९६९ रविवार,
अंक १ } • सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९

{ वार्षिक शुल्क स्वदेश मे—१० रु०
„ „ विदेश मे—२० रु०
एक प्रति का मूल्य ००—२० पैसे

सम्पादक- जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनरपि वायुसूर्यगुणा उपदिश्यन्ते ॥

फिर भी वायु और सूर्य्य के गुणों का उपदेश अगले मन्त्र में किया है।

तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्था एका यमस्य भुवने विराषाट्।
आणिं न रथ्यममृताधि तस्थुरिह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत् ॥

ऋ० १.३५.६ ॥

पदार्थः—(तिस्रः) त्रित्वसंख्याकाः (द्यावः) सूर्याग्निविद्युद्रूपाः (सवितुः) सूर्यलोकस्य (द्वौ) स्वप्रकाशभूगोलौ (उपस्था) उपतिष्ठन्ति यस्मिंस्तत्र (एका) [illegible] (यमस्य) वायोः (भुवने) अन्तरिक्षस्थाने (विराषाट्) वीरान् [illegible] (आणिम्) [illegible] (न) इव (रथ्यम्) रथम् वहति तम् (अमृता) अमृतानि (अधि) उपरिभावे (तस्थुः) तिष्ठन्ति (इह) अस्मिन् संसारेऽन्तर्विद्यायां वा (ब्रवीतु) उपदिशतु (यः) मनुष्यः (उ) वितर्के (तत्) ज्ञानम् (चिकेतत्) विजानीयात् ॥

अन्वयः—हे विद्वत्वं [illegible] सूर्यलोकस्य सवितुः सूर्यलोकस्य प्रकाशे यास्तिस्रो द्यावोऽधितस्थुस्तत्र द्वौ भूमिसूर्यलोकावुपस्था वर्तेते। विराषाड् विद्युदाख्यदीप्तिर्यमस्य नियन्तुर्वायोर्भुवनेऽन्तरिक्षे हि तिष्ठति। [illegible] कारणरूपेण [illegible] नाशरहितानि चन्द्रतारकादीनि भुवनानि सवितृ प्रकाशमन्तरिक्षेऽधितस्थुरधितिष्ठन्ति। य उ एतानि चिकेतत् जानीयात् स तज्ज्ञानं ब्रवीतु तथा भूतेभ्यो विद्यामुपदिश ॥

भावार्थः—[illegible] [illegible] [illegible] तिस्रो दीप्तयः सूर्याग्निविद्युदाख्या दीप्तयः [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

लोकाः सूर्यप्रकाशमुपाश्रित्य वर्तन्ते। यो विद्वान् स एव प्रश्नोत्तराणि वक्तुमर्हति नैव मनुष्यैरविदुषां कथने विश्वसितव्यं न विद्वत्कथने [illegible]ऽश्रद्धा कार्य्येति ॥

भाषार्थः—हे विद्वान् तू (आणिम्) जैसे रथ के [illegible] (न) समान (रथ्यम्) रथ को चलाने वाले [illegible] के (न) समान इस (सवितुः) सूर्यलोक के प्रकाश में जो (तिस्रः) तीन अर्थात् (द्यावः) सूर्य अग्नि और विद्युत् रूप के साधनों से युक्त (अधितस्थुः) स्थित होते हैं उनमें से (द्वौ) दो प्रकाश का भूलोक सूर्यमण्डल के (उपस्था) समीप में रहते हैं और (एका) एक (विराषाट्) शूरवीर ज्ञानवान् प्राप्ति स्वभाव वाले जीवों को सहने वाली बिजुली रूप दीप्ति। (यमस्य) नियम करने वाले वायु के (भुवने) अन्तरिक्ष में ही रहती है और जो (अमृता) कारण रूप से नाशरहित चन्द्र तारे आदि लोक हैं वे इस सूर्यलोक के प्रकाश में प्रकाशित होकर (अधितस्थुः) स्थित होते हैं (यः) जो मनुष्य (उ) वादविवाद से इनको (चिकेतत्) जाने और उस ज्ञान को (ब्रवीतु) अच्छे प्रकार उपदेश करे वहीं के प्रमाण होके हमको तद्गुणों का उपदेश किया कर ॥

भावार्थः—इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस ईश्वर ने अग्नि रूप कारण से सूर्य, अग्नि और बिजुली रूप तीन प्रकार की दीप्ति रची है जिनके द्वारा सब कार्य सिद्ध होते हैं जब कोई ऐसा पूछे कि जीव अपने शरीरों को छोड़ के किस [illegible] स्थान को प्राप्त होते हैं—यह कौन है? तब उत्तर देने वाला अन्तरिक्ष में रहने वाले वायु को प्राप्त होते हैं, ऐसा कहे। जैसे युद्ध में रथ अश्वादि सेना के अंगों में स्थित होते हैं वैसे मरे और जीते हुए जीव वायु के अवलम्ब से स्थित होते हैं। पृथिवी चन्द्रमा और नक्षत्रादि लोक सूर्य प्रकाश के आश्रय से स्थित होते हैं जो विद्वान् हो वही प्रश्नों के उत्तर कह सकता है, मूर्ख नहीं। इसलिये मनुष्यों को मूर्ख अर्थात् अनाप्त के कहने में विश्वास और विद्वानों के कथन में अश्रद्धा कभी न करनी चाहिये ॥

* श्रद्धानन्द तथा सभा अधिवेशन अङ्क *

आर्यप्रतिनिधि पंजाब के प्रतिनिधियों को भ्रम में डालने के दूषित प्रयास

दीवान हाल दिल्ली में पंजाब सभा का कोई अधिवेशन नहीं हो रहा

अब तो यह आर्य जगत् को भली-भांति ज्ञात है कि श्री रामगोपाल आदि की तथाकथित सार्वदेशिक सभा के साप्ताहिक पत्र में आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रतिनिधियो तथा आर्यसमाजों को भ्रान्ति मे डालने का प्रयास कई वर्षों से चल रहा है, परन्तु आर्यजनता ने सदा सगठन के महत्व को समझा और इन मिथ्या समाचारों की सदा उपेक्षा की।

प्रतिनिधि महानुभावों को स्मरण होगा कि आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का वार्षिक साधारण अधिवेशन प्रति वर्ष निश्चित होता रहा है और उसका एजेण्डा भी प्रतिनिधियों की सेवा में नियमानुसार भेजा जाता, [illegible] प्रतिनिधि सभा पंजाब का वार्षिक साधारण अधिवेशन २१-१२-१९६९ को छोटूराम कालेज आफ एजूकेशन रोहतक में हो रहा है, जिसका एजेण्डा प्रतिनिधियो को भेजा जा चुका है। ठीक इसके विपरीत डा० हरि प्रकाश के नाम से भ्रम मूलक समाचार निकाले जा रहे हैं कि सभा का अधिवेशन दीवान हाल दिल्ली में होगा।

श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेश, सीनियर सब-जज तथा सेशन जज जाल धर के निर्णय के अनुसार डा० हरिप्रकाश आदि को अपने आपको आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के अधिकारी घोषित करने तथा सभा के कार्यों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है अतः इनके द्वारा आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का कोई अधिवेशन भी नही बुलाया जा सकता। यह सब षड्यन्त्र आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब के रोहतक अधिवेशन को असफल करने का श्री रामगोपाल आदि का दूषित प्रचार मात्र है।

प्रतिनिधि महानुभावों को भ्रम में डालने तथा २१ दिसम्बर ६९ को रोहतक अधिवेशन मे सम्मिलित होने से रोकने का ही यह सब षड्यन्त्र है। अतः सभी प्रतिनिधि महानुभावों को सूचित किया जाता है कि २१-१२-६९ को छोटूराम कालेज आफ एजूकेशन रोहतक मे प्रातः ११ बजे प्रारम्भ होने वाले पजाब सभा के साधारण अधिवेशन में ही सम्मिलित हों। यह बैठक किसी भी स्थिति में स्थगित न होगी।

१४-१२-६९ रघुवीरसिंह शास्त्री, संसत्सदस्य-सभा मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रतिनिधियों को चेतावनी

भ्रम मूलक विज्ञप्तियों से सावधान रहें

श्री रामगोपाल नाम के किसी व्यक्ति द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से ९-१२-६९ को पंजाब की आर्य समाजों के नाम भेजी एक विज्ञप्ति मुझे दिखाई गई जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से दिल्ली में होने वाले तथा-कथित अधिवेशन में २१-१२-६९ को उपस्थित होने के लिये लिखा है। मैंने इस विषय में पूर्ण जांच की है। पंजाब सभा का अधिवेशन २१-१२-६९ को प्रातः ११ बजे छोटूराम कालेज आफ ऐजूकेशन रोहतक में हो होगा। अतः सबको उसी में भाग लेना होगा। दिल्ली में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कोई अधिवेशन नहीं हो रहा। कुछ व्यक्ति प्रतिनिधियों को भ्रान्ति में डालने को ही इस प्रकार के षड्यंत्र कर रहे हैं वास्तविकता यह है कि सीनियर सब-जज जालन्धर तथा सैशन जज जालन्धर के निर्णयों क्रमश. २६-७-६९ तथा १४-११-६९ द्वारा श्री वीरेन्द्र आदि पर निषेधाज्ञा लगी हुई है अतः वे न अपने आपको सभा का अधिकारी घोषित कर सकते हैं तथा न सभा के कार्यों व उसकी सम्पत्ति में हस्तक्षेप कर सकते हैं। इस लिये जो भी उन द्वारा बुलाई किसी भी बैठक में भाग लेगा वह भी उनके साथ ही न्यायालय की मानहानि का दोषी होगा। सार्वदेशिक सभा ने भी श्री वीरेन्द्र आदि का ५-५-६९ का बोगस निर्वाचन अवैध तथा अमान्य घोषित कर रखा है। ऐसी अवस्था में सब प्रतिनिधियों को रोहतक में २१-१२-६९ को होने वाले पंजाब सभा के अधिवेशन में ही भाग लेना चाहिये। उसमें लगभग ७०० प्रतिनिधि उपस्थित होंगे। —महेन्द्र प्रताप शास्त्री

मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा

अमर दयानन्द

श्री सूर्यकुमार पाण्डेय, ५३-छोटा चांद गंज, लखनऊ-७

ऐसा किया है काम, धन्य आर्य-अभिराम,
सबकी जिह्वा पर नाम वेद-उद्धारी का।
करके आर्य-धर्म का प्रचार, दिया आधार,
सबही पर उपकार उस उपकारी का॥
सबही से सत्य कहा, आर्य-स्तम्भ रहा,
कोई क्या बिगाड़ सका बाल-ब्रह्मचारी का।
गया देश-भक्ति में लगाकर तन-मन-जो,
ऐसा सुपुत्र था करसन जी तिवारी का॥१॥
भली भाँति ईशका स्वरूप बतलाया हमें,
सारा ही सुकार्य किया वेद के विचार से।
लोहा जो लेता रहा सतत जग-वैरियों से,
डरा जो कभी न अघ-पाप के प्रहार से॥
सदा के लिए दीप जलता हुआ छोड़ गया,
स्वय तो चला जो गया इस संसार से।
हम कैसे भूलें उस ऋषि के उपकारों को,
घातक को प्यार दिया जिसने उपकार से॥२॥
जिसको असत्य देख भागता था बड़ी दूर,
धर्म भी अधर्म का एक मात्र वह कूल था।
सारे अधर्म-कार्य क्षण भर में मेंट चला,
वेद पथ राहियों के लिए खिला फूल था॥
शोषित प्राणियों को करुण गाथा सुन जागा,
वेद के विरोधियों के लिए तीक्ष्ण शूल था।
इसमें तो रंच अविरोध हो ही सकता न,
नित्य सत्य वक्ता, पाप-हर्ता वह 'मूल' था॥३॥

धन्यवाद

"आर्यमर्यादा" दिनांक १४-१२-६९ में मेरे ८-१२-६९ को भारत सरकार की सेवा से निवृत होने के समाचार को पढ़कर दिल्ली तथा अन्य नगरों से कई मित्रों ने आश्चर्य प्रकट किया। इन सब का मत था कि मैंने निश्चित आयु से पूर्व ही अवकाश प्राप्त कर लिया है। जब उनको पता लगा कि मैं ६० वर्ष की आयु पार करके ही मुक्त हुआ हूं तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई तथा सब ओर से बधाई आदि के सन्देश मिले। ८-१२-६९ को जब मैं दफतर के अपने साथी अफसरों से विदाई लेने गया तो उन्होंने भी कहा कि आपकी आयु तो ४५-५० वर्ष से अधिक नहीं लगती, आप रिटायर कैसे हो गये। मैंने बताया कि मेरी आयु तो ६० वर्ष की हो गई है, परन्तु स्वयं मुझे भी ४०-४५ वर्ष से अधिक नहीं लगती। आर्यभाइयों को प्रसन्नता है कि मैंने शेष आयु आर्यसमाज की यथापूर्व सेवा करने का संकल्प किया है। इसी कारण सब ओर से आशिर्वाद प्राप्त हो रहे हैं। मैं उन सब का हार्दिक धन्यवाद करना आवश्यक समझता हूं। मैं उस परम-पिता परमात्मा का भी कोटिशः धन्यवाद करता हूं जिनकी असीम कृपा तथा अनुग्रह से मैं स्वस्थ रह कर ६० वर्ष की आयु समाप्त कर पाया हूं। मुझे नौकरी मिलते समय इतनी प्रसन्नता नहीं हुई जितनी सेवा से निवृत होते समय हुई है। मैं अनुभव करता हूं कि वास्तव में मुझे स्वर्ग की प्राप्ति हुई है। मन तथा चित् दोनों प्रसन्न रहते हैं। उस दिन से सभा सम्बन्धी कार्यों मे मेरा मन लगा रहता है। भगवान् ने चाहा तो १०० वर्ष की आयु तक ऐसे ही चल सकता है, उसकी दया पर सब कुछ निर्भर करता है।

—रामनाथभल्ला, सभा कोषाध्यक्ष

आर्यसमाज रजपुरा (मेरठ) का वार्षिकोत्सव

पूर्ण सफलता से सम्पन्न हुआ। श्री जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती, श्री ठा० यशपालसिंह एम. पी. श्रीमती सत्यवती जी, चौ० वेदपालसिंह जी और श्री गजराजसिंह जी भजनोपदेशक पधारे थे। श्री डा० स्वामी महन्त जी को इस सफलता का श्रेय है। चौ० लालसिंह जी प्रधानजी के घर में ही उत्सव को उत्तम प्रबन्ध था। —निवर्तमानप्रधान

MUNICIPAL CORPORATION OF DELHI

Office of the Competent Authority, Room No. 33, Tis Hazari, Delhi.

Case No. CAI (9381) 69   Dated 15-12-69.

In the case of Ram Parkash

vs.

Melawa Ram & others

U/s section 19 of the slum areas (I&C) act. 1956 as amended Up-to-date

To

(1) Hakim Matwala Ram, Rally Dawakhana Rai Markeet, Ambala Cantt

(2) Smt Lajwanti Devi w/o Harbhagwan Gulati, Village Samleri. V & P O Bita Distt. Ambala.

(3) Smt. Vidya Wanti w/o Gian Singh Chiliwara, Shahganj, H. No 294, Agra

(4) Sh Sharam Singh — All residents of Gita Colony 6/257, Parpat Ganj Road, Near Gandhi Nagar Delhi.

(5) Sh Harbhajan Singh S/o Sharam Singh — "

(6) Sh Harbans Singh S/o Sharam Singh — "

(7) Sh Darshan Singh S/o Sharam Singh — "

(8) Sh Mohinder Singh S/o Sharam Singh — "

Whereas an application seeking permision of the Competent Authority (S)II under section 19 of the slum areas (I&C) Act 1956 as amended up-to-date to instutce a suit of proceedings for obtaining a decree or order for eviction has been submitted.

You are, hereby given an opportunity to make any objection if any, to that application, in the office of the Competent Authority (S)II Room No. 33. Civil Courts, Tis Hazori Delhi on 17-1-70 at 10 A.M a copy of the application referred above is appended.

In case you fail to attend the office either in person or through a counsel on the specified date the application shall be decided exparte without any further reference to you.

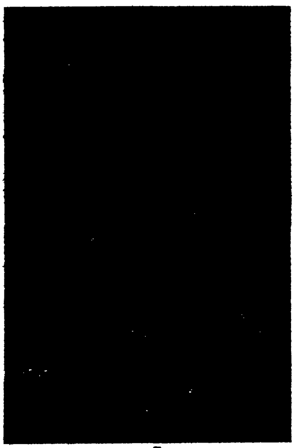
(P. R. Yecshaneya)
U.P.C.S.
Seal   ASSISTANT COMMISSIONER (S)II
Competent Authority

सम्पादकीय

आर्यसमाज के नेता स्वाम श्रीद्धानन्द

आर्यसमाज का नेतृत्व सबप्रथम स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी ने ही सफलतापूवक किया था। उनका जीवन सर्वाङ्गीण रूप मे विकसित था। वैदिक धम आर्य्यावर्त्त राष्ट्र और आर्य्यसमाज के लिये उनका कार्यक्रम चतुर्दिग् रूप मे प्रबल वेग से चलता था।

उनका जन्म नाम मुशीराम था। उन्होने अपने पिता ला० मानकचन्द शहर कोतवाल बरेली के समझाने पर ऋषि दयानन्द के व्याख्यान सुनें। ऋषि के प्रति श्रद्धा जगी। कुछ प्रश्न पूछे। उस वार्त्ता का यह प्रभाव हुआ कि युवक मुशीराम ने अपने दुर्व्यसनो को छोड कर सन्मार्ग पकड लिया। वही मुशीराम आगे चलकर महात्मा मशीराम और अन्त मे स्वामी श्रद्धानन्द सन्यासी बने।



उन्होने ऋषि दयानन्द रचित सभी ग्रन्थो का गहन अध्ययन किया और तदनुसार कार्य क्षेत्र मे उतरे। उनके कार्य क्षेत्र का सक्षिप्त विवरण आगे की पक्तियो मे दिया जाता है।

१—सत्यार्थप्रकाश के ३य समुल्लास में ब्रह्मचर्य शिक्षा प्रणाली को पढ़ा और भारतभर मे आर्ष शिक्षा पद्धति को चलाने के लिये गुरुकुल कागडी की स्थापना की। सबसे पूर्व अपने दोनो सुपुत्रों को गुरुकुल में प्रविष्ट कराया, येही दोनो सुपुत्र हरिश्चन्द्र और इन्द्र नाम से विख्यात हुए। प० हरिश्चन्द्र जी राजा महेन्द्रप्रताप (प्रसिद्ध क्रान्तदर्शी नेता) के साथ विदेशों में चले गये। वहा से भारत में नही लौटे, न जाने क्या हुआ। प० इन्द्र जी कांग्रेस के भारतीय नेताओं में अग्रगण्य रहे। अनेक पुस्तको की रचना की। गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगडी का अनेक वर्षों तक सचालन किया। गुरुकुल ने भारत में पुरानी शिक्षा पद्धति को पुन: जन्म दिया।

२—स्वामी जी ने उर्दू मे सद्धर्म प्रचारक पत्र निकाला, उसमे धर्म और राष्ट्र सम्बन्धी लेख होते थे। आगे चलकर उसको आर्यभाषा में परिवर्तित कर दिया।

३—गुरुकुल कांगडी को देखने के लिये भारत के तात्कालिक वायसराय, उत्तर प्रदेश के गवर्नर ही नहीं, अपितु इग्लैण्ड के प्रधान मन्त्री रेमजे मेकडानल्ड भी पहुचे थे। ईसाई विद्वान सी० एफ० एण्ड्रूज स्वामी जी के बहुत घनिष्ट सम्पर्क में आ गये थे।

४—पजाब मे रोलट एक्ट के कारण जलिया वाला बाग में अग्रजी शासको ने हत्या काण्ड किया। पजाब को उठाने के लिये भारतीय नेताओ में स्वामी जी ही आगे आये, अमृतसर कांग्रेस का सफल अधिवेशन किया। स्वामी जी ही हिन्दी सम्मेलन के अध्यक्ष बनाये गये और उन्होंने हिन्दी के स्थान पर आर्यभाषा शब्द का प्रयोग किया। कांग्रेस को भी जीवन मिला।

५—पटियाला राज्य मे आर्यसमाजियो पर षड्यन्त्र के नाम पर मुकदमा चलाया गया तब स्वामी जी ने सब प्रकार की पैरवी की और आर्यसमाज को जीत दिलाई।

६—गुरु का बाग "अमृतसर" मे स्वामी जी ने सिक्खो के साथ सत्याग्रह मे जेल यात्रा की।

७—खिलाफत आन्दोलन में स्वामी जी आगे आये। भारत के इतिहास मे एक ही अवसर है कि देहली की जामामस्जिद के मम्बर से स्वामी जी ने वेदमन्त्र द्वारा भाषण दिया।

८—महात्मा गान्धी की गिरफ्तारी के समय स्वामी जी ने देहली का नेतृत्व सभाला। घण्टाघर के सामने विशाल जलूस का नेतृत्व करते हुए गोरखा सिपाहियो की सगीनो के सामने छाती तान दी थी।

९—पीडित दलित अछूतो के उद्धार के लिये दलितोद्धार सभा स्थापित करके बडा कार्य किया।

१०—कांग्रेस की मुस्लिम परस्ती को देखकर स्वामी जी काग्रस से हट गये तथा शुद्धि आन्दोलन बडे जोर से चलाया। लाखो मलकाने राजपूतों को वापस आर्य धर्म मे मिलाया था।

११—आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब की स्थापना की और वर्षों इस का संचालन किया। अपने ही साथियों ने स्वामी जी पर अनेक घृणित लांछन लगाये और कोर्ट मे गये। स्वामी जी विजयी हुए तथा आरोप लगाने वाले साथियों को कुछ नहीं कहा। इसी भाति गुरुकुल कागडी मे महात्मा मुशीराम जी के रूप मे गुरुकुल का सचालन करते हुए अपने साथियो के षड्यन्त्र से खेद मानकर सन्यास आश्रम मे प्रवेश किया परन्तु विरोधियो को कुछ नही कहा।

१२—वकालत करने के समय आप झूठा मुकदमा नहीं लेते थे। एक बार इनके मुहर्रिर ने किसी मुवक्किल का झूठा मुकदमा ले लिया और ला० मुशीराम वकील साहिब की डायरी मे लिख दिया। तारीख आने पर वह मुवक्किल आया। वकील साहिब नें अपने मुहर्रिर से पूछा। कि इस मुकदमे को लेने से मैंने मना कर दिया था। इस पर मुहर्रिर ने वकालतनामे पर वकील साहिब के हस्ताक्षर दिखा दिये। उसी समय मुशीराम ने वकालत, छोड दी।

१३—स्वामी जी निर्भीक, पक्षपातहित और स्पष्ट वक्ता नेता थे। महात्मा गाधी आदि से इसी कारण पृथक् हो गये थे। और हिन्दू रक्षा के कार्य मे जुट गये थे।

१४—अति कार्य-भार से स्वामीजी रुग्ण हो गये। देहली मे नया बाजार में ऊपर के कमरे मे रहते थे। निमोनिया से कुछ छुटकारा पाया था कि अब्दुल रशीद हत्यारे ने छाती मे गोलिया मार दीं। हत्यारा पकडा गया। उधर आसाम मे कांग्रेस का महासम्मेलन हो रहा था, इधर स्वामी जी को साम्प्रदायिक जनून ने शहीद कर दिया। सारे भारत मे हलचल मची। हत्यारे को फासी हुई।

१५ स्वामी जी वास्तव में आर्यजगत् मे अपनें समय के एक मात्र सच्चे नेता थे। किसी अनुचित दबाव में आकर समझोता नही करते थे। अन्त में भी गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का ध्यान रहा। राष्ट्र और सामाजिक कार्य करते हुये भी अनेक गुरुकुलो की स्थापना की।

१६ ख्वाजा हसन निजामी ने 'दाई-इस्लाम' नाम की एक जहरीली किताब लिखी थी। स्वामी जी ने खोज के पश्चात् उसको अफरीका से मगवाया।उसका भण्डा फोड किया। राष्ट्र और वैदिक सस्कृति की रक्षा के लिये अपने प्राणों की आहुति दे गये। उस कमरे को बलिदान भवन

शेष पृ० ४ पर

भक्ति

(श्री "सत्यभूषण" "वेदालंकार" एम० ए० नई दिल्ली)

जिन पुण्यशील, सुकृती पुरुषों के नितान्त निर्मल स्वान्त में प्रेमरूपिणी भक्ति का पावन पीयूष प्रवहमान होता है, जिनके गम्भीर प्रशान्त मन-मानस में कण-कण व्यापी, देवाधिदेव परब्रह्म पल-पल में ललित लीला दिखाते हैं, जो अहर्निश निखिललोकव्यापी भुवन-भावन भगवान् की अर्चना में दत्तचित्त होकर गायत्र-गायन किया करते हैं, उन्हें दैहिक-दैविक भौतिक त्रयतापों में से एक भी ताप एवं क्लेश कवलित नहीं कर पाता।

अहा ! वह कौन सी मनोहर मधुर वेला होगी जब सर्वभूतान्तरात्मा "ओ३म्" का नाम लेते लेते मन-मयूर नरीनृत्यमान होगा। प्रेमवश नयनों से अविरल अश्रुधारा उमड़ पड़ेगी, गद्गदवाणी से आनन आप्लावित् हो जाएगा। "नयन गलदश्रुधारया वदनं गद्गदरुद्धया गिरा। पुलकैर्निचितं कदा वपुस्त व नाम ग्रहणे भविष्यति॥"

हे आधि व्याधि ग्रस्त, दुःखदावानल दग्ध त्रयतापसंतप्त विषयमृग-मरीचिका में पदे पदे मुह्यमान मानव ! यदि तुम इसी क्षणभंगुर जीवन में अमरत्व लाभ करना चाहते हो, सच्चिदानन्द कन्द की छत्रछाया में शान्ति प्राप्त करना चाहते हो, भगवान् के कृपा-कटाक्ष से जन्म-मरण के कुलिशोपम पाश से उन्मुक्त होना चाहते हो, तो तुम्हें धुरन्धर पंडितों की वाग्झिंझरिणी में अवगाहन करने की, तर्क एवं ऊहापोह की भ्रान्ति में विभ्रान्त होने की किंचिन्मात्र आवश्यकता नहीं। क्योंकि "वाग्वैखरी शब्दझरी शास्त्रव्याख्यान कौशलम्, वैदुष्य विदुषां तद्वत्भुक्तये न तु मुक्तये।"

परात्पर ब्रह्म का सानिध्य प्राप्त करने के लिए तो केवल भक्ति की अमन्द मन्दाकिनी में स्नान करना होगा। सर्वव्यापक प्रभु को सर्वथा आत्मसमर्पण कर उसकी अनन्त छवि में अपने को लीन कर देना होगा। सांसारिक चिन्ताओं, मोह, ममता के बन्धनों को ठुकरा कर परम पद की प्राप्ति का मनोरथ-प्रयास करना होगा। अहा ! किसी कवि ने क्या ही अच्छा कहा है—या चिन्ता धनधान्यभूरियशसां लाभे सदा जायते। या चिन्ता सकलत्रमित्रभरणव्यापारसंपादने। सा चिन्ता यदि "ओ३म्" नामस्मरणव्यापारमात्रे सकृत्। का चिन्ता यमराज भीतिभवने प्राणप्रयाणे तदा। ऋग्० १.९४.१३ में भी तो यही प्रेरणा दी गई है।" देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे। शर्मन् स्याम तव सप्रथस्तमे अग्ने सख्ये मा रिषामा वय तव॥ "परम पिता परमात्मन् ! तू देवों का देव, अद्भुत मित्र सर्व धनों का धन है। यज्ञ में शोभायमान है। हम तेरी विस्तृततम शरण में होवें और तेरी मित्रता से नष्ट न हों।

यही तो आर्यों की सच्ची प्रार्थना है। भक्ति भावों से भरपूर क्या हम भी इस मन को उसमें समर्पित कर देंगे। प्रभु वह दिन कब होगा। ●

प्रज्ञानं नैनमाप्नुयात्

(श्री सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए० नई दिल्ली)

बिल्कुल शुद्ध पवित्र हृदय जो आप हैं,
जानिए तो भगवान् आपके पास हैं।
कर से करिए कर्म सभी जग के विविध,
मन से किन्तु समझिए उसके दास हैं॥

आंख उठाकर तनिक देखिए सब जगह,
प्रकृति नटी कर रही अमित उल्लास है।
कण कण उसकी सत्ता नित्य बखानता,
फिर क्यों केवल तेरा चित्त उदास है॥

जिसने जगत् रचा है उसको याद कर,
मत अपनी घड़िया यों ही बरबाद कर।
उजड़ चुका जो बाग उसे आबाद कर,
वही दूर से दूर और नित पास है॥

करनी का फल पाना आप जरूर है,
फिर क्यों छाया तुझ पर अरे गरूर है।
तेरा मन यदि पापों से भरपूर है,
कुछ भी पूंजी नहीं बटोरी हाथ है॥ ●

पृ० ३ का शेष

नाम दिया गया। नये बाजार का नाम श्रद्धानन्द बाजार रखा गया।

उनके जीवन की इतनी विशेष घटनाएं हैं, जिनका छोटे से सम्पादकीय लेख वर्णन नहीं हो सकता। हमने केवल कुछ घटनाओं का ही दिग्दर्शन कराया है। शहीद दिवस पर देहली में प्रति वर्ष बलिदिवस मनाया जाता है।

क्या वर्तमान आर्यनेता स्वामी जी के जीवन से थोड़ी भी शिक्षा लेंगे ? हम चाहते हैं—लेवें॥ —जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

रोहतक में सभा के अधिवेशन में पहुंचें

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्ध रखने वाले समस्त आर्यसमाजों तथा सभा के प्रतिनिधियों को नियमानुसार यह सूचना भेजी जा चुकी है कि आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का वार्षिक साधारण अधिवेशन २१-दिसम्बर ६९ को रविवार के दिन ११ बजे होगा। अधिवेशन का स्थान छोटूराम कालिज है। छोटूराम कालिज रोहतक से देहली को जाने वाली सड़क पर है। जाट कालिज से मिलता हुआ है। देहली की तरफ से बसों द्वारा पहुंचने वाले प्रतिनिधियों को छोटूराम कालिज के सामने ही उतर लेना चाहिये। रोहतक पहुंचने की आवश्यकता नहीं। रोहतक की तरफ से पहुंचने वाले सज्जन देहली वाली सड़क पर छोटूराम कालिज के सामने उतरें। रोहतक से छोटूराम कालिज तक नई बस्तियां बस चुकी हैं। रोहतक बस अड्डे से उतरने वाले सज्जन देहली को जाने वाली बसों अथवा लोकल बसों से पहुंच सकते हैं। रेलवे स्टेशन पर उतरने वालों को स्टेशन पर ही तांगे और रिक्शा मिल जाती हैं। अम्बाला की तरफ से पहुंचने वालों को पानीपत से रोहतक पहुंचना चाहिये। सिरसा, हिसार, हांसी, भिवानी, महेन्द्रगढ, नारनौल, रेवाड़ी, दादरी (चरखी) सब जगहों से बसें रोहतक पहुंचती हैं। गुडगावां तथा होडल पलवल की तरफ से देहली होकर पहुंचना चाहिये। देहली पहुंचने वालों को यह ध्यान रखना चाहिये कि देहली से बाहर मुख्य बस अड्डे से ही रोहतक को बसें मिलेंगी। देहली से रोहतक को हिसार, जीन्द और भिवानी की बसें भी गुजरती हैं। हमने प्रतिनिधि बन्धुओं की सुविधा के लिये मार्ग का विवरण लिख दिया है, जिससे कष्ट न होवे।

यह अधिवेशन बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें पहुंचना अवश्य चाहिये। जिन आर्यसमाजों को प्रतिनिधियों के प्रवेश पत्र पहुंच चुके हैं,। वे अपने प्रतिनिधियों का ध्यान दिला देवे कि अपने प्रवेश पत्र अवश्य साथ रखें। भूल न करें।

किसी व्यक्ति की तरफ से कोई मिथ्या समाचार अखबारों में निकले तो इसको बिल्कुल झूठ समझें। अधिवेशन रोहतक में अवश्य होगा। ये शब्द इसलिये लिखने पड़े हैं कि पीछे दो बार ऐसा हो चुका है।

अच्छा यह रहेगा कि २१ दिसम्बर ६९ को रविवार के दिन प्रातः ९—१० बजे तक सभा स्थान छोटूराम कालिज में पहुंच जावें, जिससे ११ बजे ठीक कार्यवाही आरम्भ हो जावे।

एक ध्यान रखना आवश्क हैं कि सरछोटूराम पार्क और है और छोटूराम कालिज अलग है। छोटूराम पार्क रोहतक के पास ही है, परन्तु छोटूराम कालिज रोहतक शहर से १॥—२ मील पर है।

यदि किसी प्रतिनिधि को डाकखाने आदि की गड़बड़ी से प्रवेश पत्र न भी पहुंचे, तो भी उनको अपने आर्यसमाज का प्रमाण पत्र लेकर पहुंच जाना चाहिये। प्रवेश पत्र वहां मिल जावेगा।—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

सभा अधिवेशन रोहतक में पधारने वाले महानुभावों को सूचना

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के वार्षिक साधारण अधिवेशन रोहतक में २१ दिसम्बर ६९ को पधारने वाले को प्रतिनिधियों एवं आर्यसमाजों के अधिकारी महानुभावों को सूचित किया जाता है कि सभा तथा "आर्य-मर्यादा" का कार्यालय २० दिसम्बर को रोहतक पहुंच जावेगा। अतः जिन आर्यसमाजों तथा आर्यमर्यादा के ग्राहक महानुभावों की ओर सभा के वेदप्रचार दशांश तथा आर्यमर्यादा का शुल्क प्राप्तव्य है, वे प्राप्तव्यधन अपने साथ रोहतक लाने का कष्ट करें।

इस शुभावसर पर वैदिक साहित्य के प्रचार हेतु सभा के साहित्य विभाग की दुकान भी लगाई जावेगी। अतः आर्यसमाजों तथा संस्थाओं के अधिकारी साहित्य खरीद कर लाभ उठावें।

यह सभा का अधिवेशन छोटूराम कालेज रोहतक में हो रहा है। कालेज दिल्ली रोहतक मार्ग पर स्थित है।—रघुवीरसिंह शास्त्री, सभा मन्त्री

उपासना-प्रदीप—७

(पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

आसन और व्यायाम

१—ओङ्कार-जप, उपासना-योग या दीर्घकालीन सन्ध्या करने वालों को आंखें मूदकर सिद्धासन वा पद्मासन की मुद्रा में ही बैठना चाहिये। पातंजल-योग में इन आसनों की विशेष उपयोगिता स्वीकारी गई है। अन्य आसनों में बैठने का निषेध तो नहीं है, तथापि दीर्घकाल तक चेष्टारहित अभ्यास तो चलेगा ही, अतः सुविधा की दृष्टि से भी ये दो आसन ही उत्तम हैं। टांगों में कष्ट होने, या अन्य किसी विशेष कारण से अन्य आसनों का भी उपयोग किया जा सकता है। जप लेटकर भी हो सकता है। खड़े होकर भी, चल-फिर कर भी, परन्तु जपानुष्ठान की उच्चतर भूमिकाओं में तो सुस्थिरता को ही अपनाना होगा। तब तो एकान्तवास भी होगा, मौनावलम्बन भी। कोलाहल से दूर किसी सुन्दर और शान्त स्थान को तब खोज लेना चाहिये। सद्गृहस्थियों को अपने-अपने घरों में भी जप कर सन्ध्या-वन्दन आदि के लिये स्थान की यथोचित व्यवस्था करनी चाहिये। उपासकों के पास कोई वार्तालाप वा कोलाहल या खट-पट न होने पाये। ऐसे अवसरों पर बच्चों को शान्त रहने की सुशिक्षा अवश्य ही देनी चाहिये। बालकों को छोटी आयु से ही आज्ञा-पालक, अनुशासन प्रेमी और कर्त्तव्य-परायण बनायें।

२—बैठने का स्थान ऊंचा-नीचा, ऊबड़-खाबड़, अधिक गर्म, अधिक ठण्डा, असुविधाजनक वा बदबू-भरा न हो। बैठने के लिये कुशा, ऊन, रुई के गद्दे या शुद्ध वस्त्र का उपयोग सुविधा और आवश्यकता के अनुसार किया जावे। जीव-जन्तुओं, मक्खियों, मच्छरों, कीड़े-मकोड़ों का खटका वहां न हो। जहां कोलाहल या किसी प्रकार के विघ्न की आशंका हो, वहां से दूर रहना तथा हट जाना ही उपासकों के लिये हितकर है। ऋतु-ऋतु के अनुसार शरीर पर वस्त्र धारण किये जायें। स्थान का वातावरण और उसका तापमान भी शरीर की सहनशक्ति की सीमा के अन्दर ही हो।

३—जब आंख मूद कर एक ही आसन से बिना हिले-डुले, जप करते हुए साढ़े तीन घण्टे तक बैठने का अभ्यास परिपक्व हो जाये, तो समझें कि आसन की आरम्भिक सिद्धि मिल गयी है।

४—यदि मकान खुला और हवादार हो तो मकान के किवाड़ बन्द करके बैठने में भी कोई हानि नहीं है। स्थान में शुद्ध हवा का संचार आवश्यक है। जप, ध्यान और सन्ध्या-वन्दन, हवन आदि के दिखावे तो लाभ के स्थान में हानि ही किया करते हैं। बैठने पर कमर की हड्डी [रीढ़] को तान कर इस प्रकार रखें कि सिर का पिछला भाग, कमर और कमर के नीचे का भाग एकही सीध में रहे और धरती पर समकोण बने। आरम्भ में यह कार्य किसी सीधी दीवार के साथ खूब सट कर बैठने से साध सकते हैं। किसी प्रकार की खाज या सरसराहट को भी अपने स्वाभाकि रूप में ही शान्त होने दे। हाथ से शरीर के खाज वाले भाग का स्पर्श न करे। बैठने के अभ्यास को अधिक बढ़ाना ही ठीक है।

५—शरीर की नीरोगता दृढ़ता, स्फूर्ति, संशुद्धि सबलता, कार्य-क्षमता, तेजस्विता और बुद्धि की उत्तमता के सम्पादन के लिए अपनी-अपनी आवश्यकता और सुविधा के अनुसार प्रति दिन नियत समय पर कोई भी हल्का व्यायाम अथवा योग के आसनों का व्यायाम करें। योग के आसनों से शरीर में सफलता के साथ ही लचकीला पन भी बढ़ता है। रक्त संचार ठीक हो जाता है। रोगों से बचने और रोगों के निवारण में सहायता भी मिलती है। सुविधा होने पर प्रति दिन व्यायाम के कार्यक्रम दोनों समय अर्थात् दो बार भी अपनाये जा सकते हैं। दौड़ने, तैरने, तेज चलने और घोड़े की सवारी के व्यायाम भी अच्छे हैं। आसनों के अभ्यास में उत्तम पुस्तकों और शुद्ध मित्रों से भी आरम्भिक सहायता ली जा सकती है। योग के आसन तो बहुत हैं। शीर्षासन, सर्वांगासन, जानुपादासन, मयूरासन, कुक्कुटासन, भुजंगासन आदि सामान्यतया सभी के लिये हितकर हैं। व्यायाम वा अन्य प्रकार की थकावट को दूर करने के लिये शवासन सर्व श्रेष्ठ है। पांच-सात मिनट के अनुष्ठान से ही थकावट मिट जाती है। शान्ति एवं स्फूर्ति मिलती है।

६—विशेष-विशेष आसनों से विशेष-विशेष रोगों का निवारण तो होता ही है, परन्तु कुछ परिस्थितियों में कुछ साधन वर्जित भी हैं आसनों को खाली पेट ही करना चाहिये। भोजन करने के तुरन्त बाद नहीं। सांझ सवेरे स्नान के बाद, सन्ध्या- वन्दन और जप के अनुष्ठान से पहले व्यायाम हैं और योगासनों के अभ्यास के लिये सुविधा हो सके। तो अच्छा है।

७—प्रतिदिन वा एक-एक दिन छोड़ कर शरीर मे सरसों के तेल की मालिश अपने ही हाथ से करना बहुत हितकर है

८—जंगल की लम्बी सैर, दण्ड, मुग्दर, बैठके, नियमित रूप में हाथ-पांव को घुमाना, हिलाना, उछलना-कूदना, भार उठाना अच्छे व्यायाम अखाड़े की देशी कुश्ती का अभ्यास भी हितकर है। यदि ये व्यायाम, मालिश, स्नान आदि के अभ्यास नियमित रूप में न हो सकेंगे, तब तो शरीर भी जपानुष्ठान में पूरा-पूरा साथ न दे सकेगा। कई प्रकार के रोग उभरेंगे और अभ्यास को बिगाड़ देंगे। व्यायाम और साधारण शारीरिक श्रम वाले कार्यों का परित्याग कोई न करे। साधकों के लिये तो यही सबसे उत्तम है कि अपने सब काम अपने आप ही करें। दूसरों वा नौकरों के भरोसे पर रहना तो एक बड़ा दोष है।

खेती, पाती, बीनती, और घोड़े का तंग।
अपने आप सम्भालिये, लाख लोग हों संग ॥

९—जप-योग की श्रेष्ठता और उपयोगिता में तो सन्देह का कोई स्थान ही नहीं है, तथापि सफलता तो श्रद्धा-सम्पत्ति और साधन शीलता के आधार पर ही मिलती है। धैर्य पूर्वक निरन्तर पुरुषार्थ के द्वारा ही साधक उच्चतर शारीरिक, मानसिक और आत्मिक-सम्पदाओं को प्राप्त किया करते हैं। संसार में तो भोगी, विलासी, बातूनी, उभय-भ्रष्ट लोगों की भरमार हो रही है। शोक! महाशोक!! प्रभु दया करे।

ओम् नाम कड़वा लगे, मीठा लागे दाम।
दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम ॥ ●

(श्री गुरुविरजानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में-मीरमुशताक के पत्र का हिन्दी में)

॥ पद्यानुवाद ॥

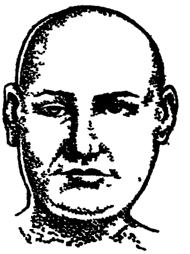
(श्री अम्बादान आर्य, कवि कुटीर कुरड़ायां (राजस्थान)

गैर हकूमत से बढ़कर है, राज्य देश का दृढ़ विश्वास।
"यही शब्द ऋषि ने दुहराया, पढ़ देखो-सत्यार्थ-प्रकाश" ॥ ११ ॥
किसी देश के प्राणी वर्ग से, यत्किंचत् भी द्वेष नहीं है।
हो सब सुख समृद्धि से सम्पन्न, नित्य प्रभु से विनय यही है ॥ १२ ॥
किन्तु फिरंगी जहां कहीं भी, बैठें राज्य-जमाय प्रभाव।
उन्हीं देशवासी लोगों से, करते पशु जैसा बरताव ॥ १३ ॥
ईश्वर पुत्र भाई-भाई सब, समझे नहीं विदेशी खास।
मजहबी किसी ग्रन्थ में ऐसा, लिखा न स्वयं सिखा सब दास ॥ १४ ॥
पराधीन पुरुषों की रहती, नहिं धर्म्म-धारना ज्ञान।
इन्ह फिरंगियों बीच बहुत सी, है अच्छी बातें मतिवान् ॥ १५ ॥
किन्तु स्वयं के भावों में बह, आतुर रंग बदल लेते हैं।
हम लोगों की अच्छाई को, बिना झिझक ठुकरा देते हैं ॥ १६ ॥
कारण कि इस भरत खण्ड को, नहिं समझता अपना देश।
बच्चा-बच्चा खैर खवाही, चाहता फिर भी पाता क्लेश ॥ १७ ॥
स्वयं देश के कुत्तों से भी, इज्जत आज हमारी कम है।
कहें कर्म का फेर तथास्तु, निकल गया हम में दम-खम है ॥ १८ ॥
जितना प्रेम वतन का इन्ह को, उन्ह से ज्यादा 'वतन परस्त'।
देशवासी भाई-भाई का, प्रेम पुजारी बनें समस्त ॥ १९ ॥
वतन परस्ती-उर आने से, पराधीनता भाग जायगी।
सुनो! शीघ्र बोरिया-बिस्तर, करत फिरंगी दृष्टि आयगी ॥ २० ॥

क्रमशः

आयवैज्ञानिको के लिये—

चन्द्रलोक का स्वरूप और यात्रा



(महर्षि दयानन्द का तत्त्वज्ञान)

देवर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित वेदभाष्य, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका और सत्यार्थप्रकाश आदि आर्ष ग्रन्थो का स्वाध्याय करने वाले विद्वान् निश्चित रूप से इस परिणाम से पहुचते हैं कि वे वेदमन्त्रार्थद्रष्टा, परमयोगी, पूर्णतत्त्वज्ञ और महावैज्ञानिक थे।

अमेरिकन वैज्ञानिको द्वारा चन्द्रलोक का ज्ञान प्राप्त करने के लिये जो साहसिक कार्य किये जा रहे हैं, उन पर ससार आज चकित है। वास्तव मे अमेरिकन वैज्ञानिक प्रशसा के पात्र हैं। परमात्मा करे भौतिक विज्ञान और आगे बढता चला जावे।

भारतवासी प्राय इस बात को कहते और पूछते रहते हैं कि क्या प्राचीन काल मे हमारे ऋषियों को इतना उच्च ज्ञान नही था ? हम निश्चय से उत्तर देते हैं कि इससे भी बढकर हमारे उन पूर्वजो को न केवल भौतिक ज्ञान, अपितु दैविक और आत्मिक ज्ञान भी था। यह बात तभी मालूम की जा सकती है, जबकि वेदों और आर्ष ग्रन्थो का पारायण किया जावे। ऐतिहासिक घटनाओ के कारण सस्कृत की बहुमूल्य निधि नष्ट कर दी गई थी। बहुत से दुष्प्राप्य सस्कृत के ग्रन्थो को पाश्चात्य विदेशी विद्वान भारत से अपने अपने राष्ट्रो में ले गये। फिर भी बहुत कुछ ग्रन्थ बचे हुए हैं उन पर खोज की जानी आवश्यक है।

कुछ लोग यह बात भी कहते लज्जित नही होते कि जितना भौतिक विज्ञान आज अग्रेजी ग्रन्थो से उपलब्ध हो सकता है, उतना प्राचीन ग्रन्थो से नही अत विज्ञान के लिये अग्रेजी पढनी अनिवार्य है।

इन दूषित मनो का उत्तर महर्षि दयानन्द दे चुके थे, जो कि कोई भी विदेशी भाषा नही जानते थे। सस्कृत भाषा पर उनका पूर्ण अधिकार था। वेदादि सत्यशास्त्रो के वे पूर्ण ज्ञाता थे। उन्होने अपने ग्रन्थों मे हम लोगो के जानने के लिये बहुत कुछ लिख दिया है। हमारा कर्त्तव्य है, उस ज्ञान को खोज कर बहुमूल्य विद्यारत्नो को प्राप्त करे। हमने जो ये पक्तिया लिखी हैं ये निराधार नही हैं। पुष्टि के लिये ऋषि दयानन्द द्वारा लिखित उच्चकोटि के विज्ञान को जानने के लिये हम अब आगे उनके लिखे ग्रन्थो वेदभाष्य आदि से लेकर केवल एक तत्त्व का उल्लेख करते हैं। आयमर्यादा के स्वाध्यायशील ग्राहक एव प्रेमी पाठक इन पक्तियो को पढे और लाभ उठावे।—सम्पादक

चन्द्र का स्वरूप

(१) चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि। न वो हिरण्यनेमय पद विन्दन्ति विद्युतो वित्त मे अस्य रोदसी ॥ ऋ० १।१०५।१ ॥

पदार्थ—(चन्द्रमा) आह्लादकारक इन्दुलोक (अप्सु) प्राणभूतेषु-वायुषु (अन्त) (आ) (सुपर्ण) शोभन पर्णं पतन गमन यस्य (धावते) (दिवि) सूर्य्यप्रकाशे (न) निषेध (व) युष्माकम (हिरण्यनेमय) हिरण्य-स्वरूपा नेमि सीमा यासा ता (पदम) विचारमय शिल्पव्यवहारम् (विन्दन्ति) लभन्ते (विद्युत) सौदामिन्य (वित्तम) विजानीतम् (मे) मम पदार्थविद्याविद सकाशात (अस्य) (रोदसी) द्यावापृथिव्याविव राजप्रजा जनसमूहौ ॥

भाषार्थ—हे (रोदसी) सूर्यप्रकाश वा भूमि के तुल्य राजा और प्रजा जनसमूह (मे) मुझ पदार्थविद्या जानने वाले की उत्तेजना से जो (अप्सु) प्राणरूपी पवनों के (अन्त) बीच (सुपर्णः) अच्छा गमन करने वा (चन्द्रमा) आनन्द देने वाला चन्द्रलोक (दिवि) सूर्य के प्रकाश मे (आ, धावते) अतिशीघ्र घूमता है और (हिरण्यनेमय) जिनकी सुवर्णरूपी चमक दमक चिलचिलाहट है वे (विद्युत) बिजुली लपट झपट से दौडती हुई (व) तुम लोगो की (पदम्) विचार शिल्पचतुराई को (न) नहीं (विन्दन्ति) पाती हैं अर्थात् तुम उनको यथोचित काम मे नहीं लाते हो (अस्य) इस पूर्वोक्त विषय को तुम (वित्तम्) जानो ॥

भावार्थ—हे राजप्रजापुरुषौ यश्चन्द्रमसश्छायान्तरिक्षजलसयोगेन शीतलत्वप्रकाशस्त विजानीतम्। या विद्युत प्रकाशन्ते ताश्चक्षुर्ग्राह्या भवन्ति या प्रलीनास्तासा चिह्न चक्षुषा ग्रहीतमशक्यम्। एतत्सर्वं विदित्वा सुख सम्पादयेतम ॥

भाषा भावार्थ—हे राजा और प्रजा के पुरुषो ! जो चन्द्रमा की छाया और अन्तरिक्ष के जल के सयोग से शीतलता का प्रकाश है उसको जानो तथा जो बिजली, लपट झपट से दमकती हैं वे आखो से देखने योग्य हैं और जो विलाय जाती हैं उनका चिह्न भी आख से देखा नही जा सकता इस सब को जानकर सुख को उत्पन्न करो।

(२) चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि। रयिं पिशङ्ग बहुल पुरुस्पृह हरिरेति कनिक्रदत् ॥यजु० ३३।९०

पदार्थ—(चन्द्रमा) शैत्यकर (अप्सु) व्याप्तेऽन्तरिक्षे (अन्त) मध्ये (आ) (सुपर्ण) शोभनानि पर्णनानि पतनानि यस्य स (धावते) सद्यो गच्छति (दिवि) सूर्य्यप्रकाशे (रयिम) श्रियम् (पिशङ्गम्) स्वर्णादिव-द्वर्णयुतम् (बहुलम्) पुष्कलम् (पुरुस्पृहम्) बहुभि स्पृहणीयम् (हरि) अश्व इव (एति) गच्छति (कनिक्रदत्) भृश शब्दयन् ॥

भावार्थ—हे मनुष्य ! यथा सूर्य्येण प्रकाशिताश्चन्द्रलोका अन्तरिक्ष गच्छन्त्यागच्छन्ति यथोत्तमोऽश्व उच्चै शब्दयन् सद्यो धावति तथाभूता सन्तो यूयमतीवोत्तमामतुला श्रिय प्राप्य सर्वान् सुखयत ॥

भाषार्थ—हे मनुष्यो ! तुम लोग जैसे (सुपर्ण) सुन्दर चालो से युक्त (चन्द्रमा) शीतकारी चन्द्रमा (कनिक्रदत्) शीघ्र शब्द करते हींसते हुए (हरि) घोडो के तुल्य (दिवि) सूर्य के प्रकाश में (अप्सु) अन्तरिक्ष के (अन्त) बीच (आ, धावते) अच्छे प्रकार शीघ्र चलता है और (पुरुस्पृहम) बहुतो से चाहने योग्य (बहुलम) बहुत (पिशङ्गम) सुवर्ण आदि के तुल्य वर्णयुक्त (रयिम) शोभा कान्ति को (एति) प्राप्त होता है वैसे पुरुषार्थी हुए वेग से लक्ष्मी को प्राप्त हो ओ ॥

भावार्थ—हे मनुष्यो ! जसे सूय से प्रकाशित चन्द्रादि लोक अन्तरिक्ष मे जाते आते हैं जैसे उत्तम घोडा ऊचा शब्द करता हुआ शीघ्र भागता है वैसे हुए तुम लोग अत्युत्तम अपूर्व शोभा को प्राप्त हो के सब को सुखी करो ॥

—(ऋषि वेदभाष्य)

(३) दिवि सोमो अधिश्रित ॥ अथर्व १४।१।१ ॥

दिवि द्योतनात्मके सूर्य्यप्रकाशे सोमश्चन्द्रमा अधिश्रित आश्रित = अर्थात सूर्य के प्रकाश मे चन्द्रमा प्रकाशित होता है।

(४) सोमेनादित्या बलिन सोमेन पृथिवी मही। अथो नक्षत्राणामेषा-मुपस्थे सोम आहित ॥ अथर्व० १४।१।२।

सोमेन चन्द्रलोकेन सहादित्या किरणा सयुज्य ततो निवृत्य च भूमि प्राप्य बलिनो बल कर्त्तुं शीला भवन्ति, तेषा बलप्रापकशीलत्वात्। सोमेन चन्द्रमस प्रकाशेन सोमाद्योषध्यादिना च पृथिवी मही बलवती पुष्टा भवति अथो इत्यनन्तरमेषा नक्षत्राणामुपस्थे समीपे चन्द्रमा आहित स्थापित. सन्वर्तते इति विज्ञेयम। अर्थात् जब आदित्य की किरण चन्द्रमा के साथ युक्त होके उससे उलट कर भूमि को प्राप्त होके बलवती होती है, तभी वे शीतल भी होती हैं। चन्द्रमा के प्रकाश और वायु से सोमलता आदि ओषधिया भी पुष्ट होती हैं और उनसे पृथिवी पुष्ट होती है। ईश्वर ने नक्षत्र लोको के समीप चन्द्रमा को स्थापित किया है।

—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

चन्द्र लोक भूमि है

(१) (प्रश्न) सूर्य, चन्द्र और तारे क्या वस्तु हैं। उनमें मनुष्यादि

(शेष पृ० ७ पर)

पृ० ६ का शेष

सृष्टि है वा नही ? (उत्तर) ये सब भूगोल लोक और इनमें मनुष्यादि प्रजा भी रहती है।—सत्यार्थप्रकाश

(२) येनेश्वरेणान्तरिक्षे पृथिव्यस्तत्समीप चन्द्रास्तत्समीपे पृथिव्योऽन्योन्य समीपस्थानि नक्षत्राणि सर्वेषां मध्ये सूर्य्यलोका एतेषु विविधा प्रजाश्च रचयित्वा स्थापिता ॥ अर्थात जिस ईश्वर ने क्रम से अन्तरिक्ष में पृथिविय, पृथिवियो के समीप चन्द्रलोक, चन्द्रलोको के समीप पृथिवियें, एक दूसरे के समीप तारालोक और सबमे नाना प्रकार प्रजा रचकर स्थापना की है।—यजुर्वेद १ २८ का ऋषिभाष्य भावार्थ

(३) एक-एक ब्रह्माण्ड मे एक सूर्य प्रकाशक और दूसरे सब लोक-लोकान्तर प्रकाश्य हैं।—सत्यार्थप्रकाश

(४) सूर्यलोक सर्वेभ्यो लोकेभ्यो महत्तमोऽस्ति ॥ अर्थात् सूर्यलोक सब लोको से महान् बडा है। (ऋग्वेद १ ६ १०) —ऋषिभाष्य

चन्द्र-यात्रा

(१) त्रय पवयो मधुवाहने रथे सोमस्य वेनामनु विश्व इद्विदु । त्रय स्कम्भास स्कभितास आरभे त्रिर्नक्त याथस्त्रिर्वश्विना दिवा० ॥

—ऋ० १ ३४ २॥

पदार्थ—(त्रय) त्रित्वसङ्ख्याविशिष्टा (पवय) वज्रतुल्यानि चालनार्थानि कलाचक्राणि (मधुवाहने) मधुरगुणयुक्तानां द्रव्याणां वेगानां वा वाहन प्रापण यस्मात्तस्मिन् (रथे) रमन्ते येन यानेन तस्मिन् (सोमस्य) ऐश्वर्यस्य चन्द्रलोकस्य वा (वेनाम) कामिना यात्राम् (अनु) आनुकूल्ये (विश्वे) सर्वे (इत्) एव (विदु) जानन्ति (त्रय) त्रित्वसङ्ख्याका (स्कम्भास) धारणार्था स्तम्भविशेषा (स्कभितास) स्थापिता धारिता (आरभे) आरब्धे गमनागमने (त्रि) त्रिवारम (नक्तम्) रात्रौ (याथ) प्राप्नुतम् (त्रि) त्रिवारम् (०) वितर्के (अश्विना) अश्विनाविव सकलशिल्पविद्याव्यापिनौ (दिवा) दिवसे ॥

भावार्थ—हे अश्वि अर्थात् वायु और बिजुली के समान सम्पूर्ण शिल्पविद्याओ को यथावत जानने वाले विद्वान् लोगो ! आप जिस (मधुवाहने) मधुरगुणयुक्त द्रव्यो की प्राप्ति होने के हेतु (रथे) विमान मे (त्रय.) तीन (पवय) वज्र के समान कला घूमने के चक्र और (त्रय) तीन (स्कम्भास) बन्धन के लिये खम्भ (स्कभितास) स्थापित और धारण किये जाते हैं, उनमे स्थित अग्नि और जल के समान कार्य्य सिद्ध करके (त्रि) तीन बार (नक्तम्) रात्रि और (त्रि) तीन बार (दिवा) दिन मे इच्छा किये हुए स्थान को (उपयाथ) पहुचो वहा भी आप के बिना कार्य्यसिद्धि कदापि नही होती। मनुष्य लोग जिसमे बैठ के (सोमस्य) ऐश्वर्य की (वेनाम्) कान्ति को प्राप्त हुई कामना वा चन्द्रलोक की कान्ति को प्राप्त होते और जिसके (आरभे) आरम्भ करने योग्य गमनागमन व्यवहार मे (विश्वे) सब विद्वान् (इत्) ही (विदु) जानते हैं उस (उ) अद्भुत रथ को ठीक-ठाक सिद्ध कर अभीष्ट स्थानो मे शीघ्र आया जाया करो ॥

भावार्थ—भूमिसमुद्रान्तरिक्षगमन चिकीर्षुभिर्मनुष्यैस्त्रिचक्राग्न्यागारस्तम्भयुक्तानि विमानादीनि यानानि रचयित्वा तत्र स्थित्वैकस्मिन् एकस्या रात्रौ भूगोलसमुद्रान्तरिक्षमार्गेण त्रिवार गन्तु शक्येरन् । तत्रदृशास्त्रयस्स्कम्भा रचनीया यत्र सर्वे कलावयवा काष्ठलोष्ठादिस्तम्भावयवा वा स्थितिं प्राप्नुयु । तत्राग्निजले सम्प्रयोज्य चालनीयानि । नैतैर्विना कश्चित्सद्यो भूमौसमुद्रेऽन्तरिक्षे वा गन्तुमागन्त च शक्नोतीति तस्मादेतेषा सिद्धये विशिष्टा प्रयत्ना कार्या इति ॥

भावार्थ—भूमि समुद्र और अन्तरिक्ष में जाने को इच्छा करने वाले मनुष्यों को योग्य है कि तीन-तीन चक्रयुक्त अग्नि के घर और स्तम्भयुक्त यान को रचकर उसमे बैठकर एक दिन रात मे भूगोल समुद्र अन्तरिक्ष मार्ग से तीन तीन बार जाने को समर्थ हो सके। उस यान मे इस प्रकार के खम्भ रचने चाहिये कि जिसमे कलावयव अर्थात कोष्ठ लोष्ठ आदि खम्भो के अवयव स्थित हो फिर वहा अग्नि जल का सयोग कर चलावे। क्योकि इनके बिना कोई मनुष्य शीघ्र भूमि समुद्र अन्तरिक्ष मे जाने आने को समर्थ नही हो सकता। इससे इनको सिद्धि के लिये सब मनुष्यों को बड़े-बडे यत्न अवश्य करने चाहिये॥"

ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य से आगे लिखी बातो पर स्पष्ट प्रकाश पड़ता है—

सार

(१) [illegible] मे [illegible] सूर्य के प्रकाश में चन्द्रमा भ्रमण करता रहता है।

(२) चन्द्र की परिधि सुवर्ण वर्ण युक्त और स्वच्छ है।

(३) चन्द्रमा के अवलोकन के लिये सभी इच्छा करते हैं।

(४) चन्द्रमा मे दो प्रकार की बिजुलिया सूर्य की किरणो द्वारा पहुचती हैं। एक प्रकार की बिजुलियो को हम देखते हैं, परन्तु दूसरे प्रकार की चन्द्रमा के लोक मे दिखाई नही देतो। विद्वानो शिल्पकारो का कर्तव्य है कि दोनो प्रकार की बिजुलियो को जानकर उनका उपयोग लेव।

(५) सूर्य की किरण अन्तरिक्ष मे होती हुई चन्द्रमा पर पृथिवी की ओर लौटती हैं। चन्द्रा की छाया और अन्तरिक्ष मे भरे हुए जल के सूक्ष्म परमाणुओ से वे शीतल प्रतीति देतो हैं और पृथिवी पर अन्नादि ओषधियो को पुष्ट करती हुई फिर लौट कर सूर्य को किरणो को बलवती कर देती हैं जिनसे सूर्य की किरण भी यथा पूर्वबलिष्ठ बनी रहती हैं।

(६) चन्द्र का स्वरूप सुन्दर है। यह भी भूमि की भान्ति भूगोल है। इसमे भी मनुष्यादि प्रजा का निवास है। उनका अन्न चन्द्रलोक की भौतिक स्थिति के अनुसार होता है।

(७) चन्द्रमा की यात्रा सुदृढ यानो के द्वारा की जा सकती है। एक दिन और एक रात्रि मे तीन-तोन बार भूमि, समुद्र और अन्तरिक्ष मे शिल्प विद्या के जानने वाले विद्वान् अतिशीघ्र यानो के द्वारा गमनागमन कर सकते हैं। इसके लिये यत्न करना चाहिये, तथा यत्न द्वारा चन्द्रलोक की प्राप्ति से वहा के पदार्थों से सुख उठाना चाहिये।

(८) अन्तरिक्ष मे वायु अग्नि, जल और पृथिवी के अत्यन्त सूक्ष्मकण सर्वत्र भरे हुए हैं। इनसे ब्रह्माण्ड का कोई स्थान खाली नहीं है।

(९) इन्हो अणुओ से सूर्य का ताप और प्रकाश सदा पूर्ण रहता है।

(१०) प्रत्येक ब्रह्माण्ड मे एक सूर्यलोक अन्य सब लोको से बडा है और सब लोको के बीच में है। ब्रह्माण्ड असख्य हैं।

(११) सूर्य और वायु के आकर्षण और धारण से सब लोक लोकान्तर अपनी परिधि मे घूमते हुए स्थिर हैं।

हम आर्य वैज्ञानिको से निवेदन करते हैं कि ऋषि के वेदभाष्य का पारायण करके अमूल्य भौतिक तत्त्व ससार के सामने रख। वेद में सम्पूर्ण विद्यायें हैं।

—जगदेवसिह सिद्धान्ती शास्त्री

महान् साधक

(कविवर प० ओकार मिश्र "प्रणव" शास्त्री एम० ए० फीरोजाबाद)

गीत कोई गा गया है, साधना सिखला गया है ॥१॥
घर की अज्ञान ने शुचि ज्ञान वैभव की हवेली।
घेर कर जिसको खडी हो वासनाओ की सहेली ॥
दे सृजन-सन्देश तो भी नव्य जीवन की पहेली।
मन्त्र वह महिमा मनोहर विश्व को बतला गया है ॥२॥
मेनका मनमौज लेने को चढी तम की सवारी।
और शिवसङ्कल्प सोये तान चादर स्वय कारी।
हारता हिम्मत न फिर भी साधना-पथ का पुजारी।
शौर्य की सञ्जीवनी सी शूर सत्य पिला गया है ॥३॥
भाग्य भूलो ने जिसे निर्द्वन्द्व निर्भय था ग्रसा।
जो धरातल पर पडा था पङ्क पिंजर मे फँसा ॥
मुक्त मञ्जुमराल वह हिम शृङ्ग पर जाकर बसा।
आत्म-दर्शन की धरोहर, दिव्य जो दिखला गया है ॥४॥
प्रगति प्रतिभा पावनी के पाव थे उखड हुए।
गये गौरव गीत के थे बाग ही उजड हुए ॥
एकता की वीणा के थे तार सब बिछुड हुए।
शुद्धि के सरगम स्वरो मे, बार बार मिला गया है ॥५॥
आत्म सयम शीलता से देश होवे शक्तिशाली।
राष्ट्र के निर्माण मे दे योजनाओ की उजाली ॥
जो भगीरथ स्वच्छ लाया गङ्ग सी गुरुकुल प्रणाली।
कीर्ति का बन कलाधर, कौमुदी मे छा गया है ॥६॥
राष्ट्र-श्रद्धानन्द मे आपाद जो कि निमग्न था।
दीन दुखियो के लिए तत्काल जो उद्विग्न था ॥
आर्य मर्यादा-सुकृति मे जो सदा सलग्न था।
सत्य संस्कृति का दधीचि, 'प्रणव'-पद वह पा गया है ॥७॥

(Continued from previous issue)

Untouchability-A malignant ulcer.

(Shri Giridhari Lal Arya Chauri Chaura)

gets the status of that Varna whose Characteristics one possesses. Similarly, the Apastamba Sutras also, 'By acting according to truth and virtue a Shudra becomes fully entitled by degrees to the rights of a Vaishya, a Kshatriya and a Brahmana and becomes fully entitled to do the acts prescribed for those Varnas. Similarly, a Brahmana belonging to the highest Varnas by acting against Dharma falls to the status of the Varnas below him i.e., the Kshatriya, Vaishya and Shudra Classes and has to observe the duties laid down for them.

That Conduct which is according to the Dharma is the only means of acquiring the rights of a higher Varna and Conduct which is opposed to Dharma Causes a man fall to the status of a lower Varna. Wherever we come across such expression as, 'a Shudra should not be taught and allowed to hear the Vedas read out,' the meaning is that as a Shudra is deficient in intellect and is incapable of learning remembering and thinking upon what he has read, it is useless and of no avail to teach him and make him learn the Vedas. The practices of untouchability amongst men, women and children is emphatically against the Vedic doctrines. Among the four Varnas, There should be mutual affection, regard for one another's good happy relations, and fellow-feeling on occasions of enjoyment, sorrow, profit and loss. They should with one mind and at all cost devote themselves to the well-being of the States and the people. In the Yajur Veda 31-11, that in this world of the all-pervading God, wherever is the most excellent like the mouth, is a Brahmana; Whoever has bodily power is a Kshatriya, as it is said in the Shatapatha Brahmana that word babu (ordinarily arm) means strength; the part below the loin and above the knee is called, Uru; he who with the help of his thighs goes abroad and trades is called the Vaishya; and he who is like the lowest limb of the body and is ignorant is called the Shudra. If a man born in a Shudra family possess the merit, actions and temperaments of a Brahmana, a Kshatrya or a Vaishya, he becomes a Prahamana, Kshatriya or a Vaishya as the case may be. Similerly, a man born in a Brahmana, Kshatrya or Vaishya family should become Shudra if his merits, actions and temperaments are Shudra-like. It means that a man or a woman should belong only to that Varna for which he or she is fit. A low-born ascends to a higher Varna by doing righteous deeds. He should be counted of the same Varna, for which he is fit. Similarly, by doing unrightous deeds, a man born in higher classes decends to a lower class for which he is fit and should be regarded as such. Whatever holds good in case of males is equally true of females. Thus, it is that the Varnas can keep in tact their respective purity by adhering to their own merits, profession and temperament, i.e., nobody should live like a Kshtriya or a Shudra in the Brahmana family. The Kshatriya, Vaishya and Shudra Varnas will also maintain their purity in this way. There will be no promiscuous anmixture nor a chance for recrimination or incompetency. Briefly, it is the duty of all men to follow the good ways of their ancestors and not evil ways. Those who say that the Varna system depends upon the reproductive elements of the parents and not upon merits or actions may be asked one question—why do you not acknowledge That man as Brahmana, who abandons the duties of his Varna and becomes low. or is converted into Islam or Christianity? You have only one answer. The man has left the duties of Brahmanas, therefore, he is not a Brahmana. This proves that those born Brahmanas who do good actions are Brahmans and those low-born also whose merits, profession and temperaments are of higeer Varnas are also of higher Varnas. Similarly, high-born person doing low things should be reckoned in the low Varna. Hence, he who makes misinterpretation of the above Vedic Verses is utterly misguided outfit. So, there is a old saying —Better untaught than ill—taught. O Glorious God, lead us from false to true. Lead us from darkness to light. Lead us from death to immortality. Om, Peace!

नवीन वेदान्ती—

> अथास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रपरिपूरणम् ॥ इति ॥
> भवति च वेदोच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद ॥ इति ॥
> (वेदान्त सूत्र शांकरभाष्य १।३।३८)

आर्यविद्वान् द्वारा खण्डनार्थ प्रमाण उद्धृत—

१. यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ।— यजु ०२६-२

२. ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ यजु० ३१-११

३. नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च यजु० १६-३२

४. समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः अथर्व० ३।३०।६।

५. शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्। क्षत्रियाज्जातमेवं तु विद्याद् वैश्यात्तथैव च ॥ मनु० १०-१२

६. वेदाभ्यासो ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य च रक्षणम्। वार्ता कर्मैव वैश्यस्य विशिष्टानि स्वकर्मसु ॥ मनु० १०-१९

७. तत्र राजा गुहो नाम रामस्यात्मसमः सखा: निषादजात्यो बलवान् स्थपतिश्चेतिविश्रुतः भुजाभ्यां साधुवृत्ताभ्यां पीडयन्वाक्यमब्रवीत्। दिष्टया त्वां गुह पश्यामि नीरोगं सह बान्धवैः वाल्मीकि-रामायण-अयोध्याकाण्ड।

८. न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्। ब्रह्मणा पूर्वं सृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम् ॥— महाभारत शान्ति पर्व अ० १८८

९. न योनिर्नापि संस्कारो न श्रुतिर्न च संततिः। कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम्। सर्वोऽयं ब्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते। वृत्ते स्थितोऽपि शूद्रोऽपि, ब्राह्मणत्वं सगच्छति। ब्रह्मपुराण अ० २३३

१० ब्राह्मण्यं ध्रुवमिदं किल कृत्रिमत्वात् कृत्रिमं भवति सामयिकत्वयोगात्॥ सांकेतिकं सकलमेव विशेषलक्ष्यं वाऽजिव्यमेव [illegible] जातिभेदः भविष्यपुराण अ० ४०।

श्रद्धानन्दं महात्मानं प्रणमामः पुनः पुनः

(कविवरः श्रीमान् धर्मदेवः विद्यालंकारः)

विवेद न भयं क्वापि यः सिंहसमविक्रमः।
यस्य नामापि संस्मृत्य बलवान् जायते नरः ॥१॥
विश्वासभूमिरार्याणां मातृभूमेश्च रक्षिता।
नेताऽभूद् भारतीयानां भयदो भारतद्रुहाम् ॥२॥
वज्रादपि कठोरः सन् कुसुमादपि यो मृदुः।
क्षात्रेण तेजसा दीप्तः प्रदीप्तो ब्राह्मतेजसा ॥३॥
व्यूढोरस्के वृषस्कन्धे शालप्रांशो महाभुजे।
दृष्टमात्रेऽपि लोकानां यस्मिन् श्रद्धा प्रजायते ॥४॥
मातृकल्पः पितृकल्पो दयालुः करुणानिधिः।
दीनानां मतिहीनानां यः शरण्यो महानभूत् ॥५॥
त्यागिनां धुरि वर्तिष्ठन् तपस्विप्रवरोऽभवत्।
समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव ॥६॥
ऋषिकल्पं तमाचार्यं श्रद्धानन्दं महौजसम्।
श्रद्धया परयोपेताः प्रणमामः पुनः पुनः ॥७॥
अनुगन्तुं तदेवार्यं यथा च प्रयतेमहि।
तथा दिशतु भो धार्मं भगवान् जगदीश्वरः ॥८॥

विचारणीय समस्या—

साम्प्रदायिक वैमनस्य-कारण और उपचार

श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान WZ/79 राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली 38)

एकता ही प्रगति एवं समृद्धि का मूलमन्त्र है। भारत की प्राचीन परम्परा में इसी मार्ग का अनुशीलन करते हुए हमारे पूर्वजों ने प्रेम, न्याय और समता का मार्ग प्रशस्त किया। भारत की अखण्डता बनाये रखने में धर्म अत्यन्त महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान करता रहा, यह निसकोच रूप से कहा जा सकता है। किन्तु साम्प्रदायिक वैमनस्य के कारण वह परम्परा टूट कर किसी अन्धकूप में जा पड़ी। परिणाम स्वरूप इतिहास को पहली बार भारत का स्थायी विभाजन स्वीकार करना पड़ा।

साम्प्रदायिक उपद्रवों का जब विश्लेषण किया जाता है, तो लगता है, कि ये उपद्रव भ्रष्ट आचरण, कुत्सित स्वार्थ और अविवेक के मद में भड़कते हैं। इन उपद्रवों का कारण एक दूसरे के प्रति अविश्वास, एक दूसरे की मान्यताओं से विरोध, एक दूसरे की आस्थाओं में शंका, एक दूसरे पर हावी होने का उपक्रम और एक दूसरे को न समझने की हठ में विद्यमान है।

स्थिति ऐसी है कि अधिकांश लोग धर्म के निकट जाना नहीं चाहते क्योंकि पैगम्बरी पुस्तकों पर कुंडली मारकर बैठ जाना ही उन्हें अभीष्ट लगता है। दूसरे, धर्म का मार्ग कुछ दुर्गम है। शाब्दिक निष्ठा दिखाने भर से वहाँ काम नहीं चलता। वहाँ तो स्वार्थ का विनाश परमार्थ से करने की प्रेरणा मिलती है, घृणा का उपचार प्रेम से करने को कहा जाता है, झूठ को सच्चाई से परास्त करने का आदेश मिलता है, एक दूसरे को तर्क-वितर्क द्वारा ठोक-बजा कर परखना पड़ता है और वैज्ञानिक उपलब्धियों से समन्वय स्थापित करने का आग्रह किया जाता है।

साम्प्रदायिक वैमनस्य ने भारत की सुरक्षा एवं शांति को निगलने की जैसे ठान सी ली हो, ऐसा लगता है। पाकिस्तान बन जाने पर लोगों ने एक सुन्दर भारत की कल्पना की थी, किन्तु लगता है वह कल्पना तब तक साकार नहीं हो सकती जब तक इन साम्प्रदायिक उपद्रवों के मूल कारणों का स्थायी रूप से उन्मूलन नहीं कर दिया जाता। ऐसा निम्नलिखित तथ्यों से स्वतः सिद्ध हो जाता है।

पाकिस्तान की मनोवृत्ति

भारत में साम्प्रदायिक वैमनस्य की जब आग भड़कती है तो प्रायः यह चर्चा सुनी जाती है, कि यह सब पाकिस्तानी पैट्रोल से सम्भव हुआ है। हो सकता है इस आशंका के कारण, साम्प्रदायिकता की नींव पर पाकिस्तान का निर्माण और भारत से उसके कटु सम्बन्ध रहते हो। किन्तु अहमदाबाद के उपद्रवों और उनके सम्बन्ध में दिये गये, श्री जयप्रकाश नारायण और सीमान्त गाँधी के वक्तव्यों ने इस आशंका को तथ्य रूप प्रदान कर दिया है।

यह कहने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती कि गत दो दशकों से पाकिस्तान में धर्म तथा मानवीय आदर्शों का जनाजा निकालने की तैयारियाँ हो रही हैं। रबात में तो कब्र भी खोदी जा चुकी है। आवश्यकता केवल उन्हें दफनाने की रह गई है। किन्तु सभ्य संसार के भय से वह इस अन्तिम संस्कार में भारत को साझीदार बनाकर कुछ आत्मिक-शक्ति अर्जित करना चाहता है, ताकि संसार की हाय-तोबा को आधा-आधा बाँट सके। भारतीय मुसलमानों व हिन्दुओं की संवेदनशील प्रकृति के कारण पाक-षड्यन्त्र प्रायः सफलीभूत हो जाते हैं। वास्तव में पाकिस्तान ही मूल-रूप से साम्प्रदायिक उत्तेजना का कारण है। भारत-विभाजन के कटु संस्मरण आज भी गैर मुसलमानों के हृदय में समाधि लिये बैठे हैं। पाकिस्तान में हिन्दुओं की दुर्दशा के प्रति क्रिया स्वरूप भारत के हिन्दुओं में भी उत्तेजना एवं आक्रोश बढ़ जाता है। सम्प्रदाय, जाति और पारिवारिक सम्बन्धों के कारण जिन भारतीय मुसलमानों की सहानुभूति पाकिस्तान के साथ है, उन्हें देखकर शंका एवं अविश्वास को बल मिलता है। गत भारत-पाक युद्ध में भारतीय मुसलमानों की शिथिलता एवं केरल में मुस्लिम बहुल जिले के रूप में छोटे पाकिस्तान का निर्माण, इस शंका और अविश्वास की दीवारों को और ऊँचा उठाने में सहायक सिद्ध हुआ है।

समय समय पर पाकिस्तानी तत्वों का भारत प्रवेश, पाकिस्तान के प्रेस और रेडियो का अमर्यम प्रचार, भारत में हुए छुट-पुट दंगों को अतिरंजित रूप से प्रकाशित व प्रसारित करने का उपक्रम, आसाम के नागाओं से साँठ-गाँठ, ये सब बातें पाकिस्तान की मनोवृत्ति की परिचायिकाएं हैं।

पाकिस्तान के विषैले प्रभाव को रोकना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह कार्य दो चरणों में पूर्ण किया जा सकता है। पहला चरण सरकार से और दूसरा समाज से सम्बन्धित है। पहले चरण के अन्तर्गत भारत सरकार को पाकिस्तान-सरकार से इस विषय में विचार-विमर्श एवं सन्धि करनी चाहिए। जो फल प्राप्त हो उसे सार्वजनिक रूप से प्रकाशित कर दिया जाये, ताकि भारतीय जनता के समक्ष पाकिस्तान का असली मुखौटा आ जाये।

दूसरे चरण में भारतीय मुसलमानों का भारतीयकरण अनिवार्य है जैसा कि सीमान्त गाँधी जी ने अनेक स्थानों पर इस सम्बन्ध में कहा भी है। दूसरे चरण की पूर्ति में गैर मुसलमानों का सहयोग अपेक्षित है। प्रेम समता और भ्रातृत्व का मार्ग प्रशस्त करके ही इस चरण को पूर्ण किया जा सकता है।

तुष्टीकरण की नीति

भ्रष्ट राजनीति तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण करना राजनीतिज्ञों के लिये अपरिहार्य समझा जाता है। तुष्टीकरण की नीति किसी आदर्श राजनीति का परिणाम न होकर स्वार्थ से उठने वाली भीषण चिनगारियाँ है जिसमें समाज की पावनता ही नहीं वरन् राष्ट्र की भव्यता भी दग्ध हो उठती है। इस नीति के कारण ही आज भारत में स्थान स्थान पर स्वार्थ रूपी विषधर खड़े फुंकार रहे हैं।

तुष्टीकरण की नीति ने ही राष्ट्रिय नेताओं को भारत विभाजन स्वीकार करने के लिये बाध्य किया था। आंख मूँद कर मुस्लिम बहुल जिले का निर्माण करने वाले नम्बुदरीपाद को जिस रहस्यमय नाटक का शिकार होना पड़ा वह तो सर्वविदित है। अब कुछ विज्ञ-जन पुलिस विभाजन में साम्प्रदायिक आधार पर पचास प्रतिशत स्थान मुसलमानों को देना चाहते हैं। भारत की गलियों में 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' का नाद उद्घोषित करने वाले देशद्रोहियों का जब तक समूलतः उन्मूलन नहीं हो जाता, क्या तब तक राष्ट्र की सुरक्षा एवं अखण्डता से इस प्रकार की खिलवाड़ उचित मानी जा सकती है?

यह सिद्ध है कि तुष्टीकरण की नीति से किसी समस्या का स्थायी समाधान नहीं निकलता अपितु इसके विपरीत साम्प्रदायिकता और दलबन्दी को अप्रत्यक्ष रूप से प्रश्रय एवं प्रोत्साहन मिलता है। कौन नहीं चाहता कि प्रत्येक नागरिक को राष्ट्रिय जीवन में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो किन्तु समस्या का हल सम्प्रदाय अथवा गुट के बजाये यदि योग्यता और अनुभव के आधार पर हो, तो सोने में सुहागा मिल जाये।

समय रहते यदि हमारे देश के राजनीतिज्ञ इस सत्यता को ग्रहण करलें कि अग्नि शमन घृत से नहीं जल से होता है, तो साम्प्रदायिक वैमनस्य को कम करने का आधार खोजा जा सकता है। इसके लिये दूरदर्शिता पूर्ण कुत्सित स्वार्थों का त्याग अपरिहार्य है। राष्ट्रिय जीवन में आत्मशुद्धि की जो अनिवार्यता को हमें भुला नहीं देना चाहिए। निष्पक्ष-नीति द्वारा ही इसका प्रतिकार सम्भव है। जन-मत की अवहेलना समूचे राष्ट्र का अपमान है और जनता कभी भी इसका प्रतिशोध ले सकती है।

धर्म और सम्प्रदाय

कुछ विद्वान सर्वधर्म-एकता की बात कहते हैं किन्तु प्रश्न उठता है कि धर्म तो आदि से अन्त तक एक रहता है फिर किन धर्मों की समन्वयता पर जोर दिया जाता है? क्या विशेष प्रचार के आचार-व्यवहार, रीति-नीति, रस्म रिवाज और विधि विधान का ही नाम धर्म है? धर्म तो मानव की अन्तरात्मा से प्रस्फुटित होने वाली ज्ञानधारा है बाहर से ठूँसने वाला भौतिक पदार्थ नहीं। धर्म और सम्प्रदाय यहीं आकर एक दूसरे से विछिन्न हो जाते हैं।

सम्प्रदाय, धर्म न होकर धर्म की उतरन है। धर्म से पूर्व जब कोई विशेषण प्रयुक्त होने लगता है तो वह धर्म न होकर सम्प्रदाय बन जाता है। सम्प्रदाय एक वर्गविशेष की बपौती होते हैं जबकि धर्म समूची मानव जाति का प्रतिनिधित्व करता है। अधिकांश सम्प्रदाय विज्ञान के विरोधी बन कर प्रकट हुए हैं। उन्होंने तर्क, विचार-विनिमय और अन्वेषण करने वाले बुद्धिजीवियों को भूल कर भी प्रोत्साहन नहीं दिया। अनेक सम्प्रदायों के विषय में प्रमाणिक रूप से यह कहा जा सकता है कि जहाँ उनका उद्भव एवं विकास हुआ वहाँ स्वार्थ, द्वेष एवं आडम्बर प्रतिष्ठित तथा पुरस्कृत हुआ। (क्रमश)

आर्यसमाज मन्दिर मोहरी चौक बटाला पर

श्री धर्मपाल जी बजाज, प्रधान समाज का पूर्ण अधिकार

प्रो० रामसिंह सभाप्रधान की जिला अधिका-रियों को चेतावनी का परिणाम

आर्यसमाज मोहरी चौक बटाला (गुरदासपुर) के प्रबन्ध आदि के लिए प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान ने गत दो तीन वर्ष पूर्व एडहाक कमेटी का निर्माण किया तथा श्री ओमप्रकाश को उसका प्रधान बनाया। परन्तु वह श्री वीरेन्द्र आदि के कुचक्र मे फस गये तथा सभा विरोधी गतिविधियो मे पड गये। इस प्रकार के कार्य में श्री वीरेन्द्र ने भी अपने समाचार पत्रो मे उनकी प्रसंसा करके सभा विरोधी कार्य कराये। इस कारण सभा प्रधान जी ने १४-७-६१ को आर्यसमाज तथा उसकी शिक्षण संस्थाओ के प्रबन्ध के लिए एक नई प्रबन्ध समिति का निर्माण किया तथा श्री धर्मपाल जी बजाज को प्रधान व श्री सजानदास को मन्त्री बनाया। श्री वीरेन्द्र की उत्तेजना पर श्री ओम्प्रकाश आदि ने एक दिन आर्यसमाज के अधिका-रियों पर सत्संग करते समय पुलिस की उपस्थिति मे आक्रमण कर दिया। दोनों पक्षों के विरुद्ध कई केस रजिस्टर हो गये। शान्ति स्थापना करने की भावना से स्थानीय एस० डी० एम० ने समाज मन्दिर पर ताले लगा दिये तथा सत्संग भी बन्द करा दिया। सेशन जज जालन्धर ने अपने निर्णय दिनांक १४-११-६१ द्वारा आर्यसमाज मोहरी चौक तथा आर्यगर्ल्स स्कूल बटाला का प्रबन्ध और नियन्त्रण प्रो० रामसिंह को दे दिया। उसके बाद सभा प्रधान जी ने स्थानीय मैजिस्ट्रेट तथा डिप्टी कमिश्नर को चेतावनी दी कि यदि उन्होंने आर्यसमाज के सत्संग मे हस्तक्षेप किया तो भयंकर स्थिति उत्पन्न हो जावेगी और उसकी जिम्मेवारी उनकी होगी, क्योंकि धार्मिक कार्यों में हस्तक्षेप करना विधान के विरुद्ध है। इसके फल-स्वरूप अधिकारियों ने श्री धर्मपाल बजाज और उनके साथियों को रविवार दिनांक ७-१२-६१ को सत्संग करने दिया। उस दिन से श्री धर्मपाल बजाज आदि का समाज आदि पर पूर्ण अधिकार है।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि श्री ओमप्रकाश के विचारों में भी परि-वर्तन हुआ है तथा उन्होंने श्री रामनाथ जी भल्ला, सभा कोषाध्यक्ष को सहयोग देने का पूर्ण आश्वासन दिया। श्री ओम्प्रकाश जी ने श्री भल्ला जी को पत्र लिखा है उसका कुछ अंश निम्न प्रकार है—

> अत मे मैं आपको पूर्ण रूप मे यह विश्वास दिलाता हू कि मैं जीवन पर्यन्त आप के द्वारा किये गये मेरे ऊपर उपकारो को नही भूलूगा। मैं आगे आपका साथी था अब भी हु और भविष्य मे भी रहूगा। जहा भी चाहे आप परख सकते हैं। मैं सिद्धान्त वाला आदमी हू। हर रोज पक्ष नहीं बदलता।"

आशा है कि उपरोक्त स्थिति के बाद आर्यसमाज मोहरी चौक बटाला मे शान्त वातावरण रहेगा तथा श्री ओम्प्रकाश जी भी श्री धर्मपाल जी बजाज को सहयोग देते रहेंगे।—निजसंवाददाता

आर्यसमाज विनय नगर नई दिल्लीके लिये तदर्थ समिति का निर्माण

आर्यसमाज विनय नगर— नई दिल्ली मे गत २-३ मास से संघर्ष चल रहा है। आर्यसमाज के अधिकारी सभा की आज्ञाओ अथवा व्यवस्था का स्पष्ट अथवा निरन्तर विरोध तथा अवहेलना कर रहे हैं। स्थानीय आर्य-समाज मे अव्यवस्था हो गई है जो समाज तथा संघटन के लिये अत्यन्त हानिकारक है। यदि उस पर तुरन्त रोक न लगी तो स्थिति और भी बिगड जावेगी। सारी स्थिति को ध्यान मे रखते हुए मैं सभा के विधान की धारा २४(६) द्वारा प्रदत्त अधिकार के आधार पर आर्यसमाज विनय नगर के संघटन को एक वर्ष के लिये स्थगित करता हू तथा उसके प्रबन्ध व नियन्त्रण के लिये निम्न महानुभावो की एक एडहाक कमेटी बनाता हू।

१ डा० कृष्ण लाल जी आनन्द—प्रधान २ श्री ओम् प्रकाश जी मेहता—उप प्रधान ३ श्री कृष्णलाल जी गुप्त—मन्त्री ४ श्री गंगा देव जी शर्मा—उप-मन्त्री ५. श्री सत्यदेव जी कुमार—कोषाध्यक्ष ६ श्री अमृत लाल जी वर्मा—सदस्य ७ श्री तीर्थराम जी दत्त—सदस्य ८ दीनदयाल जी शर्मा—सदस्य ९ श्री औ० पी० बहल—सदस्य

उपरोक्त समिति को वह सब अधिकार होंगे जो आर्यसमाज के उप-नियमो के अनुसार आर्यसमाज की अन्तरग सभा को है। यह उपसमिति समाज के आधीन शिक्षण संस्थाओं का भी प्रबन्ध करेगी।

आर्यसमाज विनय नगर के बैंकों तथा डाकखाना आदि में एकाउण्ट आपरेट करने का अधिकार डा० कृष्णलाल जी (प्रधान) श्री कृष्णलाल जी गुप्त (मन्त्री) तथा श्री सत्यदेव जी कुमार (कोषाध्यक्ष) को होगा। इनमें से दो के हस्ताक्षरो से धन निकाला जा सकेगा।

प्रतिलिपि—१ डा० कृष्णलाल जी आनन्द दुकान न०-१७६, सरोजनी नगर, नई दिल्ली-२३ २ श्री कृष्णलाल जी गुप्त बी-७३१ सरोजनी नगर, नई दिल्ली-२३। (आप उपसमिति के सदस्यों को सूचित कर दे) ३ श्री सत्यदेव जी कुमार सी-१६३ सरोजनी नगर, नई दिल्ली-२३, ४ डा० धर्मानन्द जी सेखानी (भूतपूर्व प्रधान आर्यसमाज) बाई ब्लाक सरोजनी नगर नई दिल्ली ६ मुख्य कार्यालय, जालन्धर,। ७ श्री सम्पादक जी "आर्यमर्यादा" साप्ताहिक।

श्रद्धानन्द नाम था उनका, उनको सौ सौ बार प्रणाम

(कविवर प्रोफेसर जनमेजय विद्यालंकार एम०ए० शास्त्री)

रोम रोम में रमा हुआ था उनके ओ३म नाम का राग।
नख से शिख तक पूर्ण हुआ था उनके मातृभूमि अनुराग॥
अद्वितीय पावन था उनका भव्य देह महिमा का धाम।
श्रद्धानन्द नाम था उनका उनको सौ सौ बार प्रणाम॥१॥
कान धन्य वे जिनने उनका सिंह नाद सुन पाया था।
बड भागी वे नेत्र जिन्होंने दर्शन लाभ कमाया था॥
अहो धन्य वह मस्तक जिसने उनकी चरण धूलि पाई।
स्मरण शक्ति वह धन्य न जिसने कथा पुरानी बिसराई॥२॥
एक बार जो उनसे मिल ले धन्य धन्य हो जाता था।
कायरता सब छोड उसी क्षण महावीर बन जाता था॥
उनकी दयादृष्टि को पाकर सब निहाल हो जाते थे।
रोते रोते जो आते थे हसते हसते जाते थे॥३॥
माता का सा प्यार पिता सा स्नेह सदा उनमे पाया।
सदा छत्रछाया में उनकी जगत में मंगल पाया॥
उनके ही दम से चमका था शिक्षा का प्राचीन विधान।
उनके तप से सदा सुरक्षित रहता था यह देश महान्॥४॥
कुछ तो सीखो त्याग तपस्या ऐ कविता पढ़ने वालो।
निर्भयता साहस कुछ सीखो भारत के रहने वालो॥
मुख से नहीं, आचरण से तुम ईश्वर पर विश्वास करो।
श्रद्धानन्द सदृश बन जाओ पुण्यकाम निष्काम करो॥५॥

देव दयानन्द

[कवि कस्तूरचन्द "घनसार" प्रचार मन्त्री आर्यसमाज पीपाड़ शहर राजस्थान]

सदाचार सदातन सत्य कर्म सदानन्द,
सत्य व्रत, सदय सचेत सत्-स्वामीथा।
सत्यवादी, सत्यवाक् सत्यराह सत्यपन,
समदर्शी समुचित सन्-निष्कामीथा॥
सुशील सुभद्र, सर्व लौकिक सुमुख सुर,
सौन्दर्य स्वरूप सोम, सुधा सुख-धामीथा।
स्वातिक स्वभाव शुचि सुजान समाज सेवी,
सचालक दयानन्द, वेद-अनुगामीथा॥
दयानन्द देव दीप्ति दीक्षित दीधिति दिव्य,
दम्भ-दुराचार दु:ख-दमन दिनेश थे।
देवव्रत देववाणी, द्रविण दायक देह,
दृढ भूमि दृढ व्रत दयालु दिनेश थे॥
दुर्धर्ष दुरित दुष्ट दल, दु:शासन,
दुराग्रह दुरन्त दवन दीव वेष थे,
देवराज, देवर्षि दैशिक दैविक दीर्घ,
दीर्घदृष्टि दीर्घनाद दक्षिण दिनेश थे॥

श्री मद्दयानन्दार्ष विद्यापीठ ७.१२.६९ की बैठक में निम्नलिखित निर्णय किये गये

१—आर्षविद्यापीठ की स्थापना होने के पश्चात् जिन छात्रो ने अपने विद्यालयो में ही व्याकरणाचार्य किया है, यदि वे आर्ष विद्यपीठ की व्याकरणाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करना चाहें, तो उन्हें व्याकरणाचार्य के दोनो खण्डो की परीक्षा देनी होगी। यह नियम केवल २०२८ विक्रमी चैत्र तक ही है। २—प्रथमा तृतीय खण्ड तथा कक्षा ८ वा उसके समकक्ष अन्य किसी परीक्षा में उत्तीर्ण छात्र मध्यमा प्रथम खण्ड में बैठ सकेगा। इससे उच्च योग्यता का छात्र मध्यमा के प्रथम दो खण्डो की भी एक साथ परीक्षा दे सकेगा। ३—पजाब विश्वविद्यालय से विशारद एव वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय से प्राचीन व्याकरण लेकर मध्यमा उत्तीर्ण छात्र शास्त्री में तथा ऐसे ही शास्त्री उत्तीर्ण व्याकरणाचार्य मे बैठ सकेगा। आर्ष विद्यापीठ से सम्बद्ध अपेक्षित विद्यालयो को ही ये सुविधाए दी गयी हैं। ४—पाठविधि-सशोधन का कार्य शिक्षा पटल को दिया गया है। तब तक परीक्षाए पूर्ववत् चलती रहेंगी। ५—दीक्षान्त समारोह वर्ष के अन्त मे (चैत्र की परीक्षा के पश्चात्) परिणाम निकलने पर यथासूचना हुआ करेगा। —६ अनुवाद कराना, कलात्मक निबन्ध लिखाना आदि परीक्षको के सुझाव सभी सम्बद्ध विद्यालयों के आचार्यों को भेजे जाया करें। ७—सफल-असफल उभयविध छात्र पाच रुपये प्रतिपत्र शुल्क देकर पुनरीक्षण (अको का जोड मात्र) करा सकते हैं। अशुद्धि पाये जाने पर दिये गये शुल्क का आधा लौटा दिया जायेगा। ८—जो विद्यार्थी छह महीने मे तीन पत्रो की परीक्षा देते हैं। वे पहली पारी में १, ३, ५ तथा दूसरी मे २, ४, ६ पत्रो की परीक्षा देवें। यह नियम आश्विन २०२७ मे होने वाली परीक्षाओ से लागू होगा। तब कोई पत्र किसी को छूटता दीखे, तो वह उसे भी सम्मिलित कर लें। ९—प्रथमा तृतीय खण्ड के व्याकरण पत्र मे ६० प्रतिशत अक आने पर ही उत्तीर्णता समझी जायेगी। १०—छह महीने मे परीक्षा देने का नियम पूर्ववत् ही है। यदि किसी वा किन्ही पत्रों में ६० प्रतिशत से कम अक हैं, तो उनमें अधिक अक प्राप्त करने के लिये (यदि छात्र चाहे तो) उन पत्रों की पुनः परीक्षा की जा सकेगी। ११—आश्विन और चैत्र (दोनो) परीक्षाओ में जो भी एक छात्र सर्वप्रथम और एक सर्व द्वितीय उत्तीर्ण होगा, उसे वर्ष के अन्त (परीक्षा की दृष्टि से) चैत्र में पुरस्कृत किया जावेगा। १२— विद्यापीठ से सम्बद्ध विद्यालयो के कम से कम शास्त्री उत्तीर्ण छात्रों की व्याकरण आदि में प्रतियोगिताए हुआ करेगी।

सूचनाः—

क—आचार्यों से निवेदन है कि वे अनिवार्य रूप से अनुवाद और अच्छे ढग से निबन्ध लिखवाने के लिए अध्यापको को प्रेरित कर। ख—चैत्र शुक्ला द्वितीय २०२७, आठ अप्रैल १९७० की परीक्षा में बैठने हेतु सशुल्क प्रपत्र भरकर प्रस्तोतृ-कार्यालय मे पहुचने की अन्तिम तिथि ५ जनवरी १९७० है।

वेदानन्द वेदवागीश, प्रस्तोता
श्री मद्दयानन्दार्ष विद्यापीठ, कार्यालय—गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

आर्यबालगृह व आर्यकन्यासदन

आर्य अनाथालय पटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली

मान्यवर मन्त्री जी, नमस्ते।

आपके आर्यबालगृह और कन्यासदन मे बालको तथा कन्याओ की सख्या बढ़ते-बढ़ते ६५० तक पहुच गई है। उनके निवास, भोजन, वस्त्र, शिक्षण तथा धार्मिक वातावरण में स्वावलम्बी बनाने के लिये इस वर्ष ५ लाख रुपए व्यय होंगे।

इन बालको की वही आवश्यकताएं हैं जो घरो पर पलने वाले बालको की होती हैं। अतः इनकी ओर भी प्रत्येक आर्य को उतना ही ध्यान देना चाहिये जितना कि अपने बालको के प्रति देते हैं। सर्दी शुरू हो गई है। निम्नलिखित वस्तुओं की तुरन्त आवश्यकता है :—

रजाईयाँ १००, कम्बल १००, गर्म कोट ३००, गर्म कोटी ३००, स्वेटर-३००, तथा जूते ४००।

बढ़ी हुई सख्या के लिए नई भूमि में कमरो की भी महती आवश्यकता है। उसके लिए धन भी चाहिए और भवन सम्बन्धी सामान भी। आपसे सानुरोध प्रार्थना है कि जो कुछ भी हो सके अपने समाज की ओर से अनुदान देने की कृपा करें। अपने साप्ताहिक सत्सग मे घोषणा करके कृपया अपील करें कि सभी सदस्य अधिक से अधिक सामान अथवा धन भेजकर पुण्य के भागी बनें। दैनिक व्यय की पूर्ति के लिए अपने इलाके के सज्जनों तथा देवियों को हमारा मासिक सहायक बनाकर सस्थाओ की सहायता करें

मिडिल और हायर सैकण्ड्री कक्षाओ मे पढ़ रही १६ से १९ वर्ष की आयु की गृह कार्य में चतुर १० विवाह योग्य युवति कन्याएं हैं, जिनके लिए योग्य वरो की आवश्यकता है। इनकी भी घोषणा अपने सत्सग मे करने की कृपा करे।

देसराज चौधरी — शिवचरनदास — महेन्द्र कुमार शास्त्री
प्रधान मन्त्री अधिष्ठाता

आर्यसमाज पठानकोट का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज पठानकोट पजाब की प्रमुख आर्य समाजो मे विशेष स्थान रखती है। अबकी ५, ६, ७ दिसम्बर तक समाज का उत्सव बडी धूम धाम से सम्पन्न हुआ। उत्सव से पूर्व श्री पूज्य स्वामी आनन्द भिक्षु जी महाराज पहली दिसम्बर से यज्ञ और उपदेश का कार्य क्रम चलाते रहे। सभा की ओर से उनके साथ श्री प० बलराज जी सगीत रतन, श्री जितेन्द्र जी, तथा रामनाथ यात्री मण्डली ने सहयोग दिया। १७ दिसम्बर से ही श्री पं० रामनाथ जी व ठा० शमशेरसिंह जी मण्डली नें १५ दिन तक लगातार पठानकोट के भिन्न भिन्न मुहल्लो मे प्रचार किया। इस शुभ अवसर पर श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज श्री आचार्य प्रियव्रत जी वेद वाचस्पती गुरुकुल कागडी, प० निरजनदेव जी वेदप्रचाराधिष्ठाता जी प्रो० श्यामराव जी, श्री प० तेजभानु जी भजनोपदेशक तथा श्री मुशीलाल धर्मपाल मण्डली भी पधारे। वेद प्रचार निधि मे ५०० रु० नगद दिया तथा २००) रु० पुन भेजने का वचन दिया। सभी अधिकारी श्री ला० शिवदयाल जी श्री दीवान माधोराम जी तथा मंत्री श्री चरणदास जी बधाई के पात्र हैं।

आर्यसमाज धारीवाल का वार्षिकोत्सवः—

धारीवाल आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव बडा सफल रहा सभा की ओर से श्री प० अमरनाथ जी प्रेमी रेडियो कलाकार पधारे।

निरजन देव, वेदप्रचार अधिष्ठाता

रेडियो भाषण की सूचना

कु० सुशीला आर्या जी एम०ए० विद्यावाचस्पति का रेडियो भाषण ग्रामीण बहिनो के कार्यक्रम में ३० १२- ६९ मगलवार को दिल्ली A पर २से २॥ बजे दोपहर के मध्य सुना जा सकता है। —सिद्धान्ती

वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर (जिला अम्बाला)

(१) पूज्य श्री स्वामी सत्यानन्द जी सचालक आश्रम मे वापस पहुच चुके हैं। (२) श्रीमदृदयानन्दोपदेशक विद्यालय की पढाई का कार्य नियम पूर्वक चल रहा है। जो विद्यार्थी प्रविष्ट होना चाहें वे नियमावली मगवा कर निश्चय करके आ जावे। प्रवेश शुल्क ३५ रु० है। निवास, बिजली, पानी तथा भोजन का प्रबन्ध आश्रम की ओर से है। यहा शास्त्री तक शिक्षा नि शुल्क है। अध्यापन कार्य क लिये एक योग्य विद्वान चाहिये, जो प्राज्ञ, विशारद तथा शास्त्री क विद्यार्थियो को पढा सके। इच्छुक सज्जन आश्रम से पत्र व्यवहार करें। डा० राजारामसिंह अधिष्ठता

शोक समाचार

आर्यसमाज पठानकोट के प्रतिष्ठित सभासद श्री ला० सोमराज जी की १२ वर्षीय कन्या ६ दिसम्बर रात्री के १० बजे जब कि उत्सव हो रहा था, अपने घर पर खेलती हृदय गति रुक जाने से तत्काल स्वर्ग सिधार गई। खेद की बात है इससे पूर्व भी श्री ला० जी के तीन बच्चे इसी तरह क्षण भर के अन्दर ही गत वर्षों मे स्वर्ग सिधार चुके हैं। ईश्वर उनको इस महान् कष्ट को सहन करने की शक्ति दें। उनके इस दु ख मे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब सवेदना प्रकट करती है। वेदप्रचाराधिष्ठाता

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख्य पत्र

> (प्रश्न) जो किसी का एक ही पुत्र वा पुत्री हो वह दूसरे वर्ण में प्रविष्ट हो जाय तो उसके मा बाप की सेवा कौन करेगा और वंशच्छेदन भी हो जायगा इसकी क्या व्यवस्था होनी चाहिये। (उत्तर) न किसी की सेवा का भङ्ग और न वंशच्छेदन होगा क्योंकि उनको अपने लड़के-लड़कियों के बदले स्ववर्ण के योग्य दूसरे सन्तान विद्यासभा और राजसभा की व्यवस्था से मिलेंगे इसलिये कुछ भी अव्यवस्था न होगी ॥
>
> —सत्यार्थप्रकाश

वर्ष २ अंक ४ } १४ पौष वि० २०२६, दयानन्दाब्द १४५ तदनुसार २८ दिसम्बर १९६९ रविवार, सृष्टि सं०-१९६०८५३०६९ { वार्षिक शुल्क स्वदेश में—१० रु० ,, ,, विदेश में—२० रु० एक प्रति का मूल्य ००—४० पैसे

सम्पादक—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री पूर्व लोकसभा सदस्य

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का निर्वाचन पृष्ठ २ पर

वेदमन्त्रार्थ-प्रवचन

पुनरस्य सूर्यलोकस्य गुणा उपदिश्यन्ते ॥

फिर भी सूर्य्य लोक के गुणों का उपदेश अगले मन्त्र में किया है।

वि सुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद् गभीरवेपा असुरः सुनीथः ।
क्वे३दानीं सूर्यः कश्चिकेत कतमां द्यां रश्मिरस्या ततान ॥
ऋ० १.३५.७ ॥

पदार्थः—(वि) विविधार्थे (सुपर्णः) शोभनपतनशीला रश्मयो यस्य (अन्तरिक्षाणि) अन्तरिक्षस्थानि सर्वाणि भुवनानि (अख्यत्) व्याख्यपति प्रकाशयति (गभीरवेपाः) गभीरो- [illegible] सूर्य्यादिके पृष्ठे एवोत्तिष्ठतीत्युत। असुषु प्राणेषु रमते वा (सुनीथ) सुष्ठु नीथाः पदार्थप्राप्तयो यस्मात् सः (क्व) कुत्र (इदानीम्) अस्मिन् समये वर्तमानायां रात्रौ (सूर्यः) (कः) विद्वान् (चिकेत) केतति जानाति (कतमाम्) बहूनां पृथिवीनां मध्ये काम् (द्याम्) द्योतनात्मिकाम् (रश्मिः) ज्योतिः (अस्य) सूर्यस्य (आ) समन्तात् (ततान) तनोति विस्तृ-[illegible]

अन्वयः—हे विद्वन् यथाऽसुरो गभीरवेपाः सुनीथः सुपर्णोऽस्य रश्मि-रन्तरिक्षाणि व्यख्यद्विख्यापयति प्रकाशयति तेन रश्मिसमूहेन युक्तः सूर्यः क्वेदानीं क्व वर्त्तते। एतत्कश्चि-त्को जानाति। कतमां द्याम् [illegible] सूर्यस्य रश्मिराततानैतदपि कश्चि-देव। कश्चिदेव जानाति न तु सर्वे [illegible] ॥

भावार्थः—अत्र वाचकलुप्तो-पमालङ्कारः। यदा भूगोलो भ्रमणेन सूर्यप्रकाशाच्छादनकारमन्धकारं जनयति [illegible] पृच्छन्ति [illegible] सूर्यः क्व गत इति [illegible] समाधानम्। पृथिव्या अपरे पृष्ठे- स्तीति [illegible] सूर्य- [illegible] अस्मिन् लोके ये [illegible] एवं [illegible] इति ॥

पदार्थः—हे विद्वज्जन जैसे यह सूर्यलोक जो (असुर.) सबके लिये प्राणदाता अर्थात् रात्रि में सोये हुओं को उदय के समय चेतनता देने (गभीरवेपाः) जिस का कंपन [illegible] (सुनीथः) उत्तम प्रकार से पदार्थों की प्राप्ति कराने और (सुपर्णः) उत्तम पतन-स्वभाव किरणयुक्तसूर्य (अन्तरिक्षाणि) अन्तरिक्ष मे ठहरे हुए सब लोकों को (व्यख्यत्) प्रकाशित करता है (इदानीम्) इस वर्त्तमान समय रात्रि में (क्व) कहां है। इस बात को (कः) कौन (चिकेत) जानता तथा (कतमाम्) बहुतों में किस (द्याम्) प्रकाश को (अस्य) इस सूर्य्य के (रश्मि) किरण (आततान) व्याप्त हो रहे हैं। इस बात को भी कौन जानता है अर्थात् कोई-कोई जो विद्वान् हैं वे ही जानते हैं सब साधारण पुरुष नहीं इसलिये सूर्यलोक का स्वरूप और गति आदि को तू जान ॥

भावार्थः—इस मन्त्र में वाचक-लुप्तोपमालङ्कार है। जब यह भूगोल अपने भ्रमण से सूर्य्य के प्रकाश का आच्छादन कर अन्धकार करता है तब साधारण मनुष्य पूछते हैं कि अब वह सूर्य्य कहां गया उस प्रश्न का उत्तर से समाधान करे कि पृथिवी के दूसरे पृष्ठ में है जिस का जानना अति सूक्ष्म है जैसे यह सूर्य मनुष्यों से जाना नहीं जाता वैसे ही महाबल मनुष्यों का आशय भी अविद्वान् लोग नहीं जान सकते।

—(महर्षि दयानन्द भाष्य)

श्री वीरेन्द्र आदि के जालन्धर के दोनों अभियोग खारिज

श्री बख्शीशसिंह सब-जज जालन्धर का निर्णय

जालन्धर २१-१२-६९, श्री वीरेन्द्र आदि की ओर से श्री बख्शीशसिंह सब-जज जालन्धर के न्यायालय में प्रो० रामसिंह जी आदि के विरुद्ध दो अभियोग गत वर्ष से चल रहे थे। एक अभियोग के विरुद्ध उन्होंने श्री डी० आर० सैनी अतिरिक्त सेशन जज जालन्धर के न्यायालय मे अपील करके २५-२-६९ को प्रो० रामसिंह जी आदि के विरुद्ध एक अस्थायी निषेधाज्ञा भी प्राप्त की थी जिसका श्री वीरेन्द्र स्थान स्थान पर प्रचार करते रहे, परन्तु श्री सुखदेवसिंह सेशन जज जालन्धर ने अपने निर्णय दि० १४-११-६९ द्वारा उसे महत्वहीन कर दिया। हैदराबाद आर्य महासम्मेलन के निश्चय दि० ८-११-६८ के अनुसार महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेशानुसार दोनों पक्षों ने अपने अपने अभियोग वापस लेने के प्रार्थना पत्र महात्मा जी को मार्च ६९ को दिये। परन्तु श्री वीरेन्द्र आदि ने उसे वापस लेने में आनाकानी की। १७-१२-६९ तथा २०-१२-६९ को दोनों पक्षो के वकीलों की बहस सुनने के बाद २०-१२-६९ को श्री बख्शीशसिंह सब-जज ने दोनों अभियोग खारिज कर दिये। उसके साथ ही श्री सैनी की तथाकथित निषेधाज्ञा भी समाप्त हो गई और अब उन द्वारा हाई कोर्ट चण्डीगढ में किया अभियोग भी स्वयमेव ही समाप्त हो जावेगा। स्मरण रहे कि महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती तथा महात्मा आनन्द भिक्षु जी की बार-बार प्रेरणा पर भी उपरोक्त अभियोग श्री वीरेन्द्र आदि ने वापस नहीं लिये थे, जिस कारण उन्होंने निराश होकर आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब का पूर्ण प्रबन्ध व नियन्त्रण प्रो० रामसिंह जी और उनकी अन्तरंगसभा को सम्भाल दिया था और स्वयं वेदप्रचार के लिये विदेश चले गये। ●

पंजाब, हरयाणा हाई कोर्ट चण्डीगढ में श्री वीरेन्द्र की याचिका अस्वीकार

रोहतक में सभा की २१-१२-६९ की बैठक पर रोक लगाने से इन्कार

याचिका डिसमिस

नई दिल्ली २२-१२-६९, श्री वीरेन्द्र ने पंजाब हरयाणा हाईकोर्ट में ११-१२-६९ को एक याचिका द्वारा प्रार्थना की थी कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के निर्वाचन आदि के लिये रोहतक मे २१-१२-६९ को बुलाई बैठक पर रोक लगा दी जावे। इसकी सुनवाई १९-१२-६९ को जस्टिस पी० सी० पण्डित ने की। श्री वीरेन्द्र की ओर से श्री जगन्नाथ कौशल एडवोकेट तथा प्रो० रामसिंह जी की ओर से श्री आनन्द स्वरूप जी भूत-पूर्व एडवोकेट जनरल हरयाणा तथा श्री मनमोहनसिंह एडवोकेट उपस्थित हुए। दोनो पक्षों के वकीलो की बहस सुनने के बाद जज महोदय ने श्री वीरेन्द्र की याचिका अस्वीकार कर दी तथा याचिका खारिज कर दी। उसके उपरान्त छोटूराम कालेज आफ एजूकेशन रोहतक मे प्रो० रामसिंह जी की अध्यक्षता में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का निर्वाचन सफलता-पूर्वक सम्पन्न हुआ। ●

आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब का निर्वाचन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ

प्रो० रामसिंह जी पुनः सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित

श्री रामनाथजी भल्ला मंत्री बने

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की वार्षिक बैठक ५ वर्ष के बाद रविवार २१-१२-६९ को छोटूराम कालिज आफ एजूकेशन, रोहतक में प्रो० रामसिंह जी की अध्यक्षता में आरम्भ हुई। इससे पूर्व गत वर्षों में पांच बार बैठक रखी परन्तु श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा निषेधाज्ञा लगवा देने तथा महात्मा आनन्द स्वामी जी के आदेशानुसार स्थगत करनी पड़ी थी। इसलिए यह बैठक बहुत महत्वपूर्ण समझी गई। उसमें ४६० प्रतिनिधि दिल्ली, पंजाब, हरयाणा, हिमाचल आदि प्रान्तों से उपस्थित हुए। उसमें वेद प्रचार, आर्यमर्यादा, उपदेशक विद्यालय, आर्यविद्या परिषद्, गुरुकुल कांगड़ी तथा कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून के सं० २०२५ के आय-व्यय व बैलेंस शीट तथा सं० २०२६ के २७ लाख रुपये के बजट स्वीकार हुए। इससे पूर्व के ४ वर्षों अर्थात् सं० २०२१, २०२२, २०२३ तथा २०२४ के आडिट हुए आय-व्यय तथा बैलेंस शीट जो सभा की बैठक न होने से पहले प्रस्तुत न हो सके थे वह भी स्वीकार हुए।

२. आगामी वर्ष के लिए निम्न प्रकार से अधिकारियों तथा अन्तरंग सभा के सदस्यों का निर्वाचन सर्वसम्मति से हुआ—

१. प्रो० रामसिंह जी, २२ बीडनपुरा, करौल बाग नई दिल्ली-५—प्रधान
२ ला० नवनीतलाल जी एडवोकेट, १६।१, निजामुद्दीन, ईस्ट नई दिल्ली-१३ उपप्रधान
३. महाशय भरतसिंह जी द्वारा, दयानन्द मठ, रोहतक—उपप्रधान
४. ला० लालचन्द जी सभरवाल एडवोकेट, जालन्धर—उपप्रधान
५ श्री रामनाथ जी भल्ला, ६-मीर दर्द रोड, नई दिल्ली—मंत्री
६. श्री तीर्थराज जी वैद्य, म्युनिसिपल कमिश्नर, मोगा (फिरोजपुर)—उपमन्त्री
७. श्री कपिलदेव जी शास्त्री, मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल भैसवाल (रोहतक)—उपमन्त्री
८. श्री जगन्नाथ जी, सी-६७ नानकपुरा, (साउथ मोती बाग) नई दिल्ली—कोषाध्यक्ष
९. श्री देवेन्द्रकुमार जी, पुरानी मंडी, नवांशहर (जालन्धर)—पुस्तकाध्यक्ष
१०. आचार्य भगवान् देवजी गुरुकुल झज्जर रोहतक—सदस्य
११. श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती, सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६—सदस्य
१२. श्री देसराज जी खन्ना, ४२ कोटला रोड, नई दिल्ली—सदस्य
१३ डा० रामस्वरूप जी प्रधान आर्यसमाज नया बांस, दिल्ली-६—सदस्य
१४. श्री रामलाल जी गुप्त, म्युनिसिपल कमिश्नर, ६ विक्रमपुरा जालन्धर—सदस्य
१५. आचार्य प्रियव्रत जी उप-कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी—सदस्य
१६. श्री विद्याभास्कर जी, सरीन इलैक्ट्रिकल स्टोर, चौड़ा बाजार, लुधियाना—सदस्य
१७. श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री, संसद् सदस्य, १० महादेव, रोड, नई दिल्ली—सदस्य
१८. श्री देशराज जी चौधरी, २४ दरियागंज, दिल्ली-६—सदस्य
१९. ला० दलीपसिंह आर्य, मिल ओनर, पानीपत—सदस्य
२०. श्री राजसिंह जी भल्ला, २७ घरा, मोती बाजार, चान्दनी चौक, दिल्ली—सदस्य
२१. श्री मदनगोपाल जी द्वारा आर्यसमाज, देवनगर, करोलबाग, दिल्ली-६—सदस्य
२२. श्री ज्ञानचन्दजी वानप्रस्थी, गुरुकुल मटिन्डू, पो० खरखोदा, (रोहतक)
२३. श्री शिवकर्ण जी आचार्य, आर्य हिन्दी महाविद्यालय चरखी दादरी (महेन्द्रगढ़)—सदस्य
२४. श्री धर्मपाल जी आर्य, नरवाना मण्डी (जीन्द)—सदस्य
२५. श्री पं० महेश्वर सिंह जी शास्त्री, जाट, हायर सैकेण्डरी स्कूल रोहतक—सदस्य
२६. श्री शिवदयालु जी प्रधान, आर्यसमाज पठानकोट—सदस्य
२७. श्री मास्सेन जी अग्रवाल, द्वारा आर्यसमाज होली मुहल्ला, करनाल—सदस्य
२८. श्री धर्मपाल जी आर्य, बी० ए० जूआं (रोहतक)—सदस्य
२९. श्री दरियाऊ सिंह जी, रोहना (रोहतक)—सदस्य
३०. श्री मांगेराम जी, एम०ए०, बांकनेर, दिल्ली—सदस्य
३१. श्री रणवीर सिंह जी चौहान, बी०ए० पो० बनवारी, गुडगांवा-सदस्य
३२. श्री उदमीराम जी अग्रवाल, एडवोकेट, नारनौल (महेन्द्रगढ़)—सदस्य
३३. ठा० भगवन्त सिंह जी, लोहारू, (हिसार)—सदस्य
३४. श्री वेदव्रत जी शास्त्री, दयानन्द मठ रोहतक—सदस्य
३५. पं० सोहन लाल जी, पो० लूखी (महेन्द्रगढ़) सदस्य

३. आर्य विद्या सभा के लिए निम्न महानुभाव निर्वाचित हुए—

१. आचार्य भगवान् देव जी, गुरुकुल झज्जर (रोहतक)
२. प्रि० होशयार सिंह जी,
३. डा० रणजीत सिंह जी, प्रिंसिपल गांधी स्मारक कालिज, हांसी (हिसार)
४. डा० रामस्वरूप जी, पिण्डी स्ट्रीट, लुधियाना
५. श्री लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित, प्रिंसिपल आर्य कालिज, पानीपत,
६. श्री पं० विष्णु मित्र जी शास्त्री, जाट हायर सेकेण्डरी स्कूल, रोहतक
७. श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री, संसद सदस्य, १० महादेव रोड, नई दिल्ली
८. श्री सत्यदेव जी शास्त्री, मंत्री, आर्यसमाज सोनीपत (रोहतक)
९. श्री सुखदेवजी शास्त्री, आसन (रोहतक)

४. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सीनेट के लिए निम्न महानुभाव मनोनीत हुए—

१. आचार्य भगवान् देव जी गुरुकुल झज्जर
२. श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री, १० महादेव रोड, नई दिल्ली
३. श्री लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित, प्रिंसिपल, आर्य कालिज, पानीपत
४. डा० रामस्वरूप जी, पिण्डी स्ट्रीट, लुधियाना
५. डा० रणजीत सिंह जी, प्रिंसिपल गांधी स्मारक कालिज, हांसी (हिसार)

५. आर्यसमाज गढ़शा होशयारपुर, जालन्धर के अधिकारियों ने जो सभा को आपतकाल में सहयोग दिया उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की गई तथा उनके उपस्थित अधिकारियों अर्थात् श्री प्रकाशचन्द्र बाहुरी, श्री योगेन्द्रपाल जी सेठ तथा श्री रामलाल जी गुप्त का परिचय कराया गया। ला० लालचन्द जी सभरवाल एडवोकेट, सभा उप-प्रधान ने अपने प्रयत्नों से जो सभा की रक्षा की उसके लिए सदन ने उनके प्रति हार्दिक आभार प्रदर्शित किया।

६. यह भी निश्चय हुआ कि यह सभा उसी सार्वदेशिक सभा को मानती है जिसके प्रधान प्रो० रामसिंह जी तथा मंत्री श्री महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री हैं। उक्त सार्वदेशिक सभा के लिए १५ प्रतिनिधि मनोनीत करने का पूर्ण अधिकार सभा प्रधान प्रो० रामसिंह जी को दिया गया।

७. प्रान्तीय न्याय सभा तथा राजआर्य सभा आदि के निर्माण का भी अधिकार सभा प्रधान जी को ही दिया गया।

८. एक प्रस्ताव द्वारा पंजाब में राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रसार के लिए बल दिया गया तथा राज्य सरकार से अनुरोध किया कि वह हिन्दी भाषा को प्रत्येक स्तर पर मान्यता प्रदान करें। अन्य प्रदेशों में भी राष्ट्र भाषा के प्रचार के लिए भारत सरकार से प्रार्थना की गई।

९ डी०ए०वी कालिज अबोहर में शरारती तत्वों द्वारा हवन कुण्ड की अपवित्रता करने तथा छात्राओं से दुर-व्यवहार करने के कुकर्मों की घोर निन्दा की गई तथा राज्य सरकार से अनुरोध किया गया कि वह सम्बन्धित व्यक्तियों को उचित दण्ड दे तथा भविष्य में शान्त वातावरण करने की घोषणा करें।

शान्ति पाठ के उपरान्त कार्यवाही ३।। बजे समाप्त हुई। ●

सम्पादकीय—

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का सफल अधिवेशन

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के भीतरी पक्ष विपक्ष के दुष्परिणाम स्वरूप कई वर्षों तक अधिवेशन बुलाया जाता रहा, परन्तु विपक्ष के द्वारा अदालतों से निषेध आज्ञा लेकर बन्द करवाया गया। इस वर्ष भी उसी भांति विपक्ष ने पंजाब हरयाणा हाईकोर्ट से निषेध आज्ञा लेने के लिये प्रार्थना पत्र दिया। परन्तु हाईकोर्ट द्वारा खारिज कर दिया गया और विपक्ष को अधिवेशन के स्थगित कराने की स्वीकृति नहीं दी गई। आर्यप्रतिनिधि सभा के ग्रामीण सदस्य प्रति वर्ष अधिवेशन में निमन्त्रण पाकर और समय पर अधिवेशन न होने की सूचना न मिलने पर निमन्त्रित स्थान पर पहुंचते रहे। विपक्ष ने इस प्रकार कई वर्ष आर्यबन्धुओं के हजारों रुपये मार्गव्यय में नष्ट कराये और काम छुड़वाया। इस बार भी जब सभा ने प्रतिनिधियों के पास एजण्डा भेजा, तब भी विपक्ष ने मिथ्याप्रचार किया कि इस बार भी अधिवेशन की आज्ञा नहीं मिलेगी, परन्तु सदा की भांति प्रतिनिधि महानुभावों ने उस मिथ्या प्रचार की परवाह नहीं की और यथा समय बहुत बड़ी संख्या में वार्षिक अधिवेषन में पहुंचे। पठानकोट से लेकर (गुड़गावां) तक के सदस्य बड़े उत्साह से सम्मिलित हुए और कई वर्षों के पश्चात् परस्पर मिलकर बड़े प्रसन्न और उत्साहित हुये। पंजाब और देहली के प्रतिनिधि सज्जन अपनी अपनी बसों द्वारा पहुंचे। सभी सदस्यों ने सभा की वास्तविक स्थिति का परिचय प्राप्त किया। मौसम बड़ा साफ रहा और छोटूराम कालिज रोहतक की छात्राओं के होस्टल के बीच के खुले मैदान में अधिवेशन हुआ।

श्रद्धेय प्रो० रामसिंह जी एम. ए. भारत विख्यात नेता को ही पुनः सर्वसम्मति और तालियां की गड़गड़ाहट के बीच आगामी वर्ष के लिये सभा का प्रधान चुना और उनको निर्वाचन के सब अधिकार दे दिये। अधिकारी तथा अन्तरङ्ग और विद्या सभा के सदस्यों की नाम सूची पृष्ठ २ पर दी जा चुकी है। इस वर्ष अधिकारियों तथा अन्तरङ्ग आदि सभाओं के सदस्यों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। यह सौभाग्य का चिह्न है। इस परिपाटी से नये-नये सदस्यों को सभा की नीति विधि का पता चलता रह सकता है। पंजाब, हरयाणा देहली के महानुभाव अधिकारी और अन्तरङ्ग सदस्य चुने गये। विपक्ष सदा भ्रान्ति फैलाता रहता था कि सभा पर हरयाणा के अपठित लोगों ने अधिकार किया हुआ है। अधिकारी ९ चुने जाते हैं। इस बार ९ अधिकारियों में ४ देहली राज्य के, ३ पंजाब राज्य के और २ हरयाणा राज्य के चुने गये हैं। इस निर्वाचन पर हरयाणा के आर्य बन्धु बड़े प्रसन्न थे। यह भी मिथ्या प्रचार फैलाया जाता था कि हरयाणा के जाट ही सब अधिकारों पर छाये हुये हैं। ९ अधिकारियों में केवल एक अधिकारी जाट है। यद्यपि आर्यसमाज के सामने बिरादरी का कुछ प्रश्न नहीं होता, परन्तु विपक्ष भ्रान्ति पैदा करता रहता है, अतः [illegible] छा से यह बात भी लिख दी गई है। सभा प्रधान जी ने सब प्रति[illegible] का हार्दिक धन्यवाद किया। जालन्धर के अड्डा होशियारपुर के [illegible] समाज के अधिकारी जो प्रतिनिधि रूप में पधारे, उन का सभी सदस्य महानुभावों ने हर्ष पूर्वक स्वागत किया, क्योंकि सभा के मुख्य कार्यालय की सम्भाल में उन्होंने सब प्रकार का योग दिया। अधिवेशन की सफलता पूर्वक समाप्ति के साथ सभी प्रतिनिधि परस्पर बड़े प्रेम से मिले और अपने-अपने स्थानों को लौट गये। रोहतक के आर्य भाइयों और उक्त कालिज के प्रोफेसर महानुभावों ने भोजन आदि सत्कार का उत्तम प्रबन्ध किया। सभा उन सभी के प्रति आभार प्रकट करती है।

"परमात्मा दया करे कि अगले वर्ष सभा अपने काम में और अग्रसर होकर वेदप्रचार की गति को तीव्र करे। ●

२—पंजाब सरकार और भारत सरकार ध्यान दें

पंजाब राज्य में राज्य बन्द के दिवस पर अनेक स्थानों में बन्द नहीं हुआ, डी. ए. वी. कालिज अबोहर में कुछ सिख छात्रों ने गुण्डा गर्दी की और पवित्र यज्ञ वेदी को भ्रष्ट करने की दुस्साहस किया। इस पर विवाद खड़ा हो गया। राज्य प्रशासक और अधिकारी भी पहुंचे। ५ प्रतिष्ठित सज्जनों की एक समिति को दोनों पक्षों ने स्वीकार किया। कालिज के प्रिंसिपल श्री नारायणदास जी ग्रोवर बहुत सुयोग्य तथा सुलझे हुये असाम्प्रदायिक मनोवृत्ति के विद्वान् हैं। हम पंजाब सरकार से निवेदन [illegible] हैं कि साम्प्रदायिकता रोग एक पक्ष को ही नहीं उभय पक्ष को नष्ट कर सकता है, अतः सोच समझ कर बिगड़ती स्थिति को सम्भाले। यह एक कालिज का मामला नहीं, अपितु सारे आर्यसमाज का है। भारत सरकार को भी इस सम्बन्ध में उचित पग उठाना अनिवार्य है। अन्यथा इस के परिणाम अच्छे नहीं रह सकेंगे। आशा है दोनों सम्प्रदायों के नेता तथा सरकार भविष्य में ऐसी दुर्घटना न होने पावे-ऐसा कार्य करेंगे। ●

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री

गुरुकुल कांगड़ी के बैंक अकाउण्ट बन्द के सम्बन्ध में

श्री प० दीनदयालु जी शास्त्री का असत्य प्रचार

(पं० प्रियव्रत वेदवाचस्पति उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय)

आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के चुनाव को लेकर चल रहे विवाद और झगड़ों में गुरुकुल कांगड़ी को नहीं घसीटना चाहिए था। गुरुकुल को इन झगड़ों से अलग रखा जाना चाहिए था। गुरुकुल का और उसके कर्मचारियों का इन झगड़ों से कोई सम्बन्ध नही है। परन्तु दीवान रामशरण दास जी और उनके साथियों ने जान बूझ कर गुरुकुल कांगड़ी को भी इन झगड़ों में घसीट लिया। इन लोगों के कहने से श्री पं० दीनदयालु जी शास्त्री ने बैंकों को लिख कर गुरुकुल के अधिकारियों के लिए बैंक एकाउण्ट का आपरेशन रुकवा दिया और इस प्रकार बैंकों से गुरुकुल के लिए रुपया मिलना बन्द करवा दिया, जिससे गुरुकुल के अधिकारियों के लिए गुरुकुल के संचालन में बेहद कठिनाईयां पैदा हो गई हैं। जिनसे गुरुकुल को भारी नुकसान पहुंच रहा है और भविष्य में और भी अधिक नुकसान पहुंचने का खतरा है। जब गुरुकुल के अधिकारियों ने पजाब नेशनल बैंक के उच्च अधिकारियों से मिलकर उन्हे गुरुकुल को रुपया देने के लिए तैयार कर लिया तो श्री प० दीनदयालु जी शास्त्री ने रुड़की के मुसिफ के यहां गुरुकुल के अधिकारियों और पंजाब नेशनल बैंक पर मुकदमा चला दिया, जिसमें मुसिफ से प्रार्थना की गई कि गुरुकुल के पुराने चले आ रहे अधिकारियों पर रोक लगा दी जाय तथा बैंक को गुरुकुल के अधिकारियों को रुपया देने से रोक दिया जाय। मुंसिफ महोदय ने मुकद्दमे का फैसला होने तक यथा-पूर्व स्थिति रहने का अंतिम फैसला दिया। इसके आधार पर गुरुकुल के अधिकारियों ने बैंक से मांग की कि वह यथापूर्व गुरुकुल के पुराने अधिकारियों को रुपया निकालने दे। बैंक को कुछ संदेह था, अतः बैंक ने मुसिफ महोदय से प्रार्थना की कि वे यथापूर्व स्थिति का अर्थ स्पष्ट करें। मुसिफ महोदय ने ८-११-६९ को यथापूर्व स्थिति का अर्थ स्पष्ट करते हुए आदेश दिया कि प० दीनदयालु जी शास्त्री द्वारा मुकद्दमा दायर करने की तिथि से पहिले गुरुकुल के एकाउण्ट के जो आपरेटर थे, वे ही एकाउण्ट को आपरेट करते रहें। मुसिफ के इस आदेश के विरुद्ध श्री पं० दीनदयालु जी शास्त्री ने सहारनपुर के जिला न्यायाधीश से अस्थायी निषेधाज्ञा ले ली और इस प्रकार गुरुकुल के लिए बैंक खुलने की जो आशा बंधी थी, उसे फिर मिटा दिया। श्री पं० दीनदयालु शास्त्री गुरुकुल के लिए बैंक बन्द रखवाने को हर कोशिश करते हैं। मुसिफ महोदय के ८-११-६९ के उक्त आदेश के बाद श्री शास्त्री जी के मन में विचार आया कि बैंक से फार्मेसी का रुपया निकलवा लिया जाय। इसके लिए फार्मेसी की चेक-बुक पर मेरे और श्री प० धर्मपाल जी विद्यालंकार के हस्ताक्षर कराने के लिए १३-११-६९ को शास्त्री जी ने अपना आदमी हमारे पास भेजा। हमने चैकों पर हस्ताक्षर कर दिए। बाद में हमें पता चला कि श्री शास्त्री जी ने तो १३-११-६९ को ही सहारनपुर के जिला न्यायधीश से मुसिफ के ८-११-६९ के आदेश के विरुद्ध निषेध आज्ञा ले ली है। इस पर मैंने १४-११-६९ को स्थानीय पंजाब नेशनल बैंक को लिख दिया कि उक्त चैकों को मेरा अगला पत्र मिलने तक कैश न करे। श्री शास्त्री जी यह असत्य प्रचार कर रहे हैं और "वीर अर्जुन" आदि कई पत्रों में उन्होंने ऐसा वक्तव्य भी प्रकाशित किया है कि बैंक को मेरे द्वारा उक्त पत्र लिखे जाने के बाद उन्होंने सहारनपुर से निषेधाज्ञा प्राप्त की। उनका यह कहना सरासर मिथ्या है। मैंने बैंक को उक्त पत्र १४-११-६९ को लिखा था। श्री शास्त्री जी ने १३-११-६९ को सहारनपुर से निषेधाज्ञा ले ली थी। उन द्वारा निषेधाज्ञा ले लेने के बाद मैंने बैंक को उक्त पत्र लिखना आवश्यक समझा। मुझे श्री शास्त्री जी के इस व्यवहार में कुछ चालाकी प्रतीत हुई। वे ऐसा सरासर मिथ्या प्रचार क्यों कर रहे हैं, यह समझ में नही आता है। शायद इसका कारण यह है कि उन्होंने गुरुकुल के अधिकारियों के लिए बैंक तो बन्द करवा ही रखे हैं, लोग उनसे पूंछते हैं कि आप गुरुकुल के स्नातक होकर गुरुकुल के लिए ऐसा विनाशकारी कार्य क्यों कर रहे हैं, तब अपनी सफाई के लिए उन्हें इस प्रकार की मिथ्या बातों का सहारा लेना आवश्यक प्रतीत होता है। श्री शास्त्री जी से ऐसे व्यवहार की आशा नहीं थी। ●

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वार्षिक अधिवेशन २१ दिसबम्र ६९ रोहतक की झांकिय



१—उपस्थित प्रतिनिधि महानुभावो का प्रथम दृश्य पीछे श्री जगन्नाथ जी कोषाध्यक्ष दिखाई दे रहे हैं।



५ आर्यसमाज के प्रमुख नेता आचार्य भगवान्देव जी प्रतिनिधियों को वेद प्रचार के कार्य को उन्नत करने की प्रेरणा कर रहे हैं। मच पर सभा-प्रधान प्रो० रामसिंह जी श्री नवनीतलाल एडवोकेट आदि बैठे हुये हैं।



२—प्रतिनिधि सदस्यो का दूसरा दृश्य



६ दिल्ली के प्रसिद्ध आर्य एडवोकेट श्री नवनीतलाल जी उच्चतम-न्यायालय सभा उपप्रधान प्रतिनिधियों को आर्यसमाज का कार्य आगे बढ़ाने का सन्देश दे रहे हैं।



३ श्री रघुवीरसिंह शास्त्री गत अधिवेशन की सम्पूण कार्यवाही पढ रह हैं। मच पर आचार्य प्रियव्रत जी उपकुल-पति गुरुकुलकागडी विश्वविद्यालय प्रो० रामसिंह जी सभा-प्रधान प० धर्मपाल जी विद्यालकार आदि दिखाई दे रहे हैं पीछ की ओर श्री आचाय भगवान्देव जी तथा सभा उपप्रधान महाशय भरतसिंह, परामर्श कर रह हैं।



७ वार्षिक चुनाव के अवसर पर श्री जगदेवसिंह सिद्धान्ती शास्त्री सम्पादक आर्यमर्यादा प्रधान पद के लिये श्री प्रो० रामसिंह जी का नाम प्रस्तुत कर रहे हैं। मच पर, श्री रघुवीरसिंह शास्त्री ससत्सदस्य श्री राम-नाथ जी भल्ला प्रो० रामसिंह जी आदि दिखाई दे रहे हैं।



→ ४ सभा के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर की रक्षा का श्रेय वहा के प्रमुख आर्यसमाज अड्डाहोशियारपुर की है। इस अवसर पर प्रतिनिधियो ने श्री प्रकाशचन्द्र बाहरी प्रधान, श्री योगेन्द्रपाल सेठ मन्त्री तथा श्री रामलाल गुप्त कार्यालय अधिष्ठता का स्नेह भरा स्वागत किया।

उपासना-प्रदीप—८

[कुछ शंकाओं का समाधान]

(पं० जगत्कुमार जी शास्त्री "साधु सोमतीर्थ" देहली)

१—वर्तमान युग के महान् वेदोपदेशक महर्षि दयानन्द जी ने ओङ्कारोपासना-विज्ञान को पुनः जीवित और प्रचलित करने के लिये अपने लेखों और उपदेशों में बड़ा पुरुषार्थ दर्शाया है। यदि महर्षि जी के सभी अनुयायी यत्न करेंगे, तो ओङ्कारोपासना का प्रसार होने पर, सम्पूर्ण विश्व में एकता और सुख शान्ति का प्रसार हो सकेगा। उन का आदेश है :—

"ओ३म्" इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्यप्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। [सत्यार्थ-प्रकाश, सातवां समुल्लास]

२—महर्षि दयानन्द जी ने ईश्वरके सम्यक्-ध्यान और ओङ्कारोपासना का अनुष्ठान करने के लिये ही अपनी "वैदिक-सन्ध्या-विधिः" नामिका भक्तिवाद-प्रवेशिका रची थी। उस की अनुष्ठान विधि ऐसी है :—

"एकान्त और शान्त स्थान में शुद्ध आसन पर बैठकर सर्वप्रथम गायत्री-मन्त्र से शिखा-बंधन, फिर कम से कम तीन प्राणायाम, फिर आचमन-मन्त्र से तीन आचमन, फिर इन्द्रिय-स्पर्श, इन्द्रिय-मार्जन और प्राणायाम का विशेष अभ्यास, फिर अघमर्षण-मन्त्रों से पाप-विमोचन और सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय का विचार, फिर तीन आचमन, फिर गायत्री-मन्त्र का पाठ और विचार, फिर मनसा-परिक्रमा के छः मन्त्रों का पाठ, विचार, ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध और प्राणिमात्र के प्रति वैर त्याग, फिर उपस्थान के चार मन्त्रों से ईश्वर की सत्ता और समीपता की अनुभूति, फिर गायत्री मन्त्र के पाठ और अनुष्ठान अर्थात् वारम्वार पाठ और अर्थ-विचार से बुद्धि का संवर्धन, संशोधन और ईश्वरी-प्रेरणाओं का अधिग्रहण, फिर कम से कम आधे घण्टे तक प्रणव-जप अर्थात् "ओ३म्" नाम का अर्थ विचार पूर्वक जप। फिर निम्नलिखित आर्ष-वाक्य द्वारा समर्पण-विधिः, "हे ईश्वर ! दयानिधे !! भवत्कृपयानेन जपोपासनादि-कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।"—फिर नमस्कार-मन्त्र का पाठ, विचार और सन्ध्या-कर्म की समाप्ति।

३—प्रश्न—इस आर्ष-प्रार्थना वाक्य—"हे ईश्वर ! दयानिधे !" आदि की रचना किसने की है ?

उत्तर—महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने।

४—प्रश्न—इस में ओङ्कार-जप का विधान कहां है ?

उत्तर—इस वाक्य में "जप" शब्द मौजूद है। शास्त्रीय-विधान के अनुसार जप केवल "ओ३म्" नाम का ही होता है और किसी नाम का नहीं। यथा—

तस्य वाचकः प्रणवः। तज्जपस्तदर्थभावनम्।

[योग-दर्शन—२।२७, २८]

ओ३म् (प्रणव) ईश्वर का नाम है।

ओ३म् नाम का जप और अर्थ विचार कर्त्तव्य है।

५—प्रश्न—क्या सन्ध्या-मन्त्रों का पाठ ही जप नहीं है ?

उत्तर—नहीं।

६—प्रश्न—क्या सन्ध्या-कर्म में जप आवश्यक है ?

उत्तर—हां, इस जप के साथ ही तो सन्ध्या का "सन्ध्या" नाम सार्थक होता है।

७—प्रश्न—क्या यह जप दोनों समय की सन्ध्या में कर्त्तव्य है ?

उत्तर—हां।

८—प्रश्न—यदि सन्ध्या-मन्त्रों का पाठ न किया जाये और केवल "ओ३म्" नाम का जप ही किया जाये, तो कैसा है ?

उत्तर—ओङ्कार-जप जैसे उत्तम कर्म को आरम्भ करने के लिये—सम्यक्-ध्यान, सम्यक्-उपासना, और ओङ्कार की अनुभावना करने के लिये—पूरी-पूरी तैयारी पहले ही होनी चाहिये। सन्ध्या-मन्त्रों का पाठ अनुक्रम और उन-उन मन्त्रों से जो आचमन, इन्द्रिय-स्पर्श, मार्जन, प्राणायाम आदि कर्म किये जाते हैं, वे सब तो ओङ्कार-जप की तैयारी स्वरूप ही हैं।

९—प्रश्न—क्या प्राचीनतम काल में भी यही महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्दिष्ट वैदिक-सन्ध्या प्रचलित थी ?

उत्तर—प्राचीनतम काल की कोई सन्ध्या पद्धति अब सुलभ नही है। वेदों के अन्य मन्त्रों का विनियोग भी सन्ध्या-कर्म में सम्भव है। किन्तु महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की व्यवस्था वेदों और ध्यान-योग के उपासना विषयक सिद्धान्तों के अनुसार है। अतः यह हम सब के लिये ही सर्वथा मान्य है। [आश्वलायन गृह्य सूत्रों में यही पद्धति देखी जा सकती है।
—सम्पादक]

१०—प्रश्न—उपासना आदि महत्वपूर्ण कर्मों में तो प्रत्येक उपासक को स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये। फिर यह बन्धन क्यों ?

उत्तर—यह बंधन नहीं, यह तो प्रशिक्षण और मार्ग-दर्शन है। ऐसा आर्ष-विधान ही मानने योग्य होता है। इस अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य के लिये साधारण मनुष्यों द्वारा संकलित पद्धतियां प्रामाणिक नहीं मानी जा सकतीं। क्योंकि साधारण मनुष्यों की रचनाओं में तो भूल, चूक, प्रमाद, राग, द्वेष, कुसंस्कार और पूर्वाग्रह आदि त्रुटियों का होना भी सम्भव है। तथा भिन्न-भिन्न पद्धतियों से साम्प्रदायिकता के बढ़ने, उच्छृङ्खलता होने और संघ-शक्ति के टूटने की भी सम्भावना है।

११—प्रश्न—क्या सन्ध्या-मन्त्रों के बिना केवल "ओ३म्" नाम का जप करने में कोई दोष है ?

उत्तर—नहीं, दोष तो नहीं है। बिना सन्ध्या-मन्त्रों के पाठ के भी जप हो तो सकता है, परन्तु आवश्यक तैयारी के अभाव में वह कम लाभदायक ही रहेगा। अतः मन्त्र-पाठ, विचार और आचमन, प्राणायाम आदि पूर्वक ही ओंकार-जप करना उत्तम है।

१२—प्रश्न—ओंकार-जप गायत्री-मन्त्र के बाद ही क्यों किया जाये ?

उत्तर—उपरोक्त आर्ष-प्रार्थना-वाक्य में जो "अनेन" पद प्रयुक्त हुआ है, वही इस सद्यः सम्पन्न कार्य का नियामक-निर्देशक है। इससे ध्वनित होता है कि पूरी तैयारी कर लेने और सविता-देव की प्रेरणा से बौद्धिक प्रेरणा और विकास को प्राप्त करके ही ओंकार का जप किया जाये।

१३—प्रश्न—श्वेताश्वतरोपनिषद् में तो प्रथम सृष्टि की उत्पत्ति का विचार है। क्या उपासना क्रम में यह भी आवश्यक है ?

उत्तर—हां, आवश्यक है। वैदिक-सन्ध्या-पद्धति में भी "अघमर्षण" नामक प्रकरण ऐसा ही है। सृष्टि-रचना का विचार ईश्वर-सिद्धि, ईश्वरीय महिमा के निदर्शन और पाप-निवारण में विशेष रूप से सहायक होता है।

१४—प्रश्न—वैदिक-सन्ध्या-पद्धति के अन्त में जो नमस्कार-मन्त्र और ईश्वर के प्रति नमस्कार विधान है, क्या निराकार ईश्वर के प्रति वैसा नमस्कार और आत्म-समर्पण सम्भव है ?

उत्तर—यह एक मानसिक क्रिया है। वहां नमस्कार का अर्थ आत्म-समर्पण भी है, ईश्वर और उस के गुण, कर्म, स्वभाव का प्रगाढ़ अर्थात् तीव्रतम अनुभावन भी। अपनी अल्पज्ञता और सभी मानवी-भाषाओं की असमर्थता वा दरिद्रता के कारण उपासकों के पास ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण, आत्म-निवेदन और उसके अनुभावन का दूसरा कोई मार्ग ही नहीं है। यह विधान उचित भी है, निर्दोष भी और आवश्यक भी। ओंकार-जप के बाद आर्ष प्रार्थना-वाक् के उच्चारण पूर्वक ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण करते हुए ही उपासकों को अपना-अपना प्रतिवार का वैदिक-सन्ध्या-अनुष्ठान और जप समाप्त करना चाहिये। "ओ३म्" नाम के अर्थों का बोध विस्तार पूर्वक किसी पुस्तक की सहायता या किसी जानकार के सहयोग से प्राप्त कर लेना चाहिये। ●

चुनौती करो, आर्य ! स्वीकार

(श्री सूर्यकुमार पाण्डेय, ५३ छोटा चांद गंज, लखनऊ-७)

आज विश्व का कण-कण करता, देखो, हाहाकार।
चुनौती करो, आर्य ! स्वीकार ॥
पनप रहे हैं विषम भाव अब, सोये हो, जागोगे तुम कब ?
बाट जोहता सकल जगत् ही, दो नवीनतम प्यार।
चुनौती करो आर्य ! स्वीकार ॥
सब बातों में ही फैला भ्रम, इसको बस तुम कर सकते कम;
क्योंकि तुम्हीं में ऐसी क्षमता, कर सकते उपकार।
चुनौती करो, आर्य ! स्वीकार ॥
सुनो जग भर की करुण पुकार। चुनौती करो, आर्य ! स्वीकार ॥ ●

संसार में अवैदिक मतों के उद्भव के प्रमुख कारण

(श्री सत्येन्द्रसिंह एम. ए., बामपुर)

आस्तिक जगत् में प्रचलित मतों की सख्या कोई कम नहीं है। बाह्य रूप से सभी मत बड़ी गोल माल और अच्छी लगने वाली बातों से पूर्ण हैं, परन्तु आन्तरिक रूप से उन मतों के सिद्धान्त परस्पर विरुद्ध हैं और साम्प्रदायिकता एवं कलह का कारण हैं। विभिन्न मतों की पुस्तकों के स्वाध्याय से एक निष्पक्ष पाठक इसी निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि ससार के सभी मतों में जो "चोरी न करना, सत्य बोलना, परोपकार आदि" मनुष्य मात्र की भलाई को अच्छी बातें हैं, वे सब वैदिक धर्म से ली गई हैं और उन बातों के प्रचार के लिए किसी भी मत की स्थापना की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि वे बातें तो सृष्टि के आरम्भ से वैदिक धर्म में ही विद्यमान हैं। इन सामान्य अच्छी बातों के अतिरिक्त मतों में जो मत विशेष की निजी बात हैं उनके कारण ही मतों की स्थापना हुई है। वे बातें वेद विरुद्ध हैं और स्थान-स्थान पर बुद्धि विरुद्ध एवं मानवतावादी दृष्टिकोण के भी प्रतिकूल हैं। इन्हीं बातों पर मतों की स्थापना हुई है। जिन-जिन कारणों से इन मतों की स्थापना हुई है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

१—**अज्ञान**—वैदिक धर्म गहन स्वाध्याय की वस्तु है। वेद को भाषा स्थान-स्थान पर आलंकारिक है, भी जिसको स्वाध्यायशील विद्वान् जन ही समझ सकते हैं, अन्य नहीं। बाईबिल और कुरान शरीफ में जो मूल कहानी इस प्रकार दी जाती है कि एक ज्ञान का वृक्ष था। उसका फल खाना वर्जित था। आदम की इच्छा तो उस वृक्ष का फल खाने की नहीं थी परन्तु हौव्वा ने उसका फल तोड़कर खा लिया इत्यादि। यह सारी कहानी एक वेद मन्त्र का अर्थ न समझ सकने के कारण उन मतों के सस्थापकों ने गढ़ी है। मन्त्र इस प्रकार है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति॥

मन्त्र का साधारण सा अर्थ इस प्रकार है कि सुन्दर पंखों वाले, सदा साथ रहने वाले, एक दूसरे के मित्र, दो पक्षी (आत्मा और परमात्मा) हैं। दोनों एक ही वृक्ष (प्रकृति) पर बैठे हैं। दोनों में से एक पक्षी (जीवात्मा) तो उस वृक्ष के सुस्वाद फलों को खूब खाता है किन्तु दूसरा पक्षी नहीं खाता, वह केवल मात्र देखता ही रहता है। ये दो पक्षी हैं—जीवात्मा और परमात्मा। वृक्ष है प्रकृति। जीवात्मा कर्मफलों का उपभोग करता है। परमात्मा केवल साक्षी मात्र ही रहता है। अज्ञानवश इस मंत्र के अर्थ का अनर्थ करके ईसाई और इस्लाम मत खड़े किये गये हैं।

"सलिलस्य पृष्ठे" वाले वेद मंत्र का अर्थ न समझने के कारण ही बाईबिल में लिखा है कि परमेश्वर का आत्मा जल पर तैरता था। पंच महायज्ञ का ठीक-ठीक अभिप्राय न समझने के कारण ही इस्लाम में पांच समय की नमाज का विधान है। इस प्रकार के और बहुत से वैदिक मन्तव्य लोगों के अज्ञानवश बिगड़ते-बिगड़ते मतों के रूप में परिणत हो गये। प्रत्येक मत की सब बातों को देखने पर और गहराई से सोचने पर यह पता लगता है कि उस मत के उद्भव के कारणों में एक कारण यह भी है कि मत प्रवर्त्तक में अज्ञान (सृष्टि के आरम्भ से प्रचलित वैदिक मन्तव्यों को न समझ सकना) विद्यमान था।

२—**स्वार्थ**—स्वार्थपरता भी मतों के उद्भव का मूल कारण रही है। मूर्त्ति पूजा के मूल में स्वार्थ की भावना निहित है। हम वैदिक धर्मियों का कहना यह है कि निर्जीव मूर्तियों की पूजा करना कोई बुद्धिमत्ता का कार्य नहीं है। होना यह चाहिए कि हम सब माता, पिता और आचार्य जो कि जीवित (मूर्त्तियां) हैं उनकी पूजा (आदर सत्कार) करें और अन्न तथा वस्त्रों से उनकी सेवा करें। परन्तु स्वार्थ में लिप्त मठाधीशों का कहना यह है कि चाहे कोई माता, पिता और आचार्य की सेवा करे या न करे परन्तु उनके द्वारा उनके मन्दिरों में स्थापित मूर्तियों पर अवश्य भेंट पूजा (धन, अन्न, मिष्टान्न और वस्त्र) अर्पण करे। इस मान्यता में निहित स्वार्थ तो स्पष्ट है। यदि मठाधीश माता, पिता और आचार्य की पूजा (सेवा, सत्कार) करने का उपदेश करने लगे तो उनके पल्ले तो कुछ भी न पड़ेगा। इसलिए मूर्त्ति पूजा— प्रधान मत प्रचलित हुए और प्रवर्त्तकों ने यह मान्यता प्रचलित कर दी कि जिस मूर्ति की मन्दिर में स्थापना करके वे प्राण प्रतिष्ठा कर दें उसकी ही सब प्रकार से पूजा उपासना करने में भक्तों का कल्याण है। मृतक पितृ-श्राद्ध की प्रथा का प्रचलन स्वार्थ परता का दूसरा उदाहरण है। वैदिकधर्म का आदेश यह है कि श्राद्ध करना चाहिए और जीवित माता पिता की सेवा सत्कार करना ही श्राद्ध है, मृतकों की कदापि नहीं। वेदज्ञ विद्वानों की भांति यदि मठाधीश या जन्मना अपने को ब्राह्मण कहने वाले लोग भी इस मान्यता का प्रतिपादन करने लगें तो उनके लिए तो घाटे का सौदा रहेगा। अपना भाग बिना कुछ कार्य किये ही प्राप्त करने के लिए उन्होंने यह मान्यता स्थापित कर दी कि चाहे कोई जीवित माता पिता को तो भोजन आदि की सेवा से तृप्त करे या न भी करे परन्तु मरणोपरान्त माता पिता और इनसे भी पूर्व के पूर्वजों का श्राद्ध जन्मना ब्राह्मणों को भोजन कराकर, धन तथा वस्त्र का दान देकर अवश्य करें। इससे अधिक स्पष्ट स्वार्थपरता मतों के मूल में और क्या हो सकती है? फलितज्योतिष, अवतारवाद का प्रचार भी स्वार्थ सिद्धि के लिए ही हुआ है। जिस प्रकार ईसाई और इस्लाम मतों के प्रादुर्भाव में अज्ञान सहायक सिद्ध हुआ उसी प्रकार पौराणिक मतों का मूल स्वार्थपरता है।

प्रमाद—जनसाधारण का प्रमाद भी अवैदिक मतों के प्रचार और प्रसार का एक प्रधान कारण है। यदि सब लोग स्वाध्यायशील, पुरुषार्थी और बुद्धिमान् होवें, तो स्वार्थी और अज्ञानी लोगों के भ्रमजाल में और उनके द्वारा प्रचलित मतों और वादों में कोई भी न फंसे। परन्तु जैसे-जैसे लोग प्रमादवश स्वाध्याय और प्रवचन के सिद्धान्त से परे हटते चले गये त्यों-त्यों बढ़ते हुए अज्ञान के वातावरण में स्वार्थी और दम्भी लोगों को अपनी प्रयोजन सिद्धि के लिए वेद-विरुद्ध मत खड़ा करने में सुविधा हो गई। आजकल आस्तिक लोगों में अधिकांश व्यक्ति सस्ते ढंग से ईश्वर प्राप्ति चाहते हैं। धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए वेदाध्ययन (विद्या-प्राप्ति), पुरुषार्थ और सदाचार का जो वैदिक मार्ग था, उसके स्थान पर मतवादियों ने अपनी-अपनी चालाकी के अनुसार सस्ता सा जादूगरी का सा ढौंग का मार्ग प्रचलित कर दिया। राधास्वामी मत, शैव और वैष्णव मत जनसाधारण के प्रमादवश ही फैले हैं। यदि कोई व्यक्ति एक बार वैदिक मान्यताओं को मोटे रूप में भी स्वाध्याय या प्रवचन के माध्यम से समझ लेवे तो हो नहीं सकता कि फिर वह किसी अवैदिक मत के झमेले में पड़ जाय! यदि सब लोगों ने स्वाध्याय और सत्संग द्वारा वैदिक मन्तव्यों को समझने के लिए प्रमाद को त्याग दिया होता तो समस्त ससार के लोग आज वैदिक धर्मके दृढ अनुयायी होते। किसी भी अवैदिक मत के प्रचलित होने का प्रश्न ही नहीं उठ सकता था। जनसाधारण का प्रमाद भी मतों के उद्भव का कारण रहा है। और आगे भी रहेगा।

४—**व्यक्ति विशेष का दम्भ**—प्रत्येक मत के साथ किसी न किसी व्यक्ति विशेष का नाम अवश्य जुड़ा हुआ है। यदि उस मत प्रवर्त्तक व्यक्ति में दम्भ का अंश न होता तो वह वेद प्रतिपादित और सृष्टि के आरम्भ से प्रचलित मानवीय सिद्धान्तों के प्रचार और प्रसार ही में अपना जीवन लगाता, जन-कल्याण की भावना से काम करता परन्तु ऐसा करने से शायद उसकी प्रसिद्धि होने में उसे शंका का अनुभव हुआ हो इसीलिए अपनी प्रसिद्धि की इच्छा से अपनी इच्छानुसार मत प्रचलित कर दिये। वैदिक धर्म के साथ किसी व्यक्ति का नाम जुड़ा हुआ नहीं है। कपिल, कणाद और दयानन्द का नाम न लेने से वैदिक धर्म पर कोई आंच नहीं आती। इन ऋषियों ने तथा अन्य आर्य विद्वानों ने तो केवल वेद प्रतिपादित सत्य, न्याय, परोपकार, आस्तिकता आदि शाश्वत मानवीय सिद्धान्तों का प्रचार जन-कल्याणार्थ किया है। अपने नाम का तथा अपनी जीवनकथा का गठबन्धन वैदिक धर्म के साथ नहीं किया है। वेदानुकूल सध्या, यज्ञ और योगाभ्यास आदि में भी कहीं किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं आता है। परन्तु अन्य मतों में ऐसी बात नहीं है। वहां तो मत के संस्थापक का नाम तथा जीवनी का उस मत से अनिवार्य गठबन्धन है जिसको अलग करने पर मत में बचता ही कुछ नहीं है। ईसाई मत से ईसा का नाम, इस्लाम से मोहम्मद हजरत का नाम हटाने पर वहां बचता ही कुछ नहीं। वैदिक धर्म का सीधा सम्बन्ध ईश्वर से और सत्य, सदाचार, न्याय, आदि ईश्वरीय नियमों से है। मतों का सीधा सम्बन्ध ईश्वर से या इन ईश्वरीय नियमों से नहीं है, मत के संस्थापक और उसकी जीवनी तथा देश काल की ऐतिहासिक घटनाओं से है। यदि मतों के संस्थापकों में अहं भाव (दम्भ) न होता तो वे जीवन पर्यन्त अच्छे-अच्छे शाश्वत सिद्धान्तों का प्रचार ही जनसाधारण की भलाई के लिये करते। साम्प्रदायिकता एवं विवाद की जड़ जो मत हैं उनका उद्भव न हो पाता।

वर्तमान समय में प्रचलित अवैदिक मतों के उद्भव के अनेक कारणों में से चार प्रमुख कारणों का मैंने निवेदन किया है। किसी द्वेषभाव से नहीं, सच्चाई के विचार से ही लिखने का प्रयास किया है। यदि मतों के झमेले से बचकर सब लोग वैदिक धर्म की शरण आजावें, तो संसार में द्वेष मत-भेद विवाद आदि बहुत सीमा तक कम हो जावेंगे और मनुष्य जाति सुख-शान्ति से रह सकेगी।

भारत के देदीप्यमान राष्ट्रपुरुष अमरशहीद स्वामी श्रद्धानन्द

(श्री प० दीनानाथ जी सिद्धान्तालंकार १५/४७ पंजाबी बाग, दुर्गा निवास, नई दिल्ली-२१)

"सरकारी लोगों के लिए गुरुकुल एक पहेली है। अध्यापकों में एक भी अंग्रेज नहीं है। अंग्रेजी पढ़ाई और उच्च शिक्षा के लिए पंजाब यूनिवर्सिटी द्वारा नियुक्त पाठ्य पुस्तकें यहां काम में नहीं लायी जातीं, सरकारी विश्वविद्यालय की परीक्षा के लिए यहां से किसी भी विद्यार्थी को बाहर नहीं भेजा जाता और विद्यार्थियों को विद्यालय से अपनी उपाधियां दी जाती हैं। सचमुच यह सरकार की अवज्ञा है। घबराये हुए सरकारी अधिकारी के मुंह से इसके लिए पहली बात यही निकलेगी कि यह स्पष्ट राजद्रोह है ......। जहां तक मुझे मालूम है, गुरुकुल के संस्थापकों के सिवाय किसी और ने उस असन्तोष को मूर्तरूप देते हुए शिक्षा के क्षेत्र में नया परीक्षण नहीं किया है।"

ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री और ब्रिटेन में मजदूर दल के संस्थापकों में अन्यतम रेमजे मैकडानल्ड ने १९१४ में अपनी भारत यात्रा के समय गुरुकुल देखने के बाद स्वदेश लौटकर वहां के प्रमुख पत्र "डेली क्रानिकल" में गुरुकुल और आर्यसमाज के सम्बन्ध में लिखे एक भावपूर्ण लेख में उपर्युक्त शब्द कहे थे। गुरुकुल में अपने दलसहित रेमजे मैकडानल्ड जब आये, तब उनका स्वागत जिस महान् पुरुष ने किया था, उन महात्मा मुंशीराम जी (बाद में स्वामी श्रद्धानन्द जी) के सम्बन्ध में इस राजनीतिज्ञ के निम्न शब्द कितने अनूठे और अत्यन्त अपनापन लिये हुए हैं—

"एक महान् भव्य और शानदार मूर्ति जिसे देखते ही उसके प्रति आदर का भाव उत्पन्न होता है, हमारे आगे हमसे मिलने के लिये बढ़ती है। आधुनिक चित्रकार ईसामसीह का चित्र बनाने के लिए उसे अपने सामने रख सकता है और मध्यकालीन चित्रकार उसे देखकर सेंट पीटर का चित्र बना सकता है। यद्यपि उस मछियारे की अपेक्षा यह मूर्ति कहीं अधिक भव्य और प्रभावोत्पादक है।"

अपना घर फूंकने वालों के अगुआ

जरा आज से ७०-७५ वर्ष पहले के भारत की कल्पना तो कीजिए। विदेशी शासन की कड़ी जंजीरों से सारा देश जकड़ा हुआ था। किसी प्रकार का भी संगठन और किसी प्रकार का भी आन्दोलन—भले ही वह सर्वथा अराजनीतिक और विशुद्ध सामाजिक हो—विदेशियों की क्रूर और अत्यन्त संकुचित दृष्टि से बच नहीं सकता था। चारों ओर पाशों से आबद्ध और सतत प्रहारों से जर्जरित भारत माता को सर्वथा उन्मुक्त और स्वतंत्र करने के लिए जो महापुरुष सन ठीक १९वीं सदी के अन्तिम चरण और इस सदी के प्रारम्भ में ही विदेशियों की पाशविक शक्ति के सम्मुख मैदान में उतरे थे, स्वामी श्रद्धानन्द जी (महात्मा मुंशीराम) उनमें अग्रगण्य हैं। भारत माता के विशाल भाल को देदीप्यमान करने और अपने को नींव के पत्थर के रूप में आत्मसात् करने वालों के लिए ही कबीर ने कहा था—

कबीरा खड़ा बाजार में लुकारी लिये हाथ।
जो घर फूंके अपना, सो चले हमारे साथ॥

इस महापुरुष के जीवन की विविध घटनाओं को—जो अत्यन्त रोचक, शिक्षाप्रद और स्फूर्तिदायक हैं—जिस एक सूत्र में गूंथा जा सकता है, वह है "श्रद्धा के साथ आत्मसमर्पण और निर्भयता तथा उत्साह से अग्रसर होना।" इन गुणों को सजीव मूर्तिमान् देखकर जनता ने मुंशीराम को "महात्मा मुंशीराम" के नाम से विभूषित किया और इसी श्रद्धा से प्रेरित हो इन्होंने चतुर्थ आश्रम में प्रवेश करते समय अपना नाम "श्रद्धानन्द" रखा। १९१८ मार्च मास में मायापुर (हरद्वार कनखल के बीच) वाटिका में हजारों की जनता के सम्मुख जब महात्मा मुंशीराम केश श्मश्रु से मुंडित और कषायपरिधान में विनम्र भाव से यज्ञवेदी पर आये, तब जनता-जनार्दन का आशीर्वाद प्राप्त करने की कामना करते हुए उन्होंने जो शब्द कहे थे, वे आज भी हमारे कानों में गूंज रहे हैं क्योंकि हम स्वयं वहां आचार्य वर के शिष्य होने के नाते उपस्थित थे। आप ने कहा—

"मेरा सारा जीवन श्रद्धा पर आधारित आ रहा है। बड़े से बड़े संकट में भी मैंने इस श्रद्धामाता का अंचल नहीं छोड़ा है। इसलिये आज जीवन के इस तुरीय आश्रम में प्रवेश करते हुए मैं "श्रद्धानन्द" नाम ग्रहण करता हूं। जगन्माता प्रभु और जनता—दोनों का हृदय के अन्तस्तल से आशीर्वाद की कामना करता हूं।"

जीवन को नया मोड़ देने वाली—दो घटनाएं

मुंशीराम का जन्म देश के प्रथम स्वातन्त्र्य युद्ध से ठीक एक वर्ष पहले १८५६ में पंजाब के जालन्धर जिले के तलवन ग्राम में हुआ था। इनके पिता उत्तर प्रदेश मे उच्च पुलिस अधिकारी थे। इनकी शिक्षा-दीक्षा बनारस और इलाहाबाद के स्कूलों-कालेजों में ही हुई। तत्कालिक पाश्चात्य शिक्षा की चकाचौंध और घर में समस्त भौतिक सुखों की बहुलता और सहज उपलब्धि ने युवक मुंशीराम को पर्याप्त पथभ्रष्ट कर दिया था। इनकी जीवन दिशा बदलने में दो व्यक्तियों ने सर्वाधिक प्रेरणा दी, संयोग वश, प्रेरणा की स्रोत दोनों घटनायें बरेली में हुईं। एक रात यार लोग जब शराब में अत्यन्त मदहोश इन्हें घर के दरवाजे पर छोड़ गये और उलटियां करते हुए भी पतिपरायणा पत्नी शिवदेवी ने सारी रात बिना आंखें झपके इनकी सेवा में कोई कसर न छोड़ी, तो प्रातःकाल से ही, पत्नी की इस मूक तन्मयता ने जीवन दिशा बदल दी। अब मुंशीराम इन ऐन्द्रियिक व्यसनों से मुक्त हो चुके थे।

परनारियकता का जबर्दस्त पंजा अभी तक दिलोदिमाग पर कब्जा किये हुए था। उन दिनों मुंशीराम के पिता ला० नानकचन्द बरेली में कोतवाल थे। इसी समय आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द का वहां आगमन हुआ था। स्वामी जी के व्याख्यानों और उपदेशों से सारे देश में एक नवजागृति आ रही थी। स्वामी दयानन्द भारत का स्वतन्त्रता के प्रथम उद्गाता थे। विदेशी सरकार इन पर कड़ी नजर रखे हुए थी। युवक मुंशीराम इस महापुरुष के सान्निध्य में आया। आधे घंटे से, शायद, अधिक देर बातचीत नहीं हुई। परनारियकता और पश्चिमी सन्देहवाद के हृदय और मस्तिष्क पर आच्छादित सारे बादल छिन्न-भिन्न हो गये। आस्था और समर्पण का बालभानु उदित हो गया। "सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्" का ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित हो गया। अब मुंशीराम ऋषि दयानन्द के कट्टर भक्त और अविचल अनुगामी बन गये।

गुरुकुल की स्थापना का निश्चय

जब मुंशीराम जालन्धर में वहां एक चोटी के वकीलों में थे, वहां आर्यसमाज के अथक सेवक और प्रचारक भी थे। पौराणिकों और कट्टर पन्थियों से इन्होंने कई शास्त्रार्थ भी किये। पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा के वह प्रधान थे। अब जनता ने इन्हें ला० मुंशीराम से महात्मा मुंशीराम बना दिया था। ऋषि दयानन्द के "सत्यार्थप्रकाश" का स्वाध्याय करते हुए महात्मा जी ने गुरुकुल स्थापना का निश्चय किया। दो समस्यायें थीं—माता-पिता से दूर जंगल में अपने बच्चों को कौन भेजेगा और धन कहां से आएगा? सूझ-बूझ के धनी महात्मा जी ने पहली समस्या का हल इस निश्चय के साथ किया कि सबसे पहले मैं अपने दोनों लड़कों का गुरुकुल में दाखिल करूंगा।" दूसरी समस्या का हल इस घोषणा के साथ किया कि जब तक मैं ३० हजार रु० गुरुकुल के लिए इकट्ठा नहीं कर लूंगा, तब तक घर में वापस नहीं आऊंगा।" जननायक महात्मा मुंशीराम ने अब भिक्षुक बनकर सारे देश का भ्रमण किया। ६ मास में ही धन इकट्ठा हो गया। बिजनौर के एक बिलकुल अपरिचित दानी मुंशी अमनसिंह ने हरद्वार से गंगा पार विस्तृत भूमि गुरुकुल स्थापित करने के लिए और साथ में कांगड़ी ग्राम दान कर दिया।

इस प्रकार आज से ६७ वर्ष पहले फरवरी मास में इस सदी के प्रारम्भ में ही न केवल भारत किन्तु विश्व के लिए एक नया सन्देश लेकर अपने दोनों पुत्रों सहित १४ ब्रह्मचारियों और ला० शालीग्राम भंडारी तथा पं० विश्वमित्र के साथ शाम को ४ बजे के लगभग घनघोर जंगल में, गंगा के पवित्र तट पर, पवित्र यज्ञ के साथ महात्मा मुंशीराम ने गुरुकुल की स्थापना कर दी। अब महात्मा मुंशीराम आचार्य मुंशीराम के रूप में गुरुकुल के सब ब्रह्मचारियों के लिए माता-पिता की कमी को भी पूरा करते थे।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

(पृष्ठ ७ का शेष)

गांधी जी के साथ प्रथम सत्याग्रही

१९१९ के प्रारम्भ में गांधी जी का सत्याग्रह आन्दोलन शुरू ही हुआ था। स्वामी जी गांधी जी के दायें हाथ और सत्याग्रह के प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति थे। गांधी जी स्वामीजी को "बड़ा भाई" कह कर पुकारते और बड़ा आदर-सम्मान करते थे। स्वामीजी का स्थिर निवास नया बाजार स्थित तत्कालीन सार्वदेशिक सभा भवन ही था। नगर के हिन्दु-मुसलमान आपको दिल्ली का "बेताज बादशाह" समझते थे। जामामस्जिद के इतिहास में मिम्बार से बोलने वाले आप पहले हिन्दू थे, जिन्होंने उन दिनों लाखों की जनता के सम्मुख वेद मंत्रों का पाठ करने के बाद भाषण दिया था। वहां से स्वामी जी के नेतृत्व में वापस आ रही शान्त निहत्थी जनता को जब घंटाघर के पास रोक कर उस पर गोली चलाने के लिए गोरे सिपाही बन्दूक तानकर सामने आ धमके, तब इस वीर संन्यासी ने अपनी छाती खोल कर जिस निर्भयता से उन्हें ललकारा, उसे सुन गोरे सिपाहियों की बन्दूकें नीचे झुक गयीं। इनके शब्द थे—

"मैं संन्यासी हूं। यह मेरी छाती खुली है, चलाओ इस पर पहले गोलियां, मेरे पीछे खड़ी इस निहत्थी, बेकसूर जनता को भूनने से क्या लाभ?" इस अनोखी अहिंसक वीरता पर कौन मुग्ध नहीं होगा।

अमृतसर कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष

ओडवायर और डायर की नादिरशाही से पीड़ित, १३ अप्रैल १९१९ को जलियां वाला बाग हत्याकांड से आहत पंजाब की सुध लेने गई के पहले सप्ताह में ही सर्वप्रथम स्वामी जी ही लाहौर पहुंचे और पं० मदनमोहन मालवीय जी के सहयोग से "पंजाब सेवा समिति" के नाम से पीड़ितों की सेवा सहायता कार्य प्रारम्भ कर दिया था। गुरुकुल की १३वीं, १४वीं कक्षा के ब्रह्मचारियों को भी सहायता वितरण के लिए बुला लिया गया था। इन पंक्तियों के लेखक को भी उस समय अपने आचार्यश्री के चरणों में उपस्थित हो सेवा का सौभाग्य मिला था। पंजाब के सब नेता तो जेल में थे। उस वर्ष कांग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में होना था। वह काम कौन करे? पंजाब के प्रमुख नेताओं ने गांधी जी को संदेश भेजा कि "स्वामी श्रद्धानन्द जी से इस अधिवेशन का दायित्व संभालने की प्रार्थना की जाए।" गांधी जी के विशेष अनुरोध पर स्वामी जी ने एक और जनता में व्याप्त निराशा और दूसरी ओर गोरी नौकरशाही का दमन चक्र इन विपरीत स्थितियों के बावजूद यह दायित्व संभाला। कांग्रेस का इतिहास बतलाता है कि अमृतसर के इस अधिवेशन के सदृश बहुत कम सफल और शानदार तब तक और उसके बाद भी कई वर्षों तक नहीं हुए थे। स्वामी जी को केवल १५ दिन की तैयारी का ही अवसर मिला था। इन दिनों अधिवेशन दिसम्बर में, क्रिसमिस की छुट्टियों में होते थे। उस साल कड़ी सर्दी में अधिवेशन से ठीक एक दिन पहले जोरदार वर्षा अमृतसर में हुई जिससे सारी व्यवस्थाएं अस्त-व्यस्त हो गयीं।"

कांग्रेस मंच से प्रथम हिन्दी भाषण

कांग्रेस के इतिहास में उसके मंच से स्वागताध्यक्ष के रूप में वेदमन्त्रों के साथ शुद्ध हिन्दी में सबसे पहले दिया गया भाषण स्वामी जी महाराज का ही था। स्वामी जी कितने दूरदर्शी राजनीतिज्ञ थे, इसका परिचय एक इसी तथ्य से मिलता है कि अपने भाषण में सबसे पहली बार इस महा-पुरुष ने ही, अछूतों को गले लगाने और अछूतपन दूर करने की पैरवी की थी। गांधी जी का "हरिजन आन्दोलन" तब तक किसी की और उनकी अपनी कल्पना तक में भी नहीं था।

कांग्रेस के नेतृत्व का त्याग

कांग्रेस का शीर्षस्थानीय नेतृत्व करते हुए भी स्वामी जी अपने धार्मिक सिद्धान्तों का किसी भी मूल्य पर त्याग करने को तैयार नहीं थे। कांग्रेस के तत्कालीन नेता मुस्लिम धर्मान्धता के सामने सदा झुके रहते थे और हिन्दुओं को शुद्धि व संघटन के अधिकार से वंचित रखते थे। स्वामी जी ने इसके विरोध में कांग्रेस छोड़ दी और अपना सारा समय और शक्ति हिन्दुओं में अस्पृश्यता निवारण, शुद्धि उनके संघटन की दिशा में लगा दी।

अब्दुलरशीद द्वारा हत्या

स्वामी जी के इस कार्य से तत्कालीन मुस्लिम कांग्रेसी नेता मौलाना मुहम्मदअली, शौकतअली तथा अन्य मौलवी-मुल्ला उनसे बहुत नाराज हो गये, उनके विरुद्ध आन्दोलन करने लगे और मुसलमानों को भड़काने लगे। स्वामीजी दिसम्बर १९२३ के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश का दौरा करके जब वापस आये तब निमोनिया से पीड़ित हो गये। कुछ आराम आ रहा था। २३ दिसम्बर को दोपहर करीब दो बजे जब वह वृद्ध सिंह रोग से कुछ आराम या विश्राम कर रहा था तब अब्दुल रशीद नामक गुंडा सार्व० देशिक सभा के कार्यालय में स्वामीजी से धर्म चर्चा करने के लिए उनके सेवक धर्मसिंह से आग्रह करने लगा। जब धर्मसिंह ने कहा कि जरा ठहर कर आ जाना, तब स्वामी जी की नींद टूट गयी और वे बोले—"उसे आने दो, मत रोको। अब्दुल रशीद ने स्वामी जी के कमरे में प्रवेश करते ही पानी मांगा। धर्मसिंह ज्यों ही पानी लेने रसोई घर की ओर गया, इस हत्यारे ने इस निर्भीक पर रुग्ण संन्यासी पर तीन गोलियां दाग दीं। वह भागने का प्रयत्न करने लगा पर सेवक धर्मसिंह और स्वामी जी के निजी सचिव पं० धर्मपाल विद्यालंकार दोनों ने अपनी जान की तनिक भी परवाह न कर इस हत्यारे को पुलिस के आने तक बड़ी जद्दोजहद के बावजूद पकड़े रखा।

अमर बलिदान

इस प्रकार समस्त आयु आर्यजाति और मातृभूमि की सेवा में अपने आपको पूर्णरूप से समर्पित करने वाला यह संन्यासी इस बलिदान द्वारा इतिहास में यावच्चन्द्रदिवाकरो अमर हो गया!!

आज आर्यसमाज कहां है?

आज आर्यसमाज सोचे कि वह कहां तक इस अमरशहीद संन्यासी के बताये मार्ग का अनुसरण कर रहा है?

ऋषिराज! वन्दन बारम्बार

(श्री राधेश्याम श्रीवास्तवआर्य ग्राम पूरेवरियावलाल, बसीपुर जि० सुलतानपुर—उ० प्र०)

गहन 'तमिस्रा' महा पंक में डूबा था भारत सारा।
यवन क्रोधास्ताचल में था डूब चुका रविधर्म हमारा॥
भुला दिया था आर्य जनों ने वेदों का शुचिदिव्यादेश।
वर्णाश्रम की पुण्य व्यवस्था, ऋषियों का पावन संदेश॥
पुण्य धरा पर पड़ा हुआ था निर्मम बेड़ी का बन्धन।
दिल दहलाने वाला उठता सदा चतुर्दिक् था क्रन्दन॥
विधवा क्या सब अबलाएं इस पुण्यधरा पर बिलख रही थीं।
लाखों गौवें दया दृष्टि पाने को उत्सुक निरख रही थी॥
हो अनाथ लाखों बच्चे थे मारे इधर-उधर फिरते।
वेद शास्त्र शुचि ग्रन्थ हमारे यवन क्रोध अग्नि में जलते॥
बड़ा देश था नास्तिक पथ पर पाखण्डों ने घेरा था॥
रश्मिरथी के दिव्य देश में चारों ओर अंधेरा था॥
विपन्न समय भारत का था यह पतन पराजय की बेला॥
दानवता का शंखनाद कर, लगा अनय का था मेला॥
भारत माता का क्रन्दन वह नहीं सहन तुम कर पाए।
गुर्जर की उस दिव्य धरा पर, देव पुरुष तुम थे आए॥
मुरझायी वाटिका देश की तुमने निर्भय हो सींचा।
अतीत की पावन संस्कृति को आगे बढ़ कर था खींचा॥
फिर से आर्य जनों को तुमने वेदों का संदेश दिया।
मानवता पथदर्शक बन कर, हरा भरा यह देश किया॥
जाग उठी भारत की जनता जो सदियों से थी सोई।
निर्भय क्रन्दन आडम्बर मिथ्या आदि सभी खोई॥
हे भारत के उद्धारक! है कोटि तुम्हारा अभिनन्दन।
हे आर्य जनों के उद्धारक! है कोटि तुम्हारा ही वन्दन॥

गतांक से आगे—

विचारणीय समस्या—

साम्प्रदायिक वैमनस्य-कारण और उपचार

—श्री सुरेन्द्रसिंह कादियान WZ/79 राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली 38)

धर्म उतना ही पुराना है जितनी पुरानी मनुष्य की मुस्कराहट। जबकि पंथ, मजहब अथवा सम्प्रदायों का आविर्भाव कुछ शताब्दियों पूर्व ही हुआ है। सम्प्रदायों का लक्ष्य स्थान विशेष के लोगों को सन्मार्ग पर लाने तक ही सीमित रहा है। सम्पूर्ण मानव जाति की सुरक्षा एवं शांति का भार वहन करने की योग्यता उनमें कभी नहीं आयी। जब जब सम्प्रदायों ने ऐसा करने की ठानी तब तब मानव जाति भयानक रक्त-पात देख कर सिहर उठी। उस काल के अमानुषिक अत्याचारों को स्मरण कर आज भी मनुष्य के रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

साम्प्रदायिकता का प्रभाव धर्म से ही घट सकता है। विभिन्न सम्प्रदायों में समान दीखने वाले तथ्यों का एकीकरण होगा तो धर्म पुनः मानव जीवन में प्रतिष्ठित हो जायेगा। सम्प्रदायों के तुलनात्मक अध्ययन से यह एकीकरण सम्भव है। ज्यों ज्यों आध्यात्मिक उपलब्धियों का जनता से परिचय बढ़ेगा त्यों त्यों साम्प्रदायिकता का अस्त और धर्म का उदय होता जायेगा।

धर्मनिरपेक्षतावाद

धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र में जो महत्व धर्म अथवा अध्यात्मवाद का है, वही महत्व राष्ट्रिय जीवन में धर्मनिरपेक्षतवाद का है। सर्व सम्प्रदाय एकता को ठोस आधार प्रदान करने वाला यह अनुपम एवं उपयोगी स्रोत है। वास्तव में धर्मनिरपेक्षतावाद विभिन्न सम्प्रदायों की अच्छी-बुरी, सभी बातों के आगे लोकतंत्र का आत्मसमर्पण है।

धर्मनिरपेक्षतावाद का अर्थ है साम्प्रदायिक कट्टरता त्याग कर धार्मिक सहिष्णुता ग्रहण करना, पारस्परिक द्वेष त्याग कर भ्रातृत्व ग्रहण करना, शंका त्याग कर विश्वास ग्रहण करना, घृणा त्याग कर प्रेम ग्रहण करना, संकीर्णता त्याग कर विराट् भाव ग्रहण करना, दुराग्रह त्याग कर समन्वयता ग्रहण करनी और स्वार्थ त्याग कर परमार्थ ग्रहण करना। किन्तु उदात्त दृष्टिकोण का परिचायक होते हुए भी धर्मनिरपेक्षतावाद को जनसाधारण में अपेक्षित लोकप्रियता प्राप्त नहीं हुई। इसके कुछ कारण इस प्रकार हैं।

१. ईश्वरीय अथवा पैगम्बरी सम्प्रदाय अपने को अन्य सम्प्रदायों से सर्वश्रेष्ठ अर्थात् सर्वोच्च मानते हैं, जब कि धर्मनिरपेक्षतावाद इस अहं पर कुठाराघात कर सभी सम्प्रदायों को समान महत्व तथा गौरव प्रदान करता है।

२. धर्मनिरपेक्षतावाद को धर्म से विमुखता समझ उसे उपेक्षित कर दिया गया।

३. धर्मनिरपेक्षतावाद में निहित सहिष्णुता का अर्थ गलत लगाया गया।

४. इसके अधूरे प्रचार एवं प्रसार ने इस भय को जन्म दिया कि धर्मनिरपेक्षतावादी न हिन्दु रहेगा और न मुसलमान ही।

५. किसी एक साम्प्रदायिक दल की देखा-देखी अन्य दल भी इसकी वे ंना करने में अपनी सुरक्षा समझ बैठे।

६. धर्मनिरपेक्षतावाद को अल्पसंख्यक सम्प्रदायवादियों का सुरक्षात्मक हथियार समझा गया।

७. राजनीतिज्ञों द्वारा चुनाव अभियानों में इसकी पवित्रता को विजय का मोहरा बना कर कलुषित किया जाता है और कभी कभी शासकों द्वारा इसकी आड़ में अड्डे राजनीतिक खेल खेले जाते हैं।

८. धर्मनिरपेक्षतावाद, उपद्रवकारी सम्प्रदायवादियों को कठोर दण्ड से मुक्ति दिलवाता है। यह शासनतन्त्र की तत्परता में ढील लाता है और कठोर सुरक्षात्मक कार्यवाही में विघ्न डालने का दोषी बना रहता है।

इन उपरोक्त कारणों के निराकरण से ही धर्मनिरपेक्षतावाद को व्यवहारिक रूप प्राप्त होगा। राष्ट्रिय जीवन में यदि इस सिद्धान्त को अपना लिया जाता है, तो इससे देश का राजनीतिक मंच ही पवित्र नहीं होगा वरन् समाज में सद्भाव का वातावरण उत्पन्न होकर धर्म में भी अभिवृद्धि होगी।

बेरोजगारी

श्रम मनुष्य का आभूषण है। किन्तु बेरोजगारी मनुष्य के उत्साह को ठंडा बना देती है। बेरोजगारी दारिद्रय और बुभुक्षा की जननी है। मनुष्य के समक्ष जब कोई रचनात्मक कार्य करने के लिए नहीं रहता तो उसमें असंतोष और खीझ पैदा हो जाती है। भूख और गरीबी से ही उपद्रवों की कोपलें फूटती हैं। साम्प्रदायिक उपद्रवों में अधिक लूट-पाट बहुमूल्य बाजारों में होती है। अहमदाबाद की सिन्धी-मार्किट की लूट-इसका ताजा प्रमाण है।

भारत में व्याप्त बेरोजगारी न तो समाजवाद से दूर हो सकती है और न ही समष्टिवाद से। भारत में इन दोनों वादों के लिये उपयोगी आधार नहीं है। यहां बढ़ रहे पूंजीवादी का शमन और बेरोजगारी का प्रतिकार गांधीवादी अर्थनीति से ही सम्भव है।

गांधीवादी अर्थनीति से व्यक्तिवाद, समाजवाद और आदर्शवाद का समन्वय है। गांधीवादी अर्थनीति की मुख्य विशेषता आत्मनिर्भरता, विकेन्द्रीकृत उत्पादन और न्याययुक्त वितरण है। गांधीवादी अर्थनीति में आधुनिक औद्योगिक-क्रान्ति का तात्पर्य निम्नस्तर का भौतिकवाद, अधिकार लिप्सा, युद्धोन्माद, सैनिकवाद और साम्राज्यवाद से है।

एक मशीन अनेक कामगारों को बेरोजगार बना देती है जिससे शोषण और पूंजीवाद को प्रोत्साहन मिलता है। मशीन लगने से पूर्व बेकार होने वाले कारीगरों के लिये यदि कोई अन्य कार्य खोज लिया जाये तो मशीन लगाने की बात समझ में आ सकती है। प्रगति में अन्ध-श्रद्धा रखने वालों के पास यह सब सोचने का समय नहीं रहता। उनके एकपक्षीय निर्णय पर अंकुश रखने के लिये ही गांधीवादी अर्थनीति का जन्म हुआ, किन्तु उसकी सबसे अधिक उपेक्षा गांधीवादियों द्वारा ही हो रही है। अन्ततोगत्वा गांधीवादी अर्थनीति को व्यवहारिक बनाना ही पड़ेगा क्योंकि उसी से सही अर्थों में बुभुक्षा और दरिद्रता का परिवर्जन सम्भव है।

अन्य कारण

भारत में हुए अनेक साम्प्रदायिक उपद्रवों का कारण सामान्य जीवन की नितान्त छोटी घटाएं हैं। राह चलते किसी बात पर हिन्दु-मुसलमान का झगड़ा, स्वधर्मी का किसी विधर्मी दुकानदार से झगड़ा जमीन सम्बन्धी फौजदारी, किसी विधर्मी से कन्या के पाणिग्रहण करने, राह चलती महिला से किसी विधर्मी के अभद्र व्यवहार को प्रायः साम्प्रदायिक रंग दे दिया जाता है।

कुछ उपद्रवों का कारण साम्प्रदायिक भावना से खिलवाड़ करना है। गोहत्या, मस्जिदों के सामने जलूस की गति मध्यम कर सामान्य से अधिक शोरगुल करना, मन्दिरों या चौराहों पर गाय के टुकड़े डालना, मस्जिदों में सूअर का मांस फेंकना या आग लगाना और एक दूसरे के पवित्र ग्रन्थों का अपमान करना या उनपर तेल छिड़कना आदि उपक्रम साम्प्रदायिक वैमनस्य को भड़काने में काफी उत्तेजना पहुंचाते हैं।

जाति, सम्प्रदाय और भाषा का मोह राजनीतिज्ञों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, साहित्यकारों और पत्रकारों तक को भ्रष्ट कर देता है। चुनाव अभियानों में जातीयता को विशेष रूप से उभारा जाता है। छुटपुट साम्प्रदायिक दंगों को, अफवाहों के आधार पर बढ़ा-चढ़ा कर, हमारे कुछ पत्रकार प्रस्तुत करते हैं। भाषा को लेकर तो जब-तब वातावरण उत्तेजनात्मक हो ही जाता है। इन सब झूठी- सच्ची गतिविधियों को भावुक साहित्यकार लेखनीबद्ध कर देते हैं, जो स्थायी रूप से साम्प्रदायिक वैमनस्य का प्रमुख कारण बनता है।

उपरोक्त कारणों के सन्दर्भ में यह कहना अपेक्षित ही है कि कानून का बन्धन साम्प्रदायिक उपद्रवों को रोकने में इतना सहायक सिद्ध नहीं होगा जितना कि किसी नागरिक आचरण-संहिता का तैयार होना। यह संहिता सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिये विशेष उपयोगी सिद्ध होगी, साहित्यकारों की भावुकता पर रोक लगायेगी, राजनीतिज्ञों और पत्रकारों को निर्णयात्मक पग उठाने की प्रेरणा देगी। ऐसी संस्थाओं का निर्माण भी सामायिक होगा जो राजनीतिक प्रभाव से मुक्त होकर मानवीय आदर्शों को व्यावहारिक रूप देने में कटिबद्ध हों।

(शेष पृष्ठ १० पर)

हरयाणा का शहीद शिरोमणि वल्लभगढ नरेश महाराजा नाहरसिंह

(तप: पूत आचार्य भगवान् देव जी गुरुकुल झज्जर रोहतक)

१८५७ ईस्वी मे जो भारत का प्रथम स्वातन्त्र्य संग्राम लड़ा गया। उस मे भारत के लाखों वीरों ने भाग लिया था। वीरभूमि हरयाणा ने भी उसमें बढ चढ कर भाग लिया था। यदि यह कह दिया जाय कि इसका आरम्भ और समापन भी हरयाणा में ही हुआ, तो अत्युक्ति न होगी। इसका प्रारम्भ हरयाणा के प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर मेरठ (मयराष्ट्र) से हुआ और समाप्ति भी हरयाणा के प्रसिद्ध नगर दिल्ली के पतन के साथ होती है। यह ठीक है अनेक छोटी मोटी घटनायें इसके पश्चात् भी भारत के कोने कोने में होती रही। किन्तु यह भी सत्य है कि जब सारे देश में शान्ति हो गई तब भी सबसे पीछे तक हरयाणा की पञ्चायती सेनाये चरखी (दादरी) माणकावास आदि स्थानों पर अंग्रेजों के हिमायती जींद आदि के सिख राजाओं के साथ युद्ध करती रही।

इस स्वतन्त्रता के प्रथम संग्राम में जहा हरयाणा की जनता ने दिल खोल कर भाग लिया वहां इस वीर भूमि के राजा और नवाब भी पीछे नही रहे। वल्लभगढ नरेश राजा नाहरसिंह, रावराजा तुलाराम रेवाड़ी (रामपुरा) नरेश, राव कृष्ण गोपाल रेवाड़ी, झज्जर, बहादुरगढ़, और फर्रुखनगर के नवाब भी किसी से पीछे नही रहे। दिल्ली के बहादुरशाह को तो इसके मुख्य नेताओ में गिनती होती है। ये सभी हरयाणा भूमि के सुपूत थे। इस युद्ध में भाग लेने के कारण ही हरयाणा को अनेक भागों में टुकडे टुकड़े करके इसकी समाप्ति कर दी गई और इसे इसी का दण्ड मिला कि भारत के मानचित्र (नक्शे) से ही हरयाणा का नाम व निशान मिटा दिया गया। तब कही अंग्रेजों के कुछ सुख के श्वास आये। हजारों लोगों को वृक्षों पर लटकवाया, फासियां दी और हजारो को पंक्तियों में खड़ कर गोलियों से भून दिया गया, हजारो को काले पानी अण्डमान भेज अपने दिल की भड़ास मिटायी। उनमें से कोई लौट कर नहीं आया। हजारों की जमीन छीनकर उन्हें बेघरबार करके भूखा मरने को छोड दिया। सैकड़ों गांवों मे आग लगाई गई। धन माल पशु सब लूट लिये और भूमि छीन कर अपनी ओर से भिखारी बना दिया।

जो वीर इस संग्राम मे शहीद हुए, आज मैं उनमें से एक शहीद शिरोमणि वल्लभगढ नरेश महाराजा नाहरसिंह की चर्चा करता हूं। इनको ९ जनवरी १८५८ को दिल्ली में फांसी पर लटकाया गया। इनको दण्ड देने के लिए अंग्रेजो ने एक फोजी न्यायालय में अपने न्याय का ड्रामा किया था। उसकी एक सत्य प्रतिलिपि (True Copy) एक मित्र की कृपा से मुझे मिली है। जो पूरे कागज के ११८ पृष्ठों में है। उससे जहां राजा नाहरसिंह की उस समय की रीति नीति का ज्ञान होता है, वहां अंग्रेजों की बदला लेने की दुर्भावना का अच्छी प्रकार से पर्दाफाश हो जाता है।

इसकी नकल (Copy) के पोलटिकल न० (Political No 1920, 1921) १९२० तथा १९२१ हैं। यह—

C.B. Samdess Esqr, Offg Commpioner Delhi ने to R Temple Esquire, Secretary to the Chief Commipioner for the Punjab Lahore को D/Delhi April 17 the 1858, १७ अप्रैल 1958 को भेजी गई है।

इस फोजी अदालत के प्रधान (President Brigadier General Chamberlain) ब्रिगेडियर जनरल चैम्बरलेन थे। इसके सदस्य चार अन्य फोजी अफसर भी थे। ये सभी योरोपियन थे। इस न्यायलय का नाम (An European Military Commipioner) था। यह अदालत दिल्ली मे बैठी। इसी के आगे १८५७ के देश भक्तों के मुकदमें पेश किये गये। दिल्ली में १९ दिसम्बर १८५७ को राजा नाहरसिंह पर अभियोग चलाया गया, उसकी सुनवाई प्रारम्भ हुई और २ जनवरी १८५८ तक यह मुकदमा चला और उसी दिन इसका निर्णय सुना दिया गया। उसके शब्द निम्न लिखित हैं

The court is cleard Approved and confirmed Sd/ Mr. Penny Major General Comndg Merrut Division and Delhi Field Force.

The court on evidence before them are of opinion that the prisoner Nahar Singh, Rajah of Bullubgarh is guilty of the charge preferred against him with exeption to the word "money" of which the court do acquit him.

The court having found the prisoner "Guilty" of the charge preferred against him to the extent alone specified, do sentence him, Nahar Singh Rajah of Bullubgarh to be hanged by the neck until dead and further to forcit all his property and affects of every discription.

Delhi January 2nd 1858.

S/d. Neville Chamberlain,
Brigr Genl. President.

S/d. Fred Harriott Major
Dy. Judge Adm. General

Approved and confirmed.

S/d. N. Penny Major General, Commndg.
Merrut Dn. Delhi Field Force.

अदालत साक्षी आदि लेकर इस निर्णय पर पहुंची है कि कैदी नाहरसिंह बल्लभगढ नरेश दोषी है। इस लिए उसे फांसी पर लटका कर मृत्यु दण्ड दिया जाये तथा उसकी सब सम्पत्ति राज्य आदि छीन ली (जब्त करली) जाय। २ जनवरी १८५८ को यह सजा दी गई और ९ जनवरी १८५८ को अर्थात् ७ दिन पीछे ही उसे फांसी पर लटका दिया गया। वह हरयाणा का वीर फांसी की जयमाला पहन कर शहीद हो गया और वीर भूमि हरयाणा ही नहीं ऋषियों की भूमि भारत के यश कीर्ति को भी वह चार चांद लगा गया।

११८ पृष्ठ के मुकदमें की "सच्ची कापी" नाम के विवरण से वीर नाहरसिंह के कार्यों पर प्रकाश पडता है वह इस प्रकार है। (शेष)

पृष्ठ ९ का शेष

प्रशासनिक-अंकुश

लोकतंत्रीय सरकारों का अंकुश कठोर होता है, किन्तु वह दिखाने भर का होता है, प्रयोग में लाने वाला नहीं। ऐसा इस कारण होता है कि अपराधी को भी मानवी इकाई के रूप में प्रतिष्ठित बनाये रखने के ढोंग को आवश्यकता से अधिक तूल दी जाती है। लोकतंत्रीय प्रशासनिक नियमों के विषय में प्रसिद्ध है कि वे समयानुसार कठोर और लचीले हो जाते हैं। किन्तु उनकी यह विशेषता मात्र शब्दों की कलाबाजियां प्रतीत होती हैं। ऐसी विचित्र स्थिति में यदि शासक भी पक्षपाती, अन्यायी और अयोग्य हों तो नीम चढ़े करेला वाली उक्ति चरितार्थ हो जाती है।

साम्प्रदायिक उपद्रवों पर कठोर अंकुश रखना इस कारण भी दुविधापूर्ण हो जाता है कि शासक-दल को आगामी-चुनाव की विजय-लिप्सा भीतर ही भीतर कुरेदती रहती है। जितनी भी नीतियां इस सम्बन्ध में निर्धारित की जाती हैं वे इसी दूरदर्शितापूर्ण स्वार्थ में डूबी होती हैं। इन नीतियों का तात्कालिक लाभ तो मिल जाता है। किन्तु समस्या का स्थायी समाधान नहीं निकलता अर्थात् चिनगारियों को राख के ढेर में दबा भर दिया जाता है, जल छिड़क कर बुझाया नही जाता।

इसमें सन्देह नही कि जनमत की रक्षा करना लोकतंत्रीय सरकारों का परम धर्म है, किन्तु लोगों की साम्प्रदायिक गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाना भी इन सरकारों का परमावश्यक कर्तव्य है। विजय-लिप्सा का शमन तभी हो सकता है जब शासकों को आत्मशुद्धि के लिये प्रेरित किया जाये

उपरोक्त कारणों से स्पष्ट हो जाता है कि साम्प्रदायिक वैमनस्य का उपचार कठोर प्रशासनिक अंकुश, सामायिक सुरक्षात्मक प्रणाली, बेरोजगारी दूर करने, धर्मनिरपेक्षतावाद को अपनाने, सम्प्रदायों पर धर्म का प्रभुत्व स्थापित करने, तुष्टीकरण की नीति को त्यागने और पाकिस्तानी प्रभाव को नष्ट करने से ही होगा। विद्वेष फैलाने वाले गुण्डों और साम्प्रदायिक विष उगलने वाले असमाजिक तत्वों का मूलोच्छेद, भाषण झाड़ने, कमीशन बैठाने और रिपोर्टें प्रस्तुत करने से नहीं होगा। राष्ट्र को आज जागरूक प्रहरियों, कर्मठ कार्यकर्ताओं, निष्पक्ष नेताओं और न्यायप्रिय न्यायाधीशों की आवश्यकता है। क्या भारत ऐसे रत्न उगलेगा ?

दीवान हाल दिल्ली में श्री वीरेन्द्र आदि का षड्यंत्र

पंजाब सभा के कथित निर्वाचन का पुनः नाटक रचा

नई दिल्ली २२-१२-६९, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के रोहतक के २१-१२-६९ को होने वाले वार्षिक अधिवेशन के महत्व को कम करने तथा उसे असफल करने को भावना से जालन्धर के न्यायालयों से स्थायी निषेधाज्ञा लगने के बावजूद श्री वीरेन्द्र आदि ने डा० हरिप्रकाश से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कथित एजेण्डा निकलवा दिया। इसके साथ ही सभा के अधिकारियों के विरुद्ध पंजाब हरयाणा हाई कोर्ट चण्डीगढ से रोहतक में होने वाले पंजाब सभा के अधिवेशन को रुकवाने के लिये निषेधाज्ञा प्राप्त करने का प्रयत्न किया परन्तु सफलता न मिली। २१-१२-६९ को आर्यसमाज दीवान हाल का वार्षिकोत्सव था, अतः दर्शकों को अपनी कथित बैठक की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से ही दीवान हाल में बैठक बुलाई।

विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि ६०-७० तो उनके गुट के व्यक्ति ही [illegible] और इतने ही दीवान हाल का उत्सव देखने आये दर्शकों की संख्या [illegible] सम्मिलित कर ली। आर्य जनता में भ्रम पैदा करने की भावना से [illegible] समाचार पत्रों अर्थात् वीर अर्जुन नई दिल्ली में ४०० प्रति[illegible] की उपस्थिति लिख दी और जालन्धर में वीरेन्द्र ने अपने वीर प्रताप [illegible] ४५० की उपस्थिति लिख दी। इनका एक रजिस्टर हमारे पास है जिसमें इनके कुल प्रतिनिधियों की संख्या ३०२ है। उसमें से भी ७० प्रतिशत बोगस हैं। अब आर्य जनता इसका स्वयं अनुमान लगा सकती है कि ३०२ की कुल संख्या इनके रिकार्ड में है तो ४०० या ४५० प्रतिनिधियों की उपस्थिति कैसे हो गई ?

उनका इसमें कोई अपराध नहीं। क्योंकि उनके पास न तो कोई रिकार्ड है तथा न सभा का कोई नियमित कार्यालय। अतः उन्होंने सोचा होगा कि यदि असत्य प्रचार ही करना है तो जर्मनी के गोयबल्स से पीछे क्यों रहें। यह भी उल्लेखनीय है कि श्री मनोहर विद्यालंकार जिन्हें इन्होंने उप-प्रधान घोषित किया है, उन्हें उनके आर्यसमाज नया बांस दिल्ली ने [illegible] निर्वाचन में प्रतिनिधि ही नहीं बनाया। ऐसे भी और भी कई नाम आपको झूठे मिल जावेंगे। इस प्रकार असत्य, वीर अर्जुन अथवा वीर प्रताप में मिथ्या प्रचारों से आर्यजनता सावधान रहे। इनका पंजाब सभा से कोई सम्बन्ध नहीं है। —रामनाथ भल्ला—सभा-मन्त्री

महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने श्री वीरेन्द्र आदि द्वारा मिला अधिकार वापस कर दिया

असहयोग का परिणाम

नई दिल्ली २३-१२-६९, श्री वीरेन्द्र आदि ने महात्मा आनन्द स्वामी जी तथा महात्मा आनन्द भिक्षु जी की किसी भी बात को स्वीकार न किया तथा न कोई सहयोग ही दिया जिस कारण महात्मा आनन्द स्वामी [illegible] ने आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का संचालन प्रो० रामसिंह जी तथा [illegible]की अन्तरंग सभा को पुनः सम्भाल दिया।

जब सारे आर्यजगत् में इन्हें बदनाम किया जाने लगा और सभा का [illegible] कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर भी इनके पास नहीं रहा, तो श्री वीरेन्द्र ने महात्मा आनन्द भिक्षु जी के आगे पीछे फिरना आरम्भ कर दिया था। उनको प्रत्येक प्रकार के सहयोग और आश्वासन देने लगे। [illegible] कर भी अधिकार दिया कि महात्मा आनन्द भिक्षु जी जो भी निर्णय कर देवें, उन्हें स्वीकार होगा। परन्तु दूसरी ओर श्री रामगोपल की कथित सार्वदेशिक सभा में बैठ कर श्री वीरेन्द्र तथा उनके पांच साथियों ने इसी प्रकार का अधिकार स्वामी रामेश्वरानन्द और स्वामी विद्यानन्द विदेह को दे दिया। ऐसी अवस्था में महात्मा आनन्दभिक्षु जी के लिये बड़ी कठिनाई पैदा हो गई। वह फिर भी विवाद समाप्त कराने का हल ढूंढ ही रहे थे कि श्री वीरेन्द्र ने अपना अधिकार वापस मांग लिया, जिसे महात्मा जी ने विवश होकर वापस कर दिया। अब इस बात से सभी आर्य संन्यासियों को विश्वास हो गया है कि श्री वीरेन्द्र आदि विवाद को समाप्त न करके अपितु उसे और बढ़ाना चाहते हैं। इन्हें आर्यजगत् में किसी भी निष्पक्ष [illegible] पर विश्वास नहीं है। स्मरण रहे कि श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री [illegible] आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से तथा प्रो० रामसिंह जी द्वारा [illegible]देशिक सभा की ओर से दिये अधिकार महात्मा आनन्द भिक्षु जी के पास सुरक्षित पड़े हैं। उन्हें यथापूर्व महात्मा जी पर पूर्ण विश्वास है।

रजिस्ट्रार आफ फर्म्ज एण्ड सोसायटीज पंजाब द्वारा प्रो० रामसिंह तथा उनकी अन्तरंग सभा को मान्यता प्राप्त

५-५-६८ को अम्बाला छावनी में एक षड्यंत्र रच कर नाटकीय ढंग से जो श्री वीरेन्द्र आदि ने आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का कथित निर्वाचन घोषित किया था उसे भ्रममूलक ढंग से रजिस्ट्रार आफ फर्म्ज सोसायटीज पंजाब चण्डीगढ़ के समक्ष प्रस्तुत करके उन्होंने रजिस्ट्रार से एक प्रमाण-पत्र ले लिया था तथा उसके आधार पर अपने आप को स्थान स्थान पर सभा के अधिकारी घोषित करते रहे। प्रो० रामसिंह जी सभा प्रधान ने जब सारी स्थिति स्पष्ट रूप से रजिस्ट्रार महोदय के समक्ष रखी तो उन्होंने अपने प्रमाण पत्र सं० ८१२९ दि० १७-१२-६९ द्वारा अब प्रो० रामसिंह जी प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब तथा उनकी अन्तरंग सभा को मान्यता प्रदान कर दी। इसके फलस्वरूप श्री वीरेन्द्र आदि का वह प्रमाण पत्र तथा उसका आधार समाप्त हो गया है।—रामनाथ भल्ला सभा-मन्त्री

स्वर्गीय प्रिंसिपल रामनारायण जी कपूर की स्मृति में ५००) दान

वार्षिक ब्याज से धार्मिक परिक्षाओं में प्रथम आने वाले छात्रको पारितोषिक

स्वर्गीय श्री रामनारायण जी कपूर प्रिंसिपल आर्य कालिज नवांशहर की स्मृति में उनके भाई श्री कर्मनारायण जी कपूर ने आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब को ५००) रुपये दान में दिये हैं। उक्त स्थिर निधि से प्राप्त ब्याज से प्रति वर्ष तीनों परिक्षाओं में प्रथम निकलने वाले छात्र छात्राओं को पारितोषिक दिया जाया करेगा। रामनाथ भल्ला सभा–मन्त्री

डी० ए० वी० कालेज अबोहर में गुंडागर्दी की पंजाब सरकार से जांच करवाने की मांग

पंजाब बन्द के दिन जिस गुंडागर्दी का प्रदर्शन अकाली छात्रों ने अबोहर में किया है ऐसी आशा उनसे कदापि न थी। डी० ए० वी० कालेज अबोरह के कुछ अकाली छात्रों ने यज्ञशाला को तोड़ा तथा स्कूल की छात्राओं के सामने उस पर पेशाब करके उसकी पवित्रता को भंग करने की कोशिश की। उन्होंने कालेज भवन पर पत्थर मारे जिससे भवन का भी नुकसान हुआ। कालेज के हिन्दू छात्रों ने इस लज्जास्पद बात को सहन न करते हुए यज्ञ के पश्चात् धरना दिया। इस घटना से सब धर्म प्रेमी सज्जनों के दिलों को ठेस पहुंची है।

सब आर्यसमाजों व शिक्षण संस्थाओं से निवेदन है कि वह रविवार के साप्ताहिक सत्संग में इस अंधेरगर्दी के विरुद्ध प्रस्ताव पास करके श्री वी० वी० गिरी, श्रीमति इंदिरा गांधी, श्री वाई०बी चव्हान तथा मुख्य मन्त्री पंजाब को भेजें कि इस अक्षम्य अपराध की पूरी तरह जांच करवाई जाए।

—डा० वेदीराम महामन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब

भूल सुधार

आर्यमर्यादा दिनांक २१ दिसम्बर ६९ में पृष्ठ १० पर आर्यसमाज विनयनगर नई दिल्ली का समाचार प्रकाशित हुआ है उसमें कुछ अशुद्धियां रह गई हैं।

१—यह समाचार प्रो० रामसिंह सभा प्रधान आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से था।

२—श्री सत्देवजी कुमार के स्थान पर श्री सत्देवजी कुमरा पढ़ा जावे।

३—डा० धर्मानन्द जी सेक्षानी के स्थान पर डा० धर्मानन्द जी केसरवानी चाहिए।

४—इसी प्रकार पृष्ठ ३ पर सम्पादकीय लेख में आर्यसमाज के नेता के साथ स्वामी श्रद्धानन्द चाहिए।—व्यवस्थापक

शोक समाचार

आर्यसमाज दीवानहाल तथा लाजपतनगर के भूतपूर्व पुरोहित श्री पं० रामचन्द्र जी जिज्ञासु का देहान्त १८० दिसम्बर ६९ को हो गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को अपनी व्यवस्थानुसार शुभ गति प्रदान करे तथा उन के परिवार को धीरज देवे, जिससे वह इस वज्रसम दुःख का सहन कर सकें। स्वर्गीय जिज्ञासु जी एक स्वाध्यायशील धार्मिक वृत्ति के विद्वान् थे। जब वह देहली सरकारी सर्विस में थे तभी से हमारा उनके साथ सम्बन्ध चला आरहा था, आर्यमर्यादा तथा आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से हम शोक प्रकाशित करते हैं। —सम्पादक

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साहित्य

१. सत्यार्थ प्रकाश नया संस्करण—ले० स्वामी दयानन्द		मूल्य ३-००
२. धर्मवीर पं० लेखराम—ले० स्वामी श्रद्धानन्द जी		१-२५
३. सुशीला गीत शतक—आर्यसमाज के गीतों का संग्रह		१-००
४. आत्मानन्द लेखमाला—स्वा० आत्मानन्द के लेखों का संग्रह		१-२५
५. स्वतन्त्रानन्द लेखमाला—स्वा० स्वतन्त्रानन्द		१-२५
६. वैदिक सत्संग पद्धति—सन्ध्या, हवन मन्त्र अर्थ सहित		०-५०
७. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर—ले० प० लेखराम जी		६-००
८. स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (टिप्पणी सहित)		०-४०
९. वेदाविर्भाव—(वेद ईश्वरीय ज्ञान प्रकाशन विधि)		०-७५
१०. जीवन ज्योति—प० चमूपति जी एम. ए.		३-००
११. सोमसरोवर „ „ „		३-००
१२. वैदिक सिद्धान्त—		१.००
१३. Principle of Arya Samaj „ „		१-५०
१४. Glimpses of Swami Daya Nand		१-००
१५. Subject Matter of Vedas		१-००
१६. आर्यसमाज का सैद्धान्तिक परिचय—ले० स्वा० अनुभवानन्द जी		०-५०
१७. मुक्ति के साधन—प० मदनमोहन विद्यासागर		१-००
१८. प० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित्र—ले० प्रो० रामप्रकाश		१-३५
१९. वैदिकधर्म की विशेषताएं—प० हरिदेव जी आचार्य		१०) सैंकड़ा
२०. पंजाब का आर्यसमाज—ले० प्रि० रामचन्द्र जावेद		२.००
२१. सन्ध्या, क्या, क्यों, कैसे,	ले० प० गंगाप्रसाद उपाध्याय	
२२ मै और मेरा भगवान्,	„	
२३. सनातन धर्म,	„ „ „	
२४. Budha & Daya nand	„ „ „	
२५. नीहारिकावाद और उपनिषदें	ले० प० चमूपति जी एम. ए.	
२६. काया कल्प	ले० पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार	
२७. बाल कहानियाँ	आर्यसामाजिक कहानियों का संग्रह	
२८. मर्यादा पुरुषोत्तम राम	ले० कु. सुशीला आर्या एम. ए.	
२९. आर्यसमाज क्या मानता है ?	ले० प० मदनमोहन विद्यासागर	१०
३०. गोकरुणानिधि,	ले० स्वामी दयानन्द जी	१०)
३१. आर्य नेताओं के वचनामृत	डा० साईंदास भण्डारी	१०)
३२. देवयज्ञ रहस्य,	ले० प० चमूपति जी एम० ए०	
३३. ऋषि का चमत्कार	„ „ „ „	
३४. वेदों का यथार्थ स्वरूप	ले० पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड	
३५. वीर भूमि हरयाणा	ले० आचार्य भगवान् देव जी	
३६. मांस मनुष्य का भोजन नहीं	„ „ „ „	
३७. विदेशों में एक साल	ले० स्वा. स्वतन्त्रानन्द जी	
३८. वैदिक कर्तव्य शास्त्र	ले० प० धर्मदेव सिद्धान्तालंकार	

व्यवस्थापक—साहित्य विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

१५ हनुमान् रोड नई दिल्ली—१

शरद् ऋतु का उपहार



गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से ही क्यों खरीदें ?

क्योंकि—

● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण पूर्ण शास्त्रोक्त ढंग से तथा सर्वश्रेष्ठ उपादानों द्वारा करती है।

●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की आय किसी व्यक्ति की जेब में नहीं जाती, वरन् आप के ही बच्चों की शिक्षा आदि पर व्यय होती है।

●●● गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसीद्वारा निर्मित औषधि क्रय करने पर आप जहाँ निश्चय ही श्रेष्ठ औषधि प्राप्त करते हैं वहाँ आपकी जेब से निकला एक-एक पैसा भी राष्ट्र के निर्माण तथा जनता की सेवा में खर्च होता है।

●●●● इसलिए आप अपनी आयुर्वेदिक औषधियों तथा तेल आदि सम्बन्धी किसी भी खरीद के समय गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी हरिद्वार का नाम अवश्य ही याद रखें

आपका संतोष हमारा उद्देश्य है।

नोट :—१. किसी भी रोगी के सम्बन्ध में पत्र द्वारा या मिल कर सम्मति प्राप्त करें।

२. गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियां बेचने के लिये नियम मुफ्त मंगावें।

शाखा कार्यालय :

१. ६३ गली राजाकेदारनाथ, चावड़ी बाजार दिल्ली-६
२. गोविन्द मित्र रोड, पटना-४ बिहार

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी [हरिद्वार]

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिये ... द्वारा ... प्रेस, ... दिल्ली-६ में मुद्रित और १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित